

## जल्दीकरो अलभ्यलाभसे वंचित न रहो

**रसयोगसागर—**काद्वितीयभागमी छपगया रसविकित्ताकेलिये इससे बढ़कर दूसरा कोईभी ग्रन्थ नहीं है—कारण कि इसमें दुष्प्राप्य और प्रामाणिक हस्तलिखित ५८ और मुद्रित ५३ ग्रन्थोंके रसोंका सङ्ग्रह है इसके अतिरिक्त जगद्वज्रह प्रत्यकर्ताने अपना अनुभव प्रकट किया है—वर्तमानसमयके अनुकूल मात्राओंके निर्धारणपर विशेष विवेचन कियागया है बहुतसे रस सङ्गतमें लिखेहुयेये जैसे कि कारीसादिरसप्रभृति हैं उनका कुछभी अर्थ न लगनेसे निम्नमें पढ़े हुयेये उनपर भाष्यकरके उनका आशय स्पष्टाकरदिया है । ग्रन्थलेखकोंने जहांजहां कुछ शुभगम्यता रखीथी उसेभी यथाशक्य विस्तृत कर री है । ग्रन्थाशय न समझकर टीकाकारोंने जहांजहां कुछ गलतिया की हैं उन्हें सप्रमाण दिखाकर यथार्थसिद्धान्तका आविष्कार कियागया है । एकहि रसमें पदविशेषरचनाके कारण आयेहुए औपचारिक नामान्तरोंको देखकर रसान्तरता समझ कर जो पृथक् २ नामरखकर एकभारी जाल फैलाया हुआ उसे एकान्तत दूर करदियागया है । वस्तु और पद समान होनेपरभी यत्किंचित् कियादेखे जो रसान्तरता लिखीहुईथी उसे सप्रमाण लिखकर लोगोंकीबुद्धिको उत्तेजितकी है जैसे कि रविताण्डवप्रभृतिमें है । दशवींशरसोंके मौलिकपदार्थ और प्रमाणों को एकनितकर योग्यतानुसार उनको एकदोही रसोंमें समाविष्ट करनेकी युक्ति प्रदर्शितकी है जैसे कि हिरण्यगर्भगोहलीप्रभृति इनयुक्तियोंसे ग्रन्थस्थरसोंहिंके बनानेकी कुशलतामान प्राप्त नहीं होती है किन्तु योग्यतानुसार नवीनरसोंके निर्माणकरनेकीभी युक्तिमें जायति होती है । अकारादिमातृकानुसार रसोंको लिखनेसे विशेषअनुकूलता यह होगई है कि किसीकी इच्छा होवे कि अमिकुमारनामके कितने रस हैं, तब मातृकाक्रमसे प्रथम अमिकुमारसेलेकर अन्त्यतक देखजायें बाजार भरा नजर पड़ेगा सख्यामाननेकी जरूरत हो तो अखीरकी संख्यादेखनेसे संख्या अनायाससे मालूमहो सकेगी इसीतरह तमाम रसनामोंमें समझलीजिये, इसतरह अकारादितवर्गान्त प्रथमभाग है इसमें करीबन् १८०० रसोंका सङ्ग्रह है । इसके ३४ वर्षहोगये हैं इसका मूल्य १२) रुपये हैं । इसके आदिमें अमेजी और संस्कृतमें दो विस्तृत भूमिकायें लिखीगई हैं उनमें दिखायागया है कि आयुर्वेदका अस्तित्व वेदोंसे लेकर आजतक अविच्छिन्न चला आ रहा है—इसको देखकर यह सप्रमाण सिद्ध होजाता है कि आजतक जितनीभी पद्धतियां (पैथिया) दुनियामें चलीहुई देखनेमें आती हैं उन सबका मूल आयुर्वेद है । सङ्घोचविकासकीचर्चातो सतत है भीज प्रायः सङ्घुचितभावहीमें मिलाकरता है । इसनेदियेहुये त्रिदोषविचरणकी अच्छीतरह मनन करनेसे त्रिदोषसिद्धान्तकितना उपयोगी और सख्त है इसका अनायाससे पता चलजाता है । उससे आजतकके आयुर्वेदसिद्धान्ताऽनभिज्ञलोगोंसे कियेहुये आक्षेपोंका निराकरण होजाता है और भविष्यकेलिये किसीभी व्यक्तिका आयुर्वेदकी नींव मन कल्पितसिद्धांतपर है ऐसा कहनेका साहस न होगा । बौद्धसमयमें यज्ञ, और शस्त्रविकित्सापर एकान्तत अद्भुत होनेके कारण ह्योमादि शारीराऽवयवोंमें छायेहुये घोरान्धकारका एकान्तत नाशहोनाता है कारण कि सन्दिग्धवायव्योंका सप्रमाण वेद तथा ब्राह्मण और आयुर्वेदीयसंहिताओंके सूत्र तथा मन्त्रोंके दिये हुये उद्धरणोंसे शस्य विच्छिन्न होजाता है । डाक्टरों तथा आयुर्वेदीय शारीरज्ञानजिज्ञासुओंकेलिये आपसशारीरतत्त्व नामक प्रकरण तो एक अलभ्यरत्न है, इसरत्नका रसयोगसागरको छोड़कर अन्यत्र मिलनेका अभाव हि नहीं किन्तु असम्भव है इसमें कईतरहकी विशेषतायें हैं उनका रहस्यज्ञान बिना मननके नहीं होसकता है इसतरह इसकी भूमिका वैप हकीम डाक्टर याज्ञिक तथा सशोधकोंकेलिये बहुतही सहारेकी वस्तु है ।

रसयोगसागरके द्वितीयभागमें पकारादिशतपर्यन्त २०८२ रस हैं इसतरह इनदोभागोंमें यह ग्रन्थ समाप्त हुआ है । इसकेबाद अर्थात् पृ० ६१२ से—६२३ तक सिद्धसम्प्रदाय अर्थात् आर्यस्य और व्यासप्रोक्तसंप्रकरण दिया है यह बहुतही महत्त्वका है । इसकेबाद पृष्ठ ६२५ तक आन्नादिदेशप्रसिद्ध कृष्णभूषालीयप्रभृतिग्रन्थोंके प्रयोग दियेगये हैं । इसकेबाद कईकारणोंसे सङ्ग्रहकरनेकेसमय दोनोंभागोंके छूटेहुये रसोंका पृष्ठ ६४३ तक सङ्ग्रह है । इसकेबाद सङ्ग्रहकरनेमें छूटेहुये ग्रन्थोंके नाम तत्पदसोंमें दाखिलकरनेकी सूचना पृष्ठ ६६१ तक दीगई है । इसके बाद आपतत प्रतीयमान विमिश्ररसोंके एकीकरणका दिग्दर्शन कराया है । ६६३ पृष्ठसे आगे ग्रन्थान्तरमें नामान्तरसे आयेहुये रसोंकी सूची दीगई है—जिसरसका दोनोंभागोंमें पता न चले और देखनेवालेको दूसरे नाम यादहोयें उनलोगोंसे प्रार्थना है कि वेलेग इससूचीको देखनेका कष्टकरें इसमें उन्हें यह पता चल जायगा कि इसरसका यथार्थनाम यह है उसे देखकर आह्मदहकेलिये उसीनामसे उसका व्यवहारकरें इसकेउदाहरणार्थ अमरसुन्दरी अन्त स्त्र ५०४ में इसकानाम विजयमेख आया है सो वहापर देखनेसे इसके ग्रन्थमेदोंसे कितनेनाम हैं और क्या २ विशेष हैं इसकापता अनायाससे चलजायगा इसीतरह अन्य २ रसोंकीभी देखनेका कष्टकरें प्रथमभागके छपनेपर बहुतसे वैद्यमहानुभावोंके आक्षेपसूचक पत्र आयेये कि रसयोगसागरमें इतनाप्रसिद्धभी रस छूटगया सो उनसज्जनोंके लिये यह सूची दीगई है जिससेकि उनका वह भ्रम दूरहोजाय, देखिये इसीरसकी टिप्पणीमें इसके ८१० नामआये हैं उनमेंसे जो आदमी इसे चन्द्रप्रभाके नामसे जानता होगा वह चन्द्रप्रभाकेपाठोंमें इसे न देखकर मनमें जरूर कहेगा कि इसमें सङ्ग्रहकर्ताकीभूल है परन्तु वहां ऐसा मनने न लाकर इससूचीको देखनेका कष्टकरें इससे

उनके मनको अभीष्ट सन्तोष होयजायगा, हां इसमें वेनाम जरूर न मिलेंगे जोफ़ी हालके कल्पितहैं । कल्पितनामोंका प्रतिष्ठित ग्रन्थोंमें उल्लेखकहांसं वावेगा इसबातको विद्वान् व्यक्ति स्वयं समझसकतेहैं इसमें विशेष विवरणकरनेकी आवश्यकता ही क्या है, द्वितीयभागमें सब मिलकर करीबन् २४०० रसहैं । ६७१ और ६७२ में अंग्रेजी उपोद्घातके विषयोंकी सूचीहै, पृष्ठ ६७१ और ६७४ में संस्कृत उपोद्घातके विषयकी सूचीहै । पृष्ठ ६८० तक प्रथमभागका शुद्धिपत्रकहै । ६८१ में रोगानुसारिणी और अधिकारपरलसूचीरहस्यहै यद्यपि यहविषय द्विविधसूचीके अव्यवहित आदि अथवा अन्त्यमें आना उचितता परन्तु ३ प्रयोगों छपवानेकेकारण स्थानान्तर होगयाहै इसकेलिये पाठक\* क्षमाकरें द्वितीयावृत्तिमें यह यथास्थान पर चलजायगा । पृष्ठ ६८२ के आधेसे ७८३ के आधेतक दक्षिणदेशप्रसिद्ध स्थानवातादिरोगविशेषोंके लक्षण दियेहैं ६८३ के आधेसे लेकर ६९१ तक मान (तोल) विवरण दियाहै यह प्रकरण इतना गहन है कि दसवीसवार सावधानीसे बांचकर मनन कियेबिना इसका याथातथ्य अच्छेअच्छोंकीभी चितमें आरुढहोना दुस्तरहै-इसमें सुश्रुत चरक कृष्णामेयके मानोंके आपाततः आयेहुये अन्तरके कारणको दिखलाकर एकता करनेकी युक्तिदिखलाईहै इसजगह उल्लङ्घ और चक्रगाणित-प्रयुति टीकाकारोंके स्थलनका दिग्दर्शन करायगयाहै यहांपर मननकरनेसे विशिष्ट विद्वानोंकोही ज्ञानहोगा कि यह कितने दिनसे ग्रंथहुवाहै और कितने २ लोगोंको इसने धोकेमें डालाहै ? । इसकेसीवमें कालिङ्ग और मागधतोलका रहस्य खोला गयाहै, वर्तमानसमयमें कालिङ्ग तथा मागधमानकी क्या दुर्दशाहुईहै, इसअन्वेषीकोठड़ीमेंसे निकलनेके बाद आयुर्वेदमें इस विज्ञनकेहोनेसे स्कूलमेंसी क्या दुर्दशा हो रहीहै इसका अच्छी तरह अभिज्ञान होगा, इसका कुछ दिग्दर्शन करायामीगयाहै यूनानीवजनमें सबसे ज्यादाह विज्ञन दिखाईदेताहै जितनीकिताबेंहैं एकदूसरीकेसाथ मेल नहीं खातीहैं पीछेके लोगोंनेभी अमुक साहब ऐसा फर्मातेहैं और दूसरे ऐसा कहतेहैं वय इसकेसिवाय निर्णयकी बात ही नहींहै, इसी कारणसे उनके सुखखोंमें आयुर्वेदकी तरह सीधा हिसाब नहीं आताहै यह सब मूलमानकी भ्रष्टासे हुवाहै इसका भ्रम अच्छीतरह विचारनेसे दूर होजायगा, सबलोगोंको उचितहै कि दुराग्रहों छोडकर मानको सुधारलेवें यूनानीप्रभृतिपद्धतियोंका जन्मदाता आयुर्वेदहि है इसमें किसीको संदेह हो तो इसके उपोद्घातको देखनेका कष्ट करें ।

मानवधर्मशास्त्रीयमानका उल्लेखभी इसमें आयाहै परन्तु उसका आयुर्वेदके मानकेसाथ सम्बन्धनहैं है वह केवल दण्डविधानार्थसाहेतिक नियमहै । यदि वह मन्तव्य होता तो आयुर्वेदमें स्वतन्त्रमानकेलिए प्रयत्न न कियाजाता । संसारमें जुदे २ व्यवहारोंकेलिये जुदे २ मान प्रचलितये इस बातका पता वैजयन्तीकोषके मानबोधको देखनेसे अनायास लगजायगा, यह कोष्ठक पृष्ठ ६९० और ६९१ मेंहै इसकोष्ठकमें कई अज्ञातसहेतोंकामिपता दियाहुआहै इससे यह निर्धारितहोताहै कि मानकी भिन्नता व्यवहारपरले अवश्यभी, पृष्ठ ६८९ में सुश्रुतादि मानबोधकोष्ठकदियाहुआहै उससे ग्रन्थपरलेन किस २ जगह क्या भेदहै इसका हस्ताऽऽमलकवत् ज्ञान होजायगा, इस मानपरिभाषामें बहुतकुछ ज्ञातव्यांश भराहुआहै उसके लिये हम उसे मनन करनेकी सलाहदेतेहैं । पृष्ठ ६९२ से लेकर पृष्ठ ७०४ तक जेह और आसवीका विधानहै इसमें "आर्द्रव्याणो च द्विगुणम्" इस सुश्रुतीयवाक्यमें लेखकप्रमादसे वकारस्थ यकारके निकल जानेसे अज्ञातवश पीछेके लोगोंने बनाईहुई द्रवद्विगुणपरिभाषाका सप्रमाण विस्तृत रूपसे खण्डनकियागयाहै । इसीतरह पृष्ठ ६९९ में "कायसिद्धमरिष्टं तद्विघ्न आसवः" अयिधानमुखे पात्रे जलं दुर्जरात् प्रजैत् । तस्मादावरणं स्रज्जला कायादीनां विनिधयः । पृष्ठ ७०४ में द्रव्याष्टगुणं शीर्षं क्षीराक्षीरं चतुर्गुणम् । इनमेंसी परिभाषालेख खण्डन कियाहै । पृष्ठ ७०२ से ७०४ तक नसमानाकेविषयको दूरकियाहै । इसके आगे कापादिकीनिहाकि कीहै । इसकेबाद रोगपरल और अधिकारपरल दोषकारकी सूची दीहै इनके देनेसे चिकित्सकोंको बहुतही सरलता होगईहै उसकेबाद रज १ सुवर्ण २ ताम्र ३ माग ४ कान्तलोह ५ लोह ६ मासिक ७ अन्नक ८ साल ९ रजत १० वज्र ११ यशद १२ पित्तलकांश्य १३, १४ कासीस १५ हृत्प १६ इनका शोधन और मारण दियाहै । इसके समनन्तर प्राद १ गन्धक २ मन्थिला ३ वत्सनाभ ४ विषमुष्टि (कुबिला) ५ मृदारयज्ञ ६ मलातक ७ धतूर ८ करिहारी ९ करवीरमूल १० शिलाजतु ११ इनकी शुद्धि कीहै । धव इस अकेलेग्रन्थके सङ्ग्रहकरनेसे अन्य रसग्रन्थोंकी रसमेरखनेकी कोईभी आवश्यकता अवशिष्ट नहीं रहजातीहै । देतो इसके अन्त्यमें विशिष्टविद्वानोंके अभिप्राय । इस द्वितीयभागकी कीमत १०) रुपया रररहीहै दोनोंभागसाथये लेनेवालेको १८) रुपयेमें दोनों भाग दिये जायंगे डाकखर्च लेनेवालेको देना होगा । समग्र ग्रन्थमंगवतनेवालेको ५) और १ भागकेलिये ३) ६० पेशगी मेजरना चाहिये जयावकेलिये जवाबीकाउदेना उचितहै ।

पुस्तकमिलनेका पता-

वैद्य पं० हरिप्रपन्नजी

श्रीमास्कर औपचालय तीसरा भोईवाडा पोस्ट नं० २ मुम्बई.



# रसयोगसागरः

( द्वितीयोभागः )

अथ मङ्गलाचरणम् ।

यदाऽऽकाशोऽकाशे परितुष्टविकाशे परितुष्टौ,  
यदस्थूलेस्थूले स्थितिमति भृशान्तरि विधौ ।  
रथावृक्षे नक्तन्दिनमिदं कलाकालकलने,  
रसस्तोऽहंसाऽहं वितरतु सदा सिद्धिमनुलाम् ॥

यत्-अनिर्वचनीय वस्तु, आकाशे-सर्वतःसामान्यपङ्क्त-  
रि, काशे-तेजसि "काण्ड" दौतावित्यस्मात्पचायचि प्रका-  
शार्थं पर्यवसानं भवति, आदुपसर्गस्याऽऽकर्षणाऽर्थयुतेने वृत्ति  
गोच्या, उपसर्गाणामनेकार्थत्वात् एव वृषथातुसमभिव्याहारे  
तैरपि तयात्वमवगम्यते । कदाचित् सोऽयं कर्षयातोरे-  
राऽस्त्युपसर्गाणां वैयार्कणित्याये योतकावस्वीकृतत्वादिति  
शङ्क्यम् । तयात्वे येनकेनाऽप्युपसर्गेण सम्बन्धे तस्यार्थस्या  
(आकर्षणरूपस्य)ऽभिव्यक्ति स्वीकरणीया स्यादतस्तत्तदुपसर्ग  
समभिव्याहारे एवाऽर्थविशेषपस्याऽभिव्यक्ति भवतीति नियमा  
प्रवयव्यतिरेकाभ्यां वैयान्तरैरुपगत्या स्वीकरणीय एवाऽस्ति ।  
अत एव "विनापि प्रत्यय पूर्वोत्तरपदयोर्लोभे वा वक्तव्य" इति  
वार्तिक निरमिमीत वार्तिककार । अथ वार्तिक तिरोहिता  
अर्थां प्रकरणविशेषवशाद्द्वितीया इत्यर्थं समभिव्यक्तिक, न तुच्छ  
वृत्तया सर्वेन पूर्वपदादिलोपेनाऽनर्था उपस्थापयितव्या इत्यर्थं  
तोषयति, तथात्वे सति नित्याऽर्थस्म वचिदप्यसद्भावे महानु  
गम्य प्रसज्येत । महाप्रलये सर्वाण्यपि तेजासि परमात्मनि  
श्रियन्ते सर्वजगता मूलकारणत्वात् । अथ च अकाशे-तमोरूपे  
कण्ठि, आसीदिदं तमोभूतमप्रज्ञातमलक्षणमिति मनुना सूचि  
रूपे । परितुष्टविकाशे-परितः सर्वतो विकाशे महदादिमहा  
भूतान्तकादिनिर्माणे पुनरपि सृष्टिप्रादुर्भावे इति यावत् । परि-  
वृत्तौ-परितस्तु सर्वतो वृत्तौ विभिक्षय्यापारे स्थितावित्यर्थः । जगत्  
स्थितौ भवति जीवानां परिवृत्ति । "वृत्-सम्पत्तौ" क्यादि,  
"वृत् वरणे" स्वादि, "वृत् आवरणे" वरादि, इत्यादिभ्य  
स्त्वनैकशेषादिना परिवृत्तिशब्दस्य निष्पन्नत्वात् । तस्मिन् समये  
जीवानां भवति नानाविधो व्यापारः, कश्चिन्म्रियते कश्चिजायते  
कश्चित्किञ्चिदाच्यते कश्चित्किञ्चिद्वाति किञ्चिद्दृष्टाति कश्चित्क  
स्याश्चिञोनावावृत्तौ भवति इति कृत्वा यथार्थतः साऽवस्था परि  
वृत्तिस्तत्र । अस्थूले-सूक्ष्मासितसूक्ष्मपरिमाणुके । अथ च  
स्थूले-तद्विपरीते महामहीधरादिषु । स्थितिमति-स्थावरस-  
म्बन्धे कृतादौ भृशान्तरि-जगत्से इत्यर्थः, स्थितिशीलं स्थावरो  
भृशान्ता हि जगत् इति भाष्यम् । वृत्तादयोऽपि मूलादिप्रकरण  
रूपेण गच्छन्ति परन्तु तदपेक्षया योऽयं भृशान्ता स जगत् इति  
भाष्यकारेण निरुपारि । विधौ-वन्दे, रयौ-सूर्ये, मुखे-नखन  
समूहे । नक्तन्दिनमिदीति-समस्तं पदम्, रात्रिभेदे दिनभेदे

चेत्यर्थः, ब्रह्मादीनां मनुष्यान्तानां जीवानां नक्तन्दिन-  
भेदस्याऽऽवृत्त्युपपत्त्यात् । कलाकालकलने-कलाधनुष्यपि  
विद्या, अथ च गर्भाऽनुकूलानुशोणितादिसंयोगान्तरं वातवृत्ता-  
ऽऽवृत्त्यविभागाणां यथास्थितस्थापकाऽऽवरणरचनाविशिष्टाऽऽवर-  
णानि तेषु, अस्य विशेषविवरणमुपोद्धाते कलादिपण्याऽवृत्त्यम् ।  
कालः-काल्यन्ते विभक्तीभ्रियन्ते सज्यन्ते वा, सर्वे पदार्था  
अनेनेति काल । "कल" सख्याने वृत्तादि, करणाधिवरण  
योधेति घञ् । सुसुते तु स सूक्ष्मापि कला न लीयते इति  
काल इति निरूपकप्रक्रियया साधुत्व प्रदर्श्ये सङ्कलयति कालयति  
वा भूतानीति काल इति पचायचि साधित ( छ ए ११३ ) ।  
तन लब्धशरोराचरणमात्रोऽक्षिनिमेव इत्यादिना परमस्थूलस्वरूप  
प्रदर्शितम्, सूक्ष्मस्वरूपविवरणं सस्कृतोपोद्धाते सप्तचत्वारिं-  
शति पृष्ठे द्रव्यम् । कलानां कालस्य च कलने सम्पादने सङ्कयाने  
चेत्यर्थः । एतस्मिन्नेतस्मिन् किङ्कारणमिति सन्वेहे आसोच्छ्रा  
सान्या सोऽहं सोऽहमित्युत्तरयति तद्वत्सः सर्वसारभूतं परमे  
श्वररूपं ( स शब्दस्यविशेषविवरणं पूर्वार्द्धमङ्गलाचरणटीकाया  
द्रव्यम् ) सदा निरन्तरं स्वभक्तानामित्यव्याहारं ग्रन्थकर्तुं-  
रिति वा । अनुल्ला-अनुपमा मोक्षरूपं ग्रन्थपरिसमाप्तिरुपा  
ना सिद्धि वितरतु वरात् । अस्य मन्त्रस्यार्थविचारपुर सर  
तलीनताया एव ब्रह्मविद्यारूपत्वात्, ब्रह्मविद्यं सर्वां सिद्धयो  
दासीभवन्तीत्यविवादम् । इयं ब्रह्मविद्या परमगोप्यरूपेणोप  
निषदादावाख्यायिकादिभिर्मण्यते न तु साक्षाद्विदित्यते  
साक्षात्कारस्तु गुह्यसाक्षादेवाऽवगन्तव्यं " इमं विवस्वते योग  
प्रोक्तवानहमव्ययम् । विवस्वान् मनवे प्राह भगुरिक्षाकवेऽव  
वीत् ॥ एवं परम्पराप्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः । स काले-  
नेह महता योगो नष्ट परत्पत् ॥ स एवाऽयं मया तेऽयं  
योगं प्रोक्तं पुरातनं । भक्तोऽसि मे सखा चेति रहस्य  
लेखदुस्तमम् " ( भगवद्गीता अ ४ ) भगवताऽप्याख्यायिकैरेव  
सूचिताऽस्ति । न च वाच्यः । प्रायापानीं समी कृत्वा नासाऽ  
भ्यन्तरचारिणावित्यादिना प्रवटीकृताऽस्तीति, तत्राऽपि गुरु-  
गम्य एव मार्गोऽस्ति, अत एव "तद्विद्वि प्रणिपातेन परिश्रमेन  
सेवया । उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः । यं भूता  
न्यशेषेण द्रव्यस्यात्मन्यस्यो मयि" ( भगवद्गीता अ ४१३ )  
इत्यनेन स्पष्टतया ब्रह्मविद्यायां गोप्यत्वमुक्तम् । एतस्मिन्त्रार्थे  
प्रदर्शनरूपस्य तत्सवितुर्वरेण्यमिति मन्त्रस्य महागायत्र्यर्थक  
पत्वाद्वायत्रीति संख्यां शास्त्रे कृताऽस्ति, महागायत्र्या परम  
गोप्यत्वेन सर्वत्राऽप्रकाशयत्वम्, तत्स्मरणमन्त्रा च लौकिक  
कसमस्तकर्मणा निष्फलत्वमेति समीक्ष्य त्रिभिः परमं तप  
अधिष्ठाय महागायत्र्यर्थकं तत्सवितुर्वरेण्यमिति

ससारकल्याणाय दिव्यध्यानेन दृष्टा लोके गायत्रीनामैव प्राचारीति गूढ रहस्यमत एवोपनयनसमये एव सर्वसाधारण्येन महागायत्र्यर्थरूपो मन्त्र उपदिश्यते । महागायत्री तु काम-शोधादीनां सर्वतः शान्तोद्रेके सति सत्त्वगुणसमन्वुद्भवादिभिर्लान्त करणे कोऽहं कस्मादागत विज्ञाऽनुष्ठेयमिति जिज्ञासोदये सति ब्रह्मविद्यानिधानं सद्गुरुं गवेषयते शुद्धं तं सम्पक् परि-क्ष्योपदिशति । अत एव ऋग्वेदे गायत्रीमन्त्रं साक्षात्निर्दिष्टो यथा "तत्सवितुर्वरेण्यम्० (ऋ वे ३।६२।१०) सायणभा०—यं सविता देव नोऽम्नाक धिय कर्माणि धर्मादिविपया वा बुद्धी प्रचोदयात् प्रेरयेत् । तत्तस्य सर्वान् धुतिषु प्रसिद्धस्य देवस्य द्योतमानस्य सवितुः सर्वान्तर्यामितया प्रेरकस्य जगत्स्य परमेश्वरस्य आत्मभूतं वरेण्यं सर्वैरुपास्यतया ज्ञेयतया च समजनीयं भर्गं—अविद्यातत्कार्ययोगैर्नानाद्वयं स्वयज्योति परमब्रह्मत्मकं तेजो धीमहि तपोहो नोऽमी योऽमी सोऽहमिति वयं ध्यायेम । यद्वा तदितिभर्गोविशेषणं सवितुर्वरेण्यं ततादृशं भर्गं धीमहि, किं तदित्यपेक्षायामाह—य इति लिङ्गव्यत्यय यद्गर्गो धिय प्रचोदयात् तद्व्यायेमेति समन्वयः । यद्वा यं सविता सूर्यं धिय कर्माणि प्रचोदयात् प्रेरयति तस्य सवितुः सर्वस्य प्रसवितुर्वरेण्यं द्योतमानस्य सूर्यस्य तत्सर्वैरेवममानतया प्रसिद्धं वरेण्यं सर्वं समजनीयं भर्गं पापानां तापकं तेजोमण्डलं धीमहि ध्येयतया मनसा धारयेम । यद्वा भर्गं शब्देनाग्रमभिधीयते यं सविता द्यौं धिय प्रचोदयति तस्य प्रसादाद्गोऽब्राह्मणं फलं धीमहि धारयाम तस्याऽऽपारयुता भवेनेत्यर्थः । भर्गश्चन्द्रस्याप्रसूतत्वे धीमन्स्य कर्मप्रसूतत्वे च आर-वण-वेदाश्चन्द्रासि सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य कवयोभ्रमाहुः । कर्माणि धियस्तुते प्रवर्गमि प्रचोदयन्सवित्तायाभिर्गतीति । टी०—अत्र च महागायत्रीगतच्छन्दस्यार्थं विमस्तीति शङ्कायां सवितुः—लोकां प्रसावयितुं देवस्य—महाप्रलयेऽपि द्योतमानस्य सर्वमूलकारणत्वात् वरेण्यं—वरणीयं भर्गं, सर्वपापभञ्जनसमर्थत्वेन धीमहि—ध्यायम । किमर्थं तद्व्यापनमित्यु-चित्याऽऽकाङ्क्षा शान्तयितुमाह य—यत् भर्गो नः—अम्माकं धियः—बुद्धी अन्तःकरणानीति यावत् । प्रचोदयात्—शुभं मेनु नियुज्यात् । इति महागायत्रीरूपसमुदायस्यैकग्रन्थमात्रं स्यादर्थं प्रदर्शितं । समसाऽहस्य—“हसं शुचिपुत्रमुन्तति क्षमोता वदिवदतिथिर्दुरोणय । वृद्धरसत्समद्रूपोमयवस्त्रा गोत्रा क्रतवा अदित्रा क्रतुः ॥ ऋ १४।०।१४ ॥ (सा० भा०) अनया सौर्ययां य एवान्तरादित्य दिग्गमय पुण्यो नश्यते दिग्गम्यभ्युपारित्यादिभूत्योष्ठो मण्डलाऽभिनीती देवोऽहं, यः सर्वप्राणिनिधिं विष्णुं स्थितं परमात्मा यमं निरन्तरं स्तोपाधिकं परं ब्रह्म त्वय्ययं देवेभ्योति प्रतिपाद्यते हंसः—इति गंत्ययं सर्वत्र सर्वदा गन्ता यो हंसोऽब्रह्मादिगुणैरनुपपन्नः नदीशृङ्गोपपन्नः, परमात्ममन्त्रप्रतिपाद्य आदित्य ग यं शुचो दीप्तिं शुभेके सीदतीति वृत्तिः । अथ यत्नं परोदिने ज्यादित्येव इत्यादिभुते । अनेन गुण्या आदित्यं प्रति

पादित, स एव मण्यस्यानो वायुरित्याह वसु-सर्वस्य वास-यिता वासु स चान्तरिक्षस्तत् अन्तरिक्षस्वामी । अयं तन्यैव क्षितित्थानवैदिकामिरूपतामाह होता—देवानामाहुता होमनि-ष्पादको वा वेदिपतु—वेद्या गार्हपत्यादिरूपेण स्थित अति-थिरतिथिवन्सर्वदा पूज्योऽस्मि दुरोणस्तत्—दुरोणं गृहनाम तत्र पासादिसाधनत्वेन स्थित अनेन लौकिकाम्यात्मकत्वमुच्यम् । नृपतु—शुभमनुष्ठेयं चेतन्यरूपेण सीदतीति नृपत् अनेन परमा-त्मरूपत्वमुच्यम् । पुनरप्यादित्यात्मतामाह—चरस्तत्—चरं वरणीयं मण्डले सीदतीति वस्तुत् आदित्यं वर वा एतत्सन्ना यस्मि-न्नेव आसन्तस्तपतीति हि धूयते क्रतुं सत्यं ब्रह्म यज्ञो वा तत्र सीदतीत्युक्तं अस्मि व्योमान्तर्गि तत्र सीदतीति व्योमस-द्वायु । इदानीमादित्यतोऽप्यन्ते अन्ता—उदयेषु जातं वदक-मध्ये खल्वयं जायते गोजा. गोपु रश्मिषु जातं क्रतुं सत्यं सर्वैरेवत्वेन सत्यामात न क्षमाविन्नादिवत्प्ररोक्षो भवति । यद्वेदकेषु वैयुक्तरूपेण वा वाङ्मयरूपेण वा जातं अद्रिजा.—अद्रावुदयाचले जातं एव महाभुज आदित्यं क्रतुं—सत्यम-याच्य सर्वाधिष्ठानं ब्रह्म तत्त्वं तद्गोक्षमावेद्यादित्यरयोक्तृत्वं हसं शुचिपदित्येव है हसं शुचिपदित्यादिना ब्राह्मणे समाना-त्मं इति । यत्तु सायणादिभिरयमन्त्रं सूर्यप्रसूतत्वेन व्याख्या-तन्तदपि ब्रह्मविद्यायाम्ब्रह्मरूपच्छादनार्थं कृतमिति वा स्यात्पूर्वं व्याख्यातृश्रेष्ठोवाऽनुवृत्तस्यादित्यमुगीयते । महागायत्रीमन्त्रं साक्षात्पुत्राऽपि निर्दिष्टो व्याख्यातो वा भोपलभ्यत इति तस्य परमोपपत्त्यम् ।

केचित्तु बालिष्ठास्तत्सवितुर्वरेण्यमित्यादिमन्त्रमेव ब्रह्म-विद्यां वदन्ति तत्र सम्यक् ? एकाधरमान्—यार्थरूपत्वात्, प्रस-व्यार्थमात्रात्तरि प्रपातित्वात्प्रायःऽभिज्ञत्वकथनवदनुवृत्तत्वेन स्मात्तमप्रमहामन्त्राधेयात्तयैव यथार्थप्रप्रवित्वम् । तन्त्रशास्त्रे देवप्रतिमायन्त्रादीनां प्राणप्रतिष्ठापने सर्वेषु सन्त्रयायेषु पासा-द्व्यागमितमायाधीनमुपाये वायुःअहिनृत्तरणोष्मादिबीजोपायणं पुरस्तारं महामन्त्रं एव विन्यस्यते न तु पुत्रविदपि ॐ त्वचि वरेण्यमि यादिमन्त्रं समुपन्यस्तो हरयते । किञ्च तत्सवितुः तिगन्त्राऽऽपानेऽप्यन्तरात्रनिवेदयन्मन्त्रा सत्याग्निदित्यमा-वाच्यन्तन्त्रमेव ब्रह्मविद्यात्वम् । ब्रह्मविद्याप्राप्तौ नु गर्भेनैव हेयं समाप्यते इति सर्वेऽपि स्वीकार्यमतो न क्त्वावितुर्वरेण्यमित्या-दिमन्त्राधेयाने समप्रवया ब्रह्मविज्ञं समाप्या इति शान्ताश्रयं वरुणे स्थहदयैतच्छनीयमिति प्रथमाऽर्थः ॥ १ ॥

द्वितीयं नु—यत्न—अनिवर्तनीयस्वरूपं वस्तु आपादो, आकाशगमनं अवाप्तो तत्तत्तद्वदो अक्षरारहितं शरीरा-न्तं प्रवेशं वा । परितृप्तविषयो—मुनीश्वर—प्राणिमात्रादानं प्राणकारादित्यस्यकारणोद्भवकसत्प्राप्तये । परितृप्तो—नानं तोषदाऽप्यकाशमग्निपादित्यकाश इति यावत्, अग्निपा-दित्यादिनां पारं वपादित्यस्यैव नानं प्राणोपादानं स्यात्तस्या परितृप्त्या भावि स्यात् परितृप्तो अत्यन्त-रूप, स्थूल-मेघ-ज्वलि, स्थितिमति—प्राणो, भूतान्तर-

जस्य, विधौ-चन्द्रवियाया (रजतीकरणे), रघौ-सूर्यकि-  
याया, कश्चे दलसिद्धौ ( इमे धातुवादप्रसिद्धास्तद्वेता ) नक्त-  
दिनमिदि-लाक्षिकावेतौ शब्दौ वर्णवाचकताया पर्यवस्यौ  
तेन कृष्णरक्षादिवर्णभेदेन अन्यथाकरणे इति यावत् । कला  
कालकलने-कलानां विधानां कलने सम्पादने कालस्य दीर्घ  
मितियुक्तस्य कलने सङ्गपाने चेत्यर्थः । दीर्घाऽऽयुस्सिद्धावेतद् द्वय-  
मपि सम्भवति । एतस्मिन्नेतस्मिन् किं समर्थं भवतीत्यपेक्षया-  
मुत्तरयति-रसः-पारदं कथंभूतं सन्निवृत्तपेक्षायामाह हंसो  
हंस-इति एकोहंसशब्द उत्कृष्टगुणयुक्तताबोधकः । द्वितीयस्तु  
सञ्ज्ञापरिचायक उत्कृष्टगुणयुक्तो इत्यो यथा आकाशगमनादौ  
समर्थो भवति तद्वच्चन्द्रस्वरूपतामापादितं पारदोऽपि खेचरी  
सिद्धपादिप्रदाने समर्थो भवति, तथापि पारदं परितो ललित  
साधकानाम्-अनुलान्-अनुपमा सिद्धिं वितरन्-बदात् ।  
महामन्त्राऽऽराधकस्य रससिद्धिर्भवतीति ध्वनिः । महामन्त्रेणै  
वाऽलौकिकसामर्थ्योदयात् रसविद्या योगिनामेव सिद्धपतीति  
हृद निश्चयस्तदभावोदवेदानां खेचरीसिद्धिप्रवृत्तादयः शाले  
लिखिता अपि न सिद्धयन्ति इति रहस्यम् । न च योगिगान्तु  
स्वयमेव सिद्धय उदयन्ते किन्तेषु ( योगिषु ) पारदेन प्रयोजन  
मिति वाच्यम् ? योगसिद्धयुदये यथा बहुकालाऽपेक्षत्वं न तथा  
पारदे इति बह्वन्तरम् । योगमार्गाऽवलम्ब्येन महामन्त्राऽऽराधन  
वत्सिद्धपादादपि सेवनीय इति रहस्यम् । पारदे सिद्धे योगसि  
द्धिरपि सुकरा भवति अत एव “ स्थिरदेहेऽन्यासवशात्प्राम्य  
हानं गुणाऽऽक्रोपेतं । प्राप्नोति श्रद्धावदं पुनर्भववासजन्मदुःखानि ”  
इति रसहृदयतन्त्रादौ समाहितम् । अन्यायार्थानामप्राप्तिकृतया  
नोपन्यास इति सुहृद्भिः क्षमणीयम् ।

## अथ पकारादिरसाः

### १ पक्तिशूलहरो रसः

दृष्टुं मूर्च्छितं स्रुतं यवक्षारं समं ततः ।  
चूणितं भक्षयेन्मार्गं मधुना पक्तिशूलनुत् ॥ १ ॥

र क , र क ल , पक्तिशूले । र क ल ( दृष्टुं स्रुतं )

भाषा-मुनासुहागा, रससिद्ध, यवक्षार, सब समभाग लेकर  
१-२ रोज खरलकर रखछोडे । इसमेंसे १-१ माशा मधुके  
साथ चादनेसे पक्तिशूल नष्टहोता है ॥ १ ॥

### २ पञ्चगर्भकम्

हेमाऽर्कगन्धाऽमरसेन्द्रमेधाः

समीकृता मन्दहुताशसिद्धाः ।

मधुप्लुतेनाऽऽप्यलघेन लीढा

प्रोक्ता. समासादखिलाऽऽमयम्ना ॥ २ ॥

लो १, (स.) समस्तोगाऽधिकारे ।

भाषा-सुवर्ण, ताम्र, अभ्रक, इनकी भस्में, शुद्धगन्ध और  
पादा ये सब समभाग लेकर परिगन्धकी नीलवर्णकजलीमें

मिलाकर बहुतमन्द आचसे गलाकर पर्यंटी बनाले अथवा आतशी  
शीशीमें रखकर मन्दआचसे यहातक पत्रावे कि एकदम द्रव हो  
जाय । स्वादवीतल्लोनेपर शीशीको फोड़कर निकाले । इस  
मेंसे पी और मधुके साथ ३-३ रतीकी मात्रा लेनेसे यह  
समस्तरोगोंको नष्ट करताहै ॥ २ ॥

### ३ पञ्चगुञ्ज रसः

जातीद्वयं कणा विश्वं मरिचं गन्धकं रसम् ।

विहारं पञ्चलयणं गगनञ्च समार्शकम् ॥ ३ ॥

मरिचं सर्वमेकत्र युक्त्या सन्तुष्य भावितम् ।

ताम्बूलपत्रस्वरसेस्तथेवाऽऽर्द्धकजं रसैः ॥ ४ ॥

पञ्चगुञ्ज इति ख्यातो देयः पर्णेन वाऽऽर्द्धकैः ।

अग्निमान्ये त्वज्जीर्णे च सामे स्लेष्माऽनिले तथा ॥ ५ ॥

आमज्वरं त्रिदोषत्ये ज्वरे मेहे विशेषतः ।

कासे श्वासे तथाऽऽनाहे शुल्मेऽर्शसि विशेषतः ॥ ६ ॥

यो म, अग्निमान्ये ।

भाषा-जायफल, जाविरी, त्रिकटु शुद्ध गन्धक और पारा,  
सजी, सुहागा, यवक्षार, पाचौ नमक, अभ्रकमन्म, सब समभाग,  
इन सबकी बराबर मरिच लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्ध-  
ककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर पान, अदरक इनके रसोंसे  
१-१ रोज मर्दनकर ५-५ रतीकी गोलीयें बनाकर रखछोडे ।  
इनमेंसे १-१ गोली नागरबेलके पान अथवा अदरकके रसके  
साथ देनेसे मन्दाग्नि, अजीर्ण, साववातश्चैन, आमज्वर,  
त्रिदोषज्वर, प्रमेह, कास, श्वास, आनाह, शुल्म, विशेषकर  
पचासीर इन सबको यह नष्ट करता है ॥ ३ ॥

### ४ पञ्चगुल्महरो रसः

चित्रमूलहरीतक्यौ वज्रदन्ती च सैन्धवम् ।

अजमोदं व्योपमर्कं गुटिकां समभागतः ॥ ७ ॥

कुबेराक्षमितां कुर्यात्पञ्चगुल्मनिवृत्तये ।

निहन्त्यात्सवेरोगांश्च ज्ञानज्योतिर्भुनेर्वचः ॥ ८ ॥

र झा , मर्वरोगे ।

भाषा-चित्रकमूल, हर्ष, वज्रदन्ती (काश्मीरकी तरफ प्रसिद्ध  
है-उसके अभावमें मराठी) सैधानमक, अजमोद, त्रिकटु, आक-  
कीजडकी छाल, ताघमन्म ये सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर  
अदरक वगैरहके रससे करझवीजके बराबर गोलीयें बनाकर रख  
छोडे । इनमेंसे १-१ गोली तप्तद्रोणद्वाराउपानके साथ देनेसे यह  
समस्त रोगोंको दूर करता है विशेषतया शुल्मको मिटाता है ।

हि०-मूत्र कोष्ठमें अर्द्ध शुद्ध माषा है सो भी व्योषके आगे होनेसे  
आककी जड का बोध करता है पल्लु सर्वरोगहर्त्य गुणहोनेसे ताघ और  
आक दोनों दिये जाय तो अच्छा है ॥ ४ ॥

### ५ पञ्चनिम्बादिचूर्णम्

मूलं पत्रं फलं पुष्पं त्वचं निम्बास्तमाहरेत् ।

सूक्ष्मचूर्णमिदं कुर्यात्पलैः पञ्चदशोन्मिदैः ॥ ९ ॥

लोहमस्महरीतस्यौ चक्रमर्दकचित्रकौ ।  
 भल्लातकं विडङ्गानि शर्कराऽऽमलकं निशा ॥ १० ॥  
 पिप्पली मरिचं शुण्ठी चाकुची कृतमालकः ।  
 गोक्षुरश्च पलोन्मानमेकैकं कारयेद्दुधः ॥ ११ ॥  
 सर्वमेकीकृतं चूर्णं भृङ्गराजेन भावयेत् ।  
 अष्टभागाऽवशिष्टेन खदिराऽसनवारिणा ॥ १२ ॥  
 भावयित्वा च संशुष्कं कर्पमात्रं ततः पिबेत् ।  
 खदिराऽसनतोयेन सर्पिषा पयसाऽथवा ॥ १३ ॥  
 मासेन सर्वकुष्ठानि विनिहन्ति रसायनम् ।  
 पञ्चनिम्बमिदं चूर्णं सर्वरोगप्रणाशनम् ॥ १४ ॥

शा. सं., ना. वि. यो. वि., ट. यो. त., ग. नि., वै. र.,  
 रसायनसं, वै. वि., नि. र., कुष्ठे ।

टि०-रसायनमहमेहं दुग्धविमीतकवर्षितया नियोजितौ तयोराग्रे  
 प्रलेपे गुणद्विष्टव । नि. र., वै. र. वैषयिन्तामणीषु निम्बपत्रादि एव खदि-  
 रामनकायभावना प्रशय समन्वयस्त्वनि नियोज्याज्जे चूडभावनं प्र-  
 साऽस्ति, निम्बभावनापक्षया समस्तद्रव्ये भावना ज्यायसी ।

भाषा-अपनेअपने समयमें मूल, पत्र, फल, पुष्प और त्वक्  
 ये प्रत्येक ३ पल निम्बके लेवे और लोहमस्म, हरे, चक्रवड,  
 चित्रकमूल, भिलावे, विडङ्ग, शकर, आवले, हल्दी, पीपल,  
 मरिच, सोंठ, बाडची, अमिलतास, गोखरु १-१ पल लेकर  
 सबका चूर्णकर भांगरेके रस और सर्वद्रव्यकी बराबर खदिर  
 तथा असनरी छालके अष्टभागावशिष्ट काढ़से १-१ भावना  
 देकर सुखार रसछोड़े । इसमेंसे १-१ तोला खदिर और  
 अमनके काढ़से अथवा पी या दूधके साथ लेनेसे यह समस्त  
 कुष्ठोंको दूर करता है और रसायन है-अर्थात् समस्त रोगोंको  
 दूरकर आधुको बढ़ाता है ॥ ५ ॥

### ६ पञ्चनिम्बाऽवलेहः

रसायनं प्रवक्ष्यामि ब्रह्मणा यदुदाहृतम् ।  
 मार्कण्डेयप्रभृतिभिर्द्युतामुक्तं महर्षिभिः ॥ १५ ॥  
 पुष्पकाले तु पुष्पाणि फलकाले फलानि च ।  
 सङ्ग्राह्य पिचुमर्दस्य त्वङ्मूलानि दलानि च ॥ १६ ॥  
 द्विर्दशानि समाहृत्य भागिकानि प्ररूपयेत् ।  
 त्रिकला त्र्युषणं ब्राह्मी श्वर्दप्राऽरुक्फराऽग्नयः ॥ १७ ॥  
 विडङ्गसारो वाराही लोहचूर्णं स्मृताः समाः ।  
 निशाद्वयाऽथल्लुगर्क व्याधिघातः सर्शरः ॥ १८ ॥  
 कुष्ठमिन्द्रयवाः पाठा चूर्णमेपातुं संयुतम् ।  
 खदिराऽसननिम्बानां धनन्यायेन भावयेत् ॥ १९ ॥  
 सप्तधा पञ्चनिम्बन्तु मार्कवस्य रसेन च ।  
 स्तिग्धः शुद्धतनुर्धामान् योजयेत्सन्धुमे दिने ॥ २० ॥  
 मधुना तिकहविषा खदिराऽसनवारिणा ।  
 लेहमुष्णाभमसा वापि कालद्रव्या पले भवेत् ।  
 जीर्णं तस्मिन् समश्रोषातिस्निग्धं लघु दितश्च यत् ॥ २१ ॥

विचर्चिकोदुम्बरपुण्डरीक-  
 कपालदृक्किटिभालसादि ।  
 शतारुविस्फोटविषमालाः  
 कफप्रकोपं त्रिविधं किलासम् ॥ २२ ॥  
 भगन्दरश्रीपदवातरक-  
 जडान्धनाडीव्रणशीर्षरोगान् ।  
 सर्वान् प्रमेहान् प्रदरांश्च सर्वान्  
 दंष्ट्राविषं मूलविषं निहन्ति ॥ २३ ॥  
 स्थूलोदरः सिंहकशोदरः स्या-  
 त्सुक्ष्मलघुसन्धिर्मधुनोपयोगात् ।  
 सद्योपयोगादपि ये दशन्ति  
 सर्पादयो यान्ति विनाशमाशु ।  
 जीवेधिरे व्याधिजराविमुक्तः  
 शुभ्रेतरश्चन्द्रसमानकान्तिः ॥ २४ ॥

भा. प्र., च. द., ग. नि., र. र., ट. मा., कुष्ठारिदोरे ।  
 चक्रेते इष्टत्तुर्णमिति नाम ।

भाषा-अपने अपने समयसे निम्बके पत्राङ्गोंका सङ्ग्रहकर  
 २-२ भाग लेकर त्रिकला, त्रिकड, ब्राह्मी, गोखरु, भिलावा  
 चित्रक, विडङ्गतण्डुल, वाराहीचन्द, लोहमस्म, हल्दी, दासहल्दी,  
 बाडची, अमिलतास, शकर, कुड, इन्द्रजव, पाठा ये सब १-१  
 भाग लेकर कूटनपङ्खानकर सबके बराबर खदिर, असन और  
 नीमके अष्टभागावशिष्टकायोंसे और भंगरेके रससे ७-७ बार  
 भावनाएँ देकर रखछोड़े । इसमेंसे पञ्चकर्मकर शुभद्रुहर्तने मधु  
 और तिकपुत अथवा खदिर और असनके बाप, अथवा गरम-  
 पानी से आपे तोलेसे प्रारम्भ कर एक तोले तक बडाकर लेवे ।  
 जीर्णहोनेपर स्निग्ध और हितकारक भोजन करनेसे विचर्चिका,  
 उदुम्बर, पुण्डरीक, कपाल, ददु, किटिभ, अलम, शतारुक्,  
 विस्फोटक, विसर्प, गण्डमाला, कफप्रकोप, तीन प्रकारका श्वित्र,  
 भगन्दर, श्रीपद, वातरक, जडत्व, अन्धत्व, नाडीव्रण, शीर्ष-  
 रोग, समस्तप्रमेह, प्रदर, दंष्ट्राविष, मूलविष, मेद इन सबको यह  
 नष्ट करता है । इसके अधिकदिन सेवनकरनेवालेको यदि  
 संप्रकाशयया हो तो सर्प ही मरजाताहै और मनुष्य अधिक  
 दिन जीता है ॥ ६ ॥

### ७ पञ्चपञ्चामृतसरः

पञ्च पञ्चाऽमृतं प्रोक्तं पञ्चधा पञ्चधा कृतम् ।  
 पञ्चानाञ्चापि घातूनां पञ्चरोगहरं परम् ॥ २५ ॥  
 पञ्चानुपानयोगेन पञ्चानां पाचनान्वितम् ।  
 पञ्चपातकिपापार्णं पञ्चरोगहरं परम् ॥ २६ ॥  
 सुवर्णं रजतं ताम्रं नागं यक्षसमन्वितम् ।  
 सुवर्णं कान्तलोहश्च रजतं ताम्रमग्नकम् ॥ २७ ॥  
 समौलिकं हेमयज्ञं रसाग्नकसमन्वितम् ।  
 नागं यक्षं घनं लोहं नेपालं पञ्चमं स्मृतम् ॥ २८ ॥

पारदं रजत ताम्रं साऽम्रकं हेमपञ्चमम् ।  
पञ्चपञ्चामृतान्याहुः सर्वरोगहराणि च ॥ २९ ॥  
स्वानुपानविशेषेण वेदनाशमनानि च ।  
बहुवर्णवियमं कुष्ठं घोरतरं क्षयम् ॥ ३० ॥  
प्रमेहं पाण्डुरोगञ्च हन्यान्नात्र विचारयेत् ।  
यथारोगानुपानेन पाचनं वापि कारयेत् ॥ ३१ ॥  
दो०, सर्वरोगे ।

भाषा—भस्मकियेहुए सुवर्ण, रजत, ताम्र, नाग, वज्र ( १ ) सुवर्ण, कान्तलोह, रजत ताम्र, अम्रक ( २ ) मोती, सुवर्ण, हीरा, शुद्धपारा, अम्रक, ( ३ ) नाग, वज्र, अम्रक, लोह, और ताम्र, ( ४ ) शुद्धपारा, रजत, ताम्र, अम्रक, सुवर्ण ( ५ ) ये पाच पञ्चामृत है । इनमेंसे किसीएकको उचिताऽनुपानके साथ उचितमात्रामें देनेसे बहुतपुराना और विषम कुष्ठ, भय डरक्षय, प्रमेह, पाण्डुरोग इन सबको ये नष्ट करते हैं ॥ २९ ॥

### ८ पञ्चवलोरसः

तीक्ष्णहिङ्गुलनागानां तारहेमरसान्वितम् ।  
कमवृद्ध्या तु सङ्गृह्य चाद्वयौ मर्दनं कुरु ॥ ३२ ॥  
सर्वाङ्गं गन्धकं दत्त्वा रसस्य त्रिगुणीकृतम् ।  
वृहद्भाण्डे विनिक्षिप्य बालुकायां प्रयोजयेत् ॥ ३३ ॥  
अग्निं प्रज्वालयेच्छण्डं प्रमाणं युगसहस्रया ।  
रसः पञ्चवली नाम बलुः क्षौद्रघृतान्वितः ॥ ३४ ॥  
वीर्यस्तम्भे तीक्ष्णमात्रं गात्रसङ्कोचनं तथा ।  
आलस्यं बहुनिद्राञ्च वेदनां सर्वसन्धिषु ॥ ३५ ॥  
कासश्वास प्रसक्तिञ्च निशार्थं तप्तगात्रताम् ।  
आध्मात्ममत्प्रमान्यञ्च यश्मानश्चापि नाशयेत् ॥ ३६ ॥  
र श, बारीकरणे ।

भाषा—फोलाद, शिगारिक, नाग, रजत, सुवर्ण, पारा इन सबकी भस्में कमवृद्धभागसे लेकर खड़ीतिपतियाके रससे १-२ रोज मर्दनकर सबसे आधा शुद्ध्यन्धक मिलाकर बड़ी आतशी बीसीमें भरकर बालुकायन्त्रमें ४ पहरकी तीक्ष्ण आच दे । स्वाङ्गहीतल होनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे ३-३ रत्ती घृत और मधुके साथ देनेसे वीर्यका अत्यन्त स्तम्भन करता है औरआरतीकी शिथिलता दूरकर दृढ बनाता है । आलस्य, अति निद्रा, सन्धियोंकी पीडा, वास, श्वास, प्रसेक, रात्रिज्वर, आध्मात्म, मन्दाग्नि इन सबको यह नष्टकरता है ॥ ८ ॥

### ९ पञ्चमणोरसः ( प्रथमः )

रसाऽम्रनागाऽयसगन्धवर्धं  
कार्पादिकं तत्सम्भभागयुक्तम् ।  
रसेम हेम दिगुणं प्रदद्यात्  
क्षीरेण भाव्यञ्च गर्वा त्रिवारम् ॥ ३७ ॥  
विः सप्तहृत्यो विजयारसेऽस्य  
ततश्च दद्यात्कनकस्य सप्त ।

लवङ्गजातीफलकुङ्कुमैश्च  
कङ्कौलकाऽऽकल्लगजेन्द्रकैश्च ॥ ३८ ॥  
कृष्णाहरेश्चन्दनतोयभावा  
प्रत्येकमेकस्य च सप्तसप्त ।  
दर्पेण चैकाञ्च ददीत भावना  
सिद्धो रसः स्यादिति पञ्चबाणः ॥ ३९ ॥  
वीर्यस्य वृद्धिञ्च करोति पुस्त्यं  
गण्डेन्द्रियाणां हि शुभावहश्च ।  
यदीयगेहेऽगणिता रमण्य-  
स्तेनैव कार्यो रसरारा एव ।  
कान्ताप्रियत्वं बहुशुभ्रताञ्च  
शोकाऽभिवृद्धिं वितनोति सद्यः ॥ ४० ॥

वृ यो त, र मु, यो र, र बो, बारीकरणे ।  
र मु, रसकपञ्चबाण ।

भाषा—शुद्धपारा, अम्रक, नाग, लोह इनकी भस्में, शुद्ध्यन्धक, वज्र और कौबीभस्म ये सब १-१ भाग, सुवर्णभस्म २ भाग, लेकर पारे गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर गासके दूध से ३, भागरेके रससे २१, धतूरा, लौंग, जायफल, केसर, शीतलचीनी, अकलकरा, गजनीपल, पीपल सफेदचन्दन इनप्रत्येकके रसोंसे सात, कस्तूरीसे एक भावनादेनेसे यह पञ्चबाणरस सिद्धहोया । इसकी ३ ३ रत्ती गोलिये बनाकर रख छोडे । इसमेंसे १-१ गोली उचिताऽनुपानके साथ देनेसे वीर्य वृद्धि, इन्द्रियोंकी खराबी, इन सबको नष्टकर बहुतसी क्रियोंको तृप्तकरनेकी शक्ति देता है ॥ ९ ॥

### १० पञ्चबाणो रसः ( द्वितीय )

कनकं रसभूतिञ्च निरस्य लोहमम्रकम् ।  
कस्तूरीं नागधन्यां च मर्दयेच्छुष्णताऽवधिम् ॥ ४१ ॥  
धात्रीफलं दास्युग्मं लवङ्गं कुङ्कुमं तथा ।  
गुण्ठी भङ्गातकञ्चैव विजया कनकं मधु ॥ ४२ ॥  
एतैर्द्रव्यैः क्रमेणैव भावयेत्सप्तवारतः ।  
पञ्चबाणरसो नाम्ना सुसिद्धो जायते ध्रुवम् ॥ ४३ ॥  
दिनान्ते भक्षयेद्यस्तु स गच्छेत्प्रमदाशतम् ।  
अतिस्तम्भ हरेच्छीघ्रं व्योयजम्भीरनीरयुक् ॥ ४४ ॥  
र श, बारीकरणे ।

भाषा—सुवर्ण, पारा, लोह और अम्रक इनकी भस्में, कस्तूरी, नाग-वज्रभस्म सब समभागलेकर बारीकबीस आवाला, देवदाश, दाहलन्दी, लौंग, केसर, सोंठ, मिलावे, भाग, धतूरा इन प्रत्येकके रसोंकी क्रमसे ७-७ भावनाएँ देकर ३ ३ रत्ती गोलिये बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली तप्तद्रोहराऽनुपानके साथ लेनेसे यह समस्तरोगोंको दूर करता है । सन्ध्या कालमें दूधके साथलेनेसे अत्यन्तस्तम्भन होता है । उसको दूर करना हो तो त्रिकटु और जमीरीवारस पीवे ॥ १० ॥

## ११ पञ्चवाणो रसः ( तृतीयः )

नागं वङ्गञ्च कान्तञ्च हेमताराऽकरौप्यकम् ।

सूतं क्रमाद्भाग्यवृद्धं वैकान्तं सूतभागिकम् ॥ ४५ ॥

विशुद्धगन्धं सर्वोशं पर्यटं पातयेच्छुनैः ।

कामिप्रियोक्तविधिना भावितं भावनौपधैः ॥ ४६ ॥

मापपूर्णसंयावे पाचितं घृतमध्यतः ।

यथादास्त्योरसवं कृत्वा ततः सिद्धो भवेद्रसः ॥

पञ्चवाण इति ख्यातो रमयेत्कामिनीशतम् ॥ ४७ ॥

र. शं, ना. वि., बाजीकरणे ।

भाषा—नाग १ भा., वङ्ग २ भा., कान्तलोह ३ भा., सुवर्ण ४ भा., मोती ५ भा., ताम्र ६ भा., चादी ७ भा., पारा ८ भा., वैकान्त ८ भाग इन सबको मल्ले और शुद्ध गन्धक सक्कीकराकर मिलाकर पर्यटके विधानसे पर्यट बनाकर कामवर्धक गणसे भावना देकर गोलापनाय ३-४ पारों में लपेटकर उड़के आटेकी वाटीमें कवलितकर धीके अन्दर धीमीआवसे पकावे । जब वाटी सिककर जलने को होत न नीचे उतार दे । स्वास्तीशीतल होनेपर अन्दरसे रसको निकालकर कुमारीका प्रशक्तिका पूजनकर रखोड़े । इसमें से ३-३ रत्ती तत्तदोग्रहाराशुपानके साथ देनेमें यह तमामगोनों को दूर करता है और स्तम्भन की दवाओंके साथ सेवन करने में बहुतसी क्रियाओंको सुख करसका है ॥ ११ ॥

## १२ पञ्चवाणो रसः ( चतुर्थः )

श्लेष्मं सूत्रविघटितं पलमितं मापस्य पिण्डे क्षिपेत्

प्रस्ये धूतजतैलजे हुतग्ने सम्पाच्य पिण्डान्नयेत् ॥

मुकाविद्रुमसूतमसम् रविजं स्वर्णञ्च वङ्गं समं

तारं ताप्यककान्तमसम् सुभगं चाऽम्रं हिमाम्रं ततः ॥

अहियलिमपि वज्रं नागकैन्तु भागं,

करहटरसघृष्टं कोकिलाक्षस्य बीजैः ॥

फणिफलजमवाङ्गिः केसरैर्देवपुष्पैः,

त्रिकटुघनजटाभ्यां भाययेच्छालमलीभिः ॥ ४९ ॥

मधुसुमुशलिन्दैर्मैकटीशोलजाती-

फलनलदसुजातीपत्रिकाहस्तिकन्दैः ।

त्रिफलजलपुङ्खी साऽध्वाराहकन्दै-

र्द्धनमृगमदाभ्यां भाययेद्ब्रह्मसहस्रैः ॥ ५० ॥

रमयति बहुकान्तास्तीग्रमेहाऽपहारी,

समधुघृतसिताभ्यां पञ्चवाणोद्विहः ।

बहुतरमपि दीर्यं कुर्वतः क्षीरपानं,

गुफतरमपि सेव्यं स्वादुमिष्टञ्च भोज्यम् ॥ ५१ ॥

र. शं, बाजीकरणे ।

भाषा—समोर्गिरिक ४ तोले लेकर चौगुना बन्हा सूत-लपेटकर गेद जैसा गोला बनावे ऊपर दो २ अंगुल मोटा टट्टके आटे का लेप देकर गरी पेंदकी कड़ाही में रखके एक

सेर घटूरे के बीजोंका तेल डालके मन्दाग्नि से पकावे । आधा खाल होकर काला होने लगे तब नीचे उतार ले । स्वास्तीशीतल होनेपर धीरज से निकालके रखोड़े । बाजीकरण योगों में इसी का प्रयोगकरे । खासकर इस योगमें इसी को डालना । मोती, प्रवाल, पारा, नीलम अथवा ताम्र, सुवर्ण, वङ्ग इन सबकी मल्ले में १-१ भाग, चादी, सोनामाखी, कान्तलोह, शिगरिक, अम्रकमल्ल ये सब २-२ भाग, गन्धक, हीरामल्ल और अफीम १-१ भाग लेकर सबका वारीक चूर्णकर अकलकरा, तालमखाना, खसखस, केशर, लौंग, त्रिकटु, नागरमोथा, सेमलका सुसला, मुलहठी, सुसली, केवाच, वेर, जायफल, खस, जावित्री, हाथीकन्द, त्रिकला, तगर, गिलोय, असगन्ध, बाराहीकन्द, चित्रक, कम्तूरी, इन प्रत्येकके यथासम्भवस्वरूप अथवा बाथोंसे ३-३ भावनाएँ देकर ६-६ रत्तीकी गोलीये बनाकर छायाशुष्ककर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु, घृत और शकरकेसाथ लेकर दूधपीनेसे बहुतसी स्त्रियोंके साथ रमणसरसकाहे इसकेसेवनसे अभि इतना प्रदीप्तहोताहै, कि कितनाही दुर्ज्वरदार्पण रायाहो मन जीर्ण होताताहै ॥ १२ ॥

## १३ पञ्चवाणो रसः ( पञ्चमः )

गन्धकाऽन्नकधचूर्णरत्नानां चतुष्टयम् ।

पूर्वोक्ततैलात्सम्पद्ये दोलायन्ते विपाचयेत् ॥ ५२ ॥

गुटिकां तिलजाते च तैले प्रस्यप्रमाणके ।

तैले निःशेषिते पक्त्वा वस्तगोपरवाजिनाम् ॥ ५३ ॥

मूषैश्च पूर्ववत्पक्त्वा मातुलुङ्गफले क्षिपेत् ।

तद्धारमन्धितं कृत्वा पुटयेत्स्वल्पमात्रकम् ॥ ५४ ॥

पञ्चादुद्धृत्य तद्रसम् सर्पपं धिनियोजयेत् ।

सर्पपद्मयमाग्रन्तु ग्रहलग्ने विलेपयेत् ॥ ५५ ॥

त्रिदोषजानि सर्वाणि सर्वसर्पविपाणि च ।

भूतप्रेतपिशाचादिग्रहण्यादिशिरोगदान् ॥ ५६ ॥

कर्णाक्षिरोगानन्यांश्च नाशयेत्क्षणमात्रतः ।

पादाङ्गुष्ठे च लेपेन सर्वशताग्निनाशयेत् ॥ ५७ ॥

सूक्ष्मसुतप्रमाणान्तु नागपहोदलान्वितम् ।

भेदयेन्मलजालानि गुल्मांश्च विविधानपि ॥ ५८ ॥

कुक्षिरोगानशोषांश्च नाशयेन्नाऽन्न संशयः ।

महिवीर्यसंयुक्तं पाण्डुजालं विनाशयेत् ॥ ५९ ॥

कदलीफलसयुक्तं भक्षयेत् पित्तेत्ययः ।

सर्वाङ्गं लेपयेद्गन्धैः कर्पूरिण च संयुतैः ॥ ६० ॥

मदनोद्रेकसयुक्तो महामत्तगजेन्द्रधत् ।

निरन्तरमहागाढरतिं पुर्वन्मदोदत्तः ॥ ६१ ॥

यामत्रयं भवेत्स्तम्भः स्त्रीषु बाजीव गच्छति ।

मुहुर्मुहुः पियेद्भयं शर्करासंयुतं पयः ॥ ६२ ॥

नारिकेलोदकश्चैव पियेच्छेयुतपारयान् ।

कर्पूरान्वितनाम्बूलं कृते सत्प्रयागरः ॥ ६३ ॥

वृद्धिश्च स्तम्भनश्च कुरुते च निरन्तरम् ।

जम्बीरफलबीजानां चूर्णमुष्णेन वारिणा ॥ ६४ ॥  
 पिवेत्तत्क्षणमात्रेण तदुद्रेकं विनाशयेत् ।  
 सर्वेषामपि रोगाणामनुपानविशेषतः ॥ ६५ ॥  
 तदौषधप्रयोगेऽस्मिन्प्रमत्तः प्रयोजयेत् ।  
 पञ्चवाणरसः ख्यातस्सर्वलोकोपकारकः ॥ ६६ ॥  
 र. कौ. (श्र) वाजीकरणे.

**भाषा**—शुद्धगन्धक, अश्रकमस्य, घट्टोके बीज और बज्जाग इनचारोंका बारीक चूर्ण कर सहिजन डंडापूहर करछ, आकवी जड़कीछाल, भुंडावला, बछनाग, लाल और सकेदपुष्पा इन सबके यथासम्मानबीज और जड़ अथवा जड़की छाल लेकर जबडुद्धर पातालयन्त्रसे तेल निकाल इसमें गोलीबन्धनेतक घोटकर गोलीबनाकर कपडेमें बांधकर इसी तेलमें दोलायन्त्रसे पकावे । स्वाक्षसीतलोनेपर सेरभर तिलके तेलमें यदातक पकावे कि समस्ततैल समाप्त होजाय फिर इसमेंसे निकालकर बकरा, गाय, गधा, घोड़ा, इनके सूरोंके तेलमें पकावे फिर इन प्रत्येकके मूत्रमें ४-४ पहर पकाकर स्वाक्षसीतल होनेपर निकालकर बिजोरेके फलमें रखकर उसीकी ढाटसे बन्दकर ३-४ कपडमिनी देकर मुखाकर इसनी आचदे कि बिजोरीनीचु जलजाय । स्वाक्षसीतलहोनेपर निकालकर रखजोडे । इसमें ने १ वर्षपरमरमात्रा तत्परोहद्रातुपानके साथ खिलाव और व्रज रन्ध्रपर पाण्डेकर २ सप्ताह के बराबर पिये तो त्रिदोषजरोग समस्तसर्वविध, भूत, प्रेत, पिशाचादि, ग्रहणी, शिरोरोग, कान और आलके रोगोंको यह क्षणमात्रमें दूरकरता है । पैरके अंगुष्ठपर पाण्डेकर मालिशकरने से समस्त वातविकारों को नष्ट करता है । सूदके अग्रभागजिनना पके पानमें खानेसे समस्त मल, नानातरहके छलम, और कुशिरोग नष्ट होवें । भैंसके बही केसाय पाण्डुरोग नष्ट होता है केलेके फलके साथ खाकर दूध पीनेसे और कपूर मिले हुए गन्धम अङ्गमें लेपकरनेसे महामत्तहापीकीतरह कामसे व्याकुलहोकर ३ पहर तक स्तम्भनहोकर जियोमें अश्वकीतरह रतिको करता है । इसमें शकरमिलाहुआ गायकादूध बारम्बार पीवे, अधिक दाह होने, पर नारियलका जल वगैरह शीतोपचार करे । कपूरयुक्त पान खावे । इसके सेवनसे बीर्यकीवृद्धि और अत्यन्तस्तम्भन होता है । जमीरीके बीजोंका चूर्ण गरमपानीसेलेनेसे तृष्ण धीर्यस्खलन होताहै । इसका यथार्थप्रयोगकरनेसे समस्तरोग नष्ट होते है । पर इसकाप्रयोग वैद्य सावधान होकर अपने समक्षमें करावे ॥ १३ ॥

### १४ पञ्चभद्रकम्

हेमाम्बुदायोऽध्वरसेन्द्रकाञ्चन  
 सम निवाते पुटितं लघीयसा ।  
 पुटेन भृङ्गद्वयवारिणाऽऽप्लुत  
 जयेद्विलीढं मधुना ससर्पिषा ॥ ६७ ॥  
 शुद्धामयं पाण्डुगद सकामलं

प्रमेहमर्शांसि च ह्याममाहतम् ।

गदं ग्रहण्याः प्रद्राऽऽप्लवित-

मुखानतीसारमतीव दुस्तम् ॥ ६८ ॥

लो प. ( त ), अर्शसि ।

**भाषा**—शुद्ध फणू के बीज, नागजोषा, लोह, अश्रक, पारा, गुग्गुलुमस्य ये सब समभाग लेकर दोनों भंगरों के रससे मर्दनकर गोलाबनाय शरावतमुद्रमें बन्दकर मुखाकर हनुपुटकी आच दे । स्वाक्षसीतलोनेपर निकालकर रखजोडे । इसमेंसे १-१ रत्ती मधु और धोकेसाय मिलाकर चटानेसे शुद्धरोग, पाण्डुरोग, कामला, प्रमेह, घवासीर, आमवात, ग्रहणी, प्रदर, रक्पित, अतिसार इन सबको यह नष्टकरताहै ॥ १४ ॥

### १५ पञ्चमूर्ति रसः

नेपालं मूपपापाणं द्वितुष्यं तालकं समम् ।

शुद्धकन्यारसे मर्यं द्वियामं च प्रप्लवतः ॥ ६९ ॥

दोलायन्त्रे पचेद्यामं तन्नीतवा मत्स्यपित्तके ।

भाषित क्षणमात्रञ्च देयं दुग्धाऽनुपानतः ॥ ७० ॥

व्यादिकाऽस्थिगत शीतं हन्ति सत्यं न संशयः ।

पञ्चमूर्तिरसो नाम प्राणिनां हितकारकः ॥ ७१ ॥

वै चि, वा, ज्वरे ।

**टि०**—बादले दुग्धानुपानत इत्यस्य स्थाने गुग्धाऽनुपानत इति पाठ, तत्र गुग्गुलुमस्येन तन्मूल पत्रमूलकरत्नी वा प्रहीतव्यौ ।

**भाषा**—ताम्रमस्य, शुद्धसोमल, तुष्यक और खर्पर, हरितालमस्य अथवा रसमाणिस्य ये सब समभाग लेकर धोङ्गवार के रसमें दोपहरतक मर्दनकर गोला बनाय चारतरह कपडे में बांधकर दोलायन्त्र बनाय धोङ्गवारकेरसमें एरूपहर स्वेदनकर निकालकर मुखाकर रोहमछलीके पित्तसे भावनादेकर ज्वारके बराबर गोखियें बनाकर रखजोडे । इसमेंसे १-१ गोली दूधकेसाय देनेसे न्याहिक और अस्थिगत शीतन्वर इनको यह नष्ट करता है ॥ १५ ॥

### १६ पञ्चलोहभूपतिरसः

पलं रसं गन्धकघासनाभौ

गुल्मञ्च तीक्ष्ण रवितारकञ्च ।

ताप्य ह्ययस्कान्तमुचागुपुषं

सर्वं विमर्च्य धृतराष्ट्रतोये ॥ ७२ ॥

तच्छोपयेदातपयार्जितञ्च

वटीकृतं काचघटे निदध्यात् ।

सृङ्गाण्डमध्ये सिकताऽऽख्ययन्त्रे

क्रमाऽग्निना पोडश याममेतत् ॥ ७३ ॥

गाढाऽग्निमुदीप्य यथाक्रमेण

तदौषधं बहिंसमानवर्णम् ।

सधर्पणाद्यत्र च रक्तेखा

पूर्वाधर्पणं दृढवत्सनामम् ।

पलं मरीचस्य सुमर्दितं तत्

ताम्रबलवल्लीदलकं समानम् ॥ ७४ ॥

गुञ्जमात्रां वर्तय कृत्वा सम्यक् छायासुशोषिताम् ।  
पिवेद्युक्ताऽनुपानेन विषमज्वरनाशनम् ॥ ७५ ॥  
सर्वाऽऽमयहरं सद्यः सदा विजयवर्धनम् ।  
चाताऽर्दितं चातमेहं श्वासकासादिरोगनुत् ॥ ७६ ॥  
क्षतक्षयं कफोत्थञ्च पाण्डुकामलशूलनुत् ।  
सन्निपातं निहन्त्याशु चाऽम्बुपित्तं नियच्छति ॥ ७७ ॥  
अजीर्णमामवातञ्च हर्शासि ग्रहणीगदम् ।  
अन्नद्वेषमुदाचर्तमाध्मानं सोमरोगकम् ।  
पञ्चलोहक्षितीशश्च विंशतिक्षयरोगनुत् ॥ ७८ ॥  
रसायन सं., सर्वाऽऽमये ।

भाषा—शुद्धपात, गन्धक, और बज्जनाग, ताम्र, लोह, माणिस्य, रजत, सोनामारी, कान्तलोह, शुद्ध कसीस ये सब समभाग लेकर हंसराज के रस से १-२ रोज़ छायामें मदनकर गोलियें बनाय छायाशुष्कर ४-५ कपडमिठी दीहुई आतली दीक्षीमें डालकर सुंद मन्दर मिठी की नादमें बालकायन्त्र बनाय १६ ग्रहकी क्रमादि देकर अतीरमें प्रकण्डाऽमिकरे । स्वातन्त्र्यशूल होनेपर धीरज से निकालकर देखे, इसका रंग मयूखी गदन के समान होगा और कसौटी बगैरूप परंपर करने से लालरेखा निकले तब समझना कि यह यथार्थ सिद्ध हुआ है । इसमें पहिले से आपे प्रमाणमें पका हुआ शुद्ध बज्जनाग और इससे दूनी मरिच तथा सक्की बराबर पके पान मिलाकर २-२ रोज़ घोटकर १-१ रत्ती की गोलियें बनाय छायामें सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचिन्तानु-पानकेछाय देनेसे विषमज्वर, वातरोग, वातमेह, श्वास, कास, क्षत, क्षय, कफरोग, पाण्डु, कामला, शूल, सन्निपात, अम्बुपित्त, अजीर्ण, आमवात, अर्श, ग्रहणी, अरुचि, उदावर्त, आध्मान, सोमरोग, इत्यादि समस्त रोगोंकी यह नष्टकरताहै ॥ १६ ॥

### १७ पञ्चलोहरसायनम्

मृताऽन्नं कान्तलोहञ्च नागचर्मां सुमारितौ ।  
यथोत्तरं भागवृद्ध्या सत्यमभ्ये विनिःक्षिपेत् ॥ ७९ ॥  
तलघोटिन धाराया शतावयं हिमाम्बुना ।  
भावनाऽप्र प्रकृत्या यामं यामं पृथक् पृथक् ॥ ८० ॥  
चणमात्रां वर्तय कृत्वा नवनीनेन सेधयेत् ।  
प्रातःपुण्याय विधिना सर्वमेहकुलान्तकम् ॥ ८१ ॥  
शाल्यधं सपटोलञ्च तन्दुलीयकवास्तुकम् ।  
मत्स्याक्षीं मुद्गपूषञ्च शपकं फट्ठीकलम् ॥ ८२ ॥  
अर्शासि ग्रहणीदोषमृच्छञ्चाऽस्मरं हरेत् ।  
कामलापाण्डुशोफांश्च श्वासमारक्षतक्षयात् ॥ ८३ ॥  
रक्तकासं विशेषेण पञ्चलोहरसायनम् ॥ ८३ ॥  
नि. र., वै. चि., व. रा., प्रमेह ।

भाषा—अन्न १ भा., कान्तलोह २ भा., नाग ३ भा., चर ४ भा., इनकी मध्ये लेकर तुरक की जड़, धाराही, घटावर इनके अक्षरत्ता से १-१ पहर घोटकर चने प्रमाण

गोलियें बनाय छायाशुष्कर रखलेवे । इनमें से १-१ गोली मन्खन के साथ सुबह में खानेसे समस्त प्रमेह, अर्श, ग्रहणी, मृन्मूत्र, अश्वमरी, कामला, पाण्डु, शोथ, अपस्मार, क्षत, क्षय, रक्तकास इनसबकी यह नष्टकरता है । इसमें सफेद चावल, परवल, चौलाई, ब्युना, मठेजी, मूंग, कच्चाकेला, इनका शाक पच्य है ॥ १७ ॥

### १८ पञ्चवक्त्रो रसः ( मृत्युञ्जयः ) १

शुद्धं सत्तं विषं गन्धं मरिचं टङ्कणं कणा ।  
मर्दयेद्भूतजद्रावैर्दिनमेकान्तु शोषयेत् ॥ ८४ ॥  
पञ्चवक्त्रो रसो नाम ह्रिगुञ्जः सन्निपातहा ।  
अर्कमूलकपायं तु सत्रूपमनुपायेत् ॥ ८५ ॥  
युक्तं दध्योदनं पय्यं जलयोगञ्च कारयेत् ।  
रसेनाऽनेन शाम्यन्ति सक्षौद्रेण कफादयः ॥ ८६ ॥  
मध्वाऽऽर्द्रकरसञ्चानु पियेदसि विद्युदये ।  
यथेष्टं घृतमांसाशी शक्तो भवति पायकः ॥ ८७ ॥  
र. सं., र. चि., र. चं., वृ. प्र., इ. यो. त., र. क. यो., भा. प्र., वै. र., टो., भै. र., र. र. त., यो. म., चि. र., र. र. दी., नि. र., र. सु., वै. चि., रसायन सं., भै. सा., र. प्र. सु., शा. सं., व. रा., र. सि., र. सु., र. क. ल., यो.-च., र. प्र., वा., चि. क., र. को., यो. र., र. का., र. त., ज्वरे । रसायनम्. पञ्चानन ।

टि०—र. सं. र, र. सु, र. च, यो र, व. रा., र. त, वृ प्रमेय मृत्युञ्जय रस इति नाम स्थापितम्, परमाधर्ममेतदनेन पट्य स्थानिमनयो केवलैः पुनः विरचोऽस्ति तन्नामार्थं मृत्युञ्जय पाठोऽ-ध्यादूतोऽस्ति यथा—

अन्यत् मिद्विद सुबो रंजम बौर्तिरंन ।  
यस प्रद शिव माक्षान्मृत्युवर्तन म्भन ॥  
विषसैरुक्त्या अगो मरिच विमलीयगा ।  
गन्धस्य तथा वागो भय स्वट्टकण्य न ॥  
मर्दय मममण स्वादिहृन्नु दिगगिरम् ।  
चूर्णयेत्तन्मये तु मुद्रमाना बदीयेत् ॥  
अन्वीर्य रसेनाऽप्र कर्षे शिखरोपानम् ।  
रसशेलमभय स्वादिहृन्नु मेभते तदा ॥  
गोमृच्छोऽपि पय्य विष मीरविशिष्टम् ।  
मृत्युञ्जय जर हनि मृत्युञ्जय रत ॥  
मृत्युदिभिन्ति कपाटेन मृत्युञ्जयो रम ।  
मपुना हेदन श्रोत मर्नन्तरिगुणये ॥  
दधुरकपुपनेन बान्तरिगुणये ॥  
आर्द्रवय रसे चर्न दध्यो मरिचिर्दि ॥  
अन्वीर्यवर्तन हर्षिभरतनाम ॥  
अन्वीर्यवर्तन विषममममम ॥  
मर्दयेत्तन्मये तु मुद्रमाना बदीयेत् ॥  
मृत्युञ्जय रसेनाऽप्र कर्षे शिखरोपानम् ।  
मृत्युदिभिन्ति कपाटेन मृत्युञ्जयो रम ।  
मपुना हेदन श्रोत मर्नन्तरिगुणये ॥  
दधुरकपुपनेन बान्तरिगुणये ॥  
आर्द्रवय रसे चर्न दध्यो मरिचिर्दि ॥  
अन्वीर्यवर्तन हर्षिभरतनाम ॥  
अन्वीर्यवर्तन विषममममम ॥  
मर्दयेत्तन्मये तु मुद्रमाना बदीयेत् ॥



मध्यन्तर तथा जीर्ण विरघाधायवेदवम् ।  
समाहासत्रिपातोत्थ ज्वरापीनरसन्त्यम् ॥ इति ॥

**भाषा—**शुद्ध पारा, बछनाग और गन्धक, मरिच, मुना-  
सुहागा, पीपल ये सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारे-  
गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर धतूरे के पत्तों के रससे एक  
रोज मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियों बनाकर रखोड़े । इनमें  
से १-१ गोली अदरकवैरह के रस के साथ देकर ऊपर से  
३ मासे आकरी जड़की छाल के काठमें ३ मासे त्रिकटु का  
चूर्ण मिलाकर पिलावे, ऊपर से दहीभात खानेको दे । अधिक  
दाह मालूम होनेपर मत्पेपर जलधाराका प्रयोग करे, तो इससे  
घोरसन्निपात नष्ट होता है । मधुके साथ देनेसे कफरोग निवृत्त  
होते हैं । मन्दाग्निमें मधु और अदरक के रसकेसाथ देनेसे  
अग्नि प्रबल होता है ॥ १८ ॥

### १९ पञ्चवक्त्रो रसः ( द्वितीयः )

सूतं गन्धं कर्पयुग्मप्रमाणं,  
तत्पादांशं कारयेद्दे शिलाख्याम्  
व्योषं ताप्यं पिप्पलीं तरसमानां,  
प्रत्येकं वै भेषजं चूर्णयेच्च ॥ ८८ ॥  
भाष्यं पित्तैर्मत्स्यमायूरकैर्धै,  
घर्मे कृत्वा सप्तवारं हि सम्यक् ।  
गुञ्जायुग्म भक्षित पञ्चवक्त्रो  
मूर्च्छां हन्यात्सन्निपातोद्भवां वै ॥ ८९ ॥

र. प्र शु, सन्निपाते ।

**भाषा—**शुद्ध पारा और गन्धक २-२ कर्प, शुद्धमैसिल,  
त्रिकटु, सोनामाखी और पीपल ये सब आधाआधा कर्प  
लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर  
मछली और मोरके पित्तोंसे धूम्र ७-७ भावनाएँ दकर २-२  
रत्तीकी गोलियाँ बनाकर सुखाकर रखोड़े । इनमेंसे सन्निपात  
हराशुपान के साथ १-१ गोली देनेसे यह सन्निपातजमूर्च्छाको  
दूरकरताहै ॥ १९ ॥

### २० पञ्चवक्त्रो रसः ( तृतीयः )

मृत्तं सूतं मृत्तं ताम्रं हिङ्गु पुष्करमूलकम् ।  
सैन्धवं गन्धकं तालं कटुकीं चूर्णयेत्समम् ॥ ९० ॥  
पुनर्नगदेवदाह्योर्निगुण्डीमेघनादयोः ।  
तिककोपातकीर्द्राधेदिनैक मर्दयेद्दृढम् ॥ ९१ ॥  
मापमात्रं लिहैल्लोद्रे पञ्चवक्त्रो रसः स्मृतः ।  
रक्तपित्तं निहन्त्याशु मात्सरस्तमिरं यथा ॥ ९२ ॥

रसायन स रक्तपित्ते ।

**भाषा—**पारा और ताम्रभस्म, मुनाहींग, पोहकर्मूल, संधा  
नमक, शुद्धान्धक, सप्ताणिष्य, कुटकी सब समभाग लेकर  
बारीक चूर्णकर पुनर्नगा, बदाल, निगुण्डी, कण्ट्याकी चोलाई,  
कडवीतरोड़े, इनके स्वरसोंसे १-१ रोज मर्दनकर १-१ मास  
की गोलियाँ बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुके

साथ देनेसे यह रक्तपित्तको इसतरह नष्ट करता है जैसे कि घूर्म  
अन्धकार को नष्ट करता है ॥ २० ॥

### २१ पञ्चवक्त्रो रसः ( चतुर्थः )

सूतगन्धाऽमृतं स्पर्णवीजं तुल्यं समाहरेत् ।  
ज्यूप्यं सर्वतुल्यं स्यान्मर्दयेद्विषसद्वयम् ॥ ९३ ॥  
पञ्चवक्त्रा भवेत्सूतो गुञ्जामात्रो ज्वरापहः ।  
सिताऽऽर्द्रकसेनैव मुक्तो मुद्गरसाशिनाम् ॥ ९४ ॥  
समाश्च विषमान्दन्ति निम्बुनीरसितायुतः ।  
अतिसारं महाघोरं रात्रिजागरणं परम् ॥ ९५ ॥  
र, अतिसारे ।

**भाषा—**शुद्ध पारा, गन्धक, बछनाग और धतूरे क बीज ये  
सब समभाग, त्रिकटु सब के बराबर लेकर बारीक चूर्णकर दो  
रोज सूखा अथवा पानीसे मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ  
बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शकर और अदरक के  
रसकेसाथ देनेसे यह ज्वरको दूरकरता है । इसमें पच्य मृग-  
का यूप लेवे । नींदके रस और शक्कर के साथ लेनेसे यह सम  
और विषमन्वर, घोरअतिसार और रात्रिजागरणसे होनेवाले  
दोषोंको दूर करता है ॥ २१ ॥

### २२ पञ्चवक्त्रो रसः ( पञ्चमः )

रसं गन्धकं तित्तिरीकं घराटं,  
विषं टङ्गुणं सर्वमेकत्र तुल्यम्  
ततस्त्रैफलश्रीपचूर्णेन युक्तः,  
सम मर्दयेद्दृढराजद्रवण ॥ ९६ ॥  
रसः पञ्चवक्त्राऽभिधानोऽयमेको-  
ज्येत्सन्निपातानशेषान् प्रयुक्तः ।  
ततो बहूमात्रं प्रयुज्जीत युक्त्या,  
ज्वरे वातिके श्लेष्मिके रक्तजे वा ॥ ९७ ॥

र श, सन्निपाते ।

**भाषा—**शुद्ध पारा, गन्धक और जमालगोदा, कौडीभस्म,  
शुद्धबछनाग, मुनासुहागा सब समभाग, इनसबकी बराबर त्रिकला  
और त्रिकटुका चूर्ण मिलाकर भगवैरके रससे १-२ रोज मर्दन  
कर ३-३ रत्तीकी गोलियाँ बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली  
उचितानुषानकेसाथ देनेसे समस्त सन्निपात, वातिक, श्लेष्मिक  
और रक्तविकारज्वर इनसबको यह नष्ट करता है ॥ २२ ॥

### २३ पञ्चवक्त्रो रसः ( षष्ठः )

शुद्धं सूतं समं गन्धं गन्धपादञ्च टङ्गुणम् ।  
ताम्रपात्रे क्षिपेत्पिष्टं जयन्त्या मर्दयेद्दृढवै ॥ ९८ ॥  
तिलपर्णी तथा जाती पिप्पलीमूलपत्रकम् ।  
द्रवैरपाञ्च सप्ताहं पेप्यं शोष्यं पुनः पुनः ॥ ९९ ॥  
ताम्रपात्रात्समुद्भूत्य कृत्वा गोलं विद्योपयेत् ।  
पञ्चवक्त्रो रसो नाम द्वियुजः सन्निपातजित् ॥ १०० ॥

अर्कमूलकपायश्च सज्यूपमनुपाययेत् ।

सक्षीरं दापयेत्पथ्यं जलयोगश्च कारयेत् ॥ १०१ ॥

र का , र को , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ तोला, धुनासुहागा ३ मासे लेकर नीलवर्ण कजलीकर तावेकी खरल अथवा कडाहीमें डालकर जैत, हुहुर, चमेली, पिपलामूल, पत्रज, इनप्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा क्रायोंसे सातरोज मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोटे । इनमें से १-१ गोली तत्त श्लेष्महपातुगानके साथ अथवा त्रिकटु मिलेहुए आककी जड़की-छालकेकठिकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै । इसकेदेनेसे अधिक दाह मालूम होनेपर सिरपर जलकी धारा देना ॥ २३ ॥

२४ पञ्चवक्त्रो रसः ( सप्तम )

सूतं गन्धं विषं तुल्यं नागं वज्रं द्वयं द्वयम् ।

पञ्चवक्त्ररसो नाम सन्निपातकुलान्तकः ॥ १०२ ॥

र क यो , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और यज्माग १-१ भाग, नाग और वज्रभस्म २-२ भाग लेकर सबको नीलवर्णकजलीकर अदरखवैरहके रससे १-२ रोज मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोटे । इनमें से १-१ गोली सन्निपातहृपातुगानके साथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै ॥ २४ ॥

२५ पञ्चशरो रसः

रसेन युक्तं शाल्मलिजेन सूतं

त्रिसप्तधाराणि बलिं विमर्ष्य ।

पृथक् तयोः कज्जलिकां विषम्यां

घृते रस पञ्चशरोऽयमुक्तः ॥ १०३ ॥

वह्नीऽहिवह्नीद्वलसम्प्रयुक्ती-

धीयातिवृद्धिं कुरतेऽस्य नूनम् ।

मांसाऽन्नमद्य गुरुपायसश्च

पयः पियेन्माहिपमत्र सिद्धम् ॥ १०४ ॥

रै र , र री , र रु , रसायन स , ली वि , यो म , र क

छ ( ना ) , रसायने वाजीकरणे च । रसायन स ( अनङ्गसुन्दरः )

भाषा—शुद्धपारे और गन्धकको अलग २ सेमलकेरन्दके रससे इकीस २१ दिन मर्दनकर मुलाकर दोनोकी कजली बनाकर कडाहीमें थोडासा घी डालकर कजलीको गलाकर परंपटी बनाले, फिर इस परंपटीको सेमलकेरससे २१ बार भावना देकर रख छोटे । इसमें ३-३ रत्ती पके पानके साथ देकर ऊपर अधोटा भेसका दूध पिनासे और माधयुक्त अन्न, मद्य, खीर वगैरह देनेम यह कामकी वृद्धिको करता है और आयुको बढाता है ॥ २५ ॥

२६ पञ्चसायकः

मृतं सूतं मृतं चाप्य सुशुद्धं दरदं तथा ।

अग्निशोषमहः फेनं जातीपत्री च तत्फलम् ॥ १०५ ॥

करहाटं तथा गोधा यानरी कौकिलालकः ।

पतानि समभागानि खल्ये चूर्णीकृतानि च ॥ १०६ ॥

विजयाशाल्मलीमूलैरसितस्वर्णबीजकैः ।

शताह्वापोस्तुमधुकनागवह्नीदलद्रवैः ॥ १०७ ॥

भागार्शकपूरयुतो रसोऽय पञ्चसायकः ।

मात्रा बलद्वयी चाऽस्य मधुना विफलायुता ॥ १०८ ॥

पथ्यं क्षीरं यथासात्म्यं गन्धैश्च प्रमदाशतम् ।

निशामुखे रसो ब्राह्मो ह्यम्बलवर्गश्च धर्जयेत् ॥ १०९ ॥

रसायन स , वृ यो त , रसायने वाजीकरणे च ।

हिं—गोधास्ववनस्नेहप्रसिद्धत्वात्प्रकर्णोपितीमनुसृत्य यथाव्यधि तिवलपत्रेषु गोधापदसादृश्यात्तन्मूलमत्र नियोनयत्नतोक्तमिति सुधीभिर्विभावनीयम् ।

भाषा—पारद और अभ्रककी भस्म, शुद्धशिगरिक, समुद्र शोष, शुद्धअफीम, जावित्री, जायफल, अकलररा, अतिबला, (शुलसिकरीहि) केवाच के बीज, तालमराना, ये सन समभाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर माग, सेमर, कालेघट्टरे के बीज, सोंफ, पोस्तकेडोडे, मुलहठी, पान इनके रसोंसे १-१ भावना देकर मुलाकर सोलहवा हिस्सा शुद्धकर मिलाकर रखछोटे । इसमेंसे ६-६ रत्तीकी मात्रा मधु और त्रिकलाके साथ देकर ऊपरसे दूध पिनासे सेइको खियाँके साथ रमण कर सकाहै । इसका सेवन सन्ध्याकेसमय करना उचित है । इसमें अम्बलवर्ग का सेवन निषिद्ध है ॥ २६ ॥

२७ पञ्चसारो रसः ( पञ्चानन ) १

शुद्ध सूतं समं गन्धं धात्रीपत्रद्रवैर्दिनम् ।

यष्टिखजूट्पाक्षाणां फवायेन मर्दयेद्दिनम् ॥ ११० ॥

पञ्चसाररसो नाम भक्षयेन्मापमानकम् ।

धात्रीचूर्णं सितां चातु पियेद्भृगुगजिन्द्रवेत् ॥ १११ ॥

र र , व रा , र का , र च , वि क , र सि , र स , र कौ , ध , र रु , रसायन स , र बि , र क , यो म , ह्रोगे । र स इत्यादिषु पञ्चाननेति नाम । र का , पञ्चाऽमृतेति नाम ।

भाषा—शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्ण कजलीकर तावे आवलेके पत्तोका रस, मुलहठी, खजूर और द्राक्षके क्रायोंसे १-१ रोज मर्दनकर १-१ मासेकी गोलियें बनाकर रखछोटे । इनमेंसे १-१ गोली खाकर ऊपरसे आवलेका चूर्ण और शरर खाकर दूध पीनेसे यह हृदयके रोगोंको दूरकरताहै ॥ २७ ॥

२८ पञ्चसारो रसः ( द्वितीयः )

रसेन्द्रेमाऽनललोहगन्धकं

समसमं भृङ्गरसेन मूर्च्छितम्

लघौ पुटे सिद्धिमुपैत्ययाऽऽज्यव-

ग्मधुप्लुत पथ्यभुजा निपेयितम् ॥ ११२ ॥

जयेज्ज्वरं पाण्डुगदमहो-

नघोदराशोप्रहृणीयिकाराम् ।

यहमाणमुग्र परिणामशाल

हृद्रोगमाग्मानमुरःशतञ्च ॥ ११३ ॥

लो प ( स ) , प्रमेहे ।

भापा—शुद्धपारा, सुवर्णभस्म, चित्रक, लोहभस्म, शुद्ध-  
गन्धक ये सब समभाग लेकर पारेगन्धकी नीलवर्णकजलीमें  
मिलाकर भंगरेके रससे २-३ रोज् मर्दनकर गोला बनाय  
सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर कपड़मिठीकर एकवालिस्तभरके  
खड़ेमें आचदेवे । स्वाश्रयशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े ।  
इसमेंसे ३-३ रत्ती मधु और धीके साथ खिलानेसे ज्वर,  
पाण्डु, प्रमेह, आठ प्रकार के उदर, बवासीर, सङ्गहणी, राजयक्ष्मा  
रिणामशूल इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २८ ॥

### २९ पञ्चाङ्गलोहम्

अथ जलप्लुतमद्रिजमायसे  
विनिहितं मृदितं धृतमात्मये ।  
तदनु भातुमधूलविशोपणाद्  
वृधिसरामभुपस्थितमूर्द्धतः ॥ ११४ ॥  
तदभिगृह्य खरांशुखरानना-  
वनु विशोष्य विशोष्य मुहुर्मुहुः ।  
दलितकज्जलक्रोड्यथलमादरा-  
धपलधीर्धिवधीत घनं रजः ॥ ११५ ॥  
तदपरं पुनरन्यजलप्लुतं  
तपनतापवशाद्धनताङ्गतम् ।  
तदभिगृह्य च पूर्ववदव्यम-  
स्थिपि विशोष्य तदप्यथ चूर्णयेत् ॥ ११६ ॥  
इति पुन पुनरत्र शिलोद्भवे  
विधिमुदारमतिविधीतं च ।  
भयति यावदिदं जलसङ्गमा-  
द्विगतारोगपरिग्रहविग्रहम् ॥ ११७ ॥  
सुतमिदं यदि वा सलिलप्लुतं  
घनपटे परिपूतमनेकधा ।  
पुनरिदं मृदुपाकदशायशा-  
त्कठिनतां गतमेव विचूर्णयेत् ॥ ११८ ॥  
अथ तदर्कसुवर्णघनायसां  
सममिदं ननु चूर्णमनेकधा ।  
कथितवीरतरादियरीयरा-  
जलपरिप्लुतमातपशोपितम् ॥ ११९ ॥  
पुनरिदं परिचूर्णितमादरान्न-  
मधुघृतान्वितमेव निषेवितम् ।  
जयति शूलमथाऽनलमार्दवं  
क्षयमुराक्षतपाण्डुगुदाऽङ्गुरान् ॥ १२० ॥

लो.प (घ.), उर हते ।

भापा—शिलाजतुरो लोहेकी कड़ाहीमें उबलते हुए पानीमें  
बालकर भीमपुंती धूपमें छत करीब पर रख दे जहां कि सूर्यो-  
दयसे सूर्यास्त तक कड़ी धूप लगे । एक दो दिन बाद इसको खूब  
मसलछाले जिसमें कि कोई ककड़ी बाकी न रह जाय, हाथोंको

गरम पानीसे उसीमें धो डाले, उस पानीपर मलाई के सरस तह  
जमजायगी उसको धीरेसे निकालकर दूसरे लोहेके पात्रमें रखले  
और उस पानीको फिरसे खूब चलादे । दो चार दिन बाद फिर  
आईहुई पपड़ीको निकालकर चलादे, जब देखे कि पानी गाढ़ा-  
होगया तो फिर उसमें वही उबलता हुआ पानी ढाल दे । ऐसे  
व्यापार २ महीने तक करनेसे शिलाजतुका तमामहिस्सा पपड़ी  
होकर निकल आवेगा । उस पानीके नीचे नि सार धूल रह  
जायगी उसको फेंक देना और निकाळी हुई पपड़ियोंको धूपमें  
सुखालेना । बदायित अधिक पानी रहगयाहो तो बहुतमन्त्र  
आचसे गाढ़ा कर लेना यह शुद्ध शिलाजतु तैयार हुआ । इस  
विधिके करनेमें असमर्थ हो तो गरमपानीमें उबालकर गांठेबज  
अथवा फिल्टरिंगपेपर (Filtering paper) में कईबार  
छानकर अभिपर पकाकर कठिन कर लेना । फिर शुद्धशिलाजतु,  
ताम्र, सुवर्ण, अभ्रक और लोहभस्म सब समभाग लेकर बीरत-  
वर्दिगण, शतावर, त्रिफला इनके काथोंसे १-१ रोज् मर्दनकर  
धूपमें सुखाकर रखछोड़े । इसमें से ४-४ रत्तीकी मात्रा मधु  
और धीके साथ मिलाकर खानेसे शूल, मन्वाभि, क्षय, उर क्षत,  
पाण्डु, बवासीर, खास, कास और प्रमेह इनसबको यह नष्ट  
करता है । बाजीकर और रसायन है ॥ २९ ॥

### ३० पञ्चात्मको रसः (सुताभ्रयोगः)

मृतसूतारऽन्नकं ताम्रं गन्धकञ्चाऽम्लवेतसम् ।  
विपं फलत्रयं तुल्यं चूर्णयित्वा विभाजयेत् ॥ १२१ ॥  
विपमुष्टिजयावास्ताविजयारकशालिनी-  
पूहतीर्जमहारोषीधसूरपद्मपत्रैः ॥ १२२ ॥  
नन्धावर्ताऽमृताजम्बूकपाथैर्नीलोत्पलप्रैः ।  
समांशं पञ्चलवणं दत्त्वाऽऽर्द्रकरसेन च ॥ १२३ ॥  
करत्रेन्द्रयवास्तुल्यं पाययेदुष्णवारिणा ।  
कर्पेकमनुपानं स्याद्वातशूलहरं परम् ॥ १२४ ॥

यो. म. र. सं. र. हु. घ., शूले ।

टि०—अत्र 'यस्य' एक. 'अम्लवेतस' विद्वितीय । विपमुष्टिजयिर्नी-  
बनालकस्तुतीय । समारोषयवस्तुल्यमिष्यगलपक्षधुंय । सर्वस्याऽऽर्द्रकरसेन  
भावनाऽऽन्नकं पन्थम् । इत्येतेन केन प्रकारेण पञ्चात्मकस्य निर्वाह  
व्यय । रसेन्द्रयवास्तुल्यं अर्द्धांशं पञ्चलवणमिति पाठो दृश्यते । पर  
शूले समाश्लेषणमागरेव व्यापस्तवम् ।

भापा—पारद, अभ्रक, ताम्र इनकी भस्में, शुद्धगन्धक,  
अम्लवेत, शुद्धबलनाग, त्रिफला ये सब समभाग लेकर कपडछान  
चूर्णकर कुचिला, जैत, अहसा, भाग, गोरलमुण्डी, भटकटैया,  
महारोषी (मारो), धत्रा, पद्मन, पीपल, सुइची, जामुन,  
नीलोफर, इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वर अथवा काथोंसे १-१  
मायना देकर सुखाकर सबकी बराबर पाचोनयक मिलाकर अद-  
रसके रसकी २-३ भायनाएँ देकर ३-३ रत्तीकी मोलियें  
बनाकर सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली लेकर कज  
और इन्द्रयवका समभाग चूर्ण १ तोला गरम पानीके साथ  
पिलानेस यह वातशूलको दूरकरताहै ॥ ३० ॥

## ३१ पञ्चाननकल्पः

मृतं सूतं तथा गन्धं कान्तं चाऽम्रकमेव च ।  
ताम्रमस्य मृतं कर्पं निष्कार्थं शिषितुत्यक्तम् ॥ १२५ ॥  
सिन्दुवारस्य भृङ्गस्य पञ्चनृणं पलत्रयम् ।  
खादिरं द्विपलञ्च सर्वं सञ्चूर्ण्य यत्नतः ॥ १२६ ॥  
क्षिण्णमाण्डे विनिक्षिप्य द्विकाल भक्षयेत्सुधोः ।  
निष्कार्थमात्रं सेवेत पथ्य तत्कोदन्तं हितम् ॥ १२७ ॥  
लवणक्षारकाऽम्लानि चर्जयेत्स्यान्निषेचयेत् ॥  
चिरकालसमुद्भूतं हन्ति आयुक्तसन्निभम् ॥ १२८ ॥  
व रा, वै वि, स्नायुवाते ।

भाषा—पारदमस्य, शुद्धगन्धक, कान्तलोह, अम्रक और ताम्रमस्य ये प्रत्येक १ कर्प, शुद्धतुल्य २ मासो, समाल और भारकैपत्तोंका चूर्ण ३-३ पल, खैरसार २ पल, इन सबका बारीक चूर्णकर चिकने बर्तनमें रखजोड़े । इसमेंसे २-२ मासो दोनों वक पानीबगैरहके साथ खानेसे और छाछभात पथ्यसेवनकर-नेसे बहुतदिनका भयाहुआ स्नायुक्तात नष्टहोताहै । इसमें लवण, क्षार और अम्लदार्थका परित्याग करदना चाहिये ॥ ३१ ॥

## ३२ पञ्चाननज्वराह्नुशो रसः

शम्भोः कण्ठविभूषणं समरिच दैत्येन्द्रकं रविः,  
पक्षौ सागरलोचनं शशियुतं भामाऽर्कसंस्थाप्यतम् ।  
खल्वे तत्क्रिल मर्दितं रविजलैर्गुञ्जीरमान भजेत्,  
सिद्धोऽयं उग्रदन्तिर्दुर्धवलन पञ्चाननाऽऽरुहो रसः ॥

पथ्यञ्च देय दधितकमक,

सिन्धूत्यमोहं सितया समेतम् ।

गन्धाऽनुलेपो हिमतोयपान,

दुग्धञ्च देयं रज्य दाडिमाम्भः ॥ १३० ॥

र. मं, रससारसद्गुह, रसायन, र का, यो वि, र सु, र को, र स, यो म, भै र, यो स, र र्द, र, र क ल, र. क, ज्वरे ।

भाषा—शुद्धजनाग २ भा०, मरिच ४ भा०, शुद्ध गन्धक २ भा०, शिगरिफ १ भा०, ताम्रमस्य १२ आंग, लेकर बारीक चूर्णकर आकके अक्षरवत्संगे एरीष मर्दनकर १-१ रसीकी गोलियें बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली घमघोषिताऽनुपानके साथदर दही, छाछ, भात, सेपानमक, गुण, गुडर, दाका भोजन करानेमें यह समस्तज्वरोंको नष्ट करता है । इसक देनेके बाद अधिकदाह मालूमहोतो कन्दनबगैरहफलेय, छा पानी, दूध, अनार, ये देने चाहियें ॥ ३२ ॥

## ३३ पञ्चाननो रसः ( प्रथमः )

सुत गन्धश्चित्रवं चिकटुक मुस्ता विप जैफल्,  
सैतेभ्यो त्रिगुणेर्गुणैश्च मुष्टिका वृद्धप्रमाणा हरत् ।  
कुष्ठाऽऽदादायु मशालमुदर दाणप्रमेहादिक,  
रोगानीकरीन्द्रपट्टजने रुधातो हि पञ्चाननः ॥ ३३ ॥

वै र, र म, वि र, र को, यो वि, र क ल, र. ( मा ), र स, र सु, यो म, र का, र क यो, रसायनस, ना वि, उष्ट्रे ।

टि०—कुत्रचिन्मुस्ताविपचित्रकाणि नैव दृश्यन्ते, चित्रकान्धेन यत्र कुत्रचित् शुद्धची प्रक्षिप्ता यथा निविनाकमन्तवद्दया, तत्र नाम च गजचर्मपञ्चानन इति स्थापित, तत्र रसकामेधनाय स्थितम् । चिकि त्तामार, रसायनम्, र सु, एषु वातगजसिन्धु इति नाम, तत्र गुडस्वाने दिगुणमर्ककरनेन भावना प्रदत्ता । रसकामेधनी विपाऽमाव, शुद्धाया सर्वलुप्यमा, गुडस्य दिगुणभाव इति विरोधो दृश्यते । तथापि तत्र न रसान्तरता, तत्र पाठञ्जनादि सर्वं निष्पन्नमिति प्रतिभाति, कुष्ठे विपन द्रावस्याऽऽरवयाचार, किञ्च विपरिनिश्चयोऽस्मात् स्यात्तर्हि दिगुन्मयी भावना स्थापिति गृह रहस्यम् । र वि, र ल, र सु, रसायनम्, र क, र सि, एषेय रुचाहल्य इति नाम । र कौ, र ब ल, र को, एषेय मेहरदन्तवटीति नाम । र सि, रान्मन्वीवटीति नाम, यद्यो कीदृशार्थं योक्तुमिच्छेत् पुनरेक एकत्वेन येषाम विविधनामानि स्थापि तानि, समवेतद्वयान्वितस्तिमलति इति दि ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, चित्रकमूल, निकडु, नागर जोया, शुद्धजनाग, त्रिकला, ये सब समभाग लेकर सप्ते हुना गुड मिलाकर ३-३ रसीकी गोलियें बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सप्तत्रैगुहानुपानके साथ देनेसे १८ प्रकार के बुड, गुल्म, शूल, उदरोप, क्षोप और प्रमेहादिक रोगसमु दाय इन सबको यह नष्ट करता है ॥ ३३ ॥

## ३४ पञ्चाननो रसः ( द्वितीयः )

मृतं कान्तं सुघणञ्च शुल्बतापाऽम्रमस्यकम् ।  
पृथगक्षमितं सर्वं पटचूर्णं हत मृदु ॥ १३२ ॥  
रसगन्धककज्जल्या तुल्यया सह मर्दितम् ।  
सार्धद्विपलमानेन ताप्यचूर्णेन मर्दयेत् ॥ १३३ ॥  
द्विपल भूपिकामध्ये विनिक्षिप्याऽऽलचूर्णकम् ।  
ततस्तु कज्जलीं क्षिप्वा मनोह्रां तावतीं शिषेत् ॥ १३४ ॥  
ततो निरुद्धय यत्नेन परिशोष्य पुटेभिरिदि ।  
पुटेन गजसन्धेन द्रव्यशीतं विचूर्णयेत् ॥ १३५ ॥  
चतुर्गुणेन गन्धेन निर्मितां रसकज्जलीम् ।  
क्षिप्वा पूर्वसे लुङ्गवारिणा परिमर्दयेत् ॥ १३६ ॥  
पक्वेत्कोटपुटेनैव दशवारमतः परम् ।  
एवं तालककज्जल्या दशवारं पुनः पुनः ॥ १३७ ॥  
ततश्च मृतयैकान्तमस्मना च कण्ठादात ।  
ततो निचूर्ण्य यत्नेन करण्डान्तर्विनिक्षिपेत् ॥ १३८ ॥  
इमं पञ्चाननसाम गुञ्जामात्र प्रयोजयेत् ।  
श्रेष्ठः सर्वरमेन्द्रेषु महारससमो गुणैः ॥ १३९ ॥  
पथ्यासूत्रगुण्टीभिः सघृतामिनिषेचित ।  
सर्वाय पाण्डुगदान्दग्नि घृतज्ज इव सरटतिम् ॥ १४० ॥

यद्यप्यज्जर हृदयमकटज यातातिविह्वल्यन,  
कुष्ठश्च प्रहर्षां ज्वरातिसरण भ्यासश्च कामाऽरुचि ।  
श्लेष्मभ्याधिमशेषतो गल्गदन् दुर्नाम मन्दाऽऽमितां,  
मेहगुन्मदज च किं बहुगिरा हन्याद्गदान्दुस्नरा ॥ १४१ ॥

सेव्यमाने रसे चाऽस्मिन् विलम्बमेकञ्च वर्जयेत् ।  
स्वस्थः सर्वं समञ्जीयाद्द्वी पथ्यं गदापहम् ॥१४२॥  
र. र. स., र को, उदराधिकारे ।

भाषा—कान्तलोह, सुवर्ण, ताम्र, रजत और अभ्रक इन सबकी भस्में १-१ कर्प, इन सबकी बनाव शुद्धपारे और गन्धकी नीलवर्णकजली मिलाकर अच्छी तरह मर्दनकर २॥ पल शुद्ध सोनामाखी मिलाकर सबकी कजली बनावे, फिर वज्रमूपामें २ पल हरितालका चूर्ण बिछाकर इस कजलीको ऊपर बिछादे । इसपर १ पल शुद्ध मैतसिलका बारीकचूर्ण बिछाकर कपडमिठी कर अच्छी तरह सुखाकर रात्रिमें गजपुटकी आबदे । स्वाह्नीत होनेपर १ कर्प शुद्धपारेमें ४ कर्प शुद्धगन्धक मिलाकर नीलवर्णकजलीकर पूर्वसमं मिलाकर विजोरेके रसे एकरोज मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर अच्छी तरह कपडमिठी देकर सुखाकर बराहपुटकी आबदे । स्वाह्नीत होनेपर निवालकर पूर्ववत् कजली मिलाकर मर्दनकर बराहपुटमें आबदे । ऐसे दस-बार आबदेकर १ कर्प पारे और ४ कर्प हरितालकी कजली बनाव पूर्वकी तरह १० आबे दे । स्वाह्नीत होनेपर इसमें सोलहवां हिस्सा वैकान्तभस्म मिलाकर शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्तीकीमात्रा हरे, सुरण और सौंठ इनके ३ भाग्ये चूर्ण और धीके साथ अथवा तप्तद्रोहराजुपानके साथ मिला कर देनेसे समस्त पाण्डुरोग, यक्ष्मा, उदररोग, हलीमक, वात रोग, बिडबिन्ध, कुष्ठ, प्रहृणी, ज्वर, अतिसार, श्वास, काश, अरुचि, श्लेष्मरोग, गलरोग, बवासीर, मन्दाग्नि, प्रमेह, गुल्म इत्यादि समस्त रोगोंको यह इस तरह नष्ट करता है जैसे कृतप्रभा-वनी हृत्तोषकाको नष्ट करता है । इसके सेवनमें केवल बेल नहीं खाना । विशेषकर वर्तमान रोगोंको दूर करनेवाली चीजों का सेवन करना चाहिये ॥ ३४ ॥

### ३५ पञ्चाननो रसः ( तृतीयः )

लोहाऽम्रगन्धाऽदणपारदानां  
समं रजो धर्तुलपणिकायाः ।  
द्रवेष सितं लघुना पुटेन  
प्रसाधितं क्षौद्रघृताऽवगाढम् ॥ १४३ ॥  
निपेधितं तद्धिघ्निना नराणां  
निहन्ति पाण्डुरत्योयमेहान् ।  
हलीमकं कामलिकाऽतिसार-  
मर्शांसि कुष्ठानि च वह्निमान्द्यम् ॥ १४४ ॥  
लो. प ( स ) पाण्डुरोगे ।

भाषा—लोह और अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक, शिंगरिफ और पारद ये सब समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर धर्तुल पणिका ( इसका पता ब्राह्मीके आकारका गोल छतरी जैसा होता है और पीला फूल आता है प्रायः जलके किनारे रहती है पत्तिका रंग पीला रहता है दूरसे देखनेसे ग्रीष्मऋतु की ब्राह्मीका सन्देह होता है पर यह स्वतन्त्रजीव है ब्राह्मीका पत्ता

कटाहुआ रहता है इसका समग्र गोल और अक्षत रहता है, ब्राह्मीकी लता चल्ती है इसके पत्ते खड़े रहते हैं लता नहीं होती ) के रसे मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आच देकर स्वाह्नीत होनेपर निवालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकी मात्रा धी और मधुके साथ मिलाकर खानेमें पाण्डु, उदर, शोथ, प्रमेह, हलीमक, कामला, अतिसार, बवासीर, कुष्ठ और मन्दाग्नि ये सब नष्ट होते हैं ॥ ३५ ॥

### ३६ पञ्चाननो रसः ( चतुर्थः )

गौरं म्लेच्छं रसं गन्धं गोलाञ्च सुपवीरसैः ।  
मर्दनं त्रिदिनं कार्यं शुल्यपत्रेषु लेपयेत् ॥ १४५ ॥  
घालुकाऽऽख्ये पचेद्यन्त्रे सम्यग्यामचतुष्टयम् ।  
स्वाह्नीतं समुत्तार्य सतात्रं परिमर्दयेत् ॥ १४६ ॥  
गुग्गाद्वयमितः सूतः ससितो विषमज्जरम् ।  
शीतोष्णपूर्व सहसा जयेत्पञ्चाननो रसः ॥ १४७ ॥  
पेकाहिकं द्र्याहिकञ्च तथा त्रिविद्यसज्जरम् ।  
चातुर्थिकं महाघोरं दुग्धमकाशिनां हुतम् ॥ १४८ ॥  
र, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध सोमल, शिंगरिफ, पारा, गन्धक और मैत सिल सूत समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर जगलीकरेलेके रसे ३ रोज मर्दनकर सब बनाव शुद्ध ताबेके कण्टारयेधी पत्रोंपर लेपकर सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर घालुकायन्त्रमें रख ४ पहरकी तीक्ष्ण अग्नि देकर स्वाह्नीत होनेपर निवालकर ताबेसहित मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्तीकी मात्रा शक्करके साथ देनेसे विषमज्जर, शीत और उष्णपूर्वज्जर, एकाहिक, द्र्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक इन सबको यह दूर करता है । पथ्य दूध और भातदे ॥ ३६ ॥

### ३७ पञ्चाननो रसः ( पञ्चमः )

प्रत्येकं पिबुरीशगन्धतपनाऽप्यष्टद्वयं सैन्धवं,  
तुल्यं तीक्ष्णहलाहलायथ पले चैश्वानरश्रेष्ठयो ।  
शुद्धो गुग्गुलुर्जलिर्घृतयुजामेपां द्विमापा वटी,  
सा श्रेष्ठा कथिताऽऽमचातपचनाऽऽतङ्केमपञ्चाननम् ।  
रसायनस्य, आमवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, लोहभस्म, सुनागुहगा, सैन्धव, शुद्धकुश, पोलादभस्म, सर्पविष अथवा शुद्धवखाना ये सब १-१ कर्प, चित्र और त्रिफला १-१ पल लेकर बारीकचूर्ण कर पारेगन्धकी नीलवर्णकजलीमें मिलावे, फिर १६ तोले गुग्गुलुको थोड़ासा धी देकर कूटे, जब इसका द्रव हो जाय तब पूर्वोक्तचूर्ण थोड़ा थोड़ा डालकर कूटे, अब सबकीजें मिलजाय तब २-२ मासकी गोखिमें बनाव रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली तप्तद्रोहराजुपानके साथ देनेसे यह आमवात और वातव्याधियोंको नष्ट करता है ॥ ३७ ॥

## ३८ पञ्चाननो रसः ( पष्ठः )

सूतं गन्धं मृतं लोहं मृतमग्नं समांशिकम् ।  
सर्वेषां द्विगुणं चङ्गं मधुना मर्दयेद्दिनम् ॥ १५० ॥  
भक्षयेत्प्रातस्तथाय शीततायं पिबेदनु ।  
प्रमेहांविशतिं हन्ति मृधाघातांस्तथाऽऽमरीम् ॥  
मूत्ररुच्छं हरेदुग्रमयं पञ्चाननो रसः ॥ १५१ ॥  
शे. र., प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, लोह और अन्नकसम सब समभागलेखर पारेगन्धककी नीलवर्णञ्जलीमें मिलाकर सबसे दूनी वक्रमसम कालकर एकरोज मधुमें मर्दनकर १-३ रतीकी गोलिये बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली प्रातःकालमें ठंडे पानीके साथ देनेसे २० प्रकारके प्रमेह, मृदापात, अमरी, मूत्ररुच्छ इनसमस्तो यह नष्टकरताहै ॥ ३८ ॥

## ३९ पञ्चाननो रसः ( सप्तमः )

रौप्यलौहवियद्वज्राऽऽकृत्तकं समभागिकम् ।  
घरीविदारीमुशलीद्रावैः पञ्चाननो भवेत् ॥ १५२ ॥  
सर्वरोगविनिर्णाशी रामाऽऽह्वानतत्परः ।  
प्रमदाशतमभ्येति जटादोषविश्रितः ॥ १५३ ॥  
रसावतार ( मा० ), वाजीकरणे ।

भाषा—रजत, लोह, अन्नक, हीरा इनसमस्तोमल्ले और अन्नकरा समभागलेखर क्षताकर, विदारी और मुशली इनके स्वरसोंसे कमसेकम २१ रोज मर्दनकर आधी आधी रतीकी गोलिये बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानगौरहमें खानेसे समस्तरोग और बलीपलितसे दूरकर सिकड़ो क्षियोंके साथ सम्मोगरनेकी शक्तिको देताहै ॥ ३९ ॥

## ४० पञ्चाननवटी ( प्रथमा )

स्वर्णताराऽर्ककान्तश्च तीक्ष्णचूर्णं समंसमम् ।  
द्वन्द्वमेलापलितायां मूपायां चाऽन्धितं धमेत् ॥ १५४ ॥  
तरुणोदं चूर्णितं कृत्वा चाऽभिविकं तु पूर्ववत् ।  
समुले जारयेत्सूते यावत्पञ्चगुणं क्रमात् ॥ १५५ ॥  
दिव्योपघट्टयेत्स्तु मर्दयेद्वियसत्रयम् ।  
अग्न्यमूपागतं धमात् जायते गुष्टिका शुभा ॥ १५६ ॥  
नाम्ना पञ्चानना धार्या वक्ष्ये संवत्सराधधि ।  
यलीपलितनिर्मुक्तो दीर्घमायुरवाप्नुयात् ॥ १५७ ॥  
हस्तिकर्ण्याः समूलायाभूणं मध्याह्नसंयुतम् ।  
स्निग्धमाण्डे तु तदुक्ता धार्यगर्भा निवेशयेत् ॥  
त्रिसप्ताहात्समुत्पल्य पलेकं भक्षयेदनु ॥ १५८ ॥

र. गं., स्नायने ।

भाषा—गुग्गु, रजत, ताम्र, कान्तलोह, पोलाद, इन सबका यारीक चूर्ण समभाग लेखर नागवज्रलिपामां बन्दकर ४ पहर धनन बरातने यह गोठ तैयार होगा, फिर इसे दिव्योपघट्टिक पन्थाप अथवा स्वादमाने ७-८ दिनकर मर्दनकर

शुभ्रित पारदमें कमसे पञ्चगुण जारणकर पारदको दिव्योपघट्टिकोंके द्रावमें ३ दिन मर्दनकर स्वामीष्ट आकारकी गोली बनाय अन्धमूपामें घननकरनेसे यह गोली तैयार होगी । इसको एम्सालमर रोजाना २-४ घटे मुँहमें रखकर हस्तिकर्णपलाशके पञ्चाङ्गिका चूर्णकर श्ममें मधु और घृत बन्दाङ्गमाफिक डालकर घृतके भाण्डमें बन्दकर घान्यराशिम २१ रोजतन रखकर गोली रखनेसे बाद १-१ पल भक्षण करनेसे बलीपलितने निर्मुक्त होकर दीर्घजीवी होता है ॥ ४० ॥

## ४१ पञ्चाननवटी ( द्वितीया )

शुद्धं सूतं पलार्धञ्च तरुणं शुद्धगन्धकम् ।  
तयोः समं ताम्रपत्रं लिप्त्वा मूपांतरे क्षिपेत् ॥ १५९ ॥  
आच्छाद्य पञ्चलवणैर्लिप्त्वा गजपुटे पचेत् ।  
सिद्धं ताम्रं समादाय पलमेकं विमर्दयेत् ॥ १६० ॥  
पारदस्य पलार्धैव गन्धकस्य पलन्तथा ।  
पुटदग्धस्य लोहस्य गगनस्य पलंपलम् ॥ १६१ ॥  
यमानी शतपुष्पा च त्रिकटु त्रिकलाऽपि च ।  
त्रिवृता चघिका दन्ती शिपरी जीरकद्वयम् ॥ १६२ ॥  
एतेषां पलिकैर्भागेर्यष्टकर्णकमानकम् ।  
ग्रन्थिकं चित्रकञ्चैव कुलिशानां पलार्धकम् ॥ १६३ ॥  
आर्द्रकसरसैः पिष्ट्वा गुष्टिकां मापकोन्मिताम् ।  
पञ्चाननवटी ख्याता सर्वरोगविनाशिनी ॥ १६४ ॥  
अम्लपित्तमहाव्याधिनाशिनी च रसायनी ।  
महाऽग्निकारिका क्षेपा परिणामव्यथापहा ॥ १६५ ॥  
शोथपाण्डुमयाऽनाहप्लीहगुल्मोदरापहा ।  
शुक्रवृष्पाऽश्रुपानानि पयोमांसरसा हिताः ॥ १६६ ॥  
शे. र, र. र., अम्लपिने ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक आधा आधापल लेकर विजोरे वीरहेके रमने मर्दनकर एकपल शुद्धतावेके पत्रोपर लेपकर मुसकर क्षातसमुद्रमें लवणके बीचमें बन्दकर धाराधर ६-७ कपडिमी देकर सुराकर गजपुटी आच दे । स्वादशोतल होनेपर निकालकर शुद्ध पारा, और गन्धक, लोह, अन्नक, इनकी भस्में १-१ पल लेकर अजवाइन, सोंफ, त्रिकटु, त्रिपला, निशोत, कवच, दन्तीमूल, अपामार्ग, दोनोजीर इनका चूर्ण १-१ पल, षण्टरुण ( पहाटीभाषामें पनेली नाम लता प्रसिद्ध है अभावेमें हंस अथवा धाधमरी ) मानकन्द, गडिन ( अमार्गमें विगलामूल ), चित्रक, हड़बोड़, ये प्रत्येक २ तोले लेकर एषके बातिकर्णको पारेगन्धककी नीलवर्णञ्जलीमें मिलाकर नदरारके रमने १-२ रोज मर्दनकर १-१ मात्रोकी गोलिये बनाय छायाशुक्र रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गनयोक्तागुणानकेमाय देनेमें अयकर अम्लपित्त, मन्दागि, परिणामदूत, शोष, पाण्डु, आनाह, जीह, गुन्ध और उदररोग इनको दूरकर रोगयन्त्र काम करती है । इसमें भारी गरिष्ठ तथा यारीकर अयपान, दूध और मांसल ये पण्य है ॥ ४१ ॥

## ४२ पञ्चामृतचूर्णम्

पारदं गन्धक लोहं ताम्रमम्रकमेव च ।

एषां मापकमेकैकं जम्बीरद्वयमाधितम् ॥ १६७ ॥

देयं त्रिकटुना तुल्यं सम्यग्गुञ्जाचतुष्टयम् ।

तततोयानुपानेन वह्निमान्यहर परम् ॥ १६८ ॥

र र, र वो, अजीर्णं ।

भाषा—शुद्ध पारा तथा गन्धक, लोह, ताम्र और अम्रक

मस्य सबसमभागलकर जम्बीरीके रससे मर्दनकर ४-४ रत्तीकी

गोलिये बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली त्रिकटुके चूर्ण-

केसाथ मिलाकर देवे और ऊपरसे गरमपानी पिलावे तो उससे

मन्दाग्नि, शूल, श्वास, कास और वातारोग दूरहोवे ॥ ४२ ॥

## ४३ पञ्चामृतपर्वटी ( प्रथमा )

अष्टौ गन्धकमापका रसद्वल लोह तदर्थं शुभं,

लोहार्धञ्च घटाऽन्नकं सुधिमलं ताम्रं तथाऽन्नार्धकम् ।

पात्रे लोहमये च मर्दनविधौ चूर्णांकृतञ्चैकतो,

द्व्यां वादरवह्निनाऽतिमृदुना पाकं पितृत्वा इले १६९

रम्भाया लघु ढालयेन्मृदुरियं पञ्चामृता पर्वटी,

रम्भाया क्षौद्रघृतान्विता प्रतिदिनं गुञ्जाद्वयाव्ययिता ।

लोहे मर्दनयोगतः सुधिमलं भक्षयित्वा लोहवत्,

गुञ्जाद्वयवधया त्रिकत्रिगुणित सप्ताहमेव भजेत् १७०

मानावर्णप्रहण्यामरचिसमुद्ये हुष्टदुर्नामकाऽऽदौ,

छर्द्या दीर्घाऽतिसारे ज्वरमरकलिते रक्तपित्ते क्षयेऽपि ।

वृष्याणां वृष्यराक्षी घलिपलितहरा नेत्ररोगैकहन्त्री,

तुन्द दीप्तधिराक्षी पुनरपि नयक रोगिदेहं करोति

पाकाऽस्यास्त्रिविधः प्राक्तो मृदुर्मध्यः खरस्तथा

आघयोर्दृश्यते सूतः खरपाके न दृश्यते ॥ १७२ ॥

मृदौ न सम्यग् भङ्गोऽस्ति मध्ये भङ्गश्च सौम्यवत् ।

खरेऽलघुर्मवेद्भङ्गो रूक्षः श्लक्ष्णोऽरण्यच्छविः ॥

मृदुमध्यौ तथा खाद्यौ खरस्त्याज्यो विषोपमः १७३

र स, र च, भै र, र वि, र शु, वै क, र र,

रससारसं, रसायनसं, र क, र का, यो म, प्रहण्यधि

कारं । रससारसङ्गदे लोहाऽन्नाऽर्कसारान् समान्भागाभियोज्य

गन्धको द्विगुणो नियोजित इति विशेषः ।

भाषा—शुद्ध गन्धक ८ मासे, शुद्ध पारा ४ मा, लोह २ मा,

अम्रक १ मा, ताम्रमम्र ४ रत्ती लेकर लोहेके पात्रमें लोहेके

उत्से मर्दनकर नीलवर्ण कज्जली तैयारकरे । फिरलोहेकी कडाहीमें

थोडा घी लगाकर बेत्के कोयलों पर गलावे, बलनेपर ताजे गोबर

पर रखेहुए ताजे बेत्के पतेपर ढालकर ऊपर दूसरा पत्ता रख

गोबरसे दबादे । स्वाभ्रशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इस

मेंसे घी और मधुनेसाथ २-२ रत्ती लोहेके बर्तनमें घोटकर

खावे और रोजाना २-२ रत्ती बडावे । ४-८ अथवा २१ रत्ती

तक सातरोजमें मात्रा पूरीकरनेसे नानातरङ्गी प्रद्वणी, अहवि

दुष्ट ववाधीर, छर्दी, बहुतदिनका अतिसार, ज्वरसमुदाय, रक्त  
पित्त, शय, वली पलित, नेत्ररोग, मन्दाग्नि, मेद इनसबको दूर-  
कर रोगीये शरीरको नया बनादेती है । इस पर्वटीका मृदु, मध्य  
और खर तीनतरहका पाकहोताहै, मृदुमें अच्छीतरह भङ्गनहीं  
होता, मध्यमें चादीकीतरह चमकदार दुन्दे होतेहैं, खरमें रूक्ष,  
चिकने और ल्हाइलियेहुए टुकडे होते हैं । मृदु और मध्यमें  
पारा नजर आताहै खरपाकमें नजर नहीं आता । मृदु और  
मध्य खाने चाहियें, खरपाकको अहर्की तरह छोड़देना  
चाहिये ॥ ४३ ॥

## ४४ पञ्चामृतपर्वटी ( द्वितीया )

पलपरिमितशुद्धं पारदं कर्पमेकं,

घलिमपि परिशुद्धं सूततुल्यञ्च सूर्यम् ।

मृतमथ शिवयोर्यं कण्ठगं तस्य तुल्यं,

परिमृदितमशेषं तद्विनाकं ततश्च ॥ १७४ ॥

घलिमथ सकलांशं मर्दयेद्वा द्विनैकं,

पुनरथ परिशुष्कं घर्ममध्ये विशोष्य ।

अपि घृतपरिलिप्ते लोहपात्रे विपाच्य,

दुतमखिलमदस्तम्भाचिकापत्रखण्डे ॥ १७५ ॥

प्रपतितमथ पञ्चोत्थापितं पर्वटी सा,

हरति च गजचर्मोऽऽतङ्कमेवंप्रमाया ।

अखिलगदगणानां नाशिनी नित्यमुक्ता,

द्वयमुपरिसेवेद्वाकुचीनाञ्च तस्याः ॥ १७६ ॥

वि ४, कुष्ठे ।

टि०—अग्निमयौ मर्दनयोगस्याऽऽगतत्वा मर्दनद्रवस्याऽऽकथितत्वाच्च  
कन द्रवेण मर्दनं कर्तव्यमित्याकङ्क्षया अस्मिन्तत्वात् पर्वटीपात्रेन मात्रि  
कापत्रे कृतम् । अनुपाते बाकुचीरने नियोजित इति प्रकरणपालोचनेन  
सन्निहितत्वात् द्रवद्रव्यमव मर्दने नियोजितमिति शुचीभिरावृत्नीयम् ।  
घर्मभेदिरस्तेन साकमापाततोऽस्य साम्यं प्रतीयते परन्तु गन्धकादीनां प्रमा  
णस्य वैचित्र्याद्वावनाया विशेषत्वाच्चर्मेभिरस्ते पारदभस्मनोऽनागतत्वाच्च  
स्वतन्त्रं त्वयाऽयं रस इति द्वातव्यम् ।

भाषा—शुद्ध पारा १ पल, शुद्धगन्धक १ कपे, ताम्रभस्म,  
पारदभस्म और शुद्धवृक्षनाय १-१ पल लेकर सबकी नीलवर्ण  
कज्जलीकर मनोय और बाकुचीररससे १-१ रोज मर्दनकर  
धूपमें सुखाय कज्जलीकी बराबर शुद्धगन्धक देकर १-१ रोज  
इससे मर्दनकर धूपमें अच्छीतरह सुखालेवे । फिर लोहेकी कडा  
हीमें थोडा घी ढालकर बेत्के कोयलोंपर कज्जलीको गरमकरे,  
घीकी तरह इवहोनेपर ताजे गोबरपर रखे हुए मनोयके पत्तीकी  
राशिपर इसे ढालकर ऊपरसे मनोयके बहुतने पत्तीकी तह  
जमाय ताजे गोबरसे दबादे । स्वाभ्रशीतल होनेपर निकालकर  
रखछोडे । इसमेंसे २-२ रत्ती घी और मधुनेसाथ सेवनकर  
ऊपरसे बाकुचीका साथ पीवे । रोजाना २-२ रत्ती बडाता  
जाय । ऐसे २१ रोजतक बडाकर वैशेदी बम करे और कुष्ठोक्त  
पष्यका पालनकरे तो यह गजचर्मको दूरकरती है और तन्मोय-  
हरादुपानकेसाथ देनेसे अन्य तमामरोगोंको नष्टकरती है ॥ ४४ ॥

## ४५ पञ्चामृतपर्वटी ( तृतीया )

सूतकं भागमेकान्तु द्वौ भागौ गन्धकस्य च ।  
भागमेकं क्षिपेहोहं भागैकं ताम्रमेव च ॥ १७७ ॥  
द्विभागं गगनं दद्यान्मर्द्य कज्जलसन्निभम् ।  
आयसे पाचयेत्पात्रे रम्भापत्रे विनिःक्षिपेत् ॥ १७८ ॥  
ऊर्ध्वासं धौ गोमयं दत्त्वा पर्वटीरससिद्धये ।  
कासातिसारज्वरनुत्कामलापाण्डुमेहजित् ॥ १७९ ॥  
चि. र., र. बो., कासेतिसारे च ।

भाषा—शुद्धान्धक और अन्नकभस्म २-२ भा., शुद्धपाप  
लोह और ताम्रभस्म १-१ भाग लेकर सबको नीलवर्णकज्जलीकर  
लोहेके पात्रमें प्रयमपर्वटीकी तरह तैयारकर उसीतह २-२  
रसोसे अथवा रोगीकी शक्तिसे अनुसार २१ रोज़तक बढ़ावे  
और वैवेही कमकरे तो कास, अतिसार, ज्वर, कामला,  
पाण्डु और प्रमेह इनको यह नष्ट करती है ॥ ४५ ॥

## ४६ पञ्चामृतपर्वटी ( चतुर्थी )

सुवर्ण रजतं ताम्रं सत्याऽन्नं कान्तलोहकम् ।  
क्रमबद्धमिदं सर्वं शाणैर्नागयक्षकौ ॥ १८० ॥  
द्राघयित्वैकतः सर्वं रेतयित्वा ततश्चरेत् ।  
पृथक् पलमितं गन्धं शिलाऽऽलं विनिधाय च ॥ १८१ ॥  
सर्वं खल्वे विनिक्षिप्य मर्दयेदम्लवर्गतः ।  
ताप्यं नीलाञ्जनं तालं शिलां गन्धञ्च चूर्णितम् ॥ १८२ ॥  
दत्त्वा दत्त्वा पुटेत्तायद्यावद्विंशतिवारकम् ।  
लोहाद् द्विगुणसूतेन ततो द्विगुणगन्धतः ॥ १८३ ॥  
विधाय कज्जलीं नृक्षणां क्षिप्या तां लोहपात्रके ।  
द्राघयेद्बद्धाङ्गारैर्मुद्गुमिश्राऽथ निक्षिपेत् ॥ १८४ ॥  
हेमादिपञ्चलोहानां भस्म चाऽथ विलोहयेत् ।  
अथ तत्कदलीपत्रे गोमयस्ये विनिक्षिपेत् ॥ १८५ ॥  
पत्रेणाऽग्नेन संच्छाद्य कुर्याद्यत्नेन पर्वटीम् ।  
तस्योपरि क्षिपेत्सद्यो गोमयं स्तोक्रमेव च ॥ १८६ ॥  
ततः शीतं समाहृत्य पटपूतं विधाय च ।  
निक्षिपेत्पृथ्वदण्ड्यायां पालिकायां ततः परम् ॥ १८७ ॥  
पूर्ववद्बद्धाङ्गारैर्मुद्गुमिश्रावयेच्छनैः ।  
तुल्याऽऽलकशिलागन्धं पलाघविपमावितम् ॥ १८८ ॥  
पूर्वपर्वटिकातुल्यं तस्मादल्पं मुद्गुमुद्गुः ।  
आरयेत्पालिकामध्ये दहोत च न पर्वटी ॥ १८९ ॥  
पालिकेतिविनिर्दिष्टा स्नेहक्षेपणयन्त्रिका ।  
जीर्णं तालादिके चूर्णं पटपूतं विधीयताम् ॥ १९० ॥  
पूतीकरज्जपट्कोलप्याग्रीशोमाञ्जनाङ्गुलिभिः ।  
पतेः पञ्चपलैः कयाचं योडशांशाऽवशेषितम् ॥ १९१ ॥  
तेन कवायेन संख्येय शोषयेत्सप्तधा हि ताम् ।  
विपतिन्दुकलोद्भूते रसेनिर्गुणिकोत्थिते ॥ १९२ ॥  
विभाव्य पालिकामध्ये क्षिप्या बद्धपात्रके ।  
इष्यत्प्रसेदनं हृत्या स्थापयेद्वृत्तियन्ततः ॥ १९३ ॥

उक्ता भैरवनाथेन स्यात्पञ्चामृतपर्वटी ।  
व्योपाऽऽज्यसहिता लीढा गुञ्जावीजेन सम्मिता ॥ १९४ ॥  
सर्वलक्षणसम्पूर्णं विनिहन्ति क्षयाऽऽमयम् ।  
श्वासं कासं विसृञ्च प्रमेहमुद्राऽऽमयान् ॥ १९५ ॥  
अरोचकञ्च दुःसाध्यं प्रसेकं छर्दिहृद्वदम् ।  
सर्वजं गुदरोगञ्च शूलकुष्ठान्यशेषतः ॥ १९६ ॥  
वातज्वरञ्च विदुष्यं ग्रहणीं कफजान्गदान् ।  
एकद्वन्द्वत्रिदोषोपायान् रोगानन्यान्माहागदान् ॥ १९७ ॥  
अग्निमान्द्यं विशेषेण हृत्तीयं पर्वटी ध्रुवम् ।  
एवं समूहं दातव्या रोगेषु भिषगुत्तमैः ॥ १९८ ॥  
तत्तद्भागहरेर्योगैस्तत्तद्भागानुपानतः ।  
क्षयादिसर्वरोगघ्नी स्यात्पञ्चामृतपर्वटी ॥ १९९ ॥  
तैलसर्पपवित्वाऽम्लकारवेलेकुसुम्भकम् ।  
त्यजेत्पारायतं मांसं वृन्ताकं कुक्कुटं तथा ॥ २०० ॥

र. र. स., र. सु., र. को., राजयश्मणि ।

टि०—रसगन्धुन्दर शाणैर्नागयक्षकवित्याभ्य सर्व खरे  
विनिक्षिप्य स्नानस्तुष्टिं पाठोऽस्ति । अत्र ताप्य नीलाञ्जन ताल शिला  
गन्धञ्च चूर्णितयत्र प्रमाणाऽभावोऽस्ति, अत्र पृथक् पलमिति पूर्व-  
वासयेव परामर्शनीय, ततश्च प्रत्येकं पञ्चरिमिना ताप्यादिपञ्चद-  
न्याणां विंशतिपत्राणि द्रव्याणि भवन्ति, येषाञ्च विंशतिभागान् प्रत्येक  
प्रत्येकपुटे कर्षं द्रव्यं प्रक्षिप्य पुटानि देयानीति व्यवस्था करणीया ।  
तुल्याऽऽलकशिलागन्धं पलाघविपमावित्वाऽपि तदेव प्रमाणमनुसर-  
णीयम्, अथमेवापि विसृष्टिपु पुनरपि शिलातुल्यमिति दत्तमस्ति । वैदि-  
न्यहारेणैषु पलाघमिति छेद विधाय प्रत्येकं पलाघमित्यर्थः ह्रीनोऽस्ति, परम्पु  
तथाप्येव पूर्वपर्वटिकातुल्यमित्यस्याऽम्लानि स्यादिति प्रत्यक्षविरोध इति  
सहदेयारकलीनम् ।

भाषा—सुवर्ण १ कर्षं, रजत २ क., ताम्र ३ क., अन्नक  
सत्त्व ४ क., कान्तलोह ५ क., नाग और वज्र ४-४ मासो  
लेकर सबको इकडे गलाकर बारीकरेता करेले, फिर शुद्धान्धक  
मैनसिल और हरिताल ४-४ कर्षं मिलाकर सबको इकडे  
मिलाय अम्लवर्गमें १-२ रोज़ मर्दनकर सोनामासी, सुरमा,  
हरिताल, मैनसिल और गन्धक ४-४ कर्षंका मिलकर चूर्ण  
एक कर्षं डाल कर अम्लवर्गमें मर्दनकर छोटीछोटी टिकिया  
बनानर गुप्ताकर धरावयम्पुटमें बन्दकर ५ तरे कण्ठकी आंघवे,  
ऐसे कात्पुट देनेने बाद १-१ तरे प्रत्येक पुटमें कण्ठे बडाता-  
जाय ऐसे ताप्यादिरोका प्रयोग देदेकर २० पुटें देने, फिर  
१० कर्षं शुद्धपाप और २० कर्षं शुद्ध गन्धक की नीलवर्णक-  
जलीको लोहकेपात्रमें भी लगाकर बेरके कांयलोपर रखकर  
गलावे, इसकी हुति होजानेपर पुनर्दिहृद्विके हुए रसको इनमें  
डालकर बलावे, एकजीबदोनेपर गोबरपर रक्केहुए केलेके पतेपर  
डालकर दूसरा केलेमापता ऊपरमें रगोवरते उपदे । स्वातन्त्री  
तत्र होनेपर निराकार कपड्डानचूर्णकर तेज, भी मिडालनेकी  
रूपे डबेकी पलीमें इसचूर्णको डालकर बेरकेकोदोनोंपर रखकर  
गलावे और हरिताल, मैनसिल तथा गन्धक १-१ पल लेकर  
बारीक चूर्णकर आधेपल कठनायके बांधेते मर्दनकर गुप्ताकर



इसमेंसे थोड़ा थोड़ा द्रुतकजलीमें डालकर चलाताजाय पर यह ध्यान रखे कि पलीवालीपर्वटी न जलने पावे । जब तालादिचूर्ण समग्र समाप्त होजाय तब इसको ठंडाकर कपडछानचूर्ण करले, फिर घुडकरछ, पद्मपत्र, भटकटैया और सहिजनकी जड़की छाल, ये प्रत्येक ५-५ पत्तलेकर १६ सेर पानीमें थोडासावरोप कवाथकर इस कायकेसात विभागकर पलीमें १-१ भागको सुखामर दवाको धूपमें सुखादेवे । फिर मर्दनमर दूसराभागवाथका डालकर छुपावे, इसीतरह सारों भागोंको सुखावे, फिर कुचिला और निर्गुण्डीके पत्तोंका रस डालकर १-१ बार पलीमें स्वेदनकरके सुखाकर कपडछान चूर्णकर शीशीमें रखछोड़े । यह भैरवनाथकी कही हुई पञ्चामृतपर्वटी है । इसमेंसे १-१ रत्तीलेकर ३ मासे त्रिकटु-के चूर्ण और घृनेकेसाथ रोजकेसेसे समस्तलक्षणयुक्त राज-यक्ष्मा, श्वास, कास, विम्विका, प्रमेह, उदररोग, अरुचि, शुष्कसाध्यप्रसेक, छर्दि, हृद्रोग, सन्निपातजगुदरोग, शुष्क, समस्त-डुध, वातज्वर, विड्विषबन्ध, प्रहणी, कफरोग, एक्ज द्विज और निदोषज तथा अन्यसमस्तरोग विशेषकर मन्दाग्नि नष्ट होयेहैं । यक्ष्मातिरिक्त रोगोंकेलिये तत्तत्सामयिक अवस्थाको देखकर अनुपानोंका योगकरना और सारों, घेल, अम्ल, बरेला, इस्सुम, कवूरका मांस, गुन्ताक, कुक्कुट इनको छोडदेवे ॥४६॥

### ४७ पञ्चामृतपर्वटी ( पञ्चमी )

ताप्यार्कलोहशजगन्धकाः समाः

प्राक् पर्वटीवद्विपचेद्य भाषयेत् ।

सेपञ्च पञ्चामृतपर्वटीक्षये

बल्लोन्मिता सा सकलाऽऽमयाञ्जयेत् ॥ २०१ ॥

र (मा) ना. वि., कासे श्वासे च । ना वि, अर्कस्थाने अभ्र नियोजितम् तथा च इयं पर्वटी त्वरूपजातिस्सुमल्वत्रै-रुद्योजिता ।

भाषा—सोनामाखी, ताजा, लोह इनकी भस्में, शुद्धभारत और गन्धक सब समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर प्रथमपर्वटीकी तरह पर्वटी बनाय ३-३ रत्तीकी मात्रा समयोचितानुपातके साथ देनेसे यह क्षय तथा समस्तरोगोंको नष्टकरती है ॥ ४७ ॥

### ४८ पञ्चामृतपर्वटी ( पष्ठी )

रसगन्धकताम्राऽत्रैः समैर्द्विगुणलोहकैः ।

लोहपात्रे खादिराऽग्नौ मृदुपाको भवेद्रसः ॥ २०२ ॥

पञ्चामृतपर्वटिका महत्प्रतिप्रदीपिका ।

अशोऽतिसारग्रहणीकामलापाण्डुकुण्डनुत् ॥ २०३ ॥

ग्रीहाऽऽमगुलमश्लऽऽमघातमृत् च त्रिदोषहा ।

जलोदरमलपित्तं भगरोगञ्च नाशयेत् ॥

सुप्तौदनौ घृतं क्षीरं रोगां कं पथ्यमाचरेत् ॥ २०४ ॥

र. ( मा ), अग्निमान्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और अक्रमस्म १-१ भाग, लोहभस्म २ भाग, लेकर नीलवर्णकजलीकर प्रथम पर्वटीकी तरह लेकर बोयलैफ पर्वटी बनाकर रखछोड़े । इसका मृदुपाकलेवे । इसकी ३-३ रत्ती समयोचितानुपातके साथ

लेनेसे मन्दाग्नि, कवासीर, अतिसार, ग्रहणी, कामला, पाण्डु, कुष्ठ, ग्रीहा, आम, गुल्म, शूल, आमवात, सन्निपात, जलोदर, अम्लपित्त, भगरोध, इनसबको यह नष्ट करती है । मूंग, चावल, धी, दूध इत्यादि रोगोचित पथ्य देवे ॥ ४८ ॥

### ४९ पञ्चामृतपर्वटी ( सप्तमी )

सूतायसी च ताम्रान्नं समं द्विगुणगन्धकम् ।

लोहपात्रे वादराग्नौ मृदुपाको भवेद्रसः ॥ २०५ ॥

ढालयेत्कदलीपत्रे कर्तव्या रसपर्वटी ।

पञ्चामृता पर्वटी च रसो वह्निप्रदीपनः ॥ २०६ ॥

ज्वरपित्तसारकासघ्नी कामलापाण्डुमेहजित् ।

अनुपातं मले धन्दे ज्वरे जीर्णे च मूत्रकम् ॥

पलं पथ्यं तु तैलाम्लयर्ज्यमन्यच्च युक्तितः ॥ २०७ ॥

वि. २, रसायनरस, र. सु, र. द, र. कौ., र. न. मा, र. प्र, र. क्ष, वै चि, वै जी, र. सु., यो. च., र. प, र. पा, अतिसारे ।

भाषा—शुद्धपारा, लोह-ताम्र और अक्रमस्म १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भा., लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर प्रथमपर्वटीकी तरह पर्वटी बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती रोगो-चितानुपातके साथ देनेसे ज्वर, अतिसार, कास, कामला, पाण्डु, प्रमेह इनको यह नष्ट करती है । मलविषय और जीर्ण-ज्वरमें गोमूत्रकेसाथदेना और तैल तथा खटाईको छोड़कर पथ्य देना ॥ ४९ ॥

### ५० पञ्चामृतपर्वटी ( अष्टमी )

रविरसभुजगायोवह्नौ गन्धकस्य,

द्विगुणरचितभागं द्रावयेत्लोह उष्णम् ।

समचिनिहितपट्टस्थायिरम्भादलक्ष्यं,

तदितरद्वलयोगात्प्रद्रुतं यत्समन्तात् ॥ २०८ ॥

तदा तु पञ्चामृतपर्वटीति

स्मृतं उपराशेषविशेषहारि ।

कासक्षयाऽशोऽग्रहणीगदग्रं

घलद्रव्य क्षौद्रकणाऽचलीढम् ॥ २०९ ॥

वै २, २, २ का, २ बो, यो. च, कासक्षये । रसा-तार पर्वटीस्मृतः ।

भाषा—ताम्र, नाथ, लोह और वह इनकी भस्में और शुद्धपारा १-१ भाग, शुद्धगन्धक सवसे द्वा लेकर नीलवर्ण कजलीकर घीतुहण लोहेने पात्रमें प्रथमपर्वटीकी तरह पर्वटी तैयार करके रखछोड़े । इसमेंसे ६-६ रत्तीकी मात्रा पीपलेके चूर्ण और मणिके साथ खानेसे कास, क्षय, कवासीर, ग्रहणीरोग, इनको यह नष्ट करती है ॥ ५० ॥

### ५१ पञ्चामृतपर्वटी ( नवमी )

मृतं ताम्रं मृतञ्चाग्नौ कुटिलं तुल्यगन्धकम् ।

रसमस्मसमायुक्ता पर्वटी मेहनाशिनी ॥ २१० ॥

र क, प्रमेहे ।

भाषा—ताम्र, अश्रक, बज्र, पारद इनकी भस्में समभाग, शुद्धगन्धक सबकी बराबर लेकर नीलवर्णकृजलीकर पपटी बनाकर १-१ रती तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे यह समस्त रोगोंको दूर करती है ॥ ५१ ॥

### ५२ पञ्चामृतपोटलीरसः

प्रत्येकमेकगद्याणं शुद्धसूतसुवर्णयोः ।  
खल्वे पिष्ट्वा ज्यहं कार्या पिष्टिः सूक्ष्मा सुवर्णजा २११  
वस्त्रे क्षिप्त्वाऽथ तां पिष्टिं ग्रन्थिं वज्रा दृढं ततः ।  
मृन्मयी गोस्तनाकारा मूपा कार्या दृढा ततः ॥ २१२ ॥  
स्थालिका घालुकापूर्णा मूपां तत्रान्तरे क्षिपेत् ।  
खुल्ल्यामारोप्य तां स्थालीं हठाग्निं ज्वालयेदधः २१३  
शुद्धगन्धकगद्याणानां मूपान्तरे क्षिपेत् ।  
गलिते गन्धके जाते तिलतेलेन सन्निभे ॥ २१४ ॥  
प्रक्षिपेद्वेमजां पिष्टिं ग्रन्थिवज्राश्च गन्धके ।  
क्षेप्यो गन्धकगद्याणो मुहुर्दग्धे च गन्धके ॥ २१५ ॥  
पद्ममेवमहोरात्रं स्वेद्या पिष्टिश्च हेमजा ।  
शुद्धगन्धकगद्याणद्वययुक्तां दिनद्वयम् ॥ २१६ ॥  
वज्रीक्षीरेण सम्प्रेष्य प्रक्षिपेच्च शरायके ।  
भूमावेव पुटो देवो लावकः पुटसत्तरम् ॥ २१७ ॥  
युक्त्याऽनया मृतं हेम चूर्णं कृत्वा सुसूक्ष्मकम् ।  
पीतानाञ्च कपर्दीनां गद्याणां पेदसहस्रकाः ॥ २१८ ॥  
शङ्खस्याऽपीह चत्वारो ह्यष्टानां सूक्ष्मचूर्णकम् ।  
द्वयहं सेहुण्डकुन्धेन हार्कदुन्धेन च द्वयहम् ॥ २१९ ॥  
चित्रकाऽऽर्द्ररत्नेनैव द्वयहं खल्वे प्रमर्दयेत् ।  
पवं पङ्कासराणिष्ट्वा गद्याणान्यसुसूक्ष्मकान् ॥ २२० ॥  
मृतकान्ताद्रसाद्वेदा गद्याणो मृतनेमजः ।  
गद्याणान्सत्तदशकानाद्रचित्ररसेन च ॥ २२१ ॥  
द्वितैकं मर्दयेत्खल्वे शुटीः कृत्वाऽथ शोषयेत् ।  
तास्ता दग्धाश्चमचूर्णकाः पक्वकुड्मलकान्तरम् २२२  
लिप्त्वा शुक्ले घटीः क्षेप्याश्चूर्णलितपिधानकम् ।  
दत्त्वा धस्त्रमुद्रा लिप्त्वा देयं गतं पुटद्वयम् ॥ २२३ ॥  
पेपयेच्च समालम्ब्य शीतकुड्मलकाद्वटीः ।  
रसाऽसौ जायते श्रेष्ठः पञ्चाऽमृतमुपोटली ॥ २२४ ॥  
बल्लाः पञ्च रसस्याऽस्य द्वात्रिंशन्मरिचैः समम् ।  
घृतमिश्राः प्रदातव्या हातिसारे ज्वरं विना ॥ २२५ ॥  
देयः सर्वातिसारेषु श्लेष्पु विविधेषु च ।  
बलक्षणेपु मन्दाग्रो वातव्यासेपु रोगेषु ॥ २२६ ॥  
अष्टादशसु मेहेषु ह्यजीर्णं च विशेषतः ।  
चत्वारः शर्करावल्गा रसवल्लीश्च पञ्चभिः ॥ २२७ ॥  
मधुना च समं देया हातिसारे च रक्तजे ।  
सत्त्वं गुडच्याधत्तारो रसवल्लीश्च पञ्चभिः ॥ २२८ ॥  
मिश्रिता मधुना देया ॥ तिसारे ज्वरोद्भवे ।  
पते रोगाः प्रलीयन्ते भ्रमात्संसेविते रमे ॥ २२९ ॥

कांस्यपात्रे न भोक्तव्यं क्षाराम्लं वर्जयेत्सदा ।  
शालयो दधिदुग्धादि गौल्यं मिष्टाऽभ्रभोजनम् २३०  
र. कं., रसचि, सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध सुवर्ण और पारा ६-६ मास लेकर तीनरोज मर्दनकर गोली बनाकर वस्त्रमें कड़ीमन्थि बांधले, फिर मिट्टीकी गोस्तनाकार मजबूत मूपा बनाय बालुकाभेदहुए पात्रमें मूपाको रख हठाग्नि जलावे । मूपा गर्म होनेके बाद ४ तोले शुद्धगन्धक मूपामें डालदे, जब गन्धक गलकर तिलतेलेने सदृश हो जाय तब पूर्वोक्त सूतपिष्टीको उसमें रखदे और ऊपरसे आधातोला गन्धक डालदे । जब ऊपरवाला गन्धक गलकर पिष्टी उभड़ने लगे तब आधा तोला गन्धक ओर डालदे । इसतरह बारम्बार गन्धक देता हुआ एक अहोरात्र पिष्टीका स्वेदन करे । एक अहोरात्रके बाद १-१ तोला गन्धक देकर दोदिनतक पूर्ववत् स्वेदन करे । चौथेरोज पिष्टीको मूपामेंसे निकालकर गन्धकको छुआकर अलग करदे और धूरके दूधसे अच्छी तरह मर्दनकर गोली बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर खुले प्रवेशमें लावपुट दे । इसतरह सातपुट देकर सुवर्णकी भस्म बनाले । फिर पीलीकौड़ी १ तो, शुद्धशंखचूर्ण २ तो., लेकर दोनोंको धूर और आक्के दूधमें २-२ रोज मर्दनकर चित्रक और अदरकके रससे १-१ रोज मर्दन कर ६ रोजके बाद कान्तलोहभस्म और शुद्धपारा २-२ तो, और पूर्व कौडूई सुवर्णभस्म ६ मा, इसतरह सब मिलकर ८। तोलेको अदरक और चित्रकके रससे १-१ रोज मर्दनकर इसकी छोटी २ गोलिएं बनाकर सुखाले फिर पत्थरके चूनेमें रखकर हिलावे, जिसमेंकि गोलिएं पर चूना चढ़जाय । फिर मिट्टीके पके हुए कुल्हडको चूनेसे भीतरकी तरफ पोतकर सुखावे, उसमें इन गोलिएंको रख ऊपर चूनापुते हुए धीसे ढककर समस्तपर ३-४ कपडमिरी करके सुखाकर चूनेमें लघुपुटदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर दूसरा पुटदे । सम्पुट द्वादा होतो खोलनेकी जरूरत नहीं, देववशाव सम्पुट फड़गया हो तो दूसरा बदल देवे । दूसरे पुट देनेके बाद स्वाज्ञशीतलहोनेपर कुल्हडमें लेके गोलिएं निकालकर रखगोरे । यह पञ्चामृत पोटली रस तैयार हुआ । इसरसकी १५ रती लेकर १० कालीमिचौके साथ मिलाकर धीके साथ देनेसे ज्वररहित समस्त अतिसार, समस्त चूल, बकरी क्षीणता, मन्दाग्नि, वातव्याधि, १८ प्रकारके प्रमेह, अजीर्ण ये सब नष्ट होते हैं । १५ रती रसको १२ रती शरकरकेसाथ मधुमिलाकर रक्ताक्षिपारमें देवे । गिलेयसत्त्व १२ रती, रस १५ रतो मधुमें मिलाकर अतिवारज ज्वरमें दे । इसमें पथ्य पुराने चावल, दही, दूध, मसूरन, गुलगुले बगैरह मिथान भोजन करे । कांस्यके पात्रमें भोजन, क्षार और अम्लका परित्याग करे ॥ ५२ ॥

### ५३ पञ्चामृतमण्डपम्

लौहं ताम्रं गन्धमग्नं पारदञ्च समादाकम् ।  
त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडङ्गं चित्रकन्तथा ॥ २३१ ॥

किरातं देयकाप्रश्न हरिद्राह्वयपुष्करम् ।  
यमानी जीरयुग्मश्च शरीधान्यकचव्यक्तम् ॥ २३२ ॥  
प्रत्येकलोहमागश्च श्लेष्मण्यूर्णान्तु कारयेत् ।  
सर्वचूर्णस्य चाद्धांशं सुशुद्धं लोहकिट्टकम् ॥ २३३ ॥  
गोमूत्रे पाचयेद्द्वयो लोहकिट्टं चतुर्गुणे ।  
पौनर्नवाष्टगुणितं कायं तत्र प्रदापयेत् ॥ २३४ ॥  
सिद्धेऽवतारिते चूर्णे मधुनः पलमानकम् ।  
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय कोकिलाक्षानुपानतः ॥ २३५ ॥  
प्रहर्णां चिरजां हन्ति सशोथां पाण्डुकामले ।  
अग्निश्च कुरते दीप्तं ज्वरं जीर्णं व्यपोहति ॥ २३६ ॥  
ह्रीद्गुल्मौ यक्षुचैवमुदरश्च विशेषतः ।  
कासं श्वासं प्रतिहृष्यायं कान्तिपुष्टिधिवर्धनम् ॥ २३७ ॥  
भै र, र चं, र, सु, वै क, पाण्डुरो गे ।

भाषा—लोह, ताम्र, और अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक और पारद त्रिवृद्ध, निफला, नागरमोथा, बिडर, चित्रक, चिरायता, देवदारु, हल्दी, दासहल्दी, पोहकर्मूल, अण्वाइन, दोनोंजीरे, कर्पूर, धनिया, चण्य येसव १-१ भाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर सबसे आधी मण्डूरभस्म मिलाकर समस्तसे चतुर्गुणित गोमूत्र और अष्टगुणित पुनर्नवाका काय कड़ाहीमें डालकर लोह और मण्डूरभस्म डालकर पकावे । जबपककर गोमूत्रियें बचने लायक होजाय तब अन्यसबचीजें डालकर उतारकर स्वाहशीतल-होनेपर ८ तोले मधु मिलाकर रखडोडे । इसमेंसे ३-३ माशेकी मात्रा तालमपानेके साथके साथ देनेसे शोथयुक्त पुरानीसङ्गहणी पाण्डु, कामला, मन्दागि, जीर्णज्वर, ह्रीहा, गुल्म, यक्षुत, उदर रोग, कास, श्वास, और प्रतिहृष्याय इनसबको नष्टकर कान्ति और पुष्टिको बढ़ाताहै ॥ ५३ ॥

#### ५४ पञ्चामृतयोगः

पारदं रजतं ताम्रं सात्रकं हेम पञ्चकम् ।  
पञ्चामृतकर्मियाहुः सर्वरोगनिवारणम् ॥ २३८ ॥  
अनुपानविभेदेन वेदनानाशकं परम् ।  
बहुवर्षश्च विषमं कुष्ठश्चौरक्षतक्षयम् ॥  
प्रमेह पाण्डुरोगश्च हन्यान्नाऽत्र विचारणा ॥ २३९ ॥  
ना वि, ज्वराधिकारे ।

भाषा—पारद, रजत, ताम्र, अभ्रक और सुवर्ण इनकीभस्में समभागमें मिलानेसे यह पञ्चामृतयोगफलताहै इसको बयो-बलके अनुसार मात्राका निर्धारणकर उत्तमोक्तितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तरोग, नानातरहकीवेधेनी, पुराना विषमज्वर, कुष्ठ उर क्षत, क्षय, प्रमेह, पाण्डुरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५४ ॥

#### ५५ पञ्चामृतसः ( प्रथम )

शुद्धं सृतं समादाय गन्धकं भागतः समम् ।  
त्रिभागं द्रव्यं देयं विषभागत्रयं तथा ॥ २४० ॥  
भागत्रयं तथा देयं मरिचस्य प्रयत्नतः ।  
चूर्णीकृतं जलेनापि पिष्ट्वा रक्तिमितां घटीम् ॥ २४१ ॥

शुद्धवेरसेनैव भक्षयेद्वटिकांमिमाम् ।  
जलदोषोद्भवे शोथे घोरैरस्युमे जलोदरे ॥ २४२ ॥  
सन्निपातेषु घोरैषु सर्वस्मिन्श्लेष्मिके गदे ।  
ज्वरातिसारसंयुक्ते शोथे चैव गलप्रहे ॥ २४३ ॥  
शिरःशूलगदे घोरै नासारोगे सपीनसे ।  
पञ्चामृतसो ह्येव सर्वरोगोपशान्तिरुत् ॥ २४४ ॥  
भै र, र सं, र, च, वै क, र सु, र त, नासारोगे ।  
टि०—शुद्धचित्तनितोद्यमित विष बनि । स्थपितपेटेऽपि शुद्ध विषेण न कापि क्षतिर्दीप्तस्ते प्रत्युत गुणे शीघ्रकारितमुत्पन्नये ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक १-१ भाग, भुनामुहागा, शुद्धजन्माग और मरिच ३-३ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारे-गन्धकर्त्री नीलवर्णशक्तीमें मिलाकर जलकेसाथ पीटकर १-१ रत्तीरी गोमूत्रियें बनयें मुखाकर रखडोडे । इसमेंसे १-१ गोली अदरकके रसकेसाथ देनेसे जलदोषसे भयदुष्ट शोथ, अस्युम-जलोदर, शोथसन्निपात, समस्तश्लेष्मारोग, ज्वरातिसारदुष्टशोथ, गलप्रह, घोरशिरःशूल, नासारोग, पीनम इनसबको यह नष्ट-करताहै ॥ ५५ ॥

#### ५६ पञ्चामृतसः ( द्वितीयः )

कुष्णाम्रकान्तुलिशं सरसं सहैम  
सम्भर्दितं कलरुपजरसेन गाढम् ।  
तद्गोलकं कमठयन्गगतं विषकथं  
सूपागतं नियमकद्विविधोपधीभिः ॥ २४५ ॥  
पञ्चाऽमृतोऽस्य घृतमाक्षिकसमप्रयुक्ता ।  
शुद्धा गन्धान्हरति देहगदांश्च मास्तात् ।  
आरोग्यसौख्यबलपुष्टिकरी नराणां  
संसेविता भगवतीर महेशकान्ता ॥ २४६ ॥  
र ल, र द, स्वायनस, वै वि, क्षये । स्वायनसं धातु-

पञ्चामृत । सर्वरोगहराधिकारे च ।

भाषा—कुष्णाभ्रक, कान्तलोह, हीरा, पारा, सुवर्ण इन-प्रत्येककीभस्म समभागलेकर घटोके पतोकैरसमें १-२ रोज मर्दनकर गोलाबनाय मुखाकर ४ तह भोजनकेपेमें छपेटकर ६-७ कण्टके मीठेदेकर अच्छीतरह मुखाकर खोल्यगुनी बादामेरुपे उल्लोनेपर निकालकर नियामकवर्षोंकी औषधियोंसे यथालग-मर्दनकर मीठीकी सूपामें कन्तर लघुपुष्टी यथावधि आदि एकमहीनेमें समस्तशरीरके रोगोंको दूर कर आरोग्य, बल और पुष्टिको बढ़ाताहै ॥ ५६ ॥

#### ५७ पञ्चामृतसः ( तृतीयः )

समसूताऽम्रलोहाना शिलाजतु विषं समम् ।  
शुद्धचीत्रिकलापयति सस्त्रतं  
मृत नेपालताम्रञ्च स्नस्थाने

पकीरुत्य नियोज्यन्तद्दिगुञ्जं राजयक्ष्मनुत् ॥

पञ्चामृतरसो ह्येव चानुपानश्च पूर्ववत् ॥ २४८ ॥

र. र., र. चं., र. र. स., नि. र., र. को., र. का., र. क. थो., वै. चि., र. क. ल., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पारा, अन्नक, और लोहमस १-१ तोल, शिला-जतु, शुद्धवछनाग, गिलोय और त्रिफलाके बायसे शोषनकिया-हुआगुगुल ३-३ तोले लेकर सबको इक्केकर १-२ रोज मर्द-नकर थोडासा घीकाहायदेकर कूटे फिर २-२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे राजयक्ष्म दूहोताहै । यदिगारदमस न मिले तो जेपाली ताम्र-भस्मसे कामचलायेता ॥ ५७ ॥

### ५८ पञ्चामृतसरः (चतुर्थः)

अथातः सम्प्रयक्ष्यामि रसं परमदुर्लभम् ।

पञ्चामृतमिदं ख्यातं सर्वरोगहरं परम् ॥ २४९ ॥

शास्त्रे सौख्यप्रदं नृणां भुवि रोगनिवारणम् ।

पथ्यापथ्यविनिर्मुक्तं विष्णुना परिकीर्तितम् ॥ २५० ॥

सुतकान्तरविष्योन्मां शुद्धानां भस्मकं शुभम् ।

मारितं माक्षिकञ्चैव प्रत्येकञ्च पलं पलम् ॥ २५१ ॥

गन्धं पञ्चपलं दत्त्वा श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ।

आर्द्रकस्य रसं दत्त्वा त्रिदिनं मर्दयेत्ततः ॥ २५२ ॥

क्याये च दशमूलस्य बहिमूलरसेन वा ।

युक्त्या तु पथ्यधितेनापि मर्दयेच्च दिनत्रयम् ॥ २५३ ॥

शोषयित्वा ततो घर्मे चूर्णयेच्चदनन्तरम् ।

त्रिवर्गश्रितयाम्मोदतिरुत्तुष्टुकरेणुकम् ॥ २५४ ॥

भाङ्गीभूनिम्बतिकाश्च जातीफलकरोदकम् ।

पलार्धमार्तं सर्वाणि प्रत्येकैकं भवन्ति च ॥ २५५ ॥

त्रिधास्य श्लक्ष्णचूर्णानि रसेन सह मेलयेत् ।

काकमाषी च निर्गुण्डीवर्षाभूर्मुण्डिका तथा ॥ २५६ ॥

कपायेणाऽऽर्द्रकाम्मोभिर्भायनाः परिकल्पयेत् ।

कपायेण शुद्ध्याश्च शिमुमूलरसेन वा ॥ २५७ ॥

पुनरार्द्रकतोयेन भाषयित्वा यिमर्दयेत् ।

वदरास्थिप्रमाणेन कर्तव्या गुटिका ततः ॥ २५८ ॥

भरिचानान्तु विंशत्या घटीमेकान्तु भक्षयेत् ।

तत्तद्गोहरो योगः सर्वरोगं विनाशयेत् ॥ २५९ ॥

हन्यात्सर्वविषं ज्वरस्यकरं

पाण्डुञ्च शङ्खाऽऽमर्षं,

मन्दार्मिं प्रहर्षां गदांश्च कफजान्

पातोद्गवांश्चाऽऽमयान् ।

गुल्मव्यात्यदयी च पित्तजनितान्

द्वन्द्वोद्गवान् श्रोतजान्,

कासभ्यास्यपासमांश्च विविधान्

पञ्चामृतो देहिनाम् ॥ २६० ॥

यस्य रोगानुरूपेण पेयमत्र भिषग्वरैः ।

तकमकं प्रदातव्यं पथ्याय परिनिर्मितम् ॥

देयः स्तनन्धयस्यापि सोऽयं पञ्चामृतो रसः ॥ २६१ ॥

र. र., घ., रससागर, रसायने ।

भाषा—पारा, कान्तेलोह, ताम्र, अन्नक, और सोनामाषी

इनप्रत्येककी भस्म १-१ पल, शुद्धगन्धक ५ पल लेकर अदर-खके रस, दशमूल और चित्रकमूलके बायोंसे ३-३ रोज मर्दनकर धूपमें सुखाकर त्रिकटु, त्रिफला, त्रिजात, नागरमोथा, कुचिला, तुम्बुल, रेणुका, भारद्वाज, चिरायता, कुटकी, जायफल, कसेरु, ये प्रत्येक २ तोले लेकर बारीकचूर्णकर रसकेसाथ मिलाकर मकोय, निर्गुण्डी, पुनर्नवा, गोहरमुण्डी इनप्रत्येकके बायोंसे १-१ भावना देकर अदरखकारस, शुद्धचीकाय, सहिजनवी जङ्कारस, अदरखकारस इनकीरुमसे १-१ भावनादेकर वैरकी शुद्धीके बराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली २० कालीमिर्चीके चूर्णकेसाथ मिलाकर तत्तद्गोहरानुपानकेसाथलेनेसे समस्तज्वर, पाण्डु, शूल, मन्दार्मि, प्रहणी, कफरोग, वातरोग, शूरम, अरुचि, पित्तरोग, द्वन्द्वज, श्रोतोत्र, कास, खास, नाना-तरहके विषमज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै । खानेको छाछ-भात देना । दूधपीनेवाले बच्चोंकेलिये यह बहुतहितकरहै ॥ ५८ ॥

### ५९ पञ्चामृतसरः (पञ्चमः)

सूतं मृतं तथा चात्रं वक्षं तापञ्च कान्तकम् ।

मेलयित्वा समांशेन मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ॥ २६२ ॥

घर्षितां जलयोगेन घटीमेकाञ्च चूर्णयेत् ।

भक्षितो बहुमात्रो हि कृष्णाक्षौर्देण संयुतः ॥

कासभ्यासाग्निहन्त्याशु तमः सूर्योदये यथा ॥ २६३ ॥

र. प्र. छ., र. चं., कासेबासे च ।

भाषा—पारा, अन्नक, वक्ष, ताम्र और कान्त इनप्रत्येककी-

भस्म समभागमें लेकर पीतुंवारके रससे १-२ रोज मर्दनकर इसकी-

बराबर सुगन्धवाला (हिबेर सं., तगरगंडोला गु.)काचूर्ण मिलाकर

एकघटीसममर्दनकर सुखाकर चूर्णकरके रखछोड़े । इसमेंसे ३-३

रत्तीकी मात्रा बौध्दपहरी पीपल और मधुकेसाथ देनेसे कास,

खास, पीनस, हस्तपादादिदाह, स्वरमेद, अरुचि, जीर्णज्वर

इनसबको यह हस्ततह नष्टकरताहै जैसेकि सूर्यराजदय अंधेरेको

नष्टकरताहै ॥ ५९ ॥

### ६० पञ्चामृतसरः (षष्ठः)

शुद्धसूतस्य भागैकं भागौ द्वौ गन्धकस्य च ।

भागद्वयं मृतं तात्रं मरिचं दशमागिकम् ॥ २६४ ॥

मृताम्रञ्च चतुर्मासं भागमेकं विषं क्षिपेत् ।

अम्लेन मर्दयेत्सर्वं मापैकं पातकासनुत् ॥

अनुपानं लिहेत्सौर्देयिमीतकफहन्त्यचम् ॥ २६५ ॥

भे. र., वै. क., कलाधिकारः ।

भाषा—शुद्धपारा १ मा., गन्धक २ मा., ताम्रभस्म २ मा.,

मरिच १० मा., अन्नभस्म ४ मा., शुद्धवछनाग १ मा., रेणु

सर्वरा काष्ठान् पूर्नहर अन्तराग्रे १-२ रोज मर्दनहर १-१  
मारेदी गोतिरे बनावर रणोडे । इनमेमे १-१ गोती बहेदेदी  
छातेह पुन और मधुधपाय देनेमे बाजराय भिगुहोलाहे  
और भद्रगानविरोधे देनेमे प्रायः सभीरोगोंको दूरकराहे ॥६०॥

### ६१ पश्चात्तरसः ( सप्तमः )

भस्मीभूतमुपपन्तारदिनहृन्मूत्रमत्तयेः प्रमातः,  
संपृष्टैस्त्रितयप्रपमिमिहसाम्भोर्विपुतः कटुस्तिः ।  
निर्गुण्डीदशमूलयष्टिरजनीप्योराऽऽर्द्रकैर्भाषिता,  
गोलीहृत्य चिशोपिता निगदितः पश्चात्तराग्न्या रसः ॥  
नातेन सत्तराः कोऽपि रसोऽस्ति भुवनत्रये ।  
निहन्ति सकलामोघान् भयरोगमिश्राऽप्युतः ॥२६७॥  
सर्वरोगहरः सुनस्तच्छ्रेयोऽनुपाननः ।

अर्थ पश्चात्तरा नृणां भिद्ररानामिषाऽमृतम् ॥२६८॥

सो. र., नि. र., र. थं, ज. सो. त., थ, रणायन सो., सो. त.,  
र. का., र. र., छये ।

भाषा—गुणन १ भा., रजन २ भा., ताम ३ भा., पारद  
४ भा., अजगराथ ५ भा., त्रिफला, त्रिफळ, त्रिजान, त्रिजत्र,  
नागरमोषा वंश १-१ भागनेछर कारीकपुनंहर पूर्णरोगोंमें  
मिलाकर १-२ पहर गुणा मर्दनहर कादहन, निर्गुण्डी, दस-  
मूल, त्रिफळ, हल्दी, तोट, मिर्च, पीपल, और भद्रग इनके  
छापोंमें १-१ भागनादेकर १-२ रसीकी गोतिरे बनावर  
अच्छीतरह गुणाकर रणोडे । इनमेमे १-१ गोती ताम्रदोश-  
मुपपन्तारदेनेमे समन्वोगोंको यह क्षमप्रह नष्टकराहे अने  
भयरोगोंको पक्षेभ नष्टकराहे । देवताओरेलिये अने अमृत  
वरकाराहे वैदेदी यह रोगियोंको उपकाराहे ॥ ६१ ॥

### ६२ पश्चात्तरसः ( अष्टमः )

स्पर्शरौप्यरविपन्नगलोहं

चन्द्रदृक्षितचतुःशरभागम् ।

मर्दितं तनुतरं दिनमेकं

भायितं मकरपिसरसेन ॥

यल्लमात्रमसिलज्यरदान्तये

शार्कराऽऽर्द्रकरसेन ददीन ॥ २६९ ॥

नि. र., र. स, र. शं., रणायन, र. का, वै. पि, सो, ज्वरा-  
पिहार ।

भाषा—गुणभागम् १ भा., रजनभागम् २ भा., तामभागम्  
३ भा., नागभागम् ४ भा., लोहभागम् ५ भा., केसर एकदिनसूरी  
मर्दनकर मकरके पित्तमे यमालाभाकिहर १-२ रसीकी गोतिरे  
बनावर गुणाकर रणोडे । इनमेमे १-१ गोती छार और  
अदरसके रसकेसाय देनेमे यह समस्तज्वरोंको दूरकराहे ॥६२॥

### ६३ पश्चात्तरसः ( नवमः )

पारदश्च क्रियाशुद्धं तुल्यं शुद्धञ्च गन्धकम् ।

अज्रकान्तु द्वयोस्तुल्यं त्रिभिस्तुल्यस्तु शुम्भुलुः ॥२७०॥

सर्वाशिमृतासत्त्वं भापयेदौषधेः पृथक् ।

निर्गुण्डीगोक्षुरच्छिद्राफाफिलामग्न्याहप्रिजे रसैः २७१

सप्तधारं ततो युज्याऽहानरक्ते त्रिषल्लक्षम् ।

कोकिलाऽऽग्न्यस्य मूलानां पानीयमनुपाययेत् ॥२७२॥

नि. र., रणायनं., सो. र., वै. पि., पातके ।

भाषा—शुद्धास और गन्धक १-१ भा., अज्रकमम २ भा.,  
शुद्धगुण्डु ४ भा., शुद्धीगत १ सर्वरी बनावर लेसर निर्गुण्डी,  
गोक्षुर, गिनेय, तालमगानेजीरह, इनप्रत्येक रोगोंमें ७-७  
भागमर्दनकर १-१ रसीकी गोतिरे बनावर रणोडे ।  
इनमेमे १-१ गोती ताम्रगानेदी जड़के पानीकेसाय देनेसे  
यह बाजराको दूरकराहे ॥ ६३ ॥

### ६४ पश्चात्तरसः ( दशमः )

दममाक्षिकः स्याऽऽस्रकान्तमसम् प्रयेशयेत् ।

रसे सहेधि सप्तार्द्रं मूलिकारसमर्दिताम् ॥ २७३ ॥

तां पिष्टि यन्त्रयोगेन पचेत्पश्चात्तराह्णाय ।

रसोऽयं मधुमर्पिर्गर्भा युक्तः सर्वरुजाहरः ॥ २७४ ॥

र. र. थ, रणायन ।

भाषा—एकभागशुद्धरसमेंको गलाकर गिरी छोटसुद्धके पात्रमें  
दमनार रसमें १ भाग शुद्धास डाले फिर सोनामागी, कान्त-  
लोह, बज्राप्रधम्य १-१ भाग मिलाकर दिव्यमूलिकाओंके  
रसमें ( दिव्यमूलिकाओं रसेन्द्रपूषामग्निरसिमें बैसनेना ) यथा-  
साम ७-७ रोज मर्दनकर पिष्टीबनाय बारावामुष्टमें बन्दकर ६-७  
कपडिमी देकर गुणाकर बाजुरायनमें रस ४ पहरकीबडीआंचसे  
पकावे, स्वाश्रुतीकलदेनेसर निहालकर रणोडे । इनमेमे १-१  
रसी अपरा योग्यभात्रमें मधु और पीकेसाय देनेसे यह सम-  
स्तरोगोंको नष्टकराहे ॥ ६४ ॥

### ६५ पश्चात्तरसः ( एकादशः )

स्पर्शोऽङ्कं शुद्धमादाय पातितं स्येदितं रसम् ।

तल्लमप्ये विनिश्चिय मर्दयेदौषधद्वयेः ॥ २७५ ॥

शुद्धदुग्धैः शारोदुग्धैरेकतकद्वयेः ।

चन्द्रवह्नीचाऽऽनुकर्णारुणधत्तकरद्वयेः ॥ २७६ ॥

यतः समस्तैर्व्यस्तेष्व मर्दयेत्तं दिनत्रयम् ।

ततश्च पीतयेणीजैश्चन्द्रवह्नीरसेन च ॥ २७७ ॥

पचमेतैश्च सम्मथं नष्टपिष्टं रसं धरेत् ।

दिनपटुं प्रमृष्टैवं यन्त्रे सोमानले क्षिपेत् ॥ २७८ ॥

त्रिदिनं तं पचेद्यन्त्रे पुनरुद्धृत्य मर्दयेत् ।

पातनं मर्दनं त्वेवं यावद्भजति भस्मताम् ॥ २७९ ॥

तावदेवं चोद्वेदीमाश्रित्य भस्म जायते ।

पलं भस्मीकृतात्सूतालोहमसम् पलन्तथा ॥ २८० ॥

छण्णाम्नसत्त्वमसंस्कं पलं प्रांशं शिलाजतु ।

एकं पलं किशोरस्य गुग्गुलोक्ष पलन्तथा ॥ २८१ ॥

पतत्सर्वं खल्वमप्ये मर्दयेदतियज्ञतः ।

शिलाजतुरसेनैव करण्डे विनिवेशयेत् ॥ २८२ ॥

वह्नुपञ्चकमानेन मधुसर्पिर्गुतो रसः ।

प्रयोज्यो रोगराजस्य मूलच्छेदचिकीर्षुणा ॥ २८३ ॥

एवं संसेव्यमानोऽयं रसेन्द्रो रोगराजजित् ।

त्रिभिर्मसैर्न सन्देहः पद्मिः स्यान्न पुनर्मयम् २८४

वर्षद्वयप्रयोगेण वलीपलितहा भवेत् ।

एष पञ्चामृतो नाम्ना रसेन्द्रः परिकीर्तितः ॥ २८५ ॥

पथ्यं मृगाङ्गवज्ज्येमुपचरोऽपि तादृशः ।

स्वसंवेद्यादिशास्त्रोक्तरीत्या सोऽय प्रकीर्तितः ॥ २८६ ॥

रोगराजप्रणाशार्थं सम्प्रदायप्रयोगतः ।

शुद्धचीत्रिकलाकारैर्दशमूलभवेस्तथा ॥ २८७ ॥

संस्कृतो गुग्गुलुः प्रोक्तः किशोर इति वैद्यके ।

क्षायतां सम्प्रदायेन सर्वथातनिवारणः ॥ २८८ ॥

रसालं, क्षयाधिकारः ।

भाषा—युष्मन्तस्तत्कारकियेहुए पारेको खरलमें डाल भुव-  
रक, शाखोट (सीहोर) और आक इन प्रत्येकका दूध सोमरुता  
( थोरवेल, पोखंदर । *Sarcostemma Brevi-*  
*stigma*, इ. ) मूपाकर्णी, कालाधरा इनके जलग २ और  
मिलेहुए द्रवसे ३-३ रोज मर्दनकर पीलेयन्दलकेफल और  
सोमरुताके रसोंसे ३-३ रोज मर्दनकर नष्टपिष्टी बनाकर डमरू-  
यन्त्रमें रस तीनरोजकी अग्नि देकर ऊर्ध्वपातनकरे । स्वास्ती-  
तलहोनेपर यन्त्रको उपाङ्कर ऊपर लगेहुएऔर नीचे बचेहुए  
पारेको इक्का मिलाय पूर्ववत् मर्दनकर उड़ावे । इसपरह  
जबतक सम्पूर्णपारा तलस्थ न होजाय तबतक करताजाय ।  
फिर यह पारदमस, लोहमस, कृष्णाश्रकसत्तयमस शिलान्तु,  
केशोरगुग्गुलु ये प्रत्येक १-१ पल लेकर खरलमें इन्के मर्दनकरे,  
जगोली बघनेलायरुहोजाय तब १५-१५ रत्तीकी गोखियें  
बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली मधु और पीकेसाथ  
लेनेसे तीनमहीनेमें रोगराज ( राजवदम ) नष्टहोताहै और ६  
महीनेके सेवनकरनेसे पुनस्तथानकामय बनाताहै । दोषपेके  
प्रयोगसे वलीपलितसे रहितहोजाताहै इसमें पथ्य और उपचार  
सब मृगाङ्गीतरह समझना । यह स्वसंवेद्यादिरहितप्रयोगकी  
रीतिसे और सम्प्रदायके क्रमसे कहागयाहै । शुद्धची त्रिकला  
और दशमूल के हाथसे शुद्धकियेहुए गुग्गुलुको किशोरगुग्गुलु  
कहेतेहै इसमें यातनाशकशक्ति अधिक होजातीहै ॥ ६५ ॥

### ६६ पञ्चामृतरसः ( द्वादश )

गन्धकः पारदः शुद्धो मृतं नामं विष तथा ।

मरिचं शङ्खनामिख समानेताम् चिन्तयेत् ॥ २८९ ॥

मुञ्जाद्वयमितो देयो नास्त्वाकर्णप्रपूरणे ।

शृङ्गेररसेनाऽयं त्रिदोषप्रयकसमुत् ॥ २९० ॥

उपरितस्य हितं सूतो रोगघ्नः स्तम्भनाशकः ।

रसः पञ्चामृतो नाम सर्वरोगहरो भवेत् ॥ २९१ ॥

र.का, राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्धगन्धक और पारा, नागमस शुद्धवज्रनाग ।

मरिच, शङ्खनामि ये सब समभाग लेकर १-२ पहर खरलकर  
रखछोडे । इसमेंसे अदरखके रसकेसाथ २-२ रत्ती नाक तथा  
कानमें डालनेसे त्रिदोषवञ्छय, वास, ज्वर, स्तम्भ इनका नाश-  
करताहै ॥ ६६ ॥

### ६७ पञ्चामृतरसः ( त्रयोदशः )

मृतरसपलमेकं सत्त्वमेकं गुडध्या-

स्त्रिकटुकपलमुष्णं रक्त्विस्य वैव ।

त्रिफलपुरकट्टकीनेत्रसह्यापलानि

इति मिलितसमस्तं सौरसारेण घृष्टम् ॥ २९२ ॥

घृतमघुसितमिश्रं मर्दितञ्चैकरात्र

प्रतिदिनमिह खादेन्मापकाणां दशैव ।

हरति विविधरोगान् राजरोगञ्च ण्डु-

हृदयजठरशूलं श्वासकासाऽग्निमान्धम् ॥ २९३ ॥

शिरसिजगुदरोगाऽशांसि गुल्मोदराणि

हरति किल चिरोत्थान्याशुक्रप्रादिकानि

चलिपलितविनाशो वज्रकायो वलिष्ठो

रविशशिसमकालं चाऽऽयुराप्नोति विद्वान् ॥ २९४ ॥

रसेन्द्रम, सर्वरोगः ।

भाषा—पारदमस १ पल, शुद्धचीसत्त्व १ पल, त्रिकटु,  
रक्त्विक, त्रिफला, गुग्गुलु और कटुकी २-२ पल लेकर सबको  
कटकपछानकर शिलान्तुकेसाथ १-२ रोज मर्दनकर मुखाका  
इसकी बराबर घृत, मधु और क्षार मिलाकर क्षिप्रमाण्डमें  
रखछोडे । इसमेंसे १०-१० मासे तत्तद्वगहरानुपानकेसाथ देनेसे  
राजरोग, पाण्डु, हृद्रोग, जठर, शूल, श्वास, कास, मन्दाग्नि,  
शिरोरोग, गुदरोग, अर्श, गुल्म, उदर, चिरोत्थङ्ग, वलीपलित  
इत्यादि दुस्तररोगोंको यह नष्टकर दीर्घायुको देताहै ॥ ६७ ॥

### ६८ पञ्चामृतरसः ( चतुर्दश )

शुद्धगन्धकसूतो च मासिकं फान्तलोहकम् ।

अन्नकञ्च समंशञ्च वह्निकायेन पेयेत् ॥ २९५ ॥

पथ्य क्षीरौदनं देयं तापे वधीभुशर्कराः ।

पञ्चामृतरसो नाम सर्वज्वरनिपूदनः ॥ २९६ ॥

वा, ज्वरः ।

भाषा—शुद्धपारा गन्धक, सोनामाटी, कान्तलोह, अन्नक  
इनकोमसमें समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकवलीमें मिला  
कर चित्रककेजापसे १-२ रोजमर्दनकर ३ रत्तीसे ६ रत्तीतककी  
गोलियें बनाकर रखछोडे । इसमेंसे १-१ गोली समयोचितानु  
पानकेसाथ देनेसे यह समस्तन्यारोंको नष्टकरताहै । अत्यन्तदाद  
मालमहोनेपर दही, ईश और क्षारका प्रयोगकरे पथ्यमें दूध  
चावल दवे ॥ ६८ ॥

### ६९ पञ्चामृतरसः ( पञ्चदशः )

मृतसूताऽम्रलोहानि वह्ननागौ सम पूषम् ।

सर्वतुल्यं चलिं दत्त्वा मर्दयेदारनालकैः ॥ २९७ ॥

तालमूलीशतावयवोर्गोक्षीरेण विदारिका  
घाराह्यज्ञाश्वगन्धानां मर्दयेत्सप्तधा पुनः ॥ २९८ ॥  
भूधरे च पचेत्पश्चात्स्याद्गुशीतं समुद्धरत ।  
द्विगुञ्जो रसरज्जेन्द्रः सर्वरोगक्षयान्तकृतः ॥ २९९ ॥  
घलीपलितनिर्मोचो सेवितः सन् जराञ्जयेत् ।  
प्रमेहं ग्रहणीञ्चार्शः क्षयं कुष्ठं हलीमकम् ॥ ३०० ॥  
नाशयेन्नात्र सन्देहो यथा सूर्योदयस्तमः ।  
शतवर्षाधिकस्यापि पुंसो रेतो विवर्धनः ॥  
आमघाताऽस्त्रिदालञ्च रसः पञ्चामृतो हरेत् ॥ ३०१ ॥  
रससागर, रसायने ।

भाषा—पारद, अश्रु, लोह, वस्त्र और नाग इनकी भस्मों सम-  
भाग, इन सबकी बराबर शुद्धगन्धक मिलाकर काञ्ची, कालीमुसली,  
शतावरी, गोदुग्ध, विदारी, वाराही, अजगन्धा (बन्ई), अस-  
गन्ध, इन प्रत्येकके रसोंसे ७-७ बारमर्दनकर गोलाबनाय सुपा-  
वर घारावसमुद्धरितं घन्दकर भूधरयन्त्रमें ४ पहरी अभिसे पकावे ।  
स्वाङ्गशीतलहोनेपर निरालम्बर रखओके । इसमेंसे २-२ रती  
उचितानुपानकेसाय देनेसे यह क्षयादि समस्त रोगोंको नष्टकरता-  
है । घली, पलित, प्रमेह, ग्रहणी, अर्श, क्षय, कुष्ठ, हलीमक,  
आमवात, अस्थिशूल इन सबको नष्टकर दीर्घायुको करताहै ॥ २९९ ॥

### ७० पञ्चामृतसरः ( चकादि ) ११

शुद्धसुतस्य गन्धस्य तालं तालं सतैलकम् ।  
सम्मर्द्य लोहपत्रि च निक्षिपेद्वल्कात्रिकम् ॥ ३०२ ॥  
तयोः समञ्च केदारं ताम्रभस्माऽखिलैः समम् ।  
व्योषिष्ठतुपलैः सार्धं कृत्वा भृङ्गजलैः सह ॥ ३०३ ॥  
मरिचप्रमिता कार्या वटी घर्मेण शोषयेत् ।  
सन्निपाते च वाते च प्रतिश्रुधये च पीनसे ॥ ३०४ ॥  
कफघातभये रोगे शूलैः मन्दानले तथा ।  
अतिसारे ग्रहण्याञ्च सर्वत्रेणममरुदहै ॥  
चक्रपञ्चामृतो नाम हितो नृणामियेध्वरः ॥ ३०५ ॥  
रससागर, रसायने ।

भाषा—शुद्धपारा, और गन्धक १-१ तोला लेकर लोहेके-  
पात्रमें नीलवर्णकजलीकर बटुतेलेसे एकरोजमर्दनकर अम्लराष्ट्रीसे  
१ रोजमर्दनकर फिर कालीमिट्टी २ तो, ताम्रभस्म ४ तो और  
त्रिकटुकचूर्ण ४ पल लेकर सबको इके मिलाय भमरके रससे  
२-२ रोजमर्दनकर मरिचवरावर गोलियें बनाकर धूपमें सुखावर  
रखओके । इसमेंसे १-१ गोली तप्तद्रोमोचितानुपानकेसायदेनेसे  
सन्निपात, वातरोग, प्रतिर्याय, पीनस, कफातरोग, शूल,  
मन्दाभि, अतिसार, ग्रहणी, छेम्बवातरोग इन सबको यह नष्ट-  
करताहै ॥ ३०० ॥

### ७१ पञ्चामृतसरः ( सप्तदशः )

पूर्वं यानि विशोघितानि च पुनः  
कान्ताऽग्नशुल्बानि च,

पकान्येव हरेद्य गन्धकसमा-

न्येतानि सम्मेलयेत् ।

तच्चूर्णं सघृतञ्च शोधितरसं

शास्त्रक्रमाद्वै भिषक्,

तस्मिंश्च स्थिरमानसः सुविधिना

क्वाथं सुतप्तं क्षिपेत् ॥ ३०६ ॥

पञ्चामृतमूलैः दशमूलेनाऽऽवर्गमूलैः ।

मधुसज्जीवनीमार्कवविदारिमूलैः च क्वाथः ॥ ३०७ ॥

गुड्वी हस्तिरुर्णी च मुशली धावणी तथा ।

शतावरी च पञ्जैताः काथः पञ्चामृतो मतः ॥ ३०८ ॥

कपमकजीवकयुक्तं मेदायुग्मञ्च ऋद्धिबृद्धौ च ।

काकोलीद्वयसहितं काथः कथितोऽऽवर्गस्य ॥ ३०९ ॥

श्रीपर्णिका च वृहती च यस्ततःशुद्धी,

व्याघ्रप्रिमम्यशुफनासकशालपर्णः ।

विल्वञ्च गोशुल्बकमेव सुशुष्टपर्णी,

काथो बुधैश्च कथितोऽदशमूलसज्जः ॥ ३१० ॥

ज्वलनस्य तत्सर्वं शनैः शनैरेव पचनीयम् ।

प्रमाततश्चाऽऽरम्भितमस्तं याति दिवाकरे यावत् ३११

पाराऽव्यस्तानसमर्थं ज्ञात्वा तत्रैव चित्रकं शृङ्गीम् ।

त्रिकटुकचूर्णञ्च तथा रसमानं तद्विनिक्षिपेत्प्राज्ञः ३१२

गुडपारुसमानेन च वह्निस्यै तान्यौषधानि भिषक् ।

उत्तारणीयमधर्ममौ संस्थापनीयञ्च ॥ ३१३ ॥

रसेन्द्रम्, र, रसायने ।

३१०-पूर्वं धनारम्भे यानि साधनानि च पचिष्यमाणानि विशोषितानि  
मर्दादिभिर्विनिक्षिप्यापारितानि पुनैश्च पुन विशोषितानि भस्मीकृतानी-  
त्यर्थः । अतस्त्वेतत् सजीवकर्णार्थं परान्येकेति विशेषणं दत्तम् । तानि यानि  
स्वप्राप्त्या कान्ताऽग्नशुल्बानि इति श्रीणि, चतुर्णां गन्धक, श्रीपर्णिका  
पञ्चम, ज्ञेया शास्त्रोक्तिरेणैव पर्याप्तं सन्नाम पुनर्भावात् दातव्येति रह-  
स्यमवगतमर्थम् । रसावतारं तु “रसगन्धकत्रिम्यस्तुल्यं लोहं विमर्दयेत् ।  
पञ्चामृताऽवर्गमिवा दशमूलेन वा पुनः ॥ काथं कृत्वा यथाकारं सैन्दवीय  
मुहुर्मुहुः स्फूर्तिर्वि दीपकेन निक्षिप्याऽऽवसर्पार्कः । रम्यतुल्यं त्रिकटुकं चित्र  
कञ्च विनि क्षिपेत् ॥ गुडतुल्यो वातवानः सिद्धमस्तसामवेत् ॥” इति पठेन  
विल्वशुभा प्रदर्शिता सा धानपूर्णा वा स्थानमानपूर्णा वा रसादिभिः क्षुभीभि  
र्जिवातनीयम् ॥

भाषा—वान्तलोह, अश्रु और ताम्रभस्म १-१ तोला,  
गन्धक ३ तो, शुद्धपारा ३ तो, लेकर पारोपनरनी नीलवर्ण-  
कजलीमें सबको मिलाकर घृताफलोहेकी बजाहीमें धेरके कोय-  
लेपर गलाकर ताजे गोबरपर रखेहुए केलेके पतेपर ढालकर  
दूसरे केलेके पतेसे दयाकर गोबरसे दयावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर  
निरालम्बर बारीकचूर्णकर लोहेरी कड़ाहीमें ढालकर अग्निर  
ज्वावे फिर पञ्चामृतमूलशय, दशमूलशय, ऋद्धिबृद्धकाथ,  
मीठीडोडी, गंगरा, विदारीमूल इनका अष्टमादावशिष्ट उष्णकाथ  
थोड़ा २ देकर प्रत्येकसे १-१ पहरीपकावे, एककेबाद दूसरा  
काथडाले । सूर्योदयमें वास्त्वम्बर सूर्यास्तपर सबने कार्योंमें  
पकासवे फिर चित्रक, काकड़ासोंगो, त्रिकटु इन सबमगलकर

कपङ्गानवर्णकर ९ तोले कड़ाहीमें डालकर पकावे, यहध्यान रखके कड़ाहीमें नीचे लगने ॥ पावे, जसमुखी चाशनीके सदृश होजाय तब नीचे उतारले, स्वाङ्गशीतलहोनेपर १-१ माशेकी गोलियें बनाकर रखोडे ॥ इनमेंसे १ से ३ गोलीतक दुष्टप्राणुपानकेसाधदेनेसे ऋष्यजिह्वादि समस्तदुष्ट दूरहोतेहैं । गिलेय, हस्तिकर्णपलाश, मुसली, गोरखमुण्डी, शतावरी यह पञ्चामृत कायहै । बेलगिरी, सोनापाठा, गंभारी, पाटला, अण्णी, शालपर्णी, पृष्ठर्णी, गोखरू, दोनोंकटेरी यह दशमूलहै । काकोली, क्षीरकाकोली, जीबक, कपभक, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, बुद्धि यह अष्टवर्गहै ॥ ७१ ॥

### ७२ पञ्चामृतसरः ( अष्टादशः )

रसगन्धकवङ्गाऽर्धं लोहभागं समांशकम् ।  
पञ्चवक्त्रेण सम्प्रोक्तः पञ्चामृतसोत्तमः ॥ ३१४ ॥  
पञ्चवल्लमिमं खादेत्कणाक्षौद्रिणं संयुतम् ।  
धातुक्षयाग्निमान्ये च कासं पञ्चविधन्त्या ॥ ३१५ ॥  
जीर्णज्वरमजीर्णञ्च शोफपाण्डुहलीमकम् ।  
अनुपानाऽनुयोगेन नाशयेन्नात्र संशयः ॥ ३१६ ॥  
रसायनसं., धृष्ये ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, वङ्ग, अभ्रक, लोहइनकीभस्में सब समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर १-२ पहरोटकर रखोडे ॥ इसमेंसे १५-१५ रत्तीवीमात्रा मधुपीपल अथवा तप्तद्रोणहरानुपानकेसाध खानेसे धातुक्षय, अग्निमान्य, ५ प्रकारका कास, जीर्णज्वर, अजीर्ण, शोफ, पाण्डु, हलीमक इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ७२ ॥

### ७३ पञ्चामृतसरः ( ऊनविंशः )

मृतं शुल्वं मृतं तीक्ष्णं मृतं स्वर्णञ्च तुल्यकम् ।  
सर्वतुल्यं गन्धकञ्च शुद्धं तद्वत्प्रमदयेत् ॥ ३१७ ॥  
पुटेद्रजपुटे घातमेकं सिद्धो भवेद्रसः ।  
एष पञ्चामृतो नाम्ना मुखरोगनिधारण ॥ ३१८ ॥  
बाष्पताल्यादिशमनो बलीपलितनाशनः ।  
मुखरोगी त्यजेन्नित्यं लघणञ्चोष्णमोजनम् ॥  
कफकारि च यत्सर्वं मिष्टान्नञ्च दधोनि च ॥ ३१९ ॥  
र. म. मा. ना. वि. मुखरोगे ।

भाषा—तावा, लोहा, सोना, तुल्यइनकीभस्में १-१ भाग, शुद्धगन्धक ४ भा, लेकर पानवर्गकेसरसे १-२ रोज मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आवेदे, स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखोडे ॥ इसमेंसे १-१ रत्ती समयोचितानुपानके साध देनेसे ओष्ठ और तालुकेरोग, बलीपलित इनसबको यह नष्टकरताहै । पच्यमें लगन, उष्ण, बफकारी, मिष्टान्न और दहीको छोड़कर उचितवस्तुका भवनकरे ॥ ७३ ॥

### ७४ पञ्चामृतसरः ( विंशः )

जातीफलं जातिपत्रं लवङ्गं केसरन्त्या ।  
चातुर्जातयशुण्डयौ च पिप्पली मरिचानि च ॥ ३२० ॥

चित्रकं पिप्पलीमूलं वरी मूलन्तु वंशजम् ।  
सर्वं पिष्ट्वा सुसुक्ष्मञ्च वाससा परिशोधयेत् ॥ ३२१ ॥  
लोहचूर्णमथाऽर्धं वा ताम्रभस्म च बह्वकम् ।  
रसराजञ्च नागञ्च चूर्णस्याऽर्धं प्रयोजयेत् ॥ ३२२ ॥  
नागवल्लीरसेनैव ह्यथवा माक्षिकेण च ।  
गुटिका तस्य कर्तव्या माषद्वयप्रमाणिका ॥ ३२३ ॥  
दोषमग्निं बलं वीक्ष्य यथोक्तं भक्षयेद्बुधः ।  
गोदुग्धस्याऽनुपानञ्च क्षुण्णञ्चैव विशेषतः ॥ ३२४ ॥  
वर्धनं सर्वधातूनां धीर्यबुद्धिबलप्रदम् ।  
घृष्टभाकान्तिरुचिदमग्रेः सुदीप्तिकारकम् ॥ ३२५ ॥  
कफरोगहरञ्चैव बुद्धिशानादिकारणम् ।  
बन्ध्या च लभते गर्भं पण्डोऽपि पुत्रपायते ॥ ३२६ ॥  
नपुंसको याति पुंस्त्वं रामाः कामयते शतम् ।  
यज्ञकायः शुद्धधातुर्विद्यदृष्टिस्तुजायते ॥  
जराव्याधिधिनिर्मुक्तो वर्षसेवी यदा भवेत् ॥ ३२७ ॥  
यं से., रसायने ।

भाषा—जायफल, जावित्री, लौंग, केसर, चातुर्जात, सोंठ, पीपल, मरिच, चित्रक, पिप्पलामूल, शतावर, बडालोचन सब सम भागलेकर कपङ्गानवर्णकर रखले फिर लोहभस्म अथवा अभ्रक-भस्म, ताम्र, वङ्ग, पारद और नागभस्म, ये पाकों मिलकर पूर्ण चूर्णसे आषेप्रमाणमें मिलाकर पानकेरस अथवा मधुसे १-२ दिन घोटकर २-२ माशेकीगोलियें बनाकर रखोडे ॥ इनमेंसे १-१ गोली अथवा दोष और अग्निजल देकर माना कायम-कर उष्णगोदुग्धकेसाध देनेसे धातु, वीर्य, बुद्धि, बल और रुचिबलकाहास, मन्दान्नि, कफरोग, बुद्धिमान्य, बन्ध्यात्वदोष, पण्डत्व, दृष्टिदोष इन्सबको दूरकर बुद्धिपेको दूरकरताहै ॥ ७४ ॥

### ७५ पञ्चामृतसरः ( एकविंशः )

कर्म रसाङ्गन्धकतद्वच कर्म  
विमर्द्य खलेऽङ्गकमेव तावत् ।  
क्षेप्यं तथा ताप्यमयोरजश्च  
गव्येन चाऽऽज्येन विमिश्र्य किञ्चित् ॥ ३२८ ॥  
शरावयुग्मस्यमतो मृतं तत्  
समुद्भूत सर्वमपि प्रयत्नात् ।  
पांशुमर्षेण च निधाय पात्रे  
तदेव पात्रं समुद्धा प्रलिम्पेत् ॥ ३२९ ॥  
मन्दंमन्दं यन्निना क्षाययेत्-  
द्यावद्यामानां त्रयं स्वाङ्गशीतम् ।  
ग्राह्यं देयं रक्तिकेकप्रमुदचा  
यावन्माषो नाऽधिकं मानवेभ्यः ॥ ३३० ॥  
वृत्त्या घन्देर्दीपनं हन्ति रोगान्  
पाण्डुरीक्षोन्माददुर्गाममहान् ।  
पित्तं साऽम्लं साऽतिसारं पित्तञ्च  
सद्यः शूलान् निग्रहण्यामयाञ्च ॥ ३३१ ॥



अयं हि पञ्चामृतनामधेयो

रसेन्द्रयोगः क्षयरोगहारी ।

वाताऽस्रकुण्ठं श्वयथुं च हन्यात्

स्वयोगयुक्तः सकलान् विकारान् ॥ ३३२ ॥

र. सु. क्षयादौ

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक अन्नक सोनामाखी और लोह-भस्म ये सब समभाग लेकर पारे गन्धक की नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर थोड़े गायके पी का प्रक्षेप देकर मर्दनकर शरावसम्पुष्टमें बन्द कर ४-५ कपड़मिट्टीदेकर अच्छीतरह सुखनेपर लावपुटकी अग्नि दे फिर स्वादशीतलहोनेपर निकालकर तुलसी प्रशुतिके स्वर-समें एकदोरोज मर्दन कर सुखाकर पुन कजली कर आतसी शीथीमें भरकर बालका यन्त्र में बन्द कर तीन प्रहरकी मन्दा-मिमें पकावे स्वादशीतल होनेपर निकाल रखछोड़े इसमेंसे १ एक रत्ती उचिताऽनुपानके साथ आरम्भकरे और रोज एकएक रत्ती बढ़ाकर एक मासकी मात्रा कायमकर उचितसमयतक खानेसे मन्दाग्नि, पाण्डु, हीहा, उन्माद, बवासीर, अम्बपित्त, ज्वरादितिसार, सय शूल, संपहणी, वातरक्त, शोथ, क्षयादि सम-स्तरोगोंको यह बहुत शीघ्र नष्टकरता है ॥ ७५ ॥

७६ पञ्चामृतरसायनम्

भस्मसूताऽध्रवङ्गाऽप्योयुक्तं द्विजं शिलाजतु ।

तद्वारामधुना सेव्यं द्विमासं सर्वमेहहृत् ॥ ३३३ ॥

पञ्चामृतमिदं धृष्यं सुभगञ्च रसायनम् ।

स्वयोगयुक्त्या कृच्छ्राऽहमशुक्लपाण्डुक्षयापहम् ॥ ३३४ ॥

वरास्थाने भवेद्वाग्नी कुर्याद्वा गुणसत्तमाम् ।

केवलं वाऽप्यधुना मेहघ्नी बलवर्धनी ॥ ३३५ ॥

र. सि., मेहे ।

भाषा—पारद, अन्नक, वङ्ग, लोह इनसबकी भस्में समभाग, इनसबसे द्विगुणबद्ध शिलाजतु मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ या २ मास लेकर त्रिफलाकेचूर्ण और मधुके साथ देनेसे यह सम-स्तप्रमेहोंको नष्टकरता है । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ इसका प्रयो-गकरनेसे मूत्रकण्ठ, पथरी, शुष्कपाण्डु और क्षय नष्टहोतेहैं । अनुपानमें त्रिफलाके स्थानमें आबले अथवा हरे वा केवलमधुसे कामलेसेकहे । यह रसायन धातु औरआयुको बढ़ानेवालीहै और खानेमें बन्धप्रद नहींहै ॥ ७६ ॥

७७ पञ्चामृतलोहगुग्गुलुः

रसगन्धकताराऽध्रमाक्षिकार्णः पलपलम् ।

लोहस्य द्विपलञ्चापि गुग्गुलोः पलसप्तकम् ॥ ३३६ ॥

मर्दयेदायसे पात्रे दण्डेनाऽप्यायसेन च ।

कटुतेलसमायोगाद्यामह्वयमतन्द्रितः ॥ ३३७ ॥

मायमात्रप्रयोगेण गदा मस्तिष्कसम्भवाः ।

स्नायुजा वातजाश्चापि विनश्यन्ति न संशयः ॥ ३३८ ॥

यं पञ्चामृतलौहाख्यो गुग्गुलुर्न हरेज्जदम् ।

नासौ सजायते देहे मनुजानां कदाचन ॥ ३३९ ॥

भै. र., परिशिष्ट ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, रजत, अन्नक, सुवर्णमाक्षिक इनकीभस्में प्रत्येक १ पल, लोहभस्म २ पल, गुग्गुलु ७ पल लेकर लोहेके बर्तनमें सोहेके ढँडेसे थोड़ासाकड़वातेल डालकर दोपहरतक लगातार मर्दनकर १-१ मासकी गोलिमें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे मस्तिष्करोग, स्नायु, वातव्याधि इनसबको यह नष्टकरताहै । स्त्रीमें ऐंठाकोटीरोगनहींहै जिसको यह (पञ्चामृतगुग्गुलु) नष्ट-नहींकरसकताहै ॥ ७७ ॥

७८ पञ्चामृतलोहम्

कनकमास्करताप्यधनायसां

यदि रजस्त्रिफलाम्बुपरिप्लुतम् ।

खरमयूखविशोपितशोपितं

दलितमाज्यसितामधुयोजितम् ॥ ३४० ॥

हृत्ति हृद्रुजमासमीरणं

क्षयमुदारमुरःक्षतपीनसम् ।

प्रकुरते रमणीरमणीयतां

हृतहृदां सुहृदां रतिपादवम् ॥ ३४१ ॥

लो. प. (स.), ना. वि., क्षये ।

भाषा—सुवर्ण, ताम्र, सोनामाखी, अन्नक, लोह इनसबकी भस्में समभागलेकर त्रिफलाके काँसे कड़ीधूपमें कईभावनाएं देकर कपड़छान चूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे २ या ३ रत्तीकी मात्रा पी, शर्कर और मधुकेसाथ मिलाकर खानेसे हृद्रोग, आम-बाद, क्षय, अत्यन्तबड़ाआ उर.क्षत, पीनस, नपुंसकता इन-सबको यह दूरकरताहै । स्त्रियोंके सौन्दर्यको बढ़ाताहै । शृङ्गार रससे शून्य हृदयोंकोभी रतितत्पर करताहै ॥ ७८ ॥

७९ पञ्चामृतवटी

पारदं गन्धकं ताम्रमन्नकं मरिचानि च ।

समभागमिदं चूर्णं चाद्वेरीरसमर्दितम् ॥ ३४२ ॥

मर्दितं हि रसे भूयो जयन्तीसिन्धुवारयोः ।

भावनाऽपि च फर्तव्या गुञ्जापरिमिता यदी ॥ ३४३ ॥

ततोदकाऽनुपानेन चतस्रस्तिल एव धा- ।

वहिमास्ये प्रदातव्या वटयः पञ्चाऽमृताः शुभाः ३४४

र सं, र. सु, र. क., र. र., अजीर्ण ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, ताम्र, अन्नकभस्म, मरिचके सब समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजली में मिलाकर खड़ी तिलतियाके रखसे २-४ रोज मर्दनकर जैत और निरुं ण्डीके स्वस्वकी १-१ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलिमें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे ३ अथवा ४ गोलिदें गन्धनर्णके साथ देनेसे मन्दाग्नि, शुल्म, यक्ष्म, प्लीह बीजैन्द्र इन्दि रोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ७९ ॥

८० पञ्चवासकपाकः

पञ्चवासः प्रस्थमेकं क्षीरे द्रोणमिने पचेत् ।

घृतप्रस्थसमायुक्तं विपचेन्मृदुवाहिना ॥ ३४५ ॥

खण्डं शुद्धं तुलार्धञ्च प्रस्थार्धञ्च मधु क्षिपेत् ।  
 क्षिण्णभाण्डे विनिक्षिप्य स्थाप्य सर्वं प्रयत्नतः ३४६  
 चातुर्जातं लघ्वह्नानि पिण्णली च पुनर्नवा ।  
 नागार्जुनी स्वगुप्ता च गोधुरं पिष्टुमात्रया ॥ ३४७ ॥  
 मज्जिमा चाऽध्वगन्धा च हाक्षमात्रं तथैव च ।  
 नागवल्लीसमुद्भूतं चङ्गाप्रकसमं तथा ॥ ३४८ ॥  
 लोहं शुल्लं तथैकैकं शाणकद्वयमानकम् ।  
 धीरासत्त्वं तवक्षीरं पलाधञ्च प्रकल्पयेत् ॥ ३४९ ॥  
 बालकं चन्दनं मांसी कर्पूरं वंशलोचनम् ।  
 जातीफलं जातिपत्री केदारं तगरं तथा ॥ ३५० ॥  
 पलमात्रं प्रदातव्यं महाभ्याधिनिवारणम् ।  
 कासं श्वासं तथा पाण्डुं प्रमेहस्य विनाशनम् ॥ ३५१ ॥  
 पित्तोद्भवं महादोषं मूत्रकृच्छ्रञ्च दारणम् ।  
 ये चान्ये शुक्रजा दोषा एव सर्वाग्निनाशयेत् ॥  
 बलवीर्यकरः पुंसं पत्रवासाऽवलहेहकः ॥ ३५२ ॥  
 वि र. भ., पा. व., महान्यायौ ।

टि०—अत्र पत्रवास्येन क्षारिण्यो ग्रहीतव्यं, गुर्गरमाषाया  
 क्षारिण्यद्वयेन पत्रवामेति मान्ना प्रमेहे ।

भाषा—एस्सेरमार्दकेचूर्णको १६ सेरगोदुग्धमे पकावे, उसमे  
 १ सेर गोघृत डाले, जब मावा तैयारहोजाय तब ५० पल खाड  
 डालकर चादानीबाले । स्वाहशीतलहोनेपर ८ पल मधु मिलाकर  
 चिन्ने बर्तनमें रखोदे । इसमें चातुर्जात, सौंय, पीपल, पुन-  
 र्नवा, छोटीदूधी, देवांचकेबीज, गोखरू, मजीठ, अजगन्ध  
 येसन १-१ तोला, पानकीजड़, वङ्ग, अन्नक, लोह-ताम्रमम्म  
 १-१ माटे, गिलोयसत्तब, तीपूर २-२ तोले, सुगन्धवाला,  
 चन्दन, जटामांसी, कपूर, वंशलोचन, जायफल, जावित्री, केदार,  
 तगर येसन १-१ पल डालकर मिलाकर रखोदे । इसमेंमे  
 १-१ तोला अथवा अग्निमल देवापर मात्रा लेनेमें कात, भाग.  
 पाण्डु, प्रमेह, पित्तोष, नर्पकर मूत्रकृच्छ्र, कुऽअध्वगन्धरोगो,  
 इनमयरो यह नष्टकरताहै ॥ ८० ॥

### ८१ पथ्यादिलोहम् ( प्रथमम् )

पथ्या लोहरजः शुण्ठी तच्चूर्णं मधुसर्पिषा ।  
 परिणामोद्भवं शूलं सद्यो हन्ति त्रिदोषजम् ॥ ३५३ ॥  
 र. र., र. प्र., यो व., दो, रगायनं, नि. र., र. वि., यो  
 म., च. द., भा. प्र., यो. र., वै द., र. का, १ मा., ग. नि., परि  
 णामदले । पुत्रवित्कणा अधिकतया हर्षयते ।

भाषा—हर्, लोहमम्म मोट, सबलमगालेकर मिलाकर  
 रखोदे । इसमेंमे १-१ मात्रा मधु और पीकमाय लेनेमे  
 त्रिदोषज परिणामदल नष्टोताहै ॥ ८१ ॥

### ८२ पथ्यादिलोहम् ( द्वितीयम् )

तुल्या अयोरजः पथ्या हरिद्रा शौद्रसर्पिषा ।  
 चूर्णिताः कामली लिप्ताट्टडशीर्षेण चाऽभयाम् ॥ ३५४ ॥  
 च. तं., नि. र., च. द., वै वि., दो, कामलायाम् । वै वि.,  
 अयोरजः प्रभृति चूर्णम् ।

भाषा—लोहमम्म, हर्, हन्ती येसब समभागलेकर मिलाकर  
 रखोदे । इसमेंमे १-१ मात्रा अथवा वयोबलानुसार मात्रा  
 मधु और पीकमाय लेनेमे कामलारोग नष्टोवे अथवा इधने  
 अभावमें शुद्ध और मधुके साथ हर्का चूर्ण देवे ॥ ८२ ॥

### ८३ पथ्यादिलोहम् ( तृतीयम् )

पथ्यारजः सममयोरजसा विषकं  
 गोमस्रवे समशुद्धं विधिवत्पुक्तम् ।  
 शूलं निहन्ति परिणामसमुद्भवं-  
 न्नागोरीयजलमिवातिविबुद्धमेतः ॥ ३५५ ॥  
 लो. व. ( व. ), परिणामशुले ।

भाषा—हर् और लोहचूर्ण समभागलेकर अट्टगुने गोमूत्रमे  
 धीरे २ पत्रवे, पाकहोनेपर इसरीचरानर पुरानागुडमिलाकर  
 रखोदे । इसमेंमे १ माशमें ३ मासेतक समयोचिगतुपानके-  
 साथ लेनेमे परिणामदलको यह हस्तह नष्टकरताहै निमतह  
 गहोदन वेदुये पापको नष्टकरताहै ॥ ८३ ॥

### ८४ परमेश्वरो रसः

रसं वज्रं स्वर्णकान्ते मुण्डञ्च मारितं समम् ।  
 माक्षिकं गन्धकं शुद्धं सर्वं जम्भीरजैर्द्रवेः ॥ ३५६ ॥  
 संसाहं मर्दयेत्तलवे तत्रोलं चाऽग्नितं पुट्टे ।  
 भूधरे दिनमेकान्तु ख्यातः सिद्धरस परः ॥ ३५७ ॥  
 गुञ्जैर्न मधुना लेहं चर्पान्मृत्युजरापहम् ।  
 दिव्यकायां नरः सिद्धो भवेद्विष्णुपराक्रमः ॥ ३५८ ॥  
 श्वेतपौनर्नवं मूलं क्षीरपिष्टं सदा पिबेत् ।  
 मक्षयेद्वा सितालाघं क्रामकं परमे रसे ॥ ३५९ ॥  
 र. मं, रगायने ।

भाषा—शुद्धधारा, हीरा, गुञ्ज, कान्त, मुण्ड इनरी भस्मे,  
 शुद्धसोनामासी और गन्धक समभागलेकर इको सारकर जम्भी-  
 रीके रसमें ७ रोजमर्दनकर गोला बनाय शरावयमुद्धमे बन्दर  
 एरदिन भूधरपत्रमें पकानेमे यह रस सिद्धहोगा । इसमेंमे १-१  
 रसी मधुसेसाय १ वर्षतक गानेमें दिव्यकाय होताहै इनलगे  
 नानेकेवा सफेद पुनर्नवासीज १ तोला दूधमें पीगररगीवे  
 अथवा शरवेसाय क्रामकचोर्कोक मेवनकरे ॥ ८४ ॥

### ८५ परशुरामकुटारो रसः

नागगन्धरसञ्चैव कर्परी तु द्विभागतः ।  
 वेदभागं चित्रकञ्च जम्भीररसमर्दितम् ॥ ३६० ॥  
 गुञ्जामात्रां तु चट्टिमां रघुपानेन सेनयेत् ।  
 सन्निपातकुलं हन्ति जामदग्न्यकुटारकः ॥ ३६१ ॥  
 वै वि., ज्वराधिहारे ।

भाषा—नागमम्म, शुद्धगन्ध और पारा १-१ भाग,  
 गर ० भा., चिट्ट ४ भा., मयका काइजान चूर्णर पारि-  
 न्यासी जीम्भीररसमे निगच्छ उर्बरीकेलमे १ रोजमर्द-  
 न १-१ रसीदी मोरिमे बनाय रखोदे । इसमेंमे १-१

गोली तत्तत्समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सतिपातके कुलको नष्टकरताहै ॥ ८५ ॥

### ८६ परहितरसः

श्वेतां पाठां जटां श्वेतां श्वेतां चैव पुनर्नगमम् ।  
पिप्प्रा जलेन ताः कवकैः प्रनुर्यान्महामृषिकाम् ॥ ३६२ ॥  
स्थालीमध्ये च तां क्षिपेत्वा क्षिपेत्संशोधितं रसम् ।  
क्षिपेदुपरि सन्पेय्य द्वयञ्जलिप्रमितं पटुम् ॥ ३६३ ॥  
पिधानं तन्मुखे दत्त्वा सन्निरुध्याऽतियन्ततः ।  
अधस्ताज्ज्वालयेद्बहिर्निधान्यामग्न्युनिक्षिपेत् ॥ ३६४ ॥  
यामद्वितयपर्यन्तं जातेऽथ शिशिरे ततः ।  
क्रोडकेनैः समाकुर्यात् सृतं पारदमाहरेत् ॥  
नचदेतायता भस्म पुनरेव पुटेऽसम् ॥ ३६५ ॥  
तद्भस्मातिथिर्यं विषं कृमिहरं व्योषोत्तमा गन्धजं,  
चूर्णी द्वादशाहाटकं खलु गुडो द्वात्रिंशदंशोन्मितः ।  
तत्सर्वं परिचूर्णितं प्रतिदिनं बह्विधनुभिर्मितं,  
चेर्यं हन्ति समस्तरोगनिबद्धानां शरिरमानिष ॥ ३६६ ॥  
विशेषात्सर्वकुष्ठपुष्पो रसोऽयं परिकीर्तितः ।  
ख्यातः परहितो नाम्ना भानुना भूरिभानुना ॥ ३६७ ॥  
र र स, कुष्ठे ।

टि०—श्वेतादीनां पारदस्वन मत्वेक फलमानम् ।

भाषा—सपेदकूलसीकोयल, पाठाकीजड़, कच, सपेदपुन  
नवा, इनसको जलमें पीस मृषावनाय अन्दर घोघनकियाहुआ  
पाराडालकर मृषाको हड्डीमें रखदे, मृषाके ऊपर भारीकपिस्ता  
हुआ ३२ तोले सेंधानमकडालकर हड्डीकासुहवदकर चूलेपर रख  
ऊपरके टक्कनमें पानीभरदे फिर तीनपहरतक बड़ीआचदे । स्वाज्ञ  
शीतलहोनेपर धीरजसे सम्पुटनोकोलकर सुअरके बालोंके कूचेसे  
हड्डीमेंसे पारेको निकालले । यदि इतनेमें भस्म न हुईहो तो  
फिर दुबारापूर्ववत्करे । फिर यह पारदभस्म २ तोला अतीस,  
झुबबछनाग, विडग, त्रिकटु त्रिफला और गन्धक १-१ तोले,  
पुरासायुष्ट ३२ तो, लेकर सगरी गोंजा कपड़झावचूर्णकर गुड़में  
१-२-१२ रसीकी गोलियें बनाकररखछोडे । इनमेंसे १-१  
गोली तत्तद्गोहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको इततरह  
नष्टकरताहै जैसेकि मरुट सर्पिका नाशकरताहै विशेषकर कुष्ठ  
और उपदशको दूरकरताहै यह सूर्यका वड्डाहुआहै ॥ ८६ ॥

### ८७ परानन्दो रसः

मृतसूताऽम्रकं गन्धं तुत्यं सप्तदिनावधि ।  
शिशुमूलदलेर्मयी तद्गोलं भाण्डमध्यगम् ॥ २६८ ॥  
रद्धा पक्त्वा लघुत्वेन शाककण्टैर्दिनावधि ।  
परानन्दो रसो नाम घृतेर्बल्ल सदा लिहेत् ॥ ३६९ ॥  
दिनैकं त्रिफलाक्याथैः कुष्ठं सम्पग्निसाधयेत् ।  
तच्छुष्कं चूर्णितं कर्पं मध्याज्याभ्यां लिहेद्बुध्नु ॥  
सवत्सरप्रयोगेण जीवेद्वेगविवर्जितः ॥ ३७० ॥  
र र स, रसायनम्, रसायने ।

भाषा—झुदपारा, अम्रकभस्म, गन्धक सवसमभाग लेकर  
नीलरंजकनीलीकर ७ दिनतक सहितनवीजड़ और पत्तोंकेरससे  
मर्दनकर कपड़मिष्टीदीहुईहड्डीमें बन्दकर सागसीलकडीसे ४  
पहरपकाकर स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे  
३-२ रसी धीकेसाथ खाकर त्रिफलाकेवाथमें पकायेहुए कुष्ठके  
चूर्णको १ कर्पं मधु और धीकेसाथ ऊपरसे बाटे । ऐसे एक-  
वर्षतक इसका प्रयोगकरनेमें मनुष्य रोगरहितहोकर दीर्घजीवी  
होताहै ॥ ८७ ॥

### ८८ परिकररसः ( माणाद्यगुटी )

नागर तालवज्रौ च प्रत्येकान्तु त्रिकार्पिकम् ।  
चिडसौवर्चलक्षारपिष्यत्यध्यापि कार्पिकाः ॥ ३७१ ॥  
पतच्चूर्णीकृतं सर्वं गोमूत्रस्यादके पचेत् ।  
साम्ब्रीमृतं गुटीः कुर्यादस्या त्रिपलमाक्षिकम् ॥ ३७२ ॥  
यकृतलीहोदरहरो गुल्माराशौग्रहणीहृत् ।  
योगः परिकरो नाम्ना बह्विसन्दीपनः परः ॥ ३७३ ॥  
यो म, उदरे ।

भाषा—गोंठ, हरिताल, वज्रभस्म, विडनौन, सचल, यव-  
क्षार, पीपल ३-३ तोले लेकर सबका भारीकचूर्णकर ४ सेरगोमूत्रमें  
पकावे, माणाहोनेपर उतारकर रखदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर ३  
पल शहद डालकर ३-३ मासेकी गोलियें बनाकर रखछोडे ।  
इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्गोहरानुपानकेसाथ देनेसे यकृत,  
प्लीह, उदर, गुल्म, बवासीर, ग्रहणी, मन्दासि इनसबको यह  
नष्टकरताहै ॥ ८८ ॥

### ८९ परिस्राग्युदरहरो रसः

नमोलोदगन्ध शिलातमात्रकुष्ठं,  
रसव्योपनिम्वाग्निदीप्ताग्निपुष्कम् ।  
विषं शर्वरी तालमूल्या च पिष्ट,  
परिस्राविण हन्ति माक्षीकयुक्तम् ॥ ३७४ ॥

चि क, उदरे ।

भाषा—जत्रक, लोह, शामभस्म, झुडगन्धक, दाता, मैत  
सिल, कुठ, त्रिकटु, नीचनीछाल, चित्रक, मिलावा, झुडबल  
नाग, हल्दी, येसव समभागलेकर भारीकचूर्णकर तालमूलीके  
रससे मर्दनकर ३-२ रसीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इन-  
मेंसे १-१ गोली मधु अथवा मग्नानुपानकेसाथ देनेसे यह  
परिस्राग्युदरको नष्ट करताहै ॥ ८९ ॥

### ९० पर्पटीरसः ( महपपर्टी )

राले चतुःपलमिते द्रवितेऽग्नियोगा-  
त्सम्मेत्य शुक्लविषमर्धपलप्रमाणम् ।  
खल्वे क्षिपेत्तपदि पपटिका रसोऽयं,  
हन्यात्कफानिलमतिघ्नमवातिवेगान् ॥ ३७५ ॥  
सि भे म ज्वराधिकारे ।

भाषा—४ पल सपेदरालो मलकर आपापलसपेदसम  
लका भारीकचूर्णमिलाकर उसकीपट्टी बनाकर रातमें झां

दोतीनोन्मत्तमर्दनकर रजछोड़े । इसमेंसे आघोआघीरती सम-  
योचितानुपानकेसाथदेनेसे कफवातरोग, मतिभ्रम, वमन इत्या-  
दितोगोंको यह तत्क्षण दूरकरताहै । इसको बहुमतभावाकर वर्तना  
उचितहै, चैकको चाहियेकि ऐसी दवाइया रोगीको अपनेसामने  
खिलावे, दसवीसपुदिया इक्की बनाकर न दे ॥ १० ॥

### ९१ पलितारिरसः

रसगन्धाऽध्रताम्रञ्च कान्तलोहयुतन्तथा ।  
त्रिफलाभृङ्गनिर्गुण्डीपत्रै र्मर्द्य दिन पृथक् ॥ ३७६ ॥  
ततः सुमर्दयेदेभिः सिद्धोऽसौ पलितापहः ।  
त्रिफलाभृङ्गराजाभ्यां भापः पलितनाशनः ॥ ३७७ ॥  
मुत्पक्ष्वादिलेपेन व्यङ्ग्यकण्डुहिपूतनम् ।  
जयेत्कासीसतुत्याऽऽलरोचनाताक्ष्यंशैलकम् ॥ ३७८ ॥  
रक्तपत्रावरातार्क्ष्यशिलापकमजाघृतम् ।  
तत्राऽहिपूतनां हन्ति चिरोत्थामपि दुष्कराम् ॥ ३७९ ॥  
२. पलिते ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, अन्नक, ताम्र, कान्तलोह,  
इनकीभस्में समभागलेकर त्रिफला, भागरा औरनिर्गुण्डीकेपत्ते  
इनप्रत्येकके रस अथवा वाष्पसे १-१ रोज मर्दनकर १-१ मास-  
की गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिफला  
और भागराकेरसकेसाथलेनेसे पलितको नष्टकरताहै । मुत्प, कक्षा  
प्रचलितन्यानोंमें त्रिफला और अंगरेके रससे लेपकरनेसे व्यङ्ग्य,  
कण्डू, अहिपूतन इनको यह नष्टकरताहै तथा कासीच, तुल्य, हरि  
ताल, गोरोचन, रसाञ्जन, मैनसिल इनका त्रिफला और अंगराके  
रसमें लेपकरनेसे पूर्वाक्षकार्यहोताहै । अथवा मेंहदी, त्रिफला,  
रसौत, मैनसिलइनके कल्क, काषादिसे कफायाहुआ बकरीका  
पी बहुतदिनकी दु आभ्य अहिपूतनाको नष्टकरताहै ॥ ९१ ॥

### ९२ पशुपतिचूर्णम्

सुरतक्षतमालौ व्यालदाह घरा च,  
तपनकनकपुष्पौ चापि गौरी विशाला ।  
समकृतशशिरेखं सूतभस्म प्रयुक्तम्,  
पशुपतिकृतचूर्णं श्वेतकुण्डं निहन्ति ॥ ३८० ॥  
६ चि, शिरे ।

भाषा—देवदाह, अभिलाम, चित्रकमुल, सारहली त्रिफ-  
ला, आकरीजइसीछाल, सत्यानाशीरीजइ अथवा रेवनचीनी,  
हल्दी, दन्त्रायग, पारदभस्म येसन समभाग, इनसबकीबराबर  
काउचीकीयोजोंका चूर्ण मिलाकररखछोड़े । इसमेंसे ३-३ मासकी  
मात्रा शुद्धरानुपानकेसाथ देनेमें यह भेदाग्नौ दूरकरताहै ।  
इसका काफ़ी सावधानरखा चाहिये ॥ ९२ ॥

### ९३ पाञ्चजन्यरसः

लोहाकांऽयं हृजभुजगं कासमर्दाऽम्बुपृष्टं,  
गुष्कं गोल पुट्य सुदृढं मूरणान्तस्त्रिगुणम् ।  
व्योषधेष्टागुडवहिलयुतं भक्षयेन्मासमात्रं,  
स्वर्गाय रोगाश्चयति जनयेदप्येनं पाञ्चजन्यः ॥ ३८१ ॥  
२. रति, सर्वरोगे ।

भाषा—लोह, ताम्र, अन्नक, पारा, नाग, इनकीभस्में सम-  
भागलेकर कर्तोजीके रससे १-२ रोजमर्दनकर गोलाबनाय पके-  
हुए सूरणभस्ममें भीतररस उसीकी डाटसेगन्दकर ६-७ वष  
इमिरीदेकर सुखाकर गजपुटकीआचदे, स्वादशीतलोहेपर  
निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती त्रिकटु, त्रिफला, गुड  
औरगन्धक समभागके ३ मासेचूर्णमें मिलाकर खानेसे १ मही-  
नेमें समस्तरोगोंको दूरकर अग्निको प्रदीप्तकरताहै ॥ ९३ ॥

### ९४ पाणिजङ्गुरसः ( प्रथमः )

नागवह्नौ समौ शुद्धौ द्रावयेत्खर्परोपरि ।  
भागमेकं रसं दत्त्वा बद्धं खल्वे विमर्दयेत् ॥ ३८२ ॥  
हालाहलं द्विभागञ्च पित्तेश्च परिमर्दयेत् ।  
सुह्रीचित्रकतायेन गुष्कोऽयं पाणिजङ्गुकः ॥ ३८३ ॥  
२. क यो, सतिपाते ।

भाषा—समभाग शुद्धनागवह्निको खपड़ेमें गलाकर एकभाग  
शुद्धपारा डालकर उतारले फिर १ रोजमर्दनकर दोभाग शुद्ध-  
छनाग मिलाकर पत्रपित्त, बृहदेकदूध और चित्रकके क्वाथसे  
१-१ भावना देकर गुप्ताकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रती  
समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तमिषातोंको दूर  
करताहै ॥ ९४ ॥

### ९५ पाणिजङ्गुरसः ( द्वितीयः )

शुद्धनागं शुद्धवह्नं द्रावितं खर्परोपरि ।  
शुद्धवृत्तान्तु संयोज्य मस्त्यपित्तेन मर्दयेत् ॥ ३८४ ॥  
गुडामात्रं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम् ।  
शम्भुना कथितः पूर्वं रस्तोऽयं पाणिजङ्गुकः ॥ ३८५ ॥  
२ क यो, सतिपाते ।

भाषा—समभाग शुद्ध नागवह्निको गलाकर १ भाग शुद्धपारा  
मिलाकर मछलीके पित्तसे १ रोजमर्दनकर १-१ रतीकी  
गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचिना-  
नुपानकेसाथ देनेसे यह सतिपातको दूरकरताहै ॥ ९५ ॥

### ९६ पाणिबद्धरसः ( वडवाभिः )

गन्धकं पारदञ्चैव भस्मलोहाष्टकं समम् ।  
जीरकस्य कषायेण मर्दितं याममात्रकम् ॥ ३८६ ॥  
कृषिकायां निनिक्षिप्य चालुकाग्निप्रयोजितम् ।  
गाढासौ प्रिदिनञ्चैव स्वादशीतलमुदरेत् ॥ ३८७ ॥  
गुडामात्रं प्रदातव्यं पेत्ये पादकरो रम्यतम् ।  
निहन्त्यात्सर्वपित्तार्तिं योगोऽयं पाणिबद्धकः ॥ ३८८ ॥  
६ चि, व रा, पित्तरोगे ।

टि०—मफेरायेंस गुजरीमणभवनका बज्रकनकाक विना व  
नियंनित्यस्य नाम न बह्वाभिरिति स्वपिनाम ल्यो नेव प्रथमा ए  
कुमरीदेवकस्य गुणभ्यां अथवा दत्ता पाञ्चजन्यको बह्वा  
वर्षे इत्यादि शुभेतिहेति ल्यपि प्रागुक्तपित्तदोषां हर्षां ल  
रित्यत्र प्रयोग इति बोध्यम् ।

भाषा—शुद्धपास और गन्धक, आलोलोहोंकी मसम सम-  
भाग लेकर इक्के मिलाय जीरेके काढ़ेसे १ पहर मर्दनकर  
सुखाकर ६-७ कपड़मिदीदीहुई आतशी दीशीमें डालकर बालुका  
यन्त्रमें तीनदिन खराभि देकर पकावे । स्वाद्वशीतल होनेपर  
निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती हाथपैरोंकी जलन  
तथा तमाम पित्तके विकारोंमें देनेसे सबको नष्ट करता है ॥९६॥

### ९७ पाणिबुडो रसः

पूर्वशुद्धो रसो प्राह्यो भस्मीभूतः पलात्मकः ।  
तावन्मानो गन्धकः स्याद्भागवेकत्र मर्दयेत् ॥३८९॥  
चित्रकस्य कपायेण भावयेदेकघासरम् ।  
दिनत्रयं प्रमुद्गोयान्मुशलीरसतस्तथा ॥३९०॥  
दिनानि सप्त सम्मर्द्य पश्चात्पितैश्च भावयेत् ।  
माहिषैः सप्तधा भाव्य काकपित्तैस्तथैव च ॥३९१॥  
सौकरैश्च तथा पित्तैः सप्तधा भावयेद्विपक्वम् ॥  
रसस्य पौडशांशेन शृङ्गिकश्च विपं क्षिपेत् ॥३९२॥  
तद्भावेन हार्द्रिमष्टमांशेन योजयेत् ॥  
मेघशृङ्गिकसज्ज वा चतुर्थांशेन योजयेत् ॥३९३॥  
सकुक् त्वर्धमानेन घटसनां समं क्षिपेत् ॥  
निधिप्य मध्ये निक्षिप्य द्यात्पश्चाच्च भावनाः ॥३९४॥  
मारिचैः सलिलैः सप्त पिप्पलीसलिलैस्तथा ॥  
शुण्डीजीराऽऽर्द्रकरसैश्चित्रकस्य रसैस्तथा ॥३९५॥  
पथं विभाव्य तं सूत पूर्वधूमपानकम् ॥  
कृत्वा सम्मर्द्य घटिकामार्द्रकस्य रसैः कुक् ॥३९६॥  
बल्लप्रमाणा घटिका सन्निपाते प्रदीयताम् ॥  
आर्द्रकस्याऽनुपानन्तु कुर्षीताऽपि पूर्ववत् ॥३९७॥  
यावच्छीतं भवेत्तापशुद्धकं ढालयेत्तथा ॥  
सम्यक् शैत्ये समापन्ने शरीरे रोगिणस्तदा ॥३९८॥  
दधिमत्तं भोजयेत्तं खण्डशर्करया युतम् ॥  
अतिश्लेष्मोत्तरेणैवस्याहुग्धमत्तं प्रयोजयेत् ॥३९९॥  
शाकार्यमार्द्रकं द्यात्कुस्तुम्बुरुजपलवम् ॥  
मातुलुङ्गस्ताऽऽपलायं सैन्धव तत्र निक्षिपेत् ॥४००॥  
घृन्ताकं भर्जितं कृत्वा शाकार्ये सम्प्रयोजयेत् ॥  
कर्पूरं चन्दनोशीरं निपिप्याङ्गं प्रलेपयेत् ॥४०१॥  
कर्पूरं दापयेच्छब्दोद्गोगिणस्तापशान्तये ॥  
शीतोदकेन सस्नाप्य सर्वमुष्णं विवर्जयेत् ॥४०२॥  
अयं पाणिबुडो नाम सन्निपातनिर्गन्तव्यः ॥  
देवीशास्त्रानुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥४०३॥

रसालं, ज्वराधिकारे ।

टि०—अस्मात्पूर्ववर्ति प्रतापल्लोहोरोरुति तत्र निर्दिष्टकियावद्व्याप्ति  
सम्बन्धमुपेयम् ।

भाषा—शुद्धकरके मसमकियाहुआ पास, शुद्धगन्धक दोनों  
समभाग मिलाकर चित्रकके काढ़ेसे १, मुखजीके रसेसे ३  
पित्तों ७ दिन मर्दनकर मैसा, कौआ और सूअरके

पित्तोंसे ७-७ भावनाएँ देकर इससे १६ वा हिस्सा शुद्धशृङ्गि-  
कविप मिलावे, उसके अभावमें आठवा हिस्सा हार्द्रिक  
मिलावे । इसमेंभी अभावमें मेघशृङ्गिकविप चतुर्थांश मिलावे ।  
इसके अभावमें शृङ्गिकविप अर्धभागमें मिलावे । शकुक्के  
अभावमें बल्लभाय समभागमें मिलावे । फिर इन सबको इक्केकर  
मरिच, पीपल, सोंठ, जीरा, अदरक, चित्र, इन प्रत्येकके रस  
अथवा बायोसे ७-७ भावनाएँ देकर बल्लका ऊपरके घड़ेके  
भीतर लेप देकर नीचेके घड़ेमें दशाश बल्लभागका चूर्ण पानीमें  
पीसकर लेप लगा दे । फिर दोनोंका मुद्ग बन्दुर चूल्हेपर रख  
दोपहरकी मन्द आंच दे जिसमें कि नीचेका विप जलकर तमाम  
धुआ समें न्यास हो जाय । स्वाद्वशीतल होनेपर अदरकके  
रसमें ३-२ रत्तीकी गोलियें बनाकर सुखाकर रखछोड़े ।  
इसमेंसे १-१ गोली इससे पूर्व कहे हुए लघुप्रतापल्लोहुर की  
तरह काममें ले अथवा अदरकके रसेसे १-१ गोली देकर मत्थे-  
पर पानीकी धारा दे । जब एनदम शरीर ठंडा पड़जाय तब  
शकर बालर दहीभात भोजन दे । यदि कफका अत्यन्त जोर  
हो तो दहीके स्थानपर दूध देवे, धाकेंमें अदरक और पनिया  
देवे । सटार्डमें बिजोरा, वमकमें सैन्धव तथा भुनाहुआवेगन  
देवे । कपूर, बन्दव और खसका शरीरपर लेप करे । ज्वर  
उतारनेके लिये बारम्बार कपूर खिलाव । ज्ञान शीतोदकेसे  
करावे । इसमें उष्णक्रिया सब वर्जितकरे, यह रस देवीशास्त्रके  
अनुसार बहुत सभालकर बनाया है । इसके प्रयोगसे तमाम  
सन्निपात नष्ट होते हैं ॥ ९७ ॥

### ९८ पाण्डुकथानोरसः

तुर्यताम्राऽञ्जलोहानां बल्लपूतेषु भस्मसु ।  
तुल्यहार्द्रिचूर्णेन गोमूत्रं पङ्कुरं पचेत् ॥४०४॥  
हंसमण्डूरतुल्यं सद्रव्यसंकेण चैज्जजेत् ।  
पाण्डुहलीमकश्चापि कथामात्रेण शिष्यते ॥४०५॥  
रसात्यनसारं, पाण्डुरोगे ।

भाषा—तुल्य, ताप, अञ्ज, लोह इनप्रत्येककी भस्मको  
कपड़ेमें छानकर समभागमें हल्दीका चूर्ण मिलाय ६ गुना  
गोमूत्र डालकर पकावे । यह हंसमण्डूरके समान । तैयारहोगा ।  
इसको गाबकी छाछकेवाय उचितमात्रामें देनेसे पाण्डु, और  
हलीमक, इनकी केवल क्यामात्र बेशरहजाती है ॥ ९८ ॥

### ९९ पाण्डुगजकेसरीरसः

रविभागान्तु मण्डूर तत्सम लोहभस्मकम् ।  
शिलाजतु तदर्थं स्याद्रोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ॥४०६॥  
पञ्चकोलं देवदारु मुस्ता व्योषं फलत्रयम् ।  
पृथगर्द्धं विडङ्गश्च पाकान्ते चूर्णितं क्षिपेत् ॥४०७॥  
पाययेद्दक्षमात्रन्तु तत्रेणऽल्पाशानो भवेत् ।  
पाण्डुप्रहृषिणमन्दाग्निशोथार्थासि हलीमकम् ॥  
ऊरस्तुप्रहृषिणमन्दाग्निशोथार्थासि हलीमकम् ॥४०८॥  
र वि, पाण्डुरोगे ।

भाषा—तामा, मण्डूर, लोहभस्म येसव समभागलेकर सवसे आधा शिलाजतु मिलाकर अठगुने गोमूत्रमें पकावे । जब पाक-  
तैयार होजाय तब पत्रकोल, देवदाह, नागरमोथा, त्रिफल, विडङ्ग ये प्रत्येक आधाआधाभाग मिलाकर रखडोई ।  
इसमेंसे १-१ तोला छालकेसाय दूबे और हल्का भोजनकरे तो  
पाण्डु, सङ्ग्रहणी, मन्दागि, शोध, चरासीर, हलीमक, ऊह-  
स्तम्भ, त्रिमि, फ्रीहा, गलरोग, येमन नष्टहोतें ॥ ९९ ॥

### १०० पाण्डुदलनरसः

हेमरौप्यरविस्तगन्धका-

स्तुत्यभागमिलिता विमर्दिताः ।

धातुमाक्षिरुयुता हिलोहका

देवदाहशितितोयमाचिताः ॥ ४०९ ॥

पाचिताः कमठयन्त्रके क्षणं

पाण्डुरोगदलनः प्रजायते ।

घल्लमात्रमशितो मरिचाऽऽज्यैः

पिप्पलीमधुयुतः भ्ययुञ्ज ॥ ४१० ॥

१., पाण्डुरोग ।

भाषा—मुषण, रजत, ताप्र इनकी भस्में, शुद्धपारा, गन्धक  
और सोनामासी सब १-१ भाग, लोहभस्म २ भा, केसर  
सबसे पाँचगुण्यहरी नीलवर्णरज्जलीमें मिलाकर देवदाह और  
अपामार्गके क्वाथोंमें १-१ रोज मर्दनकर सुसागर आतशी-  
कीदीमें भरकर एकपहरकी आगमें पकानेगे पाण्डुदलनरस  
तैयारहोगा । इसमेंसे ३-३ रसी मरिच और दीकसायदेभेसे  
पाण्डु, पीपल और मधुरेणाथ इन्हेसे शोध नष्टहोताहै ॥ १०० ॥

### १०१ पाण्डुनाशनरसः ( प्रथमः )

स्वर्णरोप्यमथ शाणमात्रकं

शुद्धताम्रमथ तत्समं कुरु ।

रसजरे सकलेन समन्तत्

पिष्टिकां कुरु विमर्ष गोलकम् ॥ ४११ ॥

गन्धकेन परिवेष्य गोलकं

पात्रयेद्य मतिमात्र मिश्रं सदा ।

भूमिमध्यनिहितं निवन्निप्रतं

यामपद्ममध्याऽष्टकन्ततः ॥ ४१२ ॥

गन्धमन्धमपि निक्षिपेत्पुष्टे

ष्वमत्र परिजालयेद्युधः ।

निम्बुजेन परिवेष्य पशुर्धनं

गन्धनूणमथ लोहचूर्णकम् ॥ ४१३ ॥

योजयेद्य पलमानतस्तनः

लोहपायसहरे पुष्टयेयः ।

पाचयेद्य निरविन्ययद्रिना

पाण्डुनाशनरसस्ततो भवेत् ॥

घल्लमस्य मधुपिप्पलीयुतं

लेदिनं सकलपाण्डुनाशकम् ॥ ४१४ ॥

१. प्र. म, २. ५, १, पाण्डुरोग ।

भाषा—मुषण, रजत, ताप्र इनकी भस्में ३-३ मासे, शुद्ध-  
पारा सखीबजार मिलाकर एकरोज मर्दनकर गोलाग्राय  
सखी बजार गन्धको किसी अम्लक्षरसमें पीसकर दूब-  
पर लपेटकर १-२ कपड़िमी लगाकर सुसागर भूचरयन्त्रमें  
बन्दकर ६ अथवा ८ पहरकी आंचदे जिसमेंकि गन्धक जलनाय ।  
वाद्यमें निरालर इसीतरह फिर गन्धकमें लपेटकर पूर्ववत्  
पकावे । इसतरह गोलेमें पशुगन्धक जारणकर शुद्धगन्धक और  
लोहचूर्ण १-१ पल मिलाकर लोहेके सम्पुटमें बन्दकर साधारण-  
पुष्टदेवे । स्वाज्ञशीतल होनेपर निकालकर १ पलगन्धक मिलाकर  
नीचूके रखसे मर्दनकर फिर बड़ी लघुपुष्टदे । ऐसे ३ पुष्टदेकर  
स्वाज्ञशीतल होनेपर पुष्टरस और चित्तके रसोंसे गन्धककुल  
घोटकर दोपुष्ट अलग २ दे । स्वाज्ञशीतल होनेपर निकालकर  
रगडोई । इसमेंसे ३-३ रसीकीनामा मधु और पीपलदेगाय  
देनेसे यह समस्त पाण्डुरोगको नष्टकरताहै ॥ १०१ ॥

### १०२ पाण्डुनाशनरसः ( द्वितीयः )

सूक्ष्मं ताम्रदलं विलिप्य बलिना स्नूनेन गाढन्तया,  
स्थालीमध्यगतं सुसाधितमिदं यामद्वयं वद्विना ।  
नागं गन्धकस्तयुतञ्च पुष्टितं चित्राऽऽर्द्रसन्निधितं,  
चूर्णीकृत्य सप्तं सुशोभनरसं संयोजयेच्छुद्धाग्नित्तपः ।

शोधपाण्डुककयातनाशने

रक्तिनेकपरिमाणतस्थयम् ।

सेवयेद्य लघु चात्रमोजनं

तेलमल्लयवणाऽऽमिषं विना ॥ ४१६ ॥

१. प्र. म, पाण्डुरोग ।

भाषा—शुद्धताम्रके बारीकपत्रोंको बराबरके शुद्धपारों  
साथ नीचूके रखमें मर्दनकरे । जबपारा पत्रोंपर चडनाय त  
पाँचही बराबर गन्धक नीचूके रखमें पीसकर पत्रोंपर लपेटा  
तब जलावे । सूतलेपर शरीरों इन्हींमें रस कराने शरापने एक  
फिर शुद्धनेमें गरिन्द्रन्दर कर एकवालिन तरेद रात  
अथवा पिगाहुआनमक भरे २ पहरकी कड़ी आचद । स्वाज्ञ  
शीतल होनेपर निकालकर रगडोई । इसीतरह शुद्धपात्रको ग-  
कडा पुष्टदेकर भस्माकरले फिर बराबरका गन्धक देकर नि-  
अदलकेगाय घोटकर छोटी २ टिकिया बनाय पुष्ट  
यम्पुटमें बन्दकर ३-४ मर कणोंकी आँचदेख र ६ ॥  
होनेपर निराकर फिर पुष्टकर घोटकर पुष्टदे पमे ना ।  
न हो सतत करे फिर पुष्टात्र ताप्र और यह नागम ॥  
कोमिलाकर चित्त और अदलके रखमें १-१ र-  
रगडोई । इसमेंसे १-१ रसी गमयोपिचुनानेगा ॥  
शोध, पाण्डु, कक, वायु इनसबको दद नष्टकराई पश्य  
भोजनद । तै, अम्ल, रस और माय भूचरगानिदे ॥

### १०३ पाण्डुपञ्चाननरसः

लोहाऽऽमकञ्च ताम्रञ्च पल्लवानि पृथक्पृथक् ।  
यिषट्क चित्रा दन्ती चयिषः कृत्वा मात्राक्रमेण ॥

चित्रकञ्च निशे द्वे च विवृता मानमूलकम् ।

कुटजस्य फलं तिका देवदारु चचा घनम् ॥ ४१८ ॥

प्रत्येकमेपां कर्पन्तु निक्षिपेत्पाकविज्ञिपक् ।

सर्वस्य द्विगुणं देयं शुद्धमण्डूरचूर्णकम् ॥ ४१९ ॥

गोमूत्रेऽष्टगुणे पक्त्वा सिद्धरीते प्रदापयेत् ।

भक्षयेत्प्रातस्तथाय चोणतोयाऽनुपानतः ॥ ४२० ॥

हलीमकं शोथपाण्डुमूरुस्तम्भञ्च नाशयेत् ।

रसायनवरञ्चैव बलवर्णाऽग्निकारकः ॥

यकृतं प्लीहगुल्मञ्च सर्वरोगहरः परः ॥ ४२१ ॥

भै. र, र च, पाण्डुरोगे ।

**भाषा**—लोह, अत्रक, ताम्र इनकी भस्म १-१ पल, त्रिफल, त्रिफला, दन्तीमूल, चव्य, कालीजीरी, चित्रकमूल, हल्दी, दारुहल्दी, निशोत, मानकन्द, इन्द्रजव, कुटकी, देवदारु, वच, नागरसोया ये प्रत्येक १-१ तोला लेकर कपडछानचूर्णकर रखछोडे फिर सबसेद्वनी मण्डूरभस्ममें अष्टगुणित गोमूत्र डालकर पकावे, जब घनहोनेलेगे तब उतारकर रखदे ठंडा होनेपर पूर्वांकचूर्ण मिलाकर १ माघेमे २ माशेतकरी गोखिले बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली गरमपानीके साथ प्रातःकाल देनेसे यह हलीमक, शोथ, पाण्डु, क्लृप्तम्भ, बल वर्णाग्निनाश, यकृत, प्लीह और गुल्म इन सबको नष्टकर दीर्घायु को करता है ॥ १०३ ॥

### १०४ पाण्डुरोगविध्वंसनो रसः

तारं ताम्रसुहेमसुतकसमं कृत्वा पृथग्मोलकं,  
ताप्य तुल्यकान्तमभ्रवरजो वैमान्तमेभिर्मुतम् ।  
इत्या खल्यतले सुमर्वितरसे व्याप्तिमुवर्षाभवे,  
नागिन्या घननादजेन मतिमान् कृत्वा पुनर्गोलकम् ॥  
तं पन्व वदरीरसेन सहसा यत्नेन सञ्चालये,-  
धावद्भस्म भवेद्विपाच्य च ततश्चल्यास्समुत्तारयेत्,  
पद्भ्याश्चमांशसक्तुकिपि गन्धाऽश्मचूर्णांश्चित,  
शुषुषु छुङ्करसेन घेतसमुत तत्पाण्डुरोगापहम् ॥ ४२३ ॥  
मातु. म, रसेन्द्र म, पाण्डुरोगे ।

**वृत्तार्थ**—तार, ताम्र, सुवर्ण इनका भारीकचूर्ण और शुद्ध कर्पूर समभागलेकर १-२ दिन भर्जनकर इसकी पिष्टी बनाकर करीर दाफ्पाखी, तुल्य, कान्तलोह, अत्रक, वैमान्त, इनप्रत्ये शीतोदके पारेकी बराबर डालकर भ्रुकटया, इंसिट, पान, अय पांचौलाई इनप्रत्येकेरसोंसे १-१ रोजमदनकर गोला देशीशाखाकर लघुपुष्पी आचदे । ऐसे चारआने देनकेवाद रस काड़ाहीमें रखकर चूहेपर चढावे और नीचे घेरवील हो आचदे गरमहोनेकेवाद घेरके पत्तोंका रस देकर चलाता संकेतसे इसकी चमकरहित भस्म होजाय तब नीच उतारले । मातलोहोनेपर इसतमामसे दत्ता दिसा शुद्धबलनाम और समभागमिलाकर रखछोडे । इसमेंसे १-१ रती विजोरा अथवा किन्नोरकेरसके साथ देनेसे यह पाण्डुरोगका नाशकरता है ॥ १०४ ॥

### १०५ पाण्डुरोगान्तकरसः (लोहरसः)

लोहभस्म द्विपलिक पलमेकञ्च पारदम् ।

पलार्धं गन्धकस्याऽपि त्रयमेकत्र मर्दयेत् ॥ ४२४ ॥

श्वेताद्भावनयाः सप्त जम्बीराद्भावनान्नयम् ।

चित्रकस्य द्वैर्भाव्य सप्तवारं पुनः पुनः ॥ ४२५ ॥

शुद्धवेरसेनैकमेकं निर्गुण्डिकारसैः ।

शिशुमूलरसेर्भाव्यं कासमर्दरसेन च ॥ ४२६ ॥

वातारिमूलतोयेन दशमूलेन च निधा ।

पाण्डुरोगान्तको नाम सर्वशोफनिवारणः ॥ ४२७ ॥

कासं श्वासं क्षयं हन्ति यहिमान्धं हरेद्भुधम् ।

पिप्पलीमधुना योग्यं पट्टलांश्चाऽस्य दापयेत् ॥

सर्वरोगनिवृत्त्यर्थमश्विनीदेवभाषितः ॥ ४२८ ॥

रसायनस, पाण्डुरोगे ।

**भाषा**—लोहभस्म २ पल, शुद्धपारा १ पल, शुद्धगन्धक २ कर्प लेकर तीनोंकी नीलवर्णकजलीकर अर्जुनके रससे ७, जम्बीरीसे ३, चित्रककेबाथसे ७, अदरक, निर्गुण्डी, सहिजनरी जड़कीछाल, कसौजी, एरण्डीकी जड़की छाल, इन प्रत्येकके स्वरसोंसे १-१, दशमूलक स्वरसस १ भावनाए देकर १ या २ मासेनी गोखिले बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली पीपल और मधुकसाय अथवा तप्तद्रोहदातुपानके साथ देनेसे पाण्डु, श्लोक, कास, श्वास, क्षय, मन्दाग्नि इत्यादिरो रोगों को यह नष्टकरता है ॥ १०५ ॥

### १०६ पाण्डुसूदनरसः (प्रयमः)

रसं गन्धं मृतं ताम्रं जयपालञ्च गुग्गुलुम् ।

समांशमाज्यसयुक्तं गुटिकां कारयेद्विपक् ॥ ४२९ ॥

एकैकां भक्षयेत्स्थित्य पाण्डुशोथप्रशान्तये ।

शीतलञ्च जलं चाम्लं यज्येत्पाण्डुसूदने ॥ ४३० ॥

र, स, र चि, भै र, र सु, र का, ध, नि र, वै चि, र च, भै सा, र कौ, यो म, र को, रसायनस, र सि, र क, र र स, र श, र (मा), पाण्डुरोग । र स, ध, भै र, र सु, र क ल, र र, र का, एषु ग्रन्थेषु द्वितीयस्थाने पञ्चाननवटी इति नाम । र र स, र को, एतयो ग्रन्थयो जयपालरस, इति । र क ल, त्रिनेत्ररस इति । र श, पाण्डुहरेति नाम ।

**टि०**—पञ्चाननवटी नाममधिकतया निरोधितम् । जयपालरसे तु "देवदास्यास्तु पन्चाश चूर्णं धीरेश वा जलैः । निश्चयान विप्रश्रित्य मामा त्पाण्डुरापहम् ॥" इत्यभि पाठः ।

**भाषा**—शुद्धपारा, गन्धक, जयालगोटा और गुग्गुलु ताम्रभस्म संसव समभाग लेकर पारेगन्धककीनीलवर्णकजलीमें मिलाकर शोधा धी डालकर घोटकर १-१ रतीकी गोखिले बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितदातुपानके साथ देनेसे पाण्डु और शोथ इनको यह नष्टकरता है । इनके प्रयोगमें ठंडा पानी और अम्ल छोड़द ॥ १०६ ॥

## १०७ पाण्डुसूदनरसः ( द्वितीय )

सूतं तीक्ष्णकमेव गन्धसहितं भागेन संवर्धितं,  
पश्चात्सल्वतले विमर्द्य विभिन्ना चूर्णीकृतगोलकम् ।  
कुप्यां संविनिवेश्य वै सुमृदुना सलेपितायां पचेत्,  
यामद्वादशमाघ्रकहिंसिकतायन्त्रेण वैद्यः सदा ॥४३१॥

प्रक्षिपेच्च चरशामलीरसं  
त्रैफलञ्च शुद्धवह्निःकाद्रवम् ।  
पाचयेच्च मृदुवह्निना दिने  
स्याद्गुणोत्तमं प्रगृह्य च ॥ ४३२ ॥

न्यूपणार्द्रकरसेन भावयेत्  
पाण्डुसूदनरसोऽयमोरितः ।  
शुष्कपाण्डुविनिवृत्तिश्रायको  
रोगराजहरणः प्रकीर्तितः ॥ ४३३ ॥

र प्र, सु, र च, र म मा, पाण्डुरोगे । र म मा,  
लोहसुन्दरोति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, लोहभस्म २ भा०, शुद्धगन्धक  
३ भा० लेकर नीलवर्ण कमलीकर ३-४ कपडमिठी दीहुई  
आतशी शीशीमें बालकर बालकायन्त्रमें १२ पहरतक पकावे ।  
स्याद्गुणोत्तम होनेपर सेमल, त्रिफला, गिलोय इनप्रत्येकके  
रसमें घोटकर बालकायन्त्रकी १ दिनआचदे फिर निकालकर  
त्रिकटु और अदरपके रसोंसे १-१ भावनादेकर रखछोड़े ।  
इसमेंसे ३-३ रत्ती समयोचिनानुपानकसाधनेसे यह पाण्डु  
रोगको नष्टकरता है ॥ १०७ ॥

## १०८ पाण्डुरीरसः

रसगन्धाऽम्रलोहानि मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ।  
तद्गोलकञ्च सख्यं पुटेदेयं पुटैस्त्रिभिः ॥ ४३४ ॥

चतुर्वर्णो रसो भुक्तो हस्ति पाण्डुश्च कामलाम् ।  
शोष हलीमकश्चैव बह्वैर्वृद्धिं करोति च ॥ ४३५ ॥

भै सा, र ( मा ), नि र, रसवि, र प्र, र सु, वि  
सा, रसायनस, र चि, र का, यो म, वै वि, पाण्डुरोगे ।  
योगमहार्णवे कुमारीस्वरसोऽनुपानत्वेन श्रुति ।

भाषा—शुद्धपारा औरगन्धक, अम्रक, लोहभस्म सब सम  
भागलेकर धीबुवारके रसमें १-२ रोज मर्दनकर गुलाबर शरा  
वसन्मुग्धमें बन्दकर लघुपट्टकी आचदे । इसतद्वितीनपुटे देकर  
रखछोड़े । इसमेंसे १२ रत्तीकीमात्रा समयोचितानुपानके साथ  
देनेसे पाण्डु, कामला, शोष हलीमक मन्दाग्नि येसब  
नष्टहोतेहैं ॥ १०८ ॥

## १०९ पानीयभक्तवटी ( प्रथमा )

त्रिवृता मुस्तकश्चैव त्रिफला न्यूपणन्तया ।  
प्रत्येकन्तु पल भागं तदूर्ध्वं रसगन्धकौ ॥ ४३६ ॥  
लोहाऽम्रकविडङ्गानां प्रत्येकञ्च पलद्वयम् ।  
पतत्सकलमादाय चूर्णयित्वा विचक्षण ॥ ४३७ ॥

त्रिफलाया कपायेण घटिकां कारयेद्विपक् ।  
एकैकां भक्षयेत्प्रातस्तकञ्चापि पियेदनु ॥ ४३८ ॥  
हन्ति शूल पार्श्वशूलं कुक्षिवस्तिगुदे रजम् ।

श्वासं कास तथा कुष्ठं ग्रहणीदोषनाशिनी ॥ ४३९ ॥  
र स, र चि, घ, व से, र का, र च, र सु, भै र,  
चि क, र र, र क, अम्लपित्ति । चि क भक्तवटीरतिनाम ।

भाषा—निशोत, नागरमोथा, त्रिफला, त्रिकटु १-१ पल,  
शुद्धपारा औरगन्धक आधाआधापल, लोहभस्म, अम्रकभस्म  
और विडङ्ग २-२ पलकर समका बारीक चूर्णकर पारेगन्ध  
ककी नीलवर्ण कमलीमें मिलाकर त्रिफलाकेकाठमें १-२ रोज  
घोटकर १-१ मासेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली छाछकेसाथ देनेसेउदरशूल पार्श्वशूल, कुक्षि वस्ति  
और गुदाकी पीडा, श्वास, कास कुष्ठ और ग्रहणी इनसबको  
यह नष्टकरतीहै ॥ १०९ ॥

## ११० पानीयभक्तवटी ( द्वितीया )

कुप्याऽम्रलोहमलशुद्धविडङ्गचूर्णं,  
प्रत्येकमेकपलिक विधिवद्विधाय ।

चक्ष्य कटुत्रयफलत्रयकेशराज-  
दन्तीपयोदचपलाऽनलघण्टकर्णाः ॥ ४४० ॥

मानोल्बकन्दबृहतीत्रिवृताः ससूया-  
वर्ता पुनर्नैविकया सहितास्त्वमीषाम् ।

मूलं प्रतिप्रति विशोध्यतमक्षमेक,  
चूर्णं तदूर्ध्वं रसगन्धकमेकसस्यम् ॥ ४४१ ॥

कृत्वाऽऽद्रकीयरससवलितञ्च भूयः,  
समिप्य तस्य घटिका विधिवद्विधेयाः ।

हन्त्यम्लपित्तमरुचिं ग्रहणीमसाध्यां,  
दुर्नामकामलभगन्दरशोथगुल्मान् ॥ ४४२ ॥

शूलञ्च पारुज्जनित सतताऽग्निमान्ध  
सद्यः करोत्युपचितिं चिरणप्यहोः ।

कुष्ठं निहन्ति पलितञ्च बलिं प्रवृद्धां  
श्वासञ्च कासमपि पाण्डुगदं निहन्ति ॥ ४४३ ॥

धार्यभ्रमार्सदधिकाञ्जितक्रमत्स्य-  
वृक्षास्तैलपरिपक्वमुजोयघेष्टम् ।

शृङ्गादविलग्वुडकञ्च टनालिकेर-  
दुग्धानि सर्वविदलानि चिचर्जयेत् ॥ ४४४ ॥

र स, र र, भै र, र क, र का, र चि, रसायनस  
ग्रहणायम् ॥

भाषा—कालाअम्रक, लोह, मण्डूर इनकीभस्मों अं  
विडङ्गलण्डुल येप्रत्येक ४ तोले लेकर कपडछानचूर्णकर चक्र  
त्रिकटु त्रिफला, भयरा, दन्तीमूल, नागरमोथा, पीपल, चिः  
कमूल, विष्टकण ( हंस अथवा बनगहा ), मानकन्द, जगल  
सुरज वनभागा, निशोत हुहुर या सूर्यमुखी, पुनर्नवा इ  
प्रत्येकका चूर्ण १-१ तोल, इनसबसे आधी पारेगन्धक



बजली मिलाकर अदरककेसमें १-२ रोज घोटकर १-१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत द्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे अम्लपित्त, अरुचि, असाध्य प्रहणी, बचासीर, कामला, भगन्दर, शोथ, गुल्म, शूल, परिणामशूल, मन्दाग्नि, कुष्ठ, बलीपलित, भ्रात, कास, पाण्डुरोग, इन्तसबको यह दूस्वरतीहै । इसके सेवनके समय जलमें रस्वाहुआ भात ( पखाल व ), मास, दही, काझी, छाछ, मछली, बोकम, और तैल इनका सेवनकरे । सिंघाहि, केल, गुड़, मरसा, नारि यल, दूध, सवतहकीदाल इनका त्यागकरे ॥ ११० ॥

### १११ पानीयभक्तवटी ( तृतीया )

विडङ्गकृष्णाम्रफलोद्घूर्ण

पलंपल ध्योपफलत्रयाऽचम् ।

सबहिमापाऽष्टकसख्यमेत-

त्पानीयभक्तस्य जलेन पिष्टम् ॥ ४४५ ॥

सार्धं चतुर्मापकमौदकाम्लं

पानीयमस्यत्रिवलानुकारि ।

अर्धांसि निर्णाशयति प्रसद्य

क्षिप्र जरानाशमपैति चित्रम् ॥ ४४६ ॥

टो, अमिमाम्ने ।

भापा—विडङ्ग, कृष्णाम्र और लोहभस्म १-१ पल, त्रिकटु त्रिफला, नागमोधा, चित्रकमूल येप्रत्येक ८ माशे लेकर कपडछान चूर्णकर भातकी काझीसे बारीक पीसकर ४॥ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली भातकी काझीकेसाथ लेनेसे अमिके अत्यन्त बलको करतीहै अर्ध और कुष्ठपिके दूर करतीहै ॥ १११ ॥

### ११२ पानीयभक्तवटी ( चतुर्थी )

रसोऽर्धमागिकस्तुल्या विडङ्गमरिचाऽम्रका ।

भक्तोदकेन सम्मर्धं कुर्यादुज्जासामां वटीम् ॥ ४४७ ॥

भक्तोदकानुपानेन सेव्या यद्विप्रदीपिनी ।

धार्यन्नमोजनञ्चाऽथ प्रयोगे साऽभ्यमिष्यते ॥ ४४८ ॥

ब द, नि र, र चि, रसायनस, यो म, अभिमाम्ने ।

र का, शूलाधिकार ।

भापा—विडङ्ग, मिरच और अम्रक समभाग, इनसबसे आधी पारदभस्म अथवा रससिन्दूर लेकर चावलकी काझी अथवा भातमें दोतीनरोज मर्दनकर १-१ रसीकी गोलिया बनाय सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली हाकिके अनु सार भातके पानीके साथ देकर पकाकर पानीमें रक्खेहुए भातका पच्य देनेसे शूल और मन्दाग्नि नष्ट होतेहैं ॥ ११२ ॥

### ११३ पानीयभक्तवटी ( पञ्चमी )

त्रिफलात्रिकटुकमुस्तकविडङ्गमहातककेशराजानाम्  
करिवर्तच्छददन्त्यस्तण्डुलिका पुनर्नवा त्रिवृता ॥ ४४९ ॥  
चित्रहिजीरचूर्णान्येकत्र कर्पमितानि कार्याणि ।

गन्धशिलाकर्पाथं गगनपल मास्ति विधिवत् ॥ ४५० ॥

अम्लशुक्तमक्तपयसि पक्वमा कुर्यादर्थमायिकां वटिका  
अम्ल धार्यनुपेयं कार्यं तदनु-त्रिहितं पथ्यम् ॥ ४५१ ॥  
कफातिदुष्टप्रहेनोत परमत्र भेषज दष्टम् ।

हन्त्यात्तदाम जात ग्रहणीगदगुल्मशूलरुजः ॥ ४५२ ॥

व से रसायनाधिकार, र का शूलाधिकार ।

भापा—त्रिफला, त्रिकटु नागमोधा, विडङ्ग, मिलावा, काला भगरा, गजपीपल, पत्रन, दन्तीमूल, कटिवालीचौलाईकी जड़, पुनर्नवाकी जड़, निशोत, चित्रक, दोनोजीरे ये प्रत्येक १ कर्प शुद्धगन्धक ८ माशे, निधन्द्र अम्रकभस्म ४ कर्प लेकर अच्छीतरह कपडछान चूर्णकर रात्रसिरका अथवा भातकी काझी सब दवासे अठगुनी डालकर पकावे । जबगोलीबघने खायक होनाय तब आधे आधे माशेकी गोलियें बनाय सुखा कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खदी काझीकेसाथ लेनेसे और काझीभातखानेसे कफातिदुष्ट अमि प्रदीप्त होताहै । इसके बराबर कष्टुट प्रहणीका । दूसरा औषध नहीं है इसके सेवनसे आमबात, प्रहणीरोग, गुल्म, शूल और पीडा ये सब दूर होतेहैं ॥ ११३ ॥

### ११४ पानीयभक्तवटी ( षष्ठी )

विडङ्ग पिप्पलीमूलं त्रिफला मुनिज फलम् ।

लोहक गन्धकं चित्रं पलार्धं चूर्णितं पृथक् ॥ ४५३ ॥

स्पृषणं चूर्णितं ब्राह्म सार्धं द्विपलिक पृथक् ।

अम्लमारिताऽम्रपल कर्पाथं पारदस्य च ॥ ४५४ ॥

अस्थिसहारनिगुण्डीनागबल्ल्याद्रैः शुभैः ।

रसैश्चतुष्पलैरेव भावयित्वा पृथक्पृथक् ॥ ४५५ ॥

यथाऽसि भक्षयेदनां वटीमनुपिघेज्जलम् ।

वारिभक्तञ्च भुञ्जीत कुर्यात्पूर्वोक्तकान्गुणान् ॥ ४५६ ॥

व से, रसायनाधिकार, र का शूलाधिकार

भापा—विडङ्ग, पिप्पलीमूल, त्रिफला, हिंमोरनकीगिरी, लोहभस्म, शुद्धगन्धक, चित्रकमूल, ये प्रत्येक २ कर्प सोंठ, मिरच, पीपल २॥-२॥ पल, अम्लकवासं माराहुआ अम्रक १ पल, शुद्धपारा ८ माशे, इन प्रत्येकका अलग २ चूर्णकर हडनोड, निगुण्डी, नागबला, अदरक इन प्रत्येकका १-१ पल रस डालकर क्रमसे घोटकर १-१ माशेकी गोलियें बनाकर रख छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अथवा यथाशिवल मात्रा देकर काझी अथवा भक्षाधिसासित जल पिलावे । मुखलगनेपर जला धिवासित भात खिलावे तो आमबात, ग्रहणी, गुल्म, शूल ये सब नष्टहोतेहैं ॥ ११४ ॥

### ११५ पानीयभक्तवटी ( सप्तमी )

अन्यत्र त्रिफला चित्र त्रिवृल्लोहितकुम्भकम् ।

एषां कर्पाधिकं चूर्णं प्रत्येकं तावदुन्मितम् ॥ ४५७ ॥

त्र्यूपणं लवणं पाक्य विडङ्गं कार्पिकं पृथक् ।

पलं कृष्णाऽम्रकञ्चैव मन्तर्दग्ध्या विनिः क्षिपेत् ४५८

शिलायां पेपणं कृत्वा सर्वमेकत्र योजयेत् ।  
 शिखर्याद्रूनिगुण्डोनागवल्गस्थिसंहता ॥ ४५९ ॥  
 रसैर्द्विपलिकैरेषां भागयित्वाऽक्षसम्भिताम् ।  
 कृतैकां भक्षयेत्प्रातरम्लवारि पिबेदनु ॥ ४६० ॥  
 यातयेत्पमाऽऽमयान्दन्ति बहिसाद् ऊरं वमिषम् ।  
 आमवातं जरत्पित्तं चारिभक्तवटी मता ॥ ४६१ ॥

यं. से. रसायनाधिकारे । र. का. शूलाधिकारे ।

**भाषा**—गाराहीके फल अथवा पिपलामूल, त्रिफला, चित्रक, निशोत, भेंसागुल ये प्रत्येक ८ मासे, त्रिकटु ३॥ कर्पं संधानमक, सचलनमक, विडङ्ग १-१ कर्पं पुटपाकसेमारा-हुआ काला अन्नक १ पल, रेकर सनका चूर्णकर इस्ते मिलाकर अपामार्ग, अदरक, निगुण्डी, नागरबेल, हडजोड इनप्रत्येकका रस २-२ पल लेकर अलग २ भावना देकर साधारणदवाइके बराबर (१ माथा) की गोलियें बनाकर रखजोडे । इनमेंसे १-१ गोली प्रातः काल काञ्चीकेशाथ लेनेसे वातस्फेज्मरोग, मन्दाग्नि, ज्वर, वमन, आमवात, परिणामशूल इनसबको यह तत्कालनष्टकरतीहै । इसमें कष्य जलाधिवासित भात देना-चाहिये ॥ ११५ ॥

### ११६ पानीयभक्तवटी (अष्टमी)

शुद्धौ गंधरसौ कर्पौ विडङ्गमरिचाऽऽर्द्रकाः ।  
 त्रिघृता त्रिफला बहिः कणा दन्ती पुनर्नवा ॥ ४६२ ॥  
 स्नुक्सीरं मानकुलिशयावाप्ररोगसण्डिकाः ।  
 प्रत्येकैकं पलं चूर्णमम्लपानीयकं हविः ॥ ४६३ ॥  
 आन्नं चतुष्पलं भस्म वैकीकृत्याऽऽर्द्रकामुना ।  
 त्रिफलापयसा भाव्या कौलार्धमानका वटी ॥ ४६४ ॥  
 भक्तौद्काऽनुपापानेन सेव्या बहिप्रदीपनी ।  
 अम्लपित्ताऽऽमयातादीन् हन्यादुग्धाग्रभोजनात् ॥ ४६५ ॥

यं से. रसायनाधिकारे । र. का. शूलाधिकारे ।

**भाषा**—शुद्धगन्धक और पारा १-१ कर्पं विडङ्ग, मिरच, अदरक त्रिफला, निशोत, चित्रकमूल, पीपल दन्तीमूल, पुनर्नवा, शूहरकादूष, मानकद, जगलीसुण, यवक्षार, कुष्ठ, खाड, चाव लकीचाञ्ची, पुरानाची, येसन १-१ पल, अन्नरुमस ४ पल, लेकर सबको इस्तेकर अदरक, त्रिफला और दूध इनकी १-१ भावना देकर ३-३ माशेकी गोलियें बनाकर रखजोडे । इनमेंसे १-१ गोली भक्षाधिवासित पानीके साथ देनेसे और दूधमात खानेसे मन्दाग्नि, अम्लपित्त और आमवातप्रशुतिरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ११६ ॥

### ११७ पानीयभक्तवटी (नवमी)

मानकन्दोऽध्वकर्णश्च त्रिघृता मुस्तक तुण्डिः ।  
 त्रिकटु त्रिफला भृङ्गमपामार्गश्च दाडिमम् ॥ ४६६ ॥  
 तुम्बी बृहत्तिका जातीद्वयश्च शतपुष्पिका ।  
 सूर्यावर्तस्तालमूली चूर्णमेपाञ्च कार्पिकम् ॥ ४६७ ॥

कर्पद्वयं विडङ्गानां बलेः पादोनरूपकम् ।  
 गुह्यच्यम्रकमण्डुरान् प्रत्येकं वेदकार्पिकान् ॥ ४६८ ॥  
 सुचूर्णमात्रकं वरुणपतितं काजिके क्षिपेत् ।  
 अम्ले पयसि वा पश्चादुद्धरेत्पञ्चमेऽहनि ॥ ४६९ ॥  
 निर्घांपयेच्च मण्डूरं त्रिफलाया रसे शुभे ।  
 सूर्यावर्तसे वाऽथ चोभयत्र च वा मिषक् ॥ ४७० ॥  
 तच्च सञ्चूर्णितं वरुणशोधितं योजयेद्विषक् ।  
 मण्डूरेण समं पेय्यं वंशपत्ररसेन तु ॥ ४७१ ॥  
 ततः पुटानि देयानि वक्ष्यमाणैर्महोपधेः ।  
 वंशपत्ररसे पूर्व पुटयेदातपे मिषक् ॥ ४७२ ॥  
 मण्डूरकपर्णी चित्रश्च दन्तीमूलपुनर्नवे ।  
 पटोलीत्रिघृतावालप्रस्थिसंहार पय च ॥ ४७३ ॥  
 आर्द्रकं तालमूली च सूर्यावर्तश्च शिम्बिका ।  
 केशराजो भृङ्गराजः शतमूली च मुस्तकम् ॥ ४७४ ॥  
 प्रक्षिपेत्पूर्वचूर्णानि हिङ्गु कर्पंचतुष्टयम् ।  
 सप्तधा पेपयेद्वाद् त्रिफलाकाथधारिणा ॥ ४७५ ॥  
 तेनैव शुटिकां कुर्यान्मापैकेकमाणिनाम् ।  
 वटिकाद्वित्रयं भक्ष्य मरुचार्यनुपातम् ॥ ४७६ ॥  
 यद्योऽवस्थापमत्रियलं व्याधिं प्रकृतिमेव च ।  
 दृष्ट्वा मात्रां प्रयुज्जीत यथाक्षेपं प्रक्षीयते ॥ ४७७ ॥  
 प्रहणीमम्लपित्तञ्च पित्तश्लेष्माणमेव च ।  
 अर्शसि बहिसादश्च प्लीहानमरचिन्तया ।  
 यदिकेयं निहन्त्याशु नाऽन कार्या विचारणा ॥ ४७८ ॥

यं से. रसायनाधिकारे, र. का. शूलाधिकारे ।

**टि०**—अत्र बर्णिकाविधानम् येऽध्वरमलारस्य समागतत्वाद्धमात्पयं जने व्यत्यासिना प्रापित मोऽन्नाभिर्यथास्थानं निवेशित । रसकामधेत् रचयिता मण्डूरतत्त्वारस्य किमर्थोपनमिति मत्वा लघ्याग्नेयं तत्प्राप्तिं नोपयत् । वृत्तिकाजातीद्वयमिति समस्तनगरं क्रियते तर्हि बृहत्तिकाश्च जातीद्वयभेदे प्रत्युपलब्धे द्वयस्यस्य इन्द्राऽन्नातितात् । जातीयमिति स्थव च जात्याद्वयमिति समासेन जात्या अवयवद्वयं प्राप्नोति साधा रणापस्थितवपि प्ररक्षणवरेन जाला एव फलवद्ब्रह्मीन्यमिति निश्चेतव्यम् ।

**भाषा**—मानकन्द, अध्वकर्ण (सनुभाकीडाल), निशोत, नागरमोथा, तुम्बी, त्रिकटु, त्रिफला, भगरा, अपामार्ग, अदरक, दाना, तुम्बी, भटारैया, वनभाडा, जायफल, जावित्री, सोंफ, हुरहुर, तालमूली इनप्रत्येककाचूर्ण १-१ कर्पं, विडङ्गत्रकडुल २ कर्पं, शुद्धगन्धक १२ मासे, गिलोय, शुद्धअन्न ओसण्डर चार ४ कर्पं लेकर गिलोयक समस्तचीजों का वारीकचूर्णकर रखलेवे । अन्नरका धान्यान्नक बनाकर कपडछाननर खीकाञ्ची अथवा दूधमें डालदे, पानमें रोचनिकाले । १०० वर्षसे ऊपरके मण्डूरको घड़ेके कोयलोंमें ताप तपानर त्रिफला अथवा हुरहुर या दोनोंक रसमें जबतक चीजें न हो ततक दुपावे । शीण होनेपर चूर्णकर बखसे छानकर रखीकाञ्चीकी यथाशक्तिभावना देकर रखजोडे । यह मण्डूर उस अन्नककी बराबर मिलाकर वंशपत्रीके रसमें दोतीन रोच मदेनकर वारीक करले, फिर वंश

पनी, ब्राह्मी, चित्रक, दन्तीमूल, पुनर्नवा, पटोल, निशोत, वाला, हड़जोड़, अदरक, तालमूली, हुरहुर अथवा सूर्यमुखी, सेम, कालाभंगरा, भंगरा, शतावर, नागरमोथा इनप्रत्येकके रस अथवा काथोंकी सूर्यके कड़े धूपमें भावना देकर सुखालेवे, यह अग्रक और मण्डकी विशेषशुद्धि है । इसीतरह शुद्धरसके पूर्वचूर्णमें डालकर ४ तोले भुनाहुआ उत्तम हींग मिलाकर ७ रोगतक त्रिफलाके काथसे धूपमें मर्दनकरावे और आठवेंरोज १-१ माशेकी गोखियें बनाकर छायाशुष्ककरले । इसमेंसे २-२ गोली अथवा, रोगीकी अवस्थासमय, अग्नि, व्याधि और प्रकृति इनका बलबल देखकर न्यूनाधिक मात्रासे रोगेपानीके साथ देवे । कामपक्वनेपर अनुपान तथा प्रप्रेषविशेषकी योजनाकरे । इसके सेवनसे प्रहणी, अम्लपित्त, श्लेष्मपित्त, स्रवप्रकारके बवासीर, मन्दाग्नि, हीहा, अरवि देसब नष्ट होतेहैं इसमें किसीतरहका सन्देह नहीं ॥ ११७ ॥

## ११८ पानीयवटिका (प्रथमा)

अनाथनाथो जगदेकनाथः

थ्रीलोकनाथः प्रथमः प्रसिद्धः ।

जगाद् पानीयवटीं प्रसिद्धां

तामेव वक्ष्यामि गुरुप्रसादात् ॥ ४७९ ॥

जयार्कसुरसांश्चैव निर्गुण्डां वासक तथा ।

घाटपालकं करञ्जश्च सूर्यावर्तकचित्रको ॥ ४८० ॥

ब्राह्मी च सर्पपञ्चैव भृङ्गराजं विचूर्णयेत् ।

दन्ती च त्रिभृता चैव तथाऽऽम्यधपत्रकम् ॥ ४८१ ॥

सहदेवाऽमरं भण्डो तथा त्रिपुटमण्डिके ।

शाहमली पिप्पली चैव द्रोणपुष्पी च वायसी ॥ ४८२ ॥

गजाङ्गिनी केशराजस्तथा योजनवल्लिका ।

असादनैति विख्यातं धत्तूरकनकास्तथा ॥ ४८३ ॥

त्रैलोक्यविजया चैव तथा श्वेताऽपराजिता ।

प्रत्येक कार्पिकञ्चैव रसरसन्तत्र दापयेत् ॥ ४८४ ॥

स्तुष्टा दुग्ध चार्कदुग्ध यदुदुग्धन्तश्चैव च ।

प्रत्येकं कार्पिकं क्षीरं पुनर्दत्त्वा विमर्दयेत् ॥ ४८५ ॥

नूनं सुमर्दितं क्षात्वा यदा पिण्डत्वमागतम् ।

द्रव्याप्येतानि सञ्चूर्ण्य वल्लपूतानि निक्षिपेत् ॥ ४८६ ॥

दग्धहीरं चातिथिप विप्रतिन्दुकमग्नकम् ।

शोधितं पारदञ्चैव गन्धः विप्रमाह्वयम् ॥ ४८७ ॥

माक्षिक शोधितञ्चैव प्रत्येकं मापकद्वयम् ।

नूनं सुमर्दितं दग्धा चाङ्गिरीस्वरसेन च ॥ ४८८ ॥

शुटिकां सुदृढाञ्चैव तिलमात्रां प्रकटपथेत् ।

लङ्घनैवांलुकास्वेदैः क्लान्तोऽति दीनदर्शनः ॥ ४८९ ॥

प्रपूज्य करुणाधानं प्रणम्य नाथसर्पणम् ।

शरावे धारिणा पृष्ठा विशारथेनां विवेचरः ॥ ४९० ॥

पाययित्वापथ पश्चाद्वस्त्रेणाच्छाद्येध्वरम् ।

रसदाह समाश्रय दद्याद्धारि सुदीतलम् ॥ ४९१ ॥

शरावेण मितं वारि पातव्यञ्च पुनः पुनः ।

अत्रिपातज्वरञ्चैव दाहं हन्ति सुदुस्तरम् ॥ ४९२ ॥

कासं श्वासं त्वरं हिक्रां प्रमेहञ्चाश्मरोन्तथा ।

कफपित्तकृतञ्चैव दाहं हन्ति न संशयः ॥ ४९३ ॥

भूजयेगविवन्धे तु पातव्यं क्षीरसंयुतम् ।

तृणपञ्चकृतं काथ पातव्यञ्च पुनः पुनः ॥ ४९४ ॥

पानीयवटिका होपा लोकनाथेन निर्मिता ।

लोकानामुपकाराय वटिका कथिता पुरा ॥ ४९५ ॥

२२, २३, २४, २५, २६, २७, २८, २९, ३०, ३१, ३२, ३३, ३४, ३५, ३६, ३७, ३८, ३९, ४०, ४१, ४२, ४३, ४४, ४५, ४६, ४७, ४८, ४९, ५०, ५१, ५२, ५३, ५४, ५५, ५६, ५७, ५८, ५९, ६०, ६१, ६२, ६३, ६४, ६५, ६६, ६७, ६८, ६९, ७०, ७१, ७२, ७३, ७४, ७५, ७६, ७७, ७८, ७९, ८०, ८१, ८२, ८३, ८४, ८५, ८६, ८७, ८८, ८९, ९०, ९१, ९२, ९३, ९४, ९५, ९६, ९७, ९८, ९९, १००, १०१, १०२, १०३, १०४, १०५, १०६, १०७, १०८, १०९, ११०, १११, ११२, ११३, ११४, ११५, ११६, ११७, ११८, ११९, १२०, १२१, १२२, १२३, १२४, १२५, १२६, १२७, १२८, १२९, १३०, १३१, १३२, १३३, १३४, १३५, १३६, १३७, १३८, १३९, १४०, १४१, १४२, १४३, १४४, १४५, १४६, १४७, १४८, १४९, १५०, १५१, १५२, १५३, १५४, १५५, १५६, १५७, १५८, १५९, १६०, १६१, १६२, १६३, १६४, १६५, १६६, १६७, १६८, १६९, १७०, १७१, १७२, १७३, १७४, १७५, १७६, १७७, १७८, १७९, १८०, १८१, १८२, १८३, १८४, १८५, १८६, १८७, १८८, १८९, १९०, १९१, १९२, १९३, १९४, १९५, १९६, १९७, १९८, १९९, २००, २०१, २०२, २०३, २०४, २०५, २०६, २०७, २०८, २०९, २१०, २११, २१२, २१३, २१४, २१५, २१६, २१७, २१८, २१९, २२०, २२१, २२२, २२३, २२४, २२५, २२६, २२७, २२८, २२९, २३०, २३१, २३२, २३३, २३४, २३५, २३६, २३७, २३८, २३९, २४०, २४१, २४२, २४३, २४४, २४५, २४६, २४७, २४८, २४९, २५०, २५१, २५२, २५३, २५४, २५५, २५६, २५७, २५८, २५९, २६०, २६१, २६२, २६३, २६४, २६५, २६६, २६७, २६८, २६९, २७०, २७१, २७२, २७३, २७४, २७५, २७६, २७७, २७८, २७९, २८०, २८१, २८२, २८३, २८४, २८५, २८६, २८७, २८८, २८९, २९०, २९१, २९२, २९३, २९४, २९५, २९६, २९७, २९८, २९९, ३००, ३०१, ३०२, ३०३, ३०४, ३०५, ३०६, ३०७, ३०८, ३०९, ३१०, ३११, ३१२, ३१३, ३१४, ३१५, ३१६, ३१७, ३१८, ३१९, ३२०, ३२१, ३२२, ३२३, ३२४, ३२५, ३२६, ३२७, ३२८, ३२९, ३३०, ३३१, ३३२, ३३३, ३३४, ३३५, ३३६, ३३७, ३३८, ३३९, ३४०, ३४१, ३४२, ३४३, ३४४, ३४५, ३४६, ३४७, ३४८, ३४९, ३५०, ३५१, ३५२, ३५३, ३५४, ३५५, ३५६, ३५७, ३५८, ३५९, ३६०, ३६१, ३६२, ३६३, ३६४, ३६५, ३६६, ३६७, ३६८, ३६९, ३७०, ३७१, ३७२, ३७३, ३७४, ३७५, ३७६, ३७७, ३७८, ३७९, ३८०, ३८१, ३८२, ३८३, ३८४, ३८५, ३८६, ३८७, ३८८, ३८९, ३९०, ३९१, ३९२, ३९३, ३९४, ३९५, ३९६, ३९७, ३९८, ३९९, ४००, ४०१, ४०२, ४०३, ४०४, ४०५, ४०६, ४०७, ४०८, ४०९, ४१०, ४११, ४१२, ४१३, ४१४, ४१५, ४१६, ४१७, ४१८, ४१९, ४२०, ४२१, ४२२, ४२३, ४२४, ४२५, ४२६, ४२७, ४२८, ४२९, ४३०, ४३१, ४३२, ४३३, ४३४, ४३५, ४३६, ४३७, ४३८, ४३९, ४४०, ४४१, ४४२, ४४३, ४४४, ४४५, ४४६, ४४७, ४४८, ४४९, ४५०, ४५१, ४५२, ४५३, ४५४, ४५५, ४५६, ४५७, ४५८, ४५९, ४६०, ४६१, ४६२, ४६३, ४६४, ४६५, ४६६, ४६७, ४६८, ४६९, ४७०, ४७१, ४७२, ४७३, ४७४, ४७५, ४७६, ४७७, ४७८, ४७९, ४८०, ४८१, ४८२, ४८३, ४८४, ४८५, ४८६, ४८७, ४८८, ४८९, ४९०, ४९१, ४९२, ४९३, ४९४, ४९५, ४९६, ४९७, ४९८, ४९९, ५००, ५०१, ५०२, ५०३, ५०४, ५०५, ५०६, ५०७, ५०८, ५०९, ५१०, ५११, ५१२, ५१३, ५१४, ५१५, ५१६, ५१७, ५१८, ५१९, ५२०, ५२१, ५२२, ५२३, ५२४, ५२५, ५२६, ५२७, ५२८, ५२९, ५३०, ५३१, ५३२, ५३३, ५३४, ५३५, ५३६, ५३७, ५३८, ५३९, ५४०, ५४१, ५४२, ५४३, ५४४, ५४५, ५४६, ५४७, ५४८, ५४९, ५५०, ५५१, ५५२, ५५३, ५५४, ५५५, ५५६, ५५७, ५५८, ५५९, ५६०, ५६१, ५६२, ५६३, ५६४, ५६५, ५६६, ५६७, ५६८, ५६९, ५७०, ५७१, ५७२, ५७३, ५७४, ५७५, ५७६, ५७७, ५७८, ५७९, ५८०, ५८१, ५८२, ५८३, ५८४, ५८५, ५८६, ५८७, ५८८, ५८९, ५९०, ५९१, ५९२, ५९३, ५९४, ५९५, ५९६, ५९७, ५९८, ५९९, ६००, ६०१, ६०२, ६०३, ६०४, ६०५, ६०६, ६०७, ६०८, ६०९, ६१०, ६११, ६१२, ६१३, ६१४, ६१५, ६१६, ६१७, ६१८, ६१९, ६२०, ६२१, ६२२, ६२३, ६२४, ६२५, ६२६, ६२७, ६२८, ६२९, ६३०, ६३१, ६३२, ६३३, ६३४, ६३५, ६३६, ६३७, ६३८, ६३९, ६४०, ६४१, ६४२, ६४३, ६४४, ६४५, ६४६, ६४७, ६४८, ६४९, ६५०, ६५१, ६५२, ६५३, ६५४, ६५५, ६५६, ६५७, ६५८, ६५९, ६६०, ६६१, ६६२, ६६३, ६६४, ६६५, ६६६, ६६७, ६६८, ६६९, ६७०, ६७१, ६७२, ६७३, ६७४, ६७५, ६७६, ६७७, ६७८, ६७९, ६८०, ६८१, ६८२, ६८३, ६८४, ६८५, ६८६, ६८७, ६८८, ६८९, ६९०, ६९१, ६९२, ६९३, ६९४, ६९५, ६९६, ६९७, ६९८, ६९९, ७००, ७०१, ७०२, ७०३, ७०४, ७०५, ७०६, ७०७, ७०८, ७०९, ७१०, ७११, ७१२, ७१३, ७१४, ७१५, ७१६, ७१७, ७१८, ७१९, ७२०, ७२१, ७२२, ७२३, ७२४, ७२५, ७२६, ७२७, ७२८, ७२९, ७३०, ७३१, ७३२, ७३३, ७३४, ७३५, ७३६, ७३७, ७३८, ७३९, ७४०, ७४१, ७४२, ७४३, ७४४, ७४५, ७४६, ७४७, ७४८, ७४९, ७५०, ७५१, ७५२, ७५३, ७५४, ७५५, ७५६, ७५७, ७५८, ७५९, ७६०, ७६१, ७६२, ७६३, ७६४, ७६५, ७६६, ७६७, ७६८, ७६९, ७७०, ७७१, ७७२, ७७३, ७७४, ७७५, ७७६, ७७७, ७७८, ७७९, ७८०, ७८१, ७८२, ७८३, ७८४, ७८५, ७८६, ७८७, ७८८, ७८९, ७९०, ७९१, ७९२, ७९३, ७९४, ७९५, ७९६, ७९७, ७९८, ७९९, ८००, ८०१, ८०२, ८०३, ८०४, ८०५, ८०६, ८०७, ८०८, ८०९, ८१०, ८११, ८१२, ८१३, ८१४, ८१५, ८१६, ८१७, ८१८, ८१९, ८२०, ८२१, ८२२, ८२३, ८२४, ८२५, ८२६, ८२७, ८२८, ८२९, ८३०, ८३१, ८३२, ८३३, ८३४, ८३५, ८३६, ८३७, ८३८, ८३९, ८४०, ८४१, ८४२, ८४३, ८४४, ८४५, ८४६, ८४७, ८४८, ८४९, ८५०, ८५१, ८५२, ८५३, ८५४, ८५५, ८५६, ८५७, ८५८, ८५९, ८६०, ८६१, ८६२, ८६३, ८६४, ८६५, ८६६, ८६७, ८६८, ८६९, ८७०, ८७१, ८७२, ८७३, ८७४, ८७५, ८७६, ८७७, ८७८, ८७९, ८८०, ८८१, ८८२, ८८३, ८८४, ८८५, ८८६, ८८७, ८८८, ८८९, ८९०, ८९१, ८९२, ८९३, ८९४, ८९५, ८९६, ८९७, ८९८, ८९९, ९००, ९०१, ९०२, ९०३, ९०४, ९०५, ९०६, ९०७, ९०८, ९०९, ९१०, ९११, ९१२, ९१३, ९१४, ९१५, ९१६, ९१७, ९१८, ९१९, ९२०, ९२१, ९२२, ९२३, ९२४, ९२५, ९२६, ९२७, ९२८, ९२९, ९३०, ९३१, ९३२, ९३३, ९३४, ९३५, ९३६, ९३७, ९३८, ९३९, ९४०, ९४१, ९४२, ९४३, ९४४, ९४५, ९४६, ९४७, ९४८, ९४९, ९५०, ९५१, ९५२, ९५३, ९५४, ९५५, ९५६, ९५७, ९५८, ९५९, ९६०, ९६१, ९६२, ९६३, ९६४, ९६५, ९६६, ९६७, ९६८, ९६९, ९७०, ९७१, ९७२, ९७३, ९७४, ९७५, ९७६, ९७७, ९७८, ९७९, ९८०, ९८१, ९८२, ९८३, ९८४, ९८५, ९८६, ९८७, ९८८, ९८९, ९९०, ९९१, ९९२, ९९३, ९९४, ९९५, ९९६, ९९७, ९९८, ९९९, १०००

टि०—अथ योमे लोकनाथनाम्ना गोस्त्रनाथमप्रदायर्वातिना केनचि स्त्राधुना कस्यैचिच्छ्रद्धालवे स्वस्तिप्राप्य निर्दिष्टस्तोत्रं यथावदभ्यस्तन्मूर्ते त्रिपटोऽपवाजिप्रभृत् पञ्चषण्णव्यां सरकृतनामनिर्गोत्रेण च दैवित्य तथा तत्तत्तत्तत् विप्रमाह्वयमिलादिना वचनैवकीयनामान्यपि निवेशितानि तानि च प्रष्टार भ्रमणद्वेरे निवेशयन्ति तत्र एव टीकागोत्रानांऽऽकारतया पाठा प्रकथिता यथा अनाथनेतिप्रत्यनेनार्थाज्ञानाकैश्चिदासारणेति पाठ प्रवक्ष्य अथनश्वो निरवारि । अन्यैर्नवपालदीनानि नियोजितानि । केचुचित्पु रुक्मिणु आशारणेति पाठो दृश्यते तत्सर्वमप्यभिप्रायाज्ञानमूल्यम् ।

भाषा—भरणी, आक, तुलसी, रामा, अङ्गु, नाग, बला, करञ्ज, हुरहुर अथवा सूर्यमुखी, चित्रक, ब्राह्मी, पीली, सरसो, भंगरा ये सब १-१ कपलेकर घारिकपञ्चछान चूर्ण करके दन्तीमूल, सहदेवसोत, अमलता, पत्रज, सहदेवी, अमरकन्द, सिरस, गोखर, वनभाटा, सेंमलकामुखला, पीपल, गुमा, मकोय, शुष्का, कालाभंगरा, मजीठ, असादनसफेद, धवरा, कर्तोरी, भांग, सफेद अपराजिता, इन प्रत्येकका १-१ कप स्वरा पूर्वचूर्णमें मिलाकर मर्दनकरे, फिर सेकुण्ड, आक और बटका दूध १-१ कप डालकर यथातकमर्दन करेकि उसका गोख बचनाय फिर हीरेकीमम्म अथवा अक्कीकमम्म, जलीश, शुद्धकुशिला, अत्रकभस्म, शुद्धपारा, गन्धक, विषमा, (युनानी) शुद्धसोनामारी, वेप्रत्येक २-२ माशे डालकर अमलोनियाकरसे १-२ रोज मर्दनकर तिलप्रमाण गोखियें बनाकर छायाशुष्क कर रखलोवे । असाध्यरोगग्रस्त आदमीको लङ्घन तथा बाजुकास्वेदसे शुद्धकर शङ्कररीपूजाकर सर्पगनायको भक्तस्वाकर भगिने कोरे शरावमें पानीसे २१ गोली घिसकर होथीको पिलावे और बन्द धकानमें छटियापर तुलार कप-डेहिकन्दे । जिसवक क्षीरमें शारकास्वेदहो उससमय ठण्डाजल ठीकी मिश्रीने शरावको भरकर बारबार पिलावे । इसने सेवनसे सतिपात ज्वर, दुस्तरदाह, वाय, थास, ज्वर, द्विकी, प्रमेह, पथरी और वफपित्तजनित साह नष्टहोताहै । मूत्रापातमें इनगोखियें-को । दूधसेसाय देवे और तुणपत्रमूलका क्वाथ बावारा पिलावे । इष्टप्रयोगका पानीयवटी नामदे और लोगोंके उपकारके-लिये लोकनाथ सिद्धने बनाईहै ॥ ११८ ॥

## ११९ पानीयवटिका (द्वितीया)

रसमापकत्वयारि सम्यक् शुद्धानि कारयेत् ।

राजिकार्द्रकपानीयमर्दयेद्दुग्धो मियक् ॥ ४९६ ॥

स्वर्णधत्तुरजैर्द्रवैर्वृद्धाद्वैस्तथा ।  
 कन्यकोत्यद्रवैस्तद्वृद्धसशोधनमाचरेत् ॥ ४९७ ॥  
 गन्धकं रसतुल्यन्तु प्रक्षाल्य तण्डुलाम्बुना ।  
 कृत्वा तैलसमं द्रव्यं निर्वाप्य चित्रकद्रवे ॥ ४९८ ॥  
 द्वयोः कज्जलिकां कृत्वा लोहचूर्णस्य मापकम् ।  
 सुवर्णमाक्षिकमपि तत्र लोहसमं कुरु ॥ ४९९ ॥  
 घर्मयन्त्रादिसंयोगाच्चाप्रघ्नं मृतिं प्रजेत् ।  
 एकीकृत्य तु तत्सर्वं ततः प्रस्तरभाजने ॥ ५०० ॥  
 मर्दयेत्ताम्रदण्डेन द्रव्या चैषां निजं द्रवम् ।  
 प्रथमे केशराजश्च द्वितीये श्रीमन्मुन्दरः ॥ ५०१ ॥  
 तृतीये भृङ्गराजश्च चतुर्थे भेरुपणिका ।  
 पञ्चमे चन्द्रसूरश्च षष्ठे च रसपूतिका ॥ ५०२ ॥  
 सप्तमे पारिमन्त्रः स्यादष्टमे रक्तचित्रकः ।  
 शक्राशनश्च नवमे दशमे काकमाचिका ॥ ५०३ ॥  
 पक्षादशे तथा नीली द्वादशे हस्तिशुण्डिका ।  
 अमीपामौषधीनान्तु प्रत्येकन्तु पलं द्रवम् ॥ ५०४ ॥  
 मर्दयेत्तु प्रयत्नेन द्वादशाहेस्तु साधकः ।  
 ततः पाटदमानन्तु द्रव्या त्रिकटुचूर्णकम् ॥ ५०५ ॥  
 घटिकां राजिकातुल्यां छायाशुष्कां समाचरेत् ।  
 ततः शम्बूकजे पात्रे कर्तव्या घटिका त्वियम् ॥ ५०६ ॥  
 शरावे शङ्खपात्रे वा कृत्वा सलिलगालितम् ।  
 अत्यन्तदोषदुष्टाय शानशून्याय रोगिणे ॥ ५०७ ॥  
 ऊर्ध्वयोगिं समभ्यर्च्य प्रदद्याद्घटिकाद्वयम् ।  
 ढक्कयेत्तं ततः पश्चात्तत्र स्थूलपटादिभिः ॥ ५०८ ॥  
 मलमूत्रागमात्सद्यः स साध्यो भवति द्रुतम् ।  
 दृश्यन्नन्तु ततो दद्यात्पिथेद्वारि यथेच्छिकम् ॥ ५०९ ॥  
 दद्याद्वातहरं तैलमभ्यङ्गाय सदैव हि ।  
 चिरज्वरे पिथेद्वारि पञ्चमूलीप्रसाधितम् ॥ ५१० ॥  
 ग्रहण्यां रक्तपाते च पिथेद्वारि विषां गद्दी ।  
 पिथेत्तत्पट्जं धारि धारि कम्पज्वरे तथा ॥ ५११ ॥  
 तथा ज्वराऽतिसारे च जीरकस्य जलं पिथेत् ।  
 मन्दासौ कामलायाञ्च सङ्गहग्रहणीगदे ॥  
 कान्ते श्वासे सदा देया पानीयघटिका शुभा ॥ ५१२ ॥  
 भै र, र सु, ज्वराधिकारः ।

भाषा—शुद्धविषे हुए ४ मासे पात्रको राई और अदरकके  
 शरगसे बँधकर मर्दनकरे फिर कर्माँदी, धतूरा, विषारा, धौड़  
 आर इनके रोगोंमें अलग २ मर्दनकरके ऊर्ध्वपात्रसे पारिको साफ  
 करके रखते । पारिकोपरपर शुद्धगन्धको चावलोंकेपोवनसे पोकर  
 धूपमें गुप्ताकर सोहरीकट्टीमें अमिके सयोगमें तेजके सार  
 द्रव बनाकर चित्रक पत्रवरग अथवा सवाँहजयमें युताद, फिर  
 दोनोका ४ पहरमर्दनकर नीलरङ्गकर्मसे बनाकर १ मासालोहका  
 घाटीकट्टा और स्वर्णमाक्षिकनिपाद । इनमें नीचुका स्वर्ण  
 त्रपसा गुमारीका रस मित्राकर लेपके योग्य बनाने, फिर कट्ट-

कवेथी शुद्धताम्रके ४ मासे पत्र पर लेपकरके एण्डपत्रमें लपेट  
 तावेके पात्रमें रखकर कडीधूपमें रखदे । चापहरकेनाद धूपमेंसे  
 उठाकर कचासुत लपेटकर धान्यराशिमें रखदे । तीनरोजकेबाद-  
 निकालकर पत्थरकी खलमें डालकर तावेकेउठेसे सबको मर्द-  
 नकरडावे, यह तावेकेपत्रकीभस्म होजायगी । इसमें कालेभग  
 रेका रस जलकर एकोरजमर्दनकरे । दूसरेदिन हरमल, तीसरेदि  
 नभंगरा, चौथेदिनमाझी, पाचवेंदिन चंभुर, छठेदिन चिरपोदन,  
 सातवें दिन फरहद, आठवेंदिन कालचित्रक, नवेंदिन गापा,  
 दसवेंदिन मकोय, ग्यारहवेंदिन नील, बारहवेंदिन हाथीशुडी इन  
 प्रत्येक औषधोंका रसडालकर मर्दनकरे । प्रत्येकदिन पूर्वोक्त-  
 मसे प्रत्येक औषधिकारस १-१ पलसेकम न सुखावे, ऐसे १०  
 दिनोंमें इसेमर्दनकर तेरहवेंदिन ४ भागे त्रिकटुका घाटीकचूर्ण  
 मिलाकर राईके घरावर गोलेयें बनाकर छायाशुष्ककर काचरी  
 शीशीमें रखओढ़े । ज्वरकी त्रिदोषप्रकोपावस्थामें ज्वर संहार-  
 हितरोगीहो उससमय सेंपला, शङ्ख अथवा मिश्रीके कौरपात्रमें  
 २ गोली पानीकेसाथ चित्रकर घ्राणा और महादेवकी पूजाकर  
 रोगीको पिलाकर रजाईकगैरह गर्मकपड़ा ओढ़ावे । इसके देवेके  
 बाददस्तऔर पेशाबहोजावेतो रोगीको साध्य समझना अन्यथा  
 असाध्य, हे. मलमूत्रत्यागयेश्याद ज्वररोगीको अत्यन्त भूखलगे  
 तो दहीभात पिलाकर गरम या ठंडा जैसी रोगीकी इच्छाहो  
 बैसापानी पिलाना । कोईभी घातकर तैल अन्त्यहकटनेको देना ।  
 ज्वर अगर बहुतदिनरा होतो बृहत्पत्रमूलमें पकाया हुआ पानी  
 देना । ग्रहणीमें जिससमय रक्तयुक्तदस्त होतैहों उससमय अती-  
 सरा कावा देना । अत्यन्त कम्पज्वरमें पित्तरापट्टेका बाय और  
 ज्वराऽतिमारमें जीरेका पानी देना इसीतरह मन्दासि, कामला,  
 सङ्गहग्रहणी, कास, श्वास इत्यादि रोगोंमें उचिताऽनुपानकेसाथ  
 इन गोलीका प्रयोग करना ॥ १११ ॥

### ४२० पापरोगान्तको रसः

अथ शुद्धस्य सूतस्य मृतस्य मूर्च्छितस्य च ।  
 घण्टा पिप्पली धात्री द्रक्षाक्षचूतमाक्षिकैः ॥ ५१३ ॥  
 पापरोगान्तको यांगः पृथिन्यामेन दुर्लभः ।  
 बहुधाऽस्य प्रयोक्तव्यो धातुचौकायसंयुतः ॥ ५१४ ॥

र चि, रमायनं., र. र, र चं, र सि, र कौ, को. म,  
 र का, र. स, र सु, मरुकायाम्, र का, पापाद्रुयोगः ।  
 र. स, र सु, एतयोर्मन्त्रयो दुर्लभरस इति नाम स्यात्किम् ।  
 तथा ॥ धवलापिप्लीस्थाने द्विवला पिप्पलीतिताड ।

टि०—योगमार्गोंमें अनुपनविनोद। मन्त्रों मूर्च्छितरस्य येन  
 कृतोऽस्ति तन्मन्त्रः—“विषयमेवैव मूर्च्छितं परतो रस । विष्णोरीतो  
 रसो हन्ति मन्त्रेणलुपुत ॥ मयरीं मन्त्रं सैवमन्त्रं सरीर  
 जम् ॥” इति ॥

भाषा—शुद्धविषेहुएपारिकीभस्मभंगगाय १४, अथवा धातु-  
 बहभा, पीपड़, आरुने, द्रक्षा, धौ और शुद्धका योगधरके  
 उचिताऽनुपानके साथ देनेमें मरुकायोरोगका अन्त्योताहै । अगर  
 पारिकी भस्म न मिलेता रसविन्दुप्रतिमितमूर्च्छितरस

उपयोगकरता । इसकी ३ रत्तीकीमात्रा बाकुनीके काढेसेसाध देना । घी और मधुको छोड़कर तमामका प्रमाण समभाग लेना उसकी तीनरत्तीकीमात्रा समझनी चाहिये । घृत तथा मधु योग्यताप्रमाणदे, जहा रससिन्दूरप्रयुक्तताभी अभावहो वहा कबली देखेहै ॥ १२० ॥

## १२१ पारङ्गयादि रसायनम् ( गन्धकरसायनम् )

त्रिंशत्पलानि घृद्धदारु वातारेस्तन्मितानि च  
हिंसाह्वयं चित्रमूलमिन्दुदीमूलकन्तथा ॥ ५१५ ॥  
मरीचकाण्डं मूलञ्च शरपुट्टो च घृतिका ।  
अश्वगन्धा च वरुणः प्रत्येक पलपोडशम् ॥ ५१६ ॥  
तद्वृण्णकं शुद्धं जलमादाय निक्षिपेत् ।  
शनि मूत्रप्रिमा सम्यक् पाचयेत्सत्प्राप्तकम् ॥ ५१७ ॥  
चतुर्भागाऽवशेषे तु कषाये सुपरिक्षुते ।  
पुराणस्य शुद्धस्याऽपि तुलां कल्कानि दापयेत् ॥ ५१८ ॥  
करायद्रव्यमूलानि घूर्णीकृत्य प्रयत्नतः ।  
प्रत्येकं द्विपलं प्राह्यं त्रिंशद्भूतजानि च ॥ ५१९ ॥  
घृद्धवारुणक्षेत्र वातारेश्च चतुष्पलम् ।  
फटुनयश्च खदिर राज्ञाकुष्ठयिडङ्गकम् ॥ ५२० ॥  
दीप्यद्वयं जातिपत्रं तत्कलं वृष्टिकसरम् ।  
भार्ग्विद्वङ्गणमांसीनां प्रत्येकं पलमात्रकम् ॥ ५२१ ॥  
गन्धं चाऽष्टपलक्षेत्र घूर्णीकृत्य यथाविधि ।  
योजयेद्रससिन्दूरमष्टानिकप्रमाणकम् ॥ ५२२ ॥  
क्षौद्रं तुलार्द्धकक्षेत्र तदर्थं घृतमेव च ।  
लेह्यं पार्कं तथा कृत्वा सुपक्वमपि कारयेत् ॥ ५२३ ॥  
पिप्लवसेनं समभ्यर्च्य धन्यन्तरिमयाऽर्चयेत् ।  
देवब्राह्मणपूजां च वैद्यमानं प्रदापयेत् ॥ ५२४ ॥  
रघवं प्रातरुत्थाय भक्षयेत्कर्पमात्रकम् ।  
तदर्थं चैव सायाह्ने सेवयेत्पण्डलं क्रमात् ॥ ५२५ ॥  
मेहघ्नान्ध सर्वाश्च मेहुरोगांश्च सर्वशः ।  
भगन्दरक्षपिडिकां कासश्वासाऽऽरुचीस्तथा ॥ ५२६ ॥  
ज्वरवातान्द्वेष्यासु सर्वघ्नणनिवारकम् ।  
राङ्गयादिकनामेदमभ्यभ्यां निर्मितं पुरा ॥ ५२७ ॥

वै चि ,

भाषा—विषादकीजड ३० पल, एरण्डीजड ३० पल, काळा और सफेदहंस, धिक्क और हिजोटीकीजड, मिर्चकी शाखा और जड़, शरपुट्टकी जड़, घुडकरबीकी छाल अथवा गन्धप्रसार, असगन्ध, वरुणकी छाल ये प्रत्येक १६ पञ्जेलकर एकको जोड़कर अष्टगुणितपानीमें बहुतमन्दआवसे सातदिलरात रकावे और चतुर्थांश बाकीरहनेपर छानकर ४०० कर्ष पुराना गुड़ डालदे । जिनद्रव्योंका काढा बनायाहै उनकीजड २-२ रल, मिलावे ३० नग विषादकीजड १ पल एरण्डीजड ४ पल त्रिकटु, खैरसार, राज्ञा, कुठ, विडङ्ग, देशी और खुरासानी अजवाइन, जाविनी, जायफल, इलायची, केसर, माडगी,

सुहागा, जदामासी येप्रत्येक १-१ पल, शुद्धगन्धक ८ पल, इनसबका कपडछानचूर्णकर उसमें डाले । रससिन्दूर ८ टङ्क (३२ मासे), मधु २०० कर्ष, घी १०० कर्ष, इनसबको इक्का चढाकर मन्दआवसे पकावे । जब लेह जैसा तैयारहोजाय तब विश्वसेन तथा घन्धन्तरि और देव तथा भाङ्गणोंकी पूजाकर वैयका भाग ( ११ वा अंश ) देवे । दसरोज प्रातःकाल १-१ तोललेवे और शामको ६ मासेलेवे । इसतरह १ मण्डल सेव-नकरसे प्रमेहपिडिका समस्तमेहुरोग, भगन्दर, कास, श्वास, अरुचि, समस्तवात समस्तघ्नण येसम नष्ट होतेहैं ॥ १२१ ॥

## १२२ पारददुतिः

यूनो नरस्य केशांस्तु विमृद्योपलया धिया ।  
निर्मलीकृत्य नीरेण सूक्ष्मसूः ॥ ५२८ ॥  
कृत्वा शरायमध्ये च स्थापयेदेकरात्रकम् ।  
नीहारे सम्पुटीकृत्य मृदाऽधश्चिद्रसंयुतम् ॥ ५२९ ॥  
आकाशयन्त्रके धर्ति कुक्कुटेन पुटेन तु ।  
दत्त्वा तच्चिद्रतो विन्दुशङ्खतपीतसुलोहितान् ॥ ५३० ॥  
गृहीयाच्च च तान् कृष्णान् केशतिलमिलीरितम् ।  
तसैलमर्धसेहुण्डक्षीरेण परिमृद्य च ॥ ५३१ ॥  
तद्यन्त्रेणैव सङ्गृह्य तुर्थांशं नवसादरम् ।  
सम्मर्द्य तेन संक्षिप्य काचसम्पुटकान्तरम् ॥ ५३२ ॥  
पारदञ्च विमृद्योपायामद्वितयकाधधि ।  
रुद्धा सम्पुटके तस्मिन्स्थापयेद्भग्नगर्तके ॥ ५३३ ॥  
सद्यो युवाभ्यमलके संवृद्धचदिवसत्रयम् ।  
सञ्चित्वाऽजशङ्करसप्त दिनाभ्येषं स्थितिर्भवेत् ॥ ५३४ ॥  
अष्टमे दिपसे तच्च गृहीयाज्जिपजावरः ।  
स्वच्छा सलिलगुणा सा पारदस्य द्रुतिर्भवेत् ॥ ५३५ ॥  
गुञ्जातुरीयभागेन यथारोगाऽनुपानत ।  
सर्वरोगहरी ख्याता शूलगुल्मादिकान् गदान् ॥  
क्षिप्रे विनाशायत्येव शङ्करोकमिलीरितम् ॥ ५३६ ॥

र वा. गुल्माधिकारे ।

भाषा—जबान आदमीके काले केशोंमें ' यदि गर्भमेंसे आये हुए मिलसके तो अत्युत्तमहै ) शङ्करसेवाय एकदो पण्डे मसलकर स्वच्छपानीसे धोकर साफ करले जिसमेंकि मलका अवश न रहजाय, फिर इन्हें कपडेसे पोंछकर साफकरके केशोंमें जहातक होसके बारीक काटडाले । तदनन्तर मन्त्रत तथाकोरे दो शराब लेकर एकमें ३-४ बारीक छिद्रकरके उसमें उनके-शोंको रखकर जोखमें पुरातमर रखदे, फिर दूसरा शराब ढक्कर दोनोका कपडमिठीसे छिद्रबन्दकरदे, फिर आकाशयन्त्रमें ( वृक्षेण छिद्रसहितपीनको रखकर छिद्रपर शरावको रखकर मिठीसे दोनोका अन्तर बन्दकरदे जिसमें कि नीचे राखवगेह न जाय फिर गुञ्जाको सुखाले यही आकाशयन्त्रहै ) कुक्कुट पुट देवे । नीचेके छिद्रोंमेंसे सफद, पीले और लालरङ्गके बमसे विन्दु गिरेगे इनसबको छलेवे जब काले विन्दु आने लगें तब न

ले यह केश तैल तैयार हुआ । इसकेसतैलसे आधा सेहुण्डका दूध डालकर मर्दनकरे जन गोला बनजाय तब पूर्वोक्त यन्त्रसे इमजातल निराले, फिर उसतैलमें चतुर्थांश नवसादर मिला कर मर्दनकरले यह एकरहृदा भरहभवे सद्य तैयारहोजायगा इसको काचकी सरलमें लेपनरदे और लेपकीबराबर पारा डाल कर दोपहरतक काचकी मूसलीसे मर्दनकरे । फिर उसखलका सम्पुट बनाय कसरभर खड़ा खोदकर आधेमें जवान घोड़ोंकी ताजी लीद भरदे । उसपर इससम्पुटको रसरर ऊपरसे दूसरी लीद भरदे चौदरोज लीद निकालदे और । बकरोकी ताजी मींगणी पूर्ववत् भरदे । यदि बकरोकी इतनी ताजी मींगणी मिलनेका संयोग न हो तो पूर्वपक्षमें आधा या चौथाई गतकरे और सातदिनतक रहने दे । आठवेंरोज बहुत धीरजसे श्रावसम्पुटको निरालकर मुद्राको खोले, उसखलमें पानीके सद्य स्क्वच्च हृति मिलेगी इसको काचकी शीशीमें रगड़ोडे । इसमेंसे एकरतीका चतुर्थभाग यथोचित योगानुपानकेमाथ देनेसे शूल, गुल्मप्रसृति समस्ततोषोंको यह हूरन्तरीहै ॥ १२२ ॥

### १२३ पारदवटी ( प्रथमा द्वितीया च )

पारावताण्डमध्ये सूतं दृक्छत्रं क्षिपेद्युक्त्या ।  
तैरेव तावदण्डं मेध्यं यावत्तु श्वावकोत्पत्तिः ॥५३७॥  
तं सूतं गुटिकां सम्यग्योगेषु योजयेन्मतिमाय ।  
अथवाऽसितधत्तुराशास्करुधे निवेद्ययेद्विधिना ॥  
सूतं यावन्मासं भवति च गुटिकाप्रभो नियतम् ५३८  
यो. म. रसायने ।

भाषा—कृतूरी जिसवक अण्डा दे उसीसमय उसके परोक्ष एक अण्डेमें सुईसे छिद्रकरके ८ मासे पारा भरदेवे परन्तु यह ध्यान रखे कि यह बात कृतूरीको मादम न हो नहीतो वह उसको सेवेगी नहीं, क्रिया व्यर्थ जायगी । जब औरोंमेंसे फोड़करबह बचेना निकाललेन बहापर पारेकी बर्षा हुई गोली मिलेगी । अथवा कालेपतूरी शायामें पारेको भर कर छोड़दे ऊपरसे गोबर अथवा आटेसे छिद्रको बन्दकरदे और उसपर मिगोकर कपड़ा बांधदे तो एकमहीनेबाद इसकी गोली बघ जायगी । इत गोलीयोंको दूधमें उवाकर पीनेसे शुरही वृद्धि होतीहै कमरमें बांधनेसे स्वनोप और प्रमेह निरुत होताहै और यद्यपारदका योग जहा आयाहो बहापर इनमें कामले सजेहै ॥ १२३ ॥

### १२४ पारदवटी ( तृतीया )

रसं सत्ते विनिक्षिप्य धुत्तररत्समर्दितम् ।  
रजतेन निमर्द्याऽयं गुटिकाः कारयेद्बुधः ॥ ५३९ ॥  
धुत्तररुद्रराजोत्पत्तेन वचया सह ।  
पाचयेदोलिकायन्त्रे गुटिकां घञसच्छिन्नाम् ॥५४०॥  
चदने धारयेत्तेन वीर्यस्तम्भनमुत्तमम् ।  
प्रतीकरञ्च लोकानां स्त्रीणाञ्चाऽपि शतमजेत् ॥५४१॥  
र क यो , रसायने ।

भाषा—गुद्रपारेमें चादीकीमसम अथवा रेता इतना मिलावे कि पारा मुर्च्छित होजाय फिर धतूरेके रसकेसाय मर्दन करे जब मसखनके सद्य होजाय तब इसकीगोलीया बनाकर सुखाले । फिर धतूरा और भगरेला रस समभाग मिलाकर अष्टमाश वचका चूर्ण मिलाकर गोलियोंको अलग २ कपड़ेमें बांधकर दोलायन्त्रसे स्वेदन करनेसे गोली कड़ी होजायगी । इनको सुधमें रखनेसे वीर्यस्तम्भन और वशीकरण होताहै ॥ १२४ ॥

### १२५ पारदादि चूर्णम्

रसवलिघनसारकोलमजाऽ-

मरुसुमांस्तुधरः प्रियङ्गुजञ्च ।

मलयजमगधातगिन्द्रियं

हलितमिदं परिभाष्य चन्दनाद्रिः ॥

मधुमरिचयुतं रजोऽस्य मापं

जयति वर्मि प्रबलां विलिह्य मर्यः ॥ ५४२ ॥

र कौ , र यो. व , रसायनसं , र सु , नि र , छर्दिरोगे ।

टि०—अत्र योगे घनोऽन्नरम्, सारो लोहम् । केचित्तु घननारसाद्येव कूर् नियोष्यन्ति, परन्तु स लोहाऽन्नरयोगान्पुनर्वलो योगो भवतीति बोध्यम् ।

भाषा—पारेगन्धकी नीलवर्णकजली, अन्नक और लोह-भस्म, वेरकी मज्जा, खैर, नागरमोथा, मूलप्रियङ्गु ( अभावमें मालकात्री ), पण्डेचन्दन पीपल, तज, इन्द्रध, येसन सम माप लेकर वारीकचूर्णकर सकेदन्तनके पात्रेकी ६-७ भावनाये देकर सुखाकर रगड़ोडे । इसमेंसे १ मासे चूर्णमें ७ या २१ मरिच मिलाकर मनुकेवाष चटानेमें अवाध्य भी वमन निवृत्त होतीहै ॥ १२५ ॥

### १२६ पारदादिधूपः

रसं यज्ञञ्च सदिरे हरीतक्याश्च भस्मकम् ।  
लक्ष्मीरुदलोमसं वृणस्य फलज्जन्तपः ॥ ५४३ ॥  
एकतोलरुमानं स्याद्विह्वल हरितालरुम् ।  
गन्धकं तुत्यकञ्चाऽपि पद्मकं सरलन्तया ॥ ५४४ ॥  
द्वे चन्दने देवदाग वकमं काष्ठमेव च ।  
तथा केदारकाष्ठञ्च मायमानं प्रकल्पयेत् ॥ ५४५ ॥  
एकोरुत्य विचूर्ण्योऽयं सर्वं चाङ्गेरिकाद्रवैः ।  
तुलसीपत्रजरसैः पुरातनगुडेन च ॥ ५४६ ॥  
घृतेन सह पद् कार्यां घटिका मन्त्ररक्षिताः ।  
वेदनायामुत्कृष्टायां चतुर्भिः शुद्धचरैः ॥ ५४७ ॥  
वेष्टयित्वा च निर्धूमाऽङ्गात्परि प्रदापयेत् ।  
तं धूमं प्रतियुद्धोयात्ररो यन्त्रादिवेष्टित ॥ ५४८ ॥  
मुपनासाकर्णवर्दिनि न्यासस्य निरोधनात् ।  
स्वेदे जातेऽस्य नेकस्य सायं प्रातर्दिनत्रयम् ॥ ५४९ ॥  
मासमानन्तु पर्याशी शाफाम्लदधिपजनम् ।  
गुर्वन्नपायसादीनि चाऽप्यध्यानि विवर्जयेत् ॥ ५५० ॥  
दिनत्रये व्यतीते तु क्रान्तमुष्णाम्भुना चरेत् ।  
पद् घृमे रुते शान्ति मण्णध पिडिका अपि ५५१

तथा शोधश्चामघातः खड्गता पट्टताऽपि च ।  
कुष्ठोपदंशशान्त्यर्थं भैरवेण प्रकीर्तितः ॥ ५५२ ॥  
ध., भै. २, उपदंशे ।

भाषा—पारा, वज्रभस्म, कत्या, हरेकीभस्म, केलेके को-  
मलसर्पकीभस्म, सुपारीकीभस्म, येसन १-१ तोला; हिट्टल,  
हरिताल, गन्धक, तुल्य, पत्राकठ, सरल, दोनोचन्दन देवदाह,  
वक्त्रमणीकडकी, केशरकाष्ठ ( शु हलदरको ) की जड़ येसन  
१-१ मादा लेकर सबका चारीक चूर्णकर अमलोनिया, तुल-  
सीकेपत्ते, पुरानागुड़ और घृत, ये अन्दाजसे डालकर ६ गोलिए  
बनावे । जिससमय उपदंशको मिसीतरह बल न पड़तीहो  
उससमय चारतह सफेद कपड़ेसे ढककर निर्धूम अज्ञारोंपर एक  
गोली रखकर धुआं देवे और तमामअन्नमें धुएं को लगाने देवे ।  
धुआं लेते समय मुंह नाक, कान सनके डेढेताहनेसे और खासके  
बन्दकरनेसे पसीनाहोगा उसीरास्तेसे शरीरका तमाममिष  
बाहरनिकल जायगा इमंतरह सुबहशामलेवे । गेहूं, चना, धी  
और शक्कर इनको चाहे जिसतरह खाय । इनके अतिरिक्त कोई  
चीज़ न खाय और यह पथ्य एकमहीने तक चलावे । जबतक  
धुआंले तबतक खान न करे, चौथेदिन गरमपानीसे स्नानकरे ।  
केवल धुएके प्रहणसे घाब, कुंसी, शोथ, आमवात, खड्गता,  
पट्टता, कुष्ठ और उपदंश येसब घान्त होतेहैं ॥ १२६ ॥

### १२७ पारदादि मलहरम् ( प्रथमम् )

रसगन्धकयोर्धूर्ण तत्समं मर्दयत्तृणकम् ।  
सर्वतुल्यं तु कम्पिहं किञ्चित् तुल्यसमन्वितम् ॥ ५५३ ॥  
सर्वं सम्मेलयेद्वा घृतं सर्वचतुर्गुणम् ।  
पिचुद्रोतं प्रदातव्यं दुष्टघ्नघ्नविशोधनम् ॥ ५५४ ॥  
नाडीघ्नघ्नहरश्चैव सर्वघ्नघ्ननिपूदनम् ।  
ये घ्नानां न प्रशाम्यन्ति भेपजानां शतेन च ।  
अनेन ते प्रशाम्यन्ति सर्विषा स्वल्पकालतः ॥ ५५५ ॥  
२ यो. त., र. कौ., रसायनसं., घ्ने ।

भाषा—पाराऔरगन्धक समभागलेकर नीलवर्ण कजली  
करना । इनदोनोंकी घटावर मुदांसत्र और सबकी बराबर  
कमीला तथा वोडशाश नीलायोया लेकर सबका चारीकचूर्णकर  
सबसे चौगुना घृत डालकर एम्दो पहरघोटकर हस्ततहका मर-  
हम बनावेकि सब एकजीवहोनाय । इसकी कपड़ेपरलगानर  
पावपर रजना चाहिये । गम्भीर अथवा नाडीघ्न होतो इसीकी  
वत्तीभी रखे । इसके उपयोगसे दुष्टघ्ना शुद्धहोकर अच्छाहो-  
जाताहै नाडीघ्न भरजाताहै । जो घ्न सैकड़ों दवाओंके करनेसे  
शान्त न हुएहों ये इस मरहमसे बहुतयोकेही कालमें शान्तहो  
जातेहैं । इसको चाहे जिस घ्नमें लगासकेहै ॥ १२७ ॥

### १२८ पारदादि मलहरम् ( द्वितीयम् )

रसगन्धकसिन्दूरालाकम्पिहमादिकम् ।  
तुर्यं खदिरजं चूर्णं घृतं देयं चतुर्गुणम् ॥ ५५६ ॥

युक्त्या सम्मेल्य पिचुना घ्ने देयं विज्ञानता ।  
सर्वघ्नघ्नप्रशमनं घृतमेतन्न संशयः ॥ ५५७ ॥

२ यो. त., र. कौ., यो. र., रसायनसं., घ्ने ।

भाषा—पारा, गन्धक, सिन्दूर, राल, कमीला, मुदांसत्र,  
नीलायोया, कत्या, येसन समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण  
कजलीकर दूसरी चीजोंका कपडछान चूर्णकर सबसे चौगुना धी  
मिलाकर मरहम बनावे । इसकी कपड़ेपर लगाकर सवतहके  
घ्नोपर लगावे । इसके लगानेसे सत्रप्रकारके घ्न शान्त  
होतेहैं ॥ १२८ ॥

### १२९ पारदादि योगः

सूतं सवर्णं ध्योमसत्वं तारं ताम्रञ्च रोचनम् ।  
वीजञ्च शरपुद्रोतं कृष्णघट्टबीजकम् ॥ ५५८ ॥  
सर्वं मर्दयत्तृणैः कृवेराशस्य बीजकैः ।  
तक्षित्वा धारयेद्घ्नघ्ने धीर्वस्तम्भकरं चिरम् ॥ ५५९ ॥  
र खं., वीर्यस्तंभे ।

भाषा—शुद्धपारा, सुवर्णभस्म, अम्रकसरव, रजतभस्म,  
ताम्रभस्म, गोरोचन, सफेदका और कालेघट्टके बीज येसन  
समभाग लेकर पारे और रजत की जलका बनाकर सबचीजोंको  
मिलादे फिर इसमें बटका दूध डालकर मर्दनकर १-१ रतीकी  
गोलियें बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली करबकी शुद्ध-  
लीमें डालकर मुंहमें रखनेसे धीर्यस्तम्भन होताहै और यषारो-  
गावृणानकेसाप खिलानेसे यह समस्त रोगोंको दूरकरताहै १२९

### १३० पारदादि लेपः ( प्रथमः )

श्वेतस्य कणवीरस्य मूलस्य त्वक्पलार्धकम् ।  
रत्नस्याऽपि च तन्मानं हरितालं पलार्धकम् ॥ ५६० ॥  
धूर्तवीजं पलार्धं स्यात् पलार्धं गन्धकं मतम् ।  
रत्नं पलार्धं कथितं तिलतैलं ततः परम् ॥ ५६१ ॥  
कथितं पञ्चपलिकं औषधीनाञ्च चूर्णकम् ।  
कर्तव्यं सूक्ष्मं चाऽथ रसस्य बहिना सह ॥ ५६२ ॥  
कञ्जलिं सुस्मिकां कृत्वा तस्मिन्दवात्सुचूर्णकम् ।  
तैले समिश्रितं कृत्वा ध्वजायै संमलेपयेत् ॥ ५६३ ॥  
वर्षि कृत्वा प्रज्वलितां रक्षणीया जलोपरि ।  
अधोमुखीतः पतितं जले तैलं समाहरेत् ॥ ५६४ ॥  
तत्तैलं मर्दयेद्विद्वे उपरिस्थं ततः परम् ।  
श्लेष्मातकस्य पत्रं तु मृदु लिङ्गोपरि न्यसेत् ॥ ५६५ ॥  
सूत्रेण वेष्टयित्वा च सूक्ष्मचक्ष्णेन तत्परम् ।  
दिधारं सप्तदिवसं हस्तकमंकृतञ्चयेत् ॥ ५६६ ॥

१ कु

भाषा—पेदेद और लाकनेरकी जड़की छाल, हरिताल,  
घट्टके बीज, गन्धक, पारा येप्रत्येक २ कर्प, तिलका तैल  
५ पललेकर सबका कपडछानचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णक-  
जलीमें मिलायथीर १ तैलाडालकर खरकरे । मरहमकेसदशहोने-  
पर एकहायल्लगानाचौडा खादीकाकपडालेकर आधेपर इसका

लेपकर बीचमें लोहेकी शलाका रखकर बत्तीकी तरह लपेटदे और बत्तीको बीचमें चीमटेकीरहसे पकड़कर दोनों तर्फ आग-लगादे । बत्तीकेनीचे चौड़ेपात्रमें पानीभरकर रखदे जिसमें कि बत्तीमेंसे टपकाहुआ तैल पानीमें गिरकर ठंढाहोजाय । बत्तीके गुलको तोड़कर फेंकताजाय नहींतो तैलनहीं निकलेगा । तमामबत्तीजलजानेके बाद स्वाद्वशीतलहोनेपर तैलको निकाल-कर शीशमें रखछोड़े । इसमेंसे १-२ बूंद तैल लेकर सीवन और छुपारीको छोड़कर इन्द्रियपर लेपकर और बहुत कोमल लिटोडेकापता लगाकर कच्चेसूतसे लपेटकर वारीकरपड़ावांचदे, लंगोट न लगावे । इसतरह करनेसे ७ दिनों हस्तकर्मकृतदो-पसे निमुक्तहोताहै इसतैलको रानेके काममें लेनाहो तो हिर-ताल, पारा, गन्धक इनको शुद्धकरके डाले । इसतैलकी एकएक शलाका पानमें रखकर खिलावे और ऊपरसे दूधपिलावे ॥ १३० ॥

### १३१ पारदादिलेपः ( द्वितीयः )

पारदं मरिचं कुष्ठं तगरं कण्टकारिका ।  
अश्वगन्धा तिलाः क्षौद्रं सैन्धवं श्वेतसर्पपाः ॥ ५६७ ॥  
अपामार्गो यवा मापाः पिप्पली च समं जलैः ।  
पिष्ट्वा चिमर्दयेत्तेन लिङ्गं मासमहर्निशम् ॥ ५६८ ॥  
वर्धते हस्तमाग्नन्तरस्यौल्येन मुशलोपमम् ।  
वराहवसयाक्षौद्रैर्लिङ्गं मासं विलेपयेत् ।  
अतिदीर्घं दृढं स्थूलं जायतेनाऽत्र संशयः ॥ ५६९ ॥  
र. रं., ध्वजद्वौ ।

भापा—शुद्धपारा, मरिच, कुष्ठ, तगर, भट्टट्टया, अश्वगन्ध, तिल, मधु, संधानमक, पीलीसरसों, अपामार्ग, जव, उडद और पीपल येसब समभागलेकर जलमें पीसकर लिटपर लेपकरके मर्दनकरे । एकमहीनतक इसीतरह प्रयोगकरनेसे स्थूला और कठिनाता यथेष्ट प्राप्तहोतीहै । वराहरी यवा और मधुरो मिलाकर लेप करनेसे एकमहीनेमें ध्वजकी लम्बाई और स्थूला यथेष्टहोजातीहै ॥ १३१ ॥

### १३२ पारदादि वटी ( प्रथमा )

सुवर्णं रसमस्माऽथ माक्षिकं चाऽन्नसत्त्वकम् ।  
मुक्ताफलसमायुक्तं सर्वं सख्ये चिमर्दयेत् ॥ ५७० ॥  
जम्बीरफलजैट्राचैर्मर्दयेद्भिदिनं मिषक् ।  
आर्द्रकस्वरसेनैव मर्दं यामचतुष्टयम् ॥ ५७१ ॥  
चित्रमूलकपायेण मर्दयेद्भिदिनं मिषक् ।  
हंसपाद्रीसे चैव मर्दयेद्विषप्रयम् ॥ ५७२ ॥  
आतपे द्रोणयित्वाऽयं कृपिकायां निवेशयेत् ।  
सप्तभिर्मुक्तिकायत्त्रेणालुकायन्त्रमार्गतः ॥ ५७३ ॥  
पचेद्विशतियामन्तु स्याद्दशीतं समुद्धरेत् ।  
घाटाद्या च शतायर्षो गोक्षुरेण च मर्दयेत् ॥ ५७४ ॥  
काचकूप्यां विनिरूप्य पूर्वत्रपरिपाचयेत् ।  
गुज्ञाद्वयं सदा सादेदनुपानविशेषतः ॥ ५७५ ॥

सर्वव्याधिविनिर्मुक्तो दृढदीपनपाचनः ।  
वृद्धेषु सेवयेन्नित्यं पूर्णचन्द्रोदयो यथा ॥ ५७६ ॥  
वीर्यवृद्धिर्दृढवृद्धिः पण्डोऽपि पौरुषं भजेत् ।  
अस्य सेवनमात्रेण बहुस्त्रीबहुभो भवेत् ॥ ५७७ ॥  
र. क. यो., वाजीकरणे ।

भापा—सोनेकीमस्य अथवा वर्क, पारकीमस्य, माक्षि-कमस्य, अन्नरसत्वकमस्य और मोती सब समभाग लेकर जम्बीरी नीचुरे रससे ३ रोज, अदरकके रससे ४ पहर, चित्र-कमूलके काढ़से ३ रोज और हंसपदीके रससे ३ रोज मर्दनकर गोली बनाय धूपमें सुचारर सातकाइमिती की हुई आतशी शीशमें डालकर सुपबन्दकर बाहुका यन्त्रमें २० पहर आंच देवे । स्वाद्वशीतल होनेपर निकालकर वाराहीकन्द, शतावरी, गोखरू, इन प्रत्येकके स्वरससे मर्दनकर पूर्ववत् बीस २० पहरकी आंच देवे, बस यह रस तैयार होगया । इसमेंसे २-२ रत्ती यथोचितानुपानके साथ सेवन करनेसे समस्तव्याधिया दूर होकर अभि दीप्त होताहै । पाचनशक्ति एकदम बढ़कर उद्दभी पूर्णचन्द्रकी तरह जवान हो जातेहै । पण्डभी वीर्यवृद्धिको प्राप्त होकर बहुत स्त्रियोंका पति हो सक्ताहै ॥ १३२ ॥

### १३३ पारदादिवटी ( द्वितीया )

पारदः पञ्चमाषः स्याद्वयङ्गं पञ्चमाषकम् ।  
पुराणमिष्टकाचूर्णं मापद्वयमितं भवेत् ॥ ४७८ ॥  
द्रोणपुष्पीरसेनैव कांस्यपात्रे चिमर्दयेत् ।  
घटिकास्तकं कृत्वा प्रातरेकाञ्च भक्षयेत् ॥  
फिरङ्गव्याधिनाशाय भोजनान्तु यथेच्छया ॥ ५७९ ॥  
यो. म. , उपदेशे ।

भापा—शुद्धपारा और लवङ्ग ५-५ मासे पुरानीईटका चूर्ण २ मासेलेकर यद्दहत मर्दनकर कि पारा अरदय होजाय फिर यथाके रससे कांसीके पात्रमें मर्दनकरे । गोली धूपने-साथक होनेपर इसकी सात गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सुबहमें पानीके साथ निगलनादेवे तो फिरङ्गद्वारा गन्धहो । इसमें भोजन इच्छानुसार करे ॥ १३३ ॥

### १३४ पारदादिवटी ( तृतीया )

निष्प्रयमिमितो गन्धः पारदस्तत्समांशकः ।  
पट्टशाणं श्वेतपट्टिं गुडं द्वादशांशानिकम् ॥ ५८० ॥  
तुलसीस्वरसेनैव लोहपात्रे चिमर्दयेत् ।  
निम्बकाष्ठेन तत्सर्वं द्वियामं गुटिकास्ततः ॥ ५८१ ॥  
कार्याश्च सप्तसङ्ख्याका पकेकां भक्षयेत्ततः ।  
ताम्बूलं भक्षयेच्चाऽनु पानीयं स्थलपसेययेत् ॥ ५८२ ॥  
भोजनञ्च यथाकामं निचातगृहगोचरः ।  
दुःसाध्यमण्णीदीप्ताभ्यां युक्तास्तेस्य मसूरिकाः ॥  
येनप्रशमं यान्ति योगेनाऽनेन नाऽन्यथा ॥ ५८३ ॥  
यो. म., मसूरिकायाम् ।



भाषा—शुद्धपारा और गन्धक ३-३ टङ्क, सफेदकृत्या ६ टङ्क, पुरानागुड १२ टङ्क लेकर तुलसीवे स्वरसे लोहके पात्रमें नीमके डंठेसे दोपहरतक मर्दनकर सबकी सात गोलिएँ बनालेने । इनमेंसे १-१ गोली प्रातः काल पानीके साथ निगलनाय, कम से एक पानका बीडा खाकर थोड़ासा पानी पीवे । भोजन यथेच्छितकरे, वायुरहित घरमें रहे । इसके सेवनसे दुःसाध्य व्रण और पीडायुक्तमृत्तिकाएँ बहुतजल्दी शान्त हो जाती हैं ॥ १३४॥

### १३५ पारदादिवटी (चतुर्थी)

शुद्धं शिवांशमेकांशमेकांशं फणिकेनकम् ।  
द्वयंशं गन्धमिति त्रीणि पिष्ट्वा कुर्वात पर्पटीम् ॥ ५८४ ॥  
विषमुष्टिकधत्तूबीजजातीफलान्यपि ।  
एकांशानि पृथक्पृथक् दत्त्वा मन्त्रणतां नयेत् ॥ ५८५ ॥  
वाहिमीतन्तिडोतोयैर्भांययेत्सप्तधा पृथक् ।  
घटीर्यज्जीत जरणक्षौद्रैस्ता प्रहणीकिल्बः ॥ ५८६ ॥  
सि मे म, प्रहण्यधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा और अफीम १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीकर धरेके कोयलेंपर लोहकी कड़्हीमें गलाकर अफीमडाखे । मिलानेपर भेंसके ताजे गोबरपर रखेहुए कोमल केलेके पत्तेपर डालकर ऊपरसे दूसरा पत्ता रखकर दूसरे गोबरसे दबावे । चार पहरके बाद धीरेसे पर्पटीको निकालकर फिरसे कजली बनाकर शुद्धकुचिला, धतूरीबीज और जायफल ये प्रत्येक पारेकी बराबर बारीक पीसकर पर्पटीमें मिलाकर १-२ पहर खरलकरके अनारके स्वर लकी सातभावना देकर पनीहुई इमलीका बोल बनाकर उसकी सातभावनाएँ देकर १-१ रत्तीकी गोलिएँ बनाय सुखाकर रखजोडे । इनमेंसे एक अथवा दोहो गोलिएँ योग्यतानुसार १ माशा औरकेसाय गोलिएँको पीसकर मधुमें बदनासे प्रहणीरोग नष्ट होता है ॥ १३५ ॥

### १३६ पारदादिवटी (पञ्चमी)

पारदं गन्धकं तारममृतं चानु शुल्वकम् ।  
त्रिफला त्रिगुण्यक्ष चित्रकोशीररेणुकाः ॥ ५८७ ॥  
रजनीद्वयसयुक्तं सम्प्रेष्य घटकीकृतम् ।  
प्रहणीं विविधं शूलं शोषाऽतिसारकञ्जयेत् ॥ ५८८ ॥  
नि. र, र सु, वै चि, प्रहण्यधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और बज्राग, रजत और ताम्र भस्म, त्रिफला त्रिगुण्य (तज, पत्रज, इलायची), चित्रमूल, खग, रेणुबीज, हल्दी, दाहदल्दी ये सब समभागलेकर पार गन्धककी नीलवर्णकजलीकर अन्य वस्तुओंको बारीक पीसकर घटजकीछालप्रभृति सद्भावक द्रव्योंके स्वरसंकेसाय, मधु अथवा जलकेसाय ३-३ रत्तीकी गोलिएँ बनाकर रखजोडे । इनमेंसे १-१ गोली योग्यतानुसार अनुपातकेसाय देनेमें प्रहणी, नानातद्वेदशूल, शोथ और अतिसार ये सब नष्ट होते हैं ।

टि०—रेणुका नामक औषधि आजकल वैद्योंके परिचयसे बाहर निकल आई है इसके अभावमें संभालके बीज लिये जाते हैं परन्तु यह मूल है रेणुकायें शुष्ण बीजप्रधान हैं उष्णताशामक हैं, संभालके बीज अत्यन्त गरम हैं इसलिये इनको डालना उचित नहीं, हरिद्रासे लेकर बदरिकाश्रमतक एक दूधहोता है जिसकी शकल कमिष्कसे बहुतअंशोंमें मिलती जुलती है । दूसरे देखनेमें इसका फलभी कमिष्कके सदृशही मालूमपड़ता है भेद इतनाही है कि कमिष्कका फल फलानेपर स्वयं फूट जाता है और उसमेंसे लाल रज निकल पड़ता है उसीही कमिष्ककरके व्यवहारमें लाते हैं । रेणुका बीज अत्यन्त पतवारके सदृश घटित होता है फोड़ने पर प्रयत्नसे फूटता है काष्ठप्राय होता है । पहाड़में इसद्रव्यको रोण के नामसे बढ़ाके तमामवादिदे जानेतें हैं हरिद्रा और हृषीकेशके अनभिज्ञलोग वाविडङ्गके नामसे पुनराते हैं पर जैसेही पड़ाइके ऊपर जाओ कि वहाँसे लेकर सुदृढतक 'राण, नाम प्रसिद्ध है । यह नाम रेणुक अथवा रेणु शब्दसे अपभ्रंश हुआ मालूम पड़ता है इसकी दातन करनेका बहुत रिवाज है सुपपाकमें इसके बहुत लाभ होता है हमेशाके अन्ध्याससे दातों पर कुछ ललाई आती है । इसके तोड़नेसे कुछलाल रक्तका द्रव निकलता मालूम होता है इसीको रेणुका शब्दसे प्रहण किया जाय तो रेणुका शुष्क योगोंमें विशेष लाभ होमना सम्भव है ॥ १३६ ॥

### १३७ पारदादिवटी (षष्ठी)

पारदं गन्धकं नागं ताम्रं व्योषाऽनलैः समम् ।  
स्वर्जारसेन सञ्जर्ण्यं प्रदेया भायना दश ॥ ५८९ ॥  
पुनः पर्णरसेः सम्यक् चार्द्रकस्य रसेस्तथा ।  
सम्मर्द्य घटिका कार्या कफरोगनिघ्नतनी ॥ ५९० ॥  
मन्दाग्निकफरोगेषु भ्यासकासे विशेषतः ।  
आध्मानप्रतिनाहेषु प्रदेया सुखकारिणी ॥ ५९१ ॥  
नि. र, रसायनय, वै. वि, क्षमाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्ण कजली, नाग और ताम्रभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, चित्रमूल ये सब समभाग लेकर काशीपथियोंका घृण बनाकर २-३ पहर मर्दनकर बड़ी लोनी, पके पान और अदरकके रसाकी १०-१० भावनाएँ देकर ३-३ रत्तीकी गोलिएँ बनाकर रखजोडे । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुसारके साथ देनेमें कफरोग, मन्दाग्नि, क्षाम, कस, पेठका फूलना और गुग्गुगुहट ये सब नष्ट होते हैं ॥ १३७ ॥

### १३८ पारदादिवटी (विनयवटी) (सप्तमी)

समौ रसाऽम्रको रत्नचर्गेण परिभूषितो ।  
मुष्टिका करसंस्था तु मुखस्था युद्धचारणी ॥ ५९२ ॥  
र, रसेन्द्रम, र क, रसज्वाऽधिकारे । रसेन्द्रमश्लक्ष्मयोग्युदीतिनाम ।

भाषा—शुद्धपारा, अश्रुमूल और रत्नचर्गे (पद्मा, पुग राज, माणिस्य, पद्मराग, नीलम, मरकत, गोमेद, मोती और मृगा) समभाग लेना । प्रथम पारेको अश्रुमयाग्रेण सुमुश्निकर

रत्नोंका प्राप्त देनेसे गुटिकाका आकार हो जायगा । इस गुटिकाको मुखमें रखनेसे शत्रुवगैरह का घाव नहीं लगता और शुद्धमें विजय होताहै । इसीलिये बहुतेसे ग्रन्थोंमें इसका विजय-पट्टीभी नाम रक्खाहै । दूसरे लोग पारद बगैरहकी भस्म लेकर तुलसी बगैरहके रसमें इक्की खलकर पोष्टीके प्रसरसे इसकी गोली पकाना लिखतेहैं । पर वह गोली रसायन व वाजीकरण का कामकरेगी किन्तु “मुलस्था युद्धवारणी” यह अर्थ सिद्ध नहीं करसकी । कदाचित् मुलस्थाको लाक्षणिक समझकर खाना अर्थ करें और उससे ताकत आनेपर शत्रुओंका सामना करके जीतना अर्थ रखे तो यथार्थशक्ति हो सक्ताहै पर यथार्थस्थित अर्थसिद्धि नहीं हो सकी, इस तरहकी गोलियों का बाधना आजकल अवलम्बन जैसा मादूम होताहै यह सब सम्प्रदाय-विच्छेदका कारणहै । राजतरङ्गिणीके समयमें यह सम्प्रदाय चावल था इससे पुनरुज्जीवित करनेके लिये वैद्यसमुदायको ध्यान देना चाहिये ॥ १३८ ॥

### १३९ पारदादिवट्टी ( अष्टमी )

पारदं गन्धकन्तालं हिङ्गुलञ्च मनःशिलाम् ।  
मोदारपट्टकं शङ्खजीरकञ्च समंसमम् ॥ ५९३ ॥  
सुरसापल्लवरसेर्माष्यं छायाविशोपितम् ।  
धत्तूरपल्लवरसेर्मर्दयेत्पुनरेव च ॥ ५९४ ॥  
गुग्गुमा घटिका कायां गोघृतेन नियोजयेत् ।  
पथ्यं सघृतगोधूममन्यत्सर्वं विचर्जयेत् ॥  
पारदाद्या गुटी नाम ह्युपदंशयिनाशिनी ॥ ५९५ ॥  
रसायनम्., उपदेशः ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, हरिताल, शिगरिफ, मैनसिल, सुरांशज और सङ्गनीरा वैद्यक समभाग लेकर तुलसीके रसमें एकादिन मर्दनकर छायाशुष्क करे फिर श्वरेके बतोंके रसमें मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलियों बनाकर रखछेके । इनमेंसे १ अथवा २ गोलियां गायकेपीमें लपेटकर भिगलजाय । पी और गैहड़ी रोटी खानेछेदे, इसके गिराय सप् चौत्रका त्पापकरे तो उपदेश नष्टहै ॥ १३९ ॥

### १४० पारदादिवट्टी ( नवमी )

पारदस्य पलञ्चैव यशदं नागरज्जके ।  
पृथक् पलमितं प्रोक्तं त्रयाणाञ्च विशेषतः ॥ ५९६ ॥  
सम्यक् गुग्गुलुं समानीय द्वायं कुर्यात्तथापि ।  
मूत्रञ्च प्रक्षिपेत्तत्र पुनर्मूत्रान्तु निक्षिपेत् ॥ ५९७ ॥  
खल्वे भूत्वा मर्दयेत्तु फल्लोर्वा कारयेद्द्वयः ।  
गुग्गुलुमूत्रं पलमितं मरिचस्य पलायकम् ॥ ५९८ ॥  
सममूर्चं विधापाऽथ परमपूतं समाचरेत् ।  
शिप्रयुचो रसेर्मर्दं पुटानि त्रीणि दापयेत् ॥ ५९९ ॥  
आर्द्रकस्य रसेर्मेव त्रिपुटं दापयेद्विषयः ।  
कल्याणरसदी कायां पटिका कल्याणाशिनी ॥ ६०० ॥

श्वासकासौ निहन्त्याशु शीतवातान्तघैव च ।  
शूलरोगहरी प्रोक्ता रसादिवटिका त्वियम् ॥ ६०१ ॥  
र.मु., कासे ।

भाषा—शुद्धपारा, जस्त, नाग और वज्र वेप्रत्येक १ पलले, कर जस्त, नाग और वज्रको अग्निर गलाकर मिट्टीके बर्तनमें रखदेहुए पारमें डालदेवे, यह एकजातिकी नरमघातु होजायगी । इससे खरलेमें डालकर कमली बनालेवे फिर शुद्धखल-नाग १ पल और मरिच ८ पल का बारीक चूर्णकर उसमें मिलाकर एकदो पहर घोटकर सहजनकीछाल और अदरकके रससे ३-३ भावनाएं देकर मटरबराबर गोलियां बनाकर रख छेदे । इनमेंसे १-१ गोली यथोचिताशुपानकेसाय देनेसे कफ, श्वास, कास, शीतवात, शूलरोग इन सबका नाश होताहै ॥ १४० ॥

### १४१ पारदादिवट्टी ( दशमी )

पारदं सैन्धवं गन्धं नागं ध्योपाऽनलैः समम् ।  
शिग्रसेन सञ्चूर्ण्य प्रदेया भायना वृदा ॥ ६०२ ॥  
पुनः पत्ररसैः सम्यक् चाऽऽर्द्रकस्य रसेस्तथा ।  
मरिचप्रमाणा फफुजिकायां सा गुटिकोत्तमा ६०३  
अन्दाग्निकफरोगेषु कासश्वासे विशेषतः ।  
आध्मानपवनात्तं च प्रदेया मुखकारिणी ॥ ६०४ ॥  
रसायनं., कफरोगः ।

भाषा—पारा और गन्धकी नीलपुष्पकली, सैन्धव, नागभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल और चित्रकमूल सप्त समभाग लेकर बारीक चूर्णकर सहजन और अदरकके रससे १०-१० भावनाएं देकर मरिच बराबर गोलियां बनाकर रखछेदे । इनमेंसे योग्यतावसार २-३ गोली देनेसे मन्दाग्नि, कफरोग, वात श्वास, आध्मान और वातव्याधि ये सब नष्ट होछेदे ॥ १४१ ॥

### १४२ पारिजातटङ्गणम् ( तालकेशरीः )

द्विनैकं कदलीद्राघेष्टद्वयं मर्दयेद्दिनम् ।  
हरिद्राया द्रुपे द्रुपे निद्रापालागंभस्मजे ॥ ६०५ ॥  
तृतीयांशञ्च तालञ्च द्रुपा पालाशपुष्पजे ।  
सप्ताहञ्च रविशरीः श्वेतरण्डस्य धोजतः ॥ ६०६ ॥  
यामद्वयदशकं यद्विः काचकूप्यां गतस्य च ।  
तत्रिधा जायते सत्तमूर्धाऽथो मेदतः पुनः ॥ ६०७ ॥  
ऊर्ध्वं सत्त्वमधः किट्टं पुष्पितञ्च प्रजायते ।  
पुष्पितञ्चोर्ध्वसत्त्वञ्च पूर्वोक्तत्रिधा पुनः ॥ ६०८ ॥  
विमृष्टं काचकूप्याञ्च निक्षिप्याऽग्निं प्रदापयेत् ।  
त्रिवारमेवं हि कृते तालस्यं तत्रयोजयेत् ॥ ६०९ ॥  
अथ तस्य चतुर्धांशं द्वादं न्यस्य मर्दयेत् ।  
भृङ्गामार्बघदुःस्पर्शांघ्र्यत्पलाशजः ॥ ६१० ॥  
प्रत्यहञ्च शिगाम्मोमिः सप्ताहं मर्दयेद्द्रुमा ।  
काचकूप्यां विनिक्षिप्य यद्विं यामास्तु पांशुद ॥ ६११ ॥  
द्वयेवं हि त्रिवारञ्च पलाशपुष्परसस्ननः ।  
रसोनमानरसतः ग्रन्थहं मर्दयेद् दृढम् ॥ ६१२ ॥

एकानविंशतिविधाः शङ्खद्राघस्य भावनाः ।  
काचकूप्यां विनिक्षिप्य यामहादशक पचेत् ॥ ६१३ ॥  
त्रिचारमेवं हि कृते दिव्यं तलगतं भवेत् ।  
रक्तिका सर्वरोगघ्नी स्वरभेदक्षयाद्यः ॥  
दत्तमात्रेण नश्यन्ति तृल्लारशिरिवाऽग्निना ॥ ६१४ ॥  
र. का स्वरभेदे ।

भाषा—केलेकी जडके रससे मुद्रागेमो १ दिन, हल्दीके स्वरससे १ दिन, हल्दीऔर अपामार्गके धारने पानीसे एक २ दिन मर्दनकर तृतीयाया हरितालका मुरमासद्वय बारीक चुने टालर पलायके पुर्वोके रस, आरने दूध और सफेद एण्डेकी बीज स्वरससे ७-७ दिन मर्दन करे । फिर ७ कपडमिमी की हुई आतशी शीशीमें भरकर १२ पहरी की कमरुद्ध अग्निदेना, इसकी षाट बन्दकरदेनी चाहिये । स्वाहशीतल होनेपर कपडमिमीको अलगकर तैलमें एक डोरीको भीतोर शीशीक मुहर लमादे और अमि जलादे । जब डोरी जलजाय तब भीगेहुए कण्डेमें पोंछे तो अनायास शीशी फूट जायगी । इसमें ऊपर सतब, बीचमें पुण्य और नीचे त्रिद्व इतलह तीनविभाग मिलेंगे । इसमेंसु विट्को छोड़कर बाकी ( सत्त्व और पुण्य ) को लेकर पूर्वोक्त रीतिसे मर्दन करे और काचकूपीमें अग्निदेव । इतलह तीनवार करने के बाद तलस्थ को भी क्षामिल करले । फिर इससे थनुर्यास शिंगरिफ देहर भाग, भगरा, जवास, धतूरा, पलायण्य और हरे इत प्रत्येकके स्वरसमें ७-७ रोज मर्दनकर काचकूपीमें डालकर १६ पहरी अग्निदे । इतलह ३ बार करक प्याज मानरुद्ध और लघुनके स्वरसमें ७-७ रोज मर्दनकर १९ भावनाए शङ्खद्रावनी देकर १२ पहरी अग्निदे । इतलह तीनवार करनेके बाद तलस्थको पदार्थोंके उसको लेकर रखाछे । यह पारिजात दण्डन तैयार हुआ । इसकी १-१ रत्नी उचिणतु पानके साथ देनेसे स्वरभेद, क्षयप्रवृत्ति समस्तरोग इस तरह नष्ट होतेके जेने अमिस्तरागे कपामका पुन नष्ट होताहै ॥ १४२ ॥

### १४३ पारिभट्टो रसः

मूर्च्छितं पारदं धात्रीफलं निम्बस्य चाहरेत् ।  
तुल्यांशं र्यादिरेः पचाद्यदिनं मर्दयञ्च भक्षयेत् ॥  
निर्येकं दद्रुमुष्टमः पारिभट्टाह्वयोःसः ॥ ६१५ ॥

र स, वै चि, र चि, र सु, र म, रमायनस, यो म, थ. रा, र का, र र की, गुडाऽधिकारे ।

भाषा—मूर्च्छितारा, आदले और नीमकी निमोलीकीमवा समभागलेकर कूटानकर धरेके बचायेके एकदिन मर्दनकर ४-४ मागानी गोलीय बनाकर रखा छे । इनमेंगे १-१ गोली रीरक काडे अपना महामणिदिक्षायगे देनेगे यह दद्रुऔर गुडको नष्टकरताहै ॥ १४३ ॥

### १४४ पार्वतीरसः

पार्वती काशिसम्भूतो दारदो मधुपुष्पकम् ।  
गुग्गुली शालमली द्राक्षाधान्यभूनिम्बमार्कचम् ॥ ६१६ ॥

तिलमुष्टपटोलञ्च कृष्णाण्डं लवणद्वयम् ।  
यष्टिकाधान्यजं भस्म चान्तर्द्वयं समंसमम् ॥ ६१७ ॥  
मुखरोगं निहन्त्याशु पार्वतीरस उत्तमः ।  
चिरञ्जं पैत्तिकं हन्ति तिमिरञ्च तृणामपि ॥ ६१८ ॥  
र. स, र सु, र चि, सुतरेगे ।

भाषा—शुद्धान्यक, पारा और शिंगरिफ, महुआके फूल, गिलोय, सेमलका मुसला, श्राश, धनियां, चिरायता, भगरा, तिल, मूग, पटोल, कोंहडा, सेवा, साभर, मुल्हठी, धनियाकी अन्तर्द्वयविद्युधभस्म येसब चीजें समभागलेकर पातीकपीछकर रखाछे । इसमेंगे १-१ माशा मधुनेसाध अपना पित्तपात्रे-केकाडेकेसाथ देनेसे मुखरोग, बहुतदिनाका पित्तज्वर, तिमिर और प्यास इनसबको यह बहुतनल्दी नष्ट करताहै ॥ १४४ ॥

### १४५ पाशुपतास्त्रो रसः (प्रथमः)

पारदं म्लेच्छभस्माऽथ गन्धकञ्च मनःशिला ।  
पापाणद्वितयञ्चाऽथ भृङ्गीनीरेण मर्दयेत् ॥ ६१९ ॥  
द्विदिनं वालुकायन्त्रे चण्डाग्रौ च द्विषामकम् ।  
द्विगुञ्च भक्षयेन्नित्यमार्द्रकञ्चाऽनुपानकम् ॥  
पाशुपतास्त्रनामाऽयं सर्वाऽहिकं उवर्द हरेत् ॥ ६२० ॥  
थ रा, रसायनस, क्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धारा, गन्धक और मैतिल, ताम्रभस्म, काला और सफेद शुद्धतरिया येतन समभागलेकर भागरेके रससे दोरोन मर्दनकर बाजुकायन्त्रमें तीक्ष्ण अग्निगे दोपहतक पनाये । स्वाप शीतलोनेपर निकालकर रखाछे । इसमेंगे २ रत्नी अदरसों रसने साथ देनेसे सर्वाहिकज्वर नष्टहोताहै ॥ १४५ ॥

### १४६ पाशुपतास्त्रो रसः (द्वितीयः)

द्विपाषाणं द्वितुल्यञ्च नेपालं तालकं विषम् ।  
सर्वतुल्यं शुद्धसूतमर्कशीरेण मर्दयेत् ॥ ६२१ ॥  
दोलायन्त्रे पचेधामं समुद्धृत्य धिचूर्णयेत् ।  
भावितं फणिपित्तं गुडामात्रं मिषग्वरः ॥ ६२२ ॥  
लघुनस्य च तैलेन प्रलाहोरे घिलेपयेत् ।  
तत्क्षणं निहन्त्याशु सन्निपाताऽस्ययोदश ॥  
रसः पाशुपतास्त्रोऽयं शङ्खरेण प्रकल्पितः ॥ ६२३ ॥  
वै चि, वा, सविताते ।

भाषा—काय और सफेद शुद्धगविया, दानेफिरङ्ग और तृतिवा, शुद्धबाल्योद, हरिताम और पक्षमा देगव समभाग लेकर दण्डकी कमरु शुद्धारा टालर बखरी बना कर आक्रेदुधके साथ मर्दनकर गोलायनाय आक्रेदुधगे दोला यन्त्रमें १ पहर स्वदनकरके निकालकर घोटकर गुगान । इसमें बालेयारके घिलेनी दा अपना एक भावना दहर १-१ रत्नी लघुने तैलमें मित्रावर तागुके बाल त्रिधत्तर लगरनेगे तेहद्वारके सवितातेको यह तक्षण नष्टकरताहै ॥ १४६ ॥

१४७ पाशुपताऽस्त्रो रसः ( महान् ) ( तृतीयः )

द्विभागं श्वेतपापाणं म्लेच्छनेपालपारदम् ।  
प्रत्येकमेकभागान्तु खल्वमये विमर्दयेत् ॥ ६२४ ॥  
कृष्णधत्तूरतोयेन मर्दितं याममात्रकम् ।  
मुद्रप्रमाणमात्रेण त्वार्द्रकञ्चाऽनुपानरुम् ॥  
पेकाहिर्न द्व्याहिकञ्च त्र्याहिकं नाशयेज्ज्वरम् ॥ ६२५ ॥  
य रा, र म मा., वै. चि, ज्वराऽधिकारः ।

भाषा—शुद्धसप्तदशतिया २ भाग, शुद्धशिंगरिफ, जमा-  
लमोटा और पारा १-१ भाग लेकर सबकी कबली बनाय  
काले धतूरे रखने १ पहर मर्दनकर मूषबराबर मोलिया बना  
कर अदरक के साथ देनेसे अन्तर्देकर आनेवाले न्याहिक चातु-  
र्धियादि समस्त विषमज्वरोंको यह नष्ट करताहै ॥ १४७ ॥

१४८ पाशुपतो रसः

कर्पं सूतं द्विधा गन्धं त्रिभागं तीक्ष्णभस्मरुम् ।  
त्रिभिः समं विषं देयं चित्रककथभाषितम् ॥ ६२६ ॥  
धूर्तबीजस्य भस्माऽपि द्वात्रिंशद्भागसंयुतम् ।  
कटुत्रयं त्रिभागं स्यात्पुष्पैले च तत्समे ॥ ६२७ ॥  
जातीफलन्तथा कोपमर्द्धभागं नियोजयेत् ।  
तथाऽर्द्धं लवणं पञ्च स्तुब्धैरण्डसिन्तिडी- ॥ ६२८ ॥  
अपामार्गाश्वत्थजञ्च क्षारं दद्याद्विचक्षणः ।  
हरीतकी यषक्षारं सर्जिका हिह्व औरकम् ॥ ६२९ ॥  
दङ्गुणं सूततुल्यञ्च क्षन्त्ययोगेन मर्दयेत् ।  
भोजनान्ते प्रयोक्तव्यो गुञ्जाफलप्रमाणतः ॥ ६३० ॥  
रसः पाशुपतो नाम सद्यः प्रत्ययकारकः ।  
शीपनः पाचनो हृद्यः सद्यो हन्ति विसृचिकाम् ॥ ६३१ ॥  
तालमूलीरसैश्चमुद्वराग्रयनाशनः ।  
अतिसारं मोचरसैर्महर्णो तक्रसिन्धवैः ॥ ६३२ ॥  
सौष्यचलरुणाशुण्ठीयुतः शूलं विनाशयेत् ।  
अशौं हन्ति च त्रकेण पिप्पल्या राजयक्ष्मकम् ॥ ६३३ ॥  
वातरोगं निहन्त्याशु शुण्ठीसौष्यचलाश्वितः ।  
शर्कराघान्ययोगेन पित्तरोगं निहन्त्ययम् ॥ ६३४ ॥  
पिप्पलीशौद्रयंगेन श्लेष्मरोगञ्च तत्क्षणात् ।  
अस्मात्परस्परं नाऽस्ति घन्यन्तरिमतो रसः ॥ ६३५ ॥  
र रा, रसायन, यो. र, र क ल, नि. र, र सु, र प्र.,  
र. का यो त., वै. चि, अजीर्णाऽधिकारः ।

टि०—अस्य योगस्य प्रतियुक्तं काष्ठमेव दहनेन यथा वर्तमानपठ  
पूर्वरीजस्य भस्माऽपि द्वात्रिंशद्भागसंयुतमिति । अन्यग्रन्थेषु “पूर्वरीजस्य वै  
भस्म मर्दं सप्तभागान्,” इत्यादयः पठ्यन्ते मर्दितं त्रिभिः । कठय  
त्रिभागं रसायनस्य स्य ते द्विधा त्रिपटुं योग्यश्विपरीक्षादि । पर  
मकम्भवनाज्जननं भुवरीरुमनो योगो न युजिष्यते । भावनयो प्रथम  
न पद सप्तरीजं त्रिभिः त्रिभिः, भगवन्तऽपि द्वात्रिंशद्विषय मन्त्र  
मासी दह्यते, भरीर्णात्मकस्य पूर्वमग्न्यधिकारिणात् । अन्त्य  
नि रोगेनमासद्विषयस्य सङ्गीत । करमर्दं निष्पाद्युत्पन्नम् ।

भाषा—शुद्धपारा १ कप, शुद्धगन्धक २ क, लोह- । दिगर्ह ॥ १४९ ॥

मस्य ३ क. लेकर तीनोंकी बराबर शुद्धपल्लनागमिलाकर नील-  
वर्णकबलीकर चित्रककेकलीकी एकभावनादेकर धतूरेकेरीजोंकी  
भस्म ३२ भाग, त्रिपटु, लवण और इलायची ३-३ कप,  
जायफल, जावित्री और पाचों नमक प्रत्येक ८ मासे, सेतुण्ड,  
एण्ड, इम्ली, अपामार्ग और पीपल इनका धार, हर्, यव-  
धार, सबी, होंग, जीरा, मुनासुहागा ये प्रत्येक १ कप  
लेकर बारीकचूर्णकर पूर्वपिण्डमें मिलाकर नीचूने रखसे १-१  
रत्तीकी मोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचि-  
त्तनुपानकेसाथ देनेसे अग्नि प्रदीप्तहोकर सायाहुआ पचताहै  
हृदयकेरोगोंको नष्ट करताहै और हैजेको तत्काल निरुद्धकर  
ताहै । उदररोगोंमें तालमूलीके रखसे, अतिसारमें मोचरसे,  
ग्रहणीमें तक और सैन्यधने, घुलमें सचल, पीपल और सोंठके  
चूर्णसे, अशौंमें तक्र, राजयक्ष्ममें ६४ पहरा पीपलसे, वातरोगमें  
सोंठ और सचलसे, पित्तरोगमें धनिया और शक्कर, श्लेष्मरो-  
गमें पीपल और मधुमेसाथ देनेसे यह तत्तद्भागोंको बहुत  
शीघ्रताके साथ नष्टकरताहै । वैद्य और रोगीको तत्क्षण परि-  
चय देताहै ॥ १४८ ॥

१४९ पापाणभेदः

रसेन तुल्यं गगनं द्विगन्धं  
स्वर्णं रसांशं कुटिलञ्च तद्वत् ।  
विमर्दयेत्तत्करसेन शुण्ठी-  
मोक्षूरजेन द्विजयष्टिकाङ्गिः ॥ ६३६ ॥  
विभाषितः सिद्धिमुपैति सूतः  
पापाणभिहृद्भूमितः प्रयत्नात् ।  
शताघरी काशकुशाम्बुद्वि-  
कशेरुशालीधुरसैः प्रयोज्यः ॥ ६३७ ॥  
तीव्रादमरीं नाशयति प्रसह  
क्षोराशिनो मासचतुष्टयेन ।  
तथोपकादिप्रतिधापकेन  
कापं पिबेत्संतुष्टं घृतोक्तम् ॥ ६३८ ॥  
२, अमरीरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा और अन्नभस्म १-१ भाग, शुद्धगन्धक  
२ भा, शुण्ठी और नागभस्म छटा २ भाग लेकर एव अगह  
मिलाकर नीलवर्णकबलीकर तत्तत्पाणी, सोंठ, गोबरू और  
ब्रह्मपट्टीके स्वादोंसे १-१ रोजमर्दन करनेसे पापाणभेद नामक  
रस तैयार होगा । इसमेंसे ३-३ रत्ती शताघर, काग, कुन्ना,  
गोरू, कमेरू, घानकीज, और ईरा इतने रसोंके साथ मिला  
करनेसे असाध्यो असाध्य पथरीरोग नष्ट होताहै । इसमें  
केवल दूध पिलाना अथवा इसमें ऊपर बरतना काढ़ा बनाकर  
उपकादिगणका चूर्ण ३ मासे और पी डालकर पिगवे तो बार  
महीनेमें असाध्यो असाध्य पथरीरोग दूरी । रेह, तीन्ध,  
शिलाजीत, शमी, हीराक्षी, होंग, धनिया यद उपरा-

## १५० पापाणभेदी रसः ( प्रथमः )

शुद्ध सूर्तं द्विधा गन्धं शिखितुत्थरसान्वितम् ।

श्वेतापुनर्नवावासारसैः श्वेतवचाद्रवेः ॥ ६३९ ॥

प्रतिद्राचैरुपहं मर्द्यं शुष्कं तद्द्रावसंयुतम् ।

स्वेदयेद्दोलिकायन्त्रे दिनेकं ते विचूर्णयेत् ॥ ६४० ॥

रसः पापाणभिप्रायं द्विगुणश्चादमरीहरः ।

गोपालककंदीदुग्धोभूधानीमूलचूर्णकम् ॥ ६४१ ॥

कुलत्थकायसंयुक्तमनुपानं प्रशस्यते ।

सघृतं गोक्षुरकायं रात्रौ तस्मै प्रदापयेत् ॥ ६४२ ॥

रसायनस, र र, वै. क, ध., र. चं., र को. चि. र म, र दी., व रा., वै. चि, भै र, अरमर्दधिकारो । कुनविच्छिखितु  
त्यस्थाने शिलाजतु ग्रहीतम्, भावनाया श्वेतवचाद्रवस्थाने श्वेताऽ  
पराजिता ग्रहीता ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा, शुद्धतृतीया  
और रसौत १-१ भा., लेकर सबकी नीलवर्ण कजलीकर  
सफेदपुनर्नवा, अइसा, श्वेतवच इन प्रत्येकके स्वरससे १-३  
रोज मर्दनकरे परन्तु प्रत्येक भावनाके बाद गोलाबनाकर जिसकी  
भावनी दीहो उसीके रसमें १-१ रोज दोलायन्त्रसे स्वेदनकर  
छुआदे फिर दूसरे रसकी भावना देकर स्वेदन दे । अन्तरीमें  
इसकी २-२ रत्तीकी गोखिले बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१  
गोली एण्डककडी, छोटीदूधी, भूपानी इनकी जइका चूर्ण  
कुलथीके काथमें मिलाकर इसके साथ लेनेसे पयरीरोग दूर  
होताहै रानीको सोतेसमय गोखलके काथमें धी डालकर  
पिलाना ॥ १५० ॥

## १५१ पापाणभेदीरसः ( द्वितीयः )

रस्तेन सितवर्णांश्चा रसं द्विगुणगन्धकम् ।

घृष्टं पचेच्च मूपायां द्वौ मापौ तस्य भक्षयेत् ॥ ६४३ ॥

गोपालककंदीमूलं कुलरथोदै विवेदनु ।

गोक्षण्डकसदामद्रामूलस्याथ विवेभिदि ॥

अये पापाणभिप्राय्मा रसः पापाणभेदकः ॥ ६४४ ॥

र र स, अरमर्दधिकारो ।

टि.—चिरकालतः गोपालककंदी १ गोखलकंदीति च शब्दौ स्वार्थे  
सोपनाऽनमयी सजातो दुरयेने टीकाकारैश्च सतत्स्थाने स्वरसमनीषि  
मात्रेण, तत्तत्तमनिर्देशनयुक्तैश्चानन्योक्तिभिर्निर्दिष्टा प्रकाशयन्ती  
तिष्ठता मौनाऽऽलम्बनमेव श्रेयस्करम्, ताभ्यां शब्दाभ्यां किं वस्तु ग्रहीत  
व्यमिति विचार तु एण्डककडी टिं पोषैर्युं इतिप्रसिद्धमेव द्रव्यं  
अहणीयमिति वदाम “गोपालककंदीमूलं मिष्ट पर्युषिताम्भवा । गोयमान  
पित्राणैः पातवत्यस्मरीं हृदात्” इति राममार्तण्डीयवचमापानुवादेन  
अयुरपसनाऽधिपतिमहाराजैर्नितुक्तमिषकसमिलोपरिनिर्दिष्ट एषाऽर्थो  
निर्धारि, तथाचायं राजमातण्डीय प्रमेयो भवुषाऽरमापीरोगिणु नितु  
ज्याऽऽसीरवांशो ग्रहीतो मुखेने च अन्यैरपि भिन्नवर्णै रेतज्जयोगे प्रवर्णि  
व्यमिति नम्रनिवेदनम् इन्द्रनाथ्णा कर्कश्या वैतादृशीं शक्तिसारस्येति  
निश्चयेन ज्ञम् । तृतीयपापाणभेदे रसे गोपालककंदी दुग्धमिलितयोजने  
चाऽस्मल्लिखितस्य द्रव्यं पुष्टिरिति कर्कशीपातवन्त्यं गुणविधिं दुग्ध  
त्वाऽभावात् । वृक्षत्राऽर्वाऽजानाहोमालाऽर्कदीपस्थाने पातालककंदीति पाठ

कुवोऽस्ति पातालकुम्भिकेलयरर्पणावा पातालवर्त्ययामयदमरीभेदन  
शक्तेरभावात्स पात्रो निररायुष्य इत्यलमितिस्तेषां ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा लेकर  
दोनोकी नीलवर्ण कजलीकर सफेद इटसिट ( पंजाबी ) के  
रससे १-२ रोज मर्दनकर शरावसमुद्रकर लवणयन्त्रमें फकावे ।  
स्वाइशीतल होनेपर निवालकर इसमेंसे २ मांशे फावकर एर-  
ण्डककडीकी १ तोला जइको ५ तोले कुलथीके अष्टावशेष  
काथमें मिलाकर पीवे । रातको सोते समय गोखल और  
गंभारीकी जइका काढापीवे इससे पयरीके टुकड़े टुकड़े होकर  
निकल जातेहैं ॥ १५१ ॥

## १५२ पापाणभेदीरसः ( तृतीयः )

रसं द्विगुणगन्धेन मर्दयित्वा प्रयत्नतः ।

यसुः पुनर्नवा वासा श्वेता ग्राह्या प्रयत्नतः ॥ ६४५ ॥

तद्भवेमावयेदेनं प्रत्येकन्तु दिनत्रयम् ।

पचन् मूपागतं शुष्कं स्वेदयेज्जलयन्त्रतः ॥ ६४६ ॥

पापाणभेदी नामाऽयं नियुज्जीताऽस्य बल्लकम् ।

गोपालककंदीदुग्धं भूम्यामलकमूलिकाम् ॥

कुलत्थकायतोयेन पिष्ट्वा तदनु पापयेत् ॥ ६४७ ॥

र र स, र र, यो. स, र म, अरमर्दधिकारो ।

भाषा—शुद्धपारा १ भा, शुद्ध गन्धक २ भा., दोनोकी  
नीलवर्णकजली कर सफेदपुनर्नवा, कालपुनर्नवा, अइसा, वच  
अथवा सफेदकोबल इन प्रत्येकके रसोंसे १-३ रोज मर्दनकर  
गोला बनाय मूपामें रखकर छुराले और जलयन्त्रसे १ दिन  
स्वेदन कर रखाछोडे । इसमेंसे १-३ रत्ती एण्डककडीके दूधमें  
मिलाकर रखलावे और ऊपरसे भुईआवलेकी जइका चूर्ण  
आधातोला कुलथीके काथमें मिलाके पिलानेसे पयरी दूर  
होतीहै ॥ १५२ ॥

## १५३ पापाणवज्ररसः ( प्रथमः )

शुद्ध सूर्तं द्विधा गन्धं रसैः श्वेतपुनर्नवैः ।

मर्दयित्वा दिने खल्वे रुद्धा तद्गृध्रे पचेत् ॥ ६४८ ॥

दिनाग्रे तत्समुद्धृत्य मर्दयेद्दुहसंयुतम् ।

अश्मरीं वसितशूलञ्च हन्ति पापाणवज्रकः ॥ ६४९ ॥

गोरक्षवर्कटीमूलकायं कौलत्थकन्तथा ।

अनुपानं प्रयोक्तव्यं बुद्धा दोषवलावलम् ॥ ६५० ॥

र चि, र स, वै चि, र म, र च, ध, यो म, र की, चि  
क, र र, रसायनसं, ना वि, अरमर्दधिकारो ।

टि.—यो म, वै चि, शुद्धस्थाने पापाणभेदपूर्वो ग्रहीतम् ।

भाषा—शुद्धपारा १ भा, शुद्धगन्धक २ भा, लेकर नील-  
वर्णकजलीकर श्वेतपुनर्नवाके रससे एकरोज मर्दनकर गोला बनाय  
गृध्रयन्त्रमें बन्दकर दिनभरकी अग्निदे । स्वाइशीतलहोनेपर  
निवालकर १ मांशेकी मात्रा बराबरके पुराने शुद्धेसाथ देकर  
एण्डककडीकीजड २ तोलेका अथवा कुलथीका अष्टावसपत्राथ  
पिलाने अथवा दोषवलावल देखकर कामकरे ॥ १५३ ॥

## १५४ पापाणवज्ररसः ( द्वितीयः )

डिगन्धसूतस्त्रिदिनं विमृद्य

पुनर्नवाश्वेतवसुद्रवेण ।

पुटेन मृषाकुहरे निवेद्य

कालशमानच्छङ्गणेः प्रयत्नात् ॥ ६५१ ॥

समूलतफस्य रसेन मधो

गोक्षुरतोयेन दिनत्रयञ्च ।

पापाणभिच्छर्करया च बहु-

द्रयोनितश्चाश्मरिरोगनुत्स्यात् ॥ ६५२ ॥

र., अश्वरीरोगे ।

हि०—मावगाया मनुपाने च विण्पापवज्रमयोनाम् वृषक पाद-  
हृन्मोक्षि, अत्र समूलकस्य रसेनेति परं मधुमन्त्रम् तत्राऽऽप्यु-  
त्स्यादभिद्वयम् । परन्तु तन्पाने गोपाण्यसंतया (एण्डरकाई हि०)  
मूल व्यवहारणीयम् । अश्वरीभेदे निषागने चाऽऽकृतसिन्धवात् ।

भाषा—प्रथमपापाणवज्रकी बीजोंको घुंघरू भूषरयन्त्रमें  
पाकर एण्डरकाई और गोखरूके रसमें ३-३ रोज़ मदनर  
६ रत्तीकीमात्रा क्षरके साथदेनेसे अश्वरीरोग दूरहोताहै । इन्-  
योगमें तब नामकी वनस्पति आईहै वह प्रसिद्धहीहै द्रवस्थि  
एण्डरकाईसे कामलेना यह उससेकम काम नहीं करती ॥१५४॥

## १५५ पापाणवज्ररसः ( तृतीयः )

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं द्येतपौनर्नघव्रतैः ।

भायनाप्रितयं देयं रक्षा तं भूषरे पुटेत् ॥ ६५३ ॥

पापाणभेदचूर्णन्तु सप्तं संयोज्य मर्दयेत् ।

निष्कमश्मरिकां हन्ति पूर्वोक्तादनुपानतः ॥

योगधाहान् प्रयुज्जीत रसानश्मरिदान्तये ॥ ६५४ ॥

र. वि., वि. ता., र. को., नि. र., यो. र., र. र., व. रा.,  
रसायनग., अश्मरिद्विहारे ।

भाषा—शुद्धायेि दूना शुद्धगन्ध लेकर नीलार्णवखली-  
कर गफेदुनर्नघा रसमें ३ भागनाएँ देकर भूषरयन्त्रमें पकाकर  
उपरी बाराबर पापाणभेदका घूण मिलादे । इसमेंसे ३ माहोकी  
मात्रा देकर एण्डरकाई की जड़गादिस अथवा कुन्धीका भाग  
पिनांगेने अश्वरीरोग नष्ट होताहै ॥ १५५ ॥

## १५६ पिङ्गलेश्वररसः

भस्मसूतं विषं शुण्ठी घचा यक्षिः फलत्रिकम् ।

प्रलवीजं विडङ्गानि भृक्षिमल्लहातगन्धकम् ॥ ६५५ ॥

शिरितुरयं कषातुल्यं सर्वमेकत्र मर्दयेत् ।

त्रिफलाफाघसंयुक्तं कान्तपत्रे स्थितं निशि ॥ ६५६ ॥

कर्ममात्रं निद्रेत्यातः सप्यकुष्ठनिवृत्तये ।

पष्मासापचितं दृष्टि रसाऽयं पिङ्गलेश्वरः ॥ ६५७ ॥

र. गु., वि. क., र., का., र. को., कुंठे ।

भाषा—गादभस्म, शुद्धशुण्ठा, मोठ, वच, त्रिफलामूत्र,  
शिरिता, फलत्रयी, विडङ्ग, भंगरा, शुद्धभिल्व और गन्धक,  
मुष्यभस्म, पीतचूने में सब समभाग सहर घुंघर रसमें । इय-

मसे १ तोला द्वागो २ तोले त्रिफलाके काट्टेमें मिलाकर  
कान्तलोहके पात्रमें रखकर रातभर रहनेदे सुवहमें गावे । ऐसा ६  
महीनेतक करनेसे समस्तशुण् और वलोपलित नष्ट होताहै ॥१५६॥

## १५७ पित्तकृन्तनो रसः

सूतकञ्च मृततारमस्मकं

गन्धकेन सहितं समांशकम् ।

मर्दितं हि खलु भृक्षवारिणा

चाऽर्घ्याममपि कुक्कुटे पुटे ॥ ६५८ ॥

पाचितं हि सकलं विचूर्णितं

लेहितं हि मधुशर्करायुतम् ।

पित्तदोषशमनं मयादितं

पित्तकृन्तनमिदं प्रशस्यते ॥ ६५९ ॥

र. प्र. सु., र. म. मा., र. च., पित्तोर्गे ।

भाषा—शुद्धपारा, चांदीकीभस्म, शुद्धगन्धक तब समभाग  
लेकर नीलार्णवखलीकर भंगरेके रसमें १-२ रोज़ मदनर  
क्षरावगम्भुद्धमें बन्दकर उस्तुटुटकी आंचदे । स्वादगीतशुद्धे-  
पर निकालकर रखडोडे । इसमेंसे २ या ३ रत्तीकी मात्रा  
क्षरमधुके साथ देनेसे पित्तोत्पन्न दोष दान्तहोताहै ॥ १५७ ॥

## १५८ पित्तमज्जानुशो रसः

शुद्धगन्धकटुश्च तालकश्च मनःशिला ।

सर्वं हंसपदीद्रव्यैर्द्विदिनमेकं विमर्दयेत् ॥ ६६० ॥

घातुकायन्यके पाच्यं पट्टयामातं निरूप्य च ।

देयां शुङ्गानुपानेन मधुपित्तं विनाशयेत् ॥ ६६१ ॥

व. रा., वै. वि., मधुपित्त ।

भाषा—शुद्धगन्धकऔर टड्डण, हरिताल और मनःशिल  
समभागलेकर नीलार्णव खलीकर हंगराजके रसमें एकरोज  
मदनर मुगार वाजरायन्त्रमें ६ पहर घाननर रखडोडे ।  
इसमेंसे १-१ रत्ती रामबोचिवानुपानके साथ देनेसे मधुपित्त  
नष्टहोताहै । मधुपित्तका लक्षण बगवतार्जयमें देखेना ॥१५८॥

## १५९ पित्तमज्जनो रसः

प्रवालं माक्षिकं तुल्यं त्रिवारमाद्र्यारिणा ।

मर्दितं दुग्धसितया मेघं पित्तनिवारणे ॥ ६६२ ॥

मध्याज्येन सितायुक्तं मेरितं घातपित्तनुत् ।

पित्तमज्जनो योगः पित्तं नाशयति क्षणात् ॥ ६६३ ॥

र. च., पित्तोर्गे ।

भाषा—प्रवालभस्म और माक्षिकभस्म समभागलेकर  
अदार्णवमें तीनभागनादेकर रखडोडे । इसमेंसे ३ रत्तीकी-  
मात्रा क्षरमितलानूप दूधसंघा देनेसे पित्तोर्गे नष्टहोताहै ।  
मधु, यो और क्षरकेसाथ देनेसे कान्तिन नष्टहोताहै ॥१५९॥

## १६० पित्तमज्जनरसः

पारदं गन्धकं ताम्रं मुमन्तीरममर्दितम् ।

काचकूण्यां विनिक्षिप्य घातुकायन्यके तथा ॥ ६६४ ॥

पचेद्भिषक् च सञ्चूर्ण्य खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ।  
त्रिध्वारं पञ्चलवणं हिङ्गुगुल्फुकुप्रकम् ॥ ६६५ ॥  
कटुत्रयञ्च त्रिफला गान्धारी जातिकाद्वयम् ।  
दीप्यत्रयं त्रिफेनञ्च मृषामलं विपवत्सकम् ॥ ६६६ ॥  
पलाह्वयञ्च सौभाग्यं कुबेरो यक्षिमूलकम् ।  
तिन्तिडीफलप्रभ्यो च चूतं च दाडिमीफलम् ॥ ६६७ ॥  
समभागानि सञ्चूर्ण्य खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ।  
भावयेत्सप्तवारंश्च शृङ्गेर्यरसेन च ॥ ६६८ ॥  
शुद्धैर्न मधुना लेहं यामे यामे च भक्षयेत् ।  
अम्लपित्तं निहन्त्याशु ग्रहणीं हुस्तरां तथा ॥ ६६९ ॥

ब. रा. वै. वि., अम्लपित्ते । अस्मिन्ग्रन्थे मानाया निष्कार्थमिति मूले इत्येते परन्तु वस्तुयोग्यस्याति तीक्ष्णत्वादिप्रकार्थ-  
स्थाने शुद्धैकनिति पाठो ह्युतोऽस्ति

भाषा—शुद्धपाप और गन्धक, तावेकाचूरा समभागलेकर सुखलीकरसे २-३ रोजमर्दनकर सुखाकर सातपडमिडीकीहुई आतसी शीशीमे रखकर बालुकायन्त्रमें बन्दकर ४ पहरकी अग्निदेवे । स्वाह्नीशीत होनेपर निकालकर सजी, सुहागा, बबुक्षार, पाचोनमक, मुनाहीग, गुणल, कूठ, त्रिकटु, त्रिफला, भटकटैया, जायफल, जाविनी, दीप्यत्रय (अजवाइन देशी, खुरासानी और खरजवाहन), त्रिफेन (अहिषेन, समुद्रेन और अम्बर) शुद्धसोमल, शुद्धबलनाग और इन्द्रजव, छोटी तथा बड़ी इलायची, सुहागा, करजमेचीज, चित्रकनी जड़, इसलीके फल, पिपलामूल, आमकी मज्जा, अनारदाना येसय समभाग लेकर कपडछान चूर्णकर अदरकके रससे ७ भावनाएँ देकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रती मधुमेसाय पहर २ के अन्तर पर लेनेसे अम्लपित्त और हुस्तरग्रहणीरोग नष्टहोतेहैं ॥ १६० ॥

### १६१ पित्तभञ्जीज्वराहुः

सृताऽन्नके भूमिनिम्बकाथे र्धात्सुभावनाः ।  
सप्ताहं कृतमालस्यं शुद्धक्याश्च दिनत्रयम् ॥ ६७० ॥  
तिक्ताया विंशतिदिनं सती गजपुटे पचेत् ।  
सप्तवारान् गजपुटे पाचनीयं मिषकर्मैः ॥ ६७१ ॥  
रक्तिकापञ्चकं देयं विषप्ल्या ज्वरिताय वै ।  
एष पित्तज्वरं हन्ति विषमाख्यं महाबलम् ॥ ६७२ ॥  
जोर्णज्वरं बहुविधं चातुर्यादिज्वरं तथा ।  
क्षीणानां बलकृच्चैव बालानां रोगनाशनम् ॥ ६७३ ॥  
गर्भिणीनां ज्वरहरः पित्तमञ्जी ज्वराहुः ।  
पथ्यं दध्योदनं देयं सक्षितं मुद्गरं तथा ॥ ६७४ ॥  
यूपो मांसरसो वाऽयं गोदुग्धमथवा भवेत् ।  
सर्वपित्तविकाराणां विषमार्णां निवारणः ॥ ६७५ ॥  
र. ग. मा. ना वि., ज्वराधिकारे ।

भाषा—अन्नकर्ममें चिरायतके काथकी ७ दिन, अम ल्तास और गिलोयकी ३-३ दिन, कुटकीके ताबरी २० दिन भावनाएँ देकर गोलावनाय सुखाकर धारावसमुत्तर गज

पुटरी आचदे । इसीतरह सात गजपुट देकर रखछोड़े । इसमेंसे ५ रती पीपलकेसाय देनेसे पित्तप्रधान विषमज्वर मानाप्रसारका जीर्णज्वर, और चातुर्थकादि बरीकाज्वर नष्ट होताहै । क्षीणोंको बल देताहै बालकोंके तमामरोगोंको दूर करताहै । गर्भिणीके ज्वरको दूर करताहै । इसपर पथ्य शकर, दही, भात दूध अथवा भूषा यूप अथवा मांसरस या केवल गोदुग्ध रोगीकी अवस्थाानुसार देना । समस्त पित्तविकारोंके लिये और विषमरोगोंके लिये यह अत्युत्तम औषध है ॥ १६१ ॥

### १६२ पित्तभञ्जीरसः

व्योमपाददगन्धाश्मजयपालकटङ्गणान् ।  
बहिचन्द्ररसद्विभिभागाङ्गम्भाभसा ग्रहम् ॥ ६७६ ॥  
फलायप्रमिताः कृत्वा गुटिकाः पित्तभञ्जिकाः ।  
वितरेक्षामशूलाह्नीं कृमिशूले पिशेपतः ॥  
पथ्यं तर्कादनं चाऽत्र स्तम्भार्थे शीतला क्रिया ॥ ६७७ ॥  
रसायनस, र वि, र. क, वै वि, नि र, र का, शूल-  
धिकारे । नि. र, वै वि, पीडारीति नाम । र. का, शूल-  
भञ्जीति नाम । इतिचिद् व्योमस्थाने व्योषं पृथीतम् ।

भाषा—अन्नरसमम, शुद्धपाप, गन्धक, जमालगोदा और सुहागा ये क्रमशः ३-१-६-२-२ माग लेकर नीलवर्णवज्र-  
सीकर जमीरीके रससे ३ रोज मर्दनकर मटरबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ अथवा २ गोली योग्यताानुसार आमचूल और क्रिमिशूलमें देना इससे दस्तहोंगे, मानासे अधिकरचन होनेपर छाछभात खानेको देकर तमाम शीतल-  
क्रिया करता ॥ १६२ ॥

### १६३ पित्तमुहररसः

पारदं हिङ्गुलोत्थञ्च शुद्धपातनतो नयेत् ।  
कुङ्कुटाण्डरसाङ्गमष्टङ्गणक्षारमेव च ॥ ६७८ ॥  
गन्धकस्य तथा भागो घृतेन परिमर्दयेत् ।  
सिद्धं रसं समादाय जीरतोयेन दापयेत् ॥ ६७९ ॥  
भाषत्रयं प्रतिदिनं ग्रहणीरक्तदोषनुत् ।  
ज्वरदाहविनाशश्च रक्तपित्तं निवच्छति ॥ ६८० ॥  
ब. रा., रक्षपित्ते ।

भाषा—ऊर्ध्वपातनयन्त्रसे शिगरिफमेंसे निकालाहुआपारा, ऊर्ध्वपातनयन्त्रकीजड़ी, सुहागा और शुद्धगन्धक ये सब समभाग लेकर पादगन्धकनी नीलवर्णकजलीकर अन्यचीजोंको मिलाकर थोड़ीदर मर्दनकरे । गाढा होनेपर अन्दाजसे गायका पी बाल-  
क फिर मर्दनकरे । गोलिया बनानेलायक हो तब गोलिया बनाकर रखछोड़े अथवा अवलेहरूपमें रखे । इसमेंसे ३ मासकी मात्रा जीरेके पानीकेसाय देनेसे ग्रहणीदोष, रक्तदोष, ज्वर, दाह और रक्तपित्त य सब नष्ट होतेहैं ॥ १६३ ॥

### १६४ पित्तलरसायनम्

रीतिकांताऽप्रतालानि चिडङ्गं यूपणं तिलाः ।  
दीप्यचित्रकमल्लतामज्जानः सहदेविका ॥ ६८१ ॥

ब्रह्मवृक्षफलं विष्णुप्रियाया मूलमुत्तमम् ।  
भ्रामराज्यसमायुक्तं निष्कमात्रं प्रयोजयेत् ॥ ६८२ ॥  
दुग्धाशी सूर्यमाराध्यं ध्वजप्रवृत्तिं मण्डलात् ।  
कासश्वासदिशमनं पित्तलस्य रसायनम् ॥ ६८३ ॥  
वृ क , रसायने ।

भाषा—पीतल, कान्तलोह, अश्रक, हरिताल इनसीमसें, विडङ्ग, त्रिस्तु, तिल, अजवाइन, चित्रकमूल, मिठावेकीमन्त्रा, सहदेवी, पलाशरीज, तुलसीकी चड, येसब समभाग लेकर कूट कपड़छानकर मधु और शीमें मिलाकर रखोड़े । इसमेंसे ४-४ मांशकी मात्रा लवे और केवल दूधपीकर सूर्यनारायणी आराधना करे तो ४९ दिनमें श्वेतकुष्ठ और कासश्वासादि दूरहों ॥ १६४ ॥

### १६५ पित्तविध्वंसनरसः

( भद्रकालीरस , वातमम्पोहन )

शुद्धं सूतं विपश्चाऽन्नं चूर्णं गन्धद्रुणम् ।  
धूर्तवीजं सेन्यवज्जं तुल्यं तुल्यं विचूर्णितम् ॥ ६८४ ॥  
रत्नमये विनिक्षिप्य कठिहृद्रधमर्दितम् ।  
वज्रमूपागतं शृत्वा बालुकायन्त्रके पचेत् ॥ ६८५ ॥  
द्विषामान्ते समुद्धृत्य मापमेवाऽनुपानतः ।  
भक्षयेद्यमपि ते तु सर्वपित्तनिवारणम् ॥ ६८६ ॥  
व रा , वै चि , चर्मपिते ।

टि०—अस्य रसस्य वैषयिचिन्मणौ वर पाठं विन्यस्य कठिहृद्रधं स्थाने मत्स्यपित्तं निहितं तस्य नाम च भद्रनारलीरस इति स्थापितं तत्रास्य विचार—पित्तशमनार्थं चैत्रम् मण्पादनीयसाईं वरवहीद्रवभा बना दातव्या, अथर्व चैत्रदाभयोरपि भावनाया न काऽपि दातव्या धानम् म्मोहनरमोऽपि ईश्वरवज्रस्य तत्रैव निरामवातं पठितं ।

भाषा—शुद्धपारा और बडनाम, अश्रकभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, शुद्धगन्धक, सुहागा और धतूरकैरीज, सेधानमक येसब समभाग लेकर पाराम्पश्यकी नक्षिषर्णं नक्षलफिट सफ चीजें शारीकरकर मिलाकर अजलीकरलोके रसे मर्दनकर गोलात्रया वज्रमूपायें समुद्धर सुपाकर बालुकायन्त्रमें दाप हर पाककर पर बालु अधिक न दे केवल २-२ अङ्गुली चारों तरफ बालसे टकारह अन्यथा दोषहमें पाक न होगा । स्वाद्वशीतल होनपर निशालकर रखोड़े । इसमेंसे १-१ मांश समयोचितानुपानक साथ देनेसे चर्मपित्तादि समस्तपित्तविकार नष्टहोतहैं ॥ १६५ ॥

### १६६ पिताऽग्निवारिदरसः

अयोमहशोद्धवद्गरम  
विभावयेदाडिमगोस्तनीजैः ।

रसेलिधाऽय युगयल्लमाय

सितापयोमि चिनिहन्ति पित्तम् ॥ ६८७ ॥

र रा , पित्तरोगे ।

भाषा—लोहभस्म, शुद्धपारा, वज्रभस्म, सुवर्णभस्म येसब समभागकर १-२ पहर मर्दनकर अनाद और दासकरसे

३-३ भावनाए देकर ६-६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखोड़े । इसमेंसे १-१ गोली शक्करके पानीके साथदेनेसे समस्तपित्तरोगेको यह नष्टकरताहै ॥ १६६ ॥

### १६७ पिताऽङ्गुशरसः

शुद्धपारदगन्धश्च द्रुणश्चाऽन्नभस्मकम् ।

पतानि समभागानि खल्यमये विनिक्षिपेत् ॥ ६८८ ॥

भद्रमुस्तकपायेण मर्दयेत्त्रिदिनं तथा ।

काचकूप्या विनिक्षिप्य पुटमेकान्तु भूधरम् ॥ ६८९ ॥

स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ।

मूर्च्छापित्तविनाशाय सर्वपित्तनिवारणम् ॥ ६९० ॥

वै चि , पित्तरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सुहागा, अश्रकभस्म सब समभागकर नीलवर्णकम्बलीकर नागरमोथके कान्चकी ३ रोन भावना देकर सुखाकर अच्छीतरह कपडमित्रीकीहुई आतशीशी शीमें भरके मूचरयन्त्रमें पुटदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर १ रत्ती उचितानुपानक साथ देनेसे मूर्च्छापित्त प्रशुति समस्त पित्तविचारोंको यह नष्ट करताहै ॥ १६७ ॥

### १६८ पित्तान्तकरसः ( प्रथमः )

जातीकोपफले मांसी कुष्ठं तालीसपत्रकम् ।

माक्षिकं मृतलोहञ्च अम्रं दिव्यं समांशिकम् ॥ ६९१ ॥

सर्वतुल्यं सूतं तारं समं निष्पिष्य वारिणा ।

द्विगुञ्जामा बटी कार्या पित्तरोगविनाशिनी ॥ ६९२ ॥

कोष्ठाश्रितञ्च यस्मिन् शाखाश्रितमयाऽपि धा ।

शूलञ्चैवाऽम्लपित्तञ्च पाण्डुरोग हलीमकम् ॥ ६९३ ॥

दुर्नामप्रान्तिवान्तीश्च क्षिप्रमेव विनाशयेत् ।

रसः पित्तान्तको ह्येष काशिराजेन भाषितः ॥ ६९४ ॥

र स , र सु , पित्तारोगे ।

भाषा—जायफल, जावित्री, जटामानी, कूठ, तालीसपत्र, सोनामाखी, लोह और अश्रकभस्म सब समभाग कर छत्रकी बराबर रत्नभस्म डालकर पानीकेसाथ पीपलर दोदो रत्तीकी गोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानके साथ देनेसे कोष्ठ अथवा शाखाश्रित पित्त, शूल, अम्लपित्त, पाण्डुरोग, हलीमक, बवागोर, वान्ति, प्रान्ति, इन सबको यह नष्ट करताहै ॥ १६८ ॥

### १६९ पित्तान्तकरसः ( वातपित्तान्तकः ) ( द्वितीय )

मृतसूताग्रमुण्डकं तीक्ष्णमाक्षिकतालकम् ।

गन्धकं मर्दयेत्तुल्यं यष्टिदाक्षऽमृताद्रवे ॥ ६९५ ॥

जलमण्डपजै पाठाद्रवे क्षीरत्रिद्वारिजे ।

मर्दयेद्यं दिनं रात्रौ च सिताक्षौद्रयुता घटी ॥ ६९६ ॥

बहुमात्रा निहन्त्याऽपि पित्तं पित्तज्वर क्षयम् ।

दाहतृष्णाश्रमादृष्टोप हन्ति पित्तान्तको रसः ॥ ६९७ ॥



सिताक्षीरं पिबेद्यानु यष्टिकायं सिताऽन्वितम् ।

पिबेद्वा पित्तशान्त्यर्थं शीततोयेन घालकम् ॥ ६९८ ॥

व. रा., र. र. कौ., र. क., र. सं., र. र., र. चं., र. व. ल.,  
र. र. स., र. को., वै वि, वि. क., पित्तरोगे ।

६९८-र सं., र र, पत्योर्ध्वेत्त्वयोस्तथा च रमचय्याशौ द्वितीयस्थाने  
वातपित्तान्तक इति मय । र. र. कौ., र. र. स, पत्योर्ध्वेत्त्वयो द्वा-  
सारपित्तान्तक नमेति । बन्पित्तान्तस्तन्नाग्नि जलमष्टपत्रे द्विवैरित्यन्य  
स्थाने धानीयतावरीद्वानिनिर्दिश्यते । मृगयद्वाभ्रमुण्डावैरित्यत्र मुण्डस्थाने  
मुग्धा निहिता इत्यने, अनस्ययाऽवैवाऽन्तर्भाव ससुप्ति । धानीयता  
बर्वाभावनविशेषे मृगयद्वा च मुग्धा निरेतानेनापि नष्टसि विवर्तिषि ।

भाषा—पारा, अन्नक, मुण्ड, ताम्र, लोह, माक्षिक, हरि-  
ताल इनमयरी भस्मे और शुद्धाण्यक समभाग लेकर बारीक-  
पीसकर मुलहठी, द्राक्ष, गिलोय, सोवाल, पात्रा, क्षीरविदारी,  
इन प्रत्येकके स्वरस अपना हाथोंमें १-१ रोज मर्दनकर ३-३  
रतीकी गोलियां बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोली घसर  
और छहदेकसाथ मिलाकर खानेसे पित्त, पित्तज्वर, क्षय, दाह,  
तृषा ये सब नष्ट होतहैं । इसको खानेकेबाद घसर डालादुना  
दूध अपना मुलहठीका काथ पीवे अपना ठंड पानीकेसाथ  
गुणग्यवाला मिलाकर पीवे ॥ १९९ ॥

१७० पित्तान्तकरसः (सर्वपित्तविनाशकः) (तृतीयः)

रसेन्द्रो घस्तनाभश्च गगनं द्रवदं कलिः ।

तालं तुल्यानि सर्वाणि स्रव्ये कज्जलिकां कुट्ट ॥ ६९९ ॥

दिनेकं भृङ्गनीरेण मर्दयेद्य ततो भिषक् ।

कृषिकोदरमध्यस्थं दिनमेकं विपाचयेत् ॥ ७०० ॥

मात्रा चणोमिता योज्या पित्तजेषु गदेषु च ।

रसः पित्तान्तको नाम पित्तोदगनिहन्तनः ॥ ७०१ ॥

रवायनसं, वै. वि, व. रा., पित्तरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा और बजनाग, अन्नकभस्म, शुद्धसिं-  
रिक, गन्धक और हरिताल सब समभाग लेकर पारेगन्धककी  
मीलवर्णकज्जलीमें ये सब चीजें मिलाकर भंगरेके रसमें एक्कोज  
मर्दनकर सुखाकर आतशीशीदीमें भरेके १ रोज बालकायन्त्रमें  
पकाकर रखडोहे । इसमेंसे चनेप्रमाणमात्रा उचिततुलानके साथ  
देनेमें समस्तपित्तोदग दूर होतहैं ॥ १७० ॥

१७१ पिनाकपाणिरसः

यक्ष्मात्पथं सुतगन्धं नार्गांशष्टङ्गणः शिला ।

शिलाजतु द्वितीयांशां विशतिः त्रयाऽऽयस रविः ॥ ७०२ ॥

एतीयांशस्तिन्दीडिञ्जं त्रिंशंशैश्च विचूर्णयेत् ।

कपित्थकाञ्चनरसेर्माषितो यल्लमात्रकः ॥ ७०३ ॥

यष्ट्या पाण्डूदरप्लीहगुल्मकृच्छ्रविनाशनः ।

पिनाकपाणिनामाऽयं रस्तो योगीन्द्रसूचितः ॥ ७०४ ॥

र रा, पाण्डुरोगे ।

भाषा—यक्ष्मभस्म, शुद्धसोनामाषी, पारा और गन्धक  
१-१ भाग, शुद्धशुभागा और मैन्सिल ६ आठवा भाग, शिला-  
जीत २ भा, लोहभस्म बीसवा ३ भा, ताम्रभस्म तीसवा

३ भाग, इमली तीसवा ३ भाग लेकर सबमें इक्का मिलाय  
रैच और कचनाके रससे मात्रा देकर ३-३ रतीकी गोलिया  
बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोली मुलहठीकेसाथ लेनेसे  
पाण्डु, आध्मकारके उदरोग, गुल्म, मूत्रकृच्छ्र इन सबमें यह  
नष्ट करताहै ॥ १७१ ॥

१७२ पिप्पलीखण्डः

पिप्पलीप्रस्थमादाय पचेत्क्षीरं चतुर्गुणे ।

अर्द्धाऽऽदकं घृतं गव्यं शुद्धं पण्डाऽऽदकं तथा ॥ ७०५ ॥

विपचेत्पाकवर्द्धयः पश्चाच्चैतानि दापयेत् ।

चातुर्जातं नवं व्योषं श्रीलण्डं नलदाऽऽमुदे ॥ ७०६ ॥

कर्पूरं जातिपत्रञ्च कुङ्कुमं मधुकं नतम् ।

पृषक् शुक्तिमितं सर्वं चूर्णीकृत्य विनिक्षिपेत् ॥ ७०७ ॥

मृताऽम्रं कुड्योन्मानं मधुनः कुड्यं तथा ।

विमिश्रय नित्यसेवेत् यद्यं वाजीकरं परम् ॥ ७०८ ॥

दाहं तृष्णां भ्रमं छर्दिं मूर्च्छामग्निवज्रयेत् ।

कासं श्वासं क्षयं पाण्डुं प्रमेहं विपमज्वरम् ।

जयेद्वाजो वलं कुर्यादग्निभ्यां चाऽतिवृजितम् ॥ ७०९ ॥

ना. वि, आसे ।

भाषा—एकएक पीपल लेकर चासेर दूधमें, पत्रावे, मावा  
होनानेर मायका धी २ सेर और घसर ४ सेर डालकर चाशनी  
ठेकारके फिर तण, पत्र, इलायची, सोंठ, मिर्च, पीपल,  
नारियल, रस, नगरमोषा, शुद्धकपूर, जावित्री, केशर, मुल  
हठी और तगर २-२ कर्प, अन्नभस्म १६ कर्प, मधु १६  
कर्प देकर उसमें बालर अज्जीतह मिलाकर रखडोहे । इस  
मेंसे अमिरलाजुमार एकएक अथवा दोदो तोलेकी मात्रा लेकर  
दूध पीनेमें यह बलके बडाताहै वाजीकरहै दाह, तृषा, भ्रम,  
वमन, मूर्च्छा मन्दाग्नि, कास, श्वास, क्षय, पाण्डु, प्रमेह, विप  
मज्वर, और ओज क्षय इनमयों दूरकरताहै ॥ १७२ ॥

१७३ पिप्पलीपाकः (वृहन्) (प्रथमः)

प्रस्थन्तु पिप्पलीचूर्णं क्षीरे पलशतद्वये ।

पचेन्मन्दाग्निना धीमात्रं घृतप्रस्थेन संयुतम् ॥ ७१० ॥

घनीभूते मधुनिभे सुगन्धोनि विनिक्षिपेत् ।

खण्डप्रस्थत्रयं तस्मिन्मधुप्रस्थाऽर्द्धमेव च ॥ ७११ ॥

सुनिष्पन्नेऽवलेहे तु द्रव्याणीमानि दापयेत् ।

चातुर्जातं पञ्चकोलं मरिचं तगरं तथा ॥ ७१२ ॥

जातीफलं जातिपत्री देवपुष्पं कुबेरदृक् ।

आकल्लुकाऽग्निशोषञ्च तगरं जीरकद्वयम् ॥ ७१३ ॥

शतपुष्पा शटी धान्यं विडङ्गं ताम्रमेव च ।

सुवर्णमाक्षिकं लोहं प्रत्येकन्तु पलार्धकम् ॥ ७१४ ॥

तुगारुपर्योः शुक्तिचूर्णमेपं विनिक्षिपेत् ।

सुनिष्पन्नेऽवलेहेस्तु स्याद्योऽयं शुभभाजने ॥ ७१५ ॥

सदा सेव्यो नरैस्त्वेव आयुर्मेधाऽभिकाङ्क्षिभिः ।

शुक्रवृद्धिं करोत्याशु वाजीकरणमुत्तमम् ॥ ७१६ ॥

वलीपलितनिर्मुक्तः पूर्णधातुः प्रजायते ।  
 अनेन सेव्यमानेन स्त्रीशतं रमयेन्नरः ॥ ७१७ ॥  
 सर्वरोगविनिर्मुक्तो दृढकायो महावली ।  
 तेजोवृद्धिं करोत्यायुः कन्दर्पोऽऽकान्तरूपकः ॥ ६१८ ॥  
 यथावलं नरैः सेव्यः स्त्रीपुंमिर्बालवृद्धकैः ।  
 अशीतिं वातजात्रोगान्नाशयत्येव वेगतः ॥ ७१९ ॥  
 तथाऽष्टादश कुष्ठानि विंशन्मेहमरोचकम् ।  
 शुल्मं प्लीहं तथा श्वासं कासञ्च तमकादिकम् ७२० ॥  
 वातरक्तं रक्तपित्तं तथाऽष्टावृद्धाणि च ।  
 महाध्याधिपस्मारमुन्मादं नाशयत्यपि ॥ ७२१ ॥  
 गुणानन्यांश्च कुर्याद्भि रोगानीकं चिनाशयेत् ।  
 नराणाममृतं होष देवानाञ्च यथा सुधा ॥ ७२२ ॥  
 पा. व., वीर्यद्वौ ।

भाषा—एकसेर पीपलके चूर्णको ८०० तोले दूधमें मन्द  
 आचने पराये, पाक होतमभय १ सेर घी डालदेवे । मजुकी  
 तरह गाढा होनेपर छहर ३ सेर और मजु ३ सेर डालकर  
 पराये । चासनी तैयार होनेपर तज, पत्रज, इलायची, पञ्चमूल  
 ( पीपल, पिपलामूल, कव्य, चित्रक, सोंठ ), मरिच, तगर,  
 जयफल, जावित्री, लौंग, कुरङ्ग, अकलेकरा, समुद्रशोष, तगर,  
 स्याहसुपेन्द्रीरा, सोंफ, कचूर, धनिया, विडार, ताम्रमस,  
 सोनामासी, लोहमस, शुद्धरस और धमेलोचन ये सब २-२  
 तोले बारीक चूर्णकर चासनीमें डालकर अच्छीतरह मिलाकर  
 रखलोड़े । सातदिन बीतनेके बाद अमिल देकर १-१  
 अथवा २-२ तोले रारर दूध पीनेमें आयु, मेधा, श्रुत  
 इनकी वृद्धि और उत्तम वाजीकरण होताहै । वलीपलितमे  
 निर्मुक्त होकर समस्त धातुओंसे सरीर परिपूर्ण हो जाताहै  
 इसके सेवनमें ८० वातरोग, १८ प्रकारके कुष्ठ, २० प्रकारके  
 प्रमेह, अरुचि, शुल्म, रीष्टा, तमनादिधाम, कास, वातक,  
 रक्तपित्त, ८ उदररोग, अपस्मार, उन्माद, इन सबको यह  
 गूढ करताहै ॥ १७३ ॥

### १७४ पिप्पलीपाकः ( द्वितीयः )

पिप्पलीप्रस्थमादाय पचेत्सरीरं चतुर्थेण ।  
 प्रस्फार्जकं घृतं दिव्यं शुद्धसण्डाढकं तथा ॥ ७२३ ॥  
 लेहं पचेद्धनं तावदायत्पाकं सुपाचितम् ।  
 ततो द्रव्याणि चैतानि सुयुष्णानि प्रयोजयेत् ॥ ७२४ ॥  
 पलात्यद्वागुपुष्पञ्च लघ्वङ्गं नलदं तथा ।  
 नागरं पिप्पलीं मुस्तां धीरुण्डं मरिचं नतम् ॥ ७२५ ॥  
 कटुप्रिकं जातिपत्रीं कुङ्कुमं मधुकं तिलाः ।  
 प्रत्येकं चाऽक्षमात्राणि रसमस्मयुतानि च ॥ ७२६ ॥  
 सर्वैः समानां तच्चूर्णं लेह्यस्तायु साधयेत् ।  
 मधुनः कुडवं दत्त्वा ग्रादेद्भिल्वं यथा ॥ ७२७ ॥  
 कृष्यं पुष्टिकरं सूर्यं चक्षुष्यञ्चाऽभिरुचनम् ।  
 कल्पं क्षारपेकस्त्र्यं छर्दिमृच्छांश्चमापहम् ॥ ७२८ ॥

दाहतृष्णाप्रशमनमोजस्यं धातुवर्धनम् ।  
 बोधनं चेन्द्रियाणां वै प्रमेहान्हन्ति विंशतिम् ॥ ७२९ ॥  
 दोषत्रयप्रशमनं क्षयरोगविनाशनम् ।  
 वीर्यस्तम्भकरञ्चैव तथा वाजीकरं परम् ॥  
 वातान्तरक्षणं वल्यं पिप्पलीपाकसञ्ज्ञकम् ॥ ७३० ॥  
 पा. व., वाजीकरणे ।

भाषा—१ सेरपीपलकेचूर्णको चौगुने दूधमें पकावे ।  
 मात्राहोनेपर घी आधासेर, छहर ४ सेर डालकर चासनीहोने-  
 तक पराकर इलायची, तज, नागजैर, लौंग, रस, सोंठ,  
 पीपल, नागरमोषा, नारियल, मरिच, तगर, शिकुड, जावित्री,  
 केशर, मुल्हठी, तिल और पारदभस्म येसब १-१ तोला डाल-  
 कर २॥ तारसी चासनी बनाकर उतारले । छंढाहोनेपर पाषाण  
 सहद मिलाकर रखलोड़े । इसमेंमे अमिल देकर मात्रा  
 पाकर उगने दूधपीनेमें उपमा, पुष्टि, रुचि, नेत्रज्योति और  
 अभिरो बढ़ताहै । बल और दृढताको करताहै छर्दि, मृच्छां,  
 भ्रम, दाह, तृष्णा, धातुशीणता इन्द्रियदौर्बल्य, २० प्रकारके  
 प्रमेह, क्षय, धातुना पतलापन, वातवृद्धि इनमको यह नटकर  
 शरीरको मजबूत बनाताहै ॥ १७४ ॥

### १७५ पिप्पलीपाकः ( तृतीयः )

अर्द्धद्रोणं शुभं दुग्धं कणाप्रस्थार्द्धमेव च ।  
 दर्शीसंघट्टसान्द्रं तु ण्डण्डप्रस्थद्वयान्निवृत्तम् ॥ ७३१ ॥  
 वानरीमुसलीकन्दं चातुर्जातकराचना ।  
 कर्भो देवकुतुम्भं मस्तकीं करहाटकम् ॥ ७३२ ॥  
 ग्रन्थिकं नागरं धान्यं शङ्खीं लदिरस्तारकम् ।  
 लौहं प्रत्येककपर्णमेतान्येव विचूर्णयेत् ॥ ७३३ ॥  
 घनसारोऽर्द्धकषेण क्षीतले क्षौद्रफोडयम् ।  
 क्षिपेत्कणाऽवलहोऽयं प्रमेहाशौबलक्षयान् ॥  
 कासं श्वासं ज्वरं हिष्कारं छर्दिं मृच्छाक्षयजयैव ७३४ ॥  
 चि. र. भ.

भाषा—आठसेर दूधमें ३ सेर पीपल डालकर पकावे, जब  
 बड़ोभी लगनेलगे तब मात्रा २ सेर, छिलेहरहित बेवाचनेबीज,  
 दोनोमुपली, तज, पत्रज, इलायची, नागजैर, मोरोचन, ऊँटक-  
 डालेहीज, लौंग, मस्तकी, अरुन्दरा, पिपलामूल, मोठ,  
 धनिया, कचूर, कन्था, लोहभस्म ये प्रत्येक १-१ तोला मिलाकर  
 आधातोला शुद्धरसमिलादे । एतदस छंढाहोनेपर १६ तोले  
 सहद मिलाकर रखलोड़े । इसमेंमे अमिल देकर १-२ तोलेही  
 मात्रा लेकर दूध पीनेमें प्रमेह, वषाणीर, धातुक्षय, ओज क्षय,  
 कास, श्वास, क्षय, हिंसा, छर्दि, और मृच्छां क्षयजयैव १७५ ॥

### १७६ पिप्पलीलोहयोगः

पिप्पलीलोहचूर्णञ्च पयसा प्दीहनाशनम् ।  
 मन्दाग्निगुणमयातांश्च जयेद्विषयनिरेषणान् ॥ ७३५ ॥  
 य नि., उदररोगे ।

भापा—शेवड़ीपीपलकी पीसकर ३ रती लोहमस्य मिलाकर दूधसे साथ पीजावे । ऐसा २१ रोपुतकरनेसे जीर्णकर, असाध्यलीहा और अरुचि नष्टहोतेहै । प्रतिदिन सेवन रखनेसे मन्दाग्नि, गुल्म, वातरोग, येषव दूरहोतेहै ॥ १७६ ॥

### १७७ पिप्पल्यादिरसायनम् ।

पिप्पल्या दश पट्ट पलं मरिचजं भाङ्गीविडङ्गाह्वयम्,  
विश्वाज्ञाजितचतुर्पलं दहनकं भृङ्गीरजश्चयस्कम् ।  
लोहमग्नि पलद्वयं सितपलातोऽष्टौ मधुमस्यकौ,  
तत्सर्वं परियोज्य धान्यपुटके पक्षस्थितं सेवयेत् ७३६  
कासश्वासौ च मन्दाग्निं क्षयं पाण्डुमरोचकम् ।  
हृन्धादुःश्वप्तिपथं पिप्पल्यादिरसायनम् ॥ ७३७ ॥

वै चि, कासधासे ।

भापा—पीपल १० पल, मिर्च ६ पल, भारङ्गी, विडङ्ग, सोंठ और जीरा ४-४ पल चित्रकमूल, भग्रा चव्य, लोहमस्य, पिपलामूल २-२ पल, मिथी ८ पल, मधु ३२ पल लेकर सबको इको मिलाय सुहृद-द्वार अनानकी रासिमें रखदे । १५ दिने बाद निकालकर अमिलव देखकर एकएकतोला पागेसे काम, श्वास, मन्दाग्नि, क्षय, पाण्डु, अरुचि, और खराबस्वप्न का आना येषव नष्टहोतेहै ॥ १७७ ॥

### १७८ पिप्पल्यादिलोहम् ( प्रथमम् )

पिप्पल्यामूलकीद्राक्षाकोलाऽस्थिमधुशर्करा-  
विडङ्गपुष्करै युक्तं लौहं हन्ति सुदारुणम् ॥  
छर्दि हिक्कां तथा तृष्णां शिरात्रेण न संशयः ॥ ७३८ ॥  
र स, नि र, ध, र र, भै र, र सु, र च, र कौ, र,  
को, र चि, र सि, र क, हिक्काधासे ।

भापा—पीपल, आवला, द्राक्ष, बेरकीगिरी, मधु, शर्कर विडङ्ग, पोहकमूल, लोहमस्य यस्य समभाग लेकर वारीक चूर्णकर रखछोडे । इसमेंसे २-२ माशे मधु अथवा दूधके साथ लेनेसे भयङ्कर छर्दि, हिचरी और प्यास ये ३ रात्रिमें नष्टहोतेहै ॥ १७८ ॥

### १७९ पिप्पल्यादिलोहम् ( द्वितीयम् )

पिप्पलीमूलचित्राऽन्नत्रिकत्रयेन्दुसैन्धवम् ।  
सर्वचूर्णसमं लौहं हन्ति सर्वोदरामयम् ॥ ७३९ ॥  
र स, र सु, र चि, र र, उदराधिकारे ।

भापा—पीपलामूल, चित्रक, अन्नकमस्य, सोंठ, मिर्च, पीपल, त्रिकला, तज, पत्रज, श्लायची, शुद्धकपूर और सेंधव येषव समभाग, लेकर वारीकचूर्णकर सबकीबराबर लोहमस्य मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे ३ या ४ रतीकी मात्रा योग्यता उपार मधु अथवा दूधके साथ देनेसे समस्त उदररोग दूरहोतेहै ॥ १७९ ॥

### १८० पिप्पल्यादिनदी ( मधुवातारि )

पिप्पली पिप्पलीमूलं हिङ्गुलश्च शिलाजतु ।  
गुग्गुलु वर्धमानश्च माक्षिकेण गुडेन वा ॥ ७४० ॥

पथ्याशुष्यमृताकाथं पिप्पलीचूर्णमिश्रितम् ।

भक्षयेन्निष्कमाश्रन्तु मधुवातं विनाशयेत् ॥ ७४१ ॥

वै चि, व रा, मधुवाते ।

भापा—पीपल, पिपलामूल, शुद्धशिगरिक, शिलाजतु, गुग्गुलु, एरण्डकी जड़ ये सब समभाग लेकर वारीक चूर्णकर मधु अथवा शुद्धके साथ ४-४ माशेरी गोलीयां बनाकर रखछोडे । इसमेंसे १-१ गोली हर्द, सोंठ, गिलोय, इनके हाठमें पीपलके चूर्णका प्रशेष देकर कम पीनेसे मधुवात नष्ट होताहै ॥ १८० ॥

### १८१ पीतकं चूर्णम् ( प्रथमम् )

पटोलदावीमधुकं प्रियङ्गुभ्रतिविपाघनम् ।  
सनागपुष्पं प्रायन्ती भूमिर्ब्रं तिकरोहिणी ॥ ७४२ ॥

विमीतकं दाडिमत्वग्घरितालं मनःशिला ।

समांशानि त्रिमागंशं सशैलेय रसाञ्जनम् ॥ ७४३ ॥

पीतकं चूर्णमेतद्धि मध्वाकं प्रतिसारणम् ।

दन्तमूलगतास्योष्ठजिह्वातालुविकारक्षुत् ॥ ७४४ ॥

न नि, दन्तरोगे ।

टि०—यस्ययव योगो ग्रन्थकोरुण प्रतिभारणे नियुक्तमथाऽपि मधु नेऽस्य प्रयोगात्जीर्णकरमहमहपीत्रदिवायाऽतिमारुगाम्नामादयस्वीप्र सुप्रदान्ति वास्यन्तीति रहस्य न निरन्तरणीयम् ।

भापा—पटोलपत्र, शुद्धदो, प्रियतु, अतीस, नागरमोधा, नामवेसर, त्रायमाण, चिरायता, कुटकी, बहेडे और अनारकी छाल, हरिताल, नैनसिल ये सब १-१ भाग, शिलाजीत, छड़ीला और रसीत दीसरा भाग मिलाकर रखछोडे । इसका मधुमें मिलाकर मद्यन करनेसे दन्तमूल, मुद्ग, ओष्ठ, जिह्वा, तालु इनके विकारोंको यह नष्ट करताहै । यद्यपि यहयोग ग्रन्थ-कारने दन्तमन्त्ररूपसे लिखाहै परन्तु इसको समयोचितानुपा नकेसाथ देनेसे यह जीर्णश्चर, दृढ़हृणी, प्रतिब्याघ, अतिसार, श्वास कास इत्यादिरोगोंको नष्ट करेगा । खानेके लिये इसरो बनाना हो तो हरिताल और नैनसिलकी भस्म डालना । मस्य न मिलसके तो शुद्धकरके देना ॥ १८१ ॥

### १८२ पीतकं चूर्णम् ( द्वितीयम् )

मनःशिला यवक्षारं हरिताल सैन्धवम् ।

दावीं त्वक् चेति तच्चूर्णं माक्षिकेण समायुतम् ७४५

मूर्च्छित घृतमण्डेन कण्ठरोगेषु धारयेत् ।

मुखरोगेषु च श्रेष्ठ पीतक नाम कीर्तितम् ॥ ७४६ ॥

यो म, उ मा, र का, भै र, ध, र र, दो, च स,  
यो त, मुखरोगे ।

भापा—नैनसिल, यवक्षार, हरिताल, सैन्धव, दाहलदीची छाल, इन सबका वारीकचूर्णकर पी और मधुमें मिलाकर मुखमें रखनेसे मुखके समस्तरोग दूर होतेहै ॥ १८२ ॥

### १८२ पीतकं चूर्णम्

बुधे दावीं रोधमन् समज्ञा ।

पाठा तिका तेजिनी पीतिका च ॥

चूर्णं शस्तं धर्षणं तद् द्विजानां ।  
रक्तसाधं हन्तिकण्डूं रुजञ्च ॥

ग नि.,

भाषा—कुष्ठ, दाहहृदी, लोष, नागरमोया, मजीठ, पाठा, इटकी तेजवलकी छाल अथवा तुम्बुल शुद्ध मैन्थिल और हस्ताल सब समभाग लेकर चूर्ण बना रखसे सुबह साय इसके मञ्जनसे दाँतोंसे लोहिका जाना सुजली और पीड़ा ये सब नष्ट होते हैं ।

१८३ पीतमृगाङ्गरसः ( मस्कमृगाङ्कः )

संशुद्धं पारदञ्चैव सुशुद्धं गन्धकं भवेत् ।  
घृह्णं शुद्धं समादाय नवसागरमेव च ॥ ७४७ ॥  
समभागानि सर्वाणि भर्दयित्वा सुखलयेके ।  
काचकृप्यां विनिःक्षिप्य पायकस्थाययेद्बुधः ॥ ७४८ ॥  
मुखे मुद्रा च नो देया धूमं संलक्षयेत्ततः ।  
निर्धुमे जायमाने तु सिद्धः पीतमृगाङ्कः ॥ ७४९ ॥  
मधुमेहन्तु मेहानां गणं नाशयते ध्रुवम् ।  
मधुना भक्षयेच्चैव सुहृमैलाचूर्णकेन च ॥  
रससागरसिद्धागते सुधेष्टे स्वर्णमस्य ततः ॥ ७५० ॥  
र च, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक घृह्ण और नवसागर समभाग लेकर घट्टको गलाकर पाँचमें डालदे समभागसेन्धानमक और नीबूरस डालके परल करे काला होनेपर पानी फेंकदे और दूसरातमक और नीबूका रस डालके घोटे काला होनेपर फेंकदे ऐसे बारबार करे जब कालापन दूर हो जाय तो पिष्टि का पानी मुखाकर सबजीवोंकेसाथ चारपहर मर्दनकर आतशी शीशीमें भरके चूहेपर रखदे, मुँहको छुला रहनेदे, भीतरसे गन्धक तथा नवसागरका धूआ निकलना बन्दहोजाय तभी अग्नि निका लले अथवा बैसेही बज्जारोंपर रहनेदे । स्वाह्मत्वातल होनेपर शीशीको फोड़कर अन्दरसे रसको निकालले यह एकदम सुवर्णके रङ्गका निकलेगा । इसकी २-२ रत्ती मधुकेसाथ अथवा इला-यचीके चूर्णकेसाथ देनेसे यह मधुमेहको नष्ट करता है । इसको लोग सुवर्णमस्य कहकर अगुलोंको दियाकरते हैं किंतुनेही लोग स्वर्णमृगाङ्कके नामसे व्यवहार करते हैं ॥ १८३ ॥

१८४ पीयूषघनरसः ( प्रथमः )

हेमाऽम्रतापाणि मृतानि सूते  
दत्त्वा तु सूतेन समं च गन्धम् ।  
गन्धेन तुल्यं दरदञ्च दत्त्वाऽ-  
मृतारसेनैकदिनं विमर्चं ॥ ७५१ ॥  
कौरण्टभृङ्गाऽग्निविपैर्दिनैकं  
सूतेन तुल्येऽथ विनिक्षिपेत् ।  
पुटे सुताम्रस्य मृदा च लिप्त्वा  
सामुद्रपूर्णंऽथ पुटेत् भाण्डे ॥ ७५२ ॥  
ससम्पुटं तत्र विमर्चं यामं  
गुह्यचिकान्पूषणशृङ्गवैः ।

ददीत वल्लं गदिताऽनुपानि  
ज्वरेषु पीयूषघनो रसेन्द्रः ॥ ७५३ ॥

र. दी., र. चं., ज्वराधिकारे ।

भाषा—सुवर्ण, अम्रक, रजत इनकीमस्य, शुद्ध पारा, गन्धक और शिगरिक सब समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकम-लीकर सब चीजें मिलाकर मिलोयके स्वरस अथवा वाथसे एकरोज मर्दनकर कटसरैया, पीतकटसरैया, भंगरा, चित्रकमूल और चछनाइ इवप्रत्येकके स्वरस अथवा काठेमें १-१ रोज मर्दनकर पारेकीबराबरके तापेके सम्पुटमें रखकर ३-४ कपड़-मिठी देकर सुखाकर लवणयन्त्रमें रखकर ४ पहरकी जाच देने । स्वाह्मत्वातलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती मिलोय, त्रिकटु, अदरक यथोचिति इनकेसाथ अथवा झैलो क्यचूनामगिरसमें कहेहुए अनुपानोंकेसाथ देनेसे समस्तज्वर नष्टहोते हैं ॥ १८४ ॥

१८५ पीयूषघनरसः ( द्वितीयः )

गन्धं रसेन्द्रं दरदञ्च मुक्तां  
विमर्चं ताप्रस्य पुटे पुटेत् ।  
पूर्वप्रकारेण गतौषधीभि-  
र्विमर्दितस्याऽथ ददीत पल्लम् ॥ ७५४ ॥  
ज्वरेषु सर्वेषु यथाऽनुपानैः  
शलेषु सर्वेष्वपि मान्यकादयै ।  
शीतज्वरे धीतुलसीरसेन  
पिष्ट्वा मरीचानि ददीत वल्लम् ॥ ७५५ ॥  
नीरस्य पादेन नियोज्य दुग्धं  
कुस्तुम्बुरीनीरयुतं पचेत् ।  
दुग्धाऽवशेषं कणया युतञ्च  
ददीत चोष्णज्वरमाशानाय ॥ ७५६ ॥  
ऐकाहिके तण्डुलवारिपिष्टं  
ददीत मेघघ्वनिमूलचूर्णम् ।  
चातुर्थिकादौ विजयां स्थशकि-  
प्रमाणयुकाञ्च कटुत्रयेण ॥ ७५७ ॥  
पित्तोत्तरे चामलशर्कराभ्यां  
गन्धेन दुग्धेन घृतेन पक्वम् ।  
घनूरवीजं संतशुभ्रमम्रं  
ददीत वा तण्डुलवारिणा वा ॥ ७५८ ॥  
गोजिह्विकामूलरसेर्मृतस्य  
ताम्रस्य गुड्या च विरेचनाय ।  
शुण्ठीगुडचोन्दयवाविराह-  
भूनिम्बघान्यातिविपाकपायम् ॥  
सर्वाऽतिसारेषु नियोजयेच्च  
ज्वरेषु सर्वेष्वपि चारनालैः ॥ ७५९ ॥  
र. च, र. दी., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, शिंगरिफ और मोती समभाग लेकर नीलवर्ण बन्वलीकर पूर्वोपरसमी तह औषधोंके स्वर-सोमें मर्दनकर पारेकी बराबरके तापप्रसमुद्धमें बन्दकर ३-४ कपडमिठी देकर लवणयन्त्रमें ४ घट्टकी अग्नि देकर निरालले । इसमेंसे ३-३ रत्ती पूर्वोक्तानुपानसे देनेसे समस्तन्वर, शुल, अग्रिमान्द्य इनको यह नष्ट करताहै । शीतज्वरमें तुलसीके रससे १ माशा मरिचकेसाथ ३ रत्ती मिलाकर देवे । पानीमें चतुर्थांश दूध मिलाकर उसमें आधातोल घनिया डालकर पकावे । जब पानी जलकर दूधमात्र रहजाय तब पीपल डालकर देनेसे ज्वर-ज्वरका नाश होताहै । ऐकाहिक ज्वरमें तुलसीके रसकेसाथ इसको देकर ज्वरसे चाबलेके पानीमें १ तोला बटिवाली चोला ईकी जड़ पीसकर देवे । चातुर्विधादिज्वरोंमें रोगीकी शक्तिके अनुसार त्रिकटु और भाग्येसाथ देवे । पित्तप्रधानज्वरमें आवलेके घृण औरशङ्करकेसाथ देकर ज्वरसे घृतयुक्त पक्या हुआ दूध दे, अथवा शुद्ध घट्टके बीजोंके ३ रत्ती चूर्णकेसाथ ३ रत्ती अन्नकको देकर ज्वरसे चाबलोका घोबन पिलावे । मोभीकी जड़ने रससे मंरुण ताकैकी १ रत्ती देनेसे रक्तावन होताहै । सौंठ, गिलोय, इन्जब, नागमोथा, चिरायता, धनिया, असीस, इनके काढ़के साथ देनेसे समस्त अतीसार नष्ट होतेहैं । समस्तज्वरोंमें खट्टी काजीकेसाथ देनेसे भी लाभ होताहै ॥ १८५ ॥

### १८६ पीयूषवल्लीरसः

सुतमग्नं गन्धकञ्च तारं लौहं सदङ्गणम् ।  
रसाज्जनं माक्षिकञ्च शाणमेकं पृथक्पृथक् ॥ ७६० ॥  
लवङ्गं चन्दनं मुस्तं पाठाजीरकधान्यकम् ।  
समङ्गाऽतिथिषा लोघं कुटजेन्द्रयवं त्यचम् ॥ ७६१ ॥  
जातीफलं विभ्रविल्वं कनकं दाडिमिच्छदम् ।  
समङ्गा धातकी कुष्ठं प्रत्येकं रससमिमतम् ॥ ७६२ ॥  
भाययेत्सर्वमेकत्र केशराजरसैः पुनः ।  
घणकामा घटी कार्या छापीदुग्धेन पेयिता ॥ ७६३ ॥  
अनुपानं प्रदातव्यं दग्धविल्वं समं गुडैः ।  
इति सर्वानतीसारान् ग्रहणीं चिरञ्जामपि ॥ ७६४ ॥  
आमसम्पाचनो सम्यग्वह्विबुद्धिकरस्तथा ।  
पीयूषवल्ली नामाऽयं ग्रहणीरोगनाशनः ॥ ७६५ ॥

र स. मै. र. र. रु. द, ग्रहण्यधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा औरगन्धक, अन्नक, रजत औरलोहभस्म, मुनासुहागा, रसाजन और माक्षिक ४-४ माश, लवङ्ग, लालचन्दन, नागमोथा, पाठा, जीरा, धनिया, मजीठ, अतीस, लोघ, कुटज, इन्द्रजव, तार, जायफल, सौंठ, बेल, शुद्ध घट्टकेबीज, अनारकीछाल, लम्बाल, भावहीके फूल और कुट येप्रत्येक पारेकी बराबर डालकर काले भगरेके रससे मर्दनकर सुखाले । फिर घट्टीके दूधसे पीसकर चनेप्रमाण गोडिये बनाकर रखावोहै । इसमेंसे १-१ गोली देकर बेलवी रात्रि समभाग शुद्धकेसाथ मिलाकर ३ माशे देनेसे सप्रकारके अतीसार और पुरानी सङ्ग

हणी नष्टहोतेहै । इसके देनेसे आमका परिपाक होताहै और अग्निकी वृद्धि होतीहै ॥ १८६ ॥

### १८७ पीयूषसागररसः

नामं वज्रञ्च कान्तञ्च गगनं हेम सुतकम् ।  
दरदं दहूणं ताम्रं समं सर्वं विमर्दयेत् ॥ ७६६ ॥  
निशाकन्याघनोशीरत्तवङ्गसलिलैः पृथक् ।  
त्रिवारं भाययेत्सिद्धो रसः पीयूषसागरः ॥ ७६७ ॥  
वल्गुमात्रः सिताक्षौद्रयुक्तो हरति शुकजादम् ।  
विकाराद्याशयेत्सद्यो बन्ध्यानां नष्टरेतसाम् ॥ ७६८ ॥  
शुकक्षयवतां शीघ्रद्राविणां प्रयेतसाम् ।  
अबीजधर्मिणां छिन्नशुकाणां क्षतशोपिणाम् ॥ ७६९ ॥  
बालानाञ्चैव वृद्धानां पण्डानां शुकशोपिणाम् ।  
सेवनात्पुत्रदः शीघ्रं जायते नाऽत्र संशयः ॥ ७७० ॥  
रसायनस्य, पाण्ड्यचिकित्सिते ।

भाषा—सीसा, वज्र, कान्तपाषाण तथा कान्तलोह, अन्नक, सुवर्ण, पारा, शिंगरिफ, सुहागा और ताम्र इनसबकीभस्में सम-भाग लेकर हल्दी, धीकुआर, नागमोथा, घस और लौंग इनके यथालाभ स्वरस अथवा कार्योंसे ३-३ भावनाएँ देनेसे यह पीयूषसागर नामकारस तैयारहोगा । इसमेंसे ३ रत्ती शहर और मधुकेसाथ देनेसे यह समस्तशुकजोषोंको नष्टकरताहै । बन्ध्या, नष्टशुक, शुकशीण, शीघ्रद्रावी, अबीजधर्मी, छिन्नशुक, क्षती और शोपी, इनसबकेलिये यह उपकारकहै और पुत्रोत्पत्तिको देनेवालाहै ॥ १८७ ॥

### १८८ पीयूषसिन्धुरसः ( प्रथमः )

शुद्धः सुतो मौक्तिक तुर्यगन्धौ  
कान्तं ताम्रं कांस्थरौप्यं सुनीलम् ।  
स्वर्णं वज्रं ताप्यमाणिक्यताड्यं  
राजावतों रीतिकारं वङ्गनागौ ॥ ७७१ ॥  
सर्वं मर्द्य हृत्ककोलद्रयेण  
घञ्जीपाठाग्रन्थिजैः सूरणस्य ।  
दन्तीमुण्डो काकमाचो हलाख्या-  
भृङ्गाऽर्काऽश्विन्योपतीक्ष्णाभिरेचम् ॥ ७७२ ॥  
शुष्कं कृत्वा कृषिकां पूरयित्वा  
सम्यग्योगे योगिनीं पूजयित्वा ।  
भाप दद्याद्दार्द्रसिन्ध्वद्वियुक्तं  
सूतेन्द्रोऽसौ हन्ति पीयूषनामा ॥ ७७३ ॥  
अशस्ताप मूत्रकृच्छ्रं प्रमेहं  
शल्लं पाण्डुं वह्निमान्द्यं क्षयञ्च ।  
वातं शुल्मं विद्रधिं प्लीहहिके  
शोफं तूर्णं चोदं पीनसञ्च ॥ ७७४ ॥  
श्वासं कासं रक्तपित्ताऽम्लपित्तं  
कुष्ठं मेदः कामलायां ग्रहण्याम् ।

सर्वो तन्द्रां नाट्यवाताऽऽवृत्तञ्च  
भूताऽऽवेशो नाशयेदनु सत्यम् ॥  
पथ्यं सात्त्व्यञ्चाऽऽलवर्ज्यञ्च सर्वं  
नाद्याद्वर्ज्यं सर्वरोगप्रशान्त्यै ॥ ७७५ ॥

र.श. , अशुं शु ।

भाषा—शुद्ध पारा, सोती, तृतीया और गन्धक, कान्तपा-  
पाण तथा लोह, ताम्र, वामा, रजत, नीलम, सुवर्ण, हीरा,  
सोनामारी, माणिक्य, पत्ता, राजावर्त, पीतल, वज्र और नाग  
इनसबारीभस्मं समभाग लेकर पारे गन्धकनी नीलवर्णकल्लोमें  
मिलाकर मिठावा, बेर, डंडाग्रह, पाठा पिप्पलामूल, सूरण,  
दन्तीमूल, गोरसमुण्डी, मकोय, कलिहारी, माग्रा, आरु,  
चित्रकमूल, सोंठ, मिर्च, पीपल और राई इनप्रत्येकके स्वस  
अथवा काढेकी १-१ दिन भावना देकर सुपाकर रखछोड़े ।  
अच्छे मुहूर्तमें योगिनीकी पूजाकरके १ मासाकी मात्रा अदरक,  
सैंधव, चित्रकमूल इनकेसाथ बेनेसे बयासीर, चर, मूत्रहृच्छ्र,  
प्रमेह, शूल, पाण्डु, अमिमाम्ब, क्षय, वायु, शुल्म, विदधि,  
प्लीह, हिचकी, शोथ, तुनी, उदररोग, पीनस, श्वास, कास,  
रक्तपित्त, अम्लपित्त, कुष्ठ, मेशेरुदि, कामला, प्रह्वी, सबप्रकार-  
कीतन्द्रा, नाट्यवात, भूताऽऽवेश इनसबको यहशीघ्र नष्टकरताहै ।  
रउदाईको छोड़कर जो रोगीकेलिखे सात्त्व्यहो वह सब पम्थ्यहै ।  
जिस २ रोगमेजिस २ पदार्थका निषेधहै उसको न प्याय १८८

१८९ पीयूषसिन्धुरसः ( द्वितीयः )

शुद्धं सूतं पद्मं जीर्णगन्धं

काचि पात्रे वालुकायन्त्रयोगात् ।

भस्मीभूतं योजयेदत्र हेम

तनुव्यादीं भस्म लोहाऽभ्ययोश्च ॥ ७७६ ॥

सूतासुल्यं गन्धकं मेलयित्वा

एतत्वे मर्द्यं सूरणस्य द्रवेण ।

दन्तीमुण्डीकाकामाचीहलाख्या

भृङ्गाऽर्कानामग्निजातं द्रवञ्च ॥ ७७७ ॥

क्षिप्त्वा पश्चाद्धान्यराशौ त्रिघ्नञ्च

चूर्णीभूतं मापमात्रं ददौत ।

अशोरोमे दारुणे च ग्रहण्यां

शूले पाण्डावम्लपित्ते क्षये च ॥ ७७८ ॥

श्रेष्ठं क्षौद्रं चाऽनुप्राणं प्रशस्तं

रोगोक्तं वा मासपट्टप्रयोगात् ।

सर्वे रोगा यान्ति नाशं जरायां

वर्षहृन्द्ं सेवनीयं प्रयत्नात् ॥ ७७९ ॥

पथ्यं दद्यादम्लतैलादियोपि

द्वयं देयं सर्वरोगप्रशान्त्यै ।

पुष्टिं कान्तिं वीर्यवृद्धिं सुदाढर्यं

सेवायुक्तो मानवः सलभेत ॥ ७८० ॥

र.चि., र च रसायनस., र.सु., र को, नि र, र वा, यो  
म, र का, रसागरिजात, अशुं शु ।

भाषा—आतसीसोशीमें पद्मगन्धकजारण किया हुआ  
शुद्धपारा, सुवर्ण, लोह और अभ्रभस्म शुद्धगन्धक सब  
समभाग लेकर सूरण, दन्ती, गोरसमुण्डी, मकोय, कलि-  
हारी, मंगरा, चित्रकमूल इन सातोंके रसोंसे १-१ भावना  
देकर गोलाकनाय एण्ड्रयन वीरहमें लपेटकर अनानरी राशिमें  
३ रोज रखकर सुखाय चूर्णकर रखलेवे, अथवा १-१ मासेकी  
गोलिया बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली मधु अथवा  
रोगाऽनुकूल द्रव्यके साथ देनेसे भयंकर बयासीर, प्रह्वी, शूल,  
पाण्डु, अम्लपित्त, क्षय इनसबको यह नष्ट करताहै । छ महीने  
लगातार इसका प्रयोग करनेसे समस्तरोग नष्ट होतेहैं । दोबर्ष  
सेवन करनेसे सुडापा दूर होताहै । रउदाई, तैल, क्षौसत्र इनको  
छोड़कर खेष्ट आहार विहार करे । यथार्थ सेवन करनेसे पुष्टि,  
कान्ति और वीर्य इनकी उद्दी होकर शरीरकी खूबतारी  
प्राप्त होताहै ॥ १८९ ॥

१९० पीयूषमुन्दररसः

सुतदङ्गणगन्धादमवलिजानां समाशक्ताः ।

तत्तुल्यसितया युक्ताः सर्वं सम्मर्द्य यन्ततः ॥ ७८१ ॥

तन्नाक्षमत्सपचित्तं भावयेद्य निवारकम् ।

पीयूषमुन्दरं देयं गुटिकावह्निसमित्ता ॥ ७८२ ॥

देयाऽऽर्द्रकस्तेनाऽथ नवज्यपविनाशिनी ।

वार्ताकसहितं दद्यात्तत्कर्मकं हितं ततः ॥

शीतोपचारता सद्यः विद्वेष्याज्जरशान्तये ॥ ७८३ ॥

र.क.यो., प्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, सुहागा और गन्धक तथा मरिच सम  
भाग लेकर सबकी बराबर शकर डालकर ३-४ पहर मर्दनकर  
मेला और मछलीके पित्तोंकी ३-३ भावनाएँ देकर ३-३  
रतीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अद-  
स्तके रखे हेनेसे नज्ज्वरका ताश होताहै । इन्तार्कनेझाफ  
छाछमात रानेको देना और शीतोपचार करना ॥ १९० ॥

१९१ पीयूषादि वटी ( भृगुवटी )

वत्सनाभं विषं शुद्धमारुहकपट्टपणम् ।

लवङ्गं कुङ्कुमं जातोफलं जातोदलं समम् ॥ ७८४ ॥

तुर्यांशं प्रथमाञ्छुद्धं भर्जितं दङ्गण क्षिपेत् ।

पष्टांशा द्वादशांशा वा कस्तूरी प्रथमाञ्छुभा ॥ ७८५ ॥

सम्मर्द्याऽऽर्द्रकजद्रवैर्वटी मापनिभा कृता ।

भक्षिता मधुना किं वा ताम्बूलेन सुसात्प्यतः ७८६

पीयूषाख्या वटी हन्यादभ्यासाद्वातजागदान् ।

पित्ताऽचिरोधिनी चैषा बलघानुविधिनी ॥ ७८७ ॥

शैत्यापनोदिनी रम्या मुखसौरभ्यकारिणी ।

भृगुणा ज्ञानशीलेन ऋषिणा निर्मिता वटी ॥ ७८८ ॥

अस्याः संसेवनात्तस्य शीताम्भोभिः सदा मुनेः ।

न पीडा ज्ञानतः काचिदमवच्छेयसी ततः ॥ ७८९ ॥

हृत्पानयनं, सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्धवचनाग, सारलकरा, पङ्कण ( पीपल, गि-  
लामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, मिर्च ), लौग, बेसर, जायफल,  
वायित्री, सर १-१ तोला, भुनासुहाणा ३ माशे और उत्तम  
कस्तूरी २ माशे अथवा १ माशा लेकर बारीक चूर्णकर अद-  
रखे रखे मर्दनकर १-१ माशेकी गोल्या बनाकर रखोहे ।  
इनमेंसे १-१ गोली मधु अथवा पानके रखे देनेमें वातजन्य-  
रोगोंको दूर करतीहै पित्तको भङ्गवाती नहीं । पल और धातु-  
ओंको बढ़ातीहै शीतको दूर करतीहै मुखमें गुणन्धि देतीहै ।  
अधिक ज्ञानकरनेके अन्वासी यष्टुकृपिने इसको बनायाहै ।  
इसके सेवनसे उनको अधिकज्ञानजन्य कोई पीड़ा नहीं  
होतीभी ॥ १९१ ॥

### १९२ पुत्रप्रदरसः

शुद्धसूतं श्वहं स्वेयं मन्दाग्नौ दधि माहिषे ।  
शुटिते शुटिते दद्यादधि तुर्यंइति चोद्धरेत् ॥ ७९० ॥  
तस्मिन् स्थण् शिपेत्प्राशस्तुःपठितमांशकम् ।  
मर्दयेन्निम्बुनारेण यावदैक्यं हि जायते ॥ ७९१ ॥  
पुनः संस्वेद्य तं सूतं वटशुद्धाऽह्विचक्षिजैः ।  
काम्माच्या च जीवत्या रसः स्याद्यामयुग्मकात् ७९२  
दिनं शीताऽम्बुकुम्भस्थं दिनैकं दधि माहिषे ।  
एवं सिद्धरसाद्धं प्रत्यहं प्रत्यक्षयष्टुकम् ॥ ७९३ ॥  
मासैकं सेवते भर्ता सितादुग्धौदनमियः ।  
त्रिकलानिम्बकार्पासीरसैर्नारी क्रमात्पृथक् ॥ ७९४ ॥  
सप्त सप्तदिनं पीत्वा पश्चादनुसमागमे ।  
रसं बलं श्वहं घेकं कार्पास्यम्युसितायुतम् ॥ ७९५ ॥  
टङ्कणः स्फटिका सूतः पक्काम्लिकरसाग्निघ्नतः ।  
त्रिदिनं मधुना योनौ लेपः शुद्धिकरः परः ॥ ७९६ ॥  
महिष्या दधिमध्यस्थं दद्यात् सूत त्रिमाषकम् ।  
स्त्रीसेयासमये रात्रौ भक्षयेदधिसंयुतम् ॥ ७९७ ॥  
सन्मोगाऽन्ते तथा स्थेयं यामार्धं सम्भुटेन च ।  
सर्वलक्षणसम्पन्नं सुतं जनयते घरम् ॥ ७९८ ॥  
तापादिके समुत्पन्ने देयं द्राक्षासितादिकम् ।  
कार्यः शीतोष्णचारश्च युष्मत्पा शिपज्जा सदा ॥ ७९९ ॥  
आयुर्वृद्धिं बलं कान्तिं नष्टवीर्यविवर्धनम् ।  
धुर्योद्गोहहरः पुत्रप्रदो रद्विनिर्मितः ॥ ८०० ॥

र रा. क, रसायनसं., र को, स्त्री वि, पुत्रप्राप्तये ।

भाषा—शुद्धपारेको भेंसके दहीमें दोलायन्त्रसे मन्दाग्निपर  
३ रोज स्वेदनकरे, दही समाप्त होनेपर नया ढालताजाय ।  
चौथेरोज निकालकर उसपारेसे चौसठवा हिरवा सुवर्ण मिलाकर  
नीचूकास ढालकर जबतक दोनों एक न होजाय तबतक मर्दन  
करे । फिर इसकी पोटीली बनाय घटके दुधे और पान, मकोच,  
अर्कपुष्पी ( अभावमें डोडी ) इनप्रत्येककेरस अथवा कायोंसे  
अलग अलग १-१ रोज स्वेदन करके कोरे घड़ेमें ढावा पानीमर  
उसमें एकरोज पोटीलीको रखे फिर एकरोज भेंसके दहीमें रखे  
इसतरह यह रस तैयार होगा । इसमेंसे क्लृप्तवर्षका पालन करता

हुआ ३-३ रत्ती यथोचिताऽनुपानके साथ १ महीनेतक देवे ।  
शहर, दूध और चावलके सिवाय कुछ न खाये, इसतरह पुरुष  
मेवनकरे । स्त्रीको ऋतु आगमनके सातरोज पहिले त्रिकला,  
भीम और कपासके रखेसाथ १-१ गोली रोजाना देवे ।  
अयोरमें कपासके रखेसे ३ रोजतक ३-३ रत्ती पूर्वोक्तरसकी  
देवे । फिर सुहागा, फिटारी और पारा समभाग लेकर पञ्जी-  
दमलीकेरससे घोटकर मधु मिलाकर तीनदिन तक योनिमें लेप  
करे इससे योनि शुद्ध होजायगी । भेंसके दहीमें सुवोदयके समय  
३ मासे कमरना पास ढालकर रात्रिमें स्त्रीसम्भोगके समय दहीके-  
साथ उसपारेको खावे । सम्भोगके अन्तमें स्त्रीपुरुष दोनों यथाऽ-  
वस्थित आपे परतक रहें । इसतरह करनेसे समस्त शुभलक्षण  
पुत्र पुत्री पैदा करताहै । अगर ज्वर दगैरह होजायतो दास  
और शहर का शरबत देना स्त्री शीतोष्णचार करे । इसके निर-  
न्तरसेवन करनेसे आयु, बल, शक्ति और शुभकी वृद्धि होती  
है ॥ १९२ ॥

### १९३ पुत्रवर्धमानरसः

पलाघं प्रमिते स्थण् ताम्रं दत्त्वाऽश्ममन्त्रया ।  
निर्यापयेच्छतं धारात्रिक्षिप्य शुक्रपिच्छकम् ॥ ८०१ ॥  
ततश्च सारणायन्त्रे सूत्रस्थाने प्रकाशिते ।  
सारणातैलसंयुक्ते जीर्णपट्टगण्धकम् ॥ ८०२ ॥  
रसं हि द्विपलं क्षिप्य सारणाविधियोगतः ।  
सारयित्वा ततः पश्चात्पिष्टीभूतं शनैःशनैः ॥ ८०३ ॥  
तस्माद्यन्त्रानु निष्कास्य गालयित्वा च घासता ।  
भातुलुङ्गरसैः पिष्टं चतुर्निष्कमितं ह्यनु ॥ ८०४ ॥  
गन्धकं विधिना याघज्जारयित्वा चतुर्गुणम् ।  
तमादाय रसं सम्मयिचूर्णं परिगाल्य च ॥ ८०५ ॥  
पष्ठशिनि मृतं घञ्जं समधैकान्तकं मृतम् ।  
निक्षिप्य मातुलुङ्गस्य रसैः पिष्ट्वा च घासरम् ॥ ८०६ ॥  
पुटेद् द्वादश घाराणि रज्ज्वा द्वादशकोत्पलैः ।  
वन्धुजीवरसेनाऽथ लक्ष्मणास्त्ररसेन च ॥ ८०७ ॥  
पुनः सन्न्यस्य सम्पूज्य योगिनीः पितृदैवताः ।  
पुत्रिण्या पुत्रनाथश्च पूजितन्या विधानतः ॥ ८०८ ॥  
इति सा प्राप्नुयाद्रूसं रामा संघत्सराऽन्तरे ।  
आदिवन्ध्यादिदोषा या याश्चास्या दुष्टयोनयः ॥ ८०९ ॥  
प्राप्नुयुर्जीवितं पुत्रं भाग्यतौभाग्यसंयुतम् ।  
पुंसामपि च वन्धत्यं स्वल्परेतस्यमेव च ॥ ८१० ॥  
वीजदोषा विचित्राश्च चिन्त्यन्ति न संशयः ।  
एवं यः सेवयेत्सुतं वर्धमानः सपुत्रैः ॥ ८११ ॥  
स्त्री वि, पुत्रप्राप्तये ।

भाषा—आधेपल शुद्धसुवर्णको गलाकर शुद्धतावा १ कप  
मिलावे और विजोरेके रसमें पोटशरा गन्धक मिलाकर सुहावे,  
ऐसे १०० बार सुहावे यह सुवर्णताम्र बीज तैयार हुआ । इसके  
बाद यष्टुगण्धकजाति २ पल शुद्धपारेको सारणायन्त्रमें  
रखकर मृषाका अर्धमात्र सारणातैलसे भरदे । फिर वैजुओंकी

मिठी, मधु, काकविष्टा, आरु फकी टिङ्गी, जवानमेंसों के दोनोंकानोंका मल, येसर समभाग लेकर खरलसर कपड़छान-चूर्णकरले । इसचूर्णका विजोरेके रसमें कल्क बनाय सारणा तैलमें चतुर्थांश देकर पकावे । पकनेपर छानकर रखलेवे ( मछली, कछुआ, पीलामेंढक, जहरीजोंक, मेंढा, सूअर इन सबरी चर्बीको समभाग मिलाना । इसका सारणतैल साकेतिक नामहै ) प्रथमोज बीजमें चतुर्थांश मूनागादिचूर्ण डालकर विजोरेके रससे २-३ पहर मर्दनकर गोली बनाकर सारणतैलमें मीगे हुए चारसहस्रपड़ेमें पोदली बनाय मध्यच्छिद्युक्त टक्नीपर रखकर मूपाके ऊपर टक्के और सारणतैलमें एकफुडे को भिगोकर दोनोंके सुंहर लपेटकर नमक अथवा राखको विजोरेके रसमें भिगोकर सन्धि बन्द करदे । फिर मूपाके तृतीयाशप्रमाणका गर्त बनाकर मूपाको उसमें रखकर मिट्टीसे गर्तको जमीन बराबर करदे । मूपाके सुंहर खदिर कौरहके साठिह कोयले रखकर चोंकनीसे धोंके । जब देखे कि बीज गलकर भीतर चलागया तब धोंकना बन्दकरदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर कपड़ेमें छानले जितना हिस्सा बीज का न मिलाहो उसको फिर इसीतरह करके मिलावे । जब नि शेष बीज पारेमें प्रविष्ट होजाय और छाननेसे कुठमी न निकले तब इसपर विजोरेके रसमें पीसाहुआ गन्धक १ कर्प देकर कण्ठययन्त्र बगैरहमें जारणकर । ऐसे पारेसे चौगुना गन्धक जल जाय तब इसको घोटसर कपड़छान-करले फिर पारेसे पछाहा हीरा और समभाग वैकान्तमस्म मिलाकर विजोरे का रसदेकर एकदिनभर मर्दनकर गोला बनाय शराब सम्पुटकर १२ जङ्गली कण्डोंकी आचदे । इसीतरह दुप-हरियाके रसमें मर्दनकर आच देनेके बाद लक्ष्मणाके स्वरससे मर्दनकर आचदे । यह पुनर्वर्धमानरस तैयार हुना । इसको शीशामें रख योगिनी, पितृदेव, और बालग्रहोंकी विधिपूर्वक पूजाकर सुसुहृत्तमें एक सर्प प्रमाण मात्रा नामकेसर प्रशति पुसवन इत्येरे साथ सेवन करे और ककाराटक तथा तीक्ष्ण पदार्थोंसे परहेज करेतो एकवर्षके भीतर स्त्री गर्भको धारणकर । जिनको गर्भधारणके पहिले या मध्यमें या अन्तमें कुछ खरा बिया होतीहो बिना जिनकी योगिनी दूषित हो वेभी इसके सेवनसे दीर्घायु और सौभाग्ययुक्त पुत्रको प्राप्त होतीहै । पुश्यों कोभी कण्डूयत्थ, स्वल्परेतस्त्व प्रशति विविध २ दोषहुआरतेहै वे सब इसके सेवनसे नष्टहोजातेहै । जिसको पुत्रप्राप्तिकी उत्कृष्ट इच्छाहो व स्त्रीपुरुष दोनों इसका सेवनकरें । परन्तु इसरसको बनाकर तुलसी विसीको नहीं दितलना चाहिये नहींतो इससे महा अनर्थ होनेकी सम्भावनाहै कमसे कम एकसालरसके बाद देना । इसमें गलती करनेसे रोक परलोक दोनों विगडेन १९३

### १९४ पुनर्नवायुगुलुः

पुनर्नवामूलशतं विशुद्ध

स्वकमूलञ्च तथा प्रयोज्यम् ।

दत्त्वा पल पोडशकञ्च शुष्य्या-

सङ्कुट्टय सम्यग्विपचेत्सुपात्रे ॥ ८१२ ॥

पलानि चाष्टादश कौशिकस्य

तेनाष्टोपेण पुनः पचेद्य ।

परण्डतैलं कुडवञ्च दद्या-

दत्त्वा निवृच्चूर्णपलानि पञ्च ॥ ८१३ ॥

निकुम्भचूर्णस्य पलं गुडव्याः

पलद्वयञ्च द्विपलं प्रतीह ।

फलत्रयं त्र्युपणचित्रकाणि

सिन्धुत्वमम्लहातयिद्विकानि ॥ ८१४ ॥

कर्प तथा माशिरुधातुचूर्ण

पुनर्नवाचूर्णपलं तथैकम् ।

चूर्णानि दत्त्वाप्यवतार्य शीत

खादेन्नरो निष्कसमप्रमाणम् ॥ ८१५ ॥

बाताऽध्वजं वृद्धिगदध्वं सप्त

जयत्यवद्वयं त्वथ गृध्रशीञ्च ।

अद्भोरपृष्ठत्रिकयस्तिजञ्च

तथाऽऽमयातस्य वलं निहन्ति ॥ ८१६ ॥

र का, वातरकाऽधिकारः ।

भाषा—पुनर्नवा और एरण्डी ताजी साफरीहुईजड़ सौ १०० कर्प, सोंठ १६ पल लेकर सबको कूटकर मिट्टीके नवीन पात्रमें अठगुना पानी डालकर पकावे । अष्टाश्वरोप रहनेपर छानकर उसमें १८ पल मैसागुगुलु डालकर पकावे । फिर हममें एरण्डतैल पावभर, निशोतका चूर्ण ५ पल, शुद्ध जनालोटा अथवा हसरी जड़ १ पल, पिशोरा, त्रिफला, त्रिकटु, चित्रक, शैषक, तिलावा और विडङ्ग ये प्रत्येक २ पल, शुद्ध सोनामासी १ कर्प और पुनर्नवाका चूर्ण ४ कर्प डालदे । जब गोलीबधने लायक होजाय तब उतारकर रखछोडे । इसमेंसे ४-४ माशेकी गोलिया बनाकर खानेसे वातरक, सातप्रकारकी अण्डवृद्धि, कुष्ठमी, जाध, ऊरु, गृध्र, त्रिफ और वस्तिवात, आमवात इनके बलको यह नष्टकरताहै ॥ १९४ ॥

### १९५ पुनर्नवाधियोगः

पुनर्नवा नागवला याजिगन्धा शताघरी ।

गोधूरं मुखलीकन्दं मृतं सूत समंसमम् ॥ ८१७ ॥

चूर्णं मध्याज्यसंयुक्तं निष्कं भुक्त्वा पिबेत्तपयः ।

तण्डुलं दानरीबीजं चूर्णयेत्ति तथा समम् ॥ ८१८ ॥

आलोडयेद्गन्धं शौरैस्तेनकुप्यादपूपिकाम् ।

तां घृतै र्भक्षयेच्चाऽनु रमयेत्कामिनीकुलम् ॥ ८१९ ॥

र रा, बाजीकरणे ।

भाषा—पुनर्नवा, नागवला, असगन्ध, शतावर, गोखरु, मुखली, पारदभस्म, सब समभाग लेकर बातीकचूर्णकर १-२ पहर खरलकरके रखछोडे । इसमेंसे ४ माश चूर्ण मधु और पीकेसाथ बाटरक दूधपीवे । चावल, छिलनेरहित केवाचके बीज इनका बातीकचूर्णकर बराबरकी सबर डालकर गायके दूधमें छानकर पूरी बनावे । इनपुष्टियोंको पीकेसाथ खानेसे बहुलशो-धियोंका सन्नकरसकहै ॥ १९५ ॥



### १९६ पुनर्नवादिहः

पुनर्नवाया मूलानां तुलामानं पचेत्ततः ।  
हस्तिकर्णी चाद्वगन्धा शैलेयं शिशुमूलकम् ॥८२०॥  
कुनिम्बाऽऽरग्वधौ नीली घटा दाह दिकुण्डली ।  
निर्गुण्डी नीलिनी शिम्बी नागरं बहिरूपिके ॥८२१॥  
अग्निमन्यो हितुलसी मुनियण्णञ्च गोभूरम् ।  
एतानि समभागानि पृथग्दशपलानि च ॥८२२॥  
द्रोणे पादाऽवशेषेऽस्मिन् कपाये च परिधृते ।  
त्रिशत्पलं गुडं दद्यात् पुराणं च विपाचयेत् ॥८२३॥  
त्रिकटु त्रिफला राक्षा नतचन्याऽग्निप्रथिकम् ।  
तालीसं जातिका पत्रं घटादं धनिका निशा ॥८२४॥  
विडङ्गञ्चाजमोदञ्च चातुर्जातञ्च रामठम् ।  
तक्रोलं मापत्तं भार्ही कान्तलोहञ्च शुष्करम् ॥८२५॥  
जीरकञ्च मण्डूरं सैन्धवं हस्तिपिप्पली ।  
सर्वमेतत्समञ्चैव पृथक्पृथक् विचूर्णयेत् ॥८२६॥  
सान्द्रपार्कं भवेत्तस्याः युक्त्या पुष्परसं क्षिपेत् ।  
लेह्यपात्रं चावसायं द्विकालं सेवयेत्ततः ॥८२७॥  
कामलापाण्डुरोगार्णं कासं श्वासं हलीमकम् ।  
पेकाहिकं द्रव्याहिकं च पुराणं भव्यं हरेत् ॥८२८॥  
स्वरसादक्षपहर रक्तपित्तञ्च विद्रधिम् ।  
नाशयेन्नाऽयं सन्देशः कषयपो मुनिरग्रजीव ॥८२९॥  
वै चि, पाण्डुकामल्यो ।

भाषा—पुनर्नवाकी जड़ १०० पल लेकर अष्टगुणित पानीमें पकावे, चतुर्षोऽवशेष रहनेपर छानकर अलग धरे । फिर हस्तिकर्णपलाश, अद्वगन्ध, छडीला, सहिजनकी जड़, चिरायता, अभिलतासका गूदा, नीलकीजड़, त्रिफला, देवदारु, विपारा, गिलोय, समाल, कालादाना, सेम, सोंठ, चित्रकमूल, नीला आरु, अरुणी, स्याह और सफेद हल्दी, छुवारी, गोखरू, ये प्रत्येक १० पल लेकर जवकुदकर ३२ सेर पानीमें पकावनावे । चतुर्षोऽवशेष रहनेपर छानके फिर दोनोंकाडे इकट्ठे मिलाय ३० पल पुराणागुड डालकर पकावे । इर्वापे होनेपर त्रिकटु, त्रिफला, राक्षा, तार, चव्य, चित्रकमूल, पिपलामूल, तालीसत्र, जावित्री, कौडीभरम, धनिया, हल्दी, विडङ्ग, अजमोद, चातुर्जात, मुनाहीन, शीतलनीनी, मापगर्भी, भार्ही, कान्तलोह भस्म, पोहकरमूल, स्याह और सफेद जीरा, मण्डूरभस्म, सैन्धव, गजपीपल ये सब १-१ तोला लेकर वारीक चूर्णकर डालदे । गोली बघने लायक होनेपर उतारकर छटा होनेपर इतना मधु डाले कि चाटने लायक हो जाय । इसमेंसे १-१ तोला दोनों समय रोचाना खानेसे कामला, पाण्डु कास, श्वास, हलीमक, रोजाना अथवा तीसरे दिन आनेवाला ज्वर, जौर्णज्वर, शोथ, स्वरभङ्ग, क्षय, रक्तपित्त, विद्रधि, येसब नष्ट होतेहैं ॥ १९६ ॥

### १९७ पुनर्नवामण्डूरम् (प्रथमम्)

पुनर्नवा त्रिवृद् व्योपं विडङ्ग दाह चित्रकम् ।  
कुष्ठं हरिद्रि त्रिफला दन्ती चव्यं कलिङ्गकाः ॥८३०॥

पिप्पली पिप्पलीमूलं मुस्तञ्चेति पलोन्मितम् ।  
मण्डूरं द्विगुणं चूर्णात् गोमूत्रे दद्यादके पचेत् ॥८३१॥  
कोलबहुटिकाः कृत्वा तत्रेणाऽऽलोड्य ना पिबेत् ।  
ताः पाण्डुरोगान् प्लीहानमर्शांसि विषमज्वरम् ॥  
भव्यं प्रहणीदोषं हन्तुः कुष्ठं किमिस्तथा ॥८३२॥  
च सं, भा प्र, व नि, नि. र, च द, वै, चि., व मा, मै र, चि र, र. र, रससागर, दो, यो म, पाण्डुधिकारे ।  
गद्विग्रहस्य प्रथमपुस्तके पिप्पलीस्थाने तित्ता गृहीता ।  
भाषा—पुनर्नवा, निसोत, सोंठ, मिर्च, पीपल, विडङ्ग, देवदारु, चित्रकमूल, कुष्ठ, हल्दी, दाहहल्दी, त्रिफला, दन्ती, चव्य, इन्द्रजव, पीपल, पिपलामूल, नागरमोधा, ये प्रत्येक १ पल, मण्डूरभस्म सबसे दुनी लेकर सबको आठसेर गोमूत्रमें पकावे । गोली बघने लायक हो जाय तब बेर बराबर गोलिये बनाकर रखओगे । इसमेंसे अग्निबलके अनुसार १-१ अथवा २-२ गोली तकमें मिलाकर पीनेसे पाण्डुरोग, हीहा, अर्श, विषमज्वर, शोथ, प्रहणीदोष, कुष्ठ और किमि इन सबको यह नष्ट करताहै ॥ १९७ ॥

### १९८ पुनर्नवामण्डूरम् (द्वितीयम्)

पुनर्नवा त्रिवृद् व्योपं विडङ्गं दाह चित्रकम् ।  
कुष्ठं हरिद्रात्रिफला दन्ती चव्यं कलिङ्गकम् ॥८३३॥  
कटुका पिप्पलीमूलं मुस्तं शृङ्गी च कार्ष्णी ।  
ययानो कटुफलञ्चेति पृथक् पलमितं संमम् ॥८३४॥  
मण्डूरं द्विगुणं चूर्णाद्गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ।  
गुडेन वटकान् कृत्वा तत्रेणाऽऽलोड्य तान् पिबेत् ८३५  
पुनर्नवादिमण्डूरपटकोऽग्निधिमितिर्मितः ।  
पाण्डुरोगं निहन्त्यागु फामलाञ्च हलीमकम् ॥८३६॥  
श्वासं कासञ्च यश्मानं ज्वरं शोथं तथोदरम् ।  
शूलं प्लीहानमभ्यानमर्शांसि प्रहणीं किमिन् ॥  
घातरक्तञ्च कुष्ठञ्च सेवनाश्रययेद् ध्रुवम् ॥८३७॥  
भा प्र, नि. र, र सु, र. कि, चि क, पाण्डुरोगे । चि. क, पुनर्नवादिबुटीसि रूप ।

भाषा—पुनर्नवा, निसोत, सोंठ, मिर्च, पीपल, विडङ्ग, देवदारु, चित्रकमूल, कुष्ठ, हल्दी, त्रिफला, दन्तीमूल, चव्य, इन्द्रजव, कुटकी, पिपलामूल, नागरमोधा, काकडासीणी, कार्ष्णी (अमोवमें मारील), अजवाइन, कायफल, ये प्रत्येक १ पल, मण्डूर सबसे दुना लेकर सबको अष्टगुणे गोमूत्रमें पकावे । गोमूत्र क्षीण होनेपर मण्डूरके बराबर शुद्ध डालकर पकावे । चासनी होयेपर बेर बराबर गोलिये बनाकर रखओगे । इसमेंसे १-१ गोली छान्छमें मिलाकर पीनेसे पाण्डु, कामला, हलीमक, श्वास, कास, यक्ष्मा, ज्वर, शोथ, उदरशूल, हीहा, अर्श, प्रहणी, किमि, वातरक्त और कुष्ठ इनसबको यह नष्ट करताहै ॥ १९८ ॥

### १९९ पुनर्नवामण्डूरम् (तृतीयम्)

वर्षाम् धरुणो मानो लोहकिटं मयूरकम्  
भार्ही च समभागानि मूत्रे दशगुणे पचेत् ॥८३८॥

अन्तर्धूमविपन्वेन मधुसर्पियुतञ्च तत् ।  
एतन्निद्रापजं हन्ति शूलञ्च परिणामजम् ॥ ८३९ ॥  
र. का., शूलधिकारे ।

भाषा—दृष्टि ( पंजाबी ), वरुण, मानकन्द, लोहकिट्ट, शुद्धतृतीया, भारती येसव समभाग लेकर दशगुने गोमूत्रमें डालकर सुहृद्वन्दकरके पकावे जब गोमूत्र जल जाय तब उत्तारकर शीतल करके रखछोड़े । इसमेंसे एकमात्रा मधु और पीके साथ लेनेसे यह निद्रापज परिणाम शूलको नष्टकरताहै ॥ १९९ ॥

### २०० पुरन्दरवटी

सूतकाहिगुणं गन्धमेकधा कज्जलीकृतम्  
त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं प्रत्येकं सूतसम्मितम् ॥ ८४० ॥  
अजाक्षरिण सम्भाव्य वटिकां कारयेत्ततः ।  
आर्द्रकस्य रसैः सेव्या शीततोयं पिबेदनु ॥ ८४१ ॥  
काशश्वासप्रशमनी विशेषादस्त्रिपर्धिनी ।  
इयं यदि सदा सेव्या तदा स्याद्योगवाहिका ॥  
वृद्धोऽपि तृणः शक्तः स्त्रोशतेषु वृषापते ॥ ८४२ ॥  
र. सं., र. चं, घ, र. सु, काशधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारेसे द्विगुण शुद्धगन्धक लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर त्रिकटु, त्रिफला ये प्रत्येक पारेकी बराबर डालकर एकदिन मकरीके दूधकी भावना देकर १-१ माघोरी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरकके रसमें मिलाकर सेवनकरे और ऊपरसे १-२ जुल्हू उंडा पानी पीवे तो इससे काश, श्वास, मन्दामि ये सब नष्टहोते हैं । यह वटी योगवाहिका है । इसके निरन्तरसेवनकरनेसे पुष्टा भी अवाप्त होजाताहै ॥ २०० ॥

### २०१ पुष्पधन्वारसः ( प्रथमः )

हरजभुजगलौहश्चाऽन्नकं यङ्गभस्म,  
कनकविजयपृथुः शालमलीनागवल्ह्यौ ।  
घृतमधुसितकुण्डं पुष्पधन्वा रसेन्द्रो,  
रमयति शतपामा दीर्घमायु र्वलञ्च ॥ ८४३ ॥

भै र, रसायनर्ष, आ वि, उ जो त, र क, र. सु, यो.  
त, यो र, रसपारिजात, ध्वजमन्त्रे वाजीकरणे च । योगतद्रिष्या  
स्वतन्त्रौ न दृश्येते ।

भाषा—पारा, सीसा, लोह, अन्नक, यङ्ग इनसबकी भस्में, शुद्ध धतूरेके बीज, विजयसार, सुल्हदी, सेमरका मुखला, पानकी जड़ सब समभाग लेकर खरलकरके रखछोड़े । अबवा पानके रसमें घोलकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खाकर घी, मधु और शक्कर युक्त दूध पीनेसे सेकड़ों स्त्रियोंको सन्तुष्ट करसकताहै । इसके सेवनसे शरीरमें बल और आयु बढ़तेहै ॥ २०१ ॥

### २०२ पुष्पधन्वारसः ( द्वितीयः )

मृतरसरविबद्धं हैमभस्म मधुक,  
द्वरदगानचन्द्रं तायकं कान्तभस्म ।

अहिवलिशुभवज्रं सर्वमेतत्समानं  
करमिसुरसमुष्टं कोकिलाक्षस्य बीजैः ॥ ८४४ ॥  
रसजलनिधिशोपस्त्रध्वगन्धासुयष्टि-  
निकटुघनसिताभिर्भावेयेच्छात्मकीभिः ।  
मुसलिमधुकर्त्रैर्मर्कटीकालजाती-  
फलसरलसुजातीपनिकाहस्तिकन्दैः ॥ ८४५ ॥  
निफलजलगुह्यचोसत्स्ववाराहिकन्दैः  
खसफलमृगजाभ्यां भावयेत्त्रिवारम् ।  
बहुतस्मपि धीर्यं यच्छति क्षीरपाना-  
द्वृष्टतरमपि सेव्यं स्वादु वृष्यञ्च भोजयम् ॥  
रमयति बहुकान्तास्तीव्रमानाऽपहारी  
समधुघृतसिताभिः पुष्पधन्वा द्विवल्हः ॥ ८४६ ॥  
वा., वाजीकरणे ।

भाषा—पारा, ताम्र, वङ्ग, सुवर्ण, शिंगरिफ, अन्नक, चारी, सोनामाखी, कान्तपाषाण, लोह, नाग इनसबकी भस्में, शुद्ध गन्धक, हीरामसम, सप्त समभाग लेकर ४ पहर मदनकरके थैलापराजिता ( सफेद कोयल ) तालमरताला, खस, समुद्रशोप, असगन्ध, सुल्हदी, निकटु, नागरमोघा, शक्कर, सेमरकासुगला, दोनों मुसली, मधु, करज, केवच, अगर, जायफल, चीठ, जाविनी, हस्तिचन्द, त्रिफला, सुगन्धवाला, गिलोयका सत्व, वाराहीचन्द, पोस्त और कस्तूरी इन प्रत्येककी कमश ३-३ भावनाएँ कर ९-९ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खाकर मधु, घृत और शक्कर युक्त दूध पीनेसे बहुतसी स्त्रियोंके तीव्रमानको दूर करताहै और धीर्यसेपरिपूर्ण रहताहै । इसपर स्वादु और धन्य भोजन करना उचितहै ॥ २०२ ॥

### २०३ पुष्पधन्वारसः ( तृतीयः )

रम्भाकन्दे हैमताराऽरुपिष्टि  
पक्ष्वा यन्त्रे भूधरे तां पचेत् ।  
गन्धं द्रवा पङ्कणार्द्धं रुमेण  
पञ्चात्कान्तं तेन तुल्यं प्रमेण ॥ ८४७ ॥  
दत्त्वा खल्वे शालमलीयष्टितोयैः  
पक्षैकं तन्मर्दयेन्नागवल्ह्याः ।  
नीरै यामं पुष्पधन्वा रसःस्या  
द्वलं दद्यादस्य पूर्वोक्तयुक्त्या ॥  
पुष्टिं धीर्यं दीपनं सोऽन दद्या-  
द्वन्याद्रोगाग्रोगयोग्याऽनुपानैः ॥ ८४८ ॥

र र स, र च, र. दी, वाजीकरणे । र. दी, पूर्णन्दुरा  
इति नाम ।

भाषा—शुद्धपारेमें शुद्ध सुवर्ण, रजत और ताम्र इनका बारीक चूर्ण डालकर पिष्टी बनाले । इसपिष्टीको केलेंसे कन्दमें रखकर भूधरयन्त्रमें पकाकर सबमें तिष्ठना शुद्धगन्धक कण्डय यन्त्र वगैरहमें जारणकरे । फिर इसकी बराबर कान्तलोहभस्म मिलाकर मेसल और सुल्हदी क स्वरम अववा काथमें ७-७

दिल मर्दनर अन्तमें पकेपानके रसमें एक पहर मर्दनकरनेसे यह पुष्पधन्वा रस तैयार होगा । इसकी १-२ रसीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली घृत, मधु और शर्करा युक्त दूधके साथ पीनेसे अनेक स्त्रियोंकी वृत्ति करता हुआ भी वीर्यसे परिपूर्ण रहता है । तत्परोहाराष्टुपानके साथ देनेसे यह तत्परोहारा नाश करता है ॥ २०३ ॥

### २०४ पुष्पधन्वारसः वृद्धाद्यः (चतुर्थः)

कनकहर्जकान्तं ताप्यकं वृद्धिभाणं,  
द्विजकुचलययपीशात्मलीनागिनीभिः ।  
घृतमधुपयस्त्रण्डैः पुष्पधन्वा द्विवह्ने,  
रमयति बहुकान्ता दीर्घमायुर्विधत्ते ॥ ८४९ ॥

यो. ट., र. शं., र. शि., वाजीकरणे ।

भाषा—सुवर्ण १ भाग, पारा २ भा., कान्तलोह ३ भा., सुवर्णमाक्षिक ४ भा., इनसबकी भस्में इन्दी मिलाय १-१ पहर खरखर पलाशकीडाल, कोईके दूध, सुलहदी, सेमलफा सुलहा, पान इनके रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर ६-६ रसीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पी, मधु और शर्करा युक्त दूधके साथ सेवनकरनेसे बहुतसी स्त्रियोंके साथ रमणरता हुआ भी दीर्घायु और बलसे प्राप्त होता है ॥ २०४ ॥

### २०५ पुष्पधन्वारसः (पञ्चमः)

रसमस्मन्त्रयो भागाः पङ्कगा गन्धकस्य तु ।  
चतुर्थं मौक्तिकं द्वात्रिंशद् द्विभागं तालकं शिला ॥ ८५० ॥  
सारमस्रकलौहो च पङ्कमाक्षिकनागरम् ।  
अयञ्चाऽप्यौ प्रयालञ्च सर्वं खल्वे विमिश्रयेत् ॥ ८५१ ॥  
त्रिदिनं मर्दयेद्वाहं शुद्धं द्रव्यं विमर्दयेत् ।  
भायना गन्धदुधेन नलदं केतकी जया ॥ ८५२ ॥  
फाये मर्कटिबीजानां पौण्ड्रकैश्चुजभावितम् ।  
इतराश्चमन्त्राणां भागा इतराश्च पृथक् पृथक् ॥ ८५३ ॥  
लघुपङ्कजराजानीं सिद्धार्थं चञ्चु मर्कटी ।  
जातीकोपः पुनर्मूत्रं त्वगेलागोचुरास्तथा ॥ ८५४ ॥  
दन्तुबीजं वरा शृङ्गयोऽशोकबीजं दातावरी ।  
मुशली धूतवीजानि क्षीरीमाचरसौ तथा ॥ ८५५ ॥  
ययानीद्वयकं रम्भा खर्जूरं विद्विजकम् ।  
श्रियद्बुध जटामांसी अक्षवीजञ्च गोस्तनी ॥ ८५६ ॥  
आकलरञ्च बज्रोलं कर्पूरं धान्यपञ्चकम् ।  
एनानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ ८५७ ॥  
भाण्डे च द्विपलं स्थाप्य द्विभागे दारिद्र्योदो ।  
सूक्ष्मिना पथेतस्म्यद्विपलं शोषयेत्ततः ॥ ८५८ ॥  
मर्दयेत्तेन कान्तेन दिनानां द्वादशाऽयसिम् ।  
अदिनं स्पन्दयेद्बुधे द्विपलं साधयेत्ततः ॥ ८५९ ॥  
सप्तार्धं दृढं मर्धं दिनान्ते तत्समुज्जरेत् ।  
अनेन भायना देयाः सप्तपदिमिता बुधेः ॥ ८६० ॥

रसः सिद्धोऽयमाख्यातो घल्लमानं प्रयोजयेत् ।  
अनुपानयुतं लेहं मधुशर्करया सह ॥ ८६१ ॥  
गोदुग्धमोदनं मुड्यात्सर्पिः शर्करया सह ।  
मैथुने दृढलिङ्गः स्यादङ्गनानां शतत्रयम् ॥ ८६२ ॥  
प्रत्यहं रमते सेवो स्त्रीणाञ्च प्राणवल्लभः ।  
प्रातस्तयाय सेवेत सद्यो द्रवति कामिनी ॥ ८६३ ॥  
नष्टेन्द्रियतां मेहं मूत्रकृच्छ्रं तथाऽस्मरीम् ।  
योनिशूलं शिरःशूलं सर्वाश्च ग्रहणी जयेत् ॥ ८६४ ॥  
सर्वाऽतिसारशोफश्च सर्वदाहश्च निश्चितम् ।  
अयं धन्वन्तरिख्यातो रसोऽयं रतिवल्लभः ॥ ८६५ ॥  
पुष्पधन्वा रसः पूज्यो लोकानन्दकरस्तथा ।  
नारीणां रक्षयेत्प्राणान्नराणां सिद्धिदायकः ॥  
पूज्यः साक्षाद्व्रतिपतिर्वैद्यानां मुक्तिदायकः ॥ ८६६ ॥

रसपारिजाते, वाजीकरणे ।

भाषा—पारदमस्म ३ भाग, छद्गन्धक ६ भा., मोती ४ भा., सुवर्णमस्म २ भा., हरिताल, मेनसिल, रजत, अभ्रक, बह, सोनामाखी, छीसा इनसबकीभस्में २-२ भाग, लोह और प्रयालमस्म आठ ८ भाग लेकर सबको ३ रोज मर्दनकर गोदुग्धकी भावना देकर खन, केवड़ा, भाग, केदायकेबीज, ईस इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा भाषकी १-१ भावना देकर बला, अमगन्ध और उड़दके बायोकी १०-१० भावना देवे । फिर लौंग, तालमखाना, जाविनी, सरसों, छुंड (काग-हरी हिं.) केरांच, जायफल, इतसिद्ध, तनू, इलायची, गोसह, पवाइकेबीज, त्रिफला, काफ़ासींगी और बैजलींगी, अशोक-बीज, सनावर, सोनोमुगली, सुदपतूरेके बीज, बसलोचन, मोबस, देसी तथा चुरासानी अन्नाशन, कैलाशचन्द, सुआरा, चित्रकूट, विजयपाखीडाल, श्रियद्बुध, जटामांसी, द्वादशके बीज, हास, अहलररा, शीतचौनी, कपूर, धान्यपञ्चक(पनियां, सौंड, नागरमोषा, सुगन्धबाला और बेलगिरी) वरग १-१ भाग लेकर इन्हें दूधके रसमें ५ भागको । एकापको ३३ कप पानीमें मन्द अग्निर पकावे जब १ पल जल बाकी रहनाय तब उतारकर इनकलको मिलकर ऊपरवाली द्वाओंको १२ दिनतक मर्दनकरे । १२ दिनकेबाद मुगादे फिर उगीतह शोषल जो दूसराभागदे उसको ३० कप पानीमें पकाकर २ पल शोषरहनेपर १० रोजतक मर्दनकरे । इततह ६० दिन तक मर्दनहोगा । फिर एकभाग अरीमको शेरम दूधमें स्वेदनकरे । जब दूध आधा बाकी रहनाय और सब अरीम दूधमें चन्नाय तब उग दूधको दसमें डालकर दिनभर मर्दनकरे । हमरे रोज मुगाह फिर उगीतह मर्दनकरे, ऐसी छान्नाभागा दूधकी ६ । ये सब मिलकर ६० भावनाएं हुईं । इसकी १-२ रसीकी गोखिये व्याकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु और शर्कराके साथ अथवा मधु शर्करा युक्त दूधके साथ सेवनकरे और गोदुग्ध, भात, घाह तथा पी गायको प्यत्रभी सिधिल्ल निना बहुतसी स्त्रियोंके साथ रमण करता है । रस रमने में न परने

पैसीमी दबाहना हो वह तत्काल द्रावित होजातीहै इसलिये वह पुष्प सियोंका प्राणवायु होताहै । बाजीकरणाथ इसको सेवन करनाहोतो मैथुनह एक पण्टा पहिले सेवनकरे । बासीरसम्पत्त्यर्थ सेवन करनाहोतो प्रातःकाल शयना समयहै । इसके सेवनसे इन्द्रियोंकी अशक्ति, प्रमेह, मूत्ररुच्छ, ज्वरमरी, योनिशूल, शिरशूल, सपथकारकी सङ्गदहणी, अतिसार, शोथ और दाह नष्टहोते हैं । स्त्रियोंके प्राणोंकी रक्षा करताहै और पुरुषोंकी सिद्धि देताहै । यह रस साक्षात् कामदेवहै, वंशोंको यश देनेवालाहै इसलिये पैशोंकी हतो हमेशा तैयार रखना चाहिये ॥ २०५ ॥

### २०६ पुष्पधन्वारसः (पष्ठः)

शिलाऽऽलतायाऽऽम्रमुज्ज्वल  
प्रवालचैद्रुपशशिद्रिभागम् ।  
सूतस्त्रिधाऽऽऽस्यससम्पयुक्तं  
सुधर्णपत्रोद्भवतो विमर्द्य ॥ ८६७ ॥  
विभावयेत्स्तम्यकचालधूर्त-  
जयाम्बुमि घान्तिरजाम्भसा च ।  
भापाऽऽमगन्धोरगयहितोयै-  
र्भाव्यं पृथग्दिनिकं तथैव ॥ ८६८ ॥  
लघुज्जजातीफलपत्रफली  
सिद्धार्थचञ्चिधुरगोक्षुरैला-  
विश्वैः पुनर्मूल्यगिमाऽऽधिशोष-  
कङ्कोलद्रुफलत्वग्गुह्यया ॥ ८६९ ॥  
पलाण्डुशिषुष्यमीरुताली-  
दीप्यद्वायाऽऽरुक्तरक्तसारैः ।  
रज्जुर्मोच्यारसमोचकन्द  
प्रियङ्गुमांसीशशिधान्यपञ्च ॥ ८७० ॥  
द्राक्षा तुगायल्ललनारिकेलऽ-  
गुरुं समानं द्विपलं विचूर्ण्य ।  
माण्डे पचेदृष्टपले च तोये  
मृद्वग्निना तद्विपलाऽवशेषम् ॥ ८७१ ॥  
विभावयेत्तेन जलेन घर्मे  
पुनः पुनस्तं मुनिवासराणि ।  
पलद्वयं याममफनमश्रौ  
मृदौ विपकं पयसा तथैनम् ॥ ८७२ ॥  
कल्केन भाव्यं शरवासराणि  
विभावयेत्तं शतपत्रनरिः ।  
शुष्कं विमर्द्य विधिवत्प्रयोज्यो  
बहुः सितानागलतादलाभ्याम् ॥ ८७३ ॥  
पथ्यं सुदुग्धं मधुरं प्रद्या-  
त्यमेहवाते क्षयमूत्ररुक्ते ।  
शोफाऽतिसारे ग्रहणोपलापे  
प्रवाहयोनीप्यखिलाऽऽमरेषु ॥ ८७४ ॥

### धन्वन्तरिप्रेरितपुष्पधन्वा

पूज्यो नृणां द्रावयतेऽङ्गनानाम् ।

लिङ्गं दृढत्वं युवतिप्रियत्वं

नष्टाऽल्पवीर्यो रतिवल्लभः स्यात् ॥ ८७५ ॥

र. शं., दो, र. म. मा, र. क. यो., बाजीकरणे ।

१०—रमणिरातीयापेटेन बद्धा साम्प्रभावद्वयि मूलद्वये भाव  
वाध विशेषतःपणवे पादो न्यस्त इति विमाननीयम् ।

भापा—मैनसिल, हस्ताल, सोनामारी, अग्रक, नाग  
बन्ध, प्रवाल, लुपनिया, रजत और मोती इन राजकीभक्त  
२-२ भाग, पारिकीभक्त ३ भाग, लोहभक्त ४ भाग  
इनसबको इच्छाकर दो तीन पहर मर्दनकर धतूरेके पत्रस  
रस,, खीदुग्ध, झुगन्धवाला, धतूरेकीरज, भाग, केवाच  
कड़ु, अलग्न्य, नागरवेल, इनप्रत्येकके रसोंसे १०-१० कि  
मर्दनकर सुछाले । फिर लौंग, जायफल, जावित्री, फा  
पीलीसरसों, दूध (हिं. कागलहरी), समुद्रशोष, दीपलचीनी  
पवाङ्केरीज, तज, गिलोय, प्याज, कड़वा और मोठा सहजिन  
लज्जाल दोनों सुसमी, देखी और खुरासाना अजवाइन  
भिलावा, बीजम्पार (बीबलाम), छुहारे, मोषरम, केलाकन्द  
प्रियङ्गु, जटामासी, कचूर, धान्यपत्रक (धनिया, सोंठ, नाग  
रसोया, झुगन्धवाला, बेलगिरी), श्राध, वसलोचन, भोजपत्र  
नारियल और अगर ये सब १-१ भाग लेकर जबकुदकर दो २  
पलकी पांच पुडिया बनालेना । इनमेंसे एक पुडियाको १६  
पल पानीमें उबाले, जब २ पल पानी रहपाय तब छानकर  
इस पानीसे उष्णुकरसको मिगोकर सुछाले, ऐसे इसकी सातरोज  
भावनाएं देकर सुछाकर २ पल शुद्ध अनीमको ८ पल गोदुग्धमें  
डालकर मन्द आचसे १ ग्रहलोक पकावे और इसको धीरे २  
मिलाकर पाँचरोज घोटकर सुछालेवे फिर कमलपत्रके रसकी  
१ भावना देकर ३-३ रतीकी गोखिया बनाकर रखलेवे ।  
इनमेंसे १-१ गोली पकेपानमें मिथी डालकर उसके साथ  
पानेसे प्रमेह, वाताधिकार, क्षय, मूत्ररुच्छ, शोथ, अतिसार,  
सङ्गदहणी, प्रलाप, प्रवाह (शङ्को), ससस्त योनिरोग, लिङ्गदी-  
पित्य, अल्पशुक्ता और नष्टशुक्ता इनसबरोगोंको यह नष्ट-  
करताहै और स्त्रियोंका द्रावणकरताहै । यद्यपि यह पाठ पत्रम  
पाठ्ये बहुत अशोभे मिलताहै परन्तु हृष्य और भावनाओंमें  
बहुत अन्तर्होनेसे स्वतन्त्र रक्तसागयाहै ॥ २०६ ॥

### २०७ पुष्परगरसायनम्

पुष्परगागोद्धवं मस्य पलार्धममितं शुभम् ।

तदर्थं पीतकं चङ्गं तदर्थं ताम्रभस्मकम् ॥ ५७६ ॥

ताम्रस्यार्द्धञ्च रजतं जातरुपं तदर्थकम् ।

वज्रभस्म तदर्थञ्च सर्वतुल्यं मृताऽग्रकम् ॥ ८७७ ॥

तत्समं सूर्यकान्तञ्च मारितं बलिना सह ।

तुल्येन बलिना सार्द्धं दशवारं पुटेरत्तु ॥ ८७८ ॥

नीलाङ्गनाऽऽलताप्यानां पृथक्तानि पुटयन्ति च ।

इति सिद्धमिदं प्रोक्तं पुष्परगरसायनम् ॥ ८७९ ॥

क्षयादि सर्वरोगघ्नं पुष्ट्याधिहरं परम् ।  
 शुद्धगुणमार्तिदामनं पुष्योयं पृथ्वमुत्तमम् ॥ ८८० ॥  
 शिष्यं गुल्महरं स्त्रीणां नाताख्याधिनिवृद्धनम् ।  
 वीपनं परमं प्रोक्तं कामलापाण्डुनाशनम् ॥ ८८१ ॥  
 ८. १, १ पायने ।

भाषा—योगराजरीभ्यम् २ तोले, पीतल और यहभस्म १-१ तोला, ताप्तभस्म १ मासे, रजतभस्म १ मासे, सुवर्चभस्म १॥ माया, सुरगंधे आभी हीरेहीभस्म और इलावटी बराबर अश्रद्धभस्म तथा समलग्नधरदेकर मारक इष्यवर्णकेराध पोटरु दस गजपुट देवर भस्म त्रिपाटुना सुवर्चान्त अश्रद्धी बराबर बालेना । फिर शयबीजोंको मिलाकर सषडी बराबर गन्धक देकर अतीतरह मारकरमे पोटरु १० गजपुटदे । फिर नीला-इनभस्म, हरिताल और तोतायागी इनप्रत्येकको अलग २ समभाग मिलाकर पूर्ववत् मंदनकर १-१ गजपुट देनेने यह पुस्तकग्राह्यन सिद्धहुमा । इगदो बनाकर एकरमेवर रदनेदेना । इसके बाद एकएक अपरा आभी आभी रानीही मात्रा तन-श्रीगोपितानुनाके साथ देनेगे क्षय, कुप, शुद्ध्याधि, शुल्म, कण्ठ्यन्ध, नर्गुणत्व, रणगुल्ल, कामला, पाण्डु, मन्दागि, इन सब रोगोंको यह दूरकरताहै ॥ २०७ ॥

## २०८ पुष्पाऽङ्गुसरसः

सुतं साऽङ्गविपं लोहं ध्योपञ्च ययदूकजम् ।  
 मदेयेत्तु रसापह्निभृद्द्राघे दिनत्रयम् ॥  
 शुक्रामात्रं प्रयुज्जीत ह्योल्यादी स्वाऽनुपानतः ॥ ८८२ ॥

रसायनम्, मेदोदोषे ।

भाषा—पाद और अश्रद्धभस्म, शुद्धपाण्डु, लोहभस्म, लोह, मिर्च, पीपल, यरगार ६३ समभाग लेकर तुली, चित्रक, भंगरा, इनके स्वर्णोंके १-१ तोन भागना देकर १-१ रतीकी गोलियां बनाकर रसाजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मेदोदुद्धि-प्रवृत्तिरोगोंमें अपने २ अनुपानकेसाथ देनेगे यह तत्तदोगोंको दूरकरताहै ॥ २०८ ॥

## २०९ पूगपाकः ( रतिक्लमः ) ( प्रथमः )

पुगं दक्षिणदेवाजं दशपलान्मानं भृशं कर्तयेत्,  
 तत्स्वित्त्रं जलयोगतो भृदुतरं संकुट्य चूर्णीकृतम् ।  
 तच्चूर्णं पटशोधितं यसुगुणे गोशुद्धदुग्धे पचेत्,  
 गव्याज्याञ्जलिसंयुतेऽतिनिविदे दद्यात्तुलार्धां सिताम् ।  
 पक्वं तज्ज्वलनाक्षितिं प्रतिनयेत्तस्मिन्पुनः प्रक्षिपेत्,  
 दद्यात्तच्चुदीरयामि बहुला दध्नाऽऽदरात्संहिताः ।  
 पला नागबला बला सचपला जातीफलं लिङ्गिनी,  
 जातीपत्रकपत्रपत्रकयुगं तद्य त्वचासंयुतम् ॥ ८८३ ॥  
 विद्या वीरणधारिवारिद्वरा वांसी घरी चानरी,  
 दाससेधुरगोष्ठुराय महती खर्जूरिका क्षीरिका ।

धान्याकं सकमेरुकं समधुकं शृङ्गाटकं जीरकम्,  
 पृथ्वीकाऽथ यथानिका वरटिका मांसीमिती मेयिका ।  
 कन्देष्वरविदारिकाया मुशली गन्धर्गन्धा तथा,  
 कर्चूरं करिकेसरं समरिजं चारस्य धीजं नयम् ।  
 धीजं शाल्मलिसम्भयं करिकणापीजञ्जराजीवजम्,  
 इयेतंचन्दनमय रक्तमपिच धीमंशुपुष्पैःसमम् ॥ ८८६ ॥  
 सर्वञ्चेति पृथक् पृथक् पलमितं सञ्चूर्ण्य तत्र क्षिपेत्,  
 सुतं यद्भुजङ्गलाहमगनं सन्मारितं स्वेच्छया ।  
 कस्तूरीघनसारचूर्णमपिच प्राप्तं तथा प्रक्षिपेत्,  
 पश्चादस्य तु मोदकान्विरचयेद्विद्यप्रमाणानय ८८७  
 तान्भुजङ्गाऽतिसवा यथानलबलं भुज्जीत नाऽम्लं रसं,  
 पूर्वस्मिप्रक्षिते गते परिणतिं प्राप्नोतज्जनाश्रयते ।  
 नित्यं धीरतियत्तुमाऽऽप्यकमिमं यः पूगपाकं भुजेत्,  
 स स्यादोपयितुमिष्टमृद्धमद्वानो वाजीप शक्नो रतो ८८८  
 बीमाऽमिर्बलपान्थलीयिद्वरते हृष्टः सुपुष्टः सदा,  
 पृष्टो योऽपिपुष्टेय सौऽपिधरिः पूर्णगुणस्तुष्टुरः ।  
 यत्स्मिप्रतिश्रुते यदिपुनः सन्धक् गुरासानिका,  
 धत्तूरस्य च धीजमकं करमः पाथोपिशीपस्तथा ८८९  
 सन्माजूरफलं तथा ससफलं त्यक् चाऽपि निक्षिप्यते,  
 चूर्णांऽङ्गं विजया तथा सहि भयैकामेश्वरो मोदकः

यो. १, भा. प्र. ३. यो. त. २. कि. पा. ६, पो. म. २,  
 दो, बाजीकरणे । यो. म. कामेश्वरोदकेति नाम । रतिवम्भे  
 स्थितस्तुनामधितया प्रोक्षणमहाकामेश्वर ॥

भाषा—चिकनीमुपारी १० पल लेकर सरोतेते बारीक टुकड़ेकर दोलायन्य बनाय पानीकी भापने स्वेदनकरे । जब एक्दम कोमलहोनाय तब कुटर कर कपड्डान चूर्णकरले । इस-चूर्णको अठ्ठगुने नायकेदूधमें (श्वदोनेकेसरण १६ गुनाभी लेसके हैं) पकावे । अमिमन्दरमे और धीरे २ घलतारहे, बड़ाहीके बेंदरे न लगनेपावे । मावा होनानेपर आपगेर धी बालकर खूबघूने । अन्धरीतरह सिकनानेपर ५० पल शहरकी एकरानाबिचानी होनेपर मिलावे और बलतारहे । दोतासी पाननी होनेपर अमिपरले उतारकर छोटीइलायची, नागबला, चारोटी, पीपल, जायफल, शिवलिङ्गीके धीज, जापिनी, पत्र, तालीसपत्र, तन, लोह, खत, सुगन्धबाला, नागसोपा, निफला, बंगलोचन, क्षतावर, छिलेवरहित बेवाचके बीज, बीजरहित द्राक्ष, तालमलाना, गोखर, छुहारा, खिरनी, धनियां, कसेरु, मुलहटी, सिंघाड़ा, जीरा, बड़ीइलायची, देशी अजवाइन, कौडीभस्म, जयमांसी, सोंफ, मेथी, विदारीकन्द, स्याह व सफेद मुमूकी, असफन्ध, कजूर, नागकेसर, सफेद मरिच, चित्तौजी, सेमले बीज, गजरीफल, कमलकाश, सफेद तथा लालचन्दन और लज्ज इतरा चारीचूर्ण १-१ पल, पारा, बड़, नाग, लोह और अश्रक इनहीभस्ममें १-१ कपसे २-२ कपतक, चट्टरी २ कप, कपूर १ कप खिलाकर एक्कक पक्के लू बनाकर रसजोड़े । इनमेंसे अमिकल देखकर आधा अथवा एक लू

खाकर ऊपरसे दूधपीये । पञ्चत्रिनेपर पञ्चगोजनरे । इसके सेवनसे घीयकौशुदि, वाजीकरण, अमिक्री दीप्ति, बल, पुष्टि इनसबको प्राप्तहोकर दीर्घायुको प्राप्त होताहै । इस योगमें खुशानी अजवाइन, शुद्ध धतूरेके बीज, अजमरा, समुद्रसोप, माजुफल, खसखस और तज १-१ पल और सबसे आधी मुनीहुई भाग डालनेसे यह महाकामेश्वरमोदक बहलाताहै २०९

### २१० पूगपाकः ( वृहत् ) ( द्वितीयः )

पाच्यं प्रगरजो दशाऽध्रममलं मार्दवं कटाहेऽश्लिना, स्विन्नश्चाऽऽयुगे पयस्यपि घृतप्रस्याऽद्धकैऽस्मिन्धने । जातीकोपफले च पङ्कटशटी द्राक्षा वरा वानरी, चातुर्जाततुगाऽव्धधान्यमुसलीदीप्याजयष्टीधुरम् ॥ अथवा शीतबलात्रयं कारिकणा मांसां वरां मेथिका, शृङ्गादं मिश्रिजीरवारिविजया गोक्षूरपरजूरकम् धात्री शाल्मलिकोलचोरकनरं कुम्भत्रिनेत्राऽध्रक, पुष्पिकाऽभयघ्नदेयकुसुमं दध्यात्पृथक्कार्पिकम् ८९१ पञ्चाशत्पलखण्डपाकलितः स्वात्पूगपाकः पुषु-  
र्बुन्यः पाण्डुराहृतः प्रमेहदलनो रेतो विवृद्धिप्रदः । पित्ताऽक्षे प्रदरे क्षये करपदे दाहेऽम्लपित्तं यषु-  
दाहे पाण्डुगदे हुताशनहतापैतेषु शस्तो मतः ॥ ८९२ ॥

उ यो त, प्रमेह ।

भाषा—१० पल चिनी सुगारीका बारीक चूर्णरूप मिश्रीकी कच्चाहीमें अठगुना गायका दूध डालकर पकावे । भावा होनेपर आधसेर बी डालकर मूलसे फिर ५० पल शकरकी दोतारकी चादानी मिलाकर जायफल, जाविनी, पट्कट (सोंठ, मिर्च, पीपल, चन्ब, चित्रक, पिपलामूल), कचूर, द्राक्ष, त्रिफला, छिलके रहित केवाचके बीज, तज, पत्रज, इलायची, वसलोचन, नागरमोथा, धनिया, स्याह और सफेद मुसली, देशी व खुरासानी अजवाइन, अजमोद, मुल्हठी, तालमसाना, असगन्ध, शुद्ध कपूर, बला, नागबला, अतिरला ( गुलसिफ्री ), गन्धीपल, जठामासी, शतावर, मेथी, सिंघाड़े, सोंफ, जीरा, सुगन्धबाला, भाग, गोखरू, लुहरी, आवले, सेमल का मुसला, बैरवी मन्वा, चोरक ( राजवाइन ), शुद्धधतूरेके बीज, दन्तो, सफेद निसो-  
तरी जड़कीछाल, द्राक्ष, अन्नकमरूम, बडी इलायची, खल, धात्रमसम, लौंग येसव १-१ तोला लेकर बारीक चूर्णकर मिलाकर रखदे । इसमेंसे, २-२ तोले खाकर ऊपरसे दूध पीनेसे पण्डत्व, घातुक्षीणता, प्रमेह रक्तपित्त, प्रदर, क्षय, हायपैरौकीजरन, अम्लपित्त, तमाम शरीरका दाह, पाण्डुरोग और मन्दाग्नि इनसबको यह नष्ट करताहै ॥ २१० ॥

### २११ पूर्णकलावटी

रसं गन्धं घनं लौहं घातकीपुष्पविल्वकम् ।  
विपं कुटजबीजश्च पाठाजीरकधान्यरुम् ॥ ८९३ ॥  
रसाजन दङ्गुणश्च शिलाजतु पलं तथा ।  
पलं जातीफलं मुस्ता प्रत्येकं तोलकत्रयम् ॥ ८९४ ॥

भेकपर्णी पञ्चमूली बलाकश्चट्टाडिमम् ।

शृङ्गादं केशरं जम्बू दधिमस्तु जयन्तिका ॥ ८९५ ॥

केशराजो भृङ्गपत्रः प्रत्येकं तोलकद्वयम् ।

दिग्भाषा वटिका कार्या तत्रेण परिपेयिता ॥ ८९६ ॥

इयं पूर्णकला नाम ग्रहयोगदनाशिनी ।

शूलघ्नी दाहशमनी वह्निदा ज्वरनाशिनी ॥

अमच्छदिच्छेदकरी सङ्ग्रहग्रहणाजयेत् ॥ ८९७ ॥

र. स, र. क., ग्रहण्याम् ।

भाषा—शृङ्गारा और गन्धक, अन्नक और लोहमसम, धावड़ीके फूल, बेलपिरी, शुद्धबछनाग, इन्द्रजव, पाठा, जीरा, धनिया, रसीत, भुनाछुहागा येसव ३-३ तोले, शिलाजीत, जायफल, तामसोपा ये प्रत्येक १-१ पल, काष्ठै, लघुप्रसूत (शालपर्णी, पृथिवर्णी, भटकदेया, वनभाद्रा और गोखरू), बला, चौलाईकी जड़, अनारकाछिल्का, सिंघाड़े, केशर, जामुनकी छाल, दहीका पानी, जैत, स्याह और सफेद भगरा, येप्रत्येक २-२ तोले लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धरुमी नीलचूर्ण कचलीमें मिलाकर छालसे ४ पहर घोटकर २-२ मादोकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली छाउकेसाथ लेनेसे ग्रहणी, शूल, दाह, मन्दाग्नि, ज्वर, भ्रम, वमन येसव नष्टहोते हैं ॥ २११ ॥

### २१२ पूर्णचन्द्रोदयरसः ( प्रथमः )

शुद्धश्च तालकं लौहं गगनश्च पलंपलम् ।

कर्पूरं पारदं गन्धं प्रत्येकं घटकोन्मितम् ॥ ८९८ ॥

जातीकोपो मुरा पत्रं शटी तालीसकेशरम् ।

व्योषं चोचं कणामूलं लवङ्गं पिबुसन्मितम् ॥ ८९९ ॥

भक्षयेत्प्रातरुत्थाय शुद्धदेवद्विजाचकः ।

नानारूपमतीसारं ग्रहणीं सर्वैरुपिणीम् ॥ ९०० ॥

अम्लपित्तं तथा शूलं शूलञ्च परिणामजम् ।

रसायनवरश्चाऽयं बाजीकरण उत्तमः ॥ ९०१ ॥

र स, र च, अतिषारे ।

भाषा—रसमागिण्य, लोह और अन्नकमसम १-१ पल, शुद्धकपूर, पारा और गन्धक १-१ कपे, जायफल, जाविनी, सुगमासी, पत्रज, कचूर, तालीसपत्र, केशर, सोंठ, मिर्च, पीपल, तज, पिपलामूल, लौंग, ये प्रत्येक एकचपे लेकर सबका बारीक चूर्णकर एकजगह मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रस्ती उचि-  
ताऽनुपानकेसाथ देनेसे नानाप्रकारका अतिसार, सङ्ग्रहणी, अम्लपित्त, शूल, परिणामशूल, ये सब नष्टहोतेहैं । यह रसायनहै और उत्तम बाजीकरणहै ॥ २१२ ॥

### २१३ पूर्णचन्द्रोदयरसः ( द्वितीयः )

गन्धताम्ररसदङ्गुणनाम

तारकाञ्जनसुमाधिकयुग्मम् ।

कान्तविद्रुमसुचक्रमौकिरु

तीक्ष्णलोहमृगनाभिरन्नकम् ॥ ९०२ ॥

कुङ्कुमसारजचन्दनचन्द्र-  
मालतीपुष्पसुमर्दितयामम् ।

वह्ममात्ररसयोजितयुक्ति-  
रार्द्रकस्वरसपानविशेषम् ॥ ९०३ ॥

श्वासज्ञासमयपीनसरोगं  
मेहकुष्ठरुधिराऽऽमयनाशम् ।

राजयश्महरदेहसुयण-  
दीप्तिकारकमिदं हि सुवृष्यम् ॥ ९०४ ॥

पूर्णचन्द्रोदयो नाम रसः सद्योपसिद्धिदः ।

युक्त्या सुयोजितः पुंसां नानाऽऽतद्भविनाशनः ॥ ९०५ ॥

रसायन स , वै. चि. (७) सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्धगन्धक, पारा और सुरागा, ताम्र, नाग, रजत, सुवर्ण, सोनामाली, कासामाली, कान्तलोह, मृग, वज्र, मोती, पोलाद, अभ्रक इनसंगीभस्मै, कस्तूरी, केशर, लहामाली, सफेदचन्दन, शुद्धकपूर येसव समभागलेकर वारीक चूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्ण बज्जोमें मिलाकर मालतीपुष्पससे एक पहर मर्दनकर ३-३ रसीकी गोलिएं बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरकगैरह उज्जिताशुपानकेसाथ केनेसे श्वास, कास, पीनस, प्रमेह, दुष्ट, रक्तविकार, राजयश्म, धातुक्षीणता इनसबको नष्टकर शरीरमें सुवर्णके सदृश कान्तिको पैदा करताई । अनुपानादि युक्तिविशेषसे यदि इसका प्रयोग कियाजायतो यह नानाप्रकारके रोगोंको दूरकरताई ॥ ९१३ ॥

### २१४ पूर्णचन्द्रोदयसिन्दूरम्

तुल्यं तुल्यं रसं गन्धं स्वल्पमप्ये विनिःक्षिपेत् ।  
कपित्थमूलसारेण मर्दितञ्च दिनत्रयम् ॥ ९०६ ॥  
यटिकां छायायां शुष्कां भाण्डमप्ये विनिःक्षिपेत् ।  
काष्ठकृपां विनिक्षिप्य बालुकाभिः प्रपूरयेत् ॥ ९०७ ॥  
दीप्ताऽग्नौ च द्विपङ्क्यामं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।  
कपित्थमूलसारेण त्रिदिनं मर्दयेत्कमात् ॥ ९०८ ॥  
विल्वमूलकपायेण मर्दयेत्त्रिदिनं पुनः ।  
आतुजातककर्पूरलवङ्गकुसुमान्वितम् ॥ ९०९ ॥  
सर्वं रससमञ्जैव मेलयित्वाऽथ चूर्णकम् ।  
लाजचूर्णं सितामिश्रं मधुना सह सेवयेत् ॥ ९१० ॥  
यल्लवणमितः सूतो वमनस्तग्मनस्तथा ।  
कासादिपञ्चछर्द्दानामस्वेनाशकः परः ॥ ९११ ॥  
हृद्रोगं स्वरमङ्गञ्च मन्दाग्रिञ्च निवारयेत् ।  
पूर्णचन्द्रोदयो नाम निर्मितः शूलपाणिना ॥ ९१२ ॥  
न रा., वै. चि. , छयां ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्ण बज्जलीकर वैयकी जड़की छालक रससे ३ रोज मर्दनकर छोटी छोटी गोलिएं बनाकर सुखाले और ६-७ कपडमिमीकीहुई आतशी शीशमें भरके बालुकायन्त्रमें रखकर १२ पहरकी तेज अग्निदेवे । स्वाङ्गशीत होनेपर निकालकर कैयकीजड़की छाल

और बेलकी जड़ इनके स्वस अववा हाथोंसे ३-३ रोज मर्दनकर तब, पत्रन, इलायची, नागकेशर, शुद्धकपूर, लैंग इनसबका वारीक चूर्णकर रसकी बराबर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ६-६ रसीकी मात्रा लाजचूर्ण, मिश्री और मधुकेसाथ सेवन करनेसे वमन, कास, सब प्रकारकी छर्दि, अग्रि, हृद्रोग, स्वरभङ्ग, मन्दाग्रि इन सब रोगोंको यह नष्ट करताई ॥ ९१४ ॥

### २१५ पूर्णचन्द्रोरसः ( वृहन् ) (प्रथमः)

द्विकर्षं शुद्धसूतस्य गन्धकञ्च द्विकार्षिकम् ।  
लोहभस्म पलञ्चाऽऽर्द्रं जारितञ्च पलांशिकम् ॥ ९१३ ॥  
द्वितोलं रजतञ्चैव यज्ञभस्म द्विकार्षिकम् ।  
सुवर्णं तोलकञ्चैव ताम्रं कांस्यञ्च तत्समम् ॥ ९१४ ॥  
जातीफलञ्चेन्द्रपुष्पमेलाभृद्भञ्ज जीरकम् ।  
कर्पूरं घनिता मुस्तं कर्पकं पृथक् पृथक् ॥ ९१५ ॥  
सर्वं खल्वतले क्षिप्त्वा कन्यारसविमर्दितम् ।  
भाषयित्वा घरातोयैः केयुकानां रसेन च ॥ ९१६ ॥  
परण्डपत्रैरावेष्ट्य घान्ये रात्रिदिनोपितम् ।  
उद्धृत्य मर्दयित्वा तु यटिकां चणसम्भिताम् ॥ ९१७ ॥  
खादेष पणखण्डेन संयुक्तां ध्याधिनाशिनीम् ।  
सर्वव्याधिविनाशाय काशीनाथेन भाषितः ॥ ९१८ ॥  
पूर्णचन्द्ररसो नाम सर्वरोगेषु योजयेत् ।  
वस्त्यो रसायनो घृष्यो धात्रीकरण उत्तमः ॥ ९१९ ॥  
अयमष्टौलिकां हन्ति कासश्वासमरोचकम् ।  
आमदाहं कटीशूलं हृच्छूलं पित्तशूलकम् ॥ ९२० ॥  
अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च ग्रहणीं चिरजामपि ।  
आमवातमम्लपित्तं भगन्दरमपि द्रुतम् ॥ ९२१ ॥  
कामलां पाण्डुरोगञ्च प्रमेहं वातशोणितम् ।  
नातः परतः श्रेष्ठोविघते वाजिकर्मणि ॥ ९२२ ॥  
रसस्याऽस्य प्रसादेन नरो भयति निर्गदः ।  
मेधाञ्च लभते घाम्नी तुष्टिपुष्टिसन्धितः ॥ ९२३ ॥  
मदनस्य समां कान्तिं मदनस्य समं बलम् ।  
गीयते मद्नेनैव मदनस्य समं धनुः ॥ ९२४ ॥  
प्रियाञ्च भदनप्रायाः पश्यन्ति मदनाऽऽकुलम् ।  
स्त्रीणां तथाऽनपत्पानां दुर्बलानाञ्च देहिनाम् ॥ ९२५ ॥  
क्षीणानामल्पशुक्राणां वृद्धानां वातरेतसाम् ।  
ओजस्तेजस्कराऽयं स्त्रीषु कामविघर्धनः ॥ ९२६ ॥  
अभ्यासेन निहन्ति मृत्युपलितं सर्वाभयध्वंसकः,  
वृद्धानां मदनोदयोदयकरः प्रौढाङ्गनासङ्गम् ।  
नित्यानन्दकरः सुखाऽतिसुखदो भूषैः सदा सेव्यते,  
एष्टः सिद्धफलो रसायनवरः श्रीपूर्णचन्द्रो रसः ॥ ९२७ ॥  
र स , भै र , र र , घ , र सु , र च , व रा , वाजीकरणे ।

टि०—केयुकमिश्रन्दो कनाऽन्यकारे एतितोऽस्ति, कश्चिद्वलीशक वद न्यन्ये कसुकश्चिद्वलीशक इति भ्रमनकानि वचनानि स्थितवन्त । परन्तु कसुकनामसु नालीनामसु च केयुकेषु नाम न दृश्यते तत्रो न दृश्यतेनामामाश्रयणि । माषकपात्रेन कनेषु क्लेशकानाम् दहनतो

विज्ञाने चतुर्विधायोऽयम् । शुद्धदृष्ट्या स्वल्पमल्यकारणयो जलवर्षा  
वर्तते यत्फल मुकुलाकार तदन्तर्गतं तस्मिन्महद्वानि असंख्येयानि वीर्यानि  
परिपूरितानि भवन्ति तानिचाऽऽस्यदे गधुराण्यति स्थित्या च भवन्ति ।  
अन एव गुणैरेदो तत्त्वस्थानां धीतेऽपि नाम प्रसिद्धम् । तेषु वस्तु  
श्रीतीत्यमित्यस्माकं सम्मतिः ।

**भाषा—**शुद्ध पारा और गन्धक २-२ तोले, लोह और  
अध्रकमस्य ४-४ तोले, चादी और वज्र भस्म दो २ तोले,  
सुवर्ण, ताम्र, कास्य इनससरी भस्म, जायफल, लौंग, इला-  
यची, भगरा, जीरा, कपूर, वनित्ता ( त्रियङ्गु अथवा अनन्त-  
मूल ), नागरमोया ये प्रत्येक १-१ तोला लेकर भारीक चूर्णकर  
पारगन्धकही नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर धीकृआर, निफला  
और केतुक ( धीतेला शु० ) के रस अथवा क्वाथोंसे १-१ रोज  
मर्दनकर एण्डपत्रोंमें लपेटकर धान्यराशिमें रखदे । चौथेरोज  
निकालकर एण्डपत्रोंको फेंकद और गोलेको मर्दनकर चने बरा-  
बर गोल्या बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली पानके  
साथ खानेसे अष्टौलिका, बास, श्वस, अरुचि, आमशूल, कटि-  
शूल, हृन्नुल, पित्तशूल, अमिमाम्ब, अजीर्ण, पुरानी सङ्गहणी,  
आमवात, अम्लपित्त, भगन्दर, कामला, पाण्डुरोग, प्रमेह,  
वातरफ इत्यादि समस्तरोगोंको दूरकरताहै । यह उत्तमभट्टय,  
वाजीकरण और रसायनहै गन्ध्यास्त्रियोंको पुन पैदा करताहै ।  
दुबैल, क्षीण, अल्पशुक्र, वातशुक्र इनसबको दूरकरताहै । खानेसे  
बहुतही दौघ्र अपना प्रभाव दिखाताहै इसलिय यह राजा-  
सोगोंके सेवन करने योग्यहै ॥ २१५ ॥

### २१६ पूर्णचन्द्रोरसः ( द्वितीय )

मृतसूताऽम्लोहं वै शिलाजतुषिडङ्गकम् ।  
ताप्यं क्षौद्रघृतं तुल्यमेनीकृत्य चिमर्दयेत् ॥ २२८ ॥  
पूर्णचन्द्ररसो नास्ति मायिकं भक्षयेत्सदा ।  
शास्त्रम्लीपुष्पचूर्णञ्च क्षौद्रैः कर्षं पिबेदनु ॥ २२९ ॥  
दुर्बलो बलमाप्नोति मासैकेन यथा शशी ।  
कृशानां बृहणं देयं सर्वं पानाद्यमेपजम् ॥  
निद्रा चैव दिवा रात्रौ छागमांसाशनं तथा ॥ २३० ॥  
र र स, र स, र सु, र क, भै र, रसायनस, र च,  
चि क, व रा, र र दी, र नी, ना वि, रसपारिजात, र क  
ल ( ना ) रसायनाधिकारः ।

**भाषा—**पारा, अध्रक, लोह इनफीभस्म, शिलाजीत,  
विडङ्ग, शुद्धसोनामाखी, मधु और धी सब समभाग लेकर मर्द  
नकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा खाकर सेमलके फूलोंका  
चूर्ण १ तोला मधुके साथ चाटनेसे एक महीने में जिसतरह  
चन्द्रमा बजताहै उसीतरह दुबैल आदमी बलवान् होताताहै ।  
कृश आदमियोंके लिये बृहण अन्नपान देना और बकरेका मास  
खानको देना, रातदिन सोनेकी छुनी रखनी चाहिये ॥ २१६ ॥

### २१७ पूर्णचन्द्रोरसः ( तृतीयः )

सूत गन्धञ्चाऽभगन्ध्यां शुद्धौ  
यष्टीतौयै मर्दयेदेकचक्षम् ।

शुद्ध शङ्खं मौक्तिकं लोहकिटं  
मस्मीभूतं सूततुल्यञ्च दद्यात् ॥ २३१ ॥  
भूकृष्णण्डै र्वासरं तद्विमर्धं  
गोलं कृत्वा भूधरे तं पुटेत्तु ।  
चूर्णं कृत्वा नागवल्लीरसेन  
दद्यादेव मर्दयित्वेकयामम् ॥ २३२ ॥  
मध्याज्याभ्यां पूर्णचन्द्रो रसेन्द्रः  
पुष्टिं वीर्यं दीपनञ्चैव कुर्यात् ।  
प्रायो योज्यः पित्तरोगे ग्रहण्य-  
मशोरोगे पित्तजे शूलयुक्तः ॥ २३३ ॥  
स्त्रीणां रोगे शास्त्रम्लीनीरयुक्तो  
शैलेय वा शर्करातुल्यमागम् ।  
शुद्धं गन्धं वाजिगन्धाञ्च यष्टीं  
पक्त्वा दुग्धे तच्च कादर्यं ददीत ॥ २३४ ॥  
एषञ्चाऽऽज्य पाचयित्वा प्रद्ध्या-  
द्यद्वा यष्टी मागधी चाऽभगन्धा ।  
मध्याज्याभ्यां शास्त्रम्लीसत्त्वमुक्ताः  
शम्बूकै र्वा भर्जितैराज्यमिश्रैः ॥ २३५ ॥

र दी, र चि, र सु, ध, यो म, रसायनस, र क, र  
र, र र स, र च, नि र, वै चि, र का, वाजीकरणे ।

**भाषा—**शुद्ध पारा और गन्धकफी नीलवर्णकज्जली, अस  
गन्ध और गिलोय समभाग लेकर चूर्णकर मुलहठीके बाथसे  
१ रोज मर्दनकर सख्खा, मोती और मण्डूरकी भस्म, प्रत्येक  
पारकी बराबर डालकर मुईकोइलाके रससे एकदिन मर्दनकर  
गोला बनाय भूधरयन्त्रमें पुटेदेव । स्वातन्त्र्यीतल होनेपर निका-  
लकर चूर्णकर पानके रससे एकरोज मर्दनकर भूधरयन्त्रमें पक्वाने  
फिर एक पहर मधु और धीमें मर्दनकर १ मासेसे २ मासेतककी  
मात्रा देनेसे यह पुष्टि और वीर्यको बढाताहै अमिको दीप्त  
करताहै । पित्तके रोग, ग्रहणी, पित्तज बवासीर इन सबको नष्ट  
करताहै । प्रायः पित्तप्रधान रोगमें एलुआ ( मुसल्लर ) के  
साथ देना । स्त्रीरोगोंमें सेमलकी छालने रसके साथ अथवा  
पापणभेद और शक्कर समभागसे साथ देना । इस आदमियोंको  
यह रस देनेके बाद शुद्ध गन्धक, असगन्ध, मुलहठी ये आधे  
आधे तोले दूधमें पकाकर पिलाना अथवा इनमें धी पकाकर  
पिलाना अथवा मुलहठी, पीपल, ऊतगन्ध समभागका चूर्ण १  
तोला मधु और धीके साथ ऊमरसे चालना । अथवा सेमलका  
मुसल, गिलोयसल और मोती ३ माश दूधके साथ देना  
अथवा पोंधेके कीड़ेको धीमें मूनकर धी सहित खिलाना ॥ २१७ ॥

### २१८ पूर्णचन्द्रोरसः ( चतुर्थः )

हैमी भूतिः सूतमूल्या समाना  
तद्वद्वाला गन्धकं मौक्तिकञ्च ।  
घसैकं तं शृङ्खेचराऽम्रितौयै-  
मर्धःशोष्यो वल्लभसूत्रज्ञां प्रवेष्ट्य ॥ २३६ ॥



भाण्डके सलवणके शिपेच त-  
द्रोमयेन परिवेष्ट्य भाजनम् ।

शोपयेच्च पुटयेत्तृणाऽग्निना

पूर्णचन्द्र इति जायते रसः ॥ ९३७ ॥

यद्भाणं जयति प्रसदा चपलाक्षौद्राऽन्वितः शलनुतः,  
सामुद्रेण ससर्पिषा ससितया धात्र्याऽल्लपित्वाऽपहः।  
कुण्डल्यभ्युद्युतो जयत्यपि महातापश्च पित्रोर्द्वयं,  
शालमल्पभ्युद्युद्गुह्यचिकामुसहितः पाण्डुं सितार्संयुतः॥  
पुष्टिष्टिवलवीर्यवर्धनो

जायतेऽखिलगदाऽपहारकः ।

खीगदापहरण शिशुरक्षा-

कारकः स्यगद्गजानुपानकैः ॥ ९३९ ॥

र, र हा, र प्र सु, र दी, र च, बाजीकरणे । रसचण्डा-  
शुरसप्रकाशमुपाकरणो विप मौक्तिकश्च न हस्यते कृत्त्याने नागो  
हरयते, भावनाया केवल चित्रणेन मर्दनम् ।

भाषा—सुवर्ण, पारा इली भस्मे, शुद्धवज्रनाग और  
गन्धक, मोतीभस्म सब समभाग लेकर घारेगन्धककी नीलवर्ण  
कजलीमें मिलाकर अदरक और चित्रमूलके रस अथवा जायसे  
१-१ दिन मर्दनकर गोला बनाय मुष्कार ४ वह कपडा लपे  
देकर ऊपरसे १-२ कपड़मिी करके धुव सुखाले फिर लवणके  
भीतर बन्दकर गोबरसे घर्दनके मुहको बन्दकरके सुखाले और  
निर्वात स्थानमें इतने घासकी अग्नि दे कि वह नमक गरम  
होकर कपडा जलजाय । स्वास्वीतील होनेपर निवालकर रस-  
छोड़े । इसमेंसे १ अथवा २ रत्तीकी मात्रा पीपल और मधुके  
साथ देनेसे यह यद्भाको दूर करताहै । सैन्धव, घी और शरके  
साथ देनेसे झुलको मिटाता है, आनलेके रससे अम्लपित्तको  
दूर करताहै । गिलोयके हिम अथवा जायके साथ देनेसे पित्त  
अग्नि घोर दाहको शान्त करताहै । सेमलकी छाल और  
गिलोयके जाटके साथ देनेसे पाण्डुको दूर करताहै । शक्करके  
साथ देनेसे पुष्टि, नेत्रज्योति, बल, वीर्य इनको बढ़ाताहै ।  
अरने २ अनुपानके साथ देनेसे स्त्री और बालकोंने रोगोंको  
दूर करताहै ॥ २१८ ॥

२१९ पूर्णचन्द्रोरसः ( पञ्चमः )

चपला पर्वटीयुक्ता जम्बीररसमर्दिता ।  
तयो द्विगुणमामिष्ठ्य शुक्तिचूर्णं विचक्षणैः ॥९४०॥  
कुन्कुटीपुटपाकेन तद्रसं बहुमात्रकम् ।  
प्रयोगो ज्वरनाशाय पूर्णचन्द्रैर्यमीरितः ॥ ९४१ ॥  
र क यो , ज्वराधिकारे ।

भाषा—पीपल और रसपर्वटी दोनों समभाग लेकर कजली  
बनाय जम्बीरीके रससे मर्दनकर दोनोंसे दूना मोतीकी पीपका  
चूना मिलाकर दारुल्लर गोला बनाय कुन्कुटीपुष्टे पाच  
नकर ३ रत्तीकी मात्रा उचितानुपानके साथ देनेसे यह ज्वरको  
दूरकरताहै ॥ २१९ ॥

२२० पूर्णाऽभ्रकरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धमभ्रकश्च मनःशिलाम् ।  
चूर्णितं चरुणद्रावै मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥ ९४२ ॥  
काचकूप्यां निवेद्याऽथ बालुकायन्त्रके पचेत् ।  
पड्यामान्ते समुद्धृत्य सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् ॥  
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं शीतपैत्यनिवारकम् ॥ ९४३ ॥  
वै चि, व रा , पित्तोमे ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक बरारलेकर नीलवर्णक  
लीकरले । फिर अभ्रभस्म और शुद्ध मैनसिल घाबर २  
मिलाकर बणके अन्नस्वरसे दोदिन मर्दनकर गोला बनाय  
आतकी शीशीमें रखकर बालुकायन्त्रमें रखे और ६ पहरकी  
अग्नि देकर स्वास्वीतील होनेपर निवालले । इसकी २ रत्तीकी  
मात्रा उचितानुपानके साथ देनेसे घीतपित्त निवृत्त  
होताहै ॥ २२० ॥

२२१ पूर्णप्रतिहरसः

सूतं गन्धकतालकं मणिशिलां शुल्यं मृतं द्विगुलं,  
भानैकं निखिलं समांशरसकं खरते यिमर्थाऽम्भसा ।  
निर्गुण्डीसुरसाम्भसाऽऽर्द्रकरसे द्रव्यं द्विगुञ्जोन्मितं,  
तारण्याऽखिलतापजे च विपमे जीर्णज्वरे धातुने ॥  
दोपे चैव हि सन्निपातबहुले सामे निरामे सति  
हन्वादे घटिकाऽर्द्धकेन सकलान् पूर्णप्रतिहो रसः ९४४  
रतायनसः, रससागर, ज्वराधिकारे । रससागरे घृष्ट-  
वसन्तमालतीति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, हरिताल, शिलाजीत अथवा  
मैनसिल, ताम्र और शिपरिकभस्म १-१ भाग लेकर सनकी  
बराबर शुद्ध खरारिया डालकर पानीसे धोदकर २-२ रत्तीकी  
गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे २-२ गोली निर्गुण्डी,  
गुलसी और अदरकके रसोंके साथ देनेसे तरुणज्वर, विषम,  
जीर्ण, धातुग, सन्निपात, साम और निराम ज्वर इन सबको यह  
नष्टकरताहै ॥ २२१ ॥

२२२ पूर्णन्दुरसः ( प्रथमः )

शालमल्युत्थे द्रव्ये मर्द्ये पक्षेकं शुद्धपारदम् ।  
यामद्वयं पचेच्चाऽपि वस्त्रे बद्धाऽथ मर्दयेत् ॥ ९४५ ॥  
दिनेकं शालमलीद्रावै मर्दयित्वा घटीकृतम् ।  
वेष्टयेन्नागवल्ल्याऽथ निक्षिपेत्काचभाजने ॥ ९४६ ॥  
भाजनं शात्मलीद्रावै. पूर्णं यामद्वयं पचेत् ।  
बालुकायन्त्रमध्यस्थ्य द्रवे जीर्णे समुद्धरेत् ॥ ९४७ ॥  
द्विगुञ्जं भक्षयेत्प्रातः नागवल्लीदलान्तरे ।  
मुसलीं ससितां क्षीरं पलेकं पाययेदनु ॥ ९४८ ॥  
रसः पूर्णन्दुनामाऽयं सम्प्रग्वीर्यको भवेत् ।  
कामिनीनां सहस्रैकं नर कामयते ध्रुवम् ॥ ९४९ ॥  
यो र, व यो त, र म, च, र की, रतायनस, र र,  
वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्धपारको सेमलकीछालके पानीसे १५ दिन तक मर्दनकर गोली बनाय बखमें बाधकर २ पहर सेमलकी छालके-रसमें दोलायन्त्रसे स्वेदनकरे । फिर सेमलके रससे मर्दनकर गोलीबनाय पानमें लपेटकर आतशी शीशमें रखकर सेमलछा-रस भरदेवे और बाळकायन्त्रमें रखकर दोपहत्तर पकावे, द्रव-जीर्ण होनेपर निकालले । इसमेंसे २ रत्ती पानके रसके साथ देकर मुशली, शकर और दूध १ पल ऊपरसे पिलावे । इसके सेवनसे वीर्य स्थिर होताहै और बहुतसी स्त्रियोंके साथ रमण करसकाहै ॥ २२२ ॥

### २२३ पूर्णन्दुरसः (द्वितीयः)

क्षारैश्च लघुणै र्वहिराजिकाभ्याञ्च काजिकम् ।  
दत्त्वा दत्त्वा दिनं सम्यक् पारदं मर्दयेत्ततः ॥ २५० ॥  
क्षालयेत्काजिकैरेव मर्दयेत्कटुकैरपि ।  
क्षालयेत् श्लक्ष्णसम्पिष्टराजिकाविपहिङ्गुजाम् ॥ २५१ ॥  
मुपां कृत्या तदन्तःस्थं सूतं तं चक्षुषेष्टितम् ।  
स्वेदयेत्काजिके दोलायन्त्रे तं क्षालयेत्पुनः ॥ २५२ ॥  
शुद्धाऽऽनुमार्गेण शिषादिकृतपूजनः ।  
अङ्घ्रिणा तारपत्रेण रसपिष्टिं विधाय च ॥ २५३ ॥  
तां पिष्टिं स्वेदयेद्भागमै र्वलपेन वह्निना ।  
ततस्तां स्वेदयेदेतै दोलायन्त्रगतां पुनः ॥ २५४ ॥  
गुह्वरीबुधशम्बूकच्छागरकैश्च गोशूरे ।  
रम्भाफलवरीहस्तिपिपलीकोकिलाक्षकैः ॥ २५५ ॥  
धत्तुरपत्रमूलैः कायैः खापसवकैः ।  
अहिफेनजपानीरैः कायैरभिसमुद्भवैः ॥ २५६ ॥  
जपामार्गद्वयकायै र्वांठ्यालकभैरपि ।  
गोक्षूर्पातिलपर्णी च निर्गुण्डी कारुमाचिका ॥ २५७ ॥  
राजिका छिकिका गुञ्जा खुरासानी तदुद्भवैः ।  
अम्बाऽऽरिभृङ्गमण्डूकीजयन्तीमुनिवासकैः ॥ २५८ ॥  
नागाजुनीकासमर्दब्राह्मीतुलसिकारसैः ।  
दशमूलभैः कायैरकमूलदलोद्भवैः ॥ २५९ ॥  
पञ्चकौलभैः कायैस्तथा ज्योतिष्मतीभैः ।  
अर्कपुष्पीशहपुष्पीधातकीमाङ्गिकोद्भवैः ॥ २६० ॥  
मातुलोद्भवतैलेन मर्दनं सप्तवासरात् ।  
दडेन वाससा गोलं बद्धा सम्यङ्दयेद् दृढम् ॥ २६१ ॥  
गतस्नेहं विमुच्याऽथ पूर्ववत्स्वेदनं चरेत् ।  
पुरन्दरभैः पुण्यैः सोपणै र्जातिजातकैः ॥ २६२ ॥  
चातुर्जातै र्जातिपत्रैरकारकरजैरपि ।  
वानरीशर्करामावैः पूर्णन्दुः स्याद्रसोत्तमः ॥ २६३ ॥  
कार्पासमज्जया सेव्या बहोऽस्य सितया सह ।  
यस्य सन्ति गृहे लक्षं पीनोन्मत्तपयोधराः ॥ २६४ ॥  
रसायनं, र र दी., र क, बाजीकरणे ।

भाषा—क्षार, लवण, चित्रक, राई और काज्री डालकर पारको मर्दनकर बाज्रीसे ढोकर साफ करले फिर त्रिकटुसे

मर्दनकर घोडाले । इसके बाद खुर पारीक पिमीहुईराई, बड नाग और हिंगरी मूषामें रखकर बत्रसे वेष्टित करके काजिकपूर्ण दोलायन्त्रमें ४ पहर स्वेदनकर चाफकरले फिर सम्प्रदाय विधिसे शिनादितोंका पूजनकर पारसे चतुर्थांश चादीके बर्क डालकर पिष्टी बनाले फिर इस पिष्टीको केलेकेन्दमें रखकर बहुतमन्द अग्निसे स्वेदन करे अर्थात् बहुत थोड़ी अग्नि देवे जिसमें कि केलेका वन्द भुनजाय पर जले नहीं । फिर गिलोय, दूध, सखलेके कीडोंका मास और बकरेका रक्त, गोखरू, केलेका फल, शतावरी, गजपीपल, तालमर्याना, धतूरेके पत्ते और जड़, पोस्त, अफीम, माग, चित्रक, दोनों अपामार्ग, खोटेटी, गोकर्ण, हुरहुरके पत्ते, निर्गुण्डी, मकोय, राई, नर्कछिकनी, सफेदगुञ्जा, खुरासानी अजवाइन, कनेर, भगारा, ब्राह्मी, जैत, अगन्त्य, अड्डा, छोटी दूधी, कसौदी, ब्राह्मी, तुलसी, दशमूल, आकरी जड़ और पत्ते, पञ्चकोल ( पीपल, पिपलामूल, बन्ध, चित्रक और सोंठ ), मालकागनी, अर्कपुष्पी, शङ्खपुष्पी, घावई, भार्गवी, इनके यथासम्मान अन्नस्वरस अथवा कापोंसे दोलायन्त्रमें क्रमसे १-१ गेज स्वेदनकर धतूरेके बीजोंके तैलमें ७ रोज लगातार मर्दनकरे फिर ४ तह कड़में उठाकर खूबनोरसे दवाकर तैल निकाल दे और साफकरले । इसके बाद सफेद अर्जुन ( चारलो ) कोरइयाके फूल, मरिच, जायफल, तज, पत्रज, इलायची, जाबिनी, अकलफरा, कॅनाच, शकर, मानकन्द अथवा उड़द इनके १६ गुने वस्त्रमें उस गोलेको बन्दकर मूषारयन्त्रमें स्वेदन करे । यह पूर्णन्दुरस तैयार हुआ । इसमेंसे ३-३ रत्तीकी मात्रा ३ मास कपासकी मज्जाके साथ सेवन करनेसे बहुतसी स्त्रियोंमें सन्तुष्ट कर सकाहै । तत्पदोगोचिताऽनुपानके साथ देनेसे यह तमाम रोगोंको दूर करताहै ॥ २२३ ॥

### २२४ पूर्णन्दुरसः (तृतीयः)

शुद्धसूतत्रयो भागा भागैकं ताम्रचूर्णकम् ।  
कृत्वा पिष्टिं निरुद्ध्याऽथ रम्भाकन्दोदरे पुनः ॥ २६५ ॥  
मृष्टिस्तं शोषितं पक्त्वा दिनैकं करिष्याऽग्निना ।  
पथं सप्तदिनं पक्त्वा कन्दैकन्दे दिनंदिनम् ॥ २६६ ॥  
उद्धृत्य बन्धयेद्वले दृढे चैव घृतगुणे ।  
क्षुद्रशम्बूकमांसाकं छागरक्तगतं पचेत् ॥ २६७ ॥  
दोलायन्त्रे त्र्यहं यावद्द्वयं रक्तं पुनःपुनः ।  
गुह्वर्या गजपिपल्या कदल्या कोकिलाक्षकैः ॥ २६८ ॥  
गोशूरीवानरीमूलजातीमूलभैरुद्रैः ।  
पाचयेत्तत्तत्पाथैर्वा दोलायन्त्रे दिनत्रयम् ॥ २६९ ॥  
ततः क्षीरे सितायुके तद्वत्पक्त्वा दिनावधि ।  
उद्धृत्य मुशलीकाथे र्मथं यामचतुष्टयम् ॥ २७० ॥  
रसः पूर्णन्दुनामाऽयं खादेन्मांससितायुतम् ।  
गोशूरो वानरीवीजं गुह्वरी गजपिपली ॥ २७१ ॥  
कोकिलाक्षस्य वीजानि मज्जा कार्पासवीजजा ।  
शतावरी च रम्भायाः फलं सर्वं समं भवेत् ॥ २७२ ॥

सर्वतुल्या सिता योज्या मधुना लोदितं लिहेत् ।

पलार्द्धमनुपान स्यात्ततः पेयं गवां पयः ॥

कामिनीनां सहस्रैकं रमते कामदेववत् ॥ ९७३ ॥

र. ख. , भै सा , यो म , र ति , रसायने बाजीरूपेण ।

टि०—अन्यदन्त्येयु तारे पिष्टि संपादिता, रसायनखण्डे तु तारस्थाने तात्र दृश्यते तलेरसप्रमादात् स्वाजानपूर्वकं वा स्यादिति न निश्चीयते । परन्तु ताभ्रेण संपादितं भ्रान्तिभ्रान्त्यादिपरं यविष्यति, अवलोक्यैतं संपादनीयमिति युक्तं प्रतिभाति । र मि अस्मिन् विच्छिन्नं पाठः ।

भाषा—शुद्धपारेके तीनभागोंमें १ भाग शुद्धताम्रका बारीक चूर्ण डालकर पिष्टी बनाकर केलेके बन्दके रखकर उगीची डाटसे बन्दकर २-३ कण्टिमिठी करके मुखात्ते और एकदिन करीबकी अग्निमें पकावे । इसपर ७ दिन नये नये बन्दमें रखकर स्वेदनकरे । फिर ४ तह मोटेवस्त्रमें बांधकर पोटीकी बनाव पोंचैना माम मिलेहुए बचरेके रक्तमें दोलायन्त्रसे ३ रोज तक पकावे, रक्त धारम्भार देताजाय । इसके बाद गिलोय, गजपीपल, केला, तालमखाना, गोखरू, केवाचकी जड़, चने लोकी जड़, शङ्करडालाडुआ दूध इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवाक्वार्थोंसे १-१ रोज स्वेदनकर मुयलीके बवायसे १ रोज मर्दन करनेसे पूर्णैन्दुरस तैयार होगा । इसमेंसे १ या २ रत्तीकी मात्रा मांस और शकरके साथ खाकर गोखरू, केवाचके बीज, गिलोय, गजपीपल, तालमखाना, कपासकी मन्था, शतावर, पत्रा केला सब समभागलेकर सबकी बराबर शकर मिलाकर मधुसे चाटम बनाकर रखडोहे । इसमेंसे २-२ तोले खाकर ऊपरसे गायका दूधपीवे । इसके सेवनसे हजारों स्त्रियोंको कामदेवकी तरह सन्तुष्ट करसकौहे । टि०—इसकी पिष्टी बना नेमें रसायनखण्डने यद्यपि तात्र दियाहै परन्तु और प्रन्थोंमें तात्रकी जगह तार (बादी) मिलताहै । इसलिये तारके स्थानमें तात्र होना लेखक प्रमादसेभी होसकौहे । कदाचित् ज्ञानपूर्वक लिया होतो तबैका चूर्ण नहीं किन्तु तात्रकी श्वेतभस्मका प्रयोग करना ॥ ९२४ ॥

२२५ पूर्णैन्दुरसः ( चतुर्थः )

पिष्टो रसः सहैमाऽङ्गिः स्वेचो रम्भाऽङ्गिजै रसैः ।

सपिष्टं वल्लदोलायां यन्त्रे पाच्यं पृथग्निदम् ॥ ९७४ ॥

केतकीशालमलीदुग्धमशुलीशौद्रजै द्वयैः ।

धानरीगोश्रुरच्छिन्नाशिवाकदलिधात्रिजे ॥ ९७५ ॥

पूर्णैन्दुः स्यात्त्रिगुञ्जोऽयं कुर्यात्स्वास्थ्यन्तु वल्लुगुरु ।

पुष्टिदस्तुष्टिदः कामवृद्धिदः कान्तिवर्द्धनः ॥ ९७६ ॥

सेच्य तालीं वरीं कच्छू वाजिगन्धां पुनर्नवाम् ।

श्वदं प्रां शर्करां रात्रौ शृतक्षीरेण पाययेत् ॥ ९७७ ॥

ना वि , रसायने ।

भाषा—शुद्धपारेके शुद्धवर्णका चतुर्धाश चूर्ण या चर्क मिलाकर पिष्टी बनाकर केलेके बन्दके रक्तमें स्वेदनकरे । इसके बाद केवड़ा, सेमल, गोदुध, सुसली, मधु केवाच, गोखरू, गिलोय, हरे, केला, आवला इनके रसोंमें १-१ रोज स्वेदन

करनेसे यह रस तैयारहोगा । इसमेंसे ३-३ रत्ती खस, मुयली, शतावर, केवाच, असगन्ध, पुनर्नवा, गोखरू, शकर इनको डालकर पकाए हुए दूधके साथ देनेसे पुष्टि, हर्ष, काम और कान्ति बढ़ेहै ॥ २२५ ॥

२२६ प्रचण्डखेचरी गुटिका

चूर्णमभ्युत्तरस्यैव गुहासुते समं क्षिपेत् ।

त्रिदिनं मातुलुङ्गाऽस्लेस्तत्सर्वं मर्दयेद् दृढम् ॥ ९७८ ॥

सुततुर्यं मृतं वज्रं तस्मिन् क्षिप्त्वाऽथ मर्दयेत् ।

तप्तखले दिनं चाऽस्लेस्तद्गोलं चाऽन्धितं पुटेत् ॥ ९७९ ॥

दिनैकं भूधरे यन्त्रे भागेकं पूर्वपारदम् ।

क्षिप्त्वा तस्मिन् दृढं मर्धं मातुलुङ्गद्वये दिनम् ॥ ९८० ॥

रुद्धाऽथ पूर्ववत्पत्रया पुनर्दयश्च पारदः ।

मर्धं पाच्यं यथापूर्वमेव कुर्वाण सप्तधा ॥ ९८१ ॥

रसं पुनःपुनर्दत्ता स्यादेव भस्मसूतकाः ।

योजयेत्सर्वयोगेषु जराभ्युत्तरो भवेत् ॥ ९८२ ॥

भागैकं नागचूर्णस्य भागेकं पूर्वभस्मनः ।

दुतसूतस्य भागेकं खोदं कुर्वाण पूर्ववत् ॥ ९८३ ॥

तद्वज्राम्य गते नागे द्रावित जायेत्पुनः ।

पूर्ववल्लोहरत्नान्तं जीर्णं वज्रा स्थिता मुखे ॥ ९८४ ॥

प्रचण्डखेचरी नाम्नी गुटिका ये गतिप्रदा ।

पूर्ववल्लभते वीर्यं कलमत्यन्तदुर्लभम् ॥

निर्गुण्डीमूलचूर्णन्तु कर्प तक्षैः पिबेदनु ॥ ९८५ ॥

र. य. , रसायने ।

भाषा—सुसुक्षित पारेके पोंडेके छुत्का चूर्ण समभाग डालकर बिजोरेके रससे तीनरोज मर्दनकरके चौथे रोज पारेके बराबर हीरेकी भस्म तप्तखलमें डालकर बिजोरेके रससे १ रोज मर्दनकर गोला बनाय अन्धमूपामें बन्दकर १ दिन भूधरयन्त्रमें पकाकर एकभाग सुसुक्षित पारेका देकर एकदिन पूर्ववत् मर्दनकर गोला बनाकर एकदिन भूधरयन्त्रमें पकावे । ऐसे ७ बार करनेसे यह प्रचण्डखेचरी गुटिका तैयार होगी । इसमेंसे १-१ रत्ती तप्तद्रोहहटाऽ गुजानके साथदेनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकर जरा और मृत्युको हटातीहै । शुद्ध तीसेका चूर्ण शुद्ध दुतगरा और यह भस्म सब समभाग लेकर अन्धमूपामें रखकर धमन करनेसे खोट तैयार होगा । फिर इसकी धमनकरके इसमेंसे नागको जलादेना । इसके बाद इसे गलाकर इसमें यथासम्भव लोह और रत्नोंका जारणकर गोली बनाकर शुद्धमें रखनेसे आकाश गामी होताहै और अत्यन्त दुर्लभ जो वीर्यवृद्ध्यादि सुगुणें उनको प्राप्तहोताहै । गोलीमें एक कण्टके बाद मुहमेंसे निकाल कर निर्गुण्डीकी जडका एकतोला चूर्ण छांके साथ पीवे ॥ २२६ ॥

२२७ प्रचण्डभैरवोरसः ( प्रथम )

कासीस गन्धकं सूत द्रवदं मधुपुष्पकम् ।

गुग्गुची शालमली धान्य भूमिम्बोऽमरतुम्बुरू ॥ ९८६ ॥



## २३२ प्रतापमार्तण्डरसः ( द्वितीयः )

रसहिङ्गुलनेपालमर्फक्षीरं समानकम् ।  
दन्तित्वचा च संयुक्तं याममात्रं तु मर्दयेत् ॥ १९९ ॥  
गुडामात्रांस्तु घटकात् गुडेन सह सेधयेत् ।  
पथ्यं दध्योदनं देयं चतुर्यामज्वरं हरेत् ॥  
रसः प्रतापमार्तण्डः सर्वज्वरनिवारणः ॥ १००० ॥  
र क यो, ज्वराधिकारे ।

भाषा—पारा, शिंगरिफ और ताप्रमन्य, आजडा दूध, दन्ती, दालचीनी ये सब समभाग लेकर एक पहर आकडे दूधमें मर्दनकर १-१ रतीकी गोलियां बनाकर रखडोडे । इनमेंसे १-१ गोली गुड़के साथ देनेसे ४ पहरके ज्वरको नष्ट करताहै, पथ्यमें दहीभात देना ॥ २३२ ॥

## २३३ प्रतापमार्तण्डरसः ( तृतीयः )

निपं टङ्गुणनेपालं हिङ्गुलं प्रमथयितुम् ।  
जम्बीरफलजत्रायै मर्दयेदामयुग्मकम् ॥ १००१ ॥  
मरिचप्रमाणरदिका शृङ्गायानुक्तास्तु कारयेत् ।  
रसः प्रतापमार्तण्डः सर्वज्वरनिवारणः ॥ १००२ ॥  
र क यो, र सं, भै र, ना वि, र सु, रससारसङ्गद, वा, रसायन, ज्वराधिकारे । ना वि (मार्तण्डोदयभास्करः), ना. विलासे टङ्गुणन्याने हिङ्गुल हिङ्गुलन्याने टङ्गुण रखते । अनु पाने गुडाभिल्लामि सह इति विशेष ।

भाषा—शुद्ध बछनाग, सुहागा, जमालगोटा और शिंगरिफ क्रमशः भागमें लेकर बारीक चूर्ण कर जम्बीरीके रससे २ पहर घोटकर मरिच प्रमाण गोलियें बनाकर छायामें सुखा कर रखडोडे । इनमेंसे १-१ गोली रोगाक्ष्मोचित अनुपानके साथ पानेने तमाम ज्वर दूर होतेहैं ॥ २३३ ॥

## २३४ प्रतापमार्तण्डरसः ( चतुर्थः )

रसहिङ्गुलजेपालं पृथ्वीदन्त्यमुमर्दितम् ।  
दिनाऽर्धेन उग्र हन्याहुडेन सितया सह ॥  
चतुर्वर्णनिर्दं खादेत्सर्वज्वरप्रशान्तये ॥ १००३ ॥  
व रा, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, शिंगरिफ और जमालगोटा समभाग लेकर कालीजीरी और दन्तीके स्वरस अथवा कापसे दोपहर मर्दनकर डेढ १॥ माघेकी गोलियां बनाकर रखडोडे । इनमेंसे १-१ गोली गुड़ अथवा शक्करके साथ लेनेसे समस्तज्वर नष्ट होतेहैं ॥ २३४ ॥

## २३५ प्रतापलङ्केश्वररसः ( प्रथमः )

अपामार्गस्य मूलानां चूर्णं चित्रकमूलजैः ।  
वलकलैर्मर्दयित्वाऽथ रस निष्पीड्य रक्षयेत् ॥ १००४ ॥  
तेन सूतसमं गन्धमम्रकं दरद विपम् ।  
टङ्गुणं तालकञ्चैव मर्दयेद्विनसतकम् ॥ १००५ ॥  
त्रिदिनं मुशलीतोयै मांघयेद्धर्मरक्षितम् ।  
मूपाञ्च गोस्तनाकारामापूर्वं परिरक्षितम् ॥ १००६ ॥

सप्तमि मृत्तिकावस्त्रे वैष्टयित्वा पुटेद्बुधु ।  
रसतुल्यं लोहवङ्गं रजतं ताम्रक तथा ॥ १००७ ॥  
मधूकसारजलदौ रेणुका गुग्गुलुः शिला ।  
चाम्पेयश्च समांशं स्याद्भागार्थं शोधितं विपम् ॥ १००८ ॥  
तत्सर्वं मर्दयेत्तल्ले भावयेद्विपनीरतः ।  
आतपे सप्तधा तीप्ति मर्दयेद्वटिकाद्वयम् ॥ १००९ ॥  
कटुत्रयकषायेण कनकस्य रसेन च ।

समुद्रफलनीरेण विजयावारिणा तथा ॥ १०१० ॥  
चित्रकस्य कषायेण ज्वालामुख्या रसेन च ।  
प्रत्येकं सप्तधा भाव्यं तद्वत्पिस्त्रैश्च पञ्चभिः ॥ १०११ ॥  
सर्वस्य समभागेन विपेण परिधूपयेत् ।  
गुर्जकं घट्टिचूर्णेन शृङ्गयेत्तरसेन च ॥ १०१२ ॥  
द्वीत रोगिणं तीममौदरविस्मृतिशान्तये ।  
क्षुरेण तालुन्याहत्याऽऽर्द्रकनीरेण मर्दयेत् ॥ १०१३ ॥  
नोदाज्यन्ते यदा दन्तास्तदा कुर्यादमुं विधिम् ।  
सेचयेन्मन्त्रविद्विश्च धाराशुम्भशते नरम् ॥ १०१४ ॥  
भोजनेच्छा यदा तस्य जायते रोगिणः परम् ।  
दध्योदनं सितायुक्तं दद्यात्तक्तं सजीरकम् ॥ १०१५ ॥  
पाने पानं सितोजातं यदीच्छेत्सप्तदन्तिकम् ।  
पथं हृत्तेन शान्तिः स्यात्तापस्य रसजस्य च ॥ १०१६ ॥  
सचन्द्रचन्द्ररसाऽऽलेपनं कुव शीतलम् ।  
तुलिकामल्लिकाजातौ पुष्पागवकुलाऽऽघृताम् ॥ १०१७ ॥  
विधाय शय्यां तत्रस्थं लेपयेच्चन्दनं मुहुः ।  
हायभावविलासोक्तिकटाक्षैश्चाऽप्यलोकनैः ॥ १०१८ ॥  
पीनान्तुङ्गकुचोत्पीडैः कामिनौ परिरम्भयैः ।  
रम्यवीणानिनादायै गायनैः धवणाऽऽमृतैः ॥ १०१९ ॥  
पुण्यश्लोककषायेश्च सन्तापहरणं कुर ।  
पभिः प्रकरेस्तापस्य जायते शमनं परम् ॥ १०२० ॥  
वर्जयेन्मैथुनं तावद्यावन्न बलवान्भवेत् ।  
दयात्सर्वेषु धातेषु सिद्धगुग्गुलुवह्निभिः ॥ १०२१ ॥  
दयात्कणाभ्राक्षिकाभ्यां कामलाक्षयपाण्डुषु ।  
तत्तद्रोगाऽनुपानेन सर्वरोगेषु योजयेत् ॥  
अयं प्रतापलङ्केशः सखिपातनिवृत्तनः ॥ १०२२ ॥  
रसायन, र म, र श, र क, र का, भै र, यो म, र सु, सखिपाते ज्वरे च ।

भाषा—अपामार्गकी जड़के चूर्णको चित्रकमूलके स्वरससे मर्दनकर क्लक बनाले, फिर इसकी बराबर शुद्ध पारा डालकर ४ पहर मर्दनकर पारेकी बराबर शुद्ध गन्धक, अभ्रकभस्म, शुद्ध शिंगरिफ बछनाग, सुहागा और हरिताल डालकर ७ रोज मर्दनकर फिर ३ रोज मुसलीके स्वरससे धूपमें मर्दनकरे । इसके बाद गोस्तनाकार मूपामें रखकर ४ कपड़मिठी देकर सुखानर क्युपुकी आचढ़े । स्वाहशीतल हानेपर निकालकर लोह, बज्र, रजत और ताम्र, महुएकावार, नागरमोहा, रेणुका, शृगल, मैनसिल, चम्पाके फूल, ये प्रत्येक पारेकी बराबर और

पासे आधा शुद्ध बलनाग लेकर बलनाग के स्वरस अथवा काढ़ेकी सात भावनाएं देकर बड़े धूपमें २ घण्टे तक रखे फिर त्रिभुज, धतूरा, समुद्रफल, भांग, चित्रकमूल, ज्वालामुखी इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा कवाथोसे ७-७ भावनाएं देकर पञ्चपित्तोंसे १-१ भावना देकर सब दवाके बराबरके बलनागकी धूनी देकर रखडोढ़े । इसमेंसे १-१ रत्तीकी आधा चित्रकमूलके चूर्ण अथवा अदरकके रसके साथ देनेमें तीक्ष्णज्वा-नाश और विस्मृतिसे नष्टकरताहै । खानेसे दवा काम न करे तो तालमें छुरेसे पाछ देकर अदरकके रसमें दवाको मिला-कर उसजगह मर्दनकरे तो होश आजायगा । यदि इसपर भी होश न आवे और दांत न खुलें तो मन्त्रशास्त्र कुशल आदमी पानीके १०० चढ़ोंकी मत्थे पर धारादे । होश आने पर ऊपर रोगीको तीन भूय लगी हो तो दूरी, मात, शस्त्र अथवा जीरा मिलीहुई छाछदेवे । प्यास अधिक हो तो शकरका छवत दे, अधिक कहेनेसे क्या जो वह मागे सो देवे । अगर इसपरह करने परभी प्वर शान्त न होतो कपूरके साथ चन्दनकी पिसकर टंटा लेपकरे । रुई, भोगरा, चमेली पुत्राग और मोलश्रीके पुष्पोंमें शय्या बनाकर उसपर वैद्यलजर बाम्ब्यार चन्दनका लेप करे । हाथमावके साथ कटाक्ष युक्त अवलोकन करती हुई नवयुवतियोंका आलिङ्गन करावे । बीणा वगैरहकी मधुर आवाज और ध्वनप्रिय गायन, परमेश्वरकी कथा इत्यादि प्रकारोंसे तापका शीघ्र शमन हो जाताहै । मैथुन तबतक वर्जन करे जब तक कि बलवान न हो । वातविकारोंमें वातहर योगराजादि गुग्गुल और चित्रकमूलके साथ देवे । कामला, क्षय और पाण्डुमें पीपल और शहदेसे दे । तप्तशोणहराऽनुगानके साथ देनेसे यह समस्त रोगोंको दूर करताहै और सन्निपातकी खास औषध है ॥ २३५ ॥

### २३६ प्रतापलङ्केश्वररसः ( द्वितीयः )

प्रत्येक रसगन्धयो द्विपलयोः कृत्वा शुभां कज्जलीं, तस्यां श्लेच्छलुलायलोचनमनोधात्रीप्रकुञ्जधूपम् । पथ्याया वदप्रतिकं त्रिकटु पट्टशाणं घृत्वा धर्मिणी, पैलाम्मोघरपत्रकद्विदरकिल्लकाऽध्वगन्धाह्वयम् ॥ २३६ ॥ चिन्वेतत्समधूकसारमसिलं कर्पोनिर्मतं न्यस्य ततः, प्रोम्नर्थाऽर्द्धकरञ्जकाऽमृतपुतं सागस्तिकन्धूपणेः । भृषाध्रीविजयासरित्पिकले ज्वालामुखीभृङ्गजैः, प्रत्येकं विद्ध्योत निश्चलमतिः सप्तप्रमाद्वाचनाः ॥ २३७ ॥

पित्तेरयो पञ्च विषाय पञ्चभिः

करञ्जमात्राऽमृतधूपनं ततः ।

दत्त्वाऽऽर्द्रकस्य स्वरसेन तन्दुलाऽऽ-

कृतिं विद्ध्यहृष्टिकां मिषगरः ॥ २३८ ॥

देयेका सन्निपातेप्रतिहतकरणे मोहनेप्रसुप्तयोः, स्यादुल्मे साऽजमोदाप रनविकृतिपुद्गूपणेन ग्रहण्याया दातया जीरकेण द्विपुत्रगन्धुनां प्राणसंरक्षणाय, काशण्याऽसोऽश्विरेतममृतसरसं धैर्यमात्रोऽभ्यधत्वा ॥

र. र. स, र., र. को., र. सु, र. शं., र. वा., र. मृ. ज्वराऽ-धिकारः । र. को. प्राणेश्वर इति नाम । र. का काशण्याम्भोधि-रिति नाम ।

टि०—प्रोम्नर्थाऽर्द्धकरञ्जकाऽमृतपुतमिषय ग्रन्थकारस्याऽभिप्रायमज्ञाय नावाप्यमोहस्थानानि घटितानि, द्वितीयानिभक्तिकनया न भावना-स्थिति भवति । रमराजशब्दे प्रमाणे व्यत्यास इतोऽस्ति तदनुमोर्ण रमे न निषादनीय इति विशेषप्रवृत्ता ।

भाषा—दो २ पल शुद्ध पोर और गन्धककी नीलवर्ण बज्जलीकर ताब्रमरुम, शुद्ध गुग्गुल और मेनसिल ३-३ पल, हर्द, सोंठ, मिर्च, पीपल, वच, अनन्तमूल अथवा रेणुका, विडर, नागरमोथा, पत्रज, नागेश्वर, कमल, असगन्ध ये प्रत्येक १॥ कर्प मधुएकाहीर १ कर्प लेकर बारीक चूर्णकर एक दो पहर शुक्लखरकर सप्त योगसे आधा करञ्ज और शुद्ध बलनाग मिलाकर अगस्त्य, सोंठ, मिर्च, पीपल, भुईआंवाला, भांग, समुद्रफल, ज्वालामुखी ( अमिश्रिता ) और भंगरेके यथा सम्भव स्वरस अथवा कवाथों से ७-७ भावनाएं देकर पीच-पित्तों ( मछली, भेंसा, सूजर, बररा और मोर इनके पित्तों ) की १-१ भावना देकर करञ्ज फलकी बराबर बलनागकी धूनी देकर अदरकके रससे घोटकर १-१ चावल भरकी गोलिएा बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली देनेमें घोर सन्निपात निवृत्त होताहै । शुल्बमें अजमोदके साथ, पात-विकारोंमें श्रृणुपणके साथ, ग्रन्थीमें जीरेके साथ देनेसे इन सबका नाश होताहै । हाथी, घोड़ा और मनुष्य वगैरहके प्राणोंकी इससे रक्षा होतीहै इसलिये इसका प्राणेश्वर नाम रक्खा गयाहै ॥ २३६ ॥

### २३७ प्रतापलङ्केश्वररसः ( तृतीयः )

विषादिकाग्रं रसगन्धद्वयं

सताम्रकुष्ठायसपिप्पलीरजः ।

विमर्दितं काञ्चनपनधारिणा

प्रतापलङ्केश्वररसञ्जको रसः ॥ २३७ ॥

र. र. स, र. र. को., र. क, वि. क, रमेन्द्रमं., कुष्ठाधिकारः ।

भाषा—शुद्ध शरा, गन्धक और सुहागा, ताब्रमरुम, कुष्ठ, लोहमम्भ, पीपल सब समभाग लेकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कमलीमें सबकोजें मिलाकर कनारके पत्तोंके रसमें २-२ रोज मर्दनकर १-१ मादोकी गोलिएा बनाकर रखडोढ़े । इन-मेंसे १-१ गोली मधुके साथ खानेसे विषादिककुष्ठ नष्ट होताहै ॥ २३७ ॥

### २३८ प्रतापलङ्केश्वररसः ( चतुर्थः )

पकेन्दुचन्द्राऽनिलवाधिकाप्रा-

फलैकमायैः क्रमशो विमिश्रम् ।

सृताऽम्रगन्धोपणलोहरा-

घन्योत्पलामसमं विषं सुपिष्टम् ॥ २३८ ॥

प्रसुतिचापाऽनिलदन्तवन्ध-

माद्रग्निना घोरसुसन्निपातान् ।

पुरामृताऽऽर्द्रत्रिफलायुतोऽयं  
गुदाऽङ्कुरान् वल्लमितो निहन्ति ॥ १०२९ ॥  
निजाऽनुपाने निजपथ्ययुक्तया  
सर्वाऽतिसारग्रहणीगदाश्च ।  
प्रतापलङ्केश्वरनामधेयः  
सूतः प्रयुक्तो गिरिराजपुत्र्या ॥ १०३० ॥

र ल, रसायनस, र स, र कौ, वै र, र को, र च, वृ  
यो त, व से, वै वि, यो स, यो म, वै चि, र, टो, चि  
र म, मै सा, र मु, पो र, र का, र षो, र क यो, र स  
पारिजात, सुतिकारोगे ।

दि०—अन मानात्रकाणं सङ्गहा सहेता लिखिता सन्ति परन्तु रस  
राजलक्ष्मीय सहेतो युक्तिको दृश्यतेऽत स पञ्चास्याभि स्थापित ।  
पन्थोत्पलेति स्थाने विश्वोत्पलेति पाठस्तु ग्रामादिक तयाकृते सङ्गहाया  
न्यूनतापत्ति गुणाऽपकर्षेति सुप्रतिभिर्वाचनीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, अन्नरुभस्म १ भा, शुद्ध  
गन्धक १ भा, मरिच ३ भा, लोहभस्म ४ भा, शङ्खभस्म  
८ भाग, जङ्गलीकण्ठोष्णी भस्म १६ भा, शुद्धवज्रनाग १ भाग  
लेकर सबको बारीक पीसकर पारे गन्धककी नीलवर्णकमलोमें  
मिलाकर २-३ रोज घोटकर रखण्डे । इसमेंसे २-३ रत्ती  
अदरकके रसकेसाध देनेसे प्रसुतिपात, धनुर्वात, दन्तवन्ध,  
घोरसनिपात इनको यह नष्टकरताहै । शुद्धपुगल, गिलोय, अद  
रक और निपलाके साथ देनेसे यह बवासीरको नष्टकरताहै ।  
अपने अपने अनुपान और पत्थरोंके सेवनके साथ लेनेसे समस्त  
अतिसार और ग्रहणी प्रवृत्ति रोग नष्टहोतेहै ॥ २३८ ॥

२३९ प्रतापलङ्केश्वररसः ( पञ्चमः )

आर्द्रौ प्रतापलङ्केश्वररसोऽयं निरूप्यते ।  
दशधा शुद्धियोगेन यातितं समुखीकृतम् ॥ १०३१ ॥  
जीर्णबीज कलांशिन पाहुण्याजीर्णगन्धकम् ।  
पल्लव्यं समादाय भानुदुग्धेन मर्दयेत् ॥ १०३२ ॥  
निर्विणं धज्जुग्धेन हृत्पर्णाक्षाधवारिणा ।  
वत्सनाभेन तत्पञ्चाज्यालामुख्या रसेन ॥ १०३३ ॥  
ग्रहंयहं मर्दयित्वा चैकैकेन यथाक्रमम् ।  
ततः सोमाऽनले घ्न्ये मर्दितं स्थापयेद्रसम् ॥ १०३४ ॥  
दत्त्वाऽथ सुदृढं लेपं बुल्ल्यामारोपयेद्बुधः ।  
जलपूर्णं ततः कृत्वा ह्यधस्ताज्ज्यालयेत्क्रमात् ॥ १०३५ ॥  
मृदुमप्योत्तमं घर्ष्य सप्तसप्तदिनावधि ।  
परुर्विशदिने पूर्णं यन्त्राहुत्तारयेद्रसम् ॥ १०३६ ॥  
भस्मीभूत रस कृत्वा शुद्ध तत्र बलि क्षिपेत् ।  
पदं च साम्येन लोहानि भस्मीभूतानि निःक्षिपेत् ॥ १०३७ ॥  
अघ्नसत्वं कान्तसत्वं भस्मीभूत निधोजयेत् ।  
कल्पयेद्भावनामानं रससाम्येन शुद्धिमान् ॥ १०३८ ॥  
मर्दयेत्सर्वमेकत्र काकमाचीरसेन ॥ १०३९ ॥  
खल्वेव दत्त्वा दिनेकान्तु कृष्णधत्तुर्बद्धवै ॥ १०३९ ॥

परण्डनीरै र्भूषानीरसैस्त्रिकटुकद्रवैः ।  
आर्द्रकस्य रसे ज्वालामुखीनीरै जयारसैः ॥ १०४० ॥  
भृङ्गीरसै वैजयन्तीरसैस्तिन्दलदारसैः ।  
अम्बुवेतसनीरेण जम्भीरोद्भववारिणा ॥ १०४१ ॥  
मण्डूकपर्णिकातोयै रसतुल्यै रसैः क्रमात् ।  
मर्दयित्वा तत्र दद्याच्छुद्धीविपमनुत्तमम् ॥ १०४२ ॥  
रसाच्च दशमं भागं हारिद्रं तदभाषतः ।  
तदभावे साकुकं स्यात्सर्वाऽभावेऽमृत क्षिपेत् ॥ १०४३ ॥  
मर्दयेत्सर्वमेकत्र विजयारसयोगतः ॥ १०४४ ॥  
दिनमेकं ततो देया मायना पित्तसम्भवा ॥ १०४५ ॥  
मायूरं मत्स्यजं पित्तं शौकरं छागसम्भवम् ।  
माहिषं रोहिणं कार्कं दिशामोतमर्जं ततः ॥ १०४५ ॥  
हारिणं ध्याधजज्ञैति पित्तान्येतानि निर्हरेत् ।  
सप्तसप्त प्रदातव्या मायनाः पित्तसम्भवाः ॥ १०४६ ॥  
तिक्तोऽभावे प्रदातव्यास्ततोऽन्युना न कारयेत् ।  
आर्द्रौ तु कृष्णसर्पस्य गरलेन च मायना ॥ १०४७ ॥  
घन्वनागस्य गरलै मांघयेदेकशरकम् ।  
पारायतस्य पित्तेन सर्वस्याऽन्ते विमर्दयेत् ॥ १०४८ ॥  
गृह्येत्वा सिद्धसूतं तमुर्ध्वभाण्डे विलेपयेत् ।  
अधोभाण्डे वत्सनाभं रसतुल्यं विमर्दयेत् ॥ १०४९ ॥  
निक्षिप्य सुदृढं क्षिप्या यत्र बुल्ल्यां निवेशयेत् ।  
मन्दबहिमधः कुर्यात्प्रहस्त्रयमादतः ॥ १०५० ॥  
एवं कृते रसः सिद्धो भवेत्येव न चाऽन्यथा ।  
योगिनीमैरस्यान् सिद्धाये क्षेत्रपालं गुरुस्तथा ॥ १०५१ ॥  
गन्धपुण्यादिनैवेद्यै र्बलिदाने यथोचितैः ।  
पूजायित्वा स्वर्णकुर्यां रसेन्द्रं स्थापयेद्बुधः ॥ १०५२ ॥  
महाप्रतापलङ्केशनामाऽयं रसभूपतिः ।  
सन्निपातं महाघोरं वण्डाऽऽलसकमेव च ॥ १०५३ ॥  
अपस्मारं धनुर्वातं कण्ठकुञ्जकमेव च ।  
क्षयादिकास्तथा रोगान् रोगयोगोक्तयुक्तिः ॥ १०५४ ॥  
रसेन्द्रो हरति व्याधौन्नरज्जुन्नरयाजिनाम् ।  
आर्द्रकस्य रसेनाऽथ सन्निपाते नियोजयेत् ॥ १०५५ ॥  
पित्तोत्तरे तथा देयः कर्पूरेण रसेश्वर ।  
श्लेष्मोत्तरे त्रिरुदना रक्तिकामानयोगतः ॥ १०५६ ॥  
सन्निपातं निहन्त्येव रसेन्द्रो नाऽत्रसशयः ।  
रसवीर्यविकृष्टयथमुदकं दालयेत्ततः ॥ १०५७ ॥  
यावद्देहे भवेत्कम्पः सर्वथा दुःसहस्त्वतः ।  
चन्दनं चाऽथ कर्पूरं द्वादशांशं विनिःक्षिपेत् ॥ १०५८ ॥  
इक्षवधं तथा देया द्वाक्षापर्याररिकाः ।  
तवपञ्च शर्करां चा योजयेद्दीर्घवृद्धये ॥ १०५९ ॥  
श्लेष्मोत्तरे सन्निपाते दुग्धमकं प्रयोजयेत् ।  
अन्यत्र दधिमकं स्यात्तत्पण्डशर्करया युतम् ॥ १०६० ॥  
दिनत्रयं प्रयत्नेन यथेष्टं भोजयेद्भिषक् ।  
रसवीर्यविघाताय कारवेह न योजयेत् ॥ १०६१ ॥

स्वर्णं रौप्यं रविस्तीक्ष्णं त्रपुसीसाऽऽश्रकान्तजम् ।  
 सत्यमित्यष्टलोहानि कथितानि रसाऽऽयमे ॥१०६२॥  
 एतेषां मारणं वक्ष्ये शिवचोदितवर्त्मना ।  
 जम्बीरवारिणा पिष्ट्वा रसभस्माऽथ पूजैः ॥१०६३॥  
 निम्बुकीवारिणा वाऽथ स्वर्णपत्राणि लेपयेत् ।  
 समभागेन सूतेन समुद्रं रचयेद् दृढम् ॥ १०६४ ॥  
 पुटित्वाऽऽरप्यजैश्छाणि भस्मीभूतं समाहरेत् ।  
 पुटेनैकेन भस्म स्यान्नाऽथ कार्या विचारणा १०६५ ॥  
 एवं सर्वाणि लोहानि भस्मीकुर्याद्विचक्षणः ।  
 रसभस्म यदा न स्याद्धैममाशिर्योगतः ॥ १०६६ ॥  
 पूर्वोक्तैश्च रसैः पिष्ट्वा लोहपत्राणि लेपयेत् ।  
 पुटयेद्भस्मतां यान्ति निरुत्याग्निं तथा कृते ॥१०६७॥  
 एवमेतानि लोहानि मारयित्वा ततः परम् ।  
 पुरा यज्ञस्थमाणेन कृतेण च यथाक्रमम् ॥ १०६८ ॥  
 अर्कक्षीरेण पुटयेद्गोक्षरदातं धुधः ।  
 घृक्षीक्षीरेण पुटयेद्वाराएकमतः परम् ॥ १०६९ ॥  
 हृद्यारसेन पुटयेद्भस्मनामै यन्ततः ।  
 पुनश्चाकर्षयोभिस्तद्वायवेदेकविंशतिम् ॥ १०७० ॥  
 एवं सिद्धानि लोहानि रसेन्द्रे निक्षिपेद्बुधः ।  
 अन्यथा नैव योग्यानि सन्नपातादिमेषजे ॥ १०७१ ॥  
 रत्नालं, सन्निपाते ।

भाषा—दोषनद्वयोंमें १० धार मर्दनकरके पातनकरनेपर  
 सुमुक्षित बनाकर पोडशांश बीज और पड़गुणान्धक जारण-  
 कियाहो ऐसा शुद्धपारा २ फल लेकर आकरादूध, डंडाधूरका  
 दूध, अमलोनिर्वा, बछनाग, ज्वालामुखी इन प्रत्येकके द्वयसे  
 २-२ रोज़ क्रममें मर्दनकर सोमाजलव्यन्त्रमें स्थापनकर मज-  
 वृत काष्ठमिश्रीसे सन्धि बन्दकर सुलाकर चूल्हेपर रख ऊपरकी  
 हंडीमें जल भरवे और नीचे मृदु, मध्य तथा तीक्ष्ण ऐतेकक्रममें  
 ७-७ दिन अर्थात् २१ दिन तक अग्नि देकर अतीरमें कीय-  
 लोंपर रहनेदे । इससमय भैराविकोंको मलिदेवे । स्वाज्ञशीतल  
 होनेपर बन्धमेंसे पोरको निकालकर शुद्धगन्धक, पट्टलोह  
 ( सुवर्ण, रजत, ताम्र, नाग, वज्र और लोह ) की भस्म, अग्रक  
 सन्ध और कान्तसत्त्वकी भस्म सब समभाग लेकर पोर गन्धककी  
 बजलीपर शेषचीजोंको मिलाकर अक्रोय, कालापनूरा, एण्ड,  
 भूपानी, त्रिपुड, अदरक, ज्वालामुखी, भाग, भंगरा, वैजयन्ती,  
 हुरहुर, अम्लवेत, जम्बीरी, माझी, इन प्रत्येकका यथासम्मान  
 स्वाम अथवा हाथ रसकी बराबर डालकर १-१ रोज़ मर्दनकरके  
 रससे दसरा दिस्मा शुद्ध शरीरविप, अमायमें हारिदक, हदभायमें  
 सायुष, दशरकके अमायमें शुद्ध बछनाग मिलाकर भागके रससे  
 एरदिन मर्दनकर सुलाकर मोर, मण्डी, पुञ्ज, बररा, भैमा,  
 रोम, बीमा, उन्ड, शरिण, काष्ठ इन प्रत्येकके पित्तकी क्रमशः  
 ७-७ भागनाए देवे । अधिपित्तके अभावमें २-२ भागना  
 देवे इतनेमें न्यून न देवे । इसके बाद कान्थापरा जहर,  
 पामिन तापरा जहर, बज्रनक्षत्रिप, इनरी क्रमसे १-१

भावन देवे । फिर सुहृषिसकर बराबर कीहुई दोहंडी लेकर  
 एकमें इस रसका लेपकरदे और एकमें पारेकी बराबर शुद्ध  
 बछनागकी पानीमें पीसकर लेपकरदे । फिर इनदोनोंका डमरु-  
 यन्त्र बनाय ६-७ कण्डमिश्रीमें सन्धिबन्दकर धूपमें सुलाकर  
 चूल्हेपररखे । यह ध्यान रहे कि रसवाली हंडी ऊपर और  
 विषवाली नीचेरहे । नीचे दोपहर तक मन्दाग्नि जलावे, स्वाज्ञ-  
 शीतल होनेपर निहालकर योगिनी, भैरव, रससिद्ध, शेनपाठ  
 और गुल्लोगोंकी विधिपूर्वक गन्ध-पुष्प-नैवेद्य और बलिदानमें  
 पूजाकर सोनेकी डिब्बीमें इसको रखदे । इसमेंसे १ रत्तीकी  
 मात्रा अदरकके रससे देनेसे महापोरसमिपात, दण्डाऽलसक,  
 अपस्मार, घनूर्वात और कण्डलुजकरी यह नष्टकरताहै । ततः  
 श्रेणहराजुपातके साथ देनेसे मनुष्य, हाथी और घोड़ोंके  
 क्षयादिक रोगोंको नष्टकरताहै । पित्तप्रधानव्याधिमें कपूरकेसाय,  
 कक्षप्रधानव्याधिमें त्रिकटुक चूर्ण अथवा कायकेसाय देवे । इस-  
 रसमें पित्तोंकी भावना आईहै और पित्तयुक्तसोमें अतक पानी  
 सिरपर न डालाजाय तबतक उनकी शक्ति प्रकट नहीं होती,  
 इसलिये परमेश्वर का नाम लेकर सन्देहरी छोड़कर अतक  
 रोगीको कम्पैदा न हो तबतक सिरपर पानी डाले । रसकीगर्मी  
 किसीतह सहन न होसकीहो तो ऐसे स्थानपर सकेदबन्दन  
 और शुद्धकपूर बारहहैं हिस्सेका रसमें मिलाकरदे । ईश्व, श्राद्ध,  
 खजूर, वशलोचन, शकर इनका प्रयोगकरे । श्लेष्मप्रधान सन्नि-  
 पातमें दूधभातदे अन्य रोगवस्थामें दही, भात और दानरदे ।  
 इसके बाद १ रोज़तक इच्छाजुनार खानेरोदे । रसवीर्यका  
 नाश न हो इसलिये करेले खानेमें न दे ।

सुवर्ण, चांदी, ताम्र, फोलाद, रागा, सीसा, अग्रक और  
 कान्तकासाय ये रसतन्त्रमें लोह शब्दमें कहेजातेहैं । इनका  
 मारण शिवजीके कहेहुए प्रकारसे में लिखताहूँ । इसीतरहमें  
 मारणकर इन रसमें इनका योग करना तब यथावत फल होगा  
 अन्यथा नहीं । पारेकी भस्मको जमीरी अथवा विजोरे या  
 साधारण नीचके रसमें मर्दनकर सुरगके पारीक पत्रोंपर लेपकर  
 छायावमपुटमें बन्दकर २० कण्डोंकी आचदे । इसमें पारेकी  
 सुवर्णकी बराबरलेना इसमें एकडूरी पुटमें भस्म होगी । इसीतरह  
 तमामलोहोंकी भस्म करले । जहान पारेकी भस्म तब हो बदापर  
 सुरगमाशिक्षको शुद्धपारेके साथ पीटकर लोहके पत्रोंपर लेपकरे,  
 पीटनेके लिये पूर्वांक नीचुओंका रखदे । इगतह करनेसे पुराण  
 तमामलोहोंकी निरुध्य भस्म होगी । इनभस्मोंको समभाग  
 मिलाकर आचके दूधरी १०८ पुट, डंडाधूरके दूध, अमलो-  
 निया और बछनागके द्रवोंकी ८-८ भावनाएं देकर आचके  
 दूधरी २१ भावनाएं देनेसे यह खोद विद्ध होंग । इन्हींको  
 योगमें देना अन्यथा नहीं ॥ २२१ ॥

२४० प्रतापलङ्केश्वररसः ( लघुः ) ( पद्यः )

शुद्ध भस्मीकृतं सूतमाहरेद् टिपलं बलिम् ।

तावन्मानन्तु सद्गृहा मर्दयेदियसद्वयम् ॥ १०७२ ॥



नष्टपिष्टवमापन्नं ग्राहयेद्रसराजकम् ।  
 माहिषाऽक्षपुरादूर्ध्वं हृत्पर्णी तावती स्मृता ॥१०७३॥  
 गद्याणत्रितयं ध्योपं पङ्क्त्याणां हरीतकी ।  
 वचाकर्पं भद्रमुस्ता कर्पमेकं विडङ्गजम् ॥१०७४॥  
 अभ्वगन्धा कर्पकं स्याच्चित्रमूलत्वचस्तथा ।  
 पत्रकं कर्पमेकं स्याद्रण्डुका कर्पकं तथा ॥१०७५॥  
 मधुसारस्य कर्पः स्यान्नागकेसरकर्पकम् ।  
 घटसनाभं पलं प्रोक्तं भृङ्गी गद्याणकं भवेत् ॥१०७६॥  
 सर्वमेतच्छृण्वन् चूर्णं सूतचूर्णेन मेलयेत् ।  
 ततः प्रमर्दयेत्त्रीणि दिनान्यथ विभावयेत् ॥१०७७॥  
 भृङ्गराजरसैः सप्तवारान् मुनिरसैस्तथा ।  
 समुद्रफेनजैस्तद्भृत्पर्णीभावना तथा ॥१०७८॥  
 ज्वालामुखीरसैर्नैव त्रिकटो विजयारसैः ।  
 धाराहपित्तेन तथा पित्तै रोहितमस्यजैः ॥१०८१॥  
 माहिषे रोहितैः पित्तै मांयूरैश्छागलैस्तथा ।  
 कृष्णसर्पस्य पित्तेन गरलेन च भायना ॥१०८०॥  
 पारावतस्य पित्तेन हरिणस्य च पित्ततः ।  
 भाषयित्वा ततः कर्कशं समुद्रस्योर्जुपात्रगम् ॥१०८१॥  
 विलिप्य चाऽधोभाण्डस्य चूर्णितं निक्षिपेद्विषम् ।  
 पूर्वघटसमुदीकृत्य चुह्यामुपरि धारयेत् ॥१०८२॥  
 मन्दासि ज्वालयेत्पश्चात्प्रहरयमादृतः ।  
 चुह्या यन्त्रं समुत्सार्य स्वाङ्गशीतलतां गतम् ॥१०८३॥  
 उद्धृत्य यन्त्रात्सूतेन्द्रं खल्वभये विनिक्षिपेत् ।  
 मर्दयित्वाऽऽर्द्रकरले घटिकास्तण्डुलोपमाः ॥१०८४॥  
 कृत्वा कण्डकं स्थाप्याः शीतं घातुं विवर्जयेत् ।  
 सन्निपाते द्वौतैका निःसङ्कल्पमुपागते ॥१०८५॥  
 आर्द्रकस्य रसेनैवाऽनुपानं चार्द्रजं रसम् ।  
 रसेश्वरप्रदानेन दन्तात्कीलस्तदाभयेत् ॥१०८६॥  
 सर्वथा ग्रहणाऽशक्ते निःसङ्कल्पेऽथवा तथा ।  
 आर्द्रकस्य रसेनैव सूतं सम्मर्दय कर्णयोः ॥१०८७॥  
 नाट्यां सम्भृत्य प्रथमेष्टासाविधरयोस्तथा ।  
 लिङ्गद्वारेऽथवा कुर्यात्सुप्रथं वा चिदार्थं च ॥१०८८॥  
 रसं निक्षिप्य मृद्वीपाद्वैतिकार्थं प्रयत्नतः ।  
 शलाहारेऽथवा कुर्यात्सूतयोगं मियग्वरः ॥१०८९॥  
 रसप्रयोगमात्रेण नेत्रमुद्धाटयेत्कमात् ।  
 कर्णाभ्यां संश्रुणोत्येवं दन्ता उत्कीलिताः क्षणात् ॥१०९०॥  
 सावधानस्ततो दद्याद्रसेन्द्रं तण्डुलाद्यधिम् ।  
 आर्द्रकस्य रसेनैव दद्यान्मुद्ररसं ततः ॥१०९१॥  
 यमनं यदि जायेत जीवरयेव न संशयः ।  
 यान्तिश्च नैव जायेत म्रियते च विनिश्चयः ॥१०९२॥  
 जातायामप्य धान्स्यान्तु पानीयं ढालयेद्बहु ।  
 पायच्छैत्यं स्वभावेन शरीरे सम्प्रज्ञायते ॥१०९३॥  
 दाधिकं भोजयेत्पश्चाच्छकंरासदितं हितम् ।  
 घटिकाभिश्च तिसृभिः सन्निपातो निवर्तते ॥१०९४॥

ताम्बूलपत्रेण समं घटीमेकां ततोऽर्पयेत् ।  
 क्षयरोगेषु योक्तव्यो नागवल्लीदलेन वै ॥१०९५॥  
 क्षयरोगं निहन्त्येव ग्रहणीरोगमुत्कटम् ।  
 जीरकेण समं दद्यादुल्ले चैवाऽजमोदकैः ॥१०९६॥  
 अन्नश्च राजिकाशाकं राजिकासंयुतं तथा ।  
 तैलं वृन्ताककारीर कर्कोटीकारवेलकौ ॥१०९७॥  
 कलिङ्गमथ कुष्माण्डं यत्किञ्चिधर्मदात्मकम् ।  
 वर्जयेदुल्लेसेवाश्च दिवा स्वापं तथैव च ॥१०९८॥  
 रसस्योपद्रवेऽत्यर्थं खण्डजीरन्तु भक्षयेत् ।  
 अथवा चणकाभलेन जीरकं खण्डसंयुतम् ॥१०९९॥  
 कलम्बं श्वेतसङ्गश्च अभ्वगन्धामयापि वा ।  
 सर्वधोपद्रवश्चेत्स्याद्वमनं कारयेद्विषम् ॥११००॥  
 शर्करां दधिसंयुक्तां खादेदध्या पयः ।  
 तवरज्जेन संयुक्तमाकण्डं पापयेद्विषम् ॥११०१॥  
 शीतोदकेन च स्नानं सर्वथा कारयेत्तथा ।  
 श्रीखण्डेन प्रलिम्पेत्तं निधातुं स्वापयेत्ततः ॥११०२॥  
 पित्तेरुद्ग्रास्यस्त्रिणिष्यन्नानि च वर्जयेत् ।  
 एवं प्रयोगमात्रेण सर्वे रोगाः प्रयान्ति वै ॥११०३॥  
 यस्य रोगस्य यो योगस्तेनैव सहयोगतः ।  
 रसेन्द्रो हरति व्याधिं नरकुञ्जरयाजिनाम् ॥११०४॥  
 इत्येव सूतकः प्रोक्तो देवीशास्त्राऽनुसारतः ।  
 सन्निपातादिरोषाणां विनाशकरणे क्षमः ।  
 लघुः प्रतापलङ्केशः कथितोऽयं महारसः ॥११०५॥  
 रसालं, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध करके मस्य किया हुआ पारा और शुद्ध गन्धक २-२ पल लेकर दोरोग मर्दनकरे फिर नष्टपिष्टी किया हुआ पारा २ पल इसमें मिलाकर मर्दनकरदे । फिर भेतापुगल और अमलोनिया १-१ पल, सोंठ, मिर्च, पीपल १-१ मासे, हरे ३ तोला, बन्ध, नागरमोथा, विडङ्ग, असगन्ध, चित्रकम्, लकीणल, पद्मन, रेणुका, महुएकाहीर अथवा मुलहठी का सत्त्व, ये प्रत्येक १ कप, शुद्ध यज्जना १ पल, भंगरा ६ मासे, इनसबका बारीक चूर्णकर पूर्वकजलीमें मिलाकर भंगरेदरसमें ३ दिन, अगस्त्य, समुद्रफेन, अमलोनिया, ज्वालामुखी, निवृद्ध, भाग इनकेरस अथवा कषायोंनी ७-७ भावनाएं देकर घुअर, रोहमछली, भेता, रोख, मोर, बकरा, कालाघाष इनके पिठोकी ७-७ भावनाएं और काले चापका जूह, कतुत तथा हरिणकेपिठोकी १-१ भावना देकर एवहृडीमें लेपनकरदे । दूसरी हण्डीमें पूर्ववर कहेइए विगोमेंमे वितीएकका चूर्णकर पोरेवी मस्यके बराबर रखदे । फिर इनका डमकयन्त्र बनाय चुत्तेपर विपवाली हण्डीको ररादे और दोषहतक मन्दासि जलावे । स्वाङ्गशीतलोनेपर रसको निकालकर अदरखके रखे १ तोज मर्दनकर १-१ चावलभारी गोडियां बनाकर पीधीमें रखदे । यह ध्यान रखते कि यन्त्रमेंमे रसको ऐसे निर्वान्त्यान्तमें निकाले कि जहां बायुस अधिक स्थान न हो ।

शीशीको हमेशा शीत और वायुमे बचावे । इनमेंसे १-१ गोली रात्रिपातमें रोगीको सञ्चारहितहोनेपर अदरखके रसके साथ देकर ऊपरसे अदरखनाही रस थोड़ासा और पिलावे । यदि अत्यन्त वेहोशी होनेकी वजहसे सुंघमें दवा न जाय-  
 कीहो तो अदरखके रसमें एकगोली मिलाकर कानोंमें डाले और एक दुसरी नली नाकोंमें लगाकर रसको सुंघमें भरकर नलीद्वारा नाकोंमें फूंकदे । अथवा लिङ्गके रास्तेसे पिचकारी द्वारा दवाको चढ़ावे अथवा भ्रूके मध्यमें पाछदेकर १ गोलीको बारीक पीस उसजगह पर आधी घड़ी तक वर्षण करे, इसीतरह ताल पर भी प्रयोगकरे । रसप्रयोगप्रभावसे चेतना आकर नेत्रोंको उठावेगा, और कानोंसे सुनने लगेगा और दात खुलजायगे । इसतरह सञ्चार प्राप्तहोनेके बाद १ गोली अदरखके साथ खिलानर मूँगका रूप देना उससे यदि वमन हो जाय तो समझना कि रोगी बच जायगा यदि वमन न हो तो वह नहीं जीवेगा इसतरह निधय ही समझलेना । वान्ति होनेपर मत्पेपर ठंडा पानी डाले । जन असह्य होकर शरीर कापनेलगे तब पानीका डालना बन्दकर शहरके साथ दहीभात दे । इसतरह ३ गोलीसे सत्रिपात दूर हो जाताहै । अखीरमें ताम्बूलके साथ १ गोली देकर बन्दकरदे । इसीतरह ताम्बूलमें १-१ गोली देनेसे क्षय निवृत्त होताहै । सद्गृहणीमें जीरा, गुल्ममें अजमोद अनुपान समझना । पच्य अन्न देना । राईका घाक अथवा राईकी चीजें, तैल, वेंगन, करीर, ककोड़ा, फरेला, ताम्बूल, कोहळा, छोटी वड़ी सब तरहकी बकरी, खट्वाई, दिनका सोना इनको छोड़ देवे । इस रसके खानेसे वान्ति प्रभृति उपद्रव हों तो जिरिका चूर्ण शहर मिलाकर देवे अथवा खाड़ और जिरिके ऊपर चनेका खार देवे । कड़म्य (कर्मवीरी) का शाक, बच अथवा जसगन्ध देवे । अगर किसीतरह वमन घान्त न हो तो वमनकारक पदार्थ देकर पेटको साफ करे । उसके बाद शहर और दही खानेको दे अथवा दूधमें जवास की शहर डालकर कण्ठक भरपेट पिलावे । इसमें खान हमेशा ठंडे पानीसे कराना चाहिये । दाह होनेपर सफेद चन्दनका केसर निर्वात स्थानमें मुलावे और मीनेकपत्र पहिनावे । इसतरह प्रयोग करनेसे समस्तरोग दूर होते हैं । जिसरोगका जो अनुपानहै उसके साथ देनेसे मनुष्य, हाथी और घोड़े वगैरह के सब रोग अच्छे होतेहैं । देवीशास्त्रके अनुसार यहरस कहा गयाहै ॥२४०॥

### २४१ प्रतापलङ्केश्वररसः (सप्तमः)

गन्धेशकदफलव्योपजातीफलदलानि च ।  
 अभ्वमाराऽऽकलकञ्च समं सर्वं विन्युर्णितम् ॥११०६॥  
 चित्राऽऽद्रकजलैस्त्रिभिर्भाषितं मुटिकीरुतम् ।  
 घल्लमात्रं निहन्त्यागु पाण्डुवातमगन्दरान् ॥११०७॥  
 र. का, पाण्डुरोगे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, कायफल, सोंठ, मिर्च, पीपल, जायफल, जावित्री, दूधमें स्वेदन कीहुई सफेद कनेरकी

बड़ और अकलझा समभाग लेकर घारीकचूर्णर पोटगन्धकी नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर चित्रकमूल और अदरख के क्वाथ और द्रवसे ३-३ भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी मोलिया बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानके साथ देनेसे पाण्डु, वातव्याधि, और मगन्दर नष्ट होतेहैं ॥ २४१ ॥

### २४२ प्रतापलङ्केश्वररसः (अष्टमः)

गन्धं ताप्यज्जतालकञ्च गगनं तीक्ष्णं समशीतकृतं,  
 ताम्रं चूर्णितभागमिश्रितगरं सर्वैर्द्विनिघ्नं रसम् ।  
 पकोष्ठ्य सुसिन्धुवारदुतमुग्यावासककोटिका-  
 शिपूसूरणवहिमान्यहरणीकृष्णारसे मर्दयेत् ॥११०८॥  
 हवा तद्वर्णगोलकं सुशिशिरं गन्धादमसिद्धार्थजै-  
 स्तैले मध्यविपाचितं च सुधिया युक्त्या च बद्धा घटीः  
 भूतोन्मादसुसन्निपातजगदान् शूलानुदावर्तकान् ।  
 गुल्माऽपस्मृतिजान्निजश्च सकलान् हन्यादुधै योजितः ॥

रसेन्द्रम,

भाषा—शुद्ध गन्धक, सोनामाखी और हरिताल, अन्नक और फोलादकी भस्म १-१ भाग, ताम्रभस्म और शुद्ध बछ नाग चतुर्थ ३ भाग, पारा सबसे दूनालेकर कजलीकरले फिर संभाव, चित्रक, जवाला, ककोड़ा, सहिजन, सूरण, हरे, पीपल इन सबके स्वरस अथवा क्वाथोंकी १-१ भावना देकर गोल बनाय मुलाकर शरावसमुद्रमें बन्दकर कुण्डमुटकी आच दे । स्वाहशीतल होनेपर शुद्ध गन्धक और पीली सरसोंका तैल इनमें पोश्लीके प्रकारसे पकावे । स्वाहशीतल होनेपर मधु वगैरहके साथ २-२ रत्तीकी मोलिया बनाकर रखडोढ़े अथवा बेसेही रहनेदे । इसमेंसे १ भाग उचितानुपानके साथ देनेसे भूतोन्माद, सन्निपात, शूल, उदावर्त, गुल्म, अपस्मार इनस वको यह गटकरताहै ॥ २४२ ॥

### २४३ प्रतापलङ्केश्वररसः (नवमः)

रसगन्धाऽऽमृतं नागं बद्धं चेक्षुकद्वयम् ।  
 जम्बीराऽऽद्रकसंयुक्तं मापमानन्तु दापयेत् ॥१११०॥  
 मागध्या वचया युक्तं सर्ववातनिहन्तम् ।  
 सर्वज्वरहरं श्रेष्ठमन्यैश्च विपमोऽरुतम् ॥११११॥  
 सूतिकावातसम्भूतं हन्ति शीघ्रं न संशयः ।  
 प्रतापादिकलङ्केशः सर्वरोगनिवारणः ॥१११२॥

र. क. जो.,

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बजनाग, सीसे और रागे वीभल्य, श्युमूल, त्रिफल, येखव समभाग लेकर पारे गन्धकी नीलवर्ण कजलीकर अन्य सज्जीकोंको मिलाकर रखडोढ़े । इसमेंसे १-१ भाग जम्बीरी अथवा अदरखके रसके साथ अथवा पीपल और बचके साथ देनेसे समस्तवातविकार, अन्यदवाओंसे विपयताको प्राप्तहुआज्वर, सूतिकावात प्रभृति नष्टहोतें ॥ २४३ ॥

२४४ प्रतापलङ्केश्वररसः (दशमः)

टिपलं रसञ्च गन्धं

मृदितं कञ्जलयेष चतुःपलन्तत् ।

दरुस्य पलं पुरस्य

विकटूनां निदधीत साऽर्द्धकर्मम् ॥ १११३ ॥

हीरामणेरथ पलञ्च शिमाञ्च मुस्ता

मेयी विडङ्गघनचित्रकपत्रकौन्तीः ।

मधुकसारगजकेशरवाजिगन्धाः

कर्णोन्मिताः पृथग्मृद्विदधीत चूर्णम् ॥ १११४ ॥

विपं विघृष्याऽभ्युभिरर्द्धनिकं

तसिकमेतत्सकलं विमृष्टम् ।

भृङ्गेन सामुद्रकफेनकापं-

सजैर्मुनिन्यूपणभार्गवोभिः ॥ १११५ ॥

ज्वालामुत्तोभायनलाऽऽर्द्धकेश

पृथक् पृथक् सप्त विभाषनाः स्युः ।

मयूरमत्स्याऽऽजगराहवाह-

द्विपाञ्च पितेः पृथगेकयारम् ॥ १११६ ॥

भाण्डद्वयं सम्पुटितं निधाय

रसं विलिखेदुपरिस्थभाण्डे ।

विषञ्च गद्याणमितं विघृष्टं

मध्यस्थभाण्डे विनिधाय कृत्वा ॥ १११७ ॥

शुद्धां विपाच्य शिशिना मृदुनाऽहरेकं

द्वौतं समाधिभूतमर्द्धितमार्द्धकेण ।

क्षुर्यात् तण्डुलमितान्यदकान्प्रताप-

लङ्केश्वरो भजति सिद्धिमयं रसेन्द्रः ॥ १११८ ॥

तत्रैकं घटकुमुपास्य घैद्ययो-

प्युज्जीवेज्जगति विजित्य सन्निपातम् ।

नासायामधं विधमेदमुप्य चूर्णं

व्याघाते करणगतेहनुग्रहे च ॥ १११९ ॥

कृत्या तण्डुलमाग्नमन्तविषयो मौदन्तु पृथं पिबेत्,

यान्तो जीवति दीतलेन पयसा सितः प्रकम्पाऽवधि ।

कुष्णक्षायधं भक्षिते दधिसिताभक्तं मुहूर्तत्रया-

मृज्जानः सुषमेति रोगहरणादुल्लापकुलाननः ॥ ११२० ॥

प्रत्यहं च घटकेकमिहाश्रन्यमकुलघनमुत्तिजयी स्यात् ।

क्षुयदा भवति यत्र न काले क्षेपतोऽभ्युग्रहरेत रजार्थम् ॥

व्योषेण घातरोगेऽद्याह्नहर्षणां जीरसंयुतम् ।

नोष्णं भक्षेत्प्रसन्नतातो यथा जीरञ्च भक्षयेत् ॥ ११२२ ॥

मूलं वा पाजिगन्धायाः पाण्डुरं वा कदम्बकम् ।

चणकाऽऽम्लपटोलाऽम्भो जीरजातीकलेः पिबेत् ॥ ११२३ ॥

अतिग्याप्तो घामतश्च दुग्धं दाकरया पिबेत् ।

मयुराऽऽह्वात्मशोयासंसितः दीतलाऽम्भसा ॥ ११२४ ॥

मलयजसरसिलो मालतीमल्लिकामिः

परिमलितमुशीतवासरमप्यास्य दीतम् ।

गलकलितमरालोदारकपूरहारः,

शितमृदुपरिधानं सन्धानो जलाऽऽर्द्धः ॥

समणिचलयय्याच्छालमञ्जीकराप्रतः,

कलितसलिलयन्त्रात्मोच्छलच्छीकरार्द्धः ।

किसलयशयनीये कीर्णपुष्पे शयानः,

परिहरति रसातिमासिजं देहदाहम् ॥ ११२६ ॥

र. मृ. सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पात्र २ पल, गन्धक ४ पल, शुद्ध शिंगरिफः

और गुगल १-१ पल, सोंठ, मिर्च, पीपल डेढ १॥ कर्प, हीरा,

भस्म १ पल, हरे, नागरमोया, मेथी विडङ्ग, मन्डाल, चित्रक, पत्रज,

रेणुम (रोण पहाड़ी), महुएकाहीर, नागकेशर, अमरगन्ध १-१

कर्प लेशर सबरा घासी कृष्णकर पारे गन्धर्वा नीलवर्ण कजलीमें

मिलाकर पानीमें पिसेहुए २ मासे बज्जनागरे हवसे एक भावना

देवे । फिर भंगरा, समुद्रेन, लाल कपासके फूल, अगस्त्य,

त्रिकटु, सफेददूध, अमिश्रित, भारती, चित्रक और अदरकके

यथासम्भव स्वरस अथवा बाणोंसे ७-७ भावनाएं देकर मोर,

मज्जी, बरग, सुन्नर और भैंसे के पित्तोंरी १-१ भावना

देकर एक पकेके भीतर तयामका लेप करदे । दूसरे पकेमें ६

मासे पिसाहुआ शुद्ध बज्जनाग विछाकर पूर्वपकेको ऊपर रखकर

उमरुयन्त्र बनाय ६-७ कपड़मिथीसे सन्धिसे बन्दकर मुद्रार

घुल्लेपर रत एक दिवसी बहुतमन्द आंचदे । स्वाह्मदीतल

होनेपर निमलकर अदरकके रसरी एन भावना देकर १-१

बावलभरकी गोलिया बनाय छायाशुष्ककर रखोके । इनमेंमे

१-१ गोली घासी कीसर सन्निपातमें नम्य देवे तो कानोंमें

मुनने लगे और हनुग्रहसे चित्त हो । कण्ठ तुलनेपर १ गोली

अदरक बगैरके रखेगाय देकर मूकका मूष पिलावे । यदि

बमन हो जाय तो समझना कि जीवेगा, अन्यथा नहीं । बाद

मास्य होनेपर कन्ध होनेतर तिरपर छि पागोड़ी घाटादेवे ।

कालाग्रा पुत्राके दो पड़ीवेबाद दही घार और भास रानेरो

देवे । इसके सिलानेमे सन्निपाती रोगरहित होजाताहै ।

इस रसरी रोज एकएक गोली खिलानेसे राजयक्ष्म, डूठ, गुप्त-

गात्रता प्रशुति कृष्ट होतेहैं । इनके देनेके बाद जरनक भूत न

साक्ष्म हो सगठ न राय । बातरोपमें त्रिकटुक साथ, प्रहारीमें

औरिके साथ देवे । स्तत्रयोपे बाद गरमचीं ३ ॥ राय ।

रसकी शरीरमें पैलानेके लिये बच, जीरा, अमरगन्धकी जड़,

सफेद कदम्बकी छाल, इनमेंसे किसी एकके २ मासे कृष्ण

क्षार, पल्लके स्वरस, जीरा तथा जायकासे साथ प्रशुतिके,

साथ पीवे । यदि रसका अधिक असर होनेमे बमन होने लगा

हो तो घार मिला हुआ दूध पिलावे, मयुर आदार देवे, दीतल

जलकी सिरपर घात छोके, चन्दनकातेपकरे । मालती और

मोगेर प्रशुतिमें सुगन्धित और लगीदी द्यो बगैरके ठंड रिये

हुए भगानमें बैठे । कपूरी माता, सफेद और काली कपूरी

पदिने । गुलाब जल बगैरके कपूरीमें लर रगे । मणिपुत्र

कड़वाही आहार और उल्लेखे हुए कपूरके पुत्रोंके दुग्ध-

वाली स्त्रियोंके हाथों में लिये हुए गुलाबजलवगैरहके फट्टुहारोंसे उड़ते हुए जलकणोंसे भीगता हुआ नवीन पत्रोंसे निर्मित, मुगन्धितपुष्पोंसे आच्छादित बिजौनेमें सोनेसे रखी अतिव्याप्तिसे पैदा हुआ देहका दाह दूहोताहै ॥ २४४ ॥

### २४५ प्रतिज्ञावाचकोरसः

सुतं शुद्धं भागमेकञ्च तालाद्  
द्वौ भागौ चेद्वेदसहस्रा शिलायाः ।  
ताम्रस्यैवं भागयुग्मं प्रकुर्या-  
द्ब्रह्मातं वै वेदभागं तथैव ॥ ११२७ ॥  
अर्कक्षरैर्भावेयञ्च त्रिसारं  
कृत्या चूर्णं कारयेद्गोलकं तत् ।  
स्थालीमभ्ये स्थापितं तच्च गोलं  
दत्त्वा मुद्रां भस्मना सैन्धवेन ॥ ११२८ ॥  
भूमस्यैवं रोधनञ्च प्रकुर्या-  
च्छाणौ दंष्ट्रात्स्वेदनं मन्दचहौ ।  
पश्चात्तोयेनैव भाष्यञ्च चूर्णं  
गोलं कृत्या मन्दचहौ विपाच्य ॥ ११२९ ॥  
पश्चादेनं भक्षयेद्वा रसेन्द्रं  
घलञ्चैकं शर्कराचूर्णमिधम् ।  
तत्तत्कृष्णामाक्षिकेणैव जूर्ति  
हन्यादेतत्सर्वदोषोपरितां वै ॥ ११३० ॥

र. प्र. सु., र. (मा.) ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध हरिताल २ भा., जैन-सिल ४ भा., ताम्रभस्म २ भा., मिलावा ४ भा. लेकर भिला-बोको बारीक कूटले और पारे प्रशुतिकी कजलीकरके मिलादे । फिर इतमें बान्नाका दूध डालकर ३ दिनतक धूपमें मर्दनकरे और गोला बनाकर ६-७ कपडिमिट्टीकीहुई हंडीमें रखकर गोलेको एक दक्कीसे बन्दकर उसपर छनीहुई राखभरे । राखपर बारीक पीसाहुआ सेंधानमक राखपर जल्लीकण्डोंकी ४ पहरतक मन्द आच देवे । धूना ॥ निकलने पावे, कहींसे निकलता हो तो नमक अथवा भस्मसे बन्दकरदे स्वाज्ञशीतल होनेपर गोलेको निकालकर केवल पानीसे धोतकर पूर्ववत् गोला बनावे और ४ पहरकी मन्दामिमें परावे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखोदे । इसमेंसे ३-३ रत्ती शङ्कर, पीपल अथवा शहदेके साथ देनेसे यह सब प्रकारके ज्वरोंको दूरकरताहै ॥ २४५ ॥

### २४६ प्रतिश्यायहरोरसः (गन्धमर्दनः)

सुलभासमगन्धकसुतवरं  
गिरिकर्णिरसे कृतमर्दनकम् ।  
चपलारसगुण्ठितस्त्रैखिद्रिं  
मुद्रितं घनघोषज्जातिहरम् ॥ ११३१ ॥  
रसेन्द्रम्., प्रतिश्याये ।

भाषा—सुलसी, शुद्धपारा और गन्धक समभागलेकर सुलसी का बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें

मिलाकर कोयल, पीपल और सोंठ के स्वरस अथवा हाथोंसे १-१ रोज मर्दनकर १-१ मासेकी गोलिया बनाकर रखोदे । इसमेंसे १-१ गोली गरम दूधके साथ लेनेसे प्रतिश्याय (जुकाम) दूरहोताहै । नाकमें कीड़े पड़ेहों अथवा घाब होमायाहो तो इसगोलीको कोयलके रसमें घिमकर नस्यदे और घावपर ल्यावे, शोध हो तो उससे लेपकरे ॥ २४६ ॥

### २४७ प्रदरान्तकलोहम् (प्रथमम्)

लोहमस्म द्विकर्पं स्याद्रङ्गं कर्पमितं भवेत् ।  
उत्पर्पं कैरवाख्यञ्च गैरिकं घृतपाचितम् ॥ ११३२ ॥  
शाल्मलीशालनिर्वासौ कर्पमानौ पृथक्पृथक् ।  
दूर्वादाडिमधात्रीणां स्वरसैः सप्त भावयेत् ॥ ११३३ ॥  
पापाणभेदमापैखि घलं घलं प्रयोजयेत् ।  
विविधे प्रदेरे घोरे वैद्यवृन्दविघर्जिते ॥ ११३४ ॥

नू. क. प्रदेरे ।

भाषा—लोहमस्म दोकर्प, बज्र भस्म और खपरिया, अमावमें जल्लकी भस्म, कहुरावा, घीमें पकायाहुआ सोनागेरु, मोचरस, राल, ये प्रत्येक १ कर्प लेकर सबका बारीक चूर्णकर दूध, अनार और आव-लेके स्वरसोंकी ७-७ भावनाएं देकर रखोदे । इसमेंसे १-१ रत्ती पापाणभेदेके चूर्णके साथ देकर शङ्कर मिलाकर दूध पिलावे और केवल दूधमातृका भोजनमें उपयोगकरनेसे नानाप्रकारके प्रदेर जिनको कि बैयोंमें असाध्य कहकर छोड़ दियाहो उनको यह नष्टकरताहै । पापाणभेद देशभेदेसे बहुततरहका आताहै परन्तु जो कि हिमाद्रि प्रशुति ठंडे प्रदेशोंमें बटपत्रके सदृश पत्रवाली छोटीलता पत्थरोंमें सड़ीहुई रहतीहै उसका नाम पहाड़ीलोग 'पापानभेद', कहते हैं प्रायः सभीलोग जानतेहैं । बच्चा के सदृशडुक्के लालरङ्गके बान्नारमें मिलतेहैं इसीका प्रयो-गकरनेसे इसमें यथार्थ लाभ होमा । यह रस तैयार नहो तो ३ रत्ती मुद्रासत्र शङ्करमें मिलाकर फकावे और पापाणभेदेके चूर्णमें बराबरकी शङ्कर मिलाकर ३ मासे उससे फंकाकर दूध पिलावे । इस प्रयोगसे बहुतही विलक्षण फायदा होताहै परन्तु कच्चा मुद्रासत्र अधिक दिन तक नहीं देना,, अधि-देनेसे वान्ति होतीहै और शरीरमें एकतरहकी ऐंठन पैदाहोतीहै इसलिये शुद्धकरके देना चतुर्थांश सेंधानमक मिलाके चौगुन पानी देकर १ पहर घोटके रखदे दूसरे दिन पानी को निकाले और नवीन सेंधानमक मिलाकर घोटके रखदे ऐसे २१ रोज करनेसे यह सफेद होजाताहै और तमाम दुखोंमेंसे रहितहो जाताहै यह औषधिक विकारों की परमौषध है ॥ २४७ ॥

### २४८ प्रदरान्तकलोहम् (द्वितीयम्)

हरितालं लोहताम्रे घट्टमम्रं वराटिका ।  
त्रिकटु त्रिफला चित्रं विडङ्गं पटुपञ्चकम् ॥ ११३५ ॥  
चविका पिप्पली शङ्खं चचा ह्युपपाकलम् ।  
शटी पाठा देवदारु द्राघिडी वृद्धदायकम् ॥ ११३६ ॥

पतानि समभागानि सच्चूर्ण्य वटिकां कुरु ।  
शर्करामधुसंयुक्तं घृतेन भक्षयेत्युतः ॥ ११३७ ॥  
रक्तञ्च प्रदं हन्याच्छ्वेतपीतञ्च नीलकम् ।  
योनिशूलं कुक्षिशूलं कटिशूलञ्च सर्वजम् ॥ ११३८ ॥  
मन्दाग्निमर्चयि पाण्डुं कृच्छ्रभासञ्च कासरम् ।  
आयुःपुष्टिकरं वल्यं रजोवर्णप्रसादनम् ॥ ११३९ ॥  
र सं, र क, र सु, प्रदे ।

भाषा—हरिताल, लोह, ताम्र, वट, अम्रक, पीलीकौडी इनकी भस्म, त्रिकटु, त्रिकला, चित्रकमूल, विडङ्ग, पाचोन्नमक, चव्य, पीपल, शङ्खभस्म, वच, हाठवेर, कुठ, कर्क, पाठा, देव दाह, छोटी इलायची और विषास सब समभागलेकर एक जगह मिलाकर आबलेके रससे १-१ मासेकी गोलिया बना कर रखोडे । इनमेंसे १-१ गोलीकाचूर्ण शर्करा, मधु और घृतमें मिलाकर खानेसे रक्त, श्वेत, पीत और नील प्रदर, योनिशूल, कुक्षिशूल, कटिशूल और साधारणतया समस्त शूल, मन्दाग्नि, अरुचि, पाण्डु, मृक्कृच्छ्र, खास, कास इन सबको नष्टकर आयु और पुष्टिको बढाताहै रजको साफ करताहै और शरीरके वर्णको अच्छा करताहै ॥ ११४८ ॥

### २४९ मदारान्तकोरसः

शुद्धः सूतस्तथा गन्धो वङ्गमस्र च सौष्यकम् ।  
रूपरञ्जं धरादञ्च शाणमानं पृथक् पृथक् ॥ ११४० ॥  
तोलफत्रितयश्चैव लोहचूर्णं क्षिपेद् धुधः ।  
विनैक कन्यकानरैर्मेदयेद्य भिषग्वरः ॥  
असाध्य प्रदरं हन्ति भक्षणाच्चाऽप्रसङ्गः ॥ ११४१ ॥  
र स, र सु, ध, र चि, र चै, र र, व रा, भै र, प्रदे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, धात्र, बादी, उपरिया, पीलीकौडी इनसबकी भस्में ४-४ मासे और ३ तोले लोहभस्म लेकर सबका बारीक चूर्णकर पाँदे गन्धककी नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर १ दिन पीकुआरके रससे मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखोडे । इनमेंसे १-१ गोली दूधकीरहके साथ देनेसे असाध्यभी प्रदर दूरहोताहै ॥ ११४९ ॥

### २५० प्रदारारिरसः ( प्रथमः )

रस गन्धं सीसं मृत्तमिति समस्तेस्तु रसजं,  
समानं सर्वैः स्यात्तुलितमपि लोभं वृषरसैः ।  
दिनं पिष्टं नाम्ना प्रदाररिपुनेपोऽपहरति,  
क्षिपेद् द्यौर्द्रेण प्रदरमिति दुःसाध्यमपि च ॥ ११४२ ॥  
ध्रुवो त, वै, र, र च, र की, वै क, नि र, रसाय नस, यो र, प्रदे । रसायनसः प्रदाररिपुष्टिति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक तथा नाम्मस १-१ भाग, रसौत ३ भा, लोप ६ भा, लेकर सबका बारीक चूर्णकर पाँदे गन्धककी नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर आध्याके रसमें १-२ रोज मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखोडे । इनमेंसे १-१ गोली मधुके साथ देनेसे दुःसाध्यभी प्रदर नष्ट होताहै ॥ ११५० ॥

### २५१ प्रदारारिरसः ( द्वितीयः )

पारदगन्धकद्वानेकैकभागसमिध्यान् ।  
चतुरो भागाग्रसकाद्दोद्रेणेन विभायितान् ॥ ११४३ ॥  
मधुना सुभायितं तत् स्त्रीपुरुषाणाञ्च गुह्यजात्रोगान् ।  
हन्याद्बलप्रभितं दुग्धाऽनुपानतो नियमात् ॥ ११४४ ॥  
र सं, प्रदे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सुहागा १-१ भाग, खपरिया ४ भाग, लेकर सबकी कजलीकर गायके दूधसे १-२ रोज मर्दनकर मधुमें ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखोडे । इनमेंसे १-१ गोली दूधके साथ देनेसे स्त्री और पुरुषोंके गुप्त-रोगोंको यह नष्ट करताहै ॥ ११५१ ॥

### २५२ प्रदारारिरसः ( तृतीयः )

मोचं निशां मधुकर्षयवङ्गभस्मा-  
न्यादाय चूर्णमिह सूक्ष्मतमं विधाय ।  
पन्थाऽर्कपत्रजजलेन समं गृहीतः सर्व-  
ण्यसौ रसवरो प्रदराणि हन्ति ॥ ११४५ ॥  
र सु, र स, प्रदे । र सं मधुकादिचूर्णमिति नाम ।

भाषा—मोचरस, हल्दी, दाहल्दी, गुल्हदी, खपरिया और वटभस्म समभाग लेकर बारीक चूर्णकर रखोडे । इसमेंसे १ मासा चूर्ण आँकके पकेहुए पतोंके जलके साथ देनेसे यह समस्त प्रदरोंको दूर करताहै ॥ ११५२ ॥

### २५३ प्रदारारिलोहम्

घटसकस्य तुलां सम्पज्जलद्वेगेन धिपाचयेत् ।  
अष्टभागाऽवशेषान्तु कषायमपतारयेत् ॥ ११४६ ॥  
घटनपूते घनीभूते द्रव्याणीमानि दापयेत् ।  
समङ्गां शाल्मल पाठां विलं मुस्तञ्च घातनीम् ॥ ११४७ ॥  
अरुणां व्योमकं लोहं मयेकान्तु पलंपलम् ।  
यहमानं प्रयुज्जीत कुशमूलपयो हयु ॥ ११४८ ॥  
भ्येतं रक्तं तथा नीलं पीतं प्रदरमुत्कटम् ।  
कटिशूल कुक्षिशूल देहशूलञ्च सर्वगम् ॥ ११४९ ॥  
प्रदारारिरसं लोहो हन्ति रोगान् सुदुस्तरान् ।  
आयु पुष्टिकरश्चैव बलवर्णाऽस्त्रिधर्षणः ॥ ११५० ॥  
भै र, घ, प्रदे ।

भाषा—कुशाकी छाल ४०० तोले लेकर १६ सेर पानीमें १कावे । अष्टमात्राऽवशेष रक्षेपर नगरकर छानले और अमिर बडाकर परावे । जब गाडा होजाय तब मनीठ, लम्बानती, शोचस, पाठा, बेलथिरी, नागरमोया, पावङ्गने फूल, अतीष, अम्रक और लोहभस्म ये प्रत्येक १ पल मिलाकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखोडे । इसमेंसे १ अथवा २ गोली कुशकी जड़के काटेके साथ देनेसे शफेद, लाल, नीला और पीला दुस्तर प्रदररोग, कटिशूल, कुक्षिशूल और समस्त देहमें फैलेवाला दुःसाध्य प्रदररोगवृत्त समस्त दुस्तररोगोंको यह नष्टकर आयु, पुष्टि, बल, वर्ण और अमिरो बढाकर ॥ ११५३ ॥

## २५४ प्रभाकरवटी

माक्षिकं लोहमध्वं तुगाक्षीरीं शिलाजतु ।

क्षिप्त्वा खल्वोदरे पश्चाद्वात्ययेत्यर्थचारिणा ॥११५१॥

वल्लह्यमितां कुर्याद्वटीं छायाविशोपिताम् ।

प्रभाकरवटी सेयं हृद्रोगानखिलाजयेत् ॥११५२॥

ऐ र, हृद्रोगे ।

भाषा—शुद्ध सोनामारी, लोह और अन्नकमल, वस-  
लोचन, शिलाजीत, सब समभाग लेकर वारीक चुणैकर अर्जुनकी  
छालके स्वरस अथवा हाथसे १ दिन मर्दनकर ६-६ रत्तीकी  
गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली  
अर्जुनकी छालके बाँडेके साथ देनेसे यह हृदयके तमाम रोगोंको  
दूर करती है ॥ २५४ ॥

## २५५ प्रभावतीवटी ( प्रथमा )

हेमाऽम्राऽऽलकतीक्ष्णताप्यकमलान्येषां समं सप्तकं,

सुतञ्च विगुण विशोधनघृष्टुस्त्वहिशोभाजनम् ।

पाठासूरणासिन्धुवारविजयैरण्डव्रवै मर्दितं,

तेले कङ्कुणिगन्धके पट्टभवे कल्लाद्वटीं कल्पयेत् ॥११५३॥

प्रभावतीति कथिताऽऽद्रकद्रवै निषेचिता ।

ततश्चाऽनुपिवेत्तुयं दशमूलप्रसाधितम् ॥११५४॥

सपिप्पलीकं पिबतो जलज्यै-

न्मरुद्विकाराण्युद्वारण्यपस्मृतिम् ॥

शुक्मानुदावर्तचयं चलाऽचलं

शूल विसृज्यीप्रमथं धनुश्चलम् ॥११५५॥

र र, स, वातव्यायी ।

टि०—तेले कङ्कुणिगन्धके पट्टभवे कल्लाद्वटीं कल्पयेदिति वद स्वार्था-  
वबोधेऽन्यथं प्रतिपाति, तत्र छन्दोरोधार्थं प्रयुगुणन्य दोषोऽस्ति ।  
तिलतेले ज्योतिष्मतीगन्धकी समानी तिक्ष्ण्य मयुष्ट कला कन्योत्पलरूप  
वेत् । स्वाश्लीतल्लाद्वते येन मरु निष्कास्य तेन प्रतिमारीय धार कला  
तेन वटी प्रकल्पयेदिति ववरचमिगुरभिप्राय । सोऽप्येकस्मिन् पत्रे न  
समाविष्टस्तस्यैवपाठोऽस्तीति विद्वद्भिर्निर्भावीनयम् ।

भाषा—मुक्क, अन्नक, हरिताल, फोलाद सोनामाखी,  
और ताम्र, इनकीमन्में १-१ भाग, पारदमल २ भा, लेकर  
सबका बारीक चुणैकर दन्ती, ग्रियड्ड अथवा अनन्तमूल, गृहृरका  
दूध, चित्रकमूल, सहजवनकी छाल, पाठा, सूरण, सभाय भाग  
और एरण्डकी जड़ इन प्रत्येकके यथालाभ स्वरस अथवा  
वायोंसे १-१ रोज मर्दनकर सुखाले । और तिलकेतैलेमें माल  
कागनी तथा गन्धक समभाग डालकर धारावसम्पुटकरके १०  
सेर जलही कण्डोंमें फूँके जिकमें कि जलकर सबकी सफेद  
राख हो जाय । फिर इस सफेदमलको लेकर १६ गुने पानीमें  
रख मसलदे । दो रोजके बाद उसका पानी नितारले और  
उसको बडाहीमें औंठाकर शुद्धी एकतारी चावनीके सहस्र  
कलक बनाकर इसीके साथ पूर्वोक्त रसकी ६-६ रत्तीकी गोलिया  
बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १ अथवा २ गोली खिलाकर १  
माशा पीपलका प्रक्षेप दिया हुआ दशमूलका काठापीये तो

इससे जलोदर वातविकार, उदरविकार, अपस्मार गुल्म,  
रामस्त उदावर्त, चउ अथवा अचल हैजेका शूल, और धतुर्वात  
ये सब नष्ट होतातेहै ॥ २५५ ॥

## २५६ प्रभावतीवटी ( द्वितीया )

भागमेरुतु कर्पूरं तदर्थं शुद्धगन्धकम् ।

तत्समानि विडङ्गानि जातोपत्रलङ्गकम् ॥११५६॥

जातीफल तथा चैला व्योपञ्चाऽपि समंसमम् ।

शुद्धचूर्णमिदं सर्वं मर्दयेद्याममात्रम् ॥११५७॥

गुडेन मापमानान्तु वटिकां कारयेद्बुधः ।

इयं प्रभावती नाम्ना ह्याख्यवातविनाशकृत् ॥११५८॥

ब. रा, आन्ववाते ।

भाषा—शुद्ध कर्पूर १ तोल, शुद्ध गन्धक, विडङ्ग, जावित्री,  
लौंग, जायफल, इलायची, सोंठ, मिर्च और पीपल ६-६ मासे  
लेकर वारीक पीस १-२ पहर सुखा मर्दनकर बराबरका पुराना  
शुद्ध मिलाकर १-१ मासेकी गोलिया बनान रखछोडे ।  
इनमेंसे १-१ गोली दूध बगरदूधके साथ लेनेसे ऊहस्तम्भ नष्ट  
होताहै ॥ २५६ ॥

## २५७ प्रमदानन्दोरसः

अयो रौप्यं तथा हेम रसं गन्धं शिलाजतु ।

यह्निद्रवेण समर्थं रक्तिमाना घटीश्चरेत् ॥११५९॥

नाम्नाऽसौ प्रमदानन्दो रसो ह्याशु विनाशयेत् ।

त्रिफलातोययोगेन सर्वाञ्जरायुजान्गदान् ॥११६०॥

जरायुरोगिणीनारी तच्च सेवेत पुरुषम् ।

न रातेदुप्रवीर्याणि नाऽपि कुर्यादतिश्रमम् ॥११६१॥

आ वि, जरायुरोगे ।

भाषा—लोह, चादी, मुगणं इनकीमन्में, शुद्ध पारा, गन्धक  
और शिलाजीत सब समभाग लेकर पारे गन्धककी नीलवर्ण  
कजलीमें सब चीनोंको मिलाकर चित्रककी जड़के काष्ठसे १-२  
दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे ।  
इनमेंसे १-१ गोली त्रिफलके काष्ठसे देनेसे जेरेके अटकनेसे  
चितने उपश्व होतेहैं उनसबसे यह नष्ट करताहै । जरायुरो  
गिणी स्त्री पुरुषका सह न करे, अवयवीचीजेन न खाय और  
अत्यन्त परिश्रम न करे ॥ २५७ ॥

## २५८ प्रमदेमाऽङ्कुशोरसः

विशुद्धो रसो मासमुन्मत्ततेले

दशाऽहानि तैले तथोपयुज्यस्य ।

विपाच्योऽष्टयामैः क्षति बल्यतेली

मुद्रुस्यर्णपत्राणि सूताऽष्टमांशात् ॥११६२॥

दिनं पेययेत्तत्समं गन्धकं हि

कृतां कज्जलीं तां विपाच्यार्कयामम् ।

यथा त्यक्तगन्धोर्द्विकुर्यां प्रयाति

स्वशीतं समादाय सिन्दूरकटपम् ॥११६३॥

अयं सायसत्वकृपायै विमर्श  
अयं वैजयै जातिसारै दिनेकम् ।  
तथा कोकिलाक्षस्य घञं कपायै-  
विदायांऽथ भूमौ क्षिपेद्रोलं तम् ॥११६४॥  
मृदा ह्यङ्कुलोन्मानयाऽऽच्छाद्य पश्चा-  
दरण्यापलङ्घनद्वर्हि विधाय ।  
सुशीतं मृदुस्येदमातं रसेन्द्रं  
गृहीत्वा ततो भागमानं वदामः ॥ ११६५ ॥  
रसाद्वयामवैकान्तजातीप्रसूनं  
लवङ्गं द्विभागं विभागं भुजङ्गम् ।  
सितं कान्तसज्जं विषं केशराख्यं  
त्रिजातं तथा वङ्गभस्म द्विभागम् ॥११६६॥  
अहेःफेनतापीजयोरखंभागं  
विमर्शऽथ यामं मरुद्भ्रमसूनेः ।  
विदारीवरावासकै नांगवल्ली-  
बलाशालमलीमर्करीमूलजातैः ॥ ११६७ ॥  
पयोभिश्च गोधाऽद्विरम्भासमुत्थैः  
शाताह्लासहादीप्यमुष्णसीसमुत्थैः ।  
महापत्रिकायपिहस्तिद्रवैश्च  
विभाष्यं त्रिवारं ततो गोलमस्य ॥ ११६८ ॥  
दिनं स्वेदयेत्सायसत्वकृपायै-  
निबध्याऽन्वरे वोलिकायन्त्रमप्ये ।  
अकूपारशोपस्य तैलेन भाव्यो  
द्विवारं तथा स्वर्णबीजस्य तैलेः ॥ ११६९ ॥  
तथा वैजये जातिसारस्य तैले-  
द्विवारं विभाग्योऽथ गोलं निबध्य ।  
ततो मृत्पट्टेक्षिपेत्साधारयन्ने  
पचेत्पयसत्वाद्गुशीतं ततस्त्रिः ॥ ११७० ॥  
उशीरेण भाव्यः सुगन्धेन तद्व-  
त्तथाऽज्जाङ्केनाऽथ कस्तूरिकाद्रिः ।  
विभाष्यं शिवद्विदुःखान्निः शिफाली-  
द्रवैः शातपत्राङ्गैः सिद्ध एषः ॥११७१॥  
तमेनं स्वनुर्याशकपुष्पसुतं  
निर्पेषेत पल्लव्यं वाऽस्य मात्रा ।  
लयङ्गं सिता पुष्पसारोऽनुपातं  
द्वितं क्षीरपानं विषज्याऽम्लयुग्मः ॥ ११७२ ॥  
पठित्वा च पञ्चाऽक्षरं राजमन्त्रं  
कुमारीश्च यन्त्राणि सम्पूज्य यत्नात् ।  
निर्पेषेत पूर्वोक्तरीत्या रमेन्द्रं  
निर्पेषेदसौ कामिनीसङ्गमञ्च ॥ ११७३ ॥  
त्रिदोषप्र एषोऽबलागर्घहारी  
घशीकार्यकारी महास्तम्भकारी ।  
सदा पुण्यजातयानकारी मराणां  
तथा पातकारी न चायां च कारी ॥११७४॥

यामेकवारं भजते नवाऽङ्कानां  
साऽऽजन्मदास्यं भजते विनिश्चला ।  
बहुप्रकारं भजतोऽपि सङ्गमं  
तेजो बलं नैव जहाति किञ्चित् ॥ ११७५ ॥  
रसमेनं सेवयित्वा न सेवेत स्त्रियं यदि ।  
निर्गच्छेन्नयौ वीर्यं नेत्रनाशस्तथा भवेत् ॥ ११७६ ॥  
नाऽङ्गं शोधयित्वा भावं व्रजति न च कटि-  
स्थुष्यते तस्य कान्तिः-  
हेमाभा जायतेऽष्टादशविधमनुलं  
नाशमेति प्रमेहम् ।  
नष्टं धीर्यं प्रपन्नं भवति यदि पुमान्  
सेवते रम्यकान्तां,  
पण्डो वा वाजितुल्यो जनयति तनयान्  
सिंहतुल्यप्रतापान् ॥ ११७७ ॥  
एनं रसश्च प्रमदा भजते  
कुमारिकातुल्यवपुष्मती स्यात् ।  
पतद्रसास्यादनतः पुमास्तां  
युवाऽपि यातुं न समर्थ एष ॥ ११७८ ॥  
गर्भाशयगतान्द्रोपान्दन्ति यातरुकोद्विषान् ।  
प्रमदेभाङ्कुशोनाम रसरराजः सुसिद्धिः ॥ ११७९ ॥  
१. यो. स., २. न. मा., दो, २. सु, रसपरिगत, रसाय-  
न., वाजीकरणे ।  
भाष्य—शुद्धशरेको एवमहीनेतक घटोकेलीकमे पदाये  
फिर १००रोनुक्त चित्ररके तेलमे पदाये । पदायेगमय अमि  
इनी देनी चाहिये कि रातदिनेन १ पत्र तेल जले इगनरह  
पारेका कोषनवर सोनेके कण्टरुवेधी पत्र पारेमे आठवां दिव्या  
डालर पोटे, जब गुणं अत्यय होजाय तब पारेकी परापर  
शुद्धगन्ध डालर नीलवर्ण बमली कर ६-७ कण्टमिठी  
कीहुई आनीसी दीसीमे भरके वाउकायन्त्रमे रा १२ पहर  
तीक्ष्ण अग्निदे । दीसीका मुंद गुना रहनेदे । जब गन्धक  
दीसीका मुंद रोकेले तब सोईहरी गरमशाणकामे उमे जगदे,  
ऐमे २-४ पहरन करतारहे फिर लालाघात्री दीसीके पेदे तब  
डालर देरी, जब भूमरहित छालाकामे लगाहुमा भाग सात  
बर्गका होजाय तब दीसीके मुंदमे राखियामिठी अवसा ईटरी  
दाट लगाकर कण्टमिठी बरदे, कांय थोडे समयतक धनहरदे,  
कण्टमिठी घुलनेपर फिर अधिहरदे । द्युगन्ध १२ पहरकी  
आंच देकर लडकी लगावा बन्दहरदे और उन्नी कोयने पर  
रहने दे । वादके लगावनीकत होनेपर दीसीकी कण्टमिठी  
द्वारकर साफानीमे दीसीको फोडकर गिन्दूरके रखे रणको  
काहमे छुडाने । फिर इमे पोम्मेके कायने १ रोज मदनहर  
मुनीके अग्नेदी उदी अपवा मांकेके बीसोंके लेगेने १ रोज  
मदनहर आदकलेके लेगेने १ रोज मदनहरे । तदनंतर ए-  
मपाने के कायेमे छुडोउ मदनहर मोलबनाय गोमे तरावर  
जगमे दोभंजुन मिठीमे दवापर हो अहो कण्टकी आंचे ।

स्वाङ्गशीतल होनेपर स्वेदित पारेको निकालकर अन्न और वैकान्तभस्म, जावित्री और लौंग ये पारेसे २ भाग, नागभस्म ३ भाग, चादी और कान्तलोहक्रीभस्म, शुद्ध बलनाग केसर, तज, पत्रज, इलायची और वज्रभस्म ये प्रत्येक २ भाग, अफीम और सोनामाखी आधा ३ भाग मिलाकर शङ्खपुष्पीके फूलोंसे १ पहर सर्वद्वार विदारी, त्रिफला, अजसा, पान, बला, सेन-लमा मुसला, केवाचकीजड, गोडुग्ध, लज्जाल, केलकंद, सोंफ, मापपणी और मुद्रपणी अजमोद, गोरखमुण्डी, कधी, मुलहठी, हाथीका मूद अथवा हस्तिचूर्ण पलाशकी छाल इन सबके यथासम्भव स्वरस अथवा कापोंसे ३-३ पार भावना देकर गोला बनाय कपड़ेमें बांधकर दोलायन्त्रमें पोस्तका डाय भरकर १ रोज स्वेदनकर समुद्रतोषके तैले दो भावनाएँ देकर धतूरेका तैल, मुर्गीके अण्डेकी जर्दी अथवा गाजेके धीजोंका तैल, जायफलका तैल इन प्रत्येककी २-२ भावनाएँ देकर गोला बनाय तीन-कपड़े लपेटकर भूपत्यन्त्रमें पूर्वांक प्रकाशसे दो जल्ली कपड़ोंकी आध देवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर खस, एलादिगन्ध, अगर, कस्तूरी, केबड़ेकीजड हारसिंगार और कमल इनके यथासम्भव स्वरस अथवा काढ़ेकी ३-३ भावनाएँ देनेसे यह प्रमेहमादु-शरत्स तैयार हुआ । इससे ६ रत्तीची मात्रा लेकर १॥ रत्ती शुद्धकूर, लौंग २ नाग, मिथ्री और मधु मिलाकर खावे और ऊपरसे दूधपीवे । इसमें अधिक दुग्धमा सेवन हितकारक है अन्ववर्गका त्यागकरे । लेनेके पहिले ॐ नमः शिवाय इत्येवमन्त्रका जपकरे, कुमारी और दुग्धकी पूजाकरे । इसके सेवनमें स्त्रीप्रसन्न करना उचित है, यह त्रिदोषग्रही स्त्रियोंके गर्बको हरण करता है वशीकरण है और अत्यन्त स्वप्नकारक है पुरुषोंकी नपुंसकताको दूर करता है । जिस स्त्रीके साथ एम्बारभी इसरसका सेवन करनेवाला सङ्ग करे तो वह जीने तक अन्य पुरुषोंकी तत्प मनोऽशक्तिको न दौडाती हुई अनन्यभक्ता होती है यह पुरुषी अनेक प्रकारोंके बन्धोंके साथ रमणकरता हुआभी तेज और बलकी विसीतरहकी हानिको नहीं प्राप्त होता । इस रसका सेवनकरके अगर स्त्रीसङ्ग न करे तो नेत्रोंका धीरे कम होजाता है अथवा नेत्र ही नष्ट हो जाते हैं । कमप्रेषक यदि इस रसका सेवनकरे तो कोईभी अवयव क्षिणिक नहीं होता । शुक्रार्थमें प्रायः मनुष्योंकी कम शुक्राया करती है सो इसरसके सेवन करनेवालेकी नहीं होती और शुक्ल सदा कान्ति बनी रहती है । अगारह प्रकारके प्रमेह, शुक्रदोष, नपुंसकता, इन सबको यह दूर करता है । इसरसको यदि तुड़ी औरत खावे तो कन्यासदृश अवयव हो जाते हैं युवावस्थापन्नमी पुरुष इसके सन्तोष देनेके लिये समर्थ नहीं होता । स्त्रियोंके बाल और कफसे उत्पन्न होनेवाले गर्भाशयके रोगभी इससे नष्ट हो जाते हैं ॥ २५८ ॥

२५९ प्रमेहकुञ्जरकेसरीरसः ( प्रथमः )

रसगन्धकताप्राप्तायवायव्यात्मकोत्तरम् ।

भावाः स्युस्तुलितस्तत्र गुह्यवीसत्सम्भवाः ॥११८०॥

विमर्चं मुशलीरम्माशात्मलीगोश्वरद्वयैः ।

दिग्मापं ससितं खादेन्मेहकुञ्जरकेसरी ॥ ११८१ ॥

र. को, र क ल, प्रमेहाधिकारे ।

टि०—रसगन्धकतायां मुशलीरम्मागोश्वराणां भावना न दृश्यते, दृश्यते त्वत्त्वभावना । अथाऽप्यथत्त्व भावना न कोऽपि दोषः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताप और अन्नभस्म, माग, वज्रभस्म ये सब क्रमशः भागसे लेवे और सबकी बराबर मिलोयका सत्त्व मिलाकर मुसलो, केलेका मूद, सेमली छाल और गोखर इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा कापोंसे १-१ दिन सर्वद्वार २-२ मासकी गोलिया बनाकर रखडो है । इनमेंसे १-१ गोली शक्करके साथ खाकर ऊपरसे दूध पीनेसे सब प्रकारके प्रमेह नष्टहोते हैं ॥ २५९ ॥

२६० प्रमेहकुञ्जरकेसरीरसः ( द्वितीयः )

रसगन्धाऽऽयसाऽप्राणि नागवह्नौ सुवर्णकम् ।

यज्जकं मौक्तिकं सयंमेकीरुत्य विचूर्णयेत् ॥ ११८२ ॥

शतायरीसेनैव गोलरु शुष्कमातपे ।

शुद्धा शुष्कं तमुद्धृत्य शपटे सुदृढे क्षिपेत् ॥ ११८३ ॥

सन्धिहलेपं मृदा कुर्यादन्तं च गोमयाऽग्निना ।

पुटेयावच्चतुर्यां चोद्धृत्य द्वाङ्गशीतलम् ॥ ११८४ ॥

शुष्कण खत्वे विनिक्षिप्य गोलश्च मर्दयेद्बद्धम् ।

देवब्राह्मणपूजाञ्च कृत्वा धृत्वा फण्डके ॥ ११८५ ॥

खादेद्रुकिमितं प्रातः शीतं दुग्धं पिबेदनु ।

अष्टादश प्रमेहाञ्च जयेन्मासप्रयोगतः ॥ ११८६ ॥

तुष्टिं तेजो बलं वर्णं शुक्रवृद्धिमनुत्तमम् ।

अग्ने र्वल वितनुते मेहकुञ्जरकेसरी ॥

दिव्ये रसायनं श्रेष्ठं नाऽन कायां विचारणा ॥ ११८७ ॥

नि र, र च, र ट कौ, व, र, वै चि, रसपारिजात, प्रमेह

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अन्नक, नाग, वज्र, सुवर्ण, हीरा और मोती इन सबकीभस्में समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कबलौमें मिलाकर १-२ पहर शता बरोके रससे घोटकर गोला बनाय धूपमें सुखावे । सुखनेपर सम्पुष्टमें रखकर ६-७ कारमिश्रीसे बन्दकर गडमें दूतने कपड़ोंकी आवेदी कि ४ पहलें छड़ी होजाय । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर घारीक पीसकर देवता और प्राद्वर्गोंका पूजनकर शीशीमें मर्दे । इसमेंसे १-१ रत्तीकी मात्रा लेकर ठंडा दूध पीवे । इसतरह १ महीने तक करनेसे यह १८ प्रकारके प्रमेहोंको नष्ट कर उत्साह, तेज, बल, वर्ण, शुक्रवृद्धि, अमित्रल इन सबको करके बलीपलितार्थकोसे रहित करता है ॥ २६० ॥

२६१ प्रमेहकुञ्जरकेसरी रसः ( तृतीयः )

( हेमकुञ्जरकेसरी )

हेमखर्परकाऽयोऽन्नवह्नाञ्च भागवर्द्धिताः ।

पारदः यज्जभागः स्याद्गुह्ययाः सत्यकन्तया ॥ ११८८ ॥



मर्दयेन्मुसलीरम्भाशाल्मलीगोधुरद्रवैः ।  
सिद्धो घृहृद्वयमितो मेहकुञ्जकेसरी ॥ ११८९ ॥  
सेवितो मधुना सार्द्धं धात्रीगोधुरस्ततया ।  
काथं मधुसमायुक्तमनुपानाय दापयेत् ॥ ११९० ॥  
पियेन्मधुसमायुक्तं राशौ पेयः शिवारसः ।  
मासत्रयप्रयोगेण मेहान् सर्चान्व्यपोहति ॥ ११९१ ॥  
अदमर्यां मातुलुङ्गस्य मूलं पर्युपिताऽभ्युना ।  
वेल्हास्मभिज्जलयुता मूत्रकृच्छ्रनिवारणः ॥ ११९२ ॥  
गर्भिणीशूलविष्टम्भे ज्वराऽतीसारयोस्तथा ।  
ययोक्तेनाऽनुपानेन दातव्यो भिषजा सदा ॥ ११९३ ॥

र. शं., र. मु., रसपरिज्ञात, प्रमेहे । रसपरिज्ञाते मेहेभक्के-  
सरीति नाम ।

भाषा—मुत्रं, रपरिया अववा जस्त, लोह, अन्नक,  
वन्न इनसबकी भस्में कमश्चभागसे लेवा । पारदभस्म और  
गिलोयका सत्त्व ५-५ भाग लेकर सबको १-२ पहर शुष्क-  
मर्दनकर मुशली, केलेका बंद, सेमलजी छाल और गोखरु इन  
प्रत्येकके ब्यासभन्व स्वरस अववा काथोसे भावना देकर ६-६  
रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाय  
देकर आंवले और गोखरुके कट्टेमें मधु डालकर ऊपरसे पिण्ड-  
नेसे यह समस्त प्रमेहोंको १ महीनेमें नष्टकरताहै । रातको  
सोतेसमय हर्काकाढ़ा मधु मिलाकर पिलाना चाहिये । पथरीमें  
विजोरीकी जड़ बातीपानीमें घिसकर देवे । मूत्रकृच्छ्र और  
गर्भिणीके शूल, विष्टम्भ, ज्वर तथा अतिसारमें विडङ्ग और  
पाषाणमेद के चूर्णके साथदेवे ॥ २६१ ॥

### २६२ प्रमेहकुलान्तकोरसः (प्रथमः)

सूतं वक्षं मृतं तुल्यं मृताऽम्रं सूतकारिषा ।  
लघुनं सर्वतुल्यादां सर्वमेकत्र पेपयेत् ॥ ११९४ ॥  
वदरामां घटीं कुर्यात्प्रमेहस्य कुलान्तकः ।  
लघुनं छागमूत्रेण वसामेही पियेदनु ॥ ११९५ ॥

र. र., र. शं., र. क. ल., रसायनसं., व. रा., र. का,  
यो. म., प्रमेहे ।

भाषा—पारा और वन्नभस्म १-१ भाग, अन्नकभस्म  
१ भाग, लघुन ५ भाग लेकर १-२ रोज मर्दनकर बेरबराबर  
गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खाकर बचनेके  
मृन्मे लघुनमिलाकर पीनेसे वसामेह निवृत्तहोताहै ॥ २६२ ॥

### २६३ प्रमेहकुलान्तकोरसः (मेहकुलान्तकः) (द्वितीयः)

मृतं वक्षं मृतञ्चाऽम्रं शुद्धं पारदगन्धकम् ।  
भूनिम्बं पिप्पलीमूलं त्रिकटु त्रिफला त्रिवृत् ॥ ११९६ ॥  
रसाञ्जनं विडङ्गान्दिविल्यगोधुरदाडिमम् ।  
प्रत्येकं तोलकं ग्राह्यं शुद्धमश्मजतोः पलम् ॥ ११९७ ॥  
गोपालककंदीमूलस्वरसे र्वटिकां कुह ।  
प्रमेहान्विधत्ति हन्ति मूत्रकृच्छ्रं हलीमकम् ॥ ११९८ ॥

अदमरीं कामलां पाण्डुं मृषाऽऽघातमरोचकम् ।  
अनुपानं प्रयोक्तव्यं छागोदुग्धं पयोऽथवा ॥  
धात्रीफलस्य निर्यासं काथं कौलत्थजं पिवेत् ॥ ११९९ ॥  
शै., र., घ., प्रमेहे ।

भाषा—वन्न और अन्नकभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक,  
निरायाता, पिप्पलीमूल, त्रिकटु, त्रिफला, निसोत, रसोत,  
विडङ्ग, नागरमोषा, बेलगिरी, गोखरु, अनाके छिलके ये  
सब १-१ तोला, शुद्ध शिलाजीत १ पल लेकर सबका भारीक  
चूर्णकर पारेगन्धकी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर एरण्डसरवृन्नेकी  
जड़के रसमें पोडकर १-१ माशेरी गोलियें बनाकर रखछोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली बचरी अववा गाथके दूध, आंवलेकेरस  
अथवा कुलथीके कापनेसाथ रोगकी अवस्था देखकर देनेसे २०  
प्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, हलीमक, अदमरी, कामला, पाण्डु,  
मृषाऽऽघात, अर्धचि, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २६३ ॥

### २६४ प्रमेहेकेतूरसः (प्रमेहेसेतुः)

सुतमम्रं पटशीरं मर्दयेत्प्रहृद्वयम् ।  
विशोष्य पक्वं मृषायां सर्वरोगे प्रयोजयेत् ॥ १२०० ॥  
विशोषाम्नेहरोगेषु त्रिफलामधुसंयुतम् ।  
युञ्जीत वह्नेमेकन्तु रसेन्द्रस्याऽस्य वैद्यराट् ॥ १२०१ ॥  
र. चं, र. का, रसायनसं., र. शि., र. सं., र. चि., र. झ.,  
प्रमेहे । र. चं, र. का., एतौ द्वौ प्रमथौ विहाय सर्वेषु प्रमथेषु  
प्रमेहेसेतुरितिनाम्ना व्यवहृतः ।

भाषा—पारे और अन्नककी भस्मको २ पहर बटके दूधमें  
मर्दनकर गोलाबनाय मुषारयन्त्रमें पानके अन्दर स्वेदनकर ३-३  
रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचि-  
ताऽनुपानके साथ देनेसे यह संरोगोंको नष्टकरताहै । प्रमेहोंमें  
मधु और त्रिफलाके साथ देना ॥ २६४ ॥

### २६५ प्रमेहगजकेसरीरसः (प्रथमः)

मृताऽम्रकान्ततीक्ष्णानि सूतभस्माऽभिधोषकम् ।  
मृतं नागं मृतं वक्षं मृतमण्डूमेघ च ॥ १२०२ ॥  
तुल्यं तुल्यं विचूर्ण्याऽथ मेहारे र्वाजकन्तया ।  
दिनन्तु त्रिफलाद्रावे पञ्चाङ्गैराकुलीरसैः ॥ १२०३ ॥  
कतकस्य च सारेण भावयेच्चूर्णयेद्विद्रवम् ।  
त्रिवल्लसेवनाच्चैव गोतकेण दिनेदिने ॥ १२०४ ॥  
मेहानां विंशतिं चैव सूत्राऽऽघातञ्च नाशयेत् ।  
मेहकेसरिनामाऽयं हरपादेन निर्मितः ॥ १२०५ ॥  
वै. चि., प्रमेहे ।

भाषा—अन्नक, कान्तलोह, फोलाद, पारा, नाग, वन्न,  
मण्डूर इनसबकी भस्में और समुद्रशोष, समभाग लेकर  
सबकी बराबर बकायनके बीज लेकर भारीक चूर्णकर सबको  
इकट्ठा मिलाय त्रिफला, अङ्गोला पञ्चाङ्ग, निर्मलीकाहीर इनके  
ब्यासभन्व स्वरस अववा काथोसे १-१ रोज मर्दनकर १-१  
रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली

गोतक्रे साय देतेते सय प्रकारे प्रमेह और मृताऽऽधात  
नष्ट होतैहै ॥ २६५ ॥

### २६६ प्रमेहगजकेसरीरसः ( द्वितीयः )

मृतं वरुं सुवर्णञ्च कान्तलोहञ्च पारदम् ।  
मुक्तां गुडत्वचञ्चैव सृष्टैलां पप्रकेसरम् ॥ १२०६ ॥  
समभागं विचूर्ण्याऽथ कन्यानोरेण भावयेत् ।  
द्विमापां घटिकां खादेद्गुधाऽध्रं प्रपियेत्ततः ॥ १२०७ ॥  
प्रमेहं नाशयत्याशु केसरी करिणं यथा ।  
शुक्रप्रवाहं शमयेत्त्रिरात्राऽथ सशयः ॥  
चिरजातं प्रवाहञ्च मधुमेहञ्च नाशयेत् ॥ १२०८ ॥  
र. थि., र. च., र. गु., र. स., प्रमेहाऽधिरार ।

भाषा—वज्र, सुवर्ण, कान्तलोह, पारा और मोती इनकी  
भस्में, दालचीनी, छोटी इलायची, पत्रज, नागसेसर, सब  
समभाग लेकर घारीक चूर्णकर पीऊंकारके रसमें १-२ रोज  
मर्दनकर १-२ मासेरी मोलियां बनाकर रखओड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली खाकर दूधभात खानेसे यह छुकरे प्रवाहरी १  
दिनमें नष्ट करताहै । इसीतरह बहुतदिनके प्रमेह और मधुमेहको  
नष्ट करताहै ॥ २६६ ॥

### २६७ प्रमेहगजसिंहोरसः ( मेहद्विरदसिंहः ) ( प्रथमः )

पारदाऽन्नकपो भस्म मृतं लोहाऽष्टकं समम् ।  
टङ्गणञ्चैव मध्वाज्यं प्रत्येकं सूततुल्यकम् ॥ १२०९ ॥  
चाण्डालीराक्षसीपुष्पे द्विदं मये निरुद्ध च ।  
मूपायां भूधरे पक्वं दिनेकं तत्र चूर्णयेत् ॥ १२१० ॥  
मेहद्विरदसिंहोऽयं रसः शौद्रै द्विरक्तिकम् ।  
लिह्येषाऽनुपियेत्तत्रैकं निष्कैकं टङ्गणं सदा ॥ १२११ ॥  
र. र., व. रा., यो. म., र. क. यो., र. को., प्रमेह ।

भाषा—पारा, अन्नक, अष्टलोहों ( सुवर्ण, चांदी, तांबा,  
फोलाद, वज्र, नाग, अन्नक और वान्तरा उत्तव ) कीभस्में,  
भुनामुहाणा, मधु और घृत सब समभाग लेकर सैमल और  
कपासके फूलोंसे १-१ रोज मर्दनकर गोलाबनाय मूषरयन्त्रमें  
एकदिन स्वेदनकर निरालकर रखओड़े । इसमेंसे २-२ रती  
मधुमेसाय चाटकर ४ मासे भुनामुहाणा छाछमें डालकर पिला-  
नेसे तमाम प्रमेह नष्टहोतैहै ॥ २६७ ॥

### २६८ प्रमेहगजसिंहोरसः ( द्वितीयः )

चाण्डालीराक्षसीपुष्परसमध्वाज्यटङ्गणम् ।  
रसं समांशोपरसं समं हेम्ना विमर्दितम् ॥ १२१२ ॥  
समांशं पृथिलोहं वा मूपायां विपचेत्कमात् ।  
प्रमेहगजसिंहोऽयं रसः शौद्रै द्विरक्तिकः ॥ १२१३ ॥  
र. र. स., र. गु., र. को., र. का., प्रमेह ।

भाषा—नेमल और लालकपासके फूलोंका रस, मधु, ची,  
मुहाणा, पारा और उपरस ( हस्ताल, फिटकरी, गन्धक, सुर्दा-  
सज, मैन्सिल, सोनागेरु, सफेद सुरमा और कसीस ) येसब  
समभाग, दनसवकीबराबर सुवर्ण अथवा नाग-वज्रभस्म लेकर

मर्दनकर गोलाबनाय मूषरयन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि देवे ।  
स्वादाक्षीतलोहोनेपर निरालकर रखओड़े । इसमेंसे २-२ रती  
मधुमेसाय चाटनेसे सबप्रकारके प्रमेहोंको यह नष्टकरताहै २६८

### २६९ प्रमेहगजाङ्गुशोरसः ( मेहगजाङ्गुशः )

रसेनतुल्यं कनकस्य भस्म  
पुनर्नजामूलरसेन मर्धम् ।  
तच्छाल्मलीमूलरसेन वाऽपि  
दिनत्रयं चाप्रलकीरसेन ॥ १२१४ ॥  
तदभ्रकेणैवसमानभागं  
विमर्दयेत्तस्तनिकारसेन ।  
सिद्धो भवेत्मेहगजाङ्गुशाख्योऽ-  
प्यशेषमेहाजयति प्रसह्य ॥ १२१५ ॥  
सितामधुभ्यां सकणामधुभ्यां  
वा पिप्पली शर्करया समेतः ।  
घृतो जयत्याशु यथाऽनुपाने-  
रशुकलं पथ्यमिहोपदिष्टम् ॥ १२१६ ॥  
विजर्जयेत्मेहगजाङ्गुशमिभूतः  
क्षीरं दधिश्चौद्रगुडाऽम्लमद्यम् ।  
सामुद्रनिद्रा लघुनाऽम्लतीक्ष्ण-  
घातांकपोपिहृत्तीफलञ्च ॥ १२१७ ॥

र., रसपारिजात, प्रमेह ।

भाषा—पारा और सुवर्णभस्म बराबर लेकर पुनर्नवा अथवा  
सैमलकी जहके रखे ३ रोज मर्दनकर ३ रोज आवलेके रससे  
मर्दनकरे । फिर इसमें समान अन्नकभस्म मिलाकर दासके  
रसकी भावना देकर ३-३ रतीकी मोलियां बनाकर रखओड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली खाकर, मधु अथवा पीपल, मधु अथवा  
पीपल और क्षारके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्ट  
करताहै । शुकरी ॥ बडानेवाली जो बीजैहै वे खानेकोदे ।  
दूध, दही, मधु, गुड़, चटार्द, मद्य, समुद्रतटपरसोना, लहसुन,  
तीक्ष्णपार्थ, वेणु, खी, भट्टरूया इन सबका त्याग करे ॥ २६९ ॥

### २७० प्रमेहदावानलरसः

शैवभीमवल्लयः समांशका-  
स्ताभ्रभस्म कुक्ष तत्समांशकम् ।  
तच्च गण्यपयसा विमर्दितं  
वासरत्रितयकं निरन्तरम् ॥ १२१८ ॥  
ततः शिवामर्कटिबीजयष्टि  
द्राक्षेशुगोक्षुरकखजुंरीभिः ।  
मांसीशियाखण्डसितामराल-  
पादीदधित्याऽम्बुरसेनवाऽपि ॥ १२१९ ॥  
जम्बीरनारङ्गरसेन कृत्वा  
गुडचिक्रासत्वरसेन चाऽपि ।  
विमाधितः सिद्धिमुपैति सूतो  
द्विबहुमात्रो जयति प्रमेहान् ॥ १२२० ॥

स्वीयाऽनुपानै मधुना शिवाया  
नीरेण वा शर्करया समेतः ।  
मोचाऽङ्गिनीरेण तथा प्रसृता-  
नीरेण वा गोपयसा प्रदेयः ॥ १२२१ ॥  
मधुप्लुतो हन्त्यखिलामुद्राऽङ्कुर-  
स्तथाऽश्मरीं कृच्छ्रकृजं प्रसह्य ।  
प्रमेहदायानल एष सूतः  
सर्वप्रमेहेषु नियोजनीयः ॥ १२२२ ॥

र., प्रमेहे ।

भाषा—गारा, सीसाभस्म और शुद्धगन्धक ये सब सम-  
भाग और तापमध्यम सखरी बराबर लेकर गायके दूधसे लगातार  
१ रोजक मर्दनकर हरे, केवाकके बीज, मुलद्वी, दाक्ष, ईष्य,  
गोपह, खजूर, जटामानी, हरे, खांड, मिथ्री, हंसराज, कैप,  
गुण्यवाला, जंभीरी, नारही, गिलोयका सब इनके यथा-  
सम्भव स्वरस अथवा बायोसे १-१ भावना देकर ६-६ रत्तीकी  
गोलियां बनाकर रखाछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु, हरे, सकर,  
केलेकातंद, झीरुगु, गोदुग्ध इनबनमेंसे रोगोक्थिरी देकर किसी  
एकके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्ट करताहै । मधुके साथ  
देनेसे यवाक्षीर, पयरी और मृगशृङ्गूरो दूर करताहै ॥ १७० ॥

२७१ प्रमेहध्वान्तभास्करोरसः

शाम्भो बीजं रौप्यतुर्यांशयुक्तं  
लोहं ताम्रं खञ्ज सुतेन तुल्यम् ।  
मर्ध कन्यारात्रिपध्याशिवाम्बु-  
कृष्णाऽनन्तापाटलानां रसेन ॥ १२२३ ॥  
सिद्धः सूतो रक्तियुग्मप्रमाणो  
हन्त्यामेहं शर्करारात्रियुक्तः ।  
पध्याऽङ्गोहश्रीद्रयुक्तोऽपि नूनं  
मेहध्वान्तर्ष्यसने भास्करोऽयम् ॥ १२२४ ॥

वृंहणं शीतलं धृष्यमनुपानादिकञ्च यत् ।  
सत्सर्वं धर्मयथालात्प्रमेही धर्ममाचरेत् ॥ १२२५ ॥  
र., प्रमेहे ।

भाषा—रजतभस्म ४ तो., गारा, लोहा, ताम्र, अग्रक  
इनसखरी भस्मे १-१ तोला लेकर २-३ पहर सूरी खरकर  
घातुंमार, हल्दी, हरे, आंवला, सुगन्धगाला, पीपल, जनन्त-  
मूल, पायर, इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा बायोसी  
१-१ भावना देकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखाछोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली क्षयर और हल्दीके चूर्णके साथ अथवा  
हरे, अश्लोककीछाल और मधुके साथ देनेसे यह समस्त प्रमे-  
होंको नष्टकरताहै । घातुओंको बझानेवाली, ठंडी, कृष्यबीज  
अनुपानादिमें प्रमेही न ले और धर्मका सेवनकरे ॥ २७१ ॥

२७२ प्रमेहध्वान्तविवस्वानरसः

रसाऽश्मकीं तुल्यसमानमागौ  
जम्बीरनीरेस्त्रिदिनं शिमघं ।

कुर्वीत मृपाकुहरे निवेश्य  
वह्नीं ततस्तस्य पुटानि सप्त ॥ १२२६ ॥  
बीजाहमुष्काऽक्षयुगंधातत्रः  
स्युर्भावना द्वेककुमात्रिवारम् ।  
यटीसिताकेतकजीरकमा-  
खजूरिकाजातिदलेः प्रतिस्वम् ॥ १२२७ ॥  
एवं हि सिद्धस्य रसस्यवह्नीं  
मधुप्रयुक्तः सहसा शिशूनाम् ।  
सन्तापदोषो बलहीनताञ्च

रुपाञ्च वासासलिलैः प्रमेहान् ॥ १२२८ ॥

नितर्तयद्वासरससकेन  
हुग्मौदनं स्यादिह भोजनाय ।

नीरेण यन्मूलनयप्रगाला-

न्निषेध्य तैः शर्करया समेतैः ॥ १२२९ ॥

सर्वप्रमेहानिग्निहन्ति दशो

दिनययं विंशतिपत्सरस्य ।

अग्रं ससर्पिः ससितं प्रयाज्यं

दिनानि सप्तत्रिगुणानि चाऽयं ॥ १२३० ॥

घरामधुम्यां सहितञ्च यस्य

पञ्चाऽधिका वरसरविंशतिः स्यात् ।

द्वैतद्वीनेन गद्याञ्च पथ्यं

त्रिःसप्तसहस्रानि दिनानि कार्यम् ॥ १२३१ ॥

प्रदिग्धगोधूमरसेन हन्ति

सर्पिदाद्वयस्य दिनत्रयेण ।

अग्रं ससर्पिः सगुडञ्च देयं

मधुप्लुदण्डेस्त्रिदिनं विधातुम् ॥ १२३२ ॥

अङ्गानि सम्मग्नितदिनाद्यसह-

गतानि रानि स्फुटनं दद्रीत ।

चिक्षागुडाभ्यां युतमग्रमग्नि-

न्द्राक्षादिनीरेण विमिश्रितं सत् ॥

दिनत्रयं लह्वनजं विंशतिं

विनाशयेद्भोस्तनिष्कालाभ्याम् ॥ १२३३ ॥

पथ्यं देयमुमाशम्बुधासुदेवं विनिमिते ।

पातुं जगन्ति कृष्या मेहध्वान्तविस्वयति ॥

र. र. स, र. की, र. र. कौ, र. क, र. क. थो, प्रमेहे ।

३०—र. र. की. हरमौरीस की नाम । र. क. प्रमेहर की  
नय । र. क. को उमाशम्भुतिनय, म. अरुंर गन्, तन. कनयो  
विशेषा निषोकि कन्दरीतोनजनेकिरो मरना दण की निषे ।  
नीरेण यन्मूलनयप्रगाला- स्वनं तान्मयजराभेतिरिपि सारम्भ  
मेह, प्रमेहरसे वधुमरजरे विमिश्रितमय इय बीजय बीजय  
वन्मययुजितम् ।

भाषा—गारा और अग्रकभस्म आधा ३ भाग, तुल्यभस्म  
१ भाग, लेकर जंभीरीके रसमें ३ रोज मर्दनकर मोतचनय  
गाराभस्मयुग्मे बन्दकर १० मेर रुजोटी अचरे । ऐसे ७ मर्द-

देकर बीजक(बीजका म) अभावमें असन, मोटा, बड़ेडा, ध्वात इनके कायोंकी ४-४ भावनाएं दकर कहुएकी छालक काटे की २, मुलह्दी, शम्भर, केवडा, जीरा, केलेकान्द, खजूरकी चाड़ी, जावित्री इनप्रत्येकके ययासम्भव स्वस्त अपवा कायोंकी ३-३ भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखओइ । इन मेंसे १-१ गोली मधुकेसाय देनेसे बघोंकाज्वर, शोथ, वृशता और प्यास दूरहोती है । अइसेके रसकेसाय देनेसे ७ रोजमें प्रमेहोंको नष्टकरताहै इसमें भोजन दूधचावलदेना । बगुलकी नईपत्तियोंके रसमें शकर डालकर देनेसे २० वर्षके आदमीके प्रमेहोंको ३ दिनमें नष्टकरताहै । यहापर अन्नो घी और शहरके-साय देना, पच्य २१ दिनतकरना । २५ वर्षके आदमीको त्रिकला और मधुकेसाय देना और गायके मखनकेसाय २१ दिन तक पच्य देना । ३० वर्षके आदमीको गेहूँके काठेके-साय देना यहापर तीनरोज तक घी, गुड, मधु, ईर इनकेसाय अन्नदेना । एसा न करनेसे अन्नमें दाहहोकर सूदमच्छिद्रोंसे रक्तपि तनिकलने लगेगा । एसीहाल होजाय तो इसली और गुद्वेसाय अन्नदेना और दाशक बौरहका रस पिलाना । दाश और शकर केसाय ३ रोजतक देनेसे लह्वनहूत शोषको दूरकरताहै ॥ २७२ ॥

### २७३ प्रमेहनाशनोरसः ( मेहनाशन )

लोहभस्म रसभस्म ताप्यक

गन्धकेन सहित समांशकम् ।

घटसबीजकरसेन भावितं

लोहित सकलमेहनाशनम् ॥ १२३५ ॥

र प्र सु, प्रमेह ।

भाषा—लोह, पारा, सोनामाखी इनकीभस्में और शुद्ध गन्धक सब समभाग लेकर ४ पहलक सूखा मर्दनकर इन्द्र जबके रससे १-२ दिन भावना देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखओइ । इनमेंसे १-१ गोली उचिताऽनुगलक साथ देनेसे यह तमाम प्रमेहोंको नष्ट करताहै ॥ २७३ ॥

### २७४ प्रमेहनिवृत्तनोरसः ( मेहनिवृत्तन. )

पारदस्य पले द्वे च चत्वारि गन्धकस्य च ।

लोहाऽभ्रस्यर्णमाक्षीणां नागं वज्रं पलोन्मितम् ॥ १२३६ ॥

सर्वं तद्वालुकामयन्त्रे पचेन्मृद्वग्निना क्षणम् ।

ग्राहीकुमारोमाण्डूकीभृङ्गाजसैः सह ॥ १२३७ ॥

पुनरालोच्य यत्नेन पचेद्भोमयवहिना ।

एष सिद्धो रसो ज्ञेयः सर्वान्मेहान्निवृत्तति ॥ १२३८ ॥

र को, प्रमेह ।

भाषा—शुद्ध पारा २ पल शुद्ध गन्धक ४ पल, लोह, अभ्रक, सोनामाखी, नाग और वज्र इनकीभस्में १-१ पल लेकर बारीक चूर्णकर वालुकामयन्त्रमें थोड़ीदेर पकाकर स्वाज्ञशीतल होनेपर ग्राही, पीडुआर, हुड्डा, भग्रा इन प्रत्येकके रसोंमें १-१ रोज मर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ७ कपडमिठी देकर २ सेर कण्डोंकी आवरे । स्वाज्ञशीतल होनेपर

निवालकर रखओइ । इसमेंसे ३-३ रत्ती उचिताऽनुगलक साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको दूर करताहै ॥ २७४ ॥

### २७५ प्रमेहद्वोरसः

सूतभस्म मृत कान्तं मुण्डभस्म शिलाजतु ।

शुद्ध ताप्य शिलां व्योष त्रिकलाऽङ्गोलोजकम् ॥ १२३९ ॥

कपित्थं रजनीचूर्णं भृङ्गाजनेन भावयेत् ।

त्रिशद्धारं विशोष्याऽथ मधुयुक्तं लिहेत्सदा ॥ १२४० ॥

मापमानो हरेन्मेहान्मेहवद्धरसो महान् ।

महानिम्बस्य बीजानि पिप्पला पट्टसत्तयकानि च ॥ १२४१ ॥

पल तण्डुलतोयेन घृतनिष्कद्वयेन च ।

एकीकृत्य पिषेद्याऽनु हन्तिमेहं चिरन्तनम् ॥ १२४२ ॥

शा स, र र की, र र स, नि र, वै चि, र क यो, यो त यो म, र का, र प्र सु, र सु, चि र म, रसा यनस, रसचि, भै सा, व रा, प्रमेह ।

१०-र स, र चि, व, र म, एतु प्रमेहवधेति नाम तत्र मुण्ड स्थाने लोह गृहीतम् । भृङ्गालीनरस्थाने विनवीरक कृतम् । महानिम्ब बीजानि पणिकमिश्रानि गृहीतानि, प्यावाभिवेष । र स, र चि, र क स, र सु, नि र, व यो त, यो त, या र, दो, र की, र र की, एतु मेहनाशति नाम, मुण्डस्थानेऽन्नं गृहीतम्, भृङ्गालीनकम्पा नेऽङ्गोलनीरक कृतम् । कैवल्यरानीचूर्णमिवस्य स्थाने काशानवीन रज नीनिह्न, भावनाया भृङ्गाजनेन चित्रकगृहीतमेहनाशनिवेशे । रसरसाके मेहवधेति नामेशनी इत्यने तत्तु केवलमनादादाध्यम् । वैषाचिनानगी गणकनपिलया प्रश्रिय मयनरैनि नाम्ना द्वितीयो योग कृतेऽस्ति इतिविशेष । सूतभस्मय चतुःश्रीकाऽभ्रमस्तश्चिन्ताऽप्यव्योषत्रिकलाऽङ्गुलीनविनवीरकनपिलकपासवीनरनीनां समभागान् गृहीत्वा भृङ्गचित्रभावनया रम्पनादने भवति सर्वेषां समवेसो गुणाऽपिक्वम् । अत सर्वे योगा कश्चित्कामऽन्नभावीनीया इत्यरमाक समन्ति । मानिव कन्दनवीरसत्तावोर रसगणमुन्दरस्य एतौयस्थाने इमवधेति नाम तत्र सर्वनोऽधिको रसगणमुन्दरऽन्नानविज्ञास ।

भाषा—पारा, कान्त, मुण्ड, इनकी भस्में शिलाजतु, गुड सोनामाखी, और मैनसिल, सौठ, मिरच, पीपल, त्रिकला अङ्गुलीन, वैष और हल्दी सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर एकगह मिलाकर भगरेके रससे ३० बार भावनाएं देकर १-१ माशेकी गोलियां बनाकर रखओइ । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाय खाकर बकायनके बीज ६ तण बाबलेके घोवनसे पीसकर उसमें ६ माशे घी डालकर पीनेसे बहुत पुराने प्रमेह नष्ट होतेहैं । मूत्रमें हथकी मात्रा निष्कमान कीधी बह आजकलके जमानेमें सहन नहीं होसकी इसलिये मापमान यह पाठ कर दिया है ॥ २७५ ॥

### २७६ प्रमेहभैरवोरसः ( मेहभैरव )

रसं गन्ध विष लोह जातोपनञ्च तत्फलम् ।

अग्निशोपाऽहिफेनञ्च पारसीकञ्च चित्रकम् ॥ १२४३ ॥

देवपुष्पं सम सर्वं सर्वस्तुल्यं मृताऽन्नकम् ।

भावयेत्समघा सर्वं चित्रमूलकपायकै ॥ १२४४ ॥

यथासाध्येन संयोज्यं सर्वमेहापनुत्तये ।  
अर्शसि प्रहर्षी शीघ्रं पाण्डुं शुक्रक्षयं नृणाम् ॥  
यथाऽनुपानतो हन्ति सिद्धः श्रीमेहमेखः ॥ १२४५ ॥  
र सु, दो, र र दी, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बलनाभ, लोहभस्म, जावित्री, जायफल, समुद्रशोष, शुद्ध अनीम और खुरासावी अजवाइन, चित्रकमूल, लौंग ये सब समभाग इन सबकी बराबर अप्रकृतभस्म डालकर सबका बारीक चूर्णकर चित्रककी जड़के काढ़से भावना देकर १-१ रत्तीनी गोल्या बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उरियाऽपुनानके साथ देनेसे समस्त प्रमेह, अर्श, सङ्ग्रहणी, शोथ, पाण्डु, शुक्रक्षय इनको यह अपने अपने अनुपानसे दूर करताहे ॥ १२४६ ॥

### २७७ प्रमेहमर्दनोरसः ( मेहमर्दनः )

शुद्धसीसोद्वयं भस्म निर्यूढं ध्योमिनि सप्तधा ।  
ततो विचूर्ण्यं तन्मध्ये कान्तभस्म समं क्षिपेत् ॥ १२४७ ॥  
गोमूत्ररुशिलाघातुद्रवेण परिमर्दयेत् ।  
शोषयित्वा यिमर्षाऽथ क्षिपेत्भागरूपण्डके ॥ १२४७ ॥  
मेहमर्दनामाऽयं द्विषो भालुकिना खलु ।  
शुद्धाद्वयमितो देधो निम्बाऽऽमलकसंयुतः ॥ १२४८ ॥  
निहन्ति सकलान्मेहान् सर्वापद्रव्यसंयुतान् ।  
तत्तद्रोगहर्तृ द्रव्येः सर्वरोगनिवर्हणः ॥  
रोगाऽनुरूपं दातव्यं पथ्यमन यथोचितम् ॥ १२४९ ॥  
र र सु, र सु, र को, र क, ल, र र की, प्रमेहे । रस रसौमुषा “ ज्योतिर सप्तधा ” इत्यस्य स्थाने “ हेति सप्तधा ” इति पाठ ।

भाषा—शुद्ध नागभस्मको मित्रकण्डके साथ मिलाकर अप्रकृतभस्म डालकर धौंके । इसतरह इसे ७ बार करनेसे यह भस्मरूपमें होजायगा । इसमें कान्तलोहभस्म बराबरकी डालकर समस्तसे पोषकाश शुद्ध मैनसिलको गोमूत्रमें मिलाकर उससे १-४ पहर मर्दनकर शुद्धाकर सीसेकी डिब्बीमें रखजोड़े । इस मेंसे १-२ रत्ती बकायन और आवलेके चूर्णसे साथ देनेसे समस्त उपद्रवयुक्त असाध्य प्रमेह नष्टहोतेहे । तत्परोहदराऽपुना के साथ देनेसे अन्य समस्तरोगोंको दूरकरताहे । इसमें पथ्य रोगाऽनुरूप देना ॥ १२५० ॥

### २७८ प्रमेहमुद्रोरसः ( मेहमुद्रः )

रसाञ्जनं विडं दाह विट्वं गोभृशुदाडिमम् ।  
भूनिम्बपिण्णलीमूलं त्रिकटु निफला निवृत् ॥ १२५० ॥  
प्रत्येकं तोलकं देयं लोहचूर्णैस्तु तत्समम् ।  
पलैकं शुगुलु इत्या धृतेन वाटिकां कुरु ॥ १२५१ ॥  
मापैका निमित्ता चेयं मेहमुद्ररसज्जिका ।  
श्रीमद्रहनायेन लोहनिस्तारकारिणा ॥ १२५२ ॥  
अनुपानं प्रकर्तव्यं छागोदुग्धं जलञ्च वा ।  
मेहानां विनाशितं हन्यान्मूत्रकृच्छ्रं हलीमकम् ॥ १२५३ ॥

अश्मरीं कामलां पाण्डुं मूत्राऽऽघातमरोचकम्  
अर्शसि मणकुण्डञ्च वातरक्त भगन्दरम् ॥ १२५४ ॥

र स, र सु, र च, र वि, मै, र, र र, प्रमेहे ।

भाषा—सीत, विड ( जो कि बीजोंके जारणमें काम आतेहे ), विडनमक, देवदाह, बेलगिरी, गोवर्त, अनारके छिलके, चिरायता, पिप्पला, त्रिकटु, त्रिफला और निमोत ये सब १-१ तोला, लोहभस्म सबकी बराबर, शुद्ध गुण्ड १ पल लेकर सबका कपड्याल चूर्णकर १-४ पहर गोघृत देकर कुट्टेहुए गुप्तमें धरि २ मिलावे । थोड़ा २ घृत डालता जाय । जब एकतीव्र होजाय तब १-१ मासेकी गोल्या बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शक्कीके दूध अथवा जलके साथ देनेसे २० प्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, हलीमक, पथरी, कामला, पाण्डु, मूत्राऽऽघात, अरधि, बकासीर, मण, कुष्ठ, वातरक्त और भगन्दर इनसबको यह नष्ट करताहे ॥ १२५४ ॥

### २७९ प्रमेहमृगाङ्गो रसः ( मेहमृगाङ्गः )

पारदो गन्धकं वङ्गं मृगनाभिश्च दिह्लुलुम् ।  
धान्यकं बुद्धुं चैव धात्री चैवेलालुलुम् ॥ १२५५ ॥  
त्रिकटु त्रिफला मुस्ता कर्पूरञ्च समंसमम् ।  
श्रीगन्धवारिणा चापि मर्दयेद्यामयुग्मकम् ॥ १२५६ ॥  
रक्तमूत्रधिकारांश्च हन्ति मेहकुलानि च ।  
शर्कराज्याऽनुपानेन महादाहञ्च नाशयेत् ॥  
व्यातो मेहमृगाङ्गोऽयं काश्यपेन विनिर्मितः ॥ १२५७ ॥  
वे वि, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, वङ्गभस्म, कस्तूरी, दिह्लुलु, लमस, धनिया, केसर, आवला, गेंदुला, त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोषा, कपूर येसब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर छपेद चन्दनके काढ़से १ पहर मर्दनकर १-२ रत्तीनी गोल्या बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शक्कर और धौके साथ देनेसे सब प्रकारके प्रमेह और महादाह मिटतेहे ॥ १२५९ ॥

### २८० प्रमेहरसायनम् ( मेहरसायनम् )

रजतजैकभाग स्याद्गन्धकश्च द्विभागिकः ।  
वङ्गभस्म त्रयो भागाश्चत्वारो नागभस्मनः ॥ १२५८ ॥  
पञ्चभागो भवेत्सूतो हिह्लुलो रसभागिकः ।  
खल्वे निधाय कदलीस्वत्सेन विमर्दयेत् ॥ १२५९ ॥  
दिनत्रयञ्च खज्जरीकपायेण विमर्दयेत् ।  
मापोनिमितां भस्ममात्रां युज्याद्युक्ताऽनुपानतः ॥ १२६० ॥  
पाददाह हस्तदाह शुल्मं लालाप्रमेहकम् ।  
बहुभूयं मूत्रकृच्छ्रं प्रमेहं पित्तसम्भयम् ॥ १२६१ ॥  
श्वास कासं पीनसञ्च पाण्डुं यक्ष्माणमेव च ।  
अतीसारं वीर्यहानिं वातांश्च विविधाजयेत् ॥ १२६२ ॥  
शूलमण्डविधं हन्ति सर्वज्वरहरं परम् ।

सर्वाङ्गसौन्दर्यकरं सर्वं मेहघ्नमुत्तमम् ॥

इदं रसायनवरं सर्वरोगनिबर्हणम् ॥ १२६३ ॥

रसायनस, प्रमेहे ।

भाषा—रजतभस्म १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा, वज्रभस्म ३ भा, नागभस्म ४ भा, पारदभस्म ५ भाग, हिङ्गुलभस्म ६ भाग, लेकर सबको बारीक पीसकर २ पहर सूखा मर्दनकर केला और रखकर स्वरस अथवा काढ़ेसे ३-३ रोज मर्दनकर १-१ मासेकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली रोगोचिताऽनुपानके साथ देनेसे हस्तपाददाह, शुल्फ, लाजप्रमेह और बहुमूत्र, मूत्रकृच्छ्र, पित्तप्रमेह, श्वास, कास, पीनस, पाण्डू, राज्यक्षम, अतीसार, वीर्यहानि, नानाप्रकारके वायु, आठ प्रकारका शूल, समस्तज्वर ये सब दूरहोतेहैं ॥ २८० ॥

२८१ प्रमेहशुरसः

कान्ताऽभ्रमण्डूरहरीतमोनां

विचूर्णितानां क्रमशः शरांशम् ।

रसांशभूतांशमथो शरांशं

द्वानिश्चद्योत्तरमुत्तमायाः ॥ १२६४ ॥

श्लक्ष्णं मृदित्वा शुटिकां विधाय

तक्त्रेण पीतं तलपोटकस्य ।

धीजश्च तेषां द्विगुणं प्रकल्प्य

मेहामयानांशु जयेत्प्रमेही ॥ १२६५ ॥

र र स, र र. को, प्रमेहे ।

भाषा—कान्तलोहभस्म ५ भाग, अभ्रकभस्म ६ भाग, मण्डूरभस्म और हर ५-५ भाग, त्रिफला ४० भाग, लेकर बारीक चूर्णकर पानीसे ३-४ पहर मर्दनकर २-२ मासेकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली ४ मास ठहरकरके बीजको छाछमें पीसकर इसके साथ लेनेसे सबप्रकारके प्रमेह नष्ट होतेहैं ॥ २८१ ॥

२८२ प्रमेहसेतुरसः

एकः स्रोतो द्विधा वह्नौ द्वाभ्यां द्विगुणगन्धकः ।

कूपीपम्थो महासेतुर्वह्न्यग्धानेऽप्यया विधुः ॥ १२६६ ॥

र चि, रसायनस, र को, र च, र का, प्रमेहे, र का, रसायनस, र को, एउ महासेतुरिति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, वज्रभस्म २ भा, शुद्धगन्धक ६ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर गन्धक जारण तक बालकान्यन्त्रमें पकाकर स्वाज्ञाशीतलहोनेपर निकालले । यहापर वह्नीजगह चादीका विकल्पहे चाहे वज्र डाले चाहे चादी डाले इसमें आव अधिक नहीं देना । क्योंकि वज्र अथवा चादीका जो योगहे वह केवल गस्कारार्थ नहींहे किन्तु सहयोगार्थहे । अधिक आचेदेनेसे पारा ऊपर चला जायगा और गन्धक जल जायगा इसलिये गन्धर जारण तहदी आचेदेना । अथवा गन्धक की दृष्टिहोकर कुछ दिस्सा गन्धक का जल्मे लगे उससमय आव बन्दकरदेना । स्वाज्ञाशीतल होनेपर निकाल लेना । यह

पाक प्राय दोपहरमें होजायगा इसमें गन्धक भी शामिल रहेगा ॥ २८२ ॥

२८३ प्रमेहसिन्धुतारकोरसः

निष्काऽष्टादशकस्सुतो गन्धकस्य च विंशतिः ।

तालसत्त्वाच्च दश द्वौ तद्वत्तोममलस्य च ॥ १२६७ ॥

वह्नस्य पट्ट पट्टसकात्सीसकादथ चाऽन्नकात् ।

अर्कक्षीरेण सम्मर्द्य पुटैर्द्वजपुटेन च ॥ १२६८ ॥

त्रिरष्टौ द्वादश तथा द्वाविंशत्पहरं पुन ।

बहिस्त्रिधाऽर्कक्षीरेण भावयित्वा पुनःपुनः ॥ १२६९ ॥

एवं पुटैस्त्रिभिः सिद्धः कपोतप्रीवसन्निभः ।

मेहरोगहरोऽयं स्याद्भस्मो मेहाऽन्धितारकः ॥ १२७० ॥

र र स, प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा ४॥ कर्प, शुद्धगन्धक ५ कर्प, हरितालसत्त्व और सोमल ३-३ कर्प, शुद्ध वज्र, रपर्प, सीसा और धान्याऽभ्रक डेढ २ कर्प लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर ३-४ दिन आकडेद्वधमें मर्दनकर गोला बनाय घरावसम्पुटमें बन्दकर गन्धकमें ३ पहरकी आचे । स्वाज्ञाशीतल होनेपर निकालकर पूर्वतल मर्दनकर ८ पहरकी आचे । तीसरी बार १२ पहरकी, चौथीबार ३२ पहरकी आचे । इनके बाद आकडे द्वधमें ३ भावनाए देकर गोलाबनाय पूर्ववत् ३-८ और १२ पहरकी तीन आचे । येसब मिलकर सात आचे हुई, यह कञ्चुलकी गर्दनके रज्ज का रस सिद्धहोगा । इस जगह कपोतप्रीव सन्निभ रसका मधेनुवालेने लिप्पाहे पर इसका रग लालहोगा । जिस धातुको आकडे द्वधकी अधिक भावनाए दीजातीहैं उसका रज प्राय करके लाल हुआकरताहै । इसरसी १ अथवा २ रसी बलावल देतकर मलाई वीरहके साथ देनेसे यह अमाप्य प्रमेहोंको दूरकरताहै ॥ २८३ ॥

२८४ प्रमेहहरो रसः ( प्रथमः )

धीर्यं पुरारे वेलिमन्नसज्जं

जम्बीरजोरेण चिमर्द्य भस्म ।

रसाऽर्धभागेन ददौत शुल्फ

सर्वं ततो गोपयसा चिमर्द्य ॥ १२७१ ॥

खर्जूरमत्स्यपिण्डकहंसपादी-

द्रावेण सत्त्वेन शुद्धचिकानायाः ।

मांसीशिवामर्कटदन्त्यदन्ती

वीजैस्त्वदीयैः सलिले विमाव्य ॥ १२७२ ॥

ततो रसः सिद्धयति वह्नमस्य

शुक्रप्रमेहे सति शालमलीनाम् ।

मूलाभ्युना वा कुसुमाभ्युना वा

दद्यात्पयोमककमनं योज्यम् ॥

क्षौद्रेण दुर्नाम्नि तथाऽदधरीपु

गवां पयोभि निखिलप्रमेहे ॥ १२७३ ॥

र र स, र को, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, धान्याऽन्नक सीनों सम-  
भाग लेकर जमीरीनेरगने मर्दनकर टिबियापाय सावकगन्धुमें  
बन्दकर गजुटरी आवेदे । ऐसे पारा और गन्धक बारवार  
देता जाय । जय निम्नभस्म होनाय तब इगभस्मते आधी  
ताम्रभस्म मिलाकर गोरुर, रत्नरुखी छाड़ी, राव, हंगराज,  
गुह्योत्तार, जयमाती, हरे, बचांच, जमालोटा, इनके  
यथासम्भार स्वरा अथवा हाथोंसे १-१ आना देकर ३-३  
रत्नीची गोलियां बनाकर रत्नोद्रे । इसमेंसे १-१ गोली तैम-  
लकी जड़ अथवा पूतले रत्ने साथ देनेसे शुभप्रमेह नष्ट होता है ।  
गायके दूधके साथ देनेसे तमाम प्रमेह नष्ट होते हैं । बरानीर  
और पयरीमें मधुके साथ देना । इसके प्रयोगमें दूधभातके  
तिखाय और कुछ नहीं देना ॥ २८४ ॥

२८५ प्रमेहहरोरसः ( मेहहरः ) ( द्वितीयः )

गण्येन सूतं दिगुणं प्रयुज्य

विमर्दयेत्तोलुनीरयुक्तम् ।

शुष्कञ्च रुन्नाऽप्य सुततताम्र-

चक्रञ्च तस्योपरि विन्यसेष ॥ १२७४ ॥

चक्रे यिल्लञ्च ततः प्रयुज्य

मुषांदरे प्पापय द्दुणेन ।

देन्नः तुतारस्य रसेन पिपि

ताम्रस्य चाऽस्मिन् सततं शिषेय ॥ १२७५ ॥

संसेययेत्तनुयुतञ्च पतं

मिससकामेहयिमुक्तये तत् ।

नानाप्रमेहा यिलयं प्रयान्ति

पय्यादिनः कादियिविजितस्य ॥ १२७६ ॥

र. दी., र. बि, र. सु, र. का. र. को, प्रमेहे । र. को हरणीर  
इति नाम । र. दी. हेमताररसः ।

दिग्—मग्नयुगप्यननपुनर्नचमिन् साद्वंदोत्तुकिरोपलि स  
हलभितिरमदीपितायामादिन ।

भाषा—शुद्धगन्धक १ भा, शुद्ध पारा २ भाग लेकर गोर-  
रुके रससे मर्दनकरे । जय पारेकी चमक मिटनाय तब इसकी  
टिबिया बनाकर मुचाले । इस टिबियाको मिठीके बर्तनमें  
रखकर टिबियानी बराबर शुद्धतावेकी टिबिया बनाकर अग्निमें  
छालकरके पारानाथकी टिबियापर रखदेवे । इसमेंसे गन्धक  
जलनायगा और पारा तावेकी टिबियापर लगनायगा । इस  
चक्रिकाको मुषामें रख मुद्राया डालकर घमनकरे तो इसका  
खोट तैयार होगा । इन खोटमें मुर्खण तथा तारपिठीको खोटकी  
बराबर डालकर दृढ़कं योगसे घमनकरे । जब इसकी भस्म  
होनाय तब निकालकर रखोहे । इसमेंसे ३-३ रत्नी छालके  
साथ मेवन करनेसे २१ रोगोंमें नानाप्रकारके प्रमेहनष्ट होय । इसके  
प्रयोगमें अकारादिगण और प्रमेहवर्धक चीजे बजिते हैं ॥ २८५ ॥

२८६ प्रमेहहरोरस ( मेहहरः ) ( तृतीयः )

रसस्य कर्ममादाय खल्वे निःक्षिप्य बुद्धिमान् ।

रत्नाऽगस्त्यप्रसूनानां स्वरसेन विमर्दयेत् ॥ १२७७ ॥

ससरात्रं तथा साधु श्वेतद्वारसेन च ।

निष्कष्यं दृढणकं दत्त्वा खदिरसारतः ॥ १२७८ ॥

कर्पूरं रसतुल्यञ्च सर्वमेकत्र मर्दयेत् ।

यायधिकणतां याति युक्ता चन्दनवारिणा ॥ १२७९ ॥

दरेणुमायान्वटकां च्छाद्यायां परिशोषयेत् ।

प्रातर्निशायां मय्याहे सेवनीयः प्रप्लवतः ॥ १२८० ॥

अयं मेहहृत् प्रोक्तस्तथा शोषहरः परः ।

रसो मेहहरः सर्वपिडिकानाशनः परः ॥ १२८१ ॥

र क, प्रमेह ।

भाषा—एकतोल शुद्ध पारा लेकर काल अगस्त्यके रसमें  
७ रोज मर्दनकर सफेद दूधके रणों ७ रोज मर्दनकर गुत्तावे ।  
पिर इसमें गुद्राणा और रीसोर ८-८ मासे, शुद्ध कपूर १  
तोल बालकर मर्दन करे । जय एकदम बारीक हो जाय तब  
सफेदचन्दनके काड़ेने मटर बराबर गोलियों बनाकर छायामें  
मुगाकर रखोहे । इनमेंसे १-१ गोली रोगोचिताऽनुपानके  
साथ रोजाना सीनों समय देनेसे पिडिका रहित समस्तप्रमेह  
नष्ट होते हैं ॥ २८६ ॥

२८७ प्रमेहहरोरसः ( मेहसूदनः ) ( चतुर्थः )

समांशकौ सूतवली विमृष्टौ

ताभ्याञ्च लोहातिव्रतयं समानम् ।

श्वर्दपूया मर्धं च भूधराख्यं

दत्त्वा पुदं मेहहरो रसः स्यात् ॥ १२८२ ॥

घलैकमात्रञ्च सितामधुभ्यां

धात्रीरसशौद्रयुतं प्रयुक्तम् ।

घरायमधुभ्यामपि मेहयोप-

विनाशपत्येयं समस्तमेहान् ॥ १२८३ ॥

रसायनस, प्रमेह ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ तोला, सोना, चांदी  
और सोहभस्म २-२ तोले लेकर पारे गन्धककी नीलवर्ण  
बखलीमें मिलाकर गोररुके रससे मर्दनकर गोला बनाय भूधर  
पुदमें आवेदे । स्वाद्वशील होनेपर निकालकर रखोहे ।  
इसमेंसे १-३ रत्नी छाल, मधु, अथवा आवलेका रस और  
मधु अथवा रिक्का और मधु अथवा अन्य प्रमेहनाशक अनु-  
पानोंके साथ देनेसे यह तमाम प्रमेहोंको नष्ट करता है ॥ २८७ ॥

२८८ प्रमेहहरोरसः ( मेहहरः ) ( पञ्चमः )

मृतं सूतं मृतं ताम्रं तारमस्य च हाटकम् ।

हंसपादीरसेनैव समभागञ्च खल्वेके ॥ १२८४ ॥

दिनैकं मर्दयेद्गोलं काचकूप्यां निशेयेत् ।

वाल्मुकायन्त्रके चैव द्वियामं परिपाचयेत् ॥ १२८५ ॥

स्वाद्वाशीतलमुद्धृत्य गुद्राभ्यां प्रदापयेत् ।

पञ्चगौ निम्बतुल्यानां कपायमनुपाययेत् ॥

हन्ति हारिद्रकं मेहं सर्वमेहकुलान्तकः ॥ १२८६ ॥

व रा, प्रमेह ।

भाषा—पारा, तांग, चादी और सुवर्ण इनकी भस्में समभाग लेकर हंसराजके रससे १ रोज मर्दनकर गोला बनाय काचनी शीशमें डालकर बालकायन्त्रमें दो पहरतक पकावे । स्वाह्नीशीतल होनेपर निकालकर रखओड़े । इसमेंसे १-१ रतीकी मात्रा नीमके सहस्र तिक्तशोंके पञ्चाङ्गके काढ़ेके साथ देनेसे यह हारिद्रिक प्रमेहको नष्ट करताहै । साधारणतया प्रमेह-हर योगोंके साथ देनेसे साधारण प्रमेहोंको नष्ट करताहै ॥२८८॥

### २८९ प्रमेहहोरसः ( पष्ठः )

रससौम्यशिलाताम्रं मर्दयेद्वेद्यामरुषम् ।  
कुमार्याञ्च कदल्याञ्च छिक्काकृष्णाम्बुजै रसैः ॥१२८७॥  
तद्रसैरेव संस्वेद्य मर्दयेद्रजनीद्रवैः ।  
पुटेद्रजपुटेऽभ्यक्ष्यपलाशोदुम्बरेन्ध्रवैः ॥  
विश्राक्षाराऽन्तरेऽयं तु रसो मेहहरोमवेत् ॥१२८८॥  
र का., प्रमेहे ।

भाषा—पारा, चादी, तावा इनकी भस्में, शुद्ध सैनसिल सब समभाग लेकर घीङ्गुआर, केलेका कन्द, नकछिक्नी, सफेद कोंडवा इनके रसोंसे ४-४ पहर मर्दनकर गोला बनाय ४ पहरतक इन्हींके रसोंमें स्वेदनकर इसलोकके क्षारमें बन्दकर गज पुटमें पीपल, पलाश अथवा गुलर इनकी लकड़ियोंकी आचदे । ऐसे प्रत्येक भावनामें जलग २ मर्दन, स्वेदन और पुट देता जाय । स्वाह्नीशीतल होनेपर निकालकर रखओड़े । इसमेंसे १-१ रती प्रमेहहाराऽनुपानके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्ट करताहै ॥ २८९ ॥

### २९० प्रमेहहोरसः ( सप्तमः )

राजावर्तस्य रत्नस्य भस्म गन्धकसाधितम् ।  
तुल्यश्च भस्मना तेन घनसत्त्वश्च काञ्चनम् ॥१२८९॥  
मर्दयेत्तुल्यसूतश्च तत्तन्मारणकै र्द्रवैः ।  
सत्त्वतुल्येन सूतेन तावता गन्धकेन च ॥१२९०॥  
कज्जल्या कृतया सार्धं पूर्वभस्मनि मेलयेत् ।  
त्रिदिनं मर्दयित्वा तु मूपायां विनिस्सृज्य च ॥१२९१॥  
पञ्चाङ्गकमितैः शालितुपैश्च पुटमाचरेत् ।  
स्वतःशीतं समाहृत्य भावयेत्तदनन्तरम् ॥१२९२॥  
आकुलीमूलवज्जूलबीजगुग्गुलादोद्भवैः ।  
कपायैरष्टवारान्हि पट्टचूर्णं विधाय च ॥१२९३॥  
विनिःक्षिपेत्करण्डाऽन्ते यत्नेन स्थापयेत्तत् ।  
तत्तन्मेहहरे र्द्रवैः संयुक्तो रसराडयम् ॥१२९४॥  
निहन्ति सकलान्मेहान् दुरात्मानं विवर्जयेत् ।  
अयं हि सर्वमेहहो भेषजेषु प्रशस्यते ॥१२९५॥  
देवो धर्मवतामर्थे मानवानां विशेषतः ।  
रसोऽयं नन्दिनाऽऽदिष्टः प्रकृष्टो मेहनाशनः ॥१२९६॥  
र. को., र. र. स., मेहाऽधिकारे ।

भाषा—गन्धकयोगसे सिद्धी हुई राजवर्दी भस्म, जम्बूसत्त्व, सुवर्णभस्म और शुद्ध पारा सब समभाग लेकर

समको इक्का मर्दनकर यथावत मारकवर्गोंके स्वरससे मर्दनकर फिर अश्वत्थसत्त्वकी बराबर शुद्ध पारा और गन्धककी नीलवर्ण कज्जली मिलाकर मारकद्रव्योंके स्वरससे ३ रोज मर्दनकर मूपांमें बन्दकर ५ सेर धानके छिलकोंकी आचदे । स्वाह्नीशीतल होनेपर निकालकर अङ्गोळमूल, वज्जूलबीज, सफेद गुग्गुलीजइ इन प्रत्येकके काथोंसे ८-८ बार भावना देकर सुखाकर वत्ने छानकर शीशमें रखओड़े । इसमेंसे ३-३ रतीकी मात्रा मेहहाराऽनुपानके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको दूर करताहै । इसे दुरात्माको नहीं देना ॥ २९० ॥

### २९१ प्रमेहहोरसः

वङ्गस्य भस्म भागैकं कर्पूरो भाग एव च ।  
झौ भागौ जातिपत्र्याश्च द्विभागं फरहाटकम् ॥१२९७॥  
विदारायाश्चतुरो भागा धात्रीतालोसकास्समाः ।  
पट्टाणां सिरुता प्रोक्ता सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् ॥  
गोदुग्धाद्यनुपानेन सर्वमेहहरो भवेत् ॥१२९८॥  
र बो., प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—वङ्गभस्म, शुद्धकपूर १-१ भाग, जाविरी, ज रकरा २-२ भाग, विदारीकन्द, आवले और तालीसपत्र ४-४ भाग, शकर ६ भाग, लेकर सबका घारीक चुर्णकर रखओड़े इसमेंसे ३-३ माशे गोदुग्ध वगैरहके साथ लेनेसे समस्तप्रमे नष्ट होतेहै ॥ २९१ ॥

### २९२ प्रमेहान्तकोरसः ( लघु ) ( प्रथमः )

हाटकश्चैरुभागश्च रजतश्च द्विभागिकम् ।  
वङ्गभस्म त्रिभागं स्यान्नागभस्म चतुर्गुणम् ॥१२९९॥  
रसभस्म बाजभागं पट्टभागं हिङ्गुलं तथा ।  
सर्वं खर्जूरतोयेन दिनानि त्रीणि मर्दयेत् ॥१३००॥  
मेहान्तको रसो नाम्ना सर्वमेहनिघारणः ।  
सिताक्षौद्रयुतं दद्यान्मात्रां बहूमितां निपक्व ॥१३०१॥  
रसायनस., प्रमेहे ।

भाषा—सुवर्ण १ भाग, रजत २ भाग, वङ्ग ३ भाग, नाग ४ भाग, पारा ५ भाग, हिङ्गुल ६ भाग इन सबकी भस्में लेकर सबको एकत्राह मर्दनकर खजूरकी ताड़ोसे ३ रोज मर्दनकर ३-३ रतीकी गोतिया बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली शकर और मधुके साथ मिलाकर चटानेसे यह सब प्रकारके प्रमेहोंको नष्ट करताहै ॥ २९२ ॥

### २९३ प्रमेहान्तकोरसः ( महान् ) ( द्वितीयः )

स्वर्णं तौष्यञ्च गगनं रसभस्म तथैव च ।  
कान्तलोहं ताम्रभस्म नागं विद्रुममौक्तिकम् ॥१३०२॥  
शङ्खभस्म च सर्वेषां चैकेको भाग ईरितः ।  
वङ्गस्य रसमागाः स्युः चलिश्च रसभागिकः ॥१३०३॥  
कान्तभस्म चतुर्मासं सत्यम् शुद्धं समाहरेत् ।  
भाष्यश्च त्रिकलाकायैश्चियमूलरसेन च ॥१३०४॥



चन्दनस्य कपायेण वाजिदन्तरसेन च ।  
मर्दयेत्सप्तदिवसाभ्यावाहलद्वयोन्मिता ॥ १३०५ ॥  
बहुमूत्रं चेभुमेहं लालामेहं क्षयन्तथा ।  
पाण्डुरोगं श्वासकासौ तिमिर वातजं हरेत् ॥ १३०६ ॥  
हस्तदाहं पाददाहं नष्टीर्यत्वमेव च ।  
चन्ध्या स्त्री पुत्रसम्पन्ना भयेदेव न संशयः ॥  
महामेहान्तको नाम रसो लघो महागुरोः ॥ १३०७ ॥  
रसायनस्य प्रमेहः ।

भाषा—सुवर्ग, बारी, अभ्रक, पारा, कान्तलोह, ताम्र, नाग, विट्, मोती, शङ्ख इन सयरी भस्मं १-१ भाग, वज्र-भस्म और गन्धक ६-६ भाग, कान्तभस्म ४ भाग, लेकर सबको बारीक पीस त्रिकला, चित्रमूल, सपेदचन्दन, बडी इन्ती इनसबके यथासम्भव स्वरस अथवा जारोंसे ७ रोज मर्द नकर ६-६ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचिताजुगानके साथ देनेसे बहुमूत्र, इभुमेह, लाल मेह, छय, पाण्डुरोग, श्वास, कास, वातजतिमिर, हाथपैरका दाह, नष्टशुक्रता, इनसबको यह नष्टकरताहै । इसरसको चन्ध्या खाय तो पुनर्वती होय ॥ २९३ ॥

### २९४ प्रमेहान्तकोरसः ( तृतीयः )

स्वर्णञ्च ताराऽमृतसूतमम्रं  
मण्डूरतीक्ष्णं रविनागभस्म ।  
प्रवालवैकान्तकमौक्तिकानि  
कान्तं वर्लिं बह्ममथ द्विभागम् ॥ १३०८ ॥  
खल्वे विनिक्षिप्य सुमर्दितं तत्  
फलत्रयेणाऽथ दिनत्रयञ्च ।  
तत्रोलकीकृत्य पुटं प्रदाय  
पुनर्विमर्चाऽथ सुगाढमेतत् ॥ १३०९ ॥  
तद्भ्रव्यजासाञ्च चतुर्थेभ्यः  
शिलोद्भव सूतविषं तद्वर्द्धम् ।  
लवङ्गजातीफलकुङ्कुमञ्च  
कस्तुरिका निष्कर्मितं पृथक् पृथक् ॥ १३१० ॥  
सपिप्पलीक मधुनाऽवलीढं  
फोलप्रमाणं पयसाऽथवाऽद्यात् ।  
घृताक्तया शर्करया सुतं वा  
युक्ताऽनुपातैर्विनिहन्ति रोगाम् ॥ १३११ ॥  
प्रमेहधातुक्षयधातुजान्गदा-  
न्मूत्रस्य कृच्छ्राणि विवृणुदाहम् ।  
श्वासञ्च कासं विनिहन्ति वर्णं  
जीर्णश्वराऽरोचकगुल्मरोगान् ॥ १३१२ ॥  
घन्ध्या च सम्पूय भज्जे च गर्भे  
नष्टेन्द्रिये दीपयिवर्धनं स्यात् ।  
मेहान्तको नाम रसोत्तमः स्या-  
च्छुद्धे च काये विनियोजनीयः ॥ १३१३ ॥  
वै.चि. ( ल ), प्रमेहाऽपिकारे ।

भाषा—सुवर्ण और रजतभस्म, शुद्ध बडनाग, पारा, अभ्रक, मण्डूर, फोलाद, तावा, नाग, प्रवाल, वैकान्त, मोती, कान्तलोह और वज्र इनरीभस्मं शुद्ध्यन्धक २-२ भाग लेकर १-२ पहर इन्ते मर्दनकर त्रिकलाके साथसे ३ रोज घोट कर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर २० सेर कण्डोंकी आचदे । स्वाज्ञशील होनेपर निकालकर फिर त्रिकलाके काढ़ेसे ३ रोज मर्दनकर आधेघन कण्डोंकी आचदे । स्वाज्ञशी-तल होनेपर निकालकर तोलकर चतुर्थांश शुद्ध मैनसिल और मैबसिलसे आधी पारदभस्म और शुद्धबडनाग, तथा लौग जायफल, केसर, कस्तूरी, येसब ४-४ माशे लेकर सबका बारीक चूर्णकर पूर्वचूर्णमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती मधु और पीपल केसाय अथवा दूधकेसाय अथवा घी, शकरके साथ अथवा तप्तद्रोहदाऽनुपातोंके साथ देनेसे प्रमेह, धातुक्षय, धातुगतोग, मूत्रकृच्छ्र, बडीबुद्धि जलज, श्वास, कास, जीर्णश्वर, गरोचक, गुल्म, बन्ध्यत्व, नष्टेन्द्रियत्व इन सबको यह नष्टकरताहै । इसका प्रयोग करते समय वमन निरेवनादिकसे रोगीको शुद्धकरलेना ॥ २९४ ॥

### २९५ प्रमेहान्तकोरसः ( चतुर्थः )

वज्रं नागं चाऽम्रकञ्च लोहं कान्तञ्च पारदम् ।  
ताम्रञ्च तीक्ष्णदर्दं गन्धकं टङ्गुणतथा ॥ १३१४ ॥  
रसकञ्च सामांशानि खद्वयमध्ये विनिक्षिपेत् ।  
हंसपादीरसेनैव मर्दितञ्च दिनत्रयम् ॥ १३१५ ॥  
काचकूप्यां विनिक्षिप्य बालुकायन्त्रमध्यगम् ।  
यामद्वयेन सम्पक् स्याद्वाशीतं विचूर्णयेत् ॥ १३१६ ॥  
कर्पूरं कुङ्कुमञ्चैव चातुर्जातञ्च चन्दनम् ।  
जातीफलं जातिपत्रं चूर्णांशं सकलं क्षिपेत् ॥ १३१७ ॥  
विम्बीपत्ररसेनैव मर्दितञ्च दिनत्रयम् ।  
पुनस्तु गोलकं कृत्या छायाशुष्कं सुपेषयेत् ॥ १३१८ ॥  
शर्करानयनीताभ्यां हन्ति मेहांश्चिरोत्थिताम् ।  
मेहान्तकरसो नाम रसोऽयं सर्वरोगजित् ॥ १३१९ ॥  
वै चि., ( ल ), मेहः ।

भाषा—वज्र, नाग, अभ्रक, लोह, कान्तलोह, पारा, ताम्र, फोलाद इनसबरीभस्मं, शुद्ध शिगरिक, गन्धक और छुहागा, खर्पेयस्य येसब १-१ तोले लेकर हसराजके रससे ३ रोज मर्दनकर छुहाकर काचकी शीशोंमें भरकर बालुकायन्त्रमें दीप हर पकवि । स्वाज्ञशील होनेपर निकालकर पीसकर शुद्धपूर, केसर, तज, पत्र, इलायची, नागकेसर, सपेदचन्दन, जायफल, जायिनी सब डेढ १॥ तोले लेकर बारीक चूर्णकर पूर्वोक्तसमें मिलाकर कुङ्कुम पत्रस्वरसे ३ दिन मर्दनकर १-१ माशेकी गोलियें बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मसख और मिश्रीविषाय देनेसे बहुतदिनके प्रमेहोंको यह नष्ट करताहै । और तप्तद्रोहदाऽनुपातोंनेषाय देनेसे सभीरोगोंको दूरकरताहै ॥ २९५ ॥

## २९६ प्रमेहान्तकोरसः ( पञ्चमः )

रसभस्मत्रयो भागाधुतुर्धाश्लुत्वा हाटकम् ।  
 रौप्यं तीक्ष्णं तापकञ्च नागं वैक्रान्तमभ्रकम् ॥ १३२० ॥  
 शिलागन्धकचूर्णञ्च प्रत्येकं सूततुल्यकम् ।  
 सुमुहूर्तं क्षिपेत्खल्वे त्रिफलाद्रवमदितम् ॥ १३२१ ॥  
 मोदकाभ्यायया शुष्कांस्त्रिःपुटेत्सगङ्गाशीतलम् ।  
 उशीरचन्दनरसे चतस्रो भावनास्तथा ॥ १३२२ ॥  
 चतुर्गुणाप्रमाणेन शर्करामधुसंयुतम् ।  
 मधुमेहं चेक्षुमेहं दाहतापी च नाशयेत् ॥ १३२३ ॥  
 उदकं शुक्रमेहञ्च लालातन्तुविनाशनम् ।  
 क्षयमेहं वातमेहं कासभ्यासाग्निहन्ति च ॥ १३२४ ॥  
 अद्भुदाहं शिरोदाहं नानारोगान्निवारयेत् ।  
 वन्ध्या च लभते गर्भं नष्टवीर्यः प्रसन्नताम् ॥ १३२५ ॥  
 बलपुष्टिरुतं ह्येतद् भक्षणायमृतं भवेत् ।  
 मेहान्तकरसो नाम्नो मूलरोगनिवारणः ॥ १३२६ ॥  
 वै चि, प्रमेहे ।

भाषा—पारदभस्म ३ भा, सुवर्णभस्म १ भा, चादी, फोलाद, तावा, सीसा, वैक्रान्त, अभ्रक इनकी भस्में, छद्म मैन-सिल और गन्धक ३-३ भाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर अच्छे सुहूर्तमें त्रिफलाके काठसे १-२ रोज मर्दनकर बेर बराबर गोल्या बनाकर छायामें सुखाय करावसम्पुटमें बदकर ५ सेर कण्ठोंकी आचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निवालरर फिर १ रोज त्रिफलाके काठमें मर्दनकर आचदे । इसप्रकार ३ आच देकर खस और सफेद चन्दनके काठकी ३-३ भावनाएँ देकर ४-४ रत्तीकी गोल्या बनाकर रखओगे । इनमेंसे १-१ गोली शर्कर और मधुके साथे देनेसे मधुमेह, इक्षुमेह, दाह, ताप, उदकमेह, शुक्रमेह, लालामेह, तन्तुमेह, क्षयजन्ममेह, वातमेह, कास, श्वास, अद्भुदाह, शिरोदाह, इनरोगोंको यह नष्टकरताहै । इसके सेवनसे वन्ध्या पुत्रको प्राप्त होतीहै । नष्टवीर्य प्रसन्नताको प्राप्त होताहै बल और पुष्टिको करताहै ॥ २९६ ॥

## २९७ प्रमेहान्तकोरसः ( षष्ठः )

स्वर्णञ्च तारं सूतमभ्रसूतं  
 कान्तञ्च तीक्ष्णं रविनागभस्म ।  
 प्रवालमुक्ताभसितेन युक्तं  
 प्रत्येकमेतच्च चतुःप्रमाणम् ॥ १३२७ ॥  
 वैक्रान्तभस्म त्रिगुणान्धकौ च  
 तथैकभागेन नियोजयेत् ।  
 सुहूर्तमानं विनिपिप्य यत्ना-  
 त्पलत्रयं वा रविचूर्णयुक्तम् ॥ १३२८ ॥  
 लामञ्जकैश्चन्दनवालकाम्यां  
 वसन्तद्वत्या कमलस्य कन्दैः ।  
 विभाव्य सम्यक् स्वरसैश्च सप्त  
 सर्वैः समा चाऽन सित्ता प्रयोज्या ॥ १३२९ ॥

## मायैकमानेन निपेवणीयः

सितामधुभ्यां कणया समेतः ।

सुष्टुःप्रयुक्तः करपाददाहं

लालेक्षुमेहं बहुमूत्रजातम् ॥ १३३० ॥

निहन्ति शीघ्रं क्षयमेहपाण्डून्

श्वासञ्च कासं तिमिरं निहन्ति ।

जशीसि कुपं हृदरं दरञ्च

काकादिवन्ध्या लभते च गर्भम् ॥

नष्टेन्द्रियो वीर्यभरञ्च शीघ्रं

मेहान्तको नाम रसोत्तमोऽयम् ॥ १३३१ ॥

र. क ओ, प्रमेहे ।

भाषा—सुवर्ण, चादी, अभ्रक, पारा, कान्तलोह, फोलाद, तावा, सीसा, प्रवाल, मोती इनकी भस्में प्रत्येक ४ तोले, वैक्रान्त और वज्रभस्म, छद्म गन्धक १-१ तोला लेकर सबका बारीक चूर्णकर ३ पल आकरी जड़ीनी छालका चूर्ण मिलावे । फिर पतलीखड, चन्दन, सुगन्धवाला, पावर, कमलकन्द इन प्रत्येकके यथासम्भार स्वरस अथवा काथोंसे ७-७ भावनाएँ देकर सुखाकर सबकी बराबर शर्कर मिलाकर रखओगे । इसमेंसे १-१ माशा शर्कर, मधु और पीपलके साथ सेवन करनेसे हाथ-पैरोंकी जलन, लालामेह, इक्षुमेह, बहुमूत्र, क्षयप्रमेह, पाण्डू, श्वास, कास, तिमिर, बवासीर, उदररोग, प्रदर, काकवन्ध्यादि दोष, नष्टेन्द्रियत्व और मूर्च्छादिरोग इन सबको यह नष्ट करताहै ॥ २९७ ॥

## २९८ प्रमेहारिरसः ( प्रथमः )

सूतस्ताम्रमयोऽभ्रकञ्च कुटिलं सर्वं समांशीकृतं,  
 तच्छ्रेष्ठाजलद्वयेण दिवसं सम्मर्दयेद्यत्नतः ।  
 सक्षौद्रो जयति प्रसह्य सितया वा मेहघुञ्चं महा-  
 मूत्राघातमपि प्रकटगुदजान्घट्टोन्मितो मेहहा ॥ १३३१ ॥  
 र, र. पा. प्रमेहे । रसपारिजाते प्रमेहप्रभञ्जेनेति नाम ।

भाषा—पारा, तावा, लोहा, अभ्रक, हीरा इनकीभस्में बराबर लेकर बारीक चूर्णकर त्रिफला और नागरमोथेके काठसे १-१ रोज भावना देकर सुखाने रखओगे । इसमेंसे ३-३ रत्ती मधु अथवा शर्करके साथ सेवन करनेसे प्रमेह, मूत्राऽऽपत्त, बवासीर इन सबको यह नष्ट करताहै ॥ २९८ ॥

## २९९ प्रमेहारिरसः ( द्वितीयः )

सूतखर्परकासीसं मर्दयेद्विचस्रजयम् ।  
 पला जातोफलं यष्टिमधुक हिमवालकम् ॥ १३३३ ॥  
 मधुकपुष्पं खदिरः शिवा गोक्षुरकस्तथा ।  
 कर्पूरं जटिलाऽङ्गोलौ तेन तुल्य विमिश्रयेत् ॥ १३३४ ॥  
 लाडली तुम्बिनी दुग्धं दधिमुद्ररसेः पृथक् ।  
 मर्दयेत्त्रिदिनं सिद्धस्ततो मेहगणाऽपहः ॥  
 मधुना निष्कमात्रोऽयं भवेत्क्षीरोदनाशिनम् ॥ १३३५ ॥  
 र, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पाठा, मपरिया और बर्गीस १-१ तोला  
लेजर ३ तोल शुद्ध मर्दनकर बबली बनाले फिर इलायची,  
जायफल, मुन्हादी, सपेदचन्दन, मुन्धवाला, महुआ, रौर,  
हर्, गोखरू, भीमसेनीकपूर, जदामांसे, अष्टोत्कीमन्वा, ये सब  
१-१ तोला लेजर घाटीक चूर्णसर पूर्वयोगमें मिलाकर कलि-  
हारी, कडवीतुंबी, दही और मूंग इन अन्येकके यथासम्भव  
स्वरा अथवा हार्थोमें ३-३ तोल मर्दनकर ३-३ मासोकी  
गोलियां बनासर रराटोडे । इनमेंसे १-१ गोली मधुमेया  
रानेसे तनाम प्रकारके प्रमेह नष्ट होतेहै ॥ ३५५ ॥

३०० प्रमेहारिसः ( तृतीयः )

रसकपूरकात्कर्ष कर्ष षडिरसायनम् ।  
तैलद्रुणतः कर्ष मरिचं शुक्तिमायकम् ॥ १३३६ ॥  
कज्जलीं कारयेद्देवां मर्दयेत्तिग्मुजे रसेः ।  
पादपालिकैस्ततो यध्यः कार्याधणकमायिकाः १३३७  
सशर्करं ततः प्रादेष्टव्यांदाहिनायधि ।  
प्रमेहारिरसं नात्रा पथ्यहीनोऽपि दातव्यः ॥ १३३८ ॥  
रसायनम्, उपदेशः ।

भाषा—राक्षस, गन्धर्वराजान, तेल और सुगन्ध १-१  
 तोला, गरिब १ तोला इत्यादिकी कञ्चनकर १ पल नीबूके  
 रसमें भरदकर थने प्रमाण गोलिएया बनाकर खाओगे । इन-  
 मेंसे १-१ गोली दाखरे घाप खाओगे यह ४० दिनमें उपद-  
 जन्य व्याधि और तमाम प्रवेदोंको नष्टकरताहै । इसे कप्य  
 हीन आदमीभी खाकर लाभ उठाताहै ॥ १०० ॥

३०१ प्रमेहारिरसः (चतुर्थः)

रसगौरी मरिच्य कम्बुजीरं मृदारसम्भितम् ।  
मायाकलं खादिच्छ भसितं यदपत्रजम् ॥ १३३९ ॥  
सितपूगस्य भसितं प्रत्येकं कर्णसम्भितम् ।  
माये भञ्जिततुल्यस्य कांस्ये ताप्रेण मन्वेत् ॥ १३४० ॥  
गन्धो धृतं मेढ्रित्या स्थापयेत्कृपिकाद्वरे ।  
दर्शनाधृतमिधन्तराद्वेष्टागद्वलं साह ॥ १३४१ ॥  
यत्प्रमाणं पथ्याये गोधूमं ज्वलन्तुवरी ।  
धूमं सितं पदोन्मेष कोदातक्यश्च मेधिका ॥ १३४२ ॥  
आर्द्रकं गुर्वमन्ना च गुण्डी च जीरकस्तथा ।  
जीर्णं किरकञ्जं दौषमुपदर्शकुलोद्भयम् ॥  
धूमं तच्छमयेद्धानु नाऽत्र कार्या विचारणा ॥ १३४३ ॥  
रसायनी.. सारदी ।

भारा—रगड़र, मरिच, रङ्गमैला, मुद्गमञ्ज, कानूकन,  
गौर, बदरन और लोहिद मुद्गमैली भन्म के सब १-१ लोका,  
मुद्गमञ्ज १ भारा, भेतर सबको बरीबरीगबर बजिरे बडे-  
मैले लोहिदे देहेगे जापदे बीबेगाप १-१ रोडु मन्त्रर लोहिदे  
एकजोहे । इममैले १-१ लोका छटर और बीमै मिलाकर वज-  
रेगाप बज्जिमे पारामेगे पारना इन्नाइ और निरुहोम करतोहै ।

गेहूं, ज्वार, अरहर, धी, शार, परवल, मुरई, मेथी, अदरक,  
 हुरदुर, मोंठ, जीरा ये सब इसमें पम्प्यह ॥ ३०१ ॥

३०२ प्रमेद्वारिरसः ( पद्यनः )

दङ्गणञ्च रसराजगन्धकेसीसकञ्च रसकेन संयुतम् ।  
नागवह्निजरमेन मर्दितं सर्वमेहृतरोगनाशनम् ॥३४४॥  
र. प्र. सु. र. चं. नि. र. र. क. न. प्रमेहे ।

माया—शुद्ध सुखाया, पाता और गन्धक, सीसा और  
खपरिया अन्य समभाग लेकर पानके हाथे दोतीन रोज  
मईनकर ३-३ रसीकी गोल्यां बनाकर खाओगे । इनमेंसे  
१-१ गोली मरुतन वर्गमें कबलित करके खानेसे यह गमरत  
प्रमेहको नष्ट करता है ॥ ३०३ ॥

३०३ प्रमेहारिरसः ( षष्ठः )

पारदमस्य शिलाजतु कृष्णा  
 लोहमलं त्रिकलाऽङ्गुलीजम् ।  
 ताप्यनिशारजतोपलकान्त-  
 ध्योगरजः खपुरब्ध कपित्थात् ॥ १३४१ ॥  
 सर्वमिदं परिष्कृत्य समादां  
 भृङ्गरत्नेन विभाव्य सुपेषः ।  
 विंशतिवारमिदं मधुलीढं  
 विंशतिमेहहरं शतदण्डम् ॥ १३४२ ॥  
 र. र. घ., प्रमेहे ।

भाषा—गार्हपत्य, शिलाजीत, पीपत्र, मण्डूरभक्ष्य,  
त्रिरस्य, अदोलेके बीज, सोममागी, हृन्दी, चांरीभक्ष्य,  
कान्त्यपानभक्ष्य, लोठ, मिर्च, पीपत्र, मूत्र, और क्षिप, गण  
समभग देकर बारीक बूझकर भांगरेके रसमे २० बार भांगराना  
देकर १-१ रत्नीकी गोतिया बनाकर रखोडे । इनमेमे १-१  
गोती मयुके साथ मेमेमे यद २० अक्षरके प्रमेरोको नष्ट कर-  
ताहे । यह तीक्ष्ण बाराह अजमाया हुआहे ॥ ३०३ ॥

३०४ प्रमेहारितः ( सप्तमः )

पुनरेमासकालान्तिं गर्वा क्षीरेण मर्दयेत् ।  
 त्रिदिनं क्षीरकाकोडी मर्दिनं विषमप्रयम् ॥ १३४० ॥  
 तत्रां लघुपुटं दद्याद्ब्रामाभं प्रयोजयेत् ।  
 मेतामधुस्यामपया त्रिजलासौद्रतांऽपि वा ॥ १३४१ ॥  
 दीर्घवृद्धिं बलं पुष्टिं कान्तिश्चाऽपि प्रयच्छति ।  
 प्रधानां नादानं भृष्टं परं क्षुप्यं रम्भायनम् ॥ १३४२ ॥  
 १० वा०. श्लोहाऽपि कारः ।

माया—तब, मोता, अन्न, चन्द्रादेह इनकीभावे गम  
त्य देवर बाहीक जूँवर तोड़त और धीरहाहीके समे  
-१ तोड़ मंदनर भातममदुमे बरुह १-४ मेर बातेही  
तीव देवे । म्हाप्रतीति होवेर निहानर मंदनर समोरे ।  
ममेमे १-१ एही छहर, मयु अयसा विक्रम और मरु  
ज देवेमे दद समम्य प्रमेहीके सर बागही । सीई, वर,  
शि, बाति और चन्द्रादेह देही म्हा सममदे व १०४४

## ३०५ प्रमेहारिरसः (अष्टमः)

सूतं बाहुमित्रं वलिं शशिमित्रं सम्मर्धं तत्कज्जलीं,  
कृत्वा मागधिकाशिबोत्थसलिलैः सम्मर्धं घर्षणं पुनः ।  
कृप्यां पारदकालिकां सुपिहितां मृत्स्नां शुक्रैः सप्तभिः,  
संवेष्ट्य त्रिदिनं विशोष्य लवणाऽऽपूणं क्षिपेद्गण्डके ॥  
पस्तवायामचतुष्टयं तु शिशिरां भित्त्वा च तां कृपिकां,  
तं सूतं हिलचं लवश्च गगन लोहं लवं मर्दयेत् ।  
सिद्धो बहुमित्रः सितासुमधुना वत्सादनोत्सृज्यते,  
नोचेत्क्षौद्रकणासुतश्च तरसा सर्पप्रमेहाश्चयेत् ॥  
रोगाधीभ्यरपाण्डु कामलहरिद्राभत्वपित्तोद्भवान्,  
सर्वाश्च प्रदरामपाण्ड्विजयते मेहारिनामा रसः ॥३५१॥

इ. इ. इ., प्रमेहे ।

भाषा—शुद्धपारा २ भाग, गन्धक १ भाग लेकर नीलगुण  
कज्जलीकर पीपल और हरेक कोड़ेसे १-१ पहर मर्दनकर  
सुलाकर ६-७ कपड़मिट्टी दोहुई आतशी शीशोमें भरके सुह-  
पर कपड़मिट्टी देवे । सुतेपर लवणयन्त्रमें ४ पहरकी मध्यम  
अग्निदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर शीशोमेंसे रसको निकालकर  
इसमेंसे २ भाग लेकर अन्नक और लोहभस्म १-१ भाग मिला-  
कर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती शकर, मधु अथवा गिलोयके  
साथ अथवा पीपल और मधुके साथ देनेसे सम्पूर्ण प्रमेह,  
राजयक्ष्म, पाण्डु, कामला, पीलापन पित्ताधिरस्य, प्रदर, इन  
सबको यह नष्ट करताहै ॥ ३०५ ॥

## ३०६ प्रमेहभण्डीरवरसः (मेहभण्डीरवः)

पिप्पौ गन्धरुसूतकौ समलवौ सङ्गमूल्या युतौ,  
मर्द्यौ श्रीकलकार्थोबहुकलीप्राक्षो गराऽस्त्रिद्वैः ।  
प्रत्येकं दिवसत्रयं सुरकुतासखेन यल्लोमिमितो,  
हृन्मन्मेहराग भयेद्रसवरो मेहभण्डीरवः ॥ ३५२ ॥

र, र पा, र ॥ सु. प्रमेहे ।

टि०—रसकाशुपाकरे अत्य योग्य भातकीखरसेन मर्दन विधाय  
बहुयुग्ममात्राया मधुनुपानेन प्रमेहादितिसारवो न्यिषेण इकोऽस्ति, नाम च  
मेहाङ्गुल इति स्वयिनम् । परन्तु स योगोऽध्यादभिन्न । भातकी खरमशो  
बनाया भक्तिश्रेष्ठ सा अत्रैवाऽनुष्ठेया । शुद्धबीमलयोगेननुकृत्यामिषा  
ऽऽवहति सामन्तिकारणवशात्कदाचित्तर प्रतिहृत्वा भास्येत तर्हि तयोभो  
न करणीय इति सर्वं समग्रमस्य ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और बद्धमस्य समभागलेकर  
नीलगुण कज्जलीकर नारियल, मगैरल, बहुफली, मगदी, निफला  
और चित्रक इन प्रत्येकके स्वरस अथवा कायोंकी ३-३ रोज  
भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इन  
मेंसे १-१ गोली गिलोयके साथके साथ देनेसे समस्तप्रमेह  
नष्टहोतेहै ॥ ३०६ ॥

## ३०७ प्रमेहभकेसरीरसः (वसन्तकुसुमाकरः)

हेमसूतौ च लोहाऽन्नं बद्धमस्य क्रमाद्बहु ।  
पञ्चभागाऽमृतं सप्त मालतीगोक्षुरोद्भवैः ॥ ३५३ ॥

मेहभकेसरी नाम धात्रीचूर्णं भवेदनु ।

अनुपानविशेषेण मधुना सर्वमेहजित् ॥ ३५४ ॥

र क यो, प्रमेहे ।

भाषा—सुवर्ण १, पारा २, लोह ३, अन्नक ४ और वध ५  
इतयन्की मध्यम बद्धमसागसे लेकर शुद्धवज्रनाग ५ भाग डाल  
कर सबका बारीक चूर्णकर मालती और गोखरूके रसकी ७-७  
भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इन-  
मेंसे १-१ गोली आवलेके चूर्ण और मधुके साथ अथवा  
तत्तद्रोगहराऽनुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको  
नष्टकरताहै ॥ ३०७ ॥

## ३०८ प्रलयानलोरसः

पारदं वत्सनामञ्ज हिङ्गुलं दृङ्गणं समम् ।

त्रिस्तारं पञ्चलवणं दीप्यं कृष्णाजीरकम् ॥ ३५५ ॥

मृतं तीक्ष्णं मृतं ताम्रं सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ।

कटुत्रयकपायेण बालुकायन्त्रके पचेत् ॥ ३५६ ॥

पड्यामान्ते समुद्धृत्य फणिपित्तेन भावयेत् ।

गुज्रामात्रं प्रदातव्यं सर्वेषां सक्षिपातिनाम् ॥

अनुपानविशेषेण रसोऽयं प्रलयानलः ॥ ३५७ ॥

वै चि, सक्षिपाते ।

भाषा—शुद्धपारा, बलनाम, शिंगरिफ, और सुहागा,  
सखी, यवशर, पलाशशर, पाचोन्नमक, अजवाइन, कालीजीरी,  
लोह और ताम्रभस्म सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर त्रिकटुके  
काठमें एकदिन मर्दनकर सुलाकर बालुकायन्त्रमें ६ पहरकी  
अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर कालेसर्पके  
पित्तकी १ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रख  
छोड़े । इसमेंसे १-१ गोली अनुपानविशेषसे देनेसे यह समस्त  
सक्षिपातों को दूरकरताहै ॥ ३०८ ॥

## ३०९ प्रलयानलरुद्ररसः

( प्रसन्नभैरवः, कालाशिवः )

हिङ्गुलोत्थरसाद्रागो द्वौ भागौ गन्धकस्य च ।

वाणभागी खगोदन्तौ कालमाणा मनःशिला ॥ ३५८ ॥

दृङ्गणं नेत्रभागञ्च रसकादनुभागकाः ।

एकभागान्तु नेपालं नेत्रभागं हलाहलम् ॥ ३५९ ॥

दरदं चाऽग्निभागञ्च द्वौ द्वौ च ताम्रलाहयोः ।

खल्वे रसैरशेषान्तु क्षीरेणाऽऽकस्य मर्दयेत् ॥ ३६० ॥

सिन्धुवाराऽग्निधनूरजम्बीरैः कारवेह्यैः ।

विषचेचात्रपात्रान्ते द्वियामं बालुकाऽग्निना ॥ ३६१ ॥

स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य खल्वमप्ये विमर्दयेत् ।

गन्धतालं विषं म्लेच्छं भागार्धं निक्षिपेत्ततः ॥ ३६२ ॥

दशमूलकपायेण मर्दयेद्यामयुग्मकम् ।

पिप्पलीवृहतीपक्वफलनीरेण मर्दयेत् ॥ ३६३ ॥

पञ्चकोलकपायेण मर्दयेद्यामयुग्मकम् ।

बहुमात्रप्रमाणेन शृङ्गवेररसेन च ॥ ३६४ ॥

योजयेत्तरुणे पित्तश्लेष्मवातजरेऽपि च ।

हृद्याहिके तरुणे चाऽपि चातुर्यिकशिरात्रिके ॥१३६५॥

प्रत्यहान्तरिते चाऽपि घातुगे चाऽस्थिगेऽपि वा ।

अन्येश्च विविधे देहि जनिते रुजि योजयेत् ॥१३६६॥

दाहस्थेदोलरणे जाते मुहुर्मुहुर्दुष्पागते ।

पयः शालयोदनं पथ्यं दधिनकसमन्वितम् ॥१३६७॥

सितयामिश्रतोयेन नारिकेलाम्बुना तथा ।

कदलीफलपक्वानि सर्वे च मधुरा रसाः ॥१३६८॥

ताम्रमूलं चन्द्रसंयुक्तं देयं तत्र भिषग्भैरवः ।

घापीकूपतडागादिज्वानं कुप्योद्ययेच्छया ॥१३६९॥

प्रलयानलवृद्धाऽऽख्यो रसः कालाऽग्निभैरवः ।

प्रसन्नभैरवो नाम्ना कप्यते प्राणिनां हितः ॥१३७०॥

शिवेन दलितोऽचिन्त्यकिरातेनोदितः पुरा ॥१३७०॥

र. क. यो., वा., व. रा., वै. वि., स्तायनम्., र. व. ज्वरा-  
धिकारः ।

टि०—रमयनम् प्रउषकालाग्रिद्वयम् इति नाम । स्तयनम्  
मृत्युञ्जय इति नाम अग्निचोऽन्तरं विरिजयेत्यत्र न स्तयने । बहु-  
प्रत्ययवाचाद्रमयनिरात्रेण पुटितं वाट सममादित इति प्रतीयते ।

भाषा—हिमलोत्थ पारा १ भाग, शुद्धगन्ध २ भाग,  
अन्नक और गोमन्तीहरिताल ५-५ भाग, शुद्धमेनसिल ३ भाग,  
मुनामुहागा २ भाग, शुद्धरूपरे अथवा जस्तमन्म ६ भाग,  
शुद्धजम्बूका १ भाग, खर्सा विप अथवा शुद्ध बछनाग २  
भाग, शुद्धदिगारिक २ भाग, ताम्र और लोहमन्म २-२ भाग,  
लेवर सवरा भारीक पूर्णछर पारदगन्धककी नीलरंग कम्बलीमें  
मिलाकर आठका दूध, सभाज, चित्रमूल, घृतता, जंभीरी,  
कैला इतके यथागन्ध स्वरस अथवा बाधोंसे १-१ रोज  
मर्दनकर गोला बनाय तापप्राप्ते बन्दर घालनायन्त्रमे २ पहर  
की भाग देवे । हराजरीताल होनेपर निकालकर शुद्ध गन्धक,  
हरिताल, बछनाग और दिगारिक आधा भाग भाग मिलाकर  
दामूल, पीपन, वनभाटिके पत्र, पत्रोल इतके बाधोंसे २-२  
पहर मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखोड़े । हननेसे  
१-१ गोली भरारोरे नरसमे देवेने तरुण पित्तश्लेष्मज्वर,  
वातज्वर, हृद्याहिक, घातुर्यिक, शिरात्र, खता, घातुर्य, अतियम,  
नानालरुहे दोषमे होनेवाला ज्वर, दाह और रवेद युक्त ज्वर  
इन सबको दूर करगड़े पथ्यमें दही, छाछे गांध आन अथवा  
दूधभात देना, घाटरका पचन, नारियलका पानी, पेहेदेके, सय  
छाहेके मुरारिनाथ, कपूरयुक्त ताम्बू, ये सब देना । बाघड़ी,  
झा, तागाव बगैरमें मेषेड आन करे । इसको बड़ी प्रत्यक्षाऽ-  
नलवृद्ध, बड़ी कालाऽग्निभैरव और बड़ी प्रसन्नभैरव  
नामसे पुकारवेहे ॥ १०५ ॥

### ३१० प्रलापान्तकरसः

सौभाग्यमागधीनुण्डोमरिचानां पृथक् पृथक् ।

नुदपष्टरं बीज नयमापकसमिमतम् ॥१३७१॥

लवङ्गनिफलाम्बुपारदान्प्रतिकोन्तकान् ।

नलजम्बूकजद्वैः पिप्पुा गुञ्जाद्वयमित्ताम् ॥१३७२॥

अष्टादशाङ्गकोयेन व्याध्यादिजनितेन वा ।

बृहदाव्यांदिजातेन घटीं दद्यात्प्रलापके ॥१३७३॥

वृ. क., सधियाते ।

भाषा—मुनामुहागा, पीपन, लौंग, पिप्पला, शुद्ध गन्धक और  
पारा ६-६ मासे लेकर वारीकपूर्णकर पारिगन्धककी नीलरंग-  
कम्बलीमें मिलाकर नलगर और सोनापाटाके बाधोंसे १-१ रोज  
मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखोड़े । हननेसे  
१-१ गोली अष्टादशाङ्ग अथवा व्याध्यादि अथवा बृहदाव्यां-  
दिवापके साथ देनेसे प्रलापन घटिगातरहोताहै ॥ ११० ॥

### ३११ प्रवालपञ्चामृतोरसः

प्रवालमुकाफलशङ्खशुक्ति-

कपर्दिकानाञ्च समांशभागाम् ।

प्रवालमात्रं द्विगुणं प्रयोग्यं

सर्वैः समांशं रविचुग्ममेव ॥१३७४॥

पकीकृतं तरलजल माण्डमये

क्षिप्वा मुने बन्धनमप योजयम् ।

पुटं विद्वेष्याद्विशीतले च

उक्त्य तद्रूपं भवेत्करण्डे ॥१३७५॥

निर्यं द्विपारं प्रतिरोगयोगः

यत्तुप्रमाणेन प्रयोज्यमेव ।

गुल्मोदरप्लीहविषकफास-

भ्यासाधिमार्गान्धकफमाकर्तार्यान् ॥

अजीर्णमुत्रारुहदामयम्

बालप्रहारी परमं प्रशस्तम् ॥१३७६॥

मेहामयं मूत्ररोगं मूत्रकृच्छ्रं तथाऽऽमरीम् ।

नाशयेन्नाऽत्र सन्द्देहः सत्यं गुदयस्यो यथा ॥१३७७॥

पथ्याधितं भोजनमादरेण

समाचरेत्प्रिमलचित्तवृत्त्या ।

प्रवालपञ्चामृतामृतामधेयी

योगोत्तमः सर्वगदाऽपहारी ॥१३७८॥

यो. र., स्तायनम्., वि. र., व. य., दुग्मे ।

भाषा—संघा २ भाग, मोती, पट्ट, मोतीचीपीप, पीली-  
पीली इतकी भागे १-१ भाग लेकर सबकी बराबर आठका  
दूध छाछर मिश्रिके बन्धने भर मुगमुदरके मज्जुकी  
भाँचे । स्वाजरीकृच्छ्रोनेपर निहलनर पीपीमें रखोड़े ।  
हानेसे १-१ रत्ती मुख नाम मधु प्रदी लम्पेकोविनाशनामी  
के साथ देनेसे दुग्मे, उदर, पीप, बन्धन, कफ, भण,  
मन्दागि, कफाश्लेष्म, अजीर्ण, उत्रार, हृत्ता, घातुर्य, प्रमेह,  
मूत्ररोग, मूत्रकृच्छ्र, प्लीहा, कफाश्लेष्मोको दूर करगड़े ।  
पथ्य होनेपि बरता । इसको लम्पेगदाऽपहारीकण १११ ॥

## ३१२ प्रवालयोगः ( प्रथमः )

पिवेत्तया तण्डुलघावनेन  
प्रवालचूर्णं कफमूत्रकुच्छेत् ।

च. सं., ग. नि., मूत्रकुच्छेत् ।

भाषा—चावलों के धोवनसे प्रवालकी पिष्टी करके । इसमेंसे १-१ माथा चावलों के धोवनके साथ देनेसे कफमूत्रकुच्छ निवृत्त होता है ॥ ३१२ ॥

## ३१३ प्रवालयोगः ( द्वितीयः )

प्रवालमुक्ताञ्जनशङ्खचूर्णं  
लिह्यात्तथा काञ्चनगैरिकोत्थम् ॥ ३१७९ ॥  
मु. सं., पाण्डुधिकारः ।

भाषा—मुंगा, मोती, सफेदसुरमा और शङ्खभस्म इनको गोमूत्रके साथ देनेसे अथवा सोनागैरिकीभस्म गोमूत्रके साथ देनेसे पाण्डुरोग निवृत्त होता है ॥ ३१३ ॥

## ३१४ प्रवालयोगः

पला प्रवालकं हिङ्गु लघणश्च समं भवेत् ।  
मद्येनोष्णेन तर्पितं मेहं ससिकतज्जयेत् ॥ ३२८० ॥  
मे. सं., प्रमेहाधिकारः ।

भाषा—इलायची, प्रवालभस्म, भुनाहींग, सेंधानमक ये सब समभागलेकर घाटीकचूर्णकर १-१ माथेकी मात्रा उष्ण-मद्यके साथ लेनेसे यह सिक्तासहित प्रमेहोंको नष्ट करता है ३१४

## ३१५ प्रवालरसायनम्

चतुःपलं प्रवालस्य भस्मनो मृततारकम् ।  
तत्समं द्विगुणं ताम्रं प्रवालमर्दभागिकम् ॥ ३३८१ ॥  
त्रिंशद्विभागिकं धर्जं षोडशांशश्च नीलकम् ।  
ध्योमसत्वं समं सर्वैस्तालकं सर्वतः समम् ॥ ३३८२ ॥  
विमर्शं लिङ्गिनीतायै र्थावदिनचतुष्टयम् ।  
सर्वाङ्गशुद्धसूतेन तस्माद्विगुणमन्यकैः ॥ ३३८३ ॥  
विहितां कज्जलीं सम्यग्द्राघयित्वा यथापुरा ।  
प्रवालादीनि भस्मानि विनिक्षिप्य विमिश्रय च ॥ ३३८४ ॥  
निर्वाप्य गोघृतैः सम्यग्द्राघाशुद्धपुरातनैः ।  
शरावसम्पुटे रुद्धा घृताक्तं स्वेदयेच्छनैः ॥ ३३८५ ॥  
विचूर्ण्य भावयेद्भृङ्गस्ते वीरांश्च सप्त च ।  
व्योषाऽऽज्यसहितं हन्ति ज्वररोगं दिनैस्त्रिभिः ॥ ३३८६ ॥  
क्षयश्च मण्डलाघ्नं प्रहणीं पाण्डुकामले ।  
कुन्तकामलिकारोगमुदावर्तं महोदरम् ॥ ३३८७ ॥  
प्रमेहं मेदसो वृद्धिं वातव्याधिं कफाऽऽप्रयम् ।  
गुदरोगश्च मन्दाग्निं भूत्रघातमशेषतः ॥ ३३८८ ॥  
स्मरमन्दिरजं व्याधिं घन्ध्यारोगांश्च गात्रजान् ।  
व्योषाऽऽज्यचित्रतायैश्च मद्यपानमशेषतः ॥ ३३८९ ॥  
भूयोभूयो विसृज्यति देहिनी यस्य आयते ।

रसोऽयं तस्य दातव्यो मण्डलानां त्रयं खलु ॥  
आमरोगे च दातव्यो भिषगिर् वत्सरावधि ॥ ३३९० ॥  
र. च., रसायने ।

भाषा—प्रवाल और रजतमस ४-४ पल, ताम्रमस ८ पल, ताम्रसे आधी प्रवालपिष्टी और ३० वां भाग, हीरेकीभस्म तथा षोडशांश नीलमस और सबकी बराबर अन्नरसत्व, इन सबचीजोंके बराबर शुद्धहरिताल लेकर सबका बारीक चूर्णकर शिवलिङ्गीके अन्नस्वरसे ४ रोज मर्दनकरे । सब पिण्डसे आधा शुद्ध पारा और पारिसे दूना शुद्ध गन्धक लेकर नीलवर्णकजलीकर बेरके कोयलों पर इसको पिघलाकर प्रवालादिक समस्त द्रव्य धीरे २ मिलावे । कुलकर रहमायतो १२ वर्षका पुराना गायका घी ढालकर एकाविकरे । फिर इसको गोघृतसे चिकनेकियेहुए घारावमें ढालकर घारावसम्पुटक भूधरायनमें स्वेदनकरे । स्वाज्ञ-शीतलोहेनेपर निकालकर बारीकचूर्णकर भंगरेके रससे ७ दिन मर्दनकर १-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिकटु और घीके साथ देनेसे ३ रोजमें यह ज्वरको नष्ट करता है । आधे मण्डलमें क्षय, प्रहणी, पाण्डु, कामला, कुन्तकामला ( कुम्भकामला ), उदावर्त, महोदर ( जलोदर ), प्रमेह, मेदोदरि, वातव्याधि, कफरोग, गुदरोग, मन्दाग्नि, भूत्रघात, योनिरोग, वन्ध्यारोग, शरीरजरोग, इन सबको यह नष्ट करता है । त्रिकटु, घी और चित्रककाय इनके साथ देनेसे समस्त मद्यपानरोगोंको नष्ट करता है । जिस आदमीको बारम्बार हैजा हुआ करता है उस आदमीको ३ मण्डल तक देना । आमरोगमें १ बपैत देना ॥ ३१५ ॥

## ३१६ प्राचेतसं चूर्णम्

त्वक् सप्तपर्णात्कुटजतलनिम्बा-  
वृद्धामयोशीरनतानि ताप्यम् ।  
रोधं विदध्यान्नयमे नवाह्नं  
प्राचेतसं चूर्णमुदाहरन्ति ॥ ३३९१ ॥  
लौहेऽथ हैमे त्वय राजते वा  
पात्रे स्थितं सन्ननि भूपतीनाम् ।  
क्षौद्रेण लोहं सचराचराणि  
विषाणि हन्याद्भुवि मानुषाणाम् ॥ ३३९२ ॥  
चि. क., विषाधिकारः ।

टि०—अत्र नवमं=नवमद्रव्य लोभ तत् नवाह्नं नव अन्नानि अर्था-  
न्नाया यस्य सत्रवाह्नमिति व्याख्येयम् । कैश्चित् नवाह्नं प्राचितम् विद-  
ध्यादिति निबोधितं तत्र सत्यम् १ नवमं नवाह्नं विदध्यादित्यर्थकं स्यादिति  
सहृदयैरालम्बनीयम् ।

भाषा—सप्तपर्ण, कुटज, नीम, नागरमोथा, कुठ, खस, तगर, उद सोनयासी ये सब १-१ भाग और लोह १ भाग लेकर सबका इक्षदा चूर्णकर लोह अथवा सुवर्ण अथवा चांदीके पात्रमें रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ माथे मद्यके साथ चाटनेमें स्थावर और जन्म दोनों विषोंको यह नष्ट करता है । राजालोगोंके घरमें इसका हमेशा रहना अत्यावश्यक है ॥ ३१६ ॥

## ३१७ प्राणदापर्वटी

सुताऽऽऽयोहिवद्गोपणविषमखिलां-

शेन गन्धेन लौहां,

कोलाशौ चिद्रुतेन क्षणमथ मिलितं

ढालितं गोमयस्ये ।

रम्भापत्रेऽमुनाऽन्येन च दृढपिहितं

प्राणदा पर्वटीस्या-

रपाण्डौ रैके प्रहृण्यां ज्वररुजि कसने

यक्ष्ममेहाऽऽशिमाच्ये ॥ १३९३ ॥

प्राणदा पर्वटी सैया भापिता शम्भुना स्वयम् ।

तत्तद्रोगोऽनुपानेन सर्वरोगविनाशिनी ॥ १३९४ ॥

पृ यो. त, नि र, र च, यो र, क्षयाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपात, अभ्रक, लोह, नाग, यज्ञ इनरीमस्ये, कालीमिर्च, शुद्ध बजनाग, देसब समभाग और सबरी बराबर शुद्ध गन्धक लेकर पारोगन्धककी नीलवर्णकजली कर बेरके कोयलोर लोहेकी कड़ाहीमें धृतयोगसे गलाकर बाकी चीजोंको मिलादे । एकदम गलजानेपर ताजे गोबरपर रखते हुये केलेके पत्तेपर डालकर दूसरे पत्तेसे ढककर गोबरसे ढकावे । स्वाज्ञवी-तल होनेपर निकालकर रखओगे । इसमेंसे पीपलप्रतिकेसाथ आधीरत्तीसे ५ रत्तीतक माना बझार खावे और उसीक्रमसे कमकरे । ऐसे जलतक पूर्ण आरोग्यलाभ न हो तबतक इसी-मको जारी रख्ये । एकदम आराम होनेपर आधी रत्तीकी मात्रा पर काकर छोड़ेंगे । इसके सेवकसे पाण्डु, प्रवाहिका, प्रहणी, ज्वर, कास, यक्ष्म, प्रमेह और अभिमान्य नष्ट होतेहैं । तत्तद्रोगोऽनुपानके साथ देकर रोगोचित पच्य पालन करनेसे यह सभीरोगोंको नष्टकरतीहै ॥ ११७ ॥

## ३१८ प्राणनाथरसः (प्रथमः)

लोहभस्म पलैकान्तु द्विपलं भृङ्गजद्रचम् ।

घराभाङ्गीमयं द्रावं पलैकैकं नियोजयेत् ॥ १३९५ ॥

पलैकस्मिन्निफलोत्थे सर्वे भर्ज्यश्च खपरि ।

लौहांशं माक्षिकं शुद्धं मर्द्यं पूर्वोदिते द्रव्ये ॥ १३९६ ॥

रुद्धा त्रिभिः पुटेः पाच्यं द्रव्यं मर्द्यं पुनः पुनः ।

मृतं सत्त्वं मृतं यद्वं निष्कं निष्कं विमिश्रयेत् ॥ १३९७ ॥

द्वौ निष्कौ शुद्धगन्धस्य चतुर्निष्का वराटिका ।

एकीऽन्ये पुटे पाच्यं पूर्वलोहविमिश्रितम् ॥ १३९८ ॥

पूर्वोक्तैस्तु द्रव्यं मर्द्यं पुटेनैकेन पाचयेत् ।

सप्तनिष्कान्मरीचानां तुल्यद्वन्द्वण्यो दंश ॥ १३९९ ॥

मेलयेद्य पृथक् सर्वं प्राणनाथाऽऽह्वयो रसः ।

भक्षयेत्प्रिकपादार्धमसाध्यं राजयद्रमनुत् ॥

शोफोदराऽशोमहणीज्वरगुल्महरं तथा ॥ १४०० ॥

नि. र, र को, र का, र र, क्षयाधिकारे । र प्राणनाथरस इति नाम । तथाच "वराभाङ्गीमयं द्रावं पलैकैकं नियोजयेत्" इति पाठो न दृश्यते, तथा च वरस्याने नामं नियोजितम् ।

भाषा—लोहभस्म १ पल, भंगरेका रस २ पल, त्रिफला और भाङ्गीका रस १-१ पल लेकर पहिले त्रिफलाका रस मिट्टीके खपड़ेमें डालकर उसमें लोहेको मिलाकर सेके । रस सुखजानेपर लोहकी बराबर शुद्ध सोनाभाबी डालकर भंगरा और भाङ्गीके रसोंसे कमसे मर्दनकरे । रससुखजानेपर गोला बनाय सुवरयन्त्रमें रखकर २ सेर बण्डोंकी आचदे । स्वाज्ञ-शीतल होनेपर निकालकर फिर दोनों रसोंसे मर्दनकर पुटेदे । ऐसे तीनवार करके चौथीवार पारद और ब्रह्मभस्म ४-४ मासे मिलाकर शुद्धगन्धक ८ मासे, पीलीकौड़ीकी भस्म १ कर्प मिलाकर पूर्वोक्त रसोंसे मर्दनकर १ पुटेदे । स्वाज्ञशीतल होनेपर निकालकर मिचं १॥ कर्प, शुद्धसुहागा २॥ कर्प मिलाकर रखओगे । इसमेंसे १-१ माया उचिताऽनुपानके साथ देनेसे अमाप्यराजयक्ष्म, शोच, उदर, बवासीर, प्रहणी, ज्वर और गुल्म इनसबको यह नष्ट करता है ॥ ११८ ॥

## ३१९ प्राणनाथरसः (द्वितीयः)

अयोरजो विंशतिनिष्कमानं

विभाषितं भृङ्गरसाऽऽदकेन ।

घटूरभाङ्गीत्रिफलारसेक्ष

तुल्यांशताप्यं विपचेत्पुटे ॥ १४०१ ॥

सुतञ्च निष्कं समभागतुल्यं

गन्धोपलाहौ चतुरो वराटात् ।

पक्त्वा पुटाऽग्नौ समलोहचूर्णो-

त्पचयेत्तथा पूर्वरेसेन मिश्रात् ॥ १४०२ ॥

चूर्णेऽस्मिन्मरिचान्सप्त तोलयद्वन्द्वणकान्दश ।

संयुजेत्सप्तपृथक्त्रिफलां प्राणनाथाऽऽह्वयोदितः ॥ १४०३ ॥

अर्द्धपादो रसाङ्गश्चः केवलद्राजयक्ष्मभिः ।

शोफोदराशोमहणीज्वरगुल्माद्युपद्रुतेः ॥ १४०४ ॥

र. र. स, रसवि, राजयक्ष्मणि ।

टि०—प्रथमप्राणनाथाद्रूपेण साम्यभावद्वयवि प्रविद्यामानत्वात्-रस्युक्त पाठो श्रुति इति विभावनीयम् ।

भाषा—शुद्धलोहेका वारीकृत् ५ कर्प लेकर भंगरा, पदूर, भारङ्गी, और त्रिफलाके ४-४ प्रस्थ रसोंकी भावना देकर सुहावे फिर ५ कर्प शुद्धसोनाभायी डालकर भंगरेके रसमें घोट टिकिया बनाय सुखाकर गरपुटकी आचदे फिर पदूर, भाङ्गी और त्रिफलाके रसोंमें घोटघोटकर गरपुटकी आचदे । ऐसे ४ वजपुट देनेकेबाद शुद्धपात और तुल्य ४-४ मासे, शुद्धगन्धक ८ मासे, पीली कौड़ी १ कर्प लेकर उन चीजों पर गन्धक की नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर पूर्वोक्तोंसे टिकिया बनाय गरपुटकी आच दव । इसकेबाद लोहभस्म ५ कर्प, मरिच १॥ कर्प, शुद्ध तुलिया और सुहागा दार्द २॥ कर्प मिलाकर रखओगे । इसमेंसे ४-४ रत्ती उचिताऽनुपानकेसाथ देनेसे राजयक्ष्म, शोच, उदररोग, बवासीर, प्रहणी, ज्वर और गुल्मादिक सब नष्ट होतेहैं ॥ ११९ ॥

## ३२० प्राणवह्नभोरसः ( प्रथमः )

वरदादुत्थितं सूतं काश्मीरोद्भवगन्धकौ ।  
 लौहं ताम्रं घटादश्च तुल्यं हिङ्गुफलत्रिकम् ॥१४०५॥  
 स्नुहीक्षीरं यवक्षारो जैपालो दन्तिका त्रिवृत् ।  
 प्रत्येकं शाणभागान्तु छागीक्षीरेण पेयेत् ॥१४०६॥  
 चतुर्गुणं घटी खादद्धारिणा मधुना सह ।  
 प्राणवह्नभनामाऽयं महानान्दभापितः ॥१४०७॥  
 श्लेष्मदीपं समाऽऽलोभ्य युक्त्या च त्रुटिवर्धनम् ।  
 निहन्ति कामलां पाण्डुमानाहं शरीपदं तथा ॥१४०८॥  
 गलगण्डं गण्डमालां यूपानि च हलीमकम् ।  
 ऊरुस्तम्भं शूलशोथौ सङ्घहग्रहणीकृयेत् ॥१४०९॥  
 धार्मि मूर्च्छां धर्मं दाहं कासं श्वासं गलग्रहम् ।  
 असाध्यं सन्निपातञ्च रक्तगुल्ममरोचकम् ॥१४१०॥  
 वातरक्तं तथा शोषं कण्डू विस्फोटकाऽपचोम् ।  
 नाऽतापःपत्तरं किञ्चित्कामलाऽतिघृज्जापहम् ॥१४११॥

र. सं., ध., र. चि., भै. र., र. क., र. सु., र. चं., पाण्डुरोगे ।

टि०—केयुचिद्वत्पुत्रं अयं पात्रो गुल्मेऽपि धितस्तत्र पूर्वाऽपरशानवि-  
 स्मृति मूलम् । उपरितनाऽद्वैतलोऽपि ज्वरप्रमदप्रदफला इति तु केनाऽ-  
 पि न विचारितम् ।

भाषा—विंगरिफसे निकालाहुआ पारा, केसर, शुद्ध  
 गन्धक, लोह, ताम्र, पीलीकौडी और तुल्य इनकीमसमें, भुना-  
 हाँग, त्रिफला, शूराकादूष, यवक्षार, शुद्ध जमालगोटा, दन्ती  
 और निशोत ये प्रत्येक ४-४ मासे लेकर बारीक चूणकर पारे  
 गन्धककी नीलवर्ण कजलीमें मिलापर बकरीके दूधमें २-३  
 दिन मर्दनकर ४-४ रत्तीकी गोलियाँ बनाकर रखओगे । इनमेंसे  
 १-१ गोली मधु अथवा जलके साथ देना । श्लेष्मकी न्यूनाऽ-  
 धिकता देखकर मानामें न्यूनाऽऽधिक्य करलेना । इसके सेवनसे  
 कामला, पाण्डु, आनाह, शीपद, गलगण्ड, गण्डमाला, गण,  
 हलीमक, ऊरुस्तम्भ, शूल, शोथ, सङ्घहग्रहणी, वमन, मूर्च्छा,  
 भ्रम, दाह, कास, श्वास, गलग्रह, असाध्यसन्निपात, रक्तगुल्म,  
 अरोचक, वातरक्त, शोष, छगली, विस्फोटक, अन्धवी इनवक्को  
 यह नष्टकरताहै । कामलाको दूरकरनेमें इसके सदृश अन्वयोग  
 नहींहै ॥ ३२० ॥

## ३२१ प्राणवह्नभोरसः ( द्वितीयः )

रसं विपं मलमम्रं गन्धकञ्च मनःशिलाय् ।  
 मर्दितं पर्यट्टावे वज्रमुपास्तरे क्षिपेत् ॥१४१२॥  
 विपाच्यं भूधरे यन्त्रे स्वाङ्गशीतलमुदरेत् ।  
 खल्वमच्ये विनिःक्षिप्य मत्स्याजशिलिपिचकैः ॥१४१३॥  
 पाचितं याममावन्तु गुजामात्रं प्रदापयेत् ।  
 गुल्मवातं निहन्त्याशु सर्वपातविकारानुत् ॥१४१४॥

व. रा., वै. चि., गुल्मवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, बजनाय, सोमल, अम्रकमस, गन्धक  
 औरमैनसिल सबसमभाग लेकर नीलवर्ण कजलीकर पित्तपात्रके

रससे १-२ रोज मर्दनकर गोला बनाय वज्रमुपामें बन्दकर  
 सूधरयन्त्रमें अग्निदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर मछली,  
 बकरी और मोरके पित्तोंसे १-१ भावना देकर १-१ रत्तीकी  
 गोलियाँ बनाकर रखओगे । इनमेंसे १-१ गोली वातहृद्य-  
 धानके साथ देनेसे गुल्मजात बिना समस्त वातविकारोंको यह  
 नष्टकरता है ॥ ३२१ ॥

## ३२२ प्राणिकल्पदुभोरसः

सूतं गन्धं कान्तपापाणमिध्रं  
 प्राहैर्वीजैर्मर्दयेदेकघस्रम् ।  
 गोलं कृत्वा दृक्कणेन प्रवेष्ट्य  
 पश्चान्मृत्लागोमपाभ्यां धमेत् ॥१४१५॥  
 शुष्के यन्त्रे सखपातप्रधाना-  
 किट्टे सूतो यद्दतामेति जूनम् ।  
 शुद्धं पश्चात्क्षारकाचप्रयोगा-  
 लेज्जातुल्यं सूताभावर्येत्तु ॥१४१६॥  
 चपत्रे गोलः स्थापितोवासरार्ध-  
 रोगान्स्वार्वां हन्ति सौख्यं करोति ।  
 यद्वा दुग्धे गोलकं पाचयित्वा  
 दद्याद् दुग्धं पिप्पलीभिः क्षयेत् ॥१४१७॥  
 लौहे पात्रे पाचयित्वा तु देयं  
 शुष्के पाण्डो कामले पित्तरोगे ।  
 वाते गोलं व्योपघातारितैलं  
 पन्था तैलं गन्धतैलं ददीत ॥१४१८॥  
 भाङ्गीमुण्डीकासमर्वाऽऽदरूप-  
 द्रावे गोलं पाचयेच्चूष्मनुत्तये ।  
 कासे श्वासे तज्ज दद्याद्रुपायं  
 मार्च्चीकाकं पिप्पलीचूष्मयुक्तम् ॥१४१९॥  
 यस्मिन्नेगे यः कपायोऽस्ति चोक्त-  
 स्तस्मिन्गोलं पाचयित्वाकपायम् ।  
 दद्यात्सद्रागनाशाय पथ्य-

मुकोगोलः प्राणिकल्पदुभोरस्य ॥ १४२० ॥

यो. म., रसायनं., आ. प्र., र. दी., रसायने ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, कान्तपापाणऔर पलाशके बीज  
 समभाग लेकर १ रोज मर्दनकर पानीके संयोगसे गोलाबनाय ऊपर  
 मुद्राकेवलपर करदेना । सुखनेपर मिठी और गोबरका लेपकरदेना  
 फिर सत्पातनयन्त्रमें रखकर घमनकरना । इससे पारा किस्म-  
 होकर बन्धको प्राप्त हो जायगा । इसरो मुहंगा और काचकेसाथ  
 गलाकर साफ करके बराबरके सुतर्णके साथ गोलीरूपमें ढाललेना ।  
 इसगोलीको वर्षामें सुधमें रखनेसे समस्तरोग दूरहोकर आदनी  
 सुखी होताहै । अथवा इसगोलीको दूधमें ढालकर थोड़ा गरमकर  
 पिप्पलीका योड़ासा चूषं ढालकर पिलानेसे क्षय दूर होताहै ।  
 लोहेके पात्रमें दूधके साथ पत्ताकर पिलानेसे शुष्कपाण्डु, कामला  
 और पित्तरोग नष्टहोते है । त्रिभङ्गके बल्कसे एण्डीका तैल पका-  
 कर उसमेंसे इसगोलीको योड़ी देर पकाकर निकालले और



उसतैलमे गन्धकका तैल मिलाकर देनेसे वातव्याधि दूरहोताहै । भारती, गोरखमुण्डी, कर्तोदी, अद्वस इनके रसोंमें इसगोलीको पकाकर देनेसे श्लेष्मरोग दूरहोतेहैं । कासश्वासमें भाज्यादिवायव्ये महुएका आसव और पीपलका चूर्ण डालकर देना । जिसरोगका जो काढ़ाहै उस उसमें इसगोलीको पकाकर देनेसे तत्तत् समस्त रोगोंको दूरकरतीहै ॥ ३२२ ॥

### ३२३ प्राणेश्वररसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं मृताऽप्यं विपसंयुतम् ।  
समं तन्मर्दयेत्तालमूलीनैरेक्ष्यहं बुधः ॥ १४२१ ॥  
पूरयेत्कृपिकां तेन मुद्रयित्वा विशोषयेत् ।  
सप्तभि मृत्तिकावस्त्रै वैद्ययित्वाऽथ शोषयेत् ॥ १४२२ ॥  
पुटेकुम्भप्रमाणेन स्याद्वाशीत समुच्चरेत् ।  
गृहीत्वा कृपिकामध्यान्मर्दयेद्यं दिनं ततः ॥ १४२३ ॥  
अजाजी त्रिषक हिङ्गु स्वर्जिका टङ्गुणं जगत् ।  
गुग्गुलुः पञ्चलघणं यवक्षारो यवानिका ॥ १४२४ ॥  
मरिचं पिप्पली चैव प्रत्येकञ्च समानतः ।  
एषां कपायेण पुनर्मावयेत्सप्तधाऽऽसवे ॥ १४२५ ॥  
नागवल्लीद्वलयुतः पञ्चगुञ्जो रसेश्वरः ।  
द्यान्मध्वज्वरे तीव्रे कोष्णं घारि पिबेदनु ॥ १४२६ ॥  
प्राणेश्वररसो नाम्ना सन्निपातप्रकोपजित् ।  
शीतज्वरे दाहपूर्वे गुल्मे शूलं त्रिदोषजे ॥ १४२७ ॥  
घातिष्ठतं भोजनं दद्यात्कुर्याद्यादनलेपनम् ।  
तापौद्रेकप्रशमनो नानाऽस्तीसारनाशनः ॥  
भवेद्यं नाऽत्र सन्देहः स्यात्स्वप्नञ्च लभते नरः ॥ १४२८ ॥

र. स, र म, भै र, र की, यो म, र म, र का,  
रसायन स, ज्वरे ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भा, गन्धक २ भा, अन्नकम्लम और शुद्धबछनाग १-१ भागलेरर घारिकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण बज्जलीमें मिलाकर तालमूलीके स्वरसे ३ रोज मर्दन कर मुलाकर ७ कपडमिठी दीडई आतशीशीशीमें बन्दकर कपडमिठीसे मुहवदकर कुन्ममुटकी आच देवे । स्वाद्वाशीतल होमेपर शीशीमेंसे निकालकर एकरोज मर्दनकर जीरा, चित्रक-मूल, भुनाहींग, समी, सुहागा, फिटकरी, गुग्गुल, पाचो नमरु, यवक्षार, अजवाइन, मरिच और पीपल ये प्रत्येक इसयोगानी बराबर लेकर सबका कोथ बनाकर ७ बार घुपयें भावना देकर ५-५ रतीकी गोलिया बनाकर रखोजे । इसमेंसे १-१ गोली पानमें रत्नकर नवज्वरोंमें देवे । यदि ज्वर बहुततीव्र मात्रामें होतो थोडा कमसे गरमपानी पिलादे । इसके सेवनसे सति पात, शीतज्वर, दाहज्वर, त्रिदोषजगुल्म और शूल येसब नष्ट होतेहैं । इसके देनेके बाद रोगीकी जिस चीजपर इच्छाहो वह खानेको देना । चन्दनप्रस्थि शीतस्तुतोंका लेपकरना । यह श्वरकी उत्कृष्टताने दूरकरताहै । और अतिसारका नाश करताहै ॥ ३२३ ॥

### ३२४ प्राणेश्वररसः (सर्वाङ्गसुन्दरः) (द्वितीयः)

अन्नसत्त्वं पातयित्वा मस्मीकुर्याद्विचक्षणः ।  
त्रिफलातालमूलीजै रसैः समर्धं सम्पुटेत् ॥ १४२९ ॥  
शरावसम्पुटे क्षिप्यवा वाराहेण ततः परम् ।  
थावद्भस्मीभवेत्सर्वं मर्दयित्वा पुटेत्कमात् ॥ १४३० ॥  
इत्थं मस्मीकृतं व्योम समं सूतं मृतं तथा ।  
गन्धकं शोधितं कृत्वा प्रत्येकञ्च पलंपलम् ॥ १४३१ ॥  
खल्वे निक्षिप्य मुशलीनैरेः सम्मर्दयेद् दृढम् ।  
दिनत्रयं प्रयत्नेन कल्कं सम्पादयेत्ततः ॥ १४३२ ॥  
सनालायां काचकृप्यां तं कल्कं निक्षिपेद् बुधः ।  
काचकृप्यां मुखं कम्पात्खट्विन्या यत्नतो निपक्व ॥ १४३३ ॥  
कृपिकां लेपयेत्पञ्चाद्विना कर्पटयुक्तया ।  
सर्वाङ्गं शोषयेत्पञ्चादातपेऽतिखरे बुधः ॥ १४३४ ॥  
क्षिपेद् भूधरके यन्त्रे कृपिकां तां त्रिमागिकाम् ।  
कुङ्कुटोद्युतं दत्त्वा स्वाद्वाशीतलतां गतम् ॥ १४३५ ॥  
निर्धूय कर्पटमूर्धं खट्विनीरससंयुताम् ।  
कृपिस्थं मर्दयेत्सर्वं सूक्ष्मचूर्णतु कारयेत् ॥ १४३६ ॥  
तन्मध्ये प्रक्षिपेदेतदौषधं चूर्णितं भृशम् ।  
क्षारत्रयं पञ्चपटु त्रिकटु त्रिफला पुरम् ॥ १४३७ ॥  
याहीकजं मद्रयवं त्रिजगद्विजयादलम् ।  
वैश्वानरश्चाजमोदो यवानी च सर्माशतः ॥ १४३८ ॥  
पारदस्य प्रमाणेन ग्राह्यं सर्वमिदं ध्रुवम् ।  
सूक्ष्मचूर्णं विधायैतत्सर्वं सूते विनिःक्षिपेत् ॥ १४३९ ॥  
शुष्कमदनयोगेन सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ।  
एवं सिध्यति सूतेन्द्रः सर्वरोगकृते पटुः ॥ १४४० ॥  
नागवल्लीदलेनैतं सूतं युञ्जीत बुद्धिमान् ।  
गुञ्जापञ्चप्रमाणेन सूतेन्द्रः सर्वरोगहा ॥ १४४१ ॥  
अहर्मुखे समुत्थाप्य सूतेन्द्रं भक्षयेद्बुधः ।  
अनुपानं प्रयुञ्जीत कपोष्णं सलिलं सदा ॥ १४४२ ॥  
सुलुकद्वयमानञ्च नाऽधिकं सम्प्रपाययेत् ।  
तुदभाये चारमेकं शीतं घारि पिबेद्दिने ॥ १४४३ ॥  
क्षाराऽम्लविदलं वर्ज्यं भोजनं तैलसम्भयम् ।  
तैलाभ्यङ्गं शाकजातं वर्जयेच्छयनं दिवा ॥ १४४४ ॥  
आचरेद्भस्मवर्ज्यञ्च हितसेवी सदा भवेत् ।  
अहितं वर्जयेद्यत्नाद्रससेवाविधौ नरः ॥ १४४५ ॥  
एवं संसेव्यमानोऽयं रसो रोगाश्रितयेत् ।  
निश्चेतनत्वं यो याति सन्निपातात्कथञ्चन ॥ १४४६ ॥  
प्राणेश्वरं रसं दद्यात्तस्याऽपि निपगुत्तमः ।  
युजयित्वा देवविप्रकुमारी योगिनी रसम् ॥ १४४७ ॥  
निजशक्त्यनुसारेण रसेन्द्रं योजयेत्ततः ।  
अन्यथा नैव सिद्धिः स्याद्रसेन्द्रे सेयितेऽपि च ॥ १४४८ ॥  
सन्निपातं निहन्त्येव रसो युक्त्या निपेयितः ।  
ज्वरान् सर्वाश्च गृहीहान् शुल्म पञ्चविधं हरेत् ॥ १४४९ ॥

विकारान् चातजांश्च लं परिणाममव हरेत् ।  
कामलां पाण्डुरोगञ्च मन्दाग्निं ग्रहणीमपि ॥१४५०॥  
शिववत्सेवितो हन्ति रसः प्राणेश्वरो रुजः ।  
इति प्राणेश्वरो नाम्ना रसः सर्वगदाऽपहः ॥१४५१॥  
दृष्टप्रभावः सृष्टोऽयं लोकोपकृतिहेतवे ।  
देवीशास्त्राऽनुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥१४५२॥

रसाल, र र स, रससागर, र म्, शुल्मे ।

टि०—रसाऽलङ्कारे गजाऽद्विनी शब्दाऽङ्गानां तत्तत्स्थाने निगदिजयादल  
नियोजितम् । गजाद्विनीशब्देन दुग्धुलविलिखिते युनानी वैषके प्रसिद्ध  
बीजं योज्यम् । केचित्तु गुञ्जामिनीति पाठ मत्वा गुञ्जा नियोज्यमिति तत्तु  
न सम्बन्धुभावेन तद्रूपभावात् । गुञ्जाम्बुके साहस्य गच्छतीति गुञ्जा  
किनी अत्रापि ॥ एवाप्ये प्रगतेभवति गुञ्जापत्रे तत्राप्य साहस्यमाव  
हति । अतएवाऽङ्गा कृष्णपुष्पा तदप्यहारं कुर्वन्तीति विभावनीयम् ।

भाषा—अन्नकका सत्त्व निकालकर त्रिफला और ताल  
मूलीके रससे १-१ रोज मर्दनकर सुखाकर बराहपुटकी आचदे  
जबतक भस्म न हो तबतक पूर्वोक्तसोमें मर्दनकरके पुट देवा  
जाय । जब भस्म होजाय तब उसमें पारेकीभस्म और शुद्ध  
गन्धक १-१ पल मिलाकर तीनरोज मुसलीके रससे मर्दनकर  
क्लकबनाले । उसक्लकको आतशी शीशीमें भरके खाड़ियामिही  
की डाट लगादे और ऊपरसे ६-७ कपड़मिगीकर अच्छीतरह  
सुखाकर छोमें ३ भागतक गाड़कर कुम्भपुटके बराबर ऊंचा जङ्ग-  
लोकण्डोंका पुटदे । स्वाहशीतल होनेपर कपड़मिही और डाटको  
हटाकर शीशीको साफकरके रसको निकालले । फिर उसमें  
सब्जी, सुहागा, यवक्षार, पाचौनमक, त्रिकटु, त्रिफला, गुगल,  
भुनीहींग, इन्द्रजव, भाग, चित्रकमूल, अजमोद, अजवायन  
इनसबको समभाग लेकर बारीक चूण करके पारेके बराबर  
मिलाकर १-२ रोज मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे ५-५  
रती पके पानके रसमें खाकर दो तुल्य बोझागम जल पीवे,  
प्यास न हो तो एकही तुल्य पीवे । हार, अम्ल, दाल,  
तेलके पदार्थ, तैलाम्बह, सम्पूर्ण शाक, दिनका शयन, इनको  
छोड़कर हितकारक पदार्थ और श्रमार्थ का सेवनकरे । सति-  
पातकी निधेननावस्थामें देव, ब्राह्मण, कुमारी और योगिनीका  
शचयसुसार पूजनकर इनरसका योगकरे, पूजनके विना फल नहीं  
होता । इसरसके देनेसे सनिपातादिकज्वर, शीहा, पाचप्रकारका  
शुल्म, वातजविरार, शूल, परिणामशूल, कामला, पाण्डु,  
मन्दाग्नि और ग्रहणी येसब नष्ट होतेहैं । यह कईवारका  
परीक्षितहै ॥ ३२४ ॥

३२५ प्राणेश्वररसः ( सिद्धाद्यः ) ( तृतीयः )

गन्धेदाऽम्रं पृथक्वेदभागमन्यच्च मागिकम् ।  
स्वर्जाटङ्गयवक्षाराः पञ्चैव लघुणानि च ॥ १४५३ ॥  
वराग्व्योपेन्द्रबीजानि द्विजिरीऽम्रियवानिकाः ।  
सहिह्रुबीजसारञ्च शतपुष्पा सुचूर्णिता ॥ १४५४ ॥  
सिद्धप्राणेश्वरः सूत प्राणिनां प्राणदायकः ।  
माप्रेकं भक्षयेदस्य नागवह्नीदले युतम् ॥ १४५५ ॥

उष्णोदकाऽनुपानञ्च दद्यात्तत्र पलत्रयम् ।  
ज्वराऽतिसारेऽतिसृती केवले वा ज्वरेऽपि वा १४५६  
ज्वरे त्रिदोषजे घोरे ग्रहण्यादिगदेऽपि च ।  
वातरोगे तथा शूलं शूलं च परिणामजे ॥ १४५७ ॥  
र स, र च, र क, भै र, र, चि, रसायनस, र, सु, र  
का, यो म, र सि, ज्वराऽतिसारे ।

टि०—र स, र च पतयोर्गन्धयोर्द्वितीयस्थाने भागे व्यत्याम ठूला  
सर्वरसाऽधिकतया प्रक्षिप्य पाठान्तर स्थापित स नोचिन, सत्परमत्त्व  
त्रैव निवेशनीय इति सुधीभिरावलीनीयम् ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, अन्नकभस्म ४-४ भाग,  
सब्जी, सुहागा, यवक्षार, पाचौनमक, त्रिफला, त्रिकटु, इन्द्र  
जव, सपेदजीरा, स्याहजीरा, चित्रक, अजवाइन, भुनाहींग,  
विज्जतण्डुल और सोंफ येसब १-१ भाग लेकर सबका बारीक  
चूणकर पारे गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर १-२ पहर  
घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा पानमें रखकर खाकर  
ऊपरसे गरमजल पीनेसे ज्वरातिसार, अतिघारकी अधिकता,  
साधारण ज्वर, त्रिदोषज ज्वर, ग्रहणी, वातरोग, शूल, परि-  
णामशूल इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३२५ ॥

३२६ प्राणेश्वररसः ( चतुर्थः )

शम्बुकतुल्यं रसगन्धकलक  
पित्तै र्बिमर्द्याऽथ पुट ददीत ।  
जयारसेनैकदिन विमर्द्य  
बहुधाएकं वातमवे ददीत ॥ १४५८ ॥  
मरीचचूर्णेन घृताम्वितेन  
प्राणेश्वरः सप्तदिनं त्रिसप्त ।  
मरीचमाज्येन युतं निशायां  
जयां निपेयेत ततः सुखी स्यात् ॥ १४५९ ॥  
र दौ, र म्, अतिघारे ।

टि०—कपुचिलरसकपु शम्बुकतुल्यमिति पाठा दृश्यत, तत्र शम्बुक  
मत्स्यमत्स्यारो भागा द्राक्षा पारदगन्धयोस्तेष्वेकै इति विधेय ।

भाषा—घोंपाकीभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक समभाग  
लेकर नीलवर्णकजलीकर यथाशक्ति पत्रपित्तोंसे मर्दनकर गोला  
बनाय भूषणपुटमें आचदे । स्वाहशीतल होनेपर निकालकर  
एकदिन भागके रससे मर्दनकर ३-३ मासोकी मोलिये बनाकर  
रखछोड़े । इसमेंसे १-१ मोली घृत और कालीमिर्चोंके साथ  
७ अथवा २१ दिनतक देनेसे वातजअतिसार निरत होता  
है । रातमें सोतेसमय शक्त्यनुसार मिन, पी और भागका  
सेवन करे ॥ ३२६ ॥

३२७ प्राणेश्वररसः ( पञ्चमः )

रस गन्ध समं शुद्धं मृतं ताम्र मृतं रसम् ।  
दिनेकं तालमूल्याद्य वाराहा रसमर्दितम् ॥ १४६० ॥  
मुसल्या वा द्रवे मर्द्य यथालाभं दिनं ततः ।  
निरुद्धं काचकूप्यां तु वालुकायन्यागं पचेत् ॥ १४६१ ॥

दिनं वा भूधरे पत्न्या समादाय विचूर्णयेत् ।  
त्रिक्षार पञ्चलवर्ण त्रिकलाद्योपचित्रकैः ॥ १४६२ ॥  
सजीरकैः सेन्द्रयै हिंदुगुगुलदीप्यकैः ।  
सर्वैः समैः पूर्वसमं चूर्णीकृत्य विमिश्रयेत् ॥ १४६३ ॥  
मापमात्रं प्रदातव्यं किञ्चिदुष्णोदकं पिबेत् ।  
सन्निपाताऽचले घञं सज्जरप्रहणीप्रणुत् ॥  
कुर्यात्प्राणपरित्राणमतः प्राणेश्वरो रसः ॥ १४६४ ॥

नि र., र. सु., र. का., र. क यो., र. को., सू प्र., सन्निपाते ।  
टि०—र. म., र. म. मा., दो., र. शं., व. रा., र. पा., णु  
प्रणेषु अस्मिन्नेव पठे ताप्रत्ययेऽत्रक नियोज्य रमान्तरा लीकृता ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और पादमूलक सब  
समभाग लेकर नीलवर्ण कजलीकर तास्मूली, बाराहीकन्द और  
मुसलीके रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर सुखाकर बालुकायन्त्रमें  
पकावे अथवा एकरोज भूधरयन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतल होने-  
पर निकालकर सजी, सुहागा, यवक्षार, पाचोनमक, त्रिकला,  
त्रिकटु, चित्रक, जीरा, इन्द्रजव, हौग, शुक्ल और अजवाइन  
सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पूर्वसमं बराबर प्रमाणसे  
मिलाकर एक पहर घोटकर रतछोड़े । इनमेंसे १-१ मादा  
गरमपानीके साथ देनसे सन्निपात और ज्वरसहित ग्रहणी  
नष्ट होती है ॥ ३२७ ॥

### ३२८ प्राणेश्वररसः (लघुः) (पठः)

त्रिक्षारं ग्रन्थिकं त्र्युपक्षिजीरकयवानिकाः ।  
तेजोयती धूर्तवीजलवङ्गाऽऽर्कफराऽनलम् ॥ १४६५ ॥  
रसगन्धौ विधं शिशु निर्गुण्डयार्द्रकधूर्तजैः ।  
विधाय भावना गुञ्जाद्वयं डिगुणशर्करम् ॥ १४६६ ॥  
सद्यो जलाऽनुपातेन रसः शीतज्वराऽपहः ।  
लघुः प्राणेश्वरः सोऽयं रसो गुणो ज्वरे मतः ॥ १४६७ ॥  
र. का., ज्वराऽधिकारः ।

भाषा—सजी, सुहागा, यवक्षार, पिपलामूल, त्रिकटु,  
दोनोंजीरे, अजवाइन, तेजबलरी छाल, शुद्ध धतूरेबीज, लौंग,  
अक्लकरी, चित्रकमूल, शुद्ध पारा, गन्धक, बलनाग, और  
सहितजनकीछाल, येसब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारे  
गन्धककी नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर संगमाद, अदरक और  
धतूरेकी १-१ भावना देकर २-२ रत्तीकी मोलियें बनाकर  
रतछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सज्जरे साथ देकर ताजा पानी  
पिलानेसे यह शीतज्वरको नष्टकरता है ॥ ३२८ ॥

### ३२९ प्राणेश्वररसः (सप्तमः)

पुनर्न्याहारकवेपिकानां  
पाठासुदुग्धाकलहप्रियाणाम् ।  
शुद्धद्रवैः सूतवरः सुपिष्टः  
स्विप्रश्च गन्धेन चतुर्गुणेन ॥ १४६८ ॥  
योज्योऽथ मधौ हृदिनीजलेन  
प्राचीसहास्यपुनर्नवानाम् ।

कासज्जमाचीहृदिवह्निमानां  
दिनत्रयं गोलमयो विधाय ॥ १४६९ ॥  
स्यात्प्राणेश्वरः पचेत्तत्तिरुताख्ययन्त्रे  
रसै विमद्यौ दिवसं रसः स्यात् ।  
प्राणेश्वरः शुष्कतमेऽल्पभृष्टे  
कटुत्रयं दङ्कणयुष्कलांशुम् ॥ १४७० ॥  
अस्मिन् प्रयुज्याद्दलवर्णकान्ति-  
पुष्टिप्रदे बुद्धमुखोद्भवे च ।  
आदौ तथाऽन्ते ससितो द्विमासः  
प्रवक्ष्यमाणेषु गदेषु देयः ॥ १४७१ ॥  
ज्वरे त्रिदोषप्रभवे क्षये च  
श्वासे सकासे ग्रहणीयिकारे ।  
गुल्मेऽथ पिप्पाऽसृजि पाण्डुरोगे  
तथाऽतिसारेऽतिशोऽतिरुक्षे ॥ १४७२ ॥  
ततस्तु तैलेन विमर्षं देहं  
सूर्यसंयुग्मेऽद्विगुणस्य सप्तधौ ।  
सीमन्तिनीनां करपल्लवधैः  
सुपर्णकुम्भैः सलिलप्रयोगम् ॥ १४७३ ॥  
विष्णुभस्मरेकाऽथपि सन्निपाते  
ज्वरे त्वज्जीर्णे कुशले विदध्यात् ।  
कण्ठाऽथगदहे ग्रहणीगदेषु  
गुल्मेऽथतीसारानिपीडितेषु ॥ १४७४ ॥  
पाण्डो क्षये सेचनमेव शस्तं  
पिप्पाऽधिके क्षीणतमे जपस्तु ।  
अन्येषु रोगेषु पिचार्यं शक्तिं  
कायोऽस्त्युयोगः सकलाऽऽमयघ्नः ॥ १४७५ ॥  
देवो न कुष्ठे न च भूतदोषे  
कुम्भदिते नैव रसः कदाचित् ।  
अन्यान् जयत्येव गदान् स्वशक्त्या  
सम्यक् प्रयुक्तः सलिलप्रयोगात् ॥ १४७६ ॥  
दध्योदने शर्करया समेतं  
पथ्यञ्च मुद्राण्यु दितं कुशोऽल्पे ।  
मृत्ताकयह्नीफलजीरकाणि  
सदाऽदितान्यत्र च कारवेहम् ॥ १४७७ ॥

रसायनम्, र. का., र. र. नी., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—पुनर्नवा, अलकड़ा, बन्दाल, पाठा, चमारुपी,  
बहिहारी, इनके रसोंसे १-१ दिन पारेको मर्दनकर गोला  
बनाय चतुर्गुणित गन्धकको मलाकर बीचमें रसदे, दो पहरतक  
गन्धकको मन्दाहित रहनेदे फिर नीचे उगारदे । स्वाङ्गशीतल  
होनेपर गन्धकको मुरचकर निकालदे और पारेको बरि-  
हारी, प्राची, सुप्रगो, मायगो, यवरा, पुनर्नवा, कणोंदी,  
मकोय, दुग्धी इन्द्रप्रेक्षेके रसोंसे १ रोज मर्दनकर गोला  
बनाय शरावगम्युद्धे बन्दकर बटुघायन्त्रमें पकावे । पारा

शीतल होनेपर निकाळर १-१ रोज़ पूर्वोक्त रसोंसे मर्दनकर  
सुखादे फिर अग्निर पर बोहासेककर त्रिकटु और मुनाष्ट्रहमा सम-  
भागका चूर्ण सोलहवा हिस्सा मिलवदे और १-२ पहर घोटकर  
रखले । यह बल, बण, कान्ति और पुष्टिको करताहै, इसमेंसे  
२-२ माशेकी मात्रा शकरके साथ देनेसे त्रिदोषज ज्वर, क्षय,  
श्वास, कास, ग्रहणी, गुल्म, रक्तपित्त, पाण्डु, अतिसार, अत्य-  
न्तदृष्टता और अत्यन्तरूक्षता इनसबको यह दूरकरताहै । दवा  
लेनेके बाद तैलसे मालिशकर मत्था, स्कन्ध और पैरोंकीसन्धि  
योंपर ठंडेपानीकी धारादे । जब असब ठंड न्यने लगे तब  
बन्दकरदे । मृदणी, गुल्म और अतिसारमें कण्ठस्थान्त पानीमें  
प्रवेशकरावे । पित्ताधिक्यव्याधि और अत्यन्त क्षीणताप्रवृत्ति  
रोगोंमें रोगीकी शक्ति देखकर जलप्रयोगकरना । कुष्ठ, मूत्ररोप,  
रुमिदोष इन्हीं जलप्रयोगमें नहीं करना । जलप्रयोगके बाद बहरी,  
शकर के साथ भातदेना, दूध और अल्पप्राण आदनीको मुद्रका  
युग्म देना । बैंगन, कौहळा, जीरा और करेले सबंदा अहितकरा  
रहै इसलिये इसप्राणेश्वरके प्रयोगमें भूलकरभी न देवे ॥३२९॥

### ३३० प्राणेश्वररसः ( अष्टम )

दुग्धिकानान्तु मध्ये यां वैष्टयन्ति पिपीलिकाः ।  
सजाते तां करस्पर्शे त्यक्त्वा गच्छन्ति दूरतः ॥४७८॥  
मधुसज्जीवनी नाम पञ्चाङ्गां तां समानयेत् ।  
वर्तितां खरमुत्रेण स्थापयेद्दिनसप्तकम् ॥ ४७९ ॥  
गालयित्वा च घर्त्रेण प्रहीतयेष्यं पलद्वयम् ।  
शुल्यां खर्परमारोप्य यद्वि संज्वालयेदधः ॥४८०॥  
शुद्धसूतस्य गद्यागान् विंशतिं खर्परे क्षिपेत् ।  
आदरूपककाष्ठेन परेणाऽगस्त्यजेन वा ॥ ४८१ ॥  
काष्ठान्यां चालयेत्सूत क्षिप्या मूर्जं मुहुर्मुहुः ।  
वर्षावृत्ते शनैः क्षिप्ते निक्षिपेद्दुग्धिकारसे ॥ ४८२ ॥  
धमातो रीत्याऽनया सूतो मृतः स्याद्रससन्निभः ।  
रौप्यं वङ्गं तथा ताम्रं स्पर्शञ्च तस्मिन्निर्णयम् ॥४८३॥  
कान्तायसं तथा नागं पण्णां पत्राणि वै पृथक् ।  
कृत्वा कण्टकवेष्यानि स्त्रच्छान्येकाद्रुद्रालानि च ॥४८४॥  
मिन्नुकस्य रसे क्षिप्या विन्यसेन्मृतपारदम् ।  
शरावसम्पुटे क्षिप्या सूताभ्यक्तदलानि च ॥४८५॥  
छाणकानाञ्च विंशत्या लोहं लोहं क्रमालुप्तम् ।  
पवं दिनाऽष्टकं स्वेद्यं सूतेन हेमजानि च ॥ ४८६ ॥  
स्याहशीतं क्षिपेत्तलवे दुग्धगन्धकसंयुतम् ।  
भृङ्गराजरसेनैकं वासरं मदीयेद्य तम् ॥ ४८७ ॥  
काञ्चनारतरो मूलं त्यक्वा श्रीखण्डमर्दितम् ।  
वज्रीक्षीरेण चेकाहमर्कक्षीरेण वासरम् ॥ ४८८ ॥  
पवं चतुर्दिनं पिष्ट्वा कार्यं चतुर्लंगोलकः ।  
शरावसम्पुटे क्षिप्या चतुर्भिर्दृष्टाणैः पुष्टम् ॥४८९॥  
दहते गन्धको यावत्तावदेयं मुहुर्मुहुः ।  
मृतभेताम्रकं चूर्णं तावत्स्यान्मृतताम्रजम् ॥४९०॥

चूर्णपीतरूपदीनां शङ्खचूर्णं तुरीयकम् ।

प्रत्येकं पट्टं च गद्यागान् क्षिपेत्पीठीञ्च हेमजाम् ॥४९१॥  
सूक्ष्मां खल्वे कृतां पिष्ट्वा वज्रीक्षीरेण वासरम् ।

एकहं चाऽऽकटुगन्धेन पिष्ट्वा चैकात्मतां गतम् ॥४९२॥

प्रपानं कृत्वा विनिक्षिप्य शरावे सम्पुटे च तान् ।

वस्त्रमुत्तिक्रिया लिप्त्वा देयं गतान्तरे पुष्टम् ॥४९३॥

स्वाहशीतं क्षिपेत्कृप्यां खल्वे सञ्चूर्णयेद् दृढम् ।

तच्चूर्णं कुम्पके क्षेप्यं सञ्जातः सत्वरो रसः ॥४९४॥

साज्यं बहुत्रयं ग्राह्यं क्षिपेन्मरिचैः सह ।

अष्टादशप्रमेहेषु गुल्मयो वांस्तरकयोः ॥ ४९५ ॥

बलकोष्ठे च मन्दाग्नौ क्षये शक्ते त्रिदोषजे ।

कामहीने बलक्षीणे श्लेष्मरोगिण्यु वायुषु ॥ ४९६ ॥

मरीचाऽऽज्यैरजीर्णैऽपि ज्वरैः पूर्णादकेन च ।

मरिच्यज्यादिकं नैव देयं सर्वज्वरेषु च ॥ ४९७ ॥

तैलक्षाराम्लवर्ज्यञ्च भोज्यं मधुरभोजनम् ।

क्रमाद्रोगा विलीयन्ते मासैकान्तरे ध्रुवम् ॥

रसं गृह्णाति यो नित्यं स भवेद्धेमकान्तिमः ॥४९८॥

रं कं ली, रसवि,

भाषा—दूधीके भेदोंमें जिसपर बीटिया लड़ीरहतीहै  
और हाथके लगतेही उसे छोड़कर दूर भागातीहै उस जड़ीका  
नाम मधुसज्जीवनीहै । इसके पञ्चाङ्गको एक सिलपर पीस  
जवानगधेके चतुर्गुणित मूर्जमें घोलकर हठीमें बन्दकर ७ दिन  
तक एकान्तमें रखदे, आठवें दिन कपड़ेसे छानकर रखले ।  
इसकेबाद १० तोले शुद्धपारेको मिश्रीके तवे खपड़ेमें डालकर  
बूलेपर चन्दे और नीचे वेर बरैरहकी सारिलकड़ीकी आग  
जलावे । उसमें २ पल मधुसज्जीवनीका दनाया हुआ दूध  
डालकर अदृष्टा और अगस्त्यकी दो लकड़ियोंसे बलवे ।  
द्व जलनानेपर दूसरा डालता जाय । इसतरह करते २ पारा  
जब मूर्च्छित होजाय तब इसके मूषामें डालकर बीयलोंपर  
रखकर घनन करे और दब डालता जाय तो यह एकदम सफेद  
राखकी तरह होजायगा । फिर चारो, बज, ताम्र, उत्तमयुग्मके,  
कान्तलोह और सीसा इन छ पातुओंके चारो २ घण्टकेबायी  
१-१ अङ्गुले १०-१० तोले पत्र बनाकर सुवर्णके पत्र और  
पारेकीमसमको नीचूके रसमें डालदे । फिर शरावसम्पुटके  
२० जपलीकण्डोंकी आचरे, ऐसे आठ आंचे देवे । फिर इसमें  
दूधमें शोषाहुआ १० तोले गन्धक डालकर भगरा, कचनारकी  
छाल, सफेद चन्दन, बृह और आकना दूध इनप्रत्येकमें १-१  
रोज मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ४ कण्डोंकी  
आचदे । स्वाहशीतल होनेपर निकाळर फिर पूर्ववत् रसोंमें  
घोटकर आचदे । जब गन्धक सारा जलजाय तब आचदेना  
बन्द करदे । फिर चांधीके पत्रोंको डालकर पूर्ववत् आचदे और  
उसीतरहसे बज, ताम्रा, कान्तलोह और सीधेके पत्रोंको डालकर  
जारण करे । पूर्वलोहमेरनानेपर दूधरेको डाले । फिर सफेद  
अम्रह, ताम्रा, पीलीकोडी और धाहकी ३-३ तोले भस्म पूर्व

भग्नमे मिलाकर धूर, आक इन ग्रन्थके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर छोटी २ रिम्डियां बनाकर छायाशुक्लकर छायासम्पुट में बन्दकर भूपरग्नमें आंचदे । स्वाद्वशीतल होनेपर निकाल कर धूर और आकके दूपमें १-३ रोज मर्दनकर आतशी शीशीमें भरने १ दिनरातकी बाल्कायन्त्रमें आंचदेवे । स्वाद्वशीतल होनेपर खलकर शीशीमें भरदे । इसमेंसे १-१ रत्ती २२ कालीमिर्चवेगायदेनेसे १८ प्रमेद, दोनोतद्धने शुल्म, वात रक्त, बद्धकोट, मन्दाग्नि, क्षय, त्रिदोषवशूल, दुःस्वीणता, श्लेष्म और वायुरोग इनवषको यह दूरकरताहै । मरिच और धीके साथ देनेसे जीर्णज्वरनष्टहोताहै । साधारणज्वरमें गरमपानीके साथ देना । मरिच, धी, तैल, क्षार और अम्ल येगाय ज्वरोंमें न देवे, मयुर-भोजनकरावे । इसतरहकरनेसे एकमहीनेमें अमाप्यसे अताप्य-रोग नष्टहोताहै और सुवर्णके तल्लत बान्ति होतीहै ॥ ३३० ॥

### ३३१ प्राणेश्वररसः ( नवमः )

सुतं गन्धकमध्नकं सममहस्तालीद्वये र्भर्दितं,  
कूपिस्थं रत्निकानिरुद्धयद्वनं मृद्वप्रबद्धं पुटेत् ।  
पीतो भृङ्गिकया युतो रसस्रुपः प्राणेश्वरः साऽमृतो,  
व्यापक्षारज्यायुतोऽथ मधुना सर्वाऽतिसाराज्येत् ॥  
र श, अतिसारः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अन्नरश्मि सब समभाग लेकर नीलवर्ण कच्चीकर पट्टरोज तालमूलीके रससे मर्दनकर आतशीशीशीमें कल्ककोमरके रत्निकामिर्चीसे ढाट लगाकर सम-स्तपर २-३ कपडुमिठी देकर सुखावे । शीशीको ३ भागतक छद्में बन्दकर पुक्कुटोच पुटेदे । स्वाद्वशीतल होनेपर निकालकर रगछोड़े । इसमेंसे ५-५ रत्तीकी मात्रा अंगरे अथवा गिलेबके रसके साथ अथवा त्रिफल, तीनोंक्षार और भागके साथ अथवा मधुकेसाथ औषिणी देकर देनेसे यह समस्त अतिमारोंको दूरकरताहै ॥ ३३१ ॥

### ३३२ प्राणेश्वररसः ( दशमः )

रसाऽन्नगन्धान्सविपान्समानान्  
सुशुद्धियुक्ताग्निपुणः प्रगृह्य ।  
पुनर्वालाङ्गलिदेवदाली-  
सुवर्णदुग्धीजस्सेन वृष्याः ॥ १५०० ॥  
दिनं दिनं घर्मविभावितं त-  
च्छुष्कं विधायाऽथ पुनश्च तथ ।  
घत्तूरकासप्रसुकाकामाची-  
ब्राह्मीसहादेव्यपराजितानाम् ॥ १५०१ ॥  
सर्वोत्थयामिश्च विमर्षं सम्यक्  
मृत्कर्पटैः सम्पुटके निरुद्धव्य ।  
भाण्डे पचेद्बालुसम्भृते त-  
मूर्धुपुटेत्कूपपण्डङ्गणाल्यैः ॥ १५०२ ॥  
कलांशकं तत्र विपं नियोज्यं  
प्राणेश्वरोऽयं शिव पक्व साक्षात् ।

पात्रेऽष्टकोणे विरचय्य पत्रं  
मघ्ये रसं सर्वदले दिगीशान् ॥ १५०३ ॥

सम्पूज्य बह्वं सहनागवह्नी-

दलेन सिद्धं सिकताऽनुपानम् ।

ज्वरग्रहण्योरतिसारगुल्म

क्षयेऽप्यजीर्णं सहकासपाण्डौ ।

जीरेण देयं न तु पौत्रिकाणि

मांसानि शस्तोऽत्र जलामिषोः ॥ १५०४ ॥

र. शं, अतिसारः ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बल्लाग, अन्नरश्मि सब समभाग लेकर नीलवर्ण कच्चीकर पुनर्नडा, करिहारी, बन्दाक धूरा, धूषी और पाठाके रसोंमें १-१ दिन भाषना देकर सुखावे । फिर धूरा, कर्गोरी, मकोय, ब्राह्मी, मापपर्णी, सुद्र-पर्णी, मूर्वा, अपराजिता इन ग्रन्थके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोला बनाय छायासम्पुटमें बन्दकर १-७ कपडुमिठी देकर मुठाकर बाल्कायन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि देवे । स्वाद्वशीतल होने पर निकालकर इसमें सोलहनां हिस्तां त्रिफल, मुद्गागा और शुद्ध बल्लागका चूर्ण मिलाकर २-३ पहर घोटकर रखछोड़े । अष्टकोण पात्रमें अष्टदल पत्र बनाय धीचमें रसको रखके, आठों दलोंमें दिक्पालोंको स्थापनकर पूजाकरे । फिर इसमेंसे ३ रत्ती पानमें रखकर देवे और ऊपरने शक्करका पानी पिलावेतो ज्वर, प्रद्वणी वे नष्टहो । अतिसार, शुल्म, क्षय, अजीर्ण, कास, पाण्डु, इनमें जीरेकेसाथ देवे । दुश्करकामस भूलकरभी न दे । जलयोग इसमें प्रयन्तहै ॥ ३३२ ॥

### ३३३ प्राणेश्वररसः ( महान् ) ( एकादशः )

गन्धकाऽन्नं समं सुतं चाराहीरसमर्दितम् ।  
हंसपादीरसेनाऽपि मर्दयेत्त्रिदिनं मृदु ॥ १५०५ ॥  
काचकूप्यन्तरे शिष्या मुलं तस्य निरुद्ध च ।  
पाचयेद्बालुकायन्त्रे तथा यामचतुष्टयम् ॥ १५०६ ॥  
स्वाद्वशीतलमादाय मर्दयेदेमिरीपथैः ।  
पञ्चकोलश्च त्रिशारं तीरकद्वयदीप्यकम् ॥ १५०७ ॥  
मरिचं पञ्चलवणं गुग्गुलुश्च विपद्गम्य ।  
त्रिजातकं लवङ्गश्च वरातरास्ताऽव्यगन्धिका ॥ १५०८ ॥  
जम्बीराऽऽर्द्रकमुद्गाणां रसैः समर्दयेत्तृपयम् ।  
ससरात्रं ततो गुज्जाप्रमाणं चटकीकृतम् ॥ १५०९ ॥  
तत्तद्रोगाऽनुपानेन सेवयेत्सर्वरोगजित् ।  
सन्निपातमभिन्यासं धनुर्वातश्च तान्द्रिकम् ॥ १५१० ॥  
कासश्वासोऽग्निमान्द्यश्च पाण्डुकामलिपीनसात् ।  
शोफं गुल्मं तथाऽर्शांसि क्षयश्च ग्रहणीगदान् ॥ १५११ ॥  
ज्वरं कुष्ठं प्रमेहश्च नाशयेन्नाऽन संशयः ।  
सर्वेषां वातरोगाणां महाप्राणेश्वरो रसः ॥ १५१२ ॥  
व. रा, वै चि, वातव्याधौ ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, अन्नरश्मि समभाग केर बातादी और ह्वराज्वररससे ३-३ दिन मर्दनकर आतशी

शीशीमे भरकर सुंहर खदियामिटीकी डटेदेकर समस्तपर  
६-७ कपडमिटी देकर सुतादे । सुखनेपर ४ पहरतक बाहुका-  
यन्त्रमे अग्निदेवे । स्वाहशीतल होनेपर निकालकर पत्रकोल,  
त्रिशार,, दोनोंजोरी, अनवादन, मरिच, पत्रलवण, गुगल,  
सपेविप, बरुनाग, त्रिनात, लौंग, त्रिफला, रास्ना, अलगन्ध,  
जमीरी, अदरक, भंगरा, इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा  
स्वायोंसे ७-७ रोज मदनकर १-१ रतीकी गोल्यां बनाकर  
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तदोगहरानुपानके साथ देनेसे  
सन्निपात, अभिग्न्यास, घनुवांत, तान्द्रिक, कास, खास, अभि-  
मान्य, पाण्डु, कामला, पीनस, शोथ, गुल्म, यवासीर, क्षय,  
महणी, ज्वर, सुष्ठु, प्रमेह, वातरोगइनसंघको यह नष्टरताहे ३३३

### ३३४ ग्रीहशार्दूलरसः

सूतकं गन्धकं व्योषं समभागं पृथक् पृथक् ।  
यभिः समं ताम्रमस्य योजयेच्चैव बुद्धिमान् ॥१५१३॥  
मनःशिला घराटञ्च तुयं रामठलोहकम् ।  
जयन्ती रोहितञ्चैव क्षारटङ्गुणसैन्धवम् ॥१५१४॥  
विडं चित्रं कानकञ्च रसतुल्यं पृथक् पृथक् ।  
भावयेत्त्रिदिनं यावत्त्रिवृत्तिप्रकणाऽऽद्रकैः ॥१५१५॥  
गुग्गुमात्रां घटीं खादेत्सद्यः ग्रीहविनाशिनीम् ।  
पिप्पलीमधुसंयुक्तां द्विगुणां वा प्रयोजयेत् ॥१५१६॥  
ग्रीहानमप्रमांसञ्च यकृदुल्मं सुदुस्तरम् ।  
आमाशयेषु सर्वेषु चोदरे शोथविद्रवौ ॥१५१७॥  
अग्निमान्द्ये ज्वरे चैव ग्रीहि सर्पज्वरेषु च ।  
श्रीमद्ब्रह्मनाथेन ग्रीहशार्दूलैरितः ॥१५१८॥  
र. सं., र. चि., र. सु., ग्रीहशार्दूलरसः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, त्रिकटु, ये प्रत्येक १ तो०  
ताम्रमस ५ तो०, शुद्धमेनसिल, पीलीकौड़ी, तुष्य और लोह  
इनकी मसमें, शुनादींग, जैत, रोहिडा, यवशार, गुहागा, मेन्धव,  
विडशार अथवा विडननक, चित्रमूल, घट्टरेके बीज, येसब  
एक १ तोला लेकर सबका थारीक चूर्णकर परेगन्धकी नील-  
बण कबलीमें मिलादे । फिर निशोत, चित्रक, पीपल और  
अदरकके रसोंसे ३-३ रोज भावनाएं देकर १-१ रतीकी  
गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ अथवा २ गोली पीपल  
और मधुके साथ देनेसे प्लीहा, अप्रमास ( हृदयादिदोके रफ-  
वदादिप्रोतोमें मांसवृद्धि ), यकृत, गुल्म, आमाशयकेरोग,  
उदररोग, शोथ, विद्रधि, अभिमान्य, ज्वर, सम्पूर्णज्वर येसब  
नष्टहोते हैं ॥ ३३४ ॥

### ३३५ ग्रीहान्तकोरसः

हृतं शुद्धञ्च तारञ्च गगनाऽऽयसमुक्तिकाः ।  
वरदं पुष्करं सूतं गन्धकं नयमं तथा ॥१५१९॥  
गुग्गुलुं त्रिकटुं रास्ना तथा जैपालयोजकम् ।  
त्रिफलां कटुकां पुन्तीं देधदालीं तु सैन्धवम् ॥१५२०॥

विवृतां तु यवशारं चातारितैलमर्दितम् ।  
अष्टोदराणि पाण्डुत्वमानाहं विषमज्वरम् ॥१५२१॥  
अजोर्णमामं पिचञ्च कफञ्च सर्वशूलकम् ।  
कासं श्वासञ्च शोथञ्च सर्वमाशु व्यपोहति ॥  
प्लीहान्तकोरसो नाम प्लीहोदरविनाशनः ॥१५२२॥  
वै. क., वै., र., घ., प्लीहाऽधिकारः ।

भाषा—ताम्र, चांदी, अभ्रक, लोह, मोतीकीसीप और  
विंगरिफ इनकीमसमें, पोहकरमूल, शुद्ध पारा और गन्धक, गुगल,  
त्रिकटु, रास्ना, शुद्ध जमालयोदेकेबीज, त्रिफला, कुटकी, दन्ती-  
मूल, बन्दाल, सैन्धव, निशोत और यवशार समभाग लेकर  
थारीक चूर्णकर परेगन्धकी नीलयण कबलीमें मिलाकर १-२  
पहर शुद्धमदनकरे । फिर एण्डके तैलमें मदनकर ३-३ रतीकी  
गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानके  
साथ देनेसे ८ प्रकारके उदररोग, पाण्डु, आनाह, विषमज्वर,  
अजीर्ण, आम, पित्त और कफकेरोग, समस्तशूल, कास, खास,  
शोथ येसब नष्टहोते हैं ॥ ३३५ ॥

### ३३६ ग्रीहारिरसः ( प्रथमः )

कपेकं तालचूर्णस्य तत्पादांशं सुवर्णकम् ।  
पलार्द्धं मृतताम्रञ्च तत्समं शुद्धमस्रकम् ॥१५२३॥  
मृगाऽजिनस्य मसमाऽपि कर्पमत्र प्रदापयेत् ।  
लिम्पाकाऽद्वित्वचस्तद्वत्सर्धमेकत्र कारयेत् ॥१५२४॥  
अस्य गुग्गुप्रमाणेन घटिकां कारयेत्ततः ।  
मधुना यद्विचूर्णेत खादेत्क्षित्यं यथाबलम् ॥१५२५॥  
असाध्यमपि ग्रीहानं हन्त्ययदयं न संशयः ।  
यारुतं पाण्डुरोगञ्च गुल्मादिकमगन्दराम् ॥१५२६॥  
र. सं., र. सु., ग्रीहारिऽधिकारः ।

भाषा—शुद्धहरीताल १ तोला, घुरणभस्म ३ माशे, ताम्र  
और अभ्रकमस्य २-२ तोले, सुवर्णमसस तथा अमिलतासकी  
जड़की छाल १-१ तोला लेकर सबका थारीकचूर्णकर अमिलताम  
कीजइसीछालके रसमें २-३ रोज मदनकर ६-६ रतीकी  
गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली चित्रमूलके  
चूर्ण और मधुकेसाथ देनेसे अमाध्यग्रीहा, यकृत, पाण्डु, गुल्म  
और अगन्दर येसब नष्टहोते हैं ॥ ३३६ ॥

### ३३७ ग्रीहारिरसः ( द्वितीयः )

पारदं गन्धकं टंकं विषं व्योषं फलत्रिकम् ।  
तोलैकं समदाय जैपालञ्च तदर्द्धकम् ॥१५२७॥  
किंनूकस्य रसेनेव याममात्रान्तु मर्दयेत् ।  
गुग्गुमात्रां घटीं कृत्वा छायायां शोषयेत्ततः ॥१५२८॥  
घटिकां प्रदातव्यां शृङ्गयैररसेन च ।  
शुदाऽद्वारे गुल्मशूले ग्रीहशोथे कफरामके ॥१५२९॥  
उदायते चातशूले श्वासकासज्वरेषु च ।  
रसः ग्रीहारिनामाऽयं कोष्ठामपयिनाशनः ॥  
आमयातगदप्लेदी श्लेष्माऽऽमयिनाशनः ॥१५३०॥  
वै. र., वै. क., ग्रीहारिऽधिकारः ।

**भाषा**—शुद्धपारा, गन्धक, सुहागा और बज्जनाग, त्रिकुट, त्रिफला, ये सब १-१ तोल, शुद्धजमालगोटा सबसे आधा लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर पलाशकेरससे १ पहर मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिए बनाकर सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रसके साथ देनेसे बवासीर, शुल्म, शूल, प्लीहा, कफात्मक-शोथ, उदावर्त, वातशूल, श्वास, कास, अमाशयवैरोग, आम-वात, श्लेष्मविकार इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३३७ ॥

### ३३८ ग्रीहार्णवरसः

हिहूलं गन्धकं टङ्गमम्रकं विपमेव च ।  
प्रत्येकं पलिकं भागं चूर्णयेदतिचिकणम् ॥ १५३१ ॥  
पिप्पलीमरिचञ्चैव प्रत्येकञ्च पलाङ्ककम् ।  
मर्दयित्वा घटीं कुर्याद्बहुमानां प्रयत्नतः ॥ १५३२ ॥  
सेष्या शोफालिदलजै र्वयी माक्षिकसंयुता ।  
ग्रीहार्ण पट्प्रकारञ्च हन्ति शीघ्रं न संशयः ॥ १५३३ ॥  
ज्वरं मन्दानलञ्चैव कासं श्वासं यमिं ब्रमम् ।  
ग्रीहार्णश्च इति ख्यातो गह्वानन्दभाषितः ॥ १५३४ ॥  
र स, र चि, र च, र. सु, प्लीहाशुचिकारे ।

**भाषा**—शुद्धसिगरिक, गन्धक और सुहागा, अन्नकमसम और शुद्धबज्जनाग १-१ पल लेकर बारीकचूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर घोटकर बज्जलसमानकरके पीपल और मिर्च ३-३ तोल लेकर बारीकचूर्णकर मिलादे । फिर खस और हारसिगारके पत्तोंकेरससे मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गो लिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुकैसाथ देनेसे ॥ प्रकारकी प्लीहाहृदि, ज्वर, मन्दाग्नि, कास, श्वास, यमन और ब्रम नष्टहोतेहैं ॥ ३३८ ॥

### ३३९ प्लीहोदरगुल्महरोरसः

शमागुणौ सूतकवह्नौ विमर्दितौ एकसूर्यपन्नरसे ।  
कृत्वा गोलं पुटयेत्सहस्रकुसलिलेन मर्दयेत्त्रिदिनम् ॥  
प्लीहोदरहृत्स्तौ रोहितकवाययुग्वहः ।  
सैन्धवयुक्तो गुल्मे स्नुप्रसयुक्तोऽपि मण्डलत्रितयात् ॥  
प्लेहपृष्ठे रुधिरं विस्त्राव्याऽर्कपयः क्षिपेत् ।  
प्लीहोपशान्तिस्तेन स्याद्वासायप्रमिते दिने ॥ १५३७ ॥  
दारु कुण्डं हैमवती शताह्वाहिह्रुसैन्धवाः ।  
अर्कक्षीरयुतो लेपः सर्वोदग्गदापहः ॥ १५३८ ॥  
र, ग्रीहोदरे ।

**टि०**—अस्य रसस्यापाततो द्वितीयवैशरण साम्य प्रतीयन फलभावना दावनिविशेषतास्वतन्त्रपञ्चाशय स्याति इति विद्वद्भिन्नकल्पीयम् ।

**भाषा**—पारा १ भाग और बज्जनाग ३ भाग लेकर पके हुए आकके पत्तोंके रससे मर्दनकर गोलाबनाय बराहपुटकी आब देवे । स्वाज्ञशीतल होनेपर धूरके दूधसे ३ रोबमर्दनकर ६-६ रत्तीकी गो लिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली रोहिप-केसाथने देनेसे ग्रीहा नष्टहोताहै । सैन्धव अथवा दमापहके

रसकेसाथ २१ रोजतक देनेसे शुल्म नष्टहोताहै । ग्रीहाकी पीठ-परसे जोंकवगैरहसे रक्त निकलवाकर आककादूध डालदे । इससे ८ रोजमें ग्रीहाकी शान्ति होजातीहै । देवदारु, कुण्ड, रेवंचीनी, सोंफ, हिंग और सैन्धव सब समभागलेकर आककेदूधमें घोट-कर लेपकरनेसे उदररोग नष्टहोतेहैं ॥ ३३९ ॥

### ३४० फणिपतीरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं चाऽम्रकं लोहभस्मकम् ।  
ताम्रभस्म समं मर्चं जम्भनीरेण संयुतम् ॥ १५३९ ॥  
द्विदिनं गुटिका कार्या काचकूप्या विनिक्षिपेत् ।  
विलिप्य मृत्तिकावरुं बालुकायन्त्रके पचेत् ॥ १५४० ॥  
पह्यामान्ते समुद्रतुल्य गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ।  
अनुपानविशेषेण शुक्रवातं निहन्ति च ॥ १५४१ ॥  
ब. रा, शुक्रवाते ।

**भाषा**—शुद्ध पारा और गन्धक, अम्रक, लोह और ताम्र भस्म सब समभाग लेकर नीलवर्ण कजलीमें जम्भीरीनीचूके रसमें २ रोज घोटकर छोटी छोटी गो लियें बनाय सुखाकर आतशी कीशीमें भरके समस्तार ३-४ कपड़मिठी देकर अच्छी-तरह सूखनेपर बालुकायन्त्रमें रखकर ६ पहरकी अग्नि देवे । स्वाज्ञशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती अनुपान विशेषसे देनेसे शुक्रवात (शुक्रवात) नष्टहोताहै ॥ ३४० ॥

### ३४१ फणिभूपणरसः

पारदं दर्दं वह्नं मृत्तनागं मृत्ताऽम्रकम् ।  
सर्वैः समं शुद्धताल मघौ निर्गुण्डिजे रसे ॥ १५४२ ॥  
पाचितो बालुकायन्त्रे हियामं मन्दवह्निना ।  
स्वाज्ञशीतलमुद्रुत्य मात्स्यमाहियकच्छवैः ॥ १५४३ ॥  
बाराहशिखिजैः पित्तं भांयितश्च पृथक्पृथक् ।  
अनुपानविशेषेण देवो यल्लङ्घ्यो हितः ॥ १५४४ ॥  
सन्निपाताग्रिहन्त्याशु त्विच्छापथ्यं समाचरेत् ।  
शम्भुना कथितः पूर्व रसोऽयं फणिभूपणः ॥ १५४५ ॥  
वै चि, सन्निपाते ।

**भाषा**—शुद्ध पारा और सिगरिक, बज्ज, नाग और अम्रक भस्म सबसमभाग लेकर इनमन्त्रकी बाराह शुद्धहरीताल डालकर एकदोदिन मर्दनकर संगालके रससे एकदिन घोटकर गोला बनाय शरावसम्पुष्टमें बन्दकर दो पहर बालुकायन्त्रमें अग्निदेवे । स्वाज्ञशीतल होनेपर निकालकर मछली, भेमा, बज्जुभा, सूजर और मोरके पित्तोंसे एक एक भावना देकर ६-६ रत्तीकी गो लिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अनुपान विशेषसे देनेसे यह सन्निपातोंको नष्टकरताहै । मूखलानेपर इच्छाशुमार पथ्य-देना ॥ ३४१ ॥

### ३४२ फणियोगः

मृतस्य कृष्णसर्पस्य शोथेषुच्छान्नप्रजितम् ।  
अन्तर्भूमिपुटे दग्धं तद्रसम् न्यूपसंयुतम् ॥ १५४६ ॥

वचा चाऽतिविपा कुष्ठमध्रमस्य समं भवेत् ।  
भक्षयेत्कणियोऽयं वल्लैकं गलिताऽपहः ॥१५४७॥  
वाकुचीवीजचूर्णञ्च निम्बपञ्चाङ्गसंयुतम् ।  
मध्वाज्याभ्यां लिहेत्कर्पं कुष्ठमनुपानकम् ॥१५४८॥  
र.क.ल., गलितपुष्टे ।

भाषा—तत्काल मरेहुए कालेसांफा शिर, पुच्छ और  
अन्तडिया निकालकर हंडीमें बन्दकर अन्तर्द्वय दमकरे । स्वाज्ञ-  
शीतल होनेपर निवालकर त्रिकटु, वच, अतीस, कुठ और अम्रक-  
भस्म सब समभाग लेकर एकजगह खरलकर रखछोड़े । इसमेंसे  
३-३ रसी लेकर वाकुचीकेरीज और निम्बपञ्चाङ्गके ३ मासे  
चूर्ण और मधु तथा घृतमें मिलाकर खानेसे गलितपुष्ट दूरहो ॥२४२॥

### ३४३ फिरङ्गकुडारोरसः (प्रथमः)

राविं रसकर्पूरं त्रिफला कुष्ठं मधु ।  
फौशिकञ्च लवङ्गला समं सर्वं नियोजयेत् ॥१५४९॥  
चतुर्विधा यवानां च गन्धकं शुद्धसूतकम् ।  
भल्लातकं शुद्धञ्चैव कर्पकं विचूर्णयेत् ॥१५५०॥  
कर्पमात्रं निषेधत बल्यवर्णयिर्जितः ।  
सप्तके तु व्यतिक्रान्ते गच्छेत्पथ्यं फिरङ्गकम् ॥१५५१॥  
र.र.कौ., फिरङ्गे ।

भाषा—खैर, रसकपूर, त्रिफला, कुठ, मधु, मूणल, लौघ,  
श्लायची, देशी तथा छुरासानी अजवाइन, अजमोद, खरजवा-  
इन, शुद्ध गन्धक, पारा और मिलावे तथा शुद्ध १-१ तोला  
लेकर पारे गन्धरफी नीलकण्ठ कजलीकर अन्य पस्तुओंके चूर्णमें  
मिलारर एकजोब होनेतक कूट । इसमेंसे १-१ तोला दही  
गूँहनेके साथ निगलवादे और खानेको घी तथा गूँहनेकी  
रोटी देवे । इसप्रकार ७ दिन वीतनेपर भयङ्करवास्थापन  
फिरङ्गे नष्ट होता है ॥ ३४३ ॥

### ३४४ फिरङ्गकुडारोरसः (द्वितीयः)

आकारकर्मो दन्तीवीजञ्चैव समांशकम् ।  
रसं कुरण्डजे द्राये मर्दयित्वा नियोजयेत् ॥१५५२॥  
फिरङ्गारण्यद्रावाग्निः कुष्ठमणकुडाकः ।  
यथेच्छं भोजनं कुर्यात्कुट्टिलगुडांस्पृजेत् ॥१५५३॥  
र.र.कौ., फिरङ्गे ।

भाषा—कट्फरयाक रसमें २-३ दिन घोटारुआ पारा  
अच्छरारा और जमालगोटा समभाग लेकर १-२ गहर मर्दनकर  
रखाछोड़े । अथवा कट्फरयाक रसमें १-१ मासेकी गोहिया  
बनाकर रखाछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानीकेसाथ देनेसे  
फिरङ्ग, कुष्ठ और मण नष्ट होते हैं । कड़वातेल और शुद्धको  
छोकर यथेष्ट भोजन करे ॥ ३४४ ॥

### ३४५ फिरङ्गनाशनचूर्णम्

नागञ्च पारदञ्चैव प्रत्येकं निष्कमात्रकम् ।  
तयोस्तुल्यं भृष्टहिङ्ग तद्वत्समहिंफनकम् ॥१५५४॥

एकीकृत्याऽखिलचूर्णं मापैकं भक्षयेन्नरः ।  
क्षाराऽम्लं चर्जयेत्तावदावत्सादति मेपजम् ॥  
इत्येवं नाशयेत्किञ्च फिरङ्गाऽऽमरयमुद्धतम् ॥१५५५॥  
र.र.कौ., फिरङ्गे ।

टि०—अभिव्यक्तो निम्बपरिमिता मन्नाऽतिमयावहा आमीदितोऽस्य स्वाने  
मापैकमिति पाठ क्लोप्तिः ।

भाषा—नाग और पारदभस्म (अभावमें रसविंदर)  
समभाग, इनदोनोंकी बराबर भुनाहींग और आधा अमीम  
लेकर सबको इकट्ठा मर्दनकर कजली बनाले । इसमेंसे १-१  
माशा जल्केसाथ देनेसे यह भयङ्करफिरङ्गेरोगनो नष्टरताहै ।  
दवाका प्रयोग चले तबतक क्षार और एटाई न साथ ॥३४५॥

### ३४६ फिरङ्गनाशिनीवटी (प्रथमः)

आकारकरमञ्चैव दीप्यं जातीफलतथा ।  
दरदं निष्कमात्राञ्च विचूर्णं गुटिकाञ्चरेत् ॥  
नागचल्लीरसेनैव सेव्या नित्यं फिरङ्गजित् ॥१५५६॥  
र.र.कौ., फिरङ्गे ।

भाषा—अच्छरारा, अजवाइन, जायफल और शिंगरिफ  
समभागलेकर पानकेरसमें मर्दनकर ४-४ मासेकी गोहिया  
बनाकर रखाछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानकेसाथ देनेसे फिरङ्ग  
रोग नष्टहोताहै ॥ ३४६ ॥

### ३४७ फिरङ्गनाशिनीवटी (द्वितीयः)

दरदं सूतकञ्चैव निष्कमात्रं पृथक्पृथक् ।  
जीर्णं गुडं पलं द्रवा लोहापत्रे विमर्दयेत् ॥१५५७॥  
तुलसीस्वरसेनैव निम्बदण्डादिनयम् ।  
निम्बपत्रञ्च खदिरं सूर्यभक्तां पलंपलम् ॥१५५८॥  
फणिफेनं त्रिशाणञ्च सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ।  
सायं प्रातश्च भोक्तव्यं मापैकं द्वाऽनुपानतः ॥  
दुग्धौदनं चरेत्पथ्यं सप्ताहेन फिरङ्गजित् ॥१५५९॥  
र.र.कौ., फिरङ्गे ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ और पारा ४-४ मासे, पुरानागुड  
४ कप लेकर लोहेकेपात्रमें तुलसीके रसकेसाथ नीमके इन्नेसे  
३ दिन मर्दनकर नीमकेपत्र, खैर और हज्जुर १-१ पल, अमीम  
१२ मासे डालकर सबको एकजगह घोटकर रखाछोड़े । इसमेंसे  
१-१ मासे उचितानुपानके साथ देवे । पथ्यमें द्वापनात खिला  
नेमें फिरङ्गेरोगनष्टहोता है ॥ ३४७ ॥

### ३४८ फिरङ्गनाशिनीवटी (तृतीयः)

लवङ्गजातीफलहिङ्गूलं स्या-  
दाकारचूर्णं विडकं समांशम् ।  
कयोन्मितं सर्वमेवहिकुर्या-  
दपिप्रमाणाच्युत्कान् प्रमाते ॥  
भुक्त्वा च दुग्धौदनपथ्यमश्न-  
तिरन्ति रोगं प्रवर्त्तं फिरङ्गम् ॥१५६०॥  
र.र.कौ., फिरङ्गे ।



भाषा—जौग, जायफल, शिंगरिफ, अकलकरा, रसकपूर, विडङ्ग येसव १-१ तोलाकेसर पानीकेसाय ७ गोलिएया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली प्रातःकाल ७ रोचक लेनेसे प्रबलफिरङ्गरोग नष्टहोताहै । इसमें पच्य दूधपात देना ॥ ३४८ ॥

### ३४९ फिरङ्गविध्वंसनोरसः

पारदश्च लवङ्गश्च मस्तकी जातिपत्रिका ।  
समभागानि सर्वाणि रसार्द्धं गन्धकं शुभम् ॥ १५६१ ॥  
गन्धकस्य दशांशं तु शुद्ध फेलाद्रम निक्षिपेत् ।  
नागपह्यारसेनैव गुटिका मुहसन्निभा ॥ १५६२ ॥  
देया प्रभातसायह्ने गोधूमसघृताशने ।  
सप्तरात्रेण हस्त्याशु रसः फेरङ्गनाशनः ॥ १५६३ ॥  
चि र म, फिरङ्गरोगः ।

भाषा—शुद्धपारा, सौग, मस्तकी और जावित्री १-१ भाग, शुद्धगन्धक ३ भाग, शुद्धसोमल ३ भाग लेकर सबकी ककली कर पानके रसमें घोटकर भूगवत्पर गोलिएया बनावे । इनमेंसे १-१ गोली शुद्धशाम पानीकेसाय खानेसे सातदिनमें फिरङ्ग रोग नष्टहोताहै ॥ ३४९ ॥

### ३५० फिरङ्गशमनीवटी ( प्रथमा )

गैरिक रसकपूरमुपलाश्च पृथक् पृथक् ।  
दङ्कमान विनिर्गिप्य ताम्बूलिदलै रसैः ॥ १५६४ ॥  
घटङ्गश्चतुर्दश श्रेयाः विरगगद्घातिकाः ।  
साय प्रातः समशोयादेकैर्द्विंशतसप्तकम् ॥ १५६५ ॥  
गोधूमचिकुती द्वाद्घृतेन सितया सह ।  
फिरङ्गव्याधिनाशाय घटिकेयमनुत्तमा ॥ १५६६ ॥  
र म, फिरङ्गरोगः ।

भाषा—गैर, रसकपूर, मिश्री ४-४ मासे लेकर पानके रसमें पीसकर १४ गोलिएया बनावे । इनमेंसे १-१ गोली, शुद्धशाम पानीकेसाय खानेसे सातरोजमें फिरङ्गरोग नष्ट होजाये ॥ ३५० ॥

### ३५१ फिरङ्गशमनीवटी ( द्वितीया )

दङ्कफपारदमित खदिरद्विदङ्क-  
माकारकादिकरमश्च विघृण्य सप्त ।  
शुद्धा घटीश्च खलु माक्षिकरामद्वि-  
प्रातः फिरङ्गशमनाय गिलेद्य नित्यम् ॥ १५६७ ॥  
कटुम्ले च परित्याज्ये भोज्य स्थ विशेषतः ।  
सप्तमि दिवसे नृणां फिरङ्गो नश्यति ध्रुवम् ॥ १५६८ ॥  
चि क, भै र (परिशिष्टे) फिरङ्गरोगे ।

भाषा—४ मासे शुद्धपारा लेकर १२ मासे मधुमें मिलने तक घोटकर खैर और अकलकरा ८-८ मासे डाक्टर एक ओषधोनेपर ७ गोलिएया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली प्रातःकाल पानीकेसाय गिलेनेसे ७ दिनों फिरङ्गरोग नष्टहोताहै । कटु अम्ल और स्थभोक्त ॥ वरे ॥ ३५१ ॥

### ३५२ फिरङ्गशमनीवटी ( तृतीया )

कर्पद्वय शोशिवोश्च वीर्य-  
मक्षप्रमाणानि च तण्डुलानि ।  
पिप्पु बलायाः स्वरसेध सप्त  
त्रिष्ठा घटीः सप्तदिने नियोज्याः ॥ १५६९ ॥  
वटीत्रयस्याऽपि निषेय नित्य  
धूमश्च यो बाह्यफिरङ्गरोगी ।  
स सप्तमि र्वा दिवसेश्च तस्मा-  
द्विमुच्यतेऽम्ल लवण त्यजेद्येत् ॥ १५७० ॥  
चि क, भै र, फिरङ्गरोगे । भैषज्यतत्त्वावल्या परिशिष्टे धूम प्रयोगेति नाम्न व्यवहृतः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, चावल १-१ कर्प लेकर चावलको वारीक पीसकर घरे गन्धककी नीलवर्णकञ्ज छीमें मिलाकर कलाके अङ्गुलरसस घोटकर २१ गोलिएया बना कर रखछोड़े । इनमेंसे रोजाना तीन वक्त निवातस्थानमें १-१ गोलीका धूआले । अम्ल और लवण छोड़दे तो ७ रोजमें बाह्यफिरङ्गव्याधिसे निर्मुक्त होजाता है ॥ ३५२ ॥

### ३५३ फिरङ्गशमनीवटी ( चतुर्थी )

मुशल्याकुलदृष्टाऽपि पारसीरुयवानिका ।  
महातकफलश्चाऽपि पलमानं पृथक्पृथक् ॥ १५७१ ॥  
पलार्द्धमानः सूतः स्यात् पदपलोऽत्र शुद्ध स्मृतः ।  
एकीकृत्याऽखिल कुप्याद्वटी कर्पप्रमाणतः ॥ १५७२ ॥  
खादेदेका घटी प्रातः यवद्वाराग्यदर्शनम् ।  
गोदध्नश्चाऽनुपानेन फिरङ्गाऽऽमयनाशनीम् ॥  
निम्बुकेन विना नैव वर्जनीयमिहाऽपरम् ॥ १५७३ ॥  
र प्र फिरङ्गे ।

भाषा—मुगली, अकलकरा, छुत्तासानीभजवाइन, मिलावा ये सब ४-४ कर्प शुद्धपारा २ कर्प, पुरानाशुद्ध ६ पल लेकर पहिले शुद्धमें मिलनतक पारेको घोटकर दूसरी चीजें डालकर एकजीव होनेतक कूटकर मिलावे और इसकी १-१ तोलेकी गोलिएया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पायके दहीका साथ गिले चक्कर कि पूरा आरोग्य प्राप्त न हो । इसमें नीबूको छोड़कर और सबकीज खावे ॥ ३५३ ॥

### ३५४ फिरङ्गशमनीवटी ( पञ्चमी )

यवानी द्विपला ग्राह्या खदिरश्चाऽष्टद्विक ।  
पलद्वयाऽष्टद्विका स्यात्तत्र सूत विनिक्षिपेत् ॥ १५७४ ॥  
सपादद्वितुलित दरदात्यमनुत्तमम् ।  
महातकफलान्यत्र नवसह्यमितानि च ॥ १५७५ ॥  
पञ्चकर्षाऽज्यसंयुक्ताः कार्या घटङ्गश्चतुर्दश ।  
तार्येका भक्षयेत्प्रातः सायङ्काले च वृद्धिमानः ॥ १५७६ ॥  
उपदेशान् समस्तांश्च तद्व्यापिडिका अपि ।  
सरोथं ग्रन्थितास्तत्र भूयद्यावादिक्वयेत् ॥ १५७७ ॥

उपवंशसमुद्रतां पीडाश्चाशु व्यपोहति ।  
यस्येन्द्रियस्य मांसानि शीयन्ते प्रतिवासरम् ॥  
तदुद्धान्नं कृर्माश्चाऽपि शीघ्रमेव विनाशयेत् ॥५७८॥  
र. प्र., फिक्झारोगः ।

भाषा—अजवादन २ पल, रैर २ कप, गूगल २ कप,  
शिंगरिफे निकलाहुआ शुद्धपारा ५ मासे, मिलावां ९ नग  
लेकर गूगलमें पाचन्यपीमिलकर नरम होनेतक कूटे फिर इसमें  
पारा ढालकर एकजीव होनेतक घोटकर और चीजोंका बारीक  
चूर्ण मिलाकर १४ गोलियां बनाकर रखोडे । इनमेंसे १-१  
गोली सुबहशाम खानेसे सप्तरकारके उपदेश, पुंसी, शोथ,  
गठिया, पृथथाव और पीडा येसब शान्त होतेहैं । जिसरी  
इन्द्रियकामास दररोज गिरताहो उसरीभी इसकेप्रयोगसे तमाम  
पीडे मरकर आराम होजायगा ॥ १५४ ॥

### ३५५ फिक्झारियोगः

मार्कयलिफला दन्ती ताम्रचूर्णमयोरजः ।  
उपवंशं निहत्येष वृक्षमिन्द्राशानि यथा ॥ १५७९ ॥  
सु सं., उपदेशः ।

भाषा—भंगरा, त्रिफला, दन्ती अथवा जमालपोडा,  
तावा और सोहेकी भस्म सब समभाग लेकर तावे और सोहेकी  
भस्मको भंगरा और त्रिफलाके रसकेसाथ १-२ रोज मर्दनकर  
सबबीजोंका बारीक चूर्णकर मिलाकर ४-४ रसीकी गोलिया  
बनाकर रखोडे । इनमेंसे एक अथवा दोगोली जलप्रश्रुति उचि  
तातुपानके साथ देनेसे समस्त उपदेशोंको यह नष्टकरताहै ॥ १५५ ॥

### ३५६ फिक्झारिरसः (प्रथमः)

रसकर्पूरमरिचं लवङ्गं बृहदेलािका ।  
समभागानि सर्षाणि नागवल्क्या दलद्रव्ये ॥ १५८० ॥  
गुटिका कोलमाना स्यात्प्रातः सायं प्रदापयेत् ।  
गोधूमं सघृतं पथ्यं फिक्झारीरसो वरः ॥ १५८१ ॥  
चि र भ, फिक्झारोगः ।

भाषा—रसकपूर, मरिच, लौंग, बड़ी इलायची सब सम-  
भाग लेकर बारीकचूर्णकर पानके रससे बेरवावर गोठियें बना  
कर रखोडे । इनमेंसे १-१ गोठी जलप्रश्रुतिकेसाथ सुबहशाम  
देनेसे फिक्झारोग नष्टहोताहै । धीकेसाथ गेहूकीरोटी पथ्यमें  
देना ॥ १५६ ॥

### ३५७ फिक्झारिरसः (द्वितीयः)

रसकर्पूरतुल्यञ्च राला हिङ्गुलकं मुष्टिः ।  
खदिरञ्चैव सौभाग्यं पुगं कङ्गोलकन्तथा ॥ १५८२ ॥  
तुल्यंतुल्यं समादाय नागवल्क्या गुटो कृता ।  
देया कोलप्रमाणेन द्वे सन्ध्येऽलवणाऽम्बिकम् ॥ १५८३ ॥  
फिक्झारी रसः खयातो सर्वोपद्रवनाशनः ।  
सप्तकेन न सन्देहो गोधूमं मुद्रतण्डुलः ॥ १५८४ ॥  
चि र भ, फिक्झारोगः ।

भाषा—शुद्ध रसकपूर, शुद्धतुल्य अथवा भस्म, राल,  
शिंगरिफ, इलायची, रैर, मुनामुहागा, गुपारी, शीतलचीनी सब  
समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पानके रसमें घोटकर बेरवावर  
गोलिया बनाकर रखोडे । इनमेंसे १-१ गोली सुबहशाम  
देनेसे समस्त उपद्रवसहित फिक्झारोग ३ दिनमें नष्टहोताहै ।  
खानेको मूंग, चावल और गेहू देना ॥ १५७ ॥

### ३५८ फिक्झारिलेपः (प्रथमः)

सौराष्ट्रं गेरिकं तुल्यं पुष्पकासीससैन्धवम् ।  
रौध्रं रसाञ्जनं दार्वी हरितालं मनःशिलाम् ॥ १५८५ ॥  
हरेणुकैले च तथा सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।  
तच्चूर्णं क्षौद्रसंयुक्तमुपदेशेऽपि पूजितम् ॥ १५८६ ॥  
सु सं., उपदेशः ।

भाषा—फिङ्गडी और मगमाटी (कच्ची), गैल, तुल्य,  
गुपान्नन (कमल), हीराकसीव, सेंधन, लोध, रसौत, दारहल्दी,  
हरिताल, मैनसिल, हरेणुक (रोण, पहाड़ी) इलायची सब  
समभाग लेकर बारीकचूर्णकर धीमें मिलाकर लगानेसे सप्तरकारके  
उपदेश निरुतहोतेहैं ॥ ३५८ ॥

### ३५९ फिक्झारिलेपः (द्वितीयः)

स्थाजिका तुल्यकासीसं दौलेपञ्च रसाञ्जनम् ।  
मनःशिलासमैर्धूर्णं प्रणथीसर्पनाशनम् ॥ १५८७ ॥  
सु सं., उपदेशः ।

भाषा—सजी, तुल्य, कमीस, छडीला, रसौत और  
मैनसिल समभागलेकर बहुतबारीकचूर्णकर रखोडे । इसको  
सौरा धोएहुए धीवैरहके साथ मिलाकर लगानेसे सप्तरकारके  
व्रण और विषर्ष नष्टहोतेहैं ॥ ३५९ ॥

### ३६० वदरीपाकः

कुवेरप्रस्थमादाय सिन्ध्या रात्रौ चतुर्गुणे ।  
क्षीरे प्रातः पथेरसम्पृष्टतार्द्धप्रस्थसंयुतम् ॥ १५८८ ॥  
खण्डं वर्णकृतं कृत्वा सुगन्धं सुविनिक्षिपेत् ।  
कर्पूरवासिते पात्रे मृन्मयेऽगुरुधूपिते ॥ १५८९ ॥  
तस्मिन् सङ्कुस्थं चूर्णानि दापयेद्विषगुत्तमः ।  
चातुर्जातं त्रिकटुकं जातोपप्रफलन्तथा ॥ १५९० ॥  
देवपुष्पं विडङ्गञ्च मिश्रि नागवला घनम् ।  
निशाद्वयं तथा लोहं शुक्लं वज्रं पलाङ्ककम् ॥ १५९१ ॥  
प्रत्येकं चूर्णितं कृत्वा मस्येषा पलं बुधः ।  
सर्वान् वाताऽऽमयांश्चूलानग्निमाग्नं वलक्षयम् ॥ १५९२ ॥  
प्रमेहं मूलकञ्च शर्कराऽश्मरिपाण्डुजुत ।  
पीनसं प्रहणीरोगमतीसारमरोचकम् ॥ १५९३ ॥  
चि. र. भ, नातादी ।

हिं—अथ क्षीरक्षेत्रेन जल ग्राह्यम्, रात्रौ क्षीरं बदरीफलत्रये तदि  
कृतिभाषायाकाऽप्येत्याय । क्षीरप्रक्षेपे दुरामहथेयानन्दरौफलाय  
कृत्वा घनेन साक्षम्युप विधात तत्र बुध विद्योनीयम्, विह्वितावाऽऽ  
शुद्धविषाद्यः ।

**भाषा—**एकसेर घुबे पकेसरके लेकर हातमें ४ सेर पानीमें डालकर घुबे पकावे । सेरभर पानी रहनेपर मसलकर छानले फिर आपसेर पी और एकसेर शकर डालकर पकावे । सौलनेपर ४ सेर दूध डालकर दोताकी चादानी बनाकर उतारले । फिर चातुर्जात, त्रिहृद्, जाविनी, जायफल, लौंग, विडङ्ग, सोंफ, नागवला, नामरसोया, इली, दाहद्वीरी, लोह, ताम्र और बज्र-मन्म ये प्रत्येक २ कपे लेकर बपडछान चूर्णकरके चादानीमें मिलाकर अगले धूप देकर बपूरसे वासिन विवेकूप मिट्टीके बतनमें रखदे । ६-७ दिने बाद ४-४ सोले दूध बगैरहके साथ छेनेसे सब प्रकारके वातज्याधि, शुल, मन्दाग्न, पलश्व, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, शरर, पथरी, पाण्डु, पीनस, प्रवृणी, अति-शार और अदधि इनको यह नष्टकरता है ॥ ३६० ॥

### ३६१ बलादिपण्डूरम्

**बला** शतावरीमूलं यथैरण्डं पलद्वयम् ।  
गुडस्य द्विपलं दत्त्वा पचेत्साम्प्रतमगतम् ॥३५९४॥  
जीरकस्य पलद्वयं पिप्पल्याश्च पलन्तथा ।  
चातुर्जातकचूर्णान्तु प्रत्येकं द्रव्णं क्षिपेत् ॥ ३५९५ ॥  
यावन्त्येतानि चूर्णानि मण्डूरं त्रिगुणं तथा ।  
गोमूत्रे त्रिकलाधवाये निषिकं श्लेष्मणचूर्णितम् ॥ ३५९६ ॥  
पतङ्गलादिकं नाम मण्डूरं हन्ति हुस्तरम् ।  
अम्लपिचं सुदुर्गारं शूलं तीमं नियच्छति ॥ ३५९७ ॥  
र. का, अम्लपिते ।

**भाषा—**बला, शतावरीकेमूल, जब, एरण्डकीज और गुड २-२ पल लेकर सबसे चौगुना पानी डालकर पकावे । चादानी होनेपर जीरा, पीपल १-१ पल, चातुर्जात ( तज, पत्रज, इलायची और नागसेर ) ८-८ माघे, गोमूत्र और त्रिपलाके बराबरीमें सुताकर दूँकाहुआमण्डूर २० तोले डालकर खुबमिलकर रखलोके । इसमेंसे १-१ माघा उचितानुपानकेसाथ देनेसे असाध्य अम्लपित और तीव्रशूल नष्टहोताहै ॥ ३६१ ॥

### ३६२ घस्यामयान्तकं चूर्णम्

निजातकं त्रिपुण्ड्रं बन्धनोशीरपालुकम् ।  
घनसारं शिलासारं कर्पूरकतकोत्पलम् ॥ ३५९८ ॥  
सितनामा कृष्णरम्भा धान्यकाऽमृतशर्करा ।  
गोधूरश्च मृणालश्च पद्मकं पद्मकेसरम् ॥ ३५९९ ॥  
सर्वेषाञ्च समकुर्वान्मृद्विकां त्रिफलां सिताम् ।  
घृतेन मधुना घाऽपि पियेत्सर्वत्र मेहसुत् ॥ ३६०० ॥  
मूत्राऽऽमयान्मूत्ररुच्छान् सोमरीगाग्निहन्ति तत् ।  
वस्यामयान्तकं चूर्णं शम्भुना निर्मितं पुरा ॥ ३६०१ ॥  
वै. चि, मूत्रच्छे ।

**भाषा—**निजात, त्रिपुण्ड्र ( बला ), शफेदचन्दन, राध गंडुल, अश्रक और लोहमन्म, बपूर, निर्मली, कमलगुडा, शफेद कोयल, नील, केलेशा कन्द, घनिया, गिलोय, शकर, गोपूर,

मर्सीड, पद्माक, पद्मकेसर ये सब समभाग, इन सबकी बराबर मुनका, त्रिपला और शरर मिलाकर रखलोके । इसमेंसे रोगीका बलाबल देखकर घी और मधुकेसाथ ६-६ माघे देनेसे मूत्ररोग, मूत्रकृच्छ्र, सोमरोग और वस्तिके तमामरोग नष्टहोतेहैं ॥ ३६२ ॥

### ३६३ बहुमृन्मन्त्रदी

बीजवन्धेधुरकलीतं घांशी सिद्धकसालिमम् ।  
शुक्तिविट्मयोर्मली मज्जानावक्षप्ययोः ॥ ३६०२ ॥  
शिलाजतु त्रुटिवर्द्धः सर्वं सञ्जर्ण्य माक्षिकैः ।  
यदीं यधान सुपदां बहुमृन्मन्महेहिणाम् ॥ ३६०३ ॥  
सि. मे. म, बहुमृन्मन्मेहे ।

**भाषा—**बीजवन्द, छालमज्जाना, मुल्हडी, वैसलोवन, बेरजा, सालिमिश्री, मोतीकीसीप और मूंगीकामन्म, कहेका और हँकी मज्जा, शिलाजीत, इलायची, बज्रमन्म सब सम-भागलेकर बारीकचूर्णकर विरोजा, शिलाजीत और मधुमें मिलाकर २-२ माघेकी गोलियें बनाकर रखलोके । इनमेंसे १-१ गोली गुह शाम अजुपाव विशेषसे देनेसे यह बहुमृन्मन्मेहको हर-करती है ॥ ३६३ ॥

### ३६४ बहुमृन्मन्त्रकोरसः ( प्रथमः )

रसं गन्धमयोऽन्नञ्च बद्धं सर्वं समंसमम् ।  
रसस्य पादिकं हेमरम्भापुष्परेखेन च ॥ ३६०४ ॥  
मदीयित्वा घटी कार्या चणकाभाऽनुपानतः ।  
रसो गुह्यया दातव्यो बहुमृन्मन्त्रकाभिधः ॥ ३६०५ ॥  
आ. वि, बहुमृन्मेहे ।

**भाषा—**गुह्य पता और गन्धक, लोह, अश्रक और बज्रमन्म येसब १-१ कपे, सुवर्णभस्म ४ माघे लेकर सबकी नीलवर्ण बजलीकर केलेके पुष्पके रससे घोटकर बनेप्रमाण गोलिया बनाकर रखलोके । इनमेंसे १-१ गोली गिलोयके रसकेसाथ देनेसे बहुमृन् नष्टहोताहै ॥ ३६४ ॥

### ३६५ बहुमृन्मन्त्रकोरसः ( द्वितीयः )

सिन्दूरश्च तथा लौहं यद्वाऽऽहिकेनसारकी ।  
उदुम्बरमवं बीजं विल्वमूलं सुरभिषा ॥ ३६०६ ॥  
सर्वं समं जन्तुफलरसैः सम्मर्दितं भवेत् ।  
रक्षिद्वयमितां खादेद्वटिकाभानुपानतः ॥ ३६०७ ॥  
औदुम्बरफलद्रावं दद्यान्मेहप्रशान्तये ।  
मांसप्रघानं मथ्यञ्च तथा गोधूमपिष्टकम् ॥ ३६०८ ॥  
बहुमृन् तथा चाऽन्याप्रोगांश्चैव तदुद्गृह्यात् ।  
बहुमृन्मन्त्रकोरसो नाशयेदधिकलपतः ॥ ३६०९ ॥  
तृष्णाऽधिक्ये प्रदातव्यं श्रुतशीतमिदं शुभम् ।  
सारिवा मधुकं द्राक्षा दर्भः सरलचन्दनैः ॥ ३६१० ॥  
पथ्या मधुकपुण्ड्र सर्वञ्च समभागिकम् ।  
जले संस्थाप्य रजनीं पराहे चक्षुरालितम् ॥  
श्रोतो गहननायेन सद्यस्तृष्णाहरः परः ॥ ३६११ ॥  
र. च, बहुमृन्मेहे ।

**भाषा—**रससिन्दूर, लोह और चण भस्म, शुद्ध अफीम जमालगोटा, गूलरकेबीज, वेल्लीजड़, तुलसी सब समभाग लेकर बारीकपीस गूलरके फलोंकेरसके साथ मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली गूलरके फलके रसकेसाथ देनेसे यहसून और तदुद्भव उपद्रव इनप्रवको यह नष्ट करता है । प्यास ज्यादा लगनेपर सारिवा, मुलहठी, द्राक्ष, दर्भ, चीठ, चन्दन, हँ, और महुएके फूल समभाग लेकर काढा बनाकर छ्दाकरके पिलावे । इन्हीं चीजोंको रातमें जलमें भिगोकर सुबहमें पहले छानकर देसकेहै खानेको मासप्रधानभक्ष्य और गेहूँकी रोटी देना ॥ ३६५ ॥

### ३६६ बाकुची वटी

**धार्मिशाल्यलबाकुचीं शुभजलद्रोण्यां विशुष्कां पुनः-  
धिशांशेनपुरस्य कान्तस्सयो निचैः प्रथक् पञ्चभिः ।  
ताम्बूलोरसमादितैस्तिरलदलाऽङ्गस्याऽमृतै लैपितं,  
पक्वं धाऽथ विधानतोऽथ भजनात्कुष्ठामयध्वंसकम् ॥  
२.२ कौ, कुष्ठे ।**

**भाषा—**३२ पल बाकुचीको १६ सेर पानीमें उबालदे । जब सब पानी जलजाय तब उतारकर ६॥ कर्प शुद्ध गुग्गुलु कान्तलोह और पारेकीभस्म सवा १॥ कर्प मिलाकर पान और ह्रद्गुकास बालकर १-२ रोज मर्दनकर मिठीके पात्रमें लेपन कर फिर हठीका सुदृगन्दकर २-३ कपमिठी लगाकर छुवाले । फिर इसे मूषयन्त्रमें कुष्ठदुष्टसे स्वेदितकरे । इसमेंसे ३-३ मासे जलवर्णरसके साथ देनेसे यह कुष्ठोंको दूर करताहै ॥ ३६६ ॥

### ३६७ बाकुच्यादिचूर्णम्

पलानि सङ्गृह्य दशेन्दुराज्याः  
फलत्रयस्याऽपि समानमेतत् ।  
विडङ्गसारस्य पलानि सप्त  
शिलाजतोऽर्द्धञ्च पुरस्य चैकम् ॥ १६१३ ॥  
शतञ्च भङ्गातकसत्फलानां  
पलं तथा पुष्करमूलानाम् ।  
पलत्रयं लोहमवं सुचूर्णं  
तुरी पलादार्धं क्षय कर्पमागाः ॥ १६१४ ॥  
सप्तप्रमुस्ताकणयष्टिकानां  
सचित्रकप्रन्धिकेदारणाम् ।  
न्यग्रोधमूलोपणतुहुमाना-  
मेकत्र सच्यूर्णं सम तु खण्डम् ॥ १६१५ ॥  
खादेष्याग्निं प्रयतस्तु मात्रां  
कुष्ठान्यशेषाण्यपयान्ति नाशम् ।  
अशौघिकाराः पदपि प्रकुञ्च-  
यिष्याणि चित्राण्युदराणि चाऽष्टौ ॥ १६१६ ॥  
क्षयाश्च रुच्छं खलु पाण्डुरोगः  
कण्टामया विशतिरेव मेहाः ।

### उन्मादरोगज्वरनेत्ररोगा

नासोद्भवाः पञ्चत्रिधाश्च गुल्माः ॥ १६१७ ॥  
वातमशीतिविकारं चत्वारिंशत्प्रभेदं पित्तम् ।  
श्लेष्माणं विशतिकं विनाशमायाति हृष्टमपि ॥ १६१८ ॥  
भवति रुचिरदीप्तिर्गौरवर्णो मनुष्यः,  
समधिकशतवर्षं जीयतीह प्रगल्भम् ।  
विधटितघनरोगो वह्निमासप्रयोगा-  
द्युवतितपनहारी हृष्टपुष्टो वृषश्च ॥ १६१९ ॥  
ग नि, बुद्धाधिकारे ।

**भाषा—**बाकुची और त्रिफला १०-१० पल, विडङ्ग तण्डुल ७ पल, शिलाजीत ३॥ पल, शुद्ध गुग्गुलु १ पल, भिलावे १०० नग, पोहकरमूल १ पल, लोहभस्म ३ पल, मुनी पिष्टकड़ी २ तो, जड़पत्तेश्वरित नागरमोथा, पीपल, मुलहठी, चित्रक, पिपलामूल, नागकेसर, बटकीजड़की छाल, मरिच और केसर १-१ कर्प लेकर बारीकचूर्णकर सबको धराकर शकर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे अभिनल देखकर आधा अथवा १ तोला खानेसे समस्तकुष्ठ, ६ प्रकारके अरुं, धिन, चित्र, आठों उदररोग, क्षय, रुच्छ, पाण्डु, कण्ठविकार, २० प्रमेह, उन्माद, ज्वर, नेत्र तथा नासिकाकेरोग, पाचप्रकारकेगुल्म, ८० वातव्याधि, ४० पित्तरोग, २० कफरोग बेशब नष्टहोतेहै । इसके सेवनसे उत्तमकान्ति और गौरवर्ण होताताहै । १०० वर्षतक निरामयहोकर जीताहै जटिलरोगमें ३ महीनेके प्रयोगसे निरामय होकर हृष्टपुष्ट होताताहै ॥ ३६७ ॥

### ३६८ बाकुच्यादि लेहः

शशाङ्कलेखा सविडङ्गसारा  
सपिप्पलीका सहृताशमूला ।  
सायोमला सामलका सतैला  
कुष्ठानि सर्वाणि निहन्ति लीढा ॥ १६२० ॥  
ग. नि, कुष्ठे ।

**भाषा—**बाकुची, विडङ्गतण्डुल, पीपल, चित्रमूल, मगहू, आवले और तिलका तैल सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर तैल मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे यथाभिनल खानेसे समस्तकुष्ठ दूरहोतेहै ॥ ३६८ ॥

### ३६९ बाकुच्यादि लोहम्

बाकुची त्रिफला हृष्णा विडङ्ग सुरस्ताऽमृता ।  
अयोमधुस्थितं पत्रं जराभ्युविपापहम् ॥ १६२१ ॥  
ग नि, रसायने ।

**भाषा—**बाकुची, त्रिफला, पीपल, विडङ्ग, तुलसी, मिलेय और लोहभस्म सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे यथाभिनल खानेसे यह बुद्धा, मृत्यु और विपत्ते दूरकरादे ॥ ३६९ ॥

### ३७० बालचन्द्र रसः

चन्द्रबह्वर्चभागाश्च स्वर्णगैरिकचन्द्रजान् ।  
मर्दयेद्ब्रह्मपात्रेण बालचन्द्रो नियोजितः ॥ १६२२ ॥  
वमिक्षयाऽतिसारति हृत्पासाऽरचिपीनसान् ।  
गरदूषीविषश्वासाघ्नकपिप्तं निहन्त्यलम् ॥ १६२३ ॥  
र. रा. र. धि., क्षये ।

भाषा—सुवर्णमसम् १ भाग, सोनागेरु ३ भाग, मोती १२ भाग, लेकर सबका बारीक चूर्णकर रखछोड़े । इनमेंसे ३-३ रत्ती ययारोगानुपानकेसाय लेनेसे वमन, क्षय, अतिसार, जी मिचलाना, अरुचि, पीनस, कुत्रिमज्वर, दूषीविष, श्वास, रसपित्त इनसबको यह नष्टकरता है ॥ ३७० ॥

### ३७१ बालयकृदरिलोहम्

सहस्रमुदितञ्चाऽन्नं लोहञ्चैव तथा रसः ।  
जम्बीरवीजातिविषे मूलं प्लीहादिसम्भवम् ॥ १६२४ ॥  
रक्तचन्दनमहमज्जः प्रत्येकञ्च समांशकम् ।  
शुद्धचीरस्वरसेनैव धान्यद्वयमिता वटी ॥ १६२५ ॥  
बालानां याकृतं घोरं ज्वरं प्लीहानमेव च ।  
शोथं विषम् पाण्डुञ्च कासं मुखगदं तथा ॥ १६२६ ॥  
उदरं नाशयेदाशु भास्कर स्तिमिरं यथा ।  
बालयकृदरि नाम लौहः श्रीशिवभाषितः ॥ १६२७ ॥  
आ. वि. यकृद्वेगे ।

भाषा—सहस्रमुदी अन्नक, लोह और पारेवी अम, जम्बी-  
रीके बीज, अतीस, हाण्डूकी जड़, लाठकन्दन, पाषाणभेद  
सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर गिलोयके स्वरस अथवा झापसे  
मर्दनकर ३-३ बावली गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे  
एक अथवा दो गोलिया औषिती देखकर अवस्थोचित अनुपानके  
साथ देनेसे बच्चोंका घोर यकृद्, ज्वर, लीहा, शोथ, विषम्,  
पाण्डु, कास, मुखवेगे और उदररोग नष्ट होतेहैं ॥ ३७१ ॥

### ३७२ बालरोगान्तको रसः (वैद्यनाथवटी)

पलं शुद्धस्य स्तस्य गन्धकस्य च तत्समम् ।  
सुवर्णमाक्षिकस्याऽपि चाऽर्द्धभाग नियोजयेत् ॥ १६२८ ॥  
ततः कज्जलिकां कृत्वा पात्रे लोहमये दटे ।  
केशराजस्य शृङ्गस्य निर्गुण्ड्याः पर्णसम्भवम् ॥ १६२९ ॥  
स्वरसं काकमाच्याश्च प्रीणसुन्दरकस्य च ।  
सूर्यायतंकवर्षाभूमेकपर्णीरस्तेस्यता ॥ १६३० ॥  
श्वेताऽपराजितायाश्च रसं दद्याद्विचक्षणः ।  
देयं रसाज्जमागेन चूर्णं मरिचसम्भवम् ॥ १६३१ ॥  
शुभे शालामये पात्रे यामं दण्डेन मर्दयेत् ।  
शुष्कमातपसंयोगाद्दुष्टिकां कारयेद्भिषक् ॥ १६३२ ॥  
प्रमाणे सर्पपाकां बालानाञ्च प्रयोजयेत् ।  
दन्ति त्रिदोषसम्भूतं ज्वरञ्चैव सुदारुणम् ॥ १६३३ ॥

कासं पञ्चविधञ्चाऽपि सर्वरोगं निहन्ति च ।

शिशूनां रोगनाशाय निर्मितोऽयं महारसः ॥ १६३४ ॥

र. सं., भैर, र. सु, र. र, र. च., ध. र. क, बालवेगे । र. सु,  
र. र., र. च., ध, एषु ग्रन्थेषु बालरस इति नाम ।

टि०—र. र., ध, र. सु, र. च, भै र, र. स, एषु द्वितीयस्थाने  
रसव्युदये कथ्यते रोगे वैद्यनाथवटीति नाम्ना प्रकीर्तते निहितो  
ऽस्ति तत्र माक्षिकमरिचयोरभावेऽस्ति, भावनासु कुक्कुलाजयन्तीन्द्रास  
नौकस्य विशेषतया निहिता सन्ति, काकमाचीवर्षाभूमायतनकामा  
आऽभावेऽस्ति, श्वेतापाततो विशेषेण दृश्यते परन्तु सौऽकिमिखर,  
माक्षिकमरिचसंयोगेन गुणाऽभिप्रायः । कुक्कुलाजयन्तीन्द्रासनौकस्य  
भावनास्त्वयान्पुनरेवा इति सर्वस्यापि सामञ्जस्यः । पञ्च सप्तपर्ण-  
कृत्वा अल्पवैवाऽन्तर्भाव करणीयः ।

भाषा—शुद्ध पात्रा और गन्धक १-१ भाग, सोनामाखी  
३ भाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर लोहके पात्रमें स्याद सफेद  
भंगरा, निर्गुण्डीके पत्ते, मकोय, हलमल, हुरहुर, इदंदिद,  
माखी, सफेद कोयल इनके स्वरसोंकी १-१ भावना देखर इससे  
आधा मरिचका चूर्ण मिलाकर पत्थरके बालमें एकतरह घोट-  
कर सर्पप्रमाण गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली  
उचितानुपानकेसाथ देनेसे त्रिदोषज्वर, पाचप्रकारकी खासी  
इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३७२ ॥

### ३७३ बालसुन्दररसः

सुशुद्धं श्वेतवैकान्तं सप्ताहं भाग्यमातपे ।  
अम्लष्वेतससम्पिष्टं तेनैव द्रुतिमाप्नुयात् ॥ १६३५ ॥  
एतां द्रुतिं शुद्धसूतं समं शौद्रैर्दिनत्रयम् ।  
मर्दितं लेहयेन्मापं मासाद्बालो भवेन्नरः ॥ १६३६ ॥  
वत्सराद्रसस्तुष्यः स्याद्रसोऽयं बालसुन्दरः ।  
वाङ्मूचीबीजकर्वकं मध्याज्याभ्यां लिह्यदनु ॥ १६३७ ॥  
र. रा, रसायन सं, रसायने ।

भाषा—अच्छीताह शुद्धनिचे हुए सफेद वैकान्तको अम्ल  
वैतके रसमें बड़ीपूषमें ७ रोजतक रसने तो इसका इवहीजाताहै ।  
इसको बराबर शुद्ध पात्रा मिलाकर घादकेसाथ ३ रोज मर्दनकर  
रखछोड़े । इसमेंसे सप्तोसे लेकर मरिच प्रमाण तक मात्रा लेकर  
बावुचीके बीजोंका चूर्ण, मधु और धीकेसाथ बढानेसे बालक  
नितोग होकर इष्टगुट होजाताहै यदि इसका वर्णमर लगता  
प्रयोग किया जायतो बच्चा निरामय होकर दीर्घायु होजाताहै ।  
टि० इस प्रयोगमें वाङ्मूचीके १ वर्ण बीजोंका चूर्ण अनुगानमें  
लिखाहै तथा १ मदीनेमें जवान और १ वर्णमें वज्रसमान होना  
समझमें नहीं जाता । इसके अनुसार इसकी मात्रा अधिकसे  
अधिक ३ मासेही होनी चाहिये, परन्तु यह मालूम होताहै कि  
ग्रन्थकारने केवल अनुमानसे इसप्रयोगको लिखाहै यदि किसीको  
खिलाना नहीं और स्वयं तो खायेगैही क्यों ? इससे यह सिद्ध  
होताहै कि इसमें प्रयोगार्थस्यसे अधिक काम लियागयाहै ।  
इसलिये बच्चोंको सर्पमात्रासे देना और वाङ्मूचीके बीजोंका  
चूर्ण ३ रत्तीसे ६ रत्तीतक देना ॥ ३७३ ॥





## ३८४ बोलवद्धरसः (प्रथमः)

गुह्यचिकासत्त्वसमं रसेन्द्रं  
गन्धं समांशं निखिलेन वर्धतः ।

विमर्दयेच्छालमलिकामवाङ्गिः

स्याद्वोलवद्धो मधुयुक् त्रिमासः ॥१६६५॥

रक्तार्शसां नाशकृदेव सूतः

पित्तार्शसां पित्तजविद्वधेक्ष ।

रक्तप्रमेहस्य खुडस्य चाऽपि

स्त्रीणां प्रवाहस्य भगन्दरस्य ॥ १६६६ ॥

नि. र., र्. र., र्. यो. त., रसायन सं., र. चं., र. प्र., र., वि.  
र. भ., र. को., र. सि., र. पा., अर्शोऽधिकारे । र. शुक्रप्रमेहाऽधि-  
कारे, रसेश इति नाम ।

टि.—“गोल वज्ररसेशयो. मुक्ता सत्त्वाशयो बोलक, दत्ता सुवेदिमा-  
नित दिवसक शेषान्मूलद्रव्यैः । इत्यदिष्टं पुट दशौन तुषनः सौन सनाह्वय  
तद्, दद्याद्द्विगुणितं बीजं रसैः शुक्रमेहे रम ॥” इति शुक्रमेहे रसायनो  
पाठोऽस्ति तत्र बोल चतुर्धाशेन नियोजितम्, द्याम्लोस्थाने शेषान्मूल-  
नियोजितम् । तुषाग्निना पक्कं श्लोऽस्ति यत्तु पक्करणादोत्पृष्ट-  
सत्त्वमेतस्मैमात्राणां प्रक्रियाऽनुचितैव प्रतिपाति, बीजं रसैः शुक्रमेहे-  
शुगान्नु समीचीनमेवाऽस्ति, अतस्तत्त्वाऽन्यैर्नान्तर्भावः परणीयः ।

भाषा—रिलोयकासत्त्व, शुद्ध पारा और गन्धक समभाग  
तथा हीरादक्कन सबके बराबर लेकर पारेगन्धकी नीलग-  
ण्जलीमें सवने मिलाकर रोमलकेमुसले के स्वरस अथवा  
छालके काढ़ेमें मर्दनकर ३-१ मासेकी गोहियों बनाकर रख  
छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे खुनी  
और पित्तज बवासीर, पित्तज विद्वि, रक्तप्रमेह, वातरक, प्रदर  
और भगन्दर इनसबकी यह नष्टकरता है ॥ ३८४ ॥

## ३८५ बोलवद्धरसः (द्वितीयः)

रसमस्य विषं तुल्यं गन्धकं द्विगुणं मतम् ।

बोलतालकवाहीककौटीमाक्षिकं निद्रा ॥ १६६७ ॥

कण्टकारी यक्षारो लाङ्गली जीरसेन्धवम् ।

मधुकसारं सन्धुचूर्णं सप्ताहं वाऽऽर्द्रकट्वयैः ॥ १६६८ ॥

शुटिकां यदराकारां श्लेष्मकासापनुत्तये ।

मक्षयेद्वोलवद्धोऽयं रसः सभ्यासपाण्डुजित् ॥ १६६९ ॥

र. र., र. सु., र. को., नि. र., व. रा., र. क. ल., र. का.,  
बासाऽधिकारे । र. का. वाहीकस्थाने पाठाऽस्ति द्रव्येते ।

भाषा—पारदभस्म, शुद्धधन्नाग १-१ भाग, शुद्धगन्धक  
२ भाग, हीरा दफान, हरितालमस, मुनाहीग, नेपथ्यारी जड़,  
सोनामारी, हल्दी, मट्टरैया, यक्षार, शुद्धकरिहारी, खेद-  
जीरा, रोषानमरु, मातुपारा हीर देशव १-१ भागलेकर वारीक-  
चूर्णकर पारेगन्धकी नीलगण्जलीमें मिलाकर ७ रोजनक  
अरसछे रसमें पोटार के बराबर गोहिये बनाकर रखछोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली सपातोगानुपानके साथ देनेसे श्लेष्मरोग,  
गोमी, आम, पाण्डु, मयरो यह नष्टकरता है ॥ ३८५ ॥

## ३८६ बोलवद्धरसः (महान्) (तृतीयः)

पारदं गन्धकञ्चैव टङ्कणं चन्द्रकं पृथक् ।

एतानि कर्पमात्राणि द्विभागं धृष्ट्वीजकम् ॥ १६७० ॥

त्रिभागा विजया प्रोक्ताऽहिफेनं बुटिरिव च ।

वेदभागास्ततो नागवङ्गयोश्च रसाह्वयाः ॥ १६७१ ॥

बोलस्य मुनिभागाः स्युरेकीकृत्य विमर्दयेत् ।

भावनात्रितयं दद्यात्कतकफवायवारिणा ॥ १६७२ ॥

गुडभां वटिकां कृत्वा यष्टीमधुकजीरकैः ।

दद्यात्सितामधुभ्यां वाऽऽर्द्रं ह्यतिसारके ॥ १६७३ ॥

सोमरोगे क्षये पाण्डौ प्रमेहे भूत्रकृच्छ्रके ।

रक्तमूत्रे मूत्रदाहे मूत्राघाते प्रयोजयेत् ॥

बोलवद्ध इति ख्यातो महाप्रवीणपट्टाणः ॥ १६७४ ॥

रसायन सं., असुमरदौ ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा और कपूर ये प्रत्येक  
१-१ भाग, शुद्धचूर्णके बीज २ भाग, भांग ३ भाग, अजीम  
और इलायची ४-४ भाग, नाग और वज्रमस ६-६ भाग,  
हीरादस्वन ७ भाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारेगन्धकी  
नीलगण्जलीमें मिलाकर निमेलीके काढ़ेकी ३ भागनाएँ देकर  
१-१ रतीकी गोहियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ अथवा १  
गोली शुद्धही और जीरेकेसाथ, अथवा घाजर और मधुकसार  
देनेसे अतिसार, सोमरोग, क्षय, पाण्डु, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, रक्त-  
मूत्र, मूत्रदाह, मूत्रापात इनसबको यह नष्टकरता है ॥ ३८६ ॥

## ३८७ बोलवद्धरसः (चतुर्थः)

रसेन बोलं द्विगुणं विनेकं

विमर्दयेच्छालमलिकारसेन ।

पुटेत्ततो भूधरयन्त्रमये

गुह्यचिकासालमलिकोत्थनीरैः ॥ १६७५ ॥

तं भावयित्वाऽथ ददौत यद्वा-

चतुष्टयं तद्विगुणं तु यद्वा ।

वज्रूलं कायमिहानुद्धा-

द्विहातकं चा त्रिकलातिलैश्च ॥

कायं पिवेद्वा कुटजस्य रामौ

क्षौद्रेण संयोज्य फलत्रयेण ॥ १६७६ ॥

र. की., अर्शोऽधिकारे ।

भाषा—हीरादरसनमें दूना शुद्धपारालेकर १ रोजनमें  
छालकेकाढ़ेमें मर्दनकर गोला बनाय जराफचतुष्टये बन्दर  
भूपरयन्त्रके शुद्धपुट दे । रसायनोत्तल होनेपर मिश्र  
और भस्मके बचावोंमें १-१ रोजन भावना देकर टेंडु १॥ मासेकी  
गोहियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली वज्रूलके स्नाय-  
वेसाथ दे । अथवा भिज्जों मिश्रण और जिनके कायके  
साथ देनेमें गव अक्षरके बगलीर नष्टहोते हैं । रात्रिमें बुट्टादो  
पलका बास मिश्रण और मजु मिश्रण के ॥ ३८७ ॥



## ३८८ बोलादिवदी

बोलं सुगन्धेन समं गुह्वरी-  
सत्त्वेन तुल्यं त्रिकलाजलेन ।

विमर्दयेच्छालमलिकारसेन  
दिनत्रयं चाऽथ निषेवयेत् ॥

गद्यानयुग्मं मधुना तु मासं

पित्ताग्निवाऽर्शसि लयं प्रयान्ति ॥ १६७७ ॥

र ही, पित्ताऽर्शसि ।

भाषा—शुद्धगन्धक, हीरादक्कन और गिलोयका सत्त्व समभाग लेकर त्रिकला और सेमलकी छालके काढ़से ३-३ रोज मर्दनकर १-१ तोला मधुके साथ १ महीने तक खानेसे पित्तज बवासीर नष्टहोता है । ३८८ ॥

## ३८९ ब्रह्मपञ्जर रसः

चतुःपलं शुद्धसूतं पलैकं मृतहाटकम् ।

पलाशकुङ्कुमद्रधिस्तैलैश्च दिनत्रयम् ॥ १६७८ ॥

मर्दयेत्तत्सखल्वे तु सत्यतुल्यञ्च गन्धकम् ।

शोधितं निक्षिपेत्स्निग्धपूर्वाङ्कं मर्दयेदिनम् ॥ १६७९ ॥

मापमानां घटी खादेन्नरसामृत्युजिज्ञयेत् ।

जीवेद्ब्रह्मदिनं घटी रसोऽयं ब्रह्मपञ्जरः ॥ १६८० ॥

धानरीकाकतुण्डपुण्डरीकचूर्णं समसमम् ।

शालमलीनश्चन्द्रद्राघे भांघयेद्विषमयम् ॥ १६८१ ॥

अथैव भृङ्गजैर्द्राघे भांघितं चूर्णयेत्ततः ।

पुरातनगुडैस्तुल्यं कर्पकमनुभक्षयेत् ॥ १६८२ ॥

र ख, रसायनम्, रसायने ।

भाषा—शुद्धपारा ४ पल, सुवर्णभस्म १ पल लेकर पलाशकी कलियोंके स्वरस और पलाशबीजोके तैलमे ३-३ दिन मर्दनकर सुनहरीरंगका शुद्ध गन्धक सबकी बराबर मिलाकर कबलीकर पुष्पकोष्ठसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ मासेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खाकर केबाच और कान्नासिकाके बीज समभाग लेकर सेमलकी छाल और भांगरेके रसमे ३-३ रोज मर्दनकर सुखाय बारीकपीसकर इसमेंसे १-१ तोला पुराने गुडके साथ मिलाकर खानेसे एक वर्षभरमे बलीपलितसे रहितहोकर दीर्घायुको प्राप्त होताहै ॥ ३८९ ॥

## ३९० ब्रह्मरन्ध्ररसः

रसाऽन्नगन्धकं तालं हिङ्गुलं मरिचं तथा ।

टङ्गुणं सैन्धवोपेतं सर्वांशममृतं तथा ॥ १६८३ ॥

सर्वपादसमोपेतमहिषीपित्तमर्दितम् ।

ब्रह्मरन्ध्रे प्रयोक्तव्यं सन्यासज्ञानविभ्रमे ॥ १६८४ ॥

सहस्रकलशैः क्षानं लेपनं चन्दनादिभिः ।

शुभुमुद्रसं भोग्यं तर्कभक्त यथेप्सितम् ॥ १६८५ ॥

भ र, र.ह, रसाऽपिनागे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और हिङ्गुल, अन्नक-भस्म, मरिच, मुनासुहाया और सैन्धवमक समभाग, शुद्धच-नाग सबकीबराबर लेकर सबसे चतुर्थांश भेसेके पित्तकी भावना देकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे सन्यास और ज्ञानविभ्रम सन्निपातमें ब्रह्मरन्ध्रमें पाठलगाकर मसले तो इससे सन्निपाती चेतनामें आजाता है । उससमय एहज्जार ठंडे पानीके घड़े तिर-पर ढाले और चन्दन वगैरहाकलेपकरे । ईप, मूग, तक और मात यथेष्ट खाने ॥ ३९० ॥

## ३९१ ब्रह्मरसः (प्रथमः)

भागैकं मूर्च्छितं सूतं गन्धावन्तुजचित्रकम् ।

चूर्णन्तु ब्रह्मजीजानां प्रतिष्ठादशभागिकम् ॥ १६८६ ॥

भागान्निवाहृदयाऽपि क्षौट्रेण गुटिका कृता ।

अयं ब्रह्मरसा नाम्ना ब्रह्महत्याग्निनाशनः ॥ १६८७ ॥

द्विनिष्कं भक्षणादन्ति प्रसुप्तिकुश्रमण्डलम् ।

पातालगाढकीमूलं जलेः पिष्ट्वा पिबेदनु ॥ १६८८ ॥

र स, र बि, र म, र.र कौ, रसायनस, र ह, र.च, र का, यो म, र सि, छुडे ।

भाषा—मूर्च्छितपारा १ भाग, शुद्धगन्धक, बाङ्गची, चित्रक और पलाशकेबीज १२-१२ भाग, पुरानागुड ३० भाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर मधुमें ८-८ मासेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पातालगाढकीकी जड़ १ तला पानीमें पीसकर इससेसाथ लेनेसे सुनहरी और मण्डल इत्यादि कुष्ठों को यह नष्टकरताहै ॥ ३९१ ॥

## ३९२ ब्रह्मरसः (द्वितीयः)

सूतगन्धकमासिकलोहं पिष्टं फलप्रयकाये ।

प्रहरचतुष्कं भूधरगर्भे पार्कं विधाय गुञ्जेकम् ॥ १६८९ ॥

सधरानीरः सूतो ब्रह्माख्यो रक्तपित्तादीन् ।

जयति हितौषधयोगैः पथ्याक्षौट्रेण चाऽम्लपित्तादीन्

र.ल, अम्लपित्तादिरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सोनामाखी और लोहभस्म समभागलेकर सबकी नीलवर्ण कबलीकर ४ पहर त्रिफलाके काठमें घोटकर गोलाबनाय धरावत्स्मृष्टमें बन्दकर सूर्ययन्त्रमें एक पुटदेवे । स्वाहाश्रीकण्ठोनेपर निहालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती त्रिफलाके काठकेसाथ अथवा हरे और मधुनेसाथ अथवा तत्तद्रोगहरालुपानकेसाथ देनेसे यह रक्तपित्त और अम्ल-पित्त प्रभृतिको नष्टकरताहै ॥ ३९२ ॥

## ३९३ ब्रह्मरसः (तृतीयः)

रसं ब्रह्म प्रवक्ष्यामि पारदं गन्धकं समम् ।

किंनुकस्य च बीजानि टङ्गुणञ्च मन शिला ॥ १६९१ ॥

अपामार्गस्य बीजानि केशरजनकस्य च ।

अश्वीरस्य रसे सत्यं दिनानां पञ्च मर्दयेत् ॥ १६९२ ॥

शुभं कुर्यात्पुनः सर्वं मर्दयेन्मत्स्यभेदसा ।  
 दिनत्रयं पचेदधं कटुत्रयविमिश्रितम् ॥ १६९३ ॥  
 भेदसा तिमिजातेन मर्दयेच्च दिनद्वयम् ।  
 आर्द्रकस्य रसैः पञ्च दिनानि परिमर्दयेत् ॥  
 श्लेष्मज्वरविनाशः स्यादेकविंशतिवासरैः ॥ १६९४ ॥  
 सू. प्र., ज्वरे ।

भाषा—शुद्धपारा और मन्थक, पलाशके बीज, शुद्ध सुहाया और मैनसिल अपामार्ग और भागेरके बीज समभागलेकर वारीक चूर्णकर पारोगन्धकी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर जंभीरीके रसमें ५ दिन मर्दनकर सुखाकर मछलीकी चर्बीसे दो ३ रोज मर्दन कर समभाग त्रिफुडा चूर्ण मिलाकर मछलीकी चर्बीसे ३ दिन और अदरकके रससे ५ दिन मर्दनकरके १-१ माशेकी गोल्या बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरकके रसवर्गहके साथ २१ रोजतक देनेमें कफज्वर नष्टहोजाता है ॥ १६९३ ॥

### ३९४ ब्रह्मराक्षसरसः

वेदकर्णो रसः प्रोक्तो नयसारस्तु कर्पकः ।  
 स्तुतुल्यं गन्धकं स्यात्तदर्थं तालकं मतम् ॥ १६९५ ॥  
 तालतुल्यो यवक्षारो नागः कर्पमितो भवेत् ।  
 काकमाख्या रसैः भाष्यं सप्तवारं प्रयत्नतः ॥ १६९६ ॥  
 उन्मत्तस्य रसेनाऽपि सप्तवारान्तु भाषयेत् ।  
 पचेत्तं घालुकायन्त्रे द्वादशप्रहरावधि ॥ १६९७ ॥  
 पुनस्तत्र क्षिपेद्गन्धं वेदकर्णञ्च भाषयेत् ।  
 पूर्वोक्तस्तु द्वयै र्गन्धे घालुकाख्ये पचेत्ततः ॥ १६९८ ॥  
 अधःस्थो भस्मतामिति शायरकूपीषु योजयेत् ।  
 सप्तमि भस्मतामिति ब्रह्मराक्षसादः ॥ १६९९ ॥  
 तामाऽनुपानिमात्रेण सर्वरोगाभिहतति ।  
 मणैर्कं भुज्यते नित्यं मरेटीतसमासता ॥ १७०० ॥  
 १ को, रघायनसं, सर्वरोग ।

टि०—अथर्वी रसमिदं द्रवमिति उक्तिः तथाऽपि त्रिधायाविशेषेण तत्र रसाऽऽप्युदनाल्पिन्द्रियैः पृथग्निमित्तं, सिन्दूरता तन्माहीराऽस्ति मर्दकं भुज्यते नित्यं नरणेति फलभागे यन्निद्रितोऽप्येवास्मात्तन्मिति बोध्यम् ।

भाषा—शुद्धपारा ४ तोले, नवसादर १ तो, शुद्धगन्धक ४ तो, शुद्धहिताल और यवक्षार ३-२ तोले, शुद्धनाग १ तोला लेकर बीदागो गलाकर पाराजोड़े । फिर गन्धकमिलाकर कज्जलीकर हितालका वारीकचूर्णमिलाकर ४ पहल मर्दनकरके यवक्षार मिलादे । फिर मनोय और धनुस्त्रेखरे ७-७ भावनाएँ दकर सुखाकर १-७ कपमिठी धौर्द्ध आतली बीदीमें भरकर गुजमुंद रसकर १० पहली आचदे । इसतह करनेसे जिससमय पारेका उडना कन्धहोजाय तब सिद्धउज्जना पादिपे । इसमें प्रायः छायी बीदीमें तत्रय पारा होजायगा । भागदवादा हठी आंच न लगनेसे कसर रहानेसे कुछ भन्ना परोका ऊपर उठा हो ले १-२ इन्धिया और उन्मत्तस्य ।

इसमें यह ध्यान रजना कि कहीं आंच अधिक लगनेसे पारा अधिक उडजायगा तो बीदीमें नीचे वैठा हुआ केवल क्षार मिलेगा, यह क्षार निकम्माहै केवल श्वास कासपर काम करेगा । इसलिये बहुत संभलकर इसनी आंचदेकि गन्धकजलकर सिन्दूर तैयार होजाय । इसमेंसे १-१ रती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त रोगोंको दूरकरताहै । इसके रानेसे बहुतज्यादा मूल लगने लगेगी । कुछदिनके अन्याससे बलीपलितादिकसे निम्बुंक होजायगा ॥ ३८४ ॥

### ३९५ ब्रह्मवटी

शुभं सूतं विधा गन्धं रसतुल्यं विपं क्षिपेत् ।  
 कृष्णाभ्रताम्रलोहञ्च मर्दयेत्पूषणद्रवैः ॥ १७०१ ॥  
 आर्द्रकस्य द्वयैः पश्चात्तन्माह्वये दिनं दिनम् ।  
 कृष्णजीरकपुनाङ्गमजमोद्गा जयन्तिका ॥ १७०२ ॥  
 यमानी तिलवर्णी च ब्राह्मी धत्तृभृङ्गिहाद ।  
 ययान्यश्चार्द्रकर्णौ शिशुहस्तिक्कशुण्डिके ॥ १७०३ ॥  
 श्वेतापराजिता चासा चित्रकश्चेति कापतः ।  
 भावयेद्द्वितीया कार्या वदरास्थिसमा शुभा ॥ १७०४ ॥  
 योज्येयं यामयामान्ते मरिचैरार्द्रकद्रवैः ।  
 इयं ब्रह्मवटी नाम सक्षिपातकुलान्तिका ॥  
 पथ्यं स्यान्मनुद्रूपेण दिवास्यापञ्च घर्जयेत् ॥ १७०५ ॥  
 र. सु, र. का, र. को., ज्वराधिकारे । र. को. प्रभावती  
 घटीति नाम ।

टि०—अत्र कर्णौकशयेन कर्णिकाराऽपरपथीय आर्द्रकधो प्रसीतम् । शिरोलीकन्दमिति केषादिद्रव्याख्यानन्तमूल्यम् ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग, शुद्ध बधनाग, कृष्णाभ्र, ताग, लोह इनकीभस्में १-१ भाग लेकर सक्की नीलवर्णकज्जली बनाय त्रिफुडा, अदरक, कालाजीरा, पतत्र, अजमोद, जैत, उरासानीअजवाइन, हुरहुर, मामी, घदूरा, भंगरा, अजवाइन, अदरक, अमिलताव, सदिजन, हाथीशुण्डी, सफेद कोयल, जइसा और चित्रक इनके ययाममन्त्र स्वस्त अथवा हाथोंसे १-१ रोज भावना देकर बरकी गुडलीके बराबर मोलिया बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मरिच और अदरकके रसके साथ १-१ पहलवादे देनेसे यह तमामसत्रिातोंको नष्ट करदीहै । मूँके दूधकेसाथ चावल पच्यमें देवे । दिनेमें सोना बर्जितहै ॥ ३९५ ॥

### ३९६ ब्रह्माण्डगुटिका

नागचक्षुदलद्रवैः सप्ताहं शुद्धपाद्यम् ।  
 मर्दयेत्तप्तपल्वे तु क्षालयेत्काञ्चिकैस्ततः ॥ १७०६ ॥  
 तत्क्षिपेद्विषकन्दस्य गर्भे निष्कचतुष्टयम् ।  
 विषेण तन्मुखं यद्वा स्थूलधाराहमासजे ॥ १७०७ ॥  
 पिण्डगर्भं निरुद्धाय मुखं सूत्रेण सीयेत्ततः ।  
 सन्ध्याकाले षड्दित्वा वृष्टुं मदिरायुतम् ॥ १७०८ ॥  
 ततश्चुल्कां छांटापि तेले घृतसममये ।  
 तं पञ्चद्विजानिपते सुविषं मन्दपदिना ॥ १७०९ ॥

सन्ध्यामारभ्य यत्नेन यावत्सूर्योदयं तथा ।  
हठाञ्जागरणं कुर्यादन्यथा तन्न सिद्ध्यति ॥१७१०॥  
प्रातर्बुध्न्य गुटिकां क्षीरभाण्डे विनिःक्षिपेत् ।  
तत्क्षीरं शुष्यति क्षिप्रमेतत्प्रत्ययमनुभूतम् ॥१७११॥  
दध्ना तां धारयेद्वक्ष्ये धीर्यस्तम्भकरा रता ।  
क्षीरं पीत्वा रमेद्रामाः कामाकुलकलान्विताः ॥१७१२॥  
मुखाद्वस्तं यदा प्राप्ता तदा धीर्यं पतत्यलम् ।  
ब्रह्माण्डगुटिका नाम शोषयन्ती महोदधिम् ॥१७१३॥  
र ख , र ( मा ) र सु , र , र मं , र , र , इ यो त , र सि ,  
दो , यो म , र क ल ( ना ) वीर्यस्तम्भने । र म , इ यो त , र ,  
र एव धीर्योतीनीति नाय ।

टि०—भाषित्यन्वयैनीयराष्ट्राधारे = विषयदासित्यरोमनपारदो  
वनपराह्वला परिवेष्टित । वनकदीर्गजैकविषाचिह्नो व्रजति यामयुगेन  
सुषुप्ताम् ॥ यत्र सुषुप्ता गुटिका मुखान्धता यदा स्वात्मपुराप्रमोक्षे ।  
धीर्यं निष्कृष्यात्पुत्रप्रमोक्षे शतं स मुनीन्धनोदुक्ता ॥ इत्यकारक  
स्वतन्त्रतया पाठः प्रकल्पित, परन्तु स न रसाम्बर, इति सुधीषि  
विभावनीयम् । बुध्नोपागतत्रिपदा द्वितीयस्थाने "रत्नं कनकजैलेन  
साक्ष्यभागलभ्यम् । दिनादि सप्त सन्ध्यां विषमयो समाक्षिपेत् ॥ हेम  
तल्लक्ष्मि लिखित्य तन्मुख राधयेदिपार । मसि मृत्तिकाभिश्च वेदयित्वा  
विशोषयेत् ॥ मासिपे मासपिण्डे तु सूर्ये क्षिप्त्वाऽप्य सीवेयेत् । मासस्य  
पेठ्ठीं कृत्वा दृढ कर्मेण वेदयेत् ॥ साक्षेण वेदयेत्समस्तलापपुष्पमन्त्रैः ।  
गैमयेन च सस्थि गौल हस्तुनयेद्विषय ॥ हस्तनयमिती गौं गौशुद्र  
लिप्त्पुति । सन्ध्याये निक्षिपेद्रौक दध्ना घृति समुद्धरेत् ॥ तत्रत्या  
शुद्धिर्वा प्राप्ता विनैक्योक्तदध्निनी । सा मुने येन निक्षिप्ता रमेत्येतोऽ  
हनाशतम् ॥ यावत्सा गुटिका बन्धे तावत् प्रकृते च ॥" अथ पाठो  
धीर्योतीनीनान्ना निक्षिप्ताऽस्ति, अत्राऽपि विषयदे निधान उत्तमानेन  
कवचमभिधाने विशेष । हस्तप्रयमितगौरी धारद स्वात्मनि नेवेति  
सुतरा सन्नेह । तद्वेक्षया सपत्न्यपरिपाको विभावार्थे प्रतीयतेऽत  
स्तत्पाऽप्यवैवाऽन्तर्भावं वरणीय । वतपास्तु कृत्वा परीक्षणीय ।  
अभिरुचिविषयाभिलषणीयाऽस्ति सा केनाऽपि प्रकारेण करणीयैवाऽस्ति  
शक्यं नास्ति केनाऽपि विनादः ।

भाषा—४ मासो बुध्नोपागतो यके पानके रससे ७ दिनतक  
तल्लक्ष्मि मर्दनकर कासीसे धोकर साफकरले फिर बछनायके  
गोलेकन्दसे रखकर उसीकी बकतीसे बन्दका मुह बन्दकर  
जगली सुखरवी मासपेशीमें रखकर चोरसे छीदे । फिर सन्ध्या  
कालके अन्ते सुहृत्वेन कुनकुट और मयकी रसराजको बलि  
देकर सोहेको काशीमें मासपेशीको रखकर ध्वजेका तैल ८०  
तोले डालकर मन्दागमिसे सन्ध्यासमयसे आरम्भकर सूर्योदयतक  
पकावे । इसमें जागरण ठहरे करना चाहिये । अगर निद्रा आ  
जायगी तो यह सिद्धि नहीं होगी । प्रातः स्वाध्यासीतक होनेपर  
उसगोलीको निकालकर गोदुग्धके घड़ेमें डाले, डालेही दूध  
सुखजायतो समझना कि यह सिद्ध होगई । इस गोलीको मुहमें  
रख दूध पीकर बहुतसी छियाँके साथ प्रसन्न करनेपरगी मुहमेंसे  
दसे हाथमें न लेले तबतक धीर्य स्थिति नहीं होता है ॥१७१६॥

३९७ ब्रह्माखरसः ( ग्रन्थः )

ब्रह्माखरमयध्यायि सद्यः प्रत्ययकारकम् ।

स्तम्भमत्र विगन्धश्च तत्समं गरलं त्वदे ॥ १७१४ ॥

त्रिभिः समं विषं योज्य मरिचं सर्वतुल्यकम् ।  
चराहकेकिमहिपचितैः सप्त विभावितम् ॥ १७१५ ॥  
लाडल्या देवदाल्या च ज्वालामुख्यार्द्रकद्रवैः ।  
एकविंशतिधा भाव्यं प्रत्येकं धर्मशोषितम् ॥ १७१६ ॥  
द्विगुणमात्रनस्येन मृतमुत्थापयेद्भुयम् ।  
दध्यन् ससितं पथ्यमुपचाराश्च शीतलाः ॥ १७१७ ॥  
सर्वोदरगद्गोऽप्यमसाध्यमपि साधयेत् ।  
अस्थिशूलानि सर्वाणि नाशयत्येव सर्वथा ॥ १७१८ ॥  
इ यो त , रसायनसं , वि क्र , र का , र म मा , यो त ,  
ज्वराऽधिकारे ।

टि०—मत्र विगन्धश्चन्द्रेण गन्धकमहद्व्यभ्यस्तमस्रोऽभिप्रेत स च  
गन्धकहरितालमन शिलासकौ भवितुमर्हति, तद्वगना तु विगन्धेन  
एकार्थिकेन कृताऽस्ति गन्धविभि मममिति न विरुद्धते । चिचिस्तात्र  
मकस्यत्वतीकारेण तु त्रिभिरिति लिङ्गात्स्वसङ्ख्याविशिष्टो गन्ध इति  
मत्वा गौरीरन शुद्धमिह निगम मित्यप्रति । रसकामेनी तु निग  
म्यानीति पाठ विषय शङ्का निरप्येति हातव्यम् ।

भाषा—पारदभस्म, गन्धक, हरिताल, और मैमसिल १-१  
तोले सर्पविष ४ तोले, शुद्ध बछनाग ८ तोले, मरिच १६ तोले लेकर  
सबका धारीक चुण्क २-३ पहर सूखा मर्दनकर सूअर मोर और  
भेताके पित्तोंकी ७-७ भाषनाएँ देकर मुखाके फिर करिहारी,  
बन्दाल, हुहुर और अदखले रसोंकी ११-११ भाषनाएँ देकर  
सुपाकर रखोड़े । प्रत्येक भाववा मुखामुलाकर देनी चाहिये ।  
इसमेंसे २ रती नत्स्य देवेसे मृतावस्थाभी सनिपाती होशमें  
आजायगा । भूखलगनेपर शकर, दही, मात देना और हीतो-  
पचार करना । इससे समस्त उदररोग और सब प्रकारके शूल  
नष्ट होते है ॥ १७१७ ॥

३९८ ब्रह्माखरसः ( द्वितीयः )

द्वितुल्यञ्च त्रिपापार्णं गन्धकञ्च शिला विषम् ।  
नेपालं वरदं चाऽन्नं सिन्धव मरिचं बिडम् ॥ १७१९ ॥  
त्रिसारं द्रव्यं हिङ्गं सर्वतुल्यन्तु पारदम् ।  
ज्योतिष्मत्यास्तु तैलेन मयेयेदिनपञ्चकम् ॥ १७२० ॥  
दोलायन्त्रे दिने पक्त्वा ततः खल्वे विमर्दयेत् ।  
मयूरमहिषोमस्त्यवाराहजङ्गमपद्मगा ॥ १७२१ ॥  
शशका जम्बुकाः श्वान एषां पित्तैस्तु भावयेत् ।  
गुञ्जामात्रं सुरैर्मित्वा ब्रह्महारे विनिक्षिपेत् ॥ १७२२ ॥  
मय्यन्ति तत्स्थणेनैव सन्निपाताः सुदादणाः ।  
मूकतापस्मृतिर्दिक्का वाधिर्यश्वासकासकाः ।  
ब्रह्माखोऽयं रसः ख्यातः सक्षिपातकुलान्तकः ॥ १७२३ ॥  
च रा , र क यो सत्रिगते ।

टि०—भाषात पातुपताऽप्येति यत्समानता प्रतीयते परन्तु द्रव्य  
प्रमाणयोग्यन्याया महद्व्यभ्यस्तमस्रोऽप्य पाऽप्य पाठोऽस्ति । अत्र  
पातुपतोक्त नञ्वाभ्यासिप्रभृतयो विदशान्देन द्राष्टा अथवा नरसा  
पाऽप्य अर्थात्तन्मयम् । चूत्तिका शक्यताया कान्तस्य च मुल दिये ।  
ध्वकमेव कर्पासं द्रव्यचूर्णय्य जायेते ॥ रसायने ९ प ० । इति ॥

भाषा—शुद्ध तृतीया, दाने फिरङ्ग, स्याह—सफेद और पीला सोमल, गन्धक, मैगसिल, बछनाग, जमालगोटा, दिंग-रिफ, अन्नक्रमसम, सेंधानमक, मरिच, यथासम्भव धातुवादोक्त विद् अथवा नवसादर, तीनोंक्षार ( सजी, अपामार्ग और यव-क्षार ), भुनासुहागा और हींग समभाग, इनसबकी बराबर शुद्ध-पारा लेकर सबकी नीलवर्णकजली बनाय मालकांगनीके तैलसे ५ रोज मर्दनकर दोलायन्त्रमें एकरोज इसी तैलमें स्वेदनकर मोर, भैला, मछली, सूअर, बकरा, सांघ, खरगोष्ठ, गीदड़ और कुत्तेके पित्तोंकी १-१ भावना देवर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्ती लेकर श्वश्रुतमें पाटलमाकर मसलनेसे दाहणसधिपात, मूकता, अपस्मार, हिचकी, बधिरता, श्वास, कास येसब नष्ट होते हैं ॥ ३९८ ॥

### ३९९ ब्रह्माक्षरसः ( मृत्युञ्जयः ) ३

सूतं गन्धं शिला तालं घस्तनाभेन संयुतम् ।  
गिरिकर्णीजघोजैश्च कटुत्रयसमन्वितम् ॥ १७२४ ॥  
पतत्सर्वं समं कृत्या कहुगौतैलमर्दितम् ।  
नष्टपिष्टीकृतं पश्चात्क्षिपेद्द्वयकरण्डके ॥ १७२५ ॥  
आर्द्रकस्य रसेनैव दधानामापार्धमात्रकम् ।  
सन्निपातो महाघोरस्तत्क्षणदेव नश्यति ॥ १७२६ ॥  
अर्द्धरक्तिकमाग्रन्तु नस्य देयं क्षुनाऽऽधि ।  
क्षुनञ्च घमनञ्चय यदि योग्या रसोत्तमः ॥ १७२७ ॥  
ततो न ज्ञायते मृत्युर्न स्याद्यतो यमान्यम् ।  
भिषजा तद्दिनं स्वायं भैषज्यं नैव दापयेत् ॥ १७२८ ॥  
र. क. यो., र. प. सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, मैगसिल, हरिताल और बज्र. नाग, कौयलके बीज और त्रिकटु समभागलेकर पारे बगैरहकी नीलवर्णकजलीकर बछनाग बगैरहके बारीकचूर्णमें मिलाकर २-३ पहर घुप्पा घोटकर मालकांगनीके तैलसे ५ पहर मर्दनकर काचकी शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे आपेमाथे माथेकी थूराक अदरपके रसकेसाथ देनेसे महाघोर सन्निपात तत्क्षण नष्टहोताहै । इसमेंसे आधीरत्तीका नश्यदेना । अगर एकवारके देनेसे छींक न आवे तो दूसरीवारदेना । इसके देनेसे छींक और घमन होजायतो दूसरीवार मात्रादेना, बहुरोगी बचेगा । यदि दोनों न होंतो उसमें यत्न नही करना यह उसीदिन मरजायगा । इसलिये-लोणोंके दुग्धद करनेपरमी उसरोज दूसरी मात्रा न देनी ३९९

### ४०० ब्रह्माक्षरसः ( चतुर्थः )

कृष्णचित्रकमूलञ्च कृष्णामलकमेव च ।  
कृष्णनिर्गुण्डिकामूलं कृष्णञ्च तुलसीवृत्तम् ॥ २७२९ ॥  
पतत्सर्वं समं कृत्या पट्टतुं विधाय च ।  
कृष्णगर्षी सूतमसम लोहपद्माऽहिमस च ॥ १७३० ॥  
चतुर्भसम समकृत्या तदर्धं कृष्णपट्टम् ।  
तदेकांशं गन्धकञ्च तालकञ्च मनःशिला ॥ १७३१ ॥

नेपालं त्रिफला च्योपं रामठं माक्षिकं तथा ।  
पतत्सर्वं समं पूर्वं पट्टतुंविधाय च ॥ १७३२ ॥  
तत्सर्वं निक्षिपेत्सखवे कृष्णोन्मत्तरसेन च ।  
भृङ्गनिम्बार्द्रकरैश्च जम्बीरस्वरसेन च ॥ १७३३ ॥  
मर्दयेद्दशवारंश्च सम्यगञ्जनतुल्यकम् ।  
मरीचवीजमात्रेण वटकाय कारयेद्भिषक् ॥ १७३४ ॥  
पचमुष्णाम्बुना युक्तं नासायाश्च प्रयोजयेत् ।  
नागबल्लयमृतेन्द्राणीरसैर् युक्तं प्रयोजयेत् ॥ १७३५ ॥  
अर्धमण्डलमात्रेण वातजालं विनाशयेत् ।  
सप्तवारं त्रिवारं वा वातानेतान्निनाशयेत् ॥ १७३६ ॥  
हरीतक्याऽथ गोमूत्रे मधुना भृङ्गजाम्बसा ।  
हृदग्विघ्नानुपानैश्च कुष्ठानाञ्च प्रयोजयेत् ॥ १७३७ ॥  
सर्वे कुष्ठा विलीयन्ते श्वेतकुष्ठं विशेषतः ।  
पष्मासं सेवयेत्त्रितयं कुष्ठयर्जं घृणु भवेत् ॥ १७३८ ॥  
पुनःपष्माससेवायां रक्तवर्णं भवेद्बुधुः ।  
त्रिमासं सेवयेत्पश्चात्कृष्णं भवति तल्लघुः ॥ १७३९ ॥  
देहसिद्धिं भवेत्तस्य जीवेदाचन्द्रातरकम् ।  
अनुपानविशेषेण ज्वरादीन्नाशयेद्भुवम् ॥ १७४० ॥  
र. क. यो., र. कौ. ( हा ) कुष्ठे ।

भाषा—छालेचित्रककी जड़, पुराने बावले, काले संमालू की जड़, कालीतुलसीकीजड़ सब १-१ तोला लेकर बारीक चूर्णकर पारेकी कालीमसम, लोह, बज्र, नाग इनकीमसमें १-१ तोला, कालापारा २ तोले, शुद्धगन्धक, हरिताल, मैगसिल, जमालगोटा, त्रिफला, त्रिकटु, भुनीहींग, सोनामाखी, ये प्रत्येक १-१ तोला लेकर सबको इस्से मिलाय कालाधवरा, मंगण नीम, अदरक, जंभीरी इन प्रत्येकके रसोंसे १०-१० बार मर्दनकर कज्जलसरस होनेपर मरिच प्रमाण गोखिलें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गरमपानीकेसाथ देवे और पके-पान, गिलोय, महर इनके रसोंमें मिलाकर नस्य देवे । सात-दिनके प्रयोगसे यह समस्तनासविकारोंको दूरकरताहै । हरे गोमूत्र, मधु तथा मंगरा इनमेंसे विनीएकके साथ ४ बार अथवा ३ बार देनेसे सम्पूर्णकुष्ठोंको दूरकरताहै विशेषकर श्वेत-कुष्ठमें लाभदायकहै । ॥ महीनेतक सेवनकरनेसे धारी कुष्ठ-रहितहोजाताहै उसकेबाद छह महीनेतक सेवन करनेसे १५वर्ग होजाताहै । एकवर्षके सेवनके बाद १ महीने सेवनकरनेसे धारी काळा होजाताहै और देहसिद्धिको प्राप्तहोकर दीर्घायु होजाताहै ॥ ४०० ॥

### ४०१ ब्राह्मीवटी

तत्रज्ञातीफलदेवपुष्पमरिचाऽयोमसमज्ञातीच्छदाः ।  
विम्बाऽऽकलुकुषान्यकेसरिकणाक्षिप्राऽजमोदायचाः ।  
कुष्ठं तुम्बुरुकम्भिनित्पद्मदरदाऽसुगन्ध गन्धाऽम्बदं,  
मुकायैदाऽवृण्गञ्जीरककणामूलं विदहानिच ॥ १७४१ ॥  
मागिष्यं शततुप्पिका मलयजं चन्द्रोदयः पौंकरं,  
कस्तूरी क्षतमूलिनी लणमणि नीलं त्रिपुष्टिद्रुमम् ।

दीप्यं पावनदेशजं यशस्कं निष्कैरुमेपां पृथक्,  
ग्राहयाश्चाऽर्द्धपलं सुवर्णमसितचक्रिणश्च तन्मर्दयेत् ॥

ग्राह्यद्रि मधुना विधाय चवटोः  
सम्यक् त्रिगुञ्जामिताः,  
भ्यासाऽपस्मृतिसन्निपातक  
सनोन्मादापतन्त्राऽपहाः ।  
बुद्धिभ्रंशघनुःसमीरणगदौ  
यक्षमाणमुग्रं बल-  
क्षीणत्वं ग्रहणीं हरन्त्यथ गदा-  
न्योग्यानुपाने लघु ॥ १७४३ ॥

न. क. अपस्मारादौ ।

भाषा—तेज, जायफल, लौह, मरिच, श्लेहभस्म, जाविनी, सोंठ, अकलकरा, धनिया, गजपीपल, चिन्तकमूल, अजमोद, बच, मोठीठुठ, तुम्बूल, चिरायता, छुद्धसिंगरिच, अगर, अस-  
गन्ध, अम्बर, मोदी, नीलकण्ठीवल्लोचन, क्याहजीरा, पिपला-  
मूल, विडङ्ग, माणिक्यभस्म, सोंफ, सपेदचन्दन, चन्द्रोदय,  
पोद्दकमूल, कस्तूरी, छातावर, कहरवा, नीलमकीभस्म, सपेद  
निसोत, झुंकेकीभस्म, अजवाइन देशी, खुरासानी अजवाइन,  
संगेयशक्कीभस्म ४-४ माशे, ग्राही २ तोले, सुवर्णभस्म ४  
माशे लेकर ग्राहीके रसकी एकभाषना देकर सुखाकर मधुसे  
१-१ रस्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली  
उचितानुपानकेसाथ देनेसे श्वास, अपस्मार, सन्निपात, खासी,  
उन्माद, अपतन्द्रक ( हिस्टीरिया ), बुद्धिभ्रंश, धनुर्वीर और  
समस्तबाधुरोग, उन्मेष यक्ष्मा, बलक्षीणता, ग्रहणी, हनसबको  
नष्टकरती है ॥ ४०१ ॥

### ४०२ ग्राह्यरसायनम्

पञ्चानां पञ्चमूलानां भागान्दशपलान्मिताम् ।  
हरीतकीसहस्रञ्च त्रिगुणामलकं नवम् ॥ १७४४ ॥  
विदारिगन्धां बृहतीं पृथिपणीं निदिग्निकाम् ।  
विद्याद्विदारिगन्धां श्वर्दप्रापञ्चर्म गणम् ॥ १७४५ ॥  
बिल्याऽग्निमन्थद्वयोनाकं कादमर्यमथ पाटलीम् ।  
पुनर्नवाशर्पण्यौ बलामैण्डमेव च ॥ १७४६ ॥  
जीवकपत्रमकौ मेदां जीवन्तीं सप्ततावरीम् ।  
शरेक्षुदर्मकाशानां शालीनां मूलमेव च ॥ १७४७ ॥  
इत्येव पञ्चमूलानां पञ्चानामुपकल्पयेत् ।  
भागान्ययोकांस्तत्सर्वं साध्यं दशगुणैऽम्भसि ॥ १७४८ ॥  
दशमागावशेषन्तु पूर्णं तद्वाहयेद्रसम् ।  
हरीतकीश्च ताः सर्वाः सर्वाण्यमलकानि च ॥ १७४९ ॥  
तानि सर्वाण्यनस्थीनि फलान्यापोथ्य कूचनैः ।  
विनीय तस्मिन् निर्यूहे चूर्णानीमात्राणि दापयेत् ॥ १७५० ॥  
मण्डकपर्णयः पिप्पल्याः शङ्खपुण्याः ह्रस्वस्य च ।  
मुस्तानां सविडङ्गानां चदनाऽगुरुणोस्तथा ॥ १७५१ ॥  
मधुकस्य हरिद्राया वचायाः कनकस्य च ।  
भागांश्चतुष्पलान् कृत्वा सूक्ष्मैलायास्त्वचस्तथा ॥ १७५२ ॥

सितोपलासहस्रञ्च चूर्णितं तुलयाऽधिकम् ।  
तैलस्य द्व्यादकं तत्र दद्यात्प्रीणि च सर्पिणः ॥ १७५३ ॥  
साध्यमौदुम्बरे पाने तत्सर्वं मृदुनाऽग्निना ।  
छात्वा लेह्यमदग्धञ्च शीतं शौद्रिण संसृजेत् ॥ १७५४ ॥  
शौद्रप्रमाणं स्नेहार्द्रं तत्सर्वं घृतभाजने ।  
तिष्ठेत्सम्पूजितं तस्य मार्गं काले प्रयोजयेत् ॥ १७५५ ॥  
यानोपहन्त्यादाहारमेवं मार्गं जरां प्रति ।  
पष्टिकः पयसा चाऽत्र जीर्णं भोजनमिष्यते ॥ १७५६ ॥  
वैखानसा वालखिल्यास्तथा चान्ये तपोधनाः ।  
रसायनमिदं ग्राप्य बभ्रुरमिताऽऽयुषः ॥ १७५७ ॥  
मुस्तया जीर्णं वपुश्चाऽग्न्यमवापुस्तदणं वयः ।  
वीततन्द्रास्त्वग्भ्यासा निरातङ्गाः समाहिताः ॥ १७५८ ॥  
मेधास्मृतिबलोपेताश्चिररात्रं तपोधनाः ।  
ग्राह्यं तपो ब्रह्मचर्यं चेद्व्यात्यन्तनिष्ठया ॥ १७५९ ॥  
रसायनमिदं ग्राह्यमायुष्कामः प्रयोजयेत् ।  
दीर्घमायुर्वयश्चाऽग्न्यं कामांश्चेष्टान् समञ्जुते ॥ १७६० ॥  
च स, रसायने ।

भाषा—शालपर्णी, बनभाडा, प्रथिपर्णी, भद्रकटैया, गोखल  
यह विदारिगन्धादि १ पञ्चमूल है । बिल्व, अरणी, सोना-  
पाटा, गभारी, पाटला, यह बिल्व्यादि पञ्चमूल २ है । पुन-  
र्नवा, मुद्रपर्णी, मापण्यी, बला, एण्ड यह पुनर्नवादि ३  
पञ्चमूल है । जीवक, कपक, मेवा, जीवन्ती ( अर्कपुष्पी ),  
छातावी यह जीवकादि ४ पञ्चमूल है । नरकट, ईख, डाम,  
कास, धान यह शरादि ५ पञ्चमूल है । इन प्रत्येक पञ्चमूलके  
१० पल लेकर जबकुटकर दशगुना पानी डालकर मिठीके पात्रमें  
हाथ करें और उसमें एकज्वार नग हों, तीनहजार नग आवले  
डालदे । जब हों और आवले पकजावे तब इनको अलग निका-  
लले और मसलकर कपमें छानले । दशमभागावशिष्ट हाथको  
छानकर कड़ाहीके आकारके बनाए हुए गीले शूलके पात्रमें  
डाले । पात्रपर ६-७ कपहनिही लगावे अथवा २-३ अङ्गुल  
कीचड़ लगाकर चढ़ावे और उसीमें हों तथा आवलोंके कलके  
डालकर मिलादे । फिर ग्राही, पीपल, गङ्गुष्पी, नागरमोषा,  
मोषा, विडङ्ग, सपेदचन्दन, अगर, मुलठ्ठी, हल्दी, बच,  
सुवर्णभस्म और छोटी श्लायचीके छिलके ४-४ पल, वाकर  
१००० पल, लेकर बारीक पीसकर उसीमें डालदे । इसवेचाद  
तिलका तैल ३ सेर, घी १२ सेर डालकर बहुत मन्द आंचसे  
पकावे । पलन्तु यह ग्न्यास रखके कि अवलेह जल न जाय,  
गूलनेही कड़छेसे चलाता रहे । जब अवलेहकी गोली पंधने  
लगे तब उठाकर रखले । एवम छंदा होनेपर १० सेर मधु  
मिलाकर पीके कर्तनमें रखकर १५-२० दिनबाद इतनीमात्राले  
जोकि अन्ते समयमें बाधा न पहुँचावे । दवाके अञ्जीतरद  
पचनानेपर साडी चावल दूधकेसाथ खावे । इसके सेवनसे वैखा-  
नस, वालखिल्य प्रभृति ऋषिलोग नवीन शरीरको प्राप्त होकर  
तन्मा, क्रम, श्वास कौरह समस्त रोगोंसे मुक्त हुए और मेधा,

स्मृति, बलसे युक्त होकर प्रशङ्कयंसे रहकर ज्ञादय तपकिया ।  
यह ब्राह्मरसायन सेवन करता हुआ मनुष्यभी दीर्घायु, उत्तम  
शरीर और इष्टमनोरथको प्राप्त करता है ॥ ४०२ ॥

### ४०३ भक्तभस्मवटी

चूर्णीकृतं पञ्चपलं तुपाऽम्ले  
स्त्रिवर्धं शिवायुगिपतिन्दुवीजम् ।  
हिह्रु मिमिषन् त्रिपटु त्रिदीप्यं  
पलं पृथक् त्र्युपगन्धयुक्तम् ॥ १७६१ ॥

चूर्णीकृतं निम्बुरसेन भाव्यं  
कोलास्थिमाना घटिका विधेया ।  
संसेविता हन्ति मृणामजीर्ण  
हृद्रोगगुल्मं क्षतजोत्पगुल्मम् ॥ १७६२ ॥

प्लीहाऽग्निमान्यातिमयाऽऽमवातं  
शूलान्तिसारं प्रहणीकञ्च ।  
जलोदराशः किमिजांश्च रोगा-  
हृन्पाद्गुल्म्यातफोद्गुल्मोश्च ॥ १७६३ ॥

४ ॥ अजीर्णाऽधिकारे ।

टि०—अस्य चोप्यं मूलमग्निमित्रा वक्ष्यन्ति तदीयवत्स्य जन्म-  
वृत्तान्तमनुपचयाऽप्य पाठं शुभन स्वादिति बुद्ध्या स्वान्वयपवे बद्ध-  
पल्लु सरमासादद निष्कास्य त्रिपटुनि दत्तमि तेन तन्मघोदय  
स्वन्त्र इव प्रणिमामि, परन्त्वस्य बीजं स पञ्च बीज । पारदनिष्कामनेन  
तन्मघोदादीनवर्षादीनि शुभीभि र्विभवनीयम् । मूलयोगदस्य  
प्रमाणे च वैविध्य मन्त्रमिति भेद दर्शयितुमेवाऽऽमामि स्वान्वयपा-  
पदो गृहीत ।

भाषा—पाच ५ पल इचिका और हरेको तुपाऽम्ले ४ पहर  
स्वेदितकर छीलशले और भीतरका अङ्गुरमी निकालदे । उची-  
तरह हरेक बीजको निकालदे और दोनोंबी चटनीसी बना  
कर मुनाहीम, दिग्ग, सेंपा, सबल छाभारनमक, तीनों अजवाइन  
( देशी, पुताहीम और राजपाइन ), सोड, मिच, पीपल और  
शुद्धगन्ध १-१ पल लेकर छपरा बारीक चूर्णकर पाउन्पकड़ी  
नीलवर्णकबरीमें मिलाकर १-२ पहर शुष्क मदनकर नीपुके  
रामे १ दिन पोटकर बेरकी छुत्कीके साथ गर गोठिये बनाकर  
रखावे । इनसे १-१ गोली उष्णजल प्रसुतिकेसाथ लेनेसे  
अजीर्ण, हृद्रोग, गुल्म, रज्जुगुल्म, ग्रीह अग्निमान्य, आमवात,  
दुल, अतिवार, प्रदली जलोदर, बवासीर, किमिरोग और  
कफजातारोग इनसबको यह दूरकरता है ॥ ४०३ ॥

### ४०४ भक्तविपाकरटी

मारिकं रमगन्धौ च हरितालं मनःशिला ।  
गगनं कान्तलोहञ्च यथायोग्यं समाहरेत् ॥ १७६४ ॥  
त्रिद्वन्ती यारिपादं चित्रकञ्च महोषधम् ।  
पिप्पली मरिचं पथ्या यमानी हृणजोरकम् ॥ १७६५ ॥  
रामदं कटुका पाठा सैन्धव साऽजमोदकम् ।  
जातीकल यपसारं समभागं विचूर्णयेत् ॥ १७६६ ॥

आर्द्रकस्य रसेनैव निगुण्ड्याः स्वरसेन तु ।  
सर्वावर्तसेनैव ज्योतिष्मत्या रसेन च ॥ १७६७ ॥  
आतपे भावयेद्देहः खल्वपात्रे च निर्मले ।  
पेषयित्वा घटीं कुर्याद्बुद्धाफलसमप्रभाम् ॥  
भक्षयेच्छाणमानेन लवङ्गस्य च योगतः ॥ १७६८ ॥  
१ र, २ चं, २ मु, २ सं, अजीर्ण ।

टि०—रसत्वाके रमायनाधिकारे पाठ । १ मु, मुचोत्तरीया  
वगीति नाम ।

भाषा—शुद्ध सोनामारी, पाटा, गन्धक, हरिताल और  
मैनसिल, अन्नक और कान्तलोहमस्तु सब समभाग, निमोत,  
दन्तोमूल, नागरमोया, चित्रकमूल, मोड, पीपल, मरिच, हरे,  
अजवाइन, स्याहबीरा, मुनाहीम, कुटनी, पाठा, सेंधानमक,  
अजमोद, जायफल, यक्षदार, सप्तसमभाग लेकर बारीकचूर्णकर  
पारे गन्धकडी नीलवर्णकबरीमें मिलाकर १-२ पहर सूखीपोट-  
कर अदरक, निगुण्डी, हुरहुर, सालकागनी इनप्रत्येकके यथा-  
सम्भव स्वरस भयवा कापीसे १-१ भावना देकर १-१ रसीकी  
गोलिया बनाकर रखावे । इनसे १-१ गोली ४ भाग  
लौकिकचूर्णकेसाथ खानेसे अग्नि एकदमप्रदीप्त होजाता है  
अजीर्णनी शङ्काभी नहीं रहती ॥ ४०४ ॥

### ४०५ भक्तोत्तरचूर्णम् ।

अन्नकं गन्धकञ्चैव पिप्पली लवणानि च ।  
त्रिशारं त्रिफला चैव हरितालं मनःशिला ॥ १७६९ ॥  
पारदञ्चाऽजमोदा च यमानी शतपुष्पिका ।  
जीरकं हिह्रु मेथी च चित्रकं चविका पचा ॥ १७७० ॥  
दन्ती शैलेयकं मुस्ता त्रिधृता मृतलोहकम् ।  
अजूनं निम्बबीजानि पटोलं धृष्टदारकम् ॥ १७७१ ॥  
सर्वाणि चाऽक्षमात्राणि ऋक्षणचूर्णानि कारयेत् ।  
शतं फनकबीजानि शोषितानि प्रयोजयेत् ॥ १७७२ ॥  
सर्वमेकीकृतं युक्त्या यथाशक्त्या प्रदापयेत् ।  
एतदग्निविबुद्धचर्यमृषिभिः परिकीर्तितम् ॥ १७७३ ॥  
श्लोपद्वान्धव्यवृद्धिञ्च धातुवृद्धिञ्च दादयाम् ।  
अरुचिञ्चाऽऽमवातञ्च शूलं धातुसमुद्भयम् ॥ १७७४ ॥  
शुक्रमञ्ज्योदरव्याधीप्रादायप्यानु तक्षणात् ।  
भक्तोत्तरमिदं चूर्णमभिव्यम्भि निर्मितं पुरा ॥ १७७५ ॥  
वे क, ने र, अन्ताऽऽहश्चपिधारे ।

भाषा—अन्नकमस्त, शुद्धगन्धक, पीपल, पांचेनमक,  
तीनोंपार, त्रिपला, हरिताल और मैनसिलकी मस्त, शुद्धपा,  
अजमोद, अजवाइन, मोफ जीरा, मुनाहीम, मेथी, चित्रकमूल,  
वन्ध, वर दन्तोमूल, छरील, मोपा, निमोत, लोहकम,  
खरेद सुरमा, नीमकबीजोंकी गिरी, फनक, दिग्ग देण  
१-१ तोला और शुद्ध धूरके बीज १०० तन लेकर बरिच  
पूँकर शोष्णकडी नीमको अन्तमें मिलाकर १-२ पहर  
पोटकर रखावे । इनसे १-१ मन्त्र दक्षिणतनकेप

देनेसे मन्दाग्नि, श्मीपद, अन्त्ररुद्धि, भयङ्करातरुद्धि, अरुचि, आमवात, घातजक्षुल, गुल्म, उदररोग इनसबको यह नष्ट करताहै ॥ ४०५ ॥

### ४०६ भगन्दरहरोरसः (व्याधिहरणं)

सूतस्य द्विगुणं गन्धं तथैव रसचन्द्रकम् ।  
प्रसारिण्या रसेः पञ्चान्मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥ १७७६ ॥  
धर्मं विशोष्य तत्सर्वं काचकृष्यां विनिक्षिपेत् ।  
सुद्रयित्वा मुखं तस्यास्ताश्च भूमौ निधापयेत् ॥ १७७७ ॥  
ऊर्ध्वाऽप्यथ मलं दद्यात् घोटकस्य विचक्षणः ।  
निमासाऽन्ते समुद्धृत्य खादेद्द्विजाचतुष्टयम् ॥  
भगन्दरं निहत्येव साध्याऽसाध्यं न संशयः ॥ १७७८ ॥  
वै. र. प्र. भगन्दरे ।

टि०—नि र वै क र च व रा, वै वि, एषुप्रत्येवृषदशाऽधिकार व्याधिहरणान्ना एक पाठो निहितोऽस्ति स च बहुलायेऽनेनमा न केवल पाक विशेष ॥ तथा—“विहृणोत्थ रम भाग दिभाग रमचन्द्रकम् । रस्तुल्य बलिं दद्यात्तत्त्वमये तु वाजरीयम् ॥ पञ्चमूला ऊट रक्त दक्षिणेंद्र बाहुरागम् । त्रैलोक्यनृपमार्गि रवाङ्गशील समुद्र रेव ॥ पूनवेदुर्विपारीन्यापागम प्रवीनेव । गुञ्जाचतुष्टय खादन्नाथ लोहलेपुनम् ॥ पञ्चोऽपि सप्तत पुस्त वाजीवरणमुत्तमम् । अथ पुत्र मामेति जीवेद्य शरदां शतम् ॥ वरीरलितद्वन्द्वलतालेप्स निवर्तणम् । अथ व्याधिहर घट पूज्यपादेन निमित्त ॥

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक और रसकपूर २-२ भागलेकर नीलवर्णकञ्जलीकर प्रसारिणीके रससे ७ दिनतक मर्दनकर धूपमें सुसाकर आतशीशीमीमें भस्के सुहृन्न्दवरदे और कनरबाबर रोदेहुए गर्भमें बोदेकी ताजीकीहमें दयादे । तीन महीनेके बाद निकालकर हस्मेंसे ४-४ रसी उचितायुवानके-साथ देनेसे साध्य अथवा असाध्य भगन्दर नष्टहोताहै ॥ ४०५ ॥

### ४०७ भगन्दरारी रसः

सूतं गन्धं मृतं तापत्रमघ्नकं द्रव्यं समम् ।  
मरिचं द्विगुणं दद्यात् मर्दयेच्चित्रकाऽम्युना ॥ १७७९ ॥  
त्रिदिनं भावयित्वाऽथ भक्षयेद्रक्तिकाद्वयम् ।  
भगन्दरं पञ्चविधं जयेच्छ्रीशम्भुशासनात् ॥ १७८० ॥  
र. मा., र. वा. भगन्दरे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताप, अन्नरुमस्य शुद्धाग्नि गरिक समभाग और सपसे दूनी मरिच लेकर वारीक चूर्णकर परिगण्यकरी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाकर १-२ पहर शुद्धमर्दनकर चित्रकमूलक हाथसे ३ रोज मर्दनकर २-२ रसीकी मोलियां बनाकर रसछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली महामणिगदिकाथ अग्निके साथ देनेसे यह भगन्दरको जल्दी नष्टकरताहै ॥ ४०७ ॥

### ४०८ भगन्दरोपदंशारीरसः

रससारककासीसतुयरीट्ठुणं विषम् ।  
विषयेद्रुमस्यन्त्रे येदयामाग्निमथवरः ॥ १७८१ ॥  
लघ्वहपिहितं दद्याद्द्विजायुष्ममिह रसम् ।  
भगन्दरोपदंशानां नाशकं धेष्टमौषधम् ॥ १७८२ ॥  
र. का, उपदंशे ।

भाषा—शुद्धपारा, सोरा, कर्षास, पिटरुई, मुद्गाणा और बलनाग सब समभागलेकर कञ्जलीकर डमस्त्यन्त्रमें ४ पहरकी लूहेपर अग्निदे । स्वाङ्गशीतलोनेपर निकालकर रसछोड़े । इसमेंसे २-२ रसी लघ्वहके कर्कमें कवलितकर निगलवादे और नमकरहित भोजन देवे तो भगन्दर तथा उपदंश नष्टहोवें ॥ ४०८ ॥

### ४०९ भङ्गादिगुटिका

भङ्गाऽष्टपलिका ग्राह्या तथा ज्योतिष्मती मता ।  
द्वादशप्रमिता ग्राह्या पारसीकयवानिका ॥ १७८३ ॥  
नवटङ्कमितो ग्राह्यो ह्यजमोदस्तथा मतः ।  
टङ्काऽष्टदशकस्तद्वर्जितं धूर्तबीजकम् ॥ १७८४ ॥  
रूपद्रुमिता ग्राह्या जातिपत्री तथैव च ।  
नवटङ्कमितं प्रोक्तं फलं जात्याश्च तत्समम् ॥ १७८५ ॥  
अहिफेनं तथैव स्यात्सर्वमेकत्र चूर्णितम् ।  
शुद्धश्च द्विगुणस्तस्मात्सममसाऽर्द्धकर्मकम् ॥ १७८६ ॥  
लेह्यत्साधयेत्सु कृतं चूर्णं विनिक्षिपेत् ।  
गुटीं निष्कमितां दद्यात्परिषेद्यमहर्निशम् ॥ १७८७ ॥  
पण्डः पौलपमासाद्य मोदेन रमते स्त्रियम् ।  
हुर्बलोऽपि बलं प्राप्य हठेन रमते स्त्रियम् ॥ १७८८ ॥  
एकवारं रतिसहस्रतुवारं स्त्रियं भजेत् ।  
हस्तकर्मकृतं दोषं नाशमायाति निश्चितम् ॥  
नष्टरीर्यविवृद्धिः स्याद्बहुहण्यमपघते ॥ १७८९ ॥

र. क. वाजीकरणे ।

भाषा—भाग और मालकागनी ८-८ पत्र, सुरातानी अजवाइन (जोफि कालेजरीनहो) १२ पल, अजमोद १ टङ्क, सुनेहुए पटोके बीज १८ टङ्क, जायिरी १ टङ्क, जायफल, और शुद्ध अरीय १-१ टङ्क लेकर वारीक चूर्णकर अक्षौमकेसाथ थोड़ाथोड़ा मिलाकर घोटदे जिसमेंकि अरीय ठीक तौरपर मिलजाव । फिर इसचूर्णसे दूने पुरानेगुफरी २॥ तारकी चावनी बनाकर धीरेधीरे सब दवाइयां मिलाकर पारसीमन्म आषाढां मिलावे और ४-४ मासकी मोलियां बनाकर रसछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली हृषिकेसाथ देकर केवल दूधही पीनेसे षण्डत्व, दोर्बल्य, हस्तकर्मदोष, नष्टरीर्यत्व इनमनको दूरकरके हृष्टता बनातीहै और आयुको बढातीहै ॥ ४०९ ॥

### ४१० भङ्गातकपाकः (प्रथम)

महतात्नं परिपृष्ट घृन्तरहितात्प्रस्थोऽग्निमानम्भसि,  
प्रस्थे विंशतिमानके हुतमुजि धातान् पयस्यादके ।  
कल्योमाधमुपागतं च बुधये घातं पुन भंजितान्,  
रत्नैः सूत्रमत्तया विमर्दिततनून् दृष्ट्वा मिषम् दापयेत्  
यत्नं पारदर्भूतिकां कनकां कर्पादंमानं पृथक्,  
त्यक्वशीर्षां मद्यपन्तिर्वा मणिशिलां कर्पमाणाः शिपेत  
रत्नज्योतिषलघ्वकेशारमिश्रितव्यजातिपथ पृथक्,  
कर्पद्वन्द्वमिह सुचन्दनपत्रं कर्पादं कस्तूरिका ॥ १७९१ ॥

पलां वल्कलपत्रविश्वमगधाः शृङ्गां शिवायुष्मकम्,  
धार्त्रीं जीर्युगोपकुक्षिमरिचं धान्यं तिलान् कार्ष्णिकान्  
प्रस्ये फेनविवाजिते मधुमये समिधस्य सर्वं सुधीः,  
सौवर्णेऽप्यथ राजते मणिभवे मातंऽपि वा स्थापयेत्  
कर्पाऽर्द्धं विनियुज्य प्रातरस्मायुक्ताऽनुपानै क्षणाद्,  
वाताऽस्त्रं गलिताऽरिपदादकरजं त्वम्दाहपिडकाचितं  
पामस्तोऽविचर्चिकाः किटिमं कण्डूप्रतापाऽन्वितम्,  
शुकतुंबुडिवातरोगनिवहं हन्त्यक्षिमूर्धादिजान् ॥७९३॥  
नृक. इष्टाऽधिकारे ।

भाषा—वृत्तरहित ताजे और मोटे एकप्रस्य भिलावोंको  
२० प्रस्य पानीमें डालकर मन्द आचने पकावे । चतुर्थी  
रहनेपर भिलावोंको निकालकर पानीको फेंकदे । फिर १  
आडक गोमुथमें डालकर पकावे । चतुर्थीस दूध यानी रहनेपर  
भिलावोंको निकालकर दूधमें फेंकदे फिर पावभर गोमुथमें इन्हें  
मन्द आचनेसे । अच्छीतरह सिकजानेपर उतारकर ठाहोनेपर  
मक्खनके सद्य बारीक पंसे फिर चक्र, पारा, सुवर्ण इनकी-  
नसे आधाआधाकर, तन, वमलोचन, मेहरीके फूल, २१ बार  
गोमुथमें बुझाईहुं मैसिल देख १-१ कप, खनजोत, लौंग,  
केसर, सोंफ, कलमीतज, जावित्री, थेसन २-२ कप, सफेद-  
चन्दनकाचूर्ण १ पल, अच्छीकस्तूरी आधाकप, इलायची, भोजपत्र,  
तमालपत्र, सोंठ, पीपल, काकडाहींगी, मेढासींगी, दोनोंहों  
आवला, स्याह-सफेदनीर, मगरिल, मरिच, धनिया और तिल  
१-१ कप इनसनको इन्हें मिलावे और गरमकर पननिकालेहुए  
१ प्रस्य छेदनमें मिलाकर सुकण, चादी, मणि अथवा  
मिट्टीकेवर्तने रखठोड़े । इसको ७ दिन धान्यकीराशिमें  
रखकर निकाले फिर ७ दिनबाद आधा २ तोला तत्तदोग  
हराउपानकेसाथ प्रातः कालमें देनेसे वातरक, गलिचुष्ट जिमके  
इही, पैर नख गलेने सगेहों दाह और पिडकाओंस मुचहो । पामा,  
स्फोट, विचर्चिका, किटिम, कण्डू, प्रचण्डदाहयुक्त कुष्ठ,  
शुक और क्लृदीप, भयकर वातरोग, आस और मस्तकैरोग,  
आस, कास, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४१० ॥

#### ४११ भृहातरुपाकः ( द्वितीयः )

भृहातरुपाकां द्वौ प्रस्यो द्रोणे दुग्धे विषाचयेत् ।  
द्विप्रस्यश्च घृत दद्यात्प्रस्यं शुद्धाञ्च शर्कराम् ॥७९४॥  
त्रिफलां त्रिपलां मुस्तां मज्जिष्ठां धान्यजीरके ।  
चातुर्जातकङ्कोवेऽप्यपीपककेसरान् ॥ १७९५ ॥  
लवङ्गजातीकङ्कोलं विदारीकन्दमुपलम् ।  
वंशज लोहतामे च कर्पूरं रदिरसमम् ॥ १७९६ ॥  
प्रस्यार्द्धं निक्षिपेच्चूर्णं मक्षयेत्कर्पमात्रकम् ।  
रक्तपित्तञ्च कुष्ठञ्च दद्रुपामाविचर्चिकाः ॥ १७९७ ॥  
चकितं वातरकञ्च प्रवहत्पृथगोणितम् ।  
अङ्गस्फुरणाधिप्यं दीपित्यञ्च कुलोद्भवम् ॥  
घातव्याधिमशेषञ्च पित्तकृन्ति परित्यजेत् ॥१७९८॥

पा व ,

भाषा—दोसर टोपीनिसाले हुए भिलावोंके दूधमें ११  
सेर गायके दूधमें पकावे । भाषा होनेपर भिलावोंको निकाल  
कर फेंकदे और भावेमें धी ७ सेर, शकर १ सेर डालकर इतना  
पकावे कि भाव का पानी बलगाय और शकर गलकर भावे  
के साथ एक जीव होजाय । फिर नीचे उतारकर त्रिफला १  
पल, नागरमोषा, मजीठ, धनिया, दोनोंजीर, चातुर्जात ( तन,  
पत्रज, इलायची और नागकेसर, ) हाऊरे, मुलहड़ी, पत्रज,  
केसर, लौंग, जायफल, शीतलचीनी, विदारीकन्द, कमलगडा,  
वंसलोचन, लोह और ताप्रभम्भ, शुद्धकपूर और खैरसार देख  
डेढ ११ कप, लेजर बारीक चूर्णकर पाकमें मिलाकर धीके वर्तने  
रखठोड़े । ६-७ दिनेकेबाद इसमेंसे १-१ तोला खानेसे  
रक्षित, कुष्ठ, दद्रु, पामा, विचर्चिका, चकते, पीव और लोह  
निकलता हुआ वातरक, आर्द्राका पङ्कजा, बधिरता, कुलर-  
म्यगान शिथिलता और तमाम वातव्याधि नष्टहोतेहै । पित्त  
कारक पदार्थोंकात्याग करे ॥ ४१२ ॥

#### ४१२ भृहातरुसायनम् ( प्रथमम् )

भृहातरु शतपला तदूर्ध्वं विह्वमूलकम् ।  
काश्मरी कण्टकारी च व्याघ्री तुण्डा च पाटला ॥७९॥  
गोभूरद्वयनिर्गुण्डयौ शतमूली सुगन्धरुः ।  
मरीचानि यवासाश्च पटोली रेणुकण्टकौ ॥ १८०० ॥  
पुनर्नवा वंशमूल शरपुटौ त्रिवृद्धला ।  
वज्रवल्ली यष्टिमधु लामञ्जो शिष्टिकुण्डलम् ॥१८०१॥  
चित्रमूलं हस्तिकर्णं घनमूलमयीश्वरी ।  
मूर्वा च पत्रकन्दश्च हार्द्रकं निम्बमूलकम् ॥१८०२॥  
चतुस्त्रिंशच्च मूलानि विह्वमूलार्द्रकं क्षिपेत् ।  
अष्टद्रोणजले पाच्यमष्टभागाऽवशेषितम् ॥१८०३॥  
आदाय स्वरसांश्चाऽस्मिन् भृङ्गो मत्स्याक्षिका तथा  
ईसशर्करा कर्तव्याः कुलसी मगकारिका ॥१८०४॥  
एतेषां स्वरसञ्ज्ञैव प्रस्यं प्रस्यं विनिक्षिपेत् ।  
त्रिकुटु बिफला चर्व्यं राक्षा भाङ्गो मधुसुही ॥१८०५॥  
अन्यकञ्च विडङ्गानि कणामूलञ्च रेणुकम् ।  
जीरहयञ्च कुष्ठञ्च धान्यकं कटुद्रोहिणी ॥१८०६॥  
लाक्षा च रजनी मांसी मुस्ता श्रीगन्धचोरकम् ।  
हयगन्धिमरालञ्च शिलाजतु शिलाफलम् ॥१८०७॥  
जातीफलञ्च तत्पत्र कुङ्कुमं नागकेसरम् ।  
द्राक्षोशीरञ्च खर्जूरमुदीच्यं रोचनं तथा ॥१८०८॥  
गन्धकं वृद्धदारुञ्च लोहमसम् च वङ्गकम् ।  
अम्रकं नागमस्माऽप्य श्रीगन्धवंशरोचनाः ॥१८०९॥  
जटाभांसी गजकणा वाराही च शतावरी ।  
तालीसपत्रं तन्कोलं मिती धान्यं लवङ्गकम् ॥१८१०॥  
कृष्णाऽगुरु तुगाक्षीरी मुसली तगरं तथा ।  
पतानि समभागानि प्रत्येकं पलमानकम् ॥१८११॥  
नरिकेलजलञ्चैव नारिकेलफलनया ।  
आर्द्रकस्याऽपि स्वरसः स्त्रुजम्बीरसौ तथा ॥१८१२॥





फोलादमम ५० पल, घी आधसेर, त्रिकटु, त्रिकला, चित्रक, संधानमक, नवसादर, खरियानमक, संबल, विडङ्ग येसव १-१ पल, विधारा, तालमूली ४-४ पल, सूण ८ पल इनसवका घारीकचूर्णकर उसीमें डालकर पकावे । सिद्धहोजानेपर उतारकर एकदम टंडाहोनेपर आधसेर मधु मिलाकर चिकने बर्तनमें रखोहे । ३-४ दिनबाद इसमेंसे ६-६ मासे सुबह अथवा भोजनके समय खानेसे बवासीर, ग्रहणी, पाण्डु, अरुचि, मिमि, गुल्म, पथरी, प्रमेह, दृल, बलीपलित, इनसवको नष्टकर आदमीको जवान बनाता है ॥ ४१४ ॥

### ४१५ भङ्गातकाऽमृतम्

भङ्गातकचतुष्पट्टिपलं दुग्धञ्च तत्समम् ।  
दुग्धाच्चतुर्गुणं घारि पाच्यं दुग्धाऽवशेषितम् ॥१८३१॥  
दुग्धतुल्यं घृतं योज्यं घृतपादां सितं क्षिपेत् ।  
मधुघातौ सितानुल्ये सितार्द्धमभयारजः ॥१८३२॥  
मृतलोहं शुद्ध्याश्च प्रत्येकमभयार्द्धकम् ।  
क्षिपेत्स्निग्धघटे सर्वं धान्यराशौ निवेशयेत् ॥१८३३॥  
सप्ताहाद्धृतं तसु खादेशिष्कत्रयं त्रयम् ।  
भङ्गातकाऽमृतं नाम हृति रक्ताशंसां बलम् ॥  
क्षारं तीक्ष्णं न भोक्तव्यं तैलान्यङ्गञ्च वर्जयेत् ॥१८३४॥  
घ. रा. वै. चि., र. को, अशौधिकरे ।

भाषा—६४ पलदूधमें टोपीउतारकर डुक्के किये हुए मिलावे ६४ पल डालकर चौथुना पानी मिलाकर पकावे । दुग्धमान अवशेष रहनेपर भिलाशौको निकालकर घृत ६४ पल और शर्करा, मधु तथा आवले १६-१६ पल, हर्षकाचूर्ण ८ पल, लोहमसम, मिलोयका सरब ये प्रत्येक ४-४ पल लेकर घारीक चूर्णकर पहिले दूधमें घी डालकर भावा बनाकर सेकले फिर नीचे उतारकर सबजीजें मिलादे । एकदम टंडाहोनेपर मधुमिलाकर चिकने बर्तनमें बन्दकर अनाजके डेरमें दबादे । सातदिनबाद निकालकर १-१ तोला रोजाना खानेसे यह खूनीबवासीर के बलको नष्टकरताहै । क्षार और तीक्ष्णपदार्थ न खाव, तैलान्यङ्ग ॥ करावे ॥ ४१५ ॥

### ४१६ भस्मामृतरसः ( प्रथम )

धान्याऽन्नं सूतकं तुल्यं मर्दयेन्मारकद्रवैः ।  
दिनैकं तिलकल्केन पटं लिप्थाऽयं वर्तिकाम् ॥१८३५॥  
कृद्वैव तस्य तैलेन विलिप्य च पुन पुनः ।  
प्रज्वाल्य तामधः पात्रे सतैलं पारदं पचेत् ॥१८३६॥  
स दिनं भूधरे पर्यो भस्मीभवति नाऽन्यथा ।  
योजितो रसयोगेशस्तच्चद्रोहहरो भवेत् ॥१८३७॥  
मर्दनं तप्तखल्वेऽस्य विशेषादग्निराकः ।  
अत्र प्रकरणे घट्टये शुद्धसूतस्य मारिकाः ॥१८३८॥  
औषधी याः समस्ता वा व्यस्ताऽन्यस्ता दशोत्तराः ।  
योजिता घ्नन्ति देवेशि सूतं गन्धं त्रिनाऽपि ताः ॥

मेघनादो यज्ञबली देवदाली च चित्रकम् ।  
बला शुष्ठी जयन्ती च कर्कोटी तुम्बिका तथा ॥१८४०॥  
कटुतुम्बीकन्दरम्भाकन्दवारणशुण्डिकाः ।  
कोपातक्यमृताकन्दं कन्याका चक्रमर्दकम् ॥१८४१॥  
सूर्यावर्तः काकमाची गुञ्जानिर्गुण्डिका तथा ।  
लाङ्गली सहदेवी च गोक्षुरः काकतुण्डिका ॥१८४२॥  
जातीलज्जालुकटुकाहंसपाद्महराजकम् ।  
ब्रह्मवीजश्च भूधात्री नागवल्ली बरी तथा ॥१८४३॥  
स्तुह्यर्कदुग्धं तुलसी धुस्तूरो गिरिकर्णिका ।  
गोपाली पटुरेतामि वज्रमूपागतं पचेत् ॥१८४४॥  
प्रावाणश्च तुषा दग्धा दग्धा बलमीकनृत्तिका ।  
लोहकिट्टश्च घनाहर्मजाक्षीरेण मर्दयेत् ॥  
शुकेशाणसंयुक्ता यज्ञमूपा प्रकीर्तिता ॥१८४५॥  
र. चि., रसायने ।

भाषा—धान्याप्रक और शुद्धपाश समभागलेकर मारक-गणोके औषधियोंके रस और तिलके कल्के एकदिन नर्दनकर साफरुपेपर लेपकरके बत्ती बनाय तिलके तैलमें धारम्बार डुगाकर बीचमेंसे चीमटेसे पकड़कर पात्रमें रखकर आग लगावे, बत्ती जलती जायगी और पारेसहित तैल टपकता जायगा । इसपारे सहित तैलने मूषामे बन्दकर एकदिन सूषारयन्त्रमें अग्नि देनेसे भस्महोगी । इसमेंसे १-१ रत्ती तप्तद्रोहरातुपानके साथ देनेसे यह समस्तदोषोंको दूरकरता है । इसपारेको तप्तखल्वमें मर्दन करनेसे अग्निवर्षक गुण अधिक होजाताहै । प्रकरणानुरोधसे पारेको मारनेवाली दवाओंका नाम लिखा जाताहै ये गन्धकके बिनाही पारेकीभस्मको करदेतीहै । कटिवालीचौलाई, तिथारी-हड़कोइ, बन्दाल, चित्रक, बला, सोंड, जैत, खेखता, कड़वी-तूरी, तूरीचीजइ, केलेकाकन्द, हाथीतुण्डी, कड़वीतोराई, शुद्ध-चीकन्द, धीकुआर, चडवड, हुरहुर, मकोय, गुञ्जा, निर्गुण्डी, करिहारी, सहदेवी, गोखरु, बाम्नासिका, जाती, लज्जाल, राई, हंसराज, भागरा, शकवेचीज, भूधानी, पान, शतावरी, सेतुण्ड, आक बादूध, तुलसी, घृत, कोयल, गोपालीलता, ( गोवाली ० म० ) और नमक इनमें घोटकर यज्ञमूषामें रख पकानेसे पारेकी भस्म होती है । फरार, जलेहुएतुप, जलीहुईविन्मीकी मिथी, लोहकिट्ट सब समभागलेकर आधेपहर बकरीके दूधमें मर्दनकर मनुष्यके वेश और शणको घारीक कतरके उसमिथीमें बूटकूडकर एकबीब करदे । इससे बनाईहुई मूषाको यज्ञमूषा कहतेहै ॥ ४१६ ॥

### ४१७ भस्मामृतरसः ( द्वितीयः )

अप्रसूतगवां मूत्रैः पेयपेट्रकमूलिकाः ।  
तद्वच मर्दयेत्सूतं तुल्यगन्धकसंयुतम् ॥१८४६॥  
तप्तखल्वे चतुर्धाममिच्छिन्नं चिमर्दयेत् ।  
तत्पिण्डं पाचयेत्तन्ने त्रिंशद्वे महापुटे ॥१८४७॥  
एवं दत्तापुटेर्ध्वं मर्द्य पाच्यं पुनः पुनः ।  
तदुद्धृत्य पुन मर्द्य यज्ञमूषां निरोधयेत् ॥१८४८॥

भूषणख्ये पचेद्यन्त्रे दशधा भस्मतां प्रजेत् ।

द्रवैः पुन पुनर्मयं सिद्धोऽय भस्मसूतक ॥१८४९॥

मूलिकामारितः सूतो जारणाक्रमवर्जितः ।

न क्रमेदेहलौहेषु रोगहर्ता भवेद्भुवम् ॥ १८५० ॥

र चि, यो म सर्वतोये ।

नि०—“गते दासे भवेद्वर्तो मये गौ रम कुम् । नम्रयन्त्रमिदं मिदं दासे गौ बृहस्पत्यम्” इति चमयन्त्रकण्ठम् । चमयन्त्रादन्यथाऽस्ति सिद्धिदपि निम्नद्वाराप्यब्राम । योगमहापते रससिन्दुरेति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर रक्तचोत बगैरह कालमूलिकाए बछरीके मूनमें पीसकर इसद्रवसे ४ पहर निरन्तर मर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर चमयन्त्रमें महापुटदेवे । स्वात्तचित्त होनेपर निकालकर फिर इसीतरह सर्वत्रका आधे । इसतरह दसपुटके बाढ़ सदैवज्ज गोला बनाय मूषारयन्त्रमें १० पुट देनेसे भस्म होजाता है । इसमेंसे १-१ रत्नी तप्तद्रोहहारापुषानके साथ देनेसे यह तमामरोगोंको दूर करताहै । जारणाक्रममिता मूलिकाओंसे माराहुआ पारा देह और लोहमें बेधन नहीं करताहै केवल रोगोंको दूरकरताहै । इस लिये प्रथम धीजादिका जारणकर पारेकी भस्मकरनी अच्छी है ॥

### ४१८ भस्मेश्वररसः

भस्म षोडशानिर्गं स्यादावरण्योपलकोद्भवम् ।

निष्कन्नयश्च मरिच विपनिष्कश्च चूर्णयेत् ॥१८५१॥

अयं भस्मेश्वरो नाम ससिपातनिकृत्तनः ।

पञ्चगुडामितं खावेदाद्रकस्य रसेन तु ॥ १८५२ ॥

र स, ३ यो त, नि र, भा प्र, र सु, टो र म र २-दी, रसायनस, र चि, र क ल र वा यो म, र क यो र सि, ससिपाते । यो म आमवाते । रक्तमामेनी अरण्यो पलमहाऽर्द्धमरिचं नियोजितम् ।

भाषा—जङ्गलीकण्डोंकी भस्म ४ कर्ष, मरिच १२ माशे शुद्धबछनाय ४ माशे लेकर सबका बारीक चूर्णकर २-३ पहर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे ५-५ रत्नी अदरकके रसकेसाथ देनेसे यह सभिपातनो नष्टकरताहै ॥ ४१८ ॥

### ४१९ भागोत्तरवटी

रसभागो भवेदेको गन्धको द्विगुणो भवेत् ।

त्रिभागा विपली पथ्या चतुर्भागो विभीतकः ॥१८५३॥

पञ्च भागस्तथा वासा पट्टणा सप्तमागिका ।

भार्गी सर्वमिदं चूर्णं भाव्य वज्रूलजैर्द्रवैः ॥१८५४॥

एकविंशतिवारान्तु मधुना गुटिका कृता ।

विभीतकप्रमाणेन प्रातरेकान्तु भक्षयेत् ॥

कास श्वास हरेत्पुट्टाववायस्तदनु रुण्णया ॥१८५५॥

भै र, र म मा, र को, र क ल, वै चि यो र रसाय नर्त, र सु, नि र, र का, यो चि, र च, यो, व स, र रदी

र स, ध र क, र ख, र र स, चि क, र स क, यो त, र को, र, वै मृ, व यो त, वै र, र पा, र मृ, श्वासे कासे च ।

नि०—चि क, र स क, र को, र पा, र यो त, वै र, प्लेपु म्नेषु तथाच नि र, र का, यो त, र को रसायनस, एषु म्नेषु द्वितीयस्थाने कासकर्तरीति नाम स्थापितम् । सर्वं समान छदि रसात्तचूर्णमधिकं दृश्यते । र सुन्दरे एकस्थाने सप्तोत्तरावगीति नाम स्थापितम् । व रा विजयमेव रस इति । र स, ध र क, एषु म्नेषु र सु, द्वितीयस्थाने च रसगुटीति नामस्थापितम् । र श श्वास कासार्तरीति नाम । र यो वज्रूलारिवटी । र च, सप्तमावतवटी वैवाय्वी मार्गीस्थान विषयस्थिका दृश्यते नाम च कासश्वासातीति स्थापितम् । रसायतरे भार्गीस्थाने बहिरा नियोज्य भूताइति नाम स्थापितम् । र का, र क ल, र र स, नि र, र यो एषु म्नेषु भार्गी निष्पात्य अग्निरस इति नाम दत्त तेन मिममाधारण फल प्रकटितमिति न हावने पाठाधिक्यञ्च वैपशिर सु न्यस्तमिति स्पष्टमेव मतमस्यालम्ब्यानावयवपरीक्षाऽन्तीति सप्रदेशाकम्पनीयम् ॥

भाषा—शुद्धपारा १ भा, शुद्धगन्धक २ भा, पीपल ३ भा, हर् ४ भा, बहेड़ेकी छाल ५ भा, अड़सकी जड़की छाल अथवा पत्ते ६ भा भार्गी ७ भा, लेकर सबका बारीकचूर्ण कर बज्रूलकी छालकेकासे २१ भावनाए देकर सुखाकर मधुके साथ बहेड़ेकी गुठलीके बराबर गोलीयें बनाकर रखछोड़े । इन मेंसे १-१ गोली भद्रभट्टेयाके रस और पीपलके बाथके साथ देनेसे यह कासधासको नष्टकरतीहै ॥ ४१९ ॥

### ४२० भाण्ड्यरसः

रसकपूरक धृत्या फले दन्तशोधय वै ।

आरण्योपलसम्भूते निर्धूमेऽङ्गारके पचेत् ॥१८५६॥

द्रव शुष्क भवेद्यावसावर्त्तपाच्य प्रयतत ।

पचयमेव प्रकारेण वसुसह्ये फले पचेत् ॥ १८५७ ॥

शुद्धीत्या तु सततस्मिन् तुयोंश द्रव क्षिपेत् ।

खले खलु विमर्शाऽथ काचपात्रे निधापयेत् ॥१८५८॥

ततो निष्पृफलायै च क्षिप्वा गुडान्नय बुधः ।

विधायोष्ण चोपयित्वा पुनर्निष्पृफलनयम् ॥ १८५९ ॥

चोपयेत्तत्क्षण तश्च घटिकादंश्च स्वापयेत् ।

पथं सप्तदिनाभ्यासापुपदशानिहन्ति ये ॥ १८६० ॥

वातरक्त निहन्त्याशु नास्मा भाण्ड्यरसस्त्ययम् ।

किञ्चित्तिताविमिश्रञ्च पथ्य केवलमोदनम् ॥१८६१॥

र क ल, पित्ते ।

भाषा—रसकपूरकी ककड़ी कमरकके फलमें रखकर जङ्गली कण्डोंकी निपुम आच्यमें रखे । द्रवसुखनेपर निकालकर दूसरे फलमें रखकर रसपुषावे । इसतरह ८ फलोंमें पसानेके बाद वसुधोश सिंगारिक मिलाकर बारीक घोटकर काचकी घासीमें रखदे । इसमेंसे २ रत्नी दवा लेकर आपेनीबुके फलमें रखकर अमररके पुसवादे । फिर तीन नीबुओंको गरमकरके पुसवा कर आपेनीबुकी छुलादे । इसतरह ७ दिनतक बरनसे उपदश और वातरक्तको यह नष्टकरताहै । मोड़ी शहर मिलाकर केवल भत खानेको देवे और कुछ न खाय ॥ ४२० ॥

## ४२१ भानुचूडामणिरसः

सुवर्ण रससिन्दूरं प्रवालं वज्रमेव च ।  
 लोहं तात्रं पत्रजञ्च यमानीं विश्वमेवजम् ॥ १८६२ ॥  
 सैन्धवं मरिचं कुष्ठं खदिरं रजनीद्वयम् ।  
 रसाञ्जनं माक्षिकञ्च समभागञ्च कारयेत् ॥ १८६३ ॥  
 चारिणा घटिका कार्या रक्तिह्वयप्रमाणतः ।  
 भक्षयेत्प्रातरत्यथाय सर्वज्वरकुलान्तिकाम् ॥ १८६४ ॥  
 र. सं., ज्वराधिरसः ।

भाषा—सुवर्णमसम्, रससिन्दूर, प्रवाल, वज्र, लोह और ताम्रमसम्, पत्रज, अजराइन, सोह, सेंधानमक, मरिच, कुष्ठ, खैर, दोनोहल्ली, रसौत, शुद्धसोनामाखी, सब समभाग लेकर घाटीकचूर्णकर जलसे ४ पहर घोटकर २-२ रतीकी मोलियां बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानके साथ देनेसे यह समस्त ज्वरोंको दूरकरताहै ॥ ४२१ ॥

## ४२२ भारतीरसः

घचा पारदगन्धाऽर्धं वत्सनामं समं समम् ।  
 मुण्डीद्राघे दिनं मर्द्य मूपायां भूधरे पुटे ॥ १८६५ ॥  
 पाच्यं चटफपित्तैन भावितं दिवसद्वयम् ।  
 अनुपाननिशेपेण देयं गुञ्जाप्रमाणकम् ॥  
 सर्वज्वराग्निहृत्त्येय नाम्नाऽयं भारतीरसः ॥ १८६६ ॥  
 वै वि, सर्वज्वरः ।

भाषा—घच, शुद्ध पारा और गन्धक, अन्नकमसम्, शुद्ध-यक्ष्माग सब समभाग लेकर घाटीकचूर्णकर पारेगन्धककी मील-वर्णकजलीमें मिलाकर गोरसमुण्डीके रससे १ दिन मर्दनकर मोल्यो मूपायें बन्दरवे मूपापुटकी आचरे । स्वाज्ञशीतल होनेपर निकालकर थिड़ेके पित्तकी दोदिन तक भावना देकर १-१ रतीकी मोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अनुपानविशेषमें देनेसे सत्रप्रकारके ज्वरोंको यह नष्टकरताहै ४२२

## ४२३ भास्कराऽमृताभ्रम्

वासाऽमृताकेशराजपर्पटीनिम्बभृङ्गकम् ।  
 मुस्तं घृष्टीरघृष्टीबलामूलं शतावरी ॥ १८६७ ॥  
 पपां सत्वे मंलोन्मुक्तैर्मर्दितं विमलाऽन्नकम् ।  
 सद्यस्त्रपुटितं तत्र शतावरी रसं क्षिपेत् ॥ १८६८ ॥  
 घाट्वाद्दशक दत्त्वा घटिकां कारयेद्विषकम् ।  
 भास्कराऽमृतनामेदमम्लपित्तं नियच्छति ॥ १८६९ ॥  
 शालमधप्रय शूलं शूलञ्च परिणामजम् ।  
 छर्दिहृत्तासमरचिं तृणां कासञ्च दुर्जयम् ॥ १८७० ॥  
 हृद्गर्हं कामलां रक्तपित्तं यश्माणमेव च ।  
 दाहं शोथं घ्नं तन्द्रां विस्फोटं कुष्ठमेव च ॥  
 भ्यासं मूर्च्छाञ्च मन्दाग्निं यष्टत्स्वीहोदरं तथा ॥ १८७१ ॥  
 भै र., अम्लशिलापिष्टारः ।

भाषा—भद्र, मित्रोय, बालाभंगरा, पित्तपापडा, नीमकी-छात्र, घोदभगर, नागरमोषा, छपेदुजनेना, बनभाटा, बला-

मूल, शतावरी, इनप्रत्येकके शुद्धरससे सहस्रपुटी बनायेहुए अन्नकको मर्दनकर अतीरमें शतावरीके रसकी १२ भावनाएं देकर १-१ रतीकी मोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे अम्लपित्त, शूल, अग्नि-द्वयशूल, परिणामशूल, वमन, मिवली, अरुचि, तृषा, दुर्जय खासी, हृदयका जकड़ना, कामला, रक्तपित्त, राजयक्ष्म, दाह, शोथ, घ्न, तन्द्रा, विस्फोट, कुष्ठ, श्वास, मूर्च्छा, मन्दाग्नि, यक्ष्म, प्लीहा, उदररोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४२३ ॥

## ४२४ भास्करोत्कीर्तिरसः

अलरसवलिताप्यं दहूणं म्लेच्छगोलं,  
 मुनिसमहततात्रं सैन्धवेमाऽथ युक्तम् ।  
 रसद्वलविपमिधं मर्दयेन्निम्बुनारै-  
 र्जयति सकलघातं भास्करोत्कीर्तिनामा ॥  
 व्योषाऽऽर्द्रके गुञ्जमितं प्रयोज्यं  
 दुर्नामपाण्डामयशूलकुष्ठे ।  
 अपित्तजे योऽखिलसन्निपाते  
 रामाय दत्तः सुषुप्तः शिवेन ॥ १८७३ ॥  
 र. शि. अवैषि ।

भाषा—शुद्ध हरिताल, पारा, गन्धक, सोनामाखी, सुहागा, सिंगरिफ और मैनसिल सब समभाग लेकर नीचप्रशुतिके रसमें मर्दनकर सबकीबराबरके शुद्धतावेके पत्रेपरलेपर सुपाकर सारासमुष्टमें बन्दर लक्षणयन्त्रमें पकावे । स्वाज्ञशीतल होने परनिकालकर पूर्वयन्त्र हरिताल प्रशुतिमिलाकर मीठू बगैरहके रससे घोटकर गोलाबनाय सुपाकर सारासमुष्टमें बन्दर पूर्व-यन्त्र लक्षणयन्त्रमें पकावे । इसप्रकार ४ बार पुष्टदेकर इससे आपा शुद्धरज्जाल मिलाकर नीचूकेरससे ८ पहर मर्दनकर १-१ रतीकी मोलियां बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिकटु और अद्रत्यके रसके साथ देनेसे अग्नि, पाण्डु, शूल, कुष्ठ, पित्तदिग्ग सभिषात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४२४ ॥

## ४२५ भास्करोरसः ( प्रथमः )

सूतमाक्षिकशिलाऽऽलगन्धकाः  
 खपरञ्च हृष तुल्यमागिकम् ।  
 निम्बुनीरपरिमर्दितं दण्डं  
 स्वेदितं लयणमृषके दिनम् ॥ १८७४ ॥  
 तुल्यहेमरविसमुद्राघृतं  
 लेप्य कर्पटमूदा पुटेत्ततः ।  
 पूर्ववद्भवति यस्मिन्प्रां दितः  
 शालगुल्महृमिमान्वनाशनः ॥ १८७५ ॥

र. श्वे ।

भाषा—शुद्धपारा, मोनमाखी, मैनसिल, हरिताल, गन्धक और गारिया सब समभाग लेकर बमली बनाय मीठूकेरसमें ४ पहर मर्दनकर गोलाबनाय सत्रयुक्तमृषमें १ दिन स्वेदनकर हवाकी बराबर गुणैरघा घृता मिलाकर गोला बनाय सबकी

बराबर तावेके सम्पुटमें बन्दकर ६-७ बण्डमिष्टी देकर सुखावे । फिर इसे लवण अथवा भस्ममें दबाकर ४ पहरी की अग्निदेकर पकावे । स्वाद्वशीतल होनेपर निकालकर नीचके रससे मर्दनकर सुजाकर धारासम्पुटमें बन्दकर पकावे । ऐसे ७ पुट देनेके बाद निकालकर रखोजे । इसमेंसे १-१ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे शूल, गुल्म, कृमि और अभिमान्ध येसब नष्टहोतेहैं ॥ ४२५ ॥

### ४२६ भास्कोरसः ( द्वितीयः )

पारदं गन्धकं ध्योपं द्वौ क्षारौ लवणानि च ।  
टङ्कणञ्चेति तुल्यानि जैपालं सकलैः समम् ॥ १८७६ ॥  
भायना बीजपूरस्य धुष्कं सूक्ष्मं धिचूर्णयेत् ।  
सद्वाद्य रक्तिकायुष्ममप्रियातविनाशनम् ॥ १८७७ ॥  
गोदुग्धं कैवलं पथ्यं देयमुप्रीपयोऽथवा ।  
अन्नञ्च वर्जयेत्तावदामशोकं निवारयेत् ॥ १८७८ ॥  
चि. र., आमवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, त्रिकटु, समी, जवाहार, पाचोनमक, भुनासुहागा सब समभाग, शुद्ध जमाल्मोटा सबकी बराबर लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धकी नीलवर्णकमलीमें मिलाकर बिजोरके रसकी एकमात्रा देकर मूत्रनेपर चूर्णबनाकर अथवा २-२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखोजे । इनमेंसे १-१ गोली पानीकेसाथ देनेसे आमवात नष्टहोताहै । पथ्यमें गाव अथवा कंठनीका दूध देवे । जबतक सूजन न उतरजाय तबतक अन्न न देवे ॥ ४२६ ॥

### ४२७ भास्कोरसः ( तृतीयः )

तालं ताप्यं गन्धकं सूतफञ्च शीलाह्वं ये च रवेरसमं हि ।  
चूर्णं कृत्वा चाऽऽदरूपेण मर्धं सार्द्धेणैव सौरसेयं रसेश्वा  
मर्दितं हितदनु ताप्रनिमित्तं धारयेद्य सकलं हि सम्पुट ।  
मृत्कया च परिपेष्ट्य सम्पुटं पाचयेद्य सततं दृढाऽग्निना  
यामयुगमितमेव मात्रया यन्त्रके हि कुशशीतलं स्थयम्  
जायतेऽतिरुचिरोमहारसो ध्रुवमद्भुति भास्कोरद्वयः  
चित्रकार्द्वकरमेन योजितो राजयधमकफघातनाशनः ॥  
र. प्र. सु. र. दी., राजयधमि ।

भाषा—शुद्धरिताल, सोनामामी गन्धक, पारा, मैनेसिल, शशीर सब समभागलेकर सबकी कच्ची कनाय अदुस, अदुस और तुलसी इनप्रत्येकके रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर गोला बनाय तावेके सम्पुटमें बन्दकर ६-७ बण्डमिष्टी देकर लवण अथवा भस्मयन्त्रमें बन्दकर २ पहरी की आधे । स्वाद्वशीतल होनेपर तापगम्पुटमेंसे निकालकर रखोजे । इसमेंसे १ अथवा २ रत्ती चित्रक और अदुसके रससे देनेसे राजयधम, रुक् और बाधुसे यह नष्टरहावे ॥ ४२७ ॥

### ४२८ भास्कोरसः ( चतुर्थः )

विषं मूलं फलं गन्धं ध्युर्णं टङ्कजीरकम् ।  
एकेनं द्विगुणं लोहं शहमन्त्रयराट्कम् ॥ १८८२ ॥

सर्वतुल्यं लवङ्गञ्च जम्बीरैर्भावेद्विप्रकम् ।  
सप्तवासरपर्यन्तं ततः स्याद्भास्कोर रसः ॥ १८८३ ॥  
मुखाद्वयप्रमाणेन घटीं कुर्याद्विचक्षणः ।  
ताम्रूलीदलयोगेन घटीं सञ्चर्य भक्षयेत् ॥ १८८४ ॥  
शूलरोगेषु सर्वेषु विस्त्रयामग्निमान्धके ।  
सद्यो वह्निकरो ह्येष तन्त्रनाथेन भाषितः ॥ १८८५ ॥  
भै. र. र. सु., अभिमान्धाधिरौ ।

भाषा—शुद्धलवण, पारा, त्रिफला, शुद्धगन्धक, त्रिकटु, भुनासुहागा, बीरा येप्रत्येक १ भाग, लोह, शह, अन्नक और कौडीमस्म २-२ भाग लेकर सबकी बराबर लोह मिलाकर जम्बीरीके रसकी ७ दिनतक भावना देकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखोजे । इनमेंसे १-१ गोली पानकेसाथ सानेसे समस्तशूल, दृष्टा, अभिमान्ध इनसबको यह नष्टरहावे ॥ ४२८ ॥

### ४२९ भीमपराक्रमोरसः

तुल्याभ्यां रसगन्धाम्यां कृत्वा कज्जलिकां त्र्यहम् ।  
द्रावयित्वाऽऽपसे पात्रे मृदुना बदराऽग्निना ॥ १८८६ ॥  
निरुध्यमष्टमांशेन सीसमस्म धिनिक्षिपेत् ।  
समिन्धय कदलीपत्रे निक्षिप्य तदनन्तरम् ॥ १८८७ ॥  
आकृष्य परिपेष्ट्याऽथ सीसमस्मप्रमाणतः ।  
कान्ताऽम्रसत्त्वयोर्मसं राजायतंकभस्म च ॥ १८८८ ॥  
परिसिद्धं सगोमूत्रं शिलाधानुं निधाय च ।  
रसवे निक्षिप्य तत्सर्वं यत्नेन परिमर्दयेत् ॥ १८८९ ॥  
तुल्यमुज्जाऽङ्गुलीबीजचूर्णं रुक्कोत्पथारिणा ।  
कतकाऽङ्गिकपायेण निम्बपत्ररसेन च ॥ १८९० ॥  
ततः संशोष्य सञ्चूर्ण्य क्षिप्या लोहस्य भाजने ।  
त्रिफलानां कपायेण सप्तधा परिभाषयेत् ॥ १८९१ ॥  
अङ्गुलीबीजवर्चुरन्यासौ भृष्टचूर्णितौ ।  
समौ रससमौ कृत्वा रसेन सह मर्दयेत् ॥ १८९२ ॥  
इति सिद्धरसः सोऽयं भवेद्भीमपराक्रमः ।  
नामतः सर्वमेहघ्नो हृष्टप्रत्ययकारकः ॥ १८९३ ॥  
पल्लव्यमितो ग्रारो जलेः पशुपतिः सह ।  
पथ्यं मेहोचिन्तं देयं पथ्यं सर्वं विवर्जयेत् ॥ १८९४ ॥  
र. र. स. र. सु., र. को., र. र. को., प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धककी २ रोजतक घोटकर कच्चीकर बेरके कोयलोर लोहेकी कटोमें पिन्नाकर रुक् लीसे अष्टमांश निरुध्य सीमेरीमस्य डालकर तापे गोबरपर रसों-हुए केलेके पत्तेपर डालकर दूसरेपत्तेसे रुक् कोयले दबावे । स्वाद्वशीतल होनेपर कान्तलोह, अन्नमस्य, लावरादं, गोमूत्रमें शुद्धिप्या हुआ मैनेसिल ये प्रत्येक नानामयी बराबर डालकर शुद्ध पोटदुग्धा और अङ्गुलीबीजवर्चुरन्यासोंसे मर्दनकर १-४ पहरी मर्दनकर निम्नीकी जलघाटा, नीमकेपत्तों ध-रस इनप्रत्येककी १-१ मात्रा देकर मुखपर लोहक बने

डालकर त्रिफलाके काढ़की ॥ भावनाएं दे । अट्टोलकेबीज, बबूलका गोंद, दोनोंको भूतकर पुर्वरखकी घराबर डालकर मर्दनकर मिलाकर रखछोड़े । इनमेंसे ६-६ रसी छेपानीकेसाथ देनेसे समस्तप्रमेहको यह नष्टकरताहै । प्रमेहोप पण्य देना और तदर्थका निषेध करना ॥ ४२९ ॥

### ४३० भीममण्डूरम्

यवक्षारः कणा शुण्ठी कोलं ग्रन्थिकचित्रकौ ।  
प्रत्येकं पलमादाय प्रस्थं लोहस्य किट्टतः ॥ १८९५ ॥  
शनिः पंचेक्ष्यः पात्रे यावद्वर्षप्रलेपनम् ।  
द्वत्पाऽष्टगुणगोमूषं किट्टान्छुद्धाद्विचक्षणः ॥ १८९६ ॥  
ततोऽश्वमाश्वदकान्योजयेत्सप्तराशतः ।  
आदिमध्याऽयसानेषु भोजनस्योचितस्य वै ॥ १८९७ ॥  
स भीमवटको होय परिणामरुगतकः ।  
रससर्पियूयपयोमांसैरश्वशरो निवारयति ॥  
अध्विघर्तनमन्ते शुद्धं फ्लीहाऽग्निसादांश्च ॥ १८९८ ॥  
नि. र., दू. यो. त., यो. र., र. का., च. द., दो., रससागर., ५ मा., र., यो. म., ग. नि., परिणामरुगाऽधिकारे । शुनचित् चित्रकस्याऽभावो दृश्यते ।

टि०—कोलादिमण्डूर, चविषादिमण्डूर, भीममण्डूरश्चेति त्रयो मण्डूरवत्याः सन्ति, तेषु सर्वेषां पृष्णान्तीयानि द्रव्याणि सन्ति । केवलमण्डूरप्रमाणे विशेषोक्तिः स यथा कौशार्दिके मण्डूरस्येतरद्रव्यसमताडितः । चविषादिमण्डूरैश्चपलाणि मण्डूरस्य निक्षिप्तानि तत्र क्षारश्चेन यवक्षारमात्रस्य ग्रहणं नियतं चेद् द्रव्याणां पत्रं पत्रानि भवन्ति, क्षारश्चयेन माषारणतया क्षारस्यै शुषेन तर्हि द्रव्येभ्यः मण्डूरस्यैव पलमधिकं भवतीति, भीममण्डूरं च प्रस्थमात्रं मण्डूरस्य नियोजितं तत्रैव द्रव्येभ्यो द्विगुणमात्रं मात्रामतीतामिति, इत्येतन्मते नवीत्यस्य ग्यानस्ये निनामगिन्ध्या पाठा दत्ता सन्ति, तत्र रोगिणः प्रष्टव्यादिकं समीक्ष्य यदुचितं योगं विचिन्त्येन तं मयोजयेद् मूत्रेण कदाचिद् योनादि मण्डूरं प्रयोजयेत् माषारणे चविषादि मण्डूरं, प्रह्व्याचबर्षावान्नु भीममण्डूरमिति विवेचना ।

भाषा—यवक्षार, पीपल, सोंठ, बेर, गट्टिवर, चित्रक १-१ पल, मण्डूर १ प्रस्थ लेकर दशाभोका गरीक चूर्णकर मण्डूरसे अष्टगुने गोमूत्रमें तापयीजें मिलाकर लोहेकी कड़ाहीमें मन्द आचसे पकावे । जब कड़ाहीमें दवा छानेलेगे तब १-१ तोलेके गोले बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे दोपविशेषप्रकोपकी औषिती सम्राट्कर भोजनके आदि, मध्य और अन्तमें १-१ गोलेका ७ दिनतक योगरतनेमें परिणामनशुल्को यह नष्ट करताहै ४३०

### ४३१ भीमकट्टरसः

सुराजस्य तालैकं गन्धकस्य तथैव च ।  
अन्नात्कर्षं ततो देयं तालैकं कान्तलोहकम् ॥ १८९९ ॥  
परितोनीपधेनेय माययेष्ट पृषकृष्यक ।  
विदात्ताष्टहतीनासीसौगन्धिकसुद्धादिभिः ॥ १९०० ॥  
मर्कटवाद्यात्मगुणायाः स्वरसेन पूषकृष्यक ।  
माषकैकप्रमाणेन चटिकां कारयेद्विषक ॥ १९०१ ॥

वटीमेकां भक्षयित्वा पिबेच्छीतं जलं ततः ।  
भीमकट्टरो रसो नाम चाऽसाध्यमपि साधयेत् ॥  
कुपकुरस्य षट्गालस्य विपंहस्तिमुदुस्तरम् ॥ १९०२ ॥  
र. सं., र. छ., घ., र. र., र. चं., विषाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अथक तया कान्तलोह-मस १-१ तोला लेकर नीलवर्ण कबलीकर महर, धनमांठा, माझी, कुकरोया, अनार, अपामार्ग, केवाच, इनप्रत्येकके स्वरसे १-१ दिन भावना देकर १-१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली छडे पानीके साथ देनेसे यह वाचले बुसे और ग्यालके दुस्तर विषको दूरकरताहै ॥ ४३१ ॥

### ४३२ भीमवटी

सिन्दूरं विषमुष्टिकं धनमिति लोहस्य भागास्तयः, हिक्कोरघिमिता मरीचचिकुराद्वाणाः कुमादीघनात् । पट्टं स्यु गुग्गुलुकस्य सप्त मिलितं चित्रद्रव्यं मर्दितं, गुग्गुगुग्ममिता वटी कयलिता भीमाख्यया धाजते ॥ अग्निमान्यकृतान्दोषानपतन्समुद्भवान् । सङ्ग्रहप्रवर्णो हन्यादामवातसमुद्भवान् ॥ १९०४ ॥ श्वासकासौ च हिक्काश्च यातरकृताग्नान् । शूलगुल्मौ स्वानुपानेस्तत्तद्वेगहरी हरेत् ॥ १९०५ ॥ नू. क. अभिमान्ये ।

भाषा—रससिन्दूर और शुद्धकचिला २-२ तोले, लोह-मस ३ तो., धुनार्हांग ४ तो., भिबं ५ तो., एलुमा ६ तो., गुगल ७ तो. लेकर छबका गरीक चूर्णकर चित्रकके काढ़से तीनतोले मर्दनकर २-२ रसीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली दूध अथवा उबिनामुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, हिस्टोरिया, सङ्ग्रहप्रवर्ण, आमवात, श्वास, फान, हिक्का, नाजल, शूल, गुल्म, हस्तकको बह नष्टकरताहै । यह मन्दाग्निके लिये उत्तमयोग्यहै ॥ ४३२ ॥

### ४३३ भुक्तपाकरसः ( प्रथमः )

गन्धकं सूतकजैव भृङ्गराजेन मर्दयेत् ।  
हिंदुभागे विटङ्गानि रोहिणी च ददांश्चकम् ॥ १९०६ ॥  
यथा त्रिकटुका युक्ता भागमेकं हि सौधयम् ।  
निर्गुण्डोरसतो मयि गुटी चामलकीकला ॥ १९०७ ॥  
भोजनान्ते च तद्रुकं भुक्तपाको महारसः ।  
सर्वव्याधीन् हरेत्साऽयं बलवीर्यविघर्षनः ॥ १९०८ ॥  
र हा., अभिमान्यादियंत्रोणे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा १-१ भाग लेकर नीलवर्ण कबलीकर भेगरेकसमे एरदिन मर्दनकर मुगादे । फिर हॉग १ मा., विटङ्ग और कट्टी दत्ता ३; भाग, घब, त्रिकटु और संधानमक १-१ भाग लेकर छबका गरीकचूर्णकर गन्धककी नीलवर्णकबलीमें मिलाकर संग्राहने रखने एरदिन मर्दनकर आबलेके पत्तके बराबर गोठियां बनाकर रखछोड़े ।

इतमेसे १-१ गोली भोजनके अन्तमें देनेसे यह खाण्डुको पाचनकरके बल और वीर्यको बढ़ाताहै ॥ ४३३ ॥

### ४३४ भुक्तपाकरसः ( द्वितीयः )

वज्रमृत्नासमालिप्तकाचकूप्या रसं क्षिपेत् ।  
चित्रमूलं समानीय विल्वपर्णं पेपयेत् ॥ १९०९ ॥  
समभागं ततः क्षित्या कूपीमण्ये च मेलयेत् ।  
निर्धूमवह्नौ तद्वार्यमर्द्धाऽर्द्धं च पुनः क्षिपेत् ॥ १९१० ॥  
स्थायं यामद्वयं पञ्चात्प्रयत्नेन समुद्धरेत् ।  
जातीफलं त्रिकटुकमेलां मुस्तां विशेषतः ॥ १९११ ॥  
मेलयेत्सर्वयोगांश्च भुक्तपाको विनाशयेत् ।  
ज्ञानज्योतिस्तु रूपया कौतुकार्यमभाषत ॥ १९१२ ॥  
र र्जा, सर्वरोगे ।

टि०—यद्यप्यत्र साधारणतया समविश्वपत्रेण चित्रमूलमेव कृत्वा काचकूप्यां स्थितस्य पारदस्योपरि निक्षेप उक्तस्तथापि यथास्थित पारद कूप्या न निक्षेप्य किन्तु षोडशश चित्रकमूलचूर्णं दत्त्वा विल्वपर्णसेन साकं द्विदिनापि पारद सन्ध्य कूप्या निक्षेपणीय इति रहस्यम् ।

भाषा—घोडाघात चित्रकमूलका चूर्णमिलाकर पुटपाकसे निकालेहुए अथवा खूब कूटकर बलसे भिनालेहुए चिन्चके पत्र रससे २तीन रोज़ षोडशआ छुटपारा वज्रमिणीलगाईहुई काचकी शीशीमें डालकर चित्रकमूल और बेलकेपत्रे समभागलेकर बारीकरीसकर दोभागबनावे । एकभागको शीशीमें डालकर चलाकर पारेमें मिलावे और निर्धूम अग्निपर रखदे । जब रस जलजाय तब दूसराभागभी दवाका डालदे । इसरो दोषहरक अत्रारोपर रखे । इतनेमें पत्रे जलजायगे और पारा उन्हींमें अद्वय होजायगा । स्वाहशीतल होनेपर निकालकर जायफल, त्रिकटु, इलायची, नागरमोथा ये प्रत्येक पारेकी पचाव मिलाकर १-२ पहर घोटकर रखजोड़े । इसमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह भोजनको पचाकर समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ४३४ ॥

### ४३५ भुक्तपाकवटी

अन्नं गन्धकपारदां सद्वर्दां तात्रं सतालं शिला,  
वज्रञ्च त्रिफला विषञ्च कुन्ती भाव्याश्च दन्त्यमृता ।  
शुद्धो ज्योपयवानिचित्रकजलं ज्ञे जीरके टङ्गुर्ण,  
पला पत्रलवङ्गहिङ्गु कुन्ती जातीफलं सैन्धवम् ॥ १९१३ ॥  
पतान्याद्रकचित्रदन्तिसुरसामुर्वारसं विल्वजैः,  
प्रत्येकं दिनसहस्रयाऽथ सकलं गाढं विमर्चाऽन्यतः ।  
खादेद्ब्रह्ममितं तथा च सकलव्याधौ प्रयुज्ययादुघः,  
विह्वल्ये कफजे त्रिदोषजनिते शामानुबन्धेऽपि च ॥  
मन्दाग्रौ विषमन्वरे च सकले शले त्रिदोषोद्भवे,  
हन्त्याधीनपि भुक्तपाकवटिका भूयश्च सम्भोजयेत् ॥

र सु, र सं, अजीर्णां अधिकारे । र सं भुक्तपाकवटी नाम ।

भाषा—अन्नकमल, शुद्ध गन्धक, पारा और शिलाजिह्व, ताप, हरिताल, दन्तीकी भावना दिमागुमा मैनमिल, वज्र

वीमर्से, त्रिफला, शुद्ध वज्रनाग, कफडासीगी, त्रिकटु, अज-  
वाइन, चित्रककी जड़, सुगन्धवाला, दोनोजीरे, भुनामुद्रागा,  
इलायची, पत्रव, लौंग, भुनाहींग, कुटकी, जायफल, सैधानमक  
ये सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलकण्ठ  
बजलीमें मिलाकर अदरक, चित्रक, दन्ती, तुलसी, मरोङ्गली,  
बेल, इन प्रत्येकके स्वरगोंसे ७-७ भावनाएं देकर २-२ रतीकी  
गोलिया बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तदोगद्वारा-  
नुपानके साथ देनेसे यह समस्तव्याधियोंको दूरकरतीहै । विशेष-  
पकर विह्वलबन्ध, कफप्रधान सतिपात, आम, मन्दाग्रि, विष  
मन्वर, समस्तशूल इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ४३५ ॥

### ४३६ भूतनाथभैरवोरसः

आकाशवह्नीरसतो रसं षोढा विभाषयेत् ।  
युद्धतीफलं त्रैविस्तालो मुनिविभाषितः ॥ १९१५ ॥  
पङ्कगप्रमितं सौम्यं धूतारपञ्चदशद्रव्यैः ।  
खतुरंशाष्टकस्य शिवाक्षेणविभाषनाः ॥ १९१६ ॥  
पञ्जैपालाऽहिफेनांशा लघ्वन्नमरिचानि च ।  
शिचनेऽपुटंस्त्रेधा वचा ब्राह्मी च धातुकी ॥ १९१७ ॥  
त्रिध्वंशा भृङ्गराजस्य द्वादहांशा भाषनाः ।  
निम्बकाष्ठेन घृष्टोऽयं भूतनाथादिभैरवः ॥  
तत्तदोगानुपानेन सर्वज्वरहरोमतः ॥ १९१८ ॥

र. का, ज्वराधिकारे ।

भाषा—आकाशवलेके रससे ६ रोज पाँचको मर्दनकरे और  
बनभटिके फलोंके रससे पारिकी चारार हरितालको घोट ।  
पारेमें ६ भाग सखियेरो केऊर १५ गुने धतूरेके रसमें मर्दन  
कर सुखावे । सुद्राया ४ भाग लेकर छदासकी भावनाए । जमा-  
लमोटा और अस्त्रोम ये ६-६ भाग, लौंग और मिर्च २-२  
भाग लेकर बारीकचूर्णकर बच, माझी और बाजुकीकी २-२  
भावनाएं देकर सजको इन्द्रा मिलाय भंगेरेके रसकी १२ भावनाएं  
देकर १-१ रतीकी गोलिया बनाकर रखजोड़े । इसके घोटनेमें  
नीमका ताजा डण्डा कायमें लेना चाहिये । इनमेंसे १-१ गोली  
तत्तदोगद्वारानुपानके साथ देनेसे समस्तज्वर नष्टहोतेहैं ॥ ४३६ ॥

### ४३७ भूतनाथरसः

सूतं ताम्रमयोऽन्नकं समलघं सर्वैः समं गन्धकं,  
हेमार्काऽग्निहयारिपुष्कररसं मधः प्रयग्यासरत्न ।  
कूप्यन्ते विनिवेशितं लज्जमुद्यौरेः समावेष्ट्य तव,  
यन्त्रे सैरुतके निवेद्य विपचेष्टत्वा गणेशं दिने १९१९  
स्वाङ्गं शीतलतामुपागतमपि त्यक्त्वा च कूप्यादिर्ब-  
भूषांशेन विषेण सखरतलं तन्मर्दयेच्छततः ।  
शुद्धा स्पृशच्छलापनोदनकरी रुक्मिण्यं रासंयुता,  
भूतेशस्य सुलेपेन हितकरं स्यात्तरुणलाभिः पृतम् ॥

र. र. दी, र. रु. र. दी. सर्वेश्वर इति नाम । रगदीपिकायां  
भावनाया पुत्ररक्षणे वाता दयते । रसायने ५ एरुमारेव  
मन्दुको द्विगुणो गन्धो निर्वोक्तिः । अन्यत्र सर्वं सम इति विनियोगः ।

**भाषा—**शुद्धपारा, तांगा, लोहा, अन्नक इनकी भस्में सब समभाग, सरसी बराबर शुद्धगन्धक देकर नीलवर्णकजलीकर घट्टा, आक, चित्रक, सफेद कनेर, पोहकरगूल इनप्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा काथोंसे १-१ दिन मर्दनकर शुष्क-जलीकर काचकीशीशीमें भरके नमक और मिट्टीमें कपड़ोंको भिगोर ६-७ कपड़िमिट्टीके । सूखनेपर बालकायनर्म रसक १२ पहरकी अग्निदेवे । स्वाज्ञश्रीतलहोनेपर निकालकर पोल-शांश शुद्धवधनागका चूर्णमिलाकर २-३ पहर मर्दनकर रखोहे । इसकी १-१ रत्ती कुछ और सफरके साथ मिलाकर देनेसे स्पर्श-वातको नष्टकरतीहै । वेदनास्थानमें गुष्माके चूर्णके साथ गोमू-श्रवणहर्ममें पीसकर लेपकरना ॥ ४३७ ॥

### ४३८ भूतभैरवरसः ( प्रथमः )

रसः सतालः ससिलः सलोहः

स्रोतोऽञ्जनं सार्कमिदं हि गन्धम् ।

पिष्टं नृमूत्रेण समं समन्ता-

द्वयोद्विगमोऽयं बलिः पचेच्च ॥ १९२१ ॥

लौहे क्षणं हन्ति घृतेन मापोऽ-

पस्मादप्युन्मदमानसत्त्वम् ।

पिवेदुनुच्युपणहिहृयुक्तं

सर्पिर्नुमृञ्च दचकेन सार्धम् ॥ १९२२ ॥

भूतोन्मादेषु सर्वेषु रसोऽयं भूतभैरवः ।

स्वर्णजैः पञ्चमि धीजै दैव्यः सर्पिविमिश्रितः ॥ १९२३ ॥

यो. र., भा. प्र., र. सं., र. र., ध., र. सु., र. फो., र. यो. त., र. क. ल., र. क., नि. र., चि. र. भ., र. र. री., रसायनव., लो., वै चि., व. रा., र. का., यो. म., जै. र., यो. त., अपस्मारे । भैरव्यरत्नावल्या भवन्तरे द्वितीयस्थाने च चण्डभैरव इति नाम इत्युक्ते । अत्र योमतेण भावना इत्युक्ते. अत्राणै च "हिङ्गु सौवर्चलं दुष्टं गवा सूत्रेण सर्पिषा । कर्पमात्रं विविचाश्च रसेऽस्मि-ध्वजभैरवे, इत्यधिकः ।

**भाषा—**शुद्ध पारा, हरिताल और मैन्सिल, लोहभस्म, सफेदसुरमा, ताम्रभस्म और शुद्धगन्धक येसब १-१ भाग लेकर मनुष्यके मूत्रसे २-३ रोज मर्दनकरफिरसे शुद्धगन्धक ११ भाग मिलाकर सबकी नीलवर्णकजली बनाय पर्यंटीके प्रकारसे पर्यंटी बनाकर रखोहे । इसमेंसे १-१ भागा धीकेसाथ मिलाकर पचावे और उपरसे त्रिफला, हींग, पी, मनुष्यकामूत्र और कालानमक मिलाकर पिलानेसे अपस्मार और उन्माद नष्ट होतेहैं । भूतोन्मादोंमें घट्टाके बीज ५ नग घोंमें मिलाकर इसके साथ मात्रा देनी चाहिये ॥ ४३८ ॥

### ४३९ भूतभैरवरसः ( द्वितीयः )

नं. १-पातः स्येदां मुपं स्वर्णजारणं गन्धजारणम् ।

कृत्वा प्रागुक्तमागं सहजाय प्रोक्तमेव च ॥ १९२४ ॥

रसेन्द्रस्य समादाय पटमकं प्रमदयेत् ।

कृष्णधसूरतैलेन दिनत्रयमनन्त्रितः ॥ १९२५ ॥

यन्त्रेऽयं कच्छपे दत्त्वा कृष्णधसूरतैलतः ।

गन्धकं भावयेत्पश्चाच्छोधितं प्रोक्तयुक्तितः ॥ १९२६ ॥

ऊर्द्धाऽधो गन्धकं दत्त्वा पादांशेन पुट्टद्रसम् ।

पुटाष्टकं प्रदातव्यमेवमुक्तक्रमेण वै ॥ १९२७ ॥

अयं रसेन्द्रो प्रियते तैलगन्धकयोगतः ।

भस्मीभूतं तमादाय रसेन्द्रं रोगनाशनम् ॥ १९२८ ॥

गुञ्जामानेन संदधात् विदोषविमज्जरे ।

कासे श्वासे पीनसे च मास्ते च भगन्दरे ॥ १९२९ ॥

कुष्ठे प्रमेहेऽग्निमान्द्ये क्षयरोगोदरामये ।

पाण्डुरोगे सन्निपाते भूतभैरवनामकम् ॥ १९३० ॥

नं. २-व्योपाद्र्वीजपूरेण पटुभिः कोष्णधारिणा ।

रसेन्द्रं वितरेत्सन्निपातोत्प्लेष्मभेदेन ॥ १९३१ ॥

देवदालीफलार्थेन चूर्णेन सह योजितः ।

रसेन्द्रो नश्यतो हन्ति मूर्च्छार्थं सन्निपातजम् ॥ १९३२ ॥

यद्वा शुण्ठी च मरिचं गोमूत्रं सैन्धवं समम् ।

शिरोपवीजं सूतेन्द्रं मर्दयित्वाऽञ्जयेद् दृशि ॥ १९३३ ॥

गाढां मूर्च्छां सन्निपातोद्व्यां प्रहरति क्षणात् ।

नं. ३-तालं शरारं समाक्षीकजीरकं गन्धकं तथा ॥ १९३४ ॥

घन्ष्पाकन्दं लाहलीयं पीनं शुण्ठीञ्च सार्द्रिकाम् ।

मधूकवीजममृत्वं सर्वं सञ्चूर्णयेत्समम् ॥ १९३५ ॥

प्रत्येकं तत्समं कृत्वा रसेन्द्रं मर्दयेत्ततः ।

निर्गुण्डी निजतोयेन दिनमेकं निरन्तरम् ॥ १९३६ ॥

गुञ्जाप्रमाणां घटिकां कृत्वा दद्याज्ज्वरादिते ।

सद्यो ज्वरं निहस्येव रसेन्द्रो नाऽत्र संशयः ॥ १९३७ ॥

नं. ४-विषं ताप्यं त्रिकटुकं सूतेन्द्रं योजयेत्समम् ।

रोतिभूति नांगमस्य मृतताम्रं समांशतः ॥ १९३८ ॥

मर्दयित्वा महिषजै रौहितैः शिखिसम्भवैः ।

सम्भाव्य पित्तैस्त्रिग्वारान् गुञ्जामानां घटीः किरैत् ।

सन्निपाते महाघरे सर्वसंज्ञाविघर्जिते ।

ददीत घटिकामेकां सद्य उत्थापयेद्बुधः ॥ १९४० ॥

नं ५-तालञ्च घस्सनामञ्च गुणाद् पोडश संहरेत् ।

रसेन्द्रं विषमानेन मेलयेन्मर्दयेत्ततः ॥ १९४१ ॥

उद्वारारुणिकादुष्ये निर्गुण्डीवारिणा ततः ।

त्रिजगद्विजयानरीं बहुशो भावयेद्द्रसम् ॥ १९४२ ॥

यद्वा तालं समं ग्राह्यं रसेन्द्रेणाऽमृतेन च ।

मायूरे भावयेत्पित्तै रोहितैश्चैश्च छागजैः ॥ १९४३ ॥

आरण्यमादिपोत्थैश्च वीर्यीन्वारान्विभावयेत् ।

घटीः कृत्वा ततो दद्यात्सन्निपातादिताप्ये ॥ १९४४ ॥

आर्द्रकस्य रसेनैव सन्निपातं क्षणादरेत् ।

नं ६-भस्मं सूत्रं बलिवसां समभागं समाहरेत् ॥ १९४५ ॥

तैले गन्धं मालयित्वा ढालयेद्यिषजं रसे ।

उक्षमृष्टैस्ततः कुर्यात्कज्जलीं पारदेन वै ॥ १९४६ ॥

कज्जलीपादभागेन लोहभस्म निषोजयेत् ।

गुहं ताप्यं नटदिलां गन्धकं सर्वमेकतः ॥ १९४७ ॥



गुडेन मर्दयेत्सर्वं ताम्रपत्राणि लेपयेत् ।  
 तत्समानि ततो ध्मात्वा भास्करं भस्मतां नयेत् ॥१९४८॥  
 मेलयित्वा सन्निपातभूतभैरवपारदे ।  
 मर्दयेत्सिन्दुवारान्नि मृद्वराजरसेस्तथा ॥१९४९॥  
 मण्डूषिनीरसेश्चिन्नारंश्च पिचुमन्दैः ।  
 तरुणीजैः काकमाधीरसैः शक्रासनोद्भवैः ॥१९५०॥  
 मर्दयेत्ताम्रदण्डेन पात्रे ताम्रभये ततः ।  
 पश्चात्प्रभाययेत्पित्तैः प्रागुक्तैस्त्रिखिवारकम् ॥१९५१॥  
 राजिकामात्रगुटिकाः कुर्यात्स्तुधरस्य च ।  
 सन्निपाते महाघोरं तिक्तो दद्याद्दुष्टं युंथः ॥१९५२॥  
 घटीप्रदानतो पश्चात्प्रियांति मलमूत्रके ।  
 जीयेत्सद्यस्तदा रोगी हान्यथा सं परित्यजेत् ॥१९५३॥  
 भोजयेद्वाधिकं भक्तं सलिलं ढालयेत्ततः ।  
 ययेष्टमशनं दद्यात्सन्निपातचिकित्सने ॥१९५४॥  
 ज्वरे घातमये कुर्यात्स्वपाथञ्च दशमूलजम् ।  
 अनुपानाय घातारितिलेनाऽर्जं प्रमर्दयेत् ॥१९५५॥  
 कम्पज्वरे पर्यटनं कुर्याथ दद्याद्द्विचक्षणः ।  
 ग्रहण्यं जीरकभयं ज्वरेऽथ विषमेऽपि च ॥१९५६॥  
 अतिसारे च मन्दान्नी क्षयरोगे च कामले ।  
 शुण्ठीश्वदंष्ट्रयोः कषाथं कासश्वासगुदामये ॥१९५७॥  
 आमवाते घटी देया प्रागुक्तकषाथयोगतः ।  
 इति श्लोकः सन्निपातभूतभैरवसङ्गः ॥१९५८॥  
 रसाल, ज्वरे ।

भाषा—(न. १) पातन, स्वेदन, सुखकरण, स्पर्शजालन  
 और गन्धकजालन ये संस्कार पारेके करके एकपल लेकर काले  
 धतूरेके बीजोंके तेलसे १ दिनतक मर्दनकरे । शुद्धगन्धक १  
 तोला लेकर बारीकचूर्णकर कच्छपपत्रान्में आपा नीचे विछा-  
 कर ऊपर पारेको रज ऊपरसे आपातोला गन्धक रखकर काले  
 धतूरेकातेल इतना ढाले कि पारा और गन्धक ढूँजगय । फिर  
 यन्त्रपर करझमिडीकर भूधरपुटदेवे । ऐसे ८ पुट देनेसे पारेकी  
 भस्महोजायेगी । इसमेंसे १-१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे  
 त्रिदोष, विषमज्वर, कास, श्वास, पीनस, वाततोग, आनन्द,  
 कुष्ठ, प्रमेह, मन्दासि, क्षय, उदररोग, पाण्डु, वैषम्य नष्टहोतेहै ।

२—त्रिकटु, अदरक, विजोरा, पाचों नमक और गरम-  
 जलकेसाथ देनेसे वात और श्लेष्मप्रधानसन्निपातको नष्टकरताहै ।  
 मन्दासिके बीजोंके चूर्णनेसाथ नस्य देनेसे सन्निपातमूर्च्छाको  
 दूरकरताहै । अथवा सोंठ, मिर्च, संधानमक, गोमूत्र, सिरकेके  
 बीज सब समभागोंसे चूर्णनेसाथ इसपारेको मिलाकर अन्न कर  
 नेसे सन्निपातज गाढमूर्च्छा दूरहोतीहै ।

३—शुद्धहरिताल, तीनोंशर, सोनामाखी, जीरा, शुद्ध  
 गन्धक, बासलेखसा और करिहारीका पुष्टानन्द, सोंठ, अदरक,  
 महुएकेबीज, शुद्धबडनाग, ऊपरकीहुई पारेकी भस्म सब सम  
 भाग लेकर बारीकचूर्णकर समष्टके कन्द अथवा जड़के रससे  
 १ रोज निरन्तर मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोल्या बनाकर रख-

छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह  
 त्काल आयेहुए ज्वरको नष्टकरतीहै ॥

४—शुद्धबडनाग, सोनामाखी, त्रिकटु, पारद, पीतल, नाग  
 और ताम्र इनकी भस्में येसब समभाग लेकर १-२ पहर मर्दन-  
 कर मेना, रोहू, मोरके पित्तोंसे ३-३ भावनाएं देकर १-१  
 रत्तीकी गोल्या बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सङ्घा-  
 रहित महाघोरसन्निपातमें देनेसे यह उसको नष्टकरताहै ।

५—शुद्ध हरिताल ३ भा, बडनाग और पारदभस्म खोलह  
 १६ भाग लेकर बारीकचूर्णकर चमारदूधीके दूध, निर्गुण्डी और  
 भागके स्वरसे ७-७ भावनाएं देकर तैयारकरे अथवा हरिताल,  
 बडनाग और पारदभस्म समभाग लेकर मोर, रोहू, बरुडा और  
 जलकीभस्मेंके पित्तोंसे ३-३ भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी  
 गोल्या बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरकके रस  
 अथवा समथोचितानुपानके साथ देनेसे यह सन्निपातको एक-  
 क्षणमें दूरकरताहै ।

६—पारदभस्म, शुद्ध गन्धक और ताम्रभस्म समभाग लेकर  
 संझलू, भागा, माष्टी, चित्रक, नीम, कपास, मकोय, गांजा  
 इन प्रत्येकके यथावत्गन्ध स्वर अथवा कषाथसे तावेके पात्रमें  
 तावेके ढण्डेसे १-१ रोज मर्दनकर पूर्वाकापित्तोंसे ३-३ भावनाएं  
 देकर राईके बराबर गोल्या बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे ३-३  
 गोल्या उचितानुपानकेसाथ सूर्च्छायुक्त सन्निपातमें देनेसे यदि  
 मलमूत्रत्यागहोनाय तो साध्य समझना अन्यथा असाध्यहै,  
 उससेलिये यत्न नहीं करना । सङ्घा आनेपर इमीमात खानेको  
 देना और शिरपर पानीकी धारा छोड़ना । एकदम अच्छाहोनेपर  
 यथेष्ट भोजनकरना । बातज्वरमें दाम्बलका काया देना, और  
 एण्डके तैलकी मालिशकरना । कम्पज्वरमें पित्तपारकका काढ़ा  
 और ग्रहणी तथा विषमज्वरमें जीरेकाकाधदेना । अतिसार,  
 मन्दासि, क्षय और कामलमें सोंठ और गोदरुका काप देना ।  
 कास, श्वास, बवासीर, आमवात इनमेंसे दशमूलका काप देना । इस  
 छोटे भूतभैरवमें धतूरेके तैलमें गन्धकको गलाकर चित्रकके काप  
 और तैलकेसूत्रमें डुबाना । गुरु, सोनामाखी, मैत्रसिन्ध और  
 गन्धक सबको शुद्धकेसाथ मर्दनकर इसकी बराबरके तावेके पत्रों-  
 पर लेकर धमनकरनेसे भस्महोयी यह भस्म कानमें लाना  
 इसी नहीं ॥ ४३९ ॥

### ४४० भूतभैरवरसः (तृतीय.)

अंशः पञ्चदशांश तालकभयाः शुद्धाश्च सङ्गन्धकात्,  
 सप्तांशौ नव तिलिङ्गीफलभया विल्यादश्च द्वौ घरा ।  
 हेमाद्रा त्रय पत्र सप्त कथिता चित्रस्य पथ्याश्च पद-  
 पद सूतस्य विशोधितस्य महतां मल्लातकानां दश ॥  
 सेहण्डार्कपयोमिरभिरभितः सङ्घूर्ण्य तद्भाष्यते,  
 रोहीतस्य जटाजलेन मृदितं सूक्ष्मं कृतं खट्वगम् ।  
 पक्वोक्त्य समस्तमेतद्मृतं भागेकमत्र क्षिपेत्,  
 ताम्बूळोद्भववारिणा सुमृदितं दास्याम्भसा वा नतः ॥

मिश्र चायसपात्रकेऽथ सकल रुद्धा च धान्याऽऽकरे,  
धार्थ तत्खलु चैकविंशतिदिने चोद्धृत्य भागं शुभाम्  
दद्याच्छागलमूनकश्च नियत तच्चाऽनुपाने हितं,  
प्राज्ञो व्याधियुताय नित्यमनया रीत्या ददीतौषधम्॥  
नीलं दोषभवं तथा बहुदणं धातौ गतञ्चाऽऽरुणं,  
भ्येतं स्फीतमनल्पकं भृशरुजं कुण्डश्च तूर्णं हरेत् ।  
कुण्डाऽष्टादश भूतभैरवरसो हन्याच्च तूर्णं क्षितौ,  
घातव्याधिनिवृत्तनस्तनुभवान्दोषानय नाशयेत् ॥  
एवं समासात्खलु सर्वकुष्ठानयं रसो धै क्षपयेद्वि तूर्णम्  
निराकरोत्येव च धातुदोषान्भवत्यवश्यं सुमगं शरीरम्  
भुञ्जीतभक्तं सततं न शाकं घृतञ्च गोधूमयुतं भजेत् ।  
क्राण्णं श्रुतं दुग्धमवश्यं मद्याप्यथायमेतत्प्रदिशन्ति सत  
रसवि, र सु, र स, र वि, र च, र पा, कुष्ठे ।

भाषा—शुद्ध हरिताल और गन्धक १५-१५ भाग, इमली  
१ भाग, वेरगिरी १० भा, निफला २ भा, सत्यानाशीकी  
जड़ ३ भा, चित्रक ७ भा, हँ और शुद्ध पारा ६-६ भाग,  
यह मिलावे १० भाग, लेकर सफा घारीक चूर्णकर पारे,  
गन्धक, और हरितालकी नीलवर्णकमलीमें मिलाकर सेहुण्ड  
और आकके दूधसे १-१ दिन मर्दनकर रोहिङ्की जड़की  
छालके पानीसे एकदिन मर्दनकर नये घटुबीस शुद्ध घटनाय  
जालकर पान अथवा दूधके रससे एकदिन घोटकर रोहिङ् पात्रमें  
रख मुहान्दर बनावनी दासीमें दगावे इन्नीसवें दिन निकालकर  
३-३ रत्तीकी गोलीय बनाकर रखओइ। इनमेंसे १-१ गोली  
बन्नेके सूनेसाथ देनेसे नील, अधिकपीडायुक्त, धातुगत,  
शल, सफेद, फैलाहुआ, ये सब कुछ नष्टगैतेइ। तत्तद्गो  
चित्तानुपानक साथ देनेसे यह समस्त रोगोंको नष्टरताइ।  
इसके सेवनेसे आदमीका दिव्यशरीर होजाताइ। धातुगत जितने  
दोषहैं उनसबको दूरकरताइ बाल, गेहूँ, घी, गरमदूध, पानेको  
दे, शाक किसीभी चीनका नदे ॥ ४४० ॥

#### ४४१ भूतभैरवरसः ( चतुर्थ )

आखुहा गरुडनागरसञ्ज्ञाहारगौरसकल क्रमवृद्धम् ।  
कारवह्निरसमर्दितं पचेत्तान्नजे शिरसि लाजपाकतः ॥  
भूतभैरवरसो गुडान्वितो वल्लिजैः सह निषेवितश्चिरम्  
शीतघ्नैरल्लेखन समप्रतां हन्ति शीत मतिमात्रमाशितः  
र स, दो, र, दि, र, बो, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध सोमल १ भा, सोनामासी २ भा, सोंठ  
३ भा, पारा ४ भा, गन्धक ५ भाग लेकर घारीचूर्णकर  
पारेगन्धकी नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर करेलेन रगसे ३ रोज  
मर्दनकर गोला बनाय ताम्रके समुपुन्ये बन्दकर २-३ कपड़  
मिट्टी करके सुराले गिर रखन अथवा मस या बालमें रख  
कर नीचे घमरद आये। जब ऊपर पान डालने फूल पाय तब  
जाच देना बन्द करदे। स्वादशरीरक हानिपर निकालकर कपड़  
मिट्टीसे हटादे और ताके समुपुन्यदि घोटकर रखले। ताके

समुपुन्य जो कच्चाभाग रहाहो उसे निकालदे। इसमेंसे १-१  
रत्ती गुड़ और कालीमिर्चे साथ सेवन करके दही, भातेसाथ  
रखन खिलनेसे शीतपूर्वक आनेवाले ज्वरको यह नष्टकरताइ ४४१

#### ४४२ भूतभैरवरसः ( पञ्चम )

सूतसूर्यविषट्णङ्गन्धैः कृष्णधूर्तभवतैलनिबन्धैः ।  
भूतभैरवरसः शशियुक्तः सन्निपातमुपहन्त्युपभुक्तः ॥  
र ( मा ), रससारसङ्ग्रह, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा, ताम्रभस्म, शुद्धबछनाग, सुहागा, गन्धक  
सब समभाग लेकर नीलवर्ण कजलीकर काले घट्टेकेतलेसे १-१  
रोज मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोल्या बनाकर रखओइ। इनमेंसे  
१-१ गोली कपूरकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको दूरकरताइ ४४२

#### ४४३ भूतभैरवरसः ( षष्ठ )

पारद गन्धक ताम्र मर्धं घट्टिकपायके ।  
वज्रमूपात्रे पाच्य बालुकायन्त्रके दिनम् ॥ १९६८ ॥  
मार्जारजग्गुजैः पित्तैर्भाषितं प्रहरद्वयम् ।  
गुडामात्रं चानुपाने दैय शीतोदकेन च ॥ १९६९ ॥  
सन्धिक तत्क्षण हन्ति वृष्यं पथ्यमाचरेत् ।  
नारिकेलोदकं दाहे रसोऽय भूतभैरवः ॥ १९७० ॥  
वे चि, र प, वा, सन्धिसन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म समभागलेकर  
कजली बनाकर चित्रके कायमें एकरोज मर्दनकर वज्रमूपाने  
रूपपर बालुकायन्त्रमें एकदिन(रातकी मति) देकर मिट्टी और  
गोदबकेपित्तोसे २-२ पहर मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोल्या  
बनाकर रखओइ। इनमेंसे १-१ गोली ठंडे पानीकेसाथ देनेसे  
सन्धिकसन्निपातको यह तत्क्षण दूरकरताइ। भूतलगनेपर  
दहीमात देना। बाहहोनेपर नारियलका जल पिलाना ॥ ४४३ ॥

#### ४४४ भूताङ्गशोरसः ( षष्ठमः )

सूतायस्ताम्रमन्त्रञ्च मुक्ताञ्चाऽपि सम समम् ।  
सूतपादोत्तम यज्ञे शिलागन्धकतालकम् ॥ १९७१ ॥  
तुल्य रसञ्चानु श्रद्धमन्धिकेने शिलाज्जनम् ।  
पञ्चानां लवणानाञ्च प्रतिभागं रसोन्मिलम् ॥ १९७२ ॥  
भूतचित्रकरोष्णानां दुग्धैश्चाऽपि विमर्दयेत् ।  
दिनान्ते पिप्पिकां दृष्ट्वा रुद्धा गजपुटे पचेत् ॥ १९७३ ॥  
भूताङ्गशरसो नाम नित्यं गुग्गादय लिहते ।  
आर्द्रकस्य रसेनाऽपि मृतोन्मादिनिरारणम् ॥ १९७४ ॥  
पिप्पल्याक पिषेचाऽनु दशमूलकायकम् ।  
स्वेदयेत्कटुतुल्या च तीक्ष्ण रूक्षञ्च वर्जयेत् ॥ १९७५ ॥  
माहिषञ्च घृत क्षीर सुवर्णमपि भक्षयेत् ।  
अभ्यङ्ग कटुतैलेन हितो भूताङ्गशो रसः ॥ १९७६ ॥  
र स, र च, र सु, ध, र र, रगायन, र को, मे र,  
चि र म, र का, र र री, उन्माद। र र कोमुरां प्रायो  
शुद्ध पाठ ।

भाषा—शुद्धपारा, लोह, ताम्र, अन्नक और मोती इनकी भस्मे १-१ तोला, हीराभस्म ३ माशे, शुद्धमैत्रिल, गन्धक, हरिताल, वृत्तिया और रसौत, समुद्रके, काले सुरसे की भस्म ये प्रत्येक ६-६ भाग लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धकी नीलवर्णकमलीमें मिलाकर भंगरा और चित्रके स्वरस तथा सेहू पण्डके दूधसे १-१ दिन मर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटरी आवरे । स्वाद्वशीतल होनेपर निकालकर रखजोड़े । इसमेंसे २-२ रत्नी अदरकके रससे देकर पीपलने प्रसेपयुक्त दशमूलका काढ़ा पिलायेसे और कड़वीवृषीके स्वरस का स्वेद देनेसे मृतोन्माद नष्टहोता है । तीक्ष्ण और रुक्ष पदार्थोंका त्यागकरे । भैरवाक्षी, दूध और भारी अन इनका भक्षणकरे । कड़वे तैलकी मालिश इसमें हितकर है ॥ ४४४ ॥

### ४४५ भूताङ्गुशोरसः (द्वितीयः)

शुद्धसूतस्य भागैकं द्विभागं शुद्धगन्धकम् ।  
भागद्वयं मृतं ताम्रं मरिचं दशभागिकम् ॥ १९७७ ॥  
मृताऽन्नस्य चतुर्भागं भागमेकं विषं क्षिपेत् ।  
भूताऽङ्गुशस्य भागेन सर्वमम्लेन भावयेत् ॥ १९७८ ॥  
सोऽयं भूताङ्गुशो नाम यामैकं घातकासजित् ।  
अनुपानं लिहैक्षौद्रैर्विनीतरुफलस्यचम् ॥ १९७९ ॥

र. र. र. सु. र. क. ल. नि. र. वै. चि. यो. चि. र. भ. र. को. र. म. मा. प. रा. र. र. स. र. का. यो. म. कासाऽधिकारे । र. र. स. स्वपमदिरस इति नाम । योगमहाण्डे त्रिभाग ताम्रं योजितम् ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक और ताम्रभस्म २-२ भाग, मरिच १० भा., अन्नकभस्म ४ भा, शुद्ध वधनाग और धतूरेकेनील १-१ भाग लेकर नीचूके रससे मर्दनकर २-२ रत्नीकी गोल्या बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खाकर अमरसे बड़ेहीछालकापूर्ण मधुसे चाटनेसे वातमज्जारी निरुत होती है ॥ ४४५ ॥

### ४४६ भूतेश्वररसः (प्रथमः)

ताम्राऽम्रलोहानि रसोऽमृतञ्च  
फलत्रयं गुग्गुलुकः शिलाजतु ।  
करञ्जवीजं विपतिन्दुवीजं  
सर्वाणि चैतानि समानि पिष्ट्वा ॥ १९८० ॥  
निक्षिप्य तत्सप्तदितञ्च भाण्डे  
गद्याणमेकं मधुना च साज्यम् ।  
सेवेत दुग्धेन युतञ्च पथ्यं  
नरिण्य वा स्त्री न विवर्जनीया ॥ १९८१ ॥

र. दी., कुष्ठे ।

टि०—अथ प्रथमकुष्ठकुष्ठोरेण बहुधा साम्यमावहति परन्तु द्रव्य प्रमाणे विशेषालक्ष्यकता पाठो गृहीत । अतएव रसरीषिकायासुभय स्थौलेखोऽस्ति । अस्मिन्योगे उग्रद्रव्ययोग्यताद्रवाणिनी मात्रा न समीचीनाऽस्ति यदाचित्कालेऽपि नैरस्योक्तमनुभूयैत तथाऽपि प्रथमतो माषादारभ्य शनैर्मात्रा वद्धनीयेति सुख्यु विवक्षित ।

भाषा—ताम्र, अन्नक, लोह और पारा इनकीभस्मे, शुद्धवधनाग, त्रिफला, शुद्धगुल और शिलाजतु, पृतीकरञ्जवीज, कुचिल सब समभाग लेकर १-२ पहर मर्दनकर धीधीमें भरले । सातदिनकेबाद इसमेंसे १ माशेसे आरम्भकर धीरे २ छ माशे-तककी मात्रा धी और शब्दकेसाथ देवे । जहां मात्रा असह्य मालूमपड़े वहां रुकजानाचाहिये । इसके सेवनसे समस्तकुष्ठ नष्टहोतै । इसमें दूध अथवा जलकेसाथ पथ्य देता और स्त्रीसत्र वर्जितकरना ॥ ४४६ ॥

### ४४७ भूतेश्वररसः (द्वितीयः)

विश्वोषणं टङ्गुणपादञ्च  
सगन्धकं चूर्णसमांशयुक्तम् ।  
नेपालवीजं निवृता च गुञ्जा  
गुञ्जाप्रमाणा गुटिका प्रसिद्धा ॥ १९८२ ॥  
चित्रेचनी मूत्रयिकाश्चोषिनी  
अग्रे हिता वीपनपाचनी च ।  
जलोदरे प्लीहि गुवाऽङ्गुरे च  
संशोषिनी शीतजलेन पीता ॥  
सङ्गाहिणी चूर्णजलेन सत्यं  
भूतेश्वरस्य नाम च सुप्रसिद्धः ॥ १९८३ ॥

र. क. यो., उदरोगे

भाषा—सोड, मिर्च, भुनासुहाणा, शुद्धपारा, गन्धक, जमा-ल्लोटा, निसोत और सफेदगुञ्जा समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धकी नीलवर्णकमलीमें मिलाकर पानीके योगसे गुञ्जा-प्रमाण गोल्या बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली ठंडे जलकेसाथ देनेसे मलावरोध, मूत्रविकार, मन्दाग्नि, जलोदर, टीहा, बवासीर, इनसबसे यह नष्टकरता है ॥ ४४७ ॥

४४८ भूतेश्वररसः (तृतीयः) (पित्तकालान्तक-  
नाराच.—रुस्मीविलासः)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं नेपालं द्रव्यं समम् ।  
मर्धं वह्निकपायेण दोलायन्ने दिनं पेषेत् ॥ १९८४ ॥  
मत्स्यपित्तस्तुहीक्षीरे द्वियामं खल्वमध्यके ।  
मापैकमाद्रैर्कैर्यं ज्वरं हन्ति न संशयः ॥ १९८५ ॥  
अर्कमूलकपायेण सन्निपातं निहन्ति च ।  
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं सृपि तर्कं पिबेदनु ॥  
भूतेश्वररसो नाम भूतेश्वरविनिर्मितः ॥ १९८६ ॥

वै. चि., ज्वराऽधिकारे ।

टि०—वसवराजीवचिन्तामण्यो शिर पित्ताधिकारे दिराघृत पाठ लिखित्वा तस्य पित्तकुलान्तक इति नाम स्थापित, तत्राऽनुपानानी नामभावोऽस्ति केवल शिर पित्त नियन्त्रितीति इत्वा समाहितम्, तत्र छिन्नावापार्शिकं योजनीयम् । जह्वाते पुनर्लक्ष्मीविलास इति लिखित्वा इत्येव पाठ विन्यास्य सूत्रे नाराचोऽय महाारस इति लिखितं तत्र पित्त कुलान्तके मत्स्यपित्तेन भावना नाऽस्ति, अन्यत्र तु सर्वत्र मत्स्यपित्तं स्तुहीक्षीराभ्यामुपायार्थं भावनाऽस्तीति विशेषोक्तपाथ ।

भाषा—शुद्धपारा, वछनाग, गन्धक, जमालगोटा और शिंगरिफ सब समभाग लेकर कललीकर चित्रकके काढेसे मर्दनकर गोलाबनाय चित्रककेकाथमें सोलायन्त्रसे १ दिन पकाकर मत्स्यपित और सेहुण्डके दूधसे २-२ पहर मर्दनकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रससेसाथ देनेसे यह ज्वरको नष्टकरता है । आकसी जड़केकाढेसे देनेसे सत्रिपातको नष्टकरताहै । पथ्य दहीभात है, प्यासलगनेपर छाछ पिलाना ॥ ४४८ ॥

### ४४९ भृङ्गादिचूर्णम्

भृङ्गी ब्राह्मी च शुण्ठी त्रिफलकणयचा-  
बाकुचीकुष्ठयुक्तं,  
भृङ्गात चाऽभ्वगन्धा शिखिररलनिशा-  
पोडशं भस्मसूतम् ।  
कांश्ये पात्रे रजश्च त्रिफलजलयुतं  
प्रातस्तयाय पीतं,  
पण्मासाद्रोगहारी पलितबलिह-  
रस्वर्णदेही शरीरी ॥ १९८७ ॥

वै चि, रसायने ।

भाषा—भृङ्गा, ब्राह्मी, सोंठ, त्रिफला, पीपल, वच, बाकुची कुष्ठ, शुद्धमिलोबि, अश्वगन्ध, चित्रक और अपामार्ग, शुद्धवछनाग, हल्दी और पारेकीभस्म सब समभाग लेकर वारीकचूर्णकर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा कासेके पात्रमें त्रिफलाके काढेके साथ प्रातःकाल पीनेसे ६ महीनेके प्रयोगसे समस्त रोगद्रोहकर बलीपलितरहित होताताहै ॥ ४४९ ॥

### ४५० मेदकमञ्जरीरसः

समांशमरिचैः सार्द्धं तालकं दङ्गुणी बलिः ।  
मत्स्यपित्तं तृतीयांशं शर्करा सरलैः समा ॥ १९८८ ॥  
शृङ्गवेरसेनाऽत्र दिग्गुजतुलितो रसः ।  
दत्तो नयज्वरं हन्याजलयोगञ्च कारयेत् ॥ १९८९ ॥  
र.डु, ज्वराधिकारे ।

भाषा—मरिच, शुद्धहरिताल, सुझाग और गन्धक सब समभाग लेकर वारीक चूर्णकर इससे तृतीयांश मखलीका पित्त और बराबरकी बाकर मिलाकर अदरखके रससे मर्दनकर २-२ रस्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली देकर मत्स्यपर जलकी घाटा देनेसे नयज्वर दूरहोताहै ॥ ४५० ॥

### ४५१ मेदीज्वराद्धुशोरसः

पारदं वत्सनामञ्च प्रत्येकं निष्कसम्मितम् ।  
द्विनिष्कं गन्धकञ्चैव दङ्गुणञ्च द्विनिष्ककम् ॥ १९९० ॥  
मरिच पञ्चनिष्कं स्यात् पण्निष्कं दन्तिबीजकम् ।  
सिंहीफलरसे र्मर्धं दियाम श्लेष्मतां नयेत् ॥ १९९१ ॥  
गुजामात्रां वर्टी कृत्वा छायाशुष्काञ्च कारयेत् ।

आर्द्रकद्रवसंयुक्तां ज्वरे जीर्णे प्रयोत्रयेत् ॥  
सर्पज्वरद्वरा शीघ्रं नाम्ना मेदी ज्वराद्धुशः ॥ १९९२ ॥

व.रा., वै.चि, ज्वराधिकारे । वैशचिन्तामणो हिङ्गुलम-  
धिकं नियोजितम् ।

भाषा—शुद्ध पारा और वछनाग ४-४ माशे, शुद्धगन्धक और मुनासुहागा ८-८ माशे, मरिच २० माशे, शुद्धजमालगोटा २४ माशे, लेकर सबकी कललीकर भटकटैयाके फलोंके रससे २ पहर मर्दनकर २-२ रस्तीकी गोलिया बनाकर छायामें सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रससेसाथ देनेसे यह जीर्णज्वरको शीघ्रनष्टकरताहै ॥ ४५१ ॥

### ४५२ भैरवगुग्गुलः

परण्डमूलस्य लघो गुंङ्गुच्याः  
पुनर्नवायाः सफलत्रयस्य ।  
प्रत्येकशः प्रस्थमयार्द्रप्रस्थं  
शुण्ठ्या जलद्रोणयुगे पचेत् ॥ १९९३ ॥  
अष्टाऽवशिष्टेन पुरस्य प्रस्थं  
पचेत्कपायान्नवति स्म सान्द्रम् ।  
त्रिवृत्कणाशुण्ठिमरीचकानां  
पलं पलं भाक्षिकधातुकर्पौ ॥ १९९४ ॥  
सङ्गन्धकस्य द्विपलं यवानी  
कृमिष्णकुष्ठे लवणञ्च दन्ती ।  
फलत्रयं कार्पिकमानमुच्चै-  
राचूर्ण्य सन्निक्षिपति स्म शीते ॥ १९९५ ॥  
श्रीभैरवो गुग्गुलुरेप रोगा-  
न्निहन्ति वृद्धाश्छूयधृतशेषान् ।  
क्षयं प्रबुद्धं गलगण्डयुक्तम्  
कुष्ठौघजातं कसनान्तमस्मान् ॥  
वाताऽन्नमात्रं यदि दुस्तरञ्च  
श्रीशम्भुना कीर्तितं एव योगः ॥ १९९६ ॥  
र.क, कुशाधिकारे ।

भाषा—छोटे परण्डकीजड़, मिलोव, पुनर्नवा, त्रिफला १-१ सेर और सोंठ आधासेर लेकर जबडुट चूर्णकर १२ सेर पानीमें औटावे । अष्टमाश सापरहनेपर छानकर १ सेर शुद्धगुग्गुल वालकर पकावे । जब गुग्गुल गलकर रावके घट्टाहोजाय तब निसोत, पीपल, सोंठ, मिर्च १-१ पल, शुद्ध सोनामाची २ कर्प, शुद्धगन्धक २ पल, अजवाइन, बिडङ्ग, कुष्ठ, सेंमानमक, दन्तीमूल, त्रिफला ये १-१ कर्प लेकर इनका वारीक चूर्ण बालकर पकावे । जब गोली बचनेलायक होजाय तब उपारकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ अथवा २ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे बघेदुप, क्षय, गण्डमाला, कुष्ठमुदाय, सम्पूर्णपासी, दुम्बर वातरफ इन सबको यद नष्ट करीता है ॥ ४५२ ॥

## ४५३ भैरवरसः ( प्रथमः )

रसं गन्धं विषं द्रुं मरिचं चव्यचित्रकम् ।  
आर्द्रकस्य रसेनैव सम्मर्द्य घटिकां ततः ॥ १९९७ ॥  
गुग्गुलुप्रममाणेन खादेत्तोयाऽनुपानतः ।  
स्वरभेदं निदृश्याशु भ्यासं कासं सुदुस्तरम् ॥ १९९८ ॥  
र. सं., घ, र चं, र. सु, भै. र, स्वरभेदे ।

टि०—भैरव्यरसावल्यादौ बहुधा स्थानेषु द्रुगस्थाने ज्योतिमिति  
इत्यनेन, तनु न सम्यक् प्रतिभाति मरिचस्य पृथक् सर्वत्रोपलब्धे  
भ्यासादौ द्रुगस्थानादित्यत्र, तथा च भ्यासभैरव इति नाम  
स्थापितं विज्ञाभ्यासादधिकारः ।

भाषा—शुद्धपात, गन्धक, कृष्णाना और सुहागा, मरिच,  
चव्य, चित्रक सबसमभाग लेकर बारीक घूर्णनर अदरकर रखसे  
एकरोज मर्दनकर ३-३ रतीकी मोलिया बनाकर रखछोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली जलकेसाथ लेनेसे स्वरभेद, दुस्तरसाथ,  
काश येसब नष्टोतेहैं ॥ ४५३ ॥

## ४५४ भैरवरसः ( द्वितीयः )

शुद्धं मूलं प्रहीतव्यं रक्तिकाशतमात्रकम् ।  
त्रिगुणां शर्करां लौहं निम्बदण्डेन मर्दयेत् ॥ १९९९ ॥  
बाममानं ततो दद्याच्छ्वेतखादिरचूर्णकम् ।  
सुतमुह्यं ततः कुर्यान्मर्दनारक्तजलोपमम् ॥ २००० ॥  
विंशति घटिकाः कार्याः स्थान्या गोधूमचूर्णके ।  
निःशेषनिःशुता ह्यात्वा पिष्टिकास्ताः कलेवरे २००१  
भैरवं देहमभ्यर्च्य बलिं तस्मै प्रदाय च ।  
विधाय योगिनीपूजां गुणामभ्यर्च्य यत्नतः ॥ २००२ ॥  
घटिकास्ताः प्रयोक्तव्या मिपजा जानता क्रियाम् ।  
दिवसशितयं दद्यात्तिष्ठस्तिको यिजानता ॥ २००३ ॥  
चतुर्थांश्च समारभ्य एकमिकां प्रयोजयेत् ।  
एवं चतुर्दशदिने नैरोगो जायते नरः ॥ २००४ ॥  
एवं शर्करया सार्जुमुष्णाऽंशं कृतमस्ति च ।  
कुर्यात्साकाङ्क्षमुत्थानं सङ्गोरोजनमिष्यते ॥ २००५ ॥  
जलपानं जलस्पर्शं कदाचन न कारयेत् ।  
दुःसहायान्तु तुष्ण्यायामिश्रुदाडिमकादिकम् ॥ २००६ ॥  
शौचकार्येऽप्युष्णवारि वाससा प्रोञ्छनं कृतम् ।  
वाताऽऽतपाऽग्निस्मर्त्तान् दूरतः परिचर्जयेत् ॥ २००७ ॥  
मेघाऽऽगमे वा शीते वा कार्यमेतद्विजानता ।  
मुखरोगे तु सञ्जाते मुखरोगहरी क्रिया ॥ २००८ ॥  
धमाऽऽवभाराध्ययनस्वप्नालस्थानि वर्जयेत् ।  
ताम्बूलं भक्षयेन्नित्यं कर्पूरादिसुवासितम् ॥ २००९ ॥  
क्रिया श्लेष्महरी युक्ता वातपित्ताऽविरोधिनी ।  
लवणं वर्जयेदम्लं दिवा निद्रां तथैव च ॥ २०१० ॥  
रात्रौ जागरणञ्चैव स्त्रीमुखालोकनन्तथा ।  
सप्ताहद्वयमुत्क्रम्य ज्ञानमुष्णाम्बुना चरेत् ॥ २०११ ॥

पथ्यं कुर्याद्वितमिदं जाडलानां रसादिभिः ।  
व्यायामार्घं वर्जनंयं यावन्न प्रकृतिं भजेत् ॥ २०१२ ॥  
एवं कृतविधानस्तु यः करोत्येतदौपमम् ।  
स एव पापरोगस्य पारं याति जितेन्द्रियः ॥ २०१३ ॥  
पिष्टका विलयं याति बलं तेजश्च वर्धते ।  
रजा च प्रशमं याति प्रमथिशोधश्च शाम्यति ॥ २०१४ ॥  
अस्थ्यां भवति दाढ्यश्च आमवातश्च शाम्यति ।  
भैरवेण समाख्यातो रसोऽयं भैरवामिध. ॥ २०१५ ॥  
र. सं., भै. र., उपदसे ।

भाषा—शुद्धपात १०० रती, शर्कर ३०० रती लेकर  
लोहेकेपात्रमें नीमके छंडेसे १ पहर मर्दनकर घोरकी बराबर  
सफेदखैरकाचूर्ण डालकर कजली बनाये, इसकी २० मोलिया  
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे ३-३ गोली सनेहुएगुहके आटेमें  
बल्लितकर भैरवको बलिदेकर योगिनी और गुणकी पूजाकर  
निगलनादे । तमामशरीर फूटगवाहो तथा पिडकाओंसे व्याप्त  
होगयाहो तो तीनरोजतक ३-३ मोलियादे, चौथे दिनसे १-१  
गोली ११ दिनतकदे । ऐसे १४ दिनमें बहुतव्य मीरोग होजा-  
यगा । पथ्यमें थोड़ाथी और शक्करकेसाथ गरमभन देवे । एकदम  
सूत लगे उसवक्त एकवार भोजनदेवे, जलपान और जलस्पर्श  
मूलकरमी न करे । यदि असह्यतृष्णाहो तो ईल और अनार-  
प्रशक्तिरसदेवे । शौचकार्यमेंभी गरमपानीसे प्रक्षालनकेनाद गुर्त  
कपड़ेसे पोंछछाले । वायु, धूप और अमिका दूरसे परित्याग-  
करे । वर्षा अथवा शीतकालमें इसप्रयोगका करना उचितहै ।  
शुद्ध आकर दु सहहोनेपर सुप्रयोगको दूरकरनेवाली क्रियाकरनी ।  
परिधम, मार्गचलना, भार उठाना, दिनका सोना, रात्रिजाग-  
रण और आलस्य इनको छोड़दे । शुद्धका स्वाद खावहोनेपर  
कपूरवगैरहसे वासित पान पावे । वातपित्तकी अविरोधक श्लेष्म  
हर क्रियाकरनी, नमक और खटाईको छोड़दे स्त्रीके मुखतक-  
को न देखे । बौद्धहिनयेवाद गरमजलसे स्नानकरे और  
अहली जानवरोंके मांसरससे हितकाकपण्यले । जबतक प्रकृ-  
तिय न हो तत्कल शरीरभन न करे । जो इसतहत स्वयंकलता-  
हुआ इस औपधिका सेवनकरेगा वही जितेन्द्रिय इसपापरोगसे  
छूटेगा । इसके सेवनसे फुडिया नष्टहोजातीहै बल और तेज  
बढताहै । पीडा, गांठ और सूजन तथा आमवात नष्टहोजातेहै  
इहिया मजबूत होजातीहै ॥ ४५४ ॥

## ४५५ भैरवरसः ( तृतीयः )

द्विगुणितशुचिगन्धं पारदं कन्यकाङ्गि-  
दिनमृदितमशेषं विन्यसेत्कृपिकायाम् ।  
यसनमृदवलिप्तं सप्तशः सिकते त-  
द्विषच तरणियामं वह्निवृद्ध्या क्रमेण ॥ २०१६ ॥  
तदनु दरदतुल्यं कुपिकानाललक्षं,  
रसममलमतन्द्रो मूर्च्छितं चाददोत ।  
हरिदिल्विजयाम्भोमर्दितं चातपे तत,  
त्रिगुणितमुनिवारान् सप्तहृत्यो विमर्द्य ॥ २०१७ ॥

क्षितितलगतयन्त्रे सङ्ख्यङ्गात्सजाती,-  
फलगलितसुतेलाङ्गैर्योऽयं द्विवल्लः ।  
निशि सह सितया यैः सेवितो दुग्धमोज्यै,-  
हृदयति बहुशुक्लं नान्यथा यावदुक्तिः ॥ २०१८ ॥  
र. श. , टो., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्धपारा १ भा. गन्धक २ भा. लेकर नीलवर्णकजली-  
कर पीडुआरके रससे एकदिन मर्दनकर सुखाकर ६-७ कपड़  
मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें रखकर बालुकायन्त्रमें १२  
पहरकी बमरुद्ध अग्निदे । स्वाज्ञशीतल होनेपर रसको निवालकर  
तुलसी और मागेके रसोंसे २१ रोज़ मर्दनकर गोलावनाय  
भूचरयन्त्रमें स्वेदितकर लौंग और जायफलसे निकालेहुए  
तेलमें २-४ भावनाएँ देकर रखोजे । इसमेंसे ६-६ रती  
दायकसेसाय सेवनकरके ऊपर दूधपीनेसे पातुप्लमस्तविरार  
हूहोतेहैं । रात्रिमें विषयसे २ घंटे पहिले लेनेसे यह शुक्ल-  
म्भन करता है पर विषयकी अभिलाषासे इसरा सेवन किया  
जायतो उसदिन केवल दूध लेनाचाहिये । इसरा हमेसा सेवन  
रखनेसे समस्तरोग हूहोतेहैं ॥ ४५५ ॥

#### ४५६ भैरवरसः ( चतुर्थः )

सुवर्ण पारदं कान्तं मृतं सर्वं समं भवेत् ।  
शतावर्षायाः शिफाद्राधै भाँधयेद्विषसत्रयम् ॥ २०१९ ॥  
त्रिदिनं निफलाब्धायै भृङ्गद्राधै दिव्यनयम् ।  
भायितं मधुसर्पिर्ग्या मक्षयेद्भैरवं रसम् ॥ २०२० ॥  
मापैकैकं धर्ममात्रं जीवेच्चन्द्रार्कतारकम् ।  
मूलचूर्णं शतावर्षायाः कृष्णाजपयसा युतम् ॥  
पलेकैकं पिबेच्चालु क्रामकं परमं हितम् ॥ २०२१ ॥  
र रां , रमायनस , रमायने ।

भाषा—सुवर्ण, पारा, बान्तलोह इनतीभस्मे समभागलेकर  
शतावरी, त्रिफला और भंगराके अस्तरसोंसे ३-२ दिन मर्द-  
कर रखोजे । इसमेंसे १-१ मादा मधु और पीकेसाय १  
वर्षनक निरन्तर सेवनकरनेसे दीर्घायु होताहै शनावरीका चूर्ण ४  
तोके काजीबकरीक दूधके साथ ऊपरसे लेनेसे शरीरमें इसका  
क्रामण होताहै ॥ ४५६ ॥

#### ४५७ भैरवरसः ( पञ्चमः )

शुद्धं रसं समाहृत्य वेदमात्रपलं शुभम् ।  
अम्रक गन्धकश्चैव तापन्मात्रं प्रदापयेत् ॥ २०२२ ॥  
श्वेतं सौवीरपञ्चाऽपि चतुर्धाशब्द सैन्धवम् ।  
जम्भीरस्य च तीरेण मर्दयेत्सर्वमेकतः ॥ २०२३ ॥  
निक्षिप्य काचकृष्णं तन्निद्रज्ज्व च्छाऽतियत्नतः ।  
चालुनाभिः समाधूय याममात्रं ततः परम् ॥ २०२४ ॥  
अग्निश्च मध्यमं घुर्पांसतः शीतं समुद्धरेत् ।  
कनकस्य पलायध्यातयं सूक्ष्मं विधाय च ॥ २०२५ ॥  
माक्षिकस्य पलञ्चाऽयं गन्धकस्य चतुष्टयम् ।  
ग्रधमेकत्र तदहत्वा गन्धकः माक्षिकन्तथा ॥ २०२६ ॥

हेम्न' पञ्च तन्मध्ये धृत्वा रक्षा शरायके ।  
उपर्यपि भवेच्चाऽन्यः शरायः सन्धिमुद्रितः ॥ २०२७ ॥  
कुञ्जराख्यः पुष्टो मुख्यस्तत्र देयः सुसंपतः ।  
स्वाज्ञशीतं तमादाय भस्मीभूतश्च काञ्चनम् ॥ २०२८ ॥  
सूक्ष्मं तच्चाऽपि सङ्ख्यं पूर्वसूतेन मेलयेत् ।  
ज्वालामुखीरसै' मृतं मर्दयेदकतोऽतिलम् ॥ २०२९ ॥  
ततो गन्धेन हविषा रसश्च मर्दयेद् दृढम् ।  
कृत्वा तद्गोलकं सर्वं मृन्मूयान्तर्गतञ्च तत् ॥ २०३० ॥  
विमुद्रञ्च सकलं भाण्डे मृन्मये तत्र दीयते ।  
अग्निं हि बालुकाभिस्त्रिं दिनसप्तावधि रय्य ॥ २०३१ ॥  
अग्निं तत्र शनैः कुर्याच्छीतमादाय पारदम् ।  
विचूर्ण्य रस्यते भाण्डे राजते वाऽयं काञ्चने ॥ २०३२ ॥  
शुद्धामेकामतो दद्यात्प्रतियासरमुत्तमम् ।  
कासे श्वासे उदरे मेहे गुल्मे दृष्टस्ये तथा ॥ २०३३ ॥  
व्योषेण मधुना साकं रसं गुग्गुलुनाऽयथा ।  
घुतेन सह दातव्यः कुष्ठे कर्पायं यरामयम् ॥  
अग्निमान्चे च दातव्यो रक्तारोगे महारसः ॥ २०३४ ॥  
रसचि , रक्तारोगे ।

भाषा—शुद्धपारा, अम्रकभस्म, शुद्धगन्धक और सफेद  
सुरमा ४-४ पल, सैन्धवनक १ पल लेकर सनकी कजलीकर  
जमीरीके रससे १-२ रोज़ मर्दनकर २-३ कपड़मिट्टीदीहुई  
आतशीशीशीमें बालकर मुहन्दरकरदे । फिर बालुकायन्त्रमें  
रख एकपहरकी मध्यम अग्निदेवे । स्वाज्ञशीतल होनेपर निवाल  
कर रखोजे । एकपल सोनेके बारीकपत्रकराने' शुद्धनोनामासी  
१ पल और गन्धक ४ पल लेकर बारीक चूर्णकर शरायवम्भुमें  
सोनेकेपत्रोंके ऊपरलोच रखकर गजपुटकी आवरे । स्वाज्ञशीतल  
होनेपर सोनेकी महमको निवालकर पहिलेसमें मिलाकर हूहूह  
और पर्यङ्करीजे १-१ रोज़ मर्दकर कोलापराय मिर्गरी  
मूयाने बन्दकर बालुकायन्त्रमें रराकर ७ दिनकी सन्द आवरे ।  
स्वायशीतल होनेपर निवालकर सोने अथवा चादीके पात्रमें  
रखोजे । इसमेंसे १-१ रती रोजाना त्रिफु और मधुकेसाय  
अथवा गुलकेसाय अथवा पीकेसाय देनेसे वाय, आत, उज्र,  
प्रमेह, गुल्म, दृष्टस्य और सन्दाभि दनको यह मटकताहै ।  
नुष्णं पीकेसाय देकर त्रिफलाका धाप देना । इससे रक्षाप्रित  
तमामरोग दूहोगे ॥ ४५७ ॥

#### ४५८ भैरवरसः ( षष्ठः )

पीतेन गन्धकेनैव तुल्यः स्याच्छुद्धपारदः ।  
लाङ्क्यफेनकासीसघृताचूर्णान्तु पट्टणम् ॥ २०३५ ॥  
कृष्णोन्मत्तरसेनैतज्जाचयेद्यं दिनप्रथम् ।  
यत्तुगुम्भप्रमाणेन बन्धनीया मुषेयंदी ॥ २०३६ ॥  
नारङ्गाऽऽर्द्धरसे दद्या सन्निपातयिमुकये ।  
ज्ज्ञानं जलेन शीतेन भोजने क्षिप्रमकः ॥  
सन्निपातमसाध्यन्तु हन्त्यसौ भैरवो रसः ॥ २०३७ ॥  
सो. स. सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा १-१ तोला, शुद्ध करि हारी, अफीम और कमीस २-२ तोले लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर कालेघृतेके रससे ३ दिन भावना देकर ६-६ रत्तीकी गोल्या बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली नारद्री और अदरक के रससे देनेसे और शीतजलसे छानकराकर दहीभात खिलानेसे यह असाध्य सन्निपातको दूरकरताहै ॥ ४५८ ॥

### ४५९ भैरवरसः (सप्तमः)

पीतेन गन्धेन समश्च सूतः

सत्त्वं गुह्यया अपि तत्समानम् ।

शिलाविपं चाऽप्यपराजिता च

भागस्त्वमीषां द्विगुणो नियोज्यः ॥ २०३८ ॥

कदुनिकाऽङ्गोलकदेवदारय-

लिभागिकाः स्युः परिचूर्ण्य सर्वम् ।

तथा रसैः शिष्टवलाङ्गवैश्च

सम्मर्द्य सार्द्धं गुदिका विधेया ॥

बलप्रमाणा विपमे त्रिदोषे

कर्पूरसार्द्धं मिषजा प्रदेया ॥ २०३९ ॥

यो स, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, गिलोयसत्त्व १-१ भाग,

शुद्ध अथवा भस्मकियाहुआ सोमल, कोयल २-२ भाग, निकड, अङ्गोलकीछाल और बन्दाल ३-३ भाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर सहजमकी जङ्गीछालके रससे मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोल्या बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली कपर्कसाय देनेसे त्रिदोष और विषमज्वर नष्टहोतेहैं ॥ ४५९ ॥

### ४६० भैरवरसः (अष्टमः)

सूतं गन्धं लोहमण्डूरकिट्टं

सर्वैस्तुल्यो वत्सनामो नियोज्यः ।

आर्द्रं भृङ्ग धीजपूर जयन्ती

निर्गुण्डविषां वलपूतं द्रवैश्च ॥ २०४० ॥

युक्त्या वैद्यो भावयित्वा विधेया

शाणाऽर्द्धाऽर्द्धाः सन्निपातस्य जुष्ये ।

शीते नीरे निर्मलैः छानमत्र

पत्ये दुग्धं शर्कराभि र्हितञ्च ॥ २०४१ ॥

यो स, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और मण्डूरभस्म समभाग, सबकी बरार शुद्धबछनाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर अदरक, भगरा, विनोरा, जैत, निर्गुण्डी इन प्रत्येकके रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोल्या बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उषितागुणजेसाय देनेसे सन्निपात नष्ट होता है उद्वेगलसे रोगीको छानकराना और फल्यमें शर्कर, दूध और भात देना ॥ ४६० ॥

### ४६१ भैरवरसः (नवमः)

आदौ नागरसस्य योगविधया गद्याणकं निःक्षिपेत्,  
पैकैकं विषगुल्यलोहगगनं तालञ्च गद्याणकम् ।

यत्वे जातिदलस्य वासकरसि भृङ्गोज्ज्वैः सप्तधा,  
सिद्धः सिद्धरससिद्धोपशमनः स्वामी रसो भैरवः ॥  
किंकायैः कथितैश्च किंशुकमवैः किंवाऽग्निदाहं घ्नैः,  
किंवा मद्यविभूषणैः किमखिलैरस्यैरुपायैरपि ।

हेलानिर्जितसर्वरोगनिवहप्रागल्भ्यलब्धध्वजः,  
प्राप्तोऽयं यदि सन्निपातशमनः स्वामी रसो भैरवः ॥  
मुक्तैः सर्वचिकित्सकैः किमखिले जाति त्रिदोषे श्वरे ।  
यल्लङ्घ्यमितं हि भैरवमुं सम्यग्निगुल्याऽऽदरात्,  
पश्चाद्येदनुपानकल्पनमदो जातीफलं सज्जलं,  
छानं भक्तमशालिकं दधिसितामिश्रञ्च दद्याद्बुधः ॥

२. को, र का., र (मा), सन्निपाते । र (मा) सन्निपातभैरव इति नाम ।

हि०—रसेविषगुल्याऽन्न लेईर्बानारनाप्ति । सहजलक्षिदोषा न्तकरोऽय भैरवा भवेदिति भैरवनाम्ना रसकामधेनु रमावतार ( माणि ब्यचन्द्र ) यो रक्ततन् पाठ कल्पित, परन्तुस्मादयमुपगोष्ठिति हरि- तादरहितलाभ्यूनद्रव्यभावनावस्थाचाऽनौ न रूपकया सहगृहीत इति निरदिष्टिर्भावनीयम् ।

भाषा—निरूप्य नागभस्म, शुद्धबछनाग, ताबा, लोह, अग्रर और हरितालभस्म ६-६ मासे लेकर सप्तधा बारीक चूर्णकर जाविनी, अहसा, भगरा इनकेरसोंसे ७-७ रोज मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोल्या बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उषितागुणके साथ देनेसे यह तमाम व्याधियोंको नष्टकरताहै । इसरसके रहतेहुए कथित ( वाय ), वेद्यप्रवृत्तिका लेक, अमि- प्रवृत्तिसे दाह, मय अथवा, आभुषण इनसमस्त उपायोंकी क्या उत्तरतहै क्योंकि यह अकेलाही सबरोगोंको दूरकरदेताहै फिर अधिकतरल्लोफ उद्यमेकी क्या आवश्यकताहै जिससमय वैद्योंने रोगीको छोड दियाहो तब त्रिदोषज्वरमें ६-६ रत्तीकी मात्रादेकर जायफल और थोडाभगरमजल देवे । स्नायकराके लाल चावल दही और शकरमिलाकर देवे ॥ ४६१ ॥

### ४६२ भैरवीवटी ( प्रथमा )

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं मर्दयेद्विशुक्कद्रवैः ।

दिनं भाव्यञ्च मर्दयञ्च शोषयित्वा तु भृङ्गजैः ॥ २०४५ ॥

चतुर्धा भावयेद्वायैस्तिलपर्ण्यां द्रवैस्तथा ।

भावितञ्च विशोष्याऽथ चूर्णयेद्बल्लगालितम् ॥ २०४६ ॥

चूर्णतुल्यं सूतं ताम्रं ताम्रादृष्टांशकं विषम् ।

कृष्णाशीतविडङ्गानि कृष्णाजीराऽऽसनं बला ॥ २०४७ ॥

ताम्राऽर्द्धं प्रतिचूर्णं स्यात्सधमेकज कारयेत् ।

यामेकं भृङ्गजद्रवैर् मर्दयेत्कल्कतां गतम् ॥ २०४८ ॥

स्निग्धभाण्डगतं पाच्यं पिण्डं यामं छत्वाऽग्निना ।

वणमात्रा घटी योज्या चित्रकाऽर्द्धकसैन्धवैः ॥ २०४९ ॥

सम्पक्व त्रिदोषजं हन्ति सन्निपातं सुदारुणम् ।

भैरवी गुटिका ख्याता दध्यन्त्रं पथ्यमाचरेत् ॥ २०५० ॥

नि. र., र. मु., र. को., र. का., र. क. यो., ज्वराऽधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भा., गन्धक २ मागलेखर नीलवर्ण-  
कजलीकर ईश्वरसे १ दिन मर्दनकर सुखाय भंगरा और  
दुरदुरकरसकी ४-४ दिन भावनाएंदेकर सुखाले । फिर बराबरकी  
ताम्रमस और अष्टमांश शुद्धबलनाग, पीपल, कपूर, विड्ड,  
कालीजीरी, असन, बला ये प्रत्येक ताम्रसे आधे मिलाकर १-२  
पहर घोटकर भंगरेकरसे एक्कोर मर्दनकर चिकने वर्तने  
डालकर मन्दाग्निमें १ प्रहर पखावे । गोलीबननेलायक होनेपर  
बनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखाओड़े । इनमेंसे १-१ गोली  
चित्रक और सेंपालमककेसाथ देनेसे दाहणसन्निपातको यह  
नष्टकरतीहै इसमें पथ्य दहीभात देना ॥ ४६२ ॥

### ४६३ भैरवीवटी (द्वितीया)

पाठापारद्गन्धकाऽमृतलतामाक्षीकृतालाऽनलैः,  
काश्मीरीविपतिन्दुलान्नजटापट्टीसबौलोपधैः ।  
ककोट्याऽपि च मोघया बृहतिकानिर्गुण्डिवारापृथक्,  
भाव्यं, सप्तदिनं जयेत्सविपमान्दभाज्वरान्कोलिका ॥  
र. प., ज्वरः ।

भाषा—पाठा, शुद्ध पारा और गन्धक, गिलोय, सोना-  
माली, हरिताल, चित्रक, भंगरा, शुद्ध कुचिला और फलिहारीकी  
जड़, सुलह्दी, हीराबोल सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर  
पारेगन्धकनी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर खेचता, पाटर, बन-  
भाडा, संभाळ इनप्रत्येककेसोसे ७-७ रोऊ भावनाएंदेकर बेरकी  
गुठलीके बराबर गोलिया बनाकर रखाओड़े । इनमेंसे १-१ गोली  
दहीवेगाथ देनेसे सद्योज्वर और विषमज्वर नष्टहोतै ॥ ४६३ ॥

### ४६४ भैरवीवटी (तृतीया)

विप्ली मरिचञ्चैव दह्णं द्रवं तथा ।  
शुद्धं मनःशिलागन्धं हरितालं तथैव च ॥ २०५२ ॥  
विशुद्धं पारदं श्लोकं तथा शुद्धं विपं स्मृतम् ।  
रौप्यमृतिश्चाऽम्रकञ्च पलमानं पृथक्पृथक् ॥ २०५३ ॥  
धूपं सूक्ष्मं विधायाऽथ भावयेत्तु रसैः पुनः ।  
कदलीमूलकं चित्रं घट्टरस्य च मूलकम् ॥ २०५४ ॥  
पृथक्पृथक् पलमितं कुट्टयित्वा जले क्षिपेत् ।  
पांडशोशे क्वाथयित्वा यक्षपूतं समाचरेत् ॥ २०५५ ॥  
रत्नैश्च क्षित्या भावयेत्तु कुप्यांमुद्रनिमां घटीम् ।  
भैरवारस्या घटी रूपाता रसशङ्करमञ्जिता ।  
कासभासां निहन्त्येषा सर्पय्याधिघिनाशिनी २०५६  
र. मु., शोथः ।

भाषा—वीपत्र, मरिच, शुद्ध सुहागा, शिगरिक, मेनसिल,  
गन्धक, हरिताल, पारा और अष्टमांश, चादी और अमरमस  
१-१ पल लेकर बारीकचूर्णकर पारे गन्धकही नीलवर्णकजलीमें  
मिलाकर केलाफन्द, निमक, धूपकीजड़ १-१ पत्र लेकर अलग

२ कूटकर १६ गुने पानीमें काथकर । चतुर्थोदावशेष रहनेपर  
छानले फिर इसकाथसे पूर्वोक्तसको मर्दनकर मृगजराकर गोलियें  
बनाकर रखाओड़े । इनमेंसे १ अथवा २ गोली उचितानुपानके  
साथ देनेसे कास आसादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरतीहै ४६४

### ४६५ भैरवीवटी (चतुर्थी)

तिन्तिडीकं विपं शुद्धं दग्धशङ्खं नियोजितम् ।  
जातीफलं शुद्धियुतं सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ २०५७ ॥  
रसं गन्धं समरिचं निम्बूरसविमर्दितम् ।  
चित्रकेण तु वारिकं वटिका भापमात्रिका ॥ २०५८ ॥  
देया यत्नेन सततं नाम्ना मन्दाग्निभैरवी ।  
कासे श्वासे प्रतिश्याये विपरोगादिके ज्वरे ॥  
सर्वरोगेषु विरुधाता घटी भैरवसञ्ज्ञिता ॥ २०५९ ॥  
र. मु., अजीर्णः ।

भाषा—तिन्तिडीक (सामक यूनानी), शुद्धबलनाग, शङ्ख  
मस, जायफल, इलायची, शुद्ध पारा और गन्धक, मरिच सब  
समभाग लेकर नीपू और चित्रके रसे १-१ भावना देकर  
१-१ भादकी गोलिया बनाकर रखाओड़े । इनमेंसे १-१ गोली  
उचितानुपानके साथ देनेसे मन्दाग्नि, कास, श्वास, प्रतिश्याय,  
विष, ज्वर श्वासादिरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ४६५ ॥

### ४६६ भोगसुन्दरीवटी

हिङ्गुलञ्च चतुर्जातं लयङ्गौपधचन्दनम् ।  
जातिजं केशरं कृष्णा त्याकल्लमहिफेनकम् ॥ २०६० ॥  
कस्तुरीन्दु समं सर्वं तत्समे धिज्जपासिते ।  
शुद्धकोलमिता कार्या घटिका भोगसुन्दरी ॥ २०६१ ॥  
रसायनसं, र. को., वृ. यो., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्धशिगरिक, चातुर्जात, लौंग, शोंठ, सपेदचन्दन,  
जायफल, बेसर, पीपल, अकलवरा, अजीम, कस्तूरी, कपूर  
सबसमभाग लेकर बारीकचूर्णकर इसनी बराबर भाग और छर  
मिलाकर छोटेबेराधार गोलियें बनाकर रखाओड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली दूधनेसाथ रखनेसे यह बीदेका स्तम्भन करतीहै  
और मन्दाग्नि, सद्यहणी तथा आत कास को नष्टकरतीहै ४६६

### ४६७ भोगपुरन्दरीवटी

आकारकर्मं ग्राह्यं पलेकं केशरन्तया ।  
हिङ्गुलञ्च फलं जात्याः पञ्चद्वयप्रमाणकम् ॥ २०६२ ॥  
विट्कं देयकुसुमं टङ्कं द्रव्यं मतम् ।  
तन्मात्रमहिफेनञ्च जलेनैव विमर्दयेत् ॥ २०६३ ॥  
सूक्ष्मकोलफलोन्मानां गुटिका रचयेद्बुधः ।  
एकैकां भक्षयेद्वात्रौ पयः पयं यथेच्छितम् ॥ २०६४ ॥  
किञ्चित्पुणं बलं कृत्वा गुटी भोगपुरन्दरी ।  
धीर्यस्तम्भकरी नृणां रोगां सोऽप्यप्रदायिनी ॥ २०६५ ॥  
॥ कु., बीदेन्ममे ।



भाषा—अम्लरा १ पल, केशर २ टंक, जायफल ५ टन, लौह ३ टंक, शुद्धसिन्दूर और अक्रोम १-१ टंक लेकर सबका बारीकचूर्णकर जलके साथ १-२ पहर घोटकर छोटैवर बराबर गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखोहे । इनमेंसे १-१ गोली रतिसमयसे २ घंटेपहिले दूधके साथ लेनेसे धीरेसे तेजी जाकर बीर्यका स्तम्भनकरती है और स्त्रियोंको आनन्ददेती है ४६७

### ४६८ भ्रमनाशिनीचूर्ण

रसं त्रिपुण्णवन्द्यशुक्रौ समाश्रय सं त्रिगुणोपपन्नम् ।  
सगृह्यवेरेण सम विमर्श यदीच्छ कुर्वाणमरिचप्रमाणाम् ॥  
कृष्णा शताह्वा शुण्ठो च पथ्या यासा पलेपलम् ।  
पद्मलो सुगुड्याऽथ गुडिका भ्रमनाशिनी ॥ २०६७ ॥  
ब्राह्मीरसेनाणुणेन द्वय-

हृचीनमेभिः परिपाचनीयम् ।

ब्राह्मीवचापिप्लविकुपुविधा-

नीलोत्पलैः सन्धयामिश्रितैश्च ॥ २०६८ ॥

यो. सं, रसायन स, रससारसङ्ग्रह, र. सि, भ्रमरोगे ।

टि०—रसायन स, रससारसङ्ग्रह, र मि, एषु नागानुनीति नाम्ना एषा योगाऽस्ति संश्रितमिदं वान्तमिति । नागरयाने द्रव्यगुणु भ्रमास्तजातमिति बौद्धव्यम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग और गन्धक, नागमूत्र १-१ तोला, मरिच ३ तोले लेकर बारीकचूर्णकर धारेगन्धककी नील वर्णकजलीमें मिलाकर अदरकके रसमें मरिचबराबर गोलियें बनाकर रखोहे । यह प्रथमगुडिना तैयारहुई । पीपल, सोंफ, सोंठ, हों, धनाता १-१ पल, पुरानागुड ६ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर गुडमिलाकर ३-३ भांशेनी गोलियें बनाकर रखोहे, यह द्वितीयगुडिका तैयारहुई । ब्राह्मी, वच, पीपल, कुठ, सोंठ, नीलोत्तर और सैंधानमक इनका कल्क बाहर ८ सेर ब्राह्मीके रसमें १ सेर मन्त्रन पकाकर रखोहे । फिर भ्रमरोगीके बमनविरेचनादिसे शुद्धकर प्रातः कालमें १ गोली प्रथम रसमेंसे ब्राह्मीरसके साथदे । मध्यह्नमें द्वितीय गोली दे और रात्रिको दूधके साथ यथाशक्ति ब्राह्मीपुत दे । इतप्रयोगसे समस्तप्रकारके भ्रम, अपस्मार, श्वास, कास और वातगुल्म नष्टहोते हैं ॥ ४६८ ॥

### ४६९ मकरध्वजरसः ( प्रथमः )

स्वर्णभागी च चन्द्रश्च मौक्तिकं कान्तलोहकम् ।  
जातीकोपफले रूप्यं सिन्दूररसकांक्ष्यकम् ॥ २०६९ ॥  
कस्तूरी विद्रुमं चन्द्रमन्त्रकञ्चैकभागिकम् ।  
स्वर्णसिन्दूरतो भागाश्चत्वारः कल्पयेदुष्णम् ॥ २०७० ॥  
गुञ्जा द्विगुञ्जं वह्निं वा सम्पय्योक्ष्य पलाऽथलम् ।  
यथासिद्धाऽनुपानेन सर्वरोगेषु दापयेत् ॥ २०७१ ॥  
नातः परतः श्रेष्ठः सर्वरोगनिपद्नः ।  
सर्वलोकहितार्थाय शिवेन परिकीर्तितः ॥ २०७२ ॥  
र. सं, र. मु, रसायने बाजीकरणे च ।

भाषा—सोनेकीभस्म २ भाग, वज्र, मोती, कान्तलोह, जावित्री, जायफल, चांदी और कस्तूरभस्म, रससिन्दूर, कस्तूरी, प्रवालभस्म, कपूर, अन्नकभस्म १-१ भाग, स्वर्णसिन्दूर ४ भाग लेकर सबको मिलाकर घोटकर रखोहे । इसमेंसे १ से २ रसीतककी मात्रा बलाबल देखकर तत्तद्वेगहरानुपानके सा । देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरता है । इसकी बराबर सर्वरोगहर दूसरी औषधि नहीं है ॥ ४६९ ॥

### ४७० मकरध्वजरसः ( द्वितीयः )

सिन्दूरं हेमलोहश्च देवपुष्पं सचन्द्रकम् ।  
जातीफलं मृगमदञ्चैकं परिमर्दयेत् ॥ २०७३ ॥  
पर्णाम्मसा ततः कुर्याद्वटिकां यत्सलम्बिताम् ।  
सेविता छागपयसा प्रमेहांस्तत्कृतान्मादात् ॥ २०७४ ॥  
फलैर्धूपं धातुक्षयं फासं जीर्णैश्च विप्रमज्जरम् ।  
रसोऽयं क्षपयेच्छूर्णं मकरध्वजरसञ्चकः ॥ २०७५ ॥  
भै. र, प्रमेहपिट्टिकाधिशारे ।

टि०—“जातीफलं खड्गत्र चूर्णं मरिच तथा । मलेकं तादृकं दद्यात् सुवर्णं च मापकम् ॥ अण्डजं मापमानं सर्वतुल्यमप्येश्वरम् । यतता मर्दयेत्तत्त्वं धतुर्गुणा वी चरेत् ॥ एष चन्द्रोदया नाम रसो बाजीवर पर । हस्तिपानावेषांश्च बह्वीर्याऽभिवर्धन ॥” इति भैषज्यरत्नावल्यां ध्वजभद्राऽधिशारे पाठे हस्तसे सोऽस्तिमेतन्मन्तर्मावनीयं पृथक् पाठस्याऽनावश्यकम् । प्रमाणैर्विचित्राऽप्यन्तावश्यवत् समप्रमाणेनाऽभुत कार्यकरत्वात् ।

भाषा—रससिन्दूर, सुवर्ण और लोहभस्म, लौह, शुद्धकपूर, जायफल, कस्तूरी समभाग लेकर पाननेरसे एनरोज मर्दनकर ३-३ रसीकी गोलिया बनाकर रखोहे । इनमेंसे धरकी दूधसे १-१ गोली सेवनकरनेसे समस्तप्रमेह, पण्डता, धातुक्षय, कास, जीर्ण और विप्रमज्जर सबसबको यह नष्टकरता है ॥ ४७० ॥

### ४७१ मकरध्वजरसः ( तृतीयः )

वस्त्रहेमार्कयुताऽध्रलोहभस्म क्रमोत्तरम् ।  
सर्वं कन्याद्रवे मर्शं क्षातमन्याश्च प्रप्रेक्ष्यहम् ॥ २०७६ ॥  
तदुद्गुा कचकृष्यन्तं वांलुकायां ज्यहे पचेत् ।  
सत्करं मुशलीक्याये यन्मार्काक्षीरसंयुतः ॥ २०७७ ॥  
दिनेन मर्दयेत्तत्त्वं रुद्धाऽन्तर्भूयरे पुटेत् ।  
यामादुक्त्य सञ्चूर्ण्य सितारुष्णात्रिजातैः ॥ २०७८ ॥  
समेः समं विमिश्रयाऽथ गुञ्जैकं भक्षयेत्सदा ।  
भागधीं मुशली यष्टी यानरीवीजकं समम् ॥ २०७९ ॥  
चूर्णं सितारुष्णयमोक्षीरैः पलाऽर्द्धं पाययेदनु ।  
कामिनीनां सहस्रैकं रममाणं ॥ मुहति ॥  
सेवनाद् दृढकायः स्याद्रसोऽयं मकरध्वजः ॥ २०८० ॥

रसायन स, रसायने ।

टि०—“चतुर्कालाश्रिते ज्वरान्नद्रव्यानि वज्रघाताऽभ्रवर्गार्ज-  
पातीक्ष्णानि वज्रघ्नानि सन्ति, द्वितीयकालपटके च वज्रघाताऽभ्रे-  
याकतीक्ष्णपण्डानि वज्रघ्नानि सन्ति एव पञ्चममर्दनकामदेवेति, तृतीय-  
मर्दनकालके च वज्रघाताऽभ्रेलोहभस्मानि सन्ति इत्यत्र आपानतो

वहन्तरं न प्रतीयेते परन्तु प्रमाणे भावनासु पावाऽप्राक्थो नि क्षेपद्रव्येषु च महदन्तरत्वात्स्वतन्मा एव चत्वारः पादाः स्थापिता इति बोद्धव्यम् ।

**भाषा—**हीरा १ भा, सोना २ भा, तावा ३ भा, पारा ४ भा, अन्नक ५ भा, लोह ६ भा, इनसवरीमस्में लेकर १-२ पहर मर्दनकर घोंचुआर और सेमलकीछालके रसोंसे ३-३ दिन मर्दनकर सुरासर ६-७ वषड़मिरी दीहुई आतसीशीशीमें भरकर ३ रोजतक बाहुकायन्त्रमें पात्रकरे । स्वाज्ञशीतलोहोनेपर निकालकर सुगलीवेकाडे, सेहुण्ड और आकके दूधसे १-१ रोज मर्दनकर गोलाबनाय घरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरयन्त्रमें १ पहरकी आच देवे । स्वाज्ञशीतलोहोनेपर निकालकर इससे घरावर शकर, पीपल और त्रिजाल मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती खाकर पीपल, सुसली, सुलहड़ी, केनाचरेबीज सब समभागवा चुण्णकर शकर, धी और गायके दूधकसाय २ तोले लेनेसे बहुतसी त्रियोंकेसाथ सम्भोगकरताहुआभी स्थलित नहींहोता । चिरकालतक सेवनकरनेसे दीर्घायु होता है ॥४७१॥

### ४७२ मकरध्वजरसः (चतुर्थ)

लोहं वलिः पारदभस्म सर्वं  
तुल्यं धनं गाधुस्मोचताल्य ।  
चतुर्मेघं गोस्तनिकाश्वगन्धा-  
खर्चैरिकात्मकेति कावरीमि ॥ २०८१ ॥  
एषां लघान्सर्वसमांश्च खण्डं  
स्यात्पञ्चमार्गं सिकताऽध्वाऽपि ।  
सर्वं घराभ्यायजलेन घृष्टं  
वाराब्धश्च द्वा च तथैशुधामि ॥ २०८२ ॥  
कर्मप्रमाणं यदकञ्च खादे-  
दुर्धं ततो विंशतिरुपमानम् ।  
पिबेदलं स्यात्प्रतिशक्तिसक्तौ  
विद्यजनीयं मकरध्वजेन ॥ २०८३ ॥

र श, बाजीवरणे ।

**भाषा—**लोहभस्म, शुद्ध गन्धक और पारदभस्म १-१ तोला, अन्नकभस्म, गोपस, मोचरस, तालमूली, चातुर्जात, बड़ीदाश, असगन्ध, छुहारे, केनाचरेबीज, शतावर ये सब ३-३ माश लेकर सबका घारीक चुण्णकर इसचूर्णसे पन्चगुनी खाद मिलाकर त्रिफलाके कायेसे आठ, और ईपके रससे बारह भावनाएँ देकर १-१ तालकी गोल्या बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गाकर पावभरदूध पीवता बहुतगी त्रियोंके साथ यष्टरमणकरमाफाई और चिकालात्र उचितानुपानकेसाथ सेवन करनेसे समस्तरोगोंसे मुक्त होसकते हैं ॥ ४७२ ॥

### ४७३ मञ्जिष्ठादियोगः

मञ्जिष्ठा प्रापुषं यीजं जीरञ्च शतपुष्पिका ।  
धार्मीफल्ञ्च द्रुदं गन्धकञ्च मन शिला ॥ २०८४ ॥  
एतेषां समभागानां घृणं द्रुमिति नर ।  
अश्वेयन्मृगुना साधे पतितस्याऽऽमरी ध्रुवम् ॥ २०८५ ॥  
र प्र, अमरीरोग ।

**भाषा—**मञ्जीठ, खीरेकीज, जीरा, सोंफ, आंवले, शुद्ध मञ्जिष्ठा, गन्धक और मनसिल सब समभाग लेकर घारीक चुण्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णमञ्जलीमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ माशे मधुकेसाथ खानेसे पथरी गिपेइतैहै ४७३

### ४७४ मणिपर्पटी

वज्रं मरकतं पुष्पमिन्द्रनीलं सुवर्णितम् ।  
रसं द्विगुणगन्धञ्च कज्जलीं कारयेद्बुधः ॥ २०८६ ॥  
द्रावितां लोहपाने तु पर्पटयाकारतां नयेत् ।  
निर्गुण्डी तुलसीशिमूषाचतूररविहज्जिः ॥ २०८७ ॥  
रसं व्योपवराभ्यामुत्सेरपि भावयेत् ।  
आर्द्रकस्य रसेनाऽपि सप्तधा परिभावेत् ॥ २०८८ ॥  
एवं सिद्धो रसो नाम्ना विख्याता मणिपर्पटी ।  
कासश्वासक्षयान्मादपाह्नमौटगतमोघ्रमान् ॥ २०८९ ॥  
सन्निपातज्वराऽजीर्णधातव्याधिमगान्दरान् ।  
नासिकागलज्जाग्रोगानपतन्त्रविसृचिकाः ॥  
शुद्धाप्रमाणतो हन्ति तत्तद्रोगानुपानके ॥ २०९० ॥

र र स, र र को, र क ल र को, नासारोग ।

**भाषा—**हीरा, पारा, पुष्कराज और नीलमकीभस्में, शुद्ध पारा १-१ भाग, शुद्धान्धक २ भाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर बेरकीलकीके त्रियोंकेसाथ लोहेके पात्रमें गल कर भस्मोंको मिलादे । फिर ताजेगोबरपर रखेहुए बेल पत्तेपर डालकर दूसरेकेलेकेपत्तेमें टकर ताजेगोबरसे द्याद स्वाज्ञशीतल होनेपर निकालकर दुबारा कज्जलीबनाय समान तुलसी, सहिचन, घृत, आक, चित्रक, त्रिफला, त्रिफला, केलाकन्द इनके रसोंसे १-१ भावना दूनेकेसाथ अदरससे रसरी ७ भावनाएँ देकर १-१ रत्तीकी गोल्या बनाकर रख छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे काश, खास, क्षय, उन्माद, नपुस्कना, जड़ता, तम, भ्रम, सन्निपात, ज्वर, अजीर्ण, वातव्याधि, भगन्दर, नासिका और गलेकीरोग, अपतन्त्रर, हेजा, इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ४७४

### ४७५ मण्डूरचूर्णम्

शुद्धचूर्णञ्च मण्डूरं गाम्भेयं पाचयेद्दिनम् ।  
यज्जवल्स्या रसेः पेप्यं चित्रमुङ्गलसंयुतम् ॥  
भक्षितं द्रुमात्रञ्च हासाप्यं श्वयधुञ्जयेत् ॥ २०९१ ॥  
र र, य रा, ये वि, शोयाधिकार ।

**मन्त्र—**य, ये वि अन्धकारमण्डूरति नाम, त्रिपुङ्गुना त्रिदस्य स्थानं विज्जान्त्वमारमुपनिमि पाथा हरयन् तत्तद्रोगान् क्षनं न ह्यऽपि हानि ।

**भाषा—**मण्डूरभस्मको एकदिन गाम्भेय पहावर दृष्टाईकर रखे १ रात्र मर्दनकर सुरासर रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ माशही माया १ तोला चित्रकके दूनोंक साथ दोमे दद अमाभ्यसरोष को दूहरताहै ॥ ४७५ ॥

## ४७६ मण्डूपाकः

पुरातनं वर्षशते व्यतीते  
 किट्टं समानीय पलानि चाऽष्टौ ।  
 त्रि.सप्तधेलं ज्वलनेतितमं  
 मूत्रं गवां सितकमथो विचूर्ण्य ॥ २०९२ ॥  
 प्रस्थादमानेन गवां जलेन  
 सार्द्धं ततः पक्वमतीव गाढम् ।  
 भाण्डात्समुत्तार्य कट्टाह्वान्ते  
 संस्थाप्य तापे परिशोषणीयम् ॥ २०९३ ॥  
 मध्ये प्रदेया त्रिफला समाना  
 तस्मिन् कृते सूक्ष्मपरागरूपे ।  
 मूत्रेण पिण्डं विपुले शराधे  
 युग्मे यिनिर्माय चिमोचनीयम् ॥ २०९४ ॥  
 ह्रयं ततः कर्पटमृत्तिकाभ्यां  
 संघेष्ट्य सन्ध्यां छगणैः कृतेऽग्नौ ।  
 यामनयञ्च ज्वलमानग्रही  
 कायेन तेन त्रिफलोद्भवेन ॥ २०९५ ॥  
 संसिच्य संसिच्य तथा विधेयं  
 धूमो यथा गच्छति याति क्षोपम् ।  
 पक्वं समाह्वय विचूर्ण्य मध्ये  
 क्षेप्यं चतुर्धाशयिन्यलोहम् ॥ २०९६ ॥  
 पलकमात्रां त्रिफलाजलेन  
 ततोऽप्यु निष्काप्य चतुर्गुणांशु ।  
 कार्यं समादाय जलादभ्रभागं  
 किट्टं कट्टाहं परिमोचनीयम् ॥ २०९७ ॥  
 पूर्णाकृतं तं परिभावनीयं  
 रसेन भूपस्य दिनं समप्रभं ।  
 मुण्डया कृतिर्ये दिवसे रसेन  
 शार्ङ्गलनीरेण दिने तृतीये ॥ २०९८ ॥  
 पाकादमुष्मात्प्रयभूय पाको  
 मण्डूरनाम्ना प्रथितो धरायाम् ।  
 नागाऽनुजेन प्रकटीरतोऽयं  
 हिताय लोकस्य निर्पोडितस्त्य ॥ २०९९ ॥  
 शोफामपाण्डानलमन्दतायां  
 मगन्द्रे कृच्छ्रमुदासित्तले ।  
 प्लीहाभिगृही मिमिकण्ठरोगे,  
 मण्डूरपाकः कथितो मुनीन्दैः ॥ २१०० ॥  
 र. (मा.) , पाण्डुपिछारे ।

भाषा—यस्यैकम् १०० वर्षपुराणमण्डूर ८ पत्र लेहर  
 बहेहेकोयलोमं गरमर २१ बार गोमूत्रमे गुप्ताकर बातीकपूत्रं  
 कर आपनेर गोमूत्रकेपाग्राहारे और गात्राहोनेर कान्तोहदी  
 कट्टादीमे डालर पूरमे गुगाहे फिर इके बराबर त्रिफलाका-  
 पूर्मागर गोमूत्रमे मर्दकर गोलाकनाय बोलारामे बन्द

कर कपडमिटी देकर ३ पहर कण्डोकी अग्निमे गरमर त्रिफलाके  
 काडेमे घुसावे । इसतह बईवार करे इममे चौपागा लोह  
 मस्य मिलाकर एकपलत्रिफलाके अर्द्धांशेय काडेमे डालरे और  
 अग्निर कटार बराबरो जलावे । फिर अमिलताय, गोरम-  
 सुण्डी, और चित्रकके स्वस्त अथवा हाथोसे १-१ रोज भार-  
 नादेकर मुवाकर रगडोडे । इसमेमे ३ रतीसे ९ रतीतकही-  
 मात्रा सत्तदोषहृदाशुपानहेसाय देनेसे शोफ, आम, पाण्डु,  
 मन्दामि, सूत्रकृच्छ्र, चूल, बवातीर, मगन्दर, ग्रीहा, मिमि  
 और कण्ठरोगोंको यह नष्टकरताहे ॥ ४७६ ॥

## ४७७ मण्डूयोगः (प्रथमः)

शतवर्षं समादाय लोहविट्पाणकं शुभम् ।  
 पलानि पञ्च तथूर्णं तुल्यशौद्रसमन्वितम् ॥ २१०१ ॥  
 भद्रातकाऽऽप्यष्टशतं यिनिक्षिप्य विद्राह्यत ।  
 तद्वक्षमात्रं तत्रेण पीत्वा जीर्णं च तत्कमुक् ॥  
 पयं लभेत सप्ताहात्पाण्डुरोगी सुखं परम् ॥ २१०२ ॥  
 ग. नि., पाण्डुरोग ।

भाषा—सौवर्षका पुराना लोहेकाट्ट ५ पल लेहर कूट  
 डाले फिर इमकी बराबर मधु और भिलवि ८०० गम डालर  
 जलावे । स्वातन्त्र्यीतदोनेर कूटछानर रगडोडे । इसमेरो  
 १-१ तोला छछरेमाय पीकर छछडीपर रहनेसे सातदिनमे  
 पाण्डुरोग नष्टोताहे ॥ ४७७ ॥

## ४७८ मण्डूयोगः (द्वितीयः)

शुद्राह्वयञ्च निर्गुण्डी भृगुधनी विम्विका तथा ।  
 अनेकापांसभृङ्गाहभृङ्गराजविषाणि च ॥ २१०३ ॥  
 तोयं पपेटकं ब्राह्मी मूत्रमयं च कार्यम् ।  
 परण्डोऽतिरिया शुण्डी चित्राऽयामार्गमन्स्यदृक् ॥  
 एकपलमायेण गोमूत्राऽऽदकपाचितम् ।  
 मण्डुरं जीर्णपाकञ्च क्षिपेद्रम्यकरण्डके ॥ २१०४ ॥  
 सुक्तंस्वरमिदं खादेकामलापाण्डुरोषजित ।  
 श्वासकासक्षयहरं मण्डुरं सर्वरोगजिन ॥ २१०५ ॥

र. क. यो., पाण्डुपिछारे ।

भाषा—दोनों मट्टदेया, निर्गुण्डी, भृगुधनी, उदर,  
 सफेदमाक, बराह, भंगरा, कालाभंगरा, समस्तशिर, शुण्डर-  
 वाय, पित्तपत्रा, ब्राह्मी, पालमाक, मरोङ्गरी, कण्ठोरीरी,  
 एण्ड, अतीग, गोंठ, चित्रक, अगमार्ग, मलेठी ये मस १-१  
 पत्र लेहर जवकूटकर ४ तोर गोमूत्रमे चतुर्धासादेय कट्टाहरे,  
 फिर छानकर उगमे १०० वर्षपुरे मद्राका बातीकपूत्रं रगडे ।  
 ओजनेहबन्द ३-३ मात्रा खायेने कान्ता, पाण्डु, गुडन, आम,  
 काय, शय बरह समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहे ॥ ४७८ ॥

४७९ मण्डूयोगः (महाम्) (विजयानन्दमण्डूरम्) ३  
 शुण्डलीचित्रकाऽल्लर्गमूत्रं शुभमुत्तमम् ।  
 विषाया लोहविट्पाण्डु पृथग्द्वारापदे भवेण ॥ २१०६ ॥

गोमूत्रद्रोणसंयुक्तं पचेत्पादावशेषितम् ।  
 भृङ्गराजरसप्रसृतं मोरदस्वरसं तथा ॥ २१०८ ॥  
 हरिद्राऽऽर्द्रकयोश्चापि गोमयस्वरसन्तथा ।  
 ज्यूपणञ्च विडङ्गानि त्रिफला चित्रकं तथा ॥ २१०९ ॥  
 देवदारु हरिद्रं द्वे पिप्पलीमूलमेव च ॥  
 हिङ्गुचव्यवचाः पाठा कालजीरकमेव च ॥ २११० ॥  
 एषां हि कार्पिकान्भागान्चूर्णं कुर्यात्पृथक्पृथक्  
 मण्डूरं पेयितं श्लेष्मणं शुद्धमज्जनसन्निभम् ॥ २१११ ॥  
 एतद्रोमूत्रसंयुक्तं शनैर्मुद्राग्निना पचेत् ।  
 समानं प्रकुर्याद्वदकान् प्रभाते देयतापरः ॥ २११२ ॥  
 उपयुज्यते तत्रेण पाण्डुरोगं भग्नम् ।  
 पञ्चक्रासाहिन्याणामु मुखदन्तरुजो हरेत् ॥ २११३ ॥  
 अर्शोसि कामलां शोफमुदरञ्च विनाशयेत् ।  
 महामण्डूरकं घृतद्वानेयानुमतं शुभम् ॥ २११४ ॥

र. क. यो., वै चि, पाण्डुरोगे ।

**भाषा**—गिलोय, चित्रक, आक और पुनर्नवाकीजड, त्रिफला, पुरानामण्डूर, ये सब १०-१० पल लेकर जवकुत्तचूर्णकर १६ सेर गोमूत्रमें पकावे । चतुर्थांश काढा रहनेपर छानले परन्तु मण्डूरके टुकड़ोंको अलग छादनर रखले । फिर काढेको फड़ाही-में डालकर मण्डूरको सुरेसेसदर घारीकर उसमें डालकर भगरा, लताकज, हल्दी, अदरक और गोबरना १-१ सेर रख, त्रिकटु, विडङ्ग, त्रिफला, चित्रक, देवदारु, दोनोहल्दी, पिपला मूल, हींग, चव्य, बच, पाठा, कालजीरा ये प्रत्येक १-१ तोले लेकर अलग २ चूर्णकर पूर्वकाढेमें डालदे और मन्दप्रति पकाकर जलको जलादे । फिर नीचे उतारकर १-२ दिन मदेनकर शीशोमें रखले अथवा गोमूत्रमें घोटकर ३-३ मादोकी गोलिएा बनाकर रखडोडे । इनमेंसे १-१ गोली श्रात माल इष्टदेवताका स्मरणकर आछकेक्षण लेलेसे पाण्डु, भग्नहृत्, पाचप्रनाके कास, मुखदन्तरोग, कामला, शोफ और उदररोग ये सब नष्टहोतेहैं ॥ ४८० ॥

### ४८० मण्डूरयोगः (चतुर्थः)

मण्डूरस्य रजो लीहं भृङ्गराजरसाऽऽश्लुतम् ।  
 लोहघृष्टं रजो यावत् कृष्णाचूर्णाऽर्द्रसंयुतम् ॥ २११५ ॥  
 द्वाभ्यां तुल्यगुणोपेतं सद्बलप्रहणीहरम् ।  
 आमशलाऽलपित्तघ्नं वलपुष्टधनिकारकम् ॥ २११६ ॥  
 कामलापाण्डुरोगघ्नं पथ्यं पाचनदीपनम् ।  
 मेपजं चामवातेषु हितं तत्रेण केवलम् ॥ २११७ ॥

र. क., श्ले ।

**भाषा**—मण्डूर और लोहमस्य समभाग लेकर मंगरेके स्वरसमे १-२ दिन लोहेके बर्तनमें लोहेवेण्डेसे रगलकर सुखावे । फिर इससे आधा पीपलका चूर्ण और खसनी बराबर पुरानागुड़ मिलाकर आधे आधे तोलेकी गोलिएा बनाकर रखडोडे । इसमेंसे १-१ गोली तक्र बगैरहके साथ देनेसे, सुदृढ-महगी, आम, शूल, अम्लपित्त, यदागि, कामला, पाण्डु,

आमवात इनसरोरोगोंको यह नष्टकरताहै । आमवातमें केवल छाछपर रखना ॥ ४८० ॥

### ४८१ मण्डूरयोगः (पष्ठः)

अतिरक्तं यदाऽर्शोभ्यो निपतत्यतिपीडनात् ।  
 दृश्यते रक्तमत्यन्तं लोहकिर्दं तदाऽऽनयेत् ॥ २११८ ॥  
 गवां मूत्रेण तत्पस्त्या ततस्तत्स्वस्मचूर्णितम् ।  
 अतिसृश्माञ्जसम्पिप्य त्रिफलां कटुकान्विताम् ॥ २११९ ॥  
 क्रिष्टस्याऽर्द्धेन सम्मिश्र्य चूर्णं शर्करया युतम् ।  
 दीयते त्रिदिनाद्भुक्तं रक्तं तिष्ठति नाऽन्यथा ॥ २१२० ॥  
 मुद्राञ्च मसूरान् दीयते पथ्यमोजनम् ।  
 अर्शोसि प्रशमं याति काश्यं सैद्याऽतिवेगतः ॥  
 अत्यन्तं बलमाप्नोति परमां रतिमश्नुते ॥ २१२१ ॥

र. का, अर्शोऽधिकारः ।

**भाषा**—रक्तार्शमें दबजाने या बटजानेकी घजइसे जब अत्यन्तररक्तानेलेगे तब गोमूत्रमें शुद्धकियेहुए मण्डूरका अत्यन्त घारीकचूर्णकर त्रिफला और कटुकीकाचूर्ण मण्डूरसे आधेप्रमाणमें मिलाकर सनकीबराबर शर्करा मिलाकर रखडोडे । इसमेंसे ३-३ मादोरी मात्रा बनयोमीके स्वरस, रसौत अथवा छाछके साथ देनेसे और केवल छाछपर रखनेसे ३ दिनोंमें रक्त बन्द होजा ताहै । मूंग, मसूर खानेको देना । इसके मेवनसे सबतरहके बवासीर और कृशता नष्टहोतीहै ॥ ४८१ ॥

### ४८२ मण्डूरयोगः (सप्तमः)

दग्ध्वाऽक्षकाष्टे मेलमापसन्तु  
 गोमूत्रनिर्वापितमष्टवारान् ।  
 विषुष्यै लीढं मधुना चिरेण  
 कुम्भमह्वयं पाण्डुगदं निहन्ति ॥ २१२२ ॥  
 सु स, यो. म, वै चि, र. मा, ग नि, नि. र, आ प्र,  
 कुम्भकामलायाम् ।

दि०—यो म, च द, एतयो “मण्डूर क्षापित पर्वां लोहना वा शुद्धं तु । भलवन्मुच्यते क्षालयतिणाममुद्रवात् ।” इति पाठो दृश्यते सोऽस्यैवयोगस्य प्रयोजोऽस्ति । योगमहागोपीवर्गमण्डूरस्याऽन्यत्रै वान्तर्भावः ।

**भाषा**—सौवर्षमे पुराने मण्डूरको बहेडेकीलकड़ीके कोय-लोमें लालकरके आठवार गोमूत्रमें घुसाकर घारीक चूर्णकर रख-डोडे । इसमेंसे १-१ माथा मधुसेमाथ चाटनेसे बहुतशीघ्र कुम्भ कामला और पाण्डुरोगको यह दूरकरताहै ॥ ४८२ ॥

### ४८३ मण्डूरयोगः (अष्टमः)

मण्डूरस्यष्टीमधुपिप्लीना-  
 मेलसितापनजगोस्तनीनाम् ।  
 चूर्णं समांशं मधुद्वययुक्तं-  
 स्त्रीणत्वजीर्णजनदाहरन्तु ॥ २१२३ ॥  
 रसायनसं., जीर्णज्वरादौ ।

**भाषा**—मण्डूरमस्य, सुलट्टी, पीपल, इलायची, शरट, पत्रज, द्राक्ष, सब समभाग लेकर घारीकचूर्णकर रखडोडे । इसमेंसे

३-३ मासे मधु और दूधकेसाय सेवनकरनेसे श्रुता, शीर्ण  
ज्वर और दाह इनको यह नष्टकरताहै ॥ ४८३ ॥

### ४८४ मण्डूररसायनम्

मण्डूरं शाम्बुकं भस्म गन्धं खण्डघृतान्वितम् ।  
रोगान्दहन्ति पलं धत्ते शूलघ्नं दीपने परम् ॥ २१२४ ॥  
र सि, शूलाऽधिकारे ।

भाषा—मण्डूर और शोषाकीभस्म, शुद्धगन्धक सय सम-  
भाग मिलाकर घोटकर रसाङ्गे । इसमेंसे १-१ मासा लेकर  
१-१ तोले पी और दाहकेसाय मिलाकरखानेसे यह दूध और  
मन्दाग्निसे नष्टकर बलको उत्पन्नकरताहै ॥ ४८४ ॥

### ४८५ मण्डूरलवणम्

हृत्पादमिष्यर्णं मलमायसन्तु  
सूत्रेऽभिपिच्छेद्दृष्ट्वा गद्याञ्च ।  
तत्रैव सिन्धुत्व्यसमं विपाच्यं  
निरुद्धमञ्च धिर्भातकाञ्च ॥ २१२५ ॥  
तत्रेण पीतं मधुनाऽथवाऽपि  
मण्डूरमिश्रं लघणं प्रयुक्तम् ।  
पाण्डुरामयिभ्यो हितमेतदस्मा-  
त्पाण्डुरामयघ्नं नहि निश्चिद्वन्यत् ॥ २१२६ ॥

नि र, र (मा), र यो त, चि क, यो र, टो, वै चि, सु  
स., पाण्डुरोगे ।

१०-सुधुन मिश्रुद्धवनिर्वापितगाम्बू मण्डूरस्य निर्वर्णो विहित,  
अथ तु मण्डूरनिर्वापिते गाम्बू मिश्रुद्धवनिर्वापे इति निषेध, तत्र  
सुधुनपदस्यैव भद्रनाम प्रतिभाति क्षारयुक्तगाम्बू निर्वर्ण मण्डूरस्य  
शीघ्र मर्मभावात् । चिकित्साप्रतिपाद्या विधीनलवणमिति नाम  
स्थापितम् ।

भाषा—सौ वर्षके पुराने मण्डूरको बहेड़ेकेबोयलोंमें कालकर  
गायकेमूनमें घुंघोनेतक कुंठावे । फिर इसकी बराबर सेंपा  
नमकमिलाय सबसे बौगुना गोमूत्र डालकर इन्हींमें बन्दकर  
बहेड़ेकी लकड़ीसे ४ पहरेकी अग्निदेकर पकावे । स्वादहीन  
होनेपर निकालकर रखाओगे । इसमेंसे ३-३ मासा छाछ अथवा  
मधुकेसाय देनेसे पाण्डुरोग नष्टहोताहै । पाण्डुरोगियोंकेलिसे  
इससे उत्तम अन्य औषधि नहींहै ॥ ४८५ ॥

### ४८६ मण्डूरवटकः (प्रथमः)

न्यूपणं त्रिफलामुस्तं विडङ्गं चञ्चलचिन्तौ ।  
दार्ढ्यं त्वद्वाक्षिकोधातुं धीर्गन्धकं देवदाक च ॥ २१२७ ॥  
पपा द्विपलिकान्माषाशूर्णं हृत्पादं पुष्यकपृथक् ।  
मण्डूरं द्विगुणं चूर्णाच्चतुर्दमजनसप्तमम् ॥ २१२८ ॥  
सूत्रे चाऽष्टगुणे पक्त्वा तस्मिन्स्तु प्रक्षिपेत्ततः ।  
उदुम्बरसमान्युर्वाट्टकास्तान्यथाऽग्नि च ॥ २१२९ ॥  
उपयुज्जीत तत्रेण सात्त्व्यं जीर्णं च भोजयेत् ।  
मण्डूरवटका ह्येते प्राणदा पाण्डुरोगिणाम् ॥ २१३० ॥

कुष्ठान्यजरकं शोफमृस्तम्भकफामयान् ।  
असौक्षि कामलां मेहं प्लीहानं नाशयन्ति च ॥ २१३१ ॥

च स, ४ मा, र का, घ, भे र, रसघागर, भा प्र, टो, वै  
चि, र क यो, च द, ४ यो त, ग नि चि र, र प्र, रसा-  
यनल, अ ह, नि र, र ग दी, वै द, र को, अ स, र का,  
ध रा, र म मा, र र स, चि सा, र र, र स, यो र, वै,  
र, र को, र सु, र र्थ, ग नि, वै चि, चि र भ, वै क, यो  
म, चि क, पाण्डुधिकारे ।

१०-अथ मण्डूरवटकमण्डूरवटक मण्डूरवटक इत्यमण्डूर,  
श्वरणादिमण्डूर इति नामानि शृतीतानि । तत्र मण्डूरवटक, मण्डूरस्य  
ज्वटक, श्वरणादिमण्डूरेषु मण्डूर समस्तद्रव्याद् दिगुण, इत्यमण्डूर  
च समम् । मण्डूरके माक्षिगन्ध योगादिति । इत्यमण्डूरमण्डूरज्वट-  
कयोर्मात्रिक न इत्यने, माक्षिगन्धोपासनस्य प्रयोजन न प्रतिभाति ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोषा, विडङ्ग, चञ्चल,  
चित्रक, दाहहृत्वी, तज, सोनामासी, पिपलासूल, देवदाक, य  
सब २-२ पल लेकर सबका अलग २ चूर्णकरकरके । फिर  
एकदम सुरमाके सरवा पीसेहुए सबसे द्विगुणमण्डूरको अठगुने  
गोमूत्रमें पकाकर ऊपरके चूर्णको डाल १-१ तोलेके गोले  
बनाकर रखाओगे । इसमेंसे १-१ गोला छाछकेसाय देनेसे और  
जीर्णहोनेपर सात्त्व्यभोजनकरानेसे पाण्डु, हृष्ट, अजीर्ण, शोथ,  
ऊरुस्त्वम्भ, कफविकार, बवासीर, कामला, प्रमेह और प्लीहा  
इनसबकी ये नष्टरहतेहैं ॥ ४८६ ॥

### ४८७ मण्डूरवटकः (द्वितीयः)

लोहस्य किट्टं त्रिफलानिपिकं  
पुटेश्च पक्षं त्रिफलोदकेन ।  
कटुश्रेयं चान्यफलत्रयञ्च  
तत्तुल्यमानञ्च शुद्धं पुराणम् ॥ २१३२ ॥  
शोथश्रेयञ्च द्विगुणं प्रमृष्ट  
हृत्पातुतोयेन विपाचयेद्य  
पिण्डत्वमायाति हि यावदेव  
तत्तुल्यमासं विनिवेद्य भाण्डे ॥ २१३३ ॥  
तताऽश्मामनं परिपेयणीयं  
निहन्ति शूलं परिणामजञ्च ।  
दुर्नामरोगञ्च कफञ्च मेहं  
श्वत्सुश्च कारं ग्रहणीं निहन्ति ॥ २१३४ ॥  
र दी, पाण्डुरोगे ।

भाषा—सौवर्षके पुराने मण्डूरको बहेड़ेके बोयलोंमें तपाकर  
त्रिफलाके काटेमें कुंठातुलाकर चूर्णकरके त्रिफलाके काटेमें घोट  
कर जबतकभस्म न होपाय तबतक पुटदे, फिर त्रिकटु, चञ्चल,  
त्रिफला समभाग, इनसबकी बराबर मण्डूरभस्म और पुरानागुड़  
डालकर सबसे दूने गोमूत्र और चित्रककेकाथमें डालकर पकावे  
जब गाढहोजाय तब उतारकर बिकनेवतनेमें रखओगे । एक  
महीनेके बाद इसमेंसे १-१ तोला खानेसे परिणामशूल,  
बवासीर, कफप्रमेह, श्वत्स, कास, और सङ्गर्हणी येतक  
नष्टहोतेहैं ॥ ४८७ ॥

## ४८८ मण्डूरवटी

मण्डूरं चूर्णितं कृत्वा मुस्ताखदिरमूलकम् ॥  
 कणा शुण्ठी यवशरं पञ्चानां चूर्णितं समम् ॥२१३०॥  
 चूर्णतुल्यन्तु मण्डूरं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ।  
 तत्तुल्ये च गवां क्षीरे पचन्मूत्रक्षिणा शनैः ॥ २१३६ ॥  
 पिण्डितं कोलमात्रं तद्भक्ष्येच्छलनुद्भवेत् ।  
 प्रातर्मध्यन्दिने रात्रौ भक्ष्येद्विद्विकात्रयम् ॥ २१३७ ॥  
 यो. म., शुलाडधिकारे ।

भाषा—नागरमोथा, खैरकीजड़, पीपल, मोंठ, यवघार,  
 ये सब समभाग, मण्डूरमूल समके बराबर लेकर सबका बारीक-  
 चूर्णकर अठगुने गोमूत्रमें पकावे । पनहोजानेपर बराबरके  
 दूधमें जलकरकरावे । जब गोलीकननेलायक होजाय तब ६-६  
 माहोकी गोलियां बनाकर रखलोहे । इनमेंसे १-१ गोली दुग्ध,  
 शाम और मध्याह्नमें पात्रसे समस्तशूल नष्टहोते ॥ ४८८ ॥

## ४८९ मण्डूराद्यबलेहः

मण्डूरलोहाऽग्निविडङ्गपथ्या  
 व्योषांशकः सर्षपमानताप्यः ।

मूत्रे शृतोऽयं मधुनाऽपलेहो  
 पाण्ड्यामयं हस्त्यचिरेण घोरम् ॥ २१३८ ॥

ग. नि., यो. म., तु सं., पाण्डुरोगे ।

भाषा—मण्डूर और लोहमूल, चित्रकमूल, विडङ्ग, हों,  
 त्रिकटु सब समभाग, सोनामाखी सबकी बराबर लेकर सबका  
 बारीक चूर्णकर अठगुने गोमूत्रमें पकाकर अबलेह तैयार करे ।  
 इसमेंसे ३-३ माहोकी गोलियां बनाकर उचितानुधान्वेसोय  
 लेनेसे यह बहुतहीशीघ्र पाण्डुरोगको नष्टकरताहै ॥ ४८९ ॥

## ४९० मण्डूरारिष्टम्

मण्डूरस्य तु शुद्धस्य तुलाऽर्द्धं परिकल्पितम् ।  
 लहृहोहस्य पञ्चापि तिलोत्सेधप्रमाणतः ॥ २१३९ ॥  
 गुडाजीर्णांशु पञ्चाशत्कोलप्रस्थत्रयं तथा ।  
 निकुम्भचित्रकाभ्यां च पले द्वे द्वे सुचूर्णिते ॥२१४०॥  
 पिप्पलीनां विडङ्गानां कुडवं कुडवं पृथक् ।  
 धींधाऽपि त्रिकलाप्रस्थान् जलद्रोणे विपाचयेत् ॥२१४१॥  
 अर्द्धमासस्थितो धान्ये पेयोऽरिष्टः प्रमाणतः ।  
 द्रोपानुमयतो न्यस्य पाण्डुरोगं नियच्छति ॥२१४२॥  
 मिमीनशांसि कुष्ठञ्च कासभ्यासरुफामयान् ।  
 मण्डूरारिष्टको होपः शोफपाण्ड्यामयापहः ॥२१४३॥  
 ग नि., यो र., शोफपाण्ड्यामयं ।

भाषा—शुद्धमण्डूर, लोहके पत्र अथवा बारीकचूर्ण और  
 तुलापुष्ट ५०-५० पल, जहलीवेर ३ सेर, दन्तीमूल और  
 चिन्हा ३-३ पल, पीपल और विडङ्ग ४-४ पल,  
 त्रिकला ३ सेर सेर १६ भेर अर्द्ध पकावे । चतुर्थांश जल-  
 जानेपर उताहर चिन्हेकनने पन्धरके अनाजकी राखिसे

दगादे । १५ दिवगद यह अरिष्ट तैयार होजायगा । इसमेंसे  
 १-१ अथवा २-२ तोले सुबहसाम अथवा भोजनकेबाद पीनेमें  
 पाण्ड, किमि, अर्ध, दुष्ट, कास, श्वास, कफरोग और मूत्रन  
 ये सब नष्टहोतेहैं ॥ ४९० ॥

## ४९१ मद करीगुटिका

त्वक् पत्रं केशज्वेला चन्द्रमा जातिपत्रिका ।  
 कणा गोक्षुरकं जातीफलञ्चाऽध्रकवङ्गकौ ॥ २१४४ ॥  
 लोहचूर्णन्तु रङ्गके प्रत्येकं कारयेत्तुधः ।  
 चतुःपलं मधु प्रोक्तं तथा चाऽन्यानि निःक्षिपेत् ॥२१४५॥  
 आकारकरभक्ष्ये रोचनां कपिकुन्तुजम् ।  
 गुग्गुला मस्तङ्गिकश्चैव मुशली मरिचानि च ॥ २१४६ ॥  
 लवङ्गसहितं होतस्त्रयं रङ्गकसममितम् ।  
 भृङ्गा सार्धपला प्रोक्ता सम्यग्धीताऽर्द्धमर्जिता ॥ २१४७ ॥  
 सिता पञ्चपला प्रोक्ता कालपेया प्रकीर्तिता ।  
 सर्वेषाञ्च सुजात्यानां मूक्षमधुर्णं विधाय च ॥ २१४८ ॥  
 मधुर्णं कारयेत्तेषु सर्वं चूर्णं विनिःक्षिपेत् ।  
 भर्जयेद्विजपापत्रं यदा गन्धः प्रजापयेत् ॥ २१४९ ॥  
 शतपनीयपानीयं जातीतैलं समं वदेत् ।  
 मानमात्रं प्रदातव्यं भृङ्गां सम्मर्दयेत्ततः ॥ २१५० ॥  
 लेहे च द्रव्यं देयं पुनश्चूर्णं सितां ततः ।  
 कष्टरूपागनाभिभ्यां प्रतिपाद्यं प्रदापयेत् ॥ २१५१ ॥  
 पतन्मदरुरी रम्या विशेषाद्वातुवर्जिनी ।  
 कामिनां कामदा नित्यं विशेषाद्वातुवर्जिनी ॥ २१५२ ॥

र. क., वाजीकरणे

भाषा—तज, पनज, नापेवर, इलायची, कचूर, जाविनी,  
 पीपल, योखल, जायफल, अन्नक, वङ्ग और लोहमूल ४-४  
 माहो, मधु ४ पल, अकलफरा, मोरोवन, केरावके बीज, बहु  
 लका मोह, मस्तगी, मुमली, मरिच, लोंग १-१ टङ्क, पोर  
 अपभुनी भाग १॥ पल, कालरीमिथी ५ पल लेकर सबका बर  
 दधान चूर्णकरे । मोहको धोमें मन्द आंचपर सेरकरचूर्णकरे ।  
 मस्तगीको बपडेमें पाप अत्युष्णतामेंसे २-२ मोटे देकर निहा-  
 लकर चूर्णकरके मिलादे । फिर सब दवाओंके बराबर गुलाबजल  
 और जायफल या जाविनी का तैलके । पहिले मिथी, दहद  
 और गुलाबजलकी देतावरकी चापानीकर और शुद्धविजानुआ  
 त्रिगरिक १ टंक बारीकचूर्णकर मिलादे । इसकेबाद तैलको  
 मिलाकर अन्य औषधोंको मिलादेवे । टङ्काहोनेपर शुद्धर  
 और कन्तूरी ३-३ माहो मिलाकर ३-३ माहोकी गोलियें  
 बनाकर रखलोहे । इनमेंसे १-१ गोली दूध और शरदेमाष  
 लेनेसे श्वास, कास, सङ्घर्षा, मन्दाग्नि, घानुशीघ्रता, उन्माद,  
 नपुनकत्व येसब नष्टहोतहैं । रतिगमयसे २ पण्डे पहिले  
 लेकर दूसरीनिस सफेदमन्मन और बीयादि होतहैं ।  
 यदि गोली स्वप्नमात्रमें हो तो उपवक दूधके गिलाय करे  
 बीज न गावे ॥ ४९१ ॥

## ४९२ मदनकामदेवरासः ( प्रथम )

अथाऽन्य सम्प्रक्ष्यामि कामवृद्धिकर परम् ।  
 रागराजप्रशमन वलपुष्पिन्निधनम् ॥ २१०३ ॥  
 अक्षीणशुक्रकरण वाजीकरणमुत्तमम् ।  
 प्रागुक्तेन विधानेन दशधा पातित रसम् ॥ २१०४ ॥  
 स्वेदितं प्राप्तयुक्तयेव तस्य चात्पादयेन्मुखम् ।  
 खट्वे लोहमय स्थाण्यो रसेन्द्रा यद्विज्ञापिते ॥ २१०५ ॥  
 तत्तेन राहजेनेव मर्दकन प्रमदयेत् ।  
 सिंही नियासवागेन तथा केचुलिते समम् ॥ २१०६ ॥  
 एकविंशतिन यावद्द्वारात्ममतद्रित ।  
 खल्व तस सदा कार्यं क्षीते दापस्य दर्शनात् ॥ २१०७ ॥  
 सर्वदोष्णा रस कार्पा रसाद्रुणमर्भापुमा ।  
 एव जातमुखे सृते धीजं द्योतरुलाशकम् ॥ २१०८ ॥  
 सौवर्णे स्वेदयेद्दालायेन च विदिनं रसम् ।  
 पटुश्चापस्त्यज्जालित पनेऽथ भूर्जक ॥ २१०९ ॥  
 रस दत्त्वा यद्विदद्याद् दृढं यत्नं चतु पुन्यम् ।  
 सुधेण पोष्ट्वा यन्ना दोलापाञ्च निवशयेत् ॥ २११० ॥  
 अम्लकाधिकयागेन स्वेदयेद्विरसप्रथम् ।  
 मक्षारमृजत्र पाऽथ चतुर्थऽह्नि समुद्धरत् ॥ २१११ ॥  
 प्राप्तस्तु जार्यते सर्वाऽन्यथ स्वेदनमर्दने ।  
 पूर्ववद्विदधीनाऽन यावद्वास सुनायति ॥ २११२ ॥  
 तत सूत निवेदयाऽथ यत्रे श्माधरसञ्जके ।  
 पूर्वाक्तयुक्त्या दैत्येऽत्र जारयन् पटुण युध ॥ २११३ ॥  
 सूत मर्दयेत्तत्रे काकमागीरले युध ।  
 तारपीज पादभाग दद्या किजुलजे रसे ॥ २११४ ॥  
 यावत्पिष्टि भेषेत्सुते मर्दयेत्तमनारतम् ।  
 सवाताया तथा पिष्ट्या दिनपञ्चममर्दनम् ॥ २११५ ॥  
 कार्पाकिञ्चुलजे नारिस्तत कुर्वीत गालकम् ।  
 कार्पाकिञ्चुलकान् पिष्ट्वा पात्रं सम्यग् प्रवेष्टयेत् ॥ २११६ ॥  
 विन्यसेद्दालार्थं मृषामये तद्वज्रराधनम् ।  
 एत्स्या भूधर्यत्रस्या मृषा सम्पाचयेत्तत ॥ २११७ ॥  
 फरीपाऽग्निं तता दद्यात्पिदिन स्वेदमाचरत् ।  
 उद्धृत्य मृषा तत्राद्रसे त्र तापप्रक ॥ २११८ ॥  
 तत्रराजस्य मध्यं त रसेन्द्रं विनिधशयेत् ।  
 तत सूतं प्रयुज्जीत तत्रराजेन संयुतम् ॥ २११९ ॥  
 विष्णुष्य पयसाऽहुन्त्या गर्भिण्या यल्लक्षयम् ।  
 अनुपानञ्च तदूर्ध्वं पिष्टेच्छर्करया समम् ॥ २१२० ॥  
 अम्लं ययैश्च सक्षार लयाञ्च विद्वहि यत ।  
 कटुकञ्च कषायञ्च सर्वमय विषयैवम् ॥ २१२१ ॥  
 भुञ्जत मधुर शोथल्लासय कटुगीकलम् ।  
 घालस्य नारिकेलस्य मञ्जान सम्प्रभाषयेत् ॥ २१२२ ॥  
 रण्डयुत नारिकेलजलं पयश्च पानसम् ।  
 पत्रं पत्रमप्य वा रसयाचविट्टिद्वय ॥ २१२३ ॥

इत्येवमादि यद्वर्ष्य तसर्वं भक्षयेद्बुध ।  
 एव ससेव्यमानस्य रसेन्द्रस्य गुणाऽदृष्टु ॥ २१२४ ॥  
 क्षयरोग क्षय याति नष्टशुक्रश्च शुभ्रवान् ।  
 अक्षीतिर्यपेक्षयो वा जराजजरिताऽपि वा ॥ २१२५ ॥  
 ऊर्ध्वलिङ्ग सदा तिष्ठेद्द्रावयेद्द्विनिताशतम् ।  
 अप्रहीणमला ग्लानिर्जित सम्प्रहर्षवान् ॥ २१२६ ॥  
 अस्याऽनुपान वक्ष्यामि शास्त्राक्तं कामवर्धनम् ।  
 बहुद्वय शर्करया स्वीकृत्याऽऽदी रसं तत ॥ २१२७ ॥  
 विदारीकन्दचूर्णञ्च मधुयणं च मापकम् ।  
 तत्रराजयुतानेतान् गोदुग्धेन सम पिष्टेत् ॥ २१२८ ॥  
 अक्षीणरेता जायेत यदि स्त्रीणा शतं प्रजेत् ।  
 शताचरीगोभुष्काप्रिस्तुप मापचूर्णकम् ॥ २१२९ ॥  
 निस्तुपास्तु तिलाम्बण्डं सुपर्णेशुरस तथा ।  
 रानो पिष्टेच्च सूतेन्द्रमेतैर्द्रव्यै सम तत ॥ २१३० ॥  
 कर्पूरं छेदता दत्त्वा स स्वात्स्नीशतकामुक ।  
 मध्याच्ययुक्तं स्वरसे भावितञ्च निद्वारिजम् ॥ २१३१ ॥  
 शतश कपिरुच्छ्रजे यजिञ्च समभागिकम् ।  
 समशर्करया युक्त गादुग्धेन सम पिष्टेत् ॥ २१३२ ॥  
 अक्षीणरेता स पुमान् जायते नाऽत्र संशय ।  
 मातुऽनुहस्य रीजजनि गोवृषेण विभाजयेत् ॥ २१३३ ॥  
 एकविंशतिरास्तु विट्पण्याऽथ रत्नेभ्यश्च ।  
 विनिष्पिष्य मुखाण्णन गोदुग्धेन समं पिष्टेत् ॥ २१३४ ॥  
 एकविंशतिन यावज्जायत पूर्णवीर्यवान् ।  
 ज्ञापये नाऽत्र सद्वा रसेन्द्रस्य प्रभावत ॥ २१३५ ॥  
 सूतेन्द्रं सयते यस्तु न स्वादस्याऽहनाशनम् ।  
 न कामणे महाबाधे ररापैरुपगीह्यते ॥ २१३६ ॥  
 एव सूतरर प्राक्त शुभ्रवृद्धिकर पर ।  
 मन्दनाय कामदेवो रस परमदुर्लभ ॥ २१३७ ॥  
 तालं वाजीकरणे ।

भाषा—अथप्रातुगयोगरहित भयरा निगिरिका निकान्  
 हुआ पारा लेकर हन्ती ईं यूरुस सत्र समभगल्लर पार ।  
 पात्राणि इगमयुक्तयेव मित्राकर विचार कारुते राग १-१  
 रोज मनकर मुगाकर इमन्त्यलो क्त तियर् अयरा भय  
 पातनकर । ए । इगवारकरके कात्राणि ४ पदर इतनकर गइक  
 तमत्तन्वे रगकर इगव वरावक बैनुओंको हाइकर १-२  
 पदर पुनमनकर अष्टयार्के राग २१ रोज दिनतल मन  
 कर बाचमे राग उठा न हो । २२ वे राग उज्ज्वलनरन  
 अथवा रागकाकात धोकर सागररत्न । इगमे पादार्थ गानेके  
 वल्लरक पादा धोदा तमत्तन्वे हातई म नर करररर  
 मन्म एकावशोकादया विग गिपनमक हाता मुदाग अ  
 यन्नात नादयाम ५ दूज और आहता रूप मित्राकर ने  
 विट्पुण वात्प्राजजना ररर उदाग ४ ए मन्मक  
 काइमे मृजयदा राग ऐकदय कनय गिराधी भयरा  
 धारपुन शायन रीजदिन ४ न नर । २३ दिन निगिरा

तोलन देखे, प्रास समस्त जीर्ण होययाहो तो फिर इसीतरह स्वेदन और मर्दनकरे । जब प्रासजीर्ण होजाय और पारेका असली वजन आजाय तब मूषरयन्त्रमें रखन पटुषान्धक जाणकरे । फिर सकोयके रससे तप्तखल्वमें एकरोज मर्दनकर अष्टमाश चादोकेवर्क मिलाकर १-२ पहर मर्दनकर वैजुओंका रस डालकर मर्दनकरे । पिष्टीरूप होजायेपर काष्ठ और वैजुओंके रससे ५-५ दिन मर्दनकर गोलाबनाय काष्ठ और वैजुओंके ल्हादेमें गोलेको रखकर मूषामें रखदे और मुहबन्दकर मूषरयन्त्रमें रखन करीपकी अभिसे तीनदिन स्वेदनकरे । स्वाह-शीतलहोनेपर निकालकर रसछोड़े । इसमेंसे ६-६ रत्ती की मात्रा चादोकेवर्क और तीक्ष्णकी गोली बनाय उसके अन्दर क्वलितकर पावे । तीक्ष्णकेमात्र ६ रत्ती मिलाकर छोटीदूधीके रसकेसाथ गमिणीगायत्री देवे, जब उसत्रावका पैदाहो तब उसका शहरमिला हुआ दूध अनुपानमें रखे । अम्ब, धार, लवण, विदाहि, कटु, कषाय इनसबका परित्यागकरे, मधुरान्खावे । केलेके फलका शार, कबे नारियलकी गिरी और शकर मिलाहुआ नारियलका जल, केलेका पत्र या कषाफल इत्यादि जो जो वृथ पदार्थहैं उनका सेवनकरे । इसप्रयोगसे शय, मृदुगुणना येसब मृदुहोकर अस्मीवर्षका जर्जरित शुद्धाभी फिरसे शुक्रपूणहोकर ग्लानिरहितहोकर बहुतसीस्त्रियोंकसाथ उत्साहपूर्वक रमणरमजाहे । शास्त्रोक्त कामवर्धन इसका अनुपान इसतरहहै कि ६-६ रत्ती इसरसको शरके साथ राखर बिदारी, मुलट्टी और तीक्ष्ण ये प्रत्येक १-१ माथा गोदुग्धपरेसाय पीनसे अशीगण्डुक होसाहे अथवा शतावर, गोपल, शुलीहुई उडरकीदाल, तिल, खाड, शुद्धकपूर, पीली ईपकारस इत्येकमात्र रातमें इसरसराजको लेभेसे अशीगण्डुको-ताहै । अथवा बिदारीकन्दके चूणको बिदारीकन्द स्वरससे कई-बार भावितकर बराबरका बेजापके बीजोंका चूण डालन दोनोंकी बराबर शकर मिलावे । इससेसाथ रसराजको देकर गोदुग्ध पिलावे । अथवा मिमोरेके बीजोंको २१ दिनतक गोमूत्रमें भिगोकर सुखाकर चूर्णकरले । इसकेसाथ रसकोलेकर ऊपर गोदुग्धपीनेसे २१ दिनमें बीजसे पूर्णहोनाताहै इसके सेवन करनेसे मुखाभा और रोग आक्रमण नहीं करते ॥ ८९० ॥

### ४९३ मदनकामदेवरसः (द्वितीयः)

परण्डट्टह्वयेराऽमुकाकामाचीद्रवे रसः ।  
प्रत्येकमर्दनाच्छुद्धो जायते द्वापवर्जितः ॥ २६८८ ॥  
श्वेताऽङ्गिकलकमुषायां सप्तहत्यांऽथ शोषयेत् ।  
क्षिप्या मृतं साऽग्निचूर्णं मूषायामेयमेव हि ॥ २६८९ ॥  
पवं शुद्धं रसं कृत्वा समगन्धेन योजयेत् ।  
काकमाच्याः शुभेस्तोत्रे मर्दयित्वा द्वयं शनैः ॥ २६९० ॥  
क्षिप्या काचपट्टीमध्ये मृदा कर्पटसज्जया ।  
काचपट्टीमुखं गत्वा दत्त्वा यत्रेऽथ चक्षिकाम् २६९१ ॥  
मृत्तिकाकर्पटं यद्वा काचपात्रमपि मुखम् ।  
लिम्पेद्रसमृदा गाढमद्भुतद्वयमुत्थितम् ॥ २६९२ ॥

शोषयित्वा क्षिपेद्वाण्डे चालुकामिः प्रचूरिते ।  
अधोमुखं काचपात्रं पचेद्यामत्रयं शनैः ॥ २६९३ ॥  
स्वाहशीतं समादाय योजयेद्रोगशान्तये ।  
गुञ्जाद्वयं क्रमेणैव पर्णखण्डेन संयुतम् ॥ २६९४ ॥  
शतावरी गोक्षुरश्च बीजश्च कपिरुच्छुजम् ।  
गाङ्गेरुकी चातिशया बीजमिधुरकोद्भयम् ॥ २६९५ ॥  
अनुपानं पिवेद्दुग्धमस्य चूर्णस्य कर्षकम् ।  
सतिलं भक्षयेच्चित्तं कादलं शर्करान्वितम् ॥ २६९६ ॥  
हृद्यं वृष्यं श्रमहरं रसं मांसं पयो घृतम् ।  
शाल्यञ्च मापगोधर्मं पायसं सेवयेद्विदि ॥ २६९७ ॥  
यत्किञ्चिच्छीतलं द्रव्यं तत्सर्वमविचारतः ।  
अत्र देयं प्रयत्नेन रसवीर्यविवृद्धये ॥  
अनेनाऽऽशीतिवर्षांऽपि युवेयं सुरतं चरेत् ॥ २६९८ ॥  
र. क. रसायने ।

मापा—एण्डकीजड, अदरक और मनोयके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर शुद्धकियेहुए पारेको लेनर संकेदमूर्तवादी चौथी जड़केरसकी सुपाबनाय पारेकी बराबर चित्रकमूलका वारीकजुर्ण बीजमें डालकर उसपर पारेको रस इसी जूणसे दबा कर कल्कमें सुपाका मुह बन्दकरदे, और १-२ कपडमिठी देकर सुखावे । फिर जलबीरुण्डोकी निर्धूम अभिपर छोटपौड-कर सुखावे । जब कपडमिठी जलजाय तब निकालकर नीचे रखले । स्वातशीतल होनेपर धीरेसे पारेको निकालकर पूर्ववत् द्वौमें मर्दनकर मूषामें बन्दकर अभिपर सुखावे । ऐसे ७ बार सुखाकर बराबरकी गन्धर मिलाकर मीलजगनरजलीकर सकोयके रससे १-२ रोज मर्दनकर आतशीशीशीमें भर ईट अथवा खडियामिमीकी डाट लगाकर ३-४ कपडमिठी समस्तपर ल्या-कर ईट डालकर कूटीहुई मिठीका दो अहुल मोटा लेंप बडाकर धूममें सुखावे । गूखलेपर अधोमुख धालुगयन्त्रमें राख १ पहरकी मध्यम अभिसे पचावे । स्वातशीतल होनेपर निरात कर रसछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती पकेपानमें रखनर सिलावे और ऊपरसे शतावर, गोपल, बेचांचेबीज, गंगन ( सुकृति-की ), कहुई, तालमपाना रात्र समभाग लेनर पारीसूर्ण कर, इसमेंसे १ तोला दूधरेसाथ अनुपानने तारेपर देना चाहिये । तिल और शारकेसाथ परायेला हमेसा पिलावे । इससे हृदय और धातुओंकी निर्बलता, ग्लानि, राजयन्त्र, बन्ध्यत्व, न्युसकत्व प्रवृत्ति अवाध्य रोग दूरहोवे । रात्रिमें सम्भोगसे पहिले सेवन करनेसे यथेष्ट स्तम्भन होताहै । दमन मातरण, मांग, दूध, घी, उत्तमबाणल, अङ्गद, गद्द, रीतर तथा जो कुछभी छटी चीजें हैं सबका प्रयोगकरनेसे रसवीर्यकी रुद्धि होताहै । इससे हमेशा सेवनसे ८० वर्षका शुद्धाभी जवान की तरह रमि करनचाहि ॥ ८८२ ॥

### ४९४ मदनकामदेवरसः

प्रत्येकं चतुरंशकी रसयली तारं मृतं चांशतः ।  
तावन्नेम तनश्च शास्त्रान्तरसात्तत्पर्यमामर्दयेन ।



काकोल्याऽथ सुदुग्धयाऽप्यपरया त्रिखिचिदायांशता-  
वर्षा त्रिखिरयो विभाव्य सकलं काचस्थं कृप्यां क्षिपेत्

पक्वं यामचतुर्थं सिरुतिका-

यन्त्रात्स्वतः शीतलं,

प्रोद्धृत्याऽत्र विभावया वितनुया-

त्सताऽथ वारान् क्रमात् ।

रक्तादुत्पलतः क्षुरेण च शता-

वर्षां विदार्या रसैः,

तालीजातरसेन नागवलय

पश्चाद्रसैश्चात्मलैः ॥ २२०० ॥

पन्नकन्दरसतोऽथ गोस्तनी-

शर्करेश्चुरसतोऽथगन्धया ।

आमलक्युदककोलकन्दतो

हस्तिरुन्दरसतश्च भाषयेत् ॥ २२०१ ॥

पृथगेभिरौषधगणैर्विभाषितो

रस एष सिद्धिमुपयाति रोगिणाम् ।

अनुपगदो मदनकामदेव इत्य-

भिविश्रुतो रतिविशेषफलदायकः ॥ २२०२ ॥

गुञ्जाचतुष्टयमितं सितया समेतं

द्राक्षान्वितं समुपयुज्य कलाविलासी ।

क्षीरेण चक्षुकरसेन कृताऽनुपानः

शाल्यचमुद्रबदकामिपमापशुक् स्यात् २२०३

कलमाञ्ज शुञ्जानः

कलरयपललेन जाङ्गलेनाऽपि ।

मदन इव कामदेवो

महिषीशतशो मनोरमा रमयेत् ॥ २२०४ ॥

वृद्धमिह कामदेवं जग्धयतो ह्यभगन्धरसादस्य ।

सुरतं भवति यधूमिः सुरवरणीभि र्यथा सुरेन्द्रस्य ॥

आम्पेयगौर्यक्षपलायताक्ष्यः

कल्हारगन्धाः कर्मनीयवेषाः ।

काञ्चीरणत्कारणधितम्या

विम्वधरास्तं रमयन्ति कान्ताः ॥ २२०६ ॥

अर्धोन्मीलितलोचनान्तसुभगा निर्धतमानप्रहा,

धम्मिहोभ्रह्मनोपदर्शितसुभाषलाः सलीलाङ्गनाः ।

हाराऽलङ्कृतकन्धरा युवतयः स्मेराननास्तं सदा,

म्लिष्यन्त्या रससेविनं क्षिधिलतक्रोधा रतिं कुर्वते ॥

किमत्र मलयाऽनिलैः किमिह सान्द्रचन्द्राऽऽतपैः,

किमङ्गुथतचन्दनैः किमरविन्दसौगन्धकैः ।

मनांसि हरिणीदृशां मदयतीह संसेवितो,

मनोजरतिवल्लभो मदनकामदेवो रसः ॥ २२०८ ॥

यलेन नारी परितोषमेति

न हीनरीर्यस्य कदापि सौख्यम् ।

अतो यथार्थं रतिलम्पटस्य

धीर्याऽभिबुद्धिं प्रथमं विदध्यात् ॥ २२०९ ॥

र. गृ. र. क. खीविलास, वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ४-४ भाग, रजत और

युवर्णमसम १-१ भाग लेकर पारेगन्धकी नीलवर्णजलीकर

संमलकीजक, काकोली, छोटी और बड़ी दूधी, विदारीकन्द,

शतावर इन प्रत्येकके स्वरस अथवा काषोंसे ३-३ रोज मदनकर

सुखाकर ६-७ कपडमिठीदीहुई आतशीशीशीमें भरेके मुंहबन्द-

कर ४ पहर बालकायमें पकावे । स्वाशशीतलहोनेपर लालकमल,

तालमसाना, शतावरी, विदारी, मुसली, नागवला, सेमल,

पद्मसन्द, द्राक्ष, शंकर, ईश, असगन्ध, आबले, सुगन्धवाला,

बाराही, हस्तिरुन्द इनप्रत्येकके यथावामस्वरस अथवा काषोंसे

७-७ भावनाएं देकर सुखाकर रखजोड़े । इनमेंसे ४-४ रती

शकर अथवा द्राक्षकेसाय लेकर दूध अथवा ईलकारस पीवे ।

पुराने चावल, मूग, बड़े, मास, उड़द, कोयल, जंगली जानवरों-

कामास अथवा मासरस सेवनकरनेसे अकथनीय रतिसुखको

प्राप्तहोताहै । अतगन्धकेसाय सेवनकरनेसे वृद्धमनुज्यमी

बहुतसी स्त्रियोंकेसाय रति करसका है । कामशास्त्रोक्त सर्व-

लक्षणसम्पन्न स्फुटभावोंकेसाय कोपयुक्तस्त्रियोंका भी बोध हम-

रखके सेवकको देखकर नष्टहोजाता है । मलयानिल प्रभृति

कामोद्दीपक सामग्रीकी कोई छलरत नहीं पड़ती क्योंकि यथेष्ट-

शक्ति न रहनेपर उद्दीपकभावोंका आभयण कियाजाता है ।

इससके सेवनकरनेवालेके लिये उद्दीपकभावोंकी कोई अन्याय-

रसकता नहीं रहती । रतिके विषयमें धीर्यकी दृढता मुख्य है

और इसरसके सेवनसे वह नितान्त पुष्ट होजाताहै । हमेशा

मदाचर्यपूर्वक यदि इसकासेवन किया जायतो समस्त धातुव्यय,

राजवदम, समस्तप्रमेद, अक्स्मार, उन्माद, पुष्य तथा स्त्रीका

वन्ध्यत्व सोय इत्यादि अशाभ्यरोगोंको नष्टकर यह आदमीको

रोगरहित निरजीवी बनाने है ॥ ४९४ ॥

४९५ मदनकामदेवसः (चतुर्थ.)

गोलं गन्धकसुतयोखिरुदककायेन वद्धाऽथ धू-

कृष्माण्डान्तरस्थितं विपिहितं तेनेन लिप्त्वाोपरि ।

मापे द्वैयहूलमाज्यपकमथ तत्कृष्माण्डमभ्याहरे-

तत्क्षूर्णेन च संयुतः सुरकृतावृणस्य मुष्टिद्यम् २२१०

जया शतावरी कृप्या कपिरुच्छुफलं तिलाः ।

प्रत्येकं पलसम्माना यथाः पञ्चपलोन्मिताः ॥ २२११ ॥

तावन्मोचफलं द्वे च यष्टीं मुष्टिद्वयां शुभापम् ।

निक्षिप्य सप्त सप्ताऽत्र भाषनाः फमशश्चरेत् ॥ २२१२ ॥

महाबलाबलानामयलाभि द्रोक्षयाऽपि च ।

कृष्णाधात्रीभुभिश्चाऽपि दन्ताप्रे निनेश्य च २२१३

मत्स्यपिडकायुतं चतुर्द्वयमानं भजेतिशित ।

अनुपानमिहमाकं धारोष्णं सुरमेः पयः ॥ २२१४ ॥

दोषमातैवजं हत्वा कृयादीयेधरधनम् ।

प्यजोत्साहं तथा रूपां धात्रीकारणमुत्तमम् ॥ २२१५ ॥

अलं मलयवायुना कुमुदपाण्ययेनाऽप्यलं,

मधुयतसहायका. कलितपञ्चमाः के पिपाः ।

अमुं भज विशङ्कितं रतिसरोजिनीभास्करं,  
मनोजपरिद्वेषतं मदनकामदेवं रसम् ॥ २२१६ ॥  
र. र. स., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्ण-  
कज्जलीकर त्रिकटुके हाथसे एकरोज मर्दनकर गोलाबनाय मुई-  
कोहलेके भीतर रखकर उसीकी डाटग्यावर मुईकोहलेकेरससे  
उड़के आटेको भिगोकर दोअहुलमोटा लेपबुड़ादे । फिर धीमे  
मन्दआगिसे पकावे, जब आटा जलेलेगे तब उतारकर रखले ।  
स्वाङ्गशीतल होनेपर मुईकोहलेमेंसे कज्जलीके गोलेको निकालले ।  
फिर तुलसीकाचूर्ण २ पल, भांग, शतावर, पीपल, छिल्वेरहित  
केवांचनेबीजऔरतिल १-१ पल, जव और केलेका सूपफल  
५-५ पल, दोनों प्रकारकी सुलहटी २-२ पल लेकर वारीक-  
चूर्णकर १-२ पहर इतने मर्दनकर चन्नी, खैरटी, नागबला,  
द्राक्ष, पीपल, आवला और ईख इनके रसोंसे ७-७ भावनाएँ  
देकर हाथीदांतके पात्रमें रखदे । इसमेंसे ६-६ रत्नी राखके साथ  
रात्रिको खाकर गायका धारोष्णदूध पीवे । इसके सेवनसे रज  
और बीर्यके दोष, वृजभङ्ग प्रभृति नष्टहोकर उत्तमवाजीकरण-  
होताहै । इसरसकेसेवनकरनेपर मलयाद्रिका वायु, वन्दमा, भौर  
और कमलप्रभृति कामको जाटतकरनेवालोंकी कोई आवश्यकता  
महीं, इसके खानेमात्र हीसे मनुष्य कामान्ध होजाताहै ॥४९५॥

### ४९६ मदनकामदेव रसः ( पञ्चमः )

तारं यजं सुवर्णञ्च तान्नं सूतकगन्धकम् ।  
लोहं क्रमविवृद्धानि कुर्यादितानि मात्रया ॥ २२१७ ॥  
विमर्द्य कन्याकाद्रायै न्यसेत्काचमये घटे ।  
विमुच्य पिठरीमये धारयेत्सैन्धवाऽऽवृत्ते ॥ २२१८ ॥  
पिठरीं मुद्रयेत्सम्यग् ततश्चुल्लयां निवेशयेत् ।  
यहिं शनैः शनैः कुर्याद्दिनेकं तत उद्धरेत् ॥ २२१९ ॥  
स्याङ्गशीतञ्च सञ्चर्ष्य भावयेद्वर्कदुग्धकैः ।  
अथगन्धा च काकोली धानरी मुसली क्षुरा ॥ २२२० ॥  
त्रिभिर्वेलं रसेरुपां शताययाश्च भावयेत् ।  
पद्मकन्दकसेरुणां रसेः काशस्य भावयेत् ॥ २२२१ ॥  
रक्तिकैकां रसस्याऽस्य चूर्णेनैतेन योजयेत् ।  
कस्तूरीरुप्यपकर्पूर कङ्गुलैलालवङ्गकम् ॥ २२२२ ॥  
प्रति रक्तिद्रव्यैश्चतच्छकैरासमकं भजेत् ।  
गोदुग्धद्विपलेनैव मधुराहारसेवकः ॥ २२२३ ॥  
अस्य प्रभावात्सीन्दर्य लभेताऽन्न न संशयः ।  
तदणी रमयेद्ब्रह्मीः शुक्रहानिर्न जायते ॥ २२२४ ॥  
‘दा. सं., र. सु., रघायनकं., र. कौ., र. क., र. म., यो. र.,  
चि. र. भ., मै. सा., ट. यो. स., र. क., वाजीकरणे । व. यो. त.  
मदनकामदेवर इति नाम ।

भाषा—चांदी १ भा., हीरा २ भा., सोना ३ भा., तावा  
४ भा. इनकी भरमें, शुद्धपारा ५ भा., शुद्ध गन्धक ६ भा.,  
लोहम ७ भाग लेकर पारेगन्धककी नीलरंगकचलीमें सव-

नीजोंको मिलाकर १-२ दिन धीकुआरके रससे मर्दनकर सुखा-  
कर आतशीशीशीमें भरेके मिट्टीकेपात्रमें रखले । शीशीके चारों  
तरफ़ वारीकपीसाहुआ संधानमक ऊपरतकभरदे । फिरधीरे २  
एकरोज अभिदेकर आकाशदूध, असगन्ध, काकोली, केवांच, मुसली,  
तालमराना, शतावर, पद्मकन्द, कसेरु और कास इनप्रत्येकके  
रसोंसे ३-३ बार भावनाएँ देकर सुखाकर रखलोडे । इसमेंसे  
१-१ रत्नीलेकर कस्तूरी, त्रिकटु, शुद्धकपूर, शीतलचीनी, इला-  
यची और लौंग २-२ रत्नी लेकर वारीकचूर्णकर बराबरकी  
शकर मिलाकर २ पल गायके दूधकेसाथ सेवनकरनेसे और  
मधुराहार खानेसे सीन्दर्यको प्राप्तहोकर बहुतसी क्रियाओं  
साथ रमणकरनेपरमी शुक्रकीहानि नहींहोती ॥ ४९६ ॥

### ४९७ मदनकामदेवरसः ( षष्ठः )

रौप्यमस्य शुभं द्राघं दशगद्याणसम्मितम् ।  
पारदेन हतक्षेत्रं पूर्वप्रोक्तविधानतः ॥ २२२५ ॥  
दशकं तुत्यपापाणास्तारमाशिकतो दश ।  
सर्वं खल्वे विनिक्षिप्य सूक्ष्मं कार्यं प्रयत्नतः ॥ २२२६ ॥  
वाससा गालयेच्चूर्णमर्कदुग्धेन पेयेत् ।  
दिनेकं दिनमेकञ्च धत्तूरस्य रसेन च ॥ २२२७ ॥  
दिनेकं वत्सनामस्य श्रीखण्डेन च वासरम् ।  
करधारस्य मूलेन पुनः श्रीखण्डवारिणा ॥ २२२८ ॥  
सर्वापिधैरवमेवं शुष्कं शुष्कं विमर्दयेत् ।  
गोलं हृत्या शरावस्यै वल्गुमृत्तिकाया ततः ॥ २२२९ ॥  
गतं हस्तप्रमाणेऽथ क्षिप्याऽग्निं ज्वालेयदधः ।  
स्याङ्गशीतञ्च तच्चूर्णं हृत्या कुम्भे क्षिपेत्सुधीः ॥ २२३० ॥  
मदने कामदेवाऽयं जायते धीर्यद्वस्तः ।  
शुक्रामात्रस्तु दातव्यः सेव्योऽयं पीष्टिकोपधैः ॥ २२३१ ॥  
अवीर्यं शुष्करीर्यं च द्रवद्रव्यै तथैव च ।  
अनुत्थानेऽपि लिङ्गस्य निष्कामेऽस्यच्छवीर्यके ॥ २२३२ ॥  
बलक्षीणे तथा पण्डे द्योऽयं धीर्यद्वस्तः ।  
स्यात्तव्यं ब्रह्मचर्येण यावदायाति पूर्णताम् ॥ २२३३ ॥  
रसो निरन्तरं द्राघं हल्लभ्यर्जञ्च भोजनम् ।  
सेव्यमानेप्रतिदिनं प्रकरिणाऽमुना रसे ॥ २२३४ ॥  
भवेत्पोडशवर्षीयः कामदेवसमो नरः ।  
मद्दानिकरः स्त्रीणां भवेद्याऽत्यन्तयत्नम् ॥ २२३५ ॥  
रसपि, वाजीकरणे ।

भाषा—उदयचन्द्रलयमें बहेदुए प्रकारसे पारदगुक्कर्म-  
कीहुई चांदी, दानेपिण्ड और त्वामाग्रीशीमम् ५-५ तोले  
लेकर सबको खरलेमें डालकर आकाशदूध, चूरा, बटनाग,  
चन्दन, यफेदबनेरकी जड़शीछाल और यफेदचन्दन इनप्रत्येकके  
यथागममन्त्रसम अपरा क्राओंसे १-१ दिन पीसकर गोल  
बनावे । इसमें प्रत्येक आरना मुगागुलाकर देसीचाँदई  
फिर गोलेको शरावसम्युत्पन्ने बन्दकर ३-४ करदमिरी देह

मुखाकर एकहाथगह्वरे स्तुभेन पहिले अग्निरस आधेतकण्डेभरके सम्पुटको रस ऊपर तक कण्डोसे भरदे । स्वाद्वशीतलहोनेपर निकालकर शीशीमें रखलेवे । इसरी १-१ रती पौष्टिक अनुपानोंके साथ देनेसे वीर्यकामभाव, शुक्लवीर्यता, शीघ्रप्राप्त, लिङ्गाभ्यास, इच्छाराहित्य, अस्वच्छवीर्य, वलशीलता, पण्डता सेसव नष्टहोकर कामरुपी वनजाताहै । जस्तक वीर्यसे परिपूर्ण न होजाय तबतक मन्नाचर्य रखे । इसरसका सेवनकरनेवाला स्त्रियोंके दर्पको दूरकर उनका अत्यन्तप्रिय होताहै ॥ ४९४ ॥

### ४९८ मदनकापदेववटी

आकलुकं केशरदेवपुष्पं

जातोफलोद्विग्नहंसपाकम् ।

एतानि चूर्णानि समानि कृत्वा

मूलाद्वैमार्षं कुह मागफेनम् ॥ २२३६ ॥

क्षीरेण फेनं परिपाच्य यज्ज

मूलास्तिता पङ्कणमानयोज्या ।

विमर्षं चूर्णं गुटिकां निशायाम्

मुले स्थिता कामयते शतानि ॥ २२३७ ॥

र. (मा.) बाजीकरणे ।

टि०—केचिन्निर्मा बटिकां विप्ररीत्या निषादयन्ति सयथा—भाकलुक, केसर, लवङ्ग, जातीफल, सखरदानि इति द्रव्यविवरणानि । अक्षौकीद्विगेने प्रति द्रव्यचतुष्टके, खालमार्षिकेने च प्रति द्रव्य गृहीत्वा चक्रचूर्णं विषयम अधिकमन्नाद्वैरससे द्रव्योपभारादौ मेलयेत् । अर्द्धाङ्क वीर्यनि कुहयित्वा त्रिसेककले कायविसा पादाऽवशिष्टेन कायेन अर्द्ध प्रत्यक्षार्धार्ध मेलयित्वा सार्द्धव्यतन्त्रिका विषय सर्वं वस्तुनात तत्र निश्चित्य धर्मेनैकसता सप्ताय बदरीचलप्रमाणं बटिका विषय रक्षयेत् । तास्त्रैवैका रतिसमयाद्विषयव्याप्या दुग्धेन निषेव्य सीताहो रमणीय रमते, इति ।

भाषा—अकलुका, केसर, जौग, जायफल, उद्विग्न और शिंमाणिकमसम समभाग, सयसे आधी धूममें पकाईहुई अफीम और ६ हुनी शक्कर लेकर कापीपधियों। चूर्णकर अफीमकेसाथ पीठकर एकजीव करदे फिर शक्कर मिलाकर चूर्णरूपमें रखछोड़े, अथवा शक्करकी नाशानीमें १-१मासेकी मोलिया बनाकर रखे । इनमेंसे १-१गोली मुखमें रखकर रतिकरनेसे बहुतदेरतक स्तम्भन होताहै । मन्नाचर्यपूर्वक दूधकेसाथ सेवनकरनेसे श्वास, कास, मन्दाग्नि, प्रदुग्धि, अरुचि, नपुंसकत्व प्रप्रतिरोम नष्टहोतै ॥ ४९८ ॥

### ४९९ मदनकामरसः

पद्मशीतं कलेख्य कन्दं नालञ्च कर्णिकाम् ।

मुशलीभृङ्गराड् द्राक्षा पर्कं श्लेष्मातकं फलम् २२३८

विजयामरकटीमाषाः शणयीजानि वै तिलाः ।

कोकिलाक्षस्य धीजानि भूकृष्णान्डी शतावरी २२३९

शृङ्गादे चिरेभटं फलीवीजानि चाऽश्वगन्धिका ।

एतत्सर्वं समं पिष्ट्वा पादांशं चाहरेत्पृथक् ॥ २२४० ॥

पादांशस्याऽष्टमांशेन शुद्धं मृतं विमिश्रयेत् ।

पारदादष्टमांशञ्च कुर्यं तत्र निक्षिपेत् ॥ २२४१ ॥

चातुर्जातकमेकैकं कर्पूराह्निगुणं भवेत् ।

सुतनुल्या सिता योज्या मर्य रम्भाद्रवे दिनम् २२४२

तद्गोलं डमरी यन्त्रे क्रमवृद्धयाऽग्निना पचेत् ।

दिनान्ते चोर्द्धलनं तद्ग्राहं रम्भाद्रवे हृदम् ॥ २२४३ ॥

मर्दितं सितया तुल्यं मापेकं भक्षयेत्सदा ।

रसो मदनकामोऽयं वलवीर्यविवर्धनः ॥ २२४४ ॥

दिव्यरूपा भजेद्रामाः कामाङ्गलकलान्विताः ।

भागवत्यन्तु यत्पूर्वं पृथक् चूर्णं सुरक्षितम् ॥ २२४५ ॥

कुलीरमांसच्छागाण्डचटकाण्डानि वै पृथक् ।

प्रत्येकं चूर्णयेत्तुल्यं सर्वतुल्यं गवां पयः ॥ २२४६ ॥

तत्सर्वं चालयन्दव्यां पचेद्यावत्सुपिण्डताम् ।

प्रसार्य काष्ठपात्रान्तश्चायाशुक्तं विचूर्णयेत् ॥ २२४७ ॥

अस्य चूर्णस्य कर्पूरं क्षुतपृथ्वीशकं क्षिपेत् ।

चातुर्जातरुचूर्णान्तु क्षिपेद्वाग्निशदंशतः ॥ २२४८ ॥

सर्वतुल्यया सिता योज्या रक्षयेन्मृतने घटे ।

कर्पूरं गवां क्षीरैरनुपातैः सदा पिबेत् ॥ २२४९ ॥

र. ल. बाजीकरणे ।

भाषा—कमलगटा, कसेल, कमलकन्द, कमलनाल और कर्णिका, सुखली, मंगरा, द्राक्ष, लोकेके पकेफल, भाग, केवाचके बीज, उष्ट्र, क्षणकेबीज, तिल, तालमलाना, भुई-बाँहला, शतावर, शिंपोड़े, कचरी, कागवेबीज, असगन्ध वैसय १-१ तोले लेकर चूर्णकरले । इसमेंसे चतुर्धाश लेवे और पारा २-१ माशा, शक्कर २ रती, तन, पत्र, इलायची, मागकेसर १-१ रती, शक्कर २ माशा डालकर केलेकेकन्दकेरससे एकदिन मर्दन कर गोलाबनाय कमलचक्रमें रखकर क्रमद्वाराग्निमें दिनभरपकावे । स्वाद्वशीतलहोनेपर निकालकर कुलीरकन्दके रससे मर्दनकर सुखाय बराबरकी शक्कर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा खाकर दूध पीनेसे बल और वीर्य बढ़ताहै और दिव्यरूप स्त्रियों-केसाथ रमणकरनेमें समर्थ होताहै । पूर्वोक्त औषधियोंका ३ भाग अवशिष्ट चूर्णलेकर केकड़ेकामास, ककरो और चिंहेके अण्ड, देसव समभाग लेकर बारीक पीसकर सबरी बराबर गायके दूधमें डालकर कड़वीसे चलावाहुआ पकावे । जत्र पिण्ड होजाय तब कालके पेशवर मिछाकर ध्यायाशुद्धकर चूर्णकरले । इसचूर्णसे ६४ वा हिस्सा शुद्धकूर और २२ वा हिस्सा चातुर्जात छोड़कर सबकी बराबर शक्कर मिलाय नये वर्तनमें रखछोड़े । इसमेंसे २-२ तोले गायकेदूध अथवा पौष्टिक अनुपानोंके साथ सेवन करनेसे उत्तम बाजीकरण होताहै ॥ ४९९ ॥

### ५०० मदनमोलकः

शुद्धसूतसमं गन्धं माशिकं तत्समं कुर ।

मर्दयेन्मातुलुङ्गाम्बैः स्वर्णपत्राणि लेपयेत् ॥ २२५० ॥

मारयेत्सुदयोगेन यात्रता भस्मतां प्रजेत् ।

तन्नस्म तारवृद्धञ्च प्रवालं मीनिकाऽन्नयम् ॥ २२५१ ॥

कान्तं येनान्तगुल्यञ्च रसभस्म च वृद्धितः ।

कण्ठाककटिकोक्रन्दगोजिह्वास्तरमस्तथा ॥ २२५२ ॥

भावयेत्सप्तवारणि रवितापेन शोषयेत् ।  
 गोलं मृत्कपटे योज्यं त्रिधा वेष्ट्य विशोषयेत् ॥२२५३॥  
 लवङ्गं पूरयेद्भाण्डे तन्मये गोलकं क्षिपेत् ।  
 भाण्डवक्त्रं निम्नस्थाऽथ चतुर्धामं विषाचयेत् २२५४॥  
 स्वाङ्गशीतं समुज्ज्वल्य भावयेत्सदनन्तरम् ।  
 शाल्मल्या च विद्यायां च हलिन्या शतवीर्यया २२५५॥  
 कपिरुच्छुन्रिकण्डेन केतकीस्तनवारिणा ।  
 रत्नन्या च मुसल्या च गौर्यां धात्र्या विशालया २२५६॥  
 वासातगर्गताप्यं मालत्या शतपत्रकेः ।  
 कुङ्कुमेन ततो भाव्यो रसो मदनगोलकः ॥२२५७॥  
 यत्तद्वयलता मात्रा गोक्षुरेक्षुरकेण च ।  
 शिलाजनुसमायुक्तो कर्कोटीरस्मत्तोऽपि वा ॥२२५८॥  
 अद्मरीं शर्करां भित्त्वा शतलण्डान् करोति यः ।  
 यत्नं पुष्टिं तथा तुष्टिं कान्तिञ्च कुरुतेऽनलम् ॥२२५९॥  
 सप्तधातुगतं शोषं जयेत्कासं सुदायणम् ।  
 क्षीणानां व्याधिभिर्ह्यथ यण्डानां क्षीणरेतसाम् २२६०॥  
 रामा यस्य गृहे सन्ति तेन मेध्यो रसोत्तमः ।  
 मेधनात्कामसम्प्राप्तिः कामिनीदर्पहारकः ॥२२६१॥

रसायन सं, र. सु, रसायनेशजीकरमेव ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धर और सोनामारी १-१ तोला  
 केसर नीलकण्ठबलीकर भिन्नोदकेरुते मदनकर ३ तोले पुष्पके  
 बारीक पत्तोंपर लेकर । फिर गोलाबनाय धारावत्पुद्गलं बन्दार  
 १५ छेद करके जी भावे । इत्युक्तं भस्म होनेपर बारम्बार  
 करताजाय । यही मुरगमन्, रज, यज्ञ, प्रसल, मोती, अन्नक,  
 कान्तकोट, वैशान्त, तांबा, पारदमन्म येसब धमद्विभागों  
 केसर बासपेगयेरेरुत्त और जहलीगोमीने रंगोंसे ७-७  
 भावनाएं देकर गोलाबनाय धूपमें गुगल । गोलेपर गुग्गुलुगुग्गु  
 तीन करफिरी देवे । फिर एरुहदीमें आधितक लौंग भरकर  
 गोलेको रंगकर ऊपरतक लौंगोंसे भरकर करफिरी करदे और  
 पुष्पनेर ४ पदवीं बूहेपर अग्नि देवे । प्याङ्गलीक होनेपर  
 निकालकर सेमल, बिंदरीकन्द, बरिहाटी, क्षात्रर, केमोच,  
 गोगम, केवड़े कोमकड़े, कल्लो, सुपरी, हल्दी, आंरु,  
 इन्द्रायन, अदुवा, तगर, एक, मालती, गुग्गुलु और केसर  
 यथायन्मय स्वरा अथवा वामोंसे १-१ भाषना देकर ६-६  
 रसीदी मात्रा गोगम, कालमगना, शिञ्जनी, इनके साथ  
 अपना रंगगयेरेगाय देनेमें ॥ अद्मरीके गेहूँसे टुकड़े करता-  
 लाई बर, पुष्टि, उत्साह, कान्ति और अग्निसे करताई ।  
 मन्नेपाशुभोमें प्रथम शोष और भीषण गोमीको नष्टकराई ।  
 रोगोंसे रीन, रीनपुष्ट, हनकरनेजिदे उत्तम औरकड़े जिनक  
 परसे बहुतनी दिखेते उपरोंहसलाका येनकरनायदि ५००

#### ५०१ मदनजनकोरसः

मृतं चाम्नं धनरगमनं ताप्यरीत्यञ्च मुच्यं,  
 यामं मयं मरुक्कलः पुष्टिराभाण्डपञ्चम् ।

जीर्णं नीरं पुनरपि तथा शाल्मलीताम्रवल्ली-  
 मूक्ष्माण्डमदनजनकं सेवयेद्वल्लुपुमम् ॥ २२६२ ॥  
 धात्रीरुण्डं मुसलितुरगीक्षोद्रसर्पियुतञ्च,  
 दुग्धं पीत्वा रमयति शतं कामिनोकामदाता ।  
 दीर्घं जहाद्वलितपलितं सायमिष्टञ्च भोज्यं,  
 सर्वाप्रोगाञ्जयति जनयेत्कीर्तिदीर्घस्य पुष्टिम् ॥२२६३॥  
 र. सं., र. शि., वाजीकरणे । र. शि. पुष्पन्यावलेहः ।

भाषा—पारा, कान्तकोट, सोना, अन्नक, सोनामारी और  
 रजतमन्म सब समभागलेसर मरुक्के जलसे एकत्रगढ़ मदनकर  
 मुसाय काचरी कृषीमें भरके बालुकायन्त्रमें रखकर भावे ।  
 पानी जलजानेपर दुधारा छाले । फिर सेमल, मजीठ, पुं  
 रोहडा इनके स्वरा अथवा काउसे १-१ भावना देकर ६-६  
 रसीकी गोल्यां बनाकर रखछे । इनमेंसे १-१ गोली भावना  
 मुक्ली, अश्वगन्ध, मधु और धीरेगाय देकर दूध पीलानेसे  
 वैरहोदियोंवेसाय सम्मोगकरनेपरमी शुक्र क्षीणलक्षोहा ।  
 बहुतदिनकर सेवनकरनेसे यलीपरिणने दूरवर पुष्टि और बरको  
 बजार अनुयको गुग्गुलुस्थापन करताई । इनके मेवनमें बिदा-  
 दीपदाय और सीका त्यागकरना ॥ ५०१ ॥

#### ५०२ मदनभरवोरसः

रसं मणिशिलां गन्धं सेन्धवं मृतताम्रकम् ।  
 शृङ्गतफलजत्राये मर्दितं शुद्धिक्रीटनम् ॥ २२६४ ॥  
 भूपायां धूपदे यामं बालुकायन्त्रके पचेत् ।  
 स्वाङ्गशीतलमुज्ज्वल्य गद्यपित्तन भावयेत् ॥२२६५॥  
 क्षणमात्रं प्रदातव्यं नारिकेलजलेन च ।  
 अयमा चिकुट्टाये नाशयेद्विषतपिप्रमम् ॥  
 दूधघ्नं दापयेत्पथ्यं रसं मदनभरवय ॥ २२६६ ॥

वे पि, बा, रसायन १, तिलविभ्रमे ।

भाषा—शुद्धपारा, मैनसिल और गन्धर, गंगानमक, लव  
 भस्म सब समभाग लेकर मक्की नीलकण्ठबलीकर वनमर्दित-  
 फलोंके रसमें एहदिन मदनकर गोलाबनाय धारावत्पुद्गलं बन्  
 कर मूपदधने १ पद रवेदनकर भाषावधने एरुहदी भावे  
 देवे । स्वाङ्गशीक होनेपर गद्यपित्तनमें एक भावना देकर  
 क्षणमात्र गोल्यां बनाकर रखदेवे । इनमेंसे १-१ गोली  
 नारिकेलके जल अथवा चिकुट्टे कायमें देनेसे यह विषविभ्र  
 को नष्टकराई । इनमें पथ्य दहीभावेना ॥ ५०२ ॥

#### ५०३ मदनमञ्जरीरटिका

चपातो ध्योममागाम्नदनु निगदिनं मागयुममञ्जरीं  
 मार्गेकं शम्भुषीजं त्रितयमपि शूनं तममा गिदमन्ती ।  
 वानुतातै सज्जार्ताकनमचिचरणा मार्गे देयपुष्टे,  
 जार्तापञ्च भागदिनयमय पूयक मयममञ्जरीं

मयमञ्जरीता मिता स्वाङ्गलमधु-  
 मरिता मोदनीपुष्ट रीन,

खादेदमिं समीक्ष्य प्रसभ-  
मभिनयानन्दसंघर्षनाय ।  
योगो वाजीकराख्योऽयमिह  
निगदितो भैरवानन्दनाम्ना,  
नि.शेषन्याधिहन्ता दलित-  
यद्युच्यधामरुन्दपदपः ॥ २२६८ ॥

य यो त, भा प्र, वै र, चि. र. म, रगयनस, वाजीकरणे ।  
रसायनसङ्घर्षे भैरवानन्द इति नाम ।

भाषा—अप्रकभम् ४ भाग, यङ्गभम् २ भा, पारद  
भस्म १ भाग, शतावर ७ भा, चातुर्जात, जायफल, गरिच,  
पीपल, सोंठ, लौंग और जावित्री २-२ भाग लेकर सररा  
भारीकचूर्णकर सबसेदनी शहर मिलाकर धी और मधु अन्दा  
जैसे देकर ३-३ मासेकी गोलिया बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली दुग्ध प्रथति उचितानुपानकेसाथ देनेसे श्वास, कास,  
धातुस्य, प्रमेह और हीमताको नष्टकर उत्तम वाजीकरणको  
करताहै ॥ ५०३ ॥

५०४ मदनमोदकः ( प्रथमः )

उन्मत्तस्याऽर्द्धभागेन मृता म्रं सह भर्जितम् ।  
कणाऽऽकटाहिसिन्धुपयः सङ्घं चाऽऽधिंसंयुतम् ॥  
कङ्कोलकं बलायुग्मं हिंक्षामोवाऽऽयगोभुरम् ।  
श्मुरं मर्कटी फौर्धं जात्याः परं फलन्त्या ॥ २२७० ॥  
चन्दनं देवकुसुमं चारं सादकराऽन्तरम् ।  
यरी शुक्राभियापाहो मुशली सुपयी जलम् ॥ २२७१ ॥  
वांशीमधुशराशोपांशयुक्तं सफलफणितम् ।  
यावन्त्येतानि द्रव्याणि तापती यिजया मता ॥ २२७२ ॥  
सर्वतुल्या सिता ग्राह्या यावदायाति घन्धनम् ।  
घृतेन मधुना मिथं मोदकान् कारयेन्निपक्व ॥ २२७३ ॥  
त्रिभुगन्धिसमायुक्तं कर्पूरेणाऽधियासितम् ।  
स्थापयेत्स्निग्धभाण्डे च धीमन्मदनमोदकम् २२७४  
सर्वरोगहरं होतद्विरोपावहणीहृतम् ।  
मेधायुः कान्तिर्धैर्यञ्च बलपुष्टिविघर्धनम् ॥ २२७५ ॥  
हृददेहकरं गुणं बलीपलितनाशनम् ।  
धर्मत्रयं सदां सेव्यं चिरजीवी भवेत्तदा ॥ २२७६ ॥  
र. शि, वाजीकरणे ।

भाषा—यदुत्तरे शुद्धजीर्णका चूर्ण १ तोला, अप्रकभस्म ६  
मासे, लेकर दोनोंको एकपहर मदनकर बजाहीमें रखकर मन्द  
अग्निसे सके, फिर पीपल, अकलशरा, नागभस्म, संधानमक,  
कुठ, शीतलजीनी, बला, नागबला, हंसकीबज, केलेफावन्द,  
असान्ध, गोखरू, तालमखाना, केनाचकेजीज, कसेरू, जाय  
फल, जावित्री, सफेदचन्दन, लौंग, चिरोनी, मिलावे, ठाल  
कचनार, शतावर, क्षीरविदारी चित्रकनीजह, बाराहीचन्द,  
मुसली, स्याहजीरा, सुगन्धबाला, बल्लोचन, महुआ, समुद  
शोष, विषादा, रावकीपाइरी येसव ३-३ मासे इन सबकी  
बराबर भाग लेकर सबका यारीकचूर्णकर इन्हें मिलाय एक

पहर खरलकर सबकी बराबर शहर ठालकर त्रिसुगन्धि १-१  
तोला, शुद्धकपूर ३ मासे मिलाकर धी और मधुसे ३-३  
मासेकी गोलिया बनाकर चिकनेवर्तनमें रखजोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली ययोचितानुपानके साथ देनेसे समस्तरोग नष्ट  
होतेहैं । विशेषनया प्रदधी, विवेदिता, कान्तिर्धैर्य और बल  
तथा पुष्टिहा हास, बलीपलित येसव नष्टहोतेहैं । तीनवर्षतक  
व्यातार इतका सेवनकरनेमें चिरजीवी होजाताहै ॥ ५०४ ॥

५०५ मदनमोदकः ( द्वितीयः )

स्वर्णसिन्दूरलोहाप्रवृत्तयानीरचीनजाः ।  
शाल्मलीघन्तकाश्मीरजीरजातीलवङ्गकान् ॥ २२७७ ॥  
शोषव्योपत्वगासीयः पृथक् कोलमिताक्षिपेत् ।  
जातीपञ्चरतीद्राक्षावलाकर्कश्टङ्गिका ॥ २२७८ ॥  
पलात्मगुसाहृष्टाऽऽध्विदारीहृषिकेशराज् ।  
मांसीकपूरकूलगोभुराणां पिबुद्धयम् ॥ २२७९ ॥  
सर्वस्मादर्थभागेन मातुलानां सुभर्जिताम् ।  
सर्वस्माद्रेयभागेन सितां दद्याद्विशोधिताम् ॥ २२८० ॥  
निर्माय तन्तुर्ली तस्याः क्षिपेत्सर्वमखुनमात् ।  
शाणमात्रमनुकम्प्य वर्षपेदुर्द्धकर्मकम् ॥ २२८१ ॥  
उष्णं पयः पिबेच्चाऽनु धर्मपेदुर्द्धकर्मकम् ।  
नष्टेन्द्रिया नष्टशुक्रा बलीपलितजर्जराः ॥ २२८२ ॥  
सेवनादस्य जायन्ते युवान इव हर्षिताः ।  
स्त्रीणां मदनमृदानां भवन्ति प्राणरत्नभाः ॥ २२८३ ॥  
प्रहणीभ्यासक्रासाशी. प्रमेहमधुमेहजाः ।  
व्याधयो विनियतेन्ते हृष्टो वृष्यो रसायनः ॥ २२८४ ॥  
यू क, वाजीकरणे ।

भाषा—स्वर्णसिन्दूर, रोह, अप्रक और वङ्गभस्म, बेतके  
बीज, कोपचीनी, सेमलका सुसला, धामनरीछाल, केदार, जीरा,  
जायफल, लौंग, समुद्रशोष, त्रिकुट, बललोचन अथवा तीक्ष्ण  
४-४ मासे, जावित्री, शतावर, द्राक्ष, बला, कान्हासीगी,  
इलायची, केवाचकेजीज, कुठ, नागमोषा, क्षीरविदारी और  
काष्ठविदारी ( मुर्देकोहका ), नागकेशर, जदामासी, शुद्धकपूर,  
शीतलजीनी और गोखरू २-२ तोले, इनसबसे आधी भुनीभाग  
और सबसे दूनी स्वच्छलशरकी तीनतारी चशनीलेकर ऊपरकी  
चीर्णका भारीकचूर्ण करके मिलाकर ४-४ मासेकी गोलिया  
बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १ गोलीसे आरम्भकर क्रमश दो  
गोलीतक बढ़ाकर गरमदूधकेसाथ सेवनकरे, पाचनशक्ति बढने  
पर दूधको बढातावय । इसकेसेवनसे नष्टेन्द्रिय, नष्टशुक्र और  
बलीपलितव्यासजर्जरितमी जवानोंकी तरह हर्षयुक्तहोकर मदो  
न्मत्तप्रियाँके प्राणवन्धन होतेहैं और प्रदधी, श्वास, कास, कवा  
सीर, प्रमेह, मधुमेह इनसबको नष्टकर यनुष्यको हृष्टपुत्र बनाकर  
पुन युवावस्थामें लाताहै ॥ ५०५ ॥

५०६ मदनसजीवनरसः

थिपलं पारदं शुद्धं गन्धकञ्च चतुष्पलम् ।  
मृतमग्नकसत्त्वञ्च स्वर्णं कान्तञ्च कार्पिकम् ॥ २२८५ ॥

द्विपलं हेमविमलं भुनागायः पलत्रयम् ।  
 एभिः सर्वैश्च सम्पेय प्रकुर्यान्नष्टपिष्टिकाम् ॥२२८६॥  
 यालुकायन्त्रचिन्त्यस्तलोहपात्रे क्षिपेत्तदा ।  
 अधस्ताज्ज्वालायेदग्निं मदीयेतदनन्तरम् ॥ २२८७ ॥  
 मण्डून्मा प्राक्षिकायाश्च मुशल्याश्चित्रकस्य च ।  
 हस्तिशुण्ड्यास्तथा कृष्णनिगुण्ड्या गोक्षुरस्य च ॥२२८८॥  
 रसं कुडवमानेन क्षिपेत्खल्वे मुहुर्मुहुः ।  
 तत आकृष्य सम्पिष्य मधुना सह यत्नतः ॥२२८९॥  
 महामृषोदने क्षिप्त्वा विनिरुद्धं विशोष्य च ।  
 दशभिश्छागैर्द्वयं पुष्टं सम्पूज्य भैरवम् ॥  
 करण्डे क्षेपयेत्पिष्ट्वा समभ्यर्चितकन्यकः ॥ २२९० ॥  
 रसः प्यातो नाम्ना भुचि मदनसञ्जीवन इति,  
 द्विपञ्चाभ्यां तुल्यो घृतमधुसितादुग्धसहितः ।  
 निपीतः सप्ताहं प्रचुरमधुराहारसहितो,  
 नरं कुर्यात्तरीशतसुरतसुप्रीतहृदयम् ॥ २२९१ ॥  
 हन्यादुन्मादुमुग्धं क्षयगदमगर्धं कामलामम्लपित्तं,  
 सर्वाग्निचोर्हृदोरागुधिरभयगदान् रक्तपित्तज्वरांश्च ।  
 रक्तार्शः पित्तगुल्मं सततमतिमहानाहमन्तर्विदाहं,  
 पाण्डुं मेहांश्च मोहं प्रदग्धमपि ह्योजनस्योपमाशु ॥  
 र. र. स., र. वी., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्धपारा ३ पल, शुद्धगन्धक ८ पल, अन्नरससख,  
 सुवर्ण और कान्तलोहभस्म १-१ वर्ण, सुवर्णमाक्षिक २ पल,  
 नमकके पानीमें कान्तिरसदेहुए केंचुए और लोहभस्म ३-३  
 पल लेकर पारे और केंचुओंको ४ पहर मदनरसनेसे नष्टपिष्टिका  
 होजायगी । इसकेबाद सुवर्ण, अन्नरससख, सोनामाखी, लोह-  
 भस्म और गन्धक इनको क्रमसे डालकर २-२ पहर लोहेके  
 खल्लमें मदनरस पातुकायन्त्रपर इसखल्लको अथवा दूसरे लोहेके  
 बानको रखकर क्षयगदमानीको डालदे और नीचे आगि जलावे ।  
 गरमहोनेपर छोटी और बड़ी पात्री, मुशली चित्रक, हाथी-  
 शुण्डी, कावासमाख, गोखरू, इन प्रत्येकका १-१ पाव क्रमसे  
 रस मुगावे । सफारस एकदम सूजगानेपर निकालकर मधुमें  
 खल्लकर गोला बनाय सोमलरी मूषांमें रखकर पारावसम्पुष्टमें  
 बन्दकर २-४ कण्डमिनी देकर गुसादे । फिर दस जङ्गली-  
 कण्डोंकी आच देकर निकालकर भैरव और कन्याओंका पूजनकर  
 पीसकर शीशीमें रखडोड़े । इसमेंसे ६-६ रत्ती घी, मधु,  
 शक्कर और दूधकेसाय लेनेसे और मधुरआहारकनेसे बहु-  
 तसी त्रियोक्तो गुण करसफाई और यमोक्तिलापानकेसाय  
 देनेसे भयंर उन्माद, धाय, जदधि, कामला, अम्लपित्तादि  
 समलपित्तोच्छ्रन्, श्पिर और रक्तपित्तज्विकार, रक्तार्श, पित्त-  
 गुल्म, आनाह, भीनरजीजन, पाण्डु, प्रमेह, मोह, प्रदर,  
 श्लेष्मको यह नष्टकरताई ॥ ५०६ ॥

#### ५०७ मदनसन्दीपनचूर्णम्

गोक्षुरः क्षुरफो मेघो मरकटी शनपुत्रिका ।

मधुकः क्षीरकाशीर्नी तालमृत्पमृताऽप्यु च ॥ २२९३ ॥

शास्मलीलोहगगने विदारी तालमस्तकम् ।  
 हस्तिकर्णो बला घात्री जातीफलरुसेरुक्म् ॥ २२९४ ॥  
 शृङ्गादको मापपर्णी भृङ्गराट् कुङ्कुमं वचा ।  
 शिलाजतु शिवावीजं पारदं घातुमाक्षिकम् ॥ २२९५ ॥  
 वटस्य कोमलाः पादा पलायष्टिकतण्डुलाः ।  
 रक्तशालिश्चगोधूममापका यवकास्तथा ॥ २२९६ ॥  
 एतच्चूर्णीकृतं सर्वं सितशर्करया समम् ।  
 विडालपदकं खादेत्सर्पिणा मधुना सह ॥ २२९७ ॥  
 शीतं पयोऽनुपानञ्च कामिनीं कामयेन्नरः ।  
 वीर्यहीनो भवेद्यस्तु जीर्णो व्याधिप्रपीडितः ॥ २२९८ ॥  
 प्रमेही मूत्रकृच्छ्री च ह्यर्धादीपात्पतितश्चजः ।  
 सोशीतिवार्षिकी वृद्धो युवेव रमतेऽङ्गनाः ॥ २२९९ ॥  
 पुत्रञ्च जनयेद्रीरमरोमं दीर्घेजीविनम् ।  
 मेपजे विविधैः किं स्यादन्येष्ट शतसहस्रकैः ॥ २३०० ॥  
 फलं न किञ्चित्त्राऽस्ति केवलं गौरवं बहु ।  
 यालसर्पं यथातोयं पुष्टं च दिनेदिने ॥ २३०१ ॥  
 तथाऽनेन नृणां देहः पुष्टो भवति नान्यथा ।  
 योऽस्ति मण्डलमग्रन्तु तः गच्छेत्प्रमदाशतम् ।  
 जगतस्तु हितायैव चूर्णं मदनदीपनम् ॥ २३०२ ॥  
 च., र. र., वाजीकरणे ।

भाषा—गोखरू, तालमखाना, नागरमोथा, केवाचकेपीज,  
 बलापर, मुलहठी, क्षीरकाकोली, तालमूली, गिलोय, सुगन्ध-  
 बाला, मेमलकामुखवा, लोह और अन्नरसभस्म, विदारीकन्द,  
 ताडकली मन्ना, हस्तिकर्णपलाशकी छाल, बला, वांजले, जाय-  
 फल, केशर, सिपात्रे, मापपर्णी, भृङ्गराज, केशर, वच, शिला-  
 जीव, हरेकी मींगो, पारा और सोनामाखीकीभस्म, बटकीजरा,  
 इलायची, मुलेठी, सुगेधियाबल, साटीबाबल, गेंडूकासव, ठण-  
 दकीदाल, छिलकेरहित जव, घब समभाग लेकर बारीक चूर्ण-  
 कर सबसीबराबर शक्कर मिजकर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ तोल  
 मधु और पीके साथ खाकर पारोण दूध पीनेसे अक्षतभी  
 आदमी बयेष्ट खीमल करसफाई । इसके निरन्तर सेवनकरनेसे  
 वीर्यहानि, व्याधिसंज्ञोन्ता, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, योनिदोषसे  
 पतितज्वर, वन्ध्यत्व, इनसब दोषोंको यह दूरकरताई ॥ ५०७ ॥

#### ५०८ मदनमुन्दररसः (प्रथमः)

मासीकं घातुमाशीकं लौहचूर्णं शिलाजतु ।  
 पारदञ्च यराञ्चैव गन्धकञ्च सर्वं समम् ॥ २३०३ ॥  
 घृतेन भावयित्वा तु पात्रे कृत्वा तु चाऽऽयसे ।  
 निष्कमाश्रमाणन्तु मक्षयेत्प्रत्यहं नरः ॥ २३०४ ॥  
 मत्स्याण्डं तिलपिष्टञ्च घृतेन च परिच्युतम् ।  
 शरीरणाऽनुपिषेद्वायो शक्यरामधुमिधितम् ॥ २३०५ ॥  
 मासमात्रं पिषेन्नित्यं वीर्यवृद्धये दिनेदिने ।  
 म पुमाग्रमयेन्नारीमजस्रं चटको यया ॥ २३०६ ॥

र. र., प, वाजीकरणे ।

**भाषा—**स्वामासी, सोनामासी, रोह्यस्म, शिलाश्रीत, शुद्धपारा निफला और गन्धक समभाग लेकर पारेगन्धकी नीलवर्णकजलीमें सबबीजें मिलाकर बीसे लोहेके पात्रमें १-२ रोज मर्दनकर लोहेकपात्रमें रखडोहे । इसमेंसे ४-४ मासे रोज खाकर मछलीका अंडा, तिलकक और घी मिलानर दूधके साथ शनिमें पीनेसे बीयंकी वृद्धि और वाजीकरण होता है । शकर और मधुके साथ एहमहीनेतक खानेसे स्त्रियोंको चट्करी तरह रमणकरता हुआ भी बीयंकी हानिको नहीं प्राप्त होता ॥ ५०८ ॥

### ५०९ मदनसुन्दररसः ( द्वितीयः )

शुद्धं सूतं गन्धकं देवपुष्प-  
मेला मस्तिः स्याद्वरार्द्रं तथैव ।  
अध्वेः शोषः कलकड्डोलमग्नं  
जातीपत्री साखसीयं फलञ्च ॥ २३०७ ॥  
सर्पं समं श्लेष्छययानिका च  
तत्केसरं कुङ्कुमयह्नजञ्च ।  
जातीफलं हिङ्गुलकं पिपञ्च  
योज्यं त्रिभागां त्वहिकेनकञ्च ॥ २३०८ ॥  
एतत्समानं कनकस्य बीजं  
भावं जयाहि मुनिसंषयया च ।  
मात्रां पिषेदात्मयलानुरूपां  
घृतं सुदुग्धं ससितं प्रपेयम् ॥  
शुकं घृतं नैव भवेद्वधयाये  
निम्बफलास्यादनतोऽन्तरेण ॥ २३०९ ॥

दो., र. पा. वाजीकरणे ।

**भाषा—**शुद्ध पारा और गन्धक, लौंग, इलायची, मस्तगी, तनू, ससुद्रशोष, अक्कलरा, घीतलचीनी, अन्नभस्म, जावित्री और पोस्त १-१ तोला, सुतसानी अजवाइन, नागकशर, केशर, मरिच, जायफल, शुद्ध शिंगरिफ, घटनाम और अरीम ३-३ तोले, इनसबके बराबर शुद्धघनूके बीज लेकर सक्का बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर भागक स्वरससे ३ दिनतक मर्दनकर १-१ रतीकी गोतिवा बनाकर रखडोहे । इसमेंसे १ गोलीसे लेकर ३ गोलीतक आत्मसंयम गुप्ताकर लेकर दूधमें घी और शकर डालकर पीनेसे रतिगमयने नीबूके पुसेबिना शुद्ध स्फलितनहीं होता । इसे उजितानुपानके साथ देनेसे कास, खास, सङ्गहणी, उन्माद, गटिया ये सब नष्टहोते हैं ॥

### ५१० मदनाहुशट्कणम्

टङ्कणानुवृत्तीयांसीं सैन्यं लवणं न्यसेत् ।  
पञ्चमांसीं सोममलं पईसीं हरितालकम् ॥ २३१० ॥  
एकादशांसीं सूतञ्च मर्दयेच्च दिनाम्युना ।  
रत्नानमहातरसे यातहारिसे पुनः ॥ २३११ ॥  
काचद्रव्यां यिनिक्षिप्य यदि यामांस्तु पांडरा ।  
दत्त्वा तेषातसीयणं टङ्कणं मदनानुरूपम् ॥  
गुग्गाद्वयप्रमाणेन स्वरभेदादिनाशनम् ॥ २३१२ ॥  
र. का. स्वरभेदः ।

**भाषा—**गुहाणा १ भा., सेवानम ३ भा., सफेदसोमल ३ भा., शुद्धहरिताल ३ भा., शुद्धपारा ३ भा. लेकर सबको हरेकसाठा, लङ्गुलकास्वरस, मिलावेनातिल, एण्डकाम्बरस इनमें क्रमसे १-१ दिन मर्दनकर गुप्ताकर कपडिमिमीदीहुई आतसी-बीजीमें बालुकायन्त्रमें १६ पहरकी जावदे । स्वाप्रसीतलहोनेकर निकालकर रखडोहे । इसमेंसे २-२ रती उजितानुपानके साथ देनेसे स्वरभेद, खास, कास, आनाह, आध्मान इनसबको यह नष्टरता है ॥ ५१० ॥

### ५११ मदनोदयरसः ( प्रथमः )

शुद्धं सूतं समं गन्धं रक्तोत्पलद्वयैः ।  
यामं मयं पुनर्गन्धं साधं तत्र यिनिक्षिपेत् ॥ २३१३ ॥  
पूर्वद्रव्ये दिनं मयं रसादं गन्धकं पुनः ।  
दत्त्वा तद्वदिनं मयं काचद्रव्यां निराधयेत् ॥ २३१४ ॥  
दिनेन बालुकायन्त्रे पक्वमुद्वृत्य घृणयेत् ।  
शुक्लप्याण्डाकपायेण भावयेद्विनसप्तकम् ॥ २३१५ ॥  
छायायां तत्सितानुवर्त्य निप्रेक्षं भक्षयेत्सदा ।  
शण्मूलं सर्वाजञ्च मुगलीं शरैरा समम् ॥ २३१६ ॥  
गवां क्षीरं पलादं तु अनु राध्रीं सदा पियेत् ।  
अनन्तं वर्धते वीर्यं रसोऽयं मनोदयः ॥ २३१७ ॥

र. घ., घ. र. र., रायघरी, र. बी., रसायनं, र. क., रस-सागर, रसायनः ।

टि०—संस्करणेपरेकपात्रयो अभिनवराभदेव नाम्नाऽयमेव पाठ उक्तोऽस्ति, तत्र रक्तोत्पलशुद्धिमा भवने श्रद्धांशु शु. पावीधर भूषणाद्योभावनास्ति, अनुपाने च शर्कराजम्बू परित्यजेदिति विरोधी दृष्टये परन्तु भोऽस्तिरिक्त्वा शुद्धिर्निर्भावनवाऽयम् स्वयंप्रत्यादत्ते सवयं मामप्रत्य भविष्यति, पाठश्चरयते ॥ मट्टीरतमिति बोध्यम् । अथ पाटोऽनुशुन्नेरेषाऽऽपातनं सादृश्यमवहति परन्तु पात्रभेदमादाय एव पाठ स्वीकरोऽस्तीति विद्वद्भिरलोचनीयम् ।

**भाषा—**शुद्ध पारे और गन्धककी समानभागमें नीलवर्णकजलीकर टालनमलके फूलैकरासे एरपहर मर्दनकर कजलीमें जायी गन्धक मिलाकर पुनर्वसे एरदिन मर्दनकर पारेमें जायी शुद्धगन्धक फिर डालकर एकरोज मर्दनकर गुप्ताकर आतसीबीजीमें डालकर बाउकायन्त्रमें एकदिनरत पकावे । स्वाप्रसीतल होनेकर शुद्धलोहेके रसमें ७ रोज भावना देकर छायामें मुगाकर रखडोहे । इसमेंसे ४-४ मासेकी मात्रा बराबरकी छहर मिलाकर खावे और ऊपरसे छावीज और बीज, मुगली तथा शर सब समभागदा पूर्ण १ तोले फाँड़कर गादका दूध पीवे तो बीयंकी अल्पशुद्धितीही ॥ ५११ ॥

### ५१२ मदनोदयरसः ( द्वितीयः )

धैरान्तकान्तगगनं रमद्वेनमूल्यं  
नागं लयं तदनु चार्द्रपयि विमयं ।  
धात्रीयरीमुमलिशास्त्रलिमर्षटीमि-  
रेमिञ्च दुग्धमितया मदनोदयायः ॥ २३१८ ॥

५१६ मधुपक्वहरीतकी योगः ( प्रथमः )

सुपस्वपथ्यापलपञ्चकञ्च

सूत्रे गवां प्रस्थमिते विपाच्य ।

प्रस्थे पुनः काञ्चिककुम्भपत्रके

पक्त्वा ततो निष्कुलिका विधाय ॥ २३२९ ॥

व्योषं यवानी कुटजस्य बीजं

मुस्ता जलं दाडिममल्लवेतम् ।

सुधातकीपुष्पमज्जजियुग्मं

कणाजटा मोचरसं सुविल्वम् ॥ २३३० ॥

सौवर्चलं सैन्धवमश्मभेदं

जम्ब्याघ्रमज्जाऽतिविपाऽतिपाठाः ।

लवङ्गजातीफलतुर्येजता-

म्येतानि तुल्यानि च तत्र जातम् ॥ २३३१ ॥

कपित्थमण्डूरमयो दशारां

समस्तषुणार्द्धमिता सित्ता च ।

अनेन पथ्याः परिपूरणीयाः

सूत्रेण युक्त्या परिवेष्टनीयाः ॥ २३३२ ॥

स्थाल्यां ततस्ताः क्रमशो निधाय

तृणानि मुक्त्या परितो विमुच्य ।

मन्दाग्निना याममयो विमुच्य

विधाय शीता मधु निक्षिपेच्च ॥

ताः सेव्यमाना ग्रहणीप्रमेह-

भ्यासापहा वह्निकराः सुवृष्याः ॥ २३३३ ॥

पा. व., ग्रहणार्दी ।

भाषा—अच्छीतरह पकीहुई बाजुकी हों ५ पलकी एक-  
१ सेर गोमूत्र, काजी, दूध और छत्रमे फमसे पकाकर शुद्धी  
निकाल निजड़, अजबाइन, इन्द्रजव, नागरमोया, सुगन्धबाला,  
अनारदाना, अम्लवेत, घावड़ीके फूल, दोनोनीरे, पीपल, अटा-  
मांती, मोचरस, डेलगिरी, संचल, सेंधानमक, पाषाणभेद,  
जामुन और आमकीगिरी, अर्दीस, बड़ीपाठा, लौंग, जायफर,  
तज, पत्रज, इलायची ये सब समभाग, बैधकीमन्दा, मण्डूर  
और लोहभस्म ये प्रत्येक खससे दशावा भाग और इनसे आधी  
क्षार लेकर बारीक चूनेकर हठीमें भरकर कचेसुते बांधदे फिर  
एकदण्डीमें घास बिछाकर बहुलसंभाकर जुनकर रगड़े और  
ऊपरसे घाससे दवाकर बहुतही मन्द अग्निमें एकपहरतक पका-  
कर नीचेउतारले । स्वाग्रहीकृत होनेपर निकालकर मधुमें  
डालकर रखावे । इनमेंसे यथाभिक सेवन करनेमें ग्रहणी, प्रमेह  
आप, मन्दाग्नि, धातुहीनता येसब नष्टहोयेंगे ॥ ५१६ ॥

५१७ मधुपक्वहरीतकीयोगः ( द्वितीयः )

हरीतक्याः शतं द्रोणे पयसः परिपाचयेत् ।

शुभावशेषमुत्तार्य निष्कुलीकृत्य च क्षणान् ॥ २३३४ ॥

रसगन्धकलोहानां पलेतापूर्येष्टयेत् ।

सूत्रेण मासमेकन्तु मधुमये विनिक्षिपेत् ॥ २३३५ ॥

पथ्याशी मक्षयेदेकां सर्वरोगविमुक्तये ।

क्षयपाण्ड्वाममन्दाग्निमेहलानी व्यपोहति ॥ २३३६ ॥

रसायनम्., क्षये ।

भाषा—अच्छीतरह पकीहुई मोठीहों १०० नग लेकर  
१६ सेर दूधमें पकावे । खोआ होनेपर उतारकर हठीकी  
शुद्धी निकाल शुद्धपारा और गन्धक तथा लोहभस्म १-१  
पलकी कबलीकर हठीमें भरकर कचेसुते बांधकर मधुमें डालदे ।  
६-७ दिनेके बाद इनमेंसे १-१ हों रगड़े क्षय, पाण्डु, आम,  
मन्दाग्नि, प्रमेह और ग्लानि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५१७ ॥

५१८ मधुमण्डूरम्

शुद्धीत्वा भिषक् प्रस्थमण्डूरभागं

शृते नैफले मर्दयित्वा च यामम् ।

पुटे पाचयेद्यामयुग्मं कृशानौ

पुटानोह देयानि चन्द्राधिचारम् ॥ २३३७ ॥

तथा घेनुसूत्रे कुमारारसे च

विधेयश्च पञ्चानृते योगराजः ।

मधेस्तिग्धुनागैः पुटेः सिद्धिदोऽय-

मचिन्त्यप्रभावश्च मण्डूर पयः ॥ २३३८ ॥

मधुमण्डूर पय कणामधुना

चिरपाण्डुगर्द ननु हेममितः ।

जनको रुधिरस्य परं वलदो

विविधातिहरस्त्यनुपानवहलैः ॥ २३३९ ॥

रसायनं, वै. वि., नि. र., र. सु., यो. र., वै. वि., पाण्डुरोगे ।

भाषा—एकसेर पुराना मण्डूर लेकर निफलाके काटनेमें  
मर्दनकर साफ़कर दोपहर अग्निमें गरमकर गोमूत्रमें सुतावे ।  
इसतरह २१ भावनाएँ देकर गोमूत्र, फोड़ुआर और पयामृतमें  
२१-२१ भावनाएँ देवे । प्रत्येकभावनानि श्रुतमें २-२ पहरकी  
आंच देनीचाहिये । इसतरह ८४ भावनाएँ तथा पुट देनेमें  
यह अचिन्त्यप्रभाव मण्डूर तैयार होगा । इनमेंसे १-१  
मादाकी मात्रा पीपल और मधुके साथ देनेमें पाण्डुरोग मिट-  
ताहै और नया रुधिर पैदाहोकर दलन्दताहै । अनुगानविरोधी  
यह सबरोगोंको दूरकरताहै ॥ ५१८ ॥

५१९ मधुमालिनीवसन्तः

द्वन्द्वमथ खगं वै भावयेन्मस्तयारं,

लकुचफलमवाक्षिण्णायया शोषयेद्दे ।

तदनु मृदुशरानी धारयेत्तोहपात्रे,

द्वन्द्वपिचुकृतुल्येस्ताम्रयूडात्यगन्तिः ॥ २३४० ॥

जनितसकलतोषं दालयेत्तस्य योऽनुं,

असरुदयोदव्यां घर्षयेत्माषकाशम् ।

गुलिकगमनमात्रं गुणकताञ्च प्रयातम्,

भयति तु यन्प्रमाणं कथुरं स्वात्तदप्यर्ध ॥ २३४१ ॥

मरिचनिभमयेषं गौरयहोजगृह्यं,

लघुचजनिततांयमार्गयेन्मस्तयारम् ।



कृतमरिचसमानं दापयेदाज्यखण्डैः-

हैरति शिशिरतप्तं जीर्णं नृतिं समीरम् २३४२

मधुमालिनिनामाऽयं वसन्तो वैद्यपूजितः ।

अनुपानविशेषेण बलपुष्टिप्रदायकः ॥ २३४३ ॥

गर्भवृद्धिकरश्चाऽसौ गर्भिणीनां सुखावहः ।

रोगनाशात्परं दद्याद्बलवृद्धिर्वर्धनम् ॥ २३४४ ॥

र. चं., ज्वराधिकारः ।

भाषा—शिंगरिफ और खपरियाको बड़हरके रससे ७-७

घार घोटकर छायामें सुखाय बेरकीलकड़ीके कोयलोंपर लोहेकी कड़ाहीमें रख जितनेतोले शिंगरिफको उतनेही मुर्गीके अण्डे लेकर उनकी सफेदी और जूरी घीरे २ डालकर सुखावे और लोहेकीकड़ाहीसे बारम्बार चलाताजाय, जब गोलिया फूटजाय और शुष्कहोजाय तब दवासे आधे कचूरके मिर्चनरावर ढुक्के करके डाले और उतनाही सफेदमिर्चका चूर्ण डालकर सबको बड़हरके फलके रसकी ७ भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली घी और शकरकेसाथ देनेसे शीत तथा जीर्णज्वर और वायुको यह दूरकरताहै । अनुपानविशेषसे बल, पुष्टि, गर्भवृद्धि, अग्नि इनसबको बढ़ाताहै ॥

५२० मधुसूदनरसः ( प्रथमः )

मृताऽन्नगन्धं लयणानि पञ्च

ताप्यञ्च सर्वन्तु समानभागम् ।

विष्वर्ण्य ताम्रस्य पुटे निवेश्य

सूतेन तुल्येन पुटं ददाति ॥ २३४५ ॥

सर्वं विष्वर्ण्याऽथ पुटेत नीरे-

जयन्तिकामरुतशर्वदीपः ।

उन्मत्तवासाधिपतिन्दुविषे-

विषेण पश्चात्परिपाचयेत् ॥ २३४६ ॥

लोहस्य पात्रे घटिकाद्वयञ्च

रसस्ततः स्यान्मधुसूदनीऽयम् ।

बलप्रमाणेन ददाति चामु

शुण्ठीघृताक्तं द्विदलं चिचन्यम् ॥ २३४७ ॥

र. दी., घृताधिकारः ।

भाषा—शुद्धपारा, अन्नकर्म, शुद्धगन्धक, पाचोनमक और शुक्लमाक्षिक १-१ तोला लेकर बखलीकर एकटोले तांबेके समुष्टमें रख कपड़मिटो देकर ५ घेर कण्टोकी आचदे । स्वाह-शीतलहोनेपर भस्माद्वय समुष्टसहित खरलवर जेत, बेचाच, हल्दी, पत्रा, उषिच, चित्रक, बधनाग इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्षायसे १-१ भागना देकर शुष्ककर लोहेके समुष्टमें बन्दकर दो घड़ीकी आचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर २-३ रत्ती सोंठ और घीमें मिलाकर देनेसे ममस्त दल नष्टहोतहै ॥ ५२० ॥

५२१ मधुसूदनरसः ( तृतीयः )

यज्ञेताम्रं दिनं मयं मधुना मधुसूदनः ।

पक्वोदुस्वरमध्याह्नस्तन्मापोयदुसूत्रजित् ॥ २३४८ ॥

रसायनं, बहुभ्रमंहे ।

भाषा—वज्र, पारा, अन्नक इनकी भस्मे समभाग लेकर एकदिन मधुनेसाथ मर्दनकर १-१ मासकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पत्रेगूलकेफल और मधुकेसाथ देनेसे यह बहुसूत्रको नष्टकरताहै ॥ ५२१ ॥

५२२ मनोभैरवरसः

त्रिसारं पञ्चलवणं मृतताम्रं रसं समम् ।

अर्कमूलकपायेण दिनानि त्रीणि मर्दयेत् ॥ २३४९ ॥

संशोष्य बालुकायन्त्रे दिनेन वज्रमूषया ।

स्वाहशीतलमुदृत्य परापित्तं भावयेत् ॥ २३५० ॥

दातव्यं मापमानञ्च मधुकत्स्याऽनुपानतः ।

तत्क्षणेन विनश्येत्तु तान्द्रिकः सन्निपातरुः ॥

मनोभैरवनामाऽयं रसः सर्वथ पूज्यते ॥ २३५१ ॥

वै.चि. ( सन्धिक ), वा. तन्धिके ।

भाषा—तीनोंसार, पाचोनमक, ताम्र और पारदभस्म सर समभाग लेकर आककीजइकीछालके काटेसे तीनदिन मर्दनकर गोलाबनाया सुखाकर बज्रमूपामें रख बालुकायन्त्रमें एकदिन पकावे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर घघेरेपित्तसे १ भावना देकर १-१ मासकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मुलहठीकेकाटेनेसाथ देनेसे तन्धिक और सन्धिक सन्निपात नष्टहोताहै ॥ ५२२ ॥

५२३ मनःशिलादियोगः ( प्रथमः )

मनःशिलायाः फलपूरकस्य

रसैः कपित्थस्य च पिप्पलीनाम् ।

सौत्रेण चूर्णं मरिचैश्च युक्तं

लिह्यज्येच्छद्विमुदीर्णविगाम् ॥ २३५२ ॥

च. सं., छदितोने ।

भाषा—शुद्धमनसिलोको विजोरा, कैय और पीपलके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ मासकी भाग लेकर २१ मरिचोंके चूर्ण और मधुनेसाथ देनेसे असाध्य वमन बन्दहोताहै ॥ ५२३ ॥

५२४ मनःशिलादियोगः ( द्वितीयः )

चन्दनं तगरं कुण्डं हृदि छे त्वगेव च ।

मनःशिला तमालश्च रसः केदार एव च ॥ २३५३ ॥

शार्दूलस्य नरक्षेव सुपिष्टं तण्डुलाभुना ।

हन्ति सर्वविषाण्येव यज्जिवज्जमिषासुराश्च ॥ २३५४ ॥

च. सं., विषाधिकारः ।

भाषा—सफेदचन्दन, तगर, कुठ, दोनोंहल्दी, रज, ईन सित, तमालपत्र, पारदभस्म, केदार और शेरका नापुन सर समभाग लेकर बारीक चूबकर रखछोड़े । इनमेंसे चावलेकेपत्र केसाथ १-१ भाग देनेसे अमुरोंको हन्त्रे बज्रहीतहै ॥ ५२४ ॥

५२५ मनःशिलादियोगः ( तृतीयः )

मनःशिला व्याघ्रनारसुरसेरम्बुपेरितैः ।

पाननन्याञ्जनालेपाः मर्दयन्तीयविगपदाः ॥ २३५५ ॥

च. सं., विषाधिकारः ।

भाषा—शुद्ध भैनसिल, वायकानख और तुलसी समभाग लेकर पानीमें पीसकर पिलाने, नस्यदेने, अञ्जन और लेफकरनेसे समस्त शोथ और विषोंको यह दूरकरताहै ॥ ५२५ ॥

### ५२६ मनःशिलादिवती

मनःशिलाकुष्ठकज्जीर-  
शरीरपकास्मीरमवेः समांशैः ।

घिनिर्मिता वृश्चिकसम्भवस्य  
संहारिणी स्याद्गुटिका विपस्य ॥ २३५६ ॥

रा भा, वृश्चिकविषे ।

भाषा—शुद्धभैनसिल, कुष्ठ, कज्जीर और सिरसकेबीज, केसर येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पानीसे गोलिया बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोली पानीकेसाथ पिलावे और दस स्थानपर लगावे तो बिल्कुलविष दूरहो ॥ ५२६ ॥

### ५२७ मन्थानभैरवरसः ( प्रथम )

तृतीयपञ्चवक्त्रोद्वेष्टः

र म, र को, श स, र प्र सु, र वि, र र स, र सु,  
चि, र भ, र ष, चि क्र, र क, र का, र सि, दो, र म  
भा, रसायन स, भासकासाधिकारे ।

टि०—र का, दक्षस्थाने कटुमीनियोजिता । रसायनपदप्रदक्ष  
रेणाऽस्य नाम पञ्चवक्त्रेति शान्नाद्वाऽशानाद्वा स्थापित तदेकान्तोऽनु  
चिप, बहुप्रत्यये मन्थानभैरवेति नाम्ना प्रसिद्धस्य योगस्य नामान्तरक  
रणाऽप्युच्यताम् । विश्व अन्तिमभागे रक्पित्त निहन्त्याश्च भास्वर  
स्तिमिर मयेति पाठपरिवर्तनस्याऽपि फल न भावते दृष्टसामर्थ्या रक्त  
पित्ताशकलस्याऽप्युच्यताम् । ईद्वयशुभ्रपदभूतरक्पित्ताशकलत्वेनाऽ  
नुभूय तथा शून्य स्वादित्यनुमीयते परन्तु सर्वत्र तथाकोष्ठकषणस्याऽ  
योग्यताम् ।

### ५२८ मन्थानभैरवरसः ( द्वितीयः )

शुद्धं सूर्यं गन्धं ताग्रमस्य

सर्वं पिष्ट्वा चाऽथ जम्बीरमभ्ये ।

दालायन्ने पाचयेत्तद्विनेकं

पन्नं पिष्ट्वा चाऽपि जम्बीरमभ्यात् ॥ २३५७ ॥

नीत्या भाव्यं धस्यमाणद्रवैस्त-

त्पिष्ट्वा पिष्ट्वा खल्वभ्ये यथावत् ।

हिङ्गुद्रविश्वात्स्वरूपेन्द्रनिम्ब-

जाते द्राव्ये, सर्पनेत्र्या रसेश्च ॥ २३५८ ॥

ग्राहीद्राव्ये मीननेत्रीरसेश्च

द्रावैस्तद्वद्वसपाया रसेश्च ।

हस्तीशुण्डीरूपपादिसुवर्ण-

द्रावैस्तद्वद्वातशले, क्रमेण ॥ २३५९ ॥

द्रावैस्त्वद्वायसीसम्भवेश्च

नित्यं नित्यं चैकमेकं दिनं तत ।

सर्वं पिष्ट्वा लोहपात्रे विमुद्रय

पक्व्या यन्त्रे बालुकायां दिनैकम् ॥ २३६० ॥

विशालिकाचित्रकदीप्यजीर-

कटुत्रयाणां सविपरजोमिः ।

समै विमिश्रं खलु सन्निपाते

रक्तित्रयं मुद्गजयूपमोन्त्रे ॥ २३६१ ॥

चि क्र सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और ताग्रमस्य समभाग लेकर नीलवर्णकज्जीर जम्बीरकेसमं गोलाबनाय चारतद्वपडेमें लपेट पकेजम्बीरकेबीजमेंसे उसीके रसमें दोलायत्रसे एकदिन पकाकर हॉय, अहुसा, इन्द्रजव, नीमकीछात, सर्पक्षी, बाघी, मत्स्याक्षी, इसराज, हस्तिशुण्डी, खजरा, घबूरा, एरण्डके पत्ते और मकोयके स्वरस अथवा हाथोंसे १-१ रोज भावना देकर गोलाबनाय लोहेकेसमुद्रमें बन्दकर ३-४ कपडमिटीदेकर मुलाकर बालुकायन्त्रमें एकदिन पकावे । स्वातन्त्र्यतलहोनेपर इन्द्रायण, चित्रक अबवाहन, जीरा, त्रिकटु, शुद्ध बछनाग, इन-सबका समभागका चूर्ण इसरसकी बराबर मिलाकर रखडोहे । इसमेंसे ३-३ रसी मूगके यूप और भातकेसाथ देनेसे समस्त सन्निपात नष्टहोवेहै ॥ ५२८ ॥

### ५२९ मन्थानभैरवरसः ( तृतीयः )

मृतं शुल्वशिलाकलाऽम्बरयलिं सङ्कुट्य मिथीकृतं,

कुष्ठं नागबलाविदारिकवरीगारुण्डवैरण्डकम् ।

दत्त्वा खल्वतले विमर्दितद्वदं सर्पासुयः स्वे रसे

यष्टैकैकमिता नियद्गुटिका घातञ्च पित्तज्वरेषु ॥

र म, र, वातपित्तयो ।

टि०—अत्र द्वितीयपदे विदारिक वरी पाठा इदमेव तत्र समीचीन  
द्वलेति स्वान्तेन सह सम्भवाद । अत उन्मीयते छन्दो भङ्गमिया विदा  
रिकाश्चस्त्वन्तेन विदारि इति प्रयुक्तमुन्मीयते, अथवा विदारि इति कन्धा  
विदारिकद्वय । क्वरी इति शब्देन छत्रुपन्थिका प्राद्या, अथवा क्वरी  
अग्निना स्वादिनि विद्विराकन्तीयम् ।

भाषा—पारा और ताग्रमस्य, शुद्ध भैनसिल और हरिताल, अम्बर, शुद्धगन्धक येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर कुष्ठ, नागबला, विदारि, बरई अथवा बहुलकीपत्ती, गोखरू, एरण्डनी जड़, इद्रसिद्द इन्द्रयैरुके रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर ३-३ रसीकी गोलियां बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोली उचि-  
तानुपानसे देनेसे वात और पित्तवैरोग नष्टहोतेहै ॥ ५२९ ॥

### ५३० मन्थानभैरवरस ( चतुर्थः )

शुद्धं सूर्यं तथा गन्धं लोहं ताग्रञ्च सीसकम् ।

मरिचं पिप्पलीं विष्वं सप्रमागानि चूर्णयेत् ॥ २३६३ ॥

अर्द्धभागं त्रिषं दद्यान्मर्दयेद्वासरुद्रयम् ।

शुद्धवेराजुपात्रेन दद्याद्गुद्वाद्रयान्मितम् ॥ २३६४ ॥

नवज्वरे महापूषे सन्निपाते सुद्रागणे ।

श्रीतज्वरे दाहपूर्वे गुल्मे शूले त्रिदागणे ॥

वाञ्छितं भोजनं दद्यान्नुयांश्चन्दनलेपनम् ॥ २३६५ ॥

र सु, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, ताम्र और नाग-भस्म, मरिच, पीपल, सोंठ, येसव १-१ तोला, शुद्ध बछनाम ६ माशे लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धक की नीलवर्णकजलीमें मिलाकर अक्षरपके रससे दोरोंज मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली नवम्बर, महापौर सत्रि-पात, दाहण दीतम्बर, दाहपूवंज्वर, शुल्म और त्रिदोषजघ्नुह इनसमये यह नष्टकरताहै । त्रिदोषजघ्न्याधिमें इच्छालुसार भोजन देना । दाह अधिकहो तो चन्दनका लेप करना ॥५३०॥

### ५३१ मन्मथरसः

मुसलीकदलीकरुन्धयाजिगन्धाकसेरकैः ।  
मर्दितं हेमसुताऽम्रं मृपास्थं पुटपाचितम् ॥ २३६६ ॥  
गन्धकेन रसः पिष्टः कल्हाररसमर्दितः ।  
विषम्यो बालुकायन्त्रे चतुर्धामैः क्रमाऽग्निना ॥ २३६७ ॥  
शास्मलीचूर्णसंयुक्तं घासपाण्येकविंशतिम् ।  
भक्षयित्वा चतुर्गुणं गव्यं क्षीरं पिबेद्भु ॥ २३६८ ॥  
सर्वाङ्गोद्वर्तनं कुर्यात्सर्वयैः शास्मलीरसैः ।  
अन्वहं मधुराहारः रमेत स्त्रीसहकरम् ॥ २३६९ ॥

र को , र र स , बाजीकरणे ।

टि०—हेमसुताऽभाषा गन्धरसयोश्च धूपक पाक इत्या एकर मिश्रय्य मुमलीकदलीकरुन्धयाजिगन्धाकसेरकल्हाराणां रसे क्रमश एवैरुदित मर्दित्वा भ्यवहार कर्तव्य इति रहस्यम् । रस्यनशैलीशेषित्यादिर मलयपारतिमानाहूँ हौं रसौ ध्यासिनीं, वस्तुतत्वेक एव रसः । द्रवो सयोगेनैव मूलव्यक्तलक्षितिरिति न धूपकयेनि सङ्गद्वैर्विभावनीयम् ।

भाषा—सुवर्ण, पारा और अम्रकभस्म समभाग लेकर मुसली, कैलेका कन्द, असगन्ध, कसेह इनके रसोंमें १-१ रोज मर्दनकर गोलाबनाय घरावकमुष्टमें बन्दकर ४ पहर क्रमा क्रिसे बालुकायन्त्रमें पकावे, फिर समभाग शुद्धगन्धक और पारेकी कजलीको सफेदकमलके रससे मर्दनकर गोलाबनाय बालुकायन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकाल कर पूर्वसर्वाकारपर इसका मिश्रणकर मुसली, कैलेकाकन्द, अस गन्ध, कसेह और सफेदकमलके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ४-४ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सेमलके सुसलेके ४ माशेचूर्णके साथ खाकर ऊपरसे गायकादूध पीवे । ऐसे ब्रह्मचर्यपूर्वक २१ दिनतक करनेसे बहुतमी स्त्रियोंके साथ रमण करसकाहै इसमें मधुराहारका सेवनकरनाचाहिये ॥५३१॥

### ५३२ मन्मथाभ्ररसः

रसगन्धकयोः प्राहां पलमेकं सुदोषोचितम् ।  
अम्रं निश्चन्द्रकं दद्यात्पलार्द्धञ्च विचक्षणैः ॥ २३७० ॥  
कर्पूरं तोलकं दद्याद्वर्द्धञ्च कोलसम्मितम् ।  
ताम्रं तोलार्द्धकं तत्र निःशेष मारितं पुनः ॥ २३७१ ॥  
लोहकुर्यं सुजीर्णञ्च वृद्धदारकजीरकम् ।  
चिदासीं शतमूलीञ्चैधुरवीजं बलन्तथा ॥ २३७२ ॥  
मर्कट्यतिविषाञ्चैव जातौकोपफले तथा ।  
लवङ्गं विजयावीजं श्वेतसर्जं यमानिकाम् ॥ २३७३ ॥

शाणमागान् गृहीत्येतानेकीकृत्यैव पेपयेत् ।  
गुग्गाद्वयन्तु कर्तव्यं कोष्णं क्षीरं पिबेदनु ॥ २३७४ ॥  
गृहे यस्य घटं नायं विद्यन्तेऽतिशयप्रायिनः ।  
न तस्य लिङ्गशोधित्यमौषधस्याऽस्यसेवनात् ॥ २३७५ ॥  
न च शुक्रं क्षयं याति न बलं हासमायजेत् ।  
कामरूपी भवेन्नित्यं वृद्धः षोडशवर्षवत् ॥ २३७६ ॥  
रसः श्रीमन्मथाऽम्रोऽयं महेशेन प्रकाशितः ।  
अस्य भक्षणमात्रेण काष्ठं जीर्यति तत्क्षणात् ॥  
नाशयेद् ध्वजमङ्गादीन् रोगान्म्योगरुतानपि ॥ २३७७ ॥  
शे र., र सु., र स., रसायने ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ पल, निश्चन्द्र अम्रकभस्म २ कर्प, शुद्धरसकुर १ तोला, ब्रह्मभस्म ४ माशे, ताम्रभस्म ६ माशे, लोहभस्म १ कर्प, विषादा, सफेदजीरा, क्षीरविदारो, काष्ठविदारो, शतावर, तालमखाना, बला, केवाच, अनीस, आविनी, जायफल, लौंग, गाजेकेरीज, सफेदराल, अजवाइन सब ४-४ माशे लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धक की नीलवर्णकजलीमें मिलाकर १-२ रोज मर्दनकर रखछोड़े । अथवा ऊपरकहीहुई दवाओंके अम्रभस्मरससे भावना देकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गरमदूधसेसाथ सेवनकरनेसे अन्याहतवेगहोकर बहुतमी स्त्रियोंका सङ्गकर्तव्यभाभी शुक्र और बल्की क्षीणताको प्राप्त नहीं होताहै । रूढ़ आदमी भी १६ वर्षके सदृश दिलाई देताहै । अग्नि इतना प्रदीप्तहोताहै कि काष्ठकी भी हजम करसकाहै टोटकादिकसे बिघेहुए ध्वजमङ्ग वगैरहको यह नष्टकरताहै ५३२

### ५३३ मलदारणगुटिका

सपाण्डं गन्धकलोहचूर्णं  
नैपालताम्रं त्रिकटो, समेतम् ।  
अफेनकं चित्रकवत्सनाभ  
सदङ्कुणाऽङ्गोह्युतं समानम् ॥ २३७८ ॥  
आकलकं भृङ्गरसेन वर्या  
देवालिङ्गभावनया प्रसिद्धः ।  
कासे ज्वरेऽजीर्णविर्यसृचिरायां  
भ्वासोदरे चैत्रमरोचके च ॥  
जीर्णज्वरौघे मलशोधिवृन्दे  
मूच्छांघ्रिबालप्रहमसिपाते ॥ २३७९ ॥

र (मा) ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोहभस्म, शुद्धमाल गोटा, ताम्रभस्म, त्रिकटु, अफीम, चित्रकसूल, बलनाग, मुना मुहणा, अङ्गोल्फीनङ्ग और अकलकरा समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धक की नीलवर्णकजलीमें मिलाकर भागरा, उडा शूहर और नागवेमरके यथासम्भव स्वरस अथवा बाथोंकी १-१ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे बाल, ज्वर,



५३९ महसिन्दूरसः (मलचन्द्रोदयः) (द्वितीयः)

मैत्र्युक्तनीरेण दिनत्रयन्तु  
श्वेतादिरूपांश्चतुरोऽपि मलान् ।  
यथोत्तरं त्वप्रचलान्मिथस्तात्  
समांशस्तुतेन विमर्दयेत् ॥ २३९३ ॥  
ताभ्यां समानेन सुगन्धकेन  
कृत्वा मसौ कृपिकया पचेत् ।  
सर्वाथकया खलु कोष्ठिकायां  
यामत्रयं शीतलमुद्धरेत् ॥ २३९४ ॥  
मल्लादिचन्द्रोदयमामनन्ति  
सर्वापधेभ्योऽपि प्रधानवीर्यम् ।  
विमृचिकासन्निपतत्विदोपात्  
व्याधीनपाकतुमेनन्यशलम् ॥ २३९५ ॥

रसायनसारः, सन्निपाते ।

भाषा—श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण सोमल समभाग लेकर सबकी बराबर पारा डालकर यहाँतक मर्दनकर कि पाग पि जाय फिर इसकी बराबर शुद्ध गन्धक डालकर बालुकायन्त्रमें रख सर्वाथकरी भट्टीमें ३ पहरकी अग्निदेकर स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती उचितानुपातके साथ देनेसे हैजा, सन्निपात और त्रिदोषजन्याधियां नष्टहोती है ॥ ५३९

५४० महसिन्दूरसः (मलचन्द्रोदयः) (तृतीयः)

स्तुहीपयस्वरूपयस्तु महं  
त्रिभाषितं मर्दनशुष्करूपम् ।  
शुशुक्षुसुतद्विगुणेन शुद्ध-  
गन्धेन घृष्टा च मर्मा विदध्यात् ॥ २३९६ ॥  
तां कृपिकास्थां सिकताऽऽख्ययन्त्रे  
यथा बहिर्धर्मविधि प्रयोद्धा ।  
पिपभ्रुरहोऽर्द्धमतां द्वादीत  
शीशीमुखे मूलकवलीं सुख्ण्डाम् ॥ २३९७ ॥  
अर्द्धद्वितीयं दिनमशितापं  
वर्धरकाष्टस्य द्वादीत तीव्रम् ।  
कृत्वा स्वयं शीतमयोर्द्धशीशी-  
गलस्यचन्द्रोदयमाददीत ॥ २३९८ ॥  
कर्पूरज्जातीफलदेवपुष्प-  
कस्तरिकानकमदेलिकामिः ।

लिह्यादिर्म मासमशक्तशुक्र  
आरोग्यहतां मधुना मनुष्यः ॥ २३९९ ॥

रसायनसारः, सर्वरोगे ।

भाषा—ईशपूर और आकके दूधमें ३ रोज़ सोमलकी टकर मुखादेवे । इसकी बराबर पुष्षितपासा और दूना द्रवगन्धक डालकर नीलवर्णकमलीकर आतशीशीशीमें भरके लुकायन्त्रमें रख आचदे । दोपहरतक शीशीका मुँह खुला करे पुँहकी बाहरजानेदे । अग्न्यन्धक जलजाय तब शीशीका

मुहबन्दकर डेढ़दिनकी बन्बुलकेकाष्ठसे तीक्ष्ण अग्नि देवे स्वाज्ञशीतल होनेपर गुफिसे शीशीको फोड़कर गलेमें लगेहु सिन्दूरको निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती शुद्धकपूर जायफल, लैंग, कस्तूरी, अम्बर और इलायचीके साथ मिलाकर मधुसे एकमहीनेतक सेवनकरनेसे तमामरोगोंसे मुक्तहोता है ५४०

५४१ महसिन्दूरसः (मलचन्द्रोदयः) (चतुर्थः)

मनःशिलाऽऽसितप्रस्तराणां  
मन्दारदुग्धेन सुभाषितानाम् ।  
दिनानि चत्वारि विधाय गोलं  
छायासु शुष्कं च पयोभिर्गर्कैः ॥ २४०० ॥  
समन्ततो ब्रूयद्बलमुच्छ्रयं त-  
च्चाऽऽच्छाद्य शुष्कं निखनेत्पृथिव्याम् ।  
त्रिंशद्दिनान्येव ततो युसुक्षु-  
सूतेन तुल्येन विमर्दयेत् ॥ २४०१ ॥  
ताभ्यां समानेन च गन्धकेन  
दुग्धाज्यशुद्धेन मर्मा विदध्यात् ।  
चन्द्रोदयप्राप्तिकया पचेत्  
दिनानि चत्वार्यवधानचेताः ॥ २४०२ ॥  
घटीश्वतस्रोऽनलके तु गत्या  
रुद्धोपवेगं प्रसिताग्निकेतुम् ।  
स्वयञ्च शीते सिकताप्ययन्त्रे  
कृपीगलस्थं रसमाहरेत् ॥ २४०३ ॥  
अत्यन्तमुग्रं यदि ते विधिरु-  
र्नलीडमर्वाख्यविधे तु प्रयम् ।  
पट्टसप्तविंशधिकजीर्णगन्धं  
सूतं नियुज्यादिह कर्मसिद्धौ ॥ २४०४ ॥  
रसायनसारः, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध मैमसिल, हरिताल और कालासोमल स भाग लेकर ४ दिनतक आकके दूधसे फोटकर गोला बन छायामें सुखाकर आकके दूधमें डुबाकर रखदे । दूध सूखजा पर फिर डुबादे । इसपट्ट जबतक गोलेके चारोंतरफ दो अङ्गुल दूध न चढ़जाय तबतक करता रहे । फिर उसपर कप मिठी लपेटकर ३० दिनतक ज़मीनमें गाड़दे । इकतीसवें पि निकालकर सुवर्णमासदिये हुए शुद्धित पासेको समभाग मिलावे और सबकी बराबर शुद्धगन्धक डालकर नीलवर्णकमलीकर आतशीशीशीमें डालकर बालुकायन्त्रमें चढ़ाकर ४ घटीतक शीशीमें मुँह खुलाकरवे । बादमें डाटलगाकर कपडिमिठी करदे और रोज़तक अग्निदेकर फकावे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकाल रखछोड़े । इसे अत्यन्त उपरीय बनाताहो तो नलीडमर्दयन्त्रों ६, ७, २० अथवा जहाँतक इच्छाहो उत्तमगुण गन्धकजागरण पारा डालनचाहिये तो वैदीहो उग्रता आजायगी ॥ ५४१ ॥

५४२ मल्लादिघटी (प्रथमा)

शतमहं पीतवर्णं पञ्चशान्मिति तथा ।  
दशपञ्चमिति शानं खादिरं तत्र निश्चिपेत् ॥ २४०५ ॥

यमयोः कज्जलीं कृत्वा नागवल्लीरसेन च ।  
पिष्ट्वा कुर्याच्च घटिकां मुञ्जिकाद्वयमानतः ॥ २४०६ ॥  
सार्यं प्रातश्च भोक्तव्या मासेनं पर्णखण्डकैः ।  
गोदुग्धं केवलं पथ्यं फिरङ्गञ्चोद्धतं जयेत् ॥ २४०७ ॥  
र र कौ., फिरङ्गे ।

भाषा—गीतवर्णं शुद्धसोमल ११ कर्षं, कृत्वा ४॥॥ कर्षं  
डालकर कज्जलीकर पानकेरससे १-२ रोजं मर्दनकर १-१  
रत्तीकी गोलिया बनाकर सुवद्रसाम पानमें खानेसे १ महीनेमें  
बड़ाहुआ फिरङ्गरोज दूरहोताहै । इसमें गोदुग्धके सिवाय और  
कुछ खानेको न देना ॥ ५४१ ॥

### ५४३ मल्लादिवटी (द्वितीया)

सितं सोमलं तालकृष्णाऽपि तुल्यं  
व्यङ्गहारवेल्या रसेन प्रमर्द्यम् ।

घटी क्षुद्रमुद्रप्रमाणा निहन्त्या-

ज्यरांश्छीतपूर्वांश्च क्षणेनैव सर्वान् ॥ २४०८ ॥

र र, वै द, वा, ज्वराऽधिकारे । बह्वृट् शिलाक्षारो द्विगु  
णितो योजित नाम च शीतज्वरनिवारणेति स्थापितम् ।

भाषा—शुद्ध सफेद सोमल और हरीताल समभाग लेकर  
दोनोंका अत्यन्तसूक्ष्मचूनेकर तीनरोज करेलेके रसमें मर्दनकर  
छोटे सूप बनाकर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१  
गोली ज्वर आनेसे एकपट्टा पहिले तुलसीकेपत्रे अथवा भाग  
१ रत्ती, भटवटैया १॥ मासा और घट्टेका आपापसा इसके  
साथ देकर २, २ घंटे पानी पीनेको न देनेसे रोजका, कृतीयक,  
चातुर्दिक और तमाम विषमज्वर नष्टहोतेहै । टि०—यद्यपि  
मूलमें करेलेका रस बताया हुआहै परन्तु उसकी जगह कबोकेका  
रस दिया जायतो अधिक काम करताहै यह हमारा निजी  
अनुभवहै । विगड़ेहुए प्रतिरिवायमें १-१ गोली गायके घोटोण  
दूधसे देनेसे बहुत अल्पसमयमें तमाम दोषोंसे निर्मुक्त होजा-  
ताहै । परन्तु पहिले मलमुद्दि करलेना और ताजे प्रतिरिवायमें  
न देना उससमय उष्ण औषध देनेसे कफशुद्धहोनेकेकारण  
आपासीसी अथवा अर्थावभेदसे आगमी पीडितहोताहै ।  
कदाचिद् मूलसे ऐसा होगयाहो तो सुलब्धी, बीदाना, गाजुनी,  
बनारसा, रेशापतमी, द्राक्ष, और लम्बोडा १-१ तोलेलकर  
जबड़कर इसकी ७ पुडिया बनाना । एकपुडिया १० तोले  
पानीमें रातको भिगोदेना सुबहमें थोड़ा ममलकर छानकर  
शायर डालकर पिलादना और दूसरी पुडिया भिगोदेना उसे  
सार्यकालमें पिलाना । ऐसे ७ पुडियोंके समाप्तकरनेसे नवीन  
प्रतिरिवायमें उष्णोपचारमें पैदाहुई तमामशिकायतें दूर होजा  
तीहै उसी क्षमको प्रमाणात (उत्पन्ना) मेथी देनेसे बहुत  
गुण होताहै ॥ किसीको स्वाभाविक श्वाग काश हो और शीतो  
पचार प्रतिकूल हो तो शङ्का काय करके देना ॥ ५४२ ॥

### ५४४ मल्लादिवटी (तृतीया)

गायत्रीशी वलिमहः धृग्वहचतुष्टयम् ।

समुद्रान्तरसेः कार्यां गुडाः सपणसोदरा ॥ २४०९ ॥

सन्धिवातगलकुष्ठदुष्टाडीमणज्वरान् ।

फिरङ्गशोथपवनकफमान्द्योदरापहाः ॥ २४१० ॥

कासाश्वसनहिष्कादीशिघ्रन्येव न संशयः ।

अनुपानं जलं शीतं तैलाम्लादि विनर्जयेत् ॥ २४११ ॥

सि मे. म, वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—कृत्वा, शुद्धपारा, गन्धक और सोमल समभाग  
लेकर नीलवर्णमलीकर जवासाने रससे १-२ रोजं पोटकर  
शरसोंके बराबर थोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली  
टैडजलेनयाथ देनेसे सन्धिवात, गलितकुष्ठ, दुष्टाडीमण, धावने  
उत्पन्नहुआ ज्वर, उपदंश, सूजन, वातु, कफ, मन्दाग्नि, जलो-  
दर, कास, श्वास, हिवकी बगैरहको यह नष्टकरतीहै इसके  
अयोगमें तैल, खट्वाई बगैरह न खाय ॥ ५४४ ॥

### ५४५ मसूरिकारी रसः (मूर्च्छितरसः)

विल्वपत्ररसेनैव मूर्च्छितः पारदेश्वरः ।

हिलमोचीरसेनैव पीतो मधुसमायुतः ।

मसूरीं सत्यंजं हन्ति हस्तियज्ञां सत्यदेहजाम् ॥ २४१२ ॥

र वा, मसूरिकाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारेको वेलपत्रके रसतो यहातक मर्दनकरे कि  
मूर्च्छित होजाय । इसमेंसे १-१ रत्ती यजुजा अथवा कुरदुरके  
रस और मधुके साथ देनेसे अक्षिपदन्त धातुओंमें व्याप्त मसू-  
रिका को यह नष्टकरताहै ॥ ५४५ ॥

### ५४६ महागन्धः

रसगन्धकयोर्भागं गन्धमूलीरसं तथा ।

तत्समं मर्दयेत्प्राप्तो भाण्डे यत्नेन धारयेत् ॥ २४१३ ॥

भूमौ निधापयेन्मामं ततः पश्चात्समुद्धरेत् ।

गुटिका मुद्रमानेन भक्षणीया दिनेदिने ॥

पणमण्डलानि सेवेत महाकल्पो भयङ्करम् ॥ २४१४ ॥

र. शा, रसायने ।

टि०—अत्र गन्धमूलव्यतिरिक्ता प्रत्यवारम्ब वा वा अभिप्रेतेति न  
निश्चयःपठनम्, टीकायास्तुगन्धारिण्यत्नमस्य यत्नेन प्राप्तुमात्रेति  
कथोक्तिः ।

भाषा—समभाग शुद्ध पारे और गन्धकको नीलवर्ण कब-  
लीकर अनन्तमूल अथवा कपूरकाचरीके रसमें दोतीनरोज मर्दनकर  
किमीपात्रमेंडालकर एकहाथ घड़े गर्भमें दबादे । एकमहीनेदेबाद  
निकाकर गुमरावर थोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१  
गोली दुपवर्गदेनयाथ ६ मण्डल (१९४ दिन) तक खानेसे बगै-  
रकलादिद्वये निरुहोकर युक्तम्याको प्राप्तहोताहै ॥ ५४६ ॥

### ५४७ महागन्धकः

रसगन्धकयोः कर्षं प्राशमं नुशोषितम् ।

ततः कज्जलिकां कृत्वा मृदुपाकेन माधयेत् ॥ २४१५ ॥

जातीफलं तथा कोषं लज्जाम्परिपश्येत् ।

सिन्धुपारदलत्रेयमेलार्थाय तथैव च ॥ २४१६ ॥

एपाञ्च कर्ममात्रेण तोयेनाऽथ विमर्दयेत् ।  
मुक्ताग्रहे पुनः स्थाप्य पुटपाकेन साधयेत् ॥ २४१७ ॥  
घनपङ्क्तं वह्निर्लिप्त्वा पुटमध्ये निधापयेत् ।  
गुञ्जापट्टप्रमाणेन प्रत्यहं भक्षयेन्नरः ॥ २४१८ ॥  
एतत्प्रोक्तं कुमारानां रक्षणाय महोपधम् ।  
ज्वरघ्नं दीपनञ्चैव यलवर्णप्रसाधनम् ॥ २४१९ ॥  
दुर्बलं प्रहणीरोगं जयत्येव प्रवाहिकाम् ।  
सुतिक्ताञ्च जयेदेतद्रक्षाशो रक्तसम्भवम् ॥ २४२० ॥  
पिशाचा दानवा दैत्या बालानां विघ्नकारकाः ।  
यन्त्रोपधवरस्तिष्ठेत्तत्र सीमां ॥ यान्ति ते ॥ २४२१ ॥  
बालानां गद्युक्तानां स्त्राणाञ्चैव विशेषतः ।  
महागन्धकमेतद्वि सर्वन्याधिनिषृद्नम् ॥ २४२२ ॥  
र स , मै र , र सु , र च , अतिसारः ।

टि०—अयं रत्नो बहुलवर्णकर्षणं सह मापोमित्या दत्तो रक्तप्रदे-  
रुक्तिकार्यासी भवति, मायं मय्याहे पुराहि चेति प्रयोगं वर्तव्य ।  
द्वित्रिदिनाभ्यन्तरे एव महाप्रवाह रणदीति शुभीभिराकल्पनीयम् ।

भाषा—१-१ कर्ष पात्रे और गन्धककी नीलवर्णकजलीकर  
मुटुपाककी पर्पटी बनाले फिर जायफल, जाबिरी, लौंग, नीम  
तथा छमालकेपत्ते, इलायची इनप्रत्येकचाचूर्ण १-१ तोला लेकर  
पर्पटी मिलाय पानीसे १-२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय मोतो-  
कीसीपमें भरके सम्पुटकर दो २ अङ्गुल कालीमिट्टी लगाकर  
जलतेहुए कण्डोमें रखद । जब गोला लालहोजाय तब निम्ना  
लकर रखले । स्वाहशीतलहोनेपर ६-६ रत्नीकी गोल्या बना  
कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाय  
देनेसे ज्वर, दाबी ( प्रसारिका ), दुर्निवार प्रहणी, सुतिकारोग,  
रक्षाश इत्यादि समस्त व्याधियोंको दूरकरताहै । और यच्चोके  
तनामरोगोंको नष्टकरताहै । जिसपरमें यह औषध रहताहै वहा  
बालप्रहोंका तथा अन्य मृतादिकोंका यच्चोपर असर नहींहोता  
इसीतरह जियोंके प्रदरादि समस्तव्याधियोंमें यह अत्यन्त  
उपकारीहै ॥ ५४७ ॥

### ५४८ महाज्वालमरीचिप्रयोगः

मरिचानि समानीय महिषीपित्तमध्यतः ।  
शोषयित्वा ततः पञ्चाङ्गवयित्वा समुद्धरेत् ॥ २४२३ ॥  
अश्वगन्धावत्सनाभरसं दद्यात्पुटं युधः ।  
रूद्राणं चारिणा पिष्ट्वा ततो दद्यात्तथाऽऽतपे ॥ २४२४ ॥  
हरितालं तथा दत्त्वा दिनाग्रे शोषयेद्भृशम् ।  
गन्धकञ्च तथा देयं चित्रमूलं तथैव च ॥ २४२५ ॥  
जयपालं तथा दत्त्वा धुतूरस्य फलं तथा ।  
भृङ्गीरसं तथा दत्त्वा शोषयेदातपे सुधीः ॥ २४२६ ॥  
मधुनाऽपि तथा शोष्यं सर्वं यामचतुष्टयम् ।  
शोषयेन्महिषीपित्तमध्ये सप्ताहमादरात् ॥ २४२७ ॥  
चतुर्दिनं वराहस्य मत्स्यपित्ते दिनद्वयम् ।  
एवं सुविधिना शृत्वा शुष्नीभूतानि कारयेत् ॥ २४२८ ॥

एकैकं दापयेद्दीमान् रोगाणां तत्त्वविद्विषकम् ।  
असाध्ये मानवे दद्यात्सन्निपातसमाकुले ॥ २४२९ ॥  
महाज्वरे शैत्यशून्ये महीभूते च तिष्ठति ।  
अरिष्टसन्निपाते च जलोदरमहारुजि ॥ २४३० ॥  
पादे पादभवे शोफे महाहिमसमागमे ।  
दिग्भ्रमरं तथाकाशनासिनेऽपि प्रशस्यते ॥ २४३१ ॥  
जले प्रपतिते वाऽथ कुशासनमहीगते ।  
रोगिणां रोगशान्तिः स्यादेकैकस्य च भक्षणात् ॥ २४३२ ॥  
कालञ्च वञ्चयत्येवः कुटिलेषु न दापयेत् ।  
इति प्रकाशितो योगो ज्ञानः पर्यातिर्यतांश्वरैः ॥ २४३३ ॥  
र हा , सन्निपाते ।

भाषा—धोईहुई मिचं लेकर भेंसे पित्तमें डालकर सुखाले ।  
इसीतरह असगन्ध और बलनामके हाथसे १-१ पुट देकर इसको  
बराबर मुहागेको पानीमें धोलकर एक पुट देवे । फिर मिरचोंसे  
दसवामाग पानीमें पीसेहुए हरिताल और गन्धककी १-१  
भावना देकर चित्रमूल, जमालमोदा, धतूरेकेफल, भगार,  
मधु इनप्रत्येककी १-१ रोज भावना देकर सुखावे । इसके  
बाद भेंसेके पित्तेकी ७ रोज, सुजरके पित्तेकी ४ रोज और  
मछलीके पित्तेकी २ रोज भावनाए देकर अच्छीतरह सुखकर  
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ मरिच प्रमाण असाध्य सन्निपात,  
महाज्वर, सर्वाङ्गशीतान, वेदोशी, अरिष्टयुक्तमरिगात, जलोदर,  
पादरोग, पादशोथ येसब नष्टहोतेहैं । अत्यन्तशीत हिमालय  
आदि प्रदेश अथवा ऋतुमें, जलमें डूबेहुएको तथा मरणासनको  
देनेसे तत्काल सम्हाहोतीहै । यह कालको बञ्चित करताहै इसे  
कुटिल आदमियों को न बताना ॥ ५४८ ॥

### ५४९ महावलविधानाश्रय

गगनं फल्लसदृशं स्निग्धमशोषदोषरहितञ्च ।  
बहुशोर्ध्वाऽलसुपमलैर् युक्तं वले निबद्धञ्च ॥ २४३४ ॥  
दत्त्वा सलिलं तावत्करणे घर्षञ्च पङ्कतां नीतम् ।  
निपुणं गृहीतमुदकादजनपुञ्जयनीभूतम् ॥ २४३५ ॥  
द्वित्रिवारपरिपुटितं रवितरमथिताऽल्पदुग्धकादिरसे ।  
चूर्णितमिदं शिलायां कुडचमेकं तदादाय ॥ २४३६ ॥  
प्रथमं चतुरष्टगुणे गोमूत्रे वा पचन्मृदुज्वालम् ।  
निपुणोर्वह्निं दत्त्वा समुद्रयामं तथा दुग्धे ॥ २४३७ ॥  
रूक्ष्णं विडङ्गचूर्णं गगनार्थं त्रिकटुसम्भवञ्च रजः ।  
त्रिकटुसमं त्रिफलोत्थं पृथक् तद्वद्वञ्च वन्ध्यायाः ॥ २४३८ ॥  
नतकरिकर्णीं वृद्धरक्तानलनीलिकाणाञ्च ।  
मूलस्य तालमूल्या रक्ताश्वमारहपुषाणाम् ॥ २४३९ ॥  
पत्रकसुवाजिगन्धाशतावरीमूलसम्भवञ्चाऽपि ।  
अमलिनपुनर्नवार्कतकार्कीरविलामूलानाम् ॥ २४४० ॥  
चूर्णं कण्टकपर्णीमिवं साऽमृतभृङ्गराजस्य ।  
निबृत्तापयास्त्रिभुवनविजयस्य केशराजस्य ॥ २४४१ ॥  
सुविदितपाकं शीतं गगनचूर्णञ्च भाजने सर्वम् ।  
समधुसितैरनुसृपेः समिधस्यसर्पिषोऽसहित्वेन ॥ २४४२ ॥

पिष्ट तदनुशिलाया सुस्निग्धमाण्डे निघाय सुविधि  
सात्साह सुविनाता गृह्यायाद्वारोऽध्वरु कल्पम् २४३३  
मृदुतृप्तवमनचिरेक वैद्यप्रद्वेणे सात्म्ययागेन ।  
याति शरीरविशुद्धि दीपितदेहानला नीररु २४३४  
पूजितगुरदेवाऽनलवितथिसिद्धसाधुमान्यजन ।  
स्निग्धोद्वेगपरितुप्त दीनग्लानिसहित सत्त्व २४३५  
स्विरसङ्कल्पविनात प्रशातसर्वेन्द्रिय सर्वोत्साह च ।  
परिहृतपरोपकार परिहितप्रासा समुज्जितकाय ॥  
धृष्टवानश्रायाद्वेपथराजस्य मायकान्तरी ॥  
पुण्ये दिवसे कृत्या शुटिका तथा भक्षये प्रात ॥ २४३६ ॥  
अनुपान शीतजलं सततमत्रातिभोजन नाऽत्र ।  
हिताहिताद्य सुखद शास्त्राम्लदधिपरिहाणञ्च २४३७  
अतितिककटुकपायश्चाराऽभिष्यन्दितीक्ष्णरूपाणि ।  
घातलघिदाहिदुर्जगुरुष्यसम्पानि घस्तुनि ॥ २४३८ ॥  
पान दूराभ्ययन रतिमतिशातल दियास्वयम् ।  
प्रत्युपदेश द्वेयं घातातपजगणरणीकृतान् ॥ २४३९ ॥  
चिन्ताशाक्यिपाद्व्यायाममदकराभादकरान् ।  
पिशितश्चानूपदेश शातपान धर्जयेद्विनाशम् ॥ २४४० ॥  
एकमयूरकल्पकतिचिरिदासराजमपसारञ्चम् ।  
जाह्नलपिशित इयामं माप पणालञ्च घाताकम् २४४१  
शुक्लत पिशितरस सैन्धव सधृत सधान्याकम् ।  
स्वस्तिकपक्षिकलहितशालीनतिनिस्तुपान्मुद्रान् ॥  
मनुकफलानि द्राक्षा पनरात्रफलानि चैव शस्तानि ।  
स्वादु च परिणतिमधुरकेलिकरञ्चाऽपि घासय तापम्  
प्रतिस्नाहकमतल माञ्ज प्रसज्येज्जमानम् ।  
सुविचिचाराऽभिहा भोजनस्य पर्यन्त भवति ॥ २४४२ ॥  
रसायनराज कुर्वन्मनुजो मनाऽभिलाष प्राप्नोति ।  
नागाहुनोपदिष्ट पण्मासापविहितविधिना च्चा २४४३ ॥  
अपगतसरलयाधि विलिपितवर्जिताऽतिमहातजा  
शूर ग्राहो याम्ना नियर्गपमाज्जनो दृष्ट ॥ २४४४ ॥  
मदमत्तबुज्वल सौकुमार्यास्ताहसम्भ्रम् ।  
पादशयपयया स्वादु वस्त्रमृत् सुचिरजायनायेत ॥  
जावेद्वर्षसहस्र सतताभ्यासाद्य सयसपथ ।  
चन्द्रकमनायकाति पवनयला घामसमधामा २४४५ ॥  
यददितिसाग्राहाऽपस्मरसिष्यमभशापान् ।  
कासश्वाससिष्यप्रहणागुल्मादमरीशायान् ॥ २४४६ ॥  
प्रदरजलादभस्मकयमिपामास्त्रीपदप्रमेहाद्य ।  
विषधमगन्दरुघ्रविषमरुपाण्डुरागाश्र ॥ २४४७ ॥  
शुतिवदनादरालचनमस्तवरागान्समृष्टच्छाद्य ॥  
आगु रसायनराज क्षमयति युष्क्यां प्रयुक्तस्तु २४४८ ॥  
साम समीरमुपहन्ति वर्षे सपित्तं  
साध्रञ्च पित्तमय घातपरिहामान्यम् ।  
घातप्रकापनितान् रक्तज्राक्ष सवान्  
पित्ताद्रघाद्य निखिलान्स गदास्तथैव २४४९ ॥  
य स रसायनाधिकार ।

भाषा—धान्याध्वरुको बबलीके सन्ध शरीक पीत दूध  
और मोरसुष्णिकी चउ साथमें डालकर बन्नेमें पोष्टी बनाय  
पानीमें मसलकर निकाल । पानीको १-२ रात्र रखकर  
नितरकर अलगकरद और नीच जमेहुए अध्वरुको धूममें सुखाद ।  
फिर आक्नेद्वधमें २-३ दिन घोटकर गिजिया बनाय सुखाकर  
गजसुष्णिकी आच दे । एत २-३ आच देकर सिद्ध कियाहुआ  
अत्रक ४ फल केसर इधमें चौगुना अथवा अठगुना गाम्भ  
देकर मन्द आचमें सुखाव । इसीतरह गोदुग्ध डालकर ४ पहरकी  
मृदु अभिया पकावे । इसक बाद अध्वरुसे भाषा आपा  
विड्ड भिड्ड और निफलाका चूष ढाके फिर बापयेखेसेना  
अ तगर इतिस्नग्धपणा विधारा रक्तचित्रक कालादाना  
तालमरी शालकेनेरकेपल श्राक पनन अमग्न घातावर  
निमरीकेबीच पुननवा आक अरगी, बलामूल भक्तैया  
मिलेय भगरा मिसेत भाग कालाभगरा, बरुन बीजमिल  
कर ५ फल उसीपाकमें मिगके पकाव । पादहोनेपर उतारकर  
छाहोनेपर इनसबकीमरार सर और ३२ तोला घी तथा  
गोली बघनेलायक मधु डालकर २-३ पहर घोटकर एकतीव  
होनेपर चिकनेवनम रणजोह । निपुणवैद्यकीसलाहम सात्म्य  
द्वयस मृदुवमनचिरेक केसर कौष्ठरी गुडिहरक अभिसो प्रतीत  
कर शुभ देव अग्नि अतिथि सिद्ध साधु और मान्यजनोरा  
सत्कारकर धडा रसताहुआ इधमेंसे भाउमार्गे दवा हाव ।  
दवा पवनपर पतुच बावल और दूधप्रवृत्ति साधक भोजन  
कर । दीर्घतर दवारकर बुत्तावोंस २८ । राक्षस स्थिर रक्त  
इन्द्रियोंको कावुकरे सवमें भवना आत्मको देवता हुआ  
यथाशक्ति परोपकार करे और कौबरा छोड़ । दवाके ऊपर  
व्यास स्नानर टन जलपीवे भोजन नियमन करे । नाक  
भ्रम्य दवा इधे रहित और हिताहितका विचार करताहुआ  
पथ्यका पात्रकर । अच्युतकररा कडुआ कटीला धार,  
अभियन्दि तीक्ष्ण रूपा बावल विनाही दुजर और भारी  
पदायीका सवन न कर । मयगन मोरस पना अच्युतवि  
योंम लीनहाना अधिक टनन दिनकामोना जवावना  
द्वेप अच्युतवावु और धुत्ता सवन जापरण चिन्ता नाक  
विषाण कानस मद और टन्मादराकपणन नप्राय  
देवानयमास तीव्रप्रवृत्ति मयप्रवृत्ति पीनकपणन इनगरका  
छोड़ । हरर मयूर लता तील गरगोण बहरा मडा  
सारव और तयाम जगनीमाल कालेउत्तर परत बान  
मग मोगस सैधानमक या धनियां मुरकातीनाक साठ,  
लाल और सफेद बावल मूयको पुर्णहृदाल गुपरी डाण  
पक और माठ आयस्कृत रागनेन व्यान्त्र और पाधन  
मपुर पणन उत्सादजनक वार्ध ऊरराद्याहुआ बगनहडा  
पानी दख प्राम्त्व । इस दवाका मात्रा प्रतिदिन अपवा  
प्रतिमासाह बनाकर अथवा त्रैमासिक ग्यत्रमासे १ मरी  
नम पूर्वोक्त समस्त दवाको रोजन करनाचाहिये । यह नगानुन  
वा कडाहुआ रणयवह । इसका यथाशक्ति । मित्र



सेवन करनेसे समस्तन्यायि और बलीपलितसे रहित होजाताहै । अत्यन्त तेजस्वी, शूरवीर, विद्वान्, बाबाल, त्रिवर्णकासाधन करनेवाला, बलसे परिपूर्ण, मुकुमारता और उत्साहसे सम्पन्न, १६ वर्षकी आकृतिपुत्र बहुतायी प्रजाबाला होकर हज्जारवर्षकी आयुको भोगताहै पूर्णमासीके चन्द्रमासीतह दिव्यकान्ति और पवनकेसहस्रावेगवाला होजाताहै । यहूद, अतिमार, श्रीहा, अपस्मार, सिम्भ, राजयदम, शोष, काण, श्वास, विसर्प, ग्रहणी, गुल्म, पयरी, शोथ, प्रदर, जलोदर, भस्मक, वमन, पाया, श्लिषद, प्रमेह, विमन्य, भगन्दर, कुष्ठ, विषमञ्जर, कान, मुह, उदर, नेत्र और मस्तकके समस्तरोग, मृदङ्गच्छू, बायु, कफ, पित्त, रक्तपित्त, मन्दाग्नि, चात, पित्त और कफके प्रकोपसे होनेवाले गमस्त उपद्रव, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५४१ ॥

#### ५५० महारसः

भस्म मृतस्य तीक्ष्णस्य मरिचाज्यं समंसमम् ।  
स्तुक्क्षीरकाकमाचीभ्यां मर्दयेद्याममात्रकम् ॥२४६४॥  
निरुद्धं भूधरे पाच्यं दिनेकेन महारसम् ।  
निष्कादं भावयेद्यानु पाययेद्विषंयुतम् ॥  
सर्पाक्षीं कर्पमानागु पीत्वा घातातिसारानुत् ॥२४६५॥  
नि. र., र. को, र. सु, वै. चि, चि. र. भ., अतिसारे ।

भाषा—पाद और गोलाद्वीभस्म, मरिच और धी समभाग लेकर घृहकेदूध और मकोयकेरसे १-१ पहर मर्दनरंगोलावनाय सूषयप्रमे एकदिनपकावे । स्वाशशीतलहोनेपर निनालकर रख-छोड़े । इसमेंसे २-२ मासे दहीकेसाथ मिलाकर १ वर्ष सर्पाक्षीका पूण डालकर पीनेसे वातातिसार नष्टहोताहै ॥ ५५० ॥

#### ५५१ महार्णवरसः

विषं सूतं गन्धकञ्च तालकञ्च विमर्दयेत् ।  
घम्रदन्तीरस मर्चं गुटिका मापमात्रिकाः ॥ २४६६ ॥  
एकैकां भस्मयेद्यस्तु मलयजविनाशिनीम् ।  
हरते सर्वरोगांश्च महार्णवरसो मतः ॥ २४६७ ॥  
र. हा., ज्वरादधिकार ।

भाषा—शुद्ध बछनाग, पारा, गन्धक और हरिताल सम-भाग लेकर नीलवर्णकबलीकर मराठीके रससे १ रोज मर्दनकर उदरपरावर गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे मलयजप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५५१ ॥

#### ५५२ महामरवरसः

मृतं सूतं मृतं ताम्रं मृतंलोहं मृताऽध्रकम् ।  
मृतं कान्तं समं खल्वे मर्चं हंसपद्मरसे ॥ २४६८ ॥  
विशोष्य घालुकापयन् पाचयन्त्यन्तरं दिनम् ।  
एक्यं विपूर्णयेतखल्वे कालपित्तेन मर्दयेत् ॥ २४६९ ॥  
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वेद्या सन्निपातजिन ।  
महामरवयनामाऽयं रसो भेरवयनामतः ॥ २४७० ॥  
३. चि, ज्वं ।

भाषा—पारा, ताम्र, लोहा, अध्रक और कान्तलोह इनकी भस्मे समभाग लेकर हंसराजके रसमें एकदिन मर्दनकर मुखाय आतशीशीशीमें भरके बालुकायन्त्रमें १ दिनरी आचड़े । स्वाशशीतलहोनेपर निनालकर जल्लीसुअरके पित्तेसे मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानके साथ देनेसे यह सन्निपातादिकोंको नष्ट करता है ॥ ५५२ ॥

#### ५५३ महेंद्ररसः ( प्रथमः )

संगुञ्जं गरलं सूतं तालकञ्च मनःशिला ।  
गौरीपापाणकं तुल्यं सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ॥ २४७१ ॥  
घटूरपञ्जरसे दिनेकं मन्दवह्निना ।  
दोलायन्ने विषाव्याऽथ रुद्धवृण्यन्तु कारयेत् ॥ २४७२ ॥  
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यमनुपानविशेषतः ।  
सन्निपाताग्निहन्त्यागु महेंद्रः स रसोत्तमः ॥ २४७३ ॥  
वै. चि., ज्वरे ।

भाषा—शुद्ध बछनाग, पारा, हरिताल, मैनसिल और संशिया समभाग लेकर नीलवर्णकबलीकर घटूरकेपतोंकेरसे १ रोज मर्दनकर गोलावनाय कपड़ेमें बांधकर दोलायन्त्रमें धतूरेके रसमें १ दिन मन्दवह्निसे स्वेदितकरे । फिर मुलाकर पूर्णरुद्ध शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपात और सम्पूर्णवातन्यायिया नष्ट होतीहै ॥ ५५३ ॥

#### ५५४ महेंद्ररसः ( द्वितीयः )

एकभागं रसं गुञ्जं हेमभागसमन्वितम् ।  
द्विगुणं गन्धकं दद्याद्विष्योपधिषिभाधितम् ॥ २४७४ ॥  
चक्रराजेन तं पक्त्वा याचयेत् स्थिरायते ।  
भृङ्गराजेन सम्भाव्य धनीयाट्टिकां गुभाम् ॥ २४७५ ॥  
महेंद्ररसनामाऽयं कामलादिगदापहम् ।  
निहन्ति सकलाग्रोगान् कामणेन समन्वितः ॥ २४७६ ॥  
र. का, पाण्डुरोगादधिकार ।

भाषा—शुद्ध पारा और सोनेके धरे १-१ भाग, दुग्गन्धक २ भाग लेकर पारमें १-१ सोनेकाधरे डालकर घोटला जाय, जब इसकी पिटिका होजाय तब थोड़ा २ गन्धक देकर नीलवर्णकबलीहोनेता घोटहर दिव्योपधियों ( रवेन्द्रासन शिमे सोमदेवने सोमवन्दीप्रभृति ६४ वनस्पतियों गिनारं हैं उनमेंसे १-२ अथवा जितनी जित्वासें उठें ) के रसमें एा कबलीको १-२ दिन मर्दनकर गोलावनाय चरयन्त्रमें पार अमिष्यायी होनेतक पकावे, फिर भंगरेकेरत्ती मात्रात्त देकर १-१ रत्तीकी गोलिये बनाकर छायागुनकर रखछोड़े । इनमेंसे १मे ३ गोलीतक अमिषरापक देकर तप्तोष्णहृत्पुन केसाथ देनेसे कामलादि समस्तरोगोंको यह नष्ट करताहै । टि०—जोते कीपमें एककातित कम्पुट आननपक रने बना कर नीचे दो बहुत बान्द रगकर गन्धुको ररा बागुमे भर और उगले गर्ने आंचें । यह चरयन्त्र करतारा है ॥ ५५४ ॥

## ५५५ महोदधिवटो ( प्रथमा )

एकैकं विपस्तृतञ्च जातीटङ्कं द्विकं द्विकम् ।

कृष्णाग्रिकं विश्वपट्टकं द्विकं गन्धं कपर्दकम् ॥२४७७॥

देवपुष्पं घाणमितं सर्वं सम्मये यत्नतः ।

नाम्ना महोदधिवटो नष्टमग्निं प्रदीपयेत् २४७८ ॥

र. सं., रसायनसं., र. सु., ना. वि., भ. र., यो. म., र. क., र. चं., नि. र., र. मं., र. वि., र. का., अमिमाम्ने । रसकाण्डेनो द्वितीयस्थाने अग्निकुमारैरिति नाम लक्ष्यते ।

भाषा—शुद्ध बध्नाग और पारा १-१ भाग, गन्धक, कौडीमस, जायफल और मुहागा २-२ भाग, पीपल ३ भाग., सोंठ ६ भाग., लौग ५ भाग, लेह्र सब्बा बारीक चूर्णकर पारं गन्धकरी नीलगणैकजलीमें मिलाकर चित्रमूलद्राघ, पान, अथवा अदरक रगते ३-३ रसीवी गोलिए बनाकर रग छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुगानकेसाथ देनेसे यह नष्टामिने प्रदीप्त करतीहै ॥ ५५५ ॥

## ५५६ महोदधिवटो (द्वितीया)

दन्तीपीजमकलमयं सवह्नं शुण्डालवृक्षं समं,

गन्धं पारवटङ्गुणञ्च मरिचं धीवृजदारं विषम् ।

एतत्वे वण्डयुगं विमयं विधिना दन्ताग्रैश्च भोजनाः,

देवाः पञ्चदशानुनिगुक्तजलेन्मेषा विधा चिर्यकः ॥

त्रेधा चाऽऽर्द्रकजैरसैः शुभधिया समैव चाऽऽवेगितः,

पश्चाच्छुष्ककलायसम्मितपटो कार्या भिषक्सम्प्रता ।

शुद्धांश्च जनयेत् त्रिशूलशमनी जीर्णज्वरार्थमग्निं,

कासादोषकपाण्डुतोदरगदस्तांमामगद्गादिनी ॥

वस्त्र्याटापहलीमकाऽऽमयहरी मन्दाग्निसन्दीपनी,

सिलेयं तु महाधुपिकटिता मयामयज्जीमदा२४८१

एतायना., र. सु., य. यो. त, नि. र., यो. र., र. का., र. सं., अमिमाम्ने । र. का. शुलारीतिनाम ॥

दि०—रौद्रगामध्वनेऽयमेवपाठा निदिशोऽस्मि तथ भवनाया निम्नग्वाने शुद्धागर्वागन्त्याप्यत्र मध्यं न कऽपि दानि प्रनीयते पाठस्त्वेक एव रथापनीय ।

भाषा—शुद्धमाल्मोडा, चित्रकमूल, सोंठ, लौग, शुद्ध पारा, गन्धक और मुहागा, मरिच, विपारा, शुद्धबन्नाग सब समभाग लेह्र बारीकचूर्णकर पारमन्धकरी नीलगणैकजलीमें मिलाकर दोपहर राती पीपलर दन्तीमूलके रगही १५ भागना. देव, निर नीव, चित्रक और अदरग इनप्रत्येककी क्रममें तीन ३ भावनाएं देकर अमिल्लासके गुदेको पानीमें घोलकर ७ भावनाएं देकर सुरोमटरबाबर गोलिए बनाकर रगछोड़े । इन मेंसे १-१ गोली उचितानुगानकेसाथ देनेमें मन्दाग्नि, दुल, जीर्णज्वर, रागी, अरिच, पाण्डु, उदररोग, आमबात, बलिन-गोध, हरीमक, इत्यादि तामररोगोंको यह दूरकरतीहै ॥ ५५६ ॥

## ५५७ महोदधिवटो ( तृतीया )

रसं गन्धं तथा देम यस्त्रिदुमर्मातिक्रमः ।

गृहीत्या समभागेन मयेयन्निषफलाभ्युना ॥२४८२॥

ततो रक्तिमिताः कुर्याद्वटोऽभ्यायाप्रशोषिताः ।

एकैकं दापयेदासां यथादोषानुपानतः ॥ २४८३ ॥

रुद्रान्धत्वमन्ध्रवृद्धिं तथाऽन्यानन्तरजानादान् ।

यातपित्तकफोत्थांश्च सर्वान्हन्ति महोदधिः ॥ २४८४ ॥

भे., र., अन्यद्वदधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सोना, हीरा, मूंगा इनकी-मम्म और मोतीकी पिटी गमभाग लेह्र नीलगणैकजलीकर चिकलके रगमें २-३ रोज मर्दनकर १-१ रातीकी गोलिए बनाकर छायाभुजकर रगछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुगानकेसाथ देनेसे अन्ध्राक्षीध और अन्ध्राक्षिप्रपति ममल आंतोंकेरोग तथा पान, पित्त, कफोत्थ समस्तरोग नष्ट होतेहैं ५५७

## ५५८ महोदयप्रत्ययसारः

रसप्रस्तसमुद्रागन्धकस्य पलप्रथमम् ।

मृतमृताऽमृताप्राऽयः कर्षं कर्षं पृथक् पृथक् ॥२४८५॥

पलं हिङ्गुलचूर्णस्य माक्षिकस्य पलप्रथमम् ।

पलं कम्पिहकस्याऽपि विषस्याऽर्द्धपलं तथा ॥२४८६॥

समाहं मयेयस्यैव द्रव्या चूर्णांर्द्रकः मुहुः ।

ततस्त्रिगोलकं द्रव्या समाहं वातपे क्षिपेत् ॥ २४८७ ॥

शुद्धचूर्णं शिलाचूर्णं लिस्फेदहुत्तिकाधनम् ।

त्रिपलं गन्धकं द्रव्या श्लोक्षपापय च गोलकम् २४८८

गोलकस्यापरिष्ठाद्य क्षिपेत्तालपलप्रथमम् ।

मन्त्रधातिप्रयत्नेन दद्याद्गजपुटं खलु ॥ २४८९ ॥

स्याद्गृहीतलमाहृत्य गोलकं लेपनैः सह ।

विचूर्णं समथारं हि विपतित्नुपुल्लीङ्गये ॥ २४९० ॥

द्रव्येषाऽऽतपे गुष्कं क्षिपेत्प्रथमं कर्ण्डके ।

त्रिशदंशेन यैरान्नमसम् तस्मिन् विनिरूपेत् २४९१

अयं हि नर्दीभरमन्त्रादिद्वो

रसो विरिष्टः खलु रोगहन्ता ।

निःशेषरोगेष्वहत्प्रतापो

महोदयप्रत्ययसारनामा ॥ २४९२ ॥

इत्यान्वयेशुद्धामयान्ध्रपगदं कुण्डञ्च मन्दाग्निना,

शुद्धाध्मानगदं कर्षं भस्मननामुन्मादकापस्मृती ।

सर्वा यातकृता महाज्वरगदाप्रानाप्रकारान्न्था,

घानश्लेष्मभयं महामयचर्चं दुष्टग्रहण्यामयम् ॥२४९३॥

र. र. म., अन्तोरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक गमभागी कबरीकर आतलीपीनीमें भरके अपना अन्ध्रद्वारेने गन्धकको अन्न करले । इसरुद्रका गन्धक ३ पत्र, पारा, मन्ध्र, द्रव्य और श्लेह इनहीममें १-१ कर्ष, शुद्धलिपिक १ पत्र, माक्षिकमय १ पत्र, कभीता १ पत्र, दुष्टकपत्र २ कर्ष, लेह्र बारीकचूर्णकर १-२ पहर शुद्धमर्दनकर चूर्णके पानीमें ७ रोज मर्दनकर गोला बनाय कहीरुने मुगाकर शुद्ध, नीर और पन्थाका गुना लेह्र घोषाणी बान्धकर दूट और दो अह्नकोटो मर्दने गन्धक

सुखाले । फिर एक कुशलीमें शुद्धगन्धक ३ पल विछाकर गोलेको रस ऊपरसे ३ पल शुद्धहरितालका बारीकबूण रखकर टकदे फिर वज्रमिठीसे ६-७ कपडमिठी देकर सुपाकर गजपुटकी आचवे । स्वाद्वशीतलहोनेपर मिठीमात्र निकालकर लेपसहित घोटकर कुचिलेके फलके रससे ७ भावनाए देकर धूपमें सुखाले और ३० वा भाग वैकान्तभस्म मिलाकर १-२ पहर घोटकर रखडोढ़े । इसमेंसे १-१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे सब-प्रकारके अर्श, क्षय, कुष्ठ, मन्दाग्नि, शूल, अफरा, रुफ, श्वास, अन्माद, अपस्मार, समस्तवातविकार, सम्पूर्णज्वर, वातफे-ष्मोद्भवविकार, राजयक्ष्म, दुग्धग्रहणरोग इतसबको यह नष्ट करताहै ॥ ५५८ ॥

### ५५९ महोदयावती

प्रागुक्तेन प्रकारेण मृतं सम्यङ्निपातयेत् । निपातितञ्च तं मृतं खल्वग्नये निवेशयेत् ॥ २४९४ ॥ पञ्चभि र्वर्णैर्भर्ग्यस्त्रिभिः क्षारैस्तथैव च । व्योपैरार्द्रकनिर्यासैः सर्वैरस्यैस्ततः परम् ॥ २४९५ ॥ मर्दयित्वाऽथ तं मृतं प्रत्येकञ्च दिनत्रयम् । अस्यैः प्रक्षालयेत्सुतं पादांशं वर्जयेज्जलम् ॥ २४९६ ॥ रामतं श्वेतमरिचं क्षाराणाञ्च चतुष्टयम् । लवणानि तथा पञ्च व्योपमार्द्रकमेव च ॥ २४९७ ॥ राजिका चित्रमूलत्वङ् मूलकं कटुरोहिणी । एतत्सर्वं चिचूर्ण्वाऽथ मर्दयेत्पूर्वजैर्जलैः ॥ २४९८ ॥ तत्पिण्डमध्ये तं सूतं विदर्धत विचक्षणः । दोलायन्नेऽथ तं यद्धा धान्यास्यैः स्येदयेत्ततः २४९९ ॥ दिनानि सप्त यत्नेन स्वेदयेद् दृढयद्दिना । यथा न क्षीयते काञ्ची तथा कुर्याद्विचक्षणः ॥ २५०० ॥ पर्यं संस्वेद्य मृतेन चन्नादुत्तमं बुद्धिमान् । अग्रेन क्षालयित्वाऽथ अग्नेर्जले विमर्दयेत् ॥ २५०१ ॥ गिरिकर्णारसैः पूर्वं भृङ्गीनीरेस्ततः परम् । निगुण्डिकारसैः पश्चाज्जगन्तीश्वरैरयोः ॥ २५०२ ॥ मण्डफातिलपण्याञ्च काकमाच्युरुक्षकयोः । घृत्तरत्रिजगन्नेत्र्या रसतुल्यै रसैः क्रमात् ॥ २५०३ ॥ मर्दयित्वा प्रयत्नेन तथा पित्ते विभावयेत् । पूर्वांके दशभिः सूतं सूततुल्यै रयथाक्रमम् ॥ २५०४ ॥ धूपयेच्च ततः पश्चात्पूर्वांकेविधिमार्गतः । मरीचमाना गुटिकाः कर्तव्या रससम्भवाः ॥ २५०५ ॥ सन्निपातनिवृत्त्यर्थं प्रयुञ्जीत विचक्षणः । इयं श्रीलाभनाथेन प्राणिनां करुणावशात् ॥ २५०६ ॥ घटिका सम्प्रदिष्टा हि रुष्टप्रत्ययकारिणी । इमां प्राप्य घटीं कथित्सन्निपाताद्य नयति ॥ २५०७ ॥ घटीं दत्त्वाऽऽर्द्रनिर्यासैरिवकटोरनुपानकम् । कुर्वात दालयेत्तत्र सुशीतानि जलानि वै ॥ २५०८ ॥ व्यञ्जनानि प्रयुञ्जीत श्रीलण्डे लैपयेत्तनुम् । एष्यञ्च दधिमर्कः स्यात्तदानीमेव दीयते ॥ २५०९ ॥

इक्षवश्च तथा योज्या रसवीर्यविवृद्धये । शर्करा खण्डकारीका द्राक्षा योज्या विशेषतः २५१० ॥ शीतद्रव्यैर्मवेद्यैर्यं पित्तवृद्धीरसोत्तमे । लोकांशमतेनेयं घटी प्रोक्ता महोदया ॥ २५११ ॥ रसालः, सन्निपाते ।

भाषा—अच्छीतरह शुद्धकियेहुए पारेको तीनप्रकार पाक कर खरलमें डालकर पाचोनमक, तीनोंक्षार, त्रिकटु, बदरस, यथालाभ समस्त अम्ल इनप्रत्येकमें ३-३ रोज मर्दनकर यदाई के पानीसे साफकरले । मर्दनकरतेमय प्रत्येक चीजें पारेसे चतुर्थांश देना केवल जलका स्पर्श न होनेदेना । हींग, सफेद-मरिच, चारों क्षार ( सब्जी, सुहागा, यवक्षार और नवसादर ), पाचोनमक, त्रिकटु, बदरस, राई, चित्रकमूल, मूली, कुटकी इनसबका बारीक बूणकर पूर्वद्रव्योंसे गोला बनाय उसके बीचमें पूर्वोक्त पारेको रसकर दोलायन्त्र बनाय धान्याम्लोंसे ७ रोज तक तीक्ष्णामिसे स्वेदनकरे । काञ्ची सुपाने न पावे इसका प्याज रम्बे । इनवरह स्वेदनकर स्वाद्वशीतल होनेपर निकालकर काञ्चीप्रवृत्ति अम्लद्रव्यमें धोकर कोयल, भंगरा, निर्गुण्डी, जैत, अदरस, द्राक्षी, हुल्लर, मरौच, एरण्ड, घतुरा, भाग ये प्रत्येक पारेकी बराबर देकर १-१ रोज मर्दनकर सुखादे फिर यथा काम पित्तोंसे भावना देकर कोयलको छोड़कर पूर्वोक्त दस चीजें पारेकीबराबर अमिरप डालकर पारेको धूपदे । इसके बाद मरिच प्रमाण गोलिये बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली सम योचितानुपानके साथ देनेमें किसीभी सन्निपाते आदमी गहीं मरता । गोलीको अदरसके रससे देकर त्रिकटुकावाय मिला कर ठंडेजलकी धारादे । भूख लगनेपर इच्छानुसार भोजन दे । दाह मांसपक्ष्मनेपर चन्दनका लेप दे । ज्वर उतरनेकेबाद तृप्त दहीभात खानेको दे । रसकी शक्ति बगानेकेलिये ईश, क्षार, लुहारे और द्राक्ष देखे । इसरसमें शीतद्रव्योंमें शक्ति और पित्तकी दृढिहोतीहै ॥ ५५९ ॥

### ५६० माणिक्यरसायनम् ( प्रथमम् )

सुजातिगुणमाणिभ्यमस्म कर्षयितुं शुभम् । कनकाऽऽम्रकताम्राणां फान्तस्य भसितं पृथक् ॥ २५१२ ॥ त्रिगुणत्वेन संवृद्धं मर्दयेत्समगन्धकैः । पुट्टेनगिरिण्डेश पञ्च वापाणि यत्नतः ॥ २५१३ ॥ एवं शिलालकाम्याञ्च पुट्टेनोलाञ्जनेन च । तुल्यगन्धादमसूताभ्यां विहितां कज्जलीं शुभाकर ॥ २५१४ ॥ लोहं पात्रे परिद्राव्य वादरेणात्पवद्विता । माणिक्यादीनि भस्मानि क्षित्वा तत्र चिमिश्रयेत् ॥ अथाऽऽर्द्रकसैस्तां तु मस्यान्नि पांऽथ कज्जलीम् । सम्यक् कृत्वा विचूर्ण्वांश्च क्षिपेद्रम्यकरण्डके ॥ २५१५ ॥ व्योपाज्यमसहितं होतव्याणिफ्याद्यं रसायनम् । व्योपाऽऽज्यसहितं लोहं वण्मांसं पयामांजितम् ॥ २५१६ ॥



भाषा—सफेद अम्रकके पत्रपर हरितालकाचूर्ण विछानर अम्रिपर धरे जब हरिताल गलकर उड़नेलगे तब दूसरापत्र अम्रक का रखकर दवादे और थोड़ीदेरतक उसे अम्रिपर रखनेदे । जब देखेकि हरितालालमया तब उतारकर नीचे रखले । स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर चाबूसे इस माणिक्यरसको निकालकर रखछोड़े । यह माणिक्यके सदृश चमकताहुआ रस तैयारहोगा । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक पान अथवा मधुप्रभृतिकेसाथ देनेसे वात-प्लेग्मज्वर और सनिपात नष्टहोतेहैं ॥ ५६३ ॥

### ५६४ माणिक्यरसः ( कुमुदः ) ( तृतीयः )

तालं कुट्टितमधुपत्रपुट्टं संस्थाप्य मूलवर्परे,  
तद्रन्ध्राणि नवीनकोलद्वलजैः कल्कासृतेः पूरयेत् ।  
आरुण्डं महिषीमलं तदुपरि प्रोत्कीर्य यामार्थतः,  
कुर्याद्ब्रह्मिमयं हितस्ति कुमुदः सर्वज्वरान् दुस्तपान्  
सि भे म, उवराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध तबकी हरितालका बारीकचूर्णकर सफेद अम्रकके दो टुकड़ोंके बीचमें दवावे और उनकी सन्धिको बेरेके कोमलपत्रोंके कल्फसे बन्दकर मिठीके रसपड़ेमें रखकर ऊपरसे ताजेगोबरसे सम्पूर्णको भरेके आधे पहरतक मध्यम आचवेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर धीरजसे सम्पुटको निकाल साफकरके अन्दर से माणिक्यके रङ्गके रसको निकालकर कज्जलेके सदृश बारीक घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से ३ रत्तीतक उचितानुपाकेसाथ देनेसे यह तमामज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ ५६४ ॥

### ५६५ माणिक्यरसः ( चतुर्थः )

तालकं वंशपत्राख्यं कूष्माण्डसलिले क्षिपेत् ।  
सप्तधा वा त्रिधा वाऽपि दूलाऽम्लेन तथैव च २५३३  
शोधयित्वा पुनः शुष्कं चूर्णयेत्तण्डुलाकृति ।  
ततः शरावके पात्रे स्थापयेत्कुशलो म्रिपक्व ॥२५३४॥  
घट्टीपत्रकलेन सन्धिलेपश्च कारयेत् ।  
अरुणार्धं हाथपात्रं तावज्ज्वाला प्रदीयते ॥ २५३५ ॥  
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य माणिक्यार्धं हरेत्समम् ।  
तद्भक्तिद्वितयं ग्रादेद्धृतमामरमदितम् ॥ २५३६ ॥  
सम्पूज्य देवदेवेशं कृष्टरोगाद्रिमुच्यते ।  
स्फुटितं गलितं कृष्टं वातरक्तं भगन्दरम् ॥ २५३७ ॥  
नाडीव्यणं व्यणं दुष्टमुपदेशं विचर्चिकाम् ।  
नासाऽऽस्यस्ममवाग्रोगान् क्षतान्हुन्ति मुदाऽपान् ॥  
पुण्डरीकं चर्मदलं विस्फाटं मण्डलं तथा ॥ २५३८ ॥

र स, भै, र, र को, घ, र बि, र सु, र च, वै क,  
र त, कुष्ठे ।

टि०—मिद्धमधुपत्रमालारसवासगोरपि माणिक्यरसया रयमम  
मूलमिति विशिष्टिर्वाभावनीयम् ।

भाषा—शुद्ध तबकीहरितालको सफेदकोहलेकेरस और दही अथवा अन्य किसी गद्याईमें दोलायनवे ७ अथवा ३ दिन स्वेदकर मुसाकर तण्डुलोंके सदृश चूर्णकर शरावमें रख

दूसरे शरावसे ढकदे । और बेरेकेकोमलपत्रोंके कल्फसे सन्धि बन्दकर चूनेपर रख आचदे । जबनीचेका ढकन एकदम लज्ज होजाय तब आचदेता बन्दकरदे फिर सुद खोलकर देखे उसमें माणिक्यकी तरह नीचे जमाहुआ रस मिलेगा । इसकीमात्रा १ से २ रत्तीतक घी और भोरिके मयूके साथ खानेसे कूड़ाहुआ और गलित कुष्ठ, वातरक्त, भगन्दर, नाडीव्यण, दुष्टव्यण, उपदेश, विचर्चिका, नासिका और मुखके समस्तरोग, पुण्डरीक, चर्मदल, विस्फोटक और मण्डलकुष्ठ इनसबको यह नष्टकरताहै ५६५

### ५६६ माणिक्यरसः ( पञ्चमः )

शुद्धं मृतं पलान्यष्टौ कुनटी तालकं समम् ।  
नागपत्रं चाण्डलमष्टौ भागाश्च गन्धतः ॥ २५३९॥  
एकत्र कज्जली कृत्या काचकृप्यां विनिःक्षिपेत् ।  
वालुकायन्ममध्ये तु वह्निः पांडशयामरम् ॥ २५४० ॥  
भवेन्माणिक्यवर्णाऽयं शुक्रस्तममं करोति च ।  
जराव्याधिविनाशाय राजरोगकुलान्तकृत ॥ २५४१ ॥  
दशरानप्रयोगेण महाव्याधिविनाशनम् ।  
रक्तिकादं सदा पर्यं वृद्धः संयाति यौवनम् ॥ २५४२ ॥  
र च, र सु, यो. म, र. म भा, रानयदमभि ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, मेनसिल, हरिताल, सीसके बारीक पत्र, रेसर ८-८ पल लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर कपड़ मिठीकीहुई आतशीसीशोमें भजे वालुकायन्म में रख १६ पहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे आधीआधीरत्ती उचितानुपाकेसे देनेसे यह शुक्रस्तम्भन करताहै और बुढ़ापा, राजरोगका समूह, महाव्याधि ( कुशदि ), इन सबको नष्टकरताहै ॥ ५६६ ॥

### ५६७ माणिक्यरसः ( षष्ठः )

शुद्धमृतसमं गन्धं कज्जलीं कारयेद्दुध ।  
योडशांशं सुवर्णञ्च माणिक्यञ्च तदूर्द्ध्वम् ॥ २५४३ ॥  
सर्पमेकत्र सम्मर्द्य कन्यानीरेण भावयेत् ।  
काचकृप्यां सप्तमृद्धिलिप्तायां तन्निवेशयेत् ॥ २५४४ ॥  
धारयेत्सिकतायधे वह्निं प्रज्वालयेच्छनै ।  
यामपोडशपर्यन्तं शलाकाञ्च द्रोत वे ॥ २५४५ ॥  
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य सतं माणिक्यसन्धितम् ।  
गन्धकञ्च पुनर्दत्त्वा पुनर्माणिक्यसन्धितम् ॥ २५४६ ॥  
पूर्ववन्मर्दयेत्तच्च पाचयेत्तद्वदेव हि ।  
एवं पट्टणकं कार्यं सर्वयोगोपकारकम् ॥ २५४७ ॥  
जायते सिद्धिर्देहे सर्वप्रत्ययकारकम् ।  
सेवयेद्रोगनाशाय तत्तद्रोगाऽनुपानतः ॥ २५४८ ॥  
वह्निं वा वह्नियुग्मं वा मधुना कणया सह ।  
सेविनं कामिनीं यामं दशैवद्रुतिकौतुकम् ॥  
वीर्यगन्धकरदशीघ्रं योगामद्विनाशनम् ॥ २५४९ ॥

रसायनस, वाररोग ।

**भाषा—**शुद्ध पारा, गन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकञ्च लीकर पोडसाश सोनेकेवर्णसे आधी माणिक्यमस्य डालकर कचलीमें मिलाकर धीर्बुआरेके रससे एकभाक्का देवे । सुखनेपर सातरपइमिटीदीहुई आतशीशीशीमें भरके बालुकायन्त्रमें रख १६ पहरकी अग्निदेवे । शीशीका मुंह खुला रखनेके छिव बीचचीचमें लोहेकी गरमशलाका भीतर डालकर गन्धक जारण करे । गन्धकजारण होनेपर सुहृद्वन्द्वरदे । स्वास्त्रसीतल होनेपर निकालकर पूर्वके बराबर गन्धक, सुवर्ण और माणिक्यमस्य डालकर पूर्ववत् मर्दनकर बालुकायन्त्रमें णकावे । इसतह पङ्क-गणगन्धकजारणकरनेसे यह रस सिद्धहोताहै । इसको रोगनिवृत्त्यर्थ देनेमें सबतरहके विश्वासको पैदाकरताहै । इसमेंसे ३ अथवा ६ रत्तीकीमात्रा मधु और पीपलकेसाय देनेसे १ पहरतक शुरू-स्तम्भन होताहै रतिमें बौतुकको दियाताहै वीर्यको जल्दी बाधताहै और श्रियोके मदको नष्टकरताहै ॥ ५६७ ॥

### ५६८ माणिक्यरसः ( बृहद्विद्यादि ) ( सप्तम )

शुद्धं सूतं पञ्चपलं कुण्टी तत्समां क्षिपेत् ।  
हाटकन्तु पलं पञ्च माणिक्यन्तु चतुःपलम् ॥२५५०॥  
मुक्ताञ्च विद्रुमञ्चैव प्रत्येकं क्षिपलन्तथा ।  
नागपत्रं पलञ्चैकं शुद्धगन्धकमष्टकम् ॥ २५५१ ॥  
एकत्र कजलीकृत्य काचकृपां धिनि.क्षिपेत् ।  
बालुकायन्त्रं चाग्निं यामपट्टमिश्रं हठात् ॥२५५२॥  
भावैर्माणिक्यदिव्याऽयं कामाग्निवलयर्धनः ।  
क्षीणेन्द्रिया नष्टशुक्रा पलमांसाऽग्निवर्जिताः ॥२५५३॥  
व्यवायरहितानाञ्च धातुपुष्टिकरः परः ।  
पातिकाः श्लेष्मिकाश्चैव व्याधयः सम्भवन्ति ये २५५४  
अस्य प्रभायाद्बृहणी कासभ्यासाऽरत्रिक्षयाः ।  
घातश्लेष्मप्रतिद्वयायाः प्रशमं यान्ति घेगतः ॥२५५५॥  
तिमिरं पटलं काचं पिष्टं नक्तान्ध्यमर्जुनम् ।  
आस्रघ्नतिमिरं यच्च शशिनः पश्यति ह्रियम् ॥२५५६॥  
जराव्याधिघिनाशाय राजरांघ्रिनाशानम् ।  
दृशारात्रप्रयोगेण महाव्याधिघिनाशानम् ॥  
रक्तिकादं सदा सेव्यो घृष्टस्तरुणां प्रजेत ॥२५५७॥  
रसायनं सर्वान्वये ।

**भाषा—**शुद्ध पारा, मैन्सिल और सुवर्णमस्य ५-५ पल, माणिक्यमस्य ४ पल, मोती और मुँगीकमस्य २-२ पल, शुद्ध नागपत्र १ पल, शुद्धगन्धक ८ पल, लेकर पहिले पारमें नागपत्र डालकर घोट फिर गन्धक मिलाकर नीलवर्णकञ्चलीकर सखीजूं को मिलाकर आतशीशीशीमें भरके बालुकायन्त्रमें १६ पहरकी तीनअग्नि देवे । स्वास्त्रसीतलहोनेपर निकालकर रखलोहे । इसमेंसे आधीआधीरत्ती उचितानुपानकेसाय देनेसे कामाग्नि और बलको बढाताहै । क्षीणेन्द्रिय, नष्टशुक्र, बल, मांस और अमिरहित, रक्तिकलेमेंअसमर्थ और धातुहीनपुरुषोंको यह रोगरहित बनाताहै । वातिक तथा श्लेष्मिक व्याधियोंको अन्य कारको सुखी तरह नष्टकरताहै । प्रद्वणी, कास, आग, अरचि,

क्षय, वात-श्लेष्मप्रधानप्रतिस्वाय, इनको नष्ट करताहै । तिमिर, जाला, मोतियाबिंद, रील, रत्तोपी, अर्जुन, एकवस्तुनी दो दीखना इनसबको खाने तथा लगानेसे नष्टकरताहै । लगानाहोतो मधुमें प्रयोग करना । इसके दशरोज लगानेसेरससे अमाप्य-व्याधि नष्टहोताहै । कुटुम्बा और राजरोज कुटुम्बोंके सेवनसे नष्टहोतेहै ॥ ५६८ ॥

### ५६९ मानसूरणाद्यं लोहम्

मानसूरणमल्लातत्रिवृद्धन्तीसमन्वितम् ।

विक्रययसमायुक्तं लोहं दुर्गमनाशकम् ॥ २५५८ ॥

र. सं. र. सु., मै. र., र ॥ अशोऽधिकारः ।

दि०—रमरत्नाकरीयत्रिकनयादिहोनाडय समाननामावहति केवल मानसूरणी बाकुनीलगाने निहितो स्त । अग्निप्रेत्र योगे बाकुर्ची मिश्रय निष्पादिते सति द्वयोरपि समावेशे सुकुणया भविष्यति, अपि आरभेद्योऽप्यभि क्षित्तर मिश्रितयोगस्त्वोभयकार्यकरगण्यमत्वात् । रमरत्ना-करे तु स्वीयाधिकाः ।

**भाषा—**मानकंद, सूरण, मिलावे, निशोत, दन्तीमूल, सज, पत्रज, इलायची, अथवा-नागरमोषा, चित्रक, विडङ्ग, त्रिकटु और त्रिफला येसन समभाग, इनसबकी बराबर लोहमस्य मिलाकर रखओगे । इसमेंसे १-१ माशा रकाईमें पाषाणभेद और सारकेसाय, अथवा १ माशा रसाँवे साय अथवा बन गोभीके रवेकेसाय, शुक्राईमें दूध अथवा चित्रककीअङ्के कायके साय देवे । इससे सबतरहके बवाबीर और मेशोदि अच्छी होतीहै ॥ ५६९ ॥

### ५७० मानिनीमानभञ्जनरसः

सूतस्यैको विपस्यैकः पञ्च कृष्णान्नमस्मनः ।  
शुद्धगन्धस्यैकपलं पलञ्च रसमस्मनः ॥ २५५९ ॥  
खल्वे च मुनिसंख्यातं मोचासत्येन भावयेत् ।  
चिञ्चायाः स्यरसेस्तदनुशल्या दशधा तथा ॥२५६०॥  
कोकिलाक्षरुतोयेन गांक्षीरेणैव सप्तधा ।  
सप्त धत्तूरतोयेन सर्वघह्नीरमात्तथा ॥ २५६१ ॥  
अहिर्मेमाद्य सप्तैव चातुर्जातफलत्रयम् ।  
जातीफलं जातिपत्री सुराह्नुमुमानि च ॥ २५६२ ॥  
प्रत्येकं पलमेतेषां शाणः कर्पूरैस्मरात् ।  
कस्तूरिकाञ्च निक्षिप्य सत्सर्वं परिमर्दयेत् ॥ २५६३ ॥  
नागवह्नीरमेनैव गुट्टिका चणकोपमा ।  
कृत्वेकां भक्षयेष्वाऽहिपत्रैः क्षीरं पिबेद्बु ॥ २५६४ ॥  
वीर्यं प्रचुरतां याति कामिनी सुरतार्थिनाम् ।  
ध्वजोत्थानञ्च शुक्रते स्त्रीयोनिद्वन्द्वनक्षमः ॥ २५६५ ॥  
रममाणो न तृप्येत् स्त्रीणामानन्दवर्धनः ।  
रमा हि शिष्टाख्याता मानिनीमानभञ्जनः ॥२५६६॥

रसायनं, र सु, बाजोदरवे ।

**भाषा—**शुद्ध पारा, गन्धक और बाज्राग १-१ पत्र, कृष्णाश्रकमस्य ५ पत्र, पारदमस्य १ पत्र, लेकर सबकी नील-वर्णकञ्चलीकर केलेका रस और इसलीका फना इनकी ७-७

भावनाए देकर मुखलीके स्वरस अथवा कायकी १०, तथा तालमखानेका काय, दूध, धतूरा और पाचकारस, अफीमका द्रव इनकी ७-७ भावनाए देकर मुखाले फिर चातुर्जात, त्रिफला, जायफल, जावित्री, लौंग १-१ फल, शुद्धकपूर, केशर और कस्तूरी ४-४ मांशे मिलाकर पानकेरसे १-२ रोजमर्दनकर चनेबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानकेसाय खाकर दूध पीनेसे बहुतसी स्त्रियोकेसाय रतिकरने-परमी शुक्रशीण नहीं होता इन्द्रियभी शिथिल नहीं होतीहै ५७०

### ५७१ मार्कण्डेयचूर्णम्

शुद्धं सतञ्च गन्धञ्च हिङ्गुलं दङ्गुण्तथा ।  
वयोपं जातीफलञ्चैव तमालं देवपुष्पकम् ॥ २५६७ ॥  
पलार्थाजं चित्रकञ्च मुस्तकं गजपिप्पली ।  
तगरं सज्जलञ्चास्रं धातन्यतिविषा तथा ॥ २५६८ ॥  
शिमुयीजं शास्मलञ्च विशुद्धं नागफेनकम् ।  
एतानि समभागानि ऋक्षचूर्णानि कारयेत् ॥ २५६९ ॥  
खादेद्दृग्मात्प्रतिदिनं मापकं सितया सह ।  
सङ्ग्रहग्रहणीं हन्ति मन्दाश्लिषञ्च नाशयेत् ॥ २५७० ॥  
धातुवृद्धिं वयोवृद्धिं यलपुष्टिं करोत्यपि ।  
मार्कण्डेयनामेदं महादेवेन निर्मितम् ॥ २५७१ ॥

वे क, भै र, ग्रहण्यधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, शिपारिफ और मुहाणा, त्रिकटु, जायफल, पत्रज, लौंग, श्लाघवीकेबीज, चित्रकमूल, नागरमोथा, गजपीपल, तगर, सुगन्धबाला, अश्रकमस, वायवी केकूल, अतीस, सहिजनकेबीज, मोचरस, अफीम, येसव सम भाग लेकर धारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीरवर्णकजलीमें मिला कर १-२ रोज घोटकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ मांश घावर केसाय लेनेसे सङ्ग्रहग्रहणी, मन्दाभि, धातुक्षय, शुद्धापा, बल हानि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५७१ ॥

### ५७२ मार्तण्डभैरवरसः

शुद्धं सृतं समं गन्धं गन्धात्पादाद्रादङ्गुणम् ।  
ताम्रपात्रे क्षिपेत्पिष्टं जयन्त्यालोडयेद्रव्यं ॥ २५७२ ॥  
शिष्टमूलरसेनाऽथ भावयेच्च सप्तातपे ।  
फट्पत्रयस्य वासाया वह्निरद्वजडाद्रवेः ॥ २५७३ ॥  
तिलपण्यां तथा जातीपिप्पलीपत्रमूलकेः ।  
द्रव्येयं तु सप्ताहं शाप्यं शाप्यं विभावयेत् ॥ २५७४ ॥  
ताम्रपात्रात्समुद्धृत्य कृत्वा गालं चिशोषयेत् ।  
यद्धा यत्नमृदा चाऽथ सुपरे स्वेदयेत्पुटे ॥ २५७५ ॥  
द्वियामान्ते समुद्धृत्य चूर्णयेद्विपद्यैः सह ।  
विपकर्षरजात्येला रसस्य दशमांशतः ॥ २५७६ ॥  
भावयेद्विजयाद्रावे दिनमेकञ्च भक्षयेत् ।  
चतुर्गुणं सकर्षरमधुना मन्त्रिपातजित ॥ २५७७ ॥  
मार्तण्डभैरवो नाम रत्नाऽसाध्यञ्च साधयेत् ।  
दशमूलं पिबेद्यानु पथ्यं स्थान्मुद्रयुष्कम् ॥ २५७८ ॥  
स्तत्रि, नि र, र गु, यमिश्रिते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ तोला, मुहाणा ३ मांशे लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर ताम्रके विशुद्धपात्रमें ढाल कर जैतका रसभरकर धूपमें रखदे । सूखनेपर सहिजनकी जड़की छलका स्वरस ढालकर वहीधूपमें छुपावे । इसीतरह त्रिकटु, अदुसा, चित्रकमूल, खट्वडा ( ईसरजटा म० अभावमें अमर-बेल ), दुरदुर, जावित्री, पीपलकेपत्र और जड़, इनप्रत्येकके रसोंसे ७-७ रोज भावनाए देकर गोलावनाय छुपाले । फिर ३-४ तह कपड़े लपेटकर २-३ कपड़मिठी देकर मुखाकर दोष हतक भूषणयत्रमें आव देकर स्वेदनकरे । स्वाशशीतलहोनेपर बछनाग, कपूर, जावित्री, श्लाघवी, समभागलेकर धारीक चूर्ण कर धरिपत्रजसे दशांश मिलाकर भागके स्वरस अथवा कायकी २-४ भावनाए देकर ४-४ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली आपौरती कूर और मधुकेसाय देकर दशमूलका काढा पिलानेसे यह असाध्य सन्निपातको नष्टकरे ताहै । श्वस्त्रलने पर मृगकायुष देना ॥ ५७२ ॥

### ५७३ मार्तण्डरसः

रसञ्च गन्धकं म्लेच्छं विपं नेपालकं तथा ।  
फलत्रयं त्रिकटुकं औरकं चित्रकं तथा ॥ २५७९ ॥  
समभागानि चैतानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।  
भृङ्गस्य रसकैर्मथं शुटिका गुग्गुमात्रिका ॥ २५८० ॥  
घटकाभक्षयेन्नित्यं मरिचैश्च समन्वितम् ।  
सर्वज्वरहरं नित्यं सदा शीतजरं हरेत् ॥ २५८१ ॥  
हृद्रोगञ्च कफं प्रोक्तमम्लपित्तं सुदारणम् ।  
सर्वशूलं तथा शुल्भं क्षयपाण्ड्वोश्च नाशनः ॥ २५८२ ॥  
द्रूपनं पाचनञ्चैव समीरपित्तरोगजित ।  
रोगान्निर्मूलयेत्सत्यं मूलरोगविनाशनः ॥  
आधिज्याधिहरश्चैव सर्वव्याधिनिवारणः ॥ २५८३ ॥  
र क यो, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, शिपारिफ, बछनाग और जमा लोटा, त्रिकटु, त्रिकटु, जीरा, चित्रकमूल सब समभाग लेकर धारीकचूर्णकर अगरेके रसोंसे १-२ रोज मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानु पानकेसाय देनेसे शीतज्वर, हृद्रोग, कफ, अम्लपित्त, समस्तद्वल, शुल्भ, क्षय, पाण्डू, मन्दाभि, वात और पित्तकेरोग, अश्व प्रवृत्ति समस्तरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ ५७३ ॥

### ५७४ मार्तण्डीगुटिका

शुद्धसूतसमं गन्धं मर्दनात्कज्जलीरुतम् ।  
तत्ताम्रसम्पुटे रुद्धा लवणेन मृदा दृढम् ॥ २५८४ ॥  
पचेद्दीपाग्निना शुष्कं यामिकं भस्मयन्नके ।  
सम्पुटस्थाद्वल्लेभं तन्ममुद्धृत्याऽथ मर्दयेत् ॥ २५८५ ॥  
तुल्यपारदमंयुक्तं ध्रुवयन्सम्पुटे पचेत् ।  
उद्धृत्य तुल्यगृह्णतेन मंयुक्तं मर्दितं पचेत् ॥ २५८६ ॥

इत्येवं सप्तधा कुर्यात्पुनः पारददङ्कुणम् ।  
तुल्यं तुल्यं क्षिपेत्स्मिन्दिने सर्वं विमर्दयेत् ॥ २५८७ ॥  
वज्रमृपागतं रुद्धा ध्याते खोटो भवेद्रसः ।  
मार्तण्डी गुटिका ह्येषा ययैकं यस्य वज्रगया ॥ २५८८ ॥  
वलीपलितमुकोऽसौ जीवेदाचन्द्रतारकम् ।  
पलाशवीजजं तैलं पलैकं क्षीरतुल्यकरम् ॥ २५८९ ॥  
कामर्णं प्रविषेद्भित्तं तत्क्षणान्मूर्च्छितो भवेत् ।  
तस्य घनने गद्यां क्षीरं स्तोत्रं स्तोत्रं निषेचयेत् २५९० ॥  
प्रमुखे क्षीरमधे स्याद्भोजने परमं हितम् ।  
तस्य मृचपुरीषाभ्यां ताघ्रं भवति फाञ्चनम् ॥  
वायुधेगो महासिद्धिद्विधं पश्यति मेदिनीम् ॥ २५९१ ॥  
र ख , र बा , रसायने ।

भाषा—समभाग शुद्धपारेऔर गन्धकी नीलवर्ण कजलीकर तावकेसम्पुटमें बन्दकर ३-४ कपमिमी देकर सुखादे । सुपाने पर भस्मयन्त्रमें रस एकपहर दीपामिकी आचदे । स्वाहशीतल होनेपर ऊपरके सम्पुटमें लोहपु पदार्थको सूरचकर उसकी बराबर कच्चा पारा मिलाकर पहिलेकी तरह सम्पुटमें बन्दकर फकावे । इसतरह ७ बारकरनेकेफार आठवींबार सम्पुटमें निका लोहपु पदार्थकी बराबर पारा और सहागा मिलाकर एकदिनभर मर्दनकर वज्रमृपामें बन्दकर घोंकनेसे खोट तैयारहोगा । इसके एकपहर सुहमें रसकर पलाशके बीजोंके एकपल तैलमें बराबरका गोडुम मिलाकर पीनेमें तत्क्षण मूर्च्छा होगी । मूर्च्छितसाधकके सुहमें ताजा गायकादूध डाले, होस आनेपर दूधभात खानेको देवे । इसप्रकार एकपलतक प्रयोग करनेपर इसके मलमुत्रसे तावा सुवर्णहोगा । वायुके सहा वेग बडेगा और सिद्धियोंको प्राप्तहोगा । इसकेलिये आकृष्ट पादात्मने बोईनी जगद जानेकी रुकावट नहीं होगी । और निमीनमें महाहुमानिधि प्रत्यक्ष दिखाई देगा ५७४

### ५७५ मार्तण्डेश्वररसः

समताप्ययुतं शुद्धं पल्यंशतिमानम् ।  
प्रभातं हि चतुर्वारं खण्डयित्वा ततश्चरेत् ॥ २५९२ ॥  
तत्तुल्यमाक्षिकोपेतं पुटेद्विशतिवारकम् ।  
गन्धधेन पुटेसाध्यायपलमितं भवेत् ॥ २५९३ ॥  
क्षिपेत्पलमितं तत्र गन्धकेन हतं रसम् ।  
शाणमानं मृतं यजं सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ २५९४ ॥  
इति सिद्धो रसेन्द्रोऽयं मार्तण्डेश्वरनामवान् ।  
कीर्तितो लोकनाथेन लोकानां हितकाम्यया ॥ २५९५ ॥  
मरीचघृतसंयुक्तः सेवितो मण्डलार्द्धतः ।  
वाताघट्टमहारोगांघ्रासकासयुतं क्षयम् ॥ २५९६ ॥  
हलीमकञ्च पाण्डुञ्च ज्वरानपि सुदुस्तरान् ।  
इत्यादिगन्धान्स्वर्गान्विनाशयति निश्चितम् ॥ २५९७ ॥  
परांति दीपनं तीयं क्षीमानलदातोपमम् ।  
सन्निपातं जयत्याहुं द्यापाऽऽद्रक्ष्यसमन्वितः ॥  
सर्वसौख्यकरो नृणां स्त्रीणां गन्धवत्यनाशनः ॥ २५९८ ॥  
र र स , र म , र न , र बा मा नाम्नाभ्यामिहारः ।

भाषा—२० पल सोनामाखीका घृणेर नीवू वगैरहमें घोटकर उसके बराबरके तावेपनपर लेभकरे मृपामें रस घमनकरनेसे पिण्ड सह्य बनजायगा । इसमें बराबरकी सोना माखी डालकर २० पुट देवे । इसकेनाद बराबरका गन्धक देकर बारम्बार घमनकरे । जब १ पल ताना गेनाय तब पुटेना बन्द करदे । फिर इसकी बराबर केवल गन्धकसे माराहुआ पारा १ पल, हीरेकीभस्म ४ मास लेकर सधने एकत्र मर्दनकर रख छोडे । इसमेंसे दो चावलकी मात्रा मिर्च और पीवे साथ साथ दिनतस्त्रानेसे वातादि आठ महारोग, श्वास कास, क्षय, हली मक, पाण्डु, दुस्तरज्वर, भन्दाभि, प्रवृत्ति रोगोंको दूरकरताहै । निकडु और अदरककेसाथ देनेसे सबप्रकारके सन्निपात और क्षिणोंका घासफना नष्टहोताहै । ५७५ ॥

### ५७६ माहेश्वररसः ( प्रथमः )

रसं भस्मीकृतं कोलं गन्धकं शोधितं समम् ।  
लौहं कर्षद्वयं ताघ्रमर्द्धकोलकसम्मितम् ॥ २५९९ ॥  
सुवर्णं जारितं द्याच्छाणार्द्धं चन्द्रभस्मकम् ।  
अम्रं कर्षद्वयं दद्याच्छाणार्द्धं सुविचक्षणम् ॥ २६०० ॥  
दशमापीजं वरीञ्चैर थलामतिउलान्तथा ।  
पलाञ्च शङ्खपुष्पञ्च शाणमानं निमिशिपेत् ॥ २६०१ ॥  
जलेन घटिका कृत्वा शुक्रामात्रां प्रदापयेत् ।  
सेचनादस्य कन्दर्परूपां भवति मानवः ॥ २६०२ ॥  
सहस्रं याति नारीणामुस्ताहां जायतेऽधिकः ।  
निर्म्य स्त्रीसेनानाघस्तु क्षीणशुक्रो भवेन्नरः ॥ २६०३ ॥  
पूर्णशुक्रो भवेत्सोऽपि सेचनादस्य नाऽन्यथा ।  
महाथला महापुष्टिर्जायते नाऽत्र संशयः ॥ २६०४ ॥  
स्थूलानां कर्षकः श्रेष्ठः कुशानां पुष्टिकारकः ।  
रसो विनाशयित्रीगान् ससप्तसाहभक्षणात् ॥ २६०५ ॥

र स , र ख , रसायनवार्तिकरणयोः ।

भाषा—नारदभस्म और शुद्धगन्धक आपाभाषाकर्म, लोह-भस्म २ कर्ष, ताघ्रभस्म ४ मास, सुवर्णभस्म २ मास, अम्रक औररजतभस्म २-२ कर्ष, कालादाना २ मास, धातव, बजा, गणेत, इन्धयचीकैची, गजगुपी ये ४-४ मासो लहर सबका वायोवचूणकर जउसेसाथ पुरोवर घोटकर १-१ रत्तीकी गोल्याग्नाकर रखगेडे । इनमेंसे १-१ गोली उचिचानुगतने साथ दनेसे बहुनगी क्षिणोंसेसाथ रक्तकरने परमी शुक्रका क्षय नहीं होता । जो अत्यन्त स्त्रीसहकरनेसे क्षीणशुक्ररोगगणहो बढी इसके सेवन करनेसे शुक्रने परिपूर्ण होबानाहै । इनके सेवनसे बज और बुद्धि बढनेसे स्थूलको हृत्त और हृत्तीको स्थूल बनानाहै असाध्यरोगोंको ७ समाहमें नष्टरानाहै ॥ ५७६ ॥

### ५७७ माक्षिकरदगुटी

ध्याममाक्षिकमत्स्यञ्च तारं ताघ्रं सुरायमम् ।  
मत्सेन समायुक्तं रत्नादिगुणयुक्ता ॥ २६०६ ॥



मुटी बद्धा वरारोहे मधुरत्रयसंयुता ।

यक्त्रस्था नाशयेत्साक्षात्पलितं नाऽत्र संशयः २६०७  
रसेन्द्रमं., रसायने ।

भाषा—अन्नक तथा स्वर्णमाक्षिसत्त्व, शुद्धवादी, तांवा, सुवर्ण और पारा समभाग लेकर गलाकर किसी साँचेमें छिद्युक्त गोली बनाले । उसमें लाल अथवा काला डोरा डालकर सुँहमें रखले और ध्यानरहे कि गलेमें न उतरजाय, इसीलिये डोरेका विषाण कियागयाहै । इसके बाद शकर, धी और मधु तीनों समभाग मिलाकर सुँहमें भरकरले और थोड़ा २ गलेमें उतरने दे जिसमें कि सुँहमें १-२ पंढा गोली पड़ीरहे इस्तहका यत्न करे । इसप्रयोगसे सफेदकेश फिरसे काले होजायेंगे ॥ ५७७ ॥

### ५७८ माक्षिकयोगः

एवञ्च माक्षिकं धातुं तापीजममृतोपमम् ।

मधुरं काञ्चनामासममलं वा रजतप्रभम् ॥ २६०८ ॥

पिबन् हन्ति जराकुष्ठमेहपाण्ड्वामयक्षयान् ।

तद्भाषितः कपोताञ्च कुलयाञ्च विधर्जयेत् ॥ २६०९ ॥

मु. सं., वै. क., यो. र., वै. वि., प्रमेहाऽधिकारे ।

टि०—इयकल्यद्वुमादी “ माक्षिक धातुना लीह मेह हरति सर्वथा ” इति पाठो दृश्यते तस्याऽप्यत्रैवात्मनोऽस्ति यो. र., वै. वि., एतयोः “ शुद्धीसत्त्वस्युक्त पित्तमेह व्योरोहति ” इत्यधिक पाठः ।

भाषा—तापीतदोद्भव सुवर्णमाक्षिक मधुरहोताहै और कञ्चनवेषवध कान्तिहोतीहै तथा रजतमाक्षिक अम्लहोताहै । इन दोनोंकी मल्लें समभाग मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३ रत्तीसे १ माशेतककी मात्रा इधकेसायकेनेसे छुड़ापा, कुष्ठ, प्रमेह, पाण्डू और क्षय इनसयको यह नष्टकरताहै । इसका सेवन करनेवाला कपूतर और कुलधीका परित्याग करे ॥ ५७८ ॥

### ५७९ माक्षिकवटकः

माक्षिकं तालफमि तद्वर्द्ध गन्धकं रसम् ।

तथाऽन्नञ्च समादाय मुक्तास्वर्णौ च पादिकौ २६१०

काकमाचीपत्ररसेस्त्रिधा सम्भाव्य चलतः ।

रक्तिद्वयमिता कार्या माक्षिकादिवट्टीशुभा ॥ २६११ ॥

वेष्टिता पद्मपत्रेण धान्यराशौ निधापिता ।

यथायोग्याऽनुपानेन सेविता संहरेष्वृणाय ॥

नेत्ररोगाञ्च निखिलाग्रानोपद्रवसंयुतान् ॥ २६१२ ॥

आ. वि., नेत्ररोगाऽधिकारे ।

भाषा—सुवर्णमाक्षिक और हरितालमल्ल १-१ तोला, शुद्धपारा, गन्धक और अन्नकमल्ल ६-६ माशे, मोती तथा सुवर्णमल्ल ३-३ माशे लेकर पारोगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर माकोयकेपतोंकेरसेसे तीनदिनमदैनकर २-२ रत्तीकी गोलिएं बनाकर छायामें अर्द्धशुष्ककर कमलके ताजेपतेमें लपेटकर सूतेसे बांधकर धान्यकीराधियें ७ दिनतक रखकरनिकालले और अच्छीतरह सुताकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तनितानुपानवेचाय सेवनकरनेसे नानातरहकेउपद्रवोंकेसाथ नेत्रोंके समस्तरोगोंको यह दूरकरतीहै ॥ ५७९ ॥

### ५८० माक्षिकादिचूर्णम्

माक्षिकं पारदं गन्धं खर्परं गिरिमृत्तिकां ।

शिलाजत्वम्रलोहानि शाल्मल्याः कुसुमं त्वचम् २६१३

विदार्य गोक्षुरं बीजं चैकत्र परिमर्दयेत् ।

मापमात्रं प्रयुजीत शुक्रमेहनितृप्तये ॥ २६१४ ॥

भै. र., शुक्रमेह ।

भाषा—माक्षिकमल्ल, शुद्धपारा, गन्धक, उपरिया, गैह, शिलाजतु, अन्नक और लोहमल्ल, सेमलकेफल तथा छाल, विशा-रीकन्द, गोपल, हीरादक्खन, सब समभागलेकर घाटीक चूर्णकर पारोगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर १-२ रोज सूखामर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा बूध वगैरहकेसाथ देनेसे यह शुक्रमेहको नष्टकरताहै ॥ ५८० ॥

### ५८१ मांसजरणरसः

नागवल्लीदलोद्भूतवारिसाधितपारदः ।

वन्ध्याककौटकीकन्दपुटितो म्रियते क्षणात् ॥ २६१५ ॥

सूतं नागं विपं व्योषं सैन्धवञ्च सुयचलम् ।

समांशं भक्षितं चूर्णं मांसाहारविनाशनम् ॥ २६१६ ॥

अजीर्णशूलमाध्मानच्छर्दिमादतनाशनम् ।

विस्तृचिकायुल्मकासानुर्द्धवातं तथैव च ॥ २६१७ ॥

र. (मा.), र. यो., अजीर्णाऽधिकारे ।

भाषा—पत्ते नागरबेलके पानोंकेरसेसे शुद्धपारेको पिष्टी होनेतक घोटकर गोलीबनाय बाँसखेसकाके बन्दमें रखकर ६-७ कपड़मिठी देकर दोसरे कण्ठोंकी आँचदे । स्वाशशीतलहीनेपर निकालकरदेखे यदि मल्ल होनेमें कुछ कसरहीहो तो दुबारा करे । इसतरह कीहुई पारदमल्ल, नागमल्ल, शुद्धबधनाग, त्रिकटु, सेधा और संचल नमक येसब समभाग लेकर सरसर रखछोड़े । इसकेसे १-१ रत्ती अजिर्णशूलप्रवृत्तेक्षण देनेसे अत्यधिकसायाहुआमांस जल्दी पचजाताहै । अजीर्ण, शूल, आप्मान, वमन, वातप्रकोप, हैजा, शुल्म, कास, ऊर्ध्ववात इनसयको यह नष्टकरताहै ॥ ५८१ ॥

### ५८२ मिहिरोदयरसः

माक्षिकं रजतं लोहं सिन्दूरं घृहिवारिणा ।

भावयित्वा विमर्षाऽथ रुन्वा रक्तिमिता वट्टीः २६१८

पैकौ खादयेदासां त्रिफलाद्दिग्गहर्मुखे ।

मिहिरोदयनामाऽयं स्नायुमूले रसो हरेत् ॥ २६१९ ॥

आ. वि., स्नायुगे ।

भाषा—सुवर्णमाक्षिक, चांदी और लोहमल्ल, रसमिन्दू सब समभागलेकर चित्रकमलकेबाषसे २-२ रोज मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोल्यां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिफलाकेबाषसे प्रातःकालकेनेसे यह नहद्वेको जड़से खोताहै ॥

### ५८३ मिहिरोदयवटी

लोहमम्रं सुवर्णञ्च चिद्रुमं राजपट्टकम् ।

सर्वं समं प्रदातव्यं सिन्दूरञ्च विभागिकम् ॥ २६२० ॥

परण्डमूलजेनैव रसेन परिभाषयेत् ।

प्यायैस्तथा जटामांस्या घटी रक्तद्वयात्मिका २६२१

पथ्यापयोऽनुपानेन घटीयं मिहिरोदया ।

अर्द्धाविभेदकं हन्ति पीता घातमनन्तरम् ॥ २६२२ ॥

सूर्यावर्तं तथा शङ्खजैकजञ्च द्विदोषजम् ।

विदोषजं शिरोरोगं साध्यासाध्यं न संशयः ॥ २६२३ ॥

आ. वि. शिरोरोगे ।

भाषा—लोह, अन्नक, सुवर्ण, मृगा, राजावर्त इकीमस्मै

१-१ भाग, रससिन्दूर २ भाग लेकर सबको घाटीकीसी

एरण्डमूल और जटामासीके ढाणसे १-१ रोज मर्दनकर १-२

रतीकी गोलियं बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली हरेके

काढ़ेकेसाथ लेनेसे अर्धाविभेद, अनन्तवात, सूर्यावर्त, दहक,

एकदोषज, द्विदोषज और विदोषज साध्य अथवा असाध्य

शिररोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २६२३ ॥

५८४ मुक्तागर्मपोट्टलीरसः ( प्रथमः )

मौक्तिकं कनकसूतगन्धकं वृद्धितोऽग्निपयसा चिमर्दयेत्

धासरं पृथुवराट्कास्ततः प्ररयेच्च पुटयेच्च पूर्ववत् ।

मुक्तगर्मैवपोट्टलीरसो जायते क्षयविनाशनः परः ।

रक्तिकात्रयमितं रसं पिबेद्ब्रह्मपट्टमरिचैर्धृतप्लुतेः ॥

सर्धरोगविनिवृत्तये तथा योजयेच्च कुट्ट तत्र संशयम् ।

रोगजातरहितोऽपि योजयेत्पुष्टिर्दासिधृतिवीर्यवृद्धये ॥

र. शं. र. दी., क्षये ।

भाषा—मोतीकीमस्म १ भाग, सुवर्णमस्म २ भा. शुद्धपारा

३ भा और गन्धक ४ भाग लेकर चिन्कमूलके ढाणसे एक-

रोज मर्दनकर बड़ेकौडीमें भरके शुष्क, सुहागा और चूनेसे सुह-

बन्दकर हंडीमें रख ब्रह्मलगाकर ३-४ कपडिमिट्टी करदे ।

सूखनेपर एकमन कण्डोंकी आबदे । स्वाज्ञशीतलोहेपर निकाल-

कर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रतीकीमात्रा १८ रती काली-

मिचैके चूर्णकेसाथ पीमें मिलाकर खानेसे यह समस्तरोगोंको

निवृत्तकरताहै । इसको रोगरहितमनुष्य खाय तो पुष्टि, अमि-

रीति, धैर्य और वीर्यकीवृद्धि होतीहै ॥ ५८४ ॥

५८५ मुक्तागर्मपोट्टलीरसः ( द्वितीयः )

मृतं स्वर्णं मुक्ता विपचपलमंशं समर्पलि,

द्विपलं सम्मर्धं ज्वलनपयसा गोलकमिदम् ।

समुद्रैर्वैर्येणं मुनिमित्तमयो रोपय पुटे,

सुभाण्डस्थं माण्डे विपच दिनमेकं हिममिदम् ॥

तथा सुजे पाण्डौ ज्वररुजि समेहे गदपती,

विशुके मुक्तापोट्टलिरथ मरीचाज्यविहिता ॥

र. शं. क्षये ।

भाषा—सुवर्ण और मोतीमस्म, शुद्ध ब्रह्मण और पारा

१-१ भाग, शुद्धगन्धक ४ भाग लेकर पारेगन्धकी नीलवर्ण

कवलीमें सबकीजें मिलाकर निष्कमूलकेढाणसे दोरोज मर्दन

कर गोलावनाय २-१ तह मलमलके कपड़ेमें छेपेकर ७ कपड-

मिट्टी देकर सुखावे । फिर खराबसमुद्रमें बन्दकर लवण अथवा

मत्स अथवा गाढकायब्रमें रख एकदिनकी मध्यम अग्नि देवे ।

स्वाज्ञशीतलोहेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रती

मरिच और धीकेसाथ देनेसे जीर्णज्वर, प्रमेह, राजरोग, शुष्क-

क्षय, हृन्सक्को यह नष्टकरताहै ॥ ५८५ ॥

५८६ मुक्तादिचूर्णम्

मुक्ताप्रवालचैर्दूर्यशत्स्फटिकमज्जनम् ।

ससागन्धकाचाऽकं सूक्ष्मेला लवणद्वयम् ॥ २६२८ ॥

ताप्राऽयोरजसी रूप्यं ससौगन्धिं करोटकम् ।

जातीफलं शणाद्वीजमपामार्गस्य तण्डुलाः ॥ २६२९ ॥

पपां पाणितलं चूर्णं तुल्यानां क्षौद्रसर्पिषा ।

हिक्कां श्वासञ्च फासञ्च लीडमानु नियच्छति ॥ २६३० ॥

अजनातिमिरं कार्चं नीलिकं पुष्पकं तमः ।

पेल्यं कण्डुममिष्यन्दं मन्त्रञ्च तत्प्रणाशयेत् ॥ २६३१ ॥

च घ., ज घं., हिक्काधारकासेपु ।

टि०—“शायं समुद्रेनेत्रं मण्डूलीञ्च समुद्राग्नौ । स्फटिकं बुद्ध-

विन्दश्च प्रवालमस्तकतया ॥ वैदूर्यपलकं मुक्ताभयसागराग्निं च ।

समभागानि सम्मिष्य सार्धं क्षौद्रोऽग्नेन तु ॥ चूर्णाऽज्जनं कारित्वा

भाजने मेघपत्रेन । ससागन्धकाचं फासमभ्यस्ततस्तं तुष ॥ अमोनि

विष्ठा हन्त्या सिराजालानि तेन वै ॥ घु ॥, ज अ २५।२५-२८, ॥

इति सुप्रतीवप्रयोगे प्रायः प्रथमानि द्रव्याणि समागतानि परन्तु स

अजनतया विन्यस्य, अभिवेगेन तु दिवस्तपु व्यत्यय कृत्वा तत्राग्रे

मयुगमिति सुधीर्भिर्बाधनीयम् । सुप्रतीवप्रयोगोऽपि मन्त्रे प्रयुक्तश्चे-

त्तत्कालोपगन्धयतिशयिष्यत् इत्यस्माकमभिप्रायः । एव—“मष्टौ भागा

नमस्तस्य नीलैरप्यस्तमयुगे । औदुम्बरं घातकुम्भं राजतञ्च समासत ॥

एकदशभाग्याग्रांस्तु बीनैर्लुकाग्रे भिषकः । मृषाक्षिप्तं तदा घातमावृत्तं

जातेवेरति ॥ रसिद्विद्वस्तवाह्निं गोशङ्खिरपापि वा । गवां गन्धद्वये

युवे दग्निं सर्पिषि माक्षिके ॥ तैलमघवसामजसर्वगन्धोदेकेषु च ।

द्राक्षारसेषुविफलारसेषु सुविनेषु च ॥ सारिवादिकगणे च वराये चोत्प-

लक्षिके । निषेधैर्यत्पुष्पं नैनं घातं घातं पुन पुन ॥ ततोऽन्तरिक्षे

ससाह श्रोतवद स्थित जले । विषोष्य चूर्णयेन्मुक्तां स्फटिकं विद्रुमं तथा ॥

कालानुसार्यञ्च तथा शुक्तिरावाप्य योगतः । पतच्चूर्णान्नं श्लेष् निहितं

गार्जने शुभ्रं ॥ दन्तरक्षिकैर्वैदूर्यशङ्खलैस्तमिहैव । शतकुर्मन्त्रं सार्धं

वा राजते वा मुनकृते ॥ सहस्रपत्रकचूर्णं कृत्वा रात्रं प्रवीनयेत् ।

तेनाऽऽभिताक्षो ज्वलति वैतेत्तत्केनमपि ॥ अग्न्य सर्वभूतानां हृदि-

रोगक्षिपति ॥ घु स उ २८।८५, ॥ अथमपि योगे मन्त्रे चरन्ते

योगलुप्तानिद्विषयते प्रथानतया प्रमेह, हृष्टी, पाण्डु, भालोज-

क्षयादिकं शीघ्र क्षययिष्यति इति रहस्यम् ।

भाषा—मोती, मृगा, लसनिषा, शङ्ख, स्फटिक, शेटाग्न,

सुवर्ण इनकी मस्में, शुद्ध गन्धक, शेटकाचमस्म, सूक्ष्मातमस्म

अथवा जाकड़ी जङ्गी छाल, छोटीहलायची, संधा और साभर-

नमक, ताम्र, लोह और चादीमस्म, सहस्रदलकमल ( श्रीकमल

नामक मृदान की तर्क होताहै ), केसर, जायफल, शङ्खेकीज,

अपामार्गके पावल येसव समभाग लेकर घाटी चूर्णकर रखछोड़े ।

इसमेंसे ३ मासेसे ६ मासेतक प्रकृति, देश और कालादिकको

विचारकर मयु और धीकेसाथ देनेसे हिक्की, श्वास, फास, कास,

इससक्को यह नष्टकरताहै । अजनकृतेसे तिमिर, मोतिया,

नीलिता, पुष्प और तम, रौल, सुजली, आंघोंका दुखना, मन्ददृष्टि इनसबसे नष्टकरती है । यहपर यह विशेषकर ध्यानमें रचना उचित है कि जब इसयोगसे अन्ननेनिमित्त बनाताहो तब पातुओंकीभूमि न लेकर शुद्धरके बहुत थारीकरेता करके संगरा-वीरहकेरसे यहातक घोट कि पातुओंकेरुण नावृद् होजाय ॥

### ५८७ मुक्तापञ्चामृतसः

मुक्ताप्रवालखुरवङ्गकम्बुशुक्ति-  
मूर्ति यस्यदधिदगिन्दुसुधांशुभागाम ।  
इक्षो रसेन सुरभेः पयसा विदारी-  
कन्यापरीसुरसहस्रपदीरसेश्च ॥ २६३२ ॥  
सम्मथं यामयुगलञ्च घनोपलामि-  
र्दद्यात्पुटानि मृदुलानि च पञ्चपञ्च ।  
पञ्चामृतं रसचिमुं मिपजा प्रयोज्यं  
शुद्धाचतुष्टयमितं चपलारजश्च ॥ २६३३ ॥  
पात्रे निधाय चिरसूतपयस्थिनानां  
दुग्धेन च प्रपिबतः खलु चाल्पमोक्षः ।  
जीर्णज्वरः क्षयमियादथ सर्वरोगाः  
स्वीयानुपानकलिताश्च शमं प्रयान्ति २६३४

ओ. र, नि. र, र. त, ज्वराधिपारः ।

भाषा—मोती ८ भाग, मृगेरीपिटी ४ भाग, हिरण-  
सूरीरागाजी भस्म २ भा, कण और मोतीसीपभस्म १-१ भा,  
लेवर बारीकपीसकर ईशकास, गायकादथ, विदारीबन्ध,  
घोड़ुआर, दातावर, तुलसी, हंसराज, इनसबकेरसोंसे २-२ पहर  
मर्दनकर गोलाबनाय मुद्राकर शरासम्पुटमें बन्दकर दो सेर  
जङ्गलीकण्डोंकी आचदे । स्वादहीतलहोनेपर निकालकर फिर  
इसीतह आचदे । ऐसे प्रत्येक औषधिजी ५-५ पुटे देकर  
पञ्चामृतकी पाचआंचे देवे । इसमेंसे ४-४ रतीकीमात्रा पीपलके-  
चूर्णकेसाथ मधुमें मिलाकर खावे कमसे बहुतदिनकी व्यायीहुई-  
गायका दूधलेकर बोझाभोजनकरनेसे जीर्णज्वर, क्षयप्रवृत्ति सम-  
स्तरोग अपने २ अनुपानोंकेसाथ लेनेसे शान्त होवे ॥ ५८७ ॥

### ५८८ मुक्ताभययोगः

कटुकगैरिकाम्याञ्च मुक्ताभस्म तथैव च ।  
बीजपूरस्य तोयेन तार्त्रं तद्वत्समाक्षिप्तम् ॥ २६३५ ॥  
ओ र, र सु, र च, रसायनसं, र क ॥ हिकायाम् ।

टि०—हिकाशासननिर्दण्डनिमित्त पूर्वसाधनिक्रियते ।

भाषा—उटकी, सोनागल और मोतीभस्म समभाग लेकर  
मिलाकर रखोहे । इसमेंसे ३-३ मारोकीमात्रा बिजोरेकेरसे  
लेनेसे हिचकी और श्वास नष्टहोते हैं । इसीतह ताम और  
सुवर्णमाक्षिभस्म समभागमिलाकर २ रतीकी मात्रा बिजोरेके-  
रसेकेसाथलेनेसे श्वास और हिचकी नष्टहोते हैं ॥ ५८८ ॥

### ५८९ मुक्तामृगाङ्गरसः

यदमं तीक्ष्णञ्च कान्ते रजतरसमर्थं भस्म वज्राहि तुल्यं,  
मुक्ता सर्वैः समाना द्विगुणमथ रसाद्वन्धकं टङ्गणञ्च ।

पादांशं सर्वमेतत्तुपभवमृदितं पूर्ववचनप्रपक्यं  
स्थाङ्गं शीतं मृगाङ्गं मृगमदतुलितं यश्मरोगे प्रशस्तम् ॥  
र प, राजयक्ष्माधिकारः ।

भाषा—सुवर्ण, फोलाद, कान्तलोह, चांदी और पारा  
इनकीभस्में १-१ भाग, वज्र और नागभस्म टाई २ ॥ भाग,  
मोतीकीभस्म १० भा, शुद्धान्ध २ भा., मुनामुहाण ५ ॥  
भा, लेवर सबका बारीकचूर्णकर तुषाम्भमें ४ पहर मर्दनकर  
गोलाबनाय गैबफलेके पत्तोसे सपेटकर ३-४ कपड़मिटी लगा-  
कर सुखाले । सूखनेपर नई ईडीमें पिसेहुए समुद्रके नमकमें  
गोलेको दबाकर ४ पहरकी मृदुआंच देकर पकावे । स्वाद-  
हीतलहोनेपर निकालकर धतूरा, भाग, खसखस, तिल और  
घोड़ुआर इनप्रत्येकके स्वरसोंसे ४-४ पहर मर्दनकर गोलाबनाय  
सैधानमक बारीकपीसकर गोलेपर मुद्रा १ फिर् धतूरेप्रवृत्तिके  
रसमें उड़के आटेको छानकर गोलेपर बढाय लवणयन्त्रमें रस  
३ पहर मन्दअग्निसे पकावे । स्वादहीतल होनेपर निकालकर  
रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रतीकीमात्रा बराबरकीकस्तूरीकेसाथ  
मिलाकर देनेसे उध्वतौंसहितराजयक्ष्मका यह नष्टकरती है ५८९

### ५९० मुखरोगहरीवटी ( प्रथमा )

रसगन्धौ समौ ताम्यां द्विगुणञ्च शिलाजतु ।  
शोमूत्रेण विमर्द्यांश्च सप्तधाऽऽर्द्रवेण च ॥ २६३७ ॥  
जातीनिम्बमहाराप्तीरसैः सिद्धयति पाकहा ।  
कणामधुयुता हन्ति मुखरोगं शुद्धाहणम् ॥ २६३८ ॥  
शुद्धाऽष्टकमिता तालुगलौष्ठदन्तरोगानुव ।  
महाराप्प्यध्वगन्धाभ्यां मुखञ्च प्रतिसारयेत् ॥ २६३९ ॥  
धारणात्सेवनार्थेय हन्ति सर्वान्मुखामयान् ।  
सर्वास्यामयजित्सेव्यो मधुना पर्पटीरसः ॥ २६४० ॥  
र सं, र. सु, र चि, रसायन सं, र. कौ, मै र, र का, र  
सि, र. क मुखरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, शुद्धशिलाजीत  
४ भा., लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकमलीकर शिलाजीतमें  
मिलाकर गोमूत्र, अदरक, चमेली और नीमकीछाल तथा महा-  
राष्ट्री ( मराठी ) इनके रसोकी ७-७ भावनाए देकर ८-८  
रतीकीगोलियें बनाकर ध्यायशुष्ककर रखछोड़े । इसमेंसे १-१  
गोली पीपल और मधुकेसाथ खानेसे यह मुखके समस्तदोषोंको  
दूरकरती है । मुखमेंरखनेसे गले, ओष्ठ और दातोंके रोगोंको  
नष्टकरती है । मराठी और असगन्धके चूर्णसे दन्तमज्जन काना-  
चाहिये । इसगोलीको खानेमें तथा दातोंमें घिसनेकेकाममें  
लानाचाहिये । इसीतह मधुकेसाथ पर्पटीरसके लनेसे भी  
समस्त मुखरोग नष्टहोते हैं ॥ ५९० ॥

### ५९१ मुखरोगहरीवटी ( द्वितीया )

अम्रककम्बुकम्बजयुतं  
त्रिफलात्रिपलादाफलैस्त्रिदिनम् ।  
पमटङ्गणेन विमर्दय तं  
चटिकां कुरु तांतु सुवेष्टम् ॥ २६४१ ॥

गुडगुग्गुलुगोमयटङ्गणैः  
 क्रमतश्च सुवेष्ट्य विशोष्य ताम् ।  
 धमयेत् दृढानलयन्त्रवे  
 ध्रुवबन्धनमेति सन्दिह्युतः ॥ २६४२ ॥  
 सितकावमुटङ्गणकाज्ययुतं  
 निपुणं धमयेच्च मलं सकलम् ।  
 विजहाति स तेन समं कनकं  
 चरतारसुशुल्यदलं यदि वा ॥ २६४३ ॥  
 रसराराजसमं कुरु तत्पित्तये  
 धमयेत् रसेन तु लेप्य तम् ।  
 सुदिने गुरुसंयुतमाम्बनरा-  
 जुपचारणैरुपपूज्य ततः ॥ २६४४ ॥  
 घटने गुदिका प्रणयेत् धृता  
 व्रशने हृदया मुखरोगहरा ।  
 अनिलादिगवानपह्मि सदा  
 निल माससुधारण्याऽथ भवेत् ॥  
 घर्युद्धिकरा बलदा प्रखला  
 पलितादिहरा च समायुगले ॥ २६४५ ॥

र री, मुखरोगे ।

भाषा—अभ्रफसस्र अथवा धान्याम्रक, शङ्ख, शुद्धपारा, समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेमें मिलाकर एकदिन सुखा-मर्दनकर त्रिफला, चित्रक, पलाशकेषीज इनके काथोंसे १-१ दिन मर्दनकर सबकी बराबर शुद्धाग्रा मिलाकर तीनोंके इकट्ठावासे एकदिन मर्दनकर गोली बनाय पुराने बलके कतरन और भिड़ोको कूटकर एकजीव होनेपर एकलेपदेकर सुखावे । फिर गुड, गुग्गुलु, गोबर और शुद्धाग्रा इनका १-१ लेपदेकर सुखाकर कुठालीमें रख द्वादशसे धमनकरनेसे खोट (किटवदशपदार्थ) पैदा होगा । इससमस्तको इकट्ठाकर सकेदकाय, शुद्धाग्रा और री मिलाकर कुठालीमें रखकर धमनकरनेसे मल अलग होकर रस पृथक् होजायगा । फिर सुवर्ण, चादी और तांबा इनका बारीकरोला अथवा बर्क रसकीबराबर मिलाय गलाकर पत्र बनावे और पूर्वसके ऊपर लेपदेकर गोलीकेसदृश बनाले । शुभमहुतमें शुद्ध और पूर्यलोगोंकी पूजाकर इसगोलीको शुद्धमें रखनेसे दन्तरोग, मुखरोग, दात, पित्त तथा कफरोग एकाही-नेमें दूहोतेहैं । बुद्धिकी मन्दता, धातुओंकी कमजोरी, बली और पलित दोषवर्षमें नष्टहोतेहैं ॥ ५९१ ॥

५९२ मुखरोगहरीवटी ( तृतीया, चतुर्थी )

कनकाकं सुतारयुतं भयजं  
 यदि वा कुरु तं घटने निहितम् ।  
 यदि वाऽकैजचक्रनियद्वरसं  
 घनकान्तयुतं घटने सुखदम् ॥ २६४६ ॥

र री, मुखरोगे ।

भाषा—शुद्ध सोना, तांबा, चांदी और अमिष्यायी पारा इनसबको गलाकर गोलीबनाय मुखमें रखनेसे मुख और दातोंके

रोग दूहोकर अग्नि प्रदीप्तहोताहै । अथवा अनलरस ( छ. १२५ ) में कहेहुए प्रकारसे पाराको बांध अभ्रफसस्र और कान्तस्रसबको मिलाकर नियामरूपसे २-३ दिन घोटकर कुठालीमें रखकर गलावे और गोलीके आकारमें बनाकर रखले । इसगोलीको मुद्देमखनेसे तमाम मुखरोग नष्टहोतेहैं ॥ ५९२ ॥

५९३ मुद्राघोटक रसः

पारदो गन्धकश्चैव त्रिक्षारं लवणनयम् ।  
 गुग्गुलुर्वत्सनाभश्च प्रत्येकन्तु द्विमापकम् ॥ २६४७ ॥  
 कृष्णोन्मत्तजटातीरं भावयेत्सत्तवारकम् ।  
 गोक्षुरेन्द्रकमाटीयकरज्जिचित्रतेजिकाः ॥ २६४८ ॥  
 भृक्षुरथकलतामिष्य त्रिफलावृहतीरसे ।  
 मर्दिता वटिका कार्या कृष्णलाफलसन्निभा ॥ २६४९ ॥  
 ततो वटीद्वयं दत्त्वा यत्नात्पादादिमिर्युतः ।  
 रसः सर्वज्वरं हन्ति क्षणमात्राच्च संशयः ॥ २६५० ॥

रै र, र शु, ज्वराऽधिकारे ।

टीका—अत्र रसे भृक्षुरथकलतामिष्यति पाठे केनचिद् भूमिशिष्येति व्याख्यात तत्र सम्पत् भूमिशिष्येऽपिप्रस्तावः । तस्माद्विरिति पृथक्वत् तत्र पृथ्वीकाशयेन सुधुपादौ व्यवहृत, जके तस्य बालीगीरीति नाम । यद्यपि वटिकादिभिः उत्स्थाने बड्मकार स्वाऽज्ञानमुद्राभावि परन्तु तत्तन् वैमाचार्यस्य नाशभिन्नैः श्रवणानुरोधा-द्वयस्यतिविचरणे पतङ्गि-रेण विवेचयिष्याम । अमरप्रभृतिभिः वैमरस्यतिविधानं रसातलमनाम्यत उत्तर्वाचोने पृथ्वीराव्यो बृहदेलिकाया सङ्केतित, तदनुमारेण चेदत्र भृक्षुरथस्य व्याख्या क्रियेत सार्धं बृहदेलिका प्रदीप्यमा । कुम्भकेन सप्तचरी प्राची रत्नगर्भाचम्बरः, लताशब्देन मजिठा प्राग्वा प्रकरणादुरोपाय ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, तीनोंक्षार ( सजी शुद्धाग्रा और बबक्षार ) तीनोंनमक ( सेंधा, सामर और सचल ), गुग्गुलु, शुद्धबलनाग ये प्रत्येक २-२ मासे लेकर बारीकचूर्णकर पापेम्बुककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर काष्ठेयदुरोकीनङ्के-रससे सातवार भाबनाएँ देकर गोखल, इरैया, मरसा, वरज, त्रिफला, कनभाडा, इनप्रत्येकके बराबरसमस्त स्वस्त अथवा काथोंसे १-१ रोज मर्दनकर शुद्धाप्रमाण गोलियाबनाकर छायाशुद्धकर रखलोवे । इसमेंसे २-२ गोली पाठा, खट, सुप-न्यनायकेकाथ अथवा हिमकेसाथ देनेसे सबप्रकारकेज्वर क्षणभावमें नष्टहोताहै ॥ ५९३ ॥

५९४ मुसलीपाकः

मुसलीकन्दचूर्णन्तु क्षीरेऽष्टगुणिते पचेत् ।  
 प्रस्थमात्रं प्रदातव्यं चूर्णमेपां पृथक् पलम् ॥ २६५१ ॥  
 व्योषं निजातं ह्युपा शताह्वा शतमूलिका ।  
 अजाजी दीप्यकश्चैव चित्रको गजपिप्पली ॥ २६५२ ॥  
 यवानी ग्रन्थिकं धात्री शशी गोक्षुरधान्यकम् ।  
 अश्वगन्धाऽमयामेघाः सिन्धुदोषो लवङ्गकम् ॥ २६५३ ॥  
 जातीफलं जातिपत्री नागकेसरकं धुर ।  
 बला चातिबला नागबला मकंदबीजकम् ॥ २६५४ ॥

यष्टी शालमलिनियांसः शृङ्गाटाऽऽनुजयीजकम् ।  
 त्यक्सीरिका बालकश्च कङ्कोलाऽऽफलकं हिमम् २६५५  
 लुञ्जितानां तिलानान्तु प्रस्थाऽर्द्धमिह योजयेत् ।  
 भस्मसूतपलाऽर्द्धन्तु पलमन्नकलोहयो ॥ २६५६ ॥  
 सर्वद्विगुणखण्डस्य पाकं कृत्वाऽत्र योजयेत् ।  
 भेषज्यानां गणं सर्वं घटीः कुर्याद्विचक्षणः ॥ २६५७ ॥  
 अर्धमुष्टिमितास्तास्तु शुभेऽहनि विवक्ष्यते ।  
 इष्टदेवं समभ्यर्च्य खादेदेकमहर्मुखे ॥ २६५८ ॥  
 ततः किञ्चित्पयः पेयं खादेद्वदकमुत्तमम् ।  
 मन्दाग्निगुल्ममेहार्शः श्वासकासखण्डशयान् ॥ २६५९ ॥  
 फामलां पाण्डुरोगञ्च शुक्रक्षेप्यञ्च दृक्क्षयम् ।  
 घातरोगं पित्तरोगं कफरोगं तथैव च ॥ २६६० ॥  
 पाण्ड्वञ्च प्रदरं स्त्रीणां शुक्रदोषमुदर क्षतम् ।  
 रजोदोषं भ्रूणवृद्धं मूत्राघातं तथाऽध्मरीम् ॥ २६६१ ॥  
 मलदोषं तथाऽऽनाहं कादर्यप्राक्कल्पमुत्पणम् ।  
 घातरक्तञ्च हृत्पेप मुशलीकन्दलेहकम् ॥ २६६२ ॥  
 अमिष्टकान्तिरुक्तेजोवृद्धिदृक्कामवृद्धिरुत् ।  
 अग्निभ्यां निर्मितो योगो घलीपलितनाशनः ॥ २६६३ ॥  
 क्षीणशुक्राश्रपाट्टा नारीञ्च क्षीणधीर्यकाः ।  
 तालमूल्यचलेहोऽयं निर्मितो धरणीतले ॥ २६६४ ॥  
 नास्त्येनैव समो योगो विशेषाच्छुक्रवृद्धये ॥ २६६५ ॥  
 रसायन स, य, यो म, रसायने ।

भाषा—एन्सेर मुशलीकाचूर्णं लेकर ८ सेर दूधमें मन्द  
 आचसे पकावे । मावाहोजनेपर त्रिकटु, तज, पत्रज, इलायची,  
 हाउवेर, सोंफ, शतावर, जीरा, अन्नमोद, चित्रक, गजपीपल,  
 अजवाइन, गडिवन, आबला, नरकचूर, गोखरू, धनिया, असगन्ध,  
 हूँ, नागरमोथा, ससुद्रोप, लौंग, जायफल, जाबिनी, नाग-  
 केसर, तालमखाना, बला गगेरु, कंधी, नागबला, केवाच,  
 मुलहठी, मोचरस, सिंघादे, कमलाग्रा, तीक्ष्ण, सुगन्धवाला,  
 शीतलचीनी, अकलङ्करा, सफेदकन्दन, येसव १-१ पल, छिन्न  
 वैदहित तिल आधचेर, पारदभस्म आधापल, अन्नक और लोह-  
 भस्म १-१ पल लेकर सस्ते दूनी शकरबी चाशनीकर मावेको  
 बालकर कुलपानीकाअंशहोतो सुखादना । फिर सबकीजें मिलाकर  
 २-२ तोलेके मोदकबनालेना । इसमेंसे १-१ मोदक शुभमहूर्तमें  
 इष्टदेवकापूजनकर प्रातः कालखाकर योद्धा गरमदूध पीवे । इसके  
 सेवनसे मन्दाग्नि, गुल्म, प्रमेह, अर्थ, श्वास, कास, ण्ण, क्षय,  
 कामला, पाण्डु, शुक्रवी क्षीणता, दृष्टिकीकमजोरी, वात, पित्त  
 तथा कफरोग, नपुसकत्व, प्रदर, शुक्रदोष, उदर क्षत, रजोदोष,  
 मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, पयरी, मलदोष, आनाह, कुपता, बडा-  
 हुआवातरक इनसबको यह नष्टकरताहै । इसेश सेवनकरनेसे  
 तमामरोगोंसे निरुक्तहोकर दीर्घायु होताहै ॥ ५५४ ॥

### ५५५ मुस्तादिमण्डूकरसः

मण्डूरं चूर्णितं कृत्वा मुस्ता पद्धर्यलकम् ।  
 कणा शुण्ठी यवक्षारं पञ्चानां समचूर्णकम् ॥ २६६५ ॥

चूर्णतुल्यञ्च मण्डूरं गोमूत्राऽऽपणुं भवेत् ।  
 तत्तुल्यञ्च गवां क्षीरे पचन्मृद्वग्निना शनैः ॥ २६६६ ॥  
 पिण्डितं कोलमात्रन्तु भक्षयेच्छूलनुद्भवेत् ।  
 प्रातर्मध्याह्नरात्रौ भक्षयेद्वटिकात्रयम् ॥  
 मांसं पिष्टञ्च गुर्वन्नं मापादींश्च विवर्जयेत् ॥ २६६७ ॥  
 व रा, श्ले ।

भाषा—१०० वर्षपुरानेमण्डूकीभस्म और नागरमोथा,  
 शरवेरीकीजइकीछाल, पीपल, सोंफ, यवचार ससमभागका  
 चूर्ण मण्डूकीबराबर लेकर अठगुना गोमूत्र और दूध डालकर  
 लोहेकी कड़ाहीमें मन्दाग्निसे पकावे । गुहरीतह बाशनीहोनेपर  
 उलाकर बिकनेवर्तनमें रखडोके । इसमेंसे सुबह, मध्याह्न और  
 रात्रिमें आधेआधे तोलेकी दो अथवा तीन गोल्या खावे ।  
 मास, पिष्टमयपदार्थ, उड़द और भारीबीजें न खाय । इसके  
 सेवनसे समस्तशूल, पाण्डु और कामला प्रभृतिरोग नष्टहोतेहैं ५५५

### ५५६ मूत्रकृच्छ्रहररसः

विदारी गोक्षूरं यष्टी केशरञ्च समं पचेत् ।  
 तत्कपायं पियेत्यौद्रीं रसभस्मयुतं पुनः ॥  
 मूत्रकृच्छ्रं हृत्पेस्यं सप्ताहारिपित्तसम्भयम् ॥ २६६८ ॥  
 भै र, घ, मूत्रकृच्छ्रे ।

भाषा—विदारी, गोखरू, मुलहठी, नागकेसर, सब सम  
 भाग लेकर दो तोलेका बौयुने पाणीमें काड़ाबनावे । चतुर्धा  
 बसेप रहनेपर छानकर मधुका प्रक्षेपदेकर एकत्री पारदभस्म  
 मधुने चाटकर कावा पीवे दो सातदिनकेसेवनसे पित्तोत्त  
 मूत्रकृच्छ्र नष्टहोवे ॥ ५५६ ॥

### ५५७ मूत्रकृच्छ्रान्तकरसः (प्रथमः)

शतावरीरसेः पिष्ट्वा मृतं सूतञ्च तालकम् ।  
 शिखितुल्यञ्च तुल्यांशं दिनैकं मर्दयेत् दृढम् ॥ २६६९ ॥  
 तद्वले सार्यसे तैले शङ्खं मधुञ्च चूर्णयेत् ।  
 मूत्रकृच्छ्रान्तकश्चाऽस्य सौद्रिगुञ्जाचतुष्टयम् ॥ २६७० ॥  
 भक्षणाश्चाऽत्र सन्देहो मूत्रकृच्छ्रं निहत्यलम् ।  
 तुलसीं तिलपिण्यां च थिल्वमूलं तुपाम्बुना ॥  
 कर्पकं वाऽनुपानेन सुरया वा सुवर्चलेः ॥ २६७१ ॥  
 र स, घ, र, र, यो म, र सु, र चि, र क, र चं, र र  
 कौ, चि क, र र स, र का, व रा, र, क ल, र कौ, मूत्र  
 कृच्छ्रे । र क शिखितुल्यस्थाने गन्धक नियोजितम् । पुन  
 चितालस्थाने क्षाम नियोजितम् । र का. मूत्रकृच्छ्रारिः ।  
 यो म मृतसूत ।

भाषा—थारर, हरिताल और तुल्यमन्स समभाग लेकर  
 शतावरीके अस्वरसेएकेरों मर्दनकर थोलाबनाय सरसोंके  
 तैलमें एकपहर मध्याग्निसे पाचनकरे । स्वाहतीतलहोनेपर  
 निकालकर रखडोके । इसमेंसे ४-४ रत्ती मधुकेसाय देकर  
 तुलसी, तिलकीछली, बेलकीजइकीछाल सबसमभाग लेकर १  
 तोला तुपाम्बु अथवा मय अथवा सञ्जलकेजलकेसाय सेनेसे  
 मूत्रकृच्छ्र नष्टहोताहै ॥ ५५७ ॥

## ५९८ मूत्रकृच्छ्रान्तकरसः ( द्वितीयः )

रसगन्धयथारं सितान्तायुते पियेत ।

मूत्रकृच्छ्रान्तकरणे निहन्ति नियते नृणाम् ॥ २६७३ ॥

र. सं., र. का., र. चं., र. र. दी., रसायन सं., सूत्रच्छे. । र. का., र. र. दी., गन्धो न इत्येते नाम च मूत्रमस्मप्रयोगः ।

भाषा—शुद्धा और गन्धकड़ी नीलकण्ठमली, मधुआर और शर सव समभाग मिलाकर रगड़ोके । इन्मेंसे ३-३ मासे छाछेसाय लेनेसे सयप्रकारके मूत्रच्छे नष्टहोतेहे ॥ ५९८ ॥

## ५९९ मूत्रकृच्छ्रान्तकरसः ( तृतीयः )

पारदाभ्रकयेनान्तेहमस्तान्तानि गन्धकम् ।

मौक्तिकं विद्रुमञ्चैव प्रत्येकं स्यात्समं समम् ॥ २६७३ ॥

जम्भास्तेन सम्मर्षं मृषायां सधिराधयेत् ।

पञ्चविंशपुटं दत्त्वा ततः सूतं विपूरणयेत् ॥ २६७४ ॥

मापमात्रं रसं दद्याधननीतसितान्तायुतम् ।

मूत्रकृच्छ्राश्मरिमह्यातपित्तकफामयान् ॥

क्षयान्निलरोगांश्च नाशयेन्नाऽत्र संशयः ॥ २६७५ ॥

पे. वि., सूत्रच्छे ।

टि०—यद्यप्यत्र पुटविभाग न निर्दिष्ट तथापि गजपुट उपेय । पारदाभ्रकरी च बास्मर दत्त्वा जम्भास्तेनसमं पुटान्तर देवमिति रिशिरासम्लीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक, वैजन्त, गुग्गुलु, बान्तलोह, मोती, प्रवाल इनहीभमें सव समभाग लेकर पार गन्धकड़ी नीलकण्ठमलीमें सबको मिलाय जंभीरीबेरछते ४ पहर मईनकर गोलाबनाय धागवमनुमें बन्दकर ३-४ कण मिरी देकर गजपुटकी भांषे । स्वाङ्गीकृतहोनेपर निकालकर पुईदीपावर पारगन्धकड़ी कजली मिलाय जंभीरीबेरसे गोलाबनाय गजपुटकी भांषे । एते २५ अंगि देनेकेबाद निवालकर एरुज मईनकर धीसीमें रगड़ोके । इन्मेंसे १-१ मासा मकरान और शरकेसाय देनेसे मूत्रच्छे, पथरी, प्रमेह, वात पित्त और कफके तनामविहार तथा क्षयादि समस्तदोष इन्में नष्टहोतेहे ॥ ५९९ ॥

## ६०० मूत्रकृच्छ्रान्तकरसः ( चतुर्थः )

स्थाल्यसंममत्ताऽऽरुयं पिपाय तनुयामसा ।

पद्मा मृगेण तद्वप्यं भीषासश्च प्रसारयेत् ॥ २६७६ ॥

पयोन्मन्त्राग्निना तापयायद्रव्या अले पतेत् ।

भीषासः स्याद्भूतिऽत्र शिन्ध्यापानीयमाहरेत् २६७७ ।

तन्मह्यं घनमस्यानी प्याऽष्टमं मकराजम् ।

पक्ष्मणे गन्धकः जीर्णं तिरुनं रगमुत्तमम् ॥ २६७८ ॥

शादन्माषाद्वर्षां माषां मूत्रकृच्छ्रान्तकराद्भूतम् ।

भीषासः केपलां दीप सप्ततः सितया युतः ॥ २६७९ ॥

रसायनवार., सूत्रच्छे ।

भाषा—नईदीमें भाषेकडानीभरके मुंदर बाईकडकर रक्कर गुग्गुलि बगदर बीरंदे । ऊपर मादविगेजा धन्यकर

चीनीवेव्यालेमे दइदे । उधईदीको पूरहेपर रस मन्द अग्नि जलावे, बीचचीचमें देवता रहे जब सिरोजा गल्लर हमाम पानीमें पड़जाय तब नीचे उतारकर रगले । स्वाङ्गीकृतहोनेपर पानीको फेंकदे और सिरोजेको बिनी दीसीमेंभरके रगले । इन्में अठमांश मकरध्वज अथवा पशुपान्मपटजारित रसगिन्दूर मिलाकर १-२ पहर घोटकर २-२ मासेकी गोलीया बनाकर रग छोडे । इन्मेंसे १-१ गोली प्रात और सायंकाल देनेसे सब तरहके मूत्रच्छे नष्टहोतेहे । केवल दृढविद्यानुभावविगेजाभी शरकेसाय देनेसे काम करताहे ॥

विशेष सूचना—यद्यपि इन्में केवल पानीमें इगदा पातनसितानुअहे पर १ सेर गैडुमें १६ सेर पानी बााकर बोरे मिठीके बनेतर कण्ठापाकर २० तोले सिरोजारकमें और धीरे २ गैडुओंको पड़ावे केवत् बाय सिरोजेमें छगे, उकान आकर पानीका सगई न हो । गैडु पकनेतक ऊपरका सिरोजा पित्तकर नीचे पकनेके पड़ेमें जा लगेगा । पानी ठंडा होनेपर धीरेसे गैडुओंको निकालकर पशुओंको खानेको देवता और पानीका फेंककर सिरोजेकी निकाल लेता इमेदी विगेजेका साथ चढ़तेहे । जहां दसामे इगदा उपयोग हो वहां इगीको काममें लेता ॥ ६०० ॥

## ६०१ मूत्रदोषाहुसरसः

अन्नकं पारदं स्वर्णं लोहं पर्णं शिलाजतु ।

समभागानि धेतानि धनुनरे पिमर्दयेत् ॥ २६८० ॥

मिदिनें मुनादीनोवेरितकण्टकरनेन च ।

मूत्रदोषाऽद्भुतास्याऽस्य यत्तुयुगं प्रदापयेत् ॥ २६८१ ॥

यातकुण्डलिका नाम मूत्रमज्ञादमरीगदान् ।

धानीत्यपान जयेदोषान् यद्विसन्दीपनः परः ॥ २६८२ ॥

र. म. मा., मृषापात्रे ।

भाषा—अन्नक, पारा, गुग्गुलु, लोह और बज इनहीभमें, शिलाजीव देवस समभाग लेकर इरगिट, मुग्गुली और गोमर्कके दवागममर मवाय अथवा हाथोंमें ३-३ रोज मईनकर ५-६ रानीकी गोलीया बनाकर रगड़ोके । इन्मेंसे १-१ गोली उबि-तनुयानेखाय देनेसे वातकण्डलिका, मूत्रगद, पथरी और वातपानदेय नष्टहोतेहे तथा अग्रिम प्रसिद्धोपादे ६०१

## ६०२ मूच्छासूदनरसः

मृत् मृत् मृत् ताव्यं तुव्यमागं प्रसरयेत् ।

अन्य मृश्रादयं रसादेम्युना मरिचैः सह ॥ २६८३ ॥

पिबेत्तदनुभूतप्रदाः स्युरगं करणमित्तम् ।

जीर्णित्यरकृत्थनीं बाग्यजागयिनातानः ॥ २६८४ ॥

अग्निमान्धविषयकां राजपायमपिमर्दयः ।

धानुपुष्टिररुचिष बलदः कान्तिशरकः ॥

मृच्छायाश्च प्रयोगायां दृष्टव्यवधारकः ॥ २६८५ ॥

दे ६, सूच्छासूदनम् ।

भाषा—पारा और सुवर्णमाषिकमस्य समभाषलेकर १-२ पहर मदनकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्तीकी मात्रा मधु और ७-१४ अथवा २१ कालीमिर्चोंकेचूर्णकेसाथ लेकर ऊपरसे शङ्खाह्वलीका १ तोलास पीनेसे जीर्णज्वर, कफ, कास, श्वस, अमिमान्य, मलस्रग्बिबन्ध, राजयक्ष्म, धातुक्षीणता, बल तथा कान्तिका हास और सूक्ष्म इतसबको यह नष्टकरताहै ॥६०२॥

### ६०३ मृगजरसः ( प्रथमः )

मृतं सूतं सूतं तीक्ष्णं तुल्यं वासाद्रवै दिनम् ।  
मर्दितं मापमात्रान्तु भक्षयेन्मृगजं रसम् ॥  
सर्पाक्षिमधुना लेह्यमनुस्याद्रकपित्तके ॥ २६८६ ॥  
र र. रसायन च , यो म., रक्षयिते ।

भाषा—शरा और छोड़भस्म समभाग लेकर अच्छेके पत्तोंकेरससे एकरोज मदनकर १-१ मासोकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली खाकर अन्याह्वलीका १ तोला रस ३ मासो मधु मिलाकर ऊपरपीनेसे रक्षयित नष्टहोताहै ६०३

### ६०४ मृगजरसः ( द्वितीयः )

शुद्धं सूतं समं गन्धं टङ्गुणश्च मनःशिला ।  
पलायज्जोलजाजी च समभागश्च खल्वके ॥ २६८७ ॥  
शतावरीकपायेण दिवसं मर्दयेद् दृढम् ।  
शर्करामधुसंयुक्तं सूर्यावर्तं निहन्ति च ॥ २६८८ ॥  
ब. रा , वै चि., शिरोरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, सुहागा और मैनसिल, शलायवी, तज, बैरकीमज्जा, सफेदजीरा, येसब समभाग लेकर बारीक-चूर्णकर पारोगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर शतावरीके स्वरससे एकदिन मदनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली शकर और मधुकेसाथ मिलाकर देनेसे सूर्यावर्त नष्टहोताहै ॥ ६०४ ॥

### ६०५ मृगमालारसः

मार्कण्डी त्रपुलं शीर्षं सुदग्धं मृगशृङ्गकम् ।  
फार्पासयीजमज्जाश्च तुल्यमङ्गुलीयीजकम् ॥ २६८९ ॥  
पेषयेन्महिनीतनैर् दिनैर्क वटकीकृतम् ।  
माषद्वयं सदा सादेन्मृगमाला प्रमेहजित् ॥ २६९० ॥  
अक्षपाठाऽभयादावीकपायमनुपाययेत् ।  
मासमात्रप्रयोगेण प्रमेहगणनादानम् ॥ २६९१ ॥

र. र., र को , ब रा , यो म , रसायन , र सु , प्रमेह अधिकारे । र सु. नागमस्मादियोगः ।

३०—अर्वापाऽशानाम्मार्कण्डीस्थाने मासितमितिपाठे निबोधित ।  
मार्कण्डीराखने भूयाह्वली भद्राहा ।

भाषा—आवळ ( सु ) का पछाड़, वट्र, नाग और मृग-शृङ्ग इनकी मर्सें, कपासकेनीनोंकीमज्जा सब समभाग, सरकी बराबर अङ्गुलीकीमज्जा लेकर भेसकेमेंसे एकरोज मदनकर २-२ मासोकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली खाकर ऊपरसे बहंश, पाठ, हर्ष और दाहह्वरी का हाथ पीनेमें एकमहीनेमें सबप्रकारके प्रमेह नष्टहोताहै ॥ ६०५ ॥

### ६०६ मृगाङ्गुपोट्टलीरसः

शृङ्गवत्तनुपत्राणि हेमः सूक्ष्माणि कारयेत् ।  
तुल्यानि तानि सूतेन खरेषु क्षिप्त्वा विमर्दयेत् ॥ २६९२ ॥  
काञ्चनापरसेनैव ज्वालामुख्या रसेन वा ।  
लाङ्गल्या वा रसेस्तावद्यावद्भवति पिष्टिका ॥ २६९३ ॥  
ततो हेमश्चतुर्थांशं टङ्गुणं तत्र निक्षिपेत् ।  
पिष्टमौक्तिकचूर्णञ्च हेमद्विगुणमावपेत् ॥ २६९४ ॥  
तेषु सर्वसमं गन्धं क्षिप्त्वा चैकत्र मर्दयेत् ।  
तेषां कृत्वा ततो गोर्लं वासोमिः परिवेष्टयेत् ॥ २६९५ ॥  
पथ्यान्मृदा घेष्टयित्वा शोषयित्वा च धारयेत् ।  
शरावसम्पुटस्थान्ते तत्र मुद्रां प्रदापयेत् ॥ २६९६ ॥  
लवणापुरिते भाण्डे धारयेत्तच्च सम्पुटम् ।  
मुद्रां दत्त्वा शोषयित्वा चतुर्भिर्गोमयैः पुष्टेत् ॥ २६९७ ॥  
ततः शीते समाहृत्य गन्धं सूतसमं क्षिपेत् ।  
घृष्टा च पूर्ववत्स्वल्पे पुष्टेद्रजपुष्टेन च ॥ २६९८ ॥  
स्वाङ्गशीतं ततो नीत्वा गुञ्जायुग्मं प्रकल्पयेत् ।  
अष्टिमि मरिचैर् युक्तः कृष्णानययुतोऽथ वा ॥ २६९९ ॥  
यिलोक्य देया दोषादीनैर्कैः रसरक्तिका ।  
सर्पिणा मधुना वाऽपि दद्यादोषापपेक्षया ॥ २७०० ॥  
लोकनाथसमं पथ्यं कुर्यात्स्वस्थमनाः शुचिः ।  
श्लेष्माणं प्रहर्षां कासं श्वासं क्षयमरीचकम् ॥ २७०१ ॥  
अग्निमान्द्यं धातुशोषं प्रखलात् कफजान्मादान् ।  
मृगाङ्गुोऽयं रसो हन्यात्कुशलं घलहीनताम् ॥ २७०२ ॥

शा. सं , नि र , रसायन , रस सं , भै सा , ना वि , र प्र , र ( मा ) , चि र भ , वै द , र प्र सु , टो , यो म र का , रात्र यक्ष्मणि । शोषमहाणवै ज्वालामुखीस्थाने कार्पासकुसुमभावना हल्यवे ।

भाषा—यवासम्भवमुषुसान्तमस्कारकियाहुआ पारा खरल में डालकर सुगंधैवर्क १-१ करके डाल्दानाय, एफर्क मिल जानेपर दूसाङ्गले । इसतरह बराबरसे घर्शोको मिलाकर पिष्टी बनाले फिर कचनार, हुरहुर, करिहारी, इनप्रत्येकके अङ्गुलरससे १-१ रोज मदनकर सुवर्णसे चतुर्थांश सुहागा और द्विगुण मोतीकीपिष्टी और सबकीबराबर शुद्धगन्धक डालकर १-१ रोज पूर्वोक्तसोवे मदनकर गोलाबनाय बारह मलमलके कपड़ेमें बांधकर ऊपरसे १-१ अहुल कपड़ेकेसाथ डुट्टीहुईमिट्टीका लेपदेकर सुसादे । फिर शरावसम्पुटमें बन्दकर लवणयन्त्रमें रखकर नषडिमिट्टी देकर अच्छीतरह सुखावर इतने कण्डोकी आवदे कि गन्धकमात्र जले । स्वाङ्गशीतहोनेपर निकालकर पोखी बराबर गन्धक देकर पूर्वोक्तमें १-१ रोज मदनकर पूर्ववत् लवणयन्त्रमें बन्दकर सम्पुटकी आवदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से २ रत्तीतकही मात्रा आठ-कालीमिर्च अथवा तीनगोपत्रके चूर्णकेसाथ देवे अथवा धी और मधुकसाथ देवे । लोकनाथसमं कष्टहृत्के अनुसार पथ्यकराये ।

इसके सेवनसे कफ, प्रण्णी, कास, श्वास, क्षय, अर्चि, मन्दाग्नि, धातुशोष, उत्कटकफरोग, कृशता, निर्वेलता, इनको यह नष्टकरता है ॥ ६०६ ॥

### ६०७ मृगाङ्कुरसः ( प्रथम )

स्याद्रसेन समं हेम मोक्षिकं द्विगुणं भवेत् ।  
गन्धकञ्च समं तेन रसतुल्यन्तु दङ्गणम् ॥ २७०३ ॥  
तत्सर्वं मुदितं कृत्वा काञ्चिकेन च पेपयेत् ।  
भाण्डे लघणपूर्णं पचयेद्यमचतुष्टयम् ॥ २७०४ ॥  
मृगाङ्कुरसञ्चको ह्येयो राज्यक्षमनिवृत्तनः ।  
गुञ्जाचतुष्टयं चास्य मरिचं सह भक्षयेत् ॥ २७०५ ॥  
पिप्पलीदशैकं वाऽपि मधुना सह लेहयेत् ।  
पच्यन्तु लघुमि मांसैः प्रयोगेऽस्मिन् प्रयाजयेत् २७०६ ॥  
व्यञ्जनं घृतपकेन नातिक्षारैरहिहृभिः ।  
पलाजाजीमरीचैस्तु संस्कृतैरविदाहिभिः ॥ २७०७ ॥  
घृन्ताकपिल्यतैलानि कारयेत्तुल्यं चर्जेयत् ।  
स्त्रियं परिहरेदूर्ध्वं कोपञ्चाऽपि विचर्जेयत् ॥ २७०८ ॥

र स, र म, इ यो त, र सि, र र, नि र, र सु, मै र, चि र भ, यो र, रसायनस, र क ल, र च, र ध, र को, र र दी, दो, र सि, वै र, र (मा), र वि, र, र कौ, र प्र, र का, यो म, वै चि, र को, र स स, र प, र या राज्यक्षमणि ।

भाषा—शुद्ध पारा और सुवर्णमस १-१ भाग, मोती और गन्धक २-२ भाग, धुनाहुआगा १ भा, लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर काञ्चीकेसाथ १-२ रोन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुर्ण बन्दकर लघणयत्रमें रखकर चार पहलतक पकावे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखलोके । इसमेंसे ४-४ रत्तीकी मात्रा १, १४ अथवा २१ बालीमिथीक चूर्णकेसाथ अथवा १० पीपल और मधुकेसाथ लेव । लघुमासका भोजनकरे । इलायची, जीरा, मरिच, इनसेसमुक्त और अविदाही, अत्यन्तहीन और शरीरसे रहित धीमें पकाए हुए व्यञ्जनोका सेवनकरे । वेणन, बेल्, तैल, बेल्ला, स्त्री और श्लेष्मकी बिल्कुल छोड़देवे । ॥ ६०७ ॥

### ६०८ मृगाङ्कुरसः ( द्वितीय )

सुतं शङ्खं वराटं रविमपि निशितं तुल्यगन्धञ्च मुक्तां,  
मुक्ताईं लोकनाथं विपमपि तुलितं मृषमाणेन तस्य ।  
अन्यम्भोमि दिनेकं दिनकरपयसा वासरेकं मुपृष्टं,  
गोलं चूत्वा सुवेष्टयं लघणप्रसनमृन्नागवल्लीदलाद्यैः ॥  
पाच्योक्षीपिष्टयन्त्रैश्चपदहरणं स्यान्मृगाङ्गुमिधानं  
तुल्यं पच्यानुपानं प्रमयति च महाव्याधिसंहारपुनर्यु  
र, राज्यक्षमणि ।

भाषा—शुद्ध पारा, शङ्ख कौडी, ताबा इनकीमसमें सम भाग, इनसेबनी बराबर शुद्धगन्धक और मुष्मापिठी, मोतीसे भाषा लोकनाथस, इनसबसे सोददां हिस्सा बन्नाग डालकर

चित्रकक बाथ और आककेदूधसे १-१ रोन मर्दनकर गोलाबनाय चारतह मलमलके कपड़ेमें पोष्टीबनाय लवण, चिपटे और मिथीसे १-१ लेप देकर श्लेष्मोलेक बराबर नाग रवेलेके पत्तोंमें लपेटकर सूतसे वेष्टितकर उड़द अथवा गेंहूने आटेकी बाटीमें बवलितकर धीमें पकावे । आटा बालाहोनेलेगे तब उतारलेवे । स्वाज्ञशीतल होनेपर इसमेंसे बहुत धीरअसे मिथीबोरेहके सम्पुष्टको टाकर रसको रखले । इसमेंसे ४-४ रत्तीकीमात्रा बराबरके हरेके चूर्णकेसाथ देनेसे क्षयप्रभृति सम्पूर्ण महान्याधियोंको यह नष्टकरता है ॥ ६०८ ॥

### ६०९ मृगाङ्कुरसः ( तृतीयः )

हैमी भूति द्विगुणिता सूतभूत्या द्विमौक्तिका ।  
चतुर्गन्धा सूतपाददङ्गुणा ददमर्दिता ॥ २७१० ॥  
निम्ब्यम्बुना पिष्टयन्ने पक्वो यामचतुष्टयम् ।  
सर्वं मृगाङ्कुरज्यैव मृगाङ्गो रोगनाशनः ॥ २७११ ॥  
र, राज्यक्षमणि ।

भाषा—पारदमस्य १ भाग, सुवर्णमस और मोती १-२ भाग, शुद्धगन्धक ४ भाग लेकर पारेसे चतुर्धासु शुद्धागा डालकर एकरोज नीचुरेखसे मर्दनकर गोलाबनाय चारतह मलमलके कपड़ेमेंलपेटकर उड़द अथवा गेंहूनी बाटीमें बन्दकर ४ पहल यीमें पकावे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखलोके । इसमेंसे ४-४ रत्ती मरिच, पीपल और मधुकेसाथ देनेसे राज्यक्षमादि महान्याधियोंको यह नष्टकरता है ॥ ६०९ ॥

### ६१० मृगाङ्कुरसः ( चतुर्थ )

नरसारं सन्धयञ्च पञ्चवित्वमितं पृथक् ।  
निधाय डमस्यन्ने पक्षिं यामचतुष्टयम् ॥ २७१२ ॥  
प्रज्वालयेदूर्ध्वमाण्डलक्ष्मीं सत्त्वं समाहरेत् ।  
तत्सत्त्वं चूर्णितं रज्जं समं गन्धं तयोः समम् ॥ २७१३ ॥  
विष्वर्ण्येकत्र काचोत्थङ्कपिकाया यिनि क्षिपेत् ।  
सृष्टिसवालुकायन्नरियतायां दिवसद्वयम् ॥ २७१४ ॥  
सुत्थामस्रिमथो दत्त्वा यामान् द्वादश वा पचेत् ।  
सूयतिलस्यं तद्वस्म स्वर्णानं स्वाज्ञशीतलम् ॥ २७१५ ॥  
शुद्धीयान्मारितस्ववर्णार्धेद्रुणदाताऽधिकम् ।  
सूयमासु प्रदं सर्वमेहानाञ्च विनाशनम् ॥ २७१६ ॥  
काम्य परममेतदि मृगाङ्गो गुह्यगोपितः ।  
प्रमेहापशमं धातुवर्धने निश्चितं हि तत् ॥ २७१७ ॥  
र कौ, सि मे म, शये ।

भाषा—नोसादर और सैपानयक ५-५ पद लेकर बारीक पीत डमलअथमें रख ४ पहलकी अग्नि द । स्वाज्ञशीतलहोनेपर धीरअमें हड्डीकामुह लगाइकर ऊपर वनेहुए नोसादरकेचूर्णको निचालते फिर इसकी बराबर आगामके पचाइप्रभृति किया हुआ शेषकापूरा और दोनोकीबराबर गन्धक डालकर बारीकचूर्ण कर कपड़ामिथीहुई आतडीसीधीमें रखकर बाजुकायत्रमें दोरोज अथवा १२ पहलकी अग्निद । स्वाज्ञशीतलहोनेपर धीमेंसे



सुवर्णैस्सदा भस्मको निकालकर रखओहे । यह भस्म सुवर्णभस्मसे सौगुनी गुणकारकहोतीहे । इसमेंसे ३-३ रत्ती उचितानुपातके साथदेनेसे यह प्रमेहमात्रसे निश्चितरूपसे नष्टकर पातुओंको बढाताहे; श्वपा, आयु तथा कामक्रीडि करताहे ॥ ६१० ॥

### ६११ मृगाङ्गरसः ( पञ्चमः )

श्वेतमहस्तु भागैको तत्समं तालकं शिला ।  
काङ्क्षिका महभागा तु सर्वं पल्ये विचूर्णयेत् ॥२७१८॥  
पञ्चरत्नस्य विधिना पाचयेन्मन्दविहिना ।  
स्वर्णामो हार्द्धगो ग्राह्यो मृगाङ्को रस उत्तमः ॥२७१९॥  
सर्वपातगदं चैव ह्रिकायां कुष्ठो गिणि ।  
घृतशर्करया देयो दुग्धघ्नं पथ्यमुत्तमम् ॥  
तक्रान्नं वा शीतवारि उष्णद्रव्यं विचर्जयेत् ॥ २७२० ॥  
र. चं., वातरोग ।

भाषा—शुद्धवैदलोमल, हरिताल, मैन्सिल, फिटकरी, इन समभाग लेकर वारीक चूर्णकर महुपञ्चरत्नरसमें बहेहुए प्रकारसे बहुतमन्द आचये ४ पहर पकावे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर ऊपरसे पातमें सुगन्धैरंगे फूल मिछेंगे इन्हें निकालकर रखओहे । इसमेंसे आधी अथवा १ रत्ती घी और शपरकेसाथ देकर दूधभात अथवा छाछभात पानेकोदे । ठंडापानी पीवे, गरमचीजोंसे परहेज रखे । इसके वेनसे सगप्रकारके वातरोग, हिचदी, घुत्र, कास, श्वास प्रवृत्ति तमामरोग नष्टहोतेहे ॥६११॥

### ६१२ मृगाङ्गरसः ( षष्ठः )

नागभस्म रसभस्मना समं  
माक्षिकञ्च क्षुद्र तत्समानकम् ।  
माक्षिकं निखिलतत्समांशकं  
पांढ्री च समभागिकाऽखिलैः ॥ २६२१ ॥  
गन्धकं समलये निखिलांशैः  
सूतनुयल्लभागतदुग्धम् ।  
मर्दितं तुपजलेन दिनान्तं  
घर्षकैः सलघणैः समृष्टिकैः ॥ २७२२ ॥  
पल्लुञ्च विदर्धात गोलकं  
पेषयेत् परिशोष्य चाऽऽतपे ।  
पाचितो भवति सैष मृगाङ्कः  
कामठे लयणपत्रकं तथा ॥ २७२३ ॥  
पूर्वयल्लघयिनाशदेतुकः  
सर्वरोगविनिवारणश्रमः ।  
दीपनोऽयं पल्लुष्टिघ्नः  
मृत्तिकागङ्गिनाशकारणम् ॥ २७२४ ॥  
पथ्यानुपातप्रभृति सर्वं पूर्वमृगाङ्क्यत् ।  
नियोज्यं प्रयत्नेन भिषजा मिश्रिमिच्छता ॥२७२५॥  
र. रात्रयश्नैव ।

भाषा—नाग और पाण्ड १-१ भाग, सुक्केनाक्षिक २ भाग, मैन्सी ४ भाग, गुलाइपेट्टी ८ भाग, शुद्धगन्धक १६

भाग, मुहागा १ भागलेख तुषाम्भसे एकरोज मर्दनकर गोता बनाय चारतद्वक्त्रमें बांधकर नमक और मिट्टीसे अल्पा २ भस्मका कपड़ेको भिगोकर कपड़मिटी लगाय मुलाकर भूपर अथवा लयणपत्रमें ४ पहरकी अग्निमें पकावे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखओहे । इसमेंसे ३-३ रत्ती उचितानुपातकेसाथ देनेसे क्षय, मन्दाग्नि, कष्टादित्य, कृशता, स्मृतिछाटोसगप्रवृत्ति समस्त रोगोंको यह नष्टकरताहे । पथ्य और अनुपातप्रवृत्ति महाशुभाङ्गीतह देवे । अवान्तउपद्रवोंको बहुतमंभाकर निश्चितहो ॥६१२॥

### ६१३ मृगाङ्गरसः ( सप्तमः )

सुवर्णताम्रयोर्मस्य कर्प कर्पं पृथक्पृथक् ।  
गन्धञ्च द्विगुणं दत्त्वा कुमारीस्वरस्मेन वै ॥ २७२६ ॥  
विमर्षं मृगपङ्कान्ते कृत्वा रज्जं ततो मुपसृम् ।  
द्रुणेनाकंदुग्धेन मर्दयित्वा पुटेत्युनः ॥ २७२७ ॥  
पुटेन कुजपाचयेन स्वाज्ञशीतञ्च भक्षयेत् ।  
हरितकीमधुयुतं मापमात्रं प्रयत्नतः ॥ २७२८ ॥  
सुगुडं घृतसम्मिश्रं भक्षयेद्वा हरितकीम् ।  
विद्वान्योश्चाऽनुलोम्याप्यं वेदनायाश्च क्षान्तये ॥२७२९॥  
पक्तिशूलप्रशमनो दाहं मन्दानलञ्चयेत् ।  
पार्थिवशूलं तथाऽऽभ्यानं प्रस्वेदञ्च जयेद्ध्ययम् ॥२७३०॥  
ना. वि., र. म. भा., घुले ।

दि०—“प्रायेस्सुगुडश्रापमहाकुष्ठमि नवम् ।”

भाषा—सुवर्ण और ताम्रभस्म १-१ कर्प, शुद्धगन्धक १ कर्प लेकर नीतवर्णकमलीनर धौक्रेआकरमसे १-२ रोममर्दनकर मृगपङ्कके आठजहुलमममाणने भरके पङ्ककेनीतर निकली हुई हरीरीटाटसे बन्दकर मुहागेको आकन्दूपमें मर्दनकर कपड़ेपर इसकातेप चड़ाकर कपड़ेको समस्तमीनपर लगेकर ६-७ कारमिटी देकर सूख मुलाते और गजपुडकी अग्निदेकर स्वाज्ञशीतलहोनेपर कपड़मिटीको हटाकर मोंगवाहिन बीतकर रखओहे । इसमेंसे १-१ माता हरे और मधुकुशाप अथवा शुक्र, पून और हरेकषाप लेनेसे मलमूत्रविषय, क्षारीरीपीमा, शक्तिशूल, दाह, मन्दाग्नि, पार्थिवूल, आभ्यात, अतिस्वेद दण्ड नष्टहोतेहे ॥ ६१३ ॥

### ६१४ मृगाङ्गरसः ( अष्टमः )

रसयलितपनीयं पांजयेत्तुल्यमात्रं,  
तदनु युगलमात्रं मौक्तिकानां शुमानाम् ।  
ययजचरणमार्गं मर्दयेन्मयमेत-  
दिनमपि नुपयारा गोलकं लघ्यमये ॥२७३१॥  
निधाय मुद्रां विदर्धात माण्डे  
सुक्ष्मां समुद्रे लयणेन पूर्णं ।  
दिने षण्ण्यारम्भगाङ्गनामा  
सयाऽग्निमान्ये ग्रहर्षाधिशारे ॥ २७३२ ॥  
योऽयः सदा पण्डितमर्षिणा या  
शृण्णामधुज्यां रातने त्रिगुणः

वर्ज्यं सदा पित्तकर हि वस्तु

लोके शयत्पथ्यविधि निरुक्त ॥ २७३३ ॥

वै वि क्षये ।

भाषा—शुद्धपारा गन्धक और सुवर्णमत्स्य सब समभाग मोती १ भाग तवाखार १ भाग लेकर सबकी नीलवर्ण कज्जली कर तुपायसे एकरोज मदनकर गोलाबनाय चारतहकपडेमें लपेटकर २-३ कपड़मिठी लगाकर सुखादे । इसगोलेको दो शराबोंमें बन्दकर लवणयन्त्रमें रख मन्द मध्य और खरागिसे दिनभर पकावे । स्वादशीतलोहोनेपर निकालकर बारीक पीसकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकी मात्रा २१ या २५ काली मिर्च और पीकसाय अथवा ३ या ७ पीपल और मधुकसाय देनेसे क्षय म दाग्नि सङ्ग्रहणी प्रचुति रोगोंको यह नष्टकरताहै । इसमें पित्तकारकवस्तुओंका परहेजकरे ॥ ६१४ ॥

६१५ मृगाङ्कुरसः (नवात्म राजमृगाङ्कुर रत्नगर्भमृगाङ्कुर)

माणिक्य धनुमेक गड्डयमिमिव नीलक पुष्परामं गोमेदं चिद्रुम द्विविबुरमणिमयो मस्म शङ्खस्य शुके । ताप्य नागश्च वज्रं द्रवशिशिलगलं गङ्गुण राजपते, गन्ध त्रिवैतमत्तार रविघनममल तालकं हृच्छिला च ॥ वैक्रान्त का तलोह रसकयुगलक वेदभागा सुमुकाम् सूत सर्वाऽयमाशं त्रिदिनमथैरत मर्दनीयं सुपलात् । त्रिमौल्यं कन्यकाद्रि विषवहनयलापारिणा सप्तवारं, गाल मूलकपैर्वा र्वा लवणधिरचित्ते पाचयित्वा दिनेकम् सम्मर्द्य स्वाद्वशीत मृगमदसलिलै पिपलीक्षौद्रयुक्त हन्याच्छास्त्रं कास क्षयतमकगदात्रलगर्भा मृगाङ्कुर ॥ र प क्षये ।

भाषा—माणिक्य हीरा क्का नीलम, पुलराज गानेद प्रवाल ललनिषा शङ्ख सीप सोनामाखी नाग वज्र शिंग रिफ सुतिया महागा काजवदं इनप्रत्येककीभस्में १-१ भाग शुद्धपथक १ भाग सुवर्ण रत्न ताप्य अत्रक हरिताल मैमसिल वैक्रान्त कान्तलोह, खपरिया दानेपित्रङ्ग इनसबकीभस्में १-१ भाग मोती ४ भाग पारदभस्म सबसे अष्टमासलेकर इकट्ठ मिलाय तीनरोज निरन्तर पुत्रमर्दनकर पीकुआर बख नाग चित्रक बला इनप्रत्येककेरत अथवा बायोंसे ७-७ भाग माए देकर गोलाबनाय सुखाकर चारतहकपडेमें लपेट २-३ कप इमिठी देवे । सुखनेपर लघुशराबमें लवणवेचीक रखर एक रोज मूपर अथवा लवणयन्त्रमें पकावे । स्वादशीतलोहोनेपर निकालकर कस्तुरीकजले मदनकर ३-३ रत्तीकी गोलियाबना कर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली पीपल और मधुकसाय लेनेस क्षय कास क्षय तमकसाय इत्यादि रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६१५ ॥

६१६ मृगाङ्कुरसः ( नागदि ) ( दशम )

कनकपत्रसमं शुचि पारदं विमलखल्यतले पिशितैः शनै ।

दृढतरं सततं दिवसत्रयं

शुभमुहूर्तदिने परिमर्दयेत् ॥ २७३६ ॥

पारदाहिशुण्मोक्तिक रत्नो

मौक्तिकाहिशुण्मगन्धकोऽमल ।

पारदाऽर्धशुचिदङ्गुणस्ततोऽ-

प्येयमेव विधिना प्रकल्पयेत् ॥ २७३७ ॥

काञ्चनारसकेन चूर्णक मर्दयेत्परिविधाय गोलकम् ।

सङ्घिपेत्तदनु गर्भमुक्तं धहिरप्यथ दिनं समुज्ज्वल ॥

इति च शिशुमृगाङ्कुर सम्भवेद्राजयोग्यो

मधुसहितकणाभि वा मरीचाज्यकेन ।

सकलरुजि गृहीत शीघ्रमारोग्यदायी,

हिमकरसम्प्रकान्ति यस्तनौ सन्तनाति ॥ २७३९ ॥

र मु क्षये ।

भाषा—सोनेकबर्क, शुद्धपारा समभागलेकर शुभमुहूर्त देखकर बकर वगैरहके माससे तीनरोज मर्दनकर पारसे इन मोतीनीपिठी और पिठीसे दूनाय चक तथा पारस आधाछुहागा देकर कचनाकरेकसे ३ रोज मर्दनकर गोलाबनाय शराबसम्यु में बन्दकर मूपरयत्नम रखर एकदिनकी अभि देवे । स्वाद्वशीतलोहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकी मात्रा मधु और पीपल अथवा मिर्च और पीकसाय लेनेसे यह समस्त रोगोंको नष्टकर चन्द्रमाकसदा शराबीकान्तिको बनाताहै ॥ ६१६ ॥

६१७ मृगाङ्कुरसः ( बालादि ) ( एकादश )

रसभस्म परं शुशुद्धयेव

पलकं वै शुचिहाटकस्य भस्म ।

शुचिगन्धपलद्वयं शुशुद्ध

पलकाङ्गु शुचिमालतीभवद्व ॥ २७४० ॥

सकलस्य विष्वणुक विधेय

मुग्धभागविमलापिदालमुक्ता ।

सह चामलकीफलोद्भवै वा

यवजै धान्यरसे विमर्दयेद्वा ॥ २७४१ ॥

परिमर्द्यं दिनानि सप्त खल्वे

शुभगोल परिसविधाय तस्य ।

दृढमूपयुगं विधाय पश्चा

स्तनुमये परिमाचनीय पथ ॥ २७४२ ॥

अपि मूपयुग निरस्य पश्चा

त्परिमुञ्चन्नुमवालुकाद्वयधे ।

अपि यवचर विमुच्य चूल्या

दिनेमेकं ज्वरने शनैविधेय ॥ २७४३ ॥

सकले कथिते प्रकारवर्गे

रत्नेनास्य भवे सुमर्दन ।

ननु बालमृगाङ्कुरं सुरम्यं

क्षयहारी सुरदायका गदारि ॥ २७४४ ॥

हैम पात्रं रौप्यकं वा विदाल

मन्द मन्द माचनीया मृगाङ्कुर ।

चूर्णं कृत्वा खल्वमये सुरस्ये

कष्टे रोगे सेवनीयो हि राज्ञा ॥ २७४५ ॥

र. सु., क्षये ।

भाषा—पारा और सुरणभस्म १-१ पल, शुद्धगन्धक २ पल, मुनासुहागा १ तोला, लुगामारी, हीराबोल और मोती २-२ पल लेकर सबका पारीकचूर्णकर पकेआबलोकेस्वरस अथवा धान्यकेस्वरससे सातरोज मर्दनकर गोलाबनाय चारतह मलमल के कपड़ेमें पोछली बनाय शरावसम्पुटमें रख ६-६ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर बालुकायत्रमें रखकर एक अहोरानकी आब देने स्वाक्षरीतलदोनेपर निकालकर सुवर्ण अथवा चादीकी डिब्बीमें रखलेवे । इसमेंसे एकसे तीनरती तक तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे क्षयप्रवृत्ति असाध्यरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६१७ ॥

६१८ मृगाङ्गरसः ( बालादिः ) ( द्वादशः )

सौभाग्यसिद्धिरथ मौक्तिकहेमगन्ध,

कल्कः ससूनयनधुयुगुतुल्यभागः ।

धान्याम्लपीडितवपुःपरिशोषितस्य,

भाण्डे ततः परिभुतः पुटितो दिनान्तः २७४६

क्षयं विपं हेमरजं भ्रमाद्यं शुल्मं ज्वरं सङ्ग्रहणीञ्च कुष्ठम्  
श्यासञ्च कासञ्च शुदामयं वै निहन्ति वै बालमृगाङ्ग एषः

र. सु., क्षये ।

भाषा—सुहागा १ भाग, पीलीसरसों २ भाग, मोती १

भाग, सुवर्ण भस्म ४ भाग, गन्धक ८ भाग लेकर सबको पारे गन्धककी नीलवर्णकलीमें मिलाकर धान्याम्लसे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर चारतहकपड़ेमें पोछली बनाय शरावसम्पुटमें रख ३-४ कपड़मिट्टी देने । सुवर्ण भस्म, लवण अथवा बालुकायत्रमें रखकर ४ पहरकी अग्निदे । स्वाक्षरी-तलदोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से ३ रतीतककीमाणा योग्यतावेखकर तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, त्यावर तथा अङ्गमाविष, कामला, भ्रम, शुल्म, ज्वर, सङ्ग्रहणी, कुष्ठ, श्वास, काष, शुद्ररोग, इत्यादिकोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६१८ ॥

६१९ मृगाङ्गरसः ( बालादिः ) ( त्रयोदशः )

विषभागो भवेदेको द्विभागं गैरिकं मतम् ।

भूमुक्तानां त्रयो भागा सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ २७४८

बहोमधुक्रणायुक्तं पथ्यं दुग्धौदनं हितम् ।

वातरोगेषु सर्वेषु कासेषु प्रवृत्तौ च ॥ २७४९ ॥

अनुपानविशेषेण करोति विविधान् गुणान् ।

रसो बालमृगाङ्गोऽयं जीर्णज्वरहरः परः ॥ २७५० ॥

रसायनस, वातरोगे ।

भाषा—शुद्धबलनाग १ भाग, शुद्धगोनागेरु २ भाग, श्रेष्ठ मोती ३ भाग लेकर सबका पारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती मधु और पीपलकेनाथ देनेसे समस्त वातरोग, खांसी, प्रवृत्ति, जीर्णज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै । इसमें पथ्य दूधभात देना ॥ ६१९ ॥

६२० मृगाङ्गरसः ( बालादिः ) ( चतुर्दशः )

पूर्ववत्पातितं सतं दशवाराञ्च शुल्यतः ।

अत्रपिण्डौ ततः कृत्वा दशवाराञ्च पातयेत् ॥ २७५१ ॥

अधःपातं ततः कुर्यात् त्रिफलाशिष्टवह्निभिः ।

पञ्चमि लवणैः क्षारै राजिकाव्योपमानुभिः ॥ २७५२ ॥

वज्रोदुग्धं घैत्सनाभे नैर्पिष्टं रसं चरेत् ।

अम्लवर्गेण सम्मर्द्य विलम्पेत्पात्रमूर्द्धगम् ॥ २७५३ ॥

तेन कल्केन संरच्य सम्पुटं दीप्तवह्निना ।

उपरिष्ठात्प्रदत्तेन ज्वलन्निष्छाणकैः पुटेत् ॥ २७५४ ॥

अधः पतति सूतेन्द्रस्त्यक्त्वा दोषानशेषतः ।

जम्बीरं धीजपूरञ्च नारङ्गं चाग्लवेतसम् ॥ २७५५ ॥

चाङ्गेरीमल्लिकाञ्चैव यद्वरं चणकाम्लकम् ।

शिग्रुञ्च यज्ञकन्दञ्च सूरणं मीनलोबनम् ॥ २७५६ ॥

यहिं घनरवां वर्णाभुघं वसुभटं तथा ।

हलिनीं विपनाल्यो च यवचिञ्चौ कटुत्रयम् ॥ २७५७ ॥

पट्टनि पञ्च क्षाराञ्च नवसारञ्च रामडम् ।

चर्मारं नाम क्षारं स्यादुपक्षारं समाहरेत् ॥ २७५८ ॥

एतत्सर्वं तु सङ्घर्ष्य सन्ध्यास्तोत्रप्रभाण्डके ।

दिनानि सप्त संस्थाप्य ततस्त्वेनं प्रमर्दयेत् ॥ २७५९ ॥

दिनानि सप्त संस्थाप्य ततस्काञ्चिकयोगतः ।

ततस्खल्वे रसं दत्त्वा भूलताभिः प्रमर्दयेत् ॥ २७६० ॥

गृहकन्यारसं शुक्लं दिनत्रयमनारतम् ।

जायते पारदः सोऽयं जारणे चरणे क्षमः ॥ २७६१ ॥

चतुःपट्टयंशभागेन हेमयोजञ्च चारेत् ।

द्वात्रिंशद्भागतः पश्चाद्द्विंशतिं पोडशं तथा ॥ २७६२ ॥

जारयित्वा जारयित्वा यन्ने भूधरके क्षिपेत् ।

गन्धकं जारयेत्पश्चात् स्तोकों स्तोकों यथाक्रमम् ॥ २७६३ ॥

आदी तु राजिकामानं पश्चात्सर्पपमात्रया ।

यवमाने द्वियवकं त्रियवञ्च चतुर्वयम् ॥ २७६४ ॥

पञ्च पट्टं सप्त नय च दशैकादशसहस्रया ।

कम्बवृद्धया च गद्याणमानं भवति यावता ॥ २७६५ ॥

पश्चाद्दद्याणकं जायं रसेन्द्रे च पुटे पुटे ।

एवञ्च पट्टाणं यावद्गन्धकं जारयेद्दुषः ॥ २७६६ ॥

अधिकञ्च जारयेद्य गुणाच्चैराऽधिको भवेत् ।

पट्टेषु गन्धके जीर्णे रसो भवति रोगहा ॥ २७६७ ॥

एवं संस्तुतसूतेन्द्रं पुनः खल्वे निवेशयेत् ।

कृष्णघनत्तरुकावैस्त्रिदिनं मर्दयेत्ततः ॥ २७६८ ॥

यन्ने सौमानले क्षिप्त्वा ज्वालयेद्य दिनत्रयम् ।

मर्दनञ्च पुनस्तद्वत्पुनर्यन्त्रे विपाचयेत् ॥ २७६९ ॥

एवं रसेश्वरं कुर्यात्संस्कारेण समन्वितम् ।

तावत्कार्या क्रिया चेत् यावद्भस्मोभवेत्ततः ॥ २७७० ॥

रसभस्म पलेकं स्यादेवमभस्म पलं तथा ।

शुद्धस्य दानवेन्द्रस्य पलद्वयमुदाहृतम् ॥ २७७१ ॥

मौक्तिकं द्विपलं दद्यात्पादांशो मालतीभवः ।  
 तत्सर्वं मर्दयेत्तत्त्वत्वे चाभ्यवेतसयोगतः ॥ २७७२ ॥  
 तदभावे तु यवजकाञ्जिकेन प्रमर्दयेत् ।  
 दिनानि सप्त सम्मर्दं तत्कल्कं गोलकं चरेत् ॥ २७७३ ॥  
 छायायां शोषयेत्तच्च मृषायां गोस्तनाकृतौ ।  
 निक्षिप्य चाऽन्यथेन्मृषां तां मृषां सागराद्वये २७७४  
 यन्त्रे विनिक्षिपेद्दीमांश्चुल्लीमारोपयेत्तु तत् ।  
 चतुःप्रहरमात्रं तं रसेन्द्रं स्वेदयेद्बुधः ॥ २७७५ ॥  
 स्याद्दृशीतलमुद्रित्य रसेन्द्रं यत्नतः क्षिपेत् ।  
 विचूर्ण्य स्वर्णजे पात्रे शीतधातुविजितम् ॥ २७७६ ॥  
 स्वर्णाऽभावे रौप्यपात्रे नाऽन्यस्मिन् स्थापयेद्रसम् ।  
 अयं बालमृगाङ्गाख्यो रोगराजस्य घातकः ॥ २७७७ ॥  
 क्यधनाघनुभूतोऽयं कथ्यते शास्त्रकर्मणा ।  
 मैरयं योगिनीचक्रं सम्पूज्य मुख्यातिनम् ॥ २७७८ ॥  
 अग्निं विप्रास्तोषयित्वा कृतपापविनिष्कृतिम् ।  
 यथाशास्त्रोक्तमार्गेण शुद्धात्मानं द्विजोक्तितः ॥ २७७९ ॥  
 रसेशं सम्प्रपूज्याऽथ नमस्कार्यं रसं शुरून् ।  
 शृद्धान्देवान् द्विजान् पश्चात्कृतमाङ्गलिकं भिषक् २७८०  
 रसेन्द्रं सेवयेन्नित्यं चतुर्गुणप्रमाणतः ।  
 आज्येन मरिचैः सार्धं सेवयेच्च रसेश्वरम् ॥ २७८१ ॥  
 दशभिः पिप्पलीभिर्वा मधुना सह सेवयेत् ।  
 घृतपक्वानि शाकानि रामटे र्धजितानि च ॥ २७८२ ॥  
 सैन्धवं मणिमन्थञ्च लघुणार्थं नियोजयेत् ।  
 पलामज्जार्जं मरिचं संस्कारे धान्यकं भवेत् ॥ २७८३ ॥  
 अविदाहीनि शाकानि तथा संसृज्य योजयेत् ।  
 घृताकमेदं सर्वन्तु यज्जयेत्कारयेत्तुम् ॥ २७८४ ॥  
 धीफलं चिर्मटीजार्तिं सर्वांश्च विजर्जयेत् ।  
 अङ्गनासङ्गतिर्वर्णां कोपं यद्वाह्विजयेत् ॥ २७८५ ॥  
 न स्वप्याह्वितसे ध्रीमान् रात्रौ नैव प्रजागरः ।  
 धर्जयेत्तिलसम्भूतं विकारं तेलमेव च ॥ २७८६ ॥  
 सर्पपादीनि तैलानि सर्वाणि परिवर्जयेत् ।  
 अभ्यङ्गञ्च घृतेनैव शिरःस्नानं समाचरेत् ॥ २७८७ ॥  
 नात्युष्णीरभ्युमिः स्नानं नातिशीतेः समाचरेत् ।  
 कायं पिबेत्पिशिरीधियां त्रिकटाङ्गुलसंयुतम् ॥ २७८८ ॥  
 यल्लीतुयुरिकामूलं पलमष्टाऽयशोपितम् ।  
 पिशुलीमूलमथवा काषयेत्पलमात्रकम् ॥ २७८९ ॥  
 कासनाशाय योक्तव्यो व्योपयुक्तो निद्रागमे ।  
 भक्षयेत्काकिनीमूलं रामटेन समायुतम् ॥ २७९० ॥  
 सर्वयान्तिप्रशान्त्यर्थं भक्षयेद्येषु सर्वदा ।  
 ह्मायतकीपत्रचूर्णं गुटिकां मधुना कृताम् ॥ २७९१ ॥  
 मुरे सन्धारयेच्छब्दयत्कासकन्दचिनादिनीम् ।  
 कोविदाख्ये च दध्ना जीरकेण च भोजयेत् ॥ ८७९२ ॥  
 सर्वाऽङ्किप्रदान्त्यर्थं भृष्टजीरकमेव वा ।  
 कोविलाक्षस्य धीजानि जीरकेण शुठेन च ॥ २७९३ ॥

ईपत्कपूरसंयुक्तं रसतापे प्रयोजयेत् ।  
 जातीफलं वक्त्रशुद्धौ योजयेत्ततस्तं बुधः ॥ २७९४ ॥  
 वक्त्रशोषो यदा तु स्यात्पाटलामेघनादयोः ।  
 मत्स्याख्या मूलमथवा धारयेद्ददने बुधः ॥ २७९५ ॥  
 सद्यः शोषो निवर्तेत प्रत्येकं मिलितेरथ ।  
 रक्तं वमेघदा रोगी कुर्वात्तत्र चिकित्सितम् ॥ २७९६ ॥  
 लवङ्गमथ कङ्गोलं श्रीखण्डं रक्तचन्दनम् ।  
 उशीरं तगरं शुण्ठी पिप्पलीं नागकेशरम् ॥ २७९७ ॥  
 पलां कालाऽगुरुं मुस्तां कर्पूरमथ पत्रकम् ।  
 जातीफलं तवशीरं समभागं विचूर्णयेत् ॥ २७९८ ॥  
 अष्टौ भागास्तथा ब्राह्मस्तयराजस्य धीमता ।  
 विचूर्ण्य सर्वमेकत्र योजयेद्रक्तवान्तिहृतम् ॥ २७९९ ॥  
 हृत्पापञ्च नियतेत चूर्णेनाऽनेन निश्चितम् ।  
 एवं प्रयोगान् कुर्वीत क्षयरोगस्य शान्तये ॥ २८०० ॥  
 भिषन्दक्षः सदा भूयाधिक्रिस्तासु सुजायुतिः ।  
 येये विकारा जायन्ते तांस्तान् यत्नाभियतयेत् ॥ २८०१ ॥  
 चिप्पद्दुरोगञ्च शक्तिशून्यञ्च भोजने ।  
 भग्नगान्धमुपेक्षेत रहस्यं भिषजामिवम् ॥ २८०२ ॥  
 कथञ्चिद्बलसम्पत्तौ कृत्या धान्तिविरेचने ।  
 रसेश्वरं प्रयुज्जीत नान्यथा सम्प्रयोजयेत् ॥ २८०३ ॥  
 सामुद्रकं सुसञ्चर्ण्य मानुषधेन भावयेत् ।  
 पाययद्बुधदुग्धेन कण्ठस्थमलशुद्धये ॥ २८०४ ॥  
 यवचिञ्चीञ्च सम्पिप्य खादयेच्छकैरायुताम् ।  
 अतितापस्य शोफस्य कर्तनी रेचनी तथा ॥  
 स्वसंवेद्यप्रकारेण रसेशः सम्प्रकीर्तितः ॥ २८०५ ॥  
 रमालं, धयाऽधिकारे ।

भाषा—पातनान्तस्कारक्रियेदुए पारेमें चतुर्धा अथवा  
 समभाग शुद्धावेका चूरा डालकर जमीरीप्रवृत्तिकेएसे पिटी-  
 होनेतक मर्दनकर मुखाके दमवार पातनकरे । इसीतरह अन्नक-  
 सलकेसाथ दशबार पातनकरे । फिर त्रिफला, सहिजन, चित्र-  
 कम्बू, पांचोन्नमक, सबो, मुद्गाग, यवशार, राई, त्रिकटु, भाठ  
 और सेतुबुद्धकाश्च, बछनाग इनप्रत्येककी १-१ भावना बेकर  
 अम्लवर्षमें मर्दनकर पिटीबनाय घंटेके भीतर लेकर दूसरे घंटे-  
 पर इसको उल्टा रखकर ९-७ इंचमिडो से सन्धिबन्दकर  
 मुसाले और खाली घंटेको राशेमें रख ऊपरके घंटेपर जलदेदुए  
 कण्ठे इसअन्दाजसे रखे कि कण्ठसे पारा अलगहोकर नीचेके  
 घंठेमें चलाजाय । स्वाशोत्तल होनेपर पारेको निहालकर  
 जमीरी, बिजोरा, नारझी, अम्लवेन, अम्लोत्रिवा, इमली,  
 बेर, चनेकाखार, सहिजन, जूही और माथाएण सूरण, मलेठी,  
 चित्रक, कन्दाळ, इष्टमिड, मुनवेता, कलिसारी, बछनाग, नारी,  
 तिलकी, त्रिकटु, पांचोन्नमक, यवशार, सबो, मुद्गाग, घोरा,  
 नवगादर, हीम, सफेद नोमल, उगशार ( गुन्ध और होराक-  
 सीय ) येसब समभाग लेकर बाहीकण्ठेपर बाँधी गल अथवा  
 कदाहीमें शुद्धावेके बराबर नीचे ऊपर रग बीचने पारेको हट-

कर तावेके वर्तनसे दन्दे । सातदिनकेबाद ७ दिनतक तावेके ढण्डेसे मर्दनकर गरमकाजोसे थोकर पारेको अलगकरले । फिर तप्तसत्वमें रघु बँचुए और धीबुआरके द्रवोंसे ३-३ दिन निरन्तरमर्दनकरनेसे पाटा धातुओंके खाने और जारणकरनेमें समर्थ होजाताहै । चोंसठ, बत्तीस और पोटशाश सुवर्णकाबीज पारेमें क्रमसे प्राप्तदेकर जारणरे फिर थोड़ा २ गन्धकडालकर भूषणयत्रमें जारणकरे । एकतोलेमें राई, सरसों, एकयव, दोयव, तीन, चार, पाच, छ, सात, नव, दश और ग्यारह यव, इस क्रमसे ६ मासे तक प्रमाण बढावे । इसतरह क्रमसेक्रम पट्टण गन्धक जारणकरे । पट्टणसे अधिक जारणकरनेसे अधिक गुण होताहै । इसतरह पारेका संस्कारकर काले घट्टेके रससे तीनरोज मर्दनकर सोमानल ( डमरु ) यत्रमें तीनदिनकी अमिदे । स्वाज्ञ शीतल्होनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दन और पातनकरे । जब तक पारदभस्म तत्त्व्य न होजाय तबतक इसक्रमको बारम्बार करताहै । यह पारदभस्म और सुवर्णभस्म १-१ पल, शुद्ध गन्धक और मोती २-२ पल, सुहागा १ कर्ष लेकर सथको कजलीकर अम्बवेतकेरससे ७ रोजतकमर्दनकर गोला बनाय छायामें मुलावे । अम्बवेतके अभावमें जवकीकाजोमें मर्दनकरे । फिर गोलेको गोस्तनाकृतिमूपामें रख स्वेदनयत्रमें चूल्हेपर बदा कर ४ पहर स्वेदनकरे । स्वाज्ञशीतल्होनेपर निकालकर सुवर्णके पात्रमें १ कब्जे, शीत और वायु न लगे । सुवर्णगान्धके अभावमें चादीके पात्रमें रखले, इनके अतिरिक्त अन्यपात्रमें न रखे । यह रोगराजका नाशकरनेवाला बालमृगाङ्करस तैयार हुआ । इस का व्यवधानिकोंने अनुभवकियाहै । भैरव, योगिनीचक, सुरारि, अमि, ब्राह्मण, इनका पूजनकर प्रायश्चित्त करे और शास्त्रोक्तमार्गसे आत्माको शुद्धकर रसेध, रस, शुद्ध देव, द्विज, इनका यथाशक्ति पूजनकर स्वस्तिवाचन और नान्दीथादिका अनुष्ठान करके ४१ती काँमाना घी और मरिचके साथ अथवा १० पीपल और मधु केसाथ सेवनकरे । हींगरहित घीमें पकेहुए शाक, सेंधानमक, इलायची, जीरा, मरिच, धनिया येसब मसालेमें डाले । दाह करनेवाले शाकोंको न खाय, सबतरहके बेंगन, करेला, नारियल, ककड़ी, खीरसत्र, कोष, दिनकीनिद्रा, रात्रिजागरण, तिलबुक्कपदार्थ, तैल, सरसों, उषटन, धिरछान, अत्यन्तगरम खा ठंडे जलसे स्नान, इनसबको छोड़देवे । रात्रिको प्यास लगे तो त्रिकटुका काढा बनाकर थोड़ासा त्रिकटुका चूर्ण मिलाकर पीवे । सुदुर्घणी अथवा त्रिदुर्घी (समाल) कीजड़ १-१ पलका अष्टावैषेप काय बनाकर त्रिकटुका चूर्ण डालकर रात्रिमें पीनेसे खासी नष्टहोतीहै । गुआकीजड़ हींगक साथ लनेसे सवप्रकारकी वमन बन्दहोतीहै । आवक अथवा सनायके पतोंकचूर्णकी मधुमें गोली बनाकर मुहमें रखनेसे सबतरहकी खासी नष्टहोती है । सबतरहकी अशक्तिको नष्टकरनेके लिये सफेदफूलक कच नारकीछालाचूर्ण दही अथवा जीरेके साथ देवे अथवा क्वल भुनाहुआनीरा देवे । अथवा मछलीकीजड़ मुहमें रखे । अथवा पाटर, कटिवाली चोलाई, मछली इनसबकीजड़की गोळियें

बनाय मुहमें रखनेसे तत्काल मुखशोष मिटताहै । अगर रससेवनसे रफ़ी वमन हो तो लौंग, शीतलचीनी, सफेद और लालचन्दन, रघु, तगरण्टोका ( गुजराती ), सोंठ, पीपल, नागसेसर, इलायची, काला अगर, नागसोया, कपूर, पत्रज, जायफल, तीखुर ये सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर चूर्णसे अठगुना वसलोचन डालकर एकरोज मर्दनकर रखडोढ़े । इसमेंसे १-१ माशा मधुप्रभृतिकेसाथ देनेसे रक्कीवमन बढहोतीहै और हृदयका ताप निश्चिन्तसे निवृत्तहोताहै इसतरह उपद्रवोंको समालताहुआ क्षयरोगकी चिकित्सा करे इनके अतिरिक्त और वध्रव उपस्थित हों तो उनको यत्रसे दूरकरे । जिमकारोग बहुत वडगयाहो और भोजनकरनेकी शक्ति जातीरहीहो, गात्र सुखायेहों । नेत्र भीतर उतरगयहों उसे मरणसम समझकर छोड़दे । जिसका शरीर फूटगया हो उसकीभी चिकित्सा न करे । शरीरमें थलसम्पति अच्छीहोनेपर वमन विरेचन कराके प्रस्तुत रसको द । समुद्रनामक आक्के द्वयमें भिगोकर ३-३ रत्ती गायकें इसकेसाथ लेनेसे कण्ठमेमली बुझि होगी तितलीको पीसकर शकरकेसाथ १ माशा खिलानेसे अत्यन्तज्वरको दूर करती है और मलको रचनकरतीहै ॥ ६२० ॥

६२१ मृगाङ्करसः ( महादाय ) ( पञ्चदशः )

शुद्धं सूतं स्वर्णभस्म जम्बीरं मर्दयेदिनम् ।  
तयोद्विगुणितं तात्रं त्रिभिस्तुल्यन्तु गन्धकम् २८०६  
द्रुपुं गन्धकाऽर्द्धञ्च सर्वं जम्बीरजं द्वैः ।  
मयं यामैश्चतुर्भिस्तद्वले यद्धा विपाचयेत् ॥ २८०७  
दोलायन्ने सारनाले यामाहुद्वयं शोषयेत् ।  
ततो मृन्मयभाण्डान्तर्लेषणञ्चाऽद्भुलद्वयम् ॥ २८०८ ।  
ऊर्ध्वाऽधः पृष्ठतः कृत्वा गालकं घर्षयेष्टितम् ।  
लवणे पूर्येद्भाण्डमभ्यधित्वा त्रिने पचेत् ॥ २८०९ ।  
जुल्यो क्रमाभिसिद्धः स्याद्रसो महामृगाङ्ककः ।  
अनेनैव प्रकारेण मृगाङ्कान् पाचयेद्रसान् ॥ २८१० ॥  
राजरोगनिवृत्त्यर्थं देयं शुक्रामितं घृतैः ।  
दशभिर्मरिचैः सार्द्धं पिप्पलीमधुनाऽपि वा ॥ २८११ ॥

र र, चि र भ, र का, र क यो, र को, राजयस्मिन् ।

टि०—चिकित्सारत्नामरणे तयोद्विगुणितं तात्रं त्रिभिस्तुल्यं स्थाने तयोद्विगुणितं गुणितं गुणमिति पाठ्यः । स्वर्णभस्मस्थाने स्वर्णवर्णमिति पाठ्यः ।

माषा—शुद्धपारा और सुवर्णभस्म समभागलेकर जमीरीक रसमें एकरोज मर्दनकर दोनोंसे दूनी ताक्षभस्म, तथा तीनोंकी बराबर शुद्धगन्धक और गन्धकसे आपासुहागा डालकर सबको जमीरीक रससे चारपहर मर्दनकर गोलाबनाय चारतरहपडेमें छपेठकर दोलायत्रमें एकपहरकाजोसे स्वेदनकर मिट्टीकेवर्तनमें दोअड्डल पिसाहुआ नयकविठाकर गोलेको रस नमकसे वर्तनको मर्दे और मुखशुद्धकर एरुदिवनी क्रमाभिदेवे । स्वाज्ञ शीतल्होनेपर निकालकर रखडोढ़े । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्ती तक धीकेसाथ अथवा दशमरिच और मधुकेसाथ अथवा तीन पीपल और मधुकेसाथ देनेसे यह रानरोगका निवृत्तकरावे ६२१

६२२ मृगाङ्करसः ( महाद्य. ) षोडश. )

निरुत्यं भस्म सौवर्णं द्विगुणं भस्म सूतकम् ।  
त्रिगुणं भस्म मुक्तोत्थं शुक्रपिच्छं चतुर्गुणम् ॥२८१२॥  
सूतताप्यं पञ्चभागं तारभस्म चतुर्गुणम् ।  
सप्तभागं प्रवालञ्च रसतुल्यञ्च दङ्कणम् ॥ २८१३ ॥  
सर्धमेकत्र सम्मर्द्य त्रिदिनं लुङ्गवारिणा ।  
ततश्च गोलकं कृत्वा शोषयित्वा खरातपे ॥ २८१४ ॥  
लघणैः पात्रमापूर्य तन्मध्ये गोलकं क्षिपेत् ।  
तन्मुसन्तु मृदा रुद्धा पच्येयमचतुष्टयम् ॥ २८१५ ॥  
आकृष्य चूर्णयेच्छुद्धं चतुःपट्टिभिर्भागतः ।  
यज्ञं वा तदभाये तु वैकान्तं षोडशांशिकम् ॥२८१६॥

महामृगाङ्कः रत्न एव सिद्धः

धीनन्दिनाथप्रकटीकृतोऽयम् ।

षष्ठोऽस्य सेव्यो मरिचाऽऽज्ययुक्तः

सेव्योऽयथा पिप्पलिकासमेतः ॥ २८१७ ॥

तत्रोपचाराः कर्तव्याः सर्वे क्षयगदोदिताः ।

घल्यं धूप्यञ्च भीतकृपं त्यजेन्मृतत्वितोधि यत् ॥२८१८॥

यक्ष्माणं यद्वरुणिणं ज्वरगणं शुल्मं तथा विद्रधिम् ।

मन्दार्तिं स्थिरभेदकासमदधि यान्तिञ्च मृच्छां भ्रमम् ॥

अष्टायेन महागदान् गरगदान् पाण्डूमायान् कामलाः ।

पित्ताद्यांश्च समप्रकां यदुपिधानन्यास्तथा नाशयेत् ॥

र सं, र घ, र च, भि र, र पा, र क, र क यो., रान-

यस्मिणि । रसपारिजातं ताप्यस्यानेतामै नियोजितम् ।

भाषा—निरुत्य सुवर्णभस्म १ भाग, पारदभस्म २ भाग,

मोतीभस्म ३ भाग, सुद गन्धक ४ भाग, सुवर्णमाक्षिबभस्म ५

भा., रजतभस्म ४ भा, प्रवालभस्म ७ भा, सुदागा २ भाग

लेहर खरका शारीकचूर्णक १-२ पहर केवल मर्दनकर विजोर-

केरसते तीनदिनतः मर्दनकरं । फिर गोलाबनाय कडीधूपसे

केरसते तीनदिनतः मर्दनकरं । फिर गोलाबनाय कडीधूपसे

केरसते तीनदिनतः मर्दनकरं । फिर गोलाबनाय कडीधूपसे

केरसते तीनदिनतः मर्दनकरं । फिर गोलाबनाय कडीधूपसे

केरसते तीनदिनतः मर्दनकरं । फिर गोलाबनाय कडीधूपसे

केरसते तीनदिनतः मर्दनकरं । फिर गोलाबनाय कडीधूपसे

केरसते तीनदिनतः मर्दनकरं । फिर गोलाबनाय कडीधूपसे

केरसते तीनदिनतः मर्दनकरं । फिर गोलाबनाय कडीधूपसे

केरसते तीनदिनतः मर्दनकरं । फिर गोलाबनाय कडीधूपसे

केरसते तीनदिनतः मर्दनकरं । फिर गोलाबनाय कडीधूपसे

केरसते तीनदिनतः मर्दनकरं । फिर गोलाबनाय कडीधूपसे

केरसते तीनदिनतः मर्दनकरं । फिर गोलाबनाय कडीधूपसे

केरसते तीनदिनतः मर्दनकरं । फिर गोलाबनाय कडीधूपसे

केरसते तीनदिनतः मर्दनकरं । फिर गोलाबनाय कडीधूपसे

केरसते तीनदिनतः मर्दनकरं । फिर गोलाबनाय कडीधूपसे

केरसते तीनदिनतः मर्दनकरं । फिर गोलाबनाय कडीधूपसे

केरसते तीनदिनतः मर्दनकरं । फिर गोलाबनाय कडीधूपसे

केरसते तीनदिनतः मर्दनकरं । फिर गोलाबनाय कडीधूपसे

गते सामुद्रपूर्णे लघुतरदहने पाचिनं वेद्ययाम् ।  
दत्त्वा तत्षोडशांशं विषमतिप्रिमलं गन्धकं तेन तुल्यं,  
मर्द्य भूर्तजैर्यामिः खसखसतिलजैर्यामिः कन्यकायैः  
पिण्डं सिन्धुद्रव्येन प्रविशुलितमघो घेष्टिं मापपिष्टे ।  
स्यायं यन्त्रे त्रियामं लघणविरचिते पाचयेदग्निना तु  
स्वाद् शीते कुमारीरदुकवलियुते पूजितं यत्तमात्रं,  
रुष्णाद्यीद्रे मृगाङ्कः क्षयतिमिररविर्भाषितो जीर्णदेयः  
र.प., शयरोप ।

दि—“ह्ये तार तथा मुक्ता त्रिमु मासिक पवि । रन एहाऽप्रक  
शुल वदनायो च गन्धकम् ॥ माद्रव मगरुद्वैतशुच्य दृष्ट शिरे ।  
मदयेद्वायवेदीमानेकैरे दिनयम् ॥ कुमारी चाऽनुता धारी विराती  
प्राप्तये नरी । सुसुती वित्रया रमद्रव खराभवत्तम् ॥ बचके-  
विषयोदेमकुमार्यां एषद्रवम् । निम्बपुर्णान्वित माषद्रुग्मायां लेव-  
येत् ॥ स्थाय्य क्वायन्त्रे तु त्रियम पाचयेद्भुत् । स्वात्रशीत मुखद्वय  
पूजयेत्तुद्वैतम् ॥ बणिक्कानिपितु सुसुते विचूर्णयेत् । माद्रुगा  
इवे वेन वीक्ष्यशयनमारुभि ॥ त्रिपलामधुमपुर्णं हतमात्र प्रमुच्यते ॥”  
एतिपये रमायनगङ्गरे नागवर्णीयप्रसो भवत्य कृत्वा बलनाभ  
निक्तास्य सर्वमन्त्राय निवृत्त्य पञ्चमर इषानिषिणि परलु तीद  
पिष्टद्रुगस्यविधानात् दृश्यवैगस्याऽनुद्रव्यावसावपेग इत्या सुसुती  
भूर्तजम्बरमायां बधाय नमस्किमावनाय निषादिने सीगे इत्येवैग-  
वाक्यमभावेनो भविष्यति गुणाऽपिचन्ये स्थिरैव ।

भाषा—सुवर्ण १ भाग, रजत २ भा., मोती ३ भा,  
प्रवाल ४ भा., सोनामासी ५ भा, हीरा ६ भा., पारा ७ भा.,  
रोह ८ भा, अश्रक ९ भा., तारा १० भा, सीगा ११ भा,  
सीगा १२ भा, इनग्रहीभस्मे और सुदगन्धक १३ भा, लेहर  
१-२ पहर सुते पोटर चीईमार, आंवला, विरातीभन्द,  
मुसली, घनावर, भांग, नेमरका मुगला, धनूरी अह, इनप्र-  
त्येकवेस्वरसते १-२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय मन्दनाएके  
पणोमे लेपटकर ४-५ करामिती देकर गुयावे । सुसनेर  
एकवास्त्रि संवेचोहे गनेके बीचमे आठमहुत्कारा और गोलेके  
आनेलायक दूरगामे मोदकर नीचेपोझागा संपन्न विषाहर  
गोलेको ररा करसते घेपानयक भरेदे । अतरेके गर्भे थोडे १  
कण्ठोकी ४ पदरत आवचे । स्वात्रशीतलोनेनर निक्ताकर  
औपपसे सोलहवां हिम्पा दृष्टदृष्टाया और गन्धक मिनाकर  
पत्रा, भांग, खयगम, तिल, चीईमार इनप्रत्येककरगोमे १-१  
तोत्र मर्दनकर गोलाबनाय हन्दीरामोकरगमे घेपनयको पोटर-  
कर गोलेपर आठमहुत्कारा केपटकर गुगावर उदरेके आठमे  
बन्दकर काययके १ पहर कोपणोकी औरर । स्वात्रशीत-  
लोनेनर निक्ताकर रगणेहे । फिर कुमारी, और बटुकी दूदा  
और भितको बनि निषेदनकर इग्वको १ रलीकीमात्रा १ मा  
१ चीफ और मपुकेमाय दनेमे दह सुपयोगी नष्टकरहे ६२३

६२३ मृगाङ्करसः ( महाद्य. ) ( सप्तश. )

रमभस्म त्रियामञ्च भागोः तारभस्मकम् ।  
मुनाबन्धश्च सफटिः कार्मरीश्च त्रियामिगम २८४४  
गामेद्वैश्च द्विगुणं कार्मरींश्च निषात्रये ।  
पयरागेन्द्रनीले च राजावन्ध मागिरम ॥ २८२५ ॥

गरुडोद्वारावैकान्तं प्रवालं हेममाक्षिकम् ।  
 शशशुक्तिवराटानां पृथग्भागाक्षियोजयेत् ॥ २८२६ ॥  
 सुवर्णं रसतुल्यं स्यात्ताम्रं हेमसमांशकम् ।  
 कांस्यञ्च क्रतुभागञ्च रीतिकामागमात्रकम् ॥  
 मण्डूरं भागमात्रं स्यात्सर्वमेकरुचं चूर्णयेत् ।  
 सुवर्णं रसतुल्यञ्च तीक्ष्णं कान्ताऽन्नगन्धकम् ॥ २८२८ ॥  
 यङ्गं सुजङ्गं भागञ्च रसपाकञ्च पूर्येत् ।  
 एष राजमृगाङ्कः स्यात्सर्वरोगविनाशनः ॥ २८२९ ॥  
 क्षये प्रयोज्यो मधुपिप्पलीभ्यां  
 श्वासे च भार्ज्यामधुनागरेश्च ।  
 मध्याज्यतैलेन मरीचकैश्च  
 पाण्डो गदे नीरमधुप्लुतोऽसौ ॥ २८३० ॥  
 शताघरीशर्करया समेतो  
 धीर्यस्य वृद्धिं कुरतेऽचलीढः ।  
 घासात्सर्पशौद्रयुतो निहन्त्या-  
 रिपतं सरक्तं सितयाऽम्लपित्तम् ॥ २८३१ ॥

र. क. यो., सर्वरोगे ।

टि०—“रसमस्मन्मयो माया पद्मम् हेममस्मन्मयः । श्वतारश्च  
 भागं वज्रमेकं चतुर्गुणम् ॥ गोमेदकञ्च द्विगुणं वाङ्मोर सप्त मौक्तिकम् ।  
 पद्मरोगेन्द्रनीलञ्च राजवर्तं त्रयं च ॥ गरुडोद्वारावैकान्तं प्रवालं हेम  
 माक्षिकम् ॥ वैदर्भं पुष्परागञ्च नागवज्रं तथैव ॥ तीक्ष्णं कान्तं श्योम-  
 गन्धं त्रिकलाचित्रवाम्भसा । भावना गन्धदुग्धेन सेज्जुवासागणेन च ॥  
 वशीरुद्रमनीरुणं पृथक् सप्तमन्त्रधया । पञ्चाभ्युषमैर्वा न्यैव सुसिद्धी  
 रसाङ्गवेत् ॥ नष्टमात्रं प्रयुज्यते मधुना मेहनाशनम् । वलीपलितहृत्स्थ  
 कामदे सुदवर्धनम् ॥ वसन्तकुसुमास्त्रयो वसन्तपदपूर्वकः ॥” इति  
 पाठोऽपि रत्नाकरोपयोगे ष्व वसन्तकुसुमाकरनाम्ना लिखितोऽस्ति  
 परन्तु पाठ्यकल्पने गौरवाङ्गमेतादृक्त्वादिभिकारत्नामयैक एव पाठ  
 कल्पनीयः ॥

भाषा—वारदभस्म ३ भाग, रजतभस्म १ भा, मुष्ठा  
 पिष्टी, स्फटिक और केशर ३-३ भाग, गोमेद ६ भा,  
 माणिक्य, नीलम और लाजवर्द १-१ भा., पद्म, वैक्रान्त,  
 प्रवाल, सुवर्णमाक्षिक, शङ्ख, सीप, पीलीकौडी इनसबकीभस्मे  
 १-१ भाग, सुवर्ण और ताम्रभस्म ३-३ भा, कांस्यभस्म ६  
 भा, पीतल और मण्डूरभस्म १-१ भा, कृत्वा ३ भा,  
 फोलाद और कान्तलोहभस्म, अन्नकम्पम्, शुद्धगन्धक, वज्र और  
 नागभस्म, येसव १-१ भाग लेकर ३-४ पहर शुद्धमर्दनकर  
 हार्गके पानीसे ४ दिन मर्दनकर गोलावनाय कडीपुष्पं मुखाय  
 ४ तह कपड़े में पोछी बनाय २-४ कपडिमिठी लगाकर छुछादे ।  
 फिर सञ्जीवार, जवापार और पानौनमक सबभागमें मिलेहुए  
 ४ सेरको बारीक पीसकर उसकेबीचमें गोलेभोरख सुहृन्धकर  
 ४ पहरकी मध्यम अग्नि देवे । पञ्चाङ्गीतलहोनेपर निकालकर  
 रखछोड़े । इशमेंसे १ से ३ रत्तीतककीमात्रा मधु और पीपलके  
 साथ धुयें, भारती, सोंठ और मधुके साथ अथवा मधु, धी,  
 तैल और मरिचकेसाथ श्वासे में दे । पाण्डुमें मधुके शरवत्केसाथ  
 दे । वीर्यवृद्धिने लिये शतावर और शहरकेसाथ दे । अङ्गुलेकेस  
 और मधुकेसाथ रक्तपित्तमें और शरके साथ अम्लपित्तमें देवे ।

इसतरह यह ऊपरके हुएरोगोंको और अनुपानभेदसे अन्यरोगोंको  
 भी नष्टकरताहै ॥ ६३४ ॥

६२५ मृगाङ्करसः ( रानाद्यः ) ( ऊनविंशः )

अयाऽपरं प्रवक्ष्यामि रोगराजस्य भेदनम् ।  
 प्रागुक्तेन प्रकारेण मृतेन्द्रं शोधयेद्बुधः ॥ २८३२ ॥  
 मुखमुत्पादयेत्तद्वदसेऽग्निस्वायितां नयेत् ।  
 पूर्वोक्तेन प्रकारेण दद्याद्वासाचतुष्टयम् ॥ २८३३ ॥  
 पूर्वोक्तेन प्रकारेण जारयेद्गन्धकाच्छतम् ।  
 शुणानम्रकसत्त्वस्य बहुषुं जारयेद्वसे ॥ २८३४ ॥  
 ताप्यसत्त्वसमायुक्तं ताप्यचूर्णप्रयापितम् ।  
 शुद्धसौवर्णवीजन्तु चारयेच्च समाशितः ॥ २८३५ ॥  
 एवं जीर्णे रसे वज्रं जारयेच्च शतांशतः ।  
 मृनागसत्त्वं हेसा च समावृत्तं तु कारितम् ॥ २८३६ ॥  
 ततः कृत्वा वज्रभस्म वक्ष्यमाणक्रमेण तु ।  
 भस्मना तेन वज्रस्य मारयेत्तं रसेश्वरम् ॥ २८३७ ॥  
 चतुःपट्टिणुं सूते वज्रभस्म विनिःक्षिपेत् ।  
 मर्दयेदम्लवर्गेण नानाधचूर्णद्वयैः ॥ २८३८ ॥  
 एकविंशदिनं याचन्मर्दयेच्च निरन्तरम् ।  
 यन्त्रे सोमानले भित्त्वा दिनान्यधिकविंशतिम् ॥ २८३९ ॥  
 ज्वालायित्वा धीतिहोत्रं स्याद्गुणोत्तममुद्धरेत् ।  
 गृहीयाद्भस्मतां यातं रसेन्द्रं वज्रयोगतः ॥ २८४० ॥  
 पश्चात्तद्भस्मना हेम भस्मी कुर्वीत बुद्धिमान् ।  
 तद्भस्मनेच रजतं भस्मीकुर्वाद्बिचक्षणः ॥ २८४१ ॥  
 ताम्रं तीक्ष्णं घृन्नागावन्नकान्तं प्रमारयेत् ।  
 सूतसाम्येन सर्वेषां लोहानां भागमाहरेत् ॥ २८४२ ॥  
 मुकाचूर्णेन्तु सर्वेषां समानं परिगृह्य च ।  
 रसाद्य द्विगुणं गन्धं द्रव्यं पादतः क्षिपेत् ॥ २८४३ ॥  
 तत्सर्वं मर्दयेद्यत्नात्काञ्चिकैश्च यवोद्भवैः ।  
 दिनत्रयं प्रयत्नेन पश्चाद्गोलरुमाचरेत् ॥ २८४४ ॥  
 छायाशुष्कञ्च तं गोलं पक्वप्रागतं कृतम् ।  
 सागरे यन्त्रराजे तं दत्त्वा पाकं समाचरेत् ॥ २८४५ ॥  
 चतुर्यामप्रमाणेन मध्ये वह्निं विधाय वै ।  
 ततः सिद्धं रसेन्द्रं तं स्वाद्गुणोत्तं समुद्धरेत् ॥ २८४६ ॥  
 सम्मयं ब्रह्मविष्णुशैशान् योगिनीभैरवादिकान् ।  
 वर्लिं दत्त्वा भूतवर्गे पावकं तर्पयेद्भुतैः ॥ २८४७ ॥  
 सहस्रादधिकं हुत्वा गुरविप्रान् प्रपूज्य च ।  
 एवं कृत्वा रसेन्द्रं वै प्राश्यां नैयान्धया बुधैः ॥ २८४८ ॥  
 विचूर्ण्य स्थापयेत्पात्रे सौवर्णे राजतेऽथवा ।  
 नित्यं सम्पूजयेद्देवं रसेन्द्रं सिद्धिकामुकः ॥ २८४९ ॥  
 अन्यथाऽपहरेद्देवो भैरवो रसमुत्तमम् ।  
 ततो रसेश्वरं दद्याद्गोराजनिवृत्तये ॥ २८५० ॥  
 राजसर्पप्रमाजन्तु नाधिकं योजयेद्बुधः ।  
 पूतेन मधुना साकं व्यापचूर्णेन संयुज्य ॥ २८५१ ॥

अनुपानञ्च धारोष्णं गन्धं दुग्धं प्रयोजयेत् ।  
तवराजेन संयुक्तमज्जदुग्धमथापि वा ॥ २८०२ ॥  
पय्यञ्च पूर्ववत्तुयांश्चिकित्सा तद्वदेव हि ।  
एकमण्डलयोगेन रोगराजं निहन्त्यसौ ॥ २८०३ ॥  
रसेन्द्रो नाऽन्यथा चिन्त्य एतदीश्वरभाषितम् ।  
पण्मासस्य प्रयोगेण छिद्रे पश्यति मेदिनीम् ॥ २८०४ ॥  
ग्रहलोकावधि जगत्पश्येत्तरतलाभुवत ।  
संयत्सरप्रयोगेण सेचरो जायते नरः ॥ २८०५ ॥  
अद्वयः सत्यमृतेषु यलवान् स्यान्मुगारिवत् ।  
स्वच्छन्दचरितो गोरीकान्तवञ्जायते नरः ॥ २८०६ ॥  
तस्य मूत्रपुरीषाभ्यां शुब्धं भयति काञ्चनम् ।  
सर्वान् रोगाग्निहस्त्येव रसेन्द्रो नाऽत्र संशयः ॥ २८०७ ॥  
अनुपानविशेषेण तत्तद्गोमूत्रयोगतः ।  
अयं राजमृगाङ्गाख्यो रसेन्द्रः सम्प्रकाशितः ॥ २८०८ ॥  
यस्कीर्तनात्सर्वरोगा विनश्यन्ति न संशयः ।  
यद्दर्शनाच्च पापानि विलयं यान्ति तत्क्षणात् ॥  
देवीशास्त्राऽनुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ २८०९ ॥  
रसालं, मयाधिकरे ।

भाषा—पूर्वोक्तप्रकारसे अग्निम्यापी संस्कारपर्यन्त किया कर पूर्ववत् चारमास देकर दत्तमुणित गन्धक और पय्युण अन्नसत्त्व जाणकर सुवर्णमात्रिसत्त्वका प्राप्त देकर शुद्धसुवर्ण माक्षिकके चूर्णका अग्निर प्रप्रेष देवे । सुवर्णमाक्षिकसत्त्व मि शेषनया जारितहोनेपर शुद्धसुवर्णबीज बराबरके हिस्सेका जारणकरे फिर सौवा हिस्सा हीरा जारणकरे । मँजुओंके सत्त्वको सुवर्णके बराबर लेकर गलावे और इसमें शुद्धहीरेको लपेटकर व्याप्रीक्षन्द्प्रयुक्तिसे बन्दकर भस्म बनावे । इसभस्मका एक हिस्सा ६४ गुने पारेमें मिलाकर यथासम्भन अम्लवर्गको एक-द्वितकर उनके रसोंसे मर्दनकर तिनही धतूरेकीजाति मिलवके उमप्रत्येकके रसोंसे २१ दिनतक निरन्तर मर्दनकर उमरुयत्रमें बन्दकर २१ दिनकी क्रमद्वय अग्निदेकर पकावे । स्वाद्शीतल-होनेपर बज्रकेयोगसे मरेहुएपारेको निकालकर रखडोवे । इस मेंसे एकहिस्सा ६४ गुने सुवर्णमें ढालकर पूर्ववत् अम्ल और धतूरवर्गसे २१ रोज मर्दनकर उमरुयत्रमें २१ रोजकी अग्निदे । स्वाद्शीतलहोनेपर निकालकर इसमें ६४ गुनी रजत मिलाकर पूर्ववत् मर्दन और पाचनकरे । इसरजतभस्ममें ६४ गुना तावेका चूरा मिलाकर पूर्ववत् भस्मकरे । इस ताम्रभस्मसे फोलाद और फोलादसे वज्र, वज्रमें नाग, नागसे अन्नक और अन्नकसे कान्त लोहकी भस्म करे । पारदभस्मके बराबर आठों लोहोंकी भस्म लेवे और इनसबकी बराबर मोतीकाचूर्ण, रससे दूना शुद्धगन्धक, रससे शतुर्धना शुद्धमा मिलाकर सन्ने काञ्ची और सबके मजसे २-३ रोज मर्दनकर गोलाबनाय लायाशुष्कर पकीहुई मृषामें बन्दकर बालकायत्रमें ४ पहर मध्यम अग्निमें पकावे । स्वाद्शीतलहोनेपर निकालकर द्रव्या, विष्णु, ईश, महादेव, योगिनी, भैरव प्रभृतिको बलि देकर अग्निको सहजानुमि तर्पणकर शुद्ध

माद्वान इनकी यथाशक्ति पूजाकर पारेको खरलकर सुवर्ण अथवा चादीके वर्तनमें रखकर विविधपूर्वक रोजपूजाकरे अन्यथा दवाके गुणको भैरव हरणकरलेगे । इगतरह सुरक्षितकियेहुए रसको मोटी-राईके प्रमाण लेकर धी, मनु और त्रिकटुकेचूर्णकेसाथ मिलाकर खिलादे काखसे धारोष्णदुग्ध पिलावे अथवा बँवलोजनकाचूर्ण ढालकर बक्तीका दूध पिलावे । पय्य वृद्धराजमृगाङ्गीतरह करे । उपद्रवोंकी प्रतिक्रियाभी वैसेहीकरे । इसतरह एकमण्डल तक करनेसे यह रोगराजको नष्टकरताहै । ६ महीनेतक प्रयोग-करनेमें शुष्कीमें ऐसाकोईहिस्सा नजर नहीं पड़ता कि जहासे उसे जानेका रास्ता न मिले । मण्डलोकतक सत्तारको हस्तगत आम-लकवर देखेगा । एकचर्चके प्रयोगसे आकाशगमिता सिद्धहो-ताहै । समस्तमृतोंके अद्वय होताहुआ दिख्यवल्युक्त होताहै । स्वच्छन्दपतिको प्राप्तहोकर महादेवके सदा गुणोंको प्राप्तकर ताहै । उनकेमूत्र और पुरीषसे तावा सुवर्णहोजाताहै । तत्परो गहरागुणानेकेसाथ यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै । उसमनु-यके दर्शनकरनेमें समस्त पाप नष्टहोतेहै ॥ ६०५ ॥

६२६ मृगाङ्करसः ( राजायः ) ( विशः )

एकैकभागाने सुवर्णसूत-  
वैकान्तभस्मान्यथ गन्धकञ्च ।  
भागद्वय मौक्तिकभस्म देयं  
तुर्याशतो हीरकभस्महेहः ॥ २८६० ॥  
ततः परे दृङ्गणकञ्च सूत-  
तुर्याशकं सन्निपजा प्रदेयम् ।  
सर्वाणि चैकन निधाय रत्नये  
जम्बीरतोरणे दिने विमर्चम् ॥ २८६१ ॥  
तत्रोलकं शुष्कमनातपे च  
सूक्तपट्टनाऽपि च घेष्टयित्वा ।  
ततो वितस्तिप्रमिते च भाण्डे  
दशाङ्गुलायामयुत्तैसमं तत् ॥ २८६२ ॥  
विस्तीर्णवस्त्रे चतुरङ्गुलीभिः  
क्रिद्रे क्षिपेत्तत्र पटङ्गुलीकम् ।  
तस्योपरिष्ठाद्य गोलकं तं  
निधाय भाण्डे पृथुलुहिकायाम् ॥ २८६३ ॥  
दीपाग्निनाऽऽदौ प्रहरं पचेच्च  
मध्याग्निनाऽऽयग्रहरयञ्च ।  
चण्डाग्निना चाऽपि समुद्रायाम्-  
मेवंपुटो वासर एक एव ॥ २८६४ ॥  
तं स्वाद्शीतोत्तं स्वत उद्धरेत्  
तद्योजयेद्देहं यन्मयि ।  
कुमारिकाणामप्ययोगिनीनां  
तस्मिंश्चानामपि सहजानाम् ॥ २८६५ ॥  
सम्पूज्य मिडेभरनिप्रराजं  
खल्वे च चूर्णं निदर्शित तस्य ।



उदीरितो राजमृगाङ्क पप-  
स्ततो भवानीं प्रति शम्भुनाऽस्तो॥२८६६॥  
शौट्रेण सेव्यो दशपिप्पलीभि-  
श्रूणेन साकं भिषजां समीपे ।  
क्षयं निहन्त्याशु च वह्निदायी  
पाण्डुं प्रमेहं ग्रहणीं पितृष्टि ॥ २८६७ ॥  
शूलं समूलं सकलं निहन्ति  
चाशौंसि सर्वज्वरसन्निपातान् ।  
रोगान् प्रहृष्टान् प्रसभं पितृष्टि  
हरि यया पातकसङ्गमाशु ॥ २८६८ ॥

र. सु., र. सं., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—सोना, पारा, वैकान्तभस्म और शुद्धगन्धक १-१ भाग, सोतीकी पिष्टी अथवा भस्म २ भा., हरिकीभस्म ३ भा., मुहागा ३ भा., लेकर सबको ३-४ पहर सुखा मईनकर जमीरीकेरससे एकदिन पोटकर गोलाबनाय छायाशुष्कर चारतह मलमलके कापेमें लपेटकर ३-४ काङ्गिमी देकर अच्छीतरह सुखाय एक बालिस्तलम्बा दसअङ्गुलचोड़ा और चारअङ्गुलचोड़े मुहकागैललेकर उसमें ६ अङ्गुलतक लोहेकेकिटका चूरा निगाकर ऊपर गोलेकीरख किटके चूर्णसही ऊपरतक भरदे फिर बालुका अथवा लवणयंत्रमें रखकर चढ़े चूल्हेपर रख एकपहर दीपाग्नि, फिर दोपहर मध्यमाग्नि अखीरमें ४ पहर चण्डाग्नि देकर पकावे । स्वाद्वशीतलघोनेपर निकालकर रखछोड़े । भैरव, अग्नि, कुमारी, योगिनी, सुगान्द्राक्षण इनकी अच्छीतरह तृप्तिकर गणेशका पूज मकर भवानी और शङ्करकी प्रणामकर दशवीपल और मधुके-साय इसरसकी १ से ४ रस्तीतककी मात्रा देनेसे क्षय, अग्निमान्य, पाण्डु, प्रमेह, ग्रहणी, शूल, अरु, ज्वर, सन्निपात इन सबको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे परमेश्वरका स्मरण पाप-सङ्घातको नष्टकरताहै ॥ ६२६ ॥

६२७ मृगाङ्करसः ( नवास्ताद्यः राजाद्यः ) २१

सूतं गन्धकहमत्तारसकं वैकान्तवज्राऽऽयसे,  
चङ्गं नागजविद्रुमं सुविमलं माणिक्यगारतमजम् ।  
ताप्यं मौक्तिकपुष्पागजलजं वैदूर्यकं शुल्बकं,  
शुर्कातालकम्रमृषिहृल्लशिला गोमेदनीलं समग्र८६९  
गोक्षुरैः फणिपल्लिसिन्धुवद्रुमुण्डकगाचित्रकैः,  
शोफघ्नीशतपुष्पिक्तामधुकजं मङ्गेशुकङ्गोलजैः ।  
छिद्रानागयलात्रिजातकथनं पिप्पुम्रियावालकैः,  
अमृष्टाऽतिविपाऽऽदरूपमुशलीकन्याविदारीचरी-  
कन्याजैः स्वरसं विभाज्य सकलं लव्याऽथ तन्मेलकं,  
यन्त्रे सागरराजजं पुटयुगे यामद्वयं पाचयेत् ।  
पश्चात्स्याङ्गसुशीतलं सुसुदितं गोक्षुरसम्भावितं,  
सर्वेश्वरसैश्च मालतिमुग्धैः कर्पूरकस्तुरिजैः॥२८७१॥  
सिद्धं दन्तकरण्डकं सुनिहितं गुञ्जाद्वयं योजयेत्,  
सर्वव्याधिषु चाऽनुपानकमिदा तं वक्ष्यमाणेषु च ।

सर्वांशेषु च पिप्पलीमधुयुतं भङ्गातयुकं क्षयं,  
इयामामिदंशभि वृतेनमनुता च कोनविशेषणे २८७२  
पितं चेन्दुकवेन चाऽऽरविजये श्रीलण्डलण्डायुनः,  
स्योत्थे चाऽऽर्द्रमकुन्तुं प्रहणिकां जोरेण शौर्यजयेत्  
शूले रामतजासवेन सहितं श्वासे च कासे तथा,  
व्याधौभाङ्गितुक्त्र शुल्बविषये द्राक्षाशिशिरस्युतम् ॥  
मेहं शर्करया तथा च तुवरैरम्लाक्षयिते सिता,  
क्षौद्राभ्यां ज्वरदोषशान्तिषु हितं जोरेण धाम्येन च ।  
इत्यं राजमृगाङ्कमेतमखिलं व्याधौ प्रयुज्यशान्तिषु,  
यस्याऽऽकर्मनमात्रतोऽपि सकला रोगाः प्रगश्यन्ति हि  
र. सु. (राजयक्ष्मणि), नि. र., र. सु., र. बो., रसायनं,  
यो. र., एषु नवरत्नराजमृगाङ्क इति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सुवर्ण, चांदी, खपरिया, वैकान्त, हीरा, लोहा, वज्र, नाग, प्रवाल, त्पामाखी, माणिक्य, पना, सोनामाखी, सोती, पुलराज, राहू, खपरिया, ताश्, मोतीकीसीर, हरिताल, अन्नक, शिगरिक, मैतसिल, गोमेद, नीलम, इनसबको भस्म समभाग लेकर दोपहर शुष्कमईनकर गोखरू, नागरवेल, विषारा, वैर, गोरखमुरडी, पीपल, चित्रक, पुनर्वा, सोंक, मुलहठी, भाग, ईख, क्षीतलचीनी, गिलोय, नागमला, तज, पत्रज, इलायची, नागमोषा, तुलसी, तगर-गण्डोला (गुजराती), पाठ, अनीस, अहसा, मुसली, वासले खवा, विदारीकन्द, खान्दर, बीजुभार इन प्रत्येकके रसोंसे १-१ भावना देकर गोलाबनाय छायाशुष्कर चारतह मलमलके कापेमें बांधकर ऊपरसे २-३ काङ्गिमी देकर छायाशुष्कर दोसरावोंमें लक्षणबोच गोलेकीरख सन्धि बन्दकर दे । सुदानेपर दोपहली अग्निदे । स्वाद्वशीतलघोनेपर निकालकर गोडुमकी भावना देकर पूर्णकवस्तुओंकी क्रमसे १-१ भावना देकर तमाम जातिकीईख, मालकीकैरूच कूर और कस्तूरीकी क्रमसे भावनाए देकर २-२ रस्तीकी मोलियाबनाकर छायामें सुखाय हाथीदांतकी ठिन्नीमें बन्दकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ मोली तप्तो गहरानुवालेकेसाथ देनेसे यह तमामरोगोंको नष्टकरताहै । साधा रणया पीपल, मधु और भिलवेकनाथ क्षयको नष्टकरताहै । १० पीपल, धी और मधु अथवा १९ मरिच, घृत और मधु केसाथ पित्तको नष्टकरताहै । शुद्धकूर और तगलण्डोला अथवा लफेद चन्दन और खाइंसाय अम्लपित्तको, तथा अदरख और मधुकेसाय स्थूलताको नष्टकरताहै । जोरकेसाय ग्रहणी और दोषको नष्टकरताहै । दिद्रावासकेसाथ मूलको नष्टकरताहै । भटकटैया और मादलीकेसाथ थासफासको, दास और होंकसाय श्रेहको नष्टकरताहै । शकर और मधुकेसाथ अम्लपित्त और रक्तपित्तको एव जोर और धनियेकेसाथ ज्वरोंसे उपद्रवोंको नष्ट करताहै । इसतरह तत्तदनुगन्विशेषकेसाथ समस्तरोगोंमें इसका प्रयोग अच्छाहउत्तमोंमें होताहै ॥ ६२७ ॥

६२८ मृगाङ्करसः ( राजाद्यः ) ( द्वारिचः )

सूतं सूतं सूतं ताप्यं तुल्यभागं प्रकल्पयेत् ।  
अस्य गुञ्जाद्वयं दद्यान्मधुना मरिचैः सह ॥ २८७५ ॥

तदनु स्वरसो योज्यस्तुलस्याः कर्णसम्मितः ।  
जीर्णज्वररुफाद्यंसी ध्यासकासविनाशनः ॥ २८७६ ॥  
अग्निमान्यविविधघ्नो राजयक्ष्मविमर्दनः ।  
धातुपुष्टिरुश्चैर्यलदः कान्तिकारकः ॥ २८७७ ॥  
वे द, जीर्णज्वरे ।

टि०—मृगाङ्गेषु मायस शकः समायाति पत्न्यत्र तदभावेऽपि  
मृगाङ्ग इति नामदाने प्रयत्नः प्रण्य ।

भाषा—पारेवीभस्म ( अभावमे वन्दोदय ) और सुवर्ण  
माक्षिकमम्म समभाग लेकर १-२ पहर घोटकर रखोहे ।  
इसमेंसे २-२ रत्तीकीमात्रा मधु और २९ काष्ठीमिर्चोबेयाय  
लेक करके एकतोला मुल्सीकारस पिलावे । इससे जीर्णज्वर,  
कफ, श्वास, कास, अग्निमान्य, मलमूत्रविविध, राजयक्ष्म, धातु,  
धूल और कान्तिकाहास इनसबको यह नष्टकरताहे ॥ ६२८ ॥

६२९ मृगाङ्कुरसः ( राजाद्यः ) ( त्रयोविंशः )  
मृतं तात्रं मृतं स्थणं मृतं लोहं सगोनसम् ।  
प्रयेकं पलमानञ्च द्विगुणञ्च शिलाजतु ॥ २८७८ ॥  
प्रवालं मौक्तिकं शुक्लं कर्पं कर्पञ्च चूर्णयेत् ।  
रत्ने त्रिमृद्य तत्सर्वं घरणस्य रसेन वै ॥ २८७९ ॥  
साधयेत्सप्तद्विपसात्तच्छुष्कं भक्षयेन्नरः ।  
गुजामात्रं द्विगुञ्जं वा यथायलमधाऽपि वा ॥ २८८० ॥  
मूर्ध्मैलाचूर्णसंयुक्तं मधुना तद्धितेदिने ।  
मूत्रसाई पीयन्नाशं प्रमेहं राजरोगकम् ॥  
प्रणयति न सन्देहो यथा सुखाद्विपस्तम् ॥ २८८१ ॥  
ना वि, वापीकरणे ।

भाषा—तांरा, सुवर्ण, लोह और बैकान्त १-१ पल,  
शुद्धशिलाजीत २ पल, प्रवाल और मोतीकीपिठी १-१ कर्प  
लेकर १-२ पहर सालीमर्दनकर सातदिवसक वरणोरेसमे  
मर्दनकर गोलाबनाय चारतुह्मपडेमें लपेट करारसमुद्रमें बन्दकर  
१-२ कण्डमिठी च्वाय गुलाबर लज्जयन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि  
देवे । स्वाङ्गशीतलोनेर निकालकर रखोहे । इसमेंसे एकशीति  
दोसतीक औबिती दसतर छोटीशलायवीकेचूर्ण और मधुके  
साधनेने मूत्रपात, शुन्नाद्य, प्रमेह, राजरोग प्रवृत्ति रोगोको  
यह इततरह नष्टकरताहे जेमे सुखोदय अघोको नष्टकरताहे ॥ ६२९

६३० मृगाङ्कुरसः ( राजाद्यः ) ( चतुर्विंशः )  
स्थणं तारं तपनशुटिलं नागपत्रातपुष्पया,  
सर्वैस्तुल्यो रम इति पृथक् गन्धकं मृततुल्यम् ।  
द्वारा दत्त्वा मद्रकसलिलं मर्दयेद्वहारा,  
मूत्रास्येधो पुष्टनविधिना मूत्रपाथये रमेन्द्र ॥ २८८२ ॥  
इमं रसेन्द्रं निखिलाऽऽमयग्रं  
पल्लुकमानं त्वयुगानयोगात् ।  
धीराङ्कुरेणोतमिदं भयान्ये  
रसो यतो राजमृगाङ्गनामा ॥ २८८३ ॥  
ककारादियन्त्रं रसे योगगोहे  
सद्वर्णं पलं जात्रलं योजनीयम् ।

विशेषः परो यो यथोक्तः स कार्यं  
मुनीनां मतं वेत्ति कः पण्डितोऽपि ॥ २८८४ ॥  
र धि, सर्वरगे ।

भाषा—सुवर्ण १ माय, रत्न २ मा, तात्र २ मा, शक  
४ मा, नाग ५ मा, बैकान्त ६ मा, इनसबकीभस्मे लेकर  
सबकी बराबर २ शुद्धपार और गन्धक डालकर सबकीनीलरंग-  
कञ्जलीकर मुल्फा ( इन्मिद्रव्य ) काद्वय मोडा २ डालकर आठ  
पहरतक मर्दनकर गोलाबनाय चारतुह्मपडेमें लपेटकर १-२  
कण्डमिठी च्वाय सातवसमुद्रमें बन्दकर भूधरायन्त्रमें चारपहरकी  
अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलोनेर निकालकर रखोहे । इसमेंसे १-२  
रत्ती वत्तदोगहरानुगानेसाथ देनेसे राजयक्ष्मादि समस्तरोगोको  
यह नष्टकरताहे इसमें ककारादिकङ्का निषेधरत्ना ॥ ६३० ॥

६३१ मृगाङ्कुरसः ( राजाद्यः ) ( पञ्चविंशः )  
मृतं सृतं मृतं तात्रं मृतं तीक्ष्णं मृताऽन्नकम् ।  
नवरत्नजम्बस्मानि कान्तानिद्रक्किङ्कम् ॥ २८८५ ॥  
समांशं चित्रकद्रविः कुमारीहंसपादजैः ।  
घृन्ना तन्मृषिकामस्ये धालुकायन्त्रके पथेत् ॥ २८८६ ॥  
शिदिनं पाचयेदेतत्स्याङ्गशीतं समुज्जरेत् ।  
पाराहीकन्द्यान्त्रसार्केशुकाऽसुग्निमर्दितम् ॥ २८८७ ॥  
रसो राजमृगाङ्गोऽयं सागार्जुनयिमापितः ।  
तत्तुष्पणं यद्वासाधेन रोगजालं निहन्ति च ॥ २८८८ ॥  
र क यो, रातेगे ।

भाषा—पारा, तात्रा, फोलाह, अन्नक, नवरत्न इनसबकी  
भस्मे, कान्तानिद्र और मण्डूरभस्म समभाग लेकर १-२  
पहर सुखा मर्दनकर चित्रकमूल, पीडुमार, हंगराज इनके दया-  
गम्भज स्वस अपवा करायोमे १-२ रोज मर्दनकर गोलाब  
नाय मुल्फाकर चारतह करके लपेट २-२ कण्डमिठी च्वाकर  
कडीधुमें गुलाय चारवसमुद्रमें बन्दकर बाहुदायन्त्रमें ३ दिनतक  
कमड अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलोनेर निराङ्कुर पाराहीकन्द,  
आंशके, बोंहे पचावकेमूल और जह, इनद्रयेच्छे स्तर्गोन  
१-१ रोज मर्दनकर रखोहे । इसमेंसे १ से ३ रत्तीतककीमात्रा  
वत्तदोगहरानुगानेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोको नष्टकरताहे ॥

६३२ मृगाङ्कुरसः ( राजाद्यः ) ( षड्विंशः )  
समरसरसके द्वे मौक्तिकं गन्धकञ्च,  
निखिलदल्फलांशं काञ्चनीयिपेतम् ।  
पचनमतिमुपुष्पया लावणे यन्त्रके च,  
जयति सख्योर्यं राजरोगं पित्रोपात् ॥ २८८९ ॥  
र क यो, दन्नाऽधिकारे ।

भाषा—पुष्ट पारा और शारीया १-१ मा, मुल्फापिठी  
और दल्फला २-२ माय, मुर्चनम् शारी १२ बामप  
लेकर सबकी नीलरंगकञ्जलीकर पित्रक, पोटुमार और ह-  
राबेन्वास कपडा कापोमे १-३ दिन मर्दनकर लोहायन्त्र  
मुग्धकर चारतहपडेमें लपेट २-२ कण्डमिठी देकर करके

मुखाकर शरावसमुद्रमं बन्दकर स्वर्णयत्रमं चारपहरकी अमि देवे । स्वाज्ञशीतलोनेपर निकालकर रखोहे । इसमेंसे १ से ३ रत्तीतककीमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेमाथ देनेसे यह राजयक्ष्म-प्रभृति समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६३२ ॥

**६३३ मृगाङ्गरसः ( राजाधः ) ( सप्तविंश )**

शुद्धस्य पलमादाय पारदस्य शुभेऽहनि ।  
हमरौघ्यं पृथक्कान्तं दीनाप्ययसम्मितम् ॥ २८९० ॥  
गन्धरुद्र छिनिष्कं स्याच्चतुर्निष्कं तु माक्षिकम् ।  
तन्मात्रं लोहभस्म स्यादेकीकृत्याऽखिलं रसैः ॥ २८९१ ॥  
वाक्कुच्याः खल्वेदकस्यप्रितयं पाचयेत्पुनः ।  
कुमार्याः स्वरसेनैव सप्तचारन्तु मार्कवैः ॥ २८९२ ॥  
त्रियारं नागवल्क्यास्तु पञ्चवाराग्रसेस्तथा ।  
रेणुक्रान्वायतत्रिः स्युरेका जातिफल्गुवैः ॥ २८९३ ॥  
पञ्च धात्र्याश्च तोयेन वास्तुलोणीरसेस्तथा ।  
निर्गुण्डयाः स्वरसैः कार्यं पञ्चाङ्गप्रभयै नरैः ॥ २८९४ ॥  
मृषिकायां निरुद्रयाऽथ सप्तधा पुटमाचरेत् ।  
पञ्चाङ्गप्रभयैस्त्वेवं मुण्डयाश्च स्वरसैस्तथा ॥ २८९५ ॥  
द्विवारं विभज्यनितैस्त्रिधा कृष्माण्डकादिभिः ।  
विडङ्गशारिषान्माथैर्भांयित्वा पुनः पुटेत् ॥ २८९६ ॥  
सप्तधा मत्स्यभूनागमेककन्दकोद्भवैः ।  
पिसैः समर्द्धयेत्तत्राऽख्वा कुङ्कुटरूपं च ॥ २८९७ ॥  
छागस्तेन समर्द्धं सप्तधा पुटयेद्विपक्व ।  
शृङ्गं कृत्वा नुतं सतं शुभे कारण्डके क्षिपेत् ॥ २८९८ ॥  
गुजामात्रं प्रयुज्जीत वातक्षयनिवृत्तये ।  
घृतौदनं भवेत्पथ्यं सिद्धार्थं स्नेहलेपनम् ॥ २८९९ ॥  
समुद्रफलभाङ्गीभ्यां श्लेष्मक्षयनिवर्धनम् ।  
घृतौदनं समरिचं पथ्यमभ्यङ्गकर्मणि ॥ २९०० ॥  
गुण्ठीघृतविमिश्रं हि तत्रैः सप्ताहमाचरेत् ।  
भाङ्गीक्षिताऽनुपानेन पित्तश्लेष्मक्षयापहम् ॥ २९०१ ॥  
पथ्यं सक्षीरमरिचं घृतं गर्व्यं हितं भवेत् ।  
अभ्यङ्गे घृततैलं स्यात्पिप्पलीशर्कराऽन्वितम् ॥ २९०२ ॥  
वातपित्तक्षयं हन्ति भोजनं सघृतौदनम् ।  
भाङ्गीशुस्वरसैर्बुक्तं श्लेष्मवातक्षयापहम् ॥ २९०३ ॥  
शीतं घृतौदनं पथ्यमभ्यङ्गं तिलतैलतः ।  
निर्गुण्डीकाकृष्णाचीभ्यां क्षयं हन्ति त्रिदोषजम् ॥ २९०४ ॥  
शर्करापिप्पलीसर्पिर्मिश्रमत्तं हितं भवेत् ।  
दधिसर्पिर्घृतं कुर्यादभ्यङ्गं सप्तधा परम् ॥ २९०५ ॥  
रहस्यं कथितं सम्यग्रसेन्द्रो राजयक्ष्मणि ।  
मृगाङ्गः इति विख्यातः प्राणिनां धातुपोषकः ॥ २९०६ ॥  
र. क. यो , राजयक्ष्मणि ।

**भाषा**—शुभमुहूर्तमें शुद्धपारा १ पल, सुवर्ण, रजत, कान्त-लोहमक्ष और शुद्धगन्धक २-२ तोले, सुवर्णमाक्षिक और लोह-भस्म ४-४ तोले लेकर सबको पारोपान्यककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर एकरोज शुद्धमर्दनकर बाहुचीके स्वरस अथवा

काथये तीनरोज मर्दनकर सुखादे फिर दुमारीके स्वरसमे ३ दिन, भगोरेरससे ३ दिन, पानेरससे ५ दिन, रेणुक्रान्वायसे ३ दिन, जायफलकेबाणसे १ दिन, आवला, वयुआ, लूणी और निर्गुण्डीकापञ्चाङ्ग इनके स्यासम्भव स्वरस अथवा काथोसे ५-५ दिन भावनाएं देकर गोलाबनायमुखाकर ४ तद्वर्षपेड़में लपेटकर ६-५ वर्षमिमी लगाय सुखाकर शरावसमुद्रमं बन्दकर २-३ वर्षमिमी लगादे । सुखनेपर भूषयत्रमं ५-५ सेरकण्डोकी सात आंचे । औपधरो समुद्रमंसे न निमाले । स्वाज्ञशीतलोनेपर निमालकर गोरसमुण्डीके पञ्चाङ्गवेस्वरससे २, सोंठकेकाटेसे ३, कृष्माण्डादिण ( कृष्माण्ड, दण्डक, कालशाक, ककंदी, कर्कण्डू, कर्कोटक, कलिक, कर्मद, करीग, वतक, परोह, काजिक ), विडङ्ग और शारिषाके स्यासम्भव स्वरस अथवा काथोसे ३-३ भावनाएं देकर पूर्ववत् शरावसमुद्रान्त क्रियाकर सात आंचे दे । स्वाज्ञशीतलोनेपर मण्डीकापित्त, केंचुआंका स्वरस, मेंढ क्वापित्त, केंकेका स्वरस, पाचोपित्त, कुङ्कुट और बक्केका रक इनप्रत्येककी १-१ भावनादेकर गोला बनाय सुखाकर चारतहकपेड़में लपेट २-३ काङ्गिमिमीदेकर सुखनेपर शरावसमुद्रमं बन्दकर पूर्ववत् ५-५ सेर कण्डोकी भूषयत्रमं ७ आंचे दे । स्वाज्ञशीतलोनेपर पीसकर शीशोंमें रखोहे । इसमेंसे १-१ रत्तीकीमात्रा घी, मलाई, मक्खन प्रभृति वातहरानुपान केमाथ वातक्षयमेंदे । घी और चावल पथ्यमें ६, कुटैलका अभ्यङ्गरावे । समुद्रफल और भारतीकेसाथ श्लेष्मक्षयमेंदे । घी, चावल और मिर्च पथ्यमेंदे, सोंठ घी और छाछका ७ दिनतक अभ्यङ्ग करावे । भारती और शकरकेसाथ पित्तश्लेष्मक्षयमेंदे, गायकाषो, दूध, और मरिच पथ्यमेंदे, घी, तैल और पीपलका अभ्यङ्गकरावे । पीपल और शकरकेसाथ वातपित्तक्षयमेंदे, घी और चावल पथ्यमेंदे, भारती और ईलकेरकेसाथ श्लेष्मवात क्षयमेंदे, ठंडे चावल और घी पथ्यमेंदे, तिलकेतैलसे अभ्यङ्ग करावे । संभाळ और मकोयके रससे त्रिदोषक्षयमेंदेकर शकर, पीपल और घीमिश्रित अन पथ्यमेंदे । घीमिलेहुए दहीसे अभ्यङ्ग करावे । इसतरह तत्तद्रोगहरानुपान, पथ्य और अभ्यङ्गकेसाथ इसका प्रयोगकरनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६३३ ॥

**६३४ मृगाङ्गरसः ( राजाधः ) ( अष्टाविंशः )**

स्याद्रसेन समं तीक्ष्णं तुष्यञ्च द्विगुणं तयोः ।  
गन्धकं तैः समं प्रोक्तं रसपादञ्च द्रुणम् ॥ २९०७ ॥  
शुक्रिन्द्रसैः पिष्ट्वा तत्सर्वं गुलिकीकृतम् ।  
भाण्डे लवणपूर्णं तत्पचेद्यामचतुष्यम् ॥ २९०८ ॥  
मापकत्रितयेनाऽथ माहिपाऽऽज्येन संयुतम् ।  
दशमागधिकायुक्तं देयञ्च मधुनाऽथवा ॥ २९०९ ॥  
गुञ्जीमितं मरीचेञ्च नागवल्लीदलान्वितम् ।  
मृगाङ्गनामयोगोऽयं राजयक्ष्मनिवर्तकः ॥ २९१० ॥  
र. क. यो , राजयक्ष्मणि ।

**भाषा**—गारा और लोहभस्म १-१ भाग, तुष्यभस्म २ भा, शुद्धगन्धक ४ भा, सुहाणा १ भाग लेकर सबका घारीक

पूर्णकर लहसनेकरस १-२ रोच मर्दनकर गोलाकनाय मुखकर  
चारतद्वकपडेमे लपेन् ३-४ कपडमित्रीदेवे । सुखनेपर बराव  
सम्पुम्मे वन्दकर २-३ कपडमित्री देकर मुखकर लवणयन्त्रमे  
रख चारपदकी मध्यम अमि दव । स्वाक्षतीत होनेपर  
निकाळकर रखजोडे । इसमेसे १-१ रत्तीसीमात्रा ३ मास  
मेघसे धीमेसाथ अथवा १० पीपल और मधुसे साथ अथवा  
१० मरिच और पातनेरसका साथ दनेस यह सवप्रकारके रात  
यक्ष्मको नष्टकरताहै ॥ ६३४ ॥

### ६३५ मृगाङ्करसः (राजाय) (ऊर्जाश)

भीलरजाऽहिषैर्द्वयं महानोल प्रजालकम् ।  
गामेदं मौक्तिकञ्चैव माणिक्य पुष्परामकम् ॥ २९१० ॥  
ताम्र तीक्ष्णऽध्वकं किङ्क कान्तसिद्धरहाटकम् ।  
गन्धसुत विपं ताल समाश चित्रन्द्वे ॥ २९११ ॥  
तन्मूलिकारसे मयं घालुकायध्वके पवेत ।  
दिनाऽर्धं लघनेयुक्तं स्वाक्षतीतलमुद्धरेत् ॥ २९१३ ॥  
वाराहीदङ्कणद्राक्षाकिङ्कुमैश्च सुभाषित ।  
मृगाङ्को योगराचाय दष्ट प्रत्ययकारक ॥  
भक्षयेद्रक्तिकामान क्षयरामादिनाशन ॥ २९१४ ॥  
र क यो , रातयक्ष्माधिकारे ।

भाषा—नीलम, हीरेसीभम् सफा नहरमोहरा (सर्पका  
नहरमोहरा न मिलेपर चाह निष्का डालकहै) लानिया  
कपेदेईरानीलम प्रवाल, गोमेद मोती, माणिक्य पुखराण,  
ताम्र फोलाद अन्नक और मण्डर इनसारी भस्मे पान्तजोह  
कीशालभस्म सुवर्गभस्म गुडगन्धक, पाता बछनाग और  
हरिताल सबसमभाग लेकर सफा घाटीकनूजर पातेगन्धरुनी  
नीलकण्ठशलीमें मिलाकर १-२ रोच मर्दनकर चित्रमूलक  
हाथसे ७ रोचमर्दनकर गोलाकनाय मुखकर चारतद्व कपडेमे  
लपेन् ३-४ कपडमित्री देकर बरावसम्पुम्मे वन्दकर १-२  
कपडमित्री लगाकर सुखनेपर लवणयन्त्रमे दोषहराई आयेदे ।  
स्वाक्षतीतहोनेपर निकाळकर वाराहीदन्ड, मुग्गणा द्राण और  
डाक इनके स्वस अथवा हाथसे ३-३ भाजनाए दष्टर मुखकर  
रखजोडे । इसमेसे १-१ रत्ती सप्तरोहदगुलानकेयाथ देनग  
धयप्रयति समस्ततोषीको यद नष्टकरताहै ॥ ६३५ ॥

### ६३६ मृगाङ्करसः (राजाय) (विश)

प्रधाऽंशा मारितामृतादेकांशो हम्मसम्पत ।  
एकांशो मृतताम्रस्य शिलागन्धश्च तालकम् ॥ २९१५ ॥  
प्र येकं भागयुग्मं स्यादेतत्सर्वं त्रिषुणैव ।  
यराटी पूरयेत्तन छागीभारण द्रुग्गम् ॥ २९१६ ॥  
पिन्ना तेन मुख रज्जा मृन्नाण्डे ताथ धारयेत् ।  
शुष्क पथेद्रजुने स्वाक्षतात सम्पुद्धरेत् ॥ २९१७ ॥  
रसा राजमृगाङ्गायै चतुर्गुणं क्षयापह ।  
मरिचकनपिस्ताया कण्ठाभि दक्षभिस्तथा ॥ २९१८ ॥

मधुना सर्पिया चाऽपि दद्यादेत रस मिषक ।  
अनेन नश्यति श्वित्र पातश्चे प्रभव धय ॥ २९१९ ॥  
भा प्र र स, नु यो त, र सु र र स, र र, वै र, भै  
र, ध, र क, चि सा, र चि, रसयि वा र म, र र दी  
नि र, शा स यो त र प्र सु, रसायनवार, र म मा, र  
च, र को रसायनम, चि र म, र प्र, नि क, र स क,  
यो र, र का यो म र क यो, वै चि, रस स, र  
क ल, यो, र पा, राजयक्ष्मणि ।

पिं—वै चि वा भयमृगाङ्कति नाम । कुप्रचित्ताप्रस्थाने ताद  
निधानिन् । रसांमुखा यावत्तिकायात्र 'कमभम निभाग सुमनि  
भवेत्तथा स्वमैते हृदमिति पाठा नूनतया वपित परतु पीकङ्कडर  
मृन्नाण्डेनिर्दिष्टवास्तवमरननक्ष निभाजन समापवन्तिवाच्यस्यैव  
प्यैरुद्धरेत् कुं पयसतानात्ताम्रमरनि चतुर्भागव हेमभमनि न  
प्रभाषण व प्ररुग्गयानम् परतु भय पयसयिमुखां नूनतयादितिन् ।  
अथ पाठस्य मूल्यु उचरितिन् पाठ दद्यासि बहुमन्त्रमन्त्राए ।  
रसरत्नापिराशना प्ररुग्गयानमप्रयु सवन पूवर्गवित्ताम्रम  
रमन पवभाषण हेमभस्मनक्ष दिमागव मनमि सक्तलि प्रविधानि ।  
रनुभाषणप्रभाषण वयम् नु पयसयानादयो प्रनिर्दिष्टिन् तत्रा  
दण्णिकम् । हेमभस्मना दिग्गुञ्जन वीगस्तु न मिश्रिभक्तिर इति द्वि  
निर्विभावनीयम् । कालात्ताम्रपित क्षयभस्ममहाधातवाद्युग्रमहा  
न्माऽऽरमारजेता प्रविनिर्दिष्टिन् नैरापयिनी इति वल्लभा  
विनेतिस्ति पृष्ठ ॥

भाषा—वारदभस्म ३ भाग स्वगभस्म १ भा, ताम्र  
भस्म १ भा, गुडमनसिल, गन्धक और हरिताल २-२ भाग  
लेकर बज्जालकर पीलीकॉडियोमेंभरे । फिर मुहाणको पक्षी  
केदुर्गमें पीकर कौडियोंका मुष्पन्दकर मिनीरतनमें भरो  
सम्पुकर मुखकर गन्धुपी आयेदे । स्वाक्षतीतहोनेपर निका  
लकर रखजोडे । इसमेसे ४-४ रत्तीसीमात्रा १९ कालीमिर्च  
अथवा १० पीपल और मधु तथा धीमेसाथ दनेसे वातज्येष्म  
प्रधानगय नष्टहोताहै ॥ ६३६ ॥

### ६३७ मृगाङ्करसः (राजाय) (एरिश)

हैमसूतेद्रमुताना गन्धस्य रयिभस्मन ।  
रजतस्य प्रजालस्य भागयुक्त प्रमाद्रवम् ॥ २९२० ॥  
सर्पमेतत्तु सपिष्य वाराहीदन्धवारिणा ।  
त्रिदिनं गालकं दृष्ट्वा मृषाया सन्निराधयेत् ॥ २९२१ ॥  
भाण्डे लज्जयुग्मं तु पचेद्वामचतुष्पथम् ।  
उद्धृतं तस्मिन् शाते च त्रिदशदिशत दिशेन २०२२  
निर्गम्य निहितं यक्ष्मलाभे पांड्यादात ।  
वेज्जतप्रसम क्षेत्रेण रागे मनुकनायुतम् ॥ २९२३ ॥  
क्षयं मायं ध्यामरासास्यवर्गपितमराचयम् ।  
शुल्म हाहादरे मर् मरार पाताद मरामलार २०२४  
एतममामयान् हस्ति मज्जले चाऽऽनरीगम् ।  
दिश्यतेजायते कान्तिमायु प्रजायसाऽपरम् २०२५  
रसायनम्, रातयक्ष्मणि ।

पिं—यक्ष्मलाभे दक्षयुक्तं दृष्ट्वा मृषाया सन्निराधयेत् त्रिदिनं गालकं दृष्ट्वा मृषाया सन्निराधयेत् त्रिदिनं गालकं दृष्ट्वा मृषाया सन्निराधयेत्

पूर्वमिन्द्र नास्ति पूर्वमिन्द्रस्तुल्य दृक्गुणमस्ति अथ तु तत्रास्ति इति महान्निरोधोक्तिरिति, वस्तुतस्तु पूर्वसंस्थेयाऽप्यमश्रुजोत्तीति गूढरहस्यम् ।

**भाषा—**पुष्प, पारा, मोती इत्येवमस्मै, शुद्धगन्धक, श्यामस्म, रजत और प्रवालभस्म येषु त्रयमस्मै भागसे लेकर कजलीक। वाराहीचन्दके स्वरससे तीनदिनतक भन्दनकर गोलाबनाय मुखाकर चारतहस्पष्टमें लपेट २-३ कपड़मिठी कर सुखनेपर शराबसम्पुटमें बन्दकर कपड़मिठीलगाकर सुखावे फिर लवणयत्रमें ४ पहरकी आचवे । स्वाश्शीतलहोनेपर निकालकर १०० नए शुद्धचिलोका चूर्ण और निरुध्य हीरेकीस्म सोलहवां भाग मिलावे । हीरेके अभागमें वैक्रान्तभस्म ५०० कर रखोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती मधु और पीपलकेसाय देनेसे शय, मन्दाग्न, श्वास, कास, अम्लपित्त, अरुचि, गुल्म, प्रीहा, उदररोग, प्रमेह, समस्तवातविकार, कामला, छूल, पथरी इनसबको नष्टकर तेज, कान्ति, आयु, बुद्धि और शक्ती बढ़ाताहै ॥ ६३७ ॥

**६३८ मृगाङ्गरसः ( राजाद्यः ) ( द्वात्रिंशः )**

रसभस्म त्रिभागं स्यात् पट्टभागं हेमभस्मकम् ।  
मृततारुञ्च भागेकं वज्रश्रेष्ठं चतुर्गुणम् ॥ २९२६ ॥  
गोमेदकं द्विगुणकं काश्मीरं सप्त भोक्तिकम् ।  
पद्मरागञ्च नीलञ्च राजावर्तं तथैव च ॥ २९२७ ॥  
तार्क्ष्यं सुपण्यैकान्तौ प्रवालं हेममाक्षिकम् ।  
वैद्युयं पुष्परागञ्च नागवह्नौ च तीक्ष्णकम् ॥ २९२८ ॥  
कान्तं गन्धं व्योमसत्त्वं त्रिभागं पृथक्पृथक् ।  
शतपत्ररसेनैव मर्दितञ्च दिनत्रयम् ॥ २९२९ ॥  
काचकूप्यां धिनिःक्षिप्य यत्रे विद्याधरे पचेत् ।  
कुङ्कुमाऽगुरुकस्तूरिमर्दितञ्च पृथक्पृथक् ॥ २९३० ॥  
खयातो राजमृगाङ्कोऽयं रोगराजं निवारयेत् ।  
पीनसं श्वासकाम्नी च पाण्डुकामलशीतलम् ॥ २९३१ ॥  
शोफोदराशोप्रहृणीवातपित्तहलीमकान् ।  
हीपनं वृष्यमायुष्यं श्रीकान्तिवल्लवधैर्यम् ॥ २९३२ ॥  
योजयेदनुकूलैश्चाऽथवाशौद्रकणांश्चितम् ।  
वातघ्नैरेव तत्पीनं घान्तिशीतनिवारणम् ॥  
भोजनं हेमपात्रे स्यादथवा कदलीदले ॥ २९३३ ॥

वै बि, र, क यो, बा, र पा, क्षये ।

**टि०—**र, क यो, बा, र पा, क्षये ।  
रसपारिजिते एकभाग स्वर्णभस्म त्रिधातु नाम च नवरत्नराजमृगाङ्गैति स्थापितम् ।

**भाषा—**पारदभस्म ३ भाग, सुवर्णभस्म ६ भा, रजतभस्म १ भा, हीरामय ४ भा, गोमेदभस्म २ भा, केसर और मोती ७-७ भा, माणिक्य नीलम, लाजवर्द, पद्म, कहरवा, वैक्रान्त, मृगा, सुपर्णमाक्षिक, लमनियां, पुतराज, नाग, वज्र, कोलाद, कान्तलोह और अप्रकृतस्य इनसबकी भस्में तथा शुद्ध गन्धक ५-५ भाग लेकर सबकी कजलीकर बमलकेफूलके रससे तीनदिनभन्दनकर मुखाकर ६-७ कपड़मिठी दी हुई आतशी-शीमीमें डालकर बालुकायत्रमें पकावे । स्वाश्शीतलहोनेपर

निकालकर केसर, अगर, कस्तूरी इनप्रत्येककी १-१ भावना देकर मुखापर रखोड़े । इनमेंसे १-१ रत्ती तत्तद्विषयहरानुपान-केसाय देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै । विशेषतः पीनस, श्वास, कास, पाण्डु, कामला, शीतपित्त, सुजन, आठ उदररोग, बवासीर, सङ्गुहणी, वातपित्त, हलीमक, इनसबको नष्टकरताहै । पीपल और मधुमेधास्यदेनेसे मन्दाग्न, नपुंसकता, अग्यायु, धी, कान्ति और बलके अभावको दूरकरताहै वातम अनुगानोंकेसाय देनेसे घान्ति और शीतको निवृत्त करताहै । इसका सेवन करने-वालेको सुवर्णपात्र अथवा केलेके पत्रमें भोजन देना चाहिये ६३८

**६३९ मृगाङ्गरसः ( राजाद्यः ) ( त्रयविंशः )**

मुखातारपविप्रवालशिलजं स्वर्णं निरुध्य पुनः,  
गन्धं पारदद्वङ्गणे विषयुते सम्प्रदयेद्वाङ्गैः ।  
माध्या नागलतादलादथयुवानोरिण गोलं पचे-  
यत्रे लावणिके दिने रसवरः सिद्धो मृगाङ्गाऽभिधः ॥  
मान्ये चोपणसर्पिषा मधुकणा मेदःक्षये गुल्महृत्,  
शुण्ठ्याऽज्जाजियुतोऽधिवह-  
मशितः सोऽयं विदोपजरे ।  
देयो मोहलपासु शोपजठरे वातुर्धिकादौ ज्वरे,  
मेहप्रीहमहद्वदाऽङ्गुरगदे श्वासे च पाण्डौ क्षये २९३५  
पाण्डुऽपस्मृतिपीनसे ज्वरवर्जां भूतेषु वालामये,  
रोगानेकविधाऽनुमानवशातस्तत्सौव्यकीऽयं रसः ।  
आयुः पुष्टिरलप्रसादकणो लाजव्यकान्तिप्रदो-  
नित्याऽभ्यासवशादन्तकलदो भूपैः सदा सेव्यताम् ॥  
र. शौ., राजयस्मणि ।

**भाषा—**मोती, रजत, हीरा, मृगा, मेनसिल, सुवर्णइतकी-भस्में, शुद्धगन्धक, पारा, सुहागा और पट्टभाग समभाग लेकर वारीकचुनेकर पारियन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर अद-रख, मकोय, पान और अहुताके रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर गोलाबनाय मुखाकर चारतह कपड़में लपेट २-३ कपड़मिठी देकर सुखनेपर शराबसम्पुटमें बन्दकर ऊपरसे २-३ कपड़मिठी देकर लवणयत्रमें एकदिनको मध्यम अग्निते पकावे । स्वाश्-शीतलहोनेपर निकालकर रखोड़े । इसमेंसे १ से ३ रत्तीतक औचित्य देखकर मरिच और पीपलकेसाय देनेसे नष्टकरताहै । इसके रोजाना सेवनसे आयु, पुष्टि, बल, लाजव्य और कान्ति बढ़तीहै ॥ ६३९ ॥

**६४० मृगाङ्गरसः ( राजाद्यः ) ( चतुर्विंशः )**

सूतं गन्धं वरदकुन्दौ तालकं ताम्रभस्म,  
स्वर्णं नागं गगनरसकं भोक्तिकं ताप्ययजम् ।

पतःसर्प त्रिदिनमृदितं रत्नमालाद्वयेण,  
मुञ्जा चेका हरति सकलाग्रोगराजादिरोमान् ॥

र. सं. राजयक्षमणि ।

भाषा—शुद्धगारा, गन्धक, शिपिक, मैनसिल और हरिताल, ताम्र, सुवर्ण, नाग, अज्रक, खपरिया, मोती, सोना-माखी और हीरा इनकीभस्में समभागलेकर पारेगन्धकी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर रतनजोतेके स्वरूपसे तीनरोज मर्दन-कर गोलाबनाय सुखाकर चारतह कपड़ेमें बांधकर १-२ कपड़-मिठी लगाकर सुखादे । फिर शराबसम्पुटमें बन्दकर भूरयन्त्रमें दोसरे कणोंकी आधे । स्वाहसीतलशेनेपर निकालकर रखजे । इसमेंसे १-१ रती तत्परोहारापुनानकेसाय देनेसे यह हृयप्रवृत्ति समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६४० ॥

६४१ मृगाङ्कुरसः ( राजाद्य ) ( पञ्चत्रिंशः )

सूताऽहिवज्रकनकं गन्धमीक्तिकुचिद्रुमम् ।  
लोहतापाऽकृतापीजं शतं चित्रकराणि ॥ २९३८ ॥  
मर्दयित्वा विचूर्ण्यऽथ तेनाऽऽपूर्यं घटाटकात् ।  
टङ्कणेनाऽकरीयसा लिम्पेत्सर्पां मुखानि तु ॥ २९३९ ॥  
चूर्णाक्तमाण्डनिहितायुष्मा गजपुटे पचेत् ।  
निर्गुण्ड्याद्राऽग्निपयसा भाषयेत्सतपाप्ययम् ॥ २९४० ॥  
रक्तिकाप्रमितं त्वेतत्पिपलीशोर्द्वैतसंयुतम् ।  
घृतोपणकयुक्तो धा रोगराजं निरुन्तति ॥  
सर्वरोगेषु वा दद्याद्दत्तं राजमृगाङ्कुरम् ॥ २९४१ ॥  
र. सं. र. क. यो. राजयक्षमणि ।

भाषा—पाग, नाग, हीरा, सुवर्ण इनकीभस्में, शुद्धगन्धक और सुकापिठी, मृगा, लोह, रजत, तावा, सोनामाखी और शङ्ख इनकीभस्में सब समभाग लेकर कजली बनाय १-२ रोज चित्रकमूलके कापसे मर्दनकर बड़ेकीडोंमें भस्के आकृते दूधमें पीसे हुए मुहांगसे इनका मुंह बन्दकर सुखाकर चूनापुनेहुए घरावोंमें बन्दकर ६-७ कपड़मिठी बजानर सुपनेपर गजपुटकी आंचद । स्वाहसीतलशेनेपर निकालकर निर्गुण्डी, अमरख और चित्रक केरवोंसे ७-७ भावनाए देकर सुखानर रखजे । इसमेंसे १-१ रतीहीमात्रा पीपल और मधु अथवा जी और मरिचके-साय देनेसे यह राजयक्ष्मको नष्टकरताहै । तनत्रोहद्वारापुनानके-साय देनेसे समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६४१ ॥

६४२ मृगाङ्कुरसः ( राजाद्यः ) ( पञ्चत्रिंशः )

माणिक्यं नीलमुप्यञ्च लघुनं स्फटिकं बलिम् ।  
गोमेदकं मरकतं मुविद्राहकपर्दकम् ॥ २९४२ ॥  
परिवेयं शङ्खनाभिं क्षुत्तमेकैश्चशाणकम् ।  
तुत्पकञ्च शिलां ताल रीतिक्राधातुपञ्चकम् ॥ २९४३ ॥  
ताम्रमण्डूरकान्ताऽयस्वतरे ताप्यं भुजङ्गम् ।  
पर्णं काञ्चनताप्यञ्च रसरस्य च सत्वरकम् ॥ २९४४ ॥  
अथोरसरसोप्यञ्च मुक्ता च विद्रुमन्ततः ।  
पेयान्तः घृतजं भस्म तुत्यं माषोत्तरं भवेत् ॥ २९४५ ॥

हेम सर्वांशकं सर्वसमानं गगनं धरम् ।  
पकीकृत्य ततः सर्वं भाषयेदातपे खरे ॥ २९४६ ॥  
गव्यक्षीरेक्षुरजनीतालद्वयमुमुस्तकम् ।  
शतपरिकुमायेक्षिवासापाठाफलत्रिकम् ॥ २९४७ ॥  
तामलस्यसूता शृङ्गी माङ्गी कट्टी कट्टिकम् ।  
विदारी कट्टीकट्टं कसेहं भुषयिक्ता ॥ २९४८ ॥  
कादम्यगोक्षुरं पत्रे जयन्ती भृङ्गराजकम् ।  
अगस्त्योलाङ्गली तालमूली मुण्डी च जीरकम् ॥ २९४९ ॥  
पञ्चमूली मोचरसः पलाशाऽङ्गि रंलाङ्गयम् ।  
श्रीमूलं वटशृङ्गाणि पञ्चकन्दश्च पात्रकम् ॥ २९५० ॥  
चातुर्जातशटीमांसीकुष्ठजातीकलोद्वयः ।  
शतपत्रैः पृथक् सप्त हिमकुङ्कुमयोः क्रमात् ॥ २९५१ ॥  
कर्पूरमृगनाभिभ्यां रसरजात्तमो भवेत् ।  
चलद्वयश्चपलया सितया मधुसविषा ॥ २९५२ ॥  
मेहाऽर्शं क्षयगुल्मोष्णवातत्र्याधुद्राणि च ।  
ग्रहणीदीपकुष्ठानि पाण्डुशलाऽम्बपित्तकम् ॥ २९५३ ॥  
कासश्वासाऽग्निमान्यश्च रक्तपित्तं भगन्दरम् ।  
ग्रीवाऽनिसारहृद्वाक्वाथवातक्षयगज्वरम् ॥ २९५४ ॥  
बलिं जरां स्त्रीपथैश्च रोगानन्याञ्चपेयम् ।  
अमितायु रंलं पुष्टिं वीर्यवृद्धिं दृढां दृशम् ॥ २९५५ ॥  
खीमुंसुपुत्रद्वयैश्च धियं प्रज्ञां स्मृतिं शुभाम् ।  
रसो राजमृगाङ्गोऽयं परं प्रोक्तः रसायनम् ॥ २९५६ ॥  
र. सं. र. यो. राजयक्षमणि ।

भाषा—माणिक्य, नीलम, सुखरान, लघुनिया, स्फटिक-मणि, गोमेद, पत्रा, सीप, वट, पीलीकीट्टी, गोमतीचक, शङ्ख नाभि, छोटें सरले इनतककी भस्में और शुद्धगन्धक ४-४ मांसे, शुद्धतृतीया १ मा, मैनसिल २ मा., हरिताल ३ मा., पीत लभस ४ मा., हीराभस्म ५ मा, तावा ६ मा, मण्डूर ७ मा., कान्तलोह ८ मा, रूपाभापी ९ मा., नाग १० मा, वट ११ मा, सोनाभापी १२ मा, खपरिया १३ मा, लोह १४ मा, खपर १५ मा, चादी १६ मा, मांती १७ मा, मृगा १८ मा, वैरान्त १९ मा, पारा २० मा, तुल्य २१ मासे इनसारी भस्में तथा सुवर्णभस्म घासे चतुर्था और अज्रभस्म सबकी बराबर देकर सबको एकदिन शुद्धमर्दनकर गोदुग्ध, ईशवा-रख, हन्दी, तगरपेटोला, नागरमोषा, मोषा, शतावर, पीङ्ग-आर, चित्रक अह्वा, पाठा, त्रिकला, मुंरिमांषा अथवा इला-यची, मिलेय, काकशर्मांषी, मारुती, कुट्टी, त्रिकट्ट, विदारी, कट्टीकन्द, कणक, सुन्दरी, वमारी, गोसम, लाल और सफेद बज्जल, जेन, अमरा, अमल्य, करिहारी ताम्बूनी, गोरगुमुरी, जीरा, पयमली ( मोरवेडा म० ), मोचल, पलाशी जड़की छल दोनों खोट्टी, बेरुहीज, वटकेट्टे, पदमन्द, निगंसी चातुर्जात, कपूर, जयामापी, कुट्ट जायल, गुणव इनपेचके स्वरण अथवा वाषोंमें और सफेदबन्दन, बेगर, कपूर, कन्दूरी इनपेचके इनमें ७-७ भावनाए देकर सुखाकर रखजे ।

इसमेंसे ३ से ६ रस्तीतककीमात्रा औचित्य देखकर पीपल, शकर, मधु और धौकेयाथ देनेसे प्रमेह, वसासीर, क्षय, सुलभ, उष्णमात, उदररोग, सङ्गहणी, कुष्ठ, पाण्डु, झूल, अम्बुगित, कास, श्वास, मन्दाग्नि, रक्तपित्त, भगन्दर, ग्रीहा, अतिमात्र, द्विचरी, वातरक्त, सवतरह्वेक्षण, ज्वर, बलीपक्षित, बुद्धापा इनसबको यह दूरकरताहै । हमेशा सेवनकरनेसे आयु, बल, पुष्टि, वीर्य, रष्टि, कान्ति, बुद्धि, स्मृति चेतन बढ़तेहैं ॥६४०॥

६४३ मृगाङ्करसः ( राजाघः ) ( सप्तत्रिंशः )

सुवर्ण रजतं कान्तं ताम्रं ध्रुवससीसकम् ।  
भस्मीकृत्य च तत्सर्वं कमचूढया कृतांशकम् ॥२९५७॥  
ध्यामसत्त्वमयं भस्म सर्वैस्तुल्यं प्रकलयेत ।  
कज्जलीं सूतराजस्य सर्वैरतेः समांशिकाम् ॥२९५८॥  
प्रद्राव्य लोहपात्रेऽथ पूर्वभस्मचयं क्षिपेत् ।  
फाष्टेनाऽऽलोड्य तत्सर्वं सद्रथं हि समाह्वेत ॥२९५९॥  
ततो विचूर्ण्य तत्सर्वं सप्तयारं विभाजयेत् ।  
आकुलीवीजसम्भूतस्यायलेहेन यत्नतः ॥२९६०॥  
रजं तमहमृपायां सर्वं संस्वेदयेच्छनैः ।  
इति मिद्धो रसेन्द्रोऽयं चूर्णितः पट्गालितः ॥२९६१॥  
कान्तपात्रस्थितो राधौ जलैस्त्रिफलसंयुतेः ।  
शुभाश्रयमितः प्रातर्दातन्यो मेहोरोगिणाम् ॥२९६२॥  
मृगाचारिमुनीन्द्रेण मेहवृहत्विनाशनः ।  
निर्दिष्टोऽयं रसो राजमृगाङ्क इति कीर्तितः ॥२९६३॥  
दीपनः पाचनो वृष्यो प्रहणीपाण्डुनाशनः ।  
तापघ्नो दधिकृतसर्वरोगघ्नो योगम्वृतः ॥३९६४॥  
र. र. स. २ को, र. मु. प्रमेहः २ को सिंहदाईल इति नाम ।

भाषा—सुवर्ण १ भाग, रजत २ भा, कान्तलोह ३ भा., ताम्र ४ भा, बह ५ भा., नाग ६ भा., इनसबकोभस्म, अत्र फलत्वमम् २१ भाग, शुद्धपरि और गन्धकीकजली ४२ भाग लेकर लोहके कण्डेमें कजलीको मलाकर पूर्वी समस्तभस्मोंको डालकर षाष्टे चलाकर एकीवीजरदे । इनको पण्टी विधानसे छानकर धारी पीसरर अष्टोलीजोंके फलसे १-२ रोज मदेनर गोलधनाय मुत्तार चारह छेदेकण्डेमें बाँड़कर १-२ कण्डमिठी बरदे । सूत्रनेपर शावगम्पुत्रेमें बन्दकर २-३ कण्डमिठीके मुत्तार भूपर्यधमें दोसर छण्डीसी आवदे । स्वाह-शीतकदोनेपर निमालर रगछादे । इसमेंसे ३ रस्तीकीमात्रा मधुमें मिलाकर कान्तेन्देहे पात्रमें रातभर रहनेदे । मुखमें त्रिलोके जलसेसाथ इसको छेनेसे यह तनाम प्रमेहका नट-करताहै । तत्तरीगहानुगाननेमाथ देनेसे मन्दाग्नि, नपुषट्ता, प्रद्वी, पाण्डु, ज्वर, अग्नि श्वादिदोगोंको नटकरताहै ६४३

६४४ मृगाङ्करसः ( राजाघः ) ( अष्टत्रिंशः )

मृताऽम्रांशं हिरण्यताम्रत्रिकान्ताऽपरमपुष्पाग्नान्,  
गीतस्त्रिदुमयस्रष्टनमुमानेण्डान्ममानान्हेन ।

एकीकृत्य मृगाङ्कमेव रक्के सम्मर्च्य तद्भावये,-  
चातुर्जातविदारिगोक्षुरगुह्योद्व्यालरम्भाजलैः ॥  
काचुरैः मुरसाहरीतवृषके गोक्षीरतः सप्तधा,  
भाव्यो भृङ्गशतावरीमुशलिक्कान्तरैः कृतं गोलकम् ।  
शुष्कं सम्पुटयोगतो लवणजे यन्त्रे पचेधामकं,  
मन्दं मन्दमथोऽथतार्यं सुहिमं सिद्धास्ततः पूजयेत् ॥  
कस्तूर्यां स च भावितश्च रसराणान्ना मृगाङ्को भवेत्,  
सेव्यो चलुमितः कणामगुमुतः सर्वानशेषाजयेत् ।  
यक्षमाणं ग्रहणां प्रमेहनचयं नाफोदरं क्षीजतां,  
अशोऽपिचक्रवातरोगनिग्रहाङ्गीर्णरगान्ध्रातुगान् ॥  
र. बो. राजयक्षमणि ।

भाषा—गाय, अत्रक, सुवर्ण, रजत, सुवर्कान्त, फोलाद, बह, नाग, सीप, प्रवाल, हीरा, वैरान्त और ताम्र इनसबको भरमें समभाग लेकर एकदिन राती मदेनर चातुर्जात ( तज, पत्रज, इलायची, नागकेसर ), विदारीकन्द, गोराक, गिलोय, चित्रक, केलराकन्द, कचूर, तुलसी, छेदेदयन्दन, अह्मा, गायरादूध, भंगरा, छानार और मुसली इनसबकोके यथास्तम्भ स्वरस अथवा काचोसे ७-७ भावनाए देकर गोला धनाय मुत्तार चारह कण्डेमें छपेट २-३ कण्डमिठी देकर सूत्रनेपर शावगम्पुत्रेमें बन्दकर एम्पहर लवणयन्त्रमें मन्द आवदे । स्वाहशीतकदोनेपर निमालर मिद्ध और साधुभोका पूजनर रगछादे । इसमेंसे ३-३ रस्तीकीमात्रा १० पीपल और मधुके साथ देनेसे राजयक्ष्म, मद्गहणी, प्रमेह, मृजन, उदररोग, क्षीणता, अग्नि, अक्षि, बालरोग, जोगीरर, धातुगन्धर, इन सबको यह नटकरताहै । इनके अधिक तत्तरीगहानुगाननेमाथ देनेसे समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६४४ ॥

६४५ मृगाङ्करसः ( राजाघः ) ( जनचत्वारिंशः )

कपिकमानां रसगन्धकीं हि  
स्वादेभमभस्मप्रभयः पितुक्ष्ण ।  
शुद्धस्य बहस्य पितुक्ष्ण तठ-  
त्तया च मुक्तां द्विचिपुप्रमाणाम् ॥२९६८॥  
पाठांशतष्टुणकं प्रद्या-  
तत्तये त्रिमयांश्च मृहाऽम्लयेतम ।  
तद्भावयेद् यस्माद्विनेन  
प्रमर्षं सर्वं दिनसप्तकेन ॥२९६९॥  
गोलं विधायाऽर्चकरं दिशोऽप्य  
मृगगतं तं रज्जु पाचयेद्भि ।  
शीतं समुक्ष्य तना रसेन्द्रो  
त्रिगुण्यं घायां यत्तमपाये ॥  
ह्यस्तस्याभाये रजतस्य पात्रे

नाऽन्यस्य पात्रेषु निवेदनीयः ॥२९७०॥

अथ राजमृगाङ्काऽऽन्या नगाराजस्य पातकः ।  
पर्यं पूर्वनिषिधना कारयेन्मतिमान् भिरङ्गाऽऽ ७३॥  
२ र. मु. रम ग २. क. यो. राजयक्षमणि ।





चूर्णयेत्तदनु हेमपत्रिकां सूतमस्म विपगन्धमौक्तिकम् ।  
वृद्धितश्च परिमर्दयेत्ततश्चित्रकाऽऽर्द्रकरसेन यत्नतः ॥  
पूर्णचन्द्रवदयं विपाचितो जायते मृतकजीवनो रसः ।  
पूर्णचन्द्रवदयश्च योजितो रोगहा भवति वीर्यपुष्टिदः ॥  
र. दी., र., सर्वरोगे ।

टि०—अथ पाठस्याऽऽशयमनुज्ञां रसाञ्जनं स्वकगोलकल्पनयाऽन्य.  
पाठो ग्रन्थिनादेय इति रहस्यम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, वज्रनाग, गन्धक, कौडी और नाममस्य,  
सब समभाग लेकर सबकी नीलवर्णकन्वीकर चित्रककेकापसे  
१-२ रोज़ मर्दनकर कल्क बनाकर चारभागकरे । एकभागको  
शरावमें थिछाकर ऊपरसे कल्कके बराबरवज्रनाग सुवर्णका बारीक  
पत्र रख दूसरे शरावसम्पुटसे बन्दकर २-३ कपड़मिडीवेकर  
किछी ठीकरेमें रखदे । ऊपरसे बारअहुल ताज़ी राखको जमाय  
एक पहकी साधारण आचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर धीरेसे मुद्रा  
उपाङ्कर कल्कका दूसराभाग पूर्ववत् जमाकर दूसरी आचदे ।  
ऐसेही तीसरी और चौथी आचदे । ऐसाकरनेसे सुवर्णपत्रकी  
भस्म होजायगी और शरावमें सफेदरुणकी पारदभस्म मिलेगी  
उसे पुरचकर अलग रखले फिर सुवर्णभस्म १ भा., पारदभस्म  
१ भा., शुद्धवज्रनाग ३ भा., शुद्धगन्धक ४ भा., मौक्तिकपिष्टी  
५ भाग लेकर चित्रककरसे १-२ रोज़ मर्दनकर पूर्णचन्द्रसकी  
तरह पकावे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखलोडे । इसको  
पूर्णचन्द्रसकी तरह देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकर वीर्यकी  
पुष्टिकरताहे ॥ ६४८ ॥

### ६४९ मृतकन्दर्पजीवनरसः

रसभस्माऽञ्चकं चङ्गं तीक्ष्णं कस्तूरिकाञ्जनम् ।  
जाकल्लं कं लवङ्गञ्च दरदं जातिपत्रिका ॥ २९८८ ॥  
जातीफलं धूर्तयीजं सममेकत्र मर्दयेत् ।  
ताम्बूलौस्वरसेनैव तथाऽऽर्द्रकरसेन वै ॥ २९८९ ॥  
धर्तुरुप्रमिता मात्रा लेहयेन्मधुसर्पिषा ।  
शृतशीतं पयः पीत्वा ताम्बूलं मक्षयेत्सुधीः ॥ २९९० ॥  
मासमात्रप्रयोगेण मृतकन्दर्पजीवनम् ।  
रमेद्रामाशतं नित्यं कामतुल्यो नरो भवेत् ॥ २९९१ ॥  
सतताभ्यासयोगेन वृद्धोऽपि तरुणायते ।  
जीवेद्वर्षशतं साधं वलीपलितवर्जितः ॥ २९९२ ॥  
सर्वान् रोगान्निहन्त्याशु नाऽत्र कार्या विचारणा ।  
तत्तद्रोगाऽनुपानेन सर्वरोगेषु योजयेत् ॥  
स्निग्धकाऽत्र भोजयेन्नित्यं तैलाऽम्लं वर्जयेत्सुधीः ॥  
र. चं., वाजीकरणे ।

भाषा—पारा, अञ्चक, चङ्ग और फोलादभस्म, कस्तूरी,  
मुग्गभस्म, अकलधरा, लौंग, दिगारिफमस्य अथवा विशेषपुष्टि-  
युक्त, जावित्री, जायफल, शुद्धपत्रवेचीज सब समभागलेकर  
बारीकचूरेकर पान तथा अदरगरैरामे १-१ रोज़ मर्दनकर  
३-३ रतीशे मोतियां बनाकर रखलोडे । इनमेंसे १-१ गोली  
मधु और पीनेसापलेकर अपोया दूध पीकर ताम्बूलमज्जकरे ।

इसतरह एकमहीनेके प्रयोगसे नामर्दमी मर्दहोकर अनेक स्त्रियों-  
केसाय रमणकरनेकी शक्तियुक्त होजाताहे । इसके नित्यर  
अभ्यासकरनेसे बुद्धिमी वलीपलितवर् मिश्रुक्त तथा मवरोगोंसे  
रहितहोकर १०० वर्षतकजीताहे । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाय देनेसे  
यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहे । इसमें स्निग्धजत्रका भोजन  
और तैल खटाईसे परहेज करे ॥ ६४९ ॥

### ६५० मृतकजीवनी गुटिका

पारदं सारलौहञ्च कान्तलौहसमन्वितम् ।  
माक्षिकस्याऽपि सत्वञ्च सत्त्वं गगनसम्भवम् २९९४  
पूतानि समभागानि मर्दयेच्च प्रयत्नतः ।  
निचुलोद्भवतोयेन गोलकं कारयेत्ततः ॥ २९९५ ॥  
नवाहुलप्रमाणे च मृपागमेंऽथ तं न्यसेत् ।  
निर्गुण्डौ काकमाचीञ्च गोजिह्वां हुग्धिकान्तथा ॥  
गृहकन्यामधूकञ्च सैन्धवञ्चोपरि न्यसेत् ।  
स्वेदयेत्पुटयोगेन सा पिण्डी रुढतां प्रजेत् ॥  
स्थापिता मुखमध्ये तु वीर्यस्थैर्यकरी भवेत् ॥ २९९७ ॥

र. र., धं., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा, फोलाद, कान्तलोह, माक्षिक और  
अञ्चकसब येसब शुद्ध और समभाग लेकर जलवेतोरसे मर्द-  
नकर गोलाबनाय १ अहुल प्रमाणकी मृपामें इसे रख निर्गुण्डी,  
मकोय, बनगोमी, दूधी, पीकुंजार, महुआ, सैन्धव, येसब सम-  
भाग लेकर बारीकचूरेकर ठिकियावे ऊपर रख मृपाका सम्पुट  
बनाकर भूयरयमें बालुकासे दबाकर कुकटपुटसे स्वेदनकरनेसे  
वह गोली रुढ होजायगी । इसे मुंहमेंरखनेसे वीर्य स्थिरहोताहे ॥

### ६५१ मृतमाणदवीरसः

रसं गन्धकं दङ्कणं वत्सनामं  
सर्पं मर्दयेदूर्तयीजेन यामम् ।  
ततो वत्सनामेन हेमश्च धीजे  
रसे भावयेच्च त्रिवारं त्रिवारम् ॥ २९९८ ॥  
कटुत्र्यादिजैः पञ्चवारं ततः स्या-  
दयं सुतराजो मृतप्राणदायी ।  
ज्वरे मन्त्रिपाते ज्वरे वृत्तने वा  
महाक्षेप्परोगे च गुञ्जाप्रमाणम् ॥ २९९९ ॥  
पयः पायसं दाधिकं तक्रमकं  
सिता वा नये हि ज्वरे चाऽऽर्द्रनीरे ।  
ज्वरे चाऽतिसारे घनद्रावयुक्ते  
ग्रहण्यशलां शौद्रयुक्तं मित्ताऽऽल्यम् ३०००  
चले आयुगे त्रिकटुमिपीतं  
प्रक्रम्येऽपवाहकं एकदायाते ।  
अपस्मारमुन्मादायातं निहन्ति  
प्रयुक्तः मित्तापञ्चमि धूर्तयीजेः ॥ ३००१ ॥

वि. पा, नि र., रगायन, र. र. दो, र. मो., दो. (मृतस  
जीवनी), रसायनं, र. चं., वै. वि, र. पा, एण मुन्मत्ति

नाम तत्र त्रिवारं त्रिवारमित्यस्य स्थाने दन्तिवारा त्रिवारमिति पाठः ।

**भाषा—**शुद्ध पारा, गन्धक, गुहागा और बटनाग समभाग, धतूरेकेबीज सक्कीवरावर, सक्की नीलवर्ण कज्जलीकर बटनाग, और धतूरेकेबीज इनकेरसोंसे ३-३ रोज मर्दनकर त्रिकटुके रससे ५ दिनतक मर्दन करनेसे यह रस (मृतप्राणदायी) तैयार होता है । इसमेंसे १-१ रसी उचितानुपानसे लेनेमें ज्वर, सन्निपात, नवीनज्वर, महाक्षेपमारोग बेसब नष्टहोते हैं । दूध, स्त्रीर, बहुक्षेपदार्थ, छाछ, चावल, शकर येसबवस्तुमेंसे । नवीनज्वरमें अदरखेकरसमें, ज्वर और कतिसारमें नागरमोथेकेकाडेसे, मद्गुणी और बवासीरमें मधु तथा शकरकेसाथदे । वातज्वरमें त्रिकटु और चित्रककेसाथ, प्रकम्प, अपघातुक, एकाग्रवात, अप स्मार, उन्माद इनमें शकर और ५ नग धतूरेकेबीजोंकेसाथदेनेसे इनसबको यह नष्टकरता है ॥ ६५१ ॥

### ६५२ मृतसंजीवनरसः ( प्रथमः )

गरलाऽमृतसीभागशिलातापीजतालकम् ।  
नलेताजालिपत्राणि गन्धहिल्लुमागधीः ॥ ३००२ ॥  
श्लक्ष्णाऽजकिरिचूडालशिखिमत्स्योत्पमायुभिः ।  
भाययित्वा घटीः कुर्याद्भुसर्पसप्रतिभाः ॥ ३००३ ॥  
नागघृहीवृद्धायेस्तुलसीपत्रसम्भवेः ।  
ऋतुवेररसे वाऽपि सन्निपाते प्रदापयेत् ॥ ३००४ ॥  
ध्वासापुपत्र्याऽऽविष्टे गतसम्भेऽहरेष्वेतेन ।  
मृतसंजीवनः सोऽपि सजीवयति मानवम् ॥ ३००५ ॥  
वृ क., सन्निपाते ।

**भाषा—**नालेतापकाशहर, शुद्धबटनाग, गुहागा, मैसिल तोनामासी, हरितालभस्म अथवा रममाणिक्य, लार, पारद भस्म अथवा रसतन्दूर, जावित्री, शुद्दगन्धक और शिगारिक, पीपल सब समभाग लेकर बारीक बर्णकर रीछ, बट्टा, सुअर, सुर्गा, मोर और मछलीके पिणोंसे १-१ भावना देकर छोट सरसोंके बरार गोलीयां बनाकर छायाशुष्ककर रणोके । इनमेंसे १-१ गोली पान, तुलसी और अदरक इनमेंसे किमी-एकके रससे देनेसे आमादि उपद्रवयुक्त होकर सम्मानटोमर्दो और यत्किञ्चित् प्राणनाश बारी रहगयाहो इतकरहक सन्निपातकी नष्टकर मनुष्यको फिरसे जीवन्त करता है ॥ ६५२ ॥

### ६५३ मृतसंजीवनरसः ( द्वितीयः )

गन्धकः गगनं तालं माक्षिकञ्च मनःदिष्टा ।  
पारदध्वाऽभगन्धा च नेपालं टङ्गुणं तथा ॥ ३००६ ॥  
मुषया रोहिणी चैव फटुकाऽलातुर्याजकम् ।  
मरिचं मागधी चैव मधुकस्य च र्याजकम् ॥ ३००७ ॥  
यहताग्रयिर्मातञ्च शमया घरणोफलम् ।  
पञ्चशरसुतं चैव समभागानि योजयेत् ॥ ३००८ ॥  
खल्यान्दे विनिःशित्य कारयद्द्वारसद्वयेः ।  
निष्पज्ज्मरीचधूम्रमानुलुङ्गमेन च ॥ ३००९ ॥

फटुकाऽर्कसैश्चिञ्चातामूलोत्थै रसेर्मुहुः ।  
वह्निना सैन्धुवारैश्च रसे धीमाण् विमयेत् ॥ ३०१० ॥  
खलुणमाण्डे विनिःशित्य वालुकागी विषाचयेत् ।  
यत्किमप्रविधानेन ब्राह्मयेत्स्यान्नशीतलम् ॥ ३०११ ॥  
करण्डशीशके स्थाप्यं रक्षयेत्सम्युत्पुम्पुम् ।  
कालसंहरणं नाम पूजयेद्दश्वरं शिरम् ॥ ३०१२ ॥  
आर्द्रकस्वरसेनेय गुञ्जास्यं प्रदापयेत् ।  
मृतसंजीवनां नाम रक्षाऽप्यं भैरवोदितः ॥ ३०१३ ॥  
प्रलयानिलसंहारं यथा मेयाऽनिलेन च ।  
तथैव सन्निपातश्च नष्टो भवति तक्षणात् ॥ ३०१४ ॥  
मृतपत्रकाष्ठतुल्योऽपि योष्यते शीघ्रमद्भुतम् ।  
प्राणानेयं प्रसुतेभ्यः पुनरायतयेद्भुवम् ॥ ३०१५ ॥  
विषोपविषसहृत्तरिभ्यासादिदोषकैः ।  
उन्मादप्राणितसम्भूते मूर्च्छातैस्तु प्रयोजयेत् ॥ ३०१६ ॥  
कासे भ्यासे महाशूले पक्षाघाते जलोदरे ।  
अनुपानविरोपेक्ष सर्वांश्चाशयति क्षणात् ॥ ३०१७ ॥  
र. क. यो. सन्निपाते ।

**भाषा—**शुद्ध गन्धक, अर्धक, हरिताल और तोनामासी-बीभस्म, शुद्ध मैसिल और पारा, असगन्ध, जमालगोटा, भुनागुहागा, काजीपत्र, रोहण, कुट्टी, कङ्कीर्णमरीकेबीज मरिच, पीपल, मधुमात्रिकी, बज और ताप्रभस्म, बहुश और हरेकीछाल भुईंकोहरा, यव, तिल, पलाश, अगामाग, सेटुण्ड इन-पाकोंकेसार, येसर चीजें समभाग लेकर बारीकपूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमेंमिलाकर करेला, नीम, जमीरी, धतूरा, बिजोरा, कुट्टी, आक, इमली, पान, चित्रक, ताम्बा इन्प्रत्येकके रसोंकी ३-३ भावनाएँ देकर १-७ बपकिमिदी-दीहुरें आतवीचीसीमें भर मुदबन्दर बातुनायन्त्रमें रसहर ५ पहरकी क्रमामि देकर पकावे । स्वात्रतीतलहोमेपर भरको बलि देकर निकालकर काचकी चीसीमें रसओके । शिषाका पूनकर इनमेंसे १-१ रसकी मात्रा अदरक रसकेसाथ देनेसे सन्निपात लक्षण नष्टहोता है । जो सन्निपाती मुर्च्छीताह निष्ठ और अकृच्छर धातुहीनहोतयाहो वहभी इससे देनेसे शीघ्रसम्भवाको प्राप्तहोताहोता है । विष, उपविष अथवा अभिन्याय, उन्माद, आन्ति प्रशुतिमें मूर्च्छितहो देनेसे सोएहुमर्दो तह फिरसे सञ्ज्ञाको प्राप्तकरताहो । अनुपानविरोपेक्ष काग, थाय, महादन्त, पलाश, जलोदरप्रशुति समस्ततोषोंका यह नष्टकरता है ॥ ६५३ ॥

### ६५४ मृतसंजीवनरसः ( तृतीयः )

म्लेच्छस्य भागाद्यत्वारो जैपालस्य त्रया मताः ।  
द्वौ भागौ टङ्गुणस्यैव भागेकममृतस्य च ॥ ३०१८ ॥  
तन्मयं मर्दयेच्छूणै नृष्कं घामं मिषग्वरः ।  
ऋतुषराऽम्बुना देवो म्यायचित्रकमेग्वयः ॥ ३०१९ ॥  
गुञ्जाद्वयमितस्तापं हरन्त्येव विनिःशयः ।  
घनसारिण मारोण चन्दनेन पिडेयनम् ॥ ३०२० ॥

विद्व्यात्कास्यपात्रे च सेचयेद्रोगिणि म्रियक ।  
 शाल्यत्रं तक्रसहितं भोजयेद्विभुसंयुतम् ॥ ३०२१ ॥  
 सन्निपाते महाघोरे त्रिदोषे विषमज्वरे ।  
 आमवाते घातशूले गुल्मे ग्रीहि जलोदरे ॥ ३०२२ ॥  
 शीतपूर्वे दाहपूर्वे विषमे सततज्वरे ।  
 अग्निमान्द्ये च वाते च प्रयोज्योऽयं रसेश्वरः ।  
 मृतसंजीवनो नाम विख्यातश्च रसायने ॥ ३०२३ ॥  
 र सं, वै क, नि. र, र. चं, रसायनं, र. सु., मै र, र. म.,  
 व. रा., र. (मा.), टो., र. का., यो. म., ना वि., रसायनप.,  
 ज्वराधिकारे ।

दि०—अनन्तेश्वराने वैदित्वात्तुर्गुणं वैदित्वात् हिङ्गुलं गुणं ।

भाषा—ताम्रमस ४ भाग, शुद्धजमाल्मोटा ३ मा, पुनाछुहाणा २ मा., शुद्धबछनाग १ भाग लेकर सबको एकपहर तक इकट्ठे मर्दनकर रखछोढ़े । इसमेंसे २-२ रत्तीकी मात्रा अदरकके रसमें त्रिफल, चित्रक और सैन्यबका चूर्ण डालकर लेनेसे यह ज्वरको तत्क्षण नष्टकरता है । सन्निपाती मृतप्राय होगयाहोतो एक अथवा दोमासेकी मात्रा देना । दाहमाल्म-होनेपर सफेदचन्दन, कपूर और मक्खनका लेपकरना, काँसेकी कटोरीसे हाथपैरोंको घिसवाना, सिरपर ठंडेलकरी घारा देना । मूल रोगनेपर पुनाछुहाणोंकाभात छाछकेसाथ देना । प्यास रोगनेपर ईखकारसप्रवृत्ति शीतद्रव्यदेना । महाघोरसन्निपात, त्रिदो-पोल्यरोग, विषमज्वर, आमवात, घातशूल, गुल्म, ग्रीहा, जलो-दर, शीतपूर्व अथवा दाहपूर्व विषमज्वर, सततज्वर, मन्दाग्नि, असाध्य वातरोग इनसबमें इसरसका प्रयोग संभालकर करना ६५४

### ६५५ मृतसंजीवनरसः (चतुर्थः)

रसगन्धौ समौ ग्राह्यौ सूतपादं विपं क्षिपेत् ।  
 सर्वतुल्यं मृतञ्चाऽयं मर्द्यं धुस्वरजं द्वयैः ॥ ३०२४ ॥  
 सपोष्पाक्ष द्वयं यामं कपायेणाऽथ भाषयेत् ।  
 घातक्यतिविषा मुस्तं शुण्ठीजीरकयालकम् ३०२५ ॥  
 यमानी धान्यकं विल्वं पाठा पथ्या कणाम्बिता ।  
 कुटजस्य त्वचं याजं कपित्थं दाडिमं बलाम् ॥ ३०२६ ॥  
 प्रत्येकं कर्पमात्रं स्यात्कृष्टितं कपायेणैरलैः ।  
 चतुर्गुणं जलं दत्त्वा यावत्पाटाऽवशेषितम् ॥ ३०२७ ॥  
 अनेन त्रिदिनं भाव्यं पूर्वाह्नं मर्दितं रसम् ।  
 रुद्धा तद्रात्रिकायान्ये क्षणं मृदग्निना पचेत् ॥ ३०२८ ॥  
 मृतसंजीवनो नाम चाऽस्य गुञ्जाचतुष्टयम् ।  
 दातव्यमनुपानेन चासाध्यमपि साधयेत् ॥ ३०२९ ॥  
 पदप्रकारमतीसारं साध्याऽसाध्यं जयेद्विषम् ।  
 नागराऽतिविषामुस्तं देवदारुकणा वचा ॥ ३०३० ॥  
 यमानी घालकं धान्यं कुटजत्वग्गरीतकी ।  
 घातकीन्द्रयौ विल्वं पाठा मोचरसं समम् ॥  
 पूर्णितं मधुना लेहमनुपानं सुखावहम् ॥ ३०३१ ॥  
 र. सं., र. वि. र. र, र. यो. व, नि. र, रसायनं, यो. र, ।

र को., टो., र. र दी., र. क., वि. र, वि. र. म, र. का, यो. म., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ तोला, शुद्धबछनाग ३ मासे, अक्रमसम सबकी बराबर लेकर नीलवर्णकजलीकर घट्टा और अन्धाहलीके स्वरसे १-१ पहर मर्दनकर घावड़ी, अतीस मोधा, सोंठ, जीरा, सुगन्धवाला, अजवाइन, धनिया, बेलगिरी, पाठा, हूँ, पीपल, कुटजकीछाल और बीज, वैच, अनार, बला येसव १-१ कर्प लेकर जबकुट्टकर चौने पानीमें डालकर चतुर्थांशवशेष छात्रकर रखते, इससे तीनदिन-तक मर्दनकर गोलाबनाय द्वारासम्पुष्टमें बन्दकर बालुकायान्यमें द्रुतहोनेतक पकावे । स्वादुशीतलहोनेपर निकालकर रखछोढ़े । इसमेंसे ४-४ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे ६ प्रकारके साध्य अथवा असाध्य अतिमारोंको यह नष्टकरता है । सोंठ, अतीस, नागरमोधा, देवदारु, पीपल, वैच, अजवाइन, सुगन्ध-वाला, धनिया, कुँयाकीछाल, हूँ, धावड़ी, इन्द्रजव, बेलगिरी, पाठा, मोचरस सब समभाग लेकर घारीक चूर्णकर ६ मासे मज्जेकेसाथ ऊपरसे चढ़ानाचाहिये ॥ ६५५ ॥

### ६५६ मृतसंजीवनरसः (विस्वीविधेः) (पञ्चमः)

टङ्कणं माक्षिकं शुण्ठी पाण्डे गन्धकं विषम् ।  
 गरलं समभागैर्न सर्वेषां हिङ्गुलं समम् ॥ ३०३२ ॥  
 मर्दयेज्जम्बै श्रवै र्धटो कार्पाय प्रयत्नतः ।  
 श्वेतसर्पपतुल्या च मृतसंजीवनो रसः ॥ ३०३३ ॥  
 विस्वीं नाशयत्याशु दध्यधौ पथ्यमाचरेत् ।  
 त्रिदोषोत्थमतीसारं हन्त्युपद्रुतसंयुतम् ॥ ३०३४ ॥  
 मै. र., र. सु, विस्वीचिकारे ।

भाषा—पुनाछुहाणा, सोनामाखी, सोंठ, शुद्ध पारा, ज्वर, और बछनाग, सर्पा जड़ येसव समभाग, शुद्ध हिङ्गुल, सबकीबराबर लेकर नीलवर्ण कजलीकर घट्टा और नीलीके रसमें मर्दन सफेदसोखीबराबर गोल्याबनाकर रख छोढ़े । इसमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे ईजा, उपद्रुतसहित त्रिदो-सारको यह नष्टकरता है मूलरोगनेपर पथ्य दध्यधौ भाग देना ॥

### ६५७ मृतसंजीवनरसः (षष्ठः)

रसनागौ समभागौ सम्मर्द्य समेन शिलाजम्बु ।  
 निक्षिप्य पञ्चसुत्रे जारयेत्स्वेदयेत्पुटत्रयम् ॥ ३०३५ ॥  
 एकत्र तद्य सर्वं मूद्रायाज्जाह्लाऽम्मसा त्रिदिनम् ।  
 पश्चान्तामान्यपुटे दग्धा यद् भाषयेथ क्रमात् ॥  
 कन्याभृद्भूमयूरकमागधितानागरे विडङ्गश्च ।  
 मधुकपलशशयीजं याजिभयलाहलमुशालिका ॥  
 स हि सर्वमन्निपाते लकुचाम्मसा मन्थये दैवम् ॥  
 यहत्रयमाशोऽसी दिनत्रयेणैव निजयेद्रोगम् ॥ ३०३६ ॥  
 तत्तत्स्यादनुपानं चतुराऽतीतिश्च निजयेद्वायुम् ।  
 अष्टगुणशिलाजम्बुशेषपि हरति गुल्मजातम् ॥



२ डाल्ताजाय और संभालके ताजेइधेसे चलाताजाय । इन-  
दोनोंकीसफेदमसहोनेर घूलेहमे उतार पागकी बराबर राह-  
नाभिनीभसम डालर एकपहर मर्दनकर शुद्धशिरिक और  
पारा १-१ भाग क्या डालर सबकी बराबर लहसुनकाकल्क  
मिलाकर यहातक मर्दनकरे कि मूसजाय, फिर कपड़ेमें छानकर  
शीशीमें रखओगे । इसमेंसे १ या २ रत्ती की मात्रा अदरखके  
रसमें मिलाकर जिह्वामुद्रिणातमें जीभपर मलनेसे जिह्वास्तम्भ,  
हनुमद, मुहकी चिपचिपाहट, मन्थास्तम्भ, हनुस्तम्भ, धिरका-  
जकड़ना, लकवा येसन नष्टहोतेहैं । यदिरोगकीप्रगल्भाहो तो  
एकरसी अदरखकेरसमेंमिलाकर खानेकोदेनेसे सूखी, चेष्टा-  
रहित और शुष्की जिह्वाकेसदृश रगवाली जीभ प्रकृत्यापन्न  
होजातीहै ॥ ६५५ ॥

### ६६० मृतसर्जीवनरसः (नमः)

पारदं सुमृतं तात्रं ताप्यं मौक्तिकमेव च ।  
हेमवज्रमधालञ्च सर्वमेकत्रचूर्णयेत् ॥ ३०५७ ॥  
चतुर्धाशु शुद्ध्यग्नये दत्त्वा कृप्यां सुधीः पचेत् ।  
स्तावेद्दुष्काष्ठयश्चाऽस्य यथाऽलमथाऽपि वा ॥ ३०५८ ॥  
पिप्पलीमधुना चैवं पिप्पलीरुण्डकेन वा ।  
शुद्धशुण्ठिकया वाऽपि पञ्चकोलेन वाऽथवा ॥ ३०५९ ॥  
मृतसर्जीवनी नाम शिरोरोगं निरुन्तति ।  
अनुपानभेदेन सर्वशीर्षामयापहः ॥ ३०६० ॥  
र. मा., ना. वि., शिरोरोगे ।

भाषा—पारा, तावा, सोनामाखी, मोती, सोना, हीरा,  
सूया इनकीमस्में समभाग, शुद्ध्यग्न्यङ्कमवसे चतुर्धाशु डालकर  
कज्जलीकर आतशीशीर्षां में भर वालुकायन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि  
देकर पकावे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रखओगे । इसमेंसे  
२ रत्ती अथवा योग्यतानुसार पीवल, यधु अथवा पीवल, शकर  
अथवा गुड, सोंठ अथवा पञ्चकोलेकाप देनेसे तमाम शिरोरोग  
दूरहोतेहैं । और अनुपादभेदसे यह अवान्तर शिरोरोगोंकोभी  
नष्टकरताहै ॥ ६६० ॥

### ६६१ मृतसर्जीवनरसः (दशमः)

शुद्धं सृतं विपं गन्धं हिङ्गुलं कटुरोहिणीम् ।  
भृङ्गराजस्य नीरेण मर्दयेद्विषसन्धयम् ॥ ३०६१ ॥  
मापमात्रां वटीं कुर्याद्विकल्पाऽनुपानतः ।  
देयो हि मृतसर्जीवां रसोऽयं सन्निपातनुत् ॥ ३०६२ ॥  
व. रा., वै चि., वा., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, यजनाग, गन्धक और शिरिक, कटकी  
सब समभागलेकर कज्जलीकर भग्नेकेरखे ३ रोज मर्दनकर १-१  
मासोकीगोलिया बनाकर रखओगे । इसमेंसे १-१ गोली अदरख  
के रसकेसाथदेनेसे यह सन्निपातकी दूरकरताहै ॥ ६६१ ॥

### ६६२ मृतसर्जीवनरसः (एकादशः)

मरिचं दृङ्गणं सृतं माक्षिकं कान्तलोहकम् ।  
अन्नकञ्च समांशानि वह्निस्वायेन मर्दयेत् ॥ ३०६३ ॥

काचकृप्यां विनिक्षिप्य वालुकायत्रपाचितम् ।  
मरीचाऽद्रकमयुकं द्विगुञ्जं भक्षयेत्सदा ॥ ३०६४ ॥  
पच्यं क्षीरोद्वनञ्चैव तापे दद्यात्सार्करम् ।  
प्रातःकाले तु सेवेत सद्यः स्वेदं विमुञ्चति ॥ ३०६५ ॥  
व. रा., स्वेदपिते ।

भाषा—मरिच, शुद्ध सुदागा और पारा, सोनामाखी,  
कान्तलोह और अन्नकमस्य येसब समभागलेकर वारीकज्जली-  
बनाकर चित्रकके वायसे १-२ रोजमर्दनकर मुलाकर कपड़-  
मिठीकीहुई आतशीशीर्षां में भर वालुकायन्त्रमें ४ पहरपकावे ।  
स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रखओगे । इसमेंसे २-२ रत्ती  
मरिच और अदरखकेसाथ देनेसे अत्यन्त पत्तीनेका निकलना  
बन्दहोताहै । दाहहोनेपर दधमात दे । प्वरहोनेपर दाहदेसाथ  
दधमात दे इसकाप्रयोग सुषहमें करे ॥ ६६२ ॥

### ६६३ मृतसर्जीवनीकल्पः

चित्रकेण तथा पूर्वस्तथा शुण्ठीविङ्गुलतः ।  
लोहेन भृङ्गराजेन वलयान्निम्पपञ्चकैः ॥ ३०६६ ॥  
स्तादिरेण च निर्गुण्ड्या कण्टकायाऽथ चासकात् ।  
यपामुवा तद्रसैर्वा भायितो वटिकीकृतः ॥ ३०६७ ॥  
चूर्णं घृतेर्वा मधुना शुद्धाद्यं धारिणा तथा ।  
ओं हूं स इतिमन्त्रेण मन्त्रितो योगराजकः ॥  
मृतसर्जीवनी कल्पो रोगे मृत्युञ्जयो भवेत् ॥ ३०६८ ॥  
आ. पु., रसायनाधिकारे ।

भाषा—चित्रक, सोंठ, विङ्गुल, लोहमस, भगरा, बला,  
निम्पपञ्चात्र, खैरसीछाल, संभाल, भटकटैया, अहसा, इतसिद  
येसब समभागलेकर वारीकचूर्णकर इनप्रत्येकके स्वरस अथवा  
वायसे ३-३ भावनपे देकर ३-३ मासकी गोलिया बनाकर  
अथवा चूर्णरूपमें रखओगे । इसमेंसे २-३ मासोकीमात्रा मधु,  
शुद्ध अथवा जलप्रथति अनुपादकेसाथ “ओं हूं स” इसमन्त्रसे  
१०८ बार अभिमन्त्रितकर लेनेसे समस्तरोगोंको यह नष्ट-  
करताहै और आयुको बढ़ाताहै इसीलिये इसका मृतसर्जीवनी  
कल्प नाम रखनागर्हाहै ॥ ६६३ ॥

### ६६४ मृतसर्जीवनीवटी (प्रथमा)

कटुतुम्बी काकमाची निर्गुण्डी च कुमारिका ।  
गोजिह्वा सैन्धवं गुग्गा हार्द्रकञ्च समंसमम् ॥ ३०६९ ॥  
पिष्ट्वा तेन प्रलेप्तव्या मूषा सर्वाऽहुलाद्यधि ।  
पारदं व्योमसत्त्वञ्च कान्तं तीक्ष्णञ्च मुण्डकम् ३०७०  
ताप्यसत्त्वञ्च तुल्यांशं सर्वं सञ्चूर्ण्य मर्दयेत् ।  
दिनं जम्बीरञ्च द्रविस्तम्बपार्यां विनिक्षिपेत् ॥ ३०७१ ॥  
आन्ध्याऽऽलेप्य कल्केन चान्धयित्वा विशोषयेत् ।  
करीपाग्नौ विचारत्रै पुटे पक्त्वा समुद्धरेत् ॥ ३०७२ ॥  
पुनः प्रलिप्तमूषायां क्षिप्य कृद्धा पुटेत्ततः ।  
इत्येवं दशमूषामु प्रलिप्तामु विपाचयेत् ॥ ३०७३ ॥

जायते गुटिका दिव्या मृतसञ्जीवनी परा ।  
 वक्त्रे शिरसि कण्ठे वा कर्णे वा धारिता करे ३०७४  
 हेप्ता सुषेष्टिता सम्यग्व्यस्तम्भकरी परा ।  
 घलीपलितखालित्ये मृत्युशङ्काविनाशिनी ॥ ३०७५ ॥  
 वर्षमात्राप्र सन्देहो जीवेद्वयशतत्रयम् ।  
 शुद्धगन्धपलेकान्तु गवां क्षीरैः पिबेत्सदा ॥  
 अनेन त्वनुपानेन देहे सद्भूमते रसः ॥ ३०७६ ॥

र. खं., र. म. सा., र. बा., रसायने ।

भाषा—कड़वीवृक्ष, मकोय, निगुण्डी, घीऊआर, वन-  
 गोभी, सेंधानमक, सफेदगुप्ता और अदरक ये सब समभाग  
 लेकर बारीकगीस मूषाकमीठर चारोंतरफ १-१ अहुल मोटा  
 लेपकरके शुद्धपारा, अन्नकसत्त्व, कान्तलोह, फोलाद, मुण्डलोह,  
 स्वर्णमाक्षिकसत्त्व सयसमभागवा बारीकपूर्णकर पापें मिलाय  
 एकरोज घोटकर जमीरीकेरससे मदनकर गोलाबनाय उसीमूपें  
 डाल डहन देकर पूर्वोक्तवत्कसे सन्धिबन्दकर कल्कही १  
 अहुलमोटी खोल चढ़ादे । खोलपर २-२ कपडमिट्टी पकाकर  
 सुखनेपर कसीकी अग्नि इसप्रमाणसे देवे कि एकदिनरातमें  
 धान्त होजाय । स्वात्रशीतलहोनेपर निकालकर फिर उसीतरह  
 मदन लेपनकर अग्निदेवे । इसतरह दस मूषाओंसे पकानेसे  
 गुटिका तैयारहोगी । इसमें पारा हरक नया देताजाय । इस  
 गोलीको सुवर्णमें मढवाकर सुंढ, सिर, कण्ठ, कान, हाथ इनमेंसे  
 किसीभी स्थानमें धारण करनेसे अवस्थाके ह्रासको टिकातीहै ।  
 बली, पलित और खालित्यको दूरकर मृत्युकी शङ्काको दूर-  
 करतीहै । एकवर्षभरके निस्तार प्रयोगसे ३०० वर्षकी आयु  
 होतीहै । शुद्ध गन्धक ४ तोले लेकर गायकेदूधसे रोज पीना  
 चाहिये । इससे शरीरमें गोलीकाप्रभाव व्याप्तहोताहै ॥ ६६४ ॥

### ६६५ मृतसञ्जीवनीवटी (द्वितीया)

शुद्धसुं वज्रभस्म सत्त्वमम्रकताप्ययोः ।  
 कान्तलोहसमं हेम जम्बीरं मर्दयेद् दृढम् ॥ ३०७७ ॥  
 सप्ताहं सर्वतुल्यांशी गोलं कृत्वा समुद्धरेत् ।  
 गोजिह्वाधायसीवध्यानिगुण्डीमधुसेतुध्वेः ॥ ३०७८ ॥  
 लेपयेद्द्वजम्भूपान्ते गोलं क तत्र निक्षिपेत् ।  
 तत्कलकण्ठादितं कृत्वा पक्षैर्गंधरे पचेत् ॥ ३०७९ ॥  
 यामं यामं समुद्धृत्य लिप्त्वा मूषां पुनः पुनः ।  
 रुद्धाऽथ पूर्ववत्पाच्यमेनं पक्षात्समुद्धरेत् ॥ ३०८० ॥  
 यवचिक्षीपलाशाभ्यराजीकापीसतण्डुलैः ।  
 एतैः प्रलेपयेन्मूषां गुटिकां तत्र निक्षिपेत् ॥ ३०८१ ॥  
 टङ्गुणं श्वेतकाचञ्च दत्त्वा यामे दृढं दृढम् ।  
 खदिराऽङ्गारयोगेन द्रुतोऽयं जायते रसः ॥ ३०८२ ॥  
 मूषायां चिडयोगेन समं हेम च जायेत् ।  
 ततस्त्रिपामकैर्मयं सगोमूत्रं दिनैकतः ॥ ३०८३ ॥  
 अन्धमूषागतो ध्मातो यद्धो भवति वज्रवत् ।  
 मृतसञ्जीवनी नाम गुटिका वज्रभस्मयगा ॥ ३०८४ ॥

वर्षमानाज्जरां मृत्युं हन्ति सत्यं शिवादिदितम् ।

शस्त्रस्तम्भञ्च कुरुते ब्रह्मयुजायते नरः ॥ ३०८५ ॥  
 र. मं., रसायनसं., र र स., र. का., रसायने । रसायनसङ्ग्रहे  
 ताप्यस्थाने ताडं दहयते ।

भाषा—शुद्धपारा, हीरा, अम्रक और सुवर्णमाक्षिकसत्त्व,  
 कान्तलोह और सुवर्ण इनसबकीभस्मे समभाग लेकर जमीरीके  
 रससे ७ रोज मदनकर गोलाबनाय वनगोभी, मकोय, बाज  
 सेवसा, निगुण्डी, मधु और सेंधानमक सबसमभागलेपर  
 बारीकपीस वज्रमूषामें चारोंतरफ १-१ अहुलमोटा लेप लगाकर  
 उसमें गोलेको रस दहनलगाय उसीवत्कसे सन्धिबन्दकर १-१  
 अहुलमोटी खोल चढ़ाकर ३-४ कपडमिट्टी मुलतानी और रईको  
 कूटकरलगादे । सुखनेपर एक पहर मूषरपुटकी अग्नि दे । स्वात्र  
 शीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मदन लेपन तथा अमिका विधा-  
 नकरे । इसतरह १५ दिनतककरनेकेबाद तितली, ढाक, राई,  
 बिनीले, इनके कल्कसे मूषेको पूर्ववत् लेपदेकर जमीरीके रसमें  
 पूर्ववत् घोटकर गोलीकोरख शुद्धागा, सफेदकाच, योडशास मूषमें  
 डालकर औषधकल्कसे सन्धिबन्दकर उसीकी खोल चढ़ाकर ३-४  
 कपडमिट्टीदेवे । सुखनेपर खैरकी आचसे दस धमनकरनेसे इसरसकी  
 इतिहोजायगी । मूषेका उड़न हटाकर गोलीकी बराबर सुवर्णका  
 पूर्ण घोड़ा २ देवे । मिलजानेपर बिडोंका प्रक्षेप करे जिससे  
 कि पहिले दियाहुआ सुवर्ण जलजाय । जलजानेपर दूसरा सुवर्ण  
 दे और बिडोंका प्रक्षेपकरे । इसतरह समान सुवर्णका जारण  
 होनेपर अग्निसे निकाल खरलमें डालकर ३ पहर गोमूत्रसे मदन-  
 कर गोलाबनाय अन्धमूषामें बन्दकर धमनकरनेसे वज्रकीतरह  
 कठिनहोजाता है । इसगोलीको एकवर्षभर सुंढमें रखनेसे जरा और  
 मृत्युरहितहोकर बहुत दिनतक जीता है और उसके शरीरको  
 कोईभी क्षय क्षति नहीं पहुंचासक्ता ॥ ६६५ ॥

### ६६६ मृतसञ्जीवनीवटी (तृतीया)

यः पूर्वोक्तः सृतो लक्षाद्दृष्टश्च वेधते लोहान ।  
 यद्धः सारणयोगे मुखस्थञ्च जारयेद्दृढम् ॥ ३०८६ ॥  
 युक्तः समांशनगैः सुरलोहायस्कान्तताप्यसत्त्वैश्च ।  
 अम्रकसत्त्वसमेता गुटिका मृतसञ्जीवनी नाम ३०८७  
 हेमयुता गुलुच्छके मुकुटे वा कण्ठमूत्रकणं वा ।  
 मृत्युमयशोकोरोगविषदाहजरासततदु. खसद्वातम् ॥  
 यस्याऽङ्गे निहितेयं गुटिका मृतसञ्जीवनी नाम ।  
 सोऽसुरयक्षकिरपूज्यतमः सिद्धयोगीन्द्रैः ॥ ३०८९ ॥  
 प्रक्षाल्य तोयमध्ये गुटिका घटिकाद्वयं ततः क्षिप्त्वा ।  
 तत्रोयं वदनगता मृतरूपोत्थापनं कुरुते ॥ ३०९० ॥  
 तोयं तदेव पिबति स्वस्थं पथ्यान्वितस्ततः पुरपः ।  
 लभते दिव्यं स वा मृत्युजरावर्जितः सुदृढम् ३०९१

र. ह., रसायने ।

भाषा—पहिले शुद्धकियाहुआ पारा जो कि लक्ष्मे ऊपर  
 घातुओंका वेधन करवाहो उसमें डालेहुए रत्नोंको सारणा

तैलोसे जो जाण कर सकाहो ऐसा गुटिकास्य पाद लेकर नाग, सुवर्ण, लोह, कान्तलोह सुवर्णमाशिक और अग्रकस्त्य, येसव समभाग लेकर बद्धपरिमे बराबर प्रमाणसे मिलाकर गोलीबनाय मुवर्णसे वेष्टितकर चोटी, मुकुट, माला, कान इनमें रखनेसे मृत्यु, भय, शोक, रोग, विष, शूल, बुढ़ापा और निरन्तर दुःख-सङ्घात इनसबको नष्टकरती है । जिसकिसीके शरीरपर इसगुटिकाको रखदे वह अमर, यक्ष, किन्नर, सिद्ध और योगियोंसे सम्मानित होता है । इसगोलीको धोकर दो घण्टे पानीमें रख उसपानीको सन्ध्यास रोगादिमें मृतप्राय होगयाहो उसके मुँहमें डालकर इस गोलीको रखनेसे सञ्ज्ञाको प्राप्तहोकर उसपानीको पीजाता है । मूलालनेपर पच्यदेना उससे मृत्यु, बुढ़ापा प्रश्लिते-रहित सुदृढ विन्य शरीरको प्राप्तहोता है ॥ ६६६ ॥

### ६६७ मृतसञ्जीवनीवटी ( चतुर्थी )

कर्पूरं रसगन्धरुक्षं वरुं तीक्ष्णोद्भवं भस्मकं,  
कालेयेन्द्रययाऽजमोदहुतमुक् चिञ्चास्थिकं धातकी ।  
पला मांसिलवङ्गशालमलिमलं जातीफलं दङ्गुणं,  
नीली सिन्धुमर्चं विपं सममिदं प्रत्येकनिष्कान्वितम् ॥  
सर्वेषां सदृशश्च शिवफलकं कान्ताऽप्रसिन्दूरकं,  
सिन्दूरश्च सफेनकं सुविमलं धुस्तरवीजं नवम् ।  
भद्रापत्रककोकिलाक्षसहितं निष्कप्रमाणं पृथक्,  
धुस्तरस्वरसेन सन्ततमिदं सम्मर्दयेद्यामकम् ॥ ३०९३ ॥  
जम्बोरस्यरसेन मर्दितमिदं गुञ्जाप्रमाणा घटी,  
सेव्या चेम्पुना जयेद्भक्षिभिर्म रक्तातिसारं परम् ।  
सर्वेषु ग्रहणीगदेषु विविधेष्वामातिसारेषु च,  
तद्वच्छूलयुतांश्च दुस्तरतराशानाऽतिसारग्रजान् ॥

व. रा., ग्रहण्यतिसारयोः ।

भाषा—शुद्ध रसकपूर, पारा, गन्धक और सिमरिफ, फोला-दभस्म सब समभाग लेकर नीलवर्णकमलीकर रखोड़े । इसमें केदार, इन्द्रजव, अजमोद, चित्रक, इमलीकेबीजोंकीगिरी, हङ्गनोह, पावनीकेकूल, इलायची, जटामांजी, लोंग, मोचरस, जायफल, मुनामुहापा, नील, संधानमक, शुद्धकटमाग येसव ४-४ मासे, बेलगिरी सवेरिबराबर, कान्तासिन्दूर, अग्रसिन्दूर, रससिन्दूर, समुद्रफेन, शुद्धरूपामाली और धतूरेकेबीज, मांकेफले, तात्तम-द्याना, येसव ४-४ मासेलेकर बारीक चूर्णकर पायेगन्धककी नीलवर्णकमलीमें मिलाय धतूरा और जंभीरीकेस्वरसमे १-१ पदर मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोतिश बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुरेयाथदेनेसे रक्तातियार, समस्तग्रहणीरोग, नानातरदके श्वामातिसार, शूलयुक्तदुस्तर अतिसार, इनसबको यह नष्टकरती है ॥ ६६७ ॥

### ६६८ मृतसञ्जीवनीवटी ( पद्यमी )

रसरजगुल्यगन्धकमुरतितैः पीतभृङ्गमरिचैश्च ।  
प्राद्वीक्षितपरसाल्या गुटिकाः कार्याश्च चणकामाः ॥

एका देया प्रथमं त्रिदोषविकलस्य मूर्च्छितस्याऽपि ।  
अन्या मुहूर्तपरतः प्रहरादन्याऽपरा नेच ॥ ३०९६ ॥  
जीवति मृतोऽपि पुरुषस्त्रिदोषजान्विततन्द्रिकायुक्तः ।  
श्रीनागार्जुनगदिता गुटिका मृतसञ्जीवनी ख्याता ॥

र. स. क., र. का., रसायनसं., सत्रिपाते ।

भाषा—पारा और ताम्रभस्म, शुद्धगन्धक, सुवर्णभस्म, चिरायता, पीलागंमस, मरिच सबसमभाग लेकर बारीकचूर्णकर मण्डूकपर्णी और प्राद्वीके रसकी ३-३ भावनाएं देकर चने-प्रमाण गोलिए बनाकर रखोड़े । इनमेंसे ताद्विक्सत्रिपात-प्रश्लितमूर्च्छिताऽवस्थामें एकगोली दोनोंप्राद्वीके रसोंकेसाधेना, थोड़े समयकेबाद दूसरी गोली देना । यदि दोनोंकेदेनेसे मूर्च्छा जाग्रत न हो तो एकपहरकेबाद तीसरीगोली देना । इसके देनेसे मूर्च्छासे विमुक्त होजाताहै । यदि तीसरीगोली देनेसभी देवबलान् मूर्च्छा जाग्रत न हो तो उसकीचिकित्सा गतासु सम-शकर न करना ॥ ६६८ ॥

### ६६९ मृतसञ्जीवनीवटी ( षष्ठी )

मधुपट्टिर्लवङ्गश्च शिलाजतु शुद्धिस्तथा ।  
सुपक्षे भावना कार्या नवतण्डुलवारिणा ॥ ३०९८ ॥  
याममात्रं दृढं मर्द्यं घटी फोलसमा स्मृता ।  
कृष्णकार्पासनीरेण तृष्णादाहज्वराजयेत् ॥ ३०९९ ॥  
मृच्छांघमुग्ररोगश्च यातपित्तश्च नाशयेत् ।  
मृतसञ्जीवनी प्रोक्ता पूज्यपादैरुदीरिता ॥ ३१०० ॥  
वे. वि., दाहाप्रधिकारः ।

टि०—मधुपक्षे इत्यस्य स्थाने सहजमिति वर्तमानमप्ये पाठे दृश्यते परन्तु इत्था दीर्घपरिश्रमेण साधारणवैदिकानिर्माणस्याऽकिञ्चित्कालात् तन्व्याने सुपक्षे इत्येव पाठोऽस्माभिः प्रकल्पित इति विद्विदः क्षमणीयम् । किञ्च समवस्था महत्प्रशस्तेन सहजरेषिपाषाणी गृहीतो न तु सहजभा-वना दत्ता अतोऽत्र वैचिन्त्यायकिणारस्य प्रमननिष्पन्न तथाविध-पाठोऽस्तौत्यवगतव्यम् ।

भाषा—मुलहटी, लौंग, शिलाजीत, इलायची सब समभाग-लेकर बारीकचूर्णकर नवीनचावलके धोवनसे एकपहरतक दृ-मर्दनकर बेरबराबर गोलिए बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली कालेकपासके पानीकेगाथ देनेसे तृष्णा, दाह, ज्वर, मूर्च्छादिमयदरोग और वातपित्त इनको यह नष्टकरती है ६६९ ।

### ६७० मृतसञ्जीवनी वटी ( सप्तमी )

यष्टीमधुलवङ्गश्च शिवाचरुक् शुद्धिस्तथा ।  
सहस्रयेधौ कतफवीजं तण्डुलवारिणा ॥ ३१०१ ॥  
यामप्रयं दृढं मर्द्यं घटिका फोलसमिता ।  
कृष्णकार्पासनीरेण तृष्णादाहज्वराजयेत् ॥ ३१०२ ॥  
मृच्छांघमादिरोगांश्च यातपित्तश्च नाशयेत् ।  
मुधासञ्जीवनी नाम पूज्यपादैरुदीरिता ॥ ३१०३ ॥  
र. र. की., र. पा., तृष्णायामः ।

भाषा—मुलहटी, लौंग, हर्दीफल, छोटीइलायची, दूर-रखेपीपाषाणकीमय, निर्मलीकेबीज नवगमभागलेकर बारीक-

चूर्णकर नवीन चावलैकं धोवनसे तीनपहर मर्दनकर वेवरावर गोल्या बनाकर रखोडे । इनमेंसे १-१ गोली कालीकण्डाके स्वरसमे देनेसे तृणा, दाह, ज्वर, मूत्रां, प्रम, वातपित्तादि-जनितक्षाममारोग, इनसबको यह नष्टकरती है ॥ ६७० ॥

### ६७१ मृतोत्थापनरसः ( प्रथमः )

गुदं सूतं द्विधा गन्धं शिला च विपहिह्वलम् ।  
मृतकान्ताऽम्रताम्राऽयस्तालकं माक्षिकं सममा ३१०४ ॥  
अम्लवेतसजम्बीरचाङ्गेरीणां रसेन च ।  
निर्गुण्डीहस्तितुण्डयोश्चद्रवैर्भयं दिननयम् ॥ ३१०५ ॥  
रुद्धा तु भूषरे पाच्यं दिनागते तत्समुद्धरेत् ।  
चित्रकस्य कपायेण मर्दयेत्प्रहृद्यम् ॥ ३१०६ ॥  
मापमायं प्रदातव्यं हिङ्गुयोपाद्रिकद्रवैः ।  
सकर्षुरानुपानं स्यान्मृतस्तस्यात्थापने रसे ॥ ३१०७ ॥  
पीडितं सन्निपातेन गतं याऽपि यमालयम् ।  
तत्क्षणाज्जीवयत्येव पर्यं हरीरैः प्रयोजयेत् ॥ ३१०८ ॥  
मे र, र. रा, र. ह, नि. र, व रा., र. को, र. प्र, सू. प्र, सन्निपाते । र. को. आनन्दभैरवः ।

भाषा—शुद्धगन्धक २ भाग, शुद्धपारा, मैन्सिल, बज्जाम और शिपरिक, कान्तलोह, अभ्रक, ताप, लोह, हरिताल और सोनामाखीभस्म सब १-१ भाग, लेकर कज्जीबनाय बिजोरा, जमीरी, अमलोनिया, समाल, हाथीशुण्डी इनप्रत्येकके स्वर सोसे ३-३ रोज मर्दनकर गोलाबनाय हारावसम्पुटमें बन्दकर ४ पहरतक मूषरयन्त्रमें पकावे । स्वाद्रशीतलहोनेपर निकालकर चित्रकके काटेसे दोपहर मर्दनकर १-१ माशेकी गोल्या बना कर रखोडे । इनमेंसे १-१ गोली हिंग, त्रिकटु, अदरकका रस और शुद्धकपूर इनकेसाथ देनेसे मृतावस्थापन सन्निपाती तक्षण उठकर बैठजाता है । मूषरयन्त्रपर दूधभात खाने को देना ६७१

### ६७२ मृतोत्थापनरसः ( द्वितीयः )

अन्नं ताम्रं तथा लोहं प्रत्येकं संसृजतं पलम् ।  
सर्वमेतत्समाहृत्य शुद्धीयात्कुशलो मपक्व ॥ ३१०९ ॥  
आज्ये पलद्वादशके दुग्धे तत्स्वरससङ्घके ।  
क्षिप्या तत्र क्षिपेच्चणं सुपूतं घनतनुना ॥ ३११० ॥  
विडङ्गनिफलायह्निकहर्नां तथैव च ।  
पिप्पला पलोन्मितानेतान्यथासम्मिश्रतां नयेत् ॥ ३१११ ॥  
ततः पिप्पला शुभे भाण्डे स्थापयेत्तद्विचक्षणः ।  
आत्मनः शोभने चाऽपि पूजयित्वा गुरुं रविम् ३११२ ॥  
घृतेन मधुना मये, पाययेन्मापकाऽधिकम् ।  
अष्टौ मापान् क्रमेणैव वर्षयेच्च समाहितः ॥ ३११३ ॥  
अनुपानञ्च दुग्धेन मारिकेलोदकेन वा ।  
जीर्णं देयञ्च शाल्यत्रं मुद्रमांसरसादयः ॥ ३११४ ॥  
रसपानाऽविरोधानि द्रव्याण्यन्यानि योजयेत् ।  
हृच्छूलं पाथ्यंशूलञ्च आमवातं कटिप्रहम् ॥ ३११५ ॥  
गुल्मशूलं शिर.शूलं यक्ष्मशीहादिकं तथा ।

अग्निमान्यं क्षयं कुष्ठं कासं श्वासं विचर्चिकाम् ॥  
अश्मर्त्तं मूत्रलज्जुञ्ज योगेनाऽनेन साधयेत् ॥ ३११६ ॥  
र. र. स., शूलाऽधिकारे ।

भाषा—अभ्रक, ताम्र और लोहभस्म ४-४ तोले, गाय-का घी ४८ तोले, गायकादूध २८ तोले लेकर सबको लोहकी कड़ाहीमें ढालकर मधुर आंसेसे यदातक पकावे कि दूध, घी तमाम जलजाय । फिर इसको कपड्यानकर विडङ्ग, त्रिपला, चित्रक, त्रिकटु, ये प्रत्येक ४-४ तोले का बारीक चूर्णकर परिष्क रसमें मिलाकर ३-४ पहर मर्दनकर शीशीमें रखोडे । इसमेंसे रोगी और वैषके शुभनशत्रुमें गुह और सुर्वकी पूजाकर घृत, मधु अथवा मयकेसाथ १ माशेके लगभग देवे और प्रह-तिवी औचित्य देखकर क्रमसे आत्मासे तक बढावे । पूर्वाऽनुपान अनुकूल न पड़ेतो दूध अथवा मारियलके जलेसेसाथ दे । इसके पचजानेपर पुराने चावल, मूंगकादूध, मानस और रसके अविरुद्ध द्रव्योंको दे । इसके सेवनसे हृदयशूल, पाथ्यशूल, आम-वात, कटिप्रह, गुल्मशूल, शिर शूल, यक्ष्म शीहादि ज्वररोग, मन्दाग्नि, क्षय, कुष्ठ, कास, श्वास, विचर्चिका, पथरी, मूत्र-कुच्छ येसब नष्टहोवें ॥ ६७२ ॥

### ६७३ मृतोत्थापनरसः ( तृतीयः )

क्षारत्रयं शम्भुवीर्यं वरदं देवपुष्पकम् ।  
पञ्चट्टमितानेतान् द्विदङ्कांश्चाऽप्यतः परम् ॥ ३११७ ॥  
शिला गुद्धा प्रयोक्तव्या तालकं गन्धकं यथा ।  
मस्तकी गरलं कुष्ठं मृतताम्राऽम्रदङ्गणम् ॥ ३११८ ॥  
लोहभस्म च सम्मेल्य कटुतेलेन मर्दयेत् ।  
कूपिकां बालुकायन्त्रे विपघेयामयुग्मकम् ॥ ३११९ ॥  
स्वाद्रशीतलमुद्धृत्य खल्वमभ्ये विनि.क्षिपेत् ।  
लशुनस्याऽथ तेलेन नेपालयीजतेतलः ॥ ३१२० ॥  
चित्रकस्य कपायेण हार्द्रिकस्य जलेन वा ।  
सन्निपाते निहत्याशु गुजामात्रप्रमाणतः ॥ ३१२१ ॥  
मृतः सोऽपि पुनर्जीवित्रोगमृत्युभयापहः ।  
मिष्टाश्च पायसं दद्यादुपचारैश्च शीतलेः ॥ ३१२२ ॥  
राजोपचारेः कुर्वीत गान्तर्येणमुच्यते ।  
मृतोत्थापनको नाम रसोऽयं सर्वरोगजित् ॥ ३१२३ ॥  
र. रा, वा, र क थो, सन्निपाते ।

भाषा—यक्षार, सज्जी, सुहाया, शुद्धपारा, शिपरिक और लौंग येसब ५-५ टङ्क, शुद्धमैन्सिल, हरिताल और गन्धक, वच, मस्तकी, सर्वकाजहर, कुष्ठ, ताम्र और अभ्रकभस्म, शुना-सुहागा, लोहभस्म येसब २-२ टङ्क लेकर कज्जी बनाय ४ पहर कटुतेलेसे मर्दनकर कपडिमिठीदीहुई आतशीशीशीमें भर बालुकायन्त्रमें दो पहरतक पकावे । स्वाद्रशीतलहोनेपर निकाल-कर लशुन और जमालयोटे का तैल, चित्रककी अङ्ककाठा, अदरकका स्वरस इनसे १-१ रोज मर्दनकर १-१ शीशी गोल्या बनाकर रखोडे । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितान-



पानकेसाथ देनेसे मृतकल्पभी सन्निपाती फिरये जीवित और तमाम उपद्रवोंसे रहित होजाता है । मूलकल्पनेपर मित्राग्र और खीर देवे । दाहदोहेपर शीतोपचारकरे, चन्दनलेपनादि तमाम राजोचित उपचारकरे ॥ ६७३ ॥

### ६७४ मृत्युञ्जयमैत्रोरसः

रसवली मधुपद्वयपटपुटे

रविपुटेरपि वायसितो विषम् ।

तिथिपुटे वंचया जयपालकं

शितिगलाद्रवकैश्च हिडिम्यिकाम् ॥ ३१२४ ॥

क्रमविबुद्धयतीः सुविभाव्य ताः

सकलतुल्यकणामपि पटपुटेः ।

विद्वरसस्य च निम्बुरसैः समं

युतिफलेन समः स च मृत्युजित् ॥ ३१२५ ॥

तत्ताम्बुना पिप्पलीभिः सर्वज्वरहरो मतः ।

सद्यंत्र पुटशन्दोऽत्र भायनार्येऽभिधीयते ॥

कणातसाऽमृत्युयोगेन सर्वरोगेषु शस्यते ॥ ३१२६ ॥

र. का., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धकी कजलीको मधुरी ६ भावनाएं देवे । शुद्ध वल्लभांगको मकोयकेरसकी १२ भावनाएं देवे । शुद्ध जमालांगोटे को बच्चे स्वरस अथवा कायकी १५ भावनाएं देवे । भैनसिलको नीलीके रसकी १५ भावनाएं दे और इन सबकीपरावर पीपलका कृष्णमिलाय खदिर, नीबू और शिबुआके अहस्वरसे ६-६ भावनाएं देकर १ से २ रतीतकनी गोलिया बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोली गरमजल अथवा पीपलकेसाथदेनेसे सरप्रकारे ज्वरोंको यह नष्टकरताहै । अन्नन-कलेसे तमामविषोंको दूरकरताहै । तत्तद्रोगहरालुपालकेसाथ देनेसे समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६७४ ॥

### ६७५ मृत्युञ्जयरसः ( प्रथमः )

विषं सूतरगन्धौ च पित्तं मत्स्यवराहयोः ।

आजमावुरपित्ते च महिषस्याऽपि योजयेत् ॥ ३१२७ ॥

हरितालश्च सद्यंत्रं धानरीरीजसंयुतम् ।

अपामार्गं चित्रमूलं जयपालश्च कल्कयेत् ॥ ३१२८ ॥

एतत्सर्वं समांशेन अजामृत्रेण मर्दयेत् ।

माषेण सदृशं कार्यां वटिका सन्निप्रच्यरे ॥ ३१२९ ॥

महात्वरं महाशीतं महाशीतज्वरेऽपि च ।

मज्जागते सन्निपाते विमृच्यां विषमज्वरे ॥ ३१३० ॥

असाध्ये मानये युञ्ज्यादैकाहास्यग्नान्निनी ।

जलाद्रेऽद्भुतशिवस्य नासास्त्रावे च पीनमे ॥ ३१३१ ॥

अजीर्णं मूर्च्छनोन्थाने श्लेष्मोन्थानेऽतिदुर्जये ।

शोथकामलपाणद्वितिसर्वरोगाणहारकः ॥ ३१३२ ॥

मृत्युञ्जयो रसां नाम ज्ञानज्योतिःप्रकाशिनः ।

भृङ्गराजस्मेनाऽयं रमराजः प्रदीयते ॥ ३१३३ ॥

निर्मातेनिर्जनस्थाने यदुधरसमावृते ।

प्रम्येदः क्षणमात्रेण जायते निःसोमहात्म ॥ ३१३४ ॥

मूर्च्छितः पतितो मूर्ध्ना दह्यमानः पुनः पुनः ।

एवं चिह्नं समालीन्य वदेन्नैरज्यमातुरे ॥ ३१३५ ॥

पथ्यं यथाचते रोगी तद्वातव्यं प्रयत्नतः ।

दुष्योदनं शीतजलं दातव्यं तद्विषक्षणैः ॥ ३१३६ ॥

एवं महारसः श्रेष्ठः शम्भुना प्रेरितो भुवि ।

कृपया सर्वभूतानां ज्ञानज्योतिःप्रकाशितः ॥ ३१३७ ॥

र. ज्ञा., भे. र., र. सु., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध वल्लभांग, पारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्ण कजलीकर मछली, सूअर, बगरा, मोर, भैंसा इनके-पित्त, शुद्धहरिताल, त्रिकटु, केवाचकेबीज, अपामार्ग, चित्रक-कीजड़, शुद्धजमालांगोटा, येसम समभागलेकर पारोगन्धकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय बकरीकेमूत्रमें १-२ रोज मर्दनकर उड़द बराबर गोखिले बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोली भंगरेके रसकेसाथदेनेसे भीषणज्वर, शीताह, कत्यन्त ठंडेकर आनेवालाज्वर, मज्जाप्रभृति धातुगत तथा सन्निपातज्वर, हैजा, विषमज्वर, जलोदर, अन्नशैथिल्य, नासास्त्राव(खुकाम), पीनस, अजीर्ण, मूर्च्छाकाप्रारम्भ, अतिदुर्जयश्लेष्मकाउभार, शोथ, कामला, पाण्डु, इनसबको यह नष्टकरताहै । इसनाप्रयोग निर्जन और निर्वातस्थानमें करके बहुतसे बल ओढ़ानेसे थोड़े समयमें सर्वाङ्गमें पसीना शुद्धोजायागा और दाहकेमारे चित्रने लगाता तब समझना कि यह रोगसे निर्मुक्तहोसुका । यदि दवाके देनेसे वैसाही मृतप्राय पड़ा रहेतो उसपर किसीभी दवाका प्रयोग न करना वह अवश्य यमालयको जायागा । होशमें आकर खानेको मागे तो दहीभात और ठंडा जल देना ॥ ६७५ ॥

### ६७६ मृत्युञ्जयरसः ( द्वितीयः )

सूते गन्धकटङ्कणं शुभविषं धुस्त्वरीजं कटुं,

नीत्या भागमथोत्तरं द्विगुणितं चोमत्तमूलाम्बुना ।

कुर्यान्माषवटीं सुप्ताऽतिसुप्तदां सर्वाण्यजराश्राशये,

दैप धीशिवशासनात्मजनिताः सूतश्च मृत्युञ्जयः ३१३८

नारिकेलसितायुक्तं वातपित्तज्वरञ्जयेत् ।

मथुना श्लेष्मपित्तोत्थं ज्वरं निष्णांशयेदुधम् ॥

सन्निपातज्वरं घोरं नाशयेदार्द्रनीरतः ॥ ३१३९ ॥

भे. र., र. सु., घ., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भा., सुहागा ३ भा., बड-नाग ४ भा., धतूरेकेबीज ५ भा., कुटरी ६ भाग सेरर पारीकान्-कर पारोगन्धकीनीलवर्ण कजलीमें मिलाकर धतूरेकेरसमें १-२

रोज मर्दनकर उड़द बराबर गोखिले बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१

गोली नारियलकेजल और मिश्रीकेसाथदेनेसे वातपित्तज्वर

नष्टहोवे । मधुकेसाथदेनेसे श्लेष्मपित्तज्वर, अदरपकेरसमें साधा-

रण और मथियातज्वर नष्टहोताहै ॥ ६७६ ॥

### ६७७ मृत्युञ्जयरसः ( तृतीयः )

रमविषदितिपुशान्मनोपयामृतमलोत्थं,

मिहिरतुगगारान्माषयेसुख्यमानाग ।

दश च तदनु देया भावनाः सिन्दुवारै-  
खिरथ हृदभयाऽऽर्द्धैर्हृदिमत्स्याऽऽजपितैः ॥३१४०॥  
गुञ्जामात्रः प्रयोक्तव्यः सद्यः सर्वज्वरापहः ।  
सिद्धो मृत्युञ्जयो नाम रसोऽयं भुवि दुर्लभः ॥३१४१॥  
र शि, ज्वरे ।

भाषा—शुद्ध पारा, बलनाग और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर त्रिकटुकैकवायवी १०, बदालकेफलोकेरसकी ७, संभावके रसकी १०, अमलोनिया, हरे, अदरक, मोर, मछली और बकरेके पित्तसे ३-३ भावनाएँ देकर १-१ रसोकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरोंको तत्क्षण नष्टकरताहै ६७७

#### ६७८ मृत्युञ्जयरसः (चतुर्थ)

मृतताप्ताऽन्नं तालं हरयोर्वैश्वं गन्धकम् ।  
समुद्रफेनञ्च समं खट्वमध्ये विनि क्षिपेत् ॥ ३१४२ ॥  
लाहलीद्रात्रकैर्मयं कृत्वा गजपुटे पचेत् ।  
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य शिष्टिच्छायाऽहिमत्स्यजैः ३१४३  
पित्तैर्भाष्यं चतुर्थमर्धं देयं घल्लेकमानकम् ।  
अनुपानविशेषेण सर्वथा सन्निपातनुत् ॥  
रोगमृत्युभयं हन्ति मृत्युञ्जयरसो हित ॥ ३१४४ ॥  
वै वि, ज्वरे ।

भाषा—ताम्र और अन्नभस्म, रसमाणिक्य, शुद्ध पारा और गन्धक, समुद्रफेन येसब समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर करिहाटीके अक्षरस्वरसे मर्दनकर गोल बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आचढ़े । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मोर, बकरा, सर्प, मछली इनप्रत्येकके पित्तोंकी ४-४ पहर भावनाएँ देकर ३-३ रसोकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अनुपानविशेषसे सन्निपातको दूरकर रोग और मृत्युके भयको नष्टकरतीहै ॥ ६७८ ॥

#### ६७९ मृत्युञ्जयरसः (पञ्चम)

पारदभस्म शिलाजतुयुक्तं  
तीक्ष्णजभस्म सुमेलय तावत् ।  
दानवभस्म विभागयुतं वै  
भस्मयुतं जलजातकपदात् ॥ ३१४५ ॥  
सर्वमिदं परिमृद्य समांशं  
नागलताद्वलतौययुतञ्च ।  
चित्रकमूलजले परिमृद्य  
मापसमानवटी, परिकुर्यात् ॥ ३१४६ ॥  
आर्द्रकजेन रसेन वटीं वै  
दापय नित्यमतन्द्रितबुद्धिः ।  
दोषसमूहमयज्वरवेगं  
यत्र याति परिपक्वपायात् ॥  
मृत्युविजेतरि नामरसेऽस्मिन्  
ध्याधिगणा न गदा गणनीया ॥ ३१४७ ॥  
र क यो ज्वरे ।

भाषा—पारदभस्म, शिला तीत, फोलादभस्म, गन्धकभस्म (अभावमें तापभस्म), शङ्ख और बौडीभस्म सब समभाग-लेकर एकपहर क्षुब्धमर्दनकर पान और चित्रककी जड़के स्वरसोंसे १-१ रोज मर्दनकर उडवरावर गोलियें बनाकर रख-छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरकके रसकेसाथ देनेसे जो कि वायु वीरहसे काबूमें आताहो ऐसे त्रिदोषज्वरको यह तत्क्षण नष्टकरताहै और अनुपानविशेषसे तमामरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६७९ ॥

#### ६८० मृत्युञ्जयरसः (सिद्धाद्य) (षष्ठः)

गन्धाऽश्मा वत्सनामो  
रसवत्सहित सप्तधा भावनीयो,  
व्योषाम्भोरारिर्धार्ज-  
स्त्रिदशसुरसजैर्भांगिचित्राऽऽर्द्धजैश्च ।  
विगारानेय पित्तै-  
रजतिमिश्रिजैश्छायाया शोषयित्वा,  
दत्तो गुञ्जाप्रमाणो मरणभयहर,  
सिद्धमृत्युञ्जयोऽयम् ॥ ३१४८ ॥  
र क यो, ज्वरे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, बलनाग और पारा समभागलेकर नीलवर्ण कजलीकर त्रिकटु बदालकेबीज, तुलसी, भारती चित्रक और अदरक, इन प्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा बराबरीसे सात ७ भावनाएँ देकर बररा, मछली और मोर अथवा कुक्कुट इनकेपित्तोंसे १-१ भावना देकर १-१ रसोकी गोलिया बनाकर छायाछायाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको दूरकरताहै ६८०

#### ६८१ मृत्युञ्जयरसः (सप्तमः)

यलिः सुतो निम्बूरससमरसो भस्मसिक्ता-  
ह्वये यन्ने हृत्वा समरचिकुणाद्वृङ्गरजः ।  
त्रिघ्नस्य लुङ्गाम्भोलवकदलित, क्षौद्रहृदिपा-  
ऽधलीढोबल्लैकं द्रवयति सप्तस्तं गदगणम् ॥  
जरां वयंकिण क्षपयति च पुष्टिं चितनुते,  
तनी तेज स्फारं रमयति धधूनामपि शतम् ।  
रस श्रीमान्मृत्युञ्जय इति गिरीशेन गदित,  
प्रमाणं का वाऽन्य कथयितुमपारं प्रभवति ॥  
व यो त, र को, र वि, र ल, यो म, आ म, रसायने ।  
नि० अथ रससिद्धरूपेण प्रोपशानात्स्वल्पव्याप्तिरुदाहृतः ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारेकीनीलवर्णकजलीकर नीचके रससे यदातक मर्दनकरके नि सूखनेपर धूपमेंभी चमक न मालूम पड़े । फिर कपडिमेंदीर्घई आनशीतीशीमें भरके भस्म अथवा बाडकयन्त्रमें रख अन्तर्गुमविदग्धत्रियासे रससिद्ध बनावे (अन्तर्गुमविदग्धकी त्रिया चन्दोदयप्रथमकी टीकामें देवो) । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इषवीबरावर तापभस्म, पीपल और भुवाभुवा मिलाकर तीसरोपलक विजोरेरेरूपमें मर्दनकर

सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती मधु और धीकेसाय मिलाकर खानेसे समस्तारोगदूहोकर शरीर पुष्टहोताहै शरीरमें तेजको बढ़ाताहै, नपुंसकताको दूरकरताहै एकवर्षतक लगातार प्रयोगकरनेसे बुढ़ापेको दूरकरताहै ॥ ६८१ ॥

### ६८२ मृत्युञ्जयरसः (अष्टमः)

द्विश्वारं द्रव्यणं पञ्चलवर्णं शतपुष्पिकाम् ।  
समभागमिदं सर्वं पटवूर्णं समाचरेत् ॥ ३१५१ ॥  
तत्समौ रसगन्धौ च कृत्वा कज्जलिकां शुभाम् ।  
सर्वमेकत्र सम्मेल्य मर्दयेद्वियसत्रयम् ॥ ३१५२ ॥  
अयं मृत्युञ्जयो नाम्ना रसः शीघ्रफलप्रदः ।  
कथितो मय्यलार्थेण सन्निपातहरः परः ॥ ३१५३ ॥  
सन्निपाते प्रयोक्तव्यो रक्तिकापञ्चमात्रकः ।  
चित्रकाऽऽर्द्रकसिन्धूयकटुभिर्वा समन्वितः ॥ ३१५४ ॥  
पीततोयं त्रिदोषार्तं निवातं शाययेत्ततः ।  
पृथ्यं दध्योदनं देयं याचमानाय नाऽन्यथा ॥  
शुणो न जायते यस्य तस्य देवो रसः पुनः ॥ ३१५५ ॥  
हन्त्याद्वातगदं तथा कफगदं मन्दानलत्वं ज्वरं,  
शूलं सर्वमहामयाजठरजां पीडां यकृतपाण्डुताम् ।  
शोफं गुल्मरुजं तथा प्रहणिकां धीहामयं विद्वहं,  
घान्तिं गुल्मकृतां सकासमभितः श्वासञ्चक्षिकामपि ॥  
आदीं सर्वोदराणाञ्च देयमुक्तं धिरेचनम् ।  
गोमूत्रं चाऽथ गोक्षीरे योज्यमेरण्डतैलकम् ॥  
कर्पमात्रं प्रयत्नेन शुद्धे देवो रसः पुनः ॥ ३१५७ ॥

र. र. स., र. घ., र. फो., र. प्र., र. म. भा., उद्धाधिष्ठारे ।

भाषा—समी, यथक्षार, त्रिकटु, पार्चोन्नमक, सौंफ, सब-समभाग लेकर बारीक चूर्णकर सबसे दूनी शुद्धपारद और गन्धकको नीलवर्णकज्जली मिलाकर तीमारोज शुष्कमर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे ५-५ रती चित्रक, अदरक, सेंधानमक और कुटकी इनकेसाथ देकर थोड़ाजलपिलाकर निवात स्वानमें सुलादेना । पत्तीना जानेपर पृथग्मात्र तो दहीमात देना अन्यथा नहीं । इसके देनेमें कुछ अंतर न मालूम हो तो एक घण्टे बाद दूसरी मात्रा देना । इसके प्रयोगसे त्रिदोषजनितव्याधि, वातरोग, कफरोग, मन्दाभि, ज्वर, शूल, समस्त महारोग, उदररोग, यकृत, पाण्डु, शोथ, गुल्म, प्रहणी, ग्रीहा, मलाबरोध, गुल्म-जनितवान्ति, कास, श्वास, ह्रिक्ता इनसबको यह नष्टकरताहै । उदररोगोंमें देनेकेपहिले गोमूत्र अथवा गोदुग्धकेसाथ एण्डतैलका धिरेचन देना । कोष्ठशुद्धहोनेपर रसका प्रयोग करना ६८२

### ६८३ मृत्युञ्जयरसः (नमः)

त्रिकटु त्रिफला सूतगन्धसौ टड्गुणं विषम् ।  
यष्टी निशा कुबेराक्षौ दन्तिवीजमथाऽपि च ॥ ३१५८ ॥  
एतानि समभागानि खल्यमप्ये विनिःक्षिपेत् ।  
भृङ्गराजस्सेनेव मर्दयेत्त्रिदिनं मियक् ॥ ३१५९ ॥

गुटिका मापमात्रास्तु छायाशुष्काश्च कारयेत् ।  
अनुपानविशेषेण सर्वरोगेषु योजयेत् ॥

मृत्युञ्जयो रसो नाम सर्वरोगविदारणः ॥ ३१६० ॥  
यो. र. क्षये ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, शुद्ध पारा, गन्धक, टंकण और बज्जनाग, मुलछठी, हल्दी, कंजकेबीज, शुद्धजमालगोटा येसब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारेण्यकडीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर गंधरेकेससे ३ रोज मर्दनकर उद्धराकर मोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली तत्तदो-हरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तारोगोंको दूरकरताहै ॥ ६८३ ॥

### ६८४ मृत्युञ्जयरसः (दशमः)

यज्जमस्म रसमस्म मौक्तिकं  
मर्दितञ्च खलु निम्बुवारिणा ।  
तच्च कुक्कुटपुटेन पाचितं  
चूर्णयेन्मधुयुतं हि यल्लकम् ॥  
वर्षमात्रमपि सेवितं जये-  
मृत्युमेव सकला रुजा अपि ॥ ३१६१ ॥

र. प्र. घ. रसायने ।

भाषा—हीरा, पारा और मोतीमस्म समभाग लेकर नीबूकेसमें १-२ रोज मर्दनकर गोलाबनाय चातहृकरमें लपेटकर २-३ कपडिमिठी देकर सूखनेपर कुक्कुटपुटेमें पकाये । स्वादशीतलोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती मधुकेसाथ एकवर्षतक सेवनकरनेसे बुढ़ापा और समस्तारोग दूरहोतेहैं ॥ ६८४ ॥

### ६८५ मृत्युञ्जयरसः (एकादशः)

प्रयालमुक्ताफलवज्रताराः  
सुवर्णताम्राऽन्नकनागसाराः ।  
यथोत्तरा बह्मशिलाऽऽलगन्धाः  
पलोन्मिताः सुतकसप्तभागाः ॥ ३१६२ ॥  
चतुश्चतुः शङ्करूपदकानां  
सुतितकजम्बीरविमर्दितानाम् ।  
अफेनमाक्षौरुविपत्रयाणां  
पलं पलं दन्तिफलान्धितानाम् ॥ ३१६३ ॥  
समस्तमेकीकृतमत्र चूर्णं  
दिनद्वयं चित्ररुवारिपूणम् ।  
विशुष्कमद्भारककारुण्डयो  
स्तुगर्कवृत्ताऽमरनागशुण्ड्यः ॥ ३१६४ ॥  
किरातभल्लातनिकुम्भकुम्भाः  
कुटेरवीरारुवीररम्भाः ।  
यलात्रिबुधायारलाऽऽलुरुणीं  
कटुबिकं शीतशिवाऽऽर्द्ररूप्यः ॥ ३१६५ ॥  
नताऽमृते काण्डरुहा सलज्जा  
विषं घृषाक्षा भृशुजा सगुजा ।

अमीभिरुवाभुजगार्तियुक्तै-  
वराहगोधाशिरिमीनपित्तैः ॥ ३१६६ ॥

पृथक्पृथक्साधितमन्तरस्थं  
दृढे पुटे ताघ्नमये विपकम् ।

सुशीतमुद्धृत्य रुतं रजश्च  
रसो हि मृत्युञ्जयनामधेयः ॥ ३१६७ ॥

प्रणम्य मृत्युञ्जयमीशमर्क-  
मुपेन्द्रयन्त्राऽधिपकाशिराजान् ।

प्रपूज्य विप्रान्भिपजश्च सम्य-  
प्रसं प्रयुज्जीत यवप्रमाणम् ॥ ३१६८ ॥

सितोपलारक्तियुगेन मिश्रं  
नराय दद्यात्कृतमङ्गलाय ।

सितादिसर्वं मधुरं फलानि  
सुदाडिमादीनि च भांसयर्गम् ॥ ३१६९ ॥

पलं विदित्वा सकलं विदध्या  
श्रवाऽप्रकिञ्चित्परिहार्यमस्ति ।

विहाय कर्त्तव्यककुद्गुकोल-  
कपित्थकफांढककारपेक्षम् ॥ ३१७० ॥

करीरकोशातकिकाकमाची-  
सवित्त्वृन्ताकतिलादिकं स्यात् ।

विजित्य मृत्युं षडुदोपमुग्रं  
रोगी पुनर्जिहीति तदधमापात् ॥

अशेषदोषान्तकरो रसोऽय-  
मस्तु मृत्युञ्जयनामधेय ॥ ३१७१ ॥

दो, यो चि. ज्वराधिकारे ।

भाषा—प्रवाल १ तो, मोती २ तो, हीरा ३ तो, रजत ४ तो, सुवर्ण ५ तो, ताम्र ६ तो, अन्नक ७ तो, नाग ८ तो, फोलाद ९ तो, (इनसबरीभस्म) वज्रभस्म, शुद्ध मैनासिल, हरिताल और गन्धक ये सब ४-४ तोला, शुद्धपारा ७ तो, शुद्ध और कौडीकीभस्म ४-४ तोले लेकर बारीक बूनेंकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय चिरायता, और जमीरीके रसोंसे १-१ तोज मर्दनकर अफीम, सोनामासी, शुद्ध बडनाग, सांजुक और हारिदक, शुद्ध जमालगोटा १-१ फल लेकर सबका बारीकबूनेंकर पूर्णपिण्डमें मिलाकर दोरोंज चित्रकके रससे मर्दनकर मुखौकर पीयावासा, काबनासिका, शूअर, आक, धतूरा, देवदार, करिहारी, सोंठ, चिरायता, भिलाव, नमालगोटा, विधारा, जगलीतुलसी, शतावर, कनेर, केला, बला, निसोत, नागबला, मूषाकर्णौ, त्रिकटु, सफेदचन्दन, अदरक, गोकर्ण, तगर, गिलोय, दुब, लम्बाल, बडनाग, अडुसा, इन्द्रायण, भारही, सफेदपुष्पा, कचरी, पान, कुठ, इनप्रत्येकके स्याशस्मव स्वरस अथवा कार्योंसे १-१ भावना देकर सुख, गोद, कुक्कुट अथवा मोर और मछलीके पित्तोंसे १-१ भावना देकर गोलावनाय समस्तपिण्डकेबराबर तावके समुद्रमें भरके ६-७ कण्डिमिठी देकर सुखनेर बाहुकावचमें ४ पहली अमि

देकर फावे । स्वाद्वशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे जबप्रमाण मात्रा महादेव, सूर्य, उपेन्द्र, इन्द्र, धन्वन्तरि इनसबकी पूजाकर ब्राह्मण और वैद्योंको सन्तुष्टकर दो तोले शहरके साथ मिलाकर कृतमङ्गलरोगीको देना । शहर वगैरह मधुपदार्थ, अनारवगैरहफल, मासवर्ग रोगीके बलातुसार देना । ककड़ी, आह, काली, बैर, वैय, ककोड़ा, करेला, करीर, तरौद, मकोय, बेल, बंगन, तिल इनको छोड़कर सबचीज गाय । इसकेसेवनसे समस्तप्रणिपात और असाध्यरोग नष्ट होकर मनुष्यफिरसे जी उठताहै । समस्तदोषोंका नाश करनेसे इनका नाम मृत्युञ्जयहै ॥ ६८५ ॥

६८६ मृत्युञ्जयरसः ( द्वादशः )

भागैर्कं मरिचञ्च लोहमपि सङ्गन्धाश्च भागद्वयं,  
लौहं न्यस्य गयां घृतेन घटिकामेकां पचेत्पायके ।  
तालं वह्निलवं समुद्रलरिकं ग्लेच्छं शरांशं विपं,  
सर्वांशं जयपालञ्च कटुकोकाधासथा चित्रकात् ॥  
आय्यं राममितं तथाऽऽद्रकसत्तिम् सप्तहृत्को दृढं,  
सम्मर्द्याऽऽसपशोपितं शतदलेः पुष्पैः समभ्यर्चितम् ।  
गुञ्ज्याद्गुञ्जमितं ज्वरे तु सहसा सामे तिरामे नये,  
जोषं वा विपमे समोरणमये पिच्छोत्थिते श्लेष्मजे ॥  
द्वन्द्वोत्थे घनसन्निपातजनिते सोपद्रवेऽप्युत्थणे,  
शीत्ये स्वेदयुतेऽपि मान्यजठराऽऽनाहेषु सर्वांतिपु ।  
शुष्के शोकयुतेऽपि पाण्डुगदके विष्टम्भजत्वदिपु,  
न्योपाऽऽर्द्रेण ससेन्धवेन च सहज्जीराऽऽभुना पित्तजे ॥  
पित्ते सौद्रसितादिना तद्वनु वा वायं भवेच्छीतलं,  
खोष्णं वा तिलतैललेपिततनुः तापाऽनुरूपं पुनः ।  
रेके जीयति नाऽन्यथाऽप्यतिरुचौ मुद्राम्बु सच्छर्करं,  
पथ्यं भक्तमरिदुग्धदधियुक् द्राक्षेक्षुसदाडिमम् ॥  
खर्बुरं ससितञ्च लेपनमहो कष्टैरकस्त्रिका,  
काश्मीरं शितनीपजं तद्वनु वा रम्भादलं संस्तरः ।  
पीनोद्वसञ्च कस्यहलीसुलभलास्यालिङ्गनं घुस्मनं,  
पथ्यं मृत्युञ्जये रसे समुचितं सत्सालचूर्ताऽनिलः ॥  
र श, र प, र यो, ज्वराधिकारे ।

टि०—रसपदार्थो जयपाल दूधगो निबोधित । रसकोषक दोहदे गपाऽऽमभागद्वयमित्यस्य स्थाने दुग्धाऽमभागद्वयमिति निबोधित तत्र दुग्धाऽमसंश्लेषेन श्लेष्मजो घृतीतय, सत्रिवोतनमपि तापु प्रति भाति पस्तु तमात्रा मुद्रसमा कर्त्तव्या, मछलीजनेन तीक्ष्णनीर्दयत्वा । रसकोषकद्वेदयरसपदार्थो मध्यं रामयितमित्यस्य स्थाने मध्यमिति पाठोऽस्ति, अन्यत्सर्वं समानम् ।

भाषा—मरिच और लोहभस्म १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग, लेकर लोहेकेवर्तमें डालकर सबकी बराबर गायका घी डालकर एकपट्टी फावे । घीमुखनेपर ज्वातरर हरितालभस्म अथवा रसमाणिक्य ३ भा, ताम्रभस्म ४ भा, शुद्धबडनाग ५ भा, शुद्धजमालगोटा सबकीबराबर मिलाकर कुटकी, चित्रक, इनके स्वरस अथवा स्वायसे ३-३ भावना देकर अदरककेरसकी

ऊर्ध्वलिङ्गः सदा तिष्ठेद्वलनासु प्रियो भवेत् ।  
तहाटकसंकाशः श्रीधौमेधाविभूषितः ॥ ३१८७ ॥  
इषवेगो मधुराक्षो धाराहस्ततिरेव सः ।  
अपरः कामदेवो वा मानिनीमानमर्दनः ॥ ३१८८ ॥  
शाल्यग्रं गोपयः खण्डं सितं जाङ्गलमामिमम् ।  
गोधूमजानिकाराध्व मापार्धं कदलीफलम् ॥ ३१८९ ॥  
पनसञ्जाऽपि सङ्गं वातामं नारिकेलकम् ।  
मधुरञ्च भजेत्प्राशो वर्षमात्रमतन्द्रितः ॥  
मात्राऽस्य मापप्रमिता सदा सेव्या नरोत्तमैः ॥ ३१९० ॥

र. सु., रसायनस., र. सं. क., र. म. मा., र. प्र., प्रमेहाऽधिकारे

**भाषा**—सुवर्णं, रजतं, हीरा इनकीभस्मं समभाग लेकर  
मुशली, मूषाकर्णी, विजोरा, मोचरस, केवाच इनके रसोंसे  
३-३ दिन भावना देकर उषःपराकर गोखिलें बनाकर रसछोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली ततप्राग्वद्वातपित्तकेसाथ देवेसे राज्यक्षय,  
समप्रकारके प्रमेह, जीर्णज्वर, अतिसार, ग्रन्थी, बहुमृता,  
धातुक्षीणता, ननुंसकता, इनसबको यह दूररताहै । बुझावेको  
हृदाकर बुद्धि और कान्तिको बढ़ाताहै । जियोंके मनको भङ्ग-  
करताहै । चाबल, गायकादूध, शकर, जाङ्गलमास, गेहूँ और  
उकदने पदार्थ, केला, कटहर, खजूर, बादाम, नारियल, समस्त  
मधुरपदार्थ इतमें सेवनकरनेयोग्यहै ॥ ६९० ॥

६९१ मृत्युञ्जयरसः (लघुः) (सप्तदशः)

कर्पं शम्भुञ्जयस्यैकं कर्पं स्याद्वरऽस्य च ।  
जैपालस्य च शुक्लस्य त्रयमेतद्विह्वयम् ॥ ३१९१ ॥  
बृद्धदारकनीरेण खट्वे कृत्वा विमर्दयेत् ।  
अथोदुम्बरपर्णानां स्वरसेन विभावयेत् ॥ ३१९२ ॥  
शृङ्गवेरसेनाऽसुं रविचारं विमर्दयेत् ।  
शुक्रामात्रां वर्द्धी कृत्वा सितया सह भक्षयेत् ॥  
मृत्युञ्जयरसो नाम नयज्वरहरः परः ॥ ३१९३ ॥

र. प्र., र. सु., ज्वराऽधिकारे ।

**भाषा**—पारदभस्म, शुद्ध शिंगरिफ और जमालगोटा  
समभाग लेकर एकरहर सूत्रामर्दनकर विधारा, गुल्म, इनमें रखो ।  
२-२ दिन और अदरकके रससे १ दिन मर्दनकर १-१ रसीकी  
गोलिया बनाकर रखोहै । इनमेंसे १-१ गोली शहरवसाथ  
पानसे नवनवरका नाश होताहै ॥ ६९१ ॥

६९२ मृत्युञ्जयरसः (महान्) (अष्टादशः)

सूतकञ्च विषं नार्गं गन्धकञ्च चतुष्टयम् ।  
समं सर्वं विष्टुष्टयं शिपिना तदिहद्वयम् ॥ ३१९४ ॥  
तस्य कल्कस्य पार्दकं गुग्मये दृढभाजने ।  
क्षित्या हेज्ञाऽपि कर्तव्या पत्रेण समपत्रिका ॥ ३१९५ ॥  
दातव्या तस्य कल्कस्य हुपरिष्टाट् दृढांयसी ।  
पुनः शराचके दद्यात् कुयत्सिन्धिनिराधनम् ॥ ३१९६ ॥  
विशोष्य घालुकां दद्यादुपरिष्टासमस्ततः ।  
यामनेरुमार्गं शूल्यां पाचयेन्मध्वहिना ॥ ३१९७ ॥

अनेनैव विधानेन पत्रिकां मारयेत्कमात् ।  
समायैवञ्च सकलं हेमचूर्णं रसस्य च ॥ ३१९८ ॥  
विषं भागेकमेकञ्च चतुर्भागञ्च मौक्तिकम् ।  
गन्धकं भागमेकं स्यात्पश्चात्सर्वं तदौषधम् ॥ ३१९९ ॥  
मर्दयेदेकतः कृत्वा चित्रकस्य रसेन च ।  
पुष्टिया किञ्चिदेवैतत्पिष्टरूपं तदुद्धरेत् ॥ ३२०० ॥  
क्षये कासेऽम्बुपित्ते च श्वासे कण्डूमायेषु च ।  
शाल्मलीद्रवसंमिश्रं पुष्टितोः प्रयोजयेत् ॥ ३२०१ ॥  
मरिचेन समं देयो कफरोगेषु पारदः ।  
शूले च परिणामे च घृताकमधुमिश्रितः ॥ ३२०२ ॥  
गुह्यचीर्जरके युक्तः स्वरमद्गे प्रदापयेत् ।  
पित्ताऽधिकेषु रोगेषु शाल्मलीद्रवमिश्रितः ॥ ३२०३ ॥  
अन्यान् सर्वानयं रोगाप्रोगयोग्याऽनुपानतः ।  
नाशयत्यचिरेणाऽयं दुस्तरानतियेगतः ॥ ३२०४ ॥  
तेलं राज्ञीवयित्वञ्च वज्रयेदम्बुसेधनम् ।  
अयं मृत्युञ्जयो नाम रसो रोगारिहत्तमः ॥ ३२०५ ॥  
वारणप्रमितं कुर्याच्छरीरमजराऽभरम् ।  
न शन्यन्ते गुणा यत्तु रसस्याऽस्य नरं ध्रुवम् ॥ ३२०६ ॥  
रसवि., र. सु., र. प्र., सर्वरोगे ।

**भाषा**—शुद्ध पारा, बलमाप और गन्धक, नागभस्म  
समभाग लेकर नीलवर्णकमलीकर चित्रककेरसे दोरोग-  
मर्दनकर चार विभाग करदे । कल्कसे चतुर्थांश सुवर्णलेकर पतेके-  
सदृश थारीकपत्र बनाकर उसपर एकभाग कल्कको लपेटकर  
धारापसम्पुष्टमें बन्दकर ३-४ कपडमिठीदेकर मुलाय बाण्डका-  
यमें १ पहर पकावे । स्वाहशोतलहोनेपर निकालकर हसीतरह  
से लेपनकर पकावे । ऐसे बाण्डोंमें कल्कको समाप्तकरनेपर  
सुवर्णकीभस्म होजाएगी । परन्तु कल्पसे अमिको १-१ पहर  
बढ़ावे, चौथीभाग ४ पहरकी देनी चाहिये नहींतो क्या रहेगा ।  
यह सुवर्णभस्म, पारदभस्म, शुद्धवज्रभाग और गन्धक १-१ भाग,  
मोतीकीफिट्टी अथवा भस्म ४ भाग लेकर सप्तरों एकदिन  
चित्रककेरसे इके घोटकर गोलापनाय पाणोंमें अच्छीतरह  
लपेटकर कच्चेधतसे बांधदे । फिर एकावलिस्तथा चण्डा रोद  
बीचमें दूसरा चण्डा गोलापानेवायक रोदकर ऊपर ४ अङ्गुल  
बाधने दबदे । बाकीके चण्डेमें जख्मीचण्डोंके दुष्टनेमरके आचदे ।  
स्वाहशोतलहोनेपर निकालकर पानचहिन घोटकर १ से २ रसी-  
तककीगोमिया बनाकर रखओहै । इनमेंसे १-१ गोली उबि  
तानुपाननेसाथ क्षय, नास, अम्बुपित्त, श्वाय और सुखलीमें  
दे । पुष्टिलिये मोचरसनेसाथ दे । कफरोगोंमें ७-१४ अथवा  
२९ मरिचोनेसाथ, शूल और परिणामशूलमें धी और मधुके-  
साथदे । स्वरमद्गमें मित्तीय और जौरेकेसाथ, पिनाधिकरोगोंमें  
मोचरसनेसाथदे । इसप्रकार अन्यन्त दुस्तररोगोंको यह योग्या-  
नुपानमें देवेये नष्टरताहै । तैल, कमल, बेत, अम्बुगदामोंको  
छोढ़े । इसके हमेशा सेवनकरनेसे समस्तरोगोंमें मुण्डोका  
दीर्घायुको प्राप्तहोताहै ॥ ६९२ ॥

## ६९३ मृत्युञ्जयरसः (ऊनविंशः)

गायत्रिकामद्वितमामलम्बा  
रसेन लोढं कनकस्थ चूर्णम् ।

धानीरजस्तुल्यमिदं नराणां  
रिष्टं समुपन्नमपाकरोति ॥ ३२०७ ॥

लो. प. (स.) अरिष्टनाशे ।

टि०—यद्यप्यरिभ्यो रिए समुत्पन्नमपाकरोतीति सामान्यतया सस्त्रीतिरिष्टि पन्तु नैवावता उपपन्नरिएस निरपज सुदवास्व भवति । अन्यैव सरस्वीत्या चेदरिए नाशमायायस्व तर्हि श्दानीमपि योगकारेण साकममदादीनाम् सम्भाषणादिवमपि समुदमिष्यत । तेन रोचकत्वात् फल्गाम्रमिदं वाच्यं प्रतिपाति अतः पूर्वकृतगायत्रीपुराधरणः सुष्ठुतीये-धातुष्कामीयारमायनोपदेशविधानेन विलम्बत्वेन तुल्यमस्य पुराधरणानैव्य तदारिष्टोपशान्तिः कम्पापनीया । यथा 'भन्वोपपन्नमापुष्टि सम्बलपरकलप्रदम् । विलम्ब चूर्णे पुष्टे तु कृत वारम् सल्लसः । शीघ्रैस्तैः नरः कस्यै समुत्पन्नं दिने दिने । समर्पितेभ्यस्तु लिखादलक्ष्मीनाशाय परम् ।' इत्यादीर्यादि सुष्ठु चि., २८।८।१० पुराधरणमन्तराप्यनेन योगेन शुभाभाष्यवचस्य भविष्येति मत्वा प्रयोगकरेण धानीरजोऽर्थं कर्षं कर्षं वा यथाशिवल गृहीत्वा सुवर्णभस्मनो रक्तिलेकं निक्षिप्य ह्य-मधुस्य समारोह्य लोह्ना यथाशक्ति यथोचिति वा धानीरजानुपाय कर्तव्यम् शनैः शनैः कनकमरमप्रमाणं रक्तितुर्धमागाराधर्य रक्ति-प्रितयपर्यन्तं वर्द्धनं कर्तव्यमिति कल्परहस्य मधुस्तसमावापलु यथोचिति कर्तव्य इति दिक् ।

भाषा—परिपक्व और छायाशुष्क किये हुए आवलों के चूर्णकी धराधर आवलों के रससे निश्चयभस्म किया हुआ सुवर्ण, ये दोनों समभाग मिलाकर रखछोके इसमेंसे दो रसीसे चार रसीतक कीमात्रा लेकर परिपक्वआवलोंका आधेतोले से एकतोलेतक रस मिलाके "अजपा" गायत्री अथवा ब्रह्मगायत्रीसे एक हजार अभिमन्त्रितकर चाटनेसे उत्पन्नरिष्टभी दीर्घायुको प्राप्त होता है ।

## ६९४ मृत्युञ्जय लोहम् (प्रथमम्)

त्रिफला लोहजं चूर्णं रक्तचित्रकजा जटा ।  
श्वतकीशाप्रजं वीजं पालाशं क्षुद्रदुग्धिका ॥ ३२०८ ॥  
एतद्वैकृतादाय पृथक् पञ्चपलोन्मितम् ।  
मिश्रयित्वा पलाशस्य सर्वाङ्गरसमावितम् ॥ ३२०९ ॥  
महाफालजवीजानां भागत्रयमथाऽऽहरत् ।  
भागं कृष्णतिलह्र्येकं मिश्रयित्वा निपीडयेत् ॥ ३२१० ॥  
तेन तैलेन तक्ष्णं पिण्डीकार्यं विमर्दनात् ।  
स्निग्धे भाण्डे तदाधाय शरायेण निरोधयेत् ॥ ३२११ ॥  
लिप्त्वा तदा सुधान्यस्य पलालोघे निधापयेत् ।  
मासमाप्राप्तमाहृत्य पूजयित्वा दिवां शिवम् ३२१२ ॥  
तैलैकं भक्षयेत्प्रातस्तैलैकं भोजनोपरि ।  
एवं मासत्रयाऽध्यासात्पलितं हन्त्यसंदायम् ॥  
सर्वेण जरां हत्वा मृत्युं जयति मानवः ॥ ३२१३ ॥  
यो. म., रायनाऽधिकारः ।

भाषा—त्रिफला, लोहघात्रीकरोता, रक्तचित्रकजीरक, आम और जखलीआमरी शुद्धी, पलनापक्का, छोटीदूधी

५-५ पल लेकर बारीकचूर्णकर पलाशके पञ्चाङ्गके रससे ३-४ भावनाएं देकर बराबरकेकालेतिल और तिगुना महर (महावा-  
ष्णी) केबीजोंका तैल डालकर एकदिनमर्दनकर चिकनेयवतमें रखकर शरायसे ढक कपडमिठीकर जब या गेहूंकी राशि अथवा पयारमें दबादे । एक महीनेकेबाद निकालकर रखछोके । फिर शिव और गौरीका पूजनकर अच्छे मुहूर्तमें इसमेंसे १-१ तोला सुबह और भोजनके ऊपर खाये, भोजनमें दूध, भातकेविधाय कुंठ न ले । इसतरह ३ महीनेतककरनेसे बाल कालेहोजातेहैं । एकवर्षतक प्रयोगकरनेसे बुढ़ापेको दूरकर मनुष्य मृत्युको जीतता है । टि०—लोहेकेरेतेमें त्रिफलाकाचूर्ण और पलाशके पञ्चाङ्गकास्वरस डालकर यहांतक मर्दनकरे कि लोहेकीभस्म होजाय इसमें त्रिफलाकाचूर्ण थोड़ा २ देना चाहिये । इसतरह लोहभस्मतैयाहीनैपर सबजीज़ मिलावे ॥ ६९४ ॥

## ६९५ मृत्युञ्जयलोहम् (द्वितीयम्)

शुद्धं सूतं समं गन्धं जारिताऽम्रं तथा समम् ।  
गन्धकाहिगुणं लोहं मृतताम्रं चतुर्गुणम् ॥ ३२१४ ॥  
द्विसारं टङ्कणविडं वराटमथ शतकम् ।  
चित्रकं कुन्दी तालं कटुर्नी रामठं तथा ॥ ३२१५ ॥  
रोहीतकं त्रिभृच्चित्रे विशाला धवलङ्कटम् ।  
अपामार्गस्ताललिण्डमम्लिका च निशायुगम् ३२१६ ॥  
कानकं तुतथकश्चैव यकृन्मर्दं रसाज्जतम् ।  
पतानि क्षितिभागानि चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥ ३२१७ ॥  
आर्द्रकस्वरसेनैव शुद्ध्याः स्वरसेन च ।  
मधुनः कुडवाद्भाण्यं वटिका मायमाव्रतः ॥ ३२१८ ॥  
अनुपानं प्रदातव्यं बुद्ध्या दीपानुसारतः ।  
भक्षयेत्प्रातस्तथाय सर्वरोगकुलान्तकम् ॥ ३२१९ ॥  
प्लीहानं ज्वरमुपश्रज्ज कासश्च विपमज्वरम् ।  
चिरजं कुलजश्चैव रक्षीपदं हन्ति दारुणम् ॥ ३२२० ॥  
रोगानीकविनाशाय धन्यन्तरिहृतं पुरा ।  
मृत्युञ्जयमिदं लोहं सिद्धिदं शुभदं नृणाम् ॥ ३२२१ ॥  
र. सं., र. घु., मे. र., ध., र. वि., उदराधिकारः ।

भाषा—शुद्ध घात और गन्धक, अक्रमस्य १-१ भाग, लोहभस्म १ भा., ताम्रभस्म ४ भा., यवशार, सबीगार, गुनाग्रहाणा, नवसादर, पोलीकीड़ी तथा दक्षमस्य, विपक, शुद्ध वैतविल और हरिताल, कुटकी, मुनाहीग, मारवाडी रोहि-  
देकीछाल, निषोत, इमली, इन्द्रायण, लफेद अष्टोदकीर, अजामर्ग, ताड़वासी, अमलोनीयां, हन्दी, दाहन्दी, धनुरैक-  
बीज, शुद्धतुतिया, चरपुत्र, रसीत यैराय १-१ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पातफन्यहकी नीलवर्णरजनीमें मिलाकर अक्षर और मिल्थेयके स्वरसे १-१ रोज मर्दनकर १६ तोले मधुमें घोडकर १-१ मारोकीमोटियां बनाकर रखछोके । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ प्रातःकात देनेसे दीहा, उप-  
ज्वर, भीषणघात, विपमज्वर, बुद्धदिनका तथा वंतापग्रहणमा-  
कीलांश, इनगवको यद नष्टहोई ॥ ६९५ ॥

### ६९६ मृत्युहारीरसः

अयः १३ तिलोत्सेधं प्रतप्तं चतुरङ्गुलम् ।  
एकविंशतिपर्यायं धात्र्या निर्वाणयेद्भस्मे ॥ ३२२२ ॥  
ततः शतपलं स्थाल्यां क्षिप्वा धात्रीरसोत्तमम् ।  
कृत्वा ततः सुषिहितं भस्मरसां विनिक्षिपेत् ३२२३ ॥  
मासिमासि समुद्रय लोहदण्डेन घटयेत् ।  
तस्मिन्विशुष्यति प्राग्भस्मं धात्र्या विनिक्षिपेत् ३२२४ ॥  
द्रवीभवति तत्सर्वं वत्सरात्पत्रमायसम् ।  
ततः समन्ततोऽङ्गुष्ठपर्वमानमुत्सेन ॥ ३२२५ ॥  
आयसेन स्त्रुषेणाऽयःपात्रे कल्कीकृतं ततः ।  
शृतं पृथक् समाशेन सेवेत मधुसर्पिणा ॥ ३२२६ ॥  
जीर्णं साऽऽज्यं रसक्षीरयुक्तमप्यतममिश्रितम् ।  
पट्टितोदनमक्षीयादुपयुज्येत वत्सरम् ॥ ३२२७ ॥  
वर्षमन्यच्च शिशुभ्रो यन्त्रितात्मा कुटी वसेत् ॥  
अगम्यो दन्जराभ्युश्लाऽग्निविपतोऽग्निभिः ।  
जीवेद्ब्रह्मसहस्रं वै सर्वमायेष्वतीन्द्रियः ॥ ३२२८ ॥

र र स, रसायने ।

भाषा—तिलसदृशमोटे और ४-४ अङ्गुल चौड़े लोहेके पत्र बनवाकर गरमकरके पकेहुएआवलोंके स्वरसमें २१ बार घुसावे । इसप्रकार १०० पल लोहेको बुझाय किसी मजबूत मिट्टीकी हंडीमें भरदे । हंडीमें उतनाही आवलोंकारस भरके ठकन लगाय अच्छीतरह कपड़मिट्टीदेकर मजबूतकरावर ऊंची भस्मकी डेरीमें दबादे । १-१ महीनेनेवाह निकालकर लोहेके ढण्डेसे मर्दनकर फिर रखभरकर दबादे । ऐसे १ वर्षवाह निका लकर अण्डेके प्रथमपर्वके बराबरमोटे लोहेके ढण्डे अथवा कड़छीसे घोटकर बल्क बनाले । इसमेंसे १-१ तोला कल्क लेकर अमिरपर रख पकाकर घुआले, इसमें मधु और घी मिलाकर सेवनकरे । पाचन होनेपर बीकेसाय मसरस, दूध और मृगदेयुषेसाथ साठीबावल खाय और एकवर्षतक उत्तम अन्नका सेवनकरे । इसरा सेवन कुटीप्रवेशविधिसे शितेन्द्रियहोकर कर नेसे व्याधि, बुझापा, मृत्यु, शल, अग्नि, विष और शत्रुओंसे अगम्य होकर एकहजारवर्षकी आयुको प्राप्तहोताहै ॥ ६९६ ॥

### ६९७ मृदारभस्मयोगः

खण्डं मृदारुद्रस्य निक्षिपेद्विष्णुजे त्र्यहम् ।  
शरावसम्पुटे न्यस्य पुटं दद्यात्प्रयत्नतः ॥ ३२२९ ॥  
जायते शोभनं भस्म माययेत्त्रिफलाऽभ्युभिः ।  
कुमारीमृजम्बीरैरुदयेकैकं त्रिक्रेमेण वै ॥ ३२३० ॥  
सिद्धं भस्म ततो जातं योज्यं मेहोपदंशयोः ।  
हृदिग्रामधुरंसयुक्तं मेहं गुञ्जामितं लिह्व ॥ ३२३१ ॥  
देयपुष्पमरीचाभ्यामुपदंशोऽथवा घृते ।  
अथवा शर्करामिश्रं सेवयेद्भोगमुकये ॥ ३२३२ ॥  
रसायन स, मेहाधिकारे ।

भाषा—सुर्दासिद्धके ढक्केकर नीचुरेसमें ३ रोज भिगोकर शरावसम्पुटमें न्यस्यकर १० सेर कण्डोंकी आच देनेसे उत्तम-भस्म होजातीहै । इसको त्रिफला, धीकुमार, गोमूत्र और जम्बीरीके स्वरसोंकी ३, १, १, ३ इसक्रमसे भावनाए देकर रखछोडे । इसमेंसे १-१ रसीकी मात्रा हल्दी और मधुकेसाथ प्रमेहमेंदे । जौण और मरिचकेचूर्ण अथवा घृत अथवाशरकरे-साथ उपदंशमें देवे तो इनरोगोंसे निवृत्त होजाताहै ॥ ६९७ ॥

### ६९८ मृद्विरेचनम्

इन्दुलोचननेत्राणि शिखिभागश्च योजयेत् ।  
श्रुतिगन्धकमृदारुशतपुष्पाविचूर्णितम् ॥ ३२३३ ॥  
मापद्ध्यं गयां दुग्धैः सेवयेद्दिनपञ्चकम् ।  
रेचयेन्मृत्तिकां शुद्धां शिशूनां हितमौषधम् ॥ ३२३४ ॥  
र च, पाण्डुरोग ।

भाषा—इलायची १ भाग, गन्धक २ भा, सुर्दास २ भा, सोंफ ३ भा, लेकर बारीकचूर्णकर रखछोडे । इसमेंसे १-२ मासे गोदुग्धकेसाथ देनेसे ५ दिनोंमें बच्चोंकी खाईहुईमिट्टी दस्तमें निकलजातीहै ॥ ६९८ ॥

### ६९९ मेघद्वन्द्वरसः

तण्डुलीयद्रवैः पिष्टं सूततुल्यञ्च गन्धकम् ।  
यक्ष्मपूपागतं कृत्वा भूधरे भस्मतां नयेत् ॥ ३२३५ ॥  
दशमूलकप्रायेणा भाषयेत्प्रहृष्टयम् ।  
गुञ्जाम्रयं जयत्पाशु हिकाम्भ्यासमणज्यरात् ॥ ३२३६ ॥  
अनुपानेन दातव्यो रसोऽयं मेघद्वन्द्वरः ।  
अभया पिप्पली माह्वीं पुष्करं कर्कटी शटी ॥  
शर्कराऽष्टगुणे योज्यमनुपानं सुखायहम् ॥ ३२३७ ॥  
र र, र को, नि र, रसायनस, र सु, र को, वै वि, र वि, र च, वै सा, र सि, र (मा) र म., र का, यो म., व रा, र क ल, दो, हिवाभासयो । बसवराजीये अनुपाने अभयास्थाने नागरे हयते ।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्ण कबलीकर कागिवालीचौलाईके रखते १-१ दिग्मर्दनकर गोलीबनाय मुग्गी अथवा बतसेके अण्डेमें छोटीअहुली जानेलायक गोलछिद्रकर अन्दरका पदार्थ निकालकर गोलीकोरत चौलाईका रखभरके दूसरे अण्डेकी खोल पदार्थ संपेदभस्मकर और चूनेकोपानीमें बारीक पीस आधा अहुलमोटा लेपचढादे । सूखनेपर पुटारीपेद और मुक्तानीमिट्टीको बारीककूटकर एकतोल और चढादे । सूखजानेपर सुपरयवमें रख इन्डुपुटकी अमिदे । ऐसे ४-५ अमिये देकर पोरकी भस्म बनाले । अथवा यक्ष्मपूपामें गोलेटो रख रखभरकर सम्पुटग्रन्थं बियाकर आचदेकर भस्म बना । स्वात्तसीतलोनेपर निकालकर दशमूलक कटिसे २ पहरतक घोटकर २-२ रसीकी गोदिया बनारर रखछोडे । इसमेंसे १-१ गोली हूँ पीख, भारत्री, पोहवरसू, काकडागोनी, और कपूर समभाग लेकर अठगुनी शररमिलाकर इतकसाथ देनेसे दिपाही, भास, ज्वर, और मणमात्रको यह दूरहोताहै ॥ ६९९ ॥

## ७१० मेघनादरसः ( एकादशः )

तारं ताप्यं यलिरससहितं मर्दितं वासकैकं,  
कन्याऽनन्तासुरतरजलैर्वाल्काऽङ्गिर्विभाव्यम् ।  
देयं तृष्णाश्रमविषमधिते भ्रान्तचिस्ते व्यथाते,  
सिद्धस्तृष्णादवगणदलने मेघनादो रसेशः ॥३२६६॥  
र., तृष्णायाम् ।

भाषा—रजत और सोनामालीकीभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक, समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर पीतुंवार, जवास, देवदारु, सुगन्धवाला इनके यथासम्भव स्वरस अथवा काथोसे १-१ रोजमर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानसे साधदेनेसे तृष्णा, श्रम, विषम ज्वर, विषविशेष, और समाम पीडाओंको यह नष्टकरताहै ७१०

## ७११ मेघनादरसः ( द्वादशः )

द्वन्द्वं दृक्पणश्चैव सैन्धवश्च कटुत्रयम् ।  
त्रिफला हारहृत्वा च कृमिघ्नं रामठं तथा ॥ ३२६७ ॥  
दस्युदीप्यं समानश्च दन्ती सर्थाऽर्द्धभागिका ।  
जम्बीरयारा सममर्घं चणकस्य प्रमाणतः ॥ ३२६८ ॥  
उष्णोदकानुपानेन कृम्यामार्तं विरेचनम् ।  
तस्योपरि हितं देयं पथ्यं क्षयोदर्न परम् ॥ ३२६९ ॥  
उदरे पाण्डुशोफे च शोफोद्वरजलोदरे ।  
सर्वज्वरे च विषमे मेघनादः प्रशस्यते ॥ ३२७० ॥  
र. च, र. श, यो. र, रैचनाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धशिगरिफ, सुहागा, सैनामक, त्रिकटु, त्रिफला, हुरहुर, विडङ्ग, हिंग, चोरक, अजवाइन येसन समभाग, शुद्ध जमालोटा सबसे आधा लेकर सबका भारीक चूर्णकर जमीरी-केरसे १-२ रोज मर्दनकर चनेप्रमाणगोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गरमजलकेसाधदेनेसे कृमि और आम निकलनेतक विरेचनहोताहै । भूखलगनेपर दही और चावल देना । इसकेदेनेसे उदर, पाण्डु, शोफोदर, जलोदर, समस्त विषमज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै ७११ ॥

## ७१२ मेघनादरसः ( त्रयोदशः )

कारयेच्छोधनैः शुद्धताम्रगन्धकपारदात् ।  
गन्धकं द्विगुणं ताम्रातखले वुग्धेन पेपयेत् ॥ ३२७१ ॥  
तस्य पूषाद्वयस्यान्तस्ताम्रपत्रं क्षिपेद्बुधः ।  
शरावसम्पुटे क्षिप्त्वा वल्लभमुद्गायञ्च वेष्टयेत् ३२७२  
उत्तलैः पूषणतायामप्ये प्रक्षिप्य दीपयेत् ।  
तन्मध्यास्ताम्रमाहृष्य खले नरिण पेपयेत् ॥ ३२७३ ॥  
तच्च मृत्तान्धमूपायां घातं दीप्ये प्रमुच्यते ।  
ताम्रतुल्यं चतुर्थांशं स्वस्यं गन्धकस्तथाः ॥ ३२७४ ॥  
सम्पेय कज्जली कृत्वा ताम्रचूर्णं क्षिपेत्सुधीः ।  
ताम्राद्वृष्टुणं चूर्णमतो माचीरसं क्षिपेत् ॥ ३२७५ ॥  
मिश्रचूर्णं समं चूर्णं मरीचीनां क्षिपेत्ततः ।  
ताम्रस्याऽर्द्धं यत्सनाभं विषखण्डेन भावयेत् ३२७६

मेघनादरसो नाम्ना निष्पन्नः सर्वरोगहा ।

वल्लभात्रो जलसमं मरिचस्य क्रमेण वै ॥ ३२७७ ॥

स गद्याणैकमात्रो हि दातव्यो दृढरोगिणु ।

पित्तक्षयाऽबलाऽजीर्णाऽतोसारश्च वर्जयेत् ॥ ३२७८ ॥

र. कं. ली, सर्वरोगे ।

टि०—अत्र काकमाचौशब्दस्थाने अन्यपूर्वाक्षरलेपेन मानौशब्द सन्निवेशित इति बोद्धव्यम् ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भाग, शुद्धताम्रपत्र

१ भाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीकर दूधकेसाय कज्जलीको पीसकर तावेके पत्रपर रोटीकी तरह चूदादे फिर धारावसम्पुटे वन्दकर ६-७ कपड़मिटोलेपदे । सुखेनेपर पूरे गजपुटकी आचदे । स्वाद्वशीतल होनेपर निमालकर मिटोकी अन्धमूपामें धमनकाके गलानेसे यह समस्तदोषोंसे रहितहोना यगा । फिर तावेकी बराबर गन्धक और चतुर्थांश पारा लेकर नीलवर्णकजलीकर तावेकेसाथ मिलाकर तावेसे अठगुना पत्थर काचवा और चूनेसे अठगुना मरोदकास, इस समस्तपिण्डकी बराबर मरिचकाचूर्ण, तावेसे आधा शुद्धबधनाग मिलाकर बधनागरेस अथवा काथसे एकरोज घोटकर मुखादर रखछोड़े । इसमेंसे १ मरिच प्रमाणसे ३ रत्तीतक धीरे २ वज्रावे और ३ रत्तीपर माना कायमकरे । इसतरह ६ मासोतक सेवनकरनेसे बहुतरुाने और हठौले मूलवद्धरोगोंको यह दूरकरताहै । पित्तक्षयी, कृष, मजीर्णी और अतिसारी पर इसप्रयोगको न करना ॥ ७१२ ॥

## ७१३ मेथीपाकः

मेथीपलचतुष्कञ्च कणा द्विपलमानतः ।

सञ्जये घटवुग्धेन पाचयेद्बहिना ततः ॥ ३२७९ ॥

प्रस्थद्वयमितं खण्डं मुच्यते चूर्णकं तदा ।

सूते लयङ्गं विगुडं लाहं केशरमञ्चकम् ॥ ३२८० ॥

पुष्पं जातीफलं जातीपत्री नागकुचेरकैः ।

एतेषां पलमानेन सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ ३२८१ ॥

प्रभाते पलमानेन योजयेद्वाग्ययोगतः ।

तस्य सर्वशिरोत्पन्नं रागजालं ध्रुवं हरेत् ॥ ३२८२ ॥

सर्ववातसमूहश्च भ्रमच्छर्दिकफपथ्याम् ।

मेथिकापाकनामाऽयं वृद्धानां प्राणदायकः ॥ ३२८३ ॥

रसायनसं, वातरोगे ।

भाषा—मेथी ४ पल, पीपल २ पल लेकर बातीकचूर्णकर १६ सेर दूध डालकर भावा बनावे । तैयारहोनेपर २ सेर शकर डालकर चाशनीकरले फिर पारदमम अथवा रसविन्दु, लौंग, खजूर, ताड़ और ईसकागुड़, लोहभस्म केशर, अम्रक-भस्म, नागकेशर, जायफल, जावित्री, नागभस्म, कर्जके बीजोंकी गिरी, येसब १-१ पल मिलाकर रखछोड़े इसमेंसे १-१ पल दूधकेसायलेनेसे समस्तशिरोरोग, वातविकार, श्रम, हर्दि, कफरोग, इनसबको यह नष्टकर बुढ़ोंको फिरसे जवानी देताहै ॥ ७१३ ॥



## ७१४ मेदिनीसाररसः

पलत्रयमितं लोहं मृतं शुल्वं पलत्रयम् ।  
 भृङ्गराजोऽभ्युगोमृत्रत्रिफलाकथितं पृथक् ॥३२८४॥  
 पुटेतिवारं यत्नेन ततस्तस्मिन्विनिक्षिपेत् ।  
 अत्यम्लकाक्षिकं पञ्चात्पचेद्यामचतुष्टयम् ॥३२८५॥  
 पुनश्च तुल्यगन्धेन दद्याच्च पुटविंशतिम् ।  
 पलमात्रं मृतं मृतं रुद्रांशममृतं तथा ॥३२८६॥  
 कटुत्रयं समं सर्वैः पिष्ट्वा सम्यग्विधारयेत् ।  
 रसोऽयं मेदिनीसारो नन्दिना परिकीर्तितः ॥३२८७॥  
 सेवितो बहुमानेन घृतत्रिकटुकान्वितः ।  
 हन्ति कुष्ठानि सर्वाणि चित्राणि विविधानि च ॥३२८८॥  
 गुल्मद्वीहामयं हिकां शूलरोगं हरेत्तथा ।  
 उदावर्तं महारोगं कफं मन्दांनलस्तथा ॥३२८९॥  
 गलग्रहं मद्योन्मादं कण्ठदन्तव्याधां तथा ।  
 सर्पादिजं विषं घोरं ब्रणं लूतां भगन्दरम् ॥३२९०॥  
 विद्रधिश्चाऽऽनवृद्धिश्च शिरस्तोद्वज्ज्वलयेत् ।  
 दधिमूलकमाषाणविदाहीनि शुरुणि च ॥  
 पापकर्माणि सर्वाणि कुष्ठयुक्ता विवर्जयेत् ॥३२९१॥  
 र म सा, र को, र र स, र र कौ, कुष्ठे ।

भाषा—लोह और ताम्रभस्म ३-३ पल लेकर भगर, गोमूत्र और त्रिकलाकेवायसे ३-३ भावनाएँ देकर एकदमखरी काष्ठो मिलाकर ४ पहर मन्द अग्निसे पकावे । फिर अग्निपरसे उतारकर ठाढ़ोनेपर धराकरका शुद्धगन्धक मिलाकर पूर्वोक्तद्रव्योंकी २० पुटे देकर पारदभस्म १ पल, शुद्धवज्रमाण पलका ११ वा भाग, त्रिकटु सबकीबराबर मिलाकर रसछोड़े । इसमेंसे ३-३ रसीकी-मात्रा बी और त्रिकटुकेसाय सेनेसे चित्रविचित्र तमामकुष्ठ, गुल्म, प्लीहा, हिका, शूल, उदावर्त, महारोग, कफरोग, मन्दाग्नि, गलग्रह, मद्य, उन्माद, कान और दातोंकीपीडा, सर्पादिकोंका जहमविष, ब्रण, मकड़ीकाविष, भगन्दर, विद्रधि, अन्नहृदि (सारनगाद), शिरकीवेदना, इनसबको यह नष्टकरताहै । दही, सूली, उबड़, विदाही और गरिष्ठ पदार्थ, समस्तपापकर्म इन सबका कुड़ी त्यागकरे ॥ ७१४ ॥

## ७१५ मेदोध्वंसरसः

रसगन्धकतालानां शुद्धानां भागमुत्तमम् ।  
 दन्तीबीजञ्च मतिमाषिनिष्येकत्र भर्दयेत् ॥३२९२॥  
 त्रिदिनं कटुकीद्रावैः कृतमालद्रवैस्तथा ।  
 पुनर्नवायाः सप्ताहं ततो गजपुटे पचेत् ॥३२९३॥  
 एवं कृत्वा त्रिवारं नु ततः सिद्धो भवेद्रसः ।  
 रक्तिकाक्षितयं सादेत्सौद्रतथैः पिषेयुनः ॥  
 मेदसः समरात्रेण निवृत्तिं जायते ध्रुवम् ॥३२९४॥  
 र म सा, ना वि, मेदारोग । ना वि मेदोक्षर इति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, हरिताल और जमालगाटा समभागलेकर कजलीबनाय कुटरी और अमिलतायके बाणोंकी

३-३ दिन, पुनर्नवाके स्वस्वकी ७ दिन भावना देकर गोला बनाय सुखाकर शरावसमुद्रमें बन्दकर कपड़मिट्टीकरदे । सुखने पर गजपुटकी आवेदे । स्वाद्वसीतलहोनेपर निकालकर फिर इसीकसे मर्दनकर आवेदे । इसप्रकार ३ बार करनेसे यहरस तैयार होगा । इसमेंसे २-२ रसी मधुकेसाय खाकर मधुरा शक्त पीनेसे ७ दिनमें मेदोद्विद्धि नष्टहोतीहै ॥ ७१५ ॥

## ७१६ मोहाद्रिवज्रपातरसः

कर्पूकं रसकं त्र्यक्षं पिष्ट्वा गन्धं पलद्वयम् ।  
 पलं नागाऽम्रयोः सर्वं सञ्जुष्यं सिकताघटे ॥३२९५॥  
 पकं मृषागतं यामं पचेद्भूयः क्षिपन्द्रयम् ।  
 केतकाऽऽकलनिर्गुण्डीशिमुप्रग्रन्थिकचित्रकम् ॥३२९६॥  
 वन्ध्याऽहिवह्नीरुणात्पथ्याघ्नीलुङ्गरसीद्रवम् ।  
 अभ्यगन्ध्यामयं वाराग्निधा द्वित्रिप्रसागरान् ॥३२९७॥  
 पडसैः सतवसुदिकुडिभिर्मुघनत क्रमात् ।  
 कुमार्या पुटेत्योडो रसो मोहाद्रिवज्ररसः ॥३२९८॥  
 सुक्तो मापो निहन्त्याग्नौ सर्वाऽर्शाऽरोचकप्रहान् ।  
 मन्दाग्न्युन्मादमेदांसि गण्डमालाऽर्बुदाऽपचीः ॥  
 क्षुद्ररोगाश्च विविधान् गरुडः पन्नगानि च ॥३२९९॥  
 र कौ, अर्शोरोगे ।

भाषा—शुद्धखरिया और पारा १-१ कर्पू, गन्धक २ पल, नाग और अन्नकभस्म १-१ पल लेकर बालुकायधमें स्वेदनकर निकालकर फिरसे कजली बनाय देवडेकेस्वरसकी ३, अकलराराकी २, निगुण्डी २, सहिजन ४, पिपलामूल ९, चित्रक ९, नामलेखसा ७, पान ८, गोरखगुण्डी १०, भटवटैया २, विजोरा ३ और अतगन्धकी १४ इनसबके स्वरस अथवा कायोंसे उक्तसद्रूपामें कमश भावनाएँ देकर घीनुवारकेरसमें १-२ रोज घोटकर १-१ मासकी गोलिया बनाकर रसछोड़े । इनमेंसे १-१ गोरी रोगोचितानुपानकेसाय सेनेसे सम्पूर्ण बवासीर, अक्षि, गलग्रह, मन्दाग्नि, उन्माद, मेद, गण्डमाला, अर्बुद, अपची, क्षुद्ररोग इनसबकीयह सर्पोंको गरुडकी तरह नष्ट करताहै ॥ ७१६ ॥

## ७१७ मोहान्धसूर्यरसः

गन्धेशी लघुनाऽम्भोभिर् मर्दयेद्यामभाप्रक्रम ।  
 तस्योदकेन संयुक्तं नस्यं तत्प्रतिबोधयत् ॥  
 मरिचेन समायुक्तं हन्ति तन्त्रा प्रलापकम् ॥३३००॥  
 र चि, र क, सायबस, चि र म, र सु, दो, भै र, र दी, र का, यो म, र सि, र स, ४ रा, ३ क, सजिपाते ।  
 र स अञ्जनरसः, व ॥ महागन्धसूर्यरसः, ३ क ज्वरा-कुश इति नाम ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी मीलनकजली-कर एकगण्टाशले लहसुनके रससे १ पहर घोटकर रसछोड़े । इसको लहसुनके रसमें मरिचे साथ घोटकर नम्यदेनेसे तन्त्रा और प्रलापको यह दूरकरताहै ॥ ७१७ ॥

## ७१८ मौक्तिकरूपप्रयोगः

कटुकीर्णेरिकाभ्याञ्च मुक्ताभस्म तथैव च ।

वीजपूरस्य तोयेन ताम्रं तद्वत्समाक्षिरम् ॥ ३३०१ ॥

र का., र. सु., हिकाभासयो. ।

भाषा—उटकी और गेरुकेसाथ मोतीकीभस्म तथा बिजो रेके रसेसाथ सोनामाखी और ताम्रभस्म देनेसे हिका और भास नष्टहोते हैं ॥ ७१८ ॥

## ७१९ मौक्तिकरसायनम्

जयन्तीरससम्पिष्टं शुक्रपिच्छेन मारितम् ।

मौक्तिकं रसमात्रं हि द्विगुणं स्वर्णभस्मकम् ॥ ३३०२ ॥

त्रिगुणं कान्तजं भस्म ब्योमसत्त्वं चतुर्गुणम् ।

दत्त्वा च गन्धसौभाग्यं भृङ्गवरेण भाषितम् ॥ ३३०३ ॥

पुटेद्विशतिवारणि विद्राव्य पट्गालितम् ।

सर्वतुल्येन यलिना रसेन कृतरुज्जलीम् ॥ ३३०४ ॥

विद्राव्य पूर्ववद्भस्म मुक्तादीनां विनिःक्षिपेत् ।

विभिन्नं निक्षिपेत्तत्र क्षीरं छागीसमुद्भवम् ॥ ३३०५ ॥

संशोषितं विचूर्ण्यांश्च काचकृष्णं विनिःक्षिपेत् ।

पिप्पलीमधुना सार्द्धं सेवितं घल्लमात्रया ॥ ३३०६ ॥

रसायनविधानेन कुरते वत्सरेण हि ।

घल्लोपलितनिर्मुक्तं धातुकेन विवर्जितम् ॥ ३३०७ ॥

नयनद्वयसम्पर्शं शतायु क्षान्तशालिनम् ।

दिव्यभ्रवणसम्पर्शं मत्तवन्ति यलावृतम् ॥ ३३०८ ॥

विधादे जयदं नित्यं धीर्धैर्यविनयान्वितम् ।

लीढं मन्वाज्यतैलेष्व कणोपेताभ्यगन्धया ॥ ३३०९ ॥

क्षयरोगं निहन्त्येव मण्डलाऽर्द्धेन निश्चितम् ।

तत्तद्गोणानुपातैश्च निहन्ति सरुलामयान् ॥ ३३१० ॥

बन्ध्यापुत्रप्रदं ह्येतत्सुति कामयनाशनम् ।

वालानां परमं पथ्यं घृष्यमायुष्यमुत्तमम् ॥ ३३११ ॥

नागोदरोपविष्टश्च हन्ति स्त्रीणाञ्च वेगतः ।

हृयङ्गवीनसंयुक्तं तथराजेन संयुतम् ॥

गर्भिणीसर्वरोगेषु प्रशस्तं परिकीर्तितम् ॥ ३३१२ ॥

र बृ., रसायने ।

भाषा—जैतरेसमपिसेहृयङ्गवन्धक के योगसे मारीहुई मोतीकीभस्म ६ भाग और उसीतह मारीहुई स्वर्णभस्म २ भाग, कान्तलोहभस्म ३ भाग, अन्नरसत्त्वभस्म ४ भाग, शुद्धगन्धक और सुहागा ४-४ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर अदरख केरखी २० भावनाए देवे । सुहाकर आतशीशीशीमे अथवा लोहेकी कड़लीमे गलाकर पपटीबनाय कपड़छानचूर्णकरे । फिर सबकी बराबर शुद्धपारे और गन्धककी नीलमणिकजलीकर पपटीबनाय कपड़छान चूर्णकर पूर्वराशिमें मिलावे । इनदोनोंको मिलाकर १-२ पहर सुरा मर्दनकर बकरीके दूधसे १-२ रोज मर्दनकर ३-३ रस्तीकी मोलिया बनाकर अथवा चूर्णकर रखलोहे । इसमेंसे १-१ गोली अथवा ३ रस्तीचूर्णको रसायनविधिसे एकवर्षभर खानेसे बली,

पलित और खुदापेका नाशहोताहै । दोनों नेत्रोंकी ज्योति फिसे आतीहै सौवर्षकी आयु होतीहै । दिव्यज्ञान, ध्वज, बल, बुद्धि, धैर्य, विनय, इनमें युक्त होताहै । विधादमें अजेय होताहै । रोगप्रशमनार्थ प्रयोगकरना हो तो मधु, घी, तैल अथवा पीपल और अथगन्धककेसाथ खानेसे २५ दिनमें क्षयरोगकी दूरकरतीहै और तसरीहरानुपातकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरतीहै । बन्ध्या पुत्रको प्राप्तकरतीहै । सुप्तिका रोगोंसे निर्मुक्तहोतीहै । बालकोंके लिये बहुलगुणकारकहै उत्तमवृष्य और आयुष्यहै । त्रियोंके नागोदर और उपविष्टको बहुतबन्दी दूरकरताहै । मक्खन और वंशलोचनकेसाथ देनेसे गर्भिणियोंके समस्तरोग दूरहोते हैं ॥ ७१९ ॥

सर्वेशानदयालावेन रसयोगाऽन्धौ निरस्याऽजनि,  
नानादेशविदेशजायुभिर्पजां विज्ञानराश्याऽश्रयम्  
धित्वा विघ्नभरेण मध्यसमये किङ्कृत्याश्चन्यतां,  
यातामाशु हृत्प्रपन्नरचिते ग्रन्थः पथ्याऽवधिः ॥

## अथ यकारादिस्ताः ॥

## १ यकृतप्लीहारि लोहम्

हिङ्गूलसम्भवं सूतं गन्धकं लौहमन्नकम् ।

तुल्यं द्विगुणताम्रन्तु शिला च रजनी तथा ॥ १ ॥

जयपालं दङ्गणञ्च शिलाजतुसमं रसात् ।

एतत्सर्वं समाहृत्य चूर्णाकृत्य विभिन्नयेत् ॥ २ ॥

दन्तो निवृद्धिनरुद्धं निर्गुण्डी ज्यूपणं तथा ।

आर्द्रकं भृङ्गराजञ्च रसेर्पात्रं पृथक्पृथक् ॥ ३ ॥

भाषयित्वा घटीं कुर्याद्द्वाराऽस्थिमितां भिषक् ।

प्लीहानं यकृतञ्चैव चिरकालानुयन्धनम् ॥ ४ ॥

एकजं द्वन्द्वजञ्चैव सर्वदोषभयं तथा ।

हन्त्यादप्रेदराणीह ज्वरं पाण्डुञ्च कामलाम् ॥ ५ ॥

शोथं हलीमकं हन्ति मन्दाश्रित्वमरोचकम् ।

यकृतप्लीहारिनामेदं लीहं जगति दुर्लभम् ॥ ६ ॥

अ. र, घ, उदराधिकार ।

भाषा—हिङ्गुलसे निकालाहुआ पारा, शुद्धगन्धक, लोह और अन्नकम्प, शैवसिल, हल्दी, शुद्ध जमालगोटा, भुना सुहागा और शिलाजीत १-१ भाग, ताम्रभस्म २ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेसन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय दन्तीमूल, निशोत, विषक, निर्गुण्डी, त्रिकटु, अदरख, भागरा इतप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा काषोंसे १-१ भावना देकर बेरकीयुटलीके बराबर मोलियें बनाकर रखलोहे । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपातकेसाथ देनेसे बहुतदिनके, एक्ज, द्वन्द्वज, और सर्वदोषज प्लीहा और यकृत, उदररोग, ज्वर, पाण्डु, कामल, शोथ, हलीमक, मन्दाभि, अरोचक इतमनको यह नष्टकरताहै ॥ १ ॥

## २ यकृत्प्लीहोदरहरलोहम्

दिव्यौषधिहतं लौहं पुटितं पुटनीयम् ।  
प्लीहोदरविनाशाय दद्याद् द्वे द्वे पुटे पृथक् ॥ ७ ॥  
माणेन घण्टकर्णेन सूरणेनाऽधिकं पुनः ।  
अन्नकं निहतं कृष्णं सूतकं विधिमूर्च्छितम् ॥ ८ ॥  
लौहाऽर्द्धमन्नकं शुद्धं सूतमन्नाऽर्द्धभागिकम् ।  
त्रिगुणामयसश्चूर्णात्रिफलमन्नसंयुतात् ॥ ९ ॥  
द्विरष्टवारिणो भागमष्टशेषन्तु कारयेत् ।  
तेन चाऽष्टाऽवशेषेण समेनाऽऽज्येन यत्नतः ॥ १० ॥  
रसेन यद्वपुत्राया त्रिगुणक्षीरसम्मितम् ।  
अयसश्चाऽर्द्धभागं तु पूर्वं पाके विनि क्षिपेत् ॥ ११ ॥  
लौहमय्या पचेद्द्वयो पात्रे चायसि मृन्मये ।  
पचेत्पाकविधिब्रह्म युहिना मृदुना शनैः ॥ १२ ॥  
कन्दकार्पासिका चर्व्य विडङ्गं सषुहृदलम् ।  
शरपुष्पाञ्च पाठाञ्च चित्रकञ्च महौषधम् ॥ १३ ॥  
लवणानि च सर्वाणि सक्षारं वृद्धदाकम् ।  
वीप्यकञ्च तथा शीघ्रमायसाऽन्नसमं क्षिपेत् ॥ १४ ॥  
प्लीहोदरप्लक्ष्मणान्द्रुन्ति शस्त्राऽभिमि र्गिना ।  
प्रयोज्योऽयं महावीर्यं लोहो लौहविदां परैः ॥ १५ ॥  
भै र, ध, र र, र क, उदराधिकारः ।

भाषा—मैनसिल और अमलेनियार्क योगसे वारितर कियाहुआ और मानकन्द, हंस अथवा वयनहा, और रूणके रसकी १-१ भावना दियाहुआ लोह ९ तो, निधन्त्र कृष्णाऽन्नकमस्य १ तो, विधिपूर्वकमूर्च्छितकियाहुआ पारा आया तोला (रससिन्दूर) लेवै। फिर अन्नक और लोहमस्यसे त्रिगुनी निफलाकी १९ गुनेपानीमें उवाले। अष्टभागवशेष रहनेपर छानकर सीढीकोपेकदे। कायकी बराबर पी और शतावरीका रस और कायसे दूना गायकादूध, लोहमस्यमेंसे आधीलोह मस्य, डालकर मन्दअग्निसे पकावे। मावेका पानीजलब्रानेपर कल्ककी गोली बनने लगे तब उतारकर पहिली अवशिष्टमस्ये और सूरण, जगलीकास, चर्व्य, विडङ्ग, एण्डमूल, शरपुष्प, पाठा, चित्रकमूल, सोंठ, तमाम नषक और क्षार, विषारकी जड़, अनवाशन, घृहरकादूध, य प्रत्येक अवशिष्ट लोह और अन्नकके बराबर लेकर सबका वारीकचूर्णकर पूर्वपाकमें मिलाकर रखलोहे। इतमेंसे २ माशसे ४ माशेतककी मात्रा गरमजल-बगैरह समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे प्लीहा, उदररोग, यकृत, शुष्मश्वादिभि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २ ॥

## ३ यकृदरिलोहम् (प्लीहारि)

द्विकर्ष लोहचूर्णस्य चाऽन्नकस्य पलाऽर्द्धकम् ।  
कर्षं शुद्धं मृतं ताम्र लिम्पाकाऽद्वित्यं च पलम् ॥ १६ ॥  
मृगाऽजिनमस्य पलं सर्वमेकत्र कारयेत् ।  
नवगुञ्जा प्रमाणेन घटिका कारयेद्विषम् ॥ १७ ॥  
यावत्प्लीहोदरश्चैव कामलाश्च हलीमकम् ।

कासं श्वासं ज्वरं हन्याद्वलवर्णाऽभिराकरम् ॥  
यकृदरि त्विदं लौहं वातगुल्मविनाशनम् ॥ १८ ॥

र स, र वि, र च, भै र, र सु, उदररोगः ।

टि०—अत्र द्विकर्ष लोहचूर्णस्य चाऽन्नकस्य पलाऽर्द्धकमिति पाठेन साधारणतया लोहचूर्णं शुद्धमन्नकमिति प्रतीतिर्भवति परन्तु उभयोर्भेदेन श्रद्धीकृतम् । र स, र वि, र च, र सु, एषु ग्रन्थेषु द्विहारिनाश स्वतन्त्र पाठो दृश्यते तत्र अन्नकस्याने पारदगन्धकी नियोजिता अन्य त्वर्ष समानमस्तीत्यतोऽत्रैव पारदगन्धकगन्धकी प्रदाय एक एव रसो निष्पादनीयः । पारदगन्धकक तस्या अधिकत्वेन दाने क्षलभायो गुण वृद्धिस्तु सारमेवाऽस्ति, एकाग्रतासाध्य महत्त्वम् ।

भाषा—लोह और अन्नकमस्य २-२ कर्षं, ताम्रमस्य १ कर्षं, अमलताकी अड़कीछाल १ पल, मृगचर्मकीमस्य १ पल लेकर सबको इकट्ठेर अमिष्ठतासकीजड़की छालके कादेसे १-२ रोज मर्दनकर १-१ रसीकी गोहिया बनाकर रखछोडे। इतमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ लेनेसे प्लीहा, यकृत, कामला, हलीमक, कास, श्वास, ज्वर, बलवर्णाभिनाश, वातगुल्म इन सषको यह नष्टकरताहै ॥ ३ ॥

## ४ यकृद्वारणसिहरसः

सिन्दूरमन्नकं तालं लौहं कर्षप्रमाणतः ।  
माक्षिकश्चाऽभयाफवायै मर्दयेदतिपलतः ॥ १९ ॥  
यहमात्रां घटी कृत्वा छायाशुष्कां समाचरेत् ।  
यकृद्वारणसिहोऽसी रसो यद्विद्वन्तः ॥ २० ॥  
आ वि, उदराधिकारः ।

भाषा—रससिन्दूर, अन्नक हरिताल, लोह, सुवर्णमाक्षिक इनसबकी मस्यमें १-१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर होंकेकादेसे १-२ रोज मर्दनकर १-२ रसीकी गोहिया बनाकर छायाशुष्ककर रख छोडे। इतमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह यकृत रोगको दूरकरताहै और तपदोगहरानुपानकेसाथ देनेसे कासश्वादादिको नष्टकरताहै ॥ ४ ॥

## ५ यक्ष्मदावाऽभिरसः

सुतगन्धरयिमौक्तिकं समं  
अष्टवेरदहनाऽभिमर्दितम् ।  
सुततुल्यरविसम्पुटाऽऽवृत्तं  
पूर्ववद्भवति यक्ष्मिणां हितम् ॥ २१ ॥

र, स्याऽधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रमस्य, मौक्तिकविटी सबसमभाग लेकर अदरश तथा चित्रककेस्वरस और मिलावेके तेलसे १-१ रोज मर्दनकर गोलाबनाय पारेकीबराबर शुद्धतावेके सम्पुष्टमें बन्दकर ६-७ कपडमीटी दकर गजपुटकी आचदे। स्वाश्रयौतलहानेपर निकालकर तावक सम्पुटकी जितनी मस्य होगईहो उससबको मिलाकर पूर्वक बराबर शुद्धपारा और गन्धक मिलाकर अदरश बगैरहके रसोंसे पूर्वक मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुष्टमें बन्दकर ६-७ कपडमीटी देकर गुश्नेर पूरे गजपुटकी आचद। स्वाश्रयौतल होनेपर निकालकर रखछोडे।

इसमेंसे १-१ रत्ती समयोचितानुपानकेसाय देनेसे यह राज-  
यक्षमको दूरकरताहै ॥ ५ ॥

६ यक्षमशत्रूरसः ( महदग्निकुमारः )

स्वर्णं ताघ्रं पारदं चाऽष्टमात्रं

गन्धाद्वागाः षोडश स्युश्च शुद्धात् ।

सर्वं खल्वे न्यस्य भाव्यं दिनेकं

पार्थक्येन च्योपलुङ्गाऽऽर्द्रकाऽद्भिः ॥ २२ ॥

बहिद्राचैस्त्रैफले भृङ्गसारा

कन्याग्भोभिः शोणकपांसिपुष्पैः ।

ब्राह्मीमुण्डोन्मृष्टाणितालीसमुत्ता-

भृङ्गस्माण्डोन्दीवरीवारिणा च ॥ २३ ॥

गुञ्जायीजैः कज्जलीं काचकूप्यां

क्षिप्त्वा किञ्चिद्दृष्ट्वाऽप्यत्र देयम् ।

पार्व्यं यामान् षोडशैर्वै प्रयत्ना-

त्सिद्धः सूतो जायते यक्षमशत्रुः ॥ २४ ॥

ताम्बूलीनां पत्रयुग्मे लघ्वङ्गैः

सार्यं प्रातः सप्तभिः सेवनीयः ।

अग्नौ मन्दे माकते क्षीणवैहे

कासे भ्वासे रोगराजे प्रशस्तः ॥ २५ ॥

वर्ज्यश्चाऽस्मिन् प्रायशो भोज्यमापा-

स्तेर्लं तीक्ष्णं राजिकामत्स्यमांसम् ।

अश्विभ्यां वै पण्मुखे चोपदिष्ट-

स्ताभ्यामुक्तस्तारकानायकायै ॥ २६ ॥

रसायनसः, अमिमात्रे ।

भाषा—सुवर्ण और तापमस, शुद्धपारा ८-८ भाग, शुद्ध-

गन्धक १६ भाग लेकर सबझी नीलवर्णकजलीकर निकुड़,  
बिजोरा, अदरक, चित्रक, त्रिफला, मगरा, धीकुंमार, लाल-  
कपासकेफूल, ब्राह्मी, गोरखमुण्ड, इन्द्रायण, तालीसपत्र, केवाच,  
काष्ठविदारी, शतावर, सफेदगुञ्जाकेबीज इनप्रत्येकके यथासम्भव-  
स्वरस अथवा कार्योंसे १-१ रोज भावना देकर मुसकर फिरसे  
कज्जलीवनाय ६-७ कड़मिष्टीदीर्घ आतशीशीशीमें भरके  
ऊपरसे पिसाहुआगुहागा १६ वा हिस्सा डालकर वाङ्गकायन्त्रमें  
रखकर १६ पहरकी मन्द आचसे पकाये । शीशिकासुह  
एकदम बन्दहोजाय तो गरम शलाकाले खोलदे पर हरक  
शलाका न डाले क्योंकि गन्धक जारणकरना अभीष्ट नहींहै ।  
स्वाशशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकी  
मात्रा दो पान और ३ लवत्रके बीजमें रगकरदे । ऐसे सार्यं  
प्रातः दोनोवक देनेसे मन्दाग्रि, वातक्षीणता, कास, श्वास,  
राजयक्ष्म इनसबको यह नष्टकरताहै । इसमें उड़द, तैल, तीक्ष्ण-  
पदार्थ, राई, मछली और गोसे परहेज करे ॥ ६ ॥

७ यक्षमहरसः

शुद्धसूतविपके च हाटकं गन्धकेन सहितं सप्तांशकम् ।  
मर्षं चाऽऽर्द्रकर-नेन चित्रकैः प्रक्षिपेच्च सुष्टे सुमाजने

ताम्रभाजनमथोपरिस्थितं रोधयेत्पट्टमुदा सदैव हि ।

याममात्रं पुटितं शनैःशनैर् निक्षिपेच्च जलमूर्द्धभाजने ॥

ताम्रपात्रकुहरे रसां भवेद्योगराजविनिवर्हणक्षमः ॥ २८ ॥

र. प्र सु, र. चं, राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा और बज्जनाग, सुवर्णमस, शुद्धान्यक  
समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर अदरक और चित्रकके स्वरसों-  
से १-१ रोज मर्दनकर मजबूत मिट्टीके घड़ेमें डालकर ऊपर-  
तावेका बर्तन रख दोनोकी सन्धि बन्दकर चूल्हेपर बड़ाय एक  
पहरकी मन्द आचदे । ऊपरके बर्तनमें पानीभरदे । स्वाशशीतल  
होनेपर समुद्रको खोलकर रसको निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे  
१-१ रत्ती उचितानुपानकेसाय देनेसे यह उपद्रवसहित राज  
यक्ष्मको नष्टकरताहै ॥ ७ ॥

८ युवतिलीडारसः

एकभागश्शुद्धसूतो माक्षिकं गन्धकस्तथा ।

विपं ताघ्रं नेत्रसहस्रं द्विगुणं शुद्धमन्नरुम् ॥ २९ ॥

द्वौ भागी नागवङ्गाभ्यां सारभस्म त्रिभागिकम् ।

जातीफलस्य भागौ द्वौ तद्वद्वां जातीपत्रिका ॥ ३० ॥

त्रिकटोश्च त्रयोभागाश्चातुर्जातं च तुल्यकम् ।

ज्योतिष्मत्याश्च द्वौ भागी त्रिगुणं हेमयीजकम् ॥ ३१ ॥

मर्कट्यशोकवीजञ्च चिडङ्गं मृत्तिभागिकम् ।

कुष्ठञ्च शिमुवीजानि भृङ्गवीजञ्च तत्समम् ॥ ३२ ॥

चन्द्रसहस्रं चाजमोदं दीप्यकञ्चैकभागिकम् ।

प्रियालं यदरीजीरी कदम्बं नारिकेलजम् ॥ ३३ ॥

चन्दनं मधुकोशीरं दशभागं पृथक्पृथक् ।

शुद्धचीसारभागेकं विदारी मुशलीधुरम् ॥ ३४ ॥

मधुपट्टिश्चाऽथगन्धा कोकिलाक्षणि धान्यकम् ।

शतावरी च कदली शीरीषं शाकमलीभवम् ॥ ३५ ॥

टङ्गुणं रविपुष्पाणि खर्बुरोर्वारुणीजकम् ।

रक्ताऽथमारपुष्पाणि दशपट्टोऽष्टांशकम् ॥ ३६ ॥

अपामार्गस्यैकमागस्त्रिफला च त्रिमागिका ।

सर्वं सूक्ष्माकृतं चूर्णं खल्वमध्ये चिनिःक्षिपेत् ॥ ३७ ॥

भावना गव्यदुग्धेन विदारीद्रवकेण च ।

नारिकेलोदकं भाव्यं शाकमलीसारभावितम् ॥ ३८ ॥

रम्भासारेणेशुरसैः कृष्णोष्णचरसैः क्रमात् ।

अलर्कं पलमात्रन्तु छायागुच्छञ्च मेलयेत् ॥ ३९ ॥

शर्करासर्पिणा युक्तमपराद्धं च भक्षयेत् ।

पथ्यञ्च क्षीरमाज्यञ्च शर्करा कदलीफलम् ॥ ४० ॥

नारिकेलं प्रियालञ्च खर्बुरं पनसन्तथा ।

पतानि पथ्यान्याहारे च्वजोन्मृशयः प्रजायते ॥ ४१ ॥

शुक्रवृद्धिकरं श्रेष्ठं युवतीशतसङ्गदम् ।

महामोहकरं चक्षुं रतिदं मदकारकम् ॥ ४२ ॥

अश्ववेगयुतं कृत्वा महारतिसुखप्रदम् ।

रामारञ्जनकारित्वात्क्रीणामत्यन्तमोक्षप्रदम् ॥ ४३ ॥

नष्टेन्द्रियत्वं मेहत्वं मृत्राघाताऽश्मरीरुजम् ।  
 योनिदोषं रजोदोषं लिङ्गसङ्कुचितोच्चितम् ॥ ४४ ॥  
 क्षयञ्च रक्तपित्तञ्च वातरक्तमण्डूदरम् ।  
 हन्ति पाण्डुञ्च ग्रहणी शूलं सर्वाऽतिसारकम् ॥ ४५ ॥  
 नराणां तनुते पुष्टिं सर्वव्याधिधिनाशकः ।  
 नास्त्रा युवतिलीलाद्यो रसः पुष्टिरुरः परः ॥ ४६ ॥  
 र. क. यो बाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा, सोनमाखी और गन्धक १-१ भाग, शुद्धयक्ष्माग, ताम्र, अज्रक, नाग और वज्रभस्म २-२ भाग, रजतभस्म ३ भा, जायफल २ भा, जावित्री १ भा, त्रिकुट ३ भा, चातुर्जात, सुत्यभस्म, मालकापनी २-२ भाग, शुद्ध धतूरेकबीज ३ भा, केनाच और अशोककेबीज, विडङ्ग, कुङ्कु, सहिजन और भगरेकबीज, अजमोद, अजनाइन १-१ भाग, चित्तौजी, बेल्कीमन्ना, जीरा, कदम्ब, नारियल, सफेदकन्दन, देशीमुलहठी, खस ये प्रत्येक १० भाग, गिलोयसत्त्व, विदारी-कन्द, मुसली, गोखरू, मुलहठी (हरली), असगन्ध, तालम खाना, धनिया, शतावर, केला, सिरस और सैमल क बीज, भुनासुहागा १-१ भाग, आकनेकूल १० भा, छुआआ और ककड़ीकेबीज ६-६ भाग, सालकनेरकेकूल १६ वा हिप्पा, अवामार्ग १ भा, त्रिफला ३ भा, लेऊर सफा वारीकपूर्णर पोरिगन्धकी नीलवर्णकजलीमें मिलान्न गायकाष्ठ, क्षीर विदारी और काष्ठविदारी, नारियल, मोचरस, केलेकाष्ठ, ईल, कालाधनूरा, कनकेय्यासम्भव स्वरस अथवा बाधोसे १-१ भावना दवर सफेद आकनीमङ्गीछाल १ पल मिलाकर डेढ १ भासा कीमात्रा धार और पीनेसाथ शामको खाय । पण्यमेंदूध, घी, दाऊर, बेले, नारियल, चित्तौजी, छुहारे और कटहलखाये । इसकेलेवनसे ध्वज और छुककीद्विदोतीह । उत्तम बाजीकर-णहै । मोह और वरयको करनेवालाहै । रति और मन्त्रो कर-ताहै । नष्टेन्द्रियत्व प्रमेह, मृत्रापात, पथरी, योनिरोग, रजोदोष, लिङ्गसङ्कुच, क्षय, रक्तपित्त, वातरक्त, रक्तप्र-दर, पाण्डु, ग्रहणी, शूल, तमस्त अतिहार इत्यादि समस्त रोगोंको दूरकरिष्योको अत्यन्त आनन्ददायक होताहै । तत्सम्पन्नप्रयोगकरना हो तो उसात्रिको अन्न न खाये ।

९ योगराजगुगुलुः ( प्रथमः )

नागरं पिप्पली चर्व्य पिप्पलीमूलचित्रको ।  
 भृष्टं हिङ्गयजमोदञ्च सर्पं जौरकद्वयम् ॥ ४७ ॥  
 रेणुकेन्द्रययाः पाठा विडङ्गं गजपिप्पली ।  
 कटुकाऽतिपिपा मार्द्धं चया भूर्तेतिमागतः ॥ ४८ ॥  
 प्रत्येकं शाणिकानि स्युर्द्रव्याणीमानि विरसितः ।  
 द्रव्येभ्यः सकलेभ्यश्च त्रिफला द्विगुणा भवेत् ॥ ४९ ॥  
 एभिर्भूर्णैरुतैः सर्वैः समो देपस्तु गुग्गुलुः ।  
 एतं रौप्यञ्च नागञ्च लोहं सारं तथाऽञ्चकम् ॥ ५० ॥  
 मण्डूरं रससिन्दूरं प्रत्येकं पलसप्तमितम् ।  
 गुडपाकसमं बुयोदिमं दद्याद्यथोचितम् ॥ ५१ ॥

एकपिण्डं ततः कृत्वा धारयेद्दत्तभाजने ।  
 गुटिकाः शाणमात्रास्तु कृत्वा प्राप्ता यथोचिताः ५२  
 गुग्गुलु यौगिराजोऽयं त्रिदोषघ्नो रसायनः ।  
 मैथुनाऽऽहारपानानां त्यागो नैवाऽत्र विद्यते ॥ ५३ ॥  
 सर्वान्यातामयान्कुष्ठान्पृथोसि प्रहणीगदम् ।  
 प्रमेहं वातरक्तञ्च नाभिशूलं भगन्दरम् ॥ ५४ ॥  
 उदावर्तं क्षयं गुल्ममपस्मारमुरोग्रहम् ।  
 मन्दाग्निश्वासकासाश्च नाशयेदरुचिं तथा ॥ ५५ ॥  
 रेतोदोषहरः पुंसां रजोदोषहरः स्त्रियाम् ।  
 पुंसामपत्यजनको वन्ध्यानां गर्भदस्तथा ॥ ५६ ॥  
 राक्षादिकायसंयुक्तो धिषिधं हन्ति मारुतम् ।  
 काकोल्यादिष्टतात्त्विकं कफमारुधधादिना ॥ ५७ ॥  
 दार्यर्भृतेन मेहान्श्च गोमूत्रेण च पाण्डुताम् ।  
 मेदोवृद्धिञ्च मधुना कुष्ठं निम्नभृतेन वा ॥ ५८ ॥  
 छिन्नाकायेन वाताऽयं शीघ्रं शूलं कणाभृतात् ।  
 पाटलाकायसहितो विषं मृषिकञ्च जयेत् ॥ ५९ ॥  
 मिफलाकायसहितो नेत्राऽस्ति हन्ति क्षारणम् ।  
 पुनर्नयादेः कायेन हन्यात्सर्वांश्चरण्यपि ॥ ६० ॥

छा. सं. रसायन सं. ना वि, ध, र कि, ह मा, यो. त, वातादिरोगे ।

टि०—ना रि, ध, र कि, ह मा, या त इत्यादिषु ग्रन्थेषु धातु-  
 रिति पाठोऽस्ति । रसकिशोरे भाष्यं अत्रे " क्वा मुक्तां च वक्कन् । देव  
 दासके कुड राक्षा मुक्ता च सैवमुक्ता ॥ पल त्रिकोटक पथ्या पथ्य  
 कञ्च विरहितकम् । भास्त्री त्वचमुशीरञ्च वक्कन्नादोऽस्तिगन्धपि । यन्नि  
 समभाषाणि मूल्यवृत्तानि वारयेत् । वाक्कन्नेनानि वृत्तानि तावदेवाऽत्र  
 गुग्गुलु " इतिपाठो हस्त्ये तत्र पलराशेन मदनकल प्रकन्त । पथ्या  
 निर्भीतवाधारीनां शूद्रोपादिगन्ध्यावेन स्वप्ननामप्रहणाक्रान्तिना  
 लक्षणे सतिविदित्यास सर्वेवहातदुप्य किं वा सहात्मना भवति,  
 केवलगुग्गुलुनेन सर्वसम्पत्ताऽस्ति इति विशेषस्थान एवमेव योग  
 स्वीरणीय । नागरादीनां श्लेष्क पञ्चगोत्रपरिनिर्माणां सहाते कर्मि  
 कारपत्न्यम्, पुनर्वैवृत्त, म्पुनवारपत्नी, भेनप्रिदन्त, निम्नपक्व,  
 व्यापिक, इसरी इति सप्तवृत्ति प्रत्येक दशानेभ्यरितिनामि ।  
 रद्रवास्तिवायुल वक्कन्नेन च प्रत्येक विरानिगोत्रपरिनिर्माणा इत्या  
 स्तानुमात्रं नय योपात्र नियन्त्रयम इत्यरि एवम्पण । अथञ्च योगेन  
 म्ययोगाऽऽप्यधिकतमगुणवदोऽस्ति, अनवर मुक्ता सर्वेऽपि वदोऽ  
 मितापिमे वैवा इय योग निम्नरपत्तिनि विरानुमात्रक प्रवेना ।  
 अन्त्यन्ते मैथुनाऽऽहारपानानां त्यागो नैवाऽत्र विद्यते इति विरि  
 हस्त्ये पलन्तु वज्रपुष्टियोगे इदं न सहाच्ये, प्लासेविन वक्कन्नाद  
 सेवायां मित्रे प्रत्यवदृष्ट्या, तथाच क्वाऽऽहकारिर्वावेनमात्रं कर-  
 नीयम् । वज्रपुष्टियोगे वृ यवर्णिते रत्नवैवर्तऽस्ति, इति विरि  
 मिर्भयवृत्त्य प्रयोग करनीय ।

भाषा—सौंद, योषत्र, चर्व्य, पिप्पलीमूल, चित्रक, मुना-  
 होंग, अजमोद, पीलीसर्गो, ह्वाहगकेदरीरा, रेणुका ( रौप  
 पहापी ), इन्द्रजव, पाठा, विडङ्ग, गजरीपल, कुट्टरी, अजीग,  
 भार्जो, वक्, मुक्तां ( मरोदकरी ), १-१ टङ्क, एवमे द्वी-  
 त्रिष्टम, इनवक्की बत्तार दुन्दुब्यूल, वज्र, रजत, नग, लोह,  
 कोबड, अज्रक, यङ्गर इनदीमन्ने तथा रत्नकिन्द १-१ पल

लेकर गिलोय अथवा दशमूलकेवायमे गुगुलको पकाकर छानले और फिरसे गुड़की चाशनीके सट्टा पकाकर सबचीजें मिलाकर ४-४ माशेकी गोलिया बनाकर धीके बर्तनेमें रखलोहे, यह शाश्वतका सिद्धान्त है । परन्तु स्वचित्रप्रयतिप्रयोगोंमें विशुद्ध गुगुलको ऊखलप्रयतिमें गोपूतकेसाय यहसक कुटवाना कि उसका द्रवहोजाय फिर इसमें ऊपरके चूर्णको धीरे २ ढालकर कूटाजाय । समस्तवस्तु मिलजानेपर पूर्ववत् गोलिया बनाकर रखलोहे । इसतरह इसका विधान मिलताहै पर इतनीहीविधिसे इसे तैयार न समझना । सबचीजें मिलजानेपर लोहेके खरल्ले लोहेकी मुसलीसे ६-७ रोज मर्दनकराना जिसमें कि गुगुल और दवाओंका सुदापन कोशिशकरनेपरभी मालूम न हो । इसमें माना ४ माशेकी लिली हुई है तो धातुरहितकी सम्भन । शाश्वतकरने इसका छुलासा नहीं किया यह उनका भारी भूलहै क्योंकि उनके लिले मुताबिक पाठसे गुगुल बगैरह इष्य और धातुएं लगभग समप्रमाण होजातीहै । इसकी ४ माशेकी मात्रा आजकलके जमानेमें धातुयुक्तगुगुलकी तो दफिनार केवल गुगुलकी इतनीमात्राको कोई सहन नहीं कर सकता । इसलिये इसकी अधिकसे अधिक १ माशेकी गोली होसकौहै इसेभी सवलोग सहन नहीं करसके अनः ३-३ रतीकी गोलिया बाधनी चाहिये और धातुरहित गुगुलकी २ माशेकी गोलीसे अधिक नहीं बाधना । अपवादरूपसे कोई ४ माशेकी गोली कदाचित् इन्मकरसके पर इससे सबके लिये ४ माशेकी गोलीका प्रमाण बाधना अनुचितहै । इससे सेवनमें मैथुन, आहारपानादिकके परहेज करनेकी आवश्यकता नहीं बनाईहै परन्तु यह धातुरहितके प्रयोगमें समझना । धातुरहितके सेवनमें कमसेकम ककारादिबर्ण का त्यागकरना अत्यावश्यक समझना । इसकी १-१ गोली समयोचितानुपानकेमाय लेनेसे समस्तवातविकार, कुष्ठ, अर्श, प्रहृणी, प्रमेह, वातरफ, नाभिसुल, भगन्दर, उदावर्त, क्षय, शुल्म, अपस्मार, ऊर्ध्वतम, मन्दग्राहि, श्वास, काष्ठ, अरुचि, शुक्र और रजोदोष, क्री तथा पुरुषका बन्धनत्वदोष, इससबकी यह नष्टकरताहै । दिग्दर्शनाय अनुपानोकीकल्पना नीचेलिखे प्रकारसे करना । रात्रादिवायुके सायमानातरहकेवातविकार, काशोत्थादिके पित्तविकार, आरम्भवादिसे कफविकार, दाहदल्दीका वाटेमें प्रमेह, गोमूत्रमें पाण्डुता, मधुने मेदोद्विदि, निम्बपत्राहके वायसे कुष्ठ, शुद्धीके कायसे वातरफ, पीपलके काटेसे शोफ और दूध, पाटलेकायसे चूहेकाविष, थिफलाके कायसे नेत्रोंकी भयकररीडा, पुनर्वादिवायुमें समस्त उदररोगोंको यह नष्टकरताहै । इसतरह जहां जैसी औचित्य हो वहापर अनुपानकायोग वैय अपनीगुदिकेकर ॥ ९ ॥

### १० योगराजगुगुलः ( द्वितीयः )

त्रिफला त्रिफला पाठा शताहारा रजनीद्वयम् ।  
अजमादा चवा टिहु ह्युषा हस्तिपिप्पली ॥ ६१ ॥  
उपकुक्षिका शर्दी धान्ये पिष्टं सौषर्बलतथा ।  
सम्भयं पिप्पलीमूलं त्वगेला पत्रकेसरम् ॥ ६२ ॥

फणिज्जकञ्च लौहञ्च सर्जकञ्च विकण्टकम् ।  
राक्षा चाऽतिविषा शुण्ठी यक्ष्माऽऽम्लवेतसमा ॥ ६३ ॥  
चित्रकं पुष्करञ्चयं वृक्षाम्लं दाडिमं ख्युः ।  
अश्वगन्धा त्रिवृहन्ती बदरं देवदारु च ॥ ६४ ॥  
हृदिद्रा कटुका मूर्वा प्रायमाणा दुरालभा ।  
विडङ्गं मृतवङ्गञ्च यमानी वासकोऽम्रकम् ॥ ६५ ॥  
पतानि समभागानि शृङ्गचूर्णानि कारयेत् ।  
शोधितं गुग्गुलुञ्चैव सर्वचूर्णसमं नयेत् ॥ ६६ ॥  
घृतेन कुट्टयित्वा च स्निग्धे भाण्डे निधाययेत् ।  
रसवातेन ये भग्नाः कटिभग्नाश्च ये जनाः ॥ ६७ ॥  
एकाङ्गं शुण्पते येपानं कुणं वाऽपि क्षतोत्तरम् ।  
पादौ विस्तारितौ येपानं येपानं वा शृङ्गसीप्रहः ॥ ६८ ॥  
सन्धिवातं कौटुशीर्षं वातं सर्वशरीरगम् ।  
अशीर्षं वातजाग्रोगांश्चत्वारिंशच्च पेक्षिकाम् ॥ ६९ ॥  
विंशतिं श्लेष्मिकांश्चैव हन्त्ययश्च न संशयः ।  
अयं बृहद्योगराजगुगुलुः सर्वयातहा ॥ ७० ॥  
३. १, आमवाताधिकारः ।

भाषा—त्रिफला, त्रिफला, छोटी और बड़ी पाठा, सोंफ, वेसी और रूमी, हल्दी, दाहदल्दी, अजमोद, वच, मुनीहिंग, साजकीपत्ती या फल, गजपीपल, कालीजीरी, मंगरेल, कबूर, पनिया, विडनमक, संघल, सैन्धव, पिपलामूल, तज, इलायची, पत्रज, केशर, मरवा, लोहभस्म, राल, गोमक, राक्षा, अनीस, सोंठ, यवशार, अमलवेत, चित्रक, पोहडरसूल, चन्च, कोकम, अनार, एरण्डीबड़, असगन्ध, निमोत, दन्तीमूल, बेरडीछाल, देवदार, हल्दी, कुटकी, मरोडफली, प्रायमाण, जवासा, विट्, ब्रह्मभस्म, अजवाइन, अइसा, अन्नभस्म ये प्रत्येक समभाग लेकर बादीकचूर्णकर ऊखलवगैरहमें शुद्धगुगुलको ढालकर गोपूत देकर द्रवहोनेतक कुटवाकर सबचीजोंके चूर्णको पोछा पोछा मिलाकर कुटवावे । अन्तमें ३-३ रोज मर्दनकराके बिकने बर्तनेमें रखलोहे । इसमेंसे १ माशेसेलेकर २ माशेतक उचितानुपानकेसाय देनेसे आमवात, कटिवात, एकाग्ररोष, कुष्ठ, उर क्षुण्ण, छात्रता, कुष्ठरी, सन्धिवात, प्रोपुशीर्ष, समस्तशरीरस्थवातविकार, ८० प्रकारकी वातभ्याधि, ४० पित्तोग और २० कफरोगोंको यह नष्टकरताहै । तत्तद्योगहरानुपानकेसाय समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ १० ॥

### ११ योगराजरसः

त्रिफलायास्त्रयो भागास्त्रयस्त्रिफलाकटुस्य च ।  
भागाधिरकमूलस्य विडङ्गानां तथैव च ॥ ७१ ॥  
पञ्चाऽस्मजनुनांभागास्तथा रूप्यमलस्य च ।  
माक्षिकस्य च शुण्डस्य लौहस्य रजस्तथा ॥ ७२ ॥  
अष्टौ भागाः सितापाश्च तत्तथैव गृह्यमूर्णितम् ।  
माक्षिकेणाऽऽप्लुतं रूपाय्यमायसे भाजने गुम्भे ॥ ७३ ॥  
उदुम्बरसमां मात्रां ततः खादयिष्याऽग्निना ।  
दिनेदिने प्रयुञ्जीत जीर्णं मोक्षं यदीक्षितम् ॥ ७४ ॥

वर्जयित्वा कुलस्थानि काकमाची कपोतकम् ।  
योगराज इति ख्यातो योगोऽयममृतोपमः ॥ ७१ ॥  
रसायनमिदं श्रेष्ठं सर्वरोगहरं शिवम् ।  
पाण्डुरोगं विर्यं फासं यस्मात्तं विषमज्वरम् ॥ ७६ ॥  
कुष्ठान्यजर्णकं मेहं शोषं भ्यासमरोचकम् ।  
विशेषाद्वैद्यपुस्तके कामलां गुदजानि च ॥ ७७ ॥  
च स, अ ह, र प्र, ग नि, टो, वै द, वै चि, र र सो  
र, अ स, र च, व यो त, वै क, लो, प, ई चा, नि र, र  
धु, यो म, ना वि., पाण्डुकामलाधिकारे ।

दि०—गदनिमेषे “मुस्ताकण्डिलोर्भागे देवधापि पुष्कलम्,  
हृत्पिक पाठो दृश्यते । लो प अयमजुस्थाने भण्डू निबोधितम् ।  
चरके “ताप्याऽपि चतुर्य्याऽप्योमला पञ्चमला दृश्यः । विषकविषका  
भ्योषविद्धे पाक्षिके सह ॥ शफराऽऽलोनिम्भा चूर्णिता गधना  
प्लुता ।, हृत्पाकारेण योग विविध्य त्रिजवायास्यो भागा हृत्पलता  
हिल्लितम् । तत्र शाकान्तरात्वा न अस्मिन्नेष्येपरिहृष्टिद्वयेव त्रिज  
लायास्यो भागा हृत्पादिना विवरणं श्रुतमस्ति । र च ताप्यादियोगः ।

भाषा—त्रिफला, त्रिकटु, चित्रक, विडङ्ग ३-३ माग,  
शुद्धशिलाजीत, रूपामाली, सोनामाली, लोहमसम् ५-५  
भाग, शकर ८ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर मधुमें मिलाकर  
लोहेकेपात्रमें रखकर ६-७ रोज धान्यराशिमें रखछोड़े । इसमेंसे  
अमिषल देखकर ३ माहोत्ते १ तोलेतककी मात्रा प्रतिदिन  
सेवनकरे । जीर्णहोनेपर कुलधी, मकोय और बबुलको छेक  
कर इन्जानुसार भोजनकरे । यह अमृतसरसयोगहै समस्त  
रोगोंको नष्टकर रसायनकेफलको देताहै । पाण्डु, विष, कास,  
राजयक्ष्म, विषमज्वर, कुष्ठ, अजीर्ण, प्रमेह, शोथ, भ्रास,  
अरुचि, कामला, बवासीर इनको यह नष्टकरताहै विशेषतया  
अपस्मारको दूरकरताहै ॥ ११ ॥

## १२ योगराजलोहम्

त्रिफला धातुचीवीजं भृङ्गराजकटुत्रिकम् ।  
शुद्धच्येडगजाधीजं केशराजं समुस्तकम् ॥ ७८ ॥  
धात्रीलखिरसिन्धूर्यं यमानी जीरकद्वयम् ।  
कान्तलोहमस विडङ्गानि सर्वचूर्णानि कारयेत् ॥ ७९ ॥  
लोहं सर्वसमं होष योगराज इति स्मृत ।  
सर्वकुष्ठविकारेषु विहितो लोहकोविदैः ॥ ८० ॥  
र र, र क, कुष्ठे ।

भाषा—त्रिफला, वाकुचीकेवीज, भग्रा, त्रिकटु, गिलोय,  
पवाङ्केवीज, बालाभमरा, नागरमोया, आलता, खैरसार,  
संथानमक, अजवाइन देशी तथा खुरासानी, स्याह और सफे  
दजीरा, कान्तलोहमस, विडङ्ग, सब समभाग लेकर बारीक-  
चूर्णकर सबकी बराबर लोहमस मिलाकर रखछोड़े । अथवा  
इसयोगमें कहींहुई त्रिफला बौद्धवनस्पतियोंके स्वरस अथवा  
झाणोंसे १-१ भावना देकर १-१ माहोत्ते गोल्या बनाकर  
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली कुष्ठरानुगान्धेमाय देनेसे यह  
समस्तकुष्ठोंको नष्टकरताहै ॥ १२ ॥

## १३ योगवाहक रसः (प्रथम)

गन्धकं चूर्णयित्वा च नवमीतेन संयुतम् ।  
वस्त्रे बद्धा प्रदीपस्य शिखायाः सन्निधिं कुम् ॥ ८१ ॥  
तदुद्भूतेन तैलेन रसपिण्डं सटङ्कणम् ।  
बद्धा चूर्णेन वस्त्रेण गौरीयन्त्रे विनिक्षिपेत् ॥ ८२ ॥  
तदुद्भूतं गन्धकं दत्त्वा पिधायाऽग्निं शनैः शनैः ।  
पट्टणे गन्धके जीर्णं रसो भवति रोगहा ॥ ८३ ॥  
रसस्य तुर्यमागेन तात्रपिपिर्तिं प्रकल्पयेत् ।  
इष्टिकायां तया क्षिप्त्वा पट्टणं गन्धकं क्षिपेत् ॥ ८४ ॥  
पिपिर्तिं तां तु समुद्भूतं मत्स्याक्षीद्रवमध्यगात् ।  
शिलाभेदद्रव्यं युक्तां स्वेदेयन्मुदुवहिना ॥  
योगवाहकसञ्ज्ञोऽयं योग्यो योगेषु निर्भयः ॥ ८५ ॥  
र सु सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्धान्धकका बारीकचूर्णकर मक्खनमें मिलाकर  
खादीनेकपेपर लेपकरके बीचमलोहेकीशिलाका डालकर शिथिल-  
वर्तीयनाय दोनोंओर आग लगादे और नीचे बासेकी घाली  
रखदे । इसमेंसे जितना तैल उपके उसको किसीशीशीमें भरले,  
यह गन्धकद्रुति तैयार हुई । शुद्धपारमें चट्टणीय सहागा देकर  
इसतैलेस यहातक गर्दनकरे कि चमकरहित होकर गोली बध-  
जाय । इसगोलीको घुनाएतुहुए बलमें पोतलीके आकारमें बाधकर  
घुनाएतुहुए गौरीयन्त्र (योगवाहक-न ३ में कहेहुए) में पारेकी  
बराबर नीचे ऊपर गन्धक देकर बीचमें पोतलीको रख ऊपरसे  
अधमुराकार टीका रखकर ऊपर जललीकणोंके छोटे १ टुकड़े  
जमाय निर्वातस्थानमें अग्नि लगादे । पर यह क्यान रखके कि  
गन्धकमात्र जलजाय, पारा न चड़े । स्वातन्त्रशीतलोहोनेपर पूर्ववत्  
दूसरागन्धक रखकर आंचदे । ऐसे बहुगन्धक भारपाकरके पारेसे  
चतुर्य्याश शुद्धतमका चूर्णमिलाकर गन्धक युक्ते सहारेसे पिटी  
बनाय पूर्ववत् पट्टणगन्धकजारणकर मत्स्याक्षी और पाषाण-  
भेदकेस्वरस अथवा झणमें दोलायन्त्रवनाय ४-४ पहर पका-  
नेसे यह योगवाहकरस तैयारहोताहै । निरुद्धोकर इसका  
तमामरोगोंमें प्रयोगकरे ॥ १३ ॥

## १४ योगवाहकरसः (द्वितीयः)

मेधनाद्वच्चाहिङ्गरसोनानां हि गोलरूपम् ।  
कृत्वा तन्मध्यगं वीर्यं लघवेऽप्यतिवेशयेत् ॥ ८६ ॥  
संस्कृत्य सस्फुटं सम्यगुद्धं देहि सुगोमयम् ।  
चतुर्थां यन्त्रं समारोप्य वह्निं यामचतुष्टयम् ॥ ८७ ॥  
मध्यज्वालं समुज्ज्वाल्य स्याद्गोशीतलतां नयेत् ।  
ऊर्ध्वलघ्नं समादाय वस्त्रे धत्वा च गन्धकम् ॥ ८८ ॥  
मध्यगं पारदं कृत्वा सोमानलेन तापये ।  
ऊर्ध्वगेशस्य चत्वारो गन्धकस्याऽऽभागकाः ॥ ८९ ॥  
मैन्धयस्य च भागो द्वौ श्वेताजयन्तिकाष्टय ।  
मृद्गीहि त्रीण्यष्टानि त्वं गोलकं तं विशेषयेत् ॥ ९० ॥  
ततां धूर्णां जले क्षिप्त्वा गृह्णान रसमस्मरम् ।  
संस्कृत्य कण्टकायां र्थयेत् विनियोजये ॥ ९१ ॥

तत्तद्रोगहरं द्रव्यैः सम्यग्युक्त्या नियोजितः ।  
निहन्ति रोगसङ्घातं हृष्टप्रत्ययकारकः ॥ १२ ॥  
र. मृ. सप्रेतोमे ।

भाषा—कटिकालीचौलाई, घब, उसमहीम और एक-  
अंघ्रियालहसन सममाणलेकर बन्धवनाछे । उसकलहगेलेमे  
पूयोक् ( योगवाहक नं. १ मेहदीहुई ) गोलीको बन्दर गोला-  
बनाय ठमस्यप्रमे सत्रगेरी मीतर रस ४-५ कपडिमिरी देकर  
मुंह इसतह बन्दकरे कि सन्धिमे पाता न निकलने पावे । फिर  
दफको चूल्हेपर रस ऊरके पड़ेके पेदेपर गोबर रसद । घुन्देमे  
४ पहरी मध्यमासिरे । स्वादशीतलहगेनेपर दफको उपाह  
ऊरके पड़ेमे लगेहुए पारेको निसालकर इसके सममाण गन्ध-  
को नीचे ऊपर रस पहिलेकी तरह ठमस्यप्र बनाय ४ पहरी  
आपि देकर पारेको उपावे । इसपारेके ४ भाग, शुद्धगन्धके  
८ मा., काँचहीतरह चमकदार सैन्धव २ भाग लेकर नीलरंग  
कमलीबनाय सफेदकोयल और तिलकीके रसोंसे ३-३ रोज  
मर्दनकर गोलाबनाय शायममनुदमे बन्दर बधोमे सालकर  
इन्हीके रसोंमे सुतावे । इसीप्रकार भट्टरडेया वीरह मारकगोमे  
रसोंमे सुतावे और मर्दनकर गरमकरे । ऐसे जरउक पात  
अमिस्त्रायी न होजाय तबगहरे । अमिस्त्रायी होनेपर निका-  
छर रसछोड़े । इसको तत्तद्रोगहरागुगानवेसाध देनेमे यह  
गमस्तोमोंको नदकरताहै ॥ १४ ॥

### ✓ १५ योगवाहकसः ( तृतीयः )

रसस्य तुष्यभागेन तावन्नृणं प्रकल्पयेत् ।  
जम्बीरोत्पद्रये मर्षं दिनान्ते तत्समुद्धरेत् ॥ १३ ॥  
पक्षे पक्षेष्टिकापान्ये तुष्यं गणधेन पाचयेत् ।  
एषान्तु पक्ष्णीयपाच्यार्थं गन्धकजारणम् ॥ १४ ॥  
पाषाणमेदिमत्स्यादाश्रयेः पिष्टन्तु मर्दयेत् ।  
तत्रोक्तं यष्टपदत्रे कनकं पाषाणमेदज ॥ १५ ॥  
मत्स्यास्याद्य घनालेवं द्रव्या पातनयन्यके ।  
स्येद्वेद्याममाग्रन्तु रसोऽयं योगवाहकः ॥ १६ ॥  
शुद्धाद्यं प्रशस्तार्थं हिमयस्यस्यवासजित् ।  
द्वाराय विषेयास्तु सकलार्थं कारयकम् ॥ १७ ॥

र. को. र. क. र. गु. र. क. ब. र. को म. दिवादाय ।

टीका—इतिरुद्रमार्गं गोपीकर्मिणि नमस्कृत्य, गणना  
हो—“हस्त” बन्धुजुदेवपुत्रं वज्रान्तं गलेष्टिम् । रत्नमण-  
लानुवृत्तं कोऽप्येन केनेन ० कन्त्वा एतान् विद्वि हस्तं वज्र-  
दायकम् । ऐतन् तं तं बन्धि गोपनीयं विद्विष्टम् ॥ शिरो-  
न्तं कोकुन्ते बन्धुर्गुणितं च । लक्ष्मिं विद्विष्टुर्गुणितं बन्धु-  
गुणितम् ॥ इति गोपीकर्मिणि गोपीकर्मिणि गोपीकर्मिणि गोपीकर्मिणि  
इति गोपीकर्मिणि गोपीकर्मिणि गोपीकर्मिणि गोपीकर्मिणि गोपीकर्मिणि

भाषा—एहभाग एहगोमे एहगोमार्गं चतुर्गुण मित्रकर  
रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं  
रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं  
रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं रसोऽयं

इतनागह्रा रागा बनाये कि जिसमे पारदपिटोकी पोली आवा-  
नीये रहसके और नीचे ऊपर चतुर्गुण गन्धकपुर्णगी रहगहे ।  
फिर इसरुहेको सोप अथवा पत्थरकेपुनेये पोतपर गुत्ताये और  
पोलीमे चतुर्गुण गन्धक नीचे तथा ऊपर देकर पोलीको  
रसादे । इसगोमे ऊपर घोड़ेगुरके आधाराका लम्बा ठोकरा  
रसकरछोटे २ जललीकगडोंके दुधके जमाकर इसी आँवेरे  
जिसमे कि ईंटे अन्दरका गन्धक जलमाय पर पाता न उठे ।  
स्वादशीतलहगेनेपर निसालकर रसछोड़े इसतह १२ बार आपि  
देकर पक्ष्मगन्धकजाणकरके पाषाणमेद और मत्स्यादाश्रि  
रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर गोलीबनाय पूर्ववत् पातभ  
कहनेमे रस बधोरोमें लवेदकर गोली बनाये । इस गोलीपर  
पाषाणमेदके कलहाका आधाभकुल लेवेदकर एहकारा सन्द  
पर मत्स्यादाश्रिकालेन देकर गुत्ताय ठमस्यप्रमे रसकर ५-५  
कपडिमिरी मुंह बन्दकर एहगह्रतह मत्स्यादि देकर सवेदिउठे ।  
स्वादशीतलहगेनेपर निसालकर रसछोड़े । इसमेमे २-२ रतीकी  
मात्रा कुलगीमिलेहुए दामूलककाढ़ेगाय देनेमे हिचरी स्वर-  
भक्त और श्वाको यह नदकरताहै तत्तद्रोगहरागुगानवेगाय देनेमे  
यह गमस्तोमोंको दूरकरताहै ॥ १५ ॥

### ✓ १६ योगवाहकसः ( चतुर्थः )

मूत्रं तावन्नं कान्तपाषाणगन्धं  
कापान्तास्यिकापतं धामरीकम् ।  
घर्षेत्पश्चात्पाचनापये च यथे  
शीत्येपाये यत्ततः पाचयेद्य ॥ १८ ॥  
ताद्ये ससं नागपदांगुद्वयी-  
नीरे मूत्रं मर्दयेत्तासरकम् ।  
उक्तः मूत्रो योगयाहोऽस्य यत्तं  
द्व्यांग्रेणपूतमागेन मूत्रम् ॥ १९ ॥

र. दी., सर्वतोमादिकाहरे

भाषा—इहभाग, तत्र और कान्तपाषाणगन्ध, एहग-  
नरु सव श्वभाग लेकर नीलरंगकमलीकर बन्धवनाछोड़े  
बनाये १ रोज मर्दनकर गोलीबनाय इहवेकराकर एहग-  
पक्षके सन्तुदमे बन्दर ४-५ कपडिमिरी देकर गुत्ताये पर  
रसमे एहगोत्र कन्धक जमिमे पकावे । एहगोत्रकलेनेपर  
निसालकर तावेकगमगुने लगेहुआपारे गोलीबेगाय देकर  
नागरबेक और मिनेरुके स्वरगमे १-१ रोज मर्दनकर १-१  
रतीकी गोलीया बनाकर रसछोड़े । इसमेमे १-१ रतीकी स्वर-  
गमगदुनवेगाय देनेमे यह गमस्तोमोंको दूरकरताहै ॥ १६ ॥

### २७ योगवाहकसः

रसं द्रव्यं तावन्नं रसमार्गं  
मदानागोवै चर्याजिमये ।  
दिनाभिमार्गं मित्रं मित्रोर्गं  
मुदे दृष्टिग्राह्यं योगवाहकम् ॥ १७ ॥



महायातहारी क्षुधादीक्षिकारी  
समस्ताऽऽमये योगवाही प्रदिः ।

प्रसूतस्त्रियां बालकानां वृक्षानां

महाध्याधिविध्वंसनोऽयं रसः स्यात् ॥१०१॥

१. सि., सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, सुहागा, हरिताल और गन्धक सब  
समभागलेकर नीलवर्णकच्चीकर खौलताहुआपानी देताहुआ  
२२ रोज तक निरन्तर मर्दनकर १-२ रत्तीकी गोखिया बनाकर  
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह  
भयङ्कर व्याधियोंको नष्टकरताहै । प्रसूता की, बालक और  
वृद्ध इनके भयङ्कररोगोंको दूरकरताहै ॥ १०१ ॥

### १८ योगसारचूर्णम्

द्राक्षाऽभयाशुदिकणाशदिविध्वंसार्गी-  
श्रुद्धीनिदिग्धिरुताः पृथगेकभागाः ।

भागद्वयं सुसूततीक्ष्णभयञ्च चूर्णं

वस्त्रार पथ जतुनोऽद्रिमवस्य भागाः ॥१०२॥

सर्वं विचूर्ण्य मधुना धरणोन्मितं त-

त्त्वादौहिहितं खलु पञ्चविधञ्च कासम् ।

ध्वासं क्षयं कफसमीरणसम्भयञ्च  
रोगांस्तमसि सधितेषु सुदृष्टमेतत् ॥१०३॥

यो. म., हिक्कायाम् ।

भाषा—द्राक्ष, इरै, इलायची, गीपल, कचूर, सोंठ, भारती,  
काकशाहीगी, मैदासीगी, भटवडेया चेष्ट १-१ भाग, लोह  
भस्म २ भा, शिलाजीत ४ भागलेकर बारीकपीसकर ४-४  
माशेकी गोखिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली  
उचितानुपानकेसाथ सुबहशाम देनेसे पाचप्रकारकी खासी,  
क्षास, शय, कफरोग और हिक्कीप्रवृत्ति दुःसाध्य वातरोग  
इनसबको यह इस्तरह नष्टकरताहै जैसे सूर्य अन्धकारको ।  
यह कईबारका अनुभूतहै ॥ १०३ ॥

### ✓१९ योगसाररसः

सूतं गन्धं विपं ताम्रमसम् नेपालतालकं ।  
क्षारत्रयं पटोलञ्च पञ्चकोलं सरामठम् ॥ १०४ ॥  
शुद्धचूर्णं समालोड्य जमरीरान्नेन मर्दयेत् ।  
लग्नस्य कारयेणाऽप्यक्षजेन रसेन च ॥ १०५ ॥  
ताम्बूलवह्नीनिर्गुण्डीमातुलुहान्द्रिकवैः ।  
ततश्च घटिकां मापमात्रां प्लुत्या प्रयोजयेत् ॥ १०६ ॥  
सविगुल्मेषु शूलेषु ध्वासकासोदरेषु च ।  
आनाइ चाऽप्युदायतं सखिपाते च दारुणे ॥ १०७ ॥  
योगसाररसो ह्येष जातुकर्णेन निर्मितः ।  
उदायते समभ्यज्य स्विन्नग्राममुपाचरेत् ॥  
आनाइ च तथा कार्यं यस्या घर्ताश्च कर्मणा ॥१०८॥

४. रा., गुले गुले च ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बछनाग, ताम्रमसम्,  
शुद्धजमालगोटा, रसमाणिक्य, सखी, सुहागा, यवशार, पटो-  
लपत्र, पञ्चकोल, मुनाहीग, शङ्खभस्म सब समभागलेकर बारीक-  
पूर्णकर जभीरी, लहसुन, बड़ेडा, पान, संभाय, विजोरा, अद-  
रस इनके रसोंसे १-१ भावना देकर १-१ माशेकी गोखिया  
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ  
देनेसे सबप्रकारके गुस्म, सुल, खास, नास, उदररोग, आनाइ,  
उदायते, प्रवृत्तसन्निपात इनको यह नष्टकरताहै । उदायतेमें  
बातझूतीलोंसे समस्तभस्ममें मालिशकरके स्नेदनकरे । आनाइमें  
वस्ति और वरियोंका प्रयोगकरे ॥ १९ ॥

### २० योगसाराऽन्नकम्

कणाशिलोद्रेव्समानमन्नं

विलीढमाज्येन पयोऽनुपानम् ।

निहन्ति यस्मानामपि प्रवृद्धं

ससैन्यमेवाऽन्नं न क्षिप्रमस्ति ॥ १०९ ॥

छो प, यक्ष्मरोगे ।

भाषा—गीपल और शिलाजीत १-१ भाग, अन्नकभस्म  
२ भागलेकर सबको इकट्ठा थोडकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३  
रत्ती पीके साथ सेवनकर गरमदूधपीनेसे अत्यन्तबढ़ाहुआ  
उपद्रवसहित राज्यक्षम नष्टहोताहै । इसमें सशय नहीं करना २०

### २१ योगामृतोरसः

शुद्धसूतपलान्यष्टौ शुद्धं ताम्रं पलद्वयम् ।  
चूर्णितं सूतकं मयं कुर्यात्तम्रपिष्टिकाम् ॥ ११० ॥  
शुद्धं गन्धं द्विद्विपलं तत्तुल्यं कटुतेलकम् ।  
तयो मध्ये ताम्रपिष्टौ लोहपात्रेऽस्तराद्विना ॥ १११ ॥  
पचेद्यावद्भवे जीर्णं समुक्ष्य विचूर्णयेत् ।  
विपं घचा ज्वपञ्चकं तुल्यं मुस्तायिद्विक्रमम् ॥ ११२ ॥  
विपस्य त्रिगुणं योज्यं सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ।  
सर्वं सूतसमं चूर्णं शोऽद्रिमिश्रे घटीकृतम् ॥ ११३ ॥  
द्विगुणं भक्षितं हन्ति प्रसूतिं मण्डलं तथा ।  
शुद्धेन यक्षितो हन्ति सर्वकुष्ठनिहन्तनः ॥ ११४ ॥  
१. का, कुशाधिकारे ।

भाषा—८ पल शुद्धपोमें २ पल शुद्धनाबिका चूर्ण मिला-  
कर ४ पहर मर्दनकर बहुत बारीक कपड़ेमें रखकर गोभीबनाले ।  
फिर शुद्धगन्धक २ पल कक्षादीमें पिडाकर पोल्होरस २ पल  
गन्धक उपर रखकर द्वादरे । ऊपरसे कड़ातेल ४ पल डालकर  
बहुतमन्दआंचसे पकावे । द्रवदूधमानेपर उतारकर रसाले ।  
स्वाश्रयितलडोनेपर ऊपरसे गन्धकको सुरबद्ध ताम्रपिष्टिका  
बारीकपूर्णकर शुद्धबछनाग, चच, त्रिकटु १-१ भाग, नागरमोषा  
और विडङ्ग ३-३ भागलेकर बारीकपूर्णकर पूर्वोक्तपिष्टीमें सम-  
भागने मिलाकर मधुकेसाथ थोडकर २-२ रत्तीकी गोखिया  
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शुद्धकेसाथ देनेसे ध्व-  
गात्रा और मण्डलादि समस्तकुष्ठोंको यह नष्टकरताहै ॥ २१ ॥

## २२ योगीरसः ( त्रिमूर्त्यादिः ) ( प्रथमः )

शुद्धं सृतं द्विधा गन्धं चतुर्भागे मृताऽन्नकम् ।  
 निर्गुण्डीकारवल्लीभ्यां धुत्तराऽऽद्रकचिन्कैः ॥ ११५ ॥  
 गिरिकर्णोजयन्तीभ्यां तिलपर्ण्या भृङ्गराजकैः ।  
 कार्पासीकाञ्चनीदन्तीकदम्बकेशराजकैः ॥ ११६ ॥  
 मर्दयित्वा तु तच्छुष्कं कटुतेलेन सेचयेत् ।  
 शरावसम्पुटे रुद्धा बालुकायन्त्रके पचेत् ॥ ११७ ॥  
 स्वाङ्गशीतलमादाय हेमभस्म तु तारकम् ।  
 नागवह्नी पञ्चपटु विश्कारं हिङ्गुलं समम् ॥ ११८ ॥  
 पूरयेद्बालुकायन्त्रे त्रियामं पाचयेत् द्रुमम् ।  
 स्वाङ्गशीतलमाहृत्य विपं पात्रमिमे क्षिपेत् ॥ ११९ ॥  
 बह्नीजपञ्चभागांश्च पञ्चपित्तं विमाचयेत् ।  
 नानाऽनुपानैः संयुक्तं रेणुमानं प्रयोजितम् ॥ १२० ॥  
 साध्याऽसाध्यांश्च दोषांश्च सर्वरोगान्विनाशयेत् ।  
 सर्वशास्त्राऽनुसारेण योगीरस उदाहृतः ॥ १२१ ॥  
 र. क. यो., सरोरेणु ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धान्धक २ भा., अन्नक-  
 भस्म ४ भाग लेकर नीलवर्णः चालीकर संभाळ, करेला, धतूरा,  
 अदरक, चित्रक, पोयल, जैती, हुरहुर, भंगरा, कपासकेफूल,  
 हल्दी, दन्तीमूल, कदमकेफूल, बालाभंगरा इनप्रत्येककेसोसे  
 १-१ रोज मर्दनकर मुगगर कटुतेलसे मर्दनकर गोलाबनाय  
 पारतहरूपमें पोहोली बनाय ३-४ बपइमिठी लगादे ।  
 सूजनेपर शरावसम्पुटे बन्दर २-३ बपइमिठी लगाकर  
 मुगगाय बालुकायन्त्रमें ४ पहरी मन्द अग्निमें पकावे ।  
 स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सुवर्ण, रजत, नाग और वज्र  
 इनबीमस्में, पाचोनमूक, सक्की, सुहागा, यवभार, खिगिरिक  
 येसप मिलकर समभागमें मिलाकर पूर्वदोसे १-१ रोज मर्द-  
 नकर तेलसे पूर्वग्न गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर बालु-  
 कायन्त्रमें तीनपहरही कड़ीआंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निरा-  
 लकर इससे चतुर्धांश शुद्धवणनाग और ५ भाग मरिच मिला-  
 कर ५ पित्तोसे १-१ रोज मर्दनकर मुगगाय रगछोड़े । इसमेंसे  
 रोगकेबीजबराबर मात्रा समयोचितानुपानकेसाय देनेसे यह  
 साध्य अथवा असाध्य समस्तरोगोंको दूरकराहे ॥ २२ ॥

## २३ योगेन्द्ररसः

विशुद्धं रससिन्दूरं तद्वत् शुद्धहाटकम् ।  
 तत्समं कान्तलीहृद्य तत्समञ्चात्रमेय च ॥ १२२ ॥  
 विशुद्धं मौक्तिकञ्चैव यद्रज्ज तत्समं मतम् ।  
 कुमारिकारसं मौक्त्यं धान्यराशौ दिनप्रथमम् ॥ १२३ ॥  
 तत्रो गतिद्वयमितां घट्टीं वृषाद्विचक्षणः ।  
 योगवाही रसो रोग सर्वरोगबुलान्नकः ॥ १२४ ॥  
 घातपित्तभयान् रोगान् प्रमेहान्बहुमूत्रताम् ।  
 मूत्रापातमपस्मानं भगन्दरगुदाभयम् ॥ १२५ ॥

उन्मादमूर्च्छं यस्माणां पक्षाघातं हृतेन्द्रियम् ।  
 शूलाऽम्लपित्तकं हन्ति भास्करस्तिमिरं यथा ॥ १२६ ॥  
 त्रिफलारसयोगेन शुभया सितयापि वा ।  
 भक्षयित्वा भवेद्रोगी कामरूपी सुदर्शनः ॥ १२७ ॥  
 रात्रौ सेव्यं गवां क्षीरं रुद्रानाञ्च विशेषतः ।  
 योगेन्द्राख्यो रसो नाम्ना कृष्णात्रेयविनिर्मितः ॥ १२८ ॥  
 मै. र., घ., वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—रससिन्दूर १ भाग, सुवर्ण, कान्तलोह, अन्नक,  
 मोती और वज्र इनबीमस्में आधा आधाभाग लेकर एररोज  
 पीवुआरके रसमें मर्दनकर गोलाबनाय एण्डके पत्तोंमें लपेटकर  
 कच्चे दोरेसे बांधकर धान्यराशिमें तीनरोजतक रखे । बीयोरोज  
 निकालकर २-२ रत्तीसी मोलियां बनाकर छायाशुष्ककर रग-  
 छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली रोगान्स्थोचितानुपानकेसाय देनेसे  
 घातपित्तजरोर, प्रमेह, बहुमूत्रता, मूत्रापात, अपस्मार,  
 भगन्दर, गुदरोग, उन्माद, मूर्च्छा, रानवृश्म, पक्षाघात,  
 इन्द्रियोकी कमजोरी, शूल, अम्लपित्त इत्यादि समस्तरोगोंको  
 यह नष्टकरता है । त्रिफलास्वरस अथवा धाककेसाय इसका सेवन  
 करनेसे मनुष्य कामरूपी होजाता है । कमजोरोंको रात्रिमें एक-  
 गोली देकर रायकादूध पिलानाचाहिये ॥ २३ ॥

## २४ योगेश्वररसः

सुतकं गन्धकं लौहं नागञ्चापि घटाटिकाम् ।  
 ताम्रकं यद्रज्जसमापि व्योमरुञ्ज समानाकरम् ॥ १२७ ॥  
 मूत्रमूलापत्रमुस्तञ्च विडङ्गं नागकेसरम् ।  
 रेणुकाऽम्लरुञ्जं पिप्पलीमूलमेव च ॥ १२८ ॥  
 एषाञ्च हिगुणं भागं मर्दयित्वा प्रयत्नतः ।  
 भायना तत्र दातव्या धात्रीफलरसेन च ॥ १२९ ॥  
 मात्रा चणक्तुल्या च गुटिकेयं प्रसीतिता ।  
 अदमरीं बहुमूत्रञ्च प्रमेहं मूषहृच्छुक्रम् ॥ १३० ॥  
 व्रणं हन्ति महाकुष्ठमशीति च भगन्दरम् ।  
 योगेश्वरो रसो नाम महादेवेन भाषितः ॥ १३१ ॥  
 र. चि. र. गं., र. मु., प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, नाग, पीलीकड़ी,  
 ताम्र, वज्र और अन्नक इनबीमस्में १-१ भाग, छोटोह्लादनी,  
 पत्रज, नागरमोषा, विडङ्ग, नागकेसर, रेणुका ( रोग-पदाही ),  
 आंवले, पित्तामूल, देसब २-२ भाग लेकर बारीकपूरेकर  
 पोरौणधकरी नीलवर्णरज्जलीमें मिलाकर आनेवेदे रखो ३-४  
 भावनाएँ देकर बनेप्रमाण मोलियां बनाकर रगछोड़े । इनमेंसे  
 १-१ गोली तमोरेणुहलातानुपानकेसाय देनेसे पयरी, बहुमूत्र,  
 प्रमेह, मूषहृच्छु, नभाप्रसारेक्षण, मूत्रापात, बवागिर और  
 भगन्दर इनपचो यह नष्टकराहे ॥ २४ ॥

## २५ योगोत्तमादरी

प्रयत्नं त्रिफला क्षारी त्र्यपान्यथ चित्रकम् ।  
 तालीमं चायिकं शृङ्गी जिने द्वे गजपिपपरी ॥ १३४ ॥

पला त्वचं विडङ्गानि पौष्करं नागकेसरम् ।  
 ताप्यनं दीप्यको मुस्ता समभागानि कारयेत् ॥१३॥  
 यावन्त्येतानि द्रव्याणि तावन्मात्रमथोरजः ।  
 तावच्छिलाजतु दैवः सर्वस्तुल्यस्तु गुग्गुलुः ॥१३६॥  
 सङ्गुथ्य गुटिकां कुर्यादसमानप्रमाणतः ।  
 खादेन्ना मधुना युक्त्या तायक्षीररसाशनः ॥१३७॥  
 निर्यन्त्रितं सदा भोज्यं सर्वतुषु निरत्ययम् ।  
 अशीतिं घातजाग्रोगांधत्वारिशच पित्तकान् ॥१३८॥  
 विंशतिं श्लेष्मिकांश्चैव प्रमेहांश्चैव विंशतिम् ।  
 उदराणि तथा चाऽष्टौ श्वयं पवनान्ममम् ॥१३९॥  
 विंशतिं मूत्रकृन्नाणि दुष्टनाडीप्रणानि च ।  
 हृत्पद्माश्च कुष्ठानि सप्त चैव महाक्षयान् ॥१४०॥  
 कासं श्वासं तथा ह्रिकं हृच्छूलं छर्द्यरोचकम् ।  
 गुल्माश्च पाण्डुरोगश्च अत्यपञ्चप्रकारजम् ॥१४१॥  
 चत्वारो ब्रह्मणीदोषाः पञ्चशक्ति तथैव च ।  
 सर्वास्ताश्चाशयत्याशु तप्तः सूर्येदोषो यथा ॥१४२॥  
 तथाऽयुद्धं गण्डमालां चित्रं चि सभगन्दरम् ।  
 हस्ते सर्वरोगांश्च वृक्षमिन्द्राशनि यथा ॥  
 योगोत्तमेति विख्याता गुटिका चैवप्रजिता ॥१४३॥  
 ग नि., यो. म., सर्वरोगे ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिकला, सजी, श्वक्षार, पाचनमक,  
 चिन्मूल, तालीसपत्र, चव्य, काज्जाली, मेढासी, हल्दी,  
 दाहहल्दी, गजपीपल, इलायची, तज, विडङ्ग, पोहहरसूल,  
 नागकेशर, शुद्धसोनामाखी, अजमोद, नागसोधा येन सम-  
 भाग, इनसवकीशरावर लोहमस और शिलाजीत, इनसवकी-  
 शरावर शुद्धगुल्लेकर योगदानगुल्लकीविधिसे १-१ तोलेकी  
 गोल्या बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाय  
 खाकर जल, दूध, अथवा मांससलेवे । मूत्रलयनेपर यथेष्ट  
 भोजन करे । यह सब क्रतुओंमें अनुकूल पड़ताहै । इसकीमात्रा  
 मूलमें १ तोलेकी लिखीहै परन्तु वह सबकेलिये अनुकूल नहीं  
 होसकी । इसलिये ४ मासेकी गोलीयें बनाकर मुश्किलसे  
 इस जमानेमें चलनेकी शक्तिसे २-२ मासेकी गोलीयें  
 बनाकरकरते । इसकेसन्तसे ८० वातारोग, ४० पित्तारोग,  
 २० श्लेष्मारोग, २० प्रमेद, ८ उदररोग, वातप्रधानमूत्र, २०  
 मूत्रहन्त्र ( मूत्रापातको मिलाकर ), दुष्टनाडीमण, १८ दुष्ट, ७  
 भातुल्य, ५-५ प्रकारकेकाष्ठ, काष्ठ, द्विकी, हृच्छूल, वमन,  
 अक्षि, गुल्म, पाण्डुरोग, ५ प्रकारकीमहणी, ६ बवागौर, अण्डु,  
 गण्डमाला, चित्रि, भगन्दर इनसवको यह इमतरह नष्टकरताहै  
 जेगे सूर्योदय तकको और इन्द्रकावज शृङ्गको ॥ २५ ॥

### २६ योनिकन्दोन्मूलनरसः

मृतं कांस्थं मृतश्चाऽग्नं गन्धतुल्यं पुटैः पचेत् ।  
 सिद्धं शुजात्रयं खादेषानिदोषं व्यपाहति ॥१४४॥  
 ना. वि., योनिरोगे ।

भाषा—कांस्थ और अन्नभस्म १-१ भाग, शुद्धगन्धक  
 २ भाग लेकर रक्तोषक महामिश्रदिप्रभृतिद्रव्योंसे १०-२०  
 पुटदेकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती योनिदोषहरानुपानके-  
 सायदेनेसे और निम्बकृत्केसे मिलाकर अन्दरलेपकरनेसे योनि  
 कन्दादि समस्तरोग दूरहोतेहै ॥ २६ ॥

### २७ योनिदोषहरोरसः

गन्धे वा तारतात्रे वा कृत्वाऽऽदौ भस्मसूतकम् ।  
 युस्त्या क्रमे प्रयोक्तव्यं योनिदोषविनाशनम् ॥१४५॥  
 यो. म., रसेन्द्रेण, क्षीरोगाधिकारे ।

टि०—“कृतं सत कृतं तात्र विद्याश्वारागुनादिनम् । भावयेद्भृश  
 केनाथ मुशलीचाऽऽदिकदैव ॥ अनुपानं स्थितिर्य वनं गुणप्रदानये ॥”  
 इति योगमहाविंशे शुद्धाधिकारे पाठोऽस्ति तस्याऽऽनैवान्मार्गं वर  
 नीय । विशेषभावनाऽनुधानम् इत्यपि गुणावहेन सम्पत्त्यने, अनु  
 पानानि तु सर्वदेवाऽनिलयतानि भवन्ति ।

भाषा—शुद्धगन्धक, रजन और तात्रभस्म इन एकएकमें  
 अथवा सबमें समभाग बारदभस्म मिलाकर योनिदोषहरानुपानके-  
 साय देनेसे यह योनिरोगोंको नष्टकरताहै । इसमें यदि गन्धक-  
 केसाय पादभस्म मिलाई हो तो २ रसीतकीमात्रा देसकेहै  
 यदि रजत अथवा तात्रभस्मकेसाय मिलाई हो तो २ रसीकी  
 मात्रा समझनी । निम्बकृत्केसाय मिलाकर लेपनी करसकेहै २७

### २८ योपिद्वलभरसः

सिन्दूरमग्नं रौप्यञ्च वैकान्तं हेमदङ्गणम् ।  
 धराभ्रमसा भावयित्वा धलमात्रा यदीश्वरेत् ॥१४६॥  
 योपिद्वलभनामाऽयं रस्तोऽण्डाधारसम्भयान् ।  
 निहन्ति निखिलाग्रानान् हृयंस्तो हरिणानि ॥१४७॥  
 आ. वि., अण्डाधारस्यधिकारे ।

टि०—अण्डाधारस्य लक्षणानि—“उदराम्बुधा कृष्ण मूत्र-  
 स्वात्तरफले । अवाऽऽरोचनं दुःशान्ति भ्रति वन्धुश्रुप ॥ पनदी बैलिनी  
 शुद्ध विद्या रक्तोन्मूल तथा अण्डाधारस्यैवा प्रोक्ता माहुरी ३५॥”

भाषा—रससिन्दूर, अन्नक, रजत, वैकान्त और सुवर्णभस्म,  
 शुद्धमहाणा सब समभाग मिलाकर २-१ रोज त्रिपक्षादेशधनं  
 भावनादेकर ३-२ रसीकी गोलीयों बनाकर रखछोड़े । हमेंये  
 १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाय देनेसे प्रियोंके ताम्ब-  
 रोगोंको यह इमतरह नष्टकरताहै जैते सिंदूर गुणोंको ॥ २८ ॥

### २९ रक्तपित्तकुलकण्डनरसः (रक्तपित्तनुहारः)

नुद्धपारदवल्लिप्रयालकं हेममाक्षिकमुज्ज्वरकम् ।  
 मारितं सकलमेतदुत्तमं भावयेद्यं पृथगप्यद्रवेतिश ॥  
 चन्दनस्य कमलस्य मालतीकीरकस्य वृषपल्लवस्य च ।  
 धान्यधारणकणाशतावरिशास्मलौघटजरागुद्विभिः

रक्तपित्तकुलकण्डनानिधिं  
 जायते रसधराऽन्नपित्तनाम ।  
 प्राणदो मधुवृषद्वयं  
 मेथिलस्तु यमुराजलं मतः ॥

पला त्वचं विडङ्गानि पौष्करं नागकेसरम् ।  
ताप्यकं दीप्यको मुस्ता समभागानि कारयेत् ॥१३॥  
यावन्त्येतानि द्रव्याणि तावन्मात्रमयोरजः ।  
तावच्छिलाजतु दैव्यः सर्वैस्तुल्यस्तु गुग्गुलुः ॥१३६॥  
सङ्कट्य गुटिकां कुर्यादक्षमात्रप्रमाणतः ।

खादन्ना मधुना युक्त्या ताम्रक्षीररसाशनः ॥ १३७ ॥  
निर्यन्त्रितं सद्वा भोज्यं सर्वतुषु निरत्ययम् ।  
अशीर्तिं वातजाघ्नोर्गांश्चार्शश्च पैत्तिकान् ॥१३८॥  
विशर्तिं श्लेष्मिकांश्चैव प्रमेहांश्चैव विशर्तिम् ।  
उदराणि तथा चाऽष्टौ श्वयथुं पचनात्मकम् ॥ १३९ ॥  
विशर्तिं मूत्रकृच्छ्राणि दुष्टनाडीघ्नानि च ।  
हृत्पद्मादश कुष्ठानि सप्त चैव महाक्षयान् ॥ १४० ॥  
कासं श्वासं तथा हृत्कां हृच्छूलं छद्यरोचकम् ।  
शुल्मांश्च पाण्डुरोगञ्च जलेत्पञ्चप्रकारजम् ॥ १४१ ॥  
चक्षारो प्रहणीदोषाः पडर्शांसि तथैव च ।  
सर्वास्ताकाशयत्याशु तमः सूर्यादयो यथा ॥ १४२ ॥  
तथाऽर्बुदं गण्डमालां चिद्विधिं सभगन्दरम् ।  
हरते सर्वरोगांश्च वृक्षमिन्द्राशनं यथा ॥  
योगोत्तमेति विख्याता गुटिका यैद्युजिता ॥ १४३ ॥

ग नि, यो म, सर्वरोगे ।

भाषा—त्रिफल, त्रिफला, सजी, यवक्षीर, पाचोन्नमक  
चित्रकमूल, तालीसपत्र, चम्प, काकड़ासींगी, मँदासींगी, हल्दी  
दारुहल्ली, गजपीपल, इलायची, तण, विडङ्ग, पोहकरमूल  
नागकेसर, शुद्धसोनामाखी, अजमोव, नागमोथा येसव सम  
भाग, इनसयकीबराबर लोहभस्म और शिलाजीत, इनसयकी  
बराबर शुद्धगुल्लेकर योगराजगुल्लकीविधिसे १-१ तोले  
गोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसा  
खाकर जल, दूध, अथवा मांससलेवे । भूखलगनेपर यथा  
भोजन करे । यह सब ऋतुओंमें अनुकूल पड़ताहै । इसकीमात्र  
मूलमें १ तोलेकी छिछोदि परतु वह सर्वकेलिये अनुकूल नह  
होसकी । इसलिये ४ मासेकी गोखिं बनाकर सुखिक  
इस जमानेमें बलसंकेमी इसलिये २-२ मासेकी गोखिं  
बनाकररखे । इसकेसेवनसे ८० वाररोग, ४० पित्तरो  
२० श्लेष्मरोग, २० प्रमेह, ८ उदररोग, वातप्रधानगूजन, १  
मूत्रकृच्छ्र ( मूत्रापातको मिलाकर ), दुष्टनाडीघ्न, १८ कुष्ठ  
धातुप्रभ, ५-५ प्रकारकेकास, श्वास, हिचकी, हृच्छूल, वम  
अस्थि, शुल्म, पाण्डुरोग, ४ प्रकारकीप्रहणी, ६ वसातीर, अ  
गण्डमाला, विदधि, भगन्दर इनसयको यह इसतरह नष्ट  
जैसे सूर्यादय तमको और इन्द्रकावज्ज वृक्षोंको ॥ २५ ॥

### २६ योनिकन्दोन्मूलनरसः

मृतं कास्यं मृतञ्चाऽम्रं गन्धतुल्यं पुटे. ॥चेत॥  
सिद्धं शुजात्रयं खादद्योनिदोष व्यपोहति ॥ ॥  
ना. वि, योनिरोगे ।

भाषा—कास्य और अम्रकभस्म १-१ भाग, शुद्धगन्धक  
२ भाग छेर रक्तोष्णक महामात्रिादिप्रशुतिकार्योंसे १०-२०  
पुटेकर रखोड़े । इसमेंसे ३-३ रती योनिदोषहरानुपानके  
सायदेनेसे और निम्बकल्कमें मिलाकर अन्दरलेपरनेसे योनि  
कन्दादि समस्तरोग दूरहोतेहै ॥ २६ ॥

### २७ योनिदोषहरोरसः

गन्धे वा तारताम्रे वा कृत्वाऽऽदी भस्मसतकम् ।  
युस्त्या क्रमे प्रयोक्तव्यं योनिदोषविनाशनम् ॥ १४५ ॥  
यो म, स्लेन्ध्रम, क्षीरोगाधिकारे ।

टि०—“युत यथा मृत ताम्र चित्राक्षारामुनादिनम् । भावयन्त्र  
येमाप सुखीचाऽऽदीकृत्ये ॥ अनुपान स्थितिरिव करुणप्रदान्तये ॥”  
इति योगमन्त्रवि द्वापिष्टरे पाठोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवास्तमैव पर  
णीय । विशेषभावनाऽनुपाननु कृतमपि गुणावहमेव सम्पत्त्यने, अत  
पानानि तु सर्वैरेवाऽऽनिल्यतानि भवन्ति ।

भाषा—शुद्धगन्धक, रजत और ताम्रभस्म इन एकएकमें  
अथवा सवमें समभाग पारदभस्म मिलाकर योनिदोषहरानुपानके  
साय देनेसे यह योनिरोगोंको नष्टकरताहै । इसमें यदि गन्धक-  
केसाप पारदभस्म मिलाई हो तो १ रतीतककीमात्रा देसजैहै  
यदि रजत अथवा ताम्रभस्मकेसाप मिलाई हो तो २ रतीकी  
मात्रा समझनी । निम्बकल्केसाप मिलाकर लेपभी करसजैहै २७

### २८ यौपिद्धलभरसः

सिन्दूरमम्रं रोप्यञ्च वैकान्तं हेमदङ्कुणम् ।  
घराभस्ता भावयित्वा बहुमाना घटीश्चरेत् ॥ १४६ ॥  
योपिद्धलभनामाऽयं रसोऽण्डाधारसम्भवान् ।  
निहन्ति निखिलाघ्नोर्गात् हर्यक्षो हरिणानिव ॥ १४७ ॥  
आ वि, अण्डाधारगदाधिकारे ।

टि०—अण्डाधारमय लक्षणानि—“उदरोन्मथ्या कृच्छ्रा मूत्र  
स्वापत्तरकते । ज्वराऽप्येकहस्ता भरति वैलक्षण्य ॥ भयनी वैगिनी  
शुद्धा मित्र रक्तोष्णवत् तथाऽअण्डाधारगदस्येता मोक्ष भाहल्यो दुषे ॥”

भाषा—रससिन्दूर, अम्रक, रजत, वैकान्त और सुवर्णभस्म,  
शुद्धमुद्रागा सब समभाग मिलाकर २-३ रोज त्रिफलाकेकापसे  
भावनादेकर ३-३ रतीकी गोलिया बनाकर रखोड़े । इसमेंसे  
१-१ गोली समययोजनानुपानकेसाय देनेसे जियोंके समस्त  
रोगोंको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे सिंह शृगोंको ॥ २८ ॥

### २९ रक्तपित्तकुलकण्डनरसः (रक्तपित्तकुटारः)

शुद्धपारदवलिप्रयालकं हेममाक्षिकमुजङ्ग्वज्रकम् ।  
मारितं सकलमेतदुत्तमं भावयेच्च पृथगथ द्रवैश्चिद्रा॥  
चन्दनस्य कमलस्य मालतीशोरकस्य वृषपल्लवस्य च ।  
धान्यवारणकणाशतावरीशास्मलीवज्जटागुडचिभिः

रक्तपित्तकुलकण्डनाभिधो  
जायते रसयरोऽरक्तपित्तनाम् ।  
प्राणदो मधुवृषद्रवैर्यं  
सेविनस्तु वसुकुण्डलो मतः ॥

नाऽस्त्यनेन सममत्र मृतले

भेपजं किमपि रक्तपित्तिनाम् ॥ १५० ॥

नि.र., घृ. यो. त., र. सु., र. क. ल., रसायनसं., र. चं., र. को., यो. त., यो. र., चि. क., र. का, वै चि, रक्तपिते । वै. चि, यो. र., र. सु., नि. र. रक्तपित्तकुठारः ।

भाषा—गुद्ध पारा और गन्धक, प्रवाल, सुवर्णमाक्षिक, नाग और वज्र इनकीभस्में समभागलेकर नीलवर्णकम्लीकर सफेदचन्दन, कमल और मालतीकेफूल, अङ्गुमेकेपत्ते, धनियां, गजपीपल, शतावर, सेमलकामुसला, बटहीजटा और गिलोयके यथासम्भवस्वरस अथवा ढाधोंसे ३-३ यावनाएँ देकर ८-८ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली अङ्गुमेकेरस और मधुशेषाय देनेसे यह रक्तपित्तको जड़से नष्टकरताहै । रक्तपित्तकेलिये इसकी बराबर और कोई दवा नहींहै इसलिये रक्तपित्तकेरोगियोंकेलिये यह प्राणप्रदहै ॥ २५ ॥

३० रक्तपित्तप्रमेहहारीरसः ।

खल्वे समादाय विशुद्धचत-  
कर्पञ्च रक्तस्य घटोद्भवस्य ।

प्रसूननीरेण च सप्त वारा-  
न्वासारसेनाऽपि च तावदेव ॥ १५१ ॥

द्व्यारसेनाऽपि च तद्वदेव  
वाचान्विमर्शोऽप्यथ दृङ्गणञ्च ।

द्विनिष्कनात्रं खदिरस्य साध-  
कर्पप्रमाणञ्च शिवरुच्यम् ॥ १५२ ॥

तुल्यः पुनश्चन्दनवारिणाऽपि  
सम्पद्ये कुयाञ्च हरेणुतुल्यम् ।

छायाविशुष्काञ्च बटो मनुज्य  
मेहाञ्जयशार्ङ्गकीरखण्डैः ॥

नरक्तपित्तां पिटिकाञ्च हन्या-  
दग्नेहजान् प्रातरले मनुज्यः ॥ १५३ ॥

वि. न, रक्तपिते प्रमेह च ।

भाषा—एककप गुद्धफागलेकर अग्न्येव डालकर, अर्द्धनेकेपत्ते, सफेदवज्र इनके रसोंसे ७-७ बार मर्दनकर सुमाष्टाया ८ भाग, खैरसार, सफेदचन्दन आर्गवपूर १-१ कप डालकर चन्दनकोषाभसे ७ दिन मर्दनकर मटर बराबर गोलियां बनाकर छायायुक्तकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली मदनखैरसंज और शिवरुचिषाय मिलाकर प्रातः काल खानेने मुत्रियमेवाहृतमन्त्रपिन और प्रमेहको यह नष्टकरताहै ॥ ३० ॥

३१ रक्तपित्तशामकः

पद्मन्यजोर्जन रत्नेन हेम-  
मात्रोक्तमस्त विगुणं प्रयुज्य ।

पित्ताऽप्लवरीगोपशमाय नैव्यं  
घानाऽग्न्या मात्रिकर्मिधितेन ॥ १५४ ॥

रसायनसार, रक्तपिते ।

भाषा—पद्मपगन्धकजारितपारा (रसचिन्दर) १ भाग, सुवर्णमाक्षिकमलम २ भाग लेकर अङ्गुमेकेपत्तोंकेरससे २-४ दिन घोटकर रखोढ़े । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतककीमात्रा अङ्गुमेकेपत्तोंकेरस और श्वदकेसायदेनेसे यह रक्तपित्तको नष्टकरताहै । ३१ ।

३२ रक्तपित्तहोरोरसः (प्रथमः)

मृतं खतं मृतं तात्रं तीक्ष्णं वासारसे दिनम् ।

मर्दितं मासमात्रन्तु भक्षयेद्रक्तपित्तनुत् ॥ १५५ ॥

वृषपत्राणि निष्पीड्य रसं समधुशर्करम् ।

पिवेत्तेन शमं याति रक्तपित्तं सुदारुणम् ॥ १५६ ॥

र. म. ना, र. सु, ना वि., रक्तपिते ।

भाषा—पारा, तांबा और लोहा इनकीभस्में समभाग लेकर अङ्गुमेके पत्तोंकेरससे एकरोज मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली खाकर एकनोले अङ्गुमेके रसमें ३-३ भागसे मधु और बाहर मिलाकर पीनेसे १ महीनेमें होररक्तपित्त नष्टहोताहै ॥ ३२ ॥

३३ रक्तपित्तहोरोरसः (मृगाङ्गरसः) (द्वितीयः)

कडारमायसं चूर्णं सूतेन्द्रे समचारितम् ।

लोहारिवर्णसंवृष्टं रक्तपित्तहरे परम् ॥ १५७ ॥

सेन्द्रेमं०, र. सु, रक्तपिते ।

टि०—रसराजसुन्दरे “पटोलमायमचूर्णं सूतेन्द्रसमचारितम् । लोहारिवृणसंवृष्टं रक्तपित्तहरे परम् ॥” श्रयाकारेण महाप्रदतया विचारमङ्गलैव पाठे विन्यस्त ॥ लोहारिवर्णो यथा—थिफला मिष्टा दन्ती कडकी तालमूल्या । इददारुश्च वृक्षीरदृष्यपत्राचिपत्रा ॥ श्वदेर-विन्दही च इदमहातकौषधम् । दग्मितस्य च पत्राणि शतपुत्री पुनर्नवा ॥ कुण्डरामकी कन्दस्त-त्री मेकस्य पत्रिका । हस्तिवर्णपलाशश्च कुलिश केदारजम् ॥ माग खण्डितकर्मश्च गौहिता रोहमाकरा ॥” यथा-प्राप्त्येभिरपथैरिम रस मर्दयित्वा प्रयोग कारणीय इति रहस्यम् ॥

भाषा—गुभुक्षित पारेमें समभागसे कडारलोहके चूर्णको चारितकर लोहारिवर्णसे २-४ दिन घोटकर रखोढ़े । इसमेंसे १-१ रत्ती रक्तपित्तहरातुपानकेसाय लेनेसे यह रक्तपित्तको नष्टकरताहै ॥ ३३ ॥

३४ रक्तपित्तहोरोरसः (पित्तमुद्रः)

पित्तमुद्रोऽथ द्रष्टव्यः

र. च, र. र. स., र. सु, व. रा., रक्तपिते ।

टि०—वसवराजीये पित्तमुद्रतान्मात्रय रणे निशिनोऽस्ति सत्र प्रथम-पेक्षपूर्वार्द्धे पारद विहृगुलेवश्च अङ्गुमात्रनो नेपेदिति रुममिति तदो-पा पारद दरदक्षैश्च पूरं यन्त्रेण मेलयेदिति पाठः समीचीन ।

३५ रक्तपित्तान्तकोरसः

सूतद्विभागे बलिमाक्षिके च

शिलाजमेतत्त्रयानुल्यमस्य ।

तुल्या गुह्वरी हिमपाथ्यघात्र्यो

द्राक्षाकिरातेन्द्रयधुमत्वक् ॥ १५८ ॥

धासारसोद्भावितशुक्लपिष्टं  
नीतं सितायष्टिमधुप्रमाणम् ।  
धारोष्णदुग्धेन निवेद्यणीयं  
पित्ताऽऽहराणं नयतेऽन्तमेतत् ॥ १५९ ॥  
रसायनवारः, रक्षयिते ।

भाषा—शुद्ध पारा २ भाग, शुद्धगन्धक, सुवर्णमाक्षिक और शिलाजीत येतीनों पारेकी बराबर, मिलोय, सफेदचन्दन, धनिया, आवला, मुनक्का, चिरामता, इन्द्रजव और बुरैयाकी-छाल येसब मिलकर पूर्ववर्णकी बराबर केसर बारीक चूर्णकर १-२ पहर शुद्धमर्दनकर अङ्गुलसेपल्लोके रसे १-२ रोज मर्दनकर १ से २ मासेतककी गोखिया बनाकर रखोडे । इनमेंसे १-१ गोली शकर, मुल्हठी और मधुमेवाष चाकर ऊपरसे धारोष्णदुग्धपीनेसे उपद्रवोंसेरहित यह रक्षयितको नष्टकरताहै ॥

### ३६ रक्तमाहेश्वरोरसः

सृतं गन्धं मृतं स्वर्णं रससिन्दूरकान्तकम् ।  
सर्वविगुणमम्रञ्च ताग्रभस्म द्विभागकम् ॥ १६० ॥  
यङ्गं नागं तथा रौप्यं प्रत्येकं सृतसाम्यकम् ।  
लोहभस्म त्रिभागञ्च मुण्डसिन्दूरकन्तथा ॥ १६१ ॥  
सर्वं खल्वे विनिःक्षिप्य मर्दयेदतियत्नतः ।  
यज्ज्वरं यष्टिका द्राक्षा मधुपुष्पं शतावरी ॥ १६२ ॥  
लोहनाभमयङ्गीबेरपत्रकेसरपत्रकम् ।  
मृणालचन्दनाशीरनीलोपलघनं समम् ॥ १६३ ॥  
श्रीगन्धं बालकं कुष्ठं बलाशाल्मलिमूलकम् ।  
रम्भाकन्दं गाभूरकं माधवी सहदेविका ॥ १६४ ॥  
परुषककपायेण भावयेच्छतवारकम् ।  
वल्लप्रमाणशुद्धैश्च शर्करामृतमाक्षिकैः ॥ १६५ ॥  
भक्षयेद्धतमिधन्तु रक्षयित्वाहं परम् ।  
सर्वपैतृहरो नृणां रक्तमाहेश्वरोरसः ॥ १६६ ॥  
ब रा, पित्तारोगः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सुवर्णभस्म, रससिन्दूर और कान्तभस्म १-१ भाग, अत्रकभस्म १० भा, ताग्रभस्म २ भा, यङ्ग, नाग, रजतभस्म १-१ भाग, लोहभस्म और मुण्डसिन्दूर ३-३ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारिमेन्धक की नीलवर्णकजलीमें मिलाकर छुदारा, ब्रह्मदण्डी, मुल्हठी, द्राक्ष, महुआ, शतावर, लोध, गम्भीरीकेफल, हाकवेर, पद्म केसर, कमलगट्टा, भर्साड, सफेदचन्दन, रज्ज, नीलोफर, नाग रमोय, विरोजा, गेंदुला, कुल, खरेटी, वेमलकामुसल, केलेका कन्द, गोखरू, माधवीकटा, सद्देवी और फालसा येसब १६-२६ तोडे लेकर जवकुटकर इसके १०० भाग बनाकर रखले । इनमेंसे १-१ भागका अठ्ठुने जलमें नव्वयमागवाशिष्टकाकरे । इसकायसे ऊपरसेरसको सुखनेतक मर्दनकरे । फिर दूसरे भागको पूर्ववत् उबालकर काढाबनाय उसमें मर्दनकरमुखावे । ऐसे १०० भावनाए देकर इसरसको तैयारकरे । यद्यपि इस

रसेतैयार करनेमें बहुतदिनअंगे पण्डित यथार्थगुणतमीहोगा । अनुकल्पसे तैयार करनाहो तो तत्सखल्वमें दशाको रज्जकर पूर्वोक्तद्वयो खोपणकरता जाय तो इसतरह अधिकसेअधिक एक-छटाहमें यह रस तैयारहोजायगा । इसकी ३-२ रतीकी गोखिया बनाकर रखोडे । इनमेंसे १-१ गोली शकर, धी और मधुमे-साय लेनेसे रक्षयित और समस्त रक्षयिकारोंको यह नष्टकरता है । इसमें मृदयुक्त पच्य देना ॥ ३६ ॥

### ३७ रक्तवातान्तरकसः

शुद्धं सूनं विपश्चात्र गन्धं त्रिकटुकं समम् ।  
चित्रमूलकपायेण दिनं मर्धञ्च वासया ॥ १६७ ॥  
अर्कमूलकपायेण दिनं जम्बीरनीरकैः ।  
दोलायन्त्रे पचेद्यामं मापमात्रञ्च भक्षयेत् ॥  
क्षीणवातं निहन्त्याशु रक्तवातं घिनाशयेत् ॥ १६८ ॥  
ब. रा., वै चि, क्षीणवाते ।

टि०—भावनाविशेषस्यलोहभस्मनाऽऽमाकाङ्क्षितोपेकामनेनो माऽन्तर्भवति ।

भाषा—शुद्ध पारा और बलनाग, अत्रकभस्म, शुद्धगन्धक, त्रिकटु सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारिमेन्धक की नील-वर्णकजलीमें मिलाकर चित्रकीजह, अङ्गुला, आकवीजकी-छाल, जमीरी इनके यथासम्भव स्वरस अथवा कापोंसे १-१ रोजमर्दनकरनेवेदा सन्ध्यात्रयोंमें १-१ पहर स्वेदनकर १-१ मासेकी गोखिया बनाकर रखोडे । इनमेंसे १-१ गोली उच्चि तापुनाभेस्ताय देनेसे यह क्षीणवात और रक्तवातको नष्टकरताहै । क्षीणवात और रक्तवातकेलक्षण बसवराजीयमें देखलेना ॥ ३७ ॥

### ३८ रक्तारिरसः

रत्नं गन्धं समं मर्दत्कज्जलीं लिङ्गिकारसैः ।  
काकिनीरससंयुक्तं भार्गवकं बोलचूर्णकम् ॥ १६९ ॥  
पर्यटीकदलीयने पात्वाऽस्याधूर्णकं लिहत् ।  
रक्षयित्वाकमशोषि रक्तप्रदरनुत्थिया ॥ १७० ॥  
र रा, रक्षयिते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्ण-कजलीकर १ भागहीरादक्खनका चूर्णमिलाय शिवलिङ्गी और सफेदगुग्गाकीपत्तीके रसोंसे १-१ रोजमर्दनकर पर्यटीविधानसे पर्यटीबनाकर रखोडे । इसमेंसे ३ रतिसि १ मासेतक कम-बुद्धिसे चढावे और हाथकरे । अनुगान रोगावस्थाको देख कर चुककरे । इसकेबचनेसे रक्षयित, धृतीबवासीर और रक्तप्र-दर नष्टहोतेहैं । यद्यपि येल्लोको लोगोंने हीराबोलखिताहै परन्तु उसके डालनेसे योगोक्तगुण नहींहोगा इसलिये जहाँजहाँ रक्तको बन्दकरनेकेलिये खानेमें आताहै वहाँ सबजगह बीजकनियार्थका मध्यकरना । यह आकारसाम्यहोनेसे प्रम होयगाहै ॥ ३८ ॥

### ३९ रजतादिलोहम्

भस्मीभूतं रजतममलं तत्समं ज्योमन्त्रणं,  
सर्वैस्तुल्यं त्रिकटुं सवरं साय आज्येन युज्यते ।

लीढं प्रातः क्षपयित्तरां यश्मपाण्डूदरादाः।

श्यासं फासं नयनजस्त्रजः पिप्परोगानरोपान् ॥ १७१ ॥  
र. सं., र. चं., र. क., र. सु., यस्मिन् ।

भाषा—चाँदी और अन्नक भस्म १-१ भाग, त्रिकटु, त्रिफला और लोहभस्म २-२ भाग लेकर बारीकपूँकर एकरोज घोटकर रखोढ़े । इसमेंसे ३ रत्तीसे १ मासेतक पीनेसाथ प्रातःकाललेनेसे राजयक्ष्म, पाण्डु, उदररोग, बवाहीर, श्याम, कास, नेत्ररोग और तमामपित्तरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ३९

### ४० रजतादिवटी ( महदादिः )

कर्पप्रमाणं रजतं मौक्तिकं स्वर्णैर्गणिकम् ।  
फालमानन्तु धैर्यान्तं सिन्दूरं सक्षिलाजतु ॥ १७२ ॥  
लोहमन्नप्रवालञ्च त्रिधा चित्रकवारिणा ।  
फाकमाचीरसेनापि सप्तधा च विभाजयेत् ॥ १७३ ॥  
गुञ्जाद्वयमितां कृत्वा पटिकां पयसा सह ।  
प्रातः प्रातः प्रयुज्जीतं क्षायुरोगनिवृत्तये ॥ १७४ ॥  
त्रै. र., क्षायुरोगे ।

भाषा—रजत और मोतीभस्म, सोनगंरु १-१ कर्प, वैक्रान्तभस्म, रससिन्दूर, शुद्धसिलाजीत, लोह, अन्नक और प्रवालभस्म ३-३ कर्प लेकर बारीक घोटकर चित्रकरोड़ासे ३, और मनोयके रससे ७ भावनाएँ देकर २-२ रत्तीकी गोलियाँ बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली हमेशा प्रातःकाल दूधपेसाथलेनेसे यह प्रायुरोगरी नष्टकरताहै ४० ॥

### ४१ रतिकान्तमुन्दररसः ( मदनमुन्दरः )

रौप्यवद्भस्मसंलद्धेमर्कं धैर्याऽन्नमपि सप्तमायितम् ।  
मौञ्चजेन रतिकान्तमुन्दरः स्याद्विह्वलवर्चस्यवृद्धये ॥  
क्षीरमौचरससंश्लेषकरासंयुतां द्विगुणपतिकामितः ।  
मृष्टसाल्प्यद्विगुणमोज्जनाद्योग्यादि पञ्च रसायनम् ॥  
र. सं., पानीकरने ।

भाषा—रजत, चाँ, पाटा, लोह, मुक्कं, वैक्रान्त, अन्नक इनसबही भस्म समभाग लेर मोचरससे ७ भावनाएँ देकर २-२ रत्तीकी गोलियाँ बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली मोचरस, समुद्ररोष और क्षारमिलेहुएदूधपेसाथ सेवनकरनेसे स्तम्भनकर रसिपुरारो देताहै और अन्यन्त बीर्यकी वृद्धिकोकरताहै । शुद्ध और साल्प्य, दिनकारक, बल्क भोजनकरनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकर अन्यन्तरसायनका कामकरताहै ४१

### ४२ रतिकापरसः

प्राग्भाजिता रत्तीणां मर्दयेद्भस्ममूलकम् ।  
मृत्तं तारञ्च ताप्रञ्च गन्धकञ्च सर्वं दिनम् ॥ १७५ ॥  
रितानाम्प्राज्यसिपुर्गैः चार्तं भुरग्या पिपेतपयः ।  
रतिकापररसो नाम फामिनीमण्ये हितः ॥ १७६ ॥  
पानरामुलगोभूमं पौकिल्याग्रस्य धात्रकम् ।  
माषाभोक्षुरसः सर्पं लोहितं पात्रयेदने ॥ १७७ ॥

तेनैव वटकाः कार्या नित्यं स्यादेद् द्वयंद्वयम् ।

अनुपानमिदं सिद्धं सेवनाद्रमयेच्छतम् ॥ १८० ॥  
र. सं., रसायने ।

टि०—मूलमेंसे नैच्यमात्र ५५मीलतयाने बहामिनि कृतमलि । वन प्राग्भाजिता रत्तीणां मर्दयेद्भस्ममूलकमिति सन्दर्भे । स्यात्प्राग्भाजितामिति शुद्धगन्धकञ्च समभाग गृहीत्वा प्राग्भाजिता दिनैक मर्दयित्वा नित्ये वमाना वटिका कृत्वा भगुनेद्विषयः प्रतीयते । परन्तु “ पिप्पेऽन्नन नरारोममूर्ध्वनिर्गतं युक्तमनापुष्टता । यस्य प्रयच्छन्प्रायो गरीय दुष्टानुदूषीविषसेवनादा ॥ तेनाशु रक्त क्षुपिञ्च रक्षाः कुर्वन्ति क्षीर ज्वर मिलिन्नम् ॥ सु. नि. ७। ११-१२, इत्यादिना रोगमसुगार्हृष्यो दण्डवत्कथनाद्वैशाखविरहत्वाच्च रत्तीणां प्राग्भाजिता मर्दनं विषय भयम् स्यादयेदिति द्विवाच्याहारेण प्रत्यमन्नि. कर्त्तव्या । भग्नमय-रक्तु धीकायां मर्दयितोऽपि, मर्दनोपररगे पलाशमूत्ररसो प्रतीत्य इति बोध्यम् ।

भाषा—मुमुक्षुशान्तस्कारकियेहुए पारेको प्रयमतिवमें शुद्धाकर गोलीबनाय यन्नमूपा अथवा पुष्कटान्ठमें बन्दकर राखिया और सफेद अन्नकको बारीक घुटाकर लेपकर इसीकी एक-खोलबड़ाकर ४-५ कपडमिठी देकर सुराले । सुचनेर लु-पुटकी आंचदे । स्वाप्रदातल होनेपर निकाल्ले । कुछ बगरहै तो दुबारा इसीतरहरनेसे भस्महोगी । यहभस्म, रजत और ताम्रभस्म, शुद्धगन्धक सब समभागलेर नवीनपलाशकी जड़केद्वये एररोज मर्दनकर ३-३ रत्तीकीगोलियाँ बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली दूधपेसाथ रतिममनसे २ पंजा-पूर्वलेनेसे वयंयन्तम्भन होताहै । विशेषस्तम्भनरी इच्छा हो तो देवाचरी ताजीनक, निरास्ता, तालमराना और डहर समभाग लेकर ईपुंकरसंसेवानकर १-१ तोलेह बंधनाकर पीते पडावे, अधिकदिन रखनेहो तो सातवीमें ढाले । इनमेंसे २-२ बड़े रोज अनुपानरूपसे खानेसे बहुतगी क्षिपौर्धेयाय रमणक्षत्रकाहै यदाई अथवा नमक नानेसे स्तब्ध होगी ४२ ॥

### ४३ रत्नकरण्डोरसः

भूनागाऽन्नकयाः सत्त्वं कान्तं दाम्प्रत्ययकम् ।  
मुक्ताफलानि रत्नानि ताप्यं पश्चान्तमेव च ॥ १८१ ॥  
भस्मीकृतमिदं सर्वं पृथक्पृथक्मिति मतम् ।  
निष्कमाप्रमितिं शुद्धं राजाघर्तं रजस्तथा ॥ १८२ ॥  
पतन्मयं सर्वं योज्यं मर्दयेत्स्याऽन्येतत्तमः ।  
गुह्या गुणोदरे कौष्ठ्यां धमेदाफादादूर्ध्वानम् ॥ १८३ ॥  
शतवारं धमेदेयं मर्दयेत्स्याऽन्येतत्तमः ।  
ततः सन्मृणितं पामिन्मुनानामस्मृष्टिशासनम् ॥ १८४ ॥  
मरिचं पञ्चशतान्येवं क्षिप्त्वा सप्तमये यदातः ।  
रम्ये करण्डके क्षिप्त्वा सप्तपयेत्तदनन्तरम् ॥ १८५ ॥  
सोऽयं रत्नकरण्डको रम्यरौ मध्याप्यवदनामणां,  
हृत्पाच्छासगर्दं ज्वरं ग्रहणिको कार्पाशं क्षिप्त्वाऽन्यमपि  
शुद्धं शीरमहोदरं बहुविधं बुधञ्च हृत्पाददानं,  
यस्यो मुख्यकरः प्रदीपनकरः स्वस्वगोत्रिणां योगदानम् ॥  
१. १ म. १. १००, पामदण्डे ।

भाषा—वैजु और अन्नकासात्र, कान्तप्रापाण और कान्तलोह, मुक्कं, अन्नक, रजत, मोती, नवरत्न (हीरा, पद्मा, माणिक्य, पुष्कराज, नीलम, लज्जनिवा, गोमेद, मोती और भूषा) मुक्कंमाक्षिक, रैकान्त, साजरदं इनसक्कीमसं ४-४ मासो लेकर अमलवेन अथवा बिजोरेकेरसे १-२ रोज मर्दनकर कुटालीमें रराकर धमन करावे । धूरदित्तरत्नकण्होनेवेबाद बाहरनिकाकर छटाकरले । फिर पूर्ववत् १-२ पहर बिजोरैमें मर्दनकर धमनकरे । इततरह सौवार करनेबाद मोतीमम्म ८ मासो, मरिच २० मासो डालकर एकरोजमर्दनकर शीशीमें भरदे । इसमेंसे १ चालक रोलेकर १ चावलकसीमात्रा मधु और पीलेमाथ देनेसे श्वात, ज्वर, सङ्गहनी, काम, हिचकी, घुल, शोष, उदररोग, नाना-प्रकारके उड, धातुजोकोशीणता, पण्डत्व, मन्दाग्नि इनसक्की यह नष्टकरताहै । स्वस्थ आदमीके सेवनकरनेमें आयुकी वृद्धि कोकरताहै ॥ ४३ ॥

### ४४ रत्नगर्भपोटली

रत्नं यच्च हेमतारं नागं लोहञ्च ताम्रकम् ।  
तुल्यांशो मरिचं देयं मुक्तापिद्रुममाक्षिकम् ॥ १८७ ॥  
दाई तुत्यञ्च तुल्यांशं सप्ताहं चित्रकट्टयेः ।  
मर्दयेत्स्वा विचूर्ण्यांश्च तेनपूर्वा घराटिकाः ॥ १८८ ॥  
दङ्कणं रविदुग्धेन मुलं लिप्त्वा निरोधयेत् ।  
मृदाण्डे ता निन्द्याश्च सम्यग्गाजपुटे पचेत् १८९  
आद्याप्य चूर्णयेत्सर्वं निर्गुण्ड्या सप्त भावयेत् ।  
आर्द्रकस्य रसैः सप्त चित्रकस्यैकरविंशतिः ॥ १९० ॥  
द्रव्ये मांन्यं सप्तः शोष्यं देयं गुञ्जाप्रमाणकम् ।  
क्षयरोगं निहत्याद्यु साभ्याऽसाच्यं न संशयः ॥ १९१ ॥  
योजयेत्पिप्पलीश्रीष्टिः सपृते मरिचैस्तथा ।  
महारोगाऽष्टके फासे श्वासे वैराऽतिसारके ॥  
पोटली रत्नगर्भेयं सर्वरोगकुलान्तिका ॥ १९२ ॥

र स, र र, चि क, र च, र सु, यो र, व यो त, र  
चि, र म, नि र, र. को, रसायनस, भि र, र क, यो म, र.  
दा, दो, र. (मा), भै. सा., र को, र का, र क यो, यक्षमणि ।

टि०—येपुकेपु मुक्तेपु “दानावर्गश्च वैराग्यं गोमेदं पुष्कराजम् ॥”  
इति पत्र दत्तये, ताम्रत्पाने प्रयुज्यन्तेपु अन्नक गृहीतम् । “तुल्यांश्च  
मरिच” इत्यस्य स्थाने तुल्यांश्च मारिचमिति पाठ ।

भाषा—पाटा, हीरा, मुक्कं, चादी, नाग, लोह, ताम्रा,  
मोती, प्रवाल, सोनामाखी, सङ्ग और तुत्य इनसक्कीमसं १-१  
तोला, सफेदमिर्ब ३ तोले लेकर बारीकचूर्णकर चित्रके स्वरस  
अथवा बायसे ७ रोज मर्दनकर सुखाकर रसनेचरावर पीली  
कोडियोंमें भरके सुहावेको आंकेदूधमें मर्दनकर कौडियोंका  
अच्छीतरह सुहृन्दकर मिठीकी मजतुखिल्लीमें बन्दकर ६-७  
कण्डमिठीकरदे । अच्छीतरह सुखनेपर गजपुटवी आचदे । स्वाज्ञ-  
शीतलहोनेपर निकालकर निर्गुण्डी और अदरखैरसे ७-७  
भावनाए देकर सुखाकर चित्रके स्वरस अथवा बायकी २१  
भावनाए देकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े ।

इनमेंसे १-१ गोली पीपल, मधु अथवा धी और मिर्चोकेसाथ  
देनेसे साध्य अथवा असाध्य क्षयरोग, आठप्रकारके महारोग  
( वातव्याधि, प्रमेह, कुष्ठ, अर्श, भगन्दर, अदमरी, मूदगर्भ  
और उदर ) काष्ठ, श्वास और अतिमार इनसक्के बराबरी यह  
नष्टकरताहै । तत्तदोषहरतापुनानेमाय देनेसे समस्तरोगोंको  
दूरकरताहै ॥ ४४ ॥

### ४५ रत्नगिरीरसः ( प्रथमः )

सूताऽन्नस्वर्णताम्राणि गन्धं चादर्शशलोहकम् ।  
लोहार्द्रं मृतयेकान्तं मर्दयेद्भृङ्गजद्रवे ॥ १९३ ॥  
पर्पटीस्वयत्पाच्यं चूर्णितं भावयेत्पृथक् ।  
दिप्रवासाकनिर्गुण्डीरुद्रच्युम्नाऽग्निभृङ्गजैः ॥ १९४ ॥  
क्षुद्रामुण्डीजयन्तीभिर्मुनिप्राप्तासुतित्तजैः ।  
कन्यापाश्च द्रव्ये मांन्यं त्रिभिर्धारं पृथक्पृथक् ॥ १९५ ॥  
ततो लघुपुटे पाच्यं स्याद्गृहीतं समुच्चरेत् ।  
यहं दद्यात्कणाधान्ययुक्तं चाऽभिनयज्वरे ॥ १९६ ॥  
मुद्राग्रं मुद्रधूपं वा सनीरं तनूतककम् ।  
रसे धोक्त पथ्यमस्मिन् शाकं सर्वज्यरोदितम् ॥ १९७ ॥  
र. चि, र स, भै. र, रसायनस, र शि, नि र, र को,  
र रं, यो. म, व रा, दो., र सु, र का, र क. यो., ज्वराऽ-  
धिकारे ।

भाषा—पाटा, अन्नक, सुक्कं, ताम्र इनकीमसं, शुद्दगन्धक  
१-१ भाग, इनसक्केसाथी लोहमस, लोहसे आधी रैकान्तमस  
लेकर सक्को एकजगह भगरेकेरसे एकरोज मर्दनकर सुलाकर  
२-३ कण्डमिठीकीहुई आताशीशीशीमें रखकर २-३ पहर  
अग्निपर पकावे और दालका डालकर देखतारहे । एकजीब होनेपर  
ताजेगोबरपर रक्खेदुए केलेकेपत्तेपर डालकर दो तीन केलेके पत्तोंसे  
ढककर गोबरसे ढकावे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर पीरजसे निकालकर  
सहिब्र, अह्सा, निर्गुण्डी, गिलोय, बज, चित्रक, भंगरा, भट-  
कटैया, गोरखमुण्डी, जैती, अण्णस्य, प्राप्ती, विरायता, पीकु-  
आर इनप्रत्येकके थपासम्मव स्वरस अथवा बायोंसे ३-३ भाव-  
नाए देकर गोलावनाय सुखाकर शरावसमुद्रमें बन्दकर “७  
कण्डमिठीदेकर ५ सेरकण्डोंकी आचदेवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर  
निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा पीपल और  
धनिवेसेसाथ मधुवृषीरहमें मिलाकर देनेसे यह तन्काळ ज्वज्वको  
नष्टकरताहै । ज्वर उत्तरवेपर अच्छीतरह सूखलेगोती मूंगकायुष  
अथवा दाल अथवा उचित हो सो छाछ, भात और ज्वरोक्-  
शाक देवे ॥ ४५ ॥

### ४६ रत्नगिरीरसः ( द्वितीयः )

रसाऽन्नहैमं रवितारहेम-  
गन्धं द्विनिघ्नं सकलं विमुद्य ।  
भृङ्गजयन्तीरेः कदलीदले च  
पाच्यं ततो रत्नगिरि भवेत्सः ॥ १९८ ॥  
श्वासे च कासेऽप्यनिवारितेऽप्यः  
हस्तोद्गये यक्ष्मणि पीनसे च ।



पाण्डौ सशोभे पवने सरके

यहः प्रयोज्यो मधुपिपलीम्याम् ॥१९९॥

र.शं., शासे कासे च ।

भाषा—गारा, अश्रक, स्वर्णमाक्षिक, तांबा, चांदी और मुवर्ण इनकी मस्में १-१ माय, शुद्धगन्धक १२ भाग लेकर सबको कज्जलीकर घोटकर मंगरेकेरमसे एकोरुजमर्दनकर अच्छीतरह सुराकर घृताकलोहेकीकड्डीमें गलाकर गोबरपररस्सेहुए केलेके पत्तेपर ढालकर दूसरेपत्तेसे ढक गोबरसे दबादे । स्वाश्रुशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती मधु और पीपलके साप देनेसे अन्ययोगसे असाध्य क्षतोद्भूत आस और कास, राजयक्ष्म, शोथयुक्तपाण्डु, यातक इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १९९ ॥

४७ रत्नप्रभासः

स्वर्णमाक्षिकमम्रञ्च नागचङ्गी च पित्तलम् ।

माक्षिकं रजतं यजं लौहं तालञ्च खर्परम् ॥ २०० ॥

फटल्याः काकमाच्याश्च धासकस्योत्पलस्य च ।

स्वरसेन जयन्त्याश्च कर्पूरसलिलेन च ॥ २०१ ॥

भाययित्वा यथाशास्त्रमहोरात्रमतः परम् ।

सम्मर्द्याऽतन्द्रितः कुर्यान्निष्पगुञ्जामिता घटीः ॥ २०२ ॥

एकैकाञ्च प्रयुज्जीत प्रातरासां यलाम्बुना ।

उष्णेन पयसा धाऽपि केशराजसेन वा ॥ २०३ ॥

इयं रत्नप्रभा नाक्षी घटिका सर्वनिदिद्धा ।

सर्वेक्षारोगहृदी च यस्या बुध्या रसायनी ॥ २०४ ॥

भै र., परिशिष्टे ( रसायने )

भाषा—मुवर्ण, मोती, अश्रक, नाग, कक, पीतल, सोना-माली, चांदी, हीरा, लोह, हरिताल और कपरिया इनमन्त्री-मस्में समयागलेकर केलेराकन्द, मकोय, अड्या, कमल, जैती और कपूर इनसबके स्वरस अथवा हाथोंसे १-१ अहोरात्र मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली खोटोकेस्वरस अथवा गरमदूध अथवा मंगरेकेरमसे देनेसे यह ममन्तदोगोंको दूरकर बल और वृत्ताको देखर दीर्घा-शुनो करतीहै और तामकर श्रीरंगोंकी परमोपपडे ॥ ४७ ॥

४८ रत्नमागोत्तररसः

यजं मरकतं पद्मार्गं पुष्पञ्च नीलकम् ।

वेद्यं याऽथ गोमेदं मौक्तिकं विद्रुमं तथा ॥ २०५ ॥

कमलचन्द्रमिदं सर्वं यैकान्तं चाऽष्टमागकम् ।

तनुत्यं ताप्यजं भस्म तद्वह्निमलमस्म च ॥ २०६ ॥

मर्द्यतस्मिण्णां तुत्परसगन्धककज्जलीम् ।

सर्गमेकञ्च सम्मर्द्य छाग्रीदुग्धेन तद् दृष्यहम् ॥ २०७ ॥

विधाय पपटीं यन्नाम्परिषुष्ये प्रयत्नतः ।

घण्ट्याकर्तव्यकीकन्दरसेन परिमर्दयेत् ॥ २०८ ॥

फाननोत्पलविधान्या पुटेरलोडवापारकम् ।

एवं रमोयिनिष्यो रत्नमागोत्तररसिधः ॥ २०९ ॥

महाघण्ट्यादिघण्ट्यानां मर्द्यासां मन्तनिप्रदः ।

देयीशास्त्रे यिनिर्दिष्टः पुंसां घण्ट्यन्तरागनुत् ॥ २१० ॥

सोऽयं पाचनदीपनोद्गदहरो वृष्यस्तथा गमिणी,-

सर्वव्याधिविनाशनी रतिकरः पाण्डुप्रचण्डातिनुत् ।

घन्यो बुद्धिकरश्च पुत्रजननः सोभाग्यरूपोपितो,

योऽन्यात्कृमपाकरोति महसा पुंसामशोषार्तिनुत् २११

र. र. स., र. चं., छी. वि. र. सो., र. र. कौ., सन्तानार्थे ।

भाषा—हीरा, पना, माणिक्य, मुनराज, नीलम, लज-निया, गोमेद, मोती, प्रवाल, इनमन्त्री शास्त्रोक्तविधानसे कीहुईमस्में कमरुद्भागसे लेवे । फिर वैकान्त, मुवर्णमाक्षिक और रौप्यमाक्षिक इनप्रत्येकीमस्में पूर्वद्रव्योंसे अशुनी और सभ्ये तिलुनी शुद्धपोरगन्धकीकज्जली मिलाकर सबको दोरोज बकरीकेदूधमें मर्दनकर मुधाकर फिरसे कज्जलीबनाय घृताफ लोहेरीकड्डीमें केरीलकड़ीके कोयलोंपर गलाकर गोबरपर रखेहुए केलेके पत्रपर ढालकर दूसरे केलेके पत्तेमें ढक्कर गोब-रसे दबादे । स्वाश्रुशीतलोनेपर निकालकर कज्जलीपनाय बाँझवेरगावे बन्दकेरमसे १-२ रोज मर्दनकर गोरगुग्गुलुके स्वरसकी १६ भावनाएं देखर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचिनातुपानवेनाय देनेसे स्त्री और पुरुषोंके महाबन्ध्यत्वादि समस्तदोगोंको दूरकर वृत्तमन्तविधो पैदाकरताहै । मन्दाभि, पण्डित, पाण्डु, बुद्धिनाश, योनित्र और पुरुषोंके पण्डित्यादि समन्तदोगोंको यह दूरकरताहै ॥ ४८ ॥

४९ रत्नाकरचिन्तामणीरसः

अष्टसत्त्वञ्च हेमाद्यं ताप्याद्यद्रुतिस्तथा ।

सर्वतुल्यं रत्नं क्षित्या तद्वह्निमम्रकद्रुतिम् ॥ २१२ ॥

मीनाक्षी चैव सपांक्षी व्याघ्रोक्तं पुनर्नया ।

मिहनेत्री तथाऽऽपतां काकमाक्षी तुला मयी ॥ २१३ ॥

पीतपर्णी पुष्पा कुम्भी विद्याला च रुद्रन्तिका ।

सोमघट्टी मृगी हन्त्री द्राघिका मृषिकास्तथा ॥ २१४ ॥

पतासामीर्थीनाञ्च प्रत्येकं मन्तया पुटेत् ।

काचकृपां तथा क्षित्या पक्षैकञ्च हठाग्निना ॥ २१५ ॥

भूमवेयी रम्भो दिव्यः पङ्कधातुं पेषयेद्यम ।

एवमेव प्रकृत्यै समया च प्रयत्नतः ॥

रुद्रहीयथी रसो दिव्यो नाभ्या रत्नाकरो रसः ॥ २१६ ॥

रत्नमाग, रसायने ।

भाषा—मुवर्णदि अष्टपलकोंकी निष्पभग्न बनाय यथा शास्त्र सबका सारा निदाने और गुणान्दिपातु तथा उनके कषे-धातुओं (उपधातु)की द्रुतियां यथाममाण लेकर सबको बतार शुद्धारा, पांशे आधो अश्रकद्रुति मिलाकर ७-८ बन्धमिर्दोरी-हुई आशीर्वादीमें ढालकर मन्दागी, पण्डो, व्याघ्रीकन्द, पुनर्नया, मिहनेत्री, काकमाक्षी (काक र. गु.) मकोय, मन्-दगुष्ठा, गन्धनूत (गोडगन्धकीकड्डी), पीतानी, मृगी, जङ्गमी, इन्द्राणी, रुद्रो, गोमरी, मृगी, हन्त्री, पङ्क-ओंको दृढकरनेवाली और जराब बिनाभापन देनेवाली दिव्यी औषधिका है उन प्रदेहकाम इन्द्रा अतिव गरम है । फे

७-७ पुण्डेर काचनीतृपीमें डालकर १५ दिनतक हठाभिते धमन करनेपर यह धूमवेधी रस तैयार होगा और सार्ताघात ओंको स्वकीयधूमसे सुवर्ण बनावेगा । इसवेस्फुल्लसे महान्याधि योंसे निवृत्तहोकर दीर्घायुको प्राप्तहोताहै ॥ ४९ ॥

### ५० रत्नाकररसः

हेमहीरकचेकान्तवद्वाऽम्ररसगन्धका ।  
समभागमिता योज्या सर्वतुल्यमयो मतम् ॥ २१७ ॥  
खल्वे निःक्षिप्य सर्वाणि भाययेत्ककुभाममसा ।  
गोधूमस्य यवस्यापि कायेन सप्तधा पृथक् ॥ २१८ ॥  
ततः कन्याऽधुना प्राशस्त्रीन्यारान् परिपेचयेत् ।  
रक्तशाल्यन्तरे पिण्डं निशाः सप्त च घापयेत् ॥ २१९ ॥  
समुद्धृत्य घटीक्षाऽथ कुर्यात्स्विन्नकलाययत् ।  
अजुनस्य कपायेण काञ्जिकेनाऽऽस्वेन वा ॥ २२० ॥  
गोधूमस्य यवस्यापि कायेन हयियाऽपि वा ।  
यथादोषानुपानैर्धा प्रव्यात्परमौषधम् ॥ २२१ ॥  
वातिकं पैत्तिकञ्चाऽपि कैश्मिकं साक्षिपातिकम् ।  
मिमिजं हृद्रवञ्चाऽपि कौष्ठिकं पृथुकं तथा ॥ २२२ ॥  
तथा घटणिकं घोरं गर्दं विश्लेषकाभिधम् ।  
मेदःसूत्राभिधञ्चाऽपि परिक्षयगर्दं तथा ॥ २२३ ॥  
आयामिकाश्च यक्ष्माणं घातपित्तकफामयान् ।  
हृत्पथं निखिलाप्रोगान् वृक्षानिन्द्राशनि रंध्या ॥ २२४ ॥  
आ वि, ह्रोगाऽधिकारे ।

टि०—वैष्टिकादीना लक्षणानि अनुवर्द्धविज्ञाने निहितानि सन्ति च यथा—आमवातादभीघाताद्यथाऽऽवरणिकाद्रदात् । हरकोष्ठे जायते शोथो गद दप वि कौष्ठिक ॥ १ ॥ ज्वरो दाहोऽरुचि कम्पो वैद्यार्थं नष्टिनलय । आस बासी राजयक्षा कोष्ठे पूयस्य सञ्चय ॥ २ ॥ मूर्च्छाऽश्लेष प्रका पक्ष नाडीविषमतादिनी । गदाघ चोरसदस्माद् आमवातोऽपि प्रमु प्यवे ॥ ३ ॥ इति कौष्ठिक ॥ शोणितस्य गती वीष्टे व्याहृतयामना त्मन । तलेरी पृथुता याति मिथ्याऽऽहारविहारतः ॥ ४ ॥ हृद्रेषु र्व्यथा तत्र दीर्घं आसहृष्टता । अरति भ्रममोहौ च विद्वानि पुष्पकेगरे ॥ ५ ॥ इति पृथुक ॥ आमवाताद् वृक्षरीपाद् पीतादंस्वनिषेकवात् । हल्कोष्ठारवणी क्षिप्र वीर्यते हृत्तामन ॥ ६ ॥ दद दाहोष्णता शोफेगौरव महती व्यथा । कौष्ठस्विन्न कानो दीर्घं आसहृष्टता ॥ ७ ॥ नासा मारणे रक्तस्य सुनि वैदेश्य मन्दता । शाकासु शोफो घमनी गवेक्षिण गामिनी ॥ ८ ॥ नाग्न्या वरणीको श्लेष् व्याधि विद्रिक्स्थिते । जातमात्र शिथिल्योऽय नैवेन्य कदाचन ॥ ९ ॥ इति वरणिज ॥ हल्कोष्ठार-क्षेपको व्याधि नाग्न्या विक्षेपिका मता । जातेऽस्मिन् महति व्याधौ कोष्ठ देहोऽसुरोऽस्थम् ॥ १० ॥ सन्ध्यासारथिन् सन्ध्यावर्षी शीघ्राया वृष्टे शत । वेदना जायते तीव्रा मर्मप्रणमरीदनी ॥ ११ ॥ तीक्ष्णभेदी सप्ता कर्पो दाहस्तत्र च जायते । मुहुमुहु आसरोष पीता त्वक स्वेदनिर्गम ॥ १२ ॥ आयान्नानाहमोहाश्च वैद्यार्थं कृताऽऽरुचि । क्रमादिद्रिय विषयो मरणप्राप्त्यनान्न ॥ १३ ॥ इति विश्लेषिञ्च ॥ हल्कोष्ठपथी मृष्टे मेद कणचयो गद । मेद मृताल्पया श्रोत्रे सुनिमित्तत्वेति निमि ॥ १४ ॥ मन्द मन्द क्रोत्रादी भवेदुदयवेषु । भवमानो भ्रमो मूर्च्छां स्थायना बलमय ॥ १५ ॥ हृदरे व्याधि सप्तेदममृत्सुख सहसा भवेत् । जातमात्रशिक्षित्योऽय व्याधि परमदारुण ॥ १६ ॥ इति मेद मृष्टम् ॥ श्वात्मजायते धीरो व्याधि नग्न्या परिक्षय । चोक्षेयस्या क्षय

आसो दीर्घं सदन भ्रम ॥ १७ ॥ हृद्रेषु वृद्धिमान्य क्रमाच्छोकश्च जायते । एतत्स्वैद्य विक्षेपिद्वै व्याधि परिक्षय ॥ १८ ॥ इति परि-क्षय ॥ हल्कोष्ठप्रसृति नाग्न्या व्याधिरायामिको मता । आस शोथो भ्रमो मूर्च्छा हल्कोष्ठो वृद्धिमन्दता ॥ १९ ॥ जलेदरमनिद्रा बलमासपरिक्षय । परितस्वैद्य विक्षेपिद्वैरायामिको गद ॥ २० ॥ इत्यायामिका ॥

भाषा—सुवर्ण, हीरा, वैकान्त, वज्र, अन्नक इनकीभस्मे, शुद्धपारा और गन्धक सब समभाग और सबकीबराबर लोहभस्म लेकर कहुआ, गेहू, जव इनप्रत्येककेकार्योंसे ७-७ भावनाए देकर धीकृजारेकरसमें ३ भावनाए देवे फिर गोला बनाय एण्ड-प्रथम छेपेकर दोरेसे बाधकर लालचावलकीराशिमें ७ रोजतक द्यादे । आठवेंरोज निकालकर उबलेहुए भटवरवार गोलिया बनाकर रखोछे । इनमेंसे १-१ गोली अजुनकाकाडा, वाझी, आसव, गेहू तथा जवका काडा, धी इनमेंसे किसी एककेसाथ अथवा दोपानुसार अनुपानोंसेसाथ देनेसे वातिक, पैत्तिक, कैश्मिक, किमिज, कौष्ठिक, पृथुक, आवरणिक, विश्लेषक, मेद-सूत्र, परिक्षय, आयामिका प्रभृति समस्त हृदयके रोग और यस्माको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे कि इन्द्रका वज्र ह्मोंका नाशकरताहै ॥ ५० ॥

### ५१ रत्नेश्वररसः ( प्रथमः )

यजं वैकान्तमम्रञ्च सिन्दूरमपि माक्षिकम् ।  
मौक्तिकं हेमरौप्यञ्च सममिक्षुजघारिणा ॥ २२५ ॥  
शताघरीरसेनाऽपि विदार्थाः स्वरसेन च ।  
विभाज्य घटिकाः कुर्याद्रसिकाप्रमिता मिपक् ॥ २२६ ॥  
त्रिफलाजलयोगेन रसो रत्नेश्वरो हरेत् ।  
मस्तिष्कस्नायुजान्न्याधीनंशुघातं विशेषतः ॥  
अनुघाते प्रकृत्यो विधि मूर्च्छानिपूदनः ॥ २२७ ॥  
आ वि अनुघाते ।

टि०—अनुघातलक्षण यथा—“वज्राशोरछुना शीर्ष्णि तस्ते चण्डेन जायते । अनुघाताऽभिधो व्याधि प्राणिना प्राणवीर्यन ॥ १ ॥ सुण्ड तिघोरा स्वप्ना भ्रमो नेत्रस्य रक्तता । मृदवेगश्च मूर्च्छाया इशासी विष-माऽपरा ॥ २ ॥ आसहृष्ट्य सप्रेहागिरिक्षेपश्चान्न सम्भवेत् । प्राय काराऽवस्काना मयाना जायते च स ॥ ३ ॥ इति,

भाषा—हीरा, वैकान्त, अन्नक, रससिन्दूर, सोनामाखी, मोती, हुडरुण, चांदी इनकीभस्मे समभागलेकर ईख, दाउवर और विदारीके स्वरसोंसे १-१ रोज मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखोछे । इनमेंसे १-१ गोली त्रिफलाके पानीकेसाथ देनेसे मस्तिष्क, स्नायु, अनुघातादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै । अनुघातमें विशेषकर मूर्च्छाको दूरकरनेवाले उपाय करने चाहिये ॥ ५१ ॥

### ( ५२ रत्नेश्वररसः ( द्वितीय ) )

अर्द्धमागेन सूतेन तारं ताम्रेण मेलयेत् ।  
मारयेत्पित्तकायने शिलाहिरुल्लगन्धकैः ॥ २२८ ॥  
अर्थ रत्नेश्वरः सूतः सर्वरोगनिवृत्तनः ।  
अलं ज्ञात्वा चतुःपट्टिरोगांस्तैस्त्वैव लक्षणैः ॥ २२९ ॥





पदीयन्ते । शिष्या वातुस्यन्वतोऽग्निमपि दवाद्रिष्यन्नुदिमाय । पक्षेकाहमथाहरेत्रिगदितो बहोऽग्निः श्रामजि ॥” अयं योगः आसाऽधिकारो निहितोऽस्ति ।

र. चि., र. च., नि. र., वै. चि., एषु ग्रन्थेषु आसहेमाद्रिरस इति नाम्ना ॥ आच्छादितशिरा ताम्रीं दिगुणा वातुकाहये । पक्त्वा सन्मुख्यं गन्धेनो दिनादहं ता पुनः पचेत् ॥ आसहेमाद्रिनामाऽयं महाआसविनाशनः । वर्णवृद्धिको ह्येष सुवर्णस्य न सद्यः ॥” अयं योगः आस-  
कामाऽधिकारो निहितोऽस्ति ।

र. स., र. र. स., शा. स., र. र., र. क., ध., भै. र., नि. र., वै. र., र. सु., र. म., सु., र. च., र. म., र. चि., र. र., र. मायनय., भै. सा., यो. म., र. (सा.), र. कौ., चि. र. म., यो. च., व. रा., र. यो., र. सि., र. कौ., र. का., र. क. यो., वै. चि., र. क. ल., र. त., चि. क. प्रयुज्ये  
आसाऽधिकारो घृष्टावर्तनाम्ना ॥ गन्धकं घृतं मये यामैकं कन्यका-  
द्रवैः । द्वयोस्तुल्या ताम्रपत्रं पूर्वकलेन रेषयेत् ॥ दिनैकं हण्टिका-  
यन्त्रे पचेच्छीतं समुदरे ॥ घृष्टावर्तनाम्ना दिगुजः आसकासतु ॥  
इन्द्रबाणिमूलं देवदारुकुट्टयम् । शर्करामहितं सादेदृष्टं आसनि-  
वृत्तये ॥” अयं पादो निहितोऽस्ति । रसराजशर्करा अत्यवयवस्य  
आसकुडोरिति नाम । चिकित्साक्रमकल्पवल्या ताम्रपाकनाम्नाऽयं रसो  
विन्यत्यः, विशेषे गन्धको दिगुण इति शब्दव्युत्पत्तिः । अनुपानादौ विशेषे  
यथा—“वमनमपर्विकं कारयित्वा च पश्चात्समधुक्कययुक्तं रक्ति-  
कैश्चरमागन्तु । सद्यनय च तत्र वाऽनुपान्याम्यक्य, निपादिमनु-  
पानं पीर्णान्यस्य पच्यम् ॥ यदि कयसि दपादन्तपित्तवकास  
श्वसनमपि च शेष कामलापाण्डुरोगम् । अपहरति च पुष्पात्रकपित्त  
तथाशो, यदमय रुधिरं वा वातपूर्वं निहन्त्या ॥ सात्विकमेहनिमि-  
रांश्च निजित्व हृद्देहोऽपि ताम्रपद्रुशुभं कम्पन्य ॥ यो ताम्रपाकर-  
समपि समन्तरोगेभ्यस्तत्समाश्ननम् परिणीवीह ॥” यत्र कुत्रचित्-  
तादृशं गन्धकमिति पादो लभ्यते तत्रयोजनं तु न प्रतिभाति, गन्ध-  
काऽधिक्ये तु सम्यक् ताम्रमारणमिति प्रत्यक्षफलम् ।

रसचि., र. का., एतयोः स्वच्छन्दभैरव इति नाम्ना अवराधिकारो  
“वेदकमौ रसौ प्राज्ञो गन्धो द्वादशचरकः । श्वका कजलिकामादौ शिपि-  
चात्रस्य समुपे ॥ अष्टकर्मप्रमाणेऽस्मिन् धृत्वा सत्रं विधेयेत् । सन्धिलेपे  
विषायाऽयं स्वात्मिकायन्त्रेके शिपे ॥ दारवेण विषायाऽयं मृदा सम्य-  
न्धिलेपयेत् । महापात्रं विधेयः स्वाद्विलिप्तं च पादे ॥ उचायं शीतलं  
तत्र मधुना सम्प्रदापयेत् । शैथिले च ज्वरे दशविश्रामं मरिचः सह ॥  
वाग्निऽयं ज्वरे दवाद्रिगुणं विपनीयतम् ॥ शैथिल्ये ॥ अग्निमन्त्रो  
स्वच्छन्दभैरवः । त्रिकलरसस्युक्तं सर्वरोगे प्रयुज्यते ॥” अयं योगो  
अवराऽधिकारो निहितोऽस्ति ।

युनाऽधिकप्रमाणेन गन्धेनो कजलीं विषायं केवलया वेनैरुनाऽपि  
स्वरसेन भाविता वा तया ताम्रप्राप्त्यर्थं निष्कान्ध्याता वा लेप दत्ता  
गैल विषायं स्यात् उपरि ताम्रप्राप्त्याय वा यत्राऽपि प्रदत्तसेन च  
वायव्यमगस्य ताम्रप्राप्त्यर्थं पत्राणां वा मरम मज्जनं तेन केवलं मधु-  
ज्वेन भाविता वा नानाऽनुपादौ रिकित्वा रंगेण प्रयोगः कृतोऽस्ति तेषां  
योगानां प्रयोगनीत्याय रतिगण्ये महाग्रहः कृतोऽस्ति । अग्निमन्त्रो  
वाग्निर्विचयेन अग्निभेदे इति गूढं रहस्यम् । दोषनिवारात्मिकायान्त्रेके-  
होस्तयोर्मे दोषावाहक्यमिति सुधर्मिर्द्विदं विमर्शनीयम् । ते च योगा  
यथा—१ दवाद्रिगुणः, २ अवराऽधिकारः, ३ ताम्रयोगः, ४ अवराऽधिकारः, ५  
ननुपे, ४ भाग्यमगस्य, ५ मधु, ६ रत्नमार्गशतः, ६ रत्नमार्ग-  
वेमरी, ७ शोराह्वारः, ८ केपौराऽधिकारः, ९ अमरकसर्पिः,  
१० अमरकसर्पिः, ११ अमरकसर्पिः, १२ मधु, १३ स्वच्छन्द-  
भैरव १४ इति ।

भाषा—शुद्धपारा १ भागं और गन्धक २ भागलेख  
नीलवर्णकजलीकर धौर्ज्यारके रखें ३ दिन मर्दनकर ३ भाग  
ताम्रकेपत्रोंपर लेपलगाय ६-७ कपड़मिट्टीदीहुई हण्डीमेंरख  
पिण्डको धरावसे टकर सन्धिवन्दकर छनीहुई किसीभी रातको  
हण्डीके मुंहतक दवादवाकर भरके दोमहल संधानमक गारीक-  
पीसकर राखपर दवाके थोड़ेसे पानीके छीट लगाय टकररख  
सन्धि बन्दकर ६-७ कपड़मिट्टी लगाकर सुखाकर दो दिनरा-  
तकी कढ़ीभांचदे । स्वाद्वशीतल होनेपर निकालकर जमीरीके  
रखसे एकरोज मर्दनकर छोटी २ टिकियां मनाय सुखाकर  
धरावस्युद्धं बन्दकर ७ गजपुटी भांचदे । स्वाद्वशीतल  
होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती मधु और  
चौकेसाय देनेसे यह अग्नन्दको नष्टकरताहै । मुराली, और  
संघेनमकको काडीकेसायमिलकर अनुपानकी जगहलेवे ।  
मधुराहार सेवनकर । दिनका सोना और रंटाभोजन छोड़दे ५४

### ५५ रविताण्डवरसः ( द्वितीयः )

दशभागं ताम्रमसम् द्रवदो दशमागिकः ।  
उभयोः कजलीं कृत्या लुङ्गनीरेण मर्दयेत् ॥ २४७ ॥  
पत्रोद्धतस्य नागस्य दशभागान् प्रकल्पयेत् ।  
कृत्यां निधाय ये पश्चात्क्रमवृद्धाऽग्निना दिनम् ॥ २४८ ॥  
एवं कुर्वीत नवधा यद्विं द्वाघथायिधि ।  
रसः कुङ्कुमवर्णः स्यात्प्रोक्तोऽयमनुभूतितः ॥ २४९ ॥  
रसायनसं., रसायने ।

टि०—द्वितीयनागसिन्दुरेणाज्य बहुज्वरेषु साम्यमवहनतिप्रतिभाते  
स्वातन्त्र्यन्या निहितोऽस्ति वल्लुलु ताम्रप्राप्त्यर्थं यदावतिरेयं  
विधायैकलये वापराऽमायाऽस्ति ।

भाषा—ताम्रमसम् और सिंगरिफ १०-१० भागलेख  
दोनोको बिजोरेकरखसे एकदोरोज मर्दनकर १० भाग शुद्ध-  
वेहुए सीसेकेपत्रोंपर लेपदेकर आनटीशीसीमेंभरदे । जिर अग्नी-  
तरहुमुलमुद्रादेकर क्रमशः अग्निसे एकदिन पकावे । स्वाद्वशीतल-  
होनेपर निकालकर सिंगरिफका लेपदेकर एक एक दिन पकावे ।  
इतलह ९ आंचे देनेसे यह कुङ्कुमवर्णताहै वेदारहोगा ।  
इसमेंसे १-१ रत्ती अपना अग्निपदेकर देनेसे यह समन्त-  
रोगोंको दूरकरताहै ॥ ५५ ॥

### ५६ रविमोहरसः

रवीमेशं ज्यहं माय्यं कपित्वाञ्जोरविप्रमः ।  
यहो मेहं सितार्थिद्रिः प्रातः सायं सितान्ययुक् ॥ २५० ॥  
रसायनसं., मेहाऽधिकारो ।

भाषा—शुद्धतांबा, नाग और पारेहीमसोंको इन्द्राग्निय  
कैपकेरखें ३ रोज मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-२ रत्ती  
माया घार और मधु अपना घार और चौकेसाय मुद्राय  
देनेसे यह प्रमेहोंको दूरकरताहै ॥ ५६ ॥

### ५७ रविमुन्दोरसः

सतिगुजं चित्रयथोजदां  
मरीचयुक्तं पित्रभागमुत्तम् ।

दन्तीरसे भावनया त्रियुक्तं

रसः प्रसिद्धो रविमुन्दरोऽयम् ॥ २५१ ॥

घातज्वरानि सरुलाऽऽमयत्वं

मन्दाऽनलत्वं शिरसो शुस्त्वम् ।

सर्वं निरन्वयप्रतरं विस्तारं

गुञ्जाप्रमाणा घटकीकृता वा ॥ २५२ ॥

कुल्यद्युष्यं त्यधवा तु कृष्ण-

शाल्युत्थमण्डं प्रपिबेद्धितेन ।

कोष्ठाऽसिद्धिं विद्वद्भाति रूपं

निहन्ति वातज्वरघातदोषम् ॥ २५३ ॥

र.स., र.सु., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—संधानमक, चित्रकीज, शङ्खभस्म, मरिच, शुद्ध-  
घटनाग सब समभाग लेकर दन्तीरस्वरससे ३ भावनाए देनेसे  
यह रस तैयारहंगा । इसकी १-१ रतीकीमात्रा कुलभीके यूप  
अथवा शाहजीरा चाबलोंक मांडकेसाध देनेसे मन्दाग्नि, वात  
ज्वर तथा अन्य वातविकारोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५० ॥

५८ रविमुन्दरीवटी ( प्रथमा )

विषं गन्धो रसः शुण्ठी मरीचाऽऽमलयेतसम् ।

पिप्पलीधूर्तैर्यौजानि समं स्नुस्त्रीरभावितम् ॥ २५४ ॥

भाषना च त्रिधा देया दन्तीमूलस्य सतथा ।

चित्रकस्याऽपि हेमन्तश्च मिधृतश्चाष्टैरस्य च ॥ २५५ ॥

मुद्गप्रमाणा घटिका रविमुन्दरसज्जिका ।

करोत्यग्निवले पुंसां त्वरं कालं व्यपोहति ॥ २५६ ॥

घातरूपममवात्रोगानन्यांश्च श्लेष्मसम्भयान् ।

अजीर्णं पङ्क्तिं जित्वा कोष्ठानि वर्धयेत्सदा ॥ २५७ ॥

र.सु., अजीर्णाधिकारे ।

भाषा—शुद्धघटनाग, गन्धक और पारा, सोंठ, मिल्च,  
अम्लवेत, पीपल, शुद्धचूर्नकेबीज सबसमभाग लेकर बारीकचूर्ण-  
कर परेगन्धकी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर भूहरेके दूधसे ३  
भावनाए देकर दन्तीमूल, चित्रक, घवरा, निलोत और अदरक  
के यथासम्भव स्वरस अथवा कषायोंकी ७-७ भावनाए  
देकर मृगधरावर गोलिए बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१  
गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, ज्वर, वास,  
वातश्लेष्मज्वर, ६ प्रकारका अजीर्ण इनसबको यह नष्टकरताहै ५८

५९ रविमुन्दरीवटी ( द्वितीया )

वृक्षोत्थरसगन्धांश्च मल्लाहिगुणता नयेत् ।

पिचुमन्दरसे धूर्तैर्यौजानि समं स्नुग्दलजाम्भसा ॥ २५८ ॥

भाषयेदेकविंशत्या घटिका राजिकाऽऽकृतिः ।

धातुने सन्निपातात्ते जीर्णं चोपद्रव्यै र्युते ॥

निहन्ति च ज्वरं सर्वं रविस्तिमिरकं यथा ॥ २५९ ॥

चि.र., ज्वर ।

भाषा—शुद्ध वल्लभाग, पारा और गन्धक २-२ भाग,  
शुद्धसोमल १भाग लेकर सबकी नीलवर्ण कजलीधर नीम,

घवरा, आक और भूलवेपते इनके यथासम्भव स्वरस अथवा  
कषायोंसे २१-२१ बार भावनाए देकर राईके बराबर गोल्या  
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ  
देनेसे धातुग, सन्निपातज और उपद्रवोंकेसाथ जीर्णज्वरोंको  
यह अन्धवारको सूर्यकीतह नष्टकरताहै ॥ ५९ ॥

६० रसकन्दर्परसः

सुतमस्माहिवद्भञ्ज ताम्रं वलिसुवर्णकम् ।

रौप्यकान्तप्रवालाऽम्रं कर्पञ्च पृथगीरितम् ॥ २६० ॥

मौक्तिकश्च द्विभागं स्यात्सर्वमेकत्र कारयेत् ।

भावनाश्च पृथग्दद्यादंसपाद्यग्निकन्यका- ॥ २६१ ॥

तालभूलीविदारीभुशर्कराशाल्मलीद्रवैः ।

कृप्यां पुनर्द्रवैरभि विपचेच्च शलाकया ॥ २६२ ॥

कृपीमध्यात्समाहृत्य मूढमतां प्रतिपादयेत् ।

भाषयेत्तत्पुनः सर्वं निर्गुण्डीभृङ्गजैस्तथा ॥ २६३ ॥

चन्द्रकस्तुरिकाभ्याश्च सुसिद्धो रसरङ्ग भवेत् ।

शुल्कगुञ्जांश्च सिद्धांश्च कुमारीयोगिनीगणान् ॥ २६४ ॥

पूजयित्वा यथाऽध्यायं ब्राह्मणान्वेदपारगान् ।

ध्यात्वा शिष्यं शिवां देवीं देयं धन्वन्तरिं तथा ॥ २६५ ॥

रसः कन्दर्पनामाऽयं कामिनामर्थसाधकः ।

नृपञ्चक्षुरं देवीं जपेदयुतसहस्रया ॥ २६६ ॥

हृत्वाऽग्नौ भोजयेद्विभ्रान् देयः सर्गार्थसिद्धये ।

सिताकृष्णामधुयुतो यत्नोऽस्य जयति ध्रुवम् ॥ २६७ ॥

क्षयमेहादिकान्स्तथांश्च रौप्यधैश्च प्रयोजितः ।

यन्त्या प्रसूयते पुत्रं वृद्धोऽपि तरुणो भवेत् ॥ २६८ ॥

सर्गव्याधिविनिर्मुक्तो रमते स्त्रीसहस्रकम् ।

रसः कन्दर्पनामाऽयं शम्भुनायेन निर्मितः ॥ २६९ ॥

र.स., क्षयाधिकारे ।

भाषा—पारा, नाम, वज्र, ताम्र, सुवर्ण, चादी, कान्तलोह,  
कान्तपाषाण, प्रवाल, अभ्रक इनकीभस्में और शुद्धगन्धक १-१

कर्प, मुक्तापिटी २ कर्पलेकर बारीक चूर्णकर एकजगह मिलाकर

हस्ताज, चित्रक, धीकुआर, तालमूली, विदारीकन्द, दीमकका

सुल्फर, सेमलका मुसला इमप्रत्येककी १-१ भावना देकर

सुखावर ६-७ कपडिमिठीकीहुई आतशीशीशमें ढालकर बालु-

कायत्रमें रख पूर्वोक्तवत् क्रमसे ढालकर पकावे और लोहेकी

बालकासे चलातरादे । श्व समाप्तहोनेपर शीशमेंसे निकालकर

सुखेपर बारीकचूर्णकर पूर्वोक्तद्रवोंसे १-१ भावना देकर

निर्गुण्डी, अमरा, कपूर और कस्तूरी, इनकी १-१ भावना

देकर ३-३ रतीकी गोल्या बनाकर सुखाकर रखछोड़े । गुरु,

रूढ, सिद्ध, कुमारी, योगिनी, वेदपारगब्राह्मण, शिव, उमा

और धन्वन्तरिका यथासम्प्रदाय पूजनकर नवार्ण ( ॐ ऐं ह्रीं

ह्रीं चामुण्डायै नमः ) और पञ्चाक्षर ( ॐ नमः शिवाय ) मन्त्रोंका

दस-दसहजार जपकरे । जपका दशाश हवनकर ब्राह्मणभोजन-

कराय इतरसकी १-१ गोली शहर, पीपल और मधुवेसाध

देनेसे क्षय, प्रमेह, बन्ध्यत्व, पण्टत्वप्रवृत्ति समस्तरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ ६० ॥

### ६१ रसगन्धकयोगः

पलाशाऽस्थजमोदाभ्यां क्षाराश्च रसगन्धकौ ।  
कृमिशूलहरौ तद्वदालुपुर्ण्यम्भसा सह ॥ २७० ॥  
चि.क. किमिशुल ।

भाषा—पलाशकेरीजोंकीमूत्रा, अजमोद, सच्ची, गुहाणा, यवक्षार, शुद्ध पारा और गन्धक सब समभाग लेकर एकत्रगुह घोटकर रखडोहे । इनमेंसे ३ भागैकीमात्रा मूत्रार्णवकेरसके-  
साथ देनेसे यह क्रिमि और शूलको नष्टकरताहै ॥ ६१ ॥

### ६२ रसगर्भायसलोहम्

शृङ्गासुरीमन्दिधूमधान्य-  
धराग्निसिन्धुयजयाद्विभृङ्गैः ।  
मेकाऽऽद्रकव्यूषणतित्तिक्काण्ड-  
स्यन्दार्कमेकासितसिन्दुवारैः ॥ २७१ ॥  
शुद्धेन कर्पाग्नितप्तमूत्रकेन  
गन्धाश्मना भृङ्गविशोधितेन ।  
कर्पाग्नितेनाक्षमितञ्च लोहं  
पुटेन सिद्धं मृदुना यथावत् ॥ २७२ ॥  
तद्वर्धितं व्यूषणतुल्यभागं  
जयत्यतीसारमतिप्रबृद्धम् ।  
दुर्नामकाऽग्निप्रह्णीयिकारं  
शोथञ्च शूलं परिणामजातम् ॥ २७३ ॥  
लो. प., अतिसार ।

भाषा—ईंट, राई, यहूधूम, धनिया, त्रिफला, चित्रक, सेन्धव, भांग, स्याहसफेदमंगरे, माग्री, अदरक, त्रिकटु, चिरा-  
यता, हलदियासाहकाड़ीर, कुरकुर, कालीनिगुण्डी इनप्रत्येकके-  
साथ पारको १-१ रोज तप्तखरलमें घोटकर गरमसाड़ीसे बार  
बार साफकर ईंट और सेंपेको छोड़कर सनकेसरसोंमें दोलाय-  
बमें १-१ रोजपकाकर शुद्धकियाहुआपारा १ कर्प, गलकर भंग-  
रेकरसमें ६-७ बार ढालकर उमीकरसमें ६-७ बार मर्दनकर  
मुलायाहुआ गन्धक १ कर्प और लोहमम्म १ कर्प लेकर सब-  
कीनीलवर्णकञ्जलीकर गोलाबनाय धारावगम्पुटमें बन्दकर पुकपुट-  
पुटकी आंचद । स्वाज्ञशील होनेपर निकालकर फिरसे पार और  
गन्धरक्षायोगकरे । एते ६ ७ पुट देनेकेबाद इमें रखडोहे ।  
इसकी १-१ रत्ती समभाग त्रिफलेमाष देनेसे अन्यन्त बड़ा-  
हुआ अतिसार, पवासीर, मन्दाकिम, प्रहणी, शोथ, परिणामशूत्र  
इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६२ ॥

### ६३ रसगुग्गुलुः ( प्रथमः )

प्राहाः पातनयन्त्रेण शुद्धश्चन्द्रसमो रसः ।  
रत्तिकारातमेतस्य शर्करा त्रिगुणा भवेत् ॥ २७४ ॥  
ततश्चतुर्गुणो प्राहो गुग्गुलुः संहियाक्षकः ।  
पूतं रसममं दधानमर्दयेथ प्रयततः ॥ २७५ ॥

विंशति वेदिकाः कार्यास्तिस्रस्तिस्रो दिनत्रयम् ।  
एकादशदिनेरन्या देया एकादशैव ताः ॥ २७६ ॥  
समाहृत्यमेवञ्च कारयेद्विपजावरः ।  
लवणं घर्जयेत्पथ्ये पादाऽऽर्शानमिष्यते ॥ २७७ ॥  
दिनद्वये व्यतीते तु पादेन पथ्यमाचरेत् ।  
मसूरसुषं समुद्धं व्यञ्जनं चाऽथ कल्पयेत् ॥ २७८ ॥  
पुनर्नवा पटोलानि तिकपनी च गोक्षुरम् ।  
पटुपर्त्री कोकिलाक्षं शाकार्यं घृतमजितम् ॥ २७९ ॥  
शर्करा लवणस्थाने वेशावारे धनीयकम् ।  
लवङ्गाऽजाजिह्वानि धान्यकं जीरकाणि च ॥ २८० ॥  
पाकार्यं सम्प्रदातव्यं संस्कारार्थं भिषग्वरैः ।  
मैत्रवस्य रसस्यान्याः क्रिया अत्र प्रयोजयेत् ॥ २८१ ॥  
रसगुग्गुलुखं हि सर्वोक्तित्वाऽऽमयानयम् ।  
कुष्ठोपदंशनामानं घ्नणं यातादिसंयुतम् ॥  
कामदेवप्रतीकाशश्चिरजीवी भवेन्नरः ॥ २८२ ॥  
भै. र., घ., उपदंशे ।

भाषा—एकदमशुद्धकियेहुए पारकी १०० रत्ती और  
शर्कर ३०० रत्ती, इनदोनोंसे चौगुना भंसापूगल लेकर पारकी-  
बराबर धी ढालकर ३-४ पहर सुख कूटे । एकजीवहोनेपर  
सक्की २० गोल्या बनाकर रखडोहे । इनमेंसे ३-३ गोल्या  
तीनदिनतकदेकर फिर ११ दिन तक १-१ गोली देवे ऐसे  
१४ दिनतक दवाका प्रयोगकरे । नमक छोड़दे, भोजन अटमा  
करे । दो दिन बीतनेपर चौथाहिस्सा भोजनकरे, ऐसे प्रतिदिन  
एक एक अंश बढ़ाताजाय । मसुरकीदालको पीसकर शुद्धमिलाकर  
गुलगुलेबनावे । पुनर्नवा, परवल, गिलोय, गोखरू, क्षणी,  
तालमखाना, इनसबके पत्तोंको धीमें सेककर नमकरहित साक  
बनावे, नमस्की जगह क्षरमे कामले । मृतालेने धनिया,  
लौंग, जीरा, हिंगदेवे । अजीम मादम होनेपर धनिया और  
भुनेजीरेका चूर्ण देवे । अन्यपथ्यवर्गह भैरवरस ( नं. १ )  
कीताहरे । इसके नेक्वसे कुट, उपदंश और बागदिदोसे  
उत्पन्नहुए प्रणोमे निहृतहोकर कामदेवगण्ड वाप्तिपुत्र होकर  
चिरजीवी होताहै ॥ ६३ ॥

### ६४ रसगुग्गुलुः ( द्वितीयः )

पले कुष्ठं पुरोः पञ्च त्रिफला त्रिपला भवेत् ।  
ततः मृतपटं चास्य कर्पः सर्वत्रपणापहः ॥ २८३ ॥  
यो म, रमायनमं, मृणाऽपि करे ।

टि०—रमायनमं इह कुष्ठवने कृष्णा रसवते, मृतपटने तद्वन  
निवासिन्, पत्न्यु अस्तुल्यस्य कर्पिर्दोषनाश न ममति मर्मादि  
वित्तो कल्पेत् ।

भाषा—कुष्ठ १ पल, शुद्धपुत्र ५ पत्र, त्रिफला ३ पत्र,  
शुद्धारद १ पत्र लेकर सबको एकत्रगुहघटकर १-१ तेंपेद  
गोलेबनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोला रोजाना मात्र  
नमकरहित धी और धनेका सेवनसनेसे मपमर्दक प्राप्ता  
जातेहैं ॥ ६४ ॥

## ६५ रसगुटिका (प्रथमा)

सूतमन्नकसत्त्वश्च दृढं स्थाल्यां निपापयेत् ।  
 सूतकं शिपिपित्तस्य मध्ये मुक्त्वा प्रयत्नतः ॥ २८४ ॥  
 दोलिकायन्नरूपेण सत्त्वं स्थाल्यां हि मुच्यते ।  
 तां स्थालीं स्थापयेदमं यावत्सप्तदिनं भवेत् ॥ २८५ ॥  
 तत उद्धृत्य तद्द्वन्द्वमम्लयह्वरीसं दंडम् ।  
 पाचयेद्वह्नियोगेन सप्तवारान्समाप्तयाः ॥ २८६ ॥  
 तत उद्धृत्य सूतं तं द्वितीये शिपिपित्तके ।  
 मुक्त्वाऽथ काचकूप्यां तत्क्रियते मुखमुद्रणम् ॥ २८७ ॥  
 गतायां वायुकां भृत्या प्रथमं ह्यङ्गुलद्वयम् ।  
 तस्योपरि कौमुदीकस्य दीयते वह्निना पुटम् ॥ २८८ ॥  
 तत उद्धृत्य वह्णपाच्ये स्थापयेच्छिपिपित्तके ।  
 ततः कूप्यां तथा कृत्वा द्वितीये ह्यङ्गुलद्वयम् ॥ २८९ ॥  
 एवं तथा कृत्वा तृतीयेऽङ्गुलमाग्रतः ।  
 एवं घृष्टिप्रयोगेण गुटिका यज्ञयज्ञयेत् ॥  
 पाठामस्त्यस्य पिशितखण्डमध्येऽथ सेच्यते ॥ २९० ॥  
 र. हा., स्तम्भने ।

भाषा—पारा और अन्नकसत्त्व १-१ कर्पलेकर मोरके दो पित्तों में अलग २ रखकर पित्तों का मुहबन्दकर किसी हण्डी में दोला यन्त्री तरह अलग २ लटकाकर धूपमें सुरक्षितस्थानमें रखदे जहा कि सूर्योदयसे सूर्यास्ततक धूपनके । ध्यान रहे कि कोई जीबजन्तु उठा न लेजाय । इसतरह ७ दिनकेमाद दोनोंपित्तोंको एकसाथ अमलोनियाकेरसे ७ रोज क्वेदनकर दवानिकात्कर दूसरे मोरकेपित्तेमें इक्केभरदे । फिर पित्तेका मुंह बाधकर ६-७ कपड़मिथीहीडुईकाचकी शीशीमें डालकर ढाटलगाय ३-४ कपड़मिथीकरदे । सूजेनपर शीशीको खंडमें रखके ऊपरसे २ अङ्गुल बालसे आच्छादितकर डबडुटपुटकीआचदे । स्वास्त्रसोतलहोनेपर फिर तीसरे पित्तेमें रख एकअङ्गुलबालसे ढककर आवेदे । इस तरहकरनेसे इसकी कड़ी गोली तैयारहोगी । इसगोलीको पाठा मछलीकामास और बाकरवेबीचमें रखकर सुहमेंरखनेसे स्तम्भन नहोताहै ॥ ६५ ॥

## ६६ रसगुटिका (द्वितीया)

रसस्तु पादिकस्तुल्या विडङ्गमरिचाऽम्रकाः ।  
 गङ्गापालङ्कजसे मर्दयित्वा पुन.पुनः ॥ २९१ ॥  
 रक्तिमात्रागुदाशोघ्नी बह्वेत्पय्यर्दीपनी ।  
 कण्टकिफलास्तमुखक्षारो गोरोचनाजलम् ॥ २९२ ॥  
 लेपमात्रेण विस्त्राव्य हठादन्ति गुदादुरागम् ।  
 भावितं रजनीचूर्णं स्नुहीक्षीरे पुन.पुनः ॥  
 वन्धनास्तुदृढं योगश्लिन्त्यवशां न संशयः ॥ २९३ ॥

भै र, यो म. अशोरोम ।

भाषा—विडङ्ग, मरिच और अम्रक १-१ तोला, गुडपारा ३ मासे लेकर सबका बारीकचूर्णकर गन्नामेंहोनेवाले अन्नली पालकके रसमें ६-७ रोज मर्दनकर १-१ रत्तीकी मोलिया

बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह अवरोधको दूरकरीहै और अमिनो प्रशस्तिकरतीहै । कटहरकेफलकेमुलकेकाधार गोरोचनकेपानीमें मिलाकर लेपकरनेसे अङ्गुरोंको पकाकर नष्टकरदेताहै अथवा धूरकैचूचमें बारम्बार भिगोयाहुआ इल्दीकाचूर्ण मसोपर लगानेसे उन्हें काट डालताहै । पूर्वोक्त गोलीका प्रयोगकरतेसमय इनदोनोंमेंसे किसीएकका प्रयोगकरना आवश्यकहै ॥ ६६ ॥

## ६७ रसचन्द्रिकावटी

त्रैलोक्यविजयावीजं वीजमुन्मत्तरस्य च ।  
 कण्टकारीवीजकञ्च हैजलं वीजमेव च ॥ २९४ ॥  
 वीजञ्च वृद्धदारस्य समो गन्धकपारदौ ।  
 आद्रिः चटिका कार्या कलायपरिमाणतः ॥ २९५ ॥  
 एषा तीयाऽनुपानेन प्रातः साघा हिताशिना ।  
 चिरञ्च सर्वजञ्चैव शिरोरोगं सुदारणम् ॥ २९६ ॥  
 आमवातं श्लेष्मरोगं मन्थास्तम्भं गलप्रहम् ।  
 ग्रहणी र्शोपदं हन्यादन्नवृद्धिं भगन्दरम् ॥ २९७ ॥  
 कामलां शोथपाण्डुत्वं पीनसाशं गुदामयाय ।  
 यासुदेवेन कथिता घटिका रसचन्द्रिका ॥ २९८ ॥  
 र स, र सु, र च, शिरोरोगे ।

भाषा—गन्ना, धूरा, मटकटैया, जलवेत, विधारा इन-सबकेबीज, गुडपारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकजली कर अक्षरखंकरसे १-२ रोज मर्दनकर मटरबत्तावर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सुबहशाम जलकेसाथ अथवा तत्तदोगह्वातानुपानकेसाथ लेकर हितनोजनकरनेसे बहुत दिनका और त्रिदोषज भीषण शिरोरोग, आमवात, श्लेष्मरोग, मन्थास्तम्भ, गलग्रह, सङ्गहणी, फोलाव, अन्नवृद्धि, भगन्दर, कामला, शोथ, पाण्डु, पीनस, बवासीर, गुदाकेरोग इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ६७ ॥

## ६८ रसचन्द्रोदयः

चन्द्रं सूते गन्धकञ्च तालकं विपसंयुतम् ।  
 भागार्द्रं दङ्गुणं दघाजयपालं तथैव च ॥ २९९ ॥  
 कटुत्रयं तदधञ्च त्रिफलामूलमूलकम् ।  
 मयं तत्समभागेन गन्धमूत्रेण कोविदैः ॥ ३०० ॥  
 कुष्ठदीनहस्ते व्याधीन् प्रमेहांश्च क्षयं तथा ।  
 गुल्मशूलमलाजीर्णं भ्रामिकं कण्टशूलकम् ॥ ३०१ ॥  
 ज्वरञ्च सन्निपातञ्च विस्त्रुच्यं विपमज्वरम् ।  
 श्लान्त्ययतिनिस्कोऽसौ रसचन्द्रोदयाऽभिधः ॥ ३०२ ॥  
 र हा, उष्णदौ ।

भाषा—रसकपूर, शुद्धगन्धक, दूरिताल और बघनाग १-१ तोला, शुद्धसुहागा और जमालोटो ६-६ मासे, त्रिफल, त्रिफला, सूखीमूली ३-३ मासे लेकर बारीकचूर्णकर सबके-बराबरके गोमूत्रसे मर्दनकर १-१ रत्तीकी मोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तदोगह्वातानुपानकेसाथ देनेसे



भयङ्करकुष्ठ, प्रमेह, क्षय, गुल्म, शूल, मलाजीर्ण, भ्रम, कण्ठशूल, ज्वर, सन्निपात, हेजा, विषमज्वर, इनसबनो यह नष्टकरताहै ६८

### ६९ रसचूडामगौरसः

सूतभस्म विपं ताम्रं जयपालं सुगन्धकम् ।  
हेमतेलेन सम्मर्द्य ततो लघुपुटं ददेत् ॥ ३०३ ॥  
भावयेत्कनकद्रावेरजामहिपमीनजैः ।  
पित्तैः पृथक् सप्तमितं विषधूमेन शोषयेत् ॥ ३०४ ॥  
सप्तवारं त्रिवारं वा पश्चाद्द्रावेण भावयेत् ।  
रसचूडामणिः सिद्धः साक्षाच्छ्रीभैरवं महः ॥ ३०५ ॥  
ततोऽस्य रक्तिकां युष्टयाद्भुजार्द्रं चाऽऽर्दनिम्युयुक् ।  
महारोगे सन्निपाते नवे चाऽप्यनवे ज्वरे ॥ ३०६ ॥  
जलाऽवगाहनं कुर्यात्सेचनं व्यजनाऽनिलम् ।  
तत्क्षणाग्नम्लक्ष्णानं कुडुमं चन्द्रचन्दनम् ॥ ३०७ ॥  
पथ्ये यथेप्सितं खाद्यं स्वादुद्राक्षेक्षुदाडिमम् ।  
सितां समुद्रकरसां काञ्जिकं ज्ञानमेव वा ॥ ३०८ ॥  
शूले शुल्मेऽग्निमान्धादौ ग्रहणयुदरपाप्मसु ।  
घाते सर्वाङ्गैककाङ्गघाते वाऽप्यनिले तथा ॥ ३०९ ॥  
प्रसूतिघाते सामे वा स्वानुपानैः प्रयोजयेत् ।  
एतदौषं चिना चैवं योजयेद्वर्जयेदिह ॥ ३१० ॥  
तैलाऽम्बराजिकामीनक्रीधरोकाऽध्वचङ्कमम् ।  
यिल्वारनालसुपचीफलवृन्तारुमेधुनम् ॥ ३११ ॥

३ यो.स, रसायनस, र क, र सु, र चि, र.स, ओ म,  
र का, दो, ज्वरे सन्निपाते च ।

भाषा—गारदभस्म, शुद्धरज्जुनाग, ताम्रभस्म, शुद्धजमाल-  
गोटा और गन्धक सन समभागलेर नीलवर्णकजलीकर धतूरेके-  
तैलेसे १-२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर  
लघुपुटकी आधे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर धतूरेकारस,  
बकरा, भैंसा और मछलीकैपित्तोसे ७-७ भावनाए देकर इस  
रसकीबराबर बलनागकीधूनी ७ बार या ३ बार देकर अदरखवे-  
रसेसे १ रोज भावनादेकर आधीआधीरतीकी गोलिया बनाकर  
रखछोड़े । इनमेंसे १ गोलीसे २ गोलीतक अदरख और मीनूके-  
रसकेसाथ देनेसे महारोग, सन्निपात, नया या पुरानाज्वर येसन  
नष्टहोतेहैं । इसरसको देकर जल्मे बैठावे या जलकी सिरपर  
पारादे । पत्थेकी हवाकरे । अक्षयशीत मालुमहोनेपर जलसे  
अलगकर केसर, कपूर और चन्दनका शरीरमें लेपने । भूस  
मालुमहोनेपर यथेच्छ भोजनदे । मीठीद्राव, ईश, अनार,  
शकर, और मूंगकापुय यथेष्टदेवे, काञ्जीसे ज्ञानकरावे । शुद्ध,  
गुल्म, अमिमाम्ब, प्रहणी, उदररोग, एकाग्र अथवा सर्वाङ्गवात,  
प्रसूतिवात, आमवात, इन रोगोंमें अपनेअपने अतुरानोंकेसाथ  
देनेसे सबको नष्टकरताहै । रणदोषरङ्गलेको छोड़कर अन्ययन  
रोगोंमें इसे देसछेहैं । इसमें तैल, खट्वाई, राई, मछली, बोध,  
शोक, रास्ता, वेग, काञ्जी, बरेला, बंगन और मैथुनका  
त्यागकरे ॥ ६९ ॥

### ७० रसनायकद्रव्यम् ( रत्नगर्भेश्वरः )

स्वर्णरौप्यरविविहङ्गनागकाः  
कान्तविद्रुमपविमुक्तमाक्षिकाः ।  
सर्वमेकसममभ्रसूतकाः  
धूर्तभृङ्गहलिभानुभाविताः ॥ ३१२ ॥  
अञ्जयन्त्रविहितो रसरराजो  
बलमात्रमशितो गदहन्ता ।  
रत्नगर्भे इति कीर्तिमुपेतः  
शम्भुना निगदितः प्रमुणाऽसौ ॥ ३१३ ॥  
सूतवज्रकनकाऽभ्रककान्ता-  
धूर्तयज्ञिरविदुग्धमर्दिताः ।  
जायते पुष्टितमर्दनयोगा-  
त्स्वर्वरोगहरणे समर्थकः ॥ ३१४ ॥

र शि, राजयक्ष्मणि ।

भाषा—सुवर्ण, चादी, ताम्र, बज्र, नाग, कान्तलोह, कान्त-  
पाषाण, प्रवाल, हीरा, मोती, सोनामाखी, अभ्रक, पारा इनकी  
भस्में समभागलेकर धतूरा, भगरा, करिहारी, आक इनकेरसोंसे  
१-१ रोज मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६-७  
कपड़मिमीदेवे । सुखनेपर वालू, रास अथवा नमक इनमेंसे  
किसीएकमें हणडीमें द्वागुल्लेपर शरावसम्पुटदेकर ४ पहरकी तीक्ष्ण  
अग्निमें पकावे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । अथवा  
पारा, हीरा मोना, अभ्रक कान्तलोह इनकीभस्म समभागलेकर  
अतूरेकेस, सेतुषड और आककेधूमे १-१ रोज मर्दनकर ग ला-  
बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर पहिलेकीतरह भस्म लगन अथवा  
वालूमायत्रमें पकाकर रखछोड़े । येदोनों रसनायकरस तयार  
होंगे । इनकी आधीआधीरतीकीमाना तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ  
देनेसे ये समस्तरोगोंको दूरकरतेहैं ॥ ७० ॥

### ७१ रसपर्वटी ( प्रथमा )

जयापनरसेनाऽपि वर्धमानरमेन च ।  
भृङ्गराजरसेनाऽपि कारुमात्र्या रसेन च ॥ ३१५ ॥  
रम् संशोधय यत्नेन तत्समं शोधयेद्वलिम् ।  
भृङ्गराजरसेः पिप्पु शोषयेद्वर्जरदिममि ॥ ३१६ ॥  
सप्तधा वा त्रिधा वाऽपि पश्चाच्चूर्ण्य कारयेत् ।  
चूर्णयित्वा समं तेन रसेन सह मर्दयेत् ॥ ३१७ ॥  
नष्टमृतं यदा चूर्णं भयेत्कजलसन्निभम् ।  
निर्धुमं यद्राज्ञाग्रे द्वाङ्कुयात्प्रयत्नतः ॥ ३१८ ॥  
महिषीमलविन्यस्ते तत्र सत् कदलीदले ।  
निक्षिप्य तदुपयन्त्यत्रपं दत्त्वा प्रपीडयेत् ॥ ३१९ ॥  
शीतलत्वं गते पश्चात्समुद्भूत्य विचूर्णयेत् ।  
यत् सिद्धा भवेद् व्याधियातिनी रसपर्वटी ॥ ३२० ॥  
ज्वरादिव्याधिभिर्न्यासं विन्धं दृष्ट्वा पुन हटः ।  
चकार रूपया युक्तं मुचावन्नमपर्वटीम् ॥ ३२१ ॥

रक्तिकासम्मितां तावद्भुज्जीरकसंयुताम् ।

गुञ्जाऽर्द्धभ्रष्टहृद्वाद्यां भक्षयेत्सर्पपटीम् ॥ ३२२ ॥

रोगानुरूपमैषज्वरेपि तां भक्षयेद्बुधः ।

पिबेत्तदनु पानीयं शीतलं चुलुकत्रयम् ॥ ३२३ ॥

प्रत्यहं वर्धयेत्तस्या यकैकां रक्तिकां भिषक् ।

नाऽधिकां दशगुञ्जातो भक्षयेत्तां कदाचन ॥ ३२४ ॥

एकादशदिनाऽऽरम्भात्तां तथैवाऽपकर्षयेत् ।

एवमेतां समश्रीयान्नरो विंशतिवासरात् ॥ ३२५ ॥

शिवं गुरुं तथा विप्रात् पूजयित्वा प्रणम्य च ।

धृज्या भक्षयेदेतां क्षीरमांसरसाशनः ॥ ३२६ ॥

ज्वरञ्च ग्रहणीञ्चाऽपि तथाऽतीसारमेव च ।

कामलां पाण्डुरोगञ्च शूलप्लीहजलोद्वरम् ॥ ३२७ ॥

एवमादीन्मादाहृत्या हृष्टः पुष्टश्च धीर्यवान् ।

ज्जीवेद्दृष्टान्तं तस्यै प्रलीयन्नित्यभिहितः ॥ ३२८ ॥

भा प्र, चि क, र सु, र क ल, नि र, यो म, र त, भै

र, र सु, रससागर, र, म सु, र सु, ज्वराऽधिकारे ।

टि०—“हाद्य रत्त ताम्र यश्च परिदीपने । विषयाख्या तु सा वेदा

सर्वरोगनिवृत्तनी ॥” इति रतेन्द्रसारसम्भे दृश्यते फल्गु प्रणामाभिक

तया योगे पञ्चमृत्तमणीनि नाम स्थापयितुमुचितं न तु विज्यपटीति ।

रसमागरे गिरिकर्णविर्धमानकामाचीश्वरैरते शारदस्य स्वेदनादिक

विहितम् । भैषज्यरत्नावल्याञ्च जलन्येष्टाऽऽर्द्धककामाचीभी रस

शोधन विहितम् । र, म सु, र सु एतयोरप्युपलक्षणिकाकामाची

दाकिमीवरतै अत्येक पारदस्य भर्दन विहितमते दाकिमीवीजर

साऽथैव नियोनीयः । भावप्रकाशादौ स्वेदन विहितम् । रसमागरे निर्वि

शेष दाधन विहितम् । एव भैषज्यरत्नावल्यामपि भर्दनयोग्यरूपेण

शोधन निर्विशितम् । अधिक तु न तद्वानिरेनिन्यायानुरूपेण जयान्य

न्तीमिरिष्यैरप्येष्टवृद्धकामाची दाकिमीवीरानीति सर्वोपपदे भर्दन

स्वेदनादिभी रसशोधन विषय सर्वेषां ग्रन्थानां मामात्रस्य सम्पादैक एव

पाठ मन्मादनीय इत्यस्मात्क समसि । र चि, यी र, सु यी त, ना

चि, र च, रसाशन, र नि, नि र, र का, यो म, य, र स, र

क ल, य, र र दी, र सु, चि र भ, चि क, र र स, र कौ, वै,

र, र सु, ग्रहण्यधिकारे । एषु ग्रन्थेषु “ग्रन्थकजलीं लोहं द्रुता बाधर

बहिना । ग्रामयोपरिविन्ध्यन्तकदीहलपातनात् ॥ कुर्वात्पर्विकाकारामस्या

रत्तिद्वय ब्रमात् । दशशृण्णलक वायव्ययोग प्रहरादत्त ॥ तदुक्तं बहुभूतस्य

भक्ष्या दिवसे पुन । शृतीय एव मासाभ्युदयमत्र विधीयते ॥” वज्रै

विदाहिलीरुग्मात्क तैलञ्च साधयम् । ग्रहणीश्वरपुष्पां शोषावीर्णादि

नादिनी ॥” ईश्वर पाठे दृश्यते, तत्र पारदगन्धको शुद्धिनिष्कास

काऽतिरिक्तो विशेषः न दृश्यतेऽस्तस्याऽप्येवाऽप्युत्तमं करणीय ।

कावाऽप्यस्यकताया शुद्धवचाराऽमावे तु गौणकलोपेऽशमावेऽपि

जनानां स्वाभाविकी प्रश्लिमेवतीति कृत्वा तदयं स्वतन्त्रपाठकस्यस्याऽ-

न्याय्यत्वमिति सूचीमिदंभावनीयम् । साधारणपाठे च टेटरानन्दे द्वितीय

स्थाने दीनकशास्त्रमिष्टेष्टपूज्यमपूजि क्षनुपानत्वेन विहितानि सङ्ग्रहण्या

तदतिप्रसरतस्तम् । कुञ्चितम् “श्रद्धानाशिवामूलं सवचं क्षीरपाचितम् ।

परीरसस्तुक्तं सप्ताहाददमरीप्रमुत् ॥” इति पाठेऽप्यसिद्धेयं अनुपानत्वेन

गृहीतः कुञ्चितम् “कृष्णचरुजे दीजे पञ्चमि पथरीस । सम्प्रयोगे

प्रशमयेद्दन्माद भूतसम्भवम्” इति पाठ उन्मादे अनुपानत्वेन गृहीतः ।

चि न एवमिदंशिवाराणि पर्यै रसपर्विकात् । रसुद्दिष्टेन सम्भाव्य

क्रियाभ्यामेव प्रदायपेदितिविशेषः । र कौ, वै र एतयो “पर्यट्या

दिगुणी चीरस्तुषारी शोमदस्य च । दीपके भयुना चैवा शिशोर्गुञ्जावतु

द्वयम् ॥ शेषविताऽनिलवासाऽम्पदीनमपाण्डुता । श्रौहृत्तादशुल्कानि

हन्वात्समाञ्चर नवम् ॥” इत्यभिकतया पाठे दृश्यते । तदाऽनुपानाना

मन्यतस्तात्र तद्वेदेन पाठभिरता भवितुमर्हत्य सोऽपि पाठेऽप्येवाऽ-

न्तर्भवतीति नोच्यम् । भैषज्यरत्नावल्याञ्च पर्यटितेनमप्युद्विस्तरो निरु-

क्ति सोऽप्यस्ताभ्यसोद्वह्य । स यथा—

श्रीविन्ध्यवामिपादौ नत्वा धन्वन्तरिञ्च सुरभिपत्नम् ।

रसगन्धकर्षणैरपिपारिपाटीपाट्य वक्ष्ये ॥

मक्ष रते ज्वन्त्याः पश्चादेरप्यसम्भूते ।

बादकरो न मृत पत्रते कावमाच्याश्च ॥

मधुमदित्वाऽनुपूर्वा मरनशुक्लं करणं गृहीत्वा ।

प्रलरमानमभ्ये शुद्धिरिव पारदलोका ॥

शुचिपिच्छमप्यथायौ नवनीतनमृति ।

मधुग कठिनं लिख्य भेद्ये गन्धक इत्येते ॥

इत्वा मद्र गन्धकमतिकुशलं शुद्धगन्धुलाकारम् ।

तद्वत्पारदरसनन्तरं भावयेत्पत्रे ॥

कतु च शुष्णं कुर्वाद्भक्तिसमानञ्च सप्तपा रौद्रे ।

कतु च शुष्कं चूर्णं इत्वा विन्यस्य लौहिकान्धे ॥

निर्धूमवदत्वाऽहारे न्यस्तं विकल्प्य तैलसमम् ।

पात्रस्थितं शुद्धं पारदसम्ये ढालयेन्नियुत ॥

तस्मिन् प्रविष्टमात्रं धदिनल्यं पातितं गन्धकचूर्णम् ।

पुनरपि रौद्रे शुष्कं केतकरं ता समानता नीतम् ॥

शुद्धे स्ते शोषितगन्धकचूर्णेन तुल्यता कार्या ।

तावत्प्रदनमनवो बाधश्च वणीऽपि दृश्यते स्त ॥

पश्चात्कजलमृदश्च चूर्णं लौहोस्थितं दत्तेन ।

निर्धूमवदत्वाऽहारे न्यस्तं विकल्प्य तैलसमम् ॥

सप्तो गोमयनिधिरे कदलिदले ढालयेन्मुद्रुनि ।

लौहोस्थितमवशिष्टं वठिनं तत्र प्रदीतव्यम् ॥

पश्चात्पत्रस्याऽप्येष्टिका दीर्घत रूपैः ।

नयूरचन्द्रिकाकारं लिङ्गं यत्तु दृश्यते ॥

तत्र निर्वि विनानीयद्विधा नैराऽन सद्यः ।

समुद्रदिवसे कार्यं श्रुत्वा च पथरी मनुजैः ॥

जीरकपुत्रे हिमोर्द्वे रायेच वातल चट्टः ।

जीरकपुत्रेन त्वनुपानं सल्लिख्यारवा कार्यम् ॥

रसगन्धकर्षणैरपि भक्षणमात्रे तु माम्भय पानम् ।

प्रथमं गुञ्जावतलं प्रतिदिनमेवेद्विहीतं भक्ष्यम् ।

दशगुञ्जापरिसाणाऽऽश्विनमदनीयैकपर्वशतित्तिदिना ।

भावाऽऽश्विनपक्षेऽप्यन्यथाऽऽश्विनमदनीयैकपर्वशतित्तिदिना ।

स्वावाप्त्याऽऽश्विन स्नात्वा व्याख्यातहितमत्यन्तम् ।

पाकं स्तोत्रं सर्पिर्बौरकभार्याऽदेवशरीरैश्च ॥

तिष्ठद्भूतेन रत्ननमोदनपान्यानि शाल्या मक्ष्या ।

कृष्णं वातिरुक्तालमविद्वर्ग्यं च वारुक्म् ॥

अक्षतुष्टयमेतं कदलिदलेऽपि पदोक्षम् ॥

ब्रह्मकपलश्वरैरौ भक्ष्यौ शाकेषु कापमाची च ॥

लावकतलकतिरिचि यूरमासश्च दिनकर भवति ।

मङ्करोहितमीनी बाऽदनीयौ हृण्यमतस्याश्च ॥

नीरक्षीरं व्यञ्जनमदनीयं पत्रकदी च ॥

रम्भाफलश्चलकलमूलानां वरुनं चायम् ॥

तिक्तं निम्बादिमपि नाथ नीणं तथाऽजश्च ।

आनुषमासकलचरपतत्रिपल्लव मर्षवा स्याज्यम् ॥

खीणां सम्पापणमपि गन्धश्च कृष्णमररेषु ।

नाऽप्यल न दधिप्राक पपस्या मक्षणे भक्ष्यम् ॥

गुडपण्डाकरादिव इधुविकारो न भव्य इधुश्च ।  
न दल न फल न लताप्यदनीया वारवेत्स्य ॥  
श्लोक घृतमिह भक्ष्य पथ्ये मावाहयमुत्थानम् ।  
रुतपीडाया भानमवदस्यमेव महानिशायाञ्च ॥  
समजलमिश्र एव धीर यदाऽपिन नलपक्वञ्च ।  
वधमपि आजनसमयातिनम पात ज्वर विरक्त च ॥  
वमने च नारिकेलमलिल दुग्धञ्च पातव्यम् ।  
मृत्पे पाते रमिने विरक्तञ्च धीरमव पातव्यम् ॥  
न शयने दुग्धा लक्ष्याऽलक्ष्या प्रतीयेने यदि वा ।  
अशक्तिश्चिन्तिनमन्तवद्भूतये नूनमवधार्या ॥  
किं बहु वाच्य रोगी यदा यदा भवति साक्षादक्ष ।  
पायपित्तव्य दुग्ध तदा तदा निर्वर्णीयम् ॥  
विहिताकारेण चास्यामविहितकारणे च रोगाघप्रानाम् ।  
व्यापत्तयाऽपि बहुधा दृष्ट्वा प्रामाणिके वैदुश ।  
तस्मादवधत्तव्य भवितव्य आजने निपुणै ।  
एवमपि त्रिधमाणा भवति श्वेतस्फुरी नियतम् ॥  
अशरीरा ग्रहणी सामा दृष्ट्वाऽस्तिमार्तै च ।  
कामलपण्डुव्याधीर्ग्रीहानञ्चाऽतिदुःखान् इति ॥  
गुग्गुलुद्वारभरनरागा इत्यामवनाशाश्च ।  
अद्यान्तैव कुष्ठान्प्रदोषशयादिरोगाश्च ॥  
इयमल्पचित्तशमनी त्रिदापद्रमनी क्षुधापिबमनीया ।  
अग्नि निमज्जमुदर ज्वालाज्वलित करत्याशु ॥  
रमण्यपपण्डिका त्वपवाय व्याधिसङ्गमम् ।  
वरीपलिनइत्य् पुन्य दीर्घायुष कुण्ठ ॥  
व्याधिप्रभावहरणादपमृत्युशाननाशकरणाश्च ।  
मर्त्यानाममृदयदी रमण भवत्पर्ण जयागि ॥  
शम्भु प्रथम्य भवत्या पूजा वृषवा च विष्णुनराणाञ्च ।  
रसगन्धवपणिया भक्ष्या तनाऽतिसिद्धिदा भवति ॥  
नृणां मन्त्रा भुवमित्यमारात्य भवनशालिना कुञ्जे ।  
आवल्मादुविमिर्मिना मम्यभ्रमवर्षर्ण श्रेष्ठा ॥  
उत्तमव हि वन्य्य नामारागनया तथा ।  
भीषन्त्रियवेवाऽन वन्य्या रातरमिया ॥  
प्रत्येवावविनाशार्थं श्रेयशालद्वि न्यस्तम् ।  
रुजमद्वल्य प्रात यौगिनीनामत परम् ॥ इति ॥

### विशेषमूच्यमम्

“ प्रथम गुग्गुलुगुल प्रतिदिनेभैरवैकशुद्धितो भक्ष्यम् । दश  
गुग्गुपरिमाणमाधिकमदनीयमेकविंशतिदिनानि ॥” इति वि-  
न्यवासिप्रयोगे गुग्गुद्वयात्प्रथममाराग्म इत्वा प्रतिदिनेभैरवैक-  
गुग्गुप्रमाण वर्षयित्वा नवमदिने दशगुग्गुपरिमाण अभिव्यति  
ततोऽनन्तर द्वादशदिनानि यावत् तत्प्रमाण स्थिर भवति द्वाविं-  
शतितम दिनमाराग्म प्रतिदिनेभैरवैकगुग्गुया हास कर्तव्य इत्य-  
त्रिंशदिने प्रयोग समाप्यते । भावमिश्रादिमते प्रथम गुग्गुत  
आरम्य प्रतिदिनेभैरवैकगुग्गुया तृदि, एकादशदिनादारम्य  
प्रतिदिनेभैरवैकगुग्गुया हास इत्यं विंशतिदिनेभैरव प्रयोग समा-  
प्यते । एतावता काचन रोगस्य देवकसापि क्षयता सम्पद्यते  
तर्हि द्वितीयप्रयोगाऽऽरम्भा निर्वर्धकोऽस्ति । देवकसा प्रथम  
योगेनोत्पापता न हृदयत तर्हि द्वितीयनृतीयादिप्रयोगा अपि  
गमाद्वरणीया । विन्यवासिमते द्वितीय प्रयोगो मासद्वय  
समाप्यते । भवमिश्रादिमते तु चत्वारिंशता दिनेरिति

विशेष । एतस्मिन्नुभयविधप्रयोगे जलनिषेधमत्यावश्यक-  
मन्यन्ते चिकित्सका । केचित्तु गुग्गुप्रशालादािकमपि दुग्गा-  
दिना कारयन्ति । जलस्यदीनमात्रेणाऽपि मृत्यु सम्पत्त्यते  
इत्यादौत्यादिविभीषिका प्रदर्श्य रोगिणमर्द्रप्राणायितं कुर्वन्ति  
तत्र कीदृशयापातव्यमिति विचारे—प्रथमतो जलरक्तवगवेपथाऽ-  
त्यावश्यकं प्रतिभाति । अप एव समजरीं ताम् वीजम्वा  
सृजदिति मनुवाक्येन स्थूलसृष्टिनिर्माणे जलस्य प्रधानत्वमा-  
याति । अत्यक्षतोऽपि क्षीपुससयोगे व्युत्तयो रज मुक्तयो र्गमो-  
पादानकारणत्वादत्यतत्त्वाऽपेक्षया शरीरे जलीयभागम्याऽत्यधि-  
कत्वादेकान्ततो जलवर्जनं न युक्तिसहम्, दुग्गादावपि प्रचुरज-  
लीयभागत्वादुत्कटवृणोद्गमाऽभावाद् दुग्गुजलेन मन्दागम्यादि  
रोगसङ्करोदयाश्च जलवर्जने तात्पर्येण तथाविधवचनान्युपल-  
भ्यन्ते, उत्कटवृणोद्गमे तु स्वच्छजलमृद्गे दोषाऽभावोऽस्तीति  
बोध्यम् । यत्र ॥ स्वच्छजलाभावोऽस्ति तत्र कृमिमरीत्यापि  
तत्स्वच्छता सम्पादनीया । फलीयस्वारसस्तु पौरस्त्यपाथात्य-  
वैया ऐकमत्येन व्यापारयन्त्येव तत्र न कश्चित्प्रत्ययायो हृदयत  
इति प्रत्यक्षविषय । “ तृतीय एव मासाऽऽरम्यदुग्गुमत्र विधी-  
यते ” इत्यादिवाक्य केनाऽभिप्रायेण निहितमस्तीति न ह्यप्ये,  
ग्रहणीरोगाऽभिभूतस्य तृतीय एव दिवसे तादृशदुग्गुदयाऽभा-  
वात् । पथेदीसेवने मार्गद्वयम् दुग्गुतत्कलसेवनेनैव, लक्ष्यप्रसे-  
वनेन द्वितीय । तत्र प्रथमो मुख्यकल्पो द्वितीयस्तु बालभीत्युद्-  
भारव्रीतेणानामगत्योपयोगित्वाभिरुष्ट । प्रथमकर्त्तव्ये ह्वर्य  
श्रुत्यानुकूल्येन तदुद्भवयो निर्णय करणीय । केवलतत्कप्रयोगे  
रात्रावपि तत्सेवाया दोषाऽभावोऽस्ति । यत्र तु द्वयोरपि सम-  
वपत्त्वेनोपयोग क्रियते तत्र तु रात्रौ दुग्गुद्वयोपयोग कर-  
णीयो न तत्कम् । तत्कम्प्य सम्पक् पाकौत्तरं दुग्गुस्य प्रयोगे  
दुग्गुपारोत्तरं तत्कस्योपयोग च न कश्चित्प्रत्ययायोपस्थान  
भवति । यत्र तु द्वयो र्भेद जन्मप्रवृत्त्यन्यस्य विरुद्धताऽस्ति  
तत्र तत्सेवने दुराग्रहो न करणीय । परेण मणुसुपुत्रनुवाक्यता  
सर्वोत्तमाऽस्ति । मिष्टनिम्बवृक्षेयाऽपि ताग्वेवाऽस्ति । यद्ब्रह्म  
क्षताया गोपालकर्वी सेवनीया, वेगाऽधिक्य कश्चिदायाम ता  
नोपयोग्या, अन्यानि तपुनि मयुराभ्यनम्यानि फलानि यान्यु-  
पलभ्यन्ते तानि श्रष्टव्यदुग्गुलानि चेत्यप्रयोग्यानि । प्रयोगमना  
सावप्रयोगे विरक्तनल्पकल्परणीयति रहस्यम् ।

आथा—भाग, एण्ड, भगवा और मरुयकरातो १-१  
दिनपारको स्वेदनकर । भगवे रसने शुद्धगन्धको बार  
मदनर धूमने ३ बार या ७ बार गुतावे । फिर इष्टदो-  
षे पार और गन्धको समभासेकर नीलकण्ठगण्डर भीपु-  
हुईलाहकीकफपीमे निर्गम बेरकेरोयनेप गगनर ताजे भेद  
गोबरपर रसगुए केन्देपनेर दालद कारगे दूसरा केरदाल  
रस गोबरमे दशाद । स्वाहासातगगनेर निडाकर रसलेई  
दिए, शुभ तथा माह्यगजोमेंही पूजाकर इगमेंगे १-१ रसोई  
मात्रा १ मासा मुनेदुएदीरे और आपरीभीमुनीहीगे गण  
अथवा केवल आपरीसीहीगे थाप अथवा तमनेगुतागुता

साय खाकर ३ जुल्द ख्यापानीपीये । इसकीमात्रा रोज १-१ रती बढ़ाये और १० रतीतकबढ़ाकर म्यारहवें दिने १-१ रतीकमकरे । इसतरह भद्रापुर्वक इसकासेवनकरनेसे ज्वर, सङ्ग्रहणी, अतिमार, कामला, पाण्डु, शूल, ग्रीहा, जलेदर इत्यादि समस्त रोगोंको दूरकर आदमीको हृष्टपुष्ट और बौध्दयुक्त बनाकर वही पत्निादिकको दूरकर सौ वर्षसे अधिक आयुको करतीहै ॥७१॥

### ७२ रसपटी ( द्वितीया )

विमृद्य बलिपारुदं तुलसिजेन हत्वा घटीम् ।  
निधाय नवभाजने तदनु गोलकस्योपरि ॥ ३२९ ॥  
निधाय हृद्गुल्यजं त्रिघटिकं निरुद्धं पचेत् ।  
प्रदीपदहनेन सिद्धयति ततोऽधरे पपटी ॥ ३३० ॥  
विद्युष्य जरणादिना तु रसनामयो काकुदम् ।  
तथाऽऽर्द्रकरसाभ्यन्तं तुलितपल्लवेयाऽभतः ॥ ३३१ ॥  
पटावृतशरीरमास्थितवतश्च धर्मोद्भवाः ।  
घटि प्रति समभ्रत सुनयनकशाख्योदनम् ॥ ३३२ ॥  
दिनत्रयेण निश्चितं नयज्वराननेकशः ।  
शर्मं प्रजगति धानल न जेतुमोषधीषलम् ॥ ३३३ ॥  
यो च, रसायन, र, सु, ज्वराधिकारः ।

भाषा—समभाग छुदपारे और गन्धककी नीलवर्णकजली कर तुलसीकरसे एकरोज मदनकर गोलाबनाय मिट्टीके नये घटीमें रखकर ऊपरसे तावेनीकटोरीसे ढककर हृद्गुल्यजन्दकरदे और कटोरीको बाह्यसेढककर दीपामिसे ३ घटीतक आबदे । स्वाध्यासीतल्लोनेपर घाटीकपीसकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती कीमात्रा अदरकरसेकेसाय मिलाकर खिलावे । खानेसेपहिले जीरेप्रसूतिकेचूर्णसे जीम और ताड़वगैरहको साफकरले । दवा-देनेकेबाद गर्मकपड़ा ओढाकर सुलावे । एकसुराकने यदि फसीना न हो तो आयेण्टेकेबाद दूसरीखुलवदे । खूपसीनाहोनेके बाद अच्छीतरह शरीरको पोंछइले । भूखलगनेपर ताजीछछ और पुरानेबाबदे । इसतरह तीनरोजकरनेसे अन्य औषधियोंसे जो नवज्वर शान्त नहींहोतेहै उनको यह पपटी नष्टकरतीहै ७२

### ७३ रसपटी ( तृतीया )

शुद्धं मृतं द्विधा गन्धं मयं मूत्ररसैः क्षणम् ।  
पाचयेद्दोहपात्रस्थं चाल्यं लघुपटेन च ॥ ३३४ ॥  
लोहमस्माऽध्याया ताम्रं पादारीनं विनि क्षिपेत् ।  
पाच्यं प्रचालयन्नेव यामार्द्धं मृदुबहिना ॥ ३३५ ॥  
तत्क्षिपेत्कदलीपत्रे गोमयस्योपरि स्थिते ।  
तत्पत्रं धारयेद्दूर्ध्वं तदूर्ध्वं गोमयं क्षिपेत् ॥ ३३६ ॥  
ततः सञ्चूर्णयेत्तल्लवे निर्गुण्डया भावयेद्दिनम् ।  
जयन्तीत्रिफलाकन्यावासाभाङ्गीकटुत्रयं ॥ ३३७ ॥  
भृङ्गपत्रिमुनिमुण्डोमि भावयेत्प्रत्यहं पृथक् ।  
आर्द्रकस्य द्वयं पश्चाद्भावयेदिनसप्तकम् ॥ ३३८ ॥  
अङ्गारे स्वेदयेत्पश्चात्पट्याख्यो महारसः ।  
अष्टगुणं प्रदातव्यं गुप्तान्नं पथ्यमाचरेत् ॥ ३३९ ॥

वर्णस्य त्वचो मूलं फवाधयित्वा पिबेदनु ।  
त्रिसप्ताहप्रयोगेण चान्तःस्थां चिद्वर्धि जयेत् ॥ ३४० ॥  
चतुर्गुणमितो देयः सम्यक् श्लेष्माऽधिके ज्वरे ।  
वासाद्युष्णभयाकाथमनुपानं प्रकल्पयेत् ॥ ३४१ ॥  
चक्षुकस्य रसे वाऽथ पेया श्लेष्मज्वरापहा ॥ ३४२ ॥

र सु, र दी, चि र भ, नि र, सु प्र, र को, र शि, यो म, यो. त, यो स, र का, र ( मा ) श्लेष्मज्वरे ।

टि०—र का, र ( मा ) यतो मृतसञ्जीविनीति नाम । र ( मा ) लोहताम्रवदेताम्रान्याय विनाश प्रदर्शित, भावनायाश्च हुरसा-त्रहृदण्यीध्यामपिषा प्रदद्या इति विशेष । रसदीपिकायां लोहस्थाने स्वर्णं विकल्पित भावनायाश्च मुनिचिक्कस्थाने हुरसामेघनादौ नियोजितौ इति विशेष । र स, र च, र र, च, रै क, र ह, रै र, र क री, रत्तचि, र श, यो एषु द्विधाभावाऽधिकार नाम च लोहपपटीति यथा—“भागे रसस्य गन्धस्य द्वौवरे लोहमस्मन । पतङ्गद्वौभूतं मृद्वौ करलीरुहे ॥ पातवेनेमयने तवेनेपरि योपेत् । ततः पिष्ट्वा हरेभिः सप्ता भावयेत्पुनः ॥ भार्गी मुष्णी मुनिवर जया निगुणिका तथा । ज्योवासाकन्याऽर्द्रवैरसमापुते पचेत् ॥ आगन्ध रसरे ताम्रे पक्व्याख्यौ रसौ भवेत् ॥” इति ॥ र चि, नि र, रै चि, यो र, र क र, रसायनम्, रै सा, र का, र र दी एषु प्रत्येयु क्षयाऽधिकारो भार्गीमुष्णीचाऽतिलरसैश्च विजयाद्वै । कन्याद्वैश्च योपजे शुष्कं शुष्कं पुनश्च ॥” इत्येकं शीर्षं भावनां वैलक्षण्यवैभक्त विन्यस्त तस्याऽप्यत्र सप्तमरे क्षत्याभावात्सोऽप्यवैवाऽन्तर्भावनीय । कुचचिद्वदगन्धयो समानयो वज्जली कृत्वा भावना निष्कास्य द्रव्यपिबारे प्रयोगो योजितो यथा र च, रै र, रै क रस्यादिषु प्रत्येयु । तथा च बहुषु स्थानेषु लोहस्थाने ताम्रं प्रक्षिप्य सामप्रपटिका कृता । रसतामनेनो तु तुल्याभ्या रसगन्धाभा द्विगुणं ताम्रं प्रक्षिप्य नवे वातकेमचरे सार्धं बलद्वय गुडार्द्रकरसाभ्यां विनोतितम् भावनांश्च न हृश्यते नाम च मृतसञ्जीविनीति स्थापितम् ॥ “छात्र पारदतुल्यं गन्धकं मर्दयेत्तल्लवे । वासाहृण्पाप्यास्वरसैर्भाज्यं सप्तावरं तु ॥ मिदो भवति रसेन्द्रे हन्या स्थितं सरक्तम् । वासकसपरिभाजितो हरीतकीपूगमयुक्तः ॥ मधुयुक् छमिता वा वासारसमयुक्तो वापि । कुलो पुष्टिं परमां साधयितुं नवे दातु ॥” इति पाठे रक्षपिषाऽधिकारः सावतारः रसेन्द्रेऽस इति नाम्ना हसते सोऽप्यथाऽन्तर्भावनीय । पर्येककणेन गुणान्तरैर्दिर्बेविश्रुति । र प्र ह, र म मा, रमसागर, र का, एषु प्रत्येयु तु लोहताम्रयोः भवोपरि योग विधाय एक पाठो दिहितोऽस्ति यथा—

रसवरं फलपुष्पमितं शुभं रश्चिरताम्रमयं समभागिकम् ।  
अथिषाञ्च घृतेन विमर्दयेदतिशुभाभिष्टो देवति स्वयम् ॥  
तदनुताम्रमयो विनिबन्धतो नयमिदं सारसञ्च विमूर्च्छितम् ।  
विधयेदथ लोहसुद्विणा तदनु भावदलेपरि दास्यते ॥  
भवति सारतमा रसपटी सकलोगविधातकी हि सा ।  
कुरु समानकडुजपसुता मरिचसप्तमिता सुखदा भवेत् ॥

अनुपाते प्रयोक्तव्या विक्रयः क्षौद्रसुता ।  
पपटी अश्वये प्रातस्तथा न्युषणमनुना ॥  
रश्चिरताम्रं सा ह्यु पत्रकोलेन सुवता ।  
बहिना मधुना सार्धं सर्वस्वरविनाशिनी ॥  
कपाक्षौद्रेण सतिता सर्वशोफान्निवृत्तति ।  
श्यामात्रिकुडेनाऽपि वातका ग्रहणीज्वरे ॥  
गुग्गुलिपत्रिच्युक्ता वातरक्त विनाशयेत् ।  
वातचन्द्रेण सम्यग्निहृत्पुष्करसुता ॥

न्यौपे. कन्यारसैर्वाऽपि कलामयविनाशिनी ।  
दशमूलस्थेनाऽपि वातज्वरनिवहणी ॥  
बाकुचीवीजकल्केन कण्डुषामे विनाशयेत् ।  
आरुखरं पठिता सा तु सिधविनाशिनी ॥  
गोमूत्रेणाऽनुपानेन चार्द्रमा हि विनाशिनी ।  
नक्तमालोऽनुनक्षेत्र चित्रो मृश्राचक ॥  
शास्मली निम्बपत्राङ्ग कल्हाराश्च शुद्धिका ।  
निर्गुण्डी च समारानि कारयेद्विषयुतम् ॥  
चूर्णीकृत्य च ताम्रं पत्रेणाश्वाऽनुपानकम् ।  
अष्टादश च कुष्ठानि निहन्त्येव न सद्यः ॥  
पर्पटी रसाजस्य रोगान्हन्त्यनुपानतः ।  
अपथ्य नैव चाश्वीवादीष्वप्यभ्येषया ॥” इति

सौऽप्यत्रैवान्तर्भावनीयः । अनुपानवृत्तस्या समग्र. पाठस्तु  
लिखित एवाऽस्ति । अस्मिन्योगे रसमात्रे त्रिकट्वादिमेलनं विनैव पर्पटी-  
स्वरूपेण स्थापयित्वा तत्तद्वेगपरत्वेन विरुद्धादीनां योगः कृतः, पञ्चपां  
रोगा अनुपानपथ्ये अपिकाश्च परिगणिता नाम च विजयपर्पटीति  
स्थापितमिति विशेषः । र. का अस्त्यपर्पटीरमायनमिति नाम ।  
अत्र पारदगन्धकयोगे प्रथानत्वं स्वीकृत्य रसपर्पटीति नाम्ना व्यवहारः  
मुष्टुत्तरः, तदङ्गभूतप्रेमोपरिनिर्दिष्टदिशा लोहात्रास्वर्णनामि समा-  
धानि तत्र प्रधानबुद्ध्या रसपर्पटीति नाम संयुगे योगस्थापित्यभावयति ।  
कैश्चित् एत विशेषमनालोप्याऽप्रधाने ष्व प्रधानता स्वीकृत्य लोहयोगे  
लोहपर्पटी, ताद्वयोगे ताद्वपर्पटी, हेमयोगे हेमपर्पटी, तारयोगे तार-  
पर्पटीति नामानि दधानि यस्तु अस्मद्वक्तृत्वा रसपर्पटीति नाम  
प्रधानतयापत्तिरेव अत उपरिनिर्दिष्टाः सर्वेऽपि रसा रसपर्पट्यामेवाऽस्त-  
मन्वीयाः । यत्रकुत्रचिन्नात्रनामा विशेषो लभ्यते चेत्तौऽप्यत्रैवाऽनुपेयः,  
तदनुपाने न काऽपि हानिरिति दिक् ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भाग लेकर नीलव-  
र्णकज्जलीकर भंगरेकरतसे एकरोज मर्दनकर सुखाकर धी पुतीहुई  
लोहकीकडछीमे डालकर बेरकेडोयलोपर फावे । गलनेपर  
इसपर्पटीकाचतुर्थांश लोह अथवा ताद्वमस्र मिलाकर चलातरहे ।  
एन्जीबहोनेपर प्रथमपर्पटीकीतरह डालदे । स्वाज्ञाशीतलहोनेपर  
प्रथमकीतरह कज्जलीयनाय निर्गुण्डी, जैत, त्रिफला, धौडवार,  
अड्डा, भारती, त्रिकटु, भंगरा, चित्रक, अगस्त्य, गोरखमुण्डी  
इनप्रत्येकके स्वरसोंसे १-१ रोज मर्दनकर अदरके रससे ७  
भावनाएं देकर प्रथमपर्पटीकीतरह स्वेदन देवे । स्वाज्ञाशीतल  
होनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे ४-४ रती अड्डा, सोंठ  
और होंके हाथकेसाथ देनेसे रूग्णाऽधिकसन्निपात और कन्धके  
हाथकेसाथ देनेसे अग्नज्वर नटहोताहे ॥ ७३ ॥

### ७४ रसपर्पटी ( चतुर्था )

भागमेकमिह सूतमस्मनो  
भागयुग्ममिह गन्धकस्य च ।  
मृतपादमपि हेममस्मरुः  
तालमस्म यद्विवाऽग्रमस्मरुम् ॥ ३४२ ॥  
लोहमस्म यदि चाऽर्कजं क्षिपे-  
होहपात्रजडरे प्रपाचयेत् ।  
द्रावितं मयति तयदातदा  
निःक्षिपेथ कदनीदले ततः ॥ ३४३ ॥

आटरूपसुरसाजयन्तिका-  
क्षुद्रिकात्रिफलिकासुभृजिका ।

मेघनादकटुकन्यकारसेः

प्रत्यहञ्च परिमर्दयेद्रसम् ॥ ३४४ ॥

वत्सनाभजरसैस्ततस्त्वित्मं

लोहपात्रनिचितं पचेत्क्षणम् ।

जायते स रसपर्पटी रसः

शृङ्गवेरकनकं नियोजितः ॥ ३४५ ॥

बल्युग्मपरिमाणकस्त्वयं

श्वासकासविनिवृत्तिदायकः ।

पिप्पलीभिरनुपाययेत्ततः

कायमत्र सुरसाऽऽटरूपजम् ॥ ३४६ ॥

र. क., र. म., काशश्वासयोः ।

भाषा—पारदमस्मसे दूने शुद्धान्यकको गलाटर पारेसे  
चतुर्थांश धुवर्ण, हरिताल अत्रक, लोह और ताद्व इनतीमस्मों-  
मेंसे किसीएकको डाले । अथवा जैसी योग्यता समझे वेलातरे ।  
इसको प्रथमपर्पटीकीतरह तैयारकर बारीकचूर्णकर अड्डा, तुलसी,  
जैत, भटकडैया, त्रिफला, भंगरा, कटिवालीचौलाई, कफरा  
धौडवार और बलनयकेरसोंसे १-१ रोज मर्दनकर सुखाकर  
लोहके पात्रमें रफकर थोड़ीबेर पकाकर पीतकररखडोड़े । इसमें  
६-६ रतीकोमात्रा अदरक और धतूरेकेरसकेसाथ देकर तुलसी  
और अद्वैतकेसाथमें पीपलपत्रप्रक्षेपकरके पिलानेसे श्वासकासको  
यह निवृत्तकरतीहे ॥ ७४ ॥

### ७५ रसपर्पटी ( महा ) ( पञ्चमी )

वेदमायो रसो ब्राह्मो गन्धस्तस्माद्भिभागिकः ।

कृत्वा कज्जलिकां सूक्ष्मां घृतात्कां बह्विनाऽऽदरात् ३४७

लोहपात्रे स्थिता सायत्पर्पटी क्रियते रसः ।

जया द्वादशभाषा स्वाहुण्ठी पण्मापिका भवेत् ३४८

पिप्पली मरिचं चैव सैन्धवं सलुवचलम् ।

स्वर्जिकाविडमेतानि प्रत्येकञ्च चतुष्टयम् ॥ ३४९ ॥

भाषाणां गृह्यते सर्वं पिष्टं प्रत्येकदास्तथा ।

तदेकीक्रियते सूक्ष्मं मिथ्यते युज्यतेतराम् ॥ ३५० ॥

गन्धयुक्ते शुभेभाण्डे तच्च सर्वं निर्धायते ।

सादेद्विग्रयालोपेक्षी काजिकेनाऽम्मसाऽथवा ॥ ३५१ ॥

अशःसु शुद्धपीडामु प्रदरेषु प्रशस्यते ।

कामलायां प्रहण्याञ्च मन्दाग्री च प्रयुज्यते ॥

महापर्पटिकाऽऽययोऽयं रसो योगस्य घाहकः ॥ ३५२ ॥

र. का. ( प्रदाऽधिकारे ), यो. म. रसायने । योगनदाने

युक्तिः पाठोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धपारा ४ मासे, शुद्धान्यक ८ मासे केर  
दोनोही नीतरणकज्जलीकर प्रथमपर्पटीकीतरह पर्पटी तैयारकर  
भाग १२ मासे, सोंठ ६ मासे, पीपल, मरिच, तिन्पत्र, संघर,  
सखी और बिडनमक ४-४ मासे लेकर सारोको अला २ योगकर  
एकत्रगह मिलाकर सुगन्धयुक्तचूर्णमें डालकर रतडोड़े । इसमेंसे १

मासेसे २ मासेतककी मात्रा काशी अथवा जलकेसाय देनेसे बचातीर, गुदाकीपोड़ा, प्रदर, कामला, ग्रन्थी और मन्दाग्निको यह नष्टकरती है । तत्तदोगोपितानुपानोंकेसाथ देनेसे समस्तरोगोंको दूरकरती है ॥ ७५ ॥

### ७६ रसपर्वटी ( लम्बीविलामः ) ( पष्ठी )

रसमसितमयोऽन्नगन्धमेतान्

ददमुदकेन विमर्दयेत्कुमायाः ।

क्षिप खुकदलेषु मध्यलब्धे

थिरजनि धान्यचये च पुष्पिताम्रा ॥ ३५३ ॥

र. वि., दीर्घरोगे ।

भाषा—पाटा, लोह और अन्नकृमस्य, शुद्धगन्धक, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पीउनेकररसे १-२ रोज मर्दनकर गोलाबनाय एण्डकेपेतोंमें लपेटकर ३ दिन धानकीराखमें रखदे । चौथेरोज निकालकर बारीकचूर्णकर रखओड़े । इसमेंसे १ से २ रसीतक तत्तदोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह क्षयादि-समस्तरोगोंको नष्टकरती है ॥ ७६ ॥

### ७७ रसपर्वटी ( सप्तमी )

लोहापत्रेऽथवा ताम्रे पलैकं शुद्धगन्धकम् ।

मृद्वग्निना द्रुते तस्मिन् शुद्धन्तपलप्रथम् ॥ ३५४ ॥

क्षित्वाऽथ चालयेत्किञ्चित्कालमुष्णतातः पुनः ।

ढालयेत्कदलीपत्रेऽथवा स्थिरपट्टे क्षिती ॥

इदमेव पर्वटीबद्धं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ ३५५ ॥

यो. म., रसायने ।

टि०—पारदस्य प्रमाणाधिन्ययोगनाय एषकथा कृताऽस्ति ।

भाषा—लोहे अथवा तांबेकेपात्रमें १ पल शुद्धगन्धकको-गलाकर ३ पल शुद्धपात्रेको डालकर लोहेकीकड़हींसे पर्वणकरे । एकतीबहोनेपर गोबरपररक्खंडुए केलेकेपतेपर अथवा भीमदुष्ट-कपड़ेपर डालकर पर्वटीतैयारकरले । इसमेंसे ३-३ रसीकीमात्रा तत्तदोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरती है ७७

### ७८ रसपर्वटी ( अष्टमी )

लोहस्य पात्रे तु रसेन गन्धं

धत्तूरतोयेन दिनं विमर्ष्य ।

किञ्चिद्विषेपैलमतश्च यद्वा

प्रद्रव्यं ताम्रस्य तु भाजने तत् ॥

चित्रार्द्रतोयेन विमर्दयेच्च

क्षालामिमान्याऽरुचिहा रसः स्यात् ॥ ३५६ ॥

र. दी., क्षालामिमान्ययो ।

भाषा—समभाग शुद्धपात्रे और गन्धककी कजली बनाय लोहेकेपात्रमें धनुकेरसे एकरोज मर्दनकर सुखाकर तांबेकेपात्रमें थोड़ा तेल पोतरकर प्रथमपर्वटीकीतरह तैयारकर चित्रक और अद-रखके रसे १-१ रोजमर्दनकर ३-३ रसीकी गोलिया बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तदोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह शूल, मन्दाग्नि और अरुचि इत्यादिकोंको नष्टकरती है ॥ ७८ ॥

### ७९ रसपिटिका

सूतहेमरविपिटिका कृता

दिग्विभागविपसंयुता शुभा

सूतभागनयनाङ्गनोपगा

शूलिनीरसविमर्दिता दिनम् ॥ ३५७ ॥

जालिनीरसविमर्दिता तथा

याममेव ससिताऽऽद्रेजे रसेः ।

सेविता द्विगुणरक्तिकामितोन्मा-

दरोगमखिलं धुनोति सा ॥ ३५८ ॥

अपस्मारविधिश्चात्र वातव्याधिहरस्तथा ।

नारायणं नाम तैलं महापेशाचिकं घृतम् ॥ ३५९ ॥

कल्याणकं तथा सर्पिरुदन्तसर्पदर्शनम् ।

प्रासनं तु कपाघाते धर्षणं राजसेवकैः ॥ ३६० ॥

आध्यासनं मित्रजनैर्धनदानैः प्रियादिभिः ।

धुद्धा हेतुप्रतीकारं कुर्यात्तस्योपमर्दनम् ॥ ३६१ ॥

र., उन्मादि ।

टि०—शूलिनीरस्य रसेन्द्रचूडामर्गो-विद्वान्नागरनाय या शम्बा कपलकरका । त्रिद्वर्णि विमाल्याना प्रमिद्धा रत्नवर्णने ॥ इति ॥

भाषा—शुद्धपाटा, सुवर्ण, ताम्र समभागलेकर सुवर्ण और ताम्र पर बारीकचूर्णकरले अथवा बर्कबनाकर पोरमें थोड़ा २ डालकर पोटे । मिलजोनेपर पोरसे दशवा हिस्सा शुद्धवज्रनाग और पोरसे दूनी सुमेरीमस्य मिलाय त्रिचुलिनी और जालिनी मूटीकेरसे १-१ रोज मर्दनकर ३-२ रसीकी गोलिया बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली शूल और अदरखके रसेकेसाथ सेवनकरनेसे समस्त उन्माद, अपस्मार और वातव्याधियोंको यह नष्टकरती है । इनतीनों रोगवालोंको नारायणतैल, महापेशा-चूर्ण, कल्याणधूत तथा बहुतपुराना घृत खिलाना । उन्माद-वालेको खासकर दंतोद्वेदिए सपेसे कठवाना, राजपुखोसे डराना, कोदेल्यवाना, मित्र धनदान और प्रियस्त्रियोंसे आश्वा-सन देना । कारणको समझकर उषका प्रतीकार करना इत्यादि उपायोंसे उन्मादी प्रकृतिस्थ होजावे ॥ ७९ ॥

### ८० रसप्रयोगः

पारदं द्रवदं गन्धं कसनाभञ्ज तालकम् ।

टङ्गुणं त्रिकटुञ्चैव समभागानि कारयेत् ॥ ३६२ ॥

आद्रकस्याऽम्भसा भाव्यं दिष्टमूलस्य धारिणः ।

पुनर्नयाचित्रकयोर्भावयेदातपे खरे ॥ ३६३ ॥

द्विगुञ्जं वटकं कुर्याद्वान्यराशौ निधाययेत् ।

अग्निमान्वादिक्कान्दोषांश्छीघ्रमुन्मूलयेद्दलात् ॥ ३६४ ॥

र. क यो., अजीर्णाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पाटा, क्षिरिक, गन्धक, बछनाग, हरिताल या रसमानिक्य, शुद्धमा और त्रिकटु देवन समभागलेकर नील-वर्णकजलीकर अदरख, सहजिन, पुनर्वा और चित्रकके रसोंसे कड़ीपूषमें १-१ भावना देकर ३-२ रसीकी गोलिया बनाय क्षयाशुष्ककर एण्डकेपेतोंमें रख/थोड़ीबनाय धातुमर्दिने ।

रोजतक रखदे । इसमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह अग्निमान्द्यग्रन्थित समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ८० ॥

### ८१ रसभस्म

शरावनिहितं सूतं द्विप्रवर्जं मुहुर्मुहुः ।  
दत्त्वाऽग्निं सूर्ययामान्तं निम्बकाष्टेन चर्पयेत् ॥ ३६५ ॥  
एवं भवेत्पीतवर्णा रसराजस्य भृतिका ।  
यथाऽनुपानं रोगेषु प्रदद्याद्विपशुत्तमः ॥ ३६६ ॥  
अर्जितं विविधोपायैर्जडमाद्भिपजोमया ।  
इदं तस्यं प्रलब्धन्तु पालनीयं चिकित्सकैः ॥ ३६७ ॥

वै. म., रसायनसं., र. कौ., व. रा., र. सि., नि. र., वातव्या-  
धौ, मेदोऽधिकारे च ।

भाषा—मिश्रीके मज्जितुपात्रमें दोभागशुद्धवर्जको गलाय एकभाग पारेको छोड़कर नीमकेतले सोदेसे चर्पणकरताहुआ १२ पहर की अग्निदेवे । इसतरह पीतवर्णको पारदभस्म तैयार-  
होगी । स्वाज्ञशीतलहोनेपर इसमेंसे १-१ रसी तत्प्रादोहप्रातः-  
पानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरतीहै ॥ ८१ ॥

### ८२ रसमण्डूरम्

कुडवं पथ्यावूर्णं द्विपलं गन्धाश्म लौहकिटञ्च ।  
शुद्धरसस्याऽर्द्धपलं भृङ्गस्य रसं सकेशराजस्य ३६८  
प्रत्योन्मितञ्च दत्त्वा पात्रे लौहस्थ दण्डसङ्घट्टम् ।  
शुष्कं घृतमधुयुक्तं मृदितं स्थाप्यञ्च भाजने सिन्धे ॥  
उपयुक्तमेतद्विचित्राभिहितं कफपित्तजाम्नोगाम् ।  
शूलं तथाऽम्बुपित्तं प्रहणीञ्च कामलामुग्राम् ॥ ३७० ॥

त्रै. र., र. र., यो. म., र. चं., च. व., र. क., दो. घृताऽधिकारे

भाषा—हैं ४ पल, शुद्ध गन्धक और मण्डूर २-२ पल,  
शुद्धपाठा आधापल लेकर पारेगन्धकी नीलवर्णकजलीकर हैं-  
कावूर्ण मिलादे । फिर स्याह और सफेद भंगरेके १६-१६  
पल रसमें मिलाकर लोहेकेपात्रमें अग्निपर चढ़ाय लोहेकी कड़-  
छीसे घोटताहुआ पकावे । रससूत्रजानेपर उतारकर ठंडाहोनेपर  
१-१ पल घी और मधु मिलाकर घोटकर चिकनेवर्तनमें रख-  
छोड़े । इसमेंसे ३-३ गांठो उचितानुपानकेसाथ देनेसे  
कफपित्तजाम्नोग, शूल, अम्बुपित्त, सङ्ग्रहणी और कामलाको यह  
नष्टकरताहै ॥ ८२ ॥

### ८३ रसपाठा

हेमाऽप्रकरस्ताः शुद्धाः सिन्दूरश्च चतुष्टयम् ।  
कृष्णाम्बुफलनीरेण भावयेदकविंशतिम् ॥ ३७१ ॥  
मेथिकाकायतः पूर्वमश्वगन्धारसेन च ।  
कृष्णानोक्षीरसहिते हरिणीक्षीरपूरकैः ॥ ३७२ ॥  
यदुशो भावयेत्तस्य तवक्षीरी चतुर्गुणा ।  
द्राक्षा खञ्जूरफलकुमुस्तकेलासृष्टृणकम् ॥ ३७३ ॥  
धीचन्दनान्जतक्रोलजार्ताचूर्णं तथैव च ।  
क्षिप्त्वा पश्चाद्भारिकेलफलनीरेण भावयेत् ॥ ३७४ ॥

कृष्णानोक्षीरसंयुक्तं निष्कमात्रं तु सेवयेत् ।  
शर्करानवनीताभ्यां सेवयेदकमण्डलम् ॥ ३७५ ॥  
क्षाराम्लत्वर्णं तैलं वर्जयेत्क्षीपु सङ्गमम् ।  
मधुरेष्टाक्षपानानि भोजयेद्विवसत्रयम् ॥ ३७६ ॥  
अतिशुष्कस्य कायस्य पुष्टिं वितनुतेतराम् ।  
स्त्रीणाञ्च पुरुषाणाञ्च कुस्ते कायचर्पणम् ॥ ३७७ ॥  
आयुष्करी वक्ष्यकरी सत्त्वसन्तानकारिणी ।  
रसमातेति विख्याता नाम्ना लोके महीयते ॥ ३७८ ॥  
र. कौ. (श.), रसायने ।

भाषा—सुवर्ण, अत्रक और पारा इनकीभस्में तथा रस-  
सिन्दूर १-१ तोला लेकर सफेद बॉहलेकेरसकी २१ भावनाएं  
देकर मेथीकाकाय, अश्वगन्धकाय, कालीकाय और हरिणीका  
दूध, बिजोरेकाय इनकी १४-१४ भावनाएं देकर सुखाकर  
इससे चतुर्गुणित तीसरा अथवा बंसलोचन मिलाकर द्राक्ष, छुहारे,  
नागरमोथा, इलायची, बहेडा, सफेद चन्दन, कमलगन्ध, कषाव-  
चीनी, जाविनी इनसबका १-१ तोलाचूर्णमिलाकर नारियलक-  
जलसे ६-६ भावनाएं देकर सुखाकर रखाओगे । इसमेंसे  
४-४ गांठोकीमात्रा कालीपायके दूधकेसाथ अथवा शर्कर और  
मक्खनकेसाथ ४९ दिनतक देनेमें यह सबतरहके शोषोंको दूर-  
कर पुरुष तथा स्त्रियोंके समस्तदोषोंको नष्टकर आयु और  
सन्तानको देतीहै । इसके प्रारम्भमें ३ रोजतक मधुर और  
अनपान देवे और क्षार, अम्ल, लवण, तैल इनको प्रयोगसमाप्ति-  
तक छोड़देवे और त्र्यचर्पये रहे ॥ ८३ ॥

### ८४ रसरारसः (प्रथमः)

गोमये तैलमास्थाप्य त्रिवारं शोधयेत्प्रभु ।  
द्रावयित्वा समं सूतमेकीरुतय विचक्षणः ॥ ३७९ ॥  
धृत्वाऽपामार्गमूलन्तु मुखे चर्वणमाचरेत् ।  
गण्डपं तन निःक्षिप्य तैलं त्रिः शोधयेद्बुधः ॥ ३८० ॥  
ताम्बूलचर्वणं श्रुत्वा गण्डपं निक्षिपेद्बुधः ।  
दाढ्यमायाति तत्सद्यःपेययित्वा तु गोलकम् ॥ ३८१ ॥  
नागवल्लीदलेनैव योज्यं गुञ्जाचतुष्टयम् ।  
उपदेशो च दुःसाध्यो रसोऽयं दिनसप्तकम् ॥ ३८२ ॥  
ताम्बूलचर्वणं कार्यं विशेषाच्च गदार्तिभिः ।  
पर्यं शालयोदनं देयं घृताक्तं मुद्गसंयुतम् ॥ ३८३ ॥  
प्रशस्तं मेथिकाशाकं मुखपाको न जायते ।  
रसरारजइति ख्यातः सुप्रदः सर्वदा नृणाम् ॥ ३८४ ॥  
रसायनं, वै वि, उपदेशे ।

भाषा—ताम्बूलेपरमें गर्कद तिलकातिलमर वनको पिपल-  
कर तीनवार गुञ्जावे । और समभाग शुद्धपारेकी उसमें मिलाकर  
तैलमें गुञ्जाकर खरलमें ढाले । फिर अपामार्गकी ताजी जड़को  
मुखमें रखकर खावावे । लुआबसे मुखपरजानेपर लुआबको खरलमें  
झटकर मिलेहुए चूरा और पारेकी घोटें । सूत्रजानेपर फिर  
उगीतरहुञ्जाकरके गुञ्जावे । ऐसे तीनवार करके पारेमेंसे तैलही

चिकनाईको साफकर दे । इसीतरहसे कत्था, चूना छगेहुए पानको चवाकर पारेमें कुले डालकर पारेको तीनवार मर्दनकरके सुखावे । ऐसाकरनेसे गोली कड़ी होजायगी । इसमेंसे ४-४ रस्ती पानमें रखकर ७ दिनतक खिलावे । जो मिचलाने पर पान खिलावे । भूखलगानेपर पुरानेचाबलेंको धी और मूंगकेसाथ दे । मेथीका शाक खिलावे तो इससे मुखपाक नहींहोताहै और उपदंशके तमाम उपद्रव नष्टहोजातेहैं ॥ ८४ ॥

### ८५ रसराज रसः ( द्वितीयः )

भागा रसस्य चत्वारो हाष्टो गन्धकभागकाः ।  
मनःशिला द्विभागा स्याद्विद्रा त्रिफला तथा ॥३८५॥  
अम्रयो जयपालाश्च त्रिवृता च त्रिभागिका ।  
दन्ती च तुषारं श्योपं पृथगष्टांशकं मतम् ॥ ३८६ ॥  
एतेषां चूर्णमादाय दापयेत्सप्त भावनाः ।  
जयन्त्या घञ्जुगन्धस्य घातास्त्रिद्वाराजयोः ॥ ३८७ ॥  
जलोदरमपाकुप्याद्वाहिर तत्र न पाययेत् ।  
नामेरुत्तरभागे हि जलस्रावश्च कारयेत् ॥ ३८८ ॥  
र रा, जलोदरे ।

भाषा—शुद्धपारा ४ भाग, शुद्धगन्धक ८ भा, मैनसिल २ भा, हल्दी, त्रिफला, शुद्धमिलानेऔरजमालमोटा तथा निशोत ३-३ भाग, दन्तीमूल, तुषारक, सोंठ, मिर्च, पीपल येसब ८-८ भागलेकर सबका बारीकचूर्णकर जैती, सेहुण्डकादूध, एरण्ड और भंगरा इनप्रत्येकके स्वरसोसे ७-७ भावनाए देकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोदे । जलोदरीवेनामिके उत्तरभागकी तरफ जलस्रावकर इनमेंसे १-१ गोली प्रतिदिन देनेसे फिर पानी नहीं भरताहै । खानेकेलिये दूधभात देवे ८५

### ८६ रसराजरसः ( तृतीयः )

पलेकं शुद्धसूतस्य द्योमसस्त्वश्च कार्पिकम् ।  
तद्वर्द्धं काञ्चनं देयं कन्यारसविमर्दितम् ॥ ३८९ ॥  
लौहं शीषं मृतं यज्ञं वाजिगन्धां लयङ्गकम् ।  
जातीकोपं तथा क्षीरकाशोलीञ्च तद्वर्द्धतः ॥ ३९० ॥  
काकमावीरसिः पिप्प्रा पञ्चगुजामिता वटी ।  
क्षीरञ्च शर्करातोयमनुपानं प्रकल्पयेत् ॥ ३९१ ॥  
पक्षाघातेऽर्दिते वाते हनुस्तम्भेऽपतन्त्रके ।  
धनुस्तम्भेऽपताने च वायुधियं मस्तकग्रमे ॥ ३९२ ॥  
सर्वघातविकारिषु रसराजः प्रकीर्तितः ।  
चल्यो वृष्यश्च भोग्यश्च वाजीकरण उत्तमः ॥ ३९३ ॥  
भै.र, घ, वातव्याधयधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा १ पल, अन्नवसत्त १ कपे, स्वर्गमस्तम अपारुष्यं मिलाकर हुमारीवेरससे १ रोच मर्दनकर लोह, चादी और वज्रभस्म, असगन्ध, लौह, जाविनी, क्षीरकाशोली येसब ४-४ माशेलेकर सबको इक्के मिलाय मनोयेरससे २-२ रोजमर्दनकर ५-५ रस्तीकी गोलियां बनाकर रखछोदे । इनमेंसे १-१ गोली शहरमिलेहुए दूध अथवा पानीकेसाथ देनेसे

पक्षाघात, लम्बा, हनुस्तम्भ, हिस्टीरिया, घनुवात, खींचतान, बधिरता, सिरकाधूमना, और समस्तवातविकारोंको नष्टकर बल, कृप्यता और वाजीकरणकोवढ़ावे ॥ ८६ ॥

### ८७ रसराजरसः ( चतुर्थः )

कस्तूरी हिमरश्मि कुङ्कुमसिते  
जातीफलं हाटकं,  
चाम्पेयं वृषदेमवीजयिजया  
यष्टी जयन्ती विपम् ।  
प्रत्येकं समभागमानविधृत  
घट्टं घृतसौद्रयुकं,  
लीढं तत्क्षणमूर्च्छनं वितनुते  
पौण्ड्रादिजैस्तज्जयेत् ॥ ३९४ ॥  
स्त्रीणां गर्वाधिकृत्यं गमयति सकलं  
क्षीर्यपातं न याति,  
लिङ्गान्तो याति वृद्धिं स्थिरतरयपुप्रां  
स्तम्भच्छोनिभमम् ।  
सर्वाङ्गं सन्धिघातं प्रणविधिघर्गति  
प्रण्यलताः स्फुटन्ति,  
पूयं वृग्गन्धलता क्षवति च बहुलं  
तीव्रदुःखेन युक्तम् ॥  
दाहं मोहञ्च तृष्णां क्षयकृमिहृदातां  
पीनसं पाण्डुरोगान्,  
गुल्माऽऽप्माने च शूलं प्रहणिगुदरजं  
कुष्ठरोगान्निहन्ति ॥ ३९५ ॥  
न रा, वनेषु ।

भाषा—कस्तूरी, शुद्धकपूर, केसर, शक्कर, जायफल, अक्करा, चम्पा, अहूता, घट्टेके बीज, भांग, मुलहठी, जैती और शुद्धवज्रया येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोदे । इसमेंसे ३-३ रस्तीकीमात्रा मधु और घृतकेसाथ देनेसे सर्वाङ्ग-सन्धिघात, समस्त ऋण, दाह, पैलाहुआमकड़ीका पिप, दाह, मोह, व्यास, क्षय, कृमि, इरादा, पीनस, पाण्डु, गुल्म, आब्मान, शूल, प्रहणी, शुद्धरोग, दुष्ट, पण्डत्व, च्चग्नह, इनसबको बल नष्टकर खियोंके गर्वको हटकरताहै और सबप्रकारके शुक्रदोषोंका नाशकरताहै । इसे वाजीकरणार्थ सेवनकरना हो तो सन्ध्यासमयमें सेवनकरे इसके सेवनेसे यत्किञ्चित् मूर्च्छा जैसी प्रतीतहो तो उससमय ईश चूपनेमें दे ॥ ८७ ॥

### ८८ रसराजरसः ( पञ्चमः )

मुक्ताप्रजालरसहेमसिताऽम्रकान्तं  
यज्ञं मृतं सकलमेतदलं विभाज्य ।  
छिन्नारसेन च घरी सलिलेन सप्त  
पञ्चाहदेन्मधुहविर्मरिचिन साकम् ॥  
लिह्यादुरःस्तहरे रसराजकार्प्यं  
मापप्रमाणमतवृद्धवहेतुमेषु ॥ ३९६ ॥



नि. र., वै. क., र. सु, चि क, वृ. यो. त, र चं, यो. र, उर. क्षतक्षयादौ ।

भाषा—मोती, सृंगा, पारा, सुवर्ण, सफेद अश्रक, कान्त लोह, कान्तपाषाण, वज्र, इनहीभस्मं सब समभागलेकर घारीक चूर्णकर इकडे मिलाय गिलोय और घटावरके रसबी ६-७ भावनाए देकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली मधु, धी और ७ मिर्चकेसाथ देनेसे यह उर क्षतको नष्टकरताहै और कायवी पूर्णवृद्धिको करताहै ॥८८॥

### ८९ रसराजरसः ( पष्ठ )

भृङ्गाऽहिफेनकलनीविपमुष्टिचिलेपिते ।  
घृत्वे निर्घस्य विधिचन्द्रसगन्धकखर्परम् ॥ ३९७ ॥  
गौर्यां पचेह्रायपुटे शतेन च नियोज्य तु ।  
ऊर्ध्वाऽधोऽहमेवजातिनि पेपयेदशतः क्रमात् ॥ ३९८ ॥  
तेषां तौर्यैः पुनः कृत्वा पूषिकामर्शोपिताम् ।  
तत्कर्दमैः प्रतिपुटं दिग्धां कृत्वा पुटेच्छतम् ॥ ३९९ ॥  
रसराजो भवत्येष सर्परोगहरो रसः ।  
जम्बूघण्टांऽतिरुद्धिनो रूक्षो धीर्यवली भवेत् ॥ ४०० ॥  
जातीफललवङ्गाभ्यां रतौ धीर्यं निरोधयेत् ।  
पटुर्द्वीप्यशिवाविभ्यै वैश्वानरविघर्द्धन ॥ ४०१ ॥  
क्षयघ्नस्तु तथाऽश्वीघ्नस्तकठुणाऽभ्याग्नितः ।  
प्रहृण्यां जातिकोशेन रेके कुटजवारिणा ॥ ४०२ ॥  
प्रमेहे शास्मलीद्रावै र्यदर्याऽक्षिगदे हितः ।  
सामे वाऽपि निरामे वा समे वा विपमज्वरे ॥ ४०३ ॥  
देवो नताप्यदुःकाकारविश्वभृतेन वै ।  
रास्नाऽम्मसा यातरोगे पित्तरोगे सिता वृष्टिः ॥ ४०४ ॥  
अक्षत्यचा कफव्याधौ पाण्डुरोगेऽजमृष्रकैः ।  
अश्मर्यामश्मभेदेन कृपे वल्गुजघायसैः ॥ ४०५ ॥  
भगन्दरे गुडेनैव ब्रणो पीननैवायुतः ।  
मैदोरोगेऽन्धुमधुना प्रदरेऽशोकवारिणा ॥ ४०६ ॥  
शूले हिङ्गुकरञ्जाम्भामरुचौ रुचकेन वा ।  
छर्द्या धानीरसेनैव क्षिण्ये पर्णेन दापयेत् ॥ ४०७ ॥  
द्राक्षारसेन शोषे च सञ्जानाशे किरातकैः ।  
मृच्छार्द्यां चन्दनाम्भोभि विद्रुघौ चरुणाऽभ्युना ॥  
सर्वेष्वन्येषु रोगेषु ताम्बूलौदलयोगतः ॥ ४०८ ॥  
वृ. यो. त, र कौ, वाजीकरणाधिकारे ।

भाषा—भगरा, अफीम, मातृकामनी, शुद्धकुचिला ६-६ माशेलेकर पानीमें पीस साफमलमके टुकड़ेपर लेपकरके सुखाले । फिर पारा, गन्धक और खपरिया १-१ तोला, घट्टेकेबीज १० नग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर ऊपरकेहीहुई औषधियोंके द्रवोंसे एकटो ज मर्दनकर गोलाबनाय ऊपरकेहीहुई एकपत्रमें रखा कच्चेसूते खूब लपेटदे । फिर उपर्युक्तद्रवोंकेरसोंसे पुतीहुई कुन्डलीमें बन्द कर शरावसम्पुटदेकर ३-४ जखलीपण्डोंके टुकड़ोंसे बंधकर आचंदे । स्वाद्वरीतलहोमपर निकालकर २० नग घट्टेकेबीज मिलाकर

पूर्वोक्तद्रवोंसे मर्दनकर गोलाबनाय उन्हींके कल्कमें बन्दकर पूर्व-  
वत् शरावसम्पुटकर आचंदे । ऐसेप्रतिपुटमें १०-१० घट्टेकेबीज  
बडाताहुआ आचंदे । ऐसे १०० आचं देनेसे यह रसराज जामु-  
नके रजका अत्यन्तकठिन और रूक्ष तैयारहोगा । इसमेंसे आधी-  
रतीसे १ रतीतक जायफल और लवङ्गकेसाथ देनेसे वीर्यका अव-  
रोधहोताहै । सेंधव, भजवाइन, हर् और सोंठकेसाथदेनेसे अग्नि  
बोवडाताहै । पीपल और हर्मिलीहुई छाछेकेसाथ देनेसे क्षय  
और बवासीरको नष्टकरताहै । जावित्रीकेसाथ प्रहणी, जुरियाके-  
काठेकेसाथ विरेचन, सेमलके द्रवकेसाथ प्रमेह, बदरीद्रवसे अक्षि-  
रोग, तगर, नागरमोया, घुटकी, अक्करा और सोंठ इनकेका-  
टेसे साम अथवा निराम और सम अथवा विपमज्वर, राज्राके  
क्षायसे वातरोग, इलायची और क्षारकेसाथ पित्तरोग, बहेरी-  
छालसे कर्णरोग, बरिजेमृगसे पाण्डुरोग, पाषाणभेदसे पथरी,  
घाघुची और मकोयकेसाथ कुष्ठ, गुस्ते भगन्दर, पुननैवासे ब्रण,  
मधुके दार्वत्ते में मैदोरोग, अशोककेकाठेसे प्रदर, हींग और कर  
झोते शूल, सञ्जलनमकसे अरुचि, आवलेके स्वरससे वमन, नाग  
रवेल्से क्षीणता, द्राक्षारससे शोष, विरायतेसे सन्जानाश, सफेद-  
चन्दनकेरससे भूजर्ष, वरुणकेसाथसे विद्रिघोरोगको नष्टकरताहै ।  
इनके अतिरिक्त अन्यव्याधियोंमें नागरवेल्लकेसाथ देना ॥ ८९ ॥

### ९० रसराजरसः ( सप्तमः )

पारदं गन्धकाङ्गोत्प्लव्यलघुलकमाक्षिरम् ।  
विपतिन्दुकतालञ्च समङ्गा दुग्धिका तथा ॥ ४०९ ॥  
अर्कं गन्धर्वहस्तश्च जयन्ती कटुचिञ्चिका ।  
पलंपलं समादाय पलमात्रा च पिप्पली ॥ ४१० ॥  
अर्कसेडुण्डमेरीणां दुग्धैः कुर्याद्य भायनाः ।  
तिष्ठो वापि चतस्रो वा चूर्णे सूक्ष्मे विचक्षणः ॥ ४११ ॥  
देवदालीरसैः पश्चात्तिष्ठो देयास्तु भायनाः ।  
सर्वे विमर्चं संशोष्य छाणीमृनेण गोलकम् ॥ ४१२ ॥  
कारयेन्मृषिकामये कुक्कुटाख्यपुटे पुटेत् ।  
रक्तिकैका प्रदातव्या गुडेन परिवर्णिता ॥ ४१३ ॥  
ध्विध्वे तेन भवेयुश्च विस्फोटास्तदनन्तरम् ।  
स्फुटन्ति स्फोटास्ते सर्वे विन्द्वस्तिलसहिनाः ॥ ४१४ ॥  
निष्पद्यन्तेऽथ कृष्णास्ते रसराजप्रभावतः ।  
मापास्तिला प्रयोगेऽत्र मोकन्यास्तिलमोजनम् ॥ ४१५ ॥  
कुलत्यञ्चाऽपि वार्तकं पुण्डरीकं प्रयोजयेत् ।  
सूरणं कारवेल्लञ्च कर्कोटं छागसम्भवम् ॥ ४१६ ॥  
मांसं सवेसवारञ्च सतैलवृहतीफलम् ।  
नदन्यन्ति सर्वकुष्ठानि सङ्ख्यान्यष्टादशैव हि ॥ ४१७ ॥  
यल्लुप्तलोदरं हविद्रुघीनपि नाशयेत् ।  
अग्निञ्च घुस्ते दीप्तं वृद्धिं तेजोपलस्य च ॥ ४१८ ॥  
रसवि, र का, कुष्ठे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अड्डोलीबहरीछाल,  
सोनामासी, शुद्धकुचिला, हरितालमलम, मनीठ, छोटोद्वीपी,  
आर और एण्डबी जडकीछाल, जैती, घुटकी, इमलीकेपत्र

और पीपल येसब १-१ फल लेकर भारीकचूर्णकर पीपलगन्धकी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर आक, सेतुण्ड और मेडकेदूधोसे ३-३ अथवा ४-४ भावनाएं देकर सुखाकर बन्दालकेपञ्चाङ्गके स्वरसकी ३ भावनाएं देकर सुखाकर बन्दीकेमूत्रमें पीपलर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३-४ कपड़मिट्टीदेकर कुकुट पुटकी आवेदे । स्वाद्वशीतलोहेनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती गुडमें बबलितकर निकलादेवे । कुछदिनके प्रयोगसे थिनमें फोले उत्पन्न होंगे उन्हें फोड़देना । उसके अन्दर चमड़ीमें कालेतिलके सरस जगह २ किड़ उत्पन्नहोंगे । इसके प्रयोगमें उडद, तिल, कुलथी, बेगन, कमल, सूरज, करेला, कचड़ी, बकरेकामास, देवन, तैल, बनभाट्टा येसब खानेको देने चाहिये । इससे १८ प्रकारकेकुष्ठ, यक्षु, गुल्फ, उदररोग, स्त्रीदा, जहृपाद, मन्दाभि, तेज और कलका जमाव, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ९० ॥

### ९१ रसराजरसः ( अष्टम )

शङ्खशुक्तिकयोः कर्षौ द्वौ कर्षौ गन्धकस्य च ।  
पिष्ट्वाऽर्कदुग्धैस्तद्गोलं सम्पुटेऽग्नौ दिनाऽर्धंरुक् ॥ ४१९ ॥  
स्याद्वाशीतं रक्तिकाऽस्य वेदवेद्योपणे. सह ।  
गोघृतेन समं लिङ्गात्क्षयकासनिकृन्तनः ॥ ४२० ॥

चि र भ, लयकसे ।

भाषा—शङ्ख, मोतीकीसीप १-१ कर्ष, शृङ्गगन्धक २ कर्ष लेकर सबकावारीकचूर्णकर आककेदूधमें १-२ रोज मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर २ पहरकी अग्निदेवे । स्वाद्वशीतलोहेनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्तीकीमात्रा ४-४ रत्ती कालीमिर्चोके चूर्ण और पीनेसाथ देनेसे यह क्षयकासको नष्टकरताहै ॥ ९१ ॥

### ९२ रसराजरसः ( नवमः )

मृतसृताऽसकं कान्तं विपं तार्य शिलाजतु ।  
तुल्यांशं मधुसर्पिर्भ्यां लिह्यद्गुञ्जाऽष्टकं सदा ॥ ४२१ ॥  
पण्मासेन जरां हन्ति जीवेन्नरदिनत्रयम् ।  
अश्वगन्धामूलचूर्णं सप्तभागं घृतेः समम् ॥ ४२२ ॥  
भागाऽष्टकं गुडं तस्मिन् पिप्पलीं तत्समां क्षिपेत् ।  
मृद्वग्निना तु तत्सर्वं पिण्डितं भक्षयेत्पलम् ॥ ४२३ ॥  
रसायनस, रसायने ।

भाषा—पारा, अन्नक, कान्तलोह और सोनामासी इनकी भस्में, शृङ्ग बजनाग और शिलाजतु सबसमभाग लेकर सबको इक्के घोटकर चूर्णकररक्के । इसमेंसे ८-८ रत्तीकीमात्रा मधु और पीनेसाथ खावे और अश्वगन्धकीजड़का चूर्ण ७ भाग, पुरानागुड और पीपल ८-८ भाग लेकर गुडको अग्निमें गलाकर अमलान्ध और पीपलकेचूर्णको मिलाकर ४-४ तोलेके मोदक बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ मोदक अनुष्ठानके तौरपर ६ महीनेतक खानेसे बुढ़ापेसे रहित होकर स्वाभाविक आयुसे त्रिगुनी आयुको भोगसकाहे ॥ ९२ ॥

### ९३ रसराजरसः ( दशमः )

पातितं स्वेदितं सृतं पूर्वोक्तविधिना हरेत् ।  
उल्ले निक्षिप्य तं सृतं पीतवेणीमये रसैः ॥ ४२४ ॥  
मर्दयेत्त्रिदिनं पश्चाद्यन्त्रे सोमानले क्षिपेत् ।  
सम्पाद्विस्वद्य तद्यन्त्रं सुहृयामारोपयेद्बुधः ॥ ४२५ ॥  
ज्वालेत्येदिनं पश्चात्पुनर्वेणीमयै रसैः ।  
मर्दयेत्सम्पवेदेयं सप्तवारानतन्द्रितः ॥ ४२६ ॥  
निरुध्यं जायते भस्म रसेन्द्रे नाऽत्र संशयः ।  
स्वाद्वशीतलमुद्धृत्य भावयेद्भूर्तजै रसैः ॥ ४२७ ॥  
विजगद्द्विजयनीरे र्वस्तनामद्रवैस्ततः ।  
भूमिभ्यनीरेः सवर्गिते भावयेत्पारदेभ्यरम् ॥ ४२८ ॥  
पञ्चविंशतिवारान्तमेकैकेन विभावयेत् ।  
एवं विभावितं सृतं ज्वरे दूते प्रयोजयेत् ॥ ४२९ ॥  
मुस्तापर्पटयोः क्वाथै र्वरैः सद्यो विनश्यति ।  
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन नाऽधिकं चितरेद्बुधः ॥ ४३० ॥  
यथेष्टं भोजयेत्पश्चात्सर्वांश्च घास्त्वर्जितम् ।  
तापाऽधिक्यं यदा कुर्याद्बुधं डालयेद्बुधः ॥ ४३१ ॥  
अयं रसेभ्यरो देयः सर्वरोगेषु युक्तिः ।  
गुडचीतत्त्वसंयुक्तमजादुग्धेन योजितम् ॥ ४३२ ॥  
तथराजयुतं दद्यात्क्षयरोगे सुदारुणे ।  
लोहचूर्णेन संयुक्तं शर्वां मघितसंयुतम् ॥ ४३३ ॥  
पाण्डुरोगे प्रयुज्जीत ग्रहण्यां तक्रसंयुतम् ।  
धानीनीरेण मधुना प्रमेहान् विंशतिं जयेत् ॥ ४३४ ॥  
वत्सकाऽऽष्करकाथै र्जयेशर्षासि सर्वा ।  
खदिरकायचलिना सर्वं बुद्धं निवारयेत् ॥ ४३५ ॥  
हन्ति पञ्चविधं वायुमेरुण्डस्नेहसंयुतम् ।  
नातन्याधीश्च तेनैव वरीतोयेन वा जयेत् ॥ ४३६ ॥  
पापाणमेदकापेन कौल्यकायसंयुतम् ।  
अहमरां हन्ति पद्माऽथ विष्णुकान्तयुतं हरेत् ॥ ४३७ ॥  
गोक्षुरकाययोगाद्वा चैकप्यावृत्तं तु वा ।  
श्वरश्च्येषु युज्जीत कर्पूरं मलयोज्वरं ॥ ४३८ ॥  
शिलाजतुसमायुक्तो मगननिवारकः ।  
उर्ध्वशीरेण संयुक्तो हार्दिकप्रिलिखितः ॥ ४३९ ॥  
सर्प, क्षारश्च लणैस्सर्पार समकुलः ।  
हिन्दुचित्रकुबेरशीयुक्तस्तु वरिष्ठकश्च ॥ ४४० ॥  
शूलं निहन्ति नि शेषं सामान्यं हृत्पुष्पम् ।  
पडलोहभस्मसंयुक्तमाग्निशरानुष्पम् ॥ ४४१ ॥  
गुडशीरेण संयुक्तो हार्दिकप्रिलिखितः ॥ ४४२ ॥  
घनुयांतं निहत्सेन नात्र कर्पूरं विचार्य ॥ ४४३ ॥  
सर्वां सर्वां प्रवाहस्तु हन्ति कर्पूरं विचार्य ॥ ४४४ ॥  
पृष्ठवतो कन्धराया हार्दिकप्रिलिखितः ॥ ४४५ ॥  
नेलाप्रवाहं कुर्वति लोहं कर्पूरं विचार्य ॥ ४४६ ॥  
दशमूलमयं पश्चात्सर्वेषु कृत्वा

एवं हि यदुरोगेषु सूत्रेन्द्रं युक्तिवित्तमः ।  
 प्रयुञ्जीताऽप्रमत्तस्तु शास्त्रदृष्टेन कर्मणा ॥ ४४१ ॥  
 रसराज इति स्यातो भस्मनामा सुविस्तरात् ।  
 देवीशास्त्राऽनुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ ४४६ ॥  
 रसात्, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—दृष्टिकाप्रयतिद्रव्योंमें पारेको घोटकर ऊर्ध्व, अध-  
 और तिर्यक्पातसे शुद्धकर पीलेफूलकी बन्दाके फूलोंकेरससे  
 ३ रोज मर्दनकर टमरूयन्त्रमें बन्दकर ३ दिनकी अग्निसे पकावे ।  
 स्वाध्यासीतलहोनेपर निकालकर फिर पूर्ववत् मर्दन और पाचन-  
 करे । इसतरह ७ बारकरनेसे पारेकी निरुप्य भस्म होजायगी  
 फिर धतूरा, भांग, बछनाग, चिरायता, इनप्रत्येकके स्वरसोंसे  
 २५-२५ भावनाएं देकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्तीकी  
 मात्रा नागरमोया और पित्तपापहेके कायसे देनेसे यह नवज्वरको  
 नष्टकरताहै । ज्वर उतलेपर अम्लवर्जित यथेष्टभोजनकरावे ।  
 अधिकदाहहोनेपर सिरपर जलझी धारादे । गिलोयसब, तीपुर्  
 अथवा बंशलोचनकेसाथ देकर बकरीका दूध पिलानेसे भयङ्कर  
 क्षयरोगको नष्टकरताहै । लोहभस्मकेसाथ देकर तक्रपिलानेसे  
 पाण्डुरोग, केवल छाछसे ग्रहणी, आँखसेरेख और मधुमे २०  
 प्रकारके प्रमेह, जूँरया और भिलावेके कायसे सबप्रकारके बवा-  
 सीर, खदिरकेकाय और गन्धकसे समस्तदुष्ट, ऐरण्ठसेलेसे  
 अथवा हाताबरेके बापसे समस्तवायुरोग, पापाणमेदके बापमें  
 कुलभी अथवा कोयलका बाप मिलाकर देनेसे पयरी; पानके-  
 साथदेकर गोखरूके बापमें कपूर और चन्दन मिलाकर देनेसे  
 मूत्रकुष्ठ; शिलाजीतके साथ भगन्दर, छंदनीके दूधकेसाथ समस्त  
 उदररोग; समस्तक्षार, उपक्षार, हींग, चित्रक और वरुणकेसाथ  
 देनेसे परिणामशूल, क्षारकेसाथ देनेसे सामान्यशूल, ६ लोहोंकी  
 भस्म और अम्वरकेसाथ अथवा बछनागकेसाथ अथवा हलदि-  
 याजहरेकेसाथ देनेसे धनुर्वातको यह नष्टकरताहै । इसके देनेसे  
 यदि धनुर्वात शान्त न हो तो तमामसन्धिया, सिर, श्रृष्वंश  
 तथा कन्योंमें दम्बेदे और तैलमें बैठाने । कड़वीतूँबीसे रज-  
 निकाले फिर एकछुराक पारदकी देकर दसमूलका काढ़ा देवे ।  
 इसीतरह युक्तिमें निपुण वैद्य शास्त्रसहितवर्तसे इसरसका समस्त-  
 रोगोंमें प्रयोगकरे ॥ ९३ ॥

### ९४ रसराजरसः ( एकादशः )

रसेन्द्रभुजगौ तुल्यौ ताभ्यां द्विगुणमञ्जनम् ।  
 ईपत्कर्षरस्युक्तं दशांशं सक्तुं विपम् ॥ ४४७ ॥  
 यलानागबलाकृष्णामालतीपार्थजं रसैः ।  
 ताम्रपात्रस्य मध्यस्थं मर्दयेत्त्रिदिनं निपक् ॥ ४४८ ॥  
 युक्त्या नयनमध्यस्थं सन्निपातरुजापहम् ।  
 विव्यातो रसराजोऽयं सर्वनेत्ररुजापहः ॥ ४४९ ॥  
 रसेन्द्रम्, नेत्ररोगे ।

भाषा—पारद और नागभस्म समभाग, शुद्ध सुर्मा इन-  
 दोनेसे द्वा, सक्तुकविप और कपूर दसवा हिस्सा लेकर बला,

नागबला ( शुलसिकरी ), पीपल, मालती और अजुनवेरसोंसे  
 ताम्रके बर्तनमें ३ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसका अञ्जनकरनेसे  
 सन्निपात दूरहोताहै और नेत्रके समस्तरोगमिटतेहैं ॥ ९४ ॥

### ९५ रसराजरसः ( द्वादशः )

हरजकनकताप्यं लोहकान्ताऽमृतुल्यं  
 जलजरसविभाव्यं वासराणां त्रयं तत् ।  
 हरति च रसराजो यक्षयुग्मः सितालः  
 क्षयभवमतितापं रक्तपित्तं स्वपट्यैः ॥ ४५० ॥  
 र., रक्तपित्ते ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, सोनामारी, लोह, कान्तपापाण  
 और अन्नक इनकीभस्में १-१ पललेकर घारीक चुर्णकर कमलने  
 फूलोंकेरसमें ३ रोज मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे ६-६ रत्तीकी  
 मात्रा वासरकेसाथ देनेसे क्षयज्वर और रक्तपित्तको यह  
 नष्टकरताहै । इसमें पथ्य रोगातुक्ल करे ॥ ९५ ॥

### ९६ रसराजेन्द्ररसः ( प्रथमः )

पलं शुद्धस्य सूतस्य पलं ताम्रमयस्तथा ।  
 अत्र नागं पलं चूर्णं पलं गन्धकतालकम् ॥ ४५१ ॥  
 पलं शुद्धविषं चूर्णं सर्वमेकत्र कारयेत् ।  
 मर्दयेत्काकाभाच्याश्च शृङ्गवेरसेन च ॥ ४५२ ॥  
 मत्स्यवाराहमायूरच्छागमाहिपपित्तकैः ।  
 मर्दयेद्भिषग्भिषग् च त्रिकटोरम्युभिस्तथा ॥ ४५३ ॥  
 सिद्धोऽयं रसराजेन्द्रो धन्वन्तरिसुसंस्कृतः ।  
 गुञ्जामात्रं रसं दद्यात्सुस्तारससंयुतम् ॥ ४५४ ॥  
 मेघवारिप्रवाहेण धारितं वारिमस्तके ।  
 अनिवारो यदा दाहस्तदा देया च शर्करा ॥ ४५५ ॥  
 भोजनं दधिसंयुक्तं वारमेरुतु दापयेत् ।  
 ईश्वरेण हतः कामः केशवेन च दानवः ॥  
 पावकेन यथा शीतमनेन च तथा ज्वरः ॥ ४५६ ॥

१. सं., र. दु., यो. सं., र. च., शै र, व. रा., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और ताम्र, लोह, अन्नक, नाग, व  
 इनकीभस्में, शुद्धान्धक, हरिताल और बछनाग १-१ पल लेकर  
 घारीकचुर्णकर पारागन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर मकोय  
 अदरख इनकेरस और मखड़ी, सुअर, मोर, धकरा, मेघा इनके  
 पित्त और निकटुकेकायसे ३-३ भावनाएं देकर २-२ रत्तीकी  
 गोल्या बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तुलसीने  
 रसकेसाथ देकर मस्तकपर अखण्ड जलधारादेवे । इससे दाह  
 शान्त न हो तो शक्कर और दहीमिलाहुआ मात देवे । इससे  
 साध्यासाध्य समस्तज्वर नष्टहोतेहैं ॥ ९६ ॥

### ९७ रसराजेन्द्ररसः ( द्वितीयः )

हिङ्गुलोत्थं रसं गन्धं केशराजाम्बुशोधितम् ।  
 रसाद्देहं हेमवारञ्च नागं हेमार्द्रकतन्था ॥ ४५७ ॥  
 शिप्त्वा खल्वतले पश्चाद्वासाकायेन भावयेत् ।  
 काकमाच्याश्चित्रकस्य निर्युषड्याः कुटजस्य च ॥ ४५८ ॥

स्थलपद्मस्योत्पलस्य सप्तकृत्यो द्वैः पृथक् ।  
ततो रक्तिमिताः कुर्याद्विटीश्वण्डांशुशोषिताः ॥ ४५९ ॥  
अथजात्रिखिलाग्रोगान् सर्वदोषोद्भवान्स्थथा ।  
हन्त्ययं रसरजेन्द्रो मृगराजो यथा मृगान् ॥ ४६० ॥  
भै. र, अत्रद्वयधिकारे ।

भाषा—शिरिगिरे निकाहलुआपारा और भंगरेके रसमें शोधाहुआ गन्धक १-१ तोला, सुवर्ण और चादीभस्म ६-६ मासे, नागभस्म ३ मासे लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर अहसा, मकोय, चित्रक, निगुण्डी, बुरियाकी छाल, गोरख मुण्डी, कमल हस्तलेकके स्वस्त अथवा बाथोसे ७-७ भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर धूपमें सुलाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानवेसाय देनेसे यह सब प्रकारके अन्तर्द्विषोरेरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ९७ ॥

### ९८ रसरजेश्वररसः

सुशुद्धं पारदं भागं भागैकं शुद्धतलकम् ।  
मागार्द्धं स्फटिकं दद्यात्स्वल्पमप्ये धिनिःक्षिपेत् ४६१ ॥  
स्तुहीक्षीरे बद्धं भाव्यं त्रिदिनं मर्दयेत्स्थथा ।  
अर्कक्षीरे दिनं त्रीणि कुमारसरसस्तथा ॥ ४६२ ॥  
धुस्वररसकेनैव क्रमाद्भावं पृथक् पृथक् ।  
काचकूप्यां धिनिःक्षिप्य बालुकायग्रे पचेत् ॥ ४६३ ॥  
चतुर्धामन्तु पक्वञ्च स्याद्भृशतिलमुद्धरेत् ।  
रसरजमिदं भस्म पूर्णचन्द्रसमानकम् ॥ ४६४ ॥  
अनुपानविशेषेण सर्वरोगप्रशान्तये ।  
मीहिमात्रप्रमाणेन सर्वव्याधिनियारणम् ॥ ४६५ ॥  
ज्यरे च जिरकृष्णाम्यां निर्गुण्ड्याः सन्निपातके ।  
नागरेण सितायुक्तं रक्तपित्ते च योजयेत् ॥ ४६६ ॥  
शुद्धच्या राजरोगेषु लाजचूर्णेन छर्दिषु ।  
मन्दाग्नौ जम्भनरेण सितायुक्तेन तापजित् ॥ ४६७ ॥  
नालिकेराम्बुना युक्तं मूर्च्छा कल्याणकाह्वये ।  
वैदेहीरससंयुक्तं श्वासकासनियारणम् ॥ ४६८ ॥  
पिचुमन्दस्य निर्यासेः शक्रेराघुतसंयुतेः ।  
प्रमेहविशर्ति हन्यान्मृगच्छन्नाणि सर्वशः ॥ ४६९ ॥  
तण्डुलोदकसंयुक्तं मेहतापनियारणम् ।  
शतावरीरसे युक्तं पित्तक्षयनियारणम् ॥ ४७० ॥  
व्याघ्रीनागरसंयुक्तं कासक्षयनियारणम् ।  
फापीसीरससंयुक्तं शुक्रमेहनियारणम् ॥ ४७१ ॥  
केशरैः घृतसंयुक्तैः पीनसांस्त्रिधाहरेत् ।  
वाक्चूर्चितैलसंयुक्तं सर्वकुष्ठनियारणम् ॥ ४७२ ॥  
अक्षचूर्णसमायुक्तं शूलानां त्रिशर्तं हरेत् ।  
कन्यागोपीसमायुक्तं महातीक्ष्णान्नाशनम् ॥ ४७३ ॥  
मधुयीजसमायुक्तं शिरोधाधानियारणम् ।  
एते रोगा विनश्यन्ति रसरजप्रभावतः ॥ ४७४ ॥  
३ चि ( ल ), रसायने ।

भाषा—छद्म पारा, और हरिताल १-१ भाग, पटकड़ी आधा भाग लेकर नीलवर्णकजलीकर सेहण्ड और वाक्कादध, धोऊंआर, धत्ता इनके द्रव्योंसे ३-३ दिनमर्दनकर सुखाकर फिरसे कजलीकर ६-७ कपडिमिटीदीर्घ आतरीशीरीमंभरके बालुकायग्रेमें पकावे । गन्धकजाणहोनेवेबाद डाटलगाकर ३-४ कपडिमिटी देकर सुखाकर बमबुद्ध ४ पहरकी अभिदेवे । स्वाहशीतलहोनेपर चन्द्रोदयविधानसे शीशीको फोडकर रसनिर्गुण्डाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ चावलभरकी मात्रा जीरा और पीपलके साथ देनेसे ज्वरको और निगुण्डीके कायसे सन्निपातको यह नष्टकरताहै । सोंठ और शङ्खलेसाय देनेसे रक्तपित्त, शुद्धीसे राजरोग, साजचूर्णसे बमन, जंजीरीरससे मन्दाग्नि, शक्रेसे दाह, नारियलकेजल अथवा पित्तपापकेकायसे मूर्च्छा, पीपलकेरससे श्वास, कास, नीमवेगोद, शकर और धीकेसाय सबप्रकारकेप्रमेह, चावललेवे पानीसे सबप्रकारके मृगच्छन् और प्रमेहनितदाह, शतावरीरससे पित्तक्षय, भटकट्टियाकेरसऔर सोंठकेसाय कासजन्तक्षय, नगासकेपत्तोंकेरसकेसाय शुक्रमेह, धी और वेधारेकाय ३ प्रकारके पीनस, वाक्चूर्चितैलसे सबप्रकारके कुष्ठ, बड़ेबड़े चूर्णसे ३०० प्रकारकेजल, धीऊवार और गोपीबन्दनसे महातिसार, अनादरेरससे शिरोरोग नष्टहोवेहै ॥ ९८ ॥

### ९९ रसरजसरसः ( प्रथमः )

गन्धकं पलमानेन पारदं कर्पसम्मितम् ।  
कुनटी नयसारञ्च रसकं कर्पकपर्पकम् ॥ ४७५ ॥  
कायप्लीरसे मर्दये लेपयेत्सम्पुटोदरे ।  
कण्टवेधिप्रकर्तव्यं पलेकं ताम्रसम्पुटम् ॥ ४७६ ॥  
सुश्रमलेपं वहिः कुर्यात्ततो मृन्मयसम्पुटे ।  
हृत्वा मृत्कर्पदान्तर बालुकायग्रे पचेत् ॥ ४७७ ॥  
यामाष्टकं प्रयत्नेन ज्वलिते खादिराऽनले ।  
धुध्रां यदुत्तरां कुर्यात्सुसिद्धो रसरक्षसः ॥ ४७८ ॥  
नागवल्लीदले युक्तं घट्टमानेन दापयेत् ।  
ज्ञातव्यो गुरुमार्गेण पक्वाऽप्यस्य स्य निर्णयः ॥ ४७९ ॥  
र सि , रसायने ।

भाषा—छद्म गन्धक १ पल, पारा, मैतसिल, नवसादर, और खारिया १-१ कर्प लेकर नीलवर्णकजलीकर जहलीकरलेकरसे एकरोज मर्दनकर योलाबनाय एकपञ्चावके कण्टकवेधी सम्पुटमें रखे और ऊपरसेभी पतला लेपकरदे । इससम्पुटको शरावसम्पुटमें बन्दकर सात कपडिमिटी देकर अच्छीतरह सुखाले । सुखनेपर बालुकायग्रे रखकर ८ पहर दैरकी लकड़ीकी आचदे और बालुके ऊपर धान अथवा ज्वार रखदे । जबवह फूलनाय तब समझना चाहिये कि सिद्धहोगया । सम्पुटको वैधेहीक्रेयलोपर रखदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर सम्पुट सहितसबलकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकी मात्रा पानमें रखकर खाये अलन्त्युपाधी करताहै । वात और कफज समस्तव्याधियोंको नष्टकरताहै ॥ ९९ ॥

## १०० रसराक्षसरसः ( द्वितीयः )

सूतं खल्वे विमृष्टाऽथ लघुनेन दिनाऽष्टकम् ।  
शोभाजनरसे तावद्राजिकायां दिनाऽष्टकम् ॥ ४८० ॥  
काकमाचीरसेस्तावद्गोहृद्रावे दिनाऽष्टकम् ।  
जलयन्त्रेऽग्निना सिद्धो भवेत्पोडश्यामतः ॥ ४८१ ॥  
रसराक्षसनामाऽयं कुर्याद्बहुतरां क्षुधाम् ।  
पतद्रसप्रभावेण राजमान्यो भिषग्भवेत् ॥ ४८२ ॥  
र.सि., अग्निमान्ये ।

भाषा—शुद्धपोरको तत्परात्मै डालकर लघुनेन, सहजिन, राई, मकोय और गोहृद्राव (गोहृद्रो गलनेवाला तेजाव) में क्रमसे ८-८ रोज़ मर्दनकर लोहेकी कड़ाहीके बीचमें गोलेको रख लोहेकी कटोरीमें ढककर जलमुद्रासे बन्दकर बहुसमन्व अग्निनलावे। मुद्रा पिपलकर अञ्जीतरह कटोरीको एकड़ले उससमय उसमें धीरजसे पानी भरदे। पानीभरनेके पहिले कटोरीपर कोई वज्र-नदार चीज़ रखदे जिसमें कि मुद्रा फट न जाय। फिर धीरे २ आंव लगावे ऐसे १६ पहर आंव देनेसे यह रस तैयारहोगा। स्वादशूलतहोनेपर जलको कपड़ेपरहसे निकालले और मुद्राको धीरजसे धोकर रसको निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ चावल से १ रत्ती तक उष्णितगुणनकैसाय खानेसे यह अत्यन्त क्षुधाको बढ़ाताहै। इसके प्रभावसे वैद्य राजमान्य होताहै ॥ १०० ॥

## १०१ रसराक्षसः ( राक्षसरसः ) ( तृतीयः )

ताम्रं पारदगन्धकौ भ्रिकटुकं तोक्षञ्च सौषर्वालं,  
खल्वे मर्दनकं विधाय सिकताकुम्भेऽष्टयामं ततः ।  
स्विन्नं तस्य च रक्तशक्तिनिभवं क्षारं समं मेलयेत्,  
लुङ्गाऽल्लोरथरसे विभाव्य सकलं नाम्ना रसो राक्षसः  
मन्दाग्नौ सततं दधीत इतमुष्णकायेन संयोजितं,  
व्याधिप्रस्तकलेवराय नितरां सुकोत्तरं शूलिने ।  
असिर्वायं महेश्वराय गुरवे कृत्वा नर्ति चादरात्,  
रुणानां क्रमतोऽस्य दानसमये गुञ्जाऽष्टकं धर्षयेत् ॥

र. र. घ., र. को., वि. क., र. क. ल., र. सं., र. क. अग्निमान्ये ।

भाषा—ताम्र और फोलादभस्म, शुद्धपारा और गन्धक, भ्रिकटु, संवल, सब समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर आतशी-शीशीमें ८ पहर स्वेदनकरे। स्वादशूलतहोनेपर निकालकर समभागमें लालगुञ्जाके क्षारको मिलाकर बिजोरेखेससे २-३ भावनाएं देकर सुलाकर रखछोड़े। इसके प्रारम्भमें सूर्य, महेश्वर और गुरुको प्रणामकर एकगुञ्जाकीमात्रा चित्रककेकाड़ेसे देनेसे मन्दाग्नि नष्टहोता है। इसकी १-१ रत्ती ८ दिनतक बढ़ावे और वैसेही ह्रासकरे। परिणामशुलीको भोजनकेबाद देवे १०१

## १०२ रसराक्षसः ( चतुर्थः )

पलह्वयं रुद्रमयं सुशोधितं  
शाखोटतोयेन पुनर्विभावितम् ।  
दिनत्रयं तच्च विमर्षं गाढं  
समानगन्धेन पुनर्विचूर्ण्य ॥ ४८५ ॥

यदा भवेद्भजनसन्निकाशं  
पूर्वाकृतोयेन पुनर्विभाव्यम् ।  
तत्कालसम्मारितछागमांसे  
संक्षिप्य संलोहितचित्रकस्य ॥ ४८६ ॥  
रसेन पूर्णं खलुतालमूली-  
निर्यासयुक्तं च विमर्षं गाढम् ।  
तन्मांसपिण्डे त्वपरं निवेद्य  
मापस्य पिण्डेन निरुद्धय यत्नात् ॥ ४८७ ॥  
तत्तप्ततेले विनिवेद्य नृत्यां  
मन्दाग्निर्नैव विपचेत्प्रयत्नात् ।  
पञ्चाऽक्षरीं चान जपेद्विधिवो  
देवीभिर्मां सिद्धरसेश्वरीं वै ॥ ४८८ ॥

एकलीपेर्द्विजपेर्द्वौ पक्ष्यमाने रसेश्वरे ।  
बलिं दत्त्वा समभ्यर्च्य कुमारीः सर्वसिद्धिदाः ॥ ४८९ ॥  
ततः सिन्दूरवर्णामं वटकतं समुद्धरेत् ।  
अष्टोत्तरसहस्रजुं जप्त्वा पञ्चाक्षरीमिमाम् ॥ ४९० ॥  
तस्माद्यत्नात्समुद्धृत्य मुहूर्ते शोभने तिथौ ।  
भिषक् सन्तोष्य विप्रादीन्त्रिकैकैकन्तु भक्षयेत् ॥ ४९१ ॥  
मधुसर्पियुतं भक्तं पञ्चाङ्गोजनमाचरेत् ।  
अनुपानं पिबेद्भयं रसायनमतानुगम् ॥ ४९२ ॥  
यथेष्टं भोजनं कार्यं कपायकटुवर्जितम् ।  
अनेन विधिना कृत्वा नरः स्यात्कामदेवयत् ॥ ४९३ ॥  
योपिच्छतं भजेन्नित्यं सङ्घं काममोहितः ।  
अकृत्या मेधुनं रेतस्सुकुटित्वा लोचनं व्रजेत् ॥ ४९४ ॥  
सदैव मग्नधाकारो नाऽत्र कार्या विचारणा ।  
रसराक्षसनामाऽयं राजयोग्यं रसायनम् ॥ ४९५ ॥

र. को., दो., र. प्र., र. सु., बाजीकरणे ।

टि०—रसराक्षसन्देर रसराक्ष इति नामकरणलु भ्रमोत्पत्तकार-  
नुक्ति, मूले रसराक्षसनामाऽयमिति स्पष्टतया तन्नामकरणम् ।

भाषा—अञ्जीतरह शुद्धकियाहुआ पारा २ पल लेख सीहोरेके दूधमें ३ रोज़ मर्दनकर शुद्धकियेहुए बारापके गन्धकमें मिलाकर सीहोरेके रससे मर्दनकर अञ्जनके सहस्र होनेपर गोला-  
बनाय तत्कालमारोहण बरके मांसमें रखकर गोलासा बनाले और उसमें लालचित्रक तथा तालमूलीकास भरके बुईदोखे सीकर एकदूरे मांसपिण्डमें रख उड़दके आटेमें बाड़ी बनाय गोलाइकनेलायक तिलकेतेलमें डालकर मन्दाग्निसे पकावे। पकाते समय ॐ ऐ ह्रीं ऐ ह्रीं इतमन्त्रका जप करताहै। इसकेप्रारम्भमें बैरवको बलिदे और कुमारीकन्याओंको भोजन करावे। जब गोला सिन्दूरवर्णहोजाय तब तेलसे बाहर निकालकर रखले। उसीस्थानपर अष्टोत्तरसहस्र १००८ पूर्वाक्ष पञ्चाक्षरीकावरके गोलेमेंसे धीरजसे रसराजको निकालकर रखले। अच्छे सुहृत्, तिथि, नक्षत्रादिकमें द्वाध्वभोजन सूर्यह करके १-१ रत्तीकी मात्रा मधु और पीकेसाय खाकर दूध पीवे। कपाय और कटुको छोड़कर यथेष्टभोजनकरे। इततराइकनेसे

मनुष्य साक्षात् कामदेवके सत्त्व होजाताहै और बहुतसी स्त्रियोंकेसाथ उत्साहपूर्वक रमणकरसकाहै । मूलसे इसकासेवन कर स्त्रीसत्त्व न करनेसे तमामशरीरमें शुक्ल फूटनिकलजाहै और गर्मीकेमार आखें चलीजातीहै इसलिये यह राजालोगोंके योग्य है गरीबलोगोंको नहीं देना ॥ १०२ ॥

### १०३ रसरससरसः (पञ्चमः)

मृतं विपं त्रिरुक्तकारगफेनयुक्तं

मयं चतुर्गुणमितं मलभागयुक्तम् ।

आर्कैः पयोमिरथ पिष्टतमं दिनेकं

निक्षिप्य पिष्टममलं सितकाचकृष्याम् ॥४९६॥

मुद्रां विधाय सुदृढां मिषगण्यामं

पस्त्या पुनर्दिनचतुष्टयवाहिवृद्धया ।

ह्याग्निशङ्खमधरे चिपरिक्रमेण

कुप्यांनितानि दश सायहितो हितार्थी ॥४९७॥

शुश्रावर्कं तु सितया सह नागयस्त्या

श्रक्षो यथा विधृतमांसचयौऽन्नमस्यात् ।

स्यादिन्द्रियादिषु वृषश्च यथेष्टभोज्ये

ततः कदापि न पुमानपि मन्दवाहिः ॥४९८॥

र. का, अमिमान्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा और चण्डनाग, त्रिकटु, अजीम येसब

१-१ भाग, शुद्धसोमल ४ भाग, लेकर बारीक चूर्णकर आक्के दूधसे १ रोज मर्दनकर छुलाकर ७ कपड़मिट्टीदीर्घुरी आतशी-दीशीमें भरके सुहृष बाढ लगाय ६-७ कपड़मिट्टीसे सुहृषो बन्दकर बालकायमें रखकर क्रमशःदागिसे ८ पहरकी आचदे । छडाहोनेपर निकालकर आक्के दूधसे ४ पहर मर्दनकर पूर्ववत् क्रमशःदागिसे १-१ रोज पकावे इसतह पाकरोज पकानेके बाद मर्दनकर ७ पहरकी क्रमागिसे पकावे इसतह १-१ पहर कम करताहुआ ५ दिनतक अगिसे पकावे । कुल १० दिनकी अगि देवे । पहिलीबारजो ऊपर उड़ाहुआ भागहै उसे लेकर नीचेका बचरा फेंकदे । दूसरे दिनसे नीचे ऊपरका सबभाग निकालकर मर्दनकर आचवेताजाय । इसतहकरनेसे १० वै दिन बसु धिस्तुल तलस्य होगी इसे निकालकर रखलोके । इसमेंसे आधी आधी रसीकीमात्रा शकर और पानकेसाथ खाकर ककरादि-गणको छोड़कर यथेष्टभोजन करनेसे अत्यन्त कृष्णमनुष्यभी भालुकीतह मांससेपरिपूर्ण होजाताहै । इन्द्रिया भी प्रबलहो-जातीहै । अन्नसन्तान्दागि भी इसके सेवनकेबाद कमीभोजनसे गुप्त नहींहोताहै ॥ १०३ ॥

### १०४ रसवरोरसः

आदौ सुतवरं विमर्द्य सलिले वांसामयै वांसरं,

पश्चादन्धकताम्रमस्मसहितं खल्वे दृढं मर्दयेत् ।

भाग्यं त्रिफलाऽऽट्ठरूपककणाकन्याविषावारिमिः,

प्रत्येकं दिवसनयं रसवरं सजायते कासहा ॥४९९॥

गुञ्जापञ्चकसमितो मधुकणायुकोऽथवा वासकं,

प्राश्यायुङ्गु शृङ्गवेरचपलाशृङ्गीपिपाश्रौयुक् ।

वाभागीं चपलाऽऽणामिविजयाशौद्रान्वितः पायितः,  
काये चाप्युलिके शिवामधुयुतः कासं जयेदन्तुतम् ॥  
वा ऋणामधुयुक् शिवामधुयुतो वा नागवह्नीरस-  
श्रुदातोयसुसेन्धवाऽग्निरसयुभार्यम्युविश्वायुतः ॥

र, कासे ।

टि०—र स, ध, एतयोर्ध्ववोरहयभारवरनाम्ना “कपं मेक रम शुद्ध गन्धक सचतुर्गुणम् । विषाय कज्जली धक्ष्णा ततो निम्बु क्तारिणा ॥ बलक कुर्वीत खलेन यावद्यामचतुष्टयम् । द्रिकर्षमथ तामस्य तनुप्राणि सर्वेषु ॥ कलेन तेन निम्बुवरेनाऽऽस्थान्य खलके । स्वापवेदातप तौने पिण्डीकृत्य तत परम् ॥ मृषामये निरुद्धवाऽथ कुतकुयारैलिभिः ॥ पथेचनुत्वा निनि क्षिप्य शुष्करूपकोपै ॥ तप आकृत्य सम्यक् वरण्डे त विनि क्षिपेत् । रमोऽय सर्वरोगो नृणा मुदयमास्कर ॥ इति सर्वाणि शृण्वानि तमागीव विषाकर । पण्डित-क्या सार्धं देयक्षेत्परं ऋषु ॥ पथ रोगोक्ति देय रमस्यानुवित लयेत् ॥” अथ योग शृण्वाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

र. र, ध, व से शुभ ताग्रयंदेनाम्ना “रमगन्धकताम्राया चूर्णं कृत्वा समाश्रयम् । पुट्याकविषी पस्त्या मधुनाऽऽलोष्य सलिले ॥ सर्वरोगहरश्चैतत्प्रायस्य रमायनम् ॥” अथ वाग सर्वरोगाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

र र, ध, अनयोर्ध्वयोस्ताग्रयोगेति नाम्ना “काकमाचीशृङ्गवेर-जयासबूकेन युक् । सप्तधा मूर्च्छित शैले रस निर्मलताम्रतम् ॥ सधम-प्रीकृत ताग्र गन्धचूर्णेन योजितम् । उपेतन्धमृषाया चूर्णं तस्मैण कार-येत् ॥ तच्चूर्णं त्रिकटुसैत योग्यैश्चमुरपिपा । प्रहणीश्वरयोगेषु हित संप्रदयेषु च ॥ अन्तर्पिते च कुष्ठे च ज्वर मेहे च कामले ॥” अथ योगी प्रहणीरोगाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

भैषज्यरत्नावल्या ताग्रयोगेति नाम्ना “ताग्रवन रवे क्षीरं निर्गु-ण्डीस्तरस तथा । त्रिकण्डने स्तुदीक्षीरं ताग्र दग्ध्या क्षिपत ॥ रस स्याऽर्धरूप शुद्ध गन्धकस्य पलतथा । कज्जल्यैश्च नजीररसेन ताग्रान पलम् ॥ परिलिप्याऽथमृषाया दयालपञ्चुदाहवृत् । सम्यक् मधुमर्षिर्वा ततो रक्तिमि न क्षिपेत् ॥ अग्नये सर्वमेवे खाद्य सर्वत्रयेषु च ॥” अथ योगी भगवदशुभिकारे निहितोऽस्ति ।

रससारं, रसकार्पण्यौ च ताग्रोत्तरस इति नाम्ना “क्षुण्णचचन सह गन्धक क्रमपाचनम् । सम्भाव्य खदिरकायै मंत्रिशादिगन्ध च ध शृङ्गजेन वर्यं बद्धा कुशुदनाशिनी । ताम्रैर्व्या नम विस्वय कक-वातहर स्थान ॥ एव शर्मा प्रकृत्या वेत्रेऽल्लहवृन्दरी ॥” अथ दैव-कुञ्जाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

रसयवनं, र वि, र शी, वा म, रत्नाऽऽ शुभ रमन्त-धिकारे त्रिनेत्रस इति नाम्ना “रत्नमृकताम्रानि निम्बुवररत्नं दिनम् । मर्दयेदातप पश्चादनुक्तदन्धमज्जम् ॥ कन्धूपाय दन्ध त्रय तीक्ष्णान्ध्या चयेत् । पत्रमेन छरे चैतो रतेषु वै रसः ॥ गुञ्जामित देहसिद्धये पुष्टिर्बन्धय च ॥ न्येष्ट्य हेमन्तपत्रे नि-क्षिप्य कनका ॥” अथ दैवो निदिग्धेऽस्ति ।

रसमारसद्वयसंरक्तमुदयनं त्रिनेत्रस इति नाम्ना “रस-धिकारे “रत्नामृकताम्रानि दिनाभ्यस्तमिदं गन्धम् । इत्येन मर्दि-ताना कुपकमां निषेधित करत ॥ गुञ्जामात्रान्दन्दिनिम्बुवचुत्तु-कम् । रत्नैश्चैव्याश्चिन्मबधा तद्विषुदुधकरोतेन ॥ शनयति शूल-मि तद्वद्वयातिन द्रुदम् । उपर्युत्तुनैर्नैर्नैः सतिन कम्पनि-तः सिद्धम् ॥ कज्ज हरीतक्य वृद्धाश्चनरित्करोतेनम् ॥ मधुनो-पतिशुद्ध मयनि नक्त विनियस ॥” अथ योगी निदिग्धेऽस्ति ।

र म क, र स, रघुपनम, र स, र (मा), र क, र नि, शुभमेष्टु रक्षितोऽधिकारे त्रिनेत्र नाम्ना “यस गन्ध तथा शुद्ध

कमादेकद्रिभागिकम् । तुल्यार्क भावयेदाद्रैरसैश्चाऽपि त्रिसप्तमा ॥ गोल  
कृत्वाऽप्यमपायां कृत्वा गणयेत् पथेयम् । धनमुष्टमा च शुभेकं शीतोद समित  
क्षनु ॥ त्रिदोष नाशयेच्छीघ्रं क्रियां शीता प्रयोजयेत् । रथूल कृश कृश  
रथूल करोत्यग्निप्रदीपनम् ॥ त्रिदोषात्पतित रक्त प्रणनाह्वमिपातनम् ।  
यकृत्प्लीहोत्थिन यच्च यच्च कुष्ठरक्त त्वसक्त ॥ शोषपेददुष्टरक्त तद्रोगो  
रक्तारिसिञ्चन् ॥ अथ योगोऽस्ति । रसावतारं तापमनुरूपं रस निवेद्य  
तत्तन्मुष्टञ्च शुष्मपाया निवेद्य पुट दद्यादिति त्रिदोष ॥

र. र. स., रसेन्द्रम., अनयो रसपिठिकेति नाम्ना "पञ्चतान्धे रम.  
पिठो बलिना हिध्मिना हितः ।" अथ योगो हिष्माऽधिकारे निहितोऽस्ति ।  
भै. र., वै. क. अनयो रसराजोति नाम्ना "गन्धकेन मृत ताप शुद्ध-  
गन्धेन तुल्यम् । द्रव्यो पाद शुद्धस्य मर्दयेच्छुद्धरत्नैः ॥ पुष्टंजमुष्टं  
विद्वान्वाह्नशरीतं समुद्वेष्टे । गुञ्जादय विद्वेत्सौद्रेः शीघ्रगुल्मविनाशनम् ॥  
यकृत्प्लूत ज्वर इति कान्तिपुष्टिविषयः । रसरज इति स्वातो रोग-  
वारणकेतरी ॥" अथ योगः शूलाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

रसावतारं रसेष्ट इति नाम्ना कामाऽधिकारे "यत्तन्मधुरवय ममा-  
श्वा वायवाद्रैकरसेन मर्दिताः । जायते त्रिविधं प्रयत्नतो क्षालने  
हरिकथेय रसेष्ट ॥ बलमुग्ममशितोऽग्निपिप्लीग्राणदायधुनोऽप्यनाशनम् ।  
पञ्चकासविनिवर्तनक्षमः स्वीयपथ्यमहितो मृगाङ्गवत् ॥" अथ योगो-  
निहितोऽस्ति ।

शु. यौ. त., रसायनम्, र. क., र. मि, यौ. र., र. चि., नि. र., र. कौ.,  
र. का., र. म., यौ. म., चि. र. म., र. र. कौ., एषु ग्रन्थेषु कुञ्जाऽधिकारे  
शशिलेखावर्दीति नाम्ना "शुद्धयुक्तं सम गन्धं तुल्यञ्च मृतताम्रकम् ।  
मर्दितां वाकुचीवाप्यं दिनैकं बटनीह्वनम् ॥ नक्षमाश्रा सदा खारिच्छि-  
न्नीं शशिलेपिकाम् । बाङ्गुलीतैर्कर्मकं सश्रीमनुपायेवेष्ट ॥" अथ  
योगोनिहितोऽस्ति । तत्र र. म., यौ. म., चि. र. म., एषु ग्रन्थेषु शशि-  
धररस इति नाम, र. र. कौ., तुष्टरस इति नाम । मधुचिपुस्तकेषु  
"तुल्यञ्च मृतताम्रकम्" इत्यस्य स्थाने तुल्यञ्च मृन्ताम्रकमिति पाठो  
दृश्यते ॥

रमकामनो शूलाऽधिकारे शूलाम्रकेतरीति नाम्ना "रस पलदय  
गन्धाऽष्टपलं निम्बुदादयैः । विमर्षं शुद्धताम्रस्य पत्राणि स्थापयेत्ततः ॥  
निम्बरसे च पक्षेकं क्षिपेत्कनलिकाञ्च तान् । द्वावपसमुदे धृत्वा शोषिते  
मुद्रिते भृशम् ॥ स्वेष्टचूर्णं सटीचूर्णं शङ्खचूर्णं गुडैः ॥ शूलैर्कटविलिखे  
च शूकेऽपि वैदयामकम् ॥ स्वाङ्गशीतलमादाय रसः स्वाङ्गप्लूतकेतरी ।  
अनुपातवशात्पर्वोत्पादशूलञ्च नाशयेत् ॥" अथ योगो निहितोऽस्ति ।

प्ले योगः पृथक्पृथक्नाम्ना विभित्रविभित्रग्रन्थेषु नानाऽधिकारेषु  
निहिताः सन्ति, केसुचिद्रन्थेषु तु द्विचतुरादिसंयोगेषु पुनः पुनरव-  
स्थापिताः । मन्ति तत्राऽप्यमावश्यकते विचारः समापत्तिः यद्रूपमसह्य-  
हृदयिष्ठ भ्रमरद्वये निष्य नाऽशीतलकश्चित्रमधिकारं कर्मो योगो निहि-  
तोऽस्ति । पूर्वोक्तयोगाऽप्यस्य मिश्रता मन्तेति विचारः न कुन-  
वान्नीह्वनोऽशानाऽधिकारनिरुद्धश्चान्यातिपि निष्ये साधारणवैश्यानामधि-  
कृत्या छात्राणां का कोति सुतरां विदुषा हृदि विचारः मस्येति ।  
अमपतनकारणन्तु एकस्याऽपि योगस्य नाना नामकरणं र. चन्द्रोऽनुपेन  
मूलद्रव्यनामान्तरनिर्णयनं र भावनाविधेया ३ विविधान्यनुपानानि  
च ४ । एतद्भ्रमनिरावरणाय मूलत्वञ्च गलेषुणीयमस्यावश्यकं तत्पञ्चा-  
गन्धेशाकसंयोगेन घटितयोगस्य नानान्यापि कार्यकरणश्रमत्वायेन  
येन मिश्रता यच्च यच्च रोगे यो यो योगः परीक्षितः ॥ स तत्र तत्र लिपितः,  
मुख्यत्वेन कारणं प्रकृतिमप्यदोषादिविचारं यच्च तन्मूलञ्च निष्यञ्च  
निष्कृतिस्तथैवो वेनकेनाऽपि प्रकारेण गन्धेऽप्ययोगेन वा तापमस्य  
निष्याय यच्च योगः कृतोऽस्ति तेषां भ्रमनिराकरणाय प्रयोगतौष्ट्याय  
योपरिनिर्दिष्टमा. रसरनानाऽप्यवश्यकत्वा. प्रवीक्ष्यन्त्या. भावना  
क्षानुपानानि नु स्वद्वया न्यूनाऽधिकान्वपि ममानुग्रीयमानानि-

न योगावहायि, इति सुधीभि विभावनीयम् । अथ क्रमेणाऽभोलिखित-  
योगा ण्केनैव योगेन शुद्धा रुदा भविष्यन्तीति महदापवम् । एतद्वि-  
रण हृदि सम्यागकलस्य ण्येषु योगेषु निर्दिष्टमरण्या ते न रोगा उपकृति-  
सर्गना भविष्यन्ति । अन्यभविष्ययोगानां नामानि यथा—उदयभास्कर. १,  
ताम्रपर्वी २, ताम्रयोग ३, ताम्रयोगो द्वितीय ४, तापेन्द्ररस. ५,  
निमिरस. ६, द्वितीयश्चापि निमिर. ७, रक्तारि ८, रसपिठिका ९,  
रमराज. १०, रसेष्ट. ११, शशिलेखा वटी १२, शूलगन्धकेतरीति १३ ।

भाषा—अहसेवेरससे एरुओऽ शुद्धपारेको थोदकर इस्की  
परावर शुद्धगन्धक और ताम्रमस्य मिलाकर नीलवर्णकजलीकर  
भारती, चित्रक, त्रिफला, अदुस, पीपल, धीरुवार, अतीस  
मुग्धवाला इन प्रत्येककेस्वरस अथवा काथोसे ३-३ रोज  
मर्दनकर ५-५ रतीकी गोलीया बनाकर रखाछोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली मधु, पीपल, अथवा अदुस; अथवा द्राक्ष अथवा  
अदरक, पीपल, चक्रवर्तीकी, अतीस और मधु; अथवा  
भारती, पीपल, अतीस, चित्रक, भाग और मधु; अथवा बबूल  
की छालका काटा, हरे और मधु; अथवा पीपल और मधु;  
अथवा आवला, मधु, अथवा पान, भट्कटिया, चित्रकरारस  
और सैन्धव; अथवा भारती, मुग्धवाला और सौंठकेसाय देनसे  
यह दुस्तरकासको नष्टकरता है । इन अनुपानोंमें से जहां  
जिसरी योग्यता हो वहां उसका योगकरे ॥ १०४ ॥

### १०५ रसवीररसः

त्रिगुणं शुद्धसूतस्य योजयेच्छुद्धगन्धकम् ।  
लोहपपटिकाचूर्णं सूततुल्यं यिनिःक्षिपेत् ॥ ५०१ ॥  
स्नुहाकपयसा मर्द्यं तत्सर्वं दिवसत्रयम् ।  
तच्छुष्कं चाऽन्यतः पक्त्वा करीपात्रो दद्यानिशम् ॥  
ततश्च दृङ्गणं काचं दत्त्वा रुद्धा धमेद् दृढम् ।  
गुर्जे मधुना खादेद्रसवीरो महारसः ॥ ५०३ ॥  
अग्नेकेन जरां हन्ति जीवेदाचन्द्रतारकम् ।  
मुशलीमूलचूर्णन्तु गुञ्जापत्रद्वयैः पिबेत् ॥  
छागीमुखेण घातं ये कर्पकं कामकं परम् ॥ ५०४ ॥

र. रौ., रसायनं., रसायने. रसायनं से करवीरसेति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग और गन्धक ३ भाग, लोह-  
पर्वदी १ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर सेहुण्ड और  
आकके दूधसे ३-३ रोज मर्दनकर गोलायनाय सुखाकर अन्य-  
नूपामें बन्दकर ४-५ कपडिमिट्टी देकर करीपकी अग्निमें एक  
दिनरात पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मुनासुहाणा  
और काच समभागमें देकर तीव्र धमनकरे । स्वाङ्गशीतलहोने-  
पर निकालकर भारीकी पीसकर रखाछोड़े । इसमेंसे १-१ रती-  
कीमात्र मधुकेसाय खाकर सफेदगुञ्जाके रससे मुशलीका चूर्ण  
एककप पीवे अथवा बकरीके मूत्रसे पीवे । इसरसके सेवनसे  
एकवर्षमें बुढ़ापेको जीतकर दीर्घायुनो प्राप्तहोता है ॥ १०५ ॥

### १०६ रसशार्दूलरसः ( प्रथमः )

रसस्य द्विगुणं गन्धं शुद्धं सम्मर्दयेदितम् ।  
प्रतिहोहं सूततुल्यमप्लोहं मृतं क्षिपेत् ॥ ५०५ ॥

ब्राह्मी जयन्ती निर्गुण्डी यष्टीमधु पुनर्नवा ।  
नलिकागिरिकर्ण्यकैरुष्णयुतैर्दुरालभाः ॥ ५०६ ॥  
आटरूपः काकमाची द्वैरेषां चिमदैयेत् ।  
गुञ्जात्रयं चतुर्गुञ्जं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥  
रोगोक्तमनुपानं वा कयोर्णं वा जलं पिबेत् ॥ ५०७ ॥  
र.स., र.चि., र.सु., रसायनस., यो.य., सूतिकारोगे ।

टि०—यथपूतचत्वारिंशत्तदधिकमुरोगेणाऽयं मूलद्रव्येषु साम्यमात्रं  
हति परन्तु भावनास्वस्थिनिविशेषत्वात्तत्तत्तत्रैव पात्रे निहितोऽस्ति,  
इति न विस्मरणीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भाग, अष्टोलोह  
(सोना, चादी, तावा, रागा, सीसा, कान्तलोह, कासा और  
पीतल) १-१ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकञ्जलीकर ब्राह्मी,  
जैती, निर्गुण्डी, मुलहठी, पुनर्नवा, नालीसाक, चोयल, आक,  
कालाधतूरा, जडासा, अड्सा, मखोय, इनप्रत्येकके यथासम्भव  
स्वरस अथवा कायोर्णसे १-१ रोज मर्दनकर ३-३ अथवा ४-४  
रस्तीकी गोलिया बनाकर रखओगे । इनमेंसे १-१ गोली तत्ता  
शेगहरातुपायकेसाय अथवा कटुज्जलकेसाय देनेसे यह सम-  
स्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ १०६ ॥

### १०७ रसशार्दूलरसः

अम्रं ताम्रं तथा लोहं राजपट्टं रसं तथा ।  
ऊर्णं टङ्गुणञ्चैव यवक्षारं समांशकम् ॥ ५०८ ॥  
तथाऽन्न तालकञ्चैव निफलायाश्च तालकम् ।  
तालकञ्चाऽमृतञ्चैव पञ्चजाप्रमिता घटी ॥ ५०९ ॥  
ग्रीष्मसुन्दरकस्याऽपि नागवल्लीरसेन च ।  
भावयेत्स्ततथा हन्ति ज्वरं कासाङ्गसङ्घम् ॥  
सूतिकाऽऽतङ्कशोधादिस्त्रीरोगञ्च विनाशयेत् ॥ ५१० ॥  
र.सं., र.चि., र.सु. सूतिकारोगे । र.चि. गन्धकमधिकतया  
नियोजितम् ॥

भाषा—अम्रक, ताम्र, लोह, राजावर्त (लाजवर्द) और  
पारा इनकीभस्में, मरिच, सुहागा, यवक्षार, हरितालभस्म,  
निफला और शुद्धबट्याग १-१ तोला लेकर बारीकचूर्णकर  
हरमल और पानके रसोंसे ७-७ भावनाएं देकर ६-६ रस्तीकी  
गोलियां बनाकर रखओगे । इनमेंसे १-१ गोली तत्ताशेगहरातु  
पानकेसाय देनेसे ज्वर, कास, अम्रप्रह, सूतिकारोग, शोथ और  
त्रियोंके तमानरोग नष्टहोतेहैं ॥ १०७ ॥

### १०८ रसशार्दूलरसः (महान्) (तृतीयः)

अम्रकं पुटितं ताम्रं स्वर्णं गन्धश्च पारदः ।  
शिला टङ्गं यवक्षारः निफलायाः पलंपलम् ॥ ५११ ॥  
गरलस्य तथा ग्राह्यमर्द्धकैर्पकसम्मितम् ।  
त्वगेलापत्रकञ्चैव जातीकोपलघङ्गकम् ॥ ५१२ ॥  
मांसी तालीसपत्रञ्च माथिरकञ्च रसाज्जनम् ।  
एषां द्विकार्षिकं भागं देयञ्चाऽपि विचक्षणैः ॥ ५१३ ॥  
द्रवे किञ्चित्स्थिते चूर्णं मरिचस्य पलं क्षिपेत् ।  
भावना च प्रदातव्या पूर्वात्तेन रसेन च ॥ ५१४ ॥

निहन्ति विविधाज्जोगाह्वरान्दाहान्वर्ति भ्रमम् ।  
तथाऽतिसारकञ्चैव वह्निमान्दमरोचकम् ॥  
विशेषाद्गमिणीरोगं नाशयेद्विचरेण च ॥ ५१५ ॥

र.सं., र.सु., र.क. सूतिकारोगे ।

भाषा—अम्रक, ताम्र, स्वर्ण इनकीभस्में, शुद्ध पारा,  
गन्धक, मैन्सिल, सुहागा, यवक्षार और निफला १-१ पल,  
शुद्धबट्याग ॥ मांसे, तज, इलायची, पत्रज, जावित्री, लवङ्ग,  
जटामासी, तालीसपत्र, सोनामायी, रसौत २-२ कर्ष लेकर  
बारीकचूर्णकर हरमल और पानके रसोंसे ७-७ भावनाएं देकर कुछ  
द्वय रहनेपर एकपल मरिचका बारीकचूर्ण ढालकर ३-३ रस्तीकी  
गोलिया बनाकर रखओगे । इनमेंसे १-१ गोली तत्ताशेगहरातु-  
पानकेसाय देनेसे ज्वर, दाह, वमन, अतिसार, मन्दाग्नि  
अरुचि, तथा खामकर गर्भिणीरोगोंको यह नष्ट करताहै १०८

### १०९ रसशेखररसः

पारदञ्चाहिफेनञ्च द्विर्द्वादशकरत्तिकम् ।  
अय.पात्रे निम्बकाष्ठैर् मर्दयेत्तुलसीद्रवैः ॥ ५१६ ॥  
तस्मिन् सम्पूच्छिते दद्यादर्द्ध रससम्मितम् ।  
मर्दयेच्च तुलस्यैव ततश्चैतानि दापयेत् ॥ ५१७ ॥  
जातीकोपफले चैव पारसीकयथानिकम् ।  
आकारकरभञ्जये द्विर्द्वादशकिकाः प्रति ॥ ५१८ ॥  
मर्दयेत्तुलसीतोयैरेतेषां द्विगुणं शुभम् ।  
दद्यात्सदिरसस्यैव घटिका चणकप्रभा ॥ ५१९ ॥  
सार्यं छेद्रे प्रयोजये च लयणाऽम्लञ्च घर्जयेत् ।  
गलकुष्ठं तथास्फोटान् दुष्टान् गर्दभिकामपि ॥ ५२० ॥  
ये स्युः प्रेणा नृणामन्ये उपदेशपुर.सराः ।  
तान्सर्वांश्चाशयत्पाशु सिद्धोऽयं रसशेखरः ॥ ५२१ ॥  
र.सं., घ., धै., र.क., उपदेशे ।

भाषा—शुद्धपारा २ रस्ती, अफीम १२ रस्ती लेकर लोहेके  
पात्रमें तुलसीकेरसकेसाय नीमके ताड़ो छेदनेसे घोंटे । पारद  
अच्छीतरह मिलानेपर पारेकी बराबर शिंगरिफ ढालकर घोंटे ।  
एकजीब होनेपर जावित्री, जायफल, छुरासानी और देशी  
अजबान, अकलकरा ३२-३२ रस्ती मिलाकर एकरोज मर्दनकर  
इनसबकी भाबर उत्तमकत्था मिलानर बनेप्रमाण गोलियें बना  
कर रखओगे । इनमेंसे २-२ गोली सुवृद्धाम देकर नमक और  
खटाई से परदेजकरनेसे गलितकुष्ठ, फोड़े, दुष्टज्वर, गर्दभिरा,  
उपदेशजनित तयामाषाव येसब नष्टहोतेहैं ॥ १०९ ॥

### ११० रससिन्दूरम् (प्रथमम्)

पलमात्रं रसं शुद्धं तावन्मात्रन्तु गन्धकम् ।  
विधियत्कञ्जालीं कृत्वा न्यग्रोधाऽङ्कुरवारिमिः ॥ ५२२ ॥  
भावनात्रितयं दत्त्वा स्थालीमघ्ये निधापयेत् ।  
विरज्य कवचीयन् चालुकाभिः प्रपूरयेत् ॥ ५२३ ॥  
दद्यात्तदनु मन्दाग्निं भिषग्यामचतुष्टयम् ।  
जायते रससिन्दूरं तरुणादित्यसन्निभम् ॥  
अनुपानविशेषेण करोति विविधान्गुणान् ॥ ५२४ ॥



र. सं., नि र, र. क, र. चं, र. को., आ प्र, यो.  
र., यो. म., र. क. यो., वै. चि., वै. चि. (ल.), र. पा,  
सर्वरोगाधिकारे ।

६०—र. यो. पारदाद्विगुणेन गन्धकेन कज्जली कृत्वा महर्विशति  
भिर्गोमैरधि प्रदाय स्वाद्वरीत समारुह्य दिगुण गन्ध निपाय पाक  
कुयदिव पारपय कुर्मदित्यभिहितम्, नाम च हरगौरीति स्थानिन् ।  
नुचिद्व दिगुण गन्ध नियुज्य कृपीपात्रो विहित ।

“गन्धक पारद तुल्य जम्बीररसमर्दितम् । कुमारचिन्तकैश्च तुलसी  
त्रिफला मधु ॥ हृमपादी सहाद्वी पारिभद्र कुरुष्व ॥ प्लेषा स्वस्ती  
सम्यक् भावयेत्कुशलोभिषेक् ॥ काचकृष्या विनि शिष्य बाहुकायन्त्र  
मथ्यत । त्रिदिन पाचयेदंतरवाह्वरीतलमुदरे ॥ इन्द्रगोपसमच्छाय  
मिन्दूर सर्वनिद्रिदम् ॥” इत्याकारक पाठो रसयानपरीक्षायां रत्ना  
कारौषधयोगे च निहितोऽस्ति । “पारदश्चैव मागन्तु दिमाष गन्धकस्तथा ।  
खले हसपदीद्रावै कुमार्याश्च विमर्दितम् ॥ दिनार्द्धं बाहुकायन्त्रे मिन्दूर  
सर्वरोगजिद्व ॥” इति रत्नाकारौषधयोगे द्वितीय पाठोऽस्ति ॥

“तुल्य गन्ध रम इन्द्र खलमथैव विनि शिषेत् । हृमपादीरसै मर्द  
दिनैर्मधु कज्जली ॥ गुटिका पाचयित्वा पाचकृष्यन्तरे शिषेत् ।  
कृष्यन्तरेरामिन् कृत्वा रजतपत्रकम् ॥ तद्भाण्टान्तो काचकृष्या शिषेन्नु-  
द्वलमुत्तम् । खण मापमात्रञ्च दरेत्कुयोदरे शिषेत् ॥ बाहुपाभि  
पूरयित्वा भाण्डवन्न निरोपयेत् । दिपक्ष्मा पचेद्द्वै स्वाद्वरीतल  
मुदरे ॥ पटशाऽ वृद्ध शिष्या तनुत्पमरिचान्वितम् । चूर्णैरुक्त मर्द  
यित्वा गुणामात्र प्रदायेत् ॥ सर्वे रोगा विनश्यन्ति हनुपानविशेषण ।  
मनुपाया हितकर रससिन्दूरमुत्तमम् ॥” इत्याकारक पाठो रत्नाकारौ  
षधयोगेऽस्ति ॥ “गन्धक पारद तुल्य शिष्या तनुत्पमरिचैः । रक्तमण्ड-  
पञ्चरसैः सम्मर्दं नि शिषेत् ॥ बाहुकायन्त्रमार्गेण काचकृष्याञ्च पाचयेत् ।  
दिनार्धं नयनानन्द सिन्दूर भवति ध्रुवम् ॥” इत्याकारक पाठो रत्नाकारौ  
षधयोगे वसवराजीये वैद्यविद्यामार्गे च निहितोऽस्ति ।

“पारदाद्विगुण गन्ध जम्बीररसमर्दितम् । नागवह्नीरसै मर्द दाडिमो  
कुसुमोद्भवे ॥ रसैः सम्मर्दं गुटिका कारयेत्कृपिकान्तरे । शिष्या सन्धि  
विलिप्याश्च पचेद् द्वादशायामकम् ॥ बालवर्षप्रतीकाश मिन्दूर जायते  
रम ॥” इत्याकारको रत्नाकारौषधयोगे पाठोऽस्ति ॥ “उरुपाण्डुरैरुण्ड  
रसपादीपुनर्नवै । मण्डूवर्गामाक्षीत्या किनुकद्वयपुष्पकै ॥ वासाकार्पासि  
पुष्पाभ्या रसैः सम्मर्द प्रमर्दयेत् । पातनाद्विषय कार्यं तत उच्चारयेद्भस्म ॥  
चतुर्मासगन्धकञ्च दत्त्वा चैव प्रमर्दयेत् ॥ काचकृष्या विनि शिष्य श्रद्धासंके-  
पेद् दृढम् ॥ बाहुकाल्पेन दन्त्रेण पाचयेत्सप्तत्रयम् । मिन्दूर जायते  
क्षीमर्दिगोपसमप्रभम् ॥ अनुपाानविशेषेण सर्वरोगाघारकम् ॥” इत्या  
कारक पाठो रत्नाकारौषधयोगेऽस्ति ॥ “गन्धक भूममारञ्च शुद्ध रत्न  
मम समम् । यामैक चूर्णेत्तत्तले काचकृष्या विनि शिषेत् ॥ रुद्धा द्वादश  
यामास्तु बाहुकायन्त्रपाचनाद् । रसोद्वैतल्लङ्घित्वै तु पूर्वस्य गन्ध  
स्यजेत् ॥ अथ स्य रसमिन्दूर सर्वयोगेण योजयेत् ॥” इत्याकारक पाठो  
रत्नाकारौषधयोगेऽस्ति ॥ “परमेक रसेन्द्रस्य शुद्धगन्ध चतुष्पञ्चम् ।  
हृमपादीरसैश्च मर्दयेयामात्रकम् ॥ अर्धमूत्रपक्षेण ननुविनिपा-  
रिणा । मसुनाऽऽर्दकनीरेण प्रत्येक याममात्रकम् ॥ यत्कान् कारयेच्छु-  
ष्वान् काचकृष्यन्तरे शिषेत् । सुवनप्रसिद्धिं वंशै र्थं युक्तैश्च वेष्टयेत् ॥  
बाहुकायन्त्रविधिना पाचयेद्विसत्रयम् । पद्मरागप्रभ आनि मिन्दूर भवति  
ध्रुवम् ॥” इत्याकारक पाठो रत्नाकारौषधयोगेऽस्ति ॥

“रसविद्विषि रस पठितोऽपि विमर्दिगोपसमो हि गन्धक ।  
विमललोहमेव कृतखरैरक्षमभ्याररज परिशुच्यताम् ॥ अनिकृदाश्रि  
युने द्रवति स्वयं तदनु तत्र रम परिशुच्यताम् । विशदलोहमेवेन च  
दर्शिता विषयेत्येव इत्ययमभिहितम् ॥ यदनु काचयर्गं विनिषेत्स वै सिक  
तत्र ह्वयेण हि पात्रिन । द्विदशयामम इववह्निना भवति रत्नरसस्त

लभ्यमस्ता ॥ गन्धकेन नोषे हि सेविता भवति वाग्विन्नर सुखद सदा ।  
तत्र च वलीपन्थिनि च नाशयेच्छनरास्तु निरामयकृत्यम् ॥” इत्या  
कारक पाठो रसप्रकाशमुपाकरोऽस्ति ॥

“पारद पल्येक स्याद् दिपञ्च शुद्धगन्धकम् । रत्नाकार्पासयोगेन धृष्ट्वा  
काचस्य वृष्यके ॥ निक्षिप्य टङ्कणेनैव मुखं तस्य निरोपयेत् । बाहुका  
यन्त्रमथस्या तृणीञ्च नुरता दृढाम् ॥ अहोरात्र पचेद्भौ शास्त्रवित्कुशले  
भिषक् ॥ श्वेतखाद्या पात्रस्य कृपिरात्रात्परमिन् ॥ दरेतेन सम रक्त  
मोज्ज्वल भस्म यद्भवेत् ॥ मधुमेयाममेनञ्च धूनेन मधुना सह ॥ पक्षा  
दुदुष्य गुट चाज्य कृष्येणुमपि शर्कराम् । द्वादशरात्रं मधुमधुमर्दनीय  
अक्षयेत् ॥ विपलमधुना शान्तिं याति पित्त चित्तोत्थितम् । निर्गुणित्वा  
रसेनाञ्च दुर्वां वातवेदना ॥ प्रथमं याति वेगेन नूतनञ्च वपुर्मेव ॥  
अर्थाऽऽवर्तितुल्येन गुह्येन यथय रस ॥ वन्ध्याऽपि च भवत्येव जीव  
वल्गु सप्तुत्रिका ॥” इत्याकारक पाठो र. च, र. त, नि र, र. स,  
र. म, रम्पादिगते नाम्नाऽस्ति । र. त, नि र पक्षे हि त्रिगुणगन्धकं  
जीर्णसिन्दूर इति नाम । रम्पादिगते भावनाया रत्नाकार्पासयोगे स्थाने  
नन्यकागोप दृश्यते ।

“पारदस्य त्रयो भागा भार्गव गन्धकस्य च । शन्यवाकाकामाज्यैश्च  
तुलसीतण्डुलीयैः ॥ वण्टवायां पराशस्य द्वैर्मेघं दिनयम् ॥ बदराणि  
प्रमाणेन वटी कुर्वात्ययन्तत ॥ कृपिरां पुरेयेषामि वन्नक्षत्रिष्या बहि ।  
पुं मुले अद्रातय वन्नक्षत्रिष्या पुन ॥ पञ्च सप्तसप्तदश्यान्त्रिका  
वस्तन पुन ॥ शुष्का काचयर्गं तुल्यं बाहुकायन्त्रमथ्यन ॥ पचेद् द्वादश  
यामास्तु रत्नाद्वरीतलमुदरे ॥ मिन्दूराम मेवेन्द्रस्य गृहीत्वाऽऽ प्रयत्नत ॥  
अनुपाानविशेषेण सर्वरोगहर परम् ॥” इति पाठो रत्नाकारौषधयोगेऽस्ति ॥  
र. म. क, र. म. मा, रमायनस्य षष्ठ्युष्पे “पारदाद्विगुण गन्ध दत्त्वा  
वार्पासिमात्रैः । पूर्ववत्पाचितो कोप तदा मदनकामम् ॥” इति पाठो  
मदनकायदेवरस इति नाम्ना निहितोऽस्ति । कुत्रचित्पुस्तकेन गन्ध  
विशोध्य भावनाया सर्पाश्वा द्वैर्मेघैश्च बाहुकायन्त्रे पात्रिन ।  
“हनुतुल्य धन जीर्ण दाम्ब्या तुल्यञ्च गन्धकम् । रविक्षीरं दिनं मयंस्य  
वित्वा तु भूषेत् ॥ युक्तेन भवेत्सिद्धि रमो हारण्यगर्भक ॥” इति रत्न  
रत्नाकार पाठोऽस्ति, परन्तु तत्र रसमिन्दूरत्वाऽऽभावनायापक्षश्चिद् एवं  
व्यामनन्तर्भागे भवितुमर्हति । भूषेत् पुदवानमयेऽपि काऽस्तिनयोऽपि  
अथ एव हस्तगो भविष्यति तदपेक्षया रविक्षीरं विवृष्टं सर्वं निपाय  
नागवह्नीये द्वैर्मेघैश्च भूषेत् प्रत्येव श्वामकामादी निषोनीय स्य  
रमाक सम्पति ।

एते पाठो अथमरससिन्दूरजन्तर्भावीनया । त्रिगुणत्रिगुणचतुर्  
गन्धमानस्य तु चतुर्गुणगन्धयोगेन रसस्य सम्पादनात्मन्यगन्धमर्गो  
भवित्यति । अथिक्तु न तद्भाविनिपिन्यायेन गुणद्विरपि ह्रस्वाभा  
भवित्यति, भावनाना विशेषधर्माभिष्टेयं तस्योपनिद्रिदत्तये भावना  
प्रदाय रसमप्यादने सर्वसां भावनानामन्तर्भावीऽलोऽपि गुणमयश्च  
सम्पत्त्यते । एतैश्च भावनामपेक्ष्य पाठान्तरवस्तने गौरवात्, विशेषगुणऽ  
हामाच । मण्डूकु सुलोभिने रसे रम्पावसमये गृहधृमादिदानस्य तु  
नात्यन्तोचिनी इति प्रतिभाति, अतोऽर्धऽधिलिख्यमातानि रसे विषय  
गन्धश्च भावनार्द्रत्वे विर्भाव्य कर्तव्यं कृत्वा अलोभिद्रिदत्तये भवेत्  
भावचक्रभावनान् भावयित्वा रस सम्पादनीय इत्यस्याय सम्पति ।  
भावनाद्रव्याणि यथा—अर्कनूक्षीराऽऽर्दक-गृहधृम-सन्तुलीयक-मण्ड-  
कारी जम्बीर-कुमारी विषक तुलसी त्रिकला-मधु हृमपादी-सहाद्वी-पारि-  
भद्र-कुरुष्व-रत्नाकारि-भस्म-रत्नगवह्नी-दाडिमो-कुसुम-नारुली-रस-पुनर्न  
म-रक्तवर्ण्यं त्राक्षी किनुक-द्वय-पुष्पा-वासा-कार्पास-पुष्पा-वल्गु-वल्गु-  
प्लेषाभि भावनानाभिष्टेयं द्रव्यं भावयित्वा चन्द्रोदय निपाय रस  
मिन्दूरस्याने व्यापारिष्य महान् गुणलभ । मापनियममेव दण्ड-  
सुखित्वापरेण चन्द्रोदय जना निषादयन्ति तथा वारो तु वैष्णव  
शक्तिरपि पात्रिन तन्मन्त्रस्वर्णश्च मित्राद्वयेन पुनस्तथान कृत्वा यथा-

स्थितमूललाभोऽपि भविष्यति जनानामभिरुण्णलाभादायुर्वेदकीर्तिरपि का भविष्यति, स्वर्गप्रेमयाऽऽशा न चेत्तर्हि स्वर्गस्य मयूरसिन्धुद्वये कवे वा कृष्णतुलसीद्वये गन्तवे वा पञ्चपदिनानि चन्द्रिद्याऽऽमलनाडवसि विमृश्य पूर्वोपपत्तयुक्तस्य मध्ये शुचचक्रिका पिशाच भयानकस्युत्र कृत्वा पूर्णगन्धुदोनेनैकस्मिन्नेव पुंस्वर्गे मरुतमतेष्वपि तन्मूल्यञ्च स्वर्गाऽऽपञ्चवाऽऽपिभ्रमात्रया लभ्यते इति सत्यद्वये ह्येषाचलभ्योभयश्चैव सक्त यथास्यास्योऽनुष्ठेयमित्यस्माकं विनीता प्राप्तेना । स्वर्गस्थितमिन्दु रमयोगास्तु धनाऽऽभावमुल्का सतीति स्पष्टतया प्रतिपाति । इत्यादि रसैवेत्येतादिविषययोगा पतिकरद्विद्वानोभयसाधारण्येन सुखभा भवेत्तु इति बुद्ध्या दर्शिता । तत्राऽऽनोदानीमभिधानमन्तरा दैवपुन्यनादिभ्यो हायेन योऽय चन्द्रोदादीना प्रकाशध्वितस्तत्र शास्त्रनिर्दिष्टमार्गाऽऽप ह्याऽऽप्यनैव शुण्डीनताऽऽस्ति, इति प्रत्यक्षप्रयोग कृत्वा 'नै विवेचनी यमिति सापेक्ष ह्यस्य । अतश्चाप्यनिर्दिष्टमार्गाणैव रसोत्पादनं कृत्वा शास्त्रनिर्दिष्टगुणाऽऽशा तत्पु तेषु कर्तव्या नाऽऽप्यथा । एतदप्यामप्यप्येव षण्पञ्च यस्य कस्यापि द्वि विरुद्धनिर्दिष्टं बाधत्वात्येवतादिपुन्यद्वारा निर्मितानि लोहादिमरुतानि व्यग्रहस्य प्रत्यक्षीकृतवैलम्ब्यमतिविस्तरण ॥

**भाषा—**शुद्ध पारा और गन्धक १-१ पल्लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर बडाहुँरोंके हजरसे तीसदिनमर्दनकर सुखाकर ६-७ कपइमितीकीहुई आतशीशीशीमें भर बाहुकायधर्म रस अमि-देवे । गन्धकजारणहोनेकेबाद लडियामिठी और शुद्ध अथवा सुखानीमिठीसे सुह बन्दकर ४-५ कपइमितीदेकर ४ पहरती तीक्ष्ण अमि देवे । स्वाह्नीतलहोनेपर निगलनर रखछोड़े । इसनेसे १ रसीसे ३ रसीतक मात्रा तत्तदोगहरातुपानके साथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ११० ॥

## १११ रससिन्दूरम् ( द्वितीयम् )

शुद्धं सूतं शुभं गन्धं प्रत्येकं तु चतुष्पलम् ।  
द्विपलं नवसारञ्च फेनञ्चापि पलं तत ॥ ७२५ ॥  
पलाहं वत्सनाभञ्च वत्सनाभसमा खटि ।  
शुण्डीमरिचपिप्पल्यं पृथक्कुर्यं नियोजयेत् ॥ ७२६ ॥  
त्रिदिनं मर्दयेत्खल्वे पायकजलसन्निभम् ।  
विजयाभूर्तेशुण्डीनां जातसारेण सप्तधा ॥ ७२७ ॥  
प्रत्येकं मर्दयेत्खल्वे काचकृष्णं विनिःक्षिपेत् ।  
सप्तमि र्भुत्तिकावले बाहुकायन्त्रके पचेत् ॥ ७२८ ॥  
क्रमाऽग्निना सप्तदिनं स्वाह्नीशीतं समुद्धरेत् ।  
इन्द्रगोपसमच्छायं सिन्दूरं सर्वसिद्धिदम् ॥ ७२९ ॥  
परं वृष्यतमं पुंसां रमयेत्कीशतं मुदा ॥ ७२९ ॥

र क यो रसैरोगेषु ।

**टि—**"शुद्धहास्य मयिकं चूलाकालग्न तथा । रसतुल्य वत्सनाभं शुक्विच्छ विगमिवम् ॥ त्रिदिनं मर्दयेत्खल्वे पायकजलसन्निभम् । कुसु म्मपुष्पभारेण मर्दयेत्त्रिदिनं तत ॥ रक्तकापसप्तपुष्पैवराते रजस्विकाद्वै । हीरेवरक्तकहारे रक्षीरप्रकोशेरी ॥ रते समर्थं यत्नेन कृष्योर्बैजश क्रमच ॥ विजयाभूर्ताऽऽनोदानीनां जातसारेण सप्तधा ॥ प्रत्येकं मर्दयेन काचकृष्णं विनिःक्षिपेत् । सप्तमि र्भुत्तिकावले बाहुकायन्त्रके पचेत् ॥ क्रमाग्निना सप्तदिनं स्वाह्नीशीतं समुद्धरेत् । इन्द्रगोपसमच्छायं सिन्दूरं सर्वसिद्धिदम् ॥ शुद्धं सितया सर्पिर्मयुक्तं निषेधितम् । परं वृष्यतमं पुंसां रमयेन्मुदा ॥ अभ्यासादिति निर्दिष्टं नाम्ना विजयवृन्दरम् । नृपार्णां कीर्तुकार्थं वैजयन्तचन्द्रे ॥" इति पाठोऽप्यन्तप्रत्ययो । र क

यो, रसायनम्, निहितोऽस्ति तत्र पारदादीनां समभागत्वं गन्धकस्य विभागताऽऽस्ति, भावनायाश्च मिश्रिद्विरोधोऽस्ति तत्र पूर्वनिवेद्येव योगे निवृण्णस्यक्रमदानं कृत्वा कुसुमरसत्कापासपुष्पाऽऽम्लिकाहीरेवरक्तकहारे रक्षीरप्रकोशे रक्षीरप्रकोशानां रक्षिणिका भावना प्रदाय एक एव रस सम्पादनीय इत्यस्माकं सम्मतिः ।

"पारदो दशभागश्च तत्समानश्च गन्धकः । नवमारस्तदर्थं स्यात्क जर्ली कारयेत्तत ॥ बहुभिर्नृप्यक्तन्यारसेन परिभाषयेत् । काचकृष्णं विनिःक्षिप्य द्राघयेत्तापिका मुखे ॥ सुकटैश्चिभिः लिप्त्वा राज्ञीं याम चतुष्टयम् ॥ अग्निं प्रज्वालयेन्मन्दं रमभ्रमं प्रयायेत् ॥" इत्याकारक पाठो वैचित्र्यालसयोगमहापयोर्लूकोऽस्ति । योगमहाग्नेव न रसपरं टिकेति नाम्ना व्यवहारस्तु प्रमादिव सञ्जात इति प्रतिभाति ॥ "रस गन्धकयो कृत्वा कज्जलीं तुल्यभागयो । नरसारं समागम्य किञ्चिज्ज न्नीरपारिणा ॥ त्रिदिनं मर्दयेत्तेन काचकृष्णं निवेशयेत् । काचकृष्णं अमयेत्तु बाहुकायन्त्रके पचेत् ॥ समुद्धरेत्तन्मरुतमिन्द्रगोपेन सन्नि भम् ॥" इति रत्नाकरौपयोगे पाठोऽस्ति ॥ "यत् शिवया नमामो न दिनामि श्रीणि मर्दयेत् । पृथक् पृथक् सम कृत्वा पारदं गन्धकं तथा ॥ नरसारं घृत्सारं पट्टकं यामनाम्रम् । निम्नूत्सेन सन्मर्थं काचकृष्णं विनिःक्षिपेत् ॥ मुखे पाषाणपुष्टिकां दत्त्वा मृत्ला प्रलेपयेत् । सप्तमि र्भुत्तिकावले पृथक् मरुतोऽप्येव ॥ सत्पिष्टाया बृहदं स्यात्कां काच कृष्णं निवेशयेत् । पूरयेत्सिक्ताद्वैरगलान्मतिनामिपत्तु ॥ निवेश्य चुल्काया दहनं भन्दं मथ्य खरं क्रमात् । प्रज्वाल्यार्कमतिनाम्नाम्ना स्वाह्नी शीतं समुद्धरेत् ॥ स्फोटयित्वाऽप्य तुल्कां तादृक्पथं बलिं त्यजेत् । अथ एव रससिन्दूरं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥", इति पाठो रत्नाकरौपयोगे दोषानन्दे चाऽस्ति ।

"पारदाय तृतीयांशं गन्धं दत्त्वा तु मर्दयेत् । दद्यान्ननवारोऽग्नं शुन चोन्मथवारिणा ॥ तत्त्वे सम्मर्थं तत्तर्पं काचकृष्णं निवेशयेत् । इत्थं सम्मथयेत्तं बाहुकायन्त्रकेपथम् ॥ पचेत्तुल्यद्वयानाम्नां मन्त्रमप्युदाहृता श्रिभिः । सुपत्रं शीतलने घ्राष्टो हरगौरी रमो भवेत् ॥" इति पाठो र म, क, र म भा, रसायनम्, र क, र त, र का, एषु पुस्तकेषु निर्दि तोऽस्ति । तत्र र त पारदायतृतीयांशगन्धक, अष्टमाशन्नरमारं तिलुज्य मातुतुल्यभावनया सम्पादितम् । अन्यं बहिःक्षिद्रोवेनाग्निं नाम च चतु र्थांशं पक्वयोगेनैव र्मसिति ।

"सप्त पञ्चरत्नं स्वोपरहितलुप्यभागे बलिः, द्वौ त्र्यौ नवमा दस्तस्य तुषरीरुक्षैश्च समर्पितम् । कृष्या काचमुवि स्थितश्च सितकाचनेत्रे श्रिभिः बान्धे, पठो बहिःक्षिद्रवस्वस्वगुणा मिन्दूरनामा रम ॥" इति पाठ आ प्र, र स, च रा, नै सा, नै क, र (मा), र म, र, नि, र, रसायनम्, इ यो त, र त, नै चि (ल), यो र एषु पुस्तकेषु । र स, नै सा ण्वयो सर्वपां समभागत्वं कृतम्, टङ्गुगञ्च न दहमे इति विशेष । रसतरदिश्यां नरसारं चतुर्थांशं तिलुज्य केचिद्र सायन्य वन्दनीयमिहितम् ॥ "वृषी सप्तपुद्गलैः परिहृता शुकाऽप्य ग्नेष्वरी, तुल्यौ तौ नरसारपारदरज्जिौ सम्मर्थं तस्या न्यसेत् । तत्पत्रे मित्तास्थके तत्तन्निषे पक्त्वाऽप्येव रम, मिथ्या बुकुमपिन्नर रसवर मसाऽऽद्वेदैवराट ॥" इति पाठ आ प्र, च रा, र स, र म, र, रसायनम्, र त, नै चि (ल), नै चि, र म, एषु पुस्तकेषु । वैचरिचिन्तामणौ जम्बीररसेन भावना प्रस्ता । रसमदीरे नामागोने नरसारं तिलुज्य लभयेस्येति नाम स्थापितम् तदशानाद । स्फोटयेत्त्वा इशीतं मुद्धरेत् गन्धकं त्यजेत् । तत्तमस्मररी योगवादी स्वात्मवैरोग निशितिं कोके चूर्ण्य गन्धकं स्वयेकलभसम र्मो घ्राष्ट इत्यत्र तु गन्धका पेक्षया तलस्थलं नोक्त्य न तु कृष्यपेक्षया तलस्थलम् । यदाचिद्विदश मेव तलस्थलमभिधेत् चेत्तर्हि मयत्तु नाम रससिन्दूरदीनां नृपिकौप पार्णां सर्वेषां लब्धस्यम्, परन्तु रसयन्त्रेऽत्र त्रिद्वयभयप्रादादस्य तल स्थलं लीक्युमुचिन्तम् । उपरिनिर्दिष्टयोगेषु भावनास्तु मूद्धरेत्तु च

मल्लिशिदिगेषमादाय यत्रन ग्रन्थेषु स्वतन्त्रतया पाठाः प्रकल्पिताः सन्ति परन्तु उपरिनिर्दिष्टेष्वपि वा निर्दिष्टा भावनास्तामा मर्माभाषि एकमप्रदानेनाऽपि क्षत्यभावादित्थानमयस्याऽप्यधिककाल्येनाऽनु-  
ष्ठानेऽपि गुणद्वन्द्वेन सत्त्वात् । तथा कृत्वा एकस्यैव रमस्य मर्यादानेन स्वल्पश्रेमे विशेषगुणलामातृषेवाऽनुष्ठयभित्त्यग्राह्य मममतिः ।

**भाषा—**शुद्ध पारा और गन्धक ४-४ पल, नवसादर २ पल, अफीम १ पल, शुद्ध वज्रनाग और खडियामिश्री आधा-  
आधापल, सौंठ-मिर्च और पीपल १-१ कर्ष लेकर बारीक  
चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भांग, धतूरा,  
सौंठ, हुसुम्म और लालकपासके फूल, लम्बाछ अथवा हाथा-  
जोड़ी, हाज्वेर, लालकमल, लस, पद्मकेसर और अशोक इन-  
प्रत्येकके चरस अथवा झाणोंसे ७-७ भावनाएं देकर सुजाकर  
७ कपड़मिश्री दीहुई आतशीशीशीमें भरके बालुकायन्त्रमें क्रम-  
शुद्धामिस ॥ दिनकी आंचमें । गन्धकजारणके बाद शीशीका मुंह  
बन्दकरदेनाबाहिरे नहीं तो कुछ न मिलेगा, स्वाज्ञशीतलहोनेपर  
निकालकर रखोके । इसमेंसे १-१ रत्ती शब्र, घी और मधु-  
केषाध सेवनकरनेसे यह समस्तदोषोंको दूरकरताहै और बहुतसो  
बिषयोंकेसाथ रमणकरनेपरभी शुद्धरूपलित नहीं होताहै ॥ १११ ॥

## ११२ रससिन्दूरम् (तृतीयम्)

भागो रसस्य त्रय एव भागा

गन्धस्य मापः पचनाशनस्य ।

मममर्धं गाढं सकलं सुभाण्डे

तां कज्जलीं फाचघटे निदध्यात् ॥ ५३० ॥

संस्कृद्ध मृत्कपटैके घटीं तां

मुखे सचूर्णी खटिकाञ्च दत्त्वा ।

क्रमाग्निना धीणि दिनानि पक्त्वा

तां बालुकायन्त्रगतां ततः स्वात् ॥ ५३१ ॥

यन्धकपुष्पाणामीशज्ञस्य

मस्म प्रयोज्यं सकलामयेपु ।

निजानुपाने मरणं जराञ्च

हन्त्यस्य घटः क्रमसेवनेन ॥ ५३२ ॥

र. सं., नि. र., र. क., रसायनसार., यो. र., घे. सा., र.  
( मा. ), वै. द. र. प्र., आ. प्र., र. प्र. मु., वै. वि., र. वी., वै. क.,  
वै. वि. ( ल. ), रसायनसं., यो. म., र. त., ना. वि., र. सं., य.  
यो. स., गरीरोग ।

टि०—रसप्रकाशमुपाधे मातुतुङ्गभावना प्रदाय काचघटे पाचन  
सिद्धिम् नाम च उदयभास्वर इति स्थापितम् । कुपविष बहुधा-  
गन्धक जारणे नियोजितम् । रसमर्धं षड् वैपरिणमे च त्रयोदश-  
प्रकाराः चन्द्रोदयस्य नाम्ना भरते प्राप्ते च भिन्नि। पर ते न  
चन्द्रोदयस्य प्रकारा अपि तु रससिन्दूरनिष्पादप्रकाराः, चन्द्रोदय-  
शब्दस्य स्वर्गदक्षितसिन्दूर एव व्यवहारं प्रयोगात्, पारद ममर्धं ते  
प्रकाराः प्रथमतः सिद्धिमात्रं विचार्यतां कृते उपर्युक्तं इति बोद्धव्यम् ।

॥ भुक्त पारद शुभ शुद्ध गन्धक तन्ममम् । मत्प्राशीविक्रदावे-  
हंनदीपुनर्नवे ॥ कुमारिकाभक्त्याचीर्षे भोगविषा पुनः पुनः । कच-  
नृत्यां विनि शिष्य बाहुल्यमनमन्यम् ॥ क्रमार्थि जिन्ना यन्ने-

मिन्दूर भवति ध्रुवम् । अनुपानविरोधेण सारंगेगहर परम् ॥” इति नादे  
पाठोऽस्ति ॥ “शुद्ध रस पञ्चपलप्रमाण सुगन्धक पञ्चपलद्वयम् । शूद्रो-  
निष पञ्चपलप्रमाण नाग तथा शुद्धपरैकमेव ॥ कुमारिकादिः पुति  
त्रिवैव श्लोऽश्विमुत्पन्नवैलिम्पम् । शुष्क पुनः काचघटे न्यसेत्तमा-  
ग्निना वामरपञ्चकम् ॥ पचैवपत्तान्तिमत्तास्ययन्ने बन्धुत्तुप्यारणन-  
धिम् स्यात् । सेतेन गुडैरुमिहादिकेण ज्वरादिपाण्डूदरकुष्ठमहम् ॥ निजा-  
नुपाने ग्रहार्थं निहन्ति रसाभूतो वातवज्जुल्यवैर्ष ॥” इति रसेन्द्रप्रवृत्तुमे  
पाठोऽस्ति ॥ “रसाज्ज्वरान्घ्नौ गन्धक दिगुण तनः । शुद्धनागस्य  
वाक्काणि मायिक पत्येन च । सर्वरुज्जालिका कृत्वा भावयेज्जलपदैः ।  
वयदुरित्तया निम्बैः समष्टुलोऽप भावयेत् ॥ वीरपुष्पी विषदेवापन्ना-  
वैलिम्पम् ॥ समर्थं शुष्क तत्काचे मिक्तायां विषागन्धे ॥ याम-  
दादशक वातसर्वरोगहरो रसः ॥” इति रसेन्द्रप्रवृत्तुमे पाठोऽस्ति ॥  
“विमलनागवैरुक्विभागिक हरजनागचतुष्टयमिश्रितम् । सप्तमेव विष्णु  
शिपातले वलितमात्र सम द्रुह तद्विषय ॥ दिनमितत्र सुविशुष्य च  
कम्यकसूरस्य ऐक्योऽस्तिविशेषमेव । तदनु मृत्तवरस्य तु कज्जर्म् रनि-  
रकाचघटे विनिवेशय ॥ दिवमसुगन्धस्यः कृताहिना स च भोदरणः  
कमलच्छविः । मरुत्योविनाशमवहिरुद्ध बलकर परमोऽपि हि क्षान्ति-  
कृत् ॥ यवनरोगविनाशहरो भवेत्यकल्पायुक्विममकारकः । म मृत्  
कर्मविषाकरोऽपि निहन्नागयुतः सप्त पारदः ॥” इति र. प्र. सु.,  
र. क. यो., बा., एषु ग्रन्थेषु पाठोऽस्ति, र. क. यो. नाग नममो  
नियोजित ॥

“ एकभाग रस युवांश्च दिभाग विह्वल तथा । त्रिभाग गन्धकत्रै  
रविबीजं चतुर्गुणम् ॥ नागो विंशतिभागश्च चिन्नेरमरमर्दितम् । काच-  
कृत्वा विनि श्लिष्य मिसार पाचिष्य क्रमात् ॥ इन्द्रोपममे कर्णमूर्ध्नि रस-  
मुत्तमम् । तत्स्थाने अवेष्टम् रात्रिपञ्चममन्यकम् ॥” इति पाठो रत्नाग  
रौपयोगितादृत्यो हस्त्ये । परन्तु नागनामप्रयोग रयत्वेन मिन्दूरं यन्नि  
दिशेपाऽभ्यास्य मौड्यवैवाऽस्तमोनीयः । मिन्दूरपाकं पारद शुद्ध  
धुता मर्यादममलता कम्पचिदपि भातो. प्रवेष्टे विशेषरिगेषाऽनुपारदः ।  
मुशुक्षिपारदमयलेन रममर्यादमरुते नागसङ्घातस्य रेरे निषिद्धतात्  
तत्प्रशेषपाऽवश्य । नागमृत्तुकाद्यालु देहलोहविषरणमरुतैर मम  
विना इति प्रतीत्ये स्वतन्त्रतया भरतीत्यय मर्यादकरेण तु नाऽपि  
प्रत्यवायनपात्रिययोगानां सदस्यो दृढचत्कात् । मिन्दूरसम्पदं ना-  
गज्ज्वरदिताऽन्धपातुस्योग कृत्वा पञ्चपारदः पारदस्योऽपानेन इते तन्-  
रवपातानुमुत्ता भुवि भेत्तार्द्रगारदमिन्दूरस्य विमुष्कायैकरी धर  
तीनि चिक्लिक्के नै विरमणीयम् । एका त्रिया इत्येकरीनि म्यानेन  
मालवत्वप्र श्रयसुमेव । अन सर्वाऽधिकोऽसिद्धयमपुष्पमर्यादया-  
दने “मर्व पर इतिपदै निजमन्, मिति न्यायेनाऽप्य नागपुष्पस्य  
एकत्रैवाऽप्यन्तर्भाविना इति विरुपैराकम्नीयम् ॥

**भाषा—**शुद्धपारा १ कर्ष, शुद्धगन्धक ३ कर्ष, नाग १ मादा  
लेकर पहिलेनागको गलाकर पारेको मिलादे फिर गन्धक देकर  
नीलवर्णकज्जलीकर आतशीशीशीमें भरके पूर्वां वाजुकायन्त्रमें  
रस गन्धकजारणकर ३ दिनसो अग्नि देवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर  
निकालकर रखोके । इसका रंग दुपहरियाके फूलेकेपरास होगा ।  
इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा तत्प्रोगदतानुगमकेसाथ देनेसे  
सर्पदोषोंको दूरकर जरा और मरणसे रहित करताहै ॥ ११२ ॥

## ११३ रससिन्दूरम् (चतुर्थम्)

पलद्वयं शुद्धसुतं गन्धकञ्च तदुपकम् ।

स्वत्कारजसेनेय मायना दिनममममम् ॥ ५३३ ॥

सर्पस्य गरलेनैव काचकृपां विनिःक्षिपेत् ।  
कृपा दृढं मुखं रोषं धृत्वा सैकृतयन्त्रके ॥ ५३४ ॥  
यामपोडशकं धहिं ज्वालेयत् क्रमसेस्थितम् ।  
कृपिकागलसम्यग्दं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ ५३५ ॥  
अयं सूतधरः ख्यातो देवं विजयदायकः ।  
गुञ्जार्द्धं रोगहृत्सर्वभुघातं जायते शिवः ॥ ५३६ ॥  
नि. २. १.

टि०—अयमपि रस प्रथमरससिन्दूरेऽन्तर्भावितुमर्हति, परन्तु न तथा  
दृढ संपरलभावनयाऽस्य रसस्याऽतितीक्ष्णत्वात् । अतोऽस्य स्वतन्त्र  
तथैव पाठ स्थापित इति सुधीभिर्विमर्शनीयम् ।

भाषा—शुद्धपारा २ पल, शुद्धगन्धक १ पलकी नीलवर्ण  
कजलीकर धूर और आकके दूधसे ७-७ रोज मर्दनकर सर्पके  
जहरीसे भावना देकर मुलाकर प्रथमरससिन्दूरकी तरह १६ पहरकी  
क्रमबद्ध अग्निदेकर पकानेसे यह रक्तवर्णरस तैयार होगा । इसमें  
से आधीआधीरस्तीकीमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह  
तमाम रोगोंको नष्टकरताहै और इसके खानेसे अत्यन्तमूल  
जायतहोतीहै ॥ ११३ ॥

### ११४ रससिन्दूरम् ( पञ्चमम् )

गन्धकं सूदृढं स्थूलं निर्घणं जाल्यमद्भुतम् ।  
वर्तुलं छिद्रितं कृत्या मध्ये शुद्धं रसं क्षिपेत् ॥ ५३७ ॥  
उपरिष्ठात्पुनर्गन्धं दत्त्वा कुर्याच्च मुद्रणम् ।  
अयः शलाकया पश्चात्ततया सन्धिरोधनम् ॥ ५३८ ॥  
सूत्रेण वेष्टयेद्गन्धं निधत्ते न यथाऽम्भसा ।  
दोलास्तु स्वेदयेद्गन्धं वेदमहरमाश्रया ॥ ५३९ ॥  
रसं गन्धान्यपापाणे पुनरेव निधापयेत् ।  
दिनसप्ताऽध्वि यावत्सायत्सोऽपि क्रमो भवेत् ॥ ५४० ॥  
एवं निष्पद्यते स्वच्छः पञ्चरागमणिप्रभः ।  
अद्भुतः सर्वकार्याणि धान्छितानि च साधयेत् ॥ ५४१ ॥  
एतस्माज्जायते सूतमस्मरुं नृपवल्लभम् ।  
सर्वरोगहरं श्रीदं सम्मनःकामितप्रदम् ॥ ५४२ ॥  
श्वेतं पीतं तथा रक्तं द्यामं कृष्णञ्च कर्तुरम् ।  
जायते नाऽथ सन्देह एवं वर्णक्रमेण वै ॥ ५४३ ॥  
सर्वपां चोत्तमं कृष्णं विशातव्यं प्रयत्नतः ।  
पीतगन्धकसंयुक्तं कुमारोरससंयुतम् ॥ ५४४ ॥  
कृष्णवर्णं भवेद्भस्म देवानामपि दुर्लभम् ।  
निर्गुण्डीरससंयुक्तं चपलेन समन्वितम् ॥  
रक्तवर्णं भवेत्सूतं धलीपलितनाशनम् ॥ ५४५ ॥  
यो. म. रसायने ।

भाषा—पीतवर्णगन्धकका गोल डेला लेकर समालकर बीचमें  
छिद्रकरे । उसमें शुद्धपारेको भरके गन्धककी छलीकी डाटदेकर  
लोहेकी गरमशलाकासे दोनोंही सन्धि बन्दकरदे और कच्चेसूतसे  
छेदकर गेद जैसा बनाके जिसमें कि पानीसे गन्धक धुल न  
जाय । फिर पादको रक्तनकरनेवाली दिव्यापधियोंका सममकर  
४ पहर स्वेदनकरे । स्वाग्रशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत्

दूसरे गन्धकके डेलेंमें पारेको बन्दकर ४ पहरकी आचदे इसतह  
७ रोजक आचदेनेसे माणिस्यकेपदश पारेका रत्नहोजायगा ।  
इसपारसे तमाम अमीष्टकार्य सिद्धहोते हैं यह राजाजो-  
गोंके काममें खानेशोभ्य होताहै । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ  
इसरी १-१ रस्ती देनेसे असाध्यसे असाध्य सबरोग निवृत्तहोते  
हैं और खमीको देताहै । इसीतरह श्वेत, पीत, द्याम, कृष्ण,  
कर्तुर इन रस्तीको पैदाकरनेवाली दवाओंमेंसे जिसरा रसभरा-  
जायगा वहीरत्न पारेका होगा । दैवसंयोगसे इन २ रत्नोंका  
गन्धक भी मिलसके तो बहुत आसानी से काम होगा । सब  
रत्नोंमेंसे कृष्णरत्नका पारद उत्तमकाम करताहै । पीले गन्धकमें  
पारेको रखकर पीकुरारके रससे वाले रत्नका पारद होगा यह  
देवताओंकोभी दुर्लभ है । निर्गुण्डीकेरसमें चपलयुक्त पारेको  
स्वेदनकरनेसे रक्तवर्णहोताहै । इसके खानेसे बलीपलितका  
नाशहोताहै ॥ ११४ ॥

### ११५ रससिन्दूरम् ( षष्ठम् )

शुद्धं सूतं समं गन्धं तयोः कज्जलिकां कृताम् ।  
महेन्द्रोरससम्पिष्टां सार्त्रां काचघटे न्यसेत् ॥ ५४६ ॥  
पलाण्डुस्वरसं तत्र क्षिपेद्ब्रूलिकापट्टम् ।  
रसात्पृथ्वञ्च विधिना तद्वटं बालुकाप्यके ॥ ५४७ ॥  
यन्त्रे सम्पाचयेत्पावत्यहरद्वादशं यथा ।  
क्रमाग्निना ततः सम्भ्रमसः स्यात्तलसंस्थितः ॥ ५४८ ॥  
एवं वारत्रयं कुर्यादुत्तमोऽसौ भवेद्भस्म ।  
निर्गुण्डीस्वरसरेवं सिद्धो भवति नाऽन्यथा ॥ ५४९ ॥  
यो. म. रसायनाधिकारे ।

भाषा—पारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकजली-  
कर महरके रससे २-३ रोज मर्दनकर आतशीशीशीमें पारेकी  
बराबर नवसादर बालर इसे गीलाही भरके ऊपरसे व्याजका  
रस भरदे । प्रथमरससिन्दूरकीतरह बालुकायन्त्रमें रख १२  
पहरकी क्रमाग्निसे आच देनेसे यह तल्लय भस्महोगी । स्वाग्र-  
शीतलहोनेपर निकालकर फिर पूर्वोक्तप्रकारसे मर्दनादि करके  
आचदे । ऐसे ३ बारकरनेसे यह उत्तम प्रकारका रस तैयार  
होगा । इसीतरह निर्गुण्डीके रससेभी तैयारहोताहै ॥ ११५ ॥

### ११६ रससिन्दूरम् ( सप्तमम् )

सूतद्विगुणितं गन्धं सूताधर्सेन्धवं खले ।  
श्वेतजयन्त्या नीरैस्त्रिदिनं सम्मर्धं गोलकं कृत्या ५५०  
शुके तस्मिन् क्षिप्या मृपायां सन्धिमालिन्य ।  
शुके च सन्धिलेपे मृपास्थं यावदेकतां याति ५५१ ॥  
तावद्ब्रह्मो किञ्चिद्भूत्वा वा भूधरे पत्न्या ।  
उपलभ्य गन्धकगन्धं क्षिपेज्जले तदिति तां मृपां ५५२  
तस्मादुद्धृत्य तं रसं त्रिकण्टकरसेन भावितं भूयः ।  
सर्वगणेशु नियुज्यात्सम्पूर्णं तत्तदनुपानैः ५५३  
र. क. सर्वयोगेभु ।

भाषा—शुद्धभारेसे द्वा गन्धक और आधा सैन्धव लेकर नीलवर्ण कजलीकर सफेदजैतीके स्वरससे ३ रोज मर्दनकर गोव-  
यनाय सुलाफर मूषामें रस सन्धिवन्दकर सुलाफर इतनी अग्नि  
देवे कि अन्दरका पदार्थ गलजाय अथवा मूषयत्रकी अग्निदेवे  
जय गन्धकका गन्ध आनेलगे तब मूषाको निकालकर पानीमें  
बुझादे । शीतलहोनेपर मूषामेंसे निकालकर गोचरके रखे  
६-७ भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी गोल्या बनाकर रखठोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे यह सध-  
रोगोंको दूरकरताहै ॥ ११६ ॥

### ११७ रससिन्दूरम् ( अष्टमम् )

भाग्याश्चाष्टौ पारदस्य द्वादशैव धले र्मताः ।  
तद्वर्ध तालकं प्राक्तं तालकाधो मनःशिला ॥ ५५४ ॥  
शुद्धं ताम्रं शिलातुल्यं रसकं ताम्रतुल्यकम् ।  
सर्वमेकत्र सम्मर्धं कुमारीद्राडिमौर्वैः ॥ ५५५ ॥  
त्रिदिनं मर्दयेत्सम्पक्क काचकृप्यां विनिःक्षिपेत् ।  
निश्चिद्रं धेष्टयेत्पद्माद्राद्वल्लखण्डैः सम्मृत्तिकैः ॥ ५५६ ॥  
शोषयित्वा क्षिपेद्वाण्डे बालुकासहिते भिषक् ।  
त्रिदिनं पाचयेच्चुल्यां मृदुमध्योत्तमक्रमैः ॥ ५५७ ॥  
स्याद्वाशीतलमुद्धृत्य सिन्दूरं रक्तवर्णकम् ।  
सिद्धं भवति सिन्दूरं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ ५५८ ॥  
सन्निपाते ज्वरे घारे क्षयकासे तथैव च ।  
विशेषाद्वातरक्तञ्च कुष्ठान्पथ्यौ दशाऽपि च ॥ ५५९ ॥  
उदराणि च सर्वाणि वातरोगान्विनशयेत् ।  
सतताऽभ्यासयोगेन वर्लीपलितमाशनम् ॥ ५६० ॥  
गुञ्जाद्वयं प्रयुज्जीत तत्तद्रोगानुपानकैः ।  
नाशयिष्यति तत्सर्वं शियेन परिभाषितम् ॥  
महाधिक्रमरसो नाम भिषगाध्यक्षकारकम् ॥ ५६१ ॥  
र. क., यो., ।

टि०—अथ यौन पञ्चमालसिन्दूरणाऽऽप्तान् मनान् प्रतीयेते ।  
परन्तु तत्र ताम्रपत्तरीयोरभावाद्वातवायुगणौ विशेषकालेनान्य-  
न्वाऽप्येव । तन्मूल्यद्वय निष्पादितयेतर्हि भवतु नाम तन्मूल्योऽप्य-  
योग परन्तु साम्प्रतिकमङ्गुलनया स्वतन्त्र एव प्रतिभाति ॥ रत्नामरौषध-  
योगे एव कीदृशिकमरुतनाम्ना द्वितीयपत्राज्येऽप्येव रसो निहितोऽस्ति  
तत्र प्रमादरूप्यत्वं मिश्रितपि फल न पदयाम् । “शुद्धवर्णशिलातालक-  
गन्धक योर्वैभवं । इन्दुवैराष्ट्रुषेव वमशो भोजनसाम्ना” इत्यादिना  
दिन्यां वैभवंमि न्निपादिता । अत्र रवण्ययाऽधिकतया प्रवेशे, ताम्र-  
गन्धेयोरभावन इति ग्यूलदृष्टया विशेषे प्रतीयेते परन्तु शुभमविचार-  
नाऽस्ति बध्निदिशेय । ताम्ररसवर्धयेत्पूद्वगमनाल्लखण्डयोगस्य गुणध्विज-  
त्वात्सर्वेष्वपि रससिन्दूरेषु रत्नादानेन हृद्यमात्राया नाऽप्ययोगान्तरा-  
मार्गानुमुचिन् । एव “निर्धनञ्च गुहाटकं निगदितं निष्काकृकं तालक-  
निष्कद्राद्वल्लखणि मनिशितं शुद्धञ्च गुहं पक्वम् । सम्बन्धन्यत्वेन  
मुपिहल दार्ष्टिकिकापुष्यन्-”, अत्रैकदिनं तिस्रं मुदरं वाचे पणं निजि-  
त् ॥ गन्धार्थं तु दिनत्रयं सन्निपातयन्ने क्षिप्त्युत्पये-”, गुणमात्रं मुनी-  
रचितमस्तौ दोषान्तेष्वन्तरौ ॥” इति तृतीयो वीरभिरुत्तराय, अयाऽपि  
भागवत्यप्यदमनरा नाऽपि बध्निदिशेय । भागवतिष्णादपि रवण-  
कविर्नाऽपि । ५५४ “अथमशौ वरदस्य चतुःषड् द्वादशमात्रम् ।

शिलातालकगन्धानां भागमङ्गुला प्रकीर्तिता । सुवर्णं भागमेकत्र दार्ष्टि-  
मोपुष्पजवर्ध-” इति चतुर्थो वीरभिरुत्तराय । अत्र तु स्पष्टैव मध्यप्रकारस्य  
ज्ञानशून्यता प्रतीयेते । रसायनम्, वृ. सं. त. पञ्चमैरन्येयोरप्यन्येय-  
पाठे वीरविभ्रमनाम्ना निशिलाऽस्ति वनाऽपि पूर्वनिर्दिष्टं पन्था आश्र-  
यणीय इति दिक् ।

भाषा—शुद्धपारा ८ भाग, शुद्धगन्धक १२ भा., शुद्ध-  
रिताल ६ भा., मैनसिल-ताम्र और खपरिया ३-३ भाग  
लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर धीनुंवार और अनारकरीखोंसे  
३-३ रोज मर्दनकर सुलाफर प्रथम रससिन्दूरकी तरह आन-  
खीखीखीयें बन्दकर बालुकायत्रमें मृदु, मध्य और तीक्ष्ण इत-  
नमसे ३ रोजकी अभिदेवे । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा तत्त-  
द्रोगहरानुपानके साथ देनेसे सन्निपात, महाघोरज्वर, हृद्यजकाष्ठ,  
बातरक्त, १८ कुष्ठ, सम्पूर्णउदररोग, वातरोग इनसबको यह  
नष्टकरताहै । हमेशाके अभ्याससे बलीपलितदिक्की नष्टकर  
दीर्घायुको करताहै । अनुपानविनयेसे अन्य भयङ्कररोगोंकोभी  
नष्टकरताहै ॥ ११७ ॥

### ११८ रससिन्दूरम् ( नवमम् )

पारदस्य पलं ग्राह्यं शुद्धस्य विधिपूर्वकम् ।  
पिष्टं बद्धाऽथ वल्लेण पूर्वं सम्मयथाक्रमम् ॥ ५६२ ॥  
अधरोत्तरगन्धेन निक्षिपेन्मृषिकादरे ।  
श्वेतकुषकुदरेत्तेन दङ्गणक्षारचारिणा ॥ ५६३ ॥  
लिप्त्वा चूर्णं विशोष्याऽथ बद्धा कर्पटमृत्तया ।  
बालुकापूर्णभाण्डे तु सुखल्यप्तौ पाचयेच्छनैः ॥ ५६४ ॥  
यामानष्टौ आयते तत्सिन्दूराऽरणसन्निभम् ।  
स्याद्वाशीतलमाद्राय करण्डं विनिवेशयेत् ॥ ५६५ ॥  
र. क. यो., ।

टि०—यथाऽस्तिवत्ताऽनुष्ठाने विहितपि नाऽवशिष्टं भविष्यति  
अत्र अस्मत्पत्रस्य यथा श्वेतया निक्षेप्यं श्लेष्माऽस्ति इति विद्वद्भिर्ना-  
लनीयम् ॥

भाषा—एकपल शुद्धपारा लेकर अरणी अथवा तितपियाकं  
रखमें २-३ रोज घोटकर गोला बनाय मुर्गके अण्डेमें रस  
दूधेर अण्डेकी खोलसे टकरा शुष्क और मुहागेसे सन्धिवन्दकर  
१-२ कपडिमिठीये शुष्कमुहागेहीकी करदे । फिर पारेसे चतुर्गुणान्धक  
लेकर पारीकरीयें धारावमें आधा मिश्रय ऊपर अण्डेरो रंग  
ऊपरसे आधे गन्धकमें टकरा धरावममृदुमें बन्दकर अण्डेही-  
सफेदी, मुहागा और जल इनसे कपडिमिठीकर ऊपरसे मुल्तानी  
बगैरहसे २-३ कपडिमिठीकरदे । मुरनयेर बालुकायत्रमें बन्दकर  
८ पहली अभिदेवर म्याकसोतलहोनेपर मित्राल्मर रसठोड़े ।  
इसमेंसे २-३ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे यह हमस्तो-  
गोंको दूरकरताहै ॥ ११८ ॥

### ११९ रससिन्दूरम् ( दशमम् )

अथ यद्ये रसेन्द्रस्य सिन्दूरः प्रमुत्तमः ।  
मूर्तं पलं समं गर्धं मर्दितं कज्जलीतनम् ॥ ५६६ ॥  
कुमार्याः स्वरमेनेन यामद्वयविमर्दनात् ।  
दिलाहदिङ्गुक्रमेणानां विमलादितुल्यं क्रमान् ॥ ५६७ ॥

प्रत्येकं गन्धकाशेय घेदसहपतुलां तथा ।  
 कुमारीस्थरसेनेय द्वियामं मर्दयेदसम् ॥ ५६८ ॥  
 काचकृष्णं विनिक्षिप्य यस्त्रमृत्तिरया युतम् ।  
 पत्मीकमृत्तिकामये पुष्पुटाण्डरसे क्षिपेत् ॥ ५६९ ॥  
 मापयुपसमायुक्तं मर्दयेत्कज्जलोपमम् ।  
 यस्त्रं संलिय्य तालानां पत्रमानदलान्वितम् ॥ ५७० ॥  
 सतयस्त्रैः समालिय्य पूर्वमृत्तुणान्वितम् ।  
 तालपत्रोच्छ्रयं कृत्वा कृपिकां लेपयेन्मृदा ॥ ५७१ ॥  
 सिन्दूरमारणे चैव रसकर्मणि शस्यते ।  
 तस्यां पूर्वरसे क्षित्वा घटिकां यस्त्रतो न्यसेत् ॥ ५७२ ॥  
 मृदा मृत्तुणैः सन्धिं घालुकायन्त्रके क्षिपेत् ।  
 क्रमाऽग्निनाऽर्क्यामं तु सिन्दूरं भवति ध्रुवम् ॥ ५७३ ॥  
 पद्भुजे गन्धके जीर्णे रसो व्याधिहरो भवेत् ।  
 अथ सिन्दूरयणान्द्वयं कारयित्वा समासतः ॥ ५७४ ॥  
 सरंरोगहरं नृणां घलीपलितनाशनम् ।  
 उपपातकसम्भृततुष्टादीनां त्रिनाशनम् ॥  
 महामुलककरञ्चैव दैवानामपि दुर्लभम् ॥ ५७५ ॥

र. क. यो., रसायने ।

भाषा—शुद्ध पाठा भौर गन्धक १-१ भाग लेकर नील-  
 वर्णकज्जलीकर २ पहर घोंडावारकरसे मर्दनकर मैनासिल, दिग-  
 रिक और धान्याम्रक ४-४ भाग, लसमापी २ भाग लेकर  
 प्रत्येकको क्रमसे मिलाकर कुमारीकेरसे २ पहरमर्दनकर सुसा-  
 कर फिरसे कज्जलीकर आतसीशीशीमें बालदे परन्तु दीमककी  
 मिठी, मुर्गीके अण्डेकी सफेदी, उफ्फा घुप मिलाकर मोमके-  
 स्या पीसकर कपड़ेपर लेपेदेकर आतसीशीशीपर कपड़मिगीक-  
 रके सुखाने ऐसे ७ कपड़मिठी देकर सुखार्द्धुई आतसीशीशी-  
 होनीचाहिये । रससिन्दूर बनानेमें इसीउद्ये शीशीपर कपड़-  
 मिठी करनेमें बहुत मजबूत शीशीतयाराहोतीहै दूदनेकी शाखा-  
 नहीं रहनी । फिर शीशीको बालुकायन्त्रमें चढ़ाकर गन्धकजीर्ण  
 होनेपर खड़ियामिगी अथवा पुरानी ईंटकी डाढल्याकर धुवोंज  
 मिश्रीमें रोधानमक मिलाकर डाढवीछगि बन्दकरदे और  
 इसीका कपड़ेपर लेपेदेकर मुदर ७ कपड़मिठी देकर महादेव  
 बैसा बनादे । सुखनेपर भन्द, मध्य और उर इसप्रकारसे १२  
 पहरकी आचदे । स्वाप्रतीतलहोनेपर नीचे और ऊपरका तमामरस  
 निकालकर पूर्वप्रमाणमें गन्धक बालकर दो अथवा चार पहरतक  
 घोंडावारकरसे मर्दनकर सुपाकर पहिलेकीउद्ये १२ पहर पकावे ।  
 इसउद्ये सातशीशिया उतारकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रतीथे  
 ३ रतीतककीमात्रा तसप्रोगहरानुपाननेसाथ देनेसे यह तमाम-  
 रोगोंको नष्टकरताहै । प्रायश्चित्तकरके पन्थपूर्वक इसकासेवनकरनेसे  
 स्वभाविक दुःसाध्य कुष्ठदिककाभी नाशहोताहै सातवींशीशीमें  
 को नीचेका भागहै उसे फेकनहीं देना उसमें अम्रक और ल्हा-  
 मापीकी तैयारभस्ममिलेगी । इसकी ३-३ रतीकीमात्रा उचि-  
 तानुपाननेसाथ देनेसे श्वास, कास, कण्ठ्यक प्रथतिनष्टहोतीहै ११९

## १२० रससिन्दूरानुपानानि

शुभेऽहि षट्पत्रात्रस्य सेवनात्सकलामयान् ।  
 जयेदानु प्रयुक्तोऽयं विष्णुचक्रमियाऽसुरान् ॥ ५७६ ॥  
 भूयो रोगविशेषेषु हानुपानविधि यथा ।  
 ज्वरेषु जीरकृष्णाभ्यां निर्गुण्डया सन्निपातके ॥ ५७७ ॥  
 मृद्वीकया सितायुक्तं रक्तपित्तेषु योजयेत् ।  
 पिप्पल्यामधुनायाऽपि श्वासकासेषु योजयेत् ॥ ५७८ ॥  
 घृतेन राजयश्मान्मुष्णेषु शीतवारिणा ।  
 अरुन्धो मातुलुङ्गेन छाजाचूर्णेन छर्दिषु ॥ ५७९ ॥  
 मदात्यये निम्बनीरे सितायुक्तञ्च क्षापयेत् ।  
 नारिकेलजलेनैव सूच्यो कल्याणकाह्वये ॥ ५८० ॥  
 अपस्मारं च सभ्यामे भृङ्गनीरेण योजयेत् ।  
 चतुःसमेन युक्तञ्च ज्वरे च सन्निपातके ॥ ५८१ ॥  
 गुण्टीजीरकरजातीभिर्विमुच्यञ्च विनोपतः ।  
 धान्यनागरनिर्घृदरजीर्णं पत्रमेदके ॥ ५८२ ॥  
 चाह्वयो प्ररणीदांये सातये भृष्टा हरीतकी ।  
 अथवा भृष्टगुण्ट्या च तीक्ष्णैः क्षीणे च पानसे ॥ ५८३ ॥  
 याक्षुचीचक्रजीर्णैश्च कुष्ठेषु रज्जिरेण वा ।  
 मांसपूर्णे च यातेषु तैले वा लघुनेन वा ॥ ५८४ ॥  
 आस्थ्यास्फोटं चन्दनेन याताक्षी फोफिलाक्ष्णैः ।  
 दन्तधायनसारणेन दन्तरोगे विशेषतः ॥ ५८५ ॥  
 पेल्लेयेन चियन्धेषु दिग्माऽऽमाने कुलरथजैः ।  
 कासप्राऽऽर्द्रकायायेण क्षयरोगां विनश्यति ॥ ५८६ ॥  
 कदलीभुरसेनेन शुक्रवृद्धिः प्रजायते ।  
 मेधावृद्धिर्बलं पुंसां कान्तिपुष्टिर्धनवर्धनम् ॥ ५८७ ॥  
 आयुःप्रवर्धनञ्चैव घलीपलितनाशनम् ।  
 सतताऽभ्यासयोगेन जीयेद्वर्षात् नरः ॥  
 मधुराहारयुक्तस्य देहसिद्धिकरं परम् ॥ ५८८ ॥

र. क. यो ।

टि०—“इदंरक्तोदरनुष बहौद्रांनुनलप्रमयुमसेन्द्र । विषा-  
 गिनाशीरुतय पथ्य मुतोदन वा क्षयजिह्व ॥” इति रसाञ्जतारे  
 दशके ॥

भाषा—अनुकूलचन्द्रनादिकोंमें ३-३ रतीके प्रयोग-  
 करनेसे स्वर्णसिन्दूर विंवा रससिन्दूर समस्त रोगोंको इसउद्ये  
 नष्टकरताहै जैसे विष्णुभवानका चक्र अनुष्टोका नाशकरता है ।  
 विशेषरोगोंमें अधोलिखितप्रकारसे अनुपान समझना । ज्वरोंमें  
 जीरा और पीपल, सन्निपातमें निर्गुण्टी, रक्तपित्तमें शकरयुक्त  
 दास, श्वास और कासमें मधु तथा पीपल, राजयश्ममें घृत,  
 उष्णरोगोंमें छाजाजल, अरुचिमें विनोरा, कमनमें लाजवूर्ण,  
 मदात्ययमें नीमकाजल अथवा शर्करा, सूच्योमें नारियलका जल  
 अथवा पित्तपापडा या कल्याणपूत, श्वास और अपस्मारमें  
 मंशरा, ज्वर और सन्निपातोंमें औचित्ती देसकर चतुःसम-  
 चूर्णकेसाथ देना । (हरि, लौण, सैन्धव, अनवादन (१)  
 चन्दन, जगर, कस्तूरी और केदार (२) जायफल, लवङ्ग,



सौकी गमीसे त्रिसप्तमय अत्यन्त प्यासलगे और किसीसे शान्त न होती हो उससमय इसयोलीको मुहमें रखनेको देनेसे बहुतशीघ्र प्यास चलीजातीहै । इसे अभिस्थायीकरना हो तो रीठके कल्कलेमें डालकर तितितियाकास भरकर तितितिया और वगैरामीके चतुर्गुणितकल्कमें बन्दकर इतनी आचदेवे कि कल्क मानहीजले । ऐसे जबतक अभिस्थायी न हो तबतक करता जाय । अभिस्थायी होनेपर अधिकआचलगेसे बोलीका स्वरूप विगड़नेका सम्भवहै । इसतरह अभिस्थायी होनेसेबाद इसे दूधमें उबालकर पीनेसे शुक्रदोष निवृत्त होकर तमामघातुओंकी शुद्धिहोतीहै और मन्दाग्नि नष्टहोताहै ॥ १२३ ॥

### १२४ रसादिगुटिका ( तृतीया )

पारदस्तालको गन्धल्लयः शुद्धा समाः स्मृता ।  
जातीफलं जातिकोपं भक्ष्यार्थाजं लघुद्रवम् ॥ ५९४ ॥  
यवानी तुत्यकं शुद्धं शुद्धं स्वयं समं पृथक् ।  
नागवल्लीद्वारसे मर्दयेत्प्रहृष्टयम् ॥ ५९५ ॥  
अस्पृहानिसोधानस्य नीरैरपि तथाधिषम् ।  
अष्टगुजामिता कार्या गुटिका च भिन्नग्वरैः ॥ ५९६ ॥  
प्रभाते चैव सायाह्ने यदी देया विशेषतः ।  
मधुना नीरयुक्तेन गिलेत्ता ये बटी शुभाः ॥ ५९७ ॥  
पक्षाघातं निहन्त्यानु रसादिगुटिका त्वियम् ।  
चन्द्रेन समाख्याता योगरत्नसमुच्चये ॥ ५९८ ॥

र सु, घातव्याध्याधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और रसमागिकय, जायफल, कर्पूरी, गानेकेबीज, लौह, अजवाइन, तुषमरस, सोंठ, मिर्च, पीपल सष समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारे, गन्धक सप्ता पीपली (यूनानी) कीजइकेस्वरस अथवा कायोंसे २-२ रके छुआ लिकर ८-८ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे पीपली शुद्धशाम मधुकेचूर्णवैसाध निगलनेसे यह पक्षा- नही रहत नष्टकरतीहै ॥ १२४ ॥

### होनेपर १२५ रसादिचूर्णम् ( पारदादिचूर्णम् )

मिर्चि-गन्धकचूर्णैः शैलोशीरमरीचकैः ।  
इसीक-द्वैश्च सूर्यं चूर्णमहमुत्तरे ॥ ५९९ ॥  
जैसा बनादे । सूखनेवादेतिवैपर्युपितायु च ।  
पहरकी आचदे । स्वात्तवाताभिवेन्यप्रकाशितम् ॥ ६०० ॥  
निकालकर पूर्वप्रमाणमें गन्ध, व रा, र प्र, यो र, र च, र घोजुनारकेरसे मर्दनकर सुखाकर, तुणायाम् । र च, र म, एत इततरह सावरोशिया उतारकर रने शैलोशीरचित्रकै इति पय ३ रतीकक्रीमाया तत्तदोगहृत्तपान, र सु, रसायनस्य, र का रोगोंको नष्टकरताहै । प्रायश्चित्तकरके फ  
सम्भावत दुःसाध्य कुशादिकामो नाकपूर, छड़ीला, रस और जो भीचेका भागहै उसे फेंकनहीं देना उक्तचूर्णकर पारेगन्धकनी माखीकी तैयारभस्ममिलेगी । इसकी ३-३ मर्दनकर बराबरकी तातुपानकेसाथ देनेसे श्वास वास, पण्डित्य प्रशति,

शरकरेसाथ ३-३ रती प्राप्तकाललेकर वासीपानी पीनेसे अत्यन्तबड़ीहुई तृपाको यह नष्टकरताहै ॥ १२५ ॥

### १२६ रसाध्रगुग्म

सुवने विप्रगेहेषु पत्रिका देवकन्दली ।  
पवित्रा सर्वदेवानां मस्तकादिमनोहरी ॥ ६०१ ॥  
शुद्धसुतर्मानिय सममन्त्रेण मेलयेत् ।  
तस्या रसं विनिक्षिप्य मर्दयेत्तुतमन्त्रकम् ॥ ६०२ ॥  
याममात्रेण तत्सर्वं मिलत्येकत्र निश्चितम् ।  
पिण्डरूपमिदं सर्वं धृष्यते दिवसत्रयम् ॥ ६०३ ॥  
काचदूष्ये विनि क्षिप्य बालुकायत्रमध्यगम् ।  
देवकन्दल्यष्टीनां ज्वालयेद्याममात्रकम् ॥ ६०४ ॥  
पश्चादपरकाष्ठानि ज्वालयनीयानि यत्नतः ।  
द्वादशग्रहरस्यान्ते शीतीभूतं तदुद्धरेत् ॥ ६०५ ॥  
रक्षिकान्नितर्य दत्त्वा मधुना सह भक्षणं ।  
अत्यग्निं कुरुते दीप्तमतिपार्श्वं करोति च ॥ ६०६ ॥  
अश्लीणाश्च जायेत कल्पजीवी भवेन्नरः ।  
जराजर्जरेदेहानां पलितानि विनाशयेत् ।  
यामादपि भवेच्छ्रीमान्मतिमांश्च भवेद्भुष्य ॥ ६०७ ॥  
रसवि, रसायने ।

भाषा—शुद्ध पारा और अभ्रक समभागलेकर १-२ दिन शुष्कमर्दनकर देवकन्दलीके कन्दके रससे मर्दनकरनेसे १ पहरमें वेसब मिलकर गोला जैसा बनजायगा पर इसको तीनरोजतक उशीरसकेसाथ अलण्डमर्दनकरते रहना, अखीरमें यह चूर्णके रूपमें होजायगा । इसे सुखाकर ६-७ कपडिमिठीदीहुई सफेद आतशीशीशीमें भरके बालुकायत्रमें १२ देवकन्दलीके सुखे बण्ड- लोंसे एवपहर अग्नि देकर फिर किसीभी सारिष्टिकाष्टकी क्रमशः १२ पहरकी अग्निदेवे । स्वात्तशीतल होनेपर निकालकर रख छोड़े । इसमेंसे ३-३ रतीकीमात्रा मधुकेसाथ देनेसे यह जठ- राग्निको अत्यन्तप्रदीप्तकर अत्यधिकमोजनको पचाताहै । इसके निरन्तर सेवनकरनेसे बलीपक्षितोंजैसाध बुझापा दूरहोकर सर्वा- ह्वरिपुण होताहुआ दीर्घायुको प्राप्तहोजाताहै ॥ १२६ ॥

### १२७ रसाध्रगुगुलुः

कर्पद्वयं पारदस्य लौहं गन्धश्च तत्समम् ।  
लोहगन्धसमञ्जसं गुग्गुलुं कुडवद्वयम् ॥ ६०८ ॥  
अमृताया रसप्रस्थे रसप्रस्थे फलत्रिकात् ।  
सान्द्रीभूते रसे तस्मिन् क्षेपं दत्त्वा विचक्षणः ॥ ६०९ ॥  
त्रिकटु त्रिफला दन्ती गुदूची चेन्द्रवारणी ।  
विडङ्गं नागपुष्पञ्च जिघृता च सुचूर्णिका ॥ ६१० ॥  
प्रत्येकं कर्पमादाय सर्वमेकत्र कारयेत् ।  
मक्षयेत्कोलमात्रन्तु छिन्नाकायाऽनुपानतः ॥ ६११ ॥  
वातरक्तं महाघोरं स्फुटितं गलितजयेत् ।  
अष्टदशविधं कुष्ठं ह्मिरोगाऽश्मरीं तथा ॥ ६१२ ॥  
मगन्दरं गुदग्रंश्च भवेत्कुष्ठं सकामलम् ।  
अपची गण्डमालाश्च पामाकण्डविचर्चिका ॥ ६१३ ॥



चर्मकीलं महादुःखं माशयेन्नाऽत्र संशयः ।

वातरक्तचिनाशाय धन्वन्तरिकृतः पुरा ॥

रसाऽध्रुगुगुलुः ख्यातो वातरक्तेऽमृतोपमः ॥६१॥

मे. र., वातरक्त ।

भाषा—शुद्धपात, लोहमस्य और शुद्धगन्धक २-२ कप, अग्रक्रमस्य ४ कप, शुद्धगुल ८ पल लेकर गिलोय और त्रिफलाके चतुर्भागावशित १-१ प्रस्थ बाथमें गुल और अन्य-बीजोंको डालकर मन्दाग्निमें पकावे । चासनीके सहस्र होनेपर त्रिफु, त्रिफला, दन्तीमूल, गिलोय, इन्द्रायणीजड़, विडङ्ग, नागकेसर, निसोत, इनका चूर्ण १-१ कप क्रमसे मिलाकर घोटै । एकजीवहोनेपर हारवे बराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गिलोयके कायकेसाय खानेमें तमाम वदनमें फूटकर गलितावस्थाको प्राप्तहुआ वातरक्त, अकारहृदय, क्रिमि, पथरी, भगन्दर, शुद्धशंख, सफेददुष्ट, कामला, अपची, गण्डमाला, पामा, खजली, विषचिह्न, मस्ते, महादुःख इनसमस्त यह नष्ट-करताहै इसके सेवनमें क्षारका त्यागकरना उचित है ॥ १२७ ॥

### १२८ रसाऽध्रुगुदी

सहदेवी यला चैव सूर्यावतौऽथ मारिषः ।

अपामार्गाऽमृता चैव सम्यक् सम्पादयेत्त्रिपक्व ६१५

एषां पलानि चत्वारि प्रत्येकं कुट्टयेत्ततः ।

अत ऊर्ध्वञ्च तदस्या मण्डूरं यत्पुस्तनम् ॥ ६१६ ॥

गोमूत्रेण पचैत्तावद्यावन्नोमृप्रशोषणम् ।

तस्मादुद्धृत्य तच्चूर्णं कुर्यात्पलचतुष्टयम् ॥ ६१७ ॥

त्रिकटु त्रिफला मुस्तं शुङ्खची चित्रकं प्रिवृत् ।

दन्ती विडङ्गमेकैकं कर्मपेपान्तु चूर्णयेत् ॥ ६१८ ॥

एकपत्रीकृतस्याऽथ यज्जकाप्रस्य यत्पलम् ।

चार्यन्नाऽम्भस्त्रिरात्रस्य चारिपर्णीरसाप्लुतम् ॥ ६१९ ॥

आतपे शोषयेत्तद्दिने दिनमेकं सुरक्षया ।

सूरणस्य रमेः पिप्पला तत्र द्रुणकस्य च ॥ ६२० ॥

दत्त्वाऽष्टौ मायकास्तत्र पुष्टपाकेन पाचयेत् ।

रूमन्ये सुखेदं पात्रे मृदुना गोमयाऽग्निना ॥ ६२१ ॥

रसाह्विदशमाप्राश्च कर्णं गन्धकतः पृथक् ।

रमे मण्डूकपर्ण्याश्च मूर्च्छितौ कज्जलीरतौ ॥ ६२२ ॥

धृतस्य मधुनश्चाऽपि पृथक् पलचतुष्टयम् ।

तत्सर्वमेतत्तः एव्या खिग्धे माण्डे निधापयेत् ॥ ६२३ ॥

ततोऽष्टौ मायकान् खादेदयथा द्वादशैव च ।

कर्णं याऽपि तथा कुर्याद् युद्धा दोषबलायलम् ॥ ६२४ ॥

गुण्यश्चापि पिथेट्रेगी यक्षो मन्दत्यमागते ।

ततोऽष्टानुपानञ्च मेयेत प्रहणीमदे ॥

अजाधरीरानुपानञ्च भ्यामे कामे प्रयोजयेत् ॥ ६२५ ॥

प, र. र., रसायने ।

भाषा—सहदेवी, चोटी, दूरदूर अथवा सूर्यनुगी, रमां, अपामार्ग, गिलोय इनप्रत्येकका दसपल ४-४ पल लेकर १०० कपसे पुरानेमण्डूरका बारीकचूर्ण पूर्वोक्तगोको डालकर

लोहेकी खरलमें पीसे । मन्स्वन्रजसा होनेपर १९ अथवा ८ शुने गोमूत्रमें पल ४ डालकर पकावे और बीच २ में चलाताजाय । गोमूत्र सूखजानेपर उतारकर त्रिकटु, त्रिफला, नागसोया, गिलोय, चित्रकमूल, निसोत, दन्तीमूल और विडङ्ग १-१ कप, धान्याश्रकियाहुआ बज्राश्रक १ पल लेकर भातडालकर रक्खेहुए अत्यन्तखेद पानी और सेवारकेरसमें भिगोभिगोकर कड़ीधूपमें १-१ रोजसुखावे । इसमें ८ मासे मुहागादेकर जूहरीसुरणकेरससे पीस गोलाबनाय जूहरीसुरणके अन्दर रखकर ६-७ कपइमिटीकर सुखारर जललीकण्डोंका हल्का पुट्टे जिनमें कि सुरणकारस जलकर गोलेका रससुखजाय । स्वाज्ञरीतलोहोनेपर निकालकर रक्खे । फिर शुद्धपात १२ मासे, शुद्धगन्धक १ कप लेकर नीलवर्णकजलीबनाय मण्डूकपर्णकेरसमें १-२ रोज घोट कर कजलीबनाय पुतना घी और मधु ४-४ पल, कजली और पुट्टदियाहुआ मण्डूरसबको इकट्ठे मिलाय चिकनेवर्तनमें रखछोड़े । ७-८ रोजकेबाद इसमेंसे रोगी और रोगकाबलाबल देखकर ३ मासेसे १ तोलेतककी मात्राखिलाकर क्करसे दूधपिलानेसे मन्दाग्नि नष्टहोताहै । प्रहणीमें गरमजलकेसाय और खास, कासमें वररीके दूधकेसाय देवे ॥ १२८ ॥

### १२९ रसाऽध्रुमण्डूरम्

गन्धकान्यरसूतानां प्रत्येकं शुक्तिमानकम् ।

संदोध्य चूर्णितं कृत्वा मण्डूरं मुष्टिकद्वयम् ॥ ६२६ ॥

प्रसृतञ्च हरीतरण्याः पापाणस्तुनः पिचून् ।

कर्पकं कान्तलोहस्य सर्वं रौद्रि विभावयेत् ॥ ६२७ ॥

भृङ्गाराजरसप्रस्ये केशाराजरसे तथा ।

निर्गुण्डीमानकन्दानामाद्रिकस्य रसेऽपि ॥ ६२८ ॥

त्रिकटुत्रिफलाचन्यमुस्तैकानां पृथक्पृथक् ।

कर्पकं क्षिपेच्चूर्णं मदेयेन्मधुसर्पिणा ॥ ६२९ ॥

भक्षयेत्प्रातरुप्याय मात्रया युक्तिः पुमान् ।

निहन्ति सर्वज्ञं शोषं सर्वाङ्गकाङ्गसंश्रयम् ॥ ६३० ॥

कासश्वासतृपादाहमोहच्छादित्युतं तथा ।

अम्लपित्तं निहन्त्येव शूलमदधिघ्नयेत् ॥ ६३१ ॥

अग्निवृद्धिकरं वृष्यं हृद्यं घातानुलोमनम् ।

कामलां पाण्डुरोगञ्च श्लेष्मकुष्ठार्शचिज्वरम् ॥

श्रीहनुस्मोदरं हन्ति प्रहर्षां समराहिकाम् ॥ ६३२ ॥

मे. र., गोषाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पात, अग्रक्रमस्य २-२ कप,

वारीक पिप्पलाहुआ शुद्धमण्डूर और हरे २-२ पल, त्रिफुल्ल

३ कप, कान्तलोहमस्य १ कप लेकर सबकी नीलवर्णकजली

अंश, कालभंगरा, निर्गुण्डी, मानकन्द और अदरराक १-१

प्रत्येकमें डालकर तीक्ष्णपत्रमें सुखावे । फिर त्रिकटु, त्रिफला,

चन्य, नागसोया इनप्रत्येकका १-१ कप गुण्डालकर अच्छीत-

रद घोटकर कपइजानकरसे और मधु तथा घी अन्दाजसे मिला-

कर मदेनकर चिकनेवर्तनमें रखछोड़े । इसमेंसे १ मासेसे ३

मासेतक मुखमें खानेसे एकाग्र दिनेपत्रतोष, कण्ठ, श्वेत,

तृपा, दाह, मोह, वमन, अम्लपित्त, आठ्प्रकारका शूल, मन्दाग्नि, पातुक्षय, हृद्रोग, उदासिते, कामला, पाण्डु, श्लेष्मकुष्ठ, अश्वि, ज्वर, ग्रीह, शुल्म, उदररोग, ग्रहणी, प्रवाहिना इनसबको यह नष्टकरता है ॥ ११९ ॥

### १३० रसामृतसरः (प्रथमः)

रसस्य द्विगुणं गन्धं माक्षिकञ्च शिलाजतु ।  
शुद्धचीं चन्दनं द्राक्षां मधुपुष्पञ्च धान्यकम् ॥ ६३३ ॥  
कुटजस्य त्वचं बीजं धातकीं निम्बपत्रकम् ।  
यष्टीमधुसमायुक्तं मधुशर्करयान्वितम् ॥ ६३४ ॥  
चिथिना मर्दयित्वा तु कर्पमात्रन्तु भक्षयेत् ।  
धारोष्णपयसा युक्तं प्रातरेव समुत्थितः ॥ ६३५ ॥  
पित्तं तथाऽम्लपित्तञ्च रक्तपित्तं विशेषतः ।  
निहन्ति सर्वदेहपञ्च ज्वरं सर्वं न संशयः ॥  
रसामृतरसो नाम गहनानन्दभाषितः ॥ ६३६ ॥

र. सं., र. क., र. सु., भ., र. च., रक्षिते ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा., सोनामाखी, शिलाजीत, गिलोय, लोकेदचन्दन, द्राक्ष, मधुएकेफूल, धनिया, इरियाकीछाल और बीज, धावड़ीकेफूल, नीमकेपत्र, मुल्हठी १-१ भाग लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धकी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर १-२ दिन घोटकर शिलाजीत वगैरहोने एकजीन करदे फिर सबकी बराबर शकर मिलाकर मधुमें आधे आधे तोलेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ से २ गोलीतक प्रातः काल खाकर धारोष्ण दूध पीनेसे पित्त, अम्लपित्त, रक्तपित्त, त्रिदोषजज्वर इनसबको यह नष्टकरता है ॥ १२० ॥

### १३१ रसामृतसरः (द्वितीयः)

त्रिकटु त्रिफला मुस्ता पिडङ्गश्चित्रकं तथा ।  
एषां सञ्चर्णितानान्तु प्रत्येकान्तु पलं भवेत् ॥ ६३७ ॥  
कर्पवृक्षं गन्धकस्य तदर्थं पारदस्य च ।  
विडालपद्ममात्रन्तु लिह्यात्समधुसर्पिषा ॥ ६३८ ॥  
शीतोदकं चातुपिबेत्कमाद्रव्यं पयस्तथा ।  
अम्लपित्ताऽग्निमान्यञ्च परिणामरजं तथा ॥  
कामलां पाण्डुरोगञ्च हन्यादेतद्रसायनम् ॥ ६३९ ॥

यो. र., वृ. यो. त., र. कौ., र. क. ल., नि. र., रसायनसं., टो., र. का., वै. चि., चि. क., अम्लपित्ते ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोया, विडङ्ग और चित्रक-मूल १-१ पल, शुद्धगन्धक २ कर्ष और पारा १ कर्ष लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारेगन्धकी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर सबकीबराबर शकर, और मधु मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे आधेतोलेसे एकतोलतक खाकर टंडापानी अथवा दूध पीवे तो इससे अम्लपित्त, मन्दाग्नि, परिणामशूल, कामला, पाण्डुरोग इनसबको यह नष्टकर आयुको बढ़ाता है ॥ १२१ ॥

### १३२ रसामृतसरः (तृतीयः)

मातुलुङ्गद्रवैः सूतं भाषितं वासरावधि ।  
गन्धकञ्च पलान्यष्टौ नागं तत्पादसंयुतम् ॥ ६४० ॥  
एकीकृत्याऽथ सम्भाव्य हस्तिशुण्डीरसेस्तथा ।  
धूमसारैस्त्र्यहं भाव्यं रामठेन त्र्यहं त्र्यहम् ॥ ६४१ ॥  
शुष्कं काचघटे न्यस्य यामानष्टौ प्रदीपयेत् ।  
सिकताख्येन यन्त्रेण वैधो बुद्धिविशारदः ॥ ६४२ ॥  
रक्तिकाद्वित्यं सेव्यं मदात्ययनिवृत्तये ।  
मधुनाऽऽमलकैः नित्यं राजार्हन्तु रसामृतम् ॥ ६४३ ॥  
र. सु., र. प्र., र. क., मूलाऽधिकारे ।

भाषा—८ पल शुद्धपारेको एकोड़ विजोरेकेरससे मर्दनकर शुद्धगन्धक ८ पल और नागभस्म २ पल लेकर सबको इक्के मर्दनकर हस्तिशुण्डी, शृङ्गधूम, और होंगके यथासम्भार स्वरस अथवा बायोसे ३-२ दिन भावनाएं देकर सुखाकर आतशी-शीरीमें रख बालुकायन्त्रमें ८ पहरकी अमिदेकर पकावे । स्वाश्रयतीतलोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती मधु और आंवलेकेचूर्णकेसाथ लेनेसे मदात्यययोग दूर होता है ।

### १३३ रसायनवटी

क्षारं मल्लजमीशजं शुभतरं संशोध्य बलैर्धनैः,  
रुत्या पोष्टलिकां सुतगुल्लचितां तां काजिके निम्बुजे ।  
दोलायग्रगतां पचेच्च सलिले कृष्माण्डजे निर्मले,  
नोचेत्सप्तपुटे विमर्दितमसं तुर्येण गन्धेन च ॥ ६४४ ॥  
तुर्येणैव सुतङ्गुणेन विपचैन्निघातके खातके,  
पञ्चाशतीतलमुद्धतं शुभतरैरिष्टभारसे मर्दितम् ।  
अष्टाविंशतिवारकं द्दलरसेः श्रीद्रोणगुप्पीमयैः,  
ताम्बूलीदलसम्भवैः शुभतरैस्तुर्येण सम्मलेयत् ६४५ ॥  
छायायां खदिरोत्पपत्रजनितैः श्रीकारवेल्ल्यारसे,  
रेवं विंशतिवारकं सुवटिकां सिद्धार्थतथाऽधिकाम् ।  
खादेत्प्रागुद्याद् द्वौर्देिनमनु श्लेष्मोत्थरोगे ज्वरे,  
बह्ममाणं रुधिरादिसम्भवयुतं रोगं तथ्यऽऽप्रादिवत्,  
अस्थित्वयिहितं शिरोगततृजं पादादिजातां रजैः,  
विस्फोटद्विद्वजं रसायनवटी सा नाशयेन्निश्चितम् ।  
धीघन्वन्तरिण्येमाशु रचिता देवाहता तत्क्षणतः,  
खाद्या तत्करणेः सदा मतिमता राज्ञां सदा सम्मता ॥  
र. प्र., श्लेष्मरोगे ।

भाषा—शोषनकियेहुए पारेको १०८ बार मोटेकपड़ेमें रफ २ कर छानले जिसमें कि उसरी तमामकालिमा कपड़ेपर जानाय फिर दूधमें बोधन कियाहुआसोमल और पारा ४-४ तोले लेकर एक जगह शुद्धमर्दनकर नीचुकारस अथवा काष्ठी बोझी २ बालकर इसतरह मर्दनकरे कि गोलीहोजाय फिर इस-गोलीको गाढ़े मलमलके टुकड़ेमें बांधकर बोलायन्त्र बनावे और काष्ठी, नीचु तथा सफेदरौहरेके रसोंमें बालकर ४-४ पहर स्वेदनकरे परन्तु यह ध्यानरखे कि गोली द्रवोंसे ४ अङ्गुल

ऊंचीरहे और उफान खाकर द्रवभी उसको स्पर्श न करके केवल वाष्पहीलगे । फिर इसगोलीसे चतुर्थीतान्त्रिक और सुहागा मिलाय पूर्ववत् एकदिन खरलकर शरावमस्युद्धमें बन्दकर निवासस्थानमें एकनालित्का गढ़ा बनाकर सेरसर जलली-कण्डोंके टुकड़ोंसे ढककर आंचलावे । स्वाध्यायीतलोहनेपर निका-लकर गिलोयकेस्वरससे १ रोज मर्दनकर पूर्ववत् सम्युद्धकर आंचदे । ऐसे २८ आंचे देकर पूर्ववत् चतुर्थीश गन्धक और सुहागा मिलाकर धीबुवारकीकन्दसे मर्दनकर पूर्ववत् २८ आंचे दे फिर घृणा और पानकेरसोसे मर्दनकर २८-२८ आंचे दे । यहध्यानरहे कि दूसरे-द्रवमें जब मर्दनकरनाशुरूकरे उसमय प्रथमवार मूलद्रव्यसेचतुर्थीश गन्धक और सुहागा मिलालियाकर फिर २७ बार बेतेही आंच देवे । तदनन्तर रौर और केलेकेरससे २१-२१ दिन केवल-मर्दनकर कुछ सरसोसेपही गोलिये बनाकर छायाशुष्ककर रख-छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाधदेनेसे श्लेष्मरोग, ज्वर, राजयक्ष्म, रुधिरविकार, आमवात, अस्थि और त्वरदोष, शिरोरोग, हस्तपादादिगमरोग, विस्फोटप्रवृत्ति समस्तरोगोंको यह निधयरूपसे नष्टकरतीहै ॥ १३३ ॥

### १३४ रसायनामृतलोहम्

त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडङ्गं जीरकद्वयम् ।  
यमानीद्वयभूनिम्यं त्रिवृद्धन्ती च निम्यकम् ॥ ६४८ ॥  
सर्वेषां कार्पिकं भागं सैन्धवं कर्पमम्रकम् ।  
खण्डं पीडशपलं प्रस्थञ्च त्रिफलाजलम् ॥ ६४९ ॥  
जम्बीराणां रसं दद्यात्पलपीडशकं तथा ।  
पाच्ये सर्वं प्रयत्नेन लौहं दत्त्वा पलद्वयम् ॥ ६५० ॥  
सिद्धे पाके पुनर्देयं घृतं पलचतुष्टयम् ।  
सर्वरोगेषु संयोज्यं महामृतसरसायनम् ॥ ६५१ ॥  
गुल्मं पञ्चविधं हन्ति यक्षुर्लूहीहोदराणि च ।  
कामलां पाण्डुरोगञ्च शोथं जीर्णज्वरं तथा ।  
रोगान्सर्वाग्निहन्त्याद्यु भास्करस्तिमिरं यथा ॥ ६५२ ॥  
भै. र. घ., गुल्मे ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोथा, विडङ्ग, दोनोंजीरे, दोनों अजवाइन, बिरायता, निरोत, दन्तीमूल, नीमकीछाल, रोधानमक, अम्रकमस, येसन १-१ कर्प, शरर १६ पल, त्रिफलात्राकाङ्गा १ प्रस्थ, जम्बीरीकाश १६ पल, लोहमस २ पल लेकर सबको इन्हे मिलाकर धीमीआवसे पसावे । लूकी चातनीहोनेपर ४ पल पुराना धी टालकर उतारले । ६-७ दिन धीतमानेपर ३ मासेमे ६ मासेतक यथाप्रियल देखकर सम योचितानुगानकेसाध देनेमे ५ प्रकारके गुल्म, यक्षु, गीहा, उदरोग, कामला, पाण्डु, शोथ और जीर्णज्वरप्रवृत्ति समस्त-रोगोंको यह दूरकरतीहै ॥ १३४ ॥

### १३५ रसेन्द्रगुटिका ( यक्ष्ती ) ( प्रथमा )

कपं गुदरसेन्द्रस्य गन्धकस्याऽन्नकस्य च ।  
ताम्रस्य हनितालस्य लोहस्य च त्रिस्य च ॥ ६५३ ॥

मनःशिलायाः क्षाराणां वीजस्य कनकस्य च ।  
मरिचस्य च सर्वेषां समं चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ ६५४ ॥  
जयन्ती चित्रकं माणं खण्डकणोऽथ मण्डुकी ।  
शक्राशनं भृङ्गराजं केशराजं तथाऽऽद्रकम् ॥ ६५५ ॥  
निर्गुण्डीस्वरसेनाऽपि घनमात्रेण मर्दयेत् ।  
कलायपरिमाणान्तु वटिकां कारयेद्विपक्व ॥ ६५६ ॥  
आर्द्रकस्वरमेनेव पञ्चकासान् व्यपोहति ।  
हन्ति ह्रिकां तथा श्वासं यक्ष्माणं सभगन्दरम् ॥ ६५७ ॥  
अग्निमान्याग्वि शोधमुदरं पाण्डुकामलम् ।  
रसायनी च वृष्या च घलवर्णप्रसादनी ॥ ६५८ ॥  
गृह्णं मधुरं क्षिग्धं मत्स्यं मांसञ्च जाह्नलम् ।  
घृतपक्वं सदा भक्ष्यं रूपं तीक्ष्णं विवर्जयेत् ॥ ६५९ ॥  
र. सं., र. चं., नि. र., घ., र. र., भै. र., र. मु., र. चि., र. क.  
कासाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अन्नक, ताम्र, हरिताल, लोह इनकीमसं, शुद्धचटनाग और मैनसिल, सबी, सुहागा, यक्ष्माण घृतकेशीज और मरिच १-१ कर्प लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्ण कजलीमें मिलाकर जैती, चित्रक, मानरन्द, जल्लिसूरण, माझी, भाग अथवा गाजा, भंगरा, कालाभंगरा, अदरक और निर्गुण्डी इनके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर मटरपरावर गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरकके रसमे देनेमे ५ प्रकारकेपाठ, दिवरी, श्वास, राजयक्ष्म, भगन्दर, मन्दागि, अरवि, शोथ, उदरोग, पाण्डु, कामला इनसबको नष्टकर धातु और बल तथा बर्गकी वृद्धिको करतीहै । धातुओंको बढ़ानेवाला मधुर और क्षिग्ध भोजन, धीमे भुनीहुईमठलियां और जल्लीमान इनका भोजनकरे । तीक्ष्ण और रूपपाशर्पीका त्यागकरे ॥ १३५ ॥

### १३६ रसेन्द्रगुटिका ( द्वितीया )

माक्षिकञ्च शिलिग्रीवमम्रकं तालकं तथा ।  
एतांस्तु मिलितान्सर्वान्भाषयेदाद्रिकद्वयेः ॥ ६६० ॥  
रक्तद्वयप्रमाणान्तु कल्पयेद्वटिकां मिषय् ।  
जीर्णाग्ने भक्षयेदेकां क्षीरमांसरसाशनः ॥ ६६१ ॥  
पञ्चकासं क्षयं श्वासं रक्तपित्तं विनाशयेत् ।  
पाण्डुकिमिज्वरहरी रुक्मानां पुष्टिर्धननी ॥ ६६२ ॥  
शुक्रवृद्धिकरी चैषा अम्लपित्तविनाशिनी ।  
यद्विसन्दीपनी श्रेष्ठा त्वरौचकविनाशिनी ॥ ६६३ ॥  
र. गं., र. चं., घ., र. र., र. मु., भै. र., कासाधिकारे । भै.  
र., यक्ष्मरोगे ।

भाषा—गोनामारी, वृत्तिया, अन्नक और हरिताल इन बीसमें सब समभाग लेकर अदरककेरसमे १-२ रोज घोटकर २-२ रतीकीगोलियां बनाकर रखछोड़े । भोजनसे पचानेपर १-१ गोली देकर दूध और मांसव पित्रासे तो ५ प्रकारकेपाठ, क्षय, श्वास, रक्तपित्त, पाण्डु, क्षिमि, ज्वर, रुक्मा, रुक्माय, अम्लपित्त, मन्दागि और अरवि इनको यह नष्टकरतीहै ॥ १३६ ॥

## १३७ रसेन्द्रगुटिका ( तृतीया )

कर्प शुद्धरसेन्द्रस्य स्वरसेन जयाऽऽर्द्रयोः ।  
शिलायां खल्ययेत्तावद्याद्यत्पिण्डं घनं भवेत् ॥ ६६४ ॥  
अम्भःकणाकामाचीयासाभि भांयित्युनः ।  
सौगन्धिकमले भृङ्गस्वरसेन सुभावितम् ॥ ६६५ ॥  
चूर्णितं रससंयुक्तमजाक्षीरपलद्वये ।  
खल्वितं घनपिण्डन्तु गुटिः स्थिन्नकलायवत् ॥ ६६६ ॥  
कृत्वाऽऽर्द्रौ शिथिमभ्यर्च्य द्विजातीन्परितोष्य च ।  
जीर्णांश्चो भक्षयेदेकां क्षीरमांसरसाशनः ॥ ६६७ ॥  
सर्वरूपं क्षयं कासं रक्तपित्तमरोचकम् ।  
अपि येद्यशस्तैस्त्यक्तमम्लपित्तं नियच्छति ॥ ६६८ ॥

श्री र, च द, वै द, यो म, डो, राजयक्ष्मणि ।

भाषा—एकतोले शुद्धपारेको भाग और अदरखेरसमे यहतक घोट कि गोलीबेधनेलायकहोआव । फिर जलपीपल, मकोय, अह्ता, पीलाकमल, भंगरा इनके रसोंमें १-१ दिन मर्दनकर २ पल बकरीकदूधसे मर्दनकरे । गाढाहोनेपर फूलेहुए मटरकेपरापर गोलिया बनाकर रखओगे । भोजन पचजावेके बाद १-१ गोली दूध अथवा मासरसकेसाथ देनेसे सवप्रकारका क्षय, कास, रक्तपित्त, अरुचि और सेकड़ों वैद्योंसे छोडाहुआ अम्लपित्त, इनसबवर्गोंको यह नष्टकरतीहे ॥ १३७ ॥

## १३८ रसेन्द्रगुटिका ( चतुर्थी )

रसेन्द्रगन्धाश्मजतुप्रवाल-

लोहानि वैद्यः समभागकानि ।

रसेन्द्रपादप्रमितञ्च हेम

विभाष्य निम्बाशनचह्नितायैः ॥ ६६९ ॥

ततो घटी र्धल्लमिता यिमर्घ

विधाय शुद्धा बहुवारपारा ।

फलत्रिककषायजलेन याऽपि

प्रातः प्रयुज्यात्प्ररूपाम्बुना वा ॥ ६७० ॥

रसेन्द्रयष्ट्यास्यगदाग्निहन्ति

घातामयान्मेहगणान्ज्वरांश्च ।

करोति पहे र्धल्लधैर्ययोश्च

वृद्धिं विशेषेण रसायनीयम् ॥ ६७१ ॥

श्री. र, सुखरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और शिलाजीत, प्रवाल और लोह भस्म, सब समभाग लेकर पारेके चतुर्थांश सुवर्णभस्म मिलाकर सारकी नीलवर्णहज्जीकर नीम, अमन, चित्ररुकी जड़, इनके यथासम्भव स्वरस अथवा ऋषोंसे १-१ रोजमर्दनकर ३-३ रसीकी गोलियां बनाकर रखओगे । इनमेंसे १-१ गोली जंगलीलसोडा, त्रिफला अथवा अगर इनक यथासम्भव स्वरस अथवा ऋषोंकेसाथ लेनेसे वातरोग, प्रमेहान, समस्तज्वर मन्दाग्नि, बलवीर्यहानि इनसबको दूरकर आयुको बढ़ातीहे ॥ १३८ ॥

## १३९ रसेन्द्रचूडामणीरसः (वृहत्तालकेश्वरः) १

कृष्णाण्डस्वरसे वराकथितके नीरे तथा निम्बुजे, नीरे शुक्तिजचूर्णजे वटजटाकाये ततः काजिके ।  
छिन्नायाः स्वरसे रसे मुनिभये पुल्लजले स्वेदितं,  
गुञ्जाबलुजतलेकेन मिलितं स्वेद्यञ्च तालं ततः ॥ ६७२ ॥  
एवं शुद्धतमं सकाञ्जिकमरेः खल्वे शुभे मर्दयेत्,  
सेड्डण्डार्कजदुग्धमेलनपरः शुष्कं रहः सप्तशः ।  
कन्यामातुलगुहपन्नजरसे दुग्धैरजासम्भवे-  
स्तैलेः प्रागुदितैर्मनाक समष्टतं तद्यत्रिका निर्मिता ॥  
मये भस्म पलाशजं शुभतरे यान्ते सुमन्थानके,  
धृत्या तत्र च तां ततस्तदुपरि द्वात्रिंशायामं पथेत् ।  
पालाशस्य हठाग्निना खदिरजे वैश्वानरैरन्यदं,  
निर्धूमं सुपरीक्षितं च यलिना तुर्येण सूतेन च ॥ ६७४ ॥  
पिष्टं खल्ववरे स्तुगादिसकलेस्तुर्येण घट्टेन च,  
सम्यक् सम्पुटयन्त्रके सुविधूतं तद्वालकायन्त्रगम् ।  
यामं द्वादशकं सुखं सुविषयचट्टाभितं दापयेत्,  
तस्माद्युर्येदिनात्परं दिनमनु हात्वा तथा धर्षयेत् ॥ ६७५ ॥  
यावद्रक्तचतुष्टयं न सहते जीर्णं शुद्धं भक्षयेत्,  
द्वात्रिंशन्मरिचैः समं समशानं पथ्यं जलेनोदनम् ।  
रोगे मीपणके सुपञ्चकृतिकः साधु भैवेन्द्रक्षणे,  
व्याध्याद्यैर्विहितं कफादिजनितं रोगं व्यधादिं हरेत् ॥  
दद्रुं सर्वविधं सुमण्डलयुतं सुमित्र घाताञ्जं,  
कुष्ठाऽऽदादशहृत्सायनमिदं खल्पापहृत्स्तस्मम् ।  
पथ्यं चाऽम्लविषजितं त्यलवणं रुक्षं मकुण्डं शुभ-  
मादक्याश्च कुलत्थकः सुचणको रोगान्तकालावधिम्

२. का, कुष्ठाधिकारे ।

भाषा—शुद्धवकीहरितालको सपेदरसोड्डा, त्रिकला, नीधु, सीपके चूनेका पानी, बटकी जटा, काजी, गिलोय, भगल्लय, शरपुद्ध, सपेदगुञ्जा और बाकुचीकतिल इनप्रत्येकके यथासम्भव-  
इससे १-१ दिन स्वेदकर रसलेमें बारीक कपडानचूर्णकर सेड्डण्ड और आक्केदूधसे ७-७ दिन मर्दनकर पीडुतार और धतूरेकास, बकरीकादूध तथा गुञ्जा और बाकुचीकतिल इन प्रत्येकसे १-१ दिन मर्दनकर टिकड़ीबनाय पलाशपत्राक्षकी सपेदराखको छानकर एक मज्जत हण्डीमें भरके बीचमें टिक-  
ड़ियोंको थोड़े २ अन्तरपर जमाय बीचमें अक्षरके टुकड़े लगादे जिसमें कि एकजे दूसरी टिकड़ी मिल न जाय । ऊपरसे पलाश-  
कीराप भरके थोड़ीसी दवादे फिर चूल्हेपर चढ़ाय पलाश, रीर और चित्ररुकी लकड़ियोंकी सेब आचये ३२ पहर क्रमसे पकावे ।  
स्वाशरीरतलदोनेपर निक्कालकर अगिर रतकर परीसाकरे । अगर निर्धूम मान्य हो तो इससे चतुर्थांश पारा और गन्धक लेकर नीलवर्णहज्जीकर मिलावे और चतुर्थांश वस्त्रभस्म मिलाकर सेड्डण्डार्कहृत्स्थोंमें १-१ रोजमर्दनकर टिकड़ियां बनाय गुग्गावर शतमममुष्टमे बन्दर १-७ कषामिद्री लगाय बाउदायक्रमे ररा

१२ पहरकी अग्नि देकर पमावे । स्वाह्मतीतलहोनेपर निकाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती उचितानुपान के साथ ४ रोजतक देवे । पांचवेंरोजसे १ रत्ती माना बढ़ावे फिर ४ दिनबाद १ रत्ती बढ़ावे । इसप्रकार ४ रत्तीतक अथवा जितनी सहन करसके उतनी बढ़ावे पर ४ रत्तीसे अधिक न देवे । इसके ऊपर ३२ बाली-मिचं पुरानेगुहमें मिलाकर रखावे । जलकेसाथ भात खानेको दे । अत्यन्तभीषण रोग हो तो बमन विरेचनादिपञ्चकर्मकरके समयोचितानुपानवेमाय देनेसे कफादिजनितरोग, दृष्ट, भण्डल-कुष्ठ, मुसि, चातरक, अठारहप्रकारके कुष्ठ, चाली (हाथपैरोंकी ऐडन) इनसुरोगोंको यह नष्टकरताहै । इसमें पथ्य अम्ल और लवणकी छोड़कर रुक्ष, मोठ, अरहर, फुल्यी और चने देना जबतक कि रोग निवृत्त न होजाय ॥ १३९ ॥

### १४०. रसेन्द्रचूडामणीरसः ( द्वितीयः )

सूक्ष्मेभुजगन्त्रयङ्गकाः कान्तताप्यविमलसमाश्रिताः  
भागवृद्धिमिलिता विमर्दिता धूर्तपत्रविजयाभवे रसेः  
सम्पस चपलामृतयल्लीभार्गिकासुरलताजलतोयैः  
धारिचाहमृतयष्टिकावरीवानरीभुजगट्टसम्भवैः ॥  
अर्धभागमहिफेनैक्यसेम्भदेयेसुरसपुष्पसम्भवैः ।  
चन्दनाकंकरहादपिप्लीधाचणीद्वयसमुद्भवैरसेः ॥  
कुङ्कुमेन च ततो विभाययेन्नाभिजद्रथयुतं विभाययेत्  
सिद्धिमेति रसराडयं शुभः कामिनीमद्विधुननःपरः  
शर्करामधुयुतो द्विरक्तिकः स्तम्भहृन्निधुयनेचरेतसः ।  
संसेव्य मृतं नचरात्रिभोज्यं कुर्यात् पर्य पय एव केवलम्

तृतीययामे रससेवनन्तु

दृष्ट्या निशायाः प्रहरं व्यतीते ।

मेघेत् कान्तां कमनीयगन्त्रां

घनस्तनीमुज्ज्वलचायवत्याम् ॥

रत्युत्सुकां कातरलोलनेत्रां

विलोहहारायलिमादधानाम् ॥ ६८३ ॥

किं कामे तनुकामिनां मलयजे-

नाऽप्यदयेकेनाशु किम्,

किं चन्द्रेण परोपतापजनिना

पुंस्कोकिलेनाऽपि किम् ।

सहस्रशः सन्ति यदा तरुण्यां

मदालसाः पीनपयोधरा दृष्टाः ॥

तदा रसेन्द्रः परिपेयणीयो-

विकारकारी च भवेत्ततोऽन्यथा ॥ ६८४ ॥

र. र. स., र. चं., बाजीबरसे ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, माग, अन्नक, वस्त्र, कान्तोद, कान्यमाशिक, रत्नमाशिक और सुवर्णमाशिक देशव कम्पद-भाग्य लेख धर्रा, माग, पेश्च, मिलेय, मारो, अमरवेक, नामरमोया, बडनाग, सुगन्दी, दत्तावरी, केवाच, सारांसी इनोरम अथवा बायोंमे ७-७ रोज मदनकर मयमल्लिङ्गे

भाषा शुद्ध अफीम डालकर तुलसीकीमञ्जरी, चन्दन, आर, अफलसरा, पीपल, दोनोंगोरखगुण्डी, कुङ्कुम और कस्तूरी इन-प्रत्येकके द्रवोंसे १-१ भावना देकर २-२ रत्तीकीगोलिमें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्विगहहाराणुपानकेसाथ लेनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै । इसको स्तम्भनाथ सेना हो तो शामहोनेसे पहिले १ गोली दूधके साथ लेवे और भोजन न करे केवल दूध पीवे । एकपहर रात्रि जानेके बाद मनोभिलषित रत्युत्सुकां छत्रिस्ताथ सम्भोग करनेपर यथेष्ट स्तम्भन होता है । इससंकेसेवनकरनेकेबाद कामोदीपक तमाम हावभावोंकी सुखरत नहीं रहतीहै । इसरससेसेवन वहीकरे जिसके घरमें कामानुर बहु-तमीत्रिया मौजूदहों नहीं तो यह विकार पैदा करेगा ॥ १४० ॥

### १४१ रसेन्द्रनागरसः

नागं कपालमये क्षिप्त्वा चाग्निं निधापयेत्कमशः ।

चिञ्चाकयचक्षारं स्वल्पं स्वल्पं चिञ्चयं कुन्तलेन ६८५

भागं पारदर्शीसं घृष्टा घृष्टा विचूर्णितं सम्यक् ।

तिलमागं जग्धि मधुना तरचट्टयिजेन मिश्रितं क्रमशः

पिडिकासहितविशेषां प्रमेहगणानि कुष्ठमनिलञ्च ।

हन्त्यल्पदिनाभ्यासास्तुपथ्ययोगाद्रसेन्द्रनागोऽयम्

र. चं., र. र. स., र. गु., र. को., र. र. की. प्रमेह ।

टि०—अथ प्रयोगो यथावक्तिभवे न संवनीय, अपरिपक्वगन्धयोगा-  
दायनाशुप्रव्रजनकरं भविष्यन्तीऽस्मिन्नपिप्लवत् दत्ता चतुर्वर्गमनेन  
विषाय कुण्डलण्डे भूत्वा पत्रपट्टिकावर्षे वैद्यविद्या हारावन्तु  
निषाय वातकफये दिपदिनानि पक्त्वा स्वाह्मणीतन्मन्त्रो पश्चिदिप ।  
निलत्ता यान्त्रेपिष्वगीयोऽन्यथा दिश्राप्रयोऽन्ये प्रदान्या र्पि तत्र  
न विरमणीयम् ।

भाषा—शुद्धनागको मिट्टीकेटीछेरमें डालकर अग्निग रूपे

गलजानेपर उसरी बराबरके शुद्धगोरको डालकर इसलीके फेंके

फलोंके छिल्लेका धार थोड़ा थोड़ा डालकर पोटाजाय । इस

तह ४ पहर बोदनेसे उसपारेकेसाथ नागकीभस्म होजायगी ।

इसमेंसे एकतिलभरमात्रा तुवरकके बीजोंकेसाथ सेवनकरनेसे

पिडकामहितप्रमेह, कुष्ठ और शान्तिरोगनष्टहोतेहैं ॥ १४१ ॥

### १४२ रसेन्द्रमङ्गलरसः

तालसत्त्वं मृतं ताम्रं मृतं लोहं मृतं रसम् ।

हृत्तम्रं हृतं तारं गन्धं तुल्यं मनःशिला ॥ ६८६ ॥

सौवार्पाञ्जनकासीसं नीली भृतातकानि च ।

शिलाजत्वकैर्मूलान्तु कदलीकन्दचित्रकम् ॥ ६८७ ॥

त्यघमङ्गोलजां रुग्णां रुग्णधनुर्मूलकम् ।

आयल्लुजानि बीजानि गौरीमार्थीकलानि च ॥ ६९० ॥

हेमाह्वं फनमाह्वं फलिनीं पिपतिन्दुकम् ।

तेजिन्यां लोहकिट्टञ्च पुराणममृतञ्च तत्र ॥ ६९१ ॥

त्यचञ्च मानकासत्य पुनरुत्तपटे गृह्यक ।

तिलिन्यां घटकास्तासु मयमेकत्र पूर्णगेन ॥ ६९२ ॥

सत्ये निषाय दातया पुनरेपाञ्च भाषनाः

प्रायदण्डी शिगा पुद्गा वैषदानी च नीलिका ॥ ६९३ ॥

वाणशोणा नृपतक निम्नसारो विभीतकः ।  
 करञ्जो भृङ्गराजश्च गायत्री तित्तिनीफलम् ॥ ६९४ ॥  
 मलयमूलमेतेषां तिष्ठस्तिष्ठस्तु भायनाः ।  
 दातव्या कुपिकां कृत्वा सम्यक् संशोष्य चातपे ६९५ ॥  
 भाण्डे तद्धारयेद्भाण्डं मुद्रितं चाथ कारयेत् ।  
 यामं मन्दाग्निना पक्वो पुटमध्यं ह्यसौ रसः ॥ ६९६ ॥  
 पुण्डरीकं निहन्त्येव नात्र कार्या विचारणा ।  
 द्विमासाभ्यन्तरे पुंसामपथ्यं न तु भोजयेत् ॥ ६९७ ॥  
 रोगाः सर्वे विलीयन्ते क्षुद्रानि सकलानि च ।  
 भानुभक्तिप्रवृत्तानां गुरुभक्तिकृतां सदा ॥ ६९८ ॥  
 रसेन्द्रमङ्गलो नाम्ना रसोऽयं प्रकटीकृतः ।  
 अनुग्रहाय भक्तानां शियेन करुणात्मना ॥ ६९९ ॥  
 रसायनं, र. म, र. का, पुष्पाधिकारः ।

भाषा—हरितालसत्व, ताम्र, लोह, पारा, अभ्रक और चादी इनकीभस्में, शुद्धगन्धक, पतिया, मैनसिल, सौदीराजन, कसीस, मोलकीपत्ती, पहेहुए भिलबि और शिलाजीव, आकरी जङ्गीछाल, केलेकावन्द, चित्रकनीज, अहोलकीछाल, पीपल, कालेयद्वेजीज, बाकुची, प्रियङ्गु और माषवीलाकेजीज, सत्यानाशी, अफीम, मालकामण, डुचिला, तरुदेवज, तेजबल, तुन्दुल, पुरानामगूर, सफेदकनैरकीजङ्गीछाल २-२ पल, तिल, सफेदमर्सी, राई, हुमुम्भ, अलसी ८-८ मादो केर सनका कपड़छान चूर्णकर १ पहर सुखा घरलकर मग्नरङ्गी, मयूरशिखा, शरपुष्प, बन्दाल, नील, लालकटसीरा, लालकपासकेफूल, अमिलपास, नीमकामद, पहेड़ा, कज्ज, अंगरा, रौर, हमीकीफल, कदमरकीजङ्ग इनप्रत्येकके रसोंसे ३-३ भावनाएँ देकर मुखावर १-७ कण्टमिष्टीरीहुई आतसीशीशीमें भरके बाहुकायन्त्रमें रख मुहबन्दकर एषपहर मन्दाग्निसे पकावे । स्वाश्वीतिलहोनेपर निकालकर रचछोड़े । इसमेंसे १-१ माया उचितानुपानसेसाथ देनेसे दो महीनेमें यह पुण्डरीकपुष्टको नष्ट करताहै । छुद्राविसमस्तरोगोंकेलिये यह परमौषधहै । इसके सेवनकरनेवालेको सूर्य और शुक्ली सेवाकली उक्तिहै ॥ १४० ॥

### १४३ रसेन्द्ररसः ( प्रथमः )

घट्टं रसं ताग्रमपक्ष भस्म  
 सर्वैः समानं गगनं धिमर्द ।  
 गोक्षररम्भाऽऽमलकां गवाक्षी-  
 रसैः पूषण्वासरकं रसेन्द्रः ॥ ७०० ॥  
 निष्कार्जमात्रो मधुना निर्पातो  
 जयेत्प्रमेहं दधिस्फुतिश्च ।  
 कृष्णाण्डनीरं ससितश्च पेयं  
 कृष्माण्डसण्डेन युतश्च शकम् ॥ ७०१ ॥  
 र, प्रमेह ।

भाषा—बज्र, पारा, ताम्र और लोह इनकीभस्में १-१ भाग, अभ्रकभस्म राखरी बराबर केर गोशर, केलेकावन्द, औरता, इन्द्रायण इनके दशभाग्यभर स्वस्य अपना वाशोंमें

१-१ रोजूमर्दनकर २-२ मादोकी गोल्यां बनाकर रचछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुसेसाथ देकर सफेदरौहयेका रस, शहरजालकर पिलानेसे प्रमेह और दधिरसावको यह नष्टकर ताहै । इसमें सफेदकौहयेकासाक देना पथ्यहै ॥ १४३ ॥

### १४४ रसेन्द्ररसः ( तृतीयः )

शुद्धं सूतं समञ्चाऽन्नं मृतताम्रं विषं समम् ।  
 गन्धकञ्च समं पिष्ट्वा सूर्यमूलकपायके ॥ ७०२ ॥  
 मृषान्ते चालुकायत्रे दिनेन मन्दपहिना ।  
 पाच्यं चूर्णाकृतं सूक्ष्मं मायं चैवाऽनुपानतः ॥ ७०३ ॥  
 खादेहोषज्वरं हन्ति सन्निपातनिहन्तनः ।  
 रसेन्द्ररसनमाऽयं शम्भुना परिकीर्तितः ॥ ७०४ ॥  
 वै. वि, ज्वराधिकारः

भाषा—शुद्धपारा, बज्रभाग और गन्धक, अभ्रक और ताग्रभस्म येसाथ समभागलेकर नीलवर्ण कजलीकर आकलीजङ्गीछालकेकड़ेसे १ रोजूमर्दनकर गोलावनाय बज्रमुषामें पन्दवर १-७ कपडमिठी देकर बालुकायन्त्रमेंरख एरदिनकी मन्दाग्निसे पकावे । स्वाश्वीतिलहोनेपर निकालकर रचछोड़े । इसमेंसे १-१ माया उचितानुपानसेसाथ देनेसे यह दोपीयुवार और सन्निपातको नष्टकरताहै

### १४५ रसेन्द्ररसः ( चतुर्थः )

सूतो गन्धो गगनतपनीं द्वयन्निनागक्षमांशा,  
 निम्नद्रव्यम्भ. खलितमसकृन्सूर्यतापातिगुञ्ज ।  
 घातं शुल्भं ग्रहणिमुद्रं फासकालं ज्वराशौः,  
 कुष्ठं पाण्डुरं हरति ह्रदिति स्याऽनुपानाद्वसेन्द्रः ७०५  
 र. वि, सर्वरोगाधिकारः ।

भाषा—शुद्धपारा २ भाग, शुद्धगन्धक ४ भा., अभ्रभस्म ८ भा., ताग्रभस्म १ भाग केर नीलवर्णकजलीकर नीबू और चित्रककेरछोसे ७-७ भावनाएँ देकर ३-३ रसीकी गोल्यां बनाकर रचछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तप्तप्रोगोचितानुपानसेसाथ देनेसे बायु, गुल्म, ग्रहणी, उदर, कफ, घृल, ज्वर, बवासीर, कुष्ठ और पाण्डु इनको यह शीघ्र नष्टकरताहै ॥ १४५ ॥

### १४६ रसेश्वररसः

सूतगन्धौ समौ मयौ धन्यपासरसेऽन्यहम् ।  
 ततो लाहोऽन्नसंयुक्तौ चन्द्रान्मृधिमर्दिता ॥  
 सिद्धौ रसेशो यत्किं मुच्छां क्षौद्रकणायुतः ॥ ७०६ ॥  
 र, मुच्छांश्याम् ।

भाषा—शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकजलीकर जवाखे रखने ३ रोजूमर्दनकर पारदेके बराबर लोह और अभ्रकी भग्य मिलाकर चन्दनकेद्रव्य ३ रोजूमर्दनकर ३-३ रसीकी गोल्यां बनाकर रचछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु और पीपलनेसाथ देनेसे यह मुच्छांको दूरकरताहै ॥ १४६ ॥

### १४७ रसेश्वररसः ( प्रथमः )

सूतं गन्धं गैरिकं तुल्यमायं मयं घर्षकं बहुतायेन पथ्यात्  
 शुद्रानां यथासरेकं शुद्धीतोयेत्यायच्छृङ्खलवैराभ्याम् ।

सप्ताहं कटुकारसेन सुरसानीरेण तावद्दिनं,  
विध्यायाः स्वरसेन वासरयुगं घात्रीरसे र्भेदितः ।  
सिद्धिं यानि रसेश्वरो ससितयुक् सच्चद्रूपवेराभ्युना,  
तापं हन्त्यचिरेण बह्वयुगलो मुद्रागुमकाशिनाम् ७०८  
२, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और गेहूँ समभाग लेकर मालागानी, भट्टरदेया, गिलोय और अदरक रसे १-१ रोज मर्दनकर बूटकीके रसे ५ दिन, तुलसीके रसे १ दिन, साँठ और आवलोंके रसे २-२ दिन मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोल्या बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शकरमिलेहुए अदरकरसकेसाथ देनेसे ज्वर क्षीघ्र नष्टहोताहै । मृगलग्नेपर मृगकायूप और भातदेना ॥ १४७ ॥

### १४८ रसेश्वररसः ( द्वितीयः )

मृतो गन्धकभागिको दिवसयुक् सम्मर्दितो भूशिया,  
धार्भिः सुतद्लाऽहिफेनसहितो विध्याधिपाक्षौद्रयुक् ।  
वालाध्रीफलधातुगुडयुतो स्वीयाऽनुपानैरपि,  
सिद्धः सत्वतिसारनामहरणः श्रीसूतनामाभिः ७०९  
२, अतिसारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लकर नीलवर्ण-  
कजलीकर भुईआबलेपररसे एकदिन मर्दनकर परसे आधी  
अफीम मिलाकर १-२ दिन घोटकर १-१ रत्तीकी गोल्या बनाकर  
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली साँठ, अफीम और मधुकैसाथ  
अथवा सुगन्धवाला, देलगिरी, धावकीनेफूल और गुडकेसाथ अथवा  
तनूगोहरातुपानोंकेसाथदेनेसे यह अतिसारको दूरकरताहै ॥ १४८ ॥

### १४९ रसेश्वररसः ( तृतीयः )

रसोऽथगन्धा मुशली शतावरी

मुस्ता गुडुची मधुकर्कटी च ।

गोक्षुरकं कौकिलवीजचूर्णं

केतन्यकन्दस्वरसे दिनैस्त्रिः ॥ ७१० ॥

त्रिधारभृङ्गेण च भावयेत्-

हुज्राऽष्टकं दुग्धसितायुतञ्च ।

गोधूमपथ्यं निशि सर्वमेहं

रसेश्वरोऽयं स तु कामुकानाम् ॥ ७११ ॥

रसायनस्य, प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—पारदभस्म, असगन्ध, मुशली, शतावरी, नागरमोथा,  
गिलोयसत्त्व, चकोतेर की जड़, गोक्षुर, तालमखाना समभाग  
लेकर बारीक चूर्णकर केतकीकन्द और मगराके रसे ३-३ रोज  
भावनाएँ देकर १-१ मासकी गोलियें बनाकर रखछोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली शकरकेसाथ देनेमें यह समस्तप्रमेहोंको  
दूरकरताहै । इसमें रात्रिकेसमय गेहूँ खानेकोदेवे । यह कामियों  
केलिये उत्तम वाजीकरणहै ॥ १४९ ॥

### १५० रसेश्वररसः ( चतुर्थः )

गन्धत्रययुतं सूतं मारयेत्सुदयोगतः ।

पथेत्तं चक्रयत्रे च गन्धकेन समन्वितम् ॥ ७१२ ॥

विषं फलांशं दत्त्वा वीपनौपधिभावितम् ।

पित्तैश्चोपविषे भाव्यं वटी मापप्रमाणिका ॥ ७१३ ॥

ख्यातो रसेश्वरः सूतः सन्निपातविनाशनः ।

भिषग्भिन्नं प्रदातव्यं शीतघ्नानञ्च रोगिणे ॥ ७१४ ॥

अगदः सर्पदंष्ट्रस्य मृतसञ्जीवनः परः ।

क्रामणेन समायुक्तः सर्वव्याधिविनाशनः ॥ ७१५ ॥

रससार, रसायन ।

भाषा—एकवर्षपरामे गन्धक, हरिताल, और मँतसिल

१-१ कर्पका बारीकचूर्ण थोड़ाथोड़ा डालकर सूँछितकरे । कुछ

बाकीरहनेपर बराबरका शुद्धगन्धक मिलाकर कजलीकर चक्र-

यन्त्रमें पकावे । स्वादशीतलहोनेपर निकालकर परसे १६ वा

हिस्सा शुद्धवज्रनाम मिलाकर वीपन औषध, पित्त और उप-

विषोंके यथाक्रमस्वरस अथवा कायोंकी भावनाएँ देकर उड़द

बराबर गोल्या बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचि-

सानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको दूरकरताहै । रसकी

तीव्रताकेलिये ठण्डानीसेधानकराना । सर्पदंष्ट्रको ३-३ घण्टेके

अन्तरसे रिसाना और लेपकरना, नाक-आँख और कानोंमें

डालना । कामण औषधियोंकेसाथ देनेसे यह सब बीमा-

रियोंको नष्टकरताहै ॥ १५० ॥

### १५१ राजयक्ष्मकरिमत्तकेसरीरसः

वत्सनाभरसगन्धमौक्तिकं

चित्रकाऽऽद्रकरसेन पेपितम् ।

निक्षिपेद्विजसम्पुटे ततो

लेपितञ्च लवणायमृत्क्षया ॥ ७१६ ॥

पूर्ववच्च परिपाचितो भवे-

द्राजयक्ष्मकरिमत्तकेसरी ।

ऽप्युपपाद्रकरसेः सुभाषितं

योजयेच्च सुकर्णैर्मधुप्लुतैः ॥

ऽश्लक्ष्णैरकणचूर्णितोऽयथा

मागधीमधुगुडचिकान्वितः ॥ ७१७ ॥

२ दो, २ प्र. सु, २ च, राजयक्ष्मणि ।

टि०—२ प्र. सु, २ च, पतयो वैष्णवहरनाम्ना पाठाऽपि तस्मिन्

सर्वाण्येव बलवि भावनाश्चाप्येन रसेन समाना । मन्ति, केवल तस्मिन्

रसे सुकास्थाने सुवर्णमस्ति हतिविशेषो दृश्यते । परन्त्वस्मिन् रसे सुवर्णम

भिकनवा नियुज्य द्वयोः पाठयकाराठ सम्यक्तये गुणहृदिरपि महती

सम्यक्तये, अतन्मस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव करणीयः ।

भाषा—शुद्धवज्रनाम, पारा और गन्धक, सोती और

सुवर्णभस्म समभागलेकर साबकी नीलवर्णकजलीकर चित्रकमूल

और अदरककेरसे १-१ रोज मर्दनकर औषधके बराबरके ताप

सम्पुटमें रखकर सन्धिबन्दकर बाकीकीमिट्टी और नमकसे कई

मिठीकर सुताकर कपड़नकीहुईं सफेदराख ४-४ अहुल ऊपर

बीचे देकर हंडीमेंरख बूल्हेपर एकदर मन्दागिसे पकावे ।

स्वादशीतलहोनेपर निकालकर त्रिकटु और अदरककेरसकी १-१

दिन भावनादेकर पीपल और मधु अथवा अदरक और पीपल

अथवा पीपल, मधु और मिलेबनेसाथ देनेसे यह राजयक्ष्मको नष्टकरताहै ॥ १५१ ॥

### १५२ राजयक्ष्महररसः

रसेन्द्रशुद्धिणी तुलसी ग्राह्या तिलुकमानकी ।  
खल्वयेममतिमान्द्यो प्रहरे नांगनेत्रैः ॥ ७१८ ॥  
तवस्तत्सिद्धिमायाति दद्यात्तण्डुलसम्मितम् ।  
मधुना चा सिताऽऽप्येन लिह्याच्छोपस्य शान्तये ७१९  
कुलित्यसुपभक्त्य शोभाजनदलोद्भवम् ।  
शाकं त्वलायुसम्भृतं मरिचं तुण्डिकेरिकम् ॥ ७२० ॥  
द्विसप्ताहं भजेद्यक्ष्मी जीयितुं रोगमुक्तये ।  
अनुभूतः प्रयोगोऽयं स्वयं प्रोक्तो पिनाकिना ॥ ७२१ ॥  
रसायनं, राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पारेकीभस्म अथवा रससिन्दूरदि मूर्च्छितपारा और शुद्ध यचनाग दोनों समभाग लेकर २८ फहरतक खरलकर रखोहो । इसमेंसे १-१ चावलकीमात्रा मधु अथवा घी, शकर के साथ देनेसे राजयक्ष्मी अच्छा होजाताहै इसमें कुलीचीदाल और सहिजनकीफली, लौकी, इंदूर, काजीमिर्च इनका सेवन करावे । चौदहदिनकेसेवनसे रोगीको अद्भुत फायदा नजर आनेलगाताहै ॥ १५२ ॥

### १५३ राजयक्ष्महरयोगः

नवनीतसितामधुप्रयुक्तो  
वरखो हेममयः क्षयं क्षिणोति ।  
वितथ प्रभयेदयं प्रयोगो  
यदितन्मे शपथः सदा शिवस्य ॥ ७२२ ॥

वै मृ, रसायन, नि र, र क, राजयक्ष्मणि ।

भाषा—सौनेकावर्क एकभाग लेकर मखान, मिथी और शुद्ध क्वथमात्रासे कामिलकर रोगाना एक्कलकानेको देने से इससे क्षयनष्टहोजाताहै यहप्रयोग जिनको रक्तागिरताहो उनपर अच्छा कामकरताहै ॥ १५३ ॥

### १५४ राजराजेश्वररसः (प्रथमः)

जातसे मर्दबोस्तर्तं गन्धर्बं मृततत्प्रकम् ।  
सुहस्तमर्दितं तालं यावत्तत्र विलीयते ॥ ७२३ ॥  
भृशराजद्रव्यं वृत्त्या दिनमात्रं चिमर्दयेत् ।  
त्रिफला ग्वादिंरसारममृता वायु जीपलम् ॥ ७२४ ॥  
प्रत्येकं मृततुल्यं स्यादूर्णांरित्य विमिश्रयेत् ।  
मध्वाज्याभ्यां लौहपात्रे कर्पं भक्षयेत्सदा ॥ ७२५ ॥  
दुद्रुक्तिमनुष्ठानि मण्डलानि विनाशयेत् ।  
विशुद्धेन निहन्त्याशु राजराजेश्वरो रसः ॥ ७२६ ॥  
र स, र म र चि, यो म, र क, बुद्धयोगाधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रमस्य, रसमाणिषय अथवा शुद्धरिताल सब समभागलेकर धूपमें बैठकर नीलवर्ण बजरीकर भंगरेकरसे एकरोजमर्दनकर त्रिफला, रसमा, गिरेय, वायुची के प्रत्येक पारेकेबराबरलेकर बारीकचूर्ण कर सफेको इन्हे मर्दनकर रखोहो । इसमेंसे २ रतीकीमात्रा १-१

तोले मधु और घीकेसाथ मिलाकर खानेमें दाद, किट्ठि और मण्डलुष्ट नष्टहोते हैं ॥ १५४ ॥

### १५५ राजराजेश्वररसः (द्वितीयः)

हरवीर्यं शुद्धगन्धं तालकं माक्षिकं समम् ।  
त्रिशारं दीप्यकं हिन्दु मर्दितं दिवसद्वयम् ॥ ७२७ ॥  
चित्रमूलकपायेण वायुकायश्चक्रे पचेत् ।  
द्वियामान्ते समुद्धृत्य मत्स्यपित्तेन भावयेत् ॥ ७२८ ॥  
गुजामार्गं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम् ।  
अनुपानविशेषेण राजराजेश्वरो रसः ॥ ७२९ ॥  
वै चि, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और सोनामार्गी, सबी, सुहाया, यवशार, अजवाइन, धुनीहींग सब समभाग लेकर नीलगर्गकजलीकर चित्रमूलके काठेसे दोरोजमर्दनकर २-३ कपडमिरीदीर्घई आतशीशीघ्रीमें भस्के वायुकायश्चक्रे रख दोपहरकी अग्निदेवे । स्वात्तरीतलहोनेपर मिशालकर ब्यालाम मछलीके पित्तकी भावनादेकर १-१ रतीकी गोलीमें बनाकर रखोहो । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानवेकाप देनेसे यह सबप्रकारके सन्निपातोंको नष्टकरताहै ॥ १५५ ॥

### १५६ राजलीलागुटिका

शिलायाः शुद्धसूतस्य चत्वारिंशद्व रत्तिकाः ।  
कणाख्यगुग्गुलीस्तद्वत्तथा सौगन्धिकस्य च ॥ ७३० ॥  
रत्तिकाविंशतिप्रांशा अलकामाजपात्यचाम् ।  
अशीतिं द्वेन्त्रिंशजस्य पयसा शोधितस्य च ॥ ७३१ ॥  
धूर्णयित्वा ततः सर्वं फलकायेन भवेद्येत् ।  
निबुग्मस्य कपायेण कृमिप्रचरसेन च ॥ ७३२ ॥  
कारयेद्राजलीलाख्याः पद्मविंशद्गुटिकास्ततः ।  
एतेकां शीलयेत्प्रातः शीतेनाऽऽलीढ्य धारिणा ॥ ७३३ ॥  
वाताद्विमुच्यते प्राणी पाचदुष्णं न शीलयेत् ।  
पाण्डुज्यराशे शोफादीन्निवृच्छति गदान्हाटात् ॥ ७३४ ॥  
ट. मृ, पाण्डुधारे ।

भाषा—शुद्ध गैरगिल, पारा, कणापुल और गन्धक ४०-४० रती, अन्धाहूली, भाग और तज २०-२० रती, दूधसे शोधाहुआजामाल्योटा ६० रती लेकर सबका बारीकचूर्ण कर गैरगिल, पारा और गन्धककी नीलगर्गकजलीमें मिलाय त्रिफला, दन्तीमूल और विट्ठल इनके स्वादे अथवा काठेसे १ दिन घोटकर ३६ गोल्या बनावे इनमेंसे १-१ गोली सुबह उठे पानी के साथ सेवनकर । इससे दस्तदोष, ज्वरतक डेढागमि, पीतारहेया तबक दस्तदोषे और गरमपानीपीनेसे बन्द होजाये । इसके सेवनसे पाण्डु, ज्वर, बवासीर और शोथ प्रकृति बरोग नष्ट होते हैं ॥ १५६ ॥

### १५७ राजलीलारसः

अयाऽप्यहं जलौघनिवृत्तये ।  
शुद्धाश्लोकाज्जलौघनिवृत्तये ॥ ७३५ ॥  
यामि जलोदरनिवृत्तये ।  
यामि यथाऽनुभवयोगेन ॥ ७३५ ॥



तोलाकाञ्चनुरः सृताञ्जुद्धाद्वन्धकतस्तथा ।  
 कणागुगुलुतस्तद्वत्क्षीरिण्याञ्चतुरस्त्वथ ॥ ७३६ ॥  
 कङ्कुष्ठतश्च चतुरस्तित्तिरीफलतस्तथा ।  
 देवदालीरसैः पूर्वं दन्तीकायेन तत्तथा ॥ ७३७ ॥  
 त्रिदिनं त्रिदिनं मर्चस्त्रिधुताकायतस्ततः ।  
 भावनाश्च ततो देवाः पञ्चविंशतिसहस्रया ॥ ७३८ ॥  
 एतैरेवौषधैः स्मृतं वटीः पञ्चाश्वन्धयेत् ।  
 मरिचस्य प्रमाणेन छायायां शोषयेद्बुधः ॥ ७३९ ॥  
 एवं संसाध्य वटिका रोगिणे सम्प्रयोजयेत् ।  
 आपादपूर्वपक्षे च पाचनं सम्प्रदापयेत् ॥ ७४० ॥  
 सैन्धवं मणिमन्याख्यं घृतेन सह पाययेत् ।  
 दिनत्रयं प्रयत्नेन केतकीस्तनवारि च ॥ ७४१ ॥  
 मुद्गाकापी भयेस्पथ्ये घिलेपी शालिजाऽथवा ।  
 त्रिकटुत्रिफलाकायमेकतः पाययेद्विपक्व ॥ ७४२ ॥  
 त्रिदिनं पूर्वघत्पथ्यं प्रयुज्जीत चिच्छणः ।  
 एवं संस्वेदितं पञ्चाद्रेचयेत् रसेश्वरम् ॥ ७४३ ॥  
 शीतोदकेन वटिकामिकां वषाच रोगिणे ।  
 पलद्वयञ्च पानीयं नाऽऽधिश्यं न च हीनता ॥ ७४४ ॥  
 पाययित्वा रसयुतं ताम्बूलं सम्प्रदापयेत् ।  
 यावद्विरिच्यते जन्तुस्तावद्द्वारांश्च धारयः ॥ ७४५ ॥  
 रेचनानि च तापानि न हीनान्यधिकानि वा ।  
 मलाश्च प्रथमं यागित तत आमानि यान्त्यधः ॥ ७४६ ॥  
 यावच्छीतोपचारः स्यात्तापघ्नो भवेद्बुधम् ।  
 आतपस्य च सेवायां विरेको विनिवर्तते ॥ ७४७ ॥  
 कराङ्गी तापयेद्ग्नौ स्तम्भनं तत्क्षणाद्भवेत् ।  
 शाक्यत्वं गोघृतं पथ्यं क्षैण्यमथवा भवेत् ॥ ७४८ ॥  
 दुग्धोदनं वा सुज्जीत तवराजेन संयुतम् ।  
 एकवारं दिने देयं पथ्यं रानी न द्वीयते ॥ ७४९ ॥  
 निशीथिन्यां प्रयुज्जीत मधुना पिप्पली दंश ।  
 पथ्यञ्च कार्तिर्य यावत्क्रिया कार्या विच्छणः ॥ ७५० ॥  
 पाचनं शुद्धपक्षे स्यात्कृष्णपक्षे विरेचनम् ।  
 एवं क्रियायां सिद्धायामुदरं विनिवर्तते ॥ ७५१ ॥  
 शुल्मस्त्रीहामवाताश्च पक्विशूलं भगन्दरम् ।  
 अशीसि ग्रहणीदोपानदमरी मूत्रकृच्छ्रकम् ॥ ७५२ ॥  
 निवर्तयेत् सन्देशः पाक्षिकाष्टरयोगतः ।  
 राजलीलाभिधो नाम रसः परमदुर्लभः ॥ ७५३ ॥  
 जलोदरादिशान्त्यर्थं सम्प्रदायात्प्रकाशितः ।  
 दृष्टप्रभावः सृष्टोऽन लोकोपकृतिहेतवे ॥ ७५४ ॥  
 देवीशास्त्रानुसारेण विविच्य प्रतिपादिनः ॥  
 रसालकोरं उदराधिकारः ।  
 भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, कणागुल, जड, रेचनचीनी, शुद्धजमालगोटा सब ४-४ ते  
 तेनेके गयासम्भवस्वरस ७ ॥ ७५१ ॥  
 द्रव्योके

दकर मरिचप्रमाणोलिये बनाकर रखग्रेडे । इसरसकाप्रयोग-  
 कला हो तो आपादकृष्णपक्षमें ३ दिनतक घीमें मिलाकर १-१  
 तोला सीसानमक देवे ऊपर से केतरीकीजइका पानी ४-४ तोले  
 पिलावे । मूत्रकृष्णपक्ष मूत्रकायप अथवा चावलकी काडी देवे  
 फिर तीनदिनतक त्रिकटु और त्रिफलाकाया पिलावे, पथ्य  
 पूर्ववत् देवे । इसतरह पाचनदेकर स्वेदनरराके रेचनदेवे । उसके  
 लिये पूर्वोक्त १ गोली देकर २ पल टटापानी पिलावे फिर १  
 गोलीपानमें रखकर देवे । इसवेलेनेसे पहिले मल फिर आम  
 निकलनाहै । जन्मक शीतोपचार करतारहेगा तबतक दस्तहोते-  
 रहेंगे, घृषमें बैठने तथा गरमपानी पीनेसे विरेचन बन्द हो  
 जायगा । यदि इससे बन्द न हो तो हाथपर अग्निसे सेकने  
 चाहिये । मूत्रकृष्णपक्ष गायकापी, चावल अथवा रीर अथवा  
 दूधचावल अथवा तीखुरकीखीर बनाकर देवे । दिनमें एकवार  
 पथ्यदेनाचाहिये रात्रिमें नहीं । रात्रिमें १० पीपलकाचूर्ण मधु-  
 केसायदेवे । इसतरह जन्मक कार्तिर्य न आवे तबतक क्रिया  
 करे । शुल्मभ्रममें पाचन और कृष्णपक्षमें विरेचन देवे । इसतरह  
 करनेसे उदररोग, शुल्म, प्लीहा, आमवात, पक्विशूल, भगन्दर,  
 ववासीर, ग्रहणी, अशमरी, मूत्रकृच्छ्र इनसबको यह ८ पक्षमें  
 निश्चितकरताहै ॥ १५४ ॥

### १५८ राजवटी ( महदाघा )

रसगन्धकमग्नश्च प्रत्येकं कर्पसम्मिश्रितम् ।  
 वृद्धदारकवङ्गश्च लौहं कर्पाईकं धिपेत् ॥ ७५५ ॥  
 स्वर्णं ताम्रश्च कर्पूरं प्रत्येकं कर्पपादिकम् ।  
 शक्राशनं वरी चैव श्वेतसर्जलवङ्गकम् ॥ ७५६ ॥  
 कोकिलाक्षं विदारी च मुशली शुक्रशिथिलकम् ।  
 जातीफलं तथा कोपं यला नागयला तथा ॥ ७५७ ॥  
 मापद्वयेन संयुक्तस्तालमूल्या रमेन च ।  
 पिष्ट्वा च वटिका कार्या चतुर्गुणा प्रमाणतः ॥ ७५८ ॥  
 मधुना भक्षयेत्प्रातः त्रिपुमृज्जरशान्तेयः ।  
 घातुस्थांश्चामिधुगुह्वचिकान्वितः ॥ ७५९ ॥  
 वातिकं रू. सु., र. चं, राजयक्ष्मणि ।  
 ज्वरं रू. सु., र. चं, एतयो रैश्महज्जान्ता पाठोऽस्ति तस्मिन्  
 बलमस्तुनि भावनाध्याप्येन रतेन समाना मन्त्रि, केचन तस्मिन्  
 तुकास्थाने सुवर्णमसि शनिविशेषो द्रवते । परन्त्वस्मिन् रसे सुवर्णं  
 विनया विनय दयो पाठयोरेकपाठ सम्यक्तये गुणवद्विरपि महती  
 सम्यक्तये, अतस्तस्याऽप्येवैवाऽन्तर्भावः कारणीयः ।

भाषा—शुद्धरत्ननाग, पारा और गन्धक, मोती और  
 सुवर्णमस समभागलेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर चित्रकमूल  
 और अदरककेरसे १-१ रोख मर्दनकर औषधके बराबरके ताम्र-  
 सयुक्तमें रखकर सन्धिबन्दकर बाकीचीमिठी और नमकसे कर  
 मित्रकर सुखाकर कपड्डनकीहुई सफेदास ४-४ अङ्गुल ऊपर  
 नीचे देकर हंडीमेंरख चूलेपर एकपहर मन्दागिसे पकावे ।  
 स्वादशीतलहनेपर निकालकर त्रिकटु और अदरककेरसको १-१  
 दिन भावनादेकर पीपल और मधु अथवा अदरक और पीपल

तेन घोटकर ४-४ रतीनी योलिया बनाकर रखोहे । इन मेंसे १-१ गोली गधुक्साय खायेसे विषम, घातुस्थ, वातिक, पैतिक, सात्विातिक इत्यादि समस्तज्वर, कास, खास, क्षय, कृशता, बलहानि, शुक्लास, ऊर्ध्वग्लेष्मरोग, दाहणसन्निपात, कामला, पाण्डु, प्रमेह, रक्तपित्त इनसबको यह नष्टकरतीहे १५८

### १५९ राजवल्लभरसः ( प्रथम )

रसगन्धी पृथङ्निष्को निष्कमात्र. प्रदीपन. ।  
साह्यं पलं प्रदातव्यं घृलिकाकालवर्णं भिषक् ॥ ७६३ ॥  
खट्वे सम्मर्दयेत्तु शुष्कवस्त्रेण गालयेत् ।  
मापमात्रं प्रदातव्यो भुक्तमांसादिजारकः ॥  
अजीर्णेषु त्रिदोषेषु देयोऽयं राजवल्लभ ॥ ७६४ ॥

र म, रसायनस, र च, यो म, र सु र चि, नि  
र, भि सा, ना वि, र का, र स, अजीर्ण. र स प्रदीपन-  
रसेति नाम ।

टि०—सोण साक दत्तशेदशविद्वनाचामक ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बलनाम ४-४ मास, शुद्धनवसादर ६ कप लेकर पारा-गन्धक और बलनामकी नीलवर्ण कजलीकर नवसादको मिलाकर कपडेसे छानकर १-२ दिन शुष्कमर्दनकर रखोहे । इसमेंसे १-१ मासा तत्प्रथति समयो धितानुपानकेमाथ लेनेसे यह मांसादि गरिष्ठदायको तत्क्षण जीर्णकरताहे । अजीर्ण और त्रिदोषपचन्यव्याधियोंमें यह अत्यन्त उपकारकहे ॥ १५९ ॥

### १६० राजवल्लभरसः (तालकेश्वर) (द्वितीय)

पारदं मौक्तिकं वर्जं गगनं हेमनागकम् ।  
यलियज्ज शुल्यञ्च वैकान्तं तालकं शिला ॥ ७६५ ॥  
अमृतं स्नेहच्छलोहानि प्रवालं चन्द्रभूतिका ।  
समभागेन तत्सख्ये शुष्कं मर्चं दिनद्वयम् ॥ ७६६ ॥  
कूष्माण्डककतौयेन भाग्येद्वयसनयम् ।  
मार्कण्डेयस्वरसे अं राजराजेश्वररसः ( मर्चः ७ ) ॥

अमृततैपे मर्दयेत्तत्त गन्धकं मृतताप्रकम् ।

सुहस्तमर्दितं तालं यावत्तत्र विलीयते ॥ ७२.

भृङ्गराजद्रव्यं दत्त्वा दिनमात्रं विमर्दयेत् ।

त्रिफला ज्वादिर्सारममृता वाकुचीफलम् ॥ ७२५ ॥

प्रत्येकं सततुल्यं स्याच्चूर्णाकृत्य विमिश्रयेत् ।

मध्याज्याभ्यां लौहपात्रे कर्पं भक्षयेत्सदा ॥ ७२५ ॥

ददुकिटिभट्टप्राणि मण्डलानि विनाशयेत् ।

दिशुजेन निहन्त्याशु राजराजेश्वररो रस ॥ ७२६ ॥

र स, र सु र चि, यो म, र क, कुष्ठरोमाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ताम्रमस, रसमाणिक्क

अथवा शुद्धरिताल सब समभागलेकर धूपमें बैठकर नीलवर्ण कजलीकर भगरेकरसे एकरोमर्दनकर त्रिफला, खैरसार, गिलोय, बाकुची ये प्रत्येक पारिकेबराबरलेकर बारीकचूर्णकर सबको इक मर्दनकर रखोहे । इसमेंसे २ रतीकीमात्रा १-१

वल्लभात्र. प्रदातव्या दोषाणामनुपानत ।

सर्पपा घातुर्चा कुष्ठमज्जाजी च हरीतकी ॥ ७७५ ॥

वराटी मरिचं शुभ्रं रजनीद्वयवालुकम् ।

पतत्सख्ये चिनि.क्षिप्य वस्त्रसूत्रेण योजयेत् ॥ ७७६ ॥

दिनत्रयं ततो ज्ञात्वा चूर्णं कृत्वा पुनस्ततः ।

ग्रहण्यामृतिसारे च वराटी जरणं जया ॥ ७७७ ॥

राजवल्लभविख्यात पूज्यो गोप्यतमः सदा ।

पथ्यं रोगानुसारं स्यात्सर्वकुष्ठपुलान्तकः ॥ ७७८ ॥

र श, कुष्ठे ।

भाषा—शुद्ध पारा और मोती, वज्र, अभ्रक, सुवर्ण और नागमस, शुद्धगन्धक, हीरा, तावा, वैकान्त और हरितालमसम शुद्धमैत्रसिल, बज्जनाग और शिंगरिक, लोह, प्रवाल और चादी कीमस्य समभागलेकर पारेण्यककी नीलवर्णकजलीमें मिला कर सूयादोरोन मर्दनकर सफेदकोहळा, भगरा, अह्वस, भिला वेका सैल, अदरक, खैर, नीम, कर्पूर, पद्मकाठ, गिलोय, अन वादन, बाकुची, त्रिपात मरुता, सहदेवी, पुनर्वा, त्रिकला, गोखरु, इनप्रत्येककेत्रयोसे १२-१२ बड़ीमर्दनकर गोलाबनाय शराबसमुत्तमं बन्दकर हाथभरके खट्वेमें कण्ठोंकीआंचदे । स्वाहा शीतलोनेपर निकालकर दूसरे द्रवमें धोकर आंचदे । इसतरह सबमें पुटदेनेकेबाद दो कप शुद्धबलनामाकावारीकचूर्ण मिलाय अजीरीनीयुकेरसे शोरोन मर्दनकर ३-३ रतीकीगोलिया बनाकर रखोहे । इसमेंसे १-१ गोली तत्तद्विषयानुपानके साथ देनेसे मण्डल, पित्त, दम, कण्ठ, औदुम्बर, दयाम देसब कुष्ठ, रात्रिमें पित्तप्रकोप, सबप्रकारकीप्रवृत्ति, रक्तपित्त, कण्ठ और छातीकाभयरोध, पाण्डु शुल्म, खलोद, रक्तदोष, समस्तघृल, वेसवरोध नष्टहोयेहे । कुष्ठोंमें घेदेसरसों, बाबची, कुट, जीरा, हर्द, पीलीकौड़ीकीमसम, सफेदमिर्च, हल्दी, दाहहल्दी, गेंडुला, वेसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर जवान बकरोकेहूत्रमें ३ दिन तकमर्दनकर सुलाकर रखोहे । इसनेसे कुष्ठप्रधानव्याधियोंमें अनुपानरूपसेदेवे । पीलीकौड़ी, नीरा और भाग इनवेसाथ बहणी और अतिसारमें देवे । इसमें पथ्य रोगानुसार देना ॥ १६० ॥

### १६१ राजवल्लभरसः ( तृतीयः )

लोहभस्मविडङ्गानि त्रिफला च शिलाजतु ।

पर्णं पिप्पलीमूलं चव्यं कृष्णतिला. समम् ॥ ७७९ ॥

स्य त्रिगुणो वह्निर्लोहाद्ब्रह्मातमी तथा ।

एकं तैश्च लोहाशं सर्वस्य त्रिगुणो शुभः ॥ ७८० ॥

सुहृदभने निहन्त्याशु ह्यशामन्दाभिप्राण्डुताम् ।

व्याणानीन्द्रं कासं श्वयधुञ्च विनाशयेत् ॥ ७८१ ॥

कन्द होजायर्गं सु ।

शोय प्रथति भस्म, विडङ्ग त्रिफला, शिलाजीत, त्रिकुट, शालेलि और चातुर्गत समभागलेकर लोह

अथाऽपरं प्रवहं मिलावे मिलाकर बारीकचूर्णकर सबसे सुराखोक्तमात्रे, १ लोहेकी मोलिया बनाकर रखोहे ।

## १७३ रामनागरसः ( पञ्चमः )

द्विनिष्कं रसकञ्चैव मयूरं चैकनिष्कम् ।  
निष्कार्थं मृषिकारिश्च कारव्यह्यारसेर्दिनम् ॥ ८२९ ॥  
मर्दयेद्दुष्टीकृत्य भक्षयेद्दुष्टसंयुतम् ।  
मुद्रमात्रप्रमाणेन ह्यपकमतियोरकम् ॥ ८३० ॥  
चातुर्यिकज्वरं हन्ति रामवाणश्च नामतः ।  
क्षीराक्षमेव पथ्यं स्यादन्यथा विकृति भवेत् ॥  
मत्स्येन्द्रभाषितं गुप्तं पुत्रायाऽपि न कथ्यते ॥ ८३१ ॥

रसायनस, २ का ज्वराऽधिकारे ।

टि०—शिक्षितुष्य सोमल इरास मर्दयेत्यहम् । कृष्णपत्रतोयेन मर्दनाच्च ज्वराद्भुस । साध्याऽसाध्यात्रिहन्वाशु ज्वराश्च विषमौतुम् ॥  
इति रसभाषितेनो ज्वराद्भुसाम्ना पाठेऽस्ति तत्र स्वर्गस्थाने पारदी इत्येते सङ्गरमनोऽथैव प्रयेव दत्ता पट्टकारवतीभ्या भावना प्रदाय यथ खर रसो निष्पादनीय ।

भाषा—शुद्ध खपरिया ८ मासे, तृत्तिया ४ मासे, सोमल २ मासे लेकर बारीकचूर्णकर एकदिनकरेलेकरससे मर्दनकर मूत्र बराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शुद्ध-साय देनेसे यह अपक घोरचातुर्यिकज्वरको नष्टकरताहै । इसमें पथ्य खीर खिलाना अन्यथा उपद्रव करेगा ॥ १७३ ॥

## १७४ रामनागरसः ( षष्ठः )

श्वेतं क्षारं च पीतं च पारदं मृतसिंहकम् ।  
मनःशिला बलिश्चैवामेकभागं पृथक्पृथक् ॥ ८३२ ॥  
त्रिभागं श्वेतखदिरं सर्वं सञ्चूर्ण्य मर्दयेत् ।  
नागवल्लीदलरसैश्चतुर्थांशं मिषग्वरः ॥ ८३३ ॥  
मुद्रमाना घटी कार्या एकान्तां भक्षयेन्नरः ।  
पथ्यं मुद्राढकीचूर्णं लवणेन विना वृत्तम् ॥ ८३४ ॥  
चतुर्दशदिनान्येवमुपदेशी चरेन्नरः ।  
सोपदेशी सर्वथातं साध्याऽसाध्यश्च माशयेत् ॥  
रामवाणरसो नाम्ना कथितो रससागरे ॥ ८३५ ॥

२ सु, वातव्याध्याधिकारे ।

भाषा—सर्पद और पीलासोमल, पारद और वज्रभस्म, शुद्धमैनसिल और गन्धक १-१ भाग, सफेदवृष्या ३ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पानकरससे ४ पहरमर्दनकर मूत्रबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयो धितातुपानकेसाय देनेसे १४ दिनकेमीतर उपद्रवसहित साध्य अथवा असाध्य वातारोग नष्टहोताहै । इसमें मूत्र और अखर-कोदाल, गेंदका आटा और धी खानेको देना । नमक मूलकर भी नहीं देना ॥ १७४ ॥

## १७५ रामवाणरसः ( सप्तमः )

शुद्धं सूतं समं गन्धं तत्समं चन्द्रपुष्पकम् ।  
जातीफलं त्रिकटुकं यवक्षारश्च तत्समम् ॥ ८३६ ॥  
विषं सूतसमं दद्यात्सर्वं खरुने विमर्दयेत् ।  
नागवल्लीदलसुतं रामवाणो महारसः ॥ ८३७ ॥

३५

रक्तिकैकप्रमाणेन सन्निपातेऽतिदाहणे ।

विषमेषु च सर्वेषु प्रयोक्तव्यो महारसः ॥ ८३८ ॥

२ प्र, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक १-१ भाग, रसकपूर, जायफल, त्रिकटु, यवक्षार २-२ भाग, शुद्धबघनाग, एक भाग, लेकर सबकी नीलवर्णकज्जीकर एकरोज पानके रससे घोटकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचिततुपानकेसाय देनेसे दाहसन्निपात, विषमज्वर इनको यह नष्टकरताहै ॥ १७५ ॥

## १७६ रामनागरसः ( अष्टमः )

सूतं द्रुणमम्रकञ्च द्रव्यं तीक्ष्णं रवि कान्तजं,  
स्वर्णं भोक्तिकविद्रुमं यलियसां तारं व्रुणं माक्षिकम् ।  
मृमिश्रन्द्रकलाग्निनेत्रमनयः पक्षाघातुः कालपो,  
गुग्मं नेत्रमिषुप्रमाणं क्षतयस्त्वैतानि भागीः क्रमात् ८३९  
कस्तूरी घनसारजातिफलजात्यस्पर्शविध्यं तथा,  
सर्वं पूर्वतनाच्च माननिचयाद्योज्यश्च वेदमितम् ।  
श्रीशङ्खदन्तिफलाद्यद्रुकजलजैः पुष्पागजन्धिरसा-  
हंघितोत्पलमल्लिकाकुमुदजैर्द्रव्यैर्मिश्रं भाषयेत् ॥ ८४० ॥  
भाषार्दं मधुशर्कराकपयसा कालद्वयं सेवये-  
द्भस्महीहभगन्दरज्वरमुत्तान्दीपाज्येत्सत्त्वरम् ।  
मैदान्मूत्रमथा रजश्च शमयेत्कृत्वाञ्च दोषाज्ये-  
देतथेयमनेकरोगहरणं विश्वेश्वरं निर्मितम् ॥ ८४१ ॥

वै चि (क), रसायने ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, मुनाहुहागा १ भा, अम्रक १६ भा, शिंगरिफ ४ भा, फोखद २ भा, ताम्र १४ भा, कान्त लोह २ भा, स्वर्ण ६ भा, मोती १२ भा, मृगा २ भा, इनसबकीभस्मे, शुद्धगन्धक २ भा, चादीभस्म ५ भा, वज्रभस्म ६ भा, सोनामाखी ६ भा, कस्तूरी, शुद्धकपूर, जायफल, जायत्री, पत्रज और लवत्र ४-४ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जीमें मिलाकर सफेदवन्दन, त्रिफला, एरण्डमूल, कमल, पुत्राग, जशीरी, सुगन्धबाला, हीमेर, सफेद कमल और मोमरा तथा कुमुदकेफूल इनप्रत्येकके श्वेतसे यथाशक्ति भावनाए लेकर ४-४ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मुखद्वारा मधु और शर्कर मिलेहुए दूधकेसाय अथवा यथोक्तितुपानकेसाय देनेसे गुग्म, प्लीहा, भगन्दर, ज्वर, प्रमेह, मूत्ररोग, मूत्रकृच्छ्र, इनसबवर्गोंको यह नष्टकरताहै ॥ १७६ ॥

## १७७ रामवाणरसः ( शीतमातङ्गकेशरी ) ९

जाती लवङ्गं तालश्च द्विनिष्कन्तु पृथक्पृथक् ।  
निष्कं मृषिकपापाणं धन्तरेण विमर्दयेत् ॥ ८४२ ॥  
गुञ्जामात्रा घटी. कुर्याच्छोषायां शोषयेत्ततः ।  
शर्करामरिचं योज्यं शीतं चातुर्यिकं जयेत् ॥ ८४३ ॥  
मुद्रसारिण पयसा योजयेद्वा समाहितः ।  
रामवाणरसो नाम शीतमातङ्गकेशरी ॥ ८४४ ॥

भाषा—जायफल, खड्ग और रसमाणिस्य ८-८ माशे, शुद्धसोमल ४ माशे लेकर बारीकचूर्णकर धनुर्वेस्ससे १-२ रोज मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर छायामिष्टुपाकर रख छोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शर, मरिच अथवा सुंगकेयूपकेसाथ देनेसे यह चातुर्थिज्वरको दूरकरताहै और शीतको तत्काल नष्टकरताहै ॥ १७७ ॥

### १७८ रामवाणरसः ( दशमः )

नीलाञ्जनञ्च तुल्यञ्च गौरीपापाणमेव च ।  
धुतूरपत्रस्वरसे पेपितं गुट्टिकीकृतम् ॥ ८४५ ॥  
क्षीरशर्करया युक्तं भक्ष्यं तिन्तिडिकाकृतम् ।  
रामवाण इति ख्यातो भिषगाश्चर्यकारकः ॥ ८४६ ॥  
र. क. यो., ज्वरे ।

भाषा—सुरमाकीभस्म, शुद्धतुलिया, सोमल समभागलेकर बारीकचूर्णकर धनुर्वेस्ससे एकरोज मर्दनकर मरिचबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शर्करयुक्त दूधकेसाथ देनेसे यह शीत, विषमज्वर और बारीसे आनेनाले ज्वरोंको निकालकर वैद्यको आश्चर्य करताहै ॥ १७८ ॥

### १७९ रामवाणरसः ( एकादशः )

रसं तुल्यं शिलां तालं खर्परं मरिचं समम् ।  
मर्दयेज्जम्भनरीण रसोऽयं रामवाणकः ॥ ८४७ ॥  
र. क. यो., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, तुल्य, मेनसिल, हरिताल, खपरिया और मरिच समभागलेकर बारीकचूर्णकर जंभीरीकेरससे १ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली जंभीरीकेरस अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे तमामविषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ १७९ ॥

### १८० रामवाणरसः ( शीतकुलान्तकः ) १२

नीलाञ्जनञ्च तुल्यञ्च गौरीपापाणमेव च ।  
खर्परं श्वेतपापाणं शिलाचूर्णञ्च तालकम् ॥ ८४८ ॥  
खल्वमध्ये विनिःक्षिप्य जम्बरीण विमर्दयेत् ।  
घटकान् मापमात्रांश्च शर्कराजीरसंयुतान् ॥ ८४९ ॥  
अनुपानविशेषेण शीतज्वरनिवारणम् ।  
रामवाण इति ख्यातः सर्वशीतकुलान्तकः ॥ ८५० ॥  
र. क. यो., ज्वराधिकारे ।

भाषा—नीलाञ्जन, तुल्य, सोमल, खपरिया, गोदन्तीहरिताल, मेनसिल और हरिताल इनरीमसमें, (नीलाञ्जनको छोड़कर जिसकी भस्म न हो उसे शुद्धकरके डालना) सब समभागलेकर जंभीरीकेरससे १-२ रोज मर्दनकर उड़दबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शर और जंभीरीकेसाथ अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै ॥ १८० ॥

### १८१ रामवाणरसः ( शीतमातङ्गकेशरी ) १३

गौरीपापाणकं शुद्धं क्षीरतुल्यं तथैव च ।  
सुधा सर्वसमा योज्या जम्बरीण निमृच च ॥ ८५१ ॥

चणप्रमाणवटकांश्छायायां शोपयेद्बुधः ।

रामवाण इति ख्यातः शीतमातङ्गकेशरी ॥ ८५२ ॥

र. क. यो., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्धसोमल और तुलिया समभागलेकर दोनोंके बराबर पत्थरकाचूना मिलाकर जंभीरीके रससे १ रोज मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर छायामें सुगाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरको नाशकरताहै ॥ १८१ ॥

### १८२ रामवाणरसः ( अमोवादिः ) १४

शुद्धं द्वयं द्रवणतालसन्शकम्  
नीलाञ्जनं सूतविपे बलेयसाम् ।

द्वयञ्च पापाणरसाञ्जनं शिला  
पृथक् समं जम्भरसेस्त्रिमर्दितम् ॥ ८५३ ॥

निगुण्डिकापत्ररसेस्त्रिमर्दितं

पुष्टं ततः कुन्कुटकप्रमाणकम् ।

अमाघकं विशुद्धरामवाणकम्

बहुद्वयं क्षौद्रसितादिमेचितम् ॥ ८५४ ॥

पेकाहिकं त्रिभिचतुर्थकञ्च

शीतज्वरं तद्विषमज्वरञ्च ।

पथ्यञ्च शाल्योदनमुद्रमूर्पं

दम्भा च तत्रेण रसेश्च जातुलः ॥ ८५५ ॥

शुक्त्या चैधुरसादिकञ्च कदली खर्जरिकादाडिमं,  
कापित्थं तनुलेपनं मलयजैः प्रोढाङ्गनाऽऽलिङ्गनम् ॥

र. क. यो., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध सुहाणा, हरिताल, सुरमा, शुद्धपारा, बज्जाग, गन्धक, सफेद और धोलासोमल, रसौत, मेनसिल वेशर समभाग लेकर बारीकपीस परेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर जंभीरी और निगुण्डिकेपत्रस्वरससे १-२ रोज मर्दनकर गोला बनाय क्षावसम्पुष्टमें बन्दकर १-४ कपडिमिठी देकर सुताकर कुक्कुटपुष्टकी आपदेवे । स्वाश्रीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ६-९ रत्तीकीमात्रा शर और सधु बर्गरह केसाथ देनेसे पेकाहिक, द्वाहाहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक, शीतज्वर, विषमज्वर इनगणको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य पुरानेबाज और सुंगकीदाल अथवा दही छाल अथवा जंगलीपत्रुपक्षिमोडा मासख, ईशकास, केला, सजूर, अवार, वैद्य देसख देवे । चन्दना लेफर प्रौढस्त्रियोंका आतिशय करावे ॥ १८२ ॥

### १८३ रामवाणरसः ( पञ्चदशः )

रसगन्धकताप्राणि द्रवणं त्रिकला विषम् ।  
एतानि समभागानि नेपालं तुल्यभागिकम् ॥ ८५७ ॥

कारवल्लीरमेनेत्र मर्दयेद्याममात्रकम् ।

गुग्गुप्रमाणानटिकां भक्षयेद्दार्द्रिकाप्युता ॥

रामवाण इति ख्यातः सर्वज्वरनिवृत्तः ॥ ८५८ ॥

र. क. यो., ज्वराधिकारे ।

**भाषा**—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा और यक्षनाग, ताम्रमसम् और त्रिकला समभाग, जमालगोटा सबकी बराबर लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धकनीलवर्णकजलीमें मिलाकर करेलेकेरसे १-२ दिनमर्दनकर १-१ रत्तीकी गोल्या बनाकर रखओगे । इनमेंसे १-१ गोली अदरककेस ज्यवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त शीत और विषमन्त्रोंको नष्टकरताहै ॥१८३॥

### १८४ रामबाणरसः ( पोडशः )

हिङ्गुलं रसकं रसेन्द्रशिखितुल्याऽऽलं शिला गन्धकं, ताप्यं गौरशिला विशुद्धिसहितं सर्वं समं भागतः । कृष्णोन्मत्तरसेन मर्दितमिदं मापप्रमाणा वटी भुक्त्या शीतसमर्पितं ज्वरघणं निवासयेत्सत्क्षणात् ८५९  
र र औ, र. पा, ज्वराधिकारे ।

**भाषा**—शुद्ध शिपरिक, खपरिका, पारा, तुल्य, हरिताल, नैनसिल, गन्धक, सोनामारी और सोमल सबसमभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर कारेधतूरेकेरसे १-२ रोज मर्दनकर उड़द बराबर गोल्या बनाकर रखओगे । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तशीतज्वरोंको नष्टकरताहै ॥१८४॥

### १८५ रामरसः

गन्धकं पारदं तुल्यं मरिचञ्च त्रिभिः समम् । धीजं मैकुम्भकं मयं दन्तीकायेन यामरम् ॥  
विगुञ्जः शूलविष्टम्भाऽनिलं सामज्वरं जयेत् ॥८६०॥  
भै र, र सु, ज्वराधिकारे ।

**भाषा**—शुद्ध पारा और गन्धक तथा मरिच समभाग, शुद्ध-जमालगोटा सबकीबराबर लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धकनीलवर्णकजलीमें मिलाकर दन्तीमूलकेकापसे एकपहर घोटकर १-२ रत्तीकी गोल्या बनाकर रखओगे । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ लेनेसे शूल, विष्टम्भ, वायु और आमज्वरको यह नष्टकरताहै ॥ १८५ ॥

### १८६ रास्तादिलोहम्

रास्ताऽभ्यगन्धारुर्भेकपर्णीशिलाह्वयेः । त्रिकत्रयसमायुक्तं लोहं यस्मान्तेजस्मतम् ॥ ८६१ ॥  
सर्वोपद्रवसंयुक्तमपि वैद्यविजितम् । हन्ति कासं स्वराऽऽघातं राजयश्मक्षतक्षयम् ॥  
यलवर्णाऽशिषुपीनां वर्धनं दोषनाशनम् ॥ ८६२ ॥

र स, र सु, घ., र. च, र. क, र. र, यो र, ना वि, नि र, लो प, भै र, र यो. त राजयश्मणि ।

**टी०**—र सु दीनस्थाने दशाङ्गलोहमिति नामस्थानम् । यो र, र यो स, ना वि, ज्ञेयु चतुर्दशाङ्गलोहमिति नाम । लो प चतुर्दशाङ्गस इतिनाम । भै र यस्मान्तेजस्मिति नाम नक्षत्र त्रयसम्भेन त्रिकुट, त्रिकला, त्रिमश्रा माषा, योगरत्नाकरवीरपाठे अथग न्यास्थाने तालीन नियोगितमिति विशेष, नाम च चतुर्दशाङ्गलोहमिति ।

**भाषा**—रास्ता, अभ्यगन्ध, कपूर, माषी, नैनसिल, त्रिकुट, त्रिकला, त्रिमश्रा ( विडङ्ग, नागरमोषा, चित्रक ) सब समभाग,

इनपञ्चवीबराबर लोहमसम् डालकर रास्तादिद्रव्योंके काथोंसे १-१ दिनमर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोल्या बनाकर रखओगे । यद्यपि बहुतसेलोग केवल चूर्णबनाकर रखलेतेहैं लेकिन रास्तादिकी भावना दियेहुएके बराबर कामनहींकरताहै । इसमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे दैव्योंसे ल्यागेहुए सर्वोपद्रव्युक्त राजयश्मको यह दूरकरताहै और कास, स्वरभङ्ग, उर-क्षत, घातुक्षय, कलनर्णनाश, मन्दाग्नि इनसबको नष्टकर पुष्टि कोबढ़ताहै और समस्तदोषोंका नाशकरताहै ॥ १८६ ॥

### १८७ राक्षसरसः

समांशं योजयेत्शुद्धं पारदं गन्धकं तथा । नागार्जुनीरसे मयं सुरसावाकुचीभवेः ॥ ८६३ ॥  
मयूरपर्णीकौमारीमधुघृष्टिसमुत्थितैः । चाराहकर्णीस्वरसे बहुकल्यास्तयैव च ॥ ८६४ ॥  
एतासां रसमादाय माधनायां पृथक्पृथक् । कुङ्कुटाण्डं तत्र मृष्टा छिद्रयुक्तं समाचरेत् ॥ ८६५ ॥  
तत्रास्थितञ्च निष्कास्य तत्र भृत्या महारसम् । यस्मृत्तिकायाऽऽलिप्य कौपकुटञ्च पुटं चरेत् ॥ ८६६ ॥  
पक्वं नीतं पुनर्मयी पुनः पक्वं पुनस्तथा । एवं त्रिवारसेस्को रसरक्षोऽमृतोपमम् ॥  
क्षुधाकरं वीर्यकरं यलवर्णाऽग्निवर्धनम् ॥ ८६७ ॥

र सु, वातव्याध्यधिकारे ।

**भाषा**—शुद्ध पारे और गन्धकनी नीलवर्णकजलीकर छोटी दूधी, तुलसी, बाङ्गुची, मोरखिला, धीउजार, मुलहदी, अघ-गन्ध, बहुफली इनके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय मुनीका अण्डा ( जिसमें बच्चा ॥ पक्षा हो ) लेकर बुधिसे छिद्रकर भीतरकाद्रव निकालकर उसमें गोलेमोरप दूधसे अण्डेकी दोलसे ढक्कर गुड़बूनेसे बन्दकर ६-७ बपइमिदीदेकर सुखाकर कुन्कुटपुटकी आवचे । स्वात्राशीतलहोमेपर निकालकर फिर उसीतरहकरे । ऐसे ३ बार करनेसे यह अदृष्टके सन्ना होजाताहै । इसमेंसे १-१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह क्षुभा धीर्य, यल, वर्ण और अग्निको बढाताहै ॥ १८७ ॥

### १८८ रुद्रपर्वटी

शुद्धं सृतं द्विधा गन्धं सम्मर्चयान् द्वयेः पुनः । थातारिराद्रिकं भृङ्गी काकमाच्यार्द्रिकणिक्ता ॥ ८६८ ॥  
दिनेनैकं मर्दयेत्सखे पाचयेत्पर्वटीं तथा । हयोः पारदं सृतं ताघ्रं शित्वा मूढदिना पचेत् ॥ ८६९ ॥  
रत्नवर्णं भवेद्यावत्तावत्पात्रं प्रचालयेत् । पशियेत्तदुल्लीपत्रे स्थाप्यं जिग्मधुपुटं पुनः ॥ ८७० ॥  
आच्छाद्य तेन योगेन हृष्यश्चोद्धृष्टं गोमयम् । दग्धं विचूर्णयेत्पश्चाच्चूर्णपारदं चिपं शिपेत् ॥ ८७१ ॥  
रुद्रपर्वटीका ह्येषा देया गुञ्जाद्वयं द्वयम् । पूरितं कटुनिर्गुण्डया मूलं निष्कट्यं पिबेत् ॥ ८७२ ॥

भाषा—जायफल, लवङ्ग और रसमाणिक्य ८-८ भात्रे, शुद्धमोल ४ मासे लेकर बारीकचूर्णकर धतूरेरससे १-२ रोज मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोखिया बनाकर छायामें सुखाकर रख छोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शहर, मरिच अथवा मूंगकेयूरके साथ देनेसे यह चातुर्थिकज्वरको दूरकरताहै और शीतको तत्काल नष्टकरताहै ॥ १७७ ॥

### १७८ रामवाणरसः ( दशमः )

नीलाञ्जनञ्च तुल्यञ्च गौरीपापाणमेव च ।  
धुनूरपदस्वरसे पेयितं गुट्टिकीकृतम् ॥ ८४५ ॥  
क्षीरशर्करया युक्तं भक्ष्यं तिन्तिडिकाकृतम् ।  
रामवाण इति ख्यातो भिषगाध्यर्थकारकः ॥ ८४६ ॥  
र. क. यो., ज्वर ।

भाषा—सुरमाकीभस्म, शुद्धतृतीया, सोमल समभागलेकर बारीकचूर्णकर धतूरेरससे एकरोज मर्दनकर मरिचबराबर गोखियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शहरयुक्त दूधके साथ देनेसे यह शीत, विषमज्वर और बारीसे आनेवाले ज्वरोंको निकालकर वैद्यको आश्चर्य करताहै ॥ १७८ ॥

### १७९ रामवाणरसः ( एकादशः )

रसं तुल्यं शिलां तालं खर्परं मरिचं समम् ।  
मर्दयेज्जम्भनीरेण रस्तोऽयं रामवाणकः ॥ ८४७ ॥  
र. क. यो., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, तुल्य, मैनसिल, हरिताल, खपरिया और मरिच समभागलेकर बारीकचूर्णकर जम्भीरीकेरससे १ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोखिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली जम्भीरीकेरस अथवा उचितानुपानके साथ देनेसे तमामाविषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ १७९ ॥

### १८० रामवाणरसः ( शीतकुलान्तकः ) १२

नीलाञ्जनञ्च तुल्यञ्च गौरीपापाणमेव च ।  
खर्परी श्वेतपापाणं शिलाचूर्णञ्च तालकम् ॥ ८४८ ॥  
सख्यमध्ये धिनिक्षिप्य जम्भीरेण विमर्दयेत् ।  
यद्रक्तान् मापमानांश्च शर्कराजीरसंयुतान् ॥ ८४९ ॥  
अनुपानविशेषेण शीतज्वरनिवारणम् ।  
रामवाण इति ख्यातः सर्वशीतकुलान्तकः ॥ ८५० ॥  
र. क. यो., ज्वराधिकारे ।

भाषा—नीलाञ्जन, तुल्य, सोमल, खपरिया, गोदन्ती, हरिताल, मैनसिल और हरिताल इनकीभस्म, (नीलाञ्जनको छोड़कर जिसकी भस्म न हो उसे शुद्धकरके डालना) सब समभागलेकर जम्भीरीकेरससे १-२ रोज मर्दनकर उद्धवराबर गोखियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शहर और जीरेके साथ अथवा उचितानुपानके साथ देनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै ॥ १८० ॥

### १८१ रामवाणरसः ( शीतमातङ्गकेगरी ) १३

गौरीपापाणकं शुद्धं क्षीरतुल्यं तथैव च ।  
मुञ्च सर्वसमा योज्यं जम्भीरेण विमृष्टं च ॥ ८५१ ॥

चणप्रमाणवट्टकांश्चायायां शोषयेद्बुधः ।

रामवाण इति ख्यातः शीतमातङ्गकेगरी ॥ ८५२ ॥

र. क. यो., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्धसोमल और तृतीया समभागलेकर दोनोंके बराबर पत्थरकाचुना मिलाकर जम्भीरीके रससे १ रोज मर्दनकर चनेप्रमाण गोखियें बनाकर छायामें सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानके साथ देनेसे यह शीतज्वरका नाशकरताहै ॥ १८१ ॥

### १८२ रामवाणरसः ( अमोवादि. ) १४

शुद्धं ह्रयं टङ्कणतालसञ्चकम्  
नीलाञ्जनं सूतविषे धलेर्वसाम् ।

द्वयञ्च पापाणरसाञ्जनं शिला

पृथक् समं जम्भरसैस्त्रिमर्दितम् ॥ ८५३ ॥

निर्गुण्डिकापत्ररसैस्त्रिमर्दितं

पुष्टं ततः कुन्कुटकप्रमाणकम् ।

अमोघं च विधुतरामवाणरसम्

बलद्वयं क्षात्रसितादिसंचितम् ॥ ८५४ ॥

पेकाहिकं द्वित्रिचतुर्थकञ्च

शीतज्वरं तद्विषमज्वरञ्च ।

पथ्यञ्च शाल्योदनमुद्धृष्टं

दध्ना च तत्रेण रसेश्च जाह्नवे ॥ ८५५ ॥

भुक्त्वा चेश्वरसादिकञ्च कदली खर्चुरिकादादिभिः,  
कापित्थं तनुलेपनं मलयजैः प्रोढाङ्गनाऽऽलिङ्गनम् ॥

र. क. यो., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध सुहागा, हरिताल, सुरमा, शुद्धपारा, पद्मनाग, गन्धक, सफेद और पीलासोमल, रसौत, मैनसिल ये सब समभाग लेकर बारीकपीस पारेणन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर जम्भीरी और निर्गुण्डीकेपत्ररससे १-२ रोज मर्दनकर गोला बनाय शराबसमुद्धते बन्दकर १-४ कपडिमी देकर सुगाकर कुम्हटपुष्टी आंचदेवे। स्वादशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ६-६ रत्तीकीमात्रा शहर और मधु बराबर के साथ देनेसे ऐकाहिक, द्वाहाहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक, शीतज्वर, विषमज्वर इन सबको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य पुरानेबारत और मूंगकीदाल अथवा दही छाउ अथवा जगलीयगुपक्षिओंका मसूरस, ईसफरस, केला, राजूर, अनार, दूध के साथ देवे। चन्दनका लेपकर प्रौढव्रिषोंका आलिषन करावे ॥ १८२ ॥

### १८३ रामवाणरसः ( पञ्चदशः )

रसगन्धकताप्राणि टङ्कणं त्रिफला विषम् ।  
पतानि समभागानि नेपातं तुल्यभागिकम् ॥ ८५७ ॥  
कारवह्नीरमेनेन मर्दयेद्याममायकम् ।  
मुञ्चाप्रमाणवट्टिकां भक्षयेद्याममायुता ॥  
रामवाण इति ख्यातः सर्वज्वरनिर्मुक्तः ॥ ८५८ ॥  
र. क. यो., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा और वज्रनाभ, ताप्रभम्भ और त्रिकला समभाग, जमालोटा सन्की बरार लेकर बारीक चूर्णकर परिगन्धकनीलीलवणकजलीमें मिलाकर करेलेकेरमसे १-२ दिनमदनकर १-१ रसीकी गोल्या बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरकेरस अथवा उचितानुपानकेमाथ देनेसे यह समस्त शीत और विषमज्वरोंको नष्टरताहै ॥ १८३ ॥

### १८४ रामवाणरसः ( पोडशः )

हिहूलं रसकं रसेन्द्रशितितुषाऽऽलं शिला गन्धकं, ताप्यं गौरशिला चितुदिसहितं सर्वं समं भागतः । कृष्णोष्मत्तरसेन मर्दितमिदं मापप्रमाणा वटी भुक्त्वा शीतसमर्पितं प्यरगणं निर्यासयेत्तत्क्षणात् ८०९  
र र कौ, र पा, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, उपरिया, पारा, तुन्ध, हरिताल, मैन्सिल, गन्धक, सोमामारी और सोमल सप्तसमाग लेकर नीलवर्णकजलीकर कालेधनूरेकेरसने १-२ रोच मदनकर उफ्न बराबर गोल्या बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तशीतज्वरोंको नष्टरताहै ॥ १८४ ॥

### १८५ रामरसः

गन्धकं पारदं तुल्यं मरिचञ्च त्रिभिः समम् ।  
पीजं नेत्रुष्मकं मर्चं दन्तीधायेन यामकम् ॥  
छिगुज्जं शूलचिष्टम्माऽनिलं सामज्वरं जयेत् ॥ ८६० ॥  
भै र, र सु, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक तथा मरिच समभाग, शुद्ध-जमालोटा सन्कीबरार लेकर बारीकचूर्णकर परिगन्धकनीलीलवणकजलीमें मिलाकर दन्तीमूलकेबाधने एकपहर घोटकर २-२ रसीकी गोल्या बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ लेनेसे घूल, चिगुज्ज, वायु और आमज्वरको यह नष्टरताहै ॥ १८५ ॥

### १८६ राजादिलोहम्

राक्षाऽधगन्धाकरैरेकषणीशिलहृदयेः ।  
त्रिकषयसमायुक्तैः लोहैः यस्मान्नष्टम्भतम् ॥ ८६१ ॥  
सर्वापद्रव्यसंयुक्तमपि वीचयिवर्जितम् ।  
हन्ति कार्शं स्वराऽऽघातं राज्यश्मशतक्षयम् ॥  
धलज्जर्णास्मिपुष्टीना धर्षणं टोपनाशनम् ॥ ८६२ ॥

र ग, र सु, प., र च, र क, र र, यो र, ना वि, नि र, लो प, भै र, १ मो त राज्यश्मनि ।

दि०—र सु द्विपर्याप्त दशाद्रलोहमिति जगन्धास्तिम् । पा र, १ मो त, ना वि, मनु चतुर्दशाद्रलोहमिति नाम । ल प चतुर्दशायस इति । भै र यामा तत्तदोहमिति नाम अत्र त्रिषत्तमन विभु, त्रिकला, त्रिमरा प्रख्या योगदानवरीषाठे अथवा व्याख्याने तथैव निवाचितमिति विज्ञेय, नम च चतुर्दशाद्रलोहमिति ।

भाषा—राक्षा, अतगन्ध, कपूर, बाली, मैन्सिल, त्रिकटु, त्रिकला, त्रिमर ( विह, नागरमोथा, चित्रक ) सब समभाग,

इतयन्कीबरावर लोहमसम दालकर राक्षादिद्रव्योंके बाधोंसे १-१ दिनमदनकर ३-३ रसीकी गोल्या बनाकर रखओड़े । यद्यपि बहुतेसोय केवल चूर्णनाकर रखलेतेहैं लेकिन राक्षादिकी भावना दिखेहुके बराम कामनहींकरताहै । इसमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे वैरोंसे ल्यागहुए सर्वोपद्रव्यक राज्यश्मको यह दूरकरताहै और कास, स्वरमश, टर-सत, धातुशय, धलवर्णनाश, मन्दाभि इनवाको नष्टकर पुष्टि कोकरताहै और समस्तदोषोंका नाशकरताहै ॥ १८६ ॥

### १८७ राक्षसरसः

समांशं योजयेच्चतुर्दं पारदं गन्धकं तथा ।  
नागार्जुनीरसे मर्चं सुरस्तायाकुचोमभैः ॥ ८६३ ॥  
मयूरपर्णीजीमारीमधुयष्टिममुरितैः ।  
धाराहर्षणीस्वरसे र्धहुफल्दास्तथैव च ॥ ८६४ ॥  
एतासां रसमादाय भावनायां पृथक्पृथक् ।  
जुजुटाण्डं तत्र घृमा छिद्रयुक्तं ममाचरेत् ॥ ८६५ ॥  
तत्रास्थितञ्च निक्रास्य तत्र भूत्या महारसम् ।  
धलज्जर्णास्मिपुष्टीना कौक्युदञ्च पुष्टं चरेत् ॥ ८६६ ॥  
पक्वं नीतं पुनर्मर्चं पुनः पक्वं पुनस्तथा ।  
एवं त्रिनारसंस्कारं रसरक्षोऽनृतोपमम् ॥  
धुधकारं वीर्यकरं धलज्जर्णास्मिपुष्टीना ॥ ८६७ ॥

र सु, वातव्याघ्रधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धकनीलीलवणकजलीकर छोटी दूधी, तुलसी, बाजची, मोरशिखा, पीपुआ, मुलहठी, अतगन्ध, बहुफली इनके रसोंसे १-१ दिन मदनकर गोलाबनाय मुर्गीका अण्डा ( जिसमें बधा न पड़ा हो ) लेकर युक्तिते छिद्रकर भीतरकर विहालकर उममें गोलेगोरस दूसरे अण्डेकी खोलमें ढक्कर गुड़घुनेते धन्दकर ६-७ कपडमिनीदेकर सुपाकर कुकुटपुष्टकी आचधे । स्वातन्त्र्यतालहोनेपर निकालकर फिर उगीतरहकरे । ऐसे ३ बार करनेसे यह अमृतके सत्प होजाताहै । इसमेंसे १-१ रसी उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह धुधा वीर्य, बल, वर्ण और अभिको बढ़ाताहै ॥ १८७ ॥

### १८८ रद्रपटी

शुद्धं मृतं द्विधा गन्धं सम्मर्चयान् द्वयैः पुनः ।  
वातारिराद्रिकं भृङ्गा काकमाय्याद्रिकणिशः ॥ ८६८ ॥  
दिनेकं मर्दयेत्तत्रये पाचयेत्तद्रपटी तथा ।  
द्वयोः पारदं मृतं ताप्रं क्षित्वा मूकश्रिना पचेत् ॥ ८६९ ॥  
रत्नवर्णं भवेद्यानृतावत्पाच्यं प्रचालयेत् ।  
प्रक्षिपेत्तद्वलीपत्रे स्थाप्यं क्षिप्रयुते पुनः ॥ ८७० ॥  
आच्छाद्य तेन योगेन हृषधोद्धञ्जं गामयम् ।  
दग्धं विचूर्णयेत्तथाचूर्णपादं विषं क्षिपेत् ॥ ८७१ ॥  
रद्रपटीका होया देया गुहाद्वयं द्वयम् ।  
वर्णितं कटुनिर्गुण्ड्या मूलं निष्कष्य पिबेत् ॥ ८७२ ॥

भृङ्गराजस्तेनैव लिहेद्वा मधुना सह ।

वातिकान्सनिहन्त्याशु सर्वथैव न संशयः ॥ ८७३ ॥

नि. र., र. को., र. र., व. रा., र. का., वै चि, कासधासे ।

टि०—दिन्याताम्रपर्वण्या साकमस्या आघातव साध्य प्रतीतेरु पस्तु ताग्रपर्वण्येषयाऽस्य योगस्याऽतिथिगणत्वात्सत्तन्त्र एवाऽय योगोऽतएवाऽस्य योगस्य स्वरपर्वटीति नाम कर्ण सार्थकम् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक २-२ भागमी नीलवर्ण-कमलीकर एण्ड, लवंग, अंगरा, मकोय, कोयल इनप्रत्येकके-रतोंसे १-१ दिन मर्दनकर अच्छीतरह सुखाकर घीपुनीहुई-कड़ाहीमें डालकर बदराहातकी मृदुअग्निसे पकावे । इन होनेपर चतुर्थांश ताम्रभस्म डालकर चलाताहुआ पकावे । जब पर्वटीका रंग गन्धक न जलकर कुछ लज्जाईपरहोजाय तबपर्वटीविधानसे पर्वटी तैयारकर सबसेचतुर्थांश शुद्धबलनापका बारीकचूर्ण मिलाकर १-२ पहर खरलकर रखोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती-कोमाना अंगरेकेरस अथवा मधुकेसाथ खाकर फटेपत्तोंवाली निगुण्टीकी जड़का चूर्ण ८ मासे मधुकेसाथ ऊपरसे चाटनेसे यह घातजन्य कासको नष्टकरताहै ॥ १८८ ॥

### १८९ रुद्ररसः

तीक्ष्णं शुल्यं नागतारं स्वर्णञ्च मरिचं पृथक् ।

एकत्रिभिश्चतुष्पञ्च सप्तपट्टशुद्धसूतकम् ॥ ८७४ ॥

चाह्नेरीद्रव्यैर्मयं दिनेनैकं तच्च गोलकम् ।

गोलकं लेपयेत्तेन ततो वस्त्रेण वेष्टयेत् ॥ ८७५ ॥

मृगाङ्गवत्पेषेत्स्यात्पलां चालुकाभिः प्रप्रुरयेत् ।

उद्धृत्य चूर्णयेच्छुष्कं हरतुल्यो रसोत्तमः ॥

मृगाङ्गवत्स्वयं हन्ति तथा मात्राऽनुपानकम् ॥ ८७६ ॥

र. सु क्षयाधिकारे ।

भाषा—कोलादम्ल १ भाग, ताम्रभस्म २ भा., नागभस्म ३ भा, रजतम्ल ४ भा., सुवर्णम्ल ५ भा., मरिच ७ भा. और रससिन्दूर ६ भाग लेकर बारीकचूर्णकर तिपतियाकेरखते एकरोज मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर ३-४ तह नलमलके कपड़ेमें रस बाँटोऔर कथासूत लपेटकर गंदेकेसहस्र बनाले फिर शरावसमूहमें बन्दकर ६-७ पहरअग्निदेकर हंडीमें ४-४ अङ्गल ऊपरनीचे घालते दगाकर ४ पहरकी अग्नि देवे । स्वाह-शीतल होनेपर निकालकर रखाओड़े । इसमेंसे उचितमात्रामें यथा-सोनागुपानकेसाथ देनेसे यह सघतहके क्षयोंको नष्टकरताहै । इसमें पन्थ और अनुगान मृगाङ्गीकीतह देना ॥ १८९ ॥

### १९० रुद्रवटी ( प्रथमा )

शुद्धपाराद्वह्मनानुमरीचेः

पारादाहिगुणगन्धकमथ ।

पत्तसम्ममयमुद्धृत्यदुग्धं

घाकुचीभवकपायचये घां ॥ ८७७ ॥

मेधिमाम्य परिपेय्य दिनेक-

मशमानवटिकाः परिकल्प्य ।

माक्षिकैः समशिताऽऽसिलपामा-

हन्ति रुद्रवटिकाव्यरसोऽयम् ॥ ८७८ ॥

चि. क., कुष्ठे ।

भाषा—शुद्धपारा, चित्रक, मरिच १-१ भाग, शुद्धान्धक २ भाग लेकर नीलवर्णकमलीकर कुटज, गूलकादृष, वाकुची इनके यथासम्भव द्रव अथवा कापोंसे १-१ दिन मर्दनकर ६ मासेसे १ तोलेतककी मोलिया बनाकर रखाओड़े । इसमेंसे १-१ गोली मधुकेसाथ खिलानेसे यह सघतप्रकारकी पामाओंको नष्टकरताहै ॥ १९० ॥

### १९१ रुद्रवटी ( द्वितीया )

कान्तलोहं मृतञ्चाऽम्रं सृतं ताप्यं सतालकम् ।

गन्धकं गुग्गुलुं शुद्धं घिङ्गं त्रिफलाकुलम् ॥ ८७९ ॥

व्योषाऽग्निदेवदारुण्युद्धिफेननिशाह्वयम् ।

गिरिकर्णोपुनर्नव्यामूलचूर्णं समं समम् ॥ ८८० ॥

भृङ्गराजद्रव्यं मयं दिनेनैकं वटकीकृतम् ।

सर्वकुष्ठानि हन्त्याशु वटीयं रुद्रनामिका ॥

मासमात्राग्निहन्त्याशु मूर्ध्नीं सर्वघातुजाम् ॥ ८८१ ॥

रसायनसं., यो. म., र. का., इत्याधिकारे ।

भाषा—कान्तलोह, अम्रकभस्म, शुद्ध पारा, सोनामासी, रवमाणिस्य, गन्धक, गूल, विडंग, त्रिफला, बेर, त्रिङ्ग, चित्रक, देवदारु, समुद्रपेन, दोनोहरी, कोयल, पुनर्नवाजीअ येसव समभागलेकर बारीकचूर्णकर परिगन्धककी नीलवर्णकम-लीमें मिलाकर अंगरेकेरससे एकरोजमर्दनकर ३-२ रत्तीकी मोलिया बनाकर रखाओड़े । इसमेंसे १-१ गोली यथोविनाशु-पानकेसाथ देनेसे यह तमामप्रकारकेकुओंको नष्टकरताहै ॥ १९१ ॥

### १९२ रुद्रेश्वररसः ( वागशूलहा ) १

शुद्धं सृतं समं गन्धं मृताऽम्राकमनःशिलाः

सेन्धव्यं माक्षिकन्तालं धुचूरं हिहू खुरणम् ॥ ८८२ ॥

महाराष्ट्रपा च निगुण्ट्या घासेरण्डव्यं दितम् ।

मयं रुद्धा पुटे पाचये कुम्भकुण्डाण्डोदरे त्रिपक्वं ॥ ८८३ ॥

घट्टमार्गं लिहेत्क्षीरं रुद्रशो घातशूलजित् ।

हिहू सौवर्चलं शुष्कीमशसुप्ताग्न्यापिषेत् ॥ ८८४ ॥

ना. वि, र. को., यो. म., र. क., र. र., शूले ।

टि०—रूढा मृदुसे पक्का कुण्डालसे तपोदरेदिनि पटान्य दरपने पस्तु कुण्डालदोरे इनि पट मनीपीननामावरी पारा दीना स्थितकरपाय ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, अम्र तथा ताम्रभस्म, शुद्ध मैन्सिल, सेन्धव, सोनामासी, हरिताल पत्रुकेबीज, हींग और सुरणन्द समभाग लेकर पाँचगन्धककी नीलवर्णकमलीमें मिला-कर मराठी, निगुण्टी, अदुसा और एण्डके रसोंमें १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय सुगीके जण्टेमेंमरके दूगरेमण्टेहीगोल चगाय शुद्धपेनेमें मणिपबन्दकर ६-७ पहरअग्नि देकर बन्द अथवा उपायमेंसे ४ पहरकी अग्नि देवे । स्वापान्कलदोनेर निकालकर रखाओड़े । इसमेंसे १-१ मासेकी मात्रा मधुकेसाथ



देकर हींग, सचल और सोंठकाचूण १ तोला गरमपानीके साथ  
रनेसे सबप्रकारके शूलोंको यह नष्टकरताहै ॥ १९२ ॥

### १९३ रुद्रेश्वररसः ( द्वितीयः )

गुद्धं सूतं समं गन्धं कान्तं व्योम च मारितम् ।  
गण्डर्वायुचीवीजं निशा श्लेष्मातवीजकम् ॥ ८८५ ॥  
वेडङ्गं त्रिफला वृद्धि भृङ्गं रुष्णा तिलाऽभ्ये ।  
श्यानाककुसुमं तुल्यं चूर्णयेच्च सितायुतम् ॥ ८८६ ॥  
क्रांस्थपात्रस्थितं भक्षेत्कैयंकं मधुसर्पिणा ।  
तर्धकुष्ठहरः सोऽयं महारुद्रेश्वरो रसः ॥ ८८७ ॥  
रसायनसः, यो. म, र, का, कुष्ठे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, कान्तलोह, आम्रक, मण्डार  
नकीमसमें, वायुची, हल्दी, सतोहेकेबीज, विडङ्ग, त्रिफला,  
चित्रक, अमरा, पीपल, तिल, हरे, सोनापाटाकेकूल सब समभाग  
लेकर बारीकचूर्णकर बराबरकी शक्कर मिलाकर रखछोड़े । इस  
मेंसे १-१ तोला कांसेकेवर्तनमें बराबरके घी और मधुकेसाय  
पानेसे यह समस्तकुष्ठोंको दूरकरताहै ॥ १९३ ॥

### १९४ रेतोरोधनपोट्टलीरसः

आकल्लजातीफलजातिकेला-  
कन्दूरिकाकुङ्कुमहिङ्गुलानाम् ।  
पटे पट्टः पोष्टलिकां प्रणीय  
निक्षिप्य दुग्धे विपचेद्वसन्त्या ॥ ८८८ ॥  
हात्वाऽर्धशेषं ससितं पयस्त-  
न्निष्कास्य तां पोष्टलिकां पिबेद्यः ।  
भवन्ति मोगाय न तस्य शक्ताः  
प्रचण्डकामाः शतशोऽपि रामाः ॥ ८८९ ॥  
सि. मे. म., बाजीकरणे ।

भाषा—अकलकरा, जायफल, जावित्री, इलायची, कस्तूरी,  
केशर और शिंगरिफ सबसमभागलेकर ४ रत्तीसे १ मासेत्क  
मलमलकेधोयेहुएपट्टकेमें पोष्टलीबनाय दूधमें छोड़देवे और चूल्हे-  
पर चढ़ादे । जब अपौटा दूधहोजाय तब पोष्टलीको निकालकर  
उस दूधको पीकर सम्मोगमें प्रवृत्त हो तो भदोन्मत्त बहुतसी  
श्रिया उसके तृप्तकरके लिये समर्थ नहीं होती हैं ॥ १९४ ॥

### १९५ रेतोरोधिनीगुटिका ( प्रथमा )

जातीफलस्य फणिफेनभृतोदरस्य  
लितस्य सत्पुटमुद्रा परिपाचितस्य ।  
पलाकुरङ्गसुमकुङ्कुमहिङ्गुलाख्या  
रेतो रण्डि गुटिका पयसा निपीता ॥ ८९० ॥  
सि मे म., बाजीकरणे ।

भाषा—जायफलमें छेदकर एकमात्रा अफीम डालकर गेहूँके  
आटेके अन्दर बन्दकर पुटपाककरे । शीतलहोनेपर निकालकर  
इसमें इलायची, कस्तूरी, लौंग, केशर और शुद्धशिंगरिफ ये  
प्रत्येक अफीमकेबराबर मिलाकर ३-३ रत्तीकी गोलियां

बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली दूधकेसाय लेनेसे यह  
बीर्यको रोक्तीहै ॥ १९५ ॥

### १९६ रेतोरोधिनी गुटिका ( द्वितीया )

धनूरवीजविषमुष्टिरुगन्धसुत-  
जातीफलानि सलिलेन पृदाकुवह्याः ।  
पिप्पुा चिशिष्य मसृणं गुटिकीकृतानि  
रन्धन्तिधातुमधिमन्मथकेलि यूनाम् ॥ ८९१ ॥  
सि. मे. म., बाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध घट्टोकेबीज, कुचिला, गन्धक और पारा,  
जायफल सब समभागलेकर पकेपानोंकेरससे एकदिनमईनकर १-१  
रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सम्मो-  
गसे १ घटा पहिले दूधकेसायलेनेसे बीर्यका स्तम्भन होताहै ॥ १९६ ॥

### १९७ रेतःस्तम्भकपारदः

शुद्धं सूतमिषुप्रतोलकमितं गन्धं तथादोधितं,  
पञ्चाक्षं परिगृह्य संयुतमुखां शुक्तिं समुद्राद्व्यताम् ।  
तत्कीटं परिहृत्य शुक्तिजठरादन्तः क्षिपेद्गन्धकं,  
प्रोक्तस्याऽर्द्धमथान्तरे विनिहितं सूतं समस्तं ततः ॥  
सूतस्योपरि शेषगन्धकरजः संक्षिप्य तन्मध्यगं,  
सूतं शुक्तिरूपान्ययोपरिगया सम्मुद्रय मृद्वलकैः ।  
तां शुक्तिं परिशोष्य सूर्यकिरणात्सन्दीप्यतेऽग्निस्तुपै-  
र्धान्यानां गजसङ्घके चरपुटे तत्स्वाङ्गसंश्रितलम् ॥  
सञ्चूर्ण्यांशुकगालितं किल भवेद्भुजोन्मितं पुष्टि-  
द्रेतःस्तम्भनहृत्ययोऽनु च पिबेत्सायं सितासंयुतम्  
ध, चि र भ, रसायनसः, र. सु, बाजीकरणे । रसा-  
यनसङ्घे स्तम्भनरस इति नाम ।

टि०—अरु योगे शुक्ती गन्धकाम्ये पारदस्यापनमुष्टिम् । परन्तु  
प्रथमतस्तस्य शोषितिरिव दुस्तरा भविष्यत्स्वात् । ततोऽनन्तरं सुप  
पुं अग्नौ स्थितिरिति दुर्बारा, केवला शुक्तिरवाऽवनेषता भविष्यति ।  
अतः प्रथम येनैकैनापि प्रकारेण पारदस्य नियमन विधाय शुक्तीं स्थाप  
नीय इति गृह रक्ष्यम् । अन्यथायाऽमादिऽरगिर्नैव शुक्ते वा नष्टमिहता  
विधाय शुक्तीं स्थापयित्वा शुक्तिजं शरावमपुनःपुनर्गमिना कृत्वा पुन  
प्रेक्ष्य इत्यस्माकं सम्प्रति ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ५-५ तोलेलेकर गन्धकका  
बारीकचूर्णकर बीतीहुई शीपका मुह खोलकर जीवको बाहर  
निकालकर आपा गन्धक उसमें बिछाकर ऊपर पारेकोरखकर  
बचेहुएगन्धकसे ढकदे । फिर दूसरी शीपसे ढककर चूना और  
गुड़से सन्धिको बन्दकर ६-७ कपडमिठी देकर सुखाकर चावलकी  
सूसीकी गजपुट्यमें आव देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर  
शीपसहित चूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्तीकीमात्रा शक्कर-  
डालेहुए दूधकेसाय लेनेसे यह बीर्यका स्तम्भनकरताहै ॥ १९७ ॥

### १९८ रोगनाथरसः

अर्धाधर्तुत्यू रसनागनिष्कौ

प्रथकप्रथमगन्धककृतपण्ड ।

शङ्खस्य निष्कौ मृतताम्रतो द्वौ  
वराटिकानां नवसम्पुटानाम् ॥ ८९४ ॥  
मध्ये च पन्त्वा कदलीद्रवाद्रौ  
भूयोऽर्द्धभागेन गजोपकुल्या ।  
तदर्द्धपादं मरिचं प्रदद्या-  
द्रन्धास्तुनिष्कं च घृतेन लिङ्गात् ॥ ८९५ ॥

अश्लीयात्पूर्ववत्पथ्यं चासराण्येकविंशतिम् ।  
रोगनाथो रस्तो नाम्ना रोगराजनिकृन्तकः ॥ ८९६ ॥

र. को., र. र. स., राजयक्ष्मणि ।

टि०—रस्तो रस्तनकोपे द्वितीयस्थाने अस्य लोकनाथेतिनाम, गजना-  
माय, समानयोगस्य दिननामदानस्याऽनौचित्यात् ।

भाषा—शुद्धतृतीया २ मासे, शुद्धपारा, नागभस्म, गन्धक  
और सुहागा ४-४ मासे, शङ्ख और ताम्रभस्म ८-८ मासे  
लेकर नीलवर्णकजलीकर पीली ९ कौड़ियोंमें भरकर आकटे-  
द्वयमें पिघलुए सुहागसे सन्धि बन्दकर कौड़ियोंको शरावसम्पुटमें  
रख ६-७ कपडमिठी देकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे ।  
स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर समस्तसे आधीगजपीस और  
उससे आधीमरिच तथा ४ मासे शुद्धगन्धक मिलाकर  
केलेकेबन्दकेरसे १-२ रोज मर्दनकर सुखाकर रखडोडे ।  
इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा धीरेमाथ सेवनकरसे २१ दिनमें  
यह राजरोगनो नष्टकरताहै ॥ १९८ ॥

### १९९ रोगपञ्चाननरसः

सूतटङ्कौ वरागन्धकयूपणं  
वत्सनाभो घनस्तुल्यतो मर्दयेत् ।  
भृङ्गनीरेण तद्रुमयातोदरं  
रक्तिकामां घटी रोगपञ्चाननः ॥ ८९७ ॥

रसायनसं., वै. वि., गुल्मे ।

भाषा—शुद्धपारा, सुहागा, त्रिफला, गन्धक, त्रिकटु,  
बजनाग और अन्नकमलम येसब समभाग लेकर पोरोगन्धककी  
नीलवर्णकजलीमें मिलाकर भंगरेकेरसे १-२ दिन मर्दनकर  
१-१ रत्तीकी गोखिया बनाकर रखडोडे । इनमेंसे १-१ गोली  
उचितानुपाकेसाथ देनेसे गुल्म और बातोदर नष्टहोताहै ॥ १९९ ॥

### २०० रोगभञ्जनरसः

मृतं सृतं मृताऽन्नञ्च मृतं ताम्रं विपं समम् ।  
जम्बीरफलजद्रावै र्मर्दितं प्रहरत्रयम् ॥ ८९८ ॥  
दोलायन्त्रेण तत्पाच्यं शिशिपिन्नेन भावयेत् ।  
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम् ॥  
सर्वे रोगा विनश्यन्ति रम्भोऽयं रोगभञ्जनः ॥ ८९९ ॥  
वै. वि., सन्निपाते ।

भाषा—पारा, अन्नक, ताम्र इन्कीमर्मे और शुद्धवज्रनाग  
समभागलेकर जम्बीरीकेरसे ३ पहर मर्दनकर गोलाबनाय जम्बीरी  
केरी रसे ३ पहर स्वेदनकर मोरनेपितले १-२ भावनाएँ देकर  
१-१ रत्तीकी गोखिये बनाकर रखडोडे । इनमेंसे १-१ गोली

समयोचितानुपाकेमाथ देनेसे यह समस्तसन्निपातोंको दूरकरताहै ।  
रसव्याप्तिकेलिये जलवारादेना अन्यावश्यकहै ॥ २०० ॥

### २०१ रोगपुरदलनरसः

स्वर्णं रूप्यञ्च ताम्रं सममथहरजं  
वार्धिभागञ्च गन्ध-  
स्याऽष्टौ भागान्विमर्द्य त्रिदिन-  
मनलजोथेन वारार्कघर्मे ।  
संयोज्याऽजादिपित्तं विषमपि  
हरजात्पोडशांशश्च क्षत्या,  
देयो बह्व्रयोऽयं गदमुर-  
दलनः पावकयूपणेन ॥ ९०० ॥  
तैलाम्यक्ताय कुर्यात्सलिलविधि-  
मथो रोगिणे दध्युपेतं,  
भक्तं खण्डं मरीचं यद्वि भयति  
मनोयासना पथ्यभुक्ती ।  
उद्धृत्तं सन्निपातं जयति लघुतरं  
शैत्यतन्द्राघिमोहं,  
घातव्याधीश्च सघ्नान् कफजनि-  
महारोगानां प्रसिद्धः ॥ ९०१ ॥

र. ख., र. शं., सन्निपाते ।

भाषा—स्वर्ण, रजत और ताम्रभस्म १-१ भाग, शुद्ध  
पारा ४ भाग, शुद्धगन्धक ८ भाग लेकर बारीकपीस परेगन्ध  
ककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर चित्रकमूलेकाद्विसे ३ रोज  
मर्दनकर धूपमें सुखाकर पाचोंपित्तोंकी १-१ भावनादेकर पारे  
पोडशांश शुद्धवज्रनाग डालकर ६-६ रत्तीकी गोखिया बनाकर  
रखडोडे । इनमेंसे १-१ गोली चित्रक और त्रिकटुकेसाथ देनेसे  
घोरसन्निपात, शीत, तन्द्रा, मोह, वातव्याधिया और कफरोग  
नष्टहोतेहैं । इसकासेवनकरनेवालेको तैलाम्यक्करादे, मस्तकपर  
जली धारादेना । भूखल्लनेपर दही, मात, खांड, मरिच,  
येसब देनेकाहिये ॥ २०१ ॥

### २०२ रोगविघ्नगणेशरसः

रसरूप्यणं गन्धशुल्काऽऽयसञ्च  
भुजङ्गः समा वत्सनाभोऽन्नकश्च ।  
समं चूर्णितं बह्व्रश्चाऽनुपाते-  
रजोपैः सदा रोगविघ्नो गणेशः ॥ ९०२ ॥

रसायनसं., वै. वि., र. ख., र. शं., र. का., दो., र. को., सर्व-  
रोगे । र. का., दो., विघ्नगणेश इतिनाम । वै. वि. अन्नकस्याभावः ।  
अनलो द्रव्यते । क. अन्नकस्याभावः ।

भाषा—शुद्धपारा, त्रिकटु, गन्धक, ताम्र, मोह और नाग  
इन्कीमर्मे, शुद्धवज्रनाग, अन्नकमलम येसब समभागलेकर पोडकर  
रखडोडे । इसमेंसे ३-३ रत्ती उचितानुपाकेसाथ देनेसे यह  
समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ २०२ ॥

## २०३ रोगविदारणरसः

हरदीर्घं वत्सनाभं द्रुणं माक्षिकं कणाम् ।  
तालकं गन्धकं चात्रं त्रिपापाणञ्च सैन्धवम् ॥ ९०३ ॥  
सर्वं भृङ्गस्य नीरेण मर्दयेत्प्रहरत्रयम् ।  
गुजामात्रं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम् ॥ ९०४ ॥  
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं तृष्णार्थं शीतलं जलम् ।  
अथ धन्वन्तरिप्रोक्तो रसो रोगविदारणः ॥ ९०५ ॥  
वै चि , ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाम, सुहागा, सोनामाखी, पीपल, रसमाणिष्य, शुद्धगन्धक, अजबभस्म, स्याह, सफेद और पीलासोमल, संधानमक समभाग लेबर बारीकपीसकर पारेगन्ध बारी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर भारेकरसे ३ पहर मर्दनकर १-१ रसीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त सन्निपातोंको नष्ट-रताहै । इसमें दही, मात और ठंडाजल पच्य देना ॥ २०३ ॥

## २०४ रोगान्तकोरसः

वृषाधा पातितं सृतं स्विन्नं प्रागुक्तयुक्तितः ।  
रसेश्वरं समादाय प्रखरीसलिलं भृशम् ॥ ९०६ ॥  
खल्वमग्रे विनिःक्षिप्य मर्दयेदुपविशकान् ।  
दिवसांस्तद्वैधिल्यैश्चक्रिकां रचयेद् दृढाम् ॥ ९०७ ॥  
चक्रिकां दृढभाण्डस्य सन्ध्यान्मध्यभाण्डके ।  
उपरिष्ठासूतककं मर्दितं विनिवेशयेत् ॥ ९०८ ॥  
तस्योपरिष्ठात्प्रखरीसलिलचक्रां निवेशयेत् ।  
दृढं शरायं सन्ध्याद् दृढो लेपः क्रमेण वै ॥ ९०९ ॥  
जलपूर्णं विधायाऽथ शुल्ल्यां यन्नं निवेशयेत् ।  
दिनानि त्रीणि संकाश्य रसं यन्प्रात्समुद्भवेत् ॥ ९१० ॥  
अन्यं भाण्डं समादाय वत्सनाभस्य चूर्णकम् ।  
भाण्डमध्ये विनिःक्षिप्य तस्योपरि रसं क्षिपेत् ॥ ९११ ॥  
उपरिष्ठाद्वत्सनाभचूर्णं रससमं क्षिपेत् ।  
पूर्ववत्सन्धिलेपञ्च कृत्वा यन्नं जलोपितम् ॥ ९१२ ॥  
शुल्ल्यामारोपयेद्वह्निं ज्वालयेदुपविशकान् ।  
दिवसान् पारदः साऽयं भस्मीभवति साऽन्यथा ॥ ९१३ ॥  
गृहीत्वा भस्मसृतं तं निम्बुद्रावेण मर्दयेत् ।  
स्तोकमानं तेन लिम्पेद्भस्मनाणि घृष्टिमान् ॥ ९१४ ॥  
ऊर्ध्वाऽधो माक्षिकं दत्त्वा पुटयेद्वन्यगोमयैः ।  
भस्मीभूतं भवेद्भस्म तद्वद्रजतमारणम् ॥ ९१५ ॥  
ताम्रं तीक्ष्णं यद्भनागी तथा मुक्तयैव मारयेत् ।  
मृतानि तानि लोहानि गृहीत्वास्तुतपादत् ॥ ९१६ ॥  
माक्षिकं गन्धकं तालं मनोहा हिङ्गुलं तथा ।  
तुल्यञ्च रसकञ्चैव सृतपादाशतं क्षिपेत् ॥ ९१७ ॥  
एकीकृत्य रसेः सार्धं सर्वमेकत्र मर्दयेत् ।  
शुष्कमर्दनयोगेन दिनमेकं त्रिचक्षणम् ॥ ९१८ ॥

वाते त्रिकटुना देयः श्लेष्मण्यपि तथैव हि ।  
पेत्तिकेषु विकारेषु गुड्वीसत्ययुक्तया ॥ ९१९ ॥  
युक्तो योग्यः शर्करया मूलजे शिखिवन्नया ।  
कुष्ठेषु खदिरकाथं वाकुचीचूर्णसंयुतम् ॥ ९२० ॥  
प्रयुज्जीत रसं वैद्यस्तस्योगोक्तयोगतः ।  
रोगान्तक इति ख्यातः सर्वव्याधिनिनाशनः ॥ ९२१ ॥  
दृष्टप्रभावः स्प्रोऽत्र लोकोपकृतिहेतवे ।  
देवीशास्त्राऽनुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ ९२२ ॥  
रसाल , ज्वराधिकारे ।

भाषा—नियामक औषधियोंमें मर्दनकरके दशवार ऊर्ध्व-पातितकियाहुआ शुद्धपारा लेकर कुर्कोधेनीजङ्गेरसे २० रोजतकमर्दनकर चक्री बनाय मजबूत पड़ेकेबीचमें रखकर कुर्कोधेनीमूलके कलक्रीटिकड़ी पारोसे चौगुनेबजनकी ऊपर ठककर मिथीकेमजबूतकङ्कसे ठककर जलमुद्रासे बन्दकर घड़ेमें पानीभरदे और चूलेपरचढ़ाय ३ दिनतक निरन्तर अग्निदेवे । ठंडाहोनेपर यत्नपूर्वक पारोको निकालकर फिरसे पूर्वोक्त औषधिवेरसे थोडकर टिकियाबनाय दूसरे नवीनघड़ेमें पारोकी बराबर बछनाम-गया चूर्ण विछाकर ऊपर रसचक्रिकाकोरख उसीकेबराबर दूसरे बछनामकेचूर्णसे ढकदे और मजबूत शरावसे ढककर जरमुद्रा करपानीसे भरकर चूलेपर चढ़ाय २० दिनकी अग्निदेवे । पानीकम होनेपर दूसरा ढालताजाय । बीसवैरोज पानी बिलबुल सुखादे । १-२ अङ्गुलीपानी बाकीरहनेपर आचबन्दकरदे और यन्नको चूहेपर रहनेदे । स्वात्तशीतल होनेपर धीरजसे मुद्रारो खोल भीतसे पारोकीभस्मको निकालकर थोड़ासा नीबूकास बालनर मर्दनकर सुवर्णके बारीकपीनोंपर लेपकर सुखाकर शरावसन्मुटमें नीचेऊपर सोनामाखीकाचूर्ण देकर सुवर्णपीनोंको बन्दकर २-४ कपड़मिथीकरदे । सूखनेपर मजबूतकी आचदे । स्वात्तशीतलहो-नेपर सुवर्णभस्मको निकालकर रखछोड़े । इसीतरह चारी, ताबा, फोलाद, बड़ और नागकी भस्मकरे । येसबभस्में १-१ भाग, पारदभस्म ४ भा , शुद्ध सोनामाखी, गन्धक, हरिताल, मैन-सिल, शिंगरिफ, तुल्य और खपरिया १-१ भाग लेकर छक्को इक्के मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रसीकी माना बायु और श्लेष्मणं त्रिकटुनेसाथ, पित्तमें क्षारयुक्त गिलोयसत्त्व, कवासीरमें मोरशिखा और कुष्ठमें वाकुचीकाचूर्ण ढालेहुए पीरेके काचकेसाथ देनेसे यत्न नष्टहोतेहै । इसीतरह तत्तदोगद्वानु-पानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ २०४ ॥

## २०५ रोगभसिहरसः ( श्रीसण्डवटी )

सुतद्वयीघनवरऽनलवेल्लभाई-  
तिकाकुट्टययविषः सवचैः समंशैः ।  
रोगभसिह इति वास्तकफामयप्रः  
सान्द्रोऽयमल्पपुटितो विहितो द्विगुणः ॥ ९२३ ॥  
एतं गुंढप्रमुदितं रसवर्जितैः स्या-  
च्छ्रीखण्डनामगुटिका विहितो द्विगुणः ।

शैल्याद्यतीर्णरूपवातभवान्विकारा-

न्हत्याद्रिकटवयुताऽप्यथ केवला वा ॥ १२४ ॥

र. स, ध., टो., र. र. दी, रसायनध., र. का., वातव्याप्य-  
विकारे । रसायनसङ्ग्रेहे व्याधिगन्धकेमरीति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, अभ्रकमस्म, त्रिफला, चित्रक, विहङ्ग, भार्ज्जी, कुट्टी, त्रिफु, वच और शुद्धवल-  
नाग समभागलेखर विपको छोड़कर इसयोगमें आईहुई वनस्प-  
तिओंकेकटेमें १-१ भावना देकर गोलावनाय पकेपानोंमेंरख  
सूतलेपपेटकर एक्वालित्वकेयुद्धमें रखकर ऊपरसे बालभर  
बराहपुटकी आघद । स्वाद्वशीतलोनेपर निकालकर २-२  
रत्तीकी गोल्या बनाकर रखओगे । इनमेंसे १-१ गोली  
तत्तद्रोगहरातुपानेसाथ देनेसे यह तमामवातव्याधियोंको दूर-  
करताहै । इसमेंसे धातुओंको निरालकर गोली बनाईजायतो  
उसकानाम धर्माखण्डवटीहै और उसको अदरकसेरस बधवा  
बेलपानीकेसाथ देनेसे कफ और वातविकार दूरहोतेहैं २०५.

२०६ रोमवेधरसः

शुद्धीचिपं सर्पमहाविषञ्च

शुद्धं समं सूतकगन्धकञ्च ।

एकाऽधिकं विशतिवासराणि

निधाप्य यत्रे सजलप्रदेहे ॥ १२५ ॥

शुद्धैरुमानं सपृष्टं प्रपिष्टे

नयज्वरे चाऽप्यधिज्वराते ।

अभ्यङ्गमानेन निहन्ति सर्वा-

न्यथा सुजङ्गं गरुडो गरीयान् ॥ १२६ ॥

रोमवेध इति ख्यातो रसरराजश्चिकित्सकः ।

कौतुकाथं नरेन्द्राणां धन्वन्तरिचिनिर्मितः ॥ १२७ ॥

रसायनं, र. सु., भै. सा, टो., र. का. यो. म., र (मा.) ज्वराधि-  
कार । रसायनसङ्ग्रेहे सर्वरोगाऽधिकार । र (मा.) मर्दनज्वरादि ।

भाषा—शुद्धपछनाग, सर्पविष, शुद्ध पारा और गन्धक  
समभाग लेखर पारे गन्धककी नीलवर्णकलीमें विपको मिला-  
कर १-१ दिन मर्दनकर शीघ्रीमें भरके सुहर पर मोमवर्णहसे  
इसतद्गन्धन्यत्रे कि पानी जानेकी राह न रहे । फिर इसे जहां  
हमेशा पानी मरारहातो बधवा फिरता हो उसजगह हाथभर  
चाहा गोदकर नीचे गाढ़े और २१ रोजक रहनेदे । इसके-  
बाद इसमेंसे १ रत्तीलेखर पीनेमिलाय तमाम क्षीरपर मालि-  
शकर कपडा ओटाकर मुलाहै । इससे पत्नीनाहोकर तत्सम  
भाट्यकारका ज्वर निकलजाताहै ॥ २०६ ॥

२०७ रोहीतकलोहम्

रोहीतकसमायुक्तं त्रिकप्रययुतं त्वयः ।

ग्रीहानमग्रमांसञ्च पाटतञ्च विनाशयेत् ॥ १२८ ॥

र. मं, र. वि, म, र. क, भै. र, र. सु, र. चं, र. र, र. का,  
रसायनं, यष्ट्यह्लाऽधिकारः ।

भाषा—रोहिदीकीछाल, त्रिकट, त्रिकण, त्रिमद (विहङ्ग,  
नागरमोषा, त्रिफ) गव समभाग, इनमन्त्री दगावर लेंद

मस मिलाकर इन्होंकेकाथोंसे २-४ भावनाएं देकर २-२  
रत्तीकी गोल्या बनाकर रखओगे । इनमेंसे १-१ गोली शर-  
पुद्गमूलगैरहके क्वाथसे लेनेसे प्लीहा, अग्रमांस, यकृत, इनस-  
रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २०७ ॥

२०८ रौप्यरसवटी

पारदं राजतं चूर्णं समं शुद्धं विमर्दयेत् ।

गोलं कृत्वा च संस्थाप्य दिनमेकं करण्डके ॥ १२९ ॥

द्वितीये दिवसेऽङ्गारं लोहपात्रे विनिःक्षिपेत् ।

लोहदण्डेन सट्पृष्य शुभ्रं भस्म च कारयेत् ॥ १३० ॥

तद्वीर्यभस्म निष्पेकं क्षिपेत् कुङ्कुमं शुभ्रम् ।

जातीकोपफले चैव लवङ्गं शङ्खजीरकम् ॥ १३१ ॥

प्रतिरूपं तथा नारीकेलमजा च भृष्टला ।

मल्लतकाच्च निर्वीजात्पलं प्राह्यं प्रयत्नतः ॥ १३२ ॥

तिन्तिडीफलमांसञ्च योजयेत्पलपञ्चकम् ।

विधियत्सर्वमेकत्र मर्दयेत्सुदृढं मिषकम् ॥ १३३ ॥

कोलमाना च वटिका तिलतैलेन योजयेत् ।

किं वा कौमुदतैलेन सद्यो निष्कासितेन वा ॥ १३४ ॥

धेनुदध्नाऽथवाऽऽज्येन सायं प्रातः प्रयोजयेत् ।

आम्रशुकादिसम्भूतं रसं कर्पञ्च पाययेत् ॥ १३५ ॥

वटी रौप्यरसा नाम सर्वमेहयिनाशिनी ।

पूतिमेहं विशेपेण पथ्यं सामान्यमाचरेत् ॥ १३६ ॥

वर्जयेद्द्वर्षपर्यन्तं पनसं तुमिर्जं फलम् ।

अन्या च वटिका नास्ति पूतिमेहयिनाशिनी ॥ १३७ ॥

र चं., प्रमेहाधिकारः ।

भाषा—शुद्ध ५.५ और चांदीका घारीकेता समभाग  
लेखर एकदिन मर्दनकर गोलावनाय शीघ्रीमें बन्दकर रखओगे ।  
दूसरेदिन सोहके कड़ाहीमें बालकर नीचे बेरकीलकड़ीकी गांघ  
जलावे और सोहके दबसे परंपरकरताजाय । ऐसे ४ पहर रण-  
नेसे जब एकदम श्वेतरंगहोजाय तब उतारकर रखले । फिर  
चांदीभस्म ८ माहो, बेर ८ माहो, जावित्री, जायफल, लवङ्ग,  
सत्रजराह १-१ कर्प, नारियलसीमवा, बीजनिक्कालेनुए मिलवि  
और इमलीसीमवा १-१ पत्र लेखर सपरी घारीकीसी बेरपा-  
वर गोल्यां बनाकर रखओगे । इनमेंसे १-१ गोली तत्काल  
निक्कालेनुए तित अथवा पुष्पमूत्रके तेलकेसाथ बधवा मादयी  
दही बधवा धीकेसाथ मुरदशाम देकर ऊपरसे जानममृष्टिके  
आचारका १ तोलास पिलावे । इसकेपनसे पूतिप्रमेद नष्ट  
होताहै इनमें पथ्य साधारण रन्ध्रानावाहै बिरेषकी दुष्टता  
नहीं, पर कट्टर और तुबही एकपर्यन्त नताय । इसकेपन  
मुत्राकरो नष्टकरनेकेलिये दूसरी दवा नहींहै ॥ २०८ ॥

२०९ रौप्यरानरसः

रसेन्द्रभागद्वितयं स्नेहच्छास्त्रं चतुर्गुणम् ।

काफजह्वारसं मर्चं त्वन्ये द्विपमपञ्चकम् ॥ १३८ ॥

ताम्रसस्फुटके रज्ज्वा सज्जिते हण्डिकान्तरे ।

नियेदय पातुकां दद्याद् देवोऽग्निः प्रहाराष्टकम् ॥ १३९ ॥

स्याद्गतीं समुद्रं मधुद्विजसंयुतम् ।  
धमेन्प्रागतं तावदाद्यद्भमति तारयन् ॥ ९४० ॥  
रोप्यराजरसः सोऽयं भगन्दकुलान्तकः ।  
यत्प्रमात्रममुं लोढा मधुना सह पथ्यमुक् ॥ ९४१ ॥  
त्रिफलायाः पिबेत्काथं पश्चात्पथ्यं हितञ्चरेत् ।  
मुक्तः स्वल्पेऽरहोभिः स्याद्भगन्दरमहागदात् ॥ ९४२ ॥  
बृ. यो. त. दो. र. का. वै र. र. क. ल. र. कौ. रसायनस.,  
वि. र. म., भगन्दर ।

भाषा—शुद्धपारा २ भाग, सगरास्क ४ भागलेकर बारी-  
कचूर्णकर कपडद्वारेरसमे ५ रोज मर्दनकर तापसमुद्रमे वन्द-  
कर २-४ कपडिमी देकर छिन्नहित है। केबीचमे रख ऊपर  
से बाजुकेसे टक्कर ८ पहरकी अग्नि देवे। स्वाद्वीतलहोने-  
पर निकालकर मधु और मुद्गा मिश्रकर मूषामे धमन करावे।  
जब बादीहीतह बहरतालेगे तब डालकर रखोड़े। फिर  
इतका बारीकचूर्णकर ३-२ रती मधुनेचाप खाकर त्रिफलाका-  
काय पीकर रितमोजन करनेसे थोड़ेहीदिनमे भगन्दरोगसे  
निवृत्ति होतीहै ॥ २०९ ॥

### २१० लङ्केश्वरोरसः (प्रथमः)

मृताऽत्रशुल्बानि च मारितानि  
सगन्धकं तालशिलाद्रयो च ।  
विषाऽम्लजेतो च समं समस्तं  
दिनत्रयं चान्तरसे विषेप्यम् ॥ ९४३ ॥  
समासिकेणैव मृतेन कुर्या-  
द्ददीद्विगुञ्जाच्च शतारह्नीम् ।  
लङ्काधिपाव्यस्तु रसः प्रसिद्धो  
निहन्ति कुष्ठाश्च शतारकादीन् ॥ ९४४ ॥  
फलनयं निम्नचाऽरण्ये च  
पटोलमूलं कटुना निदाह्या ।  
कायीकृतं धानुपिषेधं नित्यं  
लङ्काधिपार्यं तु रसं निपेय्य ॥ ९४५ ॥

वि. क. र. म. र. वि., र. मु., र. र., र. व. रा. र. का.,  
व. वि., रेन्जन, यो. म., र. र. कौ., सताखुटे। यो. म.  
रसादिगुटी। र. र. कौ. कुण्डलेनेति नाम ।

भाषा—पारा, अत्रक, ताल इनकीभस्मे, शुद्ध गन्धक,  
हरिताल, शिलाजीत और बजनाग, अनलवेत, सोनामाखीकी  
मस्य समभाग लेकर बारीकचूर्णकर जमीरीप्रभृतिहरससे ३ दिन  
मर्दनकर २-२ रतीकी गोलिया बनाकर रखोड़े। इनमेसे  
१-१ गोली त्रिफला, नीमदीछाल, बच, मजीठ, परबलीजङ्ग,  
कुटकी और हल्दी समभागक ढांपकेचाप लेनेसे यह शतायन  
प्रभृतिघट्टोको नष्टकरताहै ॥ २१० ॥

### २११ लङ्केश्वरोरसः (द्वितीयः)

भस्म मृताकलोहानां कृष्णगन्धकद्वयम् ।  
कुष्ठं तुल्यञ्च तुल्यांशं मयं धुन्वन्ते ऽत्रे ॥ ९४६ ॥

दिनेनैकं तद्वटी कुर्यान्मापमानाञ्च भक्षयेत् ।  
रसो लङ्केश्वरो नास्ति प्रभुसिमण्डलप्रभुत् ॥ ९४७ ॥  
गन्धकं त्रिफलाचूर्णं निर्विषीं गुग्गुलुं समम् ।  
लिहदेरुण्डतेलेन कर्पूरमनुपानकम् ॥ ९४८ ॥  
र. र., र. र. का., कुष्ठाधिकारे ।

भाषा—पारा, तामा और लोह इनकीभस्मे, पीपल, शुद्ध-  
गन्धक, मुद्गागा, कुठ और तृतीया समभागलेकर बारीकचूर्णकर  
धतुरेकरससे एकदिन मर्दनकर १-१ मासकी गोलिया बनाकर  
रखोड़े। इनमेसे १-१ गोली खाकर शुद्धगन्धक, त्रिफला,  
निर्विषी और गुग्गुलुसमभागलेकर १ तोला ऊपरसेएकटेलकेचाप-  
खिलानेसे सुप्तभाव और मण्डलप्रभृति घट्टोको यह दूरकरताहै ॥

### २१२ लङ्केश्वरोरसः (तृतीयः)

तालकं मासिकं नुर्यं हरयीजं सगन्धकम् ।  
कर्मदीकन्दतोयेन मर्दयेद्विनसप्तकम् ॥ ९४९ ॥  
शुल्ब्यां पाच्यं चतुर्धामं सितया च ज्वरापहः ।  
अयं लङ्केश्वरो भाम शीतमातङ्गकेसरी ॥ ९५० ॥  
र. मु., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध हरिताल, सोनामायी, तुल्य, पारा और  
गन्धक समभाग लेकर पोखगन्धकी नीलमैकजलीमे मिलाकर  
सेखसेकेन्दनेरसमे ७ दिनतक मर्दनकर मुद्गाकर १-७ कपड-  
मिरीशुद्ध आतशीगीसीमे डालकर बाउकायब्रमे रख ४ पहरकी  
अग्निदेवे। स्वाद्वीतलहोनेपर निकालकर रखोड़े। इनमेसे १  
रतसे ३ रतीतक द्रवकेचापदेनेसे यह शीतम्बरकानाशकरताहै ॥

### २१३ लङ्केश्वरोरसः (चतुर्थः)

शिवशिरोपणलोलमोदरा-  
व्दिजनुपापलभस्मनिमात्रं कमात् ।  
शशिशरीन्दुकृतानुधनेर्दो-  
रपि मितानय पोडशामुमिताम् ॥ ९५१ ॥  
परिविमृष्टं तथासुघटोरसे-  
भवेति रावणनासपुटीधरः ।  
हरति सूतिमर्दांस्त्रिमवज्रं  
निजधिपाट्टेकनारसितादियुक् ॥ ९५२ ॥  
वि. क., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, हरे और मरिच १-१ भाग, लोह-  
भस्म ३ भा, अत्रकभस्म २ भा., शुद्धमस्य ११ भा,  
मोती १६ भा, लाजवर्दे १ भागलेकर धतुरेकी बारीकचूर्ण नारि-  
यलेकानीसे २-२ रोज मर्दनकर २-२ रतीकी गोलिया बना  
कर रखोड़े। इनमेसे १-१ गोली औचित्ती देखकर अदरक-  
केस कपडा धुनकरप्रभृति केचापदेनेसे यह प्रभृतिरोग और  
छत्तिभावको दूरकरताहै ॥ २१३ ॥

### २१४ ललितनाथोरसः

शाला मुमुक्षिनः मृतः सपेदोपविजितः ।  
महर्षेयं च मुग्धनी कर्मेटी च कुमारिका ॥ ९५३ ॥

मुण्डी भृङ्गा रसैरेषां प्रत्येकं सप्त भावनाः ।  
 दुग्धाऽर्मेण पलहन्ते स्वेद्येत्यत्रिदिनं भिषक् ॥ ९५४ ॥  
 सुरणान्तर्विनिक्षिप्य मृत्कपटविलेपिते ।  
 शरावयन्ने वहिश्च दद्याद् द्वादशयामकम् ॥ ९५५ ॥  
 मृत्कृपिकायां निक्षिप्य वह्नावाकाशयत्रतः ।  
 मदिरापुष्पविमुड्भिः पाचयेद्दिनसप्तकम् ॥ ९५६ ॥  
 तत एरण्डतैलेन ज्योतिर्यन्त्रे विपाचयेत् ।  
 पुनः शीतं गृहीत्वा तत्तैलेनाऽनेन मर्दयेत् ॥ ९५७ ॥  
 विपतिन्दुकमभ्रजातनिम्बस्तुग्धीजपञ्चकम् ।  
 ऋषिज्योतिष्मतीधूर्तनाकुलीकरवीरकम् ॥ ९५८ ॥  
 अजमोदाफलै रेषां तैले पातालवयने जे ।  
 विपं विभाव्य तत्तैले गन्धं तालं चिमर्दयेत् ॥ ९५९ ॥  
 जैपालं सर्वतुल्यञ्च गन्धतुल्यं लवङ्गकम् ।  
 जातीपत्रफले कृष्णामेतेषां तैलमाहरेत् ॥ ९६० ॥  
 तत्तैले मर्दयेत्सूतं तच्च जातीफलान्तरे ।  
 फाचकूप्यां विनिक्षिप्य वह्नि द्वादशयामकम् ॥ ९६१ ॥  
 सुसिद्धोऽयं रसः प्रोक्तो नाथस्तु ललितनाथः ।  
 रक्तिपापादमानेन हन्ति सर्वाऽऽमयाज्जवात् ॥  
 मदात्ययक्षयश्वासान्मादकासादिकान्मादान् ॥ ९६२ ॥  
 र. का., मदात्ययाधिकारे ।

भाषा—समस्तदोषोपेक्षितं और सुमुक्षितं पारा लेकर सहदेवी, मुशली, ककड़ी, धीकुमार, गोरखमुण्डी और भंगरेकरसोसे ७-७ दिन मर्दनकर गरमकाजीसे साफकरले फिर इसमेंसे २ पल पारेको एकद्रोणदूधमें तीनदिनतक स्वेदनकर पके हुए मोटे सुरणके बन्दमें रोदपर रखदे और ऊपरसे उसीकी षाटलगाय सन्धिबन्दकर ६-७ कपड़मिथीदेवे । सूत्रनेपर किसी मिथीकीनादवेअन्दर रखकर दूसरीनादसे बन्दकर चूल्हेपर रख १२ पहर की साधारण अग्निदेवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर धीरजने निकालकर ४ सह मलमलके कपड़ेमें बांधकर मिथीकेपड़ेमें मघ-भर नालके मुँहपर इसे लटकादे और नीचे मिथीकाही बालागाकर मुँहबन्दकरदे और धीरे २ मघकेपड़ेमें नीचे आचदे जिसमें कि मघनेकुहारे उसपोटलीपर लगातार पडतेरहे । यत्र इसतरहका बनावे कि अगाधिकरावेमेंसे मध्यमनेपर स्वयं निकलजाय और पीछेकेपड़ेमें समाप्तहोनेपर दूसरीगरसके, आचवीचमें बन्द न करनी पड़े । ऐसे ७ दिनतक स्वेदितकर स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर एण्डतैलेमें डालकर बहुतमन्दाग्निसे सातरोजतक आचदे पर यह ध्यानरहेकि तैलेमें आग न लगनेपावे । आठवें-रोज स्वाज्ञशीतल होनेपर पारेकोतैलेसे निकालकर रखलेमें डाल बुचिटा, मिठावा, नियोली, शूद्रकादूध, पिस्ता, बादाम, चिरोजी, असरोट, चिलगोजा, गोरोचन, मालकामनी, धतुरक-बीज, नाडली ?, सपेदकनेलीजङ्ग, अजमोद, मेनफल, इनका पातालवयने तैलनिकाल उसमें ७ दिनतक पारेको घोट । बने-हुएतैलेमें पारेकेधरावर बजनाग, गन्धक और हरितालको भावना देवे । फिर लौग, जाविनी, जायफल, पीपल तथा सुदज्जमा

लगोटा ३-३ भाग, इनसबको भावना देकर पातालवयनसे तैल निकालकर पूर्वोक्तपारदको इसतैलेमें ७ रोज मर्दनकर धरावरके जायफलकेसाथ घोटकर ६-७ कपड़मिथीदीहुई आतशीशीशीमें डालकर वालुकायनमेंरख १२ पहरकी जमाग्नि देवे । स्वाज्ञ शीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ चावल गमयोचित अथवा तस्रोहगहउपानकेमाथ देनेमें यह मदात्यय, क्षय, श्वास, उन्माद और काशप्रवृत्तिरोगोंको नष्टरताहै २१४

### २१५ लवङ्गपाकः

प्रस्थमेकं लवङ्गस्य पिष्ट्वा दुग्धाऽऽडके क्षिपेत् ।  
 घनीभूते च तस्मिंस्तु शकैराप्रस्थमात्रकम् ॥ ९६३ ॥  
 जातीफलञ्च कङ्गोलं कृष्णा शुण्ठी मरीचकम् ।  
 त्रिफला रजनीयुग्मं तुटी तगरकेशरम् ॥ ९६४ ॥  
 जातीपत्र्यध्वगन्धा च पीपलरं प्रस्थिकं बलम् ।  
 अहिफेनं लवङ्गञ्च विपं गोक्षुरकं तथा ॥ ९६५ ॥  
 कर्पूरं खुरसानञ्च चण्डकं नागकेशरम् ।  
 एतानि कर्पमानानि चूर्णाकृत्य विनिक्षिपेत् ॥ ९६६ ॥  
 मृतं सूतं तथा ताम्रं शाणमानं क्षिपेत्सुधीः ।  
 भक्षयेच्चुकिमान्जनु गव्यं दुग्धं पिवेदनु ॥ ९६७ ॥  
 तुष्टिः पुष्टिः प्रोक्तो वीर्यस्तम्भकरो मतः ।  
 पञ्चकासं तथा पाण्डुं श्वासं गुल्मं प्रमेहकम् ॥ ९६८ ॥  
 अदमरी मृनरुच्यं वार्तं हस्ति तथाऽर्बुदम् ।  
 पित्तं प्रदरकुष्ठञ्च हिकानेनशिरोग्रथाः ॥ ९६९ ॥

रसायनच., चि. र. म., र. को., रसायने ।

भाषा—एकप्रस्थ लवङ्गको ४ प्रस्थ दूधमें डालकर पकावे । गाटा होनेपर एकप्रस्थ शकर डालकर चाशनी तैयारकरे । फिर जायफल, शीतलबीनी, पीपल, घोंट, मरिच, त्रिफला, हल्ली, दाहहल्ली, इलायची, तगर, केशर, जाविनी, असगन्ध, पीह करमूल, पिपलमूल, बला, अफीम, लौग, शुद्धबजनाग, गोखरु, शुद्धकपूर और खुरसानो अजवाइन, चवय और नागकेशर १-१ कपका बारीकचूर्ण तथा पारद और ताम्रमस ४-४ मासोलेकर पूर्वोक्त चाशनीमें मिलाकर जमादे । इसमेंसे आपोतोलेने २ तोलेतक यथाभिन्नलक्षकर गायकादूध पीनेसे तुष्टि, पुष्टि और वीर्यका स्तम्भन करताहै । पाचप्रकारकी खासी, पारु, श्वास, गुल्म, प्रमेह, पथरी, मृनरुच्य, वायु, अर्बुद, पित्त, प्रदर, कुष्ठ, हिकी, नेत्र और शिरकेरोग इनसबको यह नष्टरताहै ॥ २१५ ॥

### २१६ लवङ्गादिचूर्णम् (वृहत्) (प्रथमम्)

लवङ्गं जीरकं कौन्ती सैन्धवं त्रिसुगन्धकम् ।  
 अजमोदा यमानी च मुस्तकं सकटुययम् ॥ ९७० ॥  
 त्रिफला शतपुष्पा च पाठा भृनिवगाधुरम् ।  
 जातीकोपफले दार्वी नलटं चन्दनं मुरा ॥ ९७१ ॥  
 शटी मधुरिका मेथी टङ्गुणं टण्णजीरकम् ।  
 आष्टक्यं बालकञ्च त्रिवं पीपलरकतथा ॥ ९७२ ॥

चित्रकं पिप्पलीमूलं विडङ्गं सधनीयकम् ।  
 रसाऽप्रगन्धकं लोहं समं सर्वं विचूर्णितम् ॥ ९७३ ॥  
 उष्णोदकापुपानेन मन्दाग्ने दीपनं परम् ।  
 शीततोयाऽनुपाने वा बुद्ध्या दोषघ्निं भिषक् ॥ ९७४ ॥  
 आमातिसारप्रहणी चिरफालोऽस्थितामपि ।  
 शूलं विष्टम्भमानाहं विस्चयी शोधकामले ॥ ९७५ ॥  
 हलीमकं पाण्डुरोगं हन्ति कासं विशेषतः ।  
 लघ्नान्नं महत्तृणं शर्करासहितं पिबेत् ॥ ९७६ ॥  
 आभ्यानं शमयेच्छीघ्रं लघ्नस्त्रयाऽनुपानतः ।  
 अश्विभ्यां निर्मितं होतस्त्रोकाऽनुग्रहेतये ॥ ९७७ ॥  
 भै र , ग्रहण्यधिरा ।

भाषा—लौग, जीरा, रोण ( पहाड़ी ), मँधानमक, तज, पनज, इलायची, अजमोद, अजवाइन, नागरमोथा, त्रिकटु, निफला, सोंफ, पाठा, चिरायता, गोखरु, जाविनी, जायफल, बादहल्दी, रस, चन्दन, सुरामासी, कचूर, सोआ, मेथी, सुना-सुहागा, स्याहजीरा, सजी, यवक्षार, मुग्न्यवाला ( तगर-गण्डोला ), बेलगिरी, पोहङ्करमूल, चित्रकजीङ्ग, पिपलामूल, विडङ्ग, धनिया, शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक और लोहभस्म सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेण्यधकरी नीलवर्णकजालीमें मिलाकर रखडोढ़े । इसमेंसे १-१ माशेकीमात्रा शक्कर-केसाथ लेकर गरमपानी पीनेसे अग्नि प्रदीप्तहोताहै । पित्तप्रधा नरोगोंमें टडापानी पिलावे । इसके निरन्तरसेवनसे आमाति सार, पुरानी ग्रहणी, शूल, विष्टम्भ, आनाह, हैजा, शोथ, कामला, हलीमक, पाण्डु, कास, आभ्यानप्रभृति समस्तरोग नष्टहोतेहैं । खन्नके अनुपानकेसाथ यह आभ्यानको बहुत धीप्र नष्टकरताहै ॥ २१९ ॥

### २१७ लघ्नान्नादिचूर्णम् ( वृहत् ) ( द्वितीयम् )

लघ्नान्नातिविषा मुस्तं पिप्पली मरिचानि च ।  
 सैन्धवं हृपुषा धान्यं कदफलं पुष्करं तथा ॥ ९७८ ॥  
 जातीकीपफलाऽज्जाजी सौवर्चलरसाञ्जनम् ।  
 धातकी मोचकं पाठा पत्रं तालीसकेदारम् ॥ ९७९ ॥  
 चित्रकश्च विडङ्गश्चैव तुरगुरुर्विल्वमेव च ।  
 त्वमेला पिप्पलीमूलमजमोदा यमानिका ॥ ९८० ॥  
 समङ्गा वस्त्रकं गुण्ठी दाडिमं यावश्शुक्रजम् ।  
 निम्बं सर्जरसं क्षारं सामुद्रं तद्गुणन्तथा ॥ ९८१ ॥  
 हीचेरं कुटजश्चैव जम्बवाग्रं कटुरोहिणी ।  
 अभ्रकं पुटितं लोहं शुद्धगन्धकपारदम् ॥ ९८२ ॥  
 पतानि समभागानि श्लेष्मिचूर्णानि कारयेत् ।  
 मधुना वा लिह्येचूर्णं पिबेत्तण्डुलवारिणा ॥ ९८३ ॥  
 सर्वदोषहृत्तृणं ग्रहणीं हन्ति दुस्तराम् ।  
 धातकीं पित्तीक्ष्णीं चैव श्लेष्मिकीं साधिपातिकां ॥ ९८४ ॥  
 पक्वाऽपक्वमतीसारं नानावर्णं सवेदनम् ।  
 कृष्णाऽरुणश्च पीतश्च मांसघावनसन्निभम् ॥ ९८५ ॥

ज्वराऽरोचकमन्दाग्निं कासं श्वासं वर्मं तथा ।  
 अम्लपित्तं तथा ह्रिक्कां प्रमेहश्च हलीमकम् ॥ ९८६ ॥  
 पाण्डुरोगश्च विष्टम्भमर्शांसि विविधानि च ।  
 ग्रीहशुल्मांश्चरानाहशोथाऽतीसारपीनसात् ॥ ९८७ ॥  
 आमवातं तथा जीर्णं सङ्ग्रहग्रहणी जयेत् ।  
 उदरं प्रदरश्चैव लघ्नान्नमिदं शुभम् ॥ ९८८ ॥  
 भै. र , ग्रहण्यधिरा ।

भाषा—लौग, अतीस, नागरमोथा, पीपल, मरिच, सैन्धा-नमक, शाळ, धनिया, जायफल, पोहङ्करमूल, जाविनी, जाय-फल, जीरा, संचल, रसौत, धावडीकेफूल, मोचरस, पाठा, तेजपात, तालीसपत्र, नागकेसर, चित्रकमूल, विडनमक, तुन्डुल, बेलगिरी, तज, इलायची, पिपलामूल, अजमोद, अजवाइन, मजीठ, इरैयारीछाल, सोंठ, अनारदाना, यवक्षार, नीमकीछाल, राल, सनीसार, समुद्रनमक, सुनासुहागा, तगरगण्डोला, इन्द्रजव, आसुन और आमकीगिरी अथवा छाल, कुटकी, अभ्रक और लोहभस्म, शुद्ध गन्धक और पारा येसब समभागलेकर बारीक-चूर्णकर पारेण्यधकरी नीलवर्णकजालीमें मिलाकर रखडोढ़े । इसमेंसे १ माशेसे ३ मासेतककीमात्रा मधुकेसाथ बादर-सारसे वाचलोहें धोवनकापानी पीनेसे दुस्तरसङ्ग्रहणी, स-तरहका अतिसार, ज्वर, अरुचि, मन्दाग्नि, कास, श्वास, बमन, अम्लपित्त, हिक्की, प्रमेह, हलीमक, पाण्डु, विष्टम्भ, "नाना-तरहके बवाधीर, प्लीह, शुल्म, उदररोग, आनाह, शोथातिसार, पीनस, आमवात, अजीर्ण, सङ्ग्रहग्रहणी, प्रदर इनसबको यह नष्टरताहै ॥ २१७ ॥

### २१८ लघ्नान्नादिचूर्णम् ( तृतीयम् )

लघ्नं तद्गुणं मुस्तं धातकी विल्वधान्यकम् ।  
 जातीफलं सर्जेकश्च शताङ्गा दाडिमन्तथा ॥ ९८९ ॥  
 जीरकं सैन्धवं मोच्यं नीलोत्पलरसाञ्जनम् ।  
 अभ्रकं धन्तृकश्चैव समङ्गा रक्तचन्दनम् ॥ ९९० ॥  
 विष्टञ्चाऽतिविषा शृङ्गी खदिरं बालकं समम् ।  
 एतच्चूर्णं प्रदातव्यं सङ्ग्रहग्रहणीहरम् ॥ ९९१ ॥  
 नानावर्णमतीसारं ज्वरश्चैव नियच्छति ।  
 आमरक्ताऽतिसारश्च शूलशोथनिषृदनम् ॥ ९९२ ॥  
 भृङ्गराजस्यैः श्लाघ्यं भागधित्वा दिनत्रयम् ।  
 छापीदुग्धेन मतिमान्नाभिणीमनुपानतः ॥ ९९३ ॥  
 भै र , गर्भिणीरोगाऽधिकारे ।

भाषा—लौग, सुनासुहागा, नागरमोथा, धावडीकेफूल, बेलगिरी, धनिया, जायफल, सफेदराल, सोंफ, अनारदाना, जीरा, सैन्धानमक, मोचरस, नीलोपर, रसौत, अभ्रक और वज्रभस्म, लज्जाल, रालचन्दन, सोंठ, अतीस, काकडासींगी, खैर, सुगन्धवाला सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखडोढ़े । इसमेंसे १ माशेसे ३ मासेतक अतिवेल देखकर उचितानुपानके-साथ देनेसे सबतरहके अतिसार, ज्वर, शूल, शोथ, इनसबको

यह नष्टरताहै । इसको भंगरेखरसे ३ रोज़ भावनादेकर वकी-  
नेहृपकेमाय वनेसे गर्भिणीके समागमोर्गोको दूरकरताहै ॥ २१८ ॥

### २१९ लघुद्वादिवर्त

लघुद्वाजातीफलधान्यकुष्ठं जीरक्यं ज्यूपणत्रैफलञ्च ।  
पलात्तयं टङ्कुराट्मुस्तं वचाऽजमोदं विडसेण्वधञ्च ।  
तद्वर्द्धकं पारदगन्धमम्रं लौहञ्च तुल्यं सुविचूर्णं सर्वम् ।  
तन्नागवल्लीदलतीरपिष्टं बल्लप्रमाणा वटिकाश्च रुन्वा  
प्रातर्विदध्यादपि चोष्णतोये

रिपं निहन्त्याहृहणीविकारम् ।

आमाऽनुग्रहं सखलं प्रवाहं

ज्वरं तथा श्लेष्मणं सञ्चलम् ॥

कुष्ठाऽम्बुपित्तं प्रयत्नं समीरं

मन्दानलं कोष्ठगतञ्च घातम् ॥ ९९६ ॥

र. सं., अजीर्णाऽधिकारे ।

भाषा—औंग, जायफल, घनियां, कुष्ठ, स्याह-उफेदजीरा,  
त्रिकटु, त्रिकला, इलायची, तज, मुनासुहागा, कौडीभस्म,  
नागसोया, वच, अजमोद, विडनमक, संधानमक येसब सम-  
भाग, इनसबसेआधी शुद्धपारेगन्धककीनीलवर्णकजली और  
अम्रकमस तथा सखडीयवार लोहभस्म डालकर अच्छीतरह  
मर्दनकर रखजोहे । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा उचितानुपात-  
केसाथ अथवा गरमपानीसे देनेसे ग्रहणी, पुरानाआम, पीडा-  
शुलभ्रजहिका, कफ औरशूलयुक्त ज्वर, वृष्ट, अम्लपित्त, प्रबल-  
वात, मन्दाग्नि, कोष्ठगत इनसबसे यह नष्टकरताहै ॥ २१९ ॥

### २२० लघुनपाकः ( प्रथमः )

रसोनकं प्रस्थमितं विमृष्ट

दुग्धामेणोनापि विपाच्यमानम् ।

शुल्बाऽम्रकं लोहसं लघु-

कर्पूरमाकल्लरुमध्यगन्धा ॥ ९९७ ॥

क्षिप्रिना नागरं नागकेसरं त्रिकला समम् ।

जातिपत्री जातिफलं मागधी मरिचं नमम ॥ ९९८ ॥

प्रस्थेकखण्डसहितं हरते समीरं,

गुहमवप्यां विपमसर्वसमीरणार्तिम् ।

मन्दाग्निशूलकफहृद्दन्ताशकारि,

पाकः स्मृतः सुकयिना च रसोनकस्य ॥ ९९९ ॥

रसायनं, घातव्याम्प्यधिकारे ।

भाषा—एकप्रस्थ एकरोती छिन्नेहुए लघुनको बारीकटुडने-  
कर १ द्रोणमें पड़ावे । माषाहोनेर ताम्र, अथक, लोह  
और पारा इन्कीभस्मे, औंग, शुद्धकपूर, अजमोद, अथक,  
हरी, दारहरी, लोह, मागदेशर, त्रिकला, जातिपत्री, जायफल,  
पीपल और मरिच १-१ तोला और घनर १ प्रस्थ डेकर  
माषेमें मिठाकर रखजोहे । इसमेंसे १-१ तोला अपरा दया  
मिश्रक येउनइमेसे प्रबलवात, शुल्भ, विषयवात, मन्दाग्नि,  
दन्त, कफ, द्रोण इनसबसे यह नष्टकरताहै ॥ २२० ॥

### २२१ लघुनपाकः ( द्वितीयः )

निस्तुपं लघुनं कृत्वा रात्रौ तके विनिःक्षिपेत् ।

तदुग्रगन्धनाशाय प्रातर्प्रांश्च जलाप्लुतम् ॥ १००० ॥

प्रस्थमात्रान्नं तत्पिष्ट्वा क्षीरप्रस्थचतुष्टये ।

विपाच्य सान्द्रीभूतेऽस्मिन् सर्पिषः कुडवं क्षिपेत् ॥

रस्ता सहचरी छिन्ना शरी विथ्वा सुख्यम् ।

गुहदारकदीप्याग्निरताह्वामुपनर्त्ता ॥ १००१ ॥

फलत्रयं पिप्पली च कृमिघ्नः कर्पसम्भितम् ।

विचूर्णं कुडवं शीते मधुनस्तत्र योजयेत् ॥ १००२ ॥

सिताप्रस्थचतुष्पञ्च पञ्जलोहरमेन्द्रकम् ।

कर्पूरं भृगुनामिञ्च यथालाभं विमिश्रयेत् ॥ १००३ ॥

पालिकां भक्षयेन्मात्रामाट्यावातहनुमहं ।

आक्षेपकादिभङ्गेषु कष्टगस्तम्भदुग्धहं ॥ १००४ ॥

सर्वाङ्गं सन्धिभङ्गं च प्रयत्ने मारते दितः ।

लघुनस्य सुपाकोऽयं वर्णायुःपुष्टिकारकः ॥ १००५ ॥

पा. व., रसायने ।

भाषा—एकप्रस्थ एकरोतीछिन्नेहुए लघुनको रातको  
छाछमें डालकर रखदे । मुहमें धोकर अन्दरका अङ्कुर निदान  
बारीकीसहा ४ प्रस्थमें डालकर मन्दाग्निमें पड़ावे । माषा-  
होनेर ४ प्रस्थ शकर और पावभर घी डालकर पाककरे ।  
लूहकी थासनी होनेर उतारकर रखले । उसमें राम्रा, पियारावा,  
मिलोच, कपूर, लोह, देवदाह, विषास, अजमोद, चिदकपूर,  
सोप, पुनर्वा, त्रिकला, पीपल, विडङ्ग, पाबोलोह और  
पारदभस्मका कपडानकियाहुमा १-१ कप पूर्ण मिलावे ।  
एकदम ठंडाहोनेर पावभर शहद तथा शुद्धकपूर और कपूरी  
दयावधि मिलाकर रखले । इसमेंसे १ तोलेमेंदेकर ४ तोले  
औरकिनी देकर रामेमें जस्तम्भ, हनुमद, काशेर, लहवा,  
दुग्धकटिपुक्त जस्तम्भ, सर्वांतवात, सन्धिभङ्ग और प्रयत्न  
वातवेदना इनसबको यह नष्टकर वने और पुष्टिको करताहै २२१

### २२२ लहरीतरद्वारसः

मृतास्त्राऽयोऽर्कवद्वानां शुद्धपाटगन्धयोः ।

पञ्चविंशतिमाणाः स्युः पृथक् पञ्च विप्रस्य च ॥ १००६ ॥

नवसारकृताः पञ्च भागा हाट्वा टङ्कुरात् ।

मानयो द्रागमृष्याश्च माचयेत्कन्यकाट्टये ॥ १००७ ॥

एकविंशतिवर्षांश्च तापदाट्टिकं रमेः ।

सप्तधा भूतनेत्रेण तथा कन्यारसेन च ॥ १००८ ॥

काचपृष्याश्च मेरुद्वयं यातुकायन्त्रं पचेत् ।

यामहाद्वारं चायन्याहृतांस्तं समुदरे ॥ १००९ ॥

गुग्गादयं त्रयं चापि यथायोग्यं भक्षयेत् ।

सन्निगतं गन्धान्नि राजपद्मान्निमुच्यते ॥

योगी प्रस्ताव्य लहरीतरद्वारसं महारसः ॥ १०१० ॥

र. मु. नं. मा. यो. न., सन्निगते ।



भाषा—अन्नक, लोह, ताम्र, वज्र, इनकी मूर्तमें, शुद्ध पारा और गन्धक २५—२५ भाग, शुद्ध बलनाग और नवसादर ५—५ भाग, मुहागा और दालचिकना १२—१२ भाग लेकर वारीक-चूर्णकर पारिगन्धकनी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर घीजुवार और अदरकके रससे २१—२१, धतूरेके रस और घीजुवारके रससे ७—७ भागवाएँ देकर अच्छीतरह सुखाकर ६—७ कपडमिमी दी हुई आतशीशीशीमें भरके बालुकायन्त्रमें रख मुहबन्दकर १२ पहरकी क्कमात्रि देवे । स्वात्रशीतल्लोनेपर निकालकर रख छोड़े । इसमेंसे २ से १ रत्तीतकनी मात्रा औचित्य देखकर खिला नेमे सभिपात, यद्वाटुआराजयश्च, इनसबको यह नष्टकरता है ०२२

### २२३ लक्ष्मणालोहम् ( प्रथमम् )

लक्ष्मणपायाः पलशतं काथयित्वा यथाविधि ।  
काये पूते पुनः पके घनीभूते च निःक्षिपेत् ॥१०१२॥  
अशोकं कुशमूलञ्च मधुकं मधुकं यलाम् ।  
पाठां विट् पलोमानं लौहं सर्वत्रयं तथा ॥ १०१३ ॥  
लक्ष्मणालोहनामेदं भेषजं स्त्रीगदापहम् ।  
जगतामुपकाराय द्वाभ्यां परिनिर्मितम् ॥ १०१४ ॥  
श्री. र., स्त्रीरोगाधिकारे ।

भाषा—लक्ष्मणालोहम् १०० पल लेकर चतुर्गुणित-पानीमें काथकरे । चतुर्धाशिवशेष रहनेपर मसलकर छानकर फिलसे फकावे । पुन तैयारहोनेपर अशोककी छाल, कुशकी जड़, महुएका हीर, मुलजड़ी, बला, पाठा और वेलगिरी १—१ पलका वारीक चूर्णकर इसकी बराबर लोहमसुम लेकर सबको सिद्धकिये-हुए घनदे मिलाकर रखजोड़े । इसमेंसे ४ रत्तीसे १ मासेतक-की मात्रा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह बिजियोंके समस्त-रोगोंको दूरकरता है ॥ २२३ ॥

### २२४ लक्ष्मणालोहम् ( द्वितीयम् )

लक्ष्मणाहस्तिकर्णभ्यां त्रिकत्रयसमन्वयात् ।  
अध्वगन्वासामयोगालौहं पुंसघनं स्मृतम् ॥१०१५॥  
पुशोत्पत्तिकरं धूर्यं कन्यासूतिनियतकम् ।  
कृशस्य यलदं श्रेष्ठं सर्वाभ्यपहरं परम् ॥ १०१६ ॥  
श्री. र., र. ॥, शृङ्गाधिकारे, बाजीकरणे

भाषा—लक्ष्मणा, हस्तिकर्णपलाश, त्रिकटु, त्रिफला, त्रिजात और असगन्ध समभाग लेकर सबकी बराबर लोहमसुम मिलाकर १—२ दिन मर्दनकर रखजोड़े । इसमेंसे ३ रत्तीसे १ मासे लक्ष्मीमात्रा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह प्रभूतिरोगको दूरकरता है । कृशको बलिष्ठ बनाता है और समस्तरोगोंको नष्टकरता है । इससेसेवनसे कन्याओंकी उत्पत्ति बन्दहोकर पुत्रोत्पत्ति होती है ॥ २२४ ॥

### २२५ लक्ष्मीकान्तरसः ( प्रथमः )

कान्तं सृतं ताप्यपापाणगन्धं  
प्राप्ते र्वांजे र्मेदयित्वा धमेत ।

गोलान् कृत्वा वेष्टयित्वा मृदाद्यै-  
ध्मापेत्पश्चाच्छोधयेत्क्षारकायैः ॥१०१७॥  
कान्ताश्माक्षं यज्ञमूर्पां प्रलिप्य  
सृतं दद्यात्पौडशशश्च हेम ।  
ध्मापेद्वाहं सुतराजे तु दद्या-  
ज्जीर्णं प्राप्ते आसमन्थं तथैव ॥ १०१८ ॥  
एवं तुल्यं पद्मपञ्चापि जार्य  
सृते र्वांजे ताप्यसत्त्वेन तुल्यम् ।  
नं सृतेन्द्रं कच्छपे यन्त्रराजे  
शुद्धे सृतं जारयेत्तुर्वाभागम् ॥ १०१९ ॥  
तं सृतेन्द्रं जारयेद्भेगमें  
लक्ष्मीकान्तः सुतराजोऽथ मिद्धः ।  
तुष्टे शम्भो जायते लक्ष्मयेषी  
चन्द्राऽकांस्ती ताप्यसत्त्वेन युक्तः ॥  
वज्रने गोलं धारयेत्तस्मैरकं  
तुष्टे शम्भो देहसिद्धिं ध्रुवा स्यात् १०२०  
र. दी., बाजीकरणे ।

भाषा—कान्तलोह, पारा, सोनामाली, गन्धक सब सम-भागलेकर पलाशकी फलियोंकेस अथवा काथसे १—२ दिन मर्दनकर गोलिया बनाय ऊपर कालीमिरी पीतकर सुखादे । सुखनेपर सपरपातनयन्त्रमें रखकर धमनकराके सत्त्वपातनकरे । सत्त्वको मुहागावरीरह देकर मलसे रहितकरले । फिर इसका चूर्ण बहेरेकेसाथ मिलाकर पानीमें सरलकर बज्रमूर्पामें लेदेकर सुषुक्षितपारा बालकर १६ वा हिस्सा सुषुष्वीजदेकर गाढ़घमन-करावे । सुषुष्वीजोदेनेपर दूसरा शाय देकर जीर्णकरे । इसत-रह बराबर अथवा पद्मपञ्चापारेमें र्वांजा जारणकर धारवरका मुक्कमाक्षिकसत्त्व मिलाकर रखले । फिर कच्छपयन्त्रमें जमि-स्वायी और सुषुक्षित शुद्धपारेको रख ऊपर रखेहुए ताप्यपु-ष्पाका चतुर्धा जारणकरे और इनपारेको हेमगर्भपारेमें जारण करे यह लक्ष्मीकान्तपद तैयारहुआ । यह किया शिव-जीके प्रणव होनेपर होसकीहै अन्यथा नहीं । यह रस साक्षि-कसत्त्वकेसाथ देनेसे चन्द्रक्रिया अथवा सूर्यक्रियामें लक्ष्मिगुणित-घातुको रुपांतरमें परिणतकरता है । ऊपरदेहुए लक्ष्मीकान्त-रमके पिण्डको एम्पयमर लगातार सुद्धमें रखनेसे देहसिद्धि होती है ।

### २२६ लक्ष्मीकान्तरसः ( द्वितीयः )

सूरीलायां पूरयेत्सुतराजं पिष्टीभूतं यज्ञमर्मेण हेम्ना ।  
मासाष्टेधो यन्त्रतत्र दिमासाद्दृढं यत्तात्सुतराजं प्रगृह्य  
ध्मापेत्पश्चात्परिमलः शुभ्रतुल्यः  
भूतः स्त्रीतो जायते लक्ष्मणोक्तः ।  
उत्ताम्नागान्मारितो जारितोऽस्ती  
सृते र्वांजे सारितः पूर्वातुल्यः ॥ १०२२ ॥  
र. दी., बाजीकरणे ।

भाषा—पूर्वपर पारा, सुवर्णमाक्षिक, गन्धक, हीरा और सुवर्ण समभाग मिलाकर पलाशबीजोंके स्वरूप अथवा काथसे

एकदोदिन मर्दनकर छोटी २ गोल्या बनाय सुनाकर काली-  
मिट्टीसे पोतदे । सुननेपर हठधमन कराये सत्तनिकाले । इस-  
सत्त्वसे मुहागे वगैरहोने शुद्धर इसके करावर बहडेका चूर्ण  
मिलाय बज्रमुपायमें लेपन होरकामत्व और सुवर्णमिलनेसे-  
पिठीभूत अमिस्थायी और सुपुष्टितापरोको डालकर एक या दो  
महीनेतक प्रतीक्षाकरे । दियेहुए प्राणकी एकताहोनेपर धमनकर-  
रावे । ताव अनेपर यह सुनने सद्यः शुद्धहोजायगा इसपारेका  
नौया हिल्ला शुद्धमुपुष्टित और अमिस्थायी पारमें जाणनेपर  
फिर इसपारेको पूर्वपरिष्कृतपारमें जाणनकरनेमें सारणतलेसे  
सारणमेंस्कार देनेपर यह सूर्य और चन्द्रक्रियामें लक्ष्येयी  
होताहै । माक्षिकपारनेमाथ इसकागोलाबनाय एकपंतर निर-  
न्तर सुमेरुगनेसे इससे वेहसिद्धि होतीहै ॥ २२६ ॥

### २२७ लक्ष्मीकान्तरसः ( तृतीयः )

ताप्यं गन्धं क्षारकान्ताऽश्मतालं  
निम्भूतये मर्दयित्वा विलिप्य ।  
तद्वद् भ्रापाद्रस्मतामेति स्तुतं  
गन्धं तुल्यं तेन कृत्वाऽम्लयुक्तम् ॥  
हेत्रः परं लेपयित्वा पुष्टे  
भस्मीभूतं जायते तारमेवम् ॥ १०२३ ॥

२. धी., बाजीकरणे ।

भाषा—सौनामावी, गन्धक, मुहागा, सजी, यवक्षार,  
कान्तापाण और हरिताल समभागलेकर नीचुरेसने १-२  
रोजमर्दनकर बज्रमुपायमें लेपकर शुद्ध और अमिस्थायी सुवर्ण-  
दिबीजसे पिठीभूतपारोको डालकर हठधमनकरानेसे पारदमस  
होतीहै । इसमन्मनीकरावर शुद्ध गन्धको नीचुरागति अम्लने  
मर्दनकर सुवर्ण अथवा रजनेपत्रपर लेपदेकर घरायममुष्टकर  
गजपुष्टी आवेदेनेसे उत्तममस होतीहै । इससे आधीरतीसे  
एकरतीतक समयोचितानुपाननेसाधनेसे यह समस्तारोगोंको  
दूरकरताहै ॥ २२७ ॥

### २२८ लक्ष्मीनारायणरसः ( प्रथमः )

शुद्धगन्धकमेतच्च दह्णं विपहिद्भुलम् ।  
रोहिण्यतिविषा कृष्णा वत्सकाऽम्रकसेन्धवम् ॥ १०२४ ॥  
एतानि समभागानि खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।  
दन्तीद्रावैः फलद्रावैर् मर्दयेच्च दिनत्रयम् ॥ १०२५ ॥  
यत्तुष्टयं वटी कृत्वा आर्द्ररस्य जले दंडेत् ।  
दुष्टज्वरे सन्निपाते विसृज्यां विषमज्वरे ॥ १०२६ ॥  
अतिसारे ग्रहण्याश्च रक्तामे मेहशूलजित् ।  
मृतिनावातदोषांश्च लङ्घेऽस्मिन् राघवः ॥ १०२७ ॥  
इष्टान्नं भोजयेत्पथ्यमभ्यङ्गं स्नानमाचरेत् ।  
कर्पूरयुक्ताम्बुलं प्रसूनं हरिचन्दनम् ॥ १०२८ ॥  
नारिकेलोदकं पीत्वा नारीणां सङ्गमेव च ।  
लक्ष्मीनारायणो नाम रसानामुत्तमो रसः ॥ १०२९ ॥  
यो. र., र च., वातरोगे ।

भाषा—शुद्धगन्धक, मुहागा, वटनाग और शिगरि,  
उटकी, अतीव, पीपल, इन्द्रज, अश्रकमस, संधानक स  
समभागलेकर वारीकचूर्णर दन्तीमूल और त्रिकलके बाघमे  
२-३ रोज मर्दनकर ६-६ रतीकी गोल्या बनाकर रगरोड़े ।  
इनमें १-१ गोली अरुखनेसाथ देनेमें दुष्टज्वर, सन्निपात,  
हैजा, विषमज्वर, अतिमार, ग्रहणी, रक्तातिमार, प्रमेह, धूल,  
सुतिमारोग वातव्याधि इनसबको यह नष्टकरताहै । मूखलगनेपर  
उष्ट और पथ्य भोजन देवे । उद्वेजले घान, कषूयुक्ताम्बुल,  
प्लोकीमाला, चन्दनलेप, नारियलभापानी, खीमूदास इनका  
सेवनकरे ॥ २२८ ॥

### २२९ लक्ष्मीनारायणरसः ( द्वितीयः )

पलानां हिशतं स्तुतं खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।  
शहद्रायसमांशेन द्वौ मासौ मर्दयेच्छुनेः ॥ १०३० ॥  
अथ प्रक्षालयेत्स्तुतं तोयैस्त्रिशतवारकम् ।  
तत्स्तुतं चामृतसमं सर्वकञ्चुकयजितम् ॥ १०३१ ॥  
अष्टादशस्वमंस्कारैः शोधितं शास्त्रमार्गतः ।  
तं रसेन्द्रे भाण्डमध्ये निक्षिप्याऽथ पचेद्विषक् ॥ १०३२ ॥  
निगन्तरमहोरात्रं मन्दमध्यखराग्नौ ।  
मासान् पञ्च विधानेन गन्धकं प्रासमर्पयन् ॥ १०३३ ॥  
गन्धकं शुद्धिमापन्नं मुखमूर्चणं विधाय च ।  
भारमात्रम् सङ्गृह्य जीर्णं जीर्णं मुहुः क्षिपेत् ॥ १०३४ ॥  
अथ तत्त्वाङ्गसंशोधितं खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।  
पोडशोऽपचारैश्च पूजयित्वा जनार्दनम् ॥ १०३५ ॥  
शतचरीमद्रसे मर्दयित्वाऽथ भाघयेत् ।  
मणिश्च गारुडं नीलं वेदूर्यं बज्रमौक्तिकम् ॥ १०३६ ॥  
गोमेदकं पुष्परागं राजावतं प्रयालकम् ।  
चन्द्रकान्तं सूर्यकान्तं नीलाङ्गनरसाङ्गने ॥ १०३७ ॥  
घराट्शहशुक्तीश्च विमलां माक्षिकद्वयम् ।  
चतुर्विधश्च पापाणं त्रितुल्यं दह्णयम् ॥ १०३८ ॥  
विषत्रयं सुवर्णश्च वैकान्तं कान्तलोहकम् ।  
अम्रकं रजतं वङ्गं नागं कांस्थं सुरीतिकाम् ॥ १०३९ ॥  
खपरं कान्तपापाणं शोधितं विधिपूर्वकम् ।  
तत्सर्वं भस्मसात्कृत्वा गन्धकं तालकं तालकं ॥ १०४० ॥  
मृगनाभिश्च कर्पूरं काश्मीरं गोमती क्षिपेत् ।  
प्रत्येकं मानिकायुग्मं द्वौ मासौ तद्विमर्दयेत् ॥ १०४१ ॥  
होवेरोदुष्यरोशीरकदलीचन्दनद्रव्यैः ।  
हिमाशुमिश्च प्रत्येकं प्रस्थमात्रे विमर्दयेत् ॥ १०४२ ॥  
अक्षमात्रां वटी कृत्वा छायाशुकाश्च कारयेत् ।  
सर्वमेकत्र संयोज्य ताम्रपात्रे सखलके ॥ १०४३ ॥  
पूजयेदुपचारैश्च लक्ष्मीनारायणं स्मरन् ।  
शुष्कपैष्यं नैवेद्यैस्ताम्बूलं दक्षिणादिभिः ॥ १०४४ ॥  
वेण्वेन विधानेन होमं तत्र च कारयेत् ।  
वेदधोयं प्रकुर्वीत स्वस्तिवाचनपूर्वकम् ॥ १०४५ ॥



कुमारीं पूजयेत्पश्चात्पायसैर्भक्षुसर्पिषा ।  
 ततो यन्त्रं समारोप्य चुल्लिकोपरि यततः ॥ १०६९ ॥  
 दीपाग्निस्तत्र कर्तव्यं याममेक विचक्षणैः ।  
 स्याद्गृहीतं समुद्रतः तद्यन्त्रं चोद्विष्टेतुनः ॥ १०७० ॥  
 अनेन विधिना सम्यक् प्रयुक्तो रसकोविदः ।  
 वैद्यानाञ्च नृपाणाञ्च रसज्ञानां कलाविदाम् ॥ १०७१ ॥  
 सर्वेषाञ्च मनुष्याणां चमत्कारो भवेत्क्षणतः ।  
 गुञ्जामात्रमयं दत्तो हनुपानविशेषतः ॥ १०७२ ॥  
 अनेन विधिना सम्यग्रसो भवति सिद्धिः ।  
 जलयोगः प्रकृतव्यो यावत्कम्पः प्रजायते ॥ १०७३ ॥  
 ततः पथ्यं प्रदातव्यं शर्करादधिभक्तकम् ।  
 चन्दनैर्लेपयेद्गङ्गां कर्पूराऽऽगुरुमिधितैः ॥ १०७४ ॥  
 तालघृन्ताऽनिलो देवो यावद्भवति विज्वरः ।  
 उन्मादं वन्तवन्धञ्च मौढ्याऽपस्मारस्तन्द्रिकम् ॥ १०७५ ॥  
 गानाणाञ्च तथा शैत्यं तत्क्षणच्छ्रमयेत्प्रसूतः ।  
 अशीतिं पातजाग्रोर्गांधर्व्यं शिशुं पैत्तिकान् ॥ १०७६ ॥  
 विशतिं श्रेष्मजाश्चैव द्वन्द्वजाश्च विशेषतः ।  
 अष्टादशैव कुष्ठानि तथा कासक्षयाचपि ॥ १०७७ ॥  
 श्वासकासां तथा शार्फं कामलाञ्चैव पाण्डुताम् ।  
 प्रमेहविशतिञ्चाऽपि घ्नानां विशतिं तथा ॥ १०७८ ॥  
 एवं पञ्चविधानोपानान्गुल्मस्याऽपि तथैव च ।  
 पङ्क्तिष्वपि चाशीतिं प्रहण्तीनां चतुष्टयम् ॥ १०७९ ॥  
 अयुद्धं गण्डमालाञ्च विद्रधिञ्च भगन्दरम् ।  
 एतेन पङ्क्तिषा रोगा चिन्त्यन्ति रसेन वै ॥ १०८० ॥  
 लक्ष्मीनारायणो नाम रसो लोकोत्तरः स्मृतः ।  
 यथा सर्वेषु देवेषु देवो नारायणः स्मृतः ॥ १०८१ ॥  
 तथा रसेषु सर्वेषु लक्ष्मीनारायणो मतः ।  
 रूपया परया देवि कथितस्तव पार्यति ॥ १०८२ ॥  
 न चाऽस्य क्षम्यते वक्तुं प्रभावस्त्रिदशैरपि ।  
 जानाति य इमं लोके स एव परमेश्वरः ॥ १०८३ ॥  
 ये पूजयन्ति सततं रसराममेनं  
 सद्भावमकिसहितास्त्वथ भावयुक्ताः ।  
 तेषां कदाचिदपि न ज्वरदाहपीडा  
 चाऽन्येऽपि कैऽपि न भवन्ति शरीरदोषाः ॥

र श., रसायनाधिकारः ।

भाषा—पारदभस्म १ पल, शुद्धगन्धक ३ पल, अश्वक, लाह, मुवर्ग, हीरा, कान्त, प्रवाल, मैनसिल, बौडी, मोती, रत्न, नाग और वक्र इनकी भस्में १-१ पल, शुद्धचिन्तिका १ पल, शुद्धवधनाग ३ पल, लेकर सबका वारीकचूर्णकर सागकी छालकेस्वरस अथवा हाथसे २१ दिन मर्दनकर चित्रक, अदरक निगुण्डी, धतूरा, सहिजन, भग्रा, चिरायता, गूरुण, त्रिकुट, गुग्गुल, अदरक इनकेस्वरस, मच्छी, भेंसा, मोर, सुअर, और मुर्गा इनकेपित्त, सागराचदर, आककाइय इनप्रत्येकस्वसे ३-३ भावनाएँ देकर एकमिर्गकीरझाहीमें भीतरकीतर्फ इमें पीतद

और दूसरीझाहीमें इसकीबराबर वधनागचूर्ण छिछार दोनोंकीसन्धिबन्दकर २-४ कपडिमिट्टी देकर यत्र, गणेश, दुर्गा, विष्णु, कुमारीबन्ध्या इन प्रत्येककी तालपुष्पोंसे पूजाकर अरीरमें कुमारीबन्ध्याका पूजनकर रौर, मधु और पीसे कुमारीबन्ध्याको सन्तुष्टकर यत्रसे चूल्हेपर बड़ाय घटनागवाली बड़ाहीके नीचे १ पहर दीपाग्नि देकर पचावे। स्वात्तशीतल होनेपर धीरजसे यत्रको सोल ऊपरकी कड़ाहीमें अंगुण रसको रसछोड़े। इसमेंसे १-१ रतीकीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देकर मस्तकपर जलकी धारा डाले। मूखलगनेपर शार, दही और भान खानेको देवे। चन्दन, कपूर और अगरका शरीरपर लेपकरावे। जवत दाहमालूमहो तबतक ताडके पत्तैसे हवाकरे। इसप्रयोगमें उन्माद, दन्तरन्ध, वैदोशी, अपस्मार, तान्द्रिक सतिपात, शरीरशैत्य, ८० बारोग, ४० पित्तरोग, २० श्लेष्म रोग, द्वन्द्वरोग, १८ प्रकारकेकुष्ठ, कास, क्षय, श्वास, क्षोथ, कामला, पाण्डु, २० प्रकारकेप्रमेह और मृग, गुल्म, ६ प्रकारका बवालीर, ८ प्रकारकीप्रह्वो, अर्जुन, गण्डमाला, विद्रधि, भगन्दर इनसबको यह नष्टकरताह। जिसतरह दवाताओमें लक्ष्मीनारायण थैरुहें बेतेही रसोंमें यह थैरुहें। जो लोग इस रसको भक्तिपूर्वक जानतेहें उनको ज्वर, दाहादिन्य शरीरपीडा कभी भी नहीं होती ॥ २१० ॥

### २३१ लक्ष्मीनारायणरसः ( चतुर्थ )

श्रीखण्डं शिखितुत्यञ्च दह्णं तालकं समम् ।  
 पुनर्नवामूलरसे मर्दितं प्रहरत्रयम् ॥ १०८५ ॥  
 विपचेद्याममानञ्च दोलायन्त्रेण बुद्धिमान् ।  
 गुञ्जाद्वयं पिबेच्चाऽनुपानैः सर्वज्वरपहः ॥  
 दोषज्वरं हरेत्सीधं लक्ष्मीनारायणो रसः ॥ १०८६ ॥  
 वै. चि., ज्वराधिकारः ।

भाषा—चन्द, शुद्ध तुल्य, मुहणा और हरिताल सम भागलेकर वारीकचूर्णकर पुनर्नवानीजङ्गेस्वरस अथवा हाथसे ३ पहर मर्दनकर पुनर्नवासे रसमें दोलायन्त्रसे १ पहर स्वेदनकरे। स्वात्तशीतलहोनेपर निकालकर २-२ रतीकी मोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरकेद्वयोंको नष्टकरताह ॥ २३१ ॥

### २३२ लक्ष्मीविलासमोदकः

ज्यूपणं त्रिफला वह्निं श्वातुजातककेसरम् ।  
 यवानी नम्रजातीजं मुशली कपिरुच्छुजम् ॥ १०८७ ॥  
 उच्चटार्धतयीजानि पर्णमूलाऽहिफेनकम् ।  
 ज्योतिष्मती विडङ्गानि शृङ्गाटकरहाटकम् ॥ १०८८ ॥  
 कुरण्डशोपगायत्रीलोहवङ्गाऽम्रभस्मरुम् ।  
 वह्निप्रादशवाणैश्च विशदया भागमाहरेत् ॥ १०८९ ॥  
 चतुर्थीर्शां मातुलानीं सितानि हिगुणभागिकाम् ।  
 कर्पमात्रा वटी भुक्त्वा स्वम्भनं परमं भवेत् ॥ १०९० ॥

कासभ्यासप्रतिदयायनाशनं कान्तिवर्धनम् ।

सतताऽभ्यासयोगेन वलीपलितनाशनम् ॥ १०९१ ॥

टो., वाजीकरणे ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, चित्रकमुल, चातुर्जात, केशर ३-३ भाग, अजवाइन, दोनोनस, जावित्री, जायफल, मुसली, वेवांचनेवीज ८-८ भाग; उर्तिपन, धतूरेवीज, पानक्रीज, अफीम १०-१० भाग, मालकागनी, विडङ्ग, सिंघाड़े, अम्लकरा ५-५ भाग; बहुकली, समुद्रशोष, खैर, लोह-वज्र और अम्रकमन्म २०-२० भाग; भांग सबसे चतुर्थांश तथा घाकर सबसे दूनी लेकर शङ्करकी चादनीमें सबका बारीकचूर्ण मिलाकर १-१ तोलेकी गोलिएा बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे आधी अथवा १ गोली दूधकेसाय सेनेसे अल्पन्त रतम्भनहोताड़े । और श्वास, कास, प्रतिदयाय ये सब नष्टहोतेहैं हमेशाके सेवनसे बलीपलितसे रहितहोकर सुवासस्थापन होताहै ॥ २३२ ॥

२३३ लक्ष्मीविलासः ( प्रथमः )

शुद्धं सूतञ्च तालञ्च तालादं रसखपरम् ।

धर्मं ताम्रं घनं कान्तं कांस्यं गन्धं पल्लपलम् ॥ १०९२ ॥

केशराजरसेनैव भाषयेद्वियसप्रथम् ।

कुलप्यस्य रसेनैव भाषयेच्च पुनःपुनः ॥ १०९३ ॥

पलाजातीफलाख्यञ्च तेजःपथं लघ्नकम् ।

यधानी जीरकश्चैव त्रिकटु त्रिफला समम् ॥ १०९४ ॥

नतं भृङ्गं धंशगर्भं कर्पमात्रञ्च कारयेत् ।

भाषयेच्च रसेनैव गोलयेत्सर्वमीपधम् ॥ १०९५ ॥

छायाशुष्का वटी कार्या चणकप्रमिता शुभा ।

शीताभुना पिबेद्धीमान् सर्वकासनिवृत्तये ॥ १०९६ ॥

मत्स्यं मांसं तथा क्षीरं पय्यं स्यात्स्निग्धभोजनम् ।

क्षयं कासं तथा भ्यासं सज्वरं वाऽथ विज्वरम् ॥ १०९७ ॥

हलीमकं पाण्डुरोगं शोथं शूलं प्रमेहकम् ।

अशौनाशं करोत्येव यलवृद्धिञ्च कारयेत् ॥

वर्जयेच्छाकामम्लञ्च भृष्टद्रव्यं हुताशनम् ॥ १०९८ ॥

र. सं., घ. र. घ., मै र, कासाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और हरिताल १-१ कर्ष, खपरिया ॥ माघे, वज्र, ताम्र, अम्रक, कान्तलोह, कांस्य इनकीमर्से, शुद्धगन्धक १-१ पल लेकर सबकी नीलमणकबलीकर काला-भगरा और कुलपीके स्वरसोसे ३-३ रोज भावनाएँ देकर हलायवी, जायफल, पत्रज, लौंग, अजवाइन, जीरा, त्रिकटु, त्रिफला, तगर, भंगरा, बंसलोचन येसब १-१ कर्ष लेकर बारीक चूर्णकर प्रथम औषधमें मिलाय पूर्वद्रवोंसे १-१ रोज मर्दनकर चनेबराबर गोलियें बनाय छायामें सुलाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली छेपानीकेसाय सेनेसे सबप्रकारके कासनिवृत्त होतेहैं । इसमें मछली, मास और दूध प्रशुति शिष्यभोजन पय्यहैं । तत्प्रेगहृदातृपानकेसाय सेनेसे ज्वररहित अथवा रहित क्षय, कास और श्वास, हलीमक, पाण्डु, शोथ, चूल,

प्रमेह, अर्श, निर्वैकता इनसबको यह नष्टकरताहै इसमें शाक, खटाई, मुनेहुएण्य और अमिका पतियाग करे ॥ २३३ ॥

२३४ लक्ष्मीविलासः ( द्वितीयः )

शुद्धं सूतं समं गन्धं दिनं शुष्कं विमर्दयेत् ।

जम्बीरनीरेण दिनं मर्दयेन्मतिमान् भिषक् ॥ १०९९ ॥

निःक्षिपेद् दृढमृपायां वासोभिर्मुनिसंघैः ।

वेष्टेष्टेस्तिकतायन्त्रे यामे द्वादशभिः पचेत् ॥ ११०० ॥

स्थमावशीतमुदृत्य शूश्रेण प्लवे विमर्दयेत् ।

ताम्रमसमं कणां कुष्ठं प्रत्येकं सूतभागतः ॥ ११०१ ॥

प्रक्षिप्य मर्दयेद्वादं त्रिदिनं तुङ्गवारिणा ।

प्रदद्यात्स्य सूतस्य शृङ्गचेरसितायुतम् ॥ ११०२ ॥

बहुयुग्मं दीर्घतापे वातरोगे महत्यपि ।

निरामं नाशयेदाशु पिप्पलीमधुसंयुतम् ॥ ११०३ ॥

विषमज्वरजीर्णाशौश्यायमेहहलीमकाः ।

स्यानुपानाच्छमं यान्ति रसराजप्रभायतः ॥ ११०४ ॥

सेवितो मधुसर्पिर्भ्यां धर्मैकं जितेन्द्रियैः ।

ज्वरामरणरोगादीन् कुष्ठरोगान् सुदाहणान् ॥

लक्ष्मीविलासनामाऽयं शङ्करेण कृतो हरेत् ॥ ११०५ ॥

र. का, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर बजलीकर जंभीरीकेरससे एकरोज मर्दनकर १-५ काइमिदीदीहुद्ध आतशी शीशीमें ढालकर मुहबन्दकर बालकायन्त्रमें रख १२ पहरकी क्रमानि देवे । स्वात्तशीतल होनेपर निकालकर ताम्रमस्य, पीपल और कुष्ठ १-१ भाग मिलाकर बिजोरेकेरससे ३ दिन मर्दनकर १-६ रस्तीकी गोलिएा बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली भ्रू-रस और शङ्करकेसाय सेनेसे जीर्णज्वर तथा प्रचण्डवातरोग नष्टहोतेहैं । पीपल और मधुकेसाय निरामज्वर, और तत्प्रेगहृदातृपानकेसाय सेनेसे विषम तथा जीर्णज्वर, बवासीर, क्षय, प्रमेह, हलीमक येसब नष्टहोतेहैं । जितेन्द्रियहोकर मधु और भूतकेसाय एकचपतक सेवनकरनेसे भयङ्करकुष्ठप्रचुरिरीगोसे निवृत्त होकर ब्रुवोपे रहित होताहै ॥ २३४ ॥

२३५ लक्ष्मीविलासः ( तृतीयः )

पलं चज्जाघ्रचूर्णस्य तदर्धं गन्धकं भवेत् ।

तदर्धं चङ्गमसमाऽपि तदर्धं पारदं तथा ॥ ११०६ ॥

तत्समं हरितालञ्च तदर्धं ताम्रमसमकम् ।

रससाम्येन कर्षुरं जातीकोपफले तथा ॥ ११०७ ॥

वृद्धदारकवीजञ्च बीजं स्वर्णफलस्य च ।

प्रत्येकं कार्षिकं भागं मृतस्पर्णञ्च शाणिकम् ॥ ११०८ ॥

निपिप्य वटिका कार्या दिगुज्जाफलमानतः ।

निहन्ति सधिपातोत्थानादान्धोरान् सुदाहणान् ॥ ११०९ ॥

गलोत्थानब्रूवृद्धिञ्च तथाऽतीसारमेव च ।

कुष्ठमेकादशविधं प्रमेहान्विशतिं तथा ॥ १११० ॥



हम्यात्कान्तिं धीर्यवृद्धिं पुष्टिञ्च विपुलं यत्नम् ।

दत्ते लक्ष्मीविलासोऽयं पुंसां लक्ष्मीप्रदायकः ॥११३४॥

र.पा., नि. र., र.चं., र.सु., रसायनसं., र.प., यो.र., र.क. यो., राजयदमणि ।

टि०—विपण्डुररुणाकरादौ युक्तिः। पादोऽस्ति, वरमुद्धा जनै पाठ-  
द्वयी स्थापिता तदशानविश्वमिभमिति चिद्विदि विमर्शनीयम् ॥

**भाषा**—कान्तलोह, लोह, अन्नकसत्त्व, ताम्र, सुवर्ण, वज्र, रजत, नाग, फोलाद, प्रवाल और मोती इनकीमसमें समभाग लेकर सबकी बराबर पारदभस्म मिलाकर ३ दिनतक मधुमें खरलकर वज्रमूत्रांसे बन्दकर कुक्कुटपुटकी आचड़े। स्वाज्ञासीतल होनेपर निकालकर चित्रकमूलकेवायसे दोरोंज भावना देकर शतावर, दीमकरा मूलपर, (कामेशवत्सरसमें विवरणदेखो) विदारीकन्द, गोखरू, ईख, बला, नागयला, गुलसिकरी, सेम-लकामुसला, ककड़ी, तिपतिया, गिलोय, मुलहठी, सोंठ, ब्राह्म, ब्रह्मदण्डी, भांग, उर्दगन, गूद, पोस्त, अनन्तमूल, पोदबेल (मराठी), इनके यथासम्भव स्वस्थ अवस्था हाथोंसे ७-७ भावनाएं देकर यथाशक्ति कस्तूरीकी भावना देकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखोड़े। इनमेंसे १-१ गोली रोग अवस्था समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे आठमहारोग, प्रमेह, क्षय, पाण्डू, कामला, इन्द्रिय तथा शुम्भकी कमजोरी, पुराना अति-सार, मूत्रकृच्छ्र, गर, शोथ, वलीपलित, क्षयाग, वीर्यहीनता इतसयको नष्टकर यह मनुष्यको फिरसे विपुलनयुक्त बनाताहै २३७

**२३८ लक्ष्मीविलासरसः ( महान् ) ( पद्यः )**

लोहमस्रं विपं मुस्तां फलत्रयकटुप्रयम् ।

धुस्वरं वृद्धवाञ्छं योजिमिन्द्राशनस्य च ॥ ११३५ ॥

गोधुच्छयकञ्चैव पिप्पलीमूलमेव च ।

पतत्सर्वं समं प्रायं रसे धुस्वरकस्य च ॥ ११३६ ॥

भाषयित्वा घटी कायां हिगुजाफलमानतः ।

महालक्ष्मीविलासोऽयं सन्निपातनियारकः ॥ ११३७ ॥

र.सं., र.इ., व.ता., र.र., विरोरोगे ।

**भाषा**—लोह और अन्नभस्म, शुद्धकण्ठाग, नागरमोषा, त्रिकला, त्रिदण्ड और घट्टा-विषाग-नामा इनकेबीच, दोनों-गोखरू, पिपलामूल, येसव समभाग लेकर सबका थारीकपूर्णकर घट्टोकेरसे १-२ रोज मर्दनकर १-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखोड़े। इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे सबप्रकारके त्रिदोषनष्टोंको यह नष्टकरताहै ॥ २३८ ॥

**२३९ लक्ष्मीविलासरसः ( सप्तमः )**

सुवर्णमुक्ताफलमन्नकञ्च

रसेन्द्रभस्मायसविद्रुमञ्च ।

कस्तूरिकाकुङ्कुमजातिपरी-

लयमलेख्यकृत्यमागिकम् ॥ ११३८ ॥

सम्भवेन्नेत्रागलतारमेन

पृष्ठा ज्यहं यत्नमितञ्च दद्यात् ।

सितामधुभ्यां सह सेवनीयः

सर्वामयं हन्ति न संशयोऽत्र ॥ ११३९ ॥

कामस्य वृद्धिं नितरां करोति

नारीशतं गच्छति नित्यमेव ।

पण्डोऽल्पवीर्यो यदुमृत्रमेही

यथाऽनुपानेन च सेवयेत् ॥

क्षयापहं धातुविवर्धनञ्च

लक्ष्मीविलासो रसरजः पयः ॥ ११४० ॥

र.चं., वाशीकरणे ।

**भाषा**—सुवर्ण, मोती, अन्नक, पारा, लोह और प्रवाल इनकी मसमें, कस्तूरी, केसर, जाविनी, लौंग, इलायची, सज, सब समभागलेकर थारीकपूर्णकर पानकेरसमें १ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शहर और मधुकेसाथ सेवनकरनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै। निरन्तरसेवनकरनेसे शुक्रकीवृद्धिहोकर मनुष्यकी मर्द होजाताहै। मधुमेहम अनुपानकेसाथ देनेसे बहुजून नष्टहोताहै ॥ २३९ ॥

**२४० लक्ष्मीविलासरसः ( अष्टमः )**

हेमभस्म च भागेकं रौप्यभस्म द्विभागिकम् ।

शुल्यभस्म त्रिभागञ्च कान्तभस्म चतुर्गुणम् ॥ ११४१ ॥

पञ्चभागञ्च रसीजं स्यान्मण्डूरं पट्टिभागिकम् ।

निश्चन्द्रं स्यामकञ्चैव भस्म स्यात्सप्तभागिकम् ॥ ११४२ ॥

अष्टभागञ्च यज्ञं स्यान्नागं स्यान्नवभागिकम् ।

दशोकादशभागे च प्रवालमौक्तिके भृते ॥ ११४३ ॥

खल्यमध्ये विधायाऽप्य तत्तुल्यं द्यूतमस्मकम् ।

मर्दयेत्कथितं द्रव्ये भावयेज्जातिपत्रकं ॥ ११४४ ॥

त्रिकुटुषिफलाचातुर्जातद्रव्यैश्च कौटुम्बे ।

भृगुनाभिरसेक्षैव मुनिपारान् दृष्यकृष्टयम् ॥ ११४५ ॥

गुञ्जामात्रं लिहेत्सन्ध्यं सितोऽऽज्यमधुसंयुतम् ।

राजरोगं निहत्याशु पाण्डुरोगविनाशनम् ॥ ११४६ ॥

द्वन्द्वजं छर्दिरोगञ्च भ्यासं कासञ्च कामलाम् ।

वीर्यवते पञ्चगुल्यान् सर्वेशुलं विनाशयेत् ॥ ११४७ ॥

उन्मादञ्च मतिभ्रंशमष्टोदरमहागदान् ।

मैहानां विरतिश्चैव पण्डित्यञ्च क्षयं नयेत् ॥ ११४८ ॥

अरौचकमग्निमान्दं प्रहणीदोपनाशनम् ।

वलीपलितचिर्ध्वंसि नारायेत्युन्मकामलाम् ॥ ११४९ ॥

दृष्टिपुष्टिर्न चलयं कम्पयातञ्च नाशयेत् ।

असाध्यरोगनाशाय साध्यो लक्ष्मीविलासकः ११५०

वै.वि. (क.), र.म.मा., रसायने ।

**भाषा**—सुवर्णभस्म १ भाग, रजतभस्म २ भा., ताम्र-भस्म ३ भा., कस्तूरीभस्म ४ भा., फोलादभस्म ५ भा., मण्डूर भस्म ६ भा., निश्चन्द्रप्रभकभस्म ७ भा., वज्रभस्म ८ भा., नागभस्म ९ भा., प्रवाल १० भा., और मोती ११ भाग, लेकर सबकी बराबर पारदभस्म मिलाकर जाविनी, त्रिकुटु, त्रिकला, चातुर्जात, केसर, कस्तूरी, इनप्रत्येककेसर्वोंसे ७-७

भावनाएँ देकर १-१ रत्तीकी गोळियाँ बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १ गोलीसे ३ गोलीतक अभिपद्य देखकर शकर, घी और मधुकेसाय देनेसे राजरोग, पाण्डु, हृन्मद, छर्दिरोग, श्वास, कास, कामला, दीर्घकालीन वातरोग, पांचप्रकारके गुल्म, सब प्रकारके शूल, उन्माद, मतिभ्रंश (विक्षिप्ता), अष्टोदरीयमहारोग, २० प्रकारके यमोद, पण्डित, अद्विचि, मन्दाग्नि, प्रक्षी, वली; पलित, दृष्टिको कमजोरी, कम्पवात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २४० ॥

### २४१ लक्ष्मीविलासरसः ( नवमः )

रसकनकपविप्रवालमुक्ता

गगनाहिवपुकान्तात्प्रमेतत् ।

तनुतरमखिलं चिमाचितं त्रिः

कनकरसैः स्नुहिजेः सुकासमर्दः ॥ ११५१ ॥

कन्येधुवज्रोस्वरसे चिमर्द

पन्नैश्च गन्धर्वदलै विवच्य ।

निधाय धान्ये त्रिदिने गृहीत्या

क्षुण्णं वराक्षीद्रुतञ्च दद्यात् ॥ ११५२ ॥

प्रमेहञ्च कासं घणं पाण्डुहिके

महाशूलमन्दानललेभवातान् ।

अपस्मारकुष्ठे हलीमज्जरञ्च

निहन्त्याश्च लक्ष्मीविलासो रसोऽयम् ॥ ११५३ ॥

रसायनचं., वै. वि., प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, हीरा, प्रवाल, मोती, अभ्रक, नाग, वज्र, कान्त और शाल इनकीमर्सें समभागलेन धरा, डंडा-धोहर, कर्सीजी, पीडुवार, ईश, मोहर इनकेस्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोला बनाय एण्डकेपत्तोंमेंलेपे कचे सुतेसे बांध-का धान्यराशिमें गाड़दे । चौथेरोज निकालकर खरलकर रखडोढ़े । इनमेंसे आधीरत्तीसे १ रत्तीतक त्रिफला और मधुके-साय देनेसे प्रमेह, खासी, ज्वर, पाण्डु, शिक्की, महाशूल, मन्दाग्नि, लेभवात, अपस्मार, कुष्ठ, हलीमक, ज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २४१ ॥

### २४२ लक्ष्मीविलासरसः ( दशमः )

सूताऽयोऽम्रकगन्धकं समलवं सूताह्निमुत्थं सितं,  
स्वर्णं मूसितया वृषेण चरया यथां विद्यायां पृथक् ।  
मर्थं कन्यकया तथैव सितया ज्येष्ठाह्वया मोचया,  
तद्गोलपरिखण्डयक्षकरजेः पत्रैस्त्रिघण्टान्यसेत् ११५४  
राशौ तण्डुलज्येष्ठया सुमनजे तुयें दिने चोद्धरेत्,  
वत्त गुञ्जवतुष्टयं धिजयते मेहादिकानामयान् ।  
क्षौट्रेण त्रिफलायुतेन मधुना रुणायुतेन क्षयं,  
कासं पञ्चविधं तथा तदनुजं पाण्डुञ्च हिकामयान् ॥  
यश्माणं पवनान्दलीमकमहापस्मारसुख्याञ्चयेत्,  
प्रोक्तोऽयं शशिशेखरेण च मुदा लक्ष्मीविलासाभिधः  
रसायनचं., र. प., र. पा., रसायने ।

भाषा—पारा, लोह, अभ्रक इनकीमर्सें, शुद्धगन्धक सम-भाग लेन प्रांसेचतुर्थांश रजत और स्वर्णभस्म मिलाकर दीमकका मूलवर (कानेसकत्सरसमें विवरणदेखो), अज्झा, त्रिफला, धतावर, विदारी, पीडुवार, शकर, केलेफान्द, मोचरस इनके इत्तोंसे १-१ रोज मर्दनकर गोलावनाय एण्डकेपत्तोंमें लेपे कचे सुतेमें बांधकर नावल अथवा फूलोंकी डेरीमें ३ दिनतक दबादे । चौथेदिननिकालकर खरलकर रखडोढ़े । इसमेंसे ४-४ रत्तीकी मात्रा त्रिफला-मधु अथवा पीपल मधुकेसाय देनेसे ५ प्रकारका कास, पाण्डु, हिका, राजयक्ष्म, वायु, हलीमक, अपस्मार प्रशुति सबरोगोंकी यह नष्टकरताहै ॥ २४२ ॥

### २४३ लक्ष्मीविलासरसः ( एकादशः )

येदेन्दुनेत्राङ्गरसाङ्गभागा

भूक्षुतगन्धोपणतिन्दुङ्गाः ।

भृङ्गाद्रगुञ्जायवनीनगामि-

भान्गं त्रिशः स्वेद्यमर्दोऽर्कपत्रे ॥

लक्ष्मीविलासः स विशाललक्ष्मीं

तनीं तनोति क्षयिणः प्रयोगीः ॥ ११५६ ॥

र. र. स., रसायने ।

भाषा—अम्रकभस्म ४ भाग, शुद्ध पारा १ भाग., गन्धक २ भा., मरिच, कुचिला और भुनामुहवा ६-६ भाग लेकर भारीकचुपकर परियन्धकरी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर भंगरा, अदरक, सफेदगुच्छा, सुरासानी अजवाइन और पुनर्नया इन्हे स्वरसोंसे ३-३ भावनाएँ देवे । प्रत्येक भावनाके पीछे आक्के-पेपत्तोंके दोनेवे रख दो दो अहुल मिश्रकालेरदेकर जलते हुए कण्डोंमें रखते । गोला लालडोनेपर बाहर निकालकर फिर दूसरेस्वरससे भावनायेर आक्केपत्तोंमें रख पूर्ववत् स्वेदनकरे । इसतद् स्वेदनकरनेकेबाद ३-३ रत्तीकी गोळियाँ बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपान-केसाय देनेसे सबप्रकारका क्षय निवृत्त होकर क्षयमस्त रोगीके शरीरमें कान्ति और बल प्रकटहोतेहैं ॥ २४३ ॥

### २४४ लक्ष्मीविलासरसः ( द्वादशः )

वह्मनागो च भागो द्वौ भागेकं रसमस्मनः ।  
गगनस्य च भागेकं हेमरौप्यं द्विभागिकम् ॥ ११५७ ॥  
वैकान्तकान्तभागी द्वौ मेलयित्वा चिमर्दयेत् ।  
भावनाः खलु दातव्याः कुमारोरस्ततः शुभाः ११५८  
एकविंशद्द्वारनीरेः सप्तधा माधयेद्विपक् ।  
योजितो रसचर्याऽयं महालक्ष्मीविलासरः ॥ ११५९ ॥  
प्रमेहाविशर्षति हन्याद्वातपित्तकफोद्धवान् ।  
यश्माणं पाण्डुरोगञ्च सोमरोगं तथाऽश्मदीम् ११६०  
मृत्राघातं मूत्रलब्धं झटितयेव विनाशयेत् ।  
वर्जयेत्सन्तानमभ्यङ्गं प्रमेहजनकं गणम् ॥ ११६१ ॥  
र. पा., प्रमेहाधिकारे ।



कान्चूर्ण अच्योतरह मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशेकी-  
मात्रा गुड अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, कास,  
बवासीर, ग्रीहा, पाण्डु, ज्वर, प्रमेह, शोथ, विट्म, सङ्ग्रह-  
ग्रहणी, सर्वातिसार, समस्तशूल, आमवात, सुतिकारोग, इन-  
सबको यह नष्टकरताहै । इसका निरन्तर सेवनकरनेवालेको बात  
पित्तकृकल व्याधियां नहीं होतीहैं । काष्ठभी खाया हुआ भस्म  
होजाताहै । भारीअम, मैथुन, ज्ञान, मांस, काष्ठी, खटाई, दूध,  
मछली और दही येसब सास्न्यहोतेहैं ॥ २४७ ॥

### २४८ लाईचूर्णम् ( चतुर्थम् )

शाणं शाणं रसें गन्धं तयोः कुर्याच्च कज्जलीम् ।  
मृताऽस्त्रं भृष्टवाहीकं त्रिसुगन्धञ्च यालकम् ॥११७८॥  
जातीफलं लघ्वद्वज्रं कुष्ठं जीरं कुलिजनम् ।  
व्योषं मोचरसं विल्वं कार्वां पटुपञ्चकम् ॥११७९॥  
पतानि शाणमात्राणि भृष्टा भङ्गाऽखिलैः समा ।  
लाईचूर्णमिति ख्यातं दृश्यं दीपनपाचनम् ॥११८०॥  
प्रातस्तोत्रेण शाणं तदेयं शाणार्द्रकं निशि ।  
सततं हन्त्यतीसारं ग्रहणीञ्च प्रवाहिकाम् ॥  
कुर्यान्निद्रायलं पुष्टिं यथाहं यालके पुनः ॥११८१॥  
र. (मा.), र.सु., अतीसार ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ४-४ माशेकी नीलवर्ण-  
कज्जली, अत्रकभस्म, भुनीर्हाँग, सज, पत्रज, इलायची, सुग-  
न्धबाला, जयफल, सौंघ, कुष्ठ, जीरा, कुलिजन, त्रिकटु, मोच-  
रस, बेलगिरी, कलौजी, पांचोन्नमक, येसब ४-४ माशे, भुनी-  
मांग सबकीबराबर लेकर बारीकचूर्णकर कज्जलीमें मिलाकर  
रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ माशा प्रातःकाल और १॥-१॥ माशा  
रात्रिको छाछकेसाथ देनेसे ग्रहणी, प्रवाहिकाइत्यादिकोंको नष्ट-  
कर मुखकीनिद्रा और पुष्टिको बढ़ाताहै ॥ २४८ ॥

### २४९ लाईचूर्णम् ( पञ्चमम् )

पञ्चलवणं त्रिशणं स्यात्प्रत्येकं ज्यूपणं पिबुः ।  
गन्धकान्मापका ह्याष्टौ चतुरो मापका रसात् ॥११८२॥  
हृन्नाशनात्पलं शाणव्रितपाऽधिकमिष्यते ।  
खादेन्मिश्रीकृताच्छाणमनुपेयञ्च काजिकम् ॥११८३॥  
मापकादिकमेणैव मनुयोज्यं रसायनम् ।  
अत्यन्ताऽधिकरश्माऽत्र भोजनं सार्वकामिकम् ॥  
प्रसिद्धयोगिनीलाईप्रोक्तं चूर्णं रसायनम् ॥११८४॥  
यो.म., र.का., र.चि., वै.र., अतिमार । र.चि., वै.र.  
नायिकाचूर्णमितिनाम ।

भाषा—पांचोन्नमक १२-१२ माशे, सौंघ, मिर्च, पीपल  
१-१ कर्प, शुद्धगन्धक ८ माशे, शुद्धपारा ४ माशे, और भुनी-  
मांग १ पल १२ माशे लेकर सबका बारीकचूर्णकर पाँचगन्धक-  
कीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशेसे  
शुरूकर ४ माशे तक बढ़ाये ऊपरसे काष्ठी पीये, भोजन थोड़ा-  
करे । इसकेसेवनसे अग्नि अत्यन्त प्रदीप्तहोकर अतिमारदिकोंका  
नाश होताहै ॥ २४९ ॥

### २५० लाईचूर्णम् ( षष्ठम् ) ( पष्ठम् )

कर्पं गन्धकमर्द्धपादमुभौ कुर्याच्छुभां कज्जलीं,  
ज्यक्षं ज्यूपणतश्च पञ्चलवणं स्यादूर्ध्वकर्पं पृथक् ।  
तच्छकाशनचूर्णतुल्यनिहितं तत्सर्वमेकीकृतं,  
खादेच्छाणमितं सकाजिकपलं मन्दान्यतीसारनुत् ॥  
र.कौ., र.क.ल., चि.र.भ., वै.चि., वै.र., य.यो.त., यो.  
त., र.सु., यो., नि.र., र.का., यो.म., र.र., र.चं., अतिमा-  
राधिकार । र.चि.नायिकाचूर्णमितिनाम ।

टि०—रसायनन्दे निष्यन्दुस्नाकरे च ब्रह्मिष्ठजीरकद्वयञ्च  
रवि निश्चितम् । रसकामेनो केवल जीरकद्वयमधिकतया म्यत्तम् पार-  
दगन्धकयोश्च समानो भागो गृहीतौ । बड्डु स्थानेयु साऽथैव कर्पं पृथ-  
गितिपाठो दृश्ये पर स्वादूर्ध्वकर्पं पृथग्येव पाठः साधुः प्रतिभाति,  
साऽर्द्धकमेतिपाठो लघ्वाऽतियोगः स्यात् । र.र., र.चं., शन्यो रसायना-  
यस्यमिति नाम, पञ्चमागश्च विशेषतया निहितोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धगन्धक १ कर्प, शुद्धपारा ८ माशेकी नीलवर्ण  
कज्जली, त्रिकटु ३ कर्प, पांचोन्नमक ८-८ माशे, भुनीमांग  
सबकीबराबर लेकर सबका बारीकचूर्णकर एकगह मिलाकर  
रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ माशे लेकर काष्ठीपीनेसे मन्दाग्नि  
और अतिसारप्रभृतियोग नष्टहोतेहैं ॥ २५० ॥

### २५१ लाईचूर्णम् ( षष्ठम् ) ( सप्तमम् )

सूतं गन्धं त्रिकटुकं दीप्यन्तं जीरकद्वयम् ।  
सौवर्चलं सैन्धवञ्च रामठं विडमेव च ॥११८६॥  
शकाह्वयस्य चूर्णन्तु चूर्णतुल्यं प्रदापयेत् ।  
सङ्ग्रहं शूलमानाहं हन्यान्नानाऽतिसारकम् ॥११८७॥  
यो.र., वै.चि., नि.र., र.चं., र.का., यो.त., अतिसार ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, त्रिकटु, अववाहन, दौमो-  
जीर, सत्रल, सैन्धव, भुनीर्हाँग, विडनमक येसब समभाग लेकर  
सबकीबराबर भुनीमांगका दूर्ध्वमिलाकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े ।  
इसमेंसे १ माशेसे ४ माशे तक मात्रा उचितानुपानकेसाथ देनेसे  
सङ्ग्रहग्रहणी, शूल, आनाह और अतिसार इनसबको यह नष्ट-  
करताहै ॥ २५१ ॥

### २५२ लाइल्यादिगुटिका

लाङ्गली विवृता लोहचूर्णं दशपलं पृथक् ।  
त्रिशन्तु गुटिकाः पथ्याः कुर्यान्मृद्गरसाप्लुताः ॥११८८॥  
छायागुष्काश्च तत्राऽर्द्धां गुटिकां भक्षयेत्ततः ।  
जीर्णं रसेन रुक्षेण पेया पूर्वं न भोजयेत् ॥११८९॥  
यजितो ब्रह्मचर्याग्नेः क्रमेण गुटिकामपि ।  
खादेत्प्रातस्तनु मासेकं भवेत्कामचरः क्रमात् ॥११९०॥  
एवं सर्वाणि कुष्ठानि जयत्यतिबाल्म्यपि ।  
धीमेधास्मृतियुक्तस्तु नित्यं जीवेत्समाः शतम् ॥११९१॥  
य.नि., कुष्ठे ।

भाषा—शुद्ध करिहारी, निशोत, लोहभस्म १०-१० पल  
लेकर बारीकचूर्णकर मंगरेन्दसे १-२ रोजुपोटर ३० गोलिए

बनाकर छायाशुक्कर रखोड़े । इनमेंसे आधीआधीगोली खावे । जीर्णहोनेपर रूक्षमासरसे पेया बनाकरदे । पहिले भोजन न दे । इसके सेवनमें ब्रह्मचर्या पाळनकरे । धरि २ सात्त्यहोने पर प्रतिदिन १-१ गोली भी खासचाहे । एकमहीने बाद यथेष्टभोजनकरे । इसकेसेवनसे समस्तकुष्ठसे रहित और बुद्धि, मेधा, स्मृतियुक्तहोकर १०० वर्षतक जीताहे । २५२ ॥

### २५३ लाङ्गल्यादिलोहम्

चिमुदलाङ्गलीमूलकदुत्रयफलत्रये ।  
द्राक्षागुग्गुलिभिस्तुल्यं लोहवृषं नियोजयेत् ॥११९२॥  
मातुलुङ्गरसेनैव त्रिफलाया रसेन च ।  
चिमूचयत्नतः पञ्चाद्रुटिकाऽङ्गोलसम्मितम् ॥११९३॥  
भक्षयेन्मधुना साऽहं करोति शृणु यावत् शुणान् ।  
आजानु स्फुटितं घोरं सर्वाङ्गस्फुटितं तथा ॥  
तत्सर्वं नाशयत्प्राधु साध्याऽसाध्यञ्च शोणितम् ॥११९४॥  
र स, र, सु, ध, र, र, वातरणैः ।

भाषा—विशुद्धरिहारी, त्रिकटु, त्रिफला, द्राक्ष, गुग्गुल वसन्त-समभाग, लोहमूलक सबको बराबर लेकर चितोरा और त्रिफलाके रससे १-१ रोज मर्दनकर ८-८ मासेकी गोल्या बनाकर रख छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाधकेनेसे बुदभोजन तथा सर्वा श्में झूट हुए साध्य अथवा असाध्य वातरणको यह नष्टकरताहे ।

### २५४ लिङ्गमाहेश्वररसः

शार्धं धीर्यञ्च देव्यं द्रवकुनटिका खपरं तालकञ्च,  
कटुघृष्टाद्रमजातं रसशशिसकलं तुल्यमागेन ग्राह्यम् ।  
जात्याप्यं देवपुष्पाङ्गुलरुमरिचं शुष्पिपाञ्चालिके द्वौ  
भागौ मर्द्यौ च रविपद्मजलयो भावयेत्सप्तवारान् ॥११९५॥  
तद्ब्रह्मव्यञ्च भाग्यां कथमपि सुरत्साकासमर्दयेच्च,  
घर्मे भाव्यं द्विवह्नात्मनः कृतगुटिकं सेयनीयं पयोभिः ।  
हन्यात्सर्वोपदेशं ग्रणमपि विविधं गण्डमालां भग्नम्,  
पर्यं गोधूमयुक्तं यहुलघृतयुतं कोष्णनीरञ्च पाने ॥११९६॥  
रसायनतः उपदत्ते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, क्षिगारिक, मैवसिल, रापरिया, हरिताल, मुर्दासत्र, शिलाजीत, और रसकपूर सबसमभाग, जावित्री, लौंग, अककुरा, मरिच, सोंठ, पीपल, २-२ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारिगन्धक नीलवर्णकजलीमें मिला कर आकसीजहरीछालके स्वरस और दुधसे ७-७ भावनाए देकर भारती, तुलसी, क्षीरजी, इनप्रत्येकके रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर ६-६ रतीकी गोल्या बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली दुधकेसाध सेवनकरनेसे सक्तरहने उपदृष्ट, मानातरहनेत्रण, गण्डमाला, भगन्दर इनसबको यह नष्टकरताहे । इनमें गेहू, धी और गरमपानी पच्यहे ॥ २५४ ॥

### २५५ लीलाविलासरसः ( प्रथम )

शुद्धमृतस्य भागो द्वौ द्वौ भागौ गन्धकस्य च ।  
मुक्ता घेमान्तरान्ताऽङ्गं हेममसं दशांशकम् ॥११९७॥

पोडशांशं ताम्रमसम् भागैकं रौप्यमसमकम् ।  
सम्मर्द्य भावयेत्सत्त्वे त्रिफलाभृङ्गजै द्वैरे ॥ ११९८ ॥  
एकविंशतिवाराणि भावयेच्छोषयेत्पुनः ।  
द्राक्षादाडिमपुष्पोत्पनारिकेलाम्भुमर्दितम् ॥ १२०० ॥  
निगुञ्जं वा चतुर्गुञ्जं मधुना संयुतं लिहेत् ।  
पित्तयुक्ते ज्वरे द्वन्द्वे हाम्लपित्ते सपित्ते ॥ १२०० ॥  
चत्वारिंशत्पित्तदोषे शूले पक्तिसमुद्भवे ।  
योनिशूले गुल्मशूले प्रदरे रक्तदोषजे ॥  
महालीलाविलासोऽयं पित्तरोगे प्रशस्यते ॥ १२०१ ॥  
र. पा, पित्तोर्गं ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक २-२ भाग, मोती, वैकान्त, कान्त, अम्रक और सुवर्णभस्म ये प्रत्येक १० भाग, ताम्रमस १६ वा भाग, रजतभस्म १ भागलेकर पारिगन्धक नीलवर्ण-कजलीमें मिलाय त्रिफला और भगवेरससे २१-२१ भावनाए देकर मर्दन और क्षोषणकरे । इसकेबाद द्राक्ष, अनारफूल, गारियल इनकेस्वरसोंसे १-१ दिनमर्दनकर ३-३ अथवा ४-४ रतीकी गोल्या बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुमें मिलाकर चाटनेसे पित्तयुक्तद्वन्द्वज्वर, अम्लपित्त, ४० प्रकारके पित्तदोष, पक्षिचूल, योनिशूल, गुल्मशूल, प्रदर, रक्तदोष इनसबको यह नष्टकरताहे ॥ २५५ ॥

### २५६ लीलाविलासरसः ( द्वितीयः )

रसा वलि ध्याम रविञ्च लौहं  
धात्र्यक्षर्नरैरिदिनं विमर्द्यं ।  
तदल्पघृष्टं मृदु मार्कषेण  
सम्मर्देदस्य च घृतयुग्मम् ॥ १२०६ ॥  
हृत्पित्तपित्तं मधुनाऽवलीढं  
लीलाविलासो रसरत्न पप ।  
दुग्धैः सुहृत्पाण्डुरसैः सुधान्या  
परं शनैस्तत्सत्तितं भजेद्वा ॥  
छर्दिं सशूलं हृदयस्य दाहं  
नियारयेदेष न संशयोऽस्ति ॥ १२०७ ॥

र. स, र चि, वै चि, या र, भि सा, र, र स, र स, र, र, सु, चि र म, चि. क, र च, ए यो त, यो. म, नि र, दो, र म, र क ल, रसायनम्, र र. की, र की, र को, र र. दी, भि र, यो त, र. म सा, ना चि, र क, व. रा, र का, र पा, अम्लपित्ते ॥

टि०—कुत्रचिदाहस्थाने रौप्य दहनने, पाचनमपि कुत्रचिद् दहनन भावनायात्रा हरीनका मर्दनमभितराया दहनने । रसपारिजाते भावनाया “पञ्चविंशतिवारं तावन्निर्बद्धिन्द्रिये” इत्यर्थको विशेषन दृश्यते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अम्रक, ताम्र और लोह-भस्म सब समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर आवले और बड़ेदे केरससे ३-३ रोजमर्दनकर भगवेरससे धोहीदेमर्दनकर ६-६ रतीकीगोल्या बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली

मधुकेसायलेनेसे अम्बपित्त, वमन, घृलपुक्कहृदयकादाह, इनसब-  
को यह नष्टकरताहै । दूधमें स्फेद बोहला अथवा कच्चे आबलोंका  
रस डालकर पकावे । फटजानेपर इसकापानी अनुपानमें देवे ॥२५६॥

### २५७ लोकनाथगोद्वलीरसः

पारदभूति हैमभूत्या कायां समानांशः ।  
द्वाभ्यां समानगन्धः पयसा गन्धेन मर्दयेद्विषसम् ॥२०४॥  
चित्रकनीरेण तनूस्त्रिदिने पयसाऽथ सूर्यस्य ।  
त्रिगुणितपीतवराटकगर्भे क्षिप्ते निरोधितं यत्नात् ॥२०५॥  
कापोस्तडूणाभ्यां चूर्णहितेऽथ भाण्डके क्षिप्तम् ।  
रुद्धं गजपुटसज्जे विपाचितं तत् त्रियामायाम् ॥२०६॥  
इद्धा भैरवचटुकात् कुमारिकावृद्धवेद्ययोगीशान् ।  
प्रातःकाले स्नात्वा इद्धा पूर्वांश्च लेपनमुद्वत्य ॥२०७॥

तत्त्वतले निक्षिप्य सचराचरं मर्दयेद्यत्नात् ।  
सर्वोपद्रवघ्नस्यै सिद्धा स्यात्पोग्द्वली रम्या ॥२०८॥  
यल्लङ्घयोन्मितेपा मरिचैः घृताभ्वितैश्च संसेव्य ।  
अनेकवराश्च रोगाः सर्वे नाशं प्रयान्त्येव ॥२०९॥

मुलं विलेप्याऽथ घृतेन पूर्वं

सम्पूज्य गोविप्रभिक्षुमारीः ।

दत्त्वा घृतं स्पर्णयुतं द्विजेभ्यः

संसेवयेन्माङ्गलिकं विधाय ॥२१०॥

शुभे दिने सुनक्षत्रे लग्ना चन्द्रवलं सुधीः ।

वत्खालङ्करणैः पूज्य प्राणाचार्यं कृतादरः ॥२११॥

कृत्वा स्वस्त्ययनं पूर्वं सर्वतोमद्रसज्जके ।

लोकेऽथ पूर्वमभ्यर्च्ये प्राङ्मुखोद्मुखोऽपि वा ॥२१२॥

प्राणाचार्यं नमस्कृत्य लग्नानुहर्षद्वयम् ।

हाटके राजते पात्रे काचके वाऽपि शौक्तिके ॥२१३॥

इमं मन्त्रं समुच्चार्य प्राङ्मुखोद्मुखस्तथा ।

भेषजं सेवयेत्प्राज्ञः स्थित्वा चोक्तकसासनः ॥२१४॥

“ ब्रह्मा यक्षश्च द्येन्द्रभुवन्नाऽर्काऽनलाऽनिलाः ।

ऋषयस्तीर्थधाम्नामा भूतसहस्राश्च पाण्डु मे ॥२१५॥

रसायनमिवर्योणां देवानाममृतं यथा ।

सुधैर्योत्तमनागानां भेषज्यमिदमस्तु मे ॥” ॥२१६॥

एवं संसेव्यमाने तु रसे वहगुद्रयो भवेत् ।

यमि विरेको दाहोऽसि शिरोरुद्रागर्गरवम् ॥२१७॥

अरोचकाग्नितीमत्यगुल्फेकादयस्तथा ।

मुखपाकोऽप्यनिद्रत्यै रसव्यापचटुच्यते ॥२१८॥

प्रतिकायां प्रयगिमे चाऽन्यथा यल्लहानिद्राः ।

यमो गुह्यचिकितोयं मधुना वातिनाशनम् ॥२१९॥

मातुलुङ्गाद्वितीयं वा मधुना यद्विषयकम् ।

लाजाः कणामधुपुता नाभिदाहो जनेः स्पृशेत् ॥२२०॥

शासिरण्डस्तु मधुना दग्धा वा विजया तथा ।

विरेकोपद्रवहरा भूषाभो तण्डुलाभुना ॥२२१॥

दाये सुधाजले शस्तं शीतनीयाऽवगाहनम् ।

सकुष्ठेन घृतेनाऽलेपनं तद्वधयापहम् ॥२२२॥

शिरोरुक्षमनः शल्यफलालेपस्तु पाभुना ।

घृतेन मर्दनं देहजाड्यापहरणं तथा ॥२२३॥

मातुलुङ्गफलेकेशरं हितं

सैन्धवेन मरिचैश्च संयुतम् ।

धान्यं सगुडशर्करं घृतेः

पाचितं त्वरचित्सङ्गनाशनम् ॥२२४॥

मोचाफलं घृतसितासहितञ्च तीव्र-

बहेः सुशान्तिकरणं घृतमेव शस्तम् ।

शुकच्युतो ससितमोचफलाभु शुस्तं

वा शुकगानमथवा सघृतं ययो वा ॥२२५॥

गुडाद्रकं वा कफकोपनाशनं

मोचाफलस्यैव च भस्मकं वा ।

पलाशवीजं मधुना च घेह-

स्तथा कृमीनाशयति प्रसह्य ॥२२६॥

काथः खदिरमूलत्वक्साधितो मुखपाकहा ।

खदिरादिवटी शस्ता या च पूर्व प्रकीर्तिता ॥

उन्निद्रहरणं सर्पिः पानकं तु मुहूर्तम् ॥२२७॥

एते यदा स्युर्बहवोऽप्युपद्रवा-

स्तदा रसः कर्मकरः स्फुटं भवेत् ।

दिनान्तरेणैव रसः प्रदेयो

मरीचचूर्णं सघृतं दिनेन ॥२२८॥

शाणद्वयाऽनुघृद्य वा रसाऽनुपाने घृतं देयम् ।

प्रथमदिवसादारभ्य त्रिसप्तको भवेद्यायत् ॥२२९॥

पथ्यं तण्डुलमुद्रमापतुचरीजातं हितं पूर्वतः,

सप्ताहं घृतपुरितं सुमनसा संयावपिष्टोद्भवम् ।

शाकं चास्तुकमेधनादसुरसाश्च काशियापार्हितं,

नेष्पत्रं कर्मदकं सुरमितं हिङ्गादिभिः साधितम् ॥२३०॥

यमि विरेको दिवसे तृतीये पष्टेऽथवा सप्तदिनान्तरे वा ।

यदा रसेशः परियजेनीयो दिनानि तावन्ति पष्टिमाय

हृतं घृष्यं शुरुष्णं दधिघृतवहलं पाययेद्भूरि दुग्धं,

क्षीरं पादाऽवशिष्टे कलमघृतसितापष्टियुक्तञ्च शीतम् ।

सेव्यं युक्तं वा द्वितीये बहुगुणसहितं सप्तके पुष्टिकामो,

भूमौ चोत्ताननायो मृदुतरदायने रात्रिदोषे न सुष्यात्

तृतीये सप्तकेऽप्येवं ससितं घृतपाचितम् ।

नारिकेलाम्बुसंसिद्धं क्षेरेयं चानिसेययेत् ॥२३३॥

सर्पिणा मर्दनं शस्तं ज्ञानमुष्णाम्बुना हितम् ।

क्षुचोद्भवे हितं पर्यय चित्तुःपञ्चवारकम् ॥२३४॥

पूर्णं त्रिसप्तके रोगो रोगमुक्तः प्रजायते ।

पूर्णदेहः पुष्टियुक्तश्चतुर्थे सप्तके भवेत् ॥२३५॥

सप्तकप्रितये स्वस्थः सेवते पूर्वमायतः ।

पुष्टिरीयपलाऽऽरोग्यं प्रयाति ययुषि धियम् ॥२३६॥

केचिदिच्छन्ति संस्मितं जातरूपं रसेभ्यस्त्वं ।

अहिमिच्छेद द्विधा सम्यग्जातरूपं महीतले ॥२३७॥

१, सप्ताऽपिष्टो ।

भाषा—पारद और सुवर्णभस्म समभाग, सुदृगन्धक दोनोकी बराबर लेकर बारीकचूर्णकर एकटो गायकेदूधसे मर्द-नकर चित्रकलीजइसेस्वरस और आकडेदूधसे ३-३ रोज मर्द-नकर सबने तिलुनी पीलीकौड़ियोंमें भरके कपास कौर मुहागेको कूटकर इससे कौड़ियोंकी सन्धि बन्दकर चुनेसे पुतेहुए वर्तनमें रखकर शरावसमुद्रकर समस्तपर ३-४ कपइमिठीदेकर सुखने पर रात्रिमें गजपुटकी आचदे । स्वाह्मरीकलहोनेपर निकालकर भैरव, चक्र, कुमारिका, पृथ्वी और योगिराजोंका पूजनकर प्रातः काल स्नानपूजादि करके शरावसमुद्रसे निकालकर खरल-कर रखओगे । इसमेंसे ६-६ रती २९ मरिच और धीरेसाथ रोजाना सेवनकरनेसे अनेकप्रकारके ज्वर नष्टहोतेहैं । इसके सेव-नके पहिले गौ, ब्राह्मण, वैद्य, कुमारिका इनकी पूजाकर धी और सुवर्णकी दक्षिणा देवे । स्वस्तिकाचनप्रवृत्ति कराके छुम बार, नक्षत्रयुक्त मुहूर्तमें चन्द्रपलका विचारकर वज्र और अलङ्कारोंसे प्राणाचार्यकी पूजाकर सर्वतोभद्र मण्डलमें लोकेश्वरीकी पूजा पूर्वं या उत्तरमुखहोकरके । प्राणाचार्यकी आशा मिलनेपर सुवर्ण, रजत, काच अथवा धुत्तिके पात्रमें औषधको रख आगे केहुए मन्त्रको बोलताहुना बीरासनसेथेठ औषधका सेवनकरे । "ब्रह्मा यक्ष्यते देव्यमृचन्द्राङ्गाङ्गलाङ्गिला । ऋषयस्तौषधीप्रामा मृतसद्वाय पान्द्र मे ॥ रसायनमिवर्षीणा देवानाममृत यथा । सुधेधोत्तमानागाना भैषज्यमिदमस्तु मे ॥" इसमन्त्रको बोलकर सेवनकरे । इसतरह इसरसके सेवनकरनेसे अग्नि प्रदीप्तहोताहै । इसके बीचमें कर्मवशात् उपद्रवस्वप्न बमन, विरेचन, दाह, अस और शिरकीपीडा, आलौकीलासी, शरीरकाभारीपन, अरुचि, भस्मक, श्मश्रुण, मुखपाक, निद्रानाश ये विपत्तियाँ उपरिपत होतीहैं इनका तत्काल प्रतीकार करना उचितहै नहींतो ये बलकी हानिको करके अनर्थ पैदाकरतीहैं । बमनमें मधुमेसाय गिलोयका पानी, पिजैरकीजइकारस, मधुयुक्त मयूरपिच्छभस्म पीपल और मधुयुक्तलाजचूर्ण, नाभि और शङ्खपर जलका पोता देवे । विरेचनमें मधुयुक्त छोटीमार्दवा चूर्ण, दहीकेसाय भगका चूर्ण अथवा चावलकेधोवनकेसाथ मूषाग्रीकाचूर्णदेवे । दाहमें चूनेकापानी, टिङ्गलका तीला, कुठकाचूर्ण मिलेहुए पीका अर्धपर लेप, इनसब उपचारोंको करे । गुप्ताम्लसे पिसीहुईबिल-गिरीका मस्तकपरलेपरनेसे मस्तकभीषा शान्तहोतीहै । पृष्ठा-भ्यङ्ग करनेसे देहका भारीपनप्रताहै । सन्धव और मरिचके-साथ विजैरकीमन्त्रा अथवा गुड़ और शङ्खकेसाथ धीमें भुना हुआ घनियाँ देनेसे अरुचि नष्टहोतीहै । धी और शङ्खकेसाथ केलेफाल अथवा केवल धी देनेसे ममचक्रोग शान्त होताहै । शुक्रविरेचने शारकेसाथ केलेकेफलका पानी अथवा सिरका अथवा पृतपुष्प देना । सुहृणु अदरस अथवा केलेकीभ्यस्य शुक्रकेसाथ देनेसे कफप्रकोप नष्ट होताहै । मधुकृपाय पलाश-धीय अथवा विव्र देनेसे किमियोंका नाशहोताहै । मरिचकी जइछोछलका साथ अथवा खदिरादिवटीका सेवन मुखरङ्गको दूरकरताहै । बारम्बार धीके पीनेसे निद्रानाश होतोहै । ऊर-

कडेहुए जडव जिगमनुष्यको उपस्थितहो तो समस्तना चाहिये कि इसे रस बहुतजल्दी काम करेगा और उसे एकदिनके अन्तर-से औषधदेना । बीचके दिनमें मरिचकाचूर्ण डालकर केवल धी देना । अनुपातमें प्रथमदिन ४ मासे अथवा ८ मासे पीसे आरम्भकलना और २१ दिनतक प्रतिदिन ज्वलप्रमाणकरतेजाना । पहिलेसप्ताहमें चावल, मूंग, उड़द और अरहरकी दाल देना फिर गेहूँके आटेका हलवा और देवर, मधुआ, बोलई, तुलसी, विपत्तिया, आवले, बनभाडा, करी, करोंडा इनहा हीगवैरहसे छोंकाहुआ शाकदेना । तीसरे, छठे अथवा सातवें दिनकेबाद जब बमन या विरेचन होनेलगे तो उतनेहीदिन रसका अन्तर करदेना । हृद्य, रुच्य, भारी और गरम तथा भिषमें दही, दूध और धी अधिकभावे बड़ पदार्थ देना । मांसा, बागमतीचावल, धी, शङ्खपुष्पसाठीचावल ये दूसरे सप्ताहमें सेवनकरे । जिसको पुष्टिकी इच्छाहो बड़ जमीनमें कोमल शस्यपर चित्त सोवे और ब्राह्ममुहूर्तमें उठजाय । इसी-तरह तृतीयसप्ताहमेंभी करे और शङ्खकसाय धीमें पकाएहुए पदार्थ और नारियलकेजलमें पकायाहुआ दूधपाक खावे तथा धीसे अम्यह और गरमजलसे स्नानकरे । मूलव्यामेपर ३-८ अथवा ५ बार हित और पच्य भोजनकरे । तीनसप्ताह पूरे होनेपर रोगी रोगसे रहित होजाताहै चौथे सप्तकमें शरीर-सम्पन्न से पूर्णहोताहै । तीनपप्ताहमें स्वस्थ होनेकेबाद आगे यदि अधिकसेवनकरनेकी इच्छा हो तो पूर्वक्रमसे सेवनकरे । कितनेहीलोग इसमें पोरसे कीहुई सुवर्णभस्मका योग चाहतेहैं और सुवर्णके अभावमें पारदयोगमें कीहुई नागभस्म द्विगुण डालाकरतेहैं ॥

टि०—इसमें मुखपाकको शमनकरनेकेलिये खदिरादिवटी-का सेवन कहाहै उसका विधान अपोलिखितहै । "गायत्री-त्वच् तुव्य सादां द्वयी विट्पादिरस्य च । सप्तशेणमिते तोये पाच्ये पादाश्वसेपिणम् ॥ पनीमृतं वज्रपूतं तस्मिन् ह्रस्वाणि नि क्षिपेत् ॥ प्रत्येकं कर्मसाधनाणि पुनरावर्तिते शने ॥ एलाकृपा-लजलचन्दनरक्तकाष्ठं वयामा तमाल विक्षेपापनलोदयटप ॥ लम्बाफलत्रयराशान्नपातवीथीधीपुगंगरिक्तट्टट्टिद्रुपलानि ॥ पत्रेत्तोरप्रवट्टय्यत्राणमानी त्यमात्रिणातिप्रकोपवज्रकानि । चूर्णीकृता फलचतुष्टयचन्द्रयुक्तं तस्मिन्निशपेत् पलमितं धृष्येव सर्वम् ॥ कङ्गोलकातिप्रत्युक्तमिदं रामलनेहीकृते बहुगुणं भवति प्रशस्तम् ॥ किमीकृताशुद्रनागलज्जन्तोरोगानन्तर्गतानि जयेदुचि-मादपाति ॥ वीतीकृतास्य गुटिका चण्डोभिमता स्याद्दीर्गन्ध्य-दन्तमलनाशहोतुमन्ये ॥"

भाषा—रैरकीछल १५० पत और विट्पादिरवीछल २०० पल लेकर जड़ट्टकर ७ दोण पानीमें उबाले । चतुर्था-साजोरसदेनकर कर्बहेमें छानले । फिर इसमें इलायची, अर्ताड, खम, सफेदचन्दन, लालचन्दन, अनन्तमूल, पत्रन, मजीठ, नागरमोषा, अमर, मुहहृये, लजवन्ती, विप्रला, रसौत, धाव-सीछीछल (अभावमें पुनः), पद्मछाट, घोनागेरू, दाहहन्दी,

जायफलक्रीछाल, तालीसपत्र, पठानीलोथ, बड़ेबेदूसे, जवास, जदामासी, तत्र, हल्दी, जायफल, जाविनी, लौंगइनसबका चूर्ण १-१ कर्प डालकर मन्दाग्निसे पकावे । गोलीबंधनेलयक होनेपर उतारकर चार मगज ( बादाम, खीरा, ककड़ी, कद्दू इनके मगज ) शुद्धकर, शीतलचीनी, जायफल येसब ४-४ कर्प मिलाकर रहने दे । ठंडाहोनेपर चनेमगण गोलिया बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोली मुहमें रखकर चूसनेसे जीम, ओष्ठ, ताल, मुख, गला, दन्त, अत्र तथा श्वासनलिकाकेरोग, मुखकीदुर्गन्ध, दन्तमल और अस्थि इनको नष्टकर रचिरो पैदाकरोती है । यहपाठ प्राचीन रसावतारकाही है परन्तु कईजगह क्लिष्ट पाठ होनेकीवजहसे चरुदत्तने जगह २ पाठमें फेरफारकर दिया है और उसीको भेद्यज्यरत्नावलीवालेने स्यावस्थित लेलिया है । चरुदत्तनी हिन्दीटीकाजालेने औरमी दुर्दशा करवाली है जैसे कि जायफल, कोशफल इत्यादि । इसलिये रसावतारके पाठके अनुसार इषगोलीको तैयारकरनाचाहिये । फलचतुष्टयकीजगह ग्रन्थकारके आशयको न समझकर फलचतुष्टय-पूरका योग करदिया है वह अन्यधिक योगहोगया है । ग्रन्थकारने यूनानीमें प्रसिद्ध चारमगजके स्थानमें फलचतुष्टय शब्दसे कामलिया है सो पाठसँको ध्यानमें रखनाचाहिये । यह गोली शुष्करासकेलिनेभी पाठ उपयोगी वस्तु है ॥ २५७ ॥

### २५८ लोकनाथपोट्टली ( हेमगर्भादिः ) २

मृतरसयुगभागां हाटकं चन्द्रभागं,  
यसुगुणसुखपदं दृष्ट्वाभ्रागमेकम् ।  
सितपिपशाशिभागं सर्वतुल्यं सुगन्धं,  
तिथिदिनमनलाग्निं बज्रदुग्धेन घृष्ट्वा ॥२३८॥  
तदनु च कृतगोलं पक्वमाण्डे च घृत्वा,  
गजपुष्टविधिपक्वं पोष्टलीलोकनाथम् ।  
घृतमरिचसमेतं बहुमात्रं प्रदद्यात्,  
द्रवपतिमयहारीश्वासहारीं शिरानात् ॥२३९॥  
यदुक्ततनुपुष्टिं र्विहृदिसिञ्च कुर्यात्,  
त्कटुकतिलजयित्वं धर्जयेच्चाऽम्बवर्गम् ।  
घृतमधुरसुशारकं भोजयेद्युक्तपर्यं,  
मधुकणमनुपातं योजनीयं मिषग्भिः ॥२४०॥  
यवक्षाराऽऽज्यविश्वञ्च कथितं पोष्टलीक्रमे ।  
अनुपातं प्रयोज्यं मान्यहृद्भलदोपनुत् ॥ २४१ ॥  
वमनशमनमुक्तं मातुलिङ्गयास्तु मूले,  
भैशुमहितकणा वा दग्धवृन्ताकमञ्जा ।  
स्वरसमपि गुह्यया लाजचूर्णं ससिन्धु,  
शिथिरसलिलधारा मूर्ध्नि देयाक्रमेण ॥२४२॥  
कफविहृतिनिवृत्त्यै सौद्रयुक्तं हृद्भवेर-  
मरिचसहितमक्षयं भृष्टरम्भाफलं वा ।  
नुपविरोहितधाना हन्यस्क्वपण्डयुक्त्या,  
कुट्टिमरिचघृतेनाऽरोचकक्षः सदैव ॥२४३॥  
र. गं., र. का., क्षयाप्रसारि ।

भाषा—पारदमल २ भाग, सुराणमल १ भा, पीली-  
कौड़ी ३ भा, सुहाग १ भा, शुद्धसफेदसोमल १ भा., शुद्ध-  
गन्धक सबकीबाबर केसरमवका चोरीस चूर्णकरचित्रसमुल्लेकाय  
और सेहुण्डकेदूधसे ५-५ दिन मर्दनकर गोलानाथ सुखानर  
पैहुण्डमिठीबैचर्तनमें धारके ६-७ कपडमिठीकर गजपुटरी आचरे ।  
स्वाङ्गसोतलदोनेपर निरालकर रखडोहे । इसमेंसे १ रत्तीसे ३  
रत्तीतक माना प्रकृतिशक्त्य टेपनर धी और मरिचनेमगण  
येनेसे २ दिनों यक्ष्मा, श्वास, मन्दाग्नि इनमवको नष्टकरोती है ।  
तीक्ष्ण, तिल्लेपदार्थ, बेलमिरी और राटाईका त्यागकरे ।  
धीमें पनायाहुआ धान पच्येदे । यह मधु, पीपल, यवधार,  
धो और सोंठ इन अनुपातोंमें अमिमान्य, हृदय और गलेके  
दोषोंको दूरकरता है । वमनमें यिजोरेकीजड अथवा मधु-पीपल,  
अथवा मुहुण्ड इत्यादिकी मजा, अथवा गुह्यकीस्वरस अथवा  
सेन्धवसहित लाजचूर्णकेसाध देवे और मितपर ठगेनलकी धारा  
देवे । कफविकारमें मधु, अदरक अथवा मुनाहुआ केलेकाफल  
मरिचकेसाधदेवे । धनिशेके चावल शक्करमें मिलाकर देनेसे रक्त-  
पित्त, तथा इलायची, मरिच और धीसे अग्नि नष्टोती है २५८

### २५९ लोकनाथरसः ( प्रथमः )

शुद्धो वसुक्षितः सुतो भागद्वयमितो भवेत् ।  
तथा गन्धस्य भागो द्वौ कुर्यात्कजलिर्कांतयोः ॥२४४॥  
सूताघृतगुणेष्वेव कपेर्दुषु विनिक्षिपेत् ।  
भागीकं द्रव्यं दत्त्वा गोक्षीरेण विमर्दयेत् ॥ १२४५ ॥  
तथा शहस्य खण्डानां भागान्तो प्रकल्पयेत् ।  
क्षिपेत्सर्वं पुटस्यान्तश्चूर्णलिप्तशराचयोः ॥ १२४६ ॥  
गते हस्तोर्गमिते भूत्वा पचद्भजपुटेन च ।  
स्वाङ्गसोतं समुद्भूतं पिष्ट्वा तत्सर्वमेकतः ॥ १२४७ ॥  
पङ्कजासमितं चूर्णमेकान्तिशद्वपणैः ।  
शूतेन घातजे दद्याच्चर्तनेन पित्तजे ॥ १२४८ ॥  
क्षौद्रेण श्लेष्मजे दद्यादतीसारं क्षये तथा ।  
अरुचौ ग्रहणीरोगे काश्यं मन्दानले तथा ॥ १२४९ ॥  
कासश्वासेषु शुल्मेषु लोकनाथो रसो हितः ।  
तस्योपरि घृताभञ्जं भुञ्जीत कवलत्रयम् ॥ १२५० ॥  
मञ्च क्षणैरमुत्तानः शरीताऽनुपधानके ।  
अनलमन्त्रं सघृतं शुञ्जीत मधुरं धीम् ॥ १२५१ ॥  
प्रायेण जाह्नवं मांसं प्रदेयं घृतपाचितम् ।  
सदुग्धमक्तं दद्याच्च जातेऽग्नौ सान्ध्यभोजने ॥१२५२॥  
सघृतान्मुद्गयट्कान्यञ्जनेष्ववचारयेत् ।  
तिलाऽऽमलककूलेन सघृतेन विमर्दयेत् ॥ १२५३ ॥  
अग्न्यञ्जयेत्सर्पिषा च स्नानं कौण्डिन्दकेन च ।  
कचित्तैलं न गृह्णीयाच्च विल्वं कारवेहुरुम् ॥ १२५४ ॥  
वार्ताकं शफरीं चिञ्चां त्यजेद्दधायाममधुने ।  
मयं सन्धानं हिदुशुष्ठीं मापामसूरजान् ॥१२५५॥  
कृष्णाण्डं राजिकां कोर्पं काञ्चिकं चैव धर्जयेत् ।  
त्यजेद्युक्तनिद्राञ्च कांस्यपात्रे च भोजनम् ॥ १२५६ ॥

ककारादियुते सर्वं त्यजेच्छुभ्रकफलादिकम् ।  
पथ्यादिलोकनाथस्य शुभनक्षत्रासरे ॥ १२५७ ॥  
पूर्णातिथौ शुभ्रपक्षे जाते चन्द्रबले तथा ।  
पूजयित्वा लोकनाथं कुमारीभोजयेत्ततः ॥ १२५८ ॥  
दानं दद्याद् द्विषट्टिकामये प्राज्ञो रसोत्तमः ।  
रसात्सञ्जायते तापस्त्वदा शर्करया युतम् ॥ १२५९ ॥  
सत्त्वं गुडच्यवा गृह्यायादंशरचनया युतम् ।  
गन्धर्वं दाडिमं द्राक्षामिक्षुलपण्डानि चारयेत् ॥ १२६० ॥  
अर्यो निस्तुपं धान्यं घृतभृष्टं सशर्करम् ।  
दद्यान्नाथोऽर्ये धान्यं गुडच्यवाधमाहरेत् ॥ १२६१ ॥  
उदारियासकृत्वायं दद्यात्समधुशर्करम् ।  
रक्तपित्तं कफे भ्यासे कासे च स्वरसंक्षये ॥ १२६२ ॥  
अग्निभृष्टज्याचूर्णं मधुना निशि दीयते ।  
निद्रानाशेऽतिसारे च प्रहृष्ट्यां मन्दपात्रके ॥ १२६३ ॥  
सौर्यललाटमयाहृष्ट्याचूर्णमुष्णजलेऽपिबेत् ।  
शूलेऽजीर्णे तथा कृष्णा मधुयुक्ता ज्वरेहिता ॥ १२६४ ॥  
ह्रीहोदरे वातरक्तं छर्द्याञ्चैव गुदादरे ।  
नासिकादिषु रक्तेषु रसं दाडिममुष्णजम् ॥ १२६५ ॥  
पूर्वायाः स्वरसं नस्ये प्रदद्याच्छर्करायुतम् ।  
कोलमज्जा कणा यद्विषक्षमस्म सशर्करम् ॥ १२६६ ॥  
मधुना लेहयेच्छर्दिहिकाकोपस्थ शान्तये ।  
विधिरप्य प्रयाज्यस्तु सर्वस्मिन् पोष्टलीरसे ॥ १२६७ ॥  
मृगाह्वे हेमगर्भे च मीलित्वाऽप्ये रमेयु च ।  
हृत्पत्रं लोकनाथायै रसं सर्जरजा जयेत् ॥ १२६८ ॥  
शा स, र च, वै क, वा यि, जि र, वै चि र का, र  
प्र गु, भे सा, वा न, र (मा.), र म मा, रमायन्य, चि र  
भ, रो, र श्, रायश्मधि । र का लोकेधरपोडलीति  
नाम । रसामृते शङ्खे न दत्तवते तत्प्रागम्य वरणाभ्यागतो  
ऽप्येवाज्जन्तेवति ।  
माया—शुद्ध और गुमुरि। पारा, शुद्धमन्त्र १-२ भागकी  
नीलपत्रेकशरीर शोभे चौशुनी पीलीकीदिशोमें भरक एक-  
भाग गुहगिर्गे गायकं दूधमें पीसकर कौडियोंका मुह बन्दरे ।  
किर शक्तं दुर्गे ८ भाग लर नूनायुतेषु धराशोक अन्दर  
शङ्खपट्टोंके बीचमें कीडियोंका अमाकर सन्धिबन्द ६-७  
बाइमिरीदर सरनेपर एवदायकं गंमें गरुडदन् । स्वाय-  
धीतलदोनेपर निकलकर रसाडि । इनमें ६ रतीकीमात्रा  
२९ कालीमिर्न और पीकलाय वातरोगेने द । पित्तगोमें  
ममन और वरोगोमें मधुमेगाय द । इनरह रोग अथवा  
समयचित्तानुगानकाय दनश् अनीसार, क्षय, अर्धचि ग्रहणी,  
रुग्ना, मन्दाग्नि, काय, श्वन्, शुल्फ, इनवक्श यह नष्टर  
तादे । रसाभ्यसनर ३ भाग घी और भाग दन्ध पोडोदस्त  
तत्कारितद्विषम्याय चित्त मन्त्र । अमृच्छित्त पुन्युक्त अय,  
मधुरदी, शुभं पतायाहुआ बंगलपुन्यतिलोहमां और  
रूपभावद । अमि प्रदीप्तदोनेर कृष्णासमय घीमें सन्दूष मूवक

बदेदे । पृत्युक्त तिल और आलवेकेक अथवा केवल घीसे अम्य-  
झर मधुष्णजलेसे स्नानकरे । तैल, वेत, कोला, बैंगन, मछली,  
इमली, वसन्त, मैसुन, मय, आचारवैरद, हींग, सोठ, उडद,  
मसूर, कौह्ला, राई, कोथ, काजी, अयोग्यनिद्रा, काश्यपात्रमें  
भोजन, ककारादिनाक और फल इनका परित्यागकरे । इसका  
सेवनकरतेमय शुभ नष्ट, वार, पूर्णातिथि, शुभ्रपक्ष और  
चन्द्रबल देखकर लोचनाथकी पूजाकर कुमारीयोंको भोजनकराके  
दानदे । रक्तदेनेसे यदि ताप हो तो शक्कर और वंशलोचन  
मिलाहुआ गिलेयकापत्र, छुहारे, अनार, शश और ईसका  
उपचारकरे । अर्धचिमें घीमें भुनेहुए शक्करयुक्त घनियेके चावल,  
ज्वरमें धनिया और गिलेयका बाथ, रक्तपित्तमें मधु और शक्कर  
मिलाहुआ रास और अद्वैतकाष्ठप, कफ, भ्रास, कास और  
स्वरभ्रममें मधुसेसाय भुनीभागशार्चण, निद्रानाश, अतिसार ग्रहणी  
तथा मन्दाग्निमें गरमजलेसाय सखल, हरे और पीपल्यानूण;  
शूल, अजीर्ण और ज्वरमें मधुयुक्तीपल, प्सीहोदर, वातरक्त,  
वमन, कवासीर और नासिकादिशोके रक्तवायुमें अनारके फूलोंका  
रस अथवा शक्कर बालकर श्वेतदूर्वाके रससे नस्य दे । वमन और  
हिवरीके प्रकोषमें शक्करयुक्त वैरडीगिरी, अथवा मधुरपि-  
ष्टमस्म मधुमेगाय बढावे । यहप्रकार, मृगाह्व, हेमगर्भ और  
मीलिकप्रभृति पोष्टीलोमें करना उचितहै ॥ २५९ ॥

### २६० लोकनाथरसः ( लोकेधर ) ( द्वितीयः )

पलं कपटचूर्णस्य पलं पारदगन्धयोः ।  
मापञ्च द्रव्यस्यैकं जम्बूरीरात्रि चिर्मदयेत् ॥ १२६९ ॥  
पुष्टेलांकेधर नास्त्रा लोकनाथा रसोत्तमः ।  
श्रुते कुष्ठे रक्तपित्तमन्याभ्रोगान् यलाजयेत् ॥ १२७० ॥  
पुष्टिर्येषप्रसादीज. कान्तिलाषण्यदः परः ।  
काऽस्ति लाकेधराद्वयोः नृणां शम्भुमुखोद्भवात् ॥ १२७१ ॥  
पथ्यं शाख्योदनं सर्पिं वैधि शाकं संहिष्णुम् ।  
नित्यं यामहयाहृष्ट्यां कार्यं धारय्यं विद्या ॥ १२७२ ॥  
न्यहात्मनोऽस्त्वयौ धाऽपि नष्टः मृतो न चेत्पुनः ।  
अष्टमेऽङ्गि प्रदातव्य. पूर्वयत्कार्यसिद्धये ॥ १२७३ ॥  
प्रथमे सप्तमे देया लावगूरुणमुद्रकाः ।  
द्वितीये मापगोभूमा भक्ष्याः पूर्वोदितश्च यत् ॥ १२७४ ॥  
देयानि मत्स्यमांसानि तृतीये मर्दनादिकम् ।  
तैल्यिल्याऽऽरुनालानि कोपत्रीस्यमजागान् ॥ १२७५ ॥  
त्यजेत्कादीनि प्रत्याणि हृत्तं स्वायु च शीलयेत् ।  
वायौ सेत्यं पथ. कोष्णं पित्तं तु ससितं हितम् ॥ १२७६ ॥  
अत्यग्नौ चोरयोजानि तिलेभुकरलीफलम् ।  
खर्वस्याममृहीकामितादि सरलं भजेत् ॥ १२७७ ॥  
वीर्यव्युत्तौ नारिकेलजलं तालफलानि च ।  
आनाहाऽरुचिर्मृच्छाऽर्तिधूमोद्भारयिमुचिताः ॥ १२७८ ॥  
पतेषु लघुताल्यघ्नं केचलं सपूतं हितम् ।  
अतिगान्धौ पिथेच्छिन्नारसं शोऽंशं मयुनत्रं ॥ १२७९ ॥

सक्षौद्रं वासकं रक्तपित्ते रुचिविपर्यये ।  
भृष्टधान्यं सितायुक्तमथवा क्षौद्रसंयुतम् ॥ १२८० ॥  
यवाश्रं मधुसंयुक्तं पिवेद्वा माहिषं दधि ।  
घृताऽर्धं भक्षयेन्नित्यं सुरोष्णेन च चारिणा ॥ १२८१ ॥  
छिन्नाऽभ्युसहितं देयं दाहेऽजीर्णं मुधाजलम् ।  
आर्द्रकं सर्पपं रम्भाफलं भृङ्गं कफोत्वणे ॥ १२८२ ॥  
अन्येऽभ्युपद्रवा ये स्युस्तत्तच्छान्त्यै यथोपधम् ।  
द्वारिंशद्विधं कार्यं स्नानमामलकैस्तैलैः ॥  
युक्तं सेव्यं वले जाते शनैरग्निश्लाघुम् ॥ १२८३ ॥

र, स, नि र, र, ल, घ, दो., भै सा, र र दौ, र कौ,  
र म, र यो त, र चि, र सु, रसायनस., र (मा), योर,  
यो. न, र का, र दि, राययक्ष्मणि। यहपु स्थानेष्वय पाठो  
लोकेश्वरान्ना पोहो वेति नान्ना न्यवहतः ॥

भाषा—कौडीभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक १-१ पल,  
सुहापा १ माया लेकर नीलवर्णकम्बलीकर जभीरीकरसे एक-  
दिन मर्दनकर गोलावनाय षोडशसंखर शरावसम्पुटमें बन्द  
कर गजपुटकी आचड़े। स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रखओगे।  
कुष्ठ और रक्तपित्तको छोड़कर अन्यसर्वोर्गोंको यह हूरकरताहै।  
पुष्टि, वीर्य, प्रसाद, ओज, कान्ति और लाभयको देताहै।  
इसमें पथ्य सफेदचावल, पी और दही, हींगसे छौंकहुआशाक,  
दो दो पहरकेबाद अत्यन्त भूखलानेपर दिनमें ३ बार देनाचाहिये।  
तीनदिनकेबाद वांस्ति अथवा अष्टादि मास्य पड़े तो समझना  
चाहिये कि रस अनुकूल नहीं पड़ा, तब ५ दिनका अन्तरकर  
आठवेंदिनसे फिर शुरूकर। पहिले सप्तकमें लवा, सुरण और  
मृग देवे। द्वितीयसप्तकमें उज्ज्व, गेहूँ और पूर्वोक्तपदार्थ, तृती  
यमें मछली और मास अधिकतया देवे और अम्यज्ञ करावे।  
तैल, वेल, काड़ी कोष, छी, दिनमें प्रायन, रात्रिजागरण,  
कफाराष्टक इनका त्यागकरे। हृष्ट और स्वादुका सेवनकरे।  
घातप्रकोपमें कवल इष और पित्तप्रकोपमें दाह्र बालाहृआ  
कटुष्ण दूर पीवे। भस्मकमें चिरोजी तिल, ईश, केलेकाफल,  
रज्जूर, माम, किसमिस और मिठासका सेवनकर। बायंसावमें  
नारियलका जल और तालकृत, आनाह, अदचि, मूर्च्छा धूमो-  
द्धार और हैजा इनमें हलक सफेदचावल कवल पीकन्याय दवे।  
अत्यन्तशान्तिमें मधुमिलाकर मिलायका स्वरसद। रक्तपित्तमें  
मधुकफाय अमृकफास, अरविमें दाह्रयुक्त मुनाथनियाँ अथवा  
मधुकफाय जवकेपदार्थ अथवा मधुमिताहुआ भैतका दहीदव।  
दाहमें गिणोयक स्वरसकेमाय पुतयुक्त अग्नेद। अनीणमें चूनेका  
पानी, कट्टपानव्याधिमें अमृस, सरसों कलेकाफल और भग्रा  
देव। इसीतरह अन्यभी उपद्रव यदि अन्ततयामृत उपस्थित हों  
तो उनही शान्तिरेहिय तत्पदीय दवे। ३२ वैदिन आबस  
और तिलकाकल छाकर प्राक्करावे। शारीरिक और अग्निबल  
दोजानदेशद उचितमनुमोहा सवनकरे ॥ २६० ॥

२६१ लोकनाथरसः ( लोकेषा. ) ३

भस्म मृतस्य भागिकं चतुर्दश शुद्धगन्धकात् ।

क्षित्या घराटिकागमं द्यूणेन निरुद्धय च ॥ १२८४ ॥

भाण्डे रुद्धा पुटे पाच्यं स्वाहशीत समुद्धरेत् ।  
लोकनाथरसो नाम क्षौद्रैर्गुञ्जाचतुष्टयम् ॥ १२८५ ॥  
नागरातिविषामुस्तं देवदारुबचान्वितम् ।  
कपायमनुपानन्तु सर्वांतोसारनाशनम् ॥ १२८६ ॥  
चतुर्गुञ्जो घृतं देयौ विशद्भि र्मरिचैस्तथा ।  
जातीमूलपलेकन्तु छागीक्षीरेण पाचयेत् ॥  
शर्कराम्मोयुतश्चाऽनु पीत्वा कृच्छ्रहरं ध्रुवम् ॥ १२८७ ॥

र स, वि क, वि र भ, र. र. स, ना वि, नि र, रम  
स, र. र, वै चि, र सु, र क ल, रसायनसार, र को, यो  
म, र कौ, चि र, घ, दो, व रा, र चि, रसायनस, र चं,  
चि सा, र क, वै र, र का, र र कौ, र म. मा, अस्तिार  
मृनकृच्छ्रे च। मृनकृच्छ्राऽधिकार अस्मिन् पाठे शुद्ध स्तो  
नियोजित ।

भाषा—पारदभस्म १ भाग, शुद्धगन्धक ४ भाग लेकर  
घारिकचूर्णकर पारेसे चौथनी पीलीकौड़ियोंमें भरकर आक  
अथवा गौवेदूधमें पिसेहुए सुहागेसे कौड़ियोंकासुंद बन्दकर  
शरावसम्पुटमेंरख कपडिमिठीदेकर सुखाकर गजपुटकी आचड़े।  
स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रखओगे। इसमेंसे ४-४ रत्नीकी  
मात्रा घी और २० कालीमिर्चोनेसाथ अथवा केवल मधुकैसाय  
देकर सौंठ, अतीस, नागरकोषा देवदारु और बवकाकाया पिला-  
नेसे समस्त अतिमारोंको यह नष्टकरताहै। एकल चमेलीकी  
जड़को बकरीके दूधमें पकाकर शकर डालकर पिलानेसे मृग  
कृच्छ्र नष्टहोताहै ॥ २६१ ॥

२६२ लोकनाथरसः ( चतुर्थ )

पारदं गन्धकञ्चैव समभागं विमर्दयेत् ।  
मृताऽर्धं रसनृत्यञ्च पुनस्तत्रैव मर्दयेत् ॥ १२८८ ॥  
रसाहिमुणलौहञ्च लौहतुल्यञ्च तापन्नकम् ।  
भूति घराटिकायाश्च तापन्नस्त्रिगुणां कुय ॥ १२८९ ॥  
नागबह्नीरसेनैव मर्दयेद्यतनो भिन्नक ।  
पुटेद्रजपुटे विद्वाद्वाहशीतं समुद्धरेत् ॥ १२९० ॥  
यष्टरजोहोदरं शुद्धं भयशुद्धं चिनाशयेत् ।  
पिप्पलीं मधुसमुत्तां सगुडां वा हरीतकीम् ॥  
गोमूत्रञ्च पिवेष्वाऽनु शुद्धं वा जीरकान्वितम् ॥ १२९१ ॥

र स, घ., वै क, र च, भै र, र चि, र सु, र का, यो  
म, शोहाऽधिकार। वैपुचिच्छन्पु तास्रलोहयोर्भागे त्रैगुण्यस्यवत्।  
यो म कन्यकामुना मर्दन कृत, गजपुटपाच्य न रयते।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकम्बली,  
अत्रभस्म पारेकीबराबर, पारेसे दूनी सोह और तापन्नभस्म,  
तापसे तिगुनी कौडीभस्म लेकर राखको पानदेरगासे १-२ दिने  
नर्दनकरना-अवनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर १-० कपडिमिठीदेकर  
सुखानकर गजपुटकी आचड़े। स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर  
रखओगे। इसमेंसे ३-३ रत्नीकी मात्रा मधुमुनीरस अथवा  
गुग्गुलु हरीतकीनेसाथ देकर गोमूत्र अथवा जैतुपुटका

देनेसे यहूद, लोहा, उदरोग, शुल्म, और शोथ इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २६२ ॥

### २६३ लोकनाथरसः ( लघुः ) १

घराटभस्म मण्डूरं चूर्णयित्वा घृते पचैत् ।  
तत्समं मारिचं चूर्णं नागवल्ग्या विभावितम् ॥ १२९२ ॥  
तच्चूर्णं मधुना लेह्यमथवा नवनीतकैः ।  
मापमात्रं क्षयं हन्ति यामे यामे च भक्षितम् ॥  
लोकनाथरसो ह्येष मण्डूलाद्राजयश्मनुत् ॥ १२९३ ॥  
शा. सं., र. र., वै. द., रसायनस., र. को., नि. र., यो. म., र. क. यो., र. क. ल., ना. वि., क्षयाधिकारे ।

भाषा—कौड़ी और मण्डूरभस्म समभागलेकर बारीक-चूर्णकर चतुर्गुणित घीमें पकावे । घृतसुखजालेकर समभागमरिच काचूर्णमिलाय पानकरसे १-२ दिन घोटकर रखोहै । इसमेंसे १-१ माशा मधु अथवा मखखनकेसाथ १-१ पहरपाद देनेसे यह एकमण्डलमें राजयश्मको नष्टकरताहै ॥ २६३ ॥

### २६४ लोकनाथरसः ( पद्यः )

घराटतुल्यं मण्डूरं तद्वज्रं तीक्ष्णलोहकम् ।  
तत्पादांशं मृतं सृतं सूतादिगुणगन्धकम् ॥ १२९४ ॥  
खल्वोदरे विनिगक्षिष्य मर्दयेद्विषत्रयम् ।  
वर्षाभूषलमारेण यज्रयल्लीरसेन च ॥ १२९५ ॥  
यासांक्षया तालमूल्या चित्रमूलेन मर्दयेत् ।  
तत्रोलं चातपे शोष्यं दिनान्ते तत् उद्धरेत् ॥ १२९६ ॥  
शरावे भृङ्गपे स्थाप्यं कुन्कुटाख्ये पुटे पचैत् ।  
सूक्ष्मं पूर्णं ततः कृत्वा तत्समं मारिचं रजः ॥ १२९७ ॥  
भायनाऽनन्तरं द्रव्यं नागवल्लीरसाद्रंक्रम्य ।  
भृङ्गराजश्च निर्गुण्डीमुण्डी शिमुत्तसत्तथा ॥ १२९८ ॥  
फलत्रयकपायेण छायाशुष्कश्च कारयेत् ।  
निष्काऽहं मधुना लेह्यं यामेयामे च भक्षयेत् ॥ १२९९ ॥  
क्षयक्षयशतं व्याधिं यातपित्तकफोद्भवम् ।  
कासं श्वासं प्रतिदयायं शोफपाण्डुमुदामयान् ॥ १३०० ॥  
हृत्पीडकं चाऽस्थिगतं चिनिहन्ति च सत्त्वरम् ।  
दीपनं दीर्घरूपध्वं सर्वरोगनिग्रहणम् ॥  
लोकनाथरसो नाम शम्भुदेवेन निर्मितः ॥ १३०१ ॥  
ये. वि. ( ल. ), व. रा. , क्षयाधिकारे ।

भाषा—कौड़ी और मण्डूरभस्म १-१ भाग, कोलादभस्म आधाभाग, कोलादे चतुर्गुणितभस्म, पारसोदना शुद्ध-गन्धक लेकर बारीकपीठकरष्टातिट्टीज, सेतुष्काद्र, अहता, तालमूरी और चित्रमूल इने सबकोसे १-३ दिनमर्दकर गोला बनाय सुताकर शरावसमुद्रमें बन्दकर १-४ कपड़मिठी देकर घृतेनेर कुङ्कुटपुट्टी आवे । स्वाप्रतीत्यशेषेकर निष्काकर उतारीबाबर मरिचका चूर्णमिलाय पान, अरख, भेरा, जिणुडी, गोरखमुडी, सहिजन और चिन्ता इन्हें ।

खोसे १-१ दिन मर्दकर २-२ मासकी गोलियां बनाकर रखोहै । इनमेंसे १-१ गोली मधुमें मिलाकर १-१ पहरदे अन्तरमें देनेसे क्षय, वात-पित्त-कफज्वर्याधियां, कास, श्वास, प्रतिश्याय, शोफ, पाण्डु, क्वासीर, अस्थिगत हृत्पीडक, मन्दादि बीर्याना प्रभृति सरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ २६४ ॥

### २६५ लोकनाथरसः ( घृह्ण ) ७

शुद्धं सृतं द्विधा गन्धं खल्वे कृत्वा तु कञ्जलीम् ।  
सूततुल्यं जातिऽध्रं मर्दयेत्कन्याऽम्बुना ॥ १३०२ ॥  
ततो द्विगुणितं दद्यात्ताम्रं लौहं प्रयत्नतः ॥  
काकमाचीरसेनैव सर्वं तत्परिमर्दयेत् ॥ १३०३ ॥  
सूताश्च द्विगुणं गन्धं घराटीसम्भयं रजः ।  
पिष्ट्वा जम्बीरानरेण मृषायुग्मं प्ररूपयेत् ॥ १३०४ ॥  
तन्मध्यं गोलकं क्षित्वा यत्नेनच्छादयेन्निष्पक् ।  
शरावसमुद्रं कृत्वा मृद्भस्मलवणाम्बुभिः ॥ १३०५ ॥  
शरावसन्धिमालिष्य चातपे शोषयेत्क्षणम् ।  
ततो गजपुटं दद्यात् स्थाप्यं तत् समुद्धरेत् ॥ १३०६ ॥  
पिष्ट्वा तु सर्वमंकरं स्थापयेद्भाजने धुमे ।  
खादद्द्विद्वयश्चाऽस्य सूत्रं चाऽनु पिपेक्षरः ॥ १३०७ ॥  
मधुना पिप्पलीपूर्णं सगुडां वा हरीतकीम् ।  
अजायं वा गुडैर्न भक्षयेत्तुल्ययोगतः ॥ १३०८ ॥  
यत्तत्प्रीहांद्रोत्यश्च भव्यधुञ्च विनाशयेत् ।  
घाताष्टोलाश्च कमठीं प्रत्यष्टोलां तथैव च ॥ १३०९ ॥  
कांस्यकोडाऽप्रमांसश्च शूलश्चैव भगन्दरम् ।  
यहिमान्यश्च कासश्च लोकनाथरसोत्तमः ॥ १३१० ॥  
र. सं., वै. र., र. वि., र. पु., प्लीहाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपात १ भाग, गन्धक २ भागकी मीलन-कञ्जली और अज्राभस्म १ भागलेकर पीठारकरगमं एकदिन-मर्दकर, ताम्र और लोहभस्म २-२ भाग मिलाकर मकोक रसे एष्ट्रोड मर्दकर गोलाभवाय शुद्धगन्धक और बीड़ीभस्म २-२ भागलेकर जम्बीरीरसेमें १ दिन मर्दकर दोमृषावनावे । तथैव गोलेकोरख शरावसमुद्रमें बन्दकर ४-५ कपड़मिठी देकर धूपमें सुताकर गजपुटकी आवे । स्वाप्रतीत्यशेषेनेकर निष्काकर रखोहै । इनमेंसे १-१ रसोलेकर गोमूत्र अथवा मधुगुण-पीप अथवा गुटपुट्टी वा गुडऔरजीरा समभाग मिलाकर अनुगन्धरसे लेनेसे यहूद, लोहा, उदर, शोथ, वाताशिला, कमठी, प्रल्टीला, कांस्यकोड, अग्रमांस, शूल, भगन्दर, मन्दादि, काय इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २६५ ॥

### २६६ लोकनाथरसः ( अष्टमः )

भागाः सप्त कपदेभस्म मरिचं पादाधिकांशं विर्यं,  
चिकंशं रमभस्म विंशतिमिताः स्यु गन्धकांशा द्वा ।  
चत्वारो हृत्पिफनकस्य कनकः पादान् भागः स्मृतः  
पूर्णं तन्मृदिनश्च सर्वगदहा स्थाप्यकनाया रमः ॥ १३११ ॥





निधाय सम्पुष्टयेऽधियामं  
पुटं प्रदद्याद्गुणं शीतलन्तत् ।  
पिवेतिगुञ्जं मधुदिकणायुतं  
ग्रीहज्वरे धातुगते क्षयादौ ॥ १३२९ ॥  
सगर्भयोपिच्छिद्युदुर्वलानां  
सुखावहोऽयं कथितो गुणाढ्यः ।  
स्याल्लोकनाथोऽखिलरोगहर्ता  
दोषानुरूपश्च भजेत पथ्यम् ॥ १३३० ॥  
र. सं. श्वे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल, मैन्सिल, सुहाग  
और सुवर्गमाक्षिक ३०-३० भाग, ताम्रमस ५ भाग लेकर  
नीलवर्णकमलीकर जमीरीकरससे ७ रोज मर्दनकर गोल-  
बनाय क्षामसम्पुष्टये बन्दकर २-३ कपडमिरीदेकर मुत्ताकर  
१ ग्रह लघुपुष्टी आवेदे । स्वाहशीतलहोनेपर निरालकर  
रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा मधु और १० पीपलके-  
साधनेसे ग्रीहा, धातुगज्वर, क्षयादिरोग, गर्भवती स्त्री और  
दुर्वलबच्चोंके समामरोगोंको यह नष्टकरताहै । इसमें पथ्य दोषा-  
नुरूप देना ॥ १३२९ ॥

२७० लोकनाथरसः (लोकेश्वरः) (द्वादशः)

रसस्य भस्मना हेम पादांशेन प्ररूपयेत् ।  
द्विगुणं गन्धनं दत्त्वा मर्दयेच्चित्रकाम्बुना ॥ १३३१ ॥  
चराचरांश्च सम्पूर्य द्रुणेन निरुद्धय तु ।  
भाण्डे चूर्णप्रलितेऽथ क्षिप्या सन्धाय मृत्स्नया ॥ १३३२ ॥  
शोषयित्वा पुटेद्वर्तेऽरलिमानेऽपराहके ।  
स्वाहशीतलमुद्भूय चूर्णयित्वा तु विन्यसेत् ॥ १३३३ ॥  
एष लोकेश्वरो नाम्ना पुष्टीर्यविषयधनः ।  
गुञ्जाचतुष्टयश्चाऽस्य पिप्पलीमधुसंयुतम् ॥ १३३४ ॥  
खाद्येत्यस्या भक्त्या लोकेशं सर्वरोगहृत् ।  
अङ्गकाश्येऽग्निमान्ये च फासे पित्ते रसक्षये ॥ १३३५ ॥  
मरिचैर्धृतसंयुक्तेः प्रदातव्यो दिनत्रयम् ।  
लवणं वर्जयेत्तत्र साज्यं सधधि भोजनम् ॥ १३३६ ॥  
एकविंशतिं यावन्मरिचं सधृत् पिवेत् ।  
पथ्यं मृगाङ्गुदेयं शयीतोत्तानपाद्वः ॥ १३३७ ॥  
वमने सम्प्रवृत्ते तु गुडचोद्वयमाहरेत् ।  
मातुलुङ्गस्य मूलं पा लाजाचूर्णं ससन्धवम् ॥ १३३८ ॥  
पिप्पलीं मधुसंयुक्तां खाद्येद्वाग्निशान्तये ।  
स्नानं शीतलतोयेन मग्निं धारां यिनिःक्षिपेत् ॥ १३३९ ॥  
पेत्ते विकारे सङ्घाते फलीफलमाहरेत् ।  
भृष्टा तन्मरिचैः सार्धं भोजयेत्कफनुत्तये ॥ १३४० ॥  
आद्रिकां गुडयुक्तां वा गुडार्द्रकमयापि वा ।  
भृष्टा कुस्तुम्बरां जीरे व्योषांश्च चूर्णयेत्ततः ॥ १३४१ ॥  
शर्करागुडमिश्रं वा वृद्धीताऽग्निशान्तये ।  
अजमोदा विडङ्गानि पिष्ट्वा तत्रेण पाययेत् ॥ १३४२ ॥

कृमिकोपप्रशान्त्यर्थं कायं चातम्रमुस्तयोः ।  
संस्कृत्य दुग्धेन दध्ना विरेके सम्प्रयोजयेत् ॥ १३४३ ॥  
हैमद्रुम्या जयाचूर्णं मधुना खाद्येन्निशि ।  
अङ्गुतोदे घृतेनाऽङ्गं मर्दयेत्त्वोष्णवारिणा ॥  
स्नापयेद्गोविणं वैद्यो लोकनाथमनुस्मरन् ॥ १३४४ ॥

र. सं., घ., र. ल., रसायनसं., दृ. यो. त., र. चि., नि.  
र., र. र. स., र. म. मा., र. को., र. चं., यो. र., र. सु,  
र. सं., र. म. यो. म., ना. वि., टो., वै. चि., र. क. यो.,  
र. का., र. क. ल., चि. र. म., र. (मा.), र. र. श्वे ।

टि०—रसरत्नमुच्चये द्वितीयस्थाने षष्ठाऽङ्गभागेन त्वर्णं विदुज्य  
मृगाङ्गुपोटलीति नाम स्थापितम् । माणित्यचन्द्रीपरमावतारे द्वौ  
पाठौ प्रकलितौ, एवस्मिन् पाठे साधारण कमकभस्म निवे-  
जित, द्वितीये चतुष्पणमन्त्रधारित वनक योजितम् । हेमपारद  
गन्धया एवम्बु षट् इतिभागे विशेष । रसायनमङ्गलस्य  
द्वितीयस्थाने अभिद्रीपनीपुष्टिकेति नाम स्थापितं तत्र गन्धकस्याष्टौ  
भागा वस्तिना जीवच्छम्भूते चाऽनपेक्ष कृत इतिविशेष । रसरत्न-  
दीपिकायां द्रुणेन वरासुष्ठमसि अत्र तु नभ्ये प्रक्षिप्तमिति विशेष-  
द्वयने परन्तु स गणनायोग्यो नाऽस्ति उभयथाऽपि रसमात्रमेव तन्मेलन  
क्षीरिण्येकमर्दनम् विशेषतावामेव पर्यवस्यति, तस्याऽभ्यासमुच्चये क्षत्य-  
भावोऽस्तीति सुधीभिर्लोकनीयम् । रसामोर्गौ दोषरान्दे रसायन-  
सम्बन्धे च उभयोरपि सङ्गुह्यद्वलक्षणतामेव धीयति । रसरत्नाकरे—“वृत्त  
मृत चतुर्भागे माग्नं चुरोयन्मन् । अष्टभाग शुद्धगन्धं द्विगुणं चित्रजे  
देवे—”रित्यादिना वैरोघननाम्ना एवो रसोऽस्ति होऽप्येवैवाऽग्निमेवमिति ।  
गन्धकमात्रे भागाऽधित्यात्रैतावता रसान्तरतां प्राप्नुमर्हति इद्विदामेन  
गन्धकस्योद्भिदमानत्वात् ॥

भाषा—पारदमस ५ भाग, सुवर्गमस १ भा, शुद्धग-  
न्धक ८ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर चित्रकके रससे  
एकरोज मर्दनकर पारेसे चौधुनी कौड़ियोंमें भरके सुहागेसे  
सुखबन्दकर घुनातुहेतुए भाण्डमें रखकर क्षावपमृदुसे बन्दकर  
४-५ कपडमिरी देवे । सुखनेपर हाथभरके पादुमें दोषहरकेबाद  
इतनी आंचदेवे कि सबरे तब थंडीहोजाय । स्वाहशीतलहोनेपर  
बिनालकर रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ रत्तीकीमात्रा पीपल और  
मधुकेसाध देनेसे यह पुष्टि और बीर्यको बढ़ाताहै । इच्छता,  
मन्दाग्नि, कास, पित्तप्रकोप और रसक्षय हनरीगोंमें ३ रोजतक  
मरिच और धीकेसाधे । इसमें नमकछोड़दे घृत और दधियुक्त  
ओजनेदे । चारदिनकेबाद २१ दिनतक धी और मरिच पीये,  
पथ्य मृगाङ्गुकीतद्व दे जमीनपर चित्तरोवे । रसातिव्याप्तिके-  
कारण वमनहोनेपर मिश्रये अथवा विजोरेरीजङ्काहवरत अथवा  
शैथन्ययुक्तजचूर्ण, अथवा रात्रिमें मधुपुचपीपल देवे । पित्त-  
विकारमें शीतलजलसे स्नान, मत्स्यर शीतलजलसे घारा और बेले  
देना । कफविकारमें मरिच कषारेल्ला अथवा गुडयुक्त आदीच  
(आसामो जंजबील यौ०) अथवा गुडयुक्त अदरगदेना । अर्धिम  
मुनामरिचिया, जीरा और धिक्कुन्देसाय अथवा रात्र वा गुडनेपाय  
देना । किमिप्रकोपमें अजमोद और विटङ्ग छालमें पीसकर देना ।  
विरेचनमें एण्डमूल और नमरमोयेदावय देना और दग्गीतरह

क्षीरपाककरे देना अथवा मुनीभालरात्रुण रात्रिमें देना ।  
हृदयनमें घोंसे अम्यङ्कुरायणमन्त्रजलेस्नानकराना ॥ २५० ॥

२७१ लोकनाथरसः ( लोकेश्वरः ) १३

हो भागो गन्धकस्याऽष्टौ शङ्खचूर्णस्य योजयेत् ।  
एकमेव रसस्यांशमर्कक्षीरेण मयेयेत् ॥ १३४५ ॥  
चित्रकस्य द्रव्येणैव शोषयित्वा पुनःपुनः ।  
एकीकृत्य रसेनाऽथ क्षारं दत्त्वा तद्वर्द्धकम् ॥ १३४६ ॥  
अर्कक्षीरेण कुर्वीत गोलकानथ शोषयेत् ।  
निस्तब्ध चूर्णलितेऽथ भाण्डे दद्यात्पुटं तथा ॥ १३४७ ॥  
लोकनाथरसो ह्येष प्रहणीरोगहन्तनः ।  
गुञ्जाचतुष्टयञ्चाऽस्य मरिचाऽऽज्यसमन्वितम् ॥  
द्वीतं द्विभक्तञ्च प्रहण्याञ्च विनोपतः ॥ १३४८ ॥

र. र. स., र. म., प्रहणीरोगं ।

भाषा—शुद्धगन्धक २ भाग, चतुर्वर्ण ८ भा., शुद्धपारा १ भागलेखराक्षस्य वारीकचूर्णकर पारेगन्धकरी नीलचूर्णस्त्रलो-  
मैमिलार आकवेदुष और चित्रकज्यायरी सुग्मासुपावर  
१-१ अथवा ७-७ भावनाएँ देकर सबसे आधेप्रमाणमें  
शुद्धाग मिलाकर १-२ दिन आकवेदुषमें घोटकर बैरबरापर  
गोलियें बनाकर अच्छीतरहसुग्मावर चूनापुतेहुए बतनमें बन्दकर  
२-४ कपडिमिठीदेकर गुग्गुलेपर गजपुत्रकी आंचदे । स्वाहशीतल  
होनेपर निकालकर रत्नछोके । इसमेंसे ४-४ रत्ती मरिच  
और पीकेसाय देनेसे और दहीमात छिलानेसे प्रहणीरोग  
निवृत्तहोताहै ॥ २७१ ॥

२७२ लोकनाथरसः ( लोकेश्वरपोट्टली ) १४

प्रत्येकं दद्याद्वाद्याणाः शुद्धगन्धकमृतयोः ।  
कज्जलीमर्कदुग्धेन येष्येष्ट दिनद्वयम् ॥ १३४९ ॥  
द्रव्यं सेट्टुडदुग्धेन पिष्ट्वा रुन्ध्या च गोलकम् ।  
घराटेपु च तद्विषया येष्येष्टमृत्तन्या ॥ १३५० ॥  
पुटान्मुषलर्कं दद्यान्मेषांस्तारयधितः ।  
द्वयते गन्धको यावलहैरिनिष्ठैरित्ययः ॥ १३५१ ॥  
रुन्ध्या ततः कपर्दीनां गुणं गद्याण्यिदमित् ।  
शङ्खचूर्णं क्षिपेन्मये दद्याद्वाद्याणसम्मितम् ॥ १३५२ ॥  
आर्द्रचित्रकमूलानां स्वरमेन च भाययेत् ।  
मृतमृतञ्च तन्मये रित्त्या पूगप्रमाणिकाः ॥ १३५३ ॥  
गुटीः रुन्ध्याऽऽतपे नुष्कास्त्रनां प्राणा च कुम्भिका ।  
गुणं रित्त्याऽऽतपे नुष्कां तन्मये गुटिकाः क्षिपेत् ॥  
गुणिकाया मुग्गे पश्चाद् ददं देयं पिधानकम् ।  
मन्थि घनमुद्रा रित्त्या गन्धमये क्षिपेत्ततः ॥ १३५४ ॥  
ज्वलिता शीतलीभूता दयो युष्काऽपरः पुटः ।  
रुन्ध्या पूर्णं गुटीनाञ्च संक्षेप्येष्टिकागन्धम् ॥ १३५५ ॥  
मन्त्राण्येष्टं रमः सत्यम् मिदं लक्ष्मिदाणहन् ।  
उनीयधेः समं दयो रमो घाह्यनुपयम् ॥ १३५६ ॥  
सङ्खरुण्यमानांमारो रामे च सहजे तथा ।  
द्रात्रिस्तन्मिदं मिदो घृतमुक्तोऽथवा रमः ॥ १३५७ ॥

शुद्धचोसत्वसहितः परं ज्वरयिनाशनः

पट्टिकातण्डुला माषा गोधूमा यवशालयः ॥ १३५९ ॥

दधि दुग्धं घृतं पथ्यं मधुरं प्रायशो चरम् ।

नारङ्गं शर्करा द्राक्षा वज्रं क्षाराऽस्तैलैरुक्तम् ॥ १३६० ॥

रुचिः, र. कं. ली., प्रहणीरोगे ।

रिषो—रमरुद्धालयलेननाथपोट्टलीशुद्धचोसत्वोष पाठः महत् ।  
प्रतिमानि परन्तु पाके भावनासु च विशेषतः पाठ्ययत्नेः वक्ष्य-  
योगिन एकन्याद्वयोरपि स्वतन्त्रतया पाठः स्थापित इति विद्वि-  
विमर्शनीयम् ॥

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक ५-५ तोले लेकर नील-  
चूर्णजलीकर आठ और सेट्टुडकेदुग्धमें १-१ दिन मर्दनकर  
१० तोले पीलीकौड़ियोंमें भरके बज्रमिटोसे सन्धिबन्दकर  
चूनापुतेहुए भाण्डमें बन्दकर २-४ कपडिमिठीदेकर सूखनेपर  
इतनी आंचदे कि केवल गन्धकरी जले पारा न उड़े । स्वाह-  
शीतलहोनेपर निकालकर फिर पारेकीबराबर गन्धकदेकर पूर्व-  
द्वोंसे मर्दनकर आंचदे, ऐसे पद्मगन्धकजारणकर अलगद्वारे ।  
फिर कौडीमस १० तोले और शङ्खमस ५ तोलेका वारीक-  
चूर्णकर अदरस और चित्रकमूलकेवापसे १-१ रोज मर्दनकर  
पूर्वोक्तमस मिलाकर १-२ पहर्मर्दनकर सुपारीकेवदरा गोलियें  
बनाय धूपमें सुखाकर चूनापोतकर सुग्माईहुईरुद्धहीमें भरके  
शराईमसपुटमें बन्दकर ४-५ कपडिमिठी समस्तपर लगाय गज-  
पुत्री आंचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दन-  
कर सुपारा दूधपुटदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रत्न-  
छोके । इसमेंसे डेढ़ ११ मासेकीमात्रा पुनपुन १२ कालीमिथो-  
केमाथ अथवा रोगोचितानुपानरेमाथ देनेसे सङ्खरुणी, आम  
अथवा रुद्ध अतिशार, नष्टहोताहै । शुद्धपीगरुनेसाथ देनेसे  
यह ज्वरको नष्टकरताहै । साठीमास, उबड़, गैहू, जल, तपेद  
बासल दही, दूध, घृत और मधुरद्रव्यति तमामाहार, नारली,  
शकर येसन इसमें पथ्यहैं । धार, अम्ल और तेल नहीं खाने  
चाहिये ॥ २७२ ॥

२७३ लोकनाथरसः ( पोट्टली )

गोलं जम्बरमेन गन्धरसवोस्तत्तुल्यताप्राऽऽघृतं,  
गोलं लायणयन्त्रगर्भनिहितं गृह्णा पथेत्तं शनैः ।  
यामानष्ट कपर्दजेन सकलं तुल्येन तद्वन्मना,  
युक्तं चित्रकवारिणा लघुतरं पिष्ट्वा पुटं दापयेत् ॥ ३६१ ॥  
संयुद्धादिति पोर्टलीं सङ्खरुण्यं मारीचचूर्णं ततः,  
मथोयादिति लोकनाथचिधिना दीपेत्तकामादिपु ।  
तांफामाऽनिलगुस्मशूलमहज्जभ्यामप्रहण्यरोमि,  
प्रोदं यमणि पाण्डुरोगमहिते मन्त्रायामाद्याऽरुन्धौ ॥  
रि. र., र. चि., र. पा., कालाधिकार ।

भाषा—गन्धकमा शुद्धपारा और गन्धकरी नीलचूर्णस्यलीको  
जंभीकीरसमें मर्दनकर गोलकायाय बराबरकेवदरे गन्धकमें  
बन्दकर १-० कपडिमिठी देकर सूखनेपर सपानपत्रमें बन्दकर  
८ परकी क्रमादि देवे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रत्नछो

बराबरकी पीलीकौडियोंकीभस्म मिलाय चित्रमूलकेकाठसे १-२ रोज मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लघु पुटकी आचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा समभाग अतीव और मिचौके चूर्णके साथ मिलाकर समयोचितानुपानकेसाथ लेकर द्वितीयलोकनायमें कहेहुए पथके अनुसार चलेनेसे दुर्बलता, कास, श्वास, शोफ, काम, वातप्रकोप, शुष्म, शूल, सहजश्वास, प्रहणी, ववासीर, पूर्णरूपराज्यक्षम, पाण्डु, सन्ताप, मन्दाग्नि और अक्षि इन सबको यह नष्टकरताहै ॥ २७३ ॥

### २७४ लोकनायकरसः

पीतसूक्ष्मकपर्दनां ग्राह्यं विंशोत्तरं शतम् ।  
तस्के द्रोणमिते शार्धं मथिते द्विगुणोदके ॥ १३६३ ॥  
तक्रजीर्णे च नि.सारे मृक्षोपात्तपुनः पचेत् ।  
वालरयश्च सूतस्य क्षुधितस्याऽक्षपञ्चकम् ॥ १३६४ ॥  
लेलीतरुस्य शुद्धस्य सार्धत्वाऽऽर्धकं द्रव्योः ।  
खल्वे कज्जलिकां कृत्वा पूरयित्वा विमुद्रयेत् ॥ १३६५ ॥  
टङ्कूणेनाऽकंदुधेन भावितेन चतुर्दश ।  
घारान् कुमारिकात्रिंश शोपयित्वा पुनः पुटेत् ॥ १३६६ ॥  
विमुद्रय त्रिपुटे दत्त्वा स्याद्वाज्ञशीतलमुद्धरेत् ।  
गुञ्जापञ्चोन्मिर्तं दद्यात्पङ्कजासम्मितोपणैः ॥ १३६७ ॥  
ततः पलमितं पञ्चासिपेवाद्वाज्ञेरिकाघृतम् ।  
पथ्यं बुग्धोदत्तं कुर्यात्स्यजेद्व्यायामजागरम् ॥  
सिद्धोऽयं सिद्धनायेन कथितो लोकनायकः ॥ १३६८ ॥

जयेत्सर्वरोगानशोपानसाध्यान्

विशेषाद्बहुण्यामतीसाररोगे ।

रसो यक्ष्मकासे च शूले च शोथे

महायक्ष्मिण्युगवाही मधिष्ट ॥ १३६९ ॥

१ का, अतीसारऽधिकारः ।

भाषा—पीली और मोटीकीसी १२० लेकर दूनापानी-  
डालकर बनाईहुई एकद्रोणजठमें डालकर धीरे २ पकावे । जब  
छाछका तमामपानी जलजाय तब कौडियोंको निकालकर फिर  
उसीतरह पकावे । ऐसे ३ बार पकाकर कौडियोंकी साफकर  
शुद्धमुक्षितपारा ५ कर्षे, शुद्धमन्थक ७॥ कर्षेलेकर दोनोकी  
नीलवर्णकज्जलीकर कौडियोंमेंभर आवेदूध और पीतुनारके  
स्वरससे १४-१४ भावनाए दियेहुए छतगले मुह बन्दकर सुखा  
कर लघुपुटकी आचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर आवेदूध और  
कुमारीकेरससे १४-१४ भावनाए देकर टिकड़ीबनाय शराव  
सम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आचदे । ऐसे ३ आवे देनेकेबाद  
स्वाज्ञशीतलको निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ६-६ रत्तीकी  
मात्रा मरिचकेचूर्णकेसाथ लेकर एकपल चाँदरीपुतरीवे, पथ्यमें  
दूधभात खाय कसरत और रात्रिगमनको कहे तो समस्त  
ज्यान्त्ररोग, प्रहणी, अतीसार, राजयक्ष्म, कास, शूल, शोथ,  
अत्यन्तमन्दाग्नि इन सबको यह नष्टकरताहै और योगमवाहीहै २७४

### २७५ लोकेश्वररसः

तालकं द्रुदं वत्सनामं सर्वं समं समम् ।  
सर्वं भूमिभ्वनीरेण मर्दयेद्रोलकीकृतम् ॥ १३७० ॥  
घञ्जमृपान्तरे क्षिपत्वा लेप्या वस्त्राऽनुमृत्तिका ।  
वालुकायन्त्रके पाच्यं द्वियामं मन्दवह्निना ॥ १३७१ ॥  
स्वाज्ञशीतलमुद्भूतं च्छागपित्तेन भावयेत् ।  
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सन्निपातान्निहन्ति च ॥  
लोकेश्वररसो नाम्ना शम्भुना परिकीर्तितः ॥ १३७२ ॥  
वै चि, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धहरिताल, शिंगारिक और बछनाग समभाग  
लेकर बिरायतकेबाधसे एकरोज मर्दनकर गोलाबनाय घञ्जमृपान्त  
बन्दकर ३-४ कपडिमिठीदेकर मुलाकर वालुकायन्त्रमें रख  
दोपहरकी मन्दाग्निदेवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर बकरेके-  
पित्ते १-२ भावनाए देकर १-१ रत्तीकी गोखिलेबना-  
कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ  
देनेसे यह तमामसम्प्राप्तको दूरकरताहै ॥ २७५ ॥

### २७६ लोहगर्मरसः ( पित्ताण्डुरिः )

रसभस्म चतुर्भागं लोहभस्माऽष्टभागिकम् ।  
वह्निर्मुक्ता बिडङ्गश्च त्रिफला कुटजत्वचः ॥ १३७३ ॥  
कटुनयश्च संयोज्य प्रत्येकं भागमेककम् ।  
मधुना बहुमानश्च लोढं पाण्डुरं परम् ॥ १३७४ ॥  
रसोऽयं लोहगर्मरसः पथ्यं देयं मृगाङ्गवत् ।  
त्रिफलाबृषभभूमिभ्यतिकादार्यमुदाहृतः ॥  
काथो मधुसमायुक्तं कामलापाण्डुरोगजित् ॥ १३७५ ॥  
रसायनस, वि क, र सु, र का, ना वि, र र स, र क  
ल, र को, र क पाण्डुरोपा र क ल पाण्डुरोगप्र ॥ र र स, र  
को, र क एतेषु ग्रन्थेषु पित्ताण्डुरीतिनाम । पित्ताण्डुरिर्व्या  
लोहस्य द्वौ भागौ प्रकल्पितौ ॥

भाषा—पारदभस्म ४ भा, लोहभस्म ८ भा, चित्रकीमड़,  
लग्नसोरा, बिडङ्ग, त्रिफला, कुँदराकीछाल और त्रिङ्गु १-१  
भाग मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा मधुके  
साथदेकर त्रिफला, जड़, बिरायता, कुटरी, दाहहृदी और  
मिलेय इनकाकाय मधुपुर्णितानेमें कामला और पाण्डु नष्ट  
होवेहै । इसमें पथ्य मृगाङ्गकीताह देना ॥ २७६ ॥

### २७७ लोहगुग्गुलुः ( प्रथमः )

स्तुहीलवक् खादिरं काष्ठं काष्ठामृग्वरजं फलम् ।  
वल्कलानां पृथक् पञ्च पलमष्टगुणे जले ॥ १३७६ ॥  
पत्स्या पादावशेषेण लोहं पञ्चपलं पचेत् ।  
पिण्डभावे द्रवे किञ्चिद्वशिष्टे तु नि क्षिपेत् ॥ १३७७ ॥  
शोभाञ्जनकमूलस्य कल्केनावृत्य पाचितम् ।  
करीपात्रौ समुद्भूतं हरितालं पण्डुरयम् ॥ १३७८ ॥  
चूर्णितं क्षिपेत् तद्य शुग्गुलो घृतकल्कितम् ।  
पर्वाष्टय पचेद्भूयो यावद्धृत्यमागतम् ॥ १३७९ ॥

क्षीरपात्रकरके देना अथवा मुनीभागकाचूर्ण रात्रिमें देना ।  
हृक्कृतनमें पीसे अम्यङ्गकरीयगरमजलेत्तान्त्राणा ॥ २७० ॥

२७१ लोकनाथरसः ( लोकेश्वरः ) १३

द्वौ भागी गन्धकस्याऽष्टौ शङ्खचूर्णस्य योजयेत् ।  
एकमेव रसस्यांशमर्कुरेण मर्दयेत् ॥ १३४५ ॥  
चित्रकस्य द्रवेणैव शोषयित्वा पुनःपुनः ।  
एकीकृत्य रसेनाऽथ क्षारं दत्त्वा तदुत्कम् ॥ १३४६ ॥  
अर्कुरेण कुर्वीत गोलकानथ शोषयेत् ।  
निरुद्धय चूर्णलितेऽथ भाण्डे दद्यात्पुटे तथा ॥ १३४७ ॥  
लोकनाथरसो ह्येव प्रहणीरोगघ्नतनः ।  
गुञ्जाचतुष्टयञ्चाऽस्य मरिचाऽऽज्यसमन्वितम् ॥  
द्वीत दधिभक्तञ्च प्रहण्याञ्च विज्ञेयतः ॥ १३४८ ॥  
र. र. स. र. सु. प्रहणीरोगे ।

भाषा—शुद्धगन्धक २ भाग, शङ्खचूर्ण ८ भा., शुद्धपारा १ भागलेकर शङ्खका पारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजली-  
मेंमिलाकर आकरेद्वय और चित्रकज्वायकी सुरासुलाकर  
३-३ अथवा ७-७ भावनाएँ देकर सबसे आधेप्रमाणमें  
शुद्धाग मिलाकर १-२ दिन आकरेद्वयमें घोटकर बेरबराबर  
गोलिये पनाकर अच्छीतरहसुखार चूनापुतेहुए बर्तनमें बन्दकर  
२-४ कपडिमिरीदेकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाह्मतील  
होनेपर निकालकर रखडोहे । इसमेंसे ४-४ रत्ती मरिच  
और पीकेसाय देनेसे और दहीभात पिछानेसे प्रहणीरोग  
निरातहोताहै ॥ २७१ ॥

२७२ लोकनाथरसः ( लोकेश्वरपोट्टी ) १४

प्रत्येकं दश गद्याणाः शुद्धगन्धकमृतयोः ।  
कज्जलीमर्कदुग्धेन पेययेद्य दिनद्वयम् ॥ १३४९ ॥  
द्वयं सेहुण्डदुग्धेन पिप्पला कृत्वा च गोलकम् ।  
घराट्ये च तत्क्षिप्या वेष्टयेद्भजमृत्स्नया ॥ १३५० ॥  
पुष्टान्मुत्पलैः दद्यान्मृगैः सप्तपथितः ।  
दुराते गन्धको यायलक्ष्मिष्टिष्ठेऽपिपायतः ॥ १३५१ ॥  
कृत्वा ततः कपदीनां चूर्णं गद्याणर्विदातम् ।  
शङ्खचूर्णं क्षिपेन्मध्ये दशगद्याणसम्मितम् ॥ १३५२ ॥  
आर्द्रचित्रकमुलानां स्वरसेन च भावयेत् ।  
मृतमृतञ्च तन्मध्ये क्षिप्या पुष्पग्रमाणिताः ॥ १३५३ ॥  
गुटीः कृत्वाऽऽतपे शुष्कास्तनो प्राज्ञा च कुम्भिका ।  
चूर्णं लिप्त्वाऽऽतपे शुष्कां तन्मध्ये गुटिकाः क्षिपेत् ॥  
गुणिकाया मुने पश्चाद् ददं देयं पिधानकम् ।  
सन्धिं घट्यमुद्रा लिप्त्वा गर्तमध्ये क्षिपेत्ततः ॥ १३५४ ॥  
ज्वलित्वा शीतलीगृता देया सुष्काऽऽपरः पुनः ।  
कृत्वा पूर्णं गुटीनाञ्च संदेष्टुं पिपायतः ॥ १३५५ ॥  
गङ्गातीर्त्यं रमः सम्यक् सिद्धां लोकेशपोट्टी ।  
उनीरपेः समं देया रमो घट्यनुष्टयम् ॥ १३५६ ॥  
मङ्गदण्ड्यामनीनारे रामे च सहजे तथा ।  
प्राधिशान्मरिचै मिथो घृतयुक्तोऽप्यत्र रमः ॥ १३५७ ॥

शुद्धचीसत्त्वसहितः परं ज्वरविनाशनः

पष्टिकातण्डुला भाषा गोधूमा यवशालयः ॥ १३५९ ॥

दधि दुग्धं घृतं पथ्यं मधुरं प्रायशो वरम् ।

नारङ्गं शर्करा द्राक्षा वज्रं क्षाराऽऽलतैलकम् ॥ १३६० ॥

रसि., र. कं. ली., प्रहणीरोगे ।

रि०—रसकृद्दालीचलोकनाथपोट्टीगन्धकोट्टीस्य पाठ. सदृशः  
प्रतिपाति परन्तु पाके भावनासु च विरोधत्वात् पाठयकर्तुं कदाचि-  
न्येनैव शक्यात् द्यौरसि स्वल्पतया पाठः स्थापित इति विरहि-  
विमर्शनीयम् ॥

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक ५-५ तोले लेकर नील्-  
वर्णकजलीकर आक और सेहुण्डकेद्वयसे ३-३ दिन मर्दनकर  
१० तोले पीलीकौहियोंमें भरके बज्रमिरीसे सन्धिगन्धक  
चूनापुतेहुए भाण्डमें बन्दकर २-४ कपडिमिरीदेकर सूखनेपर  
इतनी आंचदे कि केवल गन्धकही जले पारा न उड़े । स्वा-  
ह्मतीलहोनेपर निकालकर फिर पारेकीबराबर गन्धकदेकर पुन-  
र्द्वौसे मर्दनकर आंचदे, ऐसे पङ्कगन्धकजारणर अलगरमदे ।  
फिर कौट्टीमस १० तोले और शङ्खमस ५ तोलेका पारीक-  
चूर्णकर अदरक और चित्रकमूलेकावये १-१ रोज मर्दनकर  
पूर्वाकमस मिलाकर १-२ पहरमर्दनकर सुपारीकेतरा गोलिये  
बनाय धूरमें सुसाकर चूनापोतर शुद्धाईहुईकृद्दहीमें भरके  
दारासमुदमें बन्दकर ४-५ कपडिमिरी समस्तपर लगाय गन-  
पुटकी आंचदे । स्वाह्मतीलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दन-  
कर सुपार दूधरापुटे । स्वाह्मतीलहोनेपर निकालकर रख-  
डोहे । इसमेंसे डेढ़ १॥ माचोकीमात्रा पुन्युक्त ३३ कालीमिर्चो-  
केसाय अथवा रोगोक्तानुपानकेसाय देनेसे तद्गृहणी, आभ  
अथवा सड़न अतिपार, नष्टहोताहै । शुद्धीकरवनेसाय देनेसे  
यह ज्वरको नष्टकरताहै । शालीचात्रक, उज्जड़, मूँह, जल, सफेद  
चावल दही, दूध, घृत और मधुमर्दति तमामाहार, नारसी,  
शरर बेसन इसमें पर्यहै । धार, अन्न और तेन नहीं खाने  
चाहिये ॥ २७२ ॥

२७३ लोकनाथरसः ( पोट्टी )

गोलं जम्भरसेन गन्धरसयोस्तनुत्पत्ताप्राऽऽवृत्तं,  
गोलं लाघण्यनृगमर्निहितं गृह्णा पचेत्तं शनिः ।  
यामानष्ट कपदेजेन सकलं तुष्येन तद्गम्भना,  
युक्तं चित्रकवारिणा लघुतरं पिप्पला पुटे दापयेत् ॥ ३६१ ॥  
संशुद्धामिति पोट्टीं सधियां मारीचचूर्णेन ता-  
मश्रीयादिति लोकनाथरिधिना दीर्घस्यकागदिपु ।  
शोफामाऽनिलमुष्मन्महज्जन्मसमहृष्यदीम,  
प्रोदं यद्यपि पाण्डुरोगासहितं भग्नपामाग्याऽन्यो ॥  
नि र., वै चि , र. वा., कसाधिपारः ।

भाषा—यममाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकजलीको  
जंभीरीकेरमो मर्दनकर गोलाकनाय बराबरकेद्वीसे गम्पुडे  
बन्दकर १-७ कपडिमिरी देकर मृगैनेपर लघनकन्येमें बन्दकर  
८ परकी बनाति देवे । स्वाह्मतीलहोनेपर निकालकर लघदी

बराबरकी पीलीकौडियोंकीमसम मिलाय चित्रकमूलकेकाढ़ेसे १-२ रोज मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लघु पुटकी आचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखजोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा समभाग अतीस और मिर्चीके चूर्णकेसाय मिलाकर समयोचितानुपानकेसाय लेकर द्वितीयलोकनायमें कहेहुए पथ्यके अनुसार चलेसे दुर्बलता, वास, खास, कोफ, काम, वातप्रकोप, गुल्म, शूल, सहजबाध, ग्रन्थी, नवातीर, पूर्णरुपाजयक्ष्म, पाण्डु, सन्ताप, मन्दाग्नि और अरुचि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २७३ ॥

### २७४ लोकनायकरसः

पीतस्थूलरूपशर्मां प्राह्यं विंशोत्तरं शतम् ।  
तत्रोणमिते काष्ठ्ये मथिते द्विगुणोदके ॥ १३६३ ॥  
तक्रजीर्णे च निःसारं शुद्धीयात्तरपुनः पचेत् ।  
वारज्यपञ्च सूतस्य क्षुधितस्याऽक्षपञ्चकम् ॥ १३६४ ॥  
लेलीतकस्य शुद्धस्य सार्धसप्ताऽक्षरं द्वयोः ।  
खल्वे कज्जलिकां कृत्वा पूरयित्वा यिसुद्रेयेत् ॥ १३६५ ॥  
टङ्कणेनाऽर्कदुधेन भावितेन चतुर्दश ।  
घारान् कुमारिकाद्विधं शोषयित्वा पुनः पुटेत् १३६६ ॥  
विमुद्रय त्रिपुटं दत्त्वा स्वाज्ञशीतलमुदरेत् ।  
शुक्लापञ्चोन्मितं दद्यात्पञ्चुजासम्मितापणेः ॥ १३६७ ॥  
ततः पलमितं पञ्चासिप्येचाद्देरिकाघृतम् ।  
पथ्यं दुग्धौदनं कुर्यात्स्यजेद्वायामाजगरम् ॥  
सिद्धोऽयं सिद्धतायेन कथितो लोकनायकः ॥ १३६८ ॥

जयेत्सर्वरोगानशेषानसाध्यान्

विशेषाद्वाहण्यामतीसाररोगे ।

रसो यक्ष्मकासे च शूले च शोथे

महायह्निकदोगवाही प्रदिष्टः ॥ १३६९ ॥

र का, अतीसारअधिकारे ।

भाषा—पीली और मोटीकौड़ी १२० लेकर द्वापानी-  
बालकर बनाईहुई एकटोणछाछमें बालकर धीरे २ पकावे । जब छाज्जा समामपानी जलजाय तब कौडियोंको निकालकर फिर उगीतरह पकावे । ऐसे ३ बार पकाकर कौडियोंको साफकर शुद्धबुधुक्षितपारा ५ वर्ष, शुद्धगन्धक ७॥ कपैलेकर दोनोंकी नीलवर्णकजलीकर कौडियोंमेंगर आकनेदूध और घीनुतारके स्वरससे १४-१४ भावनाए दियेहुए छुहागसे मुह बन्दकर सुखा-  
कर लघुपुटकी आचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर आकनेदूध और कुमारीकेरससे १४-१४ भावनाए देकर टिकड़ीबनाय शराव-  
सम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आचदे । ऐसे ३ आने देनेबेबाद स्वाज्ञशीतलको निकालकर रखजोड़े । इसमेंसे ६-६ रत्तीकी-  
मात्रा भरिचकेचूर्णकेसाय लेकर एकपल चात्रेरीधृतीवे, पथ्यमें दूधभात साय कसत और रात्रिनागरणको छोड़े तो समस्त असाध्यरोग, प्रदग्नी, अतीसार, राजयक्ष्म, कास, शूल, शोथ, अत्यन्तमन्दाग्नि इनसबको यह नष्ट करताहै और योगमाहीहै २७४

### २७५ लोकेश्वररसः

तालकं ददं वत्सनामं सर्वं समं समम् ।  
सर्वं भूमिम्बनीरेण मर्दयेद्गोलकीरुतम् ॥ १३७० ॥  
वज्रमूपान्तेर क्षित्त्वा लेप्या वस्त्राऽनुमृत्तिका ।  
वालुकायन्त्रके पाच्यं द्वियामं मन्दवाह्निना ॥ १३७१ ॥  
स्वाज्ञशीतलमुदृत्य च्छागपित्तेन भावयेत् ।  
गुज्जामात्रं प्रदातव्यं सन्निपातान्निहन्ति च ॥  
लोकेश्वररसो नाम्ना शम्भुना परिकीर्तितः ॥ १३७२ ॥  
वै.चि, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्धहरिताल, शिंगरिफ और वज्रनाग समभाग लेकर विरायतेकेकापसे एकरोज मर्दनकर गोलाबनाय वज्रमूपामें बन्दकर ३-४ कपहिमिट्टीदेकर सुखाकर वालुकायन्त्रमें रख दोपहरकी मन्दाग्निदेवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर बकरेके-  
पित्तसे १-२ भावनाए देकर १-१ रत्तीकी गोलीयेबना-  
कर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाय देनेसे यह तमामसन्निपातोंको दूरकरताहै ॥ २७५ ॥

### २७६ लोहगर्भरसः ( पित्ताण्डुरिः )

रसमसम् चतुर्भागं लोहभस्माऽष्टभागिकम् ।  
यहिर्मुस्ता विडङ्गश्च त्रिफला कुटजत्वचः ॥ १३७३ ॥  
कटुत्रयञ्च संयोज्य प्रत्येकं भागमेककम् ।  
मथुना घल्लमानञ्च लीढं पाण्डुरहं परम् ॥ १३७४ ॥  
रसोऽयं लोहगर्भस्यः पथ्यं देयं मृगाङ्कवत् ।  
त्रिफलावृषभूमिम्बतिकादाव्यमृताकृतः ॥  
काथो मधुसमायुक्तः कामलापाण्डुरोगजित् ॥ १३७५ ॥

रसायनते, चि क, र सु, र. वा, ना वि, र द स, र. क. ल, र. को, र. क. पाण्डुरोगे । र. क. ल पाण्डुरोगप्रः । र र स., र. को, र. क एतेषु प्रत्येषु पित्ताण्डुरीतिनाम । पित्ताण्डुरिबन्ध्या लोहस्य द्वौ भागौ प्रकल्पितौ ॥

भाषा—पारदभस्म ४ भा, लोहमसम ८ भा, चित्रककीजड़, नामरमोषा, विडङ्ग, त्रिफला, इरीयाकोछाल और त्रिबुट १-१ भाग मिलाकर रखजोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा मधुके-  
सायदेकर त्रिफला, अहुष, विरायता, कुटरी, दाहहल्दी और गिलोय इनकासाय मधुयुक्तपिलावेसे कामला और पाण्डु नष्ट-  
होतै । इसमें पथ्य मृगाङ्ककीतरह देना ॥ २७६ ॥

### २७७ लोहगुग्गुलुः ( प्रथमः )

स्तुदीत्वक् खादिरं काष्ठं काष्ठोदुम्बरजं फलम् ।  
वल्कलानां पृथक् पञ्च पलमष्टगुणे जले ॥ १३७६ ॥  
पस्त्वा पादावशेषेण लोहं पञ्चपलं पचेत् ।  
पिण्डीमावे द्वे किञ्चिद्वशिष्टे तु निःक्षिपेत् १३७७ ॥  
शोभाजनकमूलस्य कल्केनावृत्य पाचितम् ।  
करीपात्री समुदृत्य हरितालं पलद्वयम् ॥ १३७८ ॥  
चूर्णितं द्विपलं तच्च गुग्गुलो वृतकल्कितम् ।  
पक्वीकृत्य पचेद्भूयो यावद्ब्रह्महत्वमागतम् ॥ १३७९ ॥

गुल्मे कुष्ठे क्षये स्थौल्ये शोथे शूले च पाकजे ।

पाण्डुरोगे प्रमेहे च वातरोगे तथैव च ॥

सिद्धमेतत्प्रयुज्यते वलीपलितनाशनम् ॥ १३८० ॥

र. र., गुल्माधिकारे ।

भाषा—मेहुण्डकाद्वय, तज, सैरकाहीर, कटुमरकाफल, वट, पीपल, गूलर, पावर और बेतकी छाल १-१ पल लेकर अष्टगुने पानीमें पकावे । चतुर्धासहजानेपर छानले फिर इसमें ५ पल लोहमस डालकर पकावे । थोड़ापानी बाकीरहने पर सहिजनकीजड़कीछालकाकल्क १ पल डालकर करीपाभिपर रखदे । इसमें रसमाश्लिष्य और धीमें कुट्टाहुआगुल २-२ पल मिलाकर चलाताहुआ पकावे । अवलेहकेसहसहोनेपर उतारकर थिकनेवर्तनेमें रखोहे । इसमेंसे १-१ माशेकीमात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे गुल्म, वृद्ध, क्षय, स्थूला, शोथ, परिणामशूल, पाण्डु, प्रमेह, वातरोग, इनसबको यह नष्ट कर वलीपलितका नाशकरताहे ॥ २७७ ॥

### २७८ लोहगुग्गुलुः ( द्वितीयः )

अयःपलं स्यात्त्रिपलं पुरस्य

वयोपस्य योज्यानि पलानि पञ्च ।

पलानि चाऽष्टी त्रिफलारजस्तः

कपैः प्रदेयं ह्यमरत्यसिद्धये ॥ १३८१ ॥

रसायन सं, यो. र., मा. प्र., रसायने ।

भाषा—लोहमस १ पल, धीमें कुट्टाहुआगुल ३ पल, त्रिकटु ५ पल, त्रिफला ८ पल इनसबका बारीक चूर्णकर गुगलुको धी देकर दोदिनतक घनसेकुट्टे । द्रवहोनेपर चूर्ण थोड़ाथोड़ा मिलाताजाय, जितना चूर्णमिलनेके उतना कूटकूटर मिलावे । बाकीबचेहुएचूर्णको पीकीमदसे मिश्रितकरे इसमेंसे ३ माशेमें शुद्धर १ कपतककीमात्रा धीरे २ बढ़ावे । औषधपाक होनेकेबाद पच्यदेवे । इससे तमाम पातापिकारनष्टहोकर आयु यवर्तहि २७८

### २७९ लोहगुटिका

लोहस्य रजसो भागात्रिफलायास्तथा प्रयः ।

शुडस्याऽष्टी तथा भागा गुडाम्बूयं चतुर्गुणम् ॥ १३८२

पतत्सर्वञ्च विपचेद्गुडपाकविधानचित् ।

लिहञ्च तथयादाकि क्षये शूलेऽग्रपाकजे ॥ १३८३ ॥

च. द., र. र., र. का., दो. ,शो. म. अग्रपरचले । यो. म.

ग्रन्थरचयतेकिनाम ॥

भाषा—लोहमस, त्रिफला ३-३ माग, शुड ८ मा. गोमूत्र ३२ भागत्पर गुडकेसह चान्दानीबनाय रखओहे । इसमेंसे १-१ माशेकीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, और परिणामशूलको यह नष्टकरताहे ॥ २७९ ॥

### २८० लोहपत्रकम् ( विट्वादिलोहम् )

अयोरजो द्योपयिडग्न्युर्गुणं

समं पिबेन्माक्षिषसर्पिषालम् ।

प्रमेहशोथोदरकामलाशं-

गुल्मग्रहण्यामयपाण्डुरोगी ॥ १३८४ ॥

लो. प. (स.) पाण्डुधिकारे ।

भाषा—लोहमस, त्रिकटु, विट्वा देवन समभागलेख बारीकचूर्णकर रखओहे । इसमेंसे १-१ माशा पी और मधुकै. साथलेनेसे प्रमेह, शोथ, उदर, कामला, बवासीर, गुल्म, ग्रहणी और पाण्डुरोग इनसबको यह नष्टकरताहे ॥ २८० ॥

### २८१ लोहपर्वटी ( शठ्यादिः )

पलैः षोडशभिः शठ्याः कपायं विधिना चनेत् ।

वल्गूयते कपायेऽस्मिन् पुपानं गुडमावपेत् ॥ १३८५ ॥

पलैः षोडशभिस्तुल्यं गुडपाकं पचेत्ततः ।

त्रिफला ज्यूषणं क्षारं त्रिजातं चित्रमूलरुम् ॥ १३८६ ॥

दीप्यकं मुस्तकं भार्गीं शुष्ककन्दं कलिङ्गकम् ।

अक्षमामेन सञ्चुष्य लोहं पलचतुष्टयम् ॥ १३८७ ॥

उत्तायांऽथ शुद्धे क्षिप्त्वा दद्यात्सम्यक् प्रचालनम् ।

घृताके भाजने कृत्वा प्रस्तीर्य तदनन्तरम् ॥ १३८८ ॥

ततः सण्डानि कुर्वीत मानमालोच्य यत्नतः ।

ययोऽवस्थां यलं वह्निं ज्ञात्वा मात्रां प्ररूपयेत् ॥ १३८९

हन्ति क्षयांश्च सर्वांश्च पाण्डुरोगं सकामलम् ।

प्लीहाघ्नीले विशेषेण गुल्मशूलाऽऽमयास्तथा ॥ १३९०

सर्वांनुदररोगांश्च ग्रहणींश्च कफामयान् ।

सर्वांश्च घातविकारांश्च गदगदकमरद्वृद्धान् ॥ १३९१ ॥

ततो भक्षणं मात्रेण यलं वह्निं विवर्धयेत् ।

पित्ताऽधिकेन दातव्या शरी लोहस्य पर्वटी ॥ १३९२ ॥

तेलञ्च कारवेल्गञ्च सर्वमेतत्परित्यजेत् ।

इक्षुसाञ्च खर्बुरं नारिकेलोदकं तथा ॥ १३९३ ॥

द्राक्षादाडिमकं पथ्यं कल्पयेद्भिषगुत्तमः ।

अस्याद्रकं समुत्पन्नं सितादुग्धञ्च पाययेत् ॥ १३९४ ॥

रससागर, सर्वरोगे ।

भाषा—१६ पल कचूरका अष्टगुणितजलेमें छापर चतुर्धा-

भावितोप रहनेपर छानकर १६ पल पुरानागुड डालकर पकावे ।

गुडकीचाशनी होनेपर उतारकर त्रिफला, त्रिकटु, सत्वो, सप-

क्षार, युतासुहाया, त्रिजात, चित्रमूल, अजवाइन, भागनोथा

भारङ्गी, सूरण, इन्द्रजव, येमव १-१ कप और लोहमस ४

पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर चाशनीमें मिलाकर उतारले ।

वालीकैनेहमें घील्याकर टालकर ठंडाकरले । इसमेंसे ३ माशेमें

६ माशेतककीमात्रा अरुघा, बल तथा अमिरा विचारकर

देनेमें समस्तसुय, पाण्डु, कामला, प्लीहा, अजोरा, विषेयनया

गुल्म, शूल, ममस्तउदरोग, ग्रहणी, समस्त घात और कफ-

विचार, मन्दाक्षि इनसबको यह नष्टकरताहे । तिलाक्षिमें इसे

न देवे । तेज और करकेछा परिष्कारकर । ईगकेशदाय, दुधार,

नारियलदात्रत, द्रागु, अनार देवब पथ्य हैं । इसमें परगट्ट

मादूनापनेकर क्षारमिलाहुआ दूध देवे ॥ २८१ ॥

## २८२ लोहभास्कररसः

नीलोत्पलजसमुत्थकेशरा-

त्यम्भाकात्सहस्रसुरकाद्रजः ।

तुल्यमेभिरखिलैः समंशकं

लोहभास्कररजः सितासमम् ॥ १३९५ ॥

तण्डुलोद्गमनुपायिनां नृणां

रक्तपित्तमतिदाहणञ्जयेत् ।

पायुजानि रथिरात्मकानि वा

यक्ष्मपीनसमस्तद्वन्तथा ॥ १३९६ ॥

लो ५ (स), रफपिते ।

भाषा—नीलोत्पलकीकेशर, पद्मकेशर और कसेल समभाग

इनसबकीबराबर लोहभस्म लेकर सबको इकट्ठे मिलाकर रखछोड़े,

इसमेंसे ३ रत्तीसे ६ रत्तीतककीमात्रा बराबरकी सफर मिलाय

फाककर शङ्करमिलाडुआ बायलका धोवन पीनेसे अन्त्यन्तभीषण-

रक्तपित्त, खनीबवासीर, राजयक्ष्म, पीनस, रक्तपित्त, इनसबको

यह नष्टकरताहै ॥ १३९६ ॥

## २८३ लोहस्युज्जरसः (मूलजयः)

रसगन्धकलौहास्रं कुनटी मृतताम्रकम् ।

विषमुष्टिं घटाटञ्च तुल्यं दाह्यं रसाञ्जनम् ॥ १३९७ ॥

जातीफलञ्च कटुकीं द्विद्वारं कानकं तथा ।

हिह्रु व्योषं सैन्धवञ्च प्रत्येकं सूततुल्यकम् ॥ १३९८ ॥

रुक्मण्वर्णकृतं सर्वमेकत्र परिभाषयेत् ।

सूर्यावर्तरेसेनैव पिष्टव्यप्ररसेन च ॥ १३९९ ॥

सूर्यावर्तेन मतिमान् पटिकां कारयेत्ततः ।

ग्रीहान् यक्ष्मं गुल्ममष्टीलाञ्च विनाशयेत् ॥ १४०० ॥

अप्रमांसं तथा शोथं तथा सर्वांश्चिराणि च ।

वातरक्तञ्च कर्मदं चान्तर्विद्विधमेव च ॥ १४०१ ॥

र स, र सु, घ, र चि, प्लीहाधिकारे ।

टि०—कानकन केचिज्यपालफलमिच्छन्ति तन्मते धुरुरस्थाने जैवा  
लफल नियोज्यम्, भयमत्र निष्कारं यत्र रचनस्याऽस्तिवश्यता प्रतीयेत  
तत्र अयपालफलं नियोज्य यत्र तु ज्वरादीनां विशेषतोपन्यासं तत्र यत्र  
बीजान्येव बीजानि । यत्र बीजानामपि उक्तान्यीयस्युज्ज्वरास्रस्य स्वत-  
न्त्रता पाठो न कारणीय किन्तुमयापाठोस्तेषां चानि सर्वाण्यप्ये-  
कोऽस्य सूर्यावर्तेतिवचनपादैकपद्धतीनां भावनाभिरुक् एव रणे निष्पाद्य  
इति विशेष विहायनम् ॥

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, लोह और अत्रकभस्म, शुद्ध-  
मैनसिल, ताम्रभस्म, शुद्धज्विला, सौंही-सुल्य और शङ्खभस्म,  
रत्नीत, जायफल, कुटकी, सखी, मुद्गागा, शुद्धधतूरेबीज,  
मुनीहोम, त्रिकटु, सैपानमक, यसव समभाग लेकर वारीकचूर्ण-  
कर पारेगन्धककी नीलशर्फकलीमें मिलाय हड्डिर अपवा  
सूर्यमुखी और बेलपत्रकेरसोसे १-१ दिन मर्दनकर हुरहुरकै-  
रससे ३-३ रत्तीकी मोलिया यन्नार रखछोड़े । इसमेंसे १-१  
गोली समयअथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे प्लीहा, यक्ष्म,  
गुल्म, अष्टीरा, अप्रमास, शोथ, समस्तउदर, वातरक्त, कण्डुही  
और अन्तर्विद्वि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १४०१ ॥

## २८४ लोहयोगः (प्रथमः)

सप्तसत्रं गवां मूत्रे भावितं वाऽप्ययोरजः ।

पाण्डुरोगप्रशान्त्यर्थं पयसा प्रपिवेन्नरः ॥ १४०२ ॥

य. नि, टो, मा. प्र, पाण्डुतोमे ।

भाषा—लोहका वारीकचूर्ण अथवा भस्म ७ दिनतक  
गोसूत्रमें खरकर ३-३ रत्तीकीमात्रा दूधकेसाथ लेनेसे पाण्डु-  
रोग नष्टहोताहै ॥ १४०२ ॥

## २८५ लोहयोगः (द्वितीयः)

घात्रीफलं शर्करया समानं

पञ्चाङ्गनिम्बेन युतं त्रिसप्त ।

लोहस्य पादेन युतं तु मुक्तां

कण्डूर्तिकां हन्ति च मण्डलानि ॥ १४०३ ॥

र बी., छे।

भाषा—माखे, शकर और नीमकापञ्चाङ्ग समभाग लेकर  
सबसे चतुर्थांश लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे एकमाशसे  
३ माशेतककी मात्रा समयोचितानुपानकेसाथ २१ दिनतक  
खानेसे खुजली और मण्डलउठको यह नष्टकरताहै ॥ १४०३ ॥

## २८६ लोहयोगः (तृतीयः)

पुटितं भावितं लोहं पृथक्कायैरेकशः ।

उदावतेहं गुड्यात् ससितं वा यथामलम् ॥ १४०४ ॥

र क, र चि, उदावते ।

भाषा—उदावतेह योगसे मारकर उन्हीसे भावनादिया-  
हुआ लोह शर्करकेसाथ अथवा यथा दोषहरानुपानकेसाथ देनेसे  
यह उदावतेहो नष्टकरताहै ॥ १४०४ ॥

## २८७ लोहयोगः (चतुर्थः)

सिद्धं शम्भुकर्जं भस्म लोहयुक्तं पिवेन्नरः ।

उष्णोदकेन तस्मिन् हन्ति शूलं द्विधा स्थितम् ॥ १४०५ ॥  
रसागर, शूले ।

भाषा—लोहभस्मयुक्तसखलीभस्म ६ रत्ती गरमपानीके-  
साथ लेनेसे एकद्वि अथवा सर्वांश्चूलको यह नष्टकरताहै ॥ १४०५ ॥

## २८८ लोहयोगः (पञ्चमः)

चूर्णानि लोहत्रिफलाशिलानां

सौद्रेण लीढानि पृथक् समं वा ।

मेहान्मसमस्तानपि नाशयन्ति

पीतः कदाचित्स्वरसो शुद्धय्याः ॥ १४०६ ॥

रा मा, य. नि., प्रमेहाधिकारे । यदनिप्रमेह शिलानामित्यस्य  
स्थाने शिवानामितिपाठ ।

भाषा—लोहभस्म, त्रिफला और शुद्धमैनसिल समभाग  
लेकर वारीकचूर्णकर आपेमाशसे १ माशेतककीमात्रा मनुष्येसाथ-  
लेकर गिलोयकाकाय पीनेसे समस्तप्रमेह नष्टहोतेहैं । त्रिफ-  
लादि चार बीजोंमेंसे एकएककेसाथ लोहकायोगकरके देने-  
सेभी प्रमेह नष्टहोतेहैं । मैनसिलकेसाथ लोहकीमात्रा १ से ३  
रत्तीतकदेना ॥ १४०६ ॥



## २८९ लोहयोगः ( षष्ठः )

श्वविधः शरुतश्चूणं सप्तकृत्वः मुभावितम् ।

विडङ्गानां कपायेण त्रैफलेन तथैव च ॥ १४०७ ॥

क्षौद्रेण लीढाऽपि चित्रद्रुसमामलकोद्भवम् ।

अक्षामयारसञ्चाऽपि विधिरूपोऽयसामपि ॥ १४०८ ॥

मु. सं. विमिरोगे ।

टि०—अत्र अयसामिति बहुवचनेन सुवर्णादयोऽप्यौ लोहा प्रतीतव्याः, तेषां भस्म चेद्वति तर्हि विडङ्गानां त्रैफलेन च कपायेण प्रत्येकं सप्तभा-  
वना दत्त्वा यथाशिवल मात्रा प्रकृत्य क्षौद्रेण त्रैफलिता आयलकस्य  
अमवाया वा रस पाययेत् । यथापरितरूप्योद्भवन्ति तर्हि तेषां  
सुस्वादि पत्राण्यग्निमारुहत्वा विडङ्गानां कपाये त्रैफले च कपाये प्रत्येकं  
त्रि मासकृतो निर्वापयेत् इते यच्चूर्णं निष्पद्यते तस्मिन्पूर्वोक्तान्यां  
वायाम्ना सप्तमं भावना दत्त्वा अवरक्तयोः निष्पापत्वा यथाशिवल  
मात्रा निर्णीय प्रयोजयेत् ।

भाषा—जरकरी विष्टाको विडङ्ग और त्रिफलाके कट्टेसे  
७-७ भावनाएँ देकर १-१ मासे मधुमें मिलाकर लेवे और  
ऊपरमें आले, यहैके अथवा हरेका रस पीये तो इससे विमि-  
रोग नष्टहोताहै । अथवा जरकरीविष्टा, विडङ्ग, त्रिफला इन  
प्रत्येकके द्वायमें किसी अन्यतम लोहको सातसातवार सुसावे ।  
बारीकचूर्णहोजानेपर उसीकाबल्क और कपाय देकर मर्दनकर  
आवदेकर भस्मबनावे । अथवा अयस्कृतियोंके विधानसे केवल  
चूर्णलेकर उसरी यथाशिवल मात्रा पायमकर सेवनकर ऊपरसे  
आंवाला, विडङ्ग अथवा त्रिफलाका रस पीलावे । इससे समस्त  
किमिरोग नष्टहोताहै ॥ २८९ ॥

## २९० लोहयोगः ( सप्तमः )

मृदान्तःपाचितां गुप्तां लोहचूर्णसमन्विताम् ।

सगुडामभयां द्यात्सर्वशूलपशान्तये ॥ १४०९ ॥

ई, कि, र, कि, शूल ।

भाषा—गोमूत्रमें पकाकर सुखाईहुई हरेका चूर्ण और  
लोहभस्म समभाग लेकर बजारके गुप्ते में मिलाकर रखोके ।  
इसमेंसे १-२ मासकी मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपाने-  
साय देनेसे सबप्रकारके शूल शान्तहोतेहैं ॥ २९० ॥

## २९१ लोहरसायनम् ( प्रथमम् )

त्रिफलाया रमे मूत्रे गवां क्षीरे च लाघवे ।

क्रमेण चेद्वृक्षरं किंजुकरश्च एव च ॥ १४१० ॥

तीक्ष्णायसस्य पत्राणि वद्विषणीनि द्वापयेत् ।

चतुरङ्गुलदीर्घाणि तिलोन्मेषसमाणि च ॥ १४११ ॥

क्षाल्वा तान्यञ्जनाभानि मूत्रमचूर्णानि कारयेत् ।

तानि चूर्णानि मधुना रमेनामलकस्य च ॥ १४१२ ॥

मुक्तानि लेङ्गकुम्भे स्थितानि धृतमाचिते ।

संपत्सरं विधेयानि यत्पले तदेष च ॥ १४१३ ॥

द्यादालोदणं नाम सर्वभाण्डयन्मुचुः ।

संवत्सरात्यये तस्य प्रयोगो मधुसर्पिणा ॥ १४१४ ॥

प्रातः प्रातर्वलापेक्षी सात्स्यं जीर्णं च भोजनम् ।

एष एव च लोहानां प्रयोगः सम्प्रतीतितः ॥ १४१५ ॥

अनेनैव विधानेन हेमश्च रजतस्य च ।

आयुःशुक्लरूपसिद्धः प्रयोगः सर्वरोगनुत् ॥ १४१६ ॥

अभिधाते न चातुर्हं जंरया न च मृत्युना ।

अधुप्यः स्याद्वज्रप्राणः सदा चातिथलेन्द्रियः ॥ १४१७ ॥

धीमान् यशस्वी वात्सिद्धः श्रुतधारो महाबलः ।

भवेत्सत्मा प्रयुञ्जानो नरो लौहरसायनम् ॥ १४१८ ॥

चं सं. रसायने ।

भाषा—फोलादेके तिलके बराबर मोटे और ४-४ अहुल  
रत्ने पत्रनाय अग्निमें लालगर्जकर त्रिफला, गोमूत्र, गोदुग्ध,  
लवण, इंगोले और पलातुकाशर्मैदुसावे । जब वे जलकर सुग्मा  
के सदृशहोजायं तउउनका बारीकचूर्णकर आवलेकेरसे ६-७  
रोज मर्दनकर कपट्टानचूर्णकरके मधु और आनलेका रस मिलाय  
अवलेहेमन्ता बनाकर चौके बर्तनमें डालकर एकवर्षतक जरकी-  
खतीमें रखोके । प्रतिभास अवलेहुनो अच्छीतरह चलादिया-  
करे । एकवर्षतक इसमेंसे बगितल देपकर १ मासेसे १ तोले-  
तककी मात्रा लेवे । जीर्णहोनेपर सात्स्य भोजनकरे । इनीतरह  
तमागलोहोंकी रसायन तैयारके । सासकर सुवर्ण और रजत-  
को रसायनकी तैयारकर काममें लावे । इससे हड्डि और  
पुराने तपामरोग नष्टकर आयुकी रुद्धिहोतीहै । अभिधात,  
रोग, बुढ़ापा और मृत्यु इनके डरमें निर्मुक्तकरे बल, इन्द्रिय  
और बुद्धिसे परिपूर्णहोजायाहै तथा एकहाथीके बराबर पराक्रम  
होकर यशस्विता, वाक्स्थिति और धुतिधरता प्राप्तहोतीहै २९१

## २९२ लोहरसायनम् २

गुग्गुलुस्तालमूली च त्रिफला खदिरं त्रिपुषम् ।

विष्टाऽलम्बुग चैव निर्गुण्डी चित्रकं स्तुही ॥ १४१९ ॥

एषां दशपलान्माग्रांस्तोये पञ्चाङ्गेके पचेत् ।

पादशोपतनः कृत्वा कपायमवतारयेत् ॥ १४२० ॥

पलद्वादशके देये तीक्ष्णलोहस्य चूर्णितम् ।

पुराणसर्पिषः प्रस्थं शर्कराष्टयलानि च ॥ १४२१ ॥

पचेत्ताम्रमये पात्रे मुशीते चायतारिते ।

प्रत्याहर्दं माशिकं देयं शिलाजतु पलद्वयम् ॥ १४२२ ॥

पलत्त्वचोः पलाद्वेष्टं विडङ्गानि पलद्वयम् ।

मरिचञ्चाङ्गनं कृत्वा द्विपलं त्रिफलायनितम् ॥ १४२३ ॥

पलद्वयन्तु फासीसं रुद्धचूर्णार्कनं मुपेः ।

चूर्णं दत्त्वाऽथ मथितं स्निग्धं भाण्डे निधापयेत् ॥ १४२४ ॥

ततः संगुदवेहन्तु भक्षयेदक्षमाप्रकम् ।

अनुपानं पिबेत्क्षीरं जातुलानां रमन्तया ॥ १४२५ ॥

वातसेपहरं श्रेष्ठं कुष्ठदेहन्वरापहम् ।

कापलां पाण्डुरोगश्च श्वयथुं ससगन्धम् ॥ १४२६ ॥

मूचूर्णमोहविर्गाम्माद्वरणि विधिमयम् ।

स्यूतानां कर्णं श्रेष्ठं मेदुरे परमोरधम् ॥ १४२७ ॥

कर्पयेद्यातिमात्रेण कुक्षि पातालसन्निभम् ।

वक्ष्यं रसायनं मेध्यं धार्जीकरणमुत्तमम् ॥ १४२८ ॥

श्रीकरं पुत्रजननं बलीपलितनाशनम् ।

नाशीयात्कदलीकन्दं काञ्चिकं फरमर्दकम् ॥

फरीरं कारवेल्लञ्च पट्टकारादि वर्जयेत् ॥ १४२९ ॥

भै.र., र.र., र.को., भा. प्र., टो., च. द., वै. द., कै. द.  
र.प्र., यो.म., र.का., स्त्रीत्याधिकारः ।

भाषा—शुद्धयुक्त, तालमूली, त्रिफला, खैरसार, शुद्धवस्त्र-  
माम, निसोत, गोरखमुण्डी, निगुण्डीकन्द अथवा संभालूकी-  
छाल, चित्रकमूल, धूरकाक्ष, येसव १०-१० पल लेकर २०  
प्रस्थ पानोमें पकावे । चतुर्थांशवशेष रहनेपर छानकर फरेलादका  
धारीकोरता १२ पल, पुरानाघी १ प्रस्थ, शकर ८ पल डालकर  
बिनाकलई कियेहुए तावेके पात्रमें पकावे । अबलेहूतैयारहोनेपर  
उतारले । स्वातिशीतलहोनेपर मधु भाषाप्रस्थ, शिलाजीत  
२ पल, इलायची औरतज २-२ कर्ष, विडङ्ग मरिच, सुरमेकीभस्म,  
पीपल, त्रिफला, और कसीस भस्म येसव २-२ पललेकर  
कपडछानचूर्णकर अवलेहमें मिलाकर धीके चिकनेवर्तनमें रख ४०  
रोजतक धान्यराशिमें रखदे । इसकेबाद बमन बरिचनार्थिसे  
धारीकोशुद्धकर इसमेंसे १-१ कर्ष अथवा अभिषव देयकर मात्रा  
कायमकर ऊपरसे गोदुग्ध अथवा जंगलीपशुपक्षियोंका मांसरस-  
पिलावे । इससे बात, खेष्म, कुष्ठ, प्रमेह, ज्वर, कामला, पाण्डु,  
शोफ, भगन्दर, मुच्छा, मोह, विष, उन्माद, गानातरहके बनावटी  
ज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै । स्थूल और मेदस्त्विकोंको पताला-  
करनेकेलिये यह उत्तम औषधि है । अत्यन्त पेटदुष्ट पेटको यह  
पातालजैसा बनादेताहै । बल, रसायन, मेधा, सम्मोग्धाफि,  
शरीरकान्ति, पुष्टीरपादनशक्ति इनसबको देताहै । बलीपलितका  
नाशकरताहै । इसमें कैलास, काञ्ची, कौंदा, करीर, कोला  
इन छः ककारोंका यत्नसे वर्जनकरे ॥ १९२ ॥

२९३ लोहरसायनम् ( तृतीयम् )

विडङ्गसारो मेघाण्यो रक्तचहिरकण्डरः ।

हस्तिकर्णः सितार्कस्तु श्वेतपर्याप्तमुद्रवम् ॥ १४३० ॥

वाकुची मुण्डिका भृङ्गो राजको वृद्धदारकः ।

शुद्धयतिबला रात्रा तालमूली शतावरी ॥ १४३१ ॥

पिण्डारकश्चैडगजो बेंडालः केशराजकः ।

पक्वैः पलमेतेषां ग्राह्यं सुमधुकं पलम् ॥ १४३२ ॥

रसस्यैकं पलं ग्राह्यं लोहस्य पलविंशतिः ।

चत्वारिंशत्तथाऽध्वस्य शुल्बञ्चाऽपि चतुष्पलम् ॥ १४३३ ॥

गन्धकस्य पलान्यष्टौ पट्टपलानि मनःशिला ।

स्वर्णमाक्षिकचत्वारि पट्टपलानि शिलाजतोः ॥ १४३४ ॥

त्रिफला त्रिकटुञ्च प्रत्येकञ्च पलत्रयम् ।

सर्वाण्येतेषां सञ्चूर्ण्य घृतेन मधुना सह ॥ १४३५ ॥

स्निग्धे भाण्डे समालोडय स्यापयित्वा विचक्षणः ।

भक्षयेत्कमयोगेन लोहं सर्वरसायनम् ॥ १४३६ ॥

वै.भै., व.र., रसायनः । व.र.र एतयोश्च कृप्याभातोत्पद्यते

भाषा—विडङ्गतरुण्डल, नागमोषा, लालचित्रक, मिलावे,  
हस्तिकर्णमलाच, सफेदभाकडीजइकीछाल, सफेदपुनर्नवा, वाकुची  
गोरखमुण्डी; भंगरा, अभिलासका घृता, विधारेकीजइ, गिलोय,  
अतिवला ( गुलसिकी ) रात्रा, तालमूली, शतावर, पिंडार,  
पेंवाड, बिलाईलोडन, कालाभंगरा, मुलहठी, शुद्धपारा येसव  
१-१ पल, लोहभस्म २० पल, अभ्रकभस्म ४० पल, ताम्रभस्म  
४ पल, शुद्धगन्धक ३ पल, मैनसिल ६ पल, स्वर्णमाक्षिकभस्म  
४ पल, शिलाजीत ६ पल, त्रिफला और त्रिकटु ३-३ पल  
लेकर सबका बारीकचूर्णकर घी और मधु सबकीबराबरेकर  
सबको एकजगह मिलाकर चीकेवर्तनमें रखदेवे । ४० दिन-  
धीतेकेबाद इसमेंसे यथोचित मात्रामें पानेसे यह तमाम  
रोगोंको नष्टकर दीर्घायुको करताहै ॥ १९३ ॥

२९४ लोहरसायनम् ( द्वाविंशसायनम् ) ४

पारदं विधिना शुद्धं पलद्वितयसम्मिश्रितम् ।

चतुष्पलं लोहचूर्णं चतुर्थिंशपला सितम् ॥ १४३७ ॥

मनोहा गन्धपापाणं हरितालञ्च शुद्धकर्म ।

कासीसं हिङ्गु कुष्ठञ्च चकोशीररसाजनम् ॥ १४३८ ॥

सारं खदिरवृक्षस्य जातीफलसमन्वितम् ।

द्विपलं सूक्ष्मचूर्णन्तु सर्वेषां परिकीर्तितम् ॥ १४३९ ॥

गगनाहिपलं कृष्णालोहचतुर्दितं क्षुत्तात् ।

शास्त्रोक्तपृथगुद्दिष्टैः संपुज्य विधिनोचितम् ॥ १४४० ॥

विंशति त्रेफले तापे प्रस्थेन सह सर्पिषा ।

शृङ्गबेररसप्रस्थं निष्काश्यं यक्ष्यमाणकैः ॥ १४४१ ॥

त्रिषणादितचित्रञ्च चास्थिसंहारसरणम् ।

वर्णजातं सगोभूमभूमिकृष्णपट्टतण्डुलाः ॥ १४४२ ॥

शोभाजनं तालमूली मोरटे शङ्खपुष्पिका ।

पृथगष्टपलञ्चैषां वारिद्राणे विपाचयेत् ॥ १४४३ ॥

अष्टभागावशिष्टेन कषायं कारयेत्सुधीः ।

मधुनः पलानि द्वाविंशतिपेत्तत्र सुशतितले ॥ १४४४ ॥

त्रिकटु त्रिफला सिन्धु पिष्टं लीयचलन्तथा ।

टङ्कणो यावद्युक्तञ्च सुरदाकपरम्पराः ॥ १४४५ ॥

अम्लवेतससुद्धीका महार्द्रमधुयष्टिकाः ।

शृङ्गो दुपलमा सुस्तं विडङ्गं रक्तचन्दनम् ॥ १४४६ ॥

जीरकञ्च संधान्याकं पलादं चूर्णकं पृथक् ।

दासेनेदं पुरा प्रोक्तं नराणां हितकाम्यया ॥ १४४७ ॥

न चाऽत्र परिहारोऽस्ति विहापहारयज्ञणे ।

अन्नपानानि सर्वाणि भक्ष्यभोग्यानि यानि च ॥ १४४८ ॥

तानि प्रकृतिपेदक्षो बुद्धिपूर्वं प्रदापयेत् ।

सर्वव्याधिहृत्स्वतस्त्वस्याऽस्वस्थहितं सदा ॥ १४४९ ॥

वै. से. रसायनम् ।

भाषा—विधिपूर्वकशुद्धकियाहुआपारा २ पल, लोहभस्म  
४ पल, शकर २४ पल, शुद्धमैनसिल, गन्धक और हरिताल,  
कसीसभस्म, सुनीहोय, कुष्ठ, वच, सप्त, रसोत, खैरसार, जाय-

फल २-२ पल लेकर वारीकचूर्णर पारेगन्धकी नीलवर्णकज-  
लीमें मिलावे । लोहेके प्रकारसे कीहुई कालेअम्रककीभस्म २ पल;  
त्रिफलाकाकाढा ३० पल, पुरानाधी, और अदरककास १-१  
प्रस्थ, स्याह-सफेद और लालचित्रक, हड़बोह, सूरण, इटसिह,  
गेंहू, भुईबोंहका, साठोचावल, सहिजनकीछाल, तालमूली, मोरट  
( लताकरंज या मोरवेले ), दारुपुपी येसब ८-६ पल लेकर  
सबको जवड़ुटर एकट्रोणपानीमें पकावे । अष्टमागवशप रह  
नेपर छानकर पूर्वद्वयमें मिलाकर पकावे । लेह तैयारहोनेपर  
उतारकर चित्रक, त्रिफला, तैन्धव, विड, सज्जल, सुनाछुहागा,  
यवक्षार, देवदारुकेफल, अम्लवेत, द्राक्ष, सोंठ, मुलहठी, काक-  
डासीगी, जवास, नागरमोथा, विडङ्ग, लालचन्दन, जीरा,  
धनिया येसब २-२ कपलेकर मिलावे । एकदम ठंडाहोनेपर  
३९ पल मधुमिलाकर ४० दिनतक धान्यराशिमें रख निवाल  
कर रखडोहे । इसमेंसे यथाभिन्नल मात्रा कायमकर खानेसे  
यह समस्तव्याधियोंको नष्टकर शुद्धपेको दूरकरताहै । रोगी  
और निरोगी दोनोंकेलिये हितकारकहै ॥ २९४ ॥

### २९५ लोहरसायनम् ( पञ्चमम् )

तत्सिद्धं सिद्धनाथेन निर्मितं सत्यहेतुना ।  
आमवातादिनाशाय लिप्यते चाधुनेरितम् ॥ १४५० ॥  
विडङ्ग नागरं धान्यं गुडचूर्णं जीरकद्वयम् ।  
पलाशदीपकं फोलञ्च पिप्पलीं सुस्तकन्तथा ॥ १४५१ ॥  
त्रिवृक्ष त्रिफला दन्ती रालकं घृहतीद्वयम् ।  
चविका ग्रन्थिकं चिन्तं स्वयं घृहदारकम् ॥ १४५२ ॥  
पञ्चायसां मृतानाञ्च प्रत्येकं तद्विकारिकम् ।  
आमवातघ्नचूर्णञ्च यथाधिधि निपेषितम् ॥ १४५३ ॥  
२ तस्मिन्नेव पाठे श्वासादिरोगे द्वितीयः प्रक्षेपः—  
शिरः शूलमुखश्वासकफपित्तपनुत्तये ।  
लिप्यते चाधुना दिव्यं रसायनमनुत्तमम् ॥ १४५४ ॥  
शर्करा मधुके द्राक्षा मुशली श्रायमाणकम् ।  
धासा कुम्भी फालिङ्गं ध्योपञ्च त्रिफला विवृत् ॥ १४५५ ॥  
दन्ती सिम्हचूर्णं घृणं वृद्धदारं द्विकारिकम् ।  
मृदुपाके विनिःक्षिप्य सम्यक् सिद्धं समाचरेत् ॥ १४५६ ॥  
सेयितं हरते नित्यं रक्तपित्तं सुदारुणम् ।  
३ पूर्वस्मिन्पाठे प्लीहादिरोगे तृतीयः प्रक्षेपः—  
प्लीहादंरं यरुह्वलं दालक्षारान्निमि विना ॥ १४५७ ॥  
विनाशाय भ्रयाज्यानि चूर्णांनीमानि देहिनाम् ॥  
कटं कापालिका चण्यं विडङ्गं सवृहद्वलम् ॥ १४५८ ॥  
शरपुष्पा च पाठा च चित्रकं समहोपचम् ॥  
पृथग्दर्पलां मायां क्षिपेत्प्लीहाहरसायने ॥ १४५९ ॥  
लवणानि च सर्वाणि सक्षारं वृद्धदारकम् ॥  
दीप्यकञ्च प्रयुञ्जीत पाकान्मभयामुरी ॥ १४६० ॥  
प्लीहादरिनाशाय कपेरुपं पृथक्पृथक् ॥  
मानेन सण्डकर्णेन सूरणेनापिचिकं पुनः ॥ १४६१ ॥

४ पूर्वस्मिन्नेव पाठे राजयक्ष्मणि चतुर्थः प्रक्षेपः—  
राजयक्ष्मणि श्वासे च कासे रक्तोत्पणे हितम् ।

महोपचं सतालीसं कारुणं नागकेशरम् ॥ १४६२ ॥

जीवन्तीमभयां मृदां सर्वाभ्यो द्विगुणान्तथा ।

शर्कराञ्च क्षिपेत्तत्र गुडचोत्सवमेव च ॥ १४६३ ॥

व से., र का, उदरोमे । रसकामधेनी तृतीय एव प्रक्षेपो-  
ऽस्ति सम्पूर्णपाठो नास्ति ।

भाषा—विडङ्ग, सोंठ, धनिया, गिलोय, स्याहसफेदजीरा,  
पलाशकेरीज, पकेवेर, पीपल, नागरमोथा, निमोत, त्रिफला,  
दन्तीमूल, सफेदराल, भटकटैया, वनभाटा, चण्य, पिपलामूल,  
चित्रकमूल, वच, विद्यारेकीजइ येसब १-१ पललेकर जवड़ुटर  
अठगुने पानीमें पकाकर चतुर्भागावशिष्टरहनेपर छानकर ३६  
कपं शक्कर मिलाकर पाककरे । चाशनी तैयारहोनेपर कान्त,  
फालाद, ड्रवर्ण, चादी और ताम्रभस्म तथा अलम्बुयादिवर्ण  
( गोरखमुण्डी, गोखरू, गिलोय, विद्यारा, पीपल, निमोत,  
नागरमोथा, वरण, पुनववा, त्रिफला और, सोंठ समभागचूर्ण )  
येसब २-२ कपलेकर वारीकचूर्णकर अच्छीतरह मिलाकर  
रखडोहे । ४० दिनबोतेनेवेवाद इसमेंसे अभिन्नलेखकर ३ मासेमें  
आपेथोलेख लेवे । औषधचोर्णहोनेपर रोगोचित पथ्यकेसेवन-  
करनेसे आमवात नष्टहोताहै ॥ १ ॥ इसीहिवासे लेह बनाकर  
शर, मुलहठी, द्राक्ष, सुखली, रायमाण, अहला, गिलोय,  
इन्द्रजव, त्रिफला, त्रिफला, निमोत, दन्तीमूल, विडङ्ग, विद्यारा  
पञ्जलोहभस्म २-२ कपलेकर वारीकचूर्णकर लेहमें मिलाकर  
पूर्ववत् ४० दिनबोतेनेवेवाद यथाभिन्नमात्रालेकर पथ्यसेवनक-  
रनेसे शिर शूल, मुखरोग श्वास, कफ और पित्ततन्त्र्याधिया  
तथा अथ्यद्वाररूपित नष्टहोताहै ॥ २ ॥ इसीतरह पूर्वलेहमें सूरण,  
कपूरकाचरी, चण्य, विडङ्ग, कायफल, शरपुष्पाकीजइ, पादामूल  
चित्रक, सोंठ और प्राचोलेहोकीभस्म ३-३ कप, प्राचोनमक,  
सखी, यवक्षार, सुहागा, विद्यारेकीजइ, जवादान, हर्, सरसो,  
मानकन्द, खड्गकणै ( सरडोकाकन्द म० ) येसब १-१ कप  
मिलाकर रखडोहे । बालीसदिनकेसाद मात्राकायमकर खानेसे  
और उचिपथ्यपालनसे प्लीहा, उदर, यकृत औरगुल्मरोग  
येसब क्षय-क्षय और अग्रिकमेंसेविना अच्छेहोतेहैं ॥ ३ ॥  
इसीतरह पूर्वलेहको द्विगुणशक्करसे तैयारकर सोंठ, बालीसपत्र,  
काकनर यू०, नागक्षर, जीवन्ती, हर्, आपजोडा येसब २-२  
कप और गिलोयसब २८ कप मिलाकर ४० रोजतक रखकर  
यथाभिन्नमात्रा कायमकर सेवनकरनेसे तथा योग्यपथ्य पाल  
नेसे श्वास, कास, रकायमन और बन्हा आ राजयक्ष्म दूरहोताहै ॥ २९५ ॥

### २९६ लोहरसायनम् ( षष्ठम् )

त्रिफलायाः प्रयुज्जीतं प्रत्येकं पलसप्तकम् ।

वारिश्चयगुणो पक्त्वा पञ्चमागेन शोषयेत् ॥ १४६४ ॥

पदशपावास्तु दुग्धस्य हस्तिनः पलपञ्चकम् ।

पुटिताश्रायसः पञ्च शुद्धाऽप्रस्थं पलद्वयम् ॥ १४६५ ॥

## २९९ लोहरसायनम् ( नवमम् )

लोहं पूर्वं पुटेच्छुद्धं गृहीत्वा पलपञ्चकम् ।

पुनर्नवावरीमूलं त्रिफला पुटितं पुनः ॥ १४७४ ॥

वराचतुर्गुणं लोहात्पचेदष्टगुणे जले ।

सप्तमागावशेषेण द्विशतार्धं पयः क्षिपेत् ॥ १४७५ ॥

शतावरीरसञ्चाऽपि लोहतुल्यं प्रदापयेत् ।

पलानि दश चाज्यस्य मृदुपाकेऽधतारिते ॥ १४७६ ॥

द्विजीरकं विडङ्गञ्च पलाशवीजमेव च ।

ज्यूपणं त्रिफला चर्च्य चूर्णमेपां पय समम् ॥

वातपित्तोत्तरं हन्ति ग्रहणीगदमुक्तम् ॥ १४७७ ॥

व से, र का, वातपित्तग्रहण्याम् ।

भाषा—शुद्धकरकेभस्मकियाहुआ लोह ५ पललेकर पुन

नवा, शतावर, त्रिफला इनप्रत्येककेभस्मसौसे मर्दनकर १-१ पुट

दे । फिर २० पल त्रिफलाको अठगुनेपानीमें डाल सप्तमागा

वशिष्टकावकर छानकर पूर्वोक्त लोहभस्म ५ पल, दूध १ प्रस्थ,

शतावरीकास्वरस ५ पल, घी १० पल डालकर मृदुअमिसे

पकावे । कल्ककीक्षिप्यगोलिया बननेलेमें तब उतारले । फिर

उसमें स्याहसफेदजीरा, विडङ्ग, पलाशकेबीज, त्रिकटु, त्रिफला

और चर्च्य इनकाचूर्ण १ प्रस्थ मिलाकर रखछोड़े । ४० दिन

बीतनेकेबाद यथाशक्ति मात्रा नियतकर खानेसे वातपित्तप्रधान

अयस्कृमिग्रहणीरोग दूरहोताहै ॥ २९९ ॥

## ३०० लोहरसायनम् ( दशमम् )

अष्टादश पलान्यत्र त्रिफलाया विपाचयेत् ।

सलिलं द्वाधाढके चास्मिन्ननमागाऽवशेषितम् १४७८

विपचेत्तृणगुह्यं पुटितं वक्ष्यमाणकैः ।

वरायाः केशराजस्य चार्द्रकस्य रसेन च ॥ १४७९ ॥

पतत्पञ्चपलं ग्राह्यं सर्पिर्दशपलानि च ।

शतावरीरसस्याऽष्टौ नारिकेलोदरस्य च ॥ १४८० ॥

पलाईं मरिचं कृष्णा नागरं पलसम्मितम् ।

पर्दिशमापकं चूर्णं त्रिफलायाः प्रकल्पयेत् ॥ १४८१ ॥

त्रिचत्वारिंशता मापैरधिकं चूर्णितं पलम् ।

चित्रकस्य विडङ्गस्य पचेत्पाककरं ततः ॥

वातश्लेष्मोत्तरं चैव कुक्षिरोगे तथा हितम् ॥ १४८२ ॥

व से, र का, वातश्लेष्मग्रहण्याम् ।

भाषा—दोआठकपानीमें १८ पल त्रिफलाको पकाकर

नवमागावशिष्टपर छानले फिर त्रिफला, कालामगरा, अदरक

इनके यथासम्भवकरस अवका बाधोंसे भावनादीदुईलोहभस्म

५ पल, घी १० पल, शतावरकास और नारियलकाजल ८-८

पल, मरिच और भीपत्र २-२ कप, सोंठ १ पल, त्रिफला २६

मासे, चित्रकबीज ४३ मासे, विडङ्ग १ पल इनसबका वपत्र-

छानचूर्ण डालकर रखपाककरे । ४० दिनबीतनेकेबाद यथाश-

क्तमात्रा नियतकर खानेसे वात और श्लेष्माधिक उदररोग

नष्टहोताहै ॥ ३०० ॥

## ३०१ लोहरसायनम् ( दातरसायनम् ) ११

सृष्टिं पुटितं शुद्धमयसः पलपञ्चकम् ।  
 शतावरीरसे सम्यक् पुटितं पञ्चधा पुनः ॥१४८३॥  
 अष्टौ पलानि गृहीयात्त्रिकलायाः पृथक्पृथक् ।  
 सलिलस्यामर्णे पक्त्वा पादशिष्टेऽवतारिते ॥१४८४॥  
 ऋत्रिशच पलान्यत्र पयसः सर्पिषो दश ।  
 मध्यपाकं ततः पक्त्वा लेपां कर्पूरैश्च पृथक् ॥१४८५॥  
 त्रिकटुं त्रिकलां बहि विडङ्गं भद्रमुस्तकम् ।  
 पलाशस्य च बीजानि क्षिप्त्वा कुर्यादसायनम् ॥  
 पित्तश्लेष्माधिकरूक्षं निहन्त्याद्दहणीगदम् ॥१४८६॥

ब. से., र. का., पित्तश्लेष्मदहण्याम् ।

भाषा—अयस्कृतिकं प्रकारसे मोरेहुए ५ पलशुद्धलोहमें  
 शतावरीके अक्षररसे ५ भागपाएँ देवे । फिर हों, बहेडा,  
 आंवला ८-८ पल लेकर एकदोशपानीमें पकावे । चतुर्थांशव-  
 शेषरहनेपर छानकर दूध ३२ पल, घी १० पल और पूर्वोक्त-  
 लोहमस ५ पल डालकर पकावे । मध्यपाकहोनेपर त्रिकटु,  
 त्रिकला, चित्रमूल, विडङ्ग, नागरमोथा और पलाशकेबीज  
 २-२ कप लेकर बारीकचूर्णकर अच्छीतह मिलाकर रक्तोक्ते ।  
 ४० दिनबीतनेकेबाद यथाप्रित्यमाना निर्धारितकर सेवनकरनेसे  
 पित्त और श्लेष्मप्रधानग्रहीरोग नष्टहोताहै ॥ ३०१ ॥

## ३०२ लोहरसायनम् ( अयोरजीयम् ) १२

त्रिकलायास्तु कुडवं पिप्पलीकुडवं तथा ।  
 विडङ्गमर्त्रिचानास्तु द्वे द्वे चैव पले स्मृते ॥१४८७॥  
 पलं पलञ्च कुर्वात दन्तीचित्रकयोरपि ।  
 पलातः पिप्पलीमूलादष्टावष्टौ पलानि च ॥१४८८॥  
 शृङ्गबेरपले द्वे च गव्यात्वञ्च पलानि च ।  
 शोषाप्यद्वैपलानि स्यु यानि तानि निबोध मे ॥१४८९॥  
 राज्ञा यला गोक्षुरकं मधुकं देयदाय च ।  
 यथा सातिविषा पाठा मुस्ता कटुकफोहिणी ॥१४९०॥  
 कटुफलं शारिरे द्वे च इयामा भृहातकानि च ।  
 पुनरनं खनेजोहं त्यक् च पत्रं शतावरी ॥१४९१॥  
 निदिधिकाव्याघ्ननरं मज्जिष्ठा कुशकं बला ।  
 त्रिपला त्रिवृता भार्मी कुटजस्य फलत्वचः ॥१४९२॥  
 पतदाहव्य संभारं द्विस्तावत्स्याटयारजः ।  
 तथैकध्याटनं युक्त्वा लेहयेन्मधुसर्पिषा ॥१४९३॥  
 क्षीरञ्चाऽपु पिथेयुक्त्वा निरग्नं सेवयेत्सदा ।  
 अयोरजीयमित्येतत्पथां मिद्धरसायनम् ॥१४९४॥  
 मंत्रात्मरप्रयोगेण शतवर्षाणि जीवति ।  
 पर्वहयेन मनुजो द्वे जपेच्छरदां शतम् ॥१४९५॥  
 निहन्त्याच्छुष्यं घोरं धृशमिन्द्राग्निं यथा ।  
 पाण्डुरोगमयाशांसि मन्दमग्निं क्षिमांनपि ॥१४९६॥  
 भगन्दरं कामलाञ्च बुष्टानि जटराणि च ।  
 सर्गाहानमस्मारे शलानि परिकर्तिकाम् ॥१४९७॥

अतिसारं प्रमेहांश्च क्षतं श्वासं क्षयन्तथा ।  
 यस्मिन्मस्मिन्विचारे तु योगोऽयं सम्प्रयुज्यते ॥१४९८॥  
 तं तं निहन्ति वै रोगं देवारीन् केशवो यथा ।  
 अनुप्रयोगो लाजानां सक्तो मधुना सह ॥१४९९॥  
 क्षीराऽपुपानलेहोऽयं दिवसान् सप्त पञ्च वा ।  
 अर्शःस्वामातिसारेषु विधिस्त्यात्परिकर्तने ॥१५००॥  
 ततः क्षीणेषु कासेषु ज्वरेषु विषमेषु च ।  
 घर्षात्सञ्चितः श्वयथुरस्मान्मासेन शाम्यति ॥१५०१॥  
 रसायनप्रयोगाच्च पूर्वोद्दिष्टाद्यथाविधि ।  
 शालीन् सपष्टिकांश्चैव रसान्नविहृतीस्तथा ॥१५०२॥  
 क्षाराम्ललवणैश्चाऽपि गोधूमांश्च विषजयेत् ।  
 आगन्तुश्वयथुराऽपि यो वा स्यादोपसम्भवः ॥१५०३॥  
 लङ्घनेश्च चिलेपेक्ष क्षीरसेकैः प्रशाम्यति ।  
 अविषाको ज्वरच्छर्दा दीर्घस्य परिकर्तिका ॥  
 श्वासातिसारौ हिक्का च शूनस्योपद्रवाः स्मृताः ॥१५०४॥  
 मे. सं. शयथौ ।

भाषा—त्रिकला और पीपल ४-४ पल, विडङ्ग और  
 मरिच २-२ पल; दन्ती और चित्रकमूल १-१ पल, इलायची  
 और पिप्पलामूल ८-८ पल, अदरक २ पल, गायकापूत ५ पल,  
 राजा, बला, गोखर, शृङ्गबड़ी, देवदाद, वन, अमौल, पादा,  
 नागरमोथा, कुटकी, कायफल, स्याहसकेदारवा, अनन्तमूल,  
 भिलावे, पुनर्नवा, तैलबल, राज, पत्रम, शतावर, भद्रकटैया,  
 बलनहा, मज्जि, इक्षकीज और बला २-२ कप; निलोत,  
 भार्मी, ऊँयाकीछाल और बीज २-२ पल लेकर बारीकचूर्णकर  
 तोह अयस्कृतिक सबसे इनीमिलय १-२ दिन सरलकर रख-  
 छोड़े । इसमेंसे यथाप्रित्यक्त मात्रा कायमकर मधु और धीकैसा  
 लेकर दूधपिये । परिपाकहोकर मूलतगनेपर केवलपलेवे । इसका  
 १ वर्षतक प्रयोगकरनेसे १०० वर्षक निरामयहोकरजीताहै ।  
 दोषपेक्ष सेवनसे २०० वर्षकी आयु होतीहै । रोगनिहरणार्थ  
 सेवनकरनेसे मयदरसोय, पाण्डु, अदमरी, मन्दादि, त्रिभि,  
 भगन्दर, कामला, बुट, उदर, शीहा, आत्मार, घूल, पेटका  
 कटाय, अतिशार, प्रमेह, उर क्षत, श्वास, श्वय इतसबको यह  
 नष्टकरताहै । इनके अतिरिक्त निगमिरीरोगमें इसका प्रयोग  
 कियाजाय उसे यह शीघ्रनष्टकरताहै । लाजके सक्त, मधु और  
 दूध इनके लेहदेसाय ७ या ५ रोजतक लेनेसे अर्श, आमातिसार,  
 पेटकाकटाय, क्षीणता, कास और विषमज्वर नष्टहोतेहैं । एह-  
 वर्षका सञ्चितसोय एकमहीनेमें अच्छाहोताहै । रसायनप्रयोगमें  
 पावल, राटो, रस, अजकी बनारसे, क्षार, अम्ल, लवण और  
 गेहूँ इनको छोड़के । इसमें देवशास्त्र आगन्तु शोष आजायको  
 लङ्घन, लेव और दूधकेकडे निहतहोताहै । शोषी आदमीको  
 अविषाक, ज्वर, बलन, दुखेला, पेटकाकटाय, श्वास, अतिशार,  
 हिक्का ये उपाद होतेहैं ॥ ३०२ ॥

## ३०३ लोहरसायनम् ( त्रयोदशम् )

निरग्निमग्निं कान्ते त्रिभिषेनं पिमावयेत् ।  
 छिन्ना ध्यापं निवाधाया निगुण्डीकदलीभरी ॥१५०५॥

दाडिमां विपभूतागो पलाशालम्बुये वरी ।  
 कुरण्टी कदलीकन्द्यञ्चलफलगोशुराः ॥ १५०६ ॥  
 गाङ्गेयसी च पातालगरुडस्तद्रसः पृथक् ।  
 लोहपात्रे च सञ्चर्य तल्लोहं मधुसर्पिणा ॥ १५०७ ॥  
 लोढा पिथेहराक्षोपमनुपानं सुखायहम् ।  
 मासत्रयं तथा क्षोद्रपिप्पलीसंयुतं लिहेत् ॥ १५०८ ॥  
 कासं श्वासञ्च मन्दाग्निं शोथं चातञ्च कामलाम् ।  
 छिन्नासत्त्वमधूमिध्रे ग्रहणीं तापजां रुजम् ॥ १५०९ ॥  
 अण्डबुद्धिञ्च रक्ताऽस्रं मूत्ररोगान्विशेषतः ।  
 सेचितं सर्वरोगप्रमिदं लोहरसायनम् ॥  
 पुष्पपीप्रदमायुष्यं यलग्नप्रसादनम् ॥ १५१० ॥  
 वै, द रसायने ।

टि०—अथ पाठ इत्यमरिरामासदशोऽस्ति परन्तु निम्नोक्तविप-  
 भूतागगाङ्गेयसीया विशिष्टभावनानुसत्परादृष्टत्वेन सहृदीन, निशा  
 गाङ्गेयसीयाऽन्तर्भावयोग्यतामात्रहन्त्योऽपि विपभूतागयो विज्ञानीय  
 द्रव्यत्वाच्चदन्तमोक्षोऽनुचित इति विद्वद्भिर्विभावनीयम् ॥

**भाषा**—स्वयममिलोहकी प्रश्रियते मोरहुए बान्तलोहरो  
 गिलोय, निरुद्ध, हल्दी, अइसा, निगुण्डी, बेला, दसरोड,  
 अनार, बछनाग, केंचुर, पलाशवा अन्नस्वरस, गोरखगुडी,  
 शतावर, पियावासा, कदलीरुन्द, बगुलहीफली, गोपल, गुल-  
 सिक्की, पातालगरुडी इत्येते ययासम्भव स्वस्ते अथवा हाथोले  
 १-३ बार भावनाए देकर रखलोके । इसमेंसे ययाप्रबल माना  
 नियतकर मधु और पीनेसाथ सेवनकर त्रिफलाकाकाय पीने  
 तथा पथ्यपालनेसे ३ महीनेमें कास, श्वास, मन्दाग्नि, शोथ,  
 वातविकार और कामला इनसबको यह नष्टकरताहै । जिसे  
 मधु और पीका अनुपान अनुकूल न हो यह पीपल और मधुक-  
 साप सेवनकर । गिलोयतत्त्व और मधुनेसाथसेवनकरनेसे ग्रहणी  
 और ज्वरकादाह शान्तहोताहै । चिकित्सक सेवनकरनेसे  
 अण्डबुद्धि, रक्तपित्त और मूत्ररोग येसब नष्टकर बल, वर्ण  
 प्रसाद और पुन पौत्र तथा आयुष्यको देताहै ॥ ३०३ ॥

**३०४ लोहरसायनम् (चतुर्दशम्)**

लोहाऽस्रसूतकशिलाजतुकान्तलोह-  
 चक्राङ्गपूर्णसहितं विपचूर्णमस्ति ।

यः सन्ततं घृतमधूपहितं मनुष्यः

स स्याज्ज्वरामरणरोगभयै विमुक्तः ॥ १५११ ॥

र. (मा.) रसायने ।

**भाषा**—लोह, लवणक, और पारदमय, शुद्धशिलाजीत, बान्त-  
 लोहमय, गिलोय, शुद्धवज्रनाम येसब समभाग लेकर बारीक  
 चूर्णकर एकत्राह मिलाकर रखलोके । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्ती  
 तक मात्रा पी और मधुनेसाथ मिलाकर निरन्तर सेवनकरनेसे  
 बुनापा, मृत्यु और रोग इनकेमयसे निरुक्तहोताहै ॥ ३०४ ॥

**३०५ लोहसत्त्वम्**

श्वेतं काचञ्च सौभाग्यं माघीकं मधु सिकथकम् ।  
 साधनं सार्षपखलिं पुराणशुद्धमित्यपि ॥ १५१२ ॥

कुडवानि दशाद्यात्वात्येकं तानि सर्वशः ।  
 द्विगुणेष्वनुनि नि. काच्य लेपयोग्यञ्च साधयेत् ॥ १५१३ ॥  
 निरङ्गसारस्यादाय कुडवानि च सप्ततिम् ।  
 तप्ततप्तानि पत्राणि तेन लिप्तानि सन्ध्यमेत् ॥ १५१४ ॥  
 तावद्धमेवावदेतल्लोहलेपः समाप्यते ।  
 चत्वारिंशत्कुडयकं श्वेतसर्जोभवं रजः ॥ १५१५ ॥  
 काच्यं दशगुणे तथैव पट्टशेषेणाऽवतारयेत् ।  
 तथैव नवसारस्य क्षारमेवञ्च साधयेत् ॥ १५१६ ॥  
 सर्वं संसाधितं वस्त्रधृतं सूक्ष्मं पृथक् पुनः ।  
 अथ सत्पककृष्माण्डशकलेऽर्द्धे सुकोरिते ॥ १५१७ ॥  
 क्षारान्तु सर्वशः क्षित्या तच्चुल्यघटमध्यगम् ।  
 कृत्वाऽध्वमलमथै तन्निजलान्द्रलपूरणात् ॥ १५१८ ॥  
 पिधानार्थञ्च तदूर्ध्वं मिश्रमेव प्ररूपयेत् ।  
 संपादकुडयं सौमक्षारचूर्णं विनिश्चितम् ॥ १५१९ ॥  
 मुखं पिधाय वृत्तेन दिनानामेककियंशतिम् ।  
 घर्मे संस्थापयेत्तावरकारुपशः सितो भवेत् ॥ १५२० ॥  
 सिद्धं विनाय गम्भीरमृत्पात्रे विनिधाय च ।  
 आतपे शोषयेत्सत दिनान्यध्वमलान्तरं ॥ १५२१ ॥  
 संस्थाप्य मासपदकं तु उडृत्य स्थापयेत्पुनः ।  
 एकविंशदिनाभ्येव मुपमुद्रादयेत्ततः ॥ १५२२ ॥  
 सप्त लोहस्य पत्राणामुत्तरोत्तरतः स्थितौ ।  
 यदा तच्छुद्धैर्द्विन्दुस्तदा सिद्धं भवेदिति ॥ १५२३ ॥  
 न चेत्तदेकविंशत्या दिनानाञ्च पुनस्तथा ।  
 विमुद्रप स्थापयेद्युक्त्वा सन्ध्यध्वमलान्तरं ॥ १५२४ ॥  
 सिद्धं खलु च तल्लोहं निक्षिप्याऽतिखरातपे ।  
 विमुद्रप मासजितयं स्थापयेत्सावधानतः ॥ १५२५ ॥  
 प्रतिमासं तन्मुखं तु समुद्रादयाऽवलोकयेत् ।  
 ततो मयूरपुच्छानां भाजनं सम्प्रकल्पयेत् ॥ १५२६ ॥  
 तत्राऽयः स्थापयित्वा तु तत्रापि घटमध्यगम् ।  
 यवराजिकतः पूर्णं तत्पात्रञ्च पिधापयेत् ॥ १५२७ ॥  
 मासत्रयं स्थापयित्वा सूक्ष्मखण्डं भवेद्यः ।  
 सौवीरोन्नेय सम्भाव्य बहुशोऽतिखरातपे ॥ १५२८ ॥  
 पाचयेद्भूमरूपये सत्त्वमास्त्वमग्निना ।  
 पोडशग्रहरं यावद्बह्वीयाच्छीतलञ्च तत् ॥ १५२९ ॥  
 तत्सत्त्वमर्थे तस्मिन्तु द्रवसत्त्वे विमर्द्य च ।  
 मासत्रयं पूर्ववच्च स्थाप्यमध्वमलान्तरं ॥ १५३० ॥  
 गृहीत्वा कान्तलोहस्य पाने हृदनेरु भुजे ।  
 पिष्टं निम्बद्रवे सत्त्वं लिप्तं पलमितं पुनः ॥ १५३१ ॥  
 श्वेतमृत्तिकया वडं मुद्रितं समुद्रञ्च तत् ।  
 विशोष्य पञ्चकुडवरीवालस्यमुपयेधः ॥ १५३२ ॥  
 इष्टिकायन्त्रतः एकं द्वाविंशत्यहरं क्रमात् ।  
 लाजाकाञ्च तत्सत्त्वं सर्वरोगहरं भवेत् ॥ १५३३ ॥  
 अष्टमांशस्तु गुञ्जायाः सर्वगुल्मोदरापहः ।  
 सद्यो राक्षसवद्भुङ्क्ते सर्वव्याधिनिवहणः ॥ १५३४ ॥  
 र बा, उदराधिकारे ।

**भाषा**—सफेदकाच, सुहागा, महुएकामय, मधु, मॉम, साबुन, सरसोंकी खली, पुरानागुड़ ये सब ४०-४० पल्लेसर दूना पानीदेकर औदावे । लेपकीतरह गाढाहोनेपर उतारकर रखले । फिर १७॥ प्रस्थ निरालोह ( सुण्डभेद ) के बारीकपत्र बनवाकर उनपर पूर्वोक्तेपल्लगाय धमनसरावे, जबतक कि बहलेप समाप्त न होजाय । फिर १० प्रस्थ सफेदसजीको १० गुने पानीमें औदावे, छडाहिस्सा बाकीरहनेपर उतारले । इसीतरहसे १० प्रस्थ नौसादरकोभी पकाकर उतारले और दोनोंको अलग २ छानकर इनका क्षार बनाकर पकेहुए सफेदकोंहलेमें छेदकरके सबक्षार डालदे । ऊपरसे ५ पत्र सफेदसोमलकाचूण डालकर छेदमेंसे निकालीहुई चकतीसे बन्दकर सूखमज्जुत मिश्रीकेबर्तनमें कोंहलेको रस मनुष्यकेगलेतक गहरे खुदमें घोड़ेकी ताजीलीद केबीचमें गाढ़े, बहराया ऐसे ठिकानेपर होनाचाहिये कि दिनभर धूपलगतीरहे । २२ वें दिन निरालसर उसमें कौएरा-पल्ल डगावे, यह सफेद होजायतो सिद्धसमये । फिर दूसरे गहरे मिश्रीकेपात्रमें रखकर मण्डमिश्रीकर सातदिन धूपमें सुखाकर पहिलेकीतरह गलेप्रमाण गहरे खोमें घोड़ेकी लीदमें दबावे । २३ महीनेकेबाद निकालकर फिर ताजीलीदमें दबावे । २१ दिनबाद मुंह उपाङ्ककर लोहेकेबारीक ७ पत्रोंकी तहजमाकर ऊपर एकविन्दु इसक्षारका डाले यदि घालोंपत्रोंमें छेदहोजाय तो सिद्धसमझनाचाहिये । बसहरहनेपर फिर २१ रोज सुखमु-द्राकर ताजीलीदमें दबावे और फिर परीक्षणकरे । जब सिद्ध होजाय तब सुखमुद्राकर दूसरे लोहेके पात्रमें रखकर पूर्ववत् सावधानीकेसाथ ३ महीनेतक लीदमें गाढ़े । प्रतिमहीने उसका मुंह उपाङ्ककर देखले कहीं बर्तनमें नुकसान न हुआहो और उसका बाणभी निपलजाय । तीन महीनेगाढ़ निकालकर रखले यह द्रवसफे तैयारहुआ । औरकेपहलोकी छक्कीमें पूर्णोक्त लोहेके पत्रोंको रखकर मज्जुत बर्तनमें रखदे और जबकीकाछीसे पड़ेकी-भर मुंहपन्दर ३ महीनेतकलीदमें गाढ़े तो इसलोहना बारी-कचूर्ण होजायगा । इसचूर्णको निकालकर सीवीर ( काडी-शेप ) की अत्यन्तकड़ेधूपमें बहुतसी भावनाएँ देकर डमरूयन्त्रमें बन्दकर १६ घटकी कड़ी आचदे । स्वातन्त्रीतलहोनेपर निकाल कर पूर्णोक्तद्रवसत्त्वमेंसे आधाभाग मिलाकर मर्दनकर पड़ेमें भर ३ महीनेतक घोड़ेकी लीदमें दबावे । तीनमहीनेकेबाद निकालकर रखले । इसमेंसे १ पल्लपरव निकाल वान्तलोहके मज्जुत पात्रमें डालकर नीबूछारस मिलाय इन्द्राणीस समस्त पात्रपर लेपकरदे और इसपात्रको चीनीनेपात्रमें रखकर शराबगम्मुद्राकर अच्छीतरह सुखाकर पुरानी मोटी दीठमें रखा गोद घागेर शियालके पीचमें रामगम्मुद्रको रख नीचे ३२ घटकी बसाति दे । स्वातन्त्रीतलहोनेपर पीरजसे संतुष्टको नोलकर निखाले । इसमेंसे धानकी खिलोरी तरह कान्तमलम निखरेगी । इसमेंसे एकरसीका आठवां हिस्सा देनेसे रामगम्मुद्र और उदररोग नष्टहोतैव और राशगरीलह जट्याति प्रदीप्त होजाताहै । अग्राध्य बान और बर व्याधिर्बोको यह लम्हाउ नष्टहोताहै ।

कान्तलोहकीतरह इससे समस्तधातुओंकीमलम होतौहै और वह अक्षुत्तकाम करतीहै ॥ ३०५ ॥

### ३०६ लोहसारकरूपः

आलिप्य तापीरुवीरकाभ्यां  
वैभानरे प्रज्वलिते निधाय ।  
तप्तं सुतप्तं विनियोज्य तके  
निर्वाप्य वारान् बहुशः सुलोहम् ॥ १५३५ ॥  
यमिः प्रकारैः सुमृताश्च लोहा-  
श्चूर्णीकृताश्चापि पलानि चाऽष्टौ ।  
सर्पिःपलं तैलपलं पलानि  
चत्वारि चाष्टौ हि वरासस्य ॥ १५३६ ॥  
तत्तस्य चाम्लस्य चतुःपलानि  
कर्पञ्च कर्पं पृथगापधानाम् ।  
व्यापाऽजमोदाचयिकाऽनलानां-  
मूलं प्रद्यादपि पिप्पलीनाम् ॥ १५३७ ॥  
सिन्धुप्रसृतं सविडङ्गचूर्णं  
सक्रणं हन्याद्बह्वर्णां समस्ताम् ।  
अशांसि शोथे परिणामशूलं  
शूलञ्च दीप्तं तु करोति बहिम् ॥ १५३८ ॥

र का., चन्द्रहयधिकारः ।

**भाषा**—कोलादके बारीकपत्रोंपर सोनामारी और सफेदकनेरकीजको पानीमें पीसकर लेपकरे । सूजनेपर खड़ी-छाछमें सुभावे । ऐसे जबतक पत्रोंका चूरा न होजाय तत्तक-करे । यहलोहचूर्ण ८ पल, ची १ पल, तैल १ पल, निपलाका हवरा १२ पल, खड़ीपल ४ पल, सोड, मिर्च, पीपल, अज-मोद, चवय, चिन्तकीज, पिपलामूल, सैन्धव, विडङ्ग इन-सबका बारीकचूर्ण १-१ कर्प लेहर राजको मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे यथाशक्ति मात्रालेकर छाछगीनेसे सप्रकारकी प्रहणी, बवासीर, शोथ, परिणामशूल, साधारणशूल, मन्दाग्नि हनयनको यह नष्टरहावे ॥ ३०६ ॥

### ३०७ लोहसिन्दूरम् ( लोहेवैषसिन्दूरम् ) १

सूताऽग्रकं विमुद्ध्य हयमारैः सुमर्दितम् ।  
त्रीणि पत्राणि नागस्य तत्पिष्टं लेपयेच्चुम्बम् ॥ १५३९ ॥  
पुदितं त्रियते तद्वट्टङ्गं मधु योजितम् ।  
लेपयेत्तारपत्राणि तित्तिट्टीतगराम्मसा ॥ १५४० ॥  
द्वाराण्येण सिन्दूरं जायते सर्वरोगजित् ।  
हंसपादी जपापुष्पं ताम्बूलं खदिरान्वितम् ॥ १५४१ ॥  
खरैः रुमरैः घर्षणं रतैः शुद्धरत्नं क्रमात् ।  
गन्धविगुणसंयुक्तं ह्रींही पारो प्रमर्दयेत् ॥ १५४२ ॥  
निशिष्य फाचङ्गप्याश्च तन्मुग्धं सप्रिणोद्ययेत् ।  
एकविंशति यामेषु चातुकापप्रपाचनात् ॥  
शुद्धं भवति सिन्दूरं सर्वलोकं योधयेत् ॥ १५४३ ॥  
र. क. को., सारंगेय ।





नागाजुनेन रचितं रसायनमिदमुत्तमम् ॥

विनापि परिहाराद्ये लोहोदितफलप्रदम् ॥ १५५६ ॥

व. से., रसायनाधिकारे ।

भाषा—सुतानापी ४ पल, मटरूट्या, अदरक, नीम, सफेदपुनर्वा, महुआ, लघुपत्रमूल इनके स्वरसोंमें घोटघोटकर सुदमे तीक्ष्णतामें सुखार गजपट्टनी ७-७ आंचे देकर सिद्ध कियाहुआ अन्नक और फोलाद ४-४ पल, दूध और नारियल कापानी ८-८ पल डालकर मन्द आंचसे पकावे । पानी जल जानेपर त्रिफला, त्रिकटु, चित्रकमूल, विट्ठ, स्याहमफेदजीरा, जायफल, जावित्री, लौंग, नागरमोया, शीतलचीनी इनका चूर्ण ४-४ मासे डालकर मावेको लालहोनेतकसेकदे । ठंडा होनेपर ८ पल भोरोकामधु मिलाकर रखडोके । इसमेंसे १-१ माशाले प्रारम्भकर दससे ८ माशेतक मात्रा बढ़ावे । जीर्ण होनेपर हल्का पच्य लेवे । इसके एकवर्षके प्रयोगसे समस्तस्तन्वाप्योसे निवृत्तहोकर १०० वर्षको आयुको भोगतावे । लोहोक्तपच्य नहीं करनेसेभी यह शुभकरतावे ॥ ३१२ ॥

### ३१३ लोहामृतम् ( प्रथमम् )

चित्रकं त्रिफलां दन्तीं विदारीं मारुतं यलाम् ।

पीधरं तालमूलञ्च पृथगष्टपलोन्मितान् ॥ १५५७ ॥

अक्षपात्रीशिवानाञ्च प्रस्थं प्रस्थं सुकुट्टितम् ।

विषाच्य सलिलद्रोणे सुपूतेऽष्टांशोपिते ॥ १५५८ ॥

प्रस्थं चायोरजः शुद्धं गन्धकञ्च तदर्द्धकम् ।

खण्डस्य कुडवं दत्त्वा नारिकेलपयस्तथा ॥ १५५९ ॥

एकीकृत्य पचेद्गोहं रसेन सर्पिषा सह ।

अवतार्य ततः शीते मधुनोऽष्टपलं क्षिपेत् ॥ १५६० ॥

चिकटुं त्रिफलां दन्तीं चिडङ्गं नागकेशरम् ।

पलाशपीठं त्रिवृतां हनुपां जीरकद्वयम् ॥ १५६१ ॥

तालीसपत्रघान्याकं बराहं वंशलोचनम् ।

भागतः पलिकं चूर्णं माक्षिकञ्च पलद्वयम् ॥ १५६२ ॥

शिलाजतुरजस्तद्वत्क्षिप्त्वा भाण्डे निधापयेत् ।

लौहे लौहेन सहृष्ट्य मधु दत्त्वा घृताऽर्द्धकम् ॥ १५६३ ॥

कृत्वा चानु पिपेतक्षीरं जलं वा नारिकेलजम् ।

त्र्यहं मापमितं कृत्वा वर्षयेद्वृत्तिकान्मातु ॥ १५६४ ॥

शुद्धप्यात्रपानानि पयोमांसरसाः शुभाः ।

सेवनीयाः प्रयत्नेन पाचकं धीक्ष्य चात्मनः ॥ १५६५ ॥

अथिताग्निश्च मुञ्जीत कर्तव्यापेक्षया यलात् ।

एवं कुर्वन्नर्वाकान्तं प्राप्नुयाद्देहमात्मनः ॥ १५६६ ॥

तेजस्वी यलवान् वाग्मी नित्यधिमांति देयवत् ।

अस्योपयोगात्सततं सुखेन पठिष्यति ॥ १५६७ ॥

अम्लपित्तं तथा शूलमग्निमान्यं दायं ज्वरम् ।

ग्रहणीं पाण्डुरोगञ्च परिणाममर्वांरुजम् ॥ १५६८ ॥

ये च कुक्षिगतं रोगं मन्दानलमवाञ्च ये ।

तान् सर्वान्नाशयेद्रोगान् लौहामृतरसायनम् ॥ १५६९ ॥

र. र., र. क., अम्लपित्ते ।

भाषा—चित्रक, त्रिफला, दन्तीमूल, विदारीकन्द, भंगरा,

कला, शतावर, तालमूली, येसब ८-८ पल, बहेड़ा, आवले और

हरे १-१ प्रस्थ लेकर अच्छीतरह कूटकर १ द्रोण पानीमें

पकावे । अष्टांशवशेष रहनेपर छानकर लोहमस १ प्रस्थ,

शुद्धगन्धक आधाप्रस्थ, रांड और नारियलकाज ४-४ पल,

पी १ प्रस्थ डालकर मन्दआंचसे पकावे । लेह तैयारहोनेपर

उतारकर एकदम ठंडाहोनेपर मधु ८ पल, त्रिकटु, त्रिफला,

दन्तीमूल, विट्ठ, नागकेशर, पलाशकेबीज, निशोत, शाक,

स्याहमफेदजीरे, तालीसपत्र, घनिया, तज, वंसलोचन, इनका

बारीकचूर्ण १-१ पल, स्वर्णमाक्षिकमस और शिलाजीत २-२

पल लेकर सबको इन्ने मिलाय चिकने घर्तमें भरके रखडोके ।

इसमेंसे १ मासेसे १ तोलेतकमात्रा लोहेकेवर्तमें डालकर

४ मासे घी और ८ मासे मधु मिलाकर लोहेके ढंढेसे थोड़ी-

देर मर्दनकर चाटे और ऊपरसे दूध अथवा नारियलकाज

पीवे । आरम्भमें ३ रोजतक १-१ मासेकी मात्रा लेकर प्र-

तिके साल्म्यकरे फिर रोजाना १-१ रत्तीकी मात्रा बढ़ाकर

१ तोलेतक मात्रा बढ़ावे । भारी और दृढ, दूध, मांसरस,

ये हितकारकहैं, परन्तु अग्नी जट्यामिकानल देखकर सेवनकरे ।

जैसेजैसे अग्निवृद्धाजाय वैवेवेवे गरिष्ठ अन्नका सेवनकरे ।

इसतरह प्रयोग करनेसे नवीन और सुन्दर तेज, बल, वाणी

इनसेयुक्त शरीरको प्राप्तहोतावे । निरोगहोकर देवताकेसदृश

हृत्पुरुषहोतावे । अम्लपित्त, शूल, मन्दाग्नि, क्षय, ज्वर, ग्रहणी,

पाण्डु, परिणाममूल, कुक्षिरोग, और मन्दाग्निसेजायमान समस्त

उपद्रव इनसबको यह शीघ्रही नष्टकरतावे ॥ ३१३ ॥

### ३१४ लोहामृतम् ( द्वितीयम् )

मुस्ताऽमृताकणा यदि बंद्धिः शुण्ठी फलनयम् ।

चिडङ्गञ्च सर्मं चूर्णं सर्वांश्च सृतलोहकम् ॥ १५७० ॥

मधुना भस्त्रेणमात्रं पाण्डुरोगहरं परम् ।

इदं लोहामृतं नाम स्वयमभिरस्तोऽपि वा ॥ १५७१ ॥

र. र., ना वि, चि क, पाण्डुरोगे ।

टि०—अथ रस्ती द्वितीयनवायतेन शुण्ठीऽपि परन्तु तत्र भागाना

वैलक्षण्यद्वय प्रकृते स्थापित । अथ योगक्षिप्तिरसामन्वयवन्त्या

पाण्डुपिण्डे सुस्तारिलोहकान्मा निश्चितोऽपि तत्र यद्विचित्रल्योरभावी-

ऽपि नैवावता तत्र योगनता सम्भावनीया इति विद्वत् विवक्षितः ।

भाषा—नागरमोया, फिलोय, पीपल, मुलही, चित्रक-

मूल, खोठ, त्रिफला और चिडङ्ग सब समभाग लेकर बारीक-

चूँचकर सबकीबराबर लोहमस मिलाकर रखडोके । इसमेंसे

१-१ माशा मजुकेसाथ खानेसे यह पाण्डुरोगको दूरकरतावे

यह उपस्थित न हो तो स्वयमभिरससे कामलेखेहैं ॥ ३१४ ॥

### ३१५ लोहामृतम् ( तृतीयम् )

माक्षीकमाक्षिकशिलाजनुपादानां

चूर्णं सलोहकचिडङ्गशिनासितानाम् ।

साय्यश्च विंशतिदिनानि भजेत्प्रकाम

योऽशीतिकोऽपि वनितानिकरे युवेव १५७२

चि क्र र र स र र कौ ओ प चि र म यो चि  
र र दी यो म ग नि र म मा नि र ना वि र स  
र च रसाणव, रसायनस भै र, र क ठ च द र को र  
का र र रसायनाधिकारे ।

०—चि म वागीरणे। यो म भै र र क ठ च द र  
कौ र वा र र प्लेयु पाण्डुरहित पाठ । भै र यस्माद्विरोहम् र  
र कौ पृथक् च नि र ग नि शिवाभक्त्यापि रोहम् र च चि  
र म शिलाजलपानेन यो म माधुर्येन (वागीरणे) रसायनमद  
ध्ये च माणिरायकलेः इति नाम स्थापितम् ।

भाषा—शुद्धसोनामाळी मधु शिलाजलु पारद और  
लोहमन्म विन्हा हरे शकर समभाग लेकर बारीकचूर्णकर  
सबसे इन्हेमिलाकर रसछोड़े इसमेंसे यथाशक्ति मात्रा निय  
तकर धीकेसाथ २० दिनतक सेवनकरनेसे अस्तीरसका बुझागी  
नवानिकेसाथ त्रिपरीके सहको लुप्तहोताहै ॥ ३१५ ॥

३१६ लोहामृतम् (चतुर्थम्)

तद्वनि लोहपत्राणि तिलोत्सेधसमानि च ।  
कपिकाभूलकलेन सलिप्य सार्यपेण वा ॥ १५७३ ॥  
विशोप्य सूर्यकिरणे पुनरेवाऽयलेपयेत् ।  
त्रिफलाया जले ध्मात चापयेच्च पुन पुन ॥ १५७४ ॥  
तत सञ्चूर्णितं कृत्वा कर्पटेन तु गालयेत् ।  
भक्ष्ये मधुसर्पिभ्यां यथाभ्येतत्प्रयोगतः ॥ १५७५ ॥  
मापक त्रिगुण धाऽथ चतुर्गुणमथापि वा ।  
छागस्य पयस कुर्यादनुपानमभायत ॥ १५७६ ॥  
गया धृतेन दुग्धेन चतु पट्टिगुणेन च ।  
पक्विशू न्हिहृयेत मासेनैकेन निश्चितम् ॥ १५७७ ॥  
लोहामृतमिदं धेष्टं ब्रह्मणा निर्मितं पुरा ।  
ककारपूर्वकं यथा यथाऽहं परिकर्तितम् ॥  
सेन्य तत्र भवेदत्र मासं चानुपसम्भरम् ॥ १५७८ ॥  
च द, यो म शुले ।

भाषा—लोहाके तिलप्रमाण मोटे पत्र बनवाकर आवळ  
कीछालकेवक अथवा सपेदसतोरकपल्लवे प्रपौर लेपेकर  
धूममें सुखाकर फिरसे लेपकरके धमनकरय त्रिफलेवायमें  
सुभावे इसतह जगतक पत्रोंका चूण न हो नाय तबतक करताहै ।  
फिर वायको ह्वाकर रोहचुनो पालकरके कपडआनकर रखलेवे ।  
इसमेंसे अतिबलपुसार मात्रा कायमकर मधु और धीकेसाथ  
१ मासेमे ४ मासेतक खाकर बरकीका अभावेमें मायकाद्व ६५  
गुना पीनेसे एडमहीनेमें निश्चितरूपमे यह पचिचुल्लो नष्टकर  
ताहै । इसमें ककारादिगुण अमृत और आनुपमया वर्तितहै ३१६

३१७ लोहामृतम् (पञ्चमम्)

शुद्धची ईसपादी च रत्नमाग फलत्रयम् ।  
गोपालिका गोरसना मुमुक्षु लोहनिर्गन्ध ॥ १५७९ ॥

पपा रसे दोलयेत्तद्विदिदोपनिवृत्तये ।

पलद्वादशक कृत्वा कृष्णलोहस्य खण्डश ॥ १५८० ॥  
महत्त्वाऽणदश गण्डीरमूले पिण्ड प्रकल्पयेत् ।  
धृत्वा प्रथमयेत्तावधावत्सर्वं मृतं भवेत् ॥ १५८१ ॥  
सिद्धे रात्र्युपिते वीजं सूर्यावर्तस्य दापयेत् ।  
कर्पं त्रिकटुकस्याऽपि त्रिकर्पं चूर्णसमुत्तम् ॥ १५८२ ॥  
मधुनिपलसयुक्तं यथाश्रि चोपयोजयेत् ।  
अशसि कामला कुष्ठ पाण्डुरोग कर्मांस्तथा ॥ १५८३ ॥  
वर्हि गुल्मोदरं शूल विशोपात्परिणामजम् ।  
शोधाधिहन्ति सर्वाश्च विस्तपाम्नाऽथ सशय ॥  
पतलोहामृतं नाम सर्वव्याधिषु पूजितम् ॥ १५८४ ॥  
र का अशोऽधिकारे ।

भाषा—पर्वतकादोष दूरकरनेके लिये १२ पल कोलाके  
बारीकपत्रोंको गिलोय ईसराज रत्नमाला (रत्ननोत),  
त्रिफला ग्वालीस्ता (मराठी) गाडुवा तुम्बल अगर नीम  
कीछाट इनके यथासम्भव स्वरस अथवा हाथोंमें स्वेदितकर  
१८ टुकड़ बनाय गण्डीर (कोङ्गान्दल ५) कीजककल्ले  
लेपकर धूममें सुखाकर अग्निमें छालकरके कोङ्गान्दलेहीरसमें  
सुभावे । इसीतह जगतकबारीकचूर्ण न होजाय तबतककरे ।  
एकरात्रिकेबाद रसमेंसे चूरेको निकालकर बारीकपीसकर उसमें  
हुहुर १ कर्प और त्रिकटु ३ कप तथा मधु १ पल मिलाकर  
रखछोड़े । इसमेंसे अतिबलके अनुसार १ मासेकीमात्रा खानेसे  
क्वातीर कामला कुष्ठ पाण्डु त्रिभि मदाभि गुल्म उदर  
शूट परिणामशूल और शोष इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३१७ ॥

३१८ लोहेश्वरोत्सः

ताम्राऽऽखड्गरसकनागलोहाऽऽल्लोमकम् ।  
गन्ध शिला चैकमागा सार्धभागस्तु सूतक ॥ १५८५ ॥  
सम्पक् चूर्णहितं मर्धमेकादशदिनं भृशम् ।  
परण्डभृङ्गनिर्गुण्डीभृङ्गाधुसूरकन्यका ॥ १५८६ ॥  
शिरनेत्रं तुषीं द्रेका पाण्डी मुमला रवि ।  
अथ पुष्पीशङ्खपुष्पीगान्धारी गजगुण्डिका ॥ १५८७ ॥  
गोमी त्रेजोवती नीलरुण्डी च पर्यरी तथा ।  
काकमाची कामरुण्डीकर्वाणी तालमूलिका ॥ १५८८ ॥  
सहदेयी कास्पदी त्रिपरी च त्रिनेत्रकम् ।  
रत्नमागं च गोरक्षी चर्मरद्धारसेरत ॥ १५८९ ॥  
शापयित्वा पाचयेत्तद् द्वात्रिंशं महाराशिता ।  
पुन सर्वं समादाय तदेकादशमानकम् ॥ १५९० ॥  
तालसत्त्व सोमसत्त्वं शिलासत्त्वञ्च तन्तमम् ।  
तृतीयादाश्रयणेन रसेरपा विमर्दयेत् ॥ १५९१ ॥  
मार्कवस्तुलसी कण्टकारी च सहदेयिका ।  
अर्कशीरेखियाम तु शापयित्वा निपाचयेत् ॥ १५९२ ॥  
यामपोडशकं काचकृप्या पाण्ड्यं तथा ।  
लोहेश्वररसाऽयं स्यात्सर्वव्याधिहर पर ॥ १५९३ ॥  
र का, रत्नमागधिकारे ।

भाषा—ताम्र, पीतल, वज्र, खपरिया, नाग, लोह, हरिताल, सोमल इनकी भस्म, शुद्ध गन्धक और मैसिल १-१ भाग, पारदभस्म १॥ भाग लेकर सबका चारीकचूर्णकर ११ दिनतक सूर्यामर्दनकर एण्ड, भंगरा, निगुण्डी, मांग, चतुरा, धीकुंवार, खास, चूपा, वकायन, पाटला, मुसली, आक, अन्या-हली, राहाहली, बुद्धोपा, हाथीशुण्डी, वनगोमी, तेजबल, नीलचण्डी, धवई, मकोय, वाकनासिका, वांखलेखसा, ताल-मूली, सहदेवी, काकजहा, मोरखेल, त्रिनेत्र (हृत्पुलकिलकिल), रत्नमाला (रत्नजोत पं.), मोरखण्डो, आवल इनसबके यथा-सम्भव स्वस्व अपना हाथोंसे मर्दनकर सुपाकर आतशीशीशीमें डाल ३२ पहरकी ज्वरिदेव । स्वाहाशीतलहोनेपर समस्तको निकालले । फिर इसमेंसे ११ भाग, हरिताल, सोमल और मैसिलसत्त्व येतीनों ११ भाग और शुद्धगन्धक सबसे तृतीयाया मिलाकर भंगरा, तुलसी, भट्टकट्टिया, सहदेवी, आककाष्ट इन-सबमें ३-३ पहर मर्दनकर ६-७ कपडमिरीदीहुई आतशीशीमें डालकर घालकायक्रमे रत्न शीशीकामुह बन्दकर १६ पहरकी आवदे । स्वाहाशीतलहोनेपर निकालकर फिर भंगरे बगैरकेरसमे मर्दनकर १६ पहरकी आवदे । स्वाहाशीतलहोनेपर निकालकर रत्नछोड़े । इसमेंसे १-१ चावलकी मात्रा रोगोचितापुनानकेमाध देनेसे यह समस्तव्याधियोंको दूरकरताहै ॥ ३१८ ॥

### ३१९ वङ्गचन्द्रपारदगुटिका

वज्रतीक्ष्णौ समौ कृत्वा ध्माप्यते यज्रमृषया ।  
वज्रमुच्चारयेत्सम्पक् तृतीयाङ्गारेः प्रयत्नतः ॥ १५९४ ॥  
अनेनैव प्रकाशेण त्रिगुणं वाहयेत्ततः ।  
धीर्जं पापापाणं कृत्वा सत्तं पलमितं भवेत् ॥ १५९५ ॥  
मर्दयेत्सम्पक्काग्रये मर्धमेधं विशोषयेत् ।  
गोलस्थस्थेदने कार्यमहोमिः सममिस्तथा ॥ १५९६ ॥  
निफलाकाधमभ्ये तु त्रियामैः स्वेदयेत्तुषीः ।  
कुमार्याः स्पर्सेनेव भृङ्गराजमेन हि ॥ १५९७ ॥  
भृङ्गरासेन च तथा त्रिदिनं स्वेदयेदनैः ।  
परेकेनौषधेनैव फाचकृष्यां निवेदायेत् ॥ १५९८ ॥  
भूमिस्थां मासयुग्मेन पश्चादेनां समुद्धरेत् ।  
यत्नं मृतवरं प्राप्यं शुभचन्द्रसमानमम् ॥ १५९९ ॥  
सुरस्या कुष्ठे सप्त्यङ्गवज्रनिर्मं चपुः ।  
कामिनीनां शतं गच्छेद्वलीपलितार्जितः ॥ १६०० ॥  
र.मु., रसायने ।

भाषा—यज्ञ और पोटाद समभागलेकर वज्रमृषामें रत्न धमनकर । वज्रकेजन्मानेन उक्ताही दुरा टालकर जजये । शुभराद तिगुनी वज्रसे जजानेये यह तीक्ष्ण वज्रबीज देवार हुआ । इसमेंसे १ वषं बीज और १ वज्र सुसुक्ष्मपारा रातमें बाउर पीतुंवारयेरसे ७ दिनतक मर्दनकर गोलावया ४ तद मलनलेकादेमें पोष्टी बनाय पीतुंवारके रयने ७ दिनतक स्वेदनकर । फिर ३ पहर त्रिगुणाकाधममें स्वेदनकर पीतुंवार, भंगरा और मांगदेरतोसे ३-३ दिन स्वेदनकर बाचहीतीक्ष्ण

डालकर १-१ औषधिकारसभके २-२ महीने ज्जमीनमें गाड़दे । ऐसा करनेपर यह निर्मलचन्द्रमाकीतरह बढ़होजायगा । इसको मुहमें रखनेसे शरीर बलीपलितमें रहितहोकर वज्रके समान मजबूत होजाताहै । और बहुतमोक्षयोगेसाय रमण-करनेपरभी विभीतहकाविकासहोहोता ॥ ३१९ ॥

### ३२० वङ्गयोगः ( प्रथमः )

पूतीकस्वरसं वाऽपि पिवेद्वा मधुना सह ।  
पिवेद्वा पिप्पलीमूलमजामूत्रेण संयुतम् ॥  
सप्तरात्रं पिवेद्दृष्टं त्रपु वा दधिमस्तुना ॥ १६०१ ॥

\* सु.सं., विमिरोगे ।

टि०—अत्र दृष्टमित्यनेन न केवल वर्षदिवसा दापयेत् विन्तु बह्वृत्ताने द्रावयित्वा अत्यल्पद्विप्रक्षेपे कृत्वा निम्बकाष्टादिना वर्षयेत् । पूर्वदेव दधि क्षीणे त्रपुणि च शुक्ला याते पुनरपि दधि दत्त्वा वर्षयेदिति निरन्तर सप्तरात्रमर्थास्तथाहोरात्र वर्षणेन भस्म निष्याद्य दधिमस्तुना यथाशिवल दद्यादित्यभिहितम् ॥

भाषा—तैलादिकमें शुद्धकियेहुए वज्रको गलाकर दही अथवा दहीकापानी देकर नीमके ताने ढण्डेसे ७ दिनरातमर्दनकर भस्म बनाले । इसमेंसे ३-३ रतीकीमात्रा मधुनेसाथदेकर शुद्धरज्जरास अथवा पिपलामूलकी चकरीकेसूत्रकेसाथ अथवा दहीकातोड़ पीनेसे तमाम विमिरोग नष्टहोताहै ॥ ३२० ॥

### ३२१ वङ्गयोगः ( द्वितीयः )

शाल्मलीत्वग्रसोपेतं सक्षौद्रं रजनीरजः ।  
वङ्गभस्म हरेग्मेहात् पञ्चानन इव द्विपात्र ॥ १६०२ ॥  
रसायनं, प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—मोचरस अथवा सेमलकी छालकारत, हल्दीकाचूर्ण और वङ्गभस्म ३ रती मिलाकर शहदेमें छेनेगे यह समस्त प्रमेहोंको नष्टकरताहै ॥ ३२१ ॥

### ३२२ वङ्गयोगः ( तृतीयः )

वङ्गभस्मसमं शुद्धं शिलाजत्वमृतोद्भवम् ।  
सत्त्वं सितोपलेनाऽथ मधुना सह मर्दयेत् ॥  
त्रिमासं भक्षयेन्नित्यं मृत्रापातनिवृत्तये ॥ १६०३ ॥

र.प्र., मृत्रापाते ।

भाषा—वङ्गभस्म, शिलाजीत, किलेयगरस सममभाग लेकर मधुमें दूनी मिश्रीमिलानर रमजोड़े । इसमेंसे ३-३ मास भक्षुंकेसाय सेवनकरनेसे समस्त मृत्रापात निरासहोवेहै ॥ ३२२ ॥

### ३२३ वङ्गयोगः ( चतुर्थः )

वङ्गाऽममयनागाऽन्नं नागं चन्द्रं केपलम् ।  
मेहरोगे प्रयोक्तव्यं शिलाजतुसमन्वितम् ॥ १६०४ ॥  
र.मं, र.च, र.क, र.सु, प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—वङ्गऔर अन्नभस्म ४परा नाग और अन्नभस्म अथवा शुष्क २ नाग और वङ्गभस्म समभागमिलानीतोसाय सेनेगे यमगन्धमेद नष्टहोवेहै ॥ ३२३ ॥

## ३२४ वज्ररसायनम्

यज्ञमसमं कान्तं व्योममसम् च माक्षिकम् ।  
मर्दयेत्कन्याकामोभि निम्बपत्ररसैरपि ॥ १६०५ ॥  
भूपालावर्तमस्माऽथ चिनिःक्षिप्य समांशकम् ।  
गोमूत्रकशिलाधातुजलैः सम्यग्विमर्दयेत् ॥ १६०६ ॥  
ततो गुग्गुलुतोयेन मर्दयित्वा दिनाऽष्टकम् ।  
विशोष्य परिचूर्ण्यऽथ समभागेन योजयेत् ॥ १६०७ ॥  
भृष्टवृक्षलनिर्यासं वाङ्कुचीबीजचूर्णकैः ।  
ततः क्षिपेत्करण्डान्त विधाय पटगालितम् ॥ १६०८ ॥  
गोतमपिष्टरजनीसारेण सह पाययेत् ।  
क्षतुभिर्वर्षैस्तुल्यं रस्यं यज्ञरसायनम् ॥ १६०९ ॥  
निश्चितं तेन नश्यन्ति मेहा विशतिभेदकाः ।  
शालयो मुद्गरपञ्च नयनीतं तिलोद्भयम् ॥  
पटोलं तित्तुण्डरीं तत्रं पथ्या प्रशस्यते ॥ १६१० ॥  
र. च, रसायने ।

भाषा—यज्ञ, कान्त, अप्रक, और स्वर्णमाक्षिकमस सम-  
भागलेकर घीकुंवार और निम्बपत्ररससे १-१ रोज मर्दनकर  
तीनोंकी बराबर साजवर्दीकमस मिलाकर गोमूत्र और शिला-  
जीतकेप्रवसे १-१ रोज मर्दनकर मिलोयबगैरहकेसाथ हाथकर  
द्रववनाएहुएगुलसे ८ दिन मर्दनकर सुखाकर धीमे सिराहुआ  
बबूलका गोद और बाकुची समभागमें मिलाकर खीसीमें रख  
छोड़े । इसमेंसे १२-१२ रत्तीकीमात्रा पायरीछाछसे पिली-  
हुईहल्दीकेसाथ लेनेसे अवश्यही २० प्रकारके प्रमेह नष्टहोते  
हैं । काबल, मंगनीदाल, मूखन, तिलका तेल, परबल, कड़वी  
कुन्दल, छाउ बैसव हितकरहै ॥ ३२४ ॥

## ३२५ यज्ञाज्वलेहः ( प्रथमः )

यज्ञमसम् द्विषलञ्च लेहयेन्मधुना सह ।  
ततो गुडसमं गन्धं भृष्टयेत्कर्ममात्रकम् ॥ १६११ ॥  
गुडूचीसत्त्वमपचा शर्करासहितं तथा ।  
सर्वमेहहरो यज्ञाज्वलेह उत्तमः स्मृतः ॥ १६१२ ॥  
र स, र. बि, र सि., रसायनतं, र. का, र. सु, घ,  
प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—यज्ञमस ३ रत्तीसे ६ रत्तीतक मधुकेसाथ लेकर  
शुद्धगन्धक और पुरानागुड समभाग अथवा मिलोयकासत्त्व  
बराबरकीमात्राकेसाथ मिलाकर १ तोला लेनेसे समस्तप्रमेह  
नष्टहोतेहै ॥ ३२५ ॥

## ३२६ यज्ञाज्वलेहः ( द्वितीयः )

मारितं शपुसं सीसं हरिणं शृङ्गमाहुलम् ।  
कार्पासवाङ्कुचीतण्डः माक्षिकञ्च प्रमेहजित् ॥ १६१३ ॥  
पिचुमन्दस्य निपासं धात्रीपात्रेण पेपितम् ।  
शिलाधातुसमायुक्तं शुद्धमेहविनाशनम् ॥ १६१४ ॥  
य रा, शुद्धमेह ।

भाषा—यज्ञ, नाम, हरिणकाष्ठ इतरीमसमें, अड्डोलेक-  
धीन, विनोलेकीमीची, बाकुची, भैरवीछाछ अथवा आतलेक-

वाथसे पिसाहुआ नीमकाफोंद और शिलाजीत इनयोगोंमेंसे  
१-१ अथवा समस्त एकत्रितकर लेनेसे सम्पूर्णप्रमेह तथापास-  
कर शुद्धप्रमेह नष्टहोताहै ॥ ३२६ ॥

## ३२७ यज्ञाष्टकम्

रसं गन्धं मृतं लीहं मृतरूपञ्च धर्परम् ।  
मृताभ्रकं मृतं ताम्रं सर्वतुल्यञ्च यज्ञकम् ॥ १६१५ ॥  
पुटेद्गजपुटे विद्वान् स्वाङ्गशीतं समुद्वरेत् ।  
रक्तद्वयप्रमाणेन मधुना लेहयेन्नरम् ॥ १६१६ ॥  
निशाचूर्णं क्षौद्रयुतं पिबेद्वाजीरसं हतु ।  
यज्ञाष्टकमिदं स्यात् महादेयप्रकाशितम् ॥ १६१७ ॥  
प्रमेहाश्विदार्ति हन्यादामदोषं विसृष्टिकाम् ।  
विषमज्वरगुल्माशौमातीसारपित्तजित् ॥  
धौर्वैद्युर्दि करोत्याशु सोमरोगनिर्हणम् ॥ १६१८ ॥  
भै. र., प्रमेहे ।

भाषा—शुद्धगारा और गन्धक, लोह, रजत, धर्परिया,  
अभ्रक और ताम्रमस येसन समभाग, इनतुल्यकीबराबर यज्ञ-  
मस लेकर धौर्वैद्युत् की नीलवर्ण कज्जलीकर सन एकजगह  
शुष्कमर्दनकर प्रमेह और ज्वरहर औषधोंमें ६-७ रोज मर्दन  
कर गोलाबनाय सुखाकर शरावमपुटमें बन्दकर गजपुटकी  
आचद । स्वाङ्गशीतलोनेपर निकालकर रगडोड़े । इसमेंसे २-२  
रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथलेकर १ मासेसे ३ मासेतक हल्दीका-  
चूर्ण और मधु मिलाकर १ या २ तोले आलेका स्वरसपीवे ।  
इससे २० प्रकारकेप्रमेह, आमदोष, वैज्ञा, विषमज्वर, गुल्म,  
बवासीर, मूत्रापात, अतिमार, पित्तविकार, बीदेहास, सोमरोग  
इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३२७ ॥

## ३२८ यज्ञेश्वरसः ( प्रथमः )

चित्राश्वारेण संसिद्धं यज्ञं सार्धचतुपलम् ।  
तद्वस्मान्तं तालकस्य पलाङ्गिर्द्विः पुनःपुनः ॥ १६१९ ॥  
कन्याद्विभक्तिकां शुष्कां पुटेद्गजपुटेन च ।  
निगुञ्जं सेवितं युक्त्या सर्वमेहहरे परम् ॥ १६२० ॥  
र. का, प्रमेहे ।

भाषा—यज्ञकी तैलतकादिमें शुद्धकर कड़ाहीमें गलाकर  
इमलीके क्षाररा प्रोषेपदेकर नीम अथवा बन्जुली ताजीलक-  
झीसे रगडताजाय । जब तमाम यज्ञका धुगहोजाय उससमय  
क्षार ढालना बन्दकरदे और एणपहरतक कड़ी आचदेताहुआ  
ढण्डेमें चलाताजाय । फिर तमाममसको इनप्रकार ऊपरसे  
लाहेंकेछोटेमें डककर ४ पहरकी कड़ी आचदे । स्वाङ्गशीतल-  
लोनेपर निगालकर पानीढालकर चलादे म्थिर होनेपर पानीको  
नितारकर दूसरापानीमर्दे । इसतरह ३-४ बारकरनेगे इमलीका  
क्षार तमाम निश्चलायाया फिर धूपमें मुसाकर एकपके शुद्धरि-  
तालका यादीकचूर्ण ढालकर धोड़ेवाक्रेसे १-२ रोज मर्दनकर  
मुसाकर शरावमपुटमें बन्दकर गजपुटकीआचदे । इसप्रकारज-  
तक यज्ञकी मरचनेमेंतद्वस्मान्तम् ॥ होजाय तबतक बारम्बार

करताया । जव विदुश्चभस्म तयार होजाय तय उसमेंसे १ रतीसे ३ रतीतकरी मात्रा मधुकेसाथ खिलाकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको दूरकरताहै ३२८

### ३२९ वज्रेश्वररसः ( द्वितीयः )

रसभस्मसमायुक्तं चङ्गभस्म प्रकल्पयेत् ।  
अस्य गुञ्जाद्वयं हन्ति मेहान्दोषसमन्वितम् ॥  
गुञ्जामूलं पिबेत्क्षीरैरनु तस्य प्रदान्तये ॥ १६२१ ॥

र. सं., र. चि., व. यो. त., र. क. ल., घ., भै. र., र. सु., र. र., रसायनसं., टो., र. क., र. चं., चि. र. म., वै. र. चं. द., यो. म., वै. चि., र. र. दी., चि. क. यो. र., नि. र., यो. त. व. रा., र. र., भै. सा., र. (सा.), र. पा., चि. सा., र. र. यो., र. म. ड., र. म. प्रमेहाधिकारे ।

टि०—यो. र., नि. र., व. रा., वै. चि. एतु तथा र. र., रसायनम. एतयोर्विस्थाने प्रमेहारिरस इति नाम । भगवत्साधारणवृत्तवर्धितायां माणिक्यवन्दीवरमावगौर च अस्य प्रयोगस्य भातनिषेवणम् साव तु मृतावयवम् निषिध्य विहितनिषिद्धम् । रमाष्ट्रे “मुद्रामल्लक्षणेन पथ्य देय सनकम् । निलिपिष्यात् तलेन फला दद्यात् हिङ्गुम् ॥ धृतं बहु न दद्यात् निलैलञ्च भोजयेत् । मार्कं पूर्णमादाय सण्ड सारदेक्षि ॥” इत्यधिक पाठोऽस्ति । र., र. यो. पन्थो. “वज्रभस्म रसभस्मना सम मर्दितं कुम्भमौलीनां दिनम् । क्षौद्रयुक्तमधुमेहनाशनं बह्वधुमशितं विमलम् ॥” शास्त्रं मधुधुन पथः चिकित्साजनं मयूरं मधुद्रवम् । कुण्डलीरसं तु देयं रात्रिपूर्वमथवा मधुना वा ॥” इति पाठोऽस्ति तस्याऽन्यत्रैवास्तभावः कर्णवीर्यं कुरुभोग्यं दैर्घ्याऽप्यनुपुन्येन क्षायमानः, द्विडाऽनुपानानामपि तथैव विपत्तिरिति सुषेभिर्विभावनीयम् । “शुक्रस्य रमरास्य भस्म बह्वस्य भस्म च । अर्जुनस्य त्वच सर्वमस्य शास्त्रमिषै रसैः ॥ मर्दयेदाम्बु पत्रं कुम्भां टुङ्गमिनां बध्यम् । मधुपेदतु मसौद्रं विच्छेद्यचमित्रं रमम् ॥” इति पाठो वैदिक्यादीनाम्ना रमरास्यैवावलि स च रमावताररमवोधच. ध्दौदपयतिने पाठेन बहुलागे समानः केवलं तयोर्गुणस्य भावनाऽस्ति रमकामनी तु सर्वमममगुणत्वचूर्णं मिश्रय शास्त्रमिषैर्भावनोऽस्ति तयोस्तु शास्त्रमिषैर्गुणानुपानेन गुह्यं इत्यपि बहुलागे समता, अतः रमरास्यैवास्तभावः कर्णवीर्यः । अनेनप्रकारेण रसमपानेन शुभा. बहवाऽप्यस्ति पाठान्तरं न कर्णवीर्यं पृथ प्रमेहादकत्वात् । रमरास्यशुभाके वातमेहान्तराभ्यां पृथै रमो निदिधितस्ति तत्र अथारसेन भावना अधिवाऽस्ति अनेन वनमानसं जवारसस्य भावनायामनुष्ठितायां क्षायमानात्तस्याऽन्यत्रैवास्तभावोऽस्ति । रमचूर्णं शुभद्रव्यं विना तु पादद्रवमपि स्वल्पतया स्थापितं न तु प्रमादं भ्वाऽस्ति ॥

भाषा—पाद और रसभस्म समभाग मिलाकर अथवा बह्वधु पादभस्म करके १४०० । इसमेंसे २-२ रतीकीमात्रा मधुकेसाथ मिलाकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको दूरकरताहै । रागकर १ मासेमें ३ मारो १४ घंटेरगुणकीज दूधमें पित्तकर ऊपरसे पिजानेसे विशेषलाभहोताहै ॥ ३२९ ॥

### ३३० वज्रेश्वररसः ( तृतीयः )

यहभस्म रसं गन्धं दीप्यं कर्पूरममृकम् ।  
कर्पूरं मानमेघं मृताङ्गि ह्रिमोक्तिकम् ॥ १६२२ ॥

केशराजरसे भाव्यं द्विगुञ्जाफलमानतः ।  
प्रमेहान्विदशतिस्त्रैव साध्याऽसाध्यमथापि वा ॥ १६२३ ॥  
सूत्रकृच्छ्रं तथा पाण्डुं धातुस्यञ्च ज्वरज्वयेत् ।  
हलीमकं रक्तपित्तं वातपित्तकफोद्भवम् ॥ १६२४ ॥  
ग्रहणीमामदोषञ्च मन्दाग्निममरांचकम् ।  
एतान्सर्वाग्निहस्त्यागु वृक्षमिन्द्राग्निं यथा ॥ १६२५ ॥  
वृहद्वज्रेश्वरो नाम सोमरोगं निहत्यलम् ।  
यदुभयं बहुविधं सूत्रमेहं सुदारुणम् ॥ १६२६ ॥  
सूत्रातिसारं कृच्छ्रञ्च क्षीणानां पुष्टिवर्धनः ।  
ओजस्तेजस्करो नित्यं स्त्रीषु सम्पृक्पुष्यते ॥ १६२७ ॥  
यलवर्णं करो रूयः शुक्रसञ्जनः परः ।  
छागं वा यदि वा गन्धं पयो वा दधि निर्मलम् १६२८  
अनुपानं प्रयुज्जीत बुद्धा दोषगतिं भिषक् ।  
दद्याच्च घाले म्रिधे च सेयनार्थं रसायनम् ॥ १६२९ ॥  
र. सं., र. चि., घ., भै. र., र. सु., र. च., र. कौ., प्रमेह ।

भाषा—वज्रभस्म, शुद्ध पाद और गन्धक, रजतभस्म, रसपूर और अन्नकमस्य १-१ कप, सुवर्ण और मोतीभस्म ४-४ मासे लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धकी नीलार्ग-कजलीमें मिलाय कालेभंगेकेरसमें १-२ रोजमर्दनकर २-२ रतीकी गोल्या बनाकर रसछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे साध्य अथवा असाध्य २० प्रकारके प्रमेह, सूत्रकृच्छ्र, पाण्डु, धातुस्यञ्च, हलीमक, रक्तपित्त, वात, पित्त और कफोद्भव ग्रहणीदोष, आमदोष, मन्दाग्नि, अग्नि, सोमरोग, यदुभय, नानातरहका भयंकरसूत्रमेह, सूत्रातिसार, सूत्रकृच्छ्र धातुक्षीणता, ओज क्षय, स्तनभोगाभाव, यलवर्णनाश, अग्नि, शुक्रक्षय इनसबको यह नष्टकरताहै । इसमें पकरी अथवा गायकादूध अथवा दही दोषपतिकों समझकर देवे । बालक और बुढ़ोंको देनेसे यह रसायनका काम करताहै ॥ ३३० ॥

### ३३१ वज्रेश्वररसः ( चतुर्थः )

वज्रेश्वरं प्रयस्यामि रसं क्षीहोदरापहम् ।  
मन्दाग्निघातेन शस्तममृवृद्धिचिद्योजनम् ॥ १६३० ॥  
अनूयतेन प्रकारेण रसभस्माग्निकीः क्रियाः ।  
रुन्वा सृतं समादाय रस्यमप्ये विनिःश्रिपेत् ॥ १६३१ ॥  
साधारणोक्तमार्गेण कुटिलं भस्मयेदुधः ।  
पश्चात्तत्र प्रदेयानि पुटानि दत्ता सहयया ॥ १६३२ ॥  
क्षीरणं मानोः सम्मयं कुकुटाख्यानि यदातः ।  
पलमाने मृतभस्मन्येतन्मानञ्च यद्गजम् ॥ १६३३ ॥  
पलञ्च द्वे पले ताम्रास्ताधारणमृताद्भवेत् ।  
सामान्यशुद्धं गन्धञ्च द्वे पले सर्वमेकनः ॥ १६३४ ॥  
मर्दयेद्भास्करमयैः पयोभिर्दियमप्रयम् ।  
तं मृतं पुटयेत्पश्चाद्द्व्यङ्गिजैरपोषले ॥ १६३५ ॥  
मृषायां तं रसं तिष्ठन्वा कुक्कुटाप्यं पुटं ददेत् ।  
एष वज्रेश्वरो नाम्ना रमेन्द्रः सप्रकाशिनः ॥ १६३६ ॥

गुल्मग्रीहोदरच्छेदश्रीधरारीधृतो मुचि ।  
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन रसेन्द्रं सम्प्रयोजयेत् ॥ १६३७ ॥  
घसोर्भेदस्य चूर्णेन घृतेन सुरमीमुवा ।  
पर्यञ्च पूर्वपल्ल्यान्तीहगुल्मोदरच्छिदे ॥ १६३८ ॥  
रसाल, दो, उदराधिकार ।

भाषा—शुद्धकरके मलमवियाहुआ पारा और साधारण शङ्खभस्म समभागलेकर बारीक चूर्णकर आकनेदूधसे मर्दनकर गुलाकर कुम्भद्वयुष्की आचदे । ऐसे १० आच देनेकेबाद एक पल शङ्खगुल्मपारदभस्ममें घट्टभस्म १ पल, ताम्रभस्म और शुद्धान्धक १-२ पल मिलाकर बारीकचूर्णकर आकने दूधसे ३ रोज मर्दनकर कुम्भद्वयुष्की आचदे । स्वाश्रसीतल होनेपर वट और कमलके फलोंकेरससे मर्दनकर १०-१० कुम्भद्वयुष्के । इसमेंसे २-२ रत्तीकीमात्रा पुनर्नवाके चूर्ण और गोघृतकेसाथ देनेसे यह मन्दाग्नि, अन्धहृदि, गुल्म, प्लीहा और उदररोगोंको नष्टकरताहै ॥ ३३१ ॥

### ३३२ वज्रेश्वररसः ( पञ्चमः )

तुल्यांशं रसताच्छेदमगगनं नागञ्च लोहं तथा,  
ताप्यं चिद्रुममीकिकञ्च रसकं चङ्गं समं निक्षिपेत् ।  
सर्वं गोक्षुरयानरीसमुशालीरम्भामिदारीधरी-  
गोबुध्ने मुशालीधुवारिमृद्वितं स्यात्सप्त धारान्युष्क ॥  
विशन्मेहगर्णं निहन्ति सहसा वज्रेश्वरोऽयं महान्,  
सद्यो वैद्यहिताय भैरवसमः श्रीपूज्यनाम्नोदितः ॥ १६३९ ॥  
र. पा, प्रमेहाधिकार ।

भाषा—पारा, रजत, सुवर्ण, अभ्रक, नाग, लोह, सोनामारी, विद्रुम, मोती, खपरिया और वज्र इनकीभस्में समभागलेकर गोखल, केवाच, सफेद मुशली, कैलाशन्द, विदारी, धातवर, गोबुध्म, बाली मुशली, ईष इनप्रत्येकके रसोंसे ७-७ भावनाएँ देकर छुछाकर रखलोके । इसमेंसे २-२ रत्तीकीमात्रा समय अथवा उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह तमामप्रमेहोंको नष्टकरताहै ॥ ३३२ ॥

### ३३३ वज्रेश्वररसः ( वासुकिमूषण ) ६

सूतभस्म वज्रभस्म भागेकं सम्प्रकल्पयेत् ।  
गन्धकं मृताप्रञ्चं प्रयेञ्च चतुष्पलम् ॥ १६४० ॥  
अर्केश्वरीं दिनं मयं सर्वं तद्रोलकीकृतम् ।  
रज्जा तद्गुहरे पक्त्वा पुटेकेन समुद्धरेत् ॥ १६४१ ॥  
एष वज्रेश्वरो नाम प्लीहगुल्मोदराञ्जयेत् ।  
घृते गुञ्जाद्वयं लेहां निष्का श्वेतपुनर्नवाम् ॥  
गवां मुखे पिपेष्ठान् रजनीं या गवां जलेः ॥ १६४२ ॥  
र रं, र क ल, र र स, र कौ, र चि, १ यो त, नि र,  
प, र मु, र र, र कौ, र म, नि सा, रसायन, दो, र  
क, भै सा, र (मा), व रा, र का, यो म, वै चि, र, र-  
कौ, ना वि, र म मा, र पा, भै र, रसचि, र, दी., र. य,  
यष्टप्लीहाधिकार ।

टि०—यो म “पुष्परोते रक्तश्लेष्मीयु दमाद्गु रसम्”, इत्यधि-  
पाठ । र र, र क, यो म, भै र, रसचि, र दो, र म, एष ग्रन्थेयु  
उदराधिकार “खेन वज्र तु सम नियोज्य तत्पुल्लगुलेन च गन्धकेन ।  
विमद्वेदकेसेन याम मृता च सतिष्प पु र दीत । बासरसेस परिभा  
वयेच रसो भवेद्गामविभूषणोऽयम् । प्लीहश्च शुभ्रमल च शान्तवेज्य  
नक्षत्र दषादमुच्येत्युक्तम् ॥ अर्कस्य त्रयाणि समीकानि लिप्त्वा पुष्टिवा  
क्षनुपायेत ॥”, इति रसो निहितोऽस्ति सोऽश्वरसोऽभिभवन्तर्भवति ।  
पृथक् पाठस्थापनस्य कारणे तु उक्तमन्धकारा एव प्रष्टव्या ।

भाषा—पारे और वज्रकीभस्म १-१ पल, शुद्धगन्धक  
और ताम्रभस्म ४-४ पल लेकर बारीकचूर्णकर आकनेदूधसे  
एकदिन मर्दनकर गोखलनाय मूषरयत्रमें पकावे । स्वाश्रसीतल  
होनेपर रखलोके । इसमेंसे २-२ रत्तीकीमात्रा पीकेसाथ  
लेकर ४ मासे सफेदपुनर्नवाकीजह अथवा हल्दी गोमूत्रकेसाथ  
पीनेसे प्लीहा, गुल्म और उदररोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३३३ ॥

### ३३४ वज्रेश्वररसः ( सप्तमः )

वज्रमृतकयोः कृत्वा सारणां वन्यकाट्टयैः ।  
सम्मर्द्य घटिकाः कृत्वा पाचयेत्काचभाजने ॥ १६४३ ॥  
यावच्चन्द्रनिभः शुभ्रो वज्रेश्वरसो गुणः ।  
पाण्डुप्रमेहद्वीथ्यैवकामलादिकनाशनः ॥ १६४४ ॥

नि र, र चि, र च, वै चि, पाण्डुरोगे ।

टि०—यद्यपि रसश्लेष्म प्रवारविरोधेन धातुविशेषनमेकनप्रवा  
रस्य साधारणश्वेन व्यवहारस्तथाप्यत्र गौगन्धान् समेक्षणमात्रत्वं  
यथिष्ठेयम् ।

भाषा—हरितालकेयोगसे माखेणु वज्र और शुद्धपारेसी  
मिलाय धीउत्तारकेरससे १-२ दिन मर्दनकर गोखिया बनाय  
छुछाकर आतसीशीधीमें डालकर मुँहन्दकर बालुकायत्रमें  
रख ४ पहरकी आचदे । स्वाश्रसीतलहोनेपर निकालकर देखे  
इसकारण एकदम खपेदहोनाय तो सिद्ध समझे नहीं तो फिर  
पूर्ववत् मर्दनकरे । जब मक्खनकीतरह सफेद पारेकीभस्म  
होनाय तब निकालकर रखलोके । इसमेंसे २-२ रत्तीकी मात्रा  
रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह पाण्डु, प्रमेह, दुर्बलता,  
कामलाप्रभृति रोगोंको नष्टकरताहै ॥ ३३४ ॥

### ३३५ वज्रेश्वररसः ( महान् ) ८

वज्रं कान्तञ्च गगनं हेमपुष्पं समं समम् ।  
कुमारीरसतो भाव्यं सप्तवारं भिषग्वरेः ॥ १६४५ ॥  
एष वज्रेश्वरो नाम प्रमेहाम्बिदाति जयेत् ।  
मृष्टहृच्छं सोमरोगं पाण्डुरोगं महास्मरीम् ।  
रसायनचटः श्रेष्ठो नागाहुनत्रिनिर्मितः ॥ १६४६ ॥

नि र, व रा, रसायनं, यो र, वै चि, प्रमेहाधिकार ।

भाषा—वज्र, कान्तलोह और अभ्रकभस्म, घनुरेकेयुक्त  
समभागलेकर बारीकचूर्णकर धीउत्तारकेरसमें ७ दिनतक मर्दन-  
कर १-१ रत्तीकी गोखिया बनाकर रखलोके । इनमेंसे १-१  
गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे २० प्रकारके  
प्रमेह, मृष्टहृच्छ, सोमरोग, पाण्डु, अद्याप्य पयरीरोग इसवको  
यह नष्टकरताहै ॥ ३३५ ॥

३३६ वङ्गेश्वररसः ( वृहन् ) ९

मृतं गन्धं मृतं लोहं मृतमग्नं समाशिकम् ।

हेमवज्रञ्च मुका च ताप्यमेवं समसमम् ॥ १६४७ ॥

सर्वेषां चूर्णितं कृत्वा कन्यारसविमर्दिताम् ।

गुञ्जाद्वयप्रमाणेन चटिकां कुरु यत्नतः ॥ १६४८ ॥

वृहद्वज्रेश्वरो ह्येष रक्तमूत्रे प्रशस्यते ।

श्वेतमेहं हस्तिमेहं रुच्छमूत्रं तथैव च ॥ १६४९ ॥

सर्वप्रकारमेहांस्तु नाशयेद्विकल्पतः ।

अग्निवृद्धिं घयोवृद्धिं फान्तिवृद्धिं करोति च ॥ १६५० ॥

क्षयरोगं निहन्त्यागु कासं पञ्चविधं तथा ।

कुष्ठमष्टादशविधं पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥ १६५१ ॥

शूलं श्वासं ज्वरं हिकाम् मन्दाग्निव्यमरोचकम् ॥

क्रमेण शीलितो हन्ति वृक्षमिन्द्राग्निं यथा ॥ १६५२ ॥

भै. र. र सु, प्रमेह ।

भाषा—शुद्ध पात और गन्धक, लोह, अन्नक, सुवर्ण, वज्र, मोती, सुवर्णमाक्षिक इनकी भस्में समभागलेकर पारेगन्धक-फीनीलवर्णकजलीमें मिलाकर पीछेवारकरसे १-२ रोजमर्दन-कर २-२ रतीकी गोलिएं बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे रक्तमूत्र, श्वेतमेह, हस्तिमेह, मूत्ररुच्छ्र प्रवृत्ति समस्तमेह, मन्दाग्नि, शय, पाचप्रकारका कास और श्वास, १८ प्रकारकाकुष्ठ, पाण्डु, हलीमक, शूल, ज्वर, हिक्की, अरुचि, इनसबको यह नष्टकर वान्ति और आयुकीवृद्धिमें करताहै ॥ ३३६ ॥

३३७ वङ्गेश्वररसः ( दशमः )

रस्तेन वङ्गं द्विगुणं प्रगृह्य

पिद्राव्य निक्षिप्य समुद्रजञ्च ।

विमर्दयेदम्लजलेन गोलं

कृत्वा सुसंवेष्ट्य पुटेत तीव्रम् ॥ १६५३ ॥

ततः क्षिपेत्सज्जलपात्रमध्ये

नीरं तु सन्त्यज्य गृहाण सतम् ।

सद्रक्तिगुग्मं मधुना समेतं

वदीत पर्यं मधुरं समुद्रम् ॥ १६५४ ॥

तिलीत्यपिण्डीञ्च विपाच्य तत्र

वदीत हिङ्गं दधि वर्जयेच्च ।

मार्फण्डिकाचूणमपि प्रदेयं

रात्रौ गुटेनाऽपि घृतेन देय ॥ १६५५ ॥

र दी., र. चि, र. क, र. सि, र. का, र. मू, वै मू.,

र. च, रसायनसं., प्रमेह ।

टि.—“समानमागे शुचिताम्रचन्द्रे तथा समान लवण प्रसिद्धम् । शरावको षेदि विशय मुद्रां दरेष्टु उत्स्य यन्माजमिमम् ॥ ततो नवे द्रुस्य विशेषेण यथागुणान् ननु सन्नीयम् । समस्तमेहान्तकमात्रं दापि बासापहारि भस्मनापहारि ॥ शुभस्य दार्व्यमविधानदस्य प्रमत्त नाटीमुखराननीयम् । इदं हि तस्य वटिलस्य सेवां विषय वेदेन मया प्रलभ्यम् ॥” इति पाठो वै मू, र च, रसायनसं, र. सि, एषु ग्रन्थेषु

निहितोऽस्ति परान्तु स मोरश्रेण परीक्षामकृत्वेव साधुवायेन विश्वस्य निहित प्रतीयते, तत्रिदिष्टदिशा मया स्वयमेव द्वित्रवार निरपेक्ष कष्टमन्वमानि, अतोऽप्येन घनेन कष्ट न करणीयमिति विशति । ताम्र-निक्षिप्यसाध्यावस्थता प्रतीयते केन्मृत ताम्र नियुज्य रसो निष्पादनीय इति सर्वं समञ्जस भविष्यति ।

भाषा—शुद्धवज्रको गलाकर वज्रसे आधा शुद्धपाता मिला-कर सेंधेनमकका पूर्ववत् प्रशेषदेकर भस्म तैयारकर जमीरी-प्रवृत्तिके रससे एकदिनमर्दनकर टिकडीबानाय सुखाकर गजपुटकी आचदे । स्वाज्ञघीतलोहोनेपर निकालकर देखे यदि विशुद्धभस्म तैयार होगईहो तो रखलेवे नहीं तो फिर अम्लवर्णमें मर्दनकर आचदे । इसमें नमकमिलाहुआ है इसलिये पानीमें धोकर रखदे । स्वच्छपाणीको नितारकर फेंकदे । इसतरह २-३ बार-करनेसे विशुद्धभस्म अलगहोजायगी । इसे सुखाकर शीशीमें भरकरले । इसमेंसे २-२ रती मधुकेसाथ देकर तिल-कल्को छलमें पकाकर ऊपरसे दे, रात्रिमें आयलकीजड़कीछाल अथवा पुष्पकाचूर्ण शुद्ध अथवा घृतकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको दूरकरता है । इसमें होंग और दहीका निषेध है ॥ ३३७ ॥

३३८ वङ्गेश्वररसः ( द्वादशः )

सत्ताञ्च गन्धं द्विगुणं प्रगृह्य

गन्धेन वङ्गञ्च समं चिमर्द्य ।

स्योदरे बृधरयन्त्रमध्ये

विपाचयेत्तत्र समानभागम् ॥ १६५६

लोहस्य भस्माऽपि नियोजनीयं

विमर्दयेद्गोक्षुरवापिणा तत् ।

गुञ्जाद्वयं शर्करया समेतं

गुडचिकासत्त्वयुतञ्च दद्यात् ॥ १६५७ ॥

मेहाश्लिहन्त्यात्सकलान्संशूल-

न्विचर्धयेद्धानुगणं नितान्तम् ।

स्तम्भञ्च कुर्याद्वनितानिलासे

निजानुपानैः सकलामयप्रम् ॥ १६५८ ॥

र. घ, र क, र बी, प्रमेहाऽधिकार ।

भाषा—शुद्धपात १भाग, शुद्धगन्धक और वज्रभस्म २-२

भाग, लोहभस्म ५ भाग लेकर सबको पारेगन्धककी नीलवर्ण-कजलीमें मिलाय १-२ दिन मोसल्लेकापसे मर्दनकर सुखा-कर रखडोहे । इसमेंसे २-२ रतीकीमात्रा शर्करा और गिलो-यसत्त्वकेसाथ मिलाकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तप्रमेह, धातुस्य, क्षीणशुक्रफल इत्यादिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३३८ ॥

३३९ वङ्गेश्वररसः ( त्रयोदशः )

शुद्धं वङ्गरजोऽथ गन्धरसको स्थाणुर्द्रव्यं तुल्यकं  
धातुस्पाऽर्द्धपिञ्चुं हि ताप्यकनको सीवीरकं मर्दयेत् ।  
आद्राद्भिः पिचुमन्दातपयसा सम्भावयेद्दिशति,  
गोलीकृत्य गुमेऽस्ति तञ्च पुटयेच्छीतं समाकर्षयेत् ॥

यहृद्भ्रामलकीप्रवालमधुना कृष्णामधुभ्यां त्वयो,  
पीतः क्षौद्रयुतामलैः फलरसैर्योज्यो भिषगजानता ।  
विशन्मेहसुदारणाऽधमरिभयान्दुर्मन्त्रहृच्छ्रावयेत्,  
सद्योऽयं हृत्ते यन्मौ सपलितं यज्ञेश्वरो रोगहा ॥ १६६०  
र. ॥ प्रमेहे ।

भाषा—वज्रभस्म, शुद्ध गन्धक, चपरिया, पात और  
सुतिया १-१ कप, बालासुरा ८ माघो, मोनामायो,  
सुवर्ण, सनेदुमरा इनकीभस्में १-१ कप केकर बातीकचूर्णकर  
पोरणगन्धकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय बदरफ और नीमके-  
स्वरसोंसे २०-२० भाकनाए देकर टिकडिया बनाय  
सुखाकर शराबमनुदमें बन्दकर मजपुटकीआंचदे । स्वाज्ञसी-  
त्तहोनेपर निकालकर रखजोडे । इसमेंसे ३-३ रतीकीमात्रा  
आयत्तोंकेपत्तोंके स्वरस और मधु अववा पीपल मधु अववा  
आवले और मधु या अन्य अनुकूल फलरसकेसाथ देनेसे दाहण  
२० प्रकारकेप्रमेह, पपरी, मूत्रहन्त्र और बलीपलित इनसबको  
यह नष्टकरताहै ॥ ३३९ ॥

### ३४० वज्रेश्वररसः ( चतुर्दशः )

रसमेकं त्रयो यज्ञं यज्ञसाम्येन गन्धकम् ।  
मर्दयेद्विभक्तं कुमायाः स्वरसे युधः ॥ १६६१ ॥  
संस्थाप्य गोलकं भाण्डे रोधयेत्सुदृढं मुखम् ।  
पाचयेद्वायुकायध्रे दिनमेकं दृढाग्निना ॥ १६६२ ॥  
स्वाज्ञसीतलमादाय सम्पूज्य द्विजदेवताः ।  
पिप्पलीमधुना युक्तं सर्वमेहेषु योजयेत् ॥ १६६३ ॥  
क्षीराक्षरं योजयेत्पथ्यमनल्पक्षारयुजितम् ।  
रसो यज्ञेश्वरो नाम सर्वमेहनितृन्तः ॥ १६६४ ॥  
नि र, वै चि ( ल ), वै वि, रसायनस, र च, वै क, यो.  
र, वै चि, र पा, प्रमेहाधिकारे ।

टि०—र च रसचण्डानुरितानाम् । वै क, नि र, वै वि  
षु द्वितीयस्थाने चिह्नितानाम् प्रथमस्थाने "शुद्धसुगन्ध गंध  
बहुश्च दिगुण भवेत् । एतत्र मर्दयेत्सर्वं यत्मेहः प्रमेहिणम् ॥ सर्वराम  
धुमयुक्तं पथ्यध्वं क्षारवर्जितम् । एष वज्रेश्वरो नाम सकोहनिवृत्तः ॥"  
इति पाठे दृश्यते परन्तु स वृत्तिः प्रतिभाति, स्वाज्ञी वायुसु चरन्तु  
तस्याऽप्यत्रैवाऽनर्थाव वरणीयः । पाककरणेन श्लेष्मणा शरिररन्ध्रे  
स्थितिं विदग्धि विमर्शनीयम् । रसायनमन्त्रेण द्वितीयस्थाने रसमा  
म्येव नवसारमधिकृतया नियोज्य षोडशमहाराऽग्निना पक्वो योगो  
निष्पादितस्तस्याऽप्यत्रैवाऽनर्थाव वरणीयः । गन्धककरणेन साकं नर  
सारस्मादसि सुतरां जायते भविष्यति । जरामारजाणेन क्षुभरेष्यभावः ।

भाषा—शुद्धपात्रा १ भाग, शुद्धवज्र और गन्धक ३-३ माग  
केकर नीलवर्णकजलीकर पीतुवारकेरसे एकदिन मर्दनकर टिकड़ी  
बनाय सुखाकर शराबमनुदमें बन्दकर ६-७ कपक्षिमिठीदेकर  
वायुकायध्रे एकदिनकी आंचदे । स्वाज्ञसीत्तहोनेपर मादण  
और देवताओंका पूजनकर पीपल और मधुकेसाथ १ रतीसे  
३ रतीतक देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको नष्टकरताहै । क्षीर इसमें  
पथ्यदे सबतरहके क्षारोंसे पठेचके । इसका निरन्तरसेवनकरनेसे  
समस्तप्रमेह नष्टहोवेहे ॥ ३४० ॥

### ३४१ वज्रेश्वररसः ( पञ्चदशः )

शुद्धं तालं शुद्धसर्तं यज्ञं शुद्धञ्च गन्धकम् ।  
ग्राहयेत्समभागेन सूर्येश्वरि विमर्दयेत् ॥ १६६५ ॥  
दिनसप्तकपर्यन्तं मर्दयेद्य निरन्तरम् ।  
काचहृत्पां क्षिपेन्मुद्रां दत्त्वा चैत्र भिषगरः ॥ १६६६ ॥  
द्वादशप्रहरं दद्यान्मन्दाग्निञ्च न संशयः ।  
पुनरेव प्रकृत्यो त्रिधिरप न संशयः ॥ १६६७ ॥  
रसो ग्राह्यः प्रयत्नेन रक्तिकाऽर्द्धं प्रदीयते ।  
ताम्बूलपत्रसंयुक्तं वातत्र्याधि विनाशयेत् ॥ १६६८ ॥  
उन्मादे नष्टुक्तं च वृद्धिहीने च दीयते ।  
कुष्ठं मर्णं ज्वरज्वेव नाशयेद्य विमन्त्रुतम् ॥ १६६९ ॥  
र सु, वातव्याप्यधिकारे ।

भाषा—शुद्ध हरिताल, पात, वज्र और गन्धक समभाग  
केकर नीलवर्ण कजलीकर आचनेदूपसे ७ रोज मर्दनकर सुखा-  
कर ६-७ कपक्षिमिठीदीहूर्दे आतसीशीशीमें भरके मुखबन्दकर  
वायुकायध्रे रख बाह्यप्रहरवी मन्दाग्निसे पकावे । स्वाज्ञसीतल  
होनेपर निकालकर फिर उसीतरह मर्दनकर आंच दे । जबतक  
भस्म सिद्ध न होजाय तबतक इसीतरह आंच दे । सिद्धहोनेपर  
निकालकर रखजोडे । इसमेंसे आधीआधी रती सुवहणाम  
पानमें रखकर देवेसे समस्तवातव्याधि, उन्माद, शुक्लशय,  
मन्दाग्नि, कुष्ठ, मण और ज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३४१ ॥

### ३४२ वज्रेश्वररसः ( वृद्धाद्यः ) १६

यज्ञं रसं ताक्षमयोजभस्म  
सर्वैः समानं गगनं विमृष्ट ।  
गोक्षुररम्भाऽऽमलकीगनाक्षी-  
रसैः पूषण्यासरकं रसेन्द्रः ॥ १६७० ॥  
भाषार्द्धमाधो मधुना गृहीतो  
जपेत्प्रमेहे क्षिरक्षुतिञ्च ।  
कृष्माण्डनीरं ससितञ्च पथं  
कृष्माण्डखण्डेन युतञ्च शाकम् ॥ १६७१ ॥

प्रमेहे क्षयकासञ्च कृच्छ्रं प्रदूरजं रजः ।  
सर्वाग्रोषान्हरत्येष धलोपलितनाशनः ॥ १६७२ ॥  
वीर्यं तेजो यत्नोत्साही रमयेद्रमणीशतम् ।  
अनुपानविशेषेण तसद्रोगेषु योजयेत् ॥ १६७३ ॥  
वज्रेश्वराऽनुपानानि लिख्यन्ते कानिचिन्मया ।  
श्वासे विषमतीक्ष्णरे जातीफलसुजीरके ॥ १६७४ ॥  
मरिचं क्षिप्रमुलानां स्वरसेन समान्यतम् ।  
क्षये दीप्योमये प्रोक्ते करहाटकिरातसी ॥ १६७५ ॥  
अजीर्णे रचनं गुण्ठी प्लीहि गोमूत्रदङ्गुणम् ।  
समुद्धं धातुहानौ च सुरसाधातुखाससैः ॥  
नागवह्नीदलसमं सम्प्रोक्तं ह्यनुपानकम् ॥ १६७६ ॥  
रसायनं, दृष्टे !



**भाषा**—वह, पारा, ताम्र, लोह इनकीमल्ले समभाग, अत्रकभस्म सबकीबराबर लेकर गोखरू, केलेकाकन्द, आवले और इन्द्रायणके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर २ से ४ रत्ती-तकनी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुके-साथ लेकर शकरमिलाहुआ सपेदकोहलेकास पीनेसे समस्तप्रमेह, रुधिरसाव, धयजकास, मूत्रकृच्छ्र, रक्तप्रदर, कली, पलित, वीर्य-तेज और बलकाहास, नपुसकत्व इनसबको यह नष्टकरता है । श्वासमें सोंठ, अतिसारमें जायफलऔर जीरा, शीतपचान-व्याधिमें मरिच और सहिजनकीजड़कास अथवा देशी और छुरासानी अजवाइन, अरुलकरा और चिरायता, अजीर्णमें सचल और सोंठ, प्लीहामें गोमूत्र और मुहागा, धातुशीणतामें गुड़ अथवा तुलसी, शिलाजीत और पोस्तकेडोडे अथवा पानकेरसकेसाथ देवे ॥ ३४२ ॥

### ३४३ वज्रेश्वररसः ( सप्तदशः )

वज्रभस्म त्रयोभागा वज्रपादं रत्नं क्षिपेत् ।  
रसतुल्यं विपं योज्यं विभिस्तुल्यं मृतायसम् ॥ १६७७ ॥  
गन्धकं विपतुल्यं स्यान्मर्दयेद्ब्रह्मजघ्रेः ।  
कृपिकायां विनिक्षिप्य तेजोयन्त्रे तु पाचयेत् ॥ १६७८ ॥  
यामद्वादशपर्यन्तं स्याद्गोतीतं समुदरेत् ।  
देवपुष्पं सकर्पूरं चातुर्जातं फलत्रिकम् ॥ १६७९ ॥  
जातीफलत्रिकं सर्वमेतदेकत्र चूर्णयेत् ।  
सर्वं खल्वतले क्षिप्या भृङ्गद्राघेदिनत्रयम् ॥ १६८० ॥  
मर्दयेन्मधुना गाढं नाम्ना वज्रेश्वरो रसः ।  
प्रमेहेषु च सर्वेषु मूत्रकृच्छ्रे क्षये तथा ॥  
सूत्रोत्पघातारोगेषु गुल्मे सर्वहरः स्मृतः ॥ १६८१ ॥  
रसायनसः, प्रमेहाधिकारे ।

**भाषा**—वज्रभस्म १२ माघे, पारदभस्म और शुद्धवज्र-भाग ३-३ माघे, लोहभस्म १८ माघे, शुद्धगन्धक ३ माघे लेकर सबको मिलाय वारीकचूर्णकर भगैकेरससे एकदिन मर्दन कर सुलाकर ६-७ कपडिमिथीदीहुई आतशीशीशिमैं भरके बालकायन्त्रमें रख १२ पहरकी अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर लौंग, शुद्धकपूर, तज, पत्रज, इलायची, नागकेसर, हर्, वंदेडा, बायला, जायफल, विडङ्ग, नागरमोधा, चिन्तक येसब ३-३ माघे लेकर वारीकचूर्णकर पूर्वसमें मिलाय भगै-केरससे ३ रोज मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रख छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाथ सेवनकरनेसे समस्त-प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, क्षय, मूत्राशयोन्पघातरोग और गुल्म इन-सबको यह नष्टकरता है ॥ ३४३ ॥

### ३४४ वज्रेश्वररसः ( अष्टादशः )

रत्नं वज्रं समं कृत्वा चतुर्भागं तु गन्धकम् ।  
कुमारीरससंयुक्तं दिनमेकं विमर्दयेत् ॥ १६८२ ॥  
फलत्रयकपायेण त्रिदिनं मर्दयेद्दृढम् ।  
सुदीपमथ्यतीव्राग्नीं घालुकायत्रगं पचेत् ॥ १६८३ ॥

स्याद्गोतीतं समादाय चूर्णयेद्विपमुत्तमः ।  
अश्वगन्धाऽमृतासारमोचारसशताधरी- ॥ १६८४ ॥  
गोक्षुरघात्रीकृष्णाण्डीवाराहीपत्रमागधी- ।  
त्रिफलामर्कंदीमुस्तायष्टीमधुसमन्वितम् ॥ १६८५ ॥  
सर्वसाम्यसितायुक्तं चूर्णं पलाद्धंसंयुतम् ।  
गुग्गाचतुष्टयं भात्रा गोक्षीरस्याऽनुपानतः ॥ १६८६ ॥  
प्रातरस्तथाय सेवेत लवणाम्नां विवर्जयेत् ।  
यहूमर्धं मूत्रकृच्छ्रं रक्तशुक्रप्रमेहकम् ॥ १६८७ ॥  
मधुमेहं नष्टशुक्रं नष्टलिङ्गञ्च नाशयेत् ।  
सर्वप्रमेहशमनो वज्रेश्वर इति स्मृतः ॥ १६८८ ॥

रसायनसः, वै, चि, यो र, र, पा, प्रमेहाधिकारे ।

**भाषा**—शुद्धपारा और वज्रभस्म १-१ भाग, शुद्धगन्धक ४ भागलेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर धीकृन्नाकेरससे एकदिन-मर्दनकर ३ दिन त्रिफलाकेकाड़ेसे मर्दनकर सुलाकर ६-७ कपडि-मिथीदीहुई आतशीशीशिमैं बन्दकर बालकायत्रमें रख दीप, मध्य और तीव्रइसक्रमसे १२ पहरकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । फिर असगन्ध, गिलोयसत्त्व, मोचरस, शतावर, गोखरू, आवले, सुईकोहला, बाराही, पत्रज, पीपल, त्रिफला केसाव नागमोधा, मुलहठी, सबसमागके चूर्णमें बरा-वकी शकरमिलावे । इसमेंसे २ कप चूर्ण और पूर्वसकी ४ रत्ती मिलाकर गोदुग्धकेसाथ रोजाना सुबहमेंलेसे बहूमूत्र, मूत्रकृच्छ्र, रक्तशुक्र, शुक्रप्रमेह, मधुमेह, शुष्कक्षय, ध्वजभङ्ग, इनसबको यह नष्टकरता है । इसके प्रयोगमें लवण और अम्ल वर्जितकरना ॥ ३४४ ॥

### ३४५ वज्रेश्वररसः ( ऊनविंशः )

सूतं गन्धकतालसाऽध्रसशिलं प्रोक्तं तथा माक्षिकं,  
सर्वं तुल्यमथापि वज्रममलं चाऽङ्गाऽङ्गभागं नयेत् ।  
तत्सम्मथं च दुग्धिकाभवरसैस्तैर्दसपादौघैः,  
स्तदाग्निहरीतकीभवरसै र्यवदनयो वासराः ॥  
एवं यक्षचिधौ परेशकृपया जायेत वज्रेश्वरः,  
सर्वप्रमेहगदाग्रिहन्ति सततं मृधादिदोषाजयेत् ॥ १६८९ ॥  
र. सु, प्रमेह ।

**भाषा**—शुद्धपारा, गन्धक, रसमाणिक्य, अत्रकभस्म, शुद्ध-शैतल और सोनामाखी समभाग और वज्रभस्म सर्वसेचतुर्थांश लेकर नीलवर्णकजलीकर छोटीदीधी, हसरज, हल्दी, हर् इनके रसोंसे ३-३ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रख-छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तप्रमेह और मूत्राशयकेदोष नष्टहोवै ॥ ३४५ ॥

### ३४६ वज्रेश्वररसः ( विंशः )

मागचतुष्कं वज्रं सूतं हि शतं रत्नं विभागैकम् ।  
पुष्पत्रिकं हरितालं काञ्चिकपिष्टं शरायसम्पुटैः ॥ १६९० ॥  
पुष्टेद्गजाख्ये यन्ने वज्रेश्वरनामतः प्रसिद्धरसः ।  
वज्रेश्वरोऽयमप्येते यल्लो नृणां हि रमिकानाम् ॥ १६९१ ॥  
रसवि, वाजीकरणे ।

भाषा—वज्रमस्य ४ भाग शङ्खमस्य और पारा १-१ भाग रसमाणिक्य अथवा इरितालमस्य और गोदन्तीमस्य २-२ भाग लेकर एकदिन वाञ्छीमें मर्दनकर शशावसम्पुटमें बन्दकर गजपुष्पकी आवेष्टे । स्वात्राशीतलोनेपर निकालकर रख छोड़ । इसमेंसे १ रतीसे २ रतीतक अभिवलानुसारमात्रा उचितानुगुणवेसाय देनस यह समस्तप्रमेहोंको नष्टकर नपुष्क त्वको दूरकरताहै ॥ ३४६ ॥

### ३४७ वज्रेश्वररसः ( एकविंश )

रसवज्रखहेतिभिस्समान

जतु चादमप्रभव मधुप्रयुक्तम् ।

सितयाऽखिलमेहनाशनाय

खलु मापञ्चयसस्मित निषेवेत् ॥ १६९२ ॥

चि क्र, प्रमेहाधिकार ।

भाषा—पारद वज्र, अन्नक ताम्रमस्य समभाग लेकर सक्की बराबर शुद्ध धिलाजीत मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-२ रतीकी मात्रा मधु और शक्कर मिलाकर देनेसे समस्तप्रमेह नष्टहोताहै ॥

### ३४८ वज्रेश्वरादिवदो

मृत वज्र मृत लाह मृगनाभिश्च कुङ्कुमम् ।

अन्नक पारदश्चैव हिङ्गुल गन्धकस्तथा ॥ १६९३ ॥

मस्तकी नागकेतुश्च वङ्गोल जातिपत्रकम् ।

जातीफलं प्रियाल त्वक् शुण्ठी मकैट्टियोजकम् ॥ १६९४ ॥

यला तुगा च कपूरा लघ्नं गजपिप्पली ।

आकल्लरुमश्चैव नागा भुजगवल्लरी ॥ १६९५ ॥

नागकेशरमुस्ताभिचन्दनं चञ्चक शटी ।

मरिच पत्रकं यष्टी शास्मलीत्वक्च कटुफलम् ॥ १६९६ ॥

वर्षाभूमिशली चैव क्षीरकन्दं शतावरी ।

वृष्णाऽभ्यगन्धा कनकं मालीमोचरसी यला ॥ १६९७ ॥

भृङ्गराजश्च गोकण्ठ इन्दुद सयवानिक ।

समुद्रशापवीजानि त्रिपञ्चाशन्मित गणम् ॥ १६९८ ॥

योजयेत्समभागश्च सूक्ष्मचूर्णीकृतं भिषक् ।

अष्टादा विजया शुद्धा सिता सर्वसमा क्षिपेत् ॥ १६९९ ॥

गुटिका मधुसर्पिर्भ्यां कर्ममात्रा विधीयते ।

प्रभाते वाऽथ मध्याह्ने सन्ध्याया वा विशेषत ॥ १७०० ॥

एका खादेदनुपिवेत्य शर्करया युतम् ।

यलवृद्धिमवाप्नोति रैतावृद्धिं विशेषत ॥ १७०१ ॥

रैतं स्तम्भं वयं स्तम्भं घलीपलितनाशनम् ।

क्षेण्यज्यरातिसाराश्च प्रहर्षां नाशयेदपि ॥ १७०२ ॥

नारीयदयकश्चैव नारीद्रव्यकरन्तथा ।

कान्तिदं प्रतिमादश्च बुद्धिमेधाधिवर्धनम् ॥

सर्वस्त्रप्रयागेण सर्वव्याधिविनाशनम् ॥ १७०३ ॥

४ यो त वाञ्छीकरणे ।

भाषा—वज्र और लाहमस्य कस्तूरी वेशर अन्नक पारा और हिङ्गुलमस्य, गुडगन्धक, मन्तपी, अजीम, घीकल

चीनी, जावित्री, जायफल, चिरोजी, तन सोंठ, वेवाचकी गिरी, बला, बफलोवन, शुद्धकपूर, लींग, गन्धीफल अकलहरा, नाममस्य, कुल्लिन, नामवेशर नागरमोथा, चित्रक, खाल और सफेद चन्दन, चण्ड कचूर, मरिच पत्र, गुलहड़ी सैमलकीछाल कायफल पुनर्वा मुशली, क्षीरविदारी अथवा दूधियाकन्द, शतावर, पीपल असगन्ध घटुकेचीन, चना भासी, मोचरस महाबला स्याहमफेदगगरा, गोखरु, गुदरु, अचान्न, समुद्रशापकेवीज, वेसव समभाग आठ्याहिल्ला भाग, शक्कर सक्कीबराबर मिलाकर मधु और पीमें १-१ तोलेकी गोल्या बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली प्रातःकाल, मध्याह्न अथवा सन्ध्याकालमें लेकर दूध पीनसे बल और शुक्लीशुद्धिहोतीहै शुक् और अवस्थाकास्तम्भनहोताहै । क्ली, पलित, क्षय ज्वर, अतिसार प्रहणी इनसर्वको यह नष्टकरताहै । कान्ति प्रतिभा, बुद्धि मेधा, इनसर्वको बढाताहै । वर्षाभूम्यातातर प्रयोगकरनेसे समस्तगोत्र नष्टहोताहै ॥ ३४८ ॥

### ३४९ वचालोहम्

वचामयेस्तुल्यमयोमयं रजा

विलीढमाज्येन मधुस्यणेन तत् ।

निवृत्तिं शूलं परिणामसम्भव

यलोद्धतं कसमिवासुरं हरि ॥ १७०४ ॥

शोष, टो, शूलधिकार । टोडरानन्दे आमय न हरयेत् ।

भाषा—वच और वृद्ध समभाग लेकर दोनोंकी बराबर लोहमस्य मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ रतीकी मात्रा पी

और मधुवेसाय देनेसे परिणामशूल नष्टहोताहै ॥ ३४९ ॥

### ३५० वज्रकायवटी

आमकं माक्षिकञ्चैव लाहत्रयसमन्वितम् ।

शक्तिवीजसमायुक्तं बीजनयसमन्वितम् ॥ १७०५ ॥

त्रिदण्डीमर्दितं सूतमेकीकृत्य च गोलकम् ।

अन्धभूपागतं घ्नातं समावर्तं तु कारयेत् ॥ १७०६ ॥

पूजा कृत्या क्षिपेद्वज्रे षण्मासात्स भवेत्प्रिय ।

अमयं सर्वशत्रूणां वज्रकाया महायत्न ॥ १७०७ ॥

रसायने, रसायनाधिकारे ।

भाषा—आमकलोह सुवर्णमाक्षिक, सुवर्ण, रजत ताव्र,

शुद्धान्नक, सुवर्ण-रजत और ताव्रबीज तथा त्रिदण्डी (दिन्यी

वधि) क रसमें मर्दनकरके गोलीबनायाहुआ पारा, यसव

समभाग लेकर अन्धभूपागमें बन्दकर घमनकरके गोलीबाधे ।

फिर कुमारीवैराहको पूजाकर स्वामीको ६ महीनेतक सुदमें

रखेसे और रसायनोक्त विधिसे रहनेसे वज्रकाय और महाबल

होकर समस्तशत्रुओंक भयसे रहित होजाताहै ॥ ३५० ॥

### ३५१ वज्रोचरीगुटिका ( प्रथमा )

शुद्धं मृतं मृतं वज्रं व्यामसत्त्वं सहायकम् ।

अम्लवर्णं सर्वं सर्वं मर्दयेद्वियसप्रथम् ॥ १७०८ ॥

तद्गोलकं दृढं कृत्वा छायायां शोषयेत्ततः ।  
 गोजिह्वा ब्रह्मकार्पासी राजिका यवचिञ्चिका ॥१७०२॥  
 वज्र्या सर्वं समं पिष्ट्वा पूर्वगोलं प्रलेपयेत् ।  
 रुद्धा गजपुटे पत्न्या समुद्धृत्याऽथ लेपयेत् ॥१७१०॥  
 रुद्धा मृण्या धमेन्द्रादं गुटिका वज्रखेचरी ।  
 जायते धारिता धन्ये वत्सरान्मृत्युनाशिनी ॥१७११॥  
 भूताडवदचूर्णन्तु पलेन सितया युतम् ।  
 भस्त्रयेत्कामणार्थन्तु ब्रह्मायुर्जायते नरः ॥१७१२॥  
 र. खं, र. का., रसायनाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, हीरा, अन्नरसश्च, सुवर्णं इनकीभस्मं समभागलेकर जमीरीवैरह अम्बुवगे ३ रोज मदनकर गोला-  
 बनाय छायामें सुपारा वनयोमी, लालकापलकैबीज, राई, तितली, बांशखेरसा येसब गोलेकी वरावरलेकर अच्छीतरह-  
 पीच गोलेपर लेपट घरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आचदे ।  
 फिर दूसरा लेपदेकर वज्रमूपां बन्दकर दण्डधनकरानेसे  
 गुटिका तैयारहोगी इसे एकनपत्तकमुहमें रक्खे और कालीमुसली  
 तथा पापाणभेद समभागलेकर बराबरकीशहरमिलाय एकफल  
 लेकर दूधपीनेसे समस्तरोगोंसे निमुक्तहोकर पूर्णायुको प्राप्तहोताहै ॥

### ३५२ वज्रखेचरीगुटिका ( द्वितीया )

वज्रभस्म समं सूतं हंसपाद्या द्रवैरुपहम् ।  
 मर्दितं द्वन्द्वलिप्तायां मृपायां चाग्निधत्तं पुटेत् ॥१७१३॥  
 मृधराख्ये दिवाभारानी समुद्धृत्याऽथ तत्प वै ।  
 पूर्वार्धं पार्वं दत्त्वा हंसपाद्या द्रवैरुपहम् ॥१७१४॥  
 मर्दितं द्वन्द्वलिप्तायां मृपायां चाग्निधत्तं धमेत् ।  
 तत्खोटं धमनाच्छोर्ध्वं काचटङ्कणयोगतः ॥१७१५॥  
 नक्षत्राभि भयेद्यावत्सावद्वाम्यं पुनःपुनः ।  
 तद्रसं व्योमसत्त्वञ्च काञ्चनञ्च समं समम् ॥१७१६॥  
 समावर्त्य ततः कार्या गुटिका घनत्रमध्यगा ।  
 वज्रखेचरिका नाम वत्सरान्मृत्युनाशिनी ॥१७१७॥  
 घलीपलितनिर्मुक्तो दिव्यक्रावो भवेन्नरः ।  
 निर्गुण्डीमूलचूर्णन्तु कर्ममाज्यैः पिषेदनु ॥१७१८॥  
 र. खं, रसायने ।

भाषा—हीराभस्म और अम्रित्यायी उमुक्षित पारा सम-  
 भागलेकर हमराजकेरसे ३ दिन मदनकर गोलाबनाय नागवज्र  
 भस्मलिप्त अन्धमूपां बन्दकर एकदिनरात मृधराख्यमें अग्नि-  
 देवे । स्वाज्ञचीतलहोनेपर निकालकर पूर्वप्रमाणमें नयापारा मिला-  
 दे । ईसराजके रसे ३ दिन मदनकर गोलाबनाय द्वन्द्वलिप्तमूपां  
 बन्दकर धमनरनेसे खोटतैयारहोगा । इसखोटको प्रकाशमूपां  
 रखकर धमनकरे और मुहगा तथा काचनयम्की चुकटी देता  
 जाय, हमसे तमाममलजलकर एकदमसपेद चमकदार वस्तु बुदी  
 होजायगी फिर वनकीवराबर अन्नरसश्च और शुद्धसुवर्णं मिलाकर  
 एकनपत्तक मिलाकर गोलीबनाय मुहमें रक्खे कपसे निर्गुण्डीके  
 कन्दअपवाजका एकपंचपुर्ण पीमें मिलाकर लेवे । इसतह एक-  
 वर्षपर प्रयोगरनेसे वरीपलितने निर्गुण्डीकर वज्रक्रायहोताहै ॥

### ३५३ वज्रगर्भपोटलीरसः

वज्रहेमरसमस्मगन्धकान्वृद्धितश्च परिमर्दयेद्विहम् ।  
 चित्रकार्दकरसे वराटकान्धूरयेच्च पुटयेच्च पूर्ववत्  
 वज्रगर्भचरपोटलीरसो जायते क्षयविनाशनः परः ।  
 रक्तिकात्रयमितं रसं ददेद्वलपट्टमरिचैर्धृत्युतैः ॥१७२०॥  
 सर्वरोगविनिवृत्तये तथा योजयेच्च कुरुनाऽन्न संशयम्  
 रोगलेशरहितोऽपि योजयेत्पुष्टिबुद्धिबलवीर्यवृद्धये ॥  
 र. दी., क्षयादिरोगे ।

भाषा—हीरा, सुवर्णं, पारदभस्म, शुद्धगन्धक, ये कमवज्र-  
 भागसेलेकर अच्छीतरह शुष्कमर्दनकर चित्रक और अदरखकेरसे  
 एकदिन मदनकर समभाग पीलीकौडियोंमें भर गाय अथवा  
 आककेधूमें पिसेहुए सुहागेसे कौडियोंका मुंहबन्दकर जमीरी  
 अथवा बिजोरैके अन्दर कौडियोंको डालकर ४ तह मलमल  
 बगैरहके कपड़ेसे लपेटकर कच्चेसुतने गँदेसेतहना बनाय ऊपर ६-७  
 कपडिमिटी लगाकर अच्छीतरह मुखाय हाथभर लम्बेचौड़े गूमें  
 जहलीकण्डोंकी आचदे । स्वाज्ञचीतलहोनेपर निकालकर  
 खरलकर रखछोड़े । इससे ३-३ रसीकीमात्रा १८ रसी-  
 मरिचकेचूनेकेसाब धीमेंमिलाकरदेनेसे क्षयादिसमस्तरोगोंको यह  
 नष्टकताहै रोगरहितमनुष्यको देनेसे शरीर, बुद्धि, बल और  
 वीर्यकी वृद्धिहोतीहै ॥ ३५३ ॥

### ३५४ वज्रगर्भरसः

सूतं गन्धं हेमभस्माङ्गकेन  
 घृष्ट्वा यामं कान्तमृपासुगमं ।  
 क्षिप्त्वा रुद्धा भूधरे तं पुटेत्  
 सूतः सिद्धो जायते वज्रगर्भः ॥१७२०॥  
 यथेदं नागवह्नीरसेन  
 मध्वाऽप्याभ्यां रक्तिकां तस्य दद्यात् ।  
 दिव्यो देहो जायते वत्सरार्द्धे  
 रोगाः सर्वे मासतो यान्ति नाशम् ॥१७२३॥  
 क्षारं तीक्ष्णं भूरि चाऽम्लञ्च घर्ष्यं  
 सूताऽजीर्णं जायते तेन यस्मात् ।  
 सूताऽजीर्णं नमिदेशे तु शुलं  
 दाहो मान्यं जाड्यमालस्यनिष्ठे ॥१७२४॥  
 सत्त्वत्यागो जायते बुद्धिनाश-  
 स्तत्त्यागाय कन्यकाकन्दमाज्यम् ।  
 दद्याच्च राण्डमाप्यीकमुक्तं  
 प्रातःकाले त्रेफलं चूर्णमत्र ॥१७२५॥  
 व्योषं यद्वा बीजपूरस्य नीरैः  
 पथ्यं यद्वा शुण्ठिलखण्डप्रयुक्तम् ।  
 जीर्णं पश्चात्खण्डमासेवयेत्  
 रात्री दुग्धं प्रातराज्यं समतम् ॥१७२६॥  
 दध्याज्यं वा सन्ततं चाऽपि गोजं  
 त्वेलाज्जाजिसेन्ये वा मरीचैः ।

पथ्यं प्राहं गौल्यबाहुल्ययुक्तं  
 ज्ञानं कोष्णेनैव नीरेण कार्यम् ॥ १७२७ ॥  
 पानं नीरैः शीतलैः वांसयुक्तै-  
 र्ध्यानं कुर्यात्पार्वतीचलभूष्य ।  
 शस्त्यादानं योगिनातर्पणञ्च  
 हिंसा धन्यां प्राणिमात्रे च नित्यम् ॥ १७२८ ॥  
 भक्तिं कुर्याद्वाह्यपानां गुरूणां  
 तैलाभ्यङ्गं चर्जयेच्चाऽतिशीतम् ।  
 यातं धर्मं रम्यदेहप्रसिद्धये  
 कुर्यादितत्सर्वमेव प्रयत्नात् ॥ १७२९ ॥

१. दी, रसायने ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, सुवर्णमल्ल  
 आधाभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर वान्तपापानकीमुपामं बन्द-  
 कर भूषणयन्त्रमें आपदेनेसे यह वज्रगर्भरस तैयारहोताहै । पान-  
 केरसमें १ रत्ती अभ्रकमल्ल और १ रत्ती वज्रगर्भरस मिलाकर  
 मधु और घीकेसाथ देनेसे १ महीनेमें दिव्यदेह होजाताहै । एक-  
 महीनेके सेवनसे समस्तरोग दूरहोतेहैं । क्षार, तीक्ष्ण, खटाई  
 इनसे पारेका अजीर्णहोजाताहै इसलिये इन्हें न देवे । दैवयोगमले  
 सुताऽजीर्णहोगयाहो तो नामिमेंशुल, दाह, अभिमान्ध, जड़ता,  
 आलस्य और निद्रा होतीहै । धीरर सत्वहीन होजाता है ।  
 शुद्धिअथ हो तो उबकी निशितिकेलिये घीईनारका बंद घीकेसाथ  
 अथवा शकर या मध्यासक्के साथ, अथवा प्रातः काल त्रिफला या  
 त्रिकटुनाचूर्ण विजोरिके रससे देवे । अथवा सोंठ और शकरके-  
 साथ देवे । जीर्णहोनेपर रात्रिमें शकर और दूध देवे । प्रातः काल  
 घीकेसाथभातदेवे । अथवा गायका दही और घी देवे । इला-  
 यची, जीरा, सैन्धव और मरिचकेसाथ पच्य देवे । अथवा  
 शुद्धि केनेहुए पदार्थ पच्यमें देवे । घीके गरमजलसे स्नानकरावे  
 सुगन्धद्रव्याभिवासित ढंगानलपीये । परमेश्वरकाभ्यासकरे और  
 मयाशक्ति दानदेवे । योगिनिर्घोका तर्पणकरे । प्राणीमात्रकी  
 हिंसासे परहेजकरे । ब्राह्मण और गुरुजनोंमें भक्तिरक्के । तैला-  
 भ्यङ्ग, अतिशीतवात, धूप इतसम्का त्यागकरे ॥ ३५४ ॥

३५५ वज्रगुग्गुलुः

त्रिकटु त्रिफला दन्ती चित्रकं त्रिवृता शटी ।  
 विडङ्गं मुस्तकं रात्रि वाङ्कुचीन्द्रयं चया ॥ १७३० ॥  
 अङ्गोष्ठमूलं कुष्ठञ्च राजवृक्षस्य मूलरुम् ।  
 पतेपार्पं पलिकं प्राहं तत्समं गुग्गुलं गुरम् ॥ १७३१ ॥  
 भलाततैलं द्विपलं गोघृतेन जडीकृतम् ।  
 तप्तं ताम्रं हरीतालं द्वयोः कुर्यात्पलद्वयम् ॥ १७३२ ॥  
 सर्वमेकैकृतं यत्नात्पेयित्या सुपिण्डकम् ।  
 घृतभाण्डे तु संस्थाप्य खादेन्मापचतुष्टयम् ॥ १७३३ ॥  
 गुग्गुलुं घञ्जनामाऽयं गहनानन्दमापितः ।  
 देशं कालं पयो यद्धि रम्भा या शुद्धिर्वर्धनम् ॥ १७३४ ॥  
 यातरक्तं निहन्त्यानु नानादोषसमुद्भवम् ।  
 शरीरपदं शोथशूलानि मेहमेदोगलाभयान् ॥ १७३५ ॥

ग्रीहगुल्मोदराष्ट्रीलाकासम्भासमरोचकम् ।  
 जीर्णज्वरञ्च सानाहं बलवर्णान्निवर्धनम् ॥  
 सद्ब्रह्महणीं दुष्टां पाण्ड्वादिव्रितयं जयेत् ॥ १७३६ ॥  
 र र, वातरक्तं ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, दन्ती, चित्रक, निशोत, कपूर,  
 विडङ्ग, नागरमोषा, हल्दी, वाङ्गुची, इन्द्रजव, वच, अङ्गोली-  
 जह, कुठ और अभिलतासकीज १-१ पल, शुद्धपूत सकडी  
 बराबर, मिलाकरातेल २ पल, ताम्र और हरितालमल्ल १-१  
 पल लेकर वारीक पीस गुग्गुलु की पीचीचहायतासे बूटकर दवा-  
 जोको एकजीव मिलाकर घीके वर्तनमें रखलोहो । इसमेंसे ४-४  
 माशेकी मागामें देश, काल, अवस्था और अभिवल देखकर  
 बनी अथवा वृद्धिकरके उपयोगकरे । इससे सेवनकरनेसे वातरक्त,  
 क्षीपद, शोथ, शूल, मेह, ज्वरे, गलेवरोग, प्लीहा, गुल्म,  
 उदररोग, अष्टीला, कास, श्वास, अर्धचि, जीर्णज्वर, आनाह,  
 बल-वर्णभिलास, दुष्टसद्ब्रह्मणी, पाण्डु, कामला, हलीमक इन-  
 सबको यह नष्टकरताहै ॥ ३५५ ॥

३५६ वज्रगुटिका ( प्रथमा )

शैलस्य धातो रजसां शिलाभ्यः  
 सूर्यप्रतापाज्जनुसन्निभाशम् ।  
 कृष्णं स्रवेन्मृजसमानगन्धि-  
 शिलाजनुं प्राज्ञतमास्तदाहुः ॥ १७३७ ॥  
 रूप्यादिधातो गैलितं वृषद्रव-  
 स्तेभ्यः प्रदास्तं प्रवदन्ति पुर्यम् ।  
 विशोषयेत्तत्सुदिने सुपुते  
 द्विपञ्चमूलीसलिले कदाहो ॥ १७३८ ॥  
 लीहि समालोच्य दिधारुरस्य  
 सन्तारपनं रदिमभिरेव कुर्यात् ।  
 प्रणीततापात्स्वरवद्ग्रीवा  
 पुनःपुनस्तप्तमथोद्धरेण ॥ १७३९ ॥  
 तावत्प्रदेयं सलिलं धमेण  
 गाढस्य सन्दर्शनमेव यापयत् ।  
 तावच्छिद्यजाल्यभिसन्निविष्टं  
 समुद्धृतं यावदशेषतश्च ॥ १७४० ॥  
 अष्टौ पलान्यस्य विशोषितस्य  
 ततः क्रमाद्वापयितुं यतेत ।  
 द्विपञ्चमूल्यो चित्रविल्वमुस्तौ  
 पटोलनिम्बत्रिफलाः पलांशाः ॥ १७४१ ॥  
 सुपिण्डी रोहिणि जीरकञ्च  
 द्रोणेऽम्बस्तताद्विपलान्यथोक्तान् ।  
 प्रकाष्य चैवाष्टमभागशेयं  
 तस्मात्सृजेद्वाचनमयमल्पम् ॥ १७४२ ॥  
 यात्रेऽयं लीहि विशोषयेत्-  
 सुन.पुनर्माचितमेव यापयत् ।

पलद्वये मागधिकर्कटाख्ये  
चूर्णाकृते लोहरज.समांशे ॥ १७४३ ॥  
पलं ब्रूहत्याः सनिदिग्धिकायाः  
सितोपलामष्टपलोन्मितां तु ।  
पलत्रयं वेणुजरोचनाया-  
मधुत्रयं तद्विनिवेश्य कृत्वा ॥ १७४४ ॥  
त्रिपष्टिसंख्यान्वटकान्निधिशः  
खादेत्सुरावारिपयोऽनुपानात् ।  
रसेन वा लावकपिञ्जलानां  
तोयेन वा दाडिमसंस्कृतेन ॥ १७४५ ॥  
मुक्तैस्तथाऽमुक्तवति प्रदेया  
रोगार्दिते निम्परिहारिणी च ।  
कुष्ठोद्वर्धासगलामयोश्च  
भगन्दरान्मृचविण्मृगुल्मान् ॥ १७४६ ॥  
यहमाणमर्शांसि सफासहिकां  
ग्रीहाऽप्रमांसं विषमज्वरांश्च ।  
वह्नेश्च दीप्तिं परमां करोति  
वर्लाश्च हन्यात्पलितानि चैव ॥ १७४७ ॥  
सेष्या त्रिपं वज्रक्रानामधेया  
मुनिप्रदिष्टा चटकप्रधाना ।  
घर्ज्याः कुलत्थाश्च सक्ताकमाच्यः  
कपोतमांसश्च सदा प्रयोगे ॥ १७४८ ॥  
ग. नि. कुष्ठाधिकारे ।

टि०—शिलाजनुषोपन पञ्चाङ्गलोहोऽपीदमस्ति परन्तु तत्तार्कादि-  
पत्रपातुसमीनेन योगस्य मन्वादनमस्यत्र तु केवले शिलाजनुषि काष्ठी-  
पथितिलेपेन योगमन्वादनमिति विषयः ।

भाषा—मुग्ध, रजत, ताम्र, लोह इनपातुओंका सूक्ष्माद्य  
पर्वतोमसे सुयुक्त प्रयत्नापसे हृत्होकर लाखकीतरह बाहर  
निकलताहै और उसमें गोमूत्रका गन्धहोताहै उसे जाननेवाले  
शिलाजनु कहतेहैं । इनमेंसे कृष्णवर्ण जो लोहयुक्तवर्ण है वह  
सबसे श्रेष्ठ मानाजाताहै । इनकाद्वय स्वकीयपातुवैरगका हुआ-  
करताहै । बाहर आकर उसमें कानरबिटादि क्षतत मल मिश्रित  
होजातेहैं । मूलते ये खालियेजाय तो नानातरहके उपद्रवोंको  
करतेहैं । इसलिय उनको शुद्धकरके काममें लेनाचाहिये । दध-  
मूलके गरमजापको कड़ाहीमें डालकर अशुद्धशिलाजीतको  
अच्छीतरह धोकर कड़ीधूपमें रबदे और रोज उसे हिलाताहै ।  
जब तमामद्रव पानीमें मिलाजाय तब उसे हिलाना बन्दकरके  
उसीजगह पहाड़मेंदे । इसद्रवके ऊपर मलाईकी तरह एक थर  
( पटल ) जमजायगा उसे धीरजसे निकालकर दूसरे पात्रमें  
रखादे और उपद्रवको अच्छीतरह चलादेवे । काय सूक्ष्मर इसके  
गांठे होजानेपर दूसरा काय बालदियाकरे । इसकियाको प्रोथम  
भद्रुने प्राप्त्यमेव शुद्धकरे । जब शिलाजीत निष्ठलाभागेन और  
केवल मल नीचे रहजायगा तब यह अमना बन्दहोजायगा ।  
उमें मल सममदर पैकदेवे । निष्कालेदुप शिलाजीतको मुगगर  
रगगोदे हवाका कोई जिस योगमें उपयोगकरे । बतमानगमयमे

व्यापारीलोग इस प्रक्रियासे तैयार नहीं करतेहैं किन्तु जहांपर  
अधिकप्रमाणसे यह निकलताहै वहांपर खोदकर खाने बनालीहै  
और वहाकी मिट्टी तथा पत्थर खोदकर उसे गरमपानीमें औटा-  
कर छानलेतेहैं उसपानीको फिर आगपर गाढ़ाकरके बेच  
तेहैं । इसमें खराबी यह होतीहै कि प्रथमतो इनमेंसे समस्त  
मल जुदा नहीं होता दूसरे यह कड़ाहीमें संभारखनेपरभी  
पेदेमें लगकर जलनेलगताहै उससमय इसमें रहेहुए ब्रह्मादिक  
बहुतसे पदार्थ जलकर भस्महोजातेहैं और इसका जो असली-  
स्वादहै वहभी सदाबहोजाताहै । इसीलिये व्यापारियोंसे लिये-  
हुए शिलाजीतमें शालोक्तगुण नहीं मिलतेहैं । मधुमेहादिकमें  
जो मुशुतगमरहने इसके गुण लिखेंगे वे शुद्ध शिलाजीतकेहैं  
और वे सर्वहै । अस्तु ।

पूर्वोक्त्यकारसे शोषेहुए ८ पल शिलाजीतसे लेहेके चार-  
लम् डालकर दशमूल, शुद्धकरज, नागरमोपा, परवल, नीम, त्रिफला  
१-१ पल, पीपल, रोहण, दोनोंजीरे २-२ पल लेकर १६ सेर  
पानीमें ढाककरे आठवाभाग शेष रहनेपर छानकर धूपमें रखदे  
जिसमेंकि ढाक विगडने न पावे इसमेंसे थोड़ा २ काय शिलाजी-  
तमें डालकर धूपमें रखकरघोंटे ( धूपमें हव जल्दी सूजजायगा  
नहीं तो बहुत समय लगेगा ) तमामकाय धूपजानेपर पीपल,  
काकड़ासीनी १-१ पल, लोहमूल, २ पल, बनमट्टा, भट-  
कट्टिया १-१ पल, मिथी ८ पल, बंसलोचन ३ पल लेकर  
सबका बारीकचूकर पूर्वोक्त शिलाजीतमें मिलाकर धी, शकर  
और मधु इतना मिलावे कि गोलिया बनजायें । इसकी ६३  
गोलियां बनाकर रसगोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मद्य, जल,  
दूध अथवा लवा और सफेदतिलोर्कामाधरस, अथवा अनारका  
शरबत तथा भोजन इनमेंसे जैसी योग्यताहो उपकेसाय  
देनेसे कुष्ठ, उदर, श्वास, गलरोग, मन्दार, मूत्रविबन्ध, शुल्म,  
राज्यक्ष्म, बवासीर, कास, दिक्की, ग्रीहा, अम्रमांश, विषम-  
ज्वर, मन्दाहि, बलोपलित, इनसबको यहयोग मटकरताहै ।  
कुष्ठातिरिक्तोगोंमें इतनी थोड़ी मात्राकी जुबत नहीं । अमिरल  
देखकर मात्राका निर्धारणकरे । कुष्ठरोगमें प्राय कर अत्यधिक-  
मात्राका उपयोग हुमाकरताहै । उसी अधिकारमें इसे प्रत्य-  
नाने लिखाहैइसलिये उसकी इतनी अधिकमात्रा बनगईहै ।  
इसप्रयोगमें कुष्ठधी, मकोय और कपोतमायको छोड़कर कोई-  
विशेष परहेज नहींहै ॥ ३५६ ॥

३५७ वज्रगुटिका ( द्वितीया )

कान्तं वज्रं हिह्लुलाग्रे रसेन्द्रे

कृत्वा खोटं मूर्धपर्यन्तमेकम् ।

मन्दं मन्दं पाचितं स्यादुद्वीयं

सस्त्रास्त्रीयं चारयेद्यस्य वज्रम् ॥ १७४९ ॥

र. ल., टो., र. पा., रसायने ।

भाषा—कान्तलोह, हीरा, हिहल, अमर, सुसुतिनारा,  
इनका खोट बनाय १५ दिनतक मूर्धपर्यन्तमे मन्दमन्द अमिर  
पद्यनेसे गोली तैयारहोनी । इसगोलीको मुंशेरखनेमें घाम  
जार अथवा मृगुदायका निवारणहोताहै ॥ ३५७ ॥

## ३५८ वज्रगुटिका ( तृतीया )

रोहिणीं चिरवित्वञ्च कुटजञ्च फलत्रिकम् ।  
मुस्तञ्च पिप्पलीमूलं यष्टाहं निम्बनागरम् ॥ १७५० ॥  
एतत्कषायै विधिचद्वावनाश्च पृथक्पृथक् ।  
शिलाजतुपलान्यष्टौ तावती सितशर्करा ॥ १७५१ ॥  
घांश्याः कर्कटशृङ्गयाश्च भागध्याश्च पलं पलम् ।  
धानी दशपलाद्वैश्च व्याघ्रीमूलत्वचं तथा ॥ १७५२ ॥  
पत्रं त्वगेलां गन्धार्थं दत्त्वा चूर्णानि कारयेत् ।  
तं विमृश यथान्यायं दद्यान्मधु पलत्रयम् ॥ १७५३ ॥  
वर्तयेद्वटकाङ्घ्रीमानुदुग्धरफलोपमानम् ।  
तत्रैकं भक्षयेत्काले सानुपानं यथावलम् ॥ १७५४ ॥  
विडङ्गकायपृषाम्मुसुरारिपरसादिभिः ।  
क्षीरे घां हाडिमाल्हेयां पथ्यभोजी भवेन्नरः ॥ १७५५ ॥  
स जयेत्पाण्डुरोगार्शः कुपुमेहगलप्रहाय ।  
वज्राद्योऽयं समाख्यातो वटको हि महागुणः ॥  
नित्यमाश्रमिणां योग्यमेतत्स्याद्य रसायनम् ॥ १७५६ ॥  
र. का., पाण्डुरोगे ।

भाषा—रोहण, वरुण, ऊँयाकीछाल, त्रिफला, नागरमोषा, पिपलामूल, मुलढी, भीमरीछाल और सौंठ इनके बाणोंसे यथाक्रम ८ पल शिलाजीतको भावनादेकर ८ पल शर्कर, बंश-लोचन, काकहासींगी और पीपल १-१ पल; आवले और बनमटिकी जड़कीछाल ५-५ पल, पत्रज, तम्र और इलायची १-१ कर्ष लेकर सबका बारीकचूर्णकर शिलाजीतमें मिलावे । और पूर्वार्थायें १-१ भावना देकर मूलनेपर १ पल मधुदेकर १-१ तोलेकी गोलियां बनाकर रखोके । इनमेंसे १-१ गोली अथवा अभिवल देखकर मात्रानियतकर विडङ्गकाय, मुद्रपृष, मय, जरिष्ठ, मासतस, दूध, अनारकारस इनमेंसे किसीएक अनुपानके-साथ सेवनकरनेसे तथा पथ्यभोजनकरनेसे पाण्डु, बवासीर, कुष्ठ, प्रमेह, गलप्रह इत्यादि समस्त रोगोंको यह नष्टकरताहै । इसके निरन्तरसेवनकरनेसे यह रसायनका कामकरताहै ॥ ३५८ ॥

## ३५९ वज्रघनोरसः

कण्टकारीरसैः सप्तदिनं भाव्यन्तु सोमलम् ।  
एवं वारत्रयं काचकूप्यां सर्वं तु पातयेत् ॥ १७५७ ॥  
एतत्सर्वे पादसूतं सगन्धं कज्जलीष्टलम् ।  
कण्टकारी मृषिकायां शरावे पाचयेत्पुनः ॥  
यामाष्टकं वज्रघनो रसः सर्वोदरार्तिजित् ॥ १७५८ ॥  
र. का., उदरार्थिके ।

भाषा—भटकटैयाके अन्नस्वरससे ७ दिन सोमलको मर्दनकर मुखाकर ६-७ कपडमिठीदीडुई आठशीशीधीमें बन्दकर बालुकायन्त्रमें रख ४ पहरी कमादिदेवे । स्वाद्वशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् ७ दिनमर्दनकर सत्त्वपातनकरे । इसतरह ३ बारकरके इससे चतुर्थांश शुद्धपारा और गन्धक मिलाय नीलवर्णकज्जलीकर भटकटैयाके कल्की मृषामें बन्दकर शराव

सम्पुष्टमें रख ६-७ कपडमिठीदेकर सुरनेपर बालुकायन्त्रमें रख ८ पहरी कमादिसे पकावे । स्वाद्वशीतलहोनेपर निकालकर रखोके । इसमेंसे आधे आधे नावलभरकी मात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त उदररोगोंको नष्टकरताहै ॥ ३५९ ॥

## ३६० वज्रतुण्डावटी ( प्रथमा )

स्वर्णताराऽर्कमुण्डञ्च वह्नं नागाऽन्नसत्त्वकम् ।  
एतत्सर्वसमं चूर्णं चूर्णांशं मृतवज्रकम् ॥ १७५९ ॥  
सर्वतुल्यं शुद्धसूतं सर्वं दिव्यौषधीद्रवैः ।  
मर्दयेद्दिनमेकन्तु वज्रमृषान्धितं धमेत् ॥ १७६० ॥  
गुटिका वज्रतुण्डेयं जायते धारिता मुखे ।  
जराभृत्यशस्त्रसहं नाशयेद्वत्सरात्किल ॥ १७६१ ॥  
वज्रकायो महावीरो जीवेद्वर्षशतत्रयम् ।  
कुमार्याः स्वरसं प्राशं गुडेन सह लोडयेत् ॥  
पलेकं कामकं लेखमनुपानं सदैव हि ॥ १७६२ ॥  
र. च., रसायने ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, ताम्र, मुण्ड, वज्र, नाग, अन्नक-सत्त्व, इनसबका बारीकचूर्ण समभाग लेकर सबसे चतुर्थांश हीराभस्म और सबकी बराबर शुद्धपारा मिलाकर एकदोदिन शुष्क मर्दनकर दिव्यौषधियोंके द्रवसे एकरोज मर्दनकर वज्रमृषामें बन्दकर धमकरनेसे गोली तैयारहोगी । इसगोलीको एकवर्षतक निरन्तर मुखमें धारणकरनेसे वज्रकाय तथा अत्यन्त पुष्टार्थयुक्त होकर ३०० वर्षतकजीताहै । सुवाण, मृत्यु और शस्त्रसमुदायके खसे रहितहोजाताहै । धीकुवारका स्वरस शुद्धकेसाय मिलाकर १ पल पीनेसे रसका शरीरमें सङ्क्रमणहोताहै ॥ ३६० ॥

## ३६१ वज्रतुण्डावटी ( द्वितीया )

कान्तपाषाणमाक्षीकं टङ्कणं कर्कटास्थि च ।  
स्तुहाकर्षीरधुनागं सर्वमेतत्समं भवेत् ॥ १७६३ ॥  
स्त्रीस्तन्येन दिने मर्दं तेन मृषां प्रलेपयेत् ।  
तन्मध्ये द्रुतसूतन्तु धन्नभस्म समं समम् ॥ १७६४ ॥  
क्षिप्त्वा रुद्धा पुटे पाच्यं गजाख्ये याममात्रकम् ।  
ततः प्रलिसमृषायां क्षिप्त्वा रुद्धा धमेदडाता ॥ १७६५ ॥  
एवं पुनःपुनः कार्यं वज्रसूतं मिलत्यलम् ।  
ततस्तस्यैव दातव्यं समं काचं सटङ्कणम् ॥ १७६६ ॥  
एवं मृषाशते देयं तुल्यं तुल्यं धमवधमम् ।  
तेजःपुञ्जो रसेन्द्रोऽसौ भवेन्मार्तण्डसन्निभः ॥ १७६७ ॥  
गुटिका वज्रतुण्डेयं वज्ररस्या मृत्युनाशिनी ।  
वर्षमात्राञ्च सन्देहो द्रुतुल्यो भवेन्नरः ॥ १७६८ ॥  
तस्य मृषापुरीषायां पूर्ववत्काञ्चनं भवेत् ।  
पञ्चाङ्गं मक्षयेत्कर्प रदन्त्या मधुसर्पिणा ॥ १७६९ ॥  
र. च., रसायने ।

भाषा—कान्तपाषाण, सुवर्णमाक्षिक, मुद्राणा, बँकड़ेकी-हड्डी, पृथ्वी और आकडादूध तथा केतुप समभागलेकर स्त्रीके दूधसे एकरोज मर्दनकर इसरसका वज्रमृषामें लेपकर सुप्तावर

कल्ककी बराबर शुद्ध हृत्पारा और वज्रभस्म डालकर मुहवन्द-  
कर २-४ कपडमिष्टीदेकर सूखनेपर गजपुटमें एकपहरकी आचदे ।  
स्वाङ्गीताल होनेपर निकालकर फिर उगीतहृद् मूषामें रख  
घमनकरावे । ऐसे धारम्भार करनेसे वज्र और पारा मिलजायगा  
फिर उसकी बराबर काच और मुहागा डालकर घमनकरावे ऐसे  
१०० बार घमनकरनेसे सूर्यके सदृश तेज पुष्पयुक्त रस तैयारहोगा ।  
इस गुटिकाको एकपतक मुहमें रखनेसे रक्षसदृश पराक्रमवाला  
होताहै । इसके मूत्र तथा पुरीषसे धातुओंका रंग बदलजाताहै ।  
रत्नतीका पञ्चाङ्ग १ कर्म मधु और घीमें मिलाकर रोज खावे ३६१

### ३६२ वज्रधररसः ( प्रथमः )

रसगन्धकताम्राङ्गुलं क्षाराल्सीन्यरूपो वृषभ ।  
अपामार्गस्य च क्षारं लवणं त्रिद्विमापिकम् ॥ १७७० ॥  
चाङ्गेयं हस्तिगुण्डयाश्च रसैः पिष्टं पचेत्पुटे ।  
भक्षयित्वा ततो गुञ्जं प्रहण्यां काञ्जिकं पिषेत् ॥ १७७१ ॥  
पतित्तले च कान्ते च मन्दाग्रायाद्रक्षद्रघम् ।  
अम्लपित्तैश्च धारोणं क्षीरं वज्रधरो ह्ययम् ॥ १७७२ ॥  
र. र. स., र. र. कौ., प्रहण्याधिकारः ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, ताम्र और अत्रकभस्म, सज्जी,  
मुहागा, यवक्षार, वरुण, अङ्गुल, अपामार्गक्षार, सैन्धव, बेसव  
२-२ माशेलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण बज्जलीमें  
मिलाकर अम्लोनिया और हाथीगुण्डीके रसोंसे १-१ रोज मर्दन-  
कर टिकिया बनाय घरावसमुष्टमें बन्दकर ३-४ कपडमिष्टी-  
देकर सूखनेपर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गीतालहोनेपर निकालकर  
रखावे । इसमेंसे २-२ रत्तीकीमात्रा काञ्जिकेसाय देनेसे  
प्रहणीरोग नष्टहोताहै । पक्किल, कास और मन्दाग्निमें अद-  
रकके रसकेसाय देना । अम्लपित्तमें फातोष्णद्रव्यकेसाय देना ३६२

### ३६३ वज्रधररसः ( द्वितीयः )

वज्रसूताऽग्नेहोत्राञ्च भस्म योज्यं समंसमम् ।  
सर्वैश्च तालकं तुल्यं शिपुचमूरजे द्वैवे ॥ १७७३ ॥  
मर्गः स्नुहार्कजैः क्षीरे दिनेकत्राऽथ भाययेत् ।  
सप्ताहं याङ्गुलीतैलेस्तन्मापेकन्तु भक्षयेत् ॥  
रसो वज्रधरः स्यात्तः सर्वकुष्ठनिवृत्तनः ॥ १७७४ ॥  
र. र. स., रसायनार्ग., र. र. कौ., र. र. कौ., र. र. कौ.,  
दी., इष्टाधिकारः ।

टि०—रसायनमङ्गद रसानदीषिकायाश्च सुवर्णद्वामहानिर्घ-  
ण्योऽनुपारं विज्ञेययोग्यमन्यरा सन्त्योऽपि ॥ रसानरमाषोक्तिका  
समदारत्तेन रोगारत्तेन चाष्टपानानामभियतत्तारः ।

भाषा—हीरा, पारा, अत्रक, सुवर्ण इनकीभस्में समभाग  
लेकर सबकी बराबर हरितालमिलाकर सद्विजन और धतूरेकास  
भूसर और आकट्याश्च रसप्रत्येकद्रव्योंसे १-१ दिन मर्दनकर ७ दिन  
चाङ्गीके तेलमें मर्दनकर । इसमेंसे उद्दबराधरमात्रा चाङ्गीके  
तेलकेसाय रानेसे यह समस्तद्रव्योंको दूरकरताहै ॥ ३६३ ॥

### ३६४ वज्रधररसः ( तृतीयः )

वज्रसूताऽग्नेहोत्राञ्च भस्म शुद्धं तु माक्षिकम् ।  
तुल्यं सप्तदिनं मर्गं दिव्योपधिरसे हृदम् ॥ १७७५ ॥  
रुद्धा तत्त्रिदिनं पाल्यं चालुकायन्त्रगं पुनः ।  
उद्धृत्य त्रिदिनं भाव्यं भृङ्गसर्पाक्षिजे द्वैवे ॥ १७७६ ॥  
मापेकं मधुसर्पिण्यां वज्रधारारसं लिहेत् ।  
मासपट्टकप्रयोगेण रूद्रतुल्यो भवेन्नरः ॥ १७७७ ॥  
घलीपलितनिर्मुक्तो वायुवेगो महायलः ।  
पुनर्नवाभृङ्गतिलयाजिगन्थाः समांशकाः ॥  
सर्वतुल्या सिता योज्या चूर्णितं भक्षयेत्पलम् ॥ १७७८ ॥  
रसायनार्ग., र. र. कौ., रसायने ।

भाषा—हीरा, पारा, अत्रक, सुवर्ण इनकीभस्में समभाग  
लेकर सबकी बराबर सुवर्णमाक्षिकभस्म मिलाकर ७ दिन  
दिव्योपधियोंके रसोंसे मर्दनकर टिकिया बनाय मुलाकर धारो-  
वसमुष्टमें बन्दकर ३ दिनतक चालुकायन्त्रकी आचदेवे । स्वाङ्गी-  
णीतहोनेपर निकालकर भंगरा और अन्धाहलीकेरसोंसे ३-३  
दिन मर्दनकर उद्दबराधर योलिया बनाकर रखावे । इसमेंसे  
१-१ गोली मधु और चीकेसाय ६ महीनेतक लगातार सेव-  
नकरनेसे घलीपलितसेरहितहोकर वायुवेग और महानल्युत्प-  
न होताहै । पुनर्नवा, भंगरा, तिल और असगन्ध समभाग लेकर  
बारीक चूर्णकर सबकीबराबर साकर मिलाकर रखावे । इसमेंसे  
१-१ पल यानेसे रसका सङ्क्रमणहोताहै ॥ ३६४ ॥

### ३६५ वज्रधररसः

वज्रपारदयो भस्म समभागं प्रकल्पयेत् ।  
सूतपादं मृतं स्वर्णं सर्वं मर्गं दिनावधि ॥ १७७९ ॥  
हंसपादा द्वैवेर्यं तद्गोले चाग्निधत्ते पुष्टं ।  
अर्कक्षौरेः पुनर्मर्गं तद्वज्रजपुटे पचेत् ॥ १७८० ॥  
भक्षयेत्सर्वपे शुद्धं यावन्मापे विषधयेत् ।  
शरण्याः साधकानान्तु रसोऽयं वज्रपञ्जरः ॥ १७८१ ॥  
चित्रकाऽङ्गकसिन्धुर्गुह्यं मृतं तीक्ष्णं सुवर्चलम् ।  
समं सर्वं सदा चानु मस्यं स्यात्कामणे हितम् ॥ १७८२ ॥  
मासपट्टप्रयोगेण जीवेद्यश्चन्द्रतारकम् ।  
घलीपलितनिर्मुक्तो दिव्यकामो महायलः ॥ १७८३ ॥  
र. र. कौ., रसायनार्ग., रसायने ।

टि०—“हमपादीरसे कृष्ट रिपरेन पुनाने । सुवर्णधरम हन पुन-  
कन्दित धनेत् ॥ यवच्छय चतुर्गोत्राग्नेनाग्नेन भग्मना । अम्ल  
पिष्टेन नीकैर्गुह्यमापि मारयेत् ॥ रात्रिद्राङ्गोऽग्नेमाभ्य यावन्माप  
विषर्षितं । चित्राङ्गकसिन्धुर्गुह्यं नीकैर्गुह्यं मर्गं ॥ संतिष्ठ पल्प-  
यन्तो रग्नेऽथ वज्रपञ्जरः । शरण्याः परिपूतानां व्याधिर्षारपदवृत्तिभिः ॥  
इति पाठे रमररगमुच्यते निदिनं वज्रं तस्य मूलं न हानये वग्मा-  
प्रत्याङ्गुलं । सुवर्णरत्नं रसायनार्गदेव षष्ठं प्रतिमाति, तत्र य वज्र-  
पारदसंज्ञां कामविज्ञेयं त्रयाष्टमपि षष्ठं षष्ठतया प्रीतिरिति ।  
रसरगममुच्यते रजःपट्टपादं तु वज्रपञ्जरभग्मना ९१ रिपय भस्मी-

कृतस्पर्णपत्रस्योपयोगो वर्जितः स कोऽप्यल्लित इव प्रतिभाति, अतो रसापनस्योपयोग एव पाठः सापुनिति सुधीर्भिर्मर्शनीयम् ।

**भाषा—**हीरे और पारदकी मम्म १-१ तोड़ा, स्वर्णमम्म ३ माघे लेकर पोटकर हसराजके रससे एक दिन रात मर्दनकर मोलिया बनाय शरावसमुद्रमें बन्दकर ३-४ कपड़मिट्टी देकर सुखनेपर गजपुटकी आचड़े । स्वाइशीतलहोनेपर निकालकर आकके दूधसे एकदिन मर्दनकर पुनः पुटदे । स्वाइशीतलहोनेपर निकालकर रखले । इसमेंसे १-१ सर्पकवी मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ सेवनकरे और प्रतिदिन १-१ सर्पपेक्षा प्रमाण बढ़ाता जाय । उड़दबराबर मात्रा पूर्णहोनेपर उसेही नियतकर सेवनकरे । इसको ६ महीने तक लगातार सेवन करनेसे बलीपलितदिर्घसे रहितहोकर महाबल और दिव्य-शरीरयुक्त बनकर दीर्घजीवी होता है । चित्रक, अदरक, सैन्धव, खोइमस, सबल समभाग लेकर ३ माघसे १ तोले तक अशु पानरूपसे सेवनकरनेसे रसका शरीरमें भागण होता है । यह प्रयोग बहुतसमालोकर करना उचितहै वही जल्दी गुण कानेके लिये उड़द बराबर खुराक शुरूमें सेवनकरजायगा तो 'आचन्द्रतारकम्, का यही अर्थ होगा कि दिनमें खायो तो रात तक और रातको खायो तो सुबह तक आयुको भोगकर यमपुरका नासी बनजाय । ऐसे भीषण प्रयोगोंको समालोकर काममें लाना चाहिये ॥ ३६५ ॥

### ३६६ वज्रवद्गुटिका ( प्रथमा )

वज्रं योमजसत्त्वकं सरलरुचं चन्द्रं रश्मिं कान्तकं,  
नागं धूम्रमायसं हृदतरं सूतं कृतं तत्समम् ।  
यन्मरुतं रसगोलकं रतिकरं सर्वार्थदं तापहं,  
यपैकेण निहन्ति दोषानि च यं कल्याणुपा युज्यते ॥ ३६४ ॥  
रसाज्वरं, र. को, र. का रसायने । र. को नागार्जुनी बटीति नाम । र. का वज्रादिगुटीति नाम ।

**भाषा—**हीरा और अन्नरसत्त्व, सुवर्ण, रजत, ताम्र, कान्तलोह, नाग, वज्र और फोलाद ये सब समभाग, दिव्यौषधियोंके योगसे अमिषायाकियाहुआपारा सबकी बराबर लेकर इन्हें मलाय गोलीबनाकर सुद्धमें रखनेसे दिव्यस्तम्भन होता है । एकवर्ष तक निरन्तर मुँहमें रखनेसे समस्त रोगोंसे रहितहोकर दीर्घायु होता है ॥ ३६६ ॥

### ३६७ वज्रवद्गुटिका ( द्वितीया )

सुभगं माशिकञ्चैव यज्जमग्नकमेव च ।  
हेमं शुक्लं तथा तारं समभागानि कारयेत् ॥  
वज्रवद्भातु गुटिका यन्मरुता सर्वसिद्धिदा ॥ ३६८ ॥  
रसाज्वरं, रसेन्द्रम रसायनाधिकारे ।

टि०—रसेन्द्रमात्रे माशिक न दृश्यते तत्केन कारणेन निष्कामितमिति न शक्यते ।

**भाषा—**दिव्यौषधियोंसे बाधाहुआपारा, माशिक, हीरा और अन्नरस इनाकासत्त्व, सुवर्ण, ताम्र, रजत सबसमभागलेकर गोलीबनाय सुद्धमें रखनेसे यह समस्तसिद्धियोंको देती है ॥ ३६७ ॥

### ३६८ वज्रवद्दरसः

वज्रमस्मावृते हेमपिष्टिके पट्टणं वलिम् ।

पूर्ववद्भूधरे पन्त्या वद्धोऽयं योगवाहकः ॥ ३७८६ ॥

र. शि, सर्वरोगे ।

**भाषा—**तोड़द्वे अथवा बतीसवें हिस्से सुवर्णके घ्राससे पिष्टीबनाएहुएपारमें चतुर्थांश हीरेकी मम्म ढालकर दिव्यौषधियोंके स्वरससे १-२ रोज मर्दनकर टिकियाबनायसुखाकर बराबरका गन्धक नीचेखर रख शरावसमुद्रकर भूपरयन्त्रकी इतनी आचड़े कि गन्धकमान जलजाय पर पारा न उड़े । इस तरह पट्टणगन्धक जारणकरनेसे यह योगवाहकर तैयारहोता है । इसमेंसे १ सर्पमरसे शुरूकर रोजाना १-१ खरों बड़ाकर १ रतीतक मात्रा बढ़ानेसे यह तमामरोगोंको नष्टकरता है ॥ ३६८ ॥

### ३६९ वज्रमूर्तिरसः

कान्ताश्माऽऽशाङ्गारमूर्पां प्रलिप्य

धजं क्षिप्तं धमापयेद्दृङ्गणेन ।

चूर्णं तत्स्याद्वेष्टयित्वा सुदृष्ट्वा  
लिप्या धमापेत्तेन माप्राप्य तु ॥ ३७८७ ॥

एवं वज्रं पातयेद्देमगर्भे

तुल्यं यद्वा पादभागक्रमेण ।

मूत्रे तके चारनाले कुलत्वे

गव्ये पन्त्या धासौकं प्रयत्नात् ॥ ३७८८ ॥

निम्बूतोये पेपयित्वा पचत्त-

स्थालीपाके रक्तामेति यावत् ।

लौहे पात्रे निक्षिपेत्तत्र किञ्चि-

न्निम्बूतोये सूतकं सैन्धवञ्च ॥ ३७८९ ॥

घर्षयेत्पद्माहोदवण्डेन यत्ना-

त्स्तोकं चाप्यग्निक्षिपेत्तत्क्रमेण ।

झात्वा हस्ते मन्धरत्वं क्षिपेत्

सोष्णं तस्मिन् काञ्चिके क्षालयेत् ॥ ३७९० ॥

पिष्टिं यत्ने घनयित्वा निपात्य

पात्रे तं वै गोलकं स्थापयेत् ।

एवं घ्राष्टं पकताप्यस्य सत्यं

यथा क्षिप्तं मादिपे पञ्चके तत् ॥ ३७९१ ॥

क्षारं दत्त्वा गोलकं धापयित्वा

सत्त्वं ताप्यस्वेन्द्रगोपग्रमं स्यात् ।

शुष्णं तीक्ष्णं तुल्यकं मागवृद्ध्या

सूपामध्ये धापयेद्दृङ्गणेन ॥ ३७९२ ॥

किट्टजातं धापयित्वाऽतिथना-

त्कन्यातोये निक्षिपेत्सत्तधारम् ।

सत्त्वं तस्याऽपिन्द्रगोपग्रमं

स्याप्रागं किञ्चिद्वाहयेन्मार्दवाय ॥ ३७९३ ॥

शुष्णं त्यज्ज काञ्चिकक्षीरपत्रं

क्षारं छाक्षां मादिपं पञ्चपञ्च ।



पिष्टा गोलान् बन्धयित्वा धमेत  
गाढं सत्त्वं द्वित्रिवारं पतेत ॥ १७९४ ॥  
पतत्सर्वं वज्रगमं सुवर्णं  
तौत्थं सत्त्वं माक्षिकस्याऽपि तुल्यम् ।  
कृत्वा मृतं दापयेत्पादभागं  
निम्बतायैः पिष्टिकां तस्य कृत्वा ॥ १७९५ ॥  
रखे यद्धा क्षारसामुद्रजायैः  
सम्पद्युद्धा स्वेदयेत्सप्तरात्रम् ।  
यन्त्रे चाप्ये काञ्चिकेनातियत्ना-  
द्वद्धा पिष्टि मापके वैष्टयित्वा ॥ १७९६ ॥  
तैले यत्नात्पाचयेद्याममेकं  
कृप्यां पित्ते वाहिणिं निक्षिपेत् ।  
शुद्धे सूते कान्तपापाणमूपा-  
गमं प्राप्ते पिष्टिकां तां कलांशाम् ॥ १७९७ ॥  
द्वत्था गन्धं निक्षिपेत्पादभागं  
रुद्धा मूपां भूधरे तां पुटेत् ।  
यन्त्रे चाप्ये पिष्टिकां तां विपाच्य  
यद्धा यन्त्रे कण्डूये पादभागम् ॥ १७९८ ॥  
पश्चाद्गन्धं कान्तपापाणमूपा-  
कोष्ठ्यां शुद्धं पङ्कणं जारयेत् ।  
शुक्लाम्गमं सर्वरोगेषु दद्या-  
द्योगैस्तैस्ते वैज्रमूर्तीरसेन्द्रः ॥ १७९९ ॥  
र दी, वाजीकरणे ।

भाषा—कान्तपापाण और बहेड़े के कोयलोंको मूपावनाय कईवार इसीमिरीकालेप देदेकर सुखाकर चिकनी बनाकर हीरेको डालकर धमनकरे और बारम्बार थोड़ा थोड़ा सुहागा डालता जाय । हीरेका चूर्ण होजानेपर निकालकर शुद्धसुवर्णके पत्रेमें लपेटकर उसीमूपामें रखकर धमनकरे । इसतरह ३ बारकरलेसे यह हीरा सुवर्णवैद्याय मिलजायगा । प्रतिवार सुहागा डालकर जितना हीरा सुवर्णमें मिलानाहो उतना मिलावे फिर गोमूत्र, छाछ, काष्ठी, कुलधीकापाडा इनमें १-१ दिन सुवर्णगमं हीरेकी पक्काव । फिर नीपूरेखसे एकदिन पीसकर गोलीबनाय नीपूके रसमें कालरजहोनेतक स्वेदनकरे । इसकेबाद निकालकर लोहेके सरलमें इसकीनरावर शुद्धपारा और सैन्धव कालर जोड़ेसे नीपूकरसवेमाथ मर्दनकरे । गाढा होनेपर थोड़ाथोड़ा नीपूकास काढताजाय । जबदास कि पारा चमलताको छोड़कर घट होगया तब गरमसाथी डालकर साफकरले और गाटेकण्डेमें दबाकर बचेपारेको निकालद । यधीहुई गोलीको शीशीमें रखले । इसी तरह मुज्जमाक्षिप्यामी सत्त्व मिगल्ले । अथवा भेसक गोबर, मूत्र, दही, दूध और पीतोमिलाकर इसमें सुवर्णमाक्षिकको १-२ दिन मर्दनकर गोलाकृतया मूपामें रग धमनकरे और सुहागा देताजाय । इसत्पद्धतनेगे वीरबुद्धीके सप्त लालरणा सत्त्व निकलेगा । पोलदका रता १ भाग और चमकदार तृतिया २ भाग मिलाकर मूपामें रग सुहागैका प्रदेणदेकर धमनकरे तो

इसका किट होजायगा, इसकिटको फिरसे धमनकर धीकुंवाके रसमें बहुतसंभालकर डाले जिसमें कि वाहर उठेनहीं । ऐसे ७ बार करनेसे यह भी लालरजका होजायगा परन्तु यह अन्यन्त कठिनरहेगा इसलिये इसको मलाकर बहुतस्वल्प नागमिलादे जिसमें कि यह कोमल होजाय । उत्तमजातिके अम्रको काष्ठी और दुग्धमें १-१ दिन स्वेदितकर बारीक चूर्णकर सुहागा, राख और महिषपञ्चक मिलाकर १-२ दिन मर्दनकर छोटी छोटी गोलीया बनाकर सुखाकर गाढ़ धमनकरे तो उसका किट होजायगा । उसकिटमें फिर पूर्वोक्तचीजें मिलाकर धमनकरे । इसप्रकार २-३ बारकरलेसे इसमेंसे सत्त्व निकलेगा । यसवसत्त्व और वज्रगमसुवर्ण समभाग लेकर सबसे चतुर्थीका शुद्धपारा डालकर थोड़ाथोड़ानीपूकास देदेकर लोहेकी सरलमें लोहेके ढण्डेसेपोट । पारेकी चकत्ता दूहोनेपर ४ तह गाडेकपट्टेमें बाध सैन्धवमक्के-बीचमें इस पोष्टीको रखकर काष्ठीसे ७ दिनतक स्वेदनकरे । पर यह ध्यान रखे कि काष्ठी पोष्टीमें लगने न पावे केवल बाप्य लगे । काष्ठीका स्पर्शहीनेसे नमक बहजायगा । दैवबघाव मूलहोजाय तो दूसरे नमककी पोष्टीमें बाधलेवे और काष्ठीकी हण्डीको रोजाना बदलतरहे । आठवें दिन वज्रपिटीको निका-लकर उद्धके आटेके गोलेमें बन्दकर १ पहरतिलकेतैलमें पका-कर निकाले । स्वाज्ञशीतलहोनेपर बाटीमेंसे पोष्टीको निका-लकर चौड़ेमुंहकीशीशीमें बलसे जुड़ीकर धीरजसे रखदे और उसमें पिटी हचनेलायक मोरकापित भरकर सुरक्षितरखद । कान्तपापाणकीमूपामें शुद्ध मुमुक्षितपारेको डालकर पारेसे थोडासा पित्तस्थ पिष्टिकाको डालकर पारदसे चतुर्पांश ऊपरसे गन्धक डाल मुहबन्दकर भूधरयन्त्रमें आंचदे । स्वाज्ञ-शीतलहोनेपर निकालकर सैन्धवमक्केमें पूर्ववत्, पोष्टीबनाय ७ रोजतक बापयन्त्रमें पकावे । फिर कण्डूयन्त्रमें अथवा कान्तपापाणमूपामें रख पङ्कणगन्धक जारणकरे । इसमेंसे १-१ रती समय अथवा रोगोचितानुपातकेसाय दनेसे यह समस्त असाध्यरोगोंको नष्टकराहै । इसीतरह पित्तस्थ पिष्टिकाव प्रसेपसे १६ गुना रस तैयारहोतकाहै । धातुवादीकी ग्रन्थकारने कुछ सूचना नहीं दीहै परन्तु उस दशामेरी यह अवश्यकाम-करेगा । पर किन्ता करेगा यह साधकोको साक्षात् करके दखना चाहिये ॥ ३६९ ॥

### ३७० वज्ररसायनम् ( प्रथमम् )

एकं कर्पं मृतं वज्रं तावद्भूतागसत्त्वकम् ।  
ततश्च द्विगुणं स्वर्णं स्वर्णतुल्यं खसत्त्वकम् ॥ १८०० ॥  
तावन्मानश्च कान्ताऽयः सर्वे धारितरं हृतम् ।  
अष्टमांशश्च मृतश्च सर्वेभ्यः परिकीर्तितः ॥ १८०१ ॥  
नुकपिच्छः समः सर्वे मर्दयेद्यणकाम्लकैः ।  
ततो भूनागसत्त्व हि गन्धकेन ममं क्षिपेत् ॥ १८०२ ॥  
विधाय गोलकं रम्यं छायाशुक्लं समाचरेत् ।  
पुटितं शतगारांश्च शतं धाराश्च ताप्यकैः ॥ १८०३ ॥

शुनः पित्तैश्च दुग्धैश्च चारणा विशतिस्ततः ।  
गुञ्जाट्टङ्गुणसिद्धेन भूनागेन समायुतम् ॥ १८०४ ॥  
वर्तयित्वा तु तं गोले कलेनाऽनेन लेपयेत् ।  
अर्द्धाङ्गुलदलेनाऽथ परिशोष्य खरातपे ॥ १८०५ ॥  
निक्षिपेद्वालुकायश्च प्रपचेदितपश्चक्रम् ।  
ततस्त्रिकोणसेहपुण्ड्रदुग्धे गन्धकसंयुतः ॥ १८०६ ॥  
मर्दयित्वा तु तं गोले पुट्टद्वाराणि विशतिः  
पटेन गालितं कृत्वा क्षिपेदन्तःकरण्डके ॥ १८०७ ॥  
गुज्जामितं भजेदेनं रम्यं वज्ररसायनम् ।  
ज्ञाताऽज्ञातेषु सर्वेषु गदेषु विविधेषु च ॥ १८०८ ॥  
तत्तद्गोणानुपानेन दातव्यं भिषजा खलु ।  
न सोऽस्ति रोगो लोकेऽस्मिन्यो ह्यनेन न शाम्यति ॥  
रसायनप्रकारेण सेयितो मण्डलप्रथम् ।  
देहसिद्धिं करोत्येष विभ्विस्मयकाग्निष्म ॥  
विल्वमेकं विना सर्वे पथ्यमत्र प्रकीर्तितम् ॥ १८१० ॥  
र. च, रसायने ।

भाषा—होरामीम्ल, केंचुआंकासत् १-१ कर्ष, सुवर्ण-  
भस्म, अन्नकसत् और कान्तलोहभस्म २-२ कर्ष येसव बारि  
तर लकर इक्के चारलकरे । फिर इनसबसे आठवा हिस्सा पारा  
और शुद्धगन्धक सबकोबराबर लेकर नीलवर्णकजलीकर विमुद्-  
घनकक्षारसे एकरोज मर्दनकर गन्धककी बराबर भूनामसत्  
मिलाकर एक्कोज मर्दनकर गोलाबनायसुखाकर गजपुटकी  
आचदे । स्वाज्ञाशीतलोहनेपर निकालकर पूर्वांकप्रमाणसे गन्धक  
मिलाय चनेकेसारमें एक्कोज मर्दनकर गजपुटकी आचदे ।  
ऐसे १०० आचे दनेकेबाद स्वर्णमाक्षिकसत्तमिलाकर पूर्वश्रु-  
रसे १०० आचे दे । फिर कृतीके पित्त और दूधसे २०-२०  
माषनाए देकर गोला बनाय सुखाकर गुञ्जा, गुडाग और  
केंचुए समभागका चूर्णकर चनेकेक्षारमें पीसकर उसगोलेपर  
आधाअङ्गुलमोटा लेपदेकर कड़ीधूपमें सुखाकर शरावसम्पुटमें  
बन्दकर ६-७ वषडमिठीकरदे । सूखनेपर बालुकायन्त्रमें ५  
दिनकी अग्निदेवे । स्वाज्ञाशीतलोहनेपर निकालकर बराबरका  
गन्धकमिलाय तिषारीधुअरकदूधमें एरदिन मर्दनकर गोला-  
बनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आचदे । ऐसे  
२० आचे दनेकेबाद कपड़ेसे छानकर शीशीमेंरखछोड़े । इसमेंसे  
१-१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ ज्ञात अथवा  
अज्ञात नानातरङ्गेजटिलरोगोंमें देनेसे समस्तरोग नष्टहोतेहैं ।  
सत्तारमें ऐसा कोईभी रोग नहीं जो इससे नष्ट न हो । रसा-  
यनप्रकारसे इसका ३ मण्डलक सेवनकरनेसे समस्तसाराको  
विस्मयदेनेवाली देहसिद्धिकी प्राप्तिहोलाई । कबलविल्वकी  
छोड़कर दुनियामें समस्त पदार्थ इसमें पथ्यहैं ॥ ३३० ॥

### ३७१ वज्ररसायनम् ( द्वितीयम् )

विंशद्भागमितं हि वज्रभसितं स्थर्णं कलाभागिक,  
तारं चाष्टगुणं शिवामृतकर रद्रासकं चाग्नकम् ।

पादांशं खलु ताप्यकं वसुगुणं वैजान्तं पट्टणं,  
भागोऽप्युकरसाद्वरोऽयमुदितः पाहुण्यसंसिद्धये ॥  
र. च, रसायने ।

भाषा—हीराम्ल ३० मासे, सुवर्णभस्म १६ मासे,  
रजतभस्म ८ मासे, हों और शुद्धवल्गनाग ११-११ मासे, अन्नक  
भस्म ४ मासे, सुवर्णमाक्षिक ८ मासे, वैजान्तभस्म ६ मासे  
लेकर सबको मिलाकर रखछोड़े । इसका चतुर्थांशभी रसायन-  
प्रकारसे खानेसे समस्तरोगोंसे निवृत्तहोकर मनुष्यको दिव्य  
देहसिद्धि होतीहै ॥ ३७१ ॥

### ३७२ वज्रवटी

शुद्धसुताग्निमरिचं सुताहिगुणगन्धकम् ।  
काकोदुम्बरिकाक्षीरे दिनं मर्चं प्रयत्नत ॥ १८१२ ॥  
वराव्योपकगायेण वटीश्चास्य समाचरेत् ।

लिङ्गाद्वज्रवटी होयत पामारोगविनाशिनी ॥ १८१३ ॥

र. स, र. चि, र. सु, र. का, र. क. ल, कुष्ठरोगाधिकारे ।  
टि०—रसकामेना द्वितीय पाठोऽस्मिन्नेवाऽधिकारे वक्षिष्विकेति  
नाम्ना कुष्ठोऽस्ति तत्र गन्धकस्त्रिगुण, मरिचस्थाने व्युपगमिति विशद  
इत्याऽस्ति पाठस्तु एकएवाऽस्ति । त्रिगुणगन्धकमेवे शुष्कीरिपयस्योवाऽ  
पिषतया दाने न काऽपि क्षति, पाठान्तरस्तु नास्त्येव बहुप्रथमत्वा  
वाप, नाम तु वज्रवटयेवोचितम् ।

भाषा—शुद्धपारा, चित्रक, मरिच १-१ भाग, शुद्धगन्धक  
२ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें  
मिलाकर कट्ठमरकदूध, त्रिफला और त्रिकटुक काठसे १-१ दिन  
मर्दनकर ३-३ मासेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली त्रिफला और त्रिकटुककापकेसाथ खानेसे पामारोग  
नष्टहोताहै ॥ ३७२ ॥

### ३७३ वज्रवल्स्यादिगुगुलुः

वज्रवल्स्यर्जुनौ धासाविशालोहट्टङ्गुपान ।  
रसगन्धकसिन्धुस्थान्सभमागेन चूर्णयेत् ॥ १८१४ ॥

चूर्णाद्गुणप्रयं प्राहो गुगुलुं घृतपिहितम् ।

वज्रवल्स्यादिको नाम गुगुलुः परिनिर्मितः ॥ १८१५ ॥

गहनानन्दनाथेन भद्ररोगविनाशन ।

नानामग्नं निहन्त्यासु घलवर्णाऽग्निवर्धनः ॥ १८१६ ॥

रुमिषुग्राऽक्षिरोगाणां हन्ता ग्रन्थिग्रन्थापहः ।

कणिहृद्गोशमन आमवातनिपूदन ॥ १८१७ ॥

र. र, भग्नाऽधिकारे ।

भाषा—हल्जोह, अर्जुन, अदूध, महर अथवा इन्द्रायण,  
लोहभस्म, सुनासुहागा, शुद्ध पारा और गन्धक, सिन्धव सब  
समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें  
मिलाय सबवृषसे तिगुना शुद्धपुष्करलेखर धीके योगसे कूटकर  
द्व घनावे और थोडा २ चूर्णजलकर मिश्रताजाय । इसमेंसे १  
मासेसे २ मासेतकमात्रा रोग अथवा समयोचितानुपानकेसाथ  
दनेसे भद्र, बलवर्धामिनास, कुमि, कुष्ठ, अक्षिरोग, ग्रन्थिव्याधय,  
कटि और हृदय, आमवात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३७३ ॥

## ३७४ वज्रशेखररसः ( प्रथमः )

विष्णुनान्ताघनरसाः सर्पाक्षी शङ्खपुष्पिका ।  
गोजिह्वाक्षीरिणी नीली ब्रह्मवृक्षो र्दन्तिका ॥ १८१८ ॥  
निचुलः काकुमाची च रसैरपां विमर्दितम् ।  
पक्वं तुपकरीपासौ रसाहिगुणगन्धकम् ॥ १८१९ ॥  
पर्पटीरसचतुर्पक्वं खसत्वेनाऽऽरणेन च ।  
युतं गन्धकतुल्येन ताव्येन च रसाहिणा ॥ १८२० ॥  
कृतावापं धरीमुण्डाहस्तिरुण्यमृतालिका- ।  
मूर्धाविदारिकाजातेर्मर्दितं घृतमिश्रितम् ॥ १८२१ ॥  
कपाये दशमूलस्य विपकं लेहनां गतम् ।  
रसतुल्यत्रिजाताऽग्निव्योष्यप्रधाहसंयुतम् ॥ १८२२ ॥  
स्निग्धभाण्डगतं कुट्टी क्षयी च कृतशोधनः ।  
मञ्जिष्ठाद्विकृपायस्य कृत्वा मासं निपेयणम् ॥  
मापप्रमाणं सेवेत रसोऽयं वज्रशेखरः ॥ १८२३ ॥  
शुद्धाचिप्रकदाहचूर्णरजनर्भलातरा लाङ्गली,  
स्तुनक्षीरोत्तमकन्यका घनवरा धूम्रोद्गमः सूतरः ।  
गोमूत्रैश्चैव विटङ्गमरिचैः सक्षौद्रसाराभ्यु च,  
पामादद्द्विचर्चिकाफिटिभजितकण्डूभूम्रुतनात् ॥

र. र. घ., छे ।

भाषा—विष्णुनान्ता, नागरमोषा, रसौत, अन्धाहूली, शङ्खाहूली, बनगोभी, छोटीदूधी, नील, पलाश, रुद्रन्ती, जलवेत, मकोय इतगर्भके रसौमें शुद्धपारेसे द्वागन्धकडालकर की हुई नीलवर्णजलीको १-१ भाषा देकर सुपाकर फिरमेकजलीकर पुप अथवा करीपकी अमिर घृताफ लोहकीकड़छीमें गलाकर पण्टीतैयारकरले । इसमें गन्धककी बराबर लालअग्रस्तव और पारेमें चतुर्धा सोनामासी मिलाकर घनावर, गोरखमुण्डी, हस्तिरुण्यपलाश ( लोबाइन हिं० ), मिलेय, भग्रा, मूर्धा, विदारिकन्द इनकेसौत १-१ दिन मर्दनकर अन्तमें गोपूतने मर्दनकरे । फिर इतने १६ शुना दशमूलकाश देकर मन्द आचने पकावे । लेह तैयारहोनेपर इसकीबराबर तम्र, पत्र, इलायची, चित्र, त्रिकटु और मुलट्टी सबसमभागकाचूर्णमिलाकर घृतो भाण्डमें रखाछे । इनमेंसे १-१ माघा महामञ्जिष्ठादिवायव्येगाथ एकमहीनेतक संतनकरनेमें और अपोनिदिष्ट वषट्गकरनेमें कुश, शय, पामा, दंडु, विचर्चिका, फिटिभाउ और कण्डू नष्टोत्तरे । मर्चगुग्गु, चित्र, शङ्खभस्म, इली, भिलावे, करिहारी, गृह(वाट्य), पीडुवार, नागरमोषा, चित्रा, गुडगुन, शुद्धपारा, गोमूत्र, पत्रां, विडङ्ग, मरिच, मण्डू, समी, गुदागा, यशभार और पानी सबगमभाग लेकर एकत्राह मिलाकर रगालेके सर उबटनकी साममीह ॥ ३७४ ॥

## ३७५ वज्रशेखररसः ( द्वितीय )

येकान्तं हेमशान्त्रं यद्गमं स्फटिकनया ।

गुग्गुगन्धरसाभ्याश्च समं खल्वेयं प्रमदयेत् ॥ १८२५ ॥

अस्थिमंहारज्वरसं बुधो दत्त्वा दिनत्रयम् ।

मधुना मापमात्रं वा सेवेताऽग्निवल् प्रति ॥ १८२६ ॥

सद्योव्रणेऽग्निदाहे च भग्ने च विपमज्वरे ।

नाशनार्थं प्रयोक्तव्यो रसोऽयं वज्रशेखरः ॥ १८२७ ॥

टो., मणाधिपारे ।

भाषा—वैकान्त, सुरण, कान्त, विट्ग, स्फटिक, इनकी भस्में, शुद्धगन्धक और पारा सब समभागलेकर नीलवर्णजलीकर द्वाजोडकेरसे ३ दिन मर्दनकर सुखाय मधुसे १-१ माशेकीगोलिया बनाकर रखाछे । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा सोगेथितानुपानकेसाथदेनेसे सद्योव्रण, अग्निदाह, भग्न, विपमज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३७५ ॥

## ३७६ वज्रमुन्दरीवटी

आरकं मेघनादन्तु तथा पापाणभेदकम् ।

स्त्रीस्तन्यसहितं पिष्ट्वा तेन मूर्पां प्रलेपयेत् ॥ १८२८ ॥

भागेकं मृतवज्रस्य स्वर्णचूर्णस्य पोडश ।

क्षित्वा तस्यां निरुद्धयाऽथ याममात्रं दृढं धमेत् ॥ १८२९ ॥

उद्धृत्य निक्षिपेत्खल्वे शुद्धसूतञ्च तत्समम् ।

मर्दयेच्चाट्मकद्रावे यांचद्भवति गोलकः ॥ १८३० ॥

चाण्डालीकन्दमादाय स्त्रीस्तन्येन सुपेययेत् ।

अनेन गोलकं लिप्त्वा वज्रमूर्ण्यां निरोधयेत् ॥ १८३१ ॥

पत्त्या गजपुटे प्राहात शुटिका वज्रमुन्दरी ।

वर्षेकं धारयेन्नने जीयेद्ब्रह्मदिनत्रयम् ॥ १८३२ ॥

ग्रहानुसृत्य त्वचूर्णं क्षीरनित्यं पले पिबेत् ।

क्रामणे हानुपानं स्यात्साधकस्याऽतिसिद्धिदम् ॥ १८३३ ॥

तदुद्धृत्यमले लिप्ते तापन्तु धमनेन हि ।

जायते फनकं दिव्यं सत्यं शङ्करमापितम् ॥ १८३४ ॥

र. ख र. का, रसायने ।

भाषा—मरवा और पापाणभेदको मोंके दूधमें पीछकर मूपामें लेपदेकर हीरकीभस्म १ भाग, सुवर्णचूर्ण १६ भाग डालकर एकपटतक इष्टधनकरावे फिर निवालकर इसकीबराबर शुद्ध और सुमुक्षितपारा डालकर अदरनरेरतमें गोला बननेपर घोटकर चाण्डाली (दिव्योपधि) अपना सेमलेकन्दको छीके दूधमें पीछकर गोलेपर आधाअहुल मोटा लेप देकर बाममूपामें बन्दकर ६-७ कपडिमी देकर गजपुटकी आवरे । द्वात्रिंशतिरहोनेपर निवालकर रखाछे । इसे एकरपत्र ल्यागार मुहमें रखनेसे और पलाशीछालकर १ पत्राण दूधदेगाथ प्रतिदिन लनेमें रगरी स्यात्सिद्धोकर दिव्यशरीरहोजाताहै और उतने मल-सूत्रसे तापेको लेपदेकर धमनकरने दिव्यमुखां होताहै ॥ ३७६ ॥

## ३७७ वज्रशेखररसः

गुडद्विकुण्डमुग्गाम्नेः शान्दान्तरस्थयोः ।

धमेत्तुऽन्धमूर्पायामेकत्वं यज्जगमयोः ॥ १८३५ ॥

निम्बुकाभ्युत्साभ्यासः कलसः पिष्टीकृता मिथः ।

सृष्टिपुस्तरतेलाभ्यस्तुत्यगन्धकसंयुतः ॥ १८३६ ॥

जीवनी देवदाली च हंसपादी पुनर्नवा ।  
पुटितं भूधरं सप्तवारानासां रसेन च ॥ १८३७ ॥  
पुनस्तेनैव गन्धेन रसकल्कोऽथ कल्कितः ।  
शुद्धधातुविशेषतश्चर्ममूपायिनिर्गतः ॥ १८३८ ॥  
पित्ताग्निफेनसंयुक्त आर्द्रकद्रवमाधितः ।  
राजीप्रमाणा गुटिका रसाऽथ सर्वरोगहृत् ॥ १८३९ ॥  
= (मा), सर्वरोगे ।

भाषा—गुह, सुहागा, गुष्ठा और विजोप्रभृतिहारस  
इनसबका कल्कबनाय अन्यमूषामें लेपकर स्रगोशके दातकाचूर्ण  
विधाय सुवर्णपत्रमें हीरेकेचूर्णको छपेटकर रखदे और ऊपरसे  
खरगोशके दातका चूर्ण डालकर मूषाको बन्दकर ३-४  
कपड़मिठीदेवे । सूखनेपर हठ धमन करानेसे हीरे और सुवर्णका  
मिलाप होजायगा । इसको निकालकर नीचूके रसे २-४ रौन  
मर्दनकर गोलाबनाय और १ और घर्तुरेतेलमें शुद्धगन्धको  
मर्दनकर जीवन्ती, बन्दाल, हंसपदी, पुनर्नवा इनकेरसकामूषामें  
लेपकर पिष्टीकेबराबर गन्धको विधाय पिष्टीको रख उतनाही  
गन्धक और ऊपररखकर सुहन्दकर ६-७ कपड़मिठी देकर  
सूखनेपर भूधरपुटकी आवे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर  
फिर उसीतरह मर्दनकर गन्धको बीचमें रख भूधरपुटदे । ऐसे  
७ पुट देनेकेबाद इसकीबराबर सप्तधातुओं ( सुवर्ण, चादी,  
कान्त, तीक्ष्ण, ताम्र, नाग, बज्र ) की भस्में और शुद्धयज्माग  
मिलाय नीचूकेरसे मर्दनकर टिक्की बनाय चर्ममूषामें बन्दकर  
भूधरपुटकी आवे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर पक्वपित्त,  
समुद्रपेन और अदररखे द्रवोंसे १-१ भावना देकर राईके  
बराबर गोलियें बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय  
अथवा रोगोचितामुपानेकाव देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकर  
दीर्घायुको करताहै ॥ ३७७ ॥

### ३७८ वज्रसाररसः ( सारयोग ) १

द्वौ क्षारी दृङ्गणं सतं लघुङ्गं लघणत्रयम् ।  
पिप्पली गन्धकं शुण्ठी मरिचं पटसम्मितम् ॥ १८४० ॥  
कर्ममेकं विषं दत्त्वा सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।  
अर्कदुग्धस्य दातया भाजना सप्तसारसम् ॥ १८४१ ॥  
अन्धमूषागजपुटे स्वाहशीतं समुद्धरेत् ।  
ततो लघुङ्गमरिचस्फटिकानां पटं पलम् ॥ १८४२ ॥  
सम्मर्द्य सुहृदं सर्वं दृढभाण्डे निधापयेत् ।  
तस्य गुग्गुलुद्रव्यं पादेद्वक्तुं द्रावयति क्षणात् ॥ १८४३ ॥  
पुनर्मज्जनयान्द्राज्जनयेत्प्रहरापरि ।  
आममांसं द्रावयति श्लेष्मरोगनिवृत्तनम् ॥ १८४४ ॥  
वै चि अनिषे ।

भाषा—गन्जी, यवशार सुहागा, शुद्धघास, लौंग, लीनों  
नमक, पीपल, शुद्धगन्धक, सोठ और मरिच १-१ पल शुद्ध  
बडनाग १ कर्पूरेर बारिकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलगन्धकनीमें  
मिलाकर आकडेरूपसे ७ दिन मर्दनकर गोलाबनाय अन्ध

मूषामें बन्दकर २-४ कपड़मिठीदेकर सूखनेपर गजपुटकी आवे ।  
स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर लौंग, मरिच, मुनी फिटकरी  
१-१ पल मिलाकर एकदिन अच्छीतरह मर्दनकर शीशीमें  
भरलेवे । इसमेंसे २-२ रत्तीकीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ  
देनेसे भोजनको तत्क्षण जीर्णकर दुबारा भोजनकी इच्छाको  
पैदाकरताहै । वचामाम खाकर यदि इसकासेवनकियाहो तो  
एक पहरके बादही पचादेताहै । श्लेष्मरोगभी इससे नष्टहोताहै ॥

### ३७९ वज्रसाररसः ( द्वितीय )

सामुद्रं सैन्धवं काचं यशस्वरं सुवर्चलम् ।  
दृङ्गणं स्वर्जिकाक्षारं तुल्यं चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ १८४५ ॥  
अर्कक्षारीः स्नुहीक्षरीः क्षोपयेदातपे त्र्यहम् ।  
अर्कपत्रं लिपेत्तेन रक्षा भाण्डे पुटे पचेत् ॥ १८४६ ॥  
तं क्षारं चूर्णयित्वाऽथ व्यूषणं त्रिकलारजः ।  
जीरकं रजनीं यद्भि नैत्रकस्य समं ततः ॥ १८४७ ॥  
आराऽर्कं योजयेत्सन्ध्यागेकीकृत्य विचूर्णयेत् ।  
वज्रक्षारमिदं चूर्णं स्वयं प्रोक्तं पिनाकिना ॥ १८४८ ॥  
सर्वांद्रेषु गुल्मेषु शूलैः शोफे च योजयेत् ।  
अग्निमान्ये त्यजिष्यं च भक्षेन्निष्यद्वयं तथा ॥ १८४९ ॥  
वाताऽधिके जलेः कोष्णे घृतेः पित्ताऽधिके हितः ।  
कफे गोमूत्रसंयुक्त आरजालेन्निद्रोपनुत् ॥ १८५० ॥

ओ र, र वि, र र स, चि क, डो, र क, वै वि, यो,  
चि, रसायन स, वै र, चि सा, वै क, चि र भ, र.मु, र  
का, यो म, चि.र, य यो त, भा.प्र, ना वि, वै द, वेद-  
रोगाऽधिकारे । कुत्रचि श्रूयणादिचूर्णं क्षारसमं नियोजितम् ।

भाषा—गमुद्रनमक, सैन्धव, काचनमक, यवशार, सबल,  
मुनासुहागा और सब्जी समभाग लेकर आक और भूधरके रूपसे  
३-३ दिन मर्दनकर आकके पके पत्तोंमें छपेटकर हठडीमें बन्दकर  
३-४ कपड़मिठी देकर सूखनेपर गजपुटकी आवे । स्वाह-  
शीतलहोनेपर निकालकर त्रिकटु, त्रिकला, जीरा, हल्दी, विप्र-  
ककीज व सप्तसमभाग लेकर बारिकचूर्णकर क्षारमें आधि प्रमा-  
णमें मिलाकर रखजोड़े । इसमेंसे ८-८ मातेरी मात्रा यथो-  
चितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त उदररोग, गुल्म, शूल, शोष,  
सन्दाहि, अजीर्ण प्रवृत्ति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै । वाता  
धिक्यमें गमयज, पित्तमें घृत, कफमें मूत्र और निद्रोपमें  
काशीकेसाथ देना उचितहै ॥ ३७९ ॥

### ३८० वज्राङ्गसुन्दरीवटी

यद्द्रवीसकमुल्याऽग्रेहेमतारसमग्निर्नै ।  
यज्ञायसादिमिथुनः म्रियते घादिकं रम् ॥ १८५१ ॥  
यज्ञाणां द्रावर्यं यद्ये पाददस्य च गन्धनम् ।  
लघुद्रावय्य श्लेष्मेषु संयोगार्थं परस्परम् ॥ १८५२ ॥  
अस्थिग्रहलम्पस्यं हृन्वा पञ्च निरोपितम् ।  
जलभाण्डे त्रिनिशित्य स्वेदयेद्विनसतश्चम् ॥ १८५३ ॥

वह्निकारसप्तद्वष्टं नष्टपिष्टं पारदम् ।  
 स्पृक्काकन्दस्य मध्यस्थं चन्मनार्थं ततः पुटेत् ॥१८५॥  
 रेतितं लोहचूर्णं तु दङ्गणेन तु भावितम् ।  
 लघुद्रावि भवेदेवं ताप्रपात्रे न संशयः ॥ १८६ ॥  
 सर्वास्तानेकतः कृत्वा मृपामध्ये स्थिति भवेत् ।  
 गुटिकाजायते रम्या नान्ना चक्राङ्गसुन्दरी ॥ १८७ ॥  
 मुखस्थ्या सिद्धिदा प्रोक्ता जरामृत्युविनाशिनी ।  
 सङ्ग्रामे विजयी घोरो वज्रदेहो महाबलः ॥ १८८ ॥  
 सर्वलोकप्रियो नित्यं नारीणां बहुभस्तथा ।  
 गुटिकेयं समाख्याता यथोक्ता ग्रहयामले ॥ १८९ ॥  
 न. ज., यो म, रसेन्द्रं म, र, रसाणं, र खं, र. का,  
 रसायनाधिकारे ।

टि०—कुमार्यां स्वरम प्राञ्च गुटेन मह रेहयेत् । फलैरनुपान  
 स्वाजराधुपनिष्ठमन्त्रम् ॥ इत्यधिक पाठो हस्तनिष्ठः रसायनसंज्ञे  
 दृश्यते । “मनो रसाञ्चरो रत्नवर्णेन परिभूषितः । गुटिकाधारमया तु  
 मुखाख्या बुद्धवारिणी” इति रसायनगोत्रे गुटि पाठोऽस्ति तस्य वज्राङ्ग-  
 बुद्धपमिवान्तर्भावः ॥

भाषा—हङ्गोदरे कल्कमे ह्रीरेको यन्दकर दोलायन्न वनाय  
 हङ्गोदरा आश्रयस्व अथवा हाथ धर्तनमे भूके ७ दिनतक  
 स्वेदन करनेसे यह शीघ्र हुतहोके योग्य होजायगा । शुद्धपाँरेको  
 हिंगुलुरीके रससे ७ दिन मर्दनकर पीछी बनाले । फिर इसको  
 सूखा ( दिव्याधिकारके ) अथवा अनन्तमूलकी जड़केकल्कमे  
 रस धावसम्पुटमे यन्दकर मृपपुटकी आचदे । इसप्रकार बार-  
 म्बार करनेपर जगगोली कड़ी होजाय तब निकालकर रखले ।  
 तमामलोहोंके बारीकचूरेको तावेनेचामे रख मुहागेके जलसे  
 ७-७ भाबनाएं देवे फिर बज्र, नाग, ताप, अन्नकसव, सुवर्ण,  
 रजत, हीराप्रयतिरज और समस्त लोह इनको इक्काकर हङ्गोद  
 के रससे कईवारलेपकीहुई धम्ममृपामे रखकर धमनकरनेमे  
 गुटिका तैयारहोगी । इनको सुहमे रखनेसे बुद्धाणि और मृत्युका  
 भय नहीं रहता । सङ्ग्राममे वज्रदेह और महाबल होकर विजयी  
 होताहै । समस्तलोक तथा स्त्रियोंका प्रियदोताहै । यह व्रम-  
 यामलमे कहीगईहै । एकजल धीबुझावे रसमे गुड मिलाकर  
 पीनेसे इसका शरीरमे कामगहोताहै ॥ १८० ॥

### ३८१ वज्रिणीगुटिका

कान्तघनसत्त्वममलं हेमं च तारं यथाकृतवन्धम् ।  
 समज्जीर्णं बीजचरं चययुतं वज्रिणी गुटिका ॥१८१॥  
 पपा मुखपुहुरगता कुन्ते ननानागतुल्यरत्नम् ।  
 तद्वपुरपि दुर्मयं मृत्युजरादोगनिर्मुक्तम् ॥ १८२ ॥  
 र. ह, रसायने ।

भाषा—कान्तगोह, अन्नकसव, ताप, सुवर्ण और रजत  
 देसब समभाग, और समभागमे सुवर्णादिबीजजारणकरे सम-  
 भागमे हीरा मिलायाहुआ पाठा सबकी बराबर लेकर द्रव्य-  
 मेलप्रकारमे इहो मलाय गोलीबनाकर सुहमे रखनेसे १ हृदि-  
 ओके देतीहै । सुहमेरखनेमेकापासी वज्रादिकेसे  
 दुर्भेग और मृत्यु जरादिरोगमे रहित होताहै ॥ १८१ ॥

### ३८२ वज्रेश्वररसः ( वज्ररसः ) ( प्रथमः )

कपं स्वर्परसत्त्वस्य पम्मापे हेमि चिद्वृते ।  
 पणिष्कसूतं गन्धाश्मन्यष्टनिष्कं प्रवेशितम् ॥१८३॥  
 प्रवालमुक्ताफलयोग्यं हेमसमांशयोः ।  
 क्रमादिनिचतुर्निष्कं मृतायःसीसभास्करम् ॥१८४॥  
 चाङ्गेयं ग्लेने यामांस्त्रीन्मर्दितं चूर्णितं पृथक् ।  
 द्वौ निष्कौ नीलिकुङ्कुमोमांशयस्कास्ततालकात् ॥  
 अङ्गुलैरुङ्गुणीयीजतुत्येभ्यश्चतुरः पृथक् ।  
 अष्टौ च दङ्गुणक्षाराहारातानाश्च विंशतिः ॥ १८५ ॥  
 महाजम्बीरनीरस्य प्रस्थद्वन्द्वेन पेयेत् ।  
 एतदष्टशरायस्थं शुद्धं खार्यास्तुपस्य च ॥ १८६ ॥  
 ऋषिभारे च पचेदथ भापद्वयं ततः ।  
 एतावद्वन्धकार्पादं मरिचाद्भावितादपि ॥ १८६ ॥  
 मधुनाऽऽलोडितं लिप्तात्ताम्बुलीपत्रलेपितम् ।  
 गतेऽस्य घटिकांमाने प्रतियामञ्च पथ्यमुक् ॥ १८७ ॥  
 नोचेदुद्दीपितो वह्निः क्षणाद्वातुपचल्यतः ।  
 दिनमेकं निषेधैर्न त्याज्यान्तामण्डलास्यजेत् १८८  
 ततः परं यथेष्टाशी द्वादशाङ्गं सुखी भवेत् ।  
 एकमेकं दिनं सुस्था वर्षेयं महारसम् ॥ १८९ ॥  
 वर्षद्वादशपर्यन्तं ज्वरशङ्कां व्यपोहति ।  
 वर्षादी च त्यजेत्स्याज्यं क्षयपर्वतमेदनः ॥ १९० ॥  
 र. र स, र सु, र च, र को, र र, र. का, र. पा,  
 राजयक्षणि ।

टि०—र. र. को, र. बा, र. पा, एषु ग्रन्थेषु “वर्षं रात्रि-  
 सत्तस्य ममांशे हेमविद्वेत् । निक्षिप्त्तुर्विषयस्तुपिष्कं शुद्धगन्धवत् ।  
 अङ्गुलैः कङ्कुमीनीरं तुप्य तालं चतुष्टयम् । मुक्ताप्रवालचूर्णं प्रति  
 निष्पाद्यक क्षिपेत् ॥ यतर्लोहस्य निष्कौ द्वौ दङ्गुणस्याऽष्टनिष्कवत् । द्वौ  
 निष्कौ नीलिकुङ्कुमोद्वारणीलाश्च विंशतिः ॥ तिरौ निष्कस्य योग्यं सर्वं  
 रात्रे विमर्दयेत् । चाङ्गेयं ग्लेने वामेकं जम्बीराण्ये दिनद्वयम् ॥ म्बु-  
 पुगहके देव विमर्कं तुषाभिना । जम्बीरीत्यद्वेगेन विद्धा विद्धा पुं-  
 पचेत् ॥ एतेषु बीजैर्विषयं देव गन्धुः महत् । आदाय चूर्णयेत्तुल्य  
 चूर्णं शुद्धगन्धवत् ॥ गन्धार्पं मारिचं चूर्णमेवीरस्य विभापयन् ।  
 लेहनेनमुना माषं जामासीदलोडितम् ॥ पम्मासी प्रतिपाम् स्वादनुके  
 विषयद्वेत् । रसो वज्रेश्वर स्यात् स्वयंपर्वमेदनः ॥” इति शठो-  
 ऽस्ति । पतलाण्यनु न गृह्यते, अस्य मृत्पाठानु पूर्वनिर्दिष्ट प्वा-  
 स्तीति शुभीमि विभावनीयम् ॥

भाषा—६ मासे सुवर्णको मलाकर १ कपं रात्रिगन्ध  
 मिलावे । २ कपं गन्धको मलाकर १॥ कपं पारामिलावे फिर  
 प्रवाल और मोती ६-६ मासे, लोह २ कपं, नाग २ कपं और  
 ताप १ कपं ( इनसबका बारीकचूर्ण ) लेकर अमरानियमि  
 रगसे तीन तीन पहर अल्प २ मर्दनकरे । फिर इन्द्रमिलाय  
 नील और कुटकी ८-८ मासे, अन्नकसव, कान्तलोह और  
 हरितालकापासीचूर्ण, अङ्गुल और मातृकांजीनी मींगी,  
 शुद्धतुषा देसब १-१ कपं, शुद्धाश २ कपं, कोडीगम्भ ५ कपं  
 लेकर पूर्वोक्तयोगमे मिलाय २ ग्रन्थ विनोके रगसे मर्दनकर

जाय और बटकी ताजीबरोहसे चलाताजाय फिर ३ दिन बन्दाल-  
केस्वरसे मर्दनकर रखछोड़े । गर्मीकेमहीनेमें १ रत्ती पानमें  
डालकर खावे और प्रतिदिन १-१ रत्ती बडावे । ऐसे १६  
रत्तीहोनेपर मात्राको स्थिरकरे । इन्द्रायणकोजड़, वाकुची,  
बन्दाल, इनकाधमभागचूर्णमिलाकर १-१ कर्षं मधुकेसाथ खानेसे  
शरीरमें इसका अलुरुमणहोताहै । एकवर्षतक इसप्रयोगकेनरनेसे  
३०० वर्षकी आयु होतीहै और वज्रशरीरहोजाताहै ॥ ३८५ ॥

### ३८६ वडवाग्रिमुरावटी

शुल्वाऽप्योघनभस्म वेष्टुहलिनोव्योषाम्भुनिस्मच्छदैः,  
संयुक्तैश्च हरिद्रया समलवैः साऽधांशशुभ्राऽभृते ।  
भृङ्गाऽम्भोचिपतिन्दुकाद्रकरसे. सम्पिष्य शुद्धा मिता,  
संशुष्का बडवाग्रिमुरावटी गुटिका नाम्नोदितता तारया ॥  
क्षिप्रं क्षुत्प्रतिषेधिनी खलु मता सर्वाभयघ्नं सिनी,  
श्रेष्ठमव्याधिधिधूनी कसनहृच्छासापहा शूलनुत् ।  
क्षुद्रैर्मन्यहरा च गुल्मशमनी भूलातिमूलफा,  
शोकन्याधिहराऽत्र किं यदुगिरा सर्वाभयोत्सादनी ॥

र र स, र क, ना वि, सर्वरोगे । र क. भक्त्यपपाक-  
टीति नाम ।

भाषा—ताशा, लोह, अन्नकमस, विडङ्ग, करिहारी,  
त्रिकट, नागरनोया, नीमकीछाल, हल्दी येसब समभागलेकर  
सबसेआधी सौम्याक्षिकमस और शुद्धबछनाग मिलाकर भगरा,  
खस, कुचिला और अदरकले रतोंसे १-१ दिनमर्दनकर १-१  
रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय  
अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे छुपाको जायतकर समस्त  
रोगोंको दूरकरतीहै । छेम्बन्याधि, कास, हृदोग, श्वास, शूल,  
भूक्षकीपितृमता, गुल्म, बवासीर, शोथ इत्यादि समस्तरोगोंको  
यह दूरकरतीहै ॥ ३८६ ॥

### ३८७ वडवाग्रिरसः ( प्रथमः )

शुद्धं सृतं समं गन्धं तात्र तालं समं समम् ।  
अर्केश्वरिं दिनं मर्द्यं क्षौद्रं लेहं त्रिगुणकम् ॥ १८९२ ॥  
वडवाग्रिरसो नाम्ना स्थूल्यमाशु नियच्छति ।  
पलं क्षौद्रं पलं तोयमनुपानं सदा पिवेत् ॥ १८९३ ॥

र स, र र स, र र कौ, र म सा, र वि, र को, यो  
र, र ( मा ), र क ल, र र, नि र, वै क, र च, घ, र  
रू दी, र स क, अ सा, व रा, रसायन स, चि सा, दो, र  
सु, वै र, वै चि, र कौ, चि र भ, र क, र श, अ र,  
मेदोऽधिकारे ।

टि०—वै र, वै चि र म, र कौ, र क, र स, एषु मन्त्रेषु  
वडवानलरस इति नाम स्थापितम् । र स, व, र सु, र वि,  
अ र, एषु मन्त्रेषु द्वितीयस्थाने वडवाग्रिलेखमिति नाम्ना द्वितीय  
पाठ स्थापितमिति तत्र गणकस्थाने लेख निबोधितम्, शुद्धपारशाने  
तद्वत्प्र गृहीतम् । अस्मिन्नेव रसे वडुभयमपि प्रीतीला योगे निष्पादिते  
भवति इत्यारथेकस्मिन्स्थाने निवेष्ट । कुचचित्रकफाणा नील गृहीतम् ।  
रसमन्त्रकृत्या तालस्थान सार निबोचितमिति ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, तात्र और हरितालमस  
समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर आकैदूधसे एकदिन मर्दन  
कर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१  
गोली मधुकेसाथदेकर एकपलमधुमें बराबरकाजल मिलाकर ऊपरसे  
पीनेसे यह स्थूलाको क्षीण नष्टकरताहै ॥ ३८७ ॥

### ३८८ वडवाग्रिरसः ( द्वितीय )

कान्तं पद्मरसे घृष्टं पुटपकं वरासे ।  
मार्कवस्वरसे घृष्टं सप्तकृत्वस्त्वयमोलम् ॥ १८९४ ॥  
निष्कद्वादशकं कान्तं त्रिंशद्विंशकमयमोलम् ।  
टङ्गणं मरिचं तुत्यं पृथक् कर्षत्रयं मयेत् ॥ १८९५ ॥  
चूर्णान्येतानि संयोज्य स्थापयेत्पुटपकमाजने ।  
शुद्धदेहो नरस्तस्य पानं यद्भोजनोत्तरम् ॥ १८९६ ॥  
अद्यात्पथ्यं ततः स्वल्पं ततस्ताम्बूलभाग्नयेत् ।  
उदराग्रि नरस्याऽस्य वडवाग्रिसमो भवेत् ॥  
यहुनाऽत्र किमुक्तेन रसायनमयं नृणाम् ॥ १८९७ ॥  
र र स, अजीर्णाऽधिकारे ।

भाषा—कान्तलोहका शरीरक घृष्ट बनाय कमलकेफूलोंमें  
घोटकर गजपुटकी आचदे । स्वाश्वशीतलोहनेपर त्रिकलाके रसमें  
घोटकर आचदे इसतरह बारिंतर भस्मकरले । मण्डूकी बहेड़ेके  
कोयलोंमें लगतपाकर ७ बार मोमूर्तमें घुमाकर शुद्धकरले और  
भगेरेरसमें घोटघोटकर पुटदेकर भस्मकरले । फिर कान्तलोह  
भस्म ३ कर्षं, मण्डूकभस्म ७॥ कर्षं, भुनाहुणा, मरिच और  
तुत्यभस्म ३-३ कर्षं लेकर शरीरकी चूर्णन इन्के मिलाय रख  
छोड़े वमन विरेचनादिकसे शरीरको शुद्धकर इसमेंसे १ रत्तीसे  
लेकर १ माशेतककी मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानके  
साथ देकर स्वल्पपथ्य दे और ऊपरसे पानकाबीजा खिलावे ।  
इससे अग्नि एकदम प्रदीप्तहो जाताहै और हमेशा सेवनकरनेसे  
यह रसायनकाकाम करताहै ॥ ३८८ ॥

### ३८९ वडवानलरसः ( प्रथम )

अधुना कथयिष्यामि वडवानलरसस्तत्तमम् ।  
रसेन्द्रस्य च संप्रपञ्चोत्सन्धिपातोऽतिद्वारण ॥ १८९८ ॥  
अवश्य विनिवर्तते का कथा ज्वरमात्रके ।  
पूर्वमुत्पातितं सृतं भस्मीकुयाद्विचक्षण ॥ १८९९ ॥  
भस्मीकरणयोगोऽय कथ्यते सम्प्रदायत ।  
विष्णुकान्तामुच्यते वा र्णोश्च समाहृतम् ॥ १९०० ॥  
उत्तरावारणीदुधै सस्यारिजरसेस्तथा ।  
हसपादीरसेस्तद्वर्केश्वरिस्तत परम् ॥ १९०१ ॥  
वज्रीश्वरं ब्रह्ममूलरसे. सम्यक् प्रमर्दयेत् ।  
कपिकच्छुद्रिकाग्रीरं विष्णुकान्तारिसेस्तथा ॥ १९०२ ॥  
गारुण्डमूलनीरसु रसे. पौनर्नवेस्तथा ।  
पाठारसे देवदालीरसेश्च यवचिञ्चिजे ॥ १९०३ ॥  
शतावरीरसुभोजे मृत यन्तात्प्रमर्दयेत् ।  
दिनानि दश सम्मर्द्यं दिवानकमतन्त्रित ॥ १९०४ ॥

तस्य कल्कस्य गोलं तु यन्त्रे सोमानले क्षिपेत् ।  
 लेपञ्च सुदृढं दत्त्वा यन्त्रं सुल्ल्यां निवेदायेत् ॥१९०५॥  
 एकविंशदिनं यावद्दक्षिं संज्वालयेदधः ।  
 यन्त्रादुत्तारायेत्सुतं भस्मीभूतं सुपाण्डुरम् ॥१९०६॥  
 भस्मैतन्मारयेत्तोहं सुयणोष्मसंशयम् ।  
 लेपेन पुटयोगेन सर्वलोहानि मारयेत् ॥१९०७॥  
 एतद्भस्म समादधात्तोलमेकं महोऽज्वलम् ।  
 गन्धं मनःशिलां तालं प्रत्येकं तोलमाहरेत् ॥१९०८॥  
 खल्यमायेऽथ तत्सर्वं मर्दयेद्वागुणीरसेः ।  
 दिनप्रयं निम्बुकाजैस्त्रिदिनं मर्दयेत्ततः ॥१९०९॥  
 चक्रधारान्समादधात्सर्ज्यान्विशतिद्वयाम् ।  
 पूर्वमर्दितफलकान्तः क्षिप्या रश्मिं यिमर्दयेत् ॥१९१०॥  
 दिनमेकं प्रयत्नेन तस्य गोलञ्च कारयेत् ।  
 गोस्तनाकारमुपायां पञ्चहुलकमानतः ॥१९११॥  
 पञ्चायां निःक्षिपेद्गोलं मुखं सम्यङ्निरोधयेत् ।  
 मूषार्जं धरणीमथ्ये निजनेवर्द्धयुद्धतः ॥१९१२॥  
 विदध्यात्प्रकटं पञ्चादुत्पलं येनसम्भवेः ।  
 चत्वारिंशत्समाप्यतिष्ठतुर्भिरधिकैः पुटेत् ॥१९१३॥  
 स्थाङ्गशीतलमारुह्य पूजयित्वाऽथ भेरयोम् ।  
 खल्वे सङ्गुण्यं निक्षिप्य करण्डे हस्तनिर्मिते ॥१९१४॥  
 ततः परीक्षां कर्तव्या रसस्य भस्मिज्जनेः ।  
 पात्रिकां जलपुष्पाञ्च दत्त्वा तत्र निवेदायेत् ॥१९१५॥  
 सिद्धं रसं पट्टमानं पात्राऽऽच्छाद्येत चाऽन्यथा ।  
 चतुर्भिः प्रहरैः सूतः पानीयं शोषयेद् ध्रुवम् ॥१९१६॥  
 पानीयशोषणत्वेन घडवानल ईरितः ।  
 ज्वरितस्य ततो वैद्यो गुञ्जामानो रसेश्वरः ॥१९१७॥  
 प्रदानक्षणमात्रेण देहेऽतिलघिमा भवेत् ।  
 अथयेगो निरर्तत शिरोऽर्ति नन्दयति क्षणात् ॥१९१८॥  
 बुभुक्षु महुती सद्यो जायते भोजयेत्ततः ।  
 दुग्धभक्तं दाधिकं वा यावन्नृप्तिः प्रजायते ॥१९१९॥  
 सर्वथा न निवर्तत बुभुक्षु यदि तत्र ये ।  
 अन्यद्रसान्तरं तत्र कल्पमानं प्रयोजयेत् ॥१९२०॥  
 पूर्वशुद्धं रसं नीत्वा गन्धकेन समांशतः ।  
 प्रमत्तमेयीवसया मर्दयेद्विषसं ततः ॥१९२१॥  
 गोस्तनाकारमुपायां क्षिप्याऽथ पुटयेद्रसम् ।  
 पूर्ववत्स्वाङ्गशीतं तं पात्रेऽन्यस्मिन् विनिक्षिपेत् ॥१९२२॥  
 पूर्वप्रयुक्तसूतस्य जायते चेदुपद्रवः ।  
 तदुपद्रवनाशार्थं रसमेनं प्रयोजयेत् ॥१९२३॥  
 गुञ्जामानेन संहन्यादुपद्रवमसंशयम् ।  
 एतत्सूतप्रयोगेन घनुवातो विनश्यति ॥१९२४॥  
 कण्ठकुञ्जकरुसज्जोऽपि दन्तसङ्गीलनं तथा ।  
 अवश्यं नाशमायाति रसेन्द्रस्य प्रभावतः ॥१९२५॥  
 घनुवातो कण्ठकुञ्जे शैत्यं चातं विवर्जयेत् ।  
 घडवानलसज्जोऽयं रसेन्द्रो रोगभेदकः ॥१९२६॥

सर्वपापेभ्य रोगाणां चक्रवालं निहन्ति वै ।  
 अनुपानप्रयोगेण सर्वरोगनिवारणः ॥१९२७॥  
 रसात्, ज्वराऽधिकारः ।

भाषा—ऊर्ध्वं, तिर्विर् और अधःपातनवियेहुए शुद्धपात्रकी मत्सकरे, उसकेलिसे निष्पुक्रान्ता ( सफेदकोयल ) और चमार दूधी पारेके बराबरलेकर क्लृप्तनाय पारेमें मिलादे । फिर १-२ पहरमर्दनकर गोवर्ण, चमारदूधीकादूध, भगियापात, हयराज, आक और गृहकादूध, फलाशुकोजङ्गलास, केवांवडीजङ्ग, काली-कोयल, गोरावडीजङ्ग, पुनर्ना, पाठा, कन्दाल, तिल्ली, दाता-वर, क्षीरकज्जुकी ( यद्यन्त्रप्रयोगमें इसीनामसे आयाकरतोही यह एक धुजरकी जातिहे इसमें काँट नहींहोते । पत्ते पानकेसरदा दलदारहोतेहे हंडी हरी और काली होतोही बनाए प्रान्तमें इसे नागदौन पोखेहे । नागदौन यह शब्द प्रत्येकप्रान्तमें अलग २ फनसतिमें ह्राहे रसोपधियोंमेंभी इसका परिगणन आयाहे ) इनप्रत्येकके बराबरसम्भव स्वरस अथवा दूधप्रभृतिद्रवसे १०-१० दिन निरन्तर मर्दनकर गोलबनाये, बीचमें विधाम न होना-चाहिये दिनरातमर्दनकरे । फिर इसकी रोटीजैसी बनाय सोमानलयन्त्रमें रखकर ६-७ कपडिमिटोले मुहब्बन्दकर समस्तपर ६-७ कपडिमिटो सुखासुखाकरदेवे । फिर इसयन्त्रको धूलिपर रस २१ दिनतक नीचे निरन्तर झमिदेवे, ऊपरकी हंडीपर पानीकापोता रखवाजाय जिसमें कि आम्बिकी ठेगुनीसे पात उड़ न जाय ( आजकल जो सोमानलयन्त्रके लक्षणमिलवैहे वे रसा-लुहाराकर्तवियेखोले विदहैहें क्योंकि “ यन्त्र सुल्ला निवेशयेत् । एकविंशदिनं यावद्दक्षिं संज्वालयेदधः ” ऐसा वाचनिकमुशब्धे इन्होंने इसवाकरो पिट्टकियाहे ) । २१ दिनकेबाद आगदेना बन्दकरदे और कोयले बराबरस्थित रहवेदे, पोतेकोभी हटादे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर यन्त्रको सुक्षित खोले ऊपरकीहंडीमें एकदम सफेदभस्म लगीहुई मिलेगी । कभी २ नीचेही हंडीमेंनी पञ्चाया-करतोही इससबको कागदुपगैरहसे धोरनेसे निकालकर रखछोड़े । इसभस्मको मारकडव्योंकेस्वरसमें मिलाकर किसीभी पातुकेपत्रपर लेपदेकर आग्निदेनेसे उत्तमभस्महोतीहे । अन्यविशेषगुणप्र-होतीहे । यह पात्रेकीभस्म, शुद्धगन्धक, मेनसिल और हरिताल १-१ तोला लेकर एकदिन शुक्लमर्दनकर इन्द्रायणकेपत्राङ्ग और निम्बुक्ताकीभस्मकेरससे ३-३ दिनमर्दनकर ४० नग जीसे-हुए सखलौको लेकर ऊनेकेरसमें एकदिन निरन्तर मर्दनकर गोला-बनाय ६ अहुलकी फकीहुई गोस्तनीमूषामे बन्दकर मुखमुना-कर ३-४ कपडिमिटोसमस्तपर लगाय सुखाकर आभीमूषाको-जिमीनमें गाढ़े और ऊपरसे ४४ नग जलकीकण्डोंकीआचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर बैरबोकी पूनाकर चूर्णकर हाथीदांतकी डब्बोंमें रखकर जलमेरेपात्रमें डब्बोंको डुबाकर रखे । इसमेंसे ३ रती रस पानीमेरुहुएधेमें ढालकर मुहडकदे तो ४ पहरकेभीतर पेटकापानी घूसपायगा, इसीलिये इसको पडवानल कहवैहे । इसमेंसे १-१ रती उष्णानुपानवेसाय देनेसे क्षणभस्मे दरीर हलका होनावाहे और ज्वरज्वरितशिरोवेदनाप्रश्रुति निवृत्तहोकर

मूत्रलगातीहै उसवक्त दूधभात अथवा दहीभात तृप्तकरके  
खिलाना । यदि मूत्र किसीतरहसी सान्त न हो तो नीचेलिखा-  
हुआ रस देना ।

पूर्वप्रकारसे शुद्धकियाहुआ पारा और गन्धक समभाग लेकर  
मस्तमेकही चर्बीसे एकदिनमंदतकर गोस्तराकारसूपामें डालकर  
अच्छीतरह कपड़मिट्टीकर पूर्ववत् ४४ कण्ठोंकी, आंचदे स्वाज्ञ-  
शीतलहोनेपर निकालकर दूसरेपात्रमें रखलोड़े । अगर पहिले-  
रसपे उपद्रव मालूम हो तो इसमेंसे १-१ रत्ती देनेसे तमाम  
उपद्रव नष्टहोजातेहैं । इसके अतिरिक्त धनुर्वात, कण्ठकुब्जक,  
दन्तवन्ध, येसय मट होजातेहैं । धनुर्वात और कण्ठकुब्जकमें  
ठंडीचीनी और वायुका वर्जनकरे । इसमेंसे तत्तदोगहरावुपानोंके-  
साथ देनेसे यह तमामरोगोंको नष्टकराहै ॥ ३८९ ॥

### ३९० वडवानलरसः ( द्वितीयः )

गद्याणा दश ताम्रस्य तेषां पत्राणि कारयेत् ।  
तानि कण्ठकषेध्यानि द्व्यङ्गुलैकाङ्गुलानि च ॥१९२८॥  
शुद्धसूतस्य गद्याणान्ध्याल्यन्तर्विन्ध्यसेहृदा ।  
विशति निम्बुकानाञ्च खण्डानि शतशः क्षिपेत् ॥१९२९॥  
ततश्च ताम्रपत्राणि लघणं काञ्जिकेन च ।  
आग्नालधृतास्यालीमारोप्य सुहृिफोपरि ॥१९३०॥  
हठाग्रहिः प्रदीयेत भिदिनञ्च दिवानिशम् ।  
सक्षारे पक्षिना दग्धे काञ्जिकं प्रक्षिपेन्मृदुः ॥१९३१॥  
जायन्ते तानि पत्राणि श्वेतलूण्यसमानि च ।  
शुद्धगन्धकगद्याणशतं पिष्ट्वाऽनु चूर्णयेत् ॥१९३२॥  
स्थालिकायां क्षिपेच्छूणं ततः परं प्रसारयेत् ।  
पुनश्च गन्धकं दत्त्वा पूर्ववत्पतनापनम् ॥१९३३॥  
पिण्डीघनूरकस्यैवदेवामृतीतयोपरि ।  
पिघायाऽऽस्यं शरावेण दद्यात्कपटमृत्तिकायां ॥१९३४॥  
छुत्वा स्थाप्य निष्कामाऽग्निं दृष्ट्वा मन्त्रजालवेदजातः ।  
शीतामुत्तारयेत्स्थालीं ताम्रमेतायता मृतम् ॥१९३५॥  
विनाघसूरकं पिण्डं यामयुग्मं पुनः पचेत् ।  
दत्त्वा हस्तिपुटं रत्ने क्षिपेत्ताम्रं रसान्वितम् ॥१९३६॥  
( आदायान्तप्रमाणाः स्युः गंजलायककुपकुटाः )  
पिष्ट्वा चूर्णं पिघायाऽयं निर्गुण्डीस्वरसेन च ।  
आद्रुकण्ठकरीलस्य त्रिफलाया जलेन च ॥१९३७॥  
गुण्येगुण्ये पुनर्दयाः प्रत्येकं सप्त भावनाः ।  
त्रिकटुमृगया देयाश्चैकविंशतिभावनाः ॥१९३८॥  
सतेशोद्ध रसेनैव कनकस्य रसेन च ।  
निःसहायारसेनाऽपि पत्तनामधिपेण च ॥१९३९॥  
सर्वगुण्यञ्च तत्पूर्णं कृष्यां क्षेप्यं ग्रयन्ततः ।  
रक्षणीयमसौ नाम यडवानलकी रसः ॥१९४०॥  
यत्किञ्च शीतनीरेण पञ्चामृतजलेन वा ।  
प्रत्यहं सततं प्राशः प्रातस्तथाय रोगिणा ॥१९४१॥  
दद्याद्विशतिमेधेषु शलेषु विविधेषु च ।  
अष्टादशसु इष्टेषु दशतिशतारोगिषु ॥१९४२॥

अशःसु सकलेष्वेव गुरुरोगे विशेषतः ।

मन्दाग्रा चाऽन्यरोगेषु देयोऽयं रसराजकः ॥१९४३॥

तैलक्षाराऽम्बुवर्जञ्च मोक्षं मधुरभोजनम् ।

कमाद्रोगा विलीयन्ते सेविते वडवानले ॥१९४४॥

रसचि., र. कं. ली., सर्वरोगे ।

भाषा—पाचतोले शुद्धतावेके कण्ठकषेधोपत्र घनवाय १-१

अथवा २-२ अङ्गुले टुकड़े करावे । पाचतोले शुद्धपारेको  
मन्त्रवृद्धीमें डालकर पनेहुए २० नीबुओंके छोटेछोटे सैकड़ों  
टुकड़ेकरके डालदे और ऊपरसे उन ताम्रपत्रोंके टुकड़ोंको  
फैलादे । ऊपरसे ४० तोले सैन्धवको काझीमें पीसकर डालदे ।

वासीबीबुई हड्डीको साधारणकाझीसे भरके चूल्हेपर चढ़ादे  
और तीनदिनरातकी कड़ी अग्निदेकर पकावे । जब काझीसूखकर  
नीबू जलनेलें तब और काझी डालदे, ऐसे बारम्बार काझीको  
देवे अन्तमें कुलीलाही उतारले । स्वाज्ञशीतलहोनेपर धीरजसे  
तावेके पत्रोंको निकालले, इनकाएक एरुदम चादीकेसदृश  
होनायगा । फिर ५० तोले शुद्धगन्धक पीसकर बोझासा दूसरी-  
हंडीमें बिछाकर कुण्ठपत्रोंको बिछादे । इसीतरह गन्धक और  
पत्रोंकी तह जमाकर धतूरेकेपत्रोंकाकलक हंडीमें मुंदतक भरके  
शराबसमुद्रकर ६-७ कपड़मिट्टी देकर सूरनेपर हंडीको चूल्हे-  
पर रख दे पहरकी तीक्ष्णामि देवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर धीरजसे  
समुद्रमे खोलकर कल्को पेंकदे और अवशिष्टपदार्थको  
ज्योंका त्यों रखकर दोपहरकी चूल्हेपर अग्निदेवे । स्वाज्ञशीतल  
होनेपर निकालकर दूसरे समुद्रमें धतूरेकेरसे भिगोकर रखकर  
समुद्रनाकर २-४ कपड़मिट्टीदेकर गजपुटकी आंचदे ।  
स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर अच्छीतरह पीसकर निर्गुण्डी,  
अदरक, पिघायासा, अमिलतास, त्रिफला इनके स्वरसोंकी  
७-७ भावनाएँ देकर त्रिकटु की २१, ईश, धतूरा, आकाश-  
बेल और यडवानलके श्रवोंकी ७-७ भावनाएँ देकर अच्छीतरह  
सुराकर बीसीमें रखलोड़े । इसमेंसे २-३ रत्तीकी मात्रा  
ठंडजल अथवा पञ्चामृतपेसाय औचित्य देकर प्रातः काल देनेसे  
२० प्रकारके प्रमेह, नानातहवेद्वल, १८ प्रकारकेकुष्ठ, ८०  
प्रकारकेबाक्त्रोग, समस्तवासीर, यासकालुशरोग, मन्दाग्नि  
इन सबको यह नष्टकराहै और तत्तदोगहरावुपानकेसाथ देनेसे  
शाय. सभीरोगोंको नष्टकराहै । तैल, क्षार, रटाई, ये इयमें  
अप्यर्थहैं । मधुरभोजन सेवन करानाचाहिये ॥ ३९० ॥

### ३९१ वडवानलरसः ( तृतीयः )

रसवल्लिबुलितानि स्युः पट्टम्यग्निजारो,  
जलनिधिगुभफेनः फान्तलीहोऽञ्जनञ्च ।

मुजगरिषु गरुडं तालरुध्येति तुल्या,

नय रचिमवदुग्धे मर्दितं भाग्येय ॥१९४५॥

गजपुटगतमेतद्भाषयेत्कारुमाची-

कनकविषफल्गताप्राहयशोधप्रगीरः ।

तरणिःसुजयन्तीश्लकृष्णोद्विरेफ-

त्रिवृत्तिमुस्माहायामकानां जलेन ॥१९४६॥





भाग, पारदभस्म १२ भाग लेकर एकदिन शुष्कमर्दनकर गृहर और आकके दूधतया चित्रके कायसे ३-३ दिनमर्दनकर गोला-बनाय तावेसेसम्पुटमेवन्दकर गजपुटकी आचदे । स्वाह्नशीतल-होनेपर चतुर्थांश शुद्धयष्टनागमिलकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रसीकीमात्रा त्रिकटु और चित्रकेचूर्णकेसाथ देनेसे वात अथवा कफप्रधान अथवा त्रिदोषप्रधानसमिपानोंको यह नष्टकरताहै । इसमें दोषोंके प्रबलीकरणके विचारकर अनुपानोंका योगकरे॥ ३९४॥

### ३९५ वडवानलरसः ( सप्तमः )

फान्तं माक्षिकशह्नाभिलवणं वैकान्तनीलाञ्जनं,  
गोलाले रविफेनरूपमिति युक्तं शम्भूकसूताऽष्टकम् ।  
निषिष्याऽथ दिनं सुयन्निजलतो गतान्तरे त्रिःपुटान्,  
सिद्धोऽयं वडवानलो विजयते गुञ्जाऽथ सर्वांमयान्॥  
र. पि., सर्वरोगे ।

भाषा—फान्त, सुवर्णमाक्षिक, शह्नाभि इनकीभस्में, सैन्धव, वैकान्त और सुग्मेकीभस्म, शुद्धमैन्सिल, हरिताल, आरकीजइकीछाल और अफीम १-१ कप, घोंघा और पारा ८-८ कप लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर गृहारेद्वयेसे एक-दिनमर्दनकर गोलाबनाय क्षावसम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपड-मिठीदेकर गृहनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाह्नशीतलहोनेपर निकालकर फिर छेदुण्डकेद्वये एकदिन मर्दनकर पूर्ववत् गजपुटकी आंचदे । ऐसे ३ आंच देनेकेबाद रखकर रमछोड़े । इसमेंसे १-१ रसी समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ३९५ ॥

### ३९६ वडवानलरसः ( अष्टमः )

स्वर्णं रौप्यसमं रसो द्विगुणितो द्वाभ्यां तथा गन्धकः  
फान्तं स्वर्णसमं तथा चिपमपि द्वाभ्यां समस्तालकः ।  
तद्वरिसिन्धुलता समुद्रजनिता शुक्तिश्च केनस्तथा,  
क्षीरेणाऽकसमुद्भवेन दिवसं सम्मर्दिताऽथ्यम्बुना ॥  
सर्पांशाऽर्कसम्पुटे सुपटितौ मूलकपेरेरावृतौ,  
गतान्तर्यडवानलो रसयः पित्तेश्च सम्भावितः ।  
सिद्धोऽस्मी धनुषोऽनिलं क्षपयति स्वीयाऽनुपाने सुतो  
शुल्मग्रीहभगन्दुर्घणिकामन्दाग्निनिर्गलः ॥ ३९६०॥  
यहोन्मितः सयेयातमाद्रिकाभ्यु सितायुतः ।  
जयेद्वयदं मृतेदास्त्वर्धोमागगतानपि ॥ ३९६१ ॥  
गृहपारायणेनेय मापतेलेन वा तथा ।  
मर्दनं पाऽनतेलेन धनुषांतापनुसये ॥ ३९६२ ॥  
र., शालरोगे ।

भाषा—स्वर्ण और रजतभस्म १-१ भाग, पारदभस्म और शुद्धगन्धक २-२ भाग, फान्तभस्म और शुद्ध यष्टनाग १-१ भाग, हरिताभस्म अथवा रसमागिन्ध, प्रवाल, मोतीकी तीपभस्म और समुद्रेन २-२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारागन्धकी नीलानेवन्दमें मिलाकर आकके दूध और चित्रकेचूर्णसे १-१ दिनमर्दनकर गोलाबनाय क्षावकेद्वयेसे

सम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपडमिठी देकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाह्नशीतलहोनेपर निकालकर पांचोपित्तोंसे यथाशक्य भावनाएं देकर १-१ रसीकी गोसियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे धनुषांतमें वातप्र अनुपानकेसाथ ३ गोली एकघाय देनेसे इन्नेनहीं अन्यत्र औचिनी देखकर १ अथवा २ गोसियां समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे शुल्म, प्लोहा, भग-न्दर, ग्रन्थी, मन्दाग्नि इत्यादिरोगोंको यह बहुतशीघ्र नष्ट-करताहै साधारणतया समस्तवातविकारोंमें अदरसकेरस और क्षारकेसाथ देना । यह रस अधोभागगत वातविकारोंकोभी नष्टकरताहै । धनुषांतमें गृहपारायण अथवा मापतेल अथवा अर्कतेलेसे मालिश करनीचाहिये ॥ ३९६ ॥

### ३९७ वडवानलरसः ( नवमः )

शुद्धसूतस्य कर्पकं गन्धकं तत्समं मतम् ।  
पिप्पलीं पञ्चलवर्णं मरिचञ्च फलप्रयम् ॥ ३९६३ ॥  
क्षारप्रयं समं सर्वं चूर्णं कृत्वा प्रयत्नतः ।  
निर्गुण्डयाश्च द्वयेणैव भावयेद्दिनमेकतः ॥  
वडवानलनामाऽयं मन्दाग्निश्च विनाशयेत् ॥ ३९६४ ॥  
र. सं., अजीर्णां अधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा औरगन्धक, पीपल, पांचोन्मक, मरिच, त्रिफला, तीनोंक्षार, सब समभागलेकर नीलवर्ण कजलीकर निर्गुण्डोकेरसकी एकदिन भावना देकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इसमेंसे १ माशेसे ३ माशेतक योग्यता देकर देनेसे यह मन्दाग्निनो नष्टकरताहै ॥ ३९७ ॥

### ३९८ वडवानलरसः ( दशमः )

शुद्धसूतस्यभागः स्यात्ताम्रचूर्णञ्च तत्समम् ।  
तिभायो गन्धकश्चैव त्रिभागश्च कटुप्रयम् ॥ ३९६५ ॥  
वर्धिशूलस्यैकभागः कुष्ठं भागसमन्यितम् ।  
ज्वालामुखीरसे मयं बदरास्थिप्रमाणकम् ॥  
वडवानलनामाऽयं प्रशुक्तीयातनाशनः ॥ ३९६६ ॥  
व. रा., यो. म., वै. वि., सेन्द्रं., गूतिहरोगे । रोगप्रभ्रले  
वडयामुलेतिनाम ।

भाषा—शुद्ध पारा और ताम्रभस्म १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग, त्रिकटु ३ भाग, पिपलकीज और कुट्ट १-१ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारे गन्धककी नीलानेवन्दमें मिलाकर ज्वालामुखी ? (अमिश्रिता अपरा करिदाही) केरगणे एक-दिनमर्दनकर गुगारर जड़ोबेरकीगुच्छीके बराबर गोसियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अपरा रोगो-चिनानुपानकेसाथदेनेसे यह श्वातितातथो नष्टकरताहै ॥ ३९८ ॥

### ३९९ वडवानलरसः ( एकादशः )

पारदं गन्धकं ताप्यं ययक्षाराऽर्कममृकम् ।  
अश्वयमुनाऽहिपत्रेण सम्मयाऽथ द्विगुत्रकम् ॥ ३९६७ ॥

भक्षयेत्पर्णखण्डेन हिहृसिन्धुसुवर्चलेः ।  
दाडिमश्च तथा विष्वं कार्पिकं भृङ्गजद्रवैः ॥ १९६८ ॥  
पिप्पला तु सुरया युक्तं देयं स्यादनुपानकम् ।  
सर्वगुल्मं निहन्त्याशु शूलश्च परिणामजम् ॥ १९६९ ॥  
र.सं., ध., र.चं., र.घु., रसायनव., र.क., यो., र.र.दी.,  
र.का., र.र.स., र.क. यो., भै.र., र.को., वै.चि., व.रा., नि  
र., र.र.की., गुल्मरोगाधिकारे ।

दि०—ध., र. का., र.र.स., र.क. यो., भै.र., र.को., वै.चि.,  
व.रा., नि र., र.र.को., एषु ग्रन्थेषु शिविवाहवनाम्ना ख्यो रसो  
निहितोऽस्ति सोऽप्यरमादभिन्न एकाऽस्त्यतस्तस्याऽप्यवैवाऽन्तर्गता ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सुवर्णमाक्षिक, यवक्षार,  
ताम्र और अभ्रकभस्म सबसमभाग लेकर चित्रकमूल और पके-  
पानकैरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर २-२ रसोकी गोलिया बना  
कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानकेसाथ खाकर भुनखीय,  
सैन्यव, सचल, अनारदाना, बेलगिरी समभागकाचूर्ण बनाय १  
तोला भंगैकैरसमें पीसकर तीक्ष्णमणकेसाथ पिलानेसे सबप्रकारके  
गुल्म और परिणामशूलको यह तरकात नष्टकरताहै ॥ ३९९ ॥

### ४०० वडवानलरसः ( वृहन् ) ( द्वादशः )

सूतकं गन्धकञ्चैव हरितालं मनःशिला ।  
अम्रकं घट्टनाभश्च दारुजङ्गमजं विषम् ॥ १९७० ॥  
जैपालात्साऽर्द्धशतं सर्वं सङ्गृह्य मर्दयेत् ।  
मत्स्यमाहिपमायूरच्छागपित्तं विभाषयेत् ॥ १९७१ ॥  
घटिकां शीततोयेन कुयाद्रुज्जाग्रमाणतः ।  
वडवानलनामाऽयं मारिकेलजलेन वै ॥  
भक्षयेत्सन्निपातातौ मुक्तस्तस्मात्सुखी भवेत् ॥ १९७२ ॥  
र.सं., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और मेनसिल, अभ्र-  
कभस्म, शुद्धबछनाग, दालचिकना, सर्पविष येसब १-१ तोला,  
शुद्धजमालगोडा १५० नम लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारे-  
गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर मछली, भैंसा, मोर और  
बकरे पित्तोंसे १-१ दिन भावना देकर १-१ रसोकी गोलिमें  
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली ठंडेपानी अथवा नारि-  
यलके जलनेसाथ देनेसे सबप्रकारकेसन्निपात निशुद्धहोवे । जुह  
रत पङ्केपर जलयोगकरना ॥ ४०० ॥

### ४०१ वडवानलरसः (स्वल्पाः) १३

शुद्धताम्रस्य भागैकं मरिचस्य तथैव च ।  
विषं तनुल्यकं दद्यात्सर्वं मरुणं सुवर्णितम् ॥ १९७३ ॥  
लाङ्गलीरससंयुक्तं तत्सर्वं पुटके पचेत् ।  
रक्तिकाऽर्द्धं समग्रं वा वटीरामं प्रकल्पयेत् ॥ १९७४ ॥  
दोषे व्योपसमायुक्तो त्रिदोषशमनो भवेत् ।  
भक्षयेत्पचने चोषे वडवानलसञ्छितम् ॥ १९७५ ॥  
र.सं., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—ताम्रभस्म और मरिच १-१ भाग, शुद्धबछनाग  
२ भाग, लेकर सबका बारीकचूर्णकर करिहारीकन्दकेरसोंसे एक

दिन मर्दनकर गोलाबनाय पानमें लपेटकर पुटपाककरे अथवा  
भूषरयन्त्रमें स्वेदनकर आभी अथवा १-१ रसोकी गोलिया  
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली औचितोदिसकर समय  
अथवा रोगोचितानुपानके साथ देनेसे यह सन्निपात न्याधि-  
योंको नष्टकरताहै । साधारणतः त्रिदुष्टेसाथ देनेसे सन्निपात  
नश्वोताहै । प्रख्यातन्यायियोंमें कातर अनुपानोंकेसाथ देना ४०१

### ४०२ वडवानलरसः ( चतुर्दशः )

सूतं भुजङ्गममृतं लवणं हरिद्रा  
व्योषं घनञ्जयजटाऽवनिभृषरित्री ।  
अष्टौ दशद्वयनिधित्रयभागसङ्गवैः  
शोभाञ्जनाऽर्द्धकरीरकवीजपूरैः ॥  
निम्बफणीभरलतोषपलाशतोषे भाव्यं  
विशोष्य विराट् प्रविधाय चूर्णम् ॥ १९७६ ॥  
रसायनसं., र.सं., र. (सा.), र.सं.क., र.का., यो.चि.,  
वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा और नागभस्म ८-८ भा, शुद्धबछनाग  
और सैन्यव १०-१० भा, हल्दी और त्रिफला ९-९ भा.,  
चित्रकमूल गन्धक और भुईआवला ३-३ भागलेकर बारीक-  
चूर्णकर सहजन, अदरक, करीर, विनोरा, नीबू, पान, पला-  
शकीजहरीछाल इनप्रत्येकके अर्धसम्भवत्वरस अथवा द्रवोंसे  
१-१ भावना देकर मुखार चूर्णबनाय कपफछानकर रखछोड़े ।  
इसमेंसे ३-३ रसो समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे  
मन्दाग्नि, समस्तवातविकार, अग्नि, शूल, वमन इनसबको यह  
नष्टकरताहै ॥ ४०२ ॥

### ४०३ वडवानलरसः ( पञ्चदशः )

शुद्धं सूतं समं गन्धं मृतं ताम्राऽर्द्धद्वयम् ।  
सामुद्रश्च यवक्षारं स्वर्जितैन्धयनागरम् ॥ १९७७ ॥  
अपामार्गस्य च क्षारं पालाशं घट्टनाभकम् ।  
प्रत्येकं सूततुल्यं स्याच्चणकामलेन मर्दयेत् ॥ १९७८ ॥  
हस्तिकर्णाय द्रव्यैश्चाहो ह्यार्द्रयुक्तं पुटेल्लघु ।  
मारिकं भक्षयेत्त्रितयं रसोऽयं वडवानलः ॥  
सर्वान् गुल्माधिहन्त्याशु ग्रहणीञ्च विशेषतः ॥ १९७९ ॥  
यो.र., रसायनसं., र.क. यो., र.म.भा., (शुल्मे.) र.सं., व  
रा., र.को., र.का., ग्रहण्यधिकारे ।

दि०—र.सं., व.रा.को., र.का., एषु वडवाधुखरस इति नाम ।  
अत्र पलाश वलनाभकमित्यस्य स्थाने पलाशवर्णस्य च इति, तथा  
हस्तिकर्णाय द्रव्यैश्चाहो इत्यस्युद्दिष्टवैधायिकातिशयः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और अभ्रकभस्म,  
सामुद्राह्मा, समुद्रनमक, यवक्षार, सज्जी, सैन्यव, सौंठ, अपामार्ग  
और पलाशकाक्षार, शुद्ध बछनाग येसब समभागलेकर बारीक  
चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर चणकामल,  
हस्तिकर्णपलाश, अदरक इनके द्रवोंसे १-१ दिन मर्दनकर पुट-  
पाक अथवा भूषरयन्त्रसे गरमहोनेतक स्वेदनकर उडदवरार  
गोलिया बनाकर रखछोड़े । इन्मेंसे १-१ गोली समय अथवा

रोगोचितानुपानकेषाम् देनेसे समस्त गुल्म और प्रक्षीरोगको यह नष्टकरताहै ॥ ४०३ ॥

### ४०४ वडवानलरसः ( पोदशः )

हिङ्गुलसम्भवं सृतं गन्धकं मृतताम्रकम् ।  
सम्पक्कं शुद्धं तथा कान्तं वङ्गं चापि शिलाजतु ॥  
तुल्यं रसाङ्गनञ्चैव तालकं शहतमेव च ।  
वराटकञ्चाऽपि तुल्यं जयपालं हिगुणीकृतम् ॥ १९८१ ॥  
हपुषां पञ्चलवर्णं पञ्चकोलकर्सयुतम् ।  
विडङ्गं पिप्पलीमूलं प्रियङ्गुरजमोदकम् ॥ १९८२ ॥  
ह्रीं क्षारो कुष्ठमेला च लवङ्गं जारकद्वयम् ।  
शटी दन्ती त्रिवृक्षेव त्रिफला गजपिप्पली ॥ १९८३ ॥  
सर्वमेकत्र सञ्चर्य माययेत्त्रिफलाजलैः ।  
सप्तधा खलु पोषाणे प्रचण्डातपशोपितम् ॥ १९८४ ॥  
हृतीतकीरसेनाऽथ पुनः सञ्चर्य यत्नतः ।  
पञ्चरक्तिप्रमाणान्तु यटिकां कारयेद्भिषक् ॥ १९८५ ॥  
पक्कां खादयेत्प्रातः शृङ्गवेररसाऽऽप्लुताम् ।  
हन्ति कुष्ठं तथा मेद आममासतमेव च ॥ १९८६ ॥  
श्रीपदं गण्डमालाञ्च गलगण्डं भगन्दरम् ।  
नाडीं दुग्धमण्ड्यैव अघ्नवृद्धिञ्च दाहयाम् ॥ १९८७ ॥  
अम्लपित्तं रक्तपित्तं पक्वशूलं हलीमकम् ।  
यातरक्तं यातकफमुपदंशं सपीनसम् ॥ १९८८ ॥  
पञ्च गुल्मास्तथाऽऽनाहं ह्रीद्विदोषज्वरानपि ।  
उदराणि तथा कासाग्रस्तोऽयं वडवानलः ॥ १९८९ ॥

र. र., व. रा., इष्टे ।

भाषा—हिङ्गुलसे निकालाहुआ पारा और गन्धक, ताम्र, कान्तलोह, वङ्ग इनकीमर्से, शिलाजीत, भुनाहुआ तृतिया, रसौत, हरिताल, शङ्ख, कौडी इनकीमर्से १-१ भाग, शुद्ध जमालगोदा २ भाग, शाऊ, पांचोनामक, पञ्चफोल, विडङ्ग, पिलामूल, प्रियङ्गु ( गेरुला ), अजमोद, दोनोशार, कुल, इन्फा यची, लौग, दोनोशरि, कपूर, दन्तीमूल, निचोत, निहला, और गजरीफल १-१ भागलेकर पारीकचूर्णकर पारेगन्धकही नील बण्डमलीमें मिलाकर पन्थरकेतलमें त्रिफला और हरेकिपाँसे करीश्रमे ७-७ भावनाएं देख ५-५ रत्तीची गोखियेवनाकर रखाओहै । इनमेंसे १-१ गोली अक्षरखेरमेदेताथ सेनेसे कुष्ठ, मेद, आमपात, शीपद, गण्डमाला, गलगण्ड, भगन्दर, नाडीमग, दुग्धरा, अन्त्रादि, अम्लपित्त, रक्तपित्त, पक्वशूल, हलीमक, यातरक्त, यातकफ, उपदंश, पीनस, पाचोनुल्म, आनाह, शीटा, शोष, ज्वर, उदर, काप इनमधेो यह नष्टकरताहै ॥ ४०४ ॥

### ४०५ वडवानलरसः ( सप्तदशः )

रसगन्धी समो गुतमागनुल्यस्तु टङ्गुणः ।  
त्रिभिन्निकटुर्धः तुल्यं सैन्धवं टङ्गुणांदाकम् ॥ १९९० ॥  
सूतांदाको भीममेतः पिपं मृतानुपांदाकम् ।  
निम्बुनरेण सप्तादं वासमर्द्धरेतः च ॥ १९९१ ॥

पञ्चकोलकपायेण मर्दयेत्सप्तवासरम् ।  
जम्बीरनरेण तथा भृङ्गनिर्गुण्डिजद्रवेः ॥ १९९२ ॥  
मल्लतकानां कायेन शृङ्गवेराऽऽभुना तथा ।  
वडवानलसूतः स्यात्सर्वाऽजीर्णपिनाशनः ॥ १९९३ ॥  
शृङ्गवेराऽभुना मापं विसृज्यां सम्प्रयोजयेत् ।  
विलम्बिकामजीर्णञ्च पट्विषं नाशयेत्क्षणात् ॥ १९९४ ॥  
दिनं दिने यः सेवेत भीमाहारः स जायते ।  
तीर्णामिर्जायते तस्य पट्सं न प्रशाम्यति ॥ १९९५ ॥

र., र. यो., अमिमान्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, और मुहागा, सोंड, मिर्च, पीपल, सैन्धव और शुद्धकपूर १-१ भाग, शुद्धचट्नाग ३ भाग लेकर पारीकचूर्णकर पारेगन्धकही नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय नीच, कपौजी, पञ्चफोल, जंसीरी, मंगरा, निर्गुण्डी, भिलांरा, अदरप इनप्रत्येककेदोनों ७-७ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीची गोखिया वनाकर रखाओहै । इनमेंसे १ से ३ गोलीतक औषिती देखकर अक्षरखेरमेदेगाय देनेसे हैला, विलम्बिका, ६ प्रकारका अजीर्ण इनसबको नष्टर बीर्णामिर्को करताहै जोकि पट्समोत्रन-करनेपरभी घान्तनहोताहै ॥ ४०५ ॥

### ४०६ वडवानलरसः ( अष्टादशः )

रसं गन्धं शिलां तालं मयं निर्गुण्डिकारसैः ।  
त्रिदिनं निम्बुनरेण तावदेव विमायितः ॥ १९९६ ॥  
सर्वस्माद्गुण्णा मर्चाः शम्भुका जीपत्तंयुताः ।  
गोस्तनाकारमृपायां भूधरे पुटयेत्ततः ॥ १९९७ ॥  
सिद्धो भवति सूतेदो वडवानलसम्प्लितः ।  
गुड्वा जयेत्सन्निपाताग्नियमाऽविपमानपि ॥  
पर्यं दुग्धोदंनं शस्तमतितापे पृथग्विधिः ॥ १९९८ ॥

र., र. सु., र. क. यो., यमिपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, दिनतिल और हरिताल गम-भाग लेकर निर्गुण्डी और मौयूकरसोंसे १-३ दिन मर्दनकर सबसे इनेप्रमाणमें औतेहुए घोंपे दालकर मर्दनकरे । फिर गोलाबनाय गोस्तनाकाररूपमें बन्दकर २-४ कपडामिडीदेकर सूखनेपर भूधरयममें पुटदं । स्यान्नीलक होनेपर मिछालकर रखाओहै । इसमेंसे १-१ रत्तीरीमात्रासमय बनवा रोगोचिता-नुगानकेपाय देनेसे सतिपात और बिषम अवसा नित्यमानेराहे ज्वरोंको यह नष्टकरताहै । इनमें पर्य दूतगातरना । अन्धस्त दाह मादमहोनेपर उन्हे जलनकरनेका उपायकरना ॥ ४०६ ॥

### ४०७ वडवानलरसः ( उनविंशः )

त्रिसिन्धूरं समं कृत्वा निधन्त्रं मुरुतालयकम् ।  
अमृतं ताम्रगुण्डञ्च रेणुकां परिमूल्यकम् ॥ १९९९ ॥  
समांशेन ततः मृतं गन्धकं मलयन्मुर्धाः ।  
विषमुष्टिञ्च भागेकं करञ्जव्यमनेन तु ॥ २००० ॥  
वाग्भ्याम्वा नमसंयमैरपिदातिगम्यपया ।  
क्षीरययं ततो याज्यं मर्दयिष्या त्रिचक्षणः ॥ २००१ ॥

गुञ्जाऽर्द्धं भक्षयेत्प्राज्ञः सर्वव्याधिं विनाशयेत् ।  
 वातक्षयाऽश्मरीकुष्ठसन्निपातभग्नद्वारा ॥ २००२ ॥  
 कूर्मासनं लिङ्गभङ्गं कटीशूलं ततः परम् ।  
 शुद्धभङ्गमपस्मारं कृतामुन्मादनाशनम् ॥ २००३ ॥  
 कर्णाऽक्ष्णोश्च शिरःपीडा गलप्रहञ्च छिद्रकम् ।  
 ग्रीहानं पटुतां शोथं लोहजालञ्च पीनसम् ॥ २००४ ॥  
 प्रमेहग्रहणीश्लेष्मविषमज्वरनाशनम् ।  
 अत्रबुद्धिं शिरःस्वेदमर्शासिपाण्डुकामलम् ॥ २००५ ॥  
 अरुचिं मूत्रकृच्छ्रञ्च देयं जीवस्य संशये ।  
 हरसे सर्वरोगांश्च शृङ्गवेररसेः सह ॥ २००६ ॥  
 घडवानल इति ख्यातो रसानामुत्तमो रसः ।  
 सन्लोकहिताधीयं क्षुकोऽस्ती पतिकोचिदैः ॥ २००७ ॥  
 र हा, रसायने ।

भाषा—त्रिसिन्दूर (अश्रक, कान्त और लोहसिन्दूर),  
 हरितालमूत्र, शुद्धबल्लभा, ताम्रभस्म, रेणुका, चित्रकमूल येसब  
 १-१ भाग, शुद्धपारा और गन्धक सबकी बराबर, शुद्धकुङ्किा  
 १ भाग लेकर सबकाबारीकचूर्णकर पारिवन्धकी नीलवर्ण-  
 कजलीमें मिलाकर काञ्जवीछालकरसे ११ दिन मर्दनकर आक,  
 सेहण्ड और अगुलियायुद्धके दूधसे १-१ दिन मर्दनकर आधी  
 आपोरसीकी गोडियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली  
 समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाधनेसे वातक्षय, अश्वरी,  
 कुष्ठ, सन्निपात, मग्नद्वर, कडुही, ध्वजभङ्ग, कटिशूल, शुद्धश्लेष्म,  
 अपस्मार, मक्खी, उन्माद, कान् आल और सिरकीपीडा, गल  
 प्रह, ताडछिद्र, ग्रीहा, पटुता, शोथ, गलरोहिणी, पीनस, प्रमेह,  
 ग्रहणी, श्लेष्मविकार, विषमज्वर, अन्त्रबुद्धि, सिरकापसीना,  
 बवासीर, पाण्डु, कामला, अरुचि, मूत्रकृच्छ्र इनसबको यह  
 नष्टकरताहै और जिससमय कोईभी दवा काम न करतीहो,  
 जीवन सहायप्रस्तहो, उससमय अदरखकेरसकेसाध इसका  
 प्रयोगकरना ॥ ४०७ ॥

### ४०८ वडवानलरसः ( विंशः )

तालादेको रसादेक एकः सीसकमूत्रमनः ।  
 द्वौ भागौ गन्धकाञ्चुदाम्निरचात्पोडशांशकः २००८  
 चूर्णं कृत्वा रक्तिकैका घृतेन सह भक्षिता ।  
 विसृज्जीं सर्वशूलानि ग्रीहानमुदरन्तथा ॥ २००९ ॥  
 गुल्मं सङ्ग्रहणीरोगं श्वासकासगलाऽनिलान् ।  
 अक्षिमाम्नादिकात्रोगान् हन्यसौ वडवानलः २०१०  
 वै मृ, र सु, रसायनस, र पा., नि र, अजीर्णऽधिकारे ।  
 र सु, नि. र., र पा, एतेषु तात्स्थाने वन्न नियोजितम् ।

भाषा—हरिताल, पारद और नागमूत्र १-१ भाग, शुद्ध  
 गन्धक २ भा, मरिच १६ बां भाग लेकर सबका बारीकचूर्ण  
 कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ रसीवीमाया भीकेसाध देनेसे  
 हैजा, सवप्रकारकेशूल, ग्रीहा, उदररोग, गुल्म, सङ्ग्रहणी, श्वास,  
 कास, गलरोग, वातरोग और मन्दाग्नि येसब नष्टहोतेहैं ॥ ४०८ ॥

### ४०९ वडवानलरसः ( एकविंशः )

तुल्यः पारदारदाभुदकृतो मर्चोऽर्द्धयामाद्रसः,  
 गृहीयादिति सप्तधा रससमं घृष्टं विषं सङ्घिपेत् ।  
 खल्वे स्याद्वडवानलः ससिक्तो यस्तण्डुलोन्मीलितः  
 मुस्ताधामयसन्निपातदहनः पथ्यं सिताऽम्भोदधि ॥  
 र. घ, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, शिगरिक और नागमोहा १-१ तोला  
 लेकर एकपहर मर्दनकर एकतोला शुद्धबल्लभाका बहुतबारीकचूर्ण  
 ढालकर एकदिनभर घोट, इसीप्रकार दूसरेदिनभी ढाले । ऐसे ७  
 दिनतक नया बल्लभा ढालकर १-१ दिन मर्दनकरे । इसमेंसे  
 १-१ चाबलभर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाध देनेसे  
 क्षुत्स्राव और सन्निपात प्रयत्तिको यह नष्टकरताहै । इसमेंपथ्य  
 शकरका शरबत और दहीदेना ॥ ४०९ ॥

### ४१० वडवानलरसः ( द्वाविंशः )

रसांशकं विषञ्च स्यात् पटुपङ्गन्धकतालयोः ।  
 इन्तीवीजस्य पङ्गुगाः पञ्चभागान्तु टङ्गणम् ॥ २०१२ ॥  
 पथ्वारो धूर्तवीजस्य व्योपभागत्रयं भवेत् ।  
 एतानि वह्निमूलस्य कायेन परिमर्दयेत् ॥ २०१३ ॥  
 आर्द्रकस्य रसेनाऽथ देयं गुञ्जाद्वयं द्वयम् ।  
 वडवानलसम्भोऽयं सन्निपातहरः परः ॥ २०१४ ॥  
 नारिकेलोदकं देयं पिबेच्च शर्करोदकम् ।  
 क्षीराद्यं दापयेत्पथ्यं वडवानलनामके ॥ २०१५ ॥

र क, र क. यो, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और बल्लभा १-१ भाग, शुद्धगन्धक,  
 हरिताल और ज्वालामोटा ६-६ भाग, मुनामुहागा ५ भा.,  
 शुद्धधतूके बीज ४ भा, त्रिकटु ३ भाग लेकर बारीकचूर्णकर  
 पारिवन्धकी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर चित्रकमूल और अद-  
 रखके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर २-२ रसीकी गोडियां  
 बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगो-  
 चितानुपानकेसाध देनेसे यह समस्तसन्निपातोंको नष्टकरताहै ।  
 अल्पतन्त्र्यास लगानेपर नारियलकाजल और शकरका शरबत  
 देना । ज्वादा मूत्र लगानेपर दूधभातदेना ॥ ४१० ॥

### ४११ वडवानलरसः ( त्रयोविंशः )

लम्बितवह्निजरायुजरासाऽभि-  
 पेकाऽपिमृच्छितोरसेन्द्रः ।  
 गामयस्थघटिकान्तरसंस्थः  
 स्वल्पवह्निपुटितो मुहुरेषम् ॥ २०१६ ॥  
 गन्धके द्विगुणितेऽथ मुजोर्गे  
 जारयेत्तदनु हेम विषुद्धम् ।  
 पञ्चपिक्तदुतोयमृच्छितः स्वतः ॥  
 एकोऽपि हि विदोपोदधि-  
 शोपो वडवानलः ख्यातः ॥ २०१७ ॥  
 र ( मा ), त्रिदोष ।

**भाषा—**मोटा जहलीकण्डा लेकर बीचमें दो अङ्गुलका खड़ा बनाकर गोबरसे लीपकर चिन्ना बनाले और सूखनेपर नीचेसे आग लगावे । जब कण्डेमें आपेक आग पहुँचजाय तब खोमें पारेको डालकर ऊपरसे अम्बरको पानीमें हलकरके पारेपर चोवा देवे अथवा अमिश्रित्वा १-२ दिनपारेको घोटकर टिकड़ीबनाकर रखे और ऊपरसे चोवादे । ऐसे एकपड़तीक आंचलगनेकेबाद चोवादेना बन्दकरदे और पारेपर दीबलीरख बपड़मिट्टीसे सन्धिबन्दकरदे । अथवा कण्डेमेंसे निकालकर दो दीवोंमें धन्दकर २-३ कपड़मिट्टीदेकर बहुतहल्की आंचदे फिर अमिश्रित्वाकेरसमें मर्दनकर टिकड़ीबनाय पूर्ववत् चोवादे । ऐसे जयतक भस्म न होजाय तबतक करताजाय फिर कण्डेहीपर दूनागन्धक जाणकरे । इसेबाद द्विगुण सुवर्णके चूर्णमें मिलाकर अमिश्रित्वाके रसे घोटकर थोड़ी थोड़ी आंचदे । जब सुवर्णकीभस्म होजाय तब इसमें पाचोंपित्तों और कुटकीके स्वरसकी १-१ दिन भावनाएँ देकर रखोजे । इसमेंसे १-१ रत्नी समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाय देनेसे यह अकेला त्रिदोषक्षी-समुद्रको मुक्तानेकेलिये बडवानलजैसा कामकरताहै ॥ ४११ ॥

### ४१२ बडवानलरसः ( चतुर्विंशः )

त्रिकटो द्वादश भागाः दशाष्टौ सैन्धवस्य च ।  
द्रोच भागौ हृदिद्याय एकः केरभक्तस्य च ॥ २०१८ ॥  
वत्सनाभस्य नागस्य सूतस्य त्रितयं तथा ।  
प्रबलाऽग्निकरः प्रोक्तो रसोऽयं बडवानलः ॥ २०१९ ॥  
र. (मा.), अमिमान्ये ।

**भाषा—**त्रिकटु १२ भाग, सैन्धव १८ मा., हल्दी २ भाग, कहरवा, शुद्धवज्रनाग और नागभस्म १-१ भाग, पारदभस्म अथवा रससिन्दूर ३ भाग लेकर सफ्फा बारीकचूर्णकर १-२ दिन शुष्कमर्दनकर रखोजे । इसमेंसे ३ से ६ रतीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसायदेनेसे यह प्रज्वालामित्री करताहै और मन्दाग्नित्रित समस्तदोषोंको नष्टकरताहै ॥ ४१२ ॥

### ४१३ बडवानलरसः ( पञ्चविंशः )

रसभागो भवेदेको गन्धको द्विगुणो मतः ।  
त्रिगुणश्च विषं प्राहं कणाभागवतुष्टयम् ॥ २०२० ॥  
लाङ्गली पञ्चधा प्रोक्ता सर्वमेकत्र मर्दितम् ।  
भाययेन्निम्बुकद्रवि दिनमेकश्च शोषयेत् ॥ २०२१ ॥  
मरिचस्य भ्रमाणेन घटिकां कारयेद्बुधः ।  
घापोऽधतुर्पातिश्च हन्ति श्लेष्मदातानि च ॥ २०२२ ॥  
कुष्ठरोगांश्च सर्वांश्च ह्रीद्गुल्मोदराणि च ।  
शुभ्रसौ कटिशूलश्च शूलमुलान्यनेकदाः ॥ २०२३ ॥  
मेदोवृक्षेश्च शमनो यक्षिर्दीप्तिकरः परः ।  
अयं नागाहुनप्रोक्तो रसो ये बडवानलः ॥ २०२४ ॥  
मा. वि., नि. र., वातव्याघ्नयधिकारः ।

१०—विष्णुस्तोत्रात् लाङ्गलीया त्रिगुणवर्तिमदाय विषाया नागविषाया सप्तत्रय पाद प्रथितः, तत्र सप्तत्रयार्जुन अनाह प्रतीति पादरचनकर भाष्य ।

**भाषा—**शुद्धपारा १ मा., गन्धक २ मा., शुद्धवज्रनाग ३ मा., पीपल ४ मा., करिहारी ५ मा., लेकर सबका बारीक-चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकण्डलीमें मिलाकर नीचूकेरसकी एकदिन भावनादेकर मरिचबरावर गोलिएँ बनाकर रखोजे । इनमेंसे १ से २ गोलीतक रोगोचितानुपानकेसाय देनेसे ८४ वातरोग, समस्त श्लेष्म और कुष्ठरोग, ग्रीह, गुल्म, उदर, शुभ्रसौ, कटिशूल, साधारणशूल, सैकड़ोंशूलोंकेकारण, वेद, मन्दाग्नि, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४१३ ॥

### ४१४ बडवानलरसः ( षड्विंशः )

रसं गन्धश्च द्रवं सोमलं जयपालकम् ।  
तालश्च वत्सनाभश्च समभागं विचूर्णयेत् ॥ २०२५ ॥  
कार्दलीरसेनैव गुटिका मुद्रसन्निभा ।  
शर्करासहिता देया पथ्यं दुग्धोदं हितम् ॥ २०२६ ॥  
बडवानलनामाऽयं वातरोगान्बिनाशयेत् ।  
कफजान् मणयिस्फोटानुपुद्गमयानपि ॥ २०२७ ॥  
र सि, वातव्याघ्नयधिकारः ।

**भाषा—**शुद्ध पारा, गन्धक, क्षिगारिक, सोमल, जमाल-गोदा, हरिताल और यज्जनाग सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकण्डलीमें मिलाकर फोलेकेरसमें एकदिन मर्दनकर मूंगबरावर गोलिएँबनाकर रखोजे । इनमेंसे १-१ गोली शर्कराकेसाय देनेसे समस्तवात और कफकेरोग, कफ, विस्कोट, उपदेश इनसबको यह नष्टकरताहै । इनमें दूध-भात पच्येदेता ॥ ४१४ ॥

### ४१५ बडवानलवटी ( प्रथमा )

पारदस्य त्रयो भागास्तावन्तो गन्धकस्य च ।  
नागस्य भस्मनस्तद्वज्रत्यारो गगनस्य च ॥ २०२८ ॥  
कुटुत्रयं विभागं स्याद्दशैः स्युः शङ्खभस्मनः ।  
द्रो शारी सैन्धवं हेम पिडं सौधचर्चलं तथा ॥ २०२९ ॥  
खर्परं धावमेदी च धृग्यभागं समाहरेत् ।  
सञ्चूर्ण्य शृङ्गेरस्य मीरेण परिभाषयेत् ॥ २०३० ॥  
मालुलुङ्गस्य मीरेण शमीमूलरसेन च ।  
ज्वालामुखीरसेनाऽपि चणकसारवारिणा ॥ २०३१ ॥  
प्रत्येकं भावनास्तिस्रो दातव्या गुरुयुक्तिः ।  
शृङ्गेररसेनेन प्राह्मा चङ्गमिता वटी ॥ २०३२ ॥  
अग्निमान्यं निहन्त्येषा बडवानलसञ्चिह्ना ।  
मन्देऽप्रावरण्यो गुल्मे हाजार्णे च जलोदरे ॥ २०३३ ॥  
विमूर्च्छां प्रहृणीरोगे तथा ये राजपथमणि ।  
विध्वानरेण विहिता यक्षिर्दीपनकारणात् ॥ २०३४ ॥

र. का., अमिमान्ये ।

**भाषा—**शुद्धपारा, गन्धक और नागभस्म ३-३ भाग, अश्रमभस्म ४ भाग, त्रिकटु ३ मा., वज्रभस्म ८ मा., धवी, शुद्धाग, सैन्धव, शुद्ध बरूकेबीज, चिट्शार, गन्धक, क्षिगारिका, पाशानभेद येव १-१ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारे

गन्धकरी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर अदरक, विजोरा, शमीकी जड़कीछाल, हुरदुर अथवा सूर्यमुखी, चनेकाछार, इनप्रत्येकके शक्की ३-३ भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरकके रसकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, अरुचि, गुल्म, अजीर्ण, जलोदर, हैजा, प्रह्वी, राजयक्ष्म, इनसबको यह नष्टकरती है ॥ ४१५ ॥

### ४१६ बहवानलवटी ( द्वितीया )

ताल ताप्यं कनरुक्नुनदीकान्तगन्धाऽर्कसूते-  
स्तुल्यांशैस्तेररणमधुरं दीप्यं च सर्वतुल्यम् ।  
एतैः सर्वैश्चिकटु च समं कज्जलीहृत्य सर्पं,  
हिङ्गुमोभिर्मुनिमितदिने भावयेत्सप्तद्वयः ॥ २०३५ ॥  
जयन्त्याः कान्ताभ्याश्च निर्गुण्डाश्चाद्रकस्य च ।

स्वरसे भावयेतिपट्टा सहृदेष दिनेदिने ॥  
कर्तव्या मापकेस्तुल्याभ्यामाशुष्काश्च गोलिकाः २०३६  
हृन्त्येषा धडधानलाप्यगुदिका संसेचितोष्णाम्बुना,  
सर्पं शूलगदं किमींश्च सफलान्येपमप्युत्ति क्षुधः ।  
मन्दाग्निं प्रह्वीगदं श्वयधुक्क पाण्डुञ्च गुत्तमार्शत्सी,  
घातलेष्मगदं तपोदरदजं श्वासञ्च काले ज्वरम् २०३७  
र. र. घ., र. गो., चि. क. घृते ।

भाषा—शुद्धहरिताल, सोनामासी, भुवर्णभस्म, शुद्धमैन-  
सिल, कान्तलोह, शुद्धगन्धक, ताम्रभस्म और शुद्धपारा येसब  
१-१ भाग, निस्तो और पुरानागुड ८-८ भाग, नई अजवाइन  
२४ भाग, त्रिकटु ४८ भाग लेकर कारीरुचूर्णकर पारेगन्धककी-  
नीलवर्णकजलीमें मिलाकर हृदिगेलसे ७ दिन, जैत, मकोय,  
निर्गुण्डा अदरक इनकेस्वरसोंसे १-१ दिन भावनादेकर १-१  
माशेकी गोलिया बनाय छायामें सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ अथवा गरमजलकेसाथदेनेसे  
सबप्रकारके शूल, हृमि, क्षुधाकी विषमता, मन्दाग्नि, प्रह्वी,  
शोथ, पाण्डु, गुल्म, बवासीर, घातलेष्मरोग, उदररोग, श्वास,  
कास, इनसबको यह नष्टकरती है ॥ ४१६ ॥

### ४१७ वमनामृतयोगः

गन्धकः कमलाश्वय यदीमधु शिलाजतु ।  
यद्राशो टङ्कणश्चैव सारङ्गस्य च शट्कम् ॥ २०३८ ॥  
चन्दनञ्च तयस्त्रीरी गोरौचनमिदं समम् ।  
विल्वमूलकपायेण मर्दयेद्याममात्रकम् ॥ २०३९ ॥  
मात्राञ्चैव प्रभुर्वीत यद्दृष्ट्वैव प्रमाणतः ।  
नानाविधाऽनुपानेन छदिं हन्ति त्रिदोषजाय ॥ २०४० ॥  
नि. र. र. घ., र. क. गो., घृण्यम् ।

भाषा—शुद्धगन्धक, कमलाश्व, मुल्लहरी, शिलाजीत, खाश,  
भुनागुलाग, शङ्खभस्म, सफेदचन्दन, बल्लोचन, गोरौचन, सब  
समभागलेकर कारीरुचूर्णकर बेलकीमहरीछालकेकाट्टेसे १ पहर-  
मर्दनकर १-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह त्रिदोषन  
वमनको नष्टकरता है ॥ ४१७ ॥

### ४१८ वमनेश्वररसः ( प्रथमः )

अङ्गोलवीजाङ्गागौ द्वौ भागमेकञ्च तुल्यकम् ।  
सूतगन्धकशुल्वञ्च समभागानि कारयेत् ॥ २०४१ ॥  
सूक्ष्मचूर्णं विधायादौ भावयेद्वयणाम्बुना ।  
देवदालीरसेनाऽथ मदनस्य फलाम्बुना ॥ २०४२ ॥  
आटरूपवचानिष्यपटोलमधुयष्टिका- ।  
कायेन भावयेद्यैतैः सूक्ष्मचूर्णेन च कारयेत् ॥ २०४३ ॥  
गुञ्जात्रयं प्रदातव्यं तप्ततोयाऽनुपानतः ।  
वामयेदम्भलिपितानि देहशुद्धिश्च जायते ॥ २०४४ ॥  
सर्वाऽजीर्णं कफं पित्तं वमनं कुष्ठनाशनम् ।  
अतिवेदे च दातव्यं धामीफलसितासमम् ॥ २०४५ ॥  
र. सि. वमने ।

भाषा—अङ्गोलकीमीनी २ भाग, तुल्यभस्म १ भाग,  
शुद्धपारा, गन्धक और ताम्रभस्म १-१ भाग लेकर सबकी  
नीलवर्णकजलीकर समक, बन्दाल, मैनफल, अहृता, बच, नीम,  
परवल और मुल्लहरी, इनकेबापोंसे १-१ भावना देकर सुखाकर  
रखछोड़े । इनमेंसे ३-३ रत्ती गरमपानीकेसाथदेनेसे वमन  
होती है और अम्भलिपित, अजीर्ण, कफ, पित्त, वमन, कुष्ठ इनको  
यह नष्टकरता है । अतियोग होनामेपर आबोलकाचूर्ण, श्वर-  
कालहरदेना ॥ ४१८ ॥

### ४१९ वमनेश्वररसः ( द्वितीयः )

वेणीवीजं रसं गन्धं नृपं चन्द्रेन्दुभागिकम् ।  
देवदालीरसे भावयेत् सप्तधा समतुल्यकम् ॥ २०४६ ॥  
योजयेन्मापमात्रान्नु उष्णाम्भःसंयुतं तथा ।  
ऊर्ध्वजयुगदार्तानी स्वस्थानां शुद्धिमिच्छताम् ॥  
पित्तान्तरमनं सम्पक्क कुर्यात्पूना धर्मीश्वरः ॥ २०४७ ॥  
ना. वि. वमने ।

भाषा—बन्दालकेरीज १९ भाग शुद्धपारा और गन्धक  
१-१ भागलेकर बीजोंका कारीरुचूर्णकर पारेगन्धककी कमलीमें  
मिलाकर बन्दालकेरमसे ७ भावनाएं देकर बराबरका शुद्धतुल्य  
मिलाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ माता गरमपानीकेसाथ  
देनेसे यष्टवमनकोहर शुद्धितोमती है और इससे ऊर्ध्वजयुगद  
समाश्रमरोग नष्टहोताहै ॥ ४१९ ॥

### ४२० वरुणाय लोहम्

द्विपलं घर्षणं धान्यास्तद्वर्त्ता पातुपुष्पिकाय ।  
हरितक्याः पलार्द्धञ्च भृषिपणी तदस्त्रिकाय ॥ २०४८ ॥  
कर्पमानञ्च लोहारार्द्रं चूर्णमेकत्र कारयेत् ।  
भक्षयेन्प्रातःकृत्वाप शान्तामानं विधानयित् ॥ २०४९ ॥  
मृत्राघातं तथा घोरं मृत्रच्छुञ्च दाहणम् ।  
अस्मरं चिनिहृन्त्यानु प्रमेहं विरमन्तरम् ॥ २०५० ॥  
बलपुष्टिकश्चैव वृष्यमायुष्यमेव च ।  
वरुणाघमिदं लोहं सर्वस्याधिपिनानाम् ॥ २०५१ ॥  
र. घ., घ., र. वि. र. घ., र. घ., मृत्राश्वे ।

भाषा—वदणकीछाल २ पल, आवले १ पल, धावडीके-  
फूल और हरे २-२ कर्पे, पृथिवीणी, लोह और अन्नकमस १-१  
कर्पलेकर वारीकृष्णकर रखछोड़े । इसमेंसे प्रातःकाल ४-४ भागे  
समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ लेनेसे अत्यन्तभयङ्कर-  
मुत्राघात, मूत्रच्छृङ्ख, अदमरी, प्रमेह, विषमज्वर, इनसबको  
नष्टकर बल और आहुको बढ़ाताहै ॥ ४२० ॥

### ४२१ बल्लभाभूतरसः ( प्रथमः )

शुद्धं तालं द्विधा गन्धं तालाऽर्द्धं हाटकं शुभम् ।  
दिनेकं मर्दितं कृष्णतुलसीरससंयुतम् ॥ २०५२ ॥  
तद्रोलाद्धटकान्कुयोदिकैकान्मरिचोपमान् ।  
पूरयेत्काचकृष्णान् तु रुद्धा सम्यङ्मुदंशुकैः ॥ २०५३ ॥  
शुष्केऽत्र धालुकायश्चे पुटे मन्दाग्निना पचेत् ।  
यामद्वादशपर्यन्तं स्वाङ्गशीतं समाहरेत् ॥ २०५४ ॥  
शतवेधो भयेत्तेन तारं कृष्णं करोति च ।  
तत्तारं जायते स्वर्णं समयीजेन मिश्रयेत् ॥ २०५५ ॥  
रसायनमिदं श्रेष्ठं प्रयोगो बल्लभाऽमृतम् ।  
तत्तद्रोगाऽनुपानेन तत्तद्रोगनिवर्हणम् ॥  
पथ्याशान्पमोगेन वलीपलितनाशनम् ॥ २०५६ ॥  
र. क. यो., रसायने ।

भाषा—शुद्धहरीताल १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा., सुवर्ण-  
केवक आषाभागा लेकर नीलवर्णकजलीकर कालीतुलसीकेरससे  
एकदिन मर्दनकर मरिचबराबर गोलीया बनाकर मुखाकर ६-७  
कपड़मिठीदीहुरे आतशीचीशीमें भुके ४-५ कपड़मिठीसे  
शुद्धबन्दक डुबाय धालुकायन्तमें मन्दाग्निसे १२ पहर  
तक पकाये । स्वाङ्गशीतलोहेपर निकालकर रखछोड़े ।  
इसमेंसे एकभाग लेकर १०० भाग बांदीमें गलाकर छोड़नेसे  
कालकरेताहै । उसचांदीमें बराबरका सुवर्ण मिलातेसे सुवर्ण-  
होताहै । यह उत्तम रसायन है । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे  
यह घमस्तोर्गोंको दूरकर वलीपलितानाशकसे रहितकर दीर्घ-  
युको देताहै ॥ ४२१ ॥

### ४२२ बल्लभाभूतरसः ( द्वितीयः )

घञ्जैयन्नान्तताप्राऽन्नं कान्तं तीक्ष्णञ्च द्विद्वुल्लम् ।  
गन्धकं माक्षिकञ्चैव सूतमस्य समं समम् ॥ २०५७ ॥  
घाराही घन्धककांटी मर्दितञ्च पृथक्पृथक् ।  
गोलकं छायाया शुष्कं धालुकायन्तं पचेत् २०५८ ॥  
स्वाङ्गशीतलमादाय खट्वमप्ये यिनिःक्षिपेत् ।  
मत्स्यमाहिपमापूरच्छागवाराहपन्नगाः ॥ २०५९ ॥  
एतेषां पित्ततो भाव्यं पर्यायेण यथाक्रमम् ।  
गुग्गुमायै प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम् ॥ २०६० ॥  
दाहद्वयं ज्वरं हन्ति यिपमज्वरनाशनम् ।  
क्षयगुल्मभ्यासकासान् प्रहणीमतिसारकम् ॥ २०६१ ॥  
द्राक्षेऽद्यादीनि भक्ष्याणि गुडोदकनिषेवणम् ।  
लोकोपकरणायां शूद्रेण सुभाषितम् ॥  
बल्लभाभूतयोगेन सर्वरोगविनाशनम् ॥ २०६२ ॥  
र. क. यो., सतिताये ।

भाषा—हीरा, वैक्रान्त, ताम्र, अन्नक, कान्त और फोलाद  
मस्य, शुद्धशिगरिफ, गन्धक, सोनामाखी और पारदमस्य  
सब समभागलेकर वारीकृष्णकर घाराहीबन्द और बांहालेखसेके  
स्वस्तोसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय छायाशुष्ककर धालु-  
कायन्तमें बन्दकर एकदिनरातकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलोहेपर  
निकालकर मछली, भेंसा, मोर, बकरा, सुअर और सांपके-  
पित्तोसे १-१ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती समय  
अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे दाहद्वयकज्वर, सन्निपात  
और विषमज्वर, क्षय, गुल्म, श्वास, कास, ग्रहणी, अतिसार  
इनसबको यह नष्टकरताहै । अधिकगर्मी लगनेपर द्राक्ष, ईश  
और शुक्रका शरवत पिलाना ॥ ४२२ ॥

### ४२३ वसन्तकुसुमाकररसः ( प्रथमः )

प्रवालरसमैकित्ताम्यरमिदं चतुर्भांगभाक्,  
पृथक्पृथगथो मृते रजतेहमनी द्व्यंशके ।  
अयोभुजगवङ्गकं त्रिलवकं विमर्चाऽखिलं,  
शुभेऽहनि विमर्चयेद्विपणिर्द्विधा सप्तशः २०६३  
द्रव्यैर्वृषनिशेऽभुजैः कमलमालतीपुष्पजैः,  
पयः कटलिकन्दजैः शृंगजचन्दनाबुजैः ।  
वसन्तकुसुमाकरो रसपतित्तिगुञ्जीऽशितः,  
समस्तगद्गद्भवेत्तिल निजाऽनुपानैरयम् ॥ २०६४ ॥  
क्षिणोत्पत्य मधुपणैः क्षयगदेषु सर्वैष्वपि,  
प्रमेहक्षि रश्मिभिः समधुशर्कराभिः सह ।  
सितामलयजद्रव्यैर्भूति रक्तपित्तऽधवा,  
सितामधुसमन्वितैः शृषमपल्लवाणां द्रवैः ॥ २०६५ ॥  
यिजातगजकेशैररपि च तुष्टिपुष्टिप्रदो,  
मनोभवकरः परो घमिषु शङ्खपुष्पीरसैः ।  
अभीकरसदार्कसमधुभिरम्लपित्ताऽमये,  
परेषु तु यथोचितं ननु गदेष्वपि सेवयेत् ॥ २०६६ ॥  
र. यो. त., र. क. यो., र. से., रसायन प., र. र., नि., र., यो.  
र., र. यो., र. चं., वि. क., घ., र. का., र. तु., रसायन प., भै. र.,  
टो., व. रा., र. प., र. चि., शा. सं., बा., र. शि., र. र. घ., रय.  
सं., र. म. मा., वै. चि., र. पा., रसायने वाजीकरणे च ।

हिं—रसायनसमूहस्य द्वितीयस्यानेष्वमेव पाठोऽर्धमूर्तिनाम्ना  
लिखितस्यायं “विमर्चयेत्तिलं गन्धकं च ॥ २०५७ ॥ विमर्चयेत्तिलं  
नीरं दद्यात्पुत्रे तथा ॥” इति विवेचने निर्यादिरस्तत्र सर्वस्य राज्ञी  
विषयः कौषेयवकाऽऽनेष्टिनां पोटलिकां विषयः पोटलीपाकगन्धके  
विषयः पट्टकमलरसाम्नां शृषविषयः पोटलीं कृत्वा गन्धपुष्पं दत्त्वा  
रोगेषु निवेदिन इति विवेकः । बाहव्यः द्वितीयपठे वैक्रान्त-नीलप्रा-  
धिक्याय प्रसिद्धिः । क्वचिद्बतादिकमनां प्रमाणे व्यस्य गीऽप्यनिश्चि-  
त्करः । “वैक्रान्तस्य च योगिकं दिमागं दैवमग्नं च । अन्नरस्य च  
मागौ द्वौ मुतादिदुष्करोपया । बह्वस्य विभागः स्वाग्रस्य भग्न-  
रसः । चत्वारोऽप्येव च आभासः सर्वमेव मर्दिनम् ॥ क्वचिद्विद्व-  
गोदुष्येऽप्येवैववचरिभिः ॥ क्वचिद्विद्विनीरैः सतथा भावयेत्पयः ॥  
आपिने सखायः स्वादमन्तुमुपायः । पतोऽप्य मधुना धृतः शीत-  
रोगे हर्षं नयेत् ॥ मृताऽग्निगन्धेऽपि मृतापापासमोऽपि ॥ मृता-  
दाहं तादृशैः नाचयेद्वाज्रं वाहयः ॥ कठुपिठ्ठकैः दृष्यः सर्वरोगं निव-



हैण । इत्यमीनं ज्वरं श्वात क्षययोगे कृशकृत्याय ॥ जातं परतर किञ्चिदसायनमिहियते ॥” इति पाठे वैषम्बरनाबल्या इत्यते तत्र वैषान्मेवाऽधिकं नियुक्तं रोहनागो च त्यक्तौ । तथा अम्बरस्थानेऽप्रक गृहीतम् यथावस्थितेनाऽप्येतद्गुणसम्भवात्स्थक पाठकल्पना ननुचित्तहा । वैषान्मेवाऽधिकं भक्तिश्चैतज्जियोगेऽपि क्षत्यप्यम् ।

**भाषा—**प्रवाल, पारा, मोती, इनकी भस्म और अम्बर ४-४ भाग, रजत और स्वर्णमय २-२ भाग, खोह, नाग और वज्रभस्म ३-३ भाग लेकर सबको १-२ पहर मर्दनकर अच्छे दिन अष्टाया, हल्दी, ईश, जमल, मालतीपुष्प, गोदुग्ध, केले का कन्द, कस्तूरी, सफेदचन्दन इनके देवोंसे ७-७ भागनाएँ देकर ३-३ रसीकी गोलीयें बनाकर रखड़ो । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देनेसे यह समस्त रोगोंको हारकता है । साधारणतया मधुमरिचसे समस्त श्वस, हल्दी, मधु और वाङरसे समस्त प्रमेह, शकर और सफेदचन्दन अथवा अड़सके स्वरस, शकर और मधुसे रक्षपित, चातुर्गतेसे नपुंल-कत्व, दध्नुषीके स्वरसे वमन, शतावरीसे स्वरस, शकर और मधुसे ज्वलपितको यह नष्टकता है ॥ ४२३ ॥

**४२४ वसन्तकुसुमाकररसः ( द्वितीयः )**  
मृतसूताऽन्नकं स्वर्णं कान्तं तारं समांशकम् ।  
प्रवालमुक्तापञ्च भसितं नागपङ्कयोः ॥ २०६७ ॥  
तदर्थं मर्दयेत्सम्यक् सेतुकुस्त्रिकाभयम् ।  
जातीपुष्पसमुद्भूतरसेन दियस्त्रयम् ॥ २०६८ ॥  
कोकिलाक्षस्य शास्मल्या आर्द्रगान्धारिसम्मयैः ।  
खर्चुरेकद्वीद्राक्षाकेतकीमधुपट्टिजे ॥ २०६९ ॥  
मधुश्रीरक्षुजरसे घोरियाराहिकन्दजेः ।  
रतागस्थप्रसूनोत्थे मर्धं स्वैद्यं पयोन्वितैः ॥ २०७० ॥  
सम्मिथ्य शर्कराद्राक्षामुशलीमापगोक्षुरैः ।  
कण्टकैः कोकिलाक्षो धात्री रम्भाफलं मधु २०७१  
सूताश्चतुर्गुणं यामं मर्धं शास्मलिजैर्द्रवैः ।  
पल्लवैः सदा खादेत्साक्षात्कामसमप्रभः ॥ २०७२ ॥  
गवां क्षीरं पिबेद्याऽनु वसन्तपद्वर्षकम् ।  
रूपयौवनसम्पन्नां स्यानुकूलां स्त्रियं प्रजेत् ॥ २०७३ ॥  
मुद्राभ्रशालिगोधूमद्राक्षादादिमशर्कराः ।  
नवनीतं कृष्णरम्भाफलं कर्पूरसंयुतम् ॥ २०७४ ॥  
मृगनामीन्दुकास्मीरयुक्तचन्दनचर्चितः ।  
मालतीमल्लिकाकुन्दकेसररत्नविभूषितः ॥ २०७५ ॥  
विधिमेवं नरः हत्वा रमयेत्प्रमदाश्रितम् ।  
एकरात्रमतिक्रम्य क्षिरात्रे तत्र पर्ययेत् ॥ २०७६ ॥  
त्रिपञ्चपद्मज्यैव दशरात्रे तु पीडहा ।  
पथे ॥ विशतिं कुर्वान्मार्गसे चैकं शतं प्रजेत् २०७७  
१ क घो, बाजीकरणे ।  
२०—रतागकौषधयोगे ॥ “मृगनाऽन्नकं स्वर्णं कान्तं तारं समांशकम् । गोक्षीरं विमर्षाऽथ छायावाचं शिरोपयोगे ॥ कण्टकैः विनि शिष्य बाहुकापके दिनम् । स्वाह्मरीललादाय विरोधेन विनि क्षिपेत् ॥ प्रवालकुसुमाकररसं ॥ भागेन मर्दयेत्सम्यक् सेतुकुस्त्रिकाभयम् ।

वाग्निम् ॥ जातीपुष्पसमुद्भूतरसेन दिवमयम् । खर्चुरेकद्वीद्राक्षा वाराहीनन्दात्रिजे ॥ मर्दयेत्तु विवेद्याऽनु वमन्तपद्वर्षकम् । सस्ननाती रमते पुष्पो वीर्यवान्मेव ॥” इति द्वितीय- पाठे इत्यते तस्याऽन्तर्गवाऽनावाससिद्ध, रूपयौवनवाऽनुव्रतिऽपि क्षयमानोऽस्ति, पादान्तर विभ्रमहास्य महत्त्वम् ।

**भाषा—**पारा, अन्नक, सुवर्ण, कान्त और रजत २-२ भाग, प्रवाल, मोती, हीरा, नाग और वज्रभस्म १-१ भाग लेकर वारीकचूर्णकर कपूर, कस्तूरी, जावित्री, तालमखाना, सेमलकामुसला, अदरक, फगली (म०) रात्र, केलाकन्द, द्राक्ष, केबड़ा, मुल्लही, मधु, दूध, ईश, सुगन्धवाला, वाराहीकन्द, लालश्रमस्त्यकेफूल, इनप्रत्येकके हठोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाकृत्या इनसबकास्वरस और दूध इकट्ठामिलाय दोलायन्ते एकदिन स्वेदनकरे । फिर शकर, द्राक्ष, मुशली, उज्ज्व, गोखरू, केबाच, तालमखाना, बहेड़ा, आबला, केलेकाफल और मधु येसब पारसे चौगुनेचौगुने डालकर एकपहर सेमलकेसुलके स्वरसे मर्दनकर १-१ रसीकी गोलीयें बनाकर रखड़ो । इनमेंसे १-१ गोली खाकर गोदुग्ध पीकर रूपयौवनसम्पन्न ऐसी स्त्राभिलषित एकत्रीके साथ सत्रकरजायाहिये । इसरीरात्रिको घीरे २ जियोंकी चट्टाया बड़ाये । १० दिनमें १६ जियोंके साथ और १५ दिनमें २० जियोंके साथ सम्मोग करसाहिये और इसीतक हमेशाकेसेवनसे प्रसन्नराशि बढतीहीजातीहै । यदि मद्राचयके साथ इसरासेवनकरेतो तमाम अवाप्यरोग और क्षय नष्टहोजातेहैं । इसमें मूग, चावल, गेहूँ, द्राक्ष, अनार, शकर, मक्खन, केला, कपूर, येसब पय्येहैं । कस्तूरी, कपूर, केशर और चन्दन इनका सेमकरे । मालती, मोगरा, कुन्द, केशर इनकी माला पहिने ॥ ४२४ ॥

**४२५ वसन्तकुसुमाकररसः ( तृतीयः )**  
हेम तारं प्रवालञ्च यस्मै वैद्यर्पमीतिकम् ।  
अन्नकं मृतलोहञ्च द्विगुणं सूतभस्मकम् ॥ २०७८ ॥  
यङ्गं नीलञ्च यैकान्तं नागमयस प्रयोजयेत् ।  
एतद्विगुणं युञ्जीत भावनेभूगणेन च ॥ २०७९ ॥  
शतपत्रप्रसूनोत्थे मालत्याः कुसुमाभ्युभिः ।  
पञ्चान्धुगमदे भाष्यं सुसिद्धो रसराट् भवेत् ॥ २०८० ॥  
मधुना सर्पिषा दध्ना शुद्धामात्रप्रमाणतः ।  
क्षयकासाऽरुचिवायसशोषपाट्णामप्यंस्तथा ॥ २०८१ ॥  
यत्रकृन्नाश्रमरीं हन्ति मेधानां विशतिं तथा ।  
प्रहर्णां कामिलाञ्चैव सर्वरोगप्रजन्तथा ॥ २०८२ ॥  
शलाऽऽभ्यानीं यद्विनाशं कामदः पुष्टिरर्धनः ।  
रेतोवृद्धिकरः पुंसां प्रजाजननमुत्तमम् ॥  
कुसुमाकरविख्यातो वसन्तपद्वर्षकः ॥ २०८३ ॥  
१ क, बाजीकरणे ।  
**भाषा—**युवर्ण, रजत, प्रवाल, हीरा, ल्यनिदी, मोरी, अन्नक और खोह १-१ भाग, पारा, वज्र, नीलम्, वैषान् और नागमय २-२ भाग, लेकर वारीकचूर्णकर तमामपारिधे ईश,

शुलभ और मालतीदेवूँल, कम्पूरी, इनप्रत्येकके द्रवोंसे ३-३ भावनाएँ देकर १-१ रस्तीकी गोलियों बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु, घी अथवा दहीप्रशुति उचिनाउ पानेसेसाथ देनेसे क्षय, कास, अफचि, खास, शोथ, पाण्डु, मूत्रकृच्छ्र, पयरी, २० प्रकारकेप्रेमेह, प्रदण्णी, कामला, शूल, आध्मान, मन्दाग्नि, कृशता, शुक्लनाश, वन्ध्यत्व इनसबको नष्टकर यह आयुको बढ़ाताहै । ४२५ ॥

४२६ वसन्तकुसुमाकररसः ( चतुर्थ )

हेमतरविषयज्ञमौक्तिकं विदुमायसमिदं विभावयेत् ।  
धारियुग्मकपय शतपत्रकदलीकमलकन्दनिशाभिः ॥  
जातिकाश्रुगमदेन्दुवृषैश्च भावयेन्मुनिदिनं प्रतियोगम् ।  
सिद्धिदश्च रसानायक पय जायते सकलरोगनिहन्ता  
प्रमेहविषाण्डुके ग्रहणिकाऽम्लपित्ते तथा,  
क्षये श्वसनशूलके कसनरक्तपित्ते हितः ।  
कणामधुविमिश्रितस्तदनु साऽर्द्धगुञ्जामितो,  
घसन्तुऽसुमाकरो मद्गजेन्द्रकण्ठीरय ॥२०८६॥  
रसायनतः, वै वि, क्षये ।

भाषा—मुषण और रजतमस्म, शुद्धघनाम, वर, मोती, प्रवाल और लोह इनरीमस्मं सब समभाग लेकर क्षेणोत्सस गोमुख, गुलाबकेसूल, कैला और कमलकेचन्द, हल्दी, जावित्री, कस्तूरी, कपूर, अङ्गुस इनप्रत्येकैकशेषों से ७-७ दिन भावनाएँ देख १॥-१॥ रसीकी गोलीयें बनाकर रखड़ो। इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचिन्तानुषाननेसाथ देनेसे प्रमेह, विष, पाण्डु, ग्रहणी, अन्धरूपित, सबप्रकारके क्षय, श्वास, शूल, कास, रक्तपित्त प्रवृत्ति समस्तरोगोंकी यह नष्टकरताहै । साधारणतया श्वास, कास और शूलमें पीपल तथा मधुकेसायदेना ॥ ४२६ ॥

४२७ वसन्ततिलकरसः

हेज्ञो भस्म च तोलकं घनयुगं लौहात्रयं पारदात्,  
चत्वारो बलिजं सुवङ्गयुगलं वैरुहत्त मन्दयेत् ।  
मुक्ताविद्रुमयोरसेन समता गोक्षत्रासेषुणा,  
सर्वं पन्थकरीपकेण सुतट्टं तत्तत्तचेत्सप्तथा ॥२०८७॥  
कस्तूरीघनसारमर्दिततनुः पञ्चात्सुसिद्धोमवे-  
त्कासत्राससप्तित्वातकफजित्पाण्डुक्षयादीन्द्रयेत् ।  
शलादिप्रहणीं विपादिहरणीं मेहास्तथा विंशतिं,  
हृद्रोगादिहरो ज्वरादिशमनो वृष्या वयोवर्धन-२०८८  
१ सं, ११, १ मु, १, १, ५, रसायनराजीवरणयो ।

भाषा—प्रवर्णमस्य १ तो, अक्षरमस्य २ तो, लोह  
मस्य ३ तो, धातुमस्य ४ तो, शुद्धमस्य और वस्त्रमस्य  
२-२ तोले, मोती और प्रयागमस्य ४-४ तोले देख स्वका  
यारीकण्ठपर इन्द्रेणिलाय गोराह, अदुषा, ईश इनक स्वर  
छोसे १-१ दिन मर्दनेर मोलभणाय धारावसमुज्जे बन्दहर  
१ सेर करतोही बांचे। स्वात्रगीतव्योपर निहालतर फिरसे  
मर्दनेर बांचे। ऐसे ७ बार बांचेहर कम्परी और कपुके

द्वार्षेय १-१ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिएय बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ थोली समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देनेसे काष्ठ, श्वास, पित्त, वायु, कफ, पाण्डु, क्षय, शूल, प्रवृण्णी, विष, २० प्रकारके प्रमेह, हृगैग, ज्वर, शोष इनसबको दूरकर पूर्ण पुष्ट्यत्वको वेताहै और आयुको बढाताहै ॥४२७॥

४२८ वसन्तमालतीरसः ( सुवर्णवसन्तमालती ) ।

स्वर्णं मुक्तादरुमरिचं भागवृद्धया प्रदिष्टं,  
 स्तर्पयिष्ये प्रथममखिलं मर्दयेन्मृद्धानेन ।  
 यावत्स्नेहो व्रजति विलयं निम्बनीरेण ताप-  
 द्रुद्धाद्धन्दं मधुचपलया मालतीप्राग्वसन्त ॥ २०८९ ॥  
 सेवितोऽयं हरेर्ज्ञानं जीर्णञ्च विपमज्वरम् ।  
 ज्यायीनन्याश्च कौसादीन् प्रदीप्तं कुरतेऽजलम् २०९०  
 भै र, घ, रसायनघ, र सु, र कौ, र प, वै चि (ल),  
 वै द, सि भे म,, वै चि, रसायनघ, र सु, र बा, र यो,  
 र शि, र यो, र नि, र, र च, य थो.त, र का, र ति, र क  
 ल, र म मा, र प्र, र पा, ज्वराधिकारि, र सु, र दौ, र शि,  
 र यो, एष यसन्तपज्ञ इति नाम ।

**भाषा**—धूर्णभस्म अथवा बर्क १ भाग, मोती २ भा, शिंगरिफ ३ भा, सरिच ४ भा, छपरिया ८ भाग लेकर सयका वारीकचूर्णकर सबसे १५ वा हिस्सा अवधा चतुर्पास मखन देकर ३-४ दिव मर्दनकर कागजीनीयूकास कालकर चिकनाई रहितहोनेतक मर्दनकर टिक्किया बनाकर रखजोके । इसमेंसे २-३ रत्तीकीमात्रा मधु और पीपलकेसाय देनेमें रावप्रकारके जीर्ण तथा विपमज्वर और श्वासकासादिक उपद्रवोंको दूरकर अमिको प्रदीप्तकरतावे ॥ ४१८ ॥

४२९ वसन्तमालतीरसः ( द्वितीय )

रसकं वहिज्जं सृतं शुद्धं गन्धं समंसमम् ।  
मदयेन्नवनीतेन जम्भनीरेण भावयेत् ॥ २०९१ ॥  
यावद्भाज्यञ्च शुष्कञ्च तावत् कारयेद्विष्णुम् ।  
वह्निमात्रं ततो दद्यात्विष्णुहोमधुसंयुतम् ॥ २०९२ ॥  
धानुक्षयेऽग्निमान्ये च विषमे चाऽतिसारिणि ।  
दुर्नामप्रदरातौ च ग्रहणारक्तपित्तजे ॥ २०९३ ॥  
र म , धानुक्षये ।

**माथा**—शुद्धस्तरिया, मरिच, पारा और गन्धक समभाग-  
लेकर नीलगणक बलीकर मक्खनशालकर १-२ दिन मर्दनकर जमी  
रीनरससे चिखनाई जलितकर मर्दनकर फिर इसकी दीपकियें  
यनाकर रसजोड़े। इष्यमें ३-३ रतीकीमात्रा मथु और पीपलछे-  
साद्य हर्दसे पानुखस, मन्दामि, विषमन्त्र, अमिता, वषाटी,  
प्रदर, प्रहणी और रसपित्त इनको यह दूरकरजोड़े ॥ ४२१ ॥

४३० असन्तमालनीरसः ( तृतीयः )

एकादशो मरिचादुभौ रसवतः सम्मर्दयेन्मसृजे-  
पश्चात्तिम्बुरमेन मर्दनविधिं यावदतं गच्छति ।

आर्द्रजे मधुकोरये वा जले चैहोऽस्य दीयते ।  
शूलाग्रिमाम्बनाशाय चित्रतित्ताऽऽर्द्रजे जले ॥२१३५॥  
कोष्ठरोगप्रशान्त्यर्थं जयपालाऽऽज्यनागरेः ।  
समाक्षिर्ग शङ्खभस्म सर्जीरं ग्रहणीदे ॥२१३६॥  
आमवातेऽस्याऽनुपाने त्रिफलाकाथसंयुतम् ।  
कोष्णमेरुण्डतैलं स्यात्सद्यो वातगदान्दरे ॥२१३७॥  
देवदात्यशिकटुकत्रयकाथैस्तथाऽऽसि ।  
शुद्धीजीरकरकणानागरे ज्वरदान्तये ॥२१३८॥  
र. दी., शूले ।

**भाषा**—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकजली-  
कर अपाभाग और आकनेद्रवसे १-१ दिन मर्दनकर टिकड़ी-  
बनाय लोहेपानमें रख थोड़ासा सरोसा तैल ऊपर डाल  
मन्दाग्निसे पकावे । जब चटनीके सहस्रहोकर पड़ेमें लगनेलगे  
तब ताम्रपात्रमें निकालकर ताँबेके ढण्डेमें खुबपोटे । एकजीब  
होजानेपर पारेका सोलहवा हिस्सा शुद्धवचनाग मिलाकर बकरे  
और भैंसेके पित्तसे ७-७ भावनाएँ देकर चित्रक, आक और  
त्रिकटुके द्रवोंसे ७-७ भावनाएँ देकर ३-३ रत्तीकी गोलियाँ  
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरक अथवा मुलहठी  
अथवा चित्रक, कुटमी, अदरक इनके द्रवसेसाथदेनेसे शूल और  
अमिमाम्ब नष्टहोताहै । शुद्धजमालगोटा, धी और सोंठनेसाथ-  
देनेसे कौष्ठमदताकी दूरकरताहै । शङ्खभस्म, जीरा और मधुके-  
साथ देनेमें ग्रहणीरोग, त्रिफलाकेबायसे आमवात, कटुण-  
एरण्डतैलसे वातरोग; कन्नाल, चित्रक और त्रिकटुकेबायसे  
बवासीर; गिलोय, जीरा, पीपल और सोंठनेसाथदेनेसे समस्त-  
ज्वर नष्टहोताहै ॥ ४४१ ॥

### ४४२ वह्निभास्कररसः

सुवर्णमस्रं वैकान्तं रजतं शाणमानकम् ।  
लोहं रसं गन्धकञ्च माक्षिकं कर्पूरसम्मिश्रम् ॥२१३९॥  
रक्तचित्रकतोयेन तथा ग्राहया रसेन च ।  
त्रिसप्तहृत्यः सम्भाव्य कुयद्विहृमिता घटीः ॥२१४०॥  
रसोऽयं सर्वया हस्ति मस्तिष्कोदकमाशु च ।  
अन्याश्च शिरसो रोगान्यह्निस्तृणगणानि च ॥२१४१॥  
बहिवज्रास्तसे यस्माद्वीर्येणैव रसोत्तमः ।  
ख्यातः पृथ्वीतले तस्मादाख्यया वह्निभास्करः २१४२  
आ. वि., शिरोरोगे ।

**भाषा**—सुवर्ण, मस्रक, वैकान्त और रजत इनकी भस्में  
४-४ माशे, लोहभस्म, शुद्धपारा और गन्धक, माक्षिकभस्म,  
१-१ कर्पूरे नीलवर्णकजलीकर रक्तचित्रक और बाह्यीके  
रससे २१-२१ भावनाएँ देकर ३-३ रत्तीकी गोलियेंबनाकर  
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानसेसाथ देनेसे  
मस्तिष्कमेंसञ्चितजल और नागातण्डके शिरोरोग नष्टहोताहै ४४२

### ४४३ वह्निरसः ( प्रथमः )

जातीजातं त्रिकर्पं मरिचमपि  
पलं चाऽर्द्धकर्मप्रमाणं,

गन्धं सूतं लवणं विपमिद-  
मखिलं तित्तिडीरस्य तोये ।  
पिप्प्लु मापेकमात्रा वितरति-  
दहनं वह्निमान्ये च सद्यो,  
रोगांश्छूलाऽनिलादीन्दहति-  
कृतगुणो वह्निनामा रसोऽयम् ॥२१४३॥  
वै. घ., नि. र., र. घ., रसायनं., अजीर्णे ।

**भाषा**—जायफल ३ कर्प, मरिच ४ कर्प, शुद्धपारा, गन्धक,  
लौह, शुद्धवचनाग भाषा आधाकर्प लेकर वारीकचूर्णकर पारे-  
गन्धककी नीलवर्ण कजलीमें मिलाय पकी इमलीकेजसे एकदिन  
मर्दनकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली समयोचितानुपानसेसाथ देनेसे यह तत्क्षण भन्दा-  
मित्रो नष्टकर शूल और वातरोगोंकी नष्टकरताहै ॥ ४४३ ॥

### ४४४ वह्निरसः ( महान् ) ( द्वितीयः )

चतुः सूतस्य गन्धाष्टौ रजनी त्रिफला शिला ।  
प्रत्येकञ्च त्रिभागं स्यात्त्रिघृजोपालचित्रकम् ॥२१४४॥  
प्रत्येकञ्च त्रिभागं स्याद्वन्तीत्र्युपणजीरकम् ।  
प्रत्येकमष्टभागं स्यादेकीकृत्य त्रिचूर्णयेत् ॥२१४५॥  
जयन्तीस्तु कूपयांभृद्भयहियातारितैलेः ।  
प्रत्येकेन कमाद्वाग्यं सप्तवारं पृथक्पृथक् ॥२१४६॥  
महावह्निरसो नाम्ना निष्कमुण्जजलेः पिबेत् ।  
धिरचनं भवेत्तेन तर्कं भुक्तं ससेन्धयम् ॥२१४७॥  
दिनान्ते दापयेत्पथ्यं यजेयैकच्छीतलं जलम् ।  
सर्वोद्वहः प्रोक्तः श्लेष्मयातद्वहः परः ॥२१४८॥

र. सं., वै. चि., शा. सं., र. प्र. घ., र. चि., र. क. ल., र. र. सं.,  
यो. म., र. घ., र. क., र. र. कौ., व. रा., र. र., र. का., रसायनं,  
र. को., उद्वहधिकारे ।

**टि०**—योगमहर्षिने त्रय पाठा प्रकल्पिता, एकोऽग्रिष्ठचूर्णनान्ता  
व्यवहृतं, द्वितीयो अलोद्वहः, तृतीय. पाठ उपद्रुक ( वह्निरस )  
नाम्ना व्यवहृत । व. रा. र. र एतयोर्वह्निनीयं इति नाम । रस-  
काम्पेनी द्वितीयस्थाने उद्वहरीयोरिति नाम ।

**भाषा**—शुद्धपारा ४ भाग, शुद्धगन्धक ८ भा., हल्दी,  
त्रिफला, मेनसिल, चित्तोत, शुद्ध जमालगोटा और चित्रक ३-३  
भाग, वन्तीमूल, त्रिकटु, जीरा ८-८ भाग लेकर सबका वारीकचूर्ण  
कर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय जेत, सेहुण्डकादध,  
भंगरा, चित्रक, एरण्डाकतैल इनप्रत्येकके द्रवोंसे ७-७ भावनाएँ  
देकर रखछोड़े । ( तैल बहुत थोड़ाथोड़ा देकर ७ भावनाएँ  
पूरीकरे अन्यथा असम्भवहै ) इसमेंसे ४-४ माशेकीमात्रा  
गरमजलेसाथदेनेसे रचनाहोगी । सन्ध्यासमय लवणयुक्तछाछ-  
भातदेना । ठंडेजलसे परदेज रचना । इसनेसेवनसे समस्तउद्व-  
रोग, कफरोग और वातज्वररोग नष्टहोताहै ॥ ४४४ ॥

### ४४५ वह्निसिद्धोरसः

लोहं गन्धं टङ्गुणं भ्रामयित्वा  
साधैस्तस्मिन्सूतकोऽन्यश्च गन्धः ।

कन्याम्भोमि मेदितः काचकृष्यां

क्षितो वह्नी सिद्धये वह्निसिद्धः ॥ २१४९ ॥

यो म., र. सि., रसायनसं, रसायनाधिकारे ।

भाषा—लोहेको गलाकर समभाग गन्धक और गुह्याग्रा छोले । चक्रखानेपर इससे आधा पारा और गन्धक ढालकर उत्तारले फिर धीरेधारेपरसे १-२ रोज़ मर्दनकर सुखाने आतसीशीशोमें बन्दर एकदिनरात बालुकायन्त्रमें अग्निदे । स्वाज्ञाशीतलोहेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रतीसे ३ रतीतक समयोचितानुगतेसाथ देनेसे यह ग्रहणीप्रभृति समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ४४५ ॥

४४६ बाजीकरणयोगः ( प्रथमः )

सत्त्वं गुह्यच्या गगनं सुलोह-

मेलसितापिप्पलिवर्णमिधम् ।

लोह्वाऽथलेहं मधुना विमिश्रे

स्त्रीणां शतं याति यहच्छया ना ॥ २१५० ॥

र. पा., बाजीकरणे ।

भाषा—गिलोयसत्त्व, अन्नक और लोहसत्त्व, इत्यादयो, शकर और पीपल समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे अमिबल देकर १ मासेसे ३ मासेतक मधुमें मिलाकर सेवन-को और रातको दूधकेसाथ कुछ न लेवे तो अभीष्टसमयतक स्त्रीसङ्गकरसताहै ॥ ४४६ ॥

४४७ बाजीकरणयोगः ( द्वितीयः )

रसमस्माऽन्नकं लोहं धूर्तलेहैस्त्रिभाषितम् ।

विजयायीजतैलेन त्रिमास्यं सिन्धुजद्रये ॥ २१५१ ॥

बल्लमात्रं सितायुक्तं रात्रौ च क्षीरभोजनम् ।

रामात्रययुतं रम्यं पाजीकरणमुत्तमम् ॥ २१५२ ॥

र. पा., बाजीकरणे ।

भाषा—पारद, अन्नक और लोहसत्त्व समभागलेकर बारीकचूर्णकर घृता, भाग और तुवरकके बीजोंके तैलेंसे ३-३ भावनाएँ देकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रतीकीमात्रा शकरके-साथ खाकर दूधपाने और रातको भोजन न करे तो तीन पुत्र-तियोंको पुत्रा करसताहै ॥ ४४७ ॥

४४८ वाडवरसः

पट्टना पूरयेत्स्थालीं तन्मध्ये पट्टमृषिकाम् ।

तन्मध्ये रामदीव्यां तन्मध्ये मृतकं क्षिपेत् ॥ २१५३ ॥

विषं निघृष्य सूतांशं पाणिनाऽऽलोड्य सप्तभिः ।

कृते लेंपः सम्पुटिते तेन चेषं ददेच्छने ॥ २१५४ ॥

पट्टिं प्रज्वालयेद्योमं हठायामचतुष्टयम् ।

तन्मध्ये तिलमात्रन्तु दद्यात्स्वर्णं पाप्मसु ॥ २१५५ ॥

ग्रहण्यां जठरे शूले मन्दाग्री पयनामये ।

युक्तमेतन्निहत्येव कुर्याद्द्विदुतरां सुधम् ॥

तापे शीतक्रियां कुर्याद्वाडवाण्ये रसोत्तमे ॥ २१५६ ॥

र. वि., र. मु., रसायनसं, यो म, र. का, र. पि, च यात,

र. (मा) श्वराधिकारे ।

टि०—माणिक्यचन्द्रीवरसावरोध्य ज्वरारिनाम्ना प्रख्यापित-  
अरन्तु तत्र बल्लमात्रेणनाऽभावात्सुटितं पाठोऽस्ति, अतस्तस्याप्याजन्त-  
न्येव उच्यते । पावाऽनन्तरं तत्र समग्रपालदन्तीबीजानि निघोष्य  
ह्रमाद्विनिर्माणया निघोष्याऽऽनुरासेन सन्धिष्य युक्तिव्य कृता  
हन्ति, इति ॥ निघोषोऽस्तेव । अत एव तस्य ज्वरारिनाम्ना श्वर-  
पाठ कृतोऽस्तीति सुधीभि र्विभावनीयम् ।

भाषा—सैषेनमृको बारीकपीसकर आधी हंडी भरे और उसमें नमककीमूषाबानकर रखे । उसमूषामें शुद्धहींगकीमूषा-  
बानकर रखे । फिर उसमें बराबरके गीलेबट्ठनागवेसाथ घोटो-  
हुआ शुद्धपारा रख हींग और नमक के उसीक्रमसे बन्दर  
पानीमें पिसेहुएबल्लमात्रसे कपड़ेको मिगेकर मूषापर ७ बार  
हरेडकर गलेछ हंडीको नमकसे भरे और ऊपरसे ढकनबन्ध-  
कर ३-४ ऋषमिष्टीकरदे । सूखनेपर चूल्हेपर चढ़ाकर ४ पहली  
हुआमिदे । स्वाज्ञाशीतलोहेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे  
१ तिलप्रमाण 'सम्भ' समस्तपादरोगोंमें देनेसे उनको यह नष्ट-  
करताहै । ग्रहणी, उदररोग, शूल, मन्दाग्रि, वातरोग इनसबको  
नष्टकर अत्यन्त सुधाको बढ़ाताहै । दाहहोनेपर शीतक्रियाकरे ॥

४४९ वातकुलान्तकरसः

शृगनाभिः शिला नागकेसरं कलिषृङ्गजम् ।

पारदो गन्धको जातीफलमेला लघ्नकम् ॥ २१५७ ॥

प्रत्येकं कार्पिकश्चैव त्रुक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ।

जलेन मर्दयित्वा तु धर्त्वा कुण्डिरिकिकायम् ॥ २१५८ ॥

यथाव्याध्यनुपानेन योजयेद्य चिकित्सकः ।

अपस्मारे महाघोरे मृच्छांरोगे च शस्यते ॥ २१५९ ॥

घातजान्तर्यरोगांश्च हन्यादधिरसेयनात् ।

नातः परतरं श्रेष्ठमपस्मारेषु धर्तते ॥

ग्रहणा निमित्तः पूर्वं नास्त्रा घातकुलान्तकः ॥ २१६० ॥

र. स, र. च, घ., र. मु., वाताधिकारे ।

भाषा—कस्तूरी, शुद्ध मेनसिल, नागकेसर, बहेड़ा, शुद्ध-  
पारा और गन्धक, आयफल, इलायची, लौंग देकर १-१ कर्प-  
लेकर बारीकचूर्णकर पारिगन्धकी मीठकणिकजलीमें मिलाय  
जल्ले मर्दनकर २-२ रतीकी गोलीयें बनावकर रखछोड़े । इत-  
नेसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुगतेमात्र देनेसे  
महाघोर अपस्मार, मृच्छां, वातरोग, इनसबको यह नष्टकरताहै

४५० वातगजाङ्गुशरसः ( प्रथमः )

मृतं मृतं मृतं लोहं साय्यगन्धकतालकम् ।

पृष्य शृङ्गविषं व्योषमग्निमन्थ्यङ्ग दङ्कणम् ॥ २१६१ ॥

तुल्यं रख्ये त्रिर्न मयं मुण्डीनिर्गुण्डिकाद्रये ।

द्रियुजां घटिकां खादेत्सर्वथातप्रशान्तये ॥ २१६२ ॥

कणाचूर्णयुतश्चैव जिह्वाकार्यं पिबेदनु ।

साय्याऽसाय्यं निहन्त्यानु रसो घातगजाङ्गुशरः २१६३

समाहाङ्गुशरसं हन्ति दारुणं सन्निपातकम् ।

लोपुदार्पिकवातञ्चाऽप्यन्यादुक्तसम्भकम् ॥ २१६४ ॥

ऊरस्तम्भं हनुस्तम्भं मन्यास्तम्भं विनाशयेत् ।

पक्षाघातादिरोगेषु कथित परमोत्तमम् ॥ २१६० ॥

रसोऽम्बुशोषणो ह्यत्र युक्तोऽन्यो योगमाहकः ।

रास्त्राऽमृतादेवदारुशुण्ठीवातरिजं शृतम् ॥

सगुग्गुलं पिबेत्कोष्णमनुपानं सुखावहम् ॥ २१६६ ॥

र स, ध, र सु, र क यो, र क ल, नि र, वै चि, र  
र स, चि र, र च, रसायनस, टो, र का, र म, यो म, र  
क, चि क, ना वि, यो त, यो र, र स क, शा स, द यो  
त, र र, र कौ, र (मा), वै सा, व रा, रसेन्द्रम, र, चि  
र म, र सि, र प्र सु, वाताऽधिकारे ।

टि०—यो र, र स क, शा स, द यो त, र र, र कौ,  
र (मा), वै सा, व रा यो त, रसेन्द्रम, र, चि र भ, र  
नि, र म सु, र पा एषु तथा च र र स, रसायनम, र च,  
र सु, नि र, र क ल, वै चि, र का, एषोषा द्वितीयस्थाने  
स्वच्छन्दमेवरस इति नाम स्थापितम् । तत्र प्रथेप श्चरीस्थाने निगुण्ठी  
शुधीता । रसप्रकाशमुपाकारे गुग्गेनिगुण्ठीयो निष्पात्य बीजपूरद्वयेण  
भावनया प्रवृत्ता, कृष्णासर्पि क्षौद्रैरनुपानं नियोजितम् । रसावतरे  
भावनया निगुण्ठीसुरसे शुधीते, प्रथेप पक्वास्थाने शिला नियोजिता ।  
चिकित्सारहस्ये वातारियदीति नाम । वसवराजीये द्वितीयस्थाने  
स्वच्छन्दनायकेति नाम । रमरामसुन्दरे अग्निसाराऽधिकारे व्योष  
निष्पात्य भावनया गुग्गेस्थाने शुण्ठी शुधीता वातारिरस इति नाम  
स्थापितम् । नि र, र, वै चि, एतेष्वेवस्थाने समीरपत्रगेति  
नाम स्थापितम् ।

भाषा—पारा, लोह, सुवर्णमाक्षिक इनकीमसं, शुद्ध गन्धक  
और हरिताल, हरे, काकडासौंगी, शुद्धवज्रनाग, त्रिकटु, अरणी,  
मुनासुहागा, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर एकदिन शुष्क-  
मर्दनकर गोरजमुण्डी और निर्गुण्ठीकरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर  
२-२ रत्तीकी मोलियें बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोली  
पीपलकेचूर्णसेसाय लेकर जिक्रीकाकाय पिलानेसे यह साध्य  
अथवा असाध्य वातरोगकी नष्टकरताई । साताईनमें श्रुसर्पि,  
दाशरजनिपात, कोशुशीपैक, जम्बवाहुक, ऊरस्तम्भ, हनुस्तम्भ,  
मन्यास्तम्भ, पक्षाघात, इनसबको यह नष्टकरताई । वातरोगमें  
अम्बुशोषण अथवा अन्यकोई योगवाहकरसदेकर रास्त्रा, पिलोय,  
देवदाह, सोंठ और एण्ड्रीकीजडका कटुण्णबाय गुणलेसेसाधेना॥

४५१ वातगजाङ्कुशरसः ( वृहन् ) ( द्वितीयः )

सूताऽम्रतीक्ष्णकान्तानि ताम्रतालकगन्धकम् ।

स्वर्णं शुण्ठी बला धान्यं कटुफलं चामया विषम् ॥ २१६७ ॥

पट्या श्रेष्ठी पिप्पली च मरिचं टङ्गुर्णं तथा ।

तुल्यं खल्वे दिनं मर्धं मुण्डीनिर्गुण्ठीजैर्द्वै ॥ २१६८ ॥

ह्रिगुञ्जा वटिका खादेत्सर्ववातप्रशान्तये ।

साध्याऽसाध्यं निहन्त्याशु वृहद्वातगजाङ्कुश ॥ २१६९ ॥

र स, ध, र सु, र च, र र, व रा, वातरोगाऽधिकारे ।

टि०—र स, ध, र सु एषु ग्रन्थेषु द्वितीयस्थाने र च र र,  
व रा, एषु स्वयं प्रवृत्ता च "सूताऽम्रतीक्ष्णताम्रञ्च कृतातालकगन्धकम् ।  
भागी शुण्ठी बला धान्यं कटुफलं चामया विषम् ॥ मरिचं चण्डाशुने

निर्वैका भक्षयेद्दगीम् । वातमेघहरो ह्येष महावातगमाङ्कुशः ॥" इति  
पाठो दृश्यन् तस्य पूर्वैरभिप्रेत्याऽन्तर्भाव सुसाध । स्वर्णान्तयोरेभ्यो  
तद्दीनोऽपि पाठः प्रवक्ष्यतीथ इत्युपादेशान्तरस्याऽनावश्यकत्वम् । यथा  
राज्य प्रयोगयदित्येतस्मिन् सर्वत्रैव योगिनीऽनुमरन्तीत्यन्यदन्तर ॥

भाषा—पारा, अम्रक, फोलाद, कान्त, ताम्र इनकीमसं,  
शुद्धहरिताल और गन्धक, सुवर्णमस, सोंठ, बला, धनियाँ,  
कायफल, हरे, शुद्धवज्रनाग, इन्द्रायण, काकडासौंगी, पीपल,  
मरिच, मुनासुहागा, ये सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर गोर-  
जमुण्डी और निर्गुण्ठीकरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर २-२  
रत्तीकी मोलियें बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोली सधय  
अथवा रोगोपितानुपानसेसाय देनेसे यह समस्त वातुरोगोंको  
नष्टकरताई ॥ ४५१ ॥

४५२ वातगजाङ्कुशरसः ( तृतीयः )

अष्टौ भागा रसस्याऽपि विपतिन्द्वास्तथैव च ।

गन्धकस्य त्रया भागाः कटुत्रयफलत्रयम् ॥ २१७० ॥

गुञ्जामात्रा घटी खादेदशीतिधातनाशनम् ।

ऊरस्तम्भं निहन्त्याशु स्यातो वातगजाङ्कुश ॥ २१७१ ॥

व रा, वै चि, वाताऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और कुचिला ८-८ भाग, शुद्धगन्धक,  
त्रिकटु और त्रिफला ३-३ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्ध  
ककी नीलवर्णकनलीमें मिलाय वातप्रद्वर्णोने इवसे एकदिन  
मर्दनकर १-१ रत्तीकी मोलियें बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१  
गोली वातद्वानुपानकेसाय देनेसे यह ८० वातरोग और  
ऊरस्तम्भको नष्टकरताई ॥ ४५२ ॥

४५३ वातगजेन्द्रासिहरसः

अम्रं लौहं रसं गन्धं ताम्रं नागं सङ्कुण्णम् ।

विषं सिन्धुं लवङ्गञ्च हिङ्गुजातीफलं समम् ॥ २१७२ ॥

तद्वद् द्विसुगन्धञ्च त्रैफलं जीरकन्तथा ।

कन्यारसेन सम्पिप्य घटी कार्या त्रिरक्तिका ॥ २१७३ ॥

सेव्या पयोऽनुपानेन सदा प्रातः सुखान्विते ।

अशीति वातजान्त्रोगांश्चत्वारिंशद पैंसिकाद् २१७४

विशतिं श्लेष्मिकांश्चोगांश्चसेवनादेव नाशयेत् ।

अभिघातेन ये क्षीणाः क्षीणाऽह्नाऽप्यवचाश्च ये २१७५

व्याधिक्षीणा वयः क्षीणाः स्त्रीक्षीणाश्चाऽपि ये नराः ।

क्षीणेन्द्रिया नष्टयुक्ता वह्निहीनाश्च मानवा ॥ २१७६ ॥

तेषां वृष्यश्च बल्यश्च वयः स्थापनमेव च ।

खज्जाना पङ्कुकुञ्जाना क्षीणाना मासचर्दन् ॥ २१७७ ॥

अरोगी सुखमाप्नोति रोगी रोगाद्विमुच्यते ।

रसस्याऽस्य प्रसादेन नास्ति रोगाद्ध्य कश्चित् ॥ २१७८

वै र, आमवाते ।

भाषा—अम्रक और लोहमस, शुद्ध पारा और गन्धक,  
ताम्र और नागमस, मुनासुहागा, शुद्ध बज्रनाग, सेपानमक,  
लौह, हींग, जायफल येसब समभाग, सबमे आधा त्रिधुण्य,

त्रिकला और जीरा लेकर बारीकचूर्णकर एकदिन घीबुंवालेरससे मर्दनकर ३-३ स्त्रीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली दूधकेसाथलेनेसे ८० वातरोग, ४० पित्तरोग, २० श्लेष्मरोग, अभिघातजन्यक्षीणता, आप्ते अन्नक्षीणता, व्याधि-क्षीणता, आयुकाहास, स्त्रीक्षीणता, क्षीणेन्द्रियत्व, नष्टशुक्रत्व, मन्दाग्नि, खड्गता, पटुत्व, कुम्भजत्व, अत्यन्तकृशता, इनसबको नष्टकर यह आदमीको हृष्टपुष्टनाकर आयुको बढ़ाताहै ॥४५३॥

#### ४५४ वातचिन्तामणिरसः

भागप्रयं स्वर्णभस्म द्विभागं रौप्यमध्वकम् ।  
लौहात्पञ्च प्रवालञ्च मौक्तिकाख्यसम्मिश्रितम् ॥२१७९॥  
भस्मसूतं सप्तभागं कन्यारसविमर्दितम् ।  
बहुभाभा घटी कार्या भिषगिभ रतियुक्ततः ॥ २१८० ॥  
यथाव्याप्यनुपापानेन नाशयेद्भोगसङ्कुलम् ।  
घातरोगं पित्तकृतं निहन्ति नाऽत्र चिन्तनम् ॥२१८१॥  
वृद्धोऽपि तरुणस्पर्द्धां कन्वर्पसमधिकमः ।  
दृष्टः सिद्धफलश्चाऽयं वातचिन्तामणिस्त्वह ॥२१८२॥  
भै.र., घ., वातरोगे ।

भाषा—सुवर्णभस्म ३ भा., रजत और अभ्रकभस्म २-२ भा., लोहभस्म ५ भा., प्रवाल और मोती ३-३ भा., पारद-भस्म ७ भागलेकर बारीकचूर्णकर घीबुंवालेरससे एकदिन मर्दन-कर ३-३ स्त्रीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तृणद्रोणहरानुपानकेसाथ देनेसे घात और पित्तरोगोंको नष्टकर ४५४ बूढ़ोंको युवावस्थामें लाताहै ॥ ४५४ ॥

#### ४५५ वातदावानलरसः

पुनर्भूयद्भिनीरेण रसत्रिगुणगन्धकम् ।  
मर्दयेत्त्रिगुणं कान्तपात्रके विनिवेशयेत् ॥ २१८३ ॥  
पचिद्गुणैः सूर्यपत्रप्रकरसैः शनैः ।  
ततो बहिजलं दत्त्वा पिपञ्च रसपादिकम् ॥ २१८४ ॥  
शीतवातपरिशोषणक्षमो जायते सकलवातनाशनः ।  
द्रूपणेन सघृतेन सेवितः शृङ्खरेपयसाऽपि बलुकः ।  
त्रिभिषाद्यं रसं सिद्धं पर्यं सूरि घृतं हितम् ।  
साधितं तिलतैलेश्च मर्दनं वातनाशनम् ॥ २१८६ ॥  
र., वातरोगे ।

भाषा—शुद्धपारेकेसाथ तिलुने गन्धककी नीलवर्णकजलीकर दृष्टिद (५०) और चित्रककी जलकेकाढ़से १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाया गोलेसे तिलुनेबज्जनेके कान्तलोहेपात्रमें रखकर आकृष्टेपत्रपत्तोंका अठगुणरस डालकर धीरेधीरे पकावे । रस जलजानेपर बतलाही चित्रकमूलकावाय बुलावे । फिर रखसे चतुर्थांश शुद्धबलनाग मिलाकर ३-३ स्त्रीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिकटु और धीकेसाथ अथवा अदरकके रसकेसाथ सेवनकरनेसे शीतवातको यह नष्टकरताहै । इसमें पच्य अधिकपृथक्पाला अथवा तिलतैलमें बनायाहुआ पदार्थदेना और वातनाशकतैलोंकी मालिशकरना ॥ ४५५ ॥

#### ४५६ वातनाशनरसः

सूतहाटकवज्राणि ताम्रं लौहञ्च माक्षिकम् ।  
तालं नीलाञ्जनं तुल्यं सिन्धुकेन समांशिकम् ॥२१८७॥  
पञ्चानां लवणानाञ्च भागैकं सुविमर्दयेत् ।  
वज्रीक्षीरे दिनैकन्तु रुद्धा तं मृधरे पचेत् ॥ २१८८ ॥  
मापैकमाद्रकद्रव्यं लिह्याद्वातविनाशनम् ।  
पिप्पलीमूलककार्यं सङ्गणमनुपाययेत् ॥  
सर्वांवातविकारान्श्च निहन्त्याक्षेपकादिकान् ॥२१८९॥  
र.स., शा.सं., दू.यो.स., र.चं., रसायनप., ध., चि र भ., रसायनसं., र.डु., भै सा., र. (भा.), र.प्र.सु. एतेषु वातनाशन ।  
वै.क., नि.र., र.मं., र.का. एषु घातारिः । र.र., र.र.स.यह-  
वानलः । ना. वि. वातगजाडशः ।

हिं—रसप्रकाशमुपादेरे पञ्चलवणस्थाने रसोनो नियोजित इति विधेय ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, हीरा, ताम्र, लोह, सोनामाखी, हरिताल, झरमा, तुल्य इनकीभस्में, सवृद्धकेन, पांचोनमक येसब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर सेटुण्डकेदूधसे १ दिनमर्दनकर, गोलाबनाय शरावसमुद्धमे बन्दकर मृधरयन्त्रमें पकावे । स्वाज्ञ-शीतलोहेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माथा अद-रककेसाथलेकर पिप्पलामूलकावाय पीपलकाचूर्ण डालकर पीनेसे आशेषकादि समस्त वातविकारोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४५६ ॥

#### ४५७ वातपिचारिरसः

मृतं सृतं मृतं ताम्रं शिला तालं विषोपणम् ।  
कुष्ठं नागयला पर्या गोक्षुरञ्च विदारिकः ॥२१९०॥  
परण्डं मर्दयेत्तुल्यं द्रव्यैश्चाऽग्निपुनर्नयैः ।  
भाषामात्रां यदौ खारद्वैतपित्तहृषा भवेत् ॥ २१९१ ॥  
र.र., र.चं., व.रा., वै.चि., र.का. वातरोगाऽधिकारः ।

हिं—व.रा., वै.चि. तुल्यमात्राऽधिकारे, नाम व विविधमेति ।  
व.रा., वै.चि. एतयोर्विषोपण निष्कास्य गन्धक नियोजितम् । गोक्षुर-स्थाने शिरिरुण्ड नियोजित, मात्रा वैकपुत्रा प्रमिता निश्चरिता । रस-कामनेनो वातपित्तान्तकृत्येति नाम्नाऽप्येव पाठो व्युत्पत्तिरित्य-न रसान्तरता, ताम्रस्थाने अक्षयपन्नम् प्रमाददेव मन्त्रम् । परण्ड-मूल्यको मृद्वन्ने नियोजितः । रसकामनेनो ॥ कृतीयन्दर्पणेन आनन्दान्तेन प्रतिभाजयति प्रमर्दिनिशाचयननमित्यवयवमर्थम् ।

भाषा—पारा और ताम्रभस्म, शुद्धवैनविल, हरिताल और बलनाग, गरिच, कुठ, युवसिकरी, हर्, गोखच, विदारिकदृष्ट, एण्डकीजइरीजाल, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर चित्रक और पुनर्नवाके काथोंसे १-१ दिन मर्दनादेकर १-१ माथेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह वातपित्तद्वयोंको नष्टकरताहै ।

#### ४५८ वातरक्तशोधीरसः

भाष्येचालकं नुदं शरपुत्राज्ये निनम् ।  
पकर्विनातिवारं हि सततं त्रिहृद्वान्मुना ॥ २१९२ ॥

दिनत्रयं सोमराज्या भङ्गातेन दिनत्रयम् ।  
 शोषयेदातपे खल्वे न्यस्य सर्वं सुचूर्णितम् ॥ २१९३ ॥  
 तालाङ्गं शम्भुवीर्यन्तु तालतुल्यं मृताऽम्रकम् ।  
 पंचद्रजपुटे वहां काचकूप्यामथापि च ॥ २१९४ ॥  
 त्रिचारञ्च तदुद्वल्य स्वाङ्गशीतं सुचूर्णयेत् ।  
 चूर्णेन शरपुष्पायाः शाणमात्रेण भक्षयेत् ॥ २१९५ ॥  
 गुडैर्न वा डिगुडं वा त्रिगुडायाऽधिकं क्वचित् ।  
 घर्जयेत्प्लवणे यत्नादेतद्वन्यचरिण नु ॥ २१९६ ॥  
 वातरक्तमसाध्यं हि कुष्ठमष्टादशभिधम् ।  
 पामाकण्डूविचर्चान्तु दद्रुविस्फोटकानि च ॥ २१९७ ॥

र. म. मा., ना. वि., वातरक्तं ।

भाषा—शुद्धहरितालका रसमाणिक्य बनाकर चारपुष्पके-  
 हाये २१, त्रिफलाकेषापमे ७, वाङ्गुली और मिलविदेह्रोते  
 ३-३ दिन कड़ीपुष्पमें रखकर भावनादे । हरिताले भाषा शुद्धपारा  
 और बराबरसी अन्नरुमस डालकर गोलाबनाय गजपुटही  
 आंचदे, अथवा आतरीदीदीमें रखकर निकालकर पाउनायबही  
 आंचदे । ऐसे ३ बार आंचदेकर स्वाङ्गशीकलोहेनर निकालकर  
 रगणोड़े । इनमें १ से ३ रसीतक मात्रा ४ मासे चारपुष्पके-  
 पूरकेषापदे । इनमें छान बिलुल्यन्दरेतो असाध्य वातरक्त,  
 १८ प्रकारके कुष्ठ, पामा, कण्डू, विचर्चिका, दाह, विस्फोटक  
 इनषपको यह बहुतबली नष्टकरताहै ॥ ४५८ ॥

#### ४५९ वातरक्तान्तकवटी

निष्कट्विनमतिः शुद्धा एजमोदा ततो रसात् ।  
 निष्कप्रपं पिशाल्येन मुशालिनाऽप्यथातय ॥ २१९८ ॥  
 उद्धृतले रत्नां यायसुर्यं गच्छेत्ततो शुद्धम् ।  
 पुताणं त्वय तुल्यशी दत्त्वा सङ्घट्य गोघृतमा ॥ २१९९ ॥  
 शुद्धतुल्यं पिनिःक्षिप्य चतुर्दशपटीः कुम्भे ।  
 एषैकां भक्षयेत्मातस्लाग्भुलादीं मुहुर्मुहुः ॥ २२०० ॥  
 गोघृमात्रं भूरि घृतं रसादेह्यवणजितम् ।  
 पिबन् कौण्डं जलं गच्छ यहिः सञ्जर वा नथा ॥ २२०१ ॥  
 मुखपाके च मञ्जरीं दीप्यपोहलिका गुमा ।  
 मुखे घायां तथा क्षीरित्यकृपायचतुर्लोकान् कुम्भे ॥ २२०२ ॥  
 खाला श्वेषादि तथा पूषयेत्तु यदिच्छसि ।  
 स्नानं पाप्मलमि धेत्तु कुम्भे तर्हि यथामुत्तम ॥ २२०३ ॥  
 अनेन योगराजेन वातरक्तममुद्रयाः ।  
 सन्धिज्जाहा शर्म यानि पीडाः क्षीघ्रं मुहुस्तराः ॥  
 अनुपतेन गैरीहा पूषयेत्तु यिधि मज्ज ॥ २२०४ ॥

रसादनो, वातरक्तः ।

भाषा—मखमोदकापुष्प १८ बर्ग, शुद्धपारा १२ मासेदेकर  
 होमोरी कण्डूमें डालकर हूटे जब पारा उगमे निकलाय तब  
 होमोरीकाएव पुनः पुनः तथा पावना ही डालकर हूटे ।  
 एवहीबोहेनर १४ लीतिवे बनाकर रगणोड़े । इनमेंमे ३० बर्ग १  
 लीतिबर्ग उगमे पनकावे । मुगजकेर अथिक ६ हाडेकु  
 र्दे के पत्तं गादे । जल विष्णुज्जदेरे । एषणजेन

कटुलजलीवे । इसके प्रयोगमें अमघ मुखपाकहोनेपर अजवा-  
 इनरो पानीमें भिजोकर बारीकमलमलकेकरदेमें पोहली बनाय  
 मुंदमें रखे । यदि इसके शान्त न हो तो बट बगैरह दूधमले  
 थूँकी छोले कायसे गुजे करे । इच्छा हो तो ईरा चूसे ।  
 छानरवेको इच्छा हो तो करे । इससे वातरक्त और सन्धिजन्य  
 क्षीघ्र नष्टहोतै । एकरयोगसे यदि कुलन्यापि अवशिष्ट रहनाय  
 तो इसीपारदेवे ॥ ४५९ ॥

#### ४६० वातरक्तान्तकरसः

गन्धकं पारदं लोहं शिलां तालं घनं तथा ।  
 शिलाजतु पुरं गुडं समभागं विचूर्णयेत् ॥ २२०५ ॥  
 श्वेताऽपरजिता दावीं याकुचीं चित्रकन्तथा ।  
 पुनर्नवा देवकाष्टं त्रिफला ध्यापयेत्तु ॥ २२०६ ॥  
 चूर्णमेपां पृथक् तुल्यं सर्वमेकत्र कारयेत् ।  
 त्रिफलाशुद्धराजस्य रसेनेव त्रिधात्रिधा ॥ २२०७ ॥  
 भावयेद्भक्षयेत्पञ्चाद्यनामत्रं दिनेदिने ।  
 ततोऽनुपातं निम्यस्य पत्रं पुष्पं त्वयं समम् ॥ २२०८ ॥  
 शाणमात्रं घृतेः कुपोलनववातविकारनुत् ।  
 वातरक्तं महाघोरं गम्भीरं सर्वजञ्च यत् ॥  
 सर्वोपद्रवसंयुक्तं साध्याऽसाध्यं निहन्त्यलम् ॥ २२०९ ॥

र. सं., घ., र. न., र. गु., गै. र., र. र., र. क., प. क., पारले  
 टि०—१. क., वातरक्तारिरस इति नाम । र. र. वाटुवीरणो  
 भक्तिनेन विवेचितम् ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, लोहमस, शुद्धमलित  
 और हरिताल, अन्नरुमस, शिलाजीत, गुल एव १-१ भाग  
 लेहर चारगणधकी नीलवर्णकडीमें मिलाकर छेदेद्योल  
 दाहली, वाङ्गुली, चित्रकूल, पुनर्नवा, देवदाह, त्रिफला,  
 त्रिचट्ट, विट्ठल वेगव १-१ भाग लेहर बारीकपुनरह पूषोड  
 दशमें मिलाकर त्रिफला और भागरेगमें १-३ दिन मदन-  
 कर घनेप्रमाण मोतिवे बनाकर रगणोड़े । इनमेंमे १-१ गोरी  
 नीमकेरने, पूल और छाल घममाणके ४ मासे पून और पीके-  
 वाय लेजेये सम्पुन बालरक्त और पाविचारोंको यह नष्टकरताहै ।

#### ४६१ वातरक्तान्तकलोहम् ( घृत )

अयोभागह्वयं देयं प्रत्येकः कर्मागिकम् ।  
 रसगन्धकमुताऽन्नगन्धराणाञ्च काश्चनम् ॥ २२१० ॥  
 भागाऽर्द्धञ्च तथा तालं सर्पमेकत्र मिश्रयेत् ।  
 कुपोली मेकपण्योश्च द्रोणपुण्याग्नेमिषा ॥ २२११ ॥  
 भावयेद्भक्षयेत्पिन्मात्रा त्रेया रतिः पानिका ।  
 पण्यापयोऽनुपातञ्च कर्त्तव्यं हितमिच्छना ॥  
 गृहघातान्तको मीहः सैवितो निवर्त होन ॥ २२१२ ॥

सोपद्रव्यं क्षालयानरक्तः

गम्भीरमुत्तानमघोरदंताम् ।

प्रमेहमप्युपमयातिट्टय्

जानं विनारं विविधं मरणाम् ॥ २२१३ ॥

कापालमौडुम्बरमृष्यजिह्वं  
सिध्मं तथा मण्डलपुण्डरीके ।

कुर्याद्विशुद्धिं खलु शोणितस्य  
वर्णप्रकर्षञ्च बलाऽम्रिवृद्धिम् ॥ २२१४ ॥

आ. वि ( परिशिष्टे ) वातरके ।

भाषा—लोहमस्य २ भाग, शुद्ध पारा और गन्धक, मोती, अश्रक, खपरिया, सुवर्ण इनकी मस्ये १-१ भाग, हरिताम्बरस्य अथवा रसमागिकस्य आधाभाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाकर खारीजाल(मारवाड़ी), मण्डकपर्णी, द्रोणपुत्री, इनप्रत्येकके रसोंसे ३-३ भावनाएँ देकर २-२ रत्तीकी मोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली हर, दूध अथवा पानीके साथ सेनेसे उपद्रवसहित गम्भीर अथवा उत्तान वातरक, उपद्रव, भयंकर प्रमेह, सून्हच्छू, कापाल, औडुम्बर, कृष्यजिह्व, सिध्म, मण्डल, पुण्डरीक, इत्यादि समस्त-इष्टोंको दूरकर रफको शुद्धबनाय वर्ण, बल और अभिको देताहै ॥

४६२ वातराजवटी ( प्रथमा )

सुशुद्धं पारदं गन्धं लोहं माक्षिकमस्मकम् ।

स्वर्णं तारं ताम्रबद्धं कान्तं तीक्ष्णन्तु तालकम् ॥ २२१५ ॥

द्वन्द्वं बलसनाभञ्च चातुर्जातं सचित्रकम् ।

त्रिकटु त्रिफला भाङ्गीं ग्रन्थिकं गजपिप्पली ॥ २२१६ ॥

कुष्ठं जातीद्वयं दाह पुष्करं चाम्लवेतसम् ।

शटी दारुहृष्टिं द्वे पक्कं वाडिमं त्रिवृत् ॥ २२१७ ॥

राक्षा दुरालभा छिन्ना दन्ती जैपालकं विषम् ।

कर्ममात्राणि सर्वाणि द्विपलं गिरिजं मतम् ॥ २२१८ ॥

जातीफलं तुगाक्षीरी वाजिगन्धा सचञ्चकम् ।

कङ्गोलरुमुशीरञ्च द्वौ क्षारी लवणत्रयम् ॥ २२१९ ॥

सर्वं सञ्चूर्ण्य विधिवत्सुखत्वे शोभने दिने ।

निर्गुण्डाविासभृङ्गाङ्गि. काकमाच्यार्द्रकाम्बुना २२२०

तर्कारीसूत्रायास्तथास्मत्तरसेन च ।

भाषनाः खलु दातव्याः सप्त सप्त क्रमादिह ॥ २२२१ ॥

ततः पूर्णरसे भाव्यो घटिकां वह्नसम्मिताम् ।

छायाशुष्कां तत कृत्वा क्षात्वा रोगयलाऽधलम् २२२२

सुदिने शुभनक्षत्रे शिवं दुर्गा विभाकरम् ।

प्रणम्य योजयेत्सम्पग्यथारोगाऽनुपानतः ॥ २२२३ ॥

अशीतिवातजात्रोगांश्चत्वारिंशच्च पत्तिकां ।

विशतिं श्लेष्मिकाद्यौरांश्चासं कासं मगन्दरम् २२२४

कुष्ठं चोर क्षतं शूलं ज्वरं पाण्डुं गलग्रहम् ।

प्रमेहं रक्तपित्तञ्च गुल्मं सङ्गर्हणीं तथा ॥ २२२५ ॥

साध्याऽसाध्यासिंहन्त्याशु सत्यं श्रीशिवमापितम् ।

यातराजवटी होया वातरोगकुलान्तिका ॥ २२२६ ॥

॥ ॥ वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, सुवर्णमाक्षिक, सुवर्ण, रजत, ताम्र, वज्र, कान्त, फोलाद इनकी मस्ये, शुद्ध-

हरिताल, शिगरिक और बलाग्र-चातुर्जात, चित्रकमूल, त्रिकटु,

त्रिफला, भारद्वाजी, पिपलामूल, गजपीपल, कुठ, जायफल, जावित्री, देवदाह, पोहकर्मूल, अम्लवेत, कचूर, दोनों प्रकारकी दाहलदी (उत्तरमें दो प्रकारकी मिलतीहै एकको जुतरा और दूसरीको किल मोटा कहतेहै), हल्दी, आवाहलदी, पदमकाठ, अनारदाना, निसोत, रास्ना, जवाहर, गिलोय, दन्तीमूल, शुद्धजमालोटा और बल-नाग १-१ कर्प, शुद्धशिलाजीत २ पल, जायफल, वंसलोचन, असगन्ध, चञ्च, शीतलबीनी, राध, सबो और जवाखार, सेंधा, सचल और समुद्रनमक १-१ कर्प लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाय निर्गुण्डी, अङ्गु, मगरा, मकोय, अदरक, तर्कारी ?, सूरण, भट्ठा, इनप्रत्येकके यथा सम्भवस्वरस अथवा कायोंसे ७-७ भावनाएँ देकर सुधाकर अक्षीरमें पानकेरसे १-२ दिनमर्दनकर ३-३ रत्तीकी मोलिया बनाय छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली रोग और रोगीका बलाव देकर शुभनक्षत्रनुक शुभदिनमें शिव, दुर्गा और सूर्यभगवानको प्रणामकर समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देनेसे ८० वातरोग, ४० पित्तरोग, २० प्रकारके कफरोग, श्वास, कास, भगन्दर, कुष्ठ, उर क्षत, शूल, ज्वर, पाण्डु, गलग्रह, प्रमेह, रक्तपित्त, गुल्म, सङ्गर्हणी, इत्यादि साध्यासाध्य तमाम रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४६२ ॥

४६३ वातराजवटी ( द्वितीया )

पारदं गन्धकं शुद्धं चातुर्जातं कटुनयम् ।

जीरकं युगलं चन्द्रं पर्णं तालीसकेशरम् ॥ २२२७ ॥

जातीफलं लवङ्गञ्च दीप्यकं घट्टियालकम् ।

अमृता चन्दनं द्राक्षा मांसी चञ्चं यरी घचा ॥ २२२८ ॥

जातीकोर्षं चिडं धान्यं त्रिफला तगरं वृषम् ।

प्रत्येकं कर्पसम्मानं द्विपलञ्च हतायसम् ॥ २२२९ ॥

शुद्धं नवाहिकेनन्तु पलमाने प्रसीतितम् ।

सर्वं सञ्चूर्ण्य विधिवन्मर्दयेत्साखसद्रवैः ॥ २२३० ॥

यामद्वयं तत. कार्यां घटिका वह्नसम्मिता ।

दद्याद्दलाबलं दीक्ष्य यथारोगानुपानकम् ॥ २२३१ ॥

ऊरुस्तम्भे वातरोगं ज्वरं दाहमनिद्रताम् ।

प्रमेहं रक्तपित्तञ्च उर क्षतमरोचकम् ॥ २२३२ ॥

हन्ति सर्वानशेषेण तमः सूर्यादये यथा ।

अस्य प्रभावात्मनुजो रसयेद्रमणीशतम् ॥ २२३३ ॥

र सु, वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, चातुर्जात, त्रिकटु स्वाह-सफेदजीरा, शुद्धभूर, पत्रज, तालीसपत्र नागकेशर, जायफल, लौंग, अजवाइन, चित्रकमूल, तगरणोला, गिलोय, सफेद-चन्दन, द्राक्ष, जयमांसी, चञ्च, शतावर, वच, जावित्री, चिड-नमक, धनिया, त्रिफला, तगर, अङ्गु यासव १-१ कर्प, लोहमस्य २ पल, शुद्ध अफीम १ पल लेकर सबका बारीक-चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाय पोस्तकेडोडोंके वाधेसे २ पहर मर्दनकर ३-३ रत्तीकी मोलिया बनाकर रख



छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे ऊर्ध्वस्तम्भ, वातग्याधि, ज्वर, दाह, निद्रानाश, प्रमेह, रक्तपित्त, उर क्षत और अरुचि इनसबको नष्टकर उत्तम वाजीकरणको करताहै

### ४६४ वातराक्षसरसः ( प्रथमः )

शुद्धं सूतं स्वर्णगन्धं कान्तश्चाऽन्नकर्मौकिकम् ।  
ताम्रवैकान्तकं सम्यङ्मारयित्वा चिनि.क्षिपेत् २२३४  
पुनर्नवागुद्ध्यग्निसुरस्ताम्रभृत्सिन्धुकैः ।  
पृथक् पृथक् दिनं भाव्यं दद्यात्पुष्टं ततः ॥२२३५॥  
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य श्लेष्मण्चूर्णन्तु कारयेत् ।  
वातराक्षसनामाऽयं बह्वर्मात्रं प्रयोजयेत् ॥ २२३६ ॥  
मधुपिप्पलमिध्रञ्च अनुपानं यथाबलम् ।  
संववातानशेषांश्च क्षयान्पाण्डून् हलीमकम् ॥२२३७॥  
पक्षाघातं धनुर्वातं कम्पमुन्मादकं तथा ।  
निहन्त्याकुचते दीप्तिं कान्तिपुष्टिरलभ्यते ॥ २२३८ ॥  
र. पा , वातरोग ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सुवर्ण, कान्त, अन्नक, मोती, ताम्र और वैकान्त इनकीमस्में समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर पुनर्नवा, गिलोय, चित्रक, तुलसी, भगरा, निगुण्डी इनके यथासम्भव स्वरस अथवा कायोंसे १-१ दिन भावनादेकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ४-५ कपडिमिनेदेकर सुख नेपर लघुपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रख छोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा मधु और पीपलकेसाथ अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त वातविकार, क्षय, पाण्डू, हलीमक, पक्षाघात, धनुर्वात, कम्प, उन्माद और मन्दाग्नि इनसबको नष्टकर कान्ति, पुष्टि और बलको देताहै ॥ ४६४ ॥

### ४६५ वातराक्षसरसः ( द्वितीयः )

सूतं सूतं तथा गन्धं कान्तश्चाऽन्नकमेव च ।  
ताम्रं भस्मीकृतं सम्यङ्द्वयित्वा समांशकम् ॥२२३९॥  
पुनर्नवा गुद्ध्यग्निसः सुरस्ताम्रवर्णं तथा ।  
पतेपां स्वरसेनेव भावयेत्तिदिनं पृथक् ॥ २२४० ॥  
दत्त्वा लघुपुटं सम्यक् स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।  
वातराक्षसनामाऽयं वातरोगे प्रयोजयेत् ॥ २२४१ ॥  
तत्तद्रोगाऽनुपानेन द्विगुज्जामात्रसेवनात् ।  
ऊर्ध्वस्तम्भं वातरक्तं गात्रभङ्गं तथैव च ॥ २२४२ ॥  
आमवातं धनुर्वातं वेदनावातमेव च ।  
पक्षाघातं कम्पवातं सर्वसन्धिगतं तथा ॥ २२४३ ॥  
सुतिवातश्च शूलश्च शुन्मादश्च विनाशयेत् ।  
तत्तद्रोगाऽनुपानेन याताशीतिविनाशनम् ॥ २२४४ ॥  
यो र, घृ. यो त., नि. र, र च , रसायनप, रसायनस, र मु., र. म. मा , र. क यो , वै चि , र पा , वातरोगे ।

टि०—रसपारिजाते “द्यौन मरितं तुल्यं शतकुम्भ निरत्यक्म् ।” श्लेष्मण्णो विधारेण हृदयेन । तथा च आमवातां “वृणस्याने आट रूपकभावना दृश्यते ।

भाषा—पारदभस्म, शुद्धगन्धक, कान्त, अन्नक और ताम्रभस्म येसब समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पुनर्नवा, गिलोय, चित्रक, तुलसी, त्रिकुट, इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा कायोंसे ३-३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३-४ कपडिमिनेदेकर सुरनेपर लघुपुटकी आचदे । स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्तीकीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे ऊर्ध्वस्तम्भ, वातरक्त, गात्रभङ्ग, आमवात, धनुर्वात, आमवातवात, पक्षाघात, कम्प, सन्धिवात, सुप्तवात, शूल, उन्मादप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥

### ४६६ वातविध्वंसनरसः ( प्रथम )

रसं गन्धकं नागवह्नी च लोहं  
तथा ताम्रजं श्योम निश्चन्द्रकञ्च ।  
कणाटङ्गणे चोपणं नागरं वै  
पृथग्भागमेकं विमर्दयिष्याम ॥ २२४५ ॥  
ततो वत्सनामं चतु.सार्धभागं  
हठं मर्दयेद्वावना व्योपजा त्रिः ।  
वराचित्रैर्न मर्कटैः कुष्ठतोयै-  
स्तथा कारहाटैः सनिर्गुण्डितोयैः ॥२२४६॥  
मनोयानिकैराष्ट्रकैर्निम्बुनीरै-  
स्त्रिभिर्मांवेयद्वातविध्वंसनोऽयम् ।  
समीरे च शूले महान्हेमरोगे  
ग्रहण्यां तथा सन्निपाते च मौढये ॥२२४७॥  
अपस्मारमान्ये सशैत्ये सपित्तो-  
दृष्टौहकुष्ठाऽर्शसि स्त्रीगदे च ।  
निपेयेत गुञ्जाद्वयं चास्य तत्त-  
द्द्वग्नाऽनुपानैरयं रोगजित्स्यात् ॥ २२४८ ॥  
घृ. यो. त. यो , नि. र, र क यो , वै क, दो , र च , र  
को , र ति , व रा , वै चि , र सु , रसायनप, रसायनस, वै चि ,  
र पा , वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, नाम, बह्म, लोह, ताम्र, अन्नक इनकीमस्में, पीपल, शुनाशुहागा, मरिच, सोह, येसब १-१ भाग, शुद्धवह्नीनाग ४५ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारि-गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय त्रिकुट, त्रिफला, चित्रक, भगरा, कुष्ठ, अकलहारा, निगुण्डी, अमलोनिया, अदरक, नीबू इनसबके रसोंसे ३-३ भावनाए देकर २-२ रत्तीकी गोलिया-बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे अग्निबल देखकर १ से ३ गोलीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे, भयकरवात, शूल, उत्कटछेद्योग, ग्रहणी, सन्निपात, मूत्रता, अपस्मार, मन्दाग्नि, शीतपित्त, उदररोग, प्लीहा, कुष्ठ, बवासीर, स्त्रीरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४६६ ॥

### ४६७ वातविध्वंसनरसः ( द्वितीय. )

रसं गन्धं विपक्षैव ताम्रं लोहं समाक्षिकम् ।  
एतत्सर्वं समं योज्यं द्विगुणं द्विगुणं भवेत् ॥ २२४९ ॥

जैपालं तालकञ्चैव रसेन सह योजयेत् ।  
 त्र्युपणञ्च समं योज्यं सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ २२५० ॥  
 निर्गुण्डीसुरण्द्रावै भ्रानोश्च पयसस्तथा ।  
 तर्कारीभृङ्गराजश्च ततो धसूरकस्य च ॥ २२५१ ॥  
 भावना खलु दातव्या सप्तसप्तक्रमादितः ।  
 द्विगुञ्चं भक्षयेत्प्रातर्मरिचैश्च समन्यितम् ॥ २२५२ ॥  
 जानुजङ्घाकटिस्थूलपादगुल्फौष्ठशीर्षकम् ।  
 मन्यास्तम्भं हनुस्तम्भं त्रिकस्तम्भञ्च शुष्कम् २२५३  
 जिह्वास्तम्भं वाहुभवं त्रिकस्तम्भञ्च पादजम् ।  
 अधोभागे च ये वाताः सर्वाङ्गे विचरन्ति ये ॥  
 सर्वाभ्यास्ताज्जयेदशु दैत्यं नारायणो यथा ॥ २२५४ ॥  
 नि र., वै. चि, रसायनसं, वातरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, ताम्र, कोह, सुवर्णमाक्षिक इनकी-  
 भस्मे १-१ भाग, शुद्धवधनाग २ भा, शुद्ध जमालगोटा और  
 हरिताल १-१ भाग, त्रिकटु सबकी बराबर लेकर सबकाबारीक-  
 चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय निर्गुण्डी, सूरण,  
 आककाशुष, तर्कारी, भगरा, धतूरा इनके यथासम्भव स्वरस  
 अथवा कापोंसे ७-७ भावनाएं देकर २-२ रसीकी गोलियों  
 बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली प्रातः कालमें ७ अथवा  
 २१ कालीमिर्चोंके चूर्णकेसायनेसे जालु, जवा, कमर, पैर,  
 शुल्फ, ओष्ठ और शिरकेवातरोग, मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ,  
 त्रिकस्तम्भ, शुष्कता, जिह्वास्तम्भ, अवबाहुक, त्रिकस्तम्भ, पाद-  
 स्तम्भ, अधोभागगत बिंबा सर्वाङ्गगत्वापु इनसबको यह नष्ट  
 करताहै ॥ ४६७ ॥

### ४६८ वातविध्वंसनोरसः ( लघु ) ३

पारदपङ्कजं गन्धो बस्तनामोऽद्भमभेदकः ।  
 धराद्रस्तालकञ्चैव हेमद्रूपणजं द्वैवः ॥ २२५५ ॥  
 मर्दयेद्रक्षिकामानो वातविध्वंसनक्षमः ।  
 श्वासैः कासे सन्निपाते शीताग्ने शूलसङ्गहे ॥ २२५६ ॥  
 नि र., वै. चि, वै. चि, र. सु, रसायनसं, वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, सुहाग, गन्धक और बछनाग, पाषाण-  
 भेद, बौझी और हरितालमस, सब समभागलेकर धतूरे और  
 त्रिकटुके यथासम्भवस्वरस अथवाकापोंसे एकएकदिन मर्दनकर  
 १-१ रसीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली  
 समय अथवा रोगोचितानुपानकेसायनेसे समस्तवातरोग,  
 श्वास, कास, सन्निपात, शीताग्ने, समस्त शूल, इनसबको यह  
 नष्टकरताहै ॥ ४६८ ॥

### ४६९ वातविध्वंसनरसः ( चतुर्थ )

तालकं कर्पमेकञ्च पञ्चकर्पञ्च वह्निजम् ।  
 मर्दयेन्मार्कयरीसैश्चतुर्विंशतियामकम् ॥ २२५७ ॥  
 ततः शुष्कं विचूर्णयांश्च बहुयामं भिषग्वरः ।  
 गुञ्जैकं वा द्विगुञ्चं वा केवलं चार्द्रके रसे ॥ २२५८ ॥

प्राप्तं सिद्धमुखादेतदेव सर्वेषु पाप्मसु ।  
 अशीति वातजाग्रोगान् कफजान्कुष्ठसुसृजान् २२५९  
 संहरेत्सर्वरोगाञ्च अग्निमान्यादिकानथ ।  
 सिद्धमापितमेतस्य गुणान्धुर्व न शस्यते ॥ २२६० ॥  
 पण्डोऽपि कामरूपी स्यान्मासत्रयसुसेवनात् ।  
 अनुपानञ्च पण्यञ्च सघृतं मधुरं ददेत् ॥ २२६१ ॥  
 र. चि, वातरोगाधिकारे ।

भाषा—शुद्धहरिताल १ कर्ष, मरिच ५ कर्ष लेकर वारीक-  
 चूर्णकर भंगरेकरसे २४ पहर मर्दनकर सुखाकर ८ पहर शुष्क-  
 मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रसीसे २ रसीतकमात्रा रोग  
 और रोगीकाबलाबल देखकर अदरफे रसकेसाय देनेसे समस्त-  
 पापयोग, ८० वातयोग, नानाप्रकारकेकफरोग, कुष्ठ, सुप्ति,  
 मन्दाग्नि, पण्डता इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४६९ ॥

### ४७० वातविध्वंसनरसः ( लघु ) ५

रसं गन्धं विपं कृष्णा हृद्वात्री शुद्धतालकम् ।  
 विफला वारणी व्योपं सुरता शिष्टो पोक्कम् २२६२  
 समञ्च भाययेदन्तीभृङ्गजैः सतथा पृथक् ।  
 बहुयुग्मं शृङ्खेररसैश्च लयणान्वितम् ॥ २२६३ ॥  
 वाडुके सन्निपाते च तथा सर्वाङ्गजेऽनिले ।  
 अद्भमयुक्ते तथा शूले शुण्ठीकायसमन्यितः ॥  
 वातविध्वंसनो नाम धनुर्धातं नियच्छति ॥ २२६४ ॥  
 रसायनसं, वातरोगाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बछनाग, पीपल, शुद्धमै-  
 सिल और हरिताल, निफला, इन्द्रायणीमूत्र, त्रिकटु, तुलसी,  
 सहिजन, पोहकरमूल, येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारे-  
 गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय दन्तीमूल और भंगरेके रसकी  
 ७-७ भावनाएं देकर ६-६ रसीकी गोलियों बनाकर रखछोड़े ।  
 इनमेंसे १-१ गोली खण्डयुक्त अदरफे रसकेसाय देनेसे  
 अवबाहुक, सन्निपात, सर्वाङ्गजात, पथरी, शूल इनसबको यह  
 नष्टकरताहै और सौंठके कायकेसाय देनेसे पटुधातको नष्टकरताहै ॥

### ४७१ वातविध्वंसनरसः ( पृष्ठ )

सूतमग्नकसत्त्वञ्च कांस्थं शुद्धञ्च माक्षिकम् ।  
 गन्धकं तालकं सर्वं भागोत्तरविधार्धितम् ॥ २२६५ ॥  
 कज्जलीहृत्य तत्सर्वं चातारिकेहसंयुतम् ।  
 सप्ताहं मर्दयित्वा तु गोलकीहृत्य यत्नतः ॥ २२६६ ॥  
 निम्बुद्रवेण सम्पीड्य तिलकलेन लेपयेत् ।  
 अधोऽङ्गुलदलेनैव परिशोष्य प्रयत्नतः ॥ २२६७ ॥  
 प्रपचेद्बालुकायन्त्रे द्वादशमहरं ततः ।  
 जठरस्य रजः सर्वांस्तथा च मलसङ्ग्रहम् ॥ २२६८ ॥  
 आध्मानकं तथोऽऽनाहं विमृषी यद्विमान्यरम् ।  
 आमदोषमशेषञ्च शुल्भं छर्दिञ्च दुर्जयाम् ॥ २२६९ ॥  
 ग्रहणीं श्वासव्यासौ च क्रिमिरोगं विशेषतः ।  
 हन्यात्सर्वाङ्गशूलञ्च मन्यास्तम्भं तथैव च ॥ २२७० ॥

ज्वरे चैवाऽतिसारे च शूलरोगे निदोषजे ।  
पथ्यं रोगानुसारेण देयमस्मिन् भिषग्वरैः ॥  
कथितो नन्दिनाथेन वातविघ्नसंनो रसः ॥ २२७१ ॥  
र सं., घ., र. सु., र. चं., र. म. मा., र. क., र. र. स., वात-  
रोगाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, अन्नकसत्त्व, काश्य इनकीमल्ले, शुद्ध  
स्वर्णयाक्षिक, गन्धक और हरिताल येसब क्रमशःभागसे लेकर  
नीलवर्णकमलीकर एण्डोके तैलकेसाथ ७ दिनतक मर्दनकर  
गोलाबनाय नीचूकेरसमें पिसेहुए तिलोंके कल्कका आधाअहुल-  
मोटा लेपकरदे । सुटनेपर दारावसम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपड़-  
मिठी देकर सुखनेपर बाउकायन्त्रमें रस १२ पहरकी अग्निदेकर  
पकावे । स्वाहशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२  
रत्तीकी मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त  
ज्वररोग, मलसङ्ग्रह, आम्बान, आनाह, हैजा, मन्दाग्नि,  
आमदोष, शुल्म, छर्दि, दुर्जैमग्रही, श्वास, कास, कृमिरोग,  
सर्वाहशूल, मन्यास्तन्म, ज्वर, अतिसार, त्रिदोषजशूल इनसबको  
यह नष्टकरताहै इसमें पथ्य रोगानुसार देना ॥ ४७१ ॥

### ४७२ वातविस्फोटहररसः

गन्धाश्मश्लोम हिङ्गुश्च पारसीकयवानिका ।  
अहिफेनं विषं चार्कुरुच्छादञ्च जीरकम् ॥ २२७२ ॥  
गोक्षीरं विंशतिपलं सर्वमेकत्र कारयेत् ।  
पाच्यं मन्दाग्निना सम्यक् स्वाहशीतं समुद्धरेत् ॥ २२७३ ॥  
तन्मध्ये च क्षिपेद्गोप्यं खल्वेयं यामचतुष्टयम् ।  
जायते दधिघस्तु मन्थयेत्तत्रकल्लनेः ॥ २२७४ ॥  
आहरेन्नवनीतञ्च घृतं कुर्यात्प्रयत्नतः ।  
शुद्धामानं घृतं तत्तु नागवल्लीदले क्षिपेत् ॥ २२७५ ॥  
शुद्धस्रतञ्च मापेकमहुल्या मदेयतेः ।  
पारदो मूर्च्छितस्तेन जायते नाऽत्र संशयः ॥ २२७६ ॥  
तत्पत्रवीटिकां कृत्वा खादयेद्बुद्धिमाधुरः ।  
वातविस्फोटकान्सर्वान्रासिकाषफत्रनाशान् ॥ २२७७ ॥  
अङ्गशूलञ्च शुल्मञ्च बृद्धिमान्यञ्च वातजम् ।  
किं पुनर्वहुनोक्तं सर्वव्याधिविनाशनम् ॥ २२७८ ॥  
एतद्रसायनघरं शम्भुना कथितं पुरा ।  
सर्वलोकहितार्थाय सोमदेवेन भाषितम् ॥  
एतस्मात्परतो नाऽस्ति विस्फोटो यत्रने क्रिया ॥ २२७९ ॥  
रसायनः, विस्फोटकरो ।

भाषा—शुद्धगन्धक, अन्नकसत्त्व, हींग, खुरासानी अज  
वाइन, अनीम, शुद्धघन्नाग, आक्कीजङ्गीलाल, अकलकरा,  
जीरा येसब १-१ तोला लेकर बारीकचूर्णकर २० पल  
गायकेशूममें डालकर मन्दाग्निसे पकावे । अथोटा होनेपर  
उत्तारकर ठाढोनेपर एक रुपया डालदे और ४ पहरतक खरल  
करे तो यह दहीकीतरह जमजायगा फिर इसका मन्थनकर  
घी निकालकर गरमकर छानके रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्तीके  
अन्दाज घी पके पानपर डालकर एकमाथा शुद्धपारा डाल अहु

लीसे घर्षणकरे । मूर्च्छित होनेपर पानको पिलादे और  
केवल दूधमात खानेको दे । इसके सेवनसे समस्त वातविस्फोट,  
नासिका और गलेके घाव, अङ्गशूल, शुल्म, मन्दाग्नि इनसबको  
यह नष्टकरताहै ॥ ४७२ ॥

### ४७३ वातव्याधिगजाङ्गशोरसः

रसेन हिगुणं गन्धं रसेराकाशवह्निजे ।  
बृहत्ताफलजैश्चाऽथ भृङ्गराजैश्च सप्तधा ॥ २२८० ॥  
मर्जयित्वाऽतसीतैलेः कुम्भकुण्डरसे पुनः ।  
अर्कक्षीरेण सम्मर्ज्य कृप्यां द्वादशायामकम् ॥  
रहिं दत्त्वा रसोऽयं स्याद्वातव्याधिगजाङ्गशः ॥ २२८१ ॥  
र. का., वातरोगाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारेसे इना गन्धक लेकर नीलवर्णकमलीकर  
कड़ाहीमें डालकर अमरवेलकारस डालकर मन्दाग्निसे धीरे २  
सेके, रस सुखनेपर दूसरा डाले । ऐसे बरानकारस ७ बार  
सुखावे । इसकेबाद वनभट्टा, भंगरा, अलसीका तैल, कुम्भकुण्ड-  
ण्डव और आक्कादूध पूर्वमसे ७-७ बार मर्दनकर सुखावे  
फिर इसकी कजलीकर ६-७ कपड़मिठी धीहुई आतसीशीलीमें  
भरके सुंदबन्दकर १२ पहरकी वालनाग्निसे पकावे । स्वाहशीतल  
होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक  
व्याधि और रोगीका बल देखकर देनेसे समस्त वातव्याधि-  
योंको यह नष्टकरताहै ॥ ४७३ ॥

### ४७४ वातशूलहररसः

पारदेन च विलिप्य वलानि  
ताम्रकस्य वलिना द्विगुणेन ।  
क्षारकनितयमध्यगतानि  
वखलण्डनिविडानि च पङ्कैः ॥ २२८२ ॥  
लेपितानि विधिना पुटितानि  
मर्दितानि कनकाऽनलतोयैः ।  
आर्द्रकस्य च कटुत्रययुक्तं  
पोडशांशकसुशुद्धविषेण ॥ २२८३ ॥  
पेषितञ्च खलु यल्लमलं वा  
वातशूलरजि चास्य ददीत ।  
वातशूलहर एष रसश्च  
सेवनाश्रयति शूलविनाशम् ॥ २२८४ ॥

चि क्र, शूलाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारेकी दूने गन्धककेसाथ कमलीकर नीचू  
वगैरकेरससे मर्दनकर शुद्धतावेके कण्टकवैधीर्णोंपर सडावे ।  
फिर सबी, सुहागा और यवशारकाद्व बनाय कपड़ोंपर लेप  
ताम्रपत्रोंपर चढाकर सम्पुट जैसा बनाय ३-४ तह कपडा चढावे ।  
ऊपरसे दो अहुलमोटा मिठीका लेपदेकर सुखाकर लूण अथवा  
मसमयन्त्रमें बन्दकर तीनदिनकी बमामि देवे । स्वाहशीतल  
होनेपर निकालकर घट्टा, चित्रक, अदरक इनकेरसोंसे १-१  
दिनमर्दनकर बराबरका त्रिकुट्टाचूर्ण और पोडशाश शुद्धघन्नाग

मिलाकर १-२ दिन मर्दनकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा समय अथवा रोगीचिन्तानुपानकेसाथ देनेसे वातशूल, वातकफज्वर, श्वासवासादिकरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४७४ ॥

### ४७५ वातहररसः

रसगन्धाऽन्नशङ्खाऽयो समंशं मर्दयेत्यहम् ।  
फन्याकनकचाङ्गेरीद्रवै गोलं चिशोषयेत् ॥ २२८७ ॥  
सप्तवारं मृदाऽऽवेष्ट्य पुटेदारण्यकोत्पलेः ।  
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य रसो वातहरोऽद्भुतः ॥ २२८६ ॥  
द्वियद्गो मधुना योज्यः सर्वयातप्रशान्तये ।  
पानार्थं पिप्पलक्षारतोयं पेयञ्च वातहृत् ॥  
बलाऽजमोदामधुभिः क्रमो योऽन्यो रसोत्तमे ॥ २२८७ ॥  
१ पा, वातरोगाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अन्नक, चाङ्ग और लोह भस्म समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर पीवृषार, धत्ता, कमलोनिया इनकेस्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर ३-४ तह मोटेकपड़ेमें लपेट सूतेसे ढेरितकर ७ कपड़-मिर्गिदेकर घुसाकर जलीकण्डोंकी लघुपुडमें आवरे । स्वाङ्ग शीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ६-६ रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथदेवे और पीपलक्षारकापानी पिलावे । अमिप्रदीप्त होनेकेबाद बला, अजमोद और मधुकेसाथदे । इतरहकरनेसे सबप्रकारके वातरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४७५ ॥

### ४७६ वातान्तकरसः

हेमाऽर्कान्तलोहाऽन्नं सूतमस्म च गन्धकम् ।  
वैक्रान्तं धिक्कुं चैव तारं तालसमन्वितम् ॥ २२८८ ॥  
सुमुद्भूतं खल्यमभ्ये चित्रमूलस्य च द्वैः ।  
चतुर्षामञ्च सम्मर्षं छायाशुष्कञ्च कारयेत् ॥ २२८९ ॥  
कुक्कुटीपुटपाकेन स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ।  
इदञ्च धृणितं शृङ्गणं तदर्थं सूतमस्मकम् ॥ २२९० ॥  
सूतसुख्यं सूत्रं तदर्थं सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ।  
चित्रकार्द्वकनीरेण निर्गुण्डीवारणीद्रवे ॥ २२९१ ॥  
वासाजम्बीरनीरेण सप्त भाव्यं पृथक्पृथक् ।  
गुञ्जामानप्रयोगेण कणामध्वाज्यसंयुतम् ॥ २२९२ ॥  
सुप्तवात वातशूलं वेदनावातमेव च ।  
स्नायुकर्षं गान्मर्द्धं पक्षाघातं हनुग्रहम् ॥ २२९३ ॥  
वायुं भृच्छोञ्च तिमिरं वातशीतञ्च नाशयेत् ।  
वन्ध्या च लभते गर्भं नष्टवीर्यं प्रशस्यते ॥ २२९४ ॥  
वातान्तकरसो नास्ति सर्वयोगिनिराकृत् ।  
लोकानामुपकारार्थमभ्यिदेवयिनिर्मितः ॥ २२९५ ॥  
१ रा, वै चि, नेष्टिद्वये ।

भाषा—सुवर्ण, ताम्र, कान्त, लोह, अन्नक, पारद, वैक्रान्त, प्रवाल, रजत, हरिताल इनकीभस्मों और शुद्ध गन्धक सब समभाग लेकर अच्छेमुद्भूतमें खल्वे डालकर चित्रमूलके-

कावेसे ४ पहर मर्दनकर गोलाबनाय छायाशुष्ककर शरावसमुदमें बन्दकर धुनकुटपुडकी आवरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इससे आषी पारद और ताम्रभस्म मिलाकर चित्रक, अदरक, निर्गुण्डी, श्रृङ्गायण, अङ्गुषा और धम्रीरी इनप्रत्येकके-रसोंसे ७-७ भावनाएँ देकर १-१ रत्तीकी मोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पीपल और मधुकेसाथ देनेसे सुप्तवात, वातशूल, आघातवात, स्नायुकर्ष, गान्मर्द्ध, पक्षाघात, हनुग्रह, वायु, भृच्छा, तिमिर, वातशीत, वन्ध्यात्व, नष्टशुक्रत्व इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४७६ ॥

### ४७७ वातारिपाकः ( मधुस्नेही )

तालौसं त्रिकटुत्रिजातरुवरा जातीफलं केशरं,  
भृङ्गं केदयमुशीरजीरकयुतं दीप्यद्वयं ग्रन्थिकम् ।  
राक्षावाहिकचोरेकं करिकणा द्राक्षा तुगा चन्दनं,  
कङ्गोलाऽप्यसुगन्धियष्टिधनिरुः खर्जूरमांसी वरी ॥  
वापही हयगन्धगोष्ठुरफलं मोचेधुरं मर्कटी-  
वीजं कुङ्कुमजातिपत्रकमन्दाः कर्पप्रमाणाः पृथक् ।  
सम्यक्कशोधितगन्धकं दशपलं सर्वस्य तुल्यो मधु-  
स्नेहो स्याद्वदोत्थितं शुभरसं कर्पत्रयं योजयेत् २२९७  
एकीकृत्य शुभं सिताऽऽज्यमधुना सेव्यं क्षिकर्षोन्मितं,  
कर्पं वा यदि वाऽर्द्धकर्पसमितं पट्टेयैलाऽयासये ।  
वाताशीतिनिवर्हणं कफमरुतिपक्षाघातं यस्माजिह्,  
दुष्टं ग्रन्थिमगान्दरज्वरहर्तुं कान्तिप्रदं पुष्टिम ॥ २२९८ ॥  
मेहान्धिशतिमोपर्वशसकलानुद्विग्नप्रणीम्नलनं,  
लूतास्फोटयिसर्पकञ्च सरुलात्तं वृष्टादिवोगाजयेत् ॥  
रसायनसं, वातरोगे ।

भाषा—तालीवपन, त्रिकटु, त्रिजात, त्रिफला, जायफल, नागकेशर, भगरा, कालाभंगरा, खस, जीरा, दोनों अजवाइन, पिप्पलमूल, राक्षा, चित्रकमूल अपना खरजवाइन, चोरेक ? गजपीपल, शङ्ख, वसलोचन, सपेचकन्द, शीतलबीनी, नागर-सोषा, छड़ीला, मुलहठी, धनिवा, खजूर, जटामांसी, शतावर, वाताहीकन्द, अजगन्ध, चोखल, भोत्परास, तालमजाना, कैवा चकेबीज, केशर, जाविनी, कस्तूरी, गजमद और मार्जारमद १-१ कर्प, शुद्धगन्धक १० पल, शुद्धपारा ३ कर्प लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेयन्धककी बीरवर्णकजलीमें मिलाय सबकी बराबर की और मधु मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे आधे कर्पसे १ कर्पतक अञ्जिल देखकर सकर, घी और मधुकेसाथ मिला कर खानेसे ८० प्रकारके वायुरोग, कफवातजन्यरोग, पित्त प्रकोप, राजयक्ष्म, दुष्टपाठ, भगन्दर, ज्वर, कान्तिका अभाव, कुष्ठता, २० प्रकारके प्रमेह, उपदंश, दुष्टग्रन्थ, मक्की, फोड़े, विषर्ष और कुष्ठ इनसबको यह दूरकरताहै ॥ ४७७ ॥

### ४७८ वातामपाकः

वाताममज्जः प्रस्थञ्च दुग्धे पाच्यञ्चतुर्गुणे ।  
पुनः प्रस्थपुटे पाच्यः शर्करादकयायकः ॥ २२९९ ॥

क्षेप्यानीमानि मात्राणि जाती जातीफलन्तया ।  
 ज्यूपणञ्च लघ्वङ्गञ्च चातुर्जातञ्च त्रैफलम् ॥ २३०० ॥  
 क्षीरकन्दं वत्सनाभमहिफेनं घनं हिमम् ।  
 मदनी कुङ्कुमं मांसी कञ्जोलमाकलुकम् ॥ २३०१ ॥  
 अग्निशोषं गोशुरञ्च शताह्वाकपिकच्छुक्लम् ।  
 अग्न्यगन्धा च मुशली मृतपारदमम्रकम् ॥ २३०२ ॥  
 वङ्गं लोहञ्च दरुदं कर्पूरं प्रदापयेत् ।  
 पुनर्भुङ्गाधृतं क्षेप्यं कुडयं तद्विचक्षणैः ॥ २३०३ ॥  
 खादेत्कर्पप्रमाणञ्च घनं दुग्धं पिवेदनु ।  
 धातुपुष्टिकरं रस्यं वर्णाऽऽयुःकान्तिवर्धनम् ॥ २३०४ ॥  
 बृद्धो युवायते कामी स्त्रीणाञ्चाऽतीव बल्लभः ।  
 वातरोगानशेषास्तु नाशयेद्याऽत्र संशयः ॥ २३०५ ॥  
 पण्डोऽपि रमते नारीं शुटिकायाः प्रभावतः ।  
 किंपुनश्चाऽन्यरोगेषु चारणेष्वत्र संशयः ॥ २३०६ ॥

चि. र. म. रसायने वाजीकरणे च ।

भाषा—श्लेकैरहितं वादमाजीगिरी १ प्रत्यलेकरं चोद्युने  
 दूधमे पकावे । माषाहोनेपर सेरभर धी और ४ सेर धावर डाल-  
 कर वादनीकरे । पाक तैयारहोनेपर जाविनी, जायफल, त्रिफळ,  
 खड्ग, चातुर्जात, त्रिफला, क्षीरकाकोली और विदारी, शुद्ध  
 बडनाग, अफीम और कपूर, सफेदचन्दन, कस्तूरी, केसर,  
 जटामासी, शीतलचीनी, अकलङ्गा, समुद्रशोष, गोखरू, सौंफ,  
 केदाचकेबीज, असगन्ध, मुशली, पारद, अम्रक, वङ्ग और  
 लोहमस, शुद्धशिरिष ये सब १-१ कप, धीमे सिनीहुई भाग  
 ४ फल लेकर सबकायारीकपूर्णकर पाकमें मिलाकर रखछोड़े ।  
 इसमेंसे १-१ कप खाकर ऊपरये अव्यौटा दूधपीनेसे धातुओंकी  
 पुष्टिशेकर बल, वर्ण, आयु, कान्ति येसब बढ़तेहैं । बृद्धा आद-  
 मीनी जियोंमें जवानकीतरह रमणकरताहै । समस्तवातरोग,  
 पण्डित और मन्दाग्नि इत्यादि समस्तरोगोंको यह दूरकरताहै ॥

४७९ वातारिसः ( प्रथमः )

उपायैः पूर्णमाख्याते यैश्च डैमरकादिभिः ।  
 येनकेनाऽप्युपायेन भस्मीकुयाञ्च पारदम् ॥ २३०७ ॥  
 भस्मनो दश गद्याणा दशैव नयसारकात् ।  
 स्फटिका पञ्च गद्याणा वत्सनामस्य द्वौ भवतौ ॥ २३०८ ॥  
 मरिचस्य च गद्याणी मर्दयेत्पल्वके दृढम् ।  
 विधिना जायतेऽनेन रसो वातारिसञ्ज्ञकः ॥ २३०९ ॥  
 रक्त्विजाऽस्य प्रदातव्या श्लेष्मवातादिरोगिषु ।  
 अष्टादशप्रमेहेषु ग्रीहगुल्मोदरेषु च ॥ २३१० ॥  
 आमवाते च मन्दाग्नी शुल्भयो वातरक्तयोः ।  
 बाह्याऽभ्यन्तरमूलेषु समस्तेषु ज्वरेषु च ॥ २३११ ॥  
 शूलेऽप्यजीर्णं शोथे च देयो वातारिसञ्ज्ञकः ।  
 दिनाक्षराऽम्लवर्षञ्च मोज्यं मधुरमिष्यते ॥ २३१२ ॥  
 दिनार्धकं घृतं स्तोत्रं भोजने ग्राह्यमुत्तमम् ।  
 रोगाः सर्वे विलीयन्ते मासिकेन न संशयः ॥ २३१३ ॥  
 रसजि, वातरोगाधिकारे ।

भाषा—पारदमस और शुद्धनवसादर ५-५ तोले, मुनी  
 फिट्फट्टी २॥ तोले, शुद्ध बडनाग और मरिच १-१ तोला  
 लेकर बारीकचूर्णकर एकदोदिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे  
 १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचिनानुपातानुसार देनेसे वात  
 और कफरोग, १८ प्रकारके प्रमेह, प्लीहा, गुल्म, उदर, आम-  
 वात, मन्दाग्नि, वातरक्त, सप्रकारके ज्वर, शूल, अजीर्ण और  
 शोथ इनसबको यह नष्टकरताहै । इसके प्रयोगमें तैल, क्षार और  
 अम्लवर्जितहै । मधुरभोजन कराना और ८ दिनकर धी धोडा  
 देना फिर धीरे २ बडना । इसके एकमहीना सेवनसे समस्त  
 रोग नष्टहोतेहैं ॥ ४७९ ॥

४८० वातारिसः ( द्वितीयः )

शिलया निहतं नागं ताप्यमस्माऽर्द्धभागिकम् ।  
 पात्रं पादं क्षिपेद्भस्म शुल्बस्य विमलस्य च ॥ २३१४ ॥  
 कालाऽम्रसत्त्वयोश्चाऽपि स्फटिकस्य पृथक्पृथक् ।  
 सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य पुटेतिथिफलचारिणा ॥ २३१५ ॥  
 त्रिशद्वनोपलैरेव त्रिशद्वारा निचूर्णयेत् ।  
 व्योषवेल्हकचूर्णैश्च समांशैः सहमेलेयेत् ॥ २३१६ ॥  
 मध्याज्यसहितं हन्ति प्रलीढं बल्लमाश्रया ।  
 अशीर्तिं वातजाश्रोगान् धनुर्वातं विशेषतः ॥ २३१७ ॥  
 कफरोगानशेषाञ्च सूत्ररोगाञ्च सर्वशः ।  
 श्वासं कासं श्वसं पाण्डुं श्वयथुं सूतिकाज्वरम् ॥ २३१८ ॥  
 प्रहणीमामदोपञ्च बहिर्माणं सुबुज्ययम् ।  
 सर्वाण्यकदोपाञ्च नाशयेदनुपाततः ॥ २३१९ ॥

२. क., वातरोगाधिकारे ।

भाषा—मैनसिलकेयोगसेकीहुईनागमस ४ भाग, स्वर्ण-  
 माक्षिकमस २ भा., ताप, रजतमाक्षिक, काले तथा सफेद  
 अम्रककासब और स्फटिकमस १-१ भागलेकर त्रिफलाके-  
 रससे एकदिन मर्दनकर योलाबनाय धाराबसमुद्रमें बन्दकर ३०  
 जल्लीकण्डोंकी आचदे । ऐसे ३० आचदे देनेकेबाद त्रिफळ,  
 विडङ्ग समभागचूर्ण पूर्वरेखी बराबर मिलाय रखछोड़े । इस-  
 मेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा मधु और पीनेसाय लेनेसे ८० प्रकारके  
 वातरोग, खासकर धनुर्वात, कफ और सूत्रकेतमामरोग, श्वास,  
 कास, श्वस, पाण्डु, शोथ, सूतिकाज्वर, प्रहणी, आमरोग, दुर्बल  
 मन्दाग्नि, समस्त जलरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४८० ॥

४८१ वातारिसः ( तृतीयः )

गन्धकादिशुणं तालं तालनाहिगुणा शिला ।  
 शिलया द्विगुणं ताप्यं तस्माच्च द्विगुणो रसः ॥ २३२० ॥  
 कल्पयेत्सर्वमेकत्र यावत्स्यादिनसप्तकम् ।  
 सर्वस्याऽष्टमभागेन दत्त्वा रकामृतं शुभम् ॥ २३२१ ॥  
 विषतिन्दुकजद्रावैः पिब्या गोलकमाचरेत् ।  
 विशोष्य चालुकायन्त्रे तद्धर्मं दिवसद्वयम् ॥ २३२२ ॥  
 स्वाङ्गशीतलमुद्बुल्य तुल्यदिङ्म्वष्टकान्वितम् ।  
 भावयेद्दीजघ्नस्य सप्तवारं रसेन च ॥ २३२३ ॥

सप्तवारं तथा भाव्यं चित्रमूलस्य वारिणा ।  
इति सिद्धो रसेन्द्रोऽयं सर्वयातारिसञ्ज्ञकः ॥२३२४॥  
घृतेन सहितो लोढो घटद्वयमितो नृभिः ।  
निहन्ति शीतयातारिं गुल्मानप्रविधानपि ॥२३२५॥  
चतुर्विधञ्च मन्दाग्निं स्थूलानुदृजान् निमीन् ।  
आभानञ्च तथा हिक्कां मूढवातञ्च विद्वहम् ॥२३२६॥  
र क, यो. रसायन, र सु, र. च, वातोमाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक १ भाग, इस्तिाल, २ भा., शुद्धमैन  
सिल ४ भा, शुद्धस्वर्गमाक्षिक ८ भा, शुद्धपारा १६ भाग  
लेकर सबको ७ दिनतक मर्दनकर सबसे आठवाहिस्सा छल-  
वछनाग देवर कुचिलेके रससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय  
मुखाकर धारावसम्पुटमें बन्दकर २-३ कपड़मिठी देकर सूख-  
नेपर दोदिनतक बालुकायत्रमें पकावे । स्वाज्ञशीतल होनेपर  
निकालकर इसकी धरावर द्विगटकमिलाकर विजोरा और चित्र  
कमूलकेसोंकी ७-७ भाषनाए देकर ६-६ रस्तीकी गोल्यां  
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अवया रोगो  
विताग्रपानकेसाथ देनेसे शीतजात, ८ प्रकारके शुल्म, ४ प्रकार  
की मन्दाग्नि, पेठके मोटे किमि, आभ्मान, हिक्का, मूढवात,  
मलसद्गह इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४८१ ॥

### ४८२ वातोमूलनरसः

शुद्धं स्तुतं विषं गन्धं धूर्तवीजं त्रिभिः समम् ।  
पञ्चकोलरुपायेण मर्दयेद्विषसङ्घयम् ॥२३२७॥  
मृपयोर्ध्वरे पाच्यं स्वाज्ञशीतं चिचूर्णयेत् ।  
मत्स्यपित्तं मारयेच्च मर्दयेद्विषसङ्घयम् ॥२३२८॥  
पञ्चकोलरुपायेण गुञ्जामानं प्रदापयेत् ।  
स्थानवातं हरेच्छीघ्रं सर्वयातविकारञ्च ॥२३२९॥  
ब रा, वै. वि, स्थानवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग और गन्धक समभाग, शुद्ध  
धतूरेकेबीज सबकी धरावर लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी  
नीलवर्णवज्जलीमें मिलाय पञ्चकोलकेसाथसे मर्दनकर मृपामेंरख  
मृपयत्रमें पकावे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर मछलीके  
पित्तसे दोदिन मर्दनकर १-१ रस्तीकी गोल्यां बनाकर रख  
छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पञ्चकोलकेकाडेसे देनेसे स्थान-  
वातादि समस्तवातविकारोंकी यह नष्टकरताहै ॥ ४८२ ॥

### ४८३ वानरीपाकः

प्रस्थ निस्तुपमर्कटीमवरजो दौघेऽर्मणे पाचयेत्,  
यावज्जीर्यते मन्दबह्निविधिना मिष्टाऽऽदकं निक्षिपेत् ।  
पश्चात्प्रस्थघृते विपाच्य सुधिया शीते त्विमानि क्षिपेत्,  
कर्षीशाऽगुरुपूगजीरणचतुर्जातं हिमं हंसकम् ॥२३३०॥  
जातीपत्रफले धृष्टिप्रिकटुकं चन्द्राभिश्च शोषं वणिक्,  
कट्फले कट्हाटकेतवविषं गोक्षरतालीसकम् ।  
पादांशं खुरशाणिकञ्च गगनं वदं सुजङ्गं जया,  
पालिपथं त्रिपलं मधुस्थितशुभं मञ्जुहृतं वृंहणम् ॥  
र, को, रसायने ।

भाषा—एकप्रस्थ केवाचहीमजाको एकद्रोणदूधमें मन्द  
आचर चलाताहुआ पकावे । मावाहोनेपर ४ प्रस्थ शकर और  
एकप्रस्थ घी डालकर चासनीकरे । पाततैयार होनेपर नीचे  
उतारकर अमर, सुपारी, जीरा, चानुजात, सफेदचन्दन, शुद्ध-  
शिगरिक, जावित्री, बायफल, इलायची, त्रिकटु, शुद्धकपूर,  
समुद्रशोष, गेंहुल, शीतलीनी, अरुकरा, शुद्धधतूरेकेबीज  
और वज्जनाग, गोखरु, तालीसपत्र येसत्र १-१ कर्षी, खुरासानी  
अजवाइन, अम्रक, वज्र और नामभस्म ४-४ मासे, धोईहुई  
भाग १ पल, मधु ३ पल मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ४  
मासेसे १ कर्पटक खाकर दूधपीनेसे समस्तशुक्रदोष नष्टकर  
पूर्णपुरुषत्वको प्राप्तहोताहै ॥ ४८३ ॥

### ४८४ वान्तिहृद्रसः

अयः शङ्खं घली स्तुतं खल्वे तुल्यं विमर्दितम् ।  
कन्याकरुन्वाह्रेरीरसे गांलं विधीयताम् ॥२३३२॥  
सप्तमृकपर्पटीलिप्त्वा पुष्टितो वान्तिहृद्रसः ।  
द्विचलः किमिरोगेऽपि साजमोदः सवेह्लकः ॥२३३३॥  
वान्तिहारेण मुनिना प्रोक्तोऽयं मधुना पुत ।  
पिप्पलशारपानीयं पाययेद्धान्तिहृद्रसः ॥२३३४॥

र ल., यो. र, नि र., र सु, रसायनस., र च., र मा.,  
वा वि., र का, वान्तिरोगे । र. वा. वान्तिहृद्र इति नाम ।

भाषा—लोह और शङ्खभस्म, शुद्ध गन्धक और पारा  
समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर पींडुवार, पट्टा और अम्लो-  
नियारेसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय धारावसम्पुटमें  
बन्दकर ६-७ कपड़मिठी देकर सूखनेपर लघुपट्टकी आवेदे ।  
स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ६-६ रस्तीकी  
मात्रा अयमोद और विशङ्ककेसाथ मिलाकर मधुकेसाथ चढानेसे  
तमामप्रकारकीबमन शान्तहोतीहै । व्यास लगनेपर पीपलकी  
राखका पानी पिलावे ॥ ४८४ ॥

### ४८५ वाराहीलोहम्

वाराहिकाधुङ्गरस्सं लोहचूर्णं शताघटी ।  
साज्यं कर्पं पञ्चशती ॥२३३५॥

आ पु, रसायने ।

भाषा—वाराहीवन्द, भगरा, पारद और लोहभस्म, शता-  
घर येसव समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१  
कर्ष धीवैसाग खावे और पाचनहोनेपर दूधभातका सेवनकरे ।  
ऐसे एकवर्षके प्रयोगसे ५०० वर्षकी आयुको भोगसकताहै ४८५

### ४८६ वारिनिगडगुटिका

पेशानी विल्वपेशी च जातीपत्रफले तथा ।  
विषा मोचरसो मुस्ता शुण्ठी सामुद्रशोषकम् २३३६  
कनकस्य च बीजानि करवीरजटा तथा ।  
अहिफेनं गन्धरसी धूर्तद्रावेण मर्दयेत् ॥२३३७॥

द्विगुञ्जा गुटिका दध्ना गुड्यम्बुनिगडाह्वया ।

जयेत्सर्वानतीसारान्नाभिपार्श्वे विलेपतः ॥ २३३८ ॥

र. का. , अतीसारोऽधिकारे ।

**भाषा**—ईशानकोणमें रहनेवाले बेलडीगिरी, जाबिबी, जायफल, अतीस, मोचरस, नागरमोचा, सोंठ, समुद्रशोष, शुद्ध धतूरेवेगोज, सफेदकेरवीजङ्गीछाल, शुद्ध अफीम, गन्धक और पाप समभाग लेकर घारीकचूणकर पारेगन्धककी नीलवर्ण-कवलीमें मिलाय धतूरेवरसे एरदिनमर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली दहीवेसाय रिलानेसे और नाभिके बगलमें लेफरनेसे यह सरप्रकारके अतीसारोंको नष्टकरती है ॥ ४८६ ॥

### ४८७ चारिशोषणरसः

चतुर्विंशतिभागाः स्युर्गन्धाद्वद्धं तद्वर्द्धकम् ।

पञ्चभागाद्भवेद्वर्द्धः पारदः कृष्णमग्नकम् ॥ २३३९ ॥

चतुर्दशविभागं स्थान्मृतं तदीयते पुनः ।

मृतलीहमष्टभागं मृतताम्रं नयाऽत्र तत् ॥ २३४० ॥

मृतहमद्वयं तत्र मृतरौप्यञ्च सप्तकम् ।

अतिशुद्धमतिस्थूलं मृतं हीरं धनोदश ॥ २३४१ ॥

भाग्यं ब्राह्म्यं माक्षिकस्य विशुद्धस्याऽत्र पौडश ।

अष्टादशमितं ब्राह्मं नय काशीधकं पुनः ॥ २३४२ ॥

तुत्पकञ्च पडेयाऽत्र नवीनं ब्राह्ममेव च ।

तालकञ्च चतुर्भागं शिलाभागत्रयं मतम् ॥ २३४३ ॥

शैलेयं पञ्चभागं स्यात्सर्वमेकत्र नूतनम् ।

मृतमीलिकभागेकं सौभाग्यं भागयुग्मकम् ॥ २३४४ ॥

कुट्टयित्वा विचूर्णया जम्बीरस्य रसेन वै ।

भाययेत्सप्तधा गाढं गुटिका तस्य कारयेत् ॥ २३४५ ॥

पानकद्वितये हृत्या मुद्रयेत्पानकद्वयम् ।

घटमध्ये निवेद्याऽथ हृत्या पृथञ्च वालुकाम् ॥ २३४६ ॥

अर्द्धञ्च तां पुनर्दद्या वालुकामुद्रयेन्मुखम् ।

अहोरात्रं द्वादशीं स्याद्गर्दातं समुद्धरेत् ॥ २३४७ ॥

पट्टुलस्य च र्वाजेन कण्टकारीद्वयेन च ।

गुह्रचूर्णिकलायाप्य भाययेत्सप्तसप्तकम् ॥ २३४८ ॥

घृद्धास्तरसेनाऽपि तथा देयास्तु भायनाः ।

गिरिकर्णाय रसेनाऽपि मत्स्यपरेदितपित्ततः ॥ २३४९ ॥

एवं सिद्धो मयेत्सम्पत्सोऽसौ चारिशोषणः ।

देवान्गुन्ससम्पत्पर्यं यतिनां ध्यामणांस्तथा ॥ २३५० ॥

रक्तिकाद्वितयं देयं सप्रिपाते समुच्छिन्ने ।

मरिचेन रमं देयं तेन जागर्ति मानयः ॥ २३५१ ॥

श्रेष्ठिके च गदे देयं प्रहृष्यामग्निमान्यके ।

श्रीनि पाण्डो प्रयोजनं त्रिकुट्टिफलात्मसा ॥ २३५२ ॥

शूलरोगे प्रयोज्यमुद्रायामं विशेषतः ।

गुष्टे मुकुपे देयोऽयं कारादुग्मिकात्मसा ॥ २३५३ ॥

अतिबहिरः श्रीदो बलवर्णाश्विर्वर्धनः ।

धन्वन्तरिः सद्यो रसः परमदुर्लभः ॥

सर्वरोगे प्रयोज्यो निःसन्देहं मिषग्वरैः ॥ २३५४ ॥

उ. सं., र. वि. आ. वि., र. सु., रसवि., र. का., भै. र., यक्ष-  
दीहाधिकारे ।

**भाषा**—शुद्धगन्धक २४ भाग, वज्रमस १२ भा., पारद-  
मस ६ भा., अश्रकमस १४ भा., लोहमस ८ भा., ताम्र-  
मस ९ भा., सुवर्णमस २ भा., रौप्यमस ७ भा., अत्यन्त  
शुद्धबहेरीकीमस १३ भा., शुद्धमाक्षिक १६ भा., नयाकसीस  
१८ भा., तुल्य ६ भा., शुद्धहरिताल ४ भा., मैन्सिल ३ भा.,  
शिलाजतु ५ भा., मोतीमस १ भा., भुनामुहागा २ भाग लेकर  
सबकाघारीकचूणकर ७ दिन जमीरीवरसे निरन्तर मर्दनकर  
छोटीछोटीगोलियें बनाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ६-७  
कपड़मिथीदेकर सूखनेपर वालुकायन्त्रमें एर दिनरातकी  
अग्निदेवे । स्वाभ्रसीतलहोनेपर निरालकर मौलश्रीवेगीज,  
दोनोमटकटैया, गिलोय, त्रिफला इनकेस्वरसोंसे ७-७ भावनाएं  
देकर विषारा और कोयलकेस्वरस तथा रोहमछलीकेपित्तसे  
१-१ भावनादेकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली गुद, यति और ब्राह्मणोंका सत्कारकर  
उत्पत्तसमिपातमें मरिचेनयायदेवेसे मनुष्य तन्त्रासे उठैठताई ।  
इसीतरह कफरोग, प्रण्णी, मन्दाग्नि, गीहा, पाण्ड इनमें  
त्रिकुट्टेकलेसे देना । सुल, उदावर्त, दुष्टश इनमें कदमर-  
रसदेना । यह अत्यन्त अमि, बल और वर्णने करताई ।  
सबतरहके अष्टाध्यायोगोंमें इसनाभि सन्देहप्रयोगकरना ॥ ४८७ ॥

### ४८८ चारिसागररसः ( प्रथमः )

अतः परं प्रवक्ष्यामि रसेभ्यश्चरमनुत्तमम् ।

रोगापहं क्रियां चारिस्तगरं नाम नामतः ॥ २३५५ ॥

कृष्णाऽग्नकं समादाय वज्राण्यं बलवत्तरम् ।

एकपत्रं ततः कुर्वाद्रसे कार्पासपत्रजे ॥ २३५६ ॥

स्थापयेत्त्रिदिनं यावत्ततो धर्मं निधापयेत् ।

दिनमेकं रमैस्तेष्वं श्रीहिद्युतेष्वं पत्रके ॥ २३५७ ॥

निःक्षिप्य मुदं शिष्या पाटलीं मर्दयेत्करैः ।

तत्सर्वं चूर्णितं हन्वा प्रयाति च यथा वहिः ॥ २३५८ ॥

चूर्णितं निक्षिपेद्वं रसे कार्पासपत्रजे ।

मर्दयित्वा ततश्चणं तद्वसेः सम्पुटे क्षिपेत् ॥ २३५९ ॥

आरण्योत्पलकैः पद्मालुद्रान्येष्वं विंशतिः ।

व्याघ्राहसज्जानि मर्दनञ्च पुनः पुनः ॥ २३६० ॥

ऊनविंशे पुटं जाते व्योमं गच्छे यिनिःक्षिपेत् ।

मर्दयेत्कटुतेलेन ततः सम्पुटे क्षिपेत् ॥ २३६१ ॥

निरुद्ध्य सम्पुटं सम्यग् मुद्रा कर्पटयुतया ।

पुटयेदुपविंशतिं घागणि च यथाक्रमम् ॥ २३६२ ॥

ततो व्योमं समादाय रस्ये सम्पुटं यततः ।

कटुतेलेन तद् व्योमं हृदे माण्डे यिनिःक्षिपेत् ॥ २३६३ ॥

उपरिष्ठाप्युनर्दधात्कटुतैलं घनं यथा ।  
 अद्भुलद्रव्यमानेन ध्योमोपरि तथा भवेत् ॥ २३६४ ॥  
 भाण्डवन्नं सन्निरुद्धं पिधान्या कर्पटैर्मृदा ।  
 शुष्कमारोपयेच्चुल्यां काष्ठाग्निं ज्वालयेदधः ॥ २३६५ ॥  
 तावत्प्रज्वालयेदग्निं वायुमिस्तैलतां वजेत् ।  
 निस्तैलं गगनं कृत्वा कज्जलामं विचन्द्रिकम् ॥ २३६६ ॥  
 स्थापयेद्गन्धकं पश्चाद्गीरे कार्पासपत्रजे ।  
 ढालयेदेकवारं तु द्रावयित्वा ततो जले ॥ २३६७ ॥  
 सिन्धुवारभवे सप्त धारान् संढालयेद्बलिम् ।  
 पूर्वमार्गेण सूतेन्द्रं पातितं स्वधज्जारितम् ॥ २३६८ ॥  
 कलांशहेमजीर्णांर्कगुणगन्धरुभोजितम् ।  
 रसं गृहीतभारौकं पक्षभागञ्च गन्धकम् ॥ २३६९ ॥  
 युगभागञ्च गगनं जलवे सर्वं विनिःक्षिपेत् ।  
 मर्दयेत्सिन्धुवारोत्थं दिनमेकं रसेश्वरम् ॥ २३७० ॥  
 काफमाचीरसैस्तद्वत्कृष्णधतूरेवारिमिः ।  
 जयन्त्यद्रिस्तिलदलान्तरैर्दण्डोत्पलारसैः ॥ २३७१ ॥  
 जातीरसैः कदम्बोत्थैर्भृङ्गराजरसैस्ततः ।  
 अनलाग्निं मंहाराष्ट्रीनारैः पिप्पलिसूतजैः ॥ २३७२ ॥  
 क्रमेण मर्दयित्वैतैस्तत्कारकं गोलकं नयेत् ।  
 गोस्तनाकारमूपायां क्षिप्त्वा सम्यग्निरोधयेत् ॥ २३७३ ॥  
 मूपां विनिःक्षिपेच्च चालुकाण्ये ततः परम् ।  
 चालुकायत्रयद्वन्द्वं पिदध्याच्च शरावतः ॥ २३७४ ॥  
 सन्निरुद्धं समारोप्य चुल्यां संज्वालयेत्ततः ।  
 याममात्रं मध्ययर्हि स्वाह्मशीतलतां गतम् ॥ २३७५ ॥  
 क्षात्वा यत्र विनिर्मिद्य सूतमूपां समुदरेत् ।  
 मूपावन्नं विनिर्मिद्य गृहीद्याच्च रसेश्वरम् ॥ २३७६ ॥  
 पूजयित्वा रसेन्द्रं तं विन्यसेच्च करण्डके ।  
 सिद्धं रसेश्वरं पश्चाद्गोणिणे सम्प्रयोजयेत् ॥ २३७७ ॥  
 सन्निपाते महाघोरं चतुर्गुञ्जप्रमाणतः ।  
 अनलोद्भयचूर्णेन दद्यात्सस्याऽनुपानकम् ॥ २३७८ ॥  
 पट्नि पञ्च जीरे च त्रयः क्षाराश्च सार्द्रकाः ।  
 सव्योषाः सोम्रगन्धाश्च यवानांसहिताः समाः ॥ २३७९ ॥  
 प्रत्येकमेकतश्चर्णं कृत्वा वलेण गालितम् ।  
 चतुर्मासप्रमाणेन अनुपाने नियोजयेत् ॥ २३८० ॥  
 सन्निपातं निहन्येप रसेन्द्रस्तत्क्षणदधुवम् ।  
 अग्निमान्ये प्रयुञ्जीत ज्यरभेदेऽतिसारके ॥ २३८१ ॥  
 रोगराजे प्रतिद्राप्ये श्लेष्मव्याधौ च पीनसे ।  
 सङ्गहण्यां प्रयुञ्जीत निःशङ्कोऽप्य रसेश्वरम् ॥ २३८२ ॥  
 सर्वोषां ग्राहिहन्त्येव रसेन्द्रो नाऽप्य संशयः ।  
 गोक्षीरं गोघृतं गन्धं दधि तदं विवर्जयेत् ॥ २३८३ ॥  
 माहिषन्तु प्रयुञ्जीत पयस्तर्कं घृतं दधि ।  
 रसवीर्यविबृद्धिस्तु माहिषेणैव नाऽप्यथा ॥ २३८४ ॥  
 पश्चाच्च शालयः प्रोक्ता ग्रीहया मुद्रसंयुताः ।

गोधूममापसहिताः सेवनात्सर्वदा हिताः ॥

इत्यमुक्तक्रियोवारिसागरोऽयं रसेश्वरः ॥ २३८५ ॥

र. क. यो, र. चि, र. र, रसायनस, र. को, ध, यो. म, र  
 यु, र. का, सन्निपाते ।

टि०—र. चि, र. र, रसायनस, र. को, ध, यो. म, र. यु, र. का  
 एषुग्रन्थे रत्नाकरोपधनेमे च द्वितीयस्थाने भगवतीना विशेषविधान-  
 मत्वा भागविशेषज्ञाऽप्रवक्ष्य समभागेन द्रव्याणिनिजुम् रस  
 मन्पादितं यथा—

मुद्र गत दिपा गन्ध सन्तुल्य मूलाऽन्नकम् ।

निर्गुण्डी काष्ठाची च भृङ्गराद्रिकविजयम् ।

गिरिकर्णं तपनी च तिलपर्णी च भृङ्गराद् ।

दन्तीशिमुकदन्धस्य कुसुम नागकेशरम् ।

जवाकृष्णामहाराष्ट्रीद्वैरासा यमात्रमाद् ।

याम वृषविद्यौषाऽप्य कटुतैलेन भावयेत् ॥

शरावमप्युत्थं कृत्वा बाहुकायनग पथेत् ।

यामैक तत्पुनर्दृश्यं चूर्णितं कृष्णलेपम् ॥

न्यून पत्रलवण दिशार जीरकद्रवम् ।

बचाऽऽर्द्राऽग्निप्रमान्यश्च समभागानि कारयेत् ॥

अनुपाने चतुर्मास सन्निपातहार परम् ।

माहिष दधि पथ्य स्वाह्मसर्वैर्यविषयेनम् ॥

साध्याऽमाभ्येप्रयोजन्यो रतोऽयवारिसागरः । इति ॥

भाषा—हाले ब्रह्माश्रको गरमकर कपासकेपत्तोकेरसमें  
 मुद्रावे । अन्नका चुरा होजानेपर धूपमें १ दिनतक रखछोड़े ।  
 फिर छिलकेसहित घाल ढालकर बरतमें पोछी बनाय एकदिन  
 रखछोड़े । फिर धीरे २ इंचपोछीको रसमें मसाले । इससे  
 अन्नका बारीकचुरा होकर बरतसे बाहर निकल आयेगा पत्थर  
 और कोयले बरतमें रूखायगे । नितरजानेपर पानीको निकासदे  
 और अन्नको मुद्रावे फिर कपासके रससे २-३ दिन मर्दनकर  
 टिकड़ीबनाय मुद्राकर शरावमप्युद्रमें बन्दकर अजलीकपडोंमें  
 बराहपुटकी आचवे । स्वाह्मशीतलहोनेपर निकासकर पूर्ववत्  
 मर्दनकर पुटदे । ऐसे १९ पुटहोनेपर खलमें ढाल कड़वेतैलसे  
 मर्दनकर शरावमप्युद्रमें बन्दकर २-४ कपडिमिठी देकर सूखनेपर  
 बराहपुटकी १९ आचवे । स्वाह्मशीतलहोनेपर कटुतैलमें मर्दनकर  
 बड़े बरतमें ढालकर दो अद्भुल ऊपरतक तैलभरके शरावमप्युद्र-  
 कर ३-४ कपडिमिठी समस्तपर देकर सूखनेपर चूल्हेपर रख  
 लकड़ीकी आच जलावे । तमाम हण्डी भस्मिस्त होजानेपर  
 अग्नि बन्दकर । भाण्डस्थ वस्तुके पाककी यही पहिचानहै कि  
 बिना अन्दरमें पाकहुए हण्डी खाल नहीं होती । स्वाह्मशीतल  
 होनेपर तैलरहित निम्नद कवचकेसहा मसम निखलेगी । इसके  
 बाद गन्धकको गलाकर कपासके पत्तोंके रसमें मुद्रावे । स्वाह्म-  
 शीतल होनेपर निर्गुण्डीकेपत्तोंके रसमें ७ बार ढाले । फिर  
 गुग्गुलुजस्तंस्कार बिये हुए पोटमें १६ वां हिस्सा सुवर्णजाण-  
 कर बारहगुना गन्धक जाणकररे रखले । इसपोटमेंसे एकभाग,  
 शुद्धकियाहुआ गन्धक १५ भाग, पूर्वोक्त अन्नक ४ भाग लेकर  
 निर्गुण्डी, मधोय, कालाधतूरा, जैत, हुरहुर, मन्द्रगुडी, चमेली,  
 कदम्ब, भग्रा, चित्रक, मराठी, पिपलासूत, इनप्रत्येकके रसोंसे  
 १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय गोस्तनाकारमूपां रस मुद्र-



वन्दकर ६-७ कपड़मिठी ल्याकर सुखनेपर बाहुकायधर्म रप यत्रा सुंदरवन्दकर ३-४ कपड़मिठी देकर चूल्हेपर एकपहरकी मध्यम अग्नि दे । स्वाह्मशीतलहोनेपर निकालकर रसेश्वरकी पूजाकर शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ रत्तीकी मात्रा चित्रकमूलके चूर्णकेसाथ देकर, पाचोनमक, जीरा, तीनोंक्षार, अदरक, त्रिकटु, वच, अजवाइन इनसबको अलग २ पीस कपड़घानकर एकजगहमिलाय ४ मासेलेकर अनुपानमें देनेसे महाघोर सन्निपात एकक्षणमें नष्टहोता है । इसीतरह मन्दाग्नि, समस्तज्वर, अतिसार, रोगराज, प्रतिद्वयाय, श्लेष्मरोग, पीनस, सङ्ग्रहणी इनसबको यह नष्टकरता है । गायकादूध, घी, दही और छाछका निषेधकरे और भैंसकी सब चीजेंदे । भैंसके तमादिकसे रखके बीर्यकी वृद्धिहोती है । सपेद और लालचावल, मूंग, गेहू, उड़द येसब पच्यहोतेहैं ॥ ४८८ ॥

### ४८९ वारिसागररसः ( द्वितीयः )

विषा घलिः सिता तालं टङ्गुणं व्योषकं समम् ।  
जम्बीररससंयुक्तं मर्दयेत्त्रिदिनं भिषक् ॥ २३८६ ॥  
भापमात्रां वर्दी कुर्याच्छायाशुष्कां तु कारयेत् ।  
मुस्तापित्तवृण्डैर्युक्तं घातज्वरनिवारणम् ॥ २३८७ ॥  
जम्बीरशर्करायुक्तं पित्तज्वरविनाशनम् ।  
शुबेन मधुसंयुक्तं कासश्वासज्वरापहम् ॥ २३८८ ॥  
आर्द्रकस्य रसैर्युक्तं कुक्षिशूलनिवारणम् ।  
कुमारीरससंयुक्तं मेहदाहज्वरापहम् ॥  
मूवादिण्डरसैर्युक्तं सन्ततज्वरनाशनम् ॥ २३८९ ॥  
र क. यो , ज्वराधिकारे ।

भापा—अतीस, शुद्ध मन्थक, हरिताल और सुहागा, शक्कर, त्रिकटु येसब समभाग लेकर वारीकचूर्णकर अमीरीकेरससे ३ दिन मर्दनकर १-१ मासेकी गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली नागरमोया, केलगिरी और शुष्केसाथ देनेसे यह घातज्वरको नष्टकरता है । अमीरी और शक्करकेसाथ पित्तज्वर, शुद्ध और मधुकेसाथ कास, श्वास और साधारणज्वर, अदरककेसाथ कुक्षिशूल, पीडुमाकेरसकेसाथ प्रमेह और दाहज्वर, मूवादिण्डके रखसे सन्ततज्वरको यह नष्टकरता है ॥ ४८९ ॥

### ४९० वारिसागररसः ( तृतीयः )

सुतटङ्गुणविषाऽस्सुगन्धा-  
फेनकं मनशिलाऽम्लविमर्चम् ।  
भृषरं लघुपुटाद्विनिहन्ति  
सन्निपातमिति युञ्जसितायुक् ॥ २३९० ॥  
दुग्धार्धं तन्मिथं वा शिशिरञ्च जलं हितम् ।  
शीतोपचारैरन्येच्च रसोऽयं वारिसागरः ॥ २३९१ ॥  
र. शि , सन्निपाते ।

भापा—शुद्ध पारा, सुहागा और बध्नाग, चासमस्य, शुद्ध मन्थक, अमीम और मैनसिल समभाग लेकर वारीकचूर्णकर

पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय जमीरी बर्गरहके रससे एकदिन मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ३-४ कपड़मिठी देकर मूषकयन्त्रमें लघुपुटकी आवचे । स्वाह्मशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती शक्करकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरता है । मूलजम्मेपर दूध, चावल अथवा छाछ, चावल देना । प्यास लगेनेपर ठंडाजलदेना और दाहमें शीतोपचार करना ॥ ४९० ॥

### ४९१ वारिसागररसः ( चतुर्थः )

शुद्धं सूतं विषं गन्धं मृताग्रं टङ्गुणं शिलाम् ।  
मुशलीं हयमाञ्च प्रत्येकञ्च विमर्दयेत् ॥ २३९२ ॥  
द्विगुणं महायेधित्वं श्लेष्मपित्तविसर्पनुत् ।  
दुरालभा पर्यटकं पटोलं कटुकीं तथा ।  
बिफला गुग्गुलुं तुल्यं कपायमनुपायेत् ॥ २३९३ ॥  
व रा. , वै. चि , विसर्पे ।

भापा—शुद्ध पारा, बध्नाग और गन्धक, अभ्रकमस्य, शुद्ध सुहागा और मैनसिल, मुशली, सफेदकनेरकी जड़कीछाल सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय मुशली और कनेरकी जड़के कटिसे मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली जपास, पित्तपापहा, परवल, कुटकी, त्रिफला और दूगल समभागके-कायकेसाथ देनेसे श्लेष्मरोग और पित्तविसर्प नष्टहोता है ॥ ४९१ ॥

### ४९२ वालकादिलोहम्

अम्युश्रेष्ठाकिमिषुधरीव्यूषणान्निजिजातं,  
लोहं खण्डं द्वयमपि समं चूर्णमाद्यैश्च युक्तम् ।  
सर्वान्मेहान्मधुघृतयुतं योजयेन्नापमात्रं,  
शोथं पाण्डुं हरति सज्जरं कामलं चामघातम् ॥ २३९४ ॥  
र. शि , प्रमेहाधिकारे ।

भापा—मुन्धबाला, गजपीपल, विडन, शतावर, त्रिकटु, चित्रकमूल, तज, पत्रज, इलायची येसब समभाग, लोहभस्म और शक्कर सबकोबराबर लेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा मधु और घृतनेसाथ देनेसे यह शोथ, पाण्डु, कामला, आमबात इनसबकोमटकर बुझावेको दूरकरता है ॥ ४९२ ॥

### ४९३ वासाखण्डायसम्

वासाखण्डाऽर्मणसस्मिन्तेन  
चूर्णं सितातुल्यमयःसमुत्थम् ।  
प्रस्थप्रमाणं कुड्योन्मिताज्ये  
पस्त्वा कटुणे चिनिधाय तस्मिन् ॥ २३९५ ॥  
त्रिजातःशुद्धपणुस्तथान्य-  
द्विजार्कैभ्यः पर्ययूयितेभ्यः ।  
पलं पलं द्रविकया विलोऽज्य  
शीतं युतं शोऽश्चतुष्पलेन ॥ २३९६ ॥  
लौटं जयेत्तत्पत्रलञ्च कासं  
पित्तं सरसः क्षयमशिलादम् ।

करोति पुष्टिं घृणुषुः प्रवृद्धिं

यत्नं परां कारितमनामयत्वम् ॥ २३९७ ॥

लो. ५ कासे ।

भाषा—एकदोष अहंसेपत्तोंके रसमें १-१ प्रत्यक्ष बाहर और लोहमस्य तथा ४ पल घी डालकर हलकी आलये पकावे । पन तैयारहोनेपर तब, पत्र, इत्यादी, त्रिकुट, नागसोया, घनिया, दोनोंजरी १-१ पल लेकर इनका वारीकचूर्ण डालकर ऋद्धीसे मिलावे । ठंडाहोनेपर ४ पल मधु मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-२ मांश लेनेसे प्रयत्नकास, रफपित्त, क्षय, मन्दाग्नि इनको यह नष्टकरता है । शरीरकी पुष्टि, वृद्धि, बल और कान्तिको बढ़ाकर सर्वदेके लिये आरोग्य देता है ॥ ४९३ ॥

४९४ विकरालवक्त्रभैरवरसः ( प्रथमः )

रसगन्धौ रक्षितैस्तिथिपाराचिभाषयेत् ।  
यामद्वादशं यद्दि वायुकायन्नसो मत्तः ॥ २३९८ ॥  
स्वाह्मशीतं समुद्रतुल्यं धर्माक्षरेण भाषयेत् ।  
द्यात्तुल्यं दध्मिन् ततश्च तिथिभाषना ॥ २३९९ ॥  
भाषना, स्तुब्ध कम्पिष्वयीजतैलेन चानलः ।  
यामपोडशकः सोर्यं विकरालास्यभैरवः ॥ २४०० ॥  
र. का, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धकवी नीलवर्णकजलीकर आक और सेहस्रकदूधसे १५-१५ दिन मर्दनकर ६-७ कपडमिट्टी दीर्घ आतशीशीशीमें डालकर सुहृन्मन्दर १२-१२ पहरकी बाउकामि देवे । स्वाह्मशीतलहोनेपर निकालकर कमीलेकेबीजोंके तैले १५ दिन मर्दनकर १६ पहरकी अग्निदेवे । इसमेंसे १-१ रतीशीमाना समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाय देनेसे तमाम-प्रकारकेज्वर, सन्निपात, वात और कफजन्यव्याधि, खासकर उदररोग और कुष्ठ इनसबको यह नष्टकरता है ॥ ४९४ ॥

४९५ विकरालवक्त्रभैरवरसः ( नित्योदितः ) २

अनुभागं सोममलं तालं दिनमितं तथा ।  
कन्याद्रिः पञ्च दश च भाषनाश्चिकित्साद्रवेः ॥ २४०१ ॥  
अथत्यक्त्यचमप्यस्यं पट्टयामं दाहयेत्ततः ।  
अरण्योपलकैः शीतमभ्यगन्धाम्बुयोजितः ॥ २४०२ ॥  
भाषयित्वा रसैस्तनु तालं कुष्ठहरं भवेत् ।  
नित्योदितोरसः सोऽत्र रसं राज्ञीमितं भजेत् ॥ २४०३ ॥  
र. का, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्धसोमल ६ भाग, शुद्धहरिताल ७ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पीकवार और नक्षत्रिकनीकेरसोंकी १५-१५ भावनाएँ देकर टिकड़ीबनाय पीपलीछालके चूर्णकेबीजमें रख शरावसम्पुष्टकर ६-७ कपडमिट्टीदेकर अजलीकण्डोंकी ६ पहरकी अग्निदेवे । स्वाह्मशीतलहोनेपर निकालकर अमगन्धकेरसे १-२ दिन मर्दनकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ राईके बराबर माना समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाय देनेसे तमामप्रकारके कुष्ठोंको यह नष्टकरता है ॥ ४९५ ॥

४९६ विकरालवक्त्रभैरवरसः ( तृतीयः )

तालं मुनिमितं सोमरसो घणै हिडिम्बिका ।  
सौभाग्यं विशागञ्च निर्विषस्य चतुर्दश ॥ २४०४ ॥  
तोरी चारमिता तद्वत्सोमलं तानि निक्षिपेत् ।  
कालसर्पमुखे धर्मं शोषयित्वा प्रयत्नतः ॥ २४०५ ॥  
विषमेकोनविंशंशमाकलं द्वादशांशकम् ।  
मरिचाद् द्विखिलवह्नात्कणा द्वादशांशमागिका ॥ २४०६ ॥  
सप्तांशा रजनी सर्वैश्चूर्णैः पोडशा पुटेत् ।  
सप्त त्रिपुटपुष्पस्य कृष्णधृतस्य च द्रवैः ॥ २४०७ ॥  
छायाशुष्का घटी कार्या रक्तिका सर्वरोगजित् ।  
योगिनीभिर्यं प्रोक्ता विकरालास्यभैरवः ॥ २४०८ ॥  
पेन्नाहिके द्वाहाहिके च ज्याहिके विषमज्वरे ।  
जीर्णज्वरे च तरुण आगन्तौ धातुजे ज्वरे ॥ २४०९ ॥  
उद्यास्तं गुटी क्षौद्रनिकटुत्रिफलायुता ।  
टङ्गोपणसमायुक्ता सप्तरात्रं घटी स्मृता ॥  
धूर्तवीजाऽर्ककरमयीलेः सन्निपातजित् ॥ २४१० ॥  
र. का, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्धहरिताल ७ भाग, शुद्ध गन्धनाग और मैनसिल ४-४ भाग, सुहागा २० भा, निर्विषी १४ भा, फिटकड़ी और सोमल ७-७ भाग लेकर १-२ दिन मर्दनकर काले-सापकेमुँदमें भरके सुखावे फिर सापका जहर १५ भा भाग, अरुलकरा १२ वा भाग, मिरच १ भाग, लौंग ३ भा, पीपल १२ भा, हल्दी सबसे ७ वा भाग लेकर सबका वारीकचूर्णकर त्रिपुट धूरे ( ७ वा ३ आवर्त जिसके फूलमें आतेहैं ) केरससे १६ पुट देकर १-१ रतीकी गोल्या बनाकर छायामें सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देनेसे यह सबस्तरोगोंको नष्टकरता है । साधारणतया मधु, त्रिकुट और त्रिफला अथवा सुहागा और मरिचकेसाय अथवा धतूरा, आक और अरुलकराकेबीजोंकेसाय देनेसे ऐकाहिक, द्वाहाहिक, ज्याहिक, विषम, जीर्ण, तरुण, आगन्तुक और धातुपक्ष सम्पूर्णज्वर सूर्योदयसे शामतक नष्टहोतेहैं । ७ दिनों सन्निपात निवृत्तहोता है ॥ ४९६ ॥

४९७ विक्रमकेसरीरसः

शुल्यमेकं द्विधा तारं मर्दयेद्विधिविद्विषक ।  
पञ्चाक्षिपं रसं गन्धं मेलयित्वा तु भाषयेत् ॥ २४११ ॥  
एकविंशतिवारंश्च लिम्पाकलकलद्रवैः ।  
रसः सिद्धः प्रदातव्यो शुद्धामात्रो ज्वरात्तद्धत ॥  
सर्वज्वरहृत् स्यातां रसो विक्रमकेसरी ॥ २४१२ ॥  
शे. र. र. शु. ज्वराधिकारे ।

भाषा—ताम्रमस १ भाग, रजतमस २ भागलेकर एक-पहरमर्दनकर शुद्धगन्धनाग, पारा और गन्धक १-१ भाग मिलाकर नीलवर्णकजलीकर अमिल्लासकी छालकेरससे २१ भावनाएँ देकर १-१ रतीकी गोल्या बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१

गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसायदेनेसे यह समस्त-  
ज्वरोंको दूरकरताहै ॥ ४९७ ॥

### ४९८ विचित्रवीर्यरसः

रसं गन्धं विपं तुल्यं माक्षिकञ्च मनःशिला ।  
बोलतालकगुल्यञ्च मुण्डं द्रवमेव च ॥ २४१३ ॥  
हैमरौप्यजम्बूमाऽपि वाराट् भस्म तुल्यकम् ।  
कटुत्रयं चित्रकञ्च निर्गुण्डोमूलसम्भवम् ॥ २४१४ ॥  
नेपालं पिप्पलीमूलं सौभाग्यं करहाटकम् ।  
मात्स्यमाहिपमायूरच्छागवाराहिकैस्तथा ॥ २४१५ ॥  
अम्येषां विधिभिः पित्तैर् मर्दयित्वा भिषग्वरः ।  
छायाशुष्का घटीः कृत्वा काचकूप्यां विनिःक्षिपेत् ॥  
निरुद्धं बालुकायत्रे प्रहराऽर्द्धं पचेल्लघु ।  
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य तत्तद्रोगानुपानतः ॥  
शीघ्रं प्रशमयेत्तांश्च चित्रप्रत्ययकारकः ॥ २४१७ ॥  
र. क. यो., सतिपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, बछनाग, सोनामाखी, मैनसिल,  
सुरमाखी, हरिताल, तीम और मुण्डभस्म, शुद्धशिगरिफ,  
सुवर्ण-रजत और कौडीभस्म, निकट, चित्रक, निर्गुण्डोमूल,  
शुद्धजलागोदा, पिपलामूल, सुनासुहागा, अकलरवा सप्तसमभाग-  
छेकर घाटीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय  
मछली, मेवा, मोर, बकरा, सूअर तथा इन्हींके सदा अन्य-  
जानवरोंके पित्तोंसे १-१ दिन भावनादेकर १-१ रत्तीकी  
गोलिया बनाय छायाशुष्ककर काचकीशीशीमेंभर बालुकायन्त्रमें  
आधे पहरकी आचदे । स्वाङ्गशीतलोनेपर निकालकर रखोके ।  
इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसायदेनेसे  
यह सबप्रकारके ज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ ४९८ ॥

### ४९९ विजयचूडरसः

मर्दयेन्निम्बुकद्रवि रसं वज्रञ्च गन्धकम् ।  
सूपायां भूधरे पाकं कुप्याद्वासरपञ्चकम् ॥ २४१८ ॥  
तत्र गन्धं मृतं तात्रं सौवर्चलमथो क्षिपेत् ।  
गायत्रीतोषसंक्षिप्तं तात्रोदरविलेपितम् ॥ २४१९ ॥  
स्युज्जमाण्डोदरे दृष्ट्वा बालुकाग्निः प्रचुर्येत् ।  
दृष्ट्वा यामद्वयं पस्त्या प्रहण्यां घातुकज्वरे ॥ २४२० ॥  
गुल्महीहोदराऽष्टीलाऽपस्मारे भूचकृच्छ्रे ।  
परिणाममवे शूले क्षयादी सम्प्रयोजयेत् ॥  
वह्निं रोगानुपानेन रसस्य भिषजांवरः ॥ २४२१ ॥  
र. क., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, यज्ञभस्म और शुद्धगन्धक समभाग  
लेकर नीलवर्णकजलीकर नीबूनेरससे एकदिल मर्दनकर गोला-  
बनाय शरावसमुद्रमें बन्दकर सूखयन्त्रमें रखकर ५ दिनकी  
आचदे । स्वाङ्गशीतलोनेपर निकालकर शुद्धगन्धक, ताप-  
भस्म और सचल पूर्वसरसी बरार २ डालकर रौनेकाथमें  
पीसकर बरारके तापसमुद्रमें भीतर लेपदेकर हंजीमें समुद्रको

उल्टा रख सन्धिबन्दकरदे । फिर बालुभरके हंजीपर ढक्कन देकर  
३-४ घण्टामित्रीसे बन्दकर दोपहरकी तीक्ष्ण अग्निदे । स्वाङ्ग-  
शीतलोनेपर निकालकर तापसमुद्रमेंसे खुरचकर निकालले ।  
इसमेंसे ३-३ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाय देनेसे  
प्रहणी, घातुगतज्वर, गुल्म, हीहा, उदररोग, अश्लीला, अप-  
स्मारे, भूचकृच्छ्रे, परिणामचल, क्षयादिदुष्टव्याधि, इनसबको  
यह नष्टकरताहै ॥ ४९९ ॥

### ५०० विजयपर्पटीरसः ( प्रथमः )

गन्धनं क्षुद्रितं कृत्वा भाव्यं भृङ्गरसेन तु ।  
सप्तधा वा त्रिधा वाऽपि पञ्चाचकृन् विचूर्णयेत् २४२२  
चूर्णयित्वाऽऽयसे पात्रे कृत्वा वह्निगतं सुधीः ।  
दुतं भृङ्गरसे क्षिप्तं तत उज्ज्वल शोषयेत् ॥ २४२३ ॥  
तञ्च गन्धं पलञ्चैर् गन्धाऽर्द्धं शुद्धपादम् ।  
सूताऽर्द्धं भस्म रौप्यञ्च तदर्द्धं स्वर्णभस्मकम् ॥ २४२४ ॥  
तदर्द्धं मृतवैकान्तं मौक्तिकञ्च विनिःक्षिपेत् ।  
एकोक्त्य ततः सर्वं कुर्यात्पर्पटिकां शुभाम् ॥ २४२५ ॥  
लोहपात्रे समरसं मर्दितं कज्जलीकृतम् ।  
यद्राऽङ्गारयहिस्ये लोहपात्रे द्रवीकृते ॥ २४२६ ॥  
मयूरचन्द्रिकाकारं लिङ्गं वा यदि द्रवयेत् ।  
मृदो न सम्यग्भङ्गः स्थान्तये भङ्गश्च रौप्यवत् ॥ २४२७ ॥  
खरे लघुर्भवेद्भङ्गो रुक्तेः सूक्ष्मोऽरण्यचङ्घ्रिः ।  
मृदुमय्यो तथा खायौ खरस्याज्यो विपोषमः ॥ २४२८ ॥  
जराव्याधिशताऽऽकीर्णं विभवं दृष्ट्वा पुरा हरः ।  
चक्रार पर्पटीमेतां यथा नारायणोऽमृतम् ॥ २४२९ ॥  
आदौ शङ्करभयर्च्यं द्विजातीन्प्रणिपत्य च ।  
प्रभाते भक्षयेद्वा प्राप्रक्षिप्यसम्मिताम् ॥ २४३० ॥  
रक्तिकादिक्कमाद्वादि भस्या नैव दशोपरि ।  
आरोग्यदर्शने वायसावद्वास्ततः परम् ॥ २४३१ ॥  
अजीर्णं भोजनं नैव पर्यकालव्यतिक्रमः ।  
घृतसेन्धवधान्याकहिह्व जीरकनागरः ॥ २४३२ ॥  
शस्यते व्यञ्जनं सिद्धं पित्ते स्वाङ्गम्लमासिरुम् ।  
कृष्णमत्स्येन मुद्गेन मांसेन जाङ्गलेन च ॥ २४३३ ॥  
जाङ्गलेषु शशच्छायौ मत्स्ये रोहितमद्गुरो ।  
पटोलपत्रञ्च तथा कृष्णवार्ताकजाजिका ॥ २४३४ ॥  
सुत्विन्नपूनेस्ताम्बूले लभे कर्पूरसंयुतैः ।  
क्षुधाकाले व्यतिक्रान्ते यदि वायुः प्रकुप्यति ॥ २४३५ ॥  
हिन्निन्ननीति शिरःशूले विरेके वमथौ तथा ।  
तृष्णायाश्चाऽधिके पित्ते नारिकेलाम्बु निर्भयम् ॥ २४३६ ॥  
नारिकेलपत्रः पेयं द्विर्भस्यं क्षीरमेव च ।  
स्वप्ने शुक्लच्युतो चैव चम्पकं कदलीदलम् ॥ २४३७ ॥  
वर्ज्यं निम्बादिकं शाकं पाकाम्लं फाजिकं सुराम् ।  
कदलीफलपत्राऽङ्घ्रि त्रयुषाऽलानु फर्केटी ॥ २४३८ ॥

कूष्माण्डं कार्वेल्लञ्च व्यायामं जागरं निशि ।  
न पद्येत् सृष्टेद्वच्छेत्स्त्रियं जीवितुमिच्छति ॥२४३९॥  
यद्योपधे स्त्रियं गच्छेत्कर्तव्या तु प्रतिक्रिया ।  
दुर्धारां ग्रहणीं हन्ति दुःसाध्यां बहुवार्षिकीम् ॥२४४०॥  
आमशूलमतीसारं सामञ्जैव सुदारुणम् ।  
अतिसारं पडर्शांसि यक्ष्माणं सपरिग्रहम् ॥२४४१॥  
शोथञ्च कामलां पाण्डुं ग्रीहानञ्च जलोदरम् ।  
पक्षिशूलं चाऽम्बलपित्तं प्रमेहान्विषमज्वरान् ॥२४४२॥  
वातपित्तकफोत्थाञ्च ज्वरान् हन्ति सुदारुणान् ।  
जीर्णोऽपि पर्वटीं कुर्वन्वपुषा निर्मलः सुधीः ॥  
जीवेद्द्वर्षशतं श्रीमान्वलीपलितवर्जितः ॥२४४३॥

भै र, र सु, र सु ग्रहणीरोगाऽधिकारे ।

टि०—“रोगशान्त्यै प्रयोक्तव्यो गुग्गुद्विप्रमाणतः । कल्याणै  
त्रिफलायुक्ता मधुपेद्रसपर्वटीम् ॥ पञ्चफोलसमेपिता मधुसारसमन्विता ।  
हृन्वात्पण्डिका कीडा सन्निपाता हृत्कारणम् ॥ पिपली मधुमयुक्ता त्वि  
हृत्पण्डिका क्षयी । निष्ठुरयूष्मस्युक्ता हृन्वाद्या ग्रहणीग्रहम् ॥ नवकाष्ठ  
शुलोयोगात्साप्युत्तरो विनाशयेत् । रुद्धीनेन सत्युक्ता वातशूलनिवर्हणी ॥  
कन्यायूष्मण्मयुक्ता हन्ति वातज्वरं हि सा । दशमूलसमायुक्ता श्लेष्म  
रोगविनाशिनी ॥ लोमरापीयुता हन्ति तीक्षा पामा विचचिकान् ।  
महातक्तममायुक्ता हन्ति वद्रेणि हिमिकान् ॥ हृन्वात्पण्डिकाऽर्शांसि  
गवा मूत्राशुपानतः । शालाजुनवदाश्विना शाल्मलीशुनराजकौ ॥  
निम्बपत्राङ्गुलमुच्चै च शीतार्ण्यं कुण्डला तथा । निर्गुण्यशैव पत्राणि  
सामभागानि कारयेत् ॥ चूर्णयित्वा तत्वा लक्ष्मणमुपाने प्रयोजयेत् ।  
बुधरोगनिहृत्स्वर्षं प्रयुज्यात्पर्वटीरसम् ॥ एव पण्डिका युक्ता सर्वरोगाश्च  
नाशयेत् । पथ्यमत्र प्रयुज्यते यथादौचातुमारतः । शरणा नृत्तिकाराश्च  
विरुद्धमपि कारयेत् ॥” इति रसायने अनुपाने विषेपोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धान्यकका भारीकचूर्णकर भग्नरेकरसे ७ अथवा  
३ बार भावितकर चूर्णबनाय लोहेकेपात्रमें गलाकर भग्नरेकरसे  
गुणावे । यह शुद्धान्यक १ पल, शुद्धान्या २ कर्ष, रजतभस्म  
१ कर्ष, धुवर्गभस्म आधार्क्य, बैकान्तभस्म और मोती ४-४ भागे  
लेकर सघकी नीलवर्णकजलीकर पीपुतीहुईलोहेकी कवाहीमें  
गलाकर प्रथमसपर्वटीकीतरह तैयारकरे । फिर पर्वटीका भारीक  
चूर्णकर लोहेकेपात्रमें बैरेकेयोलोंपर गलाय दो कर्ष पारा  
मिलाकर उतारकर कजलीबनाकर रखदोहे । पर्वटीकापाक तीन  
तरहकाहोताहै । मयूरचन्द्रिकाकीतरह जिसमें रक्त दिखाईदे और  
तोड़नेसे अच्छीतरह न टूट वह शुष्णकहे । मायपाकमें जल्दी  
टूटजातीहै और चादीपीतरह चमकतीहै । सरपाकमें रंग लाल  
तथा रक्तहोताहै और बहुतजल्दी टूटतीहै । गुड तथा मध्य  
पाककासेवनकरे और शरको ज्वरकीतरह छोड़देवे । अच्छे  
तिथि-सुहृत् देखकर शहरका पूजनकर ब्राह्मणोंसे स्तुत्यकर  
सुषहमें २-२ रत्तीसे आरम्भकरे और प्रतिदिन १ रत्ती बढ़ावे ।  
१० रत्तीहोनेपर बढ़ीमात्रा स्थिर रखे ऊपर न बढ़े । जब  
व्याधिरहितहोजाय तब १-१ रत्तीका हाथकर बन्दकरदे ।  
अजीर्णमें भोजन और पच्यदालका लठ्ठन न करे । पी, संघा-  
नमक, धनियां, हींग, जीरा और सोंठ इनसे व्यञ्जन सिद्ध-  
करे । पित्तप्रकोपमें स्वादु, अम्ल, मधु, कालीमल्लकी, मूंग

और जागलमासका सेवनकरे । जात्रलोंमें खरगोश और बहरा  
थेबड़े, मछलियोंमें रोहू और मत्तूर, शाक्योंमें पटोलपत्र, काले-  
बेगन, तराई, फकीहुई गुपारी और कपूर लगादुआपान रावे ।  
भोजनका अतिकाल होनेसे यदि वायुका प्रकोपहो तो कानोंमें  
क्षिप्तिनी, शिर घूल, रेक्म, वगन और अधिक व्यासहोती ।  
इसमें पित्तकोशात्तकरनेकेलिये नारियलकाजल और दूधदे ।  
स्वप्नमें शुक्लस्त्वल्महोनेपर दूधपिलावे । चम्पा, कदलीदल,  
निम्बादिशाक, खटार्ई, काशी, मय, केलेकाफल-पत्ता और जड़,  
खीरे, कद, ककड़ी, कोंडला, कोला, व्यायाम, रात्रिजागरण,  
इनका निषेधकरे । अगर जीनेकी इच्छा हो तो छाँका स्पर्श  
तरुनी न करे । दैवसंयोगसे यदि औषधप्रयोगमें लीसहजोपाय  
तो उसका प्रतीकारकरे । इसप्रयोगसे पुरानी घोरप्रहणी, आम-  
शूल, जतिघार, ६ प्रकारके बवासीर, ज्वरद्वयुक्त यक्ष्मा, शोथ,  
कामला, पाण्डु, ग्रीहा, जलोदर, पक्षिशूल, अम्बलपित्त, प्रमेह,  
विषमज्वर, वात पित्त और कफप्रधानज्वर इनसबको यह नष्ट-  
करतीहै । जीर्णपुष्ट्य इसकासेवनकरे तो घलीपक्षितसे निष्ठुरहोकर  
पूरे १०० वर्षकी आयुको भोगताहै । साधारणतः २ रत्तीसे ३  
रत्तीतक त्रिफलाकेसाय सेवनकरनेसे कल्याणिद्धिहोतीहै । पञ्चकोल  
और मधुकेसाय घोरसन्निपात, पीपल और मधुकेसाय क्षय,  
मिसोट और त्रिकटुकेसायग्रहणी, गुग्गुलुकेसाय पाण्डु, एरण्ड-  
बीजोंसे वातशूल, पीडुवार और निष्ठुरमे वातज्वर, दशमूलके  
बायसे श्लेष्मरोग, बाकुचीसे मयकर पामा और विचचिका,  
मिलावेसे दूद और हिका, यामूनसे बवासीर नष्टहोताहै । सख्खा  
अजुन, बट, चित्रक, सेंमल, भंगरा, निम्बपत्राङ्ग, दोनों गोरख  
मुण्डी, पियावासा, गिलोय, निर्गुण्डीकेपत्रे सयसमभागवेचूर्णके-  
साय लेनेसे यह दुष्टोंको नष्टकरतीहै । इसतरह समय अथवा  
रोगोचितानुपानकेसाय देनेसे समस्तरोगोंको दूरकरतीहै ॥५००॥

### ५०१ विजयपर्वटी ( द्वितीया )

रसं घर्षं हेमतारं मौचिकं ताप्रमम्रकम् ।  
सर्वतुल्येन गन्धेन कुर्याद्विजयपर्वटीम् ॥२४४४॥  
दुर्धारां ग्रहणीं हन्ति दुःसाध्यां बहुवार्षिकीम् ।  
आमशूलमतीसारं चिरोत्थमतिदारुणम् ॥२४४५॥  
प्रजाहिकां पडर्शांसि यक्ष्माणं सपरिग्रहम् ।  
शोथञ्च कामलां पाण्डुं प्तीहगुल्मजलोदरम् ॥२४४६॥  
पक्षिशूलमल्लपित्तं वातरक्तं बर्मि भ्रमम् ।  
अष्टाद्राविधं बुधे प्रमेहान्विषमज्वरान् ॥२४४७॥  
चतुर्विधमजीर्णञ्च मन्दाग्निममरौचकम् ।  
जीर्णोऽपि पर्वटीं कुर्वन्वपुषा निर्मलः सुधीः ॥  
जीवेद्द्वर्षशतं श्रीमान्वलीपलितवर्जितः ॥२४४८॥  
प्रातः करोति सततं नियतं द्विगुणं,  
यस्तां स विन्दति कलां कुसुमायुधस्य ।  
आयुश्च दीर्घमनघं यपुषः स्थिरत्वं,  
हार्नि घलीपलितयोरनुत्तं थलञ्च ॥२४४९॥

जराव्याधिसमाकीर्णं विश्वं दृष्ट्वा पुरा हरः ।

चकार पर्यटीमतां यथा नारायणः सुधाम् ॥ २४५० ॥

भै र, वै क, र चं, र सु ग्रहणीरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा, हीरा, सुवर्ण, रजत, मोती, ताम्र और अत्रक इनकीमसे समभाग और शुद्धगन्धक सबहीबराबर लेकर नीलवर्णकजलीकर धौपुतीहुईकड़ाहीमें गलाकर गोबरपर रखे हुए केलेपत्रपर ढाकर दूसरे केलेकेपत्रसे ढककर गोबरसे दबादे । ठंडाहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्तीसे १० रत्तीतककीमात्रा बढ़ाकर अथवा २-२ रत्तीकी नियतमात्रा वेनेसे पुरानी दुःसाध्यग्रहणी, आमशूल, पुराना अतिघार, प्रवाहिका, ६ प्रकारके यवासीर, उपद्रवसहित यक्ष्मा, क्षोय, कामला, पाण्डु, हीहा, शुष्म, जलोदर, पक्षिशूल, अम्बुपित्त, वातरक्त, वमन, भ्रम, १८ वृष्ट, प्रमेह, विपमज्वर, ४ प्रकारका अजीर्ण, मन्दाग्नि, अरुचि इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ५०१ ॥

### ५०२ विजयप्रतापरसः

नीलं तुर्यं यत्सनाभं साऽश्मजं हरितालकम् ।

रत्न्याश्च रसैः पञ्चाद्वटं मुद्रमात्रकम् ॥ २४५१ ॥

विजयप्रतापनामाऽसौ सर्वरोगविनाशकः ।

संहरेद्ब्रह्मणीरोगं ज्वरमैकाहिकं हृत् ॥ २४५२ ॥

र हा, सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध नीलायोया, बछनाग, गन्धक और हरिताल समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर खवन्तीकेरससे ३-४ दिन मर्दनकर मुगबराबर गोलिये बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपाननेसाध देनेसे यह समस्त-रोगोंको दूरकरताहै । पातकर सङ्ग्रहणी और एकाहिकज्वरको नष्टकरताहै ॥ ५०२ ॥

### ५०३ विजयभैरवरसः ( विजयानन्द ) १

सततञ्जुनिर्मुक्तमूर्द्धशुक्लं रसेन्द्रकम् ।

मृत्कटाहान्तरे तन्तु स्थापयेद्य समप्रकम् ॥ २४५३ ॥

सुताहिगुणितं तालं द्रुम्पाण्ड्रवदोषितम् ।

दोलायन्नेन तैलादौ सप्तधा परिदोषितम् ॥ २४५४ ॥

दत्त्वाऽऽम्बाय द्रवेक्षिण्ठ्याः किञ्चिदाग्राभ्य युक्तिः ।

तपोहिगुणितं भस्म पलाशस्य परिक्षिपेत् ॥ २४५५ ॥

पुनर्हिण्डीद्रवेणैव सर्वमाग्राभ्य यत्नतः ।

खालसारकरसैर्मयः परिष्ठाव्य च पाकवित् ॥ २४५६ ॥

पचेद्बहिहो वैद्यः शालाऽङ्गारेण यत्नतः ।

चतुर्विंशतियामन्तु पन्त्वा शीतलतां नयेत् ॥ २४५७ ॥

अवतार्य काचपात्रे विधाय तदनन्तरम् ।

प्रयत्नेन कृतप्रायश्चित्तः शोधितदेहकः ॥ २४५८ ॥

सिताहरीतकीयुक्तं खादेत्प्रक्षिचतुष्टयम् ।

रक्तिकेकान्तमेणैव वर्द्धयेद्दिनसप्तकम् ॥ २४५९ ॥

मधूदकं पिवेद्याऽनु नारिकेलजलञ्च वा ।

जिह्मिनीसम्भवं क्षाधमथवा क्षौद्रनागरम् ॥ २४६० ॥

अभ्यङ्गं सुरमीतैलेः कुर्यात्ताम्रमूलचूर्णम् ।

पवनाऽनलसूर्याग्निप्रत्ययमांसदधीनि च ॥ २५११ ॥

शार्कं ककारपूर्वञ्च वर्जयेन्मतिमात्रम् ।

वातरक्तमाममिश्रमामञ्चाऽपि सुदारुणम् ॥ २४६२ ॥

सर्वकुष्ठञ्चाऽम्बुपित्तं विस्फोटञ्च मसुरिकाम् ।

विजयाभ्यो रसो नाम्ना हन्ति दोषानसुन्दरान् ॥ २४६३ ॥

र स, र चि, र सु, र च, कुष्ठअधिकारे ।

भाषा—सततञ्जुकीरहित शुद्धपारा १ भाग, कोंठेले रस कपूरहसे दोलायनमें शुद्धकियाहुआहरिताल २ भाग लेकर मिश्रीकी कड़ाहीमें रस कटसरीयाका रस दोनोंके इक्केलायक ढाकर दोनोंसे दूनी पलाशकीरास ढाले, ऊपरसे दूसरा कट सरीयाका थोड़ासा रस ढाले और बूलेपर चढाकर अग्निदेवे । जब कटसरीयाका रस सूखनेलेगे तब ताजेपोस्तकारस और आव-कादूध थोड़ा थोड़ा डारताजाय और नीचे सलुएकेकोयलोंकी आवदे । ऐसे २४ पहरकी आचदेनेकेबाद रस ढालना बन्दकर जिसमेंकि सभामरस जलकर सफेद रास होजाय । स्वाहाशीतल होनेपर धीरजसे ऊपरके मैलको खुदाकर नीचेसे पारद और हरि तालकीभस्मको निकालकर शीशीमें रखछोड़े । अच्छे तिथि, दिन और सुहृत्तमें प्रायश्चित्त और पञ्चक्रमसे देहको शुद्धकर इसमेंसे ४-४ रत्तीकीमात्रा शकर और होंकेसाध देकर मधुका शरवत अथवा नारियलकागुल अथवा जिह्मिनीकाजाय अथवा सोंठ और मधु अनुपानरूपसेदे । प्रतिदिन १-१ रत्ती सातदिन तक बढावे । चन्दनकेतैली मालिशकरावे । पान खानेकोदे । वायु, अग्नि, वृष, मछली, मांस, दही, ककारादिशाक इनको छोड़देवे । इसके सेवनसे आमयुक्त वातरक्त और भयकर आम वात, समस्तकुष्ठ, अम्बुपित्त, विस्फोटक, मसुरिका, रक्तप्रद येसब नष्टहोतेहैं ॥ ५०३ ॥

### ५०४ विजयभैरवरसः ( अमरसुन्दरी २ )

सुतकं गन्धकं लोहं विपं चित्रकमम्रकम् ।

विडङ्गं रेणुका मुस्ता द्राघिडीपनकेशरम् ॥ २४६४ ॥

कलत्रयं शिकटुकं शुल्बभस्म तथैव च ।

पतानि समभागानि द्विगुणो क्षीयते शुडः ॥ २४६५ ॥

कासे भ्रासे स्रये शुल्बे प्रमेहे विपमज्वरे ।

सुतायां ग्रहणीमान्ये शूले पाण्ड्यामये तथा ॥

हस्तपादादिरोगेषु शुटिकेयं प्रदास्यते ॥ २४६६ ॥

र. म, भै र, र चं, र सि, र चि, र स, वै क, यो म.,

रसायन, र का, र र, भै सा, र यो, र (मा.), घ, र स,

र सु, र क, व रा, र क यो, यो चि, नि र, चि र भ.,

र. पा, र क ल. कासाधिकारे ।

हिं—यो चि, नि र, र सु, चि र म, र क ल, र स म

एषु ग्रन्थेषु ताप्रस्थाने आवटक नियोज्य वाताऽधिकार अमरसुन्द

रीति नाम्ना स्वापिण्डोऽयं पाठ घ, र स, र सु, र क, व रा,

र स च एषु ग्रन्थेषु विजयवटीति नाम स्थानिम् अथ अत्रकथाने,

ग्रन्थिक नियोजितमिति विधेय र सु, नि र पन्तो द्वितीयस्थाने धमा-

दिश्वीति नाम प्रह्वयपितारथ । र स, र सु, र च, येपु द्विती-  
यस्थाने जयश्वीति नाम अथ अन्नकमलपुत्रानां स्थाने कलम-ग्रन्थि  
कन्यापत्नीजानि क्रमेण नियोजयन्तीति शिष्ये । र क यो, चन्द्रप्रभेति  
नाम । योगमहादेवे युवादां प्रह्वयमान्ये इत्यस्य स्थाने सनायां प्रह्वी  
मान्ये इति पाठान्तरम् । र स, नि र, र सु, र पा, र र स,  
र को, र यो, र च, र रा, र स, र क यो, वै पि, र क ल,  
ना वि, वा. एषु ग्रन्थेषु नीलकण्ठ इति नाम रत्नकरोत्पथयोगे द्विती-  
यस्थाने त्रिमूर्तिरिति नाम, वैष्णवितात्मनो द्वितीयस्थाने सनादिश्वीति  
नाम रत्नराजगुन्दरे पञ्चस्यैव रसस्य भगवान्त्वेन पञ्चसु स्थानेषु पाठः ।  
रसपञ्चांगी स्थानद्वये, रसमारमहद्वये स्थानत्रये, पञ्चतन्त्री स्थानद्वये,  
रसेन्द्रमारमहद्वये स्थानचतुष्टये, रसेन्द्रकल्पद्रुमे स्थानत्रये, निष्पण्डर  
स्नानरे स्थानचतुष्टये, बन्तराक्षीये स्थानत्रये, स्नानरौप्यवयोगे स्थान-  
त्रये, विश्वमारमामरये स्थानद्वये, रत्नराजगुन्दरे स्थानचतुष्टये,  
योगचिन्तामणौ स्थानद्वये पाठः । र म, भै र, र मि, र पि, वै  
क, यो म, रसायनस, र का, र र, भै सा, र मा, र र स,  
एषु ग्रन्थेषु कश्चिदेव स्थाने विजयभैरवनाम्ना पाठोऽस्ति, सर्वेष्वपि  
कन्यापञ्चपत्नी रत्नराजगुन्दरे रस्येव नानारथाने पाठवरणं न्यस्यति  
प्रत्येकारस्य बुद्धिराहित्यमिति सुप्रसि विभावनीयम् ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और बज्जनाग, लोह और  
अन्नकमल, चित्रकमूल, विरह, रेणुका (पद्मारीरण), नागर-  
मोषा, इलायची, पत्रक, नागकेसर, त्रिफला, त्रिफुट, ताम्रमलम,  
येषां समभागलेकर बारीकचूर्णकर परिरक्षणपद्धती नीलकण्ठकञ्जलीमें  
मिलाकर १-२ पहर शुष्कमर्दनकर हुनेगुहकी चारानी कन्या  
गुह मिलाकर ४ रती अथवा १ मासेकी मोलियें बना-  
कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोपशान्त  
पानकेसाथ देनेसे श्वास, कास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमम्बर,  
सूक्तिकारोग, प्रह्वी, मन्दाग्नि, घृल, पाण्डु और हस्तपादादिरोग  
इनमन्त्रको यह नष्टकरताहै ॥ ५०४ ॥

### ५०५ विजयभैरवरसः ( तृतीयः )

हरचर्यायै घत्सनामं यक्षं नागं मृताऽन्नकम् ।  
मर्दयेदितमेकञ्च कटुत्रितयजं रसे ॥ २४६७ ॥  
द्वियामं बालुकायन्त्रे पाचितं घञ्मूपया ।  
स्वाह्मशीतलमुक्ष्य शुनीपित्तेन भावयेत् ॥ २४६८ ॥  
घणमात्रं पिबेच्छाऽनु नारिकेलोदकेन च ।  
तत्क्षणेन चिन्त्येत्तु ह्यन्तकः सन्निपातकः ॥  
हृन्नापपथ्यं प्रदातव्यं रसो विजयभैरवः ॥ २४६९ ॥  
दे वि, भा, रसायनप, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और बज्जनाग, वज्र, नाग और अन्नक  
मल समभाग लेकर नीलवर्णकञ्जलीकर त्रिवृद्धैरससे एकदिन  
मर्दनकर घञ्मूपामें बन्दकर ३-४ कपडमिठीदेकर सूखनेपर  
बालुकायन्त्रमें रखकर दो पहरकी मन्द आँचदे । स्वाह्मशीतल  
होनेपर निकालकर कुत्तीके पित्तेकी एक भावना देकर चनेप्रमाण  
मोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली नारियलके  
जलकेसाथ देनेसे अन्तकसन्निपात तत्क्षण नष्टहोताहै । इसमें पथ्य  
इच्छानुसार देना ॥ ५०५ ॥

### ५०६ विजयभैरवरसः ( चतुर्थः )

रमं ताम्रं नीरक्षतारं नागयक्ष्णी तथैव च ।  
साधितं पूर्वयोगेन समं सर्वं विनिक्षिपेत् ॥ २४७० ॥  
सत्त्वाऽग्नौ तालकं सत्त्वं कुन्टीतुष्यदिह्मलम् ।  
द्विभागेन कृता होतुं सत्त्वं यन्त्रे विनिक्षिपेत् ॥ २४७१ ॥  
लाङ्गलीमेघनादथ कुमारी काकमाचिका ।  
व्याघ्री तथाद्रिः कमठी घृतकोऽप्यपचिक्षिणी ॥ २४७२ ॥  
स्नुहामिसुरदात्यथ सतथा सर्वमौषधेः ।  
पचेत्तद्गोलकं कृत्वा यज्जम्पासु मूधरे ॥ २४७३ ॥  
स्वाह्मशीतं ततो नीत्वा मेघनादेन भावयेत् ।  
मूधरेण तप्तं पक्वं तत्समं पारदं क्षिपेत् ॥ २४७४ ॥  
अष्टभागं सुतीक्ष्णञ्च पुनः पञ्च मूधरे ।  
मेघनादरसे भाज्यं रसेन्द्रः सिद्धतां प्रजेत् ॥ २४७५ ॥  
गुञ्जामात्रं रतं खादेदनुपानेन योजितम् ।  
समानममृतासत्त्वं मुशली शतपत्रिका ॥ २४७६ ॥  
गजकर्णध्वगन्धा च विद्वारी व्योपराजतम् ।  
गुग्गुलुञ्च शिलां शुद्धं पूर्वयोगविनिर्मितम् ॥ २४७७ ॥  
सिता समांशा सर्वेण मध्याज्याभ्यां लिहद्विदुः ।  
इच्छया सर्वमौषध्यामभयात्तनिकृन्तनम् ॥ २४७८ ॥  
रसयातं महावातं शोथं मन्दाग्निजं हरेत् ।  
शुद्धगुन्मी तथाऽग्नौ पाण्डुं कासं महोदरम् ॥ २४७९ ॥  
राजपश्माऽतिसारश्च प्रह्वीञ्च भगन्दरम् ।  
प्रमेहान्निशतिञ्चैव कृष्णाऽष्टादशकं तथा ॥ २४८० ॥  
घलीपलितनिर्मुक्तः सैधितः सज्जतां हरेत् ।  
ज्वरं शूलं तप्याऽभ्मानं सन्निपातांस्त्रयोदश ॥  
नाशयेच्छाऽथ सन्देहो रसो विजयभैरवः ॥ २४८१ ॥  
रसताम्र, सर्वरोगे ।

भाषा—पारा, तांबा, लोह, चादी, सीसा और वज्रमल  
१-१ भाग, अन्नक और हरितालसत्त्व, शुद्धमैसिल, सुतिया  
और शिंघारि २-२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर करिहारी,  
कटिवाली चौलाई, धौकुवार, मनोय, भञ्जदेवा, कोयल,  
कुचिल, बह्ता, धुईआंवला, सेहुण्ड, चित्रक, बन्दात इनके  
रसोंसे ७-७ दिन मर्दनकर गोलावनाय घञ्मूपामें बन्दकर  
२-४ कपडमिठी देकर सूखरपचकी आग्निदे । ऐसे प्रत्येकके  
रसोंमें मर्दनकर आग्निदेवे । स्वाह्मशीतल होनेपर निकालकर  
कटिवालीचौलाईमें मर्दनकर सूखरपचकी आँचदे । फिर इसकी  
बराबर शुद्धपारा और ८ भाग फोलादभस्म मिलाकर कटिवाली  
चौलाईकेरससे मर्दनकर सूखरपचकी आँचदे । स्वाह्मशीतलहोनेपर  
चौलाईकेरससे एकदिन मर्दनकर १-१ रतीकी मोलियां बना  
कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली बराबरके गिलोससत्त्वकेसाथ  
लेकर मुशली, गुलाबके फूल, हरितकण्ठलास, असगन्ध, विद्रा-  
रीकन्द, त्रिफल, रत्नभस्म, शुद्धमूल और मैसिल तय सम-  
भाग और शहर सक्की बराबर मिलाकर ३-३ मासे मधु और

धीकेसाय अनुपानमे लेवे, पथ्यमे इच्छामोजनकरे । इष्येमेवन्ते आमवात, रसवात, महावात, शोथ, मन्दाग्नि, श्लेहा, शुल्म, ववासीर, पाण्डु, खासी, महोदर, राजयक्ष्म, अतिसार, ग्रहणी, भगन्दर, २० प्रमेह, १८ शुष्ठ, बलीपलित, ज्वर, दूध, आध्मान, १३ सनिपात और बुझपा इनसबको यह नष्टकरताहै ॥

### ५०७ विजयरसः ( प्रथम )

रसस्यैकं पलं दद्यात् नागञ्च गन्धकं पलम् ।  
क्षारत्रयं पलं देयं लघुं पलपञ्चकम् ॥ २४८० ॥  
दशमूलजयाचूर्णं तद्वेषेण तु भावयेत् ।  
चित्रकस्य रसेनाऽथ भृङ्गराजरसेन तु ॥ २४८३ ॥  
शिथुमूलद्रव्यैश्चाऽपि ततो भाण्डे निरुद्धं च ।  
याममात्रं पचेद्भस्मी मध्येवाद्रव्यैः ॥  
ताम्बूलपत्रसंयुक्तं खादेन्मापयुग्मं सदा ॥ २४८४ ॥  
र स , अनीर्णम् ।

भाषा—शुद्धपारा, नागभस्म, शुद्धगन्धक, तीनोंक्षार, १-१ पल, लौंग, दशमूल और भाग ५-५ पल लेकर सरखा बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय दशमूल, भाग, चित्रक, भगरा, सहिजनकी जड़कीछाल इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वस्व अथवा ज्ञायोसे १-१ भावना देकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ३-४ कपड़मिदीदेकर मृषरयन्त्रमें एकपहरकी अग्निदेवे । स्वाश्रुतीतहोनेपर निकालकर अदरकके रससे १-२ दिन मर्दन कर २-२ मासकी गोलिए बनावर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानकेसाथदेनेसे अनीर्णजन्य तमामाविकारोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५०७ ॥

### ५०८ विजयरसः ( द्वितीय )

स्वल्पाग्निमान्युत्तर्यं कथ्यते विजयो रसः ।  
रसस्यैकं पलं क्षित्वा गुह्यीयाग्रन्धकं पलम् ॥ २४८५ ॥  
क्षारत्रयं पलं देहि लघुं पञ्चकं पलम् ।  
जयाचूर्णं दशपलं तद्वेषेण सुमर्दयेत् ॥ २४८६ ॥  
चित्रकस्य द्रवेणाऽथ भृङ्गराजरसेन च ।  
शिथुमूलद्रव्यं दत्त्वा पच भाण्डे निरुद्धं च ॥ २४८७ ॥  
याममात्रं ततः सिद्धं भावयाद्रव्यैर्मुहुः ।  
ताम्बूलपत्रसंयुक्तं खादेन्मापयुग्मं सदा ॥ २४८८ ॥  
र स , र मृ अभिमान्ये ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, तीनोंक्षार, पाचोनमक १-१ पल, थोईईभाग १० पललेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय भाग, चित्रकमूल, भगरा, सहिजनकीजड़कीछाल इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वस्व अथवा ज्ञायोसे १-१ भावना देकर गोलायनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर २-३ कपड़मिदीदेकर सूपनेपर मृषरयन्त्रमें एकपहरकी अग्निदेवे । स्वाश्रुतीतहोनेपर निकालकर अदरककेरसकी ७ भावनाए देकर २-२ मासकी गोलिया बनावर रखछोड़े । इनमेंसे १-१

गोली पानमें रखकर खानेसे मन्दाग्नि और तन्मन्यविकार नष्टहोतेहैं ॥ ५०८ ॥

### ५०९ विजयवटी ( प्रथमा )

पलत्रयं हरीतम्याश्चित्रकस्य पलत्रयम् ।  
पलात्वकूपत्रमुस्तानां भागोऽर्धपलिको मतः ॥ २४८९ ॥  
रेणुकाऽर्धपलः प्रोक्तस्तद्वै नागकेशरम् ।  
व्योषञ्च पिप्पलीमूलं विपञ्च पलमानकम् ॥ २४९० ॥  
लोहचूर्णपलत्रैकं त्वम्भीयाश्च पलं स्मृतम् ।  
रसं पलं पलं गन्धं सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ २४९१ ॥  
पुरातने गुडे पक्वे तुलाऽर्धे तद्विनिक्षिपेत् ।  
हिमस्पर्शे च मृद्रीयाद्वतेनाक्तां ततो धुध ॥ २४९२ ॥  
प्रकुर्याद्गुटिकां वैद्यो विजयां वदरास्थिवत् ।  
शुभेऽहनि प्रयुजीत वटीमेकां यथायत्नम् ॥ २४९३ ॥  
घृतेन भोजयेत्तावद्यावदस्य बलं भवेत् ।  
तद्वलोपचयं क्षात्वा पुनर्द्वे द्वे प्रयोजयेत् ॥ २४९४ ॥  
अथवा गुटिका साऽर्द्धी यथा न परिपीडयेत् ।  
मासद्वयेन श्लेष्माणं पित्तञ्चैव त्रिभिर्हरेत् ॥ २४९५ ॥  
चतुर्भिर्वायुदोषाश्च नाशयेन्नाऽत्र संशयः ।  
मासेस्तु सप्तमि हेन्दुजाताघ्नोगान् व्यपीहति २४९६  
सर्वव्याधिचिनिर्मुक्तो व्यर्पणेन जायते ।  
वर्षद्वयप्रयोगेण घलीपलितनर्जितः ॥  
जीयेद्द्विषातं चैव नाऽत्र कार्या विचारणा ॥ २४९७ ॥  
वै र , शै सा , र र स , र सि , र च , र क ल , यो चि ,  
र ( मा ) , पाण्डुरोगे ।

टि०—“लोहचूर्णपलत्रैकं त्वम्भीयाश्च पल स्मृतम्” इत्यर्थं पच बहुषु स्थानेषु न दृश्यते । र क र चित्रकस्थाने वज्री गृहीता नाम च वामेश्वर इति । शैषव्यसाराधुतमहिताया कणामूलस्थाने पीचर नियोजितम्, गन्धक निष्पात्य शारद कपमिनी गृहीत, नाम च विजयपदिगुड इति स्थापितम् ।

भाषा—हरकीछाल और चित्रक ३-३ पल, इलायची, तन, पत्रन, नागरमोथा, रेणुका २-२ कर्ष, नागकेशर १ कर्ष, त्रिकटु, पिपलामूल, शुद्धबलनाग, लोहभस्म, बसलोचन शुद्ध पारा और गन्धक १-१ पल लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय ५० पल गुह्यी चोशनीकर सबकीजें मिलावे । लडाहोनेपर थोडा थोड़ी डालकर मतले और बैरकी-गुह्यीचेचवारपर गोलिया बनावर रखछोड़े । शुभनक्षत्रसुतमें जबतक जटरामि प्रदीप्त न हो तबतक धीकेसाय १-१ गोलीदे । बल बढनेपर डेढ १॥ अथवा २-२ गोळियादे । इतवातकाप्यान रक्से कि रोगीको पीठित न करें । इससेसेवनसे २ महीनेमें श्लेष्म, ३ महीनेमें पित्त, ४ में वायु, ७ में द्वन्द्व और एक वर्षमें समष्ट्यव्याधियोंसे निमुंक्तहोताहै । दोवर्षके प्रयोगसे बलीपलितसे रहितहोकर १०० वर्षतकजीताहै ॥ ५०९ ॥

### ५१० विजयवटी ( द्वितीया )

रेणुका पिप्पलीमूलं बाकुची विपतिन्दुकम् ।  
अभ्यगन्धा पलाशास्थि व्योपादिनवर्कं वचा २४९८

विशाला गन्धकं कुष्ठसप्तकं रसमस्म च ।  
गुडेन गुटिकां कुर्यात्समेन मधुमिश्रिताम् ॥ २४९९ ॥  
तां भक्षयेत्सितासर्पिः क्षीरशाल्यन्नभाग्मवेत् ।  
जलोद्भूतं वा भुञ्जानो ब्रह्मचर्यपरायणः ॥ २५०० ॥  
खादेत्तापे सितधान्यसर्पिर्नागवलात्तजः ।  
घटिका विजयाख्येयं सप्त कुष्ठान्नियच्छति ॥ २५०१ ॥  
र. र. स. , र. र. कौ. , कुष्ठाधिकारे ।

भाषा—रेणुका, पिपलामूल, वातुवी, शुद्धकुष्ठिका, अख-  
गन्ध, पलाशकेषीज, त्रिकटु, त्रिफला, नागमोषा, विडङ्ग,  
चित्रक, वच, इन्द्रायणकीजइ, शुद्धगन्धक, कटुघ्न, नीलाजन,  
मैन्सिल, हरिताल, फिटकरी, कसीस और सोनामेल, पारद-  
भस्म सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर बराबरकेगुड़ और मधुके-  
साथ १-१ मासेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१  
गोली उचितानुपानकेसाथ घ्यायेसे सप्तमहादुष्टोंसे निरुद्धहोताहै ।  
शक्कर, घी, दूध, चावल अथवा जलोद्भूत खावे और ब्रह्मचर्यसे  
रहे । दाहमाल्नहोनेपर शक्कर, धनिया, घी और नागवलाका  
चूर्णदेवे ॥ ५१० ॥

### ५११ विजयवटी ( तृतीया )

सूतकाह्नी चिपं गन्धं शिष्येकांशेऽम्बुकेशरम् ।  
रेणुकं ग्रन्थिकं घृष्टं सयेपां द्विगुणं गुडम् ॥ २५०२ ॥  
कोलप्रमाणां घटिकां खादयेत्प्रातरपि हि ।  
कासे श्वाससे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे ॥ २५०३ ॥  
शोफे पाण्डूमाये कुष्ठे प्रहृष्यशोभगन्दरे ।  
विजया गुटिकां होषा रसमोक्षाऽधिकां शुणैः ॥ २५०४ ॥  
र. का. , भाग्यराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा २ भाग, बछनाग और गन्धक ३-३  
भाग, नागमोषा, नागकेशर, रेणुका, पिपलामूल, विडङ्ग १-१  
भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें  
मिलाय हुनागुड़ ढालकर बेरबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली प्रातःकाल रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे  
कास, श्वास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, शोथ, पाण्डू, कुष्ठ,  
ग्रहणी, बवासीर, भगन्दर इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ५११ ॥

### ५१२ विजयसिन्दूररसः

रसं गन्धं नागतालं सप्तधाधूर्तमाधितम् ।  
शुष्कं कृष्यान्तु वह्निः स्याच्चतुर्विंशतियामकम् ॥ २५०५ ॥  
शीतं गृहीत्वा त्रिकटुकर्चुरैरहिनेनतः ।  
भृङ्गारसेन गुटिकां गुञ्जा सर्वाऽतिसारजित् ॥  
रसो विजयसिन्दूरो ग्रहणीं हन्ति दुर्घोराम् ॥ २५०६ ॥  
र. का. , अतिसारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, नाग और हरिताल समभाग  
लेकर नागकी गलाकर पारद मिलाय नीलवर्णकजलीकर काले-  
धतूरकेसमे ७ भावनाएँ देकर सुखनेपर ६-७ कपडिमिनीदीहई  
आतशीवीथीमें भरके सुहवन्दकर २४ पहरकी आचड़े । स्वाद-

शीतलोनेपर निकालकर त्रिकटु, कन्नूर और अफीम समभागमें  
मिलाकर भागकेरससे १-२ रोज मर्दनकर १-१ रसीकी गोलियें  
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचि-  
तानुपानकेसाथ देनेसे यह दुस्तरसङ्ग्रहणीको नष्टकरताहै ॥ ५१२ ॥

### ५१३ विजयादिगुडः

शुद्धतुर्दशपलः पुराणः पलिका शिवा ।  
चित्रकः पलिको व्योषं ग्रन्थिकं नागकेशरम् ॥ २५०७ ॥  
लोहताम्राऽञ्जवीजानि पृथगर्द्धपलानि च ।  
त्वग्गन्धविपतालीसतुम्बुरुणि च काहलम् ॥ २५०८ ॥  
पारदः पुष्करो भाङ्गो पृथक्कर्षमितानि च ।  
एकौकृता गुडः स स्याद्वितीयो विजयादिकः ॥ २५०९ ॥  
अते पिप्पे सर्वरोगान्विनिहन्ति न संशयः ।  
निर्वातस्यायिनां क्षीरयुक्तभक्तमुञ्जां नृणाम् ॥  
उपदेशानयं हन्ति तास्यैः सर्पगणानिव ॥ २५१० ॥

भै. सा. , र. ( मा. ),

भाषा—हरे और चित्रक १-१ पल, सोंठ, मिर्च, पीपल,  
पिपलामूल, नागकेशर, लोह और ताम्रभस्म, कमलगडा २-२  
कषै, तब, शुद्ध गन्धक और बछनाग, तालीसपत्र, तुम्बुल,  
( चिरफ म. ), हीराकसीस, पारदभस्म अथवा शुद्धपारा,  
पोहवरमूल, भाङ्गी १-१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी  
नीलवर्णकजलीमें मिलाय १४ पल गुडकी चाशनी बनाय  
सबचीजें मिलाय उतारकर १-१ मासेकी गोलियें बनाकर  
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानु-  
पानकेसाथ लेकर बेचल दूधभातघ्यानेसे और निर्वातस्थानमेंरहनेसे  
पित्तको छोड़कर उपदेशप्रयत्नितसमस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५१३ ॥

### ५१४ विजयानलमण्डूरम्

विजयानलसिन्धूस्वप्नमोहातुल्यमाक्षिकैः ।  
पृथक्कर्षं द्विकर्पांशे ग्रन्थिगन्धकदङ्कुणैः ॥ २५११ ॥  
वरीपञ्चरसैः कान्तात्रिफलैः पुटपाचितम् ।  
एभिस्तुल्यं क्षमाद्वयं शुण्ठीमागधिक्षोपणम् ॥ २५१२ ॥  
गोमूत्राऽग्निनिशार्थेष्टावर्णाभ्राष्ट्रकभृङ्गजैः ।  
पृथक्त्रिपुटितं सम्यक् स्वरसैः सुश्मच्चर्णितम् ॥ २५१३ ॥  
मण्डूरमञ्जननिभं तुल्यमेतैः सुचर्णितैः ।  
सर्वमेकत्र संयोज्य प्रभाते युग्ममायकम् ॥ २५१४ ॥  
क्षीद्रेण च धृतेनाऽपि लेहं स्यादादिकाम्युना ।  
वातपित्तकफादेकं तज्जागद्वोद्भवान्गदान् ॥ २५१५ ॥  
सन्निपातोद्भवानग्निमान्दजांस्त्वग्गतानपि ।  
क्षयक्षयकृतान्व्याधींश्छलगुल्ममहोद्वान् ॥ २५१६ ॥  
पाण्डूशोफप्रमेहांश्च धनींश्च प्रतित्वनिकाम् ।  
ग्रहृष्यशोऽतिसारांश्च कुष्ठाऽप्लीलाऽपचीपणान् ॥ २५१७ ॥  
श्वासकासप्रतिश्यायजीर्णज्वरमरोचकान् ।  
विजयानलमण्डूरो जयत्येव रसायनः ॥ २५१८ ॥  
र. क. यो. , जग्निमान् ।



**भाषा**—भांग, चित्रक, सेंधानमक, शुद्धमैनसिल, तुल्य और सोनामाखी १-१ कप, पिपलामूल, गन्धक और सुहागा २-२ कपसेर बारीकचूर्णकर शतावर, कमलकेफूल, त्रिफला, त्रिफला इनैरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शराव-सम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आंचेदे । फिर सोंठ, पीपल और मरिच क्रमवृद्ध भागसे लेकर रसकी बराबर मिलाय गोमूत्र, चित्रक, हल्दी, गजपीपल, इतसिट, अदरक, गंगा इनप्रत्येकके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर लघुपुटकी ३-३ आंचेदे । स्वाहा-शीतल होनेपर सबकीबराबर अलन्तयाकी मण्डूरभस्ममिलाकर रखछोड़े । प्रातः काल इसमेंसे २-२ माशे मधु और धौकेसाय अथवा अदरकके रसकेसाथ देनेसे केवल वात, पित्त और कफ-जन्यरोग, इन्द्रज और रासिपातजरोरोंको यह नष्टकरताहै । खासकर मन्दाग्नि, चर्मरोग, राज्यक्षम, घातुल्य, शूल, गुल्म, महोदर, पाण्डु, शोथ, प्रमेह, तूनी, प्रतितूनी, ग्रहणी, अर्श, अतिसार, कुष्ठ, बग्रीछा, अपची, ण्ण, श्वास, कास, प्रतिदयाय, जीर्णज्वर और अरुचि इनसबकोदूरकरमुद्रापेको दूरकरताहै ७१४

#### ५१५ विडङ्गलोहम् ( प्रथमम् )

रसं गन्धञ्च मरिचं जातीफललवङ्गकम् ।  
शुण्ठी दूर्ङ्गकणा तालं प्रत्येकं भागसम्मितम् ॥ २५१९ ॥  
सर्वचूर्णसमं लौहं विडङ्गं सर्वतुल्यकम् ।  
लौहं वैडङ्गकं नाम कोष्ठस्थकिमिनाशनम् ॥ २५२० ॥  
दुर्नामाऽरुचिसङ्गातं मन्दाग्निश्च विसृचिकाम् ।  
शोथं शूलज्वरं हिक्कां श्वासं कासं विनाशयेत् ॥ २५२१ ॥  
र. स., र. सु., र. चं., घ., किमिरोने ।

**भाषा**—शुद्ध पारा और गन्धक, मरिच, जायफल, लवङ्ग, सोंठ, सुनासुहागा, पीपल, हरितालभस्म १-१ भाग, लोहभस्म ९ भाग, विडङ्गकाचूर्ण १८ भाग लेकर सबके बारीकचूर्णको पारेरन्पककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ माशेकी मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे कोष्ठमि, बवासीर, अरुचि, मन्दाग्नि, हैजा, शोथ, शूल, ज्वर, हिचकी, श्वास, कास इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५१५ ॥

#### ५१६ विडङ्गलोहम् ( द्वितीयम् )

विडङ्गमुस्तत्रिफलादेवदारुपङ्कणैः ।  
तुल्यमानमयश्चूर्णं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ॥ २५२२ ॥  
शुटिकां मापमात्राञ्च कृत्वा खादेद्दिनेदिने ।  
कामलापाण्डुरोगातस्सुखमापसते चिरात् ॥ २५२३ ॥

र. स., लो प., र. सु., र. र., घ., र. क., र. च., च. द., यो म., र. का., दो., पाण्डुकामलये ।

१८—र. का. मण्डूरवदेतिनाम, तत्र लोहमम मण्डूर निक्षिप्तमिति विशेष । चरकीयनवायसचूर्णार्थं दन्तारुषिण्यमूलकन्यानि श्रीणि द्रव्याण्यपिकानि सन्ति गोमूत्रपाकयेति विशेष ।

**भाषा**—विडङ्ग, नागरमोथा, त्रिफला, देवदारु, पङ्कण ( पीपल, पिपलामूल, चन्च, चित्रक, सोंठ, मरिच ) सब सम भागलेकर बारीकचूर्णकर सबरी बराबर लोहभस्म मिलाकर

अठगुने गोमूत्रमें पकावे । गाढ़ाहोनेपर १-१ माशेकी गोलीयें बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे पाण्डु और कामला नष्टदेतेहैं ॥ ५१६ ॥

#### ५१७ विडङ्गलोहम् ( तृतीयम् )

विडङ्गं त्रिफला ज्योषं भस्म लोहान्तु तत्समम् ।  
पुरातनगुदेनाऽथ लेहयेद्दिनसप्तकम् ॥  
श्वयथुं नाशयेच्छीघ्रं पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥ २५२४ ॥  
र. सं., र. सु., घ., र. चं., पाण्डुरोगे ।

**भाषा**—विडङ्ग, त्रिफला, त्रिभुज समभाग, इनसबकीबराबर लोहभस्मलेकर सरकावारीकचूर्णकर रखछोड़े । पुरानेगुङ्केसाथ १-१ माशेकीमात्रा लेनेसे शोथ, पाण्डु और हलीमक येसब नष्टदेतेहैं ॥ ५१७ ॥

#### ५१८ विडङ्गादिलोहम् ( चतुर्थम् )

विडङ्गत्रिफलामुस्तैः कणया नागरेण च ।  
जीरकाभ्यां युतो हन्ति प्रमेहानतिदारुणान् ॥  
लेहो मूत्रयिकारांश्च स्यानेव विनाशयेत् ॥ २५२५ ॥  
र. स., र. सु., र. र., मै. र., र. चं., च. द., र. चि., र. क. प्रमेहाधिकारे ।

**भाषा**—विडङ्ग, त्रिफला, नागरमोथा, पीपल, सोंठ, दोनोजीरे, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर सबकीबराबर लोह-भस्म मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा प्रमेहहृत्पाण्डु-केसाथदेनेसे भयङ्कर समस्त प्रमेहोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५१८ ॥

#### ५१९ विडङ्गादिलोहम् ( पञ्चमम् )

विडङ्गं नागरं क्षारः काललोहरजो मधु ।  
यथाऽऽमलकचूर्णञ्च प्रयोगः स्थौल्यनाशनः ॥ २५२६ ॥  
च. स., अ. सं., अ. ह., दो. यो. म., र. का., र. को., र. र., र. र. स., ना. वि., च. द., देसोऽधिकारे ।

**भाषा**—विडङ्ग, सोंठ, यवक्षार, लोहभस्म, इन्द्रजव और आवले समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह अति-स्थूलताको दूरकर मन्दाग्निप्रस्थितरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ५१९ ॥

#### ५२० विडङ्गादिलोहम् ( षष्ठम् )

विडङ्गत्रिफलाकृष्णालोहचूर्णाऽऽज्यशर्कराः ।  
ससौद्राः शीलिता ग्रन्थि चार्धन्यं पलितैः सह ॥ २५२७ ॥  
ग. नि., रसायने ।

**भाषा**—विडङ्ग, त्रिफला, पीपल, लोहभस्म सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा की, शर्कर और मधुकेसाथ सेवनकरनेसे यह बलीपल्लादिकको दूरकर मुद्रापेको नष्टकरताहै ॥ ५२० ॥

#### ५२१ विदारणवृत्तिहरसः

एकेन्दुवेदाऽष्टरविश्वितीशः  
सारं नयं मानुरसाः सुरेशः ।

मनःशिलाखर्परसंयुतास्ते  
जम्भाऽम्भसाऽऽपेयं ॥ कृपिकायाम् २५२८  
विन्यस्य नालं परिरभ्य चेल-  
मृत्स्ताऽऽघृतां तां लवणाऽऽप्ययथे ।  
भाण्डे पचेद्यामचतुष्टये तं  
सङ्हरा मृतं चणकप्रमाणम् ॥ २५२९ ॥  
गौल्येन केनाऽपि घटी प्रदत्ता  
निहन्ति सर्वांस्त्रिपञ्चराजान्सा ।  
त्रि.सप्तकं गौल्यमतीव पथ्यं  
तेलाऽम्भमुष्यं परिवर्जनीयम् ॥ २५३० ॥  
अयं रसोऽपस्मृतिमान् शुभ्या  
ह्रस्वं चिदध्यातृकपालतेलात् ।  
पित्ते च वाग्मिर्मयतीह किञ्चि-  
ज्जटाप्रदद्याद्विपमज्वरार्तां ॥ २५३१ ॥  
र.श.टो., र.बो., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—नोराद और ताम्रमस १-१ भाग, चारदमस  
४ भा, सुवर्णमस ८ भा, शुद्धमेतसिल १२ भा., खपरिया  
१६ भाग लेकर बारीकचूर्णकर जमीरीवेरससे १-२ रोज मर्दन  
कर ६-७ कपडिगिदीहुई आतपीसीसीमें डालकर सुंदबन्दर  
लवणयन्त्रमें रखकर चारपहर अग्निदेवर चनेराबरमात्रा हलवा  
बगैरदेवीमीतरख निगलवाकर २१ घास ऊपरसे हलवा खिलानेसे  
समस्तविषमज्वर और अपस्मारको यह नष्टकरताहै मनुष्यके  
कपालकेतैलका नक्षयनेता । पित्तप्रकृतिवर्षको हृत्से विसीविंसी-  
को बमन होतीहै । विषमज्वर और अपस्मारमें इसका  
खासप्रयोगकरना, तैल और खटाईसे परहेजकरना ॥ ५२१ ॥

### ५२२ विदारणभैरवरसः

हरदीप्यं ताम्रपद्ममर्कक्षीरेण मर्दितम् ।  
दौलायन्त्रे पचेद्याममेणपित्तेन भायितम् ॥ २५३२ ॥  
गुजामात्रं प्रदातव्यं त्रिकटोरुपानतः ।  
तत्स्वणेन विनश्येत्तु भुमनेत्रे सुदारणम् ॥  
रसो विदारणव्याप्तो भैरवः प्राणरक्षकः ॥ २५३३ ॥  
है चि, था., भुमनेत्रसन्निधौ ।

भाषा—चारद, ताम्र और पद्ममस समभागलेकर आकके-  
दूधसे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय आककेदूधमें एकपहर स्वेदन-  
कर हरिणकेपित्तेसे एकभावनादेवर १-१ रत्तीकी गोलियां  
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिडुके अनुपानसेदेनेसे  
यह भयङ्कर भुमनेत्रसन्निधाको नष्टकरताहै ॥ ५२२ ॥

### ५२३ विद्याधरमण्डूरम्

त्रिफलाव्योपजन्तुर्न दन्त्यग्निग्रन्थिकाऽमृताः ।  
कुष्ठं तेजोवती मुस्ता विष्टुल्लातसुरणी ॥ २५३४ ॥  
शताह्वा नेचुलं बीजं भाङ्गी च गजपिप्पली ।  
शृङ्गी द्वितीरकं धान्यं वृद्धदायकवर्कः ॥ २५३५ ॥

तुम्बुरुणि भद्रदाय क्षाराश्च लवणानि च ।  
अजमोदा तालमूली विशाखा भूतिकं वचा ॥ २५३६ ॥  
कोपातकी फलञ्जैतद्रूपन्नकगन्धकी ।  
यावन्त्येतानि धूणानि मण्डूरं द्विगुणं तथा ॥ २५३७ ॥  
गोमूत्रे त्रिफलाकाये निपित्तं शृङ्गणचूर्णितम् ।  
कन्दोक्तशृङ्गवेरधावणीकेशराजकैः ॥ २५३८ ॥  
रसैः सधज्वलीजैर्वन्ध्यातालोत्पस्यजैः ।  
भावयित्वैव तमूत्रं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ॥ २५३९ ॥  
चतुर्गुणेन त्रिफलाकाये दूर्वाविलेपनात् ।  
उपयुञ्जितं मतिमान् खादेशैव यथायलम् ॥ २५४० ॥  
ये च कुक्षिगता रोगा ग्रहणीमार्दद्यादयः ।  
एतद्विद्याधरं नाम मण्डूरं सर्वरोगजित् ॥ २५४१ ॥  
र.का, अम्भपित्ताधिकारे ।

भाषा—त्रिफला, त्रिडु, विडङ्ग, दन्तीमूल, चित्रक,  
त्रिफलामूल, गिलोय, कुठ, तेजकलीछाल, नागरमोषा, निवोत,  
भिलाषा, सुरण, सोंफ, वेतकेबीज, भारती, गजपीपल, काक-  
झसीसी, दानोबीर, धनिया, विषारा, पत्रज, तुम्बुल, देवदारु,  
तीनोंक्षार, पाचोनमक, अजमोद, तालमूली, पुनर्नवा, खरज-  
वाहन, वच, कङ्गीवतीरुईकेल, एण्डकीज, शुद्धगन्धक, सब  
समभागलेकर बारीकचूर्णकर गोमूत्र और त्रिफलाकायेमें शुद्धा-  
कर मसमकियाहुआ मण्डूर सबसे द्विगुणमिलाकर जलसीकरण,  
अदरक, गोरखमुण्डी, कालाभंगरा, हज्जोह, बल्लखेखा,  
ताड़फल इनप्रत्येककेरसोंसे १-१ भावनादेकर अठगुना गोमूत्र  
और चौगुना त्रिफलाकाकाय डालकर पकावे । जब कड़ाहीमें  
एकदम लगनेलगे तब उतारकर छ्वाकरके १-१ भागकी गोलियां  
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अपना रोगोचि-  
तानुपानकेसाथ देवेसे ग्रहणी और ह्राम उदरतोग नष्टहोतेहैं ॥

### ५२४ विद्याधरलोहम्

स्वच्छं पञ्चकृतं लोहं पलं लिप्तञ्च निर्धेपत् ।  
लघणे मांक्षिकोपेतं त्रिफलाकापिफोदके ॥ २५४२ ॥  
सुषिकं लोहमादाय पूतं सङ्गृह्य यत्नतः ।  
पुटेयं व्याध्याधिहरेन्द्रैः सम्पादितैः पचेत् ॥ २५४३ ॥  
पिण्डेन शर्करापायः कलम्याऽधुपप्रतः ।  
करिकर्णपलाशस्य लग्नैरप्युत्कृष्टैः ॥ २५४४ ॥  
चतुर्गुणे फलरसे लोहाच्च घृतयोजितम् ।  
पाचयेत्पिण्डस्तात्रावत्सपि विमुञ्चति ॥ २५४५ ॥  
पौडशांशं लिपेत्तत्र ततः सन्तोषितं रसम् ।  
राजिकापिण्डमध्ये तु व्योमपिण्डस्य मध्यगम् २५४६  
मयां मले तुपाग्रां च यन्म्रावृत्तञ्च काञ्चिकैः ।  
सिद्धं सताहंमन्तु ततः सङ्गृह्येयन्तुः ॥ २५४७ ॥  
विज्ञाकायायपेष्टाम्बुक्षीपनिर्गोपितेन तु ।  
द्विगुणेन गन्धकदिग्दामुल्लस्यारज्ज्वा पुनः ॥ २५४८ ॥  
पादं त्रिडुगुम्याग्निं त्रिस्त्यायोरग्रे रज्ज्वा ।  
लोहादेकीर्णं पिष्टमनुगुणं निवारयेत् ॥ २५४९ ॥

ततो माशो प्रयुज्जीत यथाद्वेषं यथावयः ।  
 आहारपरिहारो च लोहान्तरसमानकम् ॥ २५५० ॥  
 कुलत्पञ्च कपोतञ्च फरमर्दककाञ्चिके ।  
 करीरं कारवेष्टञ्च पद ककाराणि वर्जयेत् ॥ २५५१ ॥  
 विद्याद्विद्याधरमतं लोहं सर्वगदापहम् ।  
 न सोऽस्ति रोगः कुक्षिस्थो यमिदं न निहन्ति च ॥  
 जलापकारानशीसि सर्वोपद्रववन्ति च ।  
 अम्लकं ग्रहणीमेहान्गुल्मानुदरमष्टकम् ॥ २५५३ ॥  
 ८. २., अशोरोगे ।

भाषा—शुद्धकरके बारीकपत्रेकियेहुए एकपल लोहको लवण और मधुकाष्ठेयवेकर गरमकरके त्रिफलाके १-१ कर्पणानीमें सुखावे जब इसका एकदमचूर्णहोजाय तब लेकर कपड़ानचूर्णकर अशोरोगेहरदवाओंकेसाथ भदनपर पुटवे । एकदम अम्लहोनेके बाद मैनफल, दाइर, नाईशाक, दातापर, हस्तिकर्णफलाश, लवण, मिलाया इनप्रत्येकका लोहसे चौगुनाद्रव और आधा घी बालकर मन्दजांचसे पकावे । पानीजलजानेपर १६ बां हिस्सा पारदमस मिलाकर घोटकर गोलायनावे फिर राईकेकल्के-धीचमेंरखे और त्रिबुड्वाकल्क ऊपरपेट ३-४ तह मलमलके कपड़ेमेंबांधकर दोलायन्न बनाय काष्ठोंमें लटकावे और नीचे गोबर तथा तुपकी आंचदे । इसतह ७ दिनतक पकावे । काष्ठी-सुखनेपर दूसरी बालाजाय । सातदिनकेबाद स्वास्त्रसीतल-होनेपर धीरजसे गोलेको निकालकर इसली, गजपीपल और गायकेदूधमें गरमकरके कईबारशुद्धवियाहुआगन्धक और मैन-सिलकाचूर्ण द्विगुण तथा विडङ्ग, नागरमोया, चित्रक, त्रिफला और त्रिबुडसमगमाकाचूर्ण चतुर्धासमिलाकर १-२ दिन घोटकर शिथिलमापणमें रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा रोग और रोगीका बलायल देखकर समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे जलदोष, समस्त उपद्रवयुक्तवशासीर, अम्लपित्त, ग्रहणी, प्रमेह, गुल्म, उदररोग प्रवृत्तिसमस्तारोगोंको यह नष्टकरताहै । पेटका ऐसाकोईभी रोग नहीं जिसे यह न मिटासके । शूलमें आहार और परिहार अन्य-लोहोंकीतरह समझना । खाकर कुलथी, कबूतर, कठोरा, काजी, करीर, करेला इनका परित्यागकरे ॥ ५२४ ॥

#### ५२५ विद्याधराऽध्यायः (प्रथमम्)

विडङ्गमुस्तात्रिफलागुहृद्यो  
 दन्तीत्रिवृद्धहिकदुत्रिकञ्च ।  
 प्रत्येकमेपां पित्तुमागचूर्णं  
 पलानि चत्वार्यसौ मलस्य ॥ २५५४ ॥  
 गोमूत्रशुद्धस्य पुरातनस्य  
 यद्वाऽयसस्तानि चटाकिकायाः ।  
 कृष्णाऽध्रचूर्णस्य पलं विशुद्धं  
 निश्चन्द्रकं शुद्धमतीव सूतात् ॥ २५५५ ॥  
 पादोनकर्पं स्पृशेन खल्वे  
 शिलातले मनुकणादलस्य ।

सम्मर्द्य पश्चादतिशुद्धगन्ध-  
 पापाणचूर्णेन पित्तुमिमेतेन ॥ २५५६ ॥  
 युक्त्या ततः पूर्वैरजांसि दत्त्वा  
 सर्पिर्मधुप्यामवमर्द्य यत्नात् ।  
 निधापयेत्स्निग्धविशुद्धभाण्डे  
 ततः प्रयोज्योऽस्य रसायनस्य ॥ २५५७ ॥  
 प्राङ्मापको वाऽप्ययवा द्वितीयो  
 गत्वं पयो वा शिशिरं जलं वा ।  
 पिवेदयं योगवरः प्रभूत-  
 कालप्रणष्टाऽनलदीपकञ्च ॥ २५५८ ॥  
 रोगं निहन्यात्परिणामशूलं  
 शूलं तथाऽध्रवसञ्चकञ्च ।  
 यस्माऽम्लपित्तं ग्रहणीं प्रवृद्धां  
 जीर्णज्वरं लोहितपित्तमुग्रम् ॥  
 न सन्ति ये यात्र निहन्ति रोगा-  
 न्योगोत्तमः सम्यगुपास्यमानः ॥ २५५९ ॥

२. सं., र. चि., रसायनसं., घ., मै. र., नि. र. र. सि., र. र., र. क., र. सु., र. का., शूलाधिकारे ।

भाषा—विडङ्ग, नागरमोया, त्रिफला, गिलोय, दन्तीमूल, निसेत, चित्रक और त्रिबुड १-१ कर्प, १०० वर्षसे पुराना और गोमूत्रमें शुद्धवियाहुआ मण्डर अथवा गरमकरके पनमारते समय चटकर उबेहुए लोहके बारीककण ४ पल, कृष्णाऽध्रक-की निश्चन्द्रमस १ पल, अत्यन्तशुद्धपारा १२ मासे, शुद्ध-गन्धक १ कर्प लेकर सबको परिगन्धकी नीलवर्णजलीमें मिलाय १-२ पहर शुष्कमर्दनकर घट्टे और पीपलकेपतोंके रसोंसे १-१ दिन भदनकर सुलाकर इसकी बराबरका घी और मधु मिलाकर घोटकर चिकने वस्त्रमें रखछोड़े । ७ या १४ दिन बीतनेपर इसमेंसे १ अथवा २ माशा रोग और रोगीका बला-यल देखकर गायकेदूध अथवा ठंडजलकेसाथ देवे । इससेसेवनसे चिरकालसे नष्ट अमि, परिणामशूल, साधारणशूल, अतद्रवशूल, राजयक्ष्म, अम्लपित्त, बड़ीहुई ग्रहणी, जीर्णज्वर, रक्तपित्त, श्लेष्मादिसमस्तारोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५२५ ॥

#### ५२६ विद्याधराऽध्यायः (द्वितीयम्)

शुद्धं सुतं तथा गन्धं फलत्रयकटुत्रयम् ।  
 विडङ्गं मुस्तकं दन्तीं त्रिवृत्तां चित्रकं तथा ॥ २५६० ॥  
 आसुपर्णीं ग्रन्थिकञ्च प्रत्येकं कर्पसम्मितम् ।  
 पलं कृष्णाऽध्रचूर्णस्य सूताऽयश्च चतुर्गुणम् ॥ २५६१ ॥  
 घृतेन मधुना पित्ता चटिकां कोलसम्मिताम् ।  
 एकैकां चटिकां खादेत्यातस्त्रयाय नित्यशः ॥ २५६२ ॥  
 अनुपानं गवां क्षीरं नीरं वा नारिकेलजम् ।  
 सर्वशूलं निहन्याशु वातपित्तभयं तथा ॥ २५६३ ॥  
 एकजं द्विजज्जैव तथैव साधिपातिकम् ।  
 परिणामोद्भवं शूलमामवातोद्भवं तथा ॥ २५६४ ॥

काद्र्यं वैद्यर्ण्यमालस्यं तन्द्वाऽरुचिविनाशनम् ।  
साध्याऽसाध्यं निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥  
र. सं., र. च., प., र. सु., दृलाऽधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, त्रिफला, त्रिकटु, विडङ्ग, नागरमोथा, दन्तीमूल, निमोत, चित्रकमूल, मूषाकर्मी, पिप-  
लामूल, येसव १-१ कर्ष, कृष्णाश्रकभस्म १ पल, लोहभस्म ४  
पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर मधु और पृतकेसाय मिलाकर  
बेरबराबर गोलिया बनाकर रखो। इनमेंसे १-१ गोली  
प्रातःकाल गायत्रेद्वय अथवा नारियलवेजलेसेसायलेनेसे समस्त-  
शूल, परिणामशूल, आमवातोद्भवशूल, हृत्वाता, वैद्यर्ण्य, आलस्य,  
तन्द्वा, अर्धवि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५२६ ॥

### ५२७ विद्याधरीगुटिका

गन्धम्लेच्छरसाऽमृताऽर्ण्यकटुका व्योषं त्रिवृद्धन्तिका,  
हेमाद्रा त्रिफला च द्रुणमतः सर्वैः समैस्तित्तिर्डी ।  
सम्यक् पक्वफलेस्त्वयस्त्रिहृत्तिस्सम्मर्द्यं मापोग्मिता,  
पीता केन नयज्वरं गुटिका विद्याधरी क्षस्यते २५६६  
र. प., ज्वराऽधिकारः ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, त्रिगिरिक, पारा और बध्नाग, ताम्र-  
भस्म, कुट्टरी, त्रिकटु, निमोत, दन्तीमूल, सत्यानाशीवीज  
अथवा देवनवीनी, त्रिफला, मुनामुहागा येसव १-१ भाग,  
सबकीबराबर पकीहमलीका गुदा लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धक  
की नीलवर्णकजलीमें मिलाय हमलीकेसाय अच्छीतरह घोट-  
कर १-१ मांशरी गोलिया बनाकर रखो। इनमेंसे १-१  
गोली जलकसाय देनेसे यह नयज्वरको नष्टकरतीहै ॥ ५२७ ॥

### ५२८ विद्याधररसः ( प्रथमः )

शुद्धं सूतं तथा गन्धं सालकञ्च शिलाजतु ।  
खपरिताम्रचूर्णानि प्रत्येकं कर्णमात्रकम् ॥ २५६७ ॥  
तुलसीद्रव्यैः यामं यामं निर्गुण्डिकाद्रव्यैः ।  
पिष्ट्वा सत्पिण्डमादाय घणमात्रयट्कीकृतम् ॥ २५६८ ॥  
एकैकं भक्षयेद्याऽनु मागधीसितया सह ।  
नूतने विषमे चैव ज्वराऽऽधाते प्रयोजयेत् ॥ २५६९ ॥  
यमनान्ते विरेके च पथ्य क्षीरीदने तथा ।  
विद्याधररसो नाम सद्योज्वरनिवारणः ॥ २५७० ॥

र. क यो , ज्वराऽधिकारः ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, हरिताल, शिलाजीत, खपरिया  
और ताम्रभस्म १-१ कर्षलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी  
नीलवर्णकजलीमें मिलाय १-१ पहर तुलसी और निर्गुण्डीके-  
रसोंसे मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियेबनावर रखो। इनमेंसे  
१-१ गोली पीपल और शकरबेसायदेनेसे नवीन, विषम प्रभृति  
समस्तज्वरोंको यह नष्टकरताहै । यमन और विरेकन होनेके-  
बाद दूधभात खानेकोदेता ॥ ५२८ ॥

### ५२९ विद्याधररसः ( द्वितीयः )

शिलातालताप्यानि गन्धोऽथ शुल्वं  
सूतं शुद्धसूतञ्च तुल्यांशमेतत् ।

कणावारीणा धमिनीरेण मयं

दिनैकं रसो याति विद्याधराऽऽख्याम् २५७१

तमर्द्धनिष्कमात्रं विलिख्य सारधेण तु ।

पिषेद्य गोजलं नरः सुतीमगुल्मशूलयान् ॥ २५७२ ॥

वै र, ह यो. त, शा सं, र. क. ल., वै. क., र. चि., र. म.,  
र. र., र. च., नि. र., र. म., प. वै. चि., रसायनसं, र. कौ., र.  
चि., भै र, चि र. म., भै सा, व. रा, र. क., दो., र. म. मा., र.  
र. दी, र. को., र. शं., र. सु., र. सं, र. र. स, र. का., यो. म., र.  
र. कौ., ना वि, गुल्माऽधिकारः ।

नि०—“रक्तुल्य रजोरो र्क्षीभि वैषोऽनुपातक । निरुकाभो विनो  
भाषी दारौष्योपयुष्टि शुभ ॥” इत्यधिक पाठे मेरुज्यसाराश्रुनमहितावां  
हरने । कुपचितामस्थाने स्वर्णं निरोजिनम् ।

भाषा—शुद्धमैतसिल, हरिताल, स्वर्णमाक्षिक, गन्धक  
और पारा, ताम्रभस्म सबसमभागलेकर पीपलवेजाप और  
सेदुङ्गकेद्रव्यसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ मांशरी गोलिया  
बनाकर रखो। इनमेंसे १-१ गोली मधुबेसायलेकर गोमू-  
षीनेसे तीव्रगुल्म और शूल नष्टहोते। यदि एकगोलीसे काम  
न हो तो दो गोलीदेना ॥ ५२९ ॥

### ५३० विद्याधररसः ( तृतीयः )

रसोगन्धस्ताम्रं त्रिकटुकटुकीद्वयजरा,  
त्रिवृद्धन्तं हेम शुमणिपिपमेतत्सममिदम् ।  
समस्तस्तुल्यं स्याद्विमलजपपालोद्भयरजः,  
ततः स्नुक्शरीरेण प्रचुरमुदितं दन्तिसलिलैः ॥ २५७३ ॥  
क्षिगुञ्जाऽस्य प्रौढं जयति घटिका साममतुलं,  
ज्वरं पाण्डुं गुल्मं ग्रहणितुङ्गीलोद्भयरजः ।  
मरुच्छूलाऽजीर्णं प्रयलमथ सामं विमिगदं,  
विवरुद्धाहानं प्रयलमपि विद्याधररसः ॥ २५७४ ॥

र. स, र. क. ल., र. र. दी., भै र, ह यो. त, र. सु., प, र.  
को, र. शी, रसायनसं, र. म. मा., र. का, चि र, र. र. स,  
ज्वराऽधिकारः । र. श., र. क. ल., रसायनसं, र. म. मा., र. का.,  
यो. त, चि. र, र. र. स, र. को. एषु १ यो. त, र. सु. एतयो-  
द्वितीयस्थाने विनोदविद्याधरेति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, त्रिकटु, कुट्टरी,  
मुनामुहागा, त्रिफला, निमोत, दन्तीमूल, बरौंकेबीज, आक-  
वीज, शुद्ध बध्नाग येसव समभाग, ताम्रबीजबराबर शुद्ध-  
जमालोटा लेकर बारीकचूर्णकर शरीरनष्टरी नीलवर्णकजलीमें  
मिलाय धुहरकेद्रव्य और दन्तीमूलकेद्रव्यसे १-१ दिन मर्दन  
कर २-२ रत्तीकी गोलिया बनार रखो। इनमेंसे १-१  
गोली समय अथवा रोगोचितानुसंगधर देनेसे साम प्रौढज्वर,  
पाण्डु, गुल्म, ग्रहणी, बालीर, शूल, दूत, अजीर्ण, आम  
सहित विमिरोध, बद्धमूल वगैरा रोगोंको यह नष्टकरताहै ५३०

### ५३१ विद्याधररसः

रसो म्लेच्छशिलातालताम्रद्रव्यव्यक्तमागिका ।  
पिष्ट्वा तानुपुर्णितोऽप्येलाप्रभाधरो क्षिपेत् ॥ २५७५ ॥

न्युब्जशरावे संरुद्ध धालुकामध्यगं पचेत् ।  
स्फुटन्त्यो ग्रीहयो वावत्तच्छिरस्थाः शनैःशनैः २५७६  
सञ्चर्य शकैरायुक्तं द्विवहं सम्प्रयोजयेत् ।  
नाशयेद्विषमाख्यञ्च तैलाम्लादि विवर्जयेत् ॥ २५७७ ॥  
र. चि., र. सु., भै. र. सायनसं., र. सं., र. का., यो. म.,  
ज्जराधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा १ भा., शिंपरिफ २ भा., मैनसिल ३ भा., हरिताल १२ भागलेकर नीलवर्णज्वलीकर करेलेकरससे एकदिन मर्दनकर इसकी बराबरवज्रनके ताम्रपात्रमेंलेपकर कुन्हडीमें उल्टारल शरावसम्पुटसे बन्दकर ४-५ कपडिमिशीदेकर अच्छीतरहसूखनेपर ४-४ अहुल चारोंतरफ बाजुकादेकर बूलेपर अग्निदेवे । ऊपरसे परीसायं थोड़े घान डालदे जब घान फूटनेलें तब आंच धन्दकरके कोयलोंपर रहनेदे । स्वाहशीतल-होनेपर निकालकर ताम्रसम्पुटकेसाथ बारीकपीसकर रखले । इसमेंसे ६-६ रत्ती शकरकेसाथ देनेसे यह तमामविषमज्वरोंको नष्टकरताहै । इसमें तैल, खटाई गौहर्ह अपघ्न्यहै ॥ ५३१ ॥

### ५३२ विद्यावागीशरसः

मृतसूताऽध्रनागानां स्वर्णं तुल्यं प्रकल्पयेत् ।  
महानिम्यस्य चूर्णन्तु चतुर्भिः सममाहरेत् ॥ २५७८ ॥  
मधुना लेहयेन्मार्पं लालामेहप्रशान्तये ।  
सक्षौद्रं रजनीचूर्णं लेह्यं निष्कट्यं तथा ॥  
असाध्यं नाशयेन्मेहं विद्यावागीशको रसः ॥ २५७९ ॥  
र. सं., र. क. ल., र. सु., र. चि., र. सायनसं., र. को., र. चं.,  
यों. म., र. का., र. र., व. रा., चि. क., प्रमेहे ।

टि०—यो. म. र. का. पतयो नागत्वाने बहु नियोज्य स्वर्णं निष्का-  
सितम् । रसकामेनौ भवेत् योगस्य त्रय पाठा विन्यस्ताः । तत्र  
एकस्य विद्यावागीशरसि द्वितीयस्य विद्यामन्त्रेभरेति तृतीयस्य तारके-  
श्वरेति त्रीणि नामानि । स्वास्तिरिति, परस्मैकैवल्यत्राणां मुद्रित्याकुली-  
करणादतिरिक्त नाशति किञ्चित्कलमिति नौदन्त्यम् । र. र., व. रा.,  
चि. क. एव ग्रन्थे ॥ “मृतसूताध्रनागञ्च स्वर्णं तुल्यं प्रकल्पयेत्”  
इत्यस्य स्थाने “मृतसूताध्रनागानां तुल्यं भागं प्रकल्पयेत्” इति  
पाठो दृश्यते तत्र प्रमादा प्रमादादा स पाठ वेनेकनाऽपि प्रकसित इति  
प्रतिभासि, नाम च र. र., व. रा. पतयो विरयारोगेश्वर इति, चिकि-  
त्साक्रमकपरस्त्वानु मेहातीति नाम ।

भाषा—पारा, अत्रक और नागभस्म १-१ भाग, सुवर्ण-  
भस्म सबकीबराबर लेकर बकायनकेबीजोंका चूर्ण सबकीबराबर-  
मिलाय १-२ दिन सूखे खरलकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ मासा मधुनेसाथ देनेसे असाध्यलालामेह नष्टहोताहै । इसके-  
समर ८ मासो हल्दीकाचूर्ण मधुमें मिलाकर खिलाये ॥ ५३२ ॥

### ५३३ विद्यावागीश्वरीवटी ( प्रथमा )

व्योमसत्त्वं मृतं यज्रं स्वर्णतारार्कमुण्डकम् ।  
तीक्ष्णं कान्तं तालकञ्च सुवहं कृत्वा विमिश्रयेत् २५८०  
मूत्रं चूर्णं समं सर्वं चूर्णादं शुद्धपारदम् ।  
विद्रिं चाम्बलवर्गेण मर्दितं चान्घितं धमेत् ॥ २५८१ ॥

विद्यावागीश्वरी ख्याता मुद्रिका वत्सरावधि ।  
यस्य चक्रे स्थिता तस्य जरा मृत्यु न विद्यते २५८०  
कर्म ज्योतिष्मतीतैलं कामणार्थं पिबेत्सदा ।  
वाङ्मति जायते धीरो जीवेच्चन्द्राऽकतारकम् २५८१  
र. सं., र. का., र. सायने ।

भाषा—अत्रकसत्त, हीरा, सुवर्ण, रजत, ताम्र, मुण्ड  
फोलाद, कान्त, हरिताल इनकेसर्वोंकीभस्म समभागलेक  
बारीकचूर्णकर इनसबमेंआधा शुद्धपारा मिलाकर एकपहर शुष्क  
मर्दनकर किसीभी खटाईसे ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय अन्ध  
मूषामें बन्दकर धमनकरनेसे इसकी गोली तैयारहोगी । इसके  
एकवर्षतक मुंहमें रखनेसे जरा और मृत्युको जीतताहै । इसके  
शरीरमें अनुक्रमणहोनेकेलिये एककर्म मालकांगनीका तैल प्रति  
दिनपीये । इसकेवेचनेसे शुद्धस्यतिकेदरा बुद्धि होजातीहै ॥ ५३३ ॥

### ५३४ विद्यावागीश्वरीवटी ( द्वितीया )

शुद्धं सूतं विपञ्चाऽत्रं विपटङ्कणगन्धकम् ।  
मृतलोहाऽष्टकञ्चैव कर्ममानञ्च पल्यके ॥ २५८४ ॥  
अम्योरोमन्मचवासाभिस्त्रिरुद्रुफिकलोद्भवैः ।  
याममात्रन्तु प्रत्येकं मर्दयित्वा तु गोलकम् ॥ २५८५ ॥  
काचकूप्यां नियेध्याऽथ सप्तधत्तमृदा बहिः ।  
लयणैः पूरिते यत्रे त्रिदिनं मन्दवह्निना ॥ २५८६ ॥  
स्याद्गुशीतलमुदृत्य गुञ्जामानं प्रदापयेत् ।  
आर्द्रकस्याऽनुपानेन मज्जिप्राया निरुन्तनम् ॥  
विद्यावागीश्वरी नाम्ना रसेन्द्रः परिकीर्तितः ॥ २५८७ ॥  
व. रा., प्रमेहे ।

भाषा—शुद्धपारा और बडनाप, अत्रकभस्म, शुद्धसोमर,  
भुनामुहागा, गन्धक, आठोंलोहोंकीभस्म १-१ कर्पलेकर  
नीलवर्णज्वलीकर जमीरी, धवरा, अङ्गसा, त्रिकट, त्रिफला  
इलके यथासम्भव स्वरस अथवा जाधोंसे १-१ पहर मर्दनकर  
गोलाबनाय ६-७ कपडिमिशीदोहुई आतशीशीशोमें रख मुंह-  
बन्दकर लवणयन्त्रमें ३ दिनको मन्दाग्निदेवे । स्वाहशीतल-  
होनेपर निकालकर १-१ रत्ती अदरककेसाथ देनेसे यह मज्जि  
मेहको नष्टकरताहै ॥ ५३४ ॥

### ५३५ विरेचनवटी

पारदं गन्धवं विभवं टङ्कणं विपमुष्टिकम् ।  
स्वर्जिका मरिचं कृष्णा समभागानि कारयेत् २५८८  
चिडङ्गञ्चाऽभया दन्ती विवृष्रेपालकन्तथा ।  
पूर्वचूर्णसमान्येव भृङ्गद्रावेण भाधयेत् ॥ २५८९ ॥  
गुञ्जाम्रमाणवटिका भक्षिता शीतवारिणा ।  
विरेचयत्यथद्वयं हि क्रिमिमोराञ्चरानपि ॥  
विनाशयति वे सन्धक् सत्यं सुवहचो यथा ॥ २५९० ॥  
र. र. सु., विरेचने ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, सुहागा और कुचिला, सोंड,  
सखी, मरिच, पीपल येसब १-१ भाग, चिडङ्ग, हर्, दन्तीमूल,

निस्रोत, शुद्धजमलगोटा, येसवमिलकर ८ भाप लेकर सबका घारीकचूर्णकर पोरगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय मंगोके-रसमें एकदिनमर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलिया बनाकररखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली ठंडेजलकेसाथ देनेसे समस्तविमरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५३५ ॥

### ५३६ चिरेचनरसः

पातितात्स्वेदितात्सुतापलं गन्धकतः पलम् ।  
तित्तिरीफलतो ग्राह्यं पलञ्च त्रिफलात्रयम् ॥ २५९१ ॥  
कडुपुष्पाकार्कपमेकं सर्वमेकत्र मर्दयेत् ।  
पक्वं निम्बुकृतोयेन दिनमेकं निरन्तरम् ॥ २५९२ ॥  
शम्याकफलसारेण मर्दयेत्प्रहराऽष्टकम् ।  
त्रिपुष्कलायेन दन्त्याद्य रसेनैव प्रमर्दयेत् ॥ २५९३ ॥  
पवं सम्मर्दितात्सुताद्विद्व्याद्विद्विफास्तनः ।  
यद्वरीफलमातेन छायायां शोषयेद्वधः ॥ २५९४ ॥  
वटीं सन्धारयेद्वलान्छीतयातविर्जितातम् ।  
दद्यादुद्विरेणै चैकां कोष्णनरीरेण घेघराट् ॥ २५९५ ॥  
आमाम्निर्क रेचयेत् स्तम्भनं दुग्धभक्ततः ।  
यिश्वाहारप्रयोगेण नश्यते च जलोद्वरम् ॥ २५९६ ॥  
अयं चिरेचनो नाम रसः श्रेष्ठतमो मतः ।  
देयीशास्त्राऽनुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ २५९७ ॥  
रसालं, उदराऽधिकारे ।

भाषा—ऊँगादि पातनकर शुद्धकियाहुआपारा और गन्धक, शुद्धजमलगोटा १-१ पल, त्रिफला ३ पल, कडुपु (सुर्दासक कपड़ा रेचनचीनी) १ कप लेकर सबका घारीकचूर्णकर पोर गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय पकेनीधु, अमिलतास, निस्रोत, दूरी इनके स्वरस कयवा बावोंसे १-१ दिनमर्दनकर जंगली बेरवारकर गोलिया बनाय छायामें सुखाकर रखजोड़े । इनमें शीत और वायुका स्पर्श न हो । इनमेंसे १-१ गोली गरमजलकेसाथदेनेसे आमनिकलनेतक रेचनहोकर उदररोग नष्ट होतेहैं । अधिकरेचनहोनेपर दूधभात देनेसे बन्दहोंगे । ऐसे २० बार प्रयोगकरनेसे जलोद्वर नष्टहोताहै ॥ ५३६ ॥

### ५३७ विश्वतापहरणरसः

पथ्याकणाऽर्कविपतिन्दुःश्रुन्तिवीज-  
तिक्तानिवृद्धसबलीन् सदृशान्विमर्य ।  
धर्ताम्बुना सकलयासरमेप सृतः

स्याद्विश्वतापहरणोऽभिनवज्वरघ्नः ॥ २५९८

वै जी, र ल, र सु, र को, रसायनस, वि सा, नि र, वै. वि, र धो, रस स., र व ल, यो र, र पा, ज्वराऽधिकारे ।  
टि०—नीर त्रैलोक्यतापहरणेति नाम । र र, रसवि, र स, र स, र का, र र स, दो, र र दी, र क, यो म, र म मा, र पा म्तेषु तथाच रसायनस, र को, र धु, र क क, प्लेधा द्विती यस्थाने त्रैलोक्यदम्बरेति नाम, तत्र गानगायां धर्ताम्बुस्थाने वजीरुष्य दृश्यते । रसनाग्नेनो कणास्थाने वरा दृश्यते तत्रैव ज्वरध्वान्तदिना कर नाम्ना पृथो रसो निहितोऽस्ति । तत्राऽधिकतया नक्षिका नियो

जिता । वजीरुशिरण मन्मथं पश्चादुन्मत्तवारिणा । आर्द्रकस्य रसेनेति उपेन वजीरुशिराऽऽर्द्रकयो र्भावाभावाच्च विशेषोऽस्ति, अतस्त विशेष-यत्परसे नयंविला तस्याऽत्रैवाऽन्तर्भावं समुपि ।

भाषा—हैर, पीपल, ताम्रमम्म, शुद्धत्रिफला और जमालगोटा, कडुकी, निस्रोत, शुद्ध पारा और गन्धक सब समभाग लेकर घारीकचूर्णकर पोरगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय घृतोबेरससे एकदिनरात मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १ से ४ गोलीतक रोग और रोगीकी शक्तिका विचारकर समय कयवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह नवीनज्वरको नष्टकरताहै ॥ ५३७ ॥

### ५३८ विश्वधारापर्वटीरसः (सर्वेश्वरपर्वटी)

रसोपरसलोहानि कार्पिकाणि पृथक्पृथक् ।  
तेषु लोहानि सर्वाणि पाषाणकठिनानि च ॥ २५९९ ॥  
घनसत्त्वञ्च तत्सर्वं भस्मीकृत्य प्रयोजयेत् ।  
रत्नानि बहुतुल्यानि भस्मीकृत्य च सर्वथा ॥ २६०० ॥  
पमिश्रतुर्गुणः सूतो गन्धस्तस्माच्चतुर्गुणः ।  
कृत्याकजलिकांताभ्यां क्षिपेत्लोहस्य भाजने ॥ २६०१ ॥  
प्रद्राव्य यदपारं निक्षिपेत्तदनन्तरम् ।  
रसोपरसलोहानां रत्नानामपि सर्वथा ॥ २६०२ ॥  
चूर्णं भस्म यिनि.क्षिप्य काष्ठेनाऽऽलोक्य मेलयेत् ।  
ततश्च पोडशांशेन मिश्रयित्वाऽऽरणं विषम् ॥ २६०३ ॥  
गोमयोपरि निक्षिप्य निक्षिपेत्कदलीवृक्षे ।  
पर्णाऽन्येन तु रम्भाया समाच्छाद्याऽतियत्नतः ॥ २६०४ ॥  
कराभ्याश्चिपिटीकृत्य क्षिपेदुपरि गोमयम् ।  
ततः शीतं समाकृष्य चूर्णयित्वा च पर्वटीम् ॥ २६०५ ॥  
विनिक्षिपेत्करण्डान्तयुज्याच्च रसमेवजम् ।  
विश्वधाराऽभिधानेयं पर्वटी परिकीर्तिता ॥ २६०६ ॥  
सर्वरोगविनाशाय नन्विना परिकीर्तिता ।  
रक्तियुक्तिसमानेयं मरिचाद्रिसमन्वितः ॥ २६०७ ॥  
विद्व्यां पट्प्रकारायां देया वृद्धिषु सप्तसु ।  
क्षयरोगेषु सर्वेषु पाण्डुरोगे विशेषतः ॥ २६०८ ॥  
ग्रहणीरोगभेदेषु शुल्मेष्वाप्रविधेषु च ।  
मूलरोगेषु शोफेषु ह्रीहोत्रे यक्ष्माभये ॥ २६०९ ॥  
प्रमेहं सोमरोगेषु प्रदेरं जठरातिषु ।  
विशोषेषु च मन्दाग्री सर्वहिक्कावृतेषु च ॥ २६१० ॥  
अनुकेष्वपि रोगेषु तत्तदौचित्ययोगतः ।  
रसोऽयं किल दातव्यः शिवतुल्यपराक्रमः ॥ २६११ ॥  
यद्यद्व्ययमसात्तर्यं हि जन्मना सह जायते ।  
तत्सर्वं सात्त्व्यमायायति रसस्याऽस्य निषेवणात् ॥ २६१२ ॥  
पीत्वा हालाहलं तोयं पर्वताग्रे पयोधृतम् ।  
सलिलं तैलस्तुल्यं तज्जलं स्यात्तुधासमम् ॥ २६१३ ॥  
सुकं यदि च पाषाणं जीर्यतेतत्क्षणात्ततः ।  
न तस्मिन्निर्गतं वापि विद्वाराहारकर्मणि ॥ २६१४ ॥  
र को, र र स, र र को, सर्वरोगाऽधिकारे ।

टि०—र. र. स. , र. र. को. यन्मो सर्वेश्वरपदं विना नाम । एतत्सर्वे  
योग्य नानानामभिषेकहारः सद्यःप्रकाराणां बुद्धिजाड्यं चोत्पत्तिः ।

**भाषा—**रस ( शिपिरिक, सोनामाखी, रुपामाखी, चपल,  
तुलिया, कान्तापाण, कान्तलोह, बैकान्त और नीलम् ), उपरस  
( मोदन्ती हरिताल, गन्धक, मैनसिल, तवकी हरिताल, कडुछ  
( मुदासन्न ), कमीस और फिटकडी ), लोह ( सुवर्ण, चांदी,  
पीतल, ताबा, सीसा, रागा, लोह और कांसा ) । अत्रकपित्त,  
इतसकभीभस्म १-१ कप, सम्पूर्णरत्नों ( माणिक, मोती,  
सुगा, पन्ना, पुसरज, हीरा, नीलम्, गोमेद, लमनियां वगैरह )  
को भस्म ३-३ रत्नी, इनसबसे चौगुना शुद्ध पारा और  
पाँसे चौगुना गन्धकलेकर पहिले पारगन्धककी नीलवर्णकच-  
लोकर धीपुनोहुँलोहेकीकड़ाहीमें डालकर बेरकेकोयलोपर गला-  
कर रस, उपरस, लोह और रत्नोंकोभस्म कमसे मिलाकर  
छक्कीसेचलाकर मिलावे । इसरेवाद समस्तमे १६ वा हिस्सा  
शुद्ध खाल्यठनाग मिलाकर ताजे गोबरपर रक्खेहुए केलेकेपत्तेपर  
ढालकर दूसरे केलेकेपत्तोसे ढाकर गोबरसे ढकदे । स्वाह-  
शीतलहोनेपर निकालकर रसजोड़े । इसमेंसे १-१ रत्नी मरिच  
और अदरकेसायदेकर रोग और रोगीकी औचित्ती समझकर  
२-२ चावल रोजाना बड़ावे । इसतद्दिवनभस्म ३॥ रत्नी या  
४ रत्नीतक बड़ाकर वही मात्रा स्थिर रक्खे इमे आरोग्यलामहोने-  
तक कायमरखे । अथवा १० दिनकेवाद हासकर रुदिकरे भस्म  
इगक्रमकी अपेक्षा आरोग्यलामहोनेतक स्थिरमात्रारक्खे और  
आरोग्यलामहोनेकेवाद धीरे २ हासकर योगको बन्दकरे । इत-  
तरहोवनकरलेसे ६ प्रकारकीविदग्धि, ७ प्रकारकी रुद्धि, सम  
स्वास्थ्यरोग, विशेषकर पाण्डू, महर्गोभेद, ८ प्रकारके शुष्म, अर्ध,  
शोक, ग्रीहा, यक्ष्म, प्रमेह, सोमरोग, प्रदर, उदररोग, मन्दाग्नि,  
हृदिकी हलादि तमामरोग नहोतेहैं । अनुपात समय अथवा  
रोगीचित्ती बदलकर नियतकरे । जो जो इन्त्य जन्मसे लगताम्पुहों  
बेलाय इगके नेवनसे सान्ध्य होजातेहैं । पर्वतोंमें हलाहली  
पीलियाहो तो बड़ दूध, घीका कामकरताहै । तैलकेमदराज  
पीनेमें आवेनो बड़भी अत्यन्त काम करताहै । भूलकर खाय-  
हुमा पन्थभी दूधमहोजाताहै इसलिये आहारविहायमें कोईभी  
परहेज नियत नहींहै ॥ ५३८ ॥

### ५३९ विश्वमूर्तारसः ( प्रथमः )

स्वर्णनागाकपत्राणां भागाः पञ्च पृथक् पृथक् ।  
त्रयाणां द्विगुणः मृतो जम्बीराऽम्लेन मर्दयेत् ॥ २६१५ ॥  
पिष्टं तां निम्बुके क्षित्वा दोलायन्त्रे दिग्व्ययम् ।  
पाचयेद्गन्धानाल्मस्तस्मादुन्मूल्य शृण्वेत् ॥ २६१६ ॥  
ऊर्द्धोऽर्धो गन्धकं दत्त्वा तालकञ्च रम्भोन्मिमतम् ।  
लोहमम्पुटं कृत्वा क्षित्वा चैव प्रपूरयेत् ॥ २६१७ ॥  
लघुपतयं च चूर्णेन प्र्यहं मन्दाग्निना पचयेत् ।  
आदाय शृण्वेत्पूरणं दद्याद्वाचचतुष्टयम् ॥ २६१८ ॥  
आर्द्रकस्य रम्भोपेनं क्षीमं पथ्यं न दापयेत् ।  
विश्वमूर्तारसो नास्ति मन्त्रिपानादिरोगाजित् ॥ २६१९ ॥

अर्कमूलत्वचः काथं मरिचं मिश्रितं पिबेत् ।

दशमूलकपायं वा हानुपानं सुखायहम् ॥ २६२० ॥

र. चि. , र. को. , यो. म. , रसायनसं. , र. वा. , र. क. यो. , र.  
मु. , ज्वराऽधिकारे । योगमहाणवे त्रयाणां द्विगुणस्थाने त्रयाणां  
त्रिगुण इति पाठ ।

**भाषा—**सुवर्ण, नाग और तापत्रकेवारीकपत्र ५-५ भाग,  
पारा ३० भाग लेकर खरलमें डाल जम्बीरीकेरमसे घोंटे । पत्रों-  
पर सबपारा चढ़ानेपर गोलाबनाय नोबूके अन्दररस दोला-  
यन्त्रमें काञ्चीसे दो दिनतक स्वेदनकरे । स्वाहशीतलहोनेपर  
निकालकर पारके बराबर शुद्धान्धक और हरितालका चूर्ण  
लोहेकेमम्पुटमें पत्रोंके नीचे ऊपररस सम्पुटपर ३-४ कपडिमिठी  
देकर लघुपतयन्त्रमें बन्दकर ३ दिनकी मन्दाग्निसे पकावे ।  
स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रसजोड़े । इसमेंसे ४-४ रत्नी  
अदरकेके रसकेसाय देनेसे सत्रिपातादि समस्तरोग नहोतेहैं ।  
इसकीमात्रादेनेकेवाद तुर्तं पथ्य न दे, नहींतो वमनहोकर  
हैरानी होगी । सत्रिपातमें आन्की जङ्गलाकाय अथवा दसा-  
मूलाकाय मिचं डालरदेना ॥ ५३९ ॥

### ५४० विश्वमूर्तारसः ( द्वितीयः )

शुद्धं सृतं समं गन्धं तापत्रमस्म मनःशिला ।  
चन्दनं त्रिफला वासा कुष्ठजीरकदीप्यकम् ॥ २६२१ ॥  
पतानि समभागानि हंसपादीरमेन च ।  
तत्तत्सर्वं खल्यमप्ये विदिनं मर्दयेद्विपक्षम् ॥ २६२२ ॥  
ततस्तु गोलनं कृत्वा घनमूपास्तरे शिपेत् ।  
भूधरे यत्रके पाच्यं स्वाहशीतलमुद्धरेत् ॥  
द्विगुलं भूधरेक्षित्यमुद्धं नाशयेद्विपक्षम् ॥ २६२३ ॥  
न. रा. , वै. चि. , उर्ददं ।

**भाषा—**शुद्धपारा, गन्धक और मैनसिल, तापत्रमस्म,  
सपेदचन्दन, त्रिफला, अजिप्ता, गुड, जीरा, अजवाइन, बेधन  
समभाग लेकर वारीकचूर्णपर पारगन्धककी नीलवर्णकचलीमें  
मिलाय हंसराजेरमेन ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय घनमूपामें  
बन्दकर ३-४ कपडिमिठीदेकर सूरानेपर भूधरयन्त्रमें पकावे ।  
स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रसजोड़े । इसमेंसे २-२ रत्नीजी-  
मात्रा समय अथवा रोगीचित्तानुमानकेसाय देनेसे यह उर्दको  
नष्टकरताहै ॥ ५४० ॥

### ५४१ विश्वम्भरोरसः ( प्रथमः )

शुद्धिभुवञ्चस्तुयककुचेराक्षाऽग्निमूलकम् ।  
भूधार्त्रिपथ्यभुञ्ज्याकरज्ज्वादानं समुत्तमानम् ॥ २६२४ ॥  
एतेषां भूपुटेनैव नैलं घ्राणं विचक्षणः ।  
मृतशुल्वद्वयार्भस्म हरितालञ्च गन्धकम् ॥ २६२५ ॥  
त्रिकटुत्रिफलादिद्रुमाक्षिकञ्च समादाकम् ।  
नागधन्तमर्धं मस्म त्रिषं हिङ्गलमेयं च ॥ २६२६ ॥  
ग्नानि पटपूतानि नेन नैलेन मेलयेत् ।  
नागपहोदलेनैव यद्गमात्रं प्रयोजयेत् ॥ २६२७ ॥

अथाऽऽर्द्रकरसोपेतसैन्धवेन प्रयोजयेत् ।  
 अष्टशलादिगुल्मानि नाशयेदेकमानतः ॥ २६२८ ॥  
 वातान्दुष्टाग्निपित्तोरोगानपस्माराननेकशः ।  
 पीनसादिश्लेष्मटोगान्प्रन्धिरोगांश्च दारुणान् ॥ २६२९ ॥  
 अद्रमरीमृषकृच्छ्रादिप्रमेहान्धिमपज्वरान् ।  
 नाशयेद्यद्वात्सर्वायान्नानपि निहन्ति च ॥  
 विश्वम्भररसो नाम्ना सर्वरोगहरः स्मृतः ॥ २६३० ॥  
 र. क. यो., र. कौ. ( शा ),

भाषा—सहिजनकेबीज, सेहुण्ड, अङ्गुष्ठिया बृहद और आक  
 इनका दूध, कंज, चिन्कमूल, मुँदेआवला, बडनाग, सफेद-  
 गुग्गु, पुष्करद्वजा पत्राङ्ग, मूलीकेबीज, सप्तसप्तभागलेकर जव-  
 कुट्टवृण्णकर धूर और आककेदूधमें मिलाय सुखाकर पातालक्यसे  
 तैलनिकाले फिर पारा और तापक्रम, शुद्धहरिताल और  
 गन्धक, त्रिकटु, त्रिफला, हिंग, सोनामाषी, नम और बज्र  
 भस्म, बडनाग, शिगरिक येसन सप्तभागलेकर बारीकचूर्णकर  
 पारे, गन्धक और हरितालकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय पूर्वतैल-  
 की १-२ भावनाएँ देकर रसजोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती पानमें  
 रखकर अथवा सैन्धव मिलेहुए अदरकवैरसकेसाथ देवे  
 इसमें ८ प्रकारकेशूल, गुल्म, दुष्टवातरोग, अपस्मार, पीनस  
 बगैर कफरोग, दारुणप्रन्धिरोग, अद्रमरी, मृषकृच्छ्र, प्रमेह,  
 विपमज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५४१ ॥

### ५४२ विश्वम्भररसः

( म्वच्छन्तभैरवः, काससंहारभैरवः ) २

शुद्धं मृतं विपश्चाऽर्द्रं हिङ्गलं गन्धतालकम् ।  
 तुल्यं तुल्यं खल्यमध्ये क्षिपेन्मयं दिनत्रयम् ॥ २६३१ ॥  
 हंसपादीरुपायेण कुक्कुटुडुटुपाचितम् ।  
 शूर्णाङ्गुष्ठ्य विभाष्याऽथ पुनः कुक्कुटसञ्चकम् ॥ २६३२ ॥  
 दूर्मयाराहतिभिर्जैः पित्तैर्भाष्यं दिनत्रयम् ।  
 मापमात्रप्रयोगेण ह्यनुपानविशेषतः ॥ २६३३ ॥  
 घस्तिवातं सन्निपातं प्रसङ्गं नाशयेज्ज्वरम् ।  
 हृन्नापथ्यं ततो मुख्या स्विमुखण्डानि भस्मयेत् ॥ २६३४ ॥  
 नारिकेलोदकं दाहे पिबेच्छुद्धं दारुणान्धितम् ।  
 विष्णुना कथितः पूर्व विश्वम्भररसोत्तमः ॥ २६३५ ॥  
 वै चि, र क यो, व रा, ज्वरे ।

टि०—अयमेव पाठो वसिष्ठादे वसरागीरवैद्यैर्विन्तामण्यो स्वच्छ  
 नभैरतनाम्ना लिखितस्वयं गन्धकोऽसि, अत्र थोडे स नास्ति विपर्यय  
 दित्वावृत्तिरामीव साऽपि प्रमादादेव सज्जाता इति कृत्वा गन्धकमत्रैव समा  
 वेद्य स निष्पादित इति । अस्यैव पाठस्य वैयचिन्तामणौ त्रिगुण इति  
 नाम स्थापयित्वा छात्राणाङ्कते प्रमवायुर रक्षिता साऽपि दूरदपारता ।  
 अग्निश्रेव रसे पित्तमात्रना निष्पाद्य वैयचिन्तामणिलेखकाजीयकौरस  
 काससंहारभैरव इति नाम स्थापित, विषयटिप्पण्ये योगस्तद्विरहितयो  
 गालससगुणो श्लेष्मधिकोऽस्त्यत सोऽपि रसेज्जैव समाविशति ।  
 पित्तानामभावे तु सर्वेऽपिरसासक्तत्वापि तुर्नन्तैव परमस्त्वयैति  
 विशेष सर्ववैद्याऽसि इति दिक् ।

भाषा—शुद्ध पारा और बडनाग, अत्रकभस्म, शुद्धशिम्-  
 रिक, गन्धक और हरिताल सप्तभागलेकर नीलवर्णकजलीकर  
 हंसराजके रससे दोदिन मर्दनकर गोलबनाय शरावसम्पुटमें  
 बन्दकर कुक्कुटपुष्टकी आवड़े । स्वाशशीतहोनेपर निकालकर  
 कठुआ, सुअर और मछलीके पित्तोंसे ३-३ दिन मर्दनकर  
 उद्धवरावर गोलियें बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय  
 अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे वसिष्ठा, सन्निपात, प्रचण्ड-  
 ज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै । मुखलगनेपर यथेष्ट पथ्यदेना ।  
 अत्यन्तदाहहोनेपर ईख और नारियलकाजल घाकर मिलाकर  
 पिलाना ॥ ५४२ ॥

### ५४३ विश्वरूपोरसः

त्रिकटुकयवनेष्टं कारयो कृष्णजीरं,  
 रहनजललयङ्गं पारसीका यवाती ।  
 सरुमलकणमूलं चेतकीङ्गीतकानि,  
 गुटिजरणविडङ्गं सैन्धवं पत्रमुस्तम् ॥ २६३६ ॥  
 मिसिन्निबृद्धजमोदा मेथिका त्वक् प्रपथ्या,  
 कलितरफलधानी विल्यकालिङ्गमूलीम् ।  
 अतिविषविडयुक्तं हिङ्गुनिर्यासनागं,  
 यशिरनलद्वजातीकोपजातीफलानि ॥ २६३७ ॥  
 दृढरपदि समस्तं प्रक्षिपेत्सर्वतुल्या,  
 निहं वरविपतिन्मुत्साऽभ्यास्तकसिद्धान् ।  
 अनुहिममद्युक्तो मापमात्रः स सूतः,  
 प्रशमयति विकारांश्चेष्टमवातामजातान् ॥ २६३८ ॥  
 प्रथममलविषवन्धानाहमाटोपमुग्रं,  
 ज्वरमरुचिविस्वीं शूलमभद्रपादीन् ।  
 हरति च सहसाऽयं जाडरान्सर्वरोगान्,  
 ग्रहणिगरविमुख्यानाहयक्ष्मातिसारान् ॥  
 गिरिशविहिततन्त्रे भद्रयुक्त्या नियुक्तो,  
 निखिलगुणनिवास्तो विश्वरूपो रसोऽयम् ॥ २६३९ ॥  
 र. का, शूलाऽधिकारे ।

भाषा—त्रिकटु, लहसुन, कलोजी, कालीजीरी, चिन्क-  
 मूल, सस, लौग, सुरासानी अजवाइन, कमलफूल, पिपलासूल,  
 बडीहई, मुल्हद्री, छोटोइलायची, जीरा, बिज्र, सैन्धव, पत्रज,  
 नापरमोथा, सोंफ, निषोत, अजमोद, मेथी, तज, छोटोहराई,  
 बडेझा, आवला, वेल और जुरैयाकीजड़, अतीश, नवसादर,  
 हिंग, नागभस्म, सफेदपुनर्नवा, सरा, आविरी, जायफल येसब  
 सप्तभाग, छाछमें हरीवैसाय पकायेहुए कुचिले सबके बराबर  
 लेबर बारीकचूर्णकर रखजोड़े । अथवा अदरकवैरहके रससे  
 थोडेकर १-१ मासकी गोलिया बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१  
 गोली उशीरासब अथवा कर्पूरसबवैसाय देनेसे कफ और वात-  
 विकार, प्रथम मलविषवन्ध, आनाह, अत्यन्त आटोप, ज्वर,  
 अश्वि, हैजा, शूल, अन्तर्द्वशूल, समस्त उदररोग, ग्रहणी, गर,  
 राजयक्ष्म, अतिसार इनसबको यह नष्टकरताहै । शूलमें



हृदया निवलाहुआ, विपज खरस्पर्श इष्ट तथा अन्य १८ प्रकारकेकुष्ठ, मन्दाग्नि और अरुचि इनसबको यह नष्टकरताहै । जिसजगह दवा काम न करतीहो वहा रक्तमोक्ष कराना ॥५४६॥

### ५४७ विश्वेश्वररसः ( तृतीयः )

रसश्च सौम्यं त्रिदिनं विमर्द्य

जम्बीरनीरेण ततः समस्तम् ।

संयोज्य जम्बीररसेन सम्य-

ग्विमर्दयेत्त्रिणि पुनर्दिनानि ॥ २६८३ ॥

कुत्सनं कुमारीरसतस्त्रिपारं

द्विवासरान्धेनुजघ्नकेण ।

द्विवासरानाजभये विमृद्य

शुष्कश्च शुष्कं प्रतिभावनं पुटेत् ॥ २६८४ ॥

धात्रीरसेनेकवारं पुष्करस्य रसैः कश्चित् ।

त्रिभिः पुटे दग्धशुष्कं भस्म तन्मर्दयेदिनम् ॥ २६८५ ॥

ततो भवेत्सप्रमाणः सिद्धो विश्वेश्वरो रसः ।

त्रिसप्ताहं त्रिगुञ्जोऽयं देयः कन्यारसान्वितः ॥ २६८६ ॥

दुग्धाशनयुतो हन्यात्कासं श्वासं क्षयं तथा ।

भोक्तुं वास्तुकुडुग्धाधमग्निमान्द्याऽरुची जयेत् २६८७

त्रिगुञ्जो भरिवाऽर्धेन कफोद्रेकविनाशनः ।

दशमूलगुडसौत्रैश्चिसप्ताहं त्रिगुञ्जकः ॥ २६८८ ॥

त्रिदोषजं क्षयं हन्यादुग्धमक्तमुजो ध्रुवम् ।

गुण्डीचूर्णसमायुक्तं हितं मांसरसं सदा ॥

अयं सर्वेषु रोगेषु योज्यो विश्वेश्वरो रसः ॥ २६८९ ॥

र. क. र. म., सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध पार और चांदीके बारीकरेतो ३-३ दिन जमीरीरससे अलग अलग मर्दनकर इक्केमिलाय १-२ पहर सुखा घोटकर पिष्टना बनाय जमीरी और धीकुवाररसोंसे ३-३ दिन मर्दनकर भोजन और जलपेयनसे २-२ दिन, अफले और पोहलमूलकेरससे १-१ दिन मर्दनकर आतशीचीचीमें भाकर लवण अथवा भस्मयन्त्रमें रख ४ पहरकी आचड़े । स्वाह-शीतलहोनेपर निकालकर फिरसे आचड़े और पोहलमूलके रससे मर्दनकर पूर्ववत् आचड़े । इसप्रकार ३ आचड़े देकर धीधी-मेंसे निकालकर रखछोड़े । यदि चांदीसे पारा अलग होजाय तो उसे बारबार चांदीमें मिलाकर घोट और अग्निदेवे । कदा-चित् ३ बारमें पाराभस्म न हुईहो तो १-२ आचड़े और देवे । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा धीउजारकरसकेसाथ देनेसे काव, श्वास और क्षयको यह नष्टकरताहै । इसमें वधुएकाकाक और दूधचायल देना । ३ रत्ती मरिचकेचूर्णकेसाथदेनेसे मन्दाग्नि, अरुचि और कफघ्नोपको नष्टकरताहै । दशमूल, गुड और मांकेसाथ २१ दिनतकदेनेसे यह त्रिदोषजस्यको नष्टकरताहै । सौटसाचूर्ण डालकर मांसरस इत्थं हितकरहोताहै ॥ ५४७ ॥

### ५४८ विश्वेश्वररसः ( चतुर्थः )

मृतमृताकतीरणश्च तालं गन्धश्च कटफलम् ।

मेषपट्टां चला गुण्डीमाद्रीं पच्या च पालकम् ॥ २६९० ॥

धान्यकं मर्दयेत्तुल्यं पर्पटोत्पट्टवै दिनम् ।

मर्द्य मापं लिहैत्सौत्रैः कफपित्तमदात्यये ॥ २६९१ ॥

रसो विश्वेश्वरो नाम प्रोक्तो नागार्जुनेन च ।

काकमाचोरसश्चाऽनु सैन्धवेन युतं पिबेत् ॥ २६९२ ॥

र. सं., वि. र. म., रसायनसं., ज्वराधिकारे । वि. र. म.,

रसायनसं., चोरेश्वर इतिनाम ।

भाषा—पारा, तांबा और लोहभस्म, शुद्धहरिताल और मन्धक, कायफल, मेढासींगी, वच, सोंठ, भारती, हरे, सुगन्ध-बाला; धनियां, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पटोलपर्पट्टे-वायसे एकदिन मर्दनकर १-१ मासेकी गोलियां बनाकर रख-छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुबेसाथ देकर संधानमक मिलाया-हुआ मकोयकासे पिलानेसे कफपित्तमहात्यय नष्टहोताहै ॥ ५४८ ॥

### ५४९ विश्वेश्वररसः ( पञ्चमः )

स्वर्णाऽम्रलौहयज्ञानां रसगन्धकयोरपि ।

चैकान्तस्य च सङ्गुहा भागांस्तोलकसम्मिताम् २६९३

कपूरसलिलेनाऽथ भावयित्वा यथाविधि ।

रक्तिकैकप्रमाणेन विदध्याद्वटिकास्ततः ॥ २६९४ ॥

अयं विश्वेश्वरो नाम रसः फुफ्फुसजान्मादात् ।

हृद्रोगांश्च जयेत्सर्वान् संशयोऽत्र न विद्यते ॥ २६९५ ॥

भे. र., हृद्रोगाधिकारे ।

भाषा—सुवर्ण, अम्रक, लोह और वज्र इनकीभस्में, शुद्ध पारा और गन्धक, चैकान्तभस्म येसब १-१ तोला लेकर नील-वर्णकजलीकर कपूरकेजलसे २-३ भावनाएं देकर १-१ रत्ती-कीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपायकेसाथदेनेसे फुफ्फुस और हृदयके तमाम रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५४९ ॥

### ५५० विश्वेश्वररसः ( षष्ठः )

त्रिप्रिकाम्बुदेष्टुमिषुःकुष्टाऽऽमोदरसाऽमृतैः ।

भृङ्गाम्बुफलिते विश्वेश्वरो नाम रसो मतः ॥ २६९६ ॥

कासश्वासाऽग्निमान्द्याशःकामलायमिषाण्डुह्वत् ।

कुष्टाऽजीर्णविस्मृच्यतीनांशयेत्तत्तदीपयेः ॥ २६९७ ॥

र. (मा.), कासस्वासादौ ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिकण्ड और त्रिजात, नागरमोथा, विट्ठ, विवक, कुठ, शुद्ध गन्धक, पारा और घट्टनाय सबसमभाग-लेकर बारीकचूर्णकर पापेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर भंगेकेरससे २-३ दिनमर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपाय-साथदेनेसे कास, श्वास, मन्दाग्नि, श्वासीर, कामला, वमन, पाण्डू, कुष्ठ, अजीर्ण और देहदोष ये नष्टकरताहै ॥ ५५० ॥

### ५५१ विश्वेश्वररसः ( सप्तमः )

रसगन्धककपूररज्यपणं टङ्गुर्ण विपम् ।

कपदिकामभस्म सर्वं मर्दयेकत्र कारयेत् ॥ २६९८ ॥

तुलसीरससंयुक्तं देयं शीतज्वरे ततः ।

दाहज्वरे च विषमे सन्निपाते तथैव च ॥

अयं विध्वंश्वरो नाम सद्यः प्रत्ययकारकः ॥ २६९९ ॥

र का., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, कपूर, सुहागा और बलनाग, त्रिकटु, कौडीकीभस्म सब समभागलेकर तुलसीकेरसमें मर्दन कर १-१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली रोगीका बलबलदेखकर समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे शीत, दाह और विषमज्वर, सन्निपात येसब नष्टहोतेहैं ॥ ५५११ ॥

### ५५२ विश्वेश्वरीवटी

वन्ध्यागन्धकणालसूतकविपाक्षारास्थिका लाङ्गली, सिंहवीथीजमधूरुघोलनखरव्यालेगुपाडेन्द्रकैः ।  
निर्गुण्डीरसमर्दितैरथ कृता कोलप्रमाणा वटी,  
घातव्याधिधिरोधिनी विजयते लोभेऽत्र विध्वंश्वरी ॥  
रस. सं. २ (मा) वातव्याध्याधिकारे

भाषा—बाह्यलेखकेकन्द, शुद्ध गन्धक, हरिताल, पारा, बलनाग और करिहारीकीजड़, पीपल, अतीस, तीनोंक्षार, इन्-ओइ, भटकटैयके बीज, महुआ, हीराबोल, मख, चित्रकमूल, शुद्धकपूर, पाठा, इन्द्रजव सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर समालूकरसे १-२ दिन मर्दनकर बेरबारा गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली वातहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तवातव्याधियोंको नष्टकरतीहै ॥ ५५२ ॥

### ५५३ विश्वोदीपकाऽध्रम्

अन्नं निर्मलमारितं पलमितं चूर्णीकृतं यत्नतः,  
ध्वन्यं चित्रकमिन्द्रसूतकनकं मालूरपत्राऽऽद्रकम् ।  
मूलं पिप्पलिसम्भवं मधुरिका नीपाऽकंमूलं पृथक्,  
सैषां सत्त्वपलैर्विमर्दितामिदं कर्पं क्षिपेद्वृण्णम् २७०१  
शुद्धासम्भितमेतदेव यत्नितं तत्पारिभद्रद्वै-  
र्मर्दाभि चिरज्जातगुल्मविकर्षं शूलाम्लपित्तं ज्वरम् ।  
छर्दिं दुष्टमसुरिकामलसकं श्वासश्च कासं तृषां,  
ह्रीहानं यकृतं क्षयं स्वरहितं कुष्ठं महारोचकम् २७०२ ॥  
दाहं मोहमशेषदोषजनितं कृच्छ्रञ्च दुर्नामरु-  
मार्मं घातविमिश्रितं नयनजं रोगं समुन्मूलयेत् ।  
विश्वोदीपकनामरोगहरणे प्रोक्तम्पुनः शम्भुना,  
सर्वेषां हितकारकं गदघतां सर्वाभयव्यसनम् ॥  
पापार्णं यदि भक्षितं तदपि तं दुःखसुखीर्णं पुनः,  
वैर्यं व्यप्यतरं रसायनवरं मेधाकारं कान्तिदम् २७०३  
भै २, र घु, अमिमाये ।

भाषा—निध्न अन्नकभस्म १ पल लेकर चव्य चित्रक, कुटज, मूरण, घट्टरा, नेलपत्र, अदरक, पिपलामूल, सोंफ, कदम्ब, आककीजड़ इनप्रत्येकके १-१ पल स्वरसोसे मर्दनकर १ कर्प गुणासुहागा डालकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े ।

इनमेंसे १-१ गोली निम्बपत्रस्वरसकेसाथदेनेसे बहुतदिनका मन्दाभि और गुल्म, शूल, अम्लपित्त, ज्वर, वमन, मसूरिका, अलसक, श्वास, कास, तृषा, शोधा, यकृत, क्षय, स्वरभङ्ग, कुष्ठ, अरुचि, दाह, मोह, समस्तदोषज मूत्रकृच्छ्र, भरी, आमवात, नेत्ररोग इनसबको यह नष्टकर बल, बुद्धता, मेधा, कान्ति और रसायनको करताहै ॥ ५५३ ॥

### ५५४ विपतिन्दुगर्भागुटिका

ग्रहबीजरसराजगन्धका

द्वादशैककरतुल्यभागिका ।

आन्यहाम्लजलमर्दितोद्धृता ।

सूर्यभागविपतिन्दुमर्दिताः ॥ २७०४ ॥

सप्तोद्भिन्नगन्धमाण्डस्था मासं धान्योपिताः स्थिताः ।  
तद्दुष्टयोऽस्पृशरोगघ्ना पण्मासाद्विधिसेविताः २७०५  
र (मा) स्पर्शवाते ।

भाषा—ललासबीज १२ भाग, शुद्धपारा १ भाग और गन्धक २ भाग लेकर नीलवर्णकजलीकर ३ दिन विजोरे प्रयुक्ति-के रससे मर्दनकर १२ भाग शुद्ध कुचिलेका चूनेमिलाय गोली बननेलायक मधु मिलाकर चिबनेवर्तनमें रखकर एकमहीनेतक धान्यकी राक्षिमें गाढ़दे । इसमेंसे १-१ माशा रोगोपितानुपानकेसाथ ६ महीनेतक देनेसे स्पर्शरोग नष्टहोताहै ॥ ५५४ ॥

### ५५५ विषमज्वरहररसः

शिलासविमलारसं रसकताप्यगन्धाश्मयुक्तं  
त्रियारमिति भावितं विमलकारघङ्गीरसैः ।  
विशोष्य निहितं शुभे लघुनि शुल्यपाने दृढं,  
कपालविहिते पचेतु सिकताख्ययन्नस्थितम् ॥ २७०६ ॥  
ज्वलदूर्ध्वशालियहेरुत्तार्यैतन्निवारं तु,  
कृष्णमाण्डकारघङ्गीतोयैर्भावं ततस्त्रिवल्लभम् ।  
शुद्धमोचल्लण्डयोपात्सीरामैरगशनस्य दाहादीन्,  
विषमज्वराभिहन्त्यास्तघांनेव त्र्यहोण्ये ॥ २७०७ ॥

रसायनस, २ अ, विषमज्वरे ।

भाषा—शुद्धमैन्सिल, हरिताल, कास्यमाक्षिक, शुद्धपारा, खारिया, सोनायासी और गन्धक सबसमभागलेकर नीलवर्णकजलीकर कोलेकेरससे सुखा सुखाकर ३ भावनाएँ देकर बरेलेकेरसमें कल्कबनाय बराबरके तावेके सप्पुमें भीतकीतर्क लेपदेकर ढकनेसे बन्दकर ६-७ करमिद्री देकर बाहुकायन्त्रमें रख जाचदे और ऊपर बोरेसे धान डालदे । जब धानकी खोल-होजाय तब उतारकर कोयलोपर रखदे । स्वादशीतलहोनेपर निकालकर ताप जितना मध्य होमया हो उसको सायमें लेकर सफेदकोहला और बरेलेकेरसमें ३-३ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोखिमें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे ३ दिनमें विषम ज्वरोंको यह नष्टकरताहै । अधिकदाहमालूमहोनेपर गुडकाशवंत, केला, धाकर और दूधमातका सेवन कराये ॥ ५५५ ॥

## ५५६ विषमज्वरान्तकलोहम् ( प्रथमम् )

पारदं गन्धकं तुल्यं सूताऽर्द्धं जीर्णताम्रकम् ।  
ताम्रतुल्यं माक्षिकञ्च लोहं सर्वसमं नयेत् ॥ २७०८ ॥  
जयन्त्याःस्थरसेनैव कोकिलाक्षरसेन च ।  
वासकाऽऽर्द्रपर्णरसैः पञ्चधा च विमर्दयेत् ॥ २७०९ ॥  
पृथक् कलायमानान्तु घटिकां कारयेद्रिपक्व ।  
विषमज्वरान्तनामाऽयं विषमज्वरनाशनः ॥ २७१० ॥  
वह्निदीप्तिकरो हृद्यः ग्रीहगुल्मविनाशनः ।  
क्षुण्ण्यो घृंहणो घृष्यः श्रेष्ठः सर्वरुजापहः ॥ २७११ ॥  
भै. र., र. दु., घ., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग, पारेसेभाषी ताम्र और सुवर्णमाक्षिकमस, लोहमस सबकोबराबर लेकर नीलवर्णकमलीकर जैती, तालमखाना, अदुध, अदराय और पानकेस्वरसोछे ५-५ दिन मर्दनकर मटरबराबर गोलियां बनाकर रखाछे । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोक्तितानु-पानकेसाधनेसे विषमज्वर, भन्दाभि, मीहा, हृद्यकेरोग, गुल्मप्रभृति सबरोगोंको यह नष्टकरताहै । चक्षुष्य, घृंहण और हृद्य है ॥ ५५६ ॥

## ५५७ विषमज्वरान्तकलोहम् ( वृहत् ) २

शुद्धं सूतं तथा गन्धं कारयेत्कज्जलीं शुभाम् ।  
मृतसूतं हेमतारं लोहमस्रञ्च ताम्रकम् ॥ २७१२ ॥  
तालसत्वं यक्ष्मसम् मौक्तिकं सप्रपालकम् ।  
सुवर्णमाक्षिकञ्चाऽपि घूर्णयित्वा विमाययेत् ॥ २७१३ ॥  
निर्गुण्डीनागवल्ली च काकमाषी सपर्वटी ।  
त्रिफलाकारपेह्लज्ज दशमूली पुनर्नवा ॥ २७१४ ॥  
गुडूची घृपकञ्चाऽपि सभृङ्गः केशराजकः ।  
एतेपाञ्च रसेनैव भाषयेत्त्रिदिनं पृथक् ॥ २७१५ ॥  
शुक्रामानां घटीं कुर्याच्छास्त्रविलुप्तशली भिषक् ।  
पिप्पलीशुङ्गेनैव लिह्ये घटिकां शुभाम् ॥ २७१६ ॥  
ज्वरमण्डविषं हन्ति निरामं साममेव वा ।  
सप्तधातुगतञ्चाऽपि नानादोषोद्भवं तथा ॥ २७१७ ॥  
सततादिज्वरं हन्ति साध्याऽसाध्यमयापि वा ।  
अभिघाताऽभिचारोत्थं ज्वरं जीर्णं विशेषतः ॥ २७१८ ॥  
र. सं., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, पारा, सुवर्ण, चांदी, लोह, अभ्रक, ताम्र, यक्ष, मोती, प्रवाल सुवर्णमाक्षिक इन सबकोमसमें और हरितालमख, देवघ समभागलेकर सबकी नीलवर्णकमलीकर निर्गुण्डी, पान, मकोय, पित्तरापडा, त्रिफला, बरला, दशमूल, पुनर्नवा, पिलोय, अदुध, भंगरा, कालाभंगरा इन-प्रदेहके स्वरसोछे १-१ दिन मर्दनकर १-१ गोली गोलियां बनाकर रखाछे । इनमेंसे १-१ गोली पीपल और शुङ्गेमाष-देनेसे ८ प्रकारकाज्वर, निगम अथवा घाम, गमपानुगमज्वर,

सततादि नानादोषज्वर, साध्य और असाध्य अभिघातज्वर, अभिचारोत्थ और जीर्णज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५५७ ॥

## ५५८ विषमज्वरान्तकलोहम् ( तृतीयम् )

हिङ्गुलसम्भवं सूतं गन्धकेन सुकज्जलीम् ।  
रसपर्पटित्वत्पाच्यं सूताह्निहेममसमम् ॥ २७१९ ॥  
लोहं ताम्रमस्रकञ्च रसस्य द्विगुणं क्षिपेत् ।  
यक्ष्मञ्च प्रवालञ्च रसाऽर्द्धञ्च विनिःक्षिपेत् ॥ २७२० ॥  
मुकाशहं शुक्तिमसम् रसपादिकमेव च ।  
मुकाशूहं च संस्थाप्य पुटपाकेन साधयेत् ॥ २७२१ ॥  
भक्षयेत्प्रातःकथाय द्विगुणाफलमानतः ।  
अनुपानं प्रयोक्तव्यं कणाहिदुससैन्धवम् ॥ २७२२ ॥  
ज्वरमण्डविषं हन्ति वातपित्तकफोद्भवम् ।  
ग्रीहानं यकृतं शुल्मं साध्यासाध्यमयापि वा ॥ २७२३ ॥  
सततं सन्तलाप्यञ्च व्याहिकं चातुराहिकम् ।  
कामलां पाण्डुरोगञ्च शोथं मेहमरोचकम् ॥ २७२४ ॥  
ग्रहणीमामदोषञ्च कासं श्वासञ्च दारुणम् ।  
मृगरुच्छ्रुतिसारञ्च नाशयेदधिकरूपतः ॥ २७२५ ॥

र. सं., र. दु., भै. र., घ., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—४-४ भाग शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर रसपर्पटीकी तरह पर्वटी बनाय सुवर्णमसम् १ भाग, लोह, ताम्र, और अभ्रक मसम् ८-८ भा., यक्ष और प्रवालमसम् २-२ भाग, मोती, यक्ष और सीपमसम् १-१ भाग लेकर सबका बारीक घुण्कर मोतीकीसीपमें बन्दकर ३-४ कपडिमिठी देकर पुटपाकसे स्वेदितकर रखाछे । इनमेंसे २-२ रत्तीकीमात्रा पीपल, हिंग और सैन्धवमकेसाथ देनेसे वात, पित्त और कफ-जन्य ८ प्रकारकाज्वर, मीहा, यकृत, शुल्म, सन्तल और सन्त, व्याहिक, चातुर्धिक, कायला, पाण्डु, शोथ, प्रमेह, अश्वि, ग्रहणी, आमदोष, कास, भयहराधम, मृगरुच्छ्र, अतिगार, इन सबको यह नष्टकरताहै ॥ ५५८ ॥

## ५५९ विषमज्वरारीरसः ( शीतारिः )

शुद्धं सूतं तथा गन्धं ताम्रं लोहं मनःशिलाम् ।  
ममभागं विमृष्टाऽथ भाषयेत्तुलसीजले ॥ २७२६ ॥  
कारयल्लीभृङ्गराजपूतनीरे विमर्दितम् ।  
अजामूत्रेण दातव्यं यद्धो विषमशान्तये ॥  
विषमारीरति नामाऽयं विषमोन्मूलनहमः ॥ २७२७ ॥  
र. सं., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और लोहमसम्, शुद्ध-मनःशिला मय समभाग लेकर नीलवर्णकमलीकर तुलसी, कंठला, भंगरा, पत्रा इनके रसोछे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखाछे । इनमेंसे १-१ गोली बरारीदेमृङ्ग-साथ देनेसे यह मममन विषमरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ५५९ ॥

## ५६० विपनाशनोरसः

भागेकं रसनायकस्य विमलं गन्धं रसं तुल्यकं,  
गौरादं नवसादरं त्रिकटुं गुञ्जा सुजातीफलम् ।  
सर्वं कज्जलवद्विमृष्टं पयसा चर्चकयोरपर्येत,  
सिद्धः स्याद्विपनाशनो गरुडघट्टोकोऽगदोऽयं बुधैः  
मिल्या निम्बुरसेन सुगुलुयुतो देवो बलोने नरे,  
हृन्पाहन्तविचयन्धनं विषमपि श्वाऽऽसूककीटादिजम् ।  
नानामासुतनाशनभ्यर्चदितं तोवाञ्च पीडाञ्जयेत्,  
कौञ्ज्याऽपस्मृतिपाण्डुतान्द्रिकहरश्चोष्मादविष्वंसनः  
१ भौ., विषाऽधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, रसौत, तुल्य, सोमल, हरि-  
ताल, और नवसादर, त्रिकटु, गुञ्जा, आयफल सबसमभागलेकर  
बारीकचूर्णकर पारोन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाय घृह  
और भाककेधौसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोमिया  
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगो-  
चितानुपानकेनाश देनेसे दन्तविषय, विषमज्वर, कुता, चूहा  
और जहरीकीडोंका जहर, नानाप्रकार की वायुपीडा, हृदकाया-  
हुआ दुष्टेकाविष, कुञ्जता, पाण्डु, तन्त्रा, उन्माद इनसबको  
यह नष्टकरताहै । निर्मलमनुष्यकेलिये भीबूको पीरकर उसमें  
गूलकेसाथ डालकर सुसाना चाहिये ॥ ५६० ॥

## ५६१ विषमान्तकरसः

रसम्लेच्छालकुन्दीगन्धसर्परासाक्षिकम् ।  
पिप्पला जम्माऽम्भसाक्षिप्रताम्रपात्रोदरक्षिपेत् ॥ २७३० ॥  
गन्धकेन च संलिय सत्पचेत्कास्थपाकयत् ।  
भाण्डे लयणपूर्णे तु मध्ये पात्रं निरुद्धं च ॥ २७३१ ॥  
यामपात्रं ततः शीते तुरथपादं विनिक्षिपेत् ।  
यिमृष्ट घटिकां कुर्याद्रक्षिकप्राप्यसम्भिताम् ॥ २७३२ ॥  
द्वेद्वीह्येन केनाऽपि पर्णैरुण्डोपणे युताम् ।  
पेकाहिकं द्रव्याहिकञ्च तृतीयकचतुर्थको ॥ २७३३ ॥  
प्रस्कन्दनञ्च शमयेत्पूरं मुद्रसितायुतम् ।  
पथ्यञ्च यज्येन्मासं राजिकां तैलमम्लकम् ॥ २७३४ ॥  
टो, ज्वराधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पारा, शिंगरिफ, हरिताल, मैनसिल, गन्धक,  
खपरिया, और सोनामाखी, सब समभाग लेकर नीलवर्ण  
कज्जलीकर जमीरीकेरससे एकदिन मर्दनकर इसमें दिगुणतविके-  
सम्पुमें लेकर २-४ बघइमिरी देकर सुखनेपर लयणयन्त्रमें  
बन्दकर ढकन लगाकर ३-४ बघइमिरीसे मुहुरो बन्दकरदे ।  
फिर इसे चूल्हेपर चढाय एकपहरकी कड़ी आंरदे । स्वात्रासीतल  
होनेपर निकालकर इतने वतुनेभाग तुल्यमम्ल मिलाय जमीरी  
केरससे १-२ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोमिये बनाकर  
रखछोड़े । इनमेंसे १ से ३ गोलीतक रोग और रोगीका बला  
३ देसकर शुभमें गोलीकानपेट पानमें रखकर देनेसे एकादिक  
द्रवादि, तृणिक और चातुर्थिक इनसबको यह नष्टकरताहै ।

मलन्तसोपये सुदृयुष और धरकरेसाथ देना । एकमहीनेतक  
राई, तैल और खटाई नहीं देना ॥ ५६१ ॥

## ५६२ विषमारीरसः ( महादिः )

अशोधितं रसं तालं खर्परञ्च मनःशिलाम् ।  
माक्षिकं हिह्लुदं गन्धं शिबितुल्यं यथाक्रमम् ॥ २७३५ ॥  
मर्दयेद्याममेकन्तु मिषक् सम्यगुत्कृतिः ।  
इन्द्राणिकाभृङ्गराजकारवल्लीजयारसे ॥ २७३६ ॥  
वेदघर्षं विमर्दत ततः कुर्यात्सुगोलकम् ।  
भाण्डमध्यगतं ताम्रपात्रेणेनं पिघापयेत् ॥ २७३७ ॥  
अमयारुक्खटीकलैः सन्धि लिम्पेदुत्कृतिः ।  
सिकतापूरितं कृत्वा पात्रं किञ्चित्प्रशयेत् ॥ २७३८ ॥  
तत्र त्रिचतुराः सम्यद्विवेद्याः शालयः शुभाः ।  
दीपामिना पचेत्तायघायल्लाजा भयन्ति ताः ॥ २७३९ ॥  
स्यमायशीतलं ग्राह्यमपकारं न मेलयेत् ।  
इन्द्राणिकाकारवल्लीस्वरसेन विमर्दयेत् ॥ २७४० ॥  
गुञ्जाप्रयं कोलकेन तुलसीरसोऽपि वा ।  
निगुण्डीमरिचाभ्यां वा रसोनेन गुडैर्न वा ॥ २७४१ ॥  
ज्वराञ्च विषमाम्भसाक्षिप्रताम्रपत्रोदरक्षिपेत् ॥ २७४२ ॥  
दाहपूर्वाश्छीतयुक्ताम्राशयेद्विषमज्वराम् ॥ २७४३ ॥  
पथ्यं द्वादश गोक्षीरैः कोहाम्बु यज्येद्विधुषम् ।  
श्रीसङ्गो दूरतस्याज्यः शीताम्भः सम्परित्यजेत् ॥  
विषमारिं महान् प्रोक्तः शम्भुना रससागरे ॥ २७४४ ॥  
र. का, ज्वराधिकारः ।

भाषा—शुद्धपारा, हरिताल, खपरिया, मैनसिल, सोना-  
माखी, शिंगरिफ, गन्धक, तृतीया सब समभागलेकर नीलवर्ण-  
कज्जलीकर इन्द्रायण, भपरा, केला और भांगकेस्वरसोंसे ४-४  
पहर मर्दनकर गोलाग्राम हण्डीकेपीचमें रख ऊपरसे ताबके-  
सम्पुमेंदेकर हों, मिलावे और खपरियामिरीके कलमें सन्धि-  
बन्दकर ऊपर ४ अङ्गल याइसर चूल्हेपरचढाय जमिदेवे । ऊपर  
परीक्षाएं ६-७ घण्टाडालदे । पहिले दीपामिने घुलकर क्रमसे  
बढावे । घाणोंकीसीलहोनेपर भाव बन्दकरदे । स्वात्रासीतल  
होनेपर निकालकर इतना तावकासमुद्रगलाहो लये साध  
घोटकर इन्द्रायण और केलेकेस्वरसोंसे १-१ दिनमर्दनकर ३-३  
रत्तीकीगोमियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली बेर,  
तुलसी, निगुण्डी, मिर्च, लहम अथवा गुडकेगापदेनेसे दीत-  
पूर्वक अथवा दाहपूर्वक समस्तविषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै ।  
पथ्यमें गायकादूध और चावअदे । पिक्नाई और अम्लका  
परित्यागकरे । श्रीसङ्ग और टंडिगानीका मेवन न करे ॥ २७४५ ॥

## ५६३ विषजपातरसः ( प्रपमः )

स्फटिकं स्फटिकां ह्यारं स्वर्जिकाक्यं नृपारकम् ।  
संघनचमणपाषाणी तुल्यं मयं विष्णुपेयेत् ॥ २७४६ ॥  
मस्तुना कर्मपात्रन्तु पाययेद्विगुणितम् ।  
स्याथर्षं जङ्गमं यद्य गमं कुर्याद्विगुणितम् ॥ २७४७ ॥

तत्सर्वं शमतां याति सत्यं शुश्रूचो यथा ।  
शिलाऽऽलतिन्दुनेपालवचादिहृन्नि लेपयेत् ॥२७४६॥  
नू. क., विपाऽधिकारे ।

भाषा—स्फटिकमणिकाचूर्णं, मुनीहुई फिटरुड़ी, यवशार लोटासजी, नोसादरकेफूल, सेन्धव, गोइन्तीहरिताल ( घापाण-गुजराती ) इनसबको समभागलेकर अलग २ कपइलानकरके सबको एकजगहमिलाकर रसलेवे । इसमेंसे पूर्णविषवेगाविष्ट प्राणीको १-१ तोला दहीकेपानीकेसाथ अथवा ठंडीपानीकेसाथ पिलावे । यदि विषवेग न हो तो दंशस्थानमें पाठलगाकर दवाको भरदे और मैनसिल, तबकीहरिताल, कुचिला, जमाल-गोटा, वष और हिंग, इनको पानीमें पीसकरलेपकरे । इससे सांभ, बीछ, कुत्ता, सियार, बाघ, भेडिया या अन्यकोईभी जहरी जानवर, तथा अफीम, गांजा, भाग, बछनाग प्रयुक्तिका-विष, बनावटी अथवा दूषीविष येसब नष्टहोतेहैं ॥ ५६३ ॥

### ५६४ विषवज्रपातरसः ( द्वितीयः )

निशां सट्कुञ्ज सजातिकोपं

तुल्यं समांशं कुरु देवदाह्याः ।

रसेन पिष्टो विषवज्रपातो

रसो भवेत्सर्वविषापहन्ता ॥ २७४७ ॥

निष्कोऽस्य सजीघयति प्रयुक्तो

नृमूत्रयोगेन च कालदृष्टम् ।

जटाधिपेणाऽऽकुलितं तथाऽन्ये

विपै रैरञ्जान् तथाऽऽनुरञ्ज ॥ २७४८ ॥

र. सं., र. म., र. ल., वै. वि., र. म. मा. ना. वि., ट. यो. त.,  
ध., आ. प्र., र. र., र. कौ., र. चं., वै. सा., र. र. दी., र. का.,  
विपाऽधिकारे ।

दि०—र. ल., वै. वि., एतयो विषप्रहारीतिनाम । र. म. मा. विषप्र  
हारी नाम । कुचविद् “निशा सट्कुञ्ज सजातिकोप—” मित्यस्य स्थाने  
रस विष दूषणमुपशेति पाठो दृश्यते ।

भाषा—हल्दी, सुहागा, जावित्री, तृतीया सबसमभागलेकर  
बारीकचूर्णकर बन्दाकररसे १-२ दिन मर्दनकर रखोहे ।  
इसमेंसे ४-४ माशेकीमात्रा पानीबगीरहेकेसाथदेनेसे यह स्वावर  
और अन्नम समस्तविषोंको दूरकरताहै । मनुष्यके मूत्रकेसाथ  
देनेसे कालदृष्टकीभी नष्टकरताहै ॥ ५६४ ॥

### ५६५ विषसूचिकारसः

रसं विषं सर्पविषं पापाणं त्रिविधं तथा ।

समांशं पेपयेयामं कहुणीतेलमर्दितम् ॥ २७४९ ॥

अमाने सङ्गटे चैव सन्निपाते महामये ।

द्रापयेद्वाद्रकद्राचैस्तिलमात्रं विचक्षणः ॥ २७५० ॥

सर्वेषु सन्निपातेषु क्षान्तिमाप्नोति मीलया ।

विषसूचिकनामाऽयं घृद्यानां हितकारणम् ॥ २७५१ ॥

नारिकेलोदकं दद्यात्पिपेह्य दारुकोदकम् ।

क्षीराश्रश्च सिता पथ्यं रसरारजो महानयम् ॥ २७५२ ॥

र. क. यो., मज्जिते ।

भाषा—शुद्धपारा, बछनाग, सर्पविष, सफेद-लाल और  
पील सोमल सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर एकपहर माल-  
कांगनीके तैलसे मर्दनकर रखोहे । इसमेंसे तिलमात्र अज्ञात-  
सङ्गटसन्निपातमें देनेसे प्राणरक्षाहोतीहै । इसकेदेनेसे दाह  
उत्पन्नहो तो नारियलकाजल अथवा शकरका शर्वत देना और  
पथ्यमें दूधमात तथा शकर देना ॥ ५६५ ॥

### ५६६ विषामृतरसः

निर्विषीं सूतगन्धो च प्रत्येकश्च पलंपलम् ।

दन्तीवीजं पलद्वन्द्वं द्विपलं तालकन्तथा ॥ २७५३ ॥

नारिकेलाम्बुना खल्वे मर्दयेत्त्रिदिनं भिषक् ।

गुजामात्रं प्रदातव्यं दोषस्वरविनाशनम् ॥

नेत्राञ्जनेषूपयोगं विषामृतमिदं स्मृतम् ॥ २७५४ ॥

वै. वि., दोषज्वरे ।

भाषा—निर्विषी, शुद्धपारा और गन्धक १-१ पल, शुद्ध-  
जमालगोटा और हरिताल २-२ पल लेकर बारीकचूर्णकर पारे-  
गन्धककी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाय ३ दिन नारियलकेजलसे  
मर्दनकर १-१ रतीकी गोलिएं बनाकर रखोहे । इनमेंसे  
१-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे तथा  
नेत्रोंमें लगानेसे यह सन्निपात और विषोंको नष्टकरताहै ५६६

### ५६७ विष्णुपराक्रमरसः

शुद्धौ पारदगन्धौ च टङ्गुणश्च विषं समम् ।

त्रिशारं सेन्धवं तुल्यं सर्वं धुतूरजं द्वैधे ॥ २७५५ ॥

मर्दितं गोलकीकृत्य कुन्कुटुपुट्टपाचितम् ।

खल्वमथ्ये त्रिनिःक्षिप्य मत्स्यवाराहपित्तके ॥ २७५६ ॥

भावितं मापमात्रञ्च देयं क्षीतोदकं त्वनु ।

सन्निपाते ज्वरे अश्वसे दोषे विषमशीतके ॥ २७५७ ॥

अपस्मारे धनुर्वाते कम्पवाते च मूच्छने ।

तत्क्षणेन निहन्त्याशु इच्छापथ्यं प्रदापयेत् ॥ २७५८ ॥

मनुष्याणां हितायार्थं सर्वरोगमयापहः ।

विष्णुना कथितः पूर्व रसो विष्णुपराक्रमः ॥ २७५९ ॥

व. रा., वै. वि., वा., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, सुहागा, बछनाग, तीनोंशार,  
सेधानमक येसब समभागलेकर नीलवर्णकञ्जलीकर धतूरेरसेसे  
एकदिन मर्दनकर गोखरनाय शरावसम्पुटमेंबन्दकर २-४ कपइ-  
मिठीदेकर गोलेहीको कुन्कुटुपुट्टी आंचदे । स्वातन्त्रीतलहोने-  
पर निकालकर मछली और मूअरके पित्तोंसे १-१ भावनादेकर  
उद्वेगवार गोलियां बनाकर रखोहे । इनमेंसे १-१ गोली ठंडे  
पानीकेसाथ देनेसे सन्निपात, ज्वर, श्वास, विषमज्वर, अपस्मार,  
धनुर्वात, कम्परात और मूच्छां इतलवकी यह नष्टकरताहै ।  
मूखलगनेपर इच्छानुसार पथ्यदेना ॥ ५६७ ॥

### ५६८ विसर्पनाशनरसः

तीक्ष्णाऽम्रकान्तं विषनागगन्धं

तालश्च ताप्यश्च मृतं रमेन्द्रम् ।

कौमारकन्दे क्रममस्मनीतं

विसर्पनाशं प्रयदन्ति सन्तः ॥ २७६० ॥

रसेन्द्रमं., चि. क., विसर्पे ।

भाषा—लोह, अन्नक और कान्तभस्म, शुद्धबल्लभाग, नाग-  
भस्म, गन्धक, हरिताल, सोनामासी और पारदभस्म सर  
समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर धीनुवाकरेससे मर्दनकर गोली-  
बनाय धीनुवाकीअइनेअन्दर रखे और शरावसमुष्टमें बन्दकर  
२-४ कपइमीदीदेकर सूरनेपर लघुपुटरी आचदे जिसमें कि  
जइ अलजाय और गन्धक बगैर न उड़नेपावे । स्वाज्ञशीतल-  
होनेपरनिकाळकर रखछोडे । इसमेंसे १-१ रत्तीकीमात्रा रोगो-  
चितानुपानकेसाय देनेसे यह विसर्पको नष्टकरताहै ॥ ५६८ ॥

५६९ विसर्पशोषणरसः

तालकं शुल्यकं तुल्यं पारदञ्चाऽर्द्धभागिकम् ।

मर्दयेद्वाङ्गलीतोयैः करवीरप्लयेस्तथा ॥ २७६१ ॥

शरपुष्पाद्रयेभ्यश्च त्रिवारञ्च पृथक्पृथक् ।

ततो गजपुटे पाठ्यं त्रिवारं मारितं शुभम् ॥ २७६२ ॥

गुञ्जाक्षयं प्रदातव्यं विसर्पेषु प्रयत्नतः ।

पिप्पलीमधुसंयुक्तं पथ्यागुडमथापि वा ॥ २७६३ ॥

कल्पयेदनुपानं हि विसर्पतत्त्वयिसुधीः ।

अयं हन्ति मसूरीञ्च विसर्पञ्चायुक्त्वयाम् ॥ २७६४ ॥

र. म. मा., ना. वि., विसर्पे ।

भाषा—शुद्धहरिताल, तुल्य और ताम्रभस्म १-१ भाग,  
शुद्धपारा आधामाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर करिहारी, वनेर,  
शरपुष्प इनप्रत्येकके रत्तीसे ३-३ भागवाए देकर गोला बनाय  
शरावसमुष्टमें बन्दकर गजपुटकी आचदे । ऐसे ३ गजपुटेदेकर  
निकाळकर रखछोडे । इसमेंसे २-२ रत्ती रोगोचितानुपानकेसाय  
अथवा पीपल और मधुकेसाय अथवा हरे और शुद्धकेसाय देनेसे  
सबप्रकारके विसर्प, मसूरीका और स्नायुगोंको यह दूरकरताहै

५७० विसर्पारिसः

मृतं गन्धं लोहचूर्णं दिनेकं

घृष्ट्वा नरैर्योवचिक्षयाः पचेत् ।

मृषामध्ये मृधरे तस्य यद्वं

मध्याज्याभ्यां हस्तपादप्रतापे ॥ २७६५ ॥

दद्याद्यद्वा राजवृक्षस्य नरैर-

माध्वीकार्कं त्रैफलेनाऽथवापि ।

घर्षेत्तीक्ष्णं दुष्टतापप्रदेशे

ताम्रे मण्डे लैपयित्वा क्षिपेत् ॥

स्नुह्यर्कौत्थं दुग्धकं दङ्गुणार्कं

धन्यं सपि जायते लक्षणोक्तः ॥ २७६६ ॥

र दी., विसर्पे ।

हि—गौदरसेनाऽयमापात समान प्रतियति परन्तु भावनामि  
पाकेन च वैशेष्यतासूचकया निहितोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और लोहचूर्ण समभागलेकर  
क्षितलीकेरसे एकदिन मर्दनकर शरावसमुष्टमें बन्दकर मृधर

यन्त्रमेंआचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकाळकर रखछोडे । इसमेंसे  
१-१ माथा मधु और धीकेसाय अथवा अमलतासेयुदेने-  
पानीकेसाय अथवा मध्यास्र वा त्रिफलाकेसायकेसायदेनेसे  
विसर्परोग नष्टहोताहै । जलनवैस्थानमें ताप अथवा माउकालेप-  
देकर सेहुण्ड और आककेदूधमें सुहाया मिलाकर रखे, अथवा  
इनचीजोंसे धीवनाकर लगावे ॥ ५७० ॥

५७१ विमृचिर्मर्दनरसः

शुद्धसूतस्य मार्गेकं नागजिह्वा तथैव च ।

त्रिभागो मृतनागश्च गन्धकश्चाऽष्टभागिकः ॥ २७६७ ॥

ह्यत्रिशद्भागसम्मानममृतञ्चोपणन्तया ।

सूक्ष्मचूर्णं ततः कृत्वा दातव्यो गुजमात्रकः ॥ २७६८ ॥

अजीर्णं च विसृज्याश्च ज्वरे सामे मरीचकैः ।

त्रिदोषे रक्तिकायुष्मं पर्यं देयं सुशीतलम् ॥ २७६९ ॥

ना. वि., विवृचिक्षायाम् ।

भाषा—शुद्धपारा और सैनसिल १-१ भाग, नागभस्म  
३ भा., शुद्धगन्धक ८ भाग, शुद्धबल्लभाग और मरिच ३२-३२  
भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धकी नीलवर्णकज्जलीमें  
मिलाय १-१ रत्ती मरिचकेसाय देनेसे अजीर्ण, हैजा और  
सामज्वर नष्टहोतै । त्रिदोषमें २ रत्तीकीमात्रा देवे और  
शीतोपचारकरे ॥ ५७१ ॥

५७२ वीरचण्डेश्वररसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं कान्तभस्म चिपन्तया ।

याकुचीत्रिफलाचूर्णं निम्बयहिगुडचिकाः ॥ २७७० ॥

दिनं भृङ्गिद्रव्यं मयं याकुच्याश्च कपायकैः ।

भक्षयेत्त्रोहपाग्रस्थं भ्रमासे जिह्वकप्रणुत् ॥

वीरचण्डेश्वरो नाम्ना पष्मासात्सर्वकुष्ठजित् २७७१

र. सु., र. को., र. क. ल., चि. क., र. का., कुष्ठे । र. क. ल.

वीरचण्डेति नाम । कुप्रचित्त्रिफलास्याने निवृत्ता पृथीता ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और बल्लभाग, कान्तभस्म,  
वावुची, त्रिफला, नीमकीछाल, चित्रकी जइ और गिलोय  
सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धकी नीलवर्णकज्जलीमें  
मिलाय अथवा और वावुचीकेसायोंसे १-१ दिन मर्दनकर  
सुहाकर रखछोडे । इसमेंसे १ मासेसे २ मासेतक रोग और  
रोगीका बलाबल देखकर उचितानुपानकेसाय देनेसे यह १  
महीनेमें कष्टयिह्वको और ६ महीनेमें समस्तकुष्ठोंको  
नष्टकरताहै ॥ ५७२ ॥

५७३ वीरप्रतापरसः

शुद्धं सूतं चिपं गन्धं त्रिदोषश्च कटुत्रयम् ।

सूतं ताम्रं मृतं स्वर्णं प्रवालं मौक्तिकं समम् ॥ २७७२ ॥

विषफलायाः कपायेण मर्दयेद्विषसत्रयम् ।

दिनं गजपुटे पाठ्यं स्वाज्ञशीतलमुद्धरेत् ॥ २७७३ ॥

कौमारकन्दे अन्य वीरभेदेति पाठ्यम् । रसमा-  
विपरिणामांस्वमपि वायुरग्रस्ता आसन्निति

रसेन्द्रम, चि. के. विसर्पे । पाठोऽप्येवैवाऽन्तर्गतानीय ।

भाषा—लोह, अप्रक और सोन, दोनो जीरे, तीनो सार

भस्म, गन्धक, हरिताल, सोनमभागलेकर इनका बारीकचूर्ण

समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर अष्टकभस्म १-१ पल लेकर

बनाय घीउदाराकीजके अन्दर रख अदरखकेरससे १ दिन मर्दन

२-४ कपड़मिट्टीदेकर मुखनेपर तर रखछोड़े । इसमेंसे १-१

अङ्ग अलजाय और गन्धक बगैर धनयक्केसाथ अथवा जलकेसाथ

होनेपर निकालकर रखछोड़े । इनाहै । यथायै भूखलगनेपर दूध,

चित्तानुपालनकेसाथ देनेसे यह मोबार देना ॥ ५७६ ॥

५६९ विसर्पसः ( द्वितीयः )

तालकं शुल्कं तुतथ पाद्वेऽऽलतप्यं

मर्दयेद्वाहलीतोयैः कर्पूराजं मणिसैः ।

शरपुष्पाद्रयेष्वेव त्रिवाच्यं पुञ्जः

ततो गजपुटे पाच्यं निवारं माता वीरभद्रः ॥ २७९२ ॥

गुञ्जादयं प्रदातव्यं विसर्पेण प्र

पिप्पलीमधुसंयुक्तं पण्यागुडं भाग, हरिताल, सोनामाखी,

करपयेदनुपानं हि विसर्पेतर्या हर नीलवर्णकजलीकर मछ

अर्यं हन्ति मसूरीश्च विसर्पेणा २ रत्तीकी गोलिया बनाकर

र. म. मा., ना वि, विसर्पे २ शकर और अदरखकेरसकेसाथ

भाषा—शुद्धहरिताल, शुद्धपुष्पस्त-वर्णको नष्टकरताहै ५७७

शुद्धपारा आधाभाग लेकर नीलवर्ण

वायुद्वं इनप्रत्येकके रसोंसे १-१ रसः ( तृतीयः )

शरावसमुद्रं बन्दकर गजपुटस्थलकण्टकीद्वयैः ।

निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ पेष्यं पुनः पुनः ॥ २७९३ ॥

अथवा पीपल और मधुकेसाथ द्वाह्निं चाऽग्निवातके ।

सषप्रकारके विसर्पे, मसूरीकारिणा वेपथेत्समान् ॥

५७७ पादातो विनश्यति ॥ २७९४ ॥

सुतं गन्धं लोहरीगे ।

घृष्ठा नीरे २ ताम्रवीरभस्म समभागलेकर २१ दिनतक

बूयामध्ये भूधरेर चनेप्रमाणगोलियें बनाकर रखछोड़े ।

मध्याज्या समय अथवा रोगोचितानुपाननैसायदेनेसे

दद्याद्यद्वा रं नष्टहोताहै । ऊपरसे रेवनचीनी अथवा

मांश्वीक, अतीव और चित्रमूल इनको पानीमें पीस-

घर्षेत्तमिं कुकर पकाकर चरीपर रेषकरे ॥ ५७८ ॥

ताम्रे मण्ड ९ वीरभद्राऽभ्रकम्

सुखकारिणं दुग्धं कर्पूरयुग्ममतिनिर्मलीकृतम् ।

धन्यं सपि जायते चक्रस्वरससाधुसिक्तकम्

र. दी., विसर्पे ।

टि०—गोदरसेनाऽयमापात समान प्रतिभि-

पकेन च वैलक्षण्यालक्षकया निश्चितोऽस्ति । सेनी ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और लोहचूर्ण

क्षितलीकेरससे एकदिन मर्दनकर शरावसमुद्रं बन्द २७९६ ॥

वहिमान्धमपहृत्य सत्वरं

कारयेत्पल्लवरपाथकोत्तरम् ।

श्वसाकासवमिशोथकामला-

श्रीहगुल्मजठराऽऽचिन्मन्त्रम् ॥ २७९७ ॥

रक्तपित्तयक्ष्मद्वलपित्तं

शूलकोपजगद्विस्वचिकित्सा ।

आमवातवहुवातशोणितं

दाहशीतबलहानिकार्यकम् ॥ २७९८ ॥

विद्वर्धि ज्वरगरं शिरोगदं

नेत्ररोगमण्डिलं हलीमकम् ।

हन्ति घृष्यतममेतदभ्रकं

वीरभद्रमतिथल्यमुत्तमम् ॥

भक्षितं विविधभक्ष्यमागलं

काष्ठसङ्घमपि भस्मतां नयेत् ॥ २७९९ ॥

भै. र. र. सु., अग्निमान्ये ।

भाषा—इन्द्रागुण्डोसे मोरहण अभ्रकको १० दिनतक चित्रक-

के स्वरससे मर्दनकर गुलाबर अदरखकेरससे १-१ रत्तीकी

गोलिया बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली अदरखकेरसके

साथ अथवा सत्तोग्रहगुण्डानुपाननैसायदेनेसे बन्यामि, आम, कास,

पैनन, शोथ, कामला, वीह, गुल्म, उदरोग, अरुचि, धन,

रक्तपित्त, यक्ष्म, अन्धपित्त, शूल, बद्धोदर, हैजा, आमवात,

पातरक, दाह, शीत, बलनाश, कृशाता, ज्वरभाद, ज्वर, गर,

शिरोरोग, नेत्ररोग, हलीमक, धातुक्षीणता, इनसबको यह नष्ट-

करताहै । कण्ठक खाकर एकगोलीलेनेसे तत्क्षण जीर्णकरदेताहै

५८० वीररसः ( महाविः )

निष्क्री द्वौ तुतथभागस्य रसादेकं सुसंस्कृतात् ।

निष्कं विपस्य द्वौ तीक्ष्णात्कपर्शो गन्धमौक्तिकात् ॥

अग्निपर्णोहरिताभृद्वाऽऽर्द्रसुरसारसैः ।

अर्दितं लाङ्गलीकन्तप्रलितं सम्पुटे पचेत् ॥ २८०१ ॥

अर्घेपादे च पाट्टल्याः काकिण्यो द्वे विपस्य च ।

लिह्नेमरिचचूर्णञ्च मधुना पोष्टलीसमम् ॥ २८०२ ॥

क्षयग्रहण्यतोसारचहृदीर्यव्यकासिनाम् ।

पाण्डुगुल्मवतां श्रेष्ठो महावीरो हितो रसः ॥ २८०३ ॥

अतिस्थूलस्य पूयासृक्फानुद्धमतः क्षये ।

न योजयेत्क्षीररसान्विरक्तोपक्रमत्पतः ॥ २८०४ ॥

र र स, र सु, र को, राजयदमणि ।

भाषा—तुतथभस्म ८ पात्रे, शुद्धपारा और बछनाग ४-४

पा, कोलादभस्म ८ पा., शुद्धगन्धक और मोती १-१ कर्प लेकर

बारीकचूर्णकर पारेगन्धकनी नीलवर्णकजलीमें मिलाय अगिया

पास, पृथिवर्णा, अगर, अदरख, तुलसी इनके रसोंसे १-१ दिन

मर्दनकर गोलाबनाय करिद्वारीके कन्दके बल्कलेपरदिष्टेदु

पसुष्टं बन्द ३-४ कपड़मिट्टीदेकर मुखनेपर गजपुटकी

आवदे । स्वादशीतलोनेपर निकालकर अष्टमाश रसमें मृगश-

१ से २ रतीतस्मात्त्रा ८ मिचौकेषाथ मिलाकर मधुमें चटनेसे क्षय, प्रवृत्ति, वृत्तिसार, मन्दामि, काम, पाण्डु, शुल्म, भेद, भयङ्करक्षय इनसबको यह नष्टकरताहै । इसरसमें दूध और मांसरसका प्रयोग नहीं करना ॥ ५८० ॥

### ५८१ वीरविक्रमरसः ( प्रथमः )

रसं विपं विपञ्चाऽन्नं विपं दृङ्गणगन्धकम् ।  
तालकं द्रवद्वयं हितुं गजपिप्पली ॥ २८०५ ॥  
निर्विपान्ते समं हिद्रुमधुकं कटुरोहिणी ।  
द्वोद्विपर्यतपापाणं भार्गी मणिशिलात्रयम् ॥ २८०६ ॥  
त्रिक्षारं पञ्चलवर्णं द्विशिला च द्विजीरकम् ।  
कटुत्रयं दन्तिवीजं इष्यर्गिन् त्रिरजाजिका ॥ २८०७ ॥  
द्विकटुकं चचिमूलञ्च कुष्ठं कर्कटशृङ्गिका ।  
कट्टोलञ्च जटामांसी विपतिन्दुकयीजकम् ॥ २८०८ ॥  
तीक्ष्णताम्रभयं भस्म नागं वज्रञ्च रौप्यकम् ।  
मृतमारं मृतं स्वर्णं शुद्धमौक्तिकविद्रुमम् ॥ २८०९ ॥  
रत्नं मरकतं नीलं गोमये पुष्परगकम् ।  
वेदूर्यवज्रभस्मापि समभागं विचूर्णयेत् ॥ २८१० ॥  
धन्तूर्यासाखदिरकार्पासैरण्डचित्रकैः ।  
त्रिञ्चाऽन्धपाठाहिलीवृहतीद्वयगोभूरैः ॥ २८११ ॥  
रक्तमुण्डाप्रसदण्डमीर्कट्टीशिशुभृङ्गजैः ।  
विपमुष्टया काकमाचीविजयल्लीपुनर्नवैः ॥ २८१२ ॥  
जम्बयिकन्याकुटजकारवेल्लीपटोलजैः ।  
अज्यन्त्या चैव निर्गुण्ड्या तीक्ष्णकापलक्षत्रिण्डिकैः ॥ २८१३ ॥  
म्यग्रोष्ठाऽम्बुतथापादापिचुमन्दशिरीषकैः ।  
धूतपुष्पागपनमै रकुलेधतुरहुलैः ॥ २८१४ ॥  
माधुर्यमीहिकादङ्गनागाहन्कुमारिकैः ।  
गाह्वरकीधातकीभ्यां सर्पाक्ष्याः काकजङ्गलैः ॥ २८१५ ॥  
पादयपामागंधाजीभिर्मुदस्यक्षशिवोद्भवेः ।  
भाषवित्या वटी कार्या हिगुञ्जामानिका भिषक् ॥ २८१६ ॥  
रुनुहीक्षीराऽनुपानेन सर्वरोगान्घ्ननाशयेत् ।  
माशयेद्रोगविपिनं तृणपुञ्जमिमाऽनलः ॥ २८१७ ॥  
सन्निपातेषु सर्वेषु शीघ्रप्रत्ययकारकः ।  
वीरविक्रमनामाऽयं सर्ववैदेशेषु पूजितः ॥ २८१८ ॥

भा. सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धशरा, वज्रनाग और पीलासोमल, अज्रहम्य, मधुविप, गुहाग, गन्धक, हरिताल, शिगरिक, वृत्तिया, इने-  
रिग, गजपीपत्र, निर्विषी, मुण्डरी, कुटली, मधुमोदक, भारती, लीनरदरी मेनसिल, लीनोसार, पांचोनमर, शूल, सोमामर, दोनोर्जीर, त्रिफल, जमलागोत्रा, चारुज, चित्रकी  
जह, लीनोसार, पिपलामूल, गजपीपल, चम्प, घट, काषाहमीपी,  
नीलतचीनी, जटामांसी, कुचिया, फोखर, साव, नाय, वज्र,  
रत्न, पीतल, गुग्गु, मोती, प्रवाल, रत्ना, नीलम, गोमेद, पुष्प-  
राज, समन्वित, क्षीरा (शुद्धाक्षीमय) देवय १-१ भाग और सुनी-

हौग, १२ भाग लेकर सबसा वारीकचूर्णकर पारेगन्धसमृद्धिती  
नीलवर्णकजलीमें मिलाय घट्टा, अहसा, खैर, कपास, एण्ड,  
चित्रक, इमली, नागरमोया, पाठा, करिहारी, दोनोभट्टद्वैया,  
गोपल, पलाय, गोरखमुण्डा, ब्रह्मण्डी, केवांच, सहजिन,  
भंगरा, कुचिला, मकोय, हड़नोद, पुनर्नवा, जंभीरी, घोड़नार,  
कुर्िया, कोला, परवल, जैती, निर्गुण्डा, राई, पाकर, कटसरीया,  
वट, पीपल, पलाय, नीम, सिरस, आम, नागचम्पा, कटहर,  
मौलमी, अमिलतास, माधवीलता, मोगरा, जर्दल, गजपीपल,  
बांझपेखसा, गंगरन (शुलसिकरी), भावड़ी, सर्पाक्षी, पाक-  
जडा, वरण, अणामाग, आवले, छोटीदन्ती, वहेडा और हरेकि  
स्वरसोंसे १-१ भागना देकर २-२ रतीकी गोलीयां बनाकर  
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली भूहर्केद्वयसेसाय देनेमें तृण-  
पुञ्जको अंशितरह सन्निपातादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ।  
बहुतही शीघ्र अपने प्रभावको दिखाताहै और सरदेगोंमें बरा-  
बर अगुल पड़ताहै ॥ ५८१ ॥

### ५८२ वीरविक्रमरसः ( द्वितीयः )

पारदं दृङ्गणं गन्धं विपतिन्दुकयीजकम् ।  
सेन्धवं ग्रन्थिकं हिद्रुम समभागं विचूर्णयेत् ॥ २८१९ ॥  
श्रीलायनं पचेद्यामं कालपित्तेन मर्दयेत् ।  
गुञ्जामयं प्रदातव्यं सर्पाक्ष्यै सन्निपातकम् ॥  
निहन्ति तत्क्षणाच्छीघ्रं रसोऽयं वीरविक्रमः ॥ २८२० ॥  
वै. चि., रं. क. यो., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धशरा, गुहाग, गन्धक और कुचिला, सेन्धा-  
नमर, पिपलामूल, मुनाहीग सन समभागलेकर वारीकचूर्णकर  
पारेगन्धसकीनीलवर्णकजलीमें मिलाय बराहनेपित्ते १ दिन-  
मदनकर कपड़ेमें पोथी बनाय धरोरप्रयुति सन्निपातनरोगोंमें दोला-  
यन्त्रसे १ पहर स्वेदनकर १-१ रतीकी गोलीये बनाकर रख-  
छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोभियानुपानने-  
साथदेनेसे यह समस्तसन्निपातोंको नष्टकरताहै ॥ ५८२ ॥

### ५८३ वीर्यस्तम्भनपट्टी

पारदस्य त्रयः कपोः पञ्च लोहस्य कीर्तितः ।  
मर्दयेद्याममाघन्तु धूर्तवीजसमुत्थितः ॥ २८२१ ॥  
तत्कलकं विपमप्ये तु परतयजं विले क्षिपेत् ।  
पञ्चषाणपतेस्तैले मुटिकां पाचयेत्सुर्धाः ॥ २८२२ ॥  
वक्त्रमप्ये क्षिपेत्ताञ्ज स्तम्भनं परमं भवेत् ।  
नारीसहस्रं रमयेन्मुखमप्ये निषाधयेत् ॥  
पञ्चषाणविवृद्धिः स्यादुटिका राजपूजिता ॥ २८२३ ॥  
वै. वि., वाजीरपे ।

भाषा—शुद्धशरा ३ कप और लोहभस्म ५ कप लेकर  
एकदिन शुद्धमदनकर पट्टीकेपीठोकेपीठो गोलीबनेलायक  
मदनकर । गोलीको बरतारपेकट्टीमें रत्नर मुट्टो कट्टरीमें  
बन्दकर १-०० तहफड़ेमें बांध कर शीं भागमें गोलायनाय पट्टीके-



हैलमें आगानलेतक पकानस परिकीयाळी तैयारहोगी । इस्को मुहमें रखनेसे दूध बानीकरणहोताहै और गुक्की वृद्धिहोताहै ।

### ५८४ वृकोदरवृद्धी

सूतगन्धकतीक्ष्णाऽग्ने सताप्य समभागिने ।  
रसाशमपर सर्वं पट्टोल जीरकद्वयम् ॥ २८२४ ॥  
सौत्रचेल सस्ति धृथ विडङ्गञ्च हरातकी ।  
अमलपेतसप्त सर्वं बीजपूराम्भुमदितम् ॥  
गुटिकास्तेन कल्केन काया कोलास्थिमानका ॥  
योगिन्या बहुधातिनीति सतत ब्रैलाक्यवित्यातया,  
निर्दिष्टा हि वृकोदरीति गुटिका साष्णाभ्युनासेप्रिता ।  
नि शेषाऽनिलदापशोपजयञ्च श्रेष्ठाऽऽमरगान्धर्व  
मन्दाग्नि प्रहर्षा चतुर्विधमहाजीर्णञ्च वर्णजयेत् २/२९  
२२ स र च र की र क ॥ वातव्याध्यधिकार । र  
स प्रभावता वनीति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा औरगन्धन कोलाद अन्नक और सुक्क  
माक्षिकभस्म पट्टपण (पीपल पिपलासूत्र कव्य चित्रक सोंट  
मिच) दोनोंनीर सचल सेधव विन्ड हूँ अमलपेत सव  
समभागकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धकी नीमपत्रजलीम  
मिश्रय विनोरकसस १-२ दिन मदनकर बनीगुठलीके  
बराबर गोलिया बनाकर रखोहै । इनमेंस १-१ गोली गरम  
पानीकढायलेनस वातरोग गोप कफरोग आमरोग मन्दाग्नि  
४ प्रकारकी प्रहणी घोर अजीर्ण इनसबरोगोंकी यह तत्पण  
मधुरकीहै । ५८४ ॥

### ५८५ वृद्धदारुकल्पः

वृद्धदारुत्रिवृद्ध तीक्ष्णार्जुनगाम्भुरा ।  
वाट्यालनाजरुणी च याजिगधा शतावरा ॥ २८२७ ॥  
बापासी वृद्धिपर्य्यां च वहिर्ध्वयाऽपरानिता ।  
कञ्जुका तालमूग च वृहपत्रा पत्राशिमा ॥ २८२८ ॥  
प्रथियक त्रिन्नकञ्जैव विश्वदेया वचाऽमृता ।  
पाणपुष्पी च पाठा च त्रिन्ना घरण एव च ॥ २८२९ ॥  
क्षिप्त कुशिशृङ्गा च मुण्डा च कामिगप्यया ।  
अकृन्तार शताह्व च धया चय पत्रात्रिन्म ॥ २८३० ॥  
ययानी चाजमादा च द्विजार घान्यतण्डुग ।  
विडङ्गमुस्ततागस निशे लयणपञ्चकम् ॥ २८३१ ॥  
एठा पुष्परनागात त्यक्पत्र हस्तिपिण्णली ।  
पत्री कुष्ठ शनी रणु जल हिन्दु स्यालक्ष्यम् ॥ २८३२ ॥  
पापाणभेदा वृक्षाम्ल मद्रस्त्यवितुषका ।  
पलिका भागता प्राह्य गुह्वी त्रिष्वदारुके ॥ २८३३ ॥  
रुद्रापपातामृपाया शिलरु विडङ्गजुणा ।  
स्वजिकावायवकात्या चैवाक्षारा पत्राश्रिता २/३४  
अन्नकस्य पलान्यष्टौ चत्वार गधकस्य च ।  
पलद्वय रस प्राह्य लाह चाष्टपल तथा ॥ २८३५ ॥  
गवागरी भृङ्गकस्या च शालिञ्च कशाराचकम् ।  
मानसद् पठिहृद्य दहता हस्तिनर्कण ॥ २८३६ ॥

महाता मुशला मुण्डा त्रिफला वज्रपल्लवपि ।  
एषा रसे पृथक्लाह पुट्यन्मदयत्तथा ॥ २८३७ ॥  
अग्निमा मारिपश्चैव क्षार वृहतिरा तथा ।  
उत्कटा लोहिता वह्नि माणा वाणश्च तद्रसे ॥ २८३८ ॥  
पुट्येदन्नकञ्जैवमयश्च ययात्रिधि ।  
कालशामिनिपिण्ण एषया समुतेन च ॥ २/३९ ॥  
यार्वा पण्डा भवतावच्छाद्यविन्मुद्रुवहिना ।  
एकाहृत्य शुभ भाण्डे स्थापयद्रसमुत्तमम् ॥ २८४० ॥  
सर्पिणा मकरन्देन भक्षयप्रयत्नं तु स ।  
पित्रेचाऽनु पय क्षार दूर्ध्व मासरसे तथा ॥ २/४१ ॥  
माजन चाऽग्निस्त्रापेक्ष कार्यश्चैव सह तथा ।  
त्रिहितश्च मितं चाद्यादौपधे पान्मागते ॥ २८४२ ॥  
आहारेण सम कार्य नित्यमनाऽप्यवहिना ।  
अग्निवृद्धिकर कायरागाणाञ्चाऽपहारक ॥ २८४३ ॥  
यात पित्त कफे शुल हृद्रागे ध्यासकासया ।  
क्षय च विविधे घार शाय चैवाऽङ्गसङ्गह ॥ २८४४ ॥  
आमयाते त्रिन्न शुले पत्तिशूल च लग्ने ।  
अन्नपित्त सङ्गले च शोथ सर्वादर तथा ॥ २८४५ ॥  
वन्धाये पुत्रप्राप्त्यर्थं पुनश्चैव निपत्तये ।  
अयमेव हिता नियं शुभवृद्धिकर पर ॥ २/४६ ॥  
६ स रसायन ।

भाषा—विधाय निर्योत दन्ती कम्पन अन्न वासक  
नागरज मलेबारीसाम अगवध गतावर कपाम मोनाट्टिभि  
पर्णी, चित्रमूल कोयल कजुकी (नागोन) तात्रमयी  
महुलान (उज्जरी) पलागरल (डांगड) पिपलामून अथवा  
वाराहीकफल लालचिद्रक खोले वर गिनेय कन्गरीया  
पाग कुकुर कण सहिन्न पालीसुरण भगरा गोस्तमुग ।  
तात्रमसाना आक्काट्ट सोंक कुशिन्न चय त्रिफला,  
अजवाइन अन्नमोद दोनाबीर धनियक चातन विन्ना माया  
तालीसवय दानोहला पंचोदयव दगयचा पोत्रमूल नाग  
चम्या तत्र पत्र गजपोत आवन डूट कपूर रणुछा  
खस भुनाहीन मुगधनाल पापाणभं बोहन नागरजाया  
और सुवारी १-१ पत्र त्रिनेत्र गाठ दूबनाह सहुन्न  
पलाङ्गीजङ्गीछात्र रूक पालगरीपत्र अजामाग नवगात्र,  
माङ्गलानी सबी यवन्नसकफातर १-१ पल अत्रफम्ल ८  
पल शुद्धगणक ४ पल गुद्रपाता २ पत्र लोभम्ल ८ पत्र  
लहर सक्ता बाराकचूणर पारवपधका नाङ्गाहयगम  
मिलय दानु १० भयता पत्रपाता सरद्वी बागभोगा  
मानसद् कण चित्र हस्तिपिण्णम भिन्न मुग  
सों त्रिफला हृद्राङ्ग गटिकन मया यन्तार, वनभोग  
उज्ज्याग लालचिद्रक मानसद्, दानुइ इनक रणोस १-१  
दिन मन्नकर इम समन्निपिन्की बराबर जलजिम्ब (दण्डुत्र  
विलडित यूनानी) काकूट और गावकाट्ट मिलाकर मन्नागिम  
पकाव । फन तदारादोनर पत्राकर इम मुगगाव पत्रमाग

रखछोड़े । अथवा ३-३ भासेकी गोलिया बनाकर मुलाकर रखछोड़े । प्रकृति और बलका विचारकर १ गोलीसे २ गोलीतक धी और मधुकेसाम मिलाकर खिलावे । ऊपरसे दूध, खीर, यूप तथा मांसस औचिती देखकर दे । पाचनहोनेकेबाद हल्का और बलकारक सुरुक दे । इसकेसेवनकरनेसे वात, पित्त, कफ, दृढ, हृद्रोग, श्वास, कास, नानातरहके पातुष्य, राजयक्ष्म, क्षौब, अङ्गकाज्वरना, आमवात, त्रिक्चल, पचिक्चल, सर्वाङ्गचल, ज्वलपित और उदररोग प्रकृतिसो नष्टकर अग्निसो बढाताहै और शरीरको पुष्टकरताहै । यद्यपि ग्रन्थकारने यहपर वैषेही भाषणमें रखना लिखाहै परन्तु दूधकायोगहोनेसे सङ्केका अर्थहै इसलिये इसको सुझाकर रखनाचाहिये ।

**विशेषसूचना**—ग्रन्थकारने इसपाठको इसतरहलिखाहै कि उससे इतिकहेक्याता मालूम नहींहोती । इसलिये इसमें जो लोह और अन्नक आयैहै उन्हें साधारणरीतिसे तैयार न करना किन्तु इन्द्रायणसे लेकर हृज्जोदतकके रसोंमें मर्दनकर लोहेकीमलमपरना और गटिवनसे लेकर कटसरैयातकके रसोंसे अन्नको तैयारकरना फिर इन्हीके रसोंसे अन्नक और लोहको २१-२१ भावनाएँ देकर इसयोगमें मिलाना ॥ ५८५ ॥

### ५८६ वृद्धदावांशलोहम्

वृद्धदारनिवृद्धन्तीगजपिप्पलिमाणकैः ।  
त्रिकषयसमायुक्तैरामवातात्मकैः त्वयः ॥  
सर्वानेव गदान्धन्ति केसरी करिणो यथा ॥ २८४७ ॥  
र.स. र.र., ध. र.चि. यो.म., र.सु. र.पौ., र.का., आम-  
वाते । र.क. आमवातान्तकेति नाम ।

**भाषा**—विषादा, निषेध, दन्ती, गजपीपल, मानकन्द, त्रिकला, त्रिरुद्र, त्रिनात घन समभागलेखर वारीकचूर्णकर सबरी धरावर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से ४ रसीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाधलेनेसे यह आमवातप्रथति समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ५८६ ॥

### ५८७ वृद्धिनाशनरसः ( वृद्धघाटीकुठारः )

रसगन्धौ समौ ताम्ब्यां क्षिपुणं हेममाक्षिरम् ।  
पथ्यारसेन त्रिदिनं रुतैलेन वासरम् ॥ २८४८ ॥  
मर्दितं मृद्धिमायाति रमेन्द्रो वृद्धिनाशनः ।  
सपथ्यारुतैलेन सेयिता घृहमात्रकः ॥ २८४९ ॥  
समृक्वृद्धिजपत्याशु कर्णस्फोटारसेन वा ।  
यत्नातैलेन वा लिहाराजकक्यायताऽपि वा ॥ २८५० ॥  
प्राणदायायशुक्राभ्या पथ्यारस्वकतैलयुक्तं ।  
वृद्धघाटीकुठारोऽयं रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥ २८५१ ॥  
रसायनम्, र. मि. र. व. रा., र.च. वृद्धयधिकारः ।

**भाषा**—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, सुवर्णमाक्षिक २ भाग लेखर नीलमृष्टिजलीकर हरीसे स्वरसमे ३ दिन और एण्डकेनेको एकदिन मर्दनकर १-१ रसीकी गोलियाँ बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली हरे और एण्डकीका लेउ, कनरोंकी

( शिवलिङ्गी ) वास, बलातेल, चनेकाकाथ, यवक्षारसुकरहोराकाथ, हरे तथा कालानमक और एण्डकेल इनमेंसे किसीएककेसाथ देनेसे अण्डवृद्धि नष्टहोतीहै ॥ ५८७ ॥

### ५८८ वृद्धिवाधिकावटी

शुद्धं सूतं तथा गन्धं मृतमेतन्निगोजयेत् ।  
लोहं रज्जं तथा ताम्रं कांस्यञ्चाऽथ सुमारितम् २८५२  
तालकं तुल्यकञ्चाऽपि तथा शङ्खवराटकम् ।  
त्रिरुद्र त्रिफला चर्मं विडङ्गं वृद्धदायकम् ॥ २८५३ ॥  
शर्टी मागधिकाभूलं पाठां सहपुर्णं वचाम् ।  
पलावीजं देवकाष्ठं तथा लवणपञ्चकम् ॥ २८५४ ॥  
एतानि समभागानि चूर्णयेद्यथाकार्येत् ।  
कपायेण हरीतमया वटिकां मापसम्मिताम् ॥ २८५५ ॥  
पकैकां वटिकां यस्तु निर्गिलेक्षारिणा सह ।  
अण्डवृद्धिरसाध्याऽपि तस्य नश्यति स्वस्वरम् २८५६  
भा.प्र., वै.र., वै.द., भै.र. रसायनत., र.प्र., यो.म. र.,  
क.स., र.म.मा., चि.क. वृद्धयधिकारः ।

**टि०**—अथर्वे पाठ केनाऽपि धूनेन अथदिनेकेसगीनाम्ना प्रत्या-  
पिन म चित्रिमात्रमस्ववहोवारण तद्भाग्ना प्रकाशिन, अथ चिन्ति-  
त्वाभयवत्तरीचयितु न क्षेप दिन्तु स महीन्द्रनामधेयपाऽपरा-  
धोऽपि । दिवस्थाने इव ग्वाताऽपिस्वन्तु न पाठान्तरमात्रक नदत्ताऽ-  
मात्रार । स पाठो यथा—

घन गन्धराम्रावस्यमणि रज्जु सलाहं घृण,  
ताल तुल्यवराट्पुनतुल मन्थय मर्दं पुन ।  
बचूर वडुकवय त्रिफला चर्म विडङ्ग वणा,  
पात्रालीन्दया च पञ्चलवण शीर्षाणाराधुदिरम् ॥  
अष्टाक्ष ह्युपलब्धज्ज्वर दान सम पथ्येत्,  
वातेनैव शिवाभवेन वृद्धां लुब्धकां वदीय ।  
ध्वजां वकिञ्च शीतपथ्या प्राणिगणित्वद-  
स्तस्यानु प्रलय प्रयाति सहसा रोगाऽण्डवृद्धि पर ॥  
नित्य पथ्यारसं ब्रह्महरणी न्याना बर्ग नामन,  
श्रीमदेवमहीन्द्राक्षिरिण्या कर्णदिने केसरी ॥ इति ॥

**भाषा**—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, रज्ज, ताम्र, कांस्य,  
हरिताल, वृतिदा, शङ्ख और कोड़े इनकीभास्से, त्रिकरु, त्रिकला,  
चर्म, विडङ्ग, विषादा, बचूर, पिपलाभूल, पाठा, साज, वचा,  
द्विजको, देवदाक, प्राचीनमक, येमर समभागलेखर वारीक-  
चूर्णकर पथ्यारसककी नीलकण्ठजलीमें मिलाय हरेकायमे  
१-२ दिगमर्दनकर १-१ भासेकीगोलियाँ बनाकर रखछोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली जलकेसाथलेनेमें अगाध्यनी अण्डवृद्धि  
नष्टहोतीहै ॥ ५८८ ॥

### ५८९ वृद्धिपातङ्गकेसरीरसः

सूतं सूतं ताम्रकञ्च सूतं हेम मृताऽप्यकम् ।  
सूतं शुद्धं गोमसञ्च सधमेतत्समादायकम् ॥ २८५७ ॥  
मुक्तिप्रमाणं प्रत्येकं पार्थितं पलमात्रकम् ।  
यामं प्रमर्दयेन् शुद्धं त्रिपुष्टिरस्य ततः ॥ २८५८ ॥

भावनेका प्रदातव्या चित्रकस्य नलस्य च ।  
प्रत्येकं भावनास्तिक्यो दत्त्वा संशोष्य चातपे ॥ २८५९ ॥  
चिपं कर्पमितं चाप्य मरिचं पलमात्रकम् ।  
दत्त्वा मापकसम्मानं पर्णखण्डेन क्षापयेत् ॥ २८६० ॥  
दोषोत्थमेदोभूत्वाऽथवृद्धिजन्यगदं तथा ।  
गोधिकां विदग्धि पाण्डुं मृज्जदोषमरोचकम् ॥  
जयेज्ज्वरं धातुगतं श्लेष्मदं नाशयेदसौ ॥ २८६१ ॥  
र. म. मा., ना वि., इन्द्रपथिकारे ।

भाषा—पारा, ताम्र, सुवर्ण, अन्नर, वैकान्त इनसर्वीभ्यो  
३-७ कर्पं, शुद्धगन्धक १ पल लेकर घारीकचूर्णकर शुद्धचिलेके-  
रससे १ पहर भावना देकर चित्रक और मरकटके स्वरसोंकी  
३-३ भावनाएँ देकर शुद्धपन्नाग १ कर्पं और मरिच १ पल  
मिलाकर १-२ दिन मर्दनकर उद्धवरावर गोलिया बनाकर  
रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानकेसायदेनेसे वात, पित्त,  
कफ, मेद अथवा मृज्जजन्यरुद्धि, प्रन्त्ररोग, श्वद, अहरबाद,  
पाण्डु, मृज्जदोष, अश्वि, धातुगतज्वर, श्लेष्मद इनसर्वको यह  
नष्टकरताहै ॥ ५८९ ॥

### ५९० वृद्धिहररसः

रसं गन्धं विपं व्योषं तथा लघ्वणपञ्चकम् ।  
त्रिंशदं जयपालञ्च मर्दयेद्विहारिणा ॥ २८६२ ॥  
रक्तिमानां यदौ कृत्वा पाययेत्पयसा सह ।  
अनेन प्रशमं याति वृद्धिमन्नादयो गदाः ॥ २८६३ ॥  
भा. वि. वृद्धपथिकारे ।

टि०—अथ रसाऽष्टमनाराचरसेनाऽक्षरस्य साम्यभाववति केवल  
नाराच जयपालाऽम्बाऽस्ति, भावनाऽपि जीरेकेण दत्तास्ति, पाकश्च  
विशेषतया दत्तोऽस्त्यन्तस्तमादस्य स्वान्नत्वाऽस्तीति वैद्वन्त्यम् ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, घट्टाग, त्रिरट्ट, पर्वोन्मक,  
दीनोक्षार, शुद्धमालगोदा येसय समभागलेकर घारीकचूर्णकर  
चित्रकके रससे एतदिनमर्दकर १-१ रत्तीवीगोलिया बनाकर-  
रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली दूधकसायदेनेसे अण्डरुद्धि तथा  
प्रन्त्ररोग निवृत्तहोतेहै ॥ ५९० ॥

### ५९१ वृषभध्वजरसः

रुच्यं रौप्यसुनागवद्भस्मयुगलं द्विताम्रं मध्वं,  
कान्तं वीरसगन्धयोरमलयारेफद्विसहस्राकृतयोः ।  
रौद्रे सप्त त्रिमायितं मणिशिला तालद्विभागोऽमलः,  
दन्त्याः पट्टत्रिकुमाणरश्च दरदं कर्कोटिकोटङ्कुणम् ॥  
भाङ्गीचित्रकसिंहवाद्यणिवृषा निर्गुण्डिताम्बूलिका,  
रघुनका सेडगजोयवृकजरेणा रस्नाम्बुविष्णुप्रियाः ।  
माध्यक्ष्य पृथक् त्रिभिर्वररसैर्वह्यप्रमाणो रसः,  
श्वत्सं सर्वविधं ज्वरं विपमजं कासञ्च पञ्चात्मकम् ॥  
शुल्मं पीनसमार्तवं जठरजं शलाऽपतानं महा-  
मन्दाग्निश्च वृषध्वजो रसवतो रोगानशेषाञ्जयेत् ॥  
र. म. भा., श्वत्सवायोः ।

भाषा—सुवर्ण, चांदी, नाग, यद १-१ भाग, लोह और  
ताम्रभस्म २-२ भा., कान्तभस्म ३ भा., शुद्धपारा १ भा.,  
गन्धक २ भा., अगम्यकेरसमेंघोटकर ७ बार धूपमें सुखार्द्ध  
मैनाघिल और हरिताल २-२ भा., दन्ती ६ भा., शिगरिफ,  
खेउसारीजड़ और मुनामुद्राभा ३-३ भागलेकर घारीकचूर्णकर  
पारेगन्धककी नीलवर्णकम्रमें मिलाय गारदो, चित्रक, भटक-  
टैया, इन्द्रायण, अइसा, निर्गुण्डी, पान, अनन्तसूल, पंवाड़,  
एण्डक, जोरा, राधा, रम, तुलसी इन प्रत्येककेरसोंसे ३-३  
भावनाएँ देकर ३-३ रत्तीवीगोलियें बनाकर रखोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसायदेनेसे श्वास,  
समप्रकारकाज्वर, विपमज्वर, ५ प्रकारका कास, शुल्म, पीनस,  
आतंवेदोष, जठररोग, सूल, अपतानक (रोंघतान), घोरमन्दाग्नि  
इनयन्त्रों यह नष्टकरताहै ॥ ५९१ ॥

### ५९२ वृष्यगणचूर्णम्

वृष्यगणतुल्यं तत्पुटपञ्चं घनं सिताक्षिगुणम् ।  
वृष्यात्परमतिवृष्यं रसायनं चूर्णरत्नमिदम् ॥ २८६६ ॥  
रसायनं, रसायने ।

टि०—सतावरी, विदारी, गोउरक, बानरी, छुरफ, नागबला, बला,  
बलिकला इति वृष्यगणैस्तद्भाषात् । अत्र गन्धमूर्च्छित रसप्रभाविष्य  
वदति दाक्षिणात्या, अनुपेयं कुम्पादि ।

भाषा—सतावरी, विदारी, गोउरक, केवाच, तालमराना,  
नागबला, बला, कल्ली और अन्नकमल सबसमभागारा पूर्णकर  
इन्हेंके रसोंसे ६-७ भावनाएँ देकर गोलावनाय एण्डवर्गहृक्-  
पत्तोंमें छेपेटकर पुट्याकर सुपाकर दूनीशकर मिलाकर रखोड़े ।  
इसमेंसे ३ मासेसे ६ मासेतक मान पलानलेइकर दूधनेसाय-  
देनेसे यह समस्तधातुबिररोंको नष्टकर किरसे जवानी देताहै ।

### ५९३ वृष्यराजवटी ( प्रथमा )

कृष्णोन्मत्तजयावीजानुरगञ्जाऽहिकेनकम् ।  
समुद्रशोषजं वीजं रसगन्धकमेव च ॥ २८६७ ॥  
समं सञ्चूर्णयेत्सर्वं स्थूले जातिफले क्षिपेत् ।  
मापपिष्टेन लेप्यं तद्वारं सम्यग्ददं यथा ॥ २८६८ ॥  
कृष्णधत्तूरफलार्गं दुग्धे दोलागतं पचेत् ।  
उद्धृत्य कृष्णधत्तूरफलादन्यफले क्षिपेत् ॥ २८६९ ॥  
त्रि. पकमेवं जात्याश्च पलं नष्टरुषं विवृणयेत् ।  
मरिचेन समानकृत्वा घटकान्मिषगुत्तमः ॥ २८७० ॥  
रात्रौ मुकवते दद्यान्मधुना सितया सह ।  
वृष्यराज इति ख्यातो योगो वृष्येषु चोत्तमः ॥ २८७१ ॥  
टि०, र. म. भा. र. पा. बाजोररणे । र. म. मा. वृष्यदा-  
शीति नाम ।

भाषा—कालावृत्त और गांजेवीज, नागभस्म, अरान,  
समुद्रशोषवीज, शुद्धपारा और गन्धक समभागलेकर घारीक  
चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकम्रमें मिलाय बडेजायके  
अन्दर कोरकर रखे । इसमें चतुरेद्वयमें मनाटुआ उरक  
आदा लगाकर धतूरेकेफलमें गोलेकोरकर मोडुरामें दल

एकपहर स्वेदनकरे । फिर पहिलेफलमेंसे निकाल दूसरेफलमें रखकर एवंदितकरे । इसतह ३ फलमेंसे स्वेदनकरनेकेबाद आटेको निकालदे और जायफलको बारीकीसे मिर्चबराबर गोलियां बनाकर रखडोढ़े । योश्राभोजनकरनेकेबाद रात्रिमें श्ममेंसे १-१ गोली मधु और शरकेसायदेनेसे यह यथेष्ट स्तम्भनकरताहै ५९३ ।

### ५९४ वेतालरसः ( प्रथमः )

शुद्धं मृतं विषं गन्धं हरितालं समाक्षिपम् ।  
मर्दयेच्छलया तावद्यायजायेत कज्जली ॥ २८७२ ॥  
आर्द्रकस्य रसेनाऽथ कारयेदुदिकाः शुभाः ।  
गुञ्जामात्राः प्रदातव्याः सन्निपाते सुदारणे ॥ २८७३ ॥  
साध्याऽसाध्यं निहन्त्याशु सन्निपातं भयङ्करम् ।  
ईशेन कथितो ह्येष वेतालारयो महारसः ॥ २८७४ ॥  
अस्य मात्रा गुञ्जमिता पिप्पली मधुसंयुता ।  
योज्या घाते तथा शिघ्ररसेनाऽऽर्द्ररसेन च ॥ २८७५ ॥  
सितया जीरकेणाऽपि देया पित्तज्वरे बुधैः ।  
शर्करामधुयुष्टीभ्यां भूमिभ्यस्तितयाऽथवा ॥ २८७६ ॥  
शीतज्वरेषु योज्या सा पिप्पलीमधुसंयुता ।  
अथवा मधुगुण्डाभ्यामनुपानेन रोगजित् ॥ २८७७ ॥  
रसायनसं., र. सं., र. चं., वै. क. , र. सु., व. रा., भै. र., ज्वराऽ-  
धिकारे ।

टि०—रसायनग्रन्थे रसायनाधिकारः । र. म. माशिरुखने मरिच निबोधिन् । तथा च—“दन्तपङ्क्ति ईदा वर्य लेनेने ध्रान्त-  
सारके । कल्लिने नेत्रियामने वेताल विनियोगयेत् ॥ ग्लानिषु किन्हेषु  
मोहमलेषु देहिषु । दातुमर्हति वेताल यमदुग्निवारकम् ॥” इति द्वौ  
श्लोकभित्तया दृश्येने, आर्द्रकस्य भावनाया अभावः । कुनविशद-  
कारेने प्रि.सप्तश्लोकी भावना दृश्यते ।

भाषा—शुद्ध पारा, घटनाग, गन्धक, हरिताल और गुञ्ज-  
माक्षिक समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर अदरककेरससे  
१-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखडोढ़े ।  
इन्मेंसे १-१ गोली मधु और पीपलकेसाय देनेसे पीप्य  
अथवा असाध्य सन्निपातरो यह नष्टकरताहै । सहजन और  
अदरककेरसमें बाणु; शर और जीरकेसाय पित्तज्वरोग; सुल-  
हदा और शर अथवा चिरायता और शरकेसाय शीतज्वर  
नष्टहोताहै । अन्यरोगोंमें पीपप्रभु अथवा मधु और सोंटेकेसाय  
देनेसे समन्तरोग नष्टहोतै ॥ ५९४ ॥

### ५९५ वेतालरसः ( द्वितीयः )

अन्नं मृतं शिलाजतु शुद्धं मृतं शिलाजतु ।  
ताप्यं धातुचिरीजानि मिफला मुशली समम् ॥ २८७८ ॥  
संयोगं पूर्णितं लेहं मधुना निष्क्रमायकम् ।  
माषकं नाशयेत्सिन्धु वेतालाऽयं महारसः ॥ २८७९ ॥

र. र., व. रा., र. का., वै. चि., गुडाधिकारे ।

टि०—वर्माशर्करे बाणु कीर्त्यनेने अष्टोत्थरीयनि शुशंगनि ।  
इत्येति प्रते शब्दमर्थद्वयम् ।

भाषा—अन्नक और लोहभस्म, शुद्धपारा, शिलाजोत,  
स्वर्णमाक्षिक, वाकुची, मिफला, मुशली और त्रिकटु समभाग-  
लेकर चारिकचूर्णकर पातान्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय  
रखडोढ़े । इन्मेंसे ४-४ माशेकीमात्रा मधुकेसायलेनेसे सिन्ध-  
रोग नष्टहोताहै ॥ ५९५ ॥

### ५९६ वेदान्तकरसः

शुद्धाहिफेनघनसारमदावहाशाः

सिन्दूरसूततगरोत्पलशारिवाजाः ।

कर्चूरकेशविजयोत्पलशारिवाजै-

द्राविर्विमृष्ट वटिकांकुद नेत्रगुञ्जाम् ॥ २८८० ॥

जाङ्गलानां रसेर्दुर्घर्षेयुर्वाजीकरैरस्यम् ।

केवलेन जलेनाऽपि योजितो वेदान्तकरः ॥ २८८१ ॥

विस्फीप्रहणीगुल्मान् गात्राणां स्फुटनव्यथाम् ।

अथथमाऽतिसारादीन्वानुपानेयिनाशयेत् ॥ २८८२ ॥

वृ. क., विसूचिकारी ।

भाषा—शुद्धअश्रीम, कपूर, सुरासानी अजवाइन, यहैडा,  
रससिन्दूर, तगर, कमलगन्ध, सारिका वेलन समभाग लेकर  
चारीकचूर्णकर कचूर, सुगन्धरास, भांग, कमलगन्ध और सारि-  
वाकेस्वरस अथवा कार्योंसे १-१ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी  
गोलियां बनाकर रखडोढ़े । इन्मेंसे १-१ गोली जाङ्गलप्रभु-  
पक्षियोंके मातरस, दूध, दूधगन्ध और वाजीकरण इत्येकैमाय  
अथवा अमासमें केवल जलेकेसाय देनेसे दैशा, प्रहणी, गुम,  
अश्लीका कूटना, मार्गमनादिजनित घराबट, अतिशर प्रयति  
समस्त रोगोंको यह अपने अपने अनुपातोंसे नष्टकरताहै ॥ ५९६ ॥

### ५९७ वेदविद्यागुटी

पारदाऽन्नरक्तान्तानां नागभस्म समं समम् ।

दिनं व्रातसौरसे मर्दयं यालुकायन्नं पुनः ॥ २८८३ ॥

उद्धृत्य चूर्णयेच्छुष्कं जातिताऽन्नं शिलाजतु ।

ताप्यं मण्डिरयेन्नाम्ने कालोसे तुल्यमेव च ॥ २८८४ ॥

सर्वं सर्वसमञ्जं करुणयेद्य ततः पुनः ।

मुस्ताचन्दनपुष्पाग्नारिकेलस्य शूलकम् ॥ २८८५ ॥

कपिन्यरजनीदावीचूर्णं सर्वसमं भवेत् ।

जम्बीराणां द्वयं मर्दयं ह्रियामे यटकोत्तम् ॥ २८८६ ॥

येदविद्याघटी नाम्ना भक्षणादिभ्युमेहजित् ।

मधुपात्री रसज्ञाऽनु शीघ्रैरपि गृह्यचिका ॥

अङ्गोलस्य तु योजकं रात्रौ दार्यारम्भं पिबेत् ॥ २८८७ ॥

भै. र., र. को., र. का., व. रा., रसायन., यो. म., प्रमोद-  
धिकार । यो. म. शार्दोरसस्थाने यशोरसेन मर्दनं विरहितम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, अन्नक, कान्त और नागभस्म देवय  
समभागलेकर चारीकचूर्णकर शार्दोरसमें एकदिन मर्दनकर  
गोलायनाय शरासमुत्तमें बन्दकर एकदिनकी आयेरे । पारा-  
शीकरोनेने मिफालकर इन्में अन्नकभस्म, शिप्रीज, कप-  
माक्षिक, मण्डर, वैजयन्त और कर्माव देवय समभागलेकर

वारीकचूर्णकर पूर्वचूर्णमे समभाग मिलावे । फिर नागरमोथा, सफेदचन्दन, नागचम्पा, नारियलकीजड़, कैथ, हल्दी, दाहहल्दी, येसब समभागलेकर वारीकचूर्णकर पूर्वराशिकेबराबर मिलाय जभीरीकेरसे २ पहर मर्दनकर १-१ मासेकी गोलिया बना कर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ गोली मधु और आतकोंकेरस अथवा मधु और गिलोयकेरसकेसाथ देनेसे यह दृष्टप्रमेहको नष्टकरती है । अड्डोलकाबीज १ नग और रसौत १ माशा रात्रिमें दूधकेसाथदेवे ॥ ५९७ ॥

### ५९८ वेदविधारसः

रसभस्म त्रिभागश्च भागेकं तात्पर्यभस्मकम् ।  
मृतमन्त्रश्च लोहञ्च कासीसञ्च मनःशिला ॥ २८८८ ॥  
एतानि समभागानि खल्वमग्रे चिनि क्षिपेत् ।  
निर्गुण्डीमुशलीघासाजयाजेरश्मिमन्त्रजेः ॥ २८८९ ॥  
अभयाऽऽट्कजे मेघं सप्ताहञ्च पृथक्पृथक् ।  
तद्गोलं कृपिकायश्च पञ्चामं तु तुपाग्निना ॥ २८९० ॥  
त्रिगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं रक्तमेहप्रशान्तये ।  
निम्नयीजकपायश्च धौल्ययुक्तं पिबेदनु ॥  
वेदविधारसो नाम्ना रक्तमेहपुलान्तकः ॥ २८९१ ॥  
व रा, रक्तमेह ।

भाषा—पारदभस्म ३ भाग, रजत, अभ्रक और लोहभस्म, शुद्ध कसीस और मैनसिलघेतन १-१ भाग लेकर वारीकचूर्णकर सभाल, मुताली, अड्डा, भाग, अरणी, हरे और अवरलके रसोंसे ७-७ दिन मर्दनकर गोलाबनाय आतसीबीसीमें डाल मुहन्दकर ६-७ कपडिमीदेकर सूखनेपर ६ पहरकी तुपाग्निमें पकावे । स्वातशीतलहोनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे १-२ रत्तीकीमात्रा नीमकेबीजोंकेकावेमें हीरादकसकका चूर्ण डालकर इस्तेरायदेनेसे रक्तमेह नष्टहोता है ॥ ५९८ ॥

### ५९९ वैकान्तगर्भरसः

सूतं स्वर्णञ्च वैकान्तं मृतं तुल्यञ्च मर्दयेत् ।  
चाण्डालीराक्षसीद्राये द्वियामान्ते च गोलकम् ॥ २८९२ ॥  
शुक्रं रज्जा पुटे पार्य करीपात्री महापुटे ।  
भापेकं मधुना लेहां मूलकञ्च प्रशान्तये ॥ २८९३ ॥  
वैकान्तगर्भनामाऽयं सर्वकृच्छ्रप्रशान्तयेत् ।  
अपामार्गस्य मूलन्तु तने पिष्ट्वाऽनु पाययेत् ॥ २८९४ ॥  
यो, र, च, व, र का, वै चि, र क सो, भे र, र र की,  
यो म, र को, व रा, नि र, रसेन्द्रम, मूत्रच्छेद ।

टि०—र का कृष्णान्तरिति नाम । रसेन्द्रमद्र इमरसनान्ता अवमेरुना निहितोऽस्ति । कुण्डलान्द्रवमावनाऽधिकतया दत्ताऽस्ति तस्याऽऽऽप्यनुष्ठाने न बाधि क्षति पाठत्वेकं पञ्चाऽस्ति । कुण्डलीक शब्देन बाधिकं ग्रहीतव्यम् । भे, र, र की, च म, र को, नि र एव मूत्रच्छेदार्थकं नाम । बभ्ररात्रीय चन्द्रवेदंति नाम । पुन विन्दुतुल्यमित्यस्य स्थाने गण तुयमिति पाठ्यु प्रमादालम्बमिति पथावस्थितानां कार्यकरपाऽव्याख्या ।

भाषा—गारा, सुवर्ण, वैकान्त इनकीमध्यमें समभाग लेकर चाण्डाली (अभावमें सेमउडाकन्द) और राक्षसी (अभावमें गन्ध

कपास) के कूलोंकेरसोंसे २-२ पहर मर्दनकर गोलाबनाय मुलावर शरावसम्पुटमें बन्दकर कसीके गजपुटकी आवड़े । स्वातशीतलहोनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे उड़दबराबर मात्रा मधुकेसाथ देनेसे मूत्रच्छेद निश्चितहोता है । इसपर ३ मासे अपामार्गकीजड़ छाछमें पीसकर पिलाना ॥ ५९९ ॥

### ६०० वैकान्तगुटिका ( प्रथमा )

वैकान्ताऽभ्रककान्तन्तु सस्यकं तु सुरायसम् ।  
विभीतकादिसम्भूतं हेम कान्तसमं भवेत् ॥ २८९५ ॥  
समावर्त्य तत् सूते योजयेत्पादयोगतः ।  
कुमारीरससंपृष्टा दृष्टेया गुटिका शुभा ॥  
जराभृशुहरी ख्याता यत्रस्था नाऽत्र संशयः ॥ २८९६ ॥  
रसेन्द्रम, रसायने ।

भाषा—वैकान्त, अभ्रक, कान्त, तुल्य और सुवर्ण १-१ तोला, बहेडा, आवला, हरे इनकीमात्रा २-२ तोले लेकर सबका वारीकचूर्णकर त्रिकलाकी मींगीकेसाथ १-२ दिन धमनकर त्रिकलाकी मन्त्राके तैलमें बुझाकर अमिष्पायी तथा शुभ क्षितिकेबुट्ट २० तोले पारेमें गलाकर मिलावे । फिर पीऊ वारकेरसमें इसे ६-७ दिन मर्दनकर अमीष्टप्रमाणकी गोलिया बनावे । इसमेंसे १ गोली मुहमें रानेसे यह बुझाये और मधुबो दूस्करती है ॥ ६०० ॥

### ६०१ वैकान्तगुटिका ( द्वितीया )

पुनरन्यत्रस्यामि प्रयोगं भुवि दुर्लभम् ।  
चूर्णयित्वा तु वैकान्तं दुग्धमध्याज्यसंयुतम् ॥ २८९७ ॥  
ईषट्पुण्ड्रणसंयुक्तमन्यभूरागतं धमेत् ।  
तत्सत्त्वं सहसा सूते मर्दयित्वा विचक्षणः ॥ २८९८ ॥  
स्वाभीष्टां गुटिकां बद्धा मुसमग्रे च धारयेत् ।  
जायते दिव्यदेहस्तु मासमात्रस्य धारणात् ॥ २८९९ ॥  
रसबन्धश्च कुरुते इन्द्रगोपकसन्निभम् ।  
सहस्रवेधैश्च भवेत्सर्धेलोहानि पेक्षयेत् ॥ २९०० ॥  
रसेन्द्रम, रसायने ।

भाषा—दूध, मधु और घी समभागमें मिलाकर एकपात्रमें रखडोड़े और इसमें वैकान्तको गरमकरके यथातक बुझाव कि उसका घूराहोजाय फिर इसचूर्णको थोड़े मुदागरेसाथ मूषामें रख धमनकरे तो इसमेंसे सत्तर निकलेगा । इसपत्रको शुद्ध और पुमुक्षित पारेमें मिलानेमें बाली धपेगी । इसगोलीको मुहमें रखनेसे एकमहीनेमें दिव्य शरीरहो जाता है । इसगोलीको पारेमें डालनेसे बीरबहोतीके सव्य रंग होजाता है । इस रक्षितगरेका एकहजारवां हिस्सा किमोभी धातुमें देनेसे उसमें मूर्धकिया अथवा चन्द्रकिया होती है ॥ ६०१ ॥

### ६०२ वैकान्तपोटली

विश्रान्तस्त्रगगन्तं भसितं सुभाय्यं  
व्योषाम्भुना नृचुचानि चिमर्दनीयम् ।



यन्त्रमे ४ दिनकी बहुतमन्द आन्वेदे । स्वाद्वशीतल्लोनेपर निका-  
लकर १२छोड़े । इसमेंसे १ रसीसे ३ रसीतकमाना तल्लोय  
हरानुपानकेसायनेसे यह समस्तगोको दूरकरताहै । जायफल,  
जावित्री, केशर, लौंग, बेरकीमज्जा और अक्लकरा येसब सम  
भागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा अनु  
पानकीजगह स्वस्थ आदमीको देनेसे कान्ति, उत्साह, काम  
और अमिक्रीद्विहोतीहै । शुक्तिपूर्वक इसकासेवनकरनेसे शोष,  
क्षय, राजरोग, प्रमेह, विषमज्वर, प्रलेपक, जीर्ण तथा मन्द  
ज्वर, कान्त्यभाव, वन्ध्यत्व, ओज क्षय, वातविकार, स्लेष्म-  
रोग और कर्मजन्माधिया नष्टहोतीहै ॥ ६०५ ॥

### ६०६ वैकान्तगुटी

वैकान्तसत्त्वतुल्यांशं गुडं सूतं विमर्दयेत् ।  
दिनं दिव्यापधद्रावैस्तद्रोलं निगडेन वै ॥ २९२१ ॥  
लिप्त्वा लघणगर्भायां यक्षसृप्यां निरोधयेत् ।  
छायायां शोषयेत्सन्धिं त्रिविधं तुषपह्निन ॥ २९२२ ॥  
स्वेदयेद्वा करीपाशौ दियाराप्रमथोदरेत् ।  
तद्रोलं निगडेनैव लिप्त्वा तद्वज्रिद्वय च ॥ २९२३ ॥  
छायाशुष्कं धमेद्रादं बन्धमायासि निश्चितम् ।  
यर्षकं धारयेद्भस्मे जीषेद्ब्रह्मदिनत्रयम् ॥ २९२४ ॥  
वैकान्तगुटिका छीपा सर्वकामफलप्रदा ।  
कर्पकं त्रिफलाचूर्णं मन्त्राज्याभ्यां लिहदनु ॥ २९२५ ॥

१ ख, रसायने ।

आपा—वैकान्तसाध और अमिस्वायी सुसुखितपारा सम-  
भाग लेकर स्यालाम दिव्यापधियोंके स्वरससे गोली बननेतक  
मर्दनकरे । फिर तिथारीघृह और आठकादूध, पलायवेचीज,  
पुल १-१ भाग, सैधानमक २ भाग लेकर घनसेक्रे । कूटते  
कूटते जब इसमेंसे तारबधने लगे तब इसे तैयारसमसे (यहहाल  
निरन्तर २-३ दिनतक कूटनेसे होतीहै इसकानाम पारदनिगडहै  
इसकेअन्दर पारेको बन्दकरनेसे उड़नहींसका इसीलिये इसका  
नाम निगड अथवा प्राचीनव्यवहारमें निगल ऐसा प्रसिद्धहै ॥  
रमाणं ॥ ) इसका गोलीपर और बिल्वके आकारकी बज्रभूषामें  
लेपदेकर भूषामें सैधानमकबिठाकर गोलीको रक्ते और ऊपरसे  
मैथेनमकसे ढककर भूषाका ढकन लगाय उठीनिगडसे सन्धि  
बन्दकर राक्षसीरुद्धके धूनेका ऊपरसे लेपदेकर छायाशुष्ककर  
३ दिन गुणामिमें स्वेदितकरे । अथवा कर्षीनी अमिमैं एक  
अक्षोराम स्वेदनकर निकालकर रिसरे पूर्ववत् मर्दनकर बज्रभूषामें  
रखकर पूर्ववत् सन्धिबन्दकर सुसाकर धातुदावेके चिड़ मान्द्रम  
होनेतक दृढ घमनकरावेतो इससे पारेकी वैकान्तसेसाय गोली  
बप्राजयगी । इसगोलीको रमातार एकवर्गक मुंदमेंरखनेसे बहुत  
दोषानुको भोगताहै । जबसे इसका प्रयोग आरम्भकरे तभीसे  
सुखदशाम १-१ वर्ष त्रिकलाचूर्ण मधुसेसाय सेवनकरे ॥ ६०५ ॥

### ६०७ वैकान्तरसः ( पडानन )

मूतमूलाऽस्रवैकान्तकान्तताम्रं समं समम् ।  
सर्वतुल्येन गन्धेन मधं म्लान्तवान्धितम् ॥ २९२६ ॥

५१

दिनें तद्वैरेव घटी कुर्याद्गुञ्जितम् ।  
भक्षयेद्द्वजाम्बुन्ति द्वन्द्वजांश्च त्रिदोषजान् ॥ २९२७ ॥  
प्रत्यप्सुशलीवह्निभागाः कुपुस्थ पोडश ।  
पिप्पलीपिप्पलीमूलं क्षिपेद्भग्नद्वयं द्वयम् ॥ २९२८ ॥  
चतुष्कन्तु विडङ्गानां मरिचं कटुशुण्ठिके ।  
ब्रह्मदण्डी तथैकेका चूर्णितं द्विगुणं गुडम् ॥ २९२९ ॥  
कर्पाशं भक्षयेद्यान् हर्शारोगप्रशान्तये ।  
वैकान्ताप्यो रसो नाम साध्याऽसाध्यप्रशान्तये ॥

नि २, २ को, र सु, व रा, वै वि, यो म, रसायनत,  
र वि, र क ल, र च, र श, र का, अर्शोऽधिकारे ।

टि०—नि २, २ को, र सु, यो म, रसायनत, र वि, र क ल,  
र च, र श, र वा एव प्रत्यपु पडानन इतिनाम । तमगन्धोऽपि  
नर्ममसुदाये पतित । अत्रतु सर्वदिगुण । अत्र मन्त्रात्मकं मर्दनं विहित  
पडानने भावनाचर्चैव नारित, अनस्तरयान्तर्भाव उचित प्रतिभाति ।

आपा—पारा, अभ्रक, वैकान्त, कान्त और ताम्र इनकी  
भस्मे समभागलेकर सक्कीबराबर छद्मगन्धक मिलाय मिलावेके  
तैलसे एकदिन मर्दनकर २-२ रसीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसायनेसे द्वन्द्वज और  
त्रिदोषजसहितगोली यह नष्टकरताहै । सुशली और चित्रक  
८-८ भाग, कुठ १६ भाग, शीपल, पिपलामूल २-२ भाग,  
विडङ्ग ४ भा, मरिच, कुटकी, रौठ, ब्रह्मदण्डी १-१ भागलेकर  
बारीकचूर्णकर सबसेद्वजा गुडमिलाकर १-१ वर्षके मोदकबनाल ।  
इनमेंसे १-१ मोदक गोलीकेऊपर अनुपानमें देनेसे साध्या-  
साध्य समस्तवजातीर नष्टहोतेहैं ॥ ६०७ ॥

### ६०८ वैकान्तरसायनम् ( प्रथमम् )

यज्ञान्नरीयसत्त्वस्य कर्पमेकं समाहरेत् ।  
निष्कार्दं भस्म वैकान्तं भस्म पारदजं समम् ॥ २९३१ ॥  
स्वर्णं रौप्यं प्रवालञ्च माक्षिकं बृहदारकम् ।  
गुगाक्षीर्यमृतासत्त्वं कर्पमानं पृथक्पृथक् ॥ २९३२ ॥  
पुराणसर्पिषा द्यौडसिताभ्यां सह याजितम् ।  
धान्यराशौ क्षिपेन्मासं मायमात्रनिषेधणात् ॥ २९३३ ॥  
जरा न लभते स्थैर्यं धारोष्णशीरपायिनाम् ।  
रोगसङ्घा हर्षं यास्ति वैद्योपधयिचजिता ॥ २९३४ ॥  
वृ क, रसायने ।

आपा—यज्ञान्नसत्त्व १ वर्ष, वैकान्त और पारदभस्म  
२-२ माश, स्वर्ण, रत्न, प्रवाल, सुवर्णमाक्षिक इनकीभस्में,  
विपारा, बरालेखन और मिलेदरावर १-१ कर्पेन्द्रर गुगना यो,  
मधु और दाहर भन्दाभस्मे मिलाकर पीकरनेमें १२५ सुदबन्दहर  
धान्यराशिमें गाड़दे । एकमहीनेबाद निकालकर १-१ मासेकी  
मात्रा अथवा रोग और रोगीका बराबर देगवर मात्रा कायम-  
कर धारोष्णदूधकेसाय देनेमें सुदगा नष्टताहै । और त्रिज  
रोगमें वैद्य तथा औषधियोंने जकाव ददिदाहो वे अगन्ध्य-  
रोग नष्टहोताहै ॥ ६०८ ॥

## ६०९ वैकान्तरसायनम् ( द्वितीयम् )

रक्तिकाऽष्टकसम्मानं वैकान्तमसितं हरेत् ।  
 पोढा गन्धकसञ्जीर्णं रसं कर्पद्वयं क्षिपेत् ॥ २९३५ ॥  
 वैकान्तपादसम्मानं मृतं हेम विनिःक्षिपेत् ।  
 विद्रुमं मौक्तिकञ्चैव कर्पमानं पृथक्पृथक् ॥ २९३६ ॥  
 शाल्मलीसारिवाद्राक्षावाराहीबानरीमवेः ।  
 प्रत्येकैः स्वरसैः सप्त भावयित्वाऽद्धमाधिकम् ॥ २९३७ ॥  
 नागकेशरतालीसकणाकफट्टद्विजा-  
 नुगाक्षीर्यमृतासत्त्वसर्पिःक्षौद्रविमिश्रितम् ॥ २९३८ ॥  
 लिहन्न लिप्यते राजयक्ष्मपङ्कदुरासदम् ।  
 पुंस्त्वहानिं श्वासकासावग्निमान्धमरोचकम् ॥ २९३९ ॥  
 ग्रहणीं शोषगुदजाबुदराणि हलीमकम् ।  
 निहत्य कुक्कते नित्यं पुरणं दीर्घजीवितम् ॥ २९४० ॥  
 वृ. क., रसायने ।

भाषा—वैकान्तमस ८ रत्ती, पद्गुणगन्धज्वारितपाद-  
 मस २ कर्प, सुवर्णमस २ रत्ती, प्रवाल और मोतीकी मस १-१ कर्प लेकर सैमलकामुला, सारिवा, दास, बाराहीकन्द  
 और केवाचके स्वरसोंसे ७-७ भावनाएँ देकर ४-८ रत्तीकी  
 गोलिया बनाकर रसजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली नागकेशर,  
 तालीसपत्र, पीपल, काकड़ासीगी, वंसलोचन, गिलोयसत्त्व  
 इनके ३ मासे समभागवर्णकेसाथ घी और मधुमें मिलाकर  
 सेवनकरनेसे दुःशुभ्य राजयक्ष्म, पण्डित्य, श्वास, वास, मन्दाग्नि,  
 अक्षि, प्रहणी, शोष, बवासीर, ८ उदररोग, हलीमक इन  
 रोगको दूरकर यह पुरणको दीर्घजीवी बनाताहै ॥ ६०९ ॥

## ६१० वैकान्तमृतकरसः

पुनरन्यत्रयश्चामि वैकान्तविधिलक्षणम् ।  
 वैकान्तकरसं प्राप्य कस्य लोके द्रिष्टता ॥ २९४१ ॥  
 ते च सप्तविधाः प्रोक्ताः कर्म तेषामनेकधा ।  
 श्वेतो रक्तस्तथा पीतो नीलः पारावतप्रभः ॥ २९४२ ॥  
 मधुरगलकप्रप्यस्तथा मरकतप्रभः ।  
 तेषां कर्म प्रवक्ष्यामि यादृशं यस्य जायते ॥ २९४३ ॥  
 श्वेतञ्च चूर्णयेत्स्वर्गं व्याघ्रीकन्दोदरे क्षिपेत् ।  
 श्वेद्वेद्यं दियारायी यावच्च त्रिदिनं भवेत् ॥ २९४४ ॥  
 मुस्वेदितं ततो घात्वा प्रक्षिपेत्परदं ततः ।  
 तत्क्षणाज्जायते भस्म हयमूत्रेण मर्दयेत् ॥ २९४५ ॥  
 सुनिर्वाणं ततो घात्वा पलं पलशते क्षिपेत् ।  
 तारन्तु जायते भस्म विद्रुदस्फटिकारुति ॥ २९४६ ॥  
 तत्सूते मेलयेद्भस्म समभागं विचक्षणः ।  
 चारयेत्प्रजतं मृते हयमूत्रेण मर्दयेत् ॥ २९४७ ॥  
 अन्धमूपागतं पाच्यं कार्पस्यं वा तुपाट्टये ।  
 अहोरात्रं त्रिरात्रं वा भयेदग्निमहो रसः ॥ २९४८ ॥  
 स्पष्टं सर्वलोहानि रजतञ्च वरिष्यति ।  
 रतेऽप्यर्घ्यकृतं धर्मं जरादाग्निघनाशनम् ॥ २९४९ ॥

स्वेदनं व्याघ्रपद्याश्च कन्दे याम विधाय च ।  
 सारयेत्सप्तवारंश्च रसं चैव पलं तथा ॥ २९५० ॥  
 तच्चैव बलमानेन क्षिपेद्धेमपले बुधः ।  
 प्राप्नोति भस्मतां सर्वं पुनर्हमशते क्षिपेत् ॥ २९५१ ॥  
 भस्मतां याति तत्सर्वं शुद्धहेमसमप्रभम् ।  
 तद्भस्म तु रसेन्द्रेऽथ पुनरर्द्धेन मेलयेत् ॥ २९५२ ॥  
 भवेदग्निमहो ह्येव ततः सिद्धरसो भवेत् ।  
 विघ्न्यते सर्वलोहानि कनकं शोभनं भवेत् ॥ २९५३ ॥  
 दारिद्र्यनाशनं सृतं सर्वलोकापुक्कम्पनम् ।  
 पीतन्तु हेमकारि स्वात्स्वेदितो व्याघ्रिकन्दजे ॥ २९५४ ॥  
 भावितो याजिमूत्रेण पारधीयां महारसः ।  
 पलं पलशते क्षिप्त्वा पुनर्हमशते क्षिपेत् ॥  
 हेमसूतेन तत्सूते क्रोडिवैधी भवेद्वरसः ॥ २९५५ ॥  
 रसेन्द्रं, सर्वरोगं ।

भाषा—वैकान्त ग्रातप्रकारका होताहै और उनकार्यकी  
 अल्य ० है । श्वेत १ रत्न ० नील ३ पीत ४ पारावतप्रभ ५  
 मधुरगण्ड ६ और पनेकरप्रका ७ । इनमेंसे श्वेत वैकान्तको  
 लेकर व्याघ्रीकन्दमें डालकर उसीकेपूदेसे बन्दकर ६-७ कड़मिमी  
 देकर गुप्ताकर सूक्ष्मरन्ध्रमें रख ३ दिनतक स्वेदनकरे । स्वाज्ञ-  
 शीतलोदनेपर निकालकर पारेसेसाय मर्दनकरनेसे तत्क्षण भस्म  
 होजातीहै । फिर धोकेकेतानेमूत्रसे एकदिनरात मर्दनकरनेसे निव  
 स्था होजातीहै । इसके १ पलको १०० पल चादीको गलाकर  
 डालनेसे विशुद्धस्फटिकरत्नकीभस्म होजातीहै । इसभस्ममें  
 समभाग पारेमें मिलाकर धोकेकेमूत्रसे मर्दनकर अन्यमूपामें  
 बन्दकर एकदिन कर्मीमें अथवा ३ दिन सुपोंमें अग्निदेनेसे पारद  
 अग्निस्थायी होजाताहै । इसकास्पर्शकरनेसे सप्तप्रकारके लोहोंकी  
 चादी होजातीहै । इसीतरह यही क्रिया रक्तवैकान्तमें करनेसे  
 रक्ता होतीहै और बुझाया तथा दारिद्र्य दूरहोताहै । इसी  
 व्याघ्रीकन्दमें रख एकपहरस्वेदनकर एकपलसमें साराकर ३  
 रत्तीको एकपल गलेहुए सुवर्णमें डालनेसे भस्म होजातीहै । इस  
 भस्मको १०० पल सुवर्णमें डालनेसे शुद्धसुवर्णके रत्नकी भस्म  
 होजातीहै । इसभस्ममें आधामाग पारा मिलावेनेसे अग्निमह  
 होजाताहै और उसक स्पर्शसे सब लोह सुवर्णसदृशहोजातेहैं ।  
 इसीतरह पीके रत्नके वैकान्तको व्याघ्रीकन्दमें स्वेदितकर सम-  
 भागपारा मिलाकर पूर्ववत् धोकेके मूत्रमें मर्दनकरनेसे अग्निस्थायी  
 होजाताहै । इसके १ पलको १०० पल सुवर्णमें डालनेसे सम-  
 स्तकी भस्म होजातीहै । इसका एकमात्र रीतिगुणित पागमें  
 डालनेसे कोडियेयी होताहै । इसीतरह सभीरत्नोंके वैकान्तको  
 इसीप्रक्रियासे स्वकीयरत्नके धातुमें मिलावेने उर्वाररत्नके पंदा  
 करतेहैं । रोगोंको नष्टकर बुझाएको दूरकरा प्रभवा साधारण  
 कार्यहै । यहापर ग्रन्थकारने कहाकि अर्धवादे कामलियादे  
 तो भी यह एकात्म मिथ्या नहींहै इमपागको ध्यानेमें  
 रखना उचितहै ॥ ६१० ॥



### ६११ वैद्यरसायनम्

क्रान्ताकल्केन वैद्यस्य सहगन्धेन मारितम् ।  
तद्गन्धनाऽष्टशणेन तद्वद्वै मृतहम् च ॥ २९५६ ॥  
तयोः समं तीक्ष्णरजो मृतं रूप्यञ्च तत्समम् ।  
मृतञ्च विमलं सर्वैः समं सर्वं विमदितम् ॥ २९५७ ॥  
मिलितं मोक्षसारेण गोलीकृत्य विशोषयेत् ।  
अङ्गुलाद्धदलेनैव शिलाजेन विमुद्रयेत् ॥ २९५८ ॥  
पालुकायन्त्रमध्यस्थं पक्षाद् शनकैः पचेत् ।  
स्यतः शीतं समाहृत्य कुमारीमूलसारतः ॥ २९५९ ॥  
मर्दयित्वा विशोष्याऽथ पीलुमूलजलेस्तथा ।  
तथैव चित्रमूलाग्निः कन्धारीमूलसारतः ॥ २९६० ॥  
चिरबिल्वरसैस्तोयै विशोष्य च विचूर्ण्य च ।  
मृतसजीवनं होतवैद्यैरसायनम् ॥ २९६१ ॥  
आर्द्रकद्रव्यसंयुक्तं शुद्धामार्गं रसायनम् ।  
दातव्यं चित्रतोयैषां सन्निपाते विसञ्चके ॥ २९६२ ॥  
दन्तषण्डे तु सज्जाते यक्षुमात्रममुं रसम् ।  
पादयो धर्पयेद्यत्नात्तत्रैशमयाजुषात् ॥ २९६३ ॥  
आतपेष्टस्य सलिलं मूर्ध्नि शीतं विनिःश्लिषेत् ।  
शतकुम्भमितं स्वादु तीमां शुजायते ततः ॥ २९६४ ॥  
यत्किञ्चिद्याचते तस्मिन्तत्रदेयममीप्सितम् ।  
आयुधैर्दृष्टिर्दृष्ट्यास्तु जीयति मानयः २९६५ ॥  
त्रिदोषजातरोगेषु दातव्यं तण्डुलोन्मितम् ।  
पलाङ्गसितया युक्तमन्यथा हन्ति रोगिणम् ॥ २९६६ ॥  
एकदोषोद्भवे रोगे संसर्गजनिते तथा ।  
देयमेतद्धि मिषजा वैद्यैरसायनम् ॥ २९६७ ॥

र. ५, रसायने ।

भाषा—लसनिषासे चतुर्गुणित कोयल और गन्धकाकल्ल  
बनाय बीचमें लसनिषाको रस शरावमस्युटमें बन्दकर ६-७  
कपःमिठीदेकर सुखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाज्ञातीतलोनेपर  
फिर उषातीरह कल्केमें बन्दकर आचदेवे । ऐसे जबतबमस्य न  
होजाय तबतक करवादे । यह अस्य २ कप, सुवर्णमस्य १  
कप, लोह और रजतमस्य ३-३ कप, रजतमाक्षिक ९ कप  
मिलाकर केलेकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय गुलावर  
ऊपरसे आधाअङ्गुलमोटा शिलाजीतकालेपकरसे शरावमस्युटमें  
रस बालुकायन्त्रमें बन्दकर ७॥ दिनकी मन्दआंचदे । स्वाज्ञा-  
तीतलोनेपर निकालकर पीडुंवार, पीलु, चित्रक, हेस, शुद्ध-  
कृष्ण इनप्रत्येकके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गुलावर रख-  
छोदे । इसमेंसे १-१ रती बदरअखेरस अथवा चित्रककेजायके  
साथ देनेसे सञ्चारहित सन्निपात नष्टहोताहे । दन्तबन्धमें ३  
रती रसको अदरअखेरसमें मिलाय तलुग्रोंमें माहितकरनेसे  
दन्तबन्ध एटकर सोलनेलाताहे । उषणक १०० परे ठापापानी  
मत्पेपर डालना इतकेबाद तीनमूल मादमहो तब जो कुछ मांस  
यह घानेको देना । यदि आयु बाकी होगी तो यह निर्विघ्न  
जीवेगा मर्तीतो दवा अपना प्रभाव दिखाकर निहतहोजायगी ।

आधारणतोगोले एकचानलभर मात्रा २ कप शरवेसाय देना ।  
अन्यथा रोगीको मारडालेगी । एक, दो अथवा संसर्गजदोषोंमें  
वैद्यरसायन देनेसे तत्क्षण लाभहोताहे ॥ ६११ ॥

### ६१२ वैद्यादियोगः

वैद्यैरमुकामणिगोरिकाणां  
मृच्छहृदेमामलकोदकानाम् ।  
मधुदकस्येश्वरसस्य चैव  
पानाच्छर्मं गच्छति रक्तपित्तम् ॥ २९६८ ॥

च सं., रक्तपित्ते ।

भाषा—लसनिषा, मोती, माणिक्य इनकीमसमें और  
सोनागेरु समभाग मिलाकर रोगीका कलावल देखकर १-१  
रती मधुनैर्देकरसाय देकर कालीमिठी, शङ्ख, सुवर्ण और आवले  
इनमें रक्काहुआ पानी, मधुका शरवत अथवा ईलकारस पिला-  
नेसे रक्तपित्त नष्टहोताहे ॥ ६१२ ॥

### ६१३ वैद्यनाथरसः

शङ्खस्य यलयं निष्कं चतुर्निष्का पराटिका ।  
कर्पाशं नीलकण्ठं तुत्यं गन्धाम्बदङ्गणम् ॥ २९६९ ॥  
तारं नागं रसं चाऽथ निष्कांशं पूर्ववत्पुदेत् ।  
घराटचूर्णमण्डूरकल्पितालेपने पचेत् ॥ २९७० ॥

अस्याऽर्द्धमापं मरिचाऽर्द्धमापं

ताम्रमूलवह्नीरसमाधितञ्च ।

तत्पत्रलिप्ते मधुनाऽचलिह्या-

क्षार्यं नवीनेन घृतेन चाऽपि ॥ २९७१ ॥

नाडीमार्गं निर्गते चाऽल्पमत्पं

पथ्यं भोज्यं लोकनाथोपदिष्टम् ।

यामे यामे चैव मामण्डलान्ता-

त्तिस्वै सद्यः शोषजिह्वेयनाथः ॥ २९७२ ॥

र. र. सं., र. च., राजयश्मणि ।

भाषा—शङ्खनाभि ४ मासे, पीलीकोड़ी, नीलेकाचकी  
चूड़ी, तुतिया, गन्धक, सुहाणा १-१ कप, रजत, नाग और  
पारदमस्य २-२ मासे लेकर बारीकचूर्णकर चित्रककेजायसे  
१-२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय कौड़ी और मण्डूरमस्यको  
चित्रककेजायमें मर्दनकर पोलेपर लेपकर शरावमस्युटमें बन्दकर  
गजपुटकी आंचदे । स्वाज्ञातीतलोनेपर निकालकर रगछोदे ।  
इसमेंसे ४-४ रतीकी मात्रा समभाग मरिचके चूर्णकेसाथ मिश्रण  
पाननेरससे मर्दनकर पानपरलाहार पोहाया मधु कालपर सिलावे  
अथवा धक्कन या पीनेसायदेवे । आमाशयमें पतुंवेनेबाद  
२-३ प्राणमोजनदेकर चित्त शुक्लवे और १-१ पहरमें मूत्र-  
छनेपर पोहा २ भोजनदे । इषजहार एकमण्डलतब करमें  
यह राजयश्मको नष्टहोताहे ॥ ६१३ ॥

### ६४४ वैद्यनाथवटी (प्रथमा)

शार्णं गन्धमयो रसस्य च तथा कृत्वाऽयोः कञ्जलीं,  
तिक्ताचूर्णमथाक्षमेव सक्कलं गीद्रे विधा माययेत् ।

पश्चात्तत्सुपवीशुभेन पयसा कायेऽमले वैफले,  
संशोष्या शुटिका कलायसदृशीं कार्यां युधे र्यन्ततः॥  
ज्ञात्वा दोषयत्नं रसेन सुपवीपत्रस्य पर्णस्य वा,  
एकद्वित्रिचतुःक्रमेण घटिकां दद्यात्कटुष्णांश्चुना ।  
हन्ति शूलनिचयं नयन्जरं पाण्डुतामरुचिशोथसञ्चयम्  
रेचने च दधिभक्तमोजनं वैद्यनाथसुकुमाररेचनम् ॥  
भै. र., र. घ., घ., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ४-४ मासे, कुटकी १  
कप लेटर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय  
करलेकेपतोंके रस और त्रिकलाकेबाथसे घृष्यमें २-३ दिन  
भावना देकर मटरबराबर गोलियें बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे  
१ गोलीसे ४ गोलीतक रोग और और रोगीका बलावल देख-  
कर भरेले अथवा पानकेरस या गरमपानीकेसाथ देनेसे शूल,  
नयन्जर, पाण्डु, अरुचि, शोथ, इनसबको यह दूरकरतीहै ।  
जुलायलग्नेकेबाद दही, भात देना ॥ ६१४ ॥

### ६१५ वैद्यनाथवटी ( द्वितीया )

पथ्या त्रिकटु सूतञ्च द्विगुणं कानकं तथा ।  
मन्युमणिरत्नैरस्मल्लोणिकाया रसैः कृता ॥ २९७५ ॥  
शुटिकोदरशुल्मादीग्न्यापानमयधिनानिनी ।  
हृमिकुष्ठगात्रकण्डपिडकाश्च निहन्ति च ॥  
शुटी सिद्धफला चैवं वैद्यनाथेन भाषिता ॥ २९७६ ॥  
र. सं., भै. र., र. घ., घ., र. वि, उदावर्तनाहाऽधिकारे ।

भाषा—हैं, त्रिकटु और रससिन्दूर १-१ भाग, शुद्ध-  
जमालगोदा २ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर मण्डकपर्णी  
और अमलोनियारिसोंसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी  
गोलियां बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा  
रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे उदर, शुष्क, पाण्डु, हृमि, कुष्ठ,  
कण्ड, पिडिका प्रयतिफो यह नष्टकरतीहै ॥ ६१५ ॥

### ६१६ वैद्यनाथवटी ( दधिपटी ) ( तृतीया )

पक्वेष्टिकाहृदिद्राभ्यामागारधूमकेन च ।  
शोधितं सूतकं प्रातः तोलयद्वयसम्मिश्रम् ॥ २९७७ ॥  
भृङ्गराजरसैः शुद्धं गन्धकं सूततुल्यकम् ।  
हरितालं विपं तुल्यमेलयालुकताप्रक्रमम् ॥ २९७८ ॥  
खर्परं मांसिकं कान्तं सर्वमेकत्र कारयेत् ।  
सर्पादौ कज्जली प्राप्ता आयेयश्च पुनः पुनः ॥ २९७९ ॥  
सिन्धुपाररसे चैव ज्योतिष्मत्या रसे तथा ।  
रसेऽपराजितायाश्च जपन्त्याः स्वरसे तथा ॥ २९८० ॥  
रक्तचिपकमूलोत्थे रसे च परिमाययेत् ।  
घटिकां सर्पपाकारां योजयेत्तु शाली मिरकः ॥ २९८१ ॥  
ततः सप्त यटी दद्यादुष्णेन धारिण्या सह  
अनुपानञ्च कर्तव्यं कज्जल्याः कणया सह ॥ २९८२ ॥  
सन्निपातज्वरे चैव सप्तोपे ग्रहणागदे ।  
पाण्डुरोगेऽग्निमान्द्ये च त्रिविधे विषमज्वरे ॥ २९८३ ॥

शुक्रमज्जगते दद्यान्न तु कासे कदाचन ।  
नित्यं दद्यात् च भोक्तव्यं सितया युक्तमेव च ॥ २९८४ ॥  
स्नातव्यं ह्यभयान्नित्यं वयोदोषानुसारतः ।  
वारिहीनञ्चाऽलवर्णं दधि पथ्यं सदा भवेत् ॥  
वैद्यनाथवटीनाम्ना वैद्यनाथेन निर्मिता ॥ २९८५ ॥  
भै. र., घ., शोधाऽधिकारे ।

भाषा—पकीहुईईट, हल्दी, धरकेधुए प्रथमि शुद्धकिया-  
हुआ पारा २ तोले, भंगरेकरसमें कर्दवार जुलायाहुआ गन्धक  
२ तोले, शुद्धहरिताल, चटनाम औरतुतिया, गंडुहा, ताम्र, पप-  
रिया, स्वर्णमाक्षिक, कान्तलोह इनकीमत्से १-१ तोला लेकर  
सबकोपारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय संभाळ, मालकां-  
गण, कोयल, जैती, खालचिपककोजइ इनसबके यथासम्भव-  
स्वरस अथवा कायोंसे १-१ दिन मर्दनकर सर्पप्रमाण गोलियां  
बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे ७-७ गोलिया कज्जली और पीपलके-  
साथ मिलाकर गरमजल अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे  
सन्निपात, शोथसहितमहणी, पाण्डु, मन्दाग्नि, नानातरहकेविषम-  
ज्वर, शुक्र और मन्वगतज्वर, इनसबको यह नष्टकरतीहै ।  
इसरको खांसीमें मूलकरमी नहींदेना । दही और दधरकेसाथ  
पच्यदेना । अरुस्था और दोषोंका दूयालकर मानकराना ।  
नमक और जल नहीं देना, दही चाहेजिनना खावे ॥ ६१६ ॥

### ६१७ वैश्वानरयोगः

भाषितं मातुलुहाम्लैस्ताम्रञ्च मारितं दिनम् ।  
आर्द्रकस्वरसेरुद्धा विपं तुल्यञ्च घृणयेत् ॥ २९८६ ॥  
पिप्पलीपिप्पलीमूलद्वये युक्तं विभाययेत् ॥  
हिङ्गुं करञ्जयीञ्च शुण्ठीलशुनसेन्धयम् ॥ २९८७ ॥  
परण्डतैलसर्पिष्टं मायेकं भक्षयेत्सदा ।  
योगो वैश्वानरो नाम शूलं हन्ति त्रिदोषजम् ॥  
साभ्याऽसाप्यञ्च शूलञ्च हन्ति वैश्वानरो रसः २९८८  
र. को., यो. म. चलाऽधिकारे ।

भाषा—विजोकेरससे की हुई ताम्रमम्म और अदररसे-  
रससे एकदिन भावनादियाहुआ चटनाम समभागलेकर पीपल  
और पिपलामूलके कायोंसे एकदिनमर्दनकर भुनादींग, करंजयीञ,  
छोट, एकछलीलशुन और सेन्ध १-१ भाग लेकर बारीक-  
चूर्णकर पूर्वयोगमें मिलाय एरण्डतैलमें मर्दनकर १-१ मासेकी  
गोलियां बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा  
रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे छाप्य अथवा अगाप्य त्रिदोषप्र-  
सूक्तो यह नष्टकरतीहै ॥ ६१७ ॥

### ६१८ वैश्वानररसः ( वृद्धायः ) ( प्रथमः )

रसं गन्धं सूतं शुल्वं नागं प्रत्येकतोलयम् ।  
एकत्र क्रियते घृद्धा पश्चादिमानि निक्षिपेत् ॥ २९८९ ॥  
पिप्पलीपिप्पलीक्षारं मरिचं चिञ्चिकाभयम् ।  
नागं स्याजिकाक्षारं यवभाण्ड्यं दृढुजम् ॥ २९९० ॥

प्रत्येकं मापपट्टकं स्याद्ब्रह्मते स्वरुणं तथा ।  
कृष्माण्डकरसं दत्त्वादिर्नमेकं विमर्दयेत् ॥ २९९१ ॥  
अन्धमृपागतं पक्त्वा यावद्यामचतुष्टयम् ।  
उत्तार्य शीतलं नीत्वा रसं चतुष्टयम् ॥ २९९२ ॥  
अग्निमान्ये ज्वरे दद्यादुदरे पारदं परम् ।  
अतिपुष्टिकरः सम्यग्बुद्धवैश्वानरो रसः ॥ २९९३ ॥  
रसचि, र का, अग्निमान्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और नागमस्य  
१-१ तोला, छोटीपीपल, पीपल और इमलीकाष्ठार, मरिच,  
मौठ, सब्जी, यवसार, भुनामुद्राया येसब ६-६ मासेलेकर  
बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय सुरण  
और कोंडलेकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर मोलाबनाय अन्ध-  
मृपामें बन्दकर मूथरयन्त्रमें रख ४ पहर स्वेदनकरे । स्वाङ्ग-  
शीतलहोनेपर निकालकर १२-१२ रती समय अथवा रोगो  
चितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, ज्वर, उदररोग, कृमि, इन-  
सबको यह नष्टकरताहै ॥ २९९४ ॥

### ६१९ वैश्वानररसः ( द्वितीयः )

विष्णुकान्ता च जयपालं लाङ्गली सुरदालिका ।  
यवचिञ्चिजसारणे रसादिगुणगन्धकम् ॥ २९९४ ॥  
पक्षं विमर्दितं सर्वं स्वेद्येन्मुद्रयुद्धिना ।  
शुक्ले गुञ्जाम्रयञ्चाऽस्य सोष्णास्तु घृतसैन्धवम् ॥ २९९५ ॥  
घातजे कफजे लिङ्गाम्भ्याद्रक्तसमन्वितम् ।  
सस्तितामाक्षिकं पेते स्तोऽयं वैश्वानरो रसः ॥ २९९६ ॥  
र र. स, र. को, शुक्ले ।

भाषा—नैयल, शुद्ध जमालमोटा और करिहारी, बन्दाल,  
शुद्धपारा १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर बारीकचूर्णकर  
पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय तितलीकेरससे १५  
दिनतक लगातार मर्दनकर एरण्वगीरहकेपतोंमें लपेट एकअहुल-  
मोटा बीचब लगकर अहारोंमें स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतल  
होनेपर निकालकर ३-३ रतीकी गोलियें बनाकर रखजोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली घी और सेंधेनमककेसाथ देकर थोड़ा गरम  
पानी पिलानेसे वातिकगुल्म नष्टहोताहै । कफजगुल्ममें मधु और  
अश्वरक्षकेसाथ, पैतिकमें शकर और मधुके साथदेवे ॥ २९९७ ॥

### ६२० वैश्वानररसः ( तृतीयः )

संशुद्धपारदसुगन्धशिलाजतूर्ना  
भागद्वयञ्च मुशलीदशभागयुक्तम् ।  
खर्जूरकञ्च सुपयी कटुभागमेकं  
श्रेष्ठं विपञ्च युगभागसमञ्च चूर्णम् ॥ २९९७ ॥  
भृङ्गोदकेन दिनसप्तकमर्दितोऽस्ती  
मध्वन्विता मरिचमात्रगुटी विधेया ।  
नानाविधाश्च शमयेत्तु गदधराणां  
वैश्वानरो हि रसनाम बुभुक्षुताद ॥ २९९८ ॥  
र. (भा), अग्निमान्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और शिलाजीत २-२ भाग,  
मुशली १० भाग, छुहारे, मण्डैल और मरिच १-१ भाग,  
शुद्धवज्रनाभ २ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नील  
वर्णकजलीमें मिलाय भारेकेरससे ७ दिनमर्दनकर मरिचवरा-  
वर गोलियें बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु अथवा  
समयचितानुपानकेसाथदेनेसे अमिकी प्रतीतकर नानाप्रकारक  
रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २९९९ ॥

### ६२१ वैश्वानररसः ( चतुर्थः )

दशटङ्कमिता शुष्की मरिचं पिप्पली घषा ।  
सीमाग्यञ्च तथा स्रश्मं सर्ममेकत्र चूर्णितम् ॥ २९९९ ॥  
सूतकं द्रुमात्रेण गन्धकं तत्समं विपम् ।  
एकत्र चूर्णितं श्लेष्मणं कर्तव्यं चैकभागतः ॥ ३००० ॥  
एकभागमितं प्राह्यं सर्वं पर्णं चाम्मसा ।  
काशं श्वासं हरेच्छीघ्रमर्त्तचि तत्क्षणादपि ॥ ३००१ ॥  
शुष्मादिकं महाव्याधिं यकृतं प्रहणीमपि ।  
नवयर्णमितं याति प्रभावो भूमिमण्डले ॥ ३००२ ॥  
खण्डवातादिकान्सर्ग्यं समं कृत्वा व्ययोहति ।  
वैश्वानरमितिख्यातं क्षेपञ्च कुरते ध्रुवम् ॥ ३००३ ॥  
र. का, अरोचनाधिकारे ।

भाषा—सोठ, मिर्च, पीपल, बब, भुनामुद्राया ये प्रत्येक-  
२ ॥ कर्प, शुद्ध पारा, गन्धक और बडनाग ४-४ मास लेकर  
बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय पानके-  
रससे मर्दनकर ३-३ रतीकीगोलिया बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे काष्ठ,  
आघ, अदधि, शुष्मादिक महाव्याधिया, यकृत, प्रहणी,  
समस्त वातविह्वार, मन्दाग्नि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३००४ ॥

### ६२२ वैश्वानररसः ( पञ्चमः )

व्योषं विषं गदो वह्निं निर्गुण्डीव्याधिघातकी ।  
अजमोदञ्च सर्वेषां समान्भागान्समाहरेत् ॥ ३००४ ॥  
श्लेष्मणचूर्णं ततः कुर्याद्वायवेतिपुचमुन्दजे ।  
काथैरेकोनविंशत्या वारान्भृङ्गरसेस्ततः ॥ ३००५ ॥  
सप्त वारान्माचयित्वा मधुना गुटिका क्तिरेत् ।  
मायैकमानका राज्ञी मधुना सम्प्रयोजयेत् ॥ ३००६ ॥  
जयं वैश्वानरो नाम्ना योगो दृष्टप्रभाववान् ।  
जलोदरादिरोगाणां विनिवारणदक्षिण ॥ ३००७ ॥  
रसाल, उदराधिकारे ।

भाषा—त्रिकटु, शुद्धवज्रनाभ, कुठ, चित्रकमूल, निर्गुण्डी,  
अमिलतासकायूदा, अजमोद सब समभागकर बारीकचूर्णकर  
नीमकेमद अथवा स्वरससे २१ और संकेरेरससे ७ भावनाएँ देकर  
१-१ मासेकी गोलिया बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली  
रात्रिमें मधुकेसाथ देनेसे यह जलोदरादि समस्त उदररोगोंको  
नष्टकरताहै ॥ ३००८ ॥

## ६२३ वैश्वानरलोहम् ( प्रथमम् )

द्विपलं तित्तिडीक्षारं तथाऽपामार्गसम्भवम् ।  
शम्भूतमस्मसंयुक्तं लवणञ्च समं तथा ॥ ३००८ ॥  
चतुर्णां समभागाः स्युस्तुल्यञ्च लोहचूर्णकम् ।  
चूर्णं सम्पिप्य खल्वादी कारयेदक्तां मपक्व ॥ ३००९ ॥  
शूलस्यागमयेलायां खादेन्मापद्ध्यं नरः ।  
शूलमष्टविधं हन्ति साध्याऽसाध्यं न संशयः ॥ ३०१० ॥  
भै. र., घ., र. क., शूलाधिकारे ।

भाषा—इमली और अपामार्गकाक्षार, पोंघेकीभस्म और सेपानमक्ष समभागलेकर सबकी बराबर लोहभस्ममिलाय एकदिन शुष्कमईनकर रखोढ़े । शूलआनेकेसमय २-२ मासे उचितानुपानकेसाथ लेनेसे साध्य भया असाध्य समस्तशूलको यह नष्टकरताहै ॥ ६२३ ॥

## ६२४ वैश्वानरलोहम् ( द्वितीयम् )

फलत्रिकत्यचां प्राह्याः सचित्रककुटप्रथमम् ।  
जातीफलसमायुक्तं चातुर्जातसमन्वितम् ॥ ३०११ ॥  
लवणकलिका प्राह्या गद्याणद्वयसम्मिता ।  
विषं गद्याणमेकं स्यात्सिता गद्याणविंशतिः ॥ ३०१२ ॥  
मृतलोहस्य विंशत्या सर्वमेकत्र कारयेत् ।  
मधुना गुटिकां कुर्यान्मापमात्रप्रमाणतः ॥ ३०१३ ॥  
पक्षिकां भक्षयेत्मातः पञ्चपाण्डुक्षयापहम् ।  
बालस्थविरष्टुद्धानां स्त्रीणाञ्चैव विनोपतः ॥ ३०१४ ॥  
योनिशूलेषु सर्वेषु बहिमान्धै च क्षापयेत् ।  
अरुचिञ्च हृत्पाशु स्तिकाकम् प्रणश्यति ॥  
वैश्वानरं लोहनाम सद्यो रोगहरं परम् ॥ ३०१५ ॥  
रसायनं., पाण्डुरोगे ।

भाषा—त्रिकला, चित्रक, त्रिकटु, जायफल, चातुर्जात, लवण १-१ तोला, शुद्धबज्रनाग ६ मासे, शर्करा और लोहभस्म १०-१० तोले लेकर गवदा बारीकचूर्णकर इन्ने मिलाय मयुके साथ १-१ मासेकी गोलियां बनाकर रखोढ़े । इन्नेसे १-१ गोली समय भया रोगोचितानुपानकेसाथ प्रातःकालदेनेसे पांचप्रकारके पाण्डु, क्षय, योनिशूल, मन्दाग्नि अरुचि और स्तिकादोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६२४ ॥

## ६२५ वैश्वानरवटी ( प्रथमा )

शुद्धं मृतं द्विधा गन्धं मृताऽर्वाऽयः शिलाजतु ।  
रत्नमानं प्रदातव्यं रसस्य द्विगुणं विषम ॥ ३०१६ ॥  
त्रिकटुं चित्रकं घीरां निर्गुण्डी मुशलीरजः ।  
अजमोदां विषांशेन प्रत्येकञ्च नियोजयेत् ॥ ३०१७ ॥  
निम्पपञ्चाङ्गुलकार्पामांया चैकविंशतिः ।  
भृङ्गराजरत्नः सप्त मुण्डिकाभिश्च द्वादश ॥ ३०१८ ॥  
निषा नागलताश्रेपि देव्या क्षीरे िलादेयेत् ।  
भक्षयेद्भद्राऽस्थ्यामां यटिकां सां दिषामिदिग् ॥ ३०१९ ॥

श्लेष्मोदरं निहन्त्याशु नाम्ना वैश्वानरी वटी ।

देवदालवह्निमूलकस्कं क्षीरेण पाययेत् ॥

भोजनं व्योषदुग्धेन कुलत्थानां रसेन तु ॥ ३०२० ॥

र. सं., र. चं., र. र., र. घु., बा., व. रा., र. क. ल., र. चि., चि. र. म., रसायनं., र. को., र. र. स., र. शं., र. ( मा. ), रससारसङ्घ, यो. म., र. क. यो., र. र. कौ., र. मृ., र. का., उदराधिकारे ।

टि०—कुत्रचिद्विषयकस्य रसमानता, भावनायां पञ्चाङ्गुलस्य भावना निकालिता तसु न सम्यक् ? उदररोगे तस्याऽल्यावरत्नत्वात् । र. मृ., र. क. यवयो वैश्वानररस नाम्ना एको रमोऽस्ति तत्रैषमेव वटी व्यत्यासिताऽनस्तस्याप्यत्रैवाऽन्तर्मावोऽस्ति ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा., ताम्र और लोहभस्म, शिलार्जत १-१ भाग, शुद्धबज्रनाग, त्रिकटु, चित्रक, मूल, शतावरी, निर्गुण्डी, मुशली, कमीला और अजमोद २-२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पोरान्धककी नीलवर्णकबलीमें मिलाय नीम और एण्डकीजइकेकायसे २१-२१ भंगेकररसे ७, गोरखमुण्डीकररसे १२ और पानेकररसे ३ भावनाएँ देकर शुलाकर मयुमें बेरकीगुल्लीकेबराबर गोलियां बनाकर रखोढ़े । इन्नेसे १-१ गोली देवदार और चित्रकमूलको दूधके साथ-विषकर इतकेसाथदेनेसे कफोदर नष्टहोताहै । इसकेप्रयोगमें भोजनकेलिये त्रिकटुयुक्तच और तुलसीका मूष देनाचाहिये ॥

## ६२६ वैश्वानरवटी ( द्वितीया )

सैन्धवं नागरं मुस्ता नव भागाः पृथक्पृथक् ।

प्रत्येकं लघुनं दिह्नुं कुबेराक्षं त्रयलव्यः ॥ ३०२१ ॥

एकांशं भरुमस्तुतञ्च तैलेनैरण्डजेन च ।

भावितं सर्वशूलघ्नं श्लिष्टि वैश्वानरो भवेत् ॥ ३०२२ ॥

य. रा., शूले ।

भाषा—सैन्धव, सोंठ और नागरमोथा १-१ भाग, लह-सन, सुनीहीन, कर ३-३ भाग, पारदभस्म १ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर इन्नेमिलाय एण्डकीले एकदिनमईनकर १-१ मासेकी गोलियां बनाकर रखोढ़े । इन्नेसे १ से २ गोलीतक रोगीका बलाबल देखाकर समयोचितानुपानकेसाथ-देनेसे सबप्रकारकेशूल और शीदा नष्टहोताहै ॥ ६२६ ॥

## ६२७ वैष्णवरसः ( ज्वराद्वारः )

दिह्नुलं यत्तन्नामञ्च चक्राङ्गो त्रिकटुं पचाम् ।

चित्रमूलकपायेण मर्दयेद्विषसप्रथमम् ॥ ३०२३ ॥

दोलायधे पचयामं वदुद्वृत्य विष्णुणयेत् ।

शुक्रामात्रप्रयोगेण शृङ्गयराऽनुपानतः ॥ ३०२४ ॥

द्वन्द्वज्वरं सत्पित्तं पुराणं विषमज्वरम् ।

नादायेद्विह्नुं घोरं नाक्षर्यं वैष्णवो रसः ॥ ३०२५ ॥

रसायनं., वै. चि. ( ल. ), वै. चि., य. रा., र. व. यो., ज्वराधिकारे ।

दि०—र. क. यो. पुटित. पाठोऽस्ति नाम च ज्वरादुच्च इति  
थापितम् । वै चि., न. रा. अथोवांतेकेसरीनाम्ना प्लोरपोऽस्ति  
मोऽप्यभिज्ञाऽनभवति ।

भाषा—शुद्ध शिगिरिक और बधनाय, गिलोय, त्रिकटु और  
वच समभागलेकर चारीकचूर्णकर चित्रकडीजकैफोदेसे ३ दिन  
मर्दनकर गोलाबनाय ६-७ तहकपड़ेमें पोहलीबनाय एकपहर-  
चित्रकैफाथमें दोलायन्त्रसे स्वेदनकर १-१ रत्नीकी गोळियां  
बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरसकेरसकेसाथदेनेसे  
द्रव्ज, सप्रियात, जीर्ण और विषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥

### ६२८ व्याघ्रीगुटिका

समांशहमयुष्कृतो नृपांशमृतयज्ययुक् ।  
क्षिपचाकाशरहोर्जरत्नेन परिमर्दयेत् ॥ ३०२६ ॥  
ततो विद्वान्तो दद्याद्विष्णुनालकान्तकम् ।  
मयं नष्टश्च पिष्टश्च धमेदन्धं यथाविधि ॥ ३०२७ ॥  
गुटिका जायते विषया जरादारिद्र्यनाशिनी ।  
मुखस्था सिद्धिदा प्रोक्ता सङ्ग्रामे विजयप्रदा ॥ ३०२८ ॥  
यज्जदेहो महाहारीः सर्वलोकप्रियो भवेत् ।  
गुटिकायाः प्रभाषेण नारीणां वल्लभो भवेत् ॥ ३०२९ ॥  
र., रसायने ।

भाषा—सुवर्गंग चारीकरता अथवा बर्क और सुदपारद  
समभाग, हीरकीभम्म १६ वा भागलेकर द्विपदी और आकाश-  
बेलेरसोसे १-१ दिन मर्दनकर सुहागा, हरिताल और कान्त-  
नोहकोला परसे बराबरा मिलाकर मर्दनकर । बिट्टीहानिपर अन्य-  
सूत्रांमें पन्धर धमनकरनेसे गोली तयारहोजातीहै । इस मुंहमें  
रखनेमें सुहाय और शक्तिप्रको यह नष्टकरतीहै । सङ्ग्राममें जीत  
होतीहै । इसनेकारणसे पत्रसरशरीररहोकर समस्तलोक और  
प्रासकर भियोंका प्रीतिपात्र होजाताहै ॥ ६२८ ॥

### ६२९ व्याधिगजकेसरीरसः ( प्रथमः )

पारदं गन्धकं तालं पिपं शृणुकं समम् ।  
क्षिपत्तर दृक्पुष्पद्वारं प्रत्येकं शृणुमाश्रयम् ॥ ३०३० ॥  
द्वितीयजिह्व दृक्के स्रग्भृणूनि कारयेत् ।  
भृङ्गराजरेसेनैव मर्दयेदिनसप्तयम् ॥ ३०३१ ॥  
काकमाचरसेनैव निर्गुण्डरीरसकैस्तथा ।  
मरिचाभा घटी कार्या दोषमापेक्ष्य दापयेत् ॥ ३०३२ ॥  
क्षीरेण सह दातव्या व्याऽष्टज्वरनिवृत्तये ।  
अर्शति घातजान्ति निर्गुण्डया यास्तुकेन वा ॥  
गुहेन सह दातव्या चत्वारिंशो पैस्तिकम् ।  
अनुपातेन सैयुक्तस्तस्त्रांगहरः स्मृतः ॥ ३०३३ ॥  
मि. र., र. च., बं नि., बातेरेंग ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और काज्याय, नाट,  
मिर्च, पांफ, हं, चट्टा, आंबल, मुनामुहागा और  
सुदत्रमाकोठा ६-६ भाग मेहर गवडा चारीकचूर्णकर  
पारे गन्धक और हरितालकी नीलमण्डकनीमें मिलाय अंग,

मकोय, और निर्गुण्डकी स्वरसोसे ७-७ दिन मर्दनकर मरिच  
बराबर गोळियें बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली  
दूधकेसाथदेनेसे ८ प्रकारके ज्वर निवृत्तहोते । निर्गुण्डी अथवा  
वयुण्के स्वरसकेसाथ देनेसे ८० प्रकारके वायुरोग और गुदसे  
४० पित्तोग नष्टहोते । इसीतरह तत्तदोगद्वारापुनःसाथ  
देनेसे तमामरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६२९ ॥

### ६३० व्याधिगजकेसरीरसः ( द्वितीयः )

मृत्ताऽप्रकं मृतं लोहं मृतं मृतं मृतं रविम् ।  
मृतं नागं मृतं कास्यं मण्डूरं विमलां शिलाम् ॥ ३०३४ ॥  
सत्त्वं खर्परजं तालं शङ्खं दृक्पुष्पमाश्रिकम् ।  
मृतं कान्तश्च वैकान्तं विद्रुमं मौक्तिकन्तथा ॥ ३०३६ ॥  
वराटं मणिरागश्च राजापतंश्च गन्धकम् ।  
सर्वमेकश्च सङ्गुण्यं खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ॥ ३०३७ ॥  
मर्दयेत्स्वग्मातुदुग्धैः पुटयेत्त्रिदिनं लघु ।  
भावयेत्पुटयेदेभि वांरास्त्रीश्च पुष्पकपुष्पकम् ॥ ३०३८ ॥  
मानुलुङ्गवरावेतसाऽऽम्लमृषाऽऽद्रमाकथैः ।  
त्रिभिरेलं भावयित्वा पाचितं लघुपक्षिना ॥ ३०३९ ॥  
यातपित्तकफोत्थिलघ्नाऽथरान्तंस्तेजजानपि ।  
सप्रियातप्रलयनं सयाङ्गिकाङ्गमातरम् ॥ ३०४० ॥  
सेयितोऽप्रसितायुक्तो मागधीरजसा युतः ।  
मधुकाऽऽद्रकसंयुक्तस्तद्वपाधिहृणीपथः ॥ ३०४१ ॥  
सेयितो हन्ति रोगांघान्याधिधारणकेसरी ।  
क्षिप्रमेकादशविधं शोषं पाण्डुमिमीजयेत् ॥ ३०४२ ॥  
कासे पञ्चविधं भ्वासे मेहे मेदोदरं तथा ।  
अदमरीं शकरीं शूलं हाहगुल्महलीमकम् ॥  
सर्वन्याधिहरं बल्यं धूप्यं मध्यं रसायनम् ॥ ३०४३ ॥  
र. क., सर्वरोगे ।

भाषा—अत्रक, लोह, पारा, ताम्र, नाग, कांस्य, मण्डूर,  
रजतमाक्षिक, मेनसिल, नवरियाकायस, हरिताल और घट्ट  
इनकीभस्में, मुनामुहागा, सुवर्गमाक्षिक, कान्तलोह, पैरान्त,  
प्रवाल, मोती, कीड़ी, माणिस्य, ताजवर्द इनकीभस्में, शुद्ध-  
गन्धक सब समभागलेकर चारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलमण-  
कनीमें मिलाय घूर और आकनेरूपसे १-२ दिन मर्दनकर  
बिजोरा, त्रिकटा, अमलबेल, हुरदुर, अदरस, भेरा इनकेरसोंमें  
१-२ भागनाएँ देकर गोलाबनाय एरण्डगैरहके पत्रोंमें लपेट  
पुटपाककरके १-१ रत्नीकी गोळियां बनाकर रखोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली शहर अथवा पीफलेके पूजं अथवा मधु और मर-  
रकरस अथवा तन्त्रोगद्वारापुनःसाथ देनेसे त्रिरोगोंके  
पारथक्य अथवा मनुगेंगे होनेवाले जटिलज्वर, सप्रियात, भ्रमाय,  
मवांश्च अथवा एकाग्रवातोग, ११ प्रकारके शोष, पण्डु, हर्मि,  
८ प्रकारकाकाश, श्वग, प्रमेद, केद, पयरी, रदर, दल मीठा,  
गुल्म, हर्लीमक प्रथम समान्यप्याथियोंको नष्टकर मरु, बल,  
दृढता और पुटियोंका ब्रह्मताहै ॥ ६३० ॥

## ६२३ वैश्वानरलोहम् ( प्रथमम् )

हिपलं तित्तिडीक्षारं तथाऽपामार्गसम्भवम् ।  
 दाम्भकमस्मस्युक्तं लवणञ्च समं तथा ॥ ३००८ ॥  
 चतुर्णां समभागाः स्युस्तुल्यञ्च लोहचूर्णकम् ।  
 चूर्ण सन्निपत्य खल्यादौ कारयेदक्तां मेषकां ॥ ३००९ ॥  
 शूलस्यागमवेलायां खादेन्मापद्भयं नरः ।  
 शूलमधविचं हन्ति साध्याऽसाध्यं न संशयः ॥ ३०१० ॥  
 भे. र., घ., र. क., शूलाधिकारे ।

भाषा—इमली और अपामार्गकाक्षार, पौषेकीभस्म और सेंपानमक समभागलेकर सक्की बराबर लोहभस्ममिलाय एकदिन शूलमर्दनकर रखछोड़े । शूलआनेकेसमय २-२ मासे उचितानुपानकेसाथ लेनेसे साध्य अथवा अवाच्य समस्तशूलको यह नष्टकरताहै ॥ ६२३ ॥

## ६२४ वैश्वानरलोहम् ( द्वितीयम् )

फलत्रिकत्यचो द्राघाः सत्रिप्रकटद्वयम् ।  
 जानीफलसमायुक्तं चातुर्जातसमन्वितम् ॥ ३०११ ॥  
 लवणकलिका द्राघा गद्याणद्वयसम्मिता ।  
 विपं गद्याणमेकं स्यात्सिता गद्याणविंशतिः ॥ ३०१२ ॥  
 मृतलोहस्य विंशत्या सर्वमेकत्र कारयेत् ।  
 मधुना गुटिकां कुर्यान्मापमात्रप्रमाणतः ॥ ३०१३ ॥  
 पक्षिकां भक्षयेत्प्रातः पञ्चपाण्डुक्षयापहम् ।  
 घालस्यपित्रपृष्ठानां स्त्रीणाञ्चैव विणेपतः ॥ ३०१४ ॥  
 योनिशूलेषु सर्वेषु वह्निमान्धे च दापयेत् ।  
 अरुचिञ्च हस्त्याशु वृत्तिकारुक् प्रणदयति ॥  
 वैश्वानरं लोहनाम सद्यो रोगहरं परम् ॥ ३०१५ ॥  
 रसायनम्., पाण्डुरोगे ।

भाषा—त्रिकल, चित्रक, त्रिकटु, जायफल, चातुर्जात, खत १-१ तोला, शुद्धबछनाग ६ मासे, दाघर और लोहभस्म १०-१० तोले लेकर सबका बारीकचूर्णकर इन्धे मिलाय मधुके साथ १-१ मासेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अपना रोगोक्तानुपानकेसाथ प्रातःकालदेनेसे पांचप्रकारके पाण्डु, धय, योनिशूल, मन्दाग्नि अरुचि और वृत्तिघातो इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६२४ ॥

## ६२५ वैश्वानरवटी ( प्रथमा )

शुद्धं मृतं द्विधा गन्धं मृताऽर्काऽयः शिलाजतु ।  
 रत्नमानं प्रदातव्यं रसस्य द्विगुणं विषम् ॥ ३०१६ ॥  
 त्रिकटुं चित्रकं पीरां निर्गुण्डां मुसलीरजः ।  
 अजमोदां विपंशेन प्रत्येकञ्च नियोजयेत् ॥ ३०१७ ॥  
 निम्बपञ्चाङ्गुलकायमार्थना चैक्यिततिः ।  
 भृङ्गराजरसेः समं मुण्डिकामिष्य ऋदश ॥ ३०१८ ॥  
 त्रिधा नागलताश्रये देत्वा क्षीद्रे विलोडयेत् ।  
 भक्षयेद्भद्राऽऽस्यामां पट्टिकां तां दिवादिदिशाम् ॥ ३०१९ ॥

श्लेष्मोदरं निहन्त्याशु नाम्ना वैश्वानरी घटी ।  
 देवदास्त्वह्निमूलकलं क्षीरेण पाययेत् ॥  
 भोजनं व्योपदुग्धेन कुलत्थानां रसेन तु ॥ ३०२० ॥  
 र. सं., र. चं., र. र., र. सु., वा., व. रा., र. क. ल., र. चि., वि. र. म., रसायनम्., र. को., र. र. स., र. शे., र. ( मा. ), रसायसङ्ग्रह, यो. म., र. क. यो., र. र. कौ., र. मू., र. का., उदराधिकारे ।

टि०—शुद्धविद्रव्यकस्य रसमानता, भावनायां पञ्चाङ्गुलस्य भावना निष्कासिता तनु न सम्यक् ! उदररोगे तस्याऽस्यावरमत्ता । र. मू., र. का. श्लेष्मो वैश्वानररस नाम्ना एको रनोऽग्नि नयेयमेव वदो व्यत्यागिताऽस्तस्याप्यत्रैवाऽग्निर्भावोऽस्ति ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा., ताघ और लोहभस्म, शिलाजीत १-१ भाग, शुद्धबछनाग, त्रिकटु, चित्रक-मूल, शतावरी, निर्गुण्डा, मुसली, कमोला और अजमोद २-२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकलामें मिलाय नीम और एरण्डीजइकेकायसे २१-२१, भंगेकररससे ७, गोरखमुण्डीकेरससे १२ और पानकेरससे ३ भावनाएँ लेकर मुलाकर मधुमें बेरकीगुल्लीकेबराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली देवदाह और चित्रकमूलको दूधके साथ-पियकर इस्तेसायदेनेसे कफोदर नष्टहोताहै । इन्धेप्रयोगमें भोजनकेलिये त्रिकटुमुकद्दय और तुलसीका सूप देनावाहिये ॥

## ६२६ वैश्वानरवटी ( द्वितीया )

सैन्धवं नागरं मुस्ता नव भागाः पृथक्पृथक् ।  
 प्रत्येकं लघुनं दिह्नुं कुयेराक्षं त्रयखयः ॥ ३०२१ ॥  
 एकांशं भस्मघृतञ्च तैलेनैरण्डजेन च ।  
 भावितं सर्वशूलघ्नं द्विदि वैश्वानरो भवेत् ॥ ३०२२ ॥  
 व. रा., शूले ।

भाषा—सैन्धव, सोंठ और नागरमोथा ९-९ भाग, लह-सन, मुनीहॉय, करछ २-२ भाग, पारदभस्म १ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर इन्धेमिलाय एण्ढेतैलेमें एकदिनमर्दनकर १-१ मासेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ छे १ गोलीतक रोगीका बलाबल देखकर समयोचितानुपानकेसाथ-देनेसे सबप्रकारकेशूल और शीघ्र नष्टहोतीहै ॥ ६२६ ॥

## ६२७ वैष्णवरसः ( म्यराहृशः )

दिह्नुं वल्गनामञ्च चक्राह्नां त्रिकटुं धचापम् ।  
 चित्रमूलकायेण मर्दयेदियसत्रयम् ॥ ३०२३ ॥  
 दोलापये पवेचामं तदुद्धृत्य विपूर्णयेत् ।  
 गुञ्जामात्रप्रयोगेण शृङ्गयथाऽनुपानतः ॥ ३०२४ ॥  
 हृन्धन्वरं सन्निपातं पुराणं विषमज्वरम् ।  
 नाशयेदग्निलं घोरं नाम्नाऽयं वेष्णवी रसः ॥ ३०२५ ॥  
 रसायनम्., वै. वि. ( त. ), वै. चि., व. रा., र. क. यो., उदराधिकारे ।

दि०—र क यो वृत्ति पाठोऽस्ति नाम च प्वराङ्गुल इति स्थापितम् । वै चि., व रा यथोवांत्वेसरिनाम्ना एकोऽर्योऽस्ति सोऽप्यरिमेवैवास्तमेवति ।

भाषा—शुद्ध शिगरिफ और बडनाथ, गिलोय, त्रिकटु और वच समभागलेकर बारीकचूर्णकर चित्रकनीजकेकादिसे ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय ६-७ तहकपड़ेमें पोथीबनाय एकपहर-चित्रककेकायमें दोलायनसे स्वेदनकर १-१ रत्तीकी गोतियां बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरककेरसकेसाथदेनेमें द्रन्तूज, सन्निपात, जीर्ण और विषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥

## ६२८ व्याघ्रीगुटिका

समांशहेमयुक्त्वा चूर्णांशमृतवज्रयुक् ।  
द्विपद्याकाशरहोजरसेन परिमर्दयेत् ॥ ३०२६ ॥  
नतो विद्वानतो दद्याद्द्रुणालकान्तकम् ।  
मर्धं नष्टश्च पिष्टश्च धमेदग्धं यथाविधि ॥ ३०२७ ॥  
गुटिका जायते विद्या जरदारिद्र्यनाशिनी ।  
मुखस्था सिद्धिदा प्रोक्ता सङ्ग्रामे विजयप्रदा ॥ ३०२८ ॥  
यज्ञदेहो महावीर्यः सर्वलोकप्रियो भवेत् ।  
गुटिकायाः प्रभायेण नारीणां धनुभो भवेत् ॥ ३०२९ ॥  
र., रसायने ।

भाषा—मुवणका बारीकरेता अथवा वरं और शुद्धपारद समभाग, हीरकीमम्म १९ वा भागलेकर द्विपदी और आषास-बलेकरतोसे १-१ दिन मर्दनकर सुहागा, हरिताल और कान्त लोहकरेता परिते बरास मिलाकर मर्दनकरे । पिष्टीहोनेपर अन्य-मुपामें धन्दकर धमनकरनेसे गोली तयारहोनातीहै । इसे मुँहमें रखनेमें सुहाये और दारिद्र्यको यह नष्टकरतीहै । सङ्ग्राममें जीत होतीहै । इसकेपाणसे वज्रसदृशशरीरहोकर समस्तलोक और वासकर विद्योका प्रीतिपात्र होजाताहै ॥ ६२८ ॥

## ६२९ व्याधिगजकेसरीरसः ( प्रथमः )

पारदं गन्धकं तालं विषं व्यूषणकं समम् ।  
त्रिफला द्रुणक्षारं प्रत्येकं दाणमाथकम् ॥ ३०३० ॥  
दन्तिनीजश्च टङ्कैकं सहस्रवृणानि कारयेत् ।  
भृङ्गराजरसेनैव मर्दयेदिनसप्तकम् ॥ ३०३१ ॥  
फाकमाचारसेनैव निर्गुण्डारसकेस्तथा ।  
मरिचामा घटीं कार्या दोषमपेक्ष्य दापयेत् ॥ ३०३२ ॥  
क्षरिण सह दातव्या चाऽऽज्वरनिवृत्तये ।  
अतीतिं घातजान्ति निर्गुण्डमा यस्तुकेन वा ॥  
गुडेन सह दातव्या चत्वारिंशश्च पित्तिकान् ।  
अनुपानेन संयुक्तस्तस्योग्रहः स्मृतः ॥ ३०३३ ॥  
ति. र., र. च, वै नि, वातरोग ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और बडनाथ, साँठ, मिर्च, पीपल, हरे, बरहा, आवन्म, मुनामुहागा और शुद्धमालमोटा ६-४ भाग लेकर मरिच बारीकचूर्णकर परे गन्धक और हरितालकी नीलकण्ठकनीमें मिलाय भंगरा,

मकोय, और निर्गुण्डीके स्वरसोंसे ७-७ दिन मर्दनकर गरिच बराबर गोतियें बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली दूधकेसाथदेनेसे ८ प्रकारके ज्वर निवृत्तहोते । निर्गुण्डी अथवा वयुएके स्वरसकेसाथ देनेसे ८० प्रकारके वायुरोग और गुल्मे ४० पित्तरोग नष्टहोते । इसीतरह तत्तदोगहरानुपानकेसाथ देनेसे तमामरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६२९ ॥

## ६३० व्याधिगजकेसरीरसः ( द्वितीयः )

मृताऽम्रकं मृतं लोहं मृतं मृतं मृतं रविम् ।  
मृतं नागं मृतं काश्यं मण्डूरं विमलां शिलां ॥ ३०३४ ॥  
सत्त्वं खर्पटं तालं शङ्खं द्रुणमाक्षिकम् ।  
मृतं कान्तश्च वैकान्तं विद्रुमं मौक्तिकस्तथा ॥ ३०३५ ॥  
वराटं मणिरागश्च राजायतंश्च गन्धकम् ।  
सर्वमेकत्र सञ्चर्ष्य रास्यमघ्ने विनिःक्षिपेत् ॥ ३०३६ ॥  
मर्दयेत्स्वग्मातुदुग्धेः पुष्टयेतिदिनं लघु ।  
माययेत्पुष्टयेदेभि र्वापलींश्च पृथक्पृथक् ॥ ३०३७ ॥  
मातुलुङ्गधरावेतसाऽम्लसूयांऽऽर्द्रमाकुर्ये ।  
त्रिभिषलं भाययित्वा पाचितं लघुपहिना ॥ ३०३८ ॥  
घातपित्तकोलिलष्टाड्यरासं सगजानपि ।  
सन्निपातप्रलपनं सर्वाङ्गैकाङ्गमावृतम् ॥ ३०३९ ॥  
सेवितोऽम्रसितायुक्तो मागधीरजसा युतः ।  
मथुकाऽऽर्द्रकसंयुक्तस्तद्व्याधिहरणोपधेः ॥ ३०४० ॥  
सेवितो हन्ति रोगोघान्याधियारणकेसरी ।  
क्षिप्रमेकादशविधं शोषं पाण्डुनिमीजयेत् ॥ ३०४१ ॥  
कासं पञ्चविधं भ्यासं मेहं मेदोद्वरं तथा ।  
अस्मरीं शकंरां शूलं ग्रीहगुल्महलीमकम् ॥  
सर्वव्याधिहरं वल्यं धृष्यं मेघं रसायनम् ॥ ३०४२ ॥  
र. क., सर्वरोगे ।

भाषा—अम्रक, सोह, पारा, तास, नाग, काश्य, मण्डूर, रजतमाक्षिक, मेनशिल, खपरियाकासवर, हरिताल और शङ्ख इनकीभस्में, मुनामुहागा, सुवर्णमाक्षिक, कान्तलोह, वैकान्त, प्रवाल, मोती, वीड़ी, माणिक्य, साजवर इनकीभस्में, शुद्ध-गन्धक सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारंगन्धककी नीलवर्ण-कजलीमें मिलाय पहर और आकनेद्वारे ३-३ दिन मर्दनकर विजोरा, त्रिफला, अमलतेज, दुरदुर, अदरक, भंगरा इनके रसोंसे ३-३ भावनाएँ देकर गोलाबनाय एरण्वरारहेके पत्तोंमें लपट पुष्टपावकरसे १-१ रत्तीकी गोतियां बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली क्षयर अथवा पीपलके पूर्ण अथवा मधु और अद-रककेरस अथवा तत्तदोगहरानुपानकेसाथ देनेमें त्रिदोषोंके पापवय अथवा मरुगसे होनेवाले जटिलज्वर, सन्निपात, म्लान्त, सर्वाङ्ग अथवा एकाङ्गप्रतारोग, ११ प्रकारके शोष, पाण्डु, कुमि, ७ प्रकारकाकाष, श्याम, प्रमेह, मेद, पथरी, शङ्कर, शूल ग्रीहा, गुल्म, हलीमक प्रभृति सामान्यव्याधियोंको नष्टकर यह बल, श्रमा और शुद्धिको बढ़ानाहै ॥ ६३० ॥

## ६३१ व्याधिगजपञ्चाननरसः

वर्षाभृतकेशलाङ्गलिशिकास्तुरगुधपाठोद्भवैः,  
मर्चां यामचतुष्टयं रसवरः स्थिन्नश्च दीप्तश्च तम् ।  
मृतं स्वीयचतुष्टयेन यलिना युक्तं सहामण्डुकी-  
माचीकाञ्चनलाङ्गलीहरिवधूकासप्रविम्बोद्भवैः ॥  
पिप्प्रा घासरयुग्ममेव रचितं तद्रौलकं बालुका-  
यन्त्रे भाण्डगतं तदौषधरसं क्षिप्त्वा मुहुः शोषितम् ।  
पश्चादल्पपुटे ददीत च कलांशं व्युषणं टङ्गुणं,  
देयो वल्लचतुष्टयः सुसितया त्वग्दोषभृतकिमिन् ॥  
हित्वाऽन्यान्सकलाग्नान्निजयते पथ्यप्रयोगादर्थं,  
धौशाश्म्यर्चनपूर्वकं घलिधिधि कृत्वा भिषग्योजयेत् ।  
पथ्यं भक्तसितासूक्ष्मफलं देध्ना च देयं लघु,  
क्षीणे मुद्गरसः सिता समुचिता कार्या च शीतक्रिया ॥  
त्याज्यं पिप्पलमात्रमत्र सकलं मांसञ्च जीरं सदा,  
त्याज्यं स्वच्छयतां पिण्डुद्वयपुषां घस्रयत्रं सेवितः ।  
कार्ति काञ्चनसन्निभां फिल यलं भीमस्य तं पायकं,  
पुष्टिं धीर्यमयं नृणां धितनुते व्याधीमपञ्चाननः ३०४७  
र. स., र. शं., र. का., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—इदं सित, कालाभंगार, करिहारीवन्द, शूहरकाङ्घ्र,  
पाठा इनकेरसोंमें ४-४ पहर मर्दनकर स्वेदनकियाहुभाषा  
१ भाग और शुद्धगन्धक ४ भाग लेकर नीलवर्णकजलीकर  
माषपर्णी, मुद्गरपर्णी, मण्डूकपर्णी, मकोय, कचनार, करिहारी,  
मुलजी, फत्तोजी, इन्द्रस इनके रसोंसे २-२ दिन मर्दनकर  
६-७ कपडमिष्टीदीहुरै चौरैमुहरी आतशीशीशिमै भरके बाउ-  
नायब्रमै रस पूर्वोपरसोंको देदेकर मन्दाभिसै पकावे । औषधके  
बराबर प्रत्येककारस सूयनेपर निकालकर गोलाबनाय घराव-  
समुद्रमें बन्दकर लघुपुटकी आचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकाल-  
कर १६ बां हिस्ता निरुद्ध और मुनसुहागम मिलाकर रखछोड़े ।  
इसमें १२-१० रसीकीमात्रा शकरकेसाम देनेसे त्वग्दोष और  
कृमिप्रशुति समस्तव्याधियोंको यह दूरकरताहै । इससेसेवन-  
कर्मके पूर्व शहरका पूजनकर बलि देकर दवाका आरम्भकरावे ।  
भात, शकर, सुनफल और दही खानेकोदेवे । अत्यन्त दीर्घ  
आदमीकेलिये मूंगराम्पु और छपरदेवे तथा शीतक्रियाकरे ।  
पित्तकारकवस्तु, मांस, जीरा इनसबका त्यागकरे । तीनदिनके-  
बाद व्याधि कमहोनेलगगी । धीरे २ सुबगेमदस बान्ति,  
बिठुल पराक्रम और बीचैशुद्धिरो प्राप्तकरता है ॥ ६३१ ॥

## ६३२ व्याधिदावानलरसः

मृतं कान्तं त्वल्लवलिशिलास्येडताप्राऽप्रताप्यं,  
कुष्ठं सिन्धुं हलिनितृकिनागारि तुल्यं हि भाज्यम् ।  
यद्विष्णोपैः किमिरिपुजयाकुष्ठमुस्तायवानां  
ज्वालायवभागुधिलयचाभाभिर्मात्राङ्गुरैः ॥ ३०४८ ॥  
मात्रा गुग्गा निम्बिलजठरे मेहकुष्ठे प्रहण्यां,  
शोणे शूले सकलगुदजे मान्यजीर्णे विगुच्याम ।

पाण्डौ रोगे सकलपवने सन्निपाते ज्वरेऽसौ,  
हन्यादेतांस्तम इव रवि व्याधिदावानलोऽयम् ॥ ३०४९ ॥  
नवज्वरे शुण्ठिजलैः सङ्गुणैः  
परेषु रोगेष्वनुपानयोगात् ।

हितं हिमं चन्दनवारि तत्र

हिताहितं पथ्यविधौ विमुद्दयम् ॥ ३०५० ॥

र. शि., सन्निपाते ।

भाषा—पारद और कान्तभस्म, शुद्धहरिताल, गन्धक,  
मनसिल और बछनाग, ताघ्र, अन्नक और रूपामाखी भस्म, कुष्ठ,  
सिन्धु, करिहारीकीजड़, पाठा, सोनामाखी भस्म सब समभाग-  
लेकर वारीकबूणंकर चिन्नु, जिन्नु, विडङ्ग, भांग, कुठ, नागर-  
मोया, अजवाइन, अमिशिषा, समुद्रफल, धव, त्रियम्बु और  
अदरककेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रसीकीगोठियें बना-  
कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली चन्दनकेपानी अथवा तप्त-  
शेगहरानुपानकेसाथ देनेसे सबप्रकारके उदररोग, प्रमेह, कुष्ठ,  
प्रहणी, दोष, घूल, बवासीर, मन्दाभि, अजीर्ण, हैजा, पाण्डु,  
समस्तवातविकार, सन्निपात, ज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै ।  
सौंठ और पीपलके कल्कसे नवज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ ६३२ ॥

## ६३३ व्याधिधिघ्नंसनरसः

समीरपन्नगस्य स्याद्विगुणा जयपालकाः ।  
अजादुग्धेन ते पकाः क्षुण्णो गुग्गाढयं रसः ॥ ३०५१ ॥  
रण्डव्योपात्रैर्देहताः पृथग्या घृतसम्प्लुतः ।  
जाड्यगुल्मोदपृष्टीहृत्शूलामयिषमज्यरान् ॥ ३०५२ ॥  
उष्णेन पयसा स्तम्भो देहः शीतेन जायते ।  
शार्ङ्गजातीफलं दद्यादतिरेकोपशान्तये ॥ ३०५३ ॥  
पथ्यं भक्तं गवां तर्कं सर्नीरञ्च ज्वराग्रिषु ।  
तापशोषे गुडच्यम्बु व्याधिधिघ्नंस्तकारके ॥ ३०५४ ॥  
र. स., रसायनसं., दो., र. शं., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—समीरपन्नगरस १ भाग, बकराँकेदूधमें उपाले  
हुए जमालगोटे २ भागलेकर एकपहरमर्दनकर रखछोड़े । इसमें  
२-२ रसीकीमात्रा शकर, जिन्नु और अदरककेसाथ अथवा  
पीककेसाथदेनेसे जठरा, गुल्म, उदर, प्लीह, घूल, आम और  
विषमज्वर इनको यह नष्टकरताहै । ठंडापानीपीनेसे रेशनहीना  
गरमपीनेसे बन्दहोजायगा । अधिकरेचनदोमेपर मधुमें मिलाकर  
जायफलदेता, भूखलानेपर छापमातदेना । ज्वरहीहालमें  
पानीकेसाथ और ज्वरजनितशोथमें गिलोयंके स्वरणकेसाथ देना ॥

## ६३४ व्याधिग्राईलगुगुलुः ( त्रिकल्यागुगुलुः )

त्रिकल्यायाः पलान्यष्टौ प्रत्येकं धीजयर्जितम् ।  
गुग्गुलाद्विपलञ्चात्र निःक्षिपेत् मुकुटितम् ॥ ३०५५ ॥  
सयं संशुध यत्नेन साऽधोदकजले क्षिपेत् ।  
एकराशौ स्थितज्वरेन पक्वया पादावशोपितम् ३०५६ ॥  
विपलं कटुतेलस्य मिलित्वेकत्र पाचयेत् ।  
त्रिकटुत्रिकल्यामुस्तयिङ्गामलकानि च ॥ ३०५७ ॥



गुह्यमिन्द्रियद्वन्ती चन्यसूरणमानकम् ।  
 अष्टाष्टमापकानेतान् प्रत्येकान् सुवृणितम् ॥ ३०५८ ॥  
 सर्वस्यार्द्धतुलं देयं कालकं विधिशोधितम् ।  
 रसगन्धकफपिष्टं प्रत्येकं कज्जलीकृतम् ॥ ३०५९ ॥  
 सम्यक् सिद्धं तु चित्ताय स्निग्धे भाण्डे विनिक्षिपेत् ।  
 ततो मापद्वयं जग्ग्या प्रातरण्णोदकं पिबेत् ॥ ३०६० ॥  
 प्रथमं कुरुते वह्निं शरीरं स्थिरयौवनम् ।  
 धातुवृद्धिं धयोवृद्धिं बलं सुविपुलन्तया ॥ ३०६१ ॥  
 अश्मरीमूत्रकृच्छ्रं दुर्नामं समगन्दरम् ।  
 आमघातं शिरोघातमम्लपित्तं निहन्ति च ॥ ३०६२ ॥  
 कामलां पाण्डुतां श्यासं प्रमेहं गुदमिर्गमम् ।  
 ग्रीवाहानं श्लीपदं शार्थं कासं पञ्चविधं तथा ॥ ३०६३ ॥  
 शमयत्युदराण्यष्टौ शूलान्यष्टौ विशेषतः ।  
 भ्रमास्थिविद्धवातेषु सक्थिप्रह्विमोचने ॥ ३०६४ ॥  
 हृन्त्यादेयं धिघान्याधीनामघातं विशेषतः ।  
 ग्रन्थिघातं तथा कुष्ठं विपमज्वरमेव च ॥ ३०६५ ॥  
 मेदः कफामयं घातं व्याधिधारणवर्धनम् ।  
 व्याधिशार्दूलविष्यतां योगोऽयममृतोपमः ॥ ३०६६ ॥  
 र र, आमघाते ।

भाषा—हैं, बहड़ा, आवला ८-८ पल, गुगल २ पल  
 लेकर अच्छीतरहसे ५ प्रत्यहानीमें डालकर एकदिनरत  
 रहने दे । दूसरेदिन इसको बलाताहुआ पकावे जिसमें कि गुगल  
 पात्रमेंलगाकर जल न जाय । चौथाभाग अवशिष्टरहनेपर उतार-  
 कर छानले । काथमें सरसोंकातेल २ पल, त्रिकटु, त्रिकला, नागर  
 मोथा, बिडङ्ग, आवले, गिलोय, शिग्रकमूल, निसोत, दन्ती-  
 मूल, चञ्च, सूरण, मानकन्द वैसेव ८-८ मासो, अच्छीतरह-  
 से शुद्धकियाहुआ शिलाजीत ८ कर्ष, शुद्धपारा और गन्धक ८-८  
 भासोकी नीलवर्णकज्जली लेकर वारीकचूर्णकर पूर्वकाथमें डालकर  
 पकावे । गोली बघनेलायक होजाय तब पीकेबतनेमें रखले ।  
 १५ या २१ दिन बीतनेपर इसमेंसे २-२ मासोकीमात्रा  
 प्रातः काल गरमपानीकेसाथ देनेसे भ्रमाग्नि, हृत्ता, वायुव्य,  
 धातु-आयु और बलकाहास, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, बवासीर, मग-  
 न्दर, आमघात, शिरोघात, अम्लपित्त, कामला, पाण्डु, श्यास,  
 प्रमेह, गुदप्रेश, स्त्रीहा, श्लीपद, शोथ, कास, उदररोग, शूल,  
 अस्थिभग, उदरस्तम्भ, आमघात, मठिया, कुष्ठ, विपमज्वर,  
 मेद, कफ और वातव्याधि इतकको यह नष्टकरताहै ॥ ६३४ ॥

### ६३५ व्याधिहरणरसः

सुपकं पीतमानीय तित्तुर्ग्रीवमहत्फलम् ।  
 उपरिमाणे छेत्तव्यं तन्मये नरसारकम् ॥ ३०६७ ॥  
 पुण्डवं निक्षिपेत्पञ्चाच्छकलं पूर्ववध्यसेत ।  
 मृत्कपटैश्च संषेष्ट्य छिद्राणि त्रीणि कारयेत् ॥ ३०६८ ॥  
 गर्तमध्ये न्यसेद्भाण्डं तस्यापरि न्यसेत्कलम् ।  
 घस्मृत्तिकायायुक्तं न्यसेत्सप्तदिनावधि ॥ ३०६९ ॥

पञ्चादुद्धृत्य भाण्डस्थं गृह्णीयाद्रसमुत्तमम् ।  
 कुण्डवं रसकर्पूरं खल्वे सम्मर्द्य वृजिमान् ॥ ३०७० ॥  
 पञ्चाचद्रससंयुक्तं चतुर्दश दिनावधि ।  
 अर्कस्य क्षीरसंयुक्तं चतुर्दश दिनावधि ॥ ३०७१ ॥  
 सम्मर्द्य चक्रिकां कुर्याद्भाण्डे संस्थाप्य युक्तिः ।  
 तिर्यग्पातनयन्त्रेण गृह्णीयादुत्तमं रसम् ॥ ३०७२ ॥  
 कृत्वा च सम्प्रदायेन कर्पूपाद्रसमुदरेत् ।  
 तद्रसञ्च समं गन्धं रसादेन्तु विमिश्रयेत् ॥ ३०७३ ॥  
 खल्वे कज्जलिकां कृत्वा महाकोशातकीद्रवैः ।  
 रसञ्च भावयित्वा तु पञ्चात्कृप्यां विनिक्षिपेत् ॥ ३०७४ ॥  
 बालुकामध्यं कृत्वा द्रव्याग्निं खदिरस्य च ।  
 द्विपादगन्धकं शोणं चूर्णं कृत्वा विचक्षणः ॥ ३०७५ ॥  
 कृपिकायामुखे धूमं दह्ना गन्धं पुनः पुनः ।  
 क्षीयते सूर्ययामागतं तदा सिद्धो भवेद्रसः ॥ ३०७६ ॥  
 स्वाह्मशीतं समुद्धृत्य कृपिकाकण्ठं रसम् ।  
 तरुणाऽरणसंकाशं सिन्दूरं आयते घर्म् ॥ ३०७७ ॥  
 नास्त्राऽयं व्याधिहरणो रसो वैद्यैः सुप्रजितः ।  
 उपदेशे तथा मेहे पाण्डुरोगे भगन्दरे ॥ ३०७८ ॥  
 मन्दानले क्ष्ये कासे श्वासे कुष्ठे घ्नणे तथा ।  
 अनुपानविशेषेण सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ ३०७९ ॥  
 रसायनं, रसायने ।

भाषा—अच्छीतरह पकाहुआ पुष्टबीकाफल लेकर ऊपरकी  
 तरफसे डुकाकर काटकर ४ पल नवसादर बालकर वज्रनलमाय  
 ३-४ कपडिमिठी देकर खल्वेपर छोड़ेके खीलेसे ऊपरकी तरफ  
 तीन छेदकरवे । फिर एक छेदेमें पानरखकर उसमें दूबीको रख  
 नाइसे ढककर मिठीसे खड़ेको भरदे । सातदिनबाद दूबीकेद्रवको  
 निकालले । इसकेबाद ४ पल रसकपूरको इसद्रवसे और आकके  
 दूधसे १४-१४ दिनतक मर्दनकर टिकड़िया बनाय सुखाकर  
 कमलपत्रमें बन्दकर तिर्यग्पातनयन्त्रसे पारको अलगकरे । यह  
 पारा १ मास, शुद्ध गन्धक तथा साधारणशुद्धपारा आधाआधा-  
 भाव मिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर कड़वीलौकोकरससे ३-४  
 दिन मर्दनकर सुखाकर ६-७ कपडिमिठीदेईहुई आतशीशीमें  
 भर वालुकायन्त्रमें रख रैरीकी लकड़ीकी अग्निदेने । कज्जलीमें  
 डालेहुए गन्धकसे आधा गन्धक और पीसकर रखछोड़े ।  
 शीशीमेंसे धूआं निकलनेपर थोड़ाथोड़ा गन्धक ऊपरसे देता-  
 जाय । ऐसे १० पहरतक अग्निदेनेसे तमामपारा उड़कर शीशीके  
 सुधार लगजायगा । स्वाह्मशीतल्लोनेपर निकालकर रखछोड़े ।  
 इसमेंसे २ से २ रतीतक उचितानुपानकेसाथ देनेसे उपर्दश,  
 प्रमेह, पाण्डु, भगन्दर, मन्दाग्नि, श्या, कास, श्वास, कुष्ठ, घ्न  
 प्रथति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६३५ ॥

### ६३६ व्योममार्तण्डरसः

तुल्यवारिद्रिद्रव्याकरं समं  
 व्यूपणेन सफलप्रिकेण च ।

### तुल्यभागमिलितेन सर्पिषा

लीढमेतदपहन्ति पायुजान् ॥ ३०८० ॥

लो. प. (घ.), अशौरोगे ।

भाषा—नागरमोथा, ताम्रभस्म, त्रिकटु और त्रिफला समभाग लेख बारीकचूर्णकर सबकेबराबर धीमें मिलाकर रख-छोड़े । इसमेंसे १ मासेसे दोमासेतक देनेसे यह समस्तववा-सीरोंको नष्टकरताहै ॥ ६३६ ॥

### ६३७ व्योमसुन्दरीवटी

कापांस्याः काकमाच्याश्च कन्यायाश्च दलद्रवैः ।  
शुद्धं सूतं दिनं मयं क्षाल्यमग्नौः समुद्धरेत् ॥ ३०८१ ॥  
तद्रसाभिक्चत्वारि निष्कार्दं ताम्रचूर्णकम् ।  
पादोननिष्कमप्रोतं सत्त्वं पादश्च हाटकम् ॥ ३०८२ ॥  
हेमनुल्यं मुण्डचूर्णं सधर्मग्लैर्विमर्दयेत् ।  
दिनाग्नौ गोलकं कृत्वा अग्नीरस्योदरे क्षिपेत् ॥ ३०८३ ॥  
त्रिदिनं दोलकायन्त्रे पाचयेत्सारनालके ।  
उज्जुत्य धारयेद्वक्त्रे गुटिकां व्योमसुन्दरीम् ॥ ३०८४ ॥  
वर्षमात्राज्जरां हन्ति जायेद्वृद्धादिनं नरः ।  
चित्रमूलस्य चूर्णन्तु सक्षौद्रं कान्तपात्रके ॥  
आलोढ्य भक्षयेत्कपमनु स्वात्कामणे हितम् ॥ ३०८५ ॥  
रसायनर्त्तं, रसायने ।

भाषा—कपास, कनोय, घोंकूनार इनकेरसोंमें १-१ दिन पारेकोमर्दनकर काडीप्रयति खोपदापीसे साफकरके १ वर्ष लेवे । फिर शुद्धताम्रचूर्ण २ मासे, अत्रकसाव ३ मा., सुवर्ण और मुण्ड १-१ मासा मिलाकर खटाईमें ४ पहर मर्दनकर गोलीबनाय चारतह मलमलेके टुकड़ोंमें बाधकर जंभीरीनीय्रमें रख दोलायत्र बनाय काडीमें लटकाकर ३ दिनतक पकावे । काडी सुखनेपर नई डालताजाय । इन्नात्रसौतलेहोनेपर गोलीको निकालले, यह कड़ी होजायगी । इसको एकपहर मर्दनेमें रख-नेसे बुढ़ापा नष्टहोकर अत्यन्त दीर्घायुहोताहै । एकवर्ष चित्रकी जड़का चूर्ण मधुकेसाय कान्तलोहेकेपात्रमें कुलदेर घोटकर भक्षणकरनेसे इसका शरीरमें अनुक्रमणहोताहै ॥ ६३७ ॥

### ६३८ व्योपादिलोहम्

व्योपं विष्वं द्विरजनी त्रिफला द्विपुनर्नवम् ।  
मुस्ताम्ययोरजः पाठा विडङ्गं देवदारु च ॥ ३०८६ ॥  
वृद्धिदाम च भार्गो वि सक्षरिस्तेः शृतं घृतम् ।  
सर्वांगप्रशमयत्यायु विकारान्मृत्तिकाकृतान् ॥ ३०८७ ॥  
च. सं., अ. ह., वृ. मा., ग. नि., पाण्डुरोगे ।

भाषा—त्रिकटु, वेलगिरी, हल्दी, बाहल्दी, त्रिफला, लाल और सफेदपुनर्नवा, नागरमोथा, फोलादकाजुरा, पाठा, विडङ्ग, देवदारु, विजुआ, भार्गो सत्र समभागलेकर बारीक-पीसकर क्लृप्त बनावे । फिर क्लृप्ते चौथुना पी और पीसे चौथुनाइय डालकर पकावे । धीमात्र अवशिष्ट रहनेपर छानकर रखले और ऊपरकी पीसोंकाही चूर्ण बनाकर रखलेवे । इस-

चूर्णमेंसे १ से ३ मासेतकमात्रा एकतोले धीमें मिलाकर लेनेसे शुद्धसणजित समस्तविषकार नष्टहोवे । खानेकेलिये जो चूर्ण बनावे उसमें लोहमलमका उपयोगकरे ॥ ६३८ ॥

### ६३९ व्रणगजकेसरीरसः

मृतं सूतं मृतं ताम्रं मृतं स्वर्णं मृतायसम् ।  
पृथक्पृथक् शुक्तिसमं शुद्धशैलं पलानि पद ॥ ३०८८ ॥  
खल्वे शतदलीत्येन रसेन परिमर्दयेत् ।  
वारचयं तथा जातीदलजेन प्रयत्नतः ॥ ३०८९ ॥  
ततो मापमितं नित्यं त्रिफलामधुना लिहेत् ।  
शुद्धचीसारिवानिम्बमजिष्ठात्रिफलोद्भयम् ॥ ३०९० ॥  
काथं चानु पिबेन्नित्यं व्रणदोषप्रशान्तये ।  
सान्त्वयान्नाशयेदायु विद्वर्ध्याश्च भगन्दरान् ॥  
शोषाध्मानप्रमेहादीज्येच्छीशम्भुशासनात् ॥ ३०९१ ॥  
र. म. मा., ना. वि., व्रणधिकारे ।

भाषा—पारा, ताम्र, सुवर्ण और लोहभस्म १-१ पल, शुद्धशिलाजीत ६ पल लेकर गुलाब, कमल और चमेलीके स्वरसोंसे ३-३ दिन मर्दनकर १-१ मासेकी गोल्या बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिफला और मधुकेसायलेकर गिलोय, अनन्तमूल, नीम, मजीठ और त्रिफलाका काय पीनेसे सपप्रकारकण, विद्रधि, भगन्दर, शोष, आध्मान, प्रमेा-प्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६३९ ॥

### ६४० व्रणगजाङ्गारसः

दरदः पार्यतीपुष्पं कुन्ती पुरुषो रसः ।  
शोणितं गन्धको दैत्यः स्नेहवांशतिषिषा चर्वा ३०९२  
शरपुष्पा विडङ्गश्च ययानी गजपिप्पली ।  
मरीचाकां च घट्णो धूनकश्च हरीतकी ॥ ३०९३ ॥  
मर्दितं कटुतेलेन मुटिकां करयेद्विह ।  
नाडीव्रणप्रधाहञ्च गण्डमालां भगन्दरम् ॥ ३०९४ ॥  
चित्रघ्नं दद्रुकुष्ठं पूतिकफसु शिरोरोगदम् ।  
पादस्फोटं तथा हस्तं विषचीं बहुकांशजाम् ॥ ३०९५ ॥  
र. र., मै. र., घ. र., च., व्रणशोषे । मै. र. नारायणरस इति-नाम । घ. द्रव्यवटीतिनाम । र. चं नारायण इतिनाम भग-न्दराधिकारय ।

भाषा—शुद्ध शिगरिक, फिटकड़ी, कसीस, मेनसिल, गुग्गुलु, पारा, सोनागुरु, गन्धक, वैकान्त, स्नेहव, अतीस, चर्वा, शरपुष्प, विडङ्ग, जजवादन, गजपीपल, मरिच, आक्कीजड़, वरुणकीछाल, राल, हरे सेसव समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्णकबलीमें मिलाय सरसोंके तैलेसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ मासेकी गोल्या बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अवधा रोगोचितायुषानकेसाय देनेसे नाडी-व्रण, गण्डमाला, भगन्दर, पुरानाव्रण, दद्रु, कुष्ठ, सङ्गाहुआव्रण, शिरोरोग, हाथ और पैरकी फूटन, कीटयुक्तविचरिका इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६४० ॥

### ६४१ व्रणजयमल्लः

महं सङ्ग्रह यत्नेन कर्ममात्रं भियन्वरः ।  
शुद्धं कृत्वा ततः कोष्ठीयुग्मोदरविले क्षिपेत् ॥३०९६॥  
मृत्कर्पटेन संवेष्ट्य ततश्चुल्यां निवेशयेत् ।  
अथो वह्निं ददेतोप्रमदोत्तरवातायधि ॥ ३०९७ ॥  
खरमूत्रे निषेच्याऽथ स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।  
तण्डुलप्रमितां मात्रां हविषा सह योजयेत् ॥ ३०९८ ॥  
व्रणे क्षते महाकुष्ठे शतपोने भगन्दरे ।  
महामल्लामिषः प्रोक्तस्तज्ज्ञैः व्रणपराजये ॥ ३०९९ ॥  
रसायनसः, व्रणाधिकारे ।

भाषा—एकवर्षं शुद्धसोमलरी डलीको दो ठकनोंमें बन्द-  
कर कपड़मिश्री देकर बूल्हेर रख नीचे कड़ी आये । ऊपरसे  
१०८ कर्षं गणकेसूनका चोषादे । स्वाङ्गशीतलोहेपर निकाल-  
कर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ चावल माना पीकेसायदेनेसे व्रण,  
क्षत, महाकुष्ठ, शतपोनक, भगन्दर, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥

### ६४२ व्रणमर्दनरसः

द्वरदोषं रसं शुद्धं गन्धकञ्च पलपलम् ।  
पलत्रयं शुद्धतालं मर्दयेत्तुलसीव्रैः ॥ ३१०० ॥  
दिनत्रयं प्रयत्नेन रेतितं शुक्तिमात्रकम् ।  
निक्षिप्य रजतं शुद्धं काचद्रव्यां यिनिक्षिपेत् ॥ ३१०१ ॥  
प्रमुद्राथस्यं भियन् पञ्चात्सिकतायन्त्रके यथेत् ।  
मन्त्रमभ्यक्रमेणैष धर्हि प्रज्वालेयद्रथः ॥ ३१०२ ॥  
दिनत्रयं प्रयत्नेन स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।  
ततस्तु हृषिकान्तस्थं कचिन्माणित्रयसन्निभम् ३१०३  
पतङ्गां चातियत्नेन प्राहृत्य पृथक्पृथक् ।  
नीत्वाऽथ.स्यं समस्तञ्च पृथक्कुर्यादतः परम् ३१०४  
सर्पपाभा पतङ्गानां गुञ्जामानं तथा रसम् ।  
वृणितं पण्डितेन भक्षयेद्वा यथायलम् ॥ ३१०५ ॥  
यावद्गुञ्जापतङ्गी स्वाङ्गशीतं मापमितो भवेत् ।  
तद्वच्चर्चनं नैव कारयेद्गोपिर्णं प्रति ॥ ३१०६ ॥

यदाऽग्निरोधात्र भवेत्पतङ्गी

तदा रसः केवल एव नित्यम् ।

सैवेष्टवर्णानां प्रशमाय विहा-

स्ततः सुखी स्यादसृगामयानः ॥ ३१०७ ॥

र म भा., ना वि, व्रणशोधे ।

भाषा—शुद्धरिफसे निकालहुवा शुद्ध पारा और गन्धक  
१-१ पल शुद्धरिताल ३ पल, चाँदीका बारीकरेता १ पल  
लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर तुलसीकेरससे ३ दिन मर्दनकर  
खुलाकर ६-७ कपड़मिश्रीदीडुई आतशीशीशीमें बन्दकर ढाट  
लगाकर घालकायन्त्रमें रख मन्द, मध्य और खर इसक्रमसे ३  
दिनकी अभिदेवे । स्वाङ्गशीतलोहेपर सावधानीकेसाथ शीशीको  
पोढ़कर देखे, कहींपर मणिके संस्र कहीं पतङ्गकेसहस्र रत्न  
दिखाईदेगा । इनको अलग २ निकालकर शीशीमें रखछोड़े

और नीचेकामाग अलग रखसे । पतङ्गीरज्वालामेंसे १ सर्प और  
माणिक्यसहस्र तथा तल्लयकी १-१ रती पानमें रखकर खावे ।  
पतङ्गीकोमात्रा बद्धकर १ रतीतक और दूसरीकी १ माशेतक  
करे । इससे अधिक न बढ़ावे । अभिके अवरोपसे पतङ्गी नजर  
न आवे तो उसमें नीचे ऊपर जो रखमिले उसीका सेवनकरना  
चाहिये । इसके सेवनसे समस्त रक्तविकार नष्टहोतेहैं ॥ ६४२ ॥

### ६४३ व्रणवदवानलरसः

समाने द्वे च पापाणे तद्वर्द्धं घलिषादम् ।  
कुनटीक्षारमेकैकं सूतपादं सुतालकम् ॥ ३१०८ ॥  
सर्वं शुद्धं तु खस्वे च मर्दयेदिवसत्रयम् ।  
नागयल्ली च निर्गुण्डी भृङ्गराजपुनर्नयी ॥ ३१०९ ॥  
प्रत्येकपत्रसारेण मर्दनेन पुनः पुनः ।  
यदकान्यदरीषीजमात्रांश्चुल्यांस्तु कारयेत् ॥ ३११० ॥  
शुद्धे कारण्डके क्षिप्त्वा सप्तशो यत्नमुत्तिहाः ।  
सुपकं घालुकायन्त्रे द्वादशाहं निरन्तरम् ॥ ३१११ ॥  
स्वाङ्गशीतलमादाय सर्वं गोतं विचूर्णयेत् ।  
अनुपानविशेषेण व्रणांश्च विविधाञ्जयेत् ॥  
शीतिकां विषमाम्बन्धि शीतज्वरहरं परम् ॥ ३११२ ॥  
र क यो, व्रणे ।

भाषा—सफेद और पीलासोमल १-१ भाग, छत्र गन्धक  
और पारा आधाआधाभाग, मैन्सिल और झुझागा १-१ भाग,  
शुद्धहरिताल पारेसे चतुर्थांश लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर  
पान, निर्गुण्डी, भगुरा और पुनर्नयाके रसोंसे ३-३ दिन मर्दन  
कर धेरकोतुलसीकेराबर गोक्षिमें बनाय खुलाकर ६-७ कपड़  
मिश्रीदीडुई आतशीशीशीमें भरके ढाटबन्दकर घालकायन्त्रमेंरख  
१२ दिवसी अभिदेवे । स्वाङ्गशीतलोहेपर निकालकर सबको  
पीसकर रखछोड़े । इसमेंसे १ चावलसे २ चावलतक मात्रा  
उचितानुपानकेसाथ देनेसे नानाप्रकारकेव्रण, शीत और विषय  
ज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६४३ ॥

### ६४४ व्रणहररसः

रसं गन्धं विषं वह्निं लोहमम्रं समंसमम् ।  
सप्तधा पार्थतोयेन काञ्चनाराऽम्भसा तथा ॥ ३११३ ॥  
भावयित्वा बटीः कुर्याद्विकिकाप्रमिता भियद् ।  
रसो व्रणहरो नाम व्रणान्धन्ति रसोत्तमः ॥ ३११४ ॥  
र न., व्रणाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और पट्टनाग, चित्रककीज,  
लोह और अश्रकमयस समभागलेकर अर्जुन और कचनारके-  
रसोंसे ७-७ दिन मर्दनकर १-१ रतीकीगोलियां बनाकर रख  
छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह  
समस्तवर्णोंको हरकरताहै ॥ ६४४ ॥

### ६४५ व्रणान्तकगुग्गुलुः

कटुत्रयं निशायुर्मं चला यस्या प्रसारिणी ।  
मज्जिष्ठा पार्थयण्यौ च देवदाद पुनर्नया ॥ ३११५ ॥

## तुल्यभागमिलितेन सर्पिया

लीढमेतदपहन्ति पायुजान् ॥ ३०८० ॥

लो. प. (घ.), अशोरोगे ।

भाषा—नागरमोषा, ताप्रमसम्, त्रिकटु और त्रिफला समभाग लेकर बारीकचूर्णकर सक्केबराबर धीमें मिलाकर रख-छोड़े । इसमेंसे १ माशेसे दोमाशेक देनेसे यह समस्तबवा-सीरोंको नष्टकरताहै ॥ ६३६ ॥

## ६३७ व्योमसुन्दरीवटी

कापांस्याः काफमाच्यश्च कन्याच्यश्च द्वाद्वैः ।  
शुद्धं मृतं दिनं मर्चं शाल्यमम्लैः समुदरेत् ॥ ३०८१ ॥  
तद्रसाक्षिष्कचत्वारि निष्कादं ताप्रचूर्णकम् ।  
पादोननिष्कमम्रोतयं सर्वं पादञ्च हाटकम् ॥ ३०८२ ॥  
हेमतुर्यं मुण्डचूर्णं सर्वमम्लैर्विमर्दयेत् ।  
दिनाग्नौ गोलकं कृत्वा जम्भीरस्योदरे क्षिपेत् ॥ ३०८३ ॥  
त्रिदिनं दौलकायन्त्रे पाचयेत्सारनालके ।  
उक्षुप्त धारयेद्वफने गुटिकां व्योमसुन्दरीम् ॥ ३०८४ ॥  
वर्षमात्राज्जातं हन्ति जीवेद्ब्रह्मदिनं नरः ।  
चित्रमूलस्य चूर्णान्तु सार्धं कान्तपात्रके ॥  
आलोढ्य भक्षयत्कपेमनु स्यात्कामगे हितम् ॥ ३०८५ ॥  
रसायनत्वं, रसायने ।

भाषा—कपास, मकोय, पीतुवार इनकेसोंमें १-१ दिन पारेकोमर्दनकर काष्ठीप्रयुति केपेदापौसे साफकरके १ कर्ष लेवे । फिर शुद्धताम्रचूर्ण २ माशे, अभ्रसत्तव ३ मा, सुवर्ण और मुण्ड १-१ माशा मिलाकर खटाईमें ४ पहर मर्दनकर गोलीबनाय चारसह मलमलेके टुकड़ेमें गांधक जमीरीनीबूमें रख दोलायत्र बनाय काष्ठीमें लटकाकर ३ दिनतक पकावे । काष्ठी सुपनेपर नई छालजाया । स्वादुशीतलहोनेपर गोलीको निकाले, यह कड़ी होजायगी । इसको एकत्रुणभर मुहमें रख-नेसे शुद्धापा नष्टोकर अत्यन्त दीर्घायुहोताहै । एककर्ष चित्रककी जड़का गूण मनुकेसाय कान्तलोहकेपात्रमें छुष्टकर पोदकर भक्षणकरनेसे इगडा घरीरमें अनुक्रमणहोताहै ॥ ६३७ ॥

## ६३८ व्योपादिलोहम्

व्योपं पित्तं द्विरजनी त्रिफला द्विपुनर्नयम् ।  
मुस्ताम्यपोरजः पाठा विडङ्गं देवदारु च ॥ ३०८६ ॥  
वृद्धिकाली च भार्गी च सर्षपरिस्तेः शृतं घृतम् ।  
सर्पाग्रशामयत्याशु विकारामृत्तिकाकृतान् ॥ ३०८७ ॥

भा. अ. ह. प. मा., ग. नि, पाण्डुरोगे ।

भाषा—त्रिकटु, बेलगिरी, हल्दी, दाहल्ली, त्रिफला, लाल और सफेदपुनर्नवा, नागरमोषा, फोलादकाचूर, पाठा, विडङ्ग, देवदारु, बिडुआ, भार्गी सब समभागलेकर बारीक-पीसकर बन्ध बनावे । फिर बन्धमें चौगुना घी और पौसे चौगुनाघृत डालकर पकावे । धीमात्र अवक्षिप्त रहनेपर छानकर रखने और ऊपरकी धीझोंकड़ी पूर्ण बनाकर रखनेसे । इस-

चूर्णमेंसे १ से ३ माशेकमात्रा एकलोहे धीमें मिलाकर लेनेसे मृद्वक्षणाजनित समस्तविकार नष्टहोतेहै । खानेकेलिये जो चूर्ण बनावे उसमें लोहमस्मका उपयोगकरे ॥ ६३८ ॥

## ६३९ व्रणगजकेसरीरसः

मृतं सूतं मृतं ताप्रं मृतं स्वर्णं मृतायसम् ।  
पृथक्पृथक् शुक्तिसमं शुद्धशैलं पलानि पद ॥ ३०८८ ॥  
खल्वे शतद्वाल्येन रसेन परिमर्दयेत् ।  
वारत्रयं तथा जातीदलजेन प्रयत्नतः ॥ ३०८९ ॥  
ततो मापमितं नित्यं त्रिफलामधुना लिहेत् ।  
शुद्धचीसारिवानिभ्रमजिष्टात्रिफलोद्भवम् ॥ ३०९० ॥  
कायं चानु पिबेन्नित्यं व्रणक्षोपप्रशान्तये ।  
तान्त्वर्षाप्रशयेदाशु विद्वर्षाश्च भगन्दरान् ॥  
शोषाध्मानप्रमेहादीज्यैरुद्धीशम्भुशासनात् ॥ ३०९१ ॥

र. म. मा., ना. वि., व्रणाधिकारे ।

भाषा—पाठा, ताप्र, सुवर्ण और लोहमसम् १-१ पल शुद्धशिलाजीत ६ पल लेकर गुलाब, कमल और चमेलीके स्वरसोंसे ३-३ दिन मर्दनकर १-१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिफला और मधुकसायलेक मिलोय, अनन्तमूल, नीम, मजीठ और त्रिफलाका काय पीनेसे सबप्रकारकेव्रण, विद्वर्षि, भगन्दर, शोष, आध्मान, प्रमेह प्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६३९ ॥

## ६४० व्रणगजाङ्गुशरसः

दरदः पार्वतीपुष्पं कुन्दरी पुरुषो रसः ।  
शोणितं गन्धको दैत्यः सैन्धवोऽतिथिया चर्वा ३०९२  
शरपुष्पा विडङ्गश्च यवानी गजपिप्पली ।  
मरीचार्कौ च यरुणो धूतकश्च हरीतकी ॥ ३०९३ ॥  
मर्दितं कटुतेलेन गुटिकां कारयेद्विह ।  
नाडीग्रणप्रयाहञ्च गण्डमालां भगन्दरम् ॥ ३०९४ ॥  
चित्रपत्रं द्रुमुकुण्डं पृथिकान्तु शिरोगदम् ।  
पादस्फोटं तथा हस्तं विचर्च्यं धनुकोटजाम् ॥ ३०९५ ॥  
र. र., मै. र., घ. र., च., व्रणक्षोये । मै. र. नारायणरस इति-  
नाम । घ. द्रुमद्वयटीतिनाम । र. चं नारायण इतिनाम भा-  
न्दराधिकारय ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, फिटकरी, कगीस, मैनसिल, मूगन, पाठा, सोनागुरु, गन्धक, बेरान्त, सैन्धव, अनीस, चव्य, शरपुष्प, विडङ्ग, अजवाइन, यमरूपत, मरिच, आकड़ोई, बहनकड़ीछाल, रात, हरे देसव समभागलेकर बारीकचूर्णकर पौर-गन्धकडी नीलवर्णकमलीमें मिलाय सरसोंके तेलमें १-२ दिन मर्दनकर १-१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अवकाश सेतोबिडानुपानकेपाप देनेसे नाडी-ग्र, गण्डनाल, भगन्दर, पुलासमय, दन्त, घृष्ट, लहसुनाज, शिरोरोग, हाथ और पैरकी सूजन, कीटउत्पत्तिविषा इनप्रबन्धों यह नष्टकरताहै ॥ ६४० ॥

### ६४१ व्रणजयमल्लः

महं सङ्गह यत्नेन कर्ममात्रं भिषग्वरः ।  
शुद्धं कृत्वा ततः कोष्ठीयुगमोदरविले क्षिपेत् ॥३०९६॥  
मृत्कापटेन संवेष्ट्य ततश्चुल्ल्यां निवेशयेत् ।  
अथो बहिर् ददेतोग्रमष्टोत्तरशतावधि ॥ ३०९७ ॥  
खरमूत्रं निषेच्याऽथ स्वाङ्गशीतं समुदरेत् ।  
तण्डुलप्रमितां मात्रां हविषा सह योजयेत् ॥ ३०९८ ॥  
व्रणे क्षते महाकुष्ठे शतपोने भगन्दरे ।  
महामह्नाभिभः प्रोक्तस्तज्जै व्रणपराजये ॥ ३०९९ ॥  
रसायनसः, व्रणाधिकारे ।

भाषा—एककपे शुद्धसोमलकी उलीको दो ढकनों में बन्द-  
कर कपड़मिनी देकर चूल्हेपर रख नीचे कड़ी आचदे । ऊपरसे  
१०८ कपे गणिकेमुनका चोवादे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकाल  
कर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ बाबल मात्रा पीकेसायदेनेसे व्रण,  
अत, महाकुष्ठ, शतपोनक, भगन्दर, इनसबको बह नष्टकरताहै ॥

### ६४२ व्रणमर्दनरसः

द्वरदोथं रसं शुद्धं गन्धकञ्च पलंपलम् ।  
पलत्रयं शुद्धतालं मर्दयेत्तुलसीद्रवैः ॥ ३१०० ॥  
विनत्रयं प्रयत्नेन रेतितं शुक्तिमात्रकम् ।  
मिक्षिप्य रजतं शुद्धं काचकृत्यां विनिसिपेत् ॥ ३१०१ ॥  
प्रमुद्रयास्यं भिषक् पश्चात्स्तिकतायन्त्रके पचेत् ।  
मन्दमध्यक्रमेणैव बहिर् प्रज्वालयेदधः ॥ ३१०२ ॥  
विनत्रयं प्रयत्नेन स्वाङ्गशीतं समुदरेत् ।  
ततस्तु दूषिकान्तस्थं क्वचिग्माणिक्यसन्निभम् ३१०३  
पतङ्गी चालितयनैन ब्राह्मयित्वा पृथक्पृथक् ।  
नीत्वाऽधःस्थं समस्तञ्च पृथक्कुर्यादतः परम् ३१०४  
सर्वपाभा पतङ्गीना गुञ्जामात्रं तथा रसम् ।  
चूणितं पणिलण्डेन भक्षयेद्वा यथाबलम् ॥ ३१०५ ॥  
यावदुज्जापतङ्गी स्याद्रसो मापमितो भवेत् ।  
तदूर्ध्वं वर्धनं नैव कारयेद्भोगिणं प्रति ॥ ३१०६ ॥

यद्वाऽग्निरोधाघ्न भवेत्पतङ्गी

तदा रसः केवल एव नित्यम् ।

मेवेद्वणानां प्रशमाय विद्वा-

स्ततः सुखी स्यादसृगामयानं ॥ ३१०७ ॥

र म मा, ना वि, व्रणशोधे ।

भाषा—शुद्धरिफसे निकालहुआ शुद्ध पारा और गन्धक  
१-१ पल शुद्धरिताल २ पल, चादीका चादीकेरता १ पल  
लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर तुलसीकेरससे ३ दिन मर्दनकर  
गुलाकर ६-७ कपड़मिनीदीहुई आतशीशीशीमें बन्दकर ढाट  
लगाकर बाहुकायन्त्रमें रख मन्द, मध्य और खर इसक्रमसे ३  
दिनकी अभिदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर सावधानीकेसाथ शीशीको  
पोढ़कर देसे, कहींपर मणिके सध्या कहीं पतङ्गकेसध्या रत्न  
दिखादेगा । इनको अल्मा २ निकालकर शीशीमें रखछोड़े

और नीचेकाभाग अल्मा रखसे । पतङ्गीरुवालेमेंसे १ सर्वप और  
माणिक्यसध्या तथा तल्पकी १-१ रती पानमें रखकर खावे ।  
पतङ्गीचीमात्रा बढाकर १ रतीतक और दूसरोंकी १ मासेतक  
करे । इससे अधिक न बढावे । अग्निके अवरोधसे पतङ्गी नजर  
न आवे तो उसमें नीचे ऊपर जो रसमिले उसीका सेवनकरना  
चाहिये । इसके सेवनसे समस्त रक्तविकार नष्टहोतेहैं ॥६४२॥

### ६४३ व्रणवद्वानरसः

समाने द्वे च पापाणि तदर्द्धं वलिपारदम् ।  
कुनटीक्षारमेकैकं सुतपादं सुतालकम् ॥ ३१०८ ॥  
सर्वं शुद्धं तु खल्वे च मर्दयेद्विषत्रयम् ।  
नागवल्ली च निर्गुण्डी भृङ्गराजपुनर्नवौ ॥ ३१०९ ॥  
प्रत्येकपत्रसारेण मर्दनेन पुनःपुनः ।  
वटकाण्डद्रीभीजमात्रांश्चुल्कास्तु कारयेत् ॥ ३११० ॥  
शुल्वे कारण्डके क्षिप्त्वा सप्तशो वल्लभृत्क्षिकाः ।  
सुपर्कं बालुकायन्त्रे द्वादशाहं निरन्तरम् ॥ ३१११ ॥  
स्वाङ्गशीतलमादाय सर्वं गोलं विचूर्णयेत् ।  
अनुपानविशेषेण व्रणांश्च विविधाञ्जयेत् ॥  
शीतिकां विपमान्हन्ति शीतज्यरहरं परम् ॥ ३११२ ॥  
र क यो, व्रणे ।

भाषा—सपेद और शीलासोमल १-१ भाग, शुद्ध गन्धक  
और पारा आधाआधामाग, मैनेसिल और झुहागा १-१ भाग,  
शुद्धरिताल पारेसे चतुर्थांश लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर  
पान, निर्गुण्डी, भयरा और पुनर्नवाके रसोंसे ३-३ दिन मर्दन  
कर बेरकीशुलीकेबराबर गोलियें बनाय गुलाकर ६-७ कपड़  
मिनीदीहुई आतशीशीशीमें भरके ढाटबन्दकर बाहुकायन्त्रमेंरख  
१२ दिनकी अभिदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सबको  
पीसकर रखछोड़े । इसमेंसे १ बाबलसे २ बाबलतक मात्रा  
वक्षितानुपानकेसाथ देनेसे दावाप्रकारेण, शीत और विषम-  
ज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६४३ ॥

### ६४४ व्रणहररसः

रसं गन्धं विपं बहिर् लोहमर्त्रं समंसमम् ।  
सप्तधा पार्थतोयेन काञ्चनाराऽम्भसा तथा ॥ ३११३ ॥  
भावयित्वा घटी. कुर्याद्रक्तिकाप्रमिता मियक् ।  
रसो व्रणहरो नाम व्रणान्हन्ति रसोत्तमः ॥ ३११४ ॥  
र च, व्रणाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और बछनाग, चित्रकीजहू,  
लोह और अमरकमस समभागलेकर अर्जुन और कचनारके-  
रसोंसे ७-७ दिन मर्दनकर १-१ रतीकीगोलियां बनाकर रख-  
छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली वक्षितानुपानकेसाथदेनेसे यह  
समस्तर्णोंको दूरकरताहै ॥ ६४४ ॥

### ६४५ व्रणान्तकगुग्गुलुः

कटुत्रयं निशायुर्मं बला घृत्या प्रसारिणी ।  
मज्जिषा पार्थयष्टयौ च देवदाद पुनर्नवा ॥ ३११५ ॥

पृथक् पृथक् शुक्तिसमं पलैकं मृतपारदम् ।  
अम्रञ्च द्विगुणं देयं त्रिगुणं तु मृतायसम् ॥ ३११६ ॥  
चतुर्गुणं शुद्धशैलं सर्वमेकत्र मिश्रयेत् ।  
अस्थिशूलिकातोये सम्यक् शोष्यस्तु गुग्गुलुः ॥  
मर्वपं द्विगुणश्चाऽत्र दत्त्वा सम्मर्दयेत्ततः ।  
अक्षप्रमाणा गुटिका सेव्या नित्यं ततः परम् ॥ ३११८ ॥  
पिथेष्मांसरसञ्चानु दुष्टव्रणनिपीडितः ।  
पूर्यक्तास्थिवाहीनि व्रणान्याशु प्रयान्ति हि ॥  
भग्नविदिल्लसन्धीनां साक्षाद्गन्नाश्च ये व्रणाः ३११९  
टो., व्रणाधिकारे ।

भाषा—त्रिकटु, हल्दी, दारुहल्दी, यला, असगन्ध, प्रस-  
रिणी, मजीठ, अजुन, सुल्फरी, देवदारु, कुङ्कुम, चारदभस्म  
येस्य १-१ पल, अक्रकमस्य २ पल, लोहभस्म ३ पल, शुद्ध-  
शिलाजीत ४ पल लेकर सम्यक् बारीकचूर्णकर इङ्गोडकेरसमे  
शुद्धकियाहुआपुल सबसे दूना मिलाकर कूटे । एकजीवहोनेपर  
बेरबारावर गोलियें बनाकर रखलोडे । इनमेंसे १-१ गोली  
मात्रस लयवा जीवनीयगणकापकेसाय देमेसे पूय, रक्त और  
इत्रिया जिनमेंसे बहयहकर निकलीहों ऐसे दुष्टव्रण, मम,  
विच्छिष्टसन्धिया, अस्थिभग्न येस्य नष्टहोतेहैं ॥ ६४५ ॥

### ६४६ व्रणान्तकरसः ( प्रथमः )

अम्या हरिद्रा कर्पैकं श्लेच्छदीप्यस्य कर्पकम् ।  
कीटमारजमोदायाः कर्पमेकं ततो शुद्धात् ॥ ३१२० ॥  
जीपात्सार्व द्विकर्पं स्याद्भल्लातकफलानि च ।  
सार्द्धद्विसहस्रया सत्यक् पारदः सार्धमापकः ३१२१  
खल्वे सङ्कुट्टय प्रथमं भल्लातेशी ततः परम् ।  
चूर्णं वलेण सम्पुतं मेलयित्वा शुद्धेन तु ॥ ३१२२ ॥  
कुट्टयित्वा च तत्सम्यग्गुटिकाश्च चतुर्दश ।  
यद्धा द्विकालमश्रीयाच्छीततोयानुपानतः ॥ ३१२३ ॥  
दन्तस्पर्शे धिना ग्राह्यमौषधं पथ्यशीलिना ।  
गोधूमार्धं घृतस्निग्धं सूपं चाढकिसम्भवम् ॥ ३१२४ ॥  
ओदनं तिकलयणं शाकं सामान्यमेव च ।  
पथं सप्तदिनं कुर्यादप्येहि तथा वटीम् ॥ ३१२५ ॥  
हिदुजीरमरीचादिसंस्कृताश्च निषेधयेत् ।  
उत्तरार्द्धं स्नानवर्ज्यमेवं कार्यं विज्ञानता ॥ ३१२६ ॥  
अपि तालुनि सञ्जाते व्रणे चालनिक्कानिधे ।  
यत्रकुटाऽपि सम्भूते व्रणे होतत्रियोजयेत् ॥ ३१२७ ॥  
व्रणान्तकमिदं शीतं सर्वदुष्टव्रणापहम् ।  
उपदेशसमुद्भूतं शुद्धस्थानसमुद्भवम् ॥ ३१२८ ॥  
नाडीव्रणे निहन्त्याशु भगन्दरमयापि वा ।  
हस्तपादसमुद्भूता विविधा वातवेदनाः ॥ ६१२९ ॥  
ताः सर्वाः प्रशमं यान्ति सत्यमेतन्न संशयः ।  
ताम्बूलश्च सदा सेव्यमश्रीयाश्च घृतं यद् ॥ ३१३० ॥  
रसायनम्, व्रणाधिकारे ।

भाषा—आवाहृदी, खुरासानी अजवाइन, कीड़ामारी  
( शुक्राती ), अजमोद १-१ कर्प, पुरानासुई २॥ कर्प, मिलावे  
२॥ नग, पारा १॥ मासा लेकर पहिले मिलायोंको कूटकर  
पाराडालकरकूटे । पारामिलजानेपर मुड्डाले । द्रवहोनेपर सब  
जीर्णोक्तावारीकचूर्णमिलाकर कूटे । अच्छीतरह गोलोबधनेलायव-  
होनेपर इसकी १४ गोलिया बनाकर रखलोडे । इनमेंसे १-१  
गोली खुबह्दाम ठंडे पानीकेसाय दन्तस्पर्शको बचाकर निगल  
जाय । इसमें गेहूं, धी, अरहरकोदाल, भात, तिच और लयण  
रस साधारणव्याह इनका सेवनकरे । ऐसे ७ दिन बीतनेपर  
आठवेदिन हाँग, जीरा और मरिच बगैरइकेयुक्त भोजनकरे ।  
इसमें १४ दिवतक स्नान न करे । इसकेसेवनसे चल्नीबीततह  
सैकड़ोंलेडवाल ताल अथवा गुट्टादिद्यानजगण, उपद्रव, नाडी-  
व्रण, भगन्दर, नानातरहकी वातवेदना येस्य नष्टहोतेहैं । इतने  
सेवनसे सुंद खराबमालूमपड़े तो हमेशा पानका सेवनकरे ६४६

### ६४७ व्रणान्तकरसः ( द्वितीयः )

दरदञ्चैकमागन्तु पङ्गुगञ्जाऽपि गन्धकम् ।  
सूतराजस्य चैकेन तद्वदं मृतनागकम् ॥ ३१३१ ॥  
हंसपादीरसैर्मर्द्य पुटमेकञ्च वर्णितम् ।  
शुद्धाज्यमरिचैर्मिश्रं प्रातःकाले च सेवयेत् ॥ ३१३२ ॥  
व्रणकोटककुष्ठानि मण्डलानि च नाशयेत् ।  
व्रणान्तक इति खयातो दुष्टव्रणहरः परः ॥ ३१३३ ॥

व. रा., व्रणे ।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ १ भाग, शुद्धगन्धक ६ भा., शुद्धपारा  
१ भा., नागभस्म आधाभागलेकर नीलवर्णकमलीकर हसरामवे  
रसे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय एण्डकेपतोंमैलेपेट पुदपाकमें  
स्वेदितकर निकाले । इसमेंसे ३-३ रती प्रातःकाल गुड़,  
मरिच और धीकेसाय सेवनकरनेसे व्रण, कीट, कुष्ठ और चकने  
नष्टहोतेहैं ॥ ६४७ ॥

### ६४८ व्रणान्तकरसायनम्

सितमर्लं कर्पमानं दरदञ्च द्विकार्पिकम् ।  
त्रिकर्पं श्वेतखदिरं त्रींश्च खल्वे विचूर्णयेत् ॥ ३१३४ ॥  
आर्द्रकस्वरसेनैव मर्दयेत्तद्वदं नरः ।  
सर्वप्रप्रमितां मात्रां युञ्जीत भिषगुत्तमः ॥ ३१३५ ॥  
घृतानुपानतो दद्यात्सत्पथे पथ्यमाचरेत् ।  
संयावकं घृताल्यञ्च पथ्याय योजयेद्बुधः ॥ ३१३६ ॥  
व्रणाः शुष्यन्ति रोहन्ति प्रभावेणौषधस्य हि ।  
ततः पण्मासपर्यन्तं मुद्राग्रं कारयेत्तुल्यम् ॥  
कृष्णपण्डञ्च गुडं रम्भाफलं ये वर्जयेन्नरः ॥ ३१३७ ॥  
रसायनम्, व्रणाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध सफेदसोमल १ कर्प, शुद्ध शिंगरिफ २ कर्प,  
सफेदकल्या ३ कर्प लेकर सबरा बारीकचूर्णकर १-२ दिन  
अदरकरसेसे मर्दनकर सर्वप्रमाण गोलियें बनाकर रखोडे ।

इतमसे १ से ३ गोलीतक मात्रा प्रवृत्ति और बलका विचार-  
कर धीमेसायदेवे और तत्काल हल्का गिलावे । इसकेप्रभावसे  
म्रग अच्छेहोजातिहे । ६ महीनेतक म्रग, करेला, कौहला, गुड़  
और केले न खाय ॥ ६४८ ॥

### ६४९ व्रणापहारीरसः

रसाद्विगुणितो गन्धः शिलातालो च तत्समी ।  
पलद्वया सर्वसमा मर्दयेत्त्रिफलाद्रवेः ॥ ३१३८ ॥  
व्रणापहारी सिद्धः स्यात्सेच्यो मापहयोग्मितः ।  
जेतुं सर्वव्रणान्दुष्टान्नाडीनभगन्दरान् ॥ ३१३९ ॥  
र, म्रगे ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक, मैन्सिल और हरिताल  
२-२ भाग, गुग्गुलु सबकी बराबर लेकर गुग्गुलुको धीके योगसे  
मूटकर सबबीजोंकी कजलीको मिलाकर त्रिफलाकेरससे एकदिन  
मर्दनकर २-२ मासेकी गोळिया बनाकर रखओगे । इतमसे  
१-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानवेसायदेनेसे समस्त  
दुष्टम्रग, नाडीम्रग और भगन्दर नष्टहोतेहे ॥ ६४९ ॥

### ६५० व्रणारीरसः

गन्धेशाद्विफणं तुल्यं इयहं जम्बीरमर्दितम् ।  
कुमार्यां नरम्ब्रेण चित्रकेण च सिन्धुना ॥ ३१४० ॥  
नीवर्चलेन च पृथग्युक्त्या सप्तदिनैः पृथक् ।  
व्रणरोगेषु सर्वेषु सद्योजातव्रणेषु च ॥ ३१४१ ॥  
लूताभगन्दरे गण्डगण्डमालासु योजयेत् ।  
क्षीरेण वा यथायोगैस्त्रिचहं पुरस्त्युतम् ॥  
पथ्यञ्च शालयो मुद्रा गोधूमाः सघृता हिताः ॥ ३१४२ ॥  
र. सि, र. नि., रसायनस., व्रणाधिकारे ।

टि०—र सि, रसायनस गन्धेशाद्विफणं तुल्यमित्यस्य स्थाने  
गन्धेशी वणा शुष्की इति पाठ । नाम च व्रणरोगणरम इति स्थानिम ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, पारा और अजीम समभागलेकर  
पारेगन्धकरी नीलवर्णकजलीकर ३ दिन जमीरीकेरससे मर्दनकर  
घींवार, नरमून, चित्रक, सिन्धर और सप्तरत्नमक इतप्रत्येक-  
केरसे ७-७ दिन मर्दनकर ९-९ रसीकी गोळियें बनाकर  
रखओगे । इतमसे १-१ गोली मधु, गुग्गुलु अथवा रोगोचिता-  
नुपानवेसाय देनेसे समस्त व्रणरोग, सद्योजात, मूटकीकाविष,  
भगन्दर, गाँठ, गण्डमाला, वेसर नष्टहोतेहे । इसमें सफेदचावल,  
सुंग, गेहूँ, धी देसय खावेको देना और नमकसे पहेज कराना ॥

यदीयमसंगमवितर्गसङ्गवे,

जगत्त्रयस्याऽऽसमभयाऽभयोद्भयः ।

हरिप्रपन्नेन हृते प्रमान्विते,

अन्तःस्थवर्गाऽजनि योगसागरे ॥

## अथ शकारादिरसाः

### १ शक्त्यासकिट्वटी

शक्त्यासकिट्वट्यः शनैः शनैः पाण्डुरोग्गन्ताः ।  
तदुपादानपदार्थं कथयामश्चाश्वं तैलम् ॥ १ ॥  
सि मे म, पाण्डुरोगे ।

भाषा—गाड़ीकेपहियेके किट्टकी चनेप्रमाण गोळिया बना-  
कर रखओगे । इतमसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानु-  
पानवेसाय देनेसे पाण्डुरोग नष्टहोताहे ॥ १ ॥

### २ शक्तिकौमाररसः

द्वन्द्वरसकृष्णद्विगुणाऽऽलं शिलांदा  
मुनिमिततिमिपिसे मांयेष्टल्लमात्रम् ।  
ज्वरहररस आर्द्रः शक्तिकौमारनामा  
दधियुतहितपथ्यं शाकधुन्तारुजञ्च ॥ २ ॥  
र. सि., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्धविगरिक, खपरिया, पीपल, मुनामुहाग, शुद्ध-  
हरिताल और मैन्सिल समभागलेकर बारीकचूनेकर रोहमछली-  
केपिसेकी ७ भावनाएँ देकर ३-३ रसीकी गोळियें बनाकर  
रखओगे । इतमसे १-१ गोली अक्षरपके रसकेसायदेनेसे यह  
समस्तज्वरोंको नष्टकरताहे । इसमें दही, मात और बेतनकासाय  
पथ्यदेना ॥ २ ॥

### ३ शक्तिरसः ( महा )

मृतमृताऽम्रकं घञं कान्तताराऽकंहाटकम् ।  
तीक्ष्णञ्च तुल्यतुल्यांशं सर्वेषां गन्धकं समम् ॥ ३ ॥  
सर्वं पालादातेलेन मर्दयेद्द्विहसप्तकम् ।  
महाशक्तिरसो नाम क्षौद्रे मापं लिहेत्सदा ॥ ४ ॥  
पश्मासेन जरां हन्ति जीवेद्द्विहसप्तकम् ।  
वन्तरासत्सकल्पानि जीवत्येव न संशयः ॥ ५ ॥  
इच्छावेगी महासिद्धः पराशक्तिमुतो भवेत् ।  
तस्य मृत्रपुरीषाभ्यां तात्र भवति काञ्चनम् ॥ ६ ॥  
पालाशबीजजं तैले क्षीरेतैलं पलायकम् ।  
क्रामकं हानुपानं स्यात्सप्तकं छक्क्या प्रकाशितम् ॥ ७ ॥  
र स, रसायनस., रसायने ।

भाषा—गारा, अम्रक, हीरा, कान्त, रत्न, ताप, सुवर्ण  
और फोलाद इनरीमसमें समभाग लेकर सबकी बराबर शुद्ध-  
गन्धक मिलाकर पलाशबीजोंके तैले ७ दिनक मर्दनकर  
रखओगे । इसमेंसे १ रसीसे शुद्धर पीरीपीरी १ मासेकदमात्रा  
बढ़ावे । ६ महीनेकेमेवनसे बहुत दीर्घायु होतीहे । एष्वर्ध-  
सेवनसे कलजीवी तथा इन्जावेकी महासिद्ध होकर उन्वृष्ट शक्ति-  
पुष्टहोताहे । इसके मृत्र और पुरीषसे तापवर एवंभियादो गिहे ।  
इसके प्रयोगमें पलाशबीजोंकील घक्क्यानुसार आरम्भकर ८  
फल्लकद्वीमात्रा बढ़ावे तो तीसरेमें रमका नामहोताहे ॥ ३ ॥

## ४ शक्रवल्लभरसः

रसगन्धकलोहाऽम्ररौप्यहेमानि माक्षिकम् ।  
 शाणमानेन सङ्गृह्य तुगाक्षीरीञ्चकार्पिकीम् ॥ ८ ॥  
 पलप्रमाणं विजयावीजञ्चैकत्र मर्दयेत् ।  
 विजयावारिणा पश्चान्मापमानां वर्तय चरेत् ॥ ९ ॥  
 एकैका भक्षणयैषा पेयञ्चाऽनु पयः पलम् ।  
 श्रीशक्रवल्लभो नाम रसो वाजीकरः परः ॥ १० ॥  
 वीर्यस्तम्भकरोऽत्यर्थं प्रमदामदनाशनः ।  
 गतो ह्यप्सरसां शक्तो बाल्मह्यं यत्प्रसादतः ॥ ११ ॥  
 आ. वि., भै र., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अम्रक, रजत, सुवर्ण और सोनामाली इनकी भस्म ४-४ मासे, बंशलोचन १ कर्ष, गाँजेबीज १ पल लेकर सबका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर भागके स्वरसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ मासेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली दूधकेसाथ लेनेसे उत्तमवाजीकरण होताहै । वीर्यवीर्यदिको प्राप्तोकर स्त्रियोंके मदको नष्टकरताहै ॥ ४ ॥

## ५ शङ्करलोहम् ( प्रथमम् )

प्रणम्य शङ्करं रुद्रं वण्डपार्णि महेश्वरम् ।  
 जीवितारोग्यमन्विच्छन्पर्यपृच्छच्च नारदः ॥ १२ ॥  
 सुप्तोपायेन हे नाथ शूलक्षारान्निमिर्विना ।  
 दुर्बलानाञ्च मीरूणां चिकित्सां यत्कुरुहसि ॥ १३ ॥  
 तण्डिप्ययचनं ध्रुत्वा लोकानां हितकाम्यया ।  
 अर्शसां नाशनं श्रेष्ठं सैपज्यमिदमीरितम् ॥ १४ ॥  
 मुण्डवज्राविलोहानां प्राहमन्यतमं शुभम् ।  
 कृत्वा निर्मलमादौ तु कुन्दया माक्षिकेण च ॥ १५ ॥  
 पञ्चमूलकलेन लिम्पेदस्युतेन च ।  
 ज्याला च तस्य रोद्धव्या त्रिफलाया रमेन च ॥ १६ ॥  
 ततो विहाय गलितं शङ्खनोद्धं समुत्क्षिपेत् ।  
 वक्षी निक्षिप्य विधिवच्छालाऽङ्गरेण निर्धमेत् ॥ १७ ॥  
 त्रिफलाया रमे पृते तदाशुण्यं तु निर्वपेत् ।  
 न सम्यगगलितं यद्य तेनेव विधिना पुनः ॥ १८ ॥  
 भ्मातं निर्वापयेत्तस्मिँल्लोहं तन्त्रिफलासे ।  
 यद्गोहं न मृतं तत्र पाच्यं मृद्योऽपि पूर्ववत् ॥ १९ ॥  
 मारणाग्रमृतं यद्य तत्पत्तन्यमलोहवत् ।  
 ततः संशोष्य विधिवच्चूर्णयेद्गोहमाजने ॥ २० ॥  
 लोहेनैव शिलायां वा हृष्टदा शृङ्खणवृणितम् ।  
 कृत्वा लोहमये पात्रे मादं वा लिप्तरन्ध्रके ॥ २१ ॥  
 रसेः पट्टोपमं कृत्वा पाचयेन्नामयाऽग्निना ।  
 पुटानि क्रमशो दद्यात्पृथगेषां विधानतः ॥ २२ ॥  
 त्रिफलाऽऽद्रकभृङ्गाणां केसराजस्य बुद्धिमान् ।  
 बन्द्मानकमहातपशीनां मूरणस्य च ॥ २३ ॥

हस्तिकर्णपलाशस्य कुलिशस्य तथैव च ।  
 पुटेपुटे चूर्णयित्वा लोहात्पोडशिकं पलम् ॥ २४ ॥  
 तन्मानं त्रिफलायाश्च पलेनाऽधिकमाहरेत् ।  
 अष्टमागाऽवशिष्टे तु रसे तस्याः पचेद्बुधः ॥ २५ ॥  
 अष्टौ पलानि दत्त्वा च सर्पिपो लोहमाजने ।  
 ताप्त्रे वा लोहद्वार्यान्तु चालयेद्विधिपूर्वकम् ॥ २६ ॥  
 ततः पाकविधानञ्च स्वच्छे शुद्धे च सर्पिपि ।  
 मृदुमध्यादिभेदेन गृहीयात्पाकमानवित् ॥ २७ ॥  
 अभिमन्य विधानेन कृतकौतुकमङ्गलम् ।  
 ग्रामराज्यसमायुक्तं लिह्येदारक्तिकाक्रमात् ॥ २८ ॥  
 वर्धमानानुपानञ्च गव्यं क्षीरञ्च पाययेत् ।  
 गव्याभावेऽप्यजायाश्च स्निग्धवृष्यादिभोजनम् ॥ २९ ॥  
 सद्यो वह्निकरञ्चैव भस्मकञ्च नियच्छति ।  
 हन्ति वातं तथा पित्तं कुष्ठानि विषमज्वरान् ॥ ३० ॥  
 गुल्माक्षिपाण्डुरोगाञ्च तन्द्रालस्यमरोचकम् ।  
 पणिणाममवं शूलं प्रमेहमपयाहुकम् ॥ ३१ ॥  
 श्वयथुं रक्तस्रावञ्च दुर्नामानं विशेषतः ।  
 यलरुद्धं हृणञ्चैव कास्तिदं स्वरवर्द्धनम् ॥ ३२ ॥  
 लाघवञ्च मनोहञ्च नेत्रोरग्यं पुष्टिर्धनम् ।  
 आयुष्यं धीरुक्त्वेव वयस्तेजस्करोतथा ॥ ३३ ॥  
 सश्रीकपुत्रजननं बलीपलितनाशनम् ।  
 दुर्नामारिरग्यं नाम्ना हृष्टो धारसहस्रदा ॥ ३४ ॥  
 निर्मूलं दृष्टाते शीघ्रं यथातृलञ्च वह्निना ।  
 सौकुमार्योत्पकायत्वे मद्यसेवां समाचरेत् ॥ ३५ ॥  
 जीर्णमद्यानि युक्तानि भोजनैः सह पाययेत् ।  
 लायतित्तिरगोधाश्च मयूरः शशकावयः ॥ ३६ ॥  
 चटकः कलविड्मञ्च वर्तको हरितालकः ।  
 श्येनरुञ्च गृहस्त्रावो घनविष्किरकादयः ॥ ३७ ॥  
 पारावतमृगादीनां मांसं जाङ्गलजं तथा ।  
 महुरो रोहितः श्रेष्ठः शकुलश्च विशेषतः ॥ ३८ ॥  
 मत्स्यराजा इमे प्रोक्ता हितमत्स्येषु योजयेत् ।  
 प्रशस्तवार्ताकफलं पटोलं बृहतीफलम् ॥ ३९ ॥  
 प्रलम्बामील्वेवरात्रं जातुर्न तण्डुलीयकम् ।  
 वास्तुकं कालशकञ्च कर्णालुकुपुनर्नयाम् ॥ ४० ॥  
 नास्तिकलञ्च खर्चुरं दाडिमं लवलीफलम् ।  
 शृङ्गादकञ्च पक्वधात्रं द्राक्षातालफलानि च ॥ ४१ ॥  
 जातीकोपं लवङ्गञ्च पूगं तामूलपत्रकम् ।  
 नाश्रियाहुकुचं कोलककन्धुयदराणि च ॥ ४२ ॥  
 जम्बीरं बीजपूरञ्च कर्मदकतिन्तिडी ।  
 आनूपानि च मांसानि क्रूरं पुण्ड्रकादिकम् ॥ ४३ ॥  
 हंससारसदातृहृदकाकवलाहकाः ।  
 मायकन्दफरीराणि चणकञ्च कलिङ्गकम् ॥ ४४ ॥  
 कृष्णाण्डकञ्च कर्कोटी केसुकञ्च विशेषतः ।  
 कञ्जतं कारवेहञ्च कर्कोरं कर्कोटीं तथा ॥ ४५ ॥



विदलानि च सर्वाणि ककारादींश्च वर्जयेत् ।  
लोहराजस्तथा चायं स्वयं ह्येण मापितः ॥ ४६ ॥  
जनानामुपकाराय दुर्नामारिरयं ध्रुवम् ।  
स्थानादपि मेरुश्च पृथ्वी पथति वायुना ॥ ४७ ॥  
पतन्ति चन्द्रताराश्च मिथ्या चेद्दहमद्युम् ।  
ब्रह्मब्राह्म कृतब्राह्म कृशाश्चास्त्यवादिनः ॥ ४८ ॥  
घर्जनीया विदग्धेन भैषज्यगुरनिन्दकाः ।  
रक्तिद्वादशाकादूर्ध्वं वृद्धिरस्य भयप्रदा ॥ ४९ ॥  
काले मलप्रवृत्तिर्लाघवमुदरे विगुद्धिरद्वारः ।  
अङ्गेषु नावसादो मनःप्रसादोऽस्य परिपाके ॥ ५० ॥  
किमिरिपुष्पं विलोढं सहितं स्वरसेन घञ्जसेनस्य ।  
क्षपत्यचिरान्नियतं लोहाजीर्णभयं शूलम् ॥  
भवेद्यदाऽतिसारस्तु दुग्धं पीत्वा तु तं जयेत् ॥ ५१ ॥

र. र, र. क., भा. म., र. चि, यो. म, र का, अस्तु ।

**भाषा**—मुण्डादि ६ लोहोंमेंसे किसीएकके पत्रोंको शुद्धकर  
मैनसिल, सोनामाखी और पारा समभागलेकर बारीकचूनेकर  
कुकरोंधेकीजड़केसमें कल्कबनाय पत्रोंपर लपेटकर सुखाकर  
सबुएके कोयलोंपर अथवा अन्यसारिछोकोयलोंपर धमनकर ।  
तीव्रज्वाला निकलनेपर पानीरीजगह त्रिफलावेजायसे छिटिदेवे ।  
लोहकेगलजानेपर त्रिफलाकेजायमें सुझावे । इसप्रकार ७ अथवा  
२१ बारगलाकर बुझानेसे लोहेकीभस्म होकर पायमें राखकी-  
तरह अमजयायी । २१ बार बुझानेपर भी जिसकी भस्म न हो  
उसे फेंकदेना क्योंकि यह लोहनही है । फिर उसभस्मको बाप-  
मेंसे निकालकर मुष्ठाकर लोहे अथवा पत्थरकी सारमें घोट ।  
बारीकचूनेहोनेपर कुकरोंधेकेरसे १-२ दिन घोटकर टिकिया  
बनाय सुखाकर धारावसमुद्रमें बन्दकर साधारणपुटकी आवधे ।  
स्वाश्रयीतलहोनेपर निकालकर त्रिफला, अदरक, भंगरा, काला-  
भंगरा, मानकन्द, मिलावे, चिन्तमूल, जहरीसुण, हस्तिर्ण-  
पलाश, यूश्करादृष इनवेद्योंसे १-१ दिन घोटकर स्थालीपाक  
अथवा सूर्यकिरणपाककरके सुखावे फिर उसीकल्कमें घोटकर  
टिकिया बनाय साधारण पुटे । स्वाश्रयीतलहोनेपर निकालकर  
पहिलेकीतरह घोटकर पुटे । इसतरह प्रत्येकद्वयमें पाक और  
पुटेदेनेकेबाद जितनालोहो उसमेंसे १६ फलेकर १७ फल  
त्रिफलाका जबकुट्टनूपाकर अष्टगुणितपानीमें ढाबकर । एकभाग  
अवशिष्ट रहनेपर छानकर इसद्रव्यमें लोहको घोटकर ८ फल धी  
मिलाकर लोहेके बतनमें लोहको बड़छोसे चलावाहुआ मन्दागि  
पर पाककरे । जब पानीका अंश सूखकर धी ऊपर तेलेलग  
और कल्ककी मोटी बंधनेलगे तब उतारकर रखछोड़े । ठंडा  
होनेपर अच्छीतरह घोटकर धीके चिकनेबतनमें रख मुंहबन्दकर  
यवराशि अथवा धान्यदाशिमें एकसप्ताह रखकर निकाल ।  
रोगीको पत्रकमेंसे शुद्धकर अमि, देव, ब्राह्मण और वैद्यप्रशिक्षा  
पूजनकर शुभमुहूर्तमें स्वस्तिवाचनवगैरह ब्रह्मकार्यकर इष्टमन्त्रों  
अभिमतकर एकरत्नीकीमात्रा भोरिकमणु और धीवेष्टाय  
मिलाकर सेवे और ऊपरसे गोमुखपीवे । प्रतिदिन १-१ रभी-

माना बडाकर १२ रत्नीक करे । गायकेदूध और धीका भोज-  
नमें व्यवहारकरे । गायकेअमावसे बर्रीका उपयोगकरे । श्लिष्य  
और कृष्य आहारकरे । नियमपूर्वक इसका सेवनकरनेसे तन्हाय  
मन्दागि, भस्मक, वात, पित्त, कुष्ठ, विषमज्वर, शुल्म, नेत्र  
रोग, पाण्डु, कृन्दा, आलस्य, अर्धचि, शूल, परिणामशूल,  
प्रमेह, अपवाहुक, शोथ, रक्तलाव, विशेषतः बवासीर, बन्-  
कान्ति और स्वरश्लय, भारीपन, मनोग्लानि, हृत्ता, अल्पासु,  
बलीपलित इनसबको यह नष्टकरताहै । सुस्मारमनुष्यकेलिये  
भोजनकेसाथ पुष्टानेमय देवे । मासादारीको लवा, तित्तिर, गोह,  
मोर, खगोश, चडर, कलविह, बंटेर, हारिल, बाज, सिकरा,  
विष्टिक, कबुतर, सुग, इन जहरीजानवरोंकामास, मट्टर, रोहू  
और शकुल मछलिया, बेंगन, परवल, दोनों भटकट्टैया, चिचोडा,  
शतावर, बेतका अमभाग, सेवारकीतरह फैलनेवाल धाक,  
चौलाई, बघुआ, मरसा, कर्णालुक । सततहरे पुनर्नवा, मारि-  
यल, खजूर, अनार, हरफारेवड़ी, सिंघाड़े, पकाभाम, झाड़,  
ताड़गोला, जावित्री, लीय, सुगारी, पान इसका सेवनकरे ।  
बड़हर, तमामजातिके बेर, जमीरी, बिजोरा, कर्तोंदा, इमली,  
आम्रमाम, ककर, पुण्डूक, ईश, सारस, दात्यूह । पनहुन्नी,  
कीआ, बलाहक, उहद, कन्द, करीर, चना, तरबूज, कौहला,  
खेसरा, केतुक (धीतेला शुभ) करेला, कपेक, ककड़ी, सम्पूर्ण  
दाह, ककारादि समस्तपदार्थ इनसबका त्यागकरे । यह लोह-  
राज उत्तमप्रयोगहै खासकर बवासीरकी उत्तम औषधिहै ।  
अथवा, कृत्तम, हूर, मिथ्यामापी, दवा और शुभनिन्दक इनपर  
इसकाप्रयोग न करे और बलावे भी नहीं । इनकेसेवनकरनेमें  
समयपर मत्स्यकी प्रशुति, फेटका इलकान, सुखी शुद्धता,  
विशुद्धद्वारा, शरीर और मनकीप्रमत्तता रहनेपर समझनाचाहिये  
कि लोहका परिपाक ठीक होताहै । लोहका अजीर्णहोनेपर  
विद्वत्काचूने अत्यल्पके रसकेमाथ लेनेसे बहुततीव्र लाभहोताहै ।  
इसकेबतनमें अतिपाराहोनेपर केवलदुग्धका प्रयोगकरके निवृत्तकरा ।

### ६ शङ्करलोहम् ( द्वितीयम् )

पातितं स्वेदितं शुद्धं मुमुक्षुं पार्षदं भवेत् ।  
सारवीजं चतुर्थीसं पूर्वज्जारयेत्कामात् ॥ ५२ ॥  
गन्धकं पौडशगुणं पूर्वज्जारयेत्प्रियङ्गुम् ।  
ततः सूतं कृष्णपूतरेसः सम्यक् प्रमदयेत् ॥ ५३ ॥  
दिनानि सप्त पञ्चादि घेणीनानिः प्रमदयेत् ।  
दिनसप्तकमग्नांमिस्तिलपर्णीमवेस्ततः ॥ ५४ ॥  
यन्त्रे सोमानले दत्ता कल्कं सर्वं प्रयत्नतः ।  
चुल्ल्यामारोप्य तद्यन्त्रं हृष्टाग्निं ज्वालेदधः ॥ ५५ ॥  
त्रिदिनं तु ततः मृतं पृथ्व्यन्तस्प्रमदयेत् ।  
एकैकं तु दिनं पञ्चाद्यन्त्रे शिस्त्या च पृथग् ॥ ५६ ॥  
शालनं त्रिदिनं पञ्चान्मर्दनं पृथग्यरेत् ।  
एवं कृत्वा रमेन्द्रस्य मर्दनं पाचनं ततः ॥ ५७ ॥  
यावद्रमेन्द्रो जायेत निरुधो भस्मरूपमाज्ञः ।  
सप्तवात्प्रयोगेण निदित्यो जायेत भुषम् ॥ ५८ ॥



प्रकारेकप्रमेह, बहुतदिनका जीर्णज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै ।  
ज्वरको छोड़कर सबरोगोंमें मरिच और धीकेसायदेवे । पुराने-  
सफेदचावल, दही और दुग्धप्रशुति मधुरभोजनकरे । कढ़ा, अम्ल,  
क्षार और तैलयुक्तदार्थोंको आंखोंसे भी न देखे ॥ ११ ॥

### १२ शङ्खचूडरसः

रसाऽग्रहेमभस्मानि यैकान्तं सर्वतुल्यकम् ।  
सैवैः पञ्चगुणं शङ्खचूर्णं शुष्कं चिमदयेत् ॥ १०० ॥  
लेहयेन्मधुना मापचतुष्कं सातुपानकम् ।  
हिक्कां पञ्चविधां हन्ति मुस्रपौरिष तत्क्षणात् ॥  
प्राणायामेनाऽपि हिक्कां जयेदानु विचक्षणः ॥ १०१ ॥  
रसायनसं., र. चं., नि. र., र. सु., यो. र., वै. चि., चि. सा.,  
हिक्कारोगे । रसायनसङ्ग्रहस्य द्वितीयस्थाने शङ्खचूडरसेतिनाम  
श्रावकासाधिकां । चिकित्सासारहिक्काभ्यासारीतिनाम ।  
भाषा—गारा, अप्रक और शुष्कभस्म १-१ भाग, वैका-  
न्तभस्म ३ मा., शङ्खभस्म ३० भाग लेकर इन्हें मर्दनकर रप-  
छोड़े । इसमेंसे ४-४ माघो मधुकेसायदेवेसे सुसुर्षुवीभी ५  
प्रकारकी हिचकियोंको यह नष्टकरताहै । जहापर औषध काम  
न करताहो जहापर प्राणायामसे हिचकीका उपचारकरे ॥ १२ ॥

### १३ शङ्खचूर्णम्

गन्धकश्चैकभागान्तु द्विभागं सैन्धवं भवेत् ।  
त्रिभागं द्रवणं चोक्तं चतुर्भागान्तु तुल्यकम् ॥ १०२ ॥  
पञ्चभागं कपर्देऽप्यङ्गुलं शङ्खमाहरेत् ।  
शिखिलिखरसेनैव शङ्खवेररसेन च ॥ १०३ ॥  
यह्निमूलरसेनैव प्रयेकान्तु पुटत्रयम् ।  
तद्भस्म मारिचं चूर्णं घृतेन सह भक्षयेत् ॥ १०४ ॥  
अशीसि शुल्मशूलानि मूयच्छुद्धं सुदारुणम् ।  
पङ्क्तिर्ध्यातिसारश्च ग्रहणीश्च चिरन्तनाम् ॥ १०५ ॥  
वातर्जं पित्तर्जं चैव श्लेष्मजश्च विशेषतः ।  
अजीर्णकं पाण्डुरोगं शोफोदरमग्नद्वन्द्वम् ॥ १०६ ॥  
पुष्टिक्राग्निकरं यल्यमायुष्यश्च विशेषतः ।  
शङ्खचूर्णमिति ख्यातं शाण्डिल्येन च भाषितम् ॥ १०७ ॥  
र. क. यो., अमिमान्ये ।

भाषा—शुद्धान्धक १ भाग, सैन्धव २ मा., सुनासुहागा  
३ मा., तुल्यभस्म ४ मा., कौडीभस्म ५ मा., शङ्खभस्म  
६ भागलेकर वारीकचूर्णकर अपामार्ग, वेल, अदरक, चित्रमूल  
इनके यथासम्भन स्वरस अथवा काथोंसे १-१ दिन मर्दनकर  
टिबिया बनाय सुखाकर धरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी  
३-३ आंच देनेके बाद निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३ रतीसे  
१ माघोत्तक मरिच और धीकेसायदेवेसे बसासीर, शुल्म, शूल,  
दाण्डमूयच्छुद्ध, ६ प्रकारकाजितिसार, पुरानीसङ्ग्रहणी, वात पित्त  
और कफज्विकार, अजीर्ण, पाण्डुरोग, शोथ, उदररोग, मयन्दर,  
हृशता, कान्त्यभाव इनसबको यह नष्टकर बल और आयुको  
पेटाहै ॥ १३ ॥

### १४ शङ्खद्रावरसः ( प्रथमः )

अर्कस्तुहीतिलाश्वत्थचिञ्चामार्गयह्निजम् ।  
शृहीत्वा भस्म तस्मान्तु यक्षपृतं जलं हरेत् ॥ १०८ ॥  
मृद्वग्निना पचेत्तत्तु यावत्पुष्पणतां व्रजेत् ।  
तत्तुल्यावेव सद्वाही द्वौ क्षारौ द्रव्णं तथा ॥ १०९ ॥  
सामुद्राऽपि गोदन्ता कासीसश्चापि सारकम् ।  
द्विगुणं यञ्जलवर्णं शङ्खद्रावरसे तु तत् ॥ ११० ॥  
काचकूप्यां विनिक्षिप्य सप्ताहं चाम्लयोगतः ।  
साधितं सकलं चूर्णं वारुणीयब्रमुद्धरेत् ॥ १११ ॥  
द्रुतं तेजोजलप्रस्थं स्वच्छं न्ववति तत्तदा ।  
सर्वान्धातुन्द्रावयति घराटानपि शङ्खकान् ॥ ११२ ॥  
अजीर्णस्याऽथ मन्दाग्नेः का घातां द्रावणे पुनः ।  
शुल्मग्रीहोदरं शुल्ममृष्टाऽपि विनाशयेत् ॥  
घेचजीवनहेतुश्च शङ्खद्रावरसो ह्ययम् ॥ ११३ ॥

उ. यो. त., मै. र., ध., वै. वि., र. का., यो. त. उदररोगे ।

टि०—युवचिरवस्थस्थाने आरन्ध्रो हृदयते, द्वयोरपि मोगे  
क्षयभावोऽस्ति ।

भाषा—आक, यूहर, तिल, पीपल, इमली, अपामार्ग और  
चित्रक इनसबकी अल्प २ सफेदभस्म बनाकर समभागलेकर  
१६ गुने पानीमें स्वच्छवर्तनमें भिगोकर रखदे । चारपहरबाद  
इसको अच्छीतरहसे छण्डे अथवा हाथसे चलाकर रखदे । दूसरे  
४ पहर गुजरेपर पानीको ३-४ बार छानकर साफकरले ।  
बनसके तो ब्लाटिङ्गपेपरसे छानले अथवा कपेसुतकी डोरी  
डालकर दूसरे पानमें नितारले फिर स्वच्छपानमें डालकर  
इसका क्षारबनावे । इसक्षारकी बराबर सजी, यवक्षार, सुहागा,  
समुद्रफेन, गोदन्तीहरिताल, कसीस और शोराखार तथा पाँचों-  
नमक दोभाग लेकर सयका बारीकचूर्णकर काचके मजबूतपानमें  
भरकर चौगुना शङ्खद्रावनीबूकास डालकर धूपमें रखदे  
और प्रतिदिन चलादियाकरे । ७ दिनकेबाद बहुतसेमालकर  
अबकेसे इसका तेजाव निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे  
७ बूँदसे ३० बूँदतक समय अथवा रोगीकी औचित्ति देखकर  
काचडीनलीवगेरहसे इसतरह गलेमें डाले कि जीभ और दातोंमें  
न लगे । कितनेभी शङ्खद्रावहै सभी तीक्ष्णहोतेहैं इसलिये इनमें  
चौगुना पानी मिलाकर देना उचितहै इससे किगीतरहका मय  
नहीं रहताहै । कितनेहीलोग दूसरेप्रयोगमें जीभ तथा मुँहमें धी  
लगाकर प्रयोगकियाकरतेहैं पर उसकेकरनेकी कोई सुलतनहीं ।  
इसयुक्तिके गलेमें डालदियाजाय कि दात जिदाम्रशक्तिमें स्पर्श  
न हो । इसकेदेनेसे शुल्म, ग्रीह, उदररोग, ८ प्रकारकेशूल,  
अजीर्ण, मन्दाग्नि, येसुन नष्टहोतेहैं । इसमें तमाभाघात, कौडी  
और सङ्ग डालेदेनेसे द्रुतजोआतेहैं अजीर्णवगेरहरी तो कयाही-  
क्याहै । यह वैद्योंकी आजीविवाकाहेतुहैं पर इसका प्रयोग  
अनुभवीविकके पाससे करानाचाहिये नहीं तो इसमें शनरा-  
उपद्रवहोना सम्भवहै ॥ १४ ॥

## १५ शङ्खद्रावरसः ( द्वितीयः )

फटकीं पलमेकञ्च पलमेकञ्च सैन्धवम् ।  
द्विपलं यवजक्षारं द्विपलं नवसादरम् ॥ ११४ ॥  
चतुःपलं सुराक्षारं कासीसञ्च पलाऽर्द्धकम् ।  
डमरूयन्त्रयोगेन चुल्यां वै यदरीन्धनैः ॥ ११५ ॥  
साधयेल्लाघवानूर्णं शङ्खद्रावरसः परः ।  
गुल्मादिसर्वरोगेषु देयः सर्वसुखप्रदः ॥ ११६ ॥  
वै.वि. वै.चि. गुल्मादौ । वै चि. एकद्विस्तुप्रमाणमेदोऽस्ति  
तोऽकिञ्चित्करः ।

भाषा—फटकी और सैधानयक १-१ पल, यवक्षार  
और नवसादर २-२ पल, डमरूमीशोरा ४ पल, कसीस २ कर्प  
लेकर सबको कपड़ेपुमें मुखाकर जवड़तुर्णकर भवकेसे तेजाव  
निकाले । इसको प्रथम शङ्खद्रावकीतरह देनेसे यहव, ग्रीष्म,  
वातगुल्म वगैरह समस्त रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ १५ ॥

## १६ शङ्खद्रावरसः ( तृतीयः )

स्फटिका नवसारश्च शुभ्रेता च सुषर्षिका ।  
पृथग्दशपलोन्मानं गन्धकः पितुसस्मितः ॥ ११७ ॥  
वर्णयित्वा क्षिपेद्गण्डे मृन्मये मूर्ध्नि लेपिते ।  
तन्मुखं मुद्रयेत्सम्पङ्क मृन्गण्डेनाऽपरेण च ॥ ११८ ॥  
सरन्मोदरकेणैव चुल्यां तिर्यक् च धारयेत् ।  
अथः प्रज्वालेयद्बहिर्हृदाघायद्रसः कथेत् ॥ ११९ ॥  
शाणैर्कं सेषयेद्यस्तु दन्तस्पर्शविचर्जितः ।  
गुल्मोदरपक्ष्महीहप्रस्थियक्ष्मादिशूलसुत ॥ १२० ॥  
यलपुष्टिप्रदो ह्येष भुक्ताञ्च आरयेत्क्षणात् ।  
यिलोप्यतां जनैरेतद्रसमाहारम्यमद्भुतम् ॥  
कपर्दकम्बुलोहानि क्षितान्यस्मिन् गलग्नि हि ॥ १२१ ॥  
र.प्र. उरारीगे ।

भाषा—फटकी, नवसादर, खपेदसजी १०-१० पल,  
शुभ्रगन्धक १ कर्प लेकर इनका जवड़तुर्णकर भवके अपना  
डमरूयन्त्रसे तेजाव निकाले । इसमें आच कहीं होगीवाहिये  
और पतीजेहुए क्षार न चाहिये । चौगुनापानी मिलाकर इसकी  
४ मासेकीमात्रा दातोंको बचाकर पीनेसे गुल्म, उदर, यहव,  
ग्रीह, गांठ, राजयक्ष्म, शूल इनसबको यह नष्टकरताहै । खाये  
हुएको तत्क्षण जीर्णकरदेताहै । इसमें कौड़ी और शङ्ख पंगवह  
डालनेसे गलतातेहै ॥ १६ ॥

## १७ शङ्खद्रावरसः ( चतुर्थः )

सामुद्रं यवजः सूर्यः पर्पटी नवसादरः ।  
फटकी सिन्धुसौचर्चां प्रत्येकं पलपञ्चकम् ॥ १२२ ॥  
कासीसं द्विपलं प्राधां सर्वमेकत्र योजयेत् ।  
धारणीयत्रयोगेन चुल्यां वै खाद्विरेन्धनैः ॥ १२३ ॥  
साधयेल्लाघवानूर्णं शङ्खद्रावरसं परम् ।  
गुल्मादिसर्वरोगेषु देयः सर्वसुखप्रदः ॥ १२४ ॥  
वै नि, शुभ्रे ।

भाषा—समुद्रपैत, यवक्षार, शोरा, रेह, नोसादर, फट-  
की, सैन्धव, शङ्खल ५-५ पल, कसीस २ पल लेकर प्रथम  
शङ्खद्रावकीतरह भवके अपना डमरूयन्त्रसे तेजाव निकालकर  
रखछोदे । इसमेंसे चौगुनापानीमिलाय दन्तस्पर्शको बचाकर  
लेनेसे गुल्मादि समस्त रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ १७ ॥

## १८ शङ्खद्रावरसः ( पञ्चमः )

प्रत्येकं पञ्चलवणं वाणं तुल्यञ्च कर्पूरम् ।  
स्फटिका कुडयार्दञ्च तदर्द्धं नवसादरम् ॥ १२५ ॥  
कासीसं द्रव्यं स्वर्जी यवक्षारं तदर्द्धकम् ।  
कुडवान्पञ्च भूसारत्सर्वमेकत्र योजयेत् ॥ १२६ ॥  
घृष्टा तु मर्दितं सम्यक्काचकृपां यिनिःक्षिपेत् ।  
तन्मुखे कृपिकां दद्यात्स्थापयेन्मालिकोपरि ॥ १२७ ॥  
यामार्द्धं ज्वालेयद्गन्नि रसेन्द्रो भयति ध्रुवम् ।  
शङ्खद्रायमिदं स्यात्तं शङ्खद्रावमथो रसम् ॥ १२८ ॥  
सेवितं कुरुते देहे तुष्टिं पुष्टिं यलं महत् ।  
सर्वांश्छल्यिकारांश्च निहन्त्यापञ्चगुल्मकम् ॥ १२९ ॥  
प्रमेहान्धिरांश्च हन्याज्जठराग्निप्रदीपनम् ।  
सर्वरोगप्रणाशार्थमग्निनोदेयनिर्मितम् ॥ १३० ॥  
वा., चलेगुले च ।

भाषा—पाषाणयक ५-५ पल, तुल्य, खपरिया और फट-  
की २-२ पल, नवसादर १ पल, कसीस, घृष्टा, स्वर्जी  
और यवक्षार २-२ कर्प, शोरा २० पल लेकर सबको कड़ी-  
पुमें मुखाकर बारीकवर्णकर ६-७ कपड़मिहीदीहुई आतशी-  
शीशीमें डालकर दूसरीशीशीकेसाथ डमरूयवचनाय बूहेपर  
तिरछीरकर आचदे । नीचेकी शीशीको पानीमें डुबाए रखने ।  
आधेपहरतक अभिवेनेसे तमाम तेजाव तिरछीशीशीमें बला-  
आवेगा । शीशीके अभावमें घड़ेका डमरूवनाकर कामलेवे ।  
इसको प्रथम शङ्खद्रावकीतरह सेवन करनेसे तमामशूल, गुल्म,  
प्रमेह और अजीर्ण नष्टहोकर अग्नि प्रदीप्तहोताहै । यह बारीकको  
पुष्टकर बलको बढ़ाताहै ॥ १८ ॥

## १९ शङ्खद्रावरसः ( षष्ठः )

क्षारणां विंशतिः प्रोक्ता लवणानाञ्च पञ्चकम् ।  
पर्पटी नवसारश्च क्षारत्रितयद्रव्यम् ॥ १३१ ॥  
तुल्यत्रयं शिष्टां तालं गन्धकं स्वर्जिकाख्यकम् ।  
पाषाणजतु कासीसं मय्ययं तथा क्षिपेत् ॥ १३२ ॥  
यक्षारं गृहधूमाख्यं पात्रे संस्थाप्य तन्समम् ।  
अम्लवर्गेस्तथा मामं भावयेद्य मुहुर्मुहुः ॥ १३३ ॥  
तेजोयन्त्रविधानेन पाककर्मविचक्षणः ।  
पातयेन्मय्ययञ्च तोयामं शङ्खगालकम् ॥ १३४ ॥  
मसं पादसंयुक्तं घातरोगेषु योजयेत् ।  
गुल्मानां पञ्चकं हस्ति सुदराणां तपाष्टकम् ॥ १३५ ॥  
शीतज्वरं पुराणञ्च शीघ्रं सयात्रामाष्टकम् ।

प्रमेहान्विशतिं हन्ति मूत्राघातानशेषतः ॥  
हितश्च गजवाजीनां पशूनां मृगपक्षिणाम् ॥ १३६ ॥  
वा, सर्वरोगे ।

भाषा—तीक्ष्णप्रकृति चित्रकप्रकृति २० वृक्षोक्तेक्षार, पांचो-  
नमक, रेह, नवसादर, जव—मूली और चनेकाक्षार, सुहागा,  
तृतिया, दानेफिरक, जंगल, मैनसिल, हरिताल, मन्धक, सजी,  
शिलाजीत, कसीस, आठमूत्रोकाक्षार, शोरा, गृहपुम येसव  
समभाग लेकर बारीकचूर्णकर काचकेपात्रमें डालकर बराबरका  
अम्लद्रव डालकर धूपमें रक्खे । प्रतिदिन चलातारहे, द्रवसुखनेपर  
दूसरा डालताजाय । एकमहीनेबाद भवके अथवा डमरुयन्त्रसे  
इसका तेजाब निकाले, वह मूत्रवर्णका होगा । इसमेंसे प्रथम  
शङ्खद्रावकीतरह पारदमस्मकेसाधलेनेसे समस्तवातरोग, पांचो-  
गुल्म, आठों उदररोग, शीतज्वर, पुरानाशोथ, सर्वाङ्गवातन्याधि  
२० प्रकारकेप्रमेह, समस्तमूत्रापात इनसबको यह नष्टकरता है ।  
उचितमात्रामें देनेसे, हाथी, घोड़ा, पशु, मृग और पक्षियोंके  
तमामरोगोंको यह नष्टकरता है ॥ १९ ॥

## २० शङ्खद्रावरसः ( सप्तमः )

क्षारा द्वादश सम्प्रोका लयणानाञ्च पञ्चकम् ।  
कासीसं दङ्गुणं तुल्यं गन्धकं स्वर्जिकास्थकम् ॥ १३७ ॥  
पतानि समभागानि प्रत्येकञ्च पृथक् पृथक् ।  
स्फटिकानवसारो ह्यौ तत्तमं योजयेद्बुधः ॥ १३८ ॥  
पफीष्टृत्य तु तत्तत्तं पात्रे संस्थाप्य यत्नतः ।  
अम्लवर्णं मूत्रवर्णं सर्वमेकत्र लोडयेत् ॥ १३९ ॥  
सप्ताहं भाषयेदेतत्तेजोपन्ने विनिःक्षिपेत् ।  
दीप्ताग्निना पचेद्यामं पाकसिद्धिविचक्षणः ॥ १४० ॥  
शङ्खद्रावो द्रवत्येवं सर्वरोगेषु योजयेत् ।  
हन्त्यष्टादश कुष्ठानि लेपमात्रेण सत्वरम् ॥ १४१ ॥  
सर्पान्दुष्टप्रणान्धोरान्स्पृशंमामाङ्गिनिर्हरेत् ।  
अष्टोदराणि शुल्मानि शूलानि विविधानि च ॥ १४२ ॥  
मातृप्रमाणं सेवेत सप्ताहञ्च निवारयेत् ।  
अनुपानविशेषेण सर्वरोगानियर्हणम् ।  
महादेवीप्रसादेन भैरवेण विनिर्मितः ॥ १४३ ॥

वा, सर्वरोगे ।

भाषा—तीक्ष्णप्रकृति १२ वृक्षोक्तेक्षार, पांचोनमक,  
कसीस, सुहागा, तुल्य, गन्धक, सजी येसव समभाग, फटकड़ी  
और नोलादर सबकी बराबर लेकर बारीकचूर्णकर काचके-  
पात्रमें दार विजोरावरीरह अम्लवर्ण और मूत्रवर्ण जितना  
मिलवके उतना ढाले । धूपमें रखकर प्रतिदिन चलातारहे, द्रव  
सुखनेपर दूसरा डालताजाय । सातदिनबाद डमरुयन्त्र अथवा  
भक्केसे एकपट्टकी बड़ी आंचदेकर तेजाब निकाले । इसमेंसे  
प्रथमशङ्खद्रावकीतरह लेनेसे आठप्रकारकेगुल्म और नाना  
प्रकारकेशूल ७ दिनमें नष्टहोतेहैं । १८ प्रकारकेगुणोंको लेप-  
करनेसे नष्टकरता है ॥ २० ॥

## २१ शङ्खद्रावरसः ( अष्टमः )

पारदं वरदं तालं कासीसं रोमकं विषम् ।  
तुल्यद्वयं शिलां तालं स्फटिकां नवसादरम् ॥ १४४ ॥  
क्षारद्वादशकं ख्यातं सौभाग्यं पटुपञ्चकम् ।  
सूक्ष्मचूर्णं ततः कृत्वा मृगमये पात्रके क्षिपेत् ॥ १४५ ॥  
जम्बीरफलसारेण भाषयेत्सत्पारकम् ।  
तेजोयन्त्रविधानेन पातयेत्पाकवित्तमः ॥ १४६ ॥  
पीतवर्णं द्रावकं तच्छङ्खद्रावतत्परम् ।  
क्षिप्रं भवति पानीयं विचित्रगुणकारकम् ॥ १४७ ॥  
द्विकालं मापमानञ्च सेवयेद्द्विमात्रम् ।  
लाजाचूर्णं निष्कयुग्ममनुपाने प्रदापयेत् ॥ १४८ ॥  
अष्टाबुदरात्रोगान्गुल्मानां पञ्चकज्येत् ।  
अशांसि पदप्रकाराणि ग्रन्थिशूलादिमास्तान् ॥ १४९ ॥  
आध्मानश्चाग्निमान्श्च सर्वे सन्धिघ्नं हरेत् ।  
अश्मरीं मूत्ररुच्छञ्च मेहान्विशतिसहस्रकान् ॥ १५० ॥  
श्वासकासगलग्रन्थीन्धिसर्पं गजचर्मकान् ।  
कुमिरोगांश्चर्मरोगाश्चक्षेकेशसमुद्भवान् ॥ १५१ ॥  
अन्नद्वेषमजीर्णञ्च हिंसासर्पाङ्गशोफजान् ।  
तिमिरं दृष्टकण्डूञ्च नाशयेत्ताड्य संशयः ॥ १५२ ॥  
वा, सर्वरोगे ।

भाषा—पारा, क्षिपरिक, हरिताल, कसीस, रन्धारदेशक-  
कालानमक, बडनाग, तृतिया, जहाल, मैनसिल, हरिताल,  
फटकड़ी, नोसादर, १२ क्षार, सुहागा, पांचोनमक सबसब  
भागलेकर बारीकचूर्णकर काचकेपात्रमें डालकर जम्बीरीकेसही  
७ भावनाएँ देकर भवके अथवा डमरुयन्त्रसे तेजाब निकाले ।  
यह पीलेरङ्गा दार निकलेगा । इसमें दह, शीप अथवा कौड़ी  
डालतेही गलजायगी । इसमेंसे प्रथमशङ्खद्रावकीतरह सुबहशाम  
दोनोंसमय लेकनकरके आपसलेज आपसलेजके । इससे ८ प्रकार-  
के उदररोग, ५ प्रकारकेगुल्म, ६ प्रकारकेवासीर, ग्रन्थि,  
शूल, वातवेदना, आध्मान, मन्दाग्नि, सप्तप्रकारकी सन्धिघ्नोके  
मृग, पशु, मूत्ररुच्छ, २० प्रकारकेप्रमेह, श्वास, कास, गले  
कीमास, विषय, चर्मदल, किमिरोग, नख और केशोंकेरोग,  
अन्नद्वेष, अजीर्ण, हिचकी, सर्पाङ्गशोथ, तिमिर, दाद, म्वात्र  
इनसबको यह नष्टकरता है ॥ २१ ॥

## २२ शङ्खद्रावरसः ( महान् ) ( नवमः )

सुल्हकीचिञ्चाऽवत्याश्च क्षापामार्गेण पथ्यमः ।  
पृथग्मस्मजलं नीत्वा हृद्भूय लवणानि च ॥ १५३ ॥  
दङ्गुणञ्च यवक्षारं स्वर्जिं लयणपञ्चकम् ।  
रामटं तालकञ्चैव सीवीरं नवसादरम् ॥ १५४ ॥  
सोमलक्षारगोदन्त्यौ ताप्यं गन्धरसी तथा ।  
विषं समुद्रफेनञ्च शोरकं स्फटिका तथा ॥ १५५ ॥  
शङ्खचूर्णं मध्यनाभि चूर्णं पापानकोद्भवम् ।  
मनाशिला च कासीसं समभागञ्च कारयेत् ॥ १५६ ॥



इमस्त्वयन्त्र अथवा भवकेसे तेजाय निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे प्रथमशङ्खद्रावकीतरह सेवनकरनेसे बवासीर, सूत्रकृच्छ्र, पथरी, रैती, ८ उदररोग, गुल्म, ग्रीहा, अजीर्ण, ग्रहणी, विसृचिका इनसबको यह नष्टकरताहै । उच्छिष्टरहेहुएको न पीये । पानी-बिना लेनाहीतो पानवर्गएहमें एकवृंद कालर सेवनकरनाचाहिये । भोजनकरनेकेबाद लेनेसे तत्कालमें सुखलगतीहै । नियमपूर्वक इससेसेवनकरनेवालेको किसीभीभोग्याधिसे मयनहीरहता ॥२३॥

### २४ शङ्खद्रावरसः ( एकादशः )

अर्कस्तुक्सातलाचिञ्चापलाशकदलोलिलाः ।  
अपामार्गो मोक्षकश्च कपदेः शङ्ख एष च ॥ १७७ ॥  
पतेपां भूतिजक्षारः पादः पटुपञ्चकम् ।  
पञ्च क्षाराः समे सर्वेभिर्भागो गन्धकः स्मृतः ॥१७८॥  
भूरसा चैव सोरा च कासीसं नवसादरम् ।  
पतञ्जलपुट्यं सर्वैरौषधैस्तुल्यभागिकम् ॥ १७९ ॥  
सर्वेषां कज्जलीं कृत्या निम्बुनोरेण मर्दयेत् ।  
प्रदधानलिकायन्त्रे वर्हि यामचतुष्टयम् ॥ १८० ॥  
दत्त्वा द्रवं तु गृहीयात्सृचिकाद्राघकारकम् ।  
एकयत्नं द्वियत्नं वा दद्यान्नलिकया रसम् ॥ १८१ ॥  
गुल्माशः प्लीहमुष्णानां रोगाणामन्तर्गतं परम् ।  
शङ्खद्रावरसो ह्येष कृतकर्मा न संशयः ॥ १८२ ॥

रस. सं., र. सि., गुल्माऽधिकारे ।

भाषा—भाक, शहर, अहुलियाशहर, इमली, पलाश, केला, तिल, अपामार्ग, मोखा, कौडी, राह इनसबकीराखका-  
शारा, पारा, पांचौनमक, पांचौंक्षार सब १-१ भाग, गन्धक  
३ भाग, कटकड़ी, सोरा, कसीस और मोसादर बेचासे सब  
दवाओंके बराबर लेकर सबकीकजली बनाय नीचूकेरससे  
मर्दनकर नलिकायन्त्रसे ४ पहरकीअग्निदेकर तेजाय निराले ।  
इसमें सूई डालनेसे गलजातीहै । इसमेंसे ३ रतीसे ६ रतीतक  
पानीमें मिलाय बाचकीनलीसे भुंदमें डाले । ऐसे दोनोंसमय-  
लेनेसे गुल्म, बवासीर, ग्रीहा वगैरह उदररोग, अजीर्ण और  
वातव्याधिओंको यह नष्टकरताहै ॥ २४ ॥

### २५ शङ्खद्रावरसः ( द्वादशः )

योगिनीभैरवाम्बाश्च बलिमादौ प्रदापयेत् ।  
पश्चाद्यन्त्रञ्च कर्तव्यमेवाह परमेश्वरी ॥ १८३ ॥  
रसः शङ्खद्रव्यो नाम शम्भुदेवेन भाषितः ।  
गुह्याहृतमते गुह्यमिदानीं कथ्यते मया ॥ १८४ ॥  
शङ्खचूर्णं यवक्षारं स्वर्जिक्षारं सत्रङ्गणम् ।  
समञ्च पञ्चलघणं स्फटिका नरसारकः ॥ १८५ ॥  
काचकूप्यां ततः क्षित्वा चारणीयन्त्रमुद्धरेत् ।  
यामार्द्धं द्रावयत्येष शङ्खशुक्तिवराटकम् ॥ १८६ ॥  
अशांसि नाशयेत् पट्टं च सूत्रकृच्छ्रादमरीस्तथा ।  
उदराण्यष्टसहस्रानि गुल्मप्लीहोदराणि च ॥ १८७ ॥

अजीर्ण नाशयेच्छीघ्रं ग्रहणीञ्च विसृचिकाम् ।  
शुक्रशेषे च भोक्तव्यो मापमानो रसोत्तमः ॥ १८८ ॥  
क्षणमात्राद्भवेद्भस्म पुनर्भोजनमिच्छति ।  
प्रत्यहं भोजनान्ते च संसेव्योऽयं रसोत्तमः ॥ १८९ ॥  
न रुज्यायां भयं काऽपि सत्यं सत्यं यदाम्यहम् ।  
न देयं यस्यकस्याऽपि मदा गोप्यञ्च कारयेत् ॥  
रसः शङ्खद्रव्यो नाम वैद्यानामुपकारकः ॥ १९० ॥

भै. र., घ., र. त., उदराऽधिकारे ।

भाषा—योगिनी और भैरवोंकी बलिदेकर शङ्ख, यवक्षार,  
राजी, सुहागा, पांचौनमक, पट्टकड़ी, मोसादर, सब समभाग-  
लेकर बारीकचूर्णकर नलिकायन्त्रमें तेजाय निकाले । इसमेंसे १  
माथेसे २ माथेतक पानीमें मिलाकर देनेसे ६ प्रकारकी बवा-  
सीर, सूत्रकृच्छ्र, पथरी, ८ प्रकारके उदररोग, गुल्म, ग्रीहा,  
अजीर्ण, ग्रहणी, देवा इनसबको यह नष्टकरताहै । गलेतकधारकर  
इसकोलेनेसे पूर्वराखायाहुआ पाचनहोकर फिरसे भोजनही इच्छा  
होजातीहै । मन्दाभिवालोंको भोजनकरनेकेबाद इसकासेवन  
करना चाहिये ॥ २५ ॥

### २६ शङ्खद्रावरसः ( महाद्विः ) १३

शुद्धं काञ्चनमाक्षिकं मृदुतरं कांस्यामिधं तत्तथा,  
मिन्धूर्यं विमलं रसाञ्जनचर्येणः चषन्तीपतेः ।  
क्षारो स्वर्जिकसाम्मलो सुविमलो

मागास्त्यमीषां समाः,

मसानां सदृशन्तु द्रुणमिहाऽ-

स्पर्द्धां नृसारः सितः ॥ १९१ ॥

तत्तुल्या स्फटिकाकारिका मिसदृशः शुक्लो यवस्याग्रजः,  
कासीसत्रितयं यवाग्रजसमं सञ्चय्ये सर्वं न्यसेत् ।  
पात्रे काचमये मृदाम्बरचूले यन्त्रे वकाख्ये भिषक्,  
तापेन कमवर्द्धिता त्ववहितोऽमीषां रसं पातयेत् ॥  
यो द्राम्भस्म वराटिकां प्रकुरते सोऽयं महाद्रावकः,  
को वलुं प्रभवेदमुष्य नितरां सम्यग्गुणाभूतले ।  
पतञ्जलचतुष्टयं सह गिलेच्छुण्ठया लघ्वेन वा,  
तत्पश्चात्परिवासितं बहुगुणं ताम्बूलकं भक्षयेत् ॥ १९३ ॥

प्रासङ्ग्यात्कथयामि तांश्चण्ड्यु

गुणानस्यैव कांश्चित्परां,

निःशेषं विनिहन्त्यसौ

चिरम्बानष्टोदराणि ध्रुवम् ।

गुल्मं पाण्डुहलीमकं सुकठिना

मष्ट्रीलिकां कामलां,

मन्दाग्निं बिषमाग्नितां

बहुविधोच्छेयांश्च शूलानपि ॥ १९४ ॥

सर्वांशांसि भगन्दरान्कृमिगदान्पञ्चैव कासांस्तथा,  
ह्रिकाश्टीपदकोपचुडिमरचि ध्याधि महादारुणम् ।  
नव्यं वा चिरजं ज्वरं बहुविधं छर्दि किमीन्विशति ।  
पक्ष्माणं चिरजामवातपिडिका वीसर्पविकोटकां ॥

उन्मादं स्वरभेदमर्बुदमपि स्वेदश्च हृत्पाणिजं,  
जिह्वास्तम्भगलग्रहं चिरभयं श्रीयारुजामुल्लणाम् ।  
नासारुर्गणेशोऽक्षिवक्त्रजगदान्धुद्रामयाश्चापरान्,  
हन्यादेव चितोत्थितान्धुविधानन्याश्च रोगानपि १९६  
एकः स्यादपरो हि दृङ्गणमुखे द्रव्यैः परैः सप्तकैः,  
रन्यस्तु स्फटिकारिदृङ्गणयवक्षाराग्रकासीसकैः,  
जानीयाद्भुतो विभागमनयो यन्त्रादिकश्चाऽपरं,  
निर्दिष्टास्त्रय एव भेषजवराः स्वल्पो महान्मध्यमः ॥  
दृङ्गणादिकासीसान्तैः सप्तद्रव्यैर्मध्यमः,  
स्फटिकारिकासीसान्तैश्चतुर्द्रव्यैः स्वल्पः,  
स्वर्णमाक्षिकादिकासीसनिहतयान्ते महान् ॥ १९७ ॥  
भै र., उदररोगाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध स्वर्णमाक्षिक और कास्यमाक्षिक, काचनमक,  
रौप्यमाक्षिक, रसौत, समुद्रफेन, सजी और साभरनमक १-१  
भाग, सुहागा ८ भा, सफेद नोसादर तथा फिटकड़ी ४-४ भा,  
सफेद यवक्षार १६ भाग, शुद्धफूस, हरिताल और मैगसिल  
येतीनों मिलकर १६ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर कपफमिठी  
दियेहुए काचके बर्तनमें रखकर नली अथवा कमलपत्रसे बहुत-  
सावधानीकेसाथ क्रमामि जलाकर तेजाब निखाले । इसमें रह  
वैरह सब गलजातेहैं । इसकी १२ रत्ती सौंठ अथवा लवणकी-  
गोलीमें कलितकर निगलवादे फिर सुवासित पान खिलावे ।  
इसकेसेवनसे बहुतदिनकेपुराने आठों उदररोग, गुल्म, पाण्डु,  
हलीमक, कटिनमण्डाल, कामला, मन्दाभि, विषमामि, नाना  
तहकेघोष, शूल, सप्तप्रकारके कबासीर, अग्न्याद, कुमि, पाच-  
प्रकारके कास, हिचकी, पीलपच, अण्डबुद्धि, अरुचि, नया  
अथवा पुराना ज्वर, वमन, २० प्रकारके किमि, राजयक्ष्म,  
पुराना आमबात, पिडा, विषपे, विस्फोट, उन्माद, स्वरभेद,  
अर्बुद, हाथपैरोंकापीसीना, जिह्वास्तम्भ, गलग्रह, श्रीयारुकीपीडा,  
नाक, कान, शिर, आख, मुह इनके समस्तरोग और क्षुद्र  
रोगोंको यह नष्टकरताहै । दृङ्गणादि कासीसान्त ७ द्रव्योंसे  
मध्यम, स्फटिकादि कासीसान्त ४ द्रव्योंसे स्वल्प और स्वर्ण  
माक्षिकादि कासीसान्तद्रव्योंसे महान्, इसग्रह इसके विभाग  
करनेसे ३ प्रकारकेशङ्खद्रव्य तैयारहोतेहैं ॥ २६ ॥

### २७ शङ्खद्रावरसः ( चतुर्दशैः )

वृषधित्रमपामार्गं चिञ्चा कृष्णाण्डनादिका ।  
स्तुही तालस्य पुष्पञ्च चर्पाभूयैतसं तथा ॥ १९८ ॥  
एतेषां क्षारमाहृत्य लिम्पाकस्वरसेन च ।  
क्षालयित्वा क्षारतोयं यत्नपूर्वतश्च कारयेत् ॥ १९९ ॥  
चण्डातपेन संशोष्य ग्राह्यं तद्रव्यणोचितम् ।  
एतस्य द्विपलं ग्राह्यं यवक्षारपलद्वयम् ॥ २०० ॥  
स्फटिकारिपलञ्चैव नरसारं पलन्तथा ।  
पलायं सैन्धवं ग्राह्यं दृङ्गणं तोलकद्वयम् ॥ २०१ ॥  
कासीसं तोलकञ्चैव मुद्राशहञ्च तोलकम् ।  
दारमोचं कर्पकञ्च तोलं समुद्रफेनकम् ॥ २०२ ॥

सर्वमैकञ्च सञ्चर्य वक्यन्त्रेण साधयेत् ।

महाद्रावकमेतद्धि योज्यञ्च रसजारणे ॥

हन्ति गुल्मादिकान्नोगान्यकुट्टीहोदराणि च ॥ २०३ ॥

भै र., घ., उदररोगाधिकारे ।

भाषा—अर्द्धा, चित्रक, अपामार्ग, इमली, कोंहलेकीलता,  
शूल, ताड़केफूल, इंसिड, बेत इनसबकीराखको अमिलतासके  
अन्नस्वरसेम भिगोकर कपछानकर कड़ीधूपमें रखदे । इसके ऊपर  
जो क्षारकी पपड़िया बंधजायं उन्हें मलाईकोतरह उतारले ।  
६-७ दिनोंमें तमामक्षार पपड़ीहोकर निकल आताहै । यह क्षार  
और यवक्षार २-२ पञ्च, फटकड़ी और नोसादर १-१ पल,  
सैधामक २ कर्ष, सुहागा २ तोले, कमीस और मुद्रासह १-१  
तोला, दालचिन्ना १ कर्ष, समुद्रफेन १ तोला लेकर सबका  
बारीकचूर्णकर मलिका अथवा कमलपत्रसे तेजाब निखालकर  
रखजोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती पानवैरहमें रखकर देनेसे गुल्म,  
यक्ष्म और शीहादि समस्त उदररोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २०३ ॥

### २८ शङ्खनाभिरसः ( शङ्खगर्भपोट्टली ) १

नाभिं शङ्खभावां गवां शुभपयःपिष्टाञ्च मूर्पिकृतां,  
भागे. पोडशनिष्ककैश्च तुलितामावाय तस्यां मिषक  
निष्काऽर्द्धं भवबीजमस्मच्च तथा गन्धार्त्रयं निष्ककैः,  
क्षिप्या तां परिवेष्टयेच्छुभतर्पैर्वैस्तेस्ततो मृत्तिकाम् ॥  
लिप्त्वा चापरि पाचयेज्जपुटे गुञ्जामितं दापयेत्,  
पिप्पल्या मधुनाऽथवा घृतयुते मारीचचूर्णैः क्षये ।  
जैपालस्य तु चूर्णयुक्तमथवा फोलान्वितं गांघ्रुतैः,  
शले गुल्मगदे त्रिदोषशमनस्याच्छुष्येयद्रव्यैः ॥ २०५ ॥

चि. क., र. र., र. को., नि. र., यो. म., र. श., वै. चि. र.,  
श. र. का, राजयक्ष्मणि । यो म शङ्खगर्भेतिनाम, र. र. श.,  
रसायनसं, ना. वि एषु ग्रन्थेषु मृगाङ्गपोट्टलीतिनाम ॥

भाषा—चारण्य शङ्खनाभिसे गायकैश्यने पीसकर मूषा  
बनाव २ भास पारदभस्म और १२ भासे गन्धककी बजली  
को रखकर मूषाकोबन्दकर ६-७ कपडिमीदेकर धराव-  
लम्पुटमें बन्दकर गन्धुडकीआवदे । स्वाशहीतलहोनेपर निखाल  
कर रखजोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती पीपलमधु अथवा पी और  
मरिचकेसाथदेनेसे यक्ष्मरोग नष्टहोताहै । शुद्धमालगोदा अथवा  
गोषतयुक्तपत्रकोलकसाधनेसे शूल और गुल्म नष्टहोतेहैं । जद  
रखेसाथ त्रिदोष शान्तहोताहै ॥ २८ ॥

### २९ शङ्खनाभिरसः ( द्वितीयः )

भस्मीकृता गजपुटे पुटशङ्खनाभि—

चैजार्कदुग्धमृदिता स तु यत्रकल्कः ।

गन्धार्थसुतमृत्तदृङ्गपिधानगमां

शम्भुकिणामु पुदिता त्रिदिनं हि दाता ॥

आकर्ष्यशङ्खदलभागयुता च पिष्टा

सङ्गाहजिद्रुचिकरा मरिचाऽऽज्ययुक्ता २०६

रम स, र (या.) शङ्खगर्भः, गन्धवादी ।



भाषा—यूद्ध और आकस्मिक २-३ दिन शङ्खनाभिके-  
चूर्णको घोटकर गजपुटकी आचड़े । अथवा एकभाग पारा और  
दोभाग शुद्धगन्धकी कजलीको घोंघमें भरके उसीका ढक्कन  
देकर आक और यूद्धके ६धमें पीसेहुए सुहागसे सन्निवन्दकर  
शरावसमुद्रमें रस गजपुटकी आचड़े । तीसरेदिन निकालकर  
चतुर्धा शङ्खभस्म मिलाकर रखओड़े । इनदोनोंमेंसे किसीएक-  
भस्मकी एकमात्रकीमात्रा ७-१४ अथवा २१ मरिच और  
घोकेसाथ युक्तिपूर्वकदेनेसे सङ्ग्रहग्रहणी और अरुचि नष्टहोतीहै २९

### ३० शङ्खभास्कररसः

दग्धं शङ्खं घटाटञ्च तुल्याकं नयनीतयुक्तं ।

टङ्काई भक्षयेत्सर्वशूलार्तः शङ्खभास्करः ॥ २०७ ॥

र तं क., र. को., र. क. ल, टो, रसायनम्, र का.,  
शुलाघ्निरात्रे ।

भाषा—शङ्ख और कौडीभस्म १-१ भाग, ताम्रभस्म  
दोनोंकी बराबर मिलाकर रखओड़े । इसमेंसे एकमात्रसे दोमात्रे  
तक रोग अथवा रोगीका बलाबल देखकर मक्षसन्केसाथ प्रयोग-  
करनेमें निदोषगणशुद्ध नष्टहोताहै ॥ ३० ॥

### ३१ शङ्खमुखरसः ( शङ्खनाभिरसः )

शङ्खनाभेक्षतुर्भागाः कुवज्रस्य तथा द्वयम् ।

भागां गन्धस्य शुद्धस्य चैकभागोऽत्र सूतकः ॥ २०८ ॥

ग्रहण्यतीक्ष्णरसराजयश्मज्वराज्वरेच्छलमुखः स एषः ।

रोगोचितानिभिः प्रथितक्रियाभि-

लंकिभ्रवोक्तो विधिरत्र शेषः ॥ २०९ ॥

रस. स., र. (मा.) क्षयाघ्निकारे ।

भाषा—शङ्खनाभिमस ४ भाग, वक्रान्तभस्म २ भा.,  
शुद्धगन्ध और पारा १-१ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकजली-  
कर रखओड़े । इसमेंसे ३-३ रतीकीमात्रा समय अथवा रोगो-  
चितानुपानकेसाथदेनेसे ग्रहणी, अतिसार, राजयश्म, ज्वर इन-  
सबको यह नष्टकरताहै । लोचनायरसमें कहीहुई प्रक्रियाका  
अनुष्ठानकर उपद्रवोंको शमनकरना ॥ ३१ ॥

### ३२ शङ्खवटी ( प्रयमा )

पले चिञ्चाक्षरं पलमितमिदं पञ्चलवणं,  
द्वयं सम्यन्निषेधं तदनु लघुनिम्नफलरसेः ।

ततः पिष्टं तस्मिन्पलपरिमितं शङ्खशकले,

क्षिपेद्द्वारासप्त प्रमृदितमनैव विधिना ॥ २१० ॥

पलप्रमाणं कटुकत्रयञ्च

यथा च हिङ्गुश्च पलाईमानौ ।

विषं पलद्वादशभागयुक्तं

तावाग्रसो गन्धकृतोऽपि तावान् ॥ २११ ॥

यद्वास्थिप्रमाणेन चटीमेतस्य कारयेत् ।

भक्षयेत्सर्वदा धीमान्सर्वार्जोऽप्यशान्तये ॥ २१२ ॥

सर्वादरेषु शलेषु पिसृच्यां विविधेषु च ।

अग्निमात्रेषु गुल्मेषु सदा शङ्खवटी हिता ॥ २१३ ॥

मा. प्र, यो. म, र. क. ल, श्रु. यो. त, र. र. को, टो., र. क.,  
मा. वि., ध., ति. र., र. धि., चि. र. म, र. को, र. को, यो. चि,

रसायनसं, यो र, वै. मृ., र. का., मै. र., वै. चि., र सु, र क  
यो, र., र. (मा.), भ. सा., र. धि., र दी., र. स. स., चि. क,  
अग्निमान्द्ये ।

टि०—रत्नाकर्षणयोगे चिञ्चाक्षारादिरस इति नाम । र. म,  
यो चि प्लव्याईह्युग्रांशु शङ्खपादमाने गृहीते इति वि० ३ । वृहयोग  
तरङ्गिण्या हिङ्गुवचनयो स्थाने पलाईमानेन लवङ्ग गृहीत तनु स सम्यग्  
हिङ्गुवचनयोश्चमार्कप्रमृत् लवङ्गे सर्वांशुऽरत्वात् । विषमपाने विव  
दयते तत्रपि रेपकादिप्रमादविरतिन प्रतिमानि । विष पलद्वादशभाग  
युक्तमित्यत्र द्वादशाना पूर्णां द्वादश इति पूर्णप्रत्ययान स चानौ भाग  
शेति कर्मधारयात्सत्य द्वादशी भाग इति सामानौ बोध्यस्तान् निषकलि  
रसानां प्रत्येक पद वर्णमात्रक भवन्तीति ।

भाषा—ईमलीकाक्षर और पाचौनमक १-१ पल लेकर  
कागज़ीनी ड्रैकरसमें घोलदे और एकपल शङ्खको गरमकरके ७ बार  
शुखावे । इसकेबाद त्रिकटु १ पल, सच और सुनीहीण २-२  
कप, शुद्ध बलनाग, पारा और गन्धक ०२-१२ पल लेकर  
नीलवर्णकजलीकर पूर्वधारमें मिलाकर ४-५ दिनतक घोटकर  
बेरनीगुटलीकेबराबर गोलिया बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१  
गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे घन प्रकारके  
अजीर्ण, उदररोग, शूल, हैजा, मन्दाग्नि, गुल्म इन सबको  
यह नष्टकरतीहै ॥ ३२ ॥

### ३३ शङ्खवटी ( वृहती ) ( द्वितीया )

दग्धशङ्खस्य चूर्णं स्यात्तथा लवणपञ्चकम् ।

तिन्तिडीक्षारफञ्चैव कटुकत्रयमेव च ॥ २१४ ॥

तथैव हिङ्गुं कं प्राह्यं विषं पारदगन्धकौ ।

अपामार्गस्य बह्वेधं क्वाथे निम्नकजैर्द्वयैः ॥ २१५ ॥

भाययेत्सर्वेषूपैर् तद्वस्त्वर्गैर्विशेषतः ।

यायत्तद्वस्तुतां याति गुटिकाऽमृतस्वरूपिणी ॥ २१६ ॥

सद्यो बह्विकरी चैव भस्मकं नाशयेत्पलु ।

भुक्त्वाऽऽकण्ठं तु तस्यान्ते खादेष गुटिकामिमाम् ॥

तत्क्षणाज्जारयत्याशु पुनर्भोजनमिच्छति ।

हन्ति वातं तथा पित्तं कुष्ठानि विषमज्वरम् ॥ २१८ ॥

गुल्माख्यं पाण्डुरोगञ्च निद्राऽऽलस्यमरोचकम् ।

शूलञ्च परिणामोत्थं प्रमेहञ्च प्रवाहिकाम् ॥

यस्त्रस्तायञ्च शोथञ्च दुर्गन्धमानि विशेषतः ॥ २१९ ॥

र च, र सं, र. सु, र. क, मै. र, र का, अग्निमान्द्ये । र  
श्रु, मै. र. एतयोद्वापादौ प्रमादाश्चित्तौ ।

भाषा—शङ्खभस्म, पाचौनमक, ईमलीकाक्षर, त्रिकटु,  
सुनीहीण, शुद्धबलनाग, पारा और गन्धक सब समभागलेकर  
नीलवर्णकजलीकर अपामार्ग तथा चित्रकज्वाय और नीवृक  
रसमें मर्दकर देखे, यदि खटाई अच्छीतरह हो जाईतो तो  
२-३ नीवृजोंकीमात्रा और दकर बेरनीगुटलीकेबराबर  
गोलिया बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली खानेसे कण्ठ-  
तपभरपट विषेहुए भोजनको तत्क्षण जारणकर फिरो भोजन-  
कीदृच्छाको उत्पन्नकरतीहै । उचितानुपानकेमात्रलेने बात,

पित्त, कुष्ठ, विषमज्वर, शुल्म, पाण्डु, जिह्वा, आलस्य, अश्वि, परिणामशूल, प्रमेह, सङ्गी, लालास्राव, शोथ, बवासीर येसव नष्टहोतेहै ॥ ३३ ॥

### ३४ शङ्खवटी ( तृतीया )

सार्व कर्प रसेन्द्रस्य गन्धकस्य तथैव च ।  
विपं कर्पत्रयं दद्यात्सर्वतुल्यं मरीचकम् ॥ २२० ॥  
दग्धशङ्खश्च तत्तुल्यं पञ्चकर्पाश्च नागरात् ।  
स्वजिका रामठकणे सिन्धु सौवर्चले विडम् ॥ २२१ ॥  
सामुद्रमौद्गिदञ्चैव भावयेन्निम्बुकद्रवैः ।  
वटी ग्रहण्यम्लपित्तशूलघ्नी वह्निदीपनी ॥  
बहिमान्यकृतान्नोपान्तामदोषं विनाशयेत् ॥ २२२ ॥  
र च, र स, र क, अमिमाम्ने । र क. द्वौ पाठौ यहीतौ  
तत्प्रमादाश्लिखितमिति प्रतिभाति ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक डेढ १॥ कर्प, शुद्धबछनाग  
३ कर्प, मरिच और शङ्खभस्म ६-६ कर्प, सोंठ, सजी, सुनी  
हॉग, पीपल, सेंधव, सबल, बिड, सामुद्र और खारीनमव ५-५  
कर्षलेकर बारीकचूर्णकर नीबूकेरसकी ६-७ भावनाएँ देकर  
बेरकी गुठलीकेबराबर गोलियाँ बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१  
गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे ग्रहणी, अम्लपित्त, शूल, मन्दाग्नि  
और आनवात इनसबको नष्टकर यह अग्निको प्रदीप्तकरतीहै ३४

### ३५ शङ्खवटी ( चतुर्थी )

चिक्ष्वावकलभूतिः पञ्चपला लवणं तावत् ।  
निम्बुरसेन च कल्कं तप्तं शङ्खं निपेचयेत्तन ॥ २२३ ॥  
त्रिकटुकामठसहितं पलाशकं मर्दयेद्दिनं सम्यक् ।  
कर्पमितौ रसगन्धौ विपञ्च भृङ्गागुना विमर्चयत् ॥  
सन्मिथ्य च सर्वं सम्यक् निम्बम्युना पुनर्मर्चयत् ।

वदरास्थिमितायटिका मान्याऽजीर्णं

विसृजिकां तीव्राम् ॥ २२४ ॥

शूलाऽऽभ्यानोदरजान्व्याधीन्सर्वाञ्जयति घातकृताम् ।  
शङ्खामिधानी गदिता कृपीरसानुपांशधिपसंयुक्ता ॥

र, र पा, चि सा, यो चि, र वो, रसायन, अमिमाम्ने ।  
हृत्—चिक्ष्वावकासारे दिग्वादिचूर्णमिति नाम । वी चि भावना  
न दृश्यते । अस्य योगस्य प्रथमयोगेन समानताभावमि न तदन्तर्भवति  
प्रमाणे महदन्तरत्वात् ।

भाषा—इमलीकाक्षार और पाचोनमक ५-५ पल लेकर  
बराबरके नीबूकेरसमें मिलाकर ५ पल शङ्खको गरमकरके सुताये  
शङ्खका चूराहोजानेपर त्रिकटु और सुनीहॉग १-१ पल देकर  
एकदिन मर्दनकर शुद्धपारा, गन्धक और बछनाग १-१ कर्षकी  
नीलवर्णकमालीकर भगरेकेरससे एकदिन मर्दनकर फिर पूर्वयोगमें  
मिलाय १-२ दिन नीबूकेरसमें घोटकर बेरकी गुठलीकेबराबर  
गोलियाँ बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा  
रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, अजीर्ण, हैजा, शूल,  
आध्मान, उदर और वाररोग इनसबको यह नष्टकरतीहै । इसमें  
कितनेहीलोग सोलहवा हिस्सा रससिन्धु और बछनाग डालतेहैं

### ३६ शङ्खवटी ( पञ्चमी )

चिक्ष्वाऽऽभ्यवस्तुहीक्षारादपामार्गाकितस्तथा ।  
क्षाराणि पञ्च सङ्ख्या ततो लवणपञ्चकम् ॥ २२५ ॥  
सैन्धवादिसमादाय सर्वमेतत्पलद्वयम् ।  
कर्पं कर्पं विपं गन्धं रसं टङ्गुणकन्तथा ॥ २२८ ॥  
हिङ्गुपिप्पलशुण्ठीनां तथा मरिचजीरयोः ।  
द्वौद्वौ कर्पां पृथक्कर्पां तथा द्वौ शङ्खचूर्णतः ॥ २२९ ॥  
फलत्रयाच्च कर्पैकं द्विकर्पन्तु लवणतः ।  
एतत्सर्वं समासाद्य श्लक्ष्णचूर्णीकृतं शुभम् ॥ २३० ॥  
भावयेदम्बलयोगेन सप्तधा तु प्रयततः ।  
रसः शङ्खवटीनाम्ना सेवितः सर्वरोगजित् ॥ २३१ ॥  
शुक्लामात्रमिदं खादेद्भवेद्वीपनपाचनम् ।  
अजीर्णं घातसम्भूतं पित्तश्लेष्मभयं तथा ॥  
त्रिसृची शूलमानार्हं हन्याद्भ न संशयः ॥ २३२ ॥  
दो, र सु, यो र, ३ यो त, र का, वै चि, व रा, यो,  
त, नि र, अमिमाम्ने ।

भाषा—इमली, पीपल, बृहद, अपामार्ग और आकेशार,  
पाचोनमक २-२ पल, शुद्धबछनाग, गन्धक, पारा और सुहावा  
१-१ कर्ष, सुनीहॉग, पीपल, सोंठ, मरिच, जीरा और शङ्ख-  
भस्म २-२ कर्ष, दिक्का १ कर्ष, लौंग २ कर्ष, लेकर सबका  
बारीकचूर्णकर बिचोरे बरैरहके रससे सातभावनएँ देकर १-१  
रसकी गोलियाँ बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली यथो  
चितानुपानकेसाथ छेनेसे वातज, पित्तश्लेष्मज अजीर्ण, हैजा, शूल  
और आनाइप्रवृत्ति समस्तरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ३६ ॥

### ३७ शङ्खवटी ( षष्ठी )

द्वौ क्षारौ रसगन्धको सलघणी व्योपञ्च तुल्यं विपं,  
चिक्ष्वाभस्म चतुर्गुणं रसवरे लिम्पाकज्जाते कृतम् ।  
वास्फगारमिदं सुपाकचरितं लोहं क्षिपेद्विड्गुं,  
भृष्टं शङ्खसमं समुद्रितमिदं गुञ्जाम्रमाणा भवेत् ॥ २३३ ॥  
लघाता शङ्खवटी महाभिजननी शूलान्तकृत्पाचनी,  
कासश्वासविनाशिनी क्षयहरी मन्दाग्निसन्दीपनी ।  
वातज्याधिमहोदराद्रिशमनी तृष्णामयञ्जुदिनी,  
सर्वव्याधिघिनानाशिनी कृमिहरी दुष्टामयधंसिनी ॥ २३४ ॥  
र सु, र क, भै र, र का, अमिमाम्ने ।

भाषा—यवक्षार, सबी, शुद्धपारा, गन्धक, संधानमक,  
त्रिकटु और बछनाग १-१ भाग, अमिलतासरेरसमें ननाया  
हुआ इमलीकाक्षार ३६ भाग, पाचकद्रव्योंमेंकीहुईलोहभस्म  
और सुनीहॉग १-१ भाग, शङ्खभस्म सबकीबराबर लेकर  
बारीकचूर्णकर बिचोरेबरैरहकेरससे ६-७ भावनएँ देकर १-१  
रसकी गोलियाँ बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचि  
तानुपानकेसाथदेनेसे शूल, अजीर्ण, कास, श्वास, क्षय, मन्दाग्नि,  
वातज्याधि, उदररोग, प्यास, क्रिमि, बवासीर, इनसबको  
नष्टकर अग्निको अत्यन्त प्रदीप्तकरतीहै ॥ ३७ ॥

## ३८ शङ्खवटी ( महती ) ( सप्तमी )

कणामूलं वह्निदन्त्यौ पारदं गन्धकं कषा ।  
 विश्वारं पञ्चलवणं मरिचं नागरं विषम् ॥ २३५ ॥  
 अजमोदाऽमृता हिङ्गु क्षारं तिन्तिडिकामचम् ।  
 सञ्चूर्णं समभागान् तु द्विगुणं शङ्खमस्मरुम् ॥ २३६ ॥  
 अम्लद्रव्येण सम्माल्य घटीं कोलास्थिसम्मिता ।  
 अम्लद्राडिमतायेन लिम्पाकस्वरमेन च ॥ २३७ ॥  
 भक्षयेत्प्रातरुत्थाय नाम्ना शङ्खवटी शुभा ।  
 तक्रमस्तु मुरासीधुकाङ्गितोष्णोदकेन वा ॥ २३८ ॥  
 द्वांशोपादिरसेनेय रसेन चिचिधेन च ।  
 मन्दार्तिं दीपयत्याशु चङ्वाग्निसमप्रभम् ॥ २३९ ॥  
 अर्शोसि ग्रहणीरोगं कुष्ठमहभगन्दरम् ।  
 ग्रीहानममर्शं श्वासं कासं महोदरकिमीन् ॥ २४० ॥  
 हृद्रोगं पाण्डुरोगञ्च विषध्वानुदरे स्थितान् ।  
 ताम्ब्यान्नाशयत्याशु मास्करस्तिमिरं यथा ॥ २४१ ॥  
 शै. र., र. सु., वै. क., र. फा., अग्निमान्ये ।

भाषा—पीपल, चित्रक और इन्तीकसुल, शुद्ध पारा और गन्धक, पीपल, सखी, मुरागा, यवक्षार, पांचोन्नमक, मरिच, गोंद, शुद्धरज्जुना, अजमोद, गिलोय, भुनीहींग, इमलीकासार येसय समभाग और शङ्खमन्त्र सबसे दूनी लेकर सबका बारीक-चूर्ण कर पारेगन्धककी नीलवर्णजळीमें मिलाय नीचूकेरसकी १-७ भावनाएं देकर बेरकी शुष्कीकेबराबर गोलियां बनाकर रगछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खटे अनार अथवा अमिलताम बेरग, छाछ, दहीकापानी, मद्य, ताड़ी, काफ़ी, गरमजल, रागोवा और हरिण वगैरहका मांसय इत्यादि अनुपातोंकेसाथ औषधियोंकेबराबर देनेसे मन्दागि, बवागीर, ग्रहणी, कुष्ठ, प्रमेह, भगन्दर, सीहा, पयरी, श्वास, काप, अलोदर, मिमि, हृद्रोग, पाण्डु, विरग्य इनवर्गको यह नष्टकरतीहै ॥ ३८ ॥

## ३९ शङ्खवटी ( अष्टमी )

चित्राक्षारं हनुदीभारमर्कक्षारं पलंपलम् ।  
 छिपलां शङ्खमृतिञ्च रामठञ्च पलाङ्कम् ॥ २४२ ॥  
 लवणानि च सर्वाणि पलमात्राणि योजयन्तु ।  
 आरुध्यं पलाङ्कञ्च सर्वमेकत्र गृण्येत् ॥ २४३ ॥  
 जम्बीरफल्मर्मयामनलस्य दिनत्रयम् ।  
 भृष्टराजस्य निर्गुण्टीमुण्टपांशोश्च द्वयैः पृथक् ॥ २४४ ॥  
 आर्द्रकस्वरसेनैव प्रत्येकं मर्दयेद्विनम् ।  
 यद्वर्षाजमात्रान् तु पटिकां कारयेत्पृथक् ॥ २४५ ॥  
 एकेकां भक्षयेत्प्रातः पञ्चगुह्यमन्यप्राहति ।  
 मर्दयन्ते निहन्त्याशु पार्श्वानि च विगृह्यिकाम ॥ २४६ ॥  
 मन्दागिं नाशयेच्छीर्षं पथ्यं तैलाभ्यजितम् ।  
 इयं दारुनीनाम प्रहर्षायापहृत्तरा ॥ २४७ ॥  
 शै. वि., यो. र., वि. वा., शुभम् ।

भाषा—इमली, बूहर और आक्केक्षार १-१ पल, चङ्ख-मन्त्र २ पल, भुनीहींग २ कर्ष, पांचोन्नमक १-१ पल, सखी और यवक्षार २-२ कर्ष लेकर सबका बारीकचूर्ण कर जम्बीरी और चित्रकके रसोंसे ३-३ दिन, तथा भंगरा, संभाल, गोरख-मुण्टी और अदरककेरसोंसे १-१ दिन मर्दन कर बेरकी गुष्कीके-बराबर गोलियां बनाकर रगछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली प्रातः-काल उचितानुपातकेसाथलेनेसे पाचप्रकारकेगुल्म, समस्तशूल, अजीर्ण, हैजा, मन्दाग्रिप्रवृत्ति समस्तरोगोंको यह नष्टकरतीहै । तैल और खटाईको छोड़कर सबचीज़ें पथ्यहैं ॥ ३९ ॥

## ४० शङ्खवटी ( नवमी )

शङ्खं सप्तदिनानि निम्बुकरसे निर्याप्य तप्तं पलम्,  
 द्वन्द्वं चिञ्चिणिभूतितः पलमितः सार्धञ्च सौवर्चलात् ।  
 सिन्धुः स्याच्च पलं समुद्रलवणान्काचाङ्गिडाञ्चरुतां,  
 गद्याणास्त्रिरुदो नैव द्विगुणिताः संयोजयेद्यत्प्रातः २४८  
 अष्टौ रामठगन्धयो मिलितयो गद्याणाकाः पारदा-  
 शत्वारोऽत्र विषस्य पञ्च कथिताः कोलास्थिमानाकृता  
 एषा शङ्खवटी निहन्ति पवनं शूलान्यजीर्णामयं,  
 मन्दार्तिवमरोचकञ्च शमयेन्मूत्रस्य कृच्छ्राण्यपि २४९

र. कौ., यो., वृ. यो. त., अग्निमान्ये ।

भाषा—शोषलवणको नीचूकेरसमें दशगंधवि गरमकरकरके सुतावे और ७ दिनतक इनीतह पकाइनेदे । फिर इमली-क्षार १ पल, संवल १॥ पल, रौप्य, सामुद्र, काच और बिड-नमक १-१ पल, सोंठ, मिर्च, पीपल ३-३ तोले, भुनीहींग, शुद्ध गन्धक और पारा २-२ तोले, शुद्धरज्जुना २॥ तोले लेकर सबका बारीकचूर्ण कर पांगन्धककी नीलवर्णजळीमें मिलाय १-२ दिन नीचूकेरससे घोटकर बेरकीगुष्कीकेबराबर गोलियां बनाकर रगछोड़े । इन्हेंसे १-१ गोली उचितानुपातकेसाथ देनेसे शयुरोग, शूल, अजीर्ण, मन्दागि, अर्श, मूत्ररन्ध्र इनवर्गको यह नष्टकरतीहै ॥ ४० ॥

## ४१ शङ्खवटी ( दशमी )

स्नुहर्कचिञ्चाऽपामार्शम्भान्तिलपलागजान् ।  
 क्षाराञ्च निगगाद्यात्प्रत्येकं कर्षमानया ॥ २५० ॥  
 लवणानि पृथक् पञ्च ग्राहाणि पलमात्रया ।  
 स्यजिका च यवक्षारं टङ्गुप्रतिप्रतये पलम् ॥ २५१ ॥  
 सर्वमेतन्समादाय मूत्रमनूषं विधाय च ।  
 निम्बुफलरसे प्रस्थसम्मिलिते तत्परिभिरेन ॥ २५२ ॥  
 तत्र शङ्खस्य शकलं पलं चट्टी प्रताप्य तु ।  
 यागशिराण्येतस्य सर्वं द्रवति तद्यथा ॥ २५३ ॥  
 नागरं विषलं प्राहं मरिचञ्च पलद्वयम् ।  
 पिप्पलां पलमानां स्यारुताञ्च भृष्टीङ्गुक्रम ॥ २५४ ॥  
 ग्रन्थिकं चित्रकाऽपि यवानां जंगमनया ।  
 जार्तफले लवणञ्च पृथक्पथ्योन्मिन्नम् ॥ २५५ ॥

रसो गन्धो विपश्चादपि दृढगुणश्च मनःशिला ।  
एतानि कर्ममात्राणि सर्वं सञ्ख्यर्थं मिश्रयेत् ॥२५६॥  
शपावादेन चुकेण सन्नीय घटिकोऽञ्जरेत् ।  
मापप्रमाणा सा वैश्वे वृहच्छब्दवटी स्मृता ॥ २५७ ॥  
सर्वाजीर्णप्रशमनी सर्वगुलनियारिणी ।  
विमृच्यलसकादीनां सद्यो भवति नाशनी ॥ २५८ ॥

भा. प्र., र. सु., नि र., र. क. ल., र. रा., यो. म., अभि-  
मान्ये ।

भाषा—शूकर, आक, इमली, अषामार्ग, केला, तिल,  
पलाश इनकेदार १-१ कर्प, शोचनमक १-१ पल, सब्जी,  
यवधार, भुनामुद्राणा ३-३ पल लेकर सबकागरीकृष्णर १६  
पल नीचुरेसमें घोलकर रखले और एकपल शहको गरमकरके  
इन्द्रबमें ७ बार घुसावे । फिर सोंठ ३ पल, मरिच २ पल,  
पीपल १ पल, भुनीहींग, गठिकन, चित्रक, अजवाइन, जीरा,  
जायफल, लवंग २-२ कर्प, शुद्धपात्र, गन्धक, पठ्माग, मुद्राणा  
और भैतसिल १-१ पल, लुक ८ पल लेकर पोरगन्धकरी  
बजलीसहित सबका बारीककृष्णकर पूर्वबमें मिलाय १-२ दिन  
घोटकर उदरदार गोलियां बनाकर रखजोके । इनमेंसे १-१  
गोली उचितागुप्तानकेसायदेनेसे सद्यप्रकारके अजीर्ण, दूल, देहा  
और अलसप्रवृत्तिरोगोंको यह नष्टकरती है ॥ ४१ ॥

### ४२ शहवटी (एकादशी)

शुद्धगन्धरसो तुल्यो ह्योस्तुल्यं विपं भवेत् ।  
रामठं मरिचञ्चैव प्रत्येकं सप्ततुल्यकम् ॥ २५९ ॥  
प्रत्येकं पञ्चतुल्यानि कृपायिभ्याह्वयानि च ।  
शहोत्थै स्वजिका पञ्च सर्वाण्यम्ले विभाजयेत् ॥ २६० ॥  
यायद्व्यम्लमेतस्यात्ततो मात्रां प्रयोजयेत् ।  
सर्वाजीर्णहृदी चैव नास्मा शहवटी शुभा ॥ २६१ ॥  
शूलशां प्रहृणीमुल्मीदायतैरुद्धहान् ।  
आनाहाष्टीलिके हन्ति कान्तिरीयविशयिनी ॥ २६२ ॥  
र. क., अभिमान्ये ।

भाषा—शुद्ध शरा और गन्धक १-१ भाग, शुद्धपठ्माग  
२ भा., भुनीहींग और मरिच ४-४ भाग, पीपल और सोंठ  
१२-१२ भा., शहमम और सब्जी ५-५ भाग लेकर सबका  
बारीककृष्णकर नीचुरेसकी ६-७ मात्राएं देकर बेसीमुद्रा-  
केसरार गोलियां बनाकर रखजोके । इनमेंसे १-१ गोली  
उचितागुप्तानकेसाय देनेसे सद्यप्रकारके अजीर्ण, दूल, बगामी,  
प्रद्वी, गुल्म, उदावर्त, हृदयघ्नरुद्धा, आनाह, अटील  
प्रवृत्ति समस्तरोगोंको दूरकर कान्ति और अमित्री बनाती है ॥ ४२ ॥

### ४३ शहसुन्दरसः

रसगन्धकयो भागं द्वौ भागौ तालताम्रयोः ।  
लोहसर्पेरयोस्त्रिभिर्मांगस्ताप्यास्तथा लघुमा ॥ २६३ ॥  
पश्चादौ गगनं पिप्पु रसेलित्वि विभाजयेत् ।  
जम्बयित्रककन्यानां विजयाप्यर्णयोः पृथक् ॥ २६४ ॥

वृद्धिकायाश्च तं गोलं रुन्ना जम्भाम्भसा क्षणम् ।  
मर्दितेन च शक्तेन सर्वतुल्येन घेष्टयेत् ॥ २६५ ॥  
भिक्षता मृष्टे लिप्त्वा पचेत्क्षयणयन्त्रेक ।  
पट्ट्यामं स्वाहशीतन्तु समुद्वय विचूर्णयेत् ॥ २६६ ॥  
अर्कोशे सेन्धवं मृताब्धिं द्विगुणितं क्षिपेत् ।  
पुनर्जम्भाम्भसा भाव्यः सिद्धः स्याच्छतसुन्दरः ॥ २६७ ॥  
गुञ्जानयमितं शूलं ग्रहण्यशोऽतिसारकम् ।  
जीर्णज्वरान्विप्रीहकाम्भवासक्षयादिषु ॥ २६८ ॥  
निजानुपानेः शोत्रेण पिप्पलीभिः प्रदापयेत् ।  
जार्तफलेन माध्यादी विमृच्यादी प्रदापयेत् ॥ २६९ ॥  
गर्मिण्याः शूलविप्लम्भजरेष्वतिशृतां तथा ।  
ताम्रलघुहृदिपेण पथ्याच्छागजलेन च ॥ २७० ॥  
र. क., शूलदिशोमे ।

भाषा—शुद्ध पात्र और गन्धक १-१ भाग, इतिहास  
और ताम्रभस्म २-२ भाग, लोह और सार्पभस्म ३-३ भा.,  
सुवर्णमाक्षिक १ भा., अत्रकभस्म ५ भाग लेकर नीलरंग-  
बजलीरर जमीरी, चित्रक, पीडुंजार, भांग और घट्टुरेकगोसे  
३-३ मात्राएं देकर विषुआकेरमसे एकदिन मर्दनकर गोल  
बनावे । फिर जमीरीकेरमसे मर्दनकियेहुए शरकीयदावरवज्रके  
दुक्का लेपदेकर ३० काराफिदीदेकर गूखनेवर १ पररकी  
लवणयधमें अमिदे । स्वाहशीतलोनेवर निहाकर १२ वां  
हिस्ता रोपानमक और शोरेसेना शुद्धपठ्माग बालरजमीरी-  
केरमसे १-२ दिन मर्दनकर ३-३ रतीकी गोलियां बनाकर  
रखजोके । इनमेंसे १-१ गोली उचितागुप्तानकेसायदेनेसे  
दूल, प्रद्वी, बवातीर, अतिमार, जीर्णज्वर, अक्षि, शीह,  
काय, भास और क्षयप्रवृत्तिरोगोंको यह नष्टकरता है । सामा-  
न्यतः मधु और पीपलकेसायदेने । मन्दाभि और देहमें  
जायफलकेसाय तथा गर्मिणीकेदूल, विटम्भ, ज्वर और अति-  
सारमें पानेगाय देकर थोड़ासा बकरीकामूत्र पिलावे ॥ ४३ ॥

### ४४ गङ्गासूत्रसः

शुद्धं शहमं सुवर्णममलं शानाएकं सम्मूर्तं,  
तस्याङ्गे रसभस्म तद्वयमिदं पूर्णवृत्ते युक्तिः ।  
भाषाये मधुना पिलोडितमथो यामाऽमृतापरपट्ट-  
व्याघ्रीकशायमनुप्रणीतममृताङ्गं मयानं क्षयम् ॥  
एतद्वा नितरां ज्यपतिमरणं मृषातिगारं यमि,  
दुर्घातं ग्रहणीं निहन्ति सक्कं मेदः प्रमेहं दृढान् ॥ ७१ ॥  
यो. म., जरातिगार ।

भाषा—शहमस्य २ कर्प, पारदभस्म १ कर्प निगार  
रखजोके । इसमेंसे ३-३ रतीकीमात्रा मधुपेगायदेर अना,  
मिनेय, पिप्पलीर और अट्टकेदाकाकायं बरन्धार निग-  
नेसे क्षय, क्षय, क्षय, जरातिगार, मृदातिगार, वमन,  
उष्णप्यमृता, मेरोहि और प्रमेह इनको यह दृढमें  
निहन्तरा है ॥ ४४ ॥

## ४५ शङ्खेश्वररसः

शङ्खस्य बलयात्रिणं चतुर्निर्णकं घराटकम् ।  
निष्कार्द्धं नीलतुल्यस्य सर्वतुल्यन्तु गन्धकम् ॥२७२॥  
गन्धतुल्यं मृतं नागं नागतुल्यं मृतं रसम् ।  
ऋद्धं रसतुल्यं स्यान्मद्यं पात्रं मृगाङ्कवत् ॥  
गजयक्ष्महरः मोऽयं नाम्ना शङ्खेश्वरो रसः ॥२७३॥  
र. र. स., ना. वि., र. चं., नि. र., र. को., र. र., र. का., यो.  
म., वै. चि., र. क. ल., क्षयरोगे ।

टि०—योगमहागरे केवल दग्धशक्त मधुना लौहवा रात्रौ भर्जित  
विजया लेशा इत्यस्य शङ्खेश्वरनाम स्थापितम्, पलमागे च दुर्बारा-  
मपि ग्रहणीधनेदित्युक्तम् ।

भाषा—शङ्खनाभिर्मस ४ मासे, पीकीकौडीमस १ वर्षे,  
तृतीया २ मासे, शुद्धगन्धक, नाग और पादमस तथा छुहणा  
प्रत्येकसक्तीबरापर लेकर सबका बारीकचूर्णकर बररी अथवा  
गायके दूधमें १-२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें  
बन्दकर ६-७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर गजपुटकी आचदे ।  
स्वाज्ञसीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसको प्रथम मृगाङ्ककी  
तरह देकर उसीतरह पथ्यपालनेसे यह राजयक्ष्मको दूरकरताहै ॥

## ४६ शङ्खोदररसः ( प्रथमः )

मृतमसं बलिलिहं विपं त्रिकटुकं समम् ।  
पिप्पला निम्बजतोयेन शङ्खे सर्वं चतुर्गुणे ॥ २७४ ॥  
क्षिप्या मूर्दन्गुके लिप्या भाण्डे गजपुटे पचेत् ।  
शीते प्राग्वक्षिपं क्षिप्या बल्लमात्रं प्रयोजयेत् ॥२७५॥  
जातीफलञ्च विजया मधुनाऽतिवृत्ती ददेत् ।  
ग्रहण्यां चित्रकाद्राम्यु विजया विश्वमेपजम् ॥ २७६॥  
पृथग्देयं समधुना मरिचैश्च घृतान्वितम् ।  
यह्निमान्वाक्षये तद्वदुदरात्यनिलामये ॥  
पथ्यं दध्ना च तत्रेण क्षीरद्राक्षैश्च संयुतम् ॥ २७७ ॥  
नि. र., र. सु., टो., र. गा. अतिसारे ।

भाषा—पादमस, शुद्धगन्धक, लोहमस, शुद्ध बल्लमा  
और त्रिकटु समभागलेकर बारीकचूर्णकर नीचूरेसमे १-२ दिन  
मर्दनकर सयसे चौगुने शङ्खमें भरकर बररीकेदूधमें पीसेहुए  
सुहागेसे सुंढबन्दकर शरावसम्पुटमें रख ६-७ कपड़मिट्टी देकर  
सूखनेपर गजपुटकी आचदे । स्वाज्ञसीतलहोनेपर निकालकर  
पीसेयाशु शुद्धबल्लमागमिलाकर रखछोड़े । इससे ३-३ रसी  
जायफल, भांग और मधुकेसाय देनेसे यह अतिमारको दूर-  
करताहै । चित्रक और अदरकसेस अथवा भांग और सोंठ,  
अथवा मधु, मरिच और पी इन अनुपातकेसाय औषिती  
देखकर देनेसे अतिसार, ग्रहणी, मन्दाग्नि, क्षय, उदर और  
वातरोग सेसब नष्टहोतेहैं । दही, छाछ, दूध और चाफेकेसाय  
औषिती देखकर पथ्यदेवे ॥ ४६ ॥

## ४७ शङ्खोदररसः ( द्वितीयः )

जयाकैयूरैर्जैः मृतं गन्धं मयं पृथग्निनम् ।  
भृगुवा शङ्खोदरं वेष्टयं पुटे पोष्टिकाप्रमात् ॥ २७८ ॥

तथापि योजयेन्मान्ये शूले वा ग्रहणीगदे ।  
विश्वेश्वर इति ख्याता वाताधिम्यरुजापहा ॥२७९॥  
रसगन्धकमागैर्न शम्बुकाश्चाष्टमागिकाः ।  
जयादिमर्दयेद्वाचैः पुष्टेत्पुर्वक्रमेण च ॥ २८० ॥  
शम्बुकस्य भवेत्स्थाने समुद्रशुक्तिरुत्तमा ।  
कपर्दशङ्खयुक्तो वा रसीऽयं चतुराननः ॥ २८१ ॥  
र. शि., अग्निमान्वादी ।  
टि०—रसगन्धवाया शङ्खोदरगुणो योग्यः ।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धकको भांग, आकैयूष और  
धतूरेकेरसमें १-१ दिन दोनोंको अलग २ मर्दनकर इनसे अठ-  
गुनी शङ्खनाभिपर लेपदेकर शरावसम्पुटमें बन्दकर लगभगन्यमें  
रखर एकदिनतकती आंचदे । अथवा अठगुनेघोंचे अथवा  
मोतीकीसीप या कौड़ोंमें भरके आंचदे । स्वाज्ञसीतलहोनेपर  
निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा उचितानुपातकेसाथ  
देनेसे मन्दाग्नि, घृल, ग्रहणी इनको यह नष्टकरताहै । विशेषर  
चातप्रधानरोगोंको दूरकरताहै ॥ ४७ ॥

## ४८ शङ्खोदररसः ( तृतीयः )

कम्पो भस्म चतुष्कर्पं कर्पकमहिफेनकम् ।  
जातीफलं ऋद्धञ्च कर्पकं नियोजयेत् ॥ २८२ ॥  
पूर्णोक्त्य ततश्चाऽस्य गुजामात्रां प्रयोजयेत् ।  
नवमीतेन साकं हि रक्तातीसारहृत्परम् ॥ २८३ ॥  
शुदाङ्गरोद्वर्धं रक्तमामरुतं नियच्छति ।  
हृद्भ्रसाभ्यमतीसारं विविधं शूलमुल्वणम् ॥ २८४ ॥  
शमयत्यतिवेगेन रसः शङ्खोदराह्वयः ।  
शुडविवेकपायेण शूलं पक्षाशयोत्थितम् ॥  
आमं पाचयते सद्यः सर्वातिवृत्तिरुन्तनः ॥ २८५ ॥  
रसायनं., यो. र., अतिसारे ।

भाषा—शङ्खमस ४ वर्षे, अफीम, जायफल, गुनाछुहणा  
१-१ कर्प लेकर बारीकचूर्णकर १-१ रसीकीमाश्रादेनेसे रक्ता-  
तिसार, रक्षाश, आम, कृच्छमाप्य अतिसार, नागातरहका  
वत्कटशूल इनसबको यह नष्टकरताहै । शुद्ध और बेलकेकादेसे  
पक्षाशयकेशूलको नष्टकरताहै और आमको पचाताहै ॥ ४८ ॥

## ४९ शङ्खोदररसः ( चतुर्थः )

शुद्धं मृतं गन्धकं ये समांशं  
विशोन्मत्ते मर्दयेद्वासरेकम् ।  
गोलं कृत्वा शङ्खमध्ये निधाय  
भाण्डे स्थाप्यं मुद्रितव्यं प्रयत्नात् ॥ २८६ ॥  
तस्याऽधस्तादध्यामं प्रकुर्या-  
दग्निं शीते कर्पमात्रं विपं हि ।  
शृङ्गा घर्मे भायनाश्चाऽत्र तिष्ठो  
दद्यात्तद्वत्कन्यकाया रसेन ॥ २८७ ॥  
यत्नं योग्यं जीरकेणाऽप्य भृङ्गपा  
शोद्रे युक्तं भक्षितञ्च ग्रहण्याम् ।

भ्वासे शृङ्गे चानिले श्रेष्मजे वा  
कासेऽर्शःसु विड्ग्रहे चातिसारे ॥ २८८ ॥

र. प्र सु, र. म मा., र. घ, र., र. बो., र. क. यो, र. पा, श्वासाधिकारे । र. (भा.), र. स. स. एतयोर्ग्रहणीकपाट इति नाम ग्रहण्यधिकारे ।

॥—रमावतारे अग्निदानदनन्तरं निजवारसेन परिप्लव्य यथाष्ट मास विप्र नियुज्य विजयाभूतं भूषाथीकुट नातिविषामुत्ताचीरकादंन वस्तुहीरेकरूपेतिस्त्री भावना प्रदत्ता । मुस्तावायेनाऽतिविषाम भृष्टा वा दम्भा वा कुरप्येन वा विन्यादभिम्भा अतिस्त्रातविषै पुटपात्रे वा नियोज्य इति विशेषोदरस्ये । रसदीपिकायां रक्षामणिनाम्ना एक पाठोऽस्ति यथा—“सुत सुगन्ध बदरीन्यानीरविमर्ककदिल ततश्च । भापूर्य शङ्ख परिवेष्टय सस्यम् शुष्कन्तु भाण्डोरमच्यतस्यम् ॥ पुनः स गोदृष्टिकाभिधानं ददीत वातयन्तु गेदेस्मिन् । ज्ञेयस्वरक्षा मणिरेव सुत श्लाघिमान्येऽपि च यौगनीय । मरीचचूर्णेन वृत्तभुजेन विरचने कीरकपूरयमिमम् ॥ इति” अस्याप्येवाऽन्तर्भाव करणीय, भावनासु प्रदीतया एव तदनुष्ठाने क्षत्यभाव । प्रकृतपाठे शङ्खप्रमाण नास्ति तत्तु स्वबुद्धया कल्पनीयं चतुर्गुणं वा स्वादहृद्युणं वा शोडशगुणं वा नियोजनीयम् ॥ “यदा गन्ध शुद्धशङ्खेन तुल्यं वर्षेयाम बहिषत्तुरनीरे । शुष्कं कृत्वा तावच्चेष्टां बद्धा चूर्णं कृत्वा भावयेदार्द्रकेण ॥ दत्त्वा सुत चाष्टत पादमात्रं लोहेपात्रे पाचयेद्बहिनीरे । यामाकादं मोहिनीसिन्धुनी रैवंत दद्यादाग्न्यामरीचयुक्तम् । वीर्यं सुप्तिं दीपनं पाण्डुरासेन कुर्वाणाश शङ्खपाणीरसेन ॥” इति च पाठो रसदीपिकायां समागतः । एतु त्रिषु विशेषविशेषादभावात् एकस्मिन्नेव योगेऽन्तर्भावनीयाः । विविधपाठ स्थाने छात्राणां हित्वाध्यामोद्धारः ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकजली-कर चित्रक और धतूरेकेरसोसे १-१ दिन मर्दकर गोलाबनाय चतुर्गुणित शङ्खमें भरके तबि अथवा लोहेकेत्रय अथवा टीकरसे सुहृन्दकर ६-७ कपडमिठीदेकर सुखनेपर नमक, बालका अथवा भस्मयबमें रखकर ८ पहरी तीक्ष्णअग्निदेवे । स्वाह-शीतलहोनेपर निकालकर एककष शुद्धबछनाग कालकर धीजुवार केरसकी कड़ीपूरमें तीनमाषनाए देकर ३-३ रसीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली जीरा, भग्रा अथवा मधुकेशाथ देनेसे ग्रहणी, श्वास, वातशूल, कफशूल, कास, बवा-सीर, विड्ग्रह अथवा अतिसार इनसबको यह नष्टकरछोड़े ॥ ४९ ॥

५० शङ्खोदररसः ( पञ्चमः )

रसगन्धाव्रुक्तनीतालताप्यार्कहिङ्गुलम् ।  
अयोहिमरजस्तुल्यं कलांशां शङ्खभस्मनः ॥ २८९ ॥  
अयं शङ्खोदरो नास्ति यल्लुमात्रं नियोजयेत् ।  
कणाक्षीद्रयुतश्चाऽयं सर्वरोगनिवर्हण ॥ २९० ॥

र. श. सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अव्रकभस्म, शुद्धमैन सिल, हरिताल और सोनामाखी, ताम्रभस्म, शुद्धशिगरिक, लोह और सुवर्णभस्म १-१ भाग, शङ्खभस्म १६ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रसी पीपल और मधुकेशाथदेनेसे यह सप्तस्तोमोंको दूरकरछोड़े ॥ ५० ॥

५१ शङ्खोदररसः ( षष्ठः )

शुद्धसुतस्य भागेकं ताम्रभस्मांशकद्वयम् ।  
भागत्रयं गन्धकस्य मृतलोहांशकद्वयम् ॥ २९१ ॥  
चतुर्गुणं माक्षिकस्य त्रयोमभस्मांशपञ्चकम् ।  
शिलैकांशं प्रगुह्नीयान्नामौ द्वौ तालकस्य च ॥ २९२ ॥  
विशुद्धखर्परंशांस्त्रीन्सर्वं मर्दय खल्वये ।  
निम्बवर्द्धकांशधितूरयिजयाकनकट्वै ॥ २९३ ॥  
पृथग्विभावयेदैतेः शोषयेदातपे खरे ।  
सर्वोपघादप्रगुणे शुद्धे शङ्खोदरे क्षिपेत् ॥ २९४ ॥  
शङ्खोदरं शङ्खनाभिचूर्णेनान्येन लेपयेत् ।  
आरण्योत्पलभस्मानि लीहितेष्टकचूर्णकम् ॥ २९५ ॥  
सामुद्रलवणं मृत्स्ता तुल्यमेकत्र कारयेत् ।  
दद्याच्च कर्पटैलांस्त्रीश्च शुष्कान् पृथक्पृथक् ॥ २९६ ॥  
शुष्कं यिदध्याह्नयणापूर्णभाण्डोदरे क्षिपेत् ।  
निरुद्धय पुटके सर्वं स्थापयेदुल्लिखोपरि ॥ २९७ ॥  
यामद्वयं द्वादशं ज्वालयेद्य मध्यमम् ।  
यामद्वयं ततो मन्दं मन्दं यामद्वयं पुनः ॥ २९८ ॥  
स्वाङ्गशीतं समुत्तार्य लघु नि सारयेन्मुदम् ।  
सरसं मर्दयेच्छङ्खं कलाशयिपमिश्रितम् ॥ २९९ ॥  
त्रिभांयैस्त्रिकटुना निरब्रूकरसेन च ।  
शुष्कः सिद्धयति सूतोऽयं रसः शङ्खोदरमिधः ३००  
शुष्काद्वयमितं द्यातिपपलीमधुसंयुतम् ।  
कासे भ्वासे क्षये जीर्णे जरे च मरिचैः सह ॥ ३०१ ॥  
सधूतेस्त्वग्निमान्ये च विसृज्यामगरेषु च ।  
शोफे पाण्ड्यावजाम्ने रंध्यास्थं पाण्डुरोगिणि ॥  
ग्रहण्यर्शः सुधातेषु विजयाचूर्णसंयुतम् ॥ ३०२ ॥  
र. श. र. का, र. बो., वा, ग्रहण्यतिसारयो । बाह्दोऽय पाठो प्रष्टता नीतोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, ताम्रभस्म २ भा, शुद्धगन्धक ३ भा., लोहभस्म २ भा, सुवर्णमाक्षिक ४ भा, अव्रकभस्म ५ भा, शुद्धमैनसिल १ भा, हरितालभस्म अथवा रसमा-गिन्स्य २ भा, शुद्धखपरिया ३ भाग लेकर सबकीनीलवर्ण कजलीकर नील, अदरख, चित्रक, धतूरा, भाग, धतूरा इनके स्वरसोसे कड़ीपूरमें १-१ भावना देकर गोलाबनाय अठगुने शङ्खमें भरके शङ्खनामिको बहरी अथवा गायकैदूषमें पीसकर सुहृन्दकर अजलीकण्डोंकीरस, लालटै, समुद्रनमक, लालमिनी सबसमभागको पीस इससे ३ कपडमिठी सुलासुलाकरदे । अच्छीतह सुखनेपर लवणयबमें रखकर सुहृन्दकर चूल्हेपर चढ़ाय दोपहर मध्ययामिं देकर दोपहर मन्द भाव देवे । स्वाहशीतलहोनेपर मिठीकी दूरकर १६ बां हिस्सा शुद्धपरा नाम मिलाकर त्रिकटु और धतूरेकेरसोसे १-३ भावनाएँ देकर २-२ रसीकी मोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पीपल और मधुकेशाथ देनेसे काष्ठ, श्वास और क्षय तथा

मरिच और धीकेमायदेनेसे जर्णिज्वर नष्टहोताहै । मन्दाग्नि, हैजा, आम, गर और शोथमें यथोचित देखकर दवे । बकरी बमूधकेसायदेनेसे पाण्डुरोग, मागकेसायदेनेसे ग्रहणी और वातरोग नष्टहोतेहैं ॥ ५१ ॥

### ५२ शत्र्यादिलोहम्

शटीपुकरमूलानां चूर्णमामलकस्य च ।

मधुना संयुतं लेह्यं चूर्णं वा काललोहजम् ॥ ३०३ ॥

च स., हिक्रासासयो ।

भाषा—कूट, पोहलमूल, आरले, फोलादमस येसब समभाग लेकर १-१ मासेकीमात्रा मधुकेसायलेनेसे हिक्का और श्वास नष्टहोतेहैं ॥ ५२ ॥

### ५३ शतमूलादिलोहम्

शतमूलसिताध्वानागकेसरचन्दने ।

त्रिकनयतिलै युक्तं लोहं स्रग्गदापहम् ॥

वृष्णादाहज्वरच्छर्दिरेक्तपित्तहरे परम् ॥ ३०४ ॥

मे र, र च, प, र सु, र सं, वै. क., रक्तपित्ताधिकारे ।

भाषा—शतावर, शकर, धनिया, नागपेसार, सफेदचन्दन, तिलका, त्रिकटु, त्रिमद, और तिल सबसमभागलेकर सबकी बराबर लोहमन्मलिकार रखओहै। इसमेंसे ३ रसीसे ६ रसीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाय दवेये प्यास, दाह, ज्वर, वमन, रक्तपित्त, येसब नष्टहोतेहैं ॥ ५३ ॥

### ५४ शतावरीमण्डूरम् ( प्रथमम् )

संशोष्य चूर्णितं कृत्वा मण्डूरस्य पलायकम् ।

शतावरीरमस्याऽष्टौ दध्नश्च पयमस्तथा ॥ ३०५ ॥

पलान्यादाय चत्वारि तथा गव्यस्य सर्पिणः ।

विषचेत्स्रग्मेकरुषं यात्रपिण्डत्वमाप्नुयात् ॥ ३०६ ॥

सिद्धन्तु भक्षयेमद्ये प्रान्ते शुक्तस्य चाग्रतः ।

वातात्मक पित्तमर्धं शूलञ्च परिणामजम् ॥ ३०७ ॥

निहत्येव हि योगोऽयं मण्डूरस्य न संशयः ।

तुण्धे निर्वोषणं कार्यं यद्वा यदुमुत्तारसे ॥ ३०८ ॥

अथवा चोमयोरेव लोटविकृत्य सप्तधा ।

रसो गव्यं शुभं पाकं यति स्याद्यदि मर्देनात् ॥

नत्रा पाकं विजानीयाम्मण्डूरस्य न संशयः ॥ ३०९ ॥

१ या स, र का, नि र, वै चि., मे र, यो म, उ मा, र क सो, र, ना वि., टो., रसमागर, प, र, र, च द, यो र, म नि, दुग्गाधिकार ।

टि—र क या मण्डूररसो इति नाम । रमरररको जैवज्य-रतावरया शीतपरवान “अनु कान् रज एषा । त्रिन्मुखक-लज्जदीपावध्यादिनामिव” इत्यधिक पाठो दृश्यते । अग्नित्र-व्यस्य प्रवेशय दने स्रग्मेकान् श्लेष्मकेष्वेव योगं करणीय ।

भाषा—शुद्धमण्डूर, शतावरीका स्वरु, दहीकापानी और दूध ८-८ पल, गायत्री धी ४ पलकेकर इन्ने पकावे । घन तैयार

होनेपर चिकनेवर्तनमें रखओहै । इसमेंसे १ मासेसे ३ मासेतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाय भोजनसे पूर्व, मध्य अथवा अन्तमें लेनेसे वातज, पित्तज और परिणामशूल इनसबको यह नष्टकरताहै । इसयोगमें मण्डूरको गायकेदूध अथवा शतावरीकेरस अथवा कमश दोनोंमें सुक्ष्मतर शुद्धकरे । कोईकोई नागरमोया, पीपल, जीरा, धनिया, हर्, तज और इलायचीका चूर्ण ४-४ मासे प्रक्षेपमें डालतेहैं ॥ ५४ ॥

### ५५ शतावरीमण्डूरम् ( शर्करामण्डूरम् ) २

शतावरीरसप्रसवे प्रसवे च सुरभीजले ।

अजाया. पयसः प्रसवे प्रसवे धात्रीरसस्य च ॥ ३१० ॥

लोहकिट्टपलान्यष्टौ शर्करापलपोडश ।

इत्वा चाष्टपलं सर्पिः पथेन्मृद्वग्निना भिषक् ॥ ३११ ॥

मिद्धशीते घनीभूते चूर्णांनीमानि दापयेत् ।

यवानां त्रिकला व्योषं पिप्पली गजपिप्पली ॥ ३१२ ॥

द्विजोरकघनानाञ्च शूलशान्त्यक्षसमानि च ।

मधुनस्त्रिपलञ्चाऽन सिद्धे शीते प्रदापयेत् ॥ ३१३ ॥

भक्षेद्भिन्नश्लोपेक्षी भक्तस्यादौ विचक्षणः ।

शूलं सर्वोद्भवं हन्ति पक्तिशूलं विशेषतः ॥ ३१४ ॥

रक्तपित्ताद्गृहाहञ्च साम्लपित्तं वमिन्तथा ।

हृदयूलं पाण्डूशूलञ्च शुक्षियस्तिगुदोद्भवम् ॥ ३१५ ॥

कामं श्वासं तथा शोषं ग्रहणीदोषनाशनम् ।

यकृतलीहोदरं गुल्मं राजयमज्वरापहम् ॥ ३१६ ॥

विष्टम्भरीष्यदीर्घ्यमग्निमान्यं तथैव च ।

दुर्नामपाण्डुरोगञ्च कामलाञ्च हलीमकरम् ॥ ३१७ ॥

सर्वाश्च नाशयत्याशु भास्करस्तिसरि यथा ।

तुण्धे निर्वोषणं कार्यं मण्डूरस्य गवां जले ॥

सप्तनारायणारं वा रज्ज्वा निर्मलतां प्रजेत् ॥ ३१८ ॥

र. र, मे र, र का, शूले । मे. र, र का एतयो

शर्करालोहमिलिनाम ।

भाषा—शतावरीकारस, गोमूत्र, बकरीकादूध, आरलेका-

रस १-१ प्रसवे, मण्डूरमन्म ८ पल, शकर २० पल, धी ८

पल लेकर मन्दाग्निमें पकावे । घनतैयारहोनेपर उत्तारकर ठीक-

करके अचपाइन, त्रिफला, त्रिकटु, पीपल, गन्धरीपल, स्वाद-

सफेदनीरा, नागरमोया येसब १-१ कण, मधु ३ पल मिलाकर

चिकनेवर्तनमें रखओहै । सातदिनरीतनेकेबाद इसमेंसे १ मासेमें

३ मासेतक भोजनसेपहिले रोगोचितानुपानकेसाय देनेसे त्रिदो-

षचशूल, पविशूल, रक्तपित्त, अग्नादाह, अम्लपित्त, वमन,

हृदयशूल, पाण्डूशूल, पेड, मूत्राशय और शुद्धोद्भवशूल, काम,

श्वास, धातुशोष, ग्रहणी, यकृत, मीहा, गुल्म, राजयदम, ज्वर,

विष्टम्भ, शुद्धी दुर्बला, मन्दाग्नि, बवाली, पाण्डू, कामला

और हलीमक इनसबको यह मण्डूर नष्टकरताहै जैसे सुर्ग

अन्यकारको । गायकेदूध अथवा मूत्रमें ७ या ८ बार मूत्रावे-

देनेमें मण्डूर दृढहोजाताहै ॥ ५५ ॥

## ५६ शतावरीमण्डूरम् ( शर्करामण्डूरम् )

विधिवच्चुद्धमण्डूरचूर्णं प्रस्थसमन्वितम् ।  
द्वौ प्रस्थौ शर्करायाश्च पट्ट पलानि घृतात्तथा ॥३१९॥  
वर्षाश्च स्वरसाधेन्तु घात्रीरसतुलाधकम् ।  
एकीकृत्य पचेदेतथावत्तन्तुली भवेत् ॥ ३२० ॥  
त्रिफलायाः पृथक्चूर्णं कुडवं तत्र निक्षिपेत् ।  
व्योषं त्रिलवणं कुष्ठं तुम्बुरुणि च दीप्यकम् ॥३२१॥  
द्विजीरकं विडङ्गानि चातुर्जातरुमेव च ।  
एषां चूर्णांकृतानाञ्च भागं पलमितं पृथक् ॥ ३२२ ॥  
पलान्यष्टौ शिवाचूर्णात्कुडयञ्च यथाग्रजात् ।  
पलं पलं कणामूलं चण्यचित्रकमूलतः ॥ ३२३ ॥  
उत्तार्य शीते माक्षीकासतस्त्रिपलसम्मितम् ।  
खादेदग्निपलापेक्षी भोजनादी विश्वक्षणः ॥  
शूलं सर्वान्द्रव्यं हन्ति पक्तिशूलं विशेषतः ॥ ३२४ ॥  
र. १, शूलाधिकारे ।

भाषा—विधिपूर्वकरोधनविधेर्द्वेष्ट मण्डूरचूर्णं १ प्रस्थ,  
शर्करा २ प्रस्थ, गोघृत ६ पल, शतावरीका स्वरस १६ पल,  
पके आबलोकास्वरस ५० पल लेकर सबसे दोतारी चाशनी  
तेयारहोनेपर उत्तारकर हों, बहेडा, आबला ४-४ पल, त्रिकटु,  
तीनोंनमक, कुष्ठ, धनिया, दोनोतरहके तुम्बुल (चिरफल म०),  
अजवाइन, दोनोजीरे, विडङ्ग, चातुर्जात १-१ पल, हों ८ पल,  
यक्षशार ४ पल, पिपलामूल, चण्य और चित्रकमूल १-१ पल  
लेकर बारीकचूर्णकर चाशनीमें मिलाकर रख । एउदम उदा-  
होनेपर ३ पल मधु मिलाकर चिकनेबर्तनमें रखछोड़े । इससे  
६ मासेले १ तोलेतक माना रोग और अग्निकायल देखकर  
भोजनके आदि, मध्य अथवा अन्तमेंदेलेते त्रिदोषजशूल और  
खासकर परिणामशूल नष्टहोतेहैं ॥ ५६ ॥

## ५७ शतावरीमोदकः

शतावरीयां श्वेदपू च यला चातिलला तथा ।  
मर्कटीक्षुरयीजं च विशादीकन्दजं रजः ॥ ३२५ ॥  
एतानि समभागानि पलिकानि विचूर्णयेत् ।  
चूर्णांचतुर्गुणं देयं शैलीमयविजयारजः ॥ ३२६ ॥  
सर्धमेकीकृतं यावत्तदहं माहिर्ष पयः ।  
सायगन्मात्रेण दातव्यं शतावरीयां रसं तथा ॥ ३२७ ॥  
विदार्यां स्वरसप्रस्थ सितापलशतं न्यसेत् ।  
गोदयित्वा सितं दत्त्वा पात्रे सात्प्रमये ददे ॥ ३२८ ॥  
पचेत्पाकविधिज्ञो हि मोदकः परमा हितः ।  
ज्यूपणं त्रिफला शृङ्गी निजातं सैन्धवं शरी ॥३२९॥  
धान्यकं बालकं मुस्तं द्विजोरं कुन्दुरं मुरा ।  
काकोली क्षीरकाकाली द्राक्षा तुङ्गा मृगण्डजम् ॥  
जातीकोपफलेमासी तालाङ्कुरकशेके ।  
शतपुष्पा चवी दाह ग्रन्थिकं सलवङ्गकम् ॥ ३३१ ॥  
कुष्ठं यवानिका चामरगुप्ता कट्फलमेधिके ।  
खर्जूरानन्तमूले च तालीसं मधुकन्तथा ॥ ३३२ ॥

टङ्गणञ्च विचूर्ण्यार्थं प्रत्येकं कोलसम्मितम् ।  
चूर्णाद्धं शोधितं गन्धं शुद्धं पादांशपादम् ॥ ३३३ ॥  
कज्जलीकृत्य दत्त्वान्तर्लोडयेत्तुमुग्धना ।  
यथाशक्त्या मोदकञ्च कर्पूरेणाधियासयेत् ॥३३४॥  
तदुद्धृत्य स्निग्धभाण्डे स्थापयेच्च भिपग्वरः ।  
शिवं सम्पूज्य सगणं धन्वन्तरिमुनिं तथा ॥ ३३५ ॥  
कोलप्रमाणं कर्तव्यं क्षीरज्वातु पिबेधरः ।  
प्रातः भोजनकाले वा सायङ्कालेऽपि भक्षयेत् ॥३३६॥  
प्रमदाशतञ्च भजते न च शुरुक्षयं भवेत् ।  
नातः परतरं किञ्चिद्विद्यते वाजिकर्मसु ॥  
शतावरीमोदकञ्च वासुदेवेन निर्मितम् ॥ ३३७ ॥  
च., र., वाजीकरण्याधिकारे ।

भाषा—दोनोतरहकीशतावर, गोघृत, खोंदी गगेरन,  
केवाच और तालमखानेकेबीज, विदारीकन्द १-१ पल लेकर  
बारीकचूर्णकर सबसे चौगुना भागशचूर्ण, इससबसे आधा भेलका  
पी और शतावरकास, विदारीकास्वरस १ प्रस्थ, शर्करा १००  
पल लेकर ताबेचपात्रमें सबकी चाशनी बनावे । फिर त्रिकटु,  
त्रिफला, काकडासीनी, शिजात, सैधानमक, कचूर, धनिया,  
मुग्धनाला, नागरमोषा, दोनोजीरे, कुंवर, सुरमन्नी,  
काकोली, क्षीरकाकोली, द्राक्ष, बसलोचन, कस्तूरी, जाविनी,  
जायफल, जटामासी, ताडवाली, कसेर, सोंफ, चण्य, देव-  
दाह, गडिब, लौण, कुष्ठ, अजवाइन, केवाच, वायफल, मेथी,  
तुङ्गा, अन्तमूल, तालीसपत्र, मुलहठी भुनातुहागा येसब  
८-८ मासे, शुद्धपन्धर सबसे आधी और शुद्धपारा चौथाभाग  
लेकर नीलवर्णकज्जलीकर सबको ऊपरकी चाशनीमें मिलाकर तन,  
पत्र और इलायचीकेचूर्णका यथोचित प्रक्षेप देकर अमिका  
बलावल देखकर मोदक बनाय कपूरसे अधिवासितकर चिकने  
बर्तनमें रखछोड़े । फिर गणसहितशिवजी और धन्वन्तरिभगवा-  
नका पूजनकर आपतेलेकीमात्रासेशुरुकरें और धीरे १ बडाता  
जाय, ऊपरसेदूधपीये । सुबह, भोजनके समय अथवा सायंकाल  
प्रकृतिकेनुसार समयका विधानकर मात्राखाये । इनके सेवनसे  
बहुतसीखिचोयेसाथ सम्भोक्करनेपरमी शुक्रकाक्षय नहीं होता ॥

## ५८ शतावरीलोहम्

कान्तचूर्णं शतावरीभायितं भृङ्गराजेन  
मध्वाज्यं विशती भवेत् ॥ ३३८ ॥

आ पु., रसायने ।

भाषा—कान्तलोहभस्ममें यथाशक्य शतावरीकेरसकी  
माननाएँ देकर भंगरेकरस, मधु और पृतनेसाथ ३ रतीये  
१ मासेतककीमात्रा लेनेसे और पष्यपालन करनेसे ३०० वर्ष-  
तक जीसकाहै ॥ ५८ ॥

## ५९ शम्भूकभस्मयोगः

शम्भूकजं भस्मपीतं जलेनाग्नेन तत्क्षणात् ।  
पक्तिं विनिहन्त्याशु शूलं विष्णुशिरासुखात् ॥३३९॥  
वे चि, त्र मा, च द, यो. र., नि र, यो त शूल



भाषा—३ मासे धौषेकीभस्मको गरमजलसेवाय लेनेसे यह पक्तिशूलको इसतरहनच्छकताहे जैसे विष्णुभगवान् जमु-  
रोंका नाशकरतेहैं ॥ ५९ ॥

### ६० शम्भूकरसः ( प्रथमः )

अपिधानञ्च शम्भूकं प्रक्षाल्य सलिलैः शुभैः ।  
रसगन्धकयोः कृत्वा कज्जलीं लेपितं तथा ॥ ३४० ॥  
पण्मापमानमितया द्विमापेण च हिह्नुना ।  
ततो द्विपञ्चमूलीयसूक्ष्मकाण्डैः सचित्रकैः ॥ ३४१ ॥  
पिषाय निखिलां तान्तु पूरयेत्कोट्टोद्वेजैः ।  
पलालैः परितो घृषां पुटयेत्तमयाग्निना ॥ ३४२ ॥  
सूक्ष्मघूर्णं ततः कृत्वा गुटिकां सज्जमध्यागा ।  
द्विमापमानगिलितां शूलं जयति दासुणम् ॥ ३४३ ॥  
अतिसारं महाघोरं प्रहणीज्जयति ध्रुवम् ।  
कुर्याच्च बहिमत्युर्ध्वं शम्भूकाण्यो महारसः ॥ ३४४ ॥  
टो., ग्रहण्यधिकारे ।

भाषा—जीवरहितधौषको गरमानीसे धोकर ६ मासे शुद्धपारे और गन्धककीबजलीको पानीमें पीसकर भारीतक लेकरदे । मुरानेपर २ मासे हाँगाकालेपदेकर दशमूल और चित्रकके बारीक टुकड़ोंमें धन्दकर कोदोकीपासमें छपेटकर डोरीसे अच्छीतरह बांधकर गेदेकेसदृश बनादे । फिर २-३ कपड़मिट्टी लगाकर सुखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाहशोतल-  
होनेपर निकालकर दशमूल और चित्रककेहाथमें १-२ दिन घोटकर २-२ मासेकी गोलियां बनाकर रखजोहे । इनमेंसे १-१ गोली सतृकेभीतर रखकर निगलनेसे भयङ्करशूल, अति-  
सार और सङ्ग्रही इनको नष्टकर अग्निमें प्रदीप्तकरताहै ॥ ६० ॥

### ६१ शम्भूकरसः ( द्वितीयः )

दग्ध्वा शम्भूकसिन्धुर्ध्वं क्षौट्रेण सह लेहयेत् ।  
निर्गन्धेकेण जयत्याशु प्रहणीञ्चातिदुःसहाम् ॥ ३४५ ॥  
पानं व्यवर्ष्य व्यायाममीर्ष्याञ्च गुरुभोजनम् ।  
वेगसंधारणं वर्यं ग्रहणीदोषिणा सदा ॥ ३४६ ॥  
टो., र. सं, २ टो. त. र. सं, ग्रहणीरोगे ।

भाषा—धौषेकीभस्म और सेंधानमक समभागलेकर ४-४ मासेकी मात्रा मधुकेसाय लेनेसे दुःसह सङ्ग्रहणी नष्टहोतीहै । मद्यपान, व्यवसाय, कसरत, ईर्ष्या, भारीभोजन, वेगसंधारण इनसबका परित्यागकरे ॥ ६१ ॥

### ६२ शम्भूकाटिवट्टी ( प्रथमा )

पलानि त्रीणि शम्भूकाहोहचूर्णात्पलद्वयम् ।  
रसाञ्जनात्पलत्रैकं लौहकिंदात्पुनः पलम् ॥ ३४७ ॥  
सर्वैः समां शर्कराञ्च मधुना च परिष्णुताम् ।  
सर्वमेतत्समाहृत्य मोदकान्कारयेद्भिषक् ॥ ३४८ ॥  
भक्षयेत्तान् प्रयत्नेन शूलं गुन्धे हृदामये ।  
विशेषतः पक्तिशूले शोफे पाण्डूदरे भ्रमे ॥ ३४९ ॥

दुर्नासि कासे कृच्छ्रे च प्रमेहादमरिवृद्धिषु ।  
अग्निमान्ये स्मृतिभ्रंशे पीनसाद्वाचमेदके ॥ ३५० ॥

ग. नि., यो. म., टो., ४. यो. त., लो. प., ना. वि. सुलाधिकारे ।  
टि०—यो. म., ये., ४. यो. त., ना. वि. एषु ग्रन्थेषु शम्भूकादि-  
मोदक इतिनाम । नारायणविलासे आमवाताधिकारः । लो. प. शम्भू-  
कायस इतिनाम ।

भाषा—धौषेकीभस्म ३ पल, लोहभस्म २ पल, रसोत और मण्डूरभस्म १-१ पल लेकर सबकोबराबर शकर मिलाय मधुमें मोदक अथवा अवलेह बनाकर रखजोहे । इसमेंसे ३-३ मासे समय अथवा रोगोचितानुपानकेमायदेनेसे शूल, शूल, द्रोण, पक्तिशूल, मूत्रन पाण्डु, उदर, भ्रम, बवासीर, कास, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, पथरी, समस्त अण्डशक्ति, मन्दाग्नि, स्थिति-  
भ्रंश, पीनस और अर्धाचमेदक येसब नष्टहोतेहैं ॥ ६२ ॥

६३ शम्भूकाटिवट्टी ( द्वितीया )  
शम्भूकं ज्यूपणं लोहं पञ्चैव लवणानि च ।  
समांशगुटिकां कृत्वा कलम्बुकरसेन च ॥ ३५१ ॥  
प्रातर्भाजनकाले वा योज्यं नास्त्यत्र संशयः ।  
हन्ति शूलं हि तत्सर्वं पक्तिञ्च घाप्यपक्तिजम् ॥ ३५२ ॥

रमसागर, धं. र., वै. चि., ग. नि., वृ. मा., च. द., नि. र., यो. र., वि. सा., घृलाधिकारे ।  
टि०—कुनचित्लोह न दृश्यते । चिकित्सासारे 'यूषणस्थाने ऊष्ण-  
मिति पाठो दृश्यते तथा च लोहस्याऽभावः ।

भाषा—धौषेकीभस्म, निकट, लोह पार्वोनमक सबसम-  
भाग लेकर नाडीशाककरसे गोलियां बनाकर रखजोहे । इनमेंसे १-१ गोली भोजनकेसमय अथवा प्रातःकालदेनेसे पक्तिशूल अथवा साधारणशूलको यह नष्टकरतीहै ॥ ६३ ॥

६४ शम्भूरसः  
शुद्धसूतस्य भागेकं कर्पेकञ्च पलेस्तथा ।  
अम्ररस्य च कर्पं स्यात्सर्वेव दाहमस्मनः ॥ ३५३ ॥  
विषसिन्धुजगत्कोलाः प्रत्येकं शाणसमिताः ।  
एकत्र मर्दयेन्नुष्कं सर्वं कज्जलसन्निभम् ॥ ३५४ ॥  
भुजङ्गवह्नीपणनं गुञ्जैको बहिमान्यजित् ।  
अरुचौ बहिमान्यो च प्रयोक्तव्यो रसोत्तमः ॥  
अयं शम्भुरिति रयातो बहिसन्दीपनः परः ॥ ३५५ ॥  
र. का., अग्निमान्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अम्रक और शङ्खभट्ट १-१ कर्प, शुद्धवल्गनाग, सेंधानमक, सोंठ और बेर ४-४ मासे लेकर बारीकघूँघने परागन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय पानके रसे एकदिन मर्दकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखजोहे । इनमेंसे १-१ गोली रोग अथवा समयोचितानुपानके साथदेनेसे मन्दाग्नि और अरुचिको यह नष्टकरताहै ॥ ६४ ॥

६५ श्रमेश्वररसः  
सुशुद्धं पारदं गन्धं वत्सनामञ्च हिङ्गुलम् ।  
टङ्गुणञ्च समं मयं चित्रमूलकरायकं ॥ ३५६ ॥

संशोष्य बालुकायन्त्रे द्वियामं चञ्चयूपके ।  
समुद्भूत्य चिचूर्णपांशुं देयत्रिकटुद्रव्यैः ॥ ३५७ ॥  
वातपित्तरूफैश्चोषं ज्वरं हरति तत्क्षणात् ।  
सन्निपातं निहत्याशु रसोऽयं शरभेभ्यः ॥ ३५८ ॥  
वै चि , रसायनस , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, बलनाम, शिगरिक और मुद्गाया समभागलेकर सक्की नीलवर्णकजलीकर चित्रकजीजके-  
काथसे एकदिन मर्दनकर बज्रमूषामेरख ६-७ कपइमिठी देकर  
१ पहरकी बालुकायन्त्रकी अमिदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकास  
कर त्रिकटुकेरससे साय एकरसोसे दोरसोतक देनेसे त्रिदोषज्वर  
और सन्निपात तत्क्षणनष्टहोताहै ॥ ६५ ॥

### ६६ शर्करालोहम् ( प्रथमम् )

सिस्तातिकाबलायष्टीत्रिफलारजनीयुगे ।  
लोहं लिह्यात्समभ्याज्यं हलीमरुनिवृत्तये ॥ ३५९ ॥  
यो.म , कामलायाम् ।

भाषा—शकर, कुटकी, बला, सुलहदी, त्रिफला, हल्दी  
और दाहहल्दी समभागलेकर बारीकचूर्णकर सबकीबराबर लोह  
भस्म मिलाकर १-२ दिन मर्दनकर रखछोड़े । अथवा कुटकी  
बगैरहलेकाथसे २-४ दिन मर्दनकर १-१ मासेकी गोलिया  
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली औषिती देखकर मधु  
और धीनेसायदेनेसे हलीमरु नष्टहोताहै ॥ ६६ ॥

### ६७ शर्करालोहम् ( योगद्वयम् ) २

निम्बं धानी शर्करालोहचूर्णं  
ह्रींघ्रेणाक्तं गन्धकं वाऽभ्याञ्च ॥ ३६० ॥

र दी , अम्लपित्ते ।

भाषा—नीमकीछाल, आवले, शकर और लोहभस्म सम  
भाग मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा उचितानुपानके  
साथलेनेसे अम्लपित्त नष्टहोताहै । गन्धक अथवा हर मधुकेसाथ  
लेनेसेभी अम्लपित्त नष्टहोताहै ॥ ६७ ॥

### ६८ शर्करालोहम् ( तृतीयम् )

त्रिफलायास्ततो धान्याभूर्णं वा काललोहजम् ।  
शर्कराचूर्णसंयुक्तं सर्वशूलेषु लेहयेत् ॥ ३६१ ॥  
र चि , र र , ध , र स , र मु , शूले ।

भाषा—त्रिफला, आवले और शकर समभागलेकर सक्की  
बराबर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा  
उचितानुपानकेसाथलेनेसे सबप्रकारके शूल नष्टहोतेहैं ॥ ६८ ॥

### ६९ शालभादिवटी ( अर्कादिगुटिका )

रचिदालभवेक्ष्मगोधापुरीपकुहमडुसुम्भहरिताले ।  
समन.शिलेः सरुर्कटमासाकरसे. वृता गुटिका ३६२  
वृश्चिकदंशस्थाने सवृद्धपि सखेलेपणं विधाययादी ।  
अपरस्याङ्गे क्षिप्ता तद्विषसङ्ग्रामणी भवति ॥ ३६३ ॥  
रा मा , वृश्चिकविषे ।

भाषा—आकषरकोटिरी और छिपकलीकीविष्टा, वैशर,  
कुमुम्भके फूल, हरिताल, मैन्सिल सबसमभागलेकर बारीकचूर्ण-  
कर कंकड़ेकेमासस और आकवेदूपसे १-१ दिन मर्दनकर  
छोटीछोटी गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इस  
गोलीने पहिले विष्णुकोटेहुएस्थानमें एकवार हुवाकर उसीसमय  
दूसरे आदमीके अङ्गमें स्पर्शकरानेसे विष्णुका जहर चढजाताहै ।  
यह शास्त्रापरीक्षाकरनेकेलिये बतायागयाहै । फिरसे इसगोलीको  
आकवेदूपवगैरहलेसाथ पिसकर वृश्चिकादिकीटोंके ढकपर लगा-  
नेसे समस्तकीटविष नष्टहोतेहैं ॥ ६९ ॥

### ७० शशाङ्गरसः

आर्येदिष्टिकायन्त्रे शुद्धसुते द्विधा बलिम् ।  
उद्धृत्य तुल्यगन्धेन जम्बीरं मर्दयेद्दिनम् ॥ ३६४ ॥  
भृङ्गयाकुचिच्छिष्टीनामपामार्गाऽपराजिता- ।  
सर्पांक्षीणां द्रव्यै र्भयं प्रतिद्राघं दिन दिनम् ॥ ३६५ ॥  
तद्गोलं बन्धयेद्वस्त्रे मृत्तितं स्वेदयेत्तु ।  
द्वियामं बालुकायन्त्रे स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥  
अष्टगुञ्जामितं खादेच्छशाङ्कः श्वेतकुष्ठजित् ॥ ३६६ ॥  
र. का , कुष्ठाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारेकी इष्टिकायन्त्रमें रस द्विगुण गन्धक जारग-  
करे । फिर द्विगुणगन्धककेसाथ नीलवर्णकजलीकर जमीरी,  
भंगरा, वाकुची, नीलकटवीया, अपामार्ग, कालीकोयल,  
अन्धाहठी इनप्रत्येककेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय  
४ तह मलमल्लेकरफेमें लपेटकर ३-४ कपइमिठी छाकर  
सुखनेपर बालुकायन्त्रमें रस दोपहर मध्यमाग्निसे स्वेदनकरे ।  
स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ८-८ रती  
उचितानुपानकेसाथ लेनेसे यह श्वेतकुष्ठने नष्टकराहै ॥ ७० ॥

### ७१ शशिप्रसरसः

वृद्धिनिष्ठानाङ्गिजैर्मयं चक्षुराय शशिप्रभ ।  
तन्मायो मधुयुद्धमेहोऽप्यतिशये रसोनयुक् ॥ ३६७ ॥  
रसायनस , मेहे ।

भाषा—शुद्धपारा, बल और लोहभस्म समभागलेकर विधारा  
और श्लेष्मकीजठकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर रखछोड़े ।  
इसमेंसे १-१ माशा मधुकेसाथदेनेसे प्रमेह और लङ्घनकेसाथ-  
देनेसे बहुसूत्र नष्टहोताहै ॥ ७१ ॥

### ७२ शशिसेखररसः ( प्रथम )

रसगन्धाग्रहेमानि मौञ्चिकं चितुम् तथा ।  
कन्याङ्गिमर्दयेद्वस्त्रं ततः सिद्धो भवेद्रसः ॥ ३६८ ॥  
सर्वान् ह्योगदान्हन्ति ह्यशीतिं मासतोऽप्यायन् ।  
पैत्तिकात्रिखिलांश्चाऽपि श्लेष्मिकानप्ययं ध्रुवम् ३६९  
शे.र , क्रोमतेगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अत्रक, सुवर्ण, मोती  
प्रवाल इनकीभस्में सब समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर एक-

दिन धोक्वारकेरसरी भावनादेकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखोहे । इनमेंसे १ या २ गोली रोगोचितानुपानके साथ देनेसे रामस्त प्रीमरोग, अस्ती वातरोग, रामस्त पिण् तथा कफरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ७२ ॥

### ७३ शशिशेखररसः ( द्वितीयः )

लोहमन्त्रश्च सिन्दूरं मर्दयेत्कन्याकाम्बुना ।

अस्य रक्तिमितं दद्यादन्तरोगनिवृत्तये ॥ ३७० ॥

शे. र, अत्ररोगे ।

भाषा—लोह और अन्नकभस्म, रससिन्दूर सब समभाग लेकर धोक्वारकेरससे एकदिनमर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखोहे । इनमेंसे १-१ गोली धोक्वारकेरसकेसाथ देनेसे यह अत्ररोगोंको नष्टकरताहै ॥ ७३ ॥

### ७४ शाखाकामलायोगत्रयम्

शाखाकामलाकां वदन्ति मुनयश्चेमां यतस्संस्थितां,  
शाखास्त्वेष शिलाजतु प्रतिदिनं पेयं सङ्गमूत्रकम् ।  
मण्डूरं मधुना युतञ्च नियतं सेव्यञ्च लोहं परं,  
निर्धूतं खलु कुम्भकामलागदे युक्तं तु योगत्रयम् ३७१  
धि, क, कामलायाम् ।

भाषा—रोगीका बलायलेपकर शुद्धशिलाजीत ३ माशेसे १ तोलेक गोमूत्रकेसाथलेवे । अथवा शुद्धमण्डूर १ माशेसे ३ माशेतक लेकर गोमूत्रका सेवनकरे । अथवा लोहभस्म १ रत्तीसे ३ रत्तीतक मधुकेसाथलेवर गोमूत्रपीनेसे कुम्भकामला नष्टहोतीहै ॥

### ७५ शाम्भवीरसः

शुद्धपारदगन्धौ द्वौ टङ्गुणं नागराऽभया ।  
एण्डदन्तिवीजानि गौरीपाषाणकं समम् ॥ ३७२ ॥  
मर्चं जम्बीरनारिण रत्नमभये दिनत्रयम् ।  
शरापे दिनमेकञ्च पुष्टं कुङ्कुटं पचैत् ॥ ३७३ ॥  
स्नाह्नीशीतलमुद्धृत्य मर्चमेण्डुलैस्तैलेक ।  
वृशादी मरिचं दत्त्वा मरिचाऽर्द्धं विपं क्षिपेत् ॥ ३७४ ॥  
शुद्धामानं प्रदातव्यं सर्वज्वरहरं परम् ।  
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं तृपायै नारिकेलजम् ॥  
पार्वतीनिर्मितः पूर्य नाम्नाऽयं शाम्भवीरसः ॥ ३७५ ॥  
वै चि, र. क. यो, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और सुहृगा, सोंठ, हरे, एण्ड वीज, शुद्धजमालगोटा और सोमल समभाग लेकर नीलवर्णकज-लोकर जमीरीकेरससे ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें रख कुङ्कुटपट्टकी आचदे । स्वाह्नीशीतल होनेपर निकालकर एण्डतैलमें एकदिनमर्दनकर दक्षवा हिस्सा मरिच और मरिचसे आधा शुद्ध चयनाग मिलाकर रखलोहे । इसमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै । मुखलगनेपर दही, भात खानेकोदे । अधिष्ण्यास लगनेपर नारियलफानलदे ॥ ७५ ॥

### ७६ शारमेन्द्ररसः

सूतं गन्धकशुल्बभस्म द्रव्यं तालं शिला टङ्गुणं,  
माक्षीकं त्रिफला विषं त्रिकटुकं नेपालतुल्यं समम् ।  
निर्गुण्डया रसमर्दितं मुनिदिनं गुञ्जाप्रमाणा घटी,  
सर्वव्याधिहरं त्रिदोषहरणं सर्वज्वरे सत्वरम् ॥ ३७६ ॥

र. क. यो., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, शुद्धशिगरीफ, हरिताल, भैरसिल, सुहृगा और सोनामासी, त्रिफला, शुद्ध-वज्राग, त्रिकटु, शुद्धजमालगोटा, तुल्यभस्म सब समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर ७ दिन निर्गुण्डीकेरससे मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखोहे । इनमेंसे १-१ गोली तत्त-दोषहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरोंको दूरकरताहै । त्रिदोषको शीघ्रप्राप्तमें लाकर समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ ७६ ॥

### ७७ शारिवादिलोहम्

शारिवा नीलिनी रास्ना शुद्धयेला च चिन्नकः ।  
मानसुरनाशान्नित्यस्त्रिदोषहरात्ताऽभयाः ॥ ३७७ ॥

एभि युतमयो हन्ति प्रमेहपिडिका दश ।

वातरक्त पडशांसि त्वग्गदाभ्रिजिलानपि ॥ ३७८ ॥

शे र, प्रमेहपिडिकायाम् ।

भाषा—अनन्तमूल, नील, रास्ना, गिलोय, इलायची, चिन्नकमूल, मानसूर, सुरण, कावादाना, मिसोत, शुद्धशिलावा और हरे सबभागलेकर बारीकचूर्णकर सबकीबराबर लोहभस्म मिलाकर रखोहे । अथवा अनन्तमूल बगैरहंक स्वरस अथवा डायोंसे १-१ भावना देकर १-१ माशेकीगोलिया बनाकर रखोहे । इसमेंसे १-१ गोली अनन्तमूलबगैरहंकेसाथ अथवा समस्तज्वरानुपानकेसाथ देनेसे १० प्रकारकी प्रमेहपिडिका, वात-रक्त, ६ प्रकारकेरवासीर और त्वचाकुरोग नष्टहोताहै ॥ ७७ ॥

### ७८ शिरोरोगहररसः ( प्रथमः )

रसं गन्धकमप्रश्च लोहं कर्पूरमितं पृथक् ।  
स्वर्णं शाणमितञ्चैव दाव्याल्यञ्च विषं तथा ॥ ३७९ ॥  
शुद्धराजाम्मसा सम्यग्मर्दयित्वा विचक्षणः ।  
रक्षिकाधमिताः कुर्याद्विद्वेषणं शुद्धोपिताः ॥ ३८० ॥  
शिरोरोगहरो नाम रसोऽयं हरनिर्मितः ।  
हरेत्सर्वायं शिरोरोगान्चिरामे यदि सेवितः ॥ ३८१ ॥

आ वि, शिरोरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अन्नक और लोहभस्म १-१ कर्प, स्वर्णभस्म और शुद्धदालचिक्का ४-४ माशे लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर भगरेकेरससे १-२ दिन मर्दनकर जायीआभीररत्तीकी गोलिया बनाकर कड़ीधूमं मुखार रखोहे । इनमेंसे १-१ गोली १-१ दिवके-अन्तरसे समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तशिरोरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ७८ ॥

## ७९ शिरोरोगहररसः ( गगनमुखररसः ) २

गगनं स्याद्भस्मे चोर्णं तीक्ष्णं शुक्लं सुपायसम् ।  
वज्र्यामयरसे घृष्टं सूर्यावर्तविनाशनम् ॥ ३८२ ॥  
रसेन्द्रमं, शिरोरोगे ।

भाषा—समभागमें अक्रजार्णकियाहुआपारा, लोह, तांबा और सुवर्णभस्म समभागलेकर घृह और कुठके इत्रोंसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे सूर्यावर्त नष्टहोताहै ॥ ७९ ॥

## ८० शिरोवज्ररसः

पलं सूतात्पलं गन्धात्पलं लोहात्पलं रवेः ।  
गुग्गुलीः पलचत्वारि तद्वद् त्रिफलारजः ॥ ३८३ ॥  
यष्टीमधु कणा शुण्ठी गोक्षुरं किमिनाशनम् ।  
तोलकं वशमूलञ्च प्रत्येकं परिकल्पयेत् ॥ ३८४ ॥  
वायेन वशमूल्याश्च यथास्वं परिभाषयेत् ।  
घृतयोगेन कर्तव्या मापैकप्रमिता यदी ॥ ३८५ ॥  
छागीदुधेन वा सेव्या मधुना पयसाऽथवा ।  
धातुकीं पौष्टिकीञ्चैव शैत्यिकीं साक्षिपातिकीम् ३८६  
शिरोऽर्तिं नाशयत्याशु वज्रं मुकमिवासुरम् ।  
शिरोवज्ररसो नाम चन्द्रनाथेन भाषितः ॥ ३८७ ॥  
र स, र सु, भै.र, घ, शिरोरोगे । भै र, घ., एतयोः रवि  
स्थाने त्रित्वा नियोजिता नाम च शिरःशलादिघञ्जरस इति  
स्थापितम् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और ताम्रभस्म  
१-१ पल, शुद्ध गुग्गुल ४ पल, त्रिफला २ पल, मुल्हठी, पीपल,  
सोंठ, गोखल, विडङ्ग और वशमूल १-१ तोला लेकर परिगन्ध  
करी नीलवर्णकजलीमें सबकाचूर्णमिलाकर दसमलकेकाठेमें  
घोटकर धीकेयोगसे १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली बकरी अथवा गायकेदूध अथवा मधुके  
साथलेनेसे वात, पित्त, कफ और सनिपातन शिरोवेदनाओ  
यह नष्टकरताहै ॥ ८० ॥

## ८१ शिलागन्धकवटी ( शिलाजतुवटी ) १

शुद्धं सूतं समं गन्धं रक्तोपलद्वयैः ।  
यामं मर्द्यं पुनर्मर्द्यं पूर्वोददं विनिक्षिपेत् ॥ ३८८ ॥  
कोटञ्च त्रिफला निम्बं पटोलघननागरैः ।  
भावितानि दशाहानि रसे द्वित्रिगुणे तथा ॥ ३८९ ॥  
शिलाजतु पलान्यष्टौ तापती सितशर्करा ।  
त्वक्शरीरीपिप्लीधात्रीकं क्रेटास्थान्पलोन्मिताम् ३९०  
निदिग्धिकाफले मूलेः पलं युज्यात्त्रिजातकम् ।  
मधुनः पलसंयुक्तं क्षुयान्मापसमान्गुडाम् ॥ ३९१ ॥  
दाडिमाभ्युष्य पक्षिरस्तोयसुधासितान् ।  
तान्मक्षयित्वाऽत्र पिबेन्निरसो मुक्त एव वा ॥ ३९२ ॥  
पाण्डुपुष्टज्वरप्लीहतमकाशोमगन्दारम् ।  
पूतिविषभृशुकादिदोषमेहमहोदरान् ॥ ३९३ ॥

कासाऽसृक्कपित्तञ्च प्रदं रक्तसम्भयम् ।

तान्सर्वान् सुतरां हन्ति सर्वदोषहरा शिवा ॥ ३९४ ॥

र.र., भै.र., प्रदराधिकारे ।

भाषा—१-१ पल शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकजली  
कर लालमलके फूलोंकेरससे दोपहर मर्दनकर कुट्टन, त्रिफला  
और नीमकीछाल २-२ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर कजलीमें  
मिलाकर परवल, नागरमोघा और सोंठके दूने अथवा तिथुने  
स्वरससे १० दिन माषनादेकर शुद्धशिलाजीत और शर्करा ८-८  
पल, वशलोचन, पीपल, आवले, वाकजर्सीगी, भटवटैयाका  
पञ्चाङ्ग और त्रिजात १-१ पलका वारीकचूर्ण और मधु १ पल  
पूर्वोपिष्टमें मिलाय १-१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली अनारवेरस, दूध, पक्षियोंकेनास अथवा  
जलकेसाथ औचित्यदेखकर लेनेसे पाण्डु, कुष्ठ, ज्वर, प्लीहा,  
तमकवास, बवासीर, भगन्दर, विषमूत्रगन्धवाला शुक्लविकार,  
प्रमेह, जलोदर, कास, रक्तपित्त, रक्तप्रदर इनसबको यह  
नष्टकरताहै ॥ ८१ ॥

## ८२ शिलागन्धकवटी ( द्वितीया )

शिलागन्धकयोश्चूर्णं पृथग्भृङ्गरसाऽऽप्लुतम् ।  
सप्ताहं भावयेत्सर्पिर्मधुभ्याञ्च विमर्दयेत् ॥ ३९५ ॥  
अर्शसञ्चाऽनुलोम्याश्च हताश्रियलघर्जनम् ।  
रक्तिकादितयं खादेत्कुष्ठान्दिसहितो नरः ॥ ३९६ ॥  
र स, र व, अर्शरोगे ।

भाषा—शुद्धमैत्रिल और गन्धककी भगरेकेरसकी ७-७  
भाववाए रेकर इकोमिलाय धीके सयोगसे एकदिन मर्दनकरे  
फिर अन्यान्यसे मधु डालकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर  
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह  
बवासीर और मन्दाग्निको नष्टकर वायुका अनुलोमन करतीहै ८२

## ८३ शिलाजतुचूर्णम् ( प्रथमम् )

द्विपलं मार्कवै धातुमार्तिकञ्च पुनर्नवा ।  
तुषा स्फुका शालपर्णी दासकञ्च दुरालभा ॥ ३९७ ॥  
चूर्णाऽद्धेन समं योज्यं त्रिगन्धं मरिचानि च ।  
तालीसं भागधी चैत्र तद्वर्द्धनं शिलोद्वयम् ॥ ३९८ ॥  
शिलाभेदं तद्वर्द्धनं सर्वं चैकत्र मिश्रयेत् ।  
समेन तिलचूर्णन्तु शर्करायाः समायुतम् ॥ ३९९ ॥  
मक्षयेत्क्षीरपानं वा शस्यते घृतसंयुतम् ।  
तेन क्षयो राज्यश्चमा कामला च विनश्यति ॥ ४०० ॥  
अपस्मारं जयत्याशु बले धीर्येऽधिको भवेत् ।  
शाम्यन्ति च महारोगाः शुक्रादयो जायते नरः ४०१  
हा स, एवे ।

भाषा—भयरा, सोनामासी, पुनर्नवा, बसलोचन, अन-  
न्तुल, शालपर्णी, अङ्गुष्ठा, जवासा येसव २-२ पल, ताल,  
पत्रन, इलायची, मरिच, तालीसपत्र, धीपल इनसबकाचूर्ण ८  
पल, शिलाजीत ४ पल, पाषाणभेद २ पल, कार्तिल और

शरर सप्तवीरावर नेर सरराधारीकचूर्णर १-२ दिन इन्दे मदनर रगउड़े । इसमें ३ मासेमें ६ मासेतम्माना धी मिलेहुए दूधकेसाथलेनेसे क्षय, राजयम्, कामला, अपस्मार, वय्यीर्याना इनसबको नष्टकर मनुष्यको शुक्रपूर्णवनाताहे ॥८३॥

### ८४ शिलाजनुतुयोगः ( द्वितीयम् )

शैलजमाक्षिकयष्टिरुयुक्तं व्योपचिडङ्गफलत्रययुक्तम् ।  
नवमेसमं तलपोट्टरुवीजं चूर्णमिदं दशमेहमपोहत् ४०२  
वै. चि. प्रमेहः ।

भाषा—शुद्धशिलाजीत और मुनगमाक्षिक, मुल्हठी, त्रिकटु, चिडङ्ग और त्रिफला समभाग, इनसबकीबराबर तुवरक केबीजोंकी मज्जा लेकर सबका बारीकचूर्णकर ३-३ भासा दूधकेसाथलेनेसे यह श्लेष्मप्रधान १० प्रमेहोंको नष्टकरताहे ॥८४॥

### ८५ शिलाजनुतुयोगः ( प्रथमः )

लिङ्गोद्भवाकरूपयेण शुद्धं सेव्यं शिलाजनुतु ।  
पञ्चकर्मविशुद्धेन वातरक्तप्रशान्तये ॥ ४०३ ॥

र का, वातरकाऽधिकारे ।

भाषा—विधिपूर्वक सूर्यतापीशिलाजीत उचितमानामें शुद्धीकराधकैसायलेनेसे पञ्चकर्मसे विशुद्धरोगीके वातरक्तको यह नष्टकरताहे ॥ ८५ ॥

### ८६ शिलाजनुतुयोगः ( द्वितीयः )

पीतं निरुद्धमचिराद्गिनन्ति मूत्रस्य सङ्घातम् ।  
वीरजतरुगणसिद्धं शिलाजनुतु त्वत्तिविशुद्धं तत् ४०४  
र. का, मुनापाते ।

भाषा—शुद्धशिलाजीतको पीरतर्बादिगणकायकेसाथ देनेसे बहुतदिनके पुराने मुनापातको यह नष्टकरताहे ॥ ८६ ॥

### ८७ शिलाजनुतुयोगः ( तृतीयः )

त्रि.सप्तधारादंष्ट्रैलेयं मान्यं सालादिजाम्बसा ।  
पिबेत्सापोदकेनैव श्लेष्णपिष्टं यथावलम् ॥ ४०५ ॥  
जाङ्गलेन रसेनायात्तस्मिन्जीर्णं तु भोजनम् ।  
विजित्य मधुमेहाख्यमातङ्गं रोगसङ्करम् ॥  
सुपूर्वणवल्लोपेतः शतं जीवत्यनामयः ॥ ४०६ ॥

र का, मेदाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धशिलाजीतको सालसारादिगणकायकी २१ भाष नाए देकर रखउड़े । इसमेंसे १ मासेलेकर १ तोलेक रोगीका अभिन्न देपर सालसारादिगणकायकेसाथ देवे । मूखलगेपर जाङ्गलपशुक्षियोंकेमासरसकेसाथ भोजनदेवेतो उष्ट्रवयुक्तमधु मेदको जीतकर बलवर्णयुक्त होकर १०० वर्षतक निरोगी रहकर

### ननुयोगः ( चतुर्थः )

भाषा—शुद्धशिलाजीत ३ मासेमें १ तोलेक लम्ब देपर प्रातःकाल दूध और क्षयकेसाथलेनेसे २१ दिनं समस्तप्रमेहोंसेरहितहोजाताहे ॥ ८८ ॥

### ८९ शिलाजनुतुयोगः ( पञ्चमः )

फलत्रिकम्पनाथविशुद्धमादौ  
शुद्धं शुद्धच्या दशमूलशुद्धम् ।  
स्थिरादिकाकोलियुगादिशुद्धं  
शिलाजनुतु स्यात्क्षयिषु प्रशस्तम् ॥ ४०८ ॥

र का, क्षयाऽधिकारे ।

भाषा—त्रिफला, गिलेय, दशमूल, स्थिरादि और काको त्यादिगणोंकेनाथोंसे कर्मसे भावनाएदियाहुआ शुद्धशिलाजीत उचितमानामें लेनेसे क्षयरोग नष्टहोताहे ॥ ८९ ॥

### ९० शिलाजनुतुयोगः ( षष्ठः )

शिलाह्वयं वा त्रिफलारसेन  
हृत्पात्रिदोषं भ्रमयुं प्रसह्य ।  
अन्नैः पिबेद्वा गुरुभिन्नवर्चाः  
सन्त्योपसौवर्च्यन्माक्षिकैश्च ॥  
विज्ञातसहं पयसा रसे वा  
प्रायः समद्यादुष्पूकतैलम् ॥ ४०९ ॥

र का, शोधाऽधिकारे ।

भाषा—त्रिफलाकेसाथ शिलाजीत ३ मासेमें १ तोलेककी मानामें पीपित्री देकर लेनेसे यह त्रिदोषनाशोयको दूरकरताहे । इसके शेषसे वजनदार अथवा पतले दस्त होनेलेंगो त्रिकटु, सचल और सोनामापीकेसाथ अनदे । मल और वायुका अवरोधहोनेपर दूध अथवा जागल मातरसकेसाथ देवे । यदि इससेभी अवरोध शान्त न हो तो बीचबीचमें एर षडैलका औचित्री देकर प्रयोगकरे ॥ ९० ॥

### ९१ शिलाजनुतुयोगः ( सप्तमः )

शिलाजनुतु शुग्गुलुं वा पिबेत्फलोमथ नागरम् ।  
ऊरस्तम्भे पिबेन्मूत्रे दशमूलोजलेन वा ॥ ४१० ॥  
वै चि. कष्टस्तम्भे ।

भाषा—शुद्धशिलाजीत, गुग्गुलु, पीपल जर सोंठ इनसबको समभागमें मिलाकर अथवा अलग २ औचित्रीदेकर गोमूत्र अथवा दशमूलकेकाडेकेसाथ देनेसे ऊरस्तम्भ नष्टहोताहे ॥ ९१ ॥

### ९२ शिलाजनुतुयोगः ( अष्टमः )

लाजाजनुतुशिलाभांसीमधुकैश्चपि नैः ।  
मधुयुक्तैः शिशो रैह, सर्वज्वरनिवारण ॥ ४११ ॥  
हितो, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—यानकीबील, शिलाजीत, मैमसिल, जटामांसी, मुल्हठी, सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर १-२ पहर घोटकर रखउड़े । इसमेंसे १ रत्तीमें ३ रत्तीक मधुकेसाथदेनेसे बच्चोंके सप्तराजकेज्वर नष्टहोताहे ॥ ९२ ॥

## ९३ शिलाजत्वादियोगः

गोमूत्रेण पिबेत्कुम्भकामलायां शिलाजतु ।

मासं माक्षिकधातु वा किट्टं वाऽथ हिरण्यजम् ४१२

ग नि, अ सं, अ ह, सु स, भा प्र, चि सा, कामलायाम् ।

टि०—माषप्रकोषे विक्रियासारे च गोमूत्रेण पिबेत्कुम्भकामलाया  
मिलायान्, इत्यदिशब्देन योग प्रवक्ष्यते । सुष्ठो हेमात् किट्टं नास्ति ।

भाषा—शिलाजीत, सोनामाखी, सुवर्णकाफिट्ट इनमेंसे  
किसीएकको गोमूत्रकेसाथ एकमाहीनेतक देनेसे कुम्भकामला  
नष्टहोती है ॥ ९३ ॥

## ९४ शिलाजत्वादिलोहम् ( प्रथमम् )

शिलाजतु मधु व्योषं ताप्यं लोहसंस्तथा ।

क्षीरेण लहितस्याशु क्षयः क्षयमयामुयात् ॥ ४१३ ॥

र स, भै र, र चि, यो स, ध, र च, र सि, र सु, र,  
( मा ), र का, यो र, र स. क, रसायनस, ग नि, क्षया-  
धिकारे । र ( मा ) शिलासाररस इति नाम । र स. क, रसा  
यनस, एतयो क्षयारिरस इति नाम ।

भाषा—शुद्धशिलाजीत, मधु, त्रिकटु, सोनामाखी और  
लोहमल्लम समभागलेकर इन्हेंमिलाय १-२ पहर मर्दनकर रख  
छोड़े । इसमेंसे १ मासेसे २ मासेतकमाना औचित्यदेखकर  
दृष्टेसाथदेनेसे क्षय नष्टहोता है ॥ ९४ ॥

## ९५ शिलाजत्वादिलोहम् ( द्वितीयम् )

शिलाजतुयुतं लोहचलन्तु विधिमारितम् ।

पथ्याशी सेवते यस्तु स यश्मानं ध्यपोहति ॥ ४१४ ॥

ध यो त, र. सु, यो र, क्षयाधिकारे ।

भाषा—१ रत्तीलोहमल्लम और ३ मासेसे १ तोलेतक शिला  
जीत दोनोंको मिलाकर औचित्य देखकर देनेसे और पथ्यका  
पालनकरनेसे राज्यधमसहित असाध्यरोगोंको यह नष्टकरता है ॥

## ९६ शिलाजत्वादिवटी

शिलाजत्वप्रहेमानि लौहगुग्गुलुद्वयम् ।

केशराजस्य तोयेन मर्दयेद्विषसह्यम् ॥ ४१५ ॥

चलमानां यदीं कृत्वा शैवालसलिलेन च ।

प्रातः प्रातः प्रयुञ्जीत शुक्रमेहनितृचये ॥ ४१६ ॥

भै र, शुक्रमेहे ।

भाषा—शुद्धशिलाजीत, अत्रक, सुवर्ण और लोहमल्लम,  
शुद्धगुल और सुहागा सब समभागलेकर काठेभगरेके रससे  
दोदिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इन  
मेंसे १-१ गोली शिवालके पानीकेसाथ प्रातःकालमें लेनेसे  
शुक्रमेह नष्टहोता है ॥ ९६ ॥

## ९७ शिलातालरसः ( आसकासारि. )

त्रिकण्टकरसे भाग्यं तालमेकं चतुःशिला ।

व्यामायस्तारपिष्टिश्च इत्या तद्गुटिकां चरेत् ॥ ४१७ ॥

दिनं वासारसेः पिष्ट्वा बालुकायन्त्रपाचिताम् ।

द्वियामान्ते समुद्धृत्य तत्तुल्यञ्च कटुत्रयम् ॥ ४१८ ॥

निर्गुण्डीमूलचूर्णन्तु व्योमतुल्यं विमिश्रयेत् ।

शिलातालो रसो नाम मापेकं श्वासकासजित् ॥ ४१९ ॥

कटुत्रयं पावकदेवदार-

रास्नाविडङ्गत्रिफलाऽमृतानाम् ।

चूर्णं समांशं सितया समेतं

कासं जयेद्विष्णुरिवाशु दैत्याम् ॥ ४२० ॥

र को, र सु, वै चि, र यो, र क, रसायनस, र स क,  
व रा कासाधिकारे ।

टि०—रसेन्द्रकल्पदुमे त्रिकण्टकरसाने द्राक्षा पृथीता अन्यात्मनं समा-  
नम्, नाम च तालकवटीति स्थापितम् । र स, व आसकामा-  
पीति नाम स्थापितम् । बसवरापीने चिद्रक्तुषे प्रयोग कृतोऽस्ति ।

भाषा—हरितालभस्म १ भाग, गोमूत्रमें १०० बार सुझाई  
हुई मैनसिल ४ भा, अत्रक, लोह और तारपिष्टी ( शुद्ध-  
बादीके गोलात्रको कोयलोपर रख गन्धक और हरितालकेचूर्णका  
पनेसे अष्टमाश प्रशेषदेकर जलावे । इसपत्रके बीचमें बोझागर्त  
बनाले । जिससमय तारपिष्टी बनानीहो तब पत्रको कोयलोपर  
रख गर्तमें पारा छोड़दे । आचलानेसे पारा गाढा होजायगा,  
इसको मोटेकपडेमेंसे छानले जो कड़ाभाग हो उसे रखले और  
दूसरेको फिर उधीतरह गर्तमें रख गरमकर छाने । इसतरह जितना  
पारा गाढा करनाहो उतना करले फिर इसपिष्टीको १-२ पहर  
नीबूके रसमें घोटकर कालिमा दूरकरदे । गोलीको ४ तह मल  
मलके कपड़ेमें बाधकर कानी अथवा नीबूकेरसमें ४ पहर स्वेदन  
करनेसे तारपिष्टी तैयारहोगी । अथवा पारेसे चतुर्थांश रजतभस्म  
मिलाकर १-२ पहर नीबूके रसके साथ घोटनेसे तारपिष्टी तैयार  
होगी । ) १-१ भाग लेकर मोराल और अङ्गुलेरसोंसे १-१  
दिन मर्दनकर गोलाबनाय ४ तह कपड़ेमें लपेटे १-२ बघड़मिट्टी  
चढाय सुखाकर दोपहर बालुकायन्त्रमें स्वेदितकरे । स्वाश्वची-  
तलहोनेपर निकालकर इसकीबराबर त्रिकटुकाचूर्ण और अत्रक-  
कीबराबर निर्गुण्डीकीजङ्गकाचूर्ण मिलावे । इसमेंसे १-१  
माशा उचितानुपातकेसाथ देनेसे यह श्वासकासको नष्टकरता है ।  
इसके ऊपर त्रिकटु, चिन्तकमूल, देवदारु, राजा, विडङ्ग, त्रिफला,  
बिल्व सब समभाग और सबकीबराबर शकर मिलाय एक-  
मासेसे ३ मासेतक अनुपानमें देनेसे अतिशीघ्र श्वास और कास  
निकटहोता है । उसकहाहुआयोग तैयार न होनेपर केवल इस  
अनुपातसेभी काम चलाया है ॥ ९७ ॥

## ९८ शिलादिगुटिका

कर्पेका च मन शिला द्विगुणिता प्रोक्तोपेष्टाहया,  
वर्षेऽपि गतः पुराणपदवीं शुद्धो गुडोऽपि त्रिभिः ।  
तान्सम्मेल्य विधाय सप्त गुटिकाः खादेत्मात्सृष्टम् ।  
मुन्येताशु भगन्द्राघतुल्यं कालाढमक्षेका ॥ ४२१ ॥

रसायनस, मन्दसधिकारे ।

**भाषा**—शुद्धमैनसिल १ कर्प, मंगल २ कर्प, पुरानागुड ३ कर्प लेकर बारीकचूर्णकर तीनोंको इकट्ठा कूटकर ७ गोलिया बनावे । इसमेंसे १-१ गोली धीमे मिलाकर खानेसे कईबार बमनहोगी । उपरब शान्तहोनेपर गेहूँ और चनेकीरोटी धी तथा घाकुरेसाथखाय । पाचवेंदिनेसे बमन बन्दहोजायगी । इन ७ गोलियोंके घेरेहोनेपर भगन्दसे निश्चनहोताहै ॥ १८ ॥

### ९९ शिलापूतरसः

चूर्ण पाटेल्वारण्यो भण्डे दत्त्वा मनशिलाम् ।  
तत्पुष्टे शुद्धसूतन्तु कुन्दयश्शं प्रदापयेत् ॥ ४२२ ॥  
सूतार्द्धं कुन्दटीचूर्णं तस्योद्धं पूर्वमूलिकान् ।  
चूर्णं दत्त्वा पचेशुल्फां यामाष्ट्रे मृदुबहिना ॥ ४२३ ॥  
शिलापूतो रसो नाम हन्ति ह्रिक्कां त्रिगुञ्जकः ।  
रास्नाबृहत्स्रियलाकारं दुग्धञ्च पाययेत् ॥  
हिरिक्कं पाययेद्धूमं पत्रैः शिखिनिशोद्धये ॥ ४२४ ॥

र र स, र च, र को, र का, हिरायाम् । र का शिलाघनतरसेति नाम, परन्तु तत्र अष्ट पाटोऽस्तीति विद्वद्भि-  
रविस्मरणीयम् ।

**भाषा**—पाठा और इन्द्रायणकाचूर्ण धोके येदेये विछाकर इससे चतुर्गोश मैनसिल धिछावे । सपर मैनसिलकेबराबर शुद्ध पाठा रसकर पारेसेभाये मैनसिलके चूर्णसे टककर पाठा और इन्द्रायणकेचूर्णसे ठकद । फिर पाठाका डमरुयनबनाया ६-७ कपडमिडीदेकर अच्छीतरह सुखाय चूल्हेपररख ८ पहरकी मृदु-  
अग्निसे पकावे । स्वाहशीतलहोनेपर धीरजसे डमरुयनका शुद्ध उपाह ऊपरकेपात्रमें लगवुष्ट औहरको निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रसीकीमाना सोड्केचूर्णकेआम मिलाकरदेवे, ऊपरसे राखा, बनभाटा, चिन्तक, बला इनकाबाय अथवा दूध पिलावे । इसपर चिन्तक और हल्दीका धूमपानकरानेसे हिचकी नष्टहोतीहै ॥ ९९

### १०० शिलावदरसः

मृतमृतस्य भागैर्कं भागैर्कं शोधितां शिलाम् ।  
दिनं जन्जीरजे द्रायै मयं रक्षा धमेहघ्नु ॥ ४२५ ॥  
शिलायद्धो रसा नाम गुञ्जेकं पित्तशूलजित् ।  
एकं हिङ्गु शतं पथ्या त्रि. शुण्ठी द्वि. सुवचंला ।  
पतञ्जचूर्णञ्च कर्पैकमनुस्याच्छलशान्तये ॥ ४२६ ॥

र. र, टो, यो म, र र कौ, र क ल, रसायनस, गुलाड पिकारे । योगमहाणीब रसायनसङ्ग्रहे च पद्मभागा मन शिला नियोजिता । रसायनसङ्ग्रह शिपियद्वरस इति नाम ।

**भाषा**—पारदमत्स्य और शुद्धमैनसिल समभागलेकर एकदिन जमीरीकेरसे मर्दनकर दमप्रपात्रमें बन्दकर बहुत मन्द अग्निमें धमनकरे । इसमेंसे १-१ रसी उचितानुपाननेसाथदेकर सुनीहींग १ तोला, हरे १०० तो, सौठ ३ तो, खमी २ तो इनका बारीकचूर्णकर १ तोला अनुपानकेतौरपर पिलानेसे पित्तशूल शान्तहोताहै ॥ १०० ॥

### १०१ शिलायोगः

शिलाव्योपाऽभयाहिङ्गुविडङ्गसैन्यवेः समैः ।  
लेहोऽयं समधुः कासहृषकाध्वामेषु शस्यते ॥ ४२७ ॥  
हितो, र. र स, कासादी ।

टि०—रसालगमसुख व्योपस्थाने केवल मरिच गृहीत इष्टघ्राडि-  
कनाया नियोजितम् । कुष्ठसाङ्गैव योग विषादेक एव योगो निष्पादनीय  
**भाषा**—शुद्धमैनसिल, त्रिफळ, हरे, सुनीहींग, पिडङ्ग, कुठ और संधानमक समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा घृत और मधुनेसाथलेनेसे यह कास, हिचकी और खासको नष्टकरताहै ॥ १०१ ॥

### १०२ शिलावीररसः

रसमत्स्यसमं गन्धं शिलाजत्वम्लयेतसम् ।  
यामैकं मर्दयेत्सर्वं मधुसर्पियुतं लिहेत् ॥ ४२८ ॥  
निर्गैकैकं वर्षमानं शिलावीरो महारसः ।  
जराकालं निहन्त्याशु जीवेद्वर्षशतत्रयम् ॥ ४२९ ॥  
पलाद्धं मुशलीचूर्णं भृङ्गराजरसे. पिबेत् ।  
धात्रीफलरसे वाऽयं कामकं ह्यनुपानकम् ॥ ४३० ॥

र य, र. क, रसायनस, रसायने ।

टि०—रसेन्द्रकल्पद्रुमे यथकस्थाने माश्विच गृहीतम् । र यो, र  
म मा, पथ्यो सर्वरोगघ्न इति नाम, अनुपानञ्च न हृष्यते अतस्त  
स्यात्रैवाऽन्तर्भावः कर्णीय, तत्र माना द्वैमाषिर् निषारिता सा त्वकि-  
ञ्चित्परी, न हि मात्राया निश्चिन्नाऽस्ति तस्या देशकालादिमापन्नत्वात्

**भाषा**—पारदमत्स्य, शुद्धगन्धक, शिलापीत और अम्ल वेत समभागलेकर बारीकचूर्णकर एकपहर शुष्कमर्दनकर रख छोड़े । इसमेंसे १ माशेसे ४ माशेदक उचितानुपानकेसाथ एकवर्षतकलेनेसे मुशपेको जीतकर ३०० वर्षकी आयुको प्राप्त होसकाहै । आधापल मुशलीकाचूर्ण अगर अथवा आवलेके रसकेसाथ लेनेसे शरीरमें रसका सन्तमनहोताहै

**विशेषसूचना**—इसमें ४ माशेकीमाना और आधापल मुशलीका जो अनुपानलिखाहै सो ग्रन्थकारने किसीको दकर नहीं देखाहोगा एसा प्रतीत होताहै क्योंकि नित्यबनाय कोई सतुल्यमें नहीं हुएहै जा कि इतनीमात्रा उससमय खोग सहन करतेहों । इसीलिये साधारणतया इसकी १ माशेकी मात्रा और ४ मासे मुशलीकाचूर्णदेना उचित प्रतीत होताहै । ॥ कोई भीमाह्वार हो और प्रतीमानको हन्तकररखा हो तो उसे देनेमें दृष्ट नहीं । साधारणलेगोंको पहिले प्रतीमाना देनेमें आमवात होनेका सम्भवहै ॥ १०० ॥

### १०३ शिलासिन्दूरम् ( शिलाचन्द्रोदय ) १

मन शिलामार्द्रयेर्विमर्दे  
देकाधिकं चिंशतिरुत्थ आद्यम् ।  
संशोष्य संशोष्य तथा समेदं  
तत्तुल्यगन्धेन मषीञ्च कुर्यात् ॥ ४३१ ॥

भृत्या च कृप्यामय बालुकारये  
यन्त्रे पचेदस्रचतुष्टयं तत् ।  
काष्ठाऽग्निना क्षीतमथावतार्यं  
गले विलम्बे रसमाददीत ॥ ४३२ ॥  
चन्द्रोदयश्चैव मनःशिलादिः  
कुष्ठादिरोगापनयाय दिष्टः ।  
इष्टश्च गुञ्जाद्वयमात्रमानो  
हेमन्तकाले पुरुषाय यूने ॥ ४३३ ॥  
रसायनसारः, उष्ट्रे ।

भाषा—शुद्धमैनसिलको २१ दिनतक अदखकेरसमें  
घोटकर सूखेपर बराबरका शुद्ध पारा और गन्धक मिलाय  
नीलवर्णकजलीकर ६-७ कण्डमिगोदीहुई आतशीशीशोमें भरके  
प्रथम चन्द्रोदयकीतरह बालुकायधमें रख ४ दिनकी अग्निदेवे ।  
स्वाक्षशीतलहोनेपर मुक्तिपूर्वक शीशोमेंसे निकालकर रसजोड़े ।  
इसमेंसे १ रसीसे २ रसीतक कुष्ठहराजुपानकेसायदेनेने यह  
समस्तकुष्ठ और शीतपूर्वककरोंको नष्टकरताहै । इसकाप्रयोग  
शीतकालमें जवानआदमीपर करना उचितहै ॥ १०३ ॥

१०४ शिलासिन्दूरम् ( शिलाचन्द्रोदयः ) २

नलीडमर्षाव्ययिषी पुरस्तात्  
पट्टपङ्क्तिगुण्यादिचलि रमेन्द्रे ।  
पन्त्या ततः शुद्धमनःशिलायां  
घृष्ट्वा पचेत्तुल्यगुण्यकायाम् ॥ ४३४ ॥  
एतद्विधानेन यथेष्टमुत्रं  
कुर्यात्किं कुर्यादपि रोगसङ्घम् ।  
घनस्पतिन्यायरसादियोगे  
मर्षी विभाष्याऽपि रगतिर्योग्यैः ॥ ४३५ ॥  
शुद्धी शिलाया अपि कामचारः  
सारम्पदयस्य मिषग्नरस्य ।  
दिग्दर्शनं तालयिमुर्जनेन  
सन्दर्शितं मुर्जनेनसिद्धिहताः ॥ ४३६ ॥

रसायनसार, सर्वरोगाऽधिगार ।

भाषा—नलीगुण कमलपत्रमें पहिले पारेमें पट्टणादि-  
गन्धकनारंगकर उषकीबराबर शुद्धमैनसिल और गन्धक मिलाय  
नीलवर्णकजलीकर ४ दिनकी आचदेकर रसगिन्दूर तैयारकरे ।  
इसमेंसे १-१ रसी तप्तप्रोहदाजुपानकेसाय देनेने यह समस्त  
रोगगन्धको दूरकरताहै । तप्तप्रोहदा वनस्पतियोगकेसायके कब  
सीमें भावनादेकर यदि सम्यक्क्रिया हो तो तप्तप्रोहोंको विशय  
कर नष्टरोग । इगीतरह मैनसिलगीमुदि में भी बर अथनी  
मुदिपूर्वक विचारकरसाफहै । मुदिमानोकेलिने केवल दिग्दर्शन  
पर्याप्तहै ॥ १०४ ॥

१०५ शिलासिन्दूरम् ( शिलाचन्द्रोदयः ) ३

हारिद्रमल्लालयिगत्पनेले  
जैपालमहातकहृत्पनेले ।

व्यस्ते समस्तेऽप्युतगालितायां  
मनःशिलायां दधिवापितायाम् ॥ ४३७ ॥  
उष्णाम्बुसङ्घालितशोपितायां  
घर्मेऽनितोत्रे समशुद्धगन्धम् ।  
सुवर्णसङ्घालितसूतराजं  
नीत्वा समं लोहकटाहिकायाम् ॥ ४३८ ॥  
मन्दाग्निगतं त्रयमेतदेकी-  
कृत्य प्रघर्षेण राजेन भूयः ।  
शुल्याः कटाहीमवतार्य पट्टं  
निस्सार्य कुर्यात्पट्टगालितञ्च ॥ ४३९ ॥  
समृत्पट्टायामनुकृपिकायां  
भृत्या मर्षी यामचतुष्टयेन ।  
सर्वाधकुर्यात् सिरुताव्ययत्रे  
पन्त्या गलस्य रसमाददीत ॥ ४४० ॥  
रक्तस्थदोषानपहणाय शीघ्रं  
धातुनशेषानुपर्जाजयेत् ।  
शिलादिचन्द्रोदयसन्धकः स्वा-  
दुष्णस्यभावो मन्त्रीतमेव्यः ॥ ४४१ ॥

रसायनसार, कफरोग ।

भाषा—गीलासोमल, हरिताल, बडनाग, जमात्मोडा और  
भिलावोंसे निकालेहुए तैलमें स्वकीय इच्छाानुसार मैनसिलको  
कालकर दहीमें डँडार अत्यन्ततीक्ष्णरूपमें गुप्ताकर इसकीबरा-  
बर शुद्धगन्धक और सुवर्णमाददियाजुपानापाता समभागलेकर  
नीलवर्णकजलीकर लोहेकीकटाहीमें रख मन्दाग्निमें पिघाकर  
लोहेकीकटाहीसे घोटकर तीनोंको अच्छीतरह मिलाकर पुन-  
घोटकर फिरसे बज्जकीबनाय कण्डानगर ६-७ कण्डमिगो-  
दीहुई आतशीशीशोमें भरके सर्वाधकरीमगीपर बालुकायन्त्रमें रस  
४ पहरकी कड़ी आचदे । उसकामुह सुकारगनाचादिये नहीं तो  
४ पहरमें रसतेयार नहीं होगा । पर आंचरन्दकरतेगमय सीसीका  
मुह बन्दकरदेना नहीं तो शीशी राखी मिलेगी । स्वाक्षशीतल-  
होनेपर मुक्तिसे शीशीको फोडकर रगको निकालने । इसमेंसे  
रसी और रोषका बराबर देकर आधीरसीमें एकरशीतक  
उचितमात्रामें देनेगे यह कागपाक्षादि कष्टप्रधानव्याधियोंको  
तत्क्षण नष्टकरताहै । अन्य अनुपानोंकेसाय यह अनुपान न पड़े  
तो मरुतनेके साथ देना ॥ १०५ ॥

१०६ शिलासिन्दूरम् ( चतुर्थम् )

पीजं हरस्य च तद्वामनःशिलाञ्च  
घट्टरमास्यरसमर्दितमष्टयाम् ।  
तत्काचकृप्रीनिहितं मुमुद्रितं  
द्वात्रिंशदायामपिहितं मिषताव्ययत्रे ॥  
तत्पारदं भवति शुद्धमप्यनुपुत्रं  
तद्योगवाहि पलदं च रसायने च ॥ ४४२ ॥  
यो म, रसायने ।



धूपमें सुलावे । ऐसे १०० भावनाएँ देकर जमालगोटा और थोईहुईमिचं प्रत्येक ४०० नग, एण्डवीजोंकीमन्वा ६० नग मिलाकर जमीरीकेरससे ७ दिनतक मर्दनकर लड्डबराबर गोलियां बनान्तर छायाशुष्ककर रखलोढ़े । इनमेंसे १-१ गोले जमीरीके रसमें घिसकर अन्नकरनेसे रतोंधी, ग्रहीटा, सर्पविष, पटलदोष, दुर्गन्धीतज्वर, देवा वगैरह अजीर्णदोष येसब नष्ट-होतेहैं । यद्यपि सहकारक द्रव्यविशेष नहीं बतायाहै परन्तु जमीरी-केरसमें मर्दनकियागयाहै इसलिये व्यानेमेंभी उसीसेकामलेवे । इसीतरह शार्ङ्गधर्म ज्यपापलम्बाको नीचुकेरसमें भावना देकर सर्पविषमें अन्नरलिखाहै । नीचुकास इसमें अनुकूलहै परन्तु सर्पविषकेलिये बहारा मनुगलासे कायलियागयाहै ॥ ११४ ॥

**११५ शीतज्वरारण्यकृशानुमेघः ( त्रैलोक्यकीर्तिः )**

तालने तुल्या गजमागधी स्या-  
त्तद्दमागेन नयं पिबुः स्यात् ।  
दिनार्धमात्रं सुदृढं धिमर्द्यं  
शीतज्वरारण्यकृशानुमेघः ॥ ४७३ ॥  
भुजङ्गयल्लीछद्नेन दद्या-  
त्कोलास्थिमात्रा जयति त्रयौघम् ।  
दुग्धौदनं पथ्यमिह प्रशस्तं  
घारत्रयं कैवलमेव दुग्धम् ॥ ४७४ ॥  
दिने द्वितीये शुद्धजीरकन्तु  
दुग्धौदनं दाहनिवृत्तये तु ।  
त्रैलोक्यकीर्तिं विपमाश्निहन्ति  
प्रकीर्तिता सा गिरिराजपुत्र्या ॥ ४७५ ॥

१., ज्वरापधिकारे ।

भाषा—हरितालमसम अथवा रसमाणिक्य, गजपीपल और बिनीलैकीमांगी समभागलेकर ४ पहर शुद्ध मर्दनकर रखलोढ़े । इसमेंसे बेतकीगुल्लीकेरावर भाषा पानमें रखकरदेनेसे यह समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै । इसे दिनमें ३ बार देना । पथ्यमें दूधभात एकवजदेना । बादमें भूखलघुनेपर केवलदूध पिलाना । दूसरेदिन गुग्गु और जीरेकेसाथ गोली देना । और अधिकदाह माल्मदोषनेपर दूधभात देना । इसकेसेवनसे शीतपूर्व अथवा दाहपूर्व, एकाहिक, द्वापहिक, त्रयाहिक, चातुर्हिक समस्त-विषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ११५ ॥

**११६ शीतज्वरारिरसः ( प्रथमः )**

पट्टपलं तालकं शुद्धं योजं भृत्तारजस्य वारिणा ॥ ४७६ ॥  
शुक्रायाध्याऽपि कृष्णाया काकमाच्या रसेन च ।  
अर्कमेष्टुण्डदुग्धेन दातव्या भावनाः क्रमात् ॥ ४७७ ॥  
तत्कल्कं रोष्टिकाकारं स्यात्स्यामारोप्य यत्नतः ।  
संनुक्लश्च पुनर्धायं दाराये शुभलक्षणं ॥ ४७८ ॥  
तद्य घग्ममृदा लिप्त्वा सन्धिं गृह्णा विशारयेत् ।  
ततश्च बालुकायन्त्रे धार्यं नद्य प्रयत्नतः ॥ ४७९ ॥

तुल्यामारोप्य दातव्यो वह्नि यामत्रयं क्रमात् ।  
स्वाङ्गशीतं गृहीत्वा तद्रोलं सञ्चूर्णयेत् दृढम् ॥ ४८० ॥  
तस्मिन् मरिचचूर्णस्य द्विपलं चोथ मेलयेत् ।  
नागवल्लीदलेनाऽयं भापमानश्च भक्षितः ॥ ४८१ ॥  
हन्ति शीतज्वरं घोरं ध्रुवं तत्रौदनाशिनः ।  
रसः शीतज्वरारि हि वैद्यवृन्दैः सुभाषितः ॥ ४८२ ॥  
रसचि., र. शं. शीतज्वरे ।

टि०—रसरजयद्ग्रे शीतमेरवान्ना “समानमहातपनाल्को-  
दृढ सञ्जीवितवर्कयोविभावितौ । तस्यक्रिते खरंयन्मध्यमे पृथग्वि  
लभे च पुंदिनि मिषा ॥ एवाहिकादीं तुहितज्वरेऽप्य प्राक्प्रीतया  
लादितेऽप्य बहम् । गवाणचर्षेमरिचै समेत शाल्वोदन दुग्धमिदं वि  
पथ्यम् ॥ तापो यदि स्वादपरेऽपि तोय वटप्ररोहसमुप पिबन् । प्रभु-  
मान सिनया समेन शीताक्षर भैरवनाममेवम् ॥” इति पाठा निष्ठितोऽस्ति  
न उपरितनपाठस्यैवापप्रबोऽस्तीति विद्वद्भिर्विभाषनीयम् । रसचि  
न्तामर्णां सिद्धतालकेश्वरान्ना “महातक तालवज्जुष्यभाग सञ्चिदका  
यन्त्रे च कत्तम् । दत्वा शरावश्च सुमभिरौष सुषुष्काल्पानिर्गिरिस्तु  
मथ्ये ॥ यदा च नवैं सुक्षिता भवेयुस्तदा रस स्यात्तु तालकेच ॥”,  
इति पाठो निष्ठितोऽस्ति परन्तु शीतज्वरारिणाऽयं सर्वाभिः समान, नाच-  
नार्दी प्रथमे च येन न्यूनता दृश्यते तत्र मध्यमद्वयैरुपरपाठ पाठसर्वेक  
एकाऽस्ति इति विद्वद्भिर्नान्विज्य विचारणीयम् ।

भाषा—शुद्ध हरिताल और मिलावे ६-६ पललेकर बारीक-  
कूटकर भंगरेखेससे एकदिन मर्दनकर सपेद और फालीमकोय,  
आक और भूरकादूध इनप्रत्येकमें १-१ दिन मर्दनकर कल्ककी  
रोटी जैसी बनाय हंडीके पेंदरेपर रखकर सुखाले । फिर शराव-  
समुद्रमें बन्दकर ६-७ कपहमिगी देकर अच्छीतरह सुखनेपर  
बालुकायन्त्रमें रख ३ पहरकी मध्यमापि देवे । स्वाङ्गशीतल  
होनेपर निकालकर २ पल थोईहुई मरिच मिलाकर खलकर  
रखलोढ़े । इसमेंसे १-१ मासा पानमें रखकर खानेसे घोर-  
शीतज्वरको यह नष्टकरताहै ॥ ११६ ॥

**११७ शीतज्वरारिरसः ( द्वितीयः )**

दम्भुः फेनमहेः शिला सरसकं माक्षीरमेकांशकं,  
शुल्बं सोमलमक्षिभागमविलं नि.कारयह्वीरसः ।  
आर्द्राकृत्य कृतः मुकृष्णलमितः शीतज्वरारिः सिता-  
मिथो हन्ति सुदुग्धभक्तकभुजः क्षणान्सशीतज्वराव  
२ प., र. यो. शीतज्वरे ।

भाषा—शुद्ध, अफीम, मेनसिल, स्वरिया, सोनामाती  
१-१ भाग, ताप्रमम्म और सोमल २-२ भागलेकर बारीक-  
चूर्णकर कलेकेरसकी ३ भागपर देकर १-१ रतीसंगोलियां  
बनाकर रपओढ़े । इनमेंसे १-१ गोली शरावकेसाथ देनेसे  
दाह अथवा शीतज्वरोंको यह नष्टकरताहै । इसमें पथ्य दूध-  
भातदेना ॥ ११७ ॥

**११८ शीतज्वरारिरसः**

कर्ममात्रं हनं शुल्बं पञ्चांशा खर्परी शिला ।  
रसद्विगमकैः तालं कारयह्वीरसः पुटत् ॥ ४८४ ॥

वालुकायन्त्रसंपन्नं गुञ्जामात्रं नियोजयेत् ।  
सप्तभि मरिचै युक्तं शीतज्वालां निवृन्तयेत् ॥ ४८५ ॥  
र क यो, ज्वराधिकारे ।

भाषा—ताम्रमस १ कर्ष, खपरिया और मैनसिल ५-५ कर्ष, शुद्ध पारा, गन्धक और हरिताल २-२ कर्ष लेकर नीलवर्ण कजलीकर करेलेकेरससे १-२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शराव सम्पुटमें बन्दकर ४ पहरकी वायुकायमें अग्निदे । स्वाक्षशीतल होनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती ७ मिर्चोंके साथ देनेसे यह शीतज्वालाको निवृत्तकरताहै ॥ ११८ ॥

### ११९ शीततापहरणरसः

चूर्णतालमनलेन समानं  
वज्रिजेन सलिलेन विभाज्य ।  
पाचयेत्लघुपुटेऽथ च बह्व  
शीततापहरणं ससितस्तु ॥ ४८६ ॥

यो च, शीतज्वरे ।

भाषा—शीपकाचूना और हरिताल १-१ भाग, शुद्ध भिलावा २ भाग लेकर सयका अलग २ चूर्णकर भिलावेकेसाथ मिलाकर धूरकेदूधसे ३-४ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शराव सम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपडिमिठी देकर लघुपुटकी आचदे । स्वाक्षशीतलहोनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकी मात्रा शक्करकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै ॥ ११९ ॥

### १२० शीतपित्तभञ्जनरसः

पारदं गन्धकश्चैव फालीसं ताम्रमेव च ।  
शुद्धं मृदञ्च संयोज्य खल्वे गाढं निमर्दयेत् ॥ ४८७ ॥  
भृङ्गराजरसेक्ष्वैव दापयित्वा त्रैस्तथा ।  
भाषयित्वा तु सप्ताहं ततो गजपुटे पचेत् ॥ ४८८ ॥  
धारथयं तता नीतं शीतपित्तप्रभञ्जनम् ।  
रसं गुञ्जद्वयं घीमान्गुडेन सह दापयेत् ॥ ४८९ ॥  
अनेन चाग्नौ नश्यन्ति शीतपित्तादयो गदाः ।  
कुष्ठान्यपि च सर्वाणि धातरक्तं तथैव च ॥ ४९० ॥  
जलायगाहं घायाश्च सेपनञ्च प्रजागरम् ।  
विद्वाहिं चाशनं त्याज्यं शीतपित्तादितोरोगिणा ॥ ४९१ ॥  
र म मा, ना वि, शीतपित्ते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, कमीस और ताम्रमस सम भागलेकर नीलवर्णकजलीकर भग्ना और सफेकाकेरसोंसे ७-७ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपडिमिठी देकर गजपुटकी आचदे । स्वाक्षशीतलहोने पर निकालकर भग्ना और सफेकाके रसोंसे १-१ दिन मर्दन पूर्ववत् गजपुटकी आचद । ऐसे ३ आचदेकर बारीक पीसकर रखडोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती शुद्धसाधनेसे शीतपित्त, कुष्ठ, वातरक्त येमर नष्टहोतहै । इसके मेकनइनेवालेको शीत जख्यान, वायु, जागरण, निद्राहीनता छाड़ने चाहिये ॥ १२० ॥

### १२१ शीतभञ्जनरसः ( प्रथमः )

हितुष्यं मरिचं सूतं गौरीपाषाणनागरम् ।  
कारवल्लीरसे मयं कुङ्कुटीपुटपाचितम् ॥ ४९२ ॥  
भस्त्यपिषेस्ततो भाव्यं गुञ्जामात्रं प्रयत्नतः ।  
शर्करामनुषानेन देयं शीतज्वरं हरेत् ॥  
हृत्पक्रुदितः पूर्वं नास्त्राऽयं शीतभञ्जनः ॥ ४९३ ॥  
वै चि, वा, शीतज्वरे ।

भाषा—शुद्ध तुलिया, हीराकसीस, मरिच, पारा, सोमल, सौंठ समभागलेकर पारद अष्टवहोनेतक मर्दनकर बरेलेकेरससे एकदिनमात्रावा देकर शरावसम्पुटमें बन्दकर कुङ्कुटपुटकी आचदे । स्वाक्षशीतलहोनेपर निकालकर मछलीकेवित्तसे एकदिन मर्दन कर १-१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ गोली शक्करकेसाथदेनेसे यह समस्त शीतज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ १२१ ॥

### १२२ शीतभञ्जनरसः ( द्वितीयः )

तुल्यमेकं त्रयं तालं शिलाचूर्णं चतुर्गुणम् ।  
कुमारौरससम्पिष्टं कुङ्कुटीपुटपाचितम् ॥  
तुलसीरससंयुक्तं शीतज्वरविनाशनम् ॥ ४९४ ॥  
र क यो, र वा शीतज्वरे । स्वभारिनाते पूर्णचन्द्रोद-  
येति नाम ।

भाषा—शुद्ध तुलिया १ भाग, हरिताल ३ भा, मैनसिल ४ भागलेकर बारीकसीस चीकुवारकेरसमें एकदिन मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर कुङ्कुटपुटकी आचदे । स्वाक्षशीतलहोनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती दुग्भीकरसक साथ देनेसे यह शीतज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ १२२ ॥

### १२३ शीतभञ्जीरसः ( शीतज्वरारिसः ) १

सूतकं गन्धकश्चैव हरितालं मन शिला ।  
एकनिष्कं द्विनिष्कञ्च चतुर्निष्कं तथैव च ॥ ४९५ ॥  
पञ्चनिष्कं रसे, कारवेल्ल्याः सम्पङ्क प्रप्लवयेत् ।  
ताम्रपत्राणि तुल्यानि तेन कल्मेन लेपयेत् ॥ ४९६ ॥  
शतपत्रसम्पुटे तानि हृत्वा तेषामुपर्यपि ।  
दद्यात्तां पिष्टिमां पञ्चातुटपाकेन पाचयेत् ॥ ४९७ ॥  
ततः सञ्चर्षयेदेवं रसः शीत्रेण भक्षितः ।  
यनेकमात्रेया हन्ति धोरं शीतज्वरं ध्रुवम् ॥ ४९८ ॥

भा प्र, र स, र क, र क, र सु, भै वा, वै द, वि र, भै र, यो म, र क, रसायनसं., र क ल, र र दी, गो, र धा, र स स, र (मा), र क यो, रसायनमार, र र स, र को, यो च, ज्वराधिकारे ।

टि०—यै र, र क पन्थो श्रीनारिरिनि नाम । रसायनसं नाम शीतज्वरारिसः इति नाम । र क ल उरराट्टनेनि नाम, वा म श्रीनज्वरारिसः । र र दी, र का पन्थो शिवज्वरारिसः इति नाम । र र र र र शिवज्वरारिसः इति नाम । शीतज्वरारिसः

द्रागादरहितमिति पाठः नित्याज्य रसान्तरं प्रकल्पितम् । तत्तु न सम्यक् प्रतिभाति, कबल क्रमाद्वागविष्टं तदित्यस्य स्थाने कनापि कारणेन विभ्रम एव प्रतिभाति । चिकित्सारहस्यं द्वाितावस्थाने ग्लिरहित एक पाठः प्रकल्पितस्तानादृशानतादितिरिकं सर्वमपि कलं न पदयाम् ।  
( र ( मा ) शुक्लीनलस्थाने कर्त्रीरसेन भावना भदता । रजानरीपथ योगे गन्धकस्थाने तुल्य नित्ये च रामायण इति नाम स्थापितम्, तस्यापि पाठस्याऽऽनवाप्त्यर्थं कृतम् । तुल्यकनादधिक्यत्वाऽन्ये नियोजनीय तथाकरणे गुणवृद्धिर्बलव्यति पाठान्मुता न महत्त्वम् । रसायनसारेऽपि पाठो ज्वराङ्गनाम्ना निशितोऽस्ति तत्र सर्वेषां द्रव्याणां समताऽस्ति, तुल्योत्पन्नाम्रचन्द्रिकामध्ये च पाकं विहितम् । र र म, र री, यो च एषु गन्धो न दृश्यते परन्तु तत्रिष्काम नाय पञ्चभाषाऽस्ति प्रत्युत गन्धकप्रयोगे गुणवृद्धिर्बलव्यति अन स्तत्वाऽप्यन्येवाभावान्तम् ।

भाषा—शुद्ध पाठा, गन्धक २ भा, हरिताल ४ भा, मेनसिल ५ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर करेलेकेरसे १-२ दिन मर्दनकर इनकी बराबरके शुद्धतावके पत्रोंपर लेप देकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर २-४ कपड़मिथी देकर गजपुटकी आवेदे । स्वाज्ञशीतलोहोपर निकालकर रखलोहे । इसमेंसे १-१ यवप्रमाण उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह घोलीतरावकी नष्टकरताहै ॥ १२३ ॥

### १२४ शीतभञ्जीरसः ( द्वितीय )

रसहिङ्गुलतालानि तुल्यं शम्भुकजं रज्ज ।  
कन्याङ्गिः सप्तधा भाव्यं पक्वञ्च शरावके ॥४९९॥  
अहोरात्रं पुन शीतं कुम्भाधः सिकृतान्तरं ।  
दत्त पथ्यन्तु तत्रेण भक्त क्षीरेण वा युत ॥  
लवणेन विना सर्धाभ्राशयेद्विपमज्वरान् ॥ ५०० ॥  
र का, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पाठा, शिगरिक, हरिताल, तुल्य और घोंघा समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीतुगरेरसे ७ भावनाए देकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर बालुकायन्त्रमें रख एकदिवसतकी अग्निदेव । स्वाज्ञशीतलोहोपर निकालकर रख छोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे १ रत्तीतक समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तविपमज्वरोंको नष्टकरताहै । इसमें पथ्य तक अथवा दूधमात देना और नमकका परहेज करना ॥ १२४ ॥

### १२५ शीतभञ्जीरसः ( तृतीय )

रसगन्धो शिला ताल माक्षीर नियतुल्यके ।  
तुल्यं स्तुम्भोरपुटित सघृत कूर्मपाचितम् ॥  
शीतमझा रसा हन्ति हिगुञ्जा विपमज्वरान् ॥ ५०१ ॥  
र का, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पाठा, गन्धक, मेनसिल, हरिताल, सोना-माखी, बज्राग और तुल्य समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर भूरेकेदूधसे १-२ दिन मर्दनकर सूखीकम्पली बनाय आतसी-शीशीमेंबर मुदबन्दकर बालुकायन्त्रमें ४ पहरकी अग्निदेव । स्वाज्ञशीतलोहोपर निकालकर रखलोहे । इसमेंसे २-२ रत्ती धोकेसापुटनेसे यह समस्तविपम-ज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ १२५ ॥

### १२६ शीतभञ्जीरसः ( चतुर्थ )

रज्जो तालं सोमलकं हाष्टिं शुक्तिचूर्णकम् ।  
तुल्यं बल्लीरसपुटे. शीतभञ्जीरस पर. ॥ ५०२ ॥  
र का, ज्वराधिकारे ।

भाषा—नायबज्जमस, हरिताल, पीलासोमल, मोतीकी-शीप और तृतीया समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर करेलेके रसरी ६-७ भावनाए देकर भूगगरावर गोठिया बनाकर रख छोड़े । इसमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सम-स्तविपमज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ १२६ ॥

### १२७ शीतभञ्जीरसः ( पञ्चम )

द्विपञ्च पञ्च पञ्चैव द्रुङ्गालनघसारकम् ।  
काकमाथीरुक्ककाष्टिं मर्दितञ्च दिनं दिनम् ॥५०३॥  
सूर्ययामिः शरावेण पकोऽयं तु रस. पर. ।  
शीतभञ्जी हिगुञ्जस्तु निहन्ति विपमज्वरान् ॥५०४॥  
र का, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध सुहागा १० भाग, हरिताल और नोसादर ५-५ भाग लेकर मकोय और पीडावारकेसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ४-५ कपड़मिथी देकर बालुकायन्त्रमें १२ पहरकी अग्निसे पकावे । स्वाज्ञशीतल होनेपर निकालकर रखलोहे । इसमेंसे २-२ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह विपमज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ १२७ ॥

### १२८ शीतभञ्जीरसः ( षष्ठ )

पारदं रसकं तालं तुल्यं द्रुङ्गणगन्धकम् ।  
सर्वमेतत्समं शुद्धं कारवेह्वरसे दिनम् ॥ ५०५ ॥  
मर्दयित्योदरं लिम्पेत्ताम्रपात्रस्य शुद्धिमात्रम् ।  
अङ्गुलार्द्धार्द्धमानेन तं पचेत्सिकताह्वये ॥ ५०६ ॥  
यन्त्रं यावत्स्फुटत्येव त्रीहयस्तस्य पृष्ठतः ।  
ततस्तच्छीतल प्राह्यं ताम्रपात्रोदराद्विपक्वम् ॥ ५०७ ॥  
भाषेकं पर्णदण्डेन भक्षयेन्मरिचं समम् ।  
शीतभञ्जी रसो नाम त्रिविदाम्राशयेज्ज्वरम् ॥ ५०८ ॥

र स, र सि, र र स, र क ल, भै र, रसायनस, र को, र सु, र च, यो च, यो म, र मु, र म, र चि, र स क, भा प्र च रा, र क, नि र, चि र भ, र ( मा ), दो, र का, र क यां, र स स, र र को, शा. स, र प्र सु, र वो, र पा ज्वराधिकारे ।

टि०—रसमुक्तवस्तुषा द्रुङ्गणवर्षाने कुनगे नियोजिता, बरमादेव रसाचात्रपात्रादल्पनारिद्रिषा निष्कारय शीतद्वारीति स्वतन्त्रनाम ग्याप्तियम् ॥ घटपात्रस्थानं "तुल्य द्रुङ्गणमृतापकविष सत्त्वरं तात्क, सर्वं स्वल्पन विषय धनिका तत्कारवर्तीरते । शुभैवधमिना मुञ्चकर युता समीकपात्राधवा, पट्टविचिचतुषोमीहण शावाहुता नामत ॥" अथ पाठ वै वि, वै द, नि मा, यो म, र प्र, यो र, ना, एषु निह्निताऽस्ति । र सु, रसायन, नि र, र का, र वो, र क या एषु तु पाठद्वयमपि निहितमस्ति तत्र शीताङ्गुना निपमविषयानि तावतावनेनारिद्रिषा च नाम्नि न्यायात्ताव भद

दन्तर प्रणीयत परन्तु प्रवृत्तये विषयेषु विधाय रसनिष्पादने कलाभिरस्य पाठ्यमुत्तमा च महत्त्व भवितव्यस्तत्तत्तस्याऽऽवधानाभावे क्लेशोऽस्ति इति विद्वद्भिरावलीनम् । रस स, र क ए, र को एषु अन्तेषु शीतारिणां "शुल्व गन्धद्वङ्गौ गन्धतुल्य रस रसं, ताल तुल्य मिदं" इत्यारिक स्वतन्त्रादौ निहितोऽस्ति । उपरि निर्दिष्टवत्या तस्याऽऽवधानाभावे भुक्तर । विवित्ताहस्ये तुल्य परितकम् । पुनर्विद्वत्स्थाने तात्र नियोजितं तत्तु न सत्यम् । अये तात्राप्रशोदो रसविधानम् । दशमप्रकाशमर्दितस्य रस प्रयोगात् स्वतन्त्रतामदानस्य नास्त्यत्यावश्यकता । ननु तात्राप्रशोदरिति प्रथम्या तात्राप्रथम्य धृप-गवस्थानात्कथं भरीभूताप्रकाशमर्दितस्य भास्यत इति चेन्न तथापि तात्राप्रशोदो रसविधानस्यैव वैयर्थ्यात् । प्रथमशीतमभिमानोऽप्य नो गोऽस्ति तत्र च तात्राप्रथमस्यैव प्रथममस्ति इति शुभेभिर्द्वयाकलनीयम् । अपरिपक्ताप्रकाशमर्दितस्याऽऽपत्त्यावश्यकद्विद्वदानस्य निर्वाहः करणीयः । रसप्रशेषस्य तु निरारम्भोचितो प्रतिभाति । र स, र क एषावुपयोगे तुलसीमरिच विहितम् । तथापि "पात्रीकल्वनं वा शुक्ल दाहास्य विषमशयेत् । पृथ्वीधन दशगन्धवृष मसंवेदम् । ज्वरे धानुने दशास्त्रिकीश्रीरसपुनश्च । जय पञ्चानना नाम विषमज्वर नाशन ॥" इत्यपि पाठ इति मय्य च पञ्चाननरस इति स्थापितम् । र स, र क स, एष्वी ज्वरारितस्य इति नाम । रसकाम भनौ द्वितीयस्थाने तात्रमाक्षिप्य विषयविकल्पा निवृत्त्यैव रसोऽज्वरैव प्रमिष्यता निष्पादितं परन्तु तत्र कामश्चतुर्दशवितुरिक्तानपाऽस्ति । तात्राप्रशोदं विन्यदिति वाक्येन तात्रयोगस्याऽऽवधानासिद्धत्वेन स्वतन्त्र प्रथमस्याऽऽवधानात् । तस्मात्तत्र पात्रोऽभावोऽस्तीति प्रतीयते, तन्मू लन्तु पात्राद्वरगुणक बुद्धिपात्रोऽऽवधानम् । रसकामान्तेवैकल्याने ज्ञानभञ्जीनाम्ना "सगन्धमर्दितस्य मासिक दृष्टिं विदुः । रसं शिथिलपुत्रं समभागानि मर्दयेत् । पात्रलोचनेनैव दिनमेकं निरन्तरम् । सुम्नाना वनी दत्ता शीतभञ्जी महारस ॥" इति पात्रा निदि तोऽस्ति तस्याऽऽवधेयं समावेशोऽऽवधानासिद्धिः ।

**भाषा—**शुद्धपात्र, खपरिया, हरिताल, तुल्य, सुहागा और गन्धक समभागलेख नीलवर्णकजलीकर करेलेकेरसे एक-दिन मर्दनकर तावकेवर्तने दो जब मोटा लेपकर सुहर दहन रस सन्धिबन्दकर ६-७ कपडिमिटीदेकर अच्छीतहसुहागा बाल कायन्त्रमें रस ऊपर धाल डालकर अग्निदे । जब पानोंकी झील-होजाय तब अग्निबन्दकरे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर जितना तात्रपात्र अच्छीतह जलाया हो उकैसेसहित निकालकर रखओके । इसमेंसे उडदरावर मात्रा ७ कालोमिनीकेसाथ पानमें रखकर खानेसे धमनहोकर ३ दिनें शीतज्वर नष्टहोताहै ॥ १२८ ॥

**१२९ शीतभञ्जीरसः (शाङ्करीन्वसाङ्कुश) ८**  
हरिद्रा च सुधाक्षारी सिन्दूरं धूर्तनीजकम् ।  
प्रत्येकं कर्ममात्राणि शोधयितानि नवानि च ॥ ७०९ ॥  
हरितालञ्च भृङ्गात् पृथक्कर्मचतुष्टयम् ।  
सूक्ष्मं चूर्णं विधायथ माययेति पृथक्पृथक् ॥ ७१० ॥  
काश्मचीभृङ्गराजसुरणानां रसेः क्रमात् ।  
अर्कदुग्धे सुहोक्षरीस्तद्वदेयं पुटत्रयम् ॥ ७११ ॥  
शुष्कं तद्विडकामये कृत्या दत्त्वा शरावकम् ।  
विधाय सन्धिस्तोष गुडेन लवणाम्भसा ॥ ७१२ ॥  
तस्योपयोगालान्तश्च भस्मना पूर्यं हृषिकाम् ।  
तस्या मुसं मर्दयित्वा मृद्धि, पट्युतैर्ध्रुवम् ॥ ७१३ ॥

पश्चाच्चतुल्यां समारोप्य हठाग्निं यामयुग्मकम् ।  
स्वाज्ञशीतलमुत्तार्य तोलयेत्सिद्धमीपधम् ॥ ७१४ ॥  
तस्य सिद्धस्य पट्टांशं मरिचं दापयेद्बुधः ।  
सूक्ष्मचूर्णं विधायोऽप्य मानां गुञ्जाद्वयात्मिकाम् ॥ ७१५ ॥  
पर्णपत्रेण मतिमान् दापयेच्छीतकज्वरे ।  
दाहयुक्ते च विषमे ज्वरान्सर्वान्यपोहति ॥ ७१६ ॥

**र.शु. ज्वराधिकारः ।**  
**भाषा—**हल्दी, सीपकापूना, सजी और दशधार, रस-सिन्दूर, शुद्धधूरैकेवीज १-१ कर्प, हरिताल और भिलावे ४-४ कर्प लेकर बारीकचूर्णकर भिलावेकेसाथ १-२ पहरघोटकर मैरोय, भंगरा, सुरण, आक और धूरकादृष इनके द्रवोंसे ३-३ भाषनाए देवे । फिर गोलाबनाय गुप्ताकर हण्डीकबीचमें रख उलट धरावसे टकरा शुद्ध और लवणे सन्धिबन्दकर कपड़े में छानीहुई सपेदराख गलेतम्बर डहनलाय ६-७ कपड मिनीसे सन्धिबन्दकर नूलेपरकामय रोपहरकी कड़ीआवदेकर पकावे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर छडाभाग मरिचनिकालकर १-२ पत्र घोटकर रखओके । इसमेंसे २-२ रती पानमें रख-कर देनेसे दाहयुक्तज्वर, विषम तथा साधारणज्वर नष्टहोताहै ॥

**१३० शीतमातङ्गकेशरीरसः**  
रसविपशिखिगन्धं त्र्यम्बकैकनेत्रा-  
ऽनलनिगमशिराक्षै र्वाजयेच्च क्रमेण ।  
कनकदलरसेन सूक्ष्मपिष्टन्तु गुञ्जा-  
परिमितमुदिकेयं शीतमातङ्गसिंहः ॥ ७१७ ॥  
र क, यो म, ना वि, वा, वै वि, ज्वराधिकारः ।

**टि०—**योगमहाप्रेष शीतारिषीति नाम । बाह्ये द्वितीयस्थाने गन्धरहितमिष्य येष शीतयुक्तानाम्ना प्रत्यापिष्यात् परन्तु तत्र योगान्तरताया अभावः स्पष्ट एव बुधिया इति मतिमाति, गन्धकनिष्का सने प्रवीचनाऽऽभावात् ।

**भाषा—**शुद्ध पत्रा १ भाग, बछनाग २ भा, तृतिवा ३ भा, गन्धक ४ भा, खपरिया ३ भाग लेकर सबकी नीलवर्ण-कजलीकर कटोरेरसे १-२ दिनमर्दकर १-१ रसीली गोल्या बनाकर रखओके । इनमेंसे १-१ गोली उचितपुपान केसाथ देनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै ॥ १३० ॥

**१३१ शीतलपर्वटी**  
सौरं प्रकुञ्चे द्रवति प्रणीय  
मायं वलिं दालय स्वल्पकुक्षो ।  
सिद्धो रसः शीतलपर्वटीति  
वृच्छेऽतिवृच्छे कथितः सजीरः ॥ ७१८ ॥  
सि मे म, मृदच्छे ।

**भाषा—**एकालशोरेको कडाहीमें गलाकर नीचे उतार एक माथा शुद्धगन्धक डालकर चलादे । गलजानेपर खरमें डालकर छोटे और बारीकचूर्णबनाकर रखओके । इसमेंसे १-१ भांश जीरकसाधदेनेसे मृदच्छे नष्टहोताहै ॥ १३१ ॥

## १३२ शीतलानन्दरसः

हमरोप्यरसव्योम गन्धं कांस्थं शिलाजतु ।  
कन्याद्रि मर्दयित्वाऽथ मुद्रमानां वटीञ्जरे ॥५१९॥  
यथाद्रोपानुपानेन प्रयोगादस्य निश्चितम् ।  
मसूरिकादयः सर्वे नश्यन्ति त्वरया गदाः ॥ ५२० ॥  
देव्या शीतलया प्रोक्त शीतलानन्दनामकः ।  
मसूरिकाभिभूतानां रसोऽयं हितकाम्यया ॥ ५२१ ॥  
आ वि शीतलयाम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, कासा इनीमल्ले,  
शुद्ध गन्धक और शिलाजीत समभागलेकर धौज्वारकरसे १-४  
दिन मर्दनकर सूगरावर गोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली समयोचितानुपानेमायदेनेसे यह मसूरिकाप्रशुति  
समन्तदोषोंको दूरकरताहै ॥ १३२ ॥

## १३३ शीताङ्कुशरसः ( चातुर्थिकेभाङ्कुश )

रसं गन्धकं निर्विषी वत्सनामं  
तुष्यद्वयं गौरिपापाणतालम् ।  
विमर्द्यापि गोलीकृतोऽयं रसेन्द्रो  
महापूर्यिकाया घलाया रसेन ॥  
रसे धूर्तकस्याऽपि शीताङ्कुशोऽयं  
सखण्डस्तु चातुर्थिकेभाङ्कुशोऽयम् ॥५२२॥  
र प्र, ज्वराऽधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, निर्विषी, वटनाग, तृतीया,  
हीराकसीस, सोमल, रसमाणिक्य समसमभागलेकर नीलवर्ण  
कजलीकर कट्टो और धूर्तकेरसे १-१ दिन मर्दनकर सूग  
बराबर गोलियेबनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचि  
तानुपान अथवा शहरकेसायदेनेसे यह चातुर्थिकज्वरको नष्ट  
करताहै ॥ १३३ ॥

## १३४ शीतारिरसः ( प्रथमः )

पारदं गन्धकं शुद्ध दङ्गुलञ्च समसमम् ।  
पारदाहिगुणं देयं जैपालं तुष्यजितम् ॥ ५२३ ॥  
सैव्यं मेरिचं विश्राल्यगमस्म शर्कराऽपि च ।  
प्रत्येकं सूततुल्यं स्वाज्जम्भीरे मर्दयेद्दिनम् ॥ ५२४ ॥  
द्विगुञ्जस्ततोयेन वातश्लेष्मज्वरापहम् ।  
रस शीतारिनामाऽयं शीतज्वरहर पर ॥ ५२५ ॥

र स भे र र सु, नि र, रसायनस, सू प्र, र क, र  
सि, धि र भ, र म र च, र क ल र चि, र का, र र  
की, र क या, वा, मा प्र, रतचि, यो भ, ज्वराऽधिकारः ।

टि०—मा प्र रसचि, यो भ यत्तु तथा नि र र सु एतयो  
द्वितीयरसनामं सूयंगपररस इति नाम । रस दूरनकाय मानिक्यधिक  
तया प्रसिध्य ज्वराङ्कुशसि नाम रसायनम् । मानिक्यधिकरिचि  
त्रिद्विधया शीतारिरस तद् तदधिक्ये न वायुनुपपत्ति रसत्वेक  
एव । रसनाकरीषयगो शुष्ककृष्णञ्च अभिनया निमित्तं ज्वराऽपि रस  
इति नाम रसायनम् । कुशिक्यञ्च अभिज्ञया दृश्यत । नि र,  
दितारमान शीतपित्ताऽधिकारे पाठ ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा १-१ भाग, शुद्ध  
जमालगोया २ भाग, सैव्य, भरिच, पकोइमलीकेछिलकोकी  
भस्म और खर १-१ भागलेकर नीलवर्णकजलीकर जभी  
रीवरसे एकदिन मर्दनकर २-२ रत्तीकीगोलियाबनाकर रख  
छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गरमपानीकेसायदेनेसे वातश्लेष्म-  
ज्वर और शीत वर निवृत्तहोताहै ॥ १३४ ॥

## १३५ शीतारिरसः ( द्वितीयः )

त्र्युपणेन समं सूतं गन्धकस्तु तयोः समम् ।  
मर्दयित्वा तु तत्सर्वं कारवल्या दिनत्रयम् ॥ ५२६ ॥  
शुक्लं सितया युक्तं वान्तिशीतज्वरापहम् ।  
पथ्यं दुग्धोदकं देयमथवा मुद्गसूपकम् ॥  
दाहे शीतक्रियां कुर्यादायुर्वेदनिशाखम् ॥ ५२७ ॥  
र पा, ज्वराऽधिकारः ।

भाषा—चौठ, मिच, पीपल १-१ भाग, शुद्ध पारा  
३ भाग, गन्धक ६ भागकी नीलवर्णकजलीकर करेलेकरसे ३ दिन  
मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली शहरकेसायदेनेसे यह वमन और शीतज्वरको  
नष्टकरताहै । पथ्यमे दूधभात अथवा मूगकायूपदेना । अधिक  
दाहहोनेपर शीतक्रियाकरना ॥ १३५ ॥

## १३६ शीतारिरसः ( तृतीय )

वत्सनाभोपणञ्चैवाऽऽकलकं मागधी तथा ।  
द्वन्द्वं समुद्रशोषञ्च तुलसीरसमर्दितम् ॥ ५२८ ॥  
शीतज्वरं निहन्त्याशु शीतारिर्बुल्लभः परः ।  
आर्द्रकादिरसेर्देयश्शीतव्याधिबिनाशनः ॥ ५२९ ॥  
र स, ज्वराऽधिकारः ।

भाषा—शुद्धवटनाग, मरिच, अकलकरा, पीपल, शिगरिफ  
और समुद्रशोष समभागलेकर वारीकचूर्णकर तुलसीकेरसे १-१  
दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली अदरकगोरेह उचितानुपानकेसाय देनेसे यह शीत  
ज्वरको नष्टकरताहै ॥ १३६ ॥

## १३७ शीतारिरसः ( चतुर्थ )

सूतं गन्धकतालकीं च कुनटीं म्लेच्छ रवि मर्दये-  
त्साम्येनाऽथ विमावयेत्तुष्यचिजैः सप्ताहमेतत्तुष्यी ।  
शुष्कञ्चाऽथ विमर्दयेत्सुखरं शीतारिरसञ्जान्वितं,  
घल्लेकं मरिचैः हेरिप्रियरसे दत्ता हिम नाशयेत् ॥ ५३० ॥  
शीतज्वरास्तु गच्छन्ति हिमाद्रि रसपीडिता ।  
पथ्यं क्षीरोदकं देयं शीतज्वरविनाशनम् ॥ ५३१ ॥  
र श, ज्वरः ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल, मेनसिल, शिगरिफ  
और ताम्रभस्म समभागकी नीलवर्णकजलीकर करलेकरसे ७  
दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली मरिच और तुलसीकरसकासायदमेने यह शीत  
ज्वरको नष्टकरताहै । दूधमे पथ्य दूधभातदेना ॥ १३७ ॥

## १३८ श्रीतारिरसः ( पञ्चमः )

तालकं तुल्यकं ताम्रं रसं गन्धं मनःशिलाम् ।

कर्पं कर्पं प्रयोक्तव्यं मर्दयेत्त्रिफलागुम्भिः ॥ ५३२ ॥

गोलं न्यसेत्सम्पुटके पुटं दद्यात्प्रयत्नतः ।

ततो नीत्वाऽर्कदुग्धेन घञ्जीदुग्धेन सप्तधा ॥ ५३३ ॥

कायेन दन्त्याः श्यामाया भावयेत्सप्तधा पुनः ।

मापमात्रं रसं दिव्यं पञ्चाशन्मरिचैर् युतम् ॥ ५३४ ॥

गुडं गद्याणकश्चैव तुलसीद्वयमुष्णकम् ।

मथयेत्त्रिदिनं भक्त्या श्रीतारिं दुर्लभं परम् ॥ ५३५ ॥

पथ्यं दुग्धोदनं देयं विपमं शीतपूर्वकम् ।

दाहपूर्वं हरत्यागु तृतीयकचतुर्थकी ॥

द्वयाहिकं सततश्चैव घेवर्ण्यश्च नियच्छति ॥ ५३६ ॥

रसायनसः, र का, र सु, टो, चि र भ., शा.स, र. को,

र. प्र सु, ज्वराधिकारे ।

टि०—चि र भ, शा स, र को, एषु शीतज्वरारिरिति नाम ।

रसप्रकाशसुधाकोरं तल्लज्ज्वरारिरित्याय अत्र भावनायां श्यामा न दृश्यते

भाषा—गुड हरिताल, तुल्य, ताम्रमधु, पारा, गन्धक

और मैनसिल १-१ कर्प लेकर नीलवर्णकजलीकर त्रिफलाके

कापसे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर

३-४ कपडिमिरीदेकर ४ पहर बालकायन्त्रमें पकाये । स्वात्र

शीतलद्वेगेपर निकालकर आक और घृहकेदूध, दन्तीमूल और

निसोतकेकापसे ७-७ भावनाए देकर उद्धवरावर मोलिया

बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली ५० कालीमिर्च,

६ माशे पुरानेगुड़ और दो तुलसीकेपत्तोंकेसाथदेनेसे यह शीत

ज्वर, विपम, दाहपूर्वं और चातुर्थिकप्रवृत्ति तमामज्वरोंको

दूरकरताहै । इसमें पथ्य दूधभातदेना ॥ १३८ ॥

## १३९ श्रीतारिरसः ( षष्ठः )

सितमल्लमनःशिलाऽहिफेन-

रसकाश्मोधिजताप्यतुल्यभागेः ।

सुपञ्जरसमर्दितेस्त्रिवारं

भज श्रीतारिभिर्मित्सार्द्धगुञ्जम् ॥ ५३७ ॥

सेवनाद्वरते तीर्थं ज्वरं शीतं महोत्थरणम् ।

मात्रावधेण नि.शेवं पथ्यं मुञ्जीदनं स्मृतम् ॥ ५३८ ॥

रु यो त, रसायनसः, र का, र स, वै वि, ज्वराधिकारे ।

टि०—रसायनशब्दे सितमल्ले द्विभागे विभोक्ति भावनाया

अभावी दृश्यते ।

भाषा—गुड सफेदसोमल, मैनसिल, अफीम, खपरिया,

शङ्ख, सोनामाखी सबसमभागलेकर वारीकचूर्णकर करलेकरसकी

३ भावनाएदेकर आधीआधीरतीकी मोलिया बनाकर रखछोड़े ।

इनमेंसे १-१ गोली शकरकेसाथ देनेसे यह शीतपूर्वं अथवा

दाहपूर्वज्वरको ३ मात्राओंमें नष्टकरताहै । पथ्यमें दूधभातदेना ॥

## १४० श्रीतारिरसः ( सप्तमः )

मदनफलसुयीजं टङ्कणक्षारतुल्यं,

पलमपि हरनीजं सर्वमेकत्र कृत्वा ।

सममिह जयपालं मर्दयेत्स्निग्धसत्त्वे,

त्रिवृत्त्रिफलदन्ती नागवल्ली विमर्ध ॥ ५३९ ॥

गुडजलमधुयुक्तं वल्लमेरुं प्रद्या-

न्मलजलकफपित्तं वातदोषेण मिश्रम् ।

ज्वरमुदपिचारं श्लेष्मपित्तञ्च रक्तं,

तनुगतवह्नुगोमान्हितं शीघ्रं नराणाम् ॥ ५४० ॥

र. र को, ज्वराधिकारे ।

भाषा—मैनफल (मोडोल म०), इन्द्रजव, भुनासुहामा और

यवशार १-१ कर्प, रससिन्दूर १ पल लेकर सबकारीकचूर्ण-

कर सबकीबराबर गुड जमालगोटा मिलाकर निसोत, त्रिफला,

दन्तीमूल, पान इनके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रतीकी

मोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गुड, पानी

अथवा मधुकेसाथदेनेसे मलदोष, जलदोष, कफपित्तविकार,

वातदोष, ज्वर, उदरविकार, श्लेष्मपित्त, रक्तपित्त इत्यादि

समस्तरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ १४० ॥

## १४१ श्रीतारिरसः ( अष्टमः )

तालकसर्पेरसूपिकयुग्मं काश्चनपल्लवजातरसैश्च ।

मर्दय मर्दय पुनरपि मर्दय शीतमयादिनिवारणगुटिका

नि र, ज्वराधिकारे ।

भाषा—रसमाषिकय अथवा गुडहरिताल, खपरिया, सपेद

और पीलासोमल समभागलेकर धतूरेकेरससे १-२ दिन मर्दनकर

सर्वप्रमाणगोलिमें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली

समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह शीतप्रधानज्वराधियों को नष्ट

करताहै ॥ १४१ ॥

## १४२ श्रीतारिरसः ( नवमः )

रसगन्धकयुग्ममितीप्रविष-

त्रिकट्टनि टङ्कणयुतानि मुहुः ।

शिखिस्करानिमिपयित्तचरैः

परिभयं भावितमदोऽग्निरसैः ॥ ५४२ ॥

गुटिकीकृतं द्विगुणवह्निमितं

घनसारज्वरकरुणाऽऽद्रिरसैः ।

अतिशैत्यमोहयुतमप्यचिरा-

ज्ययति ज्वरं तमपि मृत्युकरम् ॥ ५४३ ॥

दशमूलाम्मसा सिद्धो दशाङ्गः प्रथितो गणः ।

साद्रकस्वरसः पीतः साद्वयत्युद्धुरं ज्वरम् ॥ ५४४ ॥

नि०, र. ३, ज्वराधिकारे । र सु, सन्निपातान्तक

इतिनाम ।

भाषा—गुड पारा, गन्धक, ताम्रमधु, सोमल, त्रिकटु,

मुनासुहामा सबसमभागी नीलवर्णकजलीकर मोर, सूअर,

मछली और सापके पित्त तथा चित्रककेकापसे १-१ दिन

मर्दनकर दो मरिचप्रमाण गोलिमें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे

औचित्य देखकर १ या २ गोली शुद्धकपूर, जीरा, पीपल और

अदरककेरसकेसाथ देनेसे शीताह, अत्यन्तशीत और मोटयुक्त

असाध्यसन्निपातको यह बहुतशीघ्र नष्टकरताहै । भट्कटैया, वनभाटा, दन्तीमूल, पटोल, काकड़ासींगी, भाखरी, पोहकर-मूल, कुटनी, कचूर, इन्द्रजव समभागलेकर जबकुटकर आधे-तोलेना दशमूलके २० तोलेवायमें फिरसे बाथबनाकर ५ तोला बासीरहनेपर अनुपानकीजगहदेनेसे अत्यन्तबड़ेहुए सन्निपातको यह नष्टकरताहै ॥ १४२ ॥

### १४३ शीतारिसः ( दशमः )

सूतं गन्धकमर्मल्लुकयुतं चेतःशिला खर्परं,  
तालः साधुसुधेति कारविरसैः समर्द्धितं सप्तधा ।  
सूपापाच्यितमष्टमांशमित्तं हेयज्ञवीनेन त-  
द्वीष्यद्वृषणतुर्यभागघटितं मत्स्याजपिसाप्लुतम् ॥  
प्रत्येकं मुनिभिः सशर्करमिदं दुग्धेन चलेकरुं,  
पीतं भक्तपयोभुजो विजयते द्राक् सर्वशोतज्वरम् ॥ ४४५ ॥  
र. ५, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, ताम्रभस्म, सोमल, मै-  
सिल, खपरिया, रसमाणिस्य अथवा शुद्धहरिताल, मोतीकी-  
सीप अथवा पत्थराचूना येसब समभागलेकर नीलवर्णकज-  
लीकर कारपी ( शुद्धकावी गुज ) के रससे ७ दिन मर्दनकर  
गोलावनाय शरासमुद्रमें बन्दकर ६-७ कपडिमिथीदेकर सूख-  
नेपर लघुपुदकीआचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर अष्टमाश  
मस्खनमिलाकर १-२ पहर मर्दनकर अजवाइन और त्रिकटु  
एमभागकाचूर्णचतुर्थांशमिलाकर मट्टी और बकरेकेपित्तोंसे  
७-७ भावनाएँ देकर ३-३ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखडोढ़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली शक्कर और दूधकेसाधदेनेसे यह सबप्रकार-  
केशीतज्वरोंको नष्टकरताहै । इसमेंपण्य दूधमातदेना ॥ १४३ ॥

### १४४ शीताशुद्धूलनम्

शिथेष्टफलसम्भूतभस्मभागाष्टकं शुभम् ।  
मरिचस्य तु घत्वारो रसादेको विपस्य च ॥ ४४६ ॥  
सूक्ष्मचूर्णीकृतादस्मान्मर्दनं चातियत्नतः ।  
असाध्येऽपि हि शीताग्ने स्वेदनं दीपनं परम् ॥  
अन्नपानञ्च यातम्रं शीतारि दुर्लभः परः ॥ ४४७ ॥

रस. स., ज्वराधिकारे ।

भाषा—धनूक फलोंकीभस्म ८ भाग, मरिच ४ भा.,  
शुद्धपारा और घटनाग १-१ भाग लेकर पारा अद्वय होनेतक  
मर्दनकर रखडोढ़े । अत्यन्तशीताज्ञानेपर बहुतबालाकर इसका-  
मर्दनकरनेसे शीताज्ञ निरुतहोताहै । यह स्वेदन और दीपनके  
द्वयमें यातम्र अथपानदना ॥ १४४ ॥

### १४५ शीतांशुरसः

शुनदी शुद्धतालञ्च तद्विभं व्योषकं भवेत् ।  
मर्दयेत्तिस्रमुनिरिण गुञ्जायुग्मं तु मेवयेत् ॥ ४४८ ॥  
अनुपानं शिवाश्रीद्रुग्णं यारि तथाऽऽट्टकम् ।  
शीतज्वरं सन्निपातं कामलां गुल्मपञ्चकम् ॥ ४४९ ॥

सर्वधासञ्च कासञ्च नाशयेदुदरं भृशम् ।  
सन्निपातं तथा छर्दिमशोतिं वातरोगजातम् ॥ ४५० ॥  
शूलमष्टविधं हन्ति नामो कुक्षौ च विप्रधिम् ।  
आध्मानानाहविष्टम् तापं सर्वाह्नादाहरम् ॥ ४५१ ॥  
जङ्गमं स्थावरञ्चैव विषं हिकं विनाशयेत् ।  
शोथञ्च भ्रममूर्च्छं च तिमिरञ्च व्यपोहति ॥ ४५२ ॥  
मर्दितं निम्नतोयेन लेपितं गजचर्मनुत् ।  
विसर्पमण्डले चैव दुष्टचर्म व्यपोहति ॥ ४५३ ॥  
सेवितं लेपितं कुर्याद्वाचितं ग्रन्थिमर्दुदम् ।  
लेपितं दन्तरोगाश्च जिह्वानिऋजस्तथा ॥ ४५४ ॥  
अर्कपत्ररसैः कर्णे पूरणाद्रोगनाशनम् ।  
निर्गुण्डीमिश्रितं नस्यमपस्मारं शिरोरजम् ॥ ४५५ ॥  
अञ्जनं यवमात्रञ्च नेत्ररोगयिनाशनम् ।  
मापञ्च सन्निपातानां कामलाज्वरशीतके ॥ ४५६ ॥  
घनुर्वातञ्च भूतञ्च शोपरोगे च काकथा  
मापितो रेवणेनैव रसः शीतांशुनामरुः ॥ ४५७ ॥  
व रा, घनुवति ।

भाषा—शुद्ध मैसिल और हरिताल १-१ भाग, सौंठ,  
मिचं, पीपल २-२ भाग लेकर सबकाबारीकचूर्णकर नीचूकेरससे  
एकदिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखडोढ़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली हरे, मधु, गरमजल अथवा अदरक इनमेंसे  
किसीएककेसाथ औचित्ती देखकरदेनेसे शीतज्वर, सन्निपात,  
कामला, पाचोंप्रकारकेशूल, धास, कास, उदररोग, सन्निपातज-  
बमन, ८० वातरोग, ८ प्रकारकेशूल, नाभि और कुक्षिका  
जहरवाद, आध्मान, आनाह, विष्टम्भ, ज्वर, सर्वाह्नादाह,  
स्थावर और जङ्गमविष, हिवकी, शोथ, भ्रम, मूर्च्छा, तिमिर  
इनसबको यहनष्टकरताहै । नीमकेजलसे लेपकरनेसे छाजन,  
विसर्प, मण्डलशूल और चर्मरोग नष्टहोतेहैं । खाने और लगा-  
नेसे गाय और अर्जुनको गलादेताहै । लेपकरनेसे दात, जिह्वा  
तथा नेत्ररोगोंको नष्टकरताहै । आकषेपतोंके रसकेसाथ मिला-  
कर डालनेसे कानकेरोगोंको दूरकरताहै । निर्गुण्डीकेरगकेसाथ  
नस्यदेनेसे अपस्मार और मस्तकपीडाको यह नष्टकरताहै ।  
यवप्रमाणका अञ्जनकरनेसे नेत्ररोग नष्टहोताहै । एवमाश्री  
नामादेनेसे सन्निपात, कामला, शीतज्वर, घनुवति, भूतनाथ  
और शोपरोगको दूरकरताहै ॥ १४५ ॥

### १४६ शुक्रमातृकावटी

गोक्षरर्वाजं यिफला पत्रमेला रसाञ्जनम् ।  
धान्याकञ्चयिका जीरं तालीनं तद्भृन्नाटिम् ॥ ४५८ ॥  
प्रत्येकाऽर्द्धपलं दत्त्वा शुग्गुलोः कार्ष्णिक्तथा ।  
रसाऽम्रलीहगन्धानां प्रत्येकञ्च पलं क्षिपेत् ॥ ४५९ ॥  
सर्वमेकीकृतं वेद्या दण्डयन्ने विमर्दयेत् ।  
घृतमाण्डे तु संस्थाप्य मासमेकान्तु खादयेत् ॥ ४६० ॥  
दाटिमस्वरसेनेय छागीदुग्धेन धाम्गमा ।  
चन्द्रनायेन गदिता घटिका शुभमातृका ॥ ४६१ ॥

विशम्भेहाग्निहन्त्याशु चातपित्तादिसम्भवान् ।  
द्वन्द्वजान्सन्निपातोत्थान्मृचकृच्छ्रद्वन्द्वमरीगदान् ॥  
यलवर्णाऽभिजननी ज्वरदोषनिपूदनी ॥ ५६२ ॥  
र र, सै र, प्रमेह ।

भाषा—गोखरू, त्रिफला, तमालपत्र, इलायची, रसौत, घनिया, चव्य, जीरा, तालीसपत्र, भुनासुहृणा, अनार येसब २-२ कर्प, शुद्धगुल १ कर्प, शुद्ध पारा और गन्धक, अग्रक और लोहभस्म १-१ पललेकर सबका बारीक चूर्णकर पारेगन्धकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय गोखरूवैरहवैकायसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ मासकी गोलियाबनाकर धीवर्तनमें एकमहीमे तक रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अनारकेरस, बर्रीके दूध अथवा जलकेसायदेनेसे बातादिजन्य २० प्रकारके प्रमेह, द्वन्द्व तथा सन्निपात मूत्रकृच्छ्र और पथरी इनसबको नष्टकर बल, वर्ण और अमिको पैदाकर ज्वरको यह नष्टकरती है ॥ १४६ ॥

### १४७ शुक्रस्तम्भकरीवटी

कर्पूरमहिफेनञ्च कस्तूरी जातिपत्रिका ।  
नागबह्नीरसेनैय गुटिका मदनशिनी ॥ ५६३ ॥  
शुक्रस्तम्भकरी नित्यं यलमासवियधिनी ।  
नरश्चटकयद्रुच्छेच्छतवारान्न संशय ॥ ५६४ ॥  
रस स, वाजीकरणे ।

टि०—अत्र कपूरश्वेत रसकर्पूरमेव प्राक्ष्य, तथोमेनैव यथोक्त गुणकभावात् ।

भाषा—शुद्ध रसकपूर, अजीम, कस्तूरी और जावित्री समभागलेकर बारीकचूर्णकर पानदेरसे मर्दनकर उड़दवामर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मलाईवैरह केसायदेनेसे यह शुक्रकास्तम्भन करती है । बल और मासको बढ़ाती है तथा सम्भोगेच्छाको बारम्बार आपतकरती है ॥ १४७ ॥

### १४८ शुण्ठीखण्डः

नागरस्य रजः सर्पिः पृथग्दशपलोन्मितम् ।  
पञ्चाशत्पलिकं क्षीरं खण्डं क्षीरसमं पचेत् ॥ ५६५ ॥  
ध्यापं निजातक धान्यं पट्टन्या जीरकद्वयम् ।  
शुद्धी लवङ्गं लोहञ्च यदा जातोफल घनम् ॥ ५६६ ॥  
प्रत्येकं चूर्णमेतेषां पलादन्तु विनि क्षिपेत् ।  
पलद्वयं चारुनीजं प्रक्षिप्य विपचेत्तुघी ॥ ५६७ ॥  
खादेदक्षिबलापेक्षी शिरोरोगविनाशनम् ।  
आमवातप्रशमनं बलपुष्टिविवर्धनम् ॥  
क्वपित्ताऽनिलहरं सेव्यमानं रसायनम् ॥ ५६८ ॥  
यो म, शिरोरोग ।

भाषा—१० पल सौंके चूर्णको १० पल धीमे सक्कर ५० पल गायदेधूमं डालकर ५० पल शक्कर मिलाकर चाशनी करे । चाशनीदेयाहोनेपर त्रिकटु, निजात, घनिया, पिपळा मूल, दोनोंजीर, काकड़ासींगी, लौंग, लोहभस्म, त्रिफला, जायफल, नागरमोथा येसब २-२ कर्प चिरोजी २ पल डालकर अच्छीतरह मिलाजनेपर उताकर रखछोड़े । इधमेंसे अश्विल

देखकर मात्रा कायमकर देनेसे शिरोरोग, आमवात, बल और पुष्टिप्राप्त, कफ, पित्त और वायुरोग इनसबको नष्टकर यह दीर्घायुको कर्ता है ॥ १४८ ॥

### १४९ शुण्ठीपाकः

प्रस्थार्द्धविष्वाऽष्टगुणञ्च दुग्धं  
प्रस्थप्रमाणज्यमुदञ्च तद्वत् ।  
विपाचयेत्तन्मुदुबहिना च

पश्चात्तदन्त क्षिप घव्यमाणम् ॥ ५६९ ॥

चातुर्जातं जातिपत्री वासावह्निफलत्रयम् ।  
देवपुष्पं गजकणा भार्गवं शृङ्गी कटुत्रयम् ॥ ५७० ॥  
आरुहकं लोहचूर्णं वंशलोचनरुदफलम् ।  
दार विष्वाऽष्टगन्धा च चूर्णमेपा हृतं समम् ॥ ५७१ ॥  
चतुष्कर्पमितं चास्माद्यो भजेदिनसप्तकम् ।  
तस्य स्वमालिङ्गार्णशिरोरोगवद्दं विनाशयेत् ॥ ५७२ ॥  
सर्वबाताज्यत्याशु कफपित्तोद्भवानपि ।  
हस्तिना कथितं सभ्यञ्च शुण्ठीपाकेति नामतः ५७३  
रसायनस, वाताधिकारः ।

भाषा—गोल्काचूर्ण ८ पल, घी और गुड १-१ प्रस्थ, गायकादूध ४ प्रस्थ लेकर इकेमिलाय मन्दाग्निसे पकावे । पाकहोनेपर चातुर्जात, जावित्री, अहसा, चित्रकमूल, त्रिफला, लौंग, गजपीपल, भार्गवी, काकड़ासींगी, त्रिकटु, अकलबरा, लोहभस्म, वंशलोचन, कायफल, दाहहृदी, सौंठ और अस गन्ध इनका चूर्ण १-१ कर्प डालकर उताकर रखछोड़े । इसमेंसे अश्विलदेपर १ कषे १ पञ्चक मात्रा ७ दिनतकखानेसे मस्तक, कान और आंखकेरोग, सम्पूर्णवातविकार, कफपित्तोरोग इनसबको यह नष्टकरता है ॥ १४९ ॥

### १५० शूलकुठाररसः

शुद्धं पारदं गन्ध त्रिफला व्यापतालके ।  
विप ताम्रञ्च जयपालं भृङ्गस्वरसमर्दितम् ॥ ५७४ ॥  
द्विगुणं नाशयेच्छूलं मरिचेनाद्रैकेण वा ।  
सर्वेभ्यस्तृणहन्त्येषा विष्णुचक्रमियासुराङ्ग ॥ ५७५ ॥  
नि र, व रा, वै चि, र क यो, र पा, शूलधिकारः ।

भाषा—शुद्ध हृहणा, पारा, और गन्धक, त्रिफला, त्रिकटु, रसमाणिक्य, शुद्धजनाग, ताम्रभस्म और शुद्धजमा लोटा समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर भागकरसे १-२ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियाबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मरिच अथवा अदरकके रसकायदेनेसे यह सब प्रकारके शूलकोनष्टकरता है ॥ १५० ॥

### १५१ शूलगजकेसरीरसः (प्रथमः)

शुद्धं ताम्रपलं बह्वौ बह्विवत्तापितं भृशम् ।  
एकविंशतिवारान्श शीतीकुर्वाणं गात्रजं ॥ ५७६ ॥  
पातयेदम्लवर्णेषु तप्त छिद्रासे पुन ।  
तद्वत्तप्तं शुद्धशीरं शीतीकुर्वाणं पुनश्च तत् ॥ ५७७ ॥



पुनस्तप्ते च गलिते पातयेत्पादपारदम् ।  
 दरदोत्थं ततस्तालशिलासोमजसत्त्वतः ॥ ५७८ ॥  
 गन्धसत्त्वेन च पुनर्लिप्त्वा पत्राणि शोषयेत् ।  
 शरावसम्पुटे धृत्वा बहिर् यामांस्तु पोडश ॥ ५७९ ॥  
 त्रिहस्तगतमध्यस्थे तुपच्छायाविडन्तरे ।  
 शीतं पुनर्गृहीत्वाऽयं रसः शूलमेकेसरी ॥ ५८० ॥  
 र. का., शूलाधिकारे ।

भाषा—एकपल शुद्धतांबेकपत्रोंको अमितावृ २१ बार गोमूत्रमें बुझावे फिर अम्लवर्ग, नकछिनीकेरस और शुद्धक-  
 द्धमें २१-२१ बार बुझावे । फिर इसे गलाकर चतुर्थांश हिङ्ग-  
 लोत्थपारा मिलाय प्रदेवनाकर हरिताल, मैनसिल, सोमल और  
 गन्धक प्रत्येक पारेसे चतुर्थांशलेकर चारीकचूर्णकर नकछिनी-  
 केरसमें मर्दनकर पत्रोंपर लेपलगाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६-७  
 कपड़मिडीदेकर अच्छीतरहसुखनेपर ३ हाथगहरे गूठमें तुप और  
 पकरीकीमीणीणिकेबीचमें रख १६ पहरकी अग्निदेवे । स्वाहा-  
 शीतलहोनेपर निकालकर रखजोड़े । इसमेंसे ३-३ रती अद-  
 रयवर्गह उचितानुपातकेसाधनेसे यह समस्तशूलोंको नष्ट  
 करताहै ॥ १५१ ॥

### १५२ शूलगजकेसरीरसः (महदादिः) २

शुद्धताम्रस्य पत्राणि कुर्याच्चतुस्राणि च ।  
 ततस्तानि नरगोजाश्वीपूखरजेषु च ॥ ५८१ ॥  
 शूत्रेष्वथद्रव्ये छिन्नाभवे प्रत्येकशः पुनः ।  
 एकविंशतिवारान्ध शीतीकुर्याद्गुहं नरः ॥ ५८२ ॥  
 लिम्पेभूसारसौभाग्यच्छिन्नास्वास्वरसतां बुधः ।  
 शुष्काणि पट्टमुत्केशमृद्वस्थान्तरशोषणात् ॥ ५८३ ॥  
 पुनस्तप्तानि च भृशं काजिके प्रक्षिपेदपि ।  
 शिथारमेव हि कृते जायन्तेऽतिसितानि च ॥ ५८४ ॥  
 अथ तानि पुनस्तापयित्वा शूत्रे च सौकरे ।  
 प्रक्षिपेद्नपञ्चाशत्किटिचिष्टाद्रवे पुनः ॥ ५८५ ॥  
 छिन्नातालद्रव्ये त्रिंश्व शिंश्वे सौकरे पुनः ।  
 किटिमांसान्तरं तान्यूनपञ्चाशदिनानि च ॥ ५८६ ॥  
 स्थापयित्वा च गृहीतास्वीतवर्णयुतानि च ।  
 अथ तालं त्रिपलिकं कदलीपुष्पजद्रवैः ॥ ५८७ ॥  
 दिनत्रयं मर्दयित्वा संशोष्यातिखरातपे ।  
 दृढस्थलेष्टिकागते चाभ्यारिमुलत्वचं क्षिपेत् ॥ ५८८ ॥  
 तत्रालञ्च पुनस्ताञ्च दत्त्वा भूयः पिधापयेत् ।  
 काचपात्रेण तल्लिप्त्वा हठमृत्तिकाया पुनः ॥ ५८९ ॥  
 मूत्कपटे विलिप्त्वाऽथ छायागुष्कञ्च कारयेत् ।  
 (घर्मीकभुनागभया कृष्णा पीता मृदिष्टिका ॥ ५९० ॥  
 पूर्णं लाक्षा च मण्डूरं गुडं भृञ्जजपत्रकम् ।  
 तुल्यञ्च मेपौक्षीरेण स्पिष्टा छायाविशोषिता ॥ ५९१ ॥  
 इयं हठा मृत्तिका स्यात्सर्वकृष्णादिलेपने ।)  
 अथ चुल्ल्यामिष्टिकां तां संस्थाप्याऽग्निं प्रदापयेत् ॥

दीपवत्प्रहरं भूयः सामान्यञ्च हठाप्यकम् ।  
 एकद्वित्रिकपट्टसङ्ख्यामानाग्निं क्रमादिह ॥ ५९३ ॥  
 शीतीभूतञ्च गृहीयादधृतवर्णञ्च सत्यकम् ।  
 अथ यामत्रयं मेपौक्षीरे सम्मर्दयेच्छिलाम् ॥ ५९४ ॥  
 अर्कक्षीरेण च तथा मोचापुष्पद्रवे तथा ।  
 कपं प्रतिध्वेतचित्रवीजेन सह मर्दयेत् ॥ ५९५ ॥  
 काचकृष्णां विनिक्षिप्य यामपोडशकानलम् ।  
 शीतीभूतञ्च तत्सत्त्वं वेदूयामं प्रजायते ॥ ५९६ ॥  
 काञ्चनामं तालजं स्यात्फटिकाभञ्च सौम्यजम् ।  
 (अथ शाहिकसीम्यन्तु गृहीत्वा सार्धमुष्टिकम् ५९७  
 तद्गददसूतञ्च मोचापुष्पद्रवे इयम् ।  
 अर्कक्षीरेस्त्वयहं ध्वेतैरपञ्चवीजेः पुनस्त्यहम् ॥ ५९८ ॥  
 अथ ऊर्द्धं लोहताम्रसम्पुटे तन्निरोधयेत् ।  
 हठमृत्तिकाया वल्गुमृदा लिप्तञ्च सतशः ॥ ५९९ ॥  
 हण्डिकायां छागविशा पूर्णायां स्थापयेद्य तत् ।  
 यामद्वादशकं गतं यर्हि दत्त्वा तदुद्धरेत् ॥ ६०० ॥  
 हिमवर्णं सौम्यसत्त्वं जायतेऽतिमनोहरम् ।)  
 अथ तत्ताम्रपत्राणि दशरूपमितानि च ॥ ६०१ ॥  
 तालसौम्यशिलासत्त्वं त्रिधिकरूपप्रमाणतः ।  
 पञ्चकपं तैलविषं गन्धतैलेन मर्दयेत् ॥ ६०२ ॥  
 (कपेसत्तमगन्धन्तु मानुल्लङ्घ्यैस्तेषु पट्ट  
 लघुमद्रवतः पट्यकं घृष्ट्वा कुर्याद्यं घटिकां ॥ ६०३ ॥  
 प्रज्वालयेद्य च तैलं तेन तैलेन मर्दयेत् ।)  
 अथ वज्रं सार्धपलं पलार्धं रसकं तथा ॥ ६०४ ॥  
 पलार्धं नवसारञ्च द्रावयेद्गोहमाण्डके ।  
 मुहूर्तमग्निं दत्त्वाऽत्र तत्र हिङ्गुलसूतकम् ॥ ६०५ ॥  
 क्षिप्त्वा घृष्ट्वा पुनः पूर्वद्रव्येण सह मेलयेत् ।  
 स्नुहीक्षीरे मोरदायाः क्षीरे त्रिलि विमर्दयेत् ॥ ६०६ ॥  
 तत्सत्त्वं मृत्तिकाकृष्णां क्षिप्त्वा तां पूरयेत्पुनः ।  
 घुस्तरैरण्डतैलाभ्यां मुद्रां दत्त्वा पचेदथ ॥ ६०७ ॥  
 यामद्वादशकं भूयः काचकृष्णां विनिक्षिपेत् ।  
 मुद्रां दत्त्वा पोडशभि यामिं यन्त्रे च सेकते ॥ ६०८ ॥  
 पचेत्तं नीलवर्णं स्याद्रसः शूलमेकेसरी ।  
 तण्डुलप्रमितो दत्तो यथाव्याप्यनुपाततः ॥ ६०९ ॥  
 सर्वरोगाघिहन्त्यागु शूलरोगे च का कथा ।  
 चातव्याधि क्षयं श्वासं कासं घातात्ममामरम् ॥  
 जित्वा रसायनं वाजीरमेतत्प्रजायते ॥ ६१० ॥

र. का., शूलधिकारे ।

भाषा—शुद्धतांबेचारीकपत्रोंको अमितावृ २१ बार मनुष्य,  
 गौ, बकरा, घोडा, ऊँट और गधेकेमूत्र तथा नकछिनीकेरसमें  
 २१-२१ बार बुझाकर नवघादर और मुहागवो नकछिनीके-  
 रसमें पीछरखओपर आपाबबनोडा सेपकर गोलाबनाय गुप्ता-  
 कर नमक, गौबीकीमिठी, बेडा इनको अच्छीतरहकूटकर कपेपर  
 लेपेदेकर गोलेपर बन्दाय अच्छीतरह गुलाकर अमितावृ २१

काशीमें सुभावे । ऐसे ३ बार करनेसे प्रजेअत्यन्तपद होजायगे फिर इनको तपाकर सुआरेमून और विद्याके द्वयमें ४५-४९ बार, और नक्षत्रिकोंके स्वरस तथा छादीमें ३-३ बार सुआकर फिर ३ बार सुआके मूत्रमें सुभावे । इसवेचाद सुआरेखाजिमासमें ४९ दिनतक रखकर निकाले, ये पीलेरङ्गके निकलेंगे । फिर ३ पल हरितालका बारीकचूर्णकर केलेकेफूलोंके रससे ३ दिनमर्दनकर टिकड़ीबनाय अत्यन्त कड़ीभूपमें सुआकर अच्छीतरह फकीहुई मोटीईंटमें गोलकाडा खोदकर सफेदकनेरकीजड़कीछालके चूर्णके बीचमें इस टिकड़ीको रख काचकेप्यालेसे मुंहबन्दकर द्रष्टृत्तिका युक्तपत्रोंसे सम्पुटकर छायामें सुभावे । (बावी और वैजुओंकी मिट्टी, काली और पीसीमिट्टी, ईटकाचूरा, लाव, मण्डर, गुड, भोजन सव समभागलेकर बारीकचूर्णकर भेङ्केइपसे सातबर हवाईसे कूटकर मोमकेसदा बनाये । इसीवानाम द्रष्टृत्तिका है ) । फिर ईंटको चूल्हेपर रख केरकैरहकोलकड़ीसे एकपहर दीपामि, दोपहर मध्यमामि और तीनपहर तीमामि देवे । स्वाहशीतलहोनेपर शुक्तिपूर्वक बबको खोलतो ऊपरके प्यालेमें पीकेरत्तकासव मिलेगा, इसे यन्त्रपूर्वक रखछोड़े यह हरितालसत्त्व हुआ । मैनसिलको बारीकपीस भेङ् और आकनेदूध तथा केलेकेपुष्पत्रयमें ३-३ पहर मर्दनकर चतुर्थांश धेतचित्रचके बीजोंकाचूर्ण मिलाय ४ पहर मर्दनकर सुआकर ६-७ कपड़-मिटीहुई आतशीशीशीमें डालकर बालुकायत्रमें १६ पहरकी ज्वामिसे पकावे । स्वाहशीतलहोनेपर शुक्तिपूर्वक क्षीशीमेंसे वैदूर्यैरत्तकेसवको निकालकर रखछोड़े । फिर सफेदसोमल और शिगरिफका पारा ६-६ पल लेकर १-२ दिन यहातक मर्दनकरे कि पारा अदृश्यहोजाय, फिर केलेकेपुष्पकेरस और आकनेदूधमें ३-३ दिन मर्दनकर समभाग सफेदएण्डबीजीमज्जा मिलाकर ३ दिन मर्दनकर टिकड़ीबनाय कड़ीभूपमें सुआकर छोड़ेके सम्पुटमेंरख ऊपरसे ताप्तसम्पुटसे बन्दकर द्रष्टृत्तिकासे ७ कपड़-मिट्टीदेवे । पुटनेपर एकपडेमें बकरीकीमिंगिणियोंके बीचमें सम्पुटको रख अमिलगाकर पड़ेको खोमें रखदे । १२ पहरवेचाद स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर अलग रखलेवे यह सफेदवर्णका माहसत्त्व तैयारहुआ ॥

पूर्वोक्ताप्रपन्न १० कर्प, हरिताल, सोमल, और मैनसिल इनकेसत्त्व ३-३ कर्प, बडनम ५ कर्प लेकर गन्धककेतैलसे एकदिनमर्दनकरे । ( गन्धक ७ कर्पलेकर बारीकचूर्णकर बिजोरे और लहसुनके ६-६ कर्प स्वरससे १-१ दिन मर्दनकर धोए-हुए सफेदपत्रपर लेपकर शिथिलसतीबनाय सरसोंके तैलमें बत्तीको डुबाकर एकदिन सूटीपर टांगकर अधिवत्तैलको टपका-कर निकालदे । फिर इसबत्तीको लोहकी शलाकापर रख नीचेके-भागमें अमिलगावे और नीचे कासेवगैरदही वाली रखदे । बत्तीजलजायगी और तैल टपकजायगा । यहापर इसीगन्धक-तैलकोलेना । ) फिर शुद्धवत् ६ कर्प, खपरिया और नोसादर २-२ कर्प लेकर कड़ाहीमें डालकर अग्निदेकर गलावे । गलने-पर शिगरिफसे निकालाहुआपाप २ कर्प डालकर कड़ाहीको

नीचे उतारकर मर्दनकरे । सबकीकजलीतैयारहोनेपर पूर्वपिण्डमें मिलावे । फिर बृहत् और मोरटा ( बृहत्कामेदे तत्रशास्त्रमें मानवकृष्णकी ) केदूधमें ३-३ दिन मर्दनकर टिकड़िया बनाय सुआकर मिट्टीके चिकनेबुल्लहमें रख धतुरे और एण्डकेतैलसे कुन्दरीको मरदे और द्रष्टृत्तिकासे ६-७ कपड़मिट्टी देकर सुखनेपर बालुकायत्रमें रख १२ पहरकी आचदे । स्वाहशीतल-होनेपर निकालकर बृहत् और मोरटाकेरससे ३-३ दिन मर्दनकर सुआकर ६-७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भारे द्रष्टृत्तिकासे मुंहबन्दकर १६ पहरकी बालुकायत्रमें अग्निदे । स्वाहशीतलहोनेपर नीलवर्णकेपदार्थको निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ चावल तप्तद्रोहराहुतानकेसाथदेसे बातव्याधि, क्षय, श्वास, कास, वातसक, आमवात प्रभृति समस्तरोगोंको नष्टकर रसायन और वागीकरणके कामकोकरताहै । शूलरोगही तो यचां ही क्या ? तत्क्षणनष्टहोजाताहै ॥ १५२ ॥

### १५३ शूलगजकेसरीरसः ( तृतीयः )

कारस्कारफलं स्थिरं क्षीरप्रस्थद्वयोन्मिते ।  
सूक्ष्मं रूपदि सपिण्यं गृहीयाद्विप्लोन्मितम् ॥ ६११ ॥  
पिप्पली पिप्पलीमूलं मरिचं नागरं यथा ।  
विल्वं हरीतकीमज्जा ह्योरपि कारजयोः ॥ ६१२ ॥  
स्यजिकाञ्च यथक्षारं सैधव्यं दधनं गडः ।  
तथैव क्षारलवणं गन्धकं कर्ममात्रकम् ॥ ६१३ ॥  
हिहु दङ्गुलदीप्यानां पलायञ्च पूषकपृथक् ।  
पृथक् चूर्णाकृतं सर्वं पिष्ट्वाऽऽद्रकरसेन च ॥ ६१४ ॥  
गुटिकाञ्चणकाकाराः कृत्या संशोष्य चातपे ।  
यन्मानैव पलायन्ते शूलप्रभृतयो गदाः ॥  
राजते त्रिषु लोकेषु स शूलगजकेसरी ॥ ६१५ ॥

वै द, शूलधिकारे ।

भाषा—सोपल कुचिले लेकर दोप्रस्थ गोदूधमें हवेदनकर छीलकर बारीकपीसे । फिर इसमें पीपल, पिपलामूल, मरिच, खोंठ, वच, बेतगिरी, हर्, दोनोंकरहोंकीमज्जा, सजी, यव-क्षार, सैधव, संचल, रेहडानमक, बिडनमक, शुद्धगन्धक देसव १-१ कर्प, मुनाहोंग, मुदागा, अजवाइन २-२ कर्प लेकर बारीकचूर्णकर अदरलकेरससे १-२ दिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियां बनाय सुआकर रखछोड़े । इनमेंसे १ गोलीसे ३ गोली-तक औचित्तिदेखकर देखे यह समस्तशूलकोदूररताहै १५३

### १५४ शूलगजकेसरीरसः ( चतुर्थः )

अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामि सर्वंशूलविनाशनम् ।  
क्षयादिरोगहं शूलगजकेसरिसम्प्रकम् ॥ ६१६ ॥  
पूर्वोदितप्रकारेण शुल्यमादी विशोषयेत् ।  
ततो यापाः प्रकृतेन्या यस्यामणौयधीरसेः ॥ ६१७ ॥  
पञ्जीमानुपयोमुखं पञ्जाङ्गं कनकस्य च ।  
मुनिपञ्जाङ्गुज्योतयं लाङ्गुलीकन्द पय च ॥ ६१८ ॥

करञ्जस्य च पञ्चाङ्गं शूलानि करवीरकात् ।  
 आट्ठरूपकपञ्चाङ्गं चित्रकस्य च कञ्जुकी ॥ ६१९ ॥  
 वाजिगण्डेज्जुदी चैव धन्नीकन्दोऽथ शिपुजः ।  
 गुह्यची शकखदिरत्रिभुता दन्तिका तथा ॥ ६२० ॥  
 वज्रवल्ली शिखरिका द्रुमो मुशली तथा ।  
 पटवः पञ्च क्षाराश्च उपक्षारास्तथैव च ॥ ६२१ ॥  
 पतत्सर्वं सुसङ्गृह्य येष्येन्महिषीभवेः ।  
 पञ्चाङ्गे दुग्धतक्रोश्च दधिमूत्रे धृतेस्ततः ॥ ६२२ ॥  
 स्निग्धे भाण्डे विनिक्षिप्य चास्येत्सप्त वासरान् ।  
 द्रवीभूते च तत्कले शूलमाधुल्यं ढालयेत् ॥ ६२३ ॥  
 त्रिःसप्तवारान्क्षिप्यैवं शूलं शुद्धिमवाप्नुयात् ।  
 तेन शूल्येन कुर्वीत पात्रिके पलमात्रिके ॥ ६२४ ॥  
 समुद्राकारधारिण्यौ तत्र चूर्तं प्रसाधयेत् ।  
 पातितस्त्रिषस्रज्जीर्णभस्मीभूतस्य कर्पकान् ॥ ६२५ ॥  
 चतुरो दानयेन्द्रस्य कर्पानद्यौ प्रकल्पयेत् ।  
 पूर्वाक्षुक्तिशुद्धस्य खल्वे द्वौ निक्षिपेत्ततः ॥ ६२६ ॥  
 शुष्कमर्दनयोगेन मर्दयेत्तौ दिनत्रयम् ।  
 कज्जलीं ताम्रपात्रस्य मध्ये चैकस्य निक्षिपेत् ॥ ६२७ ॥  
 अन्येन ताम्रपात्रेण सम्पुटं रचयेद् दृढम् ।  
 मृदाण्डसम्पुटं ग्राह्यमतीव सुदृढं तयोः ॥ ६२८ ॥  
 एकस्य मध्ये लवणं हत्वा तदुपरि क्षिपेत् ।  
 सम्पुटं ताम्रजं पश्चात्तद्वृद्धं लवणं क्षिपेत् ॥ ६२९ ॥  
 मातृकेन द्वितीयेन पटुपूर्णेन सम्पुटम् ।  
 हत्वा निरुद्धं सुदृढं खदीमुखवर्णः पटैः ॥ ६३० ॥  
 भक्तैः हरीतकीकलेः पिष्टैरेकत्र लेपयेत् ।  
 पटुपञ्चकमानेन शोषयेदातपे ततः ॥ ६३१ ॥  
 जानुद्वयीं मही खत्वा समिच्छाणीः प्रपूरयेत् ।  
 विन्यसेत्सम्पुटं तेषामुपरिप्राञ्चं छाणकान् ॥ ६३२ ॥  
 पौष्पेण प्रमाणेन ज्वालयेद्दहिना ततः ।  
 स्याद्गृहीतं विनिर्धाय सम्पुटं तं समाहरेत् ॥ ६३३ ॥  
 भित्त्वा च सम्पुटं मध्याद्रुहीयात्ताम्रसम्पुटम् ।  
 त्वस्ता यत्नेन लवणं खल्वमग्रे निवेशयेत् ॥ ६३४ ॥  
 मर्दयित्वाऽथ सुशुष्णं सिद्धं सृतेभ्रंरं ततः ।  
 पूजयित्वा भैरवादीन् स्थापयेच्च कण्डके ॥ ६३५ ॥  
 बहुमात्रः प्रयोक्तव्यो रसेन्द्रः परिणामजे ।  
 शूले यातमवे गुल्मे कणिवह्नीद्वलेः सह ॥ ६३६ ॥  
 अग्निमान्ये तथा पाण्डु रोगराजे हर्लीमके ।  
 ग्रहण्यौ कामलापाञ्च विकारे वाऽथ जाठरे ॥ ६३७ ॥  
 हरीतकयनुपानेन दातव्याऽयं रसेभ्यः ।  
 पथ्यमत्र प्रदातव्यं शाखदण्डेन वर्त्मना ॥ ६३८ ॥  
 अथवा घटिकां कुप्यादीपयेच्च रमेश्वरात् ।  
 मरिचं पिप्पलीं शुण्ठीं चाज्जालीं हिह्रुवै च ॥ ६३९ ॥  
 पञ्चानां पञ्च भागाः स्युः पष्टैः सृतेभ्यरस्य च ।  
 तत्सर्वमेकतः हत्वा खल्वे सम्मिविमर्दयेत् ॥ ६४० ॥

भृङ्गराजमवर्नीरैस्त्रिदिनं सम्प्रकल्पयेत् ।  
 तेन कल्केन चणकप्रमाणा घटिकास्ततः ॥ ६४१ ॥  
 एतेकां भक्षयेद्यद्वाघटिकां रोगहारिणीम् ।  
 वातरोगेषु सर्वेषु घटी योज्या भिषग्वरैः ॥ ६४२ ॥  
 अग्निमान्द्यभवे रोगे शूलजे तु विशेषतः ।  
 तत्सम्प्रदायसम्प्रोक्तः शूलाद्यो गजकेसरी ॥ ६४३ ॥  
 रसालं, शूलधिकारे ।

भाषा—शुद्धतावेकेवारीकपत्रराय सेहुण्ड और आक्का-  
 दूध, धतूरा और अमृत्यकापञ्चाङ्ग, गुग्गु, करिहारीकन्द, कर-  
 छरापञ्चाङ्ग, सफेदकनेरकीजड़, अहूसेकापञ्चाङ्ग, चित्रक, धीर-  
 कन्जुकी, असगन्ध, इंगोरन, जूहीमूरण, सहजन, गिलोय,  
 जुरैया, खैर, निमोत, दन्तीमूल, हज्जोह, अपामार्ग, चक्कड़,  
 मुशली, पाचोनमक, पाचोन्सार, उपक्षार इनसबका बारीकचूर्णकर  
 भैसकेदुग्धादिपञ्चक्रमें पीसकर चिकनेवर्तनमेंरख ७ दिनतक  
 रहनेदे । नमक वगैरह गलजानेपर तावेको गलाकर २१ घार  
 इसमें गुंसावे । फिर इसतावेमेंसे १ पलवजुनका समुद्रयनवाकर  
 ४ पल शुद्धपारे और ८ पलशुद्धगन्धरकी तीनदिनकेमर्दनसे  
 कीहुई नीलवर्णकमली समुद्रमें ढालकर अच्छीतरहमन्दकरदे ।  
 और २-३ इहमृत्तिकाकेलेपदेकर गुंसावे । फिर इसको मज्जुत  
 पड़ेके लवणवस्त्रमें रख धरावसे ठककर खडिया मिट्टी, लवण,  
 चिपड़े, भात और हरे समभागलेकर एकजगहपीसे और इससे  
 शरावस्थिको अच्छीतरह बन्दकर पाचोनमक इसकल्केमें  
 मिलाय समस्तयन्त्रपर लेपदेकर १-३ कपडिमिचीचड़ाय गुंसावे  
 फिर शुद्धनेवारबर खड्गा खोदकर दीर्घगैरहकी सारिष्ठलकड़ी और  
 जहलीकण्डोंसे गुदेको भरके इसपड़ेनो रख एकपुष्पप्रमाण ऊँचे-  
 कण्डे शुक्तिविशेषसे चुनकर आगलगावे । स्वाहशीतलहोनेपर  
 समुद्रको पोलकर लवण और कपडिमिचीको अच्छीतरह धाक-  
 करदे । जित्नाहिस्सा तावेकाभजन होचुकाहो । उसको सीसकर  
 रखछोड़े । फिर भैरवप्रशुक्तिका पूजनकर रसकासस्कारकरे । इसकी  
 ३-३ रती उचितागुणनवेसायदेनेसे परिणामशूल नष्टहोताहै ।  
 पानकेरखवेसायदेनेसे वातशूल्य, मन्दाग्नि, पाण्डु, रोगराज,  
 हलीमक, ग्रहणी, कामला शेषव नष्टहोतेहैं । हर्लेसाय देनेसे  
 उदरविकार नष्टहोताहै । इसमें पथय रोगोचितदेना । अथवा मरिच,  
 पीपल, सोंठ, जीरा, मुनाहीप और कपरकहाहुआरस समभागलेकर  
 भंगेकेरखसे ३ दिन मर्दनकर चनेप्रमाणगोलिये बनाकर रखछोड़े ।  
 हनमेंसे १-१ गोली उचितागुणनवेसायदेनेसे श्मस्तवातोग,  
 मन्दाग्नि और खासकर शूलको यह नष्टकरतीहै ॥ १५४ ॥

१५५ शूलगजकेसरी ( शूलद्विपमी ) ५  
 पथ्या दङ्गुणविष्यहिह्रुमरिचं घट्टि विडं गन्धकं,  
 तुल्यं सैन्धवसंयुतं तु कुचिलं सर्वैः समं सम्मतम् ।  
 शूलाऽऽध्मानविषयगुल्मकसनयस्त्रेष्मामवातापहा,  
 तृणाऽऽप्याग्न्युदराऽरुचिज्वरहरी शूलद्विपमी घटी६४४  
 वै र., वि. र. म., वै. वि., नि. र., घृते. नि. र., वै. वि.  
 एतयो पथ्याद्विघटीतिनाम ।

भाषा—है, भुनासुहागा, सोंठ, भुनाहींग, गरिच, चित्रक-  
मूल, विडनमक, शुद्धगन्धक, सैन्धव येसब समभाग और सबकी-  
बराबर शुद्धकुचिलेकाचूर्ण लेकर सबका बारीकचूर्णकर नीबू अथवा  
अदरककेरससे १-२ दिन घोटकर ३-३ रत्तीकीगोलियाँ बना-  
कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचित्वा  
गुपानकेसाधनेसे शूल, आध्मान, विवन्ध, गुदम, खासी,  
छेम, आमवात, अल्पाग्नि, उदर, अरुचि, ज्वर, और शूल  
इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १५५ ॥

### १५६ शूलगजकेसरीरसः ( पष्ठ )

पारदं गन्धकञ्चैव माशिकं पिप्पली तथा ।  
आकल्लकं हिङ्गयुक्तं समभागं विचूर्णयेत् ॥ ६४५ ॥  
आर्द्रकस्य रसेनैव शुद्धं चणकसन्निभम् ।  
शुद्धचैरसै युक्तां वापयेद्विपगुप्तमः ॥ ६४६ ॥  
सर्पशूलहरी प्रोक्ता पण्यं द्विद्वयजितम् ।  
त्रिदिनात्सर्वशूलानि हन्ति सत्यं न संशयः ॥ ६४७ ॥  
र सि, घृले ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सोनामाखी, पीपल, अकल-  
बरा, भुनीहींग सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी  
नीलवर्णकजलीमें मिलाय अदरकके रससे घोटकर चनेप्रमाण  
गोलियाँ बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरकके रस-  
केसाधनेसे समस्तशूल नष्टहोतेहैं । इसकेप्रयोगमें दाल न देवे ॥

### १५७ शूलगजकेसरीरसः ( सप्तमः )

रसकं गन्धकं शुद्धं ताप्यं जेपालबीजरम् ।  
त्रिकटुं हरयीजं च पथ्यया सह योजितम् ॥ ६४८ ॥  
सर्वमेकीकृतं खल्वे शिम्बीपत्रैश्च भाजयेत् ।  
भाजयेत्त्रिभुतातोयेस्तथा दन्तिरसेन च ॥ ६४९ ॥  
कौसुम्भैश्च तथा कनाथे दिनेकं भाजयेद्बुधः ।  
भाषमेकं प्रद्रातव्यमुष्णवारिसमन्वितम् ॥ ६५० ॥  
सर्पशूलहर, धेष्टस्तथा दन्तिरसेन च ।  
हस्तिनश्च यथा सिंहस्तथा शूलेषु केसरी ॥ ६५१ ॥  
र को, आमशले ।

भाषा—शुद्ध खपरिया, गन्धक, सोनामाखी और जमा-  
लगोटा, त्रिकटु, शुद्धपारा, हैं सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर  
पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय सैमलेकेपत्ते, निसोत,  
दन्तीमूल, कुसुम्भकेफूल इनकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनेकर १-१  
माशेकीगोलियाँ बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गरम-  
पानी अथवा दन्तीमूलकेरसकेसाधनेसे यह समस्तशूलोंको  
नष्टकरताहै ॥ १५७ ॥

### १५८ शूलगजकेसरीरसः ( अष्टम )

रसविपगन्धकपदंक्षारेण सिन्धुपिप्पलीविम्बैः ।  
अद्विपल्लव्यभुविचिष्टं शूलमहरि द्विगुञ्जोयम् ॥ ६५२ ॥  
यो र, नि र, इ यो त, वै वि, यो सं, यो त, र का,  
र र दी, दो, घृलाधिकारे ।

टि०—“क्षार कपदाद्विपैर्यवौ च व्योषञ्च सम्मर्षं शुभद्रवत्वा ।  
रसेन गुणाप्रप्तिं प्रदिष्टं समीरशूलमहरिं प्रवण्ड ॥” इतिपाठो यो  
स, यो त, र का, र र दी, दो एषु ग्रन्थेषु तथा च यो र, नि र,  
वै वि एषु द्वितीयस्थाने दृश्यते, तत्र गन्धकपदोपयोगोऽस्ति । पूर्व  
स्थित्ये योगे मरिकाडभाज कृतोऽस्ति इति व्याख्यानं केन वारणन  
सञ्चाल इति न लक्ष्यते, प्रमाद एव तत्कारणमित्यनुमीयते अतस्तथी  
पाठ्योपेक्षा संपादिक एव पाठ संपादनीय ।

भाषा—शुद्ध पारा, घृजनाग और गन्धक, कौडीमसम,  
सैधानमक, पीपल और सोंठ समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर  
पानकेरससे १-२ दिन घोटकर २-२ रत्तीकीगोलियाँ बनाकर  
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचित्वा  
पानकेसाधनेसे यह समस्तशूलोंको नष्टकरताहै ॥ १५८ ॥

### १५९ शूलगजाङ्गुशरसः

नित्कत्रयं शुद्धसूतं द्विनिष्कं शुद्धदङ्गुलम् ।  
गन्धकं पञ्चनिष्कं चाप्येकनिष्कञ्च सुस्तकम् ॥ ६५३ ॥  
चतुर्निष्कञ्च नेपालं तस्मिन् मृतताम्रकम् ।  
सर्वतुल्यं तिलक्षारं वृक्षाम्लक्षारविप्रकम् ॥ ६५४ ॥  
तद्वत्पलाशजं क्षारं पण्णिपकं ज्युषसैन्धवम् ।  
यद्यक्षारं द्विनिष्कञ्च विडसौर्यकाचकम् ॥ ६५५ ॥  
समुद्रलवणञ्चैव पिप्पली च त्रिनिष्ककम् ।  
चित्रमूलरसे युक्तं दिनेकञ्च विमर्दयेत् ॥ ६५६ ॥  
सप्तधा चणकक्षारैर्पार्श्वकद्रवमर्दितम् ।  
द्विगुञ्जं घटिकां खादेदार्द्रकस्य च वारिणा ॥ ६५७ ॥  
शुल्माष्ट्रीलाष्ट्रीहशूलप्रत्यष्ट्रीलास्तुनीद्वयम् ।  
उदरं सर्वजां बुद्धिं शोधयेत् पाण्ड्यामयं तथा ॥  
सर्वरोगान् हरेच्छीघ्रं रसः शूलगजाङ्गुशरः ॥ ६५८ ॥

व रा, घृलाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा १२ मासे, भुनासुहागा ८ मासे, शुद्ध-  
गन्धक २० मा, नगरसोया ४ मा, शुद्धजमालगोटा और  
ताम्रमसम १-१ कर्ष, तिलका क्षार ४ कर्ष १३ मा, कोकमका  
क्षार, चित्रकमूल, पलाशक्षार, त्रिकटु, सैधानमक २४-२४  
मा, यवक्षार ८ मा, विडनमक, खवल, काचलवण, समुद्र  
नमक और पीपल १२-१२ मासेलेकर बारीकचूर्णकर पार-  
गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय चित्रकमूलकेकायसे एकदिन-  
मर्दनेकर चनेक्षार और अदरककेरससे ७-७ भाजनाए देकर  
२-२ रत्तीकी गोलियाँ बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली  
अदरककेरसकेसाधनेसे, गुल्म, अट्टीला, पीद, घृल, प्रत्य  
ष्ट्रीला, तूनी, प्रतितूनी, उदररुद्धि, शोथ, पाण्डुप्रपृति समस्त-  
रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ १५९ ॥

### १६० शूलश्रीवटी

शुद्धशुल्मस्य भागेकं द्विभागमहिफेनकम् ।  
विषमुष्टिं वैदभागो घटिजं घसुभागिकम् ॥ ६५९ ॥  
आर्द्रद्वयेण यामेकं मर्दयेद्विपगुप्तमः ।  
घटी गुञ्जोपमा कार्पां तिताद्रोभ्याञ्च योजयेत् ॥ ६६० ॥

पक्तिशूल उदावर्ते शूल च परिणामजे ।

योज्या युक्तानुपानेन तत्तच्छूलहरी भवेत् ॥ ६६१ ॥

सन्धिवाते पार्श्ववाते धनुर्वातेऽपतानके ।

दण्डापतानके चैव धन्वरोमे च शस्यते ॥

ग्रहण्यामामवाते च योज्या चैवै र्यशोर्थिभिः ॥ ६६२ ॥

रसायनसं. शूलधिकारे ।

**भाषा**—ताम्रभस्म १ भाग, अफीम २ भा., शुद्धकुचिला ४ भा., मरिच ८ भा. केरु वारीकचूर्णकर अदरखेरससे एकपहर मर्दनकर १-१ रसीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शहर और अदरखेरसाधदेनेसे पक्तिशूल, उदावर्त, परिणामशूल, सन्धिवात, पार्श्वशूल, धनुर्वात, अपतान (खेच), दण्डापतान, धन्वरोम, ग्रहणी, आमवात, इनसबको यह नष्टकरती है ॥ १६० ॥

**१६१ शूलदावानलरसः (प्रथमः)**

शूलं सूतं चिपं गन्धं प्रत्येकं पलमात्रकम् ।

मरिचं पिप्पली शुण्ठी हिङ्गु चैव पलद्वयम् ॥ ६६३ ॥

त्रिञ्चाक्षरं पञ्चलवणं प्रत्येकञ्च पलाष्टकम् ।

सप्तवारं दग्धशङ्खं जम्बीराम्लेन सेचयेत् ॥ ६६४ ॥

पलाष्टकञ्च संयोज्यं तत्सर्वं निम्बुकद्वयैः ।

विनं मयं कोलमात्रं भक्षयेत्सर्वशूलनुत् ॥

शूलदावानलो नाम्ना शूलरोगनिवृत्तनः ॥ ६६५ ॥

वै.र., नि.र., टो., चि.र.भ., रसायनसं., र.क.ल., र.चं., र.सौ., यो.र., र.का., यो.त., र.क. यो., र.(भा.), शूले ।

**टी०**—माणिक्यग्रीवरसायनारौ शङ्खवटीतिनाम्ना “त्रिभाग पञ्चलवण विञ्चाक्षर दिभागिकम् । सर्वेषां द्विगुण निम्बुनीर क्षिप्वा बिलोदयेत् । तस्मिन् शङ्ख सप्तवारं तत्त्वा तत्त्वा क्षिपेद्बुध । तस्य पौञ्जमाग्राश्व रामठ पञ्चभागिकम् । एतन्मात्रं त्रिकटुक भागैः रस-गन्धयोः । विष भागैकमानञ्च सर्वमेकत्र मर्दयेत् । चणमात्रा वटी बायां द्वाधाराद्रेकं रसे । अग्निमान्द्यमनीगञ्ज नाशयेद्विष्वन्त्य । ॥ इत्यादि कारक पाठो निहितोऽस्ति, तत्रास्त्वैव पाठस्य व्यत्यासमन्तरा स्वतन्त्रता न प्राप्यते भूत्स्वयमेवाऽस्तीति विद्वद्भिर्निर्वाचनीयम् ।

**भाषा**—शुद्ध पारा, बटनाग और गन्धक १-१ पल, मरिच, पीपल, सोंठ और हॉंग २-२ पल, इमलीकाक्षर और पाचनक ८-८ पल, नीबूकेरसमें ७ बार बुझाएहुए शङ्खकी-भस्म ८ पल लेकर सबको पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर नीबूकेरसमें एकदिन मर्दनकर बेरघरावर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाधलेनेसे यह समस्तशूलको नष्टकरता है ॥ १६१ ॥

**१६२ शूलदावानलरसः (द्वितीयः)**

चिञ्चाक्षरः शुद्धशङ्खचूर्णं लवणपञ्चकम् ।

क्षाराः पञ्चाग्निसम्भूताः पृथग्गर्दपलान्विताः ॥ ६६६ ॥

मरिचं मागधी शुण्ठी हिङ्गु च त्रिपलं पृथक् ।

पारदं गन्धकं ताप्रे चिपञ्चाष्टपलं पृथक् ॥ ६६७ ॥

सर्वं जम्बीरनीरेण मयं तद्विषसप्रयम् ।

कोलप्रमाणां यटिकां पञ्चगव्यघृतान्विताम् ॥ ६६८ ॥

लेहयेच्छूलशान्त्यर्थं घृताग्रं भोजनं तथा ।

लघुनक्त्ययितं देयं दध्वाजं गव्यमेव वा ॥ ६६९ ॥

पर्यं नित्यं प्रयुञ्जीत सर्वशूलनिवहेणम् ।

हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्चाऽजीर्णशूलञ्च गुल्मजम् ॥ ६७० ॥

आनाहृष्टीहमुदरमशरीरशर्करादिकम् ।

धयञ्चैव न सन्देहो नाशयेद्दवाधिहारकः ॥

शूलदावानलो नाम्ना पूज्यपादेन भाषितः ॥ ६७१ ॥

य रा., र.क. यो., शूले ।

**भाषा**—इमलीकाक्षर, शङ्खभस्म, पांचौनमक, पाचौक्षर (सखी, सुहमा, यवक्षर, मोसादर और घोरा) २-२ रूपे, मरिच, पीपल, सोंठ और भुनीहींग २-२ पल, शुद्धपारा, गन्धक और बटनाग, ताम्रभस्म २-२ कपड़ेपर सबका शरीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय जम्बीरीके रससे ३ दिन मर्दनकर बेरघरावर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पञ्चगव्य और घीकेसाधलेनेसे सद्यप्रकारके शूल शान्तहोतेहैं । भोजनमें घी और रोटी देवे अथवा लघुन डालकर औटाएहुए गाय अथवा बकरीकेदूधका दहीदेवे । इसके सेवनकरने और यथार्थपथपालनेसे हृदयशूल, पार्श्वशूल, अजीर्णशूल, गुल्मशूल, आनाह, डीहा, उदर, पयरी, शहर, धय इनमयको यह नष्टकरता है ॥ १६२ ॥

**१६३ शूलध्वंसीरसः**

सुतायोरधिकुटिलं मुस्तात्रिफलाग्न्या सुदृढम् ।

दियसथितयं मयं शूलध्वंसी भवेत्सुतः ॥ ६७२ ॥

वत्सद्वयमितोऽसौ रुष्पणत्रिपट्टसंयुक्तः ।

निम्बुक्षारयुतो वा शिमुकायेन युक्तो वा ॥ ६७३ ॥

कफशूलं जयत्याशु द्वन्द्वजं वा त्रिदोषजम् ।

सामुद्रसर्पिषा युक्तो मरीचाप्ययुतोऽथवा ॥ ६७४ ॥

पञ्चकोलेन संसिद्धा पेया पथ्या कफामये ।

विदारीदाडिमरसो सव्योपलवणान्वितः ॥ ६७५ ॥

कफशूलं जयत्याशु घृतसंन्धवसंयुतः ।

विष्वाग्निहिङ्गुनिम्बुतथचिल्यैरण्डैर्जयत्यपि ॥ ६७६ ॥

द्वन्द्वजे सर्वशूले च विधिः कार्या विज्ञानता ।

शूलान्तको रसश्चैव योज्यः स्त्रीयानुपानकैः ॥ ६७७ ॥

मण्डरं गोत्रले सिद्धं वराशौद्रयुतं लिहेत् ।

मुच्यते मनुजः शीघ्रं सर्वशङ्खाहिदोषजातः ॥ ६७८ ॥

हिङ्गु व्योषं सलवणं शङ्खचूर्णं समांशकम् ।

उष्णोदकेन कपैकं जयेच्छूलं त्रिदोषजम् ॥ ६७९ ॥

कफशूलहिता कार्या क्रियाप्यामे विशेषतः ।

सर्वमामहरं सेव्यं यद्विचलितवर्धनम् ॥ ६८० ॥

बृहत्पौ गोशुरैरण्डमुशलीविश्वसुखण्डिकाः ।

समाक्षिका जयन्त्याशु शूलं पित्तानिलात्मकम् ॥ ६८१ ॥

त्रिफलारिष्टित्तानां कार्यं मधुयुतं पिबेत् ।

श्लेष्मपित्तमयं शूलं दाहच्छादियुतं दहेत् ॥ ६८२ ॥

वातश्लेष्मभयं शूलं विश्वहिङ्गुसुखचलम् ।  
 शुण्ठ्यम्बुनाऽनुपातव्यं हृत्पाश्वजट्टरञ्जयेत् ॥ ६८३ ॥  
 वाते निरुहं पिप्पे च क्षीरपानञ्च रेचनम् ।  
 कफे प्रच्छेदनं तिक्तकपायरससेवनम् ॥ ६८४ ॥  
 र., शूलाधिकारे ।

भाषा—पारा, लोह, तावा, शङ्ख इनकीभट्ठमें समभाग लेकर नागरमोथा और त्रिफलाकेकाढ़ेसे ३-३ दिन मर्दनकर ६-६ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखओगे । इनमेंसे १-१ गोली एण्डमूल, मरिच और तीनोंनमककेसाथ अथवा नीबूपारकेसाथ अथवा सहजिनकेसाथ, समुद्रनमक, धी अथवा मरिच और पीकेसाथ देनेसे कफज, द्वन्द्वज और त्रिदोषजशूल नष्टहोताहै । कफरोगमें पत्रकोलेसे बनाईहुई पेया पम्प्यहै । विदारी और अनारकेसमें त्रिकटु और नमक मिलाकरदेनेसे अथवा धी और सैन्धवदेनेसे कफशूल नष्टहोताहै । सोंठ, चित्रक, भुनीहींग, सेंपानमक, घेल, एण्डकीजङ्ग इनकेबाषकेसाथदेनेसे द्वन्द्वज और त्रिदोषजशूल नष्टहोताहै अथवा गोमूत्रमें सिद्धरिषेदुष्ट मण्डरको त्रिकफा और मधुकेसाथदेनेसे समस्त त्रिदोषजशूलसे निवृत्तहोताहै । भुनीहींग, त्रिकटु, नमक और शङ्खमसम समभागलेकर एककपेकीमात्रा गरमजलकेसाथलेनेसे त्रिदोषजशूल नष्टहोताहै । कफशूलकेलिये जो कर्तव्यहै उसका आमशूलमें अनुष्ठानकरनेसे लाभहोताहै । भट्टकंदया, वनभाटा, गोखर, एण्डमूल, मुसली, ईशकीगठ इनकाबाष मधुमिलाकरलेनेमें पित्त और वातशूलको नष्टकरताहै । त्रिफला, नीमकीछाल और कुटकीकाबाष मधुमिलाकर पीनेसे दाह और वमनबुल श्लेष्मपित्तशूलको नष्टकरताहै । सोंठ, भुनीहींग और संचलकेसाथ वातश्लेष्मशूलको दूरकरताहै । इदव, पार्थ और जट्टशूलको सोंठकेकाढ़ेकेसाथदेनेसे नष्टकरताहै । वातप्राधान्यमें निरुहवस्ति, पित्तमें क्षीरपान और रेचनकराना । कफमें वमन और तिक्तकपायरसका सेवन कराना ॥ १६३ ॥

### १६४ शूलनिर्मूलनरसः

गन्धकं षड्वर्णं शृङ्गं मरिचं शङ्खमसमम् ।  
 सैन्धवं रससिन्दूरं जीरकञ्चाऽम्लयेतसम् ॥ ६८५ ॥  
 कारस्कटस्य बीजानि सुशुद्धानि तद्वर्जितः ।  
 घृष्ट्याक्षिप्रकनिर्गुण्डयोः शृङ्गरेयस्य वारिणा ॥ ६८६ ॥  
 भावयित्वा घटीं कृत्वा बलमानां प्रयोजयेत् ।  
 विश्वचित्रकजं कषायं सहिद्रुमनुपापयेत् ॥ ६८७ ॥  
 नानाशूलप्रशमनः शूलनिर्मूलनाभिधः ।  
 अर्तिसारमहाणिकाविमूर्च्छागुल्मविप्रर्धात्र ॥ ६८८ ॥  
 यट्टस्त्रीहार्तिपाण्डुर्यं शोयाप्रानाधिधानि ।  
 तत्तद्व्रोगानुपानेन हन्ति रोगान्यहनयम् ॥ ६८९ ॥  
 र. क., शूले ।

भाषा—शुद्धगन्धक, त्रिकटु, शङ्खमस, मरिच, शङ्खमस, सैन्धव, रससिन्दूर, जीरा और अम्लजेत समभागलेकर सबसे आधा शुद्धत्रिफला मिलाय बारीकघूर्णकर घृष्टकाद्वय, चित्रक, निर्गुण्डी और सोंठकेकाढ़ेसे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी

गोलिया बनाकर रखओगे । इनमेंसे १-१ गोली सोंठ और चित्रकके बाषमें हींगका प्रक्षेप देकर इसकेसाथदेनेसे नाना-प्रकारकेशूल, अतिमार, प्रहणी, देजा, गुल्म, जहरवाद, यकृत, ग्रीहा, पाण्डु, शोथ इनसबको यह नष्टकरताहै । तत्तद्व्रोगानु-पानकेसाथदेनेसे बहुतसेरोगोंको नष्टकरताहै ॥ १६४ ॥

### १६५ शूलराजलोहम्

कपेकं कान्तलोहस्य शुद्धमम्रं पलन्तथा ।  
 सितायाश्च पलञ्चैकं मधुसर्पिस्तथैव च ॥ ६९० ॥  
 सर्वमेकीकृतं पात्रे लोहदण्डेन मर्दयेत् ।  
 त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विट्पुं चय्यचित्रकम् ॥ ६९१ ॥  
 प्रत्येकं तोलकं मानं चूर्णितं तत्र दापयेत् ।  
 भक्षयेत्वातरत्याय मिशिराम्भ्यनुपानतः ॥ ६९२ ॥  
 सर्वदोषभवं शूलं कुशिशूलञ्च यज्जयेत् ।  
 हृच्छूलं पार्थशूलञ्च अम्लपित्तञ्च नाशयेत् ॥ ६९३ ॥  
 अशांसि प्रहणीदोषं प्रमेहांश्च विसृजिकाम् ।  
 शूलराजमिदं लोहं हरेण परिनिमित्तम् ॥ ६९४ ॥  
 र. सं., ध., र. सु., शूले ।

भाषा—कान्तलोहमस १ कपे, अम्रमस, शङ्ख, धी और मधु १-१ पल लेकर सबको इस्त्रेमिलाय लोहेके खर-लमें लोहके ढण्डेसे मर्दनकर त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोथा, विट्पु, चय्य, चित्रकमूल १-१ तोलाकेकर बारीकघूर्णकर पूर्वोक्तसमें ढालकर घोटकर रखओगे । इसमेंसे १ मासेसे २ मासे-तक प्रातः काल ठंडानीकेसाथ लेनेसे त्रिदोषज कुशिशूल, इदव और पार्थशूल, अम्लपित्त, बवासीर, प्रहणीदोष, प्रमेह और देजेको यह नष्टकरताहै ॥ १६५ ॥

### १६६ शूलवज्रिणीवटी

रसगन्धरूलोहानां पलाद्वेन समभ्येतम् ।  
 त्रिफला रामठं शुल्बं दाटी त्रिकटु टङ्गुणम् ॥ ६९५ ॥  
 पत्रं त्यजेत्ता तालासं जातीफललघ्नकम् ।  
 यमानी जीरकं धान्यं प्रत्येकं कर्पसम्मितम् ॥ ६९६ ॥  
 मापेका यटिका कार्या छागीनुग्धेन वा पुनः ।  
 एकैका भक्षिता चैव यटिका शूलवज्रिणी ॥ ६९७ ॥  
 शूलमप्यधिषं हन्ति प्लीहगुल्मोदरं तथा ।  
 अम्लपित्तामवातञ्च पाण्डुर्यं कामलां तथा ॥ ६९८ ॥  
 शोथं गलप्रहं बुद्धिं स्त्रीदोषं समगहनम् ।  
 वृद्धशालकरी चैव मन्दारनेरपि दीपनी ॥ ६९९ ॥

र. सं., र. च., र. र., प., र. सु., भ. र., शूलाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोहमस २-२ कपे, त्रिफला, भुनीहींग, ताम्रमस, कच्चा त्रिकटु, मुनागुणा, पत्र, तज, इलायची, तात्पीपथ, जायफल, लौंग, अजवारन, जीरा और धनिया १-१ कपे लेकर बारीकघूर्णकर पारि-गन्धककी नीलकण्ठजलीमें मिलाय बटरीके दूधसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ मासेकीगोलिया बनाकर रखओगे । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुबन्धकेसाथ देनेसे ८ प्रकारकेदुल,

हीहा, शुल्म, उदररोग, अम्लपित्त, आमवात, पाण्डु, कामला, शोथ, गलघ्न, सबप्रकारकी शूलि, स्त्रीपद, भगन्दर, मन्दान्त्रि, इनसबको यह नष्टकरती है ॥ १६६ ॥

### १६७ शूलविध्वंसिनीवटी

हिङ्गु जातीफलञ्चोष्णं घृचामुण्डोसमन्वितम् ।  
पञ्चानां पञ्च भागाः स्युःसृतः स्यादेकभागकः ॥ ७०० ॥  
भृङ्गराजरसेनैव खल्यमध्ये विमर्दयेत् ।  
कल्केन तेन कुर्वीत घटीञ्चणकसन्निभाम् ॥ ७०१ ॥  
एकैकां भक्षयेत्प्रातः सर्वरोगचिन्ताशिनीम् ।  
वातरोगेऽस्तिमान्ये च शूलेऽजीर्णे कफामये ॥ ७०२ ॥  
अरुचौ वेपथावेयं प्रदेया धन्वकोष्टके ।  
व्यथायासुदृढस्यापि प्लीहरोगे शुद्धामये ॥ ७०३ ॥  
रससागर, चूले ।

भाषा—भुनीहींग, जायफल, मरिच, वच, गोरखमुण्डो ५-५ भाग, पारदभस्म अथवा रससिन्दूर १-१ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर भंगरेकरससे १-२ दिन मर्दनकर चने-प्रमाण गोलीबनाकर रखोड़े । इसमेंसे १-१ गोली सधुय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ प्रातः कालदेनेसे वातरोग, मन्दान्त्रि, शूल, अजीर्ण, कफव्याधि, अरुचि, वम्य, बद्धकोष्ठता, उदर-पीडा, मीहा और शुद्धरोग इनसबको यह नष्टकरती है ॥ १६७ ॥

### १६८ शूलविनाशनरसः

रससीवीरमाक्षीकशिलाजित्ताम्रभागकः ।  
समभागान्श्च गन्धेन सिद्धः शूलविनाशनः ॥ ७०४ ॥  
र. मृ., चूलाधिकारे ।

भाषा—पारा, सफेदसुरमा, सोनामाखी और ताम्र इनकी-भस्में, शिलाजीत, शुद्धगन्धक सब समभागलेकर १-२ दिन मर्दनकर रखोड़े । इसमेंसे ३ से ६ रसीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तशूलोंको दूरकरता है ।

### १६९ शूलशत्रुरसः

शुल्वं संशोधयेत्पूर्वं प्रायुकेन विधानतः ।  
मारयेत्पूर्वविधिना पुष्टेदुग्धादिपञ्चकैः ॥ ७०५ ॥  
पूर्वाक्तयुक्त्या सूतेन्द्र भस्मीभूतं समाहेत ।  
पलद्वयञ्च चत्वारि मृताङ्गानोः पलानि च ॥ ७०६ ॥  
ताम्रादृष्टगुणश्चैव क्षारं निर्धूममाहेत ।  
तत्सर्वमेकतः कृत्वा मर्दयेद्भिद्रुवारिणा ॥ ७०७ ॥  
कुवेराक्षरसैश्चैव व्योपनीरेस्ततः परम् ।  
लेलीतकेन सम्मर्ष्य नीरैराद्रकसम्भवेः ॥ ७०८ ॥  
जम्बीरयोजपूरादि नांगरङ्गज्युक्तैः ।  
उपक्षरेस्तथा क्षारं जम्बीराद्यभस्मसापि च ॥ ७०९ ॥  
एषामग्निः प्रमुद्गीयात्प्रत्येकञ्च दिनेदिनम् ।  
ततः संशोषयेद्यलाच्छुल्लशतुं रसेऽध्वरम् ॥ ७१० ॥  
मापमेकं प्रयुजीत रसेन्द्रं शूलशान्तेय ।  
अनुपानमिदं कुर्यादाद्रकं व्योपरामठम् ॥ ७११ ॥

रुचकञ्च कुवेराक्षौ सर्वं चूर्णं प्रकल्पयेत् ।  
शस्तेन वारिणाऽऽलोड्य पाययेदनु शूलिनम् ॥ ७१२ ॥  
सर्वेण शूलजातेन मुख्यते नाऽत्र संशयः ।  
देवीशास्त्रानुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ ७१३ ॥  
शूलशत्रुरितिर्यातः सर्वशूलविनाशनः ।  
पथ्ये तु द्विद्वलं वर्ज्यं नवाग्रं सर्वमेव हि ॥ ७१४ ॥  
रसालं, चूलाधिकारे ।

भाषा—विधिपूर्वकशुद्धकरकेमारुहए तावेको दुग्धादि पञ्च-मृतसे मर्दनकर गजपुटकी आंचदे । फिर विधिपूर्वक माराहुआ-पारा २ पल, पूर्वोक्तताम्रभस्म ४ पल, कायमशोरा अथवा नोसादर ८ पललेकर हींग, वरङ्ग, त्रिकटु, गन्धककाले, अदरक, अजीरी, बिजोरा, नागद्री, चूका, उपक्षार, क्षार और यथासम अम्लवर्ण इसके श्रवसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ मासेकी गोलिएया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोलीदेकर अदरक, त्रिकटु, भुनीहींग, संचल, करंज सब समभागलेकर घारीकचूर्ण-कर इसमेंसे ३ मासेचूर्ण ठंडापानीमें घोलकर पिलानेसे सब-प्रकारकेशूल नष्टहोतेहैं । इसमें पथ्य सबतरहकीदाल और नये अन्नको छोड़कर देना ॥ १६९ ॥

### १७० शूलसिंहरसः

विषं कर्पं वचा कर्पं चित्रकं चित्रफला च पट् ।  
भार्गी मुस्ता विडङ्गानां प्रतिरूपञ्च चित्रकम् ॥ ७१५ ॥  
गुडेन सधेतुल्येन गुटिका चणमात्रिका ।  
शूलसिंहः प्रयोगोऽयं कफशूलहरो भवेत् ॥ ७१६ ॥  
एरण्डतेलमुण्डोभ्यां हिङ्गु सौवर्चैलान्वितम् ।  
उष्णोदकैः पिबेच्चानु रसं वाऽऽनन्दभैरयम् ॥ ७१७ ॥  
र. र., दो., र. चं., यो. म., र. क. ल., र. को., ना. वि. चूले ।  
भाषा—शुद्ध घटनाग और वच १-१ कर्प, त्रिकटु और चित्रफला ६-६ कर्प, भारद्वाजी, नागरमोषा, विडङ्ग और चित्रक-मूल १-१ कर्प लेकर सबका बारीकचूर्णकर समभागगुडमिलाय चनेप्रमाणगोलिये बनाकर रखोड़े । इसमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपावकेसाथदेनेसे यह समस्तशूलोंको नष्ट-करताहै । एरण्डतेल, सोंठ, भुनीहींग और संचलकाचूर्ण ३ मासे गद्यपानीकेसाथ मिलाकर इसकेसाथ आनन्दभैरवदेनेसेभी शूल नष्टहोताहै ॥ १७० ॥

### १७१ शूलहरीवटी

हिङ्गुज्याजां समरिचा वचा शुण्ठीसमन्विता ।  
पञ्चानां पञ्च भागाः स्युस्तथैव सूतकस्य च ॥ ७१८ ॥  
भृङ्गराजरसेनैव मर्दयेत्खल्यमध्येतः ।  
तेन कल्केन कुर्वीत घटीं चणरुसस्मिताम् ॥ ७१९ ॥  
एकैकां भक्षयेत्प्रातः घटिकां रोगहारिणीम् ।  
वातरोगे प्रयोक्तव्या वह्निमान्ये तथैव च ॥ ७२० ॥  
र. क., र. म., चूलाधिकारे ।  
भाषा—हींग, जीरा, मरिच, वच, सोंठ, पारदभस्म समभागलेकर बारीकचूर्णकर भंगरेकरससे १-२ दिन मर्दनकर

यनेप्रमाणं गोलियेवनाकरं रखोड़े । इन्मेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह वातरोग और मन्दाक्षिको नष्टकरतीहै ॥ १७१ ॥

### १७२ शूलहररसः ( प्रथमः )

सिन्दूरताम्राप्रविषाणि गन्धः

समानि तनुत्यसहस्रयेधी ।

दौण्या कणाः पञ्च पट्टनि हिड्डु

आद्रोद्विरामय च शूलहानिः ॥ ७२१ ॥

रसायनसार., शूले ।

भाषा—रससिन्दूर, ताम्र और अन्नकमल, शुद्धयन्त्राग और गन्धक १-१ भाग, अमलबैत ५ भाग, अजशान्, पीपल, पाचोनमक और हींग १-१ भाग लेकर अक्षरखेकरसे १ दिन मर्दनकर ३-३ रसीकी गोलिये बनाकर रखोड़े । इन्मेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ लेनेसे यह शूलको नष्टकरतीहै ॥ १७२ ॥

### १७३ शूलहररसः ( द्वितीयः )

सूततुल्यन्तु जैपालं क्षिप्स्यन्न पित्तर्दयेत् ।

द्विगुणं भक्षयेन्नित्यं सर्वशूलहरं परम् ॥ ७२२ ॥

यधानिन्द्रिययो पाठा यिल्वगुण्ठीरसाञ्जनम् ।

चूर्णं शूलहरं चानु पिबेदुष्णाम्बुना सदा ॥ ७२३ ॥

र. को., र. क. ल., शूलाधिकार ।

भाषा—शुद्ध पाठा और जमाखोटो समभागलेकर यहा तक मर्दनकरे कि पाठा अदृश्यहोजाय अथवा रससिन्दूरजले । इसकी २-२ रसीकी गोली पानीकेसाथलेकर अजशान्, इन्द्र-जव, पाठा, बेलगिरी, सोंठ और रसीत समभागचाचूर्ण ३ मासे गरमपानीकेसाथ अनुपानमें लेनेसे सर्वप्रकारकेशूल और गुल्म नष्टहोतेहैं ॥ १७३ ॥

### १७४ शूलान्तकरसः ( प्रथमः )

चक्ष्ये शूलान्तर्कं नाम्ना सर्वशूलविनाशनम् ।

मन्दाग्निमर्त्तसि चैव निवारयति सत्वरम् ॥ ७२४ ॥

शूल्वेन पातितं सूतं दृश्या स्वेदितं तप्तः ।

प्रासित्मुखं स्वर्णजीर्णं स्फुरांशेन ततो घलिम् ॥ ७२५ ॥

आदित्यगुणतो जार्यं जीर्णकं समभागतः ।

अग्नीपोमीययन्त्रेऽथ मारयेत्पूर्वयुक्तिः ॥ ७२६ ॥

ताम्रं प्राशुकमार्गेण सम्यक् शुद्धञ्च मारयेत् ।

पञ्चाभृतादिवापेन कलेदभेदादिवर्जितम् ॥ ७२७ ॥

भस्मीभृताच्च सूतेन्द्रावपलमेकं समाहरेत् ।

मृताद्रवेः पलं प्राशं सर्वदोषविजितात् ॥ ७२८ ॥

एकत्र मर्दयेत्तौ द्वौ जम्बीराद्यम्लयोगतः ।

तत्र कल्के प्रक्षिपेच्च कल्कसाग्येन लाङ्गलीम् ॥ ७२९ ॥

वन्ध्याकन्दश्च तन्मानं कम्बुकल्कं चतुर्गुणम् ।

निक्षिप्य खल्वे तत्सर्वं जम्बीराद्यम्लयोगतः ॥ ७३० ॥

मर्दयेद्विषसान्तस्य दियानकमतन्द्रितः ।

सुदृढे सम्पुटे क्षिप्वा कल्कञ्च पुटयेत्ततः ॥ ७३१ ॥

आरष्यच्छाणके भारोन्मानकेः स्वाद्वाशीतलम् ।

आक्षिप्य खल्वे निक्षिप्य सूतं सम्मर्दयेद्बुधः ॥ ७३२ ॥

मागधोमरिचैः सार्धं योजयेच्छूलशान्तये ।

कुचेपासीं तयो मांदाह्वा सूतञ्च सादयेत् ॥ ७३३ ॥

अनुपानमिदं दद्याद्बुधोपकथं सहिहुकम् ।

कोष्णं निवर्तते शूलं पक्तिजं घातजं तथा ॥ ७३४ ॥

गुञ्जामानप्रमाणेन रसं दद्याद्विचक्षणः ।

अनुपानान्तरं चक्ष्ये रसस्य बलवत्तरम् ॥ ७३५ ॥

दग्धा हरीतकीं क्षारं कुर्यात्तस्यैकभागकम् ।

यजानी भाग एकः स्याद्वाहीका द्वागमाहरेत् ॥ ७३६ ॥

माणिमन्थस्य भागः स्याद्बुधोपकथं विनिक्षिपेत्

सूतेन्द्रं विनियोज्याऽथ कथयमेनं विधेद्वतु ॥ ७३७ ॥

सर्वपापेयं शूलानां नाशं कुर्याद्रसेध्वरः ।

ग्रहणीञ्च विमूचीञ्च तथाऽजीर्णमरोचकम् ॥ ७३८ ॥

ग्रीहानं गुल्ममरिजं नाशयेदपि सेधितः ।

शालयः कृष्णमुद्राश्च गर्वा क्षीरं घृतञ्च गोः ॥ ७३९ ॥

पथ्यमत्र प्रयोक्तव्यमनूतं धर्तयेद्बुधः ।

अयं शूलान्तको नाम रसः प्रोक्तः क्रमागतः ।

देवीशास्त्रानुसारेण विधिच्य प्रतिपादितः ॥ ७४० ॥

रसाल, शूलाधिकार ।

भाषा—शुद्धपात्रको समभाग शुद्धतावेके चूर्णमें मिलाकर नीनुकैरहेकरसे घोटघोटकर १० बार ऊर्ध्वपातनकरे । फिर विषवर्णकेसाथ मर्दनकर काज्जोमें स्वेदनकर बुसुमुना उत्पन्नकर पोश्ताश स्वर्णशीखेकर बारहगुनागन्धक जारणकरे । फिर सम-भाग ताम्रभस्म डालकर बीचूकैरहेकरसे घोटकर डमरुयन्त्रमें अग्निदेकर ऊर्ध्वपातितकरे । पारदकेयोगसे भस्मकिण्डुए ताम्रको दुग्धादिपत्राभृतमें घोटघोटकर गजनुदकीमांचदे । जब बान्ति-आन्त्यादिकोसे रहित होजाय तब इसकीबराबर पारदभस्म-मिलाय जम्बीरीकैरहे अम्लशर्कोसे १-२ दिनमर्दनकर इसकलकी-बराबर करिहारी और बाउखेखेलेकाकन्दमिलाय मर्दनकरे । फिर इससे चतुर्गुणित शङ्खभस्म डालकर लगातार ७ दिनतक मर्दन-कर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर दृढयुक्तिकोसे ६-७ करङ् मिठीदेकर अच्छोतरहस्यनेपर एकबार जहलीकण्डोंकी आंचदे । स्वाद्वाशीतलोनेपर निकालकर रखोड़े । इसमेंसे १-१ रसी पीपल और यरिचकेसाथदेकर फर्नकेबीजोंकाचूर्ण ३ मासे फकावे कससे त्रिकटुकेकायमें हींगप्रसेधेदेकर कटुणपिलावे । इससे पक्किल और बातशूल नष्टहोताहै । हरेकीभस्म, अज-वाइन, सुनीहीम्, सेंधानमक समभागलेकर चूर्णबनाकर रखोड़े । पूर्वसकोदेकर त्रिकटुकेकायमें इसचूर्णका प्रसेधेदेकर पिलानेसे सबप्रकारकेशूल, ग्रहणी, हैजा, अजीर्ण, अमचि, ग्रीहा, और सबप्रकारकेगुल्म नष्टहोतेहैं । पुरानेचावल, कालेभूग, गामका-दूध और घी येसब पच्येंहैं ॥ १७४ ॥



## १७५ शूलान्तकरसः ( द्वितीयः )

भस्मसूतमयश्चापि पलमेकं ग्रथकृष्यम् ।  
ताम्रभस्मपले द्वे तु गन्धरुस्य पलत्रयम् ॥ ७४१ ॥  
हरितालञ्च कर्पाशं विमलाहेममाक्षिरुम् ।  
पलाहं हलिनीरुन्दं नागवज्रौ पलाहकौ ॥ ७४२ ॥  
चतुष्पला त्रिभुजैस्तत्सर्वं सम्पन्विचूर्णयेत् ।  
भृषात्रीस्वरसेनैव भावयेत्सप्तधा भिषक् ॥ ७४३ ॥  
तथा दन्तीरसे बह्वं दद्यादाद्रकवारिणा ।  
तेन फोष्टं विशुद्धे च दधिभक्तञ्च भोजयेत् ॥ ७४४ ॥  
सर्वशूलान्हरत्येव रसः शूलान्तको मतः ।  
रसः शूलहरः प्रोक्त इति भालुकिभाषितम् ॥ ७४५ ॥

र. को., र. चं., चि., क. र. र. स. शूले ।

टि०—यत्र भयमः रयाने खरयेति पाठो लभ्यते तत्राऽन्नभस्म निवीज्यम् ।

भाषा—पारद और लोहभस्म १-१ पल, ताम्रभस्म २ पल, शुद्धगन्धक ३ पल, रसमाणिक्य अथवा शुद्धहरिताल, रौप्यमाक्षिक और रत्नमाक्षिक १-१ कर्प, शुद्धकरिहारी २ कर्प, नाग और बहभस्म १-१ कर्प, निसोत ४ पल लेकर बारीकचूर्णकर भुईमांसे और दन्तीमूलकेसरसोंसे ७-७ भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखओहे । इनमेंसे १-१ गोली अदरककेरसकेसाधदेनेसे दस्तहोंगे । पेट साफहोनेपर दहीमात खानेकी देवे । इससे समामशूल नष्टहोतेहैं ॥ १७५ ॥

## १७६ शूलान्तकरसः ( तृतीयः )

मृणालं चन्दनं यष्टी शुङ्खची घालकं तथा ।  
एतत्सर्वं समञ्चर्णं चूर्णांशौ शर्करां क्षिपेत् ॥ ७४६ ॥  
सिन्दूरं बल्लमात्रेण तण्डुलोदकपाततः ।  
पित्तशूलभिदाहौ च सर्वशूलं प्रशाम्यति ॥ ७४७ ॥  
व. रा., शूले ।

भाषा—भर्सीह, सफेदचन्दन, सुलहड़ी, गिलोय और सुगन्धवाला १-१ कर्प, शकर ५ कर्प, रससिन्दूर ३ रत्ती मिलाकर १-२ पहरपोटकर रखाओहे । इसमेंसे ३-३ मासे चावलके-धोवनवेसाधदेनेसे पित्तशूल और दाह नष्टहोतेहैं ॥ १७६ ॥

## १७७ शूलान्तकोरसः ( चतुर्थः )

रसहेमाभ्रयङ्गानां भागास्तुल्यांशयोजिताः ।  
वरायनाभ्युना मर्द्यः सिद्धः शूलान्तको रसः ॥ ७४८ ॥  
शतावरीरसक्षौद्रयुक्तो वा शर्करान्वितः ।  
यष्ट्याह्नत्रिफलानिम्बकटुकारग्वधैर्युतः ॥ ७४९ ॥  
घात्रीरसक्षौद्रयुतस्सधात्रीचूर्णमाक्षिकः ।  
शिवाद्राक्षायुक्तो वापि पथ्याक्षौद्रयुतोऽथवा ॥ ७५० ॥  
पाचनं वमनं शस्तं लह्नं कफशूलिनाम् ।  
गोधूमयवल्गुशाणि मृन्नि च हितानि च ॥ ७५१ ॥  
मातुलुङ्गरसो वापि शिमुकापोऽथवा हितः ।  
सक्षारो मधुना पीतः पार्श्वहृद्वस्तिशूलनुत् ॥ ७५२ ॥  
र, शूलधिकारे

भाषा—पारा, सुवर्ण, अन्नक, वज्र इनकीमल्लमें समभाग लेकर त्रिफला और नागरमोयेकेसाधसे मर्दनकर १-१ रत्तीकी-गोलियां बनाकर रखओहे । इनमेंसे १ से २ गोलीतक शतावरीके-रस और मधु अथवा शकर अथवा सुल्हड़ी, त्रिफला, नीमकी-छाल, कुटकी, अमिलतासकापूरा इनकेकाड़ेकेसाध, अथवा आंवले-केस और मधुकेसाध, अथवा आमलेकेचूर्ण और शहदेमाध, अथवा हरे और द्राक्षकेसाध अथवा हरे और मधुकेसाध, अथवा विजोरेकेरस या सहजनेकेसाधकेसाध अथवा सजरार और मधुकेसाधदेनेसे पार्श्व, हृदय और वस्तिशूलको यह नष्टकरताहै । कफशूलकी पाचन, वमन और लह्नकराना । मँह, ज्वर, रुक्ष-पदार्थ और मधु पथ्यमें देना ॥ १७७ ॥

## १७८ शूलारिरसः ( प्रथमः )

रसं गन्धं समं कृत्वा ताम्रं तुल्यं नियोजयेत् ।  
मरिचं नागरं हिङ्गुं घवाऽजाज्यभिर्मूलकम् ॥ ७५३ ॥  
मार्कण्डेयस्वरसेनैव दिने सूक्ष्मं यिमर्दयेत् ।  
वदरास्थिप्रमाणेन घटिकाः काप्येन्निपक्व ॥ ७५४ ॥  
शूलं शुल्ममुदायतं घातरोगं निहन्ति च ।  
रसः शूलारिरित्येव धहिमान्द्यनिपूदनः ॥ ७५५ ॥  
व. रा., शूले ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, मरिच, सोंठ, भुनीहींग, वच, जीरा, चित्रकमूल सब समभागलेकर बारीकचूर्ण-कर परेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय भगेरेकेरससे एकदिन-मर्दनकर घेकीशुलीकेरसरार गोलियें बनाकर रखओहे । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुमानकेसाधदेनेसे शूल, शुल्म, उदावर्त, वातरोग, मन्दाभि ये सब नष्टहोतेहैं ॥ १७८ ॥

## १७९ शूलारिरसः ( द्वितीयः )

रसं गन्धकं दद्रुणं श्वेतकाच-  
मलं भारष्टङ्गं विडङ्गं वराटम् ।  
रविशम्युक्तं मेपजातञ्च शृङ्गं  
रविस्तुक्पयोभिर्दिनं सम्मिमर्द्य ॥ ७५६ ॥  
पुटे दग्धमेतद्विपण्यापयुक्तं  
मरौचाज्ययुक्तं प्रयुज्जीत बह्वम् ।  
महाशूलदोषे सपक्वौ च रोग  
इमं मन्दबह्वौ ददीत ग्रहण्याम् ॥  
क्षये दुर्निवारे विकारे च पाण्डौ  
तथा वातरोगे प्रयुज्जीत नित्यम् ॥ ७५७ ॥

रसायनचं., र. का., चि. र., वै. चि., र. वो., शूलाधिकारे ।  
नि. र., वै. चि., शूलहर इतिनामा र. का. महेश्वररस इतिनाम

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, सुहागा, काचनमक, वारहमींगे और कौडीकीमल्ल, विडङ्ग, ताम्र, घोषा और मँदेकेसींगी-भस्म सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर परेगन्धककी नीलवर्ण कजलीमें मिलाय बृह और आरुकेदूधसे मर्दनकर गोलाबनाय शतावनीमुटमें बन्दकर ३-४ कपडिमीदेकर सूखनेपर गजपुटकी

आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर शुद्धबलनाग और निकट  
१-१ भाग मिलाकर रखोढ़े । इसमेंसे ३-३ रती मरिच और  
पीकेसायमिलाकर देनेसे उद्वतशूल, पक्षिशूल, मन्दामि, असाध्य-  
शय, पाण्डु और वातरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १७९ ॥

### १८० शूलारिरसः

शुण्ठी सौचर्चलं टङ्कं सैन्धवं प्रतिकार्पिकम् ।  
मह्यं मापमितं शिष्टुरसेन परिमदेयम् ॥ ७१८ ॥  
यदरास्थिप्रमाणेन गुटीं कृत्वा विचक्षणः ।  
उष्णतोयाऽनुपानेन शूलञ्च विविधज्वरे ॥ ७१९ ॥  
अशीतिं यातमात्रोपाशयेन्नात्र संशयः ।  
मत्स्येन्द्रः कृपया पूर्वं गोरक्षाय द्वां किल ॥ ७२० ॥  
रसायनसं, रसायनाधिकारः ।

भाषा—सोंठ, सचल, भुनासुहागा, सेंधागमक १-१ कर्प  
शुद्धतोमल १ माशा, कैरु बारीकचूर्णकर सहिजनकेरससे एक-  
दिन मर्दनकर बेरकीशुटलीकेबराबर गोलिया बनाकर रखोढ़े ।  
इसमेंसे १-१ गोली गरमपानीकेसाथलेनेसे नानाप्रकारकेशूल  
और ८० वातरोग नष्टोत्तेहै ॥ १८० ॥

### १८१ शूलेमसिंहिनीगुटिका

धलेः शुक्रस्य भागार्द्धं भागार्द्धं पारदस्य च ।  
यिपस्य भागो विहोयो मरिचस्य त्रयः स्मृताः ॥ ७२१ ॥  
भागैकं पिप्पलीशुण्ठयोः सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ।  
भाययेत्तुङ्गचेरस्य रसेनैव त्रिधासरम् ॥ ७२२ ॥  
रवुपनरसेनैव भायनात्रितयं तथा ।  
पश्चात्संशोष्य चणकमात्रा कार्यां घटीं बुधैः ॥ ७२३ ॥  
ततोदकेन दातव्या सर्वशूलनिवारिणी ।  
अज्वयेच्छीतनीरेण नेत्रस्त्रायं विनाशयेत् ॥ ७२४ ॥  
शूलेमसिंहिनी ख्याता न देया यस्य कस्यचित् ॥  
शङ्करेण स्वयं प्रोक्ता गोपालपुरतः पुरा ॥ ७२५ ॥  
र. का, शूलधिकारः ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा आधाआधाभाग, शुद्ध-  
बलनाग १ भाग, मरिच ३ भाग, पीपल और सोंठ १-१ भाग  
लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धरुकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय  
अदरत और एण्डकेरससे ३-३ दिन मर्दनकर चनेप्रमाण  
गोलिया बनाकर रखोढ़े । इसमेंसे १-१ गोली गरमजलेसाथ-  
देनेसे सबप्रकारके शूलोंको यह नष्टकरतीहै । उद्वेगपानीमेंधिसकर  
नेत्रोंमें अन्ननरनेसे नेत्रलाग नष्टोत्तेहै ॥ १८१ ॥

### १८२ शृङ्गलावातनाशनरसः

शुद्धं सूतं विपं गन्धं चाम्रकं चाम्लवेतसम् ।  
द्विद्रिप्तं भाययेत्तत्र हंसपादरीसेस्तथा ॥ ७२६ ॥  
काचवृष्यां निवेद्याऽथ कुम्भुदीपुटपाचितम् ।  
भायितं मत्स्यपित्तेन द्विगुञ्जं भक्षयेत्सदा ॥ ७२७ ॥  
अनुपानविशेषेण शृङ्गलावातनाशनम् ।  
पथ्यं क्षीरीदर्नं देयं नाटिकेलजलाऽऽप्नुतम् ॥ ७२८ ॥  
च. रा., शृङ्गलावाते ।

हिं—“देह्य पाण्डुशुक्रश्च निद्रानाश शिरोव्याधौ । वान्ति हिंका  
च विस्फोट शृङ्गलावातलक्षणम् ॥ इति”

भाषा—शुद्ध पारा, बलनाग, गन्धक, अम्रकमस, अम्लवेत  
सबसमभागलेकर नीलवर्णकजलीकर हंसराजेरससे दोदिन मर्दन-  
कर गोलबनाय ३-४ कपड़मिटोदीहुई आतसीशीशीमें भरके  
कुम्भुदीपुटकीआचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मछलीके-  
पित्तसे एकभावनादेकर २-२ रतीकी गोलिया बनाकर रखोढ़े ।  
इसमेंसे १-१ गोली रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शृङ्गला-  
वातको नष्टकरताहै । इसमें पथ्य दूधभात और मारियलका-  
जल देना ॥ १८२ ॥

### १८३ शृङ्गलारसः

रत्नं गन्धं कन्धो भंसितमपि कापर्दभंसितं,  
मरीचं भूचन्द्राशुधिरसहस्रांशुलविकम् ॥ ७२९ ॥  
रस्ताङ्गयशं टङ्कं सकलमपि चूर्णीकृतमिदं,  
कमाद्यावन्निष्कं घृतसहितमद्यात्क्षयहरम् ॥ ७३० ॥  
र. सि, स्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, शङ्खमस  
४ भा, कौशीमस ६ मा., मरिच १२ मा., भुनासुहागा २  
भागलेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर रखोढ़े । इसमेंसे १-१  
माशा पीकेसाथलेनेसे शय नष्टोत्तेहै । इसकीमात्रा धीरेधीरे  
बढाकर ४ मासेतककीकरना ॥ १८३ ॥

### १८४ शृङ्गाराभ्रम् ( प्रथमम् )

शुद्धं कृष्णाम्बुवर्णं द्विपलपरिमितं  
शाणमानं यदन्य-  
त्कर्पूरं जातिकोपं सजलमिभकणा  
तेजपत्रं लघङ्गम् ।  
मांसी तालीसचोचे गजकुमुमगदं  
धातकी घेति तुल्यं,  
पथ्या धात्री त्रिभीतं त्रिभुदुरथपृथक्  
त्वर्धशाणं द्विशानम् ॥ ७३१ ॥  
पला जातीफलार्थं क्षितितलविधिना  
शुद्धगन्धादमकोलं,  
कोलोर्दं पारदस्य, प्रतिपदधिहितं  
पिपमेरुच मिथम् ।  
पानीयेनैव कार्याः परिणतचणक-  
स्विप्रतुल्याश्च यव्यः,  
प्रातः खाद्याश्चतस्रस्तदनु च हि किय-  
च्छङ्गवेरं सपर्णम् ॥ ७३२ ॥  
पानीयं पीतमन्ते ध्रुवमपहरति  
क्षिप्रमेतान्विकारान्,  
कोष्ठे दुष्टाग्निजातां ज्वरमुदरगो  
राजयश्म शयञ्च ।

कासं श्वासं सशोथं नयनपरिमव  
मेहमेदोविकारां,  
श्वादिं शूलाम्लपित्तं तुषमपि महतीं  
गुल्मजालं विशालम् ॥ ७७३ ॥  
पाण्डुत्वं रक्तपित्तं गरलभयगदान्  
पीनसं प्लीहोरोगं,  
हृन्त्यादामानिलोत्थान्कफपवनकृता-  
न्पित्तरोगानशेषान् ।  
घृत्यो वृष्यश्च योगस्तत्क्षणतरकरः  
सर्वरोगे प्रशस्तः,  
पथ्यं मांसेश्च घृतं घृतपरिलुलितै  
गव्यदुग्धैश्च भूयः ॥ ७७४ ॥  
भोज्यं योज्यं यथेष्टं ललितललनया  
दीयमानं मुदा य-  
च्छृङ्गाराध्रमेण कामी युयतिजनशता-  
भोगयोगादनुषः ।  
यज्यं श्वाकाम्लमादौ दिनकृतिपयचि-  
त्स्वेच्छया भोज्यमन्य-  
दीर्घायुः कामभूतिं गतवलिपलितो  
मानवोऽस्य प्रसादात् ॥ ७७५ ॥

र. सं., शै. र., र. चि., र. सु., यो. म., रसायनसार, र. चं.,  
कासाधिरारे । तथा च शै. र., र. कौ., र. र., घ., रसायनसं.,  
र. म. मा., व. यो. त., र. क., घं. द., रसायनवाजीकरणयोः ।

भाषा—वज्राध्रमस्य २ पल, शुद्धकपूर, जावित्री, मुष-  
न्धवाला, गजरीपल, तमालपत्र, लौघ, जटामांसी, तालीसपत्र,  
तज, नागकेशर, कुठ और धावकीकेपूल ४-४ मासो, हेंदं,  
आंनले, पहेई, भिरडु २-२ मासो, इलायची, जायफल और  
बन्दुबीजन्त्रेष्ट शुद्धकियाहुआगन्ध ८-८ मासो, पारदभस्म  
अथवा रससिन्दूर ४ मासो केदर बारीकचूर्णकर १-२ दिन  
शतावरीवर्गहकरमे घोटकर अंगेकुपुचनेप्रमाण गोलिये बनाकर  
रगछोड़े । इनमेमे प्रातःकाल ४-४ गोली अदरम और पानके-  
साय ग्लाकर थोड़ा पानीपीनेसे मन्दाग्निजनितरोग, ज्वर, उदर-  
पीडा, राजयक्ष्म, हाय, कास, खास, दोष, नेत्रपीडा, प्रमेह,  
मेदोशुद्धि, पमन, दल, अम्लपित्त, बर्तुहृद्द्विषा, असाध्यगुल्म,  
पाण्डु, रक्तपित्त, निरदोष, पीनघ्न, ग्रीहा, आमवात, कफ और  
पातङ्गारोग, तमस्तपित्तारोग इनसबको नष्टकर मनुष्यको ज्ञान  
बनाताहै । थोड़ेदिनउछ साठ और अम्लशर्षाका परिमाणहै ।  
इमेपाद यष्टमोजनहै । इमेके निम्नतः सेवनकरनेसे कती-  
परिधादिभेगे निशानदोष पूर्णरूपसे आजाताहै ॥ १८४ ॥

१८५ शृङ्गाराध्रम ( रहत् ) २

पारदं गन्धकश्चैव दूर्णं नागकेशरम् ।  
जातकोषश्च कंठं त्र्यहं तेजपत्रकम् ॥ ७७६ ॥  
मुष्यज्जापि प्रत्येकं कर्ममात्रं प्रकरयेत् ।  
शुद्धक्याध्रमचूर्णं चतुष्कयं प्रयोजयेत् ॥ ७७७ ॥

तालीसं घनकुष्ठञ्च मांसी त्वग्धातकी तथा ।  
एलावीजं त्रिकटुकं त्रिफला करिपिप्पली ॥ ७७८ ॥  
कर्पूरं वा चैतेषां पिप्पलीकायमर्दितम् ।  
अनुपानं प्रयोक्तव्यं चोचं क्षौद्रसमायुतम् ॥ ७७९ ॥  
अग्निमान्धादिकाप्रोगानरुचिं पाण्डुकामलाम् ।  
उदराणि तथा शोथमानाहं ज्वरमेव च ॥ ७८० ॥  
ग्रहणीं श्वासकासी च हृन्त्याद्यश्मानमेव च  
नानारोगप्रशमनं पलवर्णाग्निकारकम् ॥ ७८१ ॥  
बृहच्छृङ्गाराध्रमनाम विष्णुना परिकीर्तितम् ।  
एतस्याऽभ्यासमात्रेण निर्व्याधिं जायते नरः ॥ ७८२ ॥

र. सं., घ., (कासे) र. सु., र. चं., वाजीकरणे ।

टि०—“जीर्णं सुवर्णं रोह वा यश्च परिदीकने । तदायं सर्वरोगाणां  
सार्वभौमः प्रसीतिः” इति केषुचित्पुस्तकेष्वधिकं दृश्यते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और शुद्धाग्न, नागकेशर,  
जावित्री, शुद्धकपूर, लौघ, तेजपात और सुवर्णभस्म १-१ कर्प,  
अम्रकभस्म ४ कर्प, तालीसपत्र, नागकेशोपा, कुठ, जटामांसी,  
तज, धावकीकेपूल, इलायची, त्रिकटु, त्रिफला, गजरीपल २-२  
कर्पलेकर सबका बारीकचूर्णकर पीपलकेकायसे एकदिन मर्दनकर  
३-३ रतीकी गोलियाबनाकर रगछोड़े । इनमेसे १ या २ गोली  
तज और मण्डुकेषाद्येदेसे मन्दाग्नि, अरुचि, पाण्डु, कामला,  
उदररोग, शोथ, आनाह, ज्वर, ग्रहणी, श्वास, कास, राजयक्ष्म,  
बलनाश, इनसबको नष्टकर आदमीको युवावस्थामें लाताहै १८५

१८६ शैलेन्द्ररसः

शुद्धं स्वतं समं गन्धं कान्तमस्य चिपन्तथा ।  
वाकुचीत्रिफलाचूर्णं निरूपयद्भिगुहचिजैः ॥ ७८३ ॥  
दिनं भृङ्गीद्रवे मयं वाकुच्याश्च कपायकैः ।  
भक्षयेत्तलोहपात्रस्थं कपाई जिहिकाग्रमुत्त ॥ ७८४ ॥  
शुद्धाभिलाततेलाभ्यां वाकुचीचूर्णलेपनम् ।  
अनुपानयित्तेष्वेव सर्वकुष्ठविनाशनः ॥ ८८५ ॥  
व. रा., पै. वि., कुपे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, कान्तभस्म, शुद्धवज्राग्न,  
वाकुची, और त्रिफला समभागलेकर बारीकचूर्णकर पात्रगन्धकी  
नीलवर्णभस्मीमेंमिलाय नीमकीछाल, चित्रसूत, मिलोय,  
भंगरा, वाकुची इनकेसोसे १-१ दिन मर्दनकर गुग्गाकर रग-  
छोड़े । इनमेमे ८-८ मासो लेहेकेपात्रमें मण्डुकेषाद्येदेकर खावे,  
ऊपरसे वाकुचीकाछाउ पीनेसे कान्तजिह्वुको बहनकरताहै ।  
गुग्गा और भिलाविकेत्येव वाकुचीकेचूर्णता ऐगछे ॥ १८६ ॥

१८७ शोयकालानलरसः

चित्रं कुटजर्वाजश्च धेयमी सन्धयं तथा ।  
पिप्पलीं देवपुष्पञ्च सज्जालीफलटङ्गणम् ॥ ७८६ ॥  
लौहमग्नं तथा गन्धं पारदेनेय मिथिनम् ।  
एतेषां कर्ममात्रेण घटीं शुद्धामितां शुभाम् ॥ ७८७ ॥

भक्षयेत्प्रातस्तथाय कोकिलाक्षरसेन तु ।  
 त्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमयापि वा ॥ ७८८ ॥  
 कासं श्वासं तथा शोथं ग्रीहानं हन्ति दुस्तरम् ।  
 मेहं मन्दानलं शूलं सङ्ग्रहप्रहणीं तथा ॥ ७८९ ॥  
 अवश्यं नाशयेच्छोथं कर्दमं भास्करो यथा ।  
 शोथकालानलो नाम रोगानीकविनाशनः ॥ ७९० ॥  
 भै र, घ, शोथाधिकारे ।

भाषा—चित्रकूल, इन्द्रजव, गन्धीपल, संधानमक, पीपल, लौंग, जायफल, मुनाष्ट्रहाग, लोह और अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक और पारा समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर तालमखानेकेरससे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोल्या बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली प्रातः काल तालमखानेकेस्वरससेया देनेसे ८ प्रकारकेज्वर, साध्य अथवा असाध्यकास, खास, शोथ, ग्रीहा, ममेह, मन्दागि, शूल, सङ्ग्रहप्रहणी इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १८७ ॥

### १८८ शोथहारसः ( प्रथम )

मृतं कृष्णायसं ताम्रं पारदञ्च समांशकम् ।  
 पार्थितं त्रिगुणं शुद्धं माक्षिकं ताम्रभागिकम् ॥ ७९१ ॥  
 वैक्रान्तं ताम्रभागञ्च मृतं सर्वं प्रमर्दयेत् ।  
 ताम्रसमं शङ्खभस्म मृगशृङ्गमथ तथा ॥ ७९२ ॥  
 सर्वं विमर्द्य खरवेन सिसपाननये द्रवे ।  
 दिनसप्तमितं पश्चात्सौद्रिप्यलिप्संयुतम् ॥ ७९३ ॥  
 यल्लमात्र लिहेदेतत्सर्वंश्वयधुनाशनम् ।  
 दोषजं रोगजं शोफं तथानुसमुद्भयम् ॥ ७९४ ॥  
 यष्टुलीह क्षयं पाण्डुं ग्रहणीञ्च जयेद्भुयम् ॥ ७९५ ॥  
 र म मा, ना, वि, शोथे । ना वि., शोफजकेसरि-  
 रस इति नाम ।

भाषा—लोह और ताम्र भस्म शुद्धपारा १-१ भाग, शुद्धगन्धक ३ भाग सोनामाखी, वैक्रान्त, शङ्ख, मृगशृङ्ग इनकी भस्मे १-१ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर सफेदपुनर्नवाकेरससे ७ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोल्या बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पीपल और मधुमेसाधलेनेसे खरबकारका-  
 शोथ, यक्ष्म, ग्रीहा, क्षय, पाण्डु, ग्रहणी इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १८८ ॥

### १८९ शोथहारसः ( द्वितीय )

सूतगन्धरविभस्म तुल्यकं  
 सर्वतो द्विगुणभस्म लोहजम् ।  
 रक्तचूर्णसहितं विमर्दितं  
 काककुष्ठसहितं दिनमेकम् ॥ ७९६ ॥  
 यल्लयुग्ममशितो गुडामया  
 नागरेण समुदेन कणाभिः ।  
 विष्यपत्रजरसेन वा तथा  
 शोथहा भवति विश्वरिपत ॥ ७९६ ॥

वासामृताकृष्णकारीकवायो माक्षिकसंयुतः ।  
 कुष्ठं शोथं जयत्याशु कासं श्वासं घर्म तथा ॥  
 सेकस्तथाऽर्कवर्षाभु निम्बस्वायेन शोथजित् ॥ ७९७ ॥  
 र, र वो, शोथाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म समभाग, सब सेद्वनीलोहभस्म और कमीला लेकर सबकीनीलवर्णकज्जलीकर काकज्वा और कुष्ठेस्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोल्या बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली कुष्ठ और हरेकाचूर्ण अथवा सोंठ और कुष्ठ अथवा पीपलकाचूर्ण या बेल पत्रस्वरस अथवा सोंठ और बिरायुतेकाजाय अथवा जहूरा, गिलोय और मटकट्टेवाकेयायमें मधुमिलाकर इससेसाथदेनेसे कुष्ठ, शोथ, कास, खास, वमन देसब निवृत्तहोतेहैं । शोथमें आक, पुनर्नवा और नीमकेजायका स्वेदन कराना ॥ १८९ ॥

### १९० शोथाङ्गुरसः

रसेद्रगन्धं मृतलोहताम्रं  
 नागं तथाऽम्रं समसङ्ख्यकञ्च ।  
 निर्गुण्डिकास्कोतकपितृचिञ्चा-  
 पुनर्नवाभीफलकेशराजम् ॥ ७९८ ॥  
 एषा रसेर्भावितामेकशब्द  
 कोलप्रमाणा घटिका विधेया ।  
 शोथज्वरारोचकपाण्डुरोगं  
 सर्वाङ्गशोथं विनिवारयेद्य ॥  
 पित्ताम्बितान्वातभ्रान्कफोत्था-  
 ष्छोथाङ्गुरो नाम निहन्ति रोगान् ॥ ७९९ ॥

भै र, शोथाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, ताम्र, नाग, और अभ्रकभस्म समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर निर्गुण्डी, कोयल, वैश, इमली, पुनर्नवा, बारियल, बालाभगा इनप्रत्येककेदोसे १-१ दिन मर्दनकर बेरसावर गोल्याबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुमानकेसाथ देनेसे एकाङ्ग अथवा सर्वाङ्गशोथ, ज्वर, अद्वि पाण्डु इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १९० ॥

### १९१ शोथारिरसः ( शोफारिरसः )

हिङ्गुलज्वयपालञ्च मरिचं द्रव्यं कणाम् ।  
 सम्मर्द्य यल्ल सघृतः सर्वशोफहरः परः ॥ ८०० ॥  
 र च, रसायनम, यो. र, नि र, शोथाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध हिंगरिफ, जमात्पोटा, मरिच, गुदागा और पीपल समभागलेकर बारीकचूर्णकर पुनर्नवा वरीह शोथप्रदना ओकेरसमें मर्दनकर ३-३ रत्तीकीगोल्या बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली घृतकेसाथ देनेसे यह सबप्रकारकेशोथोंको निवृत्तकरताहै ॥ १९१ ॥

## १९२ शोथारिलोहम् ( प्रथमम् )

त्रिकटु त्रिफला द्राक्षा पौष्करं सजलं शटी ।  
 लौहं वचा लवङ्गञ्च शृङ्गी त्वक् शतपुष्पिका ॥ ८०१ ॥  
 विभीतकं विडङ्गञ्च धातकीपुष्पमेव च ।  
 एतानि समभागानि शृङ्खण्णानि कारयेत् ॥ ८०२ ॥  
 सर्वद्रव्यसमञ्चाऽथ सुशुद्धं लौहकिट्टकम् ।  
 कुटजस्य रसेनाऽपि प्रक्षेप्येत्परिप्लवतः ॥ ८०३ ॥  
 घेष्टितं जम्बुपत्रेण पट्टेन परिलेपयेत् ।  
 ततो गजपुटे पक्त्वा स्वाद्गुणैर्लभ्यते ॥ ८०४ ॥  
 प्रातःकाले शुचि भूत्वा भक्षयेच्छक्तिमानतः ।  
 निहन्ति सर्वजं शोथं ग्रहणीञ्च विशेषतः ॥ ८०५ ॥  
 उदरेषु च सर्वेषु शोथेषु च विधानतः ।  
 विविधा व्याधयश्चान्ये सैन्याद्यानि साध्यताम् ८०६ ॥  
 भै. र., शोयाऽधिकारे ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, द्राक्ष, गोहृत्तरमूल, सुगन्धवाला, कटूर, लोहमस, वच, लौंग, काकडासौंगी, तज, सोंफ, बहेडा, विडङ्ग, धावडीकेफूल सय समभागलेकर वारीकचूर्णकर घराबरप्रमाणमे शुद्धमण्डूरमिलाकर कुटजके रसे भावनादेकर पिण्डबनाय जानुनकेपतौमें लपेटकर ४ अङ्गल कीचड़ ऊपरचढ़ाय गजपुटकी आंचदे । स्वाद्गुणैर्लभ्यतेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ माशेसे ३ माशेतक भ्रात.काल पवित्रहोकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाधनेसे सबप्रकारकेशोथ, विशेषकर ग्रहणीरोग, उदररोग और समस्तव्याधियां नष्टहोतीहैं ॥ १९२ ॥

## १९३ शोथारिलोहम् ( द्वितीयम् )

अथोरजस्वपूषणयावशूकं  
 चूर्णञ्च पीतं त्रिफलारसेन ।

शोथं निहन्त्यास्त्रहसा नरस्य

यथाशानि धृक्शुमुद्रप्रवेगः ॥ ८०७ ॥

भै. र., च. सं., सु. सं., आ. पु., हितो., र. सं., र., र. वि., शोयाधिकारे ।

टि०—र. स., र. सु., र. वि., एषु शूषणयादिलोहमिति नाम । कण्ठग्रविचिन्तितोपदेशे मनुष्याने त्रिफलारसपाने केवलमुष्णानुगृहीतम्, यावत्सास्त्राभावात्, सत्यस्याऽपि त्यागे कारणेनोपलभ्यते ।  
 भाषा—लोहमस, त्रिकटु और खजूर समभागलेकर त्रिफलाके स्वरस अथवा हायरेसाय उचितमात्रामें लेनेसे समस्त-शोथ नष्टहोतेहैं ॥ १९३ ॥

## १९४ शोथोदरारिलोहम्

पुनर्नवाऽमृता वह्निं गवाक्षी मानवस्रिके ।  
 सूर्यावर्तार्कमूलञ्च पृथगष्टपलं जले ॥ ८०८ ॥  
 पादशेषे शृतं द्रोणे सुवृत्ते यस्मिन्नालिते ।  
 लौहचूर्णाष्टपलकं पचेदाज्यसमं मिषक् ॥ ८०९ ॥  
 अर्कस्य द्विपलं क्षीरं स्नुहीक्षीरं चतुष्पलम् ।  
 पलद्वयं कौशिकस्य माक्षिकाश्वजतोः पलम् ॥ ८१० ॥

पलादं पारदं शुद्धं गन्धकस्य पलन्तथा ।  
 जयपालं ताम्रमन्त्रं शुद्धमत्र प्रदापयेत् ॥ ८११ ॥  
 कटुपुष्पहृत्किन्दानि शराख्यं घण्टकणिकम् ।  
 पलाशस्य च बीजानि कञ्जुकी तालमूलिका ॥ ८१२ ॥  
 त्रिफला च क्रिमिरिपुस्त्रिवृद्धन्तीमयं तथा ।  
 सूर्यावर्तगवाक्षी च वर्पांश्च वैजयन्तिका ॥ ८१३ ॥  
 एषां लौहसमां मात्रां स्निग्धभाण्डे निधापयेत् ।  
 अतोऽस्य भक्षयेन्मात्रामनुपानञ्च युक्तिः ॥ ८१४ ॥  
 हन्ति सर्वोदरं शीघ्रं नात्र कार्या विचारणा ।  
 ये च शोथाः सुदुर्वासाश्चिरकालानुबन्धिनः ॥ ८१५ ॥  
 तान्सर्वान्नाशयत्याशु तप्तः सूर्यादये यथा ।  
 नातः परतरं किञ्चिच्छोयोदरविनाशनम् ॥ ८१६ ॥  
 उदराणि पाण्डुरोगं कामलाञ्च हलीमकम् ।  
 अशीं भगन्दरं कुष्ठं ज्वरं गुल्मञ्च नाशयेत् ८१७ ॥  
 यो. म., भै. र., र. क., र. र., र. का., उदराधिकारे ।

भाषा—पुनर्नवा, गिलोय, चित्रकमूल, इन्द्रायणकीजड़, मानसन्ध, गृहरकादूष, हुरहुर और आककीजड़कीछाल ८-८ पल लेकर अठगुनेपानीमें चतुर्धासावशेषोपकायकर धळमें छानकर मण्डूर और घी ८-८ पल डालकर पकावे । पकावेसमय आककादूष २ पल, गृहरकादूष ४ पल, गुग्गुल २ पल, स्वर्णमाक्षिकमस और शिलाजीत १-१ पल, समभाग शुद्धपरिगन्धनकीकजली २पल, शुद्धजमालगोट, ताम्र और अन्नकमस १-१ पल, कटुछ, चित्रकमूल, सूरण, वायुछ, घण्टपाटल, पलाशीज, क्षीरकजुकीकादूष, तालमूली, त्रिफला, विडङ्ग, नितोत, दन्तीमूल, हुरहुर, इन्द्रायणकीजड़, पुनर्नवा, इङ्गोजड़ सबसमभागकाचूर्ण ८ पल डालकर पकावे । ये तैयारहोनेपर निकालकर चिकनेवतनमें रखछोड़े । ६-७ दिन बीतजानेपर १ माशेसे ३ माशेतकरी-मात्रा रोग और रोगीका बलाबलदेकर रोगोचितानुपानकेमाध-देनेसे दुस्तर और पुतला शोथ, उदररोग, पाण्डु, कामला, हली-मक, बवासीर, भगन्दर, कुष्ठ, ज्वर, गुल्म इनसबको यह तन्काळ नष्टकरताहै । इससे बढ़कर और दूसरी दवा शोथहर नहींहै ॥ १९४ ॥

## १९५ शोथनरसः

शुद्धसतपलं ब्राह्मं शुद्धगन्धकतः पलम् ।  
 तिस्रिरीयीजपलकं त्रिफलाऽष्टपला भवेत् ॥ ८१८ ॥  
 सर्वमेकत्र संयोज्य खल्वे दत्त्वा सुमर्दयेत् ।  
 पन्ध्रविंशुकतोयेन दिनमेकं निरन्तरम् ॥ ८१९ ॥  
 दन्तीनीरेस्तथा मर्त्यस्त्रिघृताश्वयाथतो दिनम् ।  
 ततो यद्वरमात्रेण घटिका रचयेद्दुष्टः ॥ ८२० ॥  
 छायाशुष्का विधायाऽथ करण्डे विनिवेशयेत् ।  
 एकां घटीं ददीताऽसामुदरार्तिपुत्रे मिषक् ॥ ८२१ ॥  
 उष्णोदकैर्न दत्त्वाऽथ घर्मे तं स्थापयेत्ततः ।  
 विरेचनं प्रजायेत ततो दद्याद्य पर्ययम् ॥ ८२२ ॥  
 दत्ते पथ्ये स्तम्भनं स्याद्विरेकस्य न संशयः ।  
 अनेन सनराजेन विनश्यति जलोदरम् ॥ ८२३ ॥

शोधनो नाम मृतेन्द्रो जलोदरनिवर्तकः ।  
त्रिदिनान्त्रिदिनादूर्ध्वं रसेन्द्रं सम्प्रयोजयेत् ॥ ८२४ ॥  
अन्यथा नैव योक्तव्यो घटक्षीणो विनश्यति ।  
मुद्रयूपः सुपथ्यं स्याद्विलेपीं वा प्रयोजयेत् ॥ ८२५ ॥  
रसात्., उदराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और जमालगोटा १-१ पल, त्रिपला ८ पल लेकर सरका थारीकचूर्णपर पांचगव्यकीनील-वर्णकमलीमें मिलाय पनेनीवू, दन्तोमूल और निसोतेवेद्योंसे १-१ दिन मदनकर छोटेंवेरपार गोलियें बनाकर ध्यावा-शुद्धकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गरमजलेनाथ देकर पूर्णमें भंडानेमें रचनहोगा । घटकापहोनेपर मूंगकायूप अथवा सिचड़ी देवे । प्रतिदिन प्रयोग नहींकरना क्योंकि जलोदरी प्रायः क्षीणहुमाकरताहै और बलक्षीण आदमीका अकम्मात् गल्यु हुआ करताहै ॥ ११५ ॥

### ११६ शोफमुद्रररसः

रसं गन्धं मृतं ताग्रं पण्या वालकयुग्मुलुः ।  
सममाच्येन संयुक्तं गुटिकाः कारयेत्ततः ॥ ८२६ ॥  
एकैकां सेयेयेद्वैधः शोफपाण्डुपुनस्ये ।  
शीतलञ्च जलं देयं तक्रञ्चाम्लं विप्रयेत् ॥  
शोफमुद्ररनामाऽयं पूज्यपादेन निर्मितः ॥ ८२७ ॥  
वै. चि., व. रा., शोफे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताग्रभस्म, हों, तगर गण्डोला और गुणल समभागलेकर सबका थारीकचूर्णपर पारे-गन्धकनीलवर्णकमलीमेंमिलाय गावनाथी बालर यहभक्त खलछोड़े कि गोलीबननेलायकहोजाय । इसकी १-१ मादोकी गोलियां बनाकर १-१ गोली ठंडेजलेसायदेनेसे यह बायको नष्टकरताहै । इसमें छाछ और पटार्का परहेजकरे ॥ ११६ ॥

### ११७ शोफारिरसः

स्वच्छसूतस्य गन्धेन कृत्वा कज्जलिकां शुभाय ।  
ततश्शुल्यं संक्रान्तञ्च राजायतेश्च सौम्यरुम् ॥ ८२८ ॥  
अम्रकञ्च शिला तालं विषयोपाऽपराजिताः ।  
चिपत्तिन्दुकयीजास्त्रि प्रत्येकं रससम्मिताम् ॥ ८२९ ॥  
सर्वमेकत्र संयोज्य चूर्णयित्वा ततः परम् ।  
भृङ्गराजरसं दत्त्वा मर्दयेद्विषसद्वयम् ॥ ८३० ॥  
शोधनं कारयित्वा च दातव्या चणकोपमा ।  
रसः शोफारिनामायं प्रोक्तो मन्थानमेरवेः ॥ ८३१ ॥  
स्थूलार्थं रोगमरोचकामिसदनं शोफञ्च पाण्डुमयं,  
प्लीहानं प्रहणीञ्च मूलकद्वजं वातं तथानाहकम् ।  
हिक्काभ्यासरुफानिलं त्रिमिरुच्यूलञ्च जीर्णज्वरं,  
सर्पान्वातरुफामयाञ्च हरति क्षिप्रं त्रिदोषामयान् ८३२ ॥  
वै. चि., व. रा., शोफे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताया, कान्तलोह, लाज-वर्द, चांदी, अम्रक इनकीभस्में, शुद्धमैनसिल, हरिताल और बछनाम, त्रिफला, कोयल और कुचिला समभागलेकर नीलवर्ण-कमलीकर भंगेकरेसगे दोदिन मदनकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े । वमनादिकसे कोष्ठशुद्धकरके इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानेसायदेनेसे स्थूलता, अरुचि, मन्दाग्नि, शोफ, पाण्डु, मीहा, प्रहणी, बवासीर, वातरोग, आनाह, हिक्का, श्वाग, कफवातविकार, कृमि, दृक्शूल, जीर्णज्वर इनभरों यह नष्टकरताहै ॥ ११७ ॥

### ११८ श्रीकण्डरसः

स्वर्णताराऽर्कान्तञ्च तीक्ष्णं वा भारितं समम् ।  
कृष्णाऽम्रसत्त्वमासीकं प्रत्येकं स्वर्णतुल्यरुम् ॥ ८३३ ॥  
तत्सर्वञ्चाऽग्निधतं धाम्यं तत्खोटं मृतपारदम् ।  
समं सूतान्मृतं यज्ञं पादांशं तत्र योजयेत् ॥ ८३४ ॥  
सर्वं जम्बीरजैः श्रव्यंस्तप्तपत्रये विमर्दयेत् ।  
दिनेन तन्निस्सदाऽथ भूपरे पाचयेदिनम् ॥ ८३५ ॥  
उद्धृत्य गन्धकं तुल्यं दद्याद् दद्या धमेद्वुतम् ।  
तच्चूर्णं मधुनाऽऽज्येन मापमानं लिहेत्सदा ॥ ८३६ ॥  
रसः धीकण्टनामाऽयं खेचरत्वं प्रयच्छति ।  
संयत्सरप्रयोगेन जीवैकक्ष्पान्तमेव च ॥ ८३७ ॥  
तस्य भृङ्गपुरीषाभ्यां सर्वलोहानि काञ्चनम् ।  
पलेकं गन्धकं शरीरं कामकं चानुपाययेत् ॥ ८३८ ॥  
र. रं., रसायनश्च, रसायने ।

भाषा—सुवर्ण, चांदी, ताम्र, कान्तलोह, कोलाद, अम्रक-सत्त्व, सोनामासी इनकीभस्में समभागलेकर अन्धमपामें बन्दकर धमनकरनेसे खोट तैयारहोगा । यह खोट और पारदभस्म समभाग लेकर थोसे धनुषांश हीरेकीभस्म मिलाकर जमीरीके-रससे एकदिनमदनकर गोलाबनाय शराबसम्पुद्धमें बन्दकर भृङ्ग-यन्त्रमें अमिदे । स्वाद्वशीतलोहोनेपर बराबरका शुद्धगन्धक मिलाय अन्धमपामें बन्दकर धमनकरे । दद्या होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे उद्वेगवार समयोचितानुपानेसायलेनेसे समस्तरोगोंसे निर्युक्तहोकर दीर्घजीवी होताहै । उसके मूत्र और पुरीषसे समस्तलोहोंका रक्त बदलजाताहै । एकपल शुद्धगन्धक दूधनेसायभनुपायमें देनेसे रक्का शरीरमें कामनहोताहै ॥ ११८ ॥

### ११९ श्रीपद्मगणकेसरीरसः

व्योषामृतयमान्यञ्च सूतोऽग्निं गन्धकं शिला ।  
सौमार्ग्यं जयपालञ्च चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥ ८३९ ॥  
भृङ्गगोशुरजम्बीरार्द्रकताथे विमर्दयेत् ।  
अस्य रसिद्वयं खादेदुष्णतोयाऽनुपानतः ॥  
श्रीपदं दुस्तरं हन्ति प्लीहानं हन्ति सेवितः ॥ ८४० ॥  
वै. र, घ, वै क., श्रीपदाधिकारे ।  
भाषा—त्रिफला, शुद्ध बछनाम, अजवाइन, शुद्धपारा, चित्रमूल, गन्धक, मैनसिल, सुहृगा और जमालगोटा सम

भागलेकर वारीकचूर्णकर पोरगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय भंगरा, गोखरू, जंभीरी और अदरकके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर २-२ रतीकी गोखरू बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोली गरमजलनेसाथदेनेसे दुस्तर फीलाव और झीहानेो यह नष्टकरताहे ॥ १९९ ॥

### २०० श्रीपदध्वंसीरसः

पारदं टङ्गुणं तुल्यं तालकं ताम्रमेव च ।  
माक्षिकं कान्तलोहञ्च मृतं शुद्धा शिला तथा ॥८४१॥  
एतानि मर्दयेत्सर्वे शिथुनिर्गुण्डिकापूतैः ।  
द्विसप्ताहं विशोष्याऽथ सम्यग्गजपुटे पचेत् ॥ ८४२ ॥  
शरावसम्पुटे रङ्गा काचकूप्यामयाऽपि च ।  
सप्तवारं पुटेऽजीमांस्ततः सिद्धो भवेद्भस्वः ॥ ८४३ ॥  
रसोऽयं श्रीपदध्वंसी प्रणीतो नकुलेन हि ।  
अस्य गुणाद्वयं खादेत्तनयं वाऽथ चतुष्टयम् ॥ ८४४ ॥  
पञ्चकालकपायेण हृत्पत्यं सत्त्वं गदान् ।  
श्रीपदं गलगण्डादीन्कुष्ठं विस्फोटकानपि ॥ ८४५ ॥  
ना. वि., श्रीपदाधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पारा, सुहागा और हरिताल, ताम्र, सुवर्ण माक्षिक और कान्तलोहमहम्म, शुद्धमैसिल समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर सहजन और निर्गुण्डोकेरस तथा गायके घीसे १-१ दिन मर्दनकर १४ दिनतक कडीपूपमें सुपाकर शरावसम्पुटेमें बन्दकर गजपुटकी आचदे । स्वाज्ञाशीतलदोनेपर निकालकर पूर्वोक्तज्योंसे मर्दनकर शराव अथवा आतशीशीशीमें बन्दकर आचदे । सात आच देनेकेबाद निकालकर रखडोहे । इतमेंसे २ से ४ रतीतकमाना उचितानुपानसेदेकर पञ्चकालका-  
काय पिलानेसे श्रीपद, गलगण्ड, कुष्ठ, विस्फोटक वैसेय नष्टहोतेहे ॥

### २०१ श्रीपदारिरसः

कणावचादारपुनर्वानां

चूर्णं सविभ्यं समवृद्धदारु ।

सगन्धमृतस्य निहन्ति चहः

सकाजिकः श्रीपदरोगमुग्रम् ॥ ८४६ ॥

र. का., श्रीपदाधिकारः ।

भाषा—पीपल, वच, देवदारु, पुनर्वेदा, मोंठ, विधारा शुद्ध पारा और गन्धक समभागलेकर वारीकचूर्णकर पोरगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर रखडोहे । इतमेंसे ३-३ रती काजीरियापलेनेसे बेटुए श्रीपदरोगको यह नष्टकरताहे ॥ २०१ ॥

### २०२ श्रीपदारिलोहम्

हरीतन्या विमीतस्य धान्याभूषणं सुवर्णितम् ।

पदतालक्रममाणेन भ्राह्मेतनुषेणिया ॥ ८४७ ॥

तालद्वयं लोहयुग्मं कान्तलोहस्य जारितम् ।

तालद्वयं ततो देयं विशुद्धं शिलाजतु ॥ ८४८ ॥

कृत्वैकत्र समस्तांस्तु त्रिफलान्वाथभाचना ।

श्रीपदाद्यगध्वंसी सर्वव्याधिचिनाशनः ॥

श्रीपदारिरिति ख्यातो लोहो मुनिभिराद्रितः ॥ ८४९ ॥

भै र., र. र., र. सु., टो., श्रीपदाधिकारः । टोडरानन्दे त्रिफलोहमितिनाम ।

भाषा—हरे, वेहड़ा, आवला, लोह और कान्तलोहमहम्म, शुद्धशिलाजीत २-२ तोलेलेकर वारीकचूर्णकर त्रिफलाकेकायसे ६-७ भावनाएं देकर १-१ माशेरी गोखरूबनाकर रखडोहे । इनमेंसे १ से २ गोलीतक त्रिफलाकेकायसेसाथदेनेसे सबप्रकारके श्रीपद नष्टहोतेहे ॥ २०२ ॥

### २०३ श्लेष्मकालानरसः ( प्रथमः )

रसस्य द्विगुणो गन्धः गन्धकाहिगुणं विपम् ।

विपाचु द्विगुणं देयं चूर्णं निरुदुसम्भयम् ॥ ८५० ॥

रसतुल्या प्रदतिव्या चाभया सविभीतका ।

धात्री पुष्करमूलञ्च चाजमोदाऽजगन्धिका ॥ ८५१ ॥

विडङ्गं कटफलं चयं पञ्चैव लवणानि च ।

लवङ्गं विधृता दन्ती सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ ८५२ ॥

भावयेत्सत्तथा रौद्रे स्वरसेः सुरसोद्वयैः ।

हन्ति सर्वं कफोद्धृतं व्याधिं कालानलो रसः ॥ ८५३ ॥

र. र., र. सु., र. वि., कफरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा., बठनाम ४ भा, त्रिकुट ८ भा, हरे, वेहड़ा, आवला, मोटरमूल, अज-  
मोद, बवाई, विडङ्ग, कायफल, चय, पाचोनमक, लौंग, मिश्रत और दन्तीमूल १-१ भागलेकर वारीकचूर्णकर पां गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय तुलनीकेरससे कडीपूप ७ भावनाएं देकर ४-४ रतीकी गोखरू बनाकर रखडोहे इनमेंसे १-१ गोली तुलसीबीरह कफन अनुपानकेसाथदेनें यह कफरोगको नष्टकरताहे ॥ २०३ ॥

### २०४ श्लेष्मकालानरसः ( महान् ) २

हिङ्गुलसम्भवे सृतं शिलागन्धकटङ्गणम् ।

ताम्रं बह्वं तथाऽप्रञ्चं स्वर्णमाक्षिकतालकम् ॥ ८५४ ॥

धुस्तरं सैन्धवं कुष्ठं पिप्पली हिङ्गु कटफलम् ।

दन्तीरीजं सोमराजी वनराजफलं त्रिवृत् ॥ ८५५ ॥

यजीर्हीरणं सम्मर्द्य घटिकां कारयेद्भिषक् ।

कलायपरिमाणान्तु खादेदेकां यथावलम् ॥ ८५६ ॥

सन्निपातं निहन्त्यानु वृक्षमिन्द्राशनं यथा ।

मर्त्तिसिंहो यथाऽरण्यं सुगाणां बुलनाशनः ॥

तथाऽयं सर्वरोगाणां सद्यो नाशकरो महान् ॥ ८५७ ॥

र. र., र. सु., भै र., र. वि., कफरोगे । र. सु., ज्वरे कफरोगे च । भै र. ज्वराधिकारः ।

भाषा—शिलागन्धके निकालाहुआपाप, शुद्धमैसिल, गन्धक और शुद्धा, ताम्र, बह्व, अक्षर और स्वर्णमाक्षिकमहम्म, रत माक्षिक अथवा शुद्धहरिताल, धत्रीरेशीर, ताम्र, कुष्ठ, पीपल,

मुनीर्हीग, कायफल, जमालगोटा, वाङ्गुची, केवान, गिसेत, सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी बखलीमें मिलाय गूदकेचूषसे २-३ दिनमर्दनकर मटरसावर गोलियेंबनाकर रखोहे । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानवेसाध-  
देनेमें सतिपातुरूपी समस्तरोगोंको यह बहुततीव्र नष्टकरताहै ।

### २०५ श्लेष्मपित्तान्तकरसः

मृतमृताऽम्रलोहञ्च बहिगन्धकटङ्गणम् ।  
भूमिभ्येन्द्रयवा रास्ना गुडची पत्रकं शटी ॥ ८५८ ॥  
दिनं पर्यटजे द्रांचे भर्दिंत घटकीरुतम् ।  
सिताशर्द्रे लिहन्मापं श्लेष्मपित्तान्तको रसः ॥ ८५९ ॥  
पट्यां कणां गुडं गुण्टीं कयंकं भक्षयेदनु ।  
कफपित्तहर् रसादेदाडिमं गुडनागरम् ॥ ८६० ॥  
चि र., दो, र. क, श्लेष्मपित्तारोगे ।

भाषा—पारा, अन्नक, लोह इनीभस्में, चित्रकमूल, शुद्ध गन्धक और मुहागा, चिरायता, इन्द्रजव, रास्ना, गिलोय, पद्मकाठ और कचूर समभागलेकर बारीकचूर्णकर पोरगन्धककी नीलवर्णकबलीमें मिलाय पित्तपापेनेस्वरससे १-२ दिनमर्दन-  
कर १-१ मासेकी गोलियाबनाकर रखोहे । इनमेंसे १-१ गोली शहर और मधुनेसायसाकर हूँ, पीपल, गुड और सोंठ समभागमिलाकर १ कप अनुपानमें लेनेसे श्लेष्मपित्त नष्टहोताहै ।  
उसरकहाहुआ अनुपान जिन्हें अनुकूल न हो उनके अनार, गुड और सोंठ मिलाकर देना ॥ २०५ ॥

### २०६ श्लेष्मवातघ्नरसः

मृतां बलिस्त्रिकटुकं मगधाजटाग्रि  
चन्यं विपं लयणैः समभागचूर्णम् ।  
सम्मर्द्य भृङ्गपयसा कफरोगसह  
हन्तामिष्टृदिहृद्दशीतिसमीरणजः ॥ ८६१ ॥  
रसायनसं., कफवातरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, त्रिकटु, पिपलामूल, चित्रकमूल, चव्य, शुद्धबलमाग, संधानमूक सब समभागलेकर नीलवर्ण कबलीकटु भंगरेकरससे एकदिन घोटकर १-१ मासेकीगोलिया बनाकर रखोहे । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाधदेनेसे यह कफरोग, मन्दाग्नि और समस्त वातरोगोंको नष्टकरताहै ॥

### २०७ श्लेष्मशैलेन्द्ररसः

गन्धकं पारदं चार्ध्रं त्र्यूपणं जीरकद्वयम् ।  
शटी शृङ्गा यमानी च पुष्करं रामटं तथा ॥ ८६२ ॥  
सैन्धवं यावश्शूकञ्च टङ्गणं गजपिप्पली ।  
जातीकोपाऽजमोदे च लौहं यासलवङ्गकम् ॥ ८६३ ॥  
धुस्वरवीजं जैपालं कटफलं चित्रकन्तथा ।  
प्रत्येकं कार्पिकञ्चैषां श्लक्ष्णचूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ ८६४ ॥  
पापाणे विमले पात्रे घृष्टं पापाणमुदुरे ।  
विल्यमूलरसं दत्त्वा चार्कचित्रकदन्तिकाः ॥ ८६५ ॥

शिशुरी काञ्जिका वासा निर्गुण्डी गणिकारिका ।  
धुस्वरं रुष्णजीरञ्च पारिभट्टरुपिपल्ली ॥ ८६६ ॥  
कण्टकार्याद्रियोश्चैव मूलान्येतानि दापयेत् ।  
एषां मूलरसं दत्त्वा घृष्टमातपशोषितम् ॥ ८६७ ॥  
गुड्याप्रमाणां घटिकां कारयेत्कुशलो भिषक् ।  
चतस्रश्च घटीः रसादेन्त्रियमाद्रकवारिणा ॥ ८६८ ॥  
उष्णतायानुपानेन वातन्याधि व्यपोहति ।  
विशति श्लेष्मिकांश्चैव शिरोरोगांश्च दारणान् ॥ ८६९ ॥  
प्रमेहान्विशतिञ्चैव पञ्चगुल्मनिषृदनम् ।  
उदराण्यनृद्विज्ञाप्यामवातविनाशनम् ॥ ८७० ॥  
पञ्च पाण्ड्यामयान्ति रुमिस्थौल्यामयापहम् ।  
सोदायतं ज्वरं कुष्ठं गात्ररुण्ड्यामयापहम् ॥ ८७१ ॥  
यथा गुल्मेधने बहिस्त्वया बहिविधधनः ।  
श्लेष्मामयिरुपाहेतो रसेन्द्रो मुनिभाषितः ॥  
श्लेष्मशैलेन्द्रो नाम रसेन्द्रगुटिका स्मृता ॥ ८७२ ॥

शै. र., (श्लेष्मज्वरे), र. स., र. वि. (कफे), र. सु (ज्वरे कफे च), र. र (अवर) । कुपचित्स्वैन्धवस्थाने वैरिक पठितम् ।

भाषा—शुद्धगन्धक और पारा, अन्नकभस्म, त्रिकटु, दोनोर्जीर, कचूर, काकडासींगी, अन्नवाइन, घोटकरमूल, मुनी-  
र्हीग, सैन्धव, यवशार, मुतामुहागा, गजपीपल, जाविनी, अजमोद, लोहभस्म, जवास, लौह, शुद्धधतूरेकेबीज, जमाल-  
गोटा, कायफल और चित्रकमूल १-१ कप लेकर बारीकचूर्ण-  
कर पोरगन्धककी नीलवर्णकबलीमें मिलाय बेल, आक, चित्रक, हन्ती, अपामार्ग, एण्डककड़ी, अइस, निर्गुण्डी, अरणी, भूरा, कालीजीरी, नीम, पीपल, भटकटैया, अदरक इनसबकी-  
जह्नेरसोंसे धूपमें बैठकर १-१ दिन मर्दनकर १-१ रसीवी-  
गोलियें बनाकर रखोहे । इनमेंसे ४-४ गोली अदरकैरम  
अथवा गरमजलकेसाधदेनेसे वातविकार, २० प्रकारकेश्लेष्मरोग,  
मयदूर शिरोरोग, २० प्रकारकेप्रमेह, पानोगुल्म, उदररोग,  
अन्नरुद्धि, आमवात, पाचप्रकारके पाण्डु, किमि, शूलता,  
उदावर्त, ज्वर, कुष्ठ, चुञ्जली, मन्दाग्निप्रवृत्ति समस्तरोगोंको  
यह नष्टकरताहै ॥ २०७ ॥

### २०८ श्लेष्मान्तकरसः

अन्नकं रससिन्दूरं शङ्खभस्म च मौक्तिकम् ।  
एकभागो द्विभिभागा हार्धभागश्च मौक्तिकम् ॥ ८७३ ॥  
कचूरं मौक्तिकार्द्धं स्यात्त्रिफला कर्पसमिता ।  
सर्वं सुखले सम्मर्द्य दिनं सिंहास्यतोयत ॥ ८७४ ॥  
छायाशुष्कां वरी कृत्वा रक्तिकार्द्धप्रमाणतः ।  
आर्द्ररूप्य रसेनेव मधुना सह लेहयेत् ॥ ८७५ ॥  
श्लेष्मोत्थनं वह्निमान्यं शूलं सपरिणामजम् ।  
श्लेष्मान्तको रसो नाम विनिहन्त्यनुपानतः ॥ ८७६ ॥

र च, कफरोगे ।



भाषा—अन्नकर्मस्य १ कर्प, रसचिन्दर २ कर्प, शङ्खमस्य ३ कर्प, मौक्तिकमस्य ८ मासे, कचूर ४ मा, त्रिफला १ कर्प लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर अङ्गुष्ठेकरसे १-२ दिन मर्दन कर आधीआधीरतीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरक और मधुकेसाथसेवनकरनेसे कफप्रधान-मन्दाग्नि, शूल, परिणामशूल इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २०८ ॥

### २०९ श्वेदप्रादिलोहम्

श्वेदप्रादिलोहम् मुस्ता गुह्वची फल्गुपल्लवान ।  
दर्भं कुशञ्च मज्जिष्ठां रोहिण्यस्य च पल्लवान ॥ ८७७ ॥  
बला पुनर्नवा इयामा शारिखे देवदारु च ।  
पिप्पली नागरञ्चैव विडङ्गमरिचानि च ॥ ८७८ ॥  
पाठा कम्पिल्लकं भाङ्गौ द्वे हृदि निदिग्धिनाम् ।  
एरण्डमूलं दन्तीञ्च चिन्कं कटुरोहिणाम् ॥ ८७९ ॥  
एतानि समभागानि श्लेष्मण्युष्णानि कारयेत् ।  
द्विगुणं सर्वेष्वर्णैश्चो लौहचूर्णं प्रदापयेत् ॥ ८८० ॥  
मापकृतितयं तस्माच्चतुष्टयमथापि वा ।  
पिबेदुष्णेन तायेन मयेनाऽपि च मद्यपः ॥ ८८१ ॥  
मेहशूलोदरार्द्राहशोथार्द्राः पाण्डुरोगानुत ।  
गामूनपिष्टरेतेश्च घटिकास्तद्विदापहाः ॥ ८८२ ॥  
रा २, प्रमेहाऽधिकारः ।

भाषा—गोखर, त्रिफला, नागरमोथा, गिलोय, कटुमर, जाम, कुश, मजीठ, गन्धदूष इनकेपत्ते, बला, पुनर्नवा, काली निखोत, दोनोसारिवा, देवदारु, पीपल, सोंठ, विडङ्ग, मरिच, पाठा, कमीला, भारती, दोनोहल्दी, भट्टकटैया, एरण्डनीजड़, दन्तीमूल, चिन्क और कटुकी समभागलेकर वारीकचूर्णकर सबसे दूनी लोहमस्य मिलाकर १-२ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इनमेंसे ३ अथवा ४ उद्दतकमाना गरमजल अथवा मद्यक साथलेनेसे प्रमेह, शूल, उदररोग, टीहा, शोथ, बवासीर, पाण्डुरोग इनसबको यह नष्टकरताहै । इसलोहको गोमूनमें पीस कर गोलीभी बनासकैहै ॥ २०९ ॥

### २१० श्वेदधुधातीरसः

रसगन्धकलाहकृणानिचूता

मरिचामरदारुनिशात्रिफला ।

दलितं मृदुगासलिलेन पित्र-

दनुष्पमसु श्वेदधुदरहम् ॥ ८८३ ॥

शो २, ३ यो त, ४ नी, रसामनस, नि २, शोथाधिकार ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, लोहमस्य, पीपल, निखोत, मरिच, देवदारु, हल्दी त्रिफला घनसमभागलेकर वारीकचूर्ण कर रखछोड़े । इसमेंसे १ मासे २ मासेतकमाना बठ्ठीके मूत्रकेसाथदेनेसे शोथ और उदररोग नष्टहोतेहैं ॥ २१० ॥

### २११ श्वासकालेश्वररसः

मृतं वङ्ग मृतं लोहं मृताकं मृतमम्रकम् ।

शुद्धसूतञ्च गन्धञ्च माक्षिकं हिङ्गुलं विषम् ॥ ८८४ ॥

जातीफलं लवङ्गञ्च त्वगेलानागकेदारम् ।  
उन्मत्तकस्य बीजानि जैपालं रात्रिदुर्लभम् ॥ ८८५ ॥  
एतानि समभागानि मरिचञ्च त्रिभागिकम् ।  
सर्वमेतद्विषयेत्त्वले लोहदण्डेन मर्दयेत् ॥ ८८६ ॥  
तावत्सम्मर्दयेद्यलाद्यान्तस्तौ न दृश्यते ।  
शकाशनस्य स्वरसे भावयेदेकविंशतिम् ॥ ८८७ ॥  
द्विगुञ्चाऽत्युत्तमा मात्रा शुद्धवेररसे युता ।  
तद्वत् बालद्वयेषु पथ्ये देयं तदुच्यते ॥ ८८८ ॥  
पञ्चधासाक्षात् कालं यक्षमाणं चिनिहन्ति च ।  
श्वासकालेश्वरो नाम्ना लोकानामति दुर्लभः ॥ ८८९ ॥  
वै क, नि २, व रा, वै चि, खासे ।

भाषा—वर्ष, लोह, ताम्र, अम्रक इनकीमल्ले, शुद्धपारा, गन्धक, सोनामापी, शिगरिक और बछनाग, जायफल, लौंग, तज, इलायची, नागकेदार, शुद्ध धतूरेकीज और जमलगोग, हल्दी, अवासा येसब १-१ भाग, मरिच ३ भागलेकर वारीकचूर्णकर पोरगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भागवेररसे २१ दिन घोटकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरकवेररकेसाथदेनेसे ५ प्रकारकेश्वास और कास, क्षय, राजयक्ष्म इनसबको यह दूरकरताहै । बाल २ और हठ्ठोकी आधीमात्रा देनी ॥ २११ ॥

### २१२ श्वासकासकरिकेसररसः

तारताम्ररसपिष्टिकाशिलागन्धतालसमभागिनं रसे ।  
आटरूपसुरसाद्रसम्भवैर्मर्दय प्रकुर गोलकं तत ८९०

मृत्स्तन्या च परिवेष्य गालकं

यामयुग्ममथ भूधरे पचेत् ।

गालकेन कुर तत्समं तत-

श्चाटरूपकटुकैश्च भावयेत् ॥

श्वासकासकरिकेसररसा

चलमस्य परिवेषयेद्बुधः ॥ ८९१ ॥

२ २ स, २ क, २ च, २ र, २ दौ, यो स, २ सु, २ को, यो च, श्वासकासयोः । योगसङ्गह नक्षय पक्षधामय प्रतिनक्षययोगहृत्त्वयुग्मम् ।

भाषा—चांदी और तांबेकीमस्य, पारदपिष्टिका, शुद्धमैत्रिल, गन्धक और हरिताल सबसमभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर अट्टसा, तुलसी और अदरकके स्वरसोंवे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसमुपमें बन्दकर ३-४ कपडिमिनीदकर अच्छी तरह सुखाय दोषहरकी भूधरयन्त्रमें अग्निदे । स्वाहशीतलोहोनेम निकालकर अट्टसा और त्रिकटुकेश्वरोंमें १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोच्छिन्नानुपानकसाथदेनेसे श्वास, कासप्रवृत्ति समस्त कफरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २१२ ॥

### २१३ श्वासकासचिन्तामणिरसः

पारदं माक्षिकं स्वर्णं समांशं परिकल्पयेत् ।

पारदाहं मौक्तिकञ्च सूताद्विगुणगन्धकम् ॥ ८९२ ॥

अन्नश्चैव तथा योज्यं व्योम्नो द्विगुणलौहम् ।  
कण्टकारीरसेनैव छागीदुग्धेन वै पृथक् ॥ ८९३ ॥  
यष्टीमधुरसेनैव पर्णपत्ररसेन च ।  
भावयेत्सप्तवारं द्विगुणां चरिकां भजेत् ॥  
पिप्पलीमधुसंयुक्तां श्वासकासविमर्दिनीम् ॥ ८९४ ॥  
र स, प, र, सु, र, सु, र, च, भै र श्वासकासयो । भै, र,  
श्वासचिन्तामणीति नाम ।

भाषा—शुद्धपात, सोनामाखी और सुवर्णमस १-१ भाग, मोतीआधामाग, शुद्धगन्धक और अभ्रकमस २-२ भाग, लोहमस ४ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर भट्ट कटिया, बकरीकादूध, मुलहठी, पान इनप्रत्येकके द्रवोंसे ७-७ भावनाएँ देकर २-२ रत्तीकी गोखिंयनाकर रखोछे । इसमेंसे १-१ गोली पीपल और मधुकेसायदेनेसे यह श्वासकासको नष्टकरताहै ॥ २१३ ॥

### २१४ श्वासकासारिरसः

मृतगन्धककाहरीतकी-  
मुण्डिकाश्च वृषकं विभीतकम् ।  
चूर्णयेत् समभागतस्ततो  
वत्सनाभ्रजरसे मीनाक्ष पचेत् ॥  
श्वासकास विनिवृत्तये त्विमं  
भक्षयेत् यद्वराधिमानतः ॥ ८९५ ॥

र की, श्वासकासयो ।

भाषा—शुद्धपात और गन्धक, पीपल, हर, गोरखमुण्डी, अहुसा और बहेडा समभागलेकर घारीकचूर्णकर पोरोगन्धकी नीलवर्णकजलीमें मिछाय बजनागवेस्वरस अथवा बावसे मर्दनकर गोलाबनाय एण्डपत्रवगैरहमें सपेट पुटपाककरे । स्वाजशीतल-होनेपर देरकी गुठलीकेबराबर गोलिया बनाकर रखोछे । इन मेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपापकेसाथ देनेसे यह श्वास और कासको नष्टकरताहै ॥ २१४ ॥

### २१५ श्वासकुठाररसः

रसं गन्धं विपश्चैव दृक्कुणश्च मन शिला ।  
पतानि दृक्कुमात्राणि मरिचान्यष्टदृक्कम् ॥ ८९६ ॥  
एकैकं मरिचं दत्त्वा खरवे सुक्ष्मं विघ्राय च ।  
कटुत्रयं दृक्पट्टं दत्त्वा पश्चाच्चूर्णयेत् ॥ ८९७ ॥  
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य काचकूप्यां विनिक्षिपेत् ।  
गुजामात्रं प्रदातव्यं पर्णखण्डेन निश्चितम् ॥ ८९८ ॥  
सन्निपाते च मूर्च्छायामपस्मारे तथा पुनः ।  
अतिमोह्यतामापन्ने घ्राणे दद्याद्विचक्षणः ।  
रसः श्वासकुठारोऽयं सर्वैकासनिवृन्तनः ॥ ८९९ ॥

र कौ, र क ल, वै चि, भा प्र, यो भ, वै, चि, वै र, य यो त, रसायनस, नि र, भै र, र का, चि र, यो चि, र म मा, ध, दो, वै द, भै सा, चि क, यो, र, र सु, ना वि आसे । भा प्र, च्वरे ।

टि०—वैचर्षणे बद्धयुजप्रतिमित एव विद्वितीकृत्य सादविकोपरि क्रमशः मरिचानि गच्छयेदिति विशेष । कासभासुरपतनापस्मार सन्निपातमोहदृक्पट्टोरकृत्वमृतोद्रेणभ्रमस्तव द्युतताजनादाभान शूलान्तिसेदनोपेयस्य दृष्टप्रत्यय । र स, र च पतयोरक र सु, च पतयोरद्वितीय श्वासकुठारनाम्ना "दृक्कुण पारद गंध शिलां विच कटुकिम् । निविष्य वन्निक्त कर्षां शुभानामप्रमाणत । उण्णोदक पिबेच्चानु शुद्धावायमयापि वा । कास पत्राविष इति श्वास रेणुमग्न द्रवम् ॥ शिशोयो निवन्त्याशु वक्षसि द्राशनि वैषा ॥" इति पाठो निश्चितोऽस्ति । भै र, र म, र च, एव ग्रन्थेयु द्वितीयस्तथा च र सु, च, पतयोरतृतीय श्वासकुठारनाम्ना "रस गन्धो विष दृक् विष्णोषण्यदृक्पट्टम् । सर्वं सम्पद्य दत्तव्यो रस श्वासकुठारक ॥ कात रेणुसमुद्भूत श्वास कास क्षयपयेत् ॥" इति पाठो निश्चितोऽस्ति । रसे न्द्रसारसङ्ग्रहे "रसो गन्धो विषश्चैव दृक्कुण समन शिल्पम् । पतानि सममागानि मरिच सञ्चूर्णयेत् ॥ विभाग यूक्ता येव लव्हे सर्वं विचूर्णयेत् । रस श्वासकुठारोऽयं द्विगुण श्वासकासिनाम्ना ॥ गता लब्धा वदा पुमा तदा नव्य प्रदापयेत् । प्रायेष्टान्नामिकाग्रं सञ्जानननुत्तमम् ॥ प्रतिस्वाय क्षतशीर्षमेकादशविंशत्यम् । इदोऽयं श्वासकुठारं स्वरभेद सुदाहणम् ॥ सन्निपात तथा धीर तद्रामोऽश्वाश्वितपयेत् ॥" इति कृतीय पाठ श्वासकुठारनाम्ना निश्चितोऽस्ति ।

नि र, भा प्र, वै द एव ग्रन्थेयु द्वितीय, धनवन्तु चतुष, रसकिञ्चरे वैक श्वासकुठारनाम्ना "रसो गन्धो विषश्चाऽपि दृक्कुण मन शिला । पतानि वषमानाणि मरिचश्चादृक्कपम् ॥ कटुत्रय वपयुग्म दृक्पट्टं विनि णियेत् । रस श्वासकुठारोऽयं सर्वैषामनिवारण ॥" इति पाठो निश्चितोऽस्ति । र म मा, ना वि प्तयो श्वासकुठारनाम्ना "शुद्ध मृत विष गन्ध दृक्कुण मन शिला । वणा शुण्ठी समाधैवे मरिच सप्तभागिरम् ॥ दत्त्वा सञ्चूर्णयेच्चवाचल जलमन्त्रिष । रस श्वास कुठारोऽयमाद्वय रसै युवै ॥ आस इति तप काम द्विगुण मन्त्रि पातयेत् ॥" इति पाठो निश्चितोऽस्ति । र सु, ना वि प्तयो श्वासा रिरस इति नाम्ना "पारदो वत्सनाभक्ष गन्धक दृक्कु कणा । समं च द्विगुणा शुण्ठी मरिच पत्रभागकम् ॥ मर्दनचूर्णमिदं लब्ध्वा बहमात्र प्रदापयेत् । आवासितं ह्रस्वो क्षेप सृष आनन्द र ॥" इति पाठो निश्चितोऽस्ति । जेषां सर्वैषामपि मूल प्रथमश्वामकुठारोऽस्ति, तत्र वचावरिवत्तलुनां सत्तीवरणात् । तदतिरिक्तपाटुपृच्छात्रव्यामोहवर पाऽतिरिक्तकराऽभावात्परित्यक्तस्य इति विद्विद्विरावन्तीयम् ।

भाषा—शुद्धपात, गन्धक, कछनाग, शुद्धाग औरमैनसिल ४-४ मात्रो, मरिच २ कर्षे लेकर १-१ मरिच डालकर सबकी नीलवर्णकजलीकरे । इसमें १॥ कर्षे त्रिकटुकाचूर्णमिलाकर १-२ पहर मर्दनकर शीशीमें रखोछे । इसमेंसे १-१ रत्ती पानमें रखकर यानेसे सजिपात, मूर्च्छा, अपस्मार, श्वास, कास येसथ नष्टोते है । अत्यन्तबेहोशीमें इसका नव्य देनेसे लाभहोताहै ॥ २१५ ॥

### २१६ श्वासगजाङ्गशरसः ( महदादिः )

पर्लं सूतं पर्लं गन्धं त्रिकटु त्रिपर्लं भवेत् ।  
वह्नमेकपलश्चैव दिनानि त्रीणि मर्दयेत् ॥ ९०० ॥  
सूत्रेण च तथा त्रीणि दिनानि परिमर्दयेत् ।  
मापप्रमाणान्दकं छायाशुष्कान्तु कारयेत् ॥ ९०१ ॥  
नित्यमेकान्तु वटकं दिनानि त्रिंशदेष च ।  
श्वासकासज्वरहरमग्निमान्द्याऽरचिप्रणुत् ॥ ९०२ ॥  
र कौ, र द, स, र मो, र च, र सु, श्वासाधिकारि ।

र. र. स, र. चं, र. सु, एतेषु आसहरवटकेति नाम ।  
रसेन्द्रत्वज्ञेये सहचरवटीतिनाम ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, सोंठ, मिर्च, पीपल और वट्टमस १-१ पल लेकर नीलवर्णकजलीकर गोमूत्रमे ३ दिन मर्दनकर १-१ मांशरीगोलियाबनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सबप्रकारके आस और कासको नष्टकरताहै ॥ २१६ ॥

### २१७ आसहारीरसः

कनकभुजगशूलं सूतराजं सुगन्धं,  
मुनिरसपरिप्लुतं वल्लभात्रं दिनान्ते ।  
हरति सकलकासं आसहिकासमेतं  
त्रिभुवनहितकारी जायते आसहारी॥१०३॥

र., आसे ।

भाषा—सुवर्ण, नाम और ताम्रमस, शुद्ध पारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर अगस्त्यकेरसे एक-दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इन मेसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह हिवकी और आसकासको नष्टकरताहै ॥ २१७ ॥

### २१८ आसाङ्गशरसः

शाणत्रयं पारदञ्च गन्धकं शाणपञ्चकम् ।  
त्रिशाणं वत्सनाभञ्च मरिचञ्च त्रिशाणिकम् ॥१०४॥  
आकलञ्च त्रिशाणं स्यात्पञ्च जातीफलं क्षिपेत् ।  
लवङ्गञ्च चतुःशाणं पिप्पली दशशाणिका ॥ १०५ ॥  
दङ्गुणं वह्निशाणं स्यात्त्रिशाणं कनकाह्वयम् ।  
करीराद्रकनिम्बुत्थं मर्दयेच्च दिनत्रयम् ॥ १०६ ॥  
घातगेगेषु सर्वेषु कफभासे कटीग्रहे ।  
नाभिशूलउदायते प्रमेहे घातशोणिते ॥ १०७ ॥  
सर्वसन्निपाते वाते अस्थिये स्नायुषोऽपि वा ।  
रसः आसाङ्गशो नाम आसकासनिवारणः ॥१०८॥  
वह्निद्रव्यं वह्नमात्रं वा दद्याच्छूलोपशान्तये ।  
अनुभूतो मया सम्पूङ्ग प्रयोगः कफकासयोः ॥१०९॥  
रसायनसं., आसे कासे च ।

भाषा—शुद्धपारा ३ भाग, गन्धक ५ भा, शुद्धवज्रनाग, मरिच और अजगरा ३-३ भा, जायफल ५ भा., लौंग ४ भा, पीपल १० भा., मुनामुहागा और शुद्धरत्नैचीन ३-३ भागलेकर बारीकचूर्णकर पारिप्लवकनी नीलवर्णकजलीमें मिलाय करीर, अदरक और नीबूके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेसे एक अथवा आधीगोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तत्वारीग, वज्रनिशवास, कटिग्रह, नाभिशूल, उदायते, प्रमेह, वातरक, समस्त सन्निपात, अस्थिपात और स्नायुपात इनसबको यह निश्चयकरताहै ॥ २१८ ॥

### २१९ आसान्तकरसः

सूतः पौडशभागिकोऽर्कसमकस्तस्यार्द्धभागो बलिः,  
सिन्धुस्तस्य समः सुसुक्ष्ममृदितः पट्टपिप्पलीचूर्णतः॥  
जम्बीरस्वरसेन मर्दितमिदं तप्तं सुपर्कं भवेत्,  
कासआसकगुत्तमशूलजठरं पाण्डुं लिहन्नाशयेत्॥११०॥

र. र. स, र. म. भा., र. चं, र. को, र. सु, व. रा., आसा धिकारे ।

टि०—र ॥ पारदादिरस इति नाम । व. रा. पिप्पलीस्थाने दङ्गुणं नियोज्य सज्जराजीय इति नाम स्थापितम् ।

भाषा—शुद्ध पारा और ताम्रमस १६-१६ भाग, शुद्ध गन्धक और सेंधानमक ८-८ भा., पीपल ६ भाग लेकर नीलवर्णकजलीकर जम्बीरीकेरसे एकदिन मर्दनकर एण्डबैरहके-पत्तोंमें लपेटे पुटपावकरे । स्वाज्ञशीतलहोमेपर निकालकर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेसे १-१ गोली अदरकवर्णरसके रसकेसाथ देनेसे कास, आस, गुल्म, शूल, उदररोग, पाण्डु, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २१९ ॥

### २२० आसारिलोहम् ( महत् )

कर्पद्वयं लोहचूर्णं कर्पाईमम्रमेघ च ।  
सिताकर्पद्वयञ्चैव मधुकर्पद्वयन्तथा ॥ १११ ॥  
त्रिफला मधुकं द्राक्षा कणाकोलास्थिवंशजा ।  
तालीसपत्रवैडङ्गमेलानुपुष्करकैसरम् ॥ ११२ ॥  
एतानि शूष्णचूर्णानि कर्पाईञ्च पृथक्पृथक् ।  
लौहे च लोहदण्डेन मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ॥ ११३ ॥  
ततो मात्रां लिहेत्सौद्रं शुद्धा दोषयलायलम् ।  
इदं आसारिलोहञ्च महाआसं विनाशयेत् ॥ ११४ ॥  
कासं पञ्चविधञ्चैव रक्तपित्तं सुदारणम् ।  
एकजं द्वन्द्वजं चैव तथैव सन्निपातजम् ॥  
निहन्ति नामात्र सन्देहो भास्करस्तिमिरं यथा ॥११५॥

र. सु, वै. र, आसे ।

भाषा—लोहमस २ रूपं, अन्नकमस ८ माशे, शर्कर और मधु २-२ रूपं, त्रिफला, सुलहटी, द्राक्ष, पीपल, बैरकी-मन्ना, वंसलोचन, तालीसपत्र, विडङ्ग, इलायची, पोहदरमूल और नागकेशर ८-८ माशे लेकर सबकाबारीकचूर्णकर लोहेके खरलमें दोपहर घोटकर रखछोड़े । इसमेसे १-१ माशा मधुके-साथ देनेसे महाआस, ५ प्रकारका कास, भयङ्कर रक्तपित्त येसब नष्टोतेहै ॥ २२० ॥

### २२१ त्रिवारियोगः ( प्रथमः )

गन्धकं त्रिफला भृङ्गं भृङ्गातकफला निच ।  
कटुमुत्रस्य बीजानि भृङ्गराजद्रवेण च ॥ ११६ ॥  
भाबयेच्छोषयेच्चैतत्तद्घातस्तप्तकप्रयम् ।  
त्रिवारिनाम योगोऽयं निषिद्धः प्रतिपादितः ॥११७॥  
टङ्कमात्रममुं दद्याच्छूलोपशान्तये ।  
भोजयेद्द्वै प्रयत्नेन रज्ज्याञ्च विरोपतः ॥ ११८ ॥

सूरणक्षीरवातार्कं मत्स्यमांसं विशेषतः ।

वर्जयेदम्लद्राकाणि श्वित्रनाशविचक्षणः ॥ ९१९ ॥

र का., रसचि, र मृ, कुष्ठाधिकारे । रसाश्रुतेऽय पाठो व्यत्यस्य निहितोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धगन्धक, त्रिफला, भग्रा, भिलावे और कड़वी तुमहीकेबीज समभागलेकर वारीकबुर्णकर भग्रेकेरससे २१ भावनाएँ देकर रखछोढ़े । इसमेंसे ४-४ मासे शकर और घीकेसाथदेकर दिनभर भूखा लयसे, रात्रिके उचितभोजन देवे तो इससे श्वेतकुष्ठ नष्टहोताहै । सूरण, दूध, बैंगन, मछली, मांस, खट्वाई और शाकका पतित्यागकरे ॥ २२१ ॥

## २२२ श्वित्रारियोगः ( द्वितीयः )

मृते पले भूधरयन्त्रमभ्ये  
सञ्चारयेद्गन्धपले ततोऽस्मिन् ।

मृते च गन्धस्य पलत्रयञ्च  
दत्त्वाऽथ निम्बमृतरसे विमृष्ट ॥ ९२० ॥

खरांशिकावायुचिक्राग्निभृङ्ग-  
कोरण्टनैरेः परिमर्दयेत् ।

दिनकमेकं कटुतुम्बिनीजले-  
मर्द्यं ततः काचजकूपिकान्तः ॥ ९२१ ॥

निक्षिप्य भाण्डे सिकतोदरान्त-  
र्यामद्वयं स्वेद्यं तं ततश्च ।

द्वीतं पल्लव्यमस्य कृष्णपर्णेन  
सार्धं त्वयथा तद्वर्धम् ॥ ९२२ ॥

पलाशमूले त्वनु पायपीत  
तमेण सार्धञ्च द्वीतं पथ्यम् ।

उष्णे क्षिपेत्तैलविमर्दितञ्च  
स्फोटो यदि स्युः सहसा च गाने ॥ ९२३ ॥

र र उ, र दी, र र की, र का., र मृ. कुष्ठाधिकारे ।

हिं—रसाश्रुते श्वित्रारिसनाम्ना “रसस्य धत्ते गन्धमिष्टिकायां कृत्वादेव । अन्तरपलत्रयं दत्त्वा निमृष्टीरिणं मर्दयेत् ॥ स्वेद्येदम्लकाक्ये कृत्वायमद्वयं पुनः । बले रतुष्य चास्य श्वित्रार्णेन दध्ययेत् ॥ वागोदुम्बरि कामूलं पृष्ठां तदनु पाययेत् । सततञ्च द्वीतञ्च तैश्चाकांति त्वयेत् ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति । अत्र त्रिधायां बुधित्वेनैव हि द्विद्विगन्धवनीयम् ॥

भाषा—एकपल शुद्धपारेमें भूधरयन्त्रमें एकपल गन्धक आरणकरे । फिर ३ पल शुद्धगन्धकसेसाथ नीलवर्णकजलीकर नीबूकेरससे एकदिन मर्दनकर कटुमर, वायुची, गिलावां, भग्रा, कसरिया, कड़वीतुही इनके द्रवोंसे १-१ दिन मर्दनकर आतवीशीशीमेंभरके बाउकायन्त्रमें चढाय दोपहरकी आवसे स्वेदनकरे । स्वादशीतलहोनेपर निकालकर रखछोढ़े । इसमेंसे ३ से ६ रत्तीक कालेपानमें रखकर खिलवे ऊपरसे पलाशकी जड़का वाय भिलावे और छाटकेसाथ पथ्यदे । इसकेसेबनसे यदि बदनमें फोड़े होजाय और जलमहोनेलगे तो इस औषधको तैयमें मिलाय शरीरपर माञ्जिखरावे ॥ २२२ ॥

## २२३ श्वित्रारिरसः ( प्रथमः )

कासीसं रसगन्धानि मर्दयेत्सुरसारसेः ।

सम्पुटे पुटयेद्वत्वा चाद्वेरीमधोत्तरम् ॥ ९२४ ॥

सर्वमेतच्च सञ्चर्य तण्डुलान्द्रा सप्त वा ।

आरभ्य वर्जयेद्यावत्पञ्च पटिं क्रमेण हि ॥ ९२५ ॥

अनुपानाय मध्याज्यं दध्याज्यं नृनीतकम् ।

घान्याद्रिकरसेश्चैव तन्दुकं कदलीफलम् ॥ ९२६ ॥

श्वित्रारिसञ्चितो ह्येष श्वित्रकुष्ठनिबृद्धनः ।

निम्बपत्रनिशाकृष्णावायुचीवीजक समम् ॥

धूर्णयित्वा पिपेदुग्धे. प्रभाते श्वित्रनाशनम् ॥ ९२७ ॥

र र उ, र च, र क, र र की, श्वेतपुटे ।

हिं—निक्षिप्यजम्बवत्पलहीकरेणोपरितनराष्टमशुहीत्वा “पल रम हि कामीसे र्धुं पत्रपुणै सह । मर्दयेद्यामपर्वन्तमर्जुनस्य त्वचो रमै ॥ घटावमपुणै रुद्रा पुत्रोक्तपुन हि । रम कामीमरद्वोऽय मयुषा बलतुल्यकं ॥ घाणवाकुचिकायुक्त सवितो हन्ति निक्षिप्य । त्रिभिर्मानै विलाम हि द्रव्यणि विणेप ॥” इति पाठ कामी नाथिप्रमाणयुक्तत्वेन कार्यमाश्रयत्वाद्गृहीत । र र म, र क पत योस्तु द्वयोर्ति ग्रहणम् । अत्रेदं रहस्यमन्त्र-श्वित्रात् सप्तभागभवंस्या गमनात्वागीतस्याधिरमाया मापशित्रा तदेव पारदस्य लीयमान त्वात् । कामीसर्वदे तु गन्धकाऽभावाद्गत्या पारदस्यार्थं कामीमत्वाऽधिरमाया गृहीताऽस्ति परन्तु पाठद्वयत्वात्ने गौरवात्कलाधिक्याऽभावात् श्वित्रारिसे पारदनियमनस्य विणेपनो दर्शनादत्रिमेव रसे कामी सर्वद्रव्याऽन्यतर्भाव वरणीय । अर्जुनस्य भावनाया अत्रापि ग्रहणे न बाधि क्षति रमत्वेकक वर्णनीय इति विशेषेण विनाति ।

भाषा—कसीस, शुद्धपारा, गन्धक समभागरीकजलीरर तुलीकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलाग्रनाय अम्लोनियां नीने ऊपर रख करारसपुत्रमें बन्दकर २-४ कपटमिठी देखर गज-पुटकी आचदे । स्वादशीतलहोनेपर निकालकर रखछोढ़े । इत-मेंसे ७ अथवा १० चावलभरी आरम्भकर ६५ चावलतक क्रमश बढावे । इसमें मधु और घी अथवा दही, घी, मक्खन, आवले और अदरकसारस, तैद और कैलेकापत्र अनुपाममें देवे । निम्बपत्र, हली, पीपल, वायची समभागका धूर्णवनाकर रखछोढ़े । इसकेसे १-१ कोण रुद्रा केनेकेकाद हृष्टेभाषदेहे ॥

## २२४ श्वित्रेभसिहरसः

शुद्धसूतपलिकज्जलं शुभं  
यल्लयुग्ममरलिह सर्पिणा ।

वायसी शशिफला निर्मीतक-  
क्षीद्रमक्षमितमेश्यान्वितम् ॥

शीलयेदनु पयः पिपेदिमं  
श्वित्रदन्तिहृत्पिरितो रसः ॥ ९२८ ॥

व यो व, र की, टो., श्वेतपुटे ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर इसमेंसे ६-६ रत्ती पीठेयाय सेवनकर काष्ठजडा, वायुची, बहदा समभागका चूने एकदण्ड मधु अथवा ईर्गके रसकेसाथलेकर बरससे ताजादूधनीनेमे श्वित्र नष्टहोताहै ॥ २२४ ॥

## २२५ श्वेतकुण्डहररसः

चारवीजान्ययध्वं त्रिफला च कटुत्रयम् ।

तवरजोऽशितः सर्पिर्मधुभ्यां श्वेतकुण्डहत ॥ २२९ ॥

हितो , वृष्टे ।

भाषा—चिंतोजी, लोहमस, त्रिफला, त्रिफुट्ट, वंशलोचन सप्त समभागलेकर एकजगह मिलाकर रखछोटे । इसमेंसे १ मासेसे २ मासेतक मधु और धीमें मिलाकर सेवनकरनेसे श्वेतकुण्ड नष्टहोताहै ॥ २२९ ॥

## २२६ श्वेतकुण्डारिरसः

निस्तुपीकृत्य वाकुच्या धीजानां पलविंशतिम् ।

गोजलस्थं त्रिसप्ताहं लोहं पथ्या पलद्वयम् ॥ २३० ॥

गृहीत्वा गोजले शोष्यं सूर्यतापेऽतिनिष्ठुरे ।

काकोदुम्यरिकाट्टोणत्वचां काये त्रिसप्तकम् ॥ २३१ ॥

भाययेत्तस्य चूर्णस्य गन्धसूतं समं कृतम् ।

अम्लेन कज्जली कृत्वा सर्वमेकत्र कायेत् ॥ २३२ ॥

शिष्टमूलरसेनापि नागधर्हीदलेन च ।

भावनां त्रिदिनं दत्त्वा कर्पाण्डोशां गुटी कुर ॥ २३३ ॥

पक्वैर्का भक्षयेत्प्रातः श्वेतकुण्डोपशान्तये ।

चिनकाद्वित्यचक्षुर्ण राजा गोदुग्धके वरम् ॥ २३४ ॥

क्षिपेद्द्वि विलोढ्याऽथ ग्राहयेत्तन्मुत्तमम् ।

तत्तन्कुड्यं चैवं मध्येऽथो गन्धवलुकाम् ॥ २३५ ॥

प्रक्षिप्य गुटिकां पश्चात्प्रपिबेत्त्रिसहस्रकाम् ।

नयनीतेन चाम्पय्य कार्यं स्थेयमथातपे ॥ २३६ ॥

सर्वश्वित्रे प्रजायन्ते स्फोटकाश्चाग्निदग्धवत् ।

प्रथमे सप्तके पाको जायतेऽथ द्वितीयके ॥ २३७ ॥

रोहणञ्च तृतीये हि कुर्वन्ति च न संशयः ।

निम्बुकस्य रसोपेतं कुङ्कुमालेपनं हितम् ॥ २३८ ॥

सतका गुटिका चापि रसस्थालेपने हिता ।

श्वित्राणां रोहणं रम्यं वर्णं जायते भृशम् ॥ २३९ ॥

त्रिवेष्टं तन्मत्तञ्च पूर्वं देयञ्च सप्तके ।

मधुघ्रा अपि रक्षाश्च देया जाते द्विसप्तके ॥ २४० ॥

तृतीये सप्तके देया मधुघ्रास्त्रिफलाघृतम् ।

घृतमत्तं प्रदातव्यं श्वित्रकुटी वरो भवेत् ॥ २४१ ॥

चम्पकामं चरं देहं कान्तियुक्तञ्च नीरजम् ।

प्राप्नुयान्श्रीयुतः सम्बद्धरुजो भूमिमण्डले ॥

रसरजप्रभावेण सत्यं सत्यञ्च नान्यथा ॥ २४२ ॥

र स व , रसायनस , र का श्वेतुष्टे ।

भाषा—घातकियेहुए बाहुबीनेचीज २० पलको गोमूत्रमें २१ दिन भिगोर सूर्यकीकड़ीपूषमें सुखाय एकटोण कटुमरसी छालकेहायमें २१ दिन भावनादेकर इसकीबराबर शुद्धगन्धक मिलाय कज्जलीकर किसीभी अम्लद्रवसे एकदिन मर्दनकर सहजनकीजड़ और पानकरमेंसे ३-३ दिन भावनाए देकर ८-८ मासेकी मोलियां बनाकर रखछोटे । राजिनो ३ मासे

चित्रकीजकाचूर्ण ४ पल गायकेदूधमें औटावे और दहीछाल कर जमादे । प्रातःकाल दहीकी छाछननाकर ३ मासे शुद्ध गन्धकजालकर इसकेसाथ १ या २ गोली प्रतिदिन राकर मन्त्रनसे माथिसरुको धूपमें बैठे । कुछहीदिनबाद श्वित्रस्थानमें अग्निदग्धकीतरह फोड़े उठेंगे । पहिले और दूसरे सप्ताहमें ये फोड़े और तृतीयसप्ताहमें स्वयं मन्त्रोद्घोजायगे । इनकेदाग मिटातेकेलिये नीबूमें केशर घिसकर लगावे अथवा इसीगोलीको छाछमें घिसकर लगावे । इसक्रियासे प्रणोंका चिह्न नहीं रहेगा । पहिले सप्तकमें दिनमें ३ बार छाछभातदे । दूसरेसप्ताहमें जेह रहित और तीसरे सप्ताहमें त्रिफलाघृतकेसाथ मोठदेवे ॥२९६॥

## २२७ श्वेतकुण्डारिरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं त्रिफलाभृङ्गवाकुचीः ।

भस्मातकं तिलान्कुण्ठास्त्रिम्ययीजं समांशकम् ॥ २५३ ॥

मर्दयेद्भृङ्गजटाये . शोष्यं पेप्यं पुनः पुनः ।

इत्थं कुर्वांस्त्रिसप्ताहं रसोऽयं सितकुण्डहा ॥

मध्याज्ये निष्कमार्तं तं खादेच्चिद्विनाशानम् ॥ २५४ ॥

रसायनसं , शै र , र , सि , र , का , र , चि , वै , क , रमायनस , र क , यो म , (एषु श्वेतारि) , र , क ल , र क , र र को , र र स , र दी , श्वेतुष्टाधिकारे ।

त्रि—“पत्रय गन्धकभृङ्गकुण्ठातिलोष्वल कटुतुम्बिनी च । भस्मातकं कटुनिम्बकी मर्द समान परिभावयेत् ॥” इति रसत्रय मधुचये रमदीपिकाया रसरत्नसंयुक्ताया पाठो हस्यते तत्र पत्रयस्थाने पत्रयेति प्रमादात्पाठ म्पात । कटुतुम्बिनी अथवा रसाभावात् प्रमादात्सञ्ज्ञात इति प्रदीपने, अतोऽन र रसान्तरैरेति बोध्यम् । पठ तुम्बिनीभावनाऽधिकये तु नकाऽपि क्षति । निरुविशेषणवे पूर्ववत्तत्स कृष्णमिति शब्दस्त्व श्वावे निम्बलीपत्रयमपि प्रमादचित्प्रविशन्तिम् ॥ इ को त , र को पतयो ग्रन्थयो श्वेतारिनाम्ना “शुद्धघृतमम गन्ध त्रिफला भृङ्गराजम् । यथा भस्मातकं कृष्णा निम्बनी मम पूष्य ॥ मधुभृङ्ग जटायै दिनमेक निरन्तरम् । वायसीजप्रसे देया भावनाश्चैव विंशति ॥ बाहुवीचीनिरुधैस्तत्र तिल प्रवर्धयेत् । तत्र मित्रा भवेदप भवति नीमोत्तरे ॥ मध्याज्ये निष्कमार्तं स खादेच्चिद्विनाशानम् ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति । रसमार्तं श्वेतारिनाम्ना “शुद्ध घृत मम गन्ध त्रिफलाभृङ्गवाकुची । भस्मातकं शिष्टा कृष्णा निम्बनी मम समम् ॥ मधु-वेद्भृङ्गजटायै शोष्यं पेप्यं पुन पुन । इत्थं कुर्वांस्त्रिसप्ताहं रसाद्विनाशानम् ॥” मध्याज्ये खादेच्चिद्विनाशानम् विनाशयेत् ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति । अन्ययो पाठयोर्भूल प्रथमपाठोऽस्ति तत्र केनाऽपि वार नेन तिलस्थाने शिष्टा म्पाता, शिष्टायाश्च कृष्णशब्देन समन्वये न सुव्यवस्थेयसत्यं निम्बली स्यादिति मत्वा स्वतन्त्र पाठ समज्जनी । इ यो त , र को अनयोऽपि स प्व भ्रम समापनितोऽतोऽनुना पाठमन्वये सत्यं बुद्ध्यामोक्तवदिकेन समवेद सत्तुचि । अथवा पूर्वस्थित पाठो गुणाऽप्रकटिपरीशिलानामभिव्यक्तता प्रक्षेप दत्ता वाप सीत्वास्मैन वाकुचीतीनिरुधैः च मित्रया भावना दत्तैव एव रस सम्पादनीयः ।

भाषा—शुद्ध पाठा और गन्धक, त्रिफला, भंगरा, वाकुची, दन्तद्विहितमिखावे, कालेतिल, नीमकीगिरी सप्तसमभागलेकर बारीकचूर्णकर भंगरेरससे मर्दनकर मुलावे और फिर मर्दन-

करे । ऐसे २१ भावनाएं देकर रखजोड़े । इसमेंसे ४-८ मासे मधु और धीकैसाथलानेसे यह धिन्को नष्टकरताहै ॥ २२७ ॥

### २२८ यङ्गुरसः

लक्ष्मी हरिहरः काशी त्रिफला कटुरोहिणी ।  
कामिनी गुग्गुलु दन्ती घोषाऽमृता च बालकम् १४५  
सर्वमेतत्समाहृत्य यातारितैलमर्दितम् ।  
पुष्पितं स्फुटितं चक्षुः पटलं घातइपितम् ॥ १४६ ॥  
मुखपाकं दन्तकृमि रक्तजं घृतिनासिकाम् ।  
घ्राणस्तनादिरोगञ्च पृतिकर्णं प्रशाम्यति ॥ १४७ ॥

र. र., नेत्ररोगे ।

भाषा—छद्मैनसिल, हरिताल, पारा, कसीस, त्रिफला, कुटकी, दासहल्दी, गुग्गुलु, दन्तीमूल, कड़वीतरोई, गिलोय, सुगन्धवाला सबसमभागलेकर बरइछानचूनेकर मेनसिल, हरिताल, पारा और कसीसकी कजलीमें मिलाय एरण्डकेतैलमें २-३ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती अथवा उक्चिमानाकायमकर तत्तदोहद्वारानुपानकेसाध देने तथा लगाने और नस्यप्रयत्तिमें उपयोगकरनेसे आठोंकाकोला, नेत्राधिमन्थ, जाला, वातदोष, मुखपाक, दातोंकेकीड़े, रक्तबिकार, पीनस, नाक और स्तनकेसमस्तारोग, कानोंकीसङ्गन येसबरोग मिटतहोतेहैं ॥ २२८ ॥

### २२९ पङ्गलोहम्

गगनताप्यशिलाजतुकाञ्चना

दिनकरादयस्रश्च रजः समम् ।

निफलया बहुभाषितमाज्यव-

न्मधुसुतं विनिहन्त्यशिलाग्नदान् ॥ १४८ ॥

लो प. ( स ), सर्वरोगे ।

भाषा—अम्रक, सोनामाखी, शिलाजीत, सुवर्ण, तांबा और लोह इनसबकी मर्मे लेकर त्रिफलाकेकायसे २१ भावनाएं देकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्तीजामाना मधु और धीके साथलानेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ २२९ ॥

### २३० पडशीतिगुग्गुलुः

सर्वयासोविषा दाह व्याघ्रीयुक् चविका वृषम् ।  
कृष्णाद्राग्रा घना भीरु वाय्यालं मिश्रि यहुरीत् ॥ १४९ ॥  
पथ्या शुण्ठी छिन्नरुहा शङ्खारग्यधमोक्षुरम् ।  
विशाखा मोदकी तिका ग्रन्थिर्भाङ्गी विदारिका १५०  
अलम्बुषा हस्तिरुर्णां यस्तगन्धा विषाणिका ।  
शिवाक्षं मुशली कौन्ती काकोली दीप्ययुग्मकम् १५१  
त्रिवृदन्ती शिखी शृङ्गी कोकिलाक्षो दुरालभा ।  
पञ्चमूलं महद्वीरतपः कुष्ठञ्च जोज्झकम् ॥ १५२ ॥  
जातीपथी फलेलञ्च केदारं त्यक्तिरातकम् ।  
कुङ्कुमं देवबुधुम् विशाला शशिसैन्धवम् ॥ १५३ ॥  
मन्दारमूलं कृमिजिह्वेमदुग्धा रविप्रिया ।  
गजपिप्पल्यपामागं धानटी नक्तमालकः ॥ १५४ ॥

पतै रास्ता समा चामा द्विगुणा तैः पुरः समः ।  
सतं गन्धं हिङ्गुलञ्च टङ्गुणं लोहमम्रकम् ॥ १५५ ॥  
शुल्वं वर्धं सूतमस्म नागं ताप्यमयोरजः ।  
मिलितं पुरपादञ्च सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ १५६ ॥  
पचेष्वतुगुणे काये पुरं पट्कटुजे पुरा ।  
तुर्यांशोऽपि ते काये पूते चात्र विनिक्षिपेत् ॥ १५७ ॥  
चूर्णानि पुरमुष्णानि पाचयेन्मृदुवह्निना ।  
याचदनतरं तावद्भुटिकाः कारयेत्ततः ॥ १५८ ॥  
टङ्गुप्रमाणाः सेव्यास्ता मधुसर्पिःसमन्विताः ।  
सप्तधातुगतान्वातात् शिरास्ताप्यस्थिसन्धिगान् ॥  
सामाधिरामान्स्वच्छाञ्छ्रेष्मजान्प्रति केवलान् ।  
यश्मानमग्निमान्यञ्च ज्वरं धातुगतं तथा ॥ १६० ॥  
गुल्फजानूरकटुसूदरहृत्कृदिमृक्षगान् ।  
असमन्याहनुथोत्रमूललाटाक्षिदाहगान् ॥ १६१ ॥  
प्रमेदं सूत्रकृच्छञ्च शुलभाभानमम्रमरीम् ।  
किं पुनर्मंदकान्याताप्यञ्चस्रञ्जयत्यलम् ॥ १६२ ॥  
गुग्गुलुः पडशीति यै नाम्ना भोजेन कीर्तितः ।  
क्षीयमाणेन शिष्येण प्राथितेन पुनः पुनः ॥ १६३ ॥  
स एष राजयोगोऽयं न देयो यस्य कस्यचित् ।  
योगेनाऽनेन व्यपेक्षं पण्डोऽपि प्रमदाप्रियः ॥ १६४ ॥  
वाजीकरणमन्यञ्च परं नास्माद्विशेषतः ।

शुणोऽस्य सेवनास्तित्यं यः स्यात्स स्याद्भवीमि किम् ॥

एष नो परिहार्यस्तु पानभोजनमैधुनैः ॥ १६५ ॥

यो र, वै वि, वातव्याध्याधिकारः ।

भाषा—कटुरीया, जवास, अतीस, देवदारु, मट्कटुया, वनमादा, बन्ध, अहूसा, पीपल, नागरमोथा, बच, धनिया, शतावर, खरेटी, सोंफ, मजीठ, हरे, सोढ, गिलोय, कबूर, अमिलतास, गोखर, पुनर्वा, सुर्वा, कुटकी, गटिदन, भारती, विदारीकन्द, गोस्वसुण्डी, डोडाइन, वनतुलसी, नैदासीनी, रुद्राक्ष, मुशली, रेणुझ, काकोली, अनमोद, जजबाइन, मिसोत, दन्तीमूल, मोरशिखा, काङ्गडासीगी, तालमलाना, धमामा, बेल, सोनापाठा, गमार, पाटला, अरणी, कीरतल, कुठ, अगर, जाविनी, आयकल, इलायची, माषपेशर, तन, विरायदा, बेदार, लोब, इन्द्रायण, कपूर, सेन्धव, आकरीजङ्ग, विडङ्ग, सत्यानासीकीजङ्ग, हुहुर, सज्जीफल, अपामार्ग, कवाच, बरप्र येसब समभाग, इनसबकीबराबर राजा और इनी चतुर्लो फलिया तथा इनसबकी बराबर शुद्धगुल्लदेवे । शुद्ध पारा, गन्धक, शिगरिक और मुहामा, कान्तलोह, अम्रक, ताप, वर-पारा, नाव, सुवर्णमाक्षिक, फोलाद इनसबकीमर्मे मिक्कर गुग्गुले चतुर्थांश लेवे फिर गुग्गुले बराबर पट्कटु (पीपल, पिप लासूल, चन्व, चिद्रक, सौंढ और मरिच) लेकर जवडुकर अष्टधेने पानीमें औंढावे । अर्वाविशेष रद्देपर उतारकर इसमें गुग्गुलो पकावे । चतुर्थांशवशेष रद्देपर छानकर धातुव्योर्वा कम्बली और सन्धीगोंका बारीकचूर्णडालकर मन्दआवये पकाव ।

घन तैयार होनेपर ४-४ मांशकी गोलिया बनाकर रपछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु और धीकसाय सेवनकरनेसे सातों-धातु, शिरा, स्नायु, अस्थि और सन्धिगत साम अथवा निराम वायुरोग, श्लेष्मजन्म्याधि, राजयक्ष्म, मन्दाग्नि, घातुगतज्वर, गुल्म, जातु, ऊर्ध्व, उदर, हृदय, कुक्षि, वक्ष, अक्ष, मन्त्र्या, हस्त, कान, भ्रू, ललाट इनसबकेरोग तथा शङ्खक, कर्णमन्त्र, प्रमेह, मूत्ररुच्छ्र, शूल, आध्मान, पथरी और तमामवातविकारोंको यह नष्टकरताहै । एकवर्षतक लगातार इसकसेवनकलेसे तमामरोगोंसे रहित और पण्डित्यसे निवृत्तहोकर उत्तमवाजीकरण होताहै । खानपानमें विशेष रूकावट नहींहै ॥ २३० ॥

### २३१ पटाननगुटिका

विपोषणं दृङ्गणपारदञ्च  
सगन्धचूर्णञ्च समांशयुक्तम् ।  
जेपालचूर्णं द्विगुणं गुडाकं  
सम्मर्द्य सर्वं गुटिका विधेया ॥ ९६६ ॥  
धिरेचनी सर्वधिकारहन्त्री  
लघ्नी हिता दीपनपाचनीयम् ।  
कुष्ठे हिता तीनतरो हि शूले  
चामाशये चाश्मभये चिकारे ॥  
संशोधनी शीतजलेन सम्यक्  
सङ्गाहिणी चोष्णजलेन युक्ता ॥ ९६७ ॥  
र स, र, च, र, सु, र, चि, कुष्ठे ।

भाषा—शुद्धगन्गा, मरिच, भुनमुहाणा, शुद्ध पारा और गन्धक समभाग, शुद्धजमालोटा सघसे दुनालेर पारेगन्धकी नीलवर्णकजलीमें सबकाचूर्णमिलाय बराबरकागुड़ डालकर ३-३ रतीनी गोलिया बनाकर रपछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली टडे-जलकेसाथदेनेसे पेटसाफहोताहै । मन्दाग्नि, भयङ्करकुष्ठ, वदा-हुआ आमाशयवायुशूल, पथरी इनसबको यह नष्टकरतीहै । शीतजलकेसाथलेनेसे रचनकरतीहै और गरमजललेतेही रचन बन्दहोजाताहै ॥ २३१ ॥

### २३२ पटाननरसः

आरं कांस्व सृतं तादं द्रवं पिप्पली विषम् ।  
तुल्यांशं मर्दयेत्पल्वे याम छिद्रासमुद्भवैः ॥ ९६८ ॥  
गुञ्जामात्रां वटी कृत्वा स्वानुपानेः प्रदापयेत् ।  
ज्वरं मन्दानले चैव वातपित्तज्वरेषु च ॥ ९६९ ॥  
ज्वरं चैपस्यतरणे ज्वरं जीर्णं विशेषतः ।  
मुत्राद्यं सुदृग्धं वा तनुमत्स्य केयलम् ॥ ९७० ॥  
नारिकेलोदकं देयं दाहे चैव विशेषतः ।  
पटाननो रसो नाम सर्वज्वरकुलान्तकृतः ॥ ९७१ ॥  
झै, र, र सु, विषमज्वरे ।

भाषा—पीतल, कासा, ताप्र इनकीभस्में, शुद्धशिगरिक और यलनाग, पीपल सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर एकपहर गिलोयैन्धेयसे मर्दनकर १-१ रतीनी गोलिया बनाकर रस

छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली यथाचितानुपानकेसाथदेनेसे ज्वर, मन्दाग्नि, वात और पित्तज्वर, विषम, विशेषकर जीर्णज्वरोंको यह नष्टकरताहै । इसमें पण्य भूग अथवा भूगकायूप अथवा छात्रमातदेना उचितहै । दाहतेनेपर नारियलरानलदेवे ॥ २३२ ॥

### २३३ पण्मुखलोहम्

दिनकराश्रककाञ्चनपारदं  
सुरभिलोहरजश्च समांशकम् ।  
मृदुदुताशचिलासवशीकृतं  
सघृतपुष्परमेन निषवितम् ॥ ९७२ ॥  
हरति हृज्जठरामयकामला  
ग्रहणिकामयमामसमीरणम् ।  
गुदजमेहमयानलमार्दवं  
रधिरपित्तमसुन्दरमुद्धतम् ॥ ९७३ ॥

लो. प. ( स. ), सर्वरोग ।

भाषा—ताम्र, अश्रक, सुराण, लोह इनकोभस्में, शुद्ध पारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर धीपोतकर बैरके-नोयलोपर रस्सीहुईकड़ाहीमें गलाकर पंपटी बनालेवे । इसमेंसे १ से २ रतीतक धी और मधुकेसाथसेवनकरनेसे हृदय और पेटकेरोग, कामला, ग्रहणी, आमवात, बवासीर, प्रमेह, मन्दाग्नि, रक्तपित्त, रक्तप्रदर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २३३ ॥

### २३४ पण्मुखरसः ( प्रथमः )

सृतं गन्धं समं शुद्धं सूतांशं सूतताम्रकम् ।  
सावर्धलञ्च सूतांशं जम्बोरैर्दिनसत्तकम् ॥ ९७४ ॥  
मर्दयेदातपे तीक्ष्णे रज्जा लघु पुटेरनयम् ।  
दत्त्वाऽऽदाय तु तच्चूर्णं समं त्रिकुटुं पचेत् ॥ ९७५ ॥  
पण्मुखोऽयं रसो नाम त्रिगुञ्जेनामशूलजित् ।  
एरण्डनैलपट्टभागं लघुनस्य दशाष्टकम् ॥ ९७६ ॥  
एकं हिद्रु त्रिसिन्धुर्यं सर्वमेकत्र कारयेत् ।  
त्रिनिष्कं भक्षयेद्यानु आमशूलप्रशान्तये ॥ ९७७ ॥  
र, र, र को, नि र, चि, क, व, रा, यो म, वै चि, दो, शूले ।

दि०—यो म, यो, एतयो सूताश त्रिकुटु निक्षिप्तम् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रमय्य और सन्न समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर जंभीरीकेरसे ७ दिनतक तीक्ष्णपुष्पं मर्दनकर इसचूर्णकेबराबर त्रिकुटु मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती यथाचितानुपानकेसाथदेनेसे आमशूलको यह नष्टकरताहै । इसको देकर एण्डतेल ६ भाग, लहसुनकारस १८ भा, मुनीहींग १ भा, सैषालयक ३ भाग लेकर इकोमिलकर इसमेंसे १२-१२ मांश अनुपानमें देवे ॥ २३४ ॥

### २३५ पण्मुखरसः ( द्वितीयः )

हृषकांयोऽङ्गाऽश्मरुचलिकलेरुद्विजलधि-  
द्विपद्माविंशद्विर्मिलितमनलेऽसौ यदि पुनः ।

द्वयहं एकः कृप्यां भवति सिकतायन्त्रजुषित-  
स्तलस्थः पण्डित्यप्रलयकृत्यं पण्मुखरसः ॥ १७८ ॥  
र. कौ., १ यो. त., यो., र. पा., वाजीकरणे ।

भाषा—पारा १६ भाग, ताम्र १ भा., लोह २ भा., वज्र  
४ भा., अन्नक ८ भा. इनकीभस्मे और शुद्धगन्धक २२ भाग  
लेकर नीलवर्णकञ्जीकर पण्डीबनाय फिरसे कञ्जलीकर ६-७  
कपडिमिदीहोर्दुई आदशीशीशोमे भरके दोदिन बालुकायुधमे  
परावे, इतकी तलस्थभस्मदोगी । इसमेंसे १-१ रत्ती उचितानु-  
पानकेसाधनेसे यह नरुणकृताको नष्टकरताहै ॥ २३५ ॥

### २३६ पण्मुखरसः ( तृतीयः )

नागवज्राश्रकपाणाञ्च लोहस्य शुल्वकस्य च ।  
सिन्दुराणि च पञ्चानां रससिन्दुरमेव च ॥ १७९ ॥  
एतानि समभागानि समाहृत्य विचक्षणः ।  
नित्यं तत्तुष्णरुद्रलीफलयुक्तानु लेहयेत् ॥ १८० ॥  
मधुरेष्टाप्रपानानि भुञ्जीत च यदेष्टितम् ।  
संयत्साराख्यमानेन जटामरण्यजितः ॥ १८१ ॥  
दिव्यदेहो भवेन्मर्त्यस्त्वय्यव्याधिनिनाशन ।  
कृष्णगोक्षीरसंयुक्तं क्षयाणाञ्च प्रयोजयेत् ॥ १८२ ॥  
मातुलुङ्गफलाञ्चलेन सेययेद्वर्द्धमण्डलम् ।  
भ्यासकासादिहृद्रोगपीननादिप्रशान्तये ॥ १८३ ॥  
अस्य प्रयोगचातुर्पादनुपानविशेषतः ।  
सर्वे गदा घिनद्वयन्ति तृणमेव न संशयः ॥  
पण्मुखः कथितः सोऽयं रसेन्द्रो देवदुर्लभः ॥ १८४ ॥  
र. कौ. ( हा. ), र. क. यो., सर्वरोगे ।

भाषा—नाग, वज्र, अन्नक, लोह और ताम्र इनसक्का-  
सिन्दूर और रससिन्दूर समभागलेकर १-२ दिन मर्दनकर रख-  
छोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती बालेकेलेकेफलमे रसन्न खावे  
और मधुर अन्नपानका सेवनकरे । ऐसे एकवर्षकेप्रयोगसे बुडापे  
और समस्तव्याधियोंसे रहितहोकर दिव्यदेह होजाताहै । क्षयमे  
कालीगायकाशुध, और श्वास, कास, हृद्रोग, पीनस इनकीनिष्ठ  
तिक्तेलिये विजोरेरससे आधेमण्डलक सेवनकरे । इसीप्रकार  
अनुपानमर्देशसे यह समस्तरोगोंकी दूरकरताहै ॥ २३६ ॥

### २३७ पोडशकलरसः

रसेन्द्रं सुरभीं शुल्वं शतकुम्भञ्च तारकम् ।  
काललोहं रीतिकांस्यं विद्रुमं मौक्तिकन्ध्या ॥ १८५ ॥  
नागवज्रमयस्कान्तं सम्यक्कारितमन्नकम् ।  
शुद्धाऽमृतं शङ्खचूर्णं समभागानि मेलयेत् ॥ १८६ ॥  
जम्बूजम्बीरपाठाश्रित्तृणैर्वररसेन च ।  
ततश्चिन्नकतालाभ्यां यथाशक्ति विभावयेत् ॥ १८७ ॥  
कान्तपाने विनिश्चिप्य मधुना सितया सह ।  
प्राशयेत्कायसिद्धयर्थं सर्वरोगहरं परम् ॥ १८८ ॥  
राजयक्ष्मणगुल्मघ्नं भ्यासकासोदपातिजित् ।  
ग्रहणीपाण्डुरोगघ्नं मेहविशतिरुच्छ्रजित् ॥ १८९ ॥

त्रिदोषहरणं रक्तपित्तहारि ज्वरान्तकम् ।

कलापोडशसम्पूर्णः साक्षान्मृत्युञ्जयो मतः ॥ १९० ॥  
र. क. यो., सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र, सुवर्ण, रजत,  
पोलाद, पीतल, काया, विद्रुम, मोती, नाग, वज्र, कान्त,  
अन्नक इनकीभस्मे, शुद्धजटाम, शङ्खभस्म समसमभागलेकर  
नीलवर्णकञ्जीकर जामुन, जंभीरी, पाठा, लालचिन्नक, अदरक,  
सफेदचिन्नक, ताड़फल, इनसक्की यथाशक्त्य भावनाए देकर रख-  
छोड़े । इसमेंसे १-१ रत्तीकीमात्रा मधु और घीकेसाथ कान्त-  
लोहकेपात्रमे रखकर खानेसे राजयक्ष्म, शुल्म, श्वास, कास,  
उदररोग, ग्रहणी, पाण्डु, प्रमेह, मूत्रवृच्छ, त्रिदोष, रक्तपित्त  
और समस्तज्वर, इनसक्की यह नष्टकरताहै ॥ २३७ ॥

### २३८ पोडशकलरसायनम्

रसभस्म च मार्गेण द्विभागं शुद्धगन्धकम् ।  
द्वयो. समं स्वरर्णभस्म तारभस्म च भागिकम् ॥ १९१ ॥  
कान्तं ताम्रञ्च पद्मञ्च तीक्ष्णं परमायसम् ।  
नागं वैकान्तमन्नञ्च प्रत्येकं भागमेकम् ॥ १९२ ॥  
पञ्चैर्द्रव्यनीलञ्च गोमेदं पुष्परागम् ।  
मरकतं विद्रुमं मुक्तां पद्मारागं वराटकम् ॥ १९३ ॥  
शङ्खभस्म समांशानि खल्वमध्ये चिनिक्षिपेत् ।  
भाषना गन्धदुग्धेन ह्यजाक्षीरेण भावयेत् ॥ १९४ ॥  
कुङ्कुमाऽगुचकन्दैश्च बालुकापक्वकेसरैः ।  
जातोफलैर्न तत्पत्रैस्त्रिकटुनिफलानिशा ॥ १९५ ॥  
जीरकद्वयमजिष्ठाशताह्लाचन्दनद्वयैः ।  
चातुर्जातकल्लैर्यष्टौमधुकगोक्षुरैः ॥ १९६ ॥  
त्रियङ्गुकेशरैः सुस्ताकापांस्तीवाजिगन्धजैः ।  
त्रियलाजैः शतपर्दीषयोभृशिशुक्रद्वयैः ॥ १९७ ॥  
वाडिमोपुष्पजैश्चैव लघ्वज्जनारिकेलजैः ।  
एतेषां सूक्ष्मचूर्णानां कपायाञ्च प्रकल्पयेत् ॥ १९८ ॥  
हृदं मर्चञ्च भाव्यञ्च सप्तवारं यिशोष्य च ।  
चतुर्गुणां वटीं कृत्वा प्रातस्तयाञ्च भक्षयेत् ॥ १९९ ॥  
दम्पतीभ्यांनिपेज्यञ्च रसायनमुत्तमम् ।  
यलीपलितविषंति कामदं सुखदं तथा ॥ २०० ॥  
अशीतिवार्षिको वृद्धः पुनरेव युवा भवेत् ।  
सर्वेवातामयान्दन्ति सर्वेक्षयविनाशनम् ॥ २००१ ॥  
प्रमेहान्विजशतिञ्चैव शुल्मशूलशिरोगदान् ।  
पाण्डुरोगमुदावर्तं कासश्वासाक्षिरोगकान् ॥ २००२ ॥  
अशांसि ग्रहणीञ्चैवमसृन्दरातिसारकान् ।  
पित्तरोगविनिर्णाशि सर्वरोगहरं परम् ॥ २००३ ॥  
नष्टधीयं पण्डके च पुरुषे पुष्टिदायकम् ।  
रूपीणं प्रदरदोषञ्च नष्टपुष्पं विनाशयेत् ॥  
बन्ध्या च छलमे गर्भं सर्वलक्षणसयुतम् ॥ २००४ ॥  
वीर्यवृद्धिकरं चैव सर्वेन्द्रियबलप्रदम् ।  
क्षिकालभोजनञ्चैव गोक्षीराजयेन मुक्तिः ॥ २००५ ॥



वर्जयेत्त्वयणांम्लौ च पिण्याक तैलकं तथा ।  
 राजकोलादिकं सर्वमुत्तरकरफलं तथा ॥ १००६ ॥  
 सर्जशाकांश्च लग्नं वर्जयेद्भोजने तथा ।  
 निमासं सेवयेन्नित्यं घृतेन मधुनाऽऽप्लुतम् ॥ १००७ ॥  
 कलापीडशपुष्पंश्च रसायनमहोपधम ।  
 संवत्सरप्रयोगेण दिव्यदेहश्च जायते ॥ १००८ ॥  
 र. क. यो. रसायने ।

**भाषा**—पारदभस्म १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा, सुवर्ण  
 भस्म ३ भा. रजतभस्म १ भा., कान्त, ताम्र, वज्र, फोलाद,  
 परमायस १, नाग, बैकान्त, अन्नक, हीरा, लसनिया, नीलम,  
 गोमेद, पुखराज, पत्रा, प्रवाल, मोती, माणिक्य, कौड़ी और  
 शङ्ख इनकीभस्में १-१ भाग लेकर सबकाबारीकचूर्णकर घाय  
 और बकरीकादूध, केशर, अमर, कपूर, सुगन्धवाला, पद्मकेशर,  
 जायफल, जावित्री, त्रिकटु, त्रिफला, हल्दी, दोनोंजैर, मजीठ,  
 सौंफ, दोनोचन्दन, चातुजात, राजूर, मुल्हठी, गोखर, त्रियम्ब,  
 केशर, नागरमोथा, कपासकीमन्त्रा, असगन्ध, तीनोंबला, क्षता-  
 वर, इटसिट ( पंजाबी ), दोनोंसरिजन, अनारकेपूल, लौंग,  
 नारियल इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वस्व अथवा कापोंमे ७-७  
 भावनाएँ देकर ४-४ रत्तीकी गोलिएँ बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे  
 १-१ गोली सुवह्दाम यथोचितानुपानकेसाधनेसे समस्त वात-  
 पित्ता, क्षय, २० प्रकारके प्रमेह, गुल्म, सूल, शिरोरोग, पाण्डु,  
 रुखावत, कास, श्वास, अक्षिरोग, बवासीर, प्रवृणी, अतिमार,  
 रक्तप्रद, पित्तरोग, नपुंसकत्व, शुष्कनाश, नदरोग, नटपुष्प,  
 वीर्यनाश, इन्द्रियोक्तुर्बलता, इनसबको नष्टकर बलीपित्तादि  
 रोंसे निर्मुक्तकर अस्तीवत्सर्गमी बुद्धि फिरसे शुभावस्थाको  
 प्राप्तहोताहै। इसमें गायके घी और दूधकेसाध दोबारभोजनकरे।  
 लवण, खटाई, खली, तैल, बेर, कचरी, सयतरहवैशाक, लहसन  
 इनकापरित्यागकरे। घी और मधु विशेष उपयोगमेंकरे ॥ १०१८ ॥

### २३९ सङ्कोचगोलरसः ( प्रथम )

अमृतविषपटोलं निम्बपञ्चाङ्गयुक्तं,  
 त्रिफलाखदिरसारं व्याधिघातञ्च तुल्यम् ।  
 रसपलघनमेकं गुग्गुली मांगयुक्तं,  
 जयति विषविसर्पं कुष्ठराशि जवेत् ॥ १००९ ॥

रसेन्द्रमं, कुष्ठरोगे ।

**भाषा**—शुद्ध सफेद और काला बठनाग, पटोलपत्र, निम्ब-  
 पञ्चाङ्ग, त्रिफला, वैरसार, अमिलताञ्च और शुद्धतुल्य १-१ कर्ष,  
 पारदभस्म १ पल, अन्नकभस्म और गूल १-१ कर्ष लेकर  
 बारीकचूर्णकर निम्बपञ्चाङ्गकेस्वरससे १-२ दिनमर्दनकर  
 ३-३ रत्तीकी गोलिएँ बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली  
 निम्बपञ्चाङ्ग अथवा खदिरादिशायकेसाध लेनेसे समस्तविष,  
 विसर्प और कुष्ठोको यह नष्टकरताहै ॥ २३९ ॥

### २४० सङ्कोचगोलरसः ( सङ्कोचरसः ) २

मृतताम्राग्रकं तुल्यं तयोः सूतं चतुर्गुणम् ।  
 शुद्धं तन्मर्दयेत्तुल्ये नष्टपिष्टे सुगोलकम् ॥ १०१० ॥

त्रिभिस्तुल्यं शुद्धगन्धं लोहपात्रगतं द्रुतम् ।  
 विषचेद्वेलकं मध्ये यावज्जीर्यति गन्धकः ॥ १०११ ॥  
 तावन्मृद्वग्निना यत्नात्समुद्रुतं विवृणयेत् ।  
 गुग्गुलुं निम्बपञ्चाङ्गं त्रिफलाञ्चाऽमृताविषम् १०१२  
 पटोलं खादिरं सारं व्याधिघातं समं समम् ।  
 चूर्णितं मधुना लेहं निष्कमीदुम्भरापहम् ॥  
 रसः सङ्कोचनामाऽयं पुरा नागार्जुनोदितः ॥ १०१३ ॥

र. स. र. सु. र. वि. व. रा., चि. क., रससागर, र. का. र. को.,  
 कुष्ठे । व. रा. कनकसङ्कोच इति नाम ।

**भाषा**—नात्र और अन्नकभस्म १-१ कर्ष, शुद्धपारा ८ कर्ष  
 लेकर जंगरीकेरससे मर्दनकरे। नष्टपिष्टीहोनेपर गोलाबनाय  
 तीनोंकीबराबर शुद्धगन्धको लोहेके पात्रमें गलाकर इसगोलेको  
 बीचमें रख मन्दामिसे पकावे। तमामगन्धकजलानेपर उतार-  
 कर चूर्णकरले। फिर इसमें गूल, नीमरापञ्चाङ्ग, त्रिफला, गिलोय,  
 बठनाग, पवल, वैरसार, अमिलतास ये प्रत्येक रसकी बराबर  
 लेकर बारीकचूर्णकर गुग्गुलुमें मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे  
 ४ मासे मधुकेसाध लेनेसे यह उदुम्बरकुष्ठकोनष्टकरताहै ॥ २४० ॥

### २४१ सङ्कोचपिट्टिकारसः

शुद्धसूतपलान्यथौ शुद्धताम्रापलद्वयम् ।  
 खल्वे सङ्कष्य यत्नेन कारयेत्पिट्टिकां युधः ॥ १०१४ ॥  
 गन्धकस्य पले द्वे तु कटुतेलेन पाचयेत् ।  
 तन्मध्ये पिट्टिका पाच्या भिषजा यत्नपूर्वकम् ॥ १०१५ ॥  
 तत उद्धृत्य यत्नेन यथा नोद्गीयते रसः ।  
 ततो योज्यानि वैद्येन भेषज्यानि शुभानि वै ॥ १०१६ ॥  
 कटुत्रयं वचा मुस्ता विडङ्गं चित्रकं यिषम् ।  
 समभागानि चैतानि पथ्या च त्रिगुणा विपात् १०१७  
 मधुना मर्दयित्वा तु शुटिकाः कारयेद्विषम् ।  
 गुञ्जा गुञ्जार्धमात्रा वा एकैकां भक्षयेद्बुधः ॥ १०१८ ॥  
 ज्ञात्वा बलावलं सत्त्वं द्वे द्वे वा दापयेद्बुधः ।  
 शुटिका सप्तपर्यन्ते यथायोगेन दीयते ॥ १०१९ ॥  
 सङ्कोचपिट्टिका होपा प्रसूतौ वातनाशिनी ।  
 अन्ये ये वातजा रोगा तान् कुप्रांश्च व्यपोहति १०२०  
 रसेन्द्रमं, पातरोगे ।

**भाषा**—आयल शुद्धपारेमें दोपल शुद्धताम्रकोरता बालकर  
 नष्टपिट्टिका बनाय बारीकसमलमलेकरपडेमें बाधकर २ पल शुद्ध-  
 गन्धकको बराबरके कटुतेलमें गलाकर बीचमें गोलीको रख मन्दा  
 मिसे पकावे। गन्धकके जलानेपर पोद्दीको निष्कालक कन्-  
 लीकरे। फिर इसमें त्रिकटु, वच, नागरमोथा, विडङ्ग, चित्रक-  
 गूल, शुद्धबठनाग १-१ कर्ष, हरे ३ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर  
 कजलीमें मिलाय १-२ दिन घोटकर मधुकेसाध आयी अथवा  
 १-१ रत्तीकी गोलिएँ बनाकर रखछोड़े। रोगी और रोगका  
 बलावल देखकर इनमेंसे १-१ गोली यथोचितानुपानकेसाधदेकर  
 प्रतिदिन १ गोली बडाकर ७ गोलीतक बडावे। इसकेसेवनसे  
 प्रसूतवात, अन्यसमन्तावसरोग और समस्तकुष्ठ नष्टहोतेहै ॥ २४१ ॥

## २४२ सङ्कोचरसः ( प्रथमः )

शुद्धं रसं लोणिसमुद्भवेन  
तुपोदकेनाऽपि ददं चिमर्यं ।

सगन्धकं ताघ्रविपाचितञ्च

भस्मत्वमायाति कृशानुयोगात् ॥ १०२१ ॥

तद्भस्म गन्धधाम्रकृतुत्थकञ्च

पुनर्विमर्शञ्च रसेन तेन ।

मूपागतं तच्च तुपैर्विपकं

यावद्भवेद्भस्म ततो गृहीत्वा ॥ १०२२ ॥

मद्यं सताघ्रं सह दृङ्गेन

सनागरं मागधिकायुतञ्च ।

सिद्धो भवेद्बहुमितो रसेन्द्रो

सङ्कोचनामाऽखिलकुपुहारां ॥ १०२३ ॥

र, रसेन्द्रम, डुष्टे । रसेन्द्रमज्ञेयं सङ्कोचगाल इतिनाम  
पाठस्तु सन्दिग्ध ।

भाषा—शुद्धपारको लोणोकेरस और तुपोदकसे ३-२ दिन  
मर्दनकर समभाग गन्धककेसाय नीलवर्णकच्चीकर जम्भीरीके  
रसमेंघोटकर गोलाबनाय समभाग ताबेकीकटोरीमें बन्दकर  
३-४ कपड़मिठीलगाय सुखाकर भस्म अथवा लवणयन्त्रमें रख  
८ पहरकी कडी अमिदेवे । स्वाज्ञाशीतलहोनेपर निकालकर उस-  
भस्मकीबराबर शुद्धगन्धक और तुप्य मिलाकर लोणीकेरस और  
तुपाम्बसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय अन्धमूपामें बन्दकर  
६-७ कपड़मिठीकेर सुखाकर तुपोंमें गजपुटकीआचदे । स्वाज्ञा-  
शीतलहोनेपर निकालकर धुनाहुहागा, सोंठ और पीपल सम  
भागकापूर्ण रसकेबराबर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-२ रती  
निम्नपञ्चात अथवा खदिरादिशोधनेसायलेनेसे यह समस्त-  
कुटोकी नष्टकरताहे ॥ २४२ ॥

## २४३ सङ्कोचरसः ( द्वितीयः )

कन्यारसेन सम्मर्शः सूतो द्विगुणगन्धकः ।

संस्त्वाप्य मृदयेत् पात्रे दास्यन्पात्रेण रोषयेत् ॥ १०२४ ॥

भस्मना प्रयेद्वर्द्धं मुखरोधञ्च कारयेत् ।

तद्यामद्वितयं पाच्यं स्वाज्ञाशीतं समुद्धरेत् ॥ १०२५ ॥

भृङ्गद्रवेण सम्मर्शः दिवसत्रितयं धिया ।

भृङ्गाग्नित्रिफलाघेष्ठासोमराजीकपायकैः ॥ १०२६ ॥

निवेशयेत्खादिरज कायं राजतरुस्तथा ।

वीजं याकुचिकायाश्च मलयपत्रजस्तथा ॥ १०२७ ॥

आजयेत् घनतां प्राप्तं शीतोश्नतं समाहरेत् ।

अनेन कर्ममात्रेण रसं बहुयुग्मं धरेत् ॥ १०२८ ॥

त्रिफलायाः पिवेत्योयं तृणार्ताऽपि जलञ्च तत् ।

त्रिरात्रेण भवेत्त्रिज्वरे स्फोटानामपि सम्भवः ॥ १०२९ ॥

र, डुष्टे ।

भाषा—शुद्धपारकी द्वेगुणगन्धककेसाय नीलवर्णकच्चीकर  
धीकुवारकेरससे एकदिन मर्दनकर हण्डीमें रख दोनोंकीबराबरके

ताम्रभात्रसे ढककर सुबचुनावगैहसे सन्धिवन्दकर ६-७ कपड़-  
मिठीदेकर हंडीकी राखसे भरके ढकनलगाय ६-७ कपड़मिठी  
करदे । सुपनेपर २ पहरकी कडी आचदे । स्वाज्ञाशीतलहोनेपर  
निकालकर ३ दिन भगरेकेरससे मर्दनकर ६-६ रतीकी  
गोलिया बनाकर रखछोड़े । फिर भंगरा, चित्रक, त्रिफला,  
विडर, वाङ्गची, खैर और अभिलतासे बायोको एकजगह  
मिलाकर फन बनावे । उसमें वाकुनी और कद्मरकीछालकापूर्ण  
दशास मिलाकर १-१ तोलेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े ।  
इसपनकी गोलीकेसाय पूर्वसकी १ गोली देकर त्रिफलाकाकाडा  
पिलावे । अधिकप्यासलगनेपर थोड़ापानीपीवे । इसके अति-  
रिक्त भोजनवगैह न करे । इसके ३ दिन सेवनकरनेसे श्वित्र-  
स्यानमें अभिदग्धकीतरह छाले उठकर रोगनष्टहोताहे ॥ २४३ ॥

## २४४ सङ्कोचशुल्वरसः ( सङ्कोचखल्वः )

शुल्यं तालकताण्डवं ध्वनिघ्नं सूतेन्द्रगोलं मृतं,  
कादमीरं सुरदालिपादकटुका कोशातकी सैन्धवम् ।  
निर्गुण्डीचवृष्टयदगुटिका कार्येररिष्टोद्भयः,  
श्लेष्माणं विनिहन्ति शीर्षजगदाय सङ्कोचशुल्वोरसः

रसेन्द्रम, र, कषाधिकारे ।

दि०—ताण्डव यशदं ग्राह्य, अमी निक्षिप्ते सति यशदाहानावाणां  
ज्वाला चण्डाहं प्राहुर्मवन्ति अतो लाक्षग्निकेतन्नाम । पातुसन्तुहम्ये  
उपादानादन्ते भृतमितिनिषेधेणाच्च तत्त्वाने दृग्विशेषस्याऽननुभवश्चात् ।  
गोलश्लेष्म मन् शिला ग्राह्या “गोला गोदावरीसख्यो कुनदीजुर्गयो  
खियाय” इतिमेदिनी ।

भाषा—ताबा, हरिताल, जस्त, कासा, अभ्रक, पारा,  
मैनसिल इनकीभस्में, केदार, कन्दाल, मैनफल, कुटकी, कड़वी-  
तरोई, सेवानमक सबसमभागलेकर निर्गुण्डीकरसे १-२ दिन  
मर्दनकर १-१ रतीकी गोलियें बनाने रखछोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली नीमरीछालकेकाढेकेसाय देनेसे कफरोग और  
मस्तककैरोग नष्टहोतेहे ॥ २४४ ॥

## २४५ सङ्गरभैरवरसः

मृतं ताघ्रं मृतं तीक्ष्णं त्रिसारं पारदं समम् ।

पञ्चकोलकपायेण दिनमेकान्तु मर्दयेत् ॥ १०३१ ॥

दोलायन्ने पचेद्यामं भाव्यं कुकुटपित्तकैः ।

द्विभाषमानं दातव्यं मधुना कणसंयुतम् ॥

इहाहं हन्ति शैश्वरेण रसः सङ्गरभैरवः ॥ १०३२ ॥

वै चि, वा, रसायनप, ह्नेने ।

भाषा—ताबा, कोलाद, पारा इनकीभस्में, सजी, मुहाग,  
यवसार, सबसमभागलेकर पञ्चकोलकेकाडेसे एकदिन मर्दनकर  
गोलाबनाय दोलायन्त्रमें पञ्चकोलकेकाडेसे १ पहर स्वेदनकर  
कुङ्कुटपित्तसे १ भावनादेकर २-२ भागकी गोलियें बनाकर  
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु और पीपलकेसायलेनेसे  
यह इत्येवैदाहोनी शीघ्रनष्टकरताहे ॥ २४५ ॥

वर्जयेत्त्वल्पांशुं च पिण्याक तैलकं तथा ।  
राजकोलादिकं सर्वमुर्वारकफलं तथा ॥ १००६ ॥  
सर्जशाकांश्च लघुनं वर्जयेद्भोजने तथा ।  
त्रिमसं सेवयेन्नित्यं घृतेन मधुनाऽऽप्लुतम् ॥ १००७ ॥  
कलापोऽशपूर्णञ्च रसायनमहोपधम् ।  
संवत्सरप्रयोगेण दिव्यदेहश्च जायते ॥ १००८ ॥  
र. क. यो. रसायने ।

भाषा—पारदभस्म १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा, सुवर्ण-  
भस्म ३ भा. रजतभस्म १ भा., कान्त, ताम्र, वज्र, फोलाद,  
परमायुष १, नाग, वैक्रान्त, अम्रक, हीरा, खसनियां, नीलम,  
गोमेद, पुष्यराज, पत्रा, प्रवाल, मोती, माणिक्य, कौंडी और  
शङ्ख इनकीभस्में १-१ भाग लेकर सक्कावारीकचूर्णकर गाय  
और बकरीकादूध, केशर, अमर, कपूर, सुगन्धवाला, पचकेसर,  
जायफल, जाबिरी, त्रिकटु, त्रिफला, हल्दी, दोनोंजीरे, मजीठ,  
सोंफ, दोनोचन्दन, चातुर्जात, राजूर, मुल्लूटी, गोखरू, त्रियम्बु,  
केसर, नागमोथा, कपासकीमला, असगन्ध, तीनोंचला, दाता-  
वर, इटसिट (पंजाबी), दोनोंसहिजन, अनारकेफूल, लौंग,  
नारियल इनप्रत्येकने यथासम्भव स्वरस अथवा काथोंमे ७-७  
भावनाएँ देकर ४-४ रसीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली सुबहशाम यथोचितानुपायकेसाथलेनेसे समस्त वात-  
विकार, क्षय, २० प्रकारके प्रमेह, शुल्म, बल, शिरोरोग, पाण्डु,  
बदावत, कास, श्वास, अक्षिरोग, बवासीर, प्रवृण्णी, अतिमार,  
रक्तप्रद, पित्तरोग, नर्पुसकच, शुक्लमादा, उदररोग, नटपुत्र,  
वीर्यमादा, इन्द्रियोंकीदुर्बलता, इनसबको नष्टकर बलीपल्लादि-  
कोंसे निर्मुक्तहोकर अस्तीवसरकाभी शुद्धा पिरसे युगवस्थाको  
प्राप्तहोताहै । इसमें गायके धी और इधकेसाथ दोवारभोजनकरे ।  
लवण, खटाई, पत्नी, तैल, बेर, कचरी, खतरहृदयेशाक, लहसन  
इनकापरित्यागकरे । धी और मधु विशेष उपयोगमेंलेवे ॥ १०८ ॥

### २३९ सङ्कोचगोलरसः ( प्रथम )

अमृतविषपटोलं निम्बपञ्चाङ्गमुलं,  
त्रिफलखदिरसारं व्याधियातञ्च तुल्यम् ।  
रसपलघनमेकं गुग्गुली मांग्युक्तं,  
जयति विषविसर्पं कुष्ठराशिं जवेन ॥ १००९ ॥

रसेन्द्रम्., कुष्ठरोगे ।

भाषा—शुद्ध सफेद और काला बलनाग, पटोलपत्र, निम्ब-  
पञ्चाङ्ग, त्रिफला, खैरसार, अमिलतास और शूलतुल्य १-१ कर्ष,  
पारदभस्म १ पल, अम्रकभस्म और गूल १-१ कर्ष लेकर  
बारीकचूर्णकर निम्बपञ्चाङ्गकेस्वरससे १-२ दिनमर्दनकर  
३-३ रसीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली  
निम्बपञ्चाङ्ग अथवा खदिरादिवायकेसाथ लेनेसे समस्तविष,  
विसर्प और दुष्टोंको यद् नष्टकरपाड़े ॥ २३९ ॥

### २४० सङ्कोचगोलरसः ( सङ्कोचरसः ) २

मृतताम्राप्रकं तुल्यं तयोः सतं चतुर्गुणम् ।  
शुद्धं तन्मर्दयेत्खल्वे नष्टपिष्टं सुगोलरुम् ॥ १०१० ॥

त्रिभिस्तुल्यं शुद्धगन्धं लोहपात्रगतं द्रुतम् ।  
विषचेद्वोलर्कं मध्ये यावज्जीयेति गन्धकः ॥ १०११ ॥  
तावन्मृद्वग्निना यत्नात्समुद्भूतं विचूर्णयेत् ।  
गुग्गुलुं निम्बपञ्चाङ्गं त्रिफलाञ्चाऽमृताविषम् १०१२  
पटोलं खदिरं सारं व्याधियातं समं समम् ।  
चूर्णितं मधुना लेहं निष्कमौदुम्बरापहम् ॥  
रसः सङ्कोचनामाऽयं पुरा नागार्जुनोदितः ॥ १०१३ ॥  
र. स., र. सु. र. चि. व. रा., चि. क. रससागर, र. का. र. को.,  
कुष्ठे । व. रा. कनकसङ्कोच इति नाम ।

भाषा—ताम्र और अम्रकभस्म १-१ कर्ष, शुद्धपारा ८ कर्ष  
लेकर जमीरीकेरससे मर्दनकरे । नष्टपिष्टोहोनेपर गोलानाय  
तीनोंकीबराबर शुद्धगन्धकको लोहेके पात्रमें गलाकर इसगोलेको  
वीचमें रख मन्दामिसे पकावे । तमामगन्धकजलजानेपर उता-  
कर चूर्णकरले । फिर इसमें गूल, नीमकापञ्चाङ्ग, त्रिफला, गिलोब,  
बलनाग, परवल, खैरसार, अमिलताम ये प्रत्येक रसकी बराबर  
लेकर बारीकचूर्णकर गुग्गुलुमें मिलाकर रखछोड़े । इनमेंसे  
४ मासे मधुकेसाथ लेनेसे यह उदुम्बरकुष्ठकोनष्टकरताहै ॥ १०१० ॥

### २४१ सङ्कोचपिट्टिकारसः

शुद्धसूतपलान्यष्टौ शुद्धताम्रपलद्वयम् ।  
खल्वे सङ्कष्टं यत्नेन कारयेरिपिटिकां बुधः ॥ १०१४ ॥  
गन्धकस्य पले द्वे तु कटुतैलेन पाचयेत् ।  
तन्मध्ये पिट्टिका पाच्या निपजा यत्पूर्वकम् ॥ १०१५ ॥  
तत उद्भूतं यत्नेन यथा नोद्गीयते रसः ।  
ततो योज्यानि वृतेन सैषज्यानि शुभानि वै ॥ १०१६ ॥  
कटुपत्रं बन्धु मृतेन विडङ्गं चिन्नकं धिपम् ।  
समभागानि चैतानि पथ्या च त्रिगुणा धिपात १०१७  
मधुना मर्दयित्वा तु शुद्धिकाः कारयेत्त्रिपक्व ।  
शुद्धा शुद्धार्थसारं वा एकैसां भक्षयेद्बुधः ॥ १०१८ ॥  
ज्ञात्वा बलायलं सत्यं द्वे द्वे वा दापयेद्बुधः ।  
शुद्धिका सप्तपर्यन्तं यथायोगेन दीयते ॥ १०१९ ॥  
सङ्कोचपिट्टिका क्षोपा प्रसूती वातनाशिनी ।  
अन्ये ये वातजा रोगा तान् कुष्ठान् ध्यपोहति १०२०  
रसेन्द्रम्., वातरोगे ।

भाषा—जाटिल शुद्धपारमें दोपल शुद्धताम्रकोरेता डालकर  
नष्टपिट्टिका बनाय बारीकमलमलेकरपत्रमें बांधकर २ पल शुद्ध  
गन्धकको बराबरके कटुतैलमें गलाकर वीचमें गोलीको रस मन्द-  
ामिसे पकावे । गन्धकके जलजानेपर पोह्लीको निकालकर कज-  
लीकरे । फिर इसमें त्रिकटु, बन्धु, नागमोथा, विडङ्ग, त्रिफ-  
ला, शुद्धबलनाग १-१ कर्ष, हर्ष ३ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर  
कजलीमें मिलाय १-२ दिन घोटकर मधुकेसाथ आवी अथवा  
१-१ रसीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । रोगी और रोगका  
बलाबल देखकर इनमेंसे १-१ गोली यथोचितानुपायकेसाथदेकर  
प्रतिदिन १ गोली बड़ाकर ७ गोलीतक बढ़ावे । इसकेसेवनसे  
प्रयत्नात, अन्यसमस्तवातरोग और समस्तकुष्ठ नष्टहोते ॥ १०१९ ॥

## २४२ सङ्कोचरसः ( प्रथमः )

शुद्धं रसं लोणिसमुद्भवेन  
तुपोदकेनाऽपि दृढं विमर्द्य।

सगन्धं तावद्विपाचितञ्च

भस्मरूपमायाति कृशानुयोगात् ॥ १०२१ ॥

तद्भस्म गन्धश्मरुतुत्पन्नञ्च

पुनर्विमर्द्यञ्च रसेन तेन।

मृषागतं तच्च पुनर्विपक्वं

यावद्भवेद्भस्म ततो गृहीत्वा ॥ १०२२ ॥

मर्द्यं सताम्रं सह टङ्गुणेन

सनागरं भागधिकायुतञ्च।

सिद्धं भवेद्बलमितो रसेन्द्रे

सङ्कोचनामाऽजिलकुपहारौ ॥ १०२३ ॥

र, रसेन्द्रम, कुंठे। रसेन्द्रमले सङ्कोचगोल इतिनाम  
पाठस्तु सन्दिग्धः।

भाषा—शुद्धपारकी लोणीकेरस और तुपोदकसे १-२ दिन  
मर्दनकर समभाग गन्धकवेसाथ नीलवर्णकजलीकर जम्मीरीके  
रसमेंघोटकर गोलबनाय समभाग तावेकीकटोरीमें बन्दकर  
१-४ कपडमिरीलाग्य सुलाकर भस्म अथवा सत्रणयन्त्रमें रख  
८ पहरकी कड़ी अमिर्द्वे। स्वाह्नशीतलहोनेपर निवालकर उस-  
भस्मकीबराबर शुद्ध्यगन्धक और तुष मिलकर लोणीकेरस और  
तुषाम्रसे १-१ दिन मर्दनकर गोलबनाय अन्यमृषामें बन्दकर  
६-७ कपडमिरीदकर सुलाकर तुषमें गजपुडीआचद। स्वाह्न-  
शीतलहोनेपर निवालकर धुनामुहंगा, सोंठ और पीपल सम  
भागकावर्ण रसकेबराबर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्ती  
निम्बपत्रात्र अथवा खदिरादिकायलेसाथलेनेसे यह समस्त-  
कुटोरीं बन्दकरताहें ॥ २४२ ॥

## २४३ सङ्कोचरसः ( द्वितीयः )

कन्यारसेन सम्मर्द्यः सूतो द्विगुणगन्धकः।

संस्थाप्य मृन्मये पात्रे तावत्पात्रेण रोधयेत् ॥ १०२४ ॥

भस्मना पूरयेद्दृढं मुखरोधञ्च कारयेत्।

तद्यामद्वितयं पाच्यं स्वाह्नशीतं समुद्धरेत् ॥ १०२५ ॥

भृङ्गद्रवेण सम्मर्द्या दिवसत्रितयं धिया।

भृङ्गाग्नित्रिफलावेष्टासोमराजीकपायकैः ॥ १०२६ ॥

निवेशयेत्पादिरज कार्यं राजतरोस्तथा।

वीजं वाकुचिकायाश्च मलयूतप्रजस्तथा ॥ १०२७ ॥

आवर्त्य घनतां प्राप्तं शीतीकृतं समाहरेत्।

अनेन कर्मपात्रेण रसं बहुयुगं चरेत् ॥ १०२८ ॥

त्रिफलायाः पिष्टेस्तोयं तृणातीऽपि जलञ्च तत्।

त्रिपात्रेण भवेद्विद्वेष्टे स्फोटानामपि सम्मवः ॥ १०२९ ॥

र, कुंठे।

भाषा—शुद्धपारकी द्विगुणगन्धकवेसाथ नीलवर्णकजलीकर  
पीपुवारकेरससे एकदिन मर्दनकर हण्डोमें रख दोनोकीबराबरके

ताम्रपात्रसे ढककर शुद्धचावगैरहसे सन्धिवन्दकर ६-७ कपड-  
मिरीदेकर हंडीको राखसे भरके ढकनलाग्य ६-७ कपडमिरी-  
करदे। सुखनेपर २ पहरकी कड़ी आचदे। स्वाह्नशीतलहोनेपर  
निवालकर ३ दिन भग्नेकेरससे मर्दनकर ६-६ रत्तीकी  
गोलिया बनाकर रखछोड़े। फिर भंगरा, चित्रक, त्रिफला,  
विडङ्ग, वायुची, खैर और अमिलतासे काथीको एकजगह  
मिलाकर घन बनावे। उसमें वाकुची और कद्मरकीछालकाचूर्ण  
दशांश मिलाकर १-१ तोलेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े।  
इसघनकी गोलीवेसाथ पूर्वसखी १ गोली देकर त्रिफलाकाकावा  
पिलावे। अधिकप्यासलग्नेपर थोड़ापानीपीवे। इसके अति-  
रिक्त भोजनवर्णह न करे। इसके ३ दिन सेवनकरनेसे श्वित्र-  
स्थानमें अभिदृश्यकोतह छाले उठकर रोगनष्टहोताहें ॥ २४३ ॥

## २४४ सङ्कोचशुल्परसः ( सङ्कोचलवः )

शुल्यं तालकताण्डवं ध्वनिघर्णं सूतेन्द्रगोलं मृतं,  
कादमीरं सुरदाहिरादकटुका कोशातकी सैन्धवम्।

निर्गुण्डीद्रव्यपुष्ट्यद्वगुटिका काथैररिद्रोषवैः,

रुप्याणं चिनिहस्ति शीर्षजगदान् सङ्कोचशुल्परसः

रसेन्द्रमं, र, कफाधिकारे।

दि०—ताण्डवर घट्टा घ्राष्टी निक्षिप्ते सति यशदात्रानावर्णो  
ज्वाला शब्दाश्च प्रादुर्भवन्ति अतो राक्षसिमेतन्नाम। पाण्डुमन्त्रमध्वे  
उपादानादतो मृतमिनिक्षिप्त्वाच तात्थाने पुणविशेषस्याऽननुमेषात्।  
गालक्षणेन मनःसिद्धा ग्राह्या “गोला गोदावरीमुख्यो कुनगीशुर्गो  
लियाम्” इतिवेदितौ।

भाषा—तावा, हरिताल, जस्त, कासा, अभ्रक, पारा,  
मैनसिल इनकीभस्में, केशर, बन्दाळ, मैनकल, कुटकी, कड़वी-  
तरीं, सैन्धामक सबसमभागलेकर निर्गुण्डीकेरससे १-२ दिन  
मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे  
१-१ गोली नीमकीछालकेकाटुकेसाथ देनेसे कफरोग और  
मस्तककेरोग नष्टहोतेहैं ॥ २४४ ॥

## २४५ सङ्ग्रहभैरवसः

मृतं तावत् मृतं तीक्ष्णं त्रिस्तारं पारदं समम्।

पञ्चकोलकपायेण दिनमेकान्तु मर्दयेत् ॥ १०३१ ॥

दोलायन्त्रे पचेद्यामं भाव्यं कुकुटपित्तकैः।

हिमापमात्रं दातव्यं मधुना कण्ठसंयुतम् ॥

हृदाहं हन्ति शोथेयण रसः सङ्ग्रहभैरवः ॥ १०३२ ॥

वै. चि, वा, रसायनप, हृद्रोगे।

भाषा—तावा, पोलद, पारा इनकीभस्में, सवो, मुहागा,  
यवक्षार, सबसमभागलेकर पञ्चकोलकेकाटुसे एकदिन मर्दनकर  
गोलायनाय दोलायन्त्रमें पञ्चकोलकेकाटुसे १ पहर स्वेदनकर  
कुक्कुटपित्तसे १ भावनादेकर २-३ भारोकी गोलियें बनाकर  
रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली यधु और १ गोली पालकेसाथलेनेसे  
यह हृदयकेदाहको शीघ्रनष्टकरताहै ॥ २४५ ॥

## २४६ सञ्जीवकरणरसः

रसगन्धकनेमालं पिप्पलीं सैन्धवं तथा ।  
मरिचं हिङ्गुलं ताम्रं मृताग्रं सर्वतुल्यकम् ॥ १०३३ ॥  
समभागानि तुल्यानि भावयेद्वत्सनाभजेः ।  
त्रिदिनं कृष्णसर्पस्य मुखे पिप्पुा प्रवेशयेत् ॥ १०३४ ॥  
वह्निर्नित्या च सन्धिपथ्य तक्ष्णं रेणुमात्रकम् ।  
भोजयेत्सर्वरोगेषु सद्यः प्रत्येयकारकम् ॥ १०३५ ॥  
ग्रहान्ध्रप्रयोगेण मृतस्य प्राणदर्शनम् ।  
सञ्जीवकरणो नाम्ना सौवर्णकरणस्तथा ॥  
सन्तानकरणश्चैव प्रेथिष्ये तत्प्रतिष्ठितम् ॥ १०३६ ॥  
र.क. यो., मन्त्रिपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, और जमालगोटा, पीपल, सेंधानमक, मरिच, शिंगरिफ, और ताम्रमस सब समभाग, अन्नक्रमम् सक्तीबराबर लेकर बट्नागकेपाठसे १-२ दिन मर्दनकर कालेमापरेसुंदरमरदे । ३ दिनमाद निकालकर सुखा-  
पर रखछोड़े । इसमेंसे ज्वारेकदनेरीषराबर समयोचितानु-  
पानकेसाथ देनेसे यह समस्तरीगोको नष्टहोताहै और तत्क्षण  
परिचय बताताहै । सतिपातादिजनित मूच्छावस्थामें तालमें पाछ-  
देवर पर्यणकरंगसे चेतनाको प्राप्तहोताहै । इसकेप्रयोगसे वन्ध्या  
गर्भधारणकर्तारि ॥ २४६ ॥

## २४७ सञ्जीवनरसः ( प्रथमः )

पलमात्रं रसं शुद्धं घरनागसमन्वितम् ।  
निक्षिप्य पातनायत्रे त्रिशङ्काराणि पातयेत् ॥ १०३७ ॥  
समाहरेद्वत्सं सम्यक् पातनायव्रके मृतम् ।  
मृते रसे क्षिपेत्तुल्यं भूपालादितमस्मकम् ॥ १०३८ ॥  
निरत्यं प्रपुगस्मापि निक्षिपेद्वृष्टमांशतः ।  
ततो निम्बद्विद्रावैरिषारादहं हि भावयेत् ॥  
ततः संशोष्य सञ्ज्वर्ण्य क्षिपेद्वृष्टमकरण्डके ॥ १०३९ ॥  
सञ्जीवनोऽयं बलुयल्लमानो निशाकुलीधूर्णयुतः सतक्रः  
निहन्ति सर्वानपि मेहरीगाधूर्णां नितान्तं कुक्ते क्षुधाञ्च  
र. र. घ., र. घु. र. को., प्रमेह ।

भाषा—[कालशुद्धनागको गलाकर १ पल शुद्धपारा मिलाय  
३० बार ऊर्ध्वपातकरे । इससे पारे और नागकी तुल्यय भस्म  
होगी । फिर दमकीवराबर लाजवर्द और अष्टमाश निरुत्य ब्रह्म-  
भस्म मिलाकर नोमकेतोबरेपात ३० दिन मर्दनकर रखछोड़े ।  
इसमेंसे १-३ रत्तीकीमात्रा हल्दी और अञ्जलीकोठाले ३ मासे  
पूर्णकेसाथ मिलानर छाछकेसाथलेनेसे यह समस्तप्रमेहोको  
नष्टकर अल्पत धुपाको आपनकरताहै ॥ २४७ ॥

## २४८ सञ्जीवनरसः ( द्वितीयः )

रसगन्धकताम्रं च पान्तमस्य समांशकम् ।  
मुतालीत्ससं परं काचरूप्यां विनिक्षिपेत् ॥ १०४१ ॥  
पाषण्डालुकादिभ्ये ठियामान्ते समुद्धरेत् ।  
मिन्दूरं त्रिपलां चोष्यं शारं लघणपञ्चकम् ॥ १०४२ ॥

हिङ्गु गुग्गुलुवही च कुवेराक्षश्च टङ्गुणम् ।  
दीप्यत्रयश्च जाती च सुरणं विश्ववत्सकम् ॥ १०४३ ॥  
शिमुद्धयं तथा पुह्री व्याघ्रीत्रयपटोलकम् ।  
राक्षसीवल्लवही च कटभीधुरपीलकम् ॥ १०४४ ॥  
समभागानि सञ्ज्वर्ण्य खल्वमघे विनिक्षिपेत् ।  
गुञ्जनस्य शृङ्गवेरजम्बीररसभावना ॥ १०४५ ॥  
निष्कार्दं मधुना लेह्यं यामे यामे च भक्षितम् ।  
अम्लपित्तं निहन्त्याशु सर्वव्याधिहरः परः ॥  
कुर्यात्प्राणपरित्राणं सञ्जीवनरसः स्मृतः ॥ १०४६ ॥  
व. रा., वै. चि., अम्लपित्त ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और कान्तमस्य  
समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर मुशलीनेरसे एकदिन मर्दनकर  
सुखाकर २-३ कपडिमिडीकीहुई आतशीशीमीसे रख सुंदरन्दकर  
वालुकायन्त्रमें रख दोषहरकी अभिदेवे । स्वाज्ञाशीतलहोमैपर  
निकालकर रससिन्दूर, त्रिकला, त्रिकुट, यवशार, पांचोममक,  
मुनीहींग, गुग्गु, चित्रकमूल, करंजकीमन्ना, भुनाहुहागा, खुरा-  
सानो और देशी अजवाइन, अजमोद, जावित्री, सुरण, सौंठ,  
इन्द्रजव, दोमोसहिजनकीछाल, पुनर्नवा, लाल और सफेद भेट-  
कटैया, वनमांश, परबल, सेमलकामुमला, हज्जोह, कश्म  
(काश्मीरीनामहै), तालमखाना, पीलुकीछाल, सरमभागलेकर  
वारीकचूर्णकर खलगम, अदरक और जंभीरीवेरसे १-१ भावना  
देकर २-२ मासेरी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१  
गोली उचितानुपानकेसाथलेनेसे अम्लपित्तादि समस्त अग्नि-  
विकारोको नष्टकर मनुष्यको जीवितदानदेताहै ॥ २४८ ॥

## २४९ सञ्जीवनाभ्रम्

धञ्जात्रं मारितं प्राह्यं कर्ममानं सुचुणितम् ।  
जीरकं फानकं चीजं कर्पं वासारसेन च ॥ १०४७ ॥  
कण्टकारीरसेनैव धात्रीमुस्तारसेन च ।  
शुद्धकीरसेनैव पलाशेन पृथक्पृथक् ॥ १०४८ ॥  
मुदयित्वा घटी कार्यां शुद्धामात्रा नियोजिता ।  
धिपमाख्याड्यरान्सर्वांश्च द्रोहानं यदृत्तं यमिम ॥ १०४९ ॥  
रक्तपित्तं चातरक्तं प्रहर्षो भ्यासकासकी ।  
अरुचि शूलहृत्तासावर्शांसि च विनाशयेत् ॥ १०५० ॥  
र. घु., ज्वरपिहारे ।

भाषा—अन्नक्रमम्, जीरा, शुद्धजमालगोटा १-१ कप  
लेकर अदुहा, मटकटैया, आंवले, नागरमोषा और गिलोयके  
१-१ पल्लवमसे क्रमशः मर्दनकर १-१ रत्तीरी गोतिदे  
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली यथोचितानुपानकेसाथ-  
लेनेसे खमस्त सम या विषमरक्त, प्लोहा, यष्टर, वमन,  
रक्तपित्त, वातरक्त, ग्रहणी, आश, काय, अरुचि, शूल, जीमि-  
नलाना, बवातीर इनमको यह नष्टहोताहै ॥ २४९ ॥

## २५० सञ्जीवनीघटी

विडङ्गं नागरं कृष्णा पथ्यामलविर्मातकी ।  
यथा शुद्धी भूतानं सविषं व्याघ्रं योजयेत् ॥ १०५१ ॥

एतानि समभागानि गोमूत्रेणैव पेयेत् ।  
 गुडामा गुटिका कार्या दद्याद्रुक्ते रसैः १०५२  
 एकामजीर्णगुल्मेषु द्वे विमूढ्याश्च दापयेत् ।  
 तिष्ठः स्युः सर्पदंष्ट्रे चतस्रः सन्धिपातके ॥  
 वटी सजीवनी नाम्ना सजीवयति मानवम् १०५३  
 शा स, श्रु. थो त, नि र, भै सा, रसायनस, वै. र, यो  
 चि, चि र न, यो र, यो म, वै चि, व रा, चि. क, यो  
 त, अनीपादौ ।

भाषा—विडङ्ग, सोंठ, पीपल, हर्, आवले, बोंहै, वच,  
 गिलोय, शुद्धभिलावे और बछनाग समभाग लेकर बारीक-  
 चूर्णकरे । भिलावे और ताभीगिलोयको गोमूत्रमें १-३  
 दिन घोटकर दूसरीबीजें भिलावे और अच्छीतरह घोटकर  
 १-१ रत्तीकी गोलिएं बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१  
 गोली अदरकके रसनेसाय अनोण और गुल्ममें देवे । हैजेमें  
 ३ गोली, सर्पदंष्ट्रमें ३ और गन्धिले ४ गोलियोंकी  
 मात्रा देनेसे यह मनुष्यको जीवितदान देतीहै । १५० ॥

### २५१ सञ्ज्ञाप्रबोधप्रथमनम्

यथा रसोनकटुकं सैन्धवं घृहीतफलम् ।  
 रद्राक्षं मधुसारश्च फलं सामुद्रिकं मतम् ॥ १०५४ ॥  
 गन्धेशो समभागानि हृक्षैस्तीरेण भावयेत् ।  
 भावयेन्मीनपित्तं त्रिवारं चूर्णयेत्ततः ॥ १०५५ ॥  
 धमनं कथितं श्रेष्ठं सन्धिपाते सुदारणे ।  
 कफोत्पन्ने तीव्रघाते अपस्मारे हलीमके ॥ १०५६ ॥  
 शिरोरोगे नेत्ररोगे कर्णरोगे विधानतः ।  
 भावयेद्वृषाणछिद्राभ्यां सञ्ज्ञाकरणमुत्तमम् १०५७

रसायनस, सनिपाते ।

वि०—अन मधुमारशयेन मधुपानिका प्राप्ता । कचित्तु चद्र  
 मन्वेन वययति ।

भाषा—वच, लहसुन, कुटकी, संधानमक, भटकटैयाके  
 फल रद्राक्ष, मुलहठी अथवा चन्द्रमधुक, समुद्रफल, पारा और  
 गन्धक समभाग लेकर बारीकचूर्णकर परिमन्थकरी नीलवर्ण  
 बज्जलीमें मिलाय आकेशूध और मठलीकेपित्तसे ३-३ भाव-  
 नाए देकर मुलाकर बारीकचूर्णकर रखोढ़े । कफोत्पन्न मयङ्गर  
 सन्धिपात, तीव्रज्वर, अपस्मार, हलीमक, शिरोरोग नेत्ररोग और  
 कर्णरोग इनमें इसका नस्यदेनेसे चेतना प्राप्तहोतीहै । १५१ ॥

### २५२ सञ्ज्ञाप्रबोधरसः

रूपटिका तुल्यनेपालं मरिचं निम्बयीजकम् ।  
 पुत्रजीयकमज्जा च निम्बुनीरेडर्नमाजने ॥ १०५८ ॥  
 भावना सप्त दातव्या गुटी गुडामिता कृता ।  
 अञ्जनारसन्निपाताऽहिविपाऽपस्मारनाशिनी १०५९  
 रसायनस, सनिपाते ।

भाषा—शुद्ध पिप्पली, तुल्य और ज्वालागोटा, मरिच,  
 नीमकेपीन और पतञ्जीवाची मन्जा सब समभागलेकर बारीक

चूर्णकर तावेके बर्तनमें बालहर नीबूकेरसकी ७ भावनाए देकर  
 १-१ रत्तीकी गोलिएं बनाकर छायाशुष्ककर रखोढ़े । इनमेंसे  
 १-१ गोली मनुष्यलाला अथवा नीबूकेरसमें मिसकर अन्नकरनेसे  
 सन्धिपात, सर्पविष और अपस्मारको यह नष्टकरताहै । १५२ ॥

### २५३ सच्चशेखररसः

सूतं रसकसत्त्वेन सारयित्वा समेन च ।  
 सत्त्वं तालस्य ताप्यस्य सर्वतुल्यरालं क्षिपेत् १०६०  
 मर्दयेत्सुपवीनीरे राजकोपातकीजले ।  
 देवदालीरसे यामं यामं लवणयत्रके ॥ १०६१ ॥  
 पचेच्छीतं विचूर्ण्यथ भाजयेत्तैस्त्रिभिर्जैलेः ।  
 यवचिञ्चाहरिकास्ताकान्यानां सलिलैः पृथक् ॥ १०६२ ॥  
 द्विवह्ना वटिका चास्य पिप्पली मधुसंयुता ।  
 प्रयुक्ता हन्ति वेगेन शीतदाहादिकं ज्वरम् ॥ १०६३ ॥  
 टो०, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धगोरको समभाग खर्परसत्त्वेन सारणापन्नसे  
 मिलाकर समभाग हरिताल और माक्षिकसत्त्वकेसाय भिलावे ।  
 फिर सबरीबराबर शुद्धगन्धक मिलाय नीलवर्णकज्जलीकर करेला,  
 कड़वीलौकी और बन्दालकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोला,  
 बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर १-१ पहर लवणयत्रमें पकावे ।  
 स्वाप्नशीतल्होनेपर निकालकर करेला, कड़वीलौकी, बन्दा  
 जैती, कोयल और चीज्वा(केरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ६-६  
 रत्तीकी गोलिया बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली पीपल  
 और मधुकेसायदेनेसे शीत अथवा दाहादियुक्तज्वरोंको यह  
 नष्टकरताहै । १५३ ॥

### २५४ सद्योज्वराङ्गुशरसः

रसश्च नागवह्नी च समांशान् मेलयेत्तया ।  
 अमृतञ्चापि सहस्रो मर्दयेदुष्णारिणा ॥ १०६४ ॥  
 कटुप्रयेण दातव्यं गुडामात्रे भिषग्वरैः ।  
 सद्यो ज्वराङ्गुशो नाम सर्वज्वरघिनाशकः ॥ १०६५ ॥  
 वै चि, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, नाग और बह्नीके इक्ष्वा गणाय पापेकी  
 बराबर शुद्धवृषाणवाचचूर्णमिलाय १-२ दिन शुष्कमर्दनकर  
 गरमपानीसे घोटकर १-१ रत्तीकी गोलिएं बनाकर रखोढ़े ।  
 इनमेंसे १-१ गोली त्रिकटुकचूर्णकेसाय देनेसे यह तत्क्षणभाये  
 हुए ज्वरको नष्टकरताहै । १५४ ॥

### २५५ सन्धिवातहररसः

गोदुग्धे गुटिका कार्या चोलगुग्गुलुहिङ्गुलैः ।  
 हरेद्रातव्यायां सर्वसन्धिवातश्च दुःसहम् ॥ १०६६ ॥

रसायनस, वातरीगाधिकारे ।

भाषा—हीरागोल, गुग्गु और शिपेरिक समभागलेकर  
 १-२ दिन गोदुग्धमें मर्दनकर १-१ माशेकी गोलियां बनाकर  
 रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली उन्निवातुपाननेसायदेनेसे यह  
 सन्धिवातको नष्टकरताहै । १५५ ॥

## २५६ सन्धिवातारिरसः ( रत्नगर्भपोटली )

शुद्धं सूतं विपं गन्धं हिह्रुलं कटुरोहिणी ।  
लोहताम्रमयोभस्म तालकश्च मनःशिला ॥ १०६७ ॥  
अर्कमूलरूपायेण मर्दितं घटकीकृतम् ।  
काचकूप्या निवेद्याय लेपयेद्ब्रह्ममृत्तिकां ॥ १०६८ ॥  
त्रियामं बालुकायन्त्रे पचन्मृद्वग्निना ततः ।  
गुञ्जामार्घं प्रयुज्जीत सन्धिवातं निहन्त्यलम् ॥ १०६९ ॥  
व. रा., वै. चि., सन्धिवाते ।

टि०—वैद्यचिन्तामणौ अरमाद्रताम्रक मनःशिला च निष्काल्य  
पितामहरस इति नाम स्थापितम् । तस्याच्च “सन्धिवात निहन्त्यलम्”  
नित्यस्य स्थाने अत्युच्च माशयेज्ज्वरमिति पाठ इत्यनेन सन्धिवात  
शब्देन सन्धिगसन्धिपात विवक्षित इत्यादिति प्रतिपाति । रसस्य तत्तु-  
पानस्य बाल्युपरीक्षादुभयस्यापि नाशो न कापि विप्रतिपत्तिः ।

भाषा—शुद्ध पारा, घटनाम, गन्धक और शिंगरिफ  
कुटकी, कान्तलोह, ताम्र और कोलादभस्म, शुद्ध हरिताल और  
मैनसिल सप्तसमभागलकर नीलवर्णकजलीकर आकरीजङ्गेरससे  
एकदिनमर्दनकर बेरवावरगोलिष्ठ बनाय सुखाकर आतशीशीमीमें  
भरके सुहृदन्दकर बालुकायन्त्रमें रण ३ पहली अग्निदे । इस-  
मेंसे १-१ रती उचितानुपानकेसायदेनेसे यह सन्धिवातको  
दूरकताहे ॥ २५६ ॥

## २५७ सन्धिपातकालानलरसः

यद्धन्तु ताम्रपत्रेण सूतं गन्धकतालकम् ।  
चिपमकं सुवर्णञ्च रसरुं हेममाक्षिकम् ॥ १०७० ॥  
हृशानुतापसङ्घट्टं दिनं तत्रोलकं पुनः ।  
संस्कृत्य मृत्पट्टेर्गाढं बालुकायन्त्रं पचेत् ॥ १०७१ ॥  
त्रिदिनं स्याद्गुणितं पित्तं भाग्यश्च पञ्चभिः ।  
देवेशि सत्यनुव्येन धृपितं हि विपेण च ॥ १०७२ ॥  
अर्द्धगुञ्जामितं खादेत्सन्धिपातं सुदुस्तरम् ।  
शैत्यतन्द्राप्रलापोर्ध्वं सान्द्रवातरुफोत्पणम् ॥ १०७३ ॥  
जयेद्ग्रेष्मे कृशतां ज्यराजीर्णाश्रवानपि ।  
प्रहृष्यदरुदोषाशोऽरचिर्दीर्घव्यपीनसान् ॥ १०७४ ॥  
र. क., सन्धिपातः ।

भाषा—अनलरसकी प्रश्रियासे बांधाहुआ पारा, शुद्ध-  
गन्धक, हरिताल और घटनाम, ताम्र, सुवर्ण, खपरिया और  
चोनामारी इनरीभस्में सब समभागलकर नीलवर्णकजलीकर  
चित्रमूलकरससे एकदिनमर्दनकर गोलाबनाय सारासम्पुटमें  
बन्दकर १-४ कपडमिट्टी लगाय सुखाकर ३ दिन बालुका-  
यन्त्रकी अग्निदेवे । स्वाशरीतल्लोनेपर निष्कालकर पाँचोंपित्तोंसे  
१-१ भावना देकर पट्टेकेभीतरपेटेदकर सबरीषतार बछनाम  
कागुण नीचेकेपेटेमें बिठाय डमकयन्त्र बनाकर ३-४ कपड-  
मिट्टी देकर घटनामसाले पट्टेके चुन्हेपर बनाय इतनी आचद  
कि तमासबछनाम जट्टर धूआं ऊपरके रसमें समादिष्ट होजाय  
स्वाशरीतल्लोनेपर धोतसे निष्काट भाषीआधी रसकी गाडियां  
बनाकर रगटोदे । इनमेंसे १-१ गोली गमय अथवा रोगोचि-

तानुपानवेसाय देनेसे सर्वाङ्गशीत, तन्द्रा और अधिकप्रलापयुक्त  
वातफोत्वणसन्धिपात, मन्दाग्नि, जीर्णज्वर, ग्रहणी, उदररोग,  
शोथ, ववासीर, अरुचि, पीनय इनसबको यह नटकरताहे २५७

## २५८ सन्धिपातकृतान्तकरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं बृहती कण्टकारिका ।  
सक्षौद्रः पेपयेद्यामं शुष्कं तद्भावयेद्द्रव्यैः ॥ १०७५ ॥  
रक्तशालिनिकावासाभृष्टीश्वेतापराजिता- ।  
रुदन्तीविजयाव्राह्मिनिर्गुण्डीचित्रकद्रवैः ॥ १०७६ ॥  
कपिकच्छुक्रमूलैश्च मरिचानां कपायकैः ।  
धन्तूरद्रवकेणैव धूमसारश्च निक्षिपेत् ॥ १०७७ ॥  
रसतुल्यं ततस्तत्र दिनं पित्तैश्च भावयेत् ।  
मात्स्यमाहिपमायूरेज्यांतिप्लत्याश्च तैलकैः ॥ १०७८ ॥  
चणमात्रां यदां कुर्याद्रक्षयेत्सन्धिपातयुक्त ।  
अभावे सति पित्तानां विपमुष्टिन् पट्टणम् ॥ १०७९ ॥  
क्षिपेद्ग्रेष्मस्य तत्सिद्धिरससन्धिपातकृतान्तकः ।  
सेव्यं द्रव्यादनं पच्य घृताभ्यक्तञ्च कारयेत् ॥  
धारा शिरसि दातव्या सर्वाङ्गं शीतले जलेः ॥ १०८० ॥  
र. सु., सू. प्र., र. का, र. क. यो., सन्धिपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, भटकटैया, वनभाटा सब  
समभागकी नीलवर्णकजलीकर मधु, लालगुञ्जा, अङ्गुठा, भपरा,  
सफेदकोयल, रुन्ती, भाग, ब्राह्मि, निर्गुण्डी, चित्रक, वैचाव  
कीजङ्ग, मरिच और धतूरेके यथासमभव स्वरस अथवा हाथोंसे  
१-१ भावना देकर पारकीषतार गृहधूम मिलानर मछली,  
भेंसा और मोरेकेपित्तोंमें १-१ भावना देकर मालकागनीके  
तैलसे घोटकर चनेप्रमाण गोलिया बनाकर रगटोदे । पित्तोंके  
अभावमें पारेसे वङ्गुण शुद्धचिला बाले । इनमेंसे १-१ गोली  
सन्धिपातमें समयोचितानुपानकेसायदेवे । दाहमालमहोनेपर पीस  
अभ्यङ्गराय सिरार उडधानीकी धारा दे तथा खानकरावे ।  
अत्यन्तभूखजगनेपर दहीभातदे ॥ २५८ ॥

## २५९ सन्धिपातगजवालरसः

पूर्ववज्जोषितं सूतं भस्मोभूतं समाहरेत् ।  
सुवर्णं रजतं ताम्रं तौहणं प्रपु च नागकम् ॥ १०८१ ॥  
माक्षीकमम्रकञ्चैव समान्भागान् समाहरेत् ।  
भस्मीकृतांश्च तौहोहाथं रसेन सह मर्दयेत् ॥ १०८२ ॥  
गन्धकं वत्सनामश्च सर्वैः सममुपानयेत् ।  
एकंरुण्याऽयं सप्तं तन्मर्दयेद्द्रव्यैर्द्रव्यैः ॥ १०८३ ॥  
त्रिदिनं कृष्णतुलनांतीरैः सममर्दयेद्द्रव्यैः ।  
कृष्णधन्तूरकद्रवैः क्षाप्य मरिचसम्भवेः ॥ १०८४ ॥  
पिप्लुत्यैश्च शुण्ठीजैर्भाजयेद्द्रव्यैः पञ्जस्तथा ।  
भृङ्गाद्रोक्तमुनिजैः पिपलीकासजै रमैः ॥ १०८५ ॥  
तिलपर्णारंरसतद्गुप्तपर्णासफिरिलेतथा ।  
यन्निरोधे मण्डूङ्गरसैर्गन्धैः पयजेः ॥ १०८६ ॥

भृङ्गीरसैः प्रमद्यांश्च पश्चात्पित्तैश्च भावयेत् ।  
 मधुरमीनवाराहच्छागमाहिपसम्भवैः ॥ १०८७ ॥  
 धूमपानं ततः कुर्यात्पूर्वांकिविधियोगतः ।  
 गुञ्जाप्रमाणवटिकाः कर्तव्याखिकटोरसैः ॥ १०८८ ॥  
 त्रिकटुकाथयोगेन रसेन्द्रं सम्प्रयोजयेत् ।  
 अनुपाने प्रदातव्यखिकटो रस एव हि ॥ १०८९ ॥  
 पार्थांसि ढालयेत्तत्र सुशीतानि बह्वन्यपि ।  
 ततः पथ्यं प्रदातव्यं मुद्रकायेन संयुतम् ॥ १०९० ॥  
 उपचारस्तु पूर्वाक्तः कर्तव्यो नाऽत्र संशयः ।  
 शीतद्रव्यं भवेद्दीप्यं पित्तबद्धरसोत्तमम् ॥  
 सन्निपातगजान्धालो रसेन्द्रः परिकीर्तितः ॥ १०९१ ॥  
 रसालं, सन्निपाते ।

भाषा—ऊर्जुपातनादिसंस्कारकर अस्मकियाहुआ पाया, सुवर्णं, रजत, ताम्र, फोलाद, वस्त्र, नाग, सोनामाखी, अन्नक इनकीभस्मे सव समभागलेनर शुद्धगन्धक और बछनाग सबकी बराबर बराबर मिलाय बारीकचूर्णकर अदरककेरससे ३ दिन मर्दनकर कालीतुलसी, धतूरा, मरिच, पीपल, सोंठ, मंगरा, लालअगस्त्य, पीपल, दुखुर, अम्लोनिर्वा, चित्रक, ब्राह्मी, आकरोकेपेले, भांग इनके यथासम्भव स्वरस अथवा बायोले १-१ भावना देनर मोर, मछली, चुअर, बकरा, भेडा इनके पित्तोसे १-१ भावना देवे । फिर मिश्रीकीहडीमें इसका लेप देकर दूसरीहडीमें बराबरकेबछनागकाचूर्णविछाडर उमरुयन्त्र-बनाय चूल्हेपर बछनागबाली हडीको रख इतनीआचदे कि बछनाग जलकर तमाम धूआ रसमें समाविष्टहोगाय । स्वाहशीतल-होनेपर त्रिकटुकेबायसे मर्दनकर १-१ रसीकी मोलिया बका-कर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली त्रिकटुके बायकेसायदेनेसे यह सन्निपातनो नष्टकरताहै । अलन्तगमीलानेपर ठडेजलजी-धारादे । सूखलानेपर मूककायुप और भातदे । शीतजलसे पित्त-शुकरसोंमें तेशी आतीहै इसलिये तमाम शीतोपचार करे । इनके सेवनसे सन्निपात नष्टहोताहै ॥ २५९ ॥

## २६० सन्निपातगजाङ्गुशरसः

मृत्तं मृत्तं मृत्तञ्चाग्रं शुद्धतालकमाक्षिके ।  
 रामठं तुल्यतुल्यं स्थान्मर्दरेत्त्वल्यके द्वयैः ॥ १०९२ ॥  
 धन्यापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिम्यचित्रकैः ।  
 धन्तरलाङ्गुलीपाठाभृङ्गीजम्बीरजै द्वयैः ॥ १०९३ ॥  
 त्रिदिनं मर्दयेदमिच्छर्णं कृत्वा विमिश्रयेत् ।  
 विशारं सेन्ययं व्यापं विपं मधुकसारकम् ॥ १०९४ ॥  
 तुल्यं तुल्यं विबुर्ण्याथ पूर्वांक्तञ्च रसं समम् ।  
 पक्कीकृत्य भवेत्सिद्धः सन्निपातगजाङ्गुशः ॥  
 सन्निपातं निहत्याशु गुञ्जामात्रः प्रयोजितः ॥ १०९५ ॥  
 र छु., र.र.स, र क यो, र र, नि र., र.को.र.का., सु-  
 प्र., सन्निपाते ।

टि०—रसरत्नाकरे माक्षिकरूपाने सात्र निभोजिअ । र छु, र.क यो एतयो दिङ्मरुपाने दिङ्मरु निभोजिअ ततु न मन्वक । मन्व राम-

ठलैर्योषल्ये । शुद्धपारदस्वागमनाच निर्गुण्डीसुगन्धानिम्यचित्रकैरि-  
 त्वत्र रसरत्नाकरे शुष्कीगन्धाक्षिकैरिति पाठो दृश्यते तत्र गन्धादि-  
 द्रव्येन फागली (मराठी) माहा यमहाराष्ट्रदेशे कुर्वाख्यग्रन्थविषे प्रमु-  
 ज्यते । यत्र तदभावस्तत्र कुकुरीभेति प्रसिद्धमौषधं योज्यम् । केचित्  
 मन्वदेशे गेन्द्रातोतिनाम्ना प्रसिद्धत्वाद्रूपकारिणं शृण्वन्ति, ततु न मन्वक !  
 ततोक्तद्रव्यस्यामावात्तत्तत्तैर्नैव गन्धालीनि द्रव्यप्रयोगात्सन्निपातद्व-  
 णाऽसमर्थत्वात् । रसाकर्तृव्ययोगे वातस्वरगजाङ्गुशान्ना “रत्नालक-  
 तायाभ्रलक्ष्मीवहिरामाङ्गु । यथापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिम्यपतनम् ॥  
 पाठाविद्धसुखसैलाबोलधत्ततण्डुलान् । भृङ्गीमधुकसारञ्च जम्बीरान्मेन  
 पेयेत् ॥ कुर्वाख्यकामनेन वटिका सन्निच्यति । सत्वेरदाहाग्निनाम  
 वातस्वरगजाङ्गुशः ॥” इत्येक पाठो निहितोऽस्ति । र.र.स, र क, र  
 क यो. एषु सन्निपातगजाङ्गुशान्ना “रत्नाभ्रकामाभ्रं लाङ्गुलीवहि-  
 रायम् ॥ कन्यापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिम्यपतनम् ॥ पाठा शारव  
 स्वेदगोष्पचतुरतण्डुले । श्दमीमधुकसारान् जम्बीरान्मेन मर्दयेत् ॥  
 कुर्वाक्षि मापमानेन वटिका सा निच्यति । सत्वेरदाहाग्निनाम सन्नि-  
 पातगजाङ्गुशः ॥” इति द्वितीय. पाठो निहितोऽस्ति । अन्तर्देशेरोरि  
 “श्वत मृत्तं मृत्तं चाग्रं शुद्धतालकमाक्षिके-” इत्यादिपरिनिर्देशः पाठ एव  
 मूल प्रतीयते वटुप्रत्यसत्त्वादात् । रत्नाकर्तृव्ययोगात्तु अजान्म-  
 मोक्षितु पाठद्वयं चारणाङ्गिभौ प्रतीयतां । साधनैकदशाया मरागमि  
 उदिरातुला भवति यत्कन्वो यौग सत्पादनीय इति । अकिन्तु न  
 तद्वानिनिमित्तम्यायमश्रीकृत्य योगव्यपनिर्दिष्टानि मूलद्रव्याण्येकैकं स्व  
 निर्गन्धानामिदं विमान्य एक एव रस सन्पादनीय इति विशे तु विचरि ।  
 स यथा—मृताभ्रनामरसमिति मन्वमाक्षिकालाङ्गुलीवहिरासत्तैरिति वि  
 सुशुद्धानि बहिरामगन्धापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिन्वरत्नादिविषमु-  
 लैलायैकैकैश्वर्यमात्रमिदानीमभ्युपगम्योपव्याख्येयं कर्तव्यं भवेति  
 द्रव्याप्येकं सन्निप्य कन्यापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिम्यचित्रकलक्ष्मी-  
 लाङ्गुलीपाठाभृङ्गीमधुकसारान् जम्बीरान्मेन मर्दयेत् ॥ इति ॥  
 एकेका भावना मरागान्मेन जम्बीरान्मेन विदिन दिनं शुभप्रत्य-वधि ।  
 विषय सवारोगमनुपान विमन्य प्रये इति सर्वं सन्मय पविष्ये ।

भाषा—पारद और अन्नकभस्म, शुद्ध हरिजल, लोका  
 माखी, हींग सवयमभागलेकर बारीकचूर्णकर ब्रह्मपेक्षा क-  
 वल, निर्गुण्डो, फागली ( मराठी ) भभावने कुदरेण, लौक-  
 कीछाल, चित्रकोजक, धतूरा, बरिहारी, वटा, मंग, मन्दी  
 इनके रसोंसे ३-३ दिननदरकर तीनचर, सैन्ध, मित्र,  
 शुद्धबछनाग, मरुदकायार, सवयमनचरेष्ट इतलके भाग  
 मिलाकर १-२ दिन पोटकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ लूई  
 समय अथवा रोगोक्तितुल्यपानकेबायदेने इत सम्पत्की  
 पाठोको नष्टरखावे ॥ २६० ॥

## २६१ सन्निपातदावानलरसः (प्रतः)

तालकं नागवद्धे द्वे हरिबीर्यं शुद्धम् ।  
 विशारं पञ्चलवर्णं मरुतं पार्थी सिला ॥ १०९६ ॥  
 एतानि समभागानि निम्बुनीले मर्दयेत् ।  
 पाचितं वायुकायने दिनेकं वीजवह्निना ॥ १०९७ ॥  
 स्वाहशीतलमुद्रय दिशिचक्षुः पाहिर्गिरिः ।  
 मायितं मापमात्रं दाम्प्यं दोषनामम् ॥ १०९८ ॥  
 सन्निपाताविहत्याशु दाम्प्यं पथ्यमाचरेत् ।  
 दावानलरसः स्वातो बर्हिश्चैव प्रसिद्धः ॥ १०९९ ॥  
 ई रि, वृत्तिते ।



**भाषा—**शुद्धहरिताल, नाग और वज्रमसम्, शुद्ध पारा और सुहागा, सीतोंसार, पांचोंनमक, सर्पविष, शुद्ध गन्धक और मैन्सिल सब समभागलेकर हरिताल, पारा, गन्धक और मैन्सिलकी नीलवर्णकजलीकर अन्यमवचीनोंको मिलाकर नीचके-रससे १-२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपड़मिठीदेकर अच्छीतरहसुखनेपर बालकायन्त्रमें बन्दकर ४ पहरकी बड़ीआंचदे । स्वाहशीतलहोनेपर मोर, बरुआ और सापके पित्तोंसे १-१ भावना देकर उड़दबगर गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपातकेसाथदेनेसे यह तमामसन्निपातोंको नष्टकरताहै । मूर्च्छाजगनेपर अन्यन्त मूलत्वे तो दहीभात खानेको देखे ॥ २६१ ॥

### २६२ सन्निपातदावानलरसः ( द्वितीयः )

मनःशिलास्सी तुल्यौ मर्दनीयौ गवां जलेः ।  
ततस्तु गोलकीकृत्य शोषयित्वा खरातपे ॥ ११०० ॥  
गोपाययित्वा तात्रेण सन्धियन्धं विधाय च ।  
घालुकायन्त्रसम्पकमहोरात्रात्समुद्धरेत् ॥ ११०१ ॥  
अष्टमांशं तत्र योज्यं जातोफलकणाधिपम् ।  
मत्स्यमाहिषचाराहमयूरच्छागसम्भवेः ॥ ११०२ ॥  
पित्तैस्तु सप्तधा भाग्यं दृङ्गणं तत्र निक्षिपेत् ।  
सन्निपाते महाघोरे दद्यात् प्रच्छन्नादिभिः ॥  
ग्रोहिमात्रप्रयोगेण सन्निपातविनाशनः ॥ ११०३ ॥

र. क. यो. सन्निपाते ।

**भाषा—**शुद्ध मैन्सिल और पारा समभागलेकर गोमूत्रमें २-३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय कड़ीधूपमें सुखाकर तावेके-सम्पुटमें बन्दकर वज्रमिठीसे सन्धियन्धकर ६-७ कपड़मिठी देकर सुखनेपर बालकायन्त्रमें ८ पहरकी बड़ी आंचदे । स्वाह-शीतलहोनेपर निकालकर जितनी तावेकीमसमहोगईहो उतनी इन्दी मिलाय जायफल, पीपल और शुद्धजन्ताय अष्टमांश मिलाकर मछली, भैंसा, सूअर, मोर और पक्षकेपित्तोंसे ७-७ भावना देकर दद्यात् मुनासुहागा मिलाकर रखछोड़े । इधमेंसे यवप्रमाणमात्रा सन्निपातमूर्च्छासे ताड़में पाछलगाय रकमें थोड़ीदेर मजलनेसे मूर्च्छा निवृत्तहोतीहै ॥ २६२ ॥

### २६३ सन्निपातभैरवरसः ( प्रथम )

ताम्रं गन्धं रसं श्वेतगुलामरिचपूतनाः ।  
समीनपित्तजिपलांस्तुल्यानेकर मर्दयेत् ॥ ११०४ ॥  
युग्मगुलामप्रमाणान्तु नवज्वरहरं परम् ।  
ज्वराद्गुशः सन्निपातभैरवोऽयं प्रकाशितः ॥ ११०५ ॥

र. रा. र. च. र. म. रसायनम्, ना वि. र. का. र. सु. सन्निपाते । र. सु. ज्वराद्गुश इति नाम ।

**भाषा—**गोमसम्, शुद्धगन्धक और पारा, सफेदगुआ, मरिच, वष अथवा जटामांजी, मछलीछापित्त, शुद्धनमाल्मोटा सब समभाग लेकर बारीकपूँछकर पोरकण्डकी नीलवर्णकजली में मिलाय मछलीकेपित्तकी भावना देकर २-२ रतीकी

गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानु-पातकेसाथ देनेसे यह सन्निपात और नवज्वरको नष्टकरताहै ॥ २६३ ॥

### २६४ सन्निपातभैरवरसः ( द्वितीयः )

रसो गन्धस्त्रिकर्षां कुर्यात्कज्जलिकां द्वयोः ।  
ताराम्रताम्रवङ्गाहिसाराश्चैकैकरार्पिकाः ॥ ११०६ ॥  
शिग्रुज्वालामुखीशुण्ठीविवेकस्तण्डुलीयमात् ।  
प्रत्येकस्वरसेः कुर्याद्यामैकैकं विमर्दयेत् ॥ ११०७ ॥  
कृत्वा गोलं वृत्तं वस्त्रे लवणापूरिते न्यसेत् ।  
काचमाण्डेऽथवा स्थात्यां काचरूपी निवेशयेत् ११०८ ॥  
वालुकाभिः प्रपूरयाय वृष्टिर्यामद्वयं भवेत् ।  
तत उद्धृत्य तं गोलं चूर्णयित्वा विमिश्रयेत् ॥ ११०९ ॥  
प्रवालचूर्णकर्षेण शाणमात्रविषेण च ।  
कृष्णसर्पस्य गरले दिवसं भाग्येत्तथा ॥ १११० ॥  
तगरं मुशली मांसी हेमाह्वा पेतसः कणा ।  
नीलिनी पत्रकं चैला चित्रकश्च कुठेरकः ॥ ११११ ॥  
शतपुष्पा देवदाली धत्तुरागस्त्यमुण्डिकाः ।  
मधूकजातिमदनरा रसेरपां विमर्दयेत् ॥ १११२ ॥  
प्रत्येकमेकवेलेऽथ ततः संशोष्य धारयेत् ।  
बीजपूराद्रकद्रावै र्मरिचैः पोडशोष्मितैः ॥ १११३ ॥  
रसो द्विगुलाम्रमितः सन्निपाते च दीयते ।  
प्रसिद्धोऽयं रसो नाम्ना सन्निपातस्य भैरवः ॥ १११४ ॥  
रा स, र प्र, यो. र., नि र. ३. यो. त, रसायनम्, र. का., रि, सन्निपाते ।

दि०—शुद्धगोलहृष्यां अर्धेवराहभावेन विप्रेयोगात्स विषम-कंशप्रमिति दत्तमिति विशेष । त्रिशरा सन्निपातहर इति नाम ।

**भाषा—**शुद्ध पारा और गन्धक ३-३ कर्षे, चांदी, अज्रक, ताम्र, वज्र, नाग और फोलाद इन्की भस्में १-१ कर्षलेख पोरगन्धकरी नीलवर्णकजलीमें मिलाय सहिजन, डुरुर अथवा सूर्यसुषी, सोंठ, बेल, कड़वालीचौलाई इनप्रत्येककेस्वभावोंमें १-१ पहर मर्दनकर गोला बनाय मलमलेने कपड़ेमें लपेट शराव-सम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपड़मिठी देकर सुखनेपर स्रगयवधमें बन्दकर दोपहकी आंचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर प्रवालमद्वय १ कर्षे, शुद्धरज्जुनाय ४ मांशे मिलाकर कालगर्तके जहरसे १ दिन मर्दनकर तगर, मुशली, जटामांजी, सन्तानाजी अथवा रेवनचीनी, बेन, पीपल, नील, पत्रक, इलायची, निमर, जंगलीतुलसी, सोंफ, बन्दाल, चूरा, अगस्त्य, गोरसमुदी, महुआ, जावित्री, मैन्सिल इन प्रत्येकके यथागम्भवत्प्रम अथवा काथोंसे १-१ भावना देकर २-२ रतीकी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली यिनों और ज्वरसेहेरा तथा १६ कालीयिचौड़े चूर्णकेसाथ देनेसे यह समस्तपित्तगतोंको नष्टकरताहै ॥ २६४ ॥

### २६५ सन्निपातभैरवरसः ( तृतीयः )

विपं गन्धं ताम्रमसम् स्तोमलञ्च समानयन् ।  
पारदं सर्वतुल्यं स्थालत्रया धरत्ये तु कज्जलीम् ॥ १११५ ॥

निर्गुण्डीसुरसाद्रव्ये भावयित्वाऽऽर्द्रकद्रवैः ।  
तिलमात्रा वटी देया सन्निपातादिरोगजित् ॥१११६॥  
र. चं., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध बज्जनाग, गन्धक और सोमल, ताम्रमस्य सम-  
भाग, शुद्धपारा सबकीबराबर लेकर नीलवर्णकज्जलीकर निर्गुण्डी,  
तुलसी और अदरकके रसोंकी १-१ भावना देकर तिलप्रमाण  
गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानु-  
पानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातादि समस्त रोगोंको दूरकरताहै ॥ २६५

२६६ सन्निपातभैरवरसः ( चतुर्थः )

अष्टलोहमसिताष्टभागकम्  
सूतगन्धधनभागमिश्रितम् ।  
घट्टिनीरमृदितं दिनमेकं  
पोडशांशविपमायुभावितम् ॥ १११७ ॥  
गौजिकं सुमरिचाम्रिनीरयु-  
क्त्सन्निपातहृत्भैरवो रसः ।  
स्याद्रथोद्धत इयाम्बुस्तमः  
शोपितादिसुज्वये तथा हिमः ॥ १११८ ॥

र. शि., व. रा., र. क. यो., सन्निपाते ।

टि०—व. रा., र. क. यो. पतयोरभिवृत्तमारुगान्के रसो निदि-  
तोऽस्ति तत्रार्कमूलभावनां प्रत्यय बाहुल्यार्थं स्वस्वपाकं कृतोऽस्ति ।  
विषमशेषो मायुभावना च नास्त्यतच्छ्रुतिं पादोऽस्ति तस्याऽन्याऽन्त-  
र्भावी बोध्य, अत्राऽपि पाककरणे क्षयभावः ।

भाषा—आठों लोहोंकीमसमें शुद्ध पारा, गन्धक और  
अम्रकमस्य १-१ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर चित्रककेस्वरस  
अथवा ज्ञापमें एकदिन मर्दनकर पोडशांश शुद्धबज्जनाग मिलाकर  
पाचोंपितोंकी १-१ भावनादेकर १-१ रसीकी गोलियां बनाकर  
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली १४ अथवा २१ कालीमिर्चोंके-  
साथ देकर चित्रकाकाय पिलानेसे अरुणोदयसे अंधेरेकीतरह  
सन्निपात नष्टहोताहै ॥ २६६ ॥

२६७ सन्निपातभैरवरसः ( पञ्चमः )

क्ष्वेदं व्योषं तपनद्रव्यं भागवृद्धया प्रदेयं,  
छत्वा क्षोदं विमलमखिलं योजयेद्बलमात्रम् ।  
आर्द्रांस्तोयाज्ज्वरहरणकृत् सन्निपातेषु पथ्यं,  
भक्तं दध्ना फलकृतियुतं मेरुवाक्यो रसोऽयम् ॥ १११९ ॥  
र. शि., सन्निपाते ।

भाषा—कड़वीतरोई, त्रिफळ, ताम्रमस्य और शुद्धशिंगरिफ  
क्रमवृद्धभागसे लेकर बारीकपूणैर वज्जलीतरोईरससे एकदिन  
मर्दनकर २-३ रसीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली अदरककेरसकेसाथ देनेसे समस्तसन्निपात नष्टहो-  
तेहैं । अत्यन्तमूल्य लानेपर औचित्य देखकर दहीभात देना ॥

२६८ सन्निपातभैरवरसः ( षष्ठः )

व्योषं घचाऽभयाक्षेयं विडङ्गं सैन्धवं रसम् ।  
गन्धकं हरितालञ्च निर्गुण्डीरसमर्दितम् ॥ ११२० ॥

६१

मत्स्यमाहिपवाराहच्छागपित्तैश्च भावयेत् ।  
श्रीहिमाचप्रयोगेण सन्निपातस्य भैरवः ॥ ११२१ ॥  
र. क. यो., सन्निपाते ।

भाषा—त्रिफळ, वच, हरे, कड़वीतरोई, विडङ्ग, संधानमक,  
शुद्ध पारा, गन्धक और हरिताल समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर  
निर्गुण्डीरससे एकदिन मर्दनकर मछली, भैंसा, सूअर और  
ककरोके पित्तोंसे १-१ भावना देकर यवप्रमाण गोलियां बनाकर  
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह  
समस्तसन्निपातोंको नष्टकरताहै ॥ २६८ ॥

२६९ सन्निपातभैरवरसः ( सप्तमः )

सूतं गन्धं लोहकिटं विमर्गं  
सर्वैस्तुल्यं यत्सनाभं नियुज्यात् ।  
आर्द्रं भृङ्गं यीजपूरज्यन्ती  
निर्गुण्डीका व्यस्तताजैर्द्रवैश्च ॥ ११२२ ॥  
युफ्तया वटथो भावयित्वा विधेया  
गुञ्जाऽर्द्रादं सन्निपातस्य मूलम् ।  
शीतैर्वातैर्निर्मलस्नानमग्न  
पथ्यं दुग्धं शर्करामियुतञ्च ॥ ११२३ ॥  
रत्नानसं., चि. सा., नि. र., यो. र., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, मण्डूरमस्य समभागलेकर  
नीलवर्णकज्जलीकर सबकीबराबर शुद्धबज्जनाग मिलाकर अदरक,  
भंगरा, बिजोरा, तिली और निर्गुण्डीकेस्वरसोंसे १-१ दिन  
मर्दनकर २-२ चावलभर गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१  
गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त-  
सन्निपातोंको नष्टकरताहै । अत्यन्तगर्मी माखमहीनेपर पत्थरी  
हवाकरे और खानकरावे । भूख लानेपर शर्करामिलाहुवा दूधदेवे ॥

२७० सन्निपातभैरवरसः ( अष्टमः )

तालकं गन्धकं सूतं यत्सनाभं त्रिभिः समम् ।  
शिलाञ्च दहूणञ्चैव सर्वेषां समहिङ्गुलम् ॥ ११२४ ॥  
मर्दयेच्चित्रकज्जलीरसैराद्रस्य च व्यहम् ।  
शुटिकां भाषमात्रां स्यात्सन्निपातस्य भैरवः ॥ ११२५ ॥  
विद्रोपोत्थमतीसारकफपाण्डूमायादिकान् ।  
कुशिरोगमुदावर्तं सन्निपातं नियच्छति ॥ ११२६ ॥

रत्नानसं., वा., र. क. यो., वै. चि., भै. र., र. घु., व. रा.,  
सन्निपाते ।

टि०—वै. र., र. घु., व. रा., एषु शिलाञ्च दहूणञ्चैवेत्यस्य स्थाने  
शस्त्रमूषाञ्च कलमिसिपथ विषयैव योगान्तरं स्यादिति परन्तु तद्व्य-  
वसाधिक्रियाऽप्यत्र नियमे कृत्वा रसनिपातने न बाधति श्रुतिं प्रत्युत  
विशिलेख्यैव सम्पत्त्यने सा चाऽन्यैवमेवास्ति ।

भाषा—शुद्ध हरिताल, गन्धक और पारा १-१ भाग,  
शुद्ध बज्जनाग, मैनसिल और मुद्गाभा ३-३ भाग, शुद्धशिंगरिफ  
१२ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर चित्रक और जंगी-  
रीरससे २-२ दिन मर्दनकर उड़द्वरावर गोलियां बनाकर  
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानु-

पानकेसाय देनेसे सन्निपात, त्रिदोषत्रयवित्तार, कफरोग, पाण्डु, कुक्षिरोग, उदावर्त, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २७० ॥

### २७१ सन्निपातभैरवरसः ( नवमः )

अथाप्यं सम्प्रवक्ष्यामि भैरवं सन्निपातिनाम् ।  
दरुं शुद्धसूतञ्च काञ्चनं लोहमस्मकम् ॥ ११२७ ॥  
ताम्रभस्माऽध्रकञ्चैव त्र्यु सीसं तथैव च ।  
मौक्तिकं चिद्रुमं ताप्यं कटुष्टालं मनःशिला ॥ ११२८ ॥  
हृद्वात्री चित्रकं व्योषं त्रिफलेन्द्रजराभटम् ।  
सुतार्द्धममृतं शुद्धं गन्धकञ्च चतुर्गुणम् ॥ ११२९ ॥  
एकीकृत्य ततः सर्वं भावयेदातपे खरे ।  
व्योपाग्निशिष्टेषुसुरात्रिफलाभृङ्गदन्तिजैः ॥ ११३० ॥  
निशेऽश्वगन्धागायत्रीकुष्ठप्यायेश्च सप्तधा ।  
भावयेत्पञ्चपित्तस्तु त्रिदोषभैरवो रसः ॥ ११३१ ॥  
भृङ्गवेराऽग्निनिरेण गुञ्जा सैन्धवसंयुता ।  
प्रयोदशसन्निपातान्कासश्वासापतानकान् ॥ ११३२ ॥  
शूलाऽपस्मारसम्भोहतन्द्राऽऽघ्मानवमिक्त्रिमीन् ।  
घातश्लेष्मोद्वाघोघाजयेत्सर्वांस्तुदुस्तरान् ॥ ११३३ ॥  
जलयोगादि चाहैस्य युक्त्या कुर्याच्च पूर्ववत् ।  
अहो गैरलयोगेन सूच्यग्रेण प्रयोजयेत् ॥ ११३४ ॥

र. घं., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ और पारा, सुवर्ण, लोह, ताम्र, अभ्रक, वज्र, नाग, मोती, प्रवाल, सोनामाखी, सुर्दास्य, हरिताल, मैगसिल, अम्लोनियां, चित्रक, त्रिकटु, त्रिफला, इन्द्रजव, शुनीहीण १-१ भाग, शुद्धवज्राग भाषामाग, शुद्धगन्धक ४ भाग लेकर नीलवर्णकजलीकर त्रिकटु, चित्रक, सहजिन, तुलसी, त्रिफला, भंगरा, दन्तीमूल, हल्दी, असगन्ध, खैर, कुष्ठ, इन-प्रत्येकके बराबरसम्बरसे अथवा भाषोंसे ७-७, और पाँचों-पित्तोंसे १-१ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोखिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली संधेनमक और अदरखकेरसके-साथ देनेसे १३ प्रकारकेसन्निपात, कास, श्वास, खींचतान, घृल, अपस्मार, वैद्योशी, तन्द्रा, आघ्मान, वमन, क्रिमि, घातश्लेष्मजरोग इनसबको यह नष्टकरताहै । इसकेदेनेसे सूख्खी ॥ जंगे तो सर्पके विषमें शिलाहर, सूचीकेअममागसे अस्तकपर रक्तमयोगकरे और योग्यता देखकर जलकीपारादेवे ॥ २७१ ॥

### २७२ सन्निपातभैरवरसः ( दशमः )

हिङ्गुलस्य विद्रुदस्य सार्द्धतोलचतुष्टयम् ।  
गन्धकस्य चिपस्याऽपि प्रत्येकं तोलकद्वयम् ॥ ११३५ ॥  
समापकद्वयश्चैव कनकात्तोलकत्रयम् ।  
मापेकाधिकतोलैः टङ्गुणस्य तथैव च ॥ ११३६ ॥  
सम्प्रदां जम्बीररसे घटीश्छायाविशोपिताः ।  
गुञ्जकपरिमाणस्तु कारयेत्कुशलो भिषक् ॥ ११३७ ॥  
एकान्तु भक्षयेत्तस्य गोलयित्वाऽऽध्रकद्रवैः ।  
घोरं त्रिदोषं दातव्यः सन्निपातस्य भैरवः ॥ ११३८ ॥  
अ. ट., ट. घ., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ ४॥ तोले, शुद्ध गन्धक और घट-नाप २-२ तो., सुवर्णमस ३ तोले २ मासे, सुहागा १ तो. १ भाषा लेकर बारीकचूर्णकर जम्बीरीकेरससे १-२ दिनमईन-कर १-१ रत्तीकी गोखिये बनाय छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे घोरसन्निपात नष्टहोताहै ॥ २७२ ॥

### २७३ सन्निपातभैरवरसः ( एकादशः )

तोलकांश्चतुरः सूतादष्टौ गन्धात्तथैव च ।  
खल्वयेदेकतः कृत्वा जायते कज्जली यथा ॥ ११३९ ॥  
मर्दयेत्कज्जलीं तां मु मुण्डीद्रावैस्ततः परम् ।  
शुण्ठीद्रावैर्द्विधा भाव्यं कज्जलीं शोषयेत्ततः ॥ ११४० ॥  
चतस्रो भावना देया भृङ्गराजरसैस्तथा ।  
तिलच्छदारसे द्रवैस्तद्वाहस्तुकभावना ॥ ११४१ ॥  
कृष्णाशिवाविडङ्गानि मरिचानि तथैव च ।  
एतान्यर्थपलानि स्युः प्रत्येकं कल्पयेत्ततः ॥ ११४२ ॥  
शुण्ठ्याः पलं तथा ताम्रान्मुतास्तद्वत्प्रकल्पयेत् ।  
तोलमेकं विषं प्राहां कर्पकं कृष्णजीरकात् ॥ ११४३ ॥  
एतत्सर्वं समं कृत्वा मर्दयेत्कज्जलीयुतम् ।  
भृङ्गराजस्य तोयेन कृत्वां कलकीभवेद्यथा ॥ ११४४ ॥  
क्षिप्रमाण्डे गतं कर्कटं ततस्तं विपचेन्निरपक्व ।  
सृष्टुपाको भवेद्यावत्तावत्पाकं प्रयोजयेत् ॥ ११४५ ॥  
कार्या सोष्णस्य कल्कस्य घटी चणकसम्मिता ।  
सन्निपाते त्रिदोषे च कुष्ठरोगे विशेषतः ॥ ११४६ ॥  
वटिका भिषजा देया चित्रकाद्रकसेन्धवैः ।  
कुष्ठे त्रिभिः फलैर्देया वटिका रोगनाशिनी ॥ ११४७ ॥

र. घ., सन्निपाते ।

भाषा—४ तोले शुद्ध पारे और ८ तोले गन्धककी नीलवर्ण-कजलीकर गोरसमुण्डी और सोंठकेवरस अथवा कापोंसे २-२ भावनाएँ देकर सुखादे फिर भंगरा, बुरहुर और बघुरके खल्लों-की ४-४ भावनाएँ देकर सुखाकर पीपल, हँरे, विडङ्ग और मरिच २-२ कर्प, सोंठ और ताम्रमस ४-४ कर्प, शुद्धवज्राग और कालीजीरी १-१ कर्प लेकर बारीकचूर्णकर कजलीमें मिलाय भंगरे-केरससे बल्बबनावे और चिकनेवर्तनमें रत बहुत मन्दआँवसे सृष्टुपाककरे गोली बंधनेलायक होनेपर उतारकर चनेप्रमाणगोखिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली चित्रक तथा अदरखके रस और सैन्धव केसाथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै । कुष्ठमें त्रिफलाकेजाखेसाथदेवे ॥ २७३ ॥

### २७४ सन्निपातभैरवरसः ( द्वादशः )

रसं विषं गन्धकञ्च हरितालं फलत्रयम् ।  
जयपाटं त्रिवृत्स्वर्णं ताम्रसीसाभ्रलोहकम् ॥ ११४८ ॥  
अर्कक्षीरं लाङ्गली च स्वर्णक्षीरीजमेव च ।  
रसीपासं सप्तहृत्यः प्रत्येकञ्च विमर्दयेत् ॥ ११४९ ॥  
अर्कः श्वेताऽलम्बुषा च सर्पावर्तश्च कारयौ ।  
काकजह्रा शोणकश्च कुष्ठं व्योषं विकटूतम् ॥ ११५० ॥

सूर्या मुनिश्चन्द्रकान्तो निर्गुणोद्गी रज्ज्वा जटा ।  
धुस्तरदन्तिपिप्पल्यो दशाष्टाङ्गमिदं शुभम् ॥ ११५१ ॥  
रसतुल्यं प्रदातव्यं दत्त्वा तोयं चतुर्गुणम् ।  
शिष्टैरुगुणतोयेन भावनाविधिरिष्यते ॥ ११५२ ॥  
भावनायां भावनायां शोषणं मुहुरिष्यते ।  
ततश्च वटिकां कृत्वा भैरवाय यत्नं ददेत् ॥ ११५३ ॥  
रसोऽयं श्रीसन्निपातभैरवो ज्वरनाशनः ।  
सर्वोपद्रवसंयुक्तं ज्वरं हन्ति न संशयः ॥ ११५४ ॥  
सन्निपातज्वरं हन्ति जीर्णञ्च विषमं तथा ।  
पेकाहिकं द्रव्याहिकञ्च चतुर्थिकमपि ध्रुवम् ॥ ११५५ ॥  
ज्वरञ्च जलदोषोत्थं सर्वदोषसमाकुलम् ।  
भैरवस्य प्रसादेन जगदानन्ददायकः ॥ ११५६ ॥  
भै. र. र. सु. सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग, मन्थक और हरिताल, त्रिकला, जमालगोदा, निसोत, सुवर्ण, ताम्र, सीसा, अभ्रक और लोह इनकी भस्मे १-१ भाग लेकर नीलवर्णकजलीकर आक्का-  
द्वय, करिहारी, सत्यानाशी अथवा देवनचीनी इनप्रत्येक-  
के द्रव्ये ७-७ भावनाएँ देवे । फिर आक, वच, मोरखमुण्डी,  
हुरुर अथवा सूर्यमुखी, कारवी ( मराठी ), काकजह्वा, काल-  
पुनर्नवा, कुड, त्रिकुट, काटी, इन्द्रायण, अमस्त्य, कहरवा,  
निर्गुण्डी, खजटा, घट्टरा, इन्दी, पीपल १-१ भागलेवर  
जवडुकर चौगुनेनामी के पाक चतुर्थीसायसेष रहनेपर छानकर  
इससे पूर्वसको मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलियें बनाकर रख  
छोड़े । फिर भैरवको बलिदेकर इनमेंसे १-१ गोली समय  
अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सर्वोपद्रवयुक्तमनिपात,  
जीर्णज्वर, एकाहिकादि विषमज्वर, जलदोषज्वर, इनसबको  
यह नष्टकरताहै ॥ २७४ ॥

### २७५ सन्निपातभैरवरसः ( त्रयोदशः )

टङ्कणं भर्जितं शुद्धं मरिचं रसकं समम् ।  
टङ्कणार्द्धं विपं दत्त्वा गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ॥  
प्रातः सायं सन्निपातज्वरं हन्ति न संशयः ॥ ११५७ ॥  
र. वि. सन्निपाते ।

भाषा—मुनाहड़गा, मरिच, शुद्धसपरिया १-१ भाग,  
शुद्ध बछनाग आधाभाग लेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे  
१-१ रत्ती सुवह्नाम उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह सन्निपातको  
नष्टकरताहै ॥ २७५ ॥

### २७६ सन्निपातभैरवरसः ( चतुर्दशः )

मस्मीकृतं शुद्धसूतं पूर्वाङ्कपरिपाटितः ।  
पलमेकं रसः सः स्याच्छुद्धं बलिवसापलम् ॥ ११५८ ॥  
पलन्तु दरदस्फोटं शुद्धस्य तु विधानतः ।  
एतत्वे हृत्कोमयं मयं शुष्कमर्दनयोगतः ॥ ११५९ ॥  
दिनप्रयं प्रमद्याथ ततस्त्रिकटुभाषणाः ।  
सप्तद्वयो मातुलोत्थे भृङ्गीनीरिधे भावनाः ॥ ११६० ॥

विषस्य भावनाः सप्त दत्त्वा कल्कं समुद्धरेत् ।  
संशुद्धं सम्पुटं ग्राह्यमुद्धभाषणे विलेपयेत् ॥ ११६१ ॥  
व्योपधनूरविजयानीरेः कल्कीकृतं ततः ।  
अधोभाषणे विनिक्षिप्य वत्सनामं विचूर्णितम् ॥ ११६२ ॥  
पलमात्रं ततः कुर्यात्सम्पुटं सन्धिहेपतः ।  
शुल्यामुपरि चारोष्य वह्निं प्रज्वालयेच्छनेः ॥ ११६३ ॥  
प्रहरद्वितयं यावद्यन्मुत्तारयेत्ततः ।  
निर्मिद्य सम्पुटं पश्चात्तं गृह्णीयाद्रसेश्वरम् ॥ ११६४ ॥  
सन्निपाते महाघोरे सर्वचैतन्यवर्जिते ।  
ददीत सूतरात्रं तं मुद्रमानेन बुद्धिमान् ॥ ११६५ ॥  
अथवा मधुना कृत्वा वटिकां मुद्रमात्रिकाम् ।  
एकां ददीत मधुना सन्निपातेऽतिदारुणे ॥ ११६६ ॥  
दाहक्षेदतिभूयिष्ठः सलिलं ढालयेत्ततः ।  
शुभुक्षा चेत्प्रजायेत दाधिकं भोजयेद्दिग्भृक् ॥ ११६७ ॥  
सन्निपातं निहन्त्येव रसेन्द्रो नाऽत्र संशयः ।  
प्रीको रसः सन्निपातभैरवोऽतिमहाबलः ॥  
छट्प्रभायः सुष्टोऽत्र वैशीशाखानुसारतः ॥ ११६८ ॥

रसाल, ज्वराधिकारे ।

टि०—र. सु. र. च. र. क. ट. सु. र. र. रौ. एषु विधे-  
भरनाम्ना “ दरद गन्धक सप्त गुल्याश्च मध्येद्वे । अथत्यैस्त्वह पश्चा  
द्रुते कोलकमुद्धरे ॥ निदिग्धिकारैः काकमात्रिकाया रसै पुन ।  
दिग्भुज वा विपुत्र वा गोक्षीरिण प्रदापयेत् ॥ रात्रिञ्च निहन्त्याशु नाना  
विधेश्वरो रसः ॥ ” इति पाठो दृश्यते तस्याऽप्येवावन्तर्भावं श्रुतः ।  
विशेषभावनामनुपानेऽपि क्षयभावोऽस्ति पाठराशश्च महत्कलम् । र.  
र. कौ. र. ॥ एतयोर्दरदस्थाने रसकं दृश्यते रसजनकोमुपानमुपाने  
गोक्षीरस्थाने गोक्षीरो गृहीतः । र. क. रसापनस, र. ये, ट. सु. यो.  
स, र. म. सा, एषु ग्रन्थेषु “ बुद्धा क्रमेण रसदिहृद्युष्मापकानां भागा  
रसेन विजयाकनकच्छदानाम् । व्योपस्य सप्त रूपगोच विभावनाः स्यु  
शुष्कं विनिक्षिप्य सिद्धयेत्तनाम् । वष ज्वर महाक्षिकामपि पातुताप  
साय निरासमतिसारस्यो बभिव्र । आसप्त प्रासमसर्वं त्वनुपानमेदाह-  
होऽस्य वा विषयते मणपामुपानम् ॥ ” इति पाठो निदिग्धोऽस्ति तत्र  
च रसावतारे दरदगन्धकाराश्च समानभागागृहीत्वा सर्वसामं कटुरोहिर्मी  
मिथस्य विपुवारत्नरसे सप्त भावना दत्त्वा निपादितः । रसादिनाते  
प्रथमवरणस्थाने “ सप्त खरैरगन्धैः शिथिपुत्रा नैमोमित भावदेदिति  
पाठः कृतोऽस्ति तत्र रसश्चैव खरैर कलितः, सिद्धयुक्तस्थाने घृतो  
निष्पिणितः शुक्लचैतन्यतिपातिः । ऐगागामनुपानस्य चाकलन्धा वीरे  
खरैर्गणवश्च भवितव्यमिति । पतत्सर्वमपि रसालहारीरयोगे समिन्धस्य  
सर्वा भावना वपि दत्त्वा एको रस सम्यग्दनीयः ।

भाषा—यादवभस्य, शुद्धगन्धक और शिंगरिफ १-१ पल  
लेवर ३ दिन शुष्कमर्दनकर त्रिकटु, विनोरा, भंगरा और बछ-  
नागकेद्रव्योसे ७-७ भावनाएँ देकर एकभाषणमें लेपकरदे । फिर  
एकपल बछनागके चूर्णको त्रिकटु, घट्टरा और भाषके रसोसे  
मर्दनकर कल्कबनाय दूसरेपाषाणमें लेपकर दोनों भाषणोंका इमल्-  
यन्बनाय १-७ कण्डमिश्रीसे मुंढबन्दकर बछनागवाली हण्डीको  
बुल्लेपर रख दोषहण्डी मन्द अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलोहोनेपर  
ऊपकी हण्डीमेंसे रसको निकालकर मधुसे मृगबाराध गोलेयें  
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाथ अथवा घम-

योचितानुपानकेसाय देनेसे अत्यन्त भयङ्कर सन्निपात निरुत होता है । इसके देनेसे अत्यन्त दाह मालूम हो तो मत्पेशर जलकी-पारा देवे अत्यन्त भूखमालूम होनेपर दहीमात खिलावे । यह कईवारका परीक्षितयोग है ॥ २७६ ॥

### २७७ सन्निपातभैरवरसः ( पञ्चदशः )

सूतं गन्धमृताम्रदङ्गणविषं द्वौ जीरकौ दीप्यकं,  
द्वौ क्षारौ लघणानि पञ्च मरिचं निर्गुण्डिकाजं पलमा।  
संयोज्यापि गुरूपदेशविधिना शुक्ष्मात्रं सार्द्रकं,  
जीयत्येवहि सन्निपातबहलस्वेदामृतोऽपिञ्चरी ॥११६९॥  
ना. वि. सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा, और बछनाग, अन्नक भस्म, दोनो जीरे, अनमोद, दोनो क्षार, पाचोनमक, मरिच, निर्गुण्डकी १-१ पलकेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय अदरककेससे ३-३ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरक-केरसकेसायदेनेसे शीतप्रस्वेदयुक्तभी सन्निपाती अच्छा होजाता है ॥

### २७८ सन्निपातभैरवरसः ( षोडशः )

शुद्धं सूतं विपश्चात्रं गन्धकं नागदङ्गणम् ।  
घटक्षीरे दिने मयं दोलायन्त्रे विनं पचेत् ॥ ११७० ॥  
मत्स्यमाहिषमायूरपित्तं भाज्यं दिनत्रयम् ।  
देयं हि भापमाञ्ज कणाकायानुपानतः ॥ ११७१ ॥  
तत्क्षणेन निहन्त्याह्ने रक्तौष्ठमतिभीषणम् ।  
प्रसिद्धः सन्निपाताल्पमेवो रस उत्तमः ॥ ११७२ ॥  
वै. वि. वा. रक्तौष्ठिसन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, बछनाग, अन्नक और सीसामस्य, सुहागा सय समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर बटकेपूछसे एक-दिनमर्दनकर अदरककेरसमन्निपातहरसोमें एकदिन दोलायन्त्रसे स्वेदनकर मज्जी, भेंडा और मोरके पित्तोंसे १-१ दिन मर्दन कर उडबवार गोलियें बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पीपलके काथंकेसायदेनेसे रक्तौष्ठीसन्निपातको यह नष्टकरता है ॥

### २७९ सन्निपातबडवानररसः

रसादष्टौ विपातसप्त पद पञ्चगव्यकतालयोः ।  
पङ्कगा दन्तिवीजानां पञ्चमागन्तु दङ्गणम् ॥ ११७३ ॥  
चत्वारो धूर्तवीजस्य व्योषं मागत्रयं भवेत् ।  
पतानि वह्निभूलस्य कायेन परिमर्दयेत् ॥ ११७४ ॥  
आर्द्रकस्य रसेनाऽथ देयं शुद्धाद्यं हितम् ।  
बडवानलसञ्जोऽयं सन्निपातहरः परः ॥ ११७५ ॥  
र. व. र. स. र. क. सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा ८ भाग, बछनाग ७ भा., शुद्धगन्धक, हरिताल और जमाळोटो ६-६ भाग, मुनासुहागा ५ भा., शुद्धधुरेकेबीज ४ भा., त्रिकुट ३ भा. लेकर सबका बारीक-चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय चित्रकमूलके काथसे एकदिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रख-

ओड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरकके रसकेसायदेनेसे यह सन्निपातको नष्टकरता है ॥ २७९ ॥

### २८० सन्निपातविध्वंसनरसः

सूतं गन्धं समं शुद्धं तालकं माक्षिकन्तथा ।  
मृतताम्राग्रकं धोलं विषं धुस्तूरवीजकम् ॥ ११७६ ॥  
निक्षारं रविपञ्च हिह्नु पाठा पटोलकम् ।  
गन्ध्या भृङ्गत्रयं शुण्ठी कन्दं लाङ्गलिकं समम् ॥ ११७७ ॥  
सिन्धुवारद्रवैः सर्वं मयं जम्बीरजैरपि ।  
दिनेकं घटिका कार्या चणकामाञ्ज भक्षयेत् ॥ ११७८ ॥  
अत्युग्रं सन्निपातञ्च सर्वोपद्रवसंयुतम् ।  
निहन्ति चानुपानेन दशमूलकजेन वा ॥ ११७९ ॥  
फपायेण न सन्देहः पथ्यं दृघोदनं हितम् ।  
रसो विध्वंसनो नाम सन्निपातनिरुन्तनः ॥ ११८० ॥  
र. र. र. सु. र. क. र. को. र. का. र. क. यो., सन्निपाते ।

टि०—“प्रतिपादितमार्गेण पात स्वच्छं आरणम् ।

हेनो वैश्व सृष्टेः कृता पश्चात्पमादौह ॥

हरिताल पल्लवकमृदा पदमात्रकम् ॥

गन्ध्यामन्दपल प्रोक्त इतिर्नीलमन्दं पठनम् ॥

रक्षायय पल प्राञ्च विप शुण्ठी च मागधी ॥

पाठापवल्वाकीक पटोलक पलपलम् ॥

सर्वं समानं श्वीनं स्वाहस्तिनं प्रोक्तयुक्तिम् ।

खल्वे दत्ता शुष्कद्वन्द्वं दिनमेकं समाचरेत् ॥

पञ्चवर्णीतोयेन पञ्चगव्यमन्देन वा ।

फलपूरसे चापि मर्दयित्वा दिनाद्यम् ॥

तेन कलेन कुर्वीत बदीक्षकतमिता ।

अथवा श्वीनं भस्म पठ्मात्रं समादौह ॥

मर्दयेत्कुर्वात्वा वै सर्वेनोपपन्नञ्चरेत् ।

रचयेद्विका शान्वच्छायाशुक्लाश्च ता विरेत् ॥

पूयित्वा महादेवं भैरवं योगिनीयुगम् ।

विश्राज् सङ्गृह्य विविक्तसन्निपातेऽति बाले ॥

बदीर्घकं प्रयुजीत भिन्नं व्यापिबिधौषविम् ।

रसेन्द्रसेवाभावेन सन्निपातादित्युच्यते ॥

स्वेतोक्तस्य तथा दाहं सद्यो वारयति स्फुटम् ।

दक्षपञ्च क्षणादेव निवारयति पारदं ॥

सर्वेषु वातरोगेषु केभ्यसेषु मयोपदेव ।

अभिमान्ये चोदरे विकारे दीवता रसः ॥

ऐकाक्षिकं व्याहिकं वा प्वर नाशयते रसः ।

पथ्यं प्राप्यदिनं बुयादुपचारदिनं पूर्वदेव ॥

सन्धोऽप्येव सन्निपातविध्वंसनरसेन ।

सर्वस्वरूपद्वैव वान्तेमनिरवन् ॥

अथ पाठे रमाळकुरे निहितोऽसि परन्तु तत्र न रमान्तरता, मूत्र द्रव्याणामेकता । पारदसस्करागान्तु सर्वत्रेवात्पापदयकता मर्दये वै यथाशक्य सर्वत्रेवाऽनुष्ठेया, तलेखनमात्रे । रमान्तरतावपनऽप्येव लाह । धवलपिण्डीवित्रकाणामपिच्य प्रतीये परन्तु तेषामप्यत्रैवाऽपि-कतया संयोग विषय एक एव रस सप्तमर्दनीय इति विरलु विवृति ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और सोनामाषी, ताम्र और अन्नकभस्म, मुसली, शुद्ध बछनाग और धुरेकेबीज, सुहागा, अज्जी, यवहार, जाकडे पके प्रसे, सुनी हाँग, प्रादा,

परवल, बाझखेरासेकाकन्द, स्याह-सपेद और पीला गंगरा, सोंठ, करिहारी सबसमभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय समाव् और जंभीरीके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली दशमूल अथवा आकरीजके काषेयेसाथ देनेसे समस्तो-पद्रव्युक घोरसन्निपातको यह नष्टकरताहै । दोष शान्तहोनेपर अत्यन्तमूत्र लगनेपर दहीभात देना ॥ २८० ॥

### २८१ सन्निपातमूर्धरसः ( सन्निपातभैरवः )

रसेन गन्धं द्विगुणं गृहीत्वा  
तत्पादभागं रयिताहम् ।  
मस्मीकृतं योजय मर्दयेत्त-  
दिनत्रयं यहिरसेन घर्मे ॥ ११८१ ॥  
विपञ्च द्रव्याऽत्र फलाप्रमाण-  
मजादिपिसेः परिभाषयेच ।  
वह्न्ययश्चास्य द्वादीत वह्नि-  
कटुत्रयाऽऽहस्य रसप्रयुक्तम् ॥ ११८२ ॥  
तैलेन वाऽभ्यज्य वधुष कुर्या-  
त्तानश्च तोयेन सुशीतलेन ।

यावद्भवेद्दुःसहमस्य शीतं  
मूत्रं पुरीषश्च शरीरकम्पः ॥ ११८३ ॥  
पथ्ये यदीच्छा परिजायतेऽस्य  
मरीचखण्डं दधिभक्तकं वा ।  
स्वल्पं द्वादीतमरीचभागं  
दिनाष्टकं ज्ञानविधिश्च कुर्यात् ॥  
त्रिदोषजेष्वेव सदा नियोज्यो  
ज्वरेषु वै भैरवनामधेयः ॥ ११८४ ॥

॥ सं., र. क., रसायनसं., र. च., र. वि., वृ. यो. सं., र. सु., र. दौ., यो. म., र. का., र. सि., र. को., भे. र., र. मृ., सन्निपाते ।

टि०—रसचण्डीशो द्वितीयस्थाने सन्निपातभैरव इति नाम । रस द्विप्रकाशा प्राणिपुत्रा इति नाम । भैरवशतनामक्यां रसशतसन्दर्भस्य च द्वितीयस्थाने तारव्याने ताव नियोज्य रसेचर इति नाम स्थापितम् । रसाष्टके ॥ रसेन्द्रात्र नामसं., सन्निपातान्वक्ष्यति ।

भाषा—शुद्ध पारा ४ भाग, गन्धक ८ भाग, ताव, रक्त और सुवर्णभस्म १-१ भाग लेकर नीलवर्णकजलीकर चित्रचरे-रससे ३ दिन धूपमें बैठकर घोटें । फिर इसमें १६ वा हिस्सा शुद्धदन्तागमिलाय बकरावगैर पाचोपितोसे १-१ भावना देकर ६-६ रस्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली चित्रक, त्रिकटु और अदरकनेरसकेसाथ देनेसे त्रिदोषत्र सन्निपात नष्टहोतेहै । शीतेले मालिशकरके मरयेम ठंडेजलकी पारादेवे जब शीत असाय होजाय और मज्जमूत्रका त्यागहोकर शरीरकापनेलगे तब बन्दकरे । अत्यन्त मूत्रलगनेपर गरिच डालकर शब्द अववा दहीभात खिलावे । मिच और अदरक छोड़देवे । दोषशान्त होनेपरभी दाहशान्त नहोतो ८ दिनतक घोटत्रयसे ज्ञानकरावे ॥

### २८२ सन्निपातहररसः ( प्रथमः )

रसाग्रम्लेच्छताप्यानां शिलागन्धकयोः समम् ।  
भृङ्गधूर्तरसेः पिष्ट्वा पञ्चघर्षं दशोपलेः ॥ ११८५ ॥  
पुटेदेतद्विभागानांकाहौ लोहाद्यतुर्धलेः ।  
खल्वे पिष्ट्वा दिनद्वयं पूर्ववह्नुषु सम्पुटेत् ॥ ११८६ ॥  
अस्य पौडश भागाः स्युर्नागांशो मध्येदिनम् ।  
वह्नुमात्रप्रयुक्तोऽयं सन्निपातं नवज्वरम् ॥ ११८७ ॥  
जयेदाद्रिकतोयेन द्राक्षाखण्डेन पैसिकम् ।  
क्षयपाण्डुर्विकासीन् निजयोगैः सकामलान् ॥ ११८८ ॥  
शोथं गुदकणायुक्तः सभगन्दरमुद्धतम् ।  
व्योपक्षोद्रेण चाशीसि प्रह्णीं गुद्जां व्ययाम् ॥ ११८९ ॥  
नागवल्क्या दलरसेः समं मूत्रे जलोदरम् ।  
गुल्मग्रीहोदरे वातजठरं त्रिफलोदकैः ॥ ११९० ॥  
व्योपेण सर्वकुष्ठानि विसर्पञ्च पयोयुतः ।  
रयुतैलेन शूलानि शुद्धचीसत्त्वसंयुतः ॥ ११९१ ॥  
प्रमेहांश्चिद्युतोयेन धनुर्मुह्नादिकानिलान् ।  
सन्निपातहरश्चायं रसः सर्वत्र पूजितः ॥ ११९२ ॥

र. क. सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, अग्रकमलम्, शिंगरिक, सोनामासी, सैनसिल और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर गंगरा और धतूरेके रसोंसे ५-५ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शराव-सम्पुटमें बन्दकर १० कण्ठोंकी आचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर इसके द्विगुण ताव और लोहभस्म तथा चतुर्गुणगन्धक डालकर पूर्वसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुट में बन्दकर १० कण्ठोंकी आचदे । फिर इसमें १६ वा हिस्सा नागभस्म मिलाकर १-१ दिन पूर्वसोंसे मर्दनकर २-२ रस्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरकनेरस-केसाथदेनेसे सन्निपात और नवज्वर नष्टहोताहै । दाह और खाइकेसाथ पित्तज्वरको, तथा शय, पाण्डु, काय, कामला इनको अपने २ अनुपातोंसे, भगन्दर और शोथको शुद्ध और पीपलमें, अर्वा, प्रह्णी और शुद्धवपारो त्रिकटु और मधुकेसाथ देनेसे यह नष्टकरताहै । जलोदरको पान अथवा मूत्रोंसे, गुल्म, ग्रीह, पेटकाषाय, मन्दाग्नि इनको त्रिफलाकेकाष्ठोंसे, घमस्त-कुष्ठोंको त्रिकटुसे, विसर्पछोड़नेसे, शूलोंको एरण्डोपेतैलसे, प्रमे-होंको गिलोयसत्त्वसे और धनुर्मुह्नादि मयहृत्वाततोगोंको सहि-जनक रससे यह नष्टकरताहै ॥ २८२ ॥

### २८३ सन्निपातहररसः ( द्वितीयः )

पारदं गन्धकं टङ्गं सोपणं गजपिप्पली ।  
व्योपञ्च घुस्वरजलेः पिष्टं गुद्गाद्यं द्रुतम् ॥  
सन्निपातं निहन्त्यकंकपार्यार्यापशुर्गितः ॥ ११९३ ॥  
र. क. र. क. सन्निपाते । र. क. शुद्धरजसैतिस्य स्थाने  
शुद्धरजसैति पाठः ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और धुहाणा, मरिच, गजपीपल त्रिकटु सब समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर घट्टरेकरसे एक-दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिकटुयुक्त आकक्रीजइकेकाढ़ेसेसाधदेनेसे सन्निपातको यह नष्टकरताहै ॥ २८३ ॥

२८४ सन्निपातहररसः (सन्निपातान्तकः) (तृतीयः) शुद्धसूतसमोगन्धो दरदं शुद्धखर्परम् । रसस्य त्रिगुणौ देयौ मृतताम्राभ्रलेवतसौ ॥ ११९४ ॥ जम्बीरोत्थै दिनं मयं भूधरे पाचयेत्पुष्टु । दिङ्गु त्रिकटु कर्पूरं पञ्चैतन्मिलितं समम् ॥ ११९५ ॥ सर्वस्यैतत्समं चूर्णमाद्रिकस्य रसैः सह । महाराष्ट्रयाश्च निर्गुण्डया जयन्त्याः पिप्पलीद्रवैः ॥ भृङ्गराजद्रवैः सत प्रत्येकं भावनाः पृथक् । वातव्यश्च चतुर्गुञ्जमाद्रिकस्य द्वयैः सह ॥ सन्निपातं निहन्त्याशु सन्निपातहरो रसः ॥ ११९७ ॥

र. क., र. सं., रसायनसं., र. को., र. सु., सु. प्र., सन्निपाते ।

टि०—रसेन्द्रकल्पद्रुमं विहाय सर्वेषु ग्रन्थेषु सन्निपातान्तकनाम इति नाम । कुचचित्रावनायां जम्बीरस्थाने भृङ्गे निधोलिः । र. सु., र. को., र. (मा.), नि.र., र. मा., र. क. यो., यो. म., र. सं. स., एषु “रसमयसम गन्ध ताम्रमयसम स्यो. समम् । ताम्रांश्च खर्परं योज्य खर्परंश्च दिङ्गु-शम् ॥”, इत्याकोरप पाठ विन्यस्य सन्निपातान्तक इतिनाम स्थापितं तत्र दिङ्गुल्लखर्परयोर्दिगुण्य, भावनायाश्च जयन्तीपिप्पलीभृङ्गराजस्थाने करवीरः केवलोनियोजित इति विशेषोक्तिः परमर्धं दिङ्गुल्लखर्परं दिगुणे विन्यस्य पाठः सन्निपातः । यस्तुतस्तु अस्मिन्नेव पाठे रसस्य दिगुण्यं देयं मृतताम्राभ्रलेवसन्निपाते स्वीकृते मृत्तिसर्वेषामनन्य इति ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, दिगारिक और खपरिया १-१ भाग, ताम्रमस और अम्लवेत २-२ भाग लेकर नीलवर्ण-कजलीकर जम्बीरीकेरसे एकदिन मर्दनकर भूपरुष्ठी आंचदे । स्वाहशीतलोनेपर निकालकर भुनीहींग, त्रिकटु, शुद्धकपूर सब समभागलेकर पूर्वसकी बराबर मिलाय अदरख, मराठी, निर्गुण्डी, जैती, पीपल और भंगरेके स्वरसोंसे ७-७ भावनाएं देकर ४-४ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरखकेरसेसाधदेनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै २८४

२८५ सन्निपाताङ्गुररसः (प्रथमः)

सूतं तुल्यविषं दिनत्रयमितं जम्बाम्मसा मर्दितं, मोतयाप्यातपणं ततो दिनद्वयं हेमाशुभिः स्वेदितम् । तं सूतं समदिहृलं समवलिं तुल्यालचेतःशिलाः, तापन्नतुल्यविषं विमर्चसुजयातीरेण गाढं दिनम् ॥ ११९८ ॥ हेमाद्रालिरसैः सुमाप्य मुनिशः पित्तैः पृथक् पञ्चभिः, सूतान्तुल्यविषेण धूपितमिदं स्वात्सन्निपाताङ्गुराः । गुञ्जादींस्तमितं सहाद्रिकसं पित्ताभ्युपायं भजे-दध्वरं सलितं समृत्तलफलं सत्तालवृत्तानिलम् ॥ ११९९ ॥ पञ्चशाललोचनाश्रलससक्तमृषर्पदं पाङ्गना, प्रेमालिङ्गनमिन्दुचन्दनमरं मालाः सुपुणोज्यलाः ।

जीर्णामं विषमं ज्वरं प्रहणिकां पाण्डुक्षयांश्चाहरेः, हुल्मघ्नीहजलोदरानिलशिरःशूलानयं स्वौपधेः ॥ १२००

र. सं., र. सु., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और बठनाग समभागलेकर जम्बीरीके रसे मर्दनकर टिकड़ी बनाय डमरुयन्त्रसे पारेको उड़ाकर एक-दिन घट्टरेकरसे स्वेदनकर शुद्ध शिंगरिक, गन्धक, हरिताल, मैन्सिल और बठनाग, ताम्रमस बराबर २ मिलाकर नीलवर्णकजलीकर मांगकेस्वरसे एकदिन मर्दनकरे । फिर घट्टा, अदरख और भंगरेकेसोंसे ७ दिन मर्दनकर पाचों-पित्तोंकी १-१ भावनादेकर हंडीकेपेंदेमें लेपकर समभागबठ नागकाचूर्ण हंडीमें बिठाय दोनोंका डमरुयन्त्रवनाकर यहाँतक आंचदेवे कि बठनाग सब जलजाय । स्वाहशीतलोनेपर निकालकर २-२ चावलभरकी गोलियां बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरखकेरसे अथवा अपने अपने अनुपातोंकेसाथ-देकर मत्सेपर उष्टिषानीकीबारादेनेसे जीर्ण, आम तथा विषम-ज्वर, प्रहणी, पाण्डु, क्षय, गुल्म, सीहा, जलोदर वातव्याधि, शिरःशूल इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २८५ ॥

२८६ सन्निपाताङ्गुररसः (द्वितीयः)

स्लेच्छं तात्रं विषं पिष्टं भाचयेत्पञ्चमाशुभिः । गुञ्जा तस्याम्बुना हन्ति सन्निपातं नयं ज्वरम् ॥ अपि सर्वांगान्दाह्याद्बहुणीगदमुत्तवणम् ॥ १२०१ ॥

टो., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धशिंगरिक, ताम्रमस और बठनाग समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पाचोंपित्तोंसे १-१ भावनादेकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली जल अथवा उचिततापुनकेसाधदेनेसे सन्निपात, नज्ज्वर, प्रहणी-प्रवृत्ति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २८६ ॥

२८७ सन्निपाताङ्गुररसः

निस्त्वज्जेपालजं धीजं दशनिष्कं प्रधूर्णयेत् । मरिचं पिप्पलीं सूतं प्रतिनिष्कं विमिश्रयेत् ॥ १२०२ ॥ भाव्यं जम्बीरजैर्द्रवैः सप्ताहं तत्प्रयत्नतः । सन्निपातं निहन्त्याशु अञ्जने यः शिथः स्मृतः ॥ १२०३ ॥

र. र. सं., भे. सा., र. प्र. सन्निपाते ।

टि०—र. सं., रसायनसं., यो. र., एषु रसायनसंवेधानाम्ना शपोनिमित्तनखप्रयोगोऽस्ति यथा—“वचाऽशुद्राभ्योपमृकमारुद्राद्य-मिन्द्रुहवद्बुद्धत्याः । पक्ष समुद्रस्य रसोन कल्के प्यात दिनासापु-मन्धरेणे । अस्त्वृत्तिरूपमश्चिरोन्मं प्रज्ञापनद्राप्रमनायनेहाः । समन्निपातान् धुनिकश्चमन्नं सरीनश्च इति हरीमकश्च । रसायन नेर-नामपेयं ज्ञान विचारस्त्ववि विदुजेति ॥” इत्यस्यापि नाम्ने प्रयोगः कर्-णीयः । अयमितिद्रव्यैर्गदरी प्रयोगोऽस्ति ॥

भाषा—जमालोटेकी गिरी ११ धन, मरिच, पीपल और पारा ४-४ मादो लेकर एकदिन डमरुमर्दन७ दिन जम्बीरीके रसे घोटकर रखओड़े । जम्बीरीकेरसेसाथ एकका अन्नकरनेसे समस्तसन्निपात नष्टहोवे ॥ २८७ ॥

## २८८ सन्निपातान्तकरसः

मृतं कान्ताप्रयैकान्तं ताप्यं तालं समं समम् ।  
मृत्कीटश्च रसो मर्द्य अभयानरमृप्रतः ॥ १२०४ ॥  
राजवृक्षफलव्योपकृम्पाण्डरसमर्दितः ।  
अभिन्त्यासज्वरं हन्ति सश्रोत्रो मापतुल्यकः ॥ १२०५ ॥  
रसायनसं, र. को, र. का, सु. प्र, चि. र. म, सन्निपाते ।

टि०—कुनचित् “मृत्कीटप्रसो मर्द्य” इत्यस्य स्वप्ने “मृच्छिग्र रसो मर्द्य” इति पाठो दृश्यते ।

भाषा—कान्त, अन्नक और वैद्वान्तमस्य, शुद्धसोना-  
माखी, हरिताल, कंचुए और पारा समभागलेकर नीलवर्णकजली-  
कर नरसून और हरे, अमिलतासकापूदा, त्रिफळ, सफेद-  
बोंहळा इनके यथासम्भवस्वरस अथवा कर्षोसे १-१ दिन  
मर्दनकर १-१ भाशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१  
गोली मधुकेसाय देनेसे अभिन्त्यासज्वर नष्टहोताहै ॥ २८८ ॥

## २८९ सप्तविंशकगुग्गुलुः

क्षार्द्धयं त्रिकटुकं त्रिफलाहरिद्रि-  
गुग्गारमुस्तलघणप्रयतुम्युरुणि ।  
शुल्पप्रिप्रग्निकडुताशनचव्यकुष्ठ-  
माक्षीकपोष्करचिडङ्गविषायापुतानि ॥ १२०६ ॥  
यायन्यमूनि गजपिप्पलिसंयुतानि  
तावत्प्रमाणमितगुग्गुलुयोजितानि ।  
कृत्या धृतेन गुटिका मनुजैः प्रयोज्या  
पीतानुदुग्धजलकाजिकमुद्रयूपा ॥ १२०७ ॥  
पाण्ड्यामयं क्षयमपस्मृतिमूर्द्धवात-  
मुन्मादमामपचनं भवयुं प्रमेहम् ।  
हृत्पृष्ठकोष्ठकटिघृणकुक्षिकक्षा-

शूलानि नाशयति कुष्ठफिलासरोरगान् ॥ १२०८ ॥  
चि. क, ग. नि, कुष्ठे । गदनिमिहे क्षार्द्धयस्याऽभावो दृश्यते ।

भाषा—सर्जी, सुहागा, त्रिकटु, त्रिफला, हल्दी, दाह-  
हल्दी, नागरमोषा, तीनोंनमक, गुग्गुलु, इलायची, चित्रक,  
पिपलामूल, मिलाया, चव्य, कुष्ठ, सोनामाखी, पोहकरमूल,  
विडङ्ग, अतीस ये सब समभाग और इन सबकीबराबर गज-  
पीपल लेकर शरीकचूर्णकर सबकीबराबर शुद्धगुग्गुलुको मूत्रके  
योगसे कूटकर शुगलद्रवबनाय घीरे २ समस्तचूर्णको  
मिलादे और ३-३ भाशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इन-  
मेंसे १-१ गोली जल, दूध, काजी और मूंगकेयूथप्रभृति  
रोगोक्तानुषानोंकेसाथ देनेसे पाण्डू, क्षय, अपस्मार, ऊर्ध्वावात,  
उन्माद, आम, वातविकार, शोथ, प्रमेह, हृदय, पीठ, कोष्ठ,  
कटि, वल्लूण, कुक्षि, काय इनकेशूल, और शिरको यह  
नष्टकरताहै ॥ २८९ ॥

## २९० सप्ताङ्गलोहम्

कनकताप्यरसामुदगन्धक-  
धुमणिलोहरजः समप्रानकम् ।

## त्रिफलया समया मधुसर्पिणा

जयति लीडमशेषमधामयम् ॥ १२०९ ॥

लो. प. सर्वेगे ।

भाषा—सुवर्ण, सोनामाखी, पारा, अन्नक, इनकीमसमें,  
शुद्धगन्धक, ताप और लोहमस्य सब समभाग, इनसबकी बरा-  
बर त्रिफला मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती मधु और  
पीकेसायलेनेसे समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २९० ॥

## २९१ सप्ताभ्रकम्

घरावरीयारिद्वारिवीरा-

रजःसामस्तेनसमांशमन्नम् ।

क्षौद्राज्यलीढं युधतीसहस्र-

लीलासहस्रं कुर्यते नराणाम् ॥ १२१० ॥

लो. प. , वाजीकरणे ।

भाषा—त्रिफला, शतावर, नागरमोषा, सुगन्धवाला, खस,  
सब समभागलेकर सबकीबराबर अन्नकमसमिलाकर रखछोड़े ।  
इसमेंसे ३-३ रती मधु और पीकेसाय सेवनकरनेसे बहुतसी  
क्रियाओंकेसाथ सम्मोग करनेकीशक्ति बढताहै ॥ २९१ ॥

## २९२ सप्तामृतरसः ( प्रथमः )

मृतसुताभ्रकं तुल्यं मृतलौहं शिलाजतु ।

गुग्गुलुश्च शिलाताप्यं समांशमधुना लिह्व ॥

मासमानप्रयोगेण मुखरोगं विनाशयेत् ॥ १२११ ॥

र. र. मुखरोगे ।

भाषा—पारा, अन्नक और लोहमस्य, शिलाजीत, गुगल,  
शुद्धमैन्सिल तथा सोनामाखी सब समभाग लेकर शरीकचूर्णकर  
सबकीबराबर मधु मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ रती  
खानेसे एकहीनेमें तमाम मुखरोग निश्चतोहोतेहै ॥ २९२ ॥

## २९३ सप्तामृतरसः ( द्वितीयः )

रसकनकयज्ञतीक्ष्णं शिलाजतुम्लेच्छसंज्ञकं गगनम् ।

समभात्रं कटुकत्रयतुटिदलजातीफलं लघुङ्गञ्च ॥ १२१२ ॥

कङ्कोलं त्रिफला तद्युगभागं पूर्वभागतद्भूणम् ।

मापयुयं मधुसहितं मस्यं क्षयशोपकासहरम् ॥ १२१३ ॥

यो यः, राजयदमणि ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, वज्र, फोलाह इनकीमसमें, शिलाजीत,  
शिंगरिफ और अन्नकमस्य १-१ भाग लेकर त्रिकटु, इलायची,  
जायफल, लौग, शीतलबीनी, त्रिकष्य सब समभागकाचूर्ण १४  
भाग और मधु सबकी बराबर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२  
भाशे प्रतिदिनसेवनकरनेसे क्षय, शोथ और कासको यह निश्च-  
करताहै ॥ २९३ ॥

## २९४ सप्तामृतलोहम् ( प्रथमम् )

मधुकं त्रिफलाचूर्णमयोरजः समं लिह्व ।

मधुसर्पिणुतं सम्यग्वायं क्षीरं पिबेदनु ॥ १२१४ ॥



छदिं सतिमिरां द्यूलमग्लपितं च्वरं फलमम् ।

आनाहं म्रसङ्गश्च शोथञ्चैव निहन्ति सः ॥ १२१५ ॥

च द, भे. र., र. सं., र. सि., घ, नि. र., रसायनसं., य. यो. त., दो., र. घु., र. क., र. नि., र. का., र. र., वै र., घृतेचक्षुरोगे च ।

टि०—र. र. सर्वचूर्णतमलोहमिति नाम स्थापितम् । र. घु., र. सं. प्लवो द्वितीयस्थाने प्रथमपिच प्रक्षिप्य घृतमधुनो नाम निष्कारस्य तिमिरहरलोहमिति नाम स्थापितम्, अतः स एव प्रयोगो ग्राह्यः. अनुपानमपि तदेव बोध्यम् । भेषज्यरत्नावल्यादौ फल्गुमिति गृह्यते प्रलपितमतस्तत्परित्यक्तमिति मुष्णिभिर्विभावनीयम् ॥

**भाषा**—त्रिफला, लोहभस्म, सुलहटी सब समभागमिलाकर रखजोड़े । इसमेंसे १-१ मासा मधु और पीकेसाय लेकर गायकाक्ष पीनेसे घन, तिमिर, द्यूल, अन्तपित्त, च्वर, ग्लानि, आनाह, मूत्रापात और शोथ इन सबको यह नष्टकरताहै ॥ १२१४ ॥

### २१५ सप्तमृतलोहम् ( द्वितीयम् )

त्रिफला लोहचूर्णञ्च पटोली मधुयष्टिका ।

सर्वमेकशितो ह्यभगाः स्युस्तथराजतः ॥

सर्पिषा भक्षिते यान्ति तस्मिन्निहृजोऽखिलाः ॥ १२१६ ॥

हितो, नेत्ररोगे ।

**भाषा**—त्रिफला, लोहभस्म, परवल, सुलहटी सब १-१ भाग, बंसलोचन ११ भाग लेकर बारीकचूर्णकर बंसलोचनको ८-५ दिन अलग घुटवाकर अन्यवस्तुओंके बारीकचूर्णमें मिलाकर रखजोड़े । इसमेंसे १-१ मासा पीकेसाय लेनेसे नेत्रोंके समस्तरोग नष्टहोतेहैं ॥ १२१५ ॥

### २१६ सप्तायसम्

सुरभिमास्करलोहरसाग्रकाः

सजतु हेमसमुत्थरजः समम् ।

वरुणकादिगणत्रिफलाजल-

क्षपितमातपशुष्कमेकधा ॥ १२१७ ॥

दलितमाज्यमधुसुतिमागतं

हरति यश्मगदं सपत्त्रिहम् ।

श्वसनदोषहृदामयपाण्डुतां

कसनमेहमय प्रहणीगदम् ॥ १२१८ ॥

लो. प, राजयक्ष्मणि ।

**भाषा**—शुद्धगन्धक, और पारा, ताम्र, लोह, अन्नक, सुवर्ण इनकीमल्यमें, शुद्धशिलाजीत सप्त समभागलेकर पारेगन्धकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय वरुणादिगण और त्रिफलाके कायोंसे धूपमें ३-३ अथवा ७-७ भावनाएँ देकर बराबरके मधुमें मिलाकर रखजोड़े । इसमेंसे ३-३ रती यथोचितानुपायकेसाथदेनेसे ज्वरप्रसहिता राजयक्ष्म, श्वास, शोथ, हृद्रोग, पाण्डु, कास, प्रमेह, प्रहणी इन सबको यह नष्टकरताहै ॥ १२१६ ॥

### २१७ समरसुन्दरी गुटिका ( स्मरसुन्दरी )

वज्रहेमाग्रकं ताप्यं फान्तं सूतं समसंमम् ।

मयं जम्बीरजैर्द्रावैर्दिनं खल्वे ततः पुनः ॥ १२१९ ॥

ग्रहवृक्षस्य बीजानि कार्पासास्थीनि राजिका ।

वन्ध्या च यवचिञ्ची च पिप्पला तन्मध्यगं सुर ॥ १२२० ॥

पूर्ववन्मर्दितं गोले लघुसप्तपुटेः पचेत् ।

ततो गजपुटे दद्यान्प्रां रुद्धा धमेद्धठात् ॥ १२२१ ॥

तद्वीर्यं धारयेद्भजेन शस्त्रस्तम्भकरं भवेत् ।

हन्ति रोगं जरां मृत्युं गुटिका स्मरसुन्दरी ॥ १२२२ ॥

शस्त्रस्तम्भकरे गोले कुम्भकरणं स्मरेद्यदि ।

आयातं सम्मुचं शत्रुं समोहं स निवारयेत् ॥ १२२३ ॥

ॐ अपयति स्वाहा. अनेन मन्त्रेणाष्टोत्तरहस्तं जपेत्तिष्ठि ।

र. सि., रसायने ।

**भाषा**—हीरा, सुवर्ण, अन्नक, सोनामाखी, फान्त और पारा समभागलेकर जमीरीकेरससे एक दिन मर्दनकर पलातके-बीज, कपासकीमज्जा, राई, बासलेखसेकाफन्द, तितली सब समभाग लेकर १ दिन जमीरीकेरसमें अच्छीताहरीसकर गोला-बनाय इसके बीचमें पूर्वसको १२५ शरावसम्पुटमें बन्दकर लघु-पुटकी आवचे । स्वाहाश्रीतलोहनेपर फिरसे मर्दनकर पूर्ववत् आवचे । ऐसे ७ लघुपुटदेनेकेबाद एक गजपुटकी आवचेकर छह घनकराये तो इसकी गोली तैयारहोगी । इसको मुखमें रखनेसे शलौका स्तम्भनहोताहै । रोग, बुवापा, मृत्यु इन सबका नाश होताहै । सामनेसे शत्रुको आताहुआ देखकर कुम्भकर्णका स्मरण करनेसे विशिष्टहोकर शत्रु निष्ठहोजाताहै । " ॐ अपयति स्वाहा " इत्यमन्त्रका अष्टोत्तरहस्त जपकरनेसे इसकी सिद्धिहोतीहै ।

### २१८ समशर्करलोहम् ( प्रथमम् )

लोहाहिगुणं क्षीरं सर्पिर्हिगुणं समे सितामधुनी ।

पादं विडङ्गसारं तद्वत् शुद्धिवंशजं पचेद्दोहम् ॥ १२२४ ॥

त्रिकटु वराई, कनकं धात्री यष्टयन्तु चार्धभागश्च ।

उर्यं शोणितपिष्टं समून्कृच्छ्रं क्षतं क्षयं कासम् ॥

कृच्छ्रादमरीचिनियमाजयति घटं खण्डखाद्यसमवीर्यम्

यो. म, अश्मवैचिकरे ।

**भाषा**—लोहभस्म ४ तोले, दूध ८ तोले, घृत, शर्करा और मधु २४-२४ तो०, विडङ्गतरुजल, इलायची और बंसलोचन १-१ तोला लेकर बारीकचूर्णकर इनके मिलानर पाककरे । वाद्यनी तैयारहोनेपर नीचे उतारकर त्रिकटु, तज, सुवर्णभस्म, आवले, सुलहटी और खस २-२ तोले मिलाकर रखजोड़े । ७ अथवा १४ दिन बीतजानेपर ३-३ मासे समय अथवा रोगोक्तानुपायकेसाथ देनेसे अत्यन्तबहुआ रक्तपित्त, मूत्र कृच्छ्र, उर क्षत, क्षय, कास, पथरी, इन सबको यह नष्टकरताहै ॥

### २१९ समशर्करलोहम् ( द्वितीयम् )

लवङ्गं कट्फलं कुष्ठं यमानी त्र्युषणतया ।

चित्रकं पिप्पलीमूलं वासरं कण्टकारिका ॥ १२२६ ॥

चव्यं कर्कटपट्टनी च चातुर्जातं हरीतकी ।

शटी कङ्गोलीकं मुस्तं लोहमग्नं यवाप्रजम् ॥ १२२७ ॥

सर्वं प्रतिसमं चूर्णं तावच्छर्करयाऽन्यितम् ।

सर्वमेकीकृतं चूर्णं स्थापयेत्सिन्धुभाजने ॥ १२२८ ॥

समशर्करकं लोहं चूर्णं तृणगुणप्रदम् ।

निहन्ति सर्वजं कासं यातश्चक्ष्मसमुद्भवम् ॥ १२२९ ॥

क्षयकासं रक्तपित्तं भ्रासमानु विनाशयेत् ।

क्षीणस्य पुष्टिजननं पल्यर्णाग्निवर्धनम् ॥ १२३० ॥

वै. क., भै. र., काते ।

भाषा—लौंग, कायफल, पुठ, अजनाइन, चिकुट्ट, चित्रक-  
मूल, पिपलामूल, अइथा, भट्टट्टैया, चम्प, काकडासीनी, जालु-  
जात, हर्, कबूर, शीतलबीनी, नागरमोया, लोह और अन्नक-  
भस्म, यक्षार सब समभागलेखर घारीक चूर्णकर घावरकी  
शहरकी चाचनीमें मिलाय चिकनेवर्तनेमें रखोजे । इसमेंसे ३  
मासेमें ६ मासेतक समय अथवा रोमोचिनालुपाननेसाथ देनेसे  
सबप्रकारके कास, क्षय, रक्तपित्त, श्वास, बल-वर्णाग्निहास,  
इनसबको नष्टकर आदमीको पुष्टकरताहे ॥ १२२९ ॥

### ३०० समशर्करलोहम् ( तृतीयम् )

लोहाद्यनुगुणं क्षीरमाज्यं द्विगुणमुत्तमम् ।

चूर्णं पावन्तु वैडङ्गं दद्यान्मधुसिते समे ॥ १२३१ ॥

ताम्रपात्रे हृदं पक्त्वा स्यात्पयद्वत्तभाजने ।

मापकाद्विक्रमेणैव भक्षयेद्विधिपूर्वकम् ॥ १२३२ ॥

अनुपातं प्रयुज्जीत नारिकेलोदकादिकम् ।

रक्तपित्तं जयेत्तृप्तिमग्नपित्तं क्षतं क्षयम् ॥

प्रहृष्टरक्तान्तिजननमायुष्यमुत्तमोत्तमम् ॥ १२३३ ॥

र. सं, भै र, र च, र. र, प., र. रु, र. क. र. का, र. क. पित्त ।

भाषा—लोहभस्मसे घौयुना दूध और दूना घी, चतुर्थांश  
विहृततण्डुल, शकर और मधु लोहकीघावर लेखर तावेकी कड़ा  
हीमें मन्दागिमें पकावे । चाचनी तैयार होनेपर उतारकर रखले ।  
६-७ दिन घीतनेपर १-१ मासेसे छुलकर अर्द्धतक अनुकूल-  
होसके उतानीमाना बड़ावे । इसपर नारियलकाजलवगीरह जो  
अनुकूलके बह अनुपानमें देवे । इससे बड़ाहुआ रक्तपित्त,  
अम्लपित्त, उर क्षत, क्षय ये सब नष्टकर आयुवर्धतीहे ॥ १२३० ॥

### ३०१ समीरगजकेसरीरसः

नवाहिफेनं कुचिलं नवानि मरिचानि च ।

समभागानि सर्वाणि रक्तिकाप्रमितानि च ॥ १२३४ ॥

देयानि प्रातरेतानि पुनस्ताम्रलचर्चयन्म् ।

कुञ्जे च खड्गपात्रे च सर्वजं शृण्वसीगदे ॥ १२३५ ॥

अपवाही प्रयोक्तव्यः शोषे कम्पेऽपतानके ।

चिच्छ्यामरुची दीयोऽपस्मरके च विशेषेण ॥ १२३६ ॥

र. की., र. चं, वै र, र. रु, नि र, रसायनं, वै. द,  
र. प्र, वै. चि., चि र म, वातव्याघ्रधिकारे ।

टि०—चि र म, रसचि समीरारिरस इति नाम । रसपारिजाते  
वातारिरस इति नाम । अत्र नवाहिफेनस्थाने अवाहिफेनमिति  
पाठो दृश्यते ।

भाषा—छुद अजीम, कुचिला और मरिच समभागलेखर  
घारीकचूर्णकर पानकेरससे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रतीकी

गोलिये बनाकर रखोजे । इसमेंसे १-१ गोली पाननेसाथ खानेसे  
कुञ्जता, सप्राता, शृण्वी, अपवाहुक, शोष, कम्प, रसिचान,  
विसृचिका, अरुचि, अपस्मार इनसबको यह नष्टकरताहे ॥ ३०१ ॥

### ३०२ समीरपद्मगरसः ( प्रथमः )

अम्रगन्धविषयोपरसद्भुजान्तामांशकाय ।

भावयेत्सप्तधा भृङ्गरसेन स्यात्समीरहा ॥ १२३७ ॥

आर्द्रद्वयेण गुञ्जाऽस्य खण्डव्योपयुताऽथवा ।

महावाताजयत्यानु नासाभ्यातः प्रबोधयत् ॥ १२३८ ॥

चि. सा., वै र, र. की., र. सं, र. रु, चि. र., र. रु,  
नि. र, र. च, डो., रसायनं, वै. चि, रस. घ., र. पा,  
वातव्याघ्रधिकारे ।

भाषा—अम्रकभस्म, छुदगन्धक, बज्जनाग, पारा और  
मुहागा, त्रिकटु सब समभागलेखर नीलवर्णकजलीकर भंगरेकेरसमें  
७ दिनतक मर्दनकर १-१ रतीकी गोलिये बनाकर रखोजे ।  
इसमेंसे १-१ गोली अर्द्धरकेरसे अथवा शहरकुच त्रिकटुके-  
साथदेनेसे यह समस्त वातविकारोंको नष्टकरताहे । नस्यदेनेसे  
सूच्यांको दूरकरताहे ॥ ३०२ ॥

### ३०३ समीरपद्मगरसः

पारदं गन्धकं महं हरितालं तथैव च ।

पतयन्तुर्ध्रुवं सूर्यं तुलसीरसमर्दितम् ॥ १२३९ ॥

घटौ कृत्वाऽन्नकेर्णेयं वेष्टयेत्तोलरुन्तु तत् ।

शराचयुगले क्षित्या वालुकायन्त्रां पचेत् ॥ १२४० ॥

क्षीपिकाप्रमिते यद्वि दत्त्वा यामचतुष्टयम् ।

स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य नान्नाऽसौ घातपन्नः ॥ १२४१ ॥

सन्निपाते तथोन्मादे सन्धिगन्धे कफामये ।

नागवल्क्या दलेनैव भक्षयेद्भुजिकाद्वयम् ॥ १२४२ ॥

र. चं, रसायनं, वातरोगे ।

टि०—बत्याकेशरिण सप्तदिनानि मर्दन विधाय शुष्कजालिका  
विधाय वाचचूर्णा विन्यस्य चतुर्थांशं वातुकाधी विषाच्य प्रयोगकरने  
महत्त्वक अवधीति स्वीयानुभवेऽस्तीति विद्वद्विषयलीनम् ।

भाषा—छुद पारा, गन्धक, सोमल और हरिताल समभाग  
लेखर नीलवर्णकजलीकर तुलसीकेरससे १-२ दिन मर्दनकर  
गोला बनाय सफेद अन्नकेषेप्योंसे लपेटकर शराबसमुद्रमें बन्द-  
कर २-३ काइमिमीदेकर वालुकायन्त्रमें रख मन्दागिसे ४ पहर-  
की अग्निदे । स्वाङ्गशीतकोनेपर निकालकर रखोजे । इसमेंसे  
२-२ रती पाननेसाथदेनेसे सजिपात, उन्माद, सन्धिकसजिपात  
और कफरोग नष्टहोतेहे ॥ ३०३ ॥

### ३०४ सम्मोहलोहम्

त्रिकटु त्रिफला वह्निं विडङ्गं लौहमग्नकम् ।

पतानि समभागानि घृतेन घटिकां कुरु ॥ १२४३ ॥

कामला पाण्डुरोगञ्च हृद्रोगं शोथमेव च ।

भगन्दरं कोष्ठकिमीन्मन्दानलमरोचकम् ॥ १२४४ ॥

तान्सर्वाश्चाशयेदाशु यत्नवर्णाश्रितवर्धनः ।

सम्मोहलोहनामाऽयं पाण्डुरोगे च पूजितः ॥१२४५॥

र. सं., र. चं., र. सु., पाण्डो ।

टि०—अथ पाठश्रुतवैयर्थ्याय लोहद्वयत्वात् इति सुषेभिरत्रिभिरणीयम् ।

भाषा—त्रिष्टु, त्रिफला, चित्रक, विडङ्ग, लोह और अश्वत्थमस्य समभागलेख्य वारीकचूर्णं रक्खजेहे । इसमेंसे १-१ माशा धीकेसायलेनेसे कामला, पाण्डु, हृदोग, शोथ, भग्नदर, कोष्ठमिहि, मन्दाग्नि, अर्धचि, यत्नवर्णाश्रित इत्यस्यको यह नष्टकरताहे ॥ ३०४ ॥

### ३०५ सर्वगदहरीवटिका

भल्लांतं सूतगन्धं त्रिफलविपपुर्न

तुल्यभागेन मर्त्यं,

राजाकभृङ्गचक्षिषिकदुजलकृता

गुञ्जमात्रा घटी स्यात् ।

दुर्जयाद्यग्निमान्द्यं कृमिकुलदलना

सर्वशूलान्निहन्ति,

पथ्यं दोषानुसारि निस्त्रिलगदहरी

मासमेकं प्रयुक्ता ॥ १२४६ ॥

र. सि., संगदे ।

भाषा—शुद्ध भिलावे, पारा, गन्धक, यक्ष्माग और गुग्गुलु, त्रिफला सत्र समभागलेख्य वारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्ण-कञ्जलीमें सबको मिलाय नीलाकंके लौग, भगरा, चित्रक और त्रिकटुकदेवीसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रक्खजेहे । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगो-चिन्तागुणनकेमाथेदेनेसे मन्दाग्नि, कृमि, शूल इनसबको एक-महीनेमें नष्टकरतीहे ॥ ३०५ ॥

### ३०६ सर्वज्वरसूदनरसः

रसगन्धाश्रितकटुकत्वग्लेहाकलकृन्तया ।

टङ्गुर्न सर्पगर्लं पृथग्भागेन मिश्रितम् ॥ १२४७ ॥

घत्सनाभी द्विभागः स्याद्भृङ्गराज्रसेन वै ।

चिमर्यं घटिका कार्या मुद्रमाना सदा धुषे ॥ १२४८ ॥

अपक्वोऽप्यथवा पक्वे सामे नीरामके ज्वरे ।

जीर्णे च विषमे चैव दातव्या चार्द्रकट्वैः ॥

दधिभक्तं सितं पथ्यं तापे शीतोदकक्रिया ॥ १२४९ ॥

रसायनतः, ज्वराऽधिकारे ।

टि०—रसायनमद्रमद प्व दिनीयरवने भृङ्गराजेन्द्रनाम्ना पाठो िलितः म गृह्ययोगस्य परामर्शमद्वया लिखित इति प्रतिभाति ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, चित्रक, कुट्टी, सत्र, इला-यची, अखलहरा, भुनामुद्राणा, सर्पविष १-१ भाग, शुद्धभ-नाम २ भागलेख्य राजरा वारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्ण-कञ्जलीमें मिलाय १-२ दिनभेगंकरससे मर्दनकर भृङ्गराज्र-गोलियें बनाकर रक्खजेहे । इनमेंसे १-१ गोली अर्धचन्देसाय देनेसे पत्र अपरा अरु, साम अथवा निराम, जीर्ण और विष-

मज्जर्वेको यह नष्टकरताहे । अत्यन्तमूलमनेपर दही, भात और क्षारदेवे । अत्यन्तममर्मा मालूमहोनेपर टेंडेजलका प्रयोगकरे ।

### ३०७ सर्वज्वरहररसः

फलत्रयं त्रिकटुकं जयपालाहिकेनरुम् ।

लवणाण्यम्युदधैश्च भाङ्गौ च पित्तपर्वटम् ॥ १२५० ॥

एतानि सममात्राणि विपश्चेद्यार्द्रमात्रकम् ।

एषां गुञ्जाप्रमाणेन बन्धनीया गुटी धुषेः ॥ १२५१ ॥

एकाहिके तथा जीर्णे विषमे क्षणदाज्वरे ।

भक्षयेत्पथ्यसा प्रातः सर्वज्वरनिवृत्तये ॥ १२५२ ॥

र. को., ज्वराधिकारे ।

भाषा—त्रिफला, त्रिष्टु, शुद्धजमालगोटा और अजीम, पांचोनीमक, नागरमोया, भारती और पित्तपापड़ा १-१ कर्प, शुद्धवृषभाग ८ मासे लेकर वारीकचूर्णकर अर्धराखीरहकेरससे एकदिनपोटर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रक्खजेहे । इन-मेंसे १-१ गोली तुलसीवपेरहके रसकेसायदेनेसे एकाहिक, जीर्ण, विषम और रात्रिज्वर नष्टहोतैवै । सामारणज्वरमें प्रातःकाल दूधकेसाय देना ॥ ३०७ ॥

### ३०८ सर्वज्वरहरलोहम् ( प्रथमम् )

चित्रकं त्रिफला व्योषं विडङ्गं मुस्तकं तथा ।

श्रेयसी पिप्पलीमूलमुदीरं देवदारु च ॥ १२५३ ॥

क्रिपततित्तकं पाठा कटुकी कण्टकारिका ।

शोभाञ्जनस्य बीजानि मधुकं घत्सकं समम् ॥ १२५४ ॥

लीहृतुल्यं गृहीत्वा तु घटिकां कारयेद्विषम् ।

सर्वज्वरहरं लोहं सर्वरोगहरन्तथा ॥ १२५५ ॥

वातिकं पित्तकञ्चैश्च श्लेष्मिकं साप्तिपातिकम् ।

द्वन्द्वजं विषमाप्यञ्च धातुरप्यञ्च ज्वरज्वरे ॥ १२५६ ॥

शीतं कर्षं तृषां दाहं घर्मलुतिविमिश्रमान् ।

रक्तपित्तमतीसारं मन्दाग्निं कासमेव च ॥ १२५७ ॥

ह्रीहानं यकृतं शुल्मं स्तामघातं मुद्रारुणम् ।

अशीसि धोरमुदरं मूच्छं पाण्डुं हलीमकम् ॥ १२५८ ॥

अज्यं घट्टणीञ्चैव यक्ष्माणं शोथमेव च ।

वर्षं घृण्यं पुष्टिकरं सर्वरोगनिवृद्धनम् ॥

सर्वज्वरहरं लोहं चन्द्रनाथेन भाषितम् ॥ १२५९ ॥

र. सं., भै. र., र. चं., ध., र. सु., ज्वराऽधिकारे

भाषा—चित्रक, त्रिफला, त्रिष्टु, विडङ्ग, नागरमोया, गजपीपल, पिप्पलगुल, चस, देवदारु, चिरायता, पाठा, कुट्टी, भट्टट्टया, सहजिनकेबीज, मुलहठी, इन्द्रजव तथ समभागलेख्य सबकीबराबर लोहभस्माधिलार तुल्यविरससे १-२ दिन मर्दन-कर २-२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रक्खजेहे । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचिन्तागुणनकेमाथेदेनेसे वातिक, पित्तक, श्लेष्मिक, साप्तिपातिक, द्वन्द्व, विषम और धातुरज्वर, शोथ, कर्ष, तृषा, दाह, घर्मदोह्रम, घनम, अम, रक्तपित्त, अतिपाठ, मन्दाग्नि, कास, गीहा, यकृत, शुल्म, भयदर आमवात, घा-

सीर, भयङ्कर उदररोग, सूक्ष्म, पाण्डु, हलीमक, जजीर्ण, प्रद्वी, यक्ष्मा, शोथ, कृशता इनसबको गोंको यह नष्टकरताहै ३०८

### ३०९ सर्वज्वरहरलोहम् ( वृहत् ) २

पारदं गन्धकञ्चैव ताम्रमम्रञ्च माक्षिकम् ।  
हिरण्यं तारतालञ्च कर्पमेकं पृथक् पृथक् ॥ १२६० ॥  
कान्तलोहं पलं देयं सर्वमेकीकृतं शुभम् ।  
वक्ष्यमाणोपधे भौव्यं प्रत्येकं दिनसप्तकम् ॥ १२६१ ॥  
कारयेत्तुरसैवापि दशमूलरसेन च ।  
पर्यटयाच्च कपायेण त्रिफलाकाथकेन वा ॥ १२६२ ॥  
शुद्ध्याः स्वरसेनैव नागवह्नीरसेन च ।  
कान्तमाचीरसेनैव निर्गुण्डयाः स्वरसेस्तथा ॥ १२६३ ॥  
पुनर्नवाऽऽङ्गकाम्भोभि भायना परिकीर्तिता ।  
रक्तिमादिक्रमेणैव घटिकां कारयेद्भिषक् ॥ १२६४ ॥  
पिप्पलीगुडसंयुक्ता घटिका ज्वरनाशिनी ।  
ज्वरमप्यधि हन्ति जीर्णज्वरहं तथा ॥ १२६५ ॥  
वारिदोयोद्भयञ्चैव नानादोयोद्भवस्तथा ।  
सततादिज्वरं हन्ति साध्यास्ताभ्यमयापि वा ॥ १२६६ ॥  
क्षयोद्भवञ्च धातुस्यं कामशोकभवस्तथा ।  
भूतावेशरामयञ्चैव त्रिदोषजनितं तथा ॥ १२६७ ॥  
अभिघातज्वरञ्चैव तथाऽभिचारसम्भवम् ।  
अभिन्यासं महाघोरं विषमं व्याहिकं तथा ॥ १२६८ ॥  
शीतपूर्वं दाहपूर्वं त्रिदोषं विषमज्वरम् ।  
प्रलेपकज्वरं घोरमर्जनातीश्वरं तथा ॥ १२६९ ॥  
ह्रीहज्वरं तथा कासं चातुर्यिकविपर्ययम् ।  
पाण्डुरोगं कामलाञ्च अभिमान्यं महागन्धम् ॥ १२७० ॥  
प्रास्तवर्षाग्निहन्त्याशु पक्षाघातं न संशयः ।  
शाल्यभ्रं तक्रसहितं भोजयेद्विडलसंयुतम् ॥ १२७१ ॥  
ककारपूर्यकं सर्वं घर्जनयं न संशयः ।  
मैथुनं वर्जयेत्सायद्यावन्न यलवान्भवेत् ॥  
सर्वज्वरहं लोहं दुर्लभं परिकीर्तितम् ॥ १२७२ ॥

र. स. भे. र. घ. र. घ. ज्वराधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र, अक्रक, सोनामाखी, सुवर्ण, रजत इनकीमसमें और रसमाषिक्य १-१ कर्षं, कान्त-लोहमस १ पल लेकर नीलवर्णकजलीकर करेला, दसमूल, पित्तपापहा, त्रिफला, गिलोय, पान, मकोय, निर्गुण्डी, पुन-र्नवा इनप्रत्येककेसोसे ७-७ भागनाएँ देकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखोजे। इनमेंसे १ से २ गोलीतक बलाबल देखकर पीपल और गुडकेवाधदेनेसे ८ प्रकारकेज्वर, जलेरो-पोत्य, कृत्रिम, सततादि विषम, साध्य अथवा असाध्य, क्षयज, धातुस्य, कामज, शोकज, भूतावेशज, अभिघातज, अभिचारज, असाध्य अभिन्यास, शीतपूर्वं अथवा दाहपूर्वं, प्रलेपक, अर्धनारीश्वर, ह्रीहज, चातुर्यिकविपर्यय इत्यादि सम-स्तज्वर, कास, पाण्डु, कामला, मन्दाग्नि इनसबको ७ दिनमें

यह नष्टकरताहै। मूलखनैर सफेदचावल, छाछ और सबलनमक देवे। कफारादिगणहा बर्जनेकरे और जयतक शक्ति न आवे तबतक मैथुन न करे ॥ ३०९ ॥

### ३१० सर्वज्वरहरलोहम् ( वृहत् ) ३

द्विपलं जारितं लोहं रसं गन्धं द्विकर्पकम् ।  
कर्पकं त्रिफला व्योषं विडङ्गं मुस्तकं तथा ॥ १२७३ ॥  
श्रेयसी पिप्पलीमूलं हरिद्रि दे च चित्रकम् ।  
आर्द्रकस्य रसेनैव घटिकां कारयेद्भिषक् ॥ १२७४ ॥  
गुडार्घ्यं वर्त्यं कृत्वा मक्षयेद्वाद्रकद्रवैः ।  
सर्वज्वरहं लोहं सर्वज्वरयिनाशनम् ॥ १२७५ ॥  
घातिकं पित्तिकञ्चैव श्लेष्मिकं साभिपातिरुक् ।  
विषमज्वरभूतोत्पं ज्वरं प्लीहानमेय च ॥ १२७६ ॥  
मासजं पञ्चजञ्चैव तथा संयत्सरोत्थितम् ।  
सर्वाङ्गप्राग्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥ १२७७ ॥  
भै. र. घ. र. घ. ज्वराधिकारः ।

भाषा—लोहमस २ पल, शुद्ध पारा और गन्धक २-२ कर्षं, त्रिफला, त्रिफुट, विडङ्ग, नागरमोया, गन्दीपल, पिप्पला-मूल, हल्ली, दाहल्ली और चित्रक १-१ कर्षं लेकर बारीक-चूर्णकर अक्षरखके रससे १-२ दिन मर्दनकर २-३ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखोजे। इनमेंसे १-१ गोली अक्षरखकेरससेवाय देनेसे शृष्क, क्षुब्ध अथवा अभिघातज्वर, विषम, भूतोत्प, मासज, पञ्चज, संवत्सरज इत्यादि समस्तज्वर, ह्रीहा इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३१० ॥

### ३११ सर्वज्वरहरीवटी ( लीलावती, जीर्णज्वरारिः )

एकभागो रसो भागद्वयं शुद्धञ्च गन्धकम् ।  
गरलस्य त्रयो भागाश्चतुर्भागा हिमायती ॥ १२७८ ॥  
जैपालकः पञ्चभागो निम्बुद्रव्यमिदं ।  
किमिन्नप्रमिता यद्यतः कार्याः सर्वज्वरच्छिदः ॥ १२७९ ॥  
शुद्धयेरेण दातव्या घटिकेका विनेदिने ।  
जीर्णज्वरे तथाऽजीर्णं सामे या विषमे तथा ॥  
ज्वरं सर्वे निहन्तोऽपि दावो घर्माभाऽनलः ॥ १२८० ॥

भा प्र, वृ यो त, रसायनस, र. क ल, दो, र का, वै. र., र. घ., यो त, चि र. भ, ना वि, ज्वराधिकारः ।

टि०—वृ यो त, यो ॥, एतयैरेण्यथो ह्रीलावती वटीदिनाम स्थापित रसायनसङ्ग्रहे ॥ नामद्वयमप्यस्ति स्वानभेदात् । ना वि, “चतुर्गुणितमरिचं यस्मिन्ना त्रयवर्षिता । शुल्लगुणोदप्लीशक्षयपादादि-रोगमुल ॥” इत्यधिक पाठ कृत्वा शुल्लगुणोदप्लीशक्षयपादादिनाम स्थापितम् । पञ्चविंशतितमवज्जाननेन किंवदन्तेष्वयं साम्यमावहति परन्तु कणास्याने विद्यावतीप्रयोगात् लाङ्गलीरवने च जयपालसङ्ग्रहात् मदन-नोरेण स्वतन्त्रवैव पादो गृहीतोऽस्ति ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा, सर्वविष ३ भा, शुद्धमैनासिल ४ भा, जमालगोटा ५ भाग लेकर नीलवर्ण-कजलीकर नीचुरेखसे २-३ दिन मर्दनकर विडङ्गचावर गोलियां बनाकर रखोजे। इनमेंसे १-१ गोली अक्षरखकेरसके

साधदेनेसे जीर्ण, अजीर्ण, साम, विषमप्रवृत्ति ज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३११ ॥

### ३१२ सर्वज्वराहुश्वदी

शुद्धं सूतं तथा गन्धं मरिचं नागरं कणा ।  
त्वचं जैपालकं कुष्ठं भृङ्गिन् मुस्तकं पृथक् ॥१२८१॥  
चूर्णयित्वा समांशान् कज्जल्या सह मेलयेत् ।  
निर्गुण्ड्याः स्वरसे चैवमाद्रिकस्य रसे तथा ॥१२८२॥  
भायनां कारयित्वा तु घटिकां कारयेद्विपक्व ।  
एकैकां भक्षयित्वा तु घृक्षयेष्टश्च कारयेत् ॥१२८३॥  
एषा ज्वराहुश्वदी सर्वज्वरविनाशिनी ।  
पृथग्दोषांश्च विविधान्समस्तान्विषमज्वरान् ॥१२८४॥  
प्राकृतं वैकृतं चापि घातस्तेष्वमकृतं तथा ।  
अन्तर्गतं वह्निःस्थश्च निरामं साममेव वा ॥  
ज्वरमष्टविधं हन्ति वृक्षमिन्द्राशनि र्यथा ॥१२८५॥  
भै. र. , र. सु , ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध घारा और गन्धक, मरिच, सोंठ पीपल, तन, शुद्धनमालगोटा, कुष्ठ, चिरायता, नागरमोया येसब समभागलेकर घारीकचूर्णकर पारेगन्धकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय निर्गुण्डा और अदरककेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रस्तीकी गोलियां बनाकर रखोहे । इन्मेंसे १ से ३ गोलीतक अदरककेरसके साथदेकर बलबोझाकर छलानेसे पसीनाहोकर साधारण, द्वन्द्वज, विषम, प्राकृत, अथवा वैकृत, अन्तःस्थ, वहि स्थ, निराम अथवा साम ये समस्तज्वर नष्टहोतेहैं ॥ ३१२ ॥

### ३१३ सर्वज्वरारिरसः

रसं गन्धकं हिङ्गुलं मौक्तिकञ्च  
पृथक् च्छुमानं रविश्वादीदत ।  
विष्णुर्णं द्विप्रेक्षुप्रिष्ठायां द्विप्रासं  
खण्डसी पचेज्ज्वरतिमहौ हरेत्तत् ॥१२८६॥

र. ( मा ), ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध घारा, गन्धक और शिंगरिफ, मोदी और ताम्रमेस समभागलेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर ३-४ कपड़-मिठीदीहुई आतशीधीसीमें रख दोषहरकी तोषणाभि देवे । स्वाश्वदीतलहोनेपर निकालकर रखोहे । इसमेंसे १-१ रस्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तज्वर और प्रमेहोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३१३ ॥

### ३१४ सर्वतोभद्ररसः ( प्रथमः )

सूतं कान्तं गगनतपनं ताप्यकं शुद्धतालं,  
राजायतं सुरमिमधुकं मानसी चैति तुल्यम् ।  
ध्वोपातं शिरिकलिककरं भृङ्गतोयेन मधं,  
गोलीभूतं भवति विमलः सधंमद्रामिधानः ॥१२८७॥  
शूलं मुग्धं जटरज्जो घातज्जानसर्वरोगान्,  
यहो नायं कफरुनगदं पीनसश्च ज्वरार्तिम् ।

ल्लेहं पाण्डुं क्षयकृतकञ्चः कुष्ठरोगानशेषान्,  
मूर्च्छां रोगान्धनज्जर्जं हन्ति रोगांस्तथाऽन्यान् ॥१२८८॥

र. चं. घ., र. र. , रससागर, र. सु , रसायने । रसरागध्वन्द्वे  
ग्रन्थ पाठोऽस्ति ।

भाषा—शुद्ध घारा, सोनामारी, हरिताल, गन्धक और मैनसिल, कान्तपाषाण, अत्रक, ताम्र, राजवदं इनकीमहम्मं, मुलहठी, त्रिफळ, कुष्ठ, चित्रक, अकलकरा सबसमभागलेकर घारीकचूर्णकर घातुओंकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय भंगरेवेरसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रस्तीकीगोलियां बनाकर रखोहे । इन्मेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे शूल, तुल्य, जटररोग, वातरोग, मन्दाभि, कफरोग, पीनस, ज्वर, डीहा, पाण्डु, क्षय, कुष्ठ, शिर और मुखके रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३१४ ॥

### ३१५ सर्वतोभद्ररसः ( द्वितीयः )

गन्धेशाप्रकताप्रलोहकुन्दतीतुल्यं समं तालकं,  
भोगीग्लेकृच्छरीर्यकं समलवं सर्वोदापदं विषम् ।  
सम्प्रदाईकतोयतीरसमितात्सन्धूपितं तद्विषा-  
न्नायं सप्तदिनं पृथग्वरुणयुग्वासाष्टनिर्गुण्डिका- ॥  
व्योपादं त्रिफलासभृङ्गविजयाजैपालजैस्तद्वसेः,  
यिसैवापि जयेदयं रसवरो दुःसन्निपातादिकान् ।  
तन्मोहोहविसञ्ज्ञताः किल धनुर्वातं सवातं मिलद्-  
हं प्रगन्धनमस्मृतिं नयनयोः क्षेपाद्विस्त्रचीमपि ॥१२९०॥

र. क , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध घारा, गन्धक, मैनसिल, तुल्य, हरिताल और शिंगरिफ, अत्रक, ताम्र, लोह और नाग इनकीमहम्मं, अगर येसब समभाग, सप्ते चतुर्वीस शुद्धवज्रनालेकर घारीकचूर्णकर घातुओंकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय अदरककेरससे १-२ दिन मर्दनकर पारेकेबराबर बलनागडी डमरुवज्रमें धूनीदेकर पशुन, अडवा, अष्टा, निर्गुण्डा, त्रिफळ, अदरक, चित्रका, भंगरा, भाग, जमालगोटा इनकेरसोंसे ७-७ भावनाएँ देकर यथासमय पिताकीभावनादेकर १-२ आकलमकी गोलियां बनाकर रखोहे । इन्मेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे दुष्ट-सन्निपात, तन्मा, मोह, मूर्च्छा, धनुर्वात, वातरोग, दन्तवन्ध, अग्न्यार, इनमन्को यह नष्टकरताहै । आलोंमें डालनेसे देहनेष्ट होकरप्राप्ति ॥ ३१५ ॥

### ३१६ सर्वतोभद्ररसः ( तृतीयः )

सिन्दूरमन्त्रं रजतश्च हेम  
समेन भागेन मनःशिलाश्च ।  
द्विदशस्तु घांशी निखिलेन तुल्यं  
सम्पदयेद्गुग्गुलुकं प्रयत्नात् ॥१२९१॥  
ततस्तु मायप्रमिता विषाय  
घटीं प्रयुज्जीत यथानुपानम् ।

यं सर्वतोभद्ररसो न हन्ति

न सोऽस्ति रोगः खलु देहिदेहे ॥ १२९२ ॥

भै. र. सर्वतो मे ।

भाषा—रससिन्दूर, अभ्रक, रजत और सुवर्णमसम, शुद्ध-  
मैनासिल १-१ भाग, यस्तोचन २ भाग, गुग्गुलु ३ भागलेवर  
बारीकचूर्णकर घृतकेयोगसे बृणलका द्रवकनाय चूर्णको मिला-  
कर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखोदे । इतमेंसे १-१  
गोली उचितानुगन्धकेसाधनेसे यह समस्त रोगोंको नष्टकरताहै ॥

३१७ सर्वतोभद्ररसः (चतुर्थः)

विशुद्धं गगनं प्राद्यं हिरण्यं शुद्धगन्धकम् ।  
कर्पूरं कर्पूरार्धञ्च हिमलोत्यरसन्तथा ॥ १२९३ ॥  
कर्पूरं केशरं मांसी तेजःपत्रं लघ्नकम् ।  
जातीकोपफलञ्चैव सूक्ष्मैला करिपिप्पली ॥ १२९४ ॥  
कुष्ठं तालीसपत्रञ्च धातकी चोचमुस्तकम् ।  
हरीतकी च मरिचं शृङ्गेरयिभीतकम् ॥ १२९५ ॥  
पिप्पल्यामलकञ्चैव शाणभागं विशुर्णितम् ।  
सर्वमैकीकृतं पिप्पुा वटी कुर्याद्विभक्तिकाम् ॥ १२९६ ॥  
भक्षयेत्तर्पणखण्डेन मधुना सितयाऽपि वा ।  
रोगं ज्ञात्वाऽनुपानञ्च प्रातः कुर्याद्विचक्षणः ॥ १२९७ ॥  
हन्ति मन्दानलान्सर्वानामदीषं यिसुचिकाम् ।  
पित्तश्लेष्मभयं रोगं वातश्लेष्मभयन्तथा ॥ १२९८ ॥  
आनाहं मूत्रकृच्छ्रञ्च सङ्ग्रहप्रहणी घमिमम् ।  
अम्लपित्तं शीतपित्तं रक्तपित्तं विशेषतः ॥ १२९९ ॥  
चिरज्वरं पित्तभयं धातुरर्थं विषमज्वरम् ।  
कासं पञ्चविधं हन्ति कामलां पाण्डुमेव च ॥ १३०० ॥  
सर्वलोरुहिताथार्या शिवेन कथितः पुरा ।  
सर्वतोभद्रनामायं रसः साक्षान्महेश्वरः ॥ १३०१ ॥

र. सं., ष्वराधिकारे ।

भाषा—अभ्रकमसम २ कर्प, शुद्धगन्धक १ कर्प, शिम-  
रिक्केनिकाकाहुभापारा ८ माशे, शुद्धकपूर, केशर, जटामासी,  
पत्रन, लौग, जाविनी, जायफल, छोटीझल्यकी, गजपीपल, कुष्ठ,  
तालीसपत्र, धावईकेफूल, तज, नागरमोथा, हरे, मरिच, सोंठ,  
बहेड़ा, पीपल और आवला ४-४ माशे लेकर सबका बारीक-  
चूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय अर्द्धघण्टे तक  
१-२ दिन घोटकर २-२ रत्तीकी गोलियाबनाकर रखोदे ।  
इतमेंसे १-१ गोली उत्तद्रोगहरानुपानकेसाध, पान अथवा मधु  
और साक्षकेसाध प्रातः कालदेनेसे मन्दाग्नि, आम, देह्रा, वात,  
कफ और पित्त रोग, आनाह, मूत्रकृच्छ्र, सङ्ग्रहणी, घमन, अम्ल-  
पित्त, शीतपित्त, रक्तपित्त, पित्तोत्पत्तीर्णज्वर, धातुव्यविषमज्वर,  
कास, कामला, पाण्डु, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३१७ ॥

३१८ सर्वतोभद्रलोहम् (प्रथमम्)

लोहचूर्णं मृतं तापमग्नकञ्च पलं पलम् ।

शुद्धसूतञ्च कर्पकं गन्धकार्दपलन्तथा ॥ १३०२ ॥

माक्षिकस्य विशुद्धस्य कर्पं शुद्धा शिला परा ।  
सार्धं कर्पं विशुद्धञ्च शिलाजतु तथापरम् ॥ १३०३ ॥  
गुग्गुलोश्वापि कर्पकं शाणमानं परस्य च ।  
चूर्णं विडङ्गमलातवद्विश्वेताकमूलजम् ॥ १३०४ ॥  
करिकर्णपलाशञ्च तालमली पुनर्नवा ।  
घनाऽमृते नागबला चक्रमर्दकमुण्डिके ॥ १३०५ ॥  
मूत्रकेशशताचर्यां वृद्धदारं फलत्रिकम् ।  
त्रिकटुश्वापि सर्वेषां प्रत्येकञ्च नयेद्विपक्वम् ॥ १३०६ ॥  
सर्वमेकत्र समार्धं घृतेन मधुना सह ।  
क्षिप्वे भाण्डे विनिक्षिप्य ततः कुर्याद्विधानवित् ॥  
भाषकादिक्रमेणैव लौहं सर्वरसायनम् ।  
अम्लपित्तं जयेच्छीघ्रं सर्वोपद्रवच्युतम् ॥ १३०८ ॥  
तद्वदशांसि सर्वाणि सर्वमेव भगन्दरम् ।  
पक्वियुलञ्च युलञ्च तथां कुक्षिसम्मयम् ॥ १३०९ ॥  
धातरकं तथा कुष्ठं पाण्डुरोगं हलीमकम् ।  
आमवातं तथा शोथमग्निमाद्यं सुदुस्ततम् ॥ १३१० ॥  
कामलां वातगुल्मञ्च पिडिकागरगृध्रसीः ।  
कासश्वासास्रविहर्षं वृष्यमेतद्विशेषतः ॥ १३११ ॥  
सर्वव्याधिहरं श्रेष्ठं यद्येष्टाहारसेविनः ।  
यस्मात्पुं रक्तपित्तञ्च वातरोगं विनाशयेत् ॥  
संज्ञया सर्वतोभद्रलोहो रसवरः स्मृतः ॥ १३१२ ॥  
भै. र., अम्लपित्ते ।

भाषा—लोह, ताप और अभ्रकमसम १-१ पल, शुद्धपारा  
१ कर्प, गन्धक २ कर्प, शुद्ध सोनामाली और मैनासिल १-१  
कर्प, उत्तमशिलाजीत १ कर्प, शुद्धगुल १ कर्प, विडङ्ग, मिलावे,  
त्रिकटु और सफेदआषकीअड, पलाशबेल, कालीमुशली, पुन-  
र्नवा, नागरमोथा, गिलोय, नागबला, पवाड, गोरखमुण्डी,  
स्याहश्वेदभंगरा, शतावरी, विचारा, त्रिफला, त्रिकटु ४-४ माशे  
लेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय ॥  
और धीरेधीरेमिलाकर, चिकनेबर्ततेमें रखोदे । इतमेंसे १  
माशेसे ३ माशे तक औचित्यी देखकर उचितानुपानकेसाध देनेसे  
सर्वोपद्रवजुग अम्लपित्त, अग्नि और भगन्दरको यह नष्टकर रसा-  
यनका कामकरताहै । तत्तद्विशेष अनुपातोंकेसाधदेकर पच्यवि-  
शेषकासेवनकरनेसे पक्वियुल, साधारणयुल, आम, कुक्षियुल, वात-  
रक्त, वृष्ट, पाण्डु, हलीमक, आमवात, शोथ, दुस्तरमन्दाग्नि,  
कामला, वातगुल्म, पिडिका, गर, गृध्रसी, कास, श्वास, अस्थि-  
यक्ष्मा, रक्तपित्त और वातरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३१८ ॥

३१९ सर्वतोभद्रलोहम् (द्वितीयम्)

गव्येन नवनीतेन स्वर्णमाक्षिकचुक्षुकी ।

निपिप्य लेपयेच्छ्लोहं कान्तपाण्ड्यादिस्ममयम् ॥ १३१३ ॥

ध्यापयेत्कर्मकाराग्नौ सिक्त्वा सिक्त्वा पुनः पुनः ।

त्रिफलाप्याद्यतोयेन ततो निर्वापयेत्सुधीः ॥ १३१४ ॥

पश्चात्सम्पिप्य तल्लौहं दाहयेत्पुटवह्निना ।  
 अम्हैरारूप्य विधिना जलधौतं प्रयत्नतः ॥ १३१५ ॥  
 शृङ्खणचूर्णं ततः कृत्वा बहुघृष्टनु कारयेत् ।  
 पलञ्चतुष्टयं तस्य मधुकस्यापि तत्समम् ॥ १३१६ ॥  
 पथ्याधानीविभीतस्यो रसश्च त्रिकटुस्तथा ।  
 चचावहिविडङ्गानि कृष्णजीरकजीरके ॥ १३१७ ॥  
 दन्ती पुनर्नवा मूली प्रत्येकं पलसह्यया ।  
 पलायाः कर्पकं दद्यात्कार्पिकं कटुरोहिणीम् ॥ १३१८ ॥  
 पलाई गन्धकं देयं पलाई गुग्गुलुत्वचम् ।  
 चूर्णयित्वा विधानेन सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ १३१९ ॥  
 घृतमष्टपलं दत्त्वा क्षीरं चतुःशरावकम् ।  
 चतुर्विंशपलकाये त्रिफलाशेषधारिणा ॥ १३२० ॥  
 घृतपूतेन विधिपत्पाचयेत्तान्नाभाजने ।  
 लोहोद्भवद्वयिकायां पाकं कुर्याद्विपाकवित् ॥ १३२१ ॥  
 शीतलञ्च ततः कुर्यात्स्निग्धे भाण्डे निधापयेत् ।  
 रक्तिकादिक्रमेणैव घृतेन मधुना सह ॥ १३२२ ॥  
 सम्मर्द्य लोहदण्डेन लोहपात्रे च भक्षयेत् ।  
 क्षीरानुपानं दातव्यं पित्तदुष्टायरोगिणे ॥ १३२३ ॥  
 तथामकोष्ठिने दद्याद्यक्षरस्य वारिणा ।  
 मूत्राण्डविट्पारकपित्तशूलदिसम्मवे ॥ १३२४ ॥  
 क्षीरं शर्करया मिश्रमनुपानं प्रयोजयेत् ।  
 चतुर्धा प्रहणीरोगे घातपित्तकफोद्भवे ॥ १३२५ ॥  
 क्षात्वा कुक्षौ मनाक् शूलमागमगन्धं सलोहितम् ।  
 कुक्षौ दक्षिणतः शूलं नाभिमण्डलकोपरि ॥ १३२६ ॥  
 घातपित्तनिदानं हि लक्षयित्वा प्रदीयते ।  
 नारिकेलञ्च समधु पानञ्च हितमिच्छता ॥ १३२७ ॥  
 रक्तचूर्णं विगन्धत्वमीपत्पानान्तुपैस्तिके ।  
 क्षीरं शर्करया युक्तमनुपानान्तु दापयेत् ॥ १३२८ ॥  
 कदित्रिकोद्भवे शूले कुक्षिशूल अरोचके ।  
 आमवातसमुत्थाने मुखक्षये च दीयते ॥ १३२९ ॥  
 ज्वरे सशूले सामे च वायुमार्गं निवर्तयेत् ।  
 यनकुन समुद्भूते शूले दद्याद्विचक्षणः ॥ १३३० ॥  
 वं छे, रसायने ।

भाषा—सोनामाखी और पुनर्नवाकेचूर्णको वायके मक्खनमें मिलाय कान्नादिलोहेके बारीकचूर्णपरलेपर लेहारकेयद्वा धमनकराके त्रिफलाकेकादेमें बारीकचूर्णहोनेतक घुसावे । फिर बारीकचूर्णको लेकर त्रिफलाकेकायेसे मर्दनकर दिक्की बनाय सुखाकर गजपुटकी आवेदे । स्वाज्ञश्रीतलोहोपर निकालकर फिर ह्मीतरहमर्दनकर भाषेदे । समहोनेकेवाद अन्त्यगमं घोटघोटकर २-४ भावें देकर पानीसे धोदाले की कबलकेसहघोटले । यह लोहभस्म और मुखहठी ४-४ पल, हरे, आवले, बहेरे, छुडपारा, त्रिकटु, वच, चित्रकमूल, विडङ्ग, कालीजोरी, जीरा, दन्ती और पुनर्नवाकी जड़ १-१ पल, इलायची और कुटङ्गी १-१ कर्प, शुद्धगन्धक ८ मासे, गुग्गुलुवृक्षकीछाल

२ कर्प लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलगन्धकजलीमें मिलाय धी ८ पल, दूध २ प्रस्थ, चतुर्धाधानादि त्रिफलाकाकाय २४ पललेकर सक्को तावेकीबहाहीमें लोहेकी बह्नीसे चलातहुआ मन्दाभिसे पाककरे । घन तीघरा होनेपर चक्के वर्तनमें रखओहे । इसमेंसे १ मासेसे आरम्भकर ३ मासेतक बढ़ावे । मात्राको लोहपत्रातमें धी और मधु ढालकर लोहेके ढण्डेसे थोड़ीदेर मर्दनकर सेवनकर ऊपरसे दूधपीवे । इससे दुष्टपित्त घान्तहोताहै । आमविकारमें यक्ष्मरकाजल, मूत्रां, वमन, रुपा, रफपित और शूलमें धार मिलाहुआदूध, ४ प्रकारकी प्रहणी, वात, पित्त और बफकी उत्पत्तयमें औचिनी देखकर अनुपानका योगफलसे सेव नष्टहोतेहै । कुक्षिशूल, नाभिचूल, कटिचूल, त्रिचूल, अरोचक, आमवात, मुखमार, शूलशहितकर इत्यादिकोंमें औचिनीदेखकर अनुपानका योग करे । आमगन्धपित्त रक्ती वमनमें नारियलकेजलमें मधु मिलाकरदेवे केवलपैस्तिक विकारमें धमरमिला दूधदेवे । इसकेप्रयोगमें वायु और आमपर विशेष लक्ष्य देवे ॥ ३१९ ॥

### ३२० सर्वतोभद्रावटी

हेमरौप्याम्रलोहानि जनु गन्धकमाक्षिकम् ।  
 यटीं रक्तिमितां कुर्याद्विमृष्ट घट्टणाम्भसा ॥ १३३१ ॥  
 यटीयं सर्वतोभद्रा निखिलान्मुक्तजागद्वान् ।  
 हरेत्स्तिमवांश्चापि शूलं धीर्यविषयिनी ॥ १३३२ ॥  
 आ. वि. उक्तमये ।

भाषा—धुवर्ण, रजत, अन्नक, लोह इनकीमर्दमें, शिलाजीत, गन्धक और सोनामायी समभागलेकर बरुकेकायसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोतिया बनाकर रखओहे । इनमेंसे १-१ गोली बरुके कायकेसाय देनेसे शूल और वस्तिके समस्त-रोग और शूलको नष्टकर यह बीर्यको बढ़ातीहै ॥ ३२० ॥

### ३२१ सर्वपकाशरसः

पारदगन्धकसैन्धवदङ्गुणशीतानि तुल्यभागानि ।  
 प्रथमं पारदगन्धौ कज्जलयित्वा मेलयेत्सर्वम् ॥ १३३३ ॥  
 त्रिदिनं सुरदाहिरसेन घृष्टं कं दिनं बहुरसेन ।  
 पश्चात्पुटेन दग्ध्वा दिनमेकं मध्येष्टोमृष्टे ॥ १३३४ ॥  
 अजकरिणीमहिषीखरयूने क्रमश एव सम्मर्द्य ।  
 बहुरसकटुकान्मिर्बेदरामलनीरसेः क्रमान्मर्चम् ॥  
 सिद्धं त्रिदिनं दद्यात्त्रिचलमलनाद्रैकमरिचयुतम् ।  
 घृतमुद्रवास्तुकार्द्रकयुक्तं भुक्तं त्रिदोषशमनाय ॥ १३३६ ॥  
 मागध्या मधुना चाश्रमासहयममुं गदी ।  
 वास्तुकार्द्रकमुद्राक्षं त्यजेत् राजयश्मणि ॥ १३३७ ॥  
 सिन्धुवाररसेन्धयार्द्रकैरेकविंशतिदिनान्यमुं रसम् ।  
 मुद्रवास्तुकाद्रकाशानामुच्यते सपदि गण्डमालया  
 विफलासंघवेनाश्रैस्त्रिस्तदाहं निचलकम् ।  
 कृष्णण्डकर्मटीतैर्कमुक्त्वा स्यात्तुल्यमशूलजित् ॥ १३३९ ॥

मरिचार्द्रकागवल्लीश्रे-

त्रिदिनं प्रादय हरेज्वरानशेषान् ।

## सशिवादिकण्टकारिकाभिः

कृतया पथ्यमुपाददीत विल्वेन ॥ १३४० ॥

य्यहं गुञ्जाजलेनाश्रु घृतमुद्राशनो गदी ।  
कर्कटाद्रिकशाकेन मृत्रोपादिमुच्यते ॥ १३४१ ॥  
सैन्धवगुडसुरदारभिरभ्रन्मांसगुडाक्षपथ्याशी ।  
चिर्मित्तकुरण्टकाभ्यां सैन्धवतमाज्यत्यनिलमानम् ॥  
इधुरसेन च भुक्तं दिनेकविंशज्यत्यधिकपित्तम् ।  
वृहतीद्वयकर्कटकाऽऽमलकद्राक्षावलयुताघ्राशी ॥  
दशमूलकायेन त्रिसप्तदिवसे निषेव्य रसमेनम् ।  
तुण्डीवार्ताकाभ्यां गुडभक्ताशी भगन्दरज्यति ॥ १३४४ ॥  
त्रिकलाद्रिकेण जगध्रित्सप्तदिवसमग्निमान्द्यमपहरति ।  
पथ्यश्च पञ्चकालकशल्याशनं तस्य कुरवकुरुक्तम् ॥  
इधुरसार्द्रकसेयी दिनेकविंशज्यत्यनुकृजाम् ।  
तर्कं तस्य च भक्तं शार्कं भवतीह तण्डुलोशाकम् ॥

र मृ., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा, कपूर और संधानमक  
सब समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर बन्दा लेकर सेते ३ दिन  
और चीकुरारैरसे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुट  
में बन्दकर भूषणपट में स्वेदनकरे । स्वाहावीतल्लोनेपर निकाल-  
कर गौ, बकरी, हथिनी, भैंस और गधीकैमुनोसे १-१ दिन  
मर्दनकर पीडवार, कुटकी, निम्ब, बेर और आवलेकरसेते ३-३  
दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलीये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली चित्रक, अदरक और मरिचकेसाथ अथवा धी,  
मूंग, बघुआ और अदरकनेसाथदेनेसे निद्रोष नष्टहोताहै । पीपल  
और मधुकेसाथ लेनेसे और बघुआ, अदरक तथा मूंगका सेवन  
करनेसे दो महोनेमें राज्यक्षयसे निवृत्तहोताहै । संभाल, सैन्धव  
और अदरकनेसाथ लेकर मूंग, बघुआ, धी और अदरक भोजन  
में लेवे तो गण्डमालासे निवृत्तहोताहै । त्रिकला और संधे  
नमकनेसाथ १-१ रत्ती सेवनकर कौहवा, ककड़ी और छाछ  
कापथ्यरखनेसे २१ दिनमें गुल्म और सुल्लो जीतताहै । मरिच  
अदरक और पानकेसाथ ३ दिनतक लेनेसे तथा हूँ, अदरक,  
मटकटैया और बेलसे कौहुई पेया पीनेसे समस्तग्वरोंको मष्टकर  
ताहै । सफेदगुञ्जाकेनलसे ३ दिनलेकर धी और मूंग पथ्यमें  
लेनेसे तथा ककड़ी और अदरकका शाक खायेसे मृत्रोषसे  
निवृत्तहोताहै । संधेनमक, गुड और कन्दाकेसाथ इसका सेवन  
कर मास, शुक्लेपदार्थ, कचेर, कटसैया, संधानमक और छाछ  
पथ्यमें लेवे तो बड़ाहुआ वायु नष्टहोताहै । ईखके रसकेसाथ  
लेनेसे २१ दिनमें बड़ाहुआ पित्त शान्तहोताहै । दोनोमटकटैया,  
ककड़ी, आवले, दाश और कला इनके काथसे बनाएहुए अन्ध  
सेवनकरे । दशमूलकेसाथसेसाथ इषकोसेवनकरके कुदरु, बेंगन,  
गुड और भात पथ्यमें लेनेसे २१ दिनमें भगन्दर नष्टहोताहै ।  
त्रिकला और अदरकनेसाथलेकर पञ्चकाल, सुल्यमास और  
कटसैया पथ्यमें लेनेसे २१ दिनमें गन्दाभि दूहोताहै । ईख

और अदरकके रसकेसाथ इसको लेकर छाछ, भात और बौलार्द  
का शाक पानेसे २१ दिनमें समस्तव्याधियोंसे निमुक्तहोताहै

## ३२२ सर्वदीपकरणरसः

समभागं रसं नागं संयोज्येकत्र मर्दयेत् ।  
गन्धकेनान संयोज्य दद्याद्रससमां कणाम् ॥ १३४७ ॥  
सर्वमेकत्र शृङ्गीयातिदिनं जुम्भणीरसेः ।  
कुमार्याश्च तथा माध्या भावयेच्च पृथक् पृथक् ॥ १३४८ ॥  
त्रिर्भावयेद्भजामृत्रैस्त्रिगोमृत्रेण भावयेत् ।  
सैन्धवेन ग्रन्थिकेन भावयेच्च पृथक् पृथक् ॥ १३४९ ॥  
सिद्धं शर्करया युक्तं त्रिसप्ताहं निवह्यकम् ।  
त्रिवृच्छाकाद्यो देया देयं गोधूमभोजनम् ॥ १३५० ॥  
मेहजघ्नभगन्दरार्तुदान् कौष्ठिकघ्नविपघ्ननातपि ।  
सर्वदीपकरणो हस्त्ययं सूर्यदासकृतिना विनिर्मितः ॥  
र क, र. मृ., दुग्धनाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, नागभस्म, पीपल सब  
समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर जमीरी, पीकुरा, पीपल, बकरी  
और गायकामुन, संधानमक, पिपलामुल इनप्रत्येककेत्रोंसे ३-३  
दिन भावनाएँ देकरबराबरकीशक्करमिलाकर १-१ रत्तीकी गोलीया  
बनाकर रखछोड़े अथवा सुहाकर चूर्णकरले । इसमेंसे १-१ रत्ती  
कीमाना समयोचितवापनकेसाथ देकर निशोतप्रकृति रेषक शाक  
और गंधुकाभोजनदेनेसे प्रमेहपित्तिहा, भगन्दर, अर्जुन, विद्रधि,  
विपघ्न इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३२२ ॥

## ३२३ सर्वमुखरोगारिरसः

लोहास्मजत्वमृतपारदगन्धकश्च  
क्षारप्रये त्रिकटुताप्यफलनिकञ्च ।  
युक्त्या विचूर्णितमिदं मधुनाऽवलह्यं  
सर्वेषु कण्डगलतालुगदेषु शास्तम् ॥ १३५२ ॥  
यो म., मुखरोगे ।

भाषा—लोहभस्म, शुद्ध शिलाजीत, बल्लाग, पारा और  
गन्धक, सब्जी, सुहागा, यवक्षार, त्रिकटु, सोनामारी और  
त्रिकला समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण  
कजलीमें मिलाय शिलाजीतकेसाथ १-२ दिन घोटकर रख-  
छोड़े । इनमेंसे ३-३ रत्ती मधुकेसाथदेनेसे कण्ड, गला और  
ताल इनके समस्तारोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३२३ ॥

## ३२४ सर्वमुखामहारसः

नृपमाक्षिकतुल्यशिलाजनम-  
शिलजं महिषाक्षरसेन्द्रमितम् ।  
विनिघृष्य रसे रविजे त्रिदिनं  
वदनस्थगदे तिमिरे च हितम् ॥ १३५३ ॥  
यो म, रसेन्द्रम, र. क ल, मुखरोग ।  
टि०—रसकल्लाया माक्षिकताले न रस्येते रविरेसमावना च  
नाति ।



भाषा—लानवर्द, सोनामापी, तुल्य, मैन्सिल, हरिताल, अम्रक इनकी भस्मे, शिलाजीत, भेंसागूल, शुद्धपारा समभाग-लेकर नीलवर्णकजलीकर गूलरों मिलाय आकषेपकपतोंके-रससे ३ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोल्या बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाधनेसे समस्तमुखरोग नष्टहोतेहैं । अन्ननभ्रमेसे तिमिर नष्टहोताहै ॥

### ३२५ सर्वरोगघ्नरसः

मृषा तिन्दुकविस्तारा ह्यायामे पोडशाहुन्ता ।  
भाण्डपादस्य पादांशो घालुकाभिः प्रघुरयेत् ॥३५४॥  
तस्मिन्निवेद्य द्विशुणं गन्धगर्भगतं रसम् ।  
याममात्रं पचेच्छुल्ल्यां क्षिपेद्वन्धस्य चूर्णकम् ॥३५५॥  
घायसीनागिनीमस्तमेघनादरसैः पुटेत् ।  
स रसः सर्वरोगघ्नो घलीपलितजिह्वेत् ॥ ३५६ ॥  
र. को०, रसायने ।

भाषा—तैदकेफलकेबारावर्षोंकी और १६ अहुल ऊची मृषाका चतुर्थांश वालमें द्वाय एकतोला शुद्धान्धकका बारीक-चूर्ण मूषामें विधाय १ तोला शुद्धपारा रस १ तोले गन्धगर्भसे ढकदे । फिर बादभेहुएपात्रको चूहेपर रस १ पहरकी कढ़ी आचदे, जब गन्धक पिघलकर जलनेले तब ऊपरसे थोड़ा थोड़ा गन्धकाचूर्ण डाल्तारहे जिसमें कि पारा न जड़े । एक पहरबाद यत्रको नीचे बतारकर रखोढ़े । स्वाङ्गशौतलहोनेपर निकालकर मकोय, पान, घट्टे और कटिवाली चौलाईकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोल्या बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाधनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ३५५ ॥

### ३२६ सर्वरोगहररसः ( प्रथमः )

पलत्रयश्चिन्नकश्च चेतनी च पलत्रया ।  
पारदं ध्योपकञ्चैव पिप्पलीमूलमुस्तकम् ॥ ३५७ ॥  
जातीफलं वृद्धदाय द्राह्येच्च पलं पलम् ।  
पला गुमा कुष्ठगन्धं दूरदं करहाटकम् ॥ ३५८ ॥  
ज्योतिष्मती त्वगप्रश्च लोहभस्म पलादकम् ।  
हालाहलं निष्कमेकं गुणं देयं पलाष्टकम् ॥ ३५९ ॥  
भृङ्गाजरसेनैव गुटिका कोलसमिता ।  
एकैकां मक्षयेन्नित्यं वाताशीतिं विनश्यति ॥ ३६० ॥  
कुष्ठाष्टादशकं नश्येत् प्रमेहा विंशतिस्तथा ।  
अपस्माराः क्षयं याप्ति सर्वनाडीघ्नया अपि ॥ ३६१ ॥  
एकादशविधं शापमुद्ध्वंश्वासप्रसुप्तिकाः ।  
शोथामघातपाण्डुत्वं कामलादां निहन्ति सः ॥  
सर्वरोगहरं ख्यातं वाताम्लश्च चिचर्जयेत् ॥ ३६२ ॥  
र. सु, वातज्याभ्यधिकारे ।

भाषा—चित्रक और हर ३-३ पल, शुद्धपारा, त्रिकटु, पिप्पलामूल, नागरमोषा, जायफल और विषारा १-१ पल, हालायची, वसलोचन, कुष्ठ, शुद्ध गन्धक और शिगरिक, अकल

करा, मालकापनी, तज, अम्रक और लोहभस्म २-२ कर्ष, शुद्धवज्राग ८ मासे, शुद्ध ८ पल लेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय गुडकेसाय १-२ पहर घोटकर भगरेरसेसे १-२ भावनाएं देकर बेववारर मोलियें बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपान-केसाधनेसे ८० प्रकारकेसाय, १८ कुष्ठ, २० प्रमेह, अपस्मार, समस्त नाडी-ग्न, ११ प्रकारकाशोप, ऊर्ध्वश्वस, प्रसुप्तवात, शोथ, आमवात, पाण्डु, कामला, अर्श इनसबको यह नष्टकरताहै । इसमें वातल और अम्लपदार्थोंका परित्यागकरे ॥ ३५६ ॥

### ३२७ सर्वरोगहररसः ( द्वितीयः )

हृत्वीर्यं गन्धताले शिलां टङ्कणमेव च ।  
दूरदं ताम्रभस्माऽथ नागसिन्दूरमेव च ॥ ३६३ ॥  
रोहिणीव्योपसंयुक्तं तथा त्रिफला युतम् ।  
पतेपामष्टमांशान् दन्तीचीजश्च निक्षिपेत् ॥ ३६४ ॥  
अर्द्धांशं दन्तिवीजानां विपं शुद्धं विनिःक्षिपेत् ।  
निष्कार्दं कुड्मञ्चैव तदूर्ध्वं मृगनाभिजम् ॥ ३६५ ॥  
निष्कद्वयं देवपुष्पं कर्पूरमर्द्धनिष्कम् ।  
रत्नमध्ये विनिःक्षिप्य सूक्ष्मचूर्णान् कारयेत् ॥ ३६६ ॥  
शिग्रुमूलरसैरेन मर्दयेच्च दिननयम् ।  
भृङ्गाजरसेनैव मर्दयेच्च दिननयम् ॥ ३६७ ॥  
केशराजरसेनैव मेघराजरसेन च ।  
घासारसैश्चन्दनेन मर्दितश्च दिनं पृथक् ॥ ३६८ ॥  
वज्रवह्नीरसेनैव ताम्रमूलरसमर्दितम् ।  
शुद्धामात्रांश्च यट्कान्कुयादिवं विचक्षणः ॥ ३६९ ॥  
ज्वरं सप्तविधं हन्ति सन्निपातांस्त्रयोदश ।  
अष्टाद्वपाण्डुरोगश्च श्वासं कासश्च पीनसम् ॥ ३७० ॥  
कुक्षिशूलं पार्श्वशूलं गुल्मरोगमहोद्वरम् ।  
प्रमेहं सोमरोगश्च पक्षाघातश्च शैत्यकम् ॥  
अशीतिघातरोगांश्च सर्वरोगहरः परः ॥ ३७१ ॥  
रसायन, सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल, मैन्सिल, शुद्धाग, शिगरिक, ताम्र और नागभस्म, रससिन्दूर, कुट्टरी, त्रिकटु, त्रिफला १-१ कर्ष, शुद्ध जमालओटा २ कर्ष, शुद्धवज्राग १ कर्ष, केशर ८ मासे, कच्छी ४ मासे, लौंग ८ मा, शुद्धकूर २ मासे लेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय सहजिनकीजड़ीकाल और भगरेकरसोंसे ३-३ दिन और काबभगरा, कटिवालीचौलाई, अदुसा, चन्दन, हठनोष, पान द्वायनकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोल्या बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचि-तानुपानकेसाधनेसे ७ प्रकारकाज्वर, १३ सन्निपात, ८ प्रकारका-पाण्डु, श्वास, कास, पीनस, कुक्षिशूल, पार्श्वशूल, गुल्म, जलो-दर, प्रमेह, सोम, पक्षाघात, शीतता, ८० प्रकारकेवातोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३७० ॥

## ३२८ सर्वलोकाश्रयरसः

शुद्धं सूतं पले गन्धं गन्धार्थं तालताप्यकम् ।  
 अमृतं रसकञ्चैव तालकार्द्विभागिकम् ॥ १३७२ ॥  
 एतेषां कज्जलीं कुर्याद् दृढं सम्मर्द्य पासरम् ।  
 त्रिदिनं मर्दयेद्याय दत्त्वा निम्नुजलं रज्जु ॥ १३७३ ॥  
 घटीरुह्य विशोण्याऽय काचकृपां निघापयेत् ।  
 निष्कतुल्याकप्रेण पिभायाऽऽस्यं प्रयत्नतः ॥ १३७४ ॥  
 सार्धाद्भुलमितोत्सेधं मृत्स्नया तां विलेप्य च ।  
 ततो माण्डवृत्तीपाशे सिक्तापरिपूरिते ॥ १३७५ ॥  
 निघाय सिक्तामृभिं सिक्ताभिः प्रपूरयेत् ।  
 रुद्धाऽऽस्यं तद्यो यदि ज्वालेयेत्सार्धपासरम् ॥ १३७६ ॥  
 स्वाद्भूतिरालितं काचपुटादाह्वयं सं रसम् ।  
 पटवृणं पिभायाय ताम्रमर्चं पलद्वयम् ॥ १३७७ ॥  
 पलाजममृतञ्चैव मरिचञ्च यतुप्लवम् ।  
 एकीरुह्य क्षिपेत्सर्वं मारिकेलकरण्डके ॥ १३७८ ॥  
 साज्यो शुद्धादिमानो हरति रसहरः सर्वलोकाश्रयोऽयं  
 घातस्तेष्मोरथरोगान्मुदजनितगदं शोषपाण्ड्वामपञ्च ।  
 यद्दामाणं घातशूलं ज्वरमपि निषिद्धं यद्धिमान्पञ्च गुल्मं  
 तप्तद्रागान्नयोगीः सकलगदचर्यं दीपनं तत्क्षणेन ॥ १३७९ ॥  
 र. र. स. र. सु., र. को., अर्धोऽधिकारः र. को. अर्धोऽप्र इति नाम,

भाषा—शुद्ध पात और गन्धक १-१ पल, हरिताल और सोनामाखीरस २-२ कर्ष, शुद्ध बजनाग और खपरिया १-१ कर्ष लेकर घाटीकृष्णंकर धातुभोकी नीलवर्णकमलीमें मिलाय नीबूकेरसवे ३ दिन मर्दनकर छोटीछोटीगोलिया बनाय मुलाकर ३-४ कपमिठीदीहूर्द आतसीसीसीमेंकर ढाट लगाकर १॥ जल्ल कपमिठी चारोंतक लगाय छोड़े अथवा मिठीकीनादमें रख तीसरेदिनसेतक बालमरके १॥ दिनकी ममवृद्धजमिदेवे । स्वाद्भूतिरालहोनेर निकालकर ताम्र और अन्नक १-१ पल, शुद्धबजनाग २ कर्ष, मरिच ४ पल लेकर सबका कपड्डनचूर्णकर नारियलमें भररखे । इसमेंसे २-२ रस्ती पीनेसाथ अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे वातस्तेष्मज्वरोग, बवासीर, शोष, पाण्डु, यक्ष्मा, घातशूल, सबप्रकारके ज्वर, मन्दाग्नि, गुल्म इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३२८ ॥

## ३२९ सर्वसन्निपातनाशकरसः

रसं गन्धं विपञ्चय धन्तूरं मरिचन्तया ।  
 शोधितञ्च तथा तालं माक्षिकञ्च समांशकम् ॥ १३८० ॥  
 दन्तीकाद्येव सम्मान्य गुञ्जामाया घटी कृत ।  
 साध्यासाध्यासिंहित्याशु सन्निपातांशयोदश ॥ १३८१ ॥  
 वै. क., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पात, गन्धक, बजनाग, धतूरेबीज, मरिच, हरिताल और सोनामाखी समभागलेकर नीलवर्णकमलीवर दन्ती-केवायसे मर्दनकर १-१ रस्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े ।

इसमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे ताप्यअथवा अवाप्य १३ सन्निपातोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३२९ ॥

## ३३० सर्वसिद्धिदावटी

पूर्वसिद्धरसे देवि पादांशं हेम योजयेत् ।  
 मृतं यज्जं पलाशेन व्योमसत्त्वं प्रयोजयेत् ॥ १३८२ ॥  
 क्षीरपञ्चुक्तिायेन मुरदालीरसेन च ।  
 विधिना मर्दयेत्त्वा तु नष्टपिष्टतु कारयेत् ॥ १३८३ ॥  
 कान्तचूर्णयुटिं दत्त्वा मूकगूपागतं धमेत् ।  
 मुटिका जायते दिव्या यक्षत्रस्या सर्वसिद्धिदा ॥ १३८४ ॥  
 रणाम्बे., रणायने ।

भाषा—ऊर्दुगवनादि और बीजनागरादिकेबहुप १ पल पासेमें मुखनीज और वज्रमस्त १-१ कर्ष, अन्नकतत्त्व १ पल मिलाकर क्षीरपञ्चुकी और बन्दाकेरसेसे १-१ दिन मर्दनकर कान्तोद्दहाचूर्ण १ कर्ष बालकर धोहीदेर घोटकर गोलाबनाय अन्धमुषामें बन्दकर इधमनकनेसे इसकी गोली बनतीहै । इसको मुँहमें रखनेसे समस्तबिद्धिमें होतीहै ॥ ३३० ॥

## ३३१ सर्वसिद्धिमदरसः

पातिते स्येदिते सूते जारयेत्तत्र पद्मणम् ।  
 वलिं स्वोपक्रमेणैव यन्त्रे भूषणके ततः ॥ १३८५ ॥  
 चीर्णगन्धरसेनैव खल्वेव दत्त्वा धिमर्दयेत् ।  
 विष्णुकान्तारसेनैव हृत्पणीसलिलेस्तथा ॥ १३८६ ॥  
 देवदालीरसेस्तद्भूदकन्यारसेस्तथा ।  
 काकमाचीकृष्णधूतं रक्ता च खरमज्जरी ॥ १३८७ ॥  
 तिलच्छदा तथा ब्राह्मी शोफणी मेघनिःस्पन्ना ।  
 चाङ्गेरीनागयल्ली च मुनिपुष्परसोऽक्षिका ॥ १३८८ ॥  
 मुदाली रकरक्षिञ्च रामठं हलिनी तथा ।  
 अन्नप्रसृतगवामृशं तथैवोत्तरपारुणी ॥ १३८९ ॥  
 इन्द्रवारुणिका चैव हंसपादी कुबेरदङ्क ।  
 प्रस्तरी च शिलाभेदी सस्यारि मत्स्यलोचना ॥ १३९० ॥  
 वज्रवल्ली वज्ररुन्दी वज्रदुग्धं तु दुग्धिनी ।  
 सोमयल्ली सूर्यमत्ता लज्जालुब्ध रूदन्तिका ॥ १३९१ ॥  
 मकैदी घृथिकदला पुरीषं खज्जरीदजम् ।  
 पापघतस्य विष्टा च मूलतानीरमेव च ॥ १३९२ ॥  
 पलाशमूलकायः कञ्चुकी खर्जुसुरणम् ।  
 शतावरी गोशुर्कं पाठा च ययचिक्षिका ॥ १३९३ ॥  
 मृतसञ्जीवयनिता सर्पाक्षी फाकतुण्डिका ।  
 ब्राह्मी मण्डूकपर्णी च मानुमूलरसस्तथा ॥ १३९४ ॥  
 कुक्कुटी नागिनी नागो जयाऽथ फणिमारकः ।  
 अश्वमारसोऽथ व्याघ्री वृहती विपतिन्दुकः ॥ १३९५ ॥  
 शरपुष्पा सहचरी श्रेणपुष्पी च शास्मली ।  
 कोविदारो महानीली नीली च गह्वरी तथा ॥ १३९६ ॥  
 गोपी नागवला चन्द्रवल्ली च सितभारती ।  
 महाराष्ट्री शिखिदिक्ता थोपितुःसुममेव च ॥ १३९७ ॥



लज्जाल, रुदन्ती, केवाच, विदुआघात, खड्गरीट और कव-  
तरीकी विद्या, केतुद, पलाशकीजड़कीछाल, कन्जुबी, खजूर  
जहरीसृण, शतावर, गोखरू, पाठा, जैती, गिलोय, प्रियद्व,  
सर्पाक्षी, काफनासा, सालफूलकी ब्राह्मी, मण्डूकपर्णी, आकनी  
जड़कीछाल, कुकटुदशिखा, नागदौन, चित्रपर्णी, (प्रथिपर्णी) भाग,  
फणिमार (विट्छादिर), कनेर, दोनोभट्टकटैया, कुचिला, सर-  
फोंका, कटसैरया, गुमा, सेमल, लालफूलका कचनार, दोनोनील,  
गर्दबूदी (हिमालयमें इसीनामसे प्रसिद्ध है), अनन्तमूल, नाग-  
बला, चादमोतरा, सफेदफूलकी धाड़ी, मराठी, मोरशिखा,  
झोरज, असगन्ध, चकवड, सहजिन, निसोत, हल्दी, धनसर  
(मराठी), बाकुची, जमालगोटा, कटुमर, महार, परवल, निफला,  
बहुपुष्पी, चिलगोजा, इनसबके यथासम्भव स्वरसोसे १-१  
दिन मर्दनकरे । अथवा सबको इकट्ठीमिलाय इन्वेस्वरससे  
२ महीनेतक निरन्तर मर्दनकर कमल्यन्त्रमें रखकर सुदु, मध्य  
और खर इसक्रमसे २१ दिनकी आंचे । स्वाहशीतलहोनेपर  
पारेकी भस्मको निकालकर रखले । किसीमारकद्रव्यकेसाथ  
मिलाकर इसभस्मका हारे अथवा किसीभी लोहपर लेपकरके  
आंचेदेनेसे बह फूलजाताहै । इससे तमामपातु और सरवोंकी  
कीहुई भस्म कलपोकणको देतीहै । इसपारदभस्ममें ज्वरकेलिये  
मत्स्यादि १० पित्त, बछनाग, हृत्पर्णी, कालाधतूरा, भाग,  
मराठी, हुतुर, मण्डूकपर्णी और तुलसीकी १-१ भागनादेकर  
पांचपित्तोंसे फिर भावना देकर समभाग बछनाग और सोल्दवा  
भाग लालबछनाग, १२ वा भाग हारिद्रक और आठवाभाग  
मेघशङ्खिक, चतुर्थांश सक्तुक विप अलग २ मिलाकर रखछोदे ।  
लालबछनाग मिलाया हो तो सर्वपके बराबर मात्रा सज्जारहित  
सन्निपातमें देकर मत्स्यपर टंडेलकीपारा कमहोनेतक देवे ।  
हारिद्रक मिलायाहोतो दो सर्वभरमात्रा, मेघशङ्खिकमिलाया  
हो तो ३ सर्वप, सक्तुक मिलाया हो तो ४ सर्पा और बछ-  
नाग मिलाया हो तो १ रतीकी मात्रा देवे । इसमें न्यूनाधि-  
कता ॥ करे । उपद्रवोंकी शान्ति लहेधरोंकी तरह करनीचाहिये ।  
चिरायतेकेआपसे समस्तज्वरोंकी और मोतीकेसाथदेनेसे सम-  
स्तक्षयोंको नष्टरताहै । क्षयमें २ रती रस देकर धारोष्ण  
भायके दूधमें १ माशा बसलेखन डालकर खिलावे । पीपत  
और गुगलकेसाथदेनेसे पाण्डुरोगको नष्टकरताहै । लोहभस्म  
और गिफलाके चूर्णकेसाथदेकर सुरणकास्वरस पिलानेसे समस्त-  
बासीरोंको यह नष्टकरताहै । १ रती पारदभस्ममें ८ रती  
वज्रभस्म मिलाकर मधुकेसाथबाटकर मधु और आंबेलेकास-  
पीनेसे शुक्रमेहको छोड़कर समस्तप्रमेहोंको नष्टकरताहै । मधुके  
साथ रसको देकर हल्दीकास्वरस पिलानेसे शुक्रमेह, तथा निकट  
और भट्टनटैयाकेरसकेसाथदेनेसे वातव्याधियोंको नष्टकरताहै ।  
पथरी और मूत्ररून्ध्रमें प्रमेह अनुपानदेना । वान्तिप्रान्त्या  
दिवर्जित ताम्रभस्मकेसाथ देकर बाकुचीके चूर्णका प्रक्षेपदिया  
हुमा शैरकावाय पिलानेसे समस्तकुष्ठोंको नष्टरताहै । अथवा  
नीमके मरसे भावना दियेहुए भीमकेपञ्चाङ्गकेचूर्णमें नीम और

सैरकेकाथोंकी ७-७ भागनाएं देकर छायादिस्तालोदभस्म मिला-  
कर रखछोदे ॥ इसकेसाथ रसकाप्रयोग करनेसे ६ महीनेमें  
समस्तकुष्ठोंसे निवृत्तहोजाताहै । गुल्ममें क्षारोंकेसाथ, परिणाम-  
शुल्में ताम्रभस्मकेसाथ तथा पाचोन्नमक और क्षारोंकेसाथ-  
देनेसे तमामशूल नष्टहोतेहैं । शिलाजीत, गन्धक, सोनामाखी,  
६ कोहोंकीमल्लोंकेसाथ मिलाकर धी और मधुकेसाथदेनेसे  
समस्तरोगोंको नष्टकरताहै अधिकदिनके अभ्यासे वलीपटि-  
तादिक निवृत्तहोतेहैं । निरन्तरके अभ्यासे अजरामरहोताहै ।  
दिनका सोना, रातका जगना और विषमाशन, यक्ष, राक्षस,  
पिशाच, ग्रह और डाकिनियोंका निकालना, काष्ठी, बिहा-  
हुआ मध और अन्यरसकसेवन, भात, भैंसका दही, दूध,  
घी और छाछ, स्वार, मक्की, तैलकपडापे, तिल, कौल,  
कचरे, कसौदा, कौदका, ककोदे, इन्द्रजव, अत्यन्तार्हसी, ओषध,  
अग्निभोजन, निद्रा, अत्यन्त गरम या ठंडा, अत्यन्तवायु, धूप  
इनसबकायत्नसे परित्यागकरे और खुलीहवामें रहे ॥ ३३१ ॥

### ३३२ सर्वसुन्दररसः ( प्रथमः )

पातयेत्स्वेदयेत्सूतं जापयेद्धेमदानचौ ।  
प्रागुक्तमानतः पञ्चाच्छिलां सज्जारयेत्समात्रा ॥१४३॥  
तालं ताम्रं समांशेन जापयेत्वाऽथ पारदम् ।  
चतुःपलमितं नीत्वा तालताप्ये मनःशिला ॥१४३८॥  
मृतं ताम्रं तथेतानि सूततुल्यानि योजयेत् ।  
पञ्चानां लवणानाञ्च पलानि दश योजयेत् ॥१४३९॥  
तालमेकं हेममसम् सूतेन सह मर्दयेत् ।  
ततस्तत्सर्वमेकत्र मर्दयेद्वैपधीद्रवैः ॥१४४०॥  
जयन्तीछलिलैः पूर्वं रस्तक्षिण्डिकचारिणा ।  
सिंहास्यनीरैः सम्मर्द्यां विपतिरुक्तचारिणा ॥१४४१॥  
अरणीसलिलैर्नरैर्वर्धरीजैश्च मर्दयेत् ।  
महापट्टीजलैः कृष्णधतूजरसैस्ततः ॥१४४२॥  
वत्सनाभस्य नीरेण मर्दयित्वा दिनं दिनम् ।  
तैरेव पुटयेत्पूर्वक्रमेणैव रसेभ्यरम् ॥१४४३॥  
खल्वे निःक्षिप्य सज्जर्यं स्थापयेदतियत्नतः ।  
सर्वसुन्दरनामाऽयं रसेन्द्रो गुल्मशूलहा ॥१४४४॥  
समर्घ्यं भैरवं सूतं गुल्मिने सम्प्रयोजयेत् ।  
चतुर्गुणाप्रमाणेन शुण्ठीघृतसमन्वितम् ॥१४४५॥  
द्विदलं वर्जयेत्सर्वं पथ्ये रूक्षाशनं तथा ।  
एकमासप्रयोगेण सर्वान्गुल्माघ्नित्वारयेत् ॥१४४६॥  
शुण्ठीघृतप्रकारोऽयं कथ्यते शास्त्रमार्गेतः ।  
शुण्ठ्याः पलानि पञ्चाशत्पिप्पला वस्त्रेण मालयेत् ॥  
चूर्णांश्चिशुणे नीरे चूर्णं तच्च विनिक्षिपेत् ।  
वासयित्वा दिनेकञ्च कापयेगमन्दवहिना ॥१४४८॥  
चतुर्थांशोऽवशिष्टेऽथ कापं वस्त्रेण मालयेत् ।  
गालितकाथमध्येऽथ शुण्डीमानं घृतं क्षिपेत् ॥१४४९॥

पचेन्मृद्वग्निना श्रीमान् यावच्छिष्येत वै घृतम् ।  
शुण्ठीघृतप्रकारोऽयं कथितः सम्प्रदायतः ॥ १४५० ॥  
रसाल, र. मृ, गुल्मे

भाषा—ऊर्ध्वादिपातितकियेहुएपरिमें सुवर्ण, गन्धक, मेन-  
सिल, हरिताल, ताम्र येसब समभागमें जारणकर ४ पलछेवै ।  
फिर शुद्धहरिताल, सोनामाखी, मेनसिल, ताम्रमसम् येसब ४-४  
पल और पाचोनमक २-२ पल छेवै । इनमेंसे १ कर्ष हरितालको  
अलगलेकर १ कर्षसुवर्णमसम् मिलाकर पारेका ३-४ दिनतक-  
मर्दनकर फिर अन्यवस्तुओंकी कजलीकर मिलावे । इससेमाद  
जैती, सालकटसरैया, अड्डसा, कुचिला, अरणी, बबई, मराठी,  
कालाधतूरा और बटनाग के यथासम्भवस्वरस अथवा हाथोंसे  
१-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लुण-  
पुटकी आचढ़ेवै । पेशप्रत्येकरसके मर्दनेन्याद पुटदेवै । स्वादि-  
शीतलहोनेपर निकालकर भरवका पूजनकर रखओड़े । इसमेंसे  
४ रत्तीकीमात्रा शुण्ठीघृतनेसायदेनेमें १ महोनेमें गुल्म नष्टही-  
ताहै । इसमें सबप्रकारकी दाल और रूक्षभोजनका परित्यागकरे ।  
५० पल घोटका घूणकर २० गुणे पानीमें डालकर एकदिनपरत  
रखओड़े । फिर मन्दागिसे चतुर्थांशवशेष कायबनाकर छानले ।  
फिर ५० पल गायकापी डालकर मन्दागिसे पकावे । घृतमान  
अवशेषपरहोनेपर छानकर रखओड़े । इसीकानाम शुण्ठीघृतहै ॥

### ३३३ सर्वसुन्दररसः ( द्वितीयः )

गोमूत्रे निफलाकाये तत्त्वा तत्त्वा विनिक्षिपेत् ।  
मण्डूरं भस्मसात्कृत्या चत्वारिंशच्च रक्तिकाः ॥ १४५१ ॥  
पञ्चानां लवणानाञ्च बल्लानां क्षतमाहरेत् ।  
मर्दयेच्च रसं मसम् हेनूनां गुञ्जावतुष्टयम् ॥ १४५२ ॥  
जयन्ती मण्डुकी वाक्सा विपतिन्दु जंयाभिधा ।  
वर्बरी च महाराष्ट्री धत्तूरी वत्सनामकः ॥ १४५३ ॥  
भावयेत्स्वरसैरेपां पुटे स्वल्पे विनिक्षिपेत् ।  
सर्वसुन्दरनामाऽयं गुल्मशूलविनाशनः ॥ १४५४ ॥  
शुद्धा चतुष्टयस्यास्य शुण्ठीघृतसमन्वितम् ।  
वापयेद्गोर्गिणं वैद्यो हिद्वल्लञ्च विवर्जयेत् ॥ १४५५ ॥  
र मृ, गुल्मे ।

भाषा—गोमूत्र और निफलाके कायमें गरमकरके बुझा-  
कर भस्मकिया हुआ मण्डूर ४० रत्ती, पाचोनमक ६०-६०  
रत्ती, पारा और सुवर्णमसम् ४-४ रत्ती मिलाकर जैती, मोर-  
खसुण्डी, अड्डसा, कुचिला, माग, बबई, मराठी, धतूरा, बल-  
नाग इनके यथासम्भवस्वरस अथवा हाथोंसे १-१ दिन मोट  
कर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लुणपुटकी आचढ़कर  
शीतलहोनेपर निकालकर रखओड़े । इसमेंसे ४-४ रत्ती शुण्ठी-  
घृतकेसाय देनेसे गुल्म और शूल नष्टहोतै । तमाम दार्ढ्यसे  
परहेजकरे । शुण्ठीघृत पूर्वयोगमें कहागयाहै ॥ ३३३ ॥

### ३३४ सर्वसुन्दररसः ( तृतीयः )

सूतगन्धविषमेव कारयेद्भागवद्भस्मय मर्दयेत्ततः ।  
आर्द्रपट्टिजरेसेन पक्षतः पाचितो हि लवणाप्ययन्त्रके

भक्षितो हि किल बल्लभात्रया  
क्षौद्रकेण सह पिप्पलीयुतः ।  
पूर्णचन्द्रवदयं हि सेवितो  
यश्महा भवति घातरोगहा ॥ १४५७ ॥

र. प्र. सु, यश्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बटनाग कमशुद्धभासे-  
लेनर नीलवर्णकजलीकर अदरस और चित्रकेके स्वरसोंसे १-१  
दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लवणयन्त्रमें  
४ पहरकी मन्दागिसे पकावे । स्वादिशीतल होनेपर निकालकर  
रखओड़े । इसमेंसे ३-२ रत्ती पीपल और मधुकेसाय सेवनकर  
पूर्णचन्द्रकीतरह पण्यपालनेसे यह राजयक्ष्मको नष्टकरताहै ३३४

### ३३५ सर्वसुन्दररसः ( चतुर्थः )

हेमतारविपत्रिकां भृशं पूर्ववच्च परिपाचयेत्ततः ।  
सूतभस्म विपगन्धकान्वितं मर्दयेत्तदनु तद्विभावयेत् ॥  
चित्रकाद्रकरसेन तत्क्षणं लोहपात्रकुहरे ततः पथेत् ।  
सर्वसुन्दररसेभ्यं रत्विमं योजयेद्भिगवितालुपानतः ॥  
सर्वरोगविनिवृत्तिदोभवेद्भोगयोगविनियोजितो घृतम्

र. क्षी, र. चं, र. (भा), राजयक्ष्मणि ।

भाषा—सुवर्ण, रजत और ताम्रके बारीकचूर्णोंकी सूतक-  
जीवरस ( सं. ६५८ ) के विधानसे अलग २ भस्मकर इनकी  
बराबर २ पारदभस्म, शुद्ध बटनाग और गन्धक मिलाकर १-२  
पहर मर्दनकर चित्रक और अदरलेकरसे १-२ दिन मर्दनकर  
कड़ाहीमें डालकर मन्दागिनेसे पकावे और लोहेकीकड़ीसे  
चलातारहे । जल सूखजानेपर निकालकर घोटकर १-१ रत्तीकी  
गोक्षिया बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्प्रायोगहारण  
पानकेसाय देनेसे यह राजयक्ष्मादि समस्तरोगोंको दूरकरताहै ३३५

### ३३६ सर्वसुन्दररसः ( पञ्चमः )

रसं तालं शिलां ताप्यं ताम्रे पञ्च पट्टनि च ।  
द्विश्राणिकानि वज्रस्य मापं सञ्जुष्य भावयेत् ॥ १४६० ॥  
जयन्तीवदरीवासाविपतिन्दुजयायवै ।  
समदङ्गुणजे द्रव्यं महाराष्ट्रीसुवर्णजे ॥ १४६१ ॥  
शुष्कं लघुपुटे पाच्यं स्वाद्दशीते समुद्धरेत् ।  
रक्तिकैकां ततः खादेदस्माच्छुण्ठीघृतान्विताम् ॥  
सुक्तं विवर्जयेत्तावद्दुल्मशूलविनाशनः ॥ १४६२ ॥

र शं, श्लाघिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, हरिताल, मेनसिल और सोनामाखी,  
ताम्रभस्म, पाचोनमक ८-८ मासे, वज्रभस्म १ माशा लेकर  
बारीकचूर्णकर जैती, बैरकीछाल, अड्डसा, कुचिला, माग और  
बब, समभाग सुहागेका इव, मराठी, धतूरा इनप्रत्येकके स्वरस  
अथवा हाथोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें  
बन्दकर ३-४ कणइमिठी देकर सूखनेपर लघुपुटकी आचढ़े । इसमें  
से १-१ रत्ती शुण्ठीघृतकेसायलावेसे गुल्म और शूल नष्टहोताहै ।  
रोमोंमें मिश्रफहोनेतक अन्ननखावे केवल दूध और फलोंपर रहे ॥

## ३३७ सर्वाङ्गसुन्दररसः ( षष्ठः )

गद्याणैकं सुकपूर्व कनकं कहुणीं पुरम् ।  
 तोलैकैकं समादाय सर्वमेकत्र भवेत् ॥ १४६३ ॥  
 हेमाद्रा सर्पगर्लरेकैका भावना भवेत् ।  
 अहिफेनरसस्यापि शृङ्गीविषसमुद्भवेः ॥ १४६४ ॥  
 वृक्षादन्या भवेदेका शोषयित्वा पुनः पुनः ।  
 मयूरमत्स्यमहिषपित्तानामत्र भावना ॥ १४६५ ॥  
 आटरूपरसेनाऽपि मुद्रमाना घटीश्चरेत् ।  
 सन्निपाते पुरा देया विद्रोपोत्थे विशेषतः ॥ १४६६ ॥  
 ज्वरे घोरे क्षये कासे हिकारोगे च शस्यते ।  
 ग्रीहायां यक्ष्मतीत्येवमुदरेषु च दीयते ॥ १४६७ ॥  
 गलप्रहे प्रहण्यां तमतिसारे प्रयोजयेत् ।  
 अयमर्शाःसु देयः स्याद्वातजेषु पुनः पुनः ॥ १४६८ ॥  
 कफजेषु तथा द्रव्यसमुद्भूतेषु दीयते ।  
 रोगयोग्यानुपात्तेन वातव्यः सर्वसुन्दरः ॥ १४६९ ॥  
 नारङ्गं शर्करां द्राक्षां क्षिप्ररूपाफलन्तथा ।  
 शृतं पुन्यं प्रयुज्जीत भक्तं नक्तं प्रशस्यते ॥ १४७० ॥  
 तनीपयौगिकं यद्य प्रयोज्यं तद्भिपश्चरैः ।  
 शीतलं सलिलं दद्यात्सुवासकुसुमानि च ॥ १४७१ ॥  
 अतितापो भवेद्भूते धृताकं शीतयारिणा ।  
 स्नापयेद्गोविणं पश्चात्ततोऽस्ती लभते सुखम् ॥ १४७२ ॥  
 रसचि, र. का., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धकूर ६ मासे, शुद्धधतूरेकेबीज, मालकानी और गुल १-१ तोला लेकर बारीकचूर्णकर देवनचीनी अथवा सत्पानाशी, सर्पविष, अफीम, बछनाग, धूगर इनके श्रवसे और मोर, मछली, भैंसा इनके पित्त तथा अङ्गुष्ठेरससे १-१ भावना देकर सूंगवारपरगोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपातकेसाथ देनेसे त्रिदोषोत्पत्तिसन्निपात, भयङ्करज्वर, क्षय, कास, हिचकी, ग्रीहा, यक्ष्म, उदररोग, गलप्रह, प्रहणी, अतिसार, बवालीर, वातज, कफज और द्रव्जजोग इनसबको यह नष्टकरताहै । नारङ्गी, शर्करा, द्राक्ष, दही, केलै, औटाहुसा इष इनमेंसे औचित्य देखकर देवे । अत्यन्त भूखलगेनेपर रात्रिमें भोजनदे । अत्यन्तमर्मी मादुम-होनेपर चीका अम्यज्ञकर उदेलकी धारादे । अच्छेवल और सुगन्धितपुष्पोंकीमाला पहिनावे ॥ ३३७ ॥

## ३३८ सर्वाङ्गसुन्दररसः ( प्रथमः )

यक्ष्मश्वत्यमवं चूर्णं त्रयोदशविभागिकम् ।  
 दशहो द्रव्यभागश्च शङ्खमस्य तथा भवेत् ॥ १४७३ ॥  
 त्रयोदश द्वादश च रसः स्यादमृतं त्रयम् ।  
 चिञ्चामपत्रफलत्वक्च गन्धो द्वादशभागिकः ॥ १४७४ ॥  
 शृङ्गवेरप्रवे भोज्यमेकविंशतिवारकम् ।  
 सर्वाङ्गसुन्दरं नाम्ना सर्वव्याधिनिशानम् ॥ १४७५ ॥

अनुपातान्तु ताम्बूलं त्रिदोषे सन्निपातेक ।

आर्द्रकं त्वनुपातं स्याद्विशिष्यान्त्यदापयेत् ॥ १४७६ ॥  
 र. क. यो., सन्निपाते ।

भाषा—चिञ्चामूल और पीपलीछाल १३-१३ भाग, सुनासुहागा १० मा., यक्ष्ममस्य २ भा., शुद्धपारा १३ भा., बछनाग १२ मा., पकीइमलीकेछिलके ३ मा., शुद्धगन्धक १२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेण्यचकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय अदरखेकरससे २१ भावनाएँ देकर २-२ रतीकी गोलीयें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानकेरसकेसाथदेनेसे त्रिदोषजन्यरोग नष्टहोताहै । अनुपातविशेषसे तमामन्त्रोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३३८ ॥

## ३३९ सर्वाङ्गसुन्दररसः ( द्वितीयः )

रसालनागशैलानि तुल्यं गन्धकसोमलम् ।  
 सहदेवीनिभ्ययिम्भीरसैः सप्त च सप्त च ॥ १४७७ ॥  
 दिनानि सम्मर्द्य हर्षं कृप्यां द्वात्रिंशायामकम् ।  
 बहिरातो मेहहरो रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥ १४७८ ॥  
 र. का., प्रमेहाधिकार ।

भाषा—शुद्ध पारा, हरिताल, जैनसिल, तुल्य, गन्धक और सोमल, नागमस्य सब समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर सहदेवी, भीमकीछाल और कुंदलकेरसोंसे ७-७ दिन मदनकर गुलाकर फिरसे कजलीकर ६-७ कपडमिडी दीहुई आतशीशीशीमें बन्दकर ३२ पहरकी अग्निदेवे । स्वात्तशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रती समय अथवा रोगोचितानुपातकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेह और ज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ ३३९ ॥

## ३४० सर्वाङ्गसुन्दररसः ( तृतीयः )

गन्धं रसश्च तुल्यांशौ द्वौ भागौ द्रव्यस्य च ।  
 मौक्तिकं विद्रुमं शङ्खमस्य देयं समांशिकम् ॥ १४७९ ॥  
 हेमभस्मस्यैव भागश्च सर्वं व्यव्ये यिमद्वयेत् ।  
 निम्बुद्रवेष सन्निपत्य पिण्डिकां कारयेत्ततः ॥ १४८० ॥  
 पश्चाद्भजपुटं दत्त्वा सुशीतश्च समुद्धरेत् ।  
 हेमभस्मस्यैव तीक्ष्णं तीक्ष्णार्द्रं द्रवं मतम् ॥ १४८१ ॥  
 पकीकृत्य समस्तानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।  
 ततः पूजां प्रकुर्वीत रसस्य दिवसे शुभे ॥ १४८२ ॥  
 सर्वाङ्गसुन्दरो ह्येष राजयश्मनिहन्तनः ।  
 वातपित्तज्वरे घोरे सन्निपाते सुदाहणे ॥ १४८३ ॥  
 अर्शःसु प्रहणीदोषे मेहे गुल्मे भगन्दरे ।  
 निहन्ति वातजात्रोगांश्चैव पिक्वांश्च विशेषतः ॥ १४८४ ॥  
 पिप्पलीमधुसंयुक्तं धृतयुक्तमथापि वा ।  
 भक्षयेत्पण्येखण्डेन सितया चार्द्रकेण वा ॥ १४८५ ॥  
 र. स, र. च, र. घ, र. र., घ, भै र, राजयश्मनि ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा १-१ भाग, सुहागा २ भा., मोती, स्वाल और यक्ष्ममस्य १-१ मा., सुवर्णमस्य भाषाभाग लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर नीपुकेरससे १-३

दिन मर्दनकर गोलवनाय ३-४ तह मलमलनेकपडेमे लपेट शरावसम्पुटेमे बन्दकर ६-७ कपडमिदीदेकर सुखनेपर गजपुट-पी आँचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सुवर्णमलमकी-बराबर लोहमलम और लोहसे आधा शुद्धशिंगरिफमिलाकर १-२ दिन घोटकर रखछोडे । इसमेंसे १-१ रत्तीकोमाना पीप-लमधु, पी., पानकारस, शकर और अदरककास इनमेंसे औषिनी देकर किसी एक अनुपानकेसाथ देनेसे राजयक्ष्म, घोरवात-पित्तज्वर, भयङ्कर सन्निपात, बवासीर, सङ्गहणी, प्रमेह, शुक्ल, भगन्दर, वात और कफरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३४० ॥

### ३४१ सर्वाङ्गसुन्दररसः (चतुर्थः)

अन्नगन्धकरजः पृथगच्छ

तित्तिरीफलचिपाक्षयुतञ्च ।

सम्बिमर्द्य फणिवह्निदलेषु

स्थास्तुतेष्वधिपङ्कजलगतं ॥ १४८६ ॥

सम्बिधाय रसकल्मषोर्द्ध तहिले खरयषत्रपिधानम् ।  
सन्निधाय लघुबह्निकरौषे दापयेत्पुटमयाहृतमेतत् ॥  
साहिबह्निदलमुस्तयुगेन प्रागियान्वितमयातिविमर्द्य ।  
रक्तकामितमयात्रैकवारं चिन्तकोषणवर्गे सह दद्यात् ॥

वाताग्निसादगुदजातिसुतिनिदोष-

नानासमज्वरहरो दधिभक्तकण्यः ।

सर्वाङ्गसुन्दर इति प्रथितो रसोऽय-

मायैः पुरातनभिपग्निमखरीरितस्तु ॥ १४८९ ॥

यो च, वाताग्निमान्यासं सु ।

भाषा—अन्नकलम, शुद्ध गन्धक, जमालोटा और बछ नाग, बहेड़ा १-१ तोला लेकर बारीकचूर्णपर पानकरसे १-२ दिन मर्दनकर गोलवनाय पकेपानोंमे लपेटकर ढोरेसे लपेटकर गंदकेमदख बनाय ६ अहुलके गरमें पानोंकेबीचमें रख पनके-सुंहर अच्छीतरह पानोंकीतह बिछाऊर जखलीकण्डोके टुकड़ोंका बहुतसका पुटदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर दोनों ओषों-काचूर्ण १-१ तोलामिलाय पानकरसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली चित्रक, मरिच और त्रिफलकेसाथ देनेसे वातविकार, मन्दाग्नि, बवासीर, अतिसार, त्रिदोष, नानातरहकेज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै । इसमें पध्य दहीमात देना ॥ ३४१ ॥

### ३४२ सर्वाङ्गसुन्दररसः (पञ्चमः)

शुद्धसूताभ्रताम्रायो हिङ्गुलं कार्पिकं समम् ।

गन्धकश्चैकभागः स्यात्सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ १४९० ॥

सप्तपर्णाकिंस्तुक्क्षीरवासायाताचिचार्णि ।

विपमुष्टिसमं सर्वं पेयं तत्रोल्कीकृतम् ॥ १४९१ ॥

विपचेद्वालुकापत्रे द्विपमान्ते समुखरेत् ।

पिप्पलीविपसंयुक्तो रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥

सर्ववातविकारघ्नः सर्वशूलनिर्घ्नः ॥ १४९२ ॥

र. सं, र. छ, म, र. क. वातम्भाषी ।

टि०—शुद्धतक्तताम्राय ह्यादिना सर्वसुन्दरान्ना सममेव रस न्यस्तस्य रसेन्द्रकण्यद्वये पाठान्तर म्भाषित सोऽतिशयितर इति न विमर्शणीयम् ।

भाषा—शुद्धपारा, अभ्रक, ताम्र और लोहमलम, शुद्ध-शिंगरिफ और गन्धक १-१ भागलेकर नीलवर्णकजलीकर छतिवन, आक और धूमकेतू, अइसा और एण्डके स्वर-सोमे १-१ दिन मर्दनकर समभाग शुद्धचिलेकाचूर्ण मिलाकर गोलवनाय शरावसम्पुटेमे बन्दकर २-४ कपडमिदी देकर सुख-नेपर वाडुकायन्त्रमें रख दोषहरकी अभिदेवे । स्वाङ्गशीतलहोने पर निकालकर १-१ भाग पीपल और शुद्धशमागकाचूर्ण मिला-कर रखछोडे । इसमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानु-पानकेसाथ देनेसे समस्त वातविकार और शूलोंको यह नष्टकरताहै ॥

### ३४३ सर्वाङ्गसुन्दररसः (षष्ठः)

शुद्धं सूतं तथा ताम्रं शिलामाक्षिकतालकम् ।

रजतं स्वर्णञ्च लोहमर्त्रं सनागरम् ॥ १४९३ ॥

चूर्णयेत्पञ्चलवणं देयं सर्वतु तुल्यकम् ।

गन्धकं सर्वतुल्यांशं रसेरेषां विभावयेत् ॥ १४९४ ॥

शुण्ठीजयन्तीविजयामहाराष्ट्रिकधृतजैः ।

सर्वाङ्गसुन्दरो नाम्ना रसोऽयं विष्णुनिर्मितः ॥ १४९५ ॥

खादेरेण्डशुण्ठीभ्यां बह्ममात्रं दिनेदिने ।

कफवातामयं हन्ति चानुपानं यदाम्यहम् ॥ १४९६ ॥

व्योषं सौवर्चलं हिङ्गुं करञ्जबीजसंयुतम् ।

पिबेदुष्णाम्भुना चानु सर्वशूलनिघ्नतनम् ॥ १४९७ ॥

र. सं., र. च, र. छ, म, शूलाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, ताम्रमलम, मैनसिल, सोनामाखी, हरिताल, रजत, सुवर्ण, बह्म, लोह और अभ्रक इनकीमलम, सौंठ, पाचोंमक, सबसमभाग, शुद्धगन्धक सबकीबराबर लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय सौंठ, जैती, भाग, मराठी और धतूरेके स्वरसोमे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली एण्डमूलऔर खोंडकेसाथ देनेसे यह समस्त वातविकारोंको नष्टकरताहै । त्रिकटु, सबल, भुनीहींग, करञ्जबीज समभागके चूर्णकेसाथ लेकर गरमपानीपीनेसे समस्तशूल नष्टहोतै ॥ ३४२ ॥

### ३४४ सर्वाङ्गसुन्दररसः ७

सूतं सूतं सूतं ताम्रं शिलामाक्षिकतालकम् ।

चूर्णयेत्पञ्चलवणानेतद्वत्तुल्यकम् ॥ १४९८ ॥

सूतं स्वर्णञ्च निक्षिप्य सूतादशमभागिकम् ।

सूततुल्यं वत्सनाभं चूर्णं भाष्यं दिनावधि ॥ १४९९ ॥

विपशुण्ठीजयावासा विजयारक्तशक्तिनी ।

वदरीत्यङ्गहारप्रीडवै धन्तूरजैस्तथा ॥ १५०० ॥

रुद्धा तुपुटे पक्त्वा समुदृत्य विचूर्णयेत् ।

सर्वाङ्गसुन्दरं नाम रसं गुञ्जाचतुष्टयम् ॥ १५०१ ॥

मक्षयेद्वत्तुल्यभ्यां शूलगुल्मीं निघ्नन्ति ।

भावयेद्भक्षयेन्मार्गं मुद्राल्पार्द्रकजैर्द्रवैः ॥ १५०२ ॥

अनुपानं लिङ्गप्रित्यं कफशूलप्रदान्तये ।

अनुपानं शालहरं योजयेद्गोमदान्तये ॥ १५०३ ॥

र. को., नि. र., र. र., सु. से ।

भाषा—पारा और ताम्रमम्भ, शुद्धमैन्सिल, सोनामारी और इतिहास, पाँचोंमक वषष्ठ समभाग, मुक्कमम्भ पाँगे दानां और शुद्धबज्जना पोरकोषावर मिलाय बारीकचूर्णकर बज्जना, सोड, ओडुल, अड्डा, भांग, मरगा, बेर, मराटी, धतूरा इनसबकेसोते १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शराव-तम्पुटमें बन्दकर २-४ कपडमिडी देकर मुखनेपर मुक्कपुटी आवेदे । स्वाक्षशीतलहोनेपर निहालकर रगडोडे । इसमेंसे ४-४ रती पी और सोटडेसाथ गाभेमे दान और हृत्प्य नटहोताहे । मुसली और अदरगडी भावना देकर १ मासालेनेगे कपडल नटहोताहे । शूलबिदोषोंमें औचिनी देरकर अनुपान बदलदेना ॥

३४५ सर्वाङ्गसुन्दररसः ( अष्टमः )

मृद्वभिना द्रुते गण्ये चतुःपाणितालोमिमे ।

लोहमृताश्रमेकेकेः शिस्त्या समपतारयेत् ॥ १५०४ ॥

मागपी मरिचं हिङ्गु क्षीप्यशीरकचित्रकाः ।

कर्णिके चिपं पूर्णं कृत्या पच्ये ततः शिपेत् ॥ १५०५ ॥

सर्वेषां पञ्चगुणिनं मृते ताम्रं परिशिपेत् ।

आर्द्रकैर्मर्दयेद्वापे द्विपररण्डजैश्च वा ॥ १५०६ ॥

दिनेके क्षोपयेत्तत्र भाव्यं शिशुद्रव्यं दिनम् ।

सर्पाया धामृताकन्यारचिधुङ्गापुनर्नये ॥ १५०७ ॥

आर्द्रकस्य द्रव्यं मांयं दिनान्ते तस्मिन्निशेषयेत् ।

दिने वा धालुकायने समादाय विगुणयेत् ॥ १५०८ ॥

जातीफलञ्च कर्दूरं कङ्कालं मधुमिश्रितम् ।

रसस्याभिर्द्रव्यं पांयं मायमात्रञ्च भक्षयेत् ॥ १५०९ ॥

अनुपानं पिपेष्ठास्य कार्यं त्रिकटुसम्भयम् ।

सन्निपातहरः सोऽयं रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥ १५१० ॥

र. का., र. सु., र. को., सन्निपाते ।

भाषा—४ कपे शुद्धगन्धकी बरकेकोयलोपर गलाकर सोड, पारा और अभ्रकमम्भ १-१ कपे डालकर नीचे उतारले । इसमें पीपल, मरिच, धुनीहींग, अजवाइन, जीरा, चित्रक और शुद्ध बज्जना १-१ कपे, ताम्रमम्भ ७० कपे लेकर बारीकचूर्णकर अदरक, एलड, सहिजनबीडाल, सर्पशी, गिलोय, धीरुनार, भाक, मंगरा, पुनर्वा और अदरकके रसोंमे १-१ भावना देकर गोलाबनाय शरावतम्पुटमें बन्दकर २-४ कपडमिडी देकर मुखने-पर बाहुकायनमें एकदिनी अग्निदेवे । स्वाक्षशीतल होनेपर निहालकर रसडोडे । इसमेंसे ३-३ रतीकोमात्रा जायफल, शुद्धकपूर, शीतलचीनी समभागके १ भासे चूर्णमें मिलाय मधुके साथदेकर त्रिकटुका साथ मिलावेसे सन्निपातरो यहनटकरताहे ॥

३४६ सर्वाङ्गसुन्दररसः ( नवमः )

हेमाद्रगन्धरससङ्गुणरीय्यताम्रे-

क्षन्दाश्रियाणरसयुग्मगुणाऽग्निधानैः ।

अम्यारनीररससप्तपुटेन पचं

पूर्णार्हं सममुमीकितव्यलुजैश्च ॥

युक्तानुपानसकलामयनाशनोऽयं

सर्वाङ्गसुन्दर इति प्रथिता रसेदः ॥ १५११ ॥

रमायनं., र. को., प्रमेधाधिकारः ।

भाषा—मुक्कमम्भ १ भाग, अभ्रकमम्भ २ भाग, शुद्ध-कन्धक ५ भाग, पारा ६ भाग, मुद्रगा २ भाग, रजत ३ भाग, ताम्रमम्भ ४ भाग लेकर जंभीरीकेरवसे मर्दनकर गोलाबनाय शरावतम्पुटमें बन्दकर गरुपुटी आवेदेवे । स्वाक्षशीतलहोनेपर निहालकर जंभीरीकेरवसे पूरकर मर्दनकर आवेदेवे । ऐसे ७ आवे देनेकेबाद निहालकर रगडोडे । इसमेंसे २-३ रतीकी मात्रा मोतीकीमम्भ और मरिचकापूर्ण समभाग मिलाकर रोगोथिनानुगमकेगाय लेनेसे राजपद्मादिपित्तरोगोंको यह नटकरताहे ॥ १५११ ॥

३४७ सर्वाङ्गसुन्दररसः ( दशमः )

शुद्धं यतं विषं गन्धं शुद्धं तालकमाक्षिकम् ।

एतानि समभागानि खट्वमग्नये यिनिःशिपेत् ॥ १५१२ ॥

हंसपाद्रीरसेनैव द्वियामं मर्दयेद् दृढम् ।

काचशृष्णां निवेद्यथा धालुकाभिः प्रचुरयेत् ॥ १५१३ ॥

सर्वाङ्गशीतलमुद्वृत्त्य हिङ्गुञ्जं भक्षयेत्सदा ।

विपिपकांसं निहन्त्यापि सर्वकांसं नियच्छति ॥ १५१४ ॥

सर्वाङ्गसुन्दरो ह्येष रोगराजनिहन्तनः ।

दशभि मरिचे युक्तां पच्यां पिष्ट्वाऽम्भसा पिबेत् ॥

नाभिज्ञानाति कासञ्च निद्रासुप्तकरं परम् ।

मण्डूरसंयुतं लीढं कफघाताभिमान्यनुत् ॥ १५१६ ॥

व. रा., व. वि., विपिपकासे ।

भाषा—शुद्ध पारा, बज्जना, गन्धक, इतिहास और सोना-मायी समभाग लेकर नीलरङ्गकमलीकर हंसराजकेरवसे दोषहर मर्दनकर मुसाल १-७ कपडमिडी दोहरे आतशीवीशीमें बाल-कर बाहुकायनमें रख दोषहरकी आवेदेवे । स्वाक्षशीतलहोनेपर निहालकर रसडोडे । इसमेंसे २-२ रती उचितानुपानकेसाथ-लेकर १० मरिच और १ हरेके पानीमें पीसकर ऊपरसे पीनेसे शुद्धकासको यह निहत्तरताहे । मण्डूरकेसाथलेनेसे कफ, बायु और मन्दाभित्तो नटकरताहे ॥ १५११ ॥

३४८ सर्वाङ्गसुन्दरीवटी

अष्टभागमितं शुद्धं दन्तीबीजं कणोपपञ्चम् ।

पारदं गन्धकं शुद्धं दर्दं टङ्गुणं विषम् ॥ १५१७ ॥

निर्याते खदिराङ्गरिधुर्गुणैर्द्रव्यसुमर्दितम् ।

स्थलपिष्टं त्रिकटुकं फलत्रितयचित्रकम् ॥ १५१८ ॥

प्रत्येकं मागमेकेके सूक्ष्मचूर्णं प्रकल्पयेत् ।

पलायुतं भृङ्गराजरसेपार्द्रकजैरपि ॥ १५१९ ॥

माधयेत्सप्तशः शुष्कं शुष्कञ्च सायधानतः ।

कीलमज्जसमाः कार्याः कलायाकृतवस्तथा ॥ १५२० ॥



चणकाकृतयो वटयो देया चलविचारतः ।  
 उष्णतोयानुपानञ्च कर्तव्यं कुड्यार्द्धतः ॥ १५२१ ॥  
 जाते चिरेके संशुद्धे पथ्यं देयं हितञ्च यत् ।  
 षोडाद्विंशान्तये निन्यं वटी सेव्या यथोचिता ॥ १५२२ ॥  
 पलमुष्णजले पेयमामं गच्छति सत्वरम् ।  
 उद्राणि विनश्यन्ति सर्वं निर्याति क्लिबपम् ॥ १५२३ ॥  
 प्रथमे सप्तके तक्रमकं लघु सुधीतलम् ।  
 द्वितीये दधिभक्तञ्च तृतीये सुखभोजनम् ॥ १५२४ ॥  
 वह्निं धातुकृत्स्वेव पथ्ययत्नम्विजानता ।  
 जयेत्पीडादिकं सर्वं वटी सर्वाङ्गसुन्दरी ॥ १५२५ ॥  
 र. र. को., उदरोमे ।

भाषा—शुद्ध जमालगोटा, पारा, गन्धक, सिंगरिफ, सुहावा और बछनाग, पीपल, मरिच येसब ८-८ भागलेकर नीलवर्ण कजलीकर निर्वातस्थानमें खैरकेकोयलोपर तप्तयत्नमें चूनेके पानीसे एकपहर मदनकर त्रिकटु, त्रिफला और चित्रकमूलकी-छाल १-१ भागका कपड़छनचूर्ण डालकर भंगरा और अदरक-केरसकी सुखासुखाकर ७-७ भागनाएँ देवे और बेरकीमजा, मटर तथा चनेप्रमाण गोलियेबनाय छायाशुष्ककर रपजेदे । इनमेंसे बलारजका विचारकर उचितमानाओं देकर दो पल गरम, पानी पिलायेसे तमाममल खुरिजहोनेकेबाद अवस्थाका विचार-कर उचितपथ्य देवेसे शरीरका मल विशुद्धहोजाताहै । भयङ्कर उदरोगोंकी निवृत्तिकेलिये एकपल गरमपानीकेसाथ प्रतिदिन १-१ गोली लेनीचाहिये । प्रथमसप्तकमें छाछमात, दूसरेमें दहीमात और तीसरेमें इलाकामोजन देवे । इसनेबाद अमि और भातुओंने बढ़ानेवाली चीजोंका सेवनकरनाउचितहै ॥ ३४८ ॥

### ३४९ सर्वापस्मारहररसः

क्रीताऽञ्जनञ्च सगरं सृतं सृष्टिप्रयान्यितम् ।  
 पकीकृत्य तु सम्मर्षं दशार्दं सज्जकं पिपम् ॥ १५२६ ॥  
 देवशालीरुसे प्राहो याद्यथामन्त्रं भवेत् ।  
 कृत्या तु गोलकं शुष्कं पाचयेद्गन्धमध्यतः ॥ १५२७ ॥  
 ततस्तु घटिकाः कार्या गुञ्जात्रयप्रमाणतः ।  
 भक्षिता क्षमयोगेन सर्वापस्मारनाशिनी ॥ १५२८ ॥  
 रसेन्द्रमं, अपस्मारे ।

भाषा—सुरमेकीभस्म, शुद्धबछनाग, पारा, हरिताल, गन्धक, और मैनसिल १-१ भाग, सज्जकपिप १० वा भाग लेकर सप्तकी नीलवर्णकजलीकर बन्दालकेरससे ३ पहर मदनकर गोला-बनाय सुखाकर मलमलकेचपड़ेमें लपेट पोहलोबनाय पोहली हुबनेलायक गन्धकको गलाकर उसमें पोहलीको रखदे और मन्दमन्द इतनी आंचदे कि धीरे १ गन्धक जलजाय । गन्धक-का थोड़ाहिस्सा धाकीरहनेपर नीचे उतारकर स्वाश्रीतल-होनेपर ऊपरका गन्धक खुराचदे और दवाको निकालकर बन्दाल-केरससे एकदिन घोटकर १-१ रत्तीकी गोठिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली बन्दालकेरसकेसाथ देवे और

धीरेधीरे औचितो देवकर गोलकीमात्रा बढ़ाकर ३ गोलियों तक देनेसे अपस्मार नष्टहोताहै ॥ ३४९ ॥

### ३५० सर्वारोग्यवटी

रसं पलमितं तुल्यशुद्धनागेन संयुतम् ।  
 द्रावयित्वाऽऽस्यसे पात्रे सतैले निक्षिपेत्क्षितौ ॥ १५२९ ॥  
 ततो घृतं विनिक्षिप्य गन्धकं तद्विलोड्य च ।  
 पुनरप्यास्यसे पात्रे क्षित्वा प्रद्राव्य निक्षिपेत् ॥ १५३० ॥  
 तत्तुल्यं जारयेत्तालं पुनः सञ्चूर्ण्य पूर्ववत् ।  
 तत्तुल्यं जारयेत्सम्यक्कुण्टां परिशोधिताम् ॥ १५३१ ॥  
 तत्तुल्यं घृणिते तस्मिन्क्षिपेन्नागं निहत्यकम् ।  
 तावदेव मृतं ताप्यं सर्वमन्यच्च तत्तमम् ॥ १५३२ ॥  
 तीक्ष्णायः रपरे व्योम हिङ्गुलञ्च शिलाजतु ।  
 पूषकर्वप्रमाणेन पट्कोलं पट्पला मिश्री ॥ १५३३ ॥  
 दीप्यकञ्च चतुर्जातं रेणुकोशीरवेष्टकम् ।  
 तुम्बुर मूर्च्छिका रास्ना कङ्कोलं चोरपुष्पकम् ॥ १५३४ ॥  
 कण्टकारी किपतञ्च बीजाग्न्युन्मत्तकस्य च ।  
 पलद्वयञ्च लाङ्गल्याः सर्वेषां द्वादशांशकम् ॥ १५३५ ॥  
 यत्तनामं सितम्भूरि विनिक्षिप्य ततः परम् ।  
 त्रिफलानां दशाङ्गीणां कपायेण ततः परम् ॥ १५३६ ॥  
 जयन्त्याद्रकवासानां मार्कण्डेयस्यैस्तथा ।  
 माययित्वा च कर्तव्या घटिकाश्चणकोमिताः ॥ १५३७ ॥  
 एकैका घटिका सेव्या कुर्यात्तीमत्रतं क्षुधाम् ।  
 विसृज्य सर्वतो हिक्कां सेव्यं स्यादु च क्षिततलम् ॥ १५३८ ॥  
 सामाञ्च ग्रहणीं सदाङ्गुदुर्दं शोषोक्तं पाण्डुता-  
 मातिं घातकफप्रिदोषजनितं शूलञ्च गुल्मामयम् ।  
 याताभ्रान विलम्बिकाञ्च कसनभ्यासाशंसां विद्रधि,  
 सर्वादीग्यवटी क्षणाद्विजयते रोगास्तथाग्न्यानापि ॥

र. सु, र. को., र. र. स, र. र. को., ग्रहण्यधिकारे । र. र. को. व्योम निष्कासितं तत्प्रमादादेव ।

भाषा—एकपल शुद्ध नागको कड़ाहीमें गलाकर थोड़ा-तैल डालकर १ पल शुद्ध पारा मिलकर जमीनपर डालदे । डंढा-होनेपर फिर कड़ाहीमें गलाकर थोड़ा धी और १ पल गन्धक डालकर जलावे । गन्धक जल जानेपर पूर्ववत् जमीनपर डालकर डंढाकरे । फिर गलाकर १ पल हरितालका चूर्ण थोड़ा २ डालकर जलावे इसकेबाद १ पल मैनसिलको जलाकर १-१ पल निरुत्य नाग और सोनामाखी डालकर उतारले । फिर छोह और अक्रमभस्म, शुद्धखपरिया, सिंगरिफ और शिलाजीत १-१ कर्ष, पट्कोल ६ कर्ष, सोंफ ६ पल, अजवाइन, चातुर्गात, रेणुका, खस, विडङ्ग, तुम्बुल, भारद्वाजी, रास्ना, शीतलजीनी, खजवाइन, मन्-कटैया, चिरायता, शुद्धपत्रेकेकीनी १-१ पल, शुद्धकरिहारी २ पल, खरका १२ बाहिस्सा शुद्ध सफेदबछनाग लेकर घातीकर्व-कर इच्छे मिलाय १-२ पहर मदनकर त्रिफला, दशमूल, जैती, अदरक, अदुसा, भंगरा इनप्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा

बायोमे १-१ भावना देवर चनेप्रमाणगोलिये बनाकर रखोदे ।  
इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोभितानुपानकेसाथ देनेसे  
देजा, दिक्की, घामपहनी, आँखोंका दृष्टा बड़ा आसय, पाण्डु,  
प्रियोपरी पीडा, घुल, गुल्म, कालरोग, आध्मान, विलम्बिका,  
सांगी, श्वास, बवासीर, विदग्धि इनसबको यह नष्टकरतीदे ।  
और अत्यन्तपुष्टको बड़ातीदे ॥ १५० ॥

### ३५१ सर्वेश्वरचूर्णम्

त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं चूर्णं शम्भुकजन्तुजम् ।  
ययक्षारं तथा रक्तकटिनी कामरूपिणी ॥ १५४० ॥  
शनचूर्णं समयुक्तं क्षारं दायदलोद्भवम् ।  
कलन्दीस्वरसेः शुद्धं मण्डूरं द्विगुणं ततः ॥ १५४१ ॥  
एकौहान्य प्रयत्नेन चूर्णं सर्वेश्वराह्वयम् ।  
प्राङ्मथ्यान्तकमेनेर भोजनस्य प्रयोजयेत् ॥ १५४२ ॥  
माधया चानुपानञ्च दद्याद्वाद्रजलं पयः ।  
गन्धमर्ज्जुतं शुद्धा शलादन्तरुसन्निभात् ॥ १५४३ ॥  
शिरजान्सर्पतो धोमान्दुस्तराम्बुचयते नरः ।  
पक्तिशलासर्पशान्द्रयशलाद्य सर्वशः ॥ १५४४ ॥  
मुच्यते मानवी यादृग्निष्णोराशधमे भवात् ।  
हीहगुल्मीदृषाश्च मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥ १५४५ ॥  
कासं पञ्चपिर्भं श्वासमूरस्तम्भामवातकांन ।  
हृन्वादेय प्रयोगोऽयमग्निध्यां निर्मितः पुरा ॥ १५४६ ॥  
र. र., शलादधिकारे ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, घोंघेकीभम्म, ययक्षार, शुद्ध  
कालगुडा, अमगन्ध, इन्द्रजय, गुलहड़ी और त्रिकटके पत्तीकी  
राख १-१ माग, नालीरेखसे शुद्धकर अस्मभियाहुआ मण्डूर  
समेन दूना डालकर १-२ पहर घोटकर रखोदे । इनमेंसे भोजन  
नकेपहिले, मध्य तथा अन्तमें १-१ माधाकीमात्रा अक्षरखके  
रम अथवा पायरे जरीट दूधनेसाथ लेनेसे बहुतदिनका शूल-  
रूपघुल, पचिघुल, मग्नप्रघुल, ग्रीह, गुल्म, उदररोग, मन्दाग्नि,  
अग्नि, ५ प्रकारका कास और श्वास, कलस्तम्भ, आमवात  
इनमनको यह नष्टकरतीदे ॥ १५५१ ॥

### ३५२ सर्वेश्वररसः (प्रथमः)

चतुर्गद्याणमानानि शुद्धहेममयानि च ।  
पञ्चानि कारयेत्सम्यग्विधयन्ते कण्टके रंधा ॥ १५४७ ॥  
जलवत्कोमलान्येव स्युज्जान्येकाङ्गुलानि च ।  
शुद्धसूतस्य गद्याणा अष्टौ तानि दलानि च ॥ १५४८ ॥  
मिश्रं द्वादशगद्याणं खले पिष्ट्वा दिनत्रयम् ।  
प्रस्थि धलेण घघ्नीयात्क्षित्या तां हेमपिष्टिकाम् ॥ १५४९ ॥  
मृन्मध्यां सुपिकायान्तु तद्धार्यमनियत्नतः ।  
वालुकापृष्णकुहरे यत्रे मृणां विनिक्षिपेत् ॥ १५५० ॥  
तच्च चूर्ण्योप समारोप्य मृद्वग्निं ज्वालयेदधः ।  
शुद्धगन्धकगद्याणां त्विशां तत्र निक्षिपेत् ॥ १५५१ ॥

गन्धके गलितेऽतीव जाते तैलस्य सन्निभे ।  
प्रक्षिपेद्देमंजां पिष्टिं प्रस्थिवद्वाञ्च यत्नतः ॥ १५५२ ॥  
क्षिपेद्गन्धकगद्याणां मुहुर्दग्धे च गन्धके ।  
एवं दिनाष्टकं स्वेद्या पिष्टी यत्नेन हेमजा ॥ १५५३ ॥  
स्वाङ्गशीतां क्षिपेत्खले दग्धगन्धकरुसंयुताम् ।  
भृङ्गराजसेनेकं घासरं मर्दयेद्य ताम् ॥ १५५४ ॥  
काञ्चनारतरौ मूलत्वचा क्षीखण्डमर्दिताम् ।  
घञ्जीक्षरेण चैकाहमर्कुदुग्धेन घासाम् ॥ १५५५ ॥  
एवञ्चतुर्दिनं पिष्ट्वा कार्यां वतुलगोलकः ।  
शरावसम्पुटे क्षिप्त्वा चतुर्भिश्छाणकेः पुटः ॥ १५५६ ॥  
द्वारते गन्धको यायत्तायदेयो मुहुर्मुहुः ।  
मृतं भ्येताम्रजं चूर्णं चूर्णं स्यान्मृतताम्रजम् ॥ १५५७ ॥  
चूर्णं पीतरुपर्दीनां शङ्खचूर्णं तुरीयरुम् ।  
गद्याणरट्टं प्रत्येकं क्षिपेत्पिष्टे च हेमजे ॥ १५५८ ॥  
खले पिष्ट्वा कृन्तं पिष्टं घञ्जीक्षरेण घासाम् ।  
एकाहमर्कुदुग्धेन पिष्ट्वा चैकाहमर्तां गतम् ॥ १५५९ ॥  
गोलं हत्वा विनिक्षिप्य शरावे सम्पुटेद्य ताम् ।  
यक्ष्मसिक्रिया लिप्त्वा देयो गतान्तर पुटः ॥ १५६० ॥  
स्वाङ्गशीतं नयेद्वीलं खले सञ्चर्णयेद् ददम् ।  
कृपिकायां विनिक्षेप्य जातः सर्वेश्वरो रसः ॥ १५६१ ॥  
साज्यं पटुमितं ब्राह्मं द्वात्रिंशद्गन्धरिचैः समम् ।  
अष्टादशप्रमेहेषु गुल्मयो वातपित्तयोः ॥ १५६२ ॥  
वदकोष्ठेषु मन्दाग्नी देयः शलादिरोगिषु ।  
कामहीने घलक्षीने स्तेमघातादिरोगिषु ॥ १५६३ ॥  
भरिचाज्यरज्जोर्गेषु ज्वरेपूष्णीदकेन च ।  
तैलक्षारावि चर्पे हि भोजनं मधुरं भवेत् ॥ १५६४ ॥  
कामाद्रोगा विलीयन्ते मासेकानन्तरं ध्रुवम् ।  
अशीसे नाशमायान्ति साध्यासाध्यानि सत्त्वरम् ॥  
शुद्धकीला निवर्तन्ते बाहुशालगुडान्विता ।  
दारुणा गुदपीडा च निवर्तताऽस्य सेवनात् ॥ १५६६ ॥

रत्वि, चर्परेणे ।

भाषा—शुद्धसोमेकेबर्क १ तोले, शुद्धपारा ४ तोलेको  
खरले १-१ बर्क डालकर घोट । बर्कमिलजानेपर ३ दिनतक  
घोटकर गोली बनाय बरमे पोखरी बाँधकर रखलेवे । फिर  
नालुकायकमें गोस्तनाकारमृपाको रख चूल्हेपर चढ़ाय मन्दाग्नि  
जलावे । मृषा भरमहोनेपर १० तोले शुद्धगन्धककाचूर्ण मृपामें  
रखसे जब गलकर तैलकोतरह हुतहोजाय तब हेमपिष्टीकी पोखरी  
को उसमें डुवादे । गन्धकके जलजानेपर उतनाही गन्धक  
और डालदेवे । इसतरह ८ दिनतक गन्धकमें उस पिष्टीका  
स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतलोनेपर मृपामेंसे जलेहुएगन्धककेसाथ  
पोखरीको निकाल घरलख मंभेरसारस, चन्दनकैदबमें पिसा-  
हुवा कचनास्त्रीजड़कीछालका कन्क, धूमर और आककादूध  
इनप्रत्येकमें १-१ दिन मर्दनकर गोलबनाय शरावसम्पुटमें

बन्दकर २-३ कपडिमिठीदेकर सूखनेपर ४ जहलीकण्डोंकी आचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् द्वौमं मर्दनकर आचदे । इसतरह जयतक तमामगन्धक न जलजाय तबतक करता रहे । फिर छेदेद अग्रक, ताम्र, पीलीकौड़ी और धातु इनकी भस्म ३-३ तोले मिलाय भूअर और आककेदूधसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर साधारणपुटकी आचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर चूर्णकर शीशोमें रख छोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती ३२ कालीमिर्च और धीके साप देनेसे १८ प्रकारके प्रमेह, वात और पित्तजगुल्म, बद्धकोष्ठता मन्दाग्नि, शूल, पण्डित, इत्यादि, कफ और वातिकरोग, अजीर्ण इन सबको यह नष्टकरता है । गरमजलकेसायदेनेसे ज्वरोंको नष्ट करता है । तैल और क्षार छोड़कर मधुरोजनकरे । एकमहीने केबाद क्रमशः रोग नष्टहोजातैह । बाहुशालगुडकेसायदेनेसे साध्य अपवा असाध्य बवासीर और गुदकीपीडा निवृत्त होजातीह ॥

### ३५३ सर्वेश्वररसः ( द्वितीयः )

पृथोक्तस्य रसेन्द्रस्य तोलकांश्चतुरः क्षिपेत् ।  
अन्नं मनःशिलां तालं गन्धकं कृष्णलोहकम् ॥ १५६७ ॥  
शुल्यपत्रं कांक्ष्यभस्म प्रत्येकं सूतमात्रकम् ।  
सिन्धुजं काचलवर्णं सौवर्चलविडोद्भवं ॥ १५६८ ॥  
साधुद्रुमिति सूतार्द्धमेतत्प्रत्येकमाधरेत् ।  
माधु बल्लान् सुवर्णस्य रौप्यं तावद्विधोयते ॥ १५६९ ॥  
सूतपिथी ततः कार्या स्वर्णरौप्योद्भवा ततः ।  
पिङ्गु प्रलेपयेच्छुल्यपत्राण्यम्लेन बुद्धिमान् ॥ १५७० ॥  
शिष्टाग्निं सर्वद्रव्याणि कल्कीकृत्याऽथ चूर्णयेत् ।  
दृढं भाण्डं समादाय तन्मध्ये निक्षिपेद्बुधः ॥ १५७१ ॥  
द्रव्यचूर्णं तदुपरि शुल्यपत्राणि कानिचित् ।  
दद्यादुपरि चूर्णन्तु ततः पत्राणि तद्रजः ॥ १५७२ ॥  
पवं क्षिप्वा ततो दद्यान्मुक्ताचूर्णन्तु कर्षकम् ।  
प्रवालचूर्णं कर्षे स्यादुपरिष्ठातिपथाय वै ॥ १५७३ ॥  
उदीच्यवाहणीनीरं दुग्धिनीरसमेव वा ।  
दत्त्वा सम्पुटं दद्यात्पुटं गजसमाह्वयम् ॥ १५७४ ॥  
विशोष्य सम्पुटं दद्यात्पुटं गजसमाह्वयम् ।  
आरण्यच्छान्तैर्दद्याद्वायुं नैव पुटेद्रसम् ॥ १५७५ ॥  
स्वाज्ञशीतलमुद्धृत्य सञ्चर्य स्यापयेद्रसम् ।  
रसेश्वरञ्च सम्पुज्य योगिनीगणमैरवान् ॥ १५७६ ॥  
रसेश्वरः प्रदातव्यो स्थिरताय नवज्वरे ।  
बहुमानेनानुपानं दद्यादाद्रकजं रसम् ॥ १५७७ ॥  
घान्तिश्चेत्सम्प्रजायेत जीवत्येव न संशयः ।  
न चेद्घान्तिं भवेत्तर्हि त्रियेतैव ज्वरार्दितः ॥ १५७८ ॥  
पथ्यप्रयोगः शत्रुतः कर्तव्यो मिषजा सदा ।  
अयं सर्वेश्वरो नाम रसो ज्वरनिघ्नः ॥ १५७९ ॥  
दृष्टप्रभावः सृष्टोऽथ लोकांपरुतिहेतवे ।  
देवीशालानुसारेण धियिच्य प्रतिपादितः ॥ १५८० ॥  
रसालं, जराधिकरो ।

भाषा—ऊर्ध्वपातनादिस्कारोसे शुद्धकियाहुआ पारा, मैनासिल, हरिताल और गन्धक, अग्रक, फोलाद और कास्यभस्म, कण्टकवैषी तावेकेपत्र ४-४ तोले, सैन्धव, वाचनमक, सधल, नवसादर और सयुग्लमक २-२ तोले, सुवर्ण और चादीकेवक ३-३ मासे लेकर पारमें वकौको मिलाय तावेके पत्रोंको डालकर नीबूकेरसमें घोटकर पारिको पत्रोंपर चढादे । बचेहुए द्रव्योंको नीबूके रससे मर्दनकर सुखाकर चूर्णबनावे फिर एकशरावमें घोडासा चूर्ण विद्याकर तावेकेपत्रोंकी तह जमाय ऊपर चूर्णको छिड़कदे । इसतरह समस्त पत्र और चूर्णकी तह जमाकर १-१ कर्ष मोती और प्रवालकी पिठी क्रमशः विद्याकर बमारद्धो अथवा साधारणदूधकेरससे तरकरके शरावसम्पुटमें बन्दकर वज्रमिठीसे सन्धि बन्दकर २-४ कपडिमिठी समस्तपर चढाय सुखाकर जहलीकण्डोंकी गजपुटकी आचदे । स्वाज्ञशीतल होनेपर निकालकर योगिनीगण आर भैरवोंका पूजनकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती अदरककेरसकेसाय ज्वरमें देनेसे यदि कमनहोजाय तो वह अवश्य बचेगा अन्यथा सशय है । वाग्निहोनेपर अत्यन्त सूखसे प्रसक्त हो तो मूषकापुष्पकीरह इत्का भोजन देवे ॥ ३५३ ॥

### ३५४ सर्वेश्वररसः ( तृतीयः )

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि रसं परमदुर्लभम् ।  
नाम्ना सर्वेश्वरं दिव्यं सर्वरोगकुलान्तकम् ॥ १५८१ ॥  
पलेकं तालसत्त्वञ्च नागसत्त्व तथैव च ।  
व्योमद्रुतिं पलद्वयं द्विपलां माक्षिकद्रुतिम् ॥ १५८२ ॥  
सर्वतुल्यं सृतं सृतं गन्धकञ्चैव तत्समम् ।  
द्राक्षांशञ्च वज्रञ्च तावन्मानञ्च मौक्तिकम् ॥ १५८३ ॥  
हेमताश्च पद्मान् प्रवालं हेमत्तत्समम् ।  
कान्तलोहं समं योज्यं विमला मणिसत्तकम् ॥ १५८४ ॥  
कान्तपाषाणद्विभक्तं ताम्रमयभृगुभागम् ।  
खल्वभ्यधे विनिरक्षिप्य मदेयैर्गुरुसुन्दरम् ॥ १५८५ ॥  
गिरिजाकालिकाशुद्धीक्षीरकञ्चुक्रियोगतः ।  
सप्तधास्यौषधैर्दिव्यैर्दमस्वयन्त्रगं पचेत् ॥ १५८६ ॥  
अर्द्धार्द्धं लघ्वं क्षिप्वा शराबद्वदसम्पुटे ।  
यामद्वार्शिशकञ्चैव दातव्यञ्च हठानलः ॥ १५८७ ॥  
स्वाज्ञशीतं समुद्धृत्य पूजयेद्भगयोगिनीः ।  
शुद्धामेकं रसस्याऽस्य त्रिगुल्लेख्योममाक्षिकम् ॥ १५८८ ॥  
महिषाज्यद्विकर्षेण भस्मयेत्सर्वकुष्ठपुटम् ।  
प्रमेहे वातरोगेषु पाण्डुकासहलीमके ॥ १५८९ ॥  
आमघाते हृतीसारं ब्रह्मण्यशोभगन्दरे ।  
शोफमन्दाग्र्यजीर्णं रोगराजनिवृत्तनम् ॥ १५९० ॥  
शुल्माप्लीहमहाशूलमशोः क्षुद्राश्च नाशयेत् ।  
बलीप्लीहान्मुक्तां सेवितः स ज्वरं हरेत् ॥ १५९१ ॥  
त्रयोदशान्सन्निपाताञ्ज्वरमद्यधिघ्नं हरेत् ।  
यन्ध्याद्यान्सकलाभोगाघ्राशयेन्नान संशयः ॥ १५९२ ॥  
रससागर, पुटे ।

भाषा—दरिताल और नागमल १-१ पल, अन्नक और माशिकमुति २-२ पत्र, पारदभस्म और शुद्धगन्धक सबदीबारा-  
पर, हीरा और मोतोदीभस्म सबसे १० बां भाग, सुवर्ण,  
रजत, प्रवाल १-१ भाग, कान्तलोहभस्म सबदीबारापर, रजत-  
माशिक और माशिकभस्म ७-७ भाग, कान्तसाधन १० भा०,  
तान्रभस्म २ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकमलीकर कोयल,  
कालादाना, छोटी हाथीचुपडी, क्षीरकन्दुपी सप्तपान्य इनके  
यथासम्भव स्वरस अथवा हाथोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोला-  
बनाय इन्हींद्वारा १-१ दिन स्वेदनकर चतुर्थांश नमकहालकर  
गोलाबनाय धारावन्मुद्रते बन्दकर १-७ काहमिठी देकर  
सुखनेपर १२ पहरकी गजपुटकी करीमांचे । स्वावृत्तीत-  
होनेपर निकालकर योगिनीगणोंका पूजनकर रसछोड़े । इसमेंसे  
१ रत्ती लेकर १ रत्ती गुण्यमाशिक और २ कण्ठ भस्मका घी  
मिलाकर प्रतिदिन खानेसे समस्तगुण, प्रमेह, वातरोग, पाण्डु,  
काग, हलीमक, आमवात, अतिमार, ग्रहणी, अग्नौ, गन्धर्, शोष,  
मन्दाग्नि, अजीर्ण, रात्रयक्ष्म, शुल्म, ग्रीहा, महाशूल,  
शुद्धिहा, ११ प्रकारके सप्तिरात और ८ प्रकारके उग्र इनमचको  
यह नष्टकरताहै । निम्नरसेनसे क्लीपस्तिकादिफोको दूरकर  
पुण्य और श्रियोंके कल्याणको दूरकरताहै । १५४ ॥

### ३५५ सर्वेश्वररसः (चतुर्थः)

सहदेवीरसे मर्चां द्रवदाहृष्टपारदः ।  
अहिकेनकभृङ्गाभ्यां शिष्येनप्ररसेन च ॥ १५९३ ॥  
गोभीयिष्याभ्यां प्रत्येकं द्वयं तच्च शिष्येपुनः ।  
कुक्कुटाण्डं पुनर्नोत्था सम्पुत्र मासत्रयं शिष्ये ॥  
अर्कक्षीरेण सम्मर्द्य त्रियामं शोषयेत्पुनः ।  
विनैकं डमरुयन्ने यद्विंष्ट्यात्पुनश्च तत् ॥ १५९५ ॥  
शीतं गृहीत्वा रसके समे च गलिते पुनः ।  
पाययित्वा च मृचाया रसं सम्मर्दयेत्पुनः ॥ १५९६ ॥  
एकविंशतिवारांश्च शृङ्गीयात्पञ्चभागिकम् ।  
यहं नागश्च सारश्च माशिकं सोमजं मलम् ॥ १६९७ ॥  
तालसत्वं दिलासत्वं प्रत्येकञ्च तदर्थकम् ।  
ताम्रं सार्धपलं गन्धं शृङ्गीयाश्च चतुःपलम् ॥ १६९८ ॥  
तत्सर्वं मर्दयेत्त्रिखिरकंक्षीरेण या पुनः ।  
भृत्तैलेन च विपं फेनं सार्धपलद्वयम् ॥ १६९९ ॥  
मृगारसेन सम्मर्द्य रसेरतेः पुनस्तथा ।  
रविभृत्तजयास्तुग्निः सप्ताहं रघुतैलतः ॥ १६०० ॥  
काचकृपां विनिक्षिप्य शुष्कं सम्मुद्रय यत्नतः ।  
यत्ते छागत्रिंशो पूर्णे पात्रमध्ये च कृषिकाम् ॥ १६०१ ॥  
संस्थाप्याग्निं प्रद्याद्य यामद्वादशकं तथा ।  
शृङ्गीयाच्छीतलं तच्च नीलनीरुदसधिमम् ॥ १६०२ ॥  
पवं सर्वेश्वरो नास्त्रा रसो भवति दुर्लभः ।  
दत्तस्तण्डुलमात्रस्तु सर्वरोगहरः परः ॥ १६०३ ॥  
क्षयं क्षतं श्वासकासी प्रमेहान्विशति तथा ।

ग्रहणीमतिसारांश्च मृष्यकृन्नाणि चाद्ममरीः ॥  
इत्यादिरोगाश्रित्या तु भवेद्भृष्टो रसायनः ॥ १६०४ ॥  
र. का., रात्रयक्ष्मणि ।

टि०—अत्रानुपानुनी मारणानि विविध विहितानि सन्ति तान्य  
भोक्षितरीत्या प्रत्येकान्यानि ।

### अथ ग्रहेश्वरमवमारणम्

अथारिस्तु रसे यानि रसकारीति तानि ॥ ।  
मारिणानि हि तानि ह्यु कययानि विधिं तथा ॥  
श्रीपिषयके शिष्या रमकं गलितं रसे ।  
वारयेधेनपद्माशुपुपीहीन पुन ॥  
मधुपाण्यगुन्द्राश्च रमकं सार्धमुद्रिकम् ।  
विद्रु तेन च वनाणि विक्षिप्य च निक्षेपयेत् ॥  
शुल्पात्रे तानि संस्थाप्य मान्यपाणाद्यगुन्द्रकम् ।  
शुक्लेयस्त्रै लिप्त्वा शीतवित्वा धमेन्द्राश्च ॥  
परिपाकारो वारय्य कुयारस्तु विधिम् ।  
सर्वं मनरेके विद्रु भोगयेत्पुन पुन ॥  
बुबुटु बाध तद्विधिं गात्रयेत् ततो हुनम् ।  
रमकं तद्वैरुद्र नास्त्रा सर्वं कल्याणकं ॥

### अथ ग्रहेश्वरनागमारणम्

शुद्धगन्धक वनाणि मारिणानि शिष्येदिह ।  
शिरीषदन्तिव्रसे द्वाष्टाम्भुष्यते पुन ॥  
तत्त्वत्वेरीनपद्माशुपुपीहीन प्रक्षिपेदिति ।  
पान्यधनाशुपायान् मृष्यमर्चयन् पुन ॥  
धराशीपिनिमिन्दुरिणाभिलक्ष्यन्तान्तरा ।  
धृत्वा विद्रुद्वयं शुक्लेयस्त्रै शोषिण भूयम् ॥  
सराशी च धमेयानपेक्ष मितरं विष्णुम् ।  
विरायेव हि कृते नाग मर्दयेव शिष्ये ॥

### अथ ग्रहेश्वरपद्ममारणम्

शुद्धं वहं ॥ यस्मिन् वारयेरीनविराशितम् ।  
शिष्येयकके शीरे रसे मन्त्रकस्य च ॥  
विन्दुमिक्षिते शिष्या वारयिस्तथैव च ।  
शुद्धिकाया रसे तद्वारय्या तस्या पुन शिष्य ॥  
शुक्तिचूर्णेन समिश्रय विपलयेत्पुन ॥  
तद्विशिष्य विक्षिप्य वहिं द्वाविंशत्याम् ॥  
दश्या च विहितं कष्टुमिक्षिप्य रसि पुन ॥  
किद्विषेत भोगवित्वा मारयेत्किद्विषेत ॥  
शुक्लेयस्त्रैविस्त्रि ॥ दाहयेत्त्रिपुत्रिणा ।  
यामद्वादशकं यत्ते वहं सर्वेश्वरे शिष्ये ॥

### अथ ग्रहेश्वरलोहमारणम्

अथ शुद्ध लोहपलेह तत्त तान् शिष्ये ।  
दन्त्यामिनीपद्माशुपुपीहीन विक्षिप्य ॥  
तत्त तत्त लोहपदीरीरीक्षीकोनर्विशति ।  
तालसत्वेरुद्रैल्लेखितं पद्मीकृत पुन ॥  
मृषाभ्ये गन्धकेन टङ्गेन च तापयेत् ।  
शुद्धद्रवि शिष्येद्विषये तच्च पुनपुन ॥  
विशार पत्रलवण नवसारकनीरकम् ।  
ताल लोममल तोरीनिमुद्रावेण मर्दयेत् ॥  
निक्षिप्य वारणीयन्वाच्छुद्धद्रवित्वा पूर्ववत् ।  
अथ तद्विहितं शुष्कं मृषाया सद्विराशितम् ।  
विज्याम आश्रित्य तच्च धात्रा पाद शिष्ये ॥

शीतमेकोनपञ्चासद्वाररसेन च ॥  
मर्दयित्वा भवेत्सिद्ध लोह सर्वेश्वरादये ।

अथ प्रक्षेपमाशिक्षमारण्यम्

अथ तप्त माक्षिकन्तु काञ्चिके प्रक्षिपेद्विष ।  
लिप्त्वोदुम्बरदुधेन हरिद्राया रसे पुनः ॥  
निक्षिप्यैकविंशतिदिनं मृत्पाया प्रक्षिप्यपुनः ।  
जड्वाड्यो विजया दत्ता बहिः स्थापामपसकम् ॥  
शीतमौदुम्बरे दुग्धे भाव्य भाव्य पुनस्तथा ।  
उदुम्बरीकलमरम भस्म पालाशान तथा ।  
निक्षिप्य मृगमये तु सन्मये माक्षिक क्षिरेत् ।  
ऊर्ध्वं छिन्नम क्षिप्या तदूर्ध्वं भस्म युग्मकम् ॥  
क्षिप्या विमुद्रयेच्छास्त्रादि द्विंशत्यामकम् ।  
एव माक्षिकमिदि स्थाप्यते सर्वेश्वरादये ॥ इति

**भाषा**—शिंगरफसे निकालेहुए पारेको सहदेवी, अफीम, भाग, खड़ा, वनगोमी और बजनागकेद्वोंमें ३-३ दिन रजकर मुर्गीके ताजे अण्डेमें भरकर ३ महीनेतक रखे । खराबहोनेपर अण्डेको बदलताजाय । फिर आकरेद्वयमें ३ पहर मर्दनकर मुलाकर बमरूपमें बन्दकर ४ पहरकी अमिदेवे । ऊपर भोगाहुआ ४ तह कपड़ा रखे । सन्धिधने इसतरह बन्दकर कि पारा उड़ न जाय । स्वाश्वशीलहोनेपर सम्मुद्रको उधाड़कर पारेको घीरजसे रगवकर निकाले और १०-२० बार कपड़ेमें छान साफकरले । फिर इसकी बराबर खपरियाको गलाकर पारेको उसमें मिलावे और शीतलहोनेपर खरलमें डाल मृगकेरससे २१ दिनतक मर्दनकरे । यहरस ५ पल, यज्ञ, नाग और लोहभस्म, सोनामासो, सोमल, हरिताल और मैगसिल इनके सत्त्व २॥-२॥ पल, ताम्र-भस्म १॥ पल, शुद्धगन्धक ४ पल लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर आकरेद्वय और धतूरेनीजोंके तैलसे ३-३ दिन मर्दनकर शुद्धवज्रनाग और अफीम ५-५ कर्ष मिलाकर मुर्वा, आक-काद्वय, धतूरा, भाग, यूरकाद्वय, एण्डतैल इनप्रत्येकके द्वोंमें ७-७ दिन मर्दनकर ६-७ कपड़मिठी दीहुई आतशीशीशीमें डालकर ईटवगैरहकी डाटसे शीशीका मुंढकन्दकर ६-७ कपड़मिठी देकर सूपनेपर शीशीको हंडीमें रखे । इस हंडीको खट्टेमें धकरीकी भीगणियोंके अन्दर रखे यह ध्यानरहे कि हंडीके चारोंतर्फ ४-४ अङ्गल मीगणी रहें और १२ पहरमें आंच छड़ी होजाय । इससे रसका स्वेदन होगा । स्वाश्वशीलहोनेपर निफालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ चावलभर समय अथवा रोगो-चिन्तापुनारकेसाय देनेसे क्षय, उर-क्षय, श्वास, कास, २० प्रकार केप्रमेद, महणी, जलित्मार, मूत्रकृच्छ्र, पथरी इत्यादि समस्त-रोगोंको यह नष्टकर कृष्य और रसायनका कामकरताहै ॥ ३५५ ॥

**३५६ सर्वेश्वररसः ( विधुमूर्तिः )**

मृताग्रं मृतलोहश्च पारदं मृतमेव च ।  
समभागं प्रकुर्वीत त्रिमार्गं विपतिन्दुकम् ॥ १६०५ ॥  
हिडिम्याश्च परं सर्वैः सर्वमेकव चूर्णयेत् ।  
मत्स्यपित्ताक्षया देया भावनाः सप्त चातपे ॥ १६०६ ॥

भागैकं मेलयेत्तत्र पुनः पारदभस्मनः ।  
पित्तस्य छागजातस्य माहिपस्य च भावनाः ॥ १६०७ ॥  
वराहपित्तस्य तथा प्रदेयाः सप्तसप्त च ।  
मयूरस्य क्रमेणैव रसः सर्वेश्वरः स्मृतः ॥  
कफोद्रेकं सन्धिपातं भूतोन्मादं ग्रहं हरत् ॥ १६०८ ॥

र. का., ज्वराधिकारे ।

**भाषा**—अन्नक, लोह और पारदभस्म १-१ भाग, शुद्ध-कुचिला ३ भा., भीमसेनीकपूर सबजीवरावर लेकर वारीकचूर्णकर मछलीकेपित्तकी ७ भावनाएं कड़ीधूपमें देकर एकभाग पारद-भस्म मिलाकर बबरा, भेंसा, सूअर और मोरकेपित्तोंकी ७-७ भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचिन्तापुनारकेसाय देनेसे कफप्रधानसन्धिपात, भूतोन्माद, ग्रहपीडा इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३५६ ॥

**३५७ सर्वेश्वररसः ( पटः )**

रसगन्धकयोश्चूर्णमैककृत्याऽन्नरुतथा ।  
हेममिश्रं समं कृत्वा मर्दयेचामकद्वयम् ॥ १६०९ ॥  
ज्वरपणाऽनलवज्रैलाटङ्कणं हेमनुल्यकम् ।  
कण्टकायां रसे भाव्यमेकविंशतिवारकम् ॥ १६१० ॥  
शिप्रुवीजाद्रिकरसैः सप्तधा भावयेत्पृथक् ।  
रसः सर्वेश्वरी नाम कासश्वासक्षयापहः ॥  
अनुपानं प्रयोक्तव्यं विमोक्तकफलत्वचम् ॥ १६११ ॥

र. सं., र. सु., ध., कासे ।

**भाषा**—शुद्ध पारा और गन्धक, अन्नक और सुवर्णभस्म, त्रिकटु, चित्रक, वज्रभस्म, श्लायवी, मुनाछुहाना येसय समभाग लेकर वारीकचूर्णकर परिगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय भटकटैयाकेरससे २१, सहिजनकेबीज और अदरखकेरसोंसे ७-७ भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकररखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचिन्तापुनारकेसायदेनेसे कास, श्वास, क्षय इनको यह नष्टकरताहै ॥ ३५७ ॥

**३५८ सर्वेश्वररसः ( सप्तमः )**

ताग्रं दशगुणं स्वर्णात्स्ववर्णपादं कटुत्रिकम् ।  
त्रिफलात्रिकटोस्तुल्या त्रिफलाज्जमयोदरः ॥ १६१२ ॥  
अयसोऽर्द्धं विपञ्चैव सर्वं सम्मद्यं यत्नतः ।  
सर्वेश्वररसो नाम रक्तगुल्मविनाशनः ॥ १६१३ ॥

र. सं., र. सु., ध., र. नि., गुल्माधिकारे ।

**भाषा**—वर्णभस्म १ तोला, ताम्रभस्म १० तोले, त्रिकटु और त्रिफला ३-३ भाजे, लोहभस्म १॥ मासा, शुद्धवज्रनाग ६ रत्ती लेकर सबको इक्के मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचिन्तापुनारकेसायदेनेसे रक्तगुल्मको यह नष्टकरताहै ॥ ३५८ ॥

## ३५९ सर्वेश्वरसः ( अष्टम. )

रसाद् द्विगुणितो गन्धश्चतुर्भांगान्तु दृढगन्धम् ।  
 तथाऽष्टभागो जैपालस्यहं सम्मर्दयेद् दृढम् ॥ १६१४ ॥  
 यल्लो नवज्वरं हन्ति रसः सर्वेश्वराभिधः ।  
 घट्टद्वयं हरीतक्या युक्तं वातज्वरं तथा ॥ १६१५ ॥  
 द्विपल्लो महृखण्डेन लीढः क्षौद्रयुतः कफम् ।  
 गुग्गा जीर्णज्वरं घोरं सर्वोपद्रवसंयुतम् ॥ १६१६ ॥  
 घट्टस्तु सृष्टिकारोगं पिप्पलीमधुसंयुतः ।  
 पञ्चवर्षस्य बालस्य यद्यमात्रो ज्वरजयेत् ॥ १६१७ ॥  
 गुग्गामिवृद्ध्या चिपमान्यावच्चतुर्थिकावधि ।  
 महृखण्डेन संयुक्तो हृष्यादोषत्रयस्तथा ॥ १६१८ ॥  
 यथानीकमिश्रानुप्यां यल्लो हृष्यात्स्मीनपि ।  
 एवं सर्वगदान्ध्रुमि रसो भैरवभाषितः ॥ १६१९ ॥  
 र सु, नि, र, र, र, र, कौ, र बो, यो स ( सुखरक्व ),  
 ज्वराधिकारे ।

टि०—र स, र स, चि क, र कौ, र म भा णु ऋणेपु  
 निषादिनोदरम इतिनाम्ना "रसेन्द्रवर्धितुं सत्यबालवोरे समे ।  
 एन सुप्रतिभो भोस्तपु विनोदविभापर ॥ एयोसुयुक्तो दैरस्यकलेचनीया  
 मयाद् । ज्वरञ्च जठरामयानुदगद दृढल भूषणम् ॥ सत्यम्बिरेचनाड-  
 भावे मुद्राभा विदन्तु । मेदाधिक्ये विकृतेक कम्बूलना स्वचो रसम् ॥"  
 इतिपाठो निहितोऽस्ति अत्र सर्ववस्तुपु समग्रा दृष्टवते । रक्षाफलोपयोगे  
 च मरिचमधिकतया नियुज्य ज्वराधिकारे विषाघर इति नाम स्वापि  
 तम् । अनवोदयोरस्युपरितम पान्तामर्षा करणीय । "कृत्स्नागुण  
 दृढ्या समक्का जैपालकास्तस्मा, मर्षा वास्कर शिबारायुताधिया  
 रसे सतथा । सक्षौद्रेण सुभारसेन सकलान्बीजायमात्राघये, द्रवो दिष्ट्य  
 यवान्निष्कामधुतुत वस्तुचिप्यर्षाक्षौद्रपुर ॥ उदररित्ते दोष जठरमय  
 नाशन । सट्टमाहि वनेत्येवम् द्रवद्रव्य दिन मनम् ॥" इत्युदरारि  
 नाम्ना रसावतारे पाठो दृष्टत तत्र वस्तुभागेनिल्लङ्घ्य दृष्टवते । हरीय  
 भावनानुप्राणमन इत्या तदन्तर्भा सुकर । क्रमविवृद्धमागवस्तुपेद  
 पेश्या गुणाधिक्य प्रत्यक्ष कर्ममि विद्विर् विभावनीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा, मुद्रागा ४  
 भा, जमालगोडा ८ भागलेकर परिगन्धकनीनीलखण्डकजलीमे  
 सानको मिलाय ३ दिन मर्दनकर रखोजे । इसमेंसे ३-३ रती  
 समय अथवा दोहोखितागुपानकेसाधनेसे सट्ट नवज्वरको नष्ट  
 करताहे । ६ रतीदोषेसाधनेसे वातज्वरको, ६ रतीकोही  
 मागामे मलाई और मधुनेसाधनेसे कफको नष्टकरताहे । १२ रती  
 उचितागुपानकेसाधनेसे सामस्तउपद्रवोनेवहित घोरजीणज्वरको  
 तथा पीपल और मधुनेसाध गृष्टिकारोगको नष्टकरताहे । १-१  
 गुग्गा यदाकरनेसे एकाहिक, द्विपाहिक, त्रिपाहिक और चतु  
 र्धिकज्वरको नष्टकरताहे । मलाईसेसाध थिद्रोपको, अजवाइन  
 और विष्टकेसाध किमियोंको नष्टकरताहे ॥ ३५९ ॥

## ३६० सर्वेश्वरसः ( सर्वेश्वरलोहम् )

शुद्धं शुद्धं सर्वं गन्धं द्विगुणन्तु सूताम्रकम् ।  
 त्रिफलं सूतताम्रञ्च पलायं स्वर्णमाशिकम् ॥ १६२० ॥  
 जैपालं चित्रकं मानं सूर्यं घण्टकणकम् ।  
 प्रस्थिकं त्रिफला व्यापं त्रिवृत्ता खरमञ्जरी ॥ १६२१ ॥

दण्डोत्पलं वृश्चिकार्ली कुलिशं नागदन्तिकात् ।  
 सूर्यावर्तञ्च सधूप्यं कर्पमानं चिमर्दयेत् ॥ १६२२ ॥  
 आर्द्रकस्य रसेनैव चूर्णयित्वा पुनः क्षिपेत् ।  
 त्रिपलं लोहचूर्णस्य ततः सादेच्छुभेऽहनि ॥ १६२३ ॥  
 सम्पूज्य भास्करं विष्णुं गणनाथं द्विजोत्तमम् ।  
 मापमात्रञ्च मधुना कृत्वा शीतजलं पिबेत् ॥ १६२४ ॥  
 चूर्णं सर्वेश्वरं नाम सर्वरोगहरं भवेत् ।  
 कठोरप्लीहनाशाय गुल्मोदरहरस्तथा ॥ १६२५ ॥  
 कामलां पाण्डुमानाहं यकृन्मिथुनातमयान् ।  
 विचर्च्योमस्तपितञ्च कण्डं कुष्ठं विनाशयेत् ॥ १६२६ ॥

भै र (यष्ट्वादिहाथि०), र, र, प (सायनं), र, क, गुले ।

टि०—अत्र पाठे विविधैर्विचरंननत्तेऽपि भैरवरातावनीत्य  
 ण पाठो ज्ञायाम् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ पल, अश्रकभस्म  
 २ पल, ताम्रभस्म ३ पल, सोनामाखी २ वर्ण, शुद्ध जमालगोडा,  
 चित्रकमूल, भावरन्ध, सूरण, मोला अमावसे हंस, गट्टिवन,  
 त्रिफला, त्रिकटु, निमोत, अपामार्ग, भद्रप्रदो, विदुआ, जहरी-  
 सूरण, घनसर (मराठीनाम) और हुरुर १-१ वर्ण लेकर बारीक  
 चूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय अदरखेररसे  
 १-२ दिन मर्दनकरे । फिर ३ पल लोहभस्म मिलाकर १-२ दिन  
 अदरखेररसे मर्दनकर १-१ भावोरी गोलिए बनाकर रखोजे ।  
 सर्व, विष्णु, गणेश और द्विनातिभोंका पूजनकर इनमेंसे १-१  
 गोली मधुकेसाधलेकर ठंडाजलपीनेसे कठोर, टीहा, शुम्भ,  
 उदररोग, कामला, पाण्डु, आनाह, यकृन्, त्रिमि, विचर्चिका,  
 अम्लपित्त, राज, कुष्ठ इत्येवको यह दूरकरताहे ॥ ३६० ॥

## ३६१ सर्वेश्वरसः ( दशमः )

ताप्यो दृढगन्धमताररसकं गन्धं यथाभागिकं,  
 तात्रं त्रिदमनुक्तिजं दित्तरिजं द्विप्रं तथा भागतः ।  
 वज्रायोऽहिरसेन्द्रश्रुतिगगनं वैकान्तकान्तं त्रिशः,  
 तत्सम्मर्धं त्रिभाषयेत्त्रिदिवसे यष्टीप्रजाताम्युभिः ॥  
 मुस्तोदारीयरावृषाऽसुतशरीकन्याविदारीयरी-  
 नारि गौपयसेशुरोञ्च मुशलीगोलंपेचयामकम् ॥  
 मन्दाग्री च मृषाङ्गवस्तुनरलो भाव्यस्ततो भावने,  
 द्वे कस्तूरिमुगाङ्गयो मधुकणाधुक्तोऽस्य यल्लो जयेत् ॥  
 मेहादोर्षं प्रहणीज्वरोदरमरद्वयाधि क्तं कामलां,  
 पाण्डुं बुधमगन्दरं जररणं रुच्छञ्च नृकक्षयम् ॥ १६२८ ॥  
 १ यो. त, र सु, रसायनम्, र स, र. प, र. बो, र पा,  
 प्रमेहे ।

टि०—रसपद्धत्या ताप्यो दृढगन्धस्य गन्धं मार्गवदित्तरिजं  
 पाठ त्रिभाषयित्वे क'रयनपिक, भावनानुपु विचर्यऽपि इति  
 विदेश । भावननम्रम् द्वौ कौटिल्योक्तौ, पञ्चमऽपि पाठ प्रमेहा  
 विना, ईर्ष्य विदेश्वर नाम्ना खपारिते स्थापित ।

भाषा—सोनामाखी, रूषमाखी, मुद्रागा, पुपनं, रजन,  
 खपरिया इनकोमने, शुद्दगन्धक १-१ भाग, ताम्र, प्रवाल,

मोती,, शङ्ख इनकीमस्में २-२ भाग, वज्र, लोह, नाग, पारा, अम्रक, बैकान्त और कान्तलोह इनकीमस्में ३-३ भाग लेकर सबको बारीक पीस मुलहठी, त्रिजात, नागरमोथा, राम, त्रिपला, अहसा, गिलोय, कचूर, पीपुआर, विदारी, शतावर, गायकादूध, सालमखाना और मुशलीके यथासम्भवद्वारों ३-३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय ३-४ तह कपड़ेमें लपेट शरावसम्पुर्ण बन्द कर ३-४ कपडमिरी देकर सुखनेपर गजपुटकी आचड़े । स्वाज्ञ-शीतलहोनेपर निकालकर कस्तूरी और कपूरकी २-२ भावनाएँ देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु और पीपलकेसायदेनेसे प्रमेह, बवासीर, ग्रहणी, ज्वर, उदररोग, वातविकार, कामला, पाण्डु, छूट, भण्डर, ज्वर, मूत्ररुच्छ और शुक्लशयोको यह नष्टकरताहै ॥ ३६१ ॥

### ३६२ सर्वेश्वरसः ( एकादशः )

पलं सूतं चतुर्गन्धं शुद्धं यामं विचूर्णयेत् ।  
मृतताम्राभ्रलोहानां द्वादस्य पलं पलम् ॥ ३६२९ ॥  
सुवर्णं रजतञ्चैव प्रत्येकं दशान्धिकम् ।  
मापैकं मृतवज्रञ्च तालं शुद्धं पलद्वयम् ॥ ३६३० ॥  
जम्बीरोग्मस्तवासामि, स्नुह्यर्कचिपमुष्टिमि ।  
मर्घं ह्यारिजैर्द्रावैः प्रत्येकेन दिनं दिनम् ॥ ३६३१ ॥  
एवं सप्तदिनं मर्घं तद्गोलं घब्रवेष्टितम् ।  
घालुकायन्त्रं स्नेहं मिदितं लघुवह्निना ॥ ३६३२ ॥  
आदाय चूर्णयेच्छुष्णं पलैकं योजयेद्विपम् ।  
द्विपलं पिप्पलीचूर्णं मिश्रं सर्वेश्वरो रसः ॥ ३६३३ ॥  
द्विगुणो लिह्यते क्षोष्ट्रे, सुसिमण्डलकुपुतम् ।  
आजानुस्फुटितं चापि वातरक्तमपोहति ॥ ३६३४ ॥  
वाकुचीदेवकाष्टञ्च कर्पमात्रं सुचूर्णयेत् ।  
लिह्येद्वैरण्डतैलात्तमनुपान सुखायहम् ॥ ३६३५ ॥

घ यो त, शा स, र र स, र प्र सु, र कौ, रसायन स,  
घ रा, यो त, र का, वातरक्त ।

टि०—“सुवर्णं रजतञ्चैव प्रत्येकं दशान्धिकम् । मापैकं मृतवज्रञ्च तालं शुद्धं पलद्वयम् ॥” इत्येकं यद्य बतवराजीवे रसकामेनीं च न हृष्यते तत्र ग्रन्थकारा बुद्धिपूर्वकं त्यक्तं वा रसक्रममादात्परिब्रष्टमिति वा न शायन । रसायनमनीं पुष्टे पाठस्य न्वक्तं नन ह्यौरवि पाठस्तुष्टि । रसायनसुवर्णे द्वितीयस्थाने रसद्वयपुष्टमे च सर्वेश्वरनाम्ना “पालिकं तास्रमात्रं कर्पसं लोहपारदम् । स्नुष्यर्कशीरपाशलिन्मन्त्रोक्षीरवा रिभिः ॥ मर्दितं वाकुकायन्त्रे स्वदयेद्विसनयम् । कर्षं कण्ठाया पिप्पलं विपस्वाग्निमिनिपिपत् ॥ एष सर्वेश्वर सको युष्माकम् प्रसुप्तयेत् ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति । नि र, र क, य, वै चि, र (या), रसा यनम्, र र स, र को, र कौ एषु ग्रन्थेषु सर्वेश्वर नामैव “रस द्विहृत्प्राप्तानां घनं कर्षं पलद्वयम् । तास्रमात्रको सर्वे जम्बीराद्रि विमर्देदम् । विपमुष्टयस्तेमस्तुकारवारजैः पुन । सप्तया योजक इत्या स्वदयेद्विसनयम् ॥ वाकुकायन्त्रमप्यथ शीते निष्कं विपस्य च । कर्षं कर्णानां यत् स्वात्मवैद्यो वातरक्तविज् । युष्माकमाज्यं दानव्या इव वा मत्तारिणा । रसप्रकोषणं क्षेम पिबन् परित्यजेत् ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति । र म, र चि, र क, र दी, रसायनम्, अ स,

यो म, वै चि, र रा, एषु ग्रन्थेषु सर्वेश्वर नाम्ना “मृतताम्राभ्र लोहानां द्विहृत्प्राप्तानां घनं पलम् । जम्बीरोन्मत्तमागार्मिभ स्नुष्यर्कचिप मुष्टिमि ॥ मर्घं ह्यारिजैर्द्रावैः प्रत्येकेन दिनं दिनम् । एवं सप्तदिनं मर्घं तद्गोलं घब्रवेष्टितम् ॥ वाकुकायन्त्रं स्नेहं त्रिदिनं लघुवह्निना । आदाय चूर्णयेत् मर्घं पलैकं योजयेद्विपम् ॥ द्विपलं पिप्पलीचूर्णमिध मर्घं वर रसम् । द्विगुणं ह्येत्येतादृशं सुसिमण्डलकुपुतम् ॥ वाकुचीदेवकाश्च च कर्पमात्रे विचूर्णीतौ । लिह्येद्वैरण्डतैरेन क्षुण्णपान सुखायहम् ॥ रत्तापिषय शिरा मोक्ष पादे बाही रगटके । कर्तव्यो ह्यदिगेषु कुष्ठिनाञ्च विधेयत ॥ बलिनी वहुदोषस्य वय स्वस्य शरीरिण । एतप्रमाणमिच्छन्ति प्रथम शोणितमोगणे ॥ यत्रैव वर्षासु विधातुं ग्रीष्मकाले तु शीतले । हिमन्तकाल मप्यादि शम्भकालाख्य स्मृता ॥” इतिपाठो निहितोऽस्ति । वैषयिन्ता मन्त्रो “शुद्धस्तुष्टयुगं पल याम विमर्देत् ॥ इत्यपि र पाठ । यत् मर्घेऽपि पाठा पूर्वेपाठपरिचित्रा मन्ति, सुवर्णरजतवर्णेश्वरैकं क निष्कास्य नामा पाठा प्रकल्पिता इति विशद्विराचरनीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा १ पल, गन्धक ४ पल, ताम्र, अम्रक और लोहमस्म, शुद्धशिमीरपि १-१ पल, सुवर्ण और रजत मस्म २॥-२॥ कर्षं, हीरामस्म १ माशा, शुद्धहरिताल २ पल लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जमीरी, धतूरा, अहसा, धूसर और आकसादूध, कुबिला, चण्डेकनेर इनप्रत्येकके द्रवोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय ३-४ तहान्त्रमें लपेटकर ३-४ कपडमिरी देकर सुखनेपर वाकुकायन्त्र ३ दिवसी मन्द आचसे स्वदित करे । स्वाज्ञाशीतल होनेपर निकालकर बारीकचूर्णकर शुद्धबल-नाय १ पल और पीपल २ पलका बारीकचूर्ण मिलाकर १-२ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती मधुकेसाय वेकर वाकुची और देवदाह समभागका १ कर्ष चूर्ण एरण्डतैलके साथ अनुपानमें देनेसे सुप्तात, मण्डल, असाध्य वातरक्त इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३६२ ॥

### ३६३ सर्वेश्वरसः ( द्वादशः )

स्वर्णं रोप्यं मोक्तिकञ्च विशुद्धञ्च शिलाजतु ।  
लोहमस्रं तथा सार्पं मधुययी च पिप्पली ॥ ३६३६ ॥  
मरिचं निम्बकञ्चेति सर्वमेकत्र कारयेत् ।  
विमृष्टं ग्रहरं यत्नात्कज्जल्याहृतिसिन्धिमम् ॥ ३६३७ ॥  
भृङ्गद्वयरसे मर्घं शकाशानरमे पृथक् ।  
प्रमेहं विविधं हन्ति मधुमेहं सुदुर्जयम् ॥ ३६३८ ॥  
चातपित्तसमुद्भूतं तथा कफसमुद्भवम् ।  
सर्वेश्वरो रसो नाम्ना प्रमेहकुलनाशनः ॥ ३६३९ ॥

अ र, प्रमेह ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, मोती, लोह, अम्रक, सोनामारी इनकीमस्में, शुद्धशिलाजीत, मुलहठी, पीपल, मरिच और लोह समभागलेकर बारीकचूर्णकर इकट्ठेमिलाय १ दिन शुष्कमर्दनकर स्याहपेदभस्म और गाणके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ से २ गोलीतक उचितानुपानकेसायदेनेसे वात, पित और कफज प्रमेह, तथा दुर्जर मधुमेहको यह नष्टकरताहै ॥ ३६३ ॥

## ३६४ सर्वेश्वररसः ( त्रयोदशः )

रसमस्माऽऽलुत्युत्थाहिवद्गताम्रास्रचारिणः ।  
कटुत्रयाऽमृतादमानो गोऽहिर्वेदगजद्विपाः ॥१६४०॥  
समुद्रनृपतिर्ध्वजाः सप्तद्वितियिमन्मथाः ।  
भावेयद्रसकेः सर्वे हृन्नाम्नैः सप्तथा पृथक् ॥१६४१॥  
सर्वेश्वरो भावितः स्याद्विगुञ्जः सर्वरोगहा ।  
निजानुपानेरथवा सह खण्डेन यस्मिन् ॥ १६४२ ॥  
आर्द्राभ्रमसा पञ्चगुल्मे गुडवातातिरिचिकेः ।  
श्रीद्रेण शैत्ये निर्दिष्टो व्यापार्द्रैः साक्षिपातिके १६४३  
ग्रहण्यामप्यर्तासारे हितं पथ्यचिरी पथः ।  
स्वस्वपथ्यानि या येषां दद्यात्सर्वेश्वरे रमे ॥१६४४॥  
र. घं, ग्रहण्याम् ।

भाषा—पारद १ भाग, हरिताल ८ भाग, तुल्य ४ भाग,  
नाग और वट ८-८ भाग, ताम्र ४ भाग, अन्नक १६ भाग,  
सोनामाखी १५ भाग, और रूपाभाखी ७ भाग ( इनसबकी-  
भस्मे ), त्रिकटु २ भाग, गिलोय १५ भाग, शुद्धगन्धक ५  
भाग लेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकीकच्चीमें मिलाय विनोर-  
केरसे ७ दिन मर्दनकर २-२ रतीकी गोल्यां बनाकर रख-  
छोड़े । इनमें १-१ गोली तप्तद्रोहराजानुपानेरसाथ, खाइ अथवा  
अदरखेरसकेसाधनेसे राजयक्ष्म नष्टहोताहै । अदरखेरस  
अथवा शुद्ध, एण्डकीज और चित्रककेसाध देनेसे पाँचोंगुल्म,  
मधुसे शैत्य, त्रिकटु और अदरखेरसे सनिपात नष्टहोताहै ।  
ग्रहणी और अतिघारमें दूध अथवा उचिचानुपानका योग करना ॥

## ३६५ सर्वेश्वररसः ( चतुर्दशः )

हेमताप्यां शिलैलाद्रिचिपसारैकभागकम् ।  
पृथक् प्रवालशुक्लपूरुषरसश्च द्विभागिकम् ॥१६४५॥  
मृतमस्माद्विगुञ्जयां व्याममुक्ताशिलाजनु ।  
गैरिकश्च त्रिभागं स्यात्सर्वमेकत्र वर्णयेत् ॥ १६४६ ॥  
चिदायस्यमृतामीयदाटीकन्यावरारधनेः ।  
भाषनाथ पृथक् सप्त दद्यान्मृगमदेस्ततः ॥ १६४७ ॥  
कणासिताभ्यां मधुना यत्तांऽस्य क्षयमेहसित् ।  
ग्रहणीदोषपाण्डुरांश्यातयाप्युदराणि च ॥ १६४८ ॥  
कासश्वासो गुल्मसापकुष्ठानि जपति ध्रुवम् ।  
स्वीयानुपानैः सर्वार्थ रोगान्दन्ति रसायनम् ॥  
वोर्यमुद्रिचलं दत्ते सर्वदोऽयं रसो धरः ॥ १६४९ ॥  
र. घं, क्षय ।

भाषा—मुवर्ण, सोनामाखी, मैनसिल इनकीभस्मे इत्या-  
यकी, दोनो कौयल, शुद्ध बटनाग, रजमभस्म १-१ भाग, प्रवाल,  
मोदीकी शीश, ताम्रभस्म, शुद्धपरारिया २-२ भाग, पारद,  
नाग, वट, लोह, अन्नक और नागो इनकीभस्मे, शुद्धशिलाजीन  
और गेरु ३-३ भागलेकर सबकी नीलार कच्चीकर चिदायीचन्द,  
चित्रक, गिलोय, रतावर, कबूट, पंजुवार, चिह्ना, नन्म-  
मोथा इनके दद्याथम्भ, तन्मस अथवा काथोमें ३-३ भागनाग

देकर कन्तूरी की १ भावना देवे । इसमेंसे ३-३ रती पीयल,  
शकर और मधुकेसाधदेनेसे क्षय, प्रमेह, प्रण्ठी, पाण्डु, बवासीर,  
वातरोग, उदररोग, कास, खास, गुल्म, ज्वर, कुष्ठ, इनसबको  
नष्टकर बीय और बुद्धिको बढ़ाताहै ॥ ३६५ ॥

## ३६६ सर्वेश्वररसः ( पञ्चदशः )

कनककुलिशतारं पीतिसौवीरताम्रं,  
गगनभुजगसुतं खेचरं तालटङ्कम् ।  
शिलनृपबलिलोहं राजतश्चैव वङ्गं,  
त्रिलवणमृतमेतत्सर्वमेकत्र तुल्यम् ॥१६५०॥  
एतैः समं ते मृतसूतराजं वज्रकीदुग्धे दिनमेकपृष्ठम् ।  
कृपीगतं पाचय भूतिपत्रे दिनं हिमं भाषय शृङ्गवेरेः ॥  
यासां कुरण्ठी नृपकुङ्कुटी च  
धसूरचिर्न गजदन्तमेपी ।  
मृनिम्यमुस्ता हलिनी च दन्ती  
ताम्रलपणी सह ताम्रमल्ली ॥ १६५२ ॥  
एतत्समुद्रतरसे विभाव्यः  
सर्वेश्वरो नाम रसेश्वरोऽयम् ।  
त्रिगुञ्जमात्रः खतु सन्निपाते  
रोगानशेषान्विधिधानुपानैः ॥  
महोदरं कुष्ठसपाण्डुगुल्मं  
सर्वाश्च रोगान्विनिहन्ति नूनम् ॥ १६५३ ॥  
र. घं, धाये ।

भाषा—मुवर्ण, हीरा, रजत, पीयल, ताफेदुसमा, ताम्र,  
अन्नक, नाग, पारा, कनीस, हरिताल, मैनसिल, लानवर्द, लोह,  
रजनाशिक, वट इनसबकी भस्मे, मुनासुहागा, शुद्धगन्धक,  
तीनोनमक सप्त सप्तभागलेकर नीलवर्णकच्चीकर सबकी बराबर  
पारदभस्म मिलाकर धूर और आककेपूथसे १-१ दिन मर्दन-  
कर फिरसे कच्चीबनाय ६-७ कपडिनिर्दादीहुई आतरीशीशीमें  
भरके भस्मयन्त्रमें रख एकदिनकी अनिदेवे । स्वास्तीतुहोने-  
पर निकालकर अदरा, अदुषा, पीयासो, अमिल्लास,  
सेमली छाल, धतूरा, चिदक, पनवर (मराठोनान), मेडावीगी,  
चिदायता, नागमोथा, करिहारी, दन्तीमूल, पान और ताल-  
मल्लीके यथासम्भव स्वरस अथवा काथोसे १-१ दिन मर्दनकर  
३-३ रतीकी गोल्यां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली  
उचिचानुपानकेसाथ देनेमें सन्निपात, महोदर, कुष्ठ, पाण्डु, गुल्म  
इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३६६ ॥

## ३६७ सर्वेश्वररसः ( षोडशः )

एककोऽस्मिन्नरायुर्दारकलरोऽपि नीलमात्रिकययो-  
रिःवान्ताहिदिल्लोके नृसरसकादिप्राः पृथक् स्वर्णतः  
वक्रान्तं तपनीभयादपि लयाः पञ्च प्रवालद्वलः,  
पट्ट मृताइरदास सम गगनाद्रुप्यास सर्वे ततः १६५४  
धूर्णाद्वल्य विभाव्य माकरसे मुण्डीकुमारीगुहा-  
यासांभोदधरायिकण्टमुद्रालोदुग्धीनिशारीद्रव्यैः ।



वृश्चीयादरिमेदतः शतद्वलत्विस्तस्य गोलं पयः—, पिष्टे दग्धवराटके नवलये द्वि मौक्तिके लैपयेत १६५५  
शुष्क चाथ मृगाङ्गुवज्ज्वले यन्त्रे विपाच्येणजं,  
नाभिं सूतलवं निधाय मृदितः सर्वेश्वरः स्याद्रसः ।  
स्वेस्वैरस्य गदाभिहन्ति सकलान्गुञ्जानुपाने द्रुतं,  
यस्मात् सपरिग्रहे ग्रहणिकातीसारपाण्ड्यामयान् ॥  
कासापस्मृतिगुल्ममेहश्लेष्मापण्डत्वन्व्यामयान्,  
योजातिप्रदोदरं भ्रमभ्रमवासास्त्रपित्तामयान् ।  
अन्यान्वातयत्नासपित्तसुखिरोद्भूतान्समस्तानपि,  
व्याधीन्नाशयति प्रसह्य सहस्रोद्दीप्ताद्यथाऽकांतमः ॥

र. घा., धये ।

भाषा—अमर और हीरामस्य १-१ भाग, नीलम और माणिस्यमस्य ४-४ भाग, कान्तलोह, नाग, मेनसिल, ताम्र, वज्र, खपरिया इनकीमध्ये ३-३ भाग, सुवर्णमस्य २ भा., वैकान्त और सोनासायीभस्य ५-५ भा., प्रबालमस्य और शुद्धगन्धक ६-६ भा., शुद्ध पारा, सिंगारिक, अभ्रक और रजत भस्म ७-७ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर भंगरा, गोरख-मुण्डी, चीतुंबार, शालाणी, अङ्गुठा, नागरमोथा, त्रिकला, गोखरू, मुखली, दूधी, विदारीकन्द, सफेदपुनर्वा विट्पदिर, शुलाब इनके यथासम्भवस्वरस अथवा काथोसे ३-३ दिन मर्दनकर गोलावनाय जलीहुईकीही ९ भाग, मोषीमस्य ० भाग दूधमें पीसकर गोलेपर लेपदेकर शुलाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर लवणयत्रमें एकदिनरातकी आध देवे । स्वाङ्गुशीतलोहोनेपर निकालकर पारिकीरावर कस्तूरीमिलाकर घोटकर रखोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती शतद्रोहदानुपानकेसाधनेसे उपद्रवघटित राजयक्ष्म, ग्रहणी, अतिसार, पाण्डु, कास, अपस्मार, गुल्म, प्रमेह, हृशता, नर्पसकृत्, वन्ध्यत्व, बीजदोष, प्रदर, उदररोग, भ्रम, मद, श्वास, रक्तपित्त, वातबलासक, पित्त और हृषिकेरोग इन सबको यह इस्तेमाल नष्टकरताहै जैसे प्रचण्डसूर्यसे तम नष्ट होजाताहै ॥ ३६७ ॥

### ३६८ सर्वेश्वरलोहम्

गिरिजगन्धकृताप्यरसामुद्र-  
धुमणिलोहसुवर्णरजः समम् ।

मधुयुतेन विलिप्तमिदं नृणां

सकलरोगघ्नं विनिहन्तति ॥ १६५८ ॥

लो. प., सर्वरोग ।

भाषा—शुद्धशिलाजीत, गन्धक, सुवर्णमाक्षिक, पारा, अभ्रक, ताम्र, लोह, स्वर्णमस्य सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर रखोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती मधुकेपाचलेनेसे समस्त रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३६८ ॥

### ३७० सर्पपाद्यागुटिका

सर्पपाः पृष्ठपर्णी च तगरं पत्रकेसरम् ।

हरितालं विडङ्गानि शोधद्राक्षाप्रियङ्गवः ॥ १६५९ ॥

चन्दनं वालकं मांसी विशाला समनःशिला ।  
श्रीवासकं निशा दावीं पत्रकं घ्याममेव च ॥ १६६० ॥  
सुरसप्रसवाः स्पृका रोचना गन्धनाकुली ।  
अम्लकं कुड्मं दाह स्थौणेयं गिरिकर्णिका ॥ १६६१ ॥  
जात्याः पुष्पं प्रवालञ्च पिप्पलीमरिचानि च ।  
सूक्ष्मैलासिन्धुवाञ्च यष्टाहं रोधमेव च ॥ १६६२ ॥  
पतान्यङ्गानि पट्टविशतुष्येण परिपेषिताम् ।  
गुटिकां कोलमात्राञ्च छायाशुष्कां हि कारयेत् १६६३  
नस्यपानाञ्जने चैषा सम्यग्लेपे च योजिता ।  
पुंसां सर्वविपातानां राजद्वारे रणे तथा ॥ १६६४ ॥  
वणिजां लाभकामानां विधादे च सदा हिता ।  
सरीसृपा न तिष्ठन्ति यत्र तिष्ठति चेदमनि ॥ १६६५ ॥  
अनया सम्प्रलितस्य चोद्वेहिमयं कुतः ।  
सर्पद्रुमयञ्चापि जलराक्षिमयं न च ॥ १६६६ ॥  
ग. नि., विपे ।

भाषा—गोलीसरसों, पृष्ठपर्णी (रानभाल, मराठीनाम), तगर, पत्रकेसर, हरितालमस्य, विडङ्ग, लोध, दास, प्रियङ्गु, सफेदचन्दन, मुपन्धवाला, जटामासी, इन्द्रायण, शुद्ध मेनसिल और विरोजा, हल्दी, दाहहल्ली, पत्रकाठ, खस, तुलसीबीजाज, अनन्तमूल, गोरोचन, गन्धनाकुली (मुगन्धरावा), क्रोकम, केदार, देवदारु, छद्दीला, कोयल, जाबिनी, प्रबालमस्य, पीपल, मरिच, छोटाइलायची, निरुण्डी, मुलहठी, देशीलोष सब समभाग-लेकर बारीकचूर्णकर पुष्पयक्ष्ममें इमयोगमेंमाईहुई काटोपयि-थोंके काथसे मर्दनकर ८-८ मासेकी गोखिये बनाकर छाया-शुष्ककर रखोड़े । इतना नस्य, पान, अन्न तथा लेपमें उपयोगकरनेसे तमावपि नष्टहोतेहै । जिनपरमें ये गोखियां रहतीहै वहापर दिवस जानवर, साप, चोर, असि और जलसे भय नहीं होता ॥ ३६९ ॥

### ३७० सामुद्राद्यं चूर्णम्

सामुद्रं सैन्धवं क्षारौ रुचकं रोमकं विडम् ।  
दन्ती लोहरजः किट्टं त्रिवृत्स्वरणकं समम् ॥ १६६७ ॥  
दधिगोमूत्रपयसा मन्दपाचकपाचितम् ।  
तं यथाशिवलं चूर्णं किञ्चिदुष्णेन चारिणा ॥ १६६८ ॥  
अर्णं जीर्णं तु शुद्धीत मांसादिक्लिग्धभोजनम् ।  
नामिशूलमुःशूलं गुल्मप्लीहमवञ्च यत् ॥ १६६९ ॥  
परिणामसमुत्पाने श्लेष्मे च परमं हितम् ।  
विद्वेष्यष्टीलजं हन्ति कफघातोद्भवं तथा ॥ १६७० ॥  
अन्नद्रव्यं जरयितुमजीर्णं ग्रहणीमपि ।  
शूलानामपि सर्वपापमौषधं नास्त्यतः परम् ॥ १६७१ ॥  
यो. र., र., घ, नि. र., घ. नि., ना दि., रमायनस. र. का., यो य, र क, टो., अ. र., र. र., ट. यो. त, व. मा., च द, दूधाधिकारे ।

भाषा—समुद्र और सेधानमक, सजी, यवशार, संचल, रोमक, विड, दन्तीमूल, लोह और मण्डरमस्य, निगेत,

सुरगन्धं येसव समभाग लेहर बारीकचूर्णकर दही, गोमूत्र और दूध चौगुना चौगुना ढालकर मन्दाग्निर पकावे और मुखार रखछोड़े। इममेंसे ३-३ मांसे अमिषल देसकर गरमजलके साथदेनेसे नाभिघुल, छातीकाघुल, गुल्म, प्लीहा, परिणाम-घुल, विद्रधि, अग्नीला, कफवातोद्भवघुल, अन्नद्वयघुल, अजीर्ण, प्रद्वशी इनसबको यह नष्टकरताहै। सुखोदेलिये इससे बड़कर अन्य औषध नहींहै ॥ ३७० ॥

### ३७१ सारणमुन्दररसः

सूतं गन्धं समं शुद्धं सप्तधा भावयेत्कमात् ।  
स्नुह्यंरुदुधैः धौखण्डद्वयस्यामाऽभयासैः ॥१६७२॥  
समं नेपालजं शृणं देयमेकत्र मर्दयेत् ।  
उष्णाभ्युना घृत्युगुमं देयमष्टगुणे शुद्धे ॥ १६७३ ॥  
मलाः पूर्वं जले पश्चात्ततश्चामः शनैः शनैः ।  
उदराद्य विनाऽन्त्राणि सर्वं निर्याति किस्त्रियम् ॥ १६७४ ॥  
जाते विरेके संशुद्धे पथ्यं दध्योद्वनं हितम् ।  
जयेज्यरादिकाप्रोगाप्रसः सारणमुन्दरः ॥ १६७५ ॥  
र. तं. क., रसायनसं., र. क., र. बो., उदराधिकारे।

भाषा—समभाग शुद्ध पारे और गन्धकरी नीलगन्धकन-लीकर घृतर और आककेश, दोनोंबन्दन, निघेत और हरीके द्रवोंसे ७-७ भावनाएँ देकर बराबरका शुद्धजमाखण्डो मिलाय १-२ दिन मर्दनकर १ रसीकीमात्रा गरमजलकेसाथ अथवा अष्टगुने शुद्धेरापलेनेसे पेट और अन्तर्भागमेंसे तमाममल निश्चल जाताहै। अच्छीतरह देवनहोनेकेबाद भूखलागेवर बही-भात पच्य देना। इससे तमामग्वरभीनष्टहोवेहै ॥ ३७१ ॥

### ३७२ सारस्वतरसः

रसगन्धौ यथां शतपुण्यात्रिभिर्दिनं पुष्टं ।  
चतुर्विंशतियामांस्तु पष्टिं दद्यान्मुदं भिषक् ॥ १६७६ ॥  
मापीऽस्य दुग्धमक्तानुपानेन स्वरभङ्गजित् ।  
अयं सारस्वतो नाम रसो जाट्यापहरकः ॥ १६७७ ॥  
र. का., स्वरभङ्गे।

भाषा—गमभाग शुद्ध पारे और गन्धकरी नीलगन्धकन-लीकर दूध और राह्महलीकेरसे ३-३ दिन मर्दनकर ४-५ करइमिहोदीदुई आतरीसीसीमें ढाल शुद्धन्दर काउद्योचयमें रस २४ पहरकी मन्दाग्नि देवे। स्वात्रजीतन्दोनेपर मुक्तिपूर्वक निःकालकर रगछोड़े। इममेंसे १-१ मांसा दूध और आलके-सापदेनेमें स्वरभङ्ग और जहताको यह नष्टकरताहै ॥ ३७२ ॥

### ३७३ सारियादिवटी

सारियां मधुकं कुष्ठं चातुर्जानं त्रिप्लवकम् ।  
नीलोत्पलं शुद्धीर्वाक्षं देवपुष्पं पल्लविकम् ॥ १६७८ ॥  
अग्रे सर्वसमश्चाग्रसमं लादे विभावयेत् ।  
पेक्षाऽजाज्जम्बुना पार्थकायेन ययजाम्बलम् ॥ १६७९ ॥  
काकमाचीरमेनापि शुभ्राभूलद्रव्येण च ।  
त्रिगुत्रामिताः पक्षादिद्विषादिका भिषक् ॥ १६८० ॥

धारोणेनापि पयसा शतमूलीरसेन वा ।  
पैकैकां योजयेत्प्रातः शीखण्डसलिलेन वा ॥ १६८१ ॥  
निखिलान् कर्णजामोगान् प्रमेहानपि विशतिम् ।  
रक्तपित्तं क्षयं श्वासं फलेयं जीर्णज्वरन्तथा ॥ १६८२ ॥  
अपस्मारमदाक्षांसि हृद्रोगश्च मदात्ययम् ।  
सारियादिवटी हन्यात्कर्णागदानखिलानपि ॥ १६८३ ॥  
भे. र., कर्णतोमे।

भाषा—सारिया, मुलट्टी, कुष्ठ, चातुर्जात, त्रिप्लव, नीलो-त्पल, गिलेय, लौंग, त्रिफला येसव समभाग लेहर बारीकचूर्ण-कर सखरीबराबर २ अन्नक और लोहभस्म मिलाकर काला-भंगरा, शकेदअर्जुन, जव, मकोय, गुग्गुलु इतने बंधासम्भार-स्वरात अथवा हाथोंसे १-१ भावना देकर ३-२ रसीकी-मोलियां बनाकर रखछोड़े। इममेंसे १-१ मोली धारोणद्वय अथवा दातावरोंसे अथवा बन्दनदेवलेक्षाप प्रातःकाललेनेमें जानके समस्वरोम, २० प्रकारकेप्रमेह, रक्तपित्त, क्षय, क्षाप, श्लेष्मता, जीर्णज्वर, अपस्मार, मद, अयं, हृद्रोग, मदात्यय इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३७३ ॥

### ३७४ सार्वभौमरसः

हेमपद्माप्रकाणाञ्च भस्मनां त्रितयं समम् ।  
भूनागसत्त्वभस्मापि तत्तमं निरिषिदुषः ॥ १६८४ ॥  
कृष्णचित्ररसेनैव मर्दयेद्य दिनप्रयम् ।  
अमृतस्य फलायेण कुमारीस्वरसेन च ॥ १६८५ ॥  
त्रिकटुत्रिफलानाञ्च स्वरसे च विपाचयेत् ।  
द्राक्षाफलान्वितं नित्यं गुञ्जामात्रं प्रयाजयेत् ॥ १६८६ ॥  
सर्वव्याधिपिनिर्मुक्तो यज्जहो भवेन्नरः ।  
त्रियत्स्वरप्रयोगेण जापेदाद्यन्तरारकम् ॥ १६८७ ॥  
सर्वेयामागुधानाञ्च विपाणाञ्च नियारणम् ।  
मर्दयद्रूपप्रत्यगु सुवि नैकीर्तितो भवेत् ॥ १६८८ ॥  
सार्वभौमरसो ह्ययं सर्वराजमनोहरः ॥ १६८९ ॥  
र. को. (श.), र. क. दो., रसायने।

भाषा—गुबर्ण, हीरा और अन्नभस्म समभाग, वैजुभोंके सारकीभस्म सखेबराबर, कालाचित्रक, कण्ठाग, पीरुंभात, त्रिकटु और त्रिफलास्त्रेवरतोंसे १-१ भावना देकर मोलाकनाय सारागम्युमें बन्दकर १-१ करइमिहोदीद्वय गुग्गुलेवर सखट्टकी जांचदे। इसीसह प्रमेहके स्वरसेने मर्दनकर सखट्टदे। स्वात्रजीतन्दोनेपर निःकालकर रगछोड़े। इममेंसे १-१ रसी दाधने रगहर गानेमें समस्तव्याधियोंसे निर्मुक्तहोकर बमोद-होताहै। एतज्ज ३ बर्देक स्यानात्र प्रयोगकरनेसे धमल आदुष, त्रिष और सगुभोंसे निर्मुक्तहोताहै ॥ ३७४ ॥

### ३७५ सालम्पाकः ( मुञ्जतरक पात्रः )

प्रस्येकं मालिभं पूर्णं दूधद्रोणे विनि.रिषेत् ।  
मिनोपल्लावकं दध्या तन्मुदीं विमिश्रयेत् ॥ १६८९ ॥

जातीफलं जातिपत्री लयङ्गं मधुयष्टिका ।  
 शुक्तिमात्रप्रमाणेन पृथग्ग्राह्यं भिषग्वरैः ॥ १६९० ॥  
 पिप्पली पिप्पलीमूलं नागकेशरजागरम् ।  
 श्वङ्गप्रा मरिचं द्राक्षा घाजिगन्धा शतावरी ॥ १६९१ ॥  
 लोहमन्त्रकवङ्गश्च द्वे जरी धान्यकं घनम् ।  
 पृथक्पृथक् कर्पमात्रमेला चैव त्रिकापिका ॥ १६९२ ॥  
 आक्षोटं मुशलीञ्चैव चतुःकर्पप्रमाणतः ।  
 रक्तचन्दनरूपरक्तस्तूरीमासिकेशरम् ॥ १६९३ ॥  
 त्वचं कृष्णाऽगरुञ्चैव प्रमाण तस्य निर्दिशेत् ।  
 पञ्च द्वे वह्निभूतानि रसमार्गणमार्गणाः ॥ १६९४ ॥  
 भापसंख्याप्रमाणेन यथाभागं नियोजयेत् ।  
 सम्पक् पाकं ततो हात्वा देशकालानुसारतः ॥ १६९५ ॥  
 सायं प्रातः पलाञ्जन्तु भक्षयेत्क्षीरसंयुतम् ।  
 घाजीफरो यलकरो कान्तिपुष्टिविधर्धनः ॥ १६९६ ॥  
 प्रमेहं वातरोगश्च हृद्रोगमपि नाशयेत् ।  
 अस्य संसेधनाश्रित्यं गच्छेच्च घनिताशतम् ॥  
 सर्वव्याधिहरः श्रेष्ठो योगः परमदुर्लभः ॥ १६९७ ॥  
 रसायनं, वाजीकरणे ।

टि०—साल्म मुजातकी केय स सस्कृतनाम्ना द्रुतमायो भूत्वा  
 वायवनाम्ना जायति ।

भाषा—एकप्रस्य सालमकैचूर्णको १६ सेर दूधमें डालकर  
 पकावे । अथौटादूध होनेपर ४ सेर मिथी डालकर चाफनी  
 तैयारकरे । फिर जाविनी, लौंग, मुलहठी २-२ कर्प, पीपल,  
 पिपलामूल, नागकेशर, सौंकर, गोखरू, मरिच, द्राक्ष, अषाफन्ध,  
 शतावर, लोह, अन्नरु और वज्रमस, दोनोंजरी, धनिया, नाम  
 रसोया १-१ कर्प, इलायची ३ कर्प, अजरोट और मुशली  
 १-१ पल, डालचन्दन ५ माशे, शुद्धकपूर २ माशे, कस्तूरी ३  
 माशे, जटाभासी ५ माशे, केशर ६ माशे, तज ५ माशे, काला  
 अगर ५ माशे इनसबका वारीकचूर्ण मिलाकर उतारकर अमादे ।  
 इसमेंसे अमिलबदेकर १ तोलेसे ५ तोलेतक खिलकर दूधपि-  
 लावे यह अत्यन्त वाजीकरदे कान्ति और पुष्टिको बढावाहै ।  
 प्रमेह, वातरोग और हृदयकेरोगोंको नष्टकरताहै । प्रतिदिन सेवन  
 करनेसे बहुतसी लियोंनेलाय रमणकरसकाहै ॥ ३७५ ॥

### ३७६ सावित्रवटकः

पलङ्कपा पले द्वे च कृष्णायाश्च पलद्वयम् ।  
 पथ्याऽमृताक्षघात्रीणां पृथगेकैकशः पलम् ॥ १६९८ ॥  
 प्रतीकं च व्ययधोपाशिकास्त्रीक्रिमिनाशनैः ।  
 चूर्णितैरद्वैतलिकैस्तिलतैलं पलद्वयम् ॥ १६९९ ॥  
 त्रिफलाया रसप्रस्ये खण्डं प्रस्ययुग्मं पचेत् ।  
 दर्वाप्रलेपात्पाकश्च चातुर्जातरुसंयुतः ॥ १७०० ॥  
 सावित्रवटका ह्येते यथाश्लिजलमक्षिताः ।  
 कृमिकोष्ठाग्निदोषैर्यस्योथगुल्मीदरघ्नानां ॥ १७०१ ॥  
 कामलापाण्डुरोगाशोभमन्दगदघ्नानां ।  
 निहत्येतद्वि संसिद्धं वयःस्थैर्यवलप्रदम् ॥ १७०२ ॥

वायुमेहप्रशमनाश्चक्षुषः प्रीतिवर्धनाः ।  
 भवन्त्यतिस्निग्धभुजां वातातपनिपेयिणाम् ॥ १७०३ ॥  
 नि. र., वै. चि, विमिरोगे ।

भाषा—एकप्रस्य त्रिफलात्रिकादिमें २ प्रस्य शकर डालकर  
 चाशनीतैयारकरे फिर शुद्धमूल और कालादमस २-२ पल,  
 हरे, गिलोय, बहेदे और आवले १-१ पल, शुद्धकपूर, कव्य,  
 त्रिकटु, चित्रक, कास्वीकेबीज (मराठी नाम) और बिड २-२  
 कर्प, तिलकातेल २ पल, चातुर्जात १-१ कर्प इनसब चीजोंका  
 वारीकचूर्ण डालकर उतारले । इसमेंसे १-१ तोलेकीमात्रा दूध  
 अथवा समयोचितानुपानसेवापदेनेसे विमि, मन्दासि, शोथ,  
 गुल्म, उदरवेध, कामला, पाण्डु, अर्श, भग्नशर, घण, वातु,  
 प्रमेह, नेत्ररोग इनसबको यह नष्टकरताहै । इसमें अधिकवायु  
 और घृषका निपेयकरना ॥ ३७६ ॥

### ३७७ सितामण्डूरम्

धमनविधिविशुद्धं गोजले सप्तचारं-  
 स्तरणिफिरणशुष्कं शृङ्गामण्डूरचूर्णम् ।  
 विमलतरपलेकं पञ्चसङ्घर्षं सितया,  
 अनवधूतपलानामष्टकं द्वपदुग्धम् ॥ १७०४ ॥  
 मृदुदहनशिखाभि मन्दमन्दं कदाहं,  
 विगतसलिलशेषं पाचयेत्पाकविद्धः ।  
 वितरितगुडपाके किञ्चिदुष्णोऽप्यतीर्णे,  
 द्वपदि हृदममोर्षं चूर्णितं देयमाशु ॥ १७०५ ॥  
 त्रिकटुकमधुकेलायासवेदङ्गसारं,  
 प्रतनुपदनिघृष्टं गालितं सम्प्रदद्यात् ।  
 त्रिफलगदलवङ्गं कर्पमेकैकशश्च,  
 तदनुशिदिरिकाले द्वे पले माक्षिरस्य ॥ १७०६ ॥  
 शुभतिथिदिवसादीं भोजनादौ निषेव्यं,  
 प्रथमदिवसमेनं शाणमानं तदुद्धम् ।  
 अह्रहरनुवृद्ध्या यावदक्षं प्रयोज्यं  
 हिमकररुचिशितं गव्यदुग्धश्च पेयम् ॥ १७०७ ॥  
 नियतमयमस्तुष्यान्मलपित्तोत्पश्ललात्,  
 वमनियहसदाहानाहमोहप्रमेहान् ।  
 विधिघरुधिररोगान् पित्तयुक्तानशेषान्,  
 नपहरति सितायो दिव्यमण्डूरयोगः ॥ १७०८ ॥  
 शै. र., अम्लपित्ताधिकारे ।

भाषा—धमनकरके ७ बार गायकैमूत्रमें बुझायाहुआ  
 मण्डूर १ पल, शकर ५ पल, पुरानावी ८ पल और गायका-  
 दूध १६ पल लेकर सबको कडाहीमें डालकर मन्दाभिर पाक-  
 करे । शुद्धकपूर चाशनीहोनेपर उतारकर त्रिकटु, मुलहठी,  
 इलायची, जवासा, विडवतपुडुल, त्रिफला, कुठ, लौंग १-१  
 कर्प लेकर वारीकचूर्णकर मिलावे । ठाहोनेपर २ पल मधु मिला  
 कर रखओ । शुभतिथि और अशुभदिन इसमेंसे भोजनके-  
 आदिमें ६ माशे सेवनकरे फिर धीरे २ बडाकर १ कर्पकी मात्रा

कायमरे । चन्द्रमाकी चांदनीमें रक्खाहुया ठंडा दूध पिलावे । इससे असाध्य अम्लपित्त, शूल, वमन, आनाह, सूर्च्छा, प्रमेह, रक्तविकार, वात और पित्तरोग नष्टहोतेहैं ॥ ३७७ ॥

### ३७८ सिद्धकान्तरसः

कान्तलोहस्य चूर्णेन्तु कृत्वा सूक्ष्मतमं बुधः ।  
गन्धकं पारदं दन्तीथीजाग्रेक्ष्ण कारयेत् ॥ १७०९ ॥  
ततः सम्प्रेष्य तत्कल्कं मर्दयेत्त्रिदिनं पुनः ।  
पतत्तुल्येन मत्स्यस्य पित्तेन परिभाचयेत् ॥ १७१० ॥  
सिद्धकान्तरसो ह्येष प्रयोज्योऽभिनवज्वरे ।  
शृङ्गवेरानुपानेन वल्लश्च भिषगुत्तमैः ॥  
नाशयेच्च ज्वरं सद्यो भास्करस्तिमिरं यथा ॥ १७११ ॥  
र. को. , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—कान्तलोहभस्म, शुद्ध गन्धक, पारा और जमाल गोदा समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर सबकीबराबर मछलीके पित्ते ३ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिए बनाकर रपछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अवरज्वरकेसकसाथदेनेसे अन्धकारको सूर्यकीतरह तत्क्षण ज्वरको नष्टकरदेताहै ॥ ३७८ ॥

### ३७९ सिद्धदरदामृतम्

हंसपाकस्य खण्डानि सूत्रप्रदानि युक्तितः ।  
कर्पूद्वयप्रमाणानि चन्द्रकर्ममतानि वा १७१२ ॥  
लौह्यां भिन्नानि संस्थाप्य घसुभागे विनिक्षिपेत् ।  
पलाण्डुस्वरसं स्वच्छं वियद्गुह्यमवन्तथा ॥ १७१३ ॥  
द्वर्वाह्निगुणं क्षीरं न्यप्रोषयस्य विनिक्षिपेत् ।  
प्रज्वालयाग्निमधस्तत्र द्रव्यसंशोषणावधि ॥ १७१४ ॥  
उत्सार्य तामघो लौही स्वाह्नरीताश्च कारयेत् ।  
युक्त्या द्रवखण्डानि सन्त्यक् सर्वाणिचाहरेत् १७१५ ॥  
द्वर्वादर्थमागेन चूर्णं देवसुमोद्वयम् ।  
प्रसार्य तानि खण्डानि भल्लातकफलानि च ॥ १७१६ ॥  
पट्टणानि क्रमेणैव चित्पाकारतया किरित् ।  
सर्वान्द्वयचूर्णेन समाच्छाद्य प्रयत्नतः ॥ १७१७ ॥  
हव्यवाहं समाज्याल्य निर्धूमान्यपसारयेत् ।  
घृतं ज्योतिष्मतीतैलं माधुकैरण्डजे मधु ॥ १७१८ ॥  
रक्ताचतुर्गुणानीह शोषयेत्क्रमशः शनैः ।  
स्वाह्नरीतातानि चाकृत्य सूत्रभस्मादिकं त्यजेत् १७१९ ॥  
रक्तिकाद्विषयश्चास्य वाजीकरणमुत्तमम् ।  
ऊरुस्तम्भामवातातिसारपक्षधादिकान् ॥ १७२० ॥  
शीताह्नं तन्निद्रकप्लीहयकृद्भिद्रधिपण्डताः ।  
नाशयेत्पक्षमात्रेण श्रीसिद्धदरदाह्वयः ॥ १७२१ ॥  
नृ. क. वाजीकरणे ।

भाषा—सूरीशिंगरिफे १-१ अथवा २-२ कर्पूके टुकड़े कच्चेसूतमें खेपेकर साफकड़ाहीमें रक्खे और शिंगरिफे अठ्युना सफेदप्याज और अमरवेलकारस तथा दूना बटकादूध बालकर मन्दामि देकर समप्रशङ्खुआकर कड़ाहीको नीचे उतारकर रखले ।

स्वाह्नरीतलोहेपर शिंगरिफे टुकड़ोंको निकालकर कड़ाहीको साफकर शिंगरिफे आधा लवणकाचूर्ण बिछाकर शिंगरिफे-टुकड़ोंको रख ६ गुने मिलीये चुनकर दूसरे लवणकेचूर्णसे मिली-वाँको ढकड़े और धीरे २ आंचदे । मिलीये तथा लवण जलकर निर्धूमहोजाय तब कड़ाहीको उतारकर स्वाह्नरीतलोहेपर रख-द्वारकर टुकड़ोंको निकालले और कड़ाहीको साफकर फिर टुकड़ोंको रख धी, मालकागनी, महुआ और एरण्डकातैल, मधु, क्रमशः ४-४ गुना बालकर जलावे । अन्तमें कड़ाहीमें इतनी आंच दे कि निर्धूम होजाय । यह ध्यान रहे कि शिंगरिफ उड़ न जाय । फिर कड़ाहीको नीचे उतारकर टुकड़ोंको साफकर पीसकर रख-छोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती समय अथवा रोगोचितापुननकेसाथ देनेसे ऊरुस्तम्भ, आमवात, अतिसार, पक्षाघात, शीताह्न, तन्दा, झीडा, यकृद्, अङ्गारवाह, गुंसकत्त्व इनसबको यह नष्टकर उत्तम वाजीकरणकरताहै ॥ ३७९ ॥

### ३८० सिद्धनाथरसः

द्वादशभागालिखिकटोरेकोनपट्टिरिहमनस्थिम्याः ।  
खेचरजलेन मृदिता स्यच्छेन पिशोपितेन भृशम् १७२२

तृणशिलिशिलोष्णपट्टिक-  
मागैकयुता रक्तिमिता गुटिका ।  
एषा त्रिदोषसागरविशोपिणी  
वाडवी गुटिका ॥ १७२३ ॥

र. (सा.), सन्निपाते ।

भाषा—त्रिकटु १२ भाग, शुद्धमैन्सिल ५९ भागलेकर बारीकचूर्णकर जलमें बुलीहुई कमीसके नितरेहुए पानीसे १-२ दिन बोटकर चिनक और अदामासी, मरिच और शुद्धबज्जान-काचूर्ण १-१ भाग मिलाकर १-१ रत्तीकी गोलिए बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितापुननकेसाथ देनेसे यह त्रिदोषको नष्टकरतीहै ॥ ३८० ॥

### ३८१ सिद्धभैरवरसः

पारदं तालकं तुल्यं कुमारसमर्द्धितम् ।  
दोलायन्त्रे पचेद्यामं मत्स्यपित्तेन भाचयेत् ॥ १७२४ ॥  
खणकद्रव्यमात्रञ्च देयं मधुकणायुतम् ।  
जिह्विकासन्निपातघ्नो रसोऽयं सिद्धभैरवः ॥ १७२५ ॥  
दे. वि. , बा., जिह्विकासन्निपाते ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और हरितालकी नीलवर्णकजली-कर २-३ दिन पीडवारकेरछे मर्दनकर गोलापनाय धीऊं वारके रसमें दोलायन्त्रे १ पहर स्वेदनकर सुलाकर मछलीके-पित्तकी एक भावना देकर दोचनेप्रमाण गोलिएबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितापुननकेसाथ देनेसे यह त्रिदोष-को नष्टकरताहै ॥ ३८१ ॥

### ३८२ सिद्धमण्डूरम्

मण्डूरस्य पलान्यथै गोमूत्रेऽष्टगुणं पचेत् ।  
पुननया त्रिवृद्धघोषं विडङ्गं देवदादकम् ॥ १७२६ ॥

दिनिशे पुष्करं वह्निं दन्ती चर्व्यं फलत्रिकम् ।  
 कुटजस्य फलं तित्ता पिप्पलीमूलमुस्तकम् ॥ १७२७ ॥  
 विपञ्च प्रतिकर्षं स्याच्चूर्णाकृत्य चिमिश्रयेत् ।  
 मण्डूरस्य च पाकान्ते कोलमानं वटीकृतम् ॥ १७२८ ॥  
 पाण्डुरोषोदरानाह शूलार्तिहृमिगुल्मनुत् ।  
 इत्येवं सिद्धमण्डूरः सर्वरोगविनाशकृत् ॥ १७२९ ॥  
 नि. र, र, र, व. रा, वै. चि, र का, र क यो, ना वि.  
 पाण्डुरोगे ।

टि०—चरकीयपुनर्नवामङ्गुरेण बहुलाशेज्य साहरयमावहदपि विष  
 सुक्तत्वात्सतन्मनया रथापितः ।

भाषा—८ पल मण्डूरभस्मको अठगुने गोमूत्रमें पकावे ।  
 गाढाहोनेपर पुनर्नवा, निसोत, त्रिकुट, विषज, देवदाह, दोनों-  
 हल्दी, पोहकरसूल, चित्रक, दन्ती, चर्व्य, त्रिकला, इन्द्रजव,  
 कुटकी, पिपलामूल, नागरमोषा, शुद्धवज्रनाम, इनसबरा चूर्ण  
 १-१ कर्प मिलाकर उतारले । ठाढाहोनेपर सारवेर बराबर गोलियें  
 बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचि  
 तानुपानकेसाथ देनेसे पाण्डु, शोथ, उदररोग, आनाह, शूल,  
 किमि, गुल्म इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १७२९ ॥

### ३८३ सिद्धयोगः

हरीतकीगोक्षुरलोहभस्म  
 समांशैरिक्थुरको द्विभागः ।  
 सिताक्षिमागं तुहिनेदपीतं  
 प्रमेहसन्देहमपाकरोति ॥ १७३० ॥

रसायनस, प्रमेहाधिकारः ।

भाषा—हैं, गोखरू, लोहभस्म १-१ भाग, तालमखाना  
 और शरूर २-२ भागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे  
 ३-३ माशे दूध अथवा ठंडेपानीकेसाथलेनेसे यह प्रमेहमानको  
 दूरकरताहै ॥ ३८३ ॥

### ३८४ सिद्धरसः

रसं घञं हर्यणकान्तं मुण्डं तन्मारितं समम् ।  
 माक्षिकं गन्धकं शुद्धं सर्वं जम्बीरकद्रव्यैः ॥ १७३१ ॥  
 सप्ताहं मर्दयेत्सर्वं तद्गोलज्वालिपितं पुटेत् ।  
 भूधरे दिनमेरुनृत्नं ख्यातः सिद्धरसः परः ॥ १७३२ ॥  
 भापेनं मधुना लेष्टं वर्णान्मृत्युजरापहम् ।  
 दिव्यकायो नरः सिद्धो भवेद्विष्णुपराक्रमः ॥ १७३३ ॥  
 श्वेतापुनर्नवामूलं क्षीरपिष्टं पलम्पिषेत् ।  
 भक्षयेत्पलिकादौ वा क्रामकं परमं रसे ॥ १७३४ ॥  
 रसायनतं, रसायने ।

भाषा—पारा, हीरा, सुवर्ण, कान्त, मुण्ड, सोनामाखी  
 इनसबकीभस्में और शुद्धगन्धक सब समभागलेकर नीलवर्णकज-  
 लीकर जमीरीकेरससे ७ दिनतक मर्दनकर गोलावनाथ क्षारव  
 समुद्रमें बन्दकर मूषरसमें एकदिनकी अग्निदेवे । स्वाज्ञसीतल  
 होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा मधुकेसाथ

लगातार १ वर्षतकलेनेसे मृत्यु और दुःखापेक्षो नष्टकर दिव्यकाय  
 और दीर्घायुको करताहै । एक अथवा आधापल पुनर्नवाकीजहो  
 दूधमें पीसकर पीनेसे रक्का शरीरमें कामणहोताहै ॥ ३८४ ॥

### ३८५ सिद्धलक्ष्मीश्वररसः

अष्टांशमचपले शिरिमृषिकायां  
 सज्जार्थं पद्मगण्डलि क्रमशोऽधिकश्च ।  
 ऊर्ध्वं पयोऽग्निमधरे विनिधाय घीराः  
 सिद्धिं समस्तकरणे स्वक्रे कुरुष्व ॥ १७३५ ॥  
 वृ. यो. त, रसायनस, यो म, र, मृ. वाजीकरणे ।

टि०—योग्यवाक्ये “सरोष्य पिप्पलीहृत्तानशीप क्ष्मादामगैर  
 लक्ष्मीयै । श्रीमिदलक्ष्मीमुखिलामनामा पीयूषपिण्डादरस्तम्भमुत्त ॥”  
 इत्यादिना सुषाविण्ड इति नाम स्थापितम् ।

भाषा—अग्निमें रस्तीहुईमृषामें सुशुक्षित पोरको रख अष्ट-  
 माशसुवर्ण और पद्मगण्डक अथवा इन्धेभी अधिक क्रमपूर्वक  
 जारणकरे । सुवर्णजारणकरनेकेबाद पोरका बजनकरके देखे । यदि  
 अधिक बजन हो तो बाजोमें दोलायनसे स्वेदनकरे । समता  
 आनेपर प्रथमचन्द्रोदयकी क्रियासे चन्द्रोदयबनावे और इससे  
 रसायन अथवा धातुवादी क्रियायें सिद्धकरे ॥ ३८५ ॥

### ३८६ सिद्धवटी

शुद्धं सूतं तथा गन्धं शृङ्गिकं सैन्धवं समम् ।  
 सरोगोवत्सविष्टाञ्च प्रवेष्ट्वाहया विमर्दयेत् ॥ १७३६ ॥  
 गुटिका यद्राकारा भक्षिता रोगनाशिनी ।  
 किरातादिगणनेनैयं सन्निपातं नियच्छति ॥  
 कण्ठकुर्जं विशेषेण कण्ठामयविनाशिनी ॥ १७३७ ॥  
 नि. र, र सु, र को, कण्ठकुर्जमतिपाते ।

टि०—“किरातकुटकाकाकुञ्जकण्ठकारीशनीकालिद्रुमिक्लिमासया  
 कटुश्चक्रफलाभोपरी । विषामलकुम्भारालकुलोश्चक्ष्मीवृषे मत्तैपपत  
 क्षेय्यं अथति कण्ठकुञ्जगण ॥” इति किरातादिगणः ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, वज्रनाम, सैन्धवमक औरतलाल  
 जम्बहुए बड़केकीविष्टा समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर ब्राह्मी-  
 केरससे १-२ दिव मर्दनकर बेरबराबर गोलियानाकर रखछोड़े ।  
 इनमेंसे १-१ गोली किरातादिवायकेसाथदेनेसे सन्निपात, खास-  
 कर कण्ठकुर्ज और कण्ठरोगोंको यह नष्टकरताहै । चिरायता,  
 कुटकी, पीपल, इन्द्रजव, मटवटैया, कजूर, घड़ेरा, देवदाह, हैं,  
 यिचं, कायफल, नागरमोषा, अतीश, आंवले, पोहकरसूल, चित्रक,  
 वाक्कासांशो, अजुसा येसब समभागलेकर जवटु बनाकर रखे ।  
 इसमेंसे १-१ तोलेका चतुर्मांगवशिष्ट क्षाप बनाकर १॥ माशे  
 सोंछा प्रथेपदेकर पिलावे यह किरातादिवायहै ॥ ३८६ ॥

### ३८७ सिद्धसावरयोगः

मृताग्रं विशतिपलं मृतलोहस्य पञ्चकम् ।  
 गन्धकं चेपुपलिकं त्रिभि द्विगुणमाशिकम् ॥ १७३८ ॥  
 पथ्या शतपलं योज्यं धात्रीपलशतद्रवम् ।  
 सर्वमेकत्र तच्चूर्णं जम्बीरे मर्दयेदिनम् ॥ १७३९ ॥

भृङ्गीपुनर्नान्द्राघैः पातालगर्दीरसैः ।  
 भङ्गातद्विकोरण्टा दस्तिगुण्टी तु लाङ्गली ॥१७५०॥  
 क्षीरिणी जलकुम्भी च ग्रन्थैकं प्रत्यहं द्रव्यैः ।  
 भावयेन्मर्दयेदित्यं मत्प्राज्याभ्यां विलोडयेत् ॥१७५१॥  
 क्षिग्धमाण्डे स्थितं खादेत्प्रित्यं निकट्रयं क्षयम् ।  
 सिद्धसायरयोगोऽयं त्रिदोषादांमि नाशयेत् ॥१७५२॥  
 यो. म., र. का., र. सो., अतोऽधिकारे ।

भाषा—अभ्रभस्म २० पल, लोहभस्म और सुदृगन्धक ५-५ पल, शुद्धगोमासारी ६० पल, हरे १०० पल, आंवले २०० पल मेशर सरदा बारीकचूर्णकर जमीरी, भंगरा, पुनर्नना, पातालगर्दी, भिलवां, निप्रक, बटगरीया, हाथोगुण्टी, बरि-  
 हारी, सिरती, जलकुम्भी इनप्रत्येकके स्वरतोसे १-१ दिन मर्दनकर मधु और ची उचिन्मात्रासे मिलाकर पीके बननेमें रखजोड़े । इसमेंसे ८-८ मादो प्रतिदिन उचिन्मापानवेनाय-  
 लेनेसे त्रिदोषप्रकाशीर नष्टहोताहै ॥ १८७ ॥

### ३८८ सिद्धमूतरसः

पत्रीरुनं शुद्धसूतं सुवर्णं रौप्यमेकतः ।  
 मुक्ताफलं यषक्षारं तोलेकैकं प्रकल्पयेत् ॥ १७५३ ॥  
 रक्तोत्पलदलद्रव्ये मर्दयेत्पिष्टिकाश्रितम् ।  
 पट्टणं गन्धकं दत्त्वा मर्दयेदित्सद्वयम् ॥ १७५४ ॥  
 क्षिन्त्या काचघटीमप्ये सन्निरुद्धं त्रियामकम् ।  
 सिकताप्ये पचेज्जीते मिश्रसूतन्तु भक्षयेत् ॥१७५५॥  
 पञ्चरक्तिप्रमाणेन मुशलीशकरान्वितम् ।  
 शुक्रवृद्धिं करोत्येव ध्वजमङ्गञ्च नाशयेत् ॥ १७५६ ॥  
 दुर्बलं पशुरत्यर्थं पल्लयुक्तं करोत्यसौ ।  
 मुद्रगर्मं घृतं क्षीरं शालयः क्षिग्धमामिमम् ।  
 पापायतस्य मांसञ्च तित्तिरिष्य सदा हितः ॥ १७५७ ॥

भै र., र. क., ध्वजमहो, र. सु. बाजीवरणे ।

भाषा—शुद्धपारा, सुवर्ण और चादीकेचूर्क, मोती, यष-  
 क्षार १-१ तोलाकेकर पिष्टी बनाय सालरमलकेचूर्कलोकेरससे  
 १-२ दिन मर्दनकर ६ गुना गन्धक बालकर दोदिव मर्दनकर  
 सुखावर ६-७ पत्रमिठी दीर्घद आतलीशीतीमें बालकर बालुका-  
 यत्रमें रख ४ पदकी अग्निदेवे । स्वाश्वतीतद्धोनेपर निकाल  
 कर रखजोड़े । इसमेंसे ५-५ रती मुखी और बकरकेसाय-  
 देनेसे शुक्रदानि, ध्वजमत्र, अत्यन्ताश्वीता, इनसको यद नष्ट-  
 करताहै । पशुपुष्कम्, दुध, सपेदनावल, क्षिग्धमांस, कनूर  
 और तोतका मांस हितकरहै ॥ ३८८ ॥

### ३८९ सिद्धाभ्रकरसः ( लघ्वादिः )

समांशे रसगन्धाम्नं द्रव्यं विरोषितम् ।  
 लोहखड्गे विनिःक्षिप्य गन्धायजेन समन्वितम् ॥१७५८॥  
 मर्दकेनाऽपि लोहेन मर्दयेद्विषसत्रयम् ।  
 द्रोणीसुख्यां न्यसेत्खड्गं साङ्गारायां प्रयत्नतः ॥१७५९॥

इति सिद्धरसेन्द्रोऽयं लघुः सिद्धाभ्रकोमतः ।  
 वल्लुत्तयोरमोजीरैः धारिणा सहितः प्रगे ॥ १७५० ॥  
 पीतो हृषति येनेन प्रहर्णाप्रतिदुस्तराम् ।  
 अतिसारं महाघोरं सातिसारं ज्वरन्तया ॥ १७५१ ॥  
 पाचनो दीपनो हृद्यो गात्रलाघप्रकारकः ।  
 नागार्जुनेन कथितः सद्यः प्रत्ययकारकः ॥ १७५२ ॥  
 र. को., र. चं., र. सु. प्रद्वयाम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और स्त्री क्षिगरिक, अश्व-  
 भस्म चर समभागलेकर गायका ची बालकर लोहेके तप्तपल्लवे  
 ३दिवतक मर्दनकर रखजोड़े । इसमेंसे १-१ रतीमीमात्रा १ मादो-  
 ओरमें मिलाकर जलेकेसाय प्रात काललेनेसे भयङ्कर संमृष्टी,  
 अतिसार, ज्वरातिसार इत्यसको यद नष्टकरताहै ॥ ३८९ ॥

### ३९० सिद्धामृतारसः

सौराण्याश्च त्रयो भागा भागेकं स्वर्णगैरिकम् ।  
 पूर्णं कृत्वा आपमात्रं गोदुग्धस्यानुपानतः ॥ १७५३ ॥  
 प्रभातकाले संसेव्यमम्लतैलादि यजेत् ॥  
 शिरोभ्रमं शिरोरोगमम्लपित्तं विनाशयेत् ॥ १७५४ ॥  
 सर्वाण् पित्तमयाप्रोगाभ्राशयेत्प्राऽथ संशयः ।  
 सिद्धामृतारसः स्यातः पूष्यपादेन निर्मितः ॥ १७५५ ॥  
 रसायनसं., अम्लपिते ।

भाषा—सुनीफिटकरी ३ भाग, सोनागेरू १ भागलेकर  
 १-२ पहर घोटकर रखजोड़े । इसमेंसे १-१ माद्या प्रात काल  
 गोदुग्धकेसाय देनेसे शिरोभ्रम, शिरोरोग, अम्लपित्त, पित्तज  
 समस्त उपर इत्यसको यद नष्टकरताहै ॥ ३९० ॥

### ३९१ सिद्धेश्वररसः ( महादिः ) १

शुद्धं सूतं शिलां ताप्यं मृतास्त्रं मर्दयेत्समम् ।  
 जातोफलं लघ्नैले प्रसूनं तद्विभागिकम् ॥ १७५६ ॥  
 कृण्वेत्सर्वमेकत्र रसः सिद्धेश्वरो महाद् ।  
 हिशुञ्चे भक्षयेत्सौद्रैरनुपानमधोच्यते ॥ १७५७ ॥  
 भटोलद्विनिशानिभ्रतिकोक्षातकीचचाः ।  
 यस्यां यदि समं कार्यं यक्ष्ण्यत तदाहरेत् ॥ १७५८ ॥  
 स्याद्यपादयुतं चाज्यं पचेदाज्यावरणकम् ।  
 रतदाज्यं पलादन्तु हानुपानञ्च कुशुतम् ॥ १७५९ ॥  
 लेपं सिद्धरसेनैव मुत्तस्थाने नियोजयेत् ।  
 वल्लुष्टे लाशुनं पिण्डं घट्टा स्फोटः प्रजायते ॥  
 पुनर्लेपं पुनर्वद्धा विनश्येत्सुप्तिमण्डलम् ॥ १७६० ॥

र. का., गुग्गुधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और मैसिल, सोनामासी और अश्व-  
 भस्म १-१ भाग, जायफल, लौंग, इलायची, आकरी जड़की  
 पीत २-२ भागलेकर सबका बारीकचूर्णकर पोरयन्धकी नील-  
 वर्णकजलीमें मिलाय बीसीमें रखजोड़े । अथवा आकरीजड़की-  
 थालेकेसाय अथवा स्वरसेमें १-२ दिन घोटकर २-२ रतीकी  
 पीलियावनावर रखजोड़े । इसमेंसे २-२ रती मधुकेसायदेक

पटोलपत्र, हल्दी, दाहहल्दी, नीमकीछाल, कड़वीलोईकिफल  
अथवा बीज, वच, हरे, मुलट्टी सब समभागलेकर जवकुट चूर्ण-  
कर चौमुनेपानीमें पादावशेषकायस्त्र चतुर्थांश गायकाषी डालकर  
पकावे । घी वाकीरहनेपर उतारकर छानले । इसमेंसे आधाफल  
ऊपर पिलानेमें सुप्त और मण्डलकुष्ठ नष्टहोते हैं । सुप्त और मण्डल  
स्थानमें लघुनेकेरसमें मिलाकर इसरसकालेपकरे और ऊपरसे  
लघुनाकस्त्ववाधे । ऐसे बारम्बारकनेसे कुष्ठस्थानमें फोड़ाहोकर  
अच्छा होजायगा ॥ ३९१ ॥

### ३९२ सिद्धेश्वररसः ( द्वितीयः )

नार्गं वज्रं भस्मसूते लोहं ताम्रं समं समम् ।  
हालाहलं त्रिभागं स्यादेकीकृत्य विचूर्णयेत् ॥ ३७६१ ॥  
आटरूपाग्निनिर्गुण्डीमहाराष्ट्रीपुनर्नवैः ।  
धत्तूरचिजयामुण्डीसमुद्रशोषजैरपि ॥ ३७६२ ॥  
मत्स्यमाहिपमायूररुजागवाराहसम्भयैः ।  
पित्तैः समस्तैर्व्यस्तैर्धा भावयेद्य भिषग्वरः ॥ ३७६३ ॥  
गुज्रामाघप्रयोगेण चार्द्रकस्त्यरसेन तु ।  
रसः सिद्धेश्वरो नाम सन्निपातकुलान्तकः ॥ ३७६४ ॥  
र. क. यो., सन्निपाते ।

भाषा—नाग, वज्र, लोह, ताम्र और पारदभस्म १-१  
भाग, शुद्ध घटनाग ३ भागलेकर बारीकचूर्णकर अर्द्धा, चित्रक,  
निर्गुण्डी, मराठी, पुनर्नवा, धत्तूर, भाग, गोरखमुण्डी और  
समुद्रशोषकेसोते १-१ दिन मर्दनकर मछली, भेंसा, मोर,  
बकरा और सुन्दरकेपिसोते १-१ भावना देकर १-१ रत्तीकी  
गोलियें बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अर्द्धरखके  
रखकेसाय देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै ॥ ३९२ ॥

### ३९३ सिन्दूरभूषणरसः ( प्रथमः )

अन्नकं रससिन्दूरं विद्रुमं मौक्तिकतथा ।  
ग्रन्थिकं टङ्गुणञ्चैव समभागं विनिक्षिपेत् ॥ ३७६५ ॥  
मातुलुङ्गरसेनैव मर्दितं त्रिदिनं भवेत् ।  
भुशुना सेययेन्नित्यं कुष्ठाष्टादशकामलाः ॥ ३७६६ ॥  
विंशतिं श्लेष्मरोगांश्च चत्वारिंशच्च पित्तजान् ।  
अशीतिं वातजात्रोगान्हन्ति शूलशतत्रयम् ॥ ३७६७ ॥  
प्रमेहान्विंशतिं हन्यात्पण्डोऽपि पुरुषायते ।  
बालो वाऽपि च बृद्धो वा गर्भिणी वापि सेवयेत् ।  
सिन्दूरभूषणो नाम रेवणासिद्धमापितः ॥ ३७६८ ॥  
रसायनस., वै वि ( ल ), रसायने ।

टि०—रसायनसग्रहस्य द्वितीयस्थाने विद्रुममौक्तिकस्थाने गन्धक  
ग्रन्थिके निवेद्य भृशरत्नरसैश्च भावनां दत्त्वा पाठान्तर प्रक-  
लिते दृश्यते ।

भाषा—अन्नकभस्म, रससिन्दूर, प्रवाल और मोतीकी-  
भस्म, गठिन, भुनाछाणा सब समभागलेकर बिजोरेकेरससे ३  
दिनतक मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखजोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाय देनेसे १८ प्रकारके कुष्ठ,

कामला, २० प्रकारके कफरोग, ४० पित्तरोग, ८० वातरोग,  
३०० शूल, २० प्रमेह, नपुंसकता इनसबको यह नष्टकरताहै ॥

### ३९४ सिन्दूरभूषणरसः ( द्वितीयः )

वैकान्तं जातरूपञ्च वज्रविद्रुममौक्तिकम् ।  
सुजङ्गमम्रकं कान्तं रससिन्दूरकं क्रमात् ॥ ३७६९ ॥  
पञ्चचैकैकभागाः स्युश्चतुर्भागास्तथाऽपरे ।  
जातीपुष्परसे रक्तागस्त्यपुष्पेक्षुवालकैः ॥ ३७७० ॥  
वरीलामज्जवाराहीहिमशास्त्रमलिवारिभिः ।  
प्रत्येकैश्च दिनं मर्द्य मापमानन्तु सेवयेत् ॥ ३७७१ ॥  
इष्टमुष्णादिकं योग्यं कुष्ठाष्टादशकामलाः ।  
विंशतिं श्लेष्मिकात्रोगांश्चत्वारिंशच्च पित्तजान् ॥ ३७७२ ॥  
अशीतिं वातजात्रोगान् हन्ति शूलशतत्रयम् ।  
प्रमेहार्शो महाव्याधीन्सन्निपातांस्त्रयोदश ॥ ३७७३ ॥  
अतिसारभवात्रोगांश्चैव पण्डुपण्डुज्वराजयेत् ।  
इन्द्रोत्यञ्च त्रिदोषोत्थं राजरोगमयङ्करम् ॥ ३७७४ ॥  
वन्ध्यापि लभते पुनं पण्डोऽपि पुरुषायते ।  
प्रदं सर्वग्रन्थीश्च नाशयेद्गलरोगकम् ॥ ३७७५ ॥  
बालवृद्धादिभिः सेव्यं गर्भिणीभिर्विशेषतः ।  
तप्तद्रोगानुपानञ्च हितं पथ्यञ्च दीयते ॥  
सिन्दूरभूषणो नाम रेवणासिद्धमापितः ॥ ३७७६ ॥  
र. क. यो. सवरोगे ।

भाषा—वैकान्त ५ भाग, सुवर्ण और हीरा १-१ भाग,  
प्रवाल मोती, नाग, अन्नक, कान्त इनकीभस्में और रससिन्दूर  
४-४ भाग लेकर बारीकचूर्णकर चमेली और लालमगस्त्यके  
फूल, ईख, सुगन्धवाला, घातावर, खस, वाराहीरुन्द, कपूर,  
समलकामुसला इनप्रत्येकके यथासम्भव द्वरस अथवा बाथोसे  
१-१ दिन मर्दनकर उर्द्धवारावर गोलियें बनाकर रखजोड़े । इन-  
मेंसे १-१ गोली गरमपानी अथवा समयोचितानुपानकेसाय  
देनेसे १८ प्रकारके कुष्ठ, कामला, २० प्रकारके कफरोग, ४०  
पित्तरोग, ८० वातरोग, ३०० शूल, प्रमेह, बवासीर, १३ सन्नि-  
पात, अतिसार, पाण्डु, ज्वर, इन्द्रोत्य अथवा त्रिदोषज भय-  
ङ्करराजरोग, वन्ध्यापन, नपुंसकत्व, प्रदर, सप्तप्रकारकीगर्द,  
गलरोग, गर्भिणीरोग, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३९४ ॥

### ३९५ सिन्दूरभूषणरसः ( तृतीयः )

सुवर्णं रससिन्दूरं कर्पूरञ्चाहिफेनकम् ।  
कर्पमानं पृथङ्मोचसारैलावंशारोचनाः ॥ ३७७७ ॥  
कर्पद्रव्यं पृथक्सर्वं मुस्ताकायेन भावयेत् ।  
त्रिगुञ्जां वटिकां कृत्वा दापयेत्तु दृजाम्भला ॥ ३७७८ ॥  
नाशयेद्विस्तारांश्च विश्वचीप्रहणीगदान् ।  
यलवर्णाग्निजननो नास्ति सिन्दूरभूषण ॥ ३७७९ ॥

वृ. क., अतिसारे ।

भाषा—सुवर्णभस्म, रससिन्दूर, शुद्धकर्पूर और अजीम  
१-१ कर्प, मोचसर, इलायची, बंधालोचन २-२ कर्प लेकर

वारीकचूर्णकर नागरयोधेकेकाशसे १-२ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोखिये बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली डुरैयाकी छालके काठेके साथ देनेसे अतिसार, हैजा, प्रद्वणी, बल-वर्ण और अमित्री मन्दता इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३९५ ॥

### ३९६ सिन्दूरभूषणरसः ( चतुर्थः )

शुद्धं सूतञ्च सिन्दूरं पलैकैकं विमर्दयेत् ।  
वासारसेन यामैरु तेन कुर्याच्च चक्रिकाम् ॥ १७८० ॥  
सुषुकां कारयेन्मृषामुत्तानां द्वादशाहुलाम् ।  
तन्मध्ये गन्धकं शुद्धं क्षिपेत्पलचतुष्टयम् ॥ १७८१ ॥  
पूर्वांतां चक्रिकां तत्र धृत्वा लिप्त्वा पुष्टेस्तु ।  
जीर्णं गन्धे तमुद्धृत्य चक्रिकां सां विचूर्णयेत् ॥ १७८२ ॥  
चूर्णाद्दशागुणं योज्यं मृतलोहञ्च मर्दयेत् ।  
लग्नुनेन दशांशेन चणमाना घटीः क्लिरेत् ॥ १७८३ ॥  
घातपाण्डुहरः सिद्धो रसः सिन्दूरभूषणः ।  
पियैश्चानु ह्यपामार्गस्यैरण्डस्य च मृत्तिकाम् ॥  
ततः पिष्ट्वाऽथ कर्पैकां हन्ति पाण्डुं सखामलम् ॥ १७८४ ॥  
र. र. स., र. च., र. र., र. सु., व. रा., र. का., वै. वि., र. को कामलापाण्डुधिकारे ।

भाषा—शुद्ध घात और रससिन्दूर १-१ पलकेकर एकाहर अङ्गुलैकेरसे घोटकर चक्रिका बनाय १२ अङ्गुलकी खड़ी मृषामें रस ५ पल गन्धक डालकर लघुपुटरी आवेदे । गन्धक-जीर्ण होनेपर चक्रिकासे दशगुनी लोहद्रव्यम मिलाकर दशाष्ट लहसुनका बल्क मिलाय घोटकर चनेप्रमाण गोखिये बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली खाकर अगामार्ग अथवा एरण्डकी-जड़ १-१ कर्प छाछमें पीसकर पीनेसे वातपाण्डु और बामला नष्टहोतीहै ॥ ३९५ ॥

### ३९७ सिन्दूरयोगः

सिन्दूरं कानकं धौजं विजयेक्षुरवीजकम् ।  
जातीफलं जातिपत्री कटुशिष्टमफेनकम् ॥ १७८५ ॥  
समुद्रशोषसंयुक्तं लघुद्वैधं युतं तथा ।  
भाययोद्धिजायाश्चार्थमृषायाऽनुकां कर्णां घटीम् ॥  
खादेच्च रक्तिकां नित्यं शुक्रस्तम्भः प्रजायते ॥ १७८६ ॥  
ध, बाजीकरणे ।

भाषा—रससिन्दूर, शुद्ध धतूरेकीबीज, भाग, वातमखाना, जायफल, जावित्री, कड़वेसहिजकीछाल, अटीय, समुद्रशोष, लौघ सब समभागकेकर वारीकचूर्णकर भागके रूपसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोखियां बनाय छायाशुक्रकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोपिज्ञानुगानकेसाथ देनेसे यह शुक्रका स्तम्भन करतीहै ॥ ३९७ ॥

### ३९८ सिन्दूरसिद्धि

सिन्दूरं गोस्तनी क्षौद्रं भक्ष्यते मासपञ्चकम् ।  
अरुन्दरास्थिप्रदं नाशामायाति निश्चितम् ॥ १७८७ ॥  
व रा, प्रदे ।

भाषा—रससिन्दूर २ रत्ती, आवजोश (बड़ीद्राव) और मधु २॥-३॥ मासे मिलाकर प्रतिदिन खाकर दूषणीनेसे रक्त और अस्थिप्रद नष्टहोतेहै ॥ ३९८ ॥

### ३९९ सिंहनादरसः ( प्रथमः )

लोहपात्रे शुद्धगन्धे द्वाविते तत्र निक्षिपेत् ।  
शुद्धं सूतं समं चाल्यं व्याघ्रीद्रावं द्वयोः समम् ॥  
निर्गुण्डयुतं करञ्जोत्थं तुल्यं द्वावं विनिक्षिपेत् ।  
पचेन्मृद्वग्निना तावदावच्छुष्यं द्रवप्रयम् ॥ १७८९ ॥  
विषं पादयुतं चूर्ण्य सिंहनादोत्तमो रसः ।  
शुद्धामात्रं प्रदातव्यं सन्निपातज्वरान्तकम् ॥ १७९० ॥  
अनुपानैः पितेत्कार्यं कण्टकार्याः सपुष्करम् ।  
शुद्धीनागरे युक्तमरचो भ्यासकासयोः ॥ १७९१ ॥  
र. को., र. स., वि र. म, र. र., र. क ल, र क, र का, रसायनं, सन्निपाते ।

टि०—कुशविद् व्याघ्रीरयाने मार्गं निबोधि । र. क. ल. नारास-हरस इति नाम । र. का मेघवाङ्मुरस इति नाम ।

भाषा—लोहेकेपात्रमें शुद्धगन्धक डालकर गलावे । गल-जानेपर बराबरका घात डालकर बलावे । एकजीवहोनेपर दोनोंकी बराबर भटकटैयाका स्वरस डालकर बलावे । सूखनेपर उतनाही निर्गुण्डी और करञ्जा स्वरस प्रमसे डालकर बलावे । रस-सूखनेपर चतुर्विध शुद्धबलयाग डालकर उतारले और १-२ दिन मर्दनकर रखलेवे । इसमेंसे १-१ रत्ती मधुपौरहके साथ चटा-कर भटकटैयाकेकायमें पीसकरमूलका प्रसेध देकर पिलानेसे सन्नि-पात नष्टहोताहै । गिलेय और सौंठकेकायकेमाथ लेनेसे अरुचि, श्वास और कास नष्टहोतेहै ॥ ३९९ ॥

### ४०० सिंहनादरसः ( भुजनेधरः ) २

शुद्धं सूतं विषं गन्धं समं मण्डिशिलारसम् ।  
वृन्तीबीजं समं रस्ते मर्दयेद्विषसद्वयम् ॥ १७९२ ॥  
कारचहोरेसेः सम्यक् पुटपाके च योजयेत् ।  
उद्धृत्य चूर्णयेत्स्वल्पे द्वियामं चानुपानतः ॥  
शुद्धामात्रं प्रदातव्यं विलोमचानुपानम् ॥ १७९३ ॥  
व. रा., वै. वि, विलोमचाने ।

टि०—वैष्ण्विन्नामगौ द्विषरयाने ( अरुणधिकारे ) गौरीपापाग मध्वर शिव मण्डिशिलारमन्त्रियावाचो विरोधेऽपि । नाम च धुराने अर इति स्थायिन्म् । अल्लनोक्तद्विषमभारनेच्छा वैद्यहिं अमित्रवरणे गौरीपापाभि विविध्य रस सन्नायत्रामन्त्रया नृ बराबरविष दश-योग शेषविधि सुधीभिराकन्दनीयम् ।

भाषा—शुद्ध घात, बज्जाम, गन्धक, मैनसिल, वगरीया जमालयोडा सब समभागनेकर नीलकण्ठमलीहर दोदिनभट-करलेक रसेसे मर्दनकर गोलापथय एरण्डपौरहके पानोंमें सपट पुष्टाकरके । स्वाध्वीकृत होनेपर १-१ रत्तीकी गोखियां बना-कर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली उन्निपानुगानकेसाथ देनेसे यह विलोमचानुगान नाशकरताहै ॥ ४०० ॥



## ४०१ सिंहप्रतिपालनम्

सुतं गन्धकवत्सनाभगरलं चैकैरुमागान्वितं,  
सर्वं हंसपदीद्वयेण मिलितं शुद्धैरुमात्रं भजेत् ।  
तैलाम्बुजजलोपचारसहितं पथ्यञ्च दध्योदनं,  
नानादोषसमुद्भवान्विजयते सिंहप्रतीपालनम् ॥७९४॥  
व रा., ज्वराधिकारे ।

टि०—यद्यपि तृतीयमर्गसुन्दरस्याऽप्यस्मिन्नेव रसेऽन्तर्भावः कर्तुं  
मुचितः तथाऽप्यस्य रसस्य गरलस्युक्तथाऽतिनीक्षणवीर्यत्वादयोऽपि  
स्वतन्त्रतैव पाठो गृहीतो । अमृतपात्रे तु चाप्रयुक्ततया स्वतन्त्रता सुतरा  
मेवाऽस्तीति विद्वद्भिरावलनीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, चक्षुणा और सर्पविष सम-  
भागलेकर नीलवर्णकजलीकर हराजकेरसे १-२ दिन मर्दन  
कर १-१ रत्तीकी गोखिये बनाकर रखोहे । इसमेंसे १-१  
गोली उचितानुपानकेसाथदेकर तैलाम्बुजकराके मत्पेर ठंडेलकी  
घारा देवे । अत्यन्त भूय लम्बेपर दहीभातका भोजन करावे ।  
इससे नानातहके दोषोंसे जायमान ज्वर नष्टहोतेहे ॥ ४०१ ॥

## ४०२ सिंहशार्दूलरसः

सुवर्णं रजतं कान्तं ताम्रञ्च भृषु सीसकम् ।  
भस्मीकृत्य च तत्सर्वं क्रमद्वद्धथा समांशकम् ॥७९५॥  
व्योमसत्त्वमयं भस्म सर्वैस्तुल्यं प्रकल्पयेत् ।  
कजलीं सुतराजस्य सर्वैरतैः समांशिकाम् ॥७९६॥  
प्रद्राव्य लोहभस्मादि सर्वं तत्र विनिक्षिपेत् ।  
काष्ठेनालोड्य तत्सर्वं सद्रव्यं हि समाहरेत् ॥७९७॥  
ततो विचूर्ण्य तत्सर्वं सप्तधा परिभाषयेत् ।  
अङ्गुलीयजसम्भृतकायलेहेन यत्नतः ॥७९८॥  
रुद्धं तद्वन्धमुपायां सर्वं संस्पर्शयेच्छनैः ।  
इतिखिरो रसेन्द्रोऽयं वर्णितः पट्मालितः ॥७९९॥  
कान्तपात्रस्थितै रात्रौ जलैस्त्रिपलसंयुतैः ।  
घट्टद्वयमितः प्रातः पातव्यो मेहुरोगिणा ॥८००॥  
मृगचारिमृगेणैव मेहमुह्यहविनाशनः ।  
निर्विघ्नोऽयं रसश्चैव शाब्दो हि नामतः ॥८०१॥  
दीपनः पाचनो रुच्यो ग्रहणीपाण्डुनाशनः ।  
आमघ्नो रश्चिकुसर्वरोगघ्नो योगसंयुतः ॥८०२॥  
र. को , प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, कान्त, ताम्र, वज्र, नाग इनकीमर्से  
क्रमद्वद्भागसे लेकर सबकीबराबर अवक्रसत्त्वमस्य मिलाकर मयकी  
बराबर शुद्धपारेगन्धककी नीलवर्णकजलीको धोखीहुई कड़ाहीमें  
थेरेकेकोयलेपर गलाकर समस्तको मिलाकर उतारले और घोटकर  
कजली बनाले । फिर इसको अङ्गुलीयमीमात्रकेकाथकेपत्रसे ७ दिन  
घोटकर गोलावनाय अन्यमुपायां बन्दकर भूषणयन्त्रमें स्वेदनकरे ।  
स्वाङ्गशीतलहोनेपर निवालकर चूनेपर रखोहे । इसमेंसे ६-६  
रत्तीकीमात्रा कान्तापानमें रातभर रखेहुए ३ पल जलनेसाथ प्रातः  
कालनेसे समस्तप्रमेहोको यह नष्टकरताहे । यह दीपन और  
पाचनहे, ग्रहणी, पाण्डु और आमको नष्टकरताहे ॥ ४०२ ॥

## ४०३ सीसरसायनम्

द्रुतद्रावं महाभारं छेदे कृष्णं समुज्ज्वलम् ।  
प्रतिगन्धं वह्निः कृष्णं शुद्धं सीसमतोऽन्यथा ॥८०३॥  
अत्युष्णं सीसकं क्षिग्धं तिकं वातरुपापहम् ।  
प्रमेहतोयदोपचं दीपनं चामवातनुत् ॥८०४॥  
सिन्धुवारजटाग्रथे हस्तिद्वार्ष्णिकं क्षिपेत् ।  
द्रुतनागञ्च निर्गुह्यास्त्रिवारं निक्षिपेद्वसे ॥८०५॥  
नागः शुद्धो भवेदेवं मूच्छास्फोटादि नाचरेत् ।  
तिर्यगाकारचूर्ण्यं तु तिर्यग्वनत्रं घटं क्षिपेत् ॥८०६॥  
तद्वनत्रञ्च विना सर्वं गोपयेद्यत्नतो मृदा ।  
प्राष्टयन्नाभिधे तस्मिन्मन्त्रे सीसं विनिक्षिपेत् ॥८०७॥  
पलविंशतिसम्मानमधस्तोत्रानलं क्षिपेत् ।  
द्रुते नागे क्षिपेत्सूतं शुद्धं कर्ममितं शुभम् ॥८०८॥  
विमृष्टं निक्षिपेत्क्षारमेकं हि पलं पलम् ।  
अर्जुनाख्यस्य वृक्षस्य महाराजतरोरपि ॥८०९॥  
दाडिमस्य मयूरस्य क्षिप्त्वा क्षारं पृथक् पृथक् ।  
एवं विंशतिपत्राणि पञ्चेत्तीव्रेण वह्निना ॥८१०॥  
विघट्टयन् दृढं दोर्भां दुर्वां चाथ प्रयत्नतः ।  
रक्तं तज्जायते भस्म कपोताभं विवर्जयेत् ॥८११॥  
नागं दोषविनिर्मुक्तं जायते तु रसायनम् ।  
हस्तमुत्थापितं सीसं दशवारं शुद्धयति ॥८१२॥  
तन्मृतं सीसकं सर्वदोषमुक्तं रसायनम् ।  
एवं नागोद्भवं भस्म ताप्यमस्मार्द्धभागिकम् ॥८१३॥  
पादं पादं क्षिपेद्वस्म शुल्बस्य रजतस्य च ।  
कान्ताम्रसत्त्वयोधापि स्फटिकस्य पृथक्पृथक् ॥८१४॥  
सर्वमेकत्र सञ्चर्ष्य पुष्टेस्त्रिपलाम्भसा ।  
त्रिशङ्खनगिरीन्द्रैश्च त्रिशङ्खारं विचूर्ण्य तत् ॥८१५॥  
व्योपवेष्टुं कर्षुर्गन्धं समांशैः सह योजयत् ।  
मघ्नाज्यसहितं हन्ति प्रलोढं घट्टमानया ॥८१६॥  
अशीतिं घातजात्रोगान्धनुर्घाताग्विशेषतः ।  
कफरोगानशेषांश्च सूत्ररोगांश्च सर्वशः ॥८१७॥  
भ्वासं कासं क्षयं पाण्डुं भवयुं शीतकरजसम् ।  
ग्रहणीमाममदोषञ्च वह्निमान्दुश्च दुर्जयम् ।  
सर्वान्मुद्गदोषांश्च तत्तत्रोगानुपानतः ॥८१८॥  
र. च., वातनाशायी ।

भाषा—नदी पिरलनेवाला, अत्यन्तवज्रनदार, काठनेमें  
उज्ज्वल, दुर्गन्धयुक्त इततहका सीसा कार्यक्षम होताहे । सीसा  
अत्यन्त गरम, स्निग्ध और तिकरसयुक्त होताहे । घात, कफ,  
प्रमेह, जलरोध, मन्दाग्नि और आमवातको नष्टकरताहे ।  
निर्गुहकी जड़केकाथमें हल्दीकाचूर्ण डालकर नागको गलाकर  
३ बार धुनायेमें मूच्छा और स्फोट नहीं करताहे । टडेचूल्हेमें  
टडा पड़ाख गोबरसे तमायको ठकड़े केवल मुद्ग उपाड़ा रहनेद ।  
इसमें २० पल शुद्धसीसेको डालकर तीक्ष्ण अमित्रलवे । पल  
जानेपर १ पल शुद्धपारा डालदे और अर्जुन, अमिलतास, अवार,

अभामार्ग इतकाक्षर १-१ पल लेकर योडा योडा डालकर लोहे-  
पीकड़छोसे घोटै । ऐसे २० दिनरात बड़ी आचनेकर मर्दनकरे ।  
इसतरहकरनेसे खालरसकी भस्म होगी । कपोतवर्ण हो तो उसे  
न लेवे । इसको मित्रपञ्चको गोखे जत्यापितकर फिर पूर्ववत्  
भस्मकरे । ऐसे १० बारकरनेसे यह समस्तदोषोंसे निश्चुक्त धीस  
रसायन तैयारहोगी । यह भस्म १ भाग, सुवर्णमाक्षिकभस्म  
आधाभाग, ताम्र, रजत, कान्त और अग्रक्रस्तव, स्फटिकमणि  
इनकीभस्में प्रत्येक चतुर्थांश डालकर त्रिफलाकेकाषसे एकदिन  
घोटकर गोलावनाय शरावस्तमुपयुक्तं बन्दकर ३० जल्लोकाण्डोंकी  
आचदे । इसतरह ३० आचें देकर इसमें त्रिकटु और बिडवका  
समभागवर्ण मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती मधु और  
घीकेसाथ देनेसे ८० प्रकारके वातरोग, खासकर भुतवात, कफ  
रोग, सूत्ररोग, श्वास, कास, क्षय, पाण्डु, शोथ, शीतज्वर,  
ग्रहणी, आमदोष, दुर्जय मन्दाग्नि, समस्त उदररोग इनसबको  
यह नष्टकरतीहै ॥ ४०३ ॥

### ४०४ मुखमेदीरसः

रसं गन्धं विपञ्चैव हरितालं मनःशिला ।  
टङ्गुणं हिमलज्जैव टङ्गं टङ्गं पृथक् पृथक् ॥ १८१९ ॥  
मरिचञ्च निटङ्गं स्याज्जैपालं टङ्गुपोडश ।  
खल्वे चैतानि निक्षिप्य छागपित्तन मर्दयेत् ॥ १८२० ॥  
कार्यां स्विन्नचणाकारां यट्टिकां परमोत्तमा ।  
विरैकाय प्रदातव्या शीतञ्चानुपियेज्जलम् ॥  
तावद्विरैचयेज्जन्तुं यावदुष्णं न सेचयेत् ॥ १८२१ ॥  
र र, कौ, विरेचने ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, वज्रनाग, हरिताल, मैन्सिल,  
सुहागा और शिंगरिफ ४-४ माको, मरिच ११ माको, शुद्ध  
जमालगोटा ४ कषे लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण  
कजलीमें मिश्रण एकदिन बकरेके पित्तसे घोटकर भीगेहुए घने  
प्रमाण गोक्षिप्य बनाकर रखाछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली टडेजल  
केसाथ लेनेसे रचनहोगा, उष्णोपचारकरनेसे बन्दहोनायगा ४०४

### ४०५ मुखविरैचनरसः ( प्रथमः )

शङ्खं दहेद्वोलिकया ॥ घर्मं  
त्वग्द्वैर्वर्जितदन्तिवीजम् ।  
सम्पत्तिवैशुद्धञ्च नयं नियोजयम्  
भागा. शरा. सुतलवौ बलेञ्च ॥ १८२२ ॥  
विमर्दित. स्यात्सुखरेकनाम्ना  
गुञ्जात्रयं साज्यमनुपण्णदेयम् ।  
न ग्लानिदु खं न च कष्टदाहो  
ज्वरं निहन्त्याद्विपमं नयं वा ॥ १८२३ ॥  
आम्लानिलं पाण्डुजलोदरार्ति  
संसेचितोऽयं जयतीह रेकः ।  
तत्रेण भक्तञ्च घृतेन चारिम-  
प्रोगानुरूपं प्रविचार्य देयम् ॥ १८२४ ॥  
र श, विरेचने ।

भाषा—कण्डोंमें रखकर कीहुई शङ्खकी सपेदभस्म और  
शुद्ध जमालगोटे ५-५ भाग, शुद्ध पारा और गन्धक २-२ भाग  
लेकर नीलवर्णकजलीमें मधुकेयोगसे ३-३ रत्तीकी गोक्षिप्य बना-  
कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली टडेघीरेसाथ देनेसे विना-  
किसीउपद्रवके रचनहोताहै । विषम अथवा नवीनज्वर, आम-  
वात, पाण्डु, जलोदर इनसबको यह नष्टकरताहै । अत्यन्तभूख  
आनेपर घृतकेसाथभातदेकर छाछपिलावे । अन्यरोगोंमें औचित्य  
देखकर अनुपानवगैरहकी योजनाकरे ॥ ४०५ ॥

### ४०६ मुखविरैचनरसः ( द्वितीयः )

त्रिकटु त्रिफला सूतं सिन्धुटङ्गुणगन्धकम् ।  
सर्वैः समानं जैपालं राजयोग्यं विरेचनम् ॥ १८२५ ॥  
न ग्लानिदु. खं गुदकण्डदाहो-  
ज्वरं निहन्त्याद्विपमं विकारम् ।  
आध्मानिलं पाण्डुजलोदरार्ति  
संसेचितोऽयं जयतीह वेगात् ॥  
तत्रेण पच्यञ्च घृतेन चारिमप्रो-  
गानुरूपं प्रविचार्य देयम् ॥ १८२६ ॥  
र. सु, विरेचने ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, शुद्धपारा, वैधानमक, सुहागा  
और गन्धक समभाग लेकर सबकीबराबर शुद्धजमालगोटा मिश्रण  
१-२ दिन मर्दकर अदरखके रसवगैरहमें १-१ रत्तीकी गोक्षिप्य  
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ  
देनेसे विषमज्वर, आध्मान, पाण्डु, जलोदर इनसबको यह नष्ट-  
करताहै । शुद्ध और कण्डका दाह तथा ग्लानि नहीं होती ।  
अत्यन्तभूखरूपेण ही और छाछकेसाथ भात देवे ॥ ४०६ ॥

### ४०७ मुखविरैचनरसः ( तृतीयः )

रसः क्षारलोहं गन्धकञ्च  
विमर्चापि जैपालतैलेन यामम् ।  
शुद्धञ्चभग्नज्वामिता स्याच्च माना  
सदामान्तरैची मुखप्राग्धिरैक ॥ १८२७ ॥  
वै वि, दो, रसायनं, विरेचने । दोशरानन्दे सुरातिरेक  
इतिनाम ।

भाषा—शुद्धपारा, चकहा, लोहभस्म, कुष्ठ, शुद्धगन्धक  
समभागलेकर बारीकघीस जमालगोटेके तैलेसे एकपहर मर्दनकर  
१-१ रत्तीकी मात्रा शुद्धमें लपेटकर देनेसे आमामान्तरैचन होताहै ॥

### ४०८ मुखतिरेकीरसः

गन्धानलज्जोपरसान्सभृदा  
न्वाकत्करान् स्फटिकटङ्गुणाद्यवान् ।  
सुरपैराफेनयुतान्समांशा-  
न्निवत्सनामाल्दिनसप्तकं तत् ॥ १८२८ ॥  
रसेन भृङ्गस्य विमाज्यं गुण्यं  
खरुणं विवृण्यार्धममुप्य चूर्णम् । -

अपकसम्बन्धिनि मृत्युनाञ्चि  
 वहुं प्रदद्यान्नवेकेन वा ॥ १८२९ ॥  
 नेपालकुष्ठस्य जलेन सार्धं  
 चिमाव्य कृत्वा घटिका प्रदेया ।  
 सुपकदोषे गजभाजि पथ्यं  
 दध्योदनं शर्करया चिमिश्रम् ॥ १८३० ॥  
 तापोद्ग्रेस्मिन्विदधीत शीत-  
 क्रियाः शुभा भोज्यविलासख्याः ।  
 यः पूजयेद्दीशमिन्श्च वैद्य-  
 स्तस्यज्वरं नाभिभयः कदाचित् ॥ १८३१ ॥  
 र. ल. विरचने ।

भाषा—शुद्धान्धक, चित्रक, त्रिकटु, शुद्धपारा, भंगरा,  
 मकलजरा, मरकटी, अतुल्यहारा, शुद्धप्ररिदा और अक्षय  
 १-१ भाग, शुद्धवज्रनाग २ भागलेकर ७ दिनतक भगरेके रससे  
 भावनादेकर सुलाकर रखोढ़े । इसमेंसे ३-३ रसीकीमात्रा  
 भगरेकेरस अथवा जलकेसायदेनेसे अपरिपक्वरोष, नवीन अथवा  
 पुरानाज्वर नष्टहोताहै । जमालगोटा और कुठके जलसे भावना-  
 देकर गोलीबनावे और ८ दिनबीतानेपर ज्वरकी परिपक्व  
 स्थामें इसकी १ गोली देकर दही और भातखानेको देवे । ऐस  
 सयोगसे ज्वर बड़ाज्यतो शीतोपचार करे । जो वैद्य ईश्वरभक्ति  
 परायणहोताहै उसका पत्रसे पराजय नहींहोता ॥ ४०८ ॥

### ४०९ सुगन्धमोदकः

भागद्वयं हरीतन्यास्तथा विभीतकस्य च ।  
 पलापञ्चनिभागानि चानरीधीजकान्यथ ॥ १८३२ ॥  
 कर्तुं प्रग्न्यभारुद्धी वेदभागान्श्च रेणुकाम् ।  
 वत्सनाभं जटामासीं सोमराजीञ्च नेत्रकम् ॥ १८३३ ॥  
 चन्दनं मागधीमूलं शुगुलुं पञ्चपञ्चरुम् ।  
 जातीफलं चागुरुञ्च चित्रमूलं त्रयांशकम् ॥ १८३४ ॥  
 सुगन्धि जीरकं कुष्ठं गुल्मगुल्मञ्च योजयेत् ।  
 यष्टीमधु द्विभागञ्च तत्समाञ्च घृणां शुभाम् ॥ १८३५ ॥  
 दिग्भागे पञ्चकिञ्चकं समुद्रशोषलोचनम् ।  
 दाहकं बीजमागेकं चाह्नौकं त्रिगुणं स्मृतम् ॥ १८३६ ॥  
 रसगन्धकमागेकं किञ्चिच्चन्द्रश्च भाषयेत् ।  
 एतत्समं भागचूर्णं चक्षुषूतञ्च कारयेत् ॥ १८३७ ॥  
 शुठेन मर्दयेद्धीमान्घटकं फोलमानरुम् ।  
 पक्वं भक्षयेत्प्राश्नस्तेलाम्लादीन्निवर्जयेत् ॥ १८३८ ॥  
 वातक्षयाश्मरीकुष्ठगुल्मजीर्णविस्त्रिक्ताः ।  
 अरुचि पाण्डुरोगश्च गण्डमालां भगन्दरम् ॥ १८३९ ॥  
 शीतज्वरं सन्निपातं घमनं विषमज्वरम् ।  
 उन्मादं ग्रहणीरोगं पीनसं मूलरुञ्चरुम् ॥ १८४० ॥  
 हिक्रां लृतां जुम्भणञ्च व्याघ्रां विस्फोटकादिकम् ।  
 सर्वरोगांश्च वै हन्ति चलवीर्यकरं परम् ॥ १८४१ ॥  
 रोगी चाप्यथवाऽरोगी योगिनां कल्पसाधनम् ।  
 सुगन्धमोदकं सोऽयमसहृथातगुणप्रदः ॥ १८४२ ॥

पूर्वांपाजितभाग्यो यो लभते परमोपधम् ।  
 सर्वग्रन्थार्थतत्त्वानि निष्पीड्यान्न्दकारकः ॥  
 रूपया सर्वलोकानां ज्ञानज्योतिरिमं व्यधात् ॥ १८४३ ॥

र. शा. रसायने ।

भाषा—हरे और बहेडा २-२ भाग, इलायची ५ भा,  
 केवाचकेचीज ३ भा, कचूर, गठिवन, भारती और रेणुका  
 ४-४ भाग, शुद्धवज्रनाग, जटामासी, वावची, सुगन्धवाला,  
 सफेदचन्दन, पिपलामूल और गुगल ५-५ भा, जायफल,  
 अगर, चित्रमूल ३-३ भा, कपूरकाचरी, कालाजीरा, कुठ,  
 गुल्म ? (आवली और लालकनेरकीज), मुलट्टी, बच २-२  
 भा, पञ्चकेशर १० भा, समुद्रशोष २ भा, देवदारुकेचीज १  
 भा, हींग ३ भा, शुद्ध पारा गन्धक और कपूर १-१ भाग  
 लेकर सबका कपड़छानचूर्णकर पारेगन्धकी नीलवर्णकजलीमें  
 मिलाय सबकेरवार शुद्धकी चाशनीमें डालकर ८-८ मासेकी  
 गोलिया बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली रोग अथवा  
 समयोचितानुपानकेसाय देनेसे वातक्षय, कुष्ठ, गुल्म, अजीर्ण,  
 हैजा, अरुचि, पाण्डु, गण्डमाला, भगन्दर, शीतज्वर, सन्निपात,  
 घमन, विषमज्वर, उन्माद, ग्रहणी, पीनस, मूलरुञ्च, ह्रिकी,  
 मकड़ीकाविष, जमाई, अर्जोका दृटना, विस्फोट, बल और  
 बौर्यका अभाव इनसबको यह नष्टकरताहै । तैल और खटाईका  
 पित्त्यापकरे ॥ ४०९ ॥

### ४१० सुदर्शनरसः ( प्रथमः )

सुर्जितं मर्दयेत्सुतं दध्ना घर्मं दिनतद्यधि ।  
 तच्छुष्कं निष्कपदं तु सिन्दूरं निष्कमानरुम् ॥ १८४४ ॥  
 यवक्षारस्य निष्फैकमम्लपर्णीनिशाद्रवे ।  
 दिनानां नितयं मयं लेहं मन्त्राज्यसंयुतम् ॥ १८४५ ॥  
 रसः सुदर्शनाखरोऽस्तीं ग्रहणीरोगशान्तिकृत् ।  
 यातकीकुसुमं शुण्ठीपाठाविल्वरसाज्जनैः ॥ १८४६ ॥  
 मुस्ता चातिचिपा तिका कुटजस्य फलस्यच ।  
 तुल्यं क्षौद्रं पिबेच्चानु कर्पं तण्डुलवारिणा ॥ १८४७ ॥  
 र को, र का, ग्रहणीरोगे ।

भाषा—शुद्धपारेको धूपमें बैठकर दहीकेमाय दिनभर घोट ।  
 सुखनेपर १॥ कर्पपारेमें ४-४ मासे रतसिन्दूर और यवक्षार  
 डालकर अम्लोनिथा और हल्दीके अम्लस्वरससे ३-३ दिन  
 मर्दनकर २-२ रसीकी मोलियें बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे  
 १-१ गोली मधु और पीकेसायलेकर घायकेफूल, सोंठ, पाठा,  
 घेलकीज, खौत, नागरमोथा, अतीस, कुटनी, कुरैयाकोछाल,  
 इन्द्रजव समभागका १ तोला चूर्ण लेकर चाबके धोवनकासाय  
 लेनेसे सङ्ग्रहणी नष्टहोतीहै ॥ ४१० ॥

### ४११ सुदर्शनरसः ( द्वितीय )

विद्वेषेकाणि च शिशुकुट्टिमिजैस्तैलेष्य पिस्तैस्यह-  
 माभ्याकारेसामृतं द्वियलियुक्तं बालुकायन्त्रगम् ।

मण्डूकोविपमुष्टिदिगुपयसा पक्वया ज्यहं स्वेदये-  
द्वारे लघुतस्सुदर्शनरसः स्यात्सधिपातादिपु १८४८  
दो०, सतिपाते ।

भाषा—ताम्रभस्म, शुद्ध पारा और घटनाम १-१ भाग,  
शुद्धगन्धक २ भाग लेकर नीलवर्णकम्लीकर सहजनकेरससे ३  
दिन, मालकांगनोकेरससे २ दिन और मच्छीकेरससे १ दिन  
मर्दनकर आतशीशीमीमें भरके ३ दिनको आचदे । स्वाह्मशी-  
तलोनेपर मण्डूकपर्णी, कुचिला और सहजनकेरसोंसे ३-३  
दिन स्वेदनकर १-१ रत्तीरी गोल्या बनाकर रखोड़े । इन-  
मेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोपितानुगानकेपावदेनेसे  
समिपात नष्टहोताहै ॥ ४११ ॥

### ४१२ सुदर्शनरसः ( तृतीयः )

रसस्य भाग एकः स्याद्रन्ध्ररस्य चतुर्दश ।  
मर्दयेन्मासमेकन्तु सहदेव्या रसेद्वयम् ॥ १८४९ ॥  
धिपात् ज्यैशेष्ठ गोजिह्वारसेः षोडशभायनाः ।  
तालकांशो विंशः कृष्णामण्डोरस्यः पञ्चदशापि च १८५०  
भागमेकं सोममलं पञ्चाशद्भृङ्गजे रसेः ।  
टङ्कणस्य त्रयो भागा लिङ्गयाः पञ्चसभायनाः ॥ १८५१ ॥  
हिडिम्ब्याखिनीलकण्ठीरसे द्वादश भायनाः ।  
जैपालात्सप्त भागाश्च शिञ्जेनैत्रिभायनाः ॥ १८५२ ॥  
आकल्लुकवचामार्जूरुणामरिचनगरम् ।  
जीरके च लङ्गहानि एकैकांशानि सर्वतः ॥ १८५३ ॥  
धूर्तच्छत्ररसेर्माषं सप्तविंशतिभायितम् ।  
छायाशुष्काश्च शुटिकां गुजामाम्राश्च कारयेत् १८५४  
अयं सुदर्शनो नाम रसः सर्वगदापहः ।  
तत्सद्भोगानुपानेन विशोपाज्यरजितरः ॥ १८५५ ॥  
र का, ज्वराडधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग और गन्धक १४ भागलेकर  
नीलवर्णकम्लीकर १ महीनेतक सहदेवीकेरससे मर्दनकर सोभाग  
शुद्धघटनाममिलाय घटनामसेतिगुनी जगलीगोमीकेरससे १५  
भावनार् देवे । फिर १ भाग शुद्धहिताल मिलाकर छपेवहों-  
हलेकेरसकी १५ भावनार् देवर १ भाग शुद्धनीलमलितावे और  
भंगेकेरसकी ५० भावनार् देवे । फिर ३ भाग सुदाग मिलाय  
शिवलिपीकेरसकी ६ भावनार् देकर ३ भाग शुद्धनैसिल मिला-  
कर नीलकण्ठीकेरसकी १२ भावनार् देवे । इनकेबाद ७ भाग  
शुद्ध जमालगोडा मिलाकर द्वादशके रगही ३ भावनार् देकर  
अच्छलरा, वय, भारती, पीरल, मरिच, सोंठ, जीरा, छत्र  
१-१ भाग डालकर धूर्तकेरसोकेरसकी २० भावनार् देकर  
१-१ रत्तीकी गोल्या बनाय छायाशुष्ककर रखोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली ताम्रोगद्वानुगानकेपावदेनेसे समस्तप्राणोंको यह  
नष्टकरताहै ॥ ४१२ ॥

### ४१३ सुधाकररसः ( प्रथमः )

सिन्दुरास्रक्षेमानि मीकिकं त्रिफलात्मसा ।  
दातपुत्रीरसेनापि मर्दयेत्सप्तसप्तधा ॥ १८५६ ॥

ततो रक्तिमितां कुर्याद्वर्ति छायाविशोपिताम् ।  
एकैकां योजयेत्तान्तु ययादोपानुपानतः ॥ १८५७ ॥  
रसः सुधाकरः सोऽयं हन्ति दाहं यलाधिकम् ।  
प्रमेहानपि वातात्मं यलशुष्ककरः परः ॥ १८५८ ॥

आ. वि, दाहाधिकारे ।

भाषा—रससिन्दूर, अश्रक, सुवर्ण और मोती इनकीभूमें  
समभागलेकर त्रिफला और दातावरके स्वरसोंसे ७-७ भावनार्  
देकर १-१ रत्तीकी गोल्या बनाकर छायाशुष्ककर रखोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुगानकेपाव देनेसे दाह, प्रमेह,  
वातरक्त, बल और शुष्करीहानिको यह नष्टकरताहै ॥ ४१३ ॥

### ४१४ सुधाकररसः ( द्वितीयः )

सारं साध्नं रसं तालं स्वर्णं मीकिकयिद्रुमम् ।  
अम्लनेतलजम्भीररसे मर्दनमाचरेत् ॥ १८५९ ॥  
शर्करापनयनीताभ्यां लीढं शोषक्षयापहम् ।  
करोति दिवसांस्तीघ्रं सर्वाहारक्षमाऽनलम् ॥ १८६० ॥  
ददाति परमं पुंसं यलं नागयलोपमम् ।  
परमं घृष्यमायुष्यं नेत्र्यश्च मुक्तदाहपटम् ॥  
सुधाकर इति प्यातो रसः परममुल्लभः ॥ १८६१ ॥  
वा, पाजीकरणे ।

भाषा—रजत, ताम्र, शुद्ध पारा, हिरताल, सुवर्ण, मोती,  
प्रवाल इनकीभूमें समभागलेकर अम्लनेत्र और जमीरीकेरससे  
१-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोल्या बनाकर रखोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली शर्कर और मच्छननेगावदेनेसे ३ दिनमें  
यह ज्वरामिको प्रकटकरताहै । घात, आयु और नेत्रोंकी-  
ज्योतिषो बढ़ाताहै ॥ ४१४ ॥

### ४१५ सुधानिधिरसः ( प्रथमः )

गन्धं सतं मासिकं लोहचूर्णं  
सर्वं घृष्टं त्रिफलेनोदयेन ।  
लोहि पात्रे गोपय.रपञ्च कृत्वा  
रात्रौ द्वादशकपितप्रसारयेत् ॥ १८६२ ॥

यो. र, नि. र, ना. वि, र. चि., वै. चि, रघि, र. प्र, र.  
सं, र. का., च, यो. म., र. सि, र. की, र. वं, रसायनं, वै  
क., र. छ, ने सा, र. क, र. गु, र. शी., वै. र., चि. सा.,  
रक्षयित्वा ।

टि०—ना वि., र. की, वै सा एतु दिवन्मुना रिद्रा धूर्तवने  
पान्ता पुनरी रिद्रा सैहारे बरानीर सेमवहो वक्ता गुणधनं  
समुष्टिम् । योडाकन्दे मासिक निरकार वारिकाकी र्मुद्रा धूर्ते  
वक् विषय बतमान मप्राभाष्यां दानं विरिणम् । एतद्गुणधनं वा  
माषीचलनराकने वैचि विरिणे विरिण । यस्य निरद्वयान्धे  
गन्धदादिद्रावन्निनिन रविद्रात्तत्पदवत्पद्विनि पुन वपने  
करोऽप्यभिन्नमधेनैवगुणमिदं विरिण वक्ते विरिणेनैव, वरपे  
इत्या वैषय्युधि-वैकल्प वदन् वदर वदः प्रविशन् गतिः ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, पारा, सोन-नाली, शेरमल एव  
समभागलेकर त्रिफलाकेरससे छोड़े के पानने नीलाङ्गककी

वनाय त्रिफलाका क्षाय मिलाकर दिनभर रखाओ। रात्रिको दूधमें मिलाकर पीनेसे रक्पित शान्त होताहै ॥ ४१५ ॥

### ४१६ सुधानिधिरसः ( द्वितीयः )

धान्यकं घालकं मुस्तं चिब्यं सिन्धुं सपांशकम् ।  
मण्डूरं द्विगुणं दत्त्वा भावनास्तु चतुर्दश ॥ १८६३ ॥  
गोमूत्रं केशराजश्च शोधयन्नी भृङ्गराजकः ।  
निर्गुण्डो भेरुपर्णी च रसेरपां विभाव्य च ॥ १८६४ ॥  
माषद्वयं प्रयुजीत तत्रेण सह बुद्धिमान् ।  
केशराजस्यै चापि भोजनं लघ्वं चिना ॥ १८६५ ॥  
तत्रेण भोजयेदक्षं पाने तत्राञ्च दापयेत् ।  
कामलाज्वरशोधयन्नी घट्टिसन्दीपनः परः ॥  
प्रहृष्टीप्राण्डुरोरागः स्मर्यन्मन्त्रिप्रियाङ्गलः ॥ १८६६ ॥

मै. र., बोधे

भाषा—धनियां, सुगन्धबाला, नागरमोया, सोंठ, सेंधा-  
नमक, सब समभागलेकर सबसे दूना मण्डूर मिलाकर गोमूत्र,  
कालामोया, पुनर्ना, भंगरा, निर्गुण्डो, मण्डूरपर्णी इनके स्वरस  
तथा छाछकी २-२ भावनाएं देकर २-२ मासेकी गोलियाँ  
बनाकर रखाओ। इनमेंसे १-१ गोली छाछ अथवा कालेमोयेके  
रसेसे देवे। नमकका परित्यागकरे और तनकेसाथ जन देवे।  
इससेसेवनसे कामला, ज्वर, शोथ, मन्दाग्नि, महणी, पाण्डु वेसन  
नष्टहोताहै ॥ ४१६ ॥

### ४१७ सुधानिधिरसः ( तृतीयः )

गन्धकं पारदं चाक्षमेलाप्रन्थिककेशरम् ।  
समभागयुतं खट्वे जीरकेण च मर्दितम् ॥ १८६७ ॥  
काचदृष्यां निवेदयाथ डियामं तु गुणाग्निना ।  
स्याद्भक्षीतलमुद्धृत्य द्विगुणं भक्षयेत्सदा ॥  
शर्करामधुसंयुक्तमम्लपित्तविकारनुत् ॥ १८६८ ॥

व रा., वै. चि, अन्तर्पिते ।

भाषा—शुद्धगन्धक, पारा, अन्नकमस, इलायची, गठिवन,  
नागेशर, सब समभागलेकर नीलवर्णकमलीकर जीरिसेस्वरसे  
एकदिन मर्दनकर सुखाकर ३-४ कपड़मिट्टीदीर्घुई आतशीकीक्षीमे  
भर दोपहर गुणामिमें पकावे। स्याद्भक्षीतलमुद्धृत्य द्विगुण  
रखाओ। इसमेंसे ३-३ रती और मधुकेसाथदेनेसे अम्ल  
पित्त नष्टहोताहै ॥ ४१७ ॥

### ४१८ सुधानिधिरसः ( चतुर्थः )

रसगन्धौ समौ शुद्धौ दन्तीकायेन भावयेत् ।  
जम्भीरस्य रसेनेव हार्द्रकस्य रसेन च ॥ १८६९ ॥  
मातुलङ्गस्य तोयेन तस्य मज्जारसेन च ।  
पश्चाद्विशोष्य सर्वास्ताण्डुलञ्चावचारयेत् ॥ १८७० ॥  
देवदुर्लभं वाणमितं रसपादं मृताऽऽशुतम् ।  
माषमात्रञ्च तत्सर्वं नागरेण गुडेन वा ॥ १८७१ ॥  
सर्वांरोचकशुलार्तिं सामवाते सुदारुणम् ।

विस्चूर्नी चाग्निमान्यञ्च भक्तद्वेषञ्च दाहणम् ॥  
रसोऽयं वारयत्याशु केसरी करिणं यथा ॥ १८७२ ॥  
घ, र. च, र. सं., र क, र. सु, भै र., अरोचके । भै र.  
रसकेसरतीति नाम ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धकी नीलवर्णकमली  
कर दन्ती, जंभीरी, अक्षर, विजोरा, विजोरेवेदीजोंकीमन्त्रा-  
इनके ब्रवोंकी १-१ भावनादेकर भुगुहागा और लौंग ५-५  
भाग डालकर पारदसे चतुर्थांश सोमलसम मिलाकर रखाओ।  
इसमेंसे उदरदावार माशा सोंठ अथवा गुडकेसाथ देनेसे अक्षि,  
शूल, भयङ्कर आमवात, हैजा, मन्दाग्नि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥

### ४१९ सुधापिप्पलीयोगः

चण्डलायाः प्रथमेकं स्तुहीश्वरेण भावयेत् ।  
एकविंशतिधा पूर्णं तद्वर्द्धं मलमायसम् ॥ १८७३ ॥  
तद्वर्द्धं दग्धं क्षिप्त्वा त्रयमेकत्र भावयेत् ।  
गोत्रिहाशात्मलीक्षीरगोक्षुरुरसेः पृथक् ॥ १८७४ ॥  
श्लेष्मण्युर्ध्वं पुनः कृत्वा मानां युञ्ज्यायथाश्रमम् ।  
क्षीरञ्चातुर्विंशत्यं मधुकेन समायुतम् ॥ १८७५ ॥  
सुधापिप्पलीको योगो जीर्णज्वरमपीहति ।  
मेदो दोषोदरं शोधयत्यक्षयकरः परः ॥  
क्षीणान्धातुत्वर्धयति श्लोकश्चात्रैयस्वरिणा ॥ १८७६ ॥  
र. प, जीर्णज्वरे ।

भाषा—एकस्वपीपलके चूर्णको दूधरकेदूधमें २१ भाग-  
नाए देकर मण्डूरमस ८ पल और शुद्धक्षीरगिरि ४ पल मिला-  
कर १-२ दिन शुष्कमर्दनकर वनगोभी, सेमल, दूध, गोखल,  
ईख, इनके यथासम्भव स्वरस अथवा कायोंसे १-१ भावना  
देकर १-१ मासेकी गोलियें बनाकर रखाओ। इनमेंसे १-१  
गोली मुलहठीडालकर पकाएदूधकेसाथलेनेसे जीर्णज्वर, मेद,  
शोथ, क्षय, धातुक्षीणता इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४१९ ॥

### ४२० सुधासाररसः

पृथक्पलिकगन्धाश्मस्ततसञ्जातरुज्जलीम् ।  
प्रद्रव्य निक्षिपेद्व्योम पलिकं गतचन्द्रिकम् ॥ १८७७ ॥  
काष्ठेनालोड्य तत्सर्वं क्षिपेत्कुटजपत्रके ।  
पुनः सञ्चर्य यत्नेन भावयेत्तदनन्तरम् ॥ १८७८ ॥  
बालतिन्दुफलद्रावेः क्षीरे रौद्रमरुस्तथा ।  
अरुलुप्तप्रसेक्षापि दुग्धनीस्वरसेस्तथा ॥ १८७९ ॥  
पुटपकस्य बालस्य दाडिमस्य रसेः शुभेः ।  
रुण्णकाम्बोजिकाशूलरसेः कुटजवल्कलेः ॥ १८८० ॥  
तुल्यांशं विषगन्धारीचूर्णं द्विपलिकं क्षिपेत् ।  
मुस्तावत्सकदीप्याग्नि मोचसारं सजीरकम् ॥ १८८१ ॥  
वत्सनामञ्च कर्पाशं प्रत्येकं तत्र निक्षिपेत् ।  
विबुधैर्भावयेद्भूयः शुण्डीकायेन सतथा ॥ १८८२ ॥  
इयं सिद्धो रसः पिष्टः करण्डे विनिवेशितः ।  
सुधासार इति ख्यातः सुधासारसमद्युतिः ॥ १८८३ ॥

दीपनः पाचनो ग्राही हृद्यो रुचिररस्तथा ।  
 दोषत्रयातिसारश्च दुर्जयं भेषजान्तरेः ॥ १८८४ ॥  
 आमश्चैवामरक्तश्च ज्वरातीसारमेव च ।  
 सातिसारां विसृज्यश्च प्रतिप्राति तत्क्षणतः ॥ १८८५ ॥  
 मान्यमानव्यतिरिक्तैरिव पुण्यफलोदयम् ।  
 पिष्टविश्वान्द्रक्तेन विधाय खलु चक्रिकाया ॥ १८८६ ॥  
 निक्षिपेत्स्वेदनीयान् पक्वान्द्रव्यटिकावधि ।  
 आकृत्य तज्जलेनैव सम्प्रमयं हरेद्रसम् ॥ १८८७ ॥  
 सुधासाररसं तत्र क्षिप्वा धान्यरुसम्मितम् ।  
 पूर्वोदितेषु रोगेषु प्रददीत भिषग्वरः ॥ १८८८ ॥  
 गौतमेणाजदध्वा वा पथ्यं देयं हितं मितम् ।  
 घालरम्भाफलं गुर्वाफलं विल्वफलं तथा ॥  
 आम्रपेशी च मधुरं वृन्तारुश्च प्रशस्यते ॥ १८८९ ॥  
 सर्वातिसारं ग्रहणीश्च हिकां  
 मन्दाग्निमानाहमरोचकश्च ।  
 निहन्ति सद्यो विहितामपाके  
 ह्रिप्रप्रयोगेण रसोत्तमोऽयम् ॥ १८९० ॥  
 १ र स, २ को, २ सु, २ र कौ, अतिसारः ।

भाषा—१-१ पल शुद्ध गन्धक और पारेकी नीलवर्ण कजली-  
 कर घीपुतीहुईकड़ाहीमें घेरकेकोयलोपर गलाकर १ पल निश्चन्द्र  
 अभ्रकभस्म बालकर लकड़ीसे चलाकर एकजीवकरके गोबरपर  
 रखेहुए डूँयेकोपलौपर ढालकर पण्टी बनावे । स्वाहसीतल  
 होनेपर निकालकर तंदूरेकोमलफल, गुलकाम्बू, सोनापाठा  
 बीछाल, दूधी, अनारका पुटपाक, फालीकम्बोकीजड़, कुँ-  
 माकी छाल इनके यथासम्भव स्वरस अथवा जायोंसे १-१  
 भावनावेकर सोंठ और कुकुराँधेरीजड़काचूण १-१ पल मिलावे ।  
 फिर नागरमोया, इन्द्रव, अजवाइन, चित्रक, मोचरस, जीरा  
 और शुद्धवध्नाग १-१ कर्प मिलाकर सोंठकेकाडेसे ॥ भावनाए  
 देकर ३-३ रत्तीसीगोलियें बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१  
 गोली सोंठ और नागरमोयेके पुटपाककेसाथ देनेसे मन्दाग्नि,  
 हृदोग, अरुचि, योगान्तरसे दुःसाध्य त्रिदोषातिसार, आमा  
 तिसार, ज्वरातिशय, अतिसारयुक्तविषुचिका, ग्रहणी, हिचकी,  
 आनाह, इनसबको यह नष्टकरताहै । बालक और फुल्लेको घनिये  
 केबारावर मात्रा देता । गायकेक्त अथवा दहीकेसाथ पच्यदेता ।  
 कषा बेला और बेल, सुपारी, अमचूर, मुल्हठी, वेंगन ये सब  
 पच्यहैं ॥ ४२० ॥

### ४२१ सुप्तवातारिरसः

पिचुमात्राणि शुद्धानि धीजानि विपत्तिन्दुतः ।  
 बलिसूती विडङ्गश्च यमानी ज्वपणं शटी ॥ १८९१ ॥  
 पलाशदीजं निर्गुण्डी मजिष्ठा काकमाचिका ।  
 शङ्खपुष्पश्रिसुरसे रसेरासां विभावयेत् ॥ १८९२ ॥  
 यल्लमानां वटीं कृत्वा निम्नकल्केन दापयेत् ।  
 मजिष्ठादिप्रयोगेण कौन्तीकायेन वा बुधः ॥ १८९३ ॥

निहन्ति सुप्तिवातार्तिं ग्रहणीक्षयकामलाः ।  
 सूतोन्मादमपस्मारमपतन्त्रकमुद्धतम् ॥ १८९४ ॥

वृ क, भातन्याधौ ।

भाषा—शुद्ध कुचिला, गन्धक और पारा, विडङ्ग, अजवा-  
 इन, त्रिफल कचूर, पञ्चशकेजीव, निर्गुण्डी, मजीठ, मकोय,  
 येसव १-१ कर्प लेसर बारीकचूर्णकर शङ्खपुष्पी, चित्रक और  
 तुलसीके स्वरसे १-१ भावना देकर ३-३ रत्तीकी गोलियें  
 बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली निम्बकक, मजिष्ठादि-  
 वाय अथवा रेणुकाके वायकेसाथ देनेसे सुप्तवात, ग्रहणी, क्षय,  
 कामला, सूतोन्माद, अपस्मार, अपतन्त्रक इनसबको यह  
 नष्टकरताहै ॥ ४२१ ॥

### ४२२ सुरतानन्दरसः

सूर्ति कृष्णाम्रकस्य मृगमदसहितां हिङ्गुलश्चन्द्रकश्च,  
 जातीसस्येन्द्रपुष्पं कनकदलपुतं मौक्तिकं तुल्यभागम् ।  
 सम्मयं नागवल्लीदलरससहितं घनमेकं भिषग्भि-  
 मांश गुञ्जाह्वयी च घृतमधुसहिता सेवनीया सदैव ॥  
 क्षिग्धान्न भोजयित्वा घृतमधुसहितं धातुपुष्टिप्रदञ्च,  
 सद्यो यश्मन्मेतत्सकलदग्धर कामवृद्धिं करोति ।  
 मत्तप्रोढाङ्गनानां निधुनसमये कामगर्वापहारी,  
 गुञ्जास्रवृद्धिकारी सकलरसवरः सौरतानन्द एव ॥  
 वृद्धोऽशीतिरुभयति वृद्धयुवा दीर्घकान्ती विधत्ते,  
 राक्षसं कामान्धकारी सुरतसुखविधौ  
 कामिनीनाञ्च तद्वत् ॥ १८९६ ॥

रसायनस्य, बाजीकरणे ।

भाषा—अभ्रकभस्म, वस्तूरी, गिंगरिफ, कपूर, जाबिनी-  
 लौब, सोबेकेवर्क, मोती सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पान-  
 केरसे १ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रख-  
 ओड़े । इनमेंसे १-१ गोली घृत और मधुकेसाथ लेकर क्षिग्ध  
 भोजनकरनेसे धातुसौण्ड्या, राशयश्म, दण्डव, रक्तोप इन-  
 सबको यह नष्टकरताहै ॥ ४२२ ॥

### ४२३ सुरसुन्दरीवटी ( प्रथमा )

अध्रकं माक्षिकं वज्रं कान्तं हेम समं समम् ।  
 सर्वाणि समभागानि सूतयुक्तानि कारयेत् ॥ १८९७ ॥  
 गोलरुञ्च ततः कृत्वा पक्वं निचुलवारिणा ।  
 ततस्तं पुटपाकेन स्वस्मयित्वा प्रयत्नात् ॥ १८९८ ॥  
 पात्रे चास्या विलिप्यापि घनरस्या गुट्टिकोत्तमा ।  
 स्वस्मयेच्छलसङ्घात विपरोगाश्च नाशयेत् ॥ १८९९ ॥  
 अव्येनैकेन घनरस्या घयः स्वस्मं करोति च ।  
 वलीपलितहन्त्रीयं गुट्टिका सुरसुन्दरी ॥ १९०० ॥

शै र, र. र, घ, र च, बाजीकरणे ।

भाषा—अध्रक, सोनायाची, हीरा, कान्तलोह, सुवर्ण इन  
 बीसमें और अक्षिप्याची पारा समभागलेकर १ दिन शुष्कमर्द  
 नकर घुसुदकलेकरसे १-२ दिन मर्दनकर गोलावनाय पानोंमें

लपेटकर मूधस्पृशीजांचदे । ऐसे जतक पावा वंध न जाय  
ततक आंचे देतारहे । इसको केवल अथवा किमीचीजमें कव-  
लितकर सुखमें रखनेसे शस्त्रसङ्घात और विषका आक्रमण नहीं  
होता । एकनपैतक लगातार मुँहमें रखनेसे अवस्थाको स्तब्धकर  
वलीपलितको नष्टकरतीहै ॥ ४२३ ॥

### ४२४ सुरसुन्दरीवटी ( द्वितीया )

स्वर्णमेकं कान्तमेकं पञ्चतारं द्विपारदम् ।  
विभागं व्योमसरवं स्यात्पद्मार्गं शुल्बचूर्णकम् ॥ १९०१ ॥  
सर्वमेतत्कृतं सूक्ष्मं तसखल्वे दिनत्रयम् ।  
मर्दयेदम्बलवर्गेण दोलायन्त्रे सकाञ्जिके ॥ १९०२ ॥  
तद्रोले त्रिदिनं पक्वं गुटिका सुरसुन्दरी ।  
जायते धारिता घर्त्रे घर्गाम्भृत्युजरापहा ॥  
भूताडयदमूलञ्च कर्प क्षीरेः पिबेदनु ॥ १९०३ ॥

र. खं., र. का, रसायने ।

भाषा—स्वर्ण और कान्तलोह १-१ भाग, रजत ५ भाग.,  
शुद्धपारा २ भाग, अन्नकसत्त ३ भाग, शुद्धतांबेकाचुरा ६ भाग  
लेकर सबको इकट्ठा मिलाय तसखल्वेमें ३ दिन अम्बलवर्गकेसाय  
मर्दनकर गोलाबनाय ४ तहकपड़ेमें बांधकर ३ दिन काजीमें स्वेद-  
नकरे । इसको १ नपैतक मुपमें रखनेसे बुढ़ापे और मृत्युको यह  
दूरकरतीहै । कालीमुसली और पापाणमेदकाचूर्ण १-१ कर्प  
दूधकेसाय लेवे ॥ ४२४ ॥

### ४२५ सुरुषोरसः

रसं गन्धकं द्रुपणं नागपुष्पं  
घरायुकमादौ घराजीवनेन ।  
सुमर्यं नगे भांचितं भृङ्गनीरै-  
र्वटी मापमाना विधेया भिषग्भिः ॥ १९०४ ॥  
जपेदग्निमान्यं कुरङ्गाभ्युतापं  
कफं घातमुन्मत्तमायं क्षणेन ।  
समस्तेन्दुरुशुब्दमक्षिप्रवाहं  
स उक्तो रसाग्नौ सुरुपेतिनामा ॥ १९०५ ॥

र. का., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, त्रिकटु, नागकेशर, बिफला  
सब समभागलेकर घारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकम्बलीमें  
मिलाय त्रिफला और भंगरेकेससे ८-८ दिन मर्दनकर १-१  
माशेकी गोलीय बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचि-  
तानुगान्तकेसायदेनेसे मन्दाग्नि, वातऔर कफज्वर, उन्माद, क्षय,  
नेत्ररोग इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ४२५ ॥

### ४२६ सुरेन्द्राभ्रवटी

अग्रं सहस्रशो दग्धं रसं दरदसम्भवम् ।  
केशराजाम्भसा शुद्धं गन्धकं हीरकस्तथा ॥ १९०६ ॥  
चिद्रुमं मौक्तिकं हेम रौप्यं माक्षिकमेव च ।  
कान्तलोहञ्च सम्मर्यं विधिना बह्विवारिणा ॥ १९०७ ॥

चक्षुमात्रां वटीं कृत्वा छायायां परिशोषयेत् ।  
एकैकां योजयेत्प्राज्ञो यथादोषानुपानतः ॥ १९०८ ॥  
ह्लोमरोगविनाशाय बहेः सन्धुक्षणाया च ।  
न सोऽस्ति रोगो लोकेऽस्मिन्मरियं न विनाशयेत् ॥  
यो यः समाश्रयेद्द्वयाधिः क्लोमितं तमवेक्ष्य च ।  
क्रियां संसाधयेद्द्वयो यथादोषं यथाबलम् ॥ १९१० ॥  
अनुप्राण्यन्नपानानि ह्लोमामयनिपीडितः ।  
सेवेतोप्राणि सर्वाणि यत्नतः परियर्जयेत् ॥ १९११ ॥  
भै. र., ह्लोमरोगे ।

भाषा—सहस्रपुटीअन्नक, शुद्धपारा, भंगरेके रसमें शुद्धक्रिया-  
हुआगन्धक, हीरा, प्रवाल, मोती, मुवर्ग, रजत, सोनामाषी,  
कान्तलोह इनकीमर्सें सब समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण-  
कम्बलीमें मिलाय चिद्रुमकेस्त्वस्त अथवा हाथसे १-१ दिन  
मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलीय बनाकर छायाशुष्ककर रखजोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली उचितानुगान्तकेसाय देनेसे ह्लोमरोग और  
मन्दाग्निको यह नष्टकरतीहै । ह्लोमरोगीको सौम्य अन्नका सेवन  
करावे । तीक्ष्णवस्तुओंसे परहेजकरे ॥ ४२६ ॥

### ४२७ सुलोचनाभ्रम्

पलं सुजीर्णं गगनन्तु घञ्जकं  
तेजोवती कोलमुशीरदाडिमम् ।  
धात्र्यम्बलोणी रुचकं पृथग्निद्रा-  
पलोम्मितं मर्दितमेव सेवितम् ॥ १९१२ ॥  
अरोचकं घातकफत्रिदोषजं  
पित्तोद्भवं गन्धसमुद्भवं नृणाम् ।  
कातं स्वराघातमुद्रोप्रहं रुजं  
भ्वातं यलासञ्च यकृद्गन्धरम् ॥ १९१३ ॥  
ग्रीहाग्निमान्यं भ्रवधुं समीरणं  
मेहं भृशं कुष्ठमसृग्दरं कृमीन् ।  
शूलाप्लवित्तक्षयरोगमुद्धतं  
सरकपित्तं वमिदाहमश्मरीम् ।  
निहन्ति चाशींसि सुलोचनाभ्रकं  
यत्प्रदं वृण्यतमं रसायनम् ॥ १९१४ ॥

र. सं., घ., र. घु., अरोचके ।

भाषा—निद्रव्यभ्रात्रकमत्स्य १ पल, तेजबलक्रीडाल, बेर,  
खद्य, अनाद, आचले, अम्बोलियां और संबल १०-१० पल  
लेकर घारीक चूर्णकर एकदिन शुष्कमर्दनकर रखजोड़े । इसमेंसे  
३-३ मासे समय अथवा रोगोचितानुगान्तकेसायदेनेसे अरुचि,  
त्रिदोषज-पित्तज और गन्धधूमन कास, स्वरमग्न, छातीका  
जकड़ना, श्वास, कफ, यकृद्, भगन्दर, शीघ्रा, मन्दाग्नि, शोथ,  
वातरोग, प्रमेद, कुष्ठ, रक्तप्रदर, क्रिमि, शूल, अम्बलपित्त,  
क्षय, रक्तपित्त, वमन, दाह, पथरी, बवासीर, इनसबको यह  
नष्टकरतीहै ॥ ४२७ ॥

## ४२८ सुवर्चलाद्यं लोहम्

सुवर्चला ध्याग्रनखं चित्रकं कटुरोहिणी ।

चन्यश्च देवकाष्ठश्च दीप्यक लोहमेव च ॥

शोध पाण्डुं तथा कासमुद्राणि निहन्ति च ॥ १९१५ ॥

र. सं, घ, र सु, र चि, शोषाधिकारे ।

भाषा—सञ्जी, व्याग्रनख, चित्रक, कुटकी, चन्य, देव-  
दाह, अजवाइन और लोहमम्म समभागलेकर बारीकचूर्णकर रख-  
छोड़े । इसमेंसे १-१ माशा समय अथवा रोगोन्नितापानके  
साथ देनेसे शोथ, पाण्डु, कास और उदरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥

## ४२९ सुवर्णपत्ररसः

नारं सूतं गन्धकं घटसनाभं

मघं धारा कन्यकाया विनैरुम् ।

गोलं कृत्वा निक्षिपेन्नाण्डमये

संछाद्यै ध्रावकेणापि सन्यक्त ॥ १९१६ ॥

मुद्रां दत्त्वा भूतिस्तामुद्रकेण

यामं चैकं मन्दवह्नी यिपाच्य ।

यल्लुञ्जैर्भक्षितं क्षौद्रयुक्तं

यश्माणं तन्नाशयेद्धि प्रसह्य ॥ १९१७ ॥

र प्र सु, यश्मणि ।

टि०—सुवर्णांशुमात्रेण सुवर्णपत्रेण नामवरणप्रयोगेन न क्षयत इति  
विद्वद्भिन्नवचनीयम् ।

भाषा—नागमल्ल, शुद्ध पारा, गन्धक और बछनाग, सम  
भागलेकर नीलवर्णकजलीकर धीजुआरेके रससे एकदिन मर्दन  
कर गोलाबनाय धारासम्पुटमें बन्दकर ४-५ कपहमिठी देकर  
रक्षण अथवा मलमयकमें रख एकपहरकी मन्दाग्निसे फकावे ।  
स्वाह्नशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती  
बाहदकेसायलेनेसे राज्यक्षम नष्टहोताहै ॥ ४२९ ॥

## ४३० सुवर्णपर्वटी ( प्रथमा )

शुद्धं सुवर्णदलमष्टगुणेन शुद्धसूतेन-

पिण्डितमथो यल्लुभागभाजि ।

गन्धे द्रुते यद्वरहृदिषु लोहण्ये दस्य-

विलोच्य लघुलोहशलाकया तत् ॥ १९१८ ॥

मन्दं निरस्य सुरभीमलमण्डलस्थं

रम्भादले तदुपरि प्रणिधाय चान्यत् ।

रम्भादलं लघु नियन्य तदाददीत

शीतं सुवर्णरसपेटिकाभिधानम् ॥ १९१९ ॥

पित्तोत्थलेषु सितया तुगयाऽथ याते

श्रेष्ठमोव्ये किल तुगामधुपिप्लीभिः ।

क्षीणे विरेकिणि च शोपिणि मन्दवह्नी

पाण्डो प्रमेहिणि चिरञ्ज्वरिणि ग्रहण्याम् ॥

वृद्धे शिरो सुखिनि राशि तदेवमायै

भैषज्यमेतदुदितं हितमामयघ्नम् ॥ १९२० ॥

वे क, र च, रसायनस, नि, र, यो, र, व यो, व, रसाय-

नसार, र सु, क्षयाधिकारे ।

टि०—निष्पटुरत्नाकरे पिण्डितमथो इत्यत्र पिण्डितमय इति पाठ  
प्रकल्प्य पारदासमभागयोऽपि विनियोजितम् । परन्तु बहुषु ग्रन्थेषु अथो  
इत्यत्र लामाचत्तमादादेवेति प्रतिमाति । विष्व अथोग्रहणे अयसि राधके  
वा भागस्थानवस्था दुर्गारा स्वाद, अनुपानेन सूतसमप्रकल्पन स्वग  
तेर्गतिरिति न सा भद्रा भेषीरितिक् । रसायनस, वै वि, र च, र,  
कौ, ये, यो र, व यो, त, र स, वै क, मै र, र सु, र क, नि  
र, एषु ग्रन्थेषु चतुर्षासुवर्णदानेनाऽपि एक पाठ प्रकल्पितोऽस्ति ।  
अत्र सुवर्णदाने कामचारी बोध्य । पाठान्तर ॥ गोतापित्तव्यक्तम् । अथ  
पाठे कुत्रचित्पारदादिगुण गन्धक नियुज्य कासे निवेगो कृतोऽस्ति ।

भाषा—आठमाग शुद्धपारेमें एकभाग सोनेकेवर्क १-१ करके  
मिलावे । फिर १-२ पहर घोटकर पिंडी बननेपर नीचूकारस  
डालकर मर्दनकरे । रस कालहोनेपर निकालदे, ऐसे जबतक  
कालिमा निकलतीरहे तबतककरे । पर इसपातका ध्यान रहे कि  
नीचूकरसवेसाय सुवर्णके वर्कका भाग न निरुलजाय । निकाल-  
हुआ मादमपड़ेतो जलाकर शुद्धकरले । पारोको कपड़ेसे अच्छी-  
तरह साफकरले पानीका भाग न रहे । फिर अठगुने शुद्धान्धक  
को धीपुतीहुई बहाहीमें डालकर बरेके कोयलोंपर गलावे ।  
गलानेपर पारदपिंडीको डालकर घोटें । एकजीबहोनेपर ताजे-  
गोबरपर रक्खेहुए ताजेकेलेके पत्तोंपर डालकर इसरेकेलेके पत्तोंसे  
धवाकर गोबरसे ढकदे । स्वाह्नशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े ।  
इसमेंसे १-१ रत्तीकी मात्रा कमबुद्धभागसे पित्ताधिक्यमें शक्कर,  
वाताधिक्यमें बसलोचन, बपाधिक्यमें बसलोचन, मधु और  
पीपलकेसाय देवे । इससे क्षीणता, दहशकी अनियमितता, शोथ  
मन्दाग्नि, पाण्डु, प्रमेह, जीर्णज्वर और ग्रहणी मष्टहोतीहै ।  
इद, बालकऔर सुखी आदमीकेलिये १-१ रत्तीमात्रा काफीहै ॥

## ४३१ सुवर्णपर्वटी ( द्वितीया )

सुवर्णतारताम्राभ्रसस्यलोहान्मृतं युता ।

पादांशस्तत्कृता ख्याता पर्वटी कथिता युधै ॥ १९२१ ॥

शुद्धगन्धकरुर्कं त्रिगुञ्जा रसपर्वटी ।

पण्यासाभ्यन्तरे चैषा बलीपलितनाशिनी ॥

संघत्सरं यदा सेव्या ज्वरं हन्ति न संशयः ॥ १९२२ ॥

रससागर, रसायने ।

भाषा—सुवर्ण, चांदी, ताम्र, अभ्रकसत्त्व और लोह इनकी-  
भस्में, शुद्धवज्रमाग ४-४ माशे, शुद्ध पारा और गन्धक १-१  
कप लेकर पारोगन्धकनीलवर्णकजलीकर धीपुतीहुईबहाहीमें  
बरेकेकोयलोंपर गलाकर सुवर्णादि सबजीवें मिलाकर लोहेकी  
शलाकसे चलावे । एकजीबहोनेपर प्रथम रसपर्वटीकीतरह पर्वटी-  
बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती समय अथवा तत्तदोगो  
चित्तापानकैसायदेनेसे ६ महीनेके अन्दर बलीपलितको नष्ट  
करतीहै । एकवर्षतकसे सेवनसे बुढापेको दूरकरतीहै ॥ ४३१ ॥

## ४३२ सुवर्णपर्वटी ( तृतीया )

स्वर्णं रौप्यं रविगन्धकं लोहसूतं समांशं

मुक्ताभागं विमलचलिकं पारदाद्युग्मभागम् ।



मद्यं कन्दैः कदलजनिनैः शास्त्रमलीनां रसेश्च,  
कन्याद्रात्रि मुनिदिनमयो यल्लयुग्मं निहन्त्यात् ॥  
मेहं तापं मधुचपलया माससंसेवितोऽयं,  
स्त्रीणां रोगानपि हरति युता पर्वटी काञ्चनीयम् ॥१२३॥

र. प., र. प्र., र. पा. प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—शुक्ल, रजत, ताम्र, अम्रक, लोह, मोती इनसखी  
भस्मे १-१ भाग, शुद्ध गन्धक २ भा., पारा १ भाग लेकर  
पारेगन्धककी नीलवर्णकमलीकर पौपुनीहुईकहाहीमें चेरके कोय-  
लौपर कमलीको गलाय सखीजोमे मिलाकर गोबरपर रखे-  
हुए केलेकेपत्तोंपर दवाकर पर्वटी तैयारकरे । स्वास्तीतलहोनेपर  
केला और सेंमलकन्द तथा घोड़वारकेरसोंसे ७-७ दिन मर्द-  
नकर ३-३ रत्तीकी मोलिये बनाकर रखोजे । इनमेंसे १-१  
गोली समय अथवा रोगोचिन्तानुपानकेमाथ अथवा यधु और  
पीपलकेसाथ एकमहीनेतक सेवनकरनेसे प्रमेह, ज्वर और श्रियोंके  
तमामरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ४३२ ॥

### ४३३ सुवर्णपर्वटी ( चतुर्थी )

मृतेन सूतपाजेन लोहपर्वटिका समा ।  
त्रिगुणं गन्धकं सूतारसं दिग्धीपथीद्रव्यैः ॥ १९२४ ॥  
मर्दितं तद्दिनं रज्जा ध्मातो यद्धो भवेद्रसः ।  
तस्मिन्नेते मृतं स्वर्णं क्षिप्या यद्धार्द्रकद्रव्यैः ॥ १९२५ ॥  
मद्यं यामं विष्णुर्पाथ व्योपजीरकसंयुधैः ।  
सुख्यः पूर्व्वरसस्तुल्यं यल्लमेरुतु भक्षयेत् ॥ १९२६ ॥  
जराभृत्यु निहन्त्यान्द्राक्षेमपर्वटिका रसः ।  
अश्वगन्धासमां यष्टीं धात्रीफलरसे दितम् ॥  
भावितं लेह्येल्लीद्रैः कर्षकं कामर्षं परम् ॥ १९२७ ॥

रसायनसं., र. सं., रसायने । रसायनजगड़े हेमपर्वटक इति नाम

भाषा—पादभस्म, लोहपर्वटी और शुद्धपारा १-१ भाग,  
शुद्धगन्धक ३ भागलेकर नीलवर्णकमलीकर दिव्योपथियोंके  
द्रवोंसे यथापक्व १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय अन्ययूपामें  
धननकरनेसे पारद्वर्षेण । इसमें एकभाग सुवर्णमसम मिलाकर  
बदरखके रससे एकपहर घोटकर त्रिकुट्ट, जीरा और सेंधानमक  
पूर्व्वरसकी बराबर मिलाकर रखोजे । इसमेंसे ३-३ रत्ती सम-  
योचितानुपानकेसाथ लेकर अश्वगन्ध और सुल्फ़ीर समभागलेकर  
आबलोंकेरससे ६-७ भागनाए देकर इसमेंसे १-१ कप मधुके-  
साथ चाटनेसे रमका शरीरमें अनुक्रमणहोगा और इससे बली-  
पक्षिनादिका नाशहोकर दीर्घायुहोगा ॥ ४३३ ॥

### ४३४ सुवर्णयद्वरसः

लाङ्गल्या देवदास्याश्च रसे मर्दितपादः ।  
त्रियते स्वर्णपादेन चारितोऽयं समांशतः ॥ १९२८ ॥  
रसेन मेलितः पश्चाद्विपतालकगन्धकैः ।  
धत्तुर्योजितलेन मर्दितखिदिने सति ॥  
गोमये पाचितो मृषामप्यस्यो पच्यते रसः ॥ १९२९ ॥  
यो. म., रसायनाधिकारे ।

भाषा—कहिदारी और बन्दालकेरसोंसे ३-३ दिन मर्दन  
कर चतुर्था अथवा समभाग सोनेके बर्तन जाणकर समभाग  
दूबरे शुद्धपारेमें मिलाकर बटनाम, हरिताल और गन्धक ये  
प्रत्येक पारेसे चतुर्था डालकर धरोकेरीनोकेतलेमें ३ दिन मर्दन  
कर अन्ययूपामें बन्दकर लघुमुखरी बाँव दे तो इसकी गोली  
बैधानतीहै । इसको मुँहमें रखनेसे बलीपक्षिनादिका नाशहो-  
कर दीर्घायु होताहै ॥ ४३४ ॥

### ४३५ सुवर्णभूपतिरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं मृतं शुद्धं तथोः समम् ।  
अम्रोलोहक्यो भस्म कान्तमसमं सुवर्णजम् ॥ १९३० ॥  
रजतञ्च विषं सम्यक् पृथक् सूतसमं भवेत् ।  
हंसपादरीरसे मद्यं दिनमेकं वटीकृतम् ॥ १९३१ ॥  
काचकूप्यां विनिक्षिप्य मृदा संतेपयेद्बहिः ।  
शुष्कां तां यालुकायने शनैः मृद्वग्निना पचेत् ॥ १९३२ ॥  
चतुर्गुज्जमितं देयं पिप्पल्याद्रिव्रवेण तु ।  
सयं त्रिदोषजं हन्ति सन्निपातांस्त्रयोदश ॥ २९३३ ॥  
आमवातं धनुर्वातं शृङ्खलाघातमेव च ।  
आन्ध्रवातं पट्टुघातं कफघाताग्निमान्द्यनुत् ॥ १९३४ ॥  
कटीयातं सर्वशूलं नाशयेन्नात्र संशयः ।  
गुल्मशूलमुदातं ग्रहणीमतिवृत्तरोगम् ॥ १९३५ ॥  
प्रमेहमुदरं सयाम्भमरौ मूत्रविड्महम् ।  
भग्नरसं सर्वरुष्टं विद्विधिं महतीं तथा ॥ १९३६ ॥  
भ्वातं कासमजीर्णञ्च ज्वरमष्टविधन्तया ।  
कामलां पाण्डुरोगञ्च शिरोरोगञ्च नाशयेत् ॥ १९३७ ॥  
अनुपानविशेषेण सर्वरोगान्विनाशयेत् ।  
यथा सूर्योदये नश्येत्तमः सवैगन्ततया ॥  
सर्वरोगविनाशाय सर्वेषां स्वरणभूपतिः ॥ १९३८ ॥

त्रि. र., र. मु., र. चं., रसायनं, व. रा., वै. वि., यो. र.,  
र. पा., क्षयाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, ताम्रभस्म  
२ भाग, जम्रक, लोह, कान्तलोह, सुवर्ण, रजत इनकीयुग्म  
और शुद्धबटनाम १-१ भाग लेकर नीलवर्णकमलीकर सबखीनों  
मिलाय हंसपादकेरससे एकदिन मर्दनकर फिरसे कमली बनाय  
६-७ कपधमिठी दोहई आतशीशोशीमें बन्दकर बाहुकायन्त्रमें  
रख एकदिनकी मन्दाग्निसे पकावे । स्वास्तीतलहोनेपर निकाल-  
कर रखोजे । इसमेंसे ४-४ रत्ती पीपल और बदरखकेसाथ  
देनेसे त्रिदोषप्रशय और १३ सन्निपातोंको यह नष्टकरवाहै ।  
तत्तद्विषाद्वानुपानकेसाथदेनेसे आमवात, धनुर्वात, शृङ्खलाघात,  
ऊररतम, पट्टुघात, कम्पघात, मन्दाग्नि, कटिघात, सन्निपातके  
शूल, गुल्म, उदात, मयूरप्रवृत्ती, प्रमेह, उदररोग, सवप्रकारकी  
पथरी, मलमूत्रविबन्ध, भग्नरस, सवप्रकारकेकुष्ठ, बड़ाहुआ  
ज्वरबाद, शूल, काल, बज्जीर, एक्काकाज्वर, कामला, पाण्डु,  
शिरोरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४३५ ॥



भाषा—गायत्रीस १००० बार जमिमखितकियेहुए आव-  
लेंकेरखेसाथ १ से ३ रतीतक सुवर्णमम्म और आवलेका चूर्ण  
लेनेसे उपस्थित अरिष्ट भी नष्टहोता है ॥ ४४५ ॥

### ४४६ सुवर्णयोगः ( एकादशः )

ससितया घचयामलकैरथ  
त्रिफलयाऽथ घृतज्यतिमिश्रया ।

कनकजातरजः सततं घृतं  
परमिदं हि रसायनमुच्यते ॥ १९५३ ॥

चि. क., रसायने ।

भाषा—शकर, वच, आवले अथवा त्रिफलाकेचूर्णकेसाथ  
१ से ३ रतीतक सुवर्णमम्म घीमें मिलाकरलेनेसे दीर्घायु होता है ॥

### ४४७ सुवर्णयोगः ( द्वादशः )

उन्मादिनामुन्मदमानसाना-  
मपस्मृतो भूतहतात्मनां हि ।

ब्राह्मरसः स्यात्सवचः सकृद्युः  
सहस्रपुष्पः ससुवर्णचूर्णः ॥ १९५४ ॥

चि. क., यो. त., उन्माद ।

टि०—चरके हृदयावरणतः विप्रमत्तावस्थायां सुवर्णरजसु पाण-  
मात्रदानमुक्तं यथा “शुद्धे हृदि ततः शान्तिं हेमचूर्णस्य दापयेत् । हेम  
नर्पविपाण्याश्च गराश्च विनियच्छन्ति ॥ न सज्जने हेमपात्रे निषि पश्येत्-  
सुवर् ॥” इत्यत्र चूर्णस्यैव तदयस्कृतिं शोषा सा च रसायनपादे  
विहिताऽस्ति यस्यामभवच्च विपत्तौपिभित्त्वाक दयादिनि सम्प्रदायः ।  
यथावस्थितचूर्णस्य रक्षादौ तत्काल प्रवशमावर्तय उद्भावे च हृदयावर-  
णस्य ॥ साध्यत्वात्, अथवा विपत्तौपिभिः पुन्यदिनत्वा निवृत्त्य अयम्  
सम्पाद्य तस्य द्विरन्तरिका यच्च विपत्तौपिभित्त्वादिभिर्दत्ता दीमा विष  
निर्गोचयन्ति इति निश्चितम् । चरकीयवाक्यस्यैव चिन्तित्वाकलिकादौ  
“गराजो हेम इति वदन्ति” इत्यादिना अवगारं कृतोऽस्ति ।

भाषा—ब्राह्मीकारस १ तोला, वच, कुठ, शहस्रपुष्पी १-३  
माघे, सुवर्णमम्म १ से ३ रतीतक मिलाकर लेनेसे उन्माद,  
अपस्माद, भूतनाशा येसन नष्टहोते ॥ ४४७ ॥

### ४४८ सुवर्णयोगचतुष्टयम्

सौवर्णं सुकृतं चूर्णं कुष्ठं मधु घृतं वचा ।

मरस्याक्षकः शहस्रपुष्पी मधुसपिः सकाञ्जनम् ॥ १९५५ ॥

अर्कपुष्पी मधु घृतं चूर्णितं कनकं वचा ।

हेमचूर्णानि कैटयः श्वेता दूर्वा घृतं मधु ॥ १९५६ ॥

चत्वारोऽभिहिताः प्राशाः क्षौद्रादंशु चतुर्वर्षि ।

कुमाराणां धनुर्मध्यावलबुद्धिविधवर्णाः ॥ १९५७ ॥

सुमुत, बालरोगाधिकारे ।

टि०—“मृषाकामश्च वचश्च श्रीकाम पञ्चकैरौ । शहस्रपुष्पा  
वयोर्धोऽपि तु विद्यायां च प्रवेष्टुम् ॥ नवावसकतापात्रौ तथाशोभार  
ज्ञान्ते ॥” इति गरुडिम्ह अशुभेदप्रकरणे च त्रयो योगा अन्ये विहिता  
सन्ति । इत्यमित्य सहस्रशोषि योगा सम्प्रत्यन्ते तत्सर्वकुर्यादनीषमनु  
पानानामनित्यत्वात् ।

भाषा—सुवर्णमम्म, कुठ, मधु, घृत और वच ( १ )

मटेडी, शहस्रपुष्पी, सुवर्णमम्म, मधु और घी ( २ ) अर्कपुष्पी,  
सुवर्ण, वच, मधु और घी ( ३ ) सुवर्णमम्म, महादस, वच,  
दूबमें पकायाहुआ घी और मधु ( ४ ) इन चारों योगोंको  
औचित्य देखकर संयुक्तकर देनेसे छोटबच्चोंकी मेघा, बल और  
बुद्धि बढ़ती है ॥ ४४८ ॥

### ४४९ सुवर्णरसराजरसः

शुद्धं स्वर्णरसं पृथक् पिबुमितं एकत्र सम्मर्दितं ।

मुकाविद्रुममापयुग्मसहितं मर्चाऽहिवह्नोरस्मे ।

गुडाह्नन्मृतं सुवर्णरसराट् क्षौद्रेण वा गोघृतेन,

जीर्णं यक्ष्ममवं प्रमेहदरपं पाट्टामयं यातजम् ॥ १९५८ ॥

नेत्रश्रोत्रघर्गदं हारोचकहरं कायस्य कान्तिप्रदं,

रेतोवृद्धिहरं महाशूलकरं दीर्घायुरारोग्यप्रदम् ।

पथ्यं शालिघृतं सिता सुकदली गोघृमगोक्षीररुं,

ताम्बूलं विहितं पटोलमरिचं सोष्णाभ्यु कोशातकी ॥

रसायनसं, क्षये ।

भाषा—शुद्ध पारा और सोनेकेक १-१ कर्प लेकर एक  
जगहमर्दनकर पिठोबनावे । फिर मोती और मूगेकीमम्म १-१  
मादा डालकर पानेकरसे १-२ दिन मर्दनकर २-३ रतीकी  
गोलेमें बनाकर रखोदे । इनमेंसे १-१ गोली मधु अथवा  
गोघृतकेसाथ देनेसे जीर्णज्वर, राजयदम, प्रमेह, प्रदर, वातज  
पाण्डु, नेत्र और कानकी पीडा, अरुचि, कान्तिहा अभाव,  
शुम्भस्य इनसबको नष्टकर दीर्घायुको करता है । पुरानेवृद्ध-  
चावल, घी, शकर, केला, गेहूँ, मोरुघ, परवल, मरिच, गरम-  
जल, तरौई येसब पथ्यहैं ॥ ४४९ ॥

### ४५० सुवर्णरसायनम्

चतस्रः कृष्णलोहानां पलानि त्रिफला तथा ।

उष्मदा चाजमोदा च पयस्या पिप्पली तथा ॥ १९६० ॥

विदारी मधुयष्टी च तक्षणं पालिकं स्मृतम् ।

पले सुवर्णचूर्णस्य सप्ताहिनोपयोजयेत् ॥ १९६१ ॥

बहन्तःपुरपत्नीनां राक्षस्य गरनाशनम् ।

ग्रहस्पतिमतं चूर्णमलक्ष्मीहरणं विदुः ॥ १९६२ ॥

य. नि., कल्पे ।

भाषा—चातरहकेलोहोंकीमम्म १-१ पल, त्रिफला, उर्द-  
गन, अजमोद, क्षीरकाकोली, पीपल, विदारी, सुलहटी सब-  
समभागकाचूर्ण १ पल, सुवर्णमम्म १ पल मिलाकर रख-  
छोदे । इसमेंसे १-१ कर्पकी मात्रा प्रातःकाल दूधकेसाथलेवे ।  
अच्छीतरह पचजानेपर शामको दूधभात भोजनमें लेवे । धीरे  
२ इसकी मात्रा बढ़ावे । यह पुराने जमानेकेलिये ७ दिनका  
प्रयोग लिखा है पर आजकल १ कर्पसे अधिकमात्रा लेनी  
सुविहल है । इस किसीको अधिक पाचन हो सके तो उतनी  
बटावे । जिनके अन्त पुरुष बहुतथी खिये हों ऐसे राजालोगोंको  
इमसा प्रयोगकरना योग्य है । इसके वाधारणसेवनसे समस्त  
बनावनी जहर नष्टहोते हैं ॥ ४५० ॥

### ४५१ सुवर्णराजवङ्गेश्वररसः

रसाद्रिगुणितं यद् यद्वाद्रिगुणयन्धकम् ।  
रसाद्धं ह्रमभागश्च तत्समं मौक्तिकन्तथा ॥ १९६३ ॥  
रसभागान्तु मरिचं तत्समं कान्तनागयोः ।  
कुमारीरससम्पिष्टं खल्वे चूर्णन्तु कारयेत् ॥ १९६४ ॥  
सप्त मृदुलसं कृत्वा काचकृष्णं विनिक्षिपेत् ।  
घालुकायन्यगं कृत्वा दिनमेकं हठाग्निना ॥ १९६५ ॥  
स्याद्वाशीतं समुद्रतः पुनः खल्वे विमर्दयेत् ।  
एवं सप्तदिनं कृत्वा पट्टिकाः कारयेद्बुधः ॥ १९६६ ॥  
चतुर्गुणप्रमाणेन योजयेदनुपाततः ।  
सर्वयोगेषु वातया प्रमेहान्दन्ति विंशतिम् ॥ १९६७ ॥  
मूत्राघातं मूत्रकृच्छ्रं प्रदराशीं यमीस्तथा ।  
रसायनमिदं श्रेष्ठं स्वर्णवङ्गेश्वरो रसः ॥ १९६८ ॥  
रसायनतः, रसायने ।

भाषा—शुद्धरास १ भाग, वज्रभस्म २ भाग, मन्धक ४ भाग, सुवर्ण और मोतीभस्म आधाभाषामाग, मरिच, वान्त और नागभस्म १-१ भागलेख नीलवर्णकम्लीकर कुमारीके-  
रससे १-२ दिन मर्दनकर कम्लीयनाय ६-७ कपडिमिरो दीहूर्द  
आलसीशीमे भर एकदिन घालुकायन्यमे तीक्ष्णामि पकाव ।  
सवाहीतकोमेपर निकालकर फिर मर्दनकर पाकवरे । ऐसे ७  
बार करनेबाद घोटवर रसछोडे । इसमेसे ४-४ रसी समय  
अथवा रोगोचितानुपातके साथ देनेसे सप्तप्रकारकेप्रमेह, मूत्रापात,  
मूत्रकृच्छ्र, वातगुण्डिका, प्रदर, वशाशीर, यमन इसवर्गे यह  
नष्टकरताहै ॥ ४५१ ॥

### ४५२ सुवर्णसमकं ( चूर्णम् )

स्वर्णचूर्णं समरिचं द्वौ क्षारी त्रिफला यथा ।  
ययान्यः कुञ्जिका हिहू तिग्निटोकाभ्येतसम् ॥ १९६९ ॥  
धान्याजगन्धे प्रायन्तां दाडिमं सुयमाद्रिकम् ।  
कटुका कटुजम्बीरं सैन्धवश्च समान् भिषक् ॥ १९७० ॥  
त्रिधृता सप्तला दन्ता कम्पिष्ठ नीलिकाडमया ।  
सुयर्णक्षीरी द्विगुणा सयाप्येतानि चूर्णयेत् ॥ १९७१ ॥  
आजे गन्धऽयथा मूत्रे सप्ताहं परिभाज्य तम् ।  
द्विगुणां दार्करां व्याघ्र दापयेत्पटुलं पियेत ॥ १९७२ ॥  
गोमूत्रत्रिफलाक्षाररसे मयेस्सुखाम्बुना ।  
सुवर्णसमकं चूर्णं सर्वरोगातिभेजम् ॥ १९७३ ॥  
सर्वादिरे मीहरोपगुल्महृद्गनाशनम् ।  
पाताष्टोलामयानाद् गन्धयुं सर्वगात्रजम् ॥  
हृत्पीकामालापान्पुष्पमेहज्वरगुल्महत ॥ १९७४ ॥

मे से, ग नि, उदरोगे ।

टि०—अनुप्रेषणमानानुसारक मरिचमिचयमदन वयनव  
भाग उक्तमन्धे, कान्तनागवसुराणि अदावक वडिपनि मन्ति वगण्य  
नाम ये सुवर्णसमकं चूर्णम् । अन्यत्रैव वाम् । अत्रानुमेव । अनेन  
योगेन सुवर्णरसित मरिचमन्धेना सुवर्णसमकं निज नाम उक्तपद  
योगेन प्रायसी पुण्डरीक लक्षणं निरूपयतमन्धेनेनकुण्डकं वा नाम  
कदां मरिच ७ वयन कम्पिष्ठ वरमन्धेनी सुवर्णसमकं चूर्णम् ।

गदमिधेरे वरमौलमिति पेदेन रिकं स्थान पूरित दृश्यते परन्तु तपू-  
रणेन सुवर्णमयमिति नाम्न वाचिसहनिर्नायाति । वपाचित्ववर्ण-  
पेदेन सुवर्णक्षीरेवाडमिधेताकृत्वा सुवर्णमरमिति नाम्न सद्रिचरसीति  
वेत्त, तत्र सुवर्णक्षीरेद्रिगुण्यमस्तत्र सुवर्णमयमिति नाम उचित  
नायेन । स्वर्णचूर्णमिति पेदेन पूर्णं तु सुवर्णमिति मरिचादिमिधेवेकन  
गुल्मनानावहयत्र योगेऽस्ति तपूचकमयमिति स्थुत्वा योगनाम्नो  
यथावत्प्रतिष्ठापयत्वा गदमिधेनहत्तत्रकोटरमस्ता स्वर्णचूर्णमिति पेदेना  
स्वाभिरुपेष्टि स्थान पूरितम् । अन्यत्र-द्वितीयलोकय मयवाचिरमिति  
वर्मानुपलोकं उक्तमन्धेन तत्र सुवर्णाद्रिकमिति पाठोऽस्तिमाभिः स्थापित,  
तत्र सुवर्णा = त्र्यवका, भार्दिका नागर मासम् । शोऽनेन तु सुवर्णा-  
मयमिति पाठं स्थापित परन्तु द्वौ क्षारीमन्धेनेन यथावत्प्रतिष्ठापना  
स्थान पाठो नायेव । एवं चतुर्धौकस्य चतुर्धौकसे दापयेत्यङ्गुल  
विनिर्दिष्टि पाठो उक्तमन्धेन तत्र पटुगुलपरम्याधमरुद्धा शोऽनेन  
विनिर्दिष्टि पाठो स्थापित परन्तु उदरोगानां विदितमन्धेनेन  
निक्षेपेत्तमन्धेनप्रत्ययमन्धेन तत्रादरुपयन विनक्षम् । व्यङ्ग्यमिति  
आश्रयमाग निरिचम् यथा—“तत्र मासादूर्ध्वं क्षीरापायाङ्गुलिर्द्वय-  
प्रमाणमिनामौपम्यायां विदध्यात् । क्षीरास्थिमिनां कन्धमायां क्षीरा-  
क्षायां चोन्मन्मिनामन्धेनविनिर्दिष्टम् ।” सुष्ठु गा. १०।१८।। इत्येव  
अङ्गुलीपरम्याधमरुद्धं माया निरिचं तत्रादरुपयन विनिर्दिष्टि पाठोऽस्ति  
वयवर्णयामरमितिमायां मायां वाचयेदिति मन्धेनमिधेन । सा च साधा-  
रणम् । अत्रानुमाना आपने इति यथावत्स्थित पाठं च साधुरिति मत्वा  
तत्रादरुपयन स्थापित सुवर्णमये ॥ विदोम एव विचारयन्तु, अस्माक  
मने तु उदरोगेषु प्रायज्जै येन केनापि प्रकारेण हृत्पातल्य स्थाररस  
वज्रमय वा शोऽनेनचूर्णेन धानुनामय विरक्तं परिणमया क्षीर-  
चतुर्धौकस्य सप्तानुचूर्णेन च सर्ववर्णासिपादराष्ट्रिणा सुवर्णमेव  
प्रतिमन्धेन स्वर्णचूर्णमियेव पाठेन पूरण भेदवत् प्रतिमिति इत्यन्-  
मनितिलेखेन ॥

भाषा—सुवर्णचूर्णमिति अथवा भस्म, मरिच, शुद्धाग, यव-  
क्षार, त्रिफला, वच, देसी और मुरासानी अश्वत्थान, खरखवा  
दन, कावीजोरी, मुनीहौग, बांगरिया ( भार्दिकाक्षीनाम, रामाक,  
युनामीनाम ), अमलपेट, धनियां, बर्बर, प्रायमाण, अनार-  
दाना, इन्द्रजय, शोंठ, कुटो, कङ्गीरनीभीरी, सैन्धवमक सब  
१-१ भाग, निमोत, अहुरिया धूमर, दन्तीमूल, कम्बोला,  
कालाक्षरा, हरे, वैभववीनी अथवा सप्तानासोरीहीन वेपथ १-२  
भागलेख भारीकचूर्णकर बहरी अथवा गायके मूत्रगे भावना  
दकर हृत्पातकर मिचकर १।२छोडे । इनमेसे रोगोदी तीन अहु  
तियोंके अम्रमाणवर त्रिफला चूर्ण आनेके उन्ना पकाकर गोमूत्र,  
त्रिफला, क्षार, मांसरस, मय अथवा कटुल्लत्र, इनमेसे ओषधी  
दखकर पिलायेने उदर, सीरा, शोष, गुल्म, इमोग, वातशोथ,  
अनाह, सर्वांशोष, हृत्पीक, कामना, पाण्ड, प्रमेह, उदर,  
गुल्म, इसवर्गे यह नष्टकरताहै ॥ ४५२ ॥

### ४५३ सुवर्णसिन्दूरम् ( प्रथमम् )

पार्श्वं गन्धकं स्वर्णं जम्बूतन्ममर्दितम् ।  
काचकृष्णं विनिक्षिप्य घालुकायन्यमप्यगम् ॥ १९७५ ॥  
दिनाधं पानयेदेतं म्याङ्गनीतल्लाह्नम् ।  
ह्रमसिन्दूरकं नाम नागनाद्याघ्नंयुतम् ॥  
प्रयोगे सर्वदोषादि हन्ति सत्यं न संशयः ॥ १९७६ ॥  
र. क दो, चररोपे ।

**भाषा—**शुद्ध पारा, गन्धक और सुवर्णका बारीकचूर्ण अथवा चर्क समभागलेकर नीलवर्णकञ्जलीकर जंजीरीनेरससे ३-४ दिन मर्दनकर सुखाकर ६-७ कपडमिट्टीदीहुई आतशीचीशीमें भर दोपहरकी सीढ़ा अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर नाम ताम्र और अन्नकभस्म समभाग मिलाकर रखोढ़े । इसमेंसे १ से ३ रत्तीतक समय अथवा रोगोचितानुपानवेसाधदेनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै और पूर्ण पुष्टत्वको देताहै । ४५३ ॥

#### ४५४ सुवर्णसिन्दूरम् ( द्वितीयम् )

**व्यर्णसिन्दूरममञ्ज मौक्तिकं कर्कसस्मितम् ।**  
**हेममाक्षिरुच्येप्रान्तवद्वायांसि च पित्तलम् ॥ १९७७ ॥**  
 शिलाजलतु प्रवालाग्निफेनगुग्गुलुगन्धकान् ।  
 क्रोलसाधेन सङ्गृह्य आचयेद्वह्निचरिण ॥ १९७८ ॥  
 ततो गुग्गुह्वायोनमांसा विधाय वटिकां भिषक् ।  
 देवदारुकपायेण प्रातः सायञ्च योजयेत् ॥ १९७९ ॥  
**स्वर्णसिन्दूरसञ्ज्ञोऽयं रसेषु प्रचरो रसः ।**  
**आयुजाग्निखिलाप्रोगान्हन्ति नास्त्यत्र संशयः ॥ १९८०**  
 शै. र. , कायुरोगे ।

**भाषा—**स्वर्णसिन्दूर, अन्नक और मोतीकीभस्में १-१ कर्प, सुवर्णमाक्षिक, वैकान्त, वट्र, लोह, पीतल, प्रवाल इनको-भस्में, शुद्धशिलाजीत, समुद्रफेन, गुग्गुलु और गन्धक ८-८ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर चित्रकमूलकेस्वरस अथवा काष्ठसे १-२ दिन घोटकर २-२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली सुषुप्तशाम देवदारुककाढ़िकेसाधदेनेसे यह समस्त आयुजरोगोंको नष्टकरताहै । ४५४ ॥

#### ४५५ सुवीर्यरसः

**बीजाकृतैरन्नकसत्त्वहेम-**  
**ताक्ष्यारकान्तैः सह साधितो यः ।**  
**पुनस्ततः पट्टणगन्धजीर्णः**

**सुवीर्यनामा ह्यधिकप्रभायः ॥ १९८१ ॥**

टो., रसायने ।

**भाषा—**बीजवनाण्डए अन्नकसत्त्व, सुवर्ण, सुवर्णमाक्षिक, पीतल और कान्तलोह इनका यथासाध्य घुगुक्षितपारेको प्रास-देकर पट्टणगन्धकारणकर सिद्धकियाहुआ पारा देह और लोह दोनोंमें कामकरताहै । ४५५ ॥

#### ४५६ सूचिकाभरणरसः ( लघुः ) ( प्रथमः )

**विषं पलमितं सूतः शाणिकश्चूर्णयेद्द्वयम् ।**  
**तच्चूर्णं समुपेतं क्षित्वा काचलिमशारावयोः ॥ १९८२ ॥**  
**मुद्रां दत्त्वा च संशोष्य ततश्चूर्णान् निवेशयेत् ।**  
**वह्निं शनैः शनैः कुर्यात्प्रहृष्टयसङ्गृहया ॥ १९८३ ॥**  
 तत उद्वाटयेन्मुद्रामुपरिस्थः शरावकात् ।  
 संलघ्नेषो भी भवेत्ततस्ततः शुक्लीयाच्छनैः शनैः ॥ १९८४ ॥  
**वायुस्तृणशो यथा न स्यात्तथा कृप्यां निवेशयेत् ।**  
**वायुस्तृणया मुखे लग्नः कृप्या निर्याति भेषजम् ॥ १९८५ ॥**

तावन्मात्रो रसो देयो मूर्च्छिते सन्निपातिनि ।  
 क्षुरेण प्रच्छिते मूर्च्छि तत्राहुल्या च घर्षयेत् ॥ १९८६ ॥  
**रक्तभेषजसम्पर्कान्मूर्च्छितोऽपि हि जीवति ।**  
**तथैव सर्पदण्डस्तु मृतावस्थोऽपि जीवति ॥**  
**यदा तापो भवेत्तस्य मधुरं तत्र दीयते ॥ १९८७ ॥**

शा. सं., घ. यो. त., यो. वि. , र. प्र. सु., र. सं. क., र. वि. , रसायनं., र. सु., घ., नि. र., शै. सा., रसायन., र. क. टो., र. प्र., व. रा., र. को., र. शा., यो. म. , घ. वि. , र. क. ल., वि. र. भ., सन्निपाते ।

**भाषा—**शुद्धवखानाकाचूर्ण १ पल और शुद्धपारा ४ भाग लेकर १-२ दिन मर्दनकरे । पारा अर्धय होनेपर कपडछान-वियेहुए काचका पोतादेकरमुद्राएहुए दो शरावोंमें बन्दकर ३-४ कपडमिट्टी देकर अच्छीतरह सुखनेपर चूर्णपर रस दो-पहरकी मन्दाग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे धारावको उपाधकर ऊपरके शरावमें लगेहुए पारेकोधीरजसे उतारकर बीशीमें रखले । हवा न लगे । हवा लगनेसे इसकी ताकत कम होजातीहै । सन्निपातमें मूर्च्छितहोनेपर तालमें पाण देकर सूईके अग्रभागपर जितना रस आसके उतना रक्तमें मिलाकर महु-छीसे घर्षणकरे । रक्तमें मिलतेही मूर्च्छां निवृत्त होजातीहै । इसीतरह सर्पदण्डमें भी कामलेना । इसके देनेकेबाद अत्यन्त ऊपर बढ़ने पर मधुर पदार्थ खानेको देना और शीतक्रियासे ऊपरको निवृत्तकरना । ४५६ ॥

#### ४५७ सूचिकाभरणरसः ( द्वितीयः )

**नारं पर्वि हरिणशृङ्गरसासुरेन्द्रा-**  
**स्तुत्यं शिलाञ्च रसरुञ्च समानभागात् ।**  
**अङ्गैरमेदमुनिर्निष्कृतोपशृणां-**  
**स्त्रिस्त्रिः पृथक्च पुदयेत विचूर्णयेत्तत् ॥ १९८८ ॥**  
**मृयो चिडङ्गविधिबृक्षजयीजहिङ्गु-**  
**व्याघ्रीसर्जजरकरजोयुतमेतदेवम् ।**  
**सम्मर्दयेच्च पयसा यद्यच्छिक्चिकायाः**  
**शुष्कं सुचूर्णितमिदं विदधीत वेद्यः ॥ १९८९ ॥**  
**पाण्डूमायातकमिमेहस्तवातरक्त-**  
**शोफांस्तथा कसनगुल्मरुमृत्रकृच्छ्रान् ।**  
**योग्यानुपानसहितः क्षतजं क्षयञ्च-**  
**गुञ्जामितो हर्षति रोगगणांस्तथान्यान् ॥**  
 टो., पाण्डुधिकारे ।

**भाषा—**नाग, हीरा, हरिणकाशीग, फिट्कड़ी, गन्धक, तुल्य, नैनसिल, खपरिया सब समभागलेकर नीलवर्णकञ्जलीकर आक, विट्खदिर, अमृत्य, डाकनेचूल इनके स्वरसोंसे ३-३ दिन मर्दनकर गोलवनाय धारावतमुद्रामें बन्दकर लघुपुटकी १-१ आवदेवे । फिर विडङ्ग, पलाशबीज, हॉग, वनभाटा, बीरा १-१ भागका बारीक चूर्ण मिलाकर जैतीके स्वरसों १-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखोढ़े ।

इममेते १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाय देनेसे पाण्डु, आमवात, क्रिमि, प्रमेह, वातरक, शोथ, खासी, गुल्म, मूत्रच्छर्द, उर क्षत और क्षयप्रभृतिरोगोंको बह नष्टकरताहै ४५७

### ४५८ सूचिकाभरणरसः ( तृतीयः )

रसगन्धकनागञ्ज विप्रे स्वावरजङ्गमम् ।  
मातस्यवाराहमायूच्छागपित्तं विभाषयेत् ॥ १९९१ ॥  
सूचिकाभरणो नाम मेरुवेण प्रकीर्तितः ।  
सूचिकाग्रेण दातव्यः सन्निपातनिवर्हणः ॥ १९९२ ॥  
र.स., भै. र. सु, र. सु, र. क. यो., र. न, सन्निपाते । केयु-  
चित्तपुस्तकेषु अत्रकं विशेषेण नियोजितं दृश्यते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, नाममस्म, यथाशक्य स्वावर और अङ्गमविष समभागलेकर मछली, मुञ्जर, भोर और बकरेकेपिठोंसे १-१ भाषता देकर रखओहै । इसमेंसे सूईके अग्रभागसे लेकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाय देनेसे यह समस्तभिरातोंको नष्टकरताहै ॥ ४५८ ॥

### ४५९ सूचिकाभरणरसः ( चतुर्थः )

रसयैशान्तेहमात्रं तीक्ष्णं ताम्रं मृतं समम् ।  
पङ्क्तिः समं शुद्धगन्धं सर्वं निर्गुण्डिकारसः ॥ १९९३ ॥  
कपायैश्चित्रकस्यापि मर्दयेद्विसत्रयम् ।  
सूर्यावसांशगतस्यभृङ्गैस्तिलपर्णान्द्रवारणी ॥ १९९४ ॥  
काकमाची महाराष्ट्री कङ्कणी गिरिकर्णिका ।  
धुस्वरस्तुलसी दन्ती बृहती कण्टकारिका ॥ १९९५ ॥  
स्तुल्यकथिजया मुण्डी काकतुण्डी जयाऽमृता ।  
पतासां भाषयेद्वायैश्चतुर्दशदिनावधि ॥ १९९६ ॥  
अर्कमूलरूपायेण भाषयेद्विषपञ्चकम् ।  
दत्त्वा सञ्जितं पञ्चपित्तं भाव्यं दिनत्रयम् ॥ १९९७ ॥  
विषमुष्टिकरूपायेण भाषयेद्विषसत्रयम् ।  
जेपालीरजमज्जोत्पतलेन दिवसत्रयम् ॥ १९९८ ॥  
भावितं शापितं घूर्णं मधुना सह मिश्रयेत् ।  
सूचिकाभरणो नाम रसः स्यात्सन्निपातजित् १९९९ ॥  
दापयेत्सूचिकाग्रेण सर्वेषां सन्निपातिनाम् ।  
ज्वरशूलोदराशंसु ग्रीहपाण्डुगदेषु च ॥ २००० ॥  
आध्मानशूलमन्दाग्रिकासम्भासादिरोगेषु ।  
श्लेष्मिरुत्पलदेहेषु चानुपानं घृतकृष्णकम् ॥ २००१ ॥  
५. यो. त, र सु, र क. यो., बा, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा, वैरान्त, सुक्य, अत्रक, फोलाद, ताम्र इन्दीमस्य समभागलेकर सत्री बराबर शुद्धगन्धक मिलाकर बारीकचूर्णकर निर्गुण्डी, चित्रक, सूर्यमुखी, अमृत्य, केमरा, हुहुर, इन्द्रायण, मकोय, मराठी, मालकांगनी, कोयल, धतूरा, तुलसी, दन्तीमूल, वनभाटा, भट्टकटैबा, मूजर, आरु, भांग गोरखगुडी, काकनासिका, आरणी और किलोयके स्वरसोंसे १४ दिन, आरुकोनइक्याणसे - दिन, पाँचोंपिठोंसे ३-३ दिन, कुचिलेकेसाय और जमाव्योदकेनेत्रसे ३-३ दिन

क्रमसः भावनाएं देकर रखओहै । इसमेंसे सूईके अग्रभागसे लेकर समयोचितानुपानकेसायदेनेसे समस्त सन्निपात, ज्वर, शूल, उदररोग, बरागीर, ग्रीहा, पाण्डु, आध्मान, शूल, मन्दाभि, काश, खास, कफ, मेद इवसरको यह नष्टकरताहै ४५९

### ४६० सूचिकाभरणरसः ( पञ्चमः )

येन केनाप्युपायेन भस्मीभूतो रसोत्तमः ।  
तच्चूर्णं वल्लनिष्कृतं तेनैव मिश्रयेत्सुधीः ॥ २००२ ॥  
गुल्मे विप्रे तथा चाम्रं खल्वे मर्चं मुहुर्मुहुः ।  
सेवनाच्च विलीयन्ते सन्निपातास्त्रयोदश ॥ २००३ ॥  
सूचिकाभरणो नाम नैव देयो हामृच्छिते ।  
अस्थोपयोगमात्रेण सन्निपाती भयङ्करः ॥  
स्वस्थः स्यादचिरेणैव संशयायसरौ न हि ॥ २००४ ॥  
रसचि., सन्निपाते ।

भाषा—गोखीमस्म और शुद्धपारा, ताम्र और अत्रक-मस्म, शुद्ध बल्लाग सह समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारा जलदयहोने तक घोटकर रखओहै । इसमेंसे आधीभाषीरलीकी-माना समयोचितानुपानकेसाय मुच्छिन्नसन्निपातीको देनेसे भयङ्कर सन्निपात निवृत्तहोताहै । अमृच्छिन्नवस्थामें इसे नहीं देना ॥

### ४६१ सूचिकाभरणरसः ( षष्ठः )

अमृतं गरलं दातुं सर्वतुल्यञ्च दिङ्मूलम् ।  
पञ्चपित्तैश्च सम्मर्चं सपेपामां घटी चरेत् ॥ २००५ ॥  
प्रदेया सूचिकाग्रेण सन्निपातकुलान्तहनम् ।  
वर्जयेत्तिलतेलञ्च दापयेद्विषमकमम् ॥ २००६ ॥  
भै. र., घ., र. सु, र. त, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध बल्लाग, सर्मविष, देवशर १-१ भाग, शुद्ध-क्षिप्रिक सत्रीबराबर लेकर बारीकचूर्णकर पाँचोंपिठोंसे १-१ दिन मदनकर सपेपामाणोंलिये बनार रखओहै । इसमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसायदेनेसे यह समस्तभिरातोंको दूर-करताहै । इसमें तिल और तिलकातेक वर्जितकरना । अन्यन्त-भूतव्यानेपर दहीभात खानेसे देना ॥ ४६१ ॥

### ४६२ सूचिकाभरणरसः ( सप्तमः )

वर्षादीकृत्य विप्रे कृष्णं मार्कण्डेयऽस्यमाण्डके ।  
सकाञ्जिके सगरले दत्त्वा चुल्यां निधापयेत् ॥ २००७ ॥  
समाहं तत उद्धृत्य वृक्षे सञ्चूर्णं यत्नतः ।  
सूचिकाभरणो नाम रसो गुप्ततमो भयेत् ॥ २००८ ॥  
सप्रज्ञानासौ विषेष्टस्य यतः काञ्जिकपेयितः ।  
ग्रसरन्ध्रे प्रयोजन्यः शाखास्वतित्तिदिमोदये ॥ २००९ ॥  
रगायनं., र. सु. र. र. दौ., टो, ५. यो. त, र. का, र. क. यो. र. क. क., सन्निपाते ।

भाषा—नालेबल्लागकेछोटछोट टुकड़ेकर एकत्रमेंसे डाने । इसमें दूना आठछट्ट, चौगुलीकाशी और बाबरका गांविष बालर मुंडबन्दूक जहाँ प्रतिदिन पृन्ता जन्ताहो बहा एक-कालियन गद्गा रागु खोदकर बन्देहो दशाह । अष्टोदित

निकालकर वारीकचूर्णकर रखछोके । इसमेंसे ३-३ रत्ती काञ्चीमें पीसकर ब्रह्मरन्ध्रपर पाछदेकर लगानेसे सङ्गानाश और भयकर शीत नष्टहोतेहैं ॥ ४६२ ॥

### ४६३ सूचिकाभरणरसः ( अष्टम )

अहिफेनं मृतं ताघ्रं हिङ्गुलं शृङ्गिकं विपम् ।  
मत्स्याजगजपित्तन माहिपेण विभाधितम् ॥ २०१० ॥  
दातव्यं सूचिकाग्रेण शीततोयं पिबेदनु ।  
रसश्चाद्रक्ततोयेन ह्यनुपानं प्रकल्पयेत् ॥ २०११ ॥  
शीताङ्गेपि सितापयः सहचरं दत्ते पुनर्जीवति ।  
रपातो योऽप्य स सूचिकाभरणरुः सूच्यग्रमानो रसः ।  
किंवा द्वादशरन्ध्रचर्मसु भिषक् शस्त्रेण कृत्या पदं,  
दद्याच्चाद्रक्तयारिणा द्रुततरं सञ्ज्ञां लभेताशु हि २०१२  
र घु , र (मा) , ना वि , दो , सन्निपाते ।

भाषा—अजीम, ताम्रभस्म, शुद्धशिंगरिफ, सौमियाविष, सय समभागलेकर वारीकचूर्णकर मछली, बकरा, हाथी और भैंसके पित्तोंसे १-१ भावनादेकर रखछोके । इसमेंसे सूईक अमभागसेलेकर अदरकके रसकेसाथ देकर ऊपरसे ठंडापानी पिलानेसे समस्तसन्निपात नष्टहोतेहैं । शीताङ्गमें शर्कर, दूध और षट्सरैयाकेसाथ देनेसे फिरसे जीवन आताहै । यदि ह्रस्वतरह सङ्ग्राह्यत न हो तो ब्रह्मरन्ध्रपर शस्त्रसे काचपदररके अदरकके रसकेसाथ मिलाकर पिबनेसे तत्काल सङ्ग्राहो प्राप्तहोताहै ४६३

### ४६४ सूचिकाभरणरसः ( नवमः )

हृदानी दूर्यं तुल्यं गरलेन सुमर्दितम् ।  
मुद्गरप्रमाणवटिका नाभिहृत्तालुदेशके ॥ २०१३ ॥  
कुशेन चर्म निर्भिद्य विधुष्याद्रक्तयारिणा ।  
रसप्रवेशमात्रेण नेत्रमुद्राटयेत्क्षणात् ॥ २०१४ ॥  
साधधानो भवेद्यद्वा न चेतन्यं प्रवर्तते ।  
ततस्त्येको सुवटिकां दद्याद्वाद्रक्तयारिणा ॥ २०१५ ॥  
सर्वथा सुखमाप्नोति भोजयेद्धिभक्तकम् ।  
सूचिकाभरणो नाम रसः परमदुलभः ॥ २०१६ ॥  
र घु , र , दो , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध भैनसिल और शिंगरिफ समभागलेकर सयं विषसे मदनकर सुगवराकर गोलीय बनाकर रखछोके । इनमेंसे १-१ गोली नामि, हृदय अथवा तालुप्रदेशमें कुशसे चोरकर अदरकनेजलसेसाथ मिलाकर घणघणनेसे सन्निपाती तत्क्षण नेत्रोंको खोलदेगा । उससमय १ गोली अदरकके रसकेसाथ घिसकर रित्तादेना इससे एकान्तत अच्छा होजायगा । अत्यन्त भूखलानेपर दहीमात खानेको देना ॥ ४६४ ॥

### ४६५ सूचिकाभरणरसः ( दशम )

रुचक्रश्चाप्रकं गन्धं तालकश्च मनःशिला ।  
खपरी शिखितुल्यश्च नेपालं विषटङ्गुणम् ॥ २०१७ ॥  
दत्तं सन्धधक्षेत्रं सर्वतृपयन्तु पारदम् ।  
मधूकबीजतैलेन मर्दयेद्विषसत्रयम् ॥ २०१८ ॥

दोलायन्ते पचेद्यामं तथीत्या खल्वमध्यगम् ।  
कृष्णसर्पस्य पित्तन भावयेद्विषसत्रयम् ॥ २०१९ ॥  
ब्रह्माद्वारं धुरस्मृष्टे गुञ्जामानं प्रदापयेत् ।  
जम्बीरस्य जलं देयं सन्निपातं निहन्ति च ॥ २०२० ॥  
हिकां मूर्च्छाञ्च कम्पञ्च वाधिर्यं मूकतां तथा ।  
ऊर्ध्वश्वासञ्च कासञ्च धनुर्वातं नियच्छति ॥  
सूचिकाभरणो नाम प्राणिनां प्राणदायकः ॥ २०२१ ॥

वा , व रा , सन्निपाते । बसवराजोय सूचिकामुख इति नाम ।

भाषा—छालनमक, अप्रकभस्म, शुद्ध गन्धक, हतिताल, भैनसिल, खपरिया, तुल्य, जमालगोटा, घटनाग, मुहागा, शिपरिफ, संधानमक सब समभाग और सबरी बराबर शुद्ध पारा लेकर वारीकचूर्णकर परिको अच्छीतरह मिलाय महुषदे-थीजोंकेतैले ३ दिन मर्दनकर उबोतीलेसे ३ दिन दोलायत्रसे पकावे । फिर दोदिन कालेसर्पकेपित्तसे मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलीय बनाकर रखछोके । इनमेंसे १-१ गोली ब्रह्मरन्ध्रमें चोरा देकर जम्बीरकेरसमें घिसकर मर्दनकरनेसे सन्निपात, हिचकी, मूर्च्छा, कम्प, बहिरापन, गुंगापन, ऊर्ध्वश्वास, कास, धनुर्वात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४६५ ॥

### ४६६ सूचिकाभरणरसः ( एकादशः )

मृताभ्रमेकमैकान्ततीक्ष्णताप्राप्तमृतं समम् ।  
पारदो गन्धकस्ताप्यं नागवल्ली समसमम् ॥ २०२२ ॥  
सर्वं निर्गुण्डिकाद्रावे मर्दितं खल्वेकं ततः ।  
भृङ्गी पुनर्नवा पाठा चित्रक वालकाऽमृते ॥ २०२३ ॥  
अकंचतूरतुलसीमुण्डोजम्बीरलाङ्गुलम् ।  
कुमारी नागयल्ली च द्वयैरेपां विमर्दयेत् ॥ २०२४ ॥  
काचक्षुष्यन्तरे क्षित्वा विलेप्य वल्लभसूचिकाम् ।  
दिनैकं घालुकायन्त्रे पचेन्नोत्वा च चूर्णयेत् ॥ २०२५ ॥  
मत्स्यस्य च वराहस्य कमठ्या मोहिपस्य च ।  
अजायाश्च मयूरस्य कृष्णसर्पस्य कोकुटैः ॥ २०२६ ॥  
मनुष्याभ्यधमण्डूकजातैः पित्तैश्च भावयेत् ।  
क्षापयेत्सूचिकाग्रेण सर्वेषां सन्निपातिनाम् ॥ २०२७ ॥  
श्लोहशूलमोदराणाञ्च ग्रहण्यातांतिसारिणाम् ।  
धनुर्वातं कम्पवातं हिकावाधिर्यमूकताः ॥ २०२८ ॥  
कौन्त्य हिमोद्धृथासाश्च ह्यपरमाराऽतिविघ्नमान् ।  
तत्क्षणेन निहत्याशु यथेच्छं पथ्यमाचरेत् ॥ २०२९ ॥  
नारिकेलोदकं दाहे दृष्यच्च पथ्यमाचरेत् ।  
तृपातं शीतलजलमिधुखण्डानि भक्षयेत् ॥  
सूचिकाभरणो नाम सर्वरोगविनाशकः ॥ २०३० ॥

र. क यो , सन्निपाते ।

भाषा—अप्रक, सुवर्ण, वैकान्त, फोलाद, ताम्र इनकीभस्में, शुद्ध बटनाग, पारा, गन्धक, सोनाभासी, नाग और बह्मभस्म सब समभागलेकर निर्गुण्डी, भरता, पुनर्नवा, पाठा, चित्रक, सुपन्धवाला, मीलोय, आक, धतूरा, तुलसी, गोरखमुण्डी,

जंभीरी, करिहारी, पीकुंवार और पानोंके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ४-५ पण्डमिदीहीनुं आतनीसीधीमें भरके मुंहमन्द-  
कर सुगनेपर एकदिन पाउडावन्त्यमें पकावे । स्वाह्मशीतलोने  
पर निकालकर मछली, सुअर, बडुही, भेमा, बकरी, मोर,  
कालासांप, सुर्गा, मनुष्य, घोडा, बुत्ता, मैदक, इनके यथात्म  
पित्तोंसे १-१ दिन मर्दनकर रगछोड़े । इयमेंसे सूईके अग्रभागसे  
लेकर समयोचितानुमानेमाय देनेसे समस्तपशुप्राण, श्लेह, शुल्म,  
उदररोग, ग्रहणी, अतिमार, धनुर्बात, कम्पमात, ह्रिचकी, बहिरा-  
पन, गूणासन, कुवन्नाप, टंडासीना, ऊर्ध्वभास, अस्मार, विग्रम  
इनसबको यह नटकरताहै । अत्यन्त मूललग्नेपर यथेष्ट पच्यदेवे ।  
अत्यन्त दाह मान्द पङ्गेपर दहीभातेकर नारियलजाजल पिलाने  
और ईश्वरीरह चुंलनेको देवे ॥ ४६६ ॥

### ४६७ सूचिकाभरणरसः ( द्वादशः )

शुल्यं धर्म्मं तथा नागं क्रमेण भागवृद्धितः ।  
सर्माशममूर्तं देयमर्कक्षीरणं भाषितम् ॥ २०३१ ॥  
अन्यथेप्रलिकायने भ्मापयेदेकराप्रकम् ।  
स्वाह्मशीतलतां प्राप्तां धूममृष्यगमाहरेत् ॥ २०३२ ॥  
गरलं मुद्धसर्पस्य धूमं सम्मर्द्य खल्यके ।  
सूचीमुखाम्रेण पुनस्तालुमूले तु दापयेत् ॥ २०३३ ॥  
निश्चेतो चेतनाकारः सूचिकाभरणार्पितः ।  
पार्यतीकान्तनिर्दिष्टः सद्यः प्रत्ययकारकः ॥ २०३४ ॥  
र. सु., परिणति ।

भाषा—ताम्र, बज्र और नाममन्त्र कमवृद्धभागसे लेकर  
सबको बराबर शुद्धपठनागमिलाकर आकषेदृष्टसे एकदिन मर्दन-  
कर अन्यमूर्तमें कन्दकर एकात घनमकरावे । स्वाह्मशीतलोने  
पर कारका धूमां धीरजते उतारकर श्लेषितकिचट्टए कालेगार्हे  
जहरसे मर्दनकर रगछोड़े । इयमेंसे सूईके अग्रभागसे लेकर ता-  
ह्यानमें पाउदेकर रसमें मर्दनकरनेसे गूराय निषेष्ट आदमी  
उठकर बैठजाताहै ॥ ४६७ ॥

### ४६८ सूचिकाभरणरसः ( त्रयोदशः )

यशयेकान्तयो भस्म प्रत्येकं निष्कसम्मितम् ।  
शुद्धादियं त्रिनिष्कश्च त्रिनिष्कं त्रुलिकापट्ट ॥ २०३५ ॥  
पञ्चनिष्कोऽग्निजारश्च सर्वमकश्च मेलयेत् ।  
तायङ्गमरमं पायमर्दयेदियमत्रयम् ॥ २०३६ ॥  
शाह्मसादिकयगं स्य शारनारंण भाषयेत् ।  
त्रयोविंशतिरापाणि यिमृष्य च पिशोष्य च ॥ २०३७ ॥  
ततो यिमृष्य दियमं शिषेदन्तकरण्डके ।  
मृतमज्जीयनाख्यां स्य सूचिकाभरणो रसः ॥ २०३८ ॥  
सन्निपातेन ताम्रेण सुमूर्धार्भुगनस्य च ।  
तालुनि प्रच्छयिष्याऽथ रसमेनं विनिशिषेत् ॥ २०३९ ॥  
गूढ्याऽतिगूढमया तांयामिप्रयाऽतिप्रयत्नतः ।  
ततस्तेनैव ते लिप्या निधानं सन्निषेदायेत् ॥ २०४० ॥  
ततोऽर्जमहराहं मुतमृष्यपुरीकम् ।  
लघ्वमञ्जरी प्रतापादयो क्षान्तायन्तं निषा मुद्गः ॥ २०४१ ॥

आयुष्मन्तं विजानीयादन्यथा चान्यथा खलु ।  
ततः शीताम्बुसम्पूर्णं कटाहे तं निषेदायेत् ॥ २०४२ ॥  
तत्र चोत्कथितं तांयमपनीयापरं शिषेत् ।  
याचमानममुं पश्चात्पापयेत्सतितं पयः ॥ २०४३ ॥  
दधि वा सितयोपेतं नारिकेलजलं तथा ।  
रम्भाफलानि दद्याच्च श्रियते स्तोऽन्यथा खलु ॥ २०४४ ॥  
लघ्वसज्जं प्रभाष्यते याचमानं फलादिकम् ।  
तस्मादाकृष्य तैलाक्तं तैलं यस्मादिभि हरेत् ॥ २०४५ ॥  
लेपयेद्गन्धकर्पूरापादतलमस्तकम् ।  
इत्यादिशिशिरे द्रव्यैः ससरात्रमुपाचरेत् ॥ २०४६ ॥  
कर्णाक्षिनासिकावक्त्रे शिषेपोताध्र्यं मुद्गः ।  
अष्टमेऽहनि सम्प्राप्ते ददुर्दुर्मूलजं रसम् ॥ २०४७ ॥  
सतितं पापयेद्देगमरतापितुं रसम् ।  
रसेऽयतारिते पश्चात्पापयेत् भोजनं दधि ॥ २०४८ ॥  
श्यासोच्छ्रासयुतं शान्त्यै मुक्तजीवनलक्षणैः ।  
कटाहे जलसम्पूर्णं निक्षिपेद्बोधलघ्वये ॥ २०४९ ॥  
लघ्वयोधं तमाकृष्य पूर्वयसमुपाचरेत् ।  
जीवित्वा यावदायुष्यं त्रियते तदनन्तरम् ॥ २०५० ॥  
शाह्मसा च तथा व्याघ्री करीरस्तिलपणिता ।  
रुद्रयागणिकामुस्ता हृदिऽऽङ्गोलमलिका ॥ २०५१ ॥  
अपामार्गः कणा स्वर्णं कटुतुर्ग्या च तिग्मिह्री ।  
शाह्मसादिकयगोऽयं सन्निपातहरः परः ॥ २०५२ ॥  
र. र. घ., र. को., सन्निपाते ।

भाषा—हीरे और वैदन्तडीभस्म ४-४ मासे, गूढादि  
६ मासे, नवमादर १२ मा., अम्बर २० मा., पारदमम गवरी  
बराबर लेकर १ दिनतक शुद्धमर्दनकर शाह्मसादिकयगोऽपनीये  
२१ दिन तक मर्दनकर युगाकर एकदिन युगापोटकर हाथीदाँतही  
हिसोमे रखछोड़े । मयहरमभिरागने मन्त्र मरणामम आदमीके  
तालुमें पाउदेकर बनुतपारीकमूर्तिके अग्रभागसे पानीमें दुधाकर  
उमके ऊपर शिरासय आवे उन्मा तालुमें मर्दनकर शाह्मसे तैल  
पोककर निर्वाग्यायनेसे युगादे । आपोहारके लगान्त दन्त और  
वेताब होकर वज्राहो शाह्मसोया और बाम्बार शिषो इपर  
उपर हिलावेगा उतममय नमस्तान चादिदे कि इयमें जीव  
काहीहै । अन्यथा मृग समस्ता । यशजयमको ईशानीगे  
मरीहूई कटाहोमें कैदादे । उगकापानी गरम होनेपर निहालकर  
दुसा टंडामरदे, इयकमको बराबर जारी रहने । पानी पीनेको  
माने लो छहर काल दुसा दूध अथवा छहर मिलादुमा दरी  
अथवा नादितकाजत्र और केनेका पत्र देवे । इयमें उन्मा  
करनेसे रोगो मरगदगा इयान्तर प्यत्र देवे । अज्योत्तर  
होग आनेपर जो कमादिक सगि सो वेवे और बहरीमेवे बरर  
निकालकर करारने तेकको चोकर कदन, केर और बडुही  
मन्त्र मरीरर लेय बररे । तेमे ६ दिवस ६ लोकेकगोमे  
उपरी रगछे । कन, आन, नाक और मुँह इन्मे टंडानीके  
पेने ३ । आठदिन ददुर्दुर्मो (मुन्गारो. व.) बरराय ररर



डालकर पिलावे, इससे रसकाप्रभाव मन्द पड़जायगा । इसके बाद खेयटमोजन और दही दे । रसकाप्रभाव कमहोनेपर यदि श्वासोच्छ्वास अधिक मानूम हों तो जलपूर्ण कड़ाहीमें बैठाने और पूर्वकीतरह उपचारकरें । इसतरह जितना आयु अवशेष होगा उतनेको भोगसर फिर शरीरत्यागकरेगा । काकजड़ा, अथवा मनोय, वनभाटा, करीर, हुहुर, इन्द्रायण, नागरमोथा, हल्दी, अडोलकीजड़, अपामार्ग, पीपल, धतूरा, कड़वीतुमरी, पुरानीश्मली, यह द्वात्रिंशदि गणहे ॥ ४६८ ॥

### ४६९ सूचिकाभरणरसः ( चतुर्दशः )

धातुपधातुपलराजमुक्ता-

रसाम्रकल्को भूशमर्दितोऽयम् ।

उन्मत्ततैलोद्भवागन्धयुक्तया

कर्के क्रमादष्टपुटे विपकः ॥ २०५३ ॥

तद्रूप भूधरयन्त्रविनिर्गतः

सकलपित्तधियोदधिफेनिलः ।

तिलसमोऽपि कृतान्तनिकृन्तनो

जयति चार्द्रकवारिविराजितः ॥ २०५४ ॥

स्वर्णं तारं त्रयुस्ताम्रं सीसकं तीक्ष्णपित्तले ।

संतेते धातवो मुप्याः कांस्यायाः रुचिमाः परे २०५५

महारसाश्चात्परसा विज्ञेया उपधातवः ।

पोडशैते यथाप्राप्त्या क्षिप्यन्ते रसकर्मणि ॥ २०५६ ॥

१. ( मा. ), सतिपाते ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, वज्र, ताम्र, नाग, फोलाद, पीतल, कांसा, फूल, जस्त, शिंगरिफ, सोनामासी, रुपामासी, कपल, तृतिया, कान्तपापाण, कान्तलोह, वैशान्त, नीलम, गोदन्ती, गन्धक, मैनसिल, तवकीहरीताल, कङ्कट, मुर्दासङ्ग, कसीस, फिटकरी, माणिक्य, पना, पुलराज, हीरा, गोमेद, लभनिया, अकौक, मार्जारस, फीरोजा, संगयशव, स्फटिक, जहरमोहरा, मुंगा, लाजवर्द, लालपत्थर इत्यादि रत्न, मोती, पारा, अन्नक इनवक्त्रमिस्में समभागलेकर धतूरेकरसे १-२ दिन मर्दनकर टिकड़ीबनाय सुखाकर शराबसमुष्टमें गन्धरु कुम्भपुटकी आबदे । ऐसे आठ आबें देनेकेबाद पूर्ववत् मर्दनकर फेपानोमें लपेटकर मृधरपुटकी आबदे । स्वाहशरीतलहोनेपर निकालकर गवालाभ पित्त और विष तथा समुद्रकेन और अम्बरकी १-१ भावना-देकर रखलोड़े । इसमेंसे तिलप्रमाण मात्रा अदरपके रखेसाय खाने तथा रक्तमेंसयोगकरनेसे भयङ्करसन्निपातको यह निवृत्त-करताहै ॥ ४६९ ॥

### ४७० सूचिकाभरणरसः ( पञ्चदशः )

रसं सर्षपिणं नामि धत्तूररसमर्दितम् ।

सूक्ष्मफ्रिण दातव्यं सन्निपातकुलान्तकम् ॥ २०५७ ॥

३. वि, सतिपाते ।

भाषा—पारदमस, सर्षपिण और कस्तूरी समभाग लेकर धतूरेरसे १-२ दिन मर्दनकर रखलोड़े । इसमेंसे सूचिके

अप्रमाणसे लेकर खाने तथा रक्तमें मिश्रणकरनेसे घोरसन्निपात निवृत्तहोताहै ॥ ४७० ॥

### ४७१ सूचिकाभरणरसः ( षोडशः )

चत्वारो रसभागाः स्युर्गन्धको द्विगुणस्तथा ।

चत्वारो रसकाङ्गागास्तर्धं नागवङ्गयोः ॥ २०५८ ॥

तीक्ष्णस्य हि तथा चैकं द्विगुणं हेमतारयोः ।

गुञ्जाचतुर्थ्यं वज्रं प्रवालञ्च चतुर्गुणम् ॥ २०५९ ॥

गोमेदकञ्च द्विगुणं मौक्तिकञ्च चतुर्गुणम् ।

सर्वांशमिलितात्पश्चात्पोडशांशान्नकायुतिः ॥ २०६० ॥

खलोदरे च सम्मर्द्य यावत्कजलसन्निभम् ।

नवसारेण संयुक्तं काचकूप्यां निधापयेत् ॥ २०६१ ॥

अग्निं प्रदीपयेत्तत्र द्वाविंशत्यहरेषु च ।

स्याद्भक्षीतलमुक्त्यर्थं चूर्णयेद्यत्नतः कृतम् ॥ २०६२ ॥

मत्स्यमाहिपमायूरपित्तेश्च शतभाविताम् ।

आजेनापि शतं दद्यात्पर्यारहयोरपि ॥ २०६३ ॥

ततोऽग्निगर्भं सर्वेषां समांशं मेलयेद्बुधः ।

ततः सिन्दूरवर्णं स्याच्छतवारश्च भाविताः ॥ २०६४ ॥

क्रोधिकृष्णाहिसम्भूतैः पित्तेश्च गरलैस्तथा ।

सञ्चर्यितं ततः शुष्कं ताम्रकूप्यां निधापयेत् ॥ २०६५ ॥

दाहदुग्धुभिनिर्वापयिषाणापटहवेणुभिः ।

देवद्विजयोगिबुद्धकुमारीमेरवान्मुलम् ॥ २०६६ ॥

पूजयेन्मतिमान्यैद्यत्नन कर्म समाचरेत् ।

सन्निपाते महाघोरं कालदृष्टे विपौल्वणे ॥ २०६७ ॥

शीताङ्गे दृष्टिनाशे च नाड्याश्च विपमे ग्रहे ।

स्मृतिधृतिमनोनेष्टे ह्रिकायाससमाकुले ॥ २०६८ ॥

मृच्छापक्षेन्द्रियवधे वैकल्ये नष्टचित्ति ।

यहनाऽथ किमुक्तेन सञ्जीवयति मानवम् ॥ २०६९ ॥

सूच्यग्रेण च दातव्यो नखदन्तान्तरेष्वपि ।

कारयित्वा तु जिह्वाग्रे पादाग्रे ग्रहरन्ध्रके ॥ २०७० ॥

दीयते शङ्खहृदये सर्वाङ्गे दाहशोणिते ।

मोहस्तु विनिवर्तते रसलक्षणमुत्तमम् ॥ २०७१ ॥

दधिभक्तं सुपुं देयं दुग्धहीनस्तु दाद्यनुत् ।

द्राक्षापर्यूरकं दद्यात्सर्वाङ्गे दाहसम्भूते ॥ २०७२ ॥

गाढमोहे समुत्पन्ने सिञ्चेत्क्षीरेण मस्तकम् ।

सूचिकामरणो नाम रसः सर्वज्ञसूचितः ॥ २०७३ ॥

र शं, सतिपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा ४ तोले, गन्धक ८ तोले, खपरिया ४

तोले, नाग और वज्रमस २-२ तोले, फोलादमस १ तोला,

सुवर्ण और रजतमस २-२ तोले, हीरामस ४ रत्ती, प्रवाल-

मस ४ तोले, गोमेदमस २ तोले, मोती, ४ तोले, अन्नक-

मस सबसे सोलहवाभाग लेकर सररी नोलकगन्धकीकर १६

वाभाग नवसादर मिलाकर ६-७ कपडिमिठी दोहड़ आतशीशीशी-

में भरकर बाहुकायन्यमें रख शराकासे गन्धकजारणकर मुंढ

चन्दर ३२ पहरी अग्निदेवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर चन्द्रोदयकी तरह शोशीरो फोड़कर ऊपरलगाहुआ सिन्दूर और नीचे रहीहुई भस्म निकालकर इकट्ठीकरले । सिन्दूरकेऊपर कुछ गन्धक या नव सादरकीभस्म रही हो तो उसे फेंकदे । फिर तत्पश्चात्तम और सिन्दूरको १-१ दिन मर्दनकर मछली, भैंसा, मोर, बरुआ, मनुष्य और सुअरकपित्तोंकी १००-१०० भावनाएँ देकर सक्की बराबर अम्बरमिलाकर फगीकालसाफको मोथयुक्तकर उसमा जहर और पित्तानिकालकर उनस १-१ भावना देकर तावेकी डिब्बीमें रखलेवे । नानातरहके वाचोविताथ देव ब्राह्मण योगी, कुमारी, भैरव और गुरुलोगोंका पूजनकरे । महाघोरसमिपात और भय डूसर्पदशमें शीताज्ञ, दृष्टिवध, नाडीका विषमगमन, स्मृति धुति और सन्नाहानाश, हिचकी, श्वास मूर्च्छा, विकृता इत्यादि चिह्नोंक उपस्थितहोनेपर सूचोक्त अग्रभागसलेकर नख और दातोंके अन्दर भयवा प्रहरन्ध, दाह, और हृदयप्रदेशमें कुचपत्र प्रवृत्तिसे रक्तमिलाकर उसमें शामिलकरनेसे समस्तअङ्गमें दाह और रक्ता निर्गमनहोनेलग और मोह निरुत होजाय उसवक्त समझना कि यह जीवेगा । अधिकमूलमनेपर दही, भात, द्राक्ष और खजूर पानकोदे । दूध सुखर भी न दे । दाह होनेपर मत्तपर दूधकीधाराअववा पोतेदे । इससे मृतप्रायभी अच्छाहोजाताहै ॥ ४७१ ॥

### ४७२ सूचिकाभरणरसः ( सप्तदश )

पारद गन्धर्क लोहं ताम्र रौप्यञ्च हेमजम् ।  
राजावर्तञ्च गगन तुल्यक हेममाक्षिकम् ॥ २०७४ ॥  
मिश्रञ्च मौक्तिकञ्चैव समभागानि कारयेत् ।  
व्योषकाद्येन सम्मर्धं धर्तुं कोलप्रमाणत ॥ २०७५ ॥  
निक्षिपेत्पुष्पसर्पस्य जठरे यदिका बुध ।  
आस्पञ्च सुदृढ कृत्वा मृत्तमाभाण्डे विनिक्षिपेत् २०७६ ॥  
सप्तधा वर्तयेत्तस्य भाण्डं बुद्ध्यामधिधयेत् ।  
त्रिदिनं तस्य चण्डाङ्गी पक्वया शीत समुदरेत् २०७७ ॥  
खल्वे व्योषाम्भुना मर्धं पाच्य यत्पूर्ववक्तिया ।  
मात्स्यमादिपमावूरनाकुलच्छागमेव च ॥ २०७८ ॥  
सूचिकाभरणं हि रस सर्वत्र याजयेत् ।  
पूजयेद्रसराजस्य गुरुणा शिखयोगिनाम् ॥ २०७९ ॥  
गणेश भैरवञ्चैव पूजयेष प्रयत्नत ।  
हस्तिदन्तमये भाण्डे निक्षिपेत्सुदृढं बुध ॥ २०८० ॥  
गूच्यमेण ददीतास्य प्रहरन्धे च बुद्धिमान् ।  
प्रलस्थाने च हाडुष्ठे स्नाययेद्बुधिर तदा ॥ २०८१ ॥  
मर्दयेद्दे सुतेल तु सूचिकाभरणे रसे ।  
पथ्यञ्च दधिमतन्तु हिमकर्पूरलेपनम् ॥ २०८२ ॥  
ईश्वरेण यया दत्ता धन्यन्तरिरयाऽप्रहीत ।  
धन्यन्तरि नमस्तस्य यश प्राप्नोति दुर्लभम् ॥ २०८३ ॥  
दक्षधेनु नरेन्द्रेऽय यशस्वी जायते नर ।  
तमेव प्रवृत्त कुर्यात्सूचिकाभरणो रस ॥ २०८४ ॥

अपमृत्युविनाशार्थमायुष्यवर्धनाय च ।

जनानां सुखरूपस्तु कथित शम्भुना स्वयम् २०८५  
र श, सन्निपाते ।

माषा—शुद्ध पात्र और गन्धक, लोह, ताम्र, रजत, सुवर्ण, राजवर्द, अम्रक, तुल्य, सुवर्णमाक्षिक, लसनिया, मोती इनकीभस्म समभागलेकर सबकी नीलवर्णकमालीकर त्रिकटुक कायसे १-२ दिन मर्दनकर बेरुआवर गोलिये बनाकर तत्क्षण मारहुए कालेवापके पेयमें डालकर मुहको अच्छीतरह रेशमके डारिसे सीकर मिर्चिवत्तनमें ७ घंटे लगाकर रखदे । फिर तमाम हण्डीपर बज्रमिष्टीसे ७ लेपदेकर मुहको अच्छीतरह बन्दकर । सुखचानेपर चूल्हपर चढाय ३ दिनकी कढ़ी आचदे । स्वान् शीतलहोनेपर निकालकर त्रिकटुककायमें एकदिन मर्दनकर घर बराबर गोलिये बनाय दूसरे सर्पके पटमें रख ३ दिनकी अग्निदेवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर गोलियोंको निकाल मछली, भैंसा, मोर, नकुल और यक्रेकपित्तोंसे १-१ दिन मर्दनकर गुरु, योगी, गणेश और भैरवकी पूजाकर हाथीदातकी डिब्बीमें रखजेवे । यन्निगावमें सुतावस्थाहोनेपर अग्ररन्ध्रमें रक्त निकाल सूच्यप्रमाणसे लेकर वर्षणकरनेसे सन्नाहो प्राप्त होया । इस प्रयोगमें इस बातका ध्यान रखलेकि बीरा लगनपर जहा रक्त निकले वहपर दवाका प्रयोगकरे । पानीनिकले तो निर्जीव समपकर उसपर मेहनत न करे । अत्यन्तसूख और दाह मालूम पङ्गेपर दहीभात पानेको देवे । चन्दन और कपूरका लेपकरे ॥ ४७२ ॥

### ४७३ सूचिकाभरणरसः ( अष्टादश )

तीक्ष्णं मुण्डार्कयैस्त्वनागपारदगन्धकम् ।  
ताप्याम्रालदिलास्लेच्छयिष्यैश्चान्तमौक्तिकम् २०८६ ॥  
सप्रसाल सम सर्वं सप्तधा भाषयेत्पृष्णक ।  
जयाजयन्तीनिगुण्डाभूमिजम्बूद्वयचित्रकं ॥ २०८७ ॥  
जम्भामृताष्टक्यापै काचकृष्या विनिक्षिपेत् ।  
सप्तमूलपटं कृत्वा सैरुतेऽग्निमधो दिनम् ॥ २०८८ ॥  
ज्यालयेद्रसराजं त शीत कृषीस्थमाहरेत् ।  
तद्वर्द्धेममृतं दत्त्वा विषत्रिकटुचित्रकं ॥ २०८९ ॥  
विजयाऽऽकलुषकार्द्वेक्ष सप्तधा भाषयेत्पृष्णक ।  
पित्तं मांदिपमायूच्छागकालस्नाप्येव ॥ २०९० ॥  
गरलेन च सिद्ध स्यात्सूचिकाभरणा रस ।  
यद्यप्रमाणमात्राऽय यवत्रिकटुसाम्युना ॥ २०९१ ॥  
सन्निपातेषु सर्वेषु शैत्यस्तेद्रमगपक ।  
दातव्या मृदतायाञ्च दन्तजिह्वागलप्रहं ॥ २०९२ ॥  
सूच्याऽङ्गुष्ठनरे मित्वा तालुके च विनिक्षिपेत् ।  
प्राणे वा कार्षिकं धारां ताडुकाङ्गुष्ठमूला ॥ २०९३ ॥  
दातव्या जलयागश्च त्रय कार्पाऽम्बुयोगिक ।  
महादेवादितथाऽय रसा रसमहादधौ ॥ २०९४ ॥

र श, सन्निपाते ।

**भाषा**—कोलाद, सुण्ड, तांवा, अकीक, नाग इनकीमस्में, शुद्ध पारा और गन्धक, सोनामाखी, अग्रक्रमसम, शुद्धहरिताल, मेनसिल, शिंगरिफ, यक्षनाग, पैकान्त, मोती, प्रवाल इनकीमस्में समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर भांग, जैती, निगुण्डी, जामुन, चित्रक, जंभीरी, गिलोय, अदरक और त्रिकटु इनके यथासम्भव स्वरस अथवा बाथोंसे ७-७ भावनाएं देकर आत-शीशीशीमेर मुंहबन्दकर समस्तपर ६-७ कपड़मिट्टीकरदे । सुखनेपर बालकायग्रमे उल्टी रख एकदिनरातकी आंवेदेवे । स्वाद्रशीतलहोनेपर निकालकर इससे आधा शुद्धबछनाग मिलाकर बछनाग, त्रिकटु, चित्रक, भांग, अकल्मषा और अदरकके रसोंसे ७-७ भावनाएं देकर भेंसा, बकरा, सुअर, मछली इनके पित्त और सर्पविषसे १-१ भावनादेकर रखछोड़े । इसमेंसे एक-यवप्रमाण मात्रा ज्वर और त्रिकटुकायग्रमेया सन्निपातमें देनेसे रंजपसीना, प्रलाप, मूढता, दांत, जिह्वा और गलेरा जकड़ना घेघ निवृत्तहोते हैं । अत्यन्त वेहोशी होनेपर अंगूठा और तालुमेंसे रफनिकालकर उबस्थानपर धपणकरनेसे जल्दी होशमें आजाता है । अत्यन्त दाह मादुस पड़नेपर काबीकी घारा देवे और जलकायोगकरावे ॥ ४७३ ॥

### ४७४ सूचिकाभरणरसः ( उन्विशः )

माक्षीकनीलाज्जनतुल्यकाम्र-  
शिलाहिल्लरसायनामि ।

सयजमुक्ताफलोविद्रुमाणि

खल्ये विनिक्षिप्य विमर्दितानि ॥ २०९५ ॥

हरिम्रियकोहृत्जोयुतेन सगन्धकेनाल्पपुटानि चाष्टौ ।  
द्याज्जलस्ये कमठाप्ययन्ने यन्ने पचेद्भ्रूधरसस्यकेच  
मत्स्यकासयाराहमयूरच्छागपित्तविषफेनसमेतः ।

आर्द्रकद्रवनिबद्धगुटीकस्सत्रिपातरिपुरेय रसेन्द्रः ॥

कपूरेणाद्रकेणाऽय देयः श्रेयः कृते रसः ।

अथवा योग्यमास्थेयं हृत्प्राऽयस्यां गतीयसीम् २०९८

रोगियोगीन्द्रदेयिजगुयसुरभीयोगिनीविषकन्या-

अभ्यर्च्याऽमृन्मृगकुलमकुलक्षिपिष्टुमृगवज्रात् ।

ध्यायन्भूताधिनाथं शुचिपटपिहितं पट्टमध्यास्य धीरो,

यिप्राशीर्वादपूर्य रसमयस्सं माप्रयोपाद्दतीत् ॥ २०९९ ॥

८. ( मा. ), सन्निपाते ।

**भाषा**—सोनामाखी, सुरमा, तुल्य, अग्रक, मेनसिल, हरिताल, शिंगरिफ, होरा, मोती, प्रवाल, इनकीमस्में सम-भागलेकर बारीकगुणंकर आकरीजकडीछात और शुद्धगन्धक अठमांस मिलाकर पक्षुरेदेलेओ एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय वारावठमुटमें बन्दकर कुम्मापुटकी आंवेदे । ऐसे ८ अदिनेदेके बाद कल्पायग्रमे राग पहलगन्धकभारणकर पक्षुरेदेलेओ मर्दन-कर गोलाबनाय पछे पानोंमें छपेटकर मूत्रपुटकी आंवेदे । स्वाद्रशीतलहोनेपर निकालकर मच्छी, भेंसा, सुअर, मोर, बकरा इनकेपित तथा जरीम और अदरकदेरगोंसे १-१ दिन-

मर्दनकर १-१ रतीकी मोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली योगी, देव, द्विज, सुक, गौ, योगिनी, वैद्य और कन्या-ओंका पूजनकर पक्षी, कुलदेवता, नरुल, व्याघ्र, वानर, सूत-नाय इनको प्रणामकर अच्छेबख पहिनकर ब्राह्मणोंका आशी-वांद लेताहुआ कपूर और अदरककेसाय अथवा अवस्थोचिता-नुपानेसाय १-१ गोली लेवे । अत्यन्तदाहहोनेपर पित्तघटित तमामयोगोंमें जलभाराका प्रयोगकरे क्योंकि इससे पित्तघटित योगोंका बीर्य बढ़कर रोगको नष्टकरते हैं । जहां कोई दवा काम न करतीहो बहांपर पित्तघटितयोगदेनेसे इसतरहका दाह उत्पन्नहोताहै कि वह जलामिपेकविना शान्तहोना मुश्किलहोताहै और उसी गमीके बारे तमामथातुओंका क्षोपहोकर मनुष्यका मृत्युभी होजाताहै । तमामतरहकी चिकित्साएं करके जिससमय आदमी निराशहोतेहैं और रक्तप्रसरण पन्थहोताहै उससमयपर वैद्य अन्तिमकिया समझकर ऐसेप्रयोगोंका योग करताहै । उससमय तमामथातुएं शुष्कहोजातीहैं और यह एक जल्तीआग शरीरमें दायिलहोतीहै तब जलसेकके अतिरिक्त उसका और इलाजही क्याहै ? इसीलिये उस ज्वालाको शान्तकरनेकेलिये बाष्पा-भ्यन्तर शीतकिया खचागीसे करनी पड़तीहै । रिक्तोत्त-होनेकीवजहसे अत्यन्त विक्रिया न हो इसलिये तैल अथवा घीका अभ्यग्न पढिके कियाजाताहै । इस जलामिपेकका अत्य-न्तसीतने कपना, मलमूत्रकात्यागहोना, यथास्थितमज्जाकी प्राप्ति ये मर्द परिणामहैं । यदि ये परिणाम नजर न आवें तो उसे मृतावस्थ समझकर छोड़दे उसपर अन्य किसीभी दवाका प्रयोग न करे ऐसा यह आयुर्वेदका सिद्धान्तहै । इसको समझकर काममें लावे । वैषकी थोड़ीसी गुलती और असायानीपर रोगीका मरना जीना निर्भरहै इसलिये बहुततमालकर कामलेवे ॥

### ४७५ सूचिकाभरणरसः ( विंशः )

स्वर्णं तारमुजङ्गयद्गदुरदं फेनायस् शुल्फकं,  
ताप्यं तालयुतं सुमर्दितदृढं सृतेन्द्रमिध्रीरुतम् ।  
धारम्वारकटुप्रयान्नितमिदं शृङ्गोविषं दृङ्गणं,  
सम्मार्यं खरलेन तापितमिदं निम्बूरसे जांरितम् ॥  
छागोत्थेन युतं वषाहृदिखिजे मांस्त्वेन पित्तेनयुक्तं,  
एकेकेन समाहृतेन नियतं पित्तेन सम्माधितम् ।  
राजीमानसमं निहन्ति सहसा दौषत्रयं दारुणं,  
सध्यानाशगतश हास्यनिरतं कालान्तकमपान्नितम् ॥  
सर्वोपायमिदा विघानविधिना मुक्तस्य घेघोत्तमैः,  
शून्यस्य प्रहितेन्द्रियस्य सहसा मुक्ती गतस्याऽधिकम्  
शीताङ्गस्य सितापयःसहचरं दत्ते पुनर्जीवितं,  
दक्ष योऽत्र स सूचिकाभरणकं सूच्यप्रमाणं रसम् ॥

८. ( मा. ), रसधारणद्व, सन्निपाते ।

**भाषा**—गुणं, रक्त, नाग, बह, होद, ताप, पारा, इनकीमस्में, शुद्ध शिंगरिफ, अजीम, गुपनेमाधिक और हरि-  
ताल समभागलेकर इधे मर्दनकर त्रिकटु, गौंमिया, दूराण,

नीचु इनके श्रौंसे तत्तखल्वमे ७-७ भावनाएं देकर बकरा, सूअर, मोर और मछलीके पित्तोंसे १-१ भावना देखे राईप्रमाण गोलियें बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरसप्रशुतिके रससे सुईके अग्रभागमें आवे इतना खिलने और रक्तमें संयोग करनेसे सज्जानास, मद्दादास्य और मरणान्तकम्पयुक्त, तथा इन्द्रियोंकी शून्यतासहित सन्निपातवो यह दूरकरताहै । जब दम्भादि उपाय और औषधोपचार निष्फल होनेसे असाध्य समझकर वैद्यलोगोंने छोड़दियाहो और मुदासमझकर ज़िमीन-परभो उतारलियाहो उससमय इसकेप्रयोगसे पुनर्जीवितलब्ध-होताहै । शीताश्रम शकुरुक दूधकेसाथ देवे और जलसेकादि सत्र यथोचित उपचार करे ॥ ४७५ ॥

### ४७६ सूचिकाभरणरसः ( एकविंशः )

हृत्वोन्मत्तकतैलधृतजरसैः सम्मूर्च्छितं गन्धकं, कृत्वा हिङ्गुलोहताम्रकनकं सर्वाधिकञ्चाऽमृतम् । पित्ते भांघय नागराजगरसै र्दधात्विदोषे ज्वरे, गुञ्जामात्रमिदं सितामधुयुतं सेव्यञ्च पथ्यं दधि २१०३ र. क, सन्निपाते ।

भाषा—कालेयदूरेके तैल और पतोंकेरससे गन्धकको पकाकर शुद्धशिरारिफ, लोह, ताम्र और सुवर्णमस्य बराबरप्रमाणसे मिलाकर सबकीबराबर शुद्धबलनाग मिलाय बयालाम पित्तोंकी भावना देकर अदरस और तुलसीकेरसोंकी ३-३ भावनाएँ देकर १-१ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली शकूर और मङ्गुकेसाथदेनेसे यह समस्तसन्निपातोंको दूरकरताहै । अत्यन्तमूत्रलगनेपर दहीभात देना ॥ ४७६ ॥

### ४७७ सूचीमुखरसः ( प्रथमः )

रसेन ताम्रपत्रकं विलिप्य गन्धकेन च, क्षिपेत्तु सूरणोदरे सुवेष्टय गोमयेन तम् । पचेत् तं महापुटे सुशीतलं त्रमुदरेत्, विपाश्रिपित्तगन्धके विमृष्टं तं पचेद्विन्म ॥ २१०४ ॥ शरायसम्पुटे रसः सुरकरूपमेति सः, रसस्तु सूचिकामुखो निरूपितोऽस्य तण्डुलम् । द्वादीत वातशान्तये कफाग्निमान्द्यनुत्तये, यथोक्तभक्तभोजनं त्यजेत् चाम्बराजिकं ॥ २१०५ ॥

र ही, वातव्याधौ ।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धककी नीलगर्णकजलीकर जड़लीसूरणके रसमें पीठपर चतुर्गुणित मण्टकनेची ताम्रपत्रोंपर लेदेकर सुलाकर पुष्टजालीसूरणमें रफकर ६-७ कपड़मिट्टीदेकर मद्दापुट्टी आवेदे । स्वाश्रशीतलदोषेपर निमालकर बलनाग, चित्रक और गन्धक प्रत्येक ताम्रके बराबर मिलाय पाचोंपित्तोंसे १-१ दिन मईनकर गोलाबनाय शरायसम्पुटमें बन्दकर एक-दिनकी अभिदेवे । स्वाश्रशीतलदोषेपर जालप्रचरी भस्मको निकालकर रखओड़े । इसमेंसे १-१ पावल तत्तरीगहणपुत्रानके-

ताथदेनेसे वात और कफव्याधि, मृन्दाग्नि इनको यह नष्टकरताहै । इसमें खड़ी चीजें और राई न खावे ॥ ४७७ ॥

### ४७८ सूचीमुखरसः ( द्वितीयः )

सूतं गन्धकतालकं मणिशिलां ताप्यं शुभं तुत्यकं, जैपालं विपटङ्गुणं मधुफलं कृत्वा समांशं दृढम् । कृत्वा कज्जलिकां विगोवल्गणफणेः पित्तैश्च सम्भावये-, त्सिन्धवा सीसककूपिके रसवरं सूचीमुखं नामतः ॥ ब्रह्मद्वारचिकीर्णलोहितलवं शुल्लैकमानं ददे-, कृत्वा सम्पुटयदतन्द्रिकधनुर्वीतं सशाखाहिमे । क्वासं श्वासमरोचकं प्रलपनं कम्पञ्च हिकामयम्, सूक्तं यधिरत्वमुन्मदमपस्मारं जयेत्तत्क्षणात् २१०७ र. र स, र को, यो. सं., र क यो, र. शि, सन्निपाते । र. शि. सूचिकाभरणेति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल, मैनासिल, सोना-माखी, तुत्य, जमालगोटा, और बलनाग, भुनासुहागा, महुआ समभाग लेकर धातुओंकी नीलगर्णकजलीकर सबबीजोंको मिलाय जहरीकालेसरोंकेपित्तसे १-२ दिन मईनकर शीशीमें रखओड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती ब्रह्मरन्ध्रपर पाछदेकर रक्तमें वर्णभरणसे धनुर्वात, शीताश्र, कास, आस, अश्वि, प्रलाप, कम्प, हिका, मूकता, बधिरता, बन्नाद, अपस्मार इनसबको यह उत्क्षण नष्टकरताहै ॥ ४७८ ॥

### ४७९ सूचीमुखरसः ( तृतीयः )

सौवीरं द्विगुणं निधाय तरणिक्षीरे घटे ओहले, ब्राह्मं नागमनुक्षिपेत्तुतरं क्षुण्णं कृतं मज्जितम् । तद्वन्यं परिरुद्धय भूमिनिहितं सन्दृष्टमानं समु-, कृत्वाऽऽश्चर्यं विनिक्षिपेन्मृतरसं तत्पादभागं भिषक् पिष्टेः खल्वतले भवेद्भ्रसपरः सूचीमुखो मस्तके, सूर्यप्रेण निवेशितोऽद्भुततरं सौवीरयोगोज्जयेत् । तद्वाशैत्यसुसन्निपातपथनापस्मारभूतप्रहान्, दध्यध्रे ससितं द्वादीत गदिने शीतोपचारा हिताः ॥ र. घ, र ल., र का. सन्निपाते ।

भाषा—मिट्टीके चिकने बर्तनमें दोतोले घुरमाडाखे और ब्राह्मणजातिके एकनाम्के ( सुकास्यप्रभा ये च कपिला ये च पत्र्याः । सुगन्धय सुवर्णाभास्ते जात्या ब्राह्मणा स्मृताः ॥ ) छोटे ० टुकड़े करके डालकर आवेकेदूधसे टुकड़े इक्वेलायक बर्तनको भरके बज्रमिट्टीसे सुंढेबन्दकर जियोनमें गाड़दे और ऊपरसे रातदिन अग्नि जलावे जिसमें कि घड़ेका तमाम पदार्थ जलकर राख होजाय । स्वाश्रशीतलदोषेपर निकालकर इमने चतुर्गुणित पारदमस मिलाकर रखओड़े । इसमेंसे सुईके अग्रभागसे लेकर खिलानर काञ्चीपिलावे और रक्तमें प्रवेशकरे तो तन्द्रा, शीताश्र, सन्निपात, कातबिहार, अपस्मार, भूतमह ये सब नष्टहोतै । होश आनेपर अत्यन्तभूख मालूम हो तो शकुरेसाय दहीभावेदे । दाह मालूम पड़ेनेपर शीतोपचार करे ॥ ४७९ ॥

**४८० सूतभस्मयोगः ( प्रथमः )**

विश्वमैरण्डतैलेन हिङ्गुसौवर्चलान्वितम् ।

सूतसूतकसंयुक्तं भक्षितं सर्वशूलहृत् ॥

पक्तिशूलं तथैवाभद्रवशूलं विनाशयेत् ॥ २११० ॥

व. रा., शूलधिकारे ।

भाषा—सौंठ, एण्डतैल, भुनीहोंग, सप्रल, इनकेसाथ पारे-कीभस्म उचितप्रमाणमें देनेसे पक्तिशूल, अभद्रवशूलप्रभृति सम-स्तशूल नष्टहोतेहैं ॥ ४८० ॥

**४८१ सूतभस्मयोगः ( द्वितीयः )**

शङ्खपुष्पीवचाग्राहोक्तुष्टेलाजरसैः सह ।

सूतभस्मप्रयोगोऽयं रक्तिकाद्वयमानसः ॥

सर्वापस्मारजाशाय महादेवेन भाषितः ॥ २१११ ॥

र. सं., रसायनसं., र. घु., र. चं., र. म. मा., र. का., घ., र. र. दी., अप्समारे ।

भाषा—शङ्खाह्वी, वच, माष्टी, शूठ, इलायची, मंडाश्रींगी, इनके स्वरस अथवा काथोंसे २-२ रत्ती पारदभस्म देनेसे सब-तरहके अपस्मार नष्टहोतेहैं ॥ ४८१ ॥

**४८२ सूतभस्मयोगः ( विस्फोटकारिः ) ( तृतीयः )**

शुद्धचीनिभ्यजैः काथैः खदिरेन्द्रयवाभ्युना ।

कपूरत्रिभुगन्धिभ्यां युक्तं सूतं हिगुञ्जकम् ॥

विस्फोटं त्वरितं हन्याद्वायुर्जलधराग्निः ॥ २११२ ॥

र. घु., विस्फोटकारोगे ।

भाषा—गिलोय और नीमका काथ अथवा घैर और इन्द्र-जवका काथ इनमें कपूर और त्रिभुगन्धिका योगकर इनकेसाथ २-२ रत्ती पारदभस्म देनेसे समस्तविस्फोटक नष्टहोतेहैं ॥ ४८२ ॥

**४८३ सूतभस्मयोगः ( चतुर्थः )**

ससूतमदधिर्म स्यात्तिगिडीरुगुडोपणम् ।

फारव्यजाजीरुचकै मृद्वीकाक्षीद्रदाडिमम् ॥ २११३ ॥

यो. म., र. सं., र. र. दी., र. घु., अरोचके ।

टि०—रसेन्द्रमालहम्ये शुद्धसूतयोग इति नाम । र. म., र. म. पणयोः ॥ फारव्यजाजीरुचक मृद्वीकाक्षीद्रदाडिमम् ॥ इत्येत्ये स्वाने ॥ मृद्वीका जीरु कृष्णा मातुलह्नाश्वेत्येनाम् ॥ इति पाठः ।

भाषा—शमाक ( गुनाजी ), शुद्ध, मरिच, कारवी, जीरा, राप्रल, दास, अनार, मधु, इनकेसाथ १-१ रत्ती पारदभस्मका योग करनेसे अक्षि नष्टहोतीहै ॥ ४८३ ॥

**४८४ सूतभस्मयोगः ( पञ्चमः )**

लघुणाम्युरागुक्तं ससूतं यः पिबेन्नरः ।

तस्य नश्यति येगेन मृत्राघातात्प्रयोजकः ॥ २११४ ॥

यो. म., र. बा., र. र. दी., रसायनं, मृत्राघाते ।

टि०—सामान्येनैव नान्यथाप्रमाणमिति पाठ इत्यने । एतत्तु दीनिधायैव नान्यथाप्रमाणमिति पाठः ।

भाषा—मैगानरक, गुन्पनासा, त्रिफला और त्रिफला

इनकेसाथ पारदभस्म उचितमात्रामें देनेसे १३ प्रकारके मूत्राघात नष्टहोतेहैं ॥ ४८४ ॥

**४८५ सूतभस्मयोगः ( श्वयधुनाशनः ) ( षष्ठः )**

मण्डूरतीक्ष्णं सुलभञ्च मारितं

सूतं घलातोयनिघृष्टकम् ।

पुनर्नवाया घननादजेन

स्याद्भस्मसूतं श्वयधुपघाति ॥ २११५ ॥

रसेन्द्रमं, शोधाधिकारे ।

भाषा—मण्डूर, फोलाद, ताम्र और पारदभस्म समभाग लेकर बलाकेस्वरससे मर्दनकर गोलाघनाय गजपुटकी बांधदे । इसमेंसे १-१ रत्ती पुनर्नवा और काटिवालीबोलाईके रसकेसाथ-देनेसे श्वयधु नष्टहोताहै ॥ ४८५ ॥

**४८६ सूतभस्मयोगः ( सप्तमः )**

कान्ते गन्धकसहितं सूते जीर्णञ्च तत्पतं भस्म ।

सूपायन्त्रे निहितं साक्षाद्यस्मप्रहृतं स्यात् ॥ २११६ ॥

रसेन्द्रमं, यद्यपि ।

भाषा—शुद्ध सुसुक्षितपारेमें कान्तबीजका जारणकर पतुण-गन्धकजात्यकरके भस्म बनावे । इसमेंसे १-१ रत्ती समयो-चितानुगामकेसाथ देनेसे यह राजयक्ष्मको नष्टकरताहै ॥ ४८६ ॥

**४८७ सूतभस्मयोगः ( सुषानिधिरसः ) ८**

कणामधुयुतं सूतं मूर्च्छायामनुशीलयेत् ।

शीतसेकायगाहादि सर्वाङ्गे पीडनं हृदात् ॥

सुषानिधी रसोनाम मदमूर्च्छाविनाशनः ॥ २११७ ॥

र. सं., घ., र. प्र., र. क. ल., र. र. दी., र. घु., र. क., यो. र., नि. र., यो. म., यो. त., र. का., भा. प्र., वै. द., र. चं., रसायन-सं., मूर्च्छाधिकारे । र. का., मूर्च्छाहिरसस्य इति नाम ।

भाषा—पीपल और मधुकेसाथ पारदभस्मका योगकर उचितमात्रामें देकर जलशीधारा, अक्काह और सर्वाङ्गपीडन-करनेसे मद और मूर्च्छाका नाशहोताहै ॥ ४८७ ॥

**४८८ सूतभस्मयोगः ( शीतपित्तहरः ) ९**

यवानीशुडसस्मिथो भस्मसूतो द्विवल्लकः ।

शीतपित्तं निहत्यागु कटुतैलेन मर्दितः ॥ २११८ ॥

यो. म., र. का., शीतपित्ते ।

भाषा—मज्जासूत और शुद्धकेसाथ २ से ६ रत्तीतक पारद-भस्म देकर कटुतैली मर्दिताकरनेसे शीतपित्तनष्टहोताहै ॥ ४८८ ॥

**४८९ सूतभस्मयोगः ( दशमः )**

मुस्तापपट्टेकरण्डकापयै भस्मसूतकम् ।

गुजामार्गं मूर्च्छितं या देयं चातज्वरापहम् ॥ २११९ ॥

वि. र. म., चातज्वरे ।

भाषा—नागरमोषा, चित्तापपट्टा और एण्डरीजइन्-धायकेसाथ १ रत्ती पारदभस्म अथवा सूक्ष्मपारा देनेमें चात-ज्वर नष्टहोताहै ॥ ४८९ ॥

## ४९० सूतभस्मयोगः ( एकादशः )

खदिराष्टरयोगेन भस्मसूतो निहन्ति ताम् ॥२१२०॥

र. का, कोदराख्यममृिकायाम् ।

भाषा—खैर, त्रिफला, नीमकी छाल, परवल, गिलोय और अड़सेके कापकेसाथ १ से २ रत्तीतक पारदभस्मका योगकरनेसे मसुरिका नष्टहोती है ॥ ४९० ॥

## ४९१ सूतभस्मयोगः ( द्वादशः )

चिञ्चामामार्गशिग्रत्यकुरण्टीस्तुक्पलाशजैः ।

स्यजिंक्षारैर्भस्मसूतो जम्भाम्भोमर्दितो द्रवैः २१२१  
वन्त्युत्थैर्भक्षयेदस्मात्सर्वाजीर्णविनाशनः ।

रसे यत्र क्षारयोगस्तत्र क्षारः परिरुतः ॥ २१२२ ॥

र. क, अजीर्ण ।

भाषा—इमली, अपामार्ग, सहिजन, कटसौरैया, शूभर, पलाश और सजीके क्षारोंकेसाथ अथवा जमीरीकेरसकेसाथ अथवा दन्तीमूल स्वरसकेसाथ १-१ रत्ती पारदभस्म देनेसे समस्त अजीर्ण नष्टहोती है ॥ ४९१ ॥

## ४९२ सूतभस्मयोगः ( त्रयोदशः )

आटरूपनयपल्लवद्रव्यं पालिकं सरसभस्म वल्लुकम् ।

कर्पसम्मितमधुप्रयोजितं प्राश्य नाशयति रक्तपित्तकम् ।

र. कौ, रसायनसं, यो. र., नि र., छ. यो त, स्तूपिते ।

भाषा—अड़सेकेनवीनपत्तोंके १ पल स्वरसमें १ से ३ रत्ती तरु पारदभस्म और एकपद मधु मिलाकर प्रयोगकरनेसे रक्त-पित्त नष्टहोता है ॥ ४९२ ॥

## ४९३ सूतभस्मयोगः ( चतुर्दशः )

दशमूलकपायमिधितं भयवीजस्य च भस्मकं परम् ।

दशपिप्पलीचूर्णसंयुतं त्रयजातज्वरनाशकारकम् ॥

चि. क, र क ल, र र. दी, क्रिम्यधिकारे ।

टि०—दशमूलीजलयुत सप्त विंशसु योनेदिति र क ल, र र दी पलयो योगं कथितोऽस्ति परन्तु पिप्पलीयुक्तदशमूलकपायस्याऽधिकार्योपपत्त्यादेक एव योगो बोध्यः ।

भाषा—दशमूलकेकाठमें १० पीपलचाचूर्ण और २ रत्ती पारदभस्म मिलाकर देनेसे त्रिदोषप्रसन्निपात नष्टहोता है ॥ ४९३ ॥

## ४९४ सूतभस्मयोगः ( पञ्चदशः )

रसभस्म वल्लुमानं लीढा मधुना पिबेदनु क्षौद्रम् ।

कोष्णाभ्युना समेतं स्थूल्यं मेद.कृतं जयति २१२५

यो. र, वै. क., वै. चि., व रा, रसायनसं., मेदोदोरो ।

भाषा—१ से ३ रत्तीतक पारदभस्मको मधुकेसाथलेकर कटुष्णापानीमें मधुका शरव व पीनेसे मेदसे जायमान स्थूलता नष्टहोती है ॥ ४९४ ॥

## ४९५ सूतभस्मयोगः ( षोडशः )

हिङ्गुशुण्ठीयवक्षारपथ्याकृष्णाविडाम्निभिः ।

कुप्ताग्निमन्यरचकैः पुष्कलेन्द्रस्य धाम्बुभिः ॥

हृद्रोगमग्निमन्दत्वं सूतः पीतो विनाशयेत् ॥ २१२६ ॥  
शे. शा., हृद्रोगे ।

भाषा—हींग, सोंठ, यवक्षार, हर्द, पीपल विडनमक, चित्रक, कुठ, अरणी, सचल, पोहकरमूल, बुरैयाकीछाल, इनके-काढ़ेकेसाथ १-१ रत्ती सूतभस्मका योगकरनेसे हृद्रोग और मन्दाग्नि नष्टहोती है ॥ ४९५ ॥

## ४९६ सूतभस्मयोगः ( सप्तदशः )

भस्मसूतमजाक्षीरैः कणानिष्कैः पलेः सह ।

व्योपगन्धकसौद्रैर्वा भक्षयेद्भक्षयेत्क्षयम् ॥ २१२७ ॥

र. र, र को, र क, ल, राजयश्मणि ।

भाषा—पीपल ४ मासे, मास, त्रिरड्ड, गन्धक और मधु अथवा बकरीकादूध इनमेंसे किसी एककेसाथ १ रत्ती पारदभस्म लेनेसे क्षय नष्टहोता है ॥ ४९६ ॥

## ४९७ सूतभस्मयोगः ( अष्टादशः )

सभस्मसूतटङ्कणं कणामजापयोयुतम् ।

फलनयैः कटुत्रयैः समाक्षिप्तैः क्षयक्षयः ॥ २१२८ ॥

चि. क., क्षये ।

भाषा—पीपल और बकरीकादूध, मधुयुक्त त्रिफला अथवा त्रिरड्ड, भुनामुहाणा इनमेंसे किसी एककेसाथ १ रत्ती पारद भस्मका प्रयोगकरनेसे क्षय नष्टहोता है ॥ ४९७ ॥

## ४९८ सूतभस्मयोगः ( ऊनविंशः )

सस्त्रीद्रमाघ्नजम्बूत्थं पिबेत्कार्यं रसाग्नितम् ।

अथ पित्तज्वरे प्रोक्तं रसमत्र प्रयुज्यते ॥ २१२९ ॥

र क ल, र. र दी., तुल्यायाम् ।

भाषा—आम और जासुनकीछालके हाथमें मधु मिलाकर उसकेसाथ एकरत्ती पारदभस्म देनेसे पित्तज्वर नष्टहोता है ॥ ४९८ ॥

## ४९९ सूतभस्मयोगः ( विंशः )

किराताष्टाऽमृताशुण्ठीकाथाह्वा पर्यटान्दयोः ।

पिप्पलीधान्यचूर्णाह्वा सूतो हन्त्यखिलादनादान् २१३०

पथ्यं निरामे दध्यन्नं सामे मण्डोऽथ यूपकः ।

रसवीर्यविवृद्धपथ्यं मृद्रीका चाथ दाडिमम् ॥ २१३१ ॥

र शि., सर्वरोगे ।

भाषा—चिरायता, नागरमोथा, गिलोय और सोंठ इनका-वाथ अथवा पित्तापह्वा और नागरमोथेका वाथ अथवा पीपल और घनियेकेचूर्णकेसाथ १-१ रत्ती पारदभस्म देनेसे समस्त-रोग नष्टहोती है । निरामन्याधिमें पथ्य दहीभात देना और साममें मांड अथवा यूप देना । रसका वीर्य बढ़ानेकेलिये दास अथवा अनार खानेको देना ॥ ४९९ ॥

## ५०० सूत्रराजरसः ( प्रथमः )

गन्धास्मासूतमुक्ताफलमखिलमिदं

वीजपूराभ्युदयं,

याम गाल विपाच्य लज्जमुपगत  
चौरमृद्वा प्रवेष्ट्य ।  
सिद्ध स्यात्सूतराजा निखिलगृहहर  
क्षौद्रकृष्णासमेता,  
यश्माण पाण्डुगुदजांश्च श्वसनकसनह-  
द्वधाधियाताभिहन्ति ॥ २१३२ ॥

र क्षयाधिकारे ।

भाषा—गुद पात और गन्धक मोती स्रज समभागकेर  
बिजोरकरसे मर्दनकर गोलाबनाय धाराबन्धमुमें बन्दहर एक  
पहर छत्रयत्रमे पढावे । स्वाद्विशातलहोनेपर मिगालर रख  
छोड़ । इसमेंसे ३-३ रती पपक और मबुकेसायदनेसे रान  
यहम्, पाण्डु बवासीर, आर, कास ह्रोग और वातरोग प्रभृति  
घमस्तोगोंका यह नष्टकरताहै ॥ ५०० ॥

### ५०१ सूतराजरसः ( द्वितीय )

गन्ध मृत शङ्खैरान्तयुक्त  
कापासास्थिकायता प्रासरैकम् ।  
घृष्टा गाल हेमजे ताग्रजे वा  
तारात्ये वा सम्पुटे निक्षिपेत् ॥ २१३३ ॥  
पश्चात्पूर्यात्कान्तपापाणलेप  
शुष्क कृत्वा सम्पुट त पुनैत ।  
भाण्ड स्थूले शुद्धसामुद्रपूर्ण  
शात पश्चात्सम्पुट घूणयेत् ॥ २१३४ ॥  
दत्त्वा गन्ध पादभाग विपञ्च  
विमर्द्वैस्तस्वेदयेद्ग्राहपात्रे ।  
दद्यात्पश्चाद्भावना नागवल्गा-  
नारै पिच्छद्वृण्णात्रैस्त्रिसप्त ॥  
प्रत्येक स्यात्सूतराजस्तताऽय  
सिद्धा याज्य सर्परागेषु युक्त्या ॥ २१३५ ॥

र दां सवरीग ।

भाषा—गुद गन्धक और पात शङ्ख और वैरान्तगन्ध  
समभागकेर बिनीलेकड़ायस एकदिन मर्दनकर गोत्रबनाय  
गुगुन ताम्र अथवा रतनरुम्भुमें बन्दकर कान्तपापाणका लप  
द्वहर धाराबन्धमुमें बन्दहर घटमात्र धर्म समुद्रमकराक्षमे  
रान ८ पहरकी आधे । स्वच्छालहोनेपर निष्कारर चतुर्णां  
गुदगन्धक और बटानग मिगालर विपञ्च और जदराक रान अथवा  
वायोम लोहकेपात्रमें १-१ दिन रुदनकर पान पित विरुद्ध  
और अरारुद्रगोम २१-२१ भाजना दहर १ १ रताजी  
गोलिये क्ताकर रागडाढ़ । इनमेंसे १-१ गोला समयोक्तो  
पानकपादनम् दां समस्तोगोंको नष्टकरताहै ॥ ५०१ ॥

### ५०२ सूतरासरसः

मृतस्य राक्षसमुख पश्चादापुष्पापनम् ।  
अङ्गात्यप्रसेदया पञ्चपिण्डतिसङ्ख्याया ॥ २१३६ ॥  
त्रयार्ता पुटानि स्पृक्ष्यध्वज्यन्मे पुट ।

राजिहारस्तो देया पुट द्वादशसङ्ख्याया ॥ २१३७ ॥  
कुमार्यैकादश पुट द्वाहनीटै देता ध्रुवम् ।  
पारिमद्वत्वा देया नवमी भृङ्गराजत ॥ २१३८ ॥  
उन्मत्तेन तथा सप्त विजयोत्यैश्च पद तथा ।  
विभावया तथा पञ्च चत्वारो भानुजामता ॥ २१३९ ॥  
सोमराज्या नयो देया त्रिफलाया ह्यनन्तया ।  
परुमेक त्रिकटुके लज्जेनेक एव हि ॥ २१४० ॥  
भूमिनागैस्तथा पञ्च देया प्रक्षालन त्रिना ।  
पर कृत्वा तथा मर्चा यथा स्याद्रेणुप्रदस ॥ २१४१ ॥  
तत सूत समुद्धृत्य रक्षयेत्सुप्रयत्नत ।  
रहस्य परम धर्म्ये शृणु शिष्य प्रयत्नत ॥ २१४२ ॥  
रतो रानसपन्नोऽय सुगुण शुल्वतारकम् ।  
मक्षयेद्विधिगन्धावन्समुद्र वाडवो यथा ॥ २१४३ ॥  
तत्पुन सूतराजाऽपि तालिताऽय यथास्थित ।  
कानुन मम चित्तेऽपि ज्ञानज्यातिरिद्ध पुन ॥ २१४४ ॥  
मक्षिता सूतराजेन धातन क्षुद्र यान्ति ते ।  
एतत्सर्प समाचक्ष्य तरयशाऽपि यतो यते ॥ २१४५ ॥  
ज्ञानज्यातिरराच-  
अगस्त्येन यथा पीत लीलपोदधिज जलम् ।  
देह न दृश्यते किञ्चिन्महावार्येण धीमता ॥ २१४६ ॥  
तथाऽय रसराजाऽपि महावीर्या महायल ।  
मुखगन्ध कथ तस्य रसरारस्य सम्भवेत् ॥ २१४७ ॥  
रससौचारक नात्वा तीक्ष्णखल्ले च प्रवेयेत् ।  
बहुपरि धातय रसा स्यात्प्रहरार्थक ॥ २१४८ ॥  
सुगुणारसरसदशातदा श्रेय पराक्षितम् ।  
पारदस्य पले देय सौचार मापमानकम् ॥ २१४९ ॥  
बह्विषागन सम्मर्द्य तता घटनगन्धनम् ।  
तस्य पारदराजस्य पूर्वार्चगुदिकाजरेत् ॥ २१५० ॥  
तेनैव रसराराऽपि वष्यते सुतसङ्ख्याया ।  
धातया त्रिविधाभारस्तदुक्तञ्च यथाभरे ॥ २१५१ ॥  
परमान भवेत्सुत द्विपल गन्धकस्य च ।  
उभया कज्जली कृत्वा भङ्गातकपलाष्टनम् ॥ २१५२ ॥  
पलानि कृष्णतेलेस्य चतुर्विंशतिसङ्ख्याया ।  
त्रिष्यन्त्रसक प्रस्थद्वितयञ्च तथा स्मृतम् ॥ २१५३ ॥  
प्राप्स्यकाले वसन्ते या धर्मराट्टे विधायते ।  
मक्षयेत्प्रातरुष्याय छागीदुग्धेन कर्पत ॥ २१५४ ॥  
यामार्द्ध स्थापयेदमे गुडिना पौधकेमरी ।  
माषाभराट्टिना दद्यात्पुष्पजलेन समुत्तमम् ॥ २१५५ ॥  
पथ्यमत प्रदातव्यमस्त्यक्षारत्रिजितम् ।  
जायते स्पाष्टकास्तस्य शाररे समगातरे ॥ २१५६ ॥  
एषर्विदारियाश्च श्वेतकुष्ठ प्रदायन्ति ।  
विदुमाभ्रमशेषण सर्वकुष्ठ विदारयति ॥ २१५७ ॥  
द्विदिग्निकामाङ्गाकामा गिरसस्तथा ।  
रुणप्रियसमे कृत्वा पपयेत्सुप्रयत्नत ॥ २१५८ ॥

इष्टिकाधर्पणं कृत्वा तत्र लेपो विधीयते ।  
तेन नश्यति तद्विन्दुस्तत्क्षणदेव निश्चितम् ॥  
रसोऽयं कुण्डकुहालः प्रोक्तश्च यतिकोविदैः ॥२१५९॥  
र. हा, उष्टे ।

**भाषा**—शुद्धपारेको लेकर अड्डोलनीजङ्गेरससे २५, चित्र-  
मूलस्वरससे १३, राईरेरससे १०, धीनुवारससे ११, शङ्ख-  
कीङ्गेसे १०, नीमकीछालकेरससे ९, अमरेरससे ८, काले-  
धनुकेरससे ७, भागमे ६, हल्दीसे ५, आकनेदूधसे ४, वाङ्ग-  
धीसे ३, त्रिफलासे २, त्रिफळ और खणसे १-१, विनाबोए  
हुए केतुआंसे ५ भावनाए देकर शुष्कमर्दनकरे । रेतीकीतरह  
होजानेपर यह राक्षसमुप पारद तेषारहोमा । इधमें सुवर्ण,  
तावा, रजत प्रधति समामभानु जीर्णहोजातेहै तोलनेसे इधमें  
वजन नहीं बडता यह बड़ा आधयेहै । परन्तु जिसतरह अग-  
स्त्यरूपिने हवीमें समुद्रकाजल पीलियाया और उनके शरीरमें  
बिसीतरहकी विलक्षणता नहीं हुईथी उसीतरह इसपारेमें भी  
अद्भुतशक्ति है । पर जब इससे कुछकार्य लेना हो तब इसका मुह  
बन्दकरना आवश्यक है । लाल सुरमेको लेकर फोसावकी तल  
वार पर धर्पणकर अधिक ऊपर रखे, आधेघरमें उसपर सुवर्ण  
सहस रेखा निकलेगी उसतमय उसे समझना चाहिये कि यह  
असलहै अन्यथा छोटा समझना । राक्षसमुप १ पत्रपारेमें १  
माशा लालमुरमा डालकर तप्तखरकमें मर्दनकरनेसे भारका मुह  
बन्दहोजाताहै । १ भाग इसपारेकी गोली बनाय अतुभभाग  
पारेमें रखकर आधेघर अगिर रखनेसे समस्तपारा बन्दहोजा  
यगा । उसपारेकी सत्कारविशेषसे नानातरहकी घाट्टए तैयार  
होतीहै । बद्धमुपपारा १ पल, शुद्धगन्धक २ पलकी नीलवर्ण  
बज्जलीकर मिलावेकाचूर्ण ८ पल, कालेतिलोंवातैल २४ पल,  
नीमकीछालरस २ प्रस्थ लेकर प्रीम अथवा वसन्तकालमें  
धूपमें बैठकर तप्तखरकमें धर्पणकरे । एजजीबहोनेपर रखछोड़े ।  
इसमेंसे प्रातः काल बकरीकेदूधकेमाथ १ कर्प देकर कुठीको धूपमें  
बैठावे, उदकीरोटी और काले तिलका तैल खानेको देवे खटाई  
और क्षारसे परहेज करावे । इसके प्रयोगसे ७ दिनमें उसके  
शरीरमें फोड़े उठेंगे और २१ दिनमें श्वेतपुष्ट नष्टहोयायगा ।  
इसका १-१ बिन्दुदनेसे समस्तपुष्ट नष्टहोवे । हल्दी, बल-  
माण, केशर, मकोयकारस, रेणुका, गठिवन सब समभागलेकर  
बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसको पूर्वैलमें मिलाकर श्वेतपुष्टपर  
ईंसे धर्पणकर लगानेसे तत्क्षण नष्टहोजाताहै ॥ ५०२ ॥

### ५०३ सूतवटी

कृत्वा गन्धकपिष्टिकाञ्च गगनं तापीरहोदुम्बरं,  
कान्तभ्रामकचूर्णसूतकसमं वैक्रान्ततालान्वितम् ।  
पथ्यान्वृषणराजवृक्षममरीकृष्णान्धतोयैः कृता,  
सिञ्जा सूतवटी निहन्ति सहसा सर्वाभिधातं महत् ॥  
यो. म, रसेद्रम, व्रणधित्तर ।

**भाषा**—शुद्ध पारा और गन्धक, अत्रक, सोनामाची,  
तावा, कान्त, भ्रामक, वैक्रान्त इनकीमल्ल, शुद्धहिलाल येसब

समभागलेकर पारेगन्धको तुलसीवगैरहकेरसकेसाथ घोटकर  
पिष्टीकरले फिर सबचीजें मिलाकर हों, पिष्ट, अमिलतास,  
अमरेले अथवा बन्द, सफेदकोहड़ा इनप्रत्येककेरसोंसे १-१  
दिन मर्दनकर १-१ रतीकी गोछियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह  
समस्तवाधाओंको नष्टकरतीहै ॥ ५०३ ॥

### ५०४ सूतवररसः ( प्रथम )

सुतं ताप्रमयोऽप्रकञ्च कनकं नागं तथा वज्रकं,  
तुल्यांशं परिमर्दितं सुरवृतासत्त्वञ्च धात्रीरसः ।  
चारांस्त्रिगुहकन्यकास्वरसतो वासाम्बुता सप्तभिः  
सिद्धः सूतवरो जयेद्भुततरं रक्तं सपितं तथा २१६१  
गुञ्जायुग्ममितः सितामधुयुतो वासाम्बुखण्डान्वितो,  
वा वासारसशर्कराघृतयुतो लाक्षारसेनैव धा ।  
चातुर्जातरुणारूपकशिवाधानीसितासौद्रयुक्तः,  
पथ्यैः क्षौद्रसितान्वितैः सुमधुरैः पित्ताक्षशान्तिप्रदैः ॥  
र, रक्षपिते ।

**भाषा**—शुद्धपारा, ताव, सोह, अप्रक, सुवर्ण, नाग और  
वज्रमस १-१ भाग लेकर सबकीबराबर गिलोयमस डालकर  
आवले और पीडुगारके स्वरसोंसे ३-३ भावनाए देवे । फिर  
अइसेके रसकी ७ भावनाए देकर २-२ रतीकी गोछियें बना-  
कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शक्कर, मधु (१) बज्जसेका  
रस और शक्कर (२) अइसेका स्वरस, शक्कर, और धी (३)लापका  
स्वरस (४) चातुर्जात, पीपल, अहुसा, हर्, आवले, शक्कर  
और मधु (५) इन अनुगानोंमेंसे जहा जिसकी औचित्य हो  
बहा उसकेमाथ देनेसे रक्षपित शान्तहोताहै । इधमें मधु और  
शक्करयुक्त मधुरपथ्यमें उचितहै ॥ ५०४ ॥

### ५०५ सूतवररसः ( द्वितीयः )

व्याघ्रीजदामुनिजदामुरसादरूप-  
कापांसिकाकृहृदिकास्वरसे विपक्वः ।  
गन्धोपलो रसयुतो द्रवितो नितान्तं  
लुब्धाम्बुगोक्षुरगतो मृदितः सुसिद्धः २१६३  
कणासिताव्यः करकाम्बजजाजी-  
शिवायुतो वा त्रिसुगन्धयुक्तः ।  
सितोपलेलामरिचाज्यजाती-  
सुचर्वलाकुप्युतस्तथैव ॥ २१६४ ॥

उशीरधान्योत्पलचन्दनैलाकणायुतस्तन्मधुयुतस्तु ।  
विनाशयेत्सूतवरो रसेशस्त्वचोचकं वान्तियुते प्रसह्य ॥  
र, अरोचके ।

**भाषा**—मट्टयेया और अमलकोज, तुलसी, अदसा,  
कपास और कनामाट इनके स्वरसोंमें पकाहुए गन्धको गला-  
कर बराबरक शुद्धपाराकोमकर विजोरे और गोक्षरकेरसोंसे  
मर्दनकर सुखाकर पीपल और शक्कर (१) ओलोंकापानी, जीरा  
और हर्, (२) त्रिसुगन्ध (३) मिथी, श्लायथी, मरिच, धी,



जायफल, सजी और कुठ, (४) खस, धनियां, कमलगुह, चन्दन, इलायची और पीपल (५) छाछ और मधु (६) इनमेंसे किसी एक अनुपानके साथ १-१ रत्ती देनेसे अरुचि और वान्ति नष्ट होती है ॥ ५०५ ॥

### ५०६ सूतशेखररसः ( प्रथमः )

गुह्यं मृतं मृतं स्वर्णं टङ्गुणं वत्सनामकम् ।  
व्योपमुन्मत्तयोजञ्च गन्धकं ताम्रमस्त्रकम् ॥ २१६६ ॥  
चातुर्जातं शङ्खमस्त्रं विल्वमञ्जा कचोरकम् ।  
सर्वसमं क्षिपेत्प्रलेवे मयं भृङ्गरसं दिनम् ॥ २१६७ ॥  
गुञ्जामात्रां घटीं कृत्वा भक्षयेन्मधुसर्पिणा ।  
रसोऽयमम्लपित्तघ्नो चान्तिशूलामयापहः ॥ २१६८ ॥  
पञ्च गुल्माम् पञ्चकासाग्रहण्यामयनाशनः ।  
त्रिदोषोत्थातिसारः श्वासमन्दाग्निनाशनः ॥ २१६९ ॥  
उग्रहिक्कामुदायतं दाहयाप्यगदापहः ।  
मण्डलान्नान् सन्धेहः सर्वरोगहरः परः ॥

राजयक्ष्महरः साक्षाद्रसोऽयं सूतशेखरः ॥ २१७० ॥

यो. र., र. चं., वै. क., नि. र., रसायनं, वै. चि., अम्लपित्तं,

भाषा—शुद्धपारा, सुरणमस्त्र, मुनाशुद्धागा, शुद्ध घटनाग, त्रिकटु, शुद्धपट्टेक्षेत्रीज और गन्धक, ताम्रमस्त्र, चातुर्जात, शङ्ख-मस्त्र, वेलगिरी, कचूर सबसमागलेकर बारीकचूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय भंगेवेरखसे एकदिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोखिलें बनाकर रखाओगे । इनमेंसे १-१ गोली मधु और धीरेसायनेसे अम्लपित्त, वमन, घृल, पाचोगुल्म, काष्ठ, प्रवृणी, त्रिदोषजातिमार, श्वास, मन्दाग्नि, मयङ्गरिक्का, उदायत, दाह, वाय्वरोग, राजयक्ष्म इनसबको यह एकमण्डलमें नष्ट करता है ॥ ५०६ ॥

### ५०७ सूतशेखररसः ( द्वितीयः )

रसं धिक्चञ्च कर्पाई चतुःकर्पञ्च गेरिकम् ।  
मर्दयेद्वेदधामं तु ताम्बूलोद्वयारिणा ॥ २१७१ ॥  
रक्तिकाप्रमितं योज्यं सितया मधुनाऽथवा ।  
अम्लपित्तं घ्नमं मूत्ररुन्धञ्च हरति ध्रुवम् ॥ २१७२ ॥  
रसायनघं., अम्लपित्तं ।

भाषा—शुद्धपारा और सोठ ८-८ मासे, शुद्धयोनागेश्वर ४ कर्पाईकर पारा अरयहोनेउठ शुक्लमर्दनकर पानवेरखसे ४ पहर पोटर १-१ रत्तीकी गोखिलें बनाकर रखाओगे । इनमेंसे १-१ गोली शहर अथवा मधुके साथ देनेसे अम्लपित्त, घ्नम और मूत्र-रुन्धमे यह नष्ट करता है ॥ ५०७ ॥

### ५०८ सूतशेखररसः ( रक्षाघः ) ( तृतीयः )

अन्नकं रससिन्दूरं सुरणं गुल्ममुत्तमम् ।  
लौहं कम्पुजभूतिञ्च विषं कनकबीजकम् ॥ २१७३ ॥  
चातुर्जातं टङ्गुणञ्च शुण्ठीं व्योपञ्च चन्द्राम् ।  
सये समे च कस्तूर्यास्तुर्याशं प्रक्षिपेत्तुर्धुषां ॥ २१७४ ॥

आर्द्रद्रव्येण सममर्द्यं मार्कवस्य रसं दिनम् ।  
सूतशेखरनामाऽयं तरुणारुणसन्निभः ॥ २१७५ ॥  
गुञ्जामानेन मध्वक्तो मध्वार्द्रकरसेन वा ।  
जयेद्वातकफोद्रेकं तथा खण्डार्द्रयोगतः ॥ २१७६ ॥  
वातपित्तामयं हन्यात्तथा राज्ञाकपायतः ।  
वातं गुह्यचोसत्त्वेन मधुना सर्वमेहनत् ॥ २१७७ ॥  
गोदुग्धखण्डयोगेन पित्तोद्रेकं जयेद्दुग्धम् ।  
क्षयं पाण्डुं मेहरुजं जीर्णज्वरमथारुचिम् ॥ २१७८ ॥  
प्रदरं हन्ति मान्यञ्च सोमरोगं शिरोप्रहम् ।  
अनुपानविशेषेण तत्तद्वोगहरो भवेत् ॥ २१७९ ॥  
र. चं., कफतोके ।

भाषा—अन्नक, सुरण, तांबा, लोह, शङ्ख इनसीमस्त्रें, रससिन्दूर, शुद्ध घटनाग, धवरेक्षेत्रीज, चातुर्जात, मुनाशुद्धागा सोठ, त्रिकटु, नागेश्वर सब समागलेकर बारीकचूर्णकर सबसे चतुर्धास कस्तूरी डालकर अदरख और भंगेवेरखसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोखिलें बनाकर रखाओगे । इनमेंसे १-१ गोली मधु अथवा मधु और अदरखके रसके साथ देनेसे वात और कफकी अधिकताको यह नष्ट करता है । खाड और अदरखके रसके साथ वातपित्तजव्याधिको नष्ट करता है । रक्षादि-वाय्वेके साथ वायु, गिलोयसत्त्व और मधुसे प्रमेह, शहरमिलेहुए गोदुग्धसे पित्ताधिक्य, क्षय, पाण्डु, प्रमेह, जीर्णज्वर, अरुचि, प्रदर, मन्दाग्नि, सोमरोग, सिरका जकड़ना इनसबको यह नष्ट करता है । तत्तद्वोगहरानुपानके साथ देनेसे यह तमाम व्याधि-योंको नष्ट करता है ॥ ५०८ ॥

### ५०९ सूतादिवटी ( प्रथमा )

मूतगन्धाघ्नमगधाऽम्लिकामरिचसैनधैः ।  
गुटिकाऽरोचकहरी जिह्वायदनगुद्विहृत ॥ २१८० ॥  
वृ. यो. त. र. चं., र. यु., र. को., रसायनं, अरोचके ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, अन्नकमस्त्र, पीपल, पुरानी हमी, मरिच और सैन्धव समागलेकर बारीकचूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय शरवेत्तरावर गोखिलें बनाकर मुहमें रखनेसे अरुचिको नष्ट करता है और जिह्वा तथा गुच्छी शुद्धि करती है ॥ ५०९ ॥

### ५१० सूतादिवटी ( चन्द्रप्रभा ) २

मृतं मृतं मृतं स्वर्णं मृतं तात्रं समं समम् ।  
तुल्यञ्च खादिरं सारं तथा मोचरसं क्षिपेत् ॥ २१८१ ॥  
द्रवेः शास्मलिमूलाय मर्दयेत्प्रहृष्टयम् ।  
चणमात्रां घटीं कृत्वा खाद्रेज्वीरकसंयुताम् ॥  
त्रिदोषायमतीसारं सत्वतं नाशयेद्भुयम् ॥ २१८२ ॥

र. को., र. मं., चि. र. म., र. चं., र. को., नि. र., शी. गा., र. यु., र. म. ना., र. (मा.), रसायनं, वै. चि., टो., र. का., यो. म., र. क. च, वृ. यो. त., ना. वि., अलिगरे ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, ताम्र इनकीभस्म समभागलेकर सब कीचरावर खैरसार और मोचरस मिलाकर सैमल्लैजइकेरससे दोपहर मर्दनकर चनेप्रमाणगोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली औरबेसाध देनेसे यह त्रिदोषातिसारको नष्टकरतीहै ॥

### ५११ सूतादिवटी (तृतीया)

शम्भो. कण्ठविभूषणं रवरिय. सर्वैः समांशं रसं, सम्मर्धं त्रिफलात्रिजातचपलामूलै धनै रेणुका । वेह्लन्यूपणचित्रकं समलये त्वेकत्र सम्मर्दयेत्, कर्तव्या गुटिका गुडद्विगुणिता बहोन्मितास्ता हिताः मान्वाद्वा अठरानिले ग्रहणिकाकासे क्षये पायुजे, या चात्यर्थगलप्रहृष्यधुसृग्मुल्मोदरन्याधिपु । अष्टौलावर्तगुध्रसीयुवतिरुक्कश्रेष्मामवातातिपु, क्षीणानां यिपमे प्रमेहनिचये सूतादिकेयं घटी २१८४ र, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध बछनाग, ताम्र और लोह १-१ भाग, पारद-भस्म २ भागलेकर त्रिफला, त्रिजात, पिपलामूल, नागरमोषा, रेणुका, विडह, त्रिकटु, चित्रकमूल सब समभागलेकर बारीक-चूर्णकर इक्के मिरास १-२ दिन छुलकमर्दनकर इनागुडमिला कर ३-२ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोपितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, उदर-बाधा, ग्रहणी, कास, क्षय, बवाबीर, गलप्रह, शोथ, गुल्म, उदररोग, अष्टौला, लकवा, गुध्रसी, क्षीररोग, लेप्प, आमवात, क्षीणता, विषमरोग, प्रमेह, इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ५११ ॥

### ५१२ सूतादिवटी (चतुर्थी)

शुद्धं सूतञ्च भृहातपिप्पलीमूलपिप्पली । आकल्लकं जातिपत्री लवङ्गं यङ्गभस्मकम् ॥ २१८५ ॥ मर्दयेत्समभागानेन पुराणगुडमिश्रितम् । उपदेशेपु सर्वेषु घटी मापप्रमाणिका ॥ २१८६ ॥

नि र, र च, व रा, वै. चि, रसायनस, उपद्वे। रसायन सङ्गहे उपद्वेसाहीवटीनिनाम ।

भाषा—शुद्धपारा, मिलावे, पिपलामूल, पीपल, अबलकरा, जावित्री, लौग, बङ्गसम सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेके अदरयहोनेतक घोटकर सबकी बराबर पुराणा गुड मिलाकर १-१ माशेकी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानी-केसाथ लेनेसे समस्त उपद्वेस निवृत्तहोतेहै ॥ ५१२ ॥

### ५१३ सूतिकाग्ररसः

रसगन्धकलौहात्र जातीकोपं सुवर्णकम् । समांशं मर्दयेत्खले छागीदुग्धेन पेपयेत् ॥ २१८७ ॥ गुञ्जाद्वयप्रमाणेन घटिका कुञ्ज यत्नत । ज्वरातीसाररोगाग्र सूतिकातङ्कनाशन ॥ २१८८ ॥ सूतिकाग्र रसो नाम ब्रह्मणा परिकीर्तित ॥ २१८९ ॥ र स, र चि, र च, र सु, सूतिकाग्रे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अभ्रक और सुवर्ण-भस्म जावित्री सब समभागलेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकम्बलीमें मिलाय बकरीकेदूधसे पीसकर २-२ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपान-केसाथदेनेसे ज्वर, अतिसार, सूतिकाग्र रोग इनसबको यह नष्ट-करताहै ॥ ५१३ ॥

### ५१४ सूतिकातङ्कनाशनरसः

रसाग्रगन्धकव्योपं सुवर्णमाक्षिकं यिपम् । सर्वमेकीकृतं पूर्णं खादेद्रक्तिचतुष्टयम् ॥ २१८९ ॥ सूतिकाग्रहणीरोगं वह्निमान्द्यञ्च नाशयेत् । अतिसारञ्च शमयेदपि वैद्यविजितम् ॥ कासश्चासातिसारयो वाजीकरण उत्तमः ॥ २१९० ॥ र स, र. सु, सूतिकाग्रे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सोनामाखी और बछनाग, अभ्रकभस्म और त्रिरुद्ध समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ रत्ती समय अथवा रोगोपितानुपानकेसाथ देनेसे सूतिकाग्र रोग, ग्रहणी, मन्दाग्नि, दुःसाध्य अतिसार, कास और आसको यह नष्टकरताहै ॥ ५१४ ॥

### ५१५ सूतिकातङ्कनाशिनीवटी (सूतिकाग्ररस)

रसं गन्धं मृताग्रञ्च मृतताग्रञ्च तुल्यरुम् । चूर्णितं मर्दयेत्तन्नात्रेकपर्णीरसेन च ॥ २१९१ ॥ छायाशुष्का घटी कार्या कलायसदृशी तत । माषया कटुना देया सूतिकातङ्कनाशिनी ॥ ज्वरतृणपाऽरचिहृदी शोथघ्नी वह्निदीपनी ॥ २१९२ ॥ भै र, र च, ध, र चि, र. र, र सु, व रा, र स, सूतिकाग्रे ।

टि०—केपुचितुल्यकेषु मृताग्रञ्च तुल्यकमित्यस्य स्थाने दूत ताम्र-वृद्धकमिति पाठ । तत्र यथागम्यैः अर्णवैः बोध्यं तेष्वेव पुस्तकेषु भट्ट-धानस्थाने क्षीरत्रिकटुना युक्ति पाठो दृश्यते तत्र त्रिकटुना सार्धं क्षीरस्य-का विधाय दातव्यम् । अन्यत्र तु त्रिकटुना सार्धं रस मिश्रय्य मध्ना-दिभिः प्रयोज्यमिति विशेषः । र, रसेद्रम एतयोः शुल्बेश्वरनाम्ना-“रसाग्रकम्बो कृत्वा पिटिकां सम्भागयोः । ताम्राग्रकं तयोस्तुल्ये-मर्दयेद्विषयवयम् । खराशिकारसेनैव गोलं सङ्कोचयेच्छेत् । औदम्बराख्य-ज्यति कुञ्ज शुल्बेश्वराधिपः ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति । अत्र खरा-शिकयाज्वरनाशिकाऽस्ति, इत्येवमि-मावन्तोरुक्ता समावेश कृत्वा-एक एव पाठः सम्पादनीयः द्विविधमावन्तानुष्ठाने ह्यल्पभावात् । अपि-कारभेदस्य किञ्चित्कर एकपिकारपट्टिषु बोधेपु विविधकारण-शक्तिमत्त्वात् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक और ताम्रभस्म समभागलेकर नीलवर्णकम्बलीकर ब्राह्मीरसमें १-२ दिन मर्दन कर मटरबराबर गोलिये बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इन-मेंसे १-१ गोली त्रिकटुबेसाथ देनेसे सूतिकाग्र रोग, ज्वर, तृणा, अरुचि, शोथ, मन्दाग्नि, इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ५१५ ॥

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, अम्रकमस ४ भाग, ताम्रमस ६ भाग, लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर मंगेवेरसे ७, निगुण्डी, इटसिट और पलाशकेस्वरसे ३-३ दिन मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली हरे, देवदार और सोंठ काकाड़ा (१) मधुयुक्त-पलाशकी जड़कास्वर (२) हल्दी और गुंड (३) विषादा, देवदार और सोंठ (४) एण्डतेलमें फनीहुईहरे और गोमूत्र (५) सोंठ, गिलोय और देवदार (६) कुटकी और एण्डतेल (७) एण्डतेल्युक्तधान्याम्ल (८) परब्र अथवा पतनीचाकेपत्तों-कास्वर (९) विषादा और तुषाम्ल (१०) इनमेंसे किसीभी अनुपानकेमाथ औचित्य देखकर प्रयोगकरनेसे स्त्रीपद और इष्ट नष्टहोताहै ॥ ५२४ ॥

### ५२५ सूत्रेन्द्ररसः ( तृतीयः )

मुक्ताफलं प्रवालञ्च सुवर्णं रौप्यमेव च ।  
रसगन्धकतः सर्वं तालैकैकं प्रकल्पयेत् ॥ २२२७ ॥  
रक्तोत्पलपत्ररसे मर्दयेत्तद्वनोक्तैः ।  
मर्दयेत्तत्पुनर्दत्त्वा गन्धं भापचतुष्टयम् ॥ २२२८ ॥  
क्षिप्वा काचघटीमध्ये सन्निकृष्य प्रयत्नतः ।  
वाल्मुकायनमप्यस्थां कृत्वा काचघटीं ततः ॥ २२२९ ॥  
पाकस्तत्र तथाकार्यं भवेद्यामत्रयं तथा ।  
काचपानास्तमाकर्षेत्सिद्धं सूतं ततः परम् ॥ २२३० ॥  
भक्षयेद्रक्तिकाः पञ्च रोगैराक्रान्तपुष्टलः ।  
भोजनं सर्वरोगोक्तं यत्नतः कारयेद्भिषक् ॥ २२३१ ॥  
दुर्बलं घृणुत्ययं यलयुक्तं करोत्यसौ ।  
शुक्रवृद्धिं करोत्येव धनभद्रञ्च नादायेत् ॥ २२३२ ॥  
मासेनैकेन सूत्रेन्द्रो रोगनाशाय कल्पते ।  
शालयो मुद्रयुक्ताश्च गोधूमा भोजने हिताः ॥ २२३३ ॥  
घृतं गव्यं तथा क्षीरं क्षिप्तं पथ्यं प्रयोजयेत् ।  
पारायतस्य मांसञ्च तिष्ठिरे लायिकस्य च ॥ २२३४ ॥

र र स, र रं, र को, वाजीकरणे । र को., मकरभञ्ज-  
रस इति नाम ।

भाषा—भोती, प्रवाल, सुवर्ण, चादी इनकीमसमें, शुद्ध पारा और गन्धक १-१ तोला लेकर नीलवर्णकजलीकर छाल-  
कमलेके फूलैकैफैतसे १ दिन मर्दनकर ४ मासे शुद्धान्धक मिलाय एकदिनपोटकर मुकावर कजली बनावे । फिर ४-५ कपडमिठीहई आतसीदीदीमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रख ३ पहरकी कड़ी आंचदे । स्वाशहीतलहोनेपर क्षीधोमेंसे निकालकर रखोड़े । इसमेंसे ५-५ रत्तीकीमात्रा रोगोचितानुपानकेसाथ-  
देनेसे शूलता, बल और शुक्रकीदानि, धन्यमात्र इनसबको पक्-  
महीनिमें यह नष्टहोताहै । छेदेचावल, मूंग, गेहूँ, गायकषी और दूध इत्यादि क्षिप्तभोजनकरे । कबूतर और वीतरकामांश गुणकारकहै ॥ ५२५ ॥

### ५२६ सूत्रेश्वररसः ( प्रथमः )

सूताऽघ्रायसमृतिगन्धगरलस्त्रेष्ठं सर्वैकान्तकं,  
त्रिखिमांशविशुद्धसिरलाऽऽतङ्काद्रकाम्मःप्लुतम् ।  
श्लक्ष्णीकृत्य विलिप्य भाण्डकुहरे प्रादुमानहालाहला-  
त्रियद्भूमविधुषितो रसवरस्तद्भाण्डनिष्कासितः ॥  
सुतेशः सुरसारसेन रसितो गुञ्जाद्वयोतोलीतो,  
हन्यादष्टविधाङ्गवरांश्च विपमांश्चीतोष्णसाधारणान् ॥  
र.प., ज्वरे ।

भाषा—पारा, अम्रक, लोह इनकीमसमें, शुद्धान्धक, सर्व-  
विष, ताम्र और वैकान्तमसम समभागलेकर कजलीकर भंगता,  
सहिजन, चित्रमूल, निसोत, इठ और अदरकके स्वरसे ३-३ दिन मर्दनकर मिठीकेपेठमें लेपदेकर इसके बराबर छद्म-  
नागकाचुणं दूसरी हंडीमें विछाय डमलस्य बनाकर मुहबन्दर  
चूल्हेपर रख इतनी आंचदेके कि बहनाग जलजाय । स्वाशही-  
तलहोनेपर हंडीकेपेठमेंसे रसको निकालकर तुलसीकेरसे पोद-  
कर २-२ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तुलसीकेरसेसाथदेनेसे ८ प्रकारकेज्वर, विषम, क्षीतो-  
ष्णप्रधान और साधारणज्वर नष्टहोताहै ॥ ५२६ ॥

### ५२७ सूत्रेश्वररसः ( द्वितीयः )

रसगन्धकयोः कृत्वा कज्जलीं कर्पसम्भिताम् ।  
स्थूलदुर्दुरमांसञ्च वसापित्तञ्च पूर्ववत् ॥ २२३६ ॥  
मर्दयेत्पुटयेद्यैव सिद्धः सूत्रेश्वरो भवेत् ।  
गुञ्जामात्रं जयेदोषं सर्वशैत्यनिवारणः ॥  
देहं सोपद्रव्यञ्चैव वातं दम्भनिवन्धनम् ॥ २२३७ ॥

र, वातरोगे ।

भाषा—१-१ कर्प शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्ण-  
कजलीकर बडेमेदककेमास, चर्वी और पित्तसे १-१ दिन मर्दन-  
कर गोलाबनाय शराबसम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपडमिठीदेकर  
सूखनेपर लघुपुटरी आंचदे । स्वाशहीतलहोनेपर निकालकर रख-  
ओड़े । इनमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानके-  
साथदेनेसे क्षीताश्र, दम्भविषय इत्यादि उपद्रवयुक्त सत्रिणाशको  
यह नष्टहोताहै ॥ ५२७ ॥

### ५२८ सूर्यकान्तरसः

ताप्यं गन्धं शुद्धसूतं शिलाजत्र्यम्लयेतसम् ।  
मृतताम्राम्रकं तुल्यं मध्वाज्यगुडमिश्रितम् ॥ २२३८ ॥  
मापेकं जिह्वकं हन्ति सूर्यकान्तो महारसः ।  
मुण्डीपञ्चाङ्गवृणञ्च चाकुचीतुल्यवृणकम् ॥  
मध्वाज्यसंयुतं कर्पं लेहयेदनुपानकम् ॥ २२३९ ॥

र र, र सु, नि क., र. का. गुणप्रतिकारे ।

टि.—र सु, नि क., र का सु मूपांश्वंतरस इति नाम । “रस-  
गन्धकताम्राम्रानुभि शिल्पाऽऽद्ये अनुनाशनमेतत् न । अति पथ्य तथाऽ-  
म्लकेनै गुणघातकमाशुमारिणः ॥ मधुन परिपेय माषदः” इति  
पठ उद्गमशुद्धनाशा चिक्षिप्राक्रमकन्यन्त्वामेव निदिशति ।

अस्मिन्प्रभवत्पाने शिलाविहिताऽस्त्यम्बेतमस्य च भावनायां नियो-  
गोऽस्ति एतावद्देश्याऽकिञ्चित्करवारमस्युत पूर्वपाठादीनवीर्याच्च पूर्व-  
स्मिन्नेवाऽस्याऽन्तर्भावः, करणीयः शिलाप्रक्षेपस्त्वनापि न विरुद्धते ।

**भाषा**—शुद्ध सोनामासी, गन्धक, पारा और शिलाजीत,  
अम्बवेत, ताप और अन्नकर्मस समभागलेकर नीलवर्णकचली-  
कर शिलाजीत और अम्बवेतको अच्छीतरहमिलाकर १-२ पहर  
घोटकर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ मासा मधु, घी और गुडके-  
साथ मिलाकर खानेसे श्रम्यजिह्वादि कुष्ठोंको यह नष्टकरताहै ।  
गोरखमुण्डीका पत्राह और बाकुची समभागका चूर्ण एकछर्ण  
मधु और पीकेसाथलेनेसे रसका शरीरमें सङ्क्रमणहोताहै ५२८

### ५२९ सूर्यचन्द्रप्रभावदी

भिक्षत्रयं हरिदे द्वे तिलो तिलं शरी यचा ।  
पेल्लचित्रकतालीसमाङ्गीपन्नकजीरकम् ॥ २२४० ॥  
ह्रीं क्षारौ पिप्पलीमूलं पट्टनि श्रीणि तुम्बुल ।  
देवदारु बला चव्यं धान्यकं गजपिप्पली ॥  
घत्सकातिविपादन्तीश्यामापुष्करकामृताः ॥ २२४१ ॥

भाषा—समीपां सूक्ष्मचूर्णकृतानां

भागध्वार्जस्तापितोरोद्भवस्य ।

तद्वर्द्धया भागवृद्धया परे स्यु-

रन्नं लौहं शैलजं कौशिकञ्च ॥ २२४२ ॥

सम्मर्थं गुटिका कार्या सूर्यचन्द्रप्रभाभिधा ।

पूर्वाह्णे तां प्रयुजीत माक्षिकेण परिप्लुताम् ॥ २२४३ ॥

अनुपाने प्रयुजीत तर्कं मधु रसोत्तमम् ।

क्षीरं ध्वरतोर्यं वा शर्करामिश्रितं जलम् ॥ २२४४ ॥

घृतं सूत्रं तथा चान्द्रं स्वादु दाडिमजं रसम् ।

कासं श्वासं तथा शोषमरुचिं पाश्वेवेदनाम् ॥ २२४५ ॥

अर्शांसि कामलां मेहं पाण्डुरोगं हलीमकम् ।

हृद्रोगं मूत्रकुच्छञ्च श्वयधुं प्रहणीगदम् ॥ २२४६ ॥

यहृत्क्षीहामिवृद्धिञ्च कृमिं प्रथिं भगन्दरम् ।

क्षीपदं गण्डमालाञ्च घणाप्रादीघ्रणानपि ॥ २२४७ ॥

अतिस्थौल्यातिकाश्वञ्च विद्रुधीनिपट्टिकामपि ।

मासानेनाश्रिताम्रोगांश्छिरोरोगान्मुदाकृण्वान् ॥ २२४८ ॥

मुखरोगानशोषांश्च रक्तपित्तं स्वरक्षयम् ।

ज्वरञ्च सन्निपातोत्थं विषमञ्चापि पैत्तिकम् ॥ २२४९ ॥

विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव संसृष्टान्सन्निपातिकान् ।

निजानुत्तमवांश्चैव ये चान्ये नात्रकीर्तिताः ॥

तांस्तान्प्रशमयत्येषा वृक्षमिन्द्राशनि र्वेया ॥ २२५० ॥

मेधां स्मृतिं कान्तिमनामयत्स्व-

मायुःप्रकर्षं पवनानुलोभ्यम् ।

स्त्रीषु प्रहर्षं बलमिन्द्रियाणां-

मग्नेश्च कुर्याद्विधिनोपयुक्ता ॥ २२५१ ॥

ग. नि. सर्वरोगे ।

टि०—“मेधा व्योषिर्बलमिन्द्रियनिशान्तिर्यजिज्ञासाऽमृता  
देवाहातिमिया निश्चय कर्तुं कुरुषुर्बलं काली ।

क्षारौ द्वौ लवणद्वयं गजकणा चव्यं तथाऽलुकर,  
तालीश कम्पुल्युकरशरी कुष्ठ किरात धनम् ॥

मार्गी पचकनीजक सुतुज दन्ती वचातुम्बुल,

शुद्धी कर्कटकस्य कर्पकमिता, सर्वा समाना मताः ।

लोहस्य द्विपल पुरस्य च पलान्यष्टौ प्रदद्यात्तो,

वाय्यास्त्वैकमल शिलाजदशक ताप्य तु वाशीसमम् ॥

मत्स्यपट्टीपलत्रयक वृत्तपट्टे दे दे च माक्षीकतो,

हेन्मोऽयं त्रिमुगन्धकस्य च पल दत्त्वा शुद्धी निर्मिता ।

सूर्याय परमेष्ठिना भगवता सूर्यप्रभा नामत,

कासभासमगन्धोररनिमीप्याण्डुत्वपदभ्याम् ॥

शुभं विद्रुषिपार्श्वशूलतमकासक्षीपदान्कामलाय,

स्वेद सर्वगत त्रयोदशविं स सन्निपातं हेरद ।

बातोद्भूतमश्रीतिभिर्कण्ड सन्निपातौद्भवम्,

कुष्ठार्तोविषमज्वरानरुचक मूत्रमहाप्राशयेत् ॥

सर्वान्निगमणान्निहन्ति गुट्टियामक्षप्रमाणा शुभे,

यूपभीरस्ते प्रयुज्य बलवान्नीलवर्णो जायते ॥ ”

इति पाठे यो म, द यो. त., यो र, नि र, वै. चि एषु ग्रन्थेषु  
सूर्यप्रभा शुद्धीति नाम्ना निहितोऽस्ति । अत्र चन्द्रप्रभाभावैव त्वगे-  
कारुष्कराण्यधिकतया निश्चित्य इत्युपक्रमेण च स्वल्प कृत्वा नामान्तर  
स्थापितम् । वैयचिन्तामर्णो च अत्यस्तः पाठोऽस्ति कुत्रचिन्माने भेदो  
दृश्यते ।

**भाषा**—सौंठ, मिर्च, पीपल, हर्द, बहेड़ा, आवला तज,  
पत्रज, इलायची, हल्दी, दारहल्दी, कुडकी, चिरायता, कचूर,  
वच, विडर, चित्रकमूल, तालीसपत्र, भारकमूल, पपकाठ, जीरा,  
सब्री, यक्षार, पिपलामूल, सैन्धव, संचल, समुद्रनमक, तुम्बुल  
( चिरकल, मराठीनाम ), देवदारु, बला, चव्य, धनियां, गज-  
पीपल, कुँयाकीछाल, अलीश, दन्तीमूल, निसोत, पोहूरमूल,  
गिलोय १-१ तोला, खोनामाखीमसम और बंसलोचन ६-६  
माशे, अन्नकर्मस १ तोला, कोहभरम २ तोले, शिलाजीत ३  
तोले, गुल ४ तोले केहर सबकाधारीकचूर्णहर गुल और  
शिलाजीतकेसाथ कूटकर अन्दाजसे मधु देकर १-१ माशेकी-  
गोलियं बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुमें मिला-  
कर सेवनकरे और ऊपरसे मोटीछाछ, दूध, बेरकाफाड़ा, शर-  
बत, घी, गोमूत्र, खट्टा और मोठा अनारकास इनकेसाथ लेनेसे  
कास, आस, शोष, अरुचि, पसलीकादर्द, धवासीर, कामला,  
प्रमेह, पाण्डु, हलीमक, हृद्रोग, मूत्रकुच्छ, शोथ, प्रहणी, यहू  
और झोडाशुद्धि, क्रिमि, प्रन्थि, भगन्दर, क्षीपद, गण्डमाला,  
ज्व, नाडीनय, अतिस्थूलता और हृत्ता, विद्रधि, प्रमेहपिडिका,  
नासिका, नेत्र, शिर और मुखके मयङ्गरोग, रक्तपित्त, स्वरभङ्ग,  
ज्वर, सन्निपात, विषमज्वर, पित्तज्वर, द्रव्दज और सन्निपा-  
तिक २० प्रकारकेलेष्मरोग, प्राकृत और वैकृत तन्गामरोग इन-  
सबको नष्टकर मेधा, स्मृति, कान्ति, आयु, पुष्ट्यत्व, और इन्द्रिय  
बलको देताहै तथा वायुसामुलोमन करताहै ॥ ५२९ ॥

### ५३० सूर्यपावकरसः

विपापाणं क्षित्युत्थञ्च नेपाळं तालकं समम् ।

मर्द्यं धुत्तूरकदवेः कुकुट्टीपुट्टपाचितम् ॥ २२५२ ॥

स्वाङ्गशीतलमुद्गत्य कोलपित्तेन भावयेत् ।  
गुडामात्रं प्रदातव्यं शीतज्वरनिवारकम् ॥  
सूर्यपावकनामायमीश्वरेण प्रकल्पितः ॥ २२५३ ॥

वै. वि. बा. ज्वराधिहारे ।

टि०—दीनिकापुत्रेनाड्यमापातस्नाय विष्टपि न तगन्-  
मवति महन्तरत्वात् ।

भाषा—तीनतरहका शुद्धमेध, तुल्य और हीराकसीस,  
जमालोटा, रसमाषिकय सबसमभागलेकर बारीकचूर्णसर धतूरे  
केरससे २-३ दिन मर्दनकर गोलाकन्या शरापसम्पुटमें बन्द-  
कर झुलझुलकी आंचसे । स्वाङ्गशीतलक्षेनेपर सुमरकेपितकी  
१ मावता देर १-१ रसीसी गोलिये बनाकर रचओड़े । इन-  
मेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसापदेनेसे यह शीतज्वरको  
नष्टकृताहे ॥ ५३० ॥

### ५३१ सूर्यप्रभागुटिका ( प्रथमा )

चित्रकं त्रिफला निम्बं पटोलं मधुघृष्टिका ।  
चराङ्गं केदारज्वं ययानी चाम्बरेतसम् ॥ २२५४ ॥  
भूमिम्बकश्च दार्येला मुस्तापपेटकन्तथा ।  
तुल्यकं कटुका भाङ्गी चञ्चपझरुदीप्यकाः ॥ २२५५ ॥  
पिप्पली मरिचं दन्ती शटी शुण्ठी च पुष्करम् ।  
चिङ्गं पिप्पलीमूलं जीरकं देवदारु च ॥ २२५६ ॥  
पत्रकं कुटुजं राक्षा दुरालम्भामृता मिथुत् ।  
लातारुकरतालीसं वृक्षामूलं लवणत्रयम् ॥ २२५७ ॥  
ध्यातृकञ्जाजमोदा च कारवी धातुमाक्षिकम् ।  
जातीफलं तुगाक्षीरी घाजिगन्धा च दाडिमम् २२५८ ॥  
कट्टोलरुमुशीरञ्च द्विद्वारं रेणुका तथा ।  
प्रत्येकं पलमात्राणि सूक्ष्मवूर्णानि कारयेत् ॥ २२५९ ॥  
गिरिजस्य पलान्यष्टौ द्वे पले चैन गुग्गुलीः ।  
प्रस्यमेकं सितयाश्च घृतस्य कुडवन्तया ॥ २२६० ॥  
गिरिजस्य समं लोहं प्रस्थातुं माक्षिकस्य च ।  
सर्वमेकत्र सन्मिश्र्य त्रिघ्नमाण्डे निधापयेत् ॥ २२६१ ॥  
ऊरुस्तम्भं घातरोगं हृस्पदिदञ्च गुग्गुलीम् ।  
विट्पत्रं शङ्खपदं तुल्यं पाण्डुरोगं हृलीमकरम् ॥ २२६२ ॥  
कासं पञ्चविधं घोरं मृगशृङ्गं गलप्रहम् ।  
आनाहमदमरीं यध्मं ग्रहणीमपवाहृकम् ॥ २२६३ ॥  
अरोचकं पाथ्यश्लमुदरं सप्तमन्दरम् ।  
हृद्रोगं शूलमुक्तम्पविषमज्वरनादानम् ॥ २२६४ ॥  
उरःक्षतमपे दोगं मुखरोगं च क्षारणे ।  
महोपधररादुस्माद्धार्यं पाणितलोन्मितम् ॥ २२६५ ॥  
विधिपात्रानि सुवीत यथेष्टञ्च यथासुरम् ।  
गुटिका भास्करा नास्मा मृष्टा देवेन दाम्भुना ॥ २२६६ ॥  
प्रमेहं रक्तपित्तञ्च घातरक्तं सकामलम् ।  
अग्निशर्दपन्ने हृष्टं दीर्घायुःपुष्टिदा भवेत् ॥ २२६७ ॥  
ये घानप्रमया रोगा ये च पित्तममुद्रजाः ।  
घनरोगाश्च ये केचिद्दृष्टजाः साक्षिपातिकाः ॥ २२६८ ॥

ते सर्वे प्रदामं यान्ति भास्करेण तमो यथा ।  
रोगविद्राचिणी कार्या गुटिका सूर्यवल्लभा ॥ २२६९ ॥  
नि. र., र. सु., वै. वि. वाते ।

भाषा—चित्रकमूल, त्रिफला, नीमकीछाल, पवल, मूल-  
हठी, तज, नागकेशर, अजनाइन, अम्लवेत, विरायता, दारु-  
हल्ली, इलायची, नामलोथा, पित्तपापका, शुद्धतीता, कुञ्जी,  
महाद्वी, चञ्च, पत्रकाड, मयूरीशरा, पीपल, मरिच, दन्ती-  
मूल, कचूर, सोंठ, पोहहरमूल, विडङ्ग, पिपलामूल, जीरा, देव-  
दारु, पत्रज, कुरीयाकीछाल, राक्षा, जवासा, गिलोय, निक्षोत,  
मजीठ, भिलावां, तालीसपत्र, कोकन, तीनोंनमक, पमिया,  
अजमोद, कारवी ( महाराष्ट्रमेंप्रसिद्ध है ), सोनामात्री, जायफल,  
बंसलोचन, असमन्व, अनारदाना, शीतलबीनी, खन, दोनो-  
क्षार, रेणुका येसत्र १-१ पल, शिलाजीत ८ पल, शुद्धपूगल २  
पल, मिथी १ प्रस्य, घी ४ पल, लोहमस और मधु ८-८  
पल लेकर काष्ठोपधियोंका बारीकचूर्णसर शिलाजीत और पूगल  
को अच्छीतरह मिलाय शकर, घी और मधु मिलाकर चिकने  
बतनमें रचदे । इसमेंसे १-१ तोला समय अथवा रोगोचिता-  
नुपानकेसापदेनेसे जरुस्तम्भ, वातरोग, लक्ष्वा, घृत्मी, विश्धि,  
क्षीपद, शुल्म, पाण्डु, हृलीमक, ५ प्रकारका कास, मयहर  
सूत्रहृच्छ, गलप्रह, आनाह, पयरी, अण्डबुद्धि, ग्रहणी, अपवा-  
हृक, अश्वि, पसलीकापद, उदररोग, मगन्दर, हृद्रोग, शूल,  
उत्कटकम्प, विषमज्वर, उर क्षत, मयहर मुखरोग, प्रमेह, रक्त-  
पित्त, वातरक्त, कामला, मन्दामि, हृदयकीकमजोरी, वातरोग,  
पित्तुरोग, समस्त कफरोग, दृग्दृष्ट और साक्षिपातिका समस्त-  
रोगोंको यह नष्टकृतीहे आयु और पुष्टिओ बढ़ातीहे ॥ ५३१ ॥

### ५३२ सूर्यप्रभागुटिका ( द्वितीया )

भाङ्गी बहिजयायुगाम्रकदलीपाटावधारोचना-  
श्चल्ये पत्रकचित्रके चिकटुकं क्षारुथं गन्धकम् ।  
श्रायन्ती हरबीजकेशरविषहन्तं लवणं कणा,  
कुष्ठं क्षुत्पकलं कलप्रययुतं फेनः सूर्यद्रादिपि ॥ २२७० ॥  
ब्रह्मयोजं ज्योतिषीयं बालविलिखं विम्वदकम् ।  
लवणानि तथा पञ्च जात्यादिकुसुमाधरम् ॥ २२७१ ॥  
घातारितिलेनेतेषां कल्पिता मिषजानैः ।  
एषा सूर्यप्रमा नाम गुटिकाऽग्निप्रदीपनी ॥ २२७२ ॥  
र. र. घ., र. द्यो., र. सु., अमिमान्ये ।

भाषा—भाङ्गी, सफेदचित्रकमूल, माग, जैनी, अग्रह-  
मम्, केलाकन्द, पाटा, बच, गोरोचन, चञ्च, पत्रज, लाल-  
चित्रक, चिकटु, दोनो क्षार, शुद्ध गन्धक, प्रायमाण, शुद्धगारा,  
केशर, म्याहणपेदब्रह्मण, छीग, पीपल, कुट, मैनाल, विट्पत्र,  
समुदरेन, पत्रज और बालकागोनीके बीज, पट्टहरिणो हरा  
मया हुआ बेल, पाचोन्नक, चमेरी, माक्षी, जूरी, सोना-  
जूरी, चन्ना, मौलीनी, कदम्ब, मोगा इत आठोंकेकुट, गर  
घनमाण लेकर बारीकचूर्णकर शोरणपट्टरी नीलपट्टकसीदे

मिलाय एरण्डकेतैलमे घोटकर १-१ माशेकी गोलियें बनाकर  
रखलोडे । इनमेसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे  
यह मन्दाग्निसो नष्टकरतोडे ॥ ५३२ ॥

५३३ सूर्यप्रभाताश्वरः (आदित्यप्रभापाकृताम्)

सृतं द्विगुणगन्धेन खल्वे कृत्वा प्रयत्नतः ।

सावचल रसाद्धेन दत्त्वाऽऽप्लाव्याकपत्रकः ॥२२७३॥  
तोयै र्धा शिवकर्णोत्थै लिङ्ग्या धर्मेषु पत्रकम् ।

जम्बीरानारे सुचिरं गलितं मर्दयेच्छुभम् ॥ २२७४ ॥

दद्याद्रक्तिद्वयञ्चास्य नागवल्लीद्रवै र्युतम् ।

शुल्भाम्लपित्तशूलामप्लीहपाण्डुज्वरापहम् ॥ २२७५ ॥

र. क , र को , अम्लपित्ते ।

दि०—“ पल नेपालशुल्कस्य पत्राणि सुतनूनि च ।

कृत्वा कण्टकदेभीनि कारयेत्तदनन्तरम् ॥

कथं कथं द्विपथं कथं कथं कथं कथं ।

मर्दितव्य शिखाख्ये रसै र्दन्तशठस्य वै ॥

कल्प्याश्च पञ्चवत्सृज्या तेन पत्राणि सर्वदा ।

छेपयित्वा शिलाखल्वे स्थापयेद्वातप स्यो ॥

यामैकञ्च समुदात्य द्वीभूवति नान्यथा ।

वार्त्ति विरेचनं कृत्वा शङ्खपाय यथाविधि ।

पञ्चशिल्पा सदान्विमान्वैप्राप्तेऽमाभ्यादिभिः

तु सत सधसर्पिण्यां रज्ज्कादिक्रमेषा ॥

श्रीका तक्र पिडिधान धान्यान्त्रमथापि वा

जीर्णो माय सप्तश्रीयाः सप्तश्रीयाः सप्तश्रीयाः सप्तश्रीयाः

लोहमान् विद्वन्मोक्षदाश्चिन्महाकृष्णम् ।

सम्यग्मानं निश्चयं नदन्तिपत सुदक्षिणम् ।  
कामं धर्मं तथा मोक्षमदांसि मङ्गलीश्वरम् ।

कामाख्या भाष्यसंग्रहः कामाख्याभाष्यसंग्रहः ।

इन्द्रमित्रं सखायिष्य शत्रुर्हर्त्रोदराणि च ॥

वातरोगः प्रतिश्यायः विडूर्ध्वं विषमालसः ।

मन्त्राणां श्रुतिश्चैव विद्वेषा विषमज्वरम् ।  
मन्त्राणां श्रुतिश्चैव विद्वेषा विषमज्वरम् ॥

सततान्ध्यासि यमिने बलपातितवान् ॥  
साधवत्परायणे देह सर्वव्याधिविबर्जितम् ।

सर्वप्रवृत्तयस्तु ददन्ति सर्वव्यापिनिवृत्तिम् ।  
सर्वप्रवृत्तयस्तु ददन्ति सर्वव्यापिनिवृत्तिम् ।

सर्वविद्यासंग्रहः ॥ २१ ॥

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

इति पाठो रसेन्द्ररत्नकोशेऽस्ति, अत्र फलभागे विशेषतः दृश्यते ।  
 र र स, र च, र क छ एषु पुस्तकेषु रसेन्द्ररत्नकोशे च द्वितीय  
 स्थाने " पलेग्निमत्स्य शुद्धस्य रसप्रमाणं कारयेत् । तत्समं गन्धक  
 दत्त्वा दत्त्वे सर्वं विनिश्चिप्य ।" जम्बीररससमुक्तं दिनं चर्षं निष्पापयेत् ।  
 ततः शुद्धे द्रवीभूते रसकर्षं नियोजयेत् ।" तसिद्धशुद्धे योग्यं शोके चैव  
 भोजयेत् ।" नाम्ना तुस्यमात्रेण्डस एव प्रणीतं ।" , इति पाठो निहि  
 तोऽस्ति, विशेषाऽभावात्सोऽनायासेनैवाऽत्र समाधिश्रुतिः । र, र च  
 एतयोस्तत्प्रयोगानाम्ना " रत्नगन्धक्यो कर्षं प्रत्येकं दीपयेद्विषक ।  
 "ततः कम्पलिका कृत्वा नैपाल तत्रप्रचक्रयेत् ।" वण्ठेष्वेयं विपातस्य सर्वे  
 कत कारयेत् । पात्रे हि गृहीतोऽर्धभूते रप दयादत्र शुभम् ।" पञ्चमीर  
 सन्मूलं यथापूजितमेव चतः । आर्षं स्वापयेत्तथापानतःपुत्रोपमं भवेत्  
 पाणिना मर्दयित्वा तु कटिका कारयेत्ततः । विशेष्य मानयेद्विचिदस्य  
 तस्मान्महौषधपात्रः । दिनत्रयान्तरैव रक्ति रक्तिं शिवर्धयेत् । परिहर्त्तुं  
 विष्टेन धान्यजीरानुपातः । मासतद्विपातस्य हन्ति पित्ताम्लसम्भवः ।  
 ग्रहशुभासुदतः शरमल्लपित्तत्र दलात्मः । अनीरं रक्ताचित्रं क्षयं कुपु  
 विशेषतः । इति पात्रो दानिहोऽस्ति परन्तु तत्र निष्पादनप्रक्रियायां

नृतिः प्रतिगातिः, अतस्तस्याऽन्वयैवान्तर्भावः करणीयः । र. का. , र. चि. ण्तयोः स्वयमभिनयान्ना ॥ विचर्य्य गन्धामपलं विशुद्धं रसदिशि णेयं समं च धत्ते । रसादभौवचलरूपेण्युक्तं तत्त्ववित्तं रात्वशिक्षां भवन्त्याह ॥ धर्मादौतर्कणैर्गौरवसैराह्वायं तत्कज्जलं, नेपालेद्रवतत्प्रकृ पलभितं तत्त्वष्ट्येवायिगम् । तेनालेष्य च कज्जलेन सुचिरं लम्बीरनीर- स्थितं, खलाश्मापिमेतदातप्यत पिण्डीकृतं धनैः ॥ सण्णियाःशु शुभं सुगणंनिमित्तं रत्नीत्रयं योजयेत्, तत्कालेचितवन्नशुद्धिरचिना चूर्णं विना प्रत्यक्षम् ॥ हत्वेतदभ्यासंरूपितं नगदान्पाद्विग्रामान्यञ्जनान्, रत्नीं वर्धितमाय पथं नियतो दोहोऽकसौर्विधिः ॥ इति पादो निहितोऽस्ति सोऽप्यत्रैवान्तर्भवति विरोधविरोधाभावात् ॥

भाषा—युद्धभारेकी द्विगुणगन्धरूचेपाय नीलवर्णजलीकर  
पारेसे आधासञ्चल मिलाय आठ अथवा हस्तिकर्ण पलाश  
अथवा सुपाकणी या इन्द्रायणके पत्तोंवरसेसे कल्कनाय पारेसे  
चतुर्गुणित वण्टकेवधी तावेके पत्रोंपर कल्काय लेप देकर पत्थर  
की खरलेमें रख एकदम तीक्ष्णधूपमें रखत । अत्यन्तगरम-  
होनेपर दोपहरवाय पत्रोंकी भस्म होजायगी । पूर्वैरस सुखनेपर  
जंभीरीकारस जालकर कड़ीधूपमें बैठकर घोट । जब इसकी हुति  
होजाय तब घीघोमें भरकर रखजेइ । शुभतिथि, नक्षत्र, वार-  
युक्तसुहर्तमें वसन विरेचनादिकसे ह्यदिकियेहुए रोगीकी दोरतीकी  
मात्रा पानमें ढालकर खिलानेसे शुष्म, अम्लपित्त, शूल, आम,  
डीहा, पाण्डू, ज्वर येसब नष्टहोतै । रसेन्द्रतरनरुघोमें १ रत्तीसे  
१ माशेतककीमात्रा मधु और धीकेसापदेकर छाछ अथवा  
पान्याम्ल पिलाना । जीर्णहोनेपर घुरानेबावल साथडालको  
देनाखिलाइ और भयङ्कर अम्लपित्त, कास, क्षय, घोष, बवा  
सीर, ग्रन्थी, कामल, पाण्डू, १८ कुष्ठ, रक्षपित्त खालिय,  
शूल, उदररोग, बतारोग, प्रतिक्षयाय, विषि, विषमज्वर हत्या-  
दिर्बोको नष्टकरताइ तथा इमेशाकेसेवनसे बलीपलिनादिकेसे  
निवृत्त करके शरीरको साम्नीतरह दृढबनाताइ और १००  
वर्षसे ऊपरकी आयुको देताइ । यक्षफलभागमें खिलाइ ॥५३॥

५३४ सूर्यप्रभरसः

यिष्णुकान्ता तण्डुली देयदाली

नीली घाहरी सर्पनेत्री पलाशी ।

आसां द्रावं कुम्भजातप्रभृतं  
नीत्या चिद्वाङ्मिद्विचारं यथात्मम् ॥ २७७६ ॥

तस्मिन्सूतं मर्दयेद्वा दिनैकं

गन्धं सूताद्युग्मभागं सहैव ।

एकीभूतं लोहपात्रे क्षणं त-

त्पाच्यं तावद्विद्रुतं यावदेव ॥ २२७७ ॥

शुल्यं पादं चाभ्रकं चापि सूता-

अन्द्र दत्त्या तावदेवावतार्य ।

निष्कं मुक्तं चास्य पूवानुपानः  
कुष्ठं हन्यात्सूर्यपूर्व. श्रभोऽयम् ॥ २२७८ ॥

चि क्र, र. गु, र. को, र. का, वै. वि, व. रा., कुप्रे । धं.  
व. व रा एतयो सर्वाङ्गसुन्दरेति नाम ।

३०—“ निष्पुत्रान्तेकमूलाञ्जननिनिरस्ता क्षीरिणी देवदासी,  
सर्पार्थं जीवनीया मुनिवत्सुम अश्वत्थस्य सार । गार्गी शङ्खपुष्पी  
धन्वत्वसुरसे नीलिनी भीमसेन । जाली वीरा रुन्ती मधुमदनशिवाम्बा  
बाकुचीचक्रमदी । स्त्रीरक्षोपथे सर्वयशस्वाम भिषग्वर । रसप्रमदयेद्वाड  
रक्षेरा पा निन्दनम् ॥ पश्चात्तन्मन्विशुष्पन्तु द्विशुष्प गन्धक शिपेव ।  
प्रद्राव्य चायसे पात्रे विषु तुपांगक शिरेव ॥ पण्डीरमवत्सु त्वाङ्गसीत-  
ह्ला गत । अनेत्युग्रप्रभो नाम पुण्डीरकह्वर पर ॥ ” इति पाठो रमा-  
वतार रसेन्द्रमन्त्रे च धर्मप्रभाम्ना ताप्राग्रकहिम स्थापित परन्तु  
तयोयोगेनाज्ययिकरुत्तमस्तारपूर्वमिमेव पाठेऽप्याऽप्यन्तर्भाव उक्ति ।  
एतद्विद्विष्टाऽधिकभावनातामप्याधिक्येमाऽनुष्ठाने क्षय्यभाव इति विद्व-  
द्विद्विभावनीयम् ।

भाषा—कोयल, कटिवालीचौलाई, बन्दास, नील, ब्राह्मी,  
अम्बाहली, कपूरकाचरी, अगस्त्य इनके यथासम्भवस्वरस अथवा  
हाथोंसे २-२ अथवा ३-३ दिन मदनकर दूनागन्धकदेकर  
१-१ दिन पूर्वद्रोसे मदनकर मुखाकर कजलीपनावे । फिर  
घोसुतीहुई लोहेकी कड़ाहीमें डालकर घेरकेकोयलोंपर पिपलाकर  
परिसेधतुयाँस ताप और अन्नकमस्त तथा शुद्धकपूर मिलाकर  
नीचे उतारकर घोंटे । बारीकचूर्णहोनेपर निहालकर रखओगे ।  
इसमेंसे ४-४ मासे कुट्टानुपानोंकेसाथदेनेसे यह समस्त कुट्टोंको  
नष्टकरता है ॥ ५३४ ॥

### ५३५ सूर्यरसः ( प्रथमः )

एकं भागं घत्सनामञ्ज कुर्या-

ज्ञागद्वन्द्वं दृङ्गणं दन्तिर्याजात् ।

श्रीनप्येतद्विह्वलस्पाऽपि तुयः

सद्यो जति नाशयत्येष सूर्यः ॥ २२७९ ॥

र. चं., र. प्र. सु., जने ।

भाषा—शुद्ध यज्जग १ भाग, मुनासुहागा २ भा, शुद्ध  
जमालोटा ३ भा शुद्ध शिंगरिफ चतुर्थांशमिलाकर १-२ पहर  
घोटकर रखओगे । इसमेंसे १-१ रत्ती समयोचिनुपानकेसाथ-  
देनेसे यह नवग्रहोंको दूरकरता है ॥ ५३५ ॥

### ५३६ सूर्यरसः ( द्वितीयः )

रश्मिकं द्विधा गन्धं त्रिसुप्त्यं पञ्च तालकात् ।

सर्वं शुद्धं विचूर्णय्य चतुर्भागे मृतान्नकम् ॥ २२८० ॥

यथा कुष्ठहृष्टिगिद्वि दृङ्गणं सैन्धवं विपम् ।

सपाठा लाङ्गली व्योषं प्रत्येकमेकभागम् ॥ २२८१ ॥

भाषितं भृङ्गिसारेण दिनेकं तस्य मश्नेयत् ।

मापं सूर्यरसो नाम द्विधा चैत्यर्यमासजित् ॥ २२८२ ॥

पिप्पल्या सह निगुण्ड्याः धार्यं चानुप्रपाययेत् ।

अष्टशुद्धामिता मश्या विप्याता रसपण्डी ॥ २२८३ ॥

त्रिकण्डमूलं शुण्ठी च अजाशीरं समोदकम् ।

रुतायदिष्टं तं कार्यं सङ्गणं पाययेदिति ॥ २२८४ ॥

नि. र., र. गु., य रा, र को, र का, वै. वि., र क रु पासे

भाषा—शुद्धपाठा १ भाग, गन्धक २ भा, सोनामाषी ३  
भा, रगमाषि ५ भा., अन्नकम ४ भा, बच, कुष्ठ, हल्दी,

चित्रक, मुनासुहागा, सैन्धव, शुद्धयज्जग, पाठा, करिहारी और  
त्रिकटु १-१ भागलेकर बारीकचूर्णकर परिगन्धकीनीलवर्ण-  
कजलीमें मिलाय भंगरेकरससे एकदिन मदनकर उद्भवरावर  
गोलिये बनाकर रखओगे । इसमेंसे १ से २ गोलीतक पीपल  
और संयालके साथकेसाथ देनेसे हिचकी, स्वरभङ्ग और कासको  
यह दूरकरता है । इसके अभावेमें ८ रत्ती रसपण्डी देवे और  
रातको गोखल्लीनङ्ग और सोंठका प्रसेधेदेकर बकरीकादूध और  
पानी समभाग पकाकर दूधमात्र अवशेष रहनेपर पीपल डालकर  
पिलावे ॥ ५३६ ॥

### ५३७ सूर्यरसः ( तृतीयः )

रसगन्धकताप्राग्रं कणाशुण्डपूषणं विपा ।

श्रुतमेकं विपञ्चैकं सूर्यः कासादिनाशनः ॥ २२८५ ॥

र र., चं., रासे ।

भाषा—शुद्ध पाठा और गन्धक, तापमस ५-५ भाग,  
पीपल, सोंठ, मरिच, अतीस और शुद्धयज्जग १-१ भाग लेकर  
बारीकचूर्णकर परिगन्धकी नीलवर्णकजलीकेसाथ १-२ पहर  
घोटकर रखओगे । इसमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचिना  
नुपानकेसाथ देनेसे यह कासको नष्टकरता है ॥ ५३७ ॥

### ५३८ सूर्यवटी

पिप्पली पिप्पलीमूलं विपं हिह्वलदृङ्गणम् ।

समभागानि चैतानि चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥ २२८६ ॥

जैपालं पादभागञ्च शुद्धं कृत्या विनिक्षिपेत् ।

सर्वचूर्णसमो देयः सूर्यसारः सुभञ्जितः ॥ २२८७ ॥

पुष्टपाकीरुतं यज्ञीस्वरसेन चिमर्दयेत् ।

भाषनाधितयं दत्त्वा मुद्रमानां प्रकल्पयेत् ॥ २२८८ ॥

नागवह्नीदलैः सार्धं द्विकालं भक्षयेत्सुधीः ।

अजीर्णज्वरकासार्द्र हिक्काभ्यासां द्रापहम् ॥ २२८९ ॥

गुल्मरुहाहम्लपित्तञ्च मलनातयिनाशनम् ।

शूलोष्मानहरं सद्यो मूत्रहृच्छ्रामपापहम् ॥ २२९० ॥

घातानुलोमनञ्जैर मेदि दीपनपाचनम् ।

तत्तद्रोगानुपानेन योजयेद्द्विदिमाग्निपक्वम् ॥

सूर्याह्ना यद्विका होपा निर्मिता प्रलणा पुरा ॥ २२९१ ॥

रघायनं, ज्वराऽपिचरे ।

भाषा—पीपल, पिप्पलीमूल, शुद्ध यज्जग, शिंगरिफ और  
शुद्धपाठा समभाग, शुद्धजमालोटा सबसे चतुर्थांश, हल्दीवर्णरससे  
अग्निस्वायी कियाहुआ कल्मीसोरा छपटीबरावर लेकर पु-  
ष्टपाकेमें निहालेहुए चूर्णकरेणसे ३ भावनाएँ देकर सुगंधरावर  
गोलिये बनाकर रखओगे । इसमेंसे १-१ गोली पानकरसे अपना  
समरोगहानुपानकेसाथ शुद्धरसामदेनेसे अजीर्ण, ज्वर, कास,  
हिक्का, श्वास, उदररोग, गुल्म, तीहा, अम्लपित्त, नलयात, दृढ,  
आम्भान, मूत्रहृच्छ्र, पाठोदराने, मलविषय इनपचको दूर  
नष्टकरता है और दीपन तथा पाचन है ॥ ५३८ ॥

## ५३९ सूर्यवातरसः

तुल्योपणैरसामोदताम्रभिः क्रमशो धृतैः ।

सविपारीशैः कृतः कल्कस्त्रिगुञ्जः सूर्यवातनुत ॥ २२९२ ॥

र. (भा), सूर्यवाते ।

भाषा—शुद्ध पाठा १ भाग, गन्धक २ भा, तापत्रम्म ३ भा, अन्नकमस्य ४ भा, शुद्धवज्राग ५ भा., मरिच १५ भागलेखर वारीकनूणैर पारेगन्धककी नीलवर्णकबलीमें मिलाकर रसजोड़े । इसमेंसे ३-३ रसी समयोचितानुगतनेमाय देनेसे यह सूर्यवात (अर्थात् भेद य सूर्यावर्त) को नष्ट करता है ५३९

## ५४० सूर्यशेखररसः ( विपसिन्दूरम् )

रसो द्वादशगणायाम् गन्धकस्याऽथ षोडश ।

दिङ्मूलस्य च चत्वारो घृष्टा कृष्यां विनिक्षिपेत् २२९३

द्वात्रिंशदभूतं दद्यात्सस्मिन् मृते विशोषिते ।

मृदा प्रलिप्य तां कृपां शोषयित्वा दरातपे ॥ २२९४ ॥

धृत्वाऽथ वालुकायत्रे धर्द्धि पट्टप्रहरायपिम् ।

इत्योत्सार्य स्वयं शीतं सृतं माणिक्यमभ्रमम् २२९५

सन्निपाते च दातव्यं त्रिदोशोत्पे च मृतकः ।

पर्येव गुजिका मात्रा चोत्तमा सन्निपातक ॥ २२९६ ॥

रोगोद्रेकं समीक्ष्याऽथ वर्षयेद्वा विचक्षणः ।

यदि दाहो भवेदेन आपयेद्वा चित्तञ्चरेत् ॥

भोजनं धीचितं कुर्यान्मधुप्रायमेव च ॥ २२९७ ॥

रसवि, र. च., रसायनस, र. का., काताधिकारे ।

टि०—यद्यत्र त्रिदोशप्रधाने कबल मन् हृदये तत्र मह निक्षिप्ते प्राय विपसिन्दूर चिन्तु मत्सिन्दूर स्वयंजोषो वा इत्यादि स्पष्ट नाम स्थापनीयम् ॥

भाषा—शुद्धपाठा १२ भाग, गन्धक १६ भा, शुद्धविगारिक ४ भा., शुद्धवज्राग ३ भागलेखर वारीकनूणैर पारेगन्धककी नीलवर्णकबलीमें मिलाय ६-७ कपड़मिट्टीदीड्डई आतसी शीशीमेंबर वालुकायत्रमें रस ६ पहरकी क्रमशः अभ्रि देकर पकावे । आचरन्धरोत्पत्तये शीशीका मुहूर्तकरदेवे । स्वतः शीतलदोशेन माणिक्यके सहस्र यह सिन्दूर निकलेगा इसे शीशीमें रखलेवे । इसमेंसे १-१ रसी समयोचितानुगतनेमाय देनेसे दोषनिपातको यह नष्ट करता है । रोग और रोगीका बला बल देखकर मात्राको न्यून या अधिक करदेवे । इसकेदेनेसे दाहमात्रम हो तो ठंडेजले घान करावे । अत्यन्त मूलगलेन मधुप्राय भोजन देवे ॥ ५४० ॥

## ५४१ सूर्यसिद्धरसः

गुह्वरी भृङ्गराजश्च कुमारी कण्टकारिका ।

निफला कारुमाची च कदली चाजिगन्धिका २२९८

वर्गस्यास्य रसेश्चापि वर्णाशुशलीप्रैवैः ।

प्रत्येकं मर्दयेदतैः पारदं प्रतिवासरम् ॥ २२९९ ॥

प्रस्थमात्रप्रमाणेन गाढं गाढं निरन्तरम् ।

अनन्तरं सैन्धवेन प्रस्थद्वयमितेन च ॥ २३०० ॥

प्रत्येकं गैरिकं प्रस्थं खटिकां पिष्टरूपिणीम् ।

कन्यकारसंयुक्तां रसं तत्र विमर्दयेत् ॥ २३०१ ॥

दिनत्रयमतिशुद्धं नष्टपिष्टं सत्यके ।

तापिकायप्रमारोप्य मुद्रयेद्वा मुपं ततः ॥ २३०२ ॥

त्रयोदशदिनं यावद्बहिः कुर्यान्निरन्तरम् ।

यन्नादादाय सृतेन्द्र कर्तव्यं तस्य पूजनम् ॥ २३०३ ॥

गुरूणां महतां पश्चाद्योगिनां क्रोधयज्जितः ।

मद्रमात्सर्गमुत्सृज्य मानश्चाहङ्कृतिन्तथा ॥ २३०४ ॥

ग्रन्थचर्यश्च कर्तव्यममलं द्रव्यं विपर्जयेत् ।

दानं दत्तया प्रकृत्यं वैद्यतोषणमेव च ॥ २३०५ ॥

अर्द्धगुञ्जं रसं दद्यात्सततं क्रमवर्धितम् ।

रक्तिकाननपर्यन्तं दद्याद्देवो विचक्षणः ॥ २३०६ ॥

मत्तदुग्धश्च मुञ्जीत मुद्रदुग्धघटतं घृतम् ।

शक्तामिधुखण्डानि पथ्यार्थं तत्र योजयेत् ॥ २३०७ ॥

एकविंशदिनस्यान्ते मत्ताश्च निपतन्ति च ।

चत्वारिंशदिनेऽतीते तत्वेष्टाः प्रक्षरन्ति च ॥ २३०८ ॥

एवं पष्ठिदिने क्रान्ते मला नाशं प्रजन्ति च ।

अशीतिदिवसस्यान्ते तस्य दन्ताः पतन्ति ये २३०९

एवं स्वयं प्रादयमानं रसायनरसेश्वरम् ।

मासत्रये समायाते नृताः केशा न संशयः ॥ २३१० ॥

दृढा दन्ताश्च जायन्ते नवीनाश्च पुनर्नराः ।

पुनर्नखपुष्प्या द्वितीयो मीनकेतनः ॥ २३११ ॥

सिद्धमण्डलसिद्धाङ्गो ब्रह्मायुः कालपारगः ।

दृढाङ्गो बलवान्तीर्म्हो हरिवर्गो हवेन्द्रियः ॥ २३१२ ॥

निरामयो महोत्साहो महाशी च मनोहरः ।

धनितानां शतं गच्छेत्पुत्राणां शतमामुयात् ॥ २३१३ ॥

कालध्रमरसङ्काशाः केशाः स्युर्गुच्छरूपिणः ।

विशालबाहुशोभी स्याद् दृढोरःस्थलशोभनः २३१४

कपाटप्रतिमं ग्रीढं हृदयं क्षीमनोहरम् ।

अत्युन्नतचपुर्गुर्धिशालनयनाम्बुजः ॥ २३१५ ॥

निर्गुण्डकापत्ररसं त्रिकालं घानुपाययेत् ।

औषधस्य क्षणं स्थित्वा काले ताम्बूलचर्चणम् २३१६

कर्पूरकुसुमामोदे निर्मले चित्तिवेशयेत् ।

अनल्पे मुखदे तल्पे निर्मलास्तरणि सुते ॥ २३१७ ॥

गीतसङ्गीतशास्त्रीयं रामायणपरायणः ।

अपथ्यं न च कर्तव्यं पथ्ये स्थेयं सदा बुधैः ॥

अनिष्टां देहिनां शास्त्रे दौर्मनस्यं सुकर्मणि ॥ २३१८ ॥

रसवि, रसायने ।

भाषा—गिलेय, भगटा, चीडवार, मट्फट्टिया, त्रिकला, प्रकोय, कदलीकन्द, असपन्व, इटसिट, मुशली इनप्रत्येकके स्वलोते १ प्रस्थ पोरको तप्तस्वलेमें जोरसे मर्दनकरे । फिर दो प्रस्थ सैन्धवेसे मर्दनकर पोरको स्वच्छवनावर गेहू और खटिकागिरी १-१ प्रस्थ मिलाय नमसे पीडुवारकेससे ३-३ दिन मर्दनकरे । नष्टपिरी दोनेपर बहुतमजबूत मिट्टीकेवर्तनेमें बन्दर



समस्तपर ७-८ वक्ररूपद्वितीया चंद्राय अञ्जीतरह सुखेपर चूल्हेपर रस १३ दिनकी निस्तरावधि १४ वें दिन अग्निदेना यन्दकदे और कोयलोपर रहनेदेवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर ऊपरके भागमे आयेहुए पारेको निकालकर रखछोड़े । मोय, मद, मात्सर्य, मान, अहङ्कार इनसबको छोड़कर प्रह्वार्यवत लेकर शुद्ध और योगीका पूजनकर अम्बुवर्गका परित्यागकरता हुआ यथाशक्ति दानकरे और वैद्यको सन्तुष्टकर जाधीरतीसे रसकासेवन प्रारम्भकरे । प्रतिदिन आधीआधीरती बढ़ाकर ९ रतीपर माना कायमकरे । मूखलावेपर दूध, भात, सुदूष्य, घी, दारु और ईशका उचितप्रमाणमे सेवनकरे । २१ वें दिन मद्य, ४० वें दिन केश गिरने लगेंगे । ६० दिनकेबाद मल नष्टहोंगे । ८० दिनबाद दांत गिरेंगे । ३ महीने पूरे होनेपर केश और मज्जवृत्तोंका प्रादुर्भाव होगा । फिरसे युवावस्थाको प्राप्तहोकर कल्पसदृश होजायगा । अकस्मात् दिव्यविद्याओंकी प्राप्ति होगी और दीर्घायु होगा । इसप्रकार रससेवनकरनेवालेके समस्त अन्न मज्जवृत्त, शोभा और बलयुक्त होजातेहैं तथा इन्द्रियोक्तीशक्ति बढ़जातीहै । तमामरोगोंसे निमुक्तहोताहै । भूल एकदम बढ़जातीहै । बहुतसी जिन्योंकी सम्मोगशक्ति बढ़कर दिव्यपुनर्गो उत्पन्नकरनेकी शक्तिबढ़तीहै । केशमोंरेकेसदृश काले और गुन्ठेदारहोजातेहैं । विशालगह्व, छोरस्क और कपाटसदृश मज्जन् हृदयवाला होजाताहै । शरीरका दृढ़ बढ़जाताहै और कमलसदृश विशालनेत्रहोजातेहैं । इसमें तीनोंसमय औषधमक्षणके योगीदेखाद निगुण्डीकारसफिलावे । कपूर और सुगन्धयुक्त पान देवे । विशाल और निर्मलवस्त्रविछोड़ई सुखकारक शय्यापर शयनकरावे । शास्त्रीयगीत और सङ्गीत सुनावे । रामायणकापाठकरे । इसकेमेवनमें अपच्य भूलकरभी न करे । शास्त्रमें मनुष्योंके अविश्वास और मुकर्ममें उदासीनताको देखकर विश्वासदिलानेकेलिये यह योग बढ़ागयाहै ॥ ५४१ ॥

### ५४२ सूर्यावर्तः ( प्रथमः )

तप्तपिष्टहिगन्धेन लेपयेद्रूपिप्रक्रम ।  
शरायसम्पुटे रज्जा शुष्कं चुल्ह्यामधिश्रयेत् ॥ २३१९ ॥  
अग्निः शनिः शनिदैवस्ततो यामचतुष्टयम् ।  
स्याद्गन्धीतलमुदृत्य वमनेषु प्रयोजयेत् ॥ २३२० ॥  
कासे ह्ये तथा श्वासे कण्ठरोगे च दृढे ।  
मन्देऽग्नौ कफन्मभूते घमेघोष्णामनुपानतः ॥ २३२१ ॥  
रसायनसं., श्वारे ।

टि.—केवलगन्धेन मारितत्वाद्विनाष्पेनान्तर्भावितः ।

भाषा—दोभाग शुद्धगन्धकको तक्रमे पीसकर एकभाग बारीक तावेके पत्रोंपर लेपकर धारावधुतक्रमे बन्दकर चूल्हेपर रस कम- ७५४ परकी आधेदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ मासेकी माया यमनहारकयोगोंकेसाथ देकर गरम पानीपिलानेसे बमनहोगी उग्रमे काश, हास, भास, कण्ठरोग, हृष्ट, कफमेजरपत्र मन्दासि देख नष्टहोतेहैं ॥ ५४२ ॥

### ५४३ सूर्यावर्तः ( द्वितीयः )

मृताग्रं माक्षिकञ्चैव हेमकार्पासवीजकम् ।  
टङ्गुणं मीक्षिकञ्चाथ गुह्यचोसत्त्वमेव च ॥ २३२२ ॥  
काकविम्ब्युत्थवीजानां चूर्णं गीर्वाणपुष्पकम् ।  
सर्वैः समं हिह्लुञ्च जम्बीररसमर्दितम् ॥ २३२३ ॥  
द्राक्षया हिकिकां हन्ति ग्रहणीगदनाशनः ।  
सूर्यावर्तरसेनाम देववैद्यविनिर्मितः ॥ २३२४ ॥  
वै. चि. (७), हिकियां प्रह्वयाथ ।

भाषा—अन्न और सोनामाखीमत्स, शुद्धचतुरे और कपासकेबीज, मुनाछुहागा, सुकापिटी, गिलोयसत्त्व, कौआट्टोके- बीज, लवङ्ग १-१ भाग, शुद्धसिंगरिफ सबकीबराबर लेकर बारीक चूर्णकर जम्बीरीकेरसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिएबनाकर रखाछोड़े । इनमेंसे १ से ३ गोलीतक तुलसी- वगैरह उचितानुपानकेसाथ देनेसे हिचकी, ग्रहणी और सूर्या- वर्तको यह नष्टकरताहै ॥ ५४३ ॥

### ५४४ सूर्योदयरसः

सूतश्मामुणलोहताम्रनलिका माक्षीकतालामृत्तं,  
वेष्टारामट्पीप्यकिंशुकफलं कम्पिहृक्कं कृष्टकम् ।  
तुल्यांशैः परिमर्दितं दिनमथो कन्यापरान्निक्षिजा-  
भृङ्गादिः सुरपिण्कासदिरशकादिः समङ्गाम्बुजिः ॥  
सिद्धो यद्यमितो जयेत्कृमिजङ्गं निग्गाम्बुदीप्यान्वितं,  
वेष्टारामटयुक्तया कृमिहरः शौद्रावित्तो वाऽस्मियुक् ।  
ग्रन्थुप्रातिविषाऽऽसुपत्ररसगुग्गुह्रीकादिशयस्त्र्युक्,  
शुलाभमानवियन्धगुल्मजठरास्त्र्योदयोऽसौ रसः ॥

२., इत्यधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, ताम्र, कङ्कड़, सोना- भारी, हरिताल इनकीमल्लं., सुइगुलाग, विडङ्ग, हींग, अज- वाइन, पलाशपापड़ा, कमीला, कुठ सब समभागका बारीकचूर्ण- कर परिगन्धककी नीलवर्णकबलीमें मिलाय पीऊंका, त्रिफला, चित्रक, प्रद्वण्डी, अंगार, शताव, शैर, भाग, मजीठ इनकेस्वरस अथवा कायोंसे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिए बना- कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली नीम, सुगन्धगला और अजवाइन (१) विडङ्ग और मुनीदीग (२) चित्रक और मधु- शुक् विडङ्ग, (३) गठिवन, वच, अतोस और मृषाकर्णिकेतो- कारस (४) हींग और सहजितकारस (५) इनमेंसे किमी एक अनुपानकेसाथ औचितो देखकर देनेसे क्रिमिरोग, दृल, आम्बान, विबन्ध, गुल्म और उदररोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५४४ ॥

### ५४५ सेतुगन्धरसः

रसदग्दसुताम्रं फेनगन्धेन तुल्यं,  
मुनिदिनमितद्वृष्टं विभक्तोयेन चतुर्म् ।  
ज्वरज्वलितविद्वहं दापयेद्रात्रिकेण,  
श्रुतजलहिमपाने तत्रयुगेण परम् ॥ २३२७ ॥

हन्त्याज्वरातिसारञ्च सर्वरूपं मुद्रारुणम् ।

वाले वृद्धे च तदणे सेतुबन्धो महारसः ॥ २३२८ ॥

र. वो., ज्वरातिसारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, शिंगरिफ, अफीम और गन्धक, ताप्र-  
भस्म सब समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर अदरककेरसमें ७  
दिततकमर्दनकर ३-३ रत्तीको गोलेमें बनाकर रखओगे । इन-  
मेंसे १-१ गोली अदरककेरसकेसाथ देनेसे मयङ्करज्वरातिसार  
और दाहको यह नष्टकरताहै । इसमें गरमकियाहुआजल छंदा-  
करकेदेना । छाछ और सूरके यूपकेसाथ पच्येदेना ॥ ५४५ ॥

### ५४६ सेतुबन्धवटी

म्लेच्छोपणाधिकेनं शालुकं खदिरसंयुक्तम् ।

कर्पं कर्पं चूर्णं कृत्वा विमिश्रयेत्सर्वम् ॥ २३२९ ॥

कर्पं दन्धकपर्पकचूर्णं दत्त्वा विभाव्यञ्च ।

कञ्जद्वडिमिजम्बूद्वट्टापत्रज्वरसेन प्रत्येकम् ॥ २३३० ॥

पञ्चवारं विभाव्याऽथ कारयेद्दण्डिकां शुभाम् ।

शुक्लामात्रामतीक्ष्णरे सेतुबन्धं प्रयोजयेत् ॥

नानावर्णमसाध्यञ्च शूलं पित्तं निवर्तयेत् ॥ २३३१ ॥

ना. वि., समिपातातिसारे ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, मरिच, अफीम, कमलकन्द, खैर-  
सार और पीलीकोईकीमल १-१ कर्प लेकर बारीकचूर्णकर  
मरसा अथवा जलगोल, अनार, जामुन और सिंघाड़ेके पत्तोंके-  
स्वरससे ५-५ बार भावनाएँ देकर १-१ रत्तीको गोलेमें बना-  
कर रखओगे । इनमेंसे १-१ गोली मरसाकैरहके रसकेसाथ अथवा  
समयचितानुगुणकेसाथ देनेसे नानातरहका अतिसार, असाध्य-  
शूल और पित्तोगीको यह नष्टकरताहै ॥ ५४६ ॥

### ५४७ सेवन्तीपाकः

सेवन्तीसुमसाहस्रं घृतप्रस्थे विपाचयेत् ।

घृते पक्कीकृते तत्र निक्षिपेद्वीपथं भिषक् ॥ २३३२ ॥

सितोपलाचतुष्कञ्च चातुर्जातं पलं पलम् ।

मृद्वीकां पट्टपट्टाञ्चैव क्षिप्त्वा मधु पलायकम् ॥ २३३३ ॥

धारासत्त्वं तवक्षीरं श्वेतं जीरं घृथकं घृथकं ।

नागं वज्रं पलायञ्चैव सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ २३३४ ॥

कर्पूरं बहुमात्रञ्च दत्त्वा स्याप्यं सुकुम्भके ।

भक्षयेत्कर्पमात्रन्तु प्रातरेव हि पथ्यमुक् ॥ २३३५ ॥

जीर्णज्वरे क्षये कासे अग्निमान्द्ये प्रमेहेके ।

दिनरात्रिज्वरे चैव शिरोरोगे प्रशस्यते ॥ २३३६ ॥

प्रदरं रक्तजान्नोगान् कुष्ठारोगिषु च नाशयेत् ।

नेत्ररोगान्सुदुष्टांश्च तथा सर्वांसुलेस्थितान् ॥

नाशयेन्नात्र सन्देहो मण्डलस्य च सेवनात् ॥ २३३७ ॥

नि. र., क्षये ।

भाषा—नीले अथवा लालगुलाबके १००० पुष्पोंको  
१ प्रस्थ गोघृतमें भूतकर ४ प्रस्थ शकरकी ३ तारी आसनी  
बनाकर चातुर्जात १-१ पल, बीजरहितकालीद्राक्ष ६ पल, मधु

८ पल, गिलोयसत्त, तीक्षुर अथवा वंशलोचन, सफेदजीरा,  
नाग और वज्रभस्म २-२ कर्प, शुद्धकूपर ३ रत्ती डालकर चिकने-  
वर्तन अथवा काचकेपात्रमें रखओगे । ७ दिन बीतनेपर इसमेंसे  
१-१ कर्प प्राप्त काष्ठ सेवनकरनेसे जीर्णज्वर, क्षय, कास,  
मन्दाग्नि, प्रमेह, दिन और रात्रिकाज्वर, शिरोरोग, प्रदर, रक्त-  
ज्वरोग, कुष्ठ, अंस, दुग्धनेत्ररोग, समस्तमुखरोग इनसबको १  
मण्डल (४५ दिन) में यह नष्टकरताहै ॥ ५४७ ॥

### ५४८ सोमनाथिताम्रम् ( प्रथमम् )

शुक्लं सूतसमं द्वयोरपि समो गन्धस्तदर्थः पुनः,

स्तालव्यार्द्धशिलायुतो विरचयेत्पिष्टं ततः कज्जलीम् ।

लिप्त्वा ताप्रदलानि मार्तिकद्वटे पात्रे निधायाऽथ त-

त्पाप्यं सैकतयन्त्रकेऽर्द्धदिवसं शीतं स्वतो निहरेत् ॥

तत्कासश्चसनाग्निमान्द्यगुदजानेकातिपाण्डुमय-

ङ्गीहोरः प्रतिरोधकोष्ठमक्तो रक्तं जयेद्योजितम् ।

पल्लवन्दमितं कणामधुयुतं क्षाराद्रवारापि या,

शुकं सर्वकफामयग्रमचिराद्यस्तोभनाथानिधम् ॥

वै. र., नि. र., र. सु., र. च., चि. र. भ., यो. त., टो., र. क.

यो., र. र. स., र. पा., बा., यो. च., शुके, भासे कासे च ।

टि०—रसेन्द्रचूडामणी कज्जलीं ताप्रपत्राणि पयपिच विनिक्षिपेरिति  
विशेष, कज्जल्या ताप्रकण्डलेन अपरोक्षनिक्षेपे च फलभागे प्राप्य  
समानैवास्ति अतस्तत्र स्वेच्छाचारस्यैव प्राधान्यम् ।

भाषा—शुद्धताविके बारीकपत्र और छद्मपारा १-१ भाग,  
शुद्धगन्धक २ भा, हरिताल १ भा और मैनसिल आधाभाग  
लेकर नीलवर्णकजलीकर जमीरीबौरहके रससे मर्दनकर ताप्र-  
पत्रोंपर लेपदेकर मिश्रिकेपात्रमें नीचे ऊपर रख दूसरे पानसे  
ढककर कपडिमिरीकर बालकायत्रमें दोपहरकी कड़ी आंचसे  
पकावे । स्वात्रशीतलहोनेपर निकालकर रखओगे । इसमेंसे  
६-६ रत्ती पीपल और मधु अथवा यवक्षार और अदरकके  
रसकेसाथदेनेसे कास, श्वस, मन्दाग्नि, अंस, नानातरहकेपाण्डु,  
शोधा, उर क्षत, मलमूत्रविषय, उदररोग, वातरोग और कफ  
रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५४८ ॥

### ५४९ सोमनाथिताम्रम् ( द्वितीयम् )

यलिना पलमात्रेण तद्व्यरजसा मितैः ।

विपत्तिन्दुकसाम्येन घत्सनामपद्धतैः ॥ २३४० ॥

कलिकारिशिलायुपतालपूगकरज्जकेः ।

कृत्वा चूर्णं हि जम्बीरद्वयेण विद्रवीकृतम् ॥ २३४१ ॥

तत्सर्वं श्वस्वके माण्डे विनिःक्षिप्य ततःपरम् ।

कृतकण्टकवेध्यानि पलताप्रदलान्यथ ॥

लिप्तपादांशसूतानि तस्मिन्कल्के निरुहयेत् ॥ २३४२ ॥

एतत्सिद्धमुखागतं विनिहतं श्रीसोमदेवोदितं,

शुक्लायुग्ममितं कणान्यसहितं सत्पथ्यसंसेवितम् ।

शुष्मङ्गीहोराकृद्विषयजठरं शूलाग्निमान्यामयं,

वातरोगम्पशोपपाण्डुनिचयं कृत्वादिक् नाशयेत् ।

पथ्यं रोगोचितं देयं रसाघातं विवर्जयेत् ।  
एतत्सात्त्विकं येन तस्य मृत्युं न विद्यते ॥ २३४४ ॥  
र. च., श्लाघिकारः ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और कुचिला १-१ पल, बछनाग, सेंधानमक, करिहारी, मैनसिल, निष्ठु, हरिताल, गुषारी, और करंज २-२ पल लेकर बारीकचूणकर जमीरीकेरखे पीसकर कल्पवनावे । फिर विशेषशुद्धताप्राप्ते कष्टकवेची ५१ १ पल और शुद्धपारा १ कप रखलेम डालकर घोट । समस्तपारा पत्रोंपर चढ़ जानेपर पूर्वकल्पके भीत पत्रोंकी तह लगाकर शरावसम्पुटमें बन्द कर कपड़मिठीकर लवणयन्त्रमें ४ दिनकी कड़ी आचदेवे । स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निवालकर अच्छीतरह घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती पीपल और धौबेलाय सेवनकरनेसे शुल्म, ग्रीहा, मरविबन्ध, उदरोग, शूल, मन्दाग्नि, वातछेद्यमरोग, शोष, पाण्डु, ज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै । इसमें पथ्य तत्तद्रोगो-चित देवे और रसको मारनेवाली चीजोंका परित्यागकरे । इसरो हमेशा सेवनकरनेवालेका दीर्घायु होताहै ॥ ५५५ ॥

#### ५५० सोमनाथरसः ( प्रथमः )

कपं जारितलौहञ्च तदङ्गं रसगन्धकम् ।  
पलापनं निशायुग्मं जम्बूवीरणगोक्षुरम् ॥ २३४५ ॥  
पिङ्गङ्गं जीरकं पाठा धात्रीदाडिमदङ्गुणम् ।  
चन्दनं गुग्गुलुलौधं शालार्जुनरसाज्जम् ॥ २३४६ ॥  
छागीदुग्धेन घटिकां कारयेद्दशरक्तिकाम् ।  
निमित्तो नित्यनाथेन सोमनाथरसस्तथैवम् ॥ २३४७ ॥  
सोमरोगं धनुर्विषं प्रदरं हन्ति दुर्जयम् ।  
योनिशूलं मेदुशूलं सर्वजं चिरकालजम् ।  
यधुमूर्धं विशेषेण दुर्जयंहन्त्यसंशयम् ॥ २३४८ ॥

र. स., र. सु., र. च., र. चि., सोमरोगः ।

भाषा—लोहभस्म १ कप, शुद्ध पारा और गन्धक, इला-यची, पत्र, हल्दी, दाहदही, जामुन, खस, गोखल, विडङ्ग, जीरा, पाठा, आरले, अनारदाना, मुनासुदामा, सपेदबन्दन, शुद्धगुल, लोप, सलुआ, अर्जुनरीछाल और रबीत ८-८ मासे लेकर बारीकचूणकर धातुओंकी नीलवर्णमजलीमें मिलाय बक-रीकेपत्रों १-२ दिन घोटकर १०-१० रत्तीकी गोलीयें बना कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपाननेसायके-नेसे दुःसह सोमरोग, प्रदर, योनि और मेदुशूल, त्रिदोषज और पुताणाल, दुर्जयबहुमृग, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५५० ॥

#### ५५१ सोमनाथरसः ( द्वितीयः )

हिहूलसम्भनं सूतं पालिधारसमर्दितम् ।  
रण्डादोषितगन्धञ्च तेनैव फज्जलीकृतम् ॥ २३४९ ॥  
तन्मोद्विगुणं लौहं कन्यारसचिमर्दितम् ।  
अन्नकं यक्षकं रौप्यं खरपं माक्षिगन्तया ॥ २३५० ॥  
सुवर्णञ्च तमं तथैव प्रत्येयञ्च रसाङ्गकम् ।  
तत्सप्तं कन्यकाद्राद्यं मर्दयेद्भयद्येत्ततः ॥ २३५१ ॥

मेकपर्णीरसेनैव गुञ्जाद्वयवर्तौ ततः ।  
मधुना भक्षयेच्चापि सोमरोगनिवृत्तये ॥ २३५२ ॥  
प्रमेहान्विशतिं हन्ति यधुमृगञ्च सोमकम् ।  
भूजातिसारकृच्छ्रञ्च भूजाघातं सुदारणम् ॥ २३५३ ॥  
र. स., र. सु., र. च., र. चि., भै. र., सोमरोगः ।

भाषा—विमरिफसे निकालेहुएपरिको २-३ दिन निसोत-केरससे मर्दनकर नष्टपिठी बनाय छड़ैपातितकरले । गन्धकमें चौगुना बाइतेखसेकेन्द्र अभावमें केलेकेन्द्रकास देकर चलाताहुआ पकावे । रससुखजानेपर गन्धकको धोकर साफकरले । फिर समभाग पारे और गन्धककी नीलवर्णकजलीकर दोनोंसे दूनी लोहभस्म मिलाकर १-२ दिन धीउवारकेरससे मर्दनकरे । इसकेबाद अन्नर, बज्ज, रजत, खपरिया, सोनामाखी और सुवर्ण इनकीमसमें पारेसे आधेआधेप्रमाणमें मिलानर धीउवार और मण्डकपर्णीके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलीयें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाधदेनेसे २० प्रकारकेमेह, बहुसून, सोम, मूनातिसार, मूत्रकृच्छ्र, भय-कूरसूजाघात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५५१ ॥

#### ५५२ सोमनाथरसः ( तृतीयः )

रज्जच्छदेन तनुना परिवेष्टय मुद्रां,  
ताम्रस्य साधयथमार्जवकलमभये ।  
सम्यक् पुटेदतिपटुः सुरमेः शरुद्धिः,  
स्यात्सोमनाथरस एव समीरहतां ॥ २३५४ ॥  
सि. भे. म. शूले ।

भाषा—शुद्धतावेके पैसेपर बारीक रागेकंपेकोलपेट भारेके पत्राङ्गे १६ गुने कलमें रख गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३-४ कपड़मिठीदेकर सूखनेपर गायकेकजोंकी गजपुदरी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर पैसा फूलाहुआ मिलेगा उसे पीसकर रख-छोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपाननेसाय-देनेसे यह पार्थशूलवर्गह तमामबायुरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ५५२ ॥

#### ५५३ सोमनाथरसः ( चतुर्थः )

पारदगन्धकरुनदीशदिलेसातुल्यभागपरिमृदिताः ।  
लोहवरपात्रनिहितास्त्वेता द्यपदि ततो भाव्याः ॥ २३५५ ॥  
स्नुग्जातासितभूतकनायसिकास्फोटिकादलस्वरसैः ।  
शियुदलेः सोममत्तिकासहितैः क्रमशः स्थिता रीद्रे ॥ २३५६ ॥  
तं शुष्कं सिद्धरसं गुञ्जावृद्ध्याष्टगुणपरिमाणम् ।  
ताम्बूलपत्रसहितं पूर्वार्दितं पथ्यं युञ्ज्यात् ॥ २३५७ ॥  
श्विनाडुम्वरिफिटिकासुतिपूतित्वहस्तचर्मणि ।  
श्रीसोमनाथगदितं रसायनं दुर्लभं हन्यात् ॥ २३५८ ॥  
र. म., कुंठे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, मैनसिल और बाउची समभाग लेकर बाउचीका बारीकचूणकर धातुओंकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय छोरिकरखले १-२ पहर मर्दनकर पथ्यकेवतनेमें रस-यूअर, कारापत्रा, मकौय, चिर्रोदन, गदित्रन, बाउची इनकेत

तथा कुट्टकीके स्वरसोसे तीक्ष्णवृषभे १-१ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखोछे । इनमेंसे १-१ गोली पानमें रखकर देवे और प्रतिदिन १-१ रत्ती बड़ाकर ८ रत्तीपर मात्रा कायमकरे । कुशोक्तपथका सेवनकरनेसे श्वित्र, उदुम्बर, पिडिका, मुनवहरी, सङ्ग, चर्मदल श्मश्रुको यह नष्टकरताहै ॥ ५५३ ॥

### ५५४ सोमनाथरसः ( पञ्चमः )

शुद्धसूतारूपलं पलन्तथा गन्धकश्च परिमर्दयेद्विपक्व ।  
मर्दयेत्त च सुलोहजेन तं स्वल्पशोषमचलोन्म्य कज्जलम् ।  
पादहोनपलमग्नं क्षिपेन्मर्दयेद्य च यामसम्मिमतम् ।  
विश्वचूर्णमिह निक्षिपेद्बुधः सिद्धमित्यमहिपत्रवेष्टितम् ।  
रक्तिकाप्रभुतिमापकं यथा दीयते च फलधर्गसंयुतम् ।  
व्योपमुस्तखदिरानुपानतः पथ्यमग्न यथशास्त्रिजं भवेत् ।  
अम्लमद्यतिलमैथुनानि चै

मानवो मलयुतानि नो भजेत् ।

श्वित्रं मुक्त्या हन्ति कुग्रानि पुंसां  
सर्वाङ्गान्युग्रप्रपानि मासात् ॥

पण्मासेन प्राप्तपूयानि जित्वा

धत्ते कान्तिं पूर्णचन्द्रोपमानाम् ॥ २३६२ ॥

र. गृ. दुष्टे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ पललेखर नीलवर्ण-  
कज्जलीकर ३-३ वर्ष अथक्रमस्य और खोटाचूर्ण मिलाय एक-  
पहर मर्दनकर रखोछे । इसमेंसे १-१ रत्ती पानमें रखकर खिलावे  
और कमसे मात्राबड़ाकर १ मासपर नियतकर । त्रिकला, विरट्ट,  
नागरनोथा और दैखारकाकाय ऊपरसे पिलावे । अब, पुराने-  
सफेद्याबल पथ्यमें देवे । लटाई, मघ, तिल, मिथुन, मलयुक-  
पद्माथ इनका परित्याग करनेस सफेदकुण्डोंको छोड़कर पूर्णरूप  
समस्तकुण्डोंको यह एकमहीनेमें नष्टकरताहै । पुष्यकुण्डोंको ६  
महीनेमें मिटाने पूर्णचन्द्रकीतरह शरीरकीकान्तिको बढाताहै ॥

### ५५५ सोमपाणिरसः

सूतनिष्कं गन्धनिष्कं मर्दयेद्विपक्वद्वये ।  
मापेकं मृततीक्ष्णं स्थान्मृतशुल्का माशिरुम् ॥ २३६३ ॥  
मापेकैश्च सम्मिथ्य पूर्वसुतेऽथ मर्दयेत् ।  
धनूरित्रिफलाकन्यापृच्छदायार्द्रिकद्वये ॥ २३६४ ॥  
कोशाम्रकस्य मण्डूक्या निरुण्ड्या भृङ्गचित्रकैः ।  
वयःस्थापिचुवातादिशकानान्मर्दयेत्पि ॥ २३६५ ॥  
प्रतिद्वयं पलेकं दत्त्वा खल्वे विमर्दयेत् ।  
रसांशं व्युषणं क्षित्वा चणमाना वटी कृता ॥ २३६६ ॥  
सम्मिथ्य सन्निपातात् दापयेत्क्षीरक्षद्वये ।  
कपायं पञ्चमूलानामनुपानं प्रदास्यते ॥ २३६७ ॥  
दस्यत्रं दापयेत्पथ्यं तुषार्तं शीतलं जलम् ।  
सन्निपातं निहन्त्यानु सोमपाणी रमेध्वरः ॥ २३६८ ॥

रसि, र सु, सु प्र, नि, र, र को, र का, सन्निपात।

टि०—स्यपदीधिया पाणिपुट इति नाम । र अ, र वा,

स्तयो पावररस इति नाम । योगमहाण्वे पालटान्मा “ सूतनिष्कं  
गन्धनिष्कं मर्दयेद्विपक्वद्वये । मापेकं मृततीक्ष्णस्य मृतशुल्काऽऽलमाशिरु-  
कम् ॥ मापेकं विनिक्षिप्य पूर्वसुतेन मर्दयेत् । धनूरिविषयाद्रवे मुस्ता  
उत्तननामै ॥ जातीकोशाशुताद्रवे पण्डेयापि बुद्धिमात्रम् । प्रतिद्वयं पले-  
कं दत्त्वा खल्वे विमर्दयेत् ॥ रसांशं व्युषणं मोचरस क्षित्वा वटीस्तन ।  
व्यायचण्वमात्रा वै तास्तिलो जीरकाद्रवे ॥ दापयेत्तन्मूलोत्पथपादैर्या-  
ऽनुपानम् ॥ ज्वरादिमात्रं सखरदोषोत्पथमृगणीये ॥ दस्यत्रं दापयेत्पथ्यं  
तुषार्तं शीतलं जलम् । सन्निपातं निहन्त्यानु रमोऽयं पाट्याभिः ॥ ”  
इति योगो निहितोऽस्ति । अथ मूलद्रव्येषु तात्क प्रश्नेषु च मोचरस  
विशेषतया निक्षिप्य विनेष कुतोऽस्ति परन्तस्य मूल पूर्वसुते एवेति सुधीमि  
हं भाषयन्तीयम् ।

भाषा—४-४ मासे शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जली  
कर चित्रककेस्वरससे १-२ पहर मर्दनकर कोलाद, तावा और  
सोनामाखी १-१ मासा मिलाकर धनूरा, त्रिफला, शीकुआर,  
विषारा, अदरक, जगलीआम, द्राक्षी, सभाळ, भंगरा, चित्रक,  
हर्द, नीम, एण्ड और भागके यथासम्भव १-१ पल स्वरस  
अथवा कायोसे मर्दनकर मुस्ताकर छडाभाग त्रिकुट्टाचूर्ण मिलाय  
चनेप्रमाणगोलिये बनाकर रखोछे । इनमेंसे १-१ गोली जीरके  
स्वरस अथवा कायोसे मिलाकरदेवे और ऊपरसे पञ्चमूलका-  
कापदेवे तो यह सन्निपातको नष्टकरताहै । अत्यन्तमूलखल्वेनेपर  
दहीभातदेवे और व्यासलगनेपर छाजलदेवे ॥ ५५५ ॥

### ५५६ सोमवाणरसः

हिङ्गुलं मरिचमरिचनागं नागधङ्गमलिनं ज्वलनालम् ।  
पञ्चपित्तगरलं तरलं तत्पुष्पयुक्तमपि मर्दये गाढम् ॥  
तत्समानमस्त्रिलं घनयात्रा भावितं घनमदेन मदेन ।  
भावितं तदनुपानभेदतत्सन्निपातसततादिनाशनम् ॥  
दो, ज्वराऽधिरारः ।

भाषा—शुद्धशिगरिक, मरिच, शीतजीनी, नागकेशर,  
नाग और वज्रभस्म, भाग, शुद्धगन्धक और इरिताल समभाग-  
लेकर घारीकनूणकर पाचोपित्तों और सर्पविषसे १-१ भावना  
देकर एकभाग कषीसभस्म मिलाय नागरनोथा, कपूर, कन्चूरी  
और मार्जारमदरी १-१ भावना देकर आपोआपी रत्तीकी  
गोलियो ब्रतकर रखोछे । इनमेंसे १-१ गोली सप्तसोषिता-  
पानकेसाथदेनेसे सन्निपात और सततादिमस्तन्वरोसे यह नष्ट-  
करताहै ॥ ५५६ ॥

### ५५७ सोमानलरसः ( प्रथमः )

। गोमूत्रे वांस्तुजीवीजं त्रिसप्ताहं विभावयेत् ।  
त्यज्यं शोषितं चूर्णं तुल्यांशा चामया तथा ॥ २३७१ ॥  
ततः खादिरबीजोत्पथकापाये मर्दयेत्क्षणम् ।  
कङ्कष्टं मूललोहञ्च तुल्यांशं मधुमिश्रितम् ॥  
कर्पूरं सङ्कुष्ठार्तः खादेत्सोमानलो हयम् ॥ २३७२ ॥  
र. वा, बुडाप्रधिकरः ।

भाषा—प्रतिदिन ताजे गोमूत्रमें २१ दिनतक वाडूजीको  
भिगोव । इसकी समस्तद्रव्या मोनमनेकर । इसकी बराबर हर्द  
मिलाय खादिरबीजोत्पथकायसे मर्दनकर रेहनोनी और लोह,

भस्म १-१ भाग मिलाकर मधुकेसाय १-१ तोलेकी गोलियें बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुगन्नेसाय लेनेसे सबप्रकारकेदुष्ट नष्टहोतेहैं ॥ ५५७ ॥

### ५५८ सोमानलरसः ( द्वितीयः )

विशुद्धः पारदो ग्राह्यो हेमगन्धकजारितः ।  
हेमभस्मबलिभ्याञ्च तुल्याभ्यां सह पर्ययीम् ॥ २३७३ ॥  
कृत्वा तत्र मृतं सृतं तुल्यं निक्षिप्य मर्दयेत् ।  
त्रिफलाव्योपमुस्ताग्निभृङ्गनारैः पुथक्कृत्वा ॥ २३७४ ॥  
ततः सञ्चय्य मतिमान् रोगदोषानुसारतः ।  
सर्वेषु वातरोगेषु ग्रहणसुल्भपाण्डुषु ॥ २३७५ ॥

र. क. यो., वा., वातरोगे ।

भाषा—विशुद्ध और युष्कृतगोमैयं यथास्तस्य सुवर्णबीज और गन्धको जाणकर सुवर्णभस्म और शुद्धगन्धक तीनोंसम भागकी नीलवर्णकजलीकर पर्ययीबनाया बराबरकी पारदभस्म मिलाय त्रिफला, त्रिकटु, नागरमोधा, चित्रक और अंगरेवे-स्वरसोंसे क्रमशः १-१ भावना देकर १-१ रसीकी गोलियें बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुगन्नेसाय देनेसे समस्तनातोग, ग्रहणी, सुल्भ और पाण्डुको यह नष्टकरताहै ॥ ५५८ ॥

### ५५९ सोमेश्वररसः ( प्रथमः )

शालाज्वनं लोध्रकञ्च कदम्बागुरुचन्दनम् ।  
अश्लिमन्यो निशायुग्मं धार्द्राद्विमगोक्षुरम् ॥ २३७६ ॥  
जम्बूवरीरणदूलञ्च भागमेपां पलादकम् ।  
रसगन्धकधान्याप्यद्विमेलापत्रं तथाम्रकम् ॥ २३७७ ॥  
लौहं रसाज्वनं पाठा विडङ्गं टङ्कजीरकम् ।  
प्रत्येकं पलिकं भागं पलादं गुग्गुलीरपि ॥ २३७८ ॥  
धृतेन यदिकां कृत्वा स्वादेत्पाण्डुशरत्तिकाम् ।  
गहनानन्दनायेन रसो यत्नेन निर्मितः ॥ २३७९ ॥  
सोमेश्वरो महातेजाः सोमरोगं निहत्यलम् ।  
एकजं हृद्भजञ्चैव सन्निपातसमुद्भयम् ॥ २३८० ॥  
मृदायातं मृष्टरुच्यं कामलाञ्च हलीमकम् ।  
भगन्दरोपदंती च चिचिधान्याडकान्नपान् ॥  
विस्फोटावुदकण्डूश्च सर्वमेहं विनाशयेत् ॥ २३८१ ॥

र. सं., र. मि., य., र. गु., र. र., भै. र., सोमरोगे ।

भाषा—सगुआ, अजुन, सोप, कदम्ब, अगर, सफेद-चन्दन, अण्णी, इन्दी, दासुन्दी, बाणसे, अनारदाना, मोरस, जामुन, गसडीज १-२ कप, शुद्ध पारा और गन्धक, पनियां, नागरमोधा, दशपत्री, पत्र, अम्रक और लोहकम्, रसीत, पाठा, विटत्र, शुक्राग और जीरा १-१ पल, शुद्धगुल २ कप देकर सबबाशीरकपूण्डर धातुमोरी नीलवर्णकजलीमें मिलाय धीमे पोटकर १-२ मागेकी गोलियें बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अपरा रोगोचितानुगन्नेसाय देनेसे एहज, हृद्भज और मणिपत्र सोमरोग, सूत्रान्त, मृष्टरुच्य, कामला,

हलीमक, भगन्दर, उपदंती, पीडादेनेवालेज्वर, विस्फोट, अजुन-खाज, प्रमेह इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५५९ ॥

### ५६० सोमेश्वररसः ( द्वितीयः )

शुद्धं सृतं मृतञ्चायं गन्धकं मर्दयेत्समम् ।  
दिनं निर्गुण्डिकाद्रावे रुद्राहर्भूरे पचेत् ॥ २३८२ ॥  
उद्धृत्य वाकुचीतैले वाकुच्या वा कणायतः ।  
दिनैकं भावयेत्समं निष्कमात्रञ्च भक्षयेत् ॥ २३८३ ॥  
वाकुचीं काकमाचीञ्च त्रिफलां चूर्णयेत्समाम् ।  
मध्वाज्यैः कर्ममात्रञ्च स्वनुपानमिदं लिहत् ॥  
कापालं विषमं कुण्डं हन्ति सोमेश्वरो रसः ॥ २३८४ ॥

र. सु., वै. वि., र. क. ल., चि. क., र. को., व. रा., र. का., कुण्डाधिकारे ।

टि०—चित्रिलाकमकल्पवर्त्त्वा तात्र त्रिगेपेण दृश्यते तथा च निर्गुण्ड्या द्रावे सप्तदिनपर्यन्तं मर्दनं विहितमिति विशेषः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अम्रकभस्म समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर संभालके रससे एकदिन मर्दनकर मोलाबनाय सूवरयत्रमें एकदिनरी अमिदे । स्वादुशीतलहोनेर निकालकर वाकुचीकेतैल अथवा वायसे एकदिनमर्दनकर ४-४ मासोकी-गोलियें बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली वाकुची, मद्योय और त्रिफला समभागके १ कपचूर्णकेसाय मधु और धीमे मिलाकर लेनेसे कपाल और विषमदुष्टको यह नष्टकरताहै ५६०

### ५६१ सौगतवटी ( सौरतपदी )

पारदगन्धकचम्पकैसरसुरसकुसुमकरहाटाः ।  
अजमोदाम्बुधिशीपो जातीयमञ्च जातिफलम् ॥ २३८५ ॥  
प्रत्येकं भागेकं भागद्वितपञ्च शुद्धमहिफेनम् ।  
वनपट्टरसशगुटिकाः कार्या मधुनाऽप्य भक्षयेदेकाम् ।  
यामेऽतीते ललनासधिषे स्थित्या ययामिकाकर्षम् ।  
तेलाद्रं भुञ्जीयादनुपानं चेतदेतस्याः ॥ २३८७ ॥  
लिङ्गं कठिनतरं स्याद्दीर्घस्तम्भे भवेद्यामम् ।  
एषा सौगतगुटिका सत्यं सत्यञ्च शुनरोषकरी ॥ २३८८ ॥

र. यो. त., र. बी., य. र. गु., यो. त., बाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, नागचम्पातेदुलकी केसर, तुलसीकेतुल, अम्रकछरा, अम्रमोद, समुद्रशोष, आविनी, जायफल १-१ भाग, शुद्ध अकीम दो भागलेकर एवका बाशीर-चूर्णकर मधुनेसाय जलसीवेरसार गोलियें बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली खाकर एकपहरपाद रीकेसायदेकर १ कप अजमोदको ठेकमें भिगोकर खावे । इमने ध्वज एकदमकठिन-होया और १ पहर बीयेकालम्भन होगा ॥ ५६१ ॥

### ५६२ सौभाग्यवटी

सौभाग्याऽमृतजीरपञ्चलरजःपयोऽम्याऽक्षामलाः ।  
निष्पन्नाप्रकण्डुगन्धकूरसानेकीष्टान्भावायेत् ।  
निगुण्डीयुग्मभृङ्गाजकचूपाऽपामागं पत्राहुस-  
त्प्रत्येकस्वरमेन सिसृगुटिका हन्ति त्रिदोषादयम् ॥

येषां शीतमतीय देहमखिलं स्वेदद्रवाद्रौहितं  
निद्रा घोस्तरा समस्तकरणव्यामोहमुग्धं मनः ।  
शूलधासवलासकाससहितं मूत्रांशुवी तृहज्वरं,  
तेषां वै परिहृत्य मृत्युवदनात्मत्पानयेन्नीवन् ३२९०  
रक्तिकापञ्चकं देयं तरुणस्य शिशोः पुनः ।  
रक्तिकाघृतमज्जायैरनुपातैः सुखावहैः ॥ ३२९१ ॥

र. सं., र. चं, र. सु., भै. र. र. क. ॥, ज्वराधिकारे । धन्व-  
न्तरो सौभाग्यचिन्तामणीति नाम । र. म. मा., दो., ना. वि.,  
एषु लीलाविलास इति नाम ।

भाषा—भुनाइहागा, शुद्धबधनाग, जीरा, पाचोनमक,  
त्रिकटु, हरे, बहेडा, आवला, मिश्रद्र अन्नमसम, शुद्ध गन्धक  
और पारा समभागलेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकम-  
लीमें मिलाय दोनोनिगुण्ठी, भंगरा, अह्वा और अपामार्गके  
स्वरसोंमें १-१ दिन मदनकर ५-५ रस्तीकी गोसियें बनाकर  
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचित मधु-  
धृतप्रयति अनुपातोंकेसाथ देनेसे पूर्णरुग्णशिरात, शूल, खाव,  
कफ, कास, मूत्रांशु, अरुचि, तृषा और ज्वरको यह नष्टकरताहै ।  
गर्हद्वैतेना पीछे आतीहै । बचेको दोरस्तीकी मात्रादेना ५६२

### ५६३ सौभाग्यशुण्ठीपाकः ( प्रथमः )

त्रिकटु त्रिफला भृङ्गजीरकद्वयधान्यरुम् ।  
कृष्णजमोदे लौहाञ्च शृङ्गी कटुफलमुस्तकम् ॥ २३९२ ॥  
पला जातिफलं मांसी पत्रं तालीसकेशरम् ।  
गन्धमाता शटी यटी लवङ्गं रक्तचन्दनम् ॥ २३९३ ॥  
एतानि समभागानि शुण्ठीचूर्णान्तु तत्समम् ।  
सिता छिगुणित तत्र गव्यं क्षीरं चतुर्गुणम् ॥ २३९४ ॥  
पक्त्वा कर्मप्रमाणान्तु दुग्धेनापि जलेन वा ।  
अम्लपित्तं निहन्त्येतद्वोचकनिबृदयम् ॥ २३९५ ॥  
शूलहृद्दोगशामनं कण्ठदाहं नियच्छति ।  
हृद्वाह्यं शिरःशूलं मन्दामित्वं विनाशयेत् ॥ २३९६ ॥  
हृत्शूलं पार्थक्यक्षिरं वस्तिशूलं गुदे रजम् ।  
यलपुष्टिकरञ्चैव यशोकरणात्मकम् ॥ २३९७ ॥  
विशेषादम्लपित्तञ्च मूत्रच्छृङ्खलं ज्वरं भ्रमम् ।  
निहन्ति नात्र सन्देहो भास्करस्तिमिरं यथा ॥ २३९८ ॥  
शे र, घ., अम्लपित्ते ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, भंगरा, दोनोजीरे, धनिया, कुठ,  
अजमोद, लोह और अन्नमसम, बाकड़ासीमी, कायफल, नाग,  
रमोषा, इलायची, जायफल, अजामनी, पत्र, तालीसवन,  
केशर, कपूरकाचरी, कपूर, मुल्दी, लौंग, लालचन्दन, योगच  
समभाग, सौंठ सरसीबारा, शरर सबमे दूनी, नायदाइय  
सबमे चौगुना लेकर औषधियोंका बारीकचूर्णकर सबमे इष्टे  
मिलाय मन्दआवसे पकावे । पाक्येयारदोनेपर उतारकर रखले ।  
इसमेंसे १-१ तोला दूध अथवा जलकेसाथ खनेसे अम्लपित्त,  
अरुचि, शूल, श्लेष्म, रुष्ट और हृद्वाह्य, शिरःवाह्य, मन्दामि,

हृदय, पार्थ, कुष्ठ और वस्तिकाशूल, गुदाकीपीडा, मूत्रच्छृङ्ख-  
ल और भ्रमको यह नष्टकरताहै । वल और पुष्टिको देताहै ।  
खासकर अम्लपित्तको नष्टकरताहै ॥ ५६३ ॥

### ५६४ सौभाग्यशुण्ठीपाकः ( गृह्य )

नागरं खण्डशः कृत्वा प्रस्थमात्रं भिषग्वरः ।  
अजादुग्धादकट्वे विषेन्मन्दपहिना ॥ २३९९ ॥  
धनीभूते तु पयसि शुण्ठीं तस्मात्समुदरेत् ।  
अतिसूक्ष्माञ्च निष्पिण्य शोषयेदातपे दिनम् ॥ २४०० ॥  
घृतमानीं समावाप्य तदुगन्तु पुनः ।  
यावत्पिण्डत्वमायाति ततस्तन च मिश्रयेत् ॥ २४०१ ॥  
चातुर्जातं तुगां घेलुं धान्यं जीरकद्वयम् ।  
मिश्रिमाकलकं कुष्ठं लवङ्गञ्च शतावरीम् ॥ २४०२ ॥  
तालमूलीं त्रिकटुकं कपिकच्छुञ्च पटुकटु ।  
जातीफलं जातिकोपं शृङ्गादं वृद्धदायकम् ॥ २४०३ ॥  
त्रिवृत् पद्मवीजञ्च त्रिफलाञ्च पलाययम् ।  
जलं सेव्यं वाजिगन्धा चन्दनागवकारवीः ॥ २४०४ ॥  
कङ्गोलमजगन्धाञ्च द्राक्षामाक्षौडचारजम् ।  
अजमोदाञ्च चातारं नारिकेलगतं तथा ॥ २४०५ ॥  
कर्पूरमम्रकं लोहं यर्झं ताघं शिलाजतु ।  
स्वर्णमाशिकमप्येतत्प्रत्येकं कर्तव्यमितम् ॥ २४०६ ॥  
चूर्णीकृत्य क्षिपेत्तत्र पाणिभ्यां मर्दयेद् दृढम् ।  
ततः खण्डतुलां पस्त्या तथा तथामिकां चरेत् ॥ २४०७ ॥  
खण्डनागरकं नास्त्रा भेषज्यमिदमुत्तमम् ।  
यथावलमिदं सादेत्प्रातर्नक्षत्रं भेषजम् ॥ २४०८ ॥  
क्षीणामतिहितं नाऽत्र पथ्यापथ्यविकाराणा ।  
शये पाण्डो ज्वरे कासे श्वासे मन्दानले तथा ॥ २४०९ ॥  
सङ्ग्रहण्यां रक्तगुल्मे प्रदरे सोमरोगके ।  
रक्तपित्ते चास्त्रपित्ते सर्वयातामयेषु च ॥ २४१० ॥  
पित्तरोगेषु सर्वेषु यातपित्तगदेषु च ।  
धातुरोगे प्रमेहे च रजोदोषे स्वरक्षये ॥ २४११ ॥  
दुग्धक्षये सूत्ररोगे कामलायां गलप्रहे ।  
सूत्रिकापयन्यायां सत्यमेतन्न संशयः ॥  
एषा सौभाग्यदा शुण्ठी क्षीणां पुत्रमदात्मना ॥ २४१२ ॥  
शे यो. व, रसायनरं, दो, यो. र, यो म., पि. र. म.,  
पा. व, श्रीरोगेषु ।

टि०—योगमहावि कर्मसंनिमित्तस्वर एतानि पथ्यनिमित्ति पाठ ।  
पाठ्यवल्याञ्च “भोजन-बीज-दीपक-मन्त्रां भोजनमन्त्र” इत्यधिक ।

भाषा—एकप्रस्थ सौंठके छोटोछोटो टुकड़ेपर दो आठ  
बरीके दूधमे मन्दआवसे पकावे । दूध गारादोनेपर सौंठके-  
टुकड़ोंको निकाल करनीकेसरणीसकर कड़ीरूपमें गुलाबर  
कपडजनकर ६ पल धीमे मिलाय उतीरूपमें ढालकर गावा  
बनावे । फिर इसमें चण्डांत, बंसेल, विट्ठ, पनिया,  
दोनोजीर, सौंठ, कालकड़ा, कुठ, लौंग, छप्पार, कालीगुग्गुली,  
त्रिकटु, केलाचहीमवा, पदपन, जायवन, जायवी, पियादे,

विचारकोजङ्ग, निशेत, कमलमादा, जिफला, बला, नायला, अतिरला, दोनोयम, असमन्ध, सफेदचन्दन, अगर, कारवी, शीतलचीनी, बरुंदेरीज, कालीद्राक्ष, अजरोट, चिरोजी, अजमोद, बादामरी मींगी, नारियल, शुद्धकपूर, अम्रक, लोह, वज्र, ताम्र, सोनामासी इनकीमम्मं और शिलाजीत १-१ कर्प लेकर बारीकचूर्णकर मावेमें डालकर हाथसे अच्छीतरह मसलकर मिलादे । फिर एरुला सांडवी कड़ोचाखनी बनाय सबचीजोंको मिलाकर लघुगुनाकर रखओडे । इनमेंसे अधिनलेखकर उचित-मात्रा कायमकरे । श्रियोकेलिये यह विशेषहितकारकहै । पच्यपच्यसा विशेष विचार नहींहै । इसके सेवनेसे क्षय, पाण्डु, ज्वर, कास, श्वास, मन्दाग्नि, सङ्गहृष्टी, रक्तशूल, प्रदर, सोम, रक्तपित्त, अम्लपित्त, समस्तवातविकार, पित्तरोग, वातपित्तरोग, धातुशोष, प्रमेह, रजोदोष, स्वरभङ्ग, दुग्धपच्य, मूत्ररोग, कामला, गल्प्रह, घृत्तिकारोग इनसनको दूरकर उत्तमपुनरा देताहै ॥ ५६४ ॥

### ५६५ संगोपनरसः

वृहतीपाटलामूलं वज्रदण्डी च चित्रकम् ।  
मृदन्ती श्वेतगन्धारी फड्डीमज्जिष्टिकाऽभयाः ॥ २४१३ ॥  
काकमाची द्विजिह्वा च गन्धर्वाह्वा हिरण्यिका ।  
धानीद्वयं चित्रकञ्च श्वेतहिङ्गु सुरकुम्भी ॥ २४१४ ॥  
क्षारद्वयं पीपूरकञ्च व्योपञ्च तुम्युम्भि च ।  
तदेकीकृतवृक्ष्या च द्रव्याण्येतानि योजयेत् ॥ २४१५ ॥  
कृत्वा घूर्ण तदेकांशं माक्षिकं लोहमस्म च ।  
मृतमस्मान्मृतजूर्णमेकीकृत्याऽखिलन्तथा ॥ २४१६ ॥  
मापमानप्रमाणञ्च योजयेत्तु शलो भिषक् ।  
संगोपनरसो नाम्ना प्रसिद्धः सर्वरोगहा ॥  
मेरुमण्यणुमानञ्च कुरते शङ्करोदितः ॥ २४१७ ॥  
र बी. ( शा ), सर्वरोगे ।

भाषा—वनमादा और पाटलजीङ्ग, वृषकाद्वय, चित्रकमूल, दन्तीमूल, सफेदमडकटैया, काय, मजीठ, हरे, बकोय, दाताय, एण्डमूल, पीले और जलरूपाई भट्टटैया, आवला, भुईआवला, सालचित्रकमूल, इधियाहिंग, चीठ, देवदाह, सबजी और यवशार, पोहकमूल, जिङ्गु, तुम्बुड बेसन कमरुद्वयमात्रे लेकर बारीकचूर्णकर सोनामासी, लोह और पारदमम्मं शुद्ध-यष्टनाग १-१ भाग मिलाकर रखओडे । इनमेंसे १-१ मासता समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाय देवेगे यह अत्यन्तमेदको नष्टकर आदमोको सतक बनाताहै ॥ ५६५ ॥

### ५६६ स्वाधित्यारिरसः

रौप्यमञ्चं तुल्यकञ्च मर्दयेत्कन्यकाम्भसा ।  
मुद्रमात्रां घटीं शल्या पापयेत्सह सर्पिणा ॥ २४१८ ॥  
स्वाधित्यारि रसो नाम स्वाधित्यं ज्ञायुजं गदम् ।  
पातश्रेष्ठीन्द्रवांश्चापि गदानाशु निवारयेत् ॥ २४१९ ॥  
वैद्यजान्त्र्य गोज्यानि घातज्याधिहराणि च ।  
पथ्यमत्र विज्ञानीयाद्वर्ण्यं पुष्टियलप्रदम् ॥ २४२० ॥  
भा. वि. रत्नालिये ।

भाषा—चादी, अम्रक और तुल्यकीमम्मं समभागलेकर कुमारीकेरसे १-२ दिन मर्दनकर मृगनरावर गोलिए बनाकर रखओडे । इनमेंसे १-१ गोली धीकेसाय देनेमे ज्ञायुओंकी स्थानप्रश्रुता नष्टहोतीहै । इसमें खासकर वातहर औषधों और पथ्यमें पुष्टिकारक पदार्थ देवे ॥ ५६६ ॥

### ५६७ स्तम्भनरसः

हंसपादं पलादन्तु घृत्ताकेन च पाचितम् ।  
वल्लमानप्रदानेन हीनकन्दर्पवृद्धिहृत् ॥ २४२१ ॥  
रसायनं, वीर्यस्तम्भने ।

भाषा—होकरुं शिगरिककी डलीको मलमलमें लपेट मोटे-बेगनमें रख भरताकर । ऐसे १०८ बेगनोंमें भरताकरके निकाल कर रखले । कमरेकम ५० बेगनोंमें अरब्य रखताचाहिये । इनमेंसे ३-३ रती उचितानुपानदेताथदेवेगे यह नष्टशुक्रकी वृद्धिको रूतताहै ॥ ५६७ ॥

### ५६८ स्तम्भनवटी

सद्दहिफेनचिर्मर्दितपारदः

कनकवीजरसेन चिर्मर्दितः ।

समसिताविजयो यदि भक्षितो

न रजनी न दिवा न दिवाकरः ॥ २४२२ ॥

रसायनम्, यो. त. ३ यो. त. ४, वीर्यस्तम्भने ।

भाषा—शुद्ध अजीम और पारदमम्मं समभागलेकर कचे घट्टेके बीजोंकेरसे पादा अरब्यहोनेतक घोटकर इसकेपरावर शहर और भगमिलाकर १-१ रतीकी गोलिए बनाकर रखओडे । इनमेंसे १-१ गोली सम्मोगसे १ घटाहिले लेकर केवलदूध पीनेसे अत्यन्त स्तम्भनहोताहै ॥ ५६८ ॥

### ५६९ स्त्रीगद्वररसः

पारदं गन्धकं कान्तं हेम लोहं सुमारितम् ।

गगनञ्च समांशेन पुटे गजपुटे पचेत् ॥ २४२३ ॥

दद्यात्पुलायनपानेन द्रव्यपणेनाथ वा पुनः ।

दद्यात्तुङ्गुलद्वयञ्चास्य यथानलमथापि वा ॥

अयं सर्वविकाराणां स्त्रीजातानां विनाशकः ॥ २४२४ ॥  
र म सा, ना. वि, स्त्रीरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धर, कान्त, लोह, सुवर्ग और अम्रकमम्मं समभागलेकर दत्तानुलेखयमे २-३ दिन घोटकर टिकडियेबनाय सुखाकर धारापसमुद्रमें बन्दकर गावुटरी आचद । स्वाधित्यलदोनेपर निकालकर रखओडे । इनमेंसे २-२ रती दसमूल ज्यसा त्रिकटुकायदेमाय देनेसे यह समस्त-स्त्रीरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ५६९ ॥

### ५७० स्थौल्यगजकेसररसः

रसेन्द्रं रजतं ताम्रं गगनं ताम्रलोहकम् ।

स्वर्णञ्च कमरुद्वानि मर्दयेत्पूरयारिणा ॥ २४२५ ॥

अन्येन चाभ्युत्थेन मर्दयेत्समवामरात् ।

काचहत्यां निज्याऽथ पच्यग्रामाष्टद्वयम् ॥ २४२६ ॥

स्वाङ्गशीतलतां धात्वा गृहीयात्तञ्च मर्दयेत् ।  
 आर्द्रकस्वरसेनैव द्रोणपुष्पीरसेन च ॥ २४२७ ॥  
 वृहत्याः पत्रतोयेन धीजतोयेन वा पुनः ।  
 प्रत्येकं दिनमेकं हि भावनां दापयेत्कमात् ॥ २४२८ ॥  
 पिप्पलीमधुना सार्धं चैतद्दुःखाद्वयं भजेत् ।  
 स्थूलदुर्दिनविनाशने मधु-  
 स्थौल्यपर्वतविनाशनेऽशनिः ।  
 स्थौल्यदोषरसशोषणक्षमः  
 स्थौल्यरोगगणकेसरिरसः ॥ २४२९ ॥

र. प्र. सु., र. म. मा., स्थौल्ये ।

भाषा—पारा, रजत, सोनाभासी, अन्नक, ताम्र, लोह  
 और सुवर्ण इनकीमसमें कमरुद्रुमासेलेकर बिजोरे तथा अन्य  
 अम्लवर्णकेरसे ७-७ दिन मर्दनकर सुखाकर ६-७ कपडिमिठीदी-  
 हुई आतशीशीशीमें भर मुँदबन्दकर बाहुकायबन्धे रख ८ पहली  
 हवादि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अदरक, गुमा,  
 बनभाटा, बिजोरा इनकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी  
 गोळियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पीपल और  
 मधु अथवा मेदोद्वानुपानकेसाधनेसे यह अत्यन्तस्थूलताको  
 नष्टकरताहै ॥ ५५० ॥

#### ५५१ स्थौल्यान्तकरसः ( प्रथमः )

रसगन्धौ समौ ताभ्यां द्विगुणं लोहजं रजः ।  
 चिङ्गनागरक्षारनीरेण परिमर्दयेत् ॥ २४३० ॥  
 कर्पाई नागरक्षारविडङ्गेः परिवेषितः ।  
 मापेको मधुना युक्तः स्थौल्यमाशु व्यपोहति ॥ २४३१ ॥  
 हिङ्गुसीयचैलाजाजीव्याधिघातयुतस्तथा ।  
 मस्तुसक्त्युतो वापि व्योपवेष्टायुतोऽपि वा ॥ २४३२ ॥  
 रसः स्थौल्यान्तकृच्चैव क्षौद्रतोययुतस्तथा ।  
 पथ्यमुष्णान्तु सक्षौद्रं मण्डः सोष्णस्तथा हितः २४३३  
 स्थौल्यापहरणः सुतो वसन्तकुसुमाकरः ।  
 सोऽपि क्षौद्रयुतः क्षारतोयमयेन वा हितः ॥ २४३४ ॥  
 र, स्थौल्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा और कृष्णक समभाग, दोनोंसे द्विगुण  
 लोहमस लेकर नीलवर्णकजलीकर विडङ्ग और सौंछेकाय तथा  
 प्रतिसारणीय यवसारे १-१ दिन मर्दनकर १-१ मासकी  
 गोळियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुनेसायलेकर  
 आघाकर्षण सौंछ, यवसार और विडङ्गकाचूर्ण (१) हींग, सखल,  
 जीरा और अमिलतासकाचूर्ण (२) दहीकातोड़ और सत्तु (३)  
 निरुद्ध और विडङ्गकाचूर्ण (४) इनमेंसे किसीभी अनुपानकेसाध  
 सेवनकरनेसे यह बहुतशीघ्र स्थूलताको नष्टकरताहै । इसमें मधुके  
 साथ गरमचीज और गरममाडकासेवन उचितहै । स्थौल्यके-  
 लिये वसन्तकुसुमाकर रसको मधु और क्षारकेपानी अथवा  
 मधुकेसायलेना उचितहै ॥ ५५१ ॥

#### ५५२ स्थौल्यान्तकरसः ( द्वितीयः )

वन्ध्याकर्कोटकीकन्दद्रवैर्मर्द्यं दिनत्रयम् ।  
 तालकञ्च सृतं ताम्रं द्विगुणं मधुना लिह्येत् ॥  
 पिबेत्क्षारोदकं चानु स्थौल्यरोगं विनाशयेत् ॥ २४३५ ॥  
 र. चि., व रा, स्थौल्यरोगे ।

भाषा—हरिताल और ताम्रमस समभागको बाह्यखेखसेके-  
 बन्दके रसे ३ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती  
 मधुनेसायलेकर क्षारोदकीनेसे यह स्थूलताको नष्टकरताहै ॥ ५५२

#### ५५३ स्थौल्यान्तकरसः ( तृतीयः )

सूताश्माम्रविषं लोहं ध्योपञ्च वायश्चकजम् ।  
 मर्दयेत्सुरसावह्निकन्यातोषे दिनत्रयम् ॥  
 गुञ्जामात्रं प्रयुञ्जीत स्थौल्यादौ स्वानुपानतः ॥ २४३६ ॥  
 र. सि., स्थौल्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बछनाग, अन्नक और  
 लोहमस, त्रिकटु, यवसार, समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर  
 तुळसी, चित्रकमूल और धीङ्गावेस्वरसोंसे ३-३ दिन मर्दन-  
 कर १-१ रत्तीकी गोळियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१  
 गोली उचितानुपानकेसाधनेसे यह स्थूलताको नष्टकरताहै ५५३

#### ५५४ स्थौल्यापकर्षणरसः

सुतयोलभृततालताम्रकं चार्कदुधरसकेन मर्दितम् ।  
 क्षौद्रयुक्तमपि चक्षुमात्रकं भक्षितञ्च ह्यतिवृंहितञ्जयेत् ॥  
 तायमेकपलमत्र मात्रया पानतोऽप्यखिलमहहारकम् ॥  
 र. प्र. सु., स्थौल्ये ।

भाषा—शुद्धपारा, हीराबोल, हरिताल और ताम्रमस सम-  
 भागलेकर आर्ककेदूध अथवा पदस्वरसे एकदिन मर्दनकर सुखा-  
 कर मधुनेमिलाय ३-३ रत्तीकी गोळियें बनाकर रखछोड़े ।  
 इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाधनेसे यह स्थूलताको  
 नष्टकरताहै ॥ ५५४ ॥

#### ५५५ स्त्रायन्तकरसः

कासीसञ्च शिला चैव गन्धकेन समन्वितम् ।  
 बाकुच्या मर्दितं खल्वे मर्दयेच्छोषितं दिनम् ॥ २४३८ ॥  
 पचेद्भजपुटे मापं भक्षयेदनुपानतः ।  
 क्षायुकान्तकरो नाम रसो नकुलसम्मतः ॥ २४३९ ॥  
 र म मा, ना वि., स्त्रायुरोगे ।

भाषा—कासीसमस, शुद्धमेनसिल और गन्धक समभाग  
 लेकर बारीकचूर्णकर बाकुचीके बाथसे एकदिन मर्दनकर ठिकड़ी  
 बनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गरमपुटकी आचदे ।  
 स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ मासा  
 समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाधनेसे क्षायुरोग नष्टहोताहै ॥

#### ५५६ स्पर्शवातारिरसः ( स्पर्शागजसिंहः )

अष्टौ भागा रसस्य स्युर्विपतिन्दोर्दशैव च ।  
 गन्धकस्य दश द्वौ च कटुत्रिफलयोस्त्रयः ॥ २४४० ॥



वह्निचित्रकमुस्तानां वचाश्वगन्धयोरपि ।

रेणुकाविपकुष्ठानां पिप्पलीमूलकेशरात् ॥ २४४१ ॥

एकैकस्तु भवेद्भाग इन्द्राण्या मूलतस्तथा ।

चतुर्विंशद्द्रव्याऽथ यदिका चणकाकृतिः ॥

प्रमेणेवाऽनुसेयेत स्पर्शवातापनुत्तये ॥ २४४२ ॥

र. र. स., वि. सा., र. का., वै. वि., व. रा., रसायनं.,  
र. य., स्पर्शवाते ।

टि०—नि. र. रसादिवदीति नाम शीतपित्ताधिकारे । व. रा., वै. वि. ण्ययो वातारिरस इति नाम विप्रसवाते । रमकायनेनो अरमात्पा-  
टात्किञ्चिदस्य हृदये यथा “निष्कादकं यत् भूतं निष्कादकमन्यकम् ।  
विषमुद्रि र्गन्धपुष्पः सततश्च त्रिनिष्काः ॥ विरुद्धं विरुद्धं मुस्ता वचा  
पत्रकेशुषम् । विष कुष्ठ कथामूलमथनेन्द्रवास्नी ॥ नागकेशरमेकैक  
निष्कादकं चूर्णितम् । सर्वतुल्यं शुद्धं मिश्रं चणमात्रञ्च मध्येषु ॥  
अस्पर्शगर्भितोऽयं द्रुमिमण्डलकुष्ठनि ॥” इत्यत्र लेखप्रमादजन्यो दोषः  
प्रतिभाति । स्पर्शगर्भितानामपि कल्पितमेव प्रतीयते । व. रा., वै. वि.,  
यत्तद्वैदित्येन वातगजाद्द्रव्यानाम्ना “अथो भागा रसस्यापि  
विपनिन्दोऽस्यैव च । गन्धवत्स त्रयो भागाः कटुनयनरसयम् ॥ गुञ्जा-  
मात्रं बर्धं रसादेशोनिवातनाशनम् । ऊरुसम्भ निहन्त्याशु स्यादो  
वातगमाद्द्रव्यः ॥” इति पाठो निहिषोऽस्ति स उपरितनपाठस्यैवाप-  
भ्रमः प्रतीयते तत्कारणम् । द्रुतिपाठासादनं स्वकृतित्वास्थापनं वा  
स्यादित्यनुमीयते ।

भाषा—शुद्धरा ८ भाग, कुचिला १० भा., गन्धक १२  
भा., कुट्टी और पिप्पला ३-३ भा., भिलवि, चित्रकमूल,  
नागरमोया, वच, असगन्ध, रेणुका, बछनाग, कुष्ठ, पिप्पलामूल  
नागकेशर और इन्द्रायणीक १-१ भागलेख शारीकचूर्णकर  
परिगन्धकही नीलवर्णकम्लीमें मिलाय २४ भाग शुद्ध मिलाकर  
चनेप्रमाण गोलीयेबनाकर रखोहो । इनमेंसे १-१ गोली उचि-  
तागुणकैसाय देनेसे यह स्पर्शवातको नष्टकरताहै ॥ ५७६ ॥

### ५७७ स्पर्शवातारिरसः ( शीतारिरसः )

रसेन गन्धं द्विगुणं प्रगृह्य पुनर्नयामिस्वरसे विमाष्य ।  
पकाकपत्रस्य रसेन पञ्चाद्विपाचयेद्द्रुगुणेन यत्नात् ॥  
रसाक्षेमागच्छ विपञ्च दत्त्वा विपाचयेद्भिज्जलेक्षणं तत् ।  
शीतारिरसश्चास्य रसायनस्य यष्टञ्च सार्द्धं मरिकादिकेण  
मरीचचूर्णेन घृतप्लुतेन सेवेत मांसञ्च घृतञ्च पथ्यम् ॥

र. रं., र. क., प., र. चं., र. दी., र. सु., र. र. स., र. क. ल.,  
वि. सा., र. को., र. प्र. सु., वै. वि., रसायनं., वातव्याध्य-  
धिकारे । रसायनसङ्ग्रहे शीतपित्ताारिरस इतिनाम ।

भाषा—शुद्ध रास १ भाग, गन्धक २ भागही नीलवर्ण-  
कम्लीकर पुनर्नया और चित्रकमूलकैसायमें १-१ दिन मर्दन-  
कर एक आकृतिपत्रके अष्टगुणितस्वरसे पकाकर रसेन आपा  
शुद्धराज्या मिलाय चित्रकमूलकैसाय देकर बोहीदेलाह  
प्रमाणे छत्र मोटर ३-३ रतीही गोलीये बनाकर रखोहो ।  
इनमेंसे १-१ गोली मरिच और अदरकैसाय अथवा पृथुक  
मरिचैवनेकेसाय देनेसे यह स्पर्शवातको नष्टकरताहै । इसमें  
पूनी और मांस अधिक लेवनकरना ॥ ५७७ ॥

### ५७८ स्पर्शवातारिरसः ( स्पर्शारिरसः )

दिनत्रयं स्याद्विपमुष्टिवीजं शुभारनालीयसुयन्त्रमध्ये ।  
सुपाचितं मानुपलञ्च तस्य चूर्णं पलैकं परिमृच्छितं हि

सूतं द्विगन्धञ्च पलाशवीजं

द्विपदपुलं क्षिग्धघटीगतञ्च ।

समुद्रय मासं शुभधान्यराशौ

संस्थाप्य चोद्धृत्य समाक्षिपन्तु ॥ २४४६ ॥

लेह्यं तथा स्पर्शगद्गारिरसञ्चो

प्रसुप्तवातञ्च हि स्मृतिकुष्ठम् ।

निहन्ति भूमिभविषाणिकानां

मूयविचानिभ्यफलत्रयाणाम् ॥ २४४७ ॥

पटलोपादाद्विनिशाविशाला-

ग्राहीविष्टुद्वितिसुपसकानाम् ।

सतिककोपातकिकासमांशं

चूर्णं समध्यास्यमिहानुपानम् ॥ २४४८ ॥

वि. क. व. रा., र. का., वै. वि., वातव्याध्यधिकारे ।

टि०—रसकामेनो विषमुष्टाः पदं पलाजि निषोचिनाति अत्र तु  
द्वयवेति विशेषः । र. र. स., र. रं., र. रं., र. रं., एषु स्पर्शवातारि-  
रसान्मा र. स., र. चं., प., र. सु., र. क., एषु पलाशविनीतिनाम्ना  
“पलाशवीजीत्यरसेन मूय गन्धेन युक्तं मिश्रितं विषमं । अस्तीकृतं तदि-  
पनिन्दुवीरं सयोनयेदस्य कलममाशयम् ॥ मासद्वयं निष्कमिन् प्रयत्नाद-  
र्थास्ति हन्त्याशु निषोचनीयम् ॥ वातरक्तं तथा शोथमस्पर्शव्याप्यानिगम-  
यम् । वातबद्धेयुष्टयेऽपि तत्र पित्तेन भावयेत् ॥ स्पर्शवातारिरसस्यानो  
वातपिपुड्गलकः ॥” इति पाठो निहिषोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः  
करणीयः । “एकैकं मृच्छितं सूतं शुद्धगन्धं पद्धयम् । चूर्णितं मधु  
नाऽऽलेख्य क्षिग्धमाण्डे निरोपितम् ॥ धान्यराशौ स्थितं माम सतुद-  
व्याय मध्येषु । अन्धशारिरसः कुष्ठान् हन्ति द्रुमिपुष्टिकम् ॥” इति  
रसेन्द्रारनकोशीविषपाठस्तु द्रुतिव्यवति अतस्तस्य रसान्तराया  
न भवितव्यम् ॥

भाषा—काष्ठोमें शुद्धकियाहुभा कुचिला १ पल, रससिन्दूर  
१ पल, गन्धक २ पल, पलाशवीज ८ पल लेख शारीक चूर्णकर-  
रससिन्दूर और गन्धकको अच्छीतरह मिलाय चिकनेवर्तनमें रख  
सुंदरबन्दर सुगन्धितपानकीरादिमें रखदे । ७ अथवा १४ दिन  
बाद निकालकर ४-४ मासे मयुकेसायलेनेसे प्रसुप्तवात, स्मृति-  
कारोग, शुष्ठ इनसबको यह नष्टकरताहै । चिरायता, मेढासींगी,  
मूर्ख, वच, नीलकीछाल और पिप्पला अथवा परबल, पाठा,  
दोनोहत्ती, इन्द्रायन, भाशी, भिषोत, पदमकाष्ठ इनकापोंको  
औचिनी देसकर अनुपानमें देवे अथवा कफरीवसफीकागमें  
समभाग मिलाकर मधु और चोकेसायदेवे ॥ ५७८ ॥

### ५७९ स्मृतिसागररसः

रसगन्धकतलानां सद्रिलाताप्यासायताम् ।

शुद्धानां मृच्छितानाञ्च चूर्णं भाव्यं यथागृतेः २४४९.

एकयितातिपा पञ्चाद्विपाचयता तथैव च ।

कटमीषीजतलेन भावयेदक्यारकम् ॥ २४५० ॥

स्मृतिसागरनामाऽयं रसोऽपस्मारनाशनः ।

सर्पिणा मायमात्रोऽयं भुक्तो हन्यादपस्मृतिम् ॥२४५१॥

र. कौ., द. यो. ॥, नि. र., रसायनसं., यो. र., र. क. यो., अपस्मारे ।

• टि०—केषुचित्पुस्तकेषु सखिलाताग्रमरणागिति पाठो लभ्यते, तत्र ताभ्याऽभावोदयः । तत्र तदभावो घनपूर्वको वा स्यान्नममूलको वा स्यादिति सर्वं दृष्टा तद्वशे च न ह्यपि हानिः । प्रतीयते अतस्ताप्युक्त एव पाठो व्याप्य ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और मैनासिल, सोना-  
माखी और ताम्रभस्म सब समभागकी नीलवर्णकजलीकर बच  
और भाङ्गीकेस्वरसोंसे २१-२१ भावनाएँ देकर मालवंगीकी  
तैलकी एकभावना देकर रखछोढ़े । इसमेंसे १-१ मासा घीके-  
साथ देनेसे यह अपस्मारका नाशकरताहै और स्मृतिको जाग्रत  
करताहै ॥ ५५० ॥

### ५८० स्वच्छन्दगोलकरसः

पथ्या ज्यूपणयह्मिगन्धसुरसाः शृङ्गी विपं दङ्गणं,  
गन्धं तालकमाक्षिकायसरजः सृतं द्रवन्तीफलम् ।  
निर्गुण्डीस्वरसेन भायितमिदं स्वच्छन्दगोलाभिर्धं,  
शुजायुग्ममितं निहन्ति निखिलं शीतादिपुर्वं ज्वरम् ॥

र. प., ज्वरे ।

टि०—शार्ङ्गरीयस्वच्छन्दभैरवद्रव्याणि सर्वाण्यस्मिन्तस्मिन् केवल  
द्रवन्तीफलस्यधिक्यम् । स्वच्छन्दभैरे भावनायां मुण्डीनिर्गुण्डीयुग्मे  
गृहीते अत्र तु निर्गुण्डीयैव भावना प्रदत्ता इति विशेषोक्तिः तस्याऽत्रै  
वाऽन्तर्भावः कृतमुचितः । परन्तु प्रथमवातगनाद्गुणोनाशरसः साम्यात्त  
त्रैवाऽन्तर्भावः कृतोऽस्ति । अथ तु ज्वरपादयुक्ततया स्वतन्त्रतया निहित  
इति सुभीतिराकल्पनीयम् । वस्तुतस्तु वातगनाद्गुणोनाशरसोऽप्यमप्रवीणोऽस्ति ।

भाषा—हैरं, त्रिङ्गु, अरणी, तुलसी, काकनासीगी, शुद्ध-  
पथ्याग, मुनासुहाग, शुद्ध गन्धक, हरिताल, सोनामाखी, लोह-  
भस्म, शुद्ध पारा और जमालोटा समभागलेकर बारीकचूर्णकर  
धातुओंकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय निर्गुण्डीकेरसेसे १-२ दिन  
घोटकर २-२ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोढ़े । इनमेंसे १-१  
गोली समवेचितानुपानकेसाथ देनेसे शीत अथवा दाहपूर्वज्वर  
नष्टहोताहै ॥ ५८० ॥

### ५८१ स्वच्छन्दनायकरसः (प्रथमः)

सूतगन्धकलोहानि सौष्यं सम्मर्दयेत्प्रथम् ।  
सूर्यावर्तस्य निर्गुण्डीस्तुलस्या गिरिकर्णजैः २४५३  
अस्मिन्मात्रेजं बद्धिजियाद्रि जयासहा-  
काकमाचिरसेरासां पञ्चपित्तैश्च भावयेत् ॥ २४५४ ॥  
अन्धमृषागतं पञ्चाह्वालुकायन्त्रं दिनम् ।  
आदाय घृणितं खादेन्मार्पकं चार्द्रकद्रव्ये ॥ २४५५ ॥  
निर्गुण्डीदशमूलानां कपायं सोपणं पिबेत् ।  
अभिन्यासं निहन्त्याशु रसः स्वच्छन्दनायकः ॥  
छागीदुग्धेन मुद्रं यं पथ्यमथ प्रयोजयेत् ॥ २४५६ ॥  
र. वि., र. क. र. सं., रसायनसं., र. का., यो. म., अभिन्यासे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और रजतभस्म सम-  
भागकी नीलवर्णकजलीकर सूर्यमुखी अथवा हुरहुर, निर्गुण्डी,  
तुलसी, गोकर्ण, अरणी, अदरक, चित्रकमूल, भंग, हैरं, माय-  
मणी अथवा मुद्रपर्णी और मन्त्रोपेस्वरस तथा पांचोपित्तोंसे  
१-१ भावना देकर गोलावनाय अन्धमृषामें बन्दकर बालुका-  
श्रममें रख एकदिनकी अभिदेवे । स्वाश्वतीतलहोनेपर निकालकर  
रखछोढ़े । इसमेंसे १-१ मासा अदरक अथवा निर्गुण्डी और  
दशमूलके वायमें मरिचका प्रशेषदेकर इसकेसाथदेनेसे यह  
अभिन्यासज्वरको नष्टकरताहै । इसमें पथ्य बकरीकेदूध अथवा  
मूँगेके घृणितसाथदेवे ॥ ५८१ ॥

### ५८२ स्वच्छन्दनायकरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सृतं द्विधा गन्धं सूतांश्च मृतेहमकम् ।  
मृतरौप्यञ्च ताम्रञ्च सर्वं तुल्यं पृथक् पृथक् ॥२४५७॥  
सूर्यावर्तस्य निर्गुण्डीस्तुलस्याहार्द्रकद्रव्ये ।  
शृङ्गोन्मत्तास्तुकर्णानामस्मिन्मन्त्रमन्त्रयोः ॥ २४५८ ॥  
तिलपर्णीचित्रकयोः काकमाच्यो रसैः सह ।  
मर्दयेत्त्रिदिनं खल्वे शुष्कं पित्तं बिम्बावयेत् ॥२४५९॥  
मात्स्यमाहिषयाराहच्छागामायूरजं दिनम् ।  
अन्धमृषागतं पार्थ्यं बालुकायन्त्रं दिनम् ॥ २४६० ॥  
आदाय घृणितं खादेन्मार्पकं चार्द्रकद्रव्ये ।  
निर्गुण्डीदशमूलानां कपायं सोपणं पिबेत् ॥२४६१॥  
अभिन्यासं निहन्त्याशु रसः स्वच्छन्दनायकः ।  
पथ्यं स्यान्मुद्रघृणेन क्षीरं वाऽऽर्ज्येयिधापयेत् ॥२४६२॥  
नि. र., र. सु., र. कौ., र. का., समिपाते ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भा., सुवर्गभस्म ३ भा.,  
रजत और ताम्रभस्म १-१ भाग लेकर नीलवर्णकजलीकर सूर्य-  
मुखी, निर्गुण्डी, तुलसी, अदरक, भंग, धतूरा, मृषाकर्णी,  
सफेदचित्रक, गोकर्ण, अरणी, हुरहुर, लालचित्रक, मन्त्रोप  
स्वरसेस्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर मछली, भेंसा, सुमार और  
औरकेपित्तोंसे १-१ भावनादेकर अन्धमृषामें बन्दकर बालुका-  
श्रममें रख एकदिनको आचरेवे । स्वाश्वतीतलहोनेपर निकालकर  
रखछोढ़े । इसमेंसे १-१ मासा अदरक, निर्गुण्डी और दश-  
मूलकेस्वरस अथवा वायोंमें मरिचका योगकर औष्वीतिदेखकर  
जिसी एककेसाथ देवेसे यह अभिन्यासको दृढकरताहै । इसमें  
पथ्य मूँगेकेदूध अथवा बकरीके दूधकेसाथ देवे ॥ ५८२ ॥

### ५८३ स्वच्छन्दनायकरसः (तृतीयः)

सृतं सृतं तौरणकान्तं तालं माक्षिकगन्धकम् ।  
तुल्यांशं मर्दयेद्वायं विद्वार्पाद्रिकसम्मये ॥ २४६३ ॥  
शृङ्गपुण्यैः काकमाच्युन्यं गिरिकर्णात्रये दिनम् ।  
सम्मयं माण्डगं रुद्धा पवेन्मन्दाग्निना दिनम् २४६४  
व्योषाग्निगन्धकपिपरण्युमपट्टयोः ।  
समांशोघृणितं मिथैस्तुल्यांशं पृथक्संयुतम् ॥ २४६५ ॥  
त्रिदिनं मर्दयेद्वायं मुण्डीनिर्गुण्डीशृङ्गजैः ।  
अष्टयुग्मांमितं खादेद्रसः स्वच्छन्दनायकः ॥ २४६६ ॥

सर्ववातहरः ख्यातो ह्यनुपानमिदं पिबेत् ।

लघुनं सैन्धवं तैलं कर्ममात्रं सुखावहम् ॥ २४६७ ॥

र. र., र. का., सखिपाते । र. वा. स्वच्छन्दभैरवेति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा, फोलाद और कान्तलोह इनकी मल्ले, शुद्धहीताल, सोनाभासी और गन्धक समभागलेकर नीलवर्ण-कजलीकर बिंदारी, अदरक, भंगरा, मकोय और गोवर्णके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर हण्डोमें बन्दकर एकदिनकी मन्दाग्नि देवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर त्रिकुट, चिरक-मूल, शुद्ध गन्धक, और बज्जनाग, दोनों अणु, सुहाणा सब समभागकावृण समभागमिलाकर गोरसमुण्डी, निर्गुण्डी और भंगरेके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ८-८ रत्तीकी गोलीये बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली लघुन, सेधानमक और तैल समभागमिलाकर १ कण्ठेखाय लेनेसे यह समस्त वातवि-कारोंको नष्टकरताहै ॥ ५८३ ॥

#### ५८४ स्वच्छन्दभैरवरसः ( प्रथमः )

ताम्रमस्य विपं हेमः शतधा भावितं रसेः ।

शुजादे सन्निपातादिनवज्वरहरं परम् ॥ २४६८ ॥

आर्द्राम्बुदाकृतासिन्धुयुतः स्वच्छन्दभैरवः ।

इन्द्राक्षसितैर्धातुं दाध पथ्यं रुचौ ददेत् ॥ २४६९ ॥

र. सं., र. वि., र. सु., रसायनसं., र. क., र. का., यो. म., ज्वापिकारे ।

भाषा—ताम्रमस्य और शुद्धबज्जनागका चूर्णकर धतूरेके रसे १०० भावनाएँ देकर आधीमापरीरत्तीकी गोलीये बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरक, धातु और पथ्यके-साय देनेसे यह समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै । अथवा रुचिहोने-पर ईश, द्राक्ष, धारर, कचरी और दही इनसेसाय पथ्यदेवे ॥

#### ५८५ स्वच्छन्दभैरवरसः ( द्वितीयः )

रसमेकं द्विधा गन्धं गन्धतुल्यञ्च सैन्धवम् ।

ज्यालामुजोरसैः पञ्च दिनानि परिमर्दयेत् ॥ २४७० ॥

मृगिकायां निन्दपाथ पुटेद्रात्री च मध्यमम् ।

सर्वं भस्म यदा याति यहाँ तस्मात्प्रयोजयेत् ॥ २४७१ ॥

ग्रहण्यं सङ्ग्रहणाञ्च कामे भवान् विदोपतः ।

उप्रासु ज्येष्ठन्द्रामु स्वल्पनिद्रामु योजयेत् ॥ २४७२ ॥

अन्यरोगेषु तं द्यात्रसं स्वच्छन्दभैरवम् ।

तुष्टिं पुष्टिमौ कुप्यात्सौकुमार्यञ्च कारयेत् ॥ २४७३ ॥

र. यो., रसावि., र. सु., घ., र. सं., र. का., काते ।

दि०—एकपत्रान्दरे द्विपलान्ते प्लानामुष्टिपाने निर्गुण्डी नियम्य रसायनरा समर्पिता या स्वनादेव विनिपातमाणा ।

भाषा—शुद्धपारा १ माप, गन्धक और सेधानमक २-२ भागकी नीलवर्णकजलीकर ज्यालामुगी ( जलमंजुल मराठी, अथवा अमियापाथ ) के रससे ५ दिन मर्दनकर बज्जनागके बन्दर रात्रिमें मध्यमउदरे । रात्रिशीतलहोनेपर निकालकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ रत्ती मध्य अथवा सेधानमपुनानके-

सायदेनेसे ग्रहणी, सङ्ग्रहग्रहणी कास, श्वास, भयङ्करतन्त्रा, निद्रानाश इनसबको नष्टकर आदमीको हृष्टपुत्र बनाताहै और कान्तिको बडाताहै ॥ ५८५ ॥

#### ५८६ स्वच्छन्दभैरवरसः ( तृतीयः )

रसगन्धकयोः शाणं प्रत्येकं कजलीरुतम् ।

सुवर्णमाक्षिकं शाणं शुद्धश्चैत्र कारयेत् ॥ २४७४ ॥

सिन्धुचारो रुद्रजटा नागरामलकं तथा ।

वृश्चिकाली रसेरासां कार्या मुद्रसमा वटी ॥ २४७५ ॥

आर्द्रकस्य रसेः पेया जीरकञ्चानु पाययेत् ।

स्वच्छन्दभैरवाद्योऽयं सन्निपातोऽप्यहन्मतः ॥ २४७६ ॥

ग्रहणीसूतिकातर्द्धं नाशयेदधिकपतः ॥

र. सं., ज्वरे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सोनाभासी समभागकी नीलवर्णकजलीकर संभाल, रुद्रजटा, सोंठ, आंवले और विजुआ-पासके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर मूंगपरावर गोलीये बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरककेसाय देकर जीरको पानीमें पीसकर पिलानेसे सन्निपातकी उप्रता, सङ्ग्रहणी और सूतिकारोगको यह नष्टकरताहै ॥ ५८६ ॥

#### ५८७ स्वच्छन्दभैरवरसः ( चतुर्थः )

रसं गन्धं द्रव्यञ्च विपं चर्द्धं मृतं समम् ।

त्रिफलायाः कपायेण मर्दितं दियसप्रथम् ॥ २४७७ ॥

दोलायने याममात्रं पाचितं मन्दपहिना ।

कोलपित्तेन सम्माप्य गुजामात्रं प्रदापयेत् ॥ २४७८ ॥

आर्द्रकस्यानुपानेन हन्यात्कण्ठककुच्छकम् ।

द्व्यधं द्वापयेत्पथ्यं तुल्यायां शीतले जलम् ॥

राजोपचारान्कुर्वीत रसः स्वच्छन्दभैरवः ॥ २४७९ ॥

दे. वि., वा., सखिपाते ।

दि०—बाहेरे द्रव्य न हटवने दिवसत्रयपाने दिवमत्रयमर्दन विदिनम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहाणा और बज्जनाग, बज्जनाग सबसमभागलेकर त्रिफलाकेसायसे ३ दिन मर्दनकर १ पहर त्रिफलाकेसायमें दोलायने मन्दप्रतिर पकाकर घृष्टरूपितकी १ भागनादेकर १-१ रत्तीकी गोलीये बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरकके रससेसाय देनेसे यह कण्ठगुल्मक सन्निपातको नष्टकरताहै । भुक्तमनेपर दहीमात देना । प्यामकी अधि-क्याहोनेपर शीतजल पिलाना और शीतोपचारकरना ॥ ५८७ ॥

#### ५८८ स्वच्छन्दभैरवरसः ( पञ्चमः )

रमेन द्विगुणं गन्धं शुद्धं मर्मदेयेत् हृदम् ।

लोहाष्टकं मृतममं प्रत्येकञ्च मृतं क्षिपेत् ॥ २४८० ॥

प्राश्यां जयन्ती निर्गुण्डी विपमुष्टिः पुनर्नया ।

नीलिका गिरिकर्षकं तुल्यायचतुर्भुक्तिरुम ॥ २४८१ ॥

क्षुपमं कायमात्र्यं च प्रत्येकं च ममाहितः ।

मर्दयेत्त्रिदिनं रस्ये ततः पित्तं विमापयेत् ॥ २४८२ ॥

मात्स्यमाहिपमायूरे यावत्सिकं द्रवैरसम् ।  
 शताह्वा जीवनी रास्त्रा चाजिगन्धाहिवहृती ॥२४८३॥  
 कर्चुरो नागरज्जला सर्पाक्षी सुरसत्त्वचः ।  
 जातबालस्य पिष्टा च कणागोक्षुरसंयुतम् ॥२४८४॥  
 समैरेभिः कृतां सृपां पूर्वोक्तं वेशयेद्रसम् ।  
 तैर्निरुद्धय ततो भाण्डे भृगुमये रोधयेत्पुनः ॥२४८५॥  
 स्त्रावकेण दृढं सन्धी विलिप्य वस्त्रमृत्तिकायम् ।  
 अल्पाग्निना दिने पाच्यं रसमादाय चूर्णयेत् ॥२४८६॥  
 पूर्वोक्तं भावयेत्पित्तै रसः स्वच्छन्दभैरवः ।  
 आर्द्रकस्य रसे दैव्यः सन्निपाते त्रिगुञ्जकः ॥२४८७॥  
 दशमूलैर्निगुण्ड्याः कायञ्चानु प्रयायेत् ।  
 सन्निपातं निहन्त्याशु पच्यं दद्याद्यथोचितम् ॥२४८८॥  
 र सु, र. को., टो., र. (म.), र. का., ज्वराधिकारे ।

दि०—सशुद्धात्तनाद्व्याधौ भाव्यो दोषो द्रिगुणो वलि ।

लोहाद्यैश्च कुर्वीत मागनादौ यथाक्रमम् ॥

तच्छुष्कं मर्दयेत्पूर्वं दिनमेकं निम्नरम् ।

जयन्तीपरतोयेन मर्दयेच्च दिनत्रयम् ॥

कृष्णाया सुरसायाश्च मादयः नीरैस्ततः परम् ।

पुनर्ववारमैस्तद्विद्विमुष्टिरसैस्तथा ।

नालिकासलिलैर्मेघां गिरिकर्णारसैस्तथा ।

अर्कहारीं दिनं मर्षं स्याद्विर्तैस्तथा ॥

त्रिजगद्विजयानीरै सर्वाणैः सम्प्रमदयेत् ।

मात्स्यमाहिपमायूरपित्तैरपि निम्नयेत् ॥

ततस्तद्रोष्यं कृत्वा छायायां सम्प्रशोषयेत् ।

तुलसीरससन्निधुञ्जलीवग्लिकेपिते ॥

पञ्चमृपान्तेर शिख्या सुखं सुखद्विदोषयेत् ।

घटिकादितय भावहीपमानममागत ॥

पचैत काष्ठशिखिना स्वाज्ञशीतरमुकोत् ।

सन्निपातहर सोडय रस स्वच्छन्दभैरव ॥

नानारोगान्निरहन्त्याशु सुविधानेन योजितः ।

आर्द्रकस्य रसेनैव रस सम्यक् प्रयोजयेत् ॥

निर्गुण्डीसलिलेनाथ बाधश्च दशमूलजाय ।

अनुपाने प्रयोक्तव्यं कायश्च दशमूलज ॥

वह वायु दिवह वा शीतमाशान्धरोक्ते ।

कुर्वीत श्वेदन सम्यग्वर्णमूलकायकैः ॥

रक्तप्राधान्येन रोगे बध्नां रुधिरच्युती ।

मस्तिन विमिश्रन्तु शीते स्यादनुपायकम् ॥

कर्तव्यं केमने रोगे नश्य तु लघुनादिभिः ।

इमं प्राप्य रस रोगी सन्निपाताय नश्यति ॥

मुद्राच्च कुल्लक कल्प्ये पथ्याये भिषजा सदा ॥”

इति साख्यद्वितीयपाठस्वरस्यैवप्रसङ्गोऽस्ति । भावनाविशेषेण ग्रीणि  
 श्वेदनेन तदनुष्ठानं कर्तव्यं एव रस सप्तादनीय ।

भाषा—शुद्ध पारा और आठोहोहोकीमसं १-१ भाग,  
 शुद्धान्यक २ भाग लेकर नीलवर्णकञ्जलीकर भाक्षी, जेंती,  
 निर्गुण्डी, कुचिला, पुनर्ववा, कालादना, गोकर्ण, आककादृष,  
 कलाधपूरा, भगरा, अहसा, मन्त्रोय इनेप्रत्येकके द्वितोसे २-३  
 दिन मर्दनकर मल्ली, भेंसा, मोर इनेकेपित्तोसे १-१ भावना  
 देवे । फिर सोंफ, जीवन्ती, रास्त्रा, अजसगन्ध, पान, कचूर, सोंठ

इलायची, अन्याहली, तुलसी, तज, तत्कालउत्पन्नद्वय बालक्री-  
 विष्टा, पीपल और गोखरू सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर  
 इनकी भूषावनाय पूर्वोक्तसको इसमें रखकर इण्डीमें बन्दकर  
 वज्रमिष्टीसे मुखमुद्रा देकर १ दिनकी मन्दाग्निसे पकावे ।  
 स्वाज्ञशीतलोहेनेर पूर्वोक्त औषधियोंके स्वरस और पित्तोसे  
 १-१ भावना देकर रखोदे । इसमेंसे २-३ रत्ती दशमूल  
 अथवा निर्गुण्डीके काठेकेसाथ देनेसे यह समस्तसन्निपातोंको  
 नष्टकरताहै । अत्यन्तबृक्षलगनेर यथेष्टभोजनदेवे ॥ ५८८ ॥

५८९ स्वच्छन्दभैरवसः ( पष्ठः )

समभागांश्च सङ्गृह्य पारदाभृतगन्धकान् ।  
 आतीफलस्य भागाद्वै दत्त्वा कुर्याच्च कज्जलीम् ॥२४८९॥  
 स्याद्वै पिप्पलीचूर्णं खल्वपित्वा निधापयेत् ।

शुद्धैर्कं वा द्विगुणं वा नागवल्लीद्वलैः सह ॥ २४९० ॥

आर्द्रकस्य रसेनापि द्रोणपुष्पीरसेन वा ।

शीतज्वरे सन्निपाते विसृज्यां विषमज्वरे ॥ २४९१ ॥

पीनसे च प्रतिश्याये ज्वरेऽज्जीर्णे तथैव च ।

मन्देऽग्नौ घमने चैव शिरोरोगे च दारुणे ॥ २४९२ ॥

प्रयोग्यो भिषजा सम्यग्रसः स्वच्छन्दभैरवः ।

पच्यं दध्योदनं दद्याद्वीर्यस्य द्योयबलायलम् ॥ २४९३ ॥

भै र, र. को, र. सु, वै. र, व रा, र. हा, टो, र वा,

र क बो., र र कौ, बा., र. पा, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, बडनाग और गन्धक १-१ भागकी

नीलवर्णकञ्जलीकर जायफल आधाभाग मिलाकर १-२ पहर

मर्दनकर सबसे आधा पीपलचाचूर्ण मिलाकर रखोके । इसमेंसे

१ अथवा २ रत्ती पान, अदरक अथवा पुनाकेस्वरसकेसाथ

देनेसे शीतज्वर, सन्निपात, विमृष्टिका, विषमज्वर, पीनस,

प्रतिश्याय, ज्वर, अजीर्ण, मन्दाग्नि, घमन, भयङ्कर शिरोरोग

इससबको यह नष्टकरताहै । दोषोंका बलाबल देखकर बहीमात

अथवा अन्यवस्तु पच्यमें देवे ॥ ५८९ ॥

५९० स्वच्छन्दभैरवसः ( सप्तमः )

तीक्ष्णायस्कान्तगोदन्तमाक्षिकैर्मदितो रसः ।

समांशगन्धकः पक्वो हृण्डिकायश्चमध्यमः ॥ २४९४ ॥

व्योपाग्निमन्यसुरसाकन्दद्वैतद्वयभयाविषैः ।

समैःसमं यद्दहं मुण्डोनिगुण्डोरसपिण्डितः ॥२४९५॥

सेवित शमयेद्वाताघ्नान्नास्त्रा स्वच्छन्दभैरवः ।

विशेषाद्वातरक्तश्च द्वियह्यश्चादिकं लिहेत् ॥ २४९६ ॥

र र. स, वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—कोवद, सुष्यक, गोदन्ती, सोनामाखी इनकी-

मसमें, शुद्ध पारा और गन्धक सप्तसमभागकी नीलवर्ण-

कञ्जलीकर चिकनीहडोमें रख कोयलोपर लोहेकीशङ्कामे

चक्रातुआ एकपहर पाककरे । गन्धकजलजानेपर उतारकर

रसको निकाले । फिर इसमें त्रिकटु, अरणी, तुलसी, सूरण,

कांजसोयी, हरे और बडनाग सब समभागका बारीकचूर्णकर

पूर्वरसकीयावर मिलाय गोरखमुण्डो और निगुण्डीकेस्वरससे  
२-२ दिन मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रसकेसाथदेनेसे समस्त वात-  
विकार और विशेषकर वातरज नष्टहोताहै ॥ ५९० ॥

#### ५९१ स्वच्छन्दभैरवरसः ( अष्टमः )

मृतं नागाम्रकं लोहं हिह्रुलं रसगन्धकौ ।  
जेपालं तुल्यकञ्जाय कासीसं दशमांशकम् ॥ २४९७ ॥  
भाययेत्पञ्चभिः पित्तं जलयोगञ्च कारयेत् ।  
सन्निपातहरः सूत एव स्वच्छन्दभैरवः ॥ २४९८ ॥  
र. शं., सन्निपाते ।

भाषा—नाग, अन्नक और कान्तलोह इनकीमल्ल, शुद्ध-  
शिरफ, पारा, गन्धक और जमालगोटा १-१ भाग, कचीस-  
भस्म दशवांशभागलेकर धातुओंकी नीलवर्णकञ्जीमें जमाल-  
गोटोको मिलाय पांचोपित्तोंसे १-१ भागना देकर १-१ रत्तीकी  
गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानु-  
पानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै । दाहमादम-  
होनेपर जलपाराका प्रयोगकरे ॥ ५९१ ॥

#### ५९२ स्वच्छन्दभैरवरसः ( नवमः )

शुद्धं सूतं विषं गन्धं नेपालं टङ्कचित्रकम् ।  
अर्कमूलकपायेण मर्दयेद्याममात्रकम् ॥ २४९९ ॥  
दोलायन्ये पचेद्यामं गुजामात्रं प्रदापयेत् ।  
कोष्ठवातादिकान्वातान्सायनैष विनाशयेत् ॥ २५०० ॥  
ब. रा., वै. चि., कोष्ठवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, यष्टनाग, गन्धक, जमालगोटा, सुहागा  
और चित्रकमूल सब समभागलेकर नीलवर्णकञ्जीमें आककी  
जड़कीछालकाढ़ीसे १ पहर मर्दनकर आकके काटेंमें दोलायनसे  
१ पहर स्वेदनकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त-  
वातविकारोंको नष्टकरताहै ॥ ५९२ ॥

#### ५९३ स्वच्छन्दभैरवरसः ( दशमः )

शुद्धसूतस्य गद्याणान्दश यन्ने हि मूधरे ।  
क्षिप्वा गन्धकजं देयं षोडशांशं पुटे पुटे ॥ २५०१ ॥  
एवं शतपुटे जार्यः पट्टणः शुद्धगन्धकः ।  
अधोवक्त्रपिधानेन मुखमाच्छादयेद् दहम् ॥ २५०२ ॥  
मुखं वल्लभमुदा लिप्त्वा चारम्यारं पुटेच्छतम् ।  
एवैकञ्च पुटे देयं वैदेयैर्दश गोमयैः ॥ २५०३ ॥  
एवं पुटशतं दत्त्वा निष्कास्यो मूधराद्रसः ।  
तिथिवर्णसुवर्णस्य ग्ल्यस्याप्युत्तमस्य च ॥ २५०४ ॥  
ताम्रस्याप्यतिशुद्धस्य शुद्धकान्तायसोऽपि च ।  
तथा चाग्रकसत्त्वस्यैको गद्याणकः पूयकः ॥ २५०५ ॥  
पञ्चानां पञ्च गद्याणानेकत्रायतयेत्सुधीः ।  
खोटमायतयित्वा च कुर्याच्चर्णं सुखस्मकम् ॥ २५०६ ॥

पुटोत्तीर्णं रसं क्षिप्त्वा सुपेय्यमतिसूक्ष्मकम् ।  
तिथिगद्याणकानाञ्च पिष्टिः स्यादतिसुन्दरा ॥ २५०७ ॥  
विंशते निम्बुकानाञ्च खण्डकानि विनिःक्षिपेत् ।  
काञ्जिके लवणोपेतं स्थालिकायां शनैः मुहुः ॥ २५०८ ॥  
दोलायत्रेण तां पिष्टिं स्वेदयेच्च दिनत्रयम् ।  
काञ्जिकेन समं स्पृशं निपेक्ष्यः स्वेदने सदा ॥ २५०९ ॥  
खत्वे पञ्चदश क्षेप्या गद्याणाः शुद्धगन्धकात् ।  
पिष्टयाः पञ्चदशक्षेप्यामिध्रांश्चिश्च पेषयेत् ॥ २५१० ॥  
सर्वस्य कज्जलीं खत्वे यज्ञीक्षीरेण वासरम् ।  
दिनैकञ्चार्कदुग्धेन पिष्ट्वा कृत्वा च गोलकम् ॥ २५११ ॥  
क्षिप्त्वा सुमूधरे यत्र पिधानञ्च मुखे न्यसेत् ।  
मुखं वल्लभमुदा लिप्त्वा अष्टमि गांमयैः पुटम् ॥ २५१२ ॥  
एकैकं चाष्टमि देयं छानकैः पुटमष्टमिः ।  
त्रयोदश पुटानि स्युर्विना कर्पटमुत्तिकां ॥ २५१३ ॥  
द्वारं नोद्वादनयोज्य मसम सञ्चालयन्मुहुः ।  
चतुर्दशपुटे जातः सिन्दुराभः सुगोलकः ॥ २५१४ ॥  
खत्वे कृत्वा च तच्चूर्णमेभिश्च भेषजैः पुटेत् ।  
त्रिकटो घांरिणा पूर्व त्वेकविंशतिभायनाः ॥ २५१५ ॥  
सप्तार्द्रकरसेनैव सप्त कण्टकशीलिनः ।  
फणिनागविपस्यापि गद्याणापञ्च निक्षिपेत् ॥ २५१६ ॥  
श्रीखण्डेन प्रदातव्या पञ्चादेकैव भायना ।  
तच्चूर्णं कुम्भके क्षेप्यं भवेत्स्वच्छन्दभैरवः ॥ २५१७ ॥  
प्रत्येकञ्च समुत्थाय रक्तिसाम्रश्च रोगिभिः ।  
अविच्छिन्नो रसो ब्राह्मो शीतने पयसा समम् ॥ २५१८ ॥  
सर्वेषु च प्रमेहेषु शूलेषु विविधेषु च ।  
सयश्मसन्निपातेषु समस्तेष्वपि वायुषु ॥ २५१९ ॥  
अतीसारेषु सर्वेषु रक्तातीसारवर्जितः ।  
रोमहर्षेषु मेदस्तु समस्तेष्वप्युदरेषु च ॥ २५२० ॥  
यक्षकोष्ठे च मन्दाग्नीं शुल्भे च वातरक्तके ।  
कासे श्वासे तथा शोफोऽजीर्णके श्लेष्मसम्भवे ॥ २५२१ ॥  
श्वेतयजितकुष्ठेषु देयः सप्तदशस्यपि ।  
ज्वरेषु च समस्तेषु पित्तज्वरविजितः ॥ २५२२ ॥  
ज्वरेषु राज्ञो दातव्यो न प्रभाते कदाचन ।  
तैलक्षाराम्लवर्ज्यञ्च भोज्यं मधुरभोजनम् ॥ २५२३ ॥  
मासेकानन्तरं रोगादिमुच्येत शनैः ध्रुवम् ।  
वल्लवानुचमी शूरो तेजस्वी जायते नरः ॥ २५२४ ॥  
र. कं. ली., चराधिकार ।

भाषा—पांचतोले शुद्धपारेपर सोलहवां हिस्सा गन्धककाचूर्ण  
छिड़कर मूधरयज्ञकी इतनी आंचदेवे कि गन्धकमात्र जलजाय  
( जल्लो छोटे छोटे ४ कण्डोंसे अधिक आंच न दे ) । ऐसे  
१०० पुट देकर पट्टणगन्धक जारकरे । फिर विशुद्धसुवर्ण,  
रजत, ताम्र, कान्त और अन्नकरास ६-६ माशोलेकर एकनगद  
गलाय पारोको मिलाकर थोट तैयारकरे, पर यह ध्यान रखते  
कि पारा पड़नेसे गलोहुई धातुएं उड़ानकरतीहैं ऐसा न होनेपावे ।

इसके बाद नीचुरेखसे भर्दनकर गोलीबनाय ४ तल मलमलके कपड़ेमें रखकर लवणयुक्तकाञ्चीको हंडीमें भर २० नीचुरोंके टुकड़े करके डालदे और ऊपर गोलीको बटकादे । नीचेसे ३ दिनतक इतनी मन्द आंचदे कि पोखरीको केवल वाष्पही लगे उफान न आवे । स्वाशरीतलहोनेपर निकालकर पिंडीको खर-लमें डाल जा तोले शुद्ध गन्धकके साथ नीलवर्णकबली करे । फिर शूअर और आककेदूधसे १-१ दिन भर्दनकर गोलाबनाय बराबसम्पुटमें बन्दकर ८ जलहीनपट्टोंकी मूअरपुटमें आंचदे परन्तु सम्पुटका मुह न खोले । १४ पुटोंमें यह सिन्दूरवर्णना होजायगा । फिर इसको खरलमें डाल थिकडुकेबांधे ०१, अदरस और भट्टाईयाकेरससे ७-७ भावनाएं देकर फणीमाले-सर्पकापि २॥ तोले डालकर सुखावे और चन्दनवेपथुकी एक भावना देकर सुखाकर शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रसी श्रात काल ढंके जलदेवाय श्रातिदिनलेवे । इससे समस्तप्रमेह, मानासरहृक्चल, राज्यदम, समस्तमजिपात, वातरोग, रक्षाति-सारकोछोडकर समस्त अतिसार, रोमरूप, मेदोरोग, शरप्रकारके ज्वररोग, बद्धकोष्ठा, मन्दाग्नि, शुष्म, वातरक, वास, खास, शोथ, कफज अजीर्ण, भिन्नरहितसमस्तपुष्ट, पित्तवर्जितसमस्त-ज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै । ज्वरोंमें रात्रिमें देना सबेरे नहीं । तैल, क्षार और खटाईको छोडकर मधुर भोजनकरे । एक महीनेके प्रयोगसे धीरे २ समस्तव्याधियां नष्टहोजातीहै ५९३

#### ५९४ स्वच्छन्दभैरवरसः (एकादशः)

रसगन्धककुष्ठमें भैरवा सहितैश्च मरिचके द्विगुणैः ।  
तत्समरूपवर्धपूर्णं ख्यातः स्वच्छन्दभैरवो नाम॥२५२५॥  
कफघातदीपशमनं कुर्वते स्वच्छन्दभोजनेनापि ।  
प्रतिदिनसमेकमापप्रमाणतः पुष्टिर्न भवति ॥२५२६॥

र. (मा.), रससारसुद्ध, कफघातधिक्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, बाडची, जल्लीकण्ठोंकीराख १-१ भाग, मरिच और कौड़ीभस्म २-२ भागलेकर बारीक-पूर्णकर पोरगन्धककी नीलवर्णकबलीमें मिलाय एकदिन शुष्क-भर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा रोग अथवा समयो-चितानुशानेचाप देनेसे यह कफघाताधिक्यको नष्टकरताहै ५९४

#### ५९५ स्वर्जिहारादियोगः

स्वर्जिका मायशकञ्च विजयातिविषा समम् ।  
दीप्यकं पारदं गन्धं तिष्ठ्युनीरेण भावयेत् ॥ २५२७ ॥  
माषार्द्धं मधुना देयं सितया या घृतान्यितम् ।  
अनुदद्याद्बह्वर्तियवरातीसारदान्तेषु ॥  
सशूलशोथसहितं प्रहृण्यति प्रणाशयेत् ॥ २५२८ ॥  
त्रि र., प्रहृण्यधिकारे ।

भाषा—समी, यमशार, मांष, अनोष्ठ, अजवाइन, शुद्ध-पारा और गन्धक समभाग लेकर बारीकपूर्णकर पोरगन्धककी नीलवर्णकबलीमें मिलाय नीचुरेखगदी १ भावना देकर आपे-आपे माषोदीगोलिमें बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली

मधु, शकर अथवा धीकेसाव देनेसे प्रद्वणी, ज्वरातिसार, शूल और शोथमहित प्रद्वणी इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५९५ ॥

#### ५९६ स्वयमभिरसः

शुद्धं सतं द्विधा गन्धं कुर्यात्स्वल्पेन कज्जलीम् ।  
तयोः समं तीक्ष्णचूर्णं मर्दयेत्कन्याद्रवेः ॥ २५२९ ॥  
दियामान्ते कृतं गोलं ताम्रपात्रे विनिक्षिपेत् ।  
आच्छायेरण्डपत्रेण यामार्द्धंस्तुष्णता भवेत् ॥ २५३० ॥  
घान्यराशौ न्यसेत्पश्चात्त्रिदिनान्ते समुद्धरेत् ।  
सञ्चूर्णं गालयेद्रवे सत्यं वारितरं भवेत् ॥ २५३१ ॥  
माघयेत्कन्याकाद्रावेः सतथा भृङ्गजैस्तथा ।  
कामाचीकुण्डोत्थद्रवैर्मुण्ड्याः पुनर्नयः ॥ २५३२ ॥  
सहृदयेमृताग्रीलीनियुग्ण्डीचिप्रजेस्तथा ।  
सतथा तु पृथग्द्रावैर्मांशं शोथं तथाऽऽपते २५३३  
धिदयोगोऽयमा ख्यातः सिद्धानाश्च मुखागतः ।  
अनुधृतो मया सत्यं सर्वरोगगणपहः ॥ २५३४ ॥  
स्वर्णादीन्मारयेदेवं चूर्णीकृत्य तु लोहवत् ।  
त्रिकलामधुसंयुक्तं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ २५३५ ॥  
त्रिकुटुत्रिफलेलाभिर्जातीफललवङ्गकैः ।  
नधभागोन्मितीरेतैः समः पूर्ववत्सो भवेत् ॥ २५३६ ॥  
सञ्चूर्णालोडयेत्सोद्रे भर्ष्य मापप्रमाणकम् ।  
स्वयमभिरसो नाम्ना क्षयकासनिवृत्तनः ॥ २५३७ ॥  
शा. सं., वै. द., वै. क., र. र. ख., त्रि. र., रसचि., भा. प्र.,  
ब. रा., र. प्र., भै. सा., रसायनसं. र. रां., र. को., र. यो.,  
र. का., वै. चि., र. क. छ., र. क्षि., र. र., र. को., क्षयाधिकारे ।  
दि—बहु पुल्लेखे “स्वर्णवाहिकायाम् घृष्टीरण्यानिदे मर ।  
अभयेत्स्वयमभिरसो मापनाय प्रयान्ते ।” हयचिन्मा घटो हयने  
पर तत्र स्वर्णवाहिकायाम् रेषयन्तापनैगिनि स्वादिचनस्य तत्रैव  
उभया विधुयव योजनीयम् । र. म., भै. सा., एतयोः त्रिफलेलवङ्गकैः  
स्वयमभिरसं विन्यस्य अनभिमारित लोहं मर्दयन्त्यु विभिधयेदिनि ग्रा-  
यित्वा स्वयमभिरसमरूपं प्रदर्शितम् । र. यि., यो. म., र. (मा.),  
र. नि., रसायनं, भा. ख. एतु प्रत्येयु—  
“शुद्धं यत् द्विधा गन्धं सन्ने बद्धा तु कज्जलीम् ।  
तयोः समं बाल्मीकसमावे तस्य तीक्ष्णकम् ॥  
सर्वत्र देवदेवि मरिचं कन्याद्रवेः ।  
यामद्वयं तत्र पश्चात्त्रेण ताम्रपात्रे ॥  
आच्छायेरण्डपत्रेणु बान्यराशौ विषायेत् ।  
त्रिदिनान्ते समुद्धृतं त्रि वारितरं भवेत् ॥  
कुमारीशुद्धकरस्यै कामाची पुनर्नयः ।  
नीली मुण्डी च त्रिमुण्डी सर्वरोगं घातयेत् ॥  
अन्त्यर्थां गोपुत्रक कण्डूद्वयं बद्धकरम् ॥  
प्लेशं भावयद्वा. नन्तराग्न्युत्पन्नकम् ॥  
ज्वरपित्तपथ्योवरादीनां कफघातः ।  
कुण्डोत्थमृताग्रीली चूर्णं मर्दयेत्कन्याभिरसम् ॥  
वरा चोऽपि विषेण यन्मोक्षकर इवम् ।  
मयोन्म कपुताऽप्येता सिद्धेऽं भवेत्गता ॥  
राशौ विरेद्वर्षां तत्रैव शुष्कान्द्रा दिनेषा ।  
अन्त्यराग्न्युत्पन्नकम् निषायेत् ॥

वीर्यवृद्धिकर श्रेष्ठ रामाशतसुखप्रदम् ।  
तावन्न च्यवत वीर्यं यावदम्ल न सेवेत ॥  
दीपन वान्तिर पुष्टिष्टित्तिविना सदा ।  
सुगुत कथितं यत् मिद्वेद्येश्वराभिष ॥”

इति पाठो निहिनोऽस्ति तत्र भावनानामेतदपस्या बहुल्वम् । रस  
निर्यादनप्रवारस्तु एक एवाऽस्ति । शा स, नि र, र सु, मै सा, र  
मयाननम्, र, का, प्यु ग्रन्थेषु रोहससायन नाम्ना—

“शुद्ध रसेन्द्र भागेष्ट दिग्भाय शुद्धगन्धवम् ।  
शुचित्व ज्वलित्वा धृतवा तत्र तीक्ष्णभव रत्न ॥  
शुपन्वा कञ्जलिकातुल्य ग्रहैव विमर्दयेत् ।  
तत्र कम्पाद्वै रत्ने त्रिदिन परिमर्दयेत् ॥  
तत मन्थयने सत्र सोष्णो धूमोऽग्रे महात् ।  
अत्यन्त पिण्डित्वा कृत्वा साक्षपात्रे निपाय च ॥  
मध्ये धान्यैकशतस्य त्रिदिन भारदेतुषु ।  
उद्धृत्य तस्मात्तत्त्वे च शिल्ला धमे निपापयेत् ॥  
रमे कुटारच्छिन्नायास्त्रिभु परिभावेत् ।  
सशेष्य धमे बायैश्च भावयेत्त्रिद्विदिशिषा ।  
वातासृणाचिन्नाकाया रसे भाव्य क्रमादिषा ॥  
रोहणेन तत शिल्ला भावयेत्त्रिदिनकाले ॥  
निगुण्णदाग्निमन्त्रमि विनसृक्कुरण्टकैः ।  
पलाशकलीद्रावै वीर्यकस्य श्वेन वा ॥  
नीलिकासुपाद्रावै वैष्णवकल्लिरासे ॥  
त्रिनेत्रल यशालाम भावयेदभिरीषे ॥  
भावयत्त्रिनेत्रैश्च ततो नागवल्गुरी ॥  
बलावरीगाधुराद्रा पितालमरुदरीसे ॥  
तत प्रातः श्लिष्टोद्भिष्टास्य कोपनाग्रकम् ॥  
पन्मान वराबाध विवेरस्यानुपाकम् ॥  
मामन्त्र्य क्षीलिता स्वाद्विषास्तिनाशनम् ॥  
मन्दाग्नि आसकासौ च पाण्डुता कलमारतौ ॥  
पिम्परीमपुष्पक इत्यदिनत्र सद्य ॥  
बातास मूत्रदागंश्च मर्दणी तीव्रा कम् ॥  
अण्डवृद्धिं जवेदेनष्टिआसत्त्वमपुनम् ॥  
बलवर्णकर, बुध्यामापुष्प परम शुद्धम् ॥  
कूष्माण्ड निम्बेलन्न नाराज रात्रिका तथा ।  
मद्यमम्बरमधैव त्परेतोहस्य सवक ॥”

इति पाठो निहिनाऽस्ति । अत्रापि मूलपाठान्वासास्त्रि विल  
रुऽस्ति । रसनिर्माणद्वेया नास्ति वचिदिशेपता । किञ्चि पाठेषु  
क्षयत्वापनेमयेदने रत्न, भावनार्थ सर्वो अपि ण्डद्वयाधिकारोपेतुका  
पत्र हरदने । वर्याश्विद्वि भावनार्था प्रविशुल्लव न हरदने अनसिदि  
प्राप्तमनुपाय मर्माभि भावनामिदं ध्व पाठ सत्प्राप इत्यव्याक  
ममर्मा । भावनार्थो क्रमस्त्वचानिर्दिष्टक्रम वर्याष स्र यथा—बुधारी,  
वात्सर्मा, पुनर्नाग, सदन्ना, शुद्धी, नीर्य, मिगुण्डा, चित्रर,  
चाहरी, कुट्टर, वासा, दग्नि, साम्प्राणी, “यूष्ण, त्रिफला, कदादुर,  
पातालगर्द, वर्या, सुपिण्डिता, गुगार, गण्डुक, कन्दुवृक्ष, वुर  
ष्टक, शृङ्ग, बणा, नागवन्त, कम्पुल्लिवा, जलावरी, वीर्यनिर्याय,  
पलाशाक्षररिमे प्रत्यक्ष सत्त सवना शान्त्या इति ॥

भाषा—शुद्धपात्र १ भाग, कण्ठक २ भागद्वी नीलवर्ण-  
कलीकर उदरीपरावर पालाद्वी बारीकरोता अलहर पीऊ-  
वारके रग्ये दोपदर मदनकर गोलाबनाय तावके पात्रमे रस  
एण्डपेतत्रेपनोसे दृष्टकर कड़ीधूमने ररपे । आषे पदमे यद

अत्यन्तमरमहोजायगा फिर इसे जन्ही पत्तोसे लपेटकर कचेडोरसे  
बाध अन्की राशिमि दबादे । तीनदिनबाद निकालकर सरलकर  
कलमे छानलेवे इसकी बारितर भस्महोगी । फिर धौडवार,  
गगरा, मनोय, पीयावासा, गोरखगुग्गु, पुनर्नवा, सहदेवी,  
गिलेय, काळादाना अथवा नील, मिगुण्डा और चित्रकके  
ययासम्भव स्वस अथवा कायोंसे ७-७ भावनाएं कड़ीधूमने  
देवे । यह सिद्धयोगहे सिद्धपरम्परासे चला आताहै और कई-  
वारका अनुमृतहै । त्रिफला और मधुकेशाध उचितमानमि  
देनेसे यह सवरोगोपर कामकरताहै । इसीप्रक्रियासेसुवर्णादि  
धातुओंकी भी भस्महोतीहै ।

विशेषवचन—इसे अमिसम्पर्क जनक नहीं होता तभी  
तक यह बारितर रहतीहै अमिसंयोगहोनेकेबाद पारद गन्धक  
उड़जाताहै और केवल धातु पानीमें डूबजातीहै ॥ ५९६ ॥

### ५९७ स्वरमसादकरसः

पारदं गन्धकं तुल्यं तालकञ्च मनःशिला ।  
मर्घं तुल्यं पञ्चकोलजलैस्तु दिवसत्रयम् ॥ २५३८ ॥  
ततः पृटेद्रजपुटे शरपुह्नाजले; पुनः ।  
सम्मर्द्य पाचयेद्भ्यस्ततः सिद्धो भवेद्रसः ॥ २५३९ ॥  
स्वरप्रसादको नाम रसोऽयं दृष्टचिह्नमः ।  
पण्डितपुण्डेन दातव्यो गुञ्जाद्वयमितो युष्ये ॥  
गुञ्जाद्रंकेण मध्येन पिप्पलीमधुनाऽथवा ॥ २५४० ॥  
र. म. मा, र सु, ना वि, स्वरमेदे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल, और मैनसिल सम  
भाषकी नीलवर्णकलीकर पञ्चकोलकेबापसे ३ दिन मदनकर  
गोलाबनाय शरावसमुद्रमे बन्दकर गजपुटकीलाचदे । स्वात्र-  
शीतलोहोनेपर निकालकर ३ दिन शरपुह्नेस्वरसमे मदनकर  
पूर्वकर गजपुटकी आचदे । स्वात्रशीतलोहोनेपर निकालकर  
रखओके । इसमेंसे २-२ रत्ती पान, गुड, अदरक, मधुअथवा  
पीपल और मधु इनमेंसे किसीभी अनुपातके साथ लेनेसे स्वरम  
नष्टहोताहै ॥ ५९७ ॥

### ५९८ स्वरमेदहरसः ( रत्नराज )

स्वरमेदप्रतीकारो रत्नराजोऽयं कथ्यते ।  
रसस्त्रिगुणितो गन्धो द्रावयेद्योहपात्रके ॥ २५४१ ॥  
दालयेत्कलीपणे साधयेदपि तेन तु ।  
स्वाह्नशीतो समुद्धृत्य मर्दयेत्तृषणामनुना ॥ २५४२ ॥  
ततश्च जनुतकेण दिवसत्रितयं पृथक् ।  
सिद्धो भवेदेष्ट स्रुतः स्वरमेदापहो भवेत् ॥ २५४३ ॥  
गुञ्जाचतुष्टयं व्याप्य त्रिसुगन्धगुण्डेन तु ।  
यदरीपत्रकस्त्रेन घृतसेन्यययुक्तया ॥ २५४४ ॥  
र, स्वरमेदे ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भागद्वी नीलवर्ण-  
कलीकर पीपुनीहुंदलोहेकी कडाहीमें गलाकर गोबरपर रग्ये  
हुए केलेके पत्तोपर पंटीबनाय मिद्धकेनाय, शिलाजीत और  
तमसे ३-३ दिन मदनकर ४-४ रत्तीकी गोडिये बनाकर

रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिमुक्क, शुद्ध अथवा बेरके पत्तादेक्क अथवा धी और सेंपेनमकनैसाथ देनसे यह स्वर भङ्गकोनटकरताहै ॥ ५९८ ॥

५९९ स्वर्णक्षीरीरसः

हमाहा पञ्चपलिका क्षिप्त्वा तत्राष्टे पचेत् ।  
 तत्र जीर्णे समाहृत्य पुन क्षीरघणे पचेत् ॥ २५४ ॥  
 क्षीरे जीर्णे समुद्धृत्य क्षालयित्वा विरोपत ।  
 तद्युग्मे पञ्चपलिक मरिचाना पलद्वयम् ॥ २५४६ ॥  
 पलैक मूर्च्छितं सूतमेकीकृत्य तु भक्षयेत् ।  
 निष्पेक सुतिष्ठेद्वातं स्पृणक्षीरारसा शयम् ॥ २५४७ ॥

शा स, र को, र प्र सु, भे सा, र सायनय, र द. स, र सा  
यनस, र प्र, र मं, दो, र का, जुटे।

**भाषा—**५ पत्र सत्यानासीकीजङ्गो एकदोन छात्रों काल-  
कर पढ़ावे। छात्रलज्जनेपर एम्बोन द्वयमें पढ़ावे। दृष्याना  
होनेपर निष्काश्रम अन्धरीतरह धोकर छात्ररक हस्तापूर्ण ५  
पल, मरिय २ पल, रससिन्दूर अथवा कज्जली १ पल देकर  
१-२ पहर घोटकर रराछोवे। इसमेंसे ४-४ मास समय अथवा  
रोगोन्नितानुपानकसाय देनसे यह गुनरहीको नष्टकरावे ५५५

६०० स्वर्णादिगुटिका

स्थणैरौत्थ्यासुताश्च धार्मिकेनरामृता ।  
 शङ्खपापनिशानुत्पथपालमधुयष्टिका ॥ २५४८ ॥  
 सयं हतनकास्मानि पिष्ट तु घटिका हरेत् ।  
 अशेषाभयनातङ्गाभ्येगतस्तदुपद्रवान् ॥ २५४९ ॥  
 रसायनतः, र र ही, मन्त्रगे।

भाषा—मुक्कण रत्न, ताम मोती, वस्त्र, पुष्प, धातु  
इनकीमन्त्रे, समुद्रमंथन शिवका, मिलोय, विष्णु हन्दी, मुल्हरी  
यसक समभाग केकर बारीक गुंजर मुल्हरीकापासे १-३ दिन  
मईनकर १-१ रसीकी गोलीये बनाकर रखोदे । इन्में १-१  
गोरी समय अवधारी रोगोचिंतानुसारनेपायदेनेम और स्थानसे  
नैर्बोक् व्यापि और ऊपर नयडोसै ॥ १०० ॥

६०१ स्वायम्भुवगुण्डः

शशिलेखा पञ्चपला तापत्रिजिह्व गुग्गुलु दंश च ।  
 पलत्रिंश ताप्ये स्याद्दोहात्प्रयोजकायाः ॥२५५॥  
 त्रिषण्णरजपलपरदिग्गुह्नीयचात्रिषृदती-  
 मुस्तायिद्विद्वर्जनीयतुलुह्लुपहिदुत्तंश ॥२५६॥  
 पलत्रिंश चेत मूत्रेण गर्वा पिषेधर प्रातः ।  
 बुद्धी घृतमधुमिर्धं जयत्यरुण्यातमचिरेण ॥२५७॥  
 त्रिषण्णि बुध्वाती विषण्णमुस्मादरुमेहाद्यः ।  
 उमादभगन्दरमपस्मृतिर्वापदग्निभ्यामान् ॥  
 पलत्रिंशु पत्रित् जपति स्वयम्भवेन प्रातः ॥२५८॥  
 ग वि भा प्र ३३ ।

१०-सहिते द्विदश त्रिंशत्तमे स्थितम् " अथवा  
कोपान्नरः स्यात् । अथवा अथवा अथवा अथवा

जनु तवैभ्युव पञ्चनि दत्ता गुण्युः । स्वार्थवच्य सप्रथ्य मुक्तां कार  
येद्व ॥ दाग कर्षद्वय ॥ तत सदेवयलत । वनरत्नमुद्राणि  
भित्ताणि विविधानि च ॥ म्हात्तापुष्टेयानांभि श्रष्टीगन्त  
वसितान् पुनरापाद्य पाण्डुतामुद्राणि ॥ २ ॥ "वर्षवामनद्वयमा  
पद्य विधेय । नापिर्वाथ सत्तारु हन्याद्विदिगन्त ॥ कथा  
वन्धवन्धव बन्धा मप्राप्तिवत । मापुर्वैरवस्थाय पुनरीमा  
व्यदस्य ॥ गर्भेधानाह्वालय गर्भपुष्टिर वम् । वम्भान  
विल्याना नाम्ना स्वायम्भुतो मुनि ॥ ३ ॥ इति दगन्त प्रकृतिगन्ति  
पल्लु श्रेयसुके शुभापिस्वात्पाठान्तरवचनायां पञ्चाभावात् नव  
दाग कर्षयुः

भाषा—वाङ्मयी और शिखीत ५-५ पल, पुत्रपुत्र १० पल, सोनामारी ३ पल, लोहगन्ध १-१ पल, गिरगा, बरब्रकपते, रीरसार, गिलोय, बच, निमोत दन्वीमूल नाममोया, विरङ्ग, हल्दी, ममिलतायुगपुष्पा मित्र क्मूल कुरीयाहीछाल १-१ पल सेहूर सबड़ा बारीकपुष्पाकर रखोडे । इयमेने ३-३ मासे मोसून अथवा थो और मधुक प्राय सेनसे बानरज, धित्र, वृष्ट, चरसे, नहर गर, गुण्ड, उदरोग, प्रमेद, डग्माद भगन्तर, अपस्मार, शीपत्र, त्रिमि, श्राय, बरीपलित इयमबडो यह नष्टकरताडे ॥ १०१ ॥

६०२ स्वैदशैत्यारिसः

ताम्रगुण्यर्चमूलानि द्विनिष्पाणि पृथक्पृथक् ।  
एकत पञ्चगुणात्पलं पिप्पु पुट ददत् ॥ २०५ ॥  
गण्डेदाशतमस्मानि पेदनिष्पमितानि च ।  
देयदालात्पे पिप्पु त्रिदिन कैरपिपित्तर् ॥ २०६ ॥  
स्वेदशील्यापनुष्यर् पलमात्र प्रदापये ।  
दध्ना सम्मर्दयेत्पात्रे जलयाग समाचरेत् ॥  
पथ्य घृतं सिन्धुमुद्रजर्णरक्षुकास्तनी ॥ २०७ ॥  
१ मु. शविपात ।

भाषा—आत्मन्य, गौड और आर्क ३४ ८-८ माग,  
पॉलोमस १ ५३ सेक्टर बारीकपूगडर हगीमे बन्दुध गजुं  
की आंचद । स्वातंत्र्योत्सवगर विद्याधर शुद्धगड पाग  
और शुद्धगड १-१ कांही नत्ता-इमीकर प्रागमे गिय  
बन्दा-इरमस ३ दिन मदनर मोरक रिता १ भाना वर  
३-३ रताकी भास्मि बनादर गगटे ६ । इनमे १-१ गगी  
दरीदगपमित्यकर वनम शीतल निरुत्तादे । अन्धगम  
मादुमहोनर जपगाराका यगदर । धी, गिप, सूत, गगद,  
इत और इत पयमे दव ॥ १०३ ॥

६०३ हरगौरीरसः ( पञ्चवाणम् ) ।

रमाक्षं देमताय्य यत्तमासिधमन्नमम् ।  
 नागं गुह्यं शूनं कान्तिं सममागानि कारयेत् ॥ २०० ॥  
 काचित्पादस्य बीजानि मन्त्रंमहिदेवमम् ।  
 एतच्छणं समानेन वाशारेण च मयेदेत् ॥ २०१ ॥  
 दाम्पत्येनरत्नमगेन मालम्भमगेन च ।  
 यत्तम्यम्यक्ष दानजं मिताय्यसिधमन्नमम् ॥ २०२ ॥



अष्टादशप्रमेहांश्च हन्ति रोगाननेकशः ।  
कामान्वर्धयते नृणां स्त्रीणामत्यन्तवह्निभः ॥  
कथ्यते हरगौरीशो रसोऽयं पञ्चबाणकृतः ॥ २५६० ॥  
स्वायनसं., र. पा., प्रमेहाधिकारे ।

टि०—रसापारिपाते “एण्डकुमवडोलेशन्दनेन च मर्दयेत् ॥”  
इत्यधिक पाठो दृश्यते तथा च गोशीरस्थाने गोपूरेण मर्दनं विहितम् ॥  
भाषा—पारा, अन्नरु, सुवर्ण, रजत, वज्र, सुवर्णमाक्षिक,  
नाग, ताम्र, कान्त इनकी भस्में १-१ भाग, तालमखाने, केवाच  
और अजीम ३-३ भाग लेकर शुष्कमर्दनकर गायबेदूध, सेम-  
लकामुसला और तालमूलीके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ६-६  
रत्तीनी गोलियें बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शहर,  
धी और दूधकेसायलेनेसे यह उपद्रवसहित १८ प्रकारके प्रमेहों-  
कोनष्टकर पुष्टत्वको देताहै ॥ ६०१ ॥

### ६०४ हरगौरीरसः ( द्वितीय )

फज्जलीं कारयित्वा तु तुल्ययो र्गन्धसूतयोः ।  
बीजपूररसं क्षिप्वा मर्दयेत्कज्जलं दिनम् ॥ २५६१ ॥  
फज्जल्या गोलकं कृत्वा महाकन्दोदरे क्षिपेत् ।  
तस्यैव मज्जया कन्दं मृपायकं निरोधयेत् ॥ २५६२ ॥  
निरोधयेन्मृदा वस्त्रं ततो देयं पुष्टं तथा ।  
यथार्कश्च निद्राये स्यात्पच्यते केवलो रसः ॥ २५६३ ॥  
समाकृत्य ततः कन्दाज्जात्याऽन्ते स्वाङ्गशीतलम् ।  
त्रिसप्त भायना देयास्तिलवर्णांनिजद्रवे ॥ २५६४ ॥  
सम्मथं तज्जलेव भायनाभाविर्तं रसम् ।  
कामाचीरसैरेव मर्कटीस्वरसेस्तथा ॥ २५६५ ॥  
शुष्कं तश्चूर्णितं कृत्वा योजयेत्तृपणीः समम् ।  
पञ्चमि लवणैस्तद्वत्क्षाराणां नितयेन च ॥ २५६६ ॥  
घृलद्वयं प्रयुज्जीत शृङ्गवेररसेः प्लुतम् ।  
हन्त्यादमिभवं मान्यं वातरोगमशेषतः ॥ २५६७ ॥

र. क. यो., र. मृ., अमिमान्ये ।

भाषा—सप्तभाग अमिस्थायी पारे और गन्धकरी नील-  
वर्णकजलीकर बिजोरेरसेसे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय जहरी-  
सुरणके बीचमें रख उधियेदेसे सुवर्णद्वर ६-७ कपडमिट्टी  
देकर मुखाकर गजपुटकी आचदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निका-  
लले इसका गर्मीके महीनेमें दोपहके सूर्यकेसह्य पाकहोगा ।  
श्रममें हुरदुर, मकोय और केवाचके आस्वरसोंसे १-१ भागनाए देकर त्रिकटु, पाचोनमक और तीनोंसार पूर्वपरकी  
बराबर मिलाकर ६-६ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली अदरखके सखेसाय देनेसे मन्दाग्नि और  
समस्त वातरोग नष्टहोतेहैं ॥ ६०४ ॥

### ६०५ हरगौरीसृष्टिरसः

शुद्धं सूतं चतुर्भागं स्युतार्द्धं सूतताम्रकम् ।  
गन्धकश्च द्वयोस्तुल्यं मस्तुना मर्दयेद्दिनम् ॥ २५६८ ॥

गोलकं बन्धयेद्वस्त्रे वायुकायन्त्रगं पचेत् ।  
मन्दाग्निना पचेत्सावधावत्तताश्च वायुकाः ॥ २५६९ ॥  
स्पष्टं न शभ्यते तापमथोद्भूतं विचूर्णयेत् ।  
धात्रीफलरसे भाज्यं सप्तधा गोमयेन च ॥ २५७० ॥  
शृङ्गचूर्णं ततः कृत्वा सर्वं क्षीरेण गोलयेत् ।  
वह्निव्या वटी कुर्याद्वतमध्ये विपाचयेत् ॥ २५७१ ॥  
स्वाङ्गशीताश्च तां ग्मादेत्प्रत्यहं पाचितां धृतैः ।  
महिषीक्षीरसुलुकीमनुपानश्च सर्वदा ॥ २५७२ ॥  
हरगौरीसृष्टिरसः सर्वमेहकुलान्तकः ।  
दुग्धोदं घृतं पथ्यं शाकजुषुफलं भवेत् ॥ २५७३ ॥

र. र., चि. र. म., र. को., व. रा., यो. म., र. का., प्रमेहे ।

टि०—बहुत्र स्थाने ताप्रस्थाने अन्नरु दृश्यते । र. वा सुदाई वृत्त-  
ताम्रमिनिस्थाने तनुल्यञ्च मृताभ्रकमिति पाठः । बहुत्र स्थाने गोमय-  
स्थाने गंधुर इत्येव । योगमहापत्रे शुद्धचनस्य भागीक चतुर्भागा मृता-  
भ्रकमिति पाठो दृश्यते परन्तु द्वयोस्तुल्यगन्धकमामगमनात्पायस्य  
चतुर्भागा, ताम्रस्याभ्रकस्य वा पारदार्द्धमात्रेण स्त्रीकौमुद्रिया भनि  
भाति, मात्राधिक्य तयोराधिक्येन सम्भवंतीति विशदिकारलनीयम् ।  
अत्र निष्कश्यमानाया अत्यधिकतया तत्स्थाने बहुद्वयमिति पाठः भ्रक-  
स्यितस्तदुत्प्रेषणं विशदगायत्रकस्यदेहिनि पाठो निष्कामिन इति धृषी-  
भिराकलनीयम् ।

भाषा—शुद्धपारा ४ भाग, ताम्रभस्म २ भा., शुद्धगन्धक  
६ भाग लेकर नीलवर्णकजलीकर दहीकेतोहसे एकदिन घोटकर  
गोलावनाय ४ तहमलमलके कपड़ेमें लपेट बायुकायन्त्रमें रख  
बहुतमन्दाग्निसे यहतक पकावे कि तमामयालु गरमहोवाय  
और हाथ स्पशेको सहन न करसके । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निका-  
लकर आखले और गोबरकेस्वरसोंकी ७-७ भागनाए देकर  
६-६ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली  
प्रतिदिन धीमे पकाकर खावे करासे १ तुल्य भेंसकादूध पीवे ।  
इससे समस्तप्रमेह नष्टहोतेहैं । इसमें पथ्य दूधभात, घृत और  
कागलहरीका क्षाफ देना ॥ ६०५ ॥

### ६०६ हररुद्ररसः ( हरनेत्ररसः )

तीक्ष्णं शुल्वं नागतारं स्वर्णञ्च मारितं पृथक् ।  
एकद्वित्रिचतुःपञ्च रुमात्पदं शुद्धसूतकात् ॥ २५७४ ॥  
चाक्षुर्याश्च द्रवे मर्चं दिनेनैकं कृतगोलरुम् ।  
मृगाङ्गवत्पचेत्स्यात्पायांवायुकाभिः प्रपूरितम् ॥ २५७५ ॥  
उद्धृत्य चूर्णयेच्चक्षुष्यं हररुद्रो रसोत्तमः ।  
मृगाङ्गवत्क्षयं हन्ति तदन्मानुपानकम् ॥ २५७६ ॥  
नि र., र. र., र. को., वै. चि., र. का., क्षये । र. का. हर-  
रुद्धेति नाम ।

भाषा—कोलद, तावा, नाग, रजत, सुवर्ण इनकीभस्में  
और शुद्धपारा कमरुद्रभाषसे लेकर एकदिन शुष्कमर्दनकर अमलो-  
नियलेरखमें घोटकर गोलावनाय ४ तह मलमलके कपड़ेमें लपेट  
शरावसम्पुष्टकर वायुकायन्त्रमें रख एक अहोपानकी अग्नि देवे ।  
स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखोड़े । इसमेंसे १ से २ रत्ती-



और लोहभस्म ८-८ भा., शुद्ध खपरिया और मैनसिल २२-२० भाग लेकर मकोयके रससे ३ दिन मर्दनकर काचकी शीशीमें डालकर जलमुद्रादेकर जलयन्त्रमें रख ८ दिनकी हवाभि देवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर उसकीवरावर शुद्धयन्त्रक और अष्टमाश नवसादर मिलाकर सिंही<sup>१</sup>, ज्योष्ठी<sup>२</sup>, मृगी<sup>३</sup>, हंसी<sup>४</sup>, चण्डी<sup>५</sup>, काली<sup>६</sup>, वेणिका<sup>७</sup>, ( ये सात औषधिये सङ्केतप्रधान नामसे लिखींहे और योगकर्ताने उनका कोई भिन्नपर नहीं दियाहे इसलिये रास अमुकही वस्तुएँहे यह कहना बहुतदुस्तरहे । परन्तु रसशास्त्रमें जिनसे कामलिवाजाताहे उसहिंसाबसे सिंही=सपेक्षद्वन्द्वैया, ज्योष्ठी=सपेक्षद्वन्द्वभाटा, मृगी=हिरण्यरी, हंसी=हसराज, चण्डी=चण्डालिनीकन्द, काली=हीरवी, वेणिका=आकाशवेल् इनका ग्रहणकरना उचितहे । ) इनोत्प्रेरसोंसे ७-७ दिन मर्दनकर पूर्वोक्तप्रकारसे ८ दिनकी जलयन्त्रमें हवाभिदेवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर गण और योगिनियोंकी पूजाकर रखछोड़े । यह सहस्रवेधी होताहे और जाम्बुतुको दूरकरताहे । धातुवाद सङ्केतके अनुसार चन्द्र और सूर्य दोनों कियाए इससे सिद्धहोतीहे । शरीरको कल्पोक्तप्रकारसे शुद्धकर इसमेंसे १ राईका दशवा हिंसा एकान्तवटकीछायामें देवे और ३ दिनतक वहाँ रखे । भूतल्लानेपर गोतुग्वदेवे । इससे ३ दिन सेवनकरनेसे वलीपलितसे निरुण्णहोकर जराजीर्णभी आदमी पुन युवावस्थामें आजाताहे इसका एकान्तमें सेवन करना चाहिये । शुल्म, पीडा, बवासीर, पाण्डु, कामला, श्वास, कास, राजयक्ष्म, क्षय, शूल, १८ प्रकारकेकुष्ठ, २० प्रमेह, समस्तज्वर, आम्भान, शोथ, ग्रहणी, जलितार, भग्नद्वर, पयरी, १३ सन्निपात, अस्थिशूल, शिरोरोग, स्थावर और जलमविष, इनसबको यह नष्टकरताहे । देह और लोह दोनोंमें सदसकाम करताहे । यद्वाकाली नामकवनस्पतिकेस्थानमें जो हीरवी लिखीहे वह कानानके पद्मकमें होतीहे और जङ्गलीलोग इसीनामसे परिचितहे । इसकी क्ता दोषुष्टतकलम्बी होतीहे पते शुद्धमारके सदृशहोतेहे आर नीचे तैलियारंगकाकन्दहोताहे तथा ज़हरीह । यह पारेको इततद कायमकरती हे ॥ ६१० ॥

### ६११ हरीतकीपाकः

प्रस्थमेकं शिवाणाञ्च जलद्रोणे निधापयेत् ।  
हिप्रस्थं दशमूलञ्च सार्धप्रस्था यवाः स्मृताः २५९७  
ग्रन्थिकं चित्रको भाङ्गो दशपुष्पी शटी वला ।  
विश्वामपामार्गमेधाञ्च पुष्करं गजपिप्पली ॥ २५९८ ॥  
इमानि तत्र योज्यानि प्रत्येकञ्च पलं पलम् ।  
अष्टांशे निःश्रुते चैषां पथ्याः पिष्ट्वा पचेत्ततः २५९९  
गुडप्रस्थत्रयं योज्यं गोघृतं पलपञ्चकम् ।  
जातीफलं केशरञ्च चातुर्जातञ्च घात्रिका ॥ २६०० ॥  
दीप्याश्वी जातिपनी च ताम्रं लोहं कटुत्रिकम् ।  
चूर्णमेषां क्षिपेत्तत्र प्रत्येकञ्च पलार्धकम् ॥ २६०१ ॥  
पट्यापाक इति ख्यातः कथितो भृगुणा पुरा ।  
जीर्णज्वरहरः सद्यस्तुष्टिपुष्टिबलप्रदः ॥ २६०२ ॥

रसक्रोपे ग्रहण्याञ्च क्षीणे धातौ च निःसृता ।  
गुदामये श्वासकासे वातरक्ते हितो मतः ॥ २६०३ ॥  
वै. वि., जीर्णज्वरादौ ।

भाषा—दशमूल २ प्रस्थ, जब १॥ प्रस्थ, गठिन, चित्रक, भारती, दण्डाह्वली, कचूर, वला, सोट, अपामार्ग, नागरमोथा, पोद्वरमूल और गजपीपल १-१ पल लेकर जवुष्ट चूर्णकर दोद्रोणजलमें डालकर १ प्रस्थ पकीहुई हूरं डालकर ढाकरो । अष्टमांशवशेष रहनेपर उतारले । इसमेंसे हरीको निकालकर अलग पीसले और काठेको छानकर ३ प्रस्थ शुद्ध, गोघृत ५ पल डालकर हरेकाक्क मिलाय पकावे । चाशनी तयार होनेपर जायफल, केशर, चातुर्जात, मांवेले, अजवाइन, बड़ेडा, जाविनी, ताम्र और लोहभस्म, त्रिदुध २-२ कर्पका बारीकचूर्णकर चाशनीमें डालकर उतारले । इसमेंसे आपेठोलेसे १ तोलेतक औषधितो देखकर उचितानुपातकेसाधवेनेसे जीर्णज्वर, रसप्रकोप, ग्रहणी, धातुक्षीणता, धातुलाव, शुद्धरोग, श्वास, कास, वातरक्त इतसबको यह नष्टकरताहे ॥ ६११ ॥

### ६१२ हरीतकीलेहः

हरीतकी र्यवकायद्वयाढके विशर्शति पचेत् ।  
स्थिन्ना मृदित्वा तास्तस्मिन् पुराणगुडपट्टपलम् २६०४  
दयानमनःशिलाकर्प कर्पाङ्गेञ्च रसाञ्जनम् ।  
कुडवाङ्गञ्च पिप्पल्याः सलेहः श्वासकासनुत् २६०५  
च. सं., कासाधिकारे ।

भाषा—जाठ आढक्यामीमें दोप्रस्थ जवडालकर पकावे । दो आढक बाकीरहनेपर छानकर २० मोटीहरीको डालकर पकावे । एकदम पकजानेपर हरीको मसलकर कपड़ेमेंसे छानदे फिर इसमें पुराणागुड ६ पल, शुद्ध मैनसिल १ कर्प, रसौत ८ माशे, पीपल २ पल डालकर अवलेह तयारकरे । इसमेंसे ३ से ६ माशेतक समयोचितानुपातकेसाध लेनेसे श्वास और कास नष्टहोतेहे ॥ ६१२ ॥

### ६१३ हरीतक्यादिवटी

हरीतकी वचा कुष्ठे पिप्पली मरिचानि च ।  
विमीतरुफलत्वक्च शङ्खनाभि मर्नःशिला ॥ २६०६ ॥  
लोभ्रं करञ्जवीजञ्च रजनी रक्तचन्दनम् ।  
कनकं सावरं शृङ्गी चित्रिणीवीजसूतकम् ॥ २६०७ ॥  
रसाञ्जनं गन्धकञ्च श्वेतसौवीरकस्तथा ।  
एतानि समभागानि विशुद्धञ्च महाविषम् ॥ २६०८ ॥  
पिष्ट्वा रक्तार्जुनीधूने वल्लमात्रा रुता वटी ।  
रुताविस्फोटकञ्च जालगर्दभमेव च ॥  
गलगण्डं वण्णैश्च गण्डमालादिनाशिनी ॥ २६०९ ॥

शुर्वम्लपिष्टाचकिलाटसूक-

दध्यारनालेभुविकारजानि ।

भोज्यानि सर्वाणि कफावहानि

विषजयेद्देहं गलगण्डरोगी ॥ २६१० ॥

ना. वि., यलगण्डे ।

भाषा—हैं, वच, कुठ, पीपल, मरिच, बहेड़ा, देशीलोष, करखेकीज, हल्दी, लालचन्दन, शङ्खनाभि, मैमसिल, सुवर्ण, पारा, सफेदसुरमा इन पाचोंकीभस्ममें, पयनीलोष, कारुङ्गासीगी, इमलीकेरीजोंकीमज्जा, रसौत, शुद्ध गन्धक और बलनाभ सम भागलेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय लाग्यायेमूनमें १-२ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोळियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगो चितानुपानकेसाथदेनेसे मरुझीकाविष, विस्फोट, जाल्मर्दन, गलगण्ड, घ्न, गण्डमाला इत्यादिरोगोंको यह नष्टकरतीहै । गण्डमाला वगैरहमें मूनमें पीसकर ऊपर लेपनी करना । भारी, अम्ल, पिडीकीवस्तुए, मावा, सिरका, दही, काजी, मिर्दाई और बकनारक समस्तवस्तुओंका गलगण्डरोगी पस्तिपागकरे ॥

### ६१४ हलीमककुलान्तकरसः

शुद्धसूताऽमृतं गन्धं हरितालं मनःशिला ।  
पतानि समभागानि खल्वमग्नये विनिक्षिपेत् ॥२६११॥  
वासाखदिरधनूरसेन परिभाययेत् ।  
प्रत्येकञ्च दिनं यामं घालुकायन्त्रके पचेत् ॥ २६१२ ॥  
स्वाङ्गशीतलमुद्रित्य पञ्चपित्तैश्च भाययेत् ।  
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यमनुपानं पिबेदनु ॥ २६१३ ॥  
त्रिफलं त्रिफला चैव लज्जालुगिरिकर्णिका ।  
अपामार्गश्च सुरसा निर्गुण्डी कर्ममानतः ॥ २६१४ ॥  
फाद्यध्याघ्रावशेषस्तु पीयमानो हलीमकम् ।  
नाशयेत्सर्वरोगांश्च कामलापाण्डुशोफजित् ॥ २६१५ ॥  
ब रा, पाण्डुरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, बलनाभ, गन्धक, हरिताल और मैमसिल समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर अहसा, खैर और धतूरेके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय धारावसम्पुटमें बन्दकर एकपहरकी बालुकायन्त्रमें अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पाचोंपित्तोंकी भावनाए देकर १-१ रत्तीकी गोळियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिफल, त्रिफला, लज्जातु, कोयल, अपामार्ग, तुलसी और निर्गुण्डी समभागका जवफुट चूर्ण बनाकर इसमेंसे १ तोलेके अष्टावशेषकायनेसाथ छेनेसे हलीमक, कामला, पाण्डु, शोथ ये सब नष्टहोतेहैं ॥ ६१४ ॥

### ६१५ हाटकगव्यरसः

रसकर्पाक्ष चत्वारो यशोर्ध्वं तावदेव तु ।  
शोधितं घृणितं कृत्वा उभे सत्वतले क्षिपेत् ॥२६१६॥  
द्वयोः सम्मेलनं कृत्वा मदीयेयामात्रकम् ।  
रसाद्दिगुणितं गन्धं रसाद्धं नरसारकम् ॥ २६१७ ॥  
सर्वेषां कज्जली कृत्वा मर्धं जम्भीरवारिणा ।  
दिनेन मर्दनं कृत्वा सम्यक् शुष्कं समाचरेत् ॥२६१८॥  
मृत्कर्पटप्रलिप्तायां काचकूप्यां विनिक्षिपेत् ।  
सिकतायन्त्रके पाच्यं क्रमाद्वाद्दशायामकम् ॥ २६१९ ॥

स्वाङ्गशीतलमुद्रित्य रसञ्जामीकप्रमम् ।  
गुञ्जाम्ब मधुना सार्धं लिहेत्प्रातः समुत्थितः ॥२६२०॥  
शर्करासंयुतं पेयं द्विकर्पञ्च गवां पयः ।  
फणिवह्निदलेनैव सर्वरोगप्रशान्तये ॥ २६२१ ॥  
एककालं द्विकालं वा सायं प्रातर्लिहेत्सुषुप्तिः ।  
घलवर्णकरं घृण्यं पुंसां पुंस्त्यविषवर्धनम् ॥ २६२२ ॥  
मेहत्वं पण्डदोषत्वं नाशयेन्नात्र संशयः ।  
क्षयं क्षयकृतं व्याधिं दीर्घवयं नाशयेत्क्षणात् ॥२६२३॥  
अनुपानविशेषेण सर्वरोगप्रशान्तिरुत् ।  
हाटकाख्यो रसो नाम सर्वत्र यिजयप्रदः ॥ २६२४ ॥  
वे. चि, ( स ), सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और जस्त ४-४ कर्प लेकर जस्तको घालाय पारेमें मिलाकर एकपहर शुष्कमर्दनकर ८ कर्प शुद्धगन्धक और २ कर्प बलसादर मिलाय नीलवर्णकजलीकर जमीरीके रससे एकदिन मर्दनकर सुखाकर ६-७ कपडमिडीवीहुई आतशीशीधीमें रख १२ पहरकी क्रमाग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर ऊपर उड़ेहुए रसको निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे आधीआधीरती मधुकेसाथ सुवहमें लेकर दोकयं शकरडालाहुआ दूधपीवे और ऊपरसे पान-खावे । इसकेसेवनसे बलवर्णाभाष, नपुसकत्व, प्रमेह, पण्डरोप, उषद्वयवहिन्यय, दुर्बलता येसब नष्टहोतेहैं ॥ ६१५ ॥

### ६१६ हाटकेश्वरीगुटिका

निष्कमेकं स्वर्णपत्रं त्रिनिष्कं शुद्धपारदम् ।  
जम्बीरदारपुहोत्थयद्रवै मर्धं दिनावधि ॥ २६२५ ॥  
तद्गोलं पन्थयेद्वले पचेद्गोक्षीरधूरिते ।  
दोलायन्त्रे दिवारानं गुटिका हाटकेश्वरी ॥ २६२६ ॥  
जायते धारिता धक्के अरामृत्युयिनाशिनी ।  
वर्षमानात्र सन्देहो दीर्घमायुरवाप्नुयात् ॥ २६२७ ॥  
दिनेन त्रिफलाचूर्णं वाप्येः पदिरवीजकैः ।  
भावितं मधुसर्पिर्ग्यां पलेकं ग्रामकं लिहेत् ॥ २६२८ ॥  
२ ख., १ सि, १ ख., जायतुनाछे ।

भाषा—सोनेकेबर्क ४ मासे, शुद्धपारा १२ मासे लेकर दोनोंको मिलाकर जमीरी और दापुद्रके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोली बनाय ४ तद्वहमें लपेट दोलायन्त्रसे दूधमें एक-दिनरात स्वेदनकरनेसे गोली कड़ीहोजायगी । इनको १ वर्षतक गुंभमें रखनेसे दीर्घायुहोतीहै । त्रिफलाचूर्णको सैनेयीचौके-कापसे १ दिन भावनादेकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ पत्र मधु और धीनेसाथ चाटनेसे रसका शरीरमें कामगदोदाहै ॥ ६१६ ॥

### ६१७ हिकान्तकरसः

हेममुकारकान्तानां भस्म यद्दमितं धरम् ।  
वीजपूररसशौद्रसौवर्णरसान्वितम् ॥ २६२९ ॥  
हन्ति हिकाशतं सत्यमेकमात्रा प्रयोगतः ।  
का कथा पञ्चहिकानां हरणे पुनरुच्यते ॥ २६३० ॥  
२ की, जो. २. २. च, २. सु, रसायन, २. ८ ख., हिकायात् ।

और लोहमस ८-८ भा., शुद्ध खपरिया और मैन्सिल २२-२३ भाग लेकर मकोयके रससे ३ दिन मर्दनकर काचकी शीशीमें डालकर जलमुद्रादेकर जलयन्त्रमें रख ८ दिनकी हवाग्री देवे । स्वाह्मशीतलोनेपर निकालकर उसकीबराबर शुद्धगन्धक और अष्टमांश नवसादर मिलाकर सिंही<sup>१</sup>, व्याघ्री<sup>२</sup>, मूषी<sup>३</sup>, हंसी<sup>४</sup>, चण्डी<sup>५</sup>, काली<sup>६</sup>, बेणिका<sup>७</sup>, ( ये सात औषधियें सङ्केतप्रधान नामोंसे लिखीहैं और योगकर्तानें उनका कोई विवरण नहीं दियाहै इसलिये यास अमुन्ही वस्तुएँदे यह कहना बहुतदुस्तरहै । परन्तु रसशास्त्रमें जिनसे कामलियाजाताहै उसहिंसासे सिंही=सफेदमटरकटैया, व्याघ्री=सफेदबनमादा, मूषी=हिरण्यवरी, हंसी=हंसारज, चण्डी=चण्डालिनीकन्द, काली=हीरवी, बेणिका=आकाशवेल इनका प्रहणकरना उचितहै । ) इनसेस्वारसोंसे ७-७ दिन मर्दनकर पूर्वोक्तप्रकारसे ८ दिनकी जलयन्त्रमें हवाग्रीदेवे । स्वाह्मशीतलोनेपर निकालकर गण और योगिनियोंकी पूजाकर रखछोड़े । यह सहस्रवैथी होताहै और जरामृत्युको दूरकरताहै । धातुबाद सङ्केतके अनुसार चन्द्र और सूर्य दोनों क्रियाएँ इससे सिद्धहोतीहैं । शरीरको कर्णोक्तप्रकारसे शुद्धकर इसमेंसे १ राईका दसवां हिस्सा एकान्तवटकीछायामें देवे और ३ दिनतक वहीं रखे । मूलखानेपर गोमुखदेवे । इसके ३ दिन सेवनकरनेसे क्लीपलिखेसे निर्युक्तफोहर जराजीर्णभी आदमी पुन. युवावस्थामें आजताहै इसका एकान्तमें सेवन करना चाहिये । गुल्म, रीहा, कवालीर, पाण्डू, कामला, श्वास, फास, राजयदम, क्षय, शूल, १८ प्रकारकेगुष्ठ, २० प्रमेह, समस्तज्वर, आघ्मान, दोष, प्रहणी, अतिसार, भग्नद्वर, पयरी, १३ सन्निपात, अस्थिशूल, शिरोरोग, स्वावर और ज्वरमक्षिप, इनसमको यह नष्टकरताहै । देह और लोह दोनोंमें सदाकाम करताहै । यहाकाली नामकवनस्पतिरेख्यानमें जो हीरवी लिखीहै वह कागानके पद्माङ्गमें होतीहै और जललीलोग इसीनामसे परिचितहै । इसकी छता दोफुटतकलम्बी होतीहै पत्ते गुड़मारके सदृशहोतेहैं आर नीचे तेलियारंगकाकन्दहोताहै तथा जहरीहै । यह पारोको हरतरह कायमकरती है ॥ ६१० ॥

### ६११ हरीतकीपाकः

प्रस्थमेकं शिथानाञ्च जलद्रोणे निघापयेत् ।  
हिप्रस्थं दशमूलञ्च सार्धप्रस्था यवाः स्मृताः २५९७  
ग्रन्थिके चित्रको भाङ्गी शङ्खपुष्पी शटी बला ।  
विश्यापामार्गमेधाश्च पुष्करं गजपिप्पली ॥ २५९८ ॥  
इमानि तत्र योज्यानि प्रत्येकञ्च पलं पलम् ।  
अष्टांशे निःश्रुते चैषां पथ्याः पिष्ट्वा पचेत्ततः २५९९  
गुडप्रस्थत्रयं योज्यं गोघृतं पलपञ्चकम् ।  
जातीफलं केशरञ्च चातुर्जातञ्च धात्रिका ॥ २६०० ॥  
दीप्याक्षी जातिपनी च ताभ्रं लोहं फट्टविकम् ।  
चूर्णमेषां क्षिपेत्तत्र प्रत्येकञ्च पलायर्धकम् ॥ २६०१ ॥  
पट्यापाक इति ख्यातः कथितो भृगुणा पुरा ।  
जीर्णज्वरहरः सद्यस्तुष्टिपुष्टिबलप्रदः ॥ २६०२ ॥

रसकोपे ग्रहण्याश्च क्षीणे धातौ च निःसृतौ ।  
गुदामये श्वासकासे वातरके हितो मतः ॥ २६०३ ॥  
वै. वि. , जीर्णज्वरादौ ।

भाषा—दशमूल २ प्रस्थ, जव १॥ प्रस्थ, गठिवन, चित्रक, माखरी, शङ्खाहली, कचूर, बला, सौंठ, अपामार्ग, नागरमोथा, पोद्दारमूल और गजपीपल १-१ पल लेकर जवकुट चूर्णकर दोद्रोणजलमें डालकर १ प्रस्थ पकीहुई हँई डालकर भायकर । अष्टमांशवशेष रहनेपर उतारले । इसमेंसे हरीको निकालकर अलग पीसले और काढ़ेको छानकर ३ प्रस्थ गुड़, गोघृत ५ पल डालकर हँईकाकन्द मिलाय पकावे । वातानी तैयार होनेपर जायफल, केशर, चातुर्जात, आंवले, अजवाइन, बहेड़ा, जाविनी, ताम्र और लोहमस, त्रिकटु २-२ कर्पका वारीकचूर्णकर चादानीमें डालकर उतारले । इसमेंसे आधेतोलेसे १ तोलतक औषिती देखकर उचितानुपानकेसायदेनेसे जीर्णज्वर, रसप्रकोप, प्रहणी, चातुर्धीणता, धातुसाव, गुदरोग, श्वास, फास, वातरक इनमको यह नष्टकरताहै ॥ ६११ ॥

### ६१२ हरीतकीलेहः

हरीतकी र्यक्कायद्वयादके विशर्ति पचेत् ।  
स्विच्चा मृदित्वा तास्तस्मिन् पुराणगुडपट्टपलम् २६०४  
दद्यान्मनःशिलाकर्प कर्पाक्षञ्च रसाञ्जनम् ।  
कुडवादेञ्च पिप्पल्याः सलेहः श्वासकासनुत् २६०५  
च. सं., कासाधिकारे ।

भाषा—आठ आठकपातीमें दोप्रस्थ जवडालकर पकावे । दो आठक शरीररहनेपर छानकर २० मोटीहरीको डालकर पकावे । एकदम पकजानेपर हरीको मसलकर कर्पमेंसे छानदे फिर इसमें पुराणगुड ६ पल, शुद्ध मैन्सिल १ कर्प, रसौत ८ मासे, पीपल २ पल डालकर अवलेह तैयारकरे । इसमेंसे ३ से ६ मासेतक समयोचितानुपानकेसाय लेनेसे श्वास और फास नष्टहोतेहैं ॥ ६१२ ॥

### ६१३ हरीतक्यादिवरी

हरीतकी वचा कुष्ठं पिप्पली भरिचानि च ।  
विभीतकफलत्वचश्च शङ्खानामि मनःशिला ॥ २६०६ ॥  
लोघ्रं करञ्जवीजञ्च रजनी रक्तचन्दनम् ।  
कनकं सावरं शृङ्गी विञ्जिणीवीजस्तकम् ॥ २६०७ ॥  
रसाञ्जनं गन्धकञ्च श्वेतसौवीरकन्तथा ।  
पतानि समभागानि विशुद्धञ्च महाविषम् ॥ २६०८ ॥  
पिष्ट्वा रसाञ्जुनीमूत्रे वल्लमात्रा कृता वटी ।  
कृताविस्तेटकञ्चैव जालगर्दममेव च ॥  
गलगण्डं व्रणञ्चैव गण्डमालादिनाशिनी ॥ २६०९ ॥  
गुर्वम्लपिष्टाश्रकविकारजानि ।  
दध्यारनालेक्षुविकारजानि ।  
भोज्यानि सर्वाणि कफावहानि  
विजर्जयेद् गलगण्डरोगी ॥ २६१० ॥  
ना. वि. , गलगण्डे ।

भाषा—हर्तः वच, कुठ, पीपल, मरिच, बहेड़ा, देशीलोष, करछकेबीज, हल्दी, लालचन्दन, शङ्खनाभि, मैनासिल, सुवर्ण, पारा, सफेदसुरमा इन पाचोंकीभस्में, पठनीलोष, काकड़ासींगी, इमलीकेनीजोंकीमज्जा, रसौत, शुद्ध गन्धक और बछनाग सम-भागलेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय खालगायकेमुत्रमें १-२ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिएं बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अवस्था रोगो-चितानुपानकेसाथदेनेसे मरुड़ीकाविष, विस्फोट, जालगर्दभ, गलगण्ड, प्रण, गण्डमाला इत्यादिरोगोंको यह नष्टकरतीहै । गण्डमाला वगैरहमें मुत्रमें पीसकर ऊपर लेपभी करना । भारी, अम्ल, पिष्टीकीवस्तुएं, मावा, सैराफा, दही, काष्ठी, मिठाई और कफकारक समस्तानुपानोंका गलगण्डरोगी परित्यागकरे ॥

### ६१४ हलीमककुलान्तकरसः

शुद्धसूताऽमृतं गन्धं हरितालं मनःशिला ।  
पतानि समभागानि खल्वमप्ये विनिक्षिपेत् ॥२६११॥  
वासाखदिरधसूरसेन परिभाषयेत् ।  
प्रत्येकञ्च दिनं धामं धालुकायन्त्रके पचेत् ॥ २६१२ ॥  
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य पञ्चपित्तैश्च भाजयेत् ।  
गुज्जामानं प्रदातव्यमनुपानं पिबेदनु ॥ २६१३ ॥  
त्रिकटु त्रिफला चैव लज्जालुगिरिकर्णिका ।  
अपामार्गश्च सुरस्ता निर्गुण्डा कर्ममानतः ॥ २६१४ ॥  
कायध्याष्टायशेषस्तु पीयमानो हलीमकम् ।  
नाशयेत्सर्वरोगांश्च कामलापाण्डुशोफजित् ॥ २६१५ ॥  
व. रा. पाण्डुरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग, गन्धक, हरिताल और मैनासिल समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर अड़सा, खैर और धतूरेके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय धारावतम्पुटमें बन्दकर एकपहरकी धालुकायन्त्रमें अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पाचोंपित्तोंकी भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी गोलिएं बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिकटु, त्रिफला, लज्जालु, कोयल, अपामार्ग, तुलसी और निर्गुण्डा समभागका जवट्ट चूर्ण बनाकर इसमेंसे १ तोलेके अष्टावशेषकायनेसाथ लेनेसे हलीमक, कामला, पाण्डु, गोघ ये सब नष्टहोतेहैं ॥ ६१४ ॥

### ६१५ हाटकाग्यरसः

रसकर्पाक्ष चत्वारो यशोदं तावदेव ह ॥  
शोधितं घृणितं श्लेष्मा उभे सत्यतले क्षिपेत् ॥२६१६॥  
द्वयोः सम्मेलनं श्लेष्मा मर्दयेयाममात्रकम् ।  
रसाहिगुणितं गन्धं रसाङ्गं नरसारकम् ॥ २६१७ ॥  
सर्वेषां कज्जलीं श्लेष्मा मयं जम्बीरयारिणा ।  
दिनैकं मर्दनं श्लेष्मा सम्यक् शुष्कं समाचरेत् ॥२६१८॥  
मृत्कर्पटप्रलिप्तायां काचपूष्यां विनिक्षिपेत् ।  
सिक्तायग्रके पाच्यं वमाम्हात्रशायामकम् ॥ २६१९ ॥

स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य रसञ्चामीकरप्रमम् ।  
गुज्जाम्दं मधुना सार्धं लिहेत्प्रातः समुत्थितः ॥२६२०॥  
शर्करासंयुतं पेयं द्विरुपैश्च गवां पयः ।  
फणिवह्निदलेनैव सर्वरोगप्रशान्तये ॥ २६२१ ॥  
एककालं द्विकालं वा सायं प्रातर्लिहेत्सुषोः ।  
यत्नपूर्णं चूर्णं पुंसां पुंस्त्वविषर्धनम् ॥ २६२२ ॥  
मेहत्वं पण्डदोषत्वं नाशयेन्नान संशयः ।  
क्षयं क्षयकृतं व्याधिं दीर्घत्वं नाशयेत्क्षणात् ॥२६२३॥  
अनुपानविशेषेण सर्वरोगप्रशान्तिदत् ।  
हाटकाग्यो रसो नाम सर्वत्र विजयप्रदः ॥ २६२४ ॥  
वे. चि. ( ल ), सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और जस्त ४-४ कर्प लेकर जस्तको मलय पारमें मिलाकर एकपहर शुष्कमर्दनकर ८ कर्प शुद्धगन्धक और २ कर्प नवसादर मिलाय नीलवर्णकजलीकर जम्बीरीके रससे एकदिन मर्दनकर सुखाकर ६-७ कपड़मिश्रीदीहुई भातशीशीमीमें रख १२ पहरकी ब्रह्माग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर ऊपर उठेहुए रसको निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे आधीआधीरत्ती मधुकेसाथ सुबहमें लेकर शोकर्य शर्कराजालहूमा दूधपीये और ऊपरसे पान-खावे । इसकेसेवनसे बलवर्णभाव, नपुसकत्व, प्रमेह, पण्डदोष, उपद्रवसहितक्षय, दुर्बलता येसब नष्टहोतेहैं ॥ ६१५ ॥

### ६१६ हाटकेवरीगुटिका

निष्कमेकं स्वर्णपत्रं त्रिनिष्कं शुद्धपारदम् ।  
जम्बीरप्राप्तुहोत्यग्रये मयं दिनपथि ॥ २६२५ ॥  
तद्गोलं बन्धयेद्वले पथेद्रोक्षीरपरिते ।  
दोलायन्त्रे दिवारात्रं गुटिका हाटकेवरी ॥ २६२६ ॥  
आयते धारिता यत्र जरासृत्सुनिशिनी ।  
वर्षमात्राश्च सन्देहो दीर्घमायुरवाप्नुयात् ॥ २६२७ ॥  
दिनेकं त्रिफलापूर्णं कापैः रदिर्याजकैः ।  
भाषितं मधुसर्पिर्भ्यां पलेकं कामकं लिहेत् ॥ २६२८ ॥  
२ ख., २ सि. २ ख., जरासृत्सुनायने ।

भाषा—सोनेकेवर्क ४ माते, शुद्धपारा १२ माते लेकर दोनोंको मिलाकर जम्बीरी और पारपुहके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोली बनाय ४ तहकनेमें स्पेट दोलायन्त्रसे दूधमें एक-दिनात स्वेदनकरनेसे गोली कड़ीदोत्रायणी । इसको १ वर्षतक सुंदर रखनेसे दीर्घायुहोतीहै । त्रिफलाकेपूर्णको खीरेकीजके-कापसे १ दिन भावनादेकर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ पत्र मधु और पीनेसाथ चाटनेसे रम्य सतीरमें कामगहोतीहै ॥ ६१६ ॥

### ६१७ हिकान्तकरसः

हेममुक्तकैकान्तानां मस्रं यत्नमितं धरम् ।  
बीजपूररससौद्रोषीयचलरसान्वितम् ॥ २६२९ ॥  
हन्ति हिकाशतं सत्यमेकमात्रा प्रयोगतः ।  
का कथा पञ्चहिकानां हरणे पुनरप्यन्ते ॥ २६३० ॥  
र की, यो. र. र. च, र. शु. रसादनम्, र. र. र. र. र. र.

भाषा—सुवर्ण, मोती, ताघ, कान्तलोह इनकीमर्सें सम-  
भाग मिलाकर रखोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती बिजोकेरस, मधु  
और सज्जलेसाय लेनेसे एकदोमात्रासे सबतरहकी हिचकी  
दूरहोतीहै ॥ ६१७ ॥

### ६१८ हिक्कानाशनरसः

रसगन्धकधान्याम्रतालनाप्योपलं क्रमात् ।  
भागवृद्धं यचाकुप्रहरिद्राक्षारचित्रकेः ॥ २६३१ ॥  
सपाठालाङ्गलीव्योपसैन्धवाक्षविषैः समम् ।  
भावितं भृङ्गनीरेण हिक्कास्यैकासनुत् ॥ २६३२ ॥  
र. र. स., र. चं, हिक्कायाम् ।

हि०—उपलं शब्देन गोदन्ती ग्राह्य । रसरत्नमसुषये पंथी नाम तु  
ममाद्रास्यभातम् ।

भाषा—शुद्ध पाठा १ भाग, गन्धक २ भा, धान्याम्रक-  
भस्म ३ भा, हरिताल ४ भा, सोनामाखी ५ भा, गोदन्ती  
६ भा., वच, कुठ, हल्दी, यवक्षार, चित्रक, पाठा, करिहारी,  
त्रिफळ, सैन्धव, बहेड़े, शुद्धबधनाग येसब १-१ मागलेकर  
बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय मंगरेके-  
ससे २-३ दिन घोटकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाधनेसे हिचकी,  
स्वरमन्न और कास इनको यह नष्टकरताहै ॥ ६१८ ॥

### ६१९ हिङ्गुलादिगुटिका ( प्रथमा )

हिङ्गुलं दङ्गुणं नागं मरिचं मृतरौप्यकम् ।  
पत्रतोयेन सम्मर्द्य मुद्रमाना कृता वटी ॥ २६३३ ॥  
कासे श्वासे कफे शीते शीताङ्गन्यरसहके ।  
मन्दाग्नौ शुचमवाते च प्रदास्ता गुटिकोत्तमा ॥ २६३४ ॥  
रसायनसं, अमिमान्ये ।

भाषा—शुद्ध किण्ठिक, सुहाग, नाग और रजतभस्म,  
मरिच, छब समभागलेकर पानकेरससे मर्दनकर मूंगबराबर गोलियें  
बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अवका रोगो-  
चितानुपानकेसाधनेसे काश, श्वास, कफ, शीत, शीताङ्गन्यर,  
मन्दाग्नि, गुल्म, वातरोग इनको यह नष्टकरतीहै ॥ ६१९ ॥

### ६२० हिङ्गुलादिगुटिका ( द्वितीया )

हिङ्गुलं शैकमागञ्च द्विभागा जातिपत्रिका ।  
त्रिभागा धृतेवीजाश्च चत्वारः श्वेतमात्रिकाः ॥ २६३५ ॥  
पञ्चभागोऽहिफेन. स्वारङ्गद्विभागश्चाजमोदकम् ।  
पतत्समाना गान्धारी ब्योचतोयेन मर्दयेत् ।  
घण्टमात्रप्रमाणेन स्तम्भनं याममात्रकम् ॥ २६३६ ॥  
रसायनं वाजीकरणे ।

हि०—सप्तपत्राश्रय ॥ हि० निम्बवर्णने भेद्यमिचरवर्णने जातिम  
स्वर्दे निम्बेय निम्बुद्वेय भावनां पित्रवातिनार रसमन्त्रणा हिङ्गु-  
लारिगुणेना जातिप वटी निदिनीयि । कर्मवैय जातिमन्त्र निम्बो-  
ज्ज्दनिदोय वा एक एव पत्र कटिषि कट्टये गौरवार । अर्ज-  
पदावरवर्णनां निम्बुद्वेय रनेन ररिचिहै ।

भाषा—शुद्ध किण्ठिक, जावित्री, धतूरेकेबीज, सफेदमरिच,  
अफीम और अजमोद कमरुद्रभागसे लेकर सक्की बराबर भुजी-  
हॉममिलाय तजके काखसे मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर  
रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली रतिसमयसे १ घण्टे पहिले  
मलाईबगैरहकेसाय लेनेसे १ पहरका स्तम्भनहोताहै ॥ ६२० ॥

### ६२१ हिङ्गुलादिगुटिका ( तृतीया )

हिङ्गुलजातीफलजातिपत्रिका-

गोरोचनामि जयपालकं समम् ।

विभाव्य निम्बकरसैः कृता गुटी-

रौत्फुल्लिके बालग्रेद गदन्ति ॥ २६३७ ॥

सि. भे. म., बालरोगे ।

भाषा—शुद्धकिण्ठिक, जायफल, जावित्री, गोरोचन, सब-  
समभाग लेकर सबकीबराबर शुद्ध जमालगोटा मिलाय नींदूरे-  
रससे १-२ दिन मर्दनकर मूंगबराबर गोलियें बनाकर रखोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाधनेसे यह बर्बाके  
शोष और जलोदरको दूरकरतीहै ॥ ६२१ ॥

### ६२२ हिङ्गुलादिगुटिका ( चतुर्थी )

हिङ्गुलं देवगुणञ्च नागफेनं सितायुतम् ।

सशूलं सप्रवाहञ्च प्रहणीं हन्ति दुस्तराम् ॥ २६३८ ॥

रसस, प्रहण्याम् ।

भाषा—शुद्ध किण्ठिक, लौंग, अफीम और शकर समभाग  
मिलाकर रखोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती समयोचितानुपानके-  
साधनेसे शूल और अवाहिकायुक्त दुस्तरमहगोरोगनष्टहोताहै ॥

### ६२३ हिङ्गुलादिगुटिका ( पञ्चमी )

हिङ्गुलं जातिनोपञ्च नागफेनं सङ्गुहम् ।

नागवह्नीदलरसे बंटी मुद्रसमा कृता ॥ २६३९ ॥

अतिसारं निहन्त्याशु योगोऽयं मिद्धमापितः ।

नाशयेद्बह्णीरोगं हिङ्गुलादिवटी वरा ॥ २६४० ॥

र सि, प्रहणीरोगे ।

भाषा—शुद्धकिण्ठिक, जायफल, अफीम और केशर सम  
भागलेकर बारीकचूर्णकर पानकेरससे मर्दनकर मूंगबराबर गोलियें  
बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानके-  
साधनेसे यह प्रहणीरोगको नष्टकरतीहै ॥ ६२३ ॥

### ६२४ हिङ्गुलादियोगः

हिङ्गुलं कर्ममात्रं स्यान्माष मज्जिततुल्यतः ।

साधर्म्याग्लवङ्गन्तु जम्भनीरेण मर्दयेत् ॥ २६४१ ॥

विशाय शुष्कं तत्पञ्चाश्रयनीतेन मर्दयेत् ।

ताम्बूलेन सदाश्रीयादीषथं गुञ्जमात्रकम् ॥ २६४२ ॥

पथ्यं साधारणं कार्यं पञ्चसप्तदिनापथि ।

उपद्रवं प्रतिमेहं तदुप्यं शूलमण्डले ॥

ग्रथं तालुनि सञ्जातं हन्यादेतद्विपजितम् ॥ २६४३ ॥

रसायनं, वनस्प ।

माया—शुद्धातिगिरिक १ वरं, भुजा वृत्तिया १ माया, लीग १॥ माया, लेकर बारीकपूर्णकर जंभीरीकरसमे एकदिन मंदनकर गुलाकर मस्तानमे मोटकर रखाछोके । इसमेंसे १-१ रसी पानकेसाय ५ या ७ दिनवक्त्यानेमे उपदंष्ट, बेदनासहित-गुजाक, तात्मे जायमानप्रग इनमुखको यह नटकरताहै । इसमें पच्य साधारणरसमे ॥ ६२४ ॥

### ६२५ हिङ्गुलेश्वररसः ( प्रथमः )

तुल्यांशं मर्दयेत्तस्ये पिप्पलीं दिङ्गुलं विषम् ।

क्रिगुञ्जा मधुना देया पातज्वरनिवृत्तये ॥ २६४७ ॥

र. सी., वि. र. भा., र. गु., मे. र., रसायन., र. वि., र. मं., र. क., ध., र. का., र. चं., दो., र. को., यो. म., वै. वि., र. क. ल., र. त., र. र. को., र. क. को., र. पा., गालम्बर ।

रि०—वैषमिनामयो निष्पन्नादिपूर्णमिति नाम्ना रचायितम् । रसपारिजाते जम्बीरप्रमाणना बरिचलाया हरणे, अनुमाने निगो-मानुमाने विदितम् नाम य जीर्णकरहर इति रचायितम्, दिङ्गु-स्थाने वानभञ्जनेति नाम रचायित्विनि नामभेदेन द्वौ पादौ हस्तेन । रसपञ्चगुणोद्गमरसमरसपरीति बालभर हिङ्गुलेश्वर, अरतिगिरि य मृत्तर्जुनीरुति नाम इति कृत्वा पादद्वय रसमे, रसायनौषधकेनेति मृत्तर्जुनीरुति नाम रचायितम् पच्यगमिषानुमूलकमेवास्ति ॥

माया—गीत, शुद्ध विगिरिक और बटनाग समभाग-लेकर बारीकपूर्णकर रखाछोके । इसमेंसे १-१ रसी मधुकेसाय-देनेमे यह पातज्वरको नटकरताहै ॥ ६२५ ॥

### ६२६ हिङ्गुलेश्वररसः ( द्वितीयः )

कर्पूकैः समदाय शुद्धहिङ्गुलमन्थयोः ।

मायद्वये जीर्णतार्त्रं त्वयमेकत्र मर्दयेत् ॥ २६४८ ॥

शिलायां शिलया धामं शास्मलीयत्त्वमायितम् ।

शुभाद्रयां पर्यं कुप्याम्रयत्नेन मियग्यरः ॥ २६४९ ॥

सम्मर्षं मधुना सादेदतिमारनिर्पादितः ।

प्रहणीरोगसद्वहनः सद्बहप्रहणीयुतः ॥ २६५० ॥

प्रयादिकाहृत्ततनुस्तिमान्वादिसम्पुतः ।

धान्यजीरकजं क्षायमनुपाने प्रयोक्तव्येन ॥

हिङ्गुलेश्वरनामाऽयं रसः सर्वरोगक्षयः ॥ २६५१ ॥

र. गु., प्रहणीयेन ।

माया—शुद्धातिगिरिक और कण्ठ १-१ वरं, तापभग १ मासेलेकर मेमनकरारसमे १ पर मंदनकर १-१ रसोकी-मोतिमे बनावरखाछोके । इसमेंसे १-१ गोली मधुमे मिला-करमेमेम मदी, गालपदनी, प्रयादिका, मन्दागि इनमुखको यह नटकरताहै । पचिके और जीरक-उप अनुमानमे मिलावे ॥

### ६२७ हिङ्गुलादियोगः

हिङ्गुगोमैद्वयोरुत्तुवौ श्राविषं गोशुक्रम ।

पलायुत्तरकृष्णयाः पराभाणमेद्वयम् ॥ २६५२ ॥

तत्रेण क्षयिमण्डेन रीतं कान्तरमेन वा ।

मृत्तर्जुनः कृमिगमेदं हृन्तुं ताश्च व्यपरोहति ॥ २६५३ ॥

अ. वं., रसोत्पादितः ।

माया—मुनीहोम, मोमेद, दिङ्गु, इड, क्रीमहीररी, गोस्य, इलायची, कुझाहीछत, बच, गंधे और पोदेहीतीद, पायागमेद सब समभाग लेकर बारीकपूर्णकर रखाछोके । इस-मेंसे ३-३ मासे छाछ, हरीकैतोड अथवा बेरबेसायकेसाय देनेसे मृत्तर्जुन, कृमि, प्रमेह और हृन्ताको यह नटकरताहै ॥

### ६२८ हितमभावटिका

पय्याचनुजांतकरुणकाहि-

ष्योगाम्मुदामोदरसाग्निनामैः ।

मुदेन पक्के मुटिका विमृष्टा

हितप्रभात्या दृढपाण्डुहृन्ती ॥ २६५४ ॥

व्यप्यर्द्धकदादाहृत्तं करिकण्येकपालिकाः ।

मायाः प्रत्येकदां शेया मेघजानामिदं त्रामात् ॥ २६५५ ॥

र. (मा.), पाण्डुयेन ।

माया—हरे ३ भाग, पात्रुशत ४ भा., रेणुका ३ भा., विरगसूत १ भा., विट् १ भा., वागसोपा ३ भा., शुद्ध-कण्ठ २ भा., पारा १ भा., विट् ३ भा. और शुद्धक-नाग १ भागलेकर बारीकपूर्णकर पागेण्डुहृत्ती नीलकण्ठजनीमे मिलाय समभागमुटिकावातनीमे बालकर १-१ मासेकी मोमिये बनावर रखाछोके । इसमेंसे १-१ गोली रोगोपिषानुपानकेसाय-लेनेमे भयहर पाण्डुशेखरको यह नटकरताहै ॥ ६२८ ॥

### ६२९ हिममूर्च्छनरसः

रसीमप्यविशोमिषपिहितं सताहमर्कं स्थितं,  
शरीरं शम्यत्प्रहृष्टयाममनिदो शुल्लयग्निना पाचयेत् ।  
निन्दोऽयं हिममूर्च्छनो रस इति प्रसूयते पण्डितैः,  
द्वैतमण्डलमानतः शमयतो यत्नाज्यरं ज्वालयेत् ॥  
वि. मे. म., गतपिहितः ।

माया—गुलाहीरमे वट्टा औरहर गोमली कनीको रस आकडेपुसके मरेके अच्छीपर शुद्धकर शुद्धेतरा ४ परकी-अमिदेवे । रसायनीकशेखर मिश्रनकर रखाछोके । इसमेंसे १-१ काला रसिगुलवकेसाय देनेमे यह निवृत्त्यमर्क-ज्वरको नटकरताहै ॥ ६२९ ॥

### ६३० हिमांशुरसः

रसरूप कर्मादाय श्वत्से निशित्य कुजिमान् ।  
रसागम्यपुत्रगुलस्य स्वरगेन विमर्दयेत् ॥ २६५६ ॥  
समपारं तथा साधु भवेदधोपानेन वा ।  
निषज्यं दृढमज्ज कर्तुं सादिरस्यारः ॥ २६५७ ॥  
कर्तुं रसमुत्पन्नं शर्पमेकत्र मर्दयेत् ।  
साधयिज्जन्तां यानि युक्त्या चमून्ववापिना ॥ २६५८ ॥  
हृन्नुमाशान्दवर्ज्युपायां परिशोषितान् ।  
प्रातः प्रातश्च मेघेन मण्यादे च विनोयतः ॥ २६५९ ॥  
नितापाश्च विनोयेन मेघनीयः प्रपततः ।  
एतन्नि मेरुनृपं मुग्धशेखरं परम् ॥ २६६० ॥



सोमरोगहरं सर्षपिडिकानाशनं मतम् ।

हिमांशुनामतः स्यात् तृष्णमाहनिवारकम् ॥ २६५९ ॥

र. च., र. र. स., र. को., र. क., र. र. कौ., प्रमेहे । र. को. रसादिगुटीतिनाम ।

भाषा—एककर्म शुद्धपरोको रसलेमं डालकर लालअमस्त्यके फूल और सफेददूधवेरसोंसे ७-८ बार मर्दनकर सुहागा ८ भागो, खैरसार और कपूर १-१ षप मिलकर चन्दनकेरक्तसे घोटकर चनेप्रमाण गोसियेवनाकर छायाशुष्कर ररजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली प्रतिदिन तीनोंसमय समयोचिताशुषणकेसाय-लेनेसे प्रमेह, मुणघोष, सोमरोग, पिडिका, तृष्णा और दाहको यह नष्टकरताहै ॥ ६३० ॥

६३१ हिरण्यगर्भपट्टली ( चालाशिकुमारः ) ?

उच्चवर्णसुवर्णस्य द्राव्या गद्याणका दश ।

तेषां सहमाणि पत्राणि कुर्यादेकाहुलानि च ॥ २६६० ॥

याचन्मानानि पत्राणि तनुल्यः शुद्धपारदः ।

मिश्रं विंशतिगद्याणं निम्बुकस्य रसेन च ॥ २६६१ ॥

तप्तपल्वे हृदं मर्चं यामयुग्माद्विशुष्यति ।

शुष्के शुष्के रसं दद्यात्पेप्या पिष्टि दिनाष्टरुम् ॥ २६६२ ॥

आराला क्षिपेत्स्थाल्यां खण्डे निम्बुकजैः समम् ।

शिमूषुक्षस्य पत्रैश्च तत्क्षणादोः समाहतेः ॥ २६६३ ॥

घटितं श्रृण्कां कुर्यात्तत्रैवं हेमपिष्टिकाम् ।

क्षित्वा घनं समाच्छाद्य कृत्वा वर्तुलगोलरुम् २६६४ ॥

दोलापन्ने ततः स्थाल्यां चिन्त्यसेद्वत्त्रयेष्टितम् ।

इत्थमष्टदिनं स्वेद्यं याचन्नदस्यति काञ्चिकम् ॥ २६६५ ॥

चणकाख्ययद्वाथ मृदुपत्राणि घटयेत् ।

तत्पिण्डं प्रक्षिपेद्दिमानपककुहटिकान्तरे ॥ २६६६ ॥

विष्णुकान्ताजटानाञ्च श्रीरण्डस्य च सारकम् ।

पिण्डसोपरि मुस्ताप्य श्रीरण्डोपरि पिष्टिकाम् ॥

श्रीरण्डञ्च पुनर्दद्यात्पिण्डं यादरकं पुनः ।

घ्नने सूचीमुत्तच्छिद्रं मृदीपं कारयेद्द्वयः ॥ २६६८ ॥

अधोऽन्धश्च तदेवं पिपात्रं कुम्भिकोपरि ।

रूपं कुम्भिकां क्षित्वा घटितं पत्रमुत्तल्या ॥ २६६९ ॥

वारम्बारं पुष्टं तत्र दद्याच्छगणपञ्चकेः ।

यद्याः पत्रं पिण्डार्घ्यं न्येने न्येने मुहु विधिः ॥ २६७० ॥

एकविंशतिपात्रं युक्त्या दद्यात्पुटानि च ।

स्वेदस्य विधिनाऽनेन रट्टिकासंनिधौ भवेत् ॥ २६७१ ॥

भूमौ पिष्टेयिता रेखा श्वेता निःसरति स्फुटा ।

क्षित्वा तद्गुहं यन्त्रे चतुर्भिस्छाणकैः पुष्टे ॥ २६७२ ॥

प्रदद्यात्स्याद्दशीतिऽप्य युक्त्येत्वं पुष्टपञ्चकम् ।

पञ्चभिस्छाणकैः पञ्च पञ्च पञ्चिष्ठ छाणकैः ॥ २६७३ ॥

छाणकैः सप्तभिः पञ्च त्वष्टभिः पञ्चगोमयैः ।

एवं पञ्चपुटप्रान्ते छाणकैः विप्रधेयेत् ॥ २६७४ ॥

एकपुटपादिकं देयं याचपुटप्रान्तं भवेत् ।

छाणकानि च पञ्चाष्टानानिह चतुर्दश ॥ २६७५ ॥

गणितानि भवन्त्येव दत्ते शतपुटे ध्रुवम् ।

पीडशांशविभागेन पिष्टयद्यस्तापुनः पुनः ॥ २६७६ ॥

पद्भुणो जीर्यते यावदातव्यः शुद्धगन्धकः ।

एवं पुष्टशते दत्ते लाक्षासिन्दूरसन्निभः ॥ २६७७ ॥

जपाकुसुमसङ्काश उद्यदर्कसमप्रभः ।

अतीवारुणतां प्राप्तं कृपिकायां विनिक्षिपेत् ॥ २६७८ ॥

सिद्धो हिरण्यगर्भोऽभूत्तज्जैः प्रोक्तः पुरा रसः ।

विधिना रक्तकामेकां ताम्बूलेन च भक्षयेत् ॥ २६७९ ॥

विंशतां च प्रमेहेषु ज्वरेषु विविधेषु च ।

अतीसारेषु सर्वेषु शूलेऽर्जाणं च दुस्तरे ॥ २६८० ॥

कामलायां पाण्डुरोगे हलीमकगदेष्वपि ।

अशीतिवातरोगेषु जीर्णदेहेषु दीयते ॥ २६८१ ॥

सम्प्रागं परिहाय देवो वीचेन रोगिणु ।

क्रमाद्रोगा विलीयन्ते प्रत्यहं सेविते रसे ॥

देहकान्तिः सुवर्णाभा प्रत्यहं जायतेऽधिका ॥ २६८२ ॥

रसचि., र. कं ली., रसायने ।

टि०—रसमारसश्चैरे माणिक्यचन्द्रीवरसावतोर च अष्टिकुमार नाम्ना “यत् सुवर्णं दहनोदकेन विधाय पिष्टि तु पयोघ्नेषु । गन्धाम तैले विपचेत्विषयश्च शास्त्रमिदोऽभिकुमारनामा ॥ दद्यात्सु सर्वकुमार काणा व्योषेण गुप्ता मधुना घृतेन । दन्तातिसारप्रमेहोन्मरीष इवा बलास कुल्लेऽपिशुद्धिः ॥” इति पाठो निश्चिदोऽस्ति तस्याऽत्रैवान्तर्भावः, कारणीय., विशेषगुणदर्शनात् । गन्धामरदहनोदकपयोघ्नगन्धकोऽेषु च प्रथमन रसयोगादयो स्वेदन विधाय रमरङ्गालीमोक्तं बर्तना रसे निष्पादितेऽप्याहणवीर्यता निश्चिनाऽरिण अतस्त्वास्तमभाव कारणीय एव । दहनोदकपयोघ्नगन्धामरदहनोदकमन्तरापि शुणहानि न भविष्यत्वेव । रमरङ्गालीयप्रतिपद्या पारदेऽतिशययुक्तपानानात् ।

भाषा—उत्तमधुवर्णकेवर्क और शुद्धपारा ५-५ तोले लेकर १-२ पहर मर्दनकर तप्तपल्वमें डाल नीचूकेरमसे दोपहर मर्दन करे । सुखनेपर फिर रसजले । इसतरह ८ दिनतक मर्दनकर मन्वूत हज्जीमें पकेनीबुओंकेदुकरे और काञ्चीभरके कण्ठे सहजिके ताने पत्तोंको पीसकर दो सूया बनाय उठमें पिठिकाहो ररा काञ्चीवाली हज्जीमें दोलाघत्र बनाय ८ दिनतक स्वेदकरे । काञ्चीसुपनेपर दूसरी डालनाजाय । इसगततर ध्यान रहे कि उफान आकर पोहलोको रूपो न करे । आठवें दिन आच कड़ी करदे और काञ्चीका डालना बन्द करदे जिसमें कि नीचू और काञ्ची जलनाय । स्वाहशीतलहोनेपर एक बम्बूकण्ठीमें शरबरेके कोमलपत्तोंका छुगदा रखकर कोयलरी जड़ और चन्दनके हीरका छुगदा ममसे रसाद । फिर बन्दनके छुगदे पर पिठिको रख चन्दनके हीरके छुगदेसे दडकर सारवरेके पत्तोंका छुगदा रसादे । इसनेमें सुई जानेलायक बारीक छन्दर हज्जीपर लज्जा रख २-२ काण्ठमिठी देकर एक सारदेमें दूसरी रखदे और पांचछण्ठोंके दुकराँसे हंडीको दडकर आंच लगादे । स्वाहशीतलहोनेपर निहालकर पूर्व्वपर पिठिको हंडीमें रसादे । परन्तु प्रथमही अपेक्षा बेरके कल्परप्रथति वस्तु थोड़े थोड़े बन करताजाय । इसउरह २१ पुष्ट देकर परीनिमीनपर इसही रेखा

खीचे तो राक्षसामित्रीके सन्त रसा निकलेगी । इसको मूष-  
यन्त्रमें रस ४ कण्डोंकी आंचदे । ऐसे ५ पुट देनेके बाद ५-५  
कण्डोंके ५ पुट देवे । पाचपुटोंके बाद १-१ कण्डा बघाता  
जाय । ऐसे २३ कण्डोंतक बघाकर १०० पुट देवे । प्रत्येक  
पुटमें पिठोंके नीचे ऊपर पोडसात ( ७॥ माघे ) गन्धक देकर  
घारावस्तुमें बन्दहर आचदेवे । ऐसे १०० पुटोंमें पहुँच  
गन्धक जारण होगा । इसका रस एकदम खालहोगा इसको पीस  
बर शीशोमें रखछोदे । इसमेंसे १-१ रत्ती पानमें रसकर  
रानेमें २० प्रकारके प्रमेह, समस्तज्वर, अतिमार, शूल, मय  
हृदभ्रजीर्ण, कामला, पाण्डू, हृद्योमक, ८० वातरोग, बुड्ढा  
इनसबको दूरकर रसायनका काम करतोहै ॥ ६३१ ॥

### ६३२ हिरण्यगर्भपोटली ( हेमगर्भपोटली ) २

शुद्धं सूतञ्चतुर्भागं त्रिभागं गन्धकस्य च ।  
भागमेकं सुवर्णञ्च त्रिभागं शुद्धमस्य च ॥ २६८३ ॥  
सुमासीत्सर्वयुक्तं सप्ताहं मर्दयेद् दृढम् ।  
गुटिकां कारयेत्तान्तु यन्नीयात्सर्वरूपदे ॥ २६८४ ॥  
यत्ने किञ्चिद्वलित्वा दत्ता तत्र गोलं निधाय च ।  
यन्नीयात्पोटलीं गाढां पश्चाद्वत्नेन येष्टयेत् ॥ २६८५ ॥  
सर्वभागसमं गन्धं दत्त्वा मृन्मयमाजने ।  
तन्मध्ये पोटलीं न्यस्य मुपे मुद्राञ्च कारयेत् २६८६  
विधाय छिद्रं मुद्रास्थं द्राघं दृष्ट्वा शलाकया ।  
पाचयेत्सिकतायाम्ने रसोऽयं स्रव्यह्विता ॥ २६८७ ॥  
यामार्द्धेन सुसज्जातं रसाङ्गीतं समुद्धरेत् ।  
कासे भ्यासे क्षये याते कफे प्रहणिकागदे ॥  
सर्वरोगेषु वातज्या हेमगर्भाख्यपोटली ॥ २६८८ ॥  
यो र, र थं, कावाधिकारे ।

टि०—रसायनमहद साधारणमगममान्ना ॥ बारदत्त द्विक  
रवादिबौगन्धरत्नना । ताम्रमरमिद्वर्णं स्वास्वर्णं कर्पादिकं छिद्र ॥  
कज्जलीं कज्जलकरां प्रकुर्वीत प्रयत्नतः । पोटीं बधयित्वा तु गण  
दवादिबन्धक ॥ पोटींश्च पुनस्तद्वर्णयाम् दृष्ट्वा ॥ मीं मृन्मयमन्तु  
पाचयितुं कारयेत् ॥ मुनं मुद्रां प्रकुर्वीत बद्धं दवाय सुचितं ।  
रसाङ्गीतं समुद्धरेत् रसं रसादेमगमर्भ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥  
तत्पाचयेत्सिकतायाम्ने रसोऽयं स्रव्यह्विता । यत्ने तत्र तापे चतुर्गोत्रयधिक  
मत्ताय परन्तु तदाभियमनैश्चेष्टेतस्मिन्नेत्रे चतुर्गोत्रयद्वाराधिकतया  
दानेनापि क्षयमावाप्सिती पाटनरं तु मर्दयिष्य ॥

माया—मुद्रादत्ता ४ भाग, गन्धक २ भा, मुर्गमस्य १  
भा, ताम्रमस्य ३ भा केर सबकी नीलनगद्वयोकर चौद  
बारदे रससे ७ दिनतक मर्दनकर गोलीबनाय ४ रूद काहेस  
थोड़ा गन्धक छिद्रकर उधर गोलीघोरस पेटनीबनाय  
मिठीकेदन्तमें मुर्गीकपरावर नीचे ऊपर गन्धकदेकर बीचमें  
पोरनीघोरस घावरबोचमें छिद्रकर हवीसर हवनदेकर काह  
मिठी करदे और नीचे मर्दनाम जरावे । बीचबीचमें छन्दाले  
देराजामाय । गन्धक गन्धभाव आगेरहरण करत ।  
रसाङ्गीतकापानेन निडाछर रसछोदे । इसमेंसे ८-४ रत्नी

रोगोक्तानुशानकेसाय देनेसे काम, श्वास, शय, वात, कफ,  
प्रक्षीरोग इनसबको यद नष्टरताहै ॥ ६३२ ॥

### ६३३ हिरण्यगर्भपोटली ( हेमगर्भपोटली ) ३

शुद्धं सूतं त्रिभागञ्च तत्समं शुद्धमस्य च ।  
भागैर्कं गन्धकं दद्यात्तद्वर्धं स्वर्णमेव च ॥ २६८९ ॥  
कज्जलीं कारयेत्तान्तु सखरने सप्तशालरम् ।  
अथ निर्गुण्डिकात्रावे मर्दयेद्विषमस्यम् ॥ २६९० ॥  
अथवा कनकद्रावे गुटिकां कारयेत्ततः ।  
किञ्चिद्वलितसमायुक्ते यत्ने गोलं निधाय च ॥ २६९१ ॥  
यन्नीयात्पोटलीं गाढामेवञ्च त्रि पुटांश्चरेत् ।  
दृढमृन्मयपात्रे तु गन्धं दत्त्वाऽप्युपेत्तरम् ॥ २६९२ ॥  
तन्मध्ये पोटलीं न्यस्य निर्धातमयान्तरे ।  
चित्तिस्तप्रमितं गते तस्मिन्संस्थाप्य मुद्रयेत् ॥ २६९३ ॥  
यत्नेश्च मुत्तिकाभिश्च ज्वालयेद्विषमनापि च ।  
यामेन सिद्धतां याति हेमगर्भाख्यपोटली ॥  
अनुपानानुसारेण सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ २६९४ ॥  
यो. र, रसायनर, नि. र., वै वि, कासे क्षये च ।

टि०—निर्गुण्डिकात्राव शुद्धस्थाने छिद्र नियोजित ताम्रमर्दक  
वा स्वास्तानुर्धनं वा स्थाप्य ।

माया—मुद्रादत्ता और ताम्रमस्य ३-३ भाग, शुद्ध गन्धक  
१ भा, सोनेकेक आधभाग केकर ७ दिनतक मुर्गमर्दनकर  
निर्गुण्डरी अथवा धनुरेकरामे ७ दिन मर्दनकर गोलीबनाय  
गन्धकछिद्रकेद्वारे करमें रस छोड़े बापर । हवीसर दूधरे  
कणेर गन्धकविधाय दूरी और तीवरी दृढ देवे । फिर  
मिठीके रसायने पोटीकेनीचेऊपर गन्धकदेकर मुहबन्दकर  
६-७ कणमिठी देवे । सुवर्णस्य पश्चात्स्मिन्मर्दके गुटमें १ पहर  
की आंचदे । स्वास्तानुर्धनोवेन निडाछर करे और गन्धक  
को हटाकर गोलीको नीलसे निडाछे । इसमेंसे १-१ रत्ती  
समय अथवा रोगोक्तानुशानकेसाय देनेसे यद समस्तरोगोंको  
दूररताहै ॥ ६३३ ॥

### ६३४ हिरण्यगर्भपोटली ( स्वर्णगर्भपोटली ) ४

स्वर्णस्य मन्मना नागाख्यनारः पाटन्य च ।  
अष्टौ गन्धस्य ताम्रस्य च द्रव्यैर्द्वैकमागकः ॥ २६९५ ॥  
कर्दारीक्षयो मेस्य भागौ द्वौ द्वौ च दृष्ट्वात् ।  
मुद्रार्थद्वयमुक्तानां नागाख्यगंसमा मना ॥ २६९६ ॥  
पञ्चशोलपुत्रेन सर्वं तन्नायपेन्निधा ।  
चित्तिरार्चमिका कार्या पोटनी चमरीयिता ॥ २६९७ ॥  
यत्नेश्च बलिभ्या सा पाचनीयाऽप्यवह्विता ।  
यटिकाद्विजयं दीप्तां पोटनीं मन्त्रदशनाम् ॥ २६९८ ॥  
प्रध्यायं क्षयरोगेचाऽतिमारं ज्वरकामयोः ।  
वाते वृद्धेऽतिमन्दापि त्रिभिर्गुत्रां प्रयोजयेत् ॥ २६९९ ॥  
स्वर्गद्वय, मन्त्रवधिकारे ।

**मापा**—सुवर्ण और पारदमस ४-४ भाग, शुद्धगन्धक ८ भा., ताम्र और वज्रमस १-१ भा., कौडी और धतू २-२ भाग, सुहागा १ भाग, मोती ४ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकमलीकर पञ्चकोलहोत्राये ३ दिन मर्दनकर शिखराकार गोलीबनाकर गन्धकपुष्प ३ तद्वत्प्रभेमें बाध एकगालिस्तेके खुद्वेमें दोषघटीकी आंचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर इसमेंसे २-२ रती समय अथवा रोगोघितानुगानकेसाथ देनेसे यह प्रहणी, क्षय, अतिसार, ज्वर, कास और मन्दाग्निको नष्ट-करती है बन्धे और शुद्धीको हितकर है ॥ ६३४ ॥

**६३५ हिरण्यगर्भपोट्टली ( हेमगर्भपोट्टली ) ५**  
स्वर्णसिन्दूरके कर्प स्वर्णमस सुमौक्तिकम् ।  
तुरीयांशं समं गन्धं त्रयाणामपि मर्दयेत् ॥ २७०० ॥  
ताम्रवह्मजुज्जानां भस्मान्पत्र तु पातयेत् ।  
सिन्दूरसममानानि मर्दयेदकदुग्धतः ॥ २७०१ ॥  
गुप्तां कज्जलिकामेतां घराटीन्बिच पूरयेत् ।  
मन्दारपयसा पिष्टदङ्गणेन च मुद्रयेत् ॥ २६०२ ॥  
शङ्खधूने धृता पताः पुष्टित्वा गजसङ्ग्रहे ।  
पोट्टलीं पूर्ववत्स्त्वा दिष्टरोगेषु योजयेत् ॥ २७०३ ॥  
रसायनसः,

**मापा**—शुद्धगन्धकत्रित सुवर्णसिन्दूर १ कर्प, सुवर्णमस और शुद्धमोती ४-४ भाग, शुद्धगन्धक १॥ कर्प, ताम्र, वज्र और ताम्रमस १-१ कर्प लेकर सबकी नीलवर्णकमलीकर आकैद्वयसे १-२ दिन मर्दनकर सुखाकर शुद्ध पीलीकौडि-योंमें भरकर आकैद्वयमें पिसेहुए सुहागेसे सुहवन्दर एक-हण्डीमें कबोद्धकेचूर्णके बीचमें इन कौडियोंको बन्दकर शराव-समुद्रदेवर ३-४ समस्तपर कपडिमिठी देकर मुखाले फिर इस-कोगजपुदकी आंचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर कौडियों सहित पीचकर आकैद्वयमें मर्दनकर अभीष्ट आकारकी पोट्टली बनाय ४ तद्वत्प्रभेमें छपेट रेशमसे बांधकर हंडीमें गन्धकको-विधाय कारपोट्टलीको रखदे । कारसे इतना पिसाहुभागन्धक रक्के कि पोट्टली अच्छीतरहसे ढकजाय और गन्धक जलनेपर भी पोट्टली चाली न रहे । हंडीको अग्निर रक्ष पूर्वरीतह पका-कर साफहरके रगले । इसमेंसे उचितमात्रा योगदानुगानकेसाथ देनेसे सङ्ग्रहणी और राजयक्ष्म प्रवृत्ति रोगनष्टहोतेहै ॥ ६३५ ॥

**६३६ हिरण्यगर्भपोट्टली ( महाहेमगर्भपोट्टली ) ६**  
शुद्धं मृतं पत्रैकं स्यात्पादांशं शुद्धहेमकम् ।  
शुद्धं गन्धं मापमेकं प्रतिकर्पं त्रयोजयेत् ॥ २७०४ ॥  
त्रयमेकत्र कुर्वीत सूक्ष्मं खल्वे विमर्दयेत् ।  
सुरदे यन्धयेद्वक्ष्ये स्याप्यं लोहजसम्पुटे ॥ २७०५ ॥  
मर्दितं गन्धकपलं तस्योपरि प्रदापयेत् ।  
सम्पुटे मुद्रितं कृत्वा भृषराख्यपुटे पचेत् ॥ २७०६ ॥  
स्वाहशीतलमुदस्य दूष्यं गन्धं परित्यजेत् ।  
पेषयित्वा पुनवर्त्तये सये यत्ना च गोलकम् ॥ २७०७ ॥

तत्तल्यञ्च पुनर्गन्धं सम्पुटे निक्षिपेद्विपक्व ।  
मुद्रितं सम्पुटे कृत्वा पुनर्गन्धेण पाचयेत् ॥ २७०८ ॥  
हेमगर्भरसो नाम्ना सर्वव्याधिनिवारणः ।  
रोगराजादिकं हन्यादितरेषां तु का कथा ॥ २७०९ ॥  
यो.र., नि.र., र. चं, वै.चि., रसायनसं. क्षये वाते च ।

**मापा**—शुद्धताम्र १ पल, सोनेकेबर्क १ कर्प, शुद्धगन्धक ४ भागसे लेकर सबकी नीलवर्णकमलीकर चित्रकवर्गैरकरसे मर्दनकर पुष्टवत्प्रभे बाधकर गन्धकपुष्पबलकी ३ तह लगाकर १ पल गन्धकके चूर्णको लोहेकेपात्रमें पोट्टलीके नीचे ऊपर रख शरावसमुद्रकर भृषराख्यपुटेमें आंचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकाल-कर गन्धकको साफर फिर बलमें बांध उसकीशरावर गन्धकके चूर्णमें रख पूर्ववत् आंचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रख-छोदे । इसमेंसे १ से २ रतीतक उचितानुगानकेसाथ देनेसे राजरोगप्रवृत्ति समस्तन्याधियोंको यह नष्टकरती है ॥ ६३६ ॥

**६३७ हिरण्यगर्भपोट्टली ( सप्तमी )**  
शुद्धं मृतं त्रिभागञ्च तदधांशेन गन्धकम् ।  
पादांशं कनकं दद्यात्त्रिभागं शुल्बमसकम् ॥ २७१० ॥  
कुमारिकं दशभागं प्रचालं तत्समांशकम् ।  
कुमारीरससंयुक्तं सप्ताहं मर्दयेद् ददम् ॥ २७११ ॥  
पूगमात्रां शुद्धीः कृत्वा घेष्टयेत् क्षौमदासता ।  
ददसुत्रेण सम्बध्य छायायां शोषयेत्ततः ॥ २७१२ ॥  
सघृते मृगमे पात्रे गन्धं दद्यादुपर्यधः ।  
निधाय च्छिद्रमुद्राद्यं द्वायं दध्वा शलाकया ॥ २७१३ ॥  
पाचयेत्सिरूतायन्त्रे सुवेद्यो मृदुनाऽग्निना ।  
घटीद्वये समापाते स्याहशीतं समुदरेत् ॥ २७१४ ॥  
कासे श्वासे क्षये वाते कफे प्रहणिकागदे ।  
सर्वरोगेषु दातव्या हेमगर्भाख्यपोट्टली ॥ २७१५ ॥  
वै.चि.(ल.), सर्वरोगे ।

**मापा**—शुद्धताम्र ३ भाग, गन्धक १॥ भा., सुवर्णमस अथवा बर्क पारेसे चतुर्थांश, ताम्रमस ३ भा., मोती और प्रवाल पारेसे दशमंश लेकर नीलवर्णकमलीकर धोतुंवारके रसमें ७ दिनतक मर्दनकर कुमारीकेचरावर गोलेमें बनाय रेशमीकपड़ेमें बांधकर छायामें सुखाय पीकेबर्तनमें गन्धककेचौचमें रख वालुकायन्त्रकी अग्निदेवे । गन्धक गलनेपर दण्डातुमार गोलीमें छेदकर और दोषघटीकी आंचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रखछोदे । इसमेंसे १-१ रती समय अथवा रोगोघितानुगानके-साथ देनेसे कास, श्वास, क्षय, वात, कफ और प्रहणीतोग इनसबको यह नष्टकरती है ॥ ६३७ ॥

**६३८ हिरण्यगर्भपोट्टली ( अपूर्वहेमगर्भः ) ८**  
शुद्धपारदभागं कं तत्समं स्वर्णजं दलम् ।  
उभयं मर्दयेत्तत्र कलांशं शुद्धगन्धकम् ॥ २७१६ ॥  
त्रिभागं रससिन्दूरं गन्धांशं नवसादरम् ।  
सर्ववैक्यत्र सम्मये भानुसूरिरे दिनायधि ॥ २७१७ ॥



पका यदा कृसरिका च निसर्गशीता  
कौशेयवाससि पुनर्द्वैतगन्धपकाः ।

भुञ्जीत कालयलयहिसमानमानां

मर्त्यां भवेदमरतुल्यवपु वैली च ॥ २७४१ ॥

अपस्मारितेथान्मादसन्निपातिषु योजयेत् ।

अनुपानविशेषेस्तु युक्ता हन्यामयान्यहन् ॥ २७४२ ॥

नू.क., अपस्मारोन्मादसन्निपातेषु ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सोनेकेवर्क, मोती, हीरा, ताम्र, हरिताल इनकीमर्सें, वस्तूरी और अमर १-१ कर्प लेकर नीलवर्णकजलीकर अदरककेरससे ७ दिनतक मर्दनकर सुपारीके बराबर गोलियें बनाय सुखाकर ४ तह रेशमकेकपड़ेमें प्रत्येक गोलीको रेशमसे बड़ीधांधकर मूंग और वासमतीचाबळोंकी अवयवीखिचड़ीमें गोलियोंको बालकर मुंदबन्दकर पकावे । रिचड़ी पकनेपर चूल्हेकी आग रूँचले । स्वाज्ञशीतलहोनेपर साफ़कीहुई गोलियोंको रेशमकेकपड़ेमें बांध पूर्वकीतरह गन्धक-हुतिमें दोषण्टे मन्दाभिपर पकाकर रखडोड़े । इसमेंसेकाल, बल और अमिका बलाबल देवदर १ चाबलसे १ रत्तीतक समयो-चितानुपानकेपाथ देनेसे अपस्मार, उन्माद और घोरसन्निपातको यह नष्टकरतीहै । निरन्तरसेधनकरनेसे क्लोपलितको दूरकर दीर्घायुको करतीहै ॥ ६४१ ॥

६४२ हिरण्यगर्भपोटली ( पीतहेमगर्भः ) १२

पीता मनःशिला तालं शुद्धं प्रत्यरू पिचुग्मितम् ।

कर्पाई हेम संयोज्यं तत्पादांशं महाविषम् ॥ २७४३ ॥

मर्दयेद्वस्त्रद्वयैः शुष्कं कृत्वा खरातपे ।

पूर्ववर्षपोटलीं यद्धा क्रियां पूर्ववदाचरेत् ॥ २७४४ ॥

हेमगर्भो भवेत्पीतः सर्वरोगनिवर्हणः ।

अनुपानैः सदा देयो याजीकरण उत्तमः ॥ २७४५ ॥

रसायनसं., रसायने ।

भाषा—शुद्ध पीलीमैनसिल और हरिताल १-१ कर्प, सुवर्णमस अथवा वर्क ८ मासे, पीलासोमल २ मासे लेकर घाटीक चूरीकर केदारदेवसे एकदिनमर्दनकर कड़ीपूमें सुखा-कर इच्छासुसार गोलियेंबनाय रेशम अथवा मलमलके कपड़ेमें पोटली बनाय लोहेकेपात्रमें पहुँचगन्धकको पिघलाकर बीचमें पोटलीको रख १ पहरकी अभिदेकर पकावे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकाडकर रखडोड़े । इसमेंसे २-२ चाबल समयोचितानुपानके-साथ देनेसे समस्तवन्निपात नष्टहोतेहैं और उत्तम वाजीकरणहै ॥

६४३ हिरण्यगर्भपोटली १३

कर्पेकं रसकथुरं दापयेत्तत्त्वमध्यतः ।

पादांशं हाटकं योज्यं मापेकं शुद्धमल्लकम् ॥ २७४६ ॥

मर्दयेधाममात्रेण सूक्ष्मवस्त्रे निधापयेत् ।

पोटलीञ्च दद्यां यद्धा जारयेद्गन्धकद्रवे ॥

याममेकं ततः पश्चाद्योजयेत्सकले गदे ॥ २७४७ ॥

रसायनसं., रसायने ।

भाषा—शुद्धरसकथुर १ कर्प, सोनेकेवर्क ४ मासे, शुद्ध-सोमल १ मासा लेकर एकपहर मर्दनकर सूक्ष्मवस्त्रमें पोटली-बनाय गन्धककेद्रवमें १ पहर पाचनकरे । इसमेंसे १-१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातादि समस्तरोगोंको दूर-करतीहै ॥ ६४३ ॥

६४४ हिरण्यगर्भपोटली ( हेमगर्भपोटली ) १४

रसयलिपविरजतकनकुमुत्तातालप्रवाललोहाभ्रम् ।

यद्धा पटे विपका यलितेहे हेमगर्भपोटलिका ॥ २७४८ ॥

सि. मे. म., पारदप्रकरणे क्षयादौ ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र, रजत, सुवर्ण, मोती-हरिताल, प्रवाल, लोह, अभ्रक इनकीमर्सें समभागलेकर चिद्र-प्रसूतिके रससे १-२ पहर मर्दनकर गोलीबनाय पूर्ववत् ३ तह गन्धकयुक्तकपड़ेमें पोटलीबनाय गन्धककेतैलमें एकपहर पकावे । इसमेंसे १-१ रत्ती रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह क्षयादि-समस्तव्याधियोंको नष्टकरतीहै ॥ ६४४ ॥

अथ पोटलीरहस्यम्

अत्र (पोटलीविषये) बहवो जना विवदन्ते यत्तस्य योगस्य पोटली करणीया कस्य वा न करणीयेति १ तत्र पोटलीति प्राकृ-तनामाऽस्ति तन्निर्माणप्रकारस्य तत्तदौपयमाणवस्तुहविषत्-औप-यस्यो भाण्डममताऽल्पसमये गुणातिशयादि मूलं प्रतीयते पोटलीं बद्धा गन्धकद्रवौ पाककरणेनोक्तदोषाणामभावादिर्न पद्वति-प्रज्ञाऽन्यतो धातुप्रचुरयोगानां मध्ये कस्यापि योगस्य पोटली-विबत्ताऽस्ति तन्निर्माणे सर्वेषामपि जनानां कामचारोऽस्ति । पर्वतीया जाह्लायाऽधुनाऽप्यौपधानां पिण्डं निर्मादं रक्षयन्ति । एतत्प्रकारः प्राधान्येन श्चेत्प्राक्षितान्यायेनाऽत्र तत्तत्प्रन्याम-निर्देशपुर.सर्गं चैव प्रतिपादितास्तत्र तद्वदकानि पारद, गन्धक, सुवर्ण, सुका, धातू, बराटी, दहण, ताम्र, माग, वष, लोह, अभ्रक, प्रवाल., रजत, स्वर्णसिन्दूर, रससिन्दूर, नसार, मल, हरिताल, मन.शिला, रसकथुर, चन्द्रोदय., वरू, मृग-नाभि, अमिचरथेति पञ्चविंशतिपरिमितान्यागतानि तेषां मध्ये एकस्यो द्विसप्तवर्षो वा प्रसारः कृताधेदान्त्ये जायेत । तत्र सत्तद्विज्ञानादित्यवहारभेदेन नानाविधा योगा हरयन्ते तेषां सामस्येन निर्देशः कर्तुमशक्यस्तथापि दिङ्मानुप्रदर्शनायै केचि-योगाः प्रदर्शयन्ते । यथा—सुवर्णमसमोऽष्टयु कर्पेण सुविशुद्धसम भागपारदगन्धकमलस्यैककर्प विमिश्रयेत्तद्वोलोमिषस्य बज्रुल-निर्यासादीनां वा दवेण द्विगुणसान्विष्य शुद्धगन्धकचूर्णे पादकर्थ मिश्रयित्वा सौष्ठवस्यदानया द्विगुणयित्वासुदमसुवर्णखण्डान्-कुञ्जितान् स्वापयित्वा शिखरारम्भिका वर्तौ विधाय वैद्योपपना माश्रितौ कृत्वा समन्विशोध्य चतुराष्टकोशेयवाससि बद्धाऽय-स्त्वनुभिर्दालाभिर्माय बीजपत्रैः शुद्धगन्धकं चिद्रान्यं तत्रैनां लोहशलाकादोलिका स्वापयित्वा मन्दाग्निना पाचयेत् कौशे-यस्य द्रव्याऽऽज्वालां क्लोक्थ सुचुण्डीद्वयेनैवैकां वर्तौ निष्कास्य

वस्त्रखण्डानि युक्त्या दूरीकृत्य गन्धककालिमानमपहृत्य वटीं भण्डदर्शनाङ्कुर्यात् । एन सर्वा अपि वटीर्विशोधयेत् । एव वरणे वषण्यादिशेषन्योपपाशपञ्चयज्ञैव नोदेष्यति । आधुनि कास्तौषधस्य वर्णविपर्ययोभीत्या निर्मासादिश्वभन्तरेव केवल दिव्यपलेन पिष्टिकामापाय पोट्टलीं निर्वर्तयन्ति । अनया रीत्या पोट्टल्यां काटिन्याऽपिभ्य चित्ताकर्षिणीं वर्णकुटुम्ब न सम्पद्यते । प्राचीनपोट्टलीषु तु तुलस्यादिस्वरसमावना प्रायो दृश्यन्ते, एतेन तत्तदोगर्हद्वैषयैयाशक्य विमुच्य वटिकाविधानस्यति श्रेष्ठा । ये तु केचिद्भवावनागुणो गन्धकद्रुतिप्रायेन द्रवाहितविशेषस्य भस्मीभावात्पोट्टल्या नागच्छतीति प्रत्ययवतिष्ठन्ते ते त्वज्ञानगङ्गे पतित्वा एव बोध्या । एवञ्चेनर्हि तत्तदोषविशेषैस्सम्पादिततामादि भस्मवु विशयो वक्तुमेतान्ततोऽशक्य एव स्यात्, इत्यापत्तिस्तु यत्नरतैरपि निर्दिष्टमशक्या प्रत्ययविरोधात् । गर्भपातकाशौषध निर्मितपातुभस्मना तत्तत्कार्यस्य प्रत्ययवद्वत्त्वात् । एव गर्भरक्ष कौषमादिभ्यः प्रत्ययताऽस्ति । सिद्धसम्प्रदायिकास्तु कृष्ण कुङ्कुमाङ्गस्य श्वेतवर्ण नियोजयन्ति ऐश्वर्यातिशयिभ्यः भवतिगुण रुदिरपि । पोर्टलीषु वर्णभेदस्तु तद्वर्णभस्मस्वयंभेदादुदेति । एकस्या पोर्टल्या नानावर्णोत्पत्तिरपि नानाविधौषधपिष्टिका यन्त्राणा मेल्नास्तस्यद्यते । यथायथस्ताभिर्दिश्यमानचतुरष्टयोऽर्लीनां चत्वारि अष्टौ वा खण्डानि विधायैकविधमातीयखण्ड इत्येकन स्थापनाशतुष्टौ खण्डेषु चतस्रोऽग्न्यु खण्डेषुष्टौ विचित्रवर्णा पोर्टल्यस्तस्यपुनः, परस्मिन्व सतिदेशकाना स्वचातुरीयोकन मात्रकला पाकसमये विभिन्नफलगुणानां साङ्ख्यदोषात्स्वतन्त्र पोर्टलीनिमाणप्रकार एव ज्ञायात् । सुवर्णशलाकानां निगमनमपि न सर्वत्रोपयोगि तच्छुभ्रतमन्त्रादियोगे वैयज्यात् । बलीय साश्वल जीमवे इति न्यायेन यपि सुवर्णं शतुक्मोपेऽयारक्तं प्राऽल तथापि तन दर्शकानां बिनाऽऽङ्गदन्तराऽन्यतिक्रिद्वन्तु पक्रत्वप्राऽस्तीति विद्वत्सु विवृति । अल्पप्रमाणगन्धकयोऽपि पोर्टलीगतपरमाणूनां सयोजकस्तरीयगुणोत्कृष्टविधायकञ्चेति बो ध्यम् । यत्र कम्बलपुत्रलेखस्तप्राऽन्यदस्तुमेल्नाऽन्तर्गतोपयोग वरणीयोऽन्यप्राऽभीष्टवर्णविपातककार्यं पर्यवस्यति । यत्र तु कुङ्कुमादिपुनदानमस्ति तत्र तु नेय विपुपुतिष्ठति, अमियोगेन कालिम्नोऽनुपप्यात् । पारदस्य मेल्नमपि गन्धकातिरिक्तव्यै सह द्रवाऽन्ते गन्धकमिश्रणमिति दस्तचातुरी ।

अथ लोकप्रसिद्धा काथिन्तोऽर्थवस्तानुपाना अपो निर्दिश्यन्ते ताश्च वैपारेण जयशङ्करसमं निर्दिष्टाः । यथा—

हिरण्यगर्भपोट्टली—सुवर्णभस्म १० कर्पां विपुदकम्बली १ कर्पां, शुद्धगन्धक १ टङ्कमित्, सुवर्णतनुत्तुखण्ड ६ रक्तिष्ठा, एवस्तुचतुरष्टयपटिता । अस्या निर्माणशुक्तिर्निर्दिष्टरीत्या कर णीयम्, इयं माश्रित्यग सम्पन्त्यते । कृष्णाऽन्नादुत्तराऽऽङ्क रसादिभिर्यौचित्यद्विपुप्रातो रक्तिमानां माश्रां रामयश्परक सोमजीमवेवरोत्र स्यादितु दण्डस्य रोगोचिन् विद्यादिति ॥ १ ॥

तारगर्भपोट्टली—इय भेनवर्णा । रौप्यभस्म १० कर्परि मिष्ण, पारदभस्म १ कर्प, विपुदगन्धकर्ष १ टङ्क, सुवर्णत

नुत्तुखण्डा ६ रक्तिष्ठा, एवस्तुचतुरष्टयपटिता कार्य, निर्माण पूर्ववत् । तुलसीपत्ररसमधुम्या स्तोषितेनाऽन्येनाऽनुशानेन वा योग प्रमेदशुक्ररोपतिविकृतिमृत्तव्यापयो निवर्तन्ते । श्वेतजत मस्ययोगोऽस्यादन्तेतवर्णा भविष्यति तदभावेऽन्यथात्वमिति रहस्यम् । अर्धरक्तिष्ठाकामानादेवरक्तिष्ठा मात्रा बोध्या ॥ २ ॥

ताम्रगर्भपोट्टली—मयूरकण्डामताम्रभस्म १० कर्परि मित, पूर्ववद्रिपुदकम्बली १ कर्पां, विपुदगन्धकर्ष १ टङ्क, विपुदमुक्कणतनुत्तुखण्डा ६ रक्तिमिता, निमाण पूर्ववत् । इय मयूरकण्डामा भवति । श्वेतताम्रभस्मनस्तु शुभ्रवर्णा रक्षस्य रक्षा । आर्द्रस्वरसमधम्या अवस्थाविशेषवेनेन तदुचितानुपा नेन वा कफजन्यत्रिदोषपाशकाऽऽवरधृत्वापश्ययोषा निव र्त्तते । अर्धशुद्धात एकशुद्धामिता मात्रा । पय्य रोगोचिन् दियम् ॥ ३ ॥

लोहगर्भपोट्टली (प्रथमा)—लोहभस्म १० कर्प विपुद कम्बली १ कर्पां, विपुद गन्धकर्ष १ टङ्क, सुवर्णतनुत्तुखण्डा ६ रक्तिमिता । निर्माण पूर्ववत् । लोहभस्मवगसमवर्णा, एक शुद्धातस्त्रिशुद्धापरिमिता मात्रा । आर्द्रस्वरसमधुम्यां तत्तद्रोग विषेपाऽनुशानेन वा योजिता सङ्ग्रहणीयाङ्कुराभरणरक्षौभमन्ने इष्यद्राश्राशयति । रोगोचिन् पय्यम् ॥ ४ ॥

लोहगर्भपोट्टली (द्वितीया)—लोहरीप्यद्वर्गश्वनाग तापमद्गुरुवर्गमात्रिचवदभस्मानि प्रत्येक द्विर्कापिष्टानि, कम्बली २ कर्पां, विपुद गन्धकर्षगन्धकर्ष, सुवर्णतनुत्तुखण्डा १२ रक्तिमिता । निमाण पूर्ववत् । इय कृष्णवर्णा । एकशुद्धातो द्विशुद्धापरिमिता मात्रा इन्द्रिस्वरगतोऽमृत्पुत्रैःखुरादेस्तद्रोग हतानुशानेन वा योजिता शयप्रमेहपण्डुकाभलाऽऽशोमभ्रदन्नेन रोगप्रहणीप्रहणीप्राशयति ॥ ५ ॥

महृगर्भपोट्टली—विपुद मन्मस ४ पलं, पारदभस्म २ कर्पमभावे शुद्धपारद २ कर्परित, विपुदगन्धकर्ष १ टङ्क सुवर्ण तनुत्तुखण्डा ६ रक्तिमिता । निर्माण पूर्ववत् । इयं श्वेतवर्णा । अर्धतुल्यद्वारस्य द्वितुल्यपरिमिता मात्रा इत्येन, इधिवरेण, दुर्गसरेण वा तत्तदोगहरानुपानेना दत्ता ज्वरक्षेमवातव्याध्यादुद दशरक्तिभस्मन्दरनाडीनयमाषाकाधामिनाम्याप्रपनीन् नापायति । पय्य रोगोचिन् ॥ ६ ॥

तालगर्भपोट्टली—इतिताळभस्म ४ पल, पारदभस्म २ कर्प (मल्माऽभावे द्वयमपि सुविपुद माश्रम्), पुद्गल्यकर्ष १ टङ्क, सुवर्णतनुत्तुखण्डा ६ रक्तिष्ठा, निर्माण पूर्ववत् । भस्मयतिता चेच्छेत्ता सम्पन्त्यते विपुदाम्यां पेटरीता । आर्द्र क्णरसमधुम्यां तन्नेरोगहरानुपानेनां तदनुमानाददंरसिष्ठा मात्रा प्रयुक्ता चर श्वाधकापवातव्याधिरक्षेन्नरोगाप्रारयति । पय्य रोगोचिन् दियम् ॥ ७ ॥

शिलागर्भपोट्टली—शुद्धा मन शिला ४ पला, पुद्गल २ कर्प, विपुद गन्धकर्ष १ टङ्क, सुवर्णतनुत्तुखण्डा ६ रक्तिष्ठा, निमाण पूर्ववत् । इय कुङ्कुमवर्णयन्त्यस्यते । यात्राऽ-

दंरुक्ति एकगुञ्जामिता । अतिविपाकद्वयोऽहिमीमभुमिखल्याविशे-  
पातुल्लाङ्गुशानैर्वा नियोजिता चेन्नृशशासकासादीनाशयति ॥

**विषगर्भपोष्टली**—मम्मन शिलादरदालकसकपूराणा  
भम्मनि प्रत्येकमेकफलानि, पारदभस्म १ कर्ष, भस्माऽभावे  
सुविशुद्धानि प्राप्नुयान् । सुविशुद्धान्यकचूर्ण १ टङ्क, सुवर्णतनु  
तनुखण्डा ६ रक्तिका, निर्माण पूर्ववत् । भस्मघटिता चेद्वैता  
चेन्नुता, अन्यथा तु रक्तपोता भविष्यति । भस्मघटिताचेदर्थे  
तण्डुलादेकतण्डुलमिता माना । विशुद्ध सम्पादित्वा चेदेकतण्डु-  
लमानाद्वितण्डुलमिता विल्वपत्रनिम्माद्रकस्वरसेस्तत्तद्रोगहरानुषा-  
नैर्वा नियोजिता चेदुपदक्षिणरजवातन्याधिदोषगतसेध्वविकार  
रक्तोपमगन्धद्रुणादीनादीनाशयति ॥ १ ॥

**रसगर्भपोष्टली**—रसभस्म ४ पलं, पारदभस्म १ पल  
( भस्माऽभावे विशुद्धो प्राप्नुयान् ), विशुद्धान्यकचूर्ण १ टङ्क,  
सुवर्णतनुतण्डुलखण्डा ६ रक्तिका, निर्माण पूर्ववत् । भस्मघटिता  
चेन्नुता, विशुद्धान्यकचूर्णमिता चेद्वैतकचूर्णा । १ रक्तिमानात् ३ रक्ति-  
माना माना तुलस्यादिस्वरसेयोजिता पाण्डु निहन्ति । भस्म-  
घटिता चेत्तण्डुलमानादर्थरक्तिमिता माना तत्तद्रोगहरानुषान-  
योजिता सकलामयानिहन्ति ॥ इत्येका ॥

**रसकूर्पूरभस्म** १० कर्ष, पारदभस्म १ कर्ष ( भस्माऽभावे  
सुविशुद्धो प्रदीतव्यो ) विशुद्धान्यकचूर्ण १ टङ्क, सुवर्णतनुसक-  
लानि ६ रक्तिमितानि, निर्माण पूर्ववत् । भस्मघटिताचेदेकत-  
ण्डुलमानाद्वितण्डुलमिता माना, विशुद्धान्यकचूर्णमिता चेदेकरक्ति-  
मिता इन्द्रियोपदेश निहन्ति । भस्मघटिता तु तत्तद्रोगहरानु-  
षानैर्वा सर्वरोगानिहन्ति, पर बाजोफरी कृत्वा च, उभयपादपि  
शेता । इति द्वितीया ।

**पारदभस्म** १ कर्ष, कजली ४ पला, विशुद्धान्यकचूर्ण १ टङ्क,  
सुवर्णतनुसकलानि ६ रक्तिमितानि, निर्माण पूर्ववत् । एका  
रक्तिमानाभस्म त्रिरक्तिमिता माना आर्द्रकस्वरसादिभिः सर्व-  
रोगानिहन्ति ॥ इति तृतीया ॥

**दारभस्म** ४ पल, रसकूर्पूरभस्म २ पल, पारदभस्म १ कर्ष,  
सुविशुद्धान्यकचूर्ण १ टङ्क, सुवर्णतनुतण्डुलखण्डानि ६ रक्तिमि-  
तानि, निर्माण पूर्ववत् । भस्माऽभावे सुविशुद्ध प्राप्नुयान् । भस्म-  
घटिता चेत्तण्डुलैकमानाद्वितण्डुलमाना । विशुद्धान्यकचूर्णमिता  
चेद्वैतकमिता मात्रा दुग्धकनकस्वरसाभ्यां बाजीकरी । तत्तद्रो-  
गहरानुषानैस्तु सर्वरोगानिहन्ति ॥ इति चतुर्थी ॥ १० ॥

**निघातुगर्भपोष्टली**—निरुध्य वज्रनागयशदभस्मानि प्र-  
त्येकमेकफलानि, पारदभस्म १ कर्ष, विशुद्धान्यकचूर्ण १ टङ्क  
सुवर्णतनुसकलानि ६ रक्तिमितानि, पारदभस्मनोऽभावे विशुद्ध  
पारदं भस्मनि, सह सूर्यमित्राश्चरयतामापादयेत् । पश्चात् निर्माण  
पूर्ववत् । श्वेतवर्णा पोष्टली भविष्यति । अवैरक्तितो रक्षित्वमाना  
माना हरिद्रातुलसीस्वरसाभ्यां नियोजिता प्रमेहप्लीतिमेहप्रद-  
शुक्रोपप्राशयति । दुग्धेन सेविता शुक्र वर्धयति । पच्य  
रोगोचितम् ॥ ११ ॥

**रसगर्भपोष्टली**—त्रिपादभस्मैकान्तमुक्ताप्रवालपारदमा

णिक्क्यपुत्रपागोमेदनीलखण्डाना भस्मानि प्रत्येकमेकफलाणि,  
विशुद्धान्यकचूर्णमेकटङ्क, सुवर्णतनुतण्डुलखण्डा १२ रक्तिका,  
निर्माण पूर्ववत् । केचित्तत्र रुकटिकुहविन्द्वैद्यैराजवाताना-  
मेकैकपरमधिकन्याया प्रक्षिपन्ति तेषामपि भस्मान्येव प्रदीता  
व्यानि । तेषां भस्मप्रकारा अगन्त्यसंहिततोऽगन्तव्या । इदा  
नीन्तनास्तु वज्र विनाऽन्यरत्नानि शतानुगुणानि विशीर्णोऽपि  
निर्वापान् दत्त्वा तेनैव साक विमृष्ट चक्रिका निर्माय अष्टौ दश  
वा पुष्टानि ददति । अन्ये पुनर्निर्वापान्तर कुमारीश्वरे विमृष्ट  
चक्रिका निर्माय पूर्ववत् पुष्टानि ददति । आद्रोमलकस्वरसेऽगो-  
सरसानिर्वापान् दत्त्वा तेनैव विमृष्ट चक्रिका निर्माय क्रमोत्तर  
विशुद्धोत्पलसङ्घेषु त्रिगुद्रजपुष्टे दत्तेषुतम भस्म सञ्जायते इति  
सर्वेषामेवरत्नानां परिचित प्रकार । अनेन प्रकारेण क्रियमाणानि  
भस्मानि हरिद्रावर्णानि सम्पद्यन्ते पारदभस्माऽभावे चन्द्रोदयस्य  
रसविन्दुरस्य वा योग करणीय । मुक्तानान्तु घतपत्रमुष्णं  
( गुलाबजल, हिन्दी ) पिष्टिरेव श्रेयसी । भस्मीकरणे शङ्खस्तु  
वराक येन केनाऽप्युपायेन करणीयम् । रत्नभस्मवर्णाधीनो वर्णः ।  
अन्तिमप्रकारेण क्रियमाणेषु भस्मसु तु कुङ्कुमवर्णा पोष्टली सम्प-  
त्यते सप्रेमानातण्डुलमिता माना मृगमदामिजारक्वैरजाली  
फलेऽनुगुणानिभ्यः प्रयोजिता रसायोज यन्तैश्चातुस्रपात्रां रागोरो-  
गभ्यां पद्मदुर्गसर्वानपि रोगान् नाशयति । परमरसायनी योग  
बाहिष्ठा चेति । पच्य रोगोचित दद्यात् ॥ १२ ॥

**अम्रगर्भपोष्टली**—निष्यन्दवज्राभस्म ४ पल, पारदभस्म  
१ कर्ष ( भस्माऽभावे विशुद्ध पारद ), विशुद्धान्यकचूर्णमे-  
कैर्ष सुवर्णतनुतण्डुलखण्डा ६ रक्तिका, निर्माण पूर्ववत्, इय  
रक्तवर्णा सम्पत्यते । अथेगुञ्जामिता माना आर्द्रकभस्मन्या तत्  
द्रोमहरानुषानैर्वा प्रयोजिता श्वासकासश्वषोणैश्चरारीन् गार्मिणी  
रोगान् निहन्ति । पच्य रोगोचित विद्यात् ॥ १३ ॥

**माक्षिकगर्भपोष्टली**—पुष्पमाक्षिकोप्यमाक्षिकमण्डूका-  
सीसकात्यरोतिपारदभस्मानि १-१ पलानि, पारदभस्म १ कर्ष,  
विशुद्धान्यकचूर्ण १ टङ्क, सुवर्णतनुतण्डुलखण्डा ६ रक्तिका निर्माण  
पूर्ववत् । भस्मवर्णाधीनो वर्णः । अर्धेरक्तिमानादेक रक्तिमिता  
मात्रा आर्द्रकस्वरसमुष्ण्या तत्तद्रोगहरानुषानैर्वा नियोजिता अमे-  
हशीणतापाण्डुसामलोदरोगान् निहन्ति । पच्य रोगोचितम् १४

**प्रवालगर्भपोष्टली** ( श्वेतपोष्टली )—प्रवालमुक्तास्फोटपी-  
तकपर्पदश्लक्ष्मभस्मानि प्रत्येक द्विद्विरलानि, गोदन्तभस्म ४ पल,  
पारदभस्म १ कर्ष ( भस्माऽभावे विशुद्धो प्राप्नुयान् ), विशुद्धान्य-  
कचूर्ण १ टङ्क सुवर्णतनुतण्डुलखण्डा ६ रक्तिका, निर्माण  
पूर्ववत् । इयमतिशेता । ३ रक्तिमानाभस्मापकपरिमिता माना  
किञ्चलमूलऽऽकम्बलसादिभिर्नियोजिता पाण्डुरकाश्वसाशुगुल्या  
श्रिन्वति बालरोगाय । पच्य रोगोचितम् ॥ १५ ॥

अन्यस्यगोष्टलिका पूर्वं चतुर्वाप्रतिपादितास्तासु पारदगन्ध-  
सुवर्णमुक्ताशङ्खवटीटङ्कनाभनागवज्रोदाद्रकप्रवालरजतवर्ण-  
शिन्दूररसिन्दूरलसारसमहरितात्मन शिलासकूर्पूरचन्द्रोदय

वज्रशृंगमशम्भराणि एतानि पञ्चविंशतिर्वस्तूनि समागतानि तेषु  
मृगमदामरे द्वे धातुपापाणामिमे वस्तूनी मुञ्चन् त्रयोविंशति  
धातुपापाणां समागता । समनन्तरनिर्दिष्टपञ्चशरोद्वेगीयुः अष्ट  
त्रिंशद्वस्तूनि समागतानि तेषु अष्टादशपूर्वोक्तान्येव सन्ति विंश  
तिषु नूतनानि यथा—मण्डूयशदसुवर्गमाक्षिकदत्तपाकद्वैकान्त  
माणिक्यपुष्परगणोमेदनीलस्फटिकराजावर्तकुरुविन्दवैद्यैर्युक्ति  
रौप्यमाक्षिकस्यरीतिहासीशोदन्ता इत्येतेषां सर्वेषामप्ये  
कस्यापोह्यत्वां योगचिकीर्षां चेत्तर्हि भवेदेव, यथा द्वितीयलक्ष्मी  
नारायणे सर्वेषामपि समावेश इतोऽस्ति आपातदृष्ट्या त्रिचतुर  
वस्तूनि तत्र न दृश्यन्ते यथा रसकर्षूरं हिह्वलं, कुरुविन्दं,  
शोदन्ता, परन्तु लक्ष्मीनारायणोक्तपञ्चदशकारे इत्ये हिह्वलस्य  
कर्षूरभोर्शनस्यात्पादपरत्वमस्ति कुरुविन्दशोदन्तयोरभावोऽपि  
न दोषावहो लक्ष्मीनारायणे चन्द्रसुवर्गकान्तनीलाचनरपाञ्चनमार्ज  
राक्षितरीपाण्य (तुल्यमणि) पद्मस्तुलामधिष्ठयता सम्यगमनात्  
रसकर्षूरादिद्वयवस्तुद्वयस्याधिनकथा दानेनाऽपि क्षत्यभावोऽस्ति  
कान्तपापाणामागमनान्मण्डूरस्य तुल्यद्वयसमागमनात्ताम्रस्य  
पूर्तिं स्रज्जाताम्बि विपादीनानाधिक्यता तु लक्ष्मीनारायणेऽप्येवे  
ति चर्चं पदं इतिपदे निमग्नमिति न्यायेन सर्वा अपि पोह्यन्ते  
लक्ष्मीनारायणोदरे समिविष्टा जाता सन्ति तत्र रोगा अपि  
प्रायः सर्व समागता सन्ति ज्ञानु सर्वेषां द्रव्याणां सम्भरण  
साधारणजनेन कर्तुमतीक्ष्णं दुराक्षमत्युपग्रीयत्वाम् सर्वं सर्वत्र  
प्रयोजनमपि दुराक्षाऽस्ति अतो यावत्तत्रद्रव्याणां विपरहिता  
एका कार्या तस्या सर्वत्रोपयोगो निरस्ययन लाभप्रदो भवति ।  
विपरहिता द्वितीया तस्या पोससमिगतावस्थायां कण्ठबरो  
धातो योगो लाभप्रदोऽस्ति अतो विपरहिताया लक्ष्मी  
नारायणपोहरीति विपगर्भपोहरीति वा नामकरणमुचितम् ।  
विपरहितायास्तु रसगर्भपोहरीति गृहद्विरण्यगर्भपोहरीति  
वा नामकरणमुचितं भवति । धातुपापाणातिरिक्तमृगमदानीना  
यत्र योग कर्तुमभीष्टस्तत्र एकादशद्रव्यापाकपोहरीवस्थाक  
रणीय इति रहस्यम् । हिरण्यगर्भेण लोहानां चित्तमत्यन्त  
माकृष्टं दृश्यते यथा सामान्यतोऽप्यायवत्त्वामालेख्य साकार  
गणना अभ्युपदिशन्ति यदस्मै हिरण्यगर्भं दातव्यमिति । परन्तु  
सा विप्रश्रमोऽनु निमित्तहिरण्यगर्भेऽप्यु प्रतोसाधैवादेन रस  
क्षेत्रं पुरितमिति कर्तुं वैशा अपि साध्यं कुर्वन्ति तेन रसाद्ये  
बहुशालाद्रुमूला धन्वा ययुगानिना भविष्यत्यतोऽनीकिह्वा  
विमद्भस्मनी मृगप्रायप्रकारं लाक्षोपमरिच्यौ सविधिसिद्धे  
ओष्य लोह प्रचारणीय इति ऋषियन्ततितु दृढ विनीता प्राप्य  
मेत्यत्ममतिविश्लेषेण ।

### ६४५ हिरण्यगर्भरसः (प्रथम)

एकान्ता रमराजस्य प्राचीं ह्रीं हाटकस्य च ।  
मुनापल्लस्य चन्दारो भागा पदं दीपनि स्यना ।  
ज्यंशं बले पंटाट्याश्च दृष्ट्वा रसपादिक ।  
पणनिभ्युक्तोयेन सर्वमैकत्र मर्दयेत् ॥ २७०० ॥

मृगामध्ये न्यसेत्कल्कं तस्य यज्ञं निरोधयेत् ।  
गतेऽरुणिप्रमाणे तु पुटेऽत्रिशद्वनापले ॥ २७०१ ॥  
स्वाह्मशीतलतां क्षत्वा रसं मृगपादप्रायेत् ।  
ततः खल्वोदरे मयं सुधाम्बं समुद्धरेत् ॥ २७०२ ॥  
एनस्याऽमृतरूपस्य दद्याद्ब्रह्माचतुष्टयम् ।  
घृतमाघ्नीकसंयुक्तमेकोनत्रिंशद्वयम् ॥ २७०३ ॥  
मन्दाग्नौ रोगसहं च प्रहृण्यां विपमज्वरं ।  
शुदाहुरे महाशूले पीनसे श्वासकासयो ॥ २७०४ ॥  
अतीक्ष्णं महाध्याघी श्मययो पाण्डुके गदे ।  
सर्वेषु कुष्ठरागेषु यष्टरूपीहोदरेषु च ॥ २७०५ ॥  
धातपित्तकफोत्थेषु हृद्भजेषु त्रिजेषु च ।  
दद्यात्सर्वेषु रोगेषु श्रेष्ठमेतत्सायनम् ॥ २७०६ ॥  
र स, र सु, र च, मै र, र क, प्रह्णीरोगे ।

भापा—शुदाघा १ भा, सुवर्गमम २ भा, मोती ४  
भा, शङ्ख ६ भा, शुद्धगन्धक और पीलीचौकी ३-३ भा,  
शुदाघा २ भाग लेकर सुवर्गश शारमें मिलाय १-२ पहर घोट  
कर गन्धकनेपाय नीलवर्णकजलीकर । फिर अन्य उपबीजोंको  
मिलाकर पक्कीबूकेखते एकदिन मर्दनकर बममृगामे गोलेको  
रस मुहकन्दकर हाथमरके खट्टेमें ३० जल्लीदण्डोंकी भाँचकर ।  
स्वाह्मशीतलतोनेपर मिटालकर रखोहे । इत्येते ४-४ रसीकी  
मात्रा २५ बालीमिचोंकवर्णदेसाय धी और मधुमें मिलाकर-  
लेनेसे मन्दाग्नि, प्रह्णी, विपमज्वर, अर्ग, भयङ्करघृत्, पीनग,  
श्वास, कास, प्रश्वसितार, घोष, पाण्डु, समस्तशुष्ठ, यष्टर,  
श्रीहा, उदररोग, हृद्भज अथवा त्रिशपत्र समस्तरोग मटहोतेहे  
और आयुर्दी दिहोतीहे ॥ ६४५ ॥

### ६४६ हिरण्यगर्भरसः (द्वितीय)

स्तुतात्पादप्रमाणेन हेम्न विष्टिं प्रकल्पयेत् ।  
तयो स्याद्विमुणा गन्धो मर्दयेन्नाञ्जनारिणा ॥ २७०७ ॥  
हन्वा गालं सिपेन्मृपासम्पुटे मुद्रयेत्तत ।  
पञ्चद्वयस्येण पातसरिपत्रेषु सुच. ॥ २७०८ ॥  
तत उज्ज्वलं तत्सर्वं दद्याद्भयञ्च तत्तमम् ।  
मर्दयेथाद्रैरसमैक्षिप्रकस्वरमेत च ॥ २७०९ ॥  
स्युऽपीतयराटांश्च पूरयेत्तेन मुनिना ।  
एतस्मादौषधात्तु पादद्वयमांशेन दृष्टव्यम् ॥ २७१० ॥  
दृष्ट्वा रसं विपं दत्त्वा पिष्ट्वा मेहुण्डमुद्यकं ।  
मुद्रयेत्तेन कल्केन घराटानां मुक्तानि च ॥ २७११ ॥  
माण्डे पूर्णं प्रलिप्याऽथ घृत्या मुद्रां प्रदापयेत् ।  
गते हस्तोन्मिते घृत्या पुटेऽदारण्यकात्पले ॥ २७१२ ॥  
स्वाह्मशीत रसं मात्रा प्रद्याद्ब्रह्मनापयत् ।  
पथ्य मृगाश्वज्येय त्रिदिनं लग्नं त्यजेत् ॥ २७१३ ॥  
यदा छर्दि भवेत्तस्य दद्याच्छिप्राशुनं तदा ।  
मधुयुनं तथा शेष्यकीपे दद्याद्दृष्टव्यम् ॥ २७१४ ॥  
विरिक्तं मज्जिता भक्षा प्रदेया दधिसंयुता ।



जयेत्कांसं क्षयं श्वासं ग्रहणीमरुचिं तथा ।

अग्निञ्च कुरुते दीप्तं कफजातं निपच्छति ॥ २७६५ ॥

शा. सं., रसायनसं., र. प्र. सु., यो., र. (भा.), भै. सा., नि. र., र. दी., वै. चि., र. का., रसायनसङ्ग्रह, क्षयाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा ४ भाग, सोनेकेकक १ भा., शुद्धगन्धक १० भागलेकर नीलवर्णकजलीकर कचनाकररससे १-२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय वज्रमूपामें रख सुहृन्मन्दकर ३ दिन मृषा-पुटकी आंचदे । स्वाह्नशीतलहोनेपर निकालकर उसकीबराबर शुद्धगन्धक मिलाय अदरख और चित्रकुरसोंसे मर्दनकर थड़े पीलेरङ्गके कौड़ोंमें भरके समस्तऔपचसे अष्टमांशमुहागा और पोष्टांश बछनागसो मृषाकर दूधसे मर्दनकर कौड़ोंका सुहृन्मन्दकर चूनापुतीहुईहड्डीमें रखदे । फिर सराबसे हंडीका सुहृन्मन्दकर ६-७ कपकमिष्टी समस्तपरदेकर सुखाकर हाथभरके रट्टुमें जलली-कण्डोंकी आंचदे । स्वाह्नशीतलहोनेपर निकालकर रखडोढ़े । इसमेंसे लोकनायकीतरह देकर मृगाङ्गुलीतरह पच्यपालन करे । ३ दिनतक नमक न खावे । इसके देनेपर बमबडो तो मिलोय-काहाथ, छेप्पप्रकोपमें शुद्ध और अदरख; रेचनमें सुवीमांश दहीमें मिलाकरदेवे । इसके प्रयोगसे कास, क्षय, श्वास, ग्रहणी, अरुचि, मन्दाग्नि, कफ और वातरोग येसब नष्टहोतहैं ॥ ६४६ ॥

### ६४७ हिरण्यगर्भरसः (तृतीयः)

रसस्य भागाध्वत्वारस्तायन्तः कनकस्य च ।

तथोच्च पिष्टिकां कृत्वा गन्धो द्वादशभागिकः ॥ २७६६

कुर्यात्कज्जलिकां तेषां मुक्ताभागाश्च षोडश ।

चतुर्विंशश्च शाहस्य भागकं द्रवणस्य च ॥ २७६७ ॥

एकत्र मर्दयेत्सर्वं पक्वनिम्बकजं रसेः ।

कृत्वा तेषां ततो गोलं मृषासमुदके न्यसेत् ॥ २७६८ ॥

मुद्रां कृत्वा ततो हस्तमात्रे गते च गोमयेः ।

पुटेदारण्यजातेश्च स्वाह्नशीतं समुद्धरेत् ॥ २७६९ ॥

वेदरकिमिति पिष्ट्वा वृषाद्रन्याज्यसंयुतम् ।

एकीनविंशदुन्मानमरिचं सह दीपताम् ॥ २७७० ॥

राजते मृगमे पात्रे काचजे घाटवलेहयेत् ।

लोकनायसम पथ्यमतीसारे प्रयोजयेत् ॥ २७७१ ॥

कासे श्वासे क्षये घाते कफे ग्रहणिकागदे ।

शा. सं., र. सु., र. प्र. सु., यो., र. चं., रसायनसं., र. (भा.), भै. सा., चि. र. म., नि. र., र. का., वै. चि., वै. चि., कायाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और सोनेकेकक ४-४ भाग लेकर पिष्टीबनाय १२ भाग शुद्धगन्धकनेसाय नीलवर्णकजलीकर मोती १६ भा., शङ्खमस २४ भा., सुहागा १ भाग लेकर कजलीमें मिलाय पक्वनीबूकेरससे १-२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय वज्र-मूपामें बन्दकर हाथभरके रट्टुमें जललीकण्डोंकी आंचदे । स्वाह्न-शीतलहोनेपर निकालकर रखडोढ़े । इसमेंसे ४-४ रत्तीकीमात्रा २९ मि. रसोंके चूर्णकेसाय गोमुपमें मिलाकर चांदी, मिष्टी अथवा काचके बतनमें सेवनकर लोकनायकीतरह पच्यपालनसे कास,

श्वास, क्षय, वातकफ, ग्रहणी और अतिपार इनसबको यह नष्ट-करताहै ॥ ६४७ ॥

### ६४८ हिरण्यगर्भरसः (चतुर्थः)

रसमस्य त्रिमागं स्यादेकमागं सुवर्णजम् ।

एकमागं सूनं ताम्रमेकभागश्च गन्धकम् ॥ २७७२ ॥

मर्दयेच्चित्रकुरावे द्विषामान्ते समुद्धरेत्

पूर्वां वराटिकास्तेन द्रव्णैस्ता विलेपयेत् ॥ २७७३ ॥

वपटान्पुरयेद्गण्डे रुद्धा गजपुटे पठेत् ।

विचूर्णयेत्स्नाह्नशीते पोष्टलौ हेमगर्भिकाम् ॥

मृगाङ्गुवद्यतुर्गुञ्जामक्षणाद्राजयक्ष्मनुत् ॥ २७७४ ॥

घ., र. सु., र. चं., र. को., र. सं., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—गारदमस्य ३ भाग, सुवर्ण और ताम्रमस्य, शुद्ध-गन्धक १-१ भाग लेकर कजलीकर चित्रकुरेवरससे दोपहर मर्दनकर पीलीकौड़ियोंमें भरकर दूधमेंपिठेद्विपु मुहागेसे कौड़ि-योंका मुह बन्दकर हंडीमेंरख गजपुटकी आंचदे । स्वाह्नशीतल-होनेपर निकालकर कौड़ियोंसहित पोष्टकर रखडोढ़े । इसमेंसे मृगाङ्गुकीतरह ४ रत्तीकीमात्रामें देनेसे यह राजयक्ष्मको नष्ट-करतीहै ॥ ६४८ ॥

### ६४९ हिरण्यगर्भरसः (पञ्चमः)

रसस्य भागाध्वत्वारस्तदर्थं कनकं तथा ।

तदर्थं ताम्रकञ्चय मौक्तिकं विद्रुमं समम् ॥ २७७५ ॥

तत्समानेन वलिता सर्वं खड्गे विमर्दयेत् ।

कृत्वा तु गोलकं पश्चात्पवेद्दधरयनके ॥ २७७६ ॥

मृदुना वह्निना चैत्र स्वाह्नशीतं समुद्धरेत् ।

वलिमेवञ्च संगुहं पङ्कणं जारयेत्सुधीः ॥ २७७७ ॥

हेमगर्भरसो नाम त्रिषु लोकेषु विधुतः ।

कासश्वासेषु सर्गेषु शूलेषु च हितस्तथा ॥

तत्तद्रोगानुपानेन सर्वांश्रोगाजयेत्परम् ॥ २७७८ ॥

नि. र., क्षये ।

भाषा—गारदमस्य ४ भाग, सुवर्णमस्य २ भा., ताम्रमस्य, मोती, प्रवाल और शुद्धगन्धक १-१ भागलेकर नीलवर्णकज-लीकर अदरखगैरुदेके रससे १-२ पहर घोटकर इच्छानुसार पोष्टी बनाय गन्धकयुक्त कण्डेकी ३ तहने लपेटकर मृषापुटकी आंचदे । स्वाह्नशीतलहोनेपर पूर्ववत् गन्धकको तह देकर पकावे । ऐसे पङ्कणगन्धकजराणहोनेकेबाद साफकर रखलेवे । इसमेंसे १ से २ रत्तीतक समयोचिनानुपानकेसाथ देनेसे कास, श्वास, शूलप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ६४९ ॥

### ६५० हिरण्यगर्भरसः (षष्ठः)

दरदं कर्पमात्रान्तु मर्दयेत्खड्गमध्यगम् ।

सुवर्णं माषमेकञ्च तत्सतं पाट्दं क्षिपेत् ॥ २७७९ ॥

मर्दयेत्प्रवा क्षिपेत्तत्र गन्धकं चार्धमाषकम् ।

मर्दयेदकंक्षरीरं र्वन्धयेत्पटमध्यगम् ॥ २७८० ॥



यामान्सिद्धो रसो नाम्ना सर्वरोगहरः परः ।  
हिरण्यगर्भो गुह्यैकः क्षयरोगनिवारणः ॥ २७९८ ॥  
श्वासकासौ सङ्ग्रहणौ वातज्याधीश्च सर्वशः ।  
विशेषान्नाशयत्येव यथारोगाद्युपानतः ॥ २७९९ ॥

र. का., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्धतावेकवारीकपर्णको गरमकर नवसादरमिलेहुए निगुण्डके रसमें ० बार बुझावे । फिर हरिताल और सोमल-  
सत्त्व, पारा और गन्धककतिल १-१ भाग लेकर गोमूत्र और  
आकके दूधसे मर्दनकर पत्रोंपर लेपदेकर गोला बनावे । इसके-  
बाद हीनोदार, पोंचोनमक, क्षोरा, फिटफड़ी, और बछनाग  
येसब पूर्वपिण्डके बराबर लेकर गोमूत्र और आककेदूधमें पीस  
गोलेपर लेपदेकर सुखाकर शराबसमुद्रमें बन्दकर २-३ कपह-  
मिनेदेकर सुखाय गजपुटमें ८ पहरकी आचदे । स्वाह्मशीतल  
होनेपर निकालकर पारा १६ भाग, हरितालभस्म १२ भाग,  
और शुद्धगन्धक ८ भाग लेकर आककेदूधसे १-२ दिन पीसकर  
गोलाबनाय शराबसमुद्रमें बन्दकर २१ पहरकी जहलीकण्डोंकी  
आचदे । स्वाह्मशीतलहोनेपर निकालकर रखजोड़े । इसमेंसे १-१  
रत्नी रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, श्वास, वाय, सङ्ग्रहणी,  
वातव्याधिप्रवृत्ति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६५३ ॥

### ६५४ हीरकरसायनम्

यज्ञं तार्क्ष्यञ्च माणिन्यं पुष्परङ्गं शनैर्मणिम् ।  
षेड्यैर्मथ गोमेदं मणिञ्चान्द्रं प्रवालकम् ॥ २८०० ॥  
भागोत्तरमिदं तस्माद्विक्रातं दिग्विभागिकम् ।  
माक्षिकद्वयजम्भरम् वैक्रातसममानकम् ॥ २८०१ ॥  
पूर्वस्मादुक्तसम्भारातिगुणामीशकज्जलीम् ।  
आजेन पयसा बन्ध्याकर्तोटीमूलसम्भवेः ॥ २८०२ ॥  
श्रावणीद्वयजै हंसपादीकोकनदोद्भूतैः ।  
पिप्पला पिप्पला पुटङ्गीमान् कौकुटारये च कज्जली २८०३  
वारन्धारं प्रदातव्या भवेदञ्जरासायनम् ।  
गर्भिणीनां प्रसूतानां बन्ध्यानां योनित्यापदाम् २८०४  
शुल्मप्रदरयुक्तानां स्त्रीणांमेतद्धितं परम् ।  
राजयक्ष्मक्षयहरं स्तम्भनं रेतसः परम् ॥ २८०५ ॥

नू. क., रसायने ।

भाषा—हीरा, पत्रा, माणिन्य, पुष्पराज, नीलम, वैदूर्य,  
गोमेद, चन्द्राक्षमणि, प्रवाल इनकीभस्में कमरुद्रमागसेलेकर  
वैक्रात, सोनामाक्षी और रुपामाक्षीभस्म प्रत्येक खरसे १०  
बाहिरुसा इनखरसे तिगुनी समभागपारगन्धककी कखली मिलाय  
बकरीकादूध, बाजलेपासेकाकन्द, लाल और पीली गोरख  
मुण्डी, हसराज, नीलोत्तर इनदोनोंसे १-१ दिल् मर्दनकर गोला-  
बनाय शराबसमुद्रमें बन्दकर एकत्रपुटकी आचदे । स्वाह्मशीतल-  
होनेपर निकालकर रखजोड़े । इसमेंसे १-१ रत्नी समय अववा  
रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे गर्भिणी, प्रसूता, बन्ध्या, मोचि  
क्षोप्रस्त, शुल्म, और श्रद्धयुक्त स्त्रियोंकेलिये यह अत्यन्त

हितकराकहे । राजयक्ष्म और क्षयको दूरकरताहै । सम्मोगसे  
१ ण्डापहिले लेनेसे शुक्का अत्यन्तसम्भनहोताहै ॥ ६५४ ॥

### ६५५ हीरचन्द्ररसः ( प्रथमः )

स्यात्कुलत्थरसवज्रकदुर्गघै र्वज्रमत्र पुटितं जयपालैः ।  
मेपकन्दकदलीविपरुद्धे संस्थितं तदनु किञ्चुकमूले ॥

मध्ये ततो मुनिपलाशजपिण्डे

पाचनाद्भवति हीरकभस्म ।

तत्समं कनकमौक्तिकतारं

तेन पञ्चगुणितं रससारम् ॥ २८०७ ॥

अम्लिकास्वरसमिधितमस्तः

सुरणस्य पिहितं पुटितञ्च ।

सिद्धलोहघनताम्रसमेतं

मृपयाऽथ विपचेत्पुनरेतत् ॥ २८०८ ॥

इत्थममृतगुणो रसरजो

नामतो भनति हीरकयज्ञः ।

धीमताऽऽज्यमरिचैरुपयुक्तः

सन्निपातगदनाशनसक्तः ॥ २८०९ ॥

शीणजीर्णविषमन्जरपाण्डु-

श्वासशोषकसानलमान्द्य- ।

प्लोहगुल्मजठरादिभिरग्नं

स्यागतां हृदि रजं चिनिहन्ति ॥ २८१० ॥

टो., ज्वराधिकारे ।

भाषा—हीरको डुलकीवेवाध, सेहुण्डकेदूध और जमाल-  
गोटके कर्कमें ७-७ बार बुझाकर मेपकन्द, कदलीकन्द, विप  
कन्द, पलाशकीजड़, अमल्यमूल, पलाशनेफूल इनमें क्रमश  
रखकर शराबसमुद्रमें बन्दकर गजपुटकी आच देनेसे भस्म होजा-  
ताहै । इसभस्मकी बराबर २ छवर्ग, मोती और रजतभस्म तथा  
पाचगुनी पारदभस्म मिलाकर इमलीकेद्वये १-२ दिन मर्दन  
कर जहरीसूरणके कन्दमें गोलेको रख उसीकी ढाटसे बन्दकर  
१-७ कपहमिदी देकर गजपुटकी आचदे । स्वाह्मशीतलहोनेपर  
निकालकर लोह, अन्नक और ताम्र इनकीभस्में पूर्वपिण्डकी बरा-  
बर मिलाय इमलीकेद्वये मर्दनकर पूर्ववत् सूरणमें रख गजपुटकी  
आचदे । स्वाह्मशीतलहोनेपर निकालकर रखजोड़े । इसमेंसे दो  
चावलसे १ रत्नीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ अथवा  
धी और मरिचकेसाथ देनेसे समस्तसन्निपात, शीणता, जीर्ण  
और विषमन्जर, पाण्डु, श्वास, शोथ, काष्ठ, मन्दासि, शीह, शूल,  
जठरदोष, हृदयकेरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६५५ ॥

### ६५६ हीरचन्द्ररसः ( द्वितीयः )

टङ्गाष्टकरसः शुद्धः क्षारिका टङ्गुपोडश ।

खरश्रेण्येन सप्ताहमेकोरुक्षं विमर्दयेत् ॥ २८११ ॥

पिण्डिकायां निरुद्धपाथ्य काजिके स्वेदेयेदिनम् ।

शुद्धं हीरमयो नीत्वा गुञ्जायुग्मं विजातिकम् २८१२



विद्वद्ध्यष्टालिके शुल्मे ग्रहणीमपि दुस्तपाम् ॥  
अतिसारं महाघोरं सर्वान् व्याधींश्च नाशयेत् ॥ २८४० ॥  
रसचि., रसायने ।

भाषा—हीरेकीमस २ मा., अन्नकमस ३ मा., पारद-  
भसम ४ मा., शुद्धगन्धक ६ मा., लोहमस २ मा., रजत-  
भसम ४ भागलेकर नीलवर्णकमलीकर गोरोचनकेसर और बही-  
लोणीके स्वरसकी ५-५ भावनाएं देकर दृढपामे बन्दकर  
सूपाको दो शरावोंमें रस ३-४ कपड़मिष्टी देकर एकहाथमरके  
खट्टेमें दो पहरेमें शान्तशोनेलायक लघुपुष्ट दे । स्वातन्त्र्योत्त-  
रानेपर निकालकर भैरव और दवाका पूजनकर रखछोड़े । इस-  
मेंसे १-१ रत्ती मरिचके साथ देकर पानखिलावे । क्रोध,  
मत्सरता, कसरत, धूप, अत्यन्तघोषना, चिन्ता, जुगली, अस-  
त्यभाषण इनका परित्यागकर पथ्यका सेवनकरनेसे पुष्टि, दृष्टिका  
आरोग्य, उत्तमसन्तति और वज्रघटीको प्राप्तहोता है ।  
सर्वनरहृदेषाद्यु, कान्त्यमाष, बुद्ध्या, फलित, चालित्य, स्वावर,  
जह्म और कृत्रिमविष, क्षय, काष, भयङ्करकपित, विदग्धि,  
अष्टौका, शुल्म, दुस्तप्रदणी और अतिसार ये सबरोग नष्ट  
होते हैं ॥ ६५७ ॥

### ६५८ हुताशनरसः ( प्रथमः )

एकक्षिकद्वादशभागयुक्तं  
योज्यं विषं दृढपामृषणञ्च ।

हुताशनी नाम हुताशनस्य

करोति वृद्धिं कफजिघ्राराणाम् ॥ २८४१ ॥

र. सं., र. चं., यो., र., व. यो. च., नि. र., र. कौ., वि.  
र. म., वे. चि., वे. र., दो., अमीर्णे ।

टि०—योगरत्नाकरप्रदिपु बुधविद्विमानभाग दृढप नियोगि-  
तमस्ति ।

भाषा—शुद्धघटना १ भाग, सुनापुहाणा २ मा., मरिच  
१२ भाग लेकर वारीकचूर्णकर अदरसर्गुरहके रससे घोटकर  
१-१ रत्तीकी गोलिए क्वाकर रसछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली  
रोगोपिप्रातःप्रातःकेसाय देनेसे मन्दाग्नि और कफरोगोंको यह  
दूरकरताहै ॥ ६५८ ॥

### ६५९ हुताशनरसः ( द्वितीयः )

बलिनालिरसामृतं समं त्रिकटुद्रव्यतो विमर्दयेत् ।  
ज्वलनाम्युत्तुतं तथाद्रकद्रव्यतोऽपि विमार्जितं प्रहम् ॥  
अपतौह रसायनं परं मरिचैः सहितं भगन्दरम् ।  
ग्रहणीमपि नाशयेद्गुणं घृतयुद्धरिचैर्निर्णयितम् २८४३

तन्मृद्वर्णं मधुपिप्लवीभ्यां

धात्रीरससोद्भूतं प्रमेहम् ।

आमानिले क्षौद्रहरतकीभ्यां

पासामधुम्याश्च रुष्टे निहन्त्यम् ॥ २८४४ ॥

पञ्चाङ्गनिम्बामल्लेखेन घृते

पूतां कपासोद्भूतं निहन्त्यात् ।

### घृतोपणाभ्यां गलगण्डरोगं

भ्वासाग्निमान्द्यं श्वयथुं हुताशः ॥ २८४५ ॥

र., भगन्दरे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, कालादाना, पारा और यलनाग सम-  
भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकमलीमें मिलाय  
त्रिकटु, चित्रक और अदरसकेरसोंसे ३-३ दिन मर्दनकर  
आधीआधी रत्तीकी गोलिए क्वाकर रसछोड़े । इनमेंसे १-१  
गोली मरिचकेसायदेनेसे भगन्दर; पी और मरिचकेसाय  
प्रदणी, गलगण्ड, श्वास, मन्दाग्नि और शोथ; मधु और पीपल-  
केसाय मृद्वर्ण और मकड़ोकाविष; आंवलेकेरस और मधुसे  
प्रमेह; हरे और मधुसे आमवात; अह्सेकेरस और मधुसे वात-  
रस; निम्बपत्राश्च और आंवलेसे क्षुध; येसब रोग नष्टहोतेहैं ॥

### ६६० हुताशनरसः ( तृतीयः )

यावद्भस्म भवेत्कणौ हुतयह संहृष्यतेलोहजे,  
कम्प्यो भस्मसमः समो यलिरसौ दत्त्वाऽङ्गिपादांशकौ  
उत्तार्याऽथ तयोः समोपणविषाभ्यां सार्द्धमेतद्धर्मं,  
पिप्प्ला स्याद्ब्रह्मणीयगादिषु च तद्योगे हुताशो रसः ॥

दो., ग्रहण्यम् ।

टि०—यद्यप्यस्मिन्योगेऽनिरस्यनागरजसः सम्मेलन विहित एतदु-  
निरस्यभस्मान्तरा पञ्चवर्षादितादिरोगजनकत्वसम्भवात्कुमारीरते मर्त-  
विला सत गणपुद्गन् दत्त्वा योगे निबोनीयमिति विशदु विवर्तना  
प्रायतः ॥

भाषा—वाह्यमस १ मा., समभाग पारद और गन्धककी  
कमली आधारभाग मिलाकर रखले । फिर एकभाग शुद्ध सीधेछो  
लोहेकीकड़ाहीमें गलाकर उपजुक्त तीनोंचीजोंका थोड़ा २ प्रशेप  
देकर नीम या बबुलके कण्डे अपना लोहेकी कड़ाहीसे पर्यङ्करे ।  
प्रशेष समाप्त होनेपर लूणा पर्यङ्करे । कड़ी आंव देनेपरभी न  
जमे तब घटनेसे टककर आगपरही रहनेदे । स्वातन्त्र्योत्त-  
रानेपर निकालकर इसकी बराबर मरिच और शुद्धघटनाग मिलाकर १-३  
दिन मर्दनकर रसछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती समोपिप्रातःप्रातः-  
केसाय देनेसे यह सद्ब्रह्मणीयगुरोरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६६० ॥

### ६६१ हृदयेश्वररसः

रसगन्धकलौहास्त्रं चिद्रुमं मौक्तिकं तथा ।

कन्याद्रव्येण सम्मर्ष्यं गुञ्जाद्रव्यमितां घटीम् ॥ २८४७ ॥

एत्वा संशोषयेद्भृङ्गद्रव्यहियोगं पिना मियक ।

पार्थाम्मसा सर्पिषा च दद्याद्भृङ्गोदगशान्तये ॥ २८४८ ॥

आ. वि., हृदये ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अन्नर, प्रजन  
इनकीभस्में और मुलादिष्टी समभागलेकर नीलवर्णकमलीमें  
घोटकर रखे एकदिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिए क्वा-  
कर रसछोड़े । इनमेंसे १-१ रत्ती पी चालकर संशेप अन्न-  
रसकेसाय देनेसे यह हृदयेको नष्टकरता है ॥ ६६१ ॥

कर क्षीरकृशुकी और बन्दालकेरसोंसे वसपल्वमे नष्टपिष्टी बनावे । इसकेबाद ३० वां अथवा १६ वां भाग कान्तचूर्ण मिलाय अन्यप्रमाणे बन्दकर घमनकरनेसे गुटिका तैयारहोगी । इसको सुंढमें रखनेसे समस्त सिद्धियां होतीहैं ॥ ६६६ ॥

### ६६७ हेमयोगः ( प्रथमः )

मधु मागधिकां विडङ्गसारं  
त्रिफलां हेम घृतं सिताञ्च खादेत् ।

जरया नवलीढदेहकान्तिः

समधातुश्च समाः शतञ्च जीवेत् ॥ २८६६ ॥

र. र. स., र. र. कौ., रसायने ।

भाषा—पीपल, विडङ्गल, त्रिफला और सुवर्णमसमभागलेकर सबकी बराबर बराबर मिलाकर रगड़ोड़े । इसमेंसे रोगीका बलाजल देखकर १ मासेसे २ मासेतक मधु और धीकेसाथ मिलाकर लेनेसे बुढ़ापे और धातुओंकी वियमतसे रहितहोकर पूरे १०० वर्षतकजीताहै ॥ ६६७ ॥

### ६६८ हेमयोगः ( द्वितीयः )

सपञ्चवीजामलकामयाक्षं  
सर्पिर्मधुन्यां कनकं लिहन्तः ।

दीर्घायुषो मन्दजरोपतापाः

सरीसृपाणाञ्च भयन्यगम्याः ॥ २८६७ ॥

र. र. स., र. र. कौ., रसायने ।

भाषा—कमलगडा, त्रिफला और सुवर्णमसम समभाग मिलाकर रगड़ोड़े । इसमेंसे २ रतीसे ६ रतीतककी मात्रा मधु और धीकेसाथ लेनेसे दीर्घायु होतीहै । बुढ़ापे और चित्तशोभादिस्वोंका असर कमहोताहै । सर्पप्रवृत्ति शतक जन्तुओंकाभी भय नहीं रहताहै ॥ ६६८ ॥

### ६६९ हेमयोगः ( तृतीयः )

सुवर्णचूर्णात्पलमभ्यगम्या-

रजः समानं हविषा विलीढम् ।

ततोति पुष्टिं घृणुयः सुकान्तिं

यलायुरारोग्यकरं नियोज्यम् ॥ २८६८ ॥

लो. १, रसायने ।

भाषा—सुवर्णमसम १ रती और अक्षयम्पकाचूर्ण ३ भागों धीकेसाथ लेनेसे पुष्टि, कान्ति, बल, आयु और आरोग्यकी वृद्धि होती है ॥ ६६९ ॥

### ६७० हेमलोहम्

तिरीटमोचोन्मलताप्रपुष्पा-

पाठाम्मद्वायुद्वयस्सकानाम् ।

समे रजोभि हिगुणं समान-

हेमाकेलाहं मधुना प्रयोज्यम् ॥ २८६९ ॥

पीत्या ततस्तेण्डुलधावनाम्मो

जयत्यर्तामार्मुदीर्घययम् ।

### प्रणष्टवर्हिं कुरुते प्रदीप्तं

बलं वपुःकान्तिविवर्धनञ्च ॥ २८७० ॥

लो. १., अतिसारे ।

भाषा—यशनीलोघ, मोचरस, कमलगडा, धावड़ीकीजड़-कीछाल अथवा फूल, पाठा, लज्जानु अथवा मज्जीठ, नागर-मोया, इन्द्रजव १-१ भाग, सुवर्ण, ताम्र और लोहमसम मिलाकर पूर्वचूर्णसे दूनी डालकर एकदिनमर्दनकर रखोड़े । इसमेंसे १ से ३ रतीतक मधुकेसाथ देकर ऊपरसे चावलोंका धोवन पिलासे बड़ाहुआ अतिमार नष्टहोताहै । मन्दाभिको प्रदीप्त कर बल, क्षीर और कान्तिमें यज्ञताहै ॥ ६७० ॥

### ६७१ हेमसुन्दररसः

मृतसूतस्य पादांशं हेममसमं प्रकल्पयेत् ।

क्षीराज्यमधुसमिधं मापैकं कान्तपात्रके ॥ २८७१ ॥

लेहयेन्मासपद्भुतं जराभृत्युयिनाशनम् ।

धातुचीचूर्णरूपैकं धात्रीफलरसप्लुतम् ॥

अनुपानं लिहेज्जित्वं स्याद्रसो हेमसुन्दरः ॥ २८७२ ॥

र. चि, र. सं., रसायनसं., र. सं., र. सु, यो. म, आ. प्र., बात्रीकरणे ।

टि०—कुत्रचित्क्षीराज्यमधुसमिधस्य कारणपात्रे लेहयितुं कम् । रसदा-जशितोमणौ हेमविट्टिकायोम इतिनाम्ना “पादाशक हेम रसस्य दत्ता गोल सतुने क्षिप कान्तपात्रे । सुदमिना सापिनीशोनलस्य क्षीरस्य पान मरुन्मयप्रमम् ॥” इतिपाठो निदिनोडरिण लोडयदेवाडयभ्रसोडरिण छन न पाठान्तरात् ।

भाषा—गरदमस ४ भाग, सुवर्णमसम १ भाग मिलाकर रगड़ोड़े । इसमेंसे उड़दबराबरमात्रा कान्तलोहेपानमें मधु और धीकेसाथ लेकर दृषपीनेसे ६ महीनेमें बुढ़ापे और मृत्युका नाशहोताहै ॥ ६७१ ॥

### ६७२ हेमसुन्दरीगुटिका ( प्रथमा )

मृतसूतान्नकान्तालं कर्प कर्पं समाहरेत् ।

गन्धकञ्च समं सर्वैः सुधातोयेन मर्दयेत् ॥ २८७३ ॥

चन्दनद्वितयेनापि द्रव्येणसुभवेन च ।

यर्षाभुसद्वेद्येयोश्च रामशीतलिकामधुना ॥ २८७४ ॥

गृहकन्यारमेनापि धात्रीफलरसेन च ।

दिनं दिनं विमर्द्याय शोषयेत्तदनन्तरम् ॥ २८७५ ॥

तुण्डरीरिकायाः कुण्डल्याः सत्त्वं शुक्रमलप्रमम् ।

त्रिफला कटुका मुस्ता कणा सागररक्तया ॥ २८७६ ॥

यत्नानि कर्षमानानि पूर्ववद्भावयेन्समैः ।

रमेन सह सम्मेल्य मर्दयेत्सत्ता प्रयत्नतः ॥ २८७७ ॥

द्राक्षाजेन कषापेण भावयेद्विषयस्तुजे ।

तत्तद्रोगद्वयो प्रोक्ता गुटिका हेमसुन्दरी ॥ २८७८ ॥

रगतामर, बात्रीकरणे ।

भाषा—गरद, अश्रक, कान्तगोद, हरिताल इनकोमसमें १-१ कर्प, गुडकमस ४ कर्प लेकर नीलरंगदमरकोर गुनेहा

पानी, लाल और सफेदचन्दन, ईख, इटसिट, सहदेवी, जंगली-  
कपास, धीनुवार, ताजे आदले इनके इक्कीसे १-१ दिन भाव  
नादेकर सुखाकर कुदरु और मिलोयकासक्त, त्रिफला, कुटरी,  
नागरमोया, पीपल, रोष १-१ कपलेकर बासीकचूणकर पूर्वद-  
वोंकी भावनाएँ देकर सबको इक्का मिलाय द्राक्षाके ढाघ और  
निसरोगमे प्रयोगकरताहो तनासकदवोंसे भावनादेकर १-१  
मासेकी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से २ गोलीतक  
औथितो देखकर तत्प्रागहरानुपानवेसाध देनेसे यह समस्त-  
रोगोंको नष्टकरतीहै ॥ ६४२ ॥

### ६७३ हेमसुन्दरीगुटिका ( द्वितीया )

समुखस्य रसेन्द्रस्य पृथक्काञ्चनं समम् ।  
जारपेष्टिद्वियोगेन ततो मर्द्यं दिनत्रयम् ॥ २८७९ ॥  
दिव्यौषधैः सगोमूत्रैर्वज्रमूपान्गितं धमेत् ।  
उद्धृत्य धारपेष्टकने गुटिकां हेमसुन्दरीम् ॥ २८८० ॥  
पलादं गन्धकं चाज्यैर्द्विगुणैर्लेहयेदनु ।  
वर्षकेण जरां हन्ति जीवेद्यच्चन्द्रतारकम् ॥ २८८१ ॥  
र ख, र का, रसायने ।

भाषा—उनुशान्तसस्कार कियेहुए १ पल पारेमें रसनात्रमे  
कहेहुए चतु पट्टपशादिमासोंसे समभागसुवर्णका विडयोगोंसे  
जारणकर यथाशक्य दिव्यौषधि और गोमूत्रसे ३-३ दिन  
मर्दनकर वज्रमूपामें बन्दकर ४ पहर धमनररनेसे गोली तैयार  
होगी । इसगोलीको मुहमें रखले और दोकष शुद्धगन्धरको १ पल  
गोमूतकेसाध प्रतिदिन सेवनकरनेसे दीर्घायुको प्राप्तहोताहै ॥

### ६७४ हेमसूतकरसः

रसं हेमसमं मर्द्यं पिष्टिकार्थेन गन्धकम् ।  
क्षिपद्दीं रजनीं रम्भां मर्दयेद्वृङ्गान्वितम् ॥ २८८२ ॥  
नष्टपिष्टञ्च शुष्कञ्च अन्धमूपानिवेशितम् ।  
तुपाग्निना लघुपुटं दत्त्वा भस्मत्वमानयेत् ॥ २८८३ ॥  
भक्षणादस्य सूतस्य दिव्यदेहमवाप्नुयात् ।  
सर्वव्याधिं जरां हन्ति वर्षमात्राच्च सूतराट् ॥ २८८४ ॥  
रसेन्द्रम, रसायने ।

भाषा—समभाग शुद्धपारा और सोनेकेबर्क एकजगह मिला-  
कर दशमूली, हुदुर, जलीपल वगैरहके रससे १-२ पहर  
मर्दनकर पिष्टी बनावे, फिर शुद्धगन्धक, ईशराज, हल्दी,  
केलाकान्द और सुहागा येसब मिलकर पिष्टीसे आधे प्रमाणमें  
मिलाकर केलेकेकन्दके रससे चमकनटहोनेतक मर्दनकर टिकड़ी  
बनाय अच्छीतरह सुखाकर अन्धमूपामें बन्दकर तुपागिका लु  
पुटदेनेसे भस्म तैयार होगी । इसमेंसे आधी रत्तीसे १ रत्तीतक  
मात्रा तत्प्रागहरानुपानवेसाधदेनेसे समस्त व्याधि नष्टहोतैहै ।  
एकवर्षके प्रयोगसे बुढ़ापा दूरहोकर दिव्यशरीरको प्राप्तहोताहै ॥

### ६७५ हेमाङ्गसुन्दररसः ( प्रथम )

शुद्धं सूतं समं ग्राही लोहं गन्धं सुवर्णकम् ।  
कज्जलीकृत्य यत्नेन शुल्बपात्रे भिषग्वरः ॥ २८८५ ॥

राजिकास्वरसं दत्त्वा कृष्णोन्मत्तस्य वै रसम् ।  
दत्त्वा दत्त्वा प्रयत्नेन मर्दयेद्य निमिर्दिनैः ॥ २८८६ ॥  
निमिश्च सारपं तैलं दत्त्वा कल्कं विमर्दयेत् ।  
शोषयेद्भानुभिर्मानोर्ज्वालां दद्याच्छनैः शनैः ॥ २८८७ ॥  
वाल्मुकायन्त्रयोगे तु प्रोक्तमेपजमध्यतः ।  
तावज्ज्वाला प्रदातव्या वालुकायुष्णतां मजेत् ॥ २८८८ ॥  
स्वाङ्गशीतलतां ज्ञात्वा कर्पयेत्त भिषग्वरः ।  
ततो गुञ्जाप्रमाणेन मापमापार्थक्यं पुनः ॥ २८८९ ॥  
ज्ञात्वा रोगं शरीरञ्च योजनीयं युधैः सदा ।  
घृतेन मधुना सार्द्धं मर्दयित्वा तु खल्वके ॥ २८९० ॥  
रसं वा भक्षयेत्पश्चादाज्यं गन्धं गवां पयः ।  
सामान्येन तु कर्तव्यं चित्रकार्द्वैकसैन्धवैः ॥ २८९१ ॥  
रोगिणामनुपानीयं रसमाप्येन भोजनम् ।  
सुस्निग्धं नातिमधुरं मांसञ्चैव निहायसम् ॥ २८९२ ॥  
भक्ष्यं छायादिकं मांसं ज्ञातं यस्य तु भक्षणम् ।  
एतेनापि विधानेन प्रातः प्रातर्निपययेत् ॥  
साध्याऽसाध्येषु रोगेषु तथा व्याधिचक्षेपु च ॥ २८९३ ॥  
र र, घ., बाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और सुवर्णभस्म  
समभागलेकर नीलकण्ठकलीकर तावेके पानमें तावेके डण्डेसे  
कालेपट्टेकेपत्तीकास थोडा थोडा दकर ३ दिनतक मर्दनकर ।  
फिर ३ दिन सरसोंके तेलसे मर्दनकर कड़ीभूपमें अच्छीतरह  
सुखाकर आतशीशीशीमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रख क्रमादि  
देवे । जरकीवालुकेस्पर्शको जब हाथ सहन न करे तब अग्नि  
बन्दकरदेवे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे  
१ रत्तीसे बढाकर आधे अथवा एकमासकी मात्रा तक रोग और  
रोगीका बलावल देखकर नियतकरे । घी और मधुमें कुछदेर  
खरलकरके द्वाडा सेवनकरना चाहिये । इसकेबाद पायके दूधमें  
गोमूत डालकर यथाशक्ति पीना चाहिये । साधारणरोगोंमें  
चित्रक, अदरक और सैन्धवकेसाध देवे । भोजनमें घृतयुक्त  
वासरस, स्निग्धपदार्थ, साधारणमधुर पन्थ, चिड़िया और बकरी  
भगैरहका हल्का मांस खावे । साधारणरोगोंमें केवल प्रातः काल  
औषध देवे । विधिपूर्वकसेकेसेवनसे साध्य अथवा असाध्य  
रोग निवृत्तहोतैहै ॥ ६७५ ॥

### ६४६ हेमाङ्गसुन्दररसः ( द्वितीयः )

पूर्वसिद्धे रसे क्षिप्त्वा रसपादेन काञ्चनम् ।  
विमर्द्यापि विधानेन सुपिष्टञ्च विनिक्षिपेत् ॥ २८९४ ॥  
कान्तवैकान्तके चैवं क्षितं तत्र विधानतः ।  
मधुरत्रयसंयुक्तं मासमात्रे दिने दिने ॥ २८९५ ॥  
लीढाऽनुपानं पातव्यं मन्दं तप्तं गवां पयः ।  
त्रि.सप्तदिवसैः क्षीणो भवेदक्षीणधातुकः ॥  
ऊर्ध्वलिङ्गः सदा तिष्ठेद्वायवेद्वनिताशतम् ॥ २८९६ ॥  
र. र, घ., बाजीकरणे ।

**भाषा**—तृप्तशान्तसंस्कारकियेहुएपारेमें चतुर्थीश सोनेके बर्क डालकर पिठीबनावे । फिर उसमें कान्तलोह और वैकान्तकी-भस्म प्रत्येक सुवर्णके बराबर मिलाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ रत्ती मधु, धी और शकरके साथ मिलाकर सेवनकरे और कसरसे कटुण गोदुग्धपीवे । इसप्रयोगको २१ दिनतककरनेसे घातु-क्षीणआदमी घातुसे परिपूर्णहोकर पूर्णपुण्यत्वमें आजाताहै ॥

### ६७७ हेमाद्रिरसः

वेदकर्प रसं त्र्यक्षं पिष्ट्वा गन्धं पलद्वयम् ।  
पलं नागाम्रयोः सर्वं सञ्चर्य सिकताघटे ॥ २८९७ ॥  
पक्कमृपागतं यामं पचेद्भूयः क्षिपन्ध्रवम् ।  
केतकीकुट्टनिर्गुण्डीशिमुप्रग्रन्थश्चिचव्यञ्जम् ॥ २८९८ ॥  
वन्ध्याहिंसेभक्तपुन्यं व्याघ्रीलुङ्गबलोद्भवम् ।  
अश्वगन्धाम्रं चारान्धिशदित्रीपुसागरम् ॥ २८९९ ॥  
पट्टसप्तयसुद्रिग्विचयुगं सुचनतः क्रमात् ।  
कुमार्याः पुटयेत्प्रौढो रत्तो हेमाद्रिसंज्ञकः ॥ २९०० ॥  
मुक्तो माषो निहन्त्याग्नौ सर्वांशोरोचकप्रहान् ।  
मन्दाग्न्युन्मादमेदांसि गण्डमालाऽनुदाऽपचीः २९०१ ॥  
गलगण्डप्रमेहादीन्मुष्कलिङ्गाक्षिकर्णजान् ।  
क्षुद्रोगांश्च विविधान् गरुडः पन्नगानि च ॥ २९०२ ॥  
र. बि., रसायनतं., र. का., र. सि., सर्वरोगे ।

**भाषा**—गुस्त और पारदभस्म १-१ पल, शुद्धगन्धक २ पल, नाग और अन्नकभस्म १-१ फल लेकर नीलवर्णकबली-कर एकपहेमें बालुभर बीचमें पक्कमृपामें इसकबलीको डालकर केयरेका टण्डा, कुड, निर्गुण्डी, सहिजन, पिपलामूल, चिन्क, चन्च, बांसलेपसेकाकन्द, हंस, हस्तिकर्णपलाश ( लोडाइन हिं., फल्लतवेल् म. ) मटकटिया, पिजोरा, यला, अलगन्ध, धीकुंवार इन प्रत्येककेस्वरसोसे २०, २, ३, ५, ७, ६, ७, ८, ८, २, १, ४, १४, १४, १४, इसक्रममें अग्निपर भावनाएँ देकर १-१ मासेकी गोलीएँ बनाकर रखछोड़े । प्रत्येकभावनामें इल्लारस देनायाहिये कि एकवारका डालाहुआरस एकपहेमें सूखजाय । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुगानेके साथ देनेमें सबप्रकारके बरी, अरुचि, गलगण्ड, मन्दाग्नि, टन्माद, मेद, गण्डमात्रा, अर्बुद, अपची, गलगण्ड, प्रमेह, अण्ड-लिङ्ग-आरा-कान इन-बे रोग और नानातरहके शुद्रोग इनसबको सर्वरोगहरकीतरह यद् नष्टकरताहै ॥ ६७७ ॥

### ६७८ हेमाभक्तम् ( हेमान्द्रम् )

त्रूपणाम्युकरिकेतारत्यथा

तुल्यमागरजसा समीकृतम् ।

हेमयात्रिदत्तो मधुप्लुतं

लीटमग्निजटां तनोहेत् ॥ २९०३ ॥

लो. प., अग्निमान्ये ।

**भाषा**—विष्ट, गुणधवाला, नायकेर, सब १-१ भाग, गुण और अन्नकभस्म ३-३ भाग लेकर बारीकपूर्णकर १-२

दिन घोटकर रखछोड़े । इनमेंसे १ से २ रत्तीतक मधुमें मिलाकर सेवनकरनेसे मन्दाग्निप्रभृति रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६७८ ॥

### ६७९ हेमाभ्रसिन्दूरम्

अम्रकं रससिन्दूरं मिश्रितं हेमभस्मना ।

समभागं प्रकुर्वीत रसैरार्द्रकजैर्युतम् ॥ २९०४ ॥

क्षयञ्च क्षयपाण्डुञ्च क्षयकासञ्च दारुणम् ।

जयेन्मण्डलपर्यन्तं पूर्वक्रमविधानतः ॥ २९०५ ॥

नि. र., र. सु., यो. र., राजयश्मणि ।

**भाषा**—रससिन्दूर, अम्रक और सुवर्णभस्म १-१ भाग लेकर १-२ दिन मर्दनकर रखछोड़े । अथवा अदरकके रससे १-१ रत्तीकी गोलीयेँ बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुगानेके साथ अथवा अदरकके रससे साथ एकमण्डलक-देनेसे क्षय, मयङ्गराण्डु और कासको यह नष्टकरताहै ॥ ६७९ ॥

### ६८० हेमाभृतरसः

भागमेकं पारदस्य यलेर्भागद्वयन्तथा ।

हेहः पादमितं भागमेकैकं तारवद्भयोः ॥ २९०६ ॥

अर्जुनस्य कपायेण सम्मर्द्य रक्तिकोन्मिताम् ।

वटीं कृत्वा दापयेच्च सिताऽऽज्यमधुसंयुताम् २९०७ ॥

शाम्यन्त्यनेन हृद्रोगाः सर्व एव न संशयः ।

श्रीमद्ब्रह्मनाथेन निर्मितोऽयं रत्तोत्तमः ॥ २९०८ ॥

आ. वि., हृद्रोगे ।

**भाषा**—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भाग, सुवर्णभस्म अथवा बर्क चतुर्थभाग, रजत और वज्रभस्म १-१ भाग देकर नीलवर्णकबलीकर अर्जुनकेकायसे मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलीयेँ बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शकर, धी और मधुके-साथ देनेसे समस्त हृद्रोग नष्टहोचै ॥ ६८० ॥

### ६८१ हेमान्द्रुदलोहम् ( प्रथमम् )

उशीरलोघ्रोत्पलपद्मकेशरा-

न्सचन्दनान्मीचरसोपवृंहितान् ।

मियङ्गुनापोत्पलतः समं रजः

परिप्लुतं सूक्ष्मतरणे घासस्ता ॥ २९०९ ॥

समानहेमान्द्रुदलोहपूर्णं

सर्माकृतं तेन मधुप्रलीढम् ।

विलीटमाभ्येव निहन्ति रक्त-

पित्तं गुदातद्दुर्मरुभ्रमभूतम् ॥ २९१० ॥

लो. प., रक्तपित्ते ।

**भाषा**—राघ, लोघ, कमलग्राह, कमलकेसर, राघेदनन्दन, मोचरस, मियङ्ग, नागकेसर, सेवध १-१ भाग लेकर कारकजान-पूर्णकर गुण, अम्रक और लोहभस्म १-१ भाग मिलाकर रखछोड़े । इनमेंसे ३ से ६ रत्तीतक मात्रा मधुमें मिलाकर देनेमें रक्तपित्त, गुदरोग, रजज्वर इनसबको यद् नष्टकरताहै ॥ ६८१ ॥



६८२ हेमाम्बुदलोहम् ( द्वितीयम् )

वरानिशाक्षोदसमं समांशं

हेमाम्बुदाय प्रभवं रजश्च ।

क्षौद्रेण लीढं विनिहन्ति मेहा-

न्ददाति पुष्टिं धनुषः श्रियञ्च ॥ २९११ ॥

लो. ५, प्रमेहे ।

भाषा—त्रिकला और हल्दी समभाग लेकर बारीकचूर्ण कर सबकोबराबर सुवर्ण, अन्नक और लोहमसम मिलाकर रस छोड़े । इसमेंसे १ से ३ रसीतक मधुमेयायलेनेसे सबप्रकारके प्रमेह और कृशताको नष्टकर शरीरकी कान्तिको बढाताहै ६८२

६८३ हेमार्कलोहम्

यथाऽप्यपाठाऽतिविषयाधिङ्ग-

गदानलप्रग्निकयारिषिध्वम् ।

समं रजस्तद्गुणानि तुल्य-

हेमार्कलोहानि घृतेन लीढा ॥ २९१२ ॥

पीत्वाऽनुकोष्णं जलमेव जहा-

होपं ग्रहण्या शुक्कीलकांश्च ।

प्राप्नोति घृष्टिं धनुषः प्रकर्ष-

मुहामधामोपचयोपपन्नः ॥ २९१३ ॥

लो. ५, ग्रहण्याम् ।

भाषा—बब, नागरमोषा, पाठा, अतीस, विडङ्ग, कुड, चित्रक, गठिवन, सुगन्धबाला, सोंठ, यैसव समभाग लेकर बारीकचूर्णकर सुवर्ण, ताम्र और लोहमसम चूर्णसे द्विगुणप्रमाणमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से २ रसीतक धौकेसाय मिला कर सेवनकर थोड़ापरमजलीये । जलकापीना बन्दकरे । यह ग्रहणी, बपासीर, मन्दासि, इनसबको नष्टकर शरीरको दिव्य तेज्युक्त बनाताहै ॥ ६८३ ॥

६८४ हेमेन्द्रगः

अतः पर प्रयस्यामि रसायनमुत्तमम् ।

मानाव्याधिप्रशमनं बलवृद्धिकर परम् ॥ २९१४ ॥

शुद्धसूतस्यैकभागं हेमभागसमीकृतम् ।

द्विगुणं गन्धकं दत्त्वा दिव्यौषधिदिमावितम् ॥ २९१५ ॥

चक्रराजेन तं पक्त्वा यावदेव स्थिरायते ।

भृङ्गराजेन सम्भाव्य धनीयादुटिकां शुभाम् ॥

हेमेन्द्ररसनामाऽयं कामलादिगदापहः ॥ २९१६ ॥

रससार, कामलादौ ।

भाषा—शुद्ध पारा और सुवर्णमसम १-१ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग मिलाकर नीलवर्णजलीकर यथासम्भव दिव्यौषधियोंकी भावना देकर अनलरस स १२५ में केहलुपके अनुसार बक्यन्तमें यहातक पकावे कि अमिषायी होजाय । फिर भंगोकेरसकी २-४ भावनाएँ देकर १-१ रसीकी गोळिये बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोळी तत्तदोगह्रातुपानकेसाय

सेवनकरनेसे नानाप्रकारके रोगोंको नष्टकर बल और बुद्धिको बढाताहै । अधिकदिन सेवनकरनेसे कामलावगेरह नष्टहोतेहैं ६८४

६८५ हंसपोट्टली ( प्रथमा )

वराटिकामसमसमं सुमसमं

वह्नस्य पादांशरजो रसस्य ।

विमर्चं सर्वं स्वरसेन गाढ

नागार्जुनीशास्त्रमलिजेन यामम् ॥ २९१७ ॥

संशोष्य पञ्चान्मरिचांशयुक्तं

क्षौद्रेण च व्याधियलप्रमाणम् ।

ख्लादेत्यण्यदयन्ति हि तस्य मेहा

ग्रहण्यतीसारगदाः सक्तालाः ॥ २९१८ ॥

यो. म, प्रमेहे ।

भाषा—पीलीकौड़ी और वह्नमसम १-१ भाग, पारदभस्म चतुर्थभाग मिलाकर नागार्जुनी और सैमलकेस्वरसे १-१ दिन मर्दनकर हिरण्यगर्भपोट्टलीनिर्दिष्टप्रकारसे इसकी पोष्टी बनाकर रखछोड़े । अथवा इसमें धौकशास मरिचकाचूर्ण मिलाकर रखले । इसमेंसे १ से ३ रसीतक व्याधिबलको देखकर मधुमेसायलेनेसे सबप्रकारके प्रमेह, ग्रहणी, अतिसार और कास नष्टहोतेहैं ॥

६८६ हंसपोट्टली ( द्वितीया )

निष्फेकं सुखिष्ठं सूतं क्षिनिष्कं मृततीक्ष्णरुम् ।

शिखितुल्यं तीक्ष्णतुल्यं कर्पाक्षं गन्धमौक्तिकम् २९१९

विषं निष्फञ्ज तत्तयं भृङ्गाद्रिसुरसाद्रयै ।

अग्निपर्णी हरिद्रा च लाङ्गलीकान्वजेद्रयै ॥ २९२० ॥

मरिचैर्मधुना लेह्या मापेका हंसपोट्टली ।

हन्ति सङ्गहणी शीघ्रमतिसारञ्च पाण्डुताम् ॥ २९२१ ॥

श्वासदीर्घत्वगुल्माश्च कासं हिकामरोचकम् ।

क्षौद्रेण विजयानिष्कं लेहयेदनुपानकम् ॥ २९२२ ॥

र सु, चि र, र, रसायनस, र र सी, ना. वि, ग्रहणी-रोगे ।

हिं—रसायनसद्रूपे औषधप्रमाण अथवापात्र यत्किञ्चिद्द्रव्यं प्रदीयते ॥ अकिञ्चित्करं प्रतिमानि, अतो न पृथक्पाठं समुद्धृतं ।

भाषा—पारदभस्म अथवा रससिन्दूर १ टङ्क, कोलाद और तुल्यभस्म, शुद्धगन्धक और मुक्तापिटी २-२ टङ्क, शुद्धबछ नाग १ टङ्क लेकर ३-४ पहर शुष्कमर्दनकर भगरा, अद रस, तुलसी, चित्रक अथवा अगियापास, हल्दी और करि हारीकन्द इनप्रत्येकके स्वरसे १-१ दिन मर्दनकर उद्ध्वारावर गोळिये बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोळी मधु और मरिचकेचूर्णकेसायलेनेसे सङ्गहणी, अतिसार, पाण्डु, श्वास, कृशता, गुल्म, कास, हिकार और अरचिको यह नष्टकरतीहै । यदि पोष्टी बनाई हो तो उसे अन्दानसे शहदमें घिसकर मरिचकाचूर्ण मिलाकर देना । सङ्गहणी और अतिसारमें १ माघेसे १ टङ्कक मुनीषमाका चूर्ण मधुमें मिलाकर ऊपरसे सेवनकराना ॥ ६८६ ॥

## ६८७ हंसभैरवरसः

सुरुरीक्षोरपुटिते शुक्रिक्षारेण शोषिते ।  
 वङ्गे द्रुते रसे क्षिप्त्वा तृतीयं शङ्खं हिङ्गुलम् ॥२९२३॥  
 छिन्नकारसेन सम्मर्द्य तदर्धार्थानि बुद्धिमान् ।  
 सौम्यालसिन्दूरशिलादङ्गुलानि च निक्षिपेत् ॥२९२४॥  
 पलाशवल्कलरसे रक्षीरश्च सप्तधा ।  
 पलाशवटचिञ्चानां क्षिप्त्वा क्षारांश्छरात्वेक ॥२९२५॥  
 सिद्धो हृदाग्निनाऽयं तु ह्याग्निश्चाग्निहरे पुनः ।  
 'ह्रियुः' द्वापयेच्छीत समानं हंसभैरवम् ॥२९२६॥  
 पश्याऽर्जुनविडङ्गोत्थं काथं चानु मधुप्लुतम् ।  
 शुक्रमेहादिकान्मृत्ति रसोऽयं हंसभैरवः ॥२९२७॥  
 र. का, प्रमेहाधिकारः ।

भाषा—हिरण्यवरी रागेको पिपलार सूरकिन्दूच और मोतीपीसीपत्रेक्षारजले ७-१४ अथवा २१-२१ बार बुझावे । फिर इसको गलाकर समभाग शुद्धपारा और तृतीयाश किंगरिफ मिलाकर नक्षत्रिकनीकारस देताहुआ पलाश अथवा सफेद आकके ताजे ढण्डेसे यहातक मर्दनकरे कि उसकी भस्म होजाय । फिर शुद्धसोमल, हरिताल, रससिन्दूर, भैरसिल, मुहागा ये प्रत्येक इसभस्मसे चतुर्थाश ममश डालकर मर्दनकरे फिर पलाशकीजइकीछालके रस और सफेद या साधारण आरकेन्दूचकी ७-७ भावनाएं देकर पलाश, वट और इमलीकेक्षार प्रत्येक चतुर्थाश देकर मर्दनकरे । अन्तमें नक्षत्रिकनीकेरससे १-२ दिन मर्दनकर छोटीछोटी टिकिया बनाय खुलाकर धारावस्फुटमें बन्दकर इसतरहे महागजपुष्पी आचरे जो कि ३२ पहरमें उठाहोया । स्वाङ्गशीतलहनेपर निकालकर रखओगे । इसमेंसे १ रसीकी मात्रा २ रसी मीमेसेनी कपूरकेसाथ मधुमें मिलाकर देखे । हरे, सफेदमर्दुनकीछाल और विडङ्गा काथ मधु मिला कर पिलानेसे शुष्कमेहादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥६८७॥

## ६८८ हंसमण्डूरम्

मण्डूरं चूर्णयेत्प्रस्यं गवां मूत्रादके क्षिपेत् ।  
 जीर्णान्ते च रविशिरं यासानिगुण्डिगोभुरम् ॥२९२८॥  
 भृन्मन्त्रतिन्तिडीकन्यायवर्षादिमुष्टमूत्राद ।  
 तर्कांरी त्रिफला मुस्ता याजिगन्धा शतावरी २९२९  
 यज्रवह्नी सूक्ष्ममूला वरुणः किंशुकोऽमृता ।  
 तण्डुलीयं स्थिरा मुण्डी विम्बी चित्रकणायचाः २९३०  
 शिरीषः पिचुमन्दश्च मत्स्याक्षीसुरपुष्टिकाः ।  
 पृथग्दशपलं सर्वं पाचयेन्मृदुवह्निना ॥२९३१॥  
 प्रातःकालेऽस्य कर्यैकं मधुतप्तमुत्तं भजेत् ।  
 दोषपाण्डुक्षयोन्मादश्वासकासकफामलाः ॥  
 अरोधादि गुल्मांध नाशयेदर्यचि हृदात् ॥२९३२॥  
 रसायनं, पाण्डुरोगं ।

भाषा—एकप्रस्य शुद्धमण्डूरकेचूर्णको एक आठक गोमूत्रमें बालकर औठावे । शुष्क ॥ बाकी रहनेपर आरुकादप, अदमा,

निगुण्डी, गोपुरु, चिरायता, इमली, पीडुवार, इटसिट, सहि जन, भंगरा खेती, त्रिफला, नागरमोया, असगन्ध, शतावर, तिथारीहङ्गजोह माझी, वरुणकीछाल, पलाशपुष्प, गिलोय, काटेवालीचौलाई, शालपर्णी, गोरपमुण्डी, कुंदरु, चित्रक, पीपल, वच, सिरस और नीमकीछाल, मडेछी, तालमसाना और शरपुष्पका १०-१० पल चूर्ण डालकर मन्द आचसे पकावे । इसमेंसे १-१ कप मधु अथवा छाछकेसाथ प्रातःकाल खेवनकरनेसे शोथ, पाण्डु, क्षय, उन्माद, श्वास, कास, कामला, ८ प्रकारके उदररोग, गुल्म और अरुचि नष्टहोतेहै ॥ ६८८ ॥

## ६८९ क्षयकुटाररसः

रसं गन्धश्च नागश्च लोहकान्तश्च तीहणकम् ।  
 अम्रं मण्डूरवङ्गौ च द्रव्द तालभस्मकम् ॥२९३३॥  
 कपर्दीभस्म सौभाग्यं सर्वमेकैकभागिकम् ।  
 द्विभागं मागधीचूर्णं बलमात्रं निषेधयेत् ॥  
 क्षयं सोपद्रवं हन्यात्कामलापाण्डुरोगजुत् ॥२९३४॥  
 वै चि. ( ल. ), क्षये ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, नाग, लोह, कान्त, फोलाद, अम्रक, मण्डूर, वङ्ग, शिंगरिफ, हरिताल और पीली कौड़ी इनकीभस्में, भुनामुहागा, सब समभागलेकर नीलवर्ण-कजलीकर सबसे दूना पीपलकाचूर्ण मिलाय ३-४ पहर घोटकर रखओगे । अथवा अदरकवर्गहरेरससे ३-३ रसीकी गोलियें बनाकरपकाओगे । इनमेंसे १-१ गोली अवस्थोचितामुशानके-साथ देनेसे उपद्रववहिनिय, कामला और पाण्डु नष्टहोते हैं ।

## ६९० क्षयकुलान्तरकसः

शुद्धचिकारसखरसेन्द्रभस्म  
 कृष्णाम्रकं माक्षिकलोहवङ्गम् ।  
 प्रवालमुकाफलहेमपत्रं  
 सर्वं समानं त्रिफलारसेन ॥२९३५॥  
 सम्मर्दयेत्सप्तदिनानि यत्ना-  
 द्द्वैरुमात्रं मधुना समेतम् ।  
 भक्षेद्विकारं सकलामयघ्नं  
 सर्वक्षये जीर्णतमे प्वरे च ॥२९३६॥  
 पाण्डुद्वामये पित्तमये च कासे  
 सरक्तपित्ते तमके प्रमेहे ।  
 यथाऽनुपानं खलु योजनीयं  
 पण्डित्यानां प्रकरोति सम्यक् ॥  
 धात्रीकरं पुष्टिले ददाति  
 रसायनं सर्वरुजापहारी ॥२९३७॥

र. चं, क्षये ।

भाषा—गिलोयसरव, पारा, यम्राम्रक, सुवर्णमाक्षिक, लोह, वङ्ग, प्रवाल इनकीभस्में, मुषापिठी, सोमेरेयक सब समभागलेकर ७ दिनतक निफलाके बापसे मर्दनकर ३-३ रसीकी गोलियें बनाकर रखओगे । इनमेंसे १-१ गोली मधु-

केसाय साय प्रात लेनेसे समस्त श्मेधरोग, क्षय, पुरानाज्वर, पाण्डु, मितकास, रक्तपित्त, तमकशास, प्रमेह, पण्डता इनसबको यह नष्टकर बल और पुष्टिको बढ़ाकर रसायनका काम करताहै ॥

### ६९१ क्षयकृन्तनरसः

शिलासूतोत्थकजलया मारितं शुद्धसीसकम् ।  
शुद्धमाक्षिकतुल्यं तत्कजली द्विगुणं नयेत् ॥२९३८॥  
मर्दन्मन्दारदुग्धेन चक्री शुष्कां धरेत्तले ।  
यन्त्रस्याद्धे भरेक्षूणं शङ्खजं वह्निना पचेत् ॥२९३९॥  
मन्दमध्यमतीव्रेण दिवसत्रितयं ततः ।  
चक्रीं पिष्ट्वा घने वस्त्रे चालयेत्क्षयकृन्तनम् ॥२९४०॥  
आज्यमाक्षिकयोगेन सिताक्षौद्रेण वा रसम् ।  
लिङ्गादुद्वाहये रोगी सर्वव्यायामयजितः ॥२९४१॥  
रसायनसारः, क्षये ।

भाषा—मैनसिल और पारेकी कजलीसे कीहुई नागमसम, शुद्धतोनामाखी १-१ भाग, समभाग पारगन्धककीकजली २ भाग लेकर आककेदूधसे एकदिन मर्दनकर चकोबनाय सुखा कर हण्टीमें शङ्खकेचूर्णकेबीचमें रख शराशसम्पुट देकर अच्छी तरह सुलाकर मन्द, मध्य और खर इसक्रमसे ३ दिनकी अग्निदे । स्वाशशीतलहोतेपर यत्नसे चकीको निकालकर कपड़ छानकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती घी और मधु अथवा शक्कर और मधुकेमाय लेनेसे उषधबनहित क्षय नष्टहोताहै । इसमें समीतरहके व्यायामोंका निषेधहै ॥ ६९१ ॥

### ६९२ क्षयकैररीरसः ( प्रथम )

मृतमग्नं मृतं सृतं मृतं लौहं तथा रधिः ।  
मृतं नागश्च कास्यश्च मण्डूरं विमला शिला ॥२९४२॥  
यक्ष्णं खर्परकं तालं शङ्खद्वन्द्वमाक्षिकम् ।  
वैकान्तं कान्तलौहश्च स्वर्णं चित्रममौक्तिकम् ॥२९४३॥  
यराटिका च माणिक्यं राजपट्टश्च गन्धकः ।  
सर्वमेकत्र सञ्चर्ष्ये खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ॥२९४४॥  
मर्दयेदग्निभातुभ्यां प्रपुटेतिविदिनं लघु ।  
भावयेत्पुटयेदेभिर्वातार्त्तौश्च पृथक् पृथक् ॥२९४५॥  
मातुलुङ्गवरावहिस्यल्लवेतसमार्कवेः ।  
हयमारदारकरसैः पाचितो लघुवह्निना ॥२९४६॥  
घातपित्तहृत्कोटिग्राज्यराजानाविधानपि ।  
सन्निपातं निहन्त्याशु सर्वाङ्गैकाङ्गमाकृतान् ॥२९४७॥  
सेवितश्च सितायुक्तो मागधीरजसा युतः ।  
मधुकाऽऽर्द्रकसंयुक्तद्वयाधिहरणीपथः ॥२९४८॥  
रोगिभिः सेवितो ह्नि विद्याधिराजणकेसरी ।  
क्षयमेकादशविधं शोर्षं पाण्डुं किमीडयेत् ॥२९४९॥  
कासं पञ्चविधं श्वासं मेहमेदोमहोदरम् ।  
अश्मरीं शर्करां शूलं प्लीहगुल्मं हलीमकम् ॥  
सर्वव्याधिहरो वक्ष्यो वृष्यो मेष्यो रसायनः २९५०  
र. सं., र घु, र क, यक्ष्मणि ।

भाषा—अप्रक, पारा, लोह, ताम्र, नाग कास्य, मण्डूर, रौप्यमाक्षिक, मैनसिल, वज्र, खर्पर, हरिताल, शङ्ख, कास्य-माक्षिक, स्वर्णमाक्षिक, वैकान्त, कान्त, खर्षण, प्रवाल, कौडी, माणिक्य, राजावर्त इनकीमसमें, सुकापिष्टी, भुनासुहाया, शुद्ध-गन्धक सब समभागलेकर १-२ पहर शुकर्मदनकर चित्रकके-स्वरस और आककेदूधसे १-१ दिन मर्दनकर टिकड़ीबनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आवचे । ऐसे ३ आँचें देकर विजोरा, त्रिफला, चित्रक, अम्लवेत, भंगरा, सफेदकनेर, अदरक, इनप्रत्येकके स्वरस अथवा वायसे १ दिन मर्दनकर लघुपुटकी आवचे । ऐसे प्रत्येककी भावनाकेबाद पुटदेवे । इस-मेंसे १ से २ रत्तीक मात्रा शक्कर, पीपल मधु, अदरक इनके-साथ अथवा तत्तद्वेगहृत्पुनपानकेसायदेनेसे घातपित्त और कफ प्रथान नानाप्रकारके ज्वर, सन्निपात, सर्वात अथवा एकाग्रगत वायुरोग, उपद्रवकहितलक्ष्य, शोथ, पाण्डु, किमि, समस्तश्वास, कास, प्रमेह, मेद, महोदर, अश्मरी, शक्कर, शूल, हीहा, गुल्म, हलीमक, कुशता, बल और शुद्धिकाइस इनसबको यह नष्टकर रसायनका काम करताहै ॥ ६९२ ॥

### ६९३ क्षयकेसरीरसः ( द्वितीयः )

मेथलीचनचन्द्रेनुप्रमाणं भागमाहरेत् ।  
यत्किञ्च स्फटिका ब्रष्टा गरलं नयसागरः ॥२९५१॥  
चूर्णेमेपां सितायुक्तं गुञ्जाद्धं योजयेद्विपक्षम् ।  
क्षयकेसरीनामाऽयं रस परमदुर्लभः ॥२९५२॥  
वे वि, र ख, रसायनस, दि. र, क्षये ।

भाषा—मरिच २ भाग, भुनीफिटकरी २ भा, शुद्धगन्ध-नाग और नवसादरपुष्प १-१ भाग लेकर इको पोटकर रख-छोड़े । इनमेंसे आरीरत्तीकी मात्रा शक्करकेसायलेनेसे यह कफ-क्षयको नष्टकरताहै ॥ ६९३ ॥

### ६९४ क्षयशामकरसः

तुल्यं पारदगन्धकं त्रिकटुकं ताभ्यां रजः कम्बुजं,  
तेस्तुल्यश्च भवेत्कर्पूरभसितं स्वात्पारदाद्वह्णम् ।  
पादाशं सकलैः समानमरिचं लिङ्गात्कान्तात्साज्यकं,  
यावच्चिष्कमितं भवेत्प्रतिदिनं मासात्क्षयः शाम्यति ॥  
र. च, र र स, क्षये । र र स लोहनाथेतिनाम ।

भाषा—पुद पारा और गन्धक १-१ भाग, त्रिकटु १ भा, शङ्ख और कौडीमसम ४-४ भाग, भुनासुहाया १ भा, मरिच सबही बराबर लेकर नोलक्षणं जत्रीर रखछोड़े । इन मेंसे ३ रत्तीसे ४ मासेतक ब्याधिते बडाकर पीकेसायलेनेसे एकमहीनेमें क्षयका नाशहोताहै ॥ ६९४ ॥

### ६९५ क्षयमहारसः

लीढो व्योपघरान्वितो विमलको युक्तो घृतं. सेवितो,  
हन्त्यादुर्जयहृद्दहं श्वयथुकं पाण्डुं मेहदाऽरुच्यी ।

गुलाति ग्रहणीञ्च गुल्ममनुलं यक्ष्मामयं कामलां,  
सर्वाग्निपित्तमग्नदन्तिकमपैर्योगैरशोषामयात् ॥२९५॥

र. स., ध्वे ।

भाषा—रौप्यनाधिकमस्य १ रतीसे ३ रतीतक त्रिकटु और त्रिफलाके चूर्णकेमाय घीमें मिलाकर सेवन करनेसे दुर्जय हृदोग, मयङ्गशोष, पाण्डु, प्रमेह, अरुचि, ज्वल, ग्रहणी, गुल्म, राजयक्ष्म, कामला, पित्त और वायुरोग, इन सबको यह नष्ट करता है । तत्तद्विषयानुपानकेसायदेनेसे समस्त रोगोंको नष्ट करता है ॥ ६९५ ॥

६९६ क्षयान्तकरसः ( प्रथमः )

लोहञ्च रससिन्दूरं प्रत्येकं कर्पसम्मितम् ।  
मौक्तिकं स्वर्णजं भस्म प्रत्येकं क्षाणसम्मितम् २९५५  
अमृतायाः कर्पमात्रं सत्त्वञ्च त्रिफला तथा ।  
कर्पपादं कुडमञ्च कस्तूरी मापसम्मिता ॥ २९५६ ॥  
आटल्यरूपयायेण त्रिदिनं भावयेत्पृथक् ।  
रसः क्षापान्तको नाम गुञ्जामानो मधुप्लुतः ॥२९५७॥  
सघृतो राजयक्ष्माणं जलेत्पाण्डुं शिरोग्रहम् ।  
जीर्णज्वरं मेहकृजं प्रदरं घृतिमान्यकम् ॥ २९५८ ॥  
सोमरोगं धातुदोषं वातश्लेष्मोद्धवं गदम् ।  
उकामयाऽनुपानैश्च सर्वरोगान्द्वयं नयेत् ॥ २९५९ ॥

र. चं, ध्वे ।

भाषा—लोहभस्म और रससिन्दूर १-१ कर्प, मुषापिष्टी और गुर्वर्णम १-१ टट्ट, मिलेयसव और त्रिफला १-१ कर्प, बेगर ४ मासे, कस्तूरी १ मासा केसर इन्हेमिलाय अङ्गुलिके पत्तीकेतले ३ दिन घोटकर १-१ रतीकी गोखिले बनाकर रखाछे । इनमेंसे १-१ गोली मधु और पीनेसाय लेनेसे धय, राजयक्ष्म, पाण्डु, शिराकाग्रहना, जीर्णज्वर, प्रमेह, प्रदर, मन्दाग्नि, सोमरोग, धातुदोष, वातश्लेष्मरोग इन सबको यह नष्ट करता है ॥ ६९६ ॥

६९७ क्षयान्तकरसः ( द्वितीयः )

मृततुल्यं ह्योमसत्त्वं तयोस्तुल्यञ्च गन्धकम् ।  
शुभारीस्वरसेर्मयं यन्त्रे सेषनके पथेत् ॥ २९६० ॥  
दिनद्वयान्ते सङ्घातं मध्ययेद्रक्तिमात्रकम् ।  
सर्वे शोफं तथा कर्ष्य प्रमेहञ्चापि दुष्करम् ॥  
पाण्डुरोगञ्च कादप्यंश्च जयञ्जरीर्धं म संशयः ॥२९६१॥  
टो., ध्वे ।

भाषा—टट्टफरा और अन्नमस्यमस्य १-१ भाग, शुद्ध मन्फट २ भा केसर नीलमैत्रिकान्तीकर पीतुआरैरसमे एक दिन मर्दाकर मुषाकर पिरमे चबनीकर आत्मीशीशीमेर वण्डधन्यमे दो दिनकी बनीआये पठावे । ग्वाङ्गरीतल-होनेर निष्ठाकर रखाछे । इसमेंसे १-१ रती तन्मोहरानुपानकेसाय देनेसे धय, शोष, ज्वर, दुग्धप्रमेह, पाण्डु, हृत्पाङ्गवर्गके यह नष्ट करता है ॥ ६९७ ॥

६९८ क्षयारिरसः

भस्मत्वं समुपागतं विधिदत्तं हेमामृतेनान्वितं,  
पादांशेन कणाऽऽज्यबहुसहितं गुञ्जोन्मितं सेवितम् ।  
यक्ष्माणं ज्वररोगपाण्डुगुदजांश्चैव कासामयं,  
दुष्टाञ्च ग्रहणीं क्षतक्षयमुत्पात्रोपाग्रजपेदिनः ॥२९६२॥

र. सं, ध्वे ।

भाषा—अञ्जीतल विधिपूर्वकीहुई सुवर्णभस्म में वतु-यौध शुद्ध वज्रनाग मिलाकर रखाछे । इसमेंसे १ रतीकीमात्रा ३ रती पीपलके चूर्णकेसाय मिलाकर पीके साथ खानेसे राज-यक्ष्म, ज्वर, पाण्डु, अर्थ, श्वात, कास, दुष्टवृद्धही, उर क्षत प्रवृत्तिरोगोंको यह नष्ट करता है ॥ ६९८ ॥

६९९ क्षारताम्ररसः ( प्रथमः )

क्षारक्षारार्कमृतिञ्च घटाटं लोहभस्मकम् ।  
अयोमलं यवक्षारं टङ्गुणक्षारमेव च ॥ २९६३ ॥  
निकटुं सैन्धवं तुल्यं भृङ्गतोयेन मर्दयेत् ।  
आटल्यरसेर्मयमाद्रिकस्यरसेन च ॥ २९६४ ॥  
चणमानां घटीं कृत्वा रसोऽयं क्षारताम्रकः ।  
श्यासे कासे प्रतिदयाये पुराणज्यरपीडिते ॥ २९६५ ॥  
मन्देऽग्नौ ग्रहणीदोषे स्वनुपानं यथोचितम् ।  
सेचयेत्सप्तरात्रेण नाशयेन्नाऽत्र संशयः ॥ २९६६ ॥  
चिरकालानुबन्धे च सेचयेन्मण्डलापि ।  
तत्तद्विषयानुबन्धे पथ्यं नियमेन समाचरेत् ॥ २९६७ ॥  
यो. र., र. सु., वै. वि., नि. र., प्रहयधिकारे ।

भाषा—क्षारभस्म, घावी, ताम्र, पीपी, लोह, मण्डूर इन-कीभस्में, यवक्षार, भुनामुषा, त्रिकटु, संपानमक सब समभाग केसर १-२ पट्टर शुद्धमर्दकर बेगर, अङ्गुला और अदरकके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दकर चनेप्रमाण गोखिले बनाकर रखा-छे । इसमेंसे १-१ गोली उबिनानुपानकेसाय लेनेसे श्वात, काम, प्रतिक्षयाय, जीर्णज्वर, मन्दाग्नि और ग्रहणी इनको यह ७ दिनोंमें नष्ट करता है । बद्धमद्योगमें एकमात्रलक सेवनकराना और तन्मोहोचित पथ्य देना सचित है ॥ ६९९ ॥

७०० क्षारताम्ररसः ( द्वितीयः )

पलमितमृततुल्यं तन्मितं गन्धचूर्णं,  
यसुमितपलमानं तित्तिडीक्षारचूर्णम् ।  
त्रयमिदमभिदिष्टं क्षारताम्राख्यमेत-  
क्षरति सकलज्वरं पीतमुष्णोद्वेन ॥ २९६८ ॥  
र. र. स., र. श., वै. वि., र. चं, र. को., नि. र., र. पा., ध्वे ।

भाषा—ताम्रमस्य और शुद्धगन्धक १-१ पल, इमलीके-क्षारकाचूर्ण ८ पल केसर तीनोंको इन्द्रागिलाय कारीक पी-कर रखाछे । इसमेंसे १ मासेसे ३ मासेतक नामककेसाय लेनेसे यह समस्त ज्वरोंको नष्ट करता है ॥ ७०० ॥

### ७०१ क्षारवटी

अमृतं मेघमस्माऽथ शङ्खं चित्रां सुभास्कर्म ।  
क्रमाद्विगुणितं कृत्वा तत्तुल्यञ्च कटुत्रिकम् ॥२९६९॥  
तुलसीभृङ्गराजाङ्गि मातुलुङ्गाद्रिकद्रवे ।  
भावितं यदुशश्चूर्णं रजो वा गुलिकाऽपि वा ॥२९७०॥  
मापमानां तु सेवेत गुल्मशूलान्विनाशयेत् ।  
मन्दाग्निं प्रहणीमशौं गुल्मशूलमरोचकम् ॥  
एतत्क्षारवटी नाम कृशदेहेषु युज्यते ॥ २९७१ ॥  
र र स, विद्वन्धिकारे ।

भाषा—शुद्धवटानां, अन्नक और बाज्रमस, इमली और  
आकका क्षार क्षमता द्विगुणभागे लेर सज्जो वरावर त्रिकटु  
मिलाकर तुलसी, भगता, चिपोरा और अरखकेस्वरसों कई  
बार भावनाएँ देकर १-१ माशेकी गोलियें बनाले अथवा चूर्ण  
ही रहनेदे । इसमेंसे १-१ माता तत्तद्वगहरानुपानकेसाथ देनेसे  
मन्दाग्नि, प्रहणी, अशौ, गुल्म, शूल, अग्नि इनसबको यह नष्ट  
करतीहै । कृशशरीरके लिये बहुत उपकारकहै ॥ ७०१ ॥

### ७०२ क्षीरमण्डूरम्

मण्डूरस्य पलान्यष्टौ गोमूत्रेऽष्टाङ्कं पचेत् ।  
क्षीरप्रस्थञ्च तसिद्धं पक्तिशूलहरं नृणाम् ॥ २९७२ ॥  
४ मा, रसागर, यो म, र, यो र, च द, र का,  
रसायनस, र क, ल, भै र, र को, टो, नि र, शूलाऽ  
धिकारे ।

भाषा—आठपल शुद्धमण्डूरकेचूर्णको २ प्रस्थ गोमूत्रमें  
डालकर पकावे । कुष्ठगाडहोनेपर एकप्रस्थ दूधडालकर पकावे ।  
सिद्धहोनेपर ३-३ माशेकी गोलियेंबनाकर रखजोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली उषितानुपानकेसाथ देनेसे पक्तिशूलको यह नष्ट  
करताहै ॥ ७०२ ॥

### ७०३ क्षीरसागररसः

मृतरसगगनार्कं मुण्डतीक्ष्णं सताप्यं,  
सयलिसममिदं स्याद्यष्टिकावारपिष्टम् ।  
तदनु सलिलजातैर्यौसर्कैर्गोस्तनीभि-  
र्मृदितमथ विदारीवारिणाघस्मैरुम् ॥२९७३॥  
घृतमधुसहितैर्यं बहुमात्रा वटीति,  
क्षपयति गुरपित्तं पित्तरोगं क्षयञ्च ।  
अममदमुखशोषान्दाहदृष्णासमुत्थाय,  
मलयजमिह पेयं चानुपानं सचन्द्रम् ॥२९७४॥

रसायनस, र र दी, र सु, टो, र प्र, र च, र का,  
पित्तज्वरे । र स, र सु, ष, एणु ग्रन्थेण गगनादिवटीति  
नाम वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—गारा, अन्नक, टाम्र शुण्ड, फोलाद, सोनामाखी  
इनकीभस्में, शुद्धगन्धक सब समभागलेकर १-२ पहर शुष्क  
मर्दनकर मुलट्टी, कमल, अड्डा, दाक्ष, विदारी इनके स्वरसोंसे  
१-१ दिन मर्दनकर ३-३ रसीकी गोलियें बनाकर रखजोड़े ।

इनमेंसे १-१ गोली मधु और धीनेसाथ लेनेसे पित्तरोग, क्षय,  
अम, मद, मुखशोष, दाह, तृषा, इनसबको यह नष्टकरताहै ।  
अत्यन्तउष्णतामें कपूरमिश्रित चन्दनकल्क पीनेको देना॥७०३॥

### ७०४ क्षीरोदधिरसः

रसं गन्धकमधुश्च शिलाजत्वयसी शुभे ।  
रसार्द्रमानं स्वर्णञ्च गुहकन्याम्बुना भिषक् ॥२९७५॥  
मर्दयित्वा वटीं कुर्यात्कलायपरिमाणतः ।  
त्रिफलाजलयोगेन प्रातः सायञ्च पाययेत् ॥२९७६॥  
गदोद्वेगं महाघोरं रक्तपित्तं क्षतं क्षयम् ।  
प्रमेहं वातजाग्रोगान्कामलाञ्च हलीमकम् ॥ २९७७॥  
पाण्डुताञ्च अरं जीर्णमशसि निखिलानि च ।  
रसः क्षीरोदधिर्नाम निहन्यान्नात्र संशयः ॥ २९७८ ॥  
भै र, परिशोधे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अन्नकभस्म, शिलाजतु,  
लोहभस्म १-१ भाग, पारेसे आधी स्वर्णभस्म लेकर सबकी-  
नीलवर्णकजलीकर धीज्वारके रससे एकदिन मर्दनकर मटरबरा  
बर गोलियें बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिफलाके-  
हिम अथवा कायकेसाथ सायप्रातः देनेसे अत्यन्त घबराहट,  
रक्तपित्त, उर क्षत, क्षय, प्रमेह, वातरोग, कामला, हलीमक,  
पाण्डु, जीर्णज्वर, समस्त अर्श इनमक्को यह नष्टकरताहै ॥

### ७०५ क्षुधावतीवटी ( प्रथमा )

रसाऽयोगन्धकाऽम्नाणि न्यूपणं त्रिफला वचा ।  
यमानी शतपुष्पा च चविका जीरकद्वयम् ॥ २९७९॥  
प्रत्येकं पलमेपान्तु घण्टकणैर्पुनर्नये ।  
मानकं ग्रन्थिकं येष्टं केशराजं सुदर्शनी ॥ २९८० ॥  
दण्डोत्पला त्रिष्टुधन्वी जामातृरक्तचन्दनम् ।  
भृङ्गापामार्गबुलका मण्डूकञ्च पलाङ्कम् ॥ २९८१॥  
आर्द्रकस्थरसेनाऽथ गुटिकां सम्प्रकल्पयेत् ।  
बदरास्थिसमा चैका भक्षयित्वा पिबेद्भु ॥ २९८२ ॥  
वारिभक्त जलञ्चैव प्रातश्चयाय मानवः ।  
वटी भुधावती नाम सर्वाऽजीर्णविनाशिनी ॥२९८३॥  
अग्निञ्च कुर्वते दीप्तं भस्मकञ्च नियच्छति ।  
अम्लपित्तञ्च शूलञ्च परिणामहृन्तञ्च यत् ॥ २९८४ ॥  
तत्सर्वं शमयत्यायु भास्करस्तिमिरं यथा ।  
मधुरं वर्जयेदथ विशेषात्क्षीरदाकरे ॥ २९८५ ॥

भै र, घ, द, र अल्पपित्ते । रसरत्नाकरेऽग्निमान्धाऽधि-  
कारेऽस्ति ।

टि०—“अन्नक रसगंधै च वदानी न्यूपण तथा ।

त्रिफला शतपुष्पा च चविका जीरकद्वयम् ॥

पुनर्नया वचा दन्ती त्रिफला घण्टकणैश्च ।

दण्डोत्पला सार्विदे चाश्वत्थामात्राणि कायेरेव ॥

मण्डूर द्विगुण दत्ता वैष्णवीय प्रयत्नतः ।

आर्द्रकाग्निं समालेख्य गुटिकां कल्पयेत् ॥

प्रत्यहं भक्षयेदेका भक्तवारि पिबेदनु ।  
वदी क्षुधावती नाम्ना चाम्लपित्तविनाशिनी ॥  
अग्निज्ञं कुस्ते दीप्तं तेजोवर्द्धिं बलन्तया ।  
ध्नीहानं श्वासमानाहमामवातं विनाशयेत् ॥  
परिणाममत्र शूल कफसं पञ्चविधं तथा । ”

इति भैषज्यरत्नावल्यां पाठो दृश्यते सोऽस्यैवाऽप्रमत्तः प्रतीयते ।  
लोहस्थाने मण्डूरोयोगोऽप्यम्लपित्तोऽपेक्षया नाऽपि कर्तार्यकारीति विद-  
द्विर्विभावनीयम् । एकादशद्रव्याणां पुष्पपूर्तिरपि सारिवाद्रवयोगेन बह्वे-  
मशयैवाऽस्ति, अतः सर्वद्रव्यपूर्णं एकैव योगो निष्पादनीयः । सारि-  
वाद्रवेषिका प्रीतिश्चेद्देव तवोगकरणेऽपि सत्यमावोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धं पारा और मन्वक, लोह और अम्रकभस्म,  
त्रिकटु, त्रिकला, वच, अजवाइन, सोंफ, चण्य, स्याहछफेद-  
जीरा १-१ पल, मोलाकौछाल, पुनर्नवा मानकन्द, गठिवन,  
कुश्याकौछाल, कालामंगरा, सुदर्शनकन्द, मङ्गदण्डी, निमोत,  
दन्तीमूल, धतूरेकीरज, लालचन्दन, भंगरा, अपामार्ग, कटुपरवल,  
मण्डूकपर्णी २-२ कप लेह्य धातुओंकी नीलवर्णकजलीकर  
अन्यचीजोंके कपड़छानचूर्णमें मिलाय अद्रक्षकरसे १-२ पहर  
घोटकर जंगलीचेरवार गोलियें बनाकर रसछोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली भोजनकेसाथ प्रातःकाललेनेसे समस्तभजीण,  
भस्मक, अम्लपित्त, शूल, परिणामशूल इनसबको सुखोदयसे  
तमकीतरह नष्टकरतीहै । इसके प्रयोगमें मधुरभोजन खासकर-  
दूध व दालका परिणामकरे ॥ ७०५ ॥

### ७०६ क्षुधावतीष्वती ( द्वितीया )

गगनादिपलं चूर्णं लौहस्य पलमात्रकम् ।  
लौहकिट्टं पलादंश्च सयमेकत्र संस्थितम् ॥ २९८६ ॥  
मण्डूकपर्णावशिरतालमूलीरसैः पुनः ।  
घराभृङ्गाकेशराजकालमारिपजेरथ ॥ २९८७ ॥  
त्रिफलामद्रमुस्ताभिः स्यालीपाकाद्विचूर्णितम् ।  
रसगन्धकयोः कर्पं प्रत्येकं ग्राह्यमेकतः ॥ २९८८ ॥  
तन्मसृणे शिलाखल्वे यत्ततः कज्जलीकृतम् ।  
यथा चण्यं यमानी च जीरके शतगुणिका ॥ २९८९ ॥  
ध्वोपं मुस्तं पिडङ्गश्च प्रत्येकं खरमञ्जरी ।  
त्रिधुता चित्रकी दन्ती स्यावर्तः सितस्तथा ॥ २९९० ॥  
भृङ्गमानककन्दार्धं रण्डकर्णक एव च ।  
दण्डोत्पला केशराजः काला कर्कटकोऽपि च ॥ २९९१ ॥  
पपामर्दपलं ग्राह्यं पटपटं सुधूर्णितम् ।  
प्रत्येकं त्रिफलायाश्च पलादं पलमेव च ॥ २९९२ ॥  
पतत्सर्वं समालोच्य लौहपात्रे तु भावयेत् ।  
आतपे दण्डसंघट्टमार्द्रकस्य रसेलिधा ॥ २९९३ ॥  
तद्रसेन शिलापिष्टं गुटिकाः कारयेद्विपक्व ।  
यदरास्थिनिपाः शुष्काः सुगुप्ताश्च निषापयेत् ॥ २९९४ ॥  
तत्प्रातर्भोजनादौ तु सेवितं गुटिकाकारकम् ।  
अम्लोदकानुपानञ्च हितं मधुरवर्जितम् ॥ २९९५ ॥  
दुग्धञ्च नाकिलेञ्च पर्जन्यै विशोषतः ।  
भोज्यं यथेष्टमिष्टञ्च धारिभक्तमलकाजिकम् ॥ २९९६ ॥

हृत्यम्लपित्तं विविधं शूलञ्च परिणामजम् ।  
पाण्डुरोगञ्च गुल्मञ्च शोथोदरगुदामयान् ॥ २९९७ ॥  
यक्ष्माणं पञ्च कासांश्च मन्दाग्निस्त्वमरोचकम् ।  
ध्नीहानं श्वासमानाहमामवातं सुदारुणम् ॥  
गुटी क्षुधावती सेयं विख्याता रोगनाशिनी ॥ २९९८ ॥

र. सं., र. सु., च. द., र. का., र. क., दो., वै. द., र. ध.,  
र. चि., भै. र., अम्लपित्ते ।

टि०—अनाड्यगताऽम्रकादीनां शुद्धिर्भोलिखितमकारेण कर्तव्या  
सा यथा—

#### तत्र अम्रकशुद्धिः

आशु भक्तोदकैः पिष्टमम्रकं तत्र संस्थितम् ।  
कन्दमाणाऽस्थिसंहारखण्डकारिणैरथ ॥  
तण्डुलीयकशालिष्यकालमारिपमेव च ।  
यक्ष्मीरुद्धीयुक्त्वमणिकेशराजैः ॥  
पेषणं भावना कुर्यात्पुट्ठान्नेकरो मियक् ।  
यावन्नित्यन्त्रकं तास्याच्छुद्धिरेव विहायम् ॥

#### अथ लौहशुद्धिः

हैममाक्षिकशालिष्यं ध्मात निर्वापितं जले ।  
त्रैफलेऽप्य विचूर्ण्यैव लौहं कान्तादिकं पुनः ॥  
परण्डगजकर्णालैस्त्रिकलाशुद्धिदासैः ।  
मानकन्दास्थिसंहारपट्टवैरमेव रसैः ॥  
दध्नीमूलीमुण्डितिकाताण्डूलीसुखैः ।  
प्रतिदिनं साधु यत्नेन शुद्धिमेवमयो ज्ञेयः ॥

#### अथ मण्डूकशुद्धिः

दक्षिण श्वेतवात्याल मणुपर्णी मन्दूकम् ।  
तण्डुलीयकं वर्षाहं दत्ताऽप्यश्वोद्वैरमेव च ॥  
पाक्यं मुजोर्मण्डूर गोमूत्रेण दिनत्रयम् ।  
यथाऽन्तर्वास्यन्थ स्वात्माया स्वायं दिनत्रयम् ॥  
एव विरोषितं लौहकिट्टं ग्राह्यं विचूर्णितम् ॥

#### अथ रसशुद्धिः

जयन्त्या वर्षमानस्य भृङ्गवैरसेन तु ।  
वायव्याश्वातुर्पुर्वैव मर्दनं रसोपनम् ॥  
अथ गन्धकशुद्धिः  
गन्धकं नवनीतास्य शुद्धितं लौहमाजने ।  
त्रिधा चण्डातेपे शुष्कं भृङ्गराजसाऽण्डनम् ॥  
ततो बह्वैः द्रव्यैस्तु त्वरितं बसगाहितम् ।  
वत्नादधृष्टरसे स्तितं पुनः शुष्कं विमुञ्चयति ॥ इति ॥

भाषा—अम्रकभस्म २ पल, लोहभस्म १ पल, मण्डूक-  
भस्म २ कप लेह्य १-२ पहर शुष्कमर्दनकर ब्राह्मी, रक्तपुनर्नवा,  
तालमूली, घलावरी, भंगरा, कालभंगरा, मत्सा, त्रिकला, नागर-  
मोया इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्राय मिलाकर हण्डीमें  
पछाने और चलातारहे । इसतरह प्रत्येकके स्वरसको मुसाकर  
अलीरमें यहतक अग्नि दे कि सब स्वरस जलमाय । फिर शुद्ध  
पारा और गन्धक १-१ कर्पकी नीलवर्णकजलीकर वच, चण्य,  
अजवाइन, स्याह छफेद जीरा, सोंफ, त्रिकटु, नागरमोया,  
विद्वज्ज, गठिवन, अपामार्ग, निमोत, चित्रक, दन्तीमूल, सफेद-  
फूलकी डुरहूर अथवा सुयमुखी, भंगरा, मानकन्द, अजलीमूल,

महादण्डी, कालामेरा, कात्यावाला, (गु०) काकड़ासींगी इनका शरीरचूर्ण २-२ कर्प, त्रिफला प्रत्येक आधा आधा अथवा १-१ पल केरु सबको इकट्ठे मिलाय लोहेकेपात्रमें डालकर अदरक-रससे भिगोकर धूपमें सुखावे । ऐसे ३ भावनाएं देकर जंगली-वेरवारवर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे ३-३ गोली प्रातः-काल भोजनके आदि अथवा अन्तमें खोटे पानीकेसाथ सेवनकर-नेसे अम्लपित्त, नानातरहकाशूल, परिणामशूल, पाण्डु, गुल्म, शोथ, उदररोग, गुदामय, राजयक्ष्म, ५ प्रकारकाकाश, मन्दाग्नि, अक्षि, हीहा, श्वास, आनाह, दुस्तरआमवात इनसबको यह नष्टकरती है । इसमें मधुररसको छोड़कर सब पच्य है । दूध और नारियलका विशेषतया परिस्वागकरे । बारिभक्त और खड़ी-काशीका यथेष्ट सेवनकरे ॥ ७०६ ॥

इसमें जो आये हुए द्रव्य है उनकी शुद्धि अवोलिखित प्रका-रसे करनी उचित है । धान्यान्नकको भजोदक, जहरीसुरण, मानकन्द, हज्जोह, जहरीसुरण ( वामनद्विजो म. ), कटिवाली चौलाई, सरहंघी, मरसा, पुनर्नवा, वनभाटा, भगरा, लक्ष्मणा, कालामेरा इनके स्वरसोंसे १-१ दिन पीसकर टिकड़ी बनाय गजपुटकी आचदे । ऐसे प्रत्येक औषधिमें ७-७ अथवा ३-३ बार पुट देनेसे छद्मदोहर मसम होजाती है बदास्ति इतने पुट-देनेपरमी निश्चय न हो तो इन्हींके अधिक पुटदेवे ॥ १ ॥

उत्तम लोहचूर्णको धमनकर स्वर्णमाक्षिक, सरहंघी, त्रिफला, एरण्ड, हस्तिचूर्णपलाश, त्रिफला, विषारा, मानकन्द, हज्जोह, अदरक, दशमूल, गोरखगुण्डी और तालमूलीके द्रव्यों में सुसाकर इन्हींकेद्रव्यों में घोटकर टिकिया बनाय सुखाकर गजपुटकी आचदे । जबतक बारिठर न हो तबतक इसकमकी चलाता रहे ॥ २ ॥

१०० वर्षसे ऊपर जहातकहोसके पुराने मण्डूरको धोकर साफ करले । फिर अमिसाव कर रक्कपुनर्नवा, सफेदफूलकीनला, गिलोय, अपामार्ग, कटिवालीचौलाई, इटसिट इनके स्वरसोंमें क्रमशः सुसाकर इन्हींके कल्कोंमें क्रमशः बन्दकर १-१ गजपुट-देवे । फिर गोमूत्रसे ३ दिन घोटकर अष्टगुणित अथवा चतु-गुणित गोमूत्र डालकर सुखबन्दकर अमिर रख अन्तर्ध्याविक-म्भकर ३ दिनतक उसीचूल्हेपर पड़ा रहनेदे । इसीतरह शुद्धकि याहुआ मण्डूर काममें लेना ॥ ३ ॥

जैती, एरण्ड, अदरक, मकोय, इनके रसोंमें १-१ दिन मर्दनकर डमरूयत्रमें ऊँचपातनकरनेसे रस शुद्धहोजाता है ॥ ४ ॥

आवलासार गन्धकके छोटे छोटे टुकड़ेकर लोहेके वर्तनमें डालकर मंगेरकारस देकर कड़ीधूपमें रखसे । ऐसे ३ बारकरके हण्डीमें भगोका रसभरकर ऊपरसे कल बाधदे और लोहेकी कड़ाहीमें गन्धकको गलाकर वज्रमेंसे छानदे । अथवा उसवज्र-पर गन्धकके चूर्णको बिछाकर धारावस्त्रपुदेकर हण्डीको ज़िमी-नमें गाढ़दे और ढक्कन पर थोड़ेसे कण्ठीकी आचदे जिसमें कि गन्धक गलकर भगोके रसमें पड़जाय । स्वाहशीतलहोने पर भंगेरकेरससे गन्धकको निहालकर पोंछकर सुखाले, इसी गन्ध-कको इस बटीमें डाले ॥ ५ ॥

### ७०७ क्षुधावतीवटी ( तृतीया )

त्रिसारं पञ्चलयणं शिमुकं वशतालकम् ।  
अर्कसेहपुङ्गुध्वेन भावयेदिवसद्वयम् ॥ २९९९ ॥  
विलिप्य चार्कपत्राणि रुद्धा गजपुटे पचेत् ।  
स्वाहशीतं समुदृत्य चूर्णयेत्कज्जलीपमम् ॥ ३००० ॥  
ततो रसं विषं गन्धं त्रिफलां ज्यूषणं वचाम् ।  
वह्निपुष्परदन्यौ च वृहत्यां चविका त्रिवृत् ॥ ३००१ ॥  
समञ्चणं प्रकर्तव्यं वस्त्रपूतञ्च कारयेत् ।  
निगुण्डीशिमुकुलोत्थरसेन च विभावयेत् ॥ ३००२ ॥  
वटी क्षुधावती नामा भक्षयेद्ब्रह्ममात्रिकाम् ।  
अनुपानं प्रदातव्यममयागुडसंयुतम् ॥ ३००३ ॥  
सर्वाज्जीर्णप्रशमनी वह्निमान्द्यविनाशिनी ।  
सम्भासयातगुस्मार्दाःकासहृद्रोगसूदिनी ॥ ३००४ ॥  
ना. वि., अग्रिमार्ग्ये ।

भाषा—सखी, सुहागा, यवहार, पाचोनमक, सहजनकी-छाल, हरितालकमस अथवा रसमाणिक्य १-१ तोलालेकर भाक और धुआरकेदूधसे १-१ दिन मर्दनकर दोतोले छद्मतावेके कण्ड-कवेधीपत्रोंपर लेपकर गुप्ताय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी-आचदे । स्वाहशीतलहोनेपर कज्जलेसमान चूर्णकर छद्मपारा, बछनाय और गन्धक, त्रिफला, त्रिकटु, वच, चित्रकमूल, पोह-करमूल, दन्ती, दोनोमटकद्वैया, चव्य, मिसोत, येसम १-१ तोलालेकर कण्डछानचूर्णकर पूर्वकज्जलीमें मिलाय निगुण्डी और सहजनकीगङ्गीछालके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली हर्द और गुल्मेसाधनेसे समस्तअजीर्ण, मन्दाग्नि, श्वास, वातगुल्म, अर्क, कास, हृद्रोग इनको यह नष्टकरती है ॥ ७०७ ॥

### ७०८ क्षुधावतीवटी ( अग्रिमभावटी )

गन्धं ताल रसं नागं त्रिफलं त्रिफला तथा ।  
टङ्गुणं जयपालञ्च समं शुद्धे चिमर्दयेत् ॥ ३००५ ॥  
दिनेकं निम्बुनारेण वटिका मरिचाकृतिः ।  
प्रातः सायं सेयनीया चतुर्दशदिनावधि ॥  
कफवातादिरोगघ्नी जठराऽनलदीपनी ॥ ३००६ ॥  
र. सि., अजीर्ण ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और धारा, हरिताल और नागमसम, त्रिकटु, त्रिफला, मुनासुहागा, शुद्ध जमासगोटा सब समभाग-लेकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीकर काशीपथियोंका कण्डछान चूर्णकर इकट्ठे मिलाय एकदिन नीचूरसे मर्दनकर मरिचप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ से २ गोलीतक प्रातः और सायंकाल उचितानुपानकेसाथ १४ दिनतकलेनेसे कफ और वातव्याधि, उदररोग नष्टहोते हैं ॥ ७०८ ॥

### ७०९ क्षुधासागररसः

त्रिकटु त्रिफला चैव तथा लवणपञ्चकम् ।  
क्षारत्रयं रसं गन्धं मागमेकं द्विक विषम् ॥ ३००७ ॥

गुञ्जामात्रां घटीं कुर्यात्तद्वैः पञ्चमिः सह ।  
धुधासागरनामाऽयं रसः सूर्येण निर्मितः ॥३००८॥

शे. र., र. सु., ध., नि. र., वै. र., वि र म., रसायनहं.,  
वै. चि., अग्निमान्ये ।

३०—आयुर्वेदविज्ञाने बुद्धिहरनानैको रसोऽस्ति तत्र त्रिपाल्याने  
जपपाल नियोज्य विषयभावनया निपादितं प्लावानिशेषोऽस्ति  
जपपालमुक्तयेनाऽनिरूप्यत्वात् परस्परमन्तभावः ।

“ रस गन्ध द्रव्यं व्योषदी, वरादान्पदन्त्य हिहृगुगन्धम् ।  
धृषासर्वचूर्णस्य वेदाशमागा, पुत्रैरनन्तभीरुं पद्मिददद्भिः ॥  
मुतिनिर्दिष्टारतसारयुग्म, दरेनागवतीद्वैर्भावीनीयम् ।  
वशैमुद्रमानप्रमाणा च देया, वषेष्टाधुपानाथ मुक्त शिण्णेति ॥  
महायासकासौ हरसर्वदुःख, धुधासागर सागरीवाऽनन्तम् ॥ ”  
इति धुधासागरनामा रसाग्रे पाठः भक्तियोऽस्ति, तत्र विषयाने  
धृषेतिपाठः केदारप्रसादाद्योपपन्नवृत्तिवैचित्र्यात् सञ्जातः । हिहृगु-  
गन्धमिति च द्वित्रक केनविचारेण कृतमिति शुद्धपाठः न भवति यत्तत्  
मागमादिहृल्लङ्घनस्य वैषम्यम् । गन्धकस्य तु नामनिर्देशेनैव योगमा-  
रम्भिकादेः एव समागमनात्तद्वैषम्यमपि स्पष्टमेव । प्रमाणाऽधिक्येष्टया  
तदस्तीत्यपि शक्तुं न युज्यते प्रथमविन्यासे एव त्रिगुणयोगस्य वचयितुं  
शुद्धकत्वात् । तस्मादयं योग उपरितनयोगे प्लान्मन्तानीयः ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, पाचोनमक, तीनोंक्षार, शुद्ध  
पारा और गन्धक १-१ भाग, शुद्ध वध्नाग २ भाग लेकर  
वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय लौहके  
कायसे एकदिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रख  
छोड़े । इनमेंसे १-१ गोलीकाचूर्णकर ५ लौहोंके साथ लेनेसे  
यह मन्दागिको दूरकरताहै ॥ ३००९ ॥

### ३१० क्षेत्रपालरसः

हिहृल्लञ्च विपं तात्रं लौहं तालकटङ्कणम् ।  
जीरसाहयफेनञ्च सममार्गं विमर्दयेत् ॥ ३००९ ॥  
यवादां घटिका कार्पा पथ्यं दुग्धौदनं हितम् ।  
लवणाऽम्भोविषयञ्च दातव्यं भिषजां वरैः ॥३०१०॥  
अग्निमान्यं गुर्वं शीथं प्रहणीमपि दुस्तराम् ।  
ज्वरञ्च विषमं जीर्णं नाशयेन्नाऽत्र संशयः ॥ ३०११ ॥

शे. र., र. च., शोथे ।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ, वध्नाग, शुद्धाग और अजीम,  
ताम्र, लोह और हरितालमस, सफेदजीरा सब समभागलेकर  
वारीकचूर्णकर पुनर्ववा अथवा मकोयकेससे १-२ दिन मर्दन  
कर मूगवारकर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली  
पुनर्ववादिषाग्रभृत्किंसाय देनेसे शोथ, मन्दागि, दुस्तरसङ्क-  
ट्ठणी, विषम और जीर्णज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै । पथ्यमें  
दूध और चावलदेवे । नमक और जलका परित्यागकरे ॥३०१०॥

### ३११ क्षेत्रीकरणरसः

प्रागुक्तं पातितं सूतं स्वेदितं सुमुत्तीकृतम् ।  
कलांशं हेमजीर्णञ्च पञ्चणं जीर्णदानवम् ॥ ३०१२ ॥  
रसमादाय मृद्वीयालुगन्धपञ्चरसनीरतः ।  
आयुषोर्णारसश्चैव नष्टपिष्टो भवेद्रसः ॥ ३०१३ ॥

त्रिफलोत्तरसेर्मर्द्यः सूतः कृष्णसुवर्णजैः ।  
विंशतिञ्च दिनान्येव कल्कं सोमानले क्षिपेत् ॥३०१४॥  
अथ ऊर्ध्वं बलिं दद्याद्रसेन्द्राच्च चतुर्गुणम् ।  
निरुद्धय सुदृढं यन्त्रं चुलीमग्निनिवेशयेत् ॥ ३०१५ ॥  
ज्वालयेत्क्रमशो बहिमेकविंशदिनाद्यधि ।  
मृदुमध्योत्तमं प्राप्नो वैश्वानरमतन्त्रितः ॥ ३०१६ ॥  
ज्वालयित्वा स्वाङ्गशीतं यन्त्रमुत्तारयेत्ततः ।  
निर्मिद्य यन्त्रं गृहीयाद्रसं सिन्दूरसन्निभम् ॥ ३०१७ ॥  
एवं भस्मीकृतात्सुताङ्गाय पलचतुष्टयम् ।  
ताप्यं लोहं विडङ्गञ्च शिलाजतु हरीतकी ॥ ३०१८ ॥  
सर्वं सूतसमं प्राशं प्रत्येनं मर्दयेत्ततः ।  
तत्त्वमध्ये विनिक्षिप्य सर्वमेकाग्रतां यथा ॥३०१९॥  
प्रजेत्तथाऽथ मधुना घृतेनाऽथ प्रमर्दयेत् ।  
एवं तन्मर्दितं सूतं मध्वाग्रेण समन्वितम् ॥ ३०२० ॥  
मधयेत्प्रातररथाय यस्य घृण्यमतन्त्रितः ।  
शुनृद्विकरं पुष्टिर्धनं बहिर्दीपनम् ॥ ३०२१ ॥  
गद्याणमार्गं स्वीकुर्याद्राजयश्मयिनाशनम् ।  
प्रमेहं पाण्डुरोगञ्च कामलाञ्च हलीमकम् ॥ ३०२२ ॥  
प्रहणीमतिसारञ्च नाशयेन्नाऽत्र संशयः ।  
यत्सर्वद्वययोगेन यलीपलितहा भवेत् ॥ ३०२३ ॥  
सतताऽभ्यासयोगेन जीयेदाचन्द्रतारकम् ।  
क्षेत्रीकरणनामाऽयं रसः परमसुन्दरः ॥ ३०२४ ॥  
धारोष्यं सर्वदा पेयं गन्धं शर्करया युतम् ।  
न क्वचिदपि भुञ्जीत तक्ञ्चापि विषजयेत् ॥३०२५॥  
गोधूमयश्माल्यञ्च मुद्गं मांसरसतथा ।  
प्रापेण तिकमधुरकपायकटुकात्मकान् ॥ ३०२६ ॥  
रसानुञ्जीत सततं लवणाम्लं विषर्जयेत् ।  
ताम्बूलं सततं क्षादेत्कर्दूरदिसमन्वितम् ॥  
इक्ष्वः पनसं रम्भाफलादीनि निषेवयेत् ॥ ३०२७ ॥  
रसाल, रसायने ।

भाषा—युष्मान्तस्काराकिवेहुए पारेमें षोडशाशुवर्णका-  
प्रासदेकर पञ्चगन्धकजारणकर कालाधतुरा, मृषाकर्णी, त्रिफला  
और कालेघृतकेसोसे यथाक्रम ५-५ दिन मर्दनकर टिकिया  
बनाय मुखाकर पारेसे चतुर्गुणित शुद्धगन्धक नीचेकररख डमरू  
यन्त्रमें बन्दकर समस्तार धुपधुलाकर वज्रमिष्टीसे ॥ कपडमि-  
ष्टीवरके चूल्हेपरस २१ दिनतक गुरु, मध्य और खरामि देकर  
पाककर । २२ बेदिन लकड़ियोंको निकालले और यन्नको कोय-  
लोपर रहनेदे । स्वाङ्गशीतलोहोनेर युक्तिसे यन्नको खोलकर  
ऊपरकेधेमें लगीहुई सिन्दूरपणमसको निकालकर ४ पललेवे ।  
फिर शुद्धसोनामाखी, लोहमस, विडङ्ग, शिलाजीत और हरे  
४-४ पल लेकर वारीकचूर्णकर धी अथवा गधुसे २-३ दिन  
मर्दनकर बल्बनवार रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती धी और  
मधुकेसाय मिलाकर तत्तद्वैगद्वारापुनर्नकाय प्रातःकालदेवे ।



एसे ६ मासे दवाके सेवनकरनेपर बल, तृप्ता, शुक्र, पुष्टि, अग्नि इनकानाश, राज्यस्थ, प्रमेह, पाण्डु, कामला, हलीमक, ग्रन्थी, अतिसार इनसबको यह नष्टकरताहै । दो वर्षतक लगातार सेवन करनेसे बलीपलित नष्टहोतेहैं । निरन्तर सेवनकरनेसे अत्यन्त दीर्घजीवी होताहै । शकरभिलाहूआ धारोष्णदूध, गेहूँ, जव, चावल, मूग, मासरस, तिक, मधुर, कषाय और कटुसस्का-सेवनकरे । लग्न, खटाई, विशेषकर दही और तक्रका वर्जनकरे । कर्पूरादि सुगन्धद्रव्ययुक्तपान, ईख, कटहर और केला बगैर फलोंका सेवनकरे ॥ ७११ ॥

### ७१२ ज्ञानाद्व्यागुटिका

चत्वाररतुत्यसस्वरूप तावन्तः स्वरूपमाश्लिषात् ।  
शुद्धारोप्यस्य चत्वारो बह्वैको हेमचूर्णतः ॥ ३०२८ ॥  
गुद्धोऽष्टादशान्वस्तरैः पूर्वाको यस्तु पारदः ।  
तस्य वल्लो नयत्रिशद्विपञ्चाशच्च मोलितः ॥ ३०२९ ॥  
खल्वे प्रक्षिप्य सर्वं तन्मयेयदिनसप्तमम् ।  
वरणस्य च मूलानि ध्रीखण्डं सूक्ष्मकारितम् ३०३०  
मृद्वग्री स्वेदयेदेतद्दोलायग्रे दिनद्वयम् ।  
स्वेदयेद्गुटिकां कृत्वा क्रमात्पञ्चामृतेन च ॥ ३०३१ ॥  
मध्वाज्यवधिदुग्धञ्च शर्करा चैव पञ्चमी ।  
अस्मिन्पञ्चामृते स्वेद्यं यावद्यामाष्टकं भवेत् ॥ ३०३२ ॥  
कातलोहमये पात्रे मधुपूर्णं गुटी क्षिपेत् ।  
तत्पात्रं यालुकापूर्णस्थालिकायाञ्च विन्यसेत् ३०३३  
खुल्यां स्थाली समारोप्य वह्निर्पामाष्टकं भवेत् ।  
स्वेदनेऽयं विधिः कार्यः प्रत्येकेनाऽमृतेन च ॥ ३०३४ ॥  
नष्टे नष्टे मुहुः क्षेप्यं क्रमात्पञ्चामृतं सदा ।  
मधुयुक्तं क्रमेणैव पञ्चधा स्वेदयेच्च ताम् ॥ ३०३५ ॥  
तत्सद्रोगानुपानेन सर्वाप्रोगाभियच्छति ।  
त्रिकालज्ञानमामोति नरः सततसेवनात् ॥ ३०३६ ॥  
रसवि, रसापने ।

टि०—यद्यप्यष्टादशधातुभिर्गुणि निर्मिता परन्वेतादवप्रक्रियया दिव्यज्ञानप्राप्तिरसम्भवमायत्तानुसंध्याशिक्षाभिरज्जाना वादोक्तप्रक्रियया सुभाषत्वमापद्य योगो निष्ठादीनामिति रहस्यम् । सुभाषकारस्तु अगस्त्य सप्रदायादिभिरनगत्य इति ।

भाषा—नुत्य और सुवर्णमादिकके साथ, शुद्धचादी ४-४ बाल, सुवर्णचूर्ण १ बाल ( ३ रत्ती ), अष्टदशसंस्कारकिया-हुआपारा ३९ बाल लेकर = दिव्यतक शुष्कमर्दनकर गोलीबनावे फिर वक्षकीबद्धकीछाल और खेदकन्दनका पानीमें बल्कवनाय उसमें गोलीको रखदे । फिर बून्देपर मिट्टीकी बट्टाही रख उसमें

दोबहुल बाल बिछाकर कान्तलोहके पात्रको रख औषधपिण्डका दोलायत्रबनाय मधुमें मन्दाग्निमें ८ पहरतक स्वेदनकरे । मधु सुखने पर दूसरा जाल्ता जाय । इसीतरह धी, दही, दूध और शक्करके सबतमें स्वेदनकरे । स्वाज्ञाशीतलोहोनेपर विशुद्ध बनाकर रखओहै । इसमेंसे १-१ रत्ती तत्तद्गोहृदातुपानकेसाथदेनेसे समस्तरोगनिवृत्तहोतेहैं । निरन्तरसेवनकरनेसे त्रिकालज्ञान प्राप्तहोताहै ७१२

### ७१३ ज्ञानोदयरसः

कलावेदाङ्कचन्द्रांशैः सर्वांशसितया युतैः ।  
शकाशनरजोजातीफलशुक्लैः सुसाधितः ॥ ३०३७ ॥  
सेवितः सात्म्यतो ग्राही जलदोषापनोदनः ।  
वातछेप्यामयमध्यंसी ज्वरातीसारनाशनः ॥ ३०३८ ॥  
बृंहणैरनुपानैर्हि योजितः कामबुद्धिरुत् ।  
ज्ञानोदयो भवेदेव साधकानन्दसिद्धिः ॥ ३०३९ ॥

नि र, वै र, र, कौ, रसायनस, र ल, र श, दो ज्वराऽतिशोर । र सि वाजीकरणे ।

टि०—र ल, र श, दो, एषु ग्रन्थेषु “विजयाशक्तिसयोगिनट मण्डनसमुत्ति । शान्तीरवो भवत्येव साधकानन्दसिद्धि ॥ कला वेदाङ्कचन्द्रांशैः क्रमेण समश्चर । सेवित सात्म्यतो ग्राही कषणात्पाप नोदन ॥” इति पाठो निहिताऽस्ति, अत्र नन्मण्डनमधिकमस्ति भाषायां चत्वार धर । अतऽन्तिमभागस्य द्विरिति करणीया पाठस्तु एक एव करणाय प्रवक्ष्ये गौरवात्कमण्डनमन्त्रेण शक्याऽधिकवाच । निगुणरुक्ताकरदीपाया रजस शब्दस्य पर्यकाऽध्ववरणतु हास्यास्पद प्रेषाऽस्ति, मसरजलकमीत्यपाठे रन स्थाने शक्तीति स्पष्टोक्तिर्यात् । र सि ज्ञानोदयावटीतिनाम । तत्र पारदस्थाने दिगुणद्वन्द्व नियोजितम्, पाठस्तेकयद ।

भाषा—धोयाहुआ गाजा अथवा भाग १६ भाग, शुद्ध शन्धक ४ भाग, जायफल ९ भाग, पारदभस्म अथवा चन्द्रोदय १ भाग लेकर बारीकचूर्णकर सजकी बराबर वाहरमिलाकर रख छोडे । इसमेंसेप्रकृतिकेअनुसार १ मासेसे २ मासेतककी माना उचितानुपानकेसाथ लेनेसे जलदोष, वायु और कफरोग, ज्वरा विसार, इनसबको यह नष्टकरताहै वाजीकर अनुपानोक्ताया लेनेसे यह कामकीबुद्धिको करताहै ॥ ७१३ ॥

अन्तः स्थिताऽस्ति बहिरस्ति रसस्वरूप,  
सिद्धिप्रदोऽस्तु लयसर्गधिसर्गभेदैः ।  
ऊष्माभिधाम्मजति सर्वजगज्जिवासी,  
हंसो हरिः सकलकृद्रसयोगशास्त्रे ॥

इत्युष्मपर्यन्ता रसाः समाप्ताः



**द्राविडादिप्रसिद्धा ये कुम्भजव्यासनिर्मिताः  
योगास्सम्पगिह न्यस्ताः सर्वदेशहितेच्छया ॥**

### १ अत्रिकुमाररसः

विशुद्धपारदविपगन्धकटङ्कणदरदान्समभागान्  
किञ्चिदुष्णीकृतपक्वैररसेन यामद्वयं मर्दयित्वा  
चक्रीकृत्य मृषायां निक्षिप्य मुखगन्धनं विधाय  
वालुकामये क्रमाश्रिता यामचतुष्टयं विपाच्य स्वाह्न-  
शीतलं गृहीत्वाऽऽर्द्रकरसेनैकगुञ्जपरिमिते मेचिते  
सति सर्वज्वरनिवृत्तिर्भवति । सङ्ग्रहण्यतिसारादयो-  
ऽपि नश्यन्ति । पथ्यं रोगाऽनुरूपम् । ( अगस्त्यप्रो-  
क्तवैद्यकशास्त्रे )

टि०—अयं पाठो रत्नाकरोपयोगे वसवराजीवे च सिद्धाऽत्रिकुमार-  
नाम्ना गृहीतोऽस्ति परन्तु दरदरादित्यमरि । तत्कारणं घृष्टिपाकाऽऽ-  
सारनं प्रतिभाति । न्यासेऽपि अर्धनारीश्वरव्यतिनाम्ना योऽयं योगोऽस्ति  
तत्राऽपि दरदरादित्यम्, भावनायाश्च निगुण्टीकारवत्त्वो गृहीते, लव-  
णवत्त्वे पाकः, नस्ये भक्षणे चेति द्विविध प्रयोगो दर्शितः । अत्राऽपि  
मर्वासां भावनायामनुष्ठानं कृत्वा एक एव योगरत्नपादित्येवयोगनाम्य-  
भविष्यति । वातकालवणदन्तवोस्तु कामचारः । वातकालवणमिश्रणे-  
नाऽपि पाकाऽनुष्ठाने क्षयभावः प्रत्युक् द्वयोस्त्वयोगादप्रतिमयोगेन भूषा-  
श्लेष्मणशीलवस्तुना कुनारं दृढमवरोधे भविष्यति, नस्ये भक्षणे चाऽ-  
न्यन्याहर्तव्ययोगः इति विद्वद्भिर्नित्यस्मरणीयम् । त्रिषेणमृचनम्—अ-  
नवार्धम्यवैद्यैर्वालिपिमापयोर्विचमानताऽस्ति तद्देशीयान्सद्रूपग्रन्थान्-  
नामन्यत्पि भाषाया च प्रकृते महामातक मन्वन्ते इतः वारणा-  
दद्यावपि महामहर्षयुक्तयोरप्यनयोऽनं सत्त्वाऽनुवादोऽभूत् तदे-  
शीघ्रौपमनामान्तर्विचि याल्मस्ते वयायप्रतिदम्प्रहामावादादमाभि-  
रपि पश्य ॥ प्रतिवदा योगैश्चराऽनुष्ठाने द्वितीयाऽऽर्द्रतोऽक्रूरस्पर्णां  
वाल्मन्तीति विद्वत्सु विनीता प्रार्थना गव्येष्वेषु वनयौगपमामसु  
मन्वेह आनीतनतन यथाऽन्यथितान्येव तद्देशीयनामानि निहितानि यथा  
चैषुतद्वचवादीनि भगवद्वैदाकाऽर्जविविद्वान्त वगैर्विद्वद्भिर्प्रम्यैस्मा-  
हाम्य दातव्य वनयन जात स्तान्नमपि शुष्या मृचनीय तद्वितीयावृत्तौ  
दूरीकरिष्यते ।

### २ अत्रिकुमाररसः ( स्वयमादिः )

शुद्धमयश्चूर्णं, अमलसारगन्धकं, टङ्कणं, दरदं,  
कान्तञ्चेति प्रत्येकमर्द्धपलिकं कुमारीरसेन यामच-  
तुष्टयं विमृष्ट चूर्णयित्वा ताम्रसम्पुटे निक्षिप्य वाता-  
यं भूमरेष्वोदमनपर्यन्तं स्थापनीयम् । पुनर्द्वितीयदिने  
कुमारीरसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा शुष्कीभूतं चूर्णि-  
तञ्च ताम्रसम्पुटितं विधायऽऽतपे शोषणीयम् ।  
सूक्ष्मप्रतया भूमां निःसरति । पुनस्तृतीयदिनेऽप्येवं  
कृतञ्चेद्वचण्डाऽऽतपस्ययोगापक्वोभूय मस्मीभवति ।  
गुञ्जद्वयपरिमिते मस्मिन् कलाद्वयं ( द्वादशार्किकं )  
त्रिकटुकचूर्णं मेलयित्वा मधुना सह सेवितञ्चेत्  
सन्निपातगुल्ममृच्छाकामलापाण्डुमेहादयो निवर्तन्ते ।  
पथ्यं रोगानुरूपम् । कारवैल्लेकशाकः सुतरां वर्ज्यः ।  
अनुपातमेवातसर्वेषु रोगेषूपयुज्यते ॥ ( अगस्त्य० )

टि०—एवमिदं योगेविद्वान्नीलैर्गोमरेण्डपदैरस्यैव त्रिदिनं  
धान्यराशौ स्थाप्यते । आतपनिधानसमयेऽपि वातारिष्यैराच्छाद्यते इति  
विशेषः संचालोऽस्ति यथा स्वयमभिरसे मर्दनमातपनिधानञ्च एकदिन-  
मेव दिने ममाप्यते । अथ तु महर्षिणा त्रिदिनपर्यन्तं मर्दनमातपनिधा-  
नञ्च वृत्तमस्ति मग्नं तृषपाऽपि गण्यते, शुनैरदृष्टयन्तु मृदि-  
वाऽनुष्ठानेन परीक्षणीयम् ।

### ३ अत्रिकुमाररसः ( स्वयमादिः )

शुद्धपारदः ३ पलः, गन्धकः २ पलः, कान्तसि-  
न्दूरं ४ पलं, मनःशिला २ पला, दरदं २ पलं, अयो-  
मसम् १ पलं गृहीत्वा कज्जलीरुप्य कुमारीरसेन १५  
दिनपर्यन्तं मर्दयित्वा त्रिकटुकचूर्णमिश्रिताऽऽर्द्रकरसे-  
नाऽर्द्रगुञ्जपरिमितमोषं सेवितं सङ्ग्रहिमान्यगु-  
ल्मोदावर्तपाण्डुचरुश्वासकासश्वयधुप्रभृतिरोगान्ना-  
शयति । आढकी, मुद्गाः, सूएणं, वृन्ताकं, शिशुशिम्यो,  
मिण्डिका, काकमाचोपथं, गोक्षीरं, गोवृत्तञ्च पथ्यम् ।  
अम्लरसो धूमपानं स्त्रीसंसर्गश्च वर्जनीयः ॥ ( व्यास-  
प्रोक्तवैद्यकशास्त्रे )

### ४ अत्रिकुमाररसः ( वातादिः )

विशुद्धपारदरसकर्दूरदरदतालकानि समभागानि  
गन्धकञ्च द्विभागं गृहीत्वा चूर्णीकृत्य काचकूपिकायां  
निक्षिप्य वालुकामये यामचतुष्टयं पक्त्वा स्वाह्नशी-  
तलं ग्राह्यम् । मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन सहैकगुञ्ज-  
परिमितः सर्वज्वरप्रयोजनीयः ॥ ( व्यास० )

### ५ अजीर्णमान्यवटी

सर्पदंष्ट्रां १ पलां, विडङ्गपारसीकाकृष्णजीरकरात्रा  
( राष्ट्रक ) पिप्पलीमूलरसकपूरदग्दगोरोचनकेला-  
राणि प्रत्येकं सपादतोलकानि, मृगमदञ्च पादतोल-  
कमाहृत्य ताम्बूलोदलरसेन गर्दभीक्षीरेण चैकैकयामं  
मर्दयित्वा मुष्टप्रमाणां वटीं स्तन्येन दद्यात् । अनया  
सर्वे बालरोगा नश्यन्ति । बालस्य मातुः पथ्यक्रमः=  
उष्णोदकं, पुराणतण्डुलाः, मरीचिमिश्रितसैन्धवचूर्ण-  
ञ्चेति । ताम्बूलं पुष्पसङ्गश्च वर्ज्यः ॥ ( अगस्त्य० )

### ६ अण्डवातलेहम्

हिङ्गुपारदमनःशिलापिप्पलीगजपिप्पलीसैन्धवद-  
ङ्कणतालककटुरोहिणीकृष्णजीरकाणि प्रत्येकं पाद-  
तोलकानि, शुद्धं जयपालवीजञ्चैरुपलं गृहीत्वाऽऽर्द्रो  
जयपालवीजानि एकयामपर्यन्तं सम्यग्विमृष्ट पूर्वा-  
क्तौषधचूर्णं मेलयित्वाऽऽर्द्रकरसेन द्वियामपर्यन्तं  
सम्पद्मद्वयित्वा मरिचप्रमाणा वटीः कुर्यात् । एकां  
वटीं शुद्धेन शर्करया वा निर्गलेत् । अनेन वातपा-  
ण्डुगुल्मश्वयधुज्वरहृच्छलमेहवातप्रन्थयो नश्यन्ति ।  
महोदरव्याधिप्रस्तानामण्डवातस्य च दिनत्रयाऽभ्य-  
न्तरे एकवारमोषं देयम् । एवं पञ्चदशाऽऽवृत्त्या  
औषधे दत्ते पूर्वोक्तयोगा नश्यन्ति । ( अगस्त्य० )

## ७ अमृतसञ्जीवनरसः

स्तन्यशुद्धशलाकरपूररससिन्दूरद्वन्द्व-  
(दालचिन्ना) विपाण्येतानि शुद्धानि समभागा-  
न्याद्रिकनिर्गुण्डापरत्तुलसारसमधुना च प्रत्येकदिन  
मर्दयित्वा रातन्त्रालादि विंशत्य प्राचानन्तरशुद्धे  
द्राक्षाफलमध्ये वा मुद्रप्रमाणमौषध विधाय एके-  
यामाऽनन्तर देयम् । मात्राचतुष्टयादधिकमपि न  
देयम् । महासन्निपातादिदोषेषु निवृत्तपु सत्सु पुन-  
रेतदौषध न प्रयास्यम् । उष्णमुद्रमधम्, गाधूम-  
रुण्डयूषध पथ्य । एतच्च नीलमध्वन्धुपदशपा-  
थ्यशूलरूग्णप्रन्ध्यादानाशयति । मेहराणि चाल-  
तरणभिण्डिके, औदुम्बरशालाट्ट, गाधूमखण्ड, सि-  
तापला, शिशुशिम्या, पदालह्वय, शरहञ्जिरा, प्राचा-  
नतण्डुलाश्च पथ्या । एतदौषधेन कस्यचिन्मुखपात्रा  
भवेत्सर्हि कृष्णरङ्गलव्यङ्गवायेण शोधन कार्यम् ॥  
(व्यास०)

## ८ अश्वकञ्चुकी (कोडासुरीमात्रा)

नागरमरिचाऽऽमलनाकलूककदुरारिणोसैन्धवट-  
ङ्गणशुद्धतालकद्वन्द्वऽऽरतिरूपैरपिण्डोहरातकाचि-  
मीतकट्टणनारकचित्ररत्नव्याघ्रापलाऽमलसार-  
न्ध्रमन शिलात्रिपारदा परण्ड्योजमज्जा चेति  
प्रत्येक पादतालक शुद्धजयपालराजमध्वपट्ट गृह्यत्वा  
रसगन्धकादिधातुना नालरणीषज्जली विधाय धूल-  
शाधितैरदृश्यपूर्णैः सहैराहृत्य भृङ्गराजसेन या-  
मपट्ट, जम्भारसेन च यामत्रय सम्मिश्रितमृच मरि-  
चप्रमाणा घटा कुर्यात् । एकेका घटा सैन्धवयुक्तम-  
रिचपूर्णैः सह प्रयुक्ता शुक्लरागं नाशयति । पर-  
धत्तपरसेन शातज्यटा, नागरघाघेन शोणितरा-  
तरांगा, घृतमिश्रितजातीष्वपूर्णैः स्ताऽतिसार,  
विष्वीपपरसेन धातुहास गाघृतेन सङ्ग्रहण्यति-  
सारदय, निर्गुण्डापरसेन विंशतिर्महा, मधुना  
राजयम्भादय, त्रिकटुपूर्णैः शाताधिषयजकण्टा-  
राध, शिपुपरसेन शुक्लशूरादय, मेथिकापीनक-  
लेन द्रवज्यवाधय, मृगनीरष्वपूर्णैराऽतिदाह,  
त्रिकटुकपूर्णैः काम आर्द्रकरम्मिश्रितरक्तकत्व-  
प्रमेन चित्तविघ्नमसन्निपात, नयनातमिश्रितन्याति-  
ष्मतां राजनातीषल्यकपूर्णैराऽतिमृष्यवाधिनंदयति  
रक्तकापासपुपरसेन यशाकरण, ताम्बूरेन च स्वाध-  
शाकरण भवति । परं तत्तद्ग्राणासारणाऽनुपाना  
दय कल्या । (अगस्त्य०)

## ९ अयःसिन्दूरम् (प्रथमम्)

अयश्चर्ण, अमलमारगन्धकश्चैकैकपल गृह्णीया  
पन्याद्रवण यामचतुष्टय मर्दयित्वा चञ्चिका विधाय

शरावसम्पुटित कृत्वा पञ्चाशदुत्पलैः पुटा देय ।  
पुन कन्यारसेन मर्दयित्वा पुनर्वत्पुटा दय । तत-  
स्त्वैरे निक्षिप्य पातभृङ्गस्वरसेन मर्दयित्वा पञ्चाश-  
दुत्पलैः पुटो देय । एतद्रुणादयस्सिन्दूर भवति ।  
अर्धगुञ्जापरिमित मधुना सेवनीयम् । कामपाण्डु-  
शाफादया नदयन्ति सिराश्च दृढा भवन्ति ॥ (व्यास)

## १० अयःसिन्दूरम् (द्वितीयम्)

शुद्धमयश्चर्ण ५ पल, पारदगन्धककान्तानि प्रत्येक-  
पलानि, तालक १ तालक हसपादद्वन्द्वऽऽर्द्धतालक,  
एतानि विचूर्ण्य विष्णुपत्ररसेन यामचतुष्टय मर्दयित्वा  
चञ्चिका विधाय शरावसम्पुटित कृत्वा शतात्पलैः  
पुटा देय । पुनर्भृङ्गसेनेभुरय (नीरगुग्गु) स्वरसेन  
च यामचतुष्टय सम्मयं पूर्यन्त पुटा दय । पुनर्भृङ्ग-  
सेनेका गजपुटा देय । इदमौषध चित्रकवाधन दिन-  
द्वय मर्दयित्वा मापप्रमाणा घटी कृत्वा रामद्राक्-  
दुष्कराणा समभागशृणाऽनुपानेन घटा घटी दत्ता  
चर्महासन्निपातव्यासकासक्षयमेहपाण्डुगुल्मादया  
रोगा नियतन्ते । पथ्यादिनमा यथाचित । (व्यास०)

## ११ अयःसिन्दूरम् (तृतीयम्)

शुद्धाऽयश्चर्णकान्तगन्धकान् २-२ पाल, पारद-  
श्चैरपल स्वरैः निक्षिप्य जम्भारसेन दिनद्वय मर्द-  
यित्वा शुष्का चञ्चिका शरावसम्पुटितऽप्यद्वय शताप-  
लैः पुटा देय । परं रीत्या कुमारीरसेन चत्वार  
पुटा देया । एतत् सिन्दूर भवति । शुक्लादयपरिमि-  
तस्य मधुना सह सयनादिस्त्रिगतज्यरादया मलयन्ति ।  
भृङ्गराजमूलपूर्णैः पित्तपाण्डुगुल्मादय, त्रिकटुकले-  
हेन गर्भशूलाऽज्ञानवातप्राधय, आर्द्रकपूर्णैः पान्त-  
याऽग्नेयश्च नदयति । मण्डलपर्यन्त सैयनाच्छरीर  
वक्षसम भवति ॥ (अगस्त्य०)

## १२ आनन्दभैरवसः (महादि) १

गौरीपाषाणद्वन्द्वमन शिलातालकट्टणपियगन्ध-  
कस्यार (दालचिन्ना) मृगारुद्राट्टिपाषाणानि  
विधित्वा शुद्धानि चानमाण्डे मुखपर्यन्त यात्रिकाना  
मृगमाधुष्य उपरितनाना मृक्ष पूर्णैः निक्षिप्य पञ्चमु-  
त्तिरा कृत्वा हस्तत्रयपरिमिते भूगते माण्डे निधाय  
गर्तमाधुष्य चत्वारिंशदिना युष्य मुखमुद्रणमुदाटयी  
पथ गृह्यत्वा कुमारीरसेन दिनद्वयपर्यन्तमनान मर्द-  
यित्वा चत्वारुष्टय शरावसम्पुटित कृत्वा शृदा मर्दय  
निराद्य भूपुटा देय (अन पुटा देय) । पुनर्भृङ्ग-  
सेन स्वरैः निक्षिप्य शुद्धपादं मयूरतुष्टयमस्य चैकै-  
कपल शुभ्रमस्य (सध्वीरमस्य) रागद्वान्ध मिध-  
यित्वा पानपुण्यधत्तपरसेन यामद्वय मर्दयित्वा  
मापमात्रा यगमष्टायापुत्रा कृत्वा शिरःशिरः-

नेन मिथितानामप्रभागावशिष्टकाथेन यामचतुष्टय विमुच्य गुञ्जामिता घटा विधाय स्तन्येन मधुना वा शालेभ्या दद्या । अनुपानत्रिशेषे सापद्रवास्सन्निपा-  
तादिरागा नश्यन्ति । एतस्याऽनुपानकाथ = धूम्रम्, पण्डक, थासागूलं, कुष्ठं, विष्णुचान्ता, तित्तपटाल आकारकरम, त्रिकदुर, अमृता, चित्रक भाङ्गी चेति सवाणि प्रत्येकपलिकानि सञ्जण्याऽष्टौ भागान्विधा-  
यक भाग २४ तोलके जले निक्षिप्याऽप्रभागाऽवशेषि-  
तेन काथेन मधुमिश्रितेन सहैका घटा सेवनाया ।  
श्यासकासाधुपद्रवमुता विषमशीतसन्निपातादया  
नियतन्ते । आढश्रीधुपान्न पथ्य रत्नन वा विधेयम् ।  
( व्यास० )

### १९ कान्तसिन्दूरम् ( प्रथमम् )

धूम्रमलाह शर्कराहत्याऽजारेणेन सयाज्य मृन्म-  
यपात्रे निक्षिप्य सप्तपट्टमृत्तिका दत्तैकविंशतिदिन-  
पर्यन्तं भूगते स्थापनीयम् । एतत्पञ्चपलमितं गृहीत्वा  
गन्धकाऽयश्चणपाखान् पञ्चपञ्च पलिकान् खल्वे  
निक्षिप्य जम्बीररसेन यामचतुष्टय मर्दयित्वा गुप्ता  
चक्रिका धुम्रमृन्मयपात्रेऽघट्टयाऽष्टयामपर्यन्तं गाढा  
क्षिना विपद्येत् । एतत्तण्डुलमानता गुञ्जापर्यन्तं रोग-  
शूलघल निरीक्ष्यापयोज्यम् । अजाक्षारेण सेवित-  
श्चेद्भुज्यलनसङ्गहणीकामलापाण्डुश्वयधुवातमेहा-  
न्मूलीरराति । रक्तवृद्धिर्भवति शरीरमयस्सरशञ्ज ।  
शुद्धा, सुरण, तुवरी, पटाल, शिशुशिम्या, मिण्डिका,  
विषापात्र, शरहञ्जिका, औडम्बरफलानि, गोघृत-  
तिरतपाणि, शुष्कमामलकलेहञ्ज पथ्यम् । तित्तिडा,  
तारकवस्त्रनि खीरपदानञ्च सुतरा वर्जनीयम् ।  
( अगस्त्य० )

### २० कान्तसिन्दूरम् ( द्वितीयम् )

पूर्वात्तरीत्या शुद्धकान्त गन्धकञ्च प्रतिपञ्चपल  
हीत्वा जम्बीररसेनयाम मर्दयित्वा गजपुट देयम् ।  
न प्रतिपुट पञ्चपल गन्धकं नियाज्य शोणि गज  
दानि दत्ता कृपिण्या स्थापनायम् । तदनन्तर  
प्रथमूलत्वच गन्धकञ्च प्रति पञ्चपल खल्वे स्तन्ये  
नयाम शुक्लटाण्डवतद्रवेण च द्वियाम मर्दयित्वा  
रायसमुट्टयवस्त्रय गजपुटपाका पलाशशुभ्रमव-  
त्तद्वर्णं भस्म भवति ( अत्राऽप्रिस्थितौ सन्देहः  
लभ्येष्टम् ) । एतद्विधिका पूर्वोक्तमौषधञ्च खल्वे  
नेक्षिप्याऽर्कशारेण विमुच्य शुष्कचक्रिका शराववार  
रत्नय गजपुटदानाल्पमुष्णमिश्रितं सिन्दूरं भवति ।  
तत्तण्डुलप्रमाणं मधुना मण्डलपर्यन्तं मज्जितं सूक्ष्म  
सेरागतमुषवातव्याधिमण्डवातगुल्मनलादगन्धका  
चण्डमायतं वाधाप्रादयति ॥ ( अगस्त्य० )

### २१ कालकण्ठमेहनारायणसिन्दूरम्

रसभस्म ८ तालक, गन्धक तालकञ्चैकतोलक,  
मन शिला रससिन्दूर यशदभस्म चाऽऽर्द्धाऽर्द्धतोलक,  
दरद, तनुतुजत, वज्रनागताम्रभस्मानि प्रत्येक पाद  
तोलकानि, तनुतरसुवर्णपत्रमर्द्धतोलक, शुद्ध विषम-  
न्तोलक, एतानि सम्यक् चूर्णितानि एवमे निधाय  
पीतपुष्पभृङ्गरसेन कन्यारसेन च प्रतियामचतुष्टय,  
पलाशपुष्पद्रवेण पारसपिप्पलपुष्परसेन च प्रतिया-  
मद्वय मर्दयित्वा शापयेत् । ततो रक्तकापासपुष्पाणि  
दशतालके जम्गररसे निधायऽऽतपे स्थापनी-  
यानि । जम्बीररसा यदा श्वेतरूपा भवेत्तदा पुष्पाणि  
निष्कास्य तैरेव ( जम्भाम्रसा ) यामचतुष्टयमना-  
रत मर्दयित्वा शुष्क चूर्णं काचकृपिकायामवस्त्रय  
वालुकायन्त्रे दीपमध्यतीक्ष्णाग्निभिः प्रत्यष्टयाम पा-  
काशीलवर्णमिश्रितं रक्तवर्णमौषधं सम्पद्यते । एत-  
त्सिन्दूरमर्धगुञ्जापरिमितं मधुना सेवितं चेद्दण्डगुल्म  
महादरशूलपाण्डुश्वयध्वग्निमान्द्यदाघातिसारमूलप्रह-  
ण्यादयो घट्टमूलरागा नियतन्ते । शुद्धचीसरसेन सह  
मण्डलपर्यन्तं सेजितं सदृष्टिनाडामासगतप्रमेहान्  
गर्भरारकादान् ( सहजव्याधीन् ), स्वप्नस्त्रलन, मु-  
रपाक, सूर्यावतादिशिरारगाश्च सार्धशिरारागाश्च  
नाशयति । अनेन रक्तवृद्धिघातुस्त्वम्नी जायेते ।  
पथ्य रागानुरूपम् ( व्यास० )

### २२ कालाग्निरुद्धमैरवरसः

पारदवैशान्ततुतुजतताम्रलाहसुवर्णमुक्ताना म-  
स्मानि कातसिन्दूरञ्च सवाणि समभागानि खल्वे  
निक्षिप्याऽऽर्द्धकभृङ्गचित्रकमूलत्वग्रले प्रत्येकदिन म  
र्दयित्वा विज्ञाप्य गुञ्जाप्रमाणं मधुना सेपनीयम् ।  
एतेनाऽजानाऽप्रद्रवाऽतिसारमेहनारायण नियतन्ते ।  
ग्रहणापाण्डुमहाघातश्वेतहास्त्रिवरुमुषमधुमेहादया  
नश्यन्ति । शरीरं पुष्टं स्वर्णं स्थायञ्च भवति । पथ्य-  
व्रमा रोगाघित । ( व्यास० )

### २३ कालिङ्गपादिलक्षणम्

इन्द्रवारणाफलरस २४ तोलक, अम्ल दधि १०  
ता, काचलवर्णं, सौरपर्वदीपारुद्रगुणशारा, कात  
भस्म, शुद्धपारदगन्धको चेतानि प्रत्येकं सपादताल-  
कानि, समुद्रलवण १२ ता० श्वेतपारकमर्धतालक  
शुद्धजयपात्राजमन्ताग्नं गृहात्वा पूर्णाहृत्य पूर्वा  
त्तरम दक्षिणं मेलयित्वा मृदाण्डे क्षाराऽयश्चोष पायं  
रत्ना स्थापयन् । एतदुञ्जामितं नालमुटेन पुराणमु-  
दन वा प्रातः सायं सप्ताहपर्यन्तं मेवनीयम् । एतन  
घातपलमासकधिरपूरितमहादराणि, मृदाऽपराध  
लिङ्गनालशाय, शूलमुक्तिनायाताया नश्यन्ति ।

अण्डवायुपाणिपादशोथाश्च निवर्तन्ते । वातिकाण्यि-  
वर्ज्येच्छापथ्यम् ॥ ( व्यास० )

### २४ कृष्णाध्रसिन्दूरम्

कृष्णधान्याम्रकर्मकमूलत्वक्पायसीरसकण्टकमा-  
रिपत्रस्वरसवटजटाकपायक्षीरपीतभृङ्गराजस्वर-  
सेः क्रमेण चतुर्ग्रामं विमृद्य चक्रिकां विधाय सम्यक्  
शोषयित्वा प्रत्यौषधं गजपुटं दद्यात् । अन्ते प्रत्येक-  
पले सार्धसप्तमापिकाभूपरक्षारसुधां संयोज्य स्तन्ये-  
नैरुग्रामं मर्दयित्वा गुण्ठां चक्रिकां विधाय पक्वे-  
ष्टिरुया मृपां निर्माय तस्यां चक्रिकामवरुद्ध्य गज-  
पुटो देयः । विद्रुमवर्णं निश्चन्द्रिकमम्रकसिन्दूरं  
निष्पद्यते । एतच्च सिन्दूरं सर्वरोगहरं भवति ।  
विस्वादिरेसायनेन सह पित्तापाण्डुकांमलमेहाम्राश-  
यति । खण्डाद्रिकचूर्णेन लेहेन वा पित्तगुल्मपुराण-  
शूलदादीनाशयति । श्वेतव्याघ्री ( तेलुवाकुडु ) फल-  
चूर्णेन सह श्वासकासाद्युपद्रवसहितक्षयरोगो निर्मूलो  
भवति । मधुना वातमेहः, गोघृतेन मधुमेहः, त्रिफ-  
लकेन ज्वरादयश्च नश्यन्ति । अयःसिन्दूरमम्रकसि-  
न्दूरश्च भृङ्गराजचूर्णं मेलयित्वा मधुना सहैकविंश-  
तिदिनपर्यन्तं मण्डलपर्यन्तं वा सेवनेन मेहज्वरमेह-  
प्रणादयो नश्यन्ति । ( अगस्त्य० )

टि०—विस्वादिरेसायननिर्माणक्रमः—विस्वमूल छायागुण्ठा रुखा  
चूर्णीकृत्य ३० पलपरिमित २८८ तौलके जले निक्षिप्य मृगानि ४८ तौल-  
कावशेष पाक कृत्वा बीजपूरुष २० तौलक, दाटिमफलरस २० तौलक,  
भुतागनालगुड १२ तौलक, पूर्वोक्तपाके निक्षिप्य हृदपावकमये नागर-  
द्विपल, पिप्पलीमूल ३ पल, पिप्पली १॥ पला, शरी सपादनीयत्वा,  
दालीमपत्र सपादनीयक, नागकेडा २ पल, मरिचानि ४ पलानि, चिन-  
कैलानीये १-२ पले, लवक १ तौलका, श्वेतजीरक ४ तौलक गृहीत्वा  
बलपूत चूर्णयित्वा हृदपाके संयोज्य गोघृत ५ पल, मधु ३ पल मिश्र  
यित्वा हृदपाकेनाडवताय आमलकप्रमाण प्रत्यहं सेवनीयम् । एतेन  
सितकामलापाण्डुपुटैरस्यमनदिका वासतः सखल धीनसङ्घबन्धवैद्य-  
कालासावाडोचनीदरज्वलनशरीरप्रमणादयो रोगा नश्यन्ति । अनेन  
छेदनाडय मिन्दूर कान्तसिन्दूर वा सर्वोष्णोषुक्ते सपि महती पातुषुष्टी-  
रक्तहृदिह भवति ॥

### २५ क्षयकुलान्तकरसः

तालकमीकिकसुवर्णरजतदरुभस्मानि सममा-  
गानि, चन्द्रसारः ( भीमसेनकुरूरम् ) विद्रुममस्रम् च  
सर्वचतुर्ग्रामं खल्वे निक्षिप्य वासापत्ररसेन यामच-  
तुष्टयं, श्वेतव्याघ्रीरसेन च यामहयं विमृद्य चक्रिकां  
विधाय वालुकायत्रे शिवरात्रिपञ्चापुरःसरं यामहय-  
पर्यन्तं दीपाग्निना पाकं विधाय स्वाद्गुशीतलं ग्राह्यम् ।  
एतदधेगुञ्जापरिमितं मधुना सहाऽऽमण्डलमेकमण्डलं  
वा सेवितं समेहहरक्यासकाससंयुक्तान् सकलोपद्र-  
वयुतान् पण्णयतिसह्याकक्षयाद्याशयति । मधुमेह-  
वह्नुमेहमेहज्वरकुष्ठादीनपि निहन्तति । शरीरं सुवर्ण-

च्छायं करोति । पथ्यक्रमस्तु यथोचितः । तित्तिडी-  
रसो भ्रूमपानञ्च दूरतो वर्ज्यम् । ( अगस्त्य० )

### २६ गण्डौषधम्

कुन्दनपत्राणि ( अपरुद्धा ), वखरजततन्तवः,  
शुद्धमुक्ता, विद्रुमः, यष्टिमधुकं, लवङ्गं, पिप्पली, रु-  
द्राक्षः, कुष्ठं, आकारकरभः, कृष्णसारुद्रम्, रस-  
सिन्दूरम्, वासामूलञ्चैतानि समभागानि वखरशो-  
धितानि स्तन्येन दिनहयं विमृद्य शोषयित्वा मधुनि  
मेलयित्वा रजतसम्पुटे स्थापनीयम् । सन्निपातप्र-  
कोपे रजतशलाकया किञ्चिदुद्धृत्य रसनायां मर्दनी-  
यम् । एतेन जिह्वाकण्टकाः परस्त्रीसाहच्यद्रोषः घमन-  
हिकाद्युपद्रवयुताखण्डादश सन्निपातसञ्जातधिकारा-  
स्सर्वेऽपि नश्यन्ति । एतद्रण्डौषधं तालुमूले निधाय  
सावधानतया रस आरवादनीयः । ( व्यास० )

### २७ गन्धकरसायनम् ( प्रथमम् )

अमलसारगन्धकर्षणं चतुर्धाशृतेन सह द्रवी-  
कृत्य गोक्षीरे निवापयेदिति साधारणी शुद्धिः । वि-  
शेषतो गोक्षीरेण भाषयित्वा भृगुटचिधानेन गाल-  
यित्वा गोक्षीरे निवापयेत् । अस्य विचरणम्—गोक्षीरेण  
पादभागन्यूतं मृदाण्डमापूर्य मुखोपरि सूक्ष्मं वल्लं  
यद्धोपरि गन्धचूर्णमास्तौष्यं शरावेण विधाय सन्धि-  
बन्धनं कृत्वा एतत्पात्रं गतं भूसमं निधाय सन्धिपर्य-  
न्तं मृदाऽऽलिप्य शरावोपरि २५ उत्पलकैः पुटो देयः ।  
गन्धकं द्रवीभूय वल्लच्छिद्रैर्मणिघटत क्षीरं निपतति ।  
परेषुः प्रातरुद्धृत्योष्णोदकेन क्षीरस्थं गन्धकं प्रक्षाल्य  
चूर्णीकृत्याऽऽतपे शोषयेत् एषैका भायना । पथमेव  
गोदधि, इक्षुरसः, तण्डुलीयकरसः, जलकुम्भी ( अन्त-  
र्तामराकु ), शुद्धप्माण्डं, वास्तुकं, भृङ्गराजः, त्रिफला,  
चातुर्जातकं, सिचक्रं, आद्रकं, ... ( छिन्निपाकु ),  
मधु, पञ्चामृतं, कृष्णतुलसी, गोघृतञ्चैतेषां द्रवेषु  
पूर्वाक्तप्रकारेण मर्दनादिविधिपूर्वकशोधितं गन्धकं ४  
पलं, गोक्षीरे शोधितं हेमक्षीरोचूर्णं ४ पलं, वाकुची-  
चित्रकमूलत्वक्पत्रात्राकृष्णहिंसायूल ( नह्नुविपथे )  
तालीसपत्राऽश्वगन्धापाारसपिप्पलकण्टकिपलाशश्च-  
लत्वकृचम्पकपुष्पाणां प्रत्येकपलं गृहीत्वा सम्यक्  
चूर्णीकृत्य पलत्रयां सितोपलां निक्षिप्य मधुना याम-  
चतुष्टयं विमृद्य चीनपात्रे स्थापयेत् । पादतोलकमे-  
तद्वल्लं प्रातः सायमेकमण्डलमर्द्धमण्डलं वा सेवनी-  
यम् । अनेन मेहग्रन्थयः, शुद्रपिडिकाः, कृष्णमेहः,  
मेहवायवः, मेहशूलाः, उपदेशाः, लिङ्गव्रणाः, योनि-  
ग्रन्थयः सूचीमुखीव्यापथेत्यादयो रोगा निवर्तन्ते ।  
( व्यास० )

## २८ गन्धकरसायनम् ( द्वितीयम् )

पूर्वांक्तप्रकारेण शोधितं गन्धकं ६ पलं, त्रिकटुक-  
चित्रकयाकुचीवीजान्येकैकपलानि चूर्णितानि गन्धेन  
सह मेलयित्वा समभागां शर्करां मिश्रयेत् । अथवा  
पञ्चदशपलायाः शर्करायास्तन्तुलीं विधाय सर्वमपि  
चूर्णं पाके निक्षिप्य द्वे द्वे पले घृतमधुनीं मिश्रयित्वा  
प्रत्यहं कलाद्वयप्रमाणं सेवनीयम् । एतेन सर्वापदेश-  
कुष्ठव्याधयो मेहग्रन्थयश्च निवर्तन्ते । दुग्धाध्नं पथ्यम् ।  
( व्यास० )

## २९ गन्धकामृतलेखम्

शुद्धममलसारगन्धकं ८ पलं, आमलकीचित्रक-  
त्वष्टागरमरिचाऽऽवगन्धाद्वरीतकीविभीतकपिप्पल्य-  
एकेरुतोल्किः, पद्मबीजं, चीनहेमश्रीं, मुशलीञ्जै-  
कपलिकां गृहीत्वा चूर्णीकृत्य २४ तोलके गोक्षीरे १६  
पलां सितोपलां संयोज्य मृन्नाण्डे पाकसमये पूर्वा-  
क्तममलसारगन्धकं मेलयित्वा १० पलं मधु निक्षिप्य  
लेहपाकमयतार्यं प्रत्यहममलकप्रमाणं प्रातःसायमे-  
कविंशतिदिनपर्यन्तं सेवनीयम् । एतेन शरीररमण-  
पादिकाकुष्ठोपदेशकुष्ठकुष्ठशिलोपदेशयोनिकुष्ठिमनी-  
लमेहादयो नश्यन्ति धातुवृद्धिश्च भवति । क्षीराध्नं,  
गोदधि, मुद्रमापवदकाद्याऽनुकृताः । ( अगस्त्य० )

## ३० गोरोचनवटी ( प्रथमा )

शुद्धकान्तविभीतकाऽऽमलकचण्डूलपुष्पगोरोचन-  
कुष्ठचित्रकमूलानि एकैकपलानि; मनःशिला रसकर्पू-  
रश्च प्रतिसपादतोलकं सव्यं निक्षिप्य चूर्णीकृत्य ...  
( कलिङ्गरः ) रसेनैकादश दिनानि मुक्तावर्परसेन च  
दिनद्वयं मर्दयित्वा मुद्रप्रमाणा वटीः कुर्यात् । मधु-  
मिश्रितस्तन्येन चालानां सन्निपाताऽग्निप्रान्द्यदोषाः  
शीताधिभ्रमश्च नश्यति । अनुपानभेदाद्याऽन्यरोगेषु  
यथायथमुपयोज्यम् । ( अगस्त्य० )

## ३१ गोरोचनवटी ( द्वितीया )

गोरोचनवैशारसकर्पूररमसिन्दूराऽऽम्रसिन्दूरहि-  
मसारैलायीजलयङ्गकुष्ठजातफल्गाऽऽकारकरमाणि  
समभागानि विचूर्ण्य षोडशभागाऽवशिष्टेन धीच-  
न्दनकायेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वाऽष्टभागावशिष्टेन  
लवङ्गकायेनैवमेव शतपत्राऽर्कणं ( गुलाबजल ) च  
यामद्वयं विमृद्य गुञ्जामाना वटी कार्या । बालकानां  
स्तन्याऽनुपानेन देवाऽनया कण्ठकुम्भप्रभृतयस्म-  
न्निपाता निवर्तन्ते । अनुपानविशेषः श्लेष्मज्वरसहित  
त्वरयातसन्निपातत्रोपधनुर्वातसर्वाङ्गद्वन्द्वदयो नश्य-  
न्ति । बालानां मानुः पथ्यं देयम् । ( व्यास० )

## ३२ चण्डमार्तण्डरसः

बडलवर्णं, महामोरीपापाणयोर्मैस्म, कान्तसिन्दूरं,  
गन्धकं, तालकमैस्म, मृदारष्ट्रहं, रमभस्म चैतानि  
सूक्ष्मचूर्णितानि काचकृषिकायां निक्षिप्य यामचतु-  
ष्टयं कमाग्निना पकीयध्नं ग्राह्यम् । एतत्तण्डुलपरिमाणं  
सेवितं सत्सर्वान् रोगान्नाशयति । स्तन्येन, मधुना,  
त्रिकटुककायेन वा सेविते विपदोपाः सन्निपातज्व-  
राश्च निवर्तन्ते । पथ्यं यथोचितम् । ( व्यास० )

## ३३ चतुर्विधवन्ध्यत्वहरतैलम्

धुद्रैरण्डवीजतैलं, कपिलागोक्षीरं, नारिकेलजलं,  
पाण्मासिकममलमण्डं प्रत्येकं १२० तोलकं, औदु-  
म्बरसीधु कादम्बरी ( धुद्रखर्जुरीसीधु ) च ८०-८०  
तोलकं, यनतुलसी ( रजगुर ), कृष्णतुलसी, जल-  
पिप्पली ( वुलिनाकु ) कृष्णकामाचीकोफिलाक्षधु-  
द्रकारवेल्हानां पद्माणि, पारसपिप्पल्यपुष्पाणि ( गेह-  
रायि चेट्ट ), श्रुतुलसीपत्रं ( अजगन्धा ), ग्राही  
( बहारी ), ... ( वैष्णुतट्टाकु ), भूकृष्णमण्डपत्रं ( नेल-  
गुल्मडिआकु ), बृहदग्निमन्थपत्रं ( वृद्धतकाही ),  
कपूरवृद्धी ( पत्रयवानिका, कपूरवृद्धी ) चैतियनस्प-  
तयः । मरिचचीनहेमश्रीरीनागरजातीपत्रकेशरसृग्-  
मददग्द्राखसैलायीजजातीफलमायाफलगोर्गचन-  
रसरुक्मराणि प्रत्येकं सपादतोलकानीति आपणद्र-  
व्याणि । नागरज्ज ( चीनापण्डु तै० सन्तरा० हि० )  
द्राक्षारक्तस्मादाडिमोषीजपूरखर्जुरीणां फलरमाः  
प्रत्येकं ३० तोलरुपरिमिताः । अथ तैलपाकक्रमः-  
आदौ सध्वान्नस्पतां दद्यादाशुष्कान्मिधाय चूर्णीकृ-  
त्वाऽऽपणद्रव्याणि वस्त्रशोधितानि कृत्या एरण्डतेला-  
दिकाम्बरीपर्यन्तान्, द्राक्षादिखर्जुरीफलान्तादृष्यान्  
महति मृत्पात्रे निक्षिप्य तैलावशेषं पाकं कृत्या पूर्वा-  
क्तचूर्णानि मन्त्राणि मेलयित्वा मन्दप्रतिना पाकं त्रिवाय  
स्याङ्गद्वन्द्वे गोरोचनं, मृगमदं, रसकर्पूरं, हिमलक्ष-  
तचतुष्टयमपि चूर्णीकृतं तैले निक्षिप्य सम्यगगुलित्व  
मुपपन्नं त्रिवाय १० दिनपर्यन्तं निरानप्रदेशे संर-  
क्षणीयम् । ततः प्रातः सायं प्रत्यहं पादतोलकरु-  
मितं तैलं द्रुपतीभ्यां मण्डलपर्यन्तं सेवनीयम् । अयं  
गर्भधारणयोगोऽनुभवविदः । ( अगस्त्य० )

## ३४ चित्रानन्दभैरवसः

शुद्धरसचित्रकचित्रकचित्रकचित्रकचित्रकचित्रकचित्रक-  
मागानि जम्बीररमेन यामचतुष्टयं विमृद्य गुञ्जाम-  
माणां वटी कृत्या मधुमिश्रिताऽऽम्रकमेन त्रयोदश-  
मन्निपातेषु प्रयोजयेत् ।

## ३५ चिन्तामणिरसः

शुद्धं पत्रतालकं, सवरीरं, मल्लगोरीपापाणद्वारद-  
पारदाभेदि (काशीस) स्फटिकापालतुथीपर-  
क्षारशिलाक्षारदङ्कणानां भस्मानि, सैन्धवं, अयस्ता-  
म्रसिन्दूरे, मनःशिला, लवङ्गं, पलावीजं, त्रिफला,  
श्रीगन्धचूर्णं ( श्वेतचन्दनं ), देवदारु, यवानिका,  
कुष्ठं, नागकेशरं, विष्णुकान्ता, खुरासानिका, कटुरो-  
हिणी, जातीफलं, द्राक्षा, यष्टिमधुकं, नरसारः, चन्द्र-  
सारः, जातीपत्रं, खर्वरीफलं, लशुनं, त्रिकटुकं, जय-  
पालञ्जितेषु शोधितव्यवस्तुनि सम्यक् शोधयित्वा  
भर्जनीयवस्तुनि स्वर्णच्छायं भर्जयित्वा सर्वाणि चूर्णा-  
कृत्य पीतभृङ्गनिर्गुण्डोविष्णुकान्तारसैः प्रत्येकेन सप्त-  
दिनं भर्जयित्वा कृष्णतुलसीरसेनैकदिनं विमृष्टं मुद्र-  
प्रमाणा वटीः कृत्वा शृङ्गे निक्षिप्य शिप्राशक्तिगणपति-  
पूजां विधाय सुवासिनीप्राशनपूजाञ्च कृत्वाऽम्बदा-  
नादिना सन्तोष्याऽन्तरमेतदीपघमुपयोक्तव्यम् ।  
चन्द्रसारतक्रीलशिलातन्त्रा (कलनार) हुलीपुष्प-  
मुद्गातकानां समभागचूर्णं समां सितोपलामिथयित्वा  
पादतोलरूपविमिते चूर्णे चिन्तामणियदीमिकां संयोज्य  
मधुना सह दद्यात् । अनेन रक्तक्षयश्वासकासाद्यो  
निवर्तन्ते । पुष्करपुष्पकायेनाऽण्डवायवः, अश्वगन्धा-  
चूर्णेनाऽम्बवृद्धिर्नश्यति । किञ्च-भृङ्गरसेन श्वास-  
कासी, जम्बीररसेन भृङ्गरसेन वा वटीं संघृष्य  
नेत्राञ्जने कृते शुक्लपटलादयः पण्यवतिनैरोगा  
नश्यन्ति । सकलसङ्घर्षाणां शर्करायुक्तगम्भापुष्परसेन  
त्रिफलाकपायेण वा देयः । कामलाश्वयथुरागयोर्म-  
रीचचूर्णमिश्रितगोमूत्रेण देयम् । निम्बपत्रयिमीतकी-  
सत्त्रिचतागराणां चूर्णेन मधुमिश्रितेन सह त्रिफला-  
ज्वराणां, आर्द्रकरसेन सुखसन्निपातिनां देयम् । ज्वर-  
सञ्जातदाहं शर्करया, चतुष्पष्टिपाणां जम्बीररसेन  
सङ्घृष्य क्षतस्थाने लेपनीयम् । वृश्चिन्द्रंशे जलेन  
क्षतस्थाने लेपनीयम् । नेत्राञ्जनमपि देयम् । अन्त-  
र्ज्वराणां दन्ना, श्याहिकरजराणां कार्त्तवैहवायेन,  
पित्तश्लेष्मज्वराणामार्द्रकरसेन, चतुरशीतिवातानां  
निर्गुण्डोरसेन, कपालकुष्ठग्रन्थिशूलविपरोगेषु निरु-  
दुकचूर्णेन दातव्यम् । ( व्यास० )

## ३६ ज्वरकुशाररसः

एकपलं गौरीपापाणं सूक्ष्मवस्त्रे पोष्टलीं बद्धा  
चतुष्पष्टितोलरुशिलासुधाराण्डे दोलायन्त्रेण याम  
द्वयं स्वेदयित्वा ग्राह्यम् । एवं शोधितं गौरीपापाणं,  
गन्धकं, तालकं, तुल्यं ( पालतुत्तं ), कटुरोहिणी, जय-  
पालवीजानि प्रत्येकमर्घतोलकानि सम्यग्विचूर्ण्य शु-  
द्रकारवेलेपनरमेन यामचतुर्थं विमृष्टं मापप्रमाणं

वटीं कृत्वाऽऽर्द्रकरसेन दद्यात् । शीतप्रधानज्वरा न-  
श्यन्ति । एतस्याऽनुपानचूर्णम्=तालीसनागरपिप्प-  
लीमरिचाकारकरमान् समभागान् विचूर्ण्यऽस्मात्पा-  
दतोलकेन मधुमिश्रितेन चूर्णेन सह दिनत्रयमेवनात्  
उग्रज्वरास्सन्निपाताद्यो निवर्तन्ते । दोषप्रायस्ये सति  
वक्ष्यमाणं वीरभद्राञ्जनमपि नेत्रयोर्गोप्यम् । पित्तप्र-  
तीनां शुष्कतिन्त्रिडीपत्रोपयोगः कार्यः । ( व्यास० )

## ३७ ज्वरगजादुशरसः

शुद्धः पारदः, अमलसारगन्धकः, विषं, ताम्र-  
भस्म, द्विजोरकं, चित्रकत्वक्, पञ्चलवणानि, सद्य-  
क्षारः, नरसारः, कान्तसिन्दूरम्, हरीतकी, आम-  
लकी, विभीतकी, कटुरोहिणी, विडङ्गं, दङ्कणञ्जैतानि  
समभागानि सम्यग्विचूर्ण्य चीनपात्रे निक्षिप्य अम्ब-  
दाडिमीफलरसेन भृङ्गराजरसेन चाऽऽप्लाव्य दश-  
दिनपर्यन्तमातपे शोषयित्वा पुनः रखवे निक्षिप्याऽ-  
म्बदाडिमीफलरसेन यामद्वयपर्यन्तं भर्जयित्वा शुष्कं  
चूर्णं चीनपात्रेऽवस्थप्य स्थापनीयम् । गुञ्जाद्वयमार्द्र-  
करसेन सह सेवितं विपमशीतज्वरदोषाऽग्निमान्द्यश-  
न्निपातादीनाशयति । घृतं, पुराणमुद्गः, नयनीहं,  
आर्द्रकरसः, मधु, एतदनुपानैरष्टविधगुग्मरोगो  
नश्यति । वातपदार्थानन्तरं पथ्यम् । तित्तिडीतरु-  
धूमपानाद्यो वर्ज्याः । ( अगस्त्य० )

## ३८ ज्वरफणिगह्वरसः

शुद्धपारदगन्धकविपाणि एकैकतोलकानि, हिङ्गुलं  
४ तो., जयपालवीजानि ८ तो० गृहीत्यैकत्र सङ्घर्ष्य  
धनूरमूलकायेन यामचतुर्थं विमृष्टं मरिचप्रमाणा  
वटिकाः कृते । मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसाऽनुपानेन  
वातपित्तज्वरः, मरिचचित्रकमूलविष्णुकान्तामूनिभ्य-  
वायेन सन्निपातदोषज्वरः, भृङ्गराजमूलविभीतमूल-  
सरुण्डककरुण्ठुमूलनिकटुकवायेन विपपाण्डुश्वयथु-  
ज्वरा नश्यन्ति । स्तन्येन मधुना वा सङ्घृष्य सन्नि-  
पातज्वरेषु नेत्राञ्जने देयम् । पथ्यं रोगोचितम् । अव्य-  
मानया बालानामप्युपयोक्तव्यम् । ( व्यास० )

टि०—इष्टमूर्पादीये गरलमपि दृश्यते । तत्रैव सर्वेषां ममभाग  
तत्राथैव विधाय रमज निष्कास्य पहरस्थाने जम्बीर नियोज्याऽऽ-  
यार्धेति नाम स्थापितम् । तदभिधाने ग्रन्थर्त्तव्यं प्रष्टव्यं ।

## ३९ ज्वरादुशमैरवरसः

विशुद्धपारदः, विष, गन्धकञ्जैकपलं, जातीफल-  
मर्घपलं, पिप्पली १॥ पला, सर्वं चूर्णाकृत्य ताम्बूली-  
स्वरसेनाऽऽर्द्रकरसेन च प्रति यामद्वयं विमृष्टं  
गुञ्जाप्रतिमां वटीं कृत्वा मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसाऽनु-  
पानेन प्रयोगे वातपित्तश्लेष्मज्वरा नश्यन्ति । यवा-  
नीकत्वेन द्रवेण वा शीतज्वरसञ्जातज्वरातिसारा

निवर्तन्ते । ज्वरसंज्ञाताऽतिसारसङ्ग्रहण्यादीनामनु-  
पानविशेषः = अतिविषा, मरिच, नागर, तालीसपत्र,  
पोस्तु चेति प्रतिसपादतोलक सङ्ख्युण्ण २४ तोलक-  
जले मृन्मयपात्रे निष्काश्य चतुर्मासाऽवशिष्टमवतार्य  
भागद्वयं प्रकलयेकभागमेकपट्टिकया सायमपर प्रा-  
तश्च दद्यादेव त्रिचतुराणि दिनानि कृते पूर्वोक्त-  
व्याधये निवर्तन्ते । अम्लदाडिमीफलरसेन वमन-  
हिकेन नश्यति । अभ्वगन्धा, अनन्तमूल, हेमक्षीरी (पर-  
द्वीचक्रा) भृङ्गभाण्ड, कुमारीकन्दश्चेति प्रत्येकमेक-  
पलं चूर्णाद्विष्य पादतोलकेन चूर्णेन सहैका मात्रा  
सेविता चेदस्थिगतसोपद्रवो ज्वरो नश्यति । शीत-  
पदार्थां वृज्यां । (व्यास०)

### ४० ज्वराहुशरसः (महदादि) ।

द्विपलं महपापाणं कारवेहतण्डुलीयरुपश्चरसेन  
प्रति यामचतुष्टयं मर्दयित्वा शरायसम्पुटितं विधाय  
घनतया सप्त मुस्तिका दत्तोत्पलकरणेण पुटं दद्यात् ।  
तत एव निक्षिप्य त्रिकटुककायेन यामचतुष्टयं  
विमृष्टं मुद्रपरिमिता घटी कुर्यात् । मधुमिश्रित-  
भ्रष्टजीरकचूर्णे एका घटीं सयोज्य सेवनान्नसर्वं ज्वरा-  
स्तत्क्षणं निवर्तन्ते । महाज्वरेषु त्रिराद्युक्ता घटी योज-  
नीया नाऽधिका । तित्तिडी वृज्यां । क्षीराश्व गोधूम-  
राण्डयूपञ्चाऽनुकूलः । अपि चाऽनन्तमूलकायेन  
घातज्वर, नागरकायेन पित्तज्वर त्रिकटुकचूर्ण-  
मिश्रिताऽऽद्रकसेन स्नेहज्वर, धान्यरुकायन ताप-  
ज्वर, दन्ता सङ्ग्रहण्यतीक्ष्णरी, भृङ्गराज (शुण्डगल-  
गरा) रसेन ज्वरसंज्ञातसर्गाङ्गश्लादया नश्यति ।  
नेत्राञ्जनमपि कर्तव्यम् । अतिसाराणां मिष्टिगेष्टुरसः  
(ऊपरं पलाण्डुसदृशकन्दो यस्य पत्राणि तालमूली-  
सदृशानि गृह्णीत च भवन्ति इति केचिद्वदन्ति अन्ये-  
षु शङ्खटकमाहुः) , अपङ्क्याते लताकरञ्जपत्ररसः,  
क्षीरसन्तोषाय कामकस्तूरिका (मरचक) पत्ररसः,  
सर्वसन्निपातेषु धनूरपत्ररसः, अजीर्णस्थोष्णोदकम्,  
अरीसा मूलरसः, श्वयधुपाण्डुकामलासु भ्रष्टाऽति-  
विषाधाय, दुष्टसर्पादिदंशनस्य धीजपूररसः, वृश्चि-  
कधिपस्य गोमयम्, निम्बरीजतैलं, मधुरपिच्छमस्म  
च । एवमनुपानं यथाचितं देयम् । सर्वविषाणामपि  
यत्र क्षतं तत्र मधुरपिच्छमस्मना सह निम्बरीजतैल-  
मिश्रितेन क्षतस्थानं लिम्पेत् । आद्रकसेन नेत्रे अञ्ज-  
यित्वा यद्यधस्तात्पदयेत्पातालपर्यन्तं दृष्टिं प्रसरति ।  
पिशाचप्रस्तानां केवलतिलतैलेन मिश्रयित्वा नेत्रा-  
क्षतं घृते चक्षुःक्षतपिशाचादयः पलायते । स्वमूला-  
शाब्ज्याधेनर्वनीतेन सहोऽऽसनं लेपनायम् । कन्था-  
क्षीणां परिपक्वघटीजचूर्णेन क्रतुकाळे एकवारं

दद्यात् । एवमनुपानम् । सर्पवृश्चिकान्मत्तशुनकविषादीं  
पूर्वाक्तेलेन सह क्षतस्थाने नियाजनीयम् । श्वेय-  
मेवोऽनुपानभेदेन सर्वव्याधिषु नियाजनीयम् । शिर-  
शक्लिषुजा काया ॥ (अगस्त्य०)

### ४१ ज्वराहुशरसः (द्वितीय) २

शुद्धपारदगन्धकदरदङ्गुणविषतालकजयपालत्रि-  
कटुत्रिफलाश्चेतानि प्रत्येकं सपादतोलकानि गृहीत्वा  
चूर्णाद्विष्य भृङ्गराजसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा मरि-  
चप्रमाणा मात्रा कुर्यात् । हृण्णतुलसीरसेन घाल्य-  
ज्वराणां दातव्यम् । मरिचरुक्लेन घातशला शीत-  
ज्वराश्च नश्यन्ति । चित्ररूपिप्लीमूलतित्तपटोलभू-  
निम्बविष्णुकान्ताऽनन्तमूलयष्टिमधुकाऽऽकारकरभ-  
धिरुद्रत्रिफलाऽमृताजर्दरीफलतालीसपत्राशीरक्षी-  
चन्दनानां कायेन पुराणघातपित्तश्लेष्मद्वन्दाऽऽहिका  
जीर्णज्वरा नश्यन्ति । पाण्मासिकययस्कमारभ्य त्रि-  
हायणवयस्य पर्यन्तं बालानामेकारात्रौ यत्र मुद्रप्रमाणं  
देयम् । तरणादीनां चणकप्रमाणम् । अमररसा घर्ष्य  
शीतलघातपदार्थाश्च । अस्मिन्नापधे रसगन्धकादया  
विधिना शाब्ज्या । प्रसृतलीणां ज्वरादीं लघ्वन्त्रा-  
येनोपयोजनीयम् । पथ्य रागोचितम् । (व्यास०)

### ४२ ज्वराहुशरसः (महदादि) ३

शुद्धगन्धकरपारदविषमहपातपुष्पभनूरवीजमरि-  
चानि प्रत्येकतोलकानि विष्णुष्यं हृण्णचक्षुरपत्र-  
स्वरसेन यामचतुष्टयं सम्पग्नियमृष्टं गुञ्जामात्रो घटा  
हृत्वाऽऽद्रकस्वरसेन सेविता चेद्विषशीतरूपप्रधा-  
नज्वरा निवर्तन्ते । भ्रष्टशरामिश्रितपुराणतण्डुला  
उष्णादकञ्च पथ्यम् । सप्ताऽपत्रपात्र्य त्रीणरागानां  
सर्वपापाणामभितान्योपधानि वृज्यानि । कदाचिन्म-  
हायायुक्तनिदापमहासन्निपातकण्टगतकफनातादि-  
दोषैरानान्ताब्धेत्ता तेनपि प्रधायानि (व्यास०)

### ४३ ज्वराहुशरसः (चतुर्थ) ४

सम्यक् शुद्धमेकतोलकं महपापाणं पटुतोलके  
गर्दमीक्षार चीनपात्रे मिश्रयित्वा द्विनोलकदिह्नुके  
प्राप्तो देयः । दिह्नुला यद्वा भवति । अथ तण्डुलमात्रो  
मरिचहायन सह सेवितस्तथाऽत्रात्राशयति ।  
अमररसा घर्ष्य । आढकीपूर, भिण्डिका, गोधूम-  
राण्डयूप, शुष्क काकमात्रा (कामाता) ५७ शिशु-  
क्षिप्या, क्षीराश्व पथ्यम् । अत्रेव सूचनाऽस्ति त्रि-  
मात्राच्छ्रुते मृपात्रेऽर्द्धभागं सिक्ततया पृथिव्या  
सिक्ततामये काचपात्रे निधाय तमये दरदशकलं  
निक्षिप्य योगोक्तप्रकारेण ग्राम्ने दद्यादित्यनुसंधयम् ।  
(व्यास०)



## ३५ चिन्तामणिरसः

शुद्धं पत्रतालकं, सन्धीरं, महुगौरीपापाणदरद-  
पारदाभमेदि (काशीस) स्फटिकापालतुल्यीपर-  
क्षारशिलाक्षारटङ्कणानां भस्मानि, सैन्धवं, अयस्ता-  
म्रसिन्दूरः, मनःशिला, लवङ्गं, पलावीजं, त्रिफला,  
श्रीगन्धचूर्णं (श्वेतचन्दनं), देवदारु, यथानिका,  
कुष्ठं, नागकेशरं, विष्णुकान्ता, खुरासानिका, कटुरो-  
हिणी, जातीफलं, द्राक्षा, यष्टिमधुकं, नरसारः, चन्द्र-  
सारः, जातीपर्यं, खर्जुरीफलं, लशुनं, त्रिरुद्रकं, जय-  
पालञ्चेतेषु शोधितव्यवस्तुनि सम्यक् शोधयित्वा  
मर्जनीयवस्तुनि स्वर्णच्छाद्यं मर्जयित्वा सर्वाणि चूर्णी-  
कृत्य पीतभृङ्गनिर्गुण्डीविष्णुकान्तरसैः प्रत्येकेन सप्त-  
दिनं मर्दयित्वा कृष्णतुलसीरसेनेकदिनं विमृष्टं मुद्र-  
प्रमाणा वटीः कृत्वा शृङ्गे निक्षिप्य शिवशक्तिगणपति-  
पूजां विधाय सुवासिनीप्राज्ञपूजाञ्च कृत्वाऽऽश्वा-  
नादिना सन्तोष्याऽनन्तरमेतदौषधमुपयोक्तव्यम् ।  
चन्द्रसारतक्रीलशिलान्त्या (फलनार) हुलीपुष्प-  
मुञ्जातकानां समभागचूर्णे समां सितोपलांमिश्रयित्वा  
पादतोलकपरिमिते चूर्णे चिन्तामणिचट्टीमेकां संयोज्य  
मधुना सह दद्यात् । अनेन रक्तक्षयश्वासकासादयो  
निवर्तन्ते । पुष्करपुष्पकायेनाऽण्डवायवः, अश्वगन्धा-  
चूर्णेनाऽण्डवृद्धिर्नश्यति । किञ्च-भृङ्गरसेन श्वास-  
कासी, जम्बीररसेन भृङ्गरसेन वा वटीं संचूष्य  
नेत्राञ्जने कृते शुक्रपटलाद्वयः पण्यवर्तिर्नेत्ररोगा  
नश्यन्ति । सकलसङ्घर्षाणां शर्करायुक्तस्त्रिपाण्डुरसेन  
त्रिफलाकपायेण वा देयः । कामलाश्वयथुरोगयोर्म-  
रीचचूर्णमिश्रितगोमूत्रेण देयम् । निम्बपत्रविमीतकी-  
मरिचनागराणां चूर्णेन मधुमिश्रितेन सह विपवात-  
ज्वराणां, आर्द्रकरसेन सुखसन्निपातानां देयम् । ज्वर-  
सञ्जातदोहं शर्करया, चतुष्पष्टिपिपाणां जम्बीररसेन  
सद्गुण्य क्षतस्थाने लेपनीयम् । घृष्टिचन्द्रं जलेन  
क्षतस्थाने लेपनीयम् । नेत्राञ्जनेन देयम् । अन्त-  
र्ज्वराणां पक्षा, श्याहिकज्वराणां कार्पेयकायेन,  
पित्तश्लेष्मज्वराणामार्द्रकरसेन, चतुरशीतिवातानां  
निर्गुण्डीरसेन, कपालकुण्डप्रग्रियशूलविपरोगेण त्रि-  
रुद्रचूर्णेन दातव्यम् । (व्यास०)

## ३६ ज्वरकुमाररसः

एकपलं गौरीपापाणं सूक्ष्मवले पोष्टलं चट्टा  
चतुष्पष्टितोलकशिलासुषाखण्डे दोलायन्नेन याम-  
द्वयं स्वेदयित्वा प्राह्वम् । एवं शोधितं गौरीपापाणं,  
गन्धकं, तालकं, तुल्यं (पालतुत्तं), कटुरोहिणी, जय-  
पालवीजानि प्रत्येकमर्धतोलकानि सम्यग्विचूर्ण्यं शु-  
द्रकार्पेयपत्ररसेन यामचतुष्टयं विमृष्टं मापप्रमाणां

वटीं कृत्वाऽऽर्द्रकरसेन दद्यात् । शीतप्रधानज्वरा न-  
श्यन्ति । एतस्याऽनुपानचूर्णम्=तालीसनागरपिप्प-  
लीमरिचाकारकरमान् समभागान् विचूर्ण्यऽस्मात्पा-  
दतोलकेन मधुमिश्रितेन चूर्णेन सह दिनत्रयसेवनात्  
उग्रज्वरास्सन्निपातादयो निवर्तन्ते । दोषप्रावले सति  
वक्ष्यमाणं वीरभद्राञ्जनेनपि नेत्रयोर्योज्यम् । पित्तप्रह-  
तीनां शुष्कतिन्तिडीषत्रोपयोगः कार्यः । (व्यास०)

## ३७ ज्वरगजाङ्गुररसः

शुद्धः पारदः, अमलसारगन्धकः, विषं, ताम्र-  
भस्म, द्विजोरकं, चित्रकत्वक्, पञ्चलवर्णानि, सद्यः  
क्षारः, नरसारः, कान्तसिन्दूरम्, हरीतकी, आम-  
लकी, विभीतकी, कटुरोहिणी, पिङ्गं, टङ्कणञ्चेतानि  
समभागानि सम्यग्विचूर्ण्यं चीनपात्रे निक्षिप्य अम्ल-  
दाडिमीफलरसेन भृङ्गराजरसेन चाऽऽस्त्राय दश-  
दिनपर्यन्तमातपे शोषयित्वा पुनः खल्वे निक्षिप्याऽ-  
म्लदाडिमीफलरसेन यामद्वयपर्यन्तं मर्दयित्वा शुष्कं  
चूर्णं चीनपात्रेऽवस्वस्थं स्थापनीयम् । गुञ्जाद्वयमार्द्र-  
करसेन सह मेथितं विपमशीतज्वरदोषाऽग्निमान्द्यस-  
न्निपातादीनाशयति । घृतं, पुराणगुडः, नवनीतं,  
आर्द्रकरसः, मधु, एतदनुपानैरष्टविधगुह्यमरोगो  
नश्यति । वातपदार्थानन्तरं पथ्यम् । तित्तिडीतरु-  
चूमपानादयो वर्ज्याः । (अगस्त्य०)

## ३८ ज्वरफणिगसरसः

शुद्धपारदगन्धकविपाणि एकैरुतोलकानि, हिङ्गुलं  
४ तो., जयपालवीजानि ८ तो० गृहीत्यैकत्र सङ्गुण्यं  
धनूरमूलकायेन यामचतुष्टयं विमृष्टं मरिचप्रमाणा  
वटिकाः किरतः । मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसाऽनुपानेन  
वातपित्तज्वरः, मरिचचित्रकमूलविष्णुकान्ताभूतिम्ब-  
कायेन सन्निपातदोषज्वरः, भृङ्गराजमूलविष्मीमूल-  
सकण्टकरुर्गन्धुमूलत्रिरुद्रकायेन विपपाण्डुश्वयथु-  
ज्वरा नश्यन्ति । स्तन्येन मधुना वा सद्गुण्य सन्नि-  
पातज्वरेषु नेत्राञ्जने देयम् । पथ्यं रोगोचितम् । अल्प-  
मात्रया धालानामप्युपयोक्तव्यम् । (व्यास०)

टि०—कृष्णभूपातीयं गरुडमूत्रं दृश्यते । तत्रैव सर्वथा समभाग-  
नवा योग विषय रसत्र निष्कास्य भट्टरस्थाने जम्बीर त्रिविज्याऽऽ-  
शलेति नाम स्थापितम् । तद्विधये ग्रन्थेनैव प्रहृतम् ।

## ३९ ज्वराङ्गुशैवरसः

विशुद्धपारदः, विषं, गन्धकञ्जैकपलं, जातीफल-  
मर्धपलं, पिप्पली १॥ पला, सर्वे चूर्णीकृत्य ताम्बूली-  
स्वरसेनाऽऽर्द्रकरसेन च प्रति यामद्वयं विमृष्टं  
गुञ्जाप्रतिमां वटीं कृत्वा मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसाऽनु-  
पानेन प्रयोगे वातपित्तश्लेष्मज्वरा नश्यन्ति । यवा-  
नीकलेन द्रवेण वा शीतज्वरसञ्जातज्वरातिसारा

नियतन्ते । ज्वरसञ्जाताऽतिसारसङ्ग्रहण्यादीनामनु-  
पानविशेषः = अतिपिपा, मरिच, नागर, तालीसपत्रं,  
पोस्तु चेति प्रतिसपादतोलक सङ्ग्रहण २४ तोलक-  
जले मृन्मयपात्रे निष्काश्य चतुर्भागाऽवशिष्टमवतार्य  
मागद्वय प्रकृत्यैकभागमेकटिकया सायमपर प्रा-  
तश्च दद्यादेव त्रिचतुराणि दिनानि कृते पूर्वोक्त-  
व्याधयो निवर्तन्ते । अम्लदाडिमीफलरसेन घन-  
हिके नश्यत । अभ्यगन्धा, अनन्तमूल, हेमक्षीरी (पर-  
ह्नीचका) मूकभाण्ड, कुमारीकन्दश्चेति प्रत्येकमेक-  
पलं चूर्णीकृत्य पादतोलकेन चूर्णेन सहैका मात्रा  
सेविता चेदस्थिगतसोपद्रवो ज्वरो नश्यति । शीत-  
पदार्थां वर्ज्या । ( व्यास० )

### ४० ज्वराहुशरसः ( महदादि ) १

द्विपल महपापाण कायेहेतुतण्डुलीयरूपज्वरसेन  
प्रति यामचतुष्टय मर्दयित्वा शरायसम्पुटित विधाय  
घनतया सप्त मृत्तिका द्रोरोत्पलकनयेण पुट दद्यात् ।  
तत खल्वे निक्षिप्य त्रिकटुकषायेन यामचतुष्टय  
विमृष्ट मुद्रपरिमिता घटी कुर्यात् । मधुमिश्रित-  
मृष्टजीरकचूर्णे एका घटीं सयोज्य सेवनात्सर्वे ज्वरा-  
स्तत्क्षणं निवर्तन्ते । महाज्वरेषु त्रिरावृत्ता घटी योज-  
नीया नाऽधिका । तित्तिडी वर्ज्या । क्षीरात्र गोधूम-  
खण्डपूषाऽनुकूल । अपि चाऽनन्तमूलकायेन  
घातज्वर, मागद्वयेन पित्तज्वर त्रिकटुकचूर्ण-  
मिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन स्नेहज्वर, धान्यककायेन ताप-  
ज्वर, दन्ता सङ्ग्रहण्यक्षीरी, भृङ्गराज ( शुण्टगल-  
गरा ) रसेन ज्वरसञ्जातसर्गाङ्गश्लाघा नश्यति ।  
नेत्राङ्गनमपि कर्तव्यम् । अतिसाराणां गिट्टिगेडुलरस  
( ऊपरे पलाण्डुसदृशकन्दो यस्य पत्राणि तालमूला-  
सदृशानि गृहीत च भवन्ति इति केचिद्वदन्ति अन्ये-  
स्तु शृङ्गाटकमाद्रु ) , अण्डघाते लताकरजपत्ररस,  
क्षीरस्रभागाय कामकसूरिका ( मरुचक ) पत्ररस,  
सर्वसन्निपातेषु धन्तूपत्ररस, अजीर्णस्थोष्णोदकम्,  
अरीसा मूलरस, श्वयधुपाण्डुकामलासु म्रष्टाऽति-  
विपाकाय, दुष्टरसोद्दिग्दानस्य धीजपूररस, वृश्चि-  
कविपस्य गामयम्, निम्बयीजतैलं, मयूरपिच्छमस्म  
च । एवमनुपान यथाचित देयम् । सर्वविपाणामपि  
यत्र क्षतं तत्र मयूरपिच्छमस्मना सह निम्बयीजतैल-  
मिश्रितेन क्षतस्थान लिम्पेत् । आर्द्रकरसेन नेत्रे अञ्ज-  
यित्वा यत्र घस्तात्पदयेत्पातालपर्यन्तं इष्टिं प्रसरति ।  
पिशाचप्रस्तानां कबलितलेन मिश्रयित्वा नेत्रा-  
क्षने कृत चेद्भूतमेतपिशाचादयः पलायन्ते । खमूला-  
शाब्ज्याधेनवनीतेन सहाऽऽसने लेपनीयम् । वक्ष्या-  
क्षीणां परिपकघटीयचूर्णेन क्रतुकाळे एकवारं

दद्यात् । एवमनुपाने । सर्पवृश्चिकान्मसुनकविपादी  
पूर्वोक्ततैलेन सह क्षतस्थाने नियोजनीयम् । इत्येव-  
मेवाऽनुपानभेदेन सर्वव्याधिषु नियाजनीयम् । शिर-  
शक्तिपूजा कार्या ॥ ( अगस्त्य० )

### ४१ ज्वराहुशरसः ( द्वितीय ) २

शुद्धपारदगन्धरुद्रददङ्गणविपतालकजयपालत्रि-  
कटुत्रिपलाशैतानि प्रत्येक सपादतालकानि गृहीत्वा  
चूर्णीकृत्य भृङ्गराजसेन यामचतुष्टय मर्दयित्वा मरि-  
चप्रमाणा मात्रा कुर्यात् । कृष्णतुलसीरसेन वालक-  
ज्वराणां दातव्यम् । मरिचरस्केन घातशला शीत-  
ज्वराश्च नश्यन्ति । चित्रकपिप्पलीमूलतित्तपत्रोत्पल-  
निम्बविष्णुनान्ताऽनन्तमूल यन्मिधुकाऽऽकारकरभ-  
षिकटुनिफलाऽमृताक्षरुकीफलतालीसपत्रोक्षीरधा-  
वन्दनानां कायेन पुराणघातपित्तस्नेहम्रष्टाऽऽहिका  
जीर्णज्वरा नश्यन्ति । पाण्मासिकययस्कमारभ्य नि  
हायणय पर्यन्तं बालानामेकवारमप्यथ मुद्रप्रमाण  
देयम् । तरणादीनां चणकप्रमाणम् । अम्लरसा वर्ज्य  
शातलघातपदार्थाश्च । अस्मिन्मौषधे रसगन्धकादयो  
विधिना शाब्ज्या । प्रवृत्तस्त्रीणां ज्वरादी लघ्वज्वरा-  
यनोपयोजनीयम् । पथ्य रोगोचितम् । ( व्यास० )

### ४२ ज्वराहुशरसः ( महदादि ) ३

शुद्धगन्धरुपादनिमहपातपुष्पधन्तूरुधौजमरि-  
चानि प्रत्येकतोलकानि विचूर्ण्य कृष्णचक्रपत्र-  
स्वरसेन यामचतुष्टय सम्यग्विमृष्ट गुञ्जामात्रा घटा  
कृत्याऽऽर्द्रस्वरसेन सेविता चेद्विपक्षीतरूपप्रधा-  
नज्वरा निवर्तन्ते । म्रष्टारमिश्रितपुराणतण्डुला  
उष्णादश्च पथ्यम् । सप्ताष्टयपात्र्य तरिणशालानां  
सर्वपापाणामभिताम्योपधानि वर्ज्यानि । वृद्धादिम-  
हाघायुकठिनदोषमहासन्निपातकण्टगतस्फुटातादि-  
दापेरानान्ताश्चेत्ता तेष्वपि प्रयाज्यानि ( व्यास० )

### ४३ ज्वराहुशरसः ( चतुर्थ ) ४

सम्यक् शुद्धमेकतोलकं महपापाण पट्टनालके  
गर्दमीक्षीरे चीनपात्रे मिश्रयित्वा द्विनोलकहिङ्गु  
मासो देय । हिङ्गुला यद्वा भरति । अथ तण्डुमात्रा  
मरिचकायेन सह सेवितस्सराऽज्वराभावायति ।  
अम्लरसा वर्ज्य । आढकीपूय, भिण्डिका, गोधूम-  
खण्डपूय, नुप्फ काकमाचा ( कामाता ) फल शिष्ट-  
शिर्ष्या, क्षीरात्र पथ्यम् । अथयं मृन्ना = तित्ति-  
मात्राच्छिन्ने मृत्पात्रेऽर्द्धमाग सिकतया पूरयित्वा  
सिक्कतामध्ये काचपात्र निधाय तमय द्रवशकल  
निक्षिप्य यागोक्तप्रकारेण घ्रातं दद्यादित्युक्तं पथ्यम् ।  
( व्यास० )



प्राह्यम् । आमलकप्रमाणं रजतभस्मना बङ्गभस्मना वा  
मेलयित्वा प्रत्यहं द्विवारं मण्डलपर्यन्तं सेवनीयम् ।  
शतखोरमणको भवति । स्वप्रस्खलनं निर्वृलं जायते ।  
रक्तवृद्धिर्धातुपुष्टिश्च भवति । ( व्यास० )

#### ५० नवपाषाणद्रावकम्

मलसञ्जीवनीरौद्रोद्भिद्वृषिक ( यलिका ) तालको-  
ल्लिपापाणानि, विडसैन्धवसामुद्रसौवर्चलौपरलव-  
णानि, स्फटिका, टङ्गणं, मनःशिला चैतान्यैकरूपलि-  
कानि खल्वे चूर्णयित्वा उत्तमारणि ( चमारद्वीधौ )  
स्वरसेन मर्दयित्वा शुष्कं चूर्णं भाण्डे निक्षिप्य पूर्वा-  
क्षरसेन कल्कं विधाय यामपञ्चरूपर्यन्तमेकजातीय-  
काष्ठेन पाकं कृत्वा नलिकायन्त्रेण द्रवो प्राह्यः अत्र  
( पापाणद्रवे ) सर्वे धातुपधातवो यद्वा भवन्ति ।  
पञ्चमूलव्याधिपुपयोक्तव्यम् ॥ ( अगस्त्य० )

टि०—एतत्त्रिद्विपापाणपरिचयोऽगस्त्यवैषकादेव वर्तव्यः । ईश-  
वस्तुमन्त्रेणरौद्रोद्भिदसामुद्रादेव निवेद्यवित्वा ।

#### ५१ नवरत्नमिश्रिताऽथोलोहसिन्दूरम्

अयः, ताम्रं, तीक्ष्णं, कांस्यं, लोहकट्टे, पित्तलं,  
नागः, वङ्गं, कृष्णसीसकं, रजतं, सुवर्णं, माणिक्यं,  
मुक्ता, विद्रुमं, मरकतं, वज्रं, वैदूर्यम्, नीलम्, गोमे-  
दम्, पुष्परामञ्ज्वेति प्रत्येकं पादतोलकं सत्त्वे चूर्णा-  
कृत्य पीतपुष्पभृङ्गराजरसेन यामद्वयं मर्दयित्वा  
शुष्कचक्रिका पक्वैकपागते निधाय पञ्चमूद्रैर्लित्वा  
घराहपुटो देयः । एवं पञ्चपुटेषु विद्रुमवर्णं सिन्दूर-  
मुत्पद्यते । शिवशक्तिपूजां विधाय निष्कासनीयम् ।  
अनुक्ताऽष्टातस्याधिष्वेतदुपयोजनीयम् । गुञ्जाद्वय-  
परिमितस्य मधुना सह सेवनादुल्मवायुकुष्ठद्रव्यो  
नश्यति । गोघृतेनाऽस्थिगतज्वराः, नयनीतेन शरी-  
रदाहः, जीरककायेनोदःपित्तरोगाः, आद्रक्षरसेन  
घातपित्तज्वराः, स्तन्येन सन्निपाताः, लघुनतैलेन  
सङ्गृहणी, मरिचकायेन श्वासकासयुतो ज्वरः, नागर-  
कायेनाऽजीर्णज्वराः, व्याघ्रीकायेन श्वासकासयुतः  
क्षयरोगः, अजाक्षरिण हृच्छूलं, ग्राही ( बहारी )  
पत्रदाडिमीपुष्पस्वरसाम्यां यालानामस्थिगतज्वराः,  
तालगुडेन घनीभूताः शूलाः, कीटनिष्ठीवन ( सञ्जी-  
विगुड ) चूर्णेन सर्वे मेहरोगाः, आहुली ( तंगेडु )  
मूलचूर्णेन बहुमूत्ररोगः, गोक्षरिण पाणिपादशूलानि,  
शर्करया मेहग्रन्थयः, लघुनतैलमिश्रितत्रिकटुत्रिफला-  
चूर्णेन मूत्रहृच्छ्रावयः, भृङ्गराजत्रिकटुचूर्णेन मधुना  
सह सेवनात्कामलापाणद्रावयः, चन्दनकायेन सह  
यातपित्तं, जातीफलचूर्णेन स्त्रीणां श्वेतकुसुमरोगाः,  
चानुजातचूर्णेमिश्रितगोघृतेन सहाऽस्थिमेदकमेह-  
व्याधयः, स्तन्येन सह पण्णतितनेत्ररोगाः, व्याघ्री-

वासाभुनिम्बशुद्रमुस्तककायेन चतुष्पष्टिर्जराः, अश्व-  
गन्धाचीनदेयक्षीरोच्चिररुजीरकाणां चूर्णेन सह  
मधुना सेवनात्पङ्गुवातः, शुद्धभह्मातकतैलेन सर्वाणि  
कुष्ठानि, हयङ्गवीनेन मस्तकशूलं पीनसश्च, लघुनेन  
सहाऽतिसारः, नागराऽऽमलकज्योतिष्मतीयीजचूर्णेन  
सर्वेऽतिसारा निवर्तन्ते । रोगपरिज्ञानपूर्वकं यथो-  
चितं पथ्यं देयम् ॥ ( अगस्त्य० )

#### ५२ नवरत्नसिन्दूरम्

वज्रं, मुक्ता, वैदूर्यम्, विद्रुमः, मरकतं, नीलमणिः,  
गोमेदकं, रक्तगर्जरत्नानि, पुष्परामः, पारदः, वङ्गश्चेति  
समभागं गृहीत्वा पूर्व वङ्गेन सह पारदं मेलयित्वा  
नवरत्नैः सह सञ्ज्वर्णं जम्बीररसेन भृङ्गराजरसेन  
चकैकयामं मर्दयित्वा शुष्कचूर्णं विधाय सर्वसमं शुद्ध-  
गन्धकं मेलयित्वा काचरूपिकायां निक्षिप्य गन्धक-  
जारणाऽनन्तरं मुक्तगन्धनं कृत्याऽष्टयामपर्यन्तं घालु-  
कायन्त्रे पाकं कुर्यात् । स्वाह्मशीतलं निरीक्ष्य सुप्रह-  
ण्यगणेशायोरर्चनं कृत्वा कृपिकात् औपधं प्राह्यम् ।  
एतत्सङ्कुलपरिमितं मधुना सह सेवनीयम् । अनेन  
मूत्राऽवरोधाऽश्मरीमूत्रद्वारदुग्धमूत्रहृच्छ्रावदुग्धम-  
धुमेहमेहग्रन्थयो लिङ्गद्वारशूलो महाकुष्ठानि अशीति-  
धातव्याधयो गात्रद्वीर्षस्य सर्वाङ्गशूलाश्चेते महाव्या-  
धयो नश्यन्ति । देहं वज्रसदृशं भवति । एतस्मिन्न-  
पथ्यं नास्ति । मांसरसाः, घृतपक्वमांसमिश्रितपदार्थाः,  
दधिश्चोघृतवातामाशोदादयो गुरुपदार्थाः सर्वेऽपि  
सेवनीयाः । ( अगस्त्य० )

#### ५३ नवलोलसिन्दूरम्

शुद्धसुवर्णरजताऽयस्ताम्रकांस्यपित्तलनागवङ्ग-  
सीसकानि प्रत्येकमेकतोलकानि चूर्णितानि भृङ्गरा-  
जरसेन यामद्वयं मर्दयित्वा चक्रिका विधाय शराय-  
सम्पुटितं कृत्वा घराहपुटो देयः । स्वाह्मशीतं समुद्रस्य  
पुनर्भृङ्गराजरसेन मर्दयित्वा पुटो देयः । एवं पञ्चपुटो  
देयाः । विद्रुमवर्णं सिन्दूरमुत्पद्यते । अर्धगुञ्जापरि-  
मितं मधुना सह सेवनीयम् । एतेन कृष्णमहाऽण्ड-  
घातपीनसगुल्मशूलपक्षवातघृतिकाघातपाण्डुपाथ्य-  
शूलप्रभृतयो रोगा नश्यन्ति । तत्तज्ज्वरकायार्थमधुना  
सह सन्निपातादिषु दातव्यम् । कायद्रव्याणि-क्रिातः,  
विष्णुकान्ता, मरिचं, आमरकरमः, ईश्वरी, पाठा,  
शिप्रुमूलत्वक् १-१ पलिकानि गृहीत्वा चतुर्धभाग-  
ऽवशिष्टं वायं गृहीत्वा त्रितोलककायेऽर्द्धगुञ्जापरि-  
मितं सिन्दूरमधुना सह मेलयित्वा प्राह्यम् । ( अगस्त्य० )

#### ५४ नागसिन्दूरम्

जम्बीररसे, तिलतैले, गोमयरसे, गोमूत्रे, कुल-  
त्यकाये, बालमूत्रे च प्रत्येकस्मिन् सप्तवारं शोधितं

## ४४ तालकमात्रा

शुद्धपारदगन्धकमनःशिलाचिपाणि दरदतालक-  
हेममाक्षिकाप्रकृताप्रभस्मानि समानि विचूर्ण्य  
चाङ्गेरी ( पुलिचिन्ता ) जम्बीररसाभ्यामेकैकदिनं,  
अम्लदाडिमीफलचित्रकमूलत्वग्रसाभ्याञ्च द्विद्विषामं  
विमृच्य शुष्कां चक्रिकां शराययोरवरुद्ध्य कुक्कुटपुटो  
देयः । एतद्ब्रह्माभितं मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन सेवितं  
सदुन्मादमदमृच्छांदाशयति । पथ्यं यथोचितम् ॥  
( व्यास० )

## ४५ तालसिन्दूरम्

पत्रतालकं, रक्तमनःशिला, गौरीपापाजं, महं,  
तुष्यं ( मेलतुष्यं ), अमलसारगन्धकं, हिङ्गुलः,  
पारदः, सखीरं, रसकर्पूरं, अभ्यदन्तपापाणञ्चेतानि  
एतत्वे जम्बीररसेन दिनद्वयं मर्दयित्वा शुष्कांकृत्य  
कण्टकिपलाशशिष्टरक्तकार्पासपार्श्वपिप्पलाऽर्ककुन्द-  
नन्दिषर्धनं ( अनन्त म० ) पुष्करसेः प्रत्येकं चतुर्विं-  
शतितोलकैश्चेकप्रसम्मिलितैः स्तोकेन स्तोकेन रसेन  
मर्दयित्वा सर्वोऽपि रसः शोषणीयः । अन्ते शुष्कां  
चक्रिकां विधाय शरायसमुद्रितं कृत्या गजपुटो देयः ।  
स्वाङ्गशीतलं भृङ्गराजरसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा  
पूर्ववत्पुटो देयः । पुनर्जम्बीररसेन पूर्ववत्पुटदानेनेत-  
दत्यन्तरक्तवर्णं सिन्दूरं भवति । एतन्मुद्रप्रमाणं मधु-  
मिश्रितत्रिकटुकचूर्णेन सह दत्तं चेदसाध्यशलाः, एक-  
विंशतिमेहास्तद्वन्धयश्च, अष्टादशकुष्ठानि, वातपवि-  
त्रगण्डमालाराजमणगुल्मरोगादयः सङ्क्रामकभ्या-  
धिष्ठिते सर्वे निर्मूला भवन्ति । आढकी, बालवृन्ताकं,  
शिमुशिम्वी, कृशरा, गोक्षीरं, उष्णोदकञ्चेति ध्रुव  
पथ्यम् । अम्लघ्नमो घर्षणी । ( अगस्त्य० )

## ४६ त्रिकटुकगुटिका

गन्धकः, तालकं, आकारकरमः, सखीरं, विपं,  
रसकर्पूरं, गौरीपापाजं, पारदः, जयपालवीजानि,  
त्रिकटुकं, त्रिफला, पिप्पलीमूलं, राज्ञा, भारङ्गी,  
कटुतोहिणी, सैन्धवञ्चैतेषु शोषणीयानि शोषयित्वा  
सर्वाणि सञ्चूर्ण्य भृङ्गजलेन सप्तदिनानि विमृच्य गुञ्जा-  
परिमितां वटो कृत्या छायायां विशोष्य भूनिम्बकपा-  
येण सर्वज्वरेषु देयम् । जम्बीररसेन विषोपविषाणि,  
भृङ्गाङ्गिः श्वयधुपाण्डुकामलावातपित्तमेहपिडिका-  
दयः, आमलकाधेन सर्वाङ्गशलाः, महिषीदन्ताऽ-  
तिसाराः, किञ्चिद्भृङ्गजीरेकेण शुल्माः, मधुना गर्भवा-  
तादयः, अम्लदाडिमीफलरसेन पित्तशूलवमनाऽरो-  
चकन्नस्याद्यो नश्यन्ति । वातपदार्थवर्ज्यं पथ्यम् ।  
( व्यास० )

## ४७ त्रिनेत्रसिन्धुकम्

शुद्धपारदजयपालवीजानारिकेलरुपात्मस्मप्राची-  
नतालगुडानेकैकतोलकान् गृहीत्वा नारिकेलदुग्धेन  
यामद्वयं विमृच्य सिन्धुसर्पं विधाय रजतसमुद्र-  
स्यापयेत् । एतत्कण्टकितजिह्विकार्यां किञ्चिन्मात्रं  
घर्षणीयम् । कण्टकनीलिमादिद्रोयो निवर्तते । वमन-  
हिषः, ऊर्ध्वश्वासः, इन्द्रियस्तब्धता, अङ्गदौर्ध्र्यं,  
विचित्रविप्रमः, सुखसन्निपातज्वरः ( खीसद्दोषः ),  
यत्सकाशादुत्पन्नो व्यरस्तस्त्रीजनप्रदेशादुत्तमाना-  
याऽङ्गने कृते तच्चान्तिर्भवतीति दक्षिणदेशप्रसिद्धिः )  
एते नश्यन्ति । अथ सन्निपाते नस्यम्-भृङ्गश्यामो  
( उन्मिषेरु ), द्रोणपुष्पीमूलं ( तुम्भैरु ), पति-  
करजपिण्याकञ्च समभागमञ्जनवद्विष्टम् नारिकेल-  
पुटके संस्थाप्य नश्यं देयम् । सुखसन्निपातो नश्यति ।  
मत्कुण्डलधिरमञ्जने देयम् । ( व्यास० )

## ४८ धातुशुद्धिरसायनम्

श्रुमिकृष्माण्डं ( सूचकरुद्रम् ), कृष्णमुशली, मु-  
ञ्जातकं ( सालिमं ), त्वक्, लवङ्गं, एलायीजानि,  
कोकिलाक्षः ( नोदगुम्भी ), रजतमस्म, जातीफलं,  
जातिपत्री, ईसवगोलः ( ईसवगोलः ), सुवर्णमस्म  
प्रत्येकं पादतोलकानि चूर्णयित्वा समभागां शङ्केरां  
संयोज्य लेहापकं विधाय प्रातः सायञ्च पादतोलकं  
सेवनीयम् । उपरिष्ठादशतोलकं गोक्षीरं पेयम् ।  
वृद्धोऽपि तद्विनायते । ( अगस्त्य० )

## ४९ धातुशुद्धिलेहम्

श्रुमिकृष्माण्डकन्दं, पुष्करकन्दं, त्रिकटुकं, यष्टिमधुकं,  
कतरवीजं, अभ्यगन्धा, भद्रमुस्ता, तपकोलं, त्वक्,  
जीरेकं, एलावीजं, मस्तगी, फासनीवीजं, नागकेशरं,  
भाङ्गी, जातीफलं, जातीपत्रं, अतिविषा, मुञ्जातकं,  
मुशलीकन्दं, मज्जिष्ठा, उशीरमूलं, देवदारु, शतपुष्पा,  
चण्डं, शुद्धहरीतकी, कुटजः, तक्रोलः ( सलवमि-  
याळु ), कुमुदकन्दं, उयोतिप्रमतीवीजं, पत्रवीजं, मदन-  
कामेश्वरपुष्पं, अहिकेनं, महाराष्ट्री ( मराठी मोग्गा ),  
फपिकच्छुल्लकल्लगुनशरहञ्जिकारुण्णतुलसीवीजानि  
केशरं, चन्द्रसारः, रोचना चैत्यन्तिमत्रयं प्रत्येकमर्ध-  
तोलकं, अवशिष्टानि प्रत्येकं सार्धतोलकानि गृहीत्वा  
चूर्णांकृत्य सितोपलातालीशंकरावातामानि प्रत्येकं  
१२॥ पलिकानि, आक्षोदं, त्रियाल ( सारपण्डु ) ज्वेति  
४-४ पलं ग्राह्यम् । अथ लेहापाकविधिः-यणवति-  
तोलकं गोक्षीरं शङ्केराद्वयस्य चूर्णञ्च भाण्डे निधाय  
घातामादिष्वयं धृतपक्वमिदं नञ्च क्षिप्त्वा तन्तुलीं  
विधाय पूर्वोक्तसर्वद्रव्यभाणां चूर्णं मेलयित्वा १५ पलं  
गोघृतं, २४ तोलकं मधु च निक्षिप्य लेहां कृत्या

प्राद्यम् । आमलकप्रमाणं रजतमस्मना वङ्गमस्मना वा  
मेलयित्वा प्रत्यहं द्विवारं मण्डलपर्यन्तं सेवनीयम् ।  
शानस्त्रीरमणो भवति । स्वप्नस्पृहलं निर्मूलं जायते ।  
रक्तवृद्धिधातुपुष्टिश्च भवति । ( व्यास० )

#### ५० नवपाषाणद्रव्यकम्

महसज्जीरसौरीदोद्विगृहिक ( यलिका ) तालको-  
लिपाषाणानि, विडसन्धवसामुद्रसौवर्चेलीपरलव-  
णानि, स्फटिका, रुद्धुणं, मनःशिला चैतान्येकैरुपलि-  
कानि खल्वे चूर्णयित्वा उत्तमारणि ( चमारदूधी )  
स्वरसेन मर्दयित्वा गुप्कं चूर्णं भाण्डे निक्षिप्य पूर्वा-  
करसेन कलकं विधाय यामपञ्चरूपपर्यन्तमेकजातीय-  
काष्ठेन पार्कं कृत्वा नलिकायन्त्रेण द्रव्यो ब्राह्मः अत्र  
( पाषाणद्रव्ये ) सर्वे धातुपधातवो यद्वा भवन्ति ।  
यद्बहुलव्याधिपुपयोक्तव्यम् ॥ ( अगस्त्य० )

टि०—तन्निर्दिष्टपाषाणपरिचयोऽगस्त्यवैषवादेव वर्तन्त्ये । ईश-  
राष्ट्रमहेश्वरसौरीपराशाखनक्षेत्रे विनोदविश्रामः ।

#### ५१ नवद्रवमिश्रिताऽथोलोहसिन्दूरम्

अयः, ताम्रं, तीक्ष्णं, कांस्यं, लोहफिह्रं, पित्तलं,  
नागाः, वङ्गं, कृष्णसीसकं, रजतं, सुवर्णं, माणिस्यं,  
मुक्ता, विद्रुमं, मरकतं, वज्रं, वैद्यूर्यम्, नीलम्, गोमे-  
दकम्, पुष्परागश्चेति प्रत्येकं पादतोलकं स्वस्वे चूर्णा-  
कृत्य पीतपुष्पभृङ्गराजसेन यामद्वयं मर्दयित्वा  
शुक्लचमिकां पक्वेष्टिकागते निधाय पञ्चमृदुलैल्लव्या  
घराहपुटो देयः । एवं पञ्चपुटेषु विद्रुमवर्णं सिन्दूर-  
मुत्पद्यते । शिवशक्तिपुञ्जा विधाय निष्कासनीयम् ।  
अनुक्ताऽज्ञातव्याधिर्धृतपुपयोजनीयम् । शुआद्वय-  
परिमितस्य मधुना सह सेपनाहुस्मयायुक्कुष्मादयो  
नश्यन्ति । गोपूतेनाऽस्थिगतज्वराः, नवनीतेन शरी-  
रदाहः, जीरककायेनोदपित्तरोगाः, आर्द्रकरसेन  
पातपित्तज्वराः, स्तन्येन सन्निपाताः, लग्नमर्तलेन  
सङ्गहणी, मरिचकायेन श्वासकासयुतो ज्वरः, नागर-  
कायेनाऽजीर्णज्वराः, व्याघ्रीकायेन श्वासकासयुतः  
क्षयरोगः, अजाक्षीरेण हृत्पटलं, प्राही ( घृहारी )  
पत्रदाहिमीपुष्पस्वरसाय्यां घालानामस्थिगतज्वराः,  
तालगुडेन घनीभृताः शूलाः, फाटनिष्ठीवन ( सञ्जी-  
विगुड ) चूर्णेन सर्वे मेहरोगाः, आहुली ( तंगुड )  
मूलचूर्णेन घट्टमूत्ररोगः, गोक्षीरेण पाणिपादशूलानि,  
शर्करया मेहग्रन्थयः, लग्नमर्तलेमिधितत्रिकटुत्रिफला-  
चूर्णेन मूत्रहृत्प्रादयः, भृङ्गराजत्रिकटुकृष्णचूर्णेन मधुना  
सह सेवनात्कामलापाण्डूदयः, चन्दनकायेन सह  
पातपित्तं, आर्ताफलचूर्णेन स्त्रीणां श्वेतकुसुमरोगाः,  
चातुर्जातकचूर्णमिधिततागपूतेन सहाऽस्थिभेदकमेह-  
रप्याधयः, स्तन्येन सह पञ्चरसितनेत्ररोगाः, व्याघ्री-

वासाभृनिम्बभृद्रमुस्तककायेन चतुष्पष्टिज्वराः, अश्व-  
गन्धाचीनहेमशीरीचित्रकजीरकाणां चूर्णेन सह  
मधुना सेवनात्पट्टुधातः, शुद्धमहातकतेलेन सर्वाणि  
कुष्ठानि, दैव्यचूर्णेन मस्तकशूलं पीनसश्च, लग्नेन  
सहाऽतिसारः, नागराऽऽमलकज्योतिष्मतीवीजचूर्णेन  
सर्वेऽतिसारो नियतन्ते । रोगपरिधानपूर्वकं यथो-  
चितं पथ्यं देयम् ॥ ( अगस्त्य० )

#### ५२ नवरत्नसिन्दूरम्

वज्रं, मुक्ता, वैद्यूर्यम्, विद्रुमः, मरकतं, नीलमणिः,  
गोमेदकं, रक्तवर्णरत्नानि, पुष्परागः, पारदः, वङ्गश्चेति  
समभागं गृहीत्वा पूर्वं वङ्गेन सह पारदं मेलयित्वा  
नवरत्नेः सह सञ्चूर्ण्य जम्बीररसेन भृङ्गराजरसेन  
चैकैरुपामं मर्दयित्वा गुप्कचूर्णं विधाय सर्वसमं शुद्ध-  
गन्धकं मेलयित्वा काचकृपिकायां निक्षिप्य गन्धक-  
जातराऽनन्तरं मुसयन्धनं कृत्वाऽऽष्टयामपर्यन्तं घालु-  
कायद्ये पार्कं कुर्यात् । स्वाङ्गशीतलं निरीक्ष्य सुसह-  
प्यगणेशयोर्वचनं कृत्वा कृपिकात औपधं प्राह्यम् ।  
एतत्तन्नुलपरिमितं मधुना सह सेयनीयम् । अनेन  
मृग्याऽवरोधाऽऽमरीषप्रहारदुर्गन्धमूत्रहृत्पट्टमूत्रम-  
धुमेहमेहग्रन्थयो लिङ्गहृत्पट्टलो महाकुष्ठानि अशीति-  
धातुन्याधयो गात्रद्वीपस्य सर्वाङ्गशूलार्थेन महान्या-  
धयो नश्यन्ति । देहं वज्रसदृशं भवति । एतस्मिन्-  
पथ्यं नास्ति । मांसरसाः, घृतपक्वमांसमिश्रितपदार्थाः,  
दधिशीरघृतचातामाहोद्रादयो गुरुपदार्थाः सर्वेऽपि  
सेवनीयाः । ( अगस्त्य० )

#### ५३ नवलोहसिन्दूरम्

शुद्धसुवर्णरजताऽयस्ताम्रकांस्यपित्तलनागवङ्ग-  
सीसकानि प्रत्येकमेकतोलकानि शृणितानि भृङ्गरा-  
जरसेन यामद्वयं मर्दयित्वा चमिकां विधाय शराय-  
समुद्रितं कृत्वा घराहपुटो देयः । स्वाङ्गशीतं ममुद्रत्य  
पुनर्भृङ्गराजरसेन मर्दयित्वा पुटो देयः । एवं पञ्चपुटो  
देयाः । विद्रुमवर्णं सिन्दूरमुत्पद्यते । अर्धगुञ्जापरि-  
मितं मधुना सह सेयनीयम् । एतेन कृष्णमेहाऽण्ड-  
यानपीनसगुल्मशूलपक्षयातमृत्तिकाघातपाण्डुपार्श्व-  
शूलप्रभृतयो रोगा नश्यन्ति । तत्तन्मरककायैर्मधुना  
सह सन्निपातादिपुद्गातय्यम् । कायद्रव्याणि-किरातः,  
विष्णुकान्ता, मरिचं, आकागकरभः, ईश्वरी, पाटा,  
शिषुमूलवृक्ष १-२ पलिकानि गृहीत्वा चतुर्थमागा-  
ऽवतिष्ठे शर्पं गृहीत्वा धितोलककायेऽङ्गमुञ्जापरि-  
मितं सिन्दूरं मधुना सह मेलयित्वा प्राह्यम् । ( अगस्त्य० )

#### ५४ नागसिन्दूरम्

जम्बीररसे, तिलतेले, गोमयेरसे, गोमूत्रे, कुल-  
त्यकाये, घालमूत्रे च प्रत्येकस्मिन् सप्तवारं शोधितं

चतुर्पलं कृष्णनागं मुन्मथपात्रे गालयित्वैकतोलकं  
पात्रं मिश्रयित्वा पञ्चाङ्गऽऽहुलीचूर्णं ( तद्गुडचेष्ट )  
यामचतुष्टयपर्यन्तं किञ्चित्किञ्चित्क्षिप्त्वाऽऽहुलीमूल-  
दण्डेन घर्षणीयम् । एतस्मिन्दूरं मधुना, घृतेन, नव-  
नीतेन वा सेवनीयम् । एतेन शुष्कमेहरसप्रदकुसु-  
मादिरोगमूत्रकृच्छ्रहृमूयमूत्राऽवरोधशर्करामेहऽ-  
श्मरीप्रभृतयः सङ्कीर्णरोगा निवर्तन्ते । ( व्यास० )

#### ५५ नारिकेलतैलम्

पक्वनारिकेलफलानि द्वादश, हेमक्षीरो ८ पला,  
हरीतकी चानमूलिका ( रेवन्चीनां ) नागराणि  
त्रिजपलानि, शुद्धं जयपालयीजं द्वितोलकं, शुद्धसु-  
हारश्वाऽऽहुलीपत्र ( तद्गुडकु ) रसरूपराणि प्रत्ये-  
कमेकतोलकानि गृहीत्वा सर्वं सहभुज १२० तोल-  
कजले निक्षिप्यैकरानिपर्युषितं विधाय त्रिरावृतके-  
नोष्णमपर्यन्तं पाकं कृत्वा स्वाद्गुरोते जाते जलोप-  
योगतं तैलं सावधानतया गृहीत्वा स्थापनीयम् ।  
नारिकेलजलानुपानेनाम्लमण्डेन वा विन्दुह्रयं प्रयं  
वा दातव्यम् । सुखेन विरेचनं भवति । यदि विरे-  
चनाऽऽधिन्यं स्यादतिविषामस्मल्लतं जलं देयम् ।  
क्षीराक्षमाढकीखण्डभूषाक्ष पथ्यम् । एतेनोपद्वा-  
सन्धिगतप्रमेहभ्ययथुपाध्वपृष्ठवाता हृत्पलाऽऽहिरु-  
जराद्यो नश्यन्ति । एतत्तैलमेकस्मिन्मासे सप्तदिन-  
पर्यन्तं पेयम् । एवं रीत्या मासत्रये जाते पूर्वांकरोगा  
नश्यन्ति । अपि च कण्ठ्याक्षीणां, अध्वानां, वृषभा-  
क्षीनाञ्च दातव्यम् । पशूनां दानप्रकारः—एकतोलकं  
वराङ्गं जलेन सम्मर्द्य तन्मध्ये १० विन्दुपर्यन्तं तैलं  
मेलयित्वा घंशनालमुत्तापयितव्यम् । सर्वे पशु-  
व्याधयो निवर्तन्ते । ( अगस्त्य० )

#### ५६ पञ्चलोहसिन्दूरम्

शुद्धस्वर्णं, रजतं, अयश्चूर्णं, ताम्रं, वज्रं, पञ्चपा-  
षाणानि ( दोडु—कार्मुगिल—पगडपुट—शृङ्गि—तिमिर-  
कुलपाषाणि ) समभागानि खल्वे निक्षिप्योपरक्षारं  
नरसाक्षि ५-५ पलं गृहीत्वेनह्रमपि विचूर्ण्य चीन-  
पात्रे निक्षिप्य रात्रौ जयनीरं गृहीत्वाऽनेन जयनीरेण  
मर्दयित्वा चक्रिकां विधाय शरावसम्पुटीकृत्य कुकुट-  
पुटं देयम् । एवं रीत्या चत्वारि पुटानि देयानि । अ-  
स्याऽनुपानचूर्णम्—लघुपिप्पली, मधुघण्टिः, जीरकं,  
चित्रकं, मरिचं, यवानां, कृष्णतिलाः, अवगन्धा  
चेतानि प्रत्येकपलानि चूर्णीकृत्य वस्त्रशोधितं  
विधाय समभागं चीनेनह्रमशौ मिश्रयित्वा शुद्ध-  
राजकामरुस्वटीरपन्सो गोक्षीरं प्रत्येकं २४ तोलकं  
कटादि निक्षिप्य पाकसमये पूर्वां चूर्णं क्षिप्त्वाऽव-  
लोड्य गोघृतं २४ तोलकं, मधु च १२ तोलकं संयोज्य

लेहापाको ग्राह्यः । अर्घतोलकरूपरिमिते लेहे गुञ्जं  
पञ्चलोहसिन्दूरं मेलयित्वा मण्डलान्तं सेवनीयम् ।  
अनेनाऽष्टादशदीर्घशूलानि, कुष्ठमेहविचर्चिकादयो  
निर्मूला भवन्ति । जम्बीरशुक्तं, कपित्थफललेहं, शर-  
हञ्जिका, गोधूमः, शर्करा, गोघृतं, कोपातकी, सुञ्ज  
( सर्पशार्क ), वस्तमांसञ्ज्ञेयानि पथ्यानि । ( अगस्त्य० )

#### ५७ परङ्गयादिलेहम् ( महत् )

गोदुग्धशुद्धा चीनेहमक्षीरी ५ पला, नारिकेलज-  
लेन भस्मीकृतं कलनारभस्म २ पलं, आरुण्यमहि-  
पीक्षीरं १ पलं, पलायोजं १ पलं, घृतमण्डं जातीफलं  
३ पलं, सितोपला १३ पला, शतायरीरसः ५० तो-  
लकः, केदारं १ तोलकं नीत्वा चूर्णीकृत्य सितोपला-  
यास्तनुलीं विधाय गोघृतं ४ पलं विन्यस्य सर्वमपि  
चूर्णं मेलयित्वा लेहापाकेनाऽवतार्य ग्राह्यः सायञ्जेति  
द्विवारं प्रत्यहमर्घतोलकं सेवनीयम् । अनेन सर्वे मेह-  
धिकारा नश्यन्ति, धातुपुष्टिर्भवति रक्तवृद्धिश्च । पथ्यं  
रोगाऽनुरूपम् । ( अगस्त्य० )

टि०—अत्र परङ्गीति शब्दोऽप्यतोऽप्यत्र वैषयिनामगौ परङ्गा-  
दिरास्येते बुद्धदारी इति मत्वा, निरास्य बुद्धदारीति काव्यद्रव्ये  
स्यतया कथितम्, मधेयद्रव्ये तु परङ्गपदमेति यथाऽन्यथितेनेनेनम् ।  
आधुनिकस्याग्राहिदेशवैषयास्तत्स्थाने चीनेहमक्षीरं ( रेवन्चीनी )  
निवृणन्ति, परङ्गीत्येते परङ्गीचेति शब्दं मण्डिष्यन्ति, परङ्गी श-  
ब्दस्य च योगेषु स्मृतिं मन्यन्ते । सर्वमप्येतद्धानविलम्बितम्, न ह्यन-  
स्यादिमहर्षिसमये कदाचिद्विद्वद्धानां सङ्गाव सिद्धं हेमक्षीर्वाक्षीन-  
देवादारुपरदेशादेवाऽनुनाऽप्यगमनमस्ति । अतएव रेवन्चीनी किंवा  
रेवन्धतवाक्षीति द्विवचनामैव तत्रमिदं । गोऽप्यक्षीरं रेवन्चीनी  
रीषेति नाम्ना वक्षि न प्रभवति, परङ्गीति योरोपीयदेशीरुवा-  
नामेवाऽनुनाऽप्यवहितवना नामकरणं कुर्वन्ति । चीनाभिजनामारा-  
म्भाणाञ्च तत्तद्देशानामेवाऽऽलङ्कारेणैव ह्यारोप्यन्ति, अतः परङ्गीचेति  
नाम्न ग्रावुर्भाषोऽज्ञानमूलक एवाऽस्तीति प्रतीयते । पराम्पनिविर-  
तान्वाहानि यस्या इति व्युत्पत्त्या परङ्गी इति, रक्षाणि अहानि यस्या  
इति व्युत्पत्त्यौ रक्षाग्राह्येति शब्द उपपद्यते । बुद्धदारास्तयामेहप्रमसि  
नाम सायकतायावहनि, सरीयमूत्रानां शारायना चातिप्रमृगशीलत्वा-  
त्ततोऽप्यत्र परङ्गी इति फलौ इति वा सिद्धं भवति । अत एव वैष-  
यिनितामिकारेण बुद्धदाराश्चक्रकैश्च स्वीकृताऽस्त्यत एव परङ्गलानि  
बुद्धदारीरिति स्वयमेवोक्तम् । बुद्धदाराश्चक्रकैश्च केचिदप्येव स्मरिषि तु  
केषांविद्वद्धानां कथनं एवमुपायित बुद्धदारीरचवत् चक्रादौ उपसि-  
द्धम्, केचिदप्येव तु सार्वज्यव्याख्यातिग्राह्याणि शीतलानि च,  
रक्तपदरासिसाराऽर्गोऽरुण्येवाऽऽद्यादयेन सर्वेरीयवाङ्मलानामपि  
सम्पन्नागमन्ति । अतो बुद्धदारी केचिदप्येवनामानं सवैषयाऽऽनुचितम् ।  
अतोऽप्यस्यैवयोगेणैव व्यासोक्तयोगेषु च यत्र यत्र चीनेहमक्षीरीति नाम  
दत्तमस्ति तत्र तत्र प्रायः परङ्गीशब्दस्यानेनैवानीननेन स्थापितमस्तीति  
ज्ञाव्यम् । तथैवेन गुणप्राप्तितु काकनालीयन्त्येन समाम्युपगमन-  
स्पतिवोगाव्यवसिति निरदिष्टमिति । अहो कीदृशी कालपरिणतिरी  
दस्याऽऽनुबन्धनव्यवस्थेऽस्याऽप्यज्ञानादुणाप्राप्तं सभातस्तदुदाहरणं सर्व-  
शक्तिगान् परमेष्ठर एवाऽप्यर्थनीयं इति, ईदृग्विषयश्च दक्षिणदेश एवा-  
ऽस्तीति तु स्वाम्नेनेऽपि न प्रमित्यैव सिद्धं सर्वदेशाधारणीयं विवर्ति  
निषण्डुत्वात्तत्तत्पत्रामिन्न निषण्डुत्वाभिर्निर्देशेन कृतमस्ति, तस्मिन्नेन

विशेषतया द्रष्टव्यम् । कदाचिदेवमणिविशिष्टतयोक्तवृत्तायै परचन्द्रस्य  
लाक्षणिकार्थं मत्वा पराङ्गीचन्द्रस्य चीनेहेमशीयमिव रुधिरस्तीति चेत्तत्र  
विशेषप्रमाणोपदेशाऽस्ति । अयमन्ये तु वैचिन्त्यतामिकाकारस्य मत्त  
पोषकमेतेन वैचिन्त्यतामिगिरचनसमपर्वन्त पराङ्गीचन्द्रो वृद्धास्तवा-  
यामेन प्रतिष्ठित आसीदित्यनुमीयते । कालकालात्पर्यया लोपादेम-  
शीयो केनचित्प्रतिष्ठापित इति प्रतिमातीत्यरमतिविलोकेन ।

### ५८ पाण्डुकामलादिहरतैलम्

शङ्खद्राचरुनिम्बकरसः ( नारदम्बकाचरसः ) २४  
तोलकः, जम्बीररसः १२ तोलकः, सेहुण्डशरीरम्,  
शिप्रुपत्रजलपिप्पली ( बुकिना ) हंसपादवीभृङ्गरा-  
जानां स्वरसाः, परण्डेलैलम्, कान्तभस्म, अयोभस्म  
च प्रत्येकं द्विपलं गृहीत्वाऽऽदौ रसाय तैले निक्षिप्य  
भस्मद्वयमपि जम्बीररसेनाऽऽलोड्य तैले मेलयित्वा  
पिप्पल्येलाशीजजातीफलमरिचानि प्रत्येकमर्घतोल-  
कपरिमितानि चूर्णितानि निक्षिप्य पाकं कृत्वा  
स्वाङ्गशीतं कृष्या निधाययेत् । भव्यपुपाण्डुदिप्याधि-  
प्रस्तानां यथोचितानुपानेन दातव्यम् । पथ्यं रोगानु-  
रूपम् । चोष्यतिन्तिडयो घर्ष्ये । ( अगस्त्य० )

### ५९ पिप्पल्यादिरसायनम्

क्षुद्रपिप्पली २ पला, पिङ्गनागरे १-१ पले,  
चव्यमरिचपिप्पलीमूलानि प्रत्येकं पादोनपलानि,  
उशीरैलायीजमासीजातीपशीलघङ्गहरीतन्त्र्यामलक-  
विभीतकजातीफलव्यचः प्रत्येकं पादोनद्वितोलकाः,  
भृङ्गराजमूलचूर्णं २७ तोलकं, कान्ताऽयःसिन्दूरे २-२  
पले गृहीत्वा सर्षाणि चूर्णीकृत्य घृत्युतं कृत्वाऽधो-  
भस्म भृङ्गराजरसेनाऽऽज्जनवद्विमृष्टं चूर्णेन सह मेल-  
यित्वा लोहपात्रे ४८ तोलकं मधु निक्षिप्य १६ पलां  
शर्करां मेलयित्वा पाकसमये पूर्वोक्तं चूर्णं प्रक्षिप्य  
लेह्यपकं रसायनं ग्राह्यम् । पतन्मृन्मयपात्रे स्थापनी-  
यम् । आमलकप्रमाणमेकमण्डलमर्घमण्डलपर्यन्तं वा  
सेयिते ऽरवाताऽग्निमान्यपाण्डुभ्यासकासपित्तक्षय-  
रोगादौघाशयति । पथ्यं रोगोचितम् ॥ ( अगस्त्य० )

टि०—आलोकपिप्पल्यादिरसायने वान्ताऽयः सिन्दूरयोरेवमावोऽस्ति,  
चतुषल वृषाङ्गधिवचना निक्षिप्तमस्ति । आसकासपादादिषु विशेषनया  
ऽलोपयोगादत्राऽपि चतुषलवृत्तिनिर्गोऽपि वा रुधिरदेव्यनीतिं प्रति-  
माति ।

### ६० पुनर्नवादितैलम्

भ्येतपुनर्नवाचिकैरुण्डशिप्रुपुतीकशामोदकाऽग्नि-  
मन्य ( तकाळी ) निर्गुण्डिशूलानि, त्रिफला, कृष्ण-  
यालकं ( कुन्दरेड ) चैतानि प्रत्येकमेकशतपलिकानि  
सहस्रं द्रोणचतुष्टयपरिमिते जले निक्षिप्य चतुर्भा-  
गावशेषं विपाच्यकाढकं गोक्षीरं, ८० तोलकं तिल-  
तलञ्च मिधयित्वा विपचेत् । पाकसमये पिप्पली,  
विश्रक, यवानी, यष्टिमधुकं, भृङ्गराजमूलं, सर्पदेष्टा-

शीजानि, अश्वगन्धा, खादिरम्, अतिविपा, नागरं,  
सैन्धवं, लवङ्गं, एलावीजं, वङ्गकान्तभस्मनी, शुद्ध-  
गन्धकं, मृगमदः, पुष्करमूलं चैतानि समभागानि  
चूर्णीकृत्य तैलगुण्डां मेलयित्वा पकं तैलं ग्राह्यम् ।  
अम्यञ्जननस्याभ्यासां वातपित्तपाण्डुभ्यवधुनासामणक-  
पालशोयाद्यो रोगा निवर्तन्ते । पथ्यं रोगानुरूपम् ।  
( अगस्त्य० )

### ६१ पुष्पमणिमात्रारसः

शलाकारसकरूरं, रससिन्दूरं, शुद्धदरुः, कान्त-  
सिन्दूरश्चैतानि प्रत्येकं द्वितोलकानि, केशरम् २।  
तोलकं, गोरोचनं १॥ तो०, चन्द्रसारः पट्टाणकाऽ-  
धिकैकतोलकः, तर्कोलं पादोनतोलकं, कुष्ठत्रिकटुका-  
ऽऽकारकरभाः प्रत्यर्घतोलकाः, चित्रकमूलव्यगनन्त-  
मूलभ्येतत्रिबुद्विश्रकरमुशालीयष्टिमधुकशिप्रुमूलव्यच-  
पतानि प्रत्येकं द्वितोलकानि गृहीत्वा पीतभृङ्गरसेन  
चतुर्गमं विमृष्टं चित्रकमरिचकण्टकिपलाशमूलव्यचां  
त्रिप्रिलिकानामष्टमागाऽवशेषितेन छापेन यामनयं  
मर्दयित्वाऽरिष्टीजप्रमाणा घटीश्ल्यायाशुष्का । कृत्वा  
स्थापयेत् । शर्करया सह मेहज्वरादिप्येका घटी देया ।  
त्रिकटुकचूर्णेनाऽशीतिधातव्याधिषु निषेध्या । एवमे-  
कमण्डलमर्घमण्डलपर्यन्तं वा सेयनीयम् । ( व्यास० )

### ६२ प्रभाकररसः

रामठपारव्यधानीगन्धकदङ्कुणतालकपिप्रिकटु-  
राजि काशिलाकृष्णजीरकदरुदहरीतक्य सर्षाणि सम-  
भागानि, जयपालवीजानि सर्वसमानि गृहीत्वाऽऽदौ  
जयपालं विमृष्टं सर्वमपि पूर्वोक्तसम्भारं निक्षिप्य  
यामप्रयमनारते मर्दयित्वा घृतसम्पुटे संस्थापयेत् ।  
अथवाऽऽद्रेकरसेन गुञ्जामितां घटिकां निमांय स्थाप-  
येत् । गुञ्जाममाणं नागरकायेन सेयितं सज्ज्यरामाश-  
यति । हरीतकीकायेन भ्यासकाती, गोघृतेन रक्तमूल-  
व्याधिः, गोक्षरेण शुदाहुरा नश्यन्ति । लङ्गुनेतैलं,  
मधु, आर्द्रकरसः, पतन्नुपानेन गुञ्जामाणं सेयितं  
सज्जलोदरमहोदरादीनाशयति । सर्पदेशादीनां सर्व-  
प्रमाणं निम्नरीजतैलेनाऽज्जने दद्यात् । यदि नेत्रयोः  
शोथः स्यात्कन्याद्रवेण प्रशालनीयम् । अपि च दुर्मा-  
सोत्पादकव्यणेषु, राजव्यणेषु, सन्धिग्रन्थिषु, सिराम-  
णेषु चेतदौषधं जिह्वाजलेन घृष्ट्वा व्यणोपरि लिम्पे-  
त्सर्वं व्यणा निरहुरा भविष्यन्ति । ( व्यास० )

### ६३ वट्कान्तरजतम्

यक्षसमुद्रलवणं, कान्तं, पारदः, अमलसारगन्धकं,  
मनःशिला, द्रुदं, दाहभस्म चैतानि तत्रये सम्यगिर-  
चूर्ण्य . . ( गाडिदिगडपात्र ) रसेन यामग्रयं विमृष्टं  
संशोष्य चूर्णीकृत्य गङ्गाजलकृपिकायां निधायऽष्ट-



यामं बालुकायां क्रमाग्निना पचेत् । स्वाङ्गशीतमौषधं तण्डुलद्वयपरिमितं प्रयुक्तं चेष्टिपपाण्डुज्वरवातोदर-  
गुल्मक्षयरोगादीञ्जयति । ( व्यास० )

#### ६४ यद्वत्खण्डार्द्रकम्

आर्द्रकस्वरसः २४ तोलकः, शुद्धगन्धकद्रुतिः, सैन्धवं, अपामार्गक्षारः, वंशरोचना चेति प्रत्येकं सपादतोलकं गृहीत्वा गन्धकद्रवेण सह क्षारत्रयमपि चूर्णीकृत्याऽऽर्द्रकस्वरसे मेलयित्वा दिनत्रयपर्यन्तं गाढातपे निक्षिप्येत्तत् कलामात्रं सेवनीयम् । अने-  
नाऽजीर्णाऽतिसारवमनह्रिकाविसृचिकोदरज्वलनाऽ-  
रोचरुदाहादयो नश्यन्ति । ( व्यास० )

#### ६५ यद्वत्तालकम्

शुद्धतालकं २ पलं, मनःशिला १ पला, अमल-  
सारगन्धकं १ पलं, रसरुर्ध्वरमर्धपलं गृहीत्वा चूर्णी-  
कृत्य काचकूप्यां निक्षिप्य मुखमुद्रां विधाय बालुका-  
यन्त्रविधानेन सार्धैरुपामपर्यन्तं पाकं कुर्यात् । स्वाङ्ग-  
शीतमौषधं तण्डुलद्वयपरिमितं मधुना त्रिकटुकचूर्णेन  
वा देयम् । सद्योपज्वराः, श्वासकासादिसंयुक्तक्षयाश्च  
नश्यन्ति । अम्लरसादिकं वर्ज्यम् ॥ ( व्यास० )

#### ६६ यद्वत्तदो रसरुर्ध्वरश्च ( प्रथमः )

एकशकलात्मकं शुद्धं तदं रसरुर्ध्वरश्च ८-८ पलं  
शरावे निक्षिप्य श्वेतहिंसा ( तेलावुषि ) पत्र-  
रसेन, लशुनद्रवेण च प्रति चतुर्धामं प्राप्तं दत्त्वा  
आरक्तिकर्पूरं ५ पलं, तुरकं ( साम्राणी, लोयान )  
५ पलं, एतद्वयमपि विमृद्य लोहकटाहं निक्षिप्य मन्दा-  
ग्निना द्रवीकृत्य पूर्वोक्तं द्वयमपि मध्ये निक्षिप्य सम्यक्  
पाकः कर्तव्यः । खण्डद्वयलभं किट्टं दूरीकृत्याऽऽवा-  
लवृद्धं यथोचितमुपयोजनीयम् । स्तन्येन, मधुना,  
पिप्पलीमरिचयोः क्षायाभ्यां वा सेवनेन गर्भवातरु-  
फघातसंश्लिन्नस्त्वैव ज्वरा नश्यन्ति । अजीर्णशूल-  
सन्निपाताः धनुर्द्वारा ( कम्प ) ऽन्त्रपक्षसन्निधिशरोऽ-  
र्दितममरुतसर्वाङ्गकण्ठवाताश्च सोपद्रवा नश्यन्ति ।  
क्षीरात्रं पथ्यम् । अम्लरसो वर्ज्यः । ( व्यास० )

#### ६७ यद्वत्तदः ( द्वितीयः )

एकपलां मनःशिलां जम्बीररसेन विमृद्यैकपलि-  
कस्य तुल्यशकलस्योपरि कवचं दत्त्वा सम्यग्विशोष्य  
हसन्तिकोपरि यथोचिताग्री विन्यस्य तुल्यधूमनि-  
र्गमनपर्यन्तं पाकं कुर्यात् । एतद्वलेन तुल्यभस्म चीन-  
पात्रे पञ्चतोलकसेहण्डक्षरेण सह सङ्कलय्य गाढा-  
तपे निदध्यात् । एवं दिनत्रये कृते तुल्यभस्म सिक्तं  
भवति । तत एकपलिकं हंसपाकद्वयं खर्परे विन्यस्य  
मन्दाग्निना पक्वं पूर्वाक्तुत्पसिक्तयेन सावधानतया  
पङ्घटिकापर्यन्तं किञ्चित्किञ्चिद्वाप्तं दद्यात् । क्षुद्रति-

न्तिडीकाष्ट्रैर्दीपवज्ज्वालां दद्यात् अनेन दरदो घनीभूय  
वद्धो भवति । सकलज्वरवायुषु प्रयोज्यम् । स्तन्य-  
यानां भ्रष्टपरिपक्वसातला ( पारसाणी ) काण्डनिर्धु-  
ण्डीवरुणमूलत्वयवानां कल्करुण्णतुलसीस्वरसानां-  
मन्यतमेनाऽर्द्धतण्डुलपरिमाणं देयम् । अनेन बालानां  
सोपद्रवज्वरान्तिर्भवति । अजीर्णोन्मिद्यमान्यज्वरा-  
तिसारश्वासकाससन्निपाताश्च नश्यन्ति । रोगबला-  
यलं विश्राय दिनत्रयं चतुष्टयं धोपयोज्यम् । अक्षार-  
लवणं पथ्यं मातुर्देयम् । तदुणादीनामेतद्दिगुणम् ।  
पथ्यन्तु यथोचितम् ।

#### ६८ यद्वत्तदः ( तृतीयः )

शुद्धतदः २ पलः, गन्धकः १ पलः, शलाका-  
रसरुर्ध्वरं १ पलं, एतन्नयमपि विचूर्ण्य काचकूपिकायां  
निक्षिप्य पूर्ववन्मुद्रणादिकं कृत्वा बालुकायन्त्रे एक-  
यामं पचेत् । स्वाङ्गशीतमर्द्धगुञ्जापरिमितं मधुना  
तत्तद्गोचितकायेन वा सेवितं सर्वान्वातव्याधीन्  
सविकाराज्वराश्च निहन्ति । ( व्यास० )

#### ६९ यद्वत्तदः ( चतुर्थः )

पञ्चदशतोलरुपरिमितं तद्वत्पण्डं मन्दाग्नौ खर्परे  
निक्षिप्य जम्बीररसस्य यामचतुष्टयं सावधानतया  
प्राप्तं दद्यात् । पुनश्च श्वेतहिंसाफल ( उष्णिपेडुल )  
कुमारीजीवन्तिकास्वरसेः प्रत्येकं यामचतुष्टयं प्राप्तं  
दत्त्वा स्वाङ्गशीतं यद्वत्तदं तण्डुलपरिमाणं तत्तद्गो-  
चितानुपानेन मधुना वा सेवितं सद्योपसर्गिकृष्या-  
धीनामवातरुपित्तादींश्च नाशयति । पथ्यं रोगो-  
चितम् । ( व्यास० )

#### ७० यद्वत्तदः

यद्वत् समुद्रलवणं, शुद्धं लोहचूर्णं, तन्तुरजतं, पारदः  
गन्धकश्चेतानि प्रत्येकपलानि, शुद्धतालकं मनः-  
शिला चेति प्रत्येकं सपादतोलकं गृहीत्वाऽङ्गनवह्नि-  
चूर्णं दिनद्वयं कन्यारसेन विमृद्य त्रिदिनं रोपयित्वा  
काचकूप्यां निक्षिप्य मुखमुद्रां विधाय ऽष्टयामं बालु-  
कायन्त्रे विप्राच्य स्वाङ्गशीतं घनीभूतां गुटिकापर्य-  
गुञ्जागतां मधुना सह दद्यात् । अनेन सकलसन्नि-  
पाता वातमेहादयश्च नश्यन्ति । ( व्यास० )

#### ७१ यद्वत्तदः

शुद्धपारदद्वयमाग्निस्यविद्रुममहुरजतगन्धकरस-  
कर्पूरमुक्तातालकसुवर्णानां समभागानां सूक्ष्मचूर्णं  
विधाय समूलचित्रकस्वरसेन द्वियामं मर्दयित्वा  
विशोष्य काचकूप्यां निक्षिप्य मन्दमध्यखराग्निभि-  
र्बालुकायन्त्रे यामचतुष्टयं पाकं कृत्वा खल्वे निक्षिप्य  
सुगमदः, गोरोचना, चन्द्रसारः, पतान्यैकतोलका-  
न्यौषधे मेलयित्वा स्तन्येन चित्रमूलस्वरसेन च

मापप्रमाणा वटी हृत्वाऽनुपानविशेषै सकलरोगे-  
षूपयोजनीया । अक्षातबद्धमूलरोगा सर्वे नश्यन्ति ।  
( व्यास० )

### ७२ तालमान्द्यहरतैलम्

धुद्रैरण्डवीजतैल ४० तोलक, कामकस्तुरिकापत्र-  
रस ( मरनक ) ४ पल, शिशुकरञ्जश्वेतपुनर्नवा-  
पुरपरत्नब्राह्मीपत्ररस २-२ पल, औदुम्बरत्वक्कोम-  
लवटप्ररोहचरस ४०-४० तोलक, एतान्सर्वानपि  
रसान् तैले निक्षिप्य आतीफल, जातोपन, मायाफल,  
फर्केटशृङ्गी, कुष्ठ, आकारकर्म, शुद्धजयपालञ्चैतानि  
पादतालकपरिमितानि, लशुन पलाण्डुञ्चैकैकपल  
मेलयित्वा विपचेत् । तत्र सिद्ध रसकर्पूर, मृगमद,  
गोरोचन, केसरञ्च प्रतिपादतोलक विपके तैले  
सयोज्य स्वाह्नीतलं ब्राह्मम् । विन्दुचतुष्टय पञ्चक  
या रागवल्लनुसारेण घालना हातव्यम् । तन्मात्रे  
अष्टतिन्तिडी, लघणमिथितोष्णोद्ग्राह्य पथ्यम् । एतेन  
घालस्य अत्युग्रप्रहादिवोषा निवृत्ता भवन्ति ।  
महादरपित्तश्लेष्मज्वरादिनिवृत्तिश्च भवति । अगस्त्य०

### ७३ भल्लातकलैखम्

गोमूत्रशुद्धानि भल्लातकानि १० पलानि, चीन-  
हेमक्षीयभगन्धादारहरिद्रापिप्पलीपिप्पलामूलचि-  
कमूलरजकृष्णजारकहरीतकीकुष्ठानि १-१ पलानि,  
शुष्कनारिकेलमज्जा २ पला, मिस्तुपास्तिहा १८  
तोलका, शुद्ध रसकर्पूरसपादद्वितोलक, तालगुड ५  
पल गृहीत्वाऽऽदी भल्लातकानि नारिकेलेन सहोद्-  
गले लेह्यानु रूप विधेयम् । यदराफलप्रमाण मण्डल-  
पर्यन्त प्रत्यह द्विकालं सेवनीयम् । अनेन कुष्ठशूल  
हृणप्रन्थिगुल्ममेहशूलश्वेतपीतरक्तादिरोगा सर्वे  
नश्यन्ति । तिन्तिडीरस, धूमपानं घातला मादक-  
पदार्था स्त्रियश्च वर्जनीया । पथ्यं रोगानुकूलम् ।  
( अगस्त्य० )

### ७४ भल्लातकीवटी ( ब्रह्ममनीमल्लातकी )

शुद्धभल्लातकीजानि १० पलानि, चित्रकमूल-  
त्वक्, चीनहेमक्षीरी, श्वेतहिंसा ( तेलुषुप्पि ),  
अभ्यगन्धा, शरपुष्टमूल, घणत्वक्, दारहरिद्रा, गज-  
पिप्पली, धुद्रपिप्पली, हरीतकी, वायुची, कुष्ठञ्च  
१-१ पलं, शुष्कनारिकेलरज्ज २ पलं, तालगुड ५  
पल, एण्णतिला ५ पला, रसकर्पूरं द्रवञ्च प्रतिस-  
पादतोलकं गृहीत्वा भल्लातकानां नारिकेलखण्डेन  
एण्णतिलैश्च सह कर्तव्यं विधाय शेषद्रव्याणां चूर्णं  
तालगुडञ्च मेलयित्वा रसकर्पूरकज्जलीं मिश्रयित्वा  
लोहमुरालेन सम्पक् सवुट्य सिक्थरूपतामापाये-  
कमण्डलपर्यन्तमरिष्यात्तप्रमाणं सेवनायम् । एतेन

कुष्ठानि, बह्मणादिसन्धिग्रन्थय शूलगुल्मसूतिकाया-  
तसङ्कीर्णरागा निर्मूलतामापद्यन्ते । अम्लरसधूमपा-  
नक्षीसंसर्गमादकद्रव्योपसेवनानि दूरतस्त्याज्यानि ।  
पथ्यं रोगोचितम् ( व्यास० )

### ७५ भूपतिगुटिका ( प्रथमा )

शुद्धगन्धक २ पल, पारददरसरससिन्दूरसञ्जीरा-  
ण्यैरेकपलानि चूर्णीकृत्य काचकृपिकाया निक्षिप्य  
ब्रमाग्निना यामचतुष्टय पार्कं कुर्यात् । स्वाह्नीतं नै-  
ब्राह्मम् । एतद्भूपतिगुटिकात एकपलमात्रं ग्रह्ये  
निक्षिप्य १॥ तालक गारोचन केदारञ्च नवाणक  
मिश्रयित्वा स्तन्येन, ताम्रमूलीदलेन कृष्णतुलसीपत्र-  
रसेन च प्रत्येकपार्श्वं मर्दयित्वा गुष्ठाप्रमाणा घट्टीं  
विधाय मधुना सह सेवनास्तन्निपातादयो रोगा  
निवर्तन्ते । रोगोचितं पथ्यम् । ( अगस्त्य० )

### ७६ भूपतिगुटिका ( द्वितीया )

सुरार्णरजतयशदाऽयोमुक्तामाणिक्यमस्मानि शुद्ध-  
गन्धकपारदमन शिलातालकमृदारभृष्टविषाणिप्रत्ये-  
कतोलकानि प्रातरारभ्य सार्य पर्यन्तं विबुष्य  
जम्बीररसेन यामचतुष्टय विमृष्ट शुष्का धम्रिका  
शरायसम्पुटिता हृत्वा सप्तमृत्तिका विधाय वित-  
स्तित्रयाघ्नत पुटी देय । स्वाह्नीतं तत्समं  
शुद्धदरदं मेलयित्वा स्तन्येन दिनद्वयं विमृष्टाऽङ्गुल-  
माना घट्टीं हृत्वा छायाशुष्का विधाय स्तन्याऽनुपा-  
नेन तण्डुलप्रमाणमौषधं सेवितं सत् सापड्यप्रयाद-  
शसन्निपाताप्राशयति । मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन  
निर्जायाऽपि सजायो भवति । ( व्यास० )

### ७७ मण्डूरचटकः

पादोनाऽष्ट्रस्ये गाम्भ्रे भ्रिफलादारहरिद्र ४-४  
पले निक्षिप्य प्राचानलाह्वित ९० तोलक, यस्त्रशा-  
चित्तमयधूर्णे ९० तालक, कान्तचूर्णं ४१ तालकं एत-  
श्चयमपि गोमूत्रे निक्षिप्य शापणपर्यन्तं पाकं विधाय  
विडङ्गनागरभृष्टमूलचित्रकमूलत्वक्पिप्पल्येगरीज-  
मरिचानां प्रत्येकपलानामष्टमाणाऽष्टशेषं पार्श्वं हृत्वा  
तेन दिनद्वयं मर्दयित्वा पादतालिका घटा कुर्यात् ।  
एतद्भ्रातमण सह सेवनीयाऽप्यथा चतुर्गुणितरज्जपूत-  
गोमूत्रे मरिचप्रशेषं विधाय तेन प्रत्यह २० दिनपर्यन्तं  
सेवनीय । आदर्शस्तण्डूप्राप्तं पथ्यम् । एतेन पाण्डु-  
सयाह्नीशायगुल्मादरज्जुद्वया निरन्ते । अम्लरसा  
धूमपानादिकञ्च त्याज्यमुष्णादश्च पथ्यम् ( व्यास० )

### ७८ महामेहान्तकरसायनम्

शापितचानदमक्षीरा ( परङ्गिचरा ) चूर्णं १५ पलं,  
गोक्षीरशुद्धाभ्यगन्धाभूमिहृष्माण्डसारिवाय यामूल-  
चूर्णं ५-५ पल, यष्टिमधुकभाङ्गातालसीगरीजजाती-

यामं चालुकायां क्रमाग्निना पचेत् । स्वाङ्गशीतमौषधं तण्डुलद्वयपरिमितं प्रयुक्तं चेद्विषपाण्डुज्वरवातोदर-  
गुल्मक्षयरोगादीञ्जयति । ( व्यास० )

### ६४ वद्धखण्डार्द्रिकम्

आर्द्रकस्वरसः २४ तोलकः, शुद्धगन्धकद्रुतिः, सैन्धवं, अपामार्गक्षारः, वंशरोचना चेति प्रत्येकं सपादतोलकं गृहीत्वा गन्धकद्रवेण सह क्षारत्रयमपि चूर्णीकृत्याऽऽर्द्रकस्वरसे मेलयित्वा दिनत्रयपर्यन्तं गाढातपे निक्षिप्येतत् कलामानं सेवनीयम् । अने-  
नाऽजीर्णाऽतिसारवमनहिकाविसृचिकोदरज्वलनाऽ-  
रोचकदाहादयो नश्यन्ति । ( व्यास० )

### ६५ वद्धतालकम्

शुद्धतालकं २ पलं, मनःशिला १ पला, अमल-  
सारगन्धकं १ पलं, रसरूपरमर्धपलं गृहीत्वा चूर्णी-  
कृत्य काचकृप्यां निक्षिप्य मुखमुद्रां विधाय चालुका-  
यन्त्रविधानेन सार्धैकयामपर्यन्तं पाकं कुर्यात् । स्वाङ्ग-  
शीतमौषधं तण्डुलद्वयपरिमितं मधुना त्रिकटुकचूर्णेन  
वा देयम् । सद्योपज्वराः, श्वासकासादिसंयुक्तक्षयाश्च  
नश्यन्ति । अम्लरसादिकं वर्ज्यम् ॥ ( व्यास० )

### ६६ वद्धदरदो रसरूपरश्च ( प्रथमः )

एकशकलात्मकं शुद्धं दरदं रसरूपरश्च ८-८ पलं  
शरावे निक्षिप्य श्वेतहिंसा ( तेल्लामुषि ) पत्र-  
रसेन, लशुनद्रवेण च प्रति चतुर्यामं प्रासं दत्त्वा  
आरनिकर्पूरं ५ पलं, तुरकं ( साम्याणि, लोवान )  
५ पलं, एतद्वयमपि विमृष्टलोहकटहे निक्षिप्य मन्दा-  
ग्निना द्रवीकृत्य पूर्वांके द्वयमपि मध्ये निक्षिप्य सम्यक्  
पाकः कर्तव्यः । खण्डद्वयलग्नं किंद् दूरीकृत्याऽऽवा-  
लवृद्धं यथोचितमुपयोजनीयम् । स्तन्येन, मधुना,  
पिप्पलीमरिचयोः काषाभ्यां वा सेवनेन गर्भघातक-  
फघातसम्बन्धितस्सर्वे ज्वरा नश्यन्ति । अजीर्णशु-  
लसन्निपाता, धनुर्घोरा ( कम्प ) ऽन्त्रपक्षसन्निधिरो-  
दितडमरकसर्वाङ्गकण्ठवाताश्च सोपद्रवा नश्यन्ति ।  
क्षीरान्नं पर्यम् । अम्लरसो वर्ज्यः । ( व्यास० )

### ६७ वद्धदरदः ( द्वितीयः )

एकपलां मनःशिलां जम्बीररसेन विमृष्टैकपलि-  
कस्य तुल्यशकलस्योपरि कवचं दत्त्वा सम्यग्विशोष्य  
हसन्तिकोपरि यथोचितान्नो विन्यस्य तुल्यधूमनि-  
र्गमनपर्यन्तं पाकं कुर्यात् । एतद्वले तुल्यभस्म चीन-  
पात्रे पञ्चतोलकसेरुण्डक्षीरेण सह सङ्कलय्य गाढा-  
तपे निदध्यात् । एवं दिनत्रये कृते तुल्यभस्म विन्य-  
मयति । तत एकपलिकं हंसपाकदरदं खपरे विन्यस्य  
मन्दाग्निना पचन् पूर्वाक्तुल्यसिन्धवेन सावधानतया  
पङ्कटिकापर्यन्तं त्रिचिकित्तिद्विप्रासं दद्यात् । भुद्रति-

न्तिडीकाष्ठैर्दीपयज्ज्वालां दद्यात् अनेन दरदो घनीभूय  
वद्धो भवति । सकलज्वरवायुषु प्रयोज्यम् । स्तन्य-  
यानां भ्रष्टपरिपक्वातला ( सरसाणि ) काण्डनिर्गु-  
ण्डीवरुणमूलत्वग्मयानीकक्करुण्णतुलसीस्वरसाना-  
मन्यतमेनाऽर्द्धतण्डुलपरिमाणं देयम् । अनेन वालानां  
सोपद्रवज्वरशान्तिर्भवति । अजीर्णन्द्रियमान्यज्वरा-  
तिसारश्वासकाससन्निपाताश्च नश्यन्ति । रोगबला-  
बलं विज्ञाय दिनत्रयं चतुष्टयं धोपयोज्यम् । अक्षार-  
लवणं पर्यं मातुर्देयम् । तरणादीनामेतद्दिगुणम् ।  
पथ्यन्तु यथोचितम् ।

### ६८ वद्धदरदः ( तृतीयः )

शुद्धदरदः २ पलः, गन्धकः १ पलः, शलाका-  
रसरूपरं १ पलं, एतत्रयमपि विचूर्ण्य काचकृप्यायां  
निक्षिप्य पूर्ववन्मुद्रणादिकं कृत्या चालुकायन्त्रे एक-  
यामं पचेत् । स्वाङ्गशीतमर्द्धगुञ्जापरिमितं मधुना  
तत्तद्गोचिताकायेन वा सेवितं सार्धान्वातव्याधीन्  
सविकाराभ्यङ्गोश्च निरुन्तति । ( व्यास० )

### ६९ वद्धदरदः ( चतुर्थः )

पञ्चदशतोलकपरिमितं दरदखण्डं मन्दाग्नीं खपरे  
निक्षिप्य जम्बीररसस्य यामचतुष्टयं सावधानतया  
प्रासं दद्यात् । पुनश्च श्वेतहिंसाफल ( उप्पिण्डुलु )  
कुमारीजीवन्तिकास्वरसैः प्रत्येकं यामचतुष्टयं प्रासं  
दत्त्वा स्वाङ्गशीतं वद्धदरदं तण्डुलपरिमाणं तत्तद्गो-  
चितानुपादेन मधुना वा सेवितं सद्योपसर्गिकस्या-  
धीनामवातरक्तपित्तादींश्च नाशयति । पर्यं रोगो-  
चितम् । ( व्यास० )

### ७० वद्धमयः

वद्धं समुद्रलवणं, शुद्धं लोहचूर्णं, तन्तुरजत, पारदं,  
गन्धकश्चेतानि प्रत्येकपलानि, शुद्धतालकं मनः-  
शिला चेति प्रत्येकं सपादतोलकं गृहीत्वाऽञ्जनवद्वि-  
चूर्णं दिनद्वयं कन्यारसेन विमृष्टं त्रिदिनं शोषयित्वा  
काचकृप्यां निक्षिप्य मुखमुद्रां विधाय ऽष्टयामं धालु-  
कायन्त्रे विषाज्य स्वाङ्गशीतं घनीभूतं पुटिकामर्ध-  
गुञ्जागतां मधुना सह दद्यात् । अनेन सकलसन्नि-  
पाता वानमेहादयश्च नश्यन्ति । ( व्यास० )

### ७१ वद्धमहारसः

शुद्धपारददरदमणिन्यविद्रुममल्लरजतगन्धकरस-  
कर्पूरमुकातालकसुवर्णानां समभागानां सूक्ष्मचूर्णं  
विधाय समूलचित्रकस्वरसेन द्वियामं मर्दयित्वा  
विशोष्य काचकृप्यां निक्षिप्य मन्दमध्यखाराग्निभि-  
र्वालुकायन्त्रे यामचतुष्टयं पाकं कृत्या खल्वे निक्षिप्य  
सुषुम्भदः, गोरोचना, चन्द्रसारः, एतान्येवैकतोलका-  
न्यौषधे मेलयित्वा स्तन्येन चित्रमूलस्वरसेन च

मापप्रमाणा घटी हृत्वाऽनुपानविशेषैः सकलरागे-  
धूपयोजनीया । अज्ञातवदमूलरोगा सर्वे नश्यन्ति ।  
( व्यास० )

### ७२ घालमान्यहरतैलम्

धुद्रेण्डवीजतैल ४० तोलक, कामकस्तूरिकापत्र-  
रस ( मयूरक ) ३ पल, दिगुमररज्ज्वेतपुनर्नरा-  
पुष्करलप्राक्षीपत्ररस २-३ पल, औदुम्बरत्वक्काम-  
लपत्रप्रसहस्वरस ४०-४० तोलक, एतान्सवानपि  
रसान् तैले निक्षिप्य जातीफल, जातीपत्र, मायाफल,  
कर्कटवृद्धी, कुष्ठ, आकारकर्म, शुद्धजयपालञ्चैतानि  
पादतालरूपरिमितानि, लघुन पलाण्डुञ्जैरूपल  
मेलयित्वा विपचेत् । तत्र सिद्ध रसकर्पूर, मृगमद,  
गारोचन, केसरञ्च प्रतिपादतोलक विपके तैले  
सयाज्य स्वाह्वातल ग्राह्यम् । विन्दुचतुष्टय पञ्चक  
या रजयलानुसारेण घालना दातव्यम् । तन्मात्रे  
घृष्टतिगिरी, लयणमिश्रिताष्णादकाश पथ्यम् । एतेन  
महाहृत्पित्तश्लेष्मन्तरादिनिवृत्तिश्च भवति । अगस्त्य०

### ७३ भल्लातकलेपम्

गाम्ग्रशुद्धानि भल्लातकानि १० पलानि, चीन-  
हेमक्षीर्यभ्यगन्धादाहरिद्रापिप्पलीपिप्पलीमूलचित्र-  
कमूलरूपकृष्णजातरूपीतकीकुष्ठानि १-१ पलानि,  
गुष्करनारिकेलमज्जा २ पला, निस्तुपास्तिला १८  
तालका, शुद्ध रसकर्पूरपादद्रितालक, तालगुड ५  
पल शूहीत्याऽऽवी भल्लातकानि नारिकलेन सहोद्-  
रले लेष्टानुरूप विधेयम् । यदराफलप्रमाण मण्डल-  
पर्यन्त प्रत्यह द्विकाले सेवनीयम् । अनेन कुष्ठचल-  
हृणप्रमिथगुल्ममेहशूलभ्येतपीतृक्तादिरागा सर्वे  
नश्यन्ति । तिन्त्रिडीरस, धूमपानं पातला मादक-  
पदार्थां स्त्रियश्च यर्जनीया । पथ्ये रागानुक्लम् ।  
( अगस्त्य० )

### ७४ भल्लातकीरुडी ( ब्रह्ममनीमञ्जातरी )

शुद्धभल्लातकीरुडी १० पलानि, चित्रकमूल-  
त्यक्, चीनहेमक्षीरी, भेतहिद्या ( तेलपुष्पि ),  
अभ्यगन्धा, शरपुष्पमूल, परणवत्यक् दाहहरिद्रा, गज-  
पिप्पली, धुद्रपिप्पली, हरीतरा पाशुचा, कुष्ठञ्च  
१-१ पल, गुष्करनारिकेलखण्ड २ पल, तालगुड ५  
पल, एण्णतिला ५ पला, रसकर्पूर वरदञ्च प्रतिस्-  
पादतालक शूहीत्या भल्लातकाना नारिकेलखण्डन  
एण्णतिलेञ्च सह वरक विधाय दोषत्रय्यापा नृपं  
तालगुडञ्च मेलयित्वा रसकर्पूरञ्चल । मिश्रयित्वा  
लाहमुत्तलेन सम्यक् संकुट्य सिक्यरूपतामापाद्य-  
कमण्डलपर्यन्तमरिष्टयानप्रमाणं सेवनीयम् । एतेन

कुष्ठानि, चहृणादिसन्धिप्रन्थय शूलगुल्मसूत्रिकाया-  
तसङ्कापर्णागा निर्मूलतामापद्यन्ते । अम्लरसधूमपा-  
नलीसंसर्गमादकृष्णपापसेवनानि दूरतस्त्याज्यानि ।  
पथ्य रागोचितम् ( व्यास० )

### ७५ भूपतिगुटिका ( प्रथमा )

शुद्धगन्धक २ पल, पारददरदरससिन्दूरसञ्जीवा-  
ण्येरेरूपलानि चूर्णीकृत्य काचहृपिनाया निक्षिप्य  
ब्रमाश्रिना यामचतुष्टय पार्श्वं कुर्यात् । स्वाह्वातलं  
ग्राह्यम् । एतद्भूपतिगुटिकात एकपलमात्र रस्ये  
निक्षिप्य १॥ तालक गाराचन केसरञ्च नवाणक  
मिथयित्वा स्तयेन, ताम्बूलीदलेन घृण्णतुलसीपत्र-  
रसेन च प्रत्येकयामं मर्दयित्वा गुञ्जाप्रमाणा घटीं  
विधाय मधुना सह सेवनात्सन्निपातादया रागा  
नियतन्ते । रागोचितं पथ्यम् । ( अगस्त्य० )

### ७६ भूपतिगुटिका ( द्वितीया )

सुरार्णजतयशदाऽयमुक्तामाणिक्यभस्मानि, शुद्ध-  
गन्धकरावदन शिलाताम्बूलाष्टद्विधाणि प्रत्ये-  
कतालानि प्रातरारभ्य सायं पर्यन्त विष्णुष्ये  
जम्भाररसेन यामचतुष्टयं विमृष्य शुष्का चमिका  
शरायसम्पुटिता हृत्वा सप्तमृत्तिका विधाय वित-  
स्तित्रयाग्रत पुडा देय । स्वाह्वाते तत्समे  
शुद्धदरदं मेलयित्वा स्तयेन दिनद्वय विमृष्याऽहुल-  
माना घटी हृत्वा छायाशुष्का विधाय स्तन्याऽनुपा-  
नेन तण्डुलप्रमाणमोषध सेवितं सत् सापद्रव्ययाद-  
शसन्निपाताद्याशयति । मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन  
निर्जनाऽपि सज्जा भवति । ( व्यास० )

### ७७ मण्डूरवक्त्रः

पादानाऽष्टरस्ये गाम्ग्रे त्रिषगदाहरिष्टे ४-४  
पले निक्षिप्य प्राचीनगह्विष्ट ९० ताण्ड्य, पत्रदा-  
धितमयशुण्णे ९० ताण्ड्य, वातपूर्ण ४५ ताण्ड्य एत-  
त्त्रयमपि गाम्ग्रे निक्षिप्य शारणपर्यन्त पार्श्वं विधाय  
विडङ्गनागरभृङ्गसूचित्रकमूल यक्षपिप्पल्येगर्वाज-  
मरिचाना प्रत्येकपलानामष्टमाणाऽप्यशेषे बाधे हृत्वा  
तेन दिनद्वयं मर्दयित्वा पादतालिकां घटा कुर्यात् ।  
एतद्वातवक्त्र सह सेवनीयाऽयया चतुर्गुणितयम्रपूत-  
गाम्ग्रं मन्त्रिचप्रशेषे विधाय मेन प्रत्यह २० दिनपर्यन्तं  
सेवनाय । आदर्शरज्ज्वरप्राप्ते पथ्यम् । एतेन पाण्डु-  
सयाह्वातयगुल्मादरज्ज्वरप्रादया नियन्ता । अम्लरसा  
धूमपादादिकञ्च त्याज्यमुष्णादकं पथ्यम् ( व्यास० )

### ७८ महापेशान्तकरसायनम्

दाधितचातुर्मासी ( परहिंरगा ) पूर्ण १० पत्रं,  
गार्गारपुद्गाभ्यगं घाम्मिहृष्याष्टमारियाय याम्-  
पूर्णं -- १ पल, यष्टिमधुकभाङ्गान्तालीगं गवातान्त

पनत्वकमोलाऽऽकारकरभराश्चालवङ्गजातीफलनाग  
केशरजटामांसीपुष्करकन्दशीचन्दननालीकंदोशीरधु-  
लनिफलागजपिप्पलीत्रिकटुकच्यवनपिप्पलीमूलानां व-  
स्त्रशोधितं चूर्णं १-१ पलं, गोक्षीरेण कल्कीकृताः  
खर्जुरीफलवातामराखसद्राक्षप्रियालमज्जानः ५-५  
पलाः, चन्द्रसारं, केशरं, रोचना, अयःसिन्दूरं, स्वर्णर-  
जततनुपत्राणि, कान्तसिन्दूरं, पलायोजानि सुचूर्णि-  
तानि प्रत्येकं सपादतोलकानि गृहीत्वा परस्मिन्पात्रे  
पृथुत्तरशततोलकं गोक्षीरं, अशीतितोलकञ्च शत-  
पत्रार्कं निक्षिप्य १२० तोलकां सितोपलां मिश्रयित्वा  
विपचेत् । पाकं विहाय सर्वमपि पूर्वांके चूर्णं कलकञ्च  
मेलयित्वा ६० तोलकं गोघृतं, ९० तोलकं मधु च  
निक्षिप्य सुचर्णगोरोचनसिन्दूरादिवस्त्वनि सर्वाण्यपि  
यथोचितं निधाय शिवशक्तिपूजां कृत्वा लेह्यं ग्राह्यम् ।  
प्रत्यहमाभ्यस्यमाणमेकमण्डलपर्यन्तं सेयनीयम् ।  
एतेनैकविंशतिमेहघातजन्यमांसगतज्वराऽङ्गदाहादि-  
विकारैः सह नश्यन्ति । कपालकुण्डाऽतिसारनीलमे-  
हद्विषामादयो निर्मूलतां यान्ति । ( व्यास० )

हि०—यामस्य नयामासी त्रिकुचन्द्रसारा न दृश्यन्ते मुग्धदंष्ट्रा  
सपादतोलकोऽधिकतया निक्षिप्य । नासिष्ठे चन्द्रसारं वचुरिषा भेदि  
द्वयमपि निक्षिप्य सर्वमपि सङ्कल्यैक एव पाठं सम्पादनीयम् ।

### ७९ महालवणक्षारः ( गुप्पुसुनमु )

ऊपरक्षारसर्वीरे प्रति २० पले, मयूरतुल्यना-  
गाऽमलसारगन्धकरकमनःशिलादूरीधौतपारदानां  
प्रतिचतुष्पलानां नीलवर्णां कज्जलीं कृत्वा जम्बीरर-  
सेन चतुर्यामं विमृद्य चीनपात्रे निक्षिप्य रात्रौ नीहारे  
विन्यस्याऽरुणोदयाभ्यागेयाद्य.पात्रे प्रस्तजलमन्य-  
स्यां काचकूपिकायां निधाय मुखमुद्रां कृत्वा रूपाप-  
येत् । दिवा चीनपात्रं निषातस्थाने संरक्ष्य रात्रौ  
नीहारे संस्थाप्याऽवशिष्टद्रव्यो ग्राह्यः । एवं पञ्चपाणि  
दिनानि यानञ्जयरसप्रहणपर्यन्तमनुष्ठेयम् । तद्वेत्-  
स्मिन्द्रवे सवरीरशकलं निमज्ज्योन्मज्ज्यं कण्ठादपे  
शोपितं सद्बद्धं भवति । एवं पनतालकमन्यातपशो-  
पितं सद्बद्धलवणं भवति । त्रितोलकं हंसपादरदे  
खर्परं विन्यस्याऽनेन जयनीरेणाऽष्टयामपर्यन्तं प्रासे  
दत्ते बद्धं सत्सिक्तं भवति । एतद्वदसिन्धुकमर्षमु-  
द्रप्रमाणं मधुना सेवितं सद्दन्तकाले कण्ठाऽवच्छे-  
द्येष्मसाधिपातिकशूलपक्षवातरुफरोगादिकाशश-  
यति । अपि चोपरक्षारशिलासुषे प्रत्यशीतितोलके  
महति भाण्डे निधाय द्रोणचतुष्टयं बालकमूत्रं निक्षिप्य  
सप्ताहमात्रे निधाय निर्मूलं जलं ग्रह्य हारं  
निधाय पुनरपि बालकमूत्रं निक्षिप्य पूर्ववत्तारं गृही-  
यादेवं पञ्चवारं कृते कुन्देन्दुसदृशं दिव्यं लवणं  
सम्पद्यते । एतल्लवणं चीनपात्रे निक्षिप्य दिनद्वयं

शोपयित्वा खल्वे जम्बीराद्विषांमद्वयं विमृद्य चक्री-  
कृत्य छायागुष्कं विधाय शरावसम्पुटितं कृत्वा  
अष्टभिर्दशभिर्वातपलकैः पुटं दद्यात् । पुनः पूर्वोक्त-  
जयनीरेण सह यामचतुष्टयं विमृद्य दशदिनपर्यन्तमा-  
तपे गुष्कमेतद्गुस्ममुन्नमित्युच्यते । एतच्च श्रौदेवीसन्नि-  
धावाधायोपचारैरभ्यर्च्य शाकान्नपायसान्नादिभिः  
सुवासिनीग्राह्यणादीन्सन्तर्प्य श्रीत्रिपुरागणेशभैरव-  
महादेवाऽगस्त्यसिद्धगुम्भं सम्पूज्य रोगेपूपयोज-  
नीयम् । एतल्लवणं रसोपरसमारकं भवति । रसपा-  
पाणलोहादयो यद्धा भवन्ति । अनायासेन भस्मसि-  
न्दूरलवणादिरूपतामापद्यन्ते पारदश्च धनीभूय यद्धो  
भवति ।

अथ रोगेपूपयोगप्रकारः—गुक्षपादवत्सनाभग-  
न्धकुचवर्णपत्राणि प्रत्येकपलानि, पूर्वोक्तमहालवणक्षार-  
रश्मार्धतोलकं मेलयित्वा जम्भाभसा चतुर्यामं विमृद्य  
सावधानतया शोपणचूर्णादिकं कृत्वा दृढकाचकूप्यां  
निक्षिप्य बालुकायत्रे क्रमाश्रित्वाऽष्टौ यामान्यचेत् ।  
श्रीवालाभ्यां सम्पूज्य दीनाऽनाथसाधून् सत्तो-  
कूपिकां स्फोटयित्वा सिन्दूरवर्णं महालग्नं ग्राह्यम्  
एतेन सर्वे रोगा निवर्तन्ते । एतत्तण्डुलपरिमा-  
मधुना सह पणमासपर्यन्तं सेयितञ्चेत्कायसिद्धिर्भवति  
गोघृतेन सह कुष्ठमूलमेहध्वनमधुमेहवहुद्रुममूत्रह-  
ृद्मेहग्रन्थिसोपद्रवोपद्रवभगन्दरपक्षाघातवदघाता-  
दिमहारोगा निर्मूला भवन्ति । दिव्यशरीरं भवति  
मृत्युर्निवर्तते । मण्डलपर्यन्तं सेयनीयम् । यद्धा पूर्वार्त-  
लग्नक्षारः, गुक्षपादः, सर्वरीरं, दशवीक्षादीक्षित  
सौरक्षारः, नरसारश्चेतान् प्रत्येकपलिकान् विचूर्ण्य  
भवेतार्कक्षीरमिश्रितेन कुपकुटाण्डभ्येतद्रवेण मेल-  
यित्वा चीनपात्रे निधाय घनातपे एकदिनपर्यन्तं रूपाप-  
यित्वा खल्वे यामचतुष्टयं विमृद्य चक्रीकां कृत्वा  
विशोष्य शरावसम्पुटितं विधाय सप्त मूत्रकर्पादन्त-  
पञ्चोत्पलकैः पुटं दद्यात् । एतस्य नितरां तीक्ष्णसुधा  
( कारसुखं ) भवति । एवं तीक्ष्णसुधां खल्वे निधाय  
रसकर्पूरसर्वरीरं प्रतिसार्धतोलके मेलयित्वा तेनैव  
( भवेतार्कक्षीरमिश्रितेन कुपकुटाण्डभ्येतद्रवेण ) याम-  
चतुष्टयं विमृद्य चक्रीकृत्य शोपयित्वा शरावसम्पुटितं  
विधाय पङ्क्तिपलकैः पुटं दद्यात् । एतद्विष्यं क्षारं  
भवति । पुनः पूर्ववन्मर्देनसमये वीरं, पूरं, चन्द्रसारं,  
सुगन्धमाज्जारिकामदं प्रत्येकतोलकं मेलयित्वा कुष्ठ-  
टाण्डभ्येतद्रवेणैव यामचतुष्टयपर्यन्तं मर्दयित्वा शरा-  
वसम्पुटितं विधाय शिवशक्तिगणेशपूजापुर.सरं दशो-  
त्पलकैः पुटं दद्यात् । एतद्विष्यतरो लवणक्षारो भवति  
सर्वापधेयु योगवादि सत्सकलरोगान्नाशयति ।  
( व्यास० )

## ८० महावीरद्रावकम्

शुद्धं सखीरं, सूर्यक्षारश्च १-१ पलः, स्फटिका ४ पला चूर्णीकृत्य नलिकायन्त्रविधानेन द्रवो ग्राह्यः । विन्दुद्वयं मधुना सह सेवितं सप्त कृष्णमेहसन्धिबन्धपाश्वेयातमहोदरादिव्याधीनाशयति । श्वेताऽऽजामांसशार्फेन सह विन्द्वेकपरिमितं जले निक्षिप्य पीत्वा पुनः पूर्वांकमांसशार्फाहारः कार्यः । मांसद्वेपिणां त्रिचतुरमापचटकाननुपाने योजयित्वापथं ग्राह्यम् । पुनश्च त्रिचतुरमापचटकान्भक्षयेत् । अनेन पूर्वांकव्याधयो निवर्तन्ते । ( अगस्त्य० )

## ८१ माहेन्द्ररसः

पारदः, गन्धकः, विषं, दङ्गुणं, तालकं, ताम्रभस्म, शुद्धजयपालाः, नागरं, पिप्पली, मरिचं, हरीतकी, आमलकी, विमीतकी चैतानि समभागानि भृङ्गराजरेन दिनद्वयं विमृष्ट मरिचप्रमाणां घटीं मधुना सह सेवेत् । प्रयत्न्याधिपु विष्णुकान्ताकिराततित्तकतिकपटोलचित्रकमूलऽमृतान्याध्रीपिप्पलीमूलनागरमरिचमुशलीकपिरुच्युयीजखालसरुष्णवमूलधीजानि घराह्वाऽहिफेने चैतानि सर्वाणि समभागानि चूर्णीकृत्य समभागां तितोपलां मेलयित्वाऽष्टतोलकपरिमिते चूर्णे माहेन्द्ररसघटीं संयोज्य मधुना सह सेवनीयम् । पञ्चतोलकं क्षीरमनुपेयम् । अनेन धातुघृष्टी रक्तपुष्टिश्च भवति । ( अगस्त्य० )

## ८२ मेहकुठाररसः

शुद्धपारदगन्धकतालकदङ्गुणशङ्खविद्रुमशुक्तिकास्फटिकाभस्मानि शुद्धं विषञ्च प्रत्येकपलिकं गृहीत्वा कन्याजम्बीररसाभ्यामेकैकदिनं मर्दयित्वा चक्रिकां निर्मायाऽष्टदिनपर्यन्तं शोषयित्वा घल्लीकमुत्तिकोत्पलभस्मनुपमिधितेन निर्मितायां वितस्तिपरिमितसुपरिपक्वमृद्धगण्डिकायां कुमारीत्वक्शकलान्यर्धभागपर्यन्तमास्तीर्षापर्यन्तं चक्रिकां स्थापयित्वा शेष मर्धभागमपि तैरेव शकलेः परिपूर्णं शरायसम्पुटं दत्त्वा द्वादशमुत्तिका विधायऽष्टदिनपर्यन्तमातपे शोषयित्वा चुल्ह्यामधिष्ठाप्य तित्तकोशातकीशुष्कत्वेन यन्माऽग्निनाऽष्टयामपर्यन्तं पाकः कार्यः । स्वाद्गुशीतामुद्घाटय यत्किञ्चिदपि तस्यामुपलभ्यते तत्सर्पमप्याहृत्य द्रव्ये निक्षिप्य स्वर्गतनुपत्राण्यर्द्धतोलकानि, मुक्ताविद्रुमचन्द्रसारमृगमर्दद्राक्षाऽऽकारकः रभतनुरजतानि प्रत्यर्धतोलकानि चूर्णीकृतानि पूर्वांशोपधे मेलयित्वा स्तन्येन, कृष्णतुलसीरसेन, मधुरदाडिमीफलरसेन च प्रत्येकेन यामचतुष्टयं विमृष्टाऽर्धरत्नमिता घटीः कृत्वा नुरुष्कधूमन शोष-

येत् । देवीभैरवीविनायकादिपूजां कृत्वा ब्राह्मणेभ्योऽर्घ्यं दत्त्वेकां घटीं मधुना, स्तन्येन तत्तद्रोगानुपानेन वा दद्यात् । व्याघ्रीचूर्णेन लेहोऽन वा मेहरक्तक्षयश्वासकासकफवातक्षयादयः सर्वे नश्यन्ति । अश्वगन्धालेहोऽन आस्थिगतशल्याऽऽगतपुराणज्वरा नश्यन्ति । तत्तद्रोगहरक्षयाद्येन चतुष्पष्टिज्वरा नश्यन्ति । वासापत्ररसेन ताम्बूलद्वलरसेन वा सेवितं सकाममुद्दीपयति । श्रीचन्दनस्त्रायेन रक्तपित्तं, मधुमिश्रितदारहरिद्राचूर्णेन मेहरोगा अम्लपित्तञ्च, शर्करामिश्रितमरिचचूर्णेनाऽजीर्णरोगो निवर्तते । प्रत्यहमपि स्तन्येनैकवर्षपर्यन्तं सेवितञ्चेदशनागयलो भवति । ( व्यास० )

## ८३ मृगाङ्गरसः ( महाराजादिः )

स्वर्णरजतताम्रपारदगन्धकतालकदरधमनःशिला-रसरुभस्मानि समभागान्यादाय पीतभृङ्गरसेन दिनद्वयं विमृष्ट शुष्कां चक्रिकां शराययोरप्यर्द्धदशतुल्यकैः पुटो देयः । तदनु मधुरदाडिमीपुष्परसेन कृष्णतुलसीस्वरसेन च प्रतिपामचतुष्टयं विमृष्ट शुष्कचक्रिकोपरि पादोनतोलरुमाज्जोरिकाभदेन ( पुनरुपिहीमदेन ) कथंच दत्त्वा द्वाभ्यामुत्पलाभ्यां पुटो देयः । पुनः स्तन्येन यामद्वयं विमृष्ट छायाशुष्कं विधाय चीनपात्रे स्थापयेत् । एतत्तण्डुलपरिमाणं सेवितं सत्सकलरोगाघ्नाशयति । अथेतदनुपानचूर्णम् — आरग्वधसारियाभूलत्वक्श्रीचन्दनमुञ्जातकभद्रमुस्तानां चूर्णमेकैकपलं गृहीत्वा यत्कृष्टं समाचरेत् । अर्धतोलकेऽस्मिन्चूर्णेऽर्द्धतण्डुलं रसं मेलयित्वा मधुना सह सेवनीयम् । अनेन कालमेहमेहप्रन्थिमधुमेहबहुमृत्रादिरोगा अष्टादश कुष्ठानि निवर्तन्ते । पूर्वांशोपधे विमृष्ट पुटत्रयसिद्धमोपधं शतपत्रार्केण यामचतुष्टयं विमृष्ट शुष्कां चक्रिकां शरायसम्पुटेऽप्यर्द्धदश विशदुत्पलकैः पुटं विधाय चित्ररुक्षायेन यामद्वयं विमृष्ट पादोनतुलकं मृगमर्दं मेलयित्वा स्तन्येन विमृष्ट मुद्रप्रमाणा घटीः कृत्वा रजतसम्पुटे स्थापयेत् । अनुपानविशेषैः सकलपानन्याधिपूषणोत्तनीयोऽयं महाराजमृगाङ्गः । ( व्यास० )

## ८४ रजतभूपतिरसः ( प्रथमः )

रजतताम्रमनःशिलाभस्मानि, शुद्धगन्धकः पारदश्च प्रत्येकपलः, कान्तभस्म विषञ्चेनि प्रत्यर्धपलं गृहीत्वा चित्रकमूलस्वरसेन यामद्वयं मर्दयित्वाऽऽतपे विनाप्य काचरूपिकायां निक्षिप्य मुरखध्वनं हृत्वा धातुकायन्त्रविधानेन गणेशपूजापुरःसरं दीपादिना यामचतुष्टयं पार्श्वं कुर्यात् । एतत्पादुग्रापरिमितं मधुना सह सेवितं विरानिमहानशीतिशतविकारानघी

शुक्लांश्चाऽनुपानभेदाग्राशयति । भूकृष्णान्धमु-  
ज्जातककुमारीमूलवाताममुशलीकपिकञ्जुवीजखा-  
खसकृष्णवच्चूलवीजयराङ्गऽहिफेनानि समभागानि  
चूर्णयित्वा समानां सितोपलां संयोज्याऽर्द्धतो-  
लकपरिमिते चूर्णे पादगुञ्जापरिमितं रसं मेलयित्वा  
पञ्चतोलकगोक्षीरेण सह मण्डलपर्यन्तं सेवितञ्चेत्त्रि-  
तरां धातुवृद्धिलिङ्गेत्यापनमनेकक्षीरमणशक्तिश्च  
सम्पद्यते । पथ्यं रोगानुरूपम् । ( अगस्त्य० )

#### ८५ रजतभूपतिरसः ( द्वितीयः )

तन्तुरजतचूर्णं २ पलं, यद्वलवणपारदकान्तम-  
स्मानि प्रत्येकं सार्धतोलकानि, शुद्धमल्लगन्धकताल-  
फाहृष्णतप्तस्निग्धुराणि प्रत्येकं द्वादशकलाभिमतानि,  
चूर्णाकृत्याऽजापित्तेन यामचतुष्टयं विमृद्य शुष्कां  
चक्रिकां शरावयोरपचरुद्ध दशोपलकैः पटो देयः ।  
स्याङ्गशीतोपधस्य मर्दनसमये मृगमदकेशरगोरौ-  
चनानां चूर्णं प्रतिपादतोलकं मेलयित्वा स्तन्येन  
दिनद्वयं विमृद्य मापप्रमाणा घटीः कुर्यात् । एकैका  
घटी मधुना सह सेविता चैत्त्वतिकाच्छ्रदाताऽऽन-  
न्दज्वर ( पेशाचिक्रज्वरः ) मेहघातादयो निवर्तन्ते ।  
स्तन्याऽनुपानेनाऽऽसन्नमृत्योरपि रक्षा भवति ।  
( व्यास० )

#### ८६ रसकपूरवटी

यामद्वयं वज्रीदुग्धस्य दत्तप्रासं रसकपूरं त्रिक-  
द्वनि च समभागानि चूर्णयित्वा जलेन मर्दयित्वा  
मरिचप्रमाणा घटीः कार्याः । एकैका घटी मधुमि-  
श्रितस्तन्येन सह प्रयोजिता मेहघाताग्राशयति ।  
यादानामप्युपयोजनीया । वातपदार्था वय्याः ।  
( अगस्त्य० )

#### ८७ रसगुटिका ( मही )

रसकमस्म ४॥ तोलकं, शुद्धं गन्धकं कलापट्टक-  
परिमितं, मल्लपापाणं कलाद्वयं, मयूरतुष्यपारदा-  
घट्टाऽर्द्धतोलकौ गृहीत्वा खल्वे निक्षिप्य शुद्रकार-  
वेल्लफलरसेन यामचतुष्टयं विमृद्य मुद्रप्रमाणां घटीं  
कृत्या पुराणतालगुदेन निर्गिलेत् । चातुर्थिकादयः  
पलायन्ते । क्षीराद्यं, गोधूमसण्डयूपश्चानुकूलः ।  
अन्यत् किमपि न दातव्यम् । ( अगस्त्य० )

#### ८८ रसभूपतिः ( प्रथमः )

शुद्धपारदो द्रव्यमस्म च २-२ पलं, रससिन्दूर-  
तालकमनःशिलाताम्रमस्मानि १-१ पलानि, शुद्धो-  
ऽमलसारगन्धकः ४ पलः, एतत्सर्वमपि चित्रकमूल-  
स्वरसेन यामद्वयं मर्दयित्वा गाढातपे शोषयित्वा  
पुनश्चूर्णाकृत्य गङ्गोदककाचकूपिकायां निक्षिप्य  
घन्तया सप्त कर्पटमृत्तिका विधाय मृन्मयपात्रे

वालुकायन्त्रविधानेन यामत्रयं क्रमाश्रिता पाकं  
कुर्यात् । काचकूर्पां स्फोटयित्वा गुटिकारूपतां प्राप्तं  
ग्राह्यम् । एतत्पादगुञ्जापरिमाणेनाऽर्द्धगुञ्जापरिमा-  
णेन वा स्तन्येन सेवितं सद्योदश सन्निपाताग्रा-  
शयति । मधुना पित्तज्वरं, चित्रककाथेन सर्ववा-  
तान्, त्रिकटुना हृच्छलादीन्, अतिविपाकाथेन सङ्घ-  
हण्यतिसारादीन्, कृष्णताम्रलीदलरसेन श्लेष्माव-  
रोधमूर्द्धन्धासञ्च, त्रिफलाकाथेनोष्णज्वरान्, यवा-  
नीकाथेनाऽतिदाहं, स्तन्यमिश्रिताऽऽर्द्धकरसेन कण्ट-  
कजिहिकासन्निपातं, एवमनुपानविशेषेण सर्वात्रो-  
गग्राशयति । तत्तद्व्याध्यनुसारेण पथ्यक्रमो हेयः ।  
( अगस्त्य० )

टि०—अग्निन्योगे तुलसीरसेन मर्दनं द्रव्येषु चाऽयोमरमाऽपि  
भेलनीयमिति व्यासप्रोक्ते वैद्यकशास्त्रे अपि हि इत्यते तस्याऽनानुष्ठानं  
कृत्वा एक एव योगो निष्पादनीयः

#### ८९ रसभूपतिः ( द्वितीयः )

शुद्धविषपारदगन्धकजयपालवीजानि, त्रिकटुक-  
रामठे चैतानि समभागानि विचूर्ण्य चित्रककाथेन  
सप्तदिनावधि मर्दयित्वा मरिचप्रमाणां घटीं कृत्या  
मधुमिश्रिताऽऽर्द्धकरसेन सेवेत् । अनया श्वासकां-  
सयुता सन्निपातदोषजिह्वादोषा नश्यन्ति । पथ्यं  
यथाचितम् । ( व्यास० )

#### ९० रससिन्दूरम्

पलचतुष्टयं मयूरतुष्यं दिनत्रयं मधुनि भावयित्वा  
कारवेष्टपत्ररसेन यामचतुष्टयं विमृद्य घृणां निर्माय  
तस्मिन् रजनीकृष्णधत्तृकारवेल्लपत्रस्वरसगृह्यने-  
ष्टिकाचूर्णेनरसारविषेदिनद्वयं शोधितं त्रिपलं पारदं  
चाङ्गेरोपत्र ( पुलिचिन्ताकु ) कल्केन सह निक्षिप्य  
समभागवस्मीकमृत्तिकाशणपट्टवन्नशिलासुधानां  
श्लेष्णपिष्टानां धूपोपरि कथंच दत्त्वा दिनचतुष्टयमा-  
तपे विशोष्य १८० तोलकधान्यतुल्यप्रमाणे निर्वार्य-  
स्थाने रात्री पुटं दद्यात् । शिवशक्तिपूजां विधायैतत्  
सिन्दूरं ग्राह्यम् । एतत्तण्डुलप्रमाणं घृतेन, मधुना,  
नवनीतेन वा सकलामयेषु प्रयोज्यम् । वज्रदेहो  
भवति । ( व्यास० )

#### ९१ रसानन्दभैरवरसः

शुद्धदरदं ४ पलं, टङ्गुणं ८ पलं, शुद्धविषं १६ पलं,  
पिप्पली १२ पला, चूर्णितान्येतान्यार्द्धकरसेन याम-  
चतुष्टयं विमृद्य मापमितां घटीं छायागुप्तां विधाय  
मधुमिश्रिताऽऽर्द्धकरसानुपानेन सन्निपातज्वरेषूपयो-  
क्तव्यम् । पथ्यं यथाचितम् । ( व्यास० )

#### ९२ राजव्रणतैलम्

पुरुषगलगोडिका ( मगतोण्डा. तै०, गिलहरी.  
हिं० ) एका, रसकपूरकृष्णखदिरसारप्रणियमुस्त-

कानि प्रतिद्विपलानि, तिलतैलं ४० तोलकं गृहीत्वा  
द्रव्यचूर्णेन सह तैलं विपाच्य चर्माऽन्ववक्षोऽस्थि-  
वर्ज्यां गलगोडिकां निक्षिप्य पाकः कर्तव्यः । सिद्धे  
पाके तन्मांसखण्डादिकं बहिर्निष्कासनीयम् । एत-  
त्तैलेन राजग्रणस्याऽऽसनप्रणानाञ्च लेपनं कर्तव्यम् ।  
मुद्रखण्डपरिमाणं शर्करया सह सेवनीयम् । अम्ल-  
रसः सुतरां वर्ज्यः । पथ्यं यथोचितम् । (अगस्त्य०)

### ९३ रुद्रप्रतापरसः

शुद्धसन्दीरगौरीकामुर्गिलभृषिकमल्लपाषाणानि,  
तालकगन्धकपारदविपाणि च प्रतिसपादतोलकानि  
गृहीत्वा सेहुण्डक्षीरकृष्णनिर्गुण्डिकारवेह्वरक्तकापां-  
सनीलीमूलवतशिखीपत्रस्वरसैः प्रत्येकं यामचतु-  
ष्टयं मर्दयित्वा शुष्कचक्रिकां शरावयोरवरुज्य पञ्चो-  
त्पलकैः पुष्टं दत्त्वा विद्रुममुशलयौ २-२ तोलकैः, आ-  
रग्वधपुष्पाणि च ४ तोलकानि विचूर्ण्य मस्मनि  
संयोज्य १० पलायाः शर्करायास्तन्तुलीं विधाय  
यथोचितं घृतं मधु च निक्षिप्य चूर्णं सम्यग्निधायि-  
त्वा लेह्यपथ्यं ग्राह्यम् । एतत्प्रत्यर्द्धं द्विधारमरिचवी-  
जप्रमाणं सेवनीयम् । एतेनैकविंशतिमेहा, मूत्ररु-  
च्छ्रमेहक्षयशाल्यगतमेहाश्च नियतं गते । अथ लेहो  
सुवर्णरजतमुक्तानामन्यतमं भस्म मेलयित्वा सेवने  
कायकल्पसिद्धिर्भवति शुद्धरसरूपरससिन्दूरद-  
तालकान्येकैकतोलकानि (मिरपगण्डू) भृङ्ग-  
राजेश्वरक . . (चेकृणित्याकु) पत्ररसैः प्रति-  
यामचतुष्टयं विमृद्य शुष्कां चक्रिकां शरावयोरवरु-  
ज्य १२ उत्पलकैः पुष्टो देयः । एतदीपथं पूर्वोक्तं  
रुद्रप्रतापरसञ्च प्रतिपण्डुलपरिमाणं मधुनि मिध-  
यित्वा मेहव्याधिषु देयम् । मुद्रप्रमाणमीपथद्वय-  
मपि बालानां गर्भवायुव्याधी स्तन्येनाऽण्डतैलेन वा  
देयम् । हृदिदीपदंशवहुमूत्रादिव्याधिषु केवलनयनी-  
तेन तालगुडमिश्रितेन वा देयम् । शर्करया हृच्छ-  
लपित्तवायवः, नयनीतेन शरीरोष्णाधिर्न्य, त्रि-  
कुटुर्चूर्णेन सर्वाङ्गशूलम्, यष्टिमधुकचूर्णेन चित्तवि-  
भ्रमः, त्रिफलास्वाधेनाऽऽशान्याधयः, वित्वादिले-  
होने पित्तपाण्डित्यादयो रोगा नश्यन्ति । रोगानु-  
सारेण पथ्यकमः । (व्यास०)

### ९४ रौद्ररसः

शुद्धगन्धकदङ्गुणविपाणि, नरमुक्स्वेदितं भृषिक-  
पाषाणञ्च गृहीत्वा जम्बीररसेन पञ्चयामपर्यन्तं  
विमृद्य मरिचप्रमाणा वटीभ्रष्ट्याशुष्का विधाय  
शीतज्वरसन्निपातातन्त्रादिषु देयाः । (व्यास०)

### ९५ वज्रसिन्दूरम्

पूतिकरजतैले गोमये च प्रत्येकादशवारं निर्वा-  
पितं ५ पलं वज्रं मृत्पात्रे गालयित्वा तण्डुलीयकमूल-

खण्डानि किञ्चित्किञ्चिन्निक्षिप्य कुमारीरुन्देन याम-  
चतुष्टयं घर्षणे कृते हरिद्रावर्णं भस्म भवति । पुनः  
खत्वे निक्षिप्य कुमारीरसेन मर्दयित्वा कुम्भटुपुष्टं  
देयम् । एवं पुटत्रयेण सिन्दूरं भवति । एतत्तण्डुलप्र-  
माणं मधुना सेवनीयम् । अपथेतस्याऽनुपानचूर्णम्=  
मुञ्जातक (सालमिश्री) शास्त्रलीमूलत्वग्यष्टिमधु-  
ककोकिलाक्षवीजवराङ्गाऽर्जुनत्वक्खाखसानि प्रत्येकं  
द्विपलानि, आहुलि (तंगेडु) मूलत्वकपुष्पञ्च प्रति  
दशपलं छायाशुष्कं गृहीत्वा चूर्णादित्य समभागं  
शर्करां मिथयित्वाऽर्द्धतोलकमात्रया अर्द्धगुञ्जवज्रसि-  
न्दूरेण सह नवनीतेन दिनत्रयं सेयनात्सुरामेहादम-  
रीशाल्यगतमेहतैलेमेहमूत्ररुच्छ्रमेहक्षयशाल्यमेहदा-  
रणादयोऽर्द्धमण्डलसेयनाभिर्गुलतां याम्ति । मुद्रमा-  
पचकाः, रम्भापुष्पं, मिण्डिका, गोक्षीरं, घृतमजा-  
मांसञ्च पथ्यम् । अन्यदपथ्यम् । (अगस्त्य०)

### ९६ वातकुठाररसः

शुद्धपारदगन्धकविषदङ्गुणतालकजयपालयीजानि,  
लयङ्गत्रिकटुनिफलाश्च समभागानि भृङ्गाऽऽङ्क-  
रस्ताभ्यां प्रतियामचतुष्टयं विमृद्य मरिचाभां वटीं  
वृत्वाऽऽङ्करस्ताऽनुपातेन मधुना सह सकलपित्तज-  
रेषूपयोजनीयम् । पथ्यं रोगानुरूपम् । (व्यास०)

### ९७ विषमैरवीरसः

शुद्धविषददङ्गुणतालगरमरिचविषपीलीयङ्गजय-  
पालान् समभागान् जम्बीररसेन यामचतुष्टयं मर्द-  
यित्वा मरिचप्रमाणमात्राः वृत्वा छायाशुष्का विधाय  
मधुना मरिचकायेन वा सह सेयितं सदेन्यारं रेच-  
यति । त्रिराघृते द्वासे ज्वरनिवृत्तिर्भवति । पथ्यं  
यथोचितम् । (अगस्त्य०)

### ९८ विषमसङ्ग्रहणीकपाठरसः

शुद्धदरददङ्गुणगन्धकविषमरिचवृष्णधन्तूरीजा-  
नि समभागानि भृङ्गावायेन द्वादशयामं मर्दयित्वा  
गुजामात्रा वटीः कार्याः । अतिविषचूर्णेन मधुना चैत्रा  
वटी सेविता चेद्ग्रहण्यतिसाराद्वादाशयति । निम्बकु-  
सुमं, मेथिकाचोष्यं, रम्भाकुसुमं, औदुम्बरफलं,  
गुण्यतिन्तिडीपत्रञ्चाऽनुकूलम् । (अगस्त्य०)

### ९९ वीरभद्राञ्जनम्

त्रिकटुकरामठसेन्धवजयपाललङ्गुलीयजानि  
समभागानि ताम्बूलीद्वारमेन दिनद्वयं विमृद्य  
छायाशुष्कामहुलप्रमितां वटीं विधाय ताम्बूलरसेन  
जम्बीररसेन वा सधिपातारोगिणामञ्जनं देयम् ।  
(व्यास०)



शुक्लांश्चाऽनुपानमेदात्राशयति । श्रुकम्पाण्डमु-  
ञ्जातकुमारीमूलवाताममुशलीकपिकृच्छ्रवीजरा-  
ससङ्गुणनन्दलीवीजवराङ्गाऽहिफेनानि समभागानि  
चूर्णयित्वा समानां सितोपलां संयोज्याऽर्द्धतो-  
लपरिमिते चूर्णे पादगुञ्जापरिमितं रसं मेलयित्वा  
पञ्चतोलकगोक्षीरेण सह मण्डलपर्यन्तं सेवितञ्चे-  
त्तरां धातुवृद्धिलिङ्गोत्थापनमनेकलीरमणशक्तिश्च  
सम्पद्यते । पथ्यं रोगानुरूपम् । ( अगस्त्य० )

#### ८५ रजतभूपतिरसः ( द्वितीयः )

तन्तुरजतचूर्णं २ पलं, यङ्गलवणपारदकान्तम-  
ह्मनि प्रत्येकं सार्धतोलकानि, शुद्धमल्लगन्धकताल-  
ककृष्णनागसिन्धूरणि प्रत्येकं द्वादशकलामितानि  
चूर्णीकृत्याऽजापित्तेन यामचतुष्टयं विमृष्टं शुष्कां  
चक्रिकां शपावयोरस्वच्छं दशोत्पलकैः पुटो दैवः ।  
स्वाङ्गशीतोपधस्य मदनसमये मृगमदकेशरगोरो-  
चनानां चूर्णं प्रतिपादतोलकं मेलयित्वा स्तन्येन  
दिनद्वयं विमृष्टं मापप्रमाणा घटीः कुर्यात् । एकैका  
घटी मधुना सह सेविता चैत्त्वतिकाश्रुदाताऽऽन-  
न्दज्वर ( पक्षाधिकज्वरः ) मेहवातादयो निवर्तन्ते ।  
स्तन्याऽनुपानेनाऽऽसन्नमृत्योरपि रक्षा भवति ।  
( व्यास० )

#### ८६ रसकपूरवटी

यामद्वयं वजीरुगन्धस्य दत्तप्रासं रसकपूरं त्रिक-  
ट्टिनि च समभागानि चूर्णयित्वा जलेन मर्दयित्वा  
मरिचप्रमाणा घटीः कार्याः । एकैका घटी मधुमि-  
थितस्तन्येन सह प्रयोजिता मेहवातात्राशयति ।  
यालानामप्युपयोजनीया । पातपदार्था वर्ज्याः ।  
( अगस्त्य० )

#### ८७ रसगुटिका ( महती )

रसकमरुम ४॥ तोलकं, शुद्धं गन्धकं कलापदक-  
परिमितं, मल्लपाषाणं कलाद्वयं, मयूरतुल्यपारदा-  
वत्सोऽर्द्धतोलकौ गृहीत्वा खरचे निक्षिप्य शुद्धकार-  
वेलपलरसेन यामचतुष्टयं विमृष्टं मुद्रप्रमाणां घटीं  
एन्या पुराणतालगुदेन निर्गिलत् । चानुर्थिकादयः  
पलायन्ते । शीघ्रं, गोमूत्रमण्डयूपध्यानुषुलः ।  
अन्यत् किमपि न दातव्यम् । ( अगस्त्य० )

#### ८८ रसभूपतिः ( प्रथमः )

शुष्पारसो द्रवमरुम च २-२ पलं, रससिन्दूर-  
तालकमनःशिलाताम्रमरुमानि १-१ पलानि, शुद्धो-  
ऽमलमारगन्धरः ४ पलः, एतन्सर्वमपि चित्रकमूल-  
स्वसेन यामद्वयं मर्दयित्वा गाढातपे शोषयित्वा  
पुनश्चूर्णीकृत्य गन्गाद्वयं चानुषुपायां निक्षिप्य  
घनतया सत षण्णमृत्तिका विधाय मृन्मयपात्रे

वालुकायन्त्रविधानेन यामद्वयं क्रमाश्रिता पात्रं  
कुर्यात् । काचकूर्पी स्फोटयित्वा गुटिकारूपतां प्राप्ते  
प्राहम् । एतत्पादगुञ्जापरिमाणेनाऽर्द्धगुञ्जापरिमा-  
णेन वा स्तन्येन सेवितं सत्त्रयोदश सन्निपातात्रा-  
शयति । मधुना पित्तज्वरं, चित्रककायेन सर्ववा-  
तान्, त्रिकटुना हृच्छलादीन्, अतिविपाकायेन सङ्ग-  
हण्यतिसारादीन्, कृष्णताम्रलीदलरसेन श्लेष्माव-  
रोधमूर्च्छासञ्च, त्रिफलाकायेनोष्णज्वरान्, यथा-  
नीकायेनाऽतिदाहं, स्तन्यमिथिताऽऽर्द्धकरसेन कण्ट-  
कजिह्वासन्निपातं, एवमनुपानविशेषेण सर्वात्रो-  
गात्राशयति । तत्तद्व्याध्यनुसारेण पथ्यक्रमो ह्येव ।  
( अगस्त्य० )

टि०—अस्मिन्नेगे तुलसीरसेन मदनं द्रव्येषु चाऽद्वयमस्मादपि  
मेहनयमिति व्यासप्रोक्ते वैषकशास्त्रे अपि हृदये तस्याऽनुपानान्न  
कृत्वा एक एव योगो निश्चादनीयः

#### ८९ रसभूपतिः ( द्वितीयः )

शुद्धविषपारदगन्धकजयपालवीजानि, त्रिकटु-  
रामटे चैतानि समभागानि विचूर्ण्य चित्रककायेन  
सप्तदिनावधि मर्दयित्वा मरिचप्रमाणां घटीं कृत्वा  
मधुमिथिताऽऽर्द्धकरसेन सेवेत् । अनया श्वासका-  
सयुता सन्निपातदोषजिह्वादोषा नश्यन्ति । पथ्यं  
यथाचितम् । ( व्यास० )

#### ९० रससिन्दूरम्

पलचतुष्टयं मयूरतुल्यं दिनद्वयं मधुनि भाषयित्वा  
कारवेलपनरसेन यामचतुष्टयं विमृष्टं मृपां निर्माय  
तस्मिन् रजनीकृष्णधनूरकारवेलपनरसस्वसृष्टद्वयमे-  
ष्टिकाचूर्णेनरसारविषेर्दिनद्वयं शोधितं त्रिपलं पारदं  
बाह्वेरीपत्रं ( पुलिचिन्ताकु ) कल्केन सह निक्षिप्य  
समभागवत्समीकमृत्तिकाशपाण्डसूत्रशिलासुधानां  
शुष्कपिष्टानां मृपोपरि कनचं दत्त्वा दिनचतुष्टयमा-  
तपे चिद्योष्य १८० तालकधान्यतुल्यमप्ये निर्यात-  
स्थाने रात्रौ पुटे दद्यात् । शिवशक्तिपूजां विधायैतत्  
सिन्दूरं प्राहम् । एतत्तण्डुलप्रमाणं घृतेन, मधुना,  
नवनीतेन वा सरुलामयेषु प्रयोज्यम् । चानुदोषो  
मयति । ( व्यास० )

#### ९१ रसानन्दभैरवरसः

शुद्धरसं ४ पलं, टण्डुलं ८ पलं, शुद्धविषं १६ पलं,  
पिप्पली १२ पला, चूर्णितान्येतान्यार्द्धकरसेन याम-  
चतुष्टयं विमृष्टं मापमितां घटीं छायागुष्कां विधाय  
मधुमिथिताऽऽर्द्धरसानुपानेन सन्निपातज्वरैरुपयो-  
क्तव्यम् । पथ्यं यथाचितम् । ( व्यास० )

#### ९२ राननर्णतलम्

पुरगलमोटिका ( मगतोण्डा. ते०, गिलहरी-  
टि० ) एषा, रसकपूरकृष्णपारिमारगन्धमृत्त-  
का

फानि प्रतिद्विपलानि, तिलतैल ४० तोलक गृहीत्वा  
द्रव्यचूर्णेन सह तैल विपाच्य चर्माऽन्वक्षोऽस्थि-  
घर्ष्या गलगोडिका निक्षिप्य पाकं कर्तव्यम् । सिद्धे  
पाके तन्मासखण्डादिकं बहिर्निष्कासनीयम् । एत-  
त्तैलेन राजप्रणस्याऽऽसनप्रणानाञ्च लेपनं कर्तव्यम् ।  
मुद्रखण्डपरिमाणं शर्करया सह सेवनीयम् । अम्ल-  
रस सुतरां चर्ष्यम् । पथ्यं यथोचितम् । (अगस्त्य०)

### ९३ रुद्रप्रतापरसः

शुद्धसन्धीरगौरीकामुगिलम्पिकमल्लपापानानि,  
तालकगन्धकपारदविपाणि च प्रतिपदात्तोलकानि  
गृहीत्वा सेहपण्डशरीरकृष्णनिर्गुण्डिकारवेलेरक्तकार्पा-  
सनीलोमूलघनशिम्बीपत्रस्वरसे प्रत्येकं यामचतु-  
ष्टयं मर्दयित्वा शुष्कचक्रिका शरायवोरयकृद्धं पञ्चो-  
त्पलकैः पुटं इत्यादि विद्रुममुशस्वी २-२ तोलकैः, आ-  
रवधपुष्पाणि च ४ तोलकानि विचूर्ण्य भस्मनि  
संयोज्य १० पलाया शर्करायास्तन्तुलीं विधाय  
यथोचितं घृतं मधु च निक्षिप्य चूर्णं सम्यग्निधायि-  
त्वा लेह्यपत्रं प्राह्वम् । एतत्प्रत्यहं द्विचारमरिष्टी-  
जप्रमाणं सेवनीयम् । एतेनैकविंशतिमेहा, वृन्-  
दमेहक्षयशाल्यगतमेहाश्च नियतन्ते । अत्र लेह्ये  
सुवर्णरजतमुकानामन्यतमं भस्म मेलयित्वा सेवेन  
कायकल्पसिद्धिर्भवति शुद्धरसकृपूररससिन्दूरद-  
तालकान्यैकैकतोलकानि (मिरपगण्डू) भृङ्ग-  
राजेश्वरक (वेकुणित्याहु) पत्ररसे प्रति  
यामचतुष्टयं विमृद्य शुष्का चक्रिका शरायवोरयकृ-  
द्धं १२ उत्पलकैः पुटो देयः । एतदीपधं पूर्वाक्तं  
रुद्रप्रतापरसञ्च प्रतिपण्डुलपरिमाणं मधुनि मिश्र-  
यित्वा मेहव्याधिषु देयम् । मुद्रप्रमाणमौषधद्वय-  
मपि बालानां गर्भयायुदवाधौ स्तन्येनाऽण्डतैलेन वा  
देयम् । हृदिपदशयहृद्भ्रादिव्याधिषु केवलनयनी-  
तेन तालगुडमिथितेन वा देयम् । शर्करया हृच्छ-  
लपित्तवायव, नयनीतेन शरीरोष्णाधिम्य, त्रिफ-  
लकचूर्णेन सर्वाङ्गशूलम्, यष्टिमधुकचूर्णेन चित्तवि-  
ध्रमं, त्रिफलाफलायेनाऽऽश्लेषधम्यं, विट्वादिले-  
ह्येन पित्तपाण्डित्यादयो रोगा नश्यन्ति । रोगानु-  
सारेण पथ्यम् । (व्यास०)

### ९४ रौद्ररसः

शुद्धगन्धकदङ्गणविपाणि, नरमृश्वेदितं मृषिक-  
पापानाञ्च गृहीत्वा जम्बीररसेन पञ्चयामपयन्तं  
विमृद्य मरिचप्रमाणा घटीभृष्टापागुष्का विधाय  
शीतचरसक्षिपातवातज्वरादिषु देयाः । (व्यास०)

### ९५ वज्रसिन्दूरम्

पृथिकरजतैले गोमये च प्रत्येकादशवारं निजं  
पित ५ पलं वज्रं मृपात्रे गालयित्वा तण्डुलायकमूल-

खण्डानि किञ्चित्किञ्चिद्विषयं कुमारीकन्देन याम-  
चतुष्टयं घर्षणे कृते हरिद्रावर्णं भस्म भवति । पुन-  
खल्वे निक्षिप्य कुमारीरसेन मर्दयित्वा पुष्पुटपुट-  
देयम् । एव पुटत्रयेण सिन्दूरं भवति । एतत्तण्डुलप्र-  
माणं मधुना सेवनीयम् । अपथेतस्याऽनुपानचूर्णम् =  
मुद्रातक (सालममित्री) शास्मलीमूलत्वम्प्यष्टमधु-  
ककोफिलाक्षवीजयराङ्गाऽर्जुनत्वन्त्राससनि प्रत्येकं  
द्विपलानि, आहुलि (तगेडु) मूलत्वन्त्रुपञ्च प्रति  
दशपल छायाशुष्कं गृहीत्वा चूर्णादित्यं समभाग-  
शर्करा मिश्रयित्वाऽर्द्धतोलकमात्रया अर्द्धगुञ्जवज्रसि-  
न्दूरेण सह नयनीतेन दिनत्रयं सेवनात्तुरामेहाश्म-  
रीशाल्यगतमेहतेलमेहमृश्वच्छेन्द्रियस्खालित्यमेहदा-  
रणादयोऽर्द्धमण्डलसेवनानिमूलसा यान्ति । मुद्रमा-  
पयदका, रम्भापुष्प, मिण्डिका, गोक्षीर, घृतमज्जा-  
मासञ्च पथ्यम् । अन्यदपथ्यम् । (अगस्त्य०)

### ९६ वातकुडाररसः

शुद्धपारदगन्धकविषदङ्गणतालकजयपालवीजानि,  
लवङ्गत्रिकदुर्निफलाश्च समभागानि भृङ्गाऽऽर्द्रक-  
रसाभ्यां प्रतियामचतुष्टयं विमृद्य मरिचामा घटीं  
इत्याऽऽर्द्रकरसाऽनुपानेन मधुना सह सरुलपित्तज्व-  
रेषुपयोजनीयम् । पथ्यं रोगानुरूपम् । (व्यास०)

### ९७ विषभैरवीरसः

शुद्धविषददङ्गणनगरमरिचपिप्पलीलवङ्गजय-  
पालान् समभागान् जम्बीररसेन यामचतुष्टयं मर्द-  
यित्वा मरिचप्रमाणमात्रा इत्याद्यायाशुष्का विधाय  
मधुना मरिचकायेन वा सह सेवितं सदैवकारं देव-  
यति । त्रिरावृत्ते दत्ते ज्वरनिवृत्तिर्भवति । पथ्यं  
यथोचितम् । (अगस्त्य०)

### ९८ विषमसङ्गहणीकपात्ररसः

शुद्धददङ्गणगन्धकविषमरिचदङ्गणधतूरीजीजा-  
नि समभागानि भृङ्गाफायेन द्वादशायामं मर्दयित्वा  
शुक्लामात्रा घटीं बाया । अतिविषचूर्णेन मधुना चेन्ना  
घटीं सेविता चेद्ब्रह्मपतिसारादाभ्राशयति । निम्बकु-  
सुम, मेथिकाचाप्य, रम्भाकुसुम औदुम्बरफल,  
शुष्कतिन्दिनीपत्रञ्चाऽनुकूलम् । (अगस्त्य०)

### ९९ वीरभद्राञ्जनम्

त्रिकटुकामरुतसेचनयपाललवङ्गलावीजानि  
समभागानि ताम्बूलीरसेन त्रिद्वयं विमृद्य  
छायाशुष्कामहुलप्रमितां घटीं विधाय ताम्बूलरसेन  
जम्बीररसेन वा सक्षिपातवागिनामञ्जनं देयम् ।  
(व्यास०)

## १०० शङ्खद्रावः ( महदादिः ) १

स्फटिकासूर्यक्षारौ ४-४पलौ, शुद्धगन्धकसौवर्चल-  
दरदसैन्धवसामुद्रकाचलघणरसकपूरौपरक्षारान् प्र-  
त्येकपलान् चूर्णीकृत्य मृत्पात्रे निक्षिप्य नलिकाय-  
न्त्रेण द्रव्यो ग्राह्यः । शीतोदकेन १० विन्दुपरिमितं  
सेवितं सतिपत्तवातशूलदीघादायति । पञ्चावृत्तम-  
ग्निसंयोगेन शुद्धः सूर्यक्षारः स्फटिका च प्रति ४०  
पला, ऊपरक्षारः १ पलः, चूर्णीकृतानेतान् मृन्मय-  
पात्रे निक्षिप्य नलिकायन्त्रविधिना द्रवं गृहीत्वा  
पञ्चपले पारदं चीनपात्रे निक्षिप्य तदुपरिमं द्रवं  
दद्याद्वा दिनचतुष्टयं गाढातोषे स्थापनीयम् । शुष्के  
द्रवे पुनर्द्रव्यो दातव्यः । एवं पञ्चदिनपर्यन्तं कृते शुद्धं  
पारदमस्म सम्पद्यते । पारदमस्माऽऽपादकेन वस्तु-  
त्रयमिलितद्रावकेण विन्दुदर्शकं शीतोदकेन सेवितं  
कुक्षिहृच्छललिङ्गदाहशूलसहितमूत्राऽवरोधकृच्छ्रा-  
दिरोगाघ्नाशयति । मधुमिधिताऽऽद्रकसेन घमन-  
हिसकाऽम्होद्गारपित्तचायुहदाहदरज्वलनादिरोगा  
नश्यन्ति ( अगस्त्य० )

## १०१ शङ्खद्रावः ( महदादिः ) २

सूर्यक्षारस्फटिके प्रति १० पले, शङ्खमस्म ५ पलं,  
काचनीललघणरसारदङ्कणसद्योऽपामार्गयवपट्ट-  
स्तुदीक्षापात्तुल्यकञ्चेति प्रत्येकपलिकान् गृहीत्वा  
राख्ये जम्बीररसेन विमृष्ट सम्यग्विद्रोष्य नलिकादि-  
यन्त्रेण द्रव्यो ग्राह्यः । अनेन द्रवेण शुष्मप्लीहशूलाऽऽ-  
भ्यानोदायतर्मूत्राऽवरोधकृष्टप्रधिकारद्वयाव्यादयो रो-  
गा निवर्तन्ते । आर्द्रकरसेन विन्दुपञ्चक्रममाणं सेवितं  
चेतुदरस्य पित्तदाहादिकं नश्यति । सर्वे श्लेष्मरोगाऽ-  
ष्टशुष्मजलोदरादयो निवर्तन्ते । सुवर्णपत्रे विन्दुचतु-  
ष्टयमीपधं निक्षिप्य बालानां रक्षावन्धने कृते  
भ्यासरोगः कदापि नात्ययते । पथ्यं रोगानुरूपम् ।  
( व्यास० )

टि०-नलिकायन्त्रविधानम्-हृत्पर्यट्टादिकं सुष्ठुमाण्डे क्षारद्वयं  
निधाय गन्धकपात्रिष्टु कृत्वा दे वा बगदिनिर्मितनालिके निवेश्य  
जलमुद्रया सन्धीनवरद्वयाऽयननुमि सम्यग्विद्वन् पुनरपि पञ्चप-  
त्रमृत्पात्रा प्रत्येकपलान् शुष्कामाषाद्युत्थामिध्याय चण्डालि  
प्रदद्यात् । नलिकायन्त्रं वाचने मातृक वा धरे निवेश्याऽऽभ्याना-  
देन वा बर्धनं ममादेव प्राव गृहीत्वा । नलिकामन्त्रपटत्र जले  
निवेशनीयम् । तदपश्यन्त्रमृत्पात्रमात्रे निधायनीयम् । दद्याच्च  
पटत्रमष्टपञ्चमिति पात्रत्रा दद्याच्च निधायनि तदा चतुर्थवारं  
सावन्धने तदा त्रिंशो मन्त्रपदेदतिष्ठे बहिर्नि मन्त्रेत् । यत्र तु नलि-  
कया भ्रमबोधिः तत्र शुष्मपट्टस्य दमस्क विधाय वस्तुनमृत्पात्र  
नुतिपात्रमात्रेण टिक पटत्रं सपात्रे दिद्विद्वन्ने जन्मये निग-  
नीयम् । उशान् च पूर्वरेषा । दमशादिसीमा च पूर्वरेषा । कप-  
कादिदद्यात् सततगोशं वा नीऽप्यनया रीत्या पुनः नि मरि-

प्यति । यत्र तु केतलगन्धस्य कन्धाधिकभागस्य वा द्रव्यस्य नि सा-  
रवितुमिच्छा चेत्तर्हि माण्डं नलिका चेदेतद्वयमपि काचन भवितव्यम् ।

## १०२ सकलविपचोष्यम्

शुद्धपारदगन्धकमल्लतुत्यमनःशिलामरिचकन्द  
(पामतुण्डगेडा. तै०, मिरचियाकन्द. हि०) रामठनिम्य-  
वीजमज्जान. प्रत्येकसपादतोलकं, शुद्धं जयपालवीजं  
१पलं, एतानि चूर्णीकृत्य श्वेतार्कक्षीरेण यामद्वयं, नि-  
म्बतैलेन च यामचतुष्टयं विमृष्ट शृङ्गसम्पुटे स्थापयेत् ।  
कालसर्पविपाणां मरिचप्रमाणं कवचीकृततालशुडा-  
नुपानेन देयम् । निम्बवीजतैलेन सहृष्य नेत्रयोरञ्ज-  
नमपि दातव्यम् । एतेन वमनविरेचनादिकं भवति स-  
र्पविपाणि च निवर्तन्ते । सर्पदृष्टानामेतदीपधदाने  
दिनत्रयमम्लवर्ष्यं पथ्यम् । मनुष्यभजजन्तुकमृषिकवृ-  
श्चिकृषिपेषु क्षतस्थाने औषधं लेपयित्वाऽग्निना सेकः  
कार्यः । वृश्चिकमहावृश्चिकृषिपेषु क्षतस्थाने लेपनमा-  
त्रमेव विधेयमन्तर्न दातव्यम् । जम्बुकमृषिकमनुष्यदु-  
ष्टसर्पादिदेशेऽन्तर्यहिर्धौपधं योजनीयम् ।

अपि च-एकपलं मह्यं शरावे निधाय.....  
( गाडिदिगडपाकु. तै० ) रसेन श्वेतार्कक्षीरेण च  
प्रति यामचतुष्टयं ग्रासं दद्याद्वा वृश्चिकदंशस्थाने लेप-  
नीयम् । विपदोपप्रकोपे सति शुद्धसुवर्णपत्रं, विद्रुमां,  
केशारम्, रजतचूर्णं, मुक्ता, मृगमदः, आकारकरमः,  
शृङ्गम्, जटामांसी, तक्रोलं, बिस्वफलोद्धकायः, लघ-  
ई, रससिन्दूरं, विम्बोमूलं, यष्टिमधुकं, रास्त्रा  
पलाशवीजानि, पला, त्वक्, कुष्ठं, नागकेशरं, द्राक्षा  
चेति समभागानि स्तन्येन दिनद्वयं विमृष्ट शृङ्गस-  
म्पुटे निधाय पृथ्वीकविपप्रस्तानां जिह्वादोषप्रदा-  
न्त्ये जिह्वायां धर्षणीयम् । पथ्यं यथोचितम् ।  
( व्यास० )

## १०३ सर्जीविगुटिका

शुद्धविपतालकपारदगन्धकटङ्कणत्रिकटुयिमीतकी  
गोरोचनतुरकफान् प्रत्येकमर्धतोलकान्, शुद्धजयपा-  
लवीजानि च ४ तोलकानि गृहीत्वा पट्टपूतं विधाय  
कर्पूरवह्नी ( कपूरली. तै०, पत्रयानिका ), रक्तु-  
नर्नवा ( गुरुररत्न. तै० ) चासातोयपिप्पलीभृङ्ग-  
प्लतुलसीरसेः प्रत्येकदिनं मर्दयित्वा मुद्रप्रमाणा  
वटीः कुर्यात् । अष्टतुलसीपत्ररसेन सहैका मात्रा  
सेविता चेद्बालकानामपतनकषायं, सन्निपातदीर्घं,  
भ्यासकासौ, वायुरोगांश्च नाशयति । ( व्यास० )

## १०४ सन्निपातर्भरवरसः

शुद्धपारदगन्धकटङ्कणतालकजयपालयिकटुयि-  
फलाः प्रत्येकपलाः, शुद्धदर्द ४ पलं गृहीत्वा राख्ये  
ताम्रदलरसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा संशोष्य

शृणुतुलसीरसानुपानेन रक्तिपरिमितः साधारण-  
ज्वरेषूपयोजनीयः । स्तन्येन विषमज्वराः, मधुना  
पैत्यदोषाः, मरिचन्यायेन वातज्वराः, मधुमिश्रिता-  
ऽऽर्द्रकरसेन पित्तयायवो हृदयज्वरलं सर्वशूलानि  
च नश्यन्ति । सन्निपातदोषेषु स्तन्येन, मधुना,  
ताम्बूलदलरसेन वा सहृष्य नेत्राञ्जनं देयम् । शिम्बु-  
मूलत्वग्रसेन लघुनतैलेन वाऽनुपानेन महासन्निपात-  
जनितसप्तदोषेषु प्रयोजनीयम् । तत्तद्रोगवलयानुसा-  
रेण पथ्यक्रमः कार्यः । ( व्यास० )

१०५ सन्निपाताङ्कुशरसः (जन्मकुशः) १

शुद्धविषपिप्पल्यावेकैकपले द्रवश्च द्विपलं शुद्धीत्या  
जम्बीररसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा मूलकयोजप्र-  
माणा घटीः कुर्यात् । आर्द्रकरसेन दत्ते सन्निपाता  
व्यो निवर्तते । शीणि चत्वारि वा दिनानि सेव-  
नीयः । पथ्यक्रमो यथोचितः । ( अगस्त्य० )

१०६ सन्निपाताङ्कुशरसः (जन्मकुशः) २

शुद्धपारदगन्धकतालकहेममाक्षिकविषतारमाक्षि-  
कताम्रमहभस्माऽम्रकसिन्दूरानि, सद्यःक्षारनरसार-  
कर्कटशृङ्गिरामठाऽतिविषभृद्रपटोलहरीतकीनागर-  
विजयामुशलीनिम्बनिर्वासाः, सर्वाणि समभागानि  
क्राकमाचीरसेन दिनद्वयं विमृष्ट जम्बीररसेन च  
पूर्वयन्मर्दयित्वा चणकप्रमाणा घटीः कृत्वा दशमूल-  
स्फायेन, आर्द्रकरसेन, शिम्बुमूलरसेन, लघुनरसेन,  
स्तन्येन, मधुना वा मिश्रयित्वा घटी सेचिता चे-  
त्सोपद्रवांश्चयोद्दशसन्निपाताप्राशयति । शिम्बुमूलत्व-  
ग्रसः, अर्कमूलत्वग्रसः, निम्बतैलम्, लघुनरसः, स्त-  
न्यम्, अजगन्धारसः, निर्गुण्डात्वग्रसः, आर्द्रकरसः,  
कुक्कुटाण्डतैलम्, मधु चेतानि प्रयोद्दशसन्निपाता-  
नामनुपानानि । ( व्यास० )

१०७ सञ्जीवनी

सञ्जीवरसद्रवभस्मानि, कान्तसिन्दूरं, चन्द्रसारं,  
केदारं, गोरोचनं, मृगमदश्च समभागानि स्तन्येन  
मधुना च प्रत्येकं चतुर्षां विमृष्ट शुद्धाचतुष्टयं दोष-  
ज्वरसन्निपातकण्ठवायुचित्तिविभ्रमादिव्याद्रकरसाद्य-  
नुपानेन यथायोग्यं देयम् । ( व्यास० )

१०—अत्र सञ्जीवनि बहुधा येषामुपयोगः इत्येते तस्याऽऽख्या-  
यायां कौटिलिज सञ्जीवम् ( Corroisare Sublimata ) इति नाम ।  
युनानीयैक "दालयिना" इति नाम्ना प्रसिद्धिः । एन्द्रीयाऽऽ-  
नुवेरमदिशासु दुष्कालविपरिणामेन शुष्कमेतत्करकडि नाम्ना प्रसिद्धम्  
विचित्रमितिहासं कुत्राप्यस्य विवरणं नाऽऽप्तास्ते किन्तु मौलिकतया  
सञ्जीवरसमिति नाममात्रमुपलभ्यते यथा— "एष सञ्जीवरसः काञ्ची  
सिन्धुद्वयं सममिश्रितम् । कुम्भितेन मतिमन्यावेदोऽग्निनेन वा । पुन-  
रनिरिति तस्य प्रयोगः सिद्धः । शु. उ. १०११-१२" इत्ये-

उक्त्येन मौलिक सञ्जीवराजनमित्युक्तम् । "सञ्जीवराजनं तस्य दित  
मस्या प्रयोगयेत् । च. सु. ५११३, अ. स. सु. १, अ. ह. च. २१४"  
अत्र सञ्जीवराजं सञ्जीवमिति वदता चक्रपाणिना येनेन प्रकरणे  
स्वपया विज्ञेयम् । इन्द्ररश्मिस्तस्या तु मौनमालम्बितम् । "सञ्जीव-  
राजनं तु यं ताप्यं धातुर्मेन शिवः । बहुधा मयुः लोहमयं दोष-  
भजनम् ॥ च वि. २६१५२" इत्यत्र तु चक्रपाणि निद्रायितम् ।  
"वल्मीकशिखराकारं भङ्गे गीलीत्यस्तुति । सञ्जीवराजनमिवाङ्गुरासु  
वैदविदो जनाः ॥ च. द. स्वस्थश्रुते" इत्यत्र नीलाम्बने एव रुद्रि-  
क्या । शालग्रामेण तु सञ्जीवराजनं सौतोऽञ्जनमेति द्वयोरकार्यवान्  
कल्प सञ्जीवराजम् । "सञ्जीवराजं शृणु बालनीलं सञ्जीवराजम् । सौतो-  
ञ्जनं तु सौतो नदीजं वायुनं वरम् ॥ सर्वाविषिगुणरूपकं माध्व-  
सौवर्णिमयी" । "अथन कामन्यापि कपीताञ्जनमित्यपि । सौतोऽञ्जनञ्च  
द्विषिप श्वेतदण्डविभेदः ॥ तत्र सौतोऽञ्जनं कृत्वा सञ्जीवराजं श्वेतनीलि-  
रम् । वल्मीकशिखराकारं भिन्नमगमनत्रिभम् । वृष्टुन् गैरिवाकारमेव  
सौतोऽञ्जनं स्मृतम् । सौतोऽञ्जनं तत्र केष सञ्जीवराजं तदुःप्राप्तम् ॥ पूष-  
कर्णामरि वा सञ्जीवराजनमुच्यते ।" इति वैषयिनामनी प्रदर्श-  
ितम् । स्ववराजीयेऽञ्जनप्रयुगप्रदर्शने "पुष्पाञ्जनं तिन शुद्धं  
हिमं सर्वाङ्गिरोपिन् । नीलाम्बनं कृष्णवर्णं नेत्रदोषक्षयाहम् ॥ रसा-  
ञ्जनं तु पीताम्ब विषनेत्रविषारतुम् । सौतोऽञ्जनं वायुवर्णं चतुष्टयं सर्व-  
रोगघ्नि ॥ सञ्जीवराजं तत्र मेवप्युविषापहम् ॥" इति प्रदर्श-  
ितम् । तत्र रसस्य श्वेतस्य च यथाभेदा येषु प्रत्येकं च परिचयो नीप-  
लभ्यते । एन्द्रीया अतिधातुविषयनिद्रिष्टगोदन्तमेव श्वेतान्ननाम्ना  
व्यवहरन्ति । अन्ये तु यशदुपपन्नार्का मन्त्ये । तैश्चन्द्राविश-  
दिरेष्वस्य कर्शुलिङ्गानुनाम्ना व्यवहारीति । वनकाजीये च  
श्वेतान्न लिप्ता तत्स्वरूपविषयो नास्ति । यन्महन्महारे  
पतितानां मनायपि सिद्धान्तनाम्ना यन्महो गैरिपिताडि नाऽऽप्तास्ते ।  
अतस्तयोर्लोच्येववासो यदि सञ्जीवराजनाम्ना पारदकृतिरस्ये तस्या  
पात्रवारे सर्वोऽम्भर्तिकापत्तापदि मन्त्येवस्यप्रणीतमेव तच्छास्यं  
स्वापदि अतिधातुविषयवारे पारदके प्रसिद्धिरपि सञ्जीव भवेत्तस्यत्र  
न तस्याऽपि श्वेतोद्विषयं परन्तेरेते तत्प्रकारविशालतया तु तत्रैवाऽपि  
मन्त्येव केऽपि सिद्धान्तं स्वैवमेवमार्गं वदन्ति । एतन्महो  
मुपाकरणे तु स्वसौवर्ण्ये एकादशाऽप्याये वारिमाप्रदर्शनप्रमे  
"श्वेतनीलीरलं शुद्धं शचित विषमुदिता । स्वसौ वृत्तवरे वत निजि-  
रूपकहरे ॥" इत्यादित्यस्य श्वेतनीलीरलनाम्ना प्रसिद्धि-  
रुताऽस्ति । उक्त्युपयोग्येरेणैव सञ्जीवरसमिति परं समाप्तं तत्र  
व्याकृत्यमोदेन श्वेतस्येनैवैति विचित्रं क्वचन स्यात्तन्मिति श्रुतिरेव  
विनि । तत्र जीवराजसु श्वेतस्यस्वाद्यं समाजन्मिति वैश्वार्थ-  
मित्येने इति प्रदर्शितम् । तस्यस्य वरुणोर्मेदोरे नेत्रविषयान्नाम्ना  
श्वेतस्य चाऽपि रस्यारतुविषय इव समाप्तं प्रसिद्धम् । एतन्महो  
तत्प्रमाणमादिरेममात्रनाम्नी राध्यान्त्यादावनुपपत्तिं मन्त्येन  
वायवा तत्तरीया न भिन्ने तावता इति शङ्कया केऽपि शङ्कितुं न  
प्रयत्नते । सञ्जीवमिति शब्दः सञ्जीवराजस्य सञ्जीवरस्यार्थायां  
गो प्रतीयते । अतएव तद्विषये सर्वेऽपि निरङ्कुशं व्यवहरे प्रत्य-  
यते तत्र प्रत्येकं । यथास्वविज्ञानमात्रिणाञ्जनं एतन्महो सञ्जीव-  
स्वपयित्वार्कवाजिननां मन्त्येने सन्तु तत्र सर्वं निवेदं । दशमूल-  
माक्षिकप्रकाशे श्वेतोऽप्योपपन्नार्थानां तावन्मेव यथापत्तिं  
श्वेतस्यैवनाम्नी रस्यार्थानां यथाशब्दं निम्बना इत्यन्ति । अतएव  
मन्त्येव सर्वं श्वेतोऽपि श्वेतस्यैवार्थानां इति कल्पन्तु माध्वस्य  
इव एतेषां शुद्धा इति श्रुत्यर्थः । अत्र सञ्जीवरस्यार्थानां निम्ब-  
मन्त्येन निम्बना इव मन्त्येवमन्त्येवमन्त्येवमन्त्येव । यत्र रस-  
वानां विवरणं सञ्जीवरस्यार्थानां विवरणं सञ्जीवरस्यार्थानां विवरणम् ।

## १०० शङ्खद्रावः ( महदादिः ) १

स्फटिकासूर्यक्षारौ ४-४पलौ, शुद्धगन्धकसौवर्चल-  
द्वन्द्वसैन्धवसामुद्रकाचलवणरसकपूरौपरक्षारान् प्र-  
त्येकपलान् चूर्णीकृत्य मृत्पात्रे निक्षिप्य नलिकाय-  
न्त्रेण द्रव्यो ग्राह्यः । शीतोदकेन १० विन्दुपरिमितं  
सेवितं सत्पित्तवातशूलदीघाशयति । पञ्चावृत्तम-  
ग्निसंयोगेन शुद्धः सूर्यक्षारः स्फटिका च प्रति ४०  
पला, ऊपरक्षारः १ पलः, चूर्णीकृतानेतान् मृन्मय-  
पात्रे निक्षिप्य नलिकायन्त्रविधिना द्रवं शहीत्वा  
पञ्चपले पारदं चीनपात्रे निक्षिप्य तदुपरि द्रवं  
दत्त्वा त्रिनचतुष्टयं गाढातपे स्थापनीयम् । शुके  
द्रवे पुनर्द्रवो दातव्यः । एवं पञ्चदिनपर्यन्तं कृते शुद्धं  
पारदभस्म सम्पद्यते । पारदभस्माऽऽपादकेन यस्तु-  
त्रयमिलितद्रावकेण विन्दुदशकं शीतोदकेन सेवितं  
कुक्षिहृच्छललिङ्गदाहशूलसहितमूत्राऽवरोधकृच्छ्रा-  
विरोगाग्राशयति । मधुमिधित्ताऽऽद्रेकरसेन घमन-  
ह्रिकऽऽश्लोद्गारपित्तवायुहृद्दाहोदरज्वलनादिरोगा  
नश्यन्ति ( अगस्त्य० )

## १०१ शङ्खद्रावः ( महदादिः ) २

सूर्यक्षारस्फटिके प्रति १० पले, शतभस्म ५ पलं,  
काचनीललवणनरसारदङ्गणसद्योऽपामार्गयवपट्ट-  
स्तुहीक्षारान् तुरकज्वेति प्रत्येकपलिकान् शहीत्वा  
खले जम्बीररसेन विमृष्ट सम्यग्विशोष्य नलिकादि-  
गन्धेण द्रव्यो ग्राह्यः । अनेन द्रवेण शुष्मप्लीहशूलाऽऽ-  
ध्मानोदावर्तमूत्राऽवरोधमृत्रविकारद्वयाव्यादयो रो-  
गा नियन्तरे । आर्द्रकरसेन विन्दुपञ्चक्रप्रमाणं सेवितं  
चेतुदरस्थ पित्तदाहादिकं नश्यति । मयं श्लेष्मरोगाऽ-  
ष्टशुष्मजलोदरादयो नियन्तरे । सुपर्णपत्रे विन्दुचतु-  
ष्टयमीपथं निक्षिप्य बालानां रक्षावन्धने कृते  
ध्यासरोगः कदापि नात्पद्यते । पथ्यं रोगानुरूपम् ।  
( व्यास० )

टि०—नलिकात्रविधानम्—इत्यर्थाद्विषे सुषुप्तपात्रे क्षारद्वयं  
निधाय गन्धपत्तारिष्टं कृत्वा दे वा वशादिनिमित्तानां निरोध  
जन्मुद्रया सन्धीनरम्भाऽपान्नुमि सन्धिमिष्यन्त पुनरि पञ्चव-  
रम्भितरा मन्त्रिस्तान् शुचकामापाय नुत्तयामपिष्टाव्य चष्टानि  
प्रदद्यात् । नलिकायुगा वाचने मन्त्रि वा षे निश्चयाऽऽद्रेऽग्रा-  
देन वा वर्येण समोदरे प्राय गृहीयात् । नलिकामन्त्रपट्टज्जने  
निरोधनीयम् । तदपराधमन्त्रिस्तानां निश्चयनीयम् । वरा च  
मन्त्रमन्त्रादिकं निश्चय दत्वा नि मन्त्रयति तदा चष्टयवाराव्य  
सम्पद्यते तदा मित्रां समन्वयेदपि बर्हिर्नि शार्वरे । वरं तु नलि-  
काया अमन्त्रेऽपि तत्र सुषुप्तपात्रव्य उन्नक्त विषय वदुममन्त्र  
चूर्णपात्रादीन् दिव पात्र एवमे हिन्दुवने जन्म्ये निज-  
नीयम् । वराया च पूर्वरेषा । वास्तविकीया च पूर्वरेषा । कच-  
कादिद्वारा रान्तावीया वा मन्त्रिपन्नका रीया गुणे नि रुदि-

धन्ति । वरं तु केवलान्धस्य गन्धाधिकमागस्य वा द्रव्यस्य नि सा-  
रविमुच्छिद्य चेत्तर्हि भाण्ट नलिका चेयेतद्वयमपि काचन भवितव्यम् ।

## १०२ सकलविपचोष्यम्

शुद्धपारदगन्धकमल्लतुत्यमनःशिलामरिचकन्द  
( पामतुण्डगेष्टा. तै०, मिरचियाकन्द. हि० ) रामठनिम्ब-  
वीजमज्जानः प्रत्येकं सपादतोलकं, शुद्धं जयपालवीजं  
१ पलं, एतानि चूर्णीकृत्य श्वेतार्कक्षीरेण यामद्वयं, नि-  
म्बतैलेन च यामचतुष्टयं विमृष्ट शृङ्गसम्पुटे स्थापयेत् ।  
कालसर्पविपाणां मरिचप्रमाणं कवचीकृततालगुडा-  
नुपानेन देयम् । निम्बवीजतैलेन सकृद्व्य भेदयोरञ्ज-  
नमपि दातव्यम् । एतेन घमनविरेचनादिकं भवति स-  
र्पविपाणि च निवर्तन्ते । सर्पद्वष्टानामेतदौषधदाने  
दिनत्रयमल्लयज्यं पथ्यम् । मनुष्यश्वजम्बुकमृषिकवृ-  
द्धिकविषेषु क्षतस्थाने औषधं लेपयित्वाऽग्निना सेकः  
कार्यः । वृद्धिकमहावृद्धिकविषेषु क्षतस्थाने लेपना-  
श्रमेव विषेयमन्तर्न दातव्यम् । जम्बुकमृषिकमनुष्यदु-  
ष्टसर्पादिदंशेऽन्तर्बहिर्द्वौषधं योजनीयम् ।

अपि च—एकपलं मल्लं शराये निधाय.....  
( गाडिदिगडपाकु. तै० ) रसेन श्वेताऽर्कक्षीरेण च  
प्रति यामचतुष्टयं प्रासं दत्त्वा वृद्धिकदंशस्थाने लेप-  
नीयम् । विपदोषप्रकोपे सति शुद्धसुवर्णपत्रं, चितुमां,  
केशरम्, रजतचूर्णं, मुक्ता, मृगमदः, आकाकरमः,  
शृङ्गम्, जटामांसी, सज्जोलं, विष्यफलोद्धकायः, लघ-  
नं, रससिन्दूरं, विम्बोमूलं, यष्टिमधुकं, रास्ता  
पलाशवीजानि, पला, त्यक्, कुष्ठं, नागकेशरं, द्राक्षा  
चेति सममागानि स्तन्येन दिनद्वयं विमृष्ट शृङ्गस-  
म्पुटे निधाय पूर्वोक्तविपप्रस्तानां जिह्वादोषप्रदा-  
न्त्ये जिह्वायां धरणीयम् । पथ्यं यथोचितम्  
( व्यास० )

## १०३ सजीविगुटिका

शुद्धविपतालकपारदगन्धकदङ्गणत्रिकटुयिमीतरं  
भोरोचनतुरकान् प्रत्येकमर्धतोलकान्, शुद्धजयपा-  
लवीजानि च ४ तोलकानि शहीत्वा पट्टयूते विधाय  
कपूरवल्ली ( कपूरवल्ली. तै०, पत्रयवानिका ) , रक्तु-  
नन्या ( पुरुषरत्न. तै० ) वासातोयपिप्पलीभृङ्ग-  
प्लतुलसीरसेः प्रत्येकदिनं मर्दयित्वा मुद्रप्रमाणा  
वटीः कुर्यात् । अष्टतुलसीपत्ररसेन सईका मात्रा  
मेयिता चेद्दालकानामपतानकषायं, सप्रिपातदीर्घं,  
व्यासकासी, वायुरोगांश्च नाशयति । ( व्यास० )

## १०४ सञ्जिपातभैरवरसः

शुद्धपारदगन्धकदङ्गणतालकजयपालविकटुयमि-  
फलाः प्रत्येकपलाः, शुद्धद्वन्द्व ४ पलं शहीत्वा खले  
तामूलद्वन्द्वमेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा संशोष्य

हृण्णतुलसीरसानुपानेन रक्तिपरिमितः साधारण-  
ज्वरेऽप्युपयोजनीयः । स्तन्येन विषमज्वराः, मधुना  
पैत्यदांषाः, मरिचन्यायेन वातज्वराः, मधुमिश्रिता-  
ऽऽर्द्रकरसेन पित्तघायघो हृदयज्वलनं सर्वशूलानि  
च नश्यन्ति । सन्निपातदोषेषु स्तन्येन, मधुना,  
ताम्रशूलदलरसेन वा सहृष्य नेत्राञ्जनं देयम् । शिग्रु-  
शूलत्वग्रसेन लघुनतैलेन वाऽनुपानेन महासन्निपात-  
जनितसप्तदोषेषु प्रयोजनीयम् । तत्तद्भोगबलानुसा-  
रेण पथ्यक्रमः कार्यः । ( श्यास० )

१०५ सन्निपाताङ्कुशरसः (जन्यङ्कुश.) १

शुद्धिपिपिष्यवैकैकपले द्रवञ्च द्विपलं गृहीत्वा  
जन्नीररसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा मूलकवोजप्र-  
माणा घटीः कुर्यात् । आद्रकरसेन दप्ते सन्निपाता  
द्वयो निवर्तते । ग्रीणि चत्वारि वा दिनानि सेव-  
नीयः । पथ्यक्रमो यथोचितः । ( अगस्त्य० )

१०६ सन्निपाताङ्कुशरसः (जन्यङ्कुशः) २

शुद्धपारदगन्धकतालकहेममाक्षिकषिपतारमाक्षिकताम्रमहभस्माऽन्नकसिन्दूरानि, सद्यःक्षारनरस्तारकैटभृङ्गिरामठाऽतिविषभुद्रपटोलहरीतकीनागरविजयामुशलीनिम्बनिर्यासाः, सर्वाणि सप्तभागानि काकमाचौरसेन दिनद्रयं मिथुघ जम्बीररसेन च पूर्वैवस्मर्दयित्वा चणकप्रमाणा घटीः कृत्वा दशमूल-  
कषाधेन, आर्द्रकरसेन, शिघ्रमूलरसेन, लघुनरसेन, स्तम्भेन, मधुना वा मिश्रयित्वा घटी संहिता वे-  
त्सोपद्रव्यैस्त्रयोदश शशिपाताम्राशयति । शिघ्रमूलत्व-  
प्रसाः, अर्कमूलत्वप्रसाः, निर्युतेलम्, लघुनरसः, स्त-  
म्भम्, अजगन्धारसः, निर्गुण्डीत्वप्रसा, आर्द्रकरसः,  
क्यकुटाण्डतैलम्, मधु चैतानि त्रयोदशशशिपाता-  
नामनुपातानि । (व्यास०)

१०७ सन्धीरवटी

सग्रीरसदरदमस्मानि, कान्तसिन्दूरं, चन्द्रसारं,  
केशरं, गोरोचनं, मृगमदञ्च समभागानि स्तन्येन  
मधुना च प्रत्येकं चतुर्षामं विमृद्य गुञ्जाचतुर्ण्यं दोष-  
ज्वरसन्निपातकण्ठयायुचित्तविभ्रमादि व्याघ्रकरसाद्य-  
नुपानेन यथायोग्यं देयम् । ( व्यास० )

टि०—अत्र सन्धीरमिति बहुषु योगेषु समागत दृश्यते तस्याऽऽगमभा-  
यावा कारोक्तिव सन्धिमुद्र (Corrosive Sublimate) इति नाम ।  
यूनानीवैषके “दाल्मिकना” इति नाम्ना प्रसिद्धिः । एतद्वैसीवाऽऽ-  
सुषेदसंहितासु युष्कालविपरिणामेन सुकुनेष्वलकतेति नाम्ना प्रसिद्धासु  
विष्पिसंहितासु कुण्डाऽप्यस्य विवरण दाऽप्यावते किन्तु सौरीयवर्षना  
सौरीरकमिति नाममात्रमुपलभ्यते यथा—“शैत सौरीरक वासि-  
पिनाऽय रसमावितम् । कूर्मेष्टिमे मतिमान्भावयेदौक्षितेन वा ॥ पूर्णा  
ज्वनद्वि नित्य प्रथोज्व पित्तशान्तये । सु व १७।१३-१४” इत्यत्र

अश्वमेधे मौवीरक सौवीराजनमित्युक्तम् । "सौवीरगन्धनं नित्यं स्ति  
तस्यो प्रबोध्यते । च य. ५।१३, अ. स. य. ३, अ. ह. य. २।४ ।  
अथ सुवीरायव सौवीरमिति वदता चर्याणिना येननेन प्रकारेण  
स्वम्भा विरोधित । इत्युपदृष्टायां तु मौनमात्रमित्यम् । "सौवीर-  
गन्धनं तुल्यं ताव्यो धातुर्गन्धं शिला । चक्षुष्या मधुकं लोहगन्धं दीप्य  
गन्धमम् । च यि २६।२४३" इत्यत्र तु चनेषाणि निरुद्धादितम् ।  
"चन्यकश्चिद्वाराण्यं गन्धे नीलैस्तल्पुति । सौवीराजनमिन्द्रासुतपु-  
त्रैर्विदो जना ॥ च द स्वस्थते " इत्यत्र नीलाजने एव रुचि  
कृता । शाल्याग्रेण तु सौवीराजनं सोतोऽजनत्रेति द्वयोर्कार्यवाच  
कत्वं सूचितम् । "सौवीरगन्धनं कृष्णं कालनीलं सुवीरजम् । ज्ञेयो  
ज्ञानं तु ज्ञेयोनं नदीनं यामुनं वरम् ॥ सर्वैष वैधुगुणवत्पक्ष आग्ने-  
श्वीयमेतच्छेत्" । "अजनं वामनश्चापि ययोताजनमित्यपि । ज्ञेयोऽजनश्च  
द्विषिच येनैकहृष्यविभेदतः ॥ तच्च ज्ञेयोऽजनं कृष्णं सौवीरं श्वेतमीरि-  
तम् । चन्यकश्चिद्वाराण्यं भिन्नमनसस्त्रिमम् । घृष्टम् गौकाकारमेतत्  
ज्ञेयोऽजनं स्वतम् । ज्ञेयोऽजनं सप्त श्रेयं सौवीरं, सप्त पाण्डुरम् ॥ ५४.  
गर्गाभमपि वा सौवीराजनमुच्यते । ॥ इति वैधचिन्तामणौ प्रदर्शि-  
तम् । वसवराजीयेऽजनपञ्चकगुणप्रदर्शने "पुष्पाजनं स्ति द्रुम  
क्षिप्तं सर्वाक्षिरोमिन्द । नीलाजनं कृष्णवर्णं मेघदोषक्षयापहम् ॥ रत्ना-  
जनं तु शीतम् विष्वेनरविकारानुद । ज्ञेयोऽजनं पाण्डुवर्णं चक्षुष्यं सर्वै  
रोगनिदम् ॥ योऽपि रक्तवर्णं च नेत्रकण्डुविषयापहम् ॥ इति प्रदर्शि-  
तम् । तत्र रक्तस्य श्वेतस्य च यथाश्वेतया श्वेत्यु ग्रन्थेषु च परिचयो नोप  
लभ्यते । एतद्वैशीया अतिचावचिष्यविशिष्टोदन्तमेव श्वेताजनमाम्ना  
व्यवहृष्टि । अन्ये तु यद्वदपुष्पावकता मन्यन्ते । तेष्वपि  
द्विदोषश्च कर्पूरशिलानुनाम्ना व्यवहारीऽस्ति । वसवराजीये च  
ज्ञेताजनं निलिखता तत्त्वस्वरपरिचयो नाकारि । एतन्महाभकारे  
द्विगतानां मनोमपि सिद्धान्तया यन्मदो र्वेषिताऽपि नाऽऽज्ञाते ।  
अतस्तत्त्वोच्येयकदाचैव दिव्यं सम्वीरनाम्ना एतद्वैद्विद्वद्वये तस्या  
धातुवादे सर्वोऽन्वैद्विद्वत्कारणत्वापदि महत्त्वमस्त्यप्रणीतमेव तच्छास्त्रं  
ह्याहति अतिशाचीनकालदेव एतद्वैद्विद्वद्वये तस्मिन्महाभकारे  
न कस्याऽपि सद्बोदियाए परत्वेतोद्वे तामचारासैकान्ततया पुनर्वेनाऽ  
स्तिन्विषये कोऽपि सिद्धान्तं स्वीरकर्ममतीव दुःकरम् । एतद्वैद्विद्वद्वये  
मुच्यते तु स्वकीयमन्त्रे एकादशऽध्याये तस्मिन्महाभकारे  
"श्वेतसौवीरं शुद्धं पाचितं विषमुद्रिता । सच्छेत् द्वावरे बलं निक्षिप्तं  
कृष्णद्वन्द्वे ॥ " इत्यादिरूपेऽस्य श्वेतसौवीरनाम्ना प्रसिद्धि  
कृताऽस्ति । अस्तु अतोयद्वेरोपेति शीतं सौवीरमिति परं समारणं तत्  
लेखकमादेव श्वेतस्याने शीतमिति कथत्र सजातमिति बुद्धिर्लभ्यता  
भवति । तत्र टीकाकारेण शीतशब्दस्याऽर्थं एतान्नमिति चेत्किन्तु  
क्षिप्त्यनेनैव प्रदर्शितम् । तथास्य वस्तुनोऽप्येवमेव नीयोयवत्वात्  
नीरस्य भाऽसिक्तत्वादानुक्तिश्च सहास्रं प्रतिपादितं । कदाचित्  
तत्त्वगोमवद्विस्तभावाभी रात्र्यान्वयादावनुज्ञोऽपि भवेत्पल्लु  
शब्दात् तत्परिज्ञानं न विद्येत तावता निश्चयतया कोऽपि वदितुं न  
प्रभवत्येव । सन्वीरमिति शब्दं सर्वोऽप्यद्वैद्विद्वद्वये सौवीरशब्दाद्भाषाया  
वत् प्रतीयते । अतएव तद्विषये स्पेऽपि निषङ्गवादा व्यामोहं प्राप्य  
कदा तदा प्रपन्नति । प्रादाव्यविज्ञानमात्राज्ञानं कारणात् सौवीर-  
श्वेतसौचित्यमाऽभिन्नं मन्यन्ते पल्लुं तत्र समीचीनम् । यतोऽप्यस्य-  
प्रोच्येयकदाचैव द्वारिक्तव्यारोपेत्प्रभाषायां तावतामेव पाकश्चारावि  
शेषैस्त्वत्तानां सन्वीरादीनां यथाशास्त्रं निरूपणं कृतमस्ति । अतस्तस्य  
समस्य प्रतीयैवैशान्विषयादुभावादावानी इति वयनन्तु मत्तन्वाप  
हं सर्वेषां सुवर्दा इति स्फुरत्येव । अतः सौवीरादिप्राधान्यां निर्माणं  
मतिप्राचीनकालत एव समारणमस्तीत्यवदं मन्तव्यम् । चतुर्दश्या  
प्राधान्यां विवरणं लीवराऽनुप्रवृत्तद्विषयस्यपनयायान्ये समर्थम् ।

## १०८ सारिवादिवटी

शुद्धपारदगन्धकौ प्रति दशाणकौ, नागोद्वयाण-  
काधिनेकतोलकः, तीक्ष्णलोहभस्म ४ तोलकं, ताम्र-  
भस्म २ तोलकं, सर्वाण्यपि कुमारीद्वयेण मर्दयित्वा  
शुद्धताम्रपात्रे निक्षिप्य दिनत्रयपर्यन्तं प्रचण्डाऽऽतपे  
स्थापयेत् । नितरां शुद्धतरं भस्मोपलभ्यते । एतद्गु-  
ह्यापरिमितं प्रातः सायं मधुना सेवितं सत्सकलपञ्जर-  
पाण्डुरामलाश्वयधुगुल्ममेहजातादीनाशयति । अ-  
स्यानुपानम्—हेमक्षीरी १० पला, अनन्तमूलं-  
४ पलं, विल्ववृणहिरण्माम्बला (तैलउत्पि. तै०) ५ अ-  
गन्धाभ्येतहिंसामूल ( तैलउत्पि. तै० ) पिण्डा-  
लुक ( पद्ममङ्गा तै० ) मदन ( चित्रमङ्गा ) नागराणि  
प्रति द्विपलानि, चित्रकमूलत्वक् २ ॥ पला, मरिच-  
पिप्पल्यावेकैकपले, पलालयङ्गत्वचोऽर्द्धाऽर्द्धपलाः, ए-  
तानि सर्वाणि चूर्णीकृत्याऽर्द्धतोलकपरिमिते चूर्णे  
पूर्वांक्तं भस्म गुह्याद्वयपरिमितं संयोज्य मधुना  
सह सेवनात्सन्तैकाहिकादिज्वरघातफटिशूलश्लेष्म-  
प्रधानव्याधयो निवर्तन्ते । (अगस्त्य०)

## १०९ शुद्धशरसरसः

शुद्धपारदगन्धकमनःशिलाजस्मानमर्ददाऽन्नकृता-  
लहेममाक्षिकाणि प्रत्येकं सपादतोलकानि गृहीत्वा  
चाङ्गेरी ( पुलिचिन्ता ) जम्बीरीयजपूरनिगुण्डाभृ-  
ङ्गाजरसैः प्रत्येकदिनं मर्दयित्वा शुष्कचमिका शरा-  
वयोरवच्छेद्याऽर्द्धगजपुटो देयः । पुनः सत्वे निक्षिप्य  
चित्रकपञ्चाङ्गफ्यायेन दिनद्वयं मर्दयित्वा मापप्रमाणा  
घटी. कृत्वा छायायां शोषयेत् । एतस्यानुपानम्—  
रामठशिकटुकर्पूराणि समभागानि चूर्णीकृत्य  
पादतोलके चूर्णे मधुना सह पूर्वांतघटी सेवनीया ।  
एतेन सन्निपातातोन्मादापाणिपादस्तम्भश्यासका-  
सरक्षरातकक्षयपक्षकण्ठमधिका (पुनर्वांत) शिरो-  
पाप्यादयो रोगा नश्यन्ति । क्षीराश्रं पथ्यम् । अन्य-  
त्किमपि न देयम् । (अगस्त्य०)

## ११० सुवर्णसिन्दूरम्

शुद्धं सुवर्णं मृदुतया चूर्णीकृत्य बीजपूर ( मादी  
फल ) रसेन मर्दनसमये किञ्चिन्नरसार टङ्गुणञ्च  
मेलयित्वा सम्पग्नमृद्य शोषयित्वा पुनर्नीलीपथ-  
रसेन सेहण्डक्षीरेण च प्रतियामद्वयमर्दयित्वा शुष्क-  
चमिका विधाय शरावसम्पुटेऽवच्छेद्य गणेशमभ्यर्च्य  
मयूरपुटो देयः सिन्दूर सम्पगते । एतच्चण्डुलपरि-  
माणे गोघृतेन सह सेवनीयम् । अनेन पाण्डुपुष्टाल  
कपालशूलपीनसा नश्यन्ति । मधुनोन्मादादयः,  
शकृत्या मृणा, पिचचिकावमनादयः, उष्णादकेन

ज्वरादयः, शीतोदकेनाऽतिसारो गुल्मरोगश्च नश्य-  
ति । मृगमदेन सह शरीरं सुवर्णच्छायं भवति । एक  
संपत्सरसेवनात्पञ्चशतवत्सरं जीयति कायकल्पसि-  
द्धिश्च भवति । क्षीराश्रं मापवटका, कन्दपदार्था-  
श्चेते पथ्या । अम्लक्षारादिकं वर्ज्यम् । (अगस्त्य०)

## १११ सूतसिन्दूरम्

शुद्धपारदः १ पलः, रसकपूरटङ्गुणकस्तूरीहरिद्रा  
(आवाहल्दी हि०) दाहहरिद्राः प्रत्यर्द्धतोलिकाः,  
एतानि सर्वाणि सत्वे निक्षिप्य ताम्बूलकृष्णधतूर  
रसाभ्यां प्रतियामत्रयं मर्दयित्वा (मर्दनसमये कला-  
चतुष्टयसूपरस्सारमपि योजनीयम्) शुष्कां चमिकां  
विधाय शरावसम्पुटितं कृत्वा कुक्कुटपुटं देयम् ।  
एतसिन्दूरं नवमीतेन सह पादगुह्यापरिमितं  
भोक्तव्यम् । अनेन कुक्कुरकास ( मन्दारकासः,  
कुक्कुरदग्गु तै० ), पित्तवायुः, घट्टक्षणप्रग्रियाः,  
क्षोपपञ्चराश्व निवृत्ता भवेयुः । यथोचितं पथ्यम् ।  
(अगस्त्य०)

## ११२ स्वर्णभूपतिरसः

पारदतालकगोदन्त ( कपूरशिलाजतु तै० ) ता-  
म्रगन्धकरसकदरदमस्मानि शुद्ध विपञ्च समभाग  
गृहीत्वा अनन्तमूलचित्रकेतुरकमूलरसैः प्रत्येक  
याम मर्दयित्वा तण्डुलमात्रं मधुना सह सेवितं सत्  
मेहशूलगुल्ममहासन्निपातादिदोषपञ्चराश्वनाशयति औ-  
दुम्बरशलादुसूरणावालवृन्ताकशिमुशिम्बीगोक्षीरधू-  
तपुराणतण्डुलाश्च पथ्या । (व्यास०)

## ११३ हिङ्गुलादिघटी ( प्रथमा )

छोहरसकपूररसमनी, शुद्धपारदगन्धकजयपाल-  
कृष्णधृतबीजतालमल्लविषाणि कटुरोहिणी श्वेतत्रिभु-  
त्तिकटुतिक्ततुम्बीबीजश्वेताऽपराजिता ( तैलगण्डि-  
ना तै० ) मूलहरीतम्बः, एतानि समभागानि चूर्णी-  
कृतानि सत्वे ताम्बूलीरसेन सतदिनपर्यन्तं मर्दयित्वे  
कपल मरिचचूर्णं विमिश्रत्योदकेन विमृद्य मरिच-  
भाणां घटीं कुर्यात् । उष्णोदकानुपानेन दिनत्रय से-  
विता सर्वज्वरानाशयति । (व्यास०)

## ११४ हिङ्गुलादिघटी ( द्वितीया )

शुद्धदरदविषपारदगन्धकटङ्गुणजयपालबीजानि,  
सैन्धवयिकटुकहरीतकी श्वेतत्रिभुदरिषीजमञ्जवि-  
त्रकमूलानि प्रति सपादतोलकानि स्नुहीक्षीरेण मर्द-  
यित्वा मरिचप्रमाणा घटी हृन्वोष्णोदकानुपानेन  
सेविता चेद्वातप्रघातजनितसन्निपातशूलानां सर्वेऽपि  
नश्यन्ति । पथ्यमुष्णादक तण्डुलाश्च, अन्यत्कि-  
मपि न देयम् । (व्यास०)

## ११५ हेमरसगुटिका

शुद्धदरद्विपयराटिकाभस्म त्रिकटुसैन्धवचित्र-  
कान् समभागान् जम्बीररसेन चतुर्थ्यां विमृद्य मरि-  
चप्रमाणा वटीश्चायानुष्ठा विधाय मरिचकषाये म-  
धुनि वा सेविता सकलजरदोषाघ्नाशयति । वात-  
शोतलाधिन्ये सति त्रिचतुरैल्वह्नैः सह भक्षणीया  
पथ्यं रोगोचितम् । वातपदार्थास्त्याज्याः । (अगस्त्यः)

इत्यगस्त्यन्यासप्रोक्तसप्रयोगाः समाप्ताः

## परिशिष्टो भागः

## अथान्नादिप्रसिद्धरसप्रयोगाः

(प्रायो ग्रन्थविशेषपरिचयरहिताः)

## १ अष्टादशकलरसः

हिङ्गुलोत्पपार्वः, रससिन्दूरः, शुद्धगन्धकं,  
सन्धीर, गौरीपापानं, मल्लः, मृदारष्टकं, रसरूपूरं,  
औपरक्षारः, इसपाद्वरदः, अहिकेना, शुद्धकान्तम्,  
कर्कटशृङ्गो, हरीतकीपुष्पं, तुल्यकः, कर्पूरं, तालक-  
ञ्जितेषु षोडशत्रयेषु द्वाधुमिप्रमायपरिज्ञानपूर्वकं तस-  
त्समभागं खल्वे निक्षिप्य सर्वाणि चूर्णीकृत्य कुक्कु-  
टान्द्वितैलेन दिनत्रयं सन्ध्याविमृद्य शृङ्गसमुद्रे संरक्ष-  
णीयम् । एतत्सिक्थरूपमौषधमसाध्यसन्निपातकुष्ठ-  
वातश्लेष्मरोगेषु अर्धगुञ्जप्रमाणमुपयोजनीयम् । पथ्यं  
रोगानुरूपम् ।

कुक्कुटाण्डतैलनिःसारणोपायः—२० अथवा २५  
कुक्कुटाण्डानुष्णोदके निक्षिप्य घण्टाद्वयपर्यन्तं  
मन्दाग्निना विपाच्य उपरितनं त्वचं स्फोटयित्वा त-  
दन्तरवलयं श्वेतकञ्चुकं सुरिकया दूरोकृत्य तद्वर्णं  
विद्यमानपीतगोलकान्येसोदृत्य लोहकटादि निक्षिप्य  
मृद्वग्निनाऽर्द्धयामपर्यन्तं पाके कृते गोलकानि सर्वा-  
ण्यपि द्रवीभूय तैलरूपतामाप्तस्यन्ते । एतदेवाऽ-  
ण्डतैलं चीनपात्रे स्थापयित्वा तत्तदुचितसमयेषु  
सन्निपातादिभ्यनुपानतया नियाजनीयमिति प्राचीन-  
वैद्यतद्वस्यम् । अस्य प्रह्वनादेति पादे सञ्ज्ञा ।

## २ कालान्तकसिन्दूरम् (महन्)

ताम्बूलस्वरससोधिं गन्धकं १० तालकं मृषायामर्दं  
निक्षिप्य तदुपरि तण्डुलाग्रदोषितपार्वं १० तालकं  
निधायऽवशिष्टगन्धकचूर्णनाऽऽप्यष्टाद्य लोहचक्रि-  
कया मृषामुलं विधाय सन्धिबन्धं धिनैव जलद्वह्ना-  
भाये स्थापयेत् । मृषामुलाघानात्पथ्यं भृमोदमनपूर्वक-

विजातीयगन्धकज्जालादर्शनपर्यन्तं निरीक्ष्य बहिः  
संस्थाप्य पिहितमुद्राद्य निर्वोतप्रदेशे स्वाङ्गरीतम-  
घस्थापयेत् । अत्रयं सूचना—गन्धकप्रक्षेपात्पूर्वमेव  
पलेकं गन्धकं ताम्बूलस्वरसेन विमृद्य मृषायाः कण्ठ-  
पर्यन्तं विलिप्याऽऽतये शोषणीयम् । तदनन्तरं गन्ध-  
कप्रक्षेपादिक्रिया कर्तव्या । एतच्च दीर्घकुक्षिशला-  
दिरोगेषु कालमेहादिषु च निरुद्धाः प्रवर्तते । अत्र  
शर्करामिश्रितं दुग्धानं पथ्यम् । परुमण्डलसेवना-  
त्कुष्ठनिवृत्तिर्भवति । औषधञ्च दधिमण्डेन नय-  
नीतेन वा सेवनीयम् । शारधूमपाननस्यादिकं  
त्याज्यम् ।

## ३ गन्धकसिक्थकम्

एकपलामलसारगन्धकचूर्णं लोहकटाहमाये नि-  
क्षिप्य पात्रस्याऽधस्तादेरण्डतैलेन दीपं प्रज्वाल्य  
भूम्यामलकीपत्रस्वरसं २४ तालकं गृहीत्वा गन्ध-  
कचूर्णस्योपरि किञ्चित्किञ्चिद्मासं दद्यात् । लोहश-  
लाकया मर्दं मन्दं चालनीयम् । स्वरसस्य समाप्तौ  
सर्वां गन्धकचूर्णं सिक्थं भवति । एतद्यणकप्रमाणं  
गोघृतेन सह देयम् । अनेन मेहपिडिकादिव्याधयो  
नियन्ते ।

## ४ चण्डमासुतरसः

शुद्धं रसकर्पूरं ८ भागं, वरदः ४ भा०, सन्धीरं  
(दालचिकना) गन्धकञ्च २-२ भा०, रससिन्दूरं १६  
भागं गृहीत्वा वामद्वयं मर्दयित्वा तण्डुलप्रमाणं स-  
न्निपातेऽनुपानविशेषं देयम् ।

## ५ ज्वरकुलान्तकवटी

दशतालकं मरिचं सङ्क्षुप्य १५० तालके जले  
निक्षिप्यैकतालकं शुद्धसन्धीरं (दालचिकना)  
त्रिगुणोदृतयले पोदलीं बद्धा दोलायन्त्रविधिना १५  
तालकज्जलावशेषपर्यन्तं विपाच्य माण्डमन्तार्यं स-  
न्धीरं मरिचानि च खल्वे निधाय दोलायन्त्रोपाऽ-  
वशिष्टतलेनैव विमृद्य माप (उड्ड) प्रमाणा वटीः  
कुर्यात् । दिनत्रयाऽनन्तरमेवा वटी न प्रयोज्या ।  
मार्गं मशयित्वा किञ्चिदुष्णोदकानुपानं देयम् ।

## ६ ज्वरस्तम्भनपट्टी (दुर्गाद्री)

शुद्धपार्वं १॥ तालकं, जीरकमस्माधंतोलकं,  
शुद्धगौरीं पादतोलिकां खल्वे निधाय मृषामूलस्वर-  
सेन दोलायन्त्रविधानेन रसशोषणपर्यन्तं पाकं कृत्वा  
मधुना नागरकलेन वा एका वटी सेविता वेग्यर-  
स्तम्भनं भवति । पथ्यं यथेच्छम् ।

## ७ तरुणाकरसः

स्वर्णं पारदसन्धीरं इवेतमास्करदिहृत्तुम् ।  
सिन्दूरञ्च समं ध्यातं सर्वयस्तुसमं समम् ॥



रक्तण्डुलवृषेण कुम्कुटाण्डरसेन च ।  
वह्नीदलेन सम्मिश्रे पुनः कुम्कुटपूरितम् ॥  
तरुणाकरसो नाम सन्निपातहरः परः ।  
अधोरति च मन्त्रेण संस्थाप्य पृथिवीतले ॥  
वामदेवाय सङ्गृह्य सद्योजातमिदं पचेत् ।

ब्राह्मणं भोजयेत्पञ्चादौपथं सम्यगर्चयेत् ॥

टि०—सर्पपादरक्तपूरदरसन्निभसूतवीर्यव्योषाणि समामागानि  
गृहीत्वा रक्तण्डुलमण्डने, कुम्कुटाण्डभेदने, नागवह्नीदलरसेन  
च प्रति वामचतुर्थ्य विषुष त्रयो भुपुत्र देयाः । अथ भूषट्स्य विवर-  
णम्—द्वारं साहयुगलं दद्यात् बहुगुलिनयविरचितं खातं विषाय सर्पिका-  
वृण्डं निकामिषाभ्युषं तदुपरि शुष्कां पूर्णपत्रचक्रिकां विन्यस्य चक्रि-  
कोपरि भूषमा निकामाभ्युषं निकलोपरि पश्चिमं सप्तभिर्बालकैः पुटं  
दद्यात् । एकैकसिन्धुपुटं चोपशं कुम्कुटाण्डभेदनेन मर्दयेत् । शुष्कच-  
क्रिकोपरि ताम्रण्डुलमण्डनेनाऽऽर्द्धगुलं कचच दत्त्वा विरोधं पुटे निद-  
ध्यात् । पत्रं रीत्वा पुटत्रयं देयम् । तुरीये पुटे रक्तण्डुलमण्डने दिन-  
त्रयं विषुषं चर्षेत्पुटं दत्त्वा रक्तसमुटे स्थापयेत् । महाभस्मिपान्थापिषु  
गुञ्जामात्रं प्रयोक्तव्यम् । पथ्यं यथोचितम् ।

### ८ ताम्रसिन्दूरम्

हंसपाददरदः, पलाण्डुरसे शुद्धो गन्धकः, पारदः,  
मनाशिला, तुर्थं, तालकश्चैतानि प्रत्येकमर्धतोलकानि  
स्रव्ये विन्यस्य रक्तकापोसपत्रस्वरसेन विमृष्टं  
घृततोलकारं शुष्कां चक्रिकां विषाय वितस्ति  
मात्रोच्छ्रिते मृत्पात्रेऽर्द्धमागपर्यन्तं समुद्रलवणं  
विन्यस्य लवणस्योपरि चक्रिकां निधाय पट्टतोलक-  
शुद्धताम्रनिर्मितसमुदने विषाय कण्ठावधि भाण्डं  
लवणेन पूरयित्वा शरावेण भाण्डमुत्तं सम्यङ्नि-  
रुद्धं चतुर्यामपर्यन्तं गाढाग्निना पाकं कुर्यात् । उप-  
रितनताम्रसमुदं मेघघर्णतया भस्म सञ्जायते ।  
पतञ्जलपरिमाणं घृतेन मधुना नयनीतेन वा से-  
वितं सदासाध्यदयासक्तसविषमसन्निपातकुष्ठादिम-  
हाराणां शिथारयति । यथांचितं पथ्यम् ।

### ९ दरदसिक्थकम्

यितस्तिप्रमाणोच्छ्रितमृत्पात्रतलभागे द्वादशतोल-  
कानि श्वेताकपुष्पाण्यास्तीर्य तदुपरि पट्टतोलकं  
समुद्रलवणं, लवणोपरि त्रितोलकं शुद्धदरदण्डं नि-  
धाय तदुपरि पुनर्द्वादशतोलकानि श्वेताकपुष्पाण्या  
स्तीर्य पट्टतोलकञ्च लवणं निधाय पात्रमुत्तं शरावेणा  
ऽवरुद्धं रुद्धसन्धिमुद्रणं कृत्वा शतसप्तचाकैररण्या-  
त्पलकैः पुटं दद्यात् । स्वप्नरात्रौ सत्सौपथं पुष्पका-  
रादिकिरूपां गृहीत्वा चीनपात्रं निक्षिप्य दशतोल-  
कपरिमितं जम्बीररसमाप्य तन्मध्ये रक्तजपाकुसुम-  
दलानि १० तोलकानि मेलयित्वा दिनसप्तर्कं तथैव  
संस्थाप्याऽष्टमदिने शुक्लवामारोप्य सिक्थकं निष्पा-  
द्य कचहृणां रक्षयेत् । असाध्यदयासक्तसयोरति-  
सिक्थकं तण्डुलप्रमाणं देयम् ।

### १० नवग्रहरसः

शुद्धं सूतं वत्सनामं लोहभस्म च टङ्कणम् ।  
व्योषं गन्धोन्मत्तवीजं सर्वज्ञैव समांशकम् ॥  
रुष्णभृष्टरसैर्मयं वटी मुद्रप्रमाणिका ।  
नवग्रहरसो नाम सर्वरोगहरः परः ॥  
इवासे कासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे ।  
सन्निपातेऽतिसारे च कृष्णसर्पे च वृश्चिके ॥  
अशोतिवातरोगाणामामातोसारनाशनः ।

### ११ पक्षवातविध्वंसनरसः

हिङ्गुलोत्थपारदोल्लिपापाणे १-१ तोलकं, शुद्ध-  
मल्लोऽर्द्धतोलकः, सव्यीरं पादतोलकं, नागरं २  
तोलकं, शुद्धहरीतक्याकारकभरज्जुनिकाशीजान्येकै-  
कतोलकां निष्पूर्णकृत्य ताम्रश्रीदलरसेन दिनत्रयं  
सम्यग्विमृष्टं पञ्चसप्ततिनिर्भुकरसस्य शोषण-  
पर्यन्तं सम्यग्मर्दयित्वा सर्पप्रमाणांश्चायाशुष्कां  
वटीः कुर्यात् । प्रातःसायं वटीद्वयं गोघृतानुपाधेन  
परिपेय्य कटुष्णजले तोलकं मधु मेलयित्वाऽनुपे-  
यम् । आढकीखण्डयुषो गोघृमरोटिका च पथ्या ।  
सप्तदिनपर्यन्तमौषधं निषेध्य विंशतिदिनपर्यन्तं पथ्यं  
पालनीयम् । मासद्वयपरं मुद्रात्रं भक्षणनीयम् ।  
ततोऽन्यच्छाकशाराऽम्लधूमपानादिकं सर्वथ त्या-  
ज्यम् । यदि वट्टमूलः पक्षवातः स्याद्विषसाहमौषधं  
सेवनीयम् ।

### १२ पूरवटी (रक्तपूरवटी)

पञ्चतोलकं रक्तपूरलण्डं गृहीत्वा तदवगाहन-  
पथांस्तस्मिन्निधाय दिनत्रयपर्यन्तमातपे शोष-  
येत् । प्रत्यहं नवं स्तन्यं पूरणीयम् । चतुर्थदिवसे  
कर्पूरदारुलाग्नमलं दूरीकृत्य हरच्छलोहकटाहं १५  
तोलकं शुद्धं मधु निक्षिप्य पूरदाफलं निधाय दीपा-  
ग्निना मधुशोषणपर्यन्तं पचेत् । ततःपरं पूरदाफलं  
स्रव्ये निक्षिप्य पलाघातनामज्जगोघृमपिष्टानि प्रति  
सपादतोलकानि मेलयित्वा शुद्धजलेन द्विदिनं  
विमृष्टं मसूप्रमाणा वटीश्चायाशुष्काः कुर्यात् ।  
प्रातःसायमेकैकां वटीं भक्षयेत् । द्वितीयदिवसादा-  
रभ्य त्रिदिनपर्यन्तमेकां वटीं घेलाह्वयं प्रवर्धयेत् ।  
पञ्चमदिवसार्थवर्धकदेशीहासः, पथं सप्तदिवसैः  
प्रयोगमनुष्ठाय चतुर्दशदिवसपर्यन्तं क्षीराश्लेषो  
स्यात् । मासद्वयपर्यन्तं च स्त्रीसङ्गो देयः ।

### १३ पूर्णचन्द्रोदयरसः

रजतसुवर्णताम्रनागवह्नाऽम्लककान्ततीक्ष्णविद्रुभ-  
मुकापादोदममाशिकमस्मानि, शुद्धटङ्कणमनाशि-  
लागन्धकांश्चेति सयान्स्ममागान्गृहीत्वा मुद्रपूर्णै-  
रक्तकापोसपुष्पशीरविदारीभाषपर्णाजम्बीरनुलस्यम्-

तास्वरसेरैकैकदिनं विमृष्ट शुष्का घटिका विघ्नाय काचकूपिकायामथरुद्धय दिनत्रयपर्यन्तं त्रिविधाश्रि-  
भिर्यालुकायन्त्रे पाकं कुर्यात् । स्वाङ्गशीतमौषधं  
खल्वे निक्षिप्य मृगमदजातीपत्रकपूरैरामरिचनाग-  
केशरत्नकक्रोडलवङ्गपिप्पलीजातीफलानां सममा-  
गानां चूर्णं समानं मेलयित्वा नागवह्नीदलरसेन  
विमृष्ट गुञ्जाप्रमाणा घटिकाः कुर्यात् । ताम्बूलीस्व-  
रसेन सहैकैका सेवनीया । अनेनोन्मादमूर्च्छाक्षयपा-  
ण्डुकामलाहलीमककफरातवृद्धणीस्वरऽऽमयश्वा-  
सकासरक्तपित्ताऽऽनाहराजयश्मप्रमेहादयो नश्यन्ति ।  
गण्डदण्डिर्देहपृष्ठीरक्तवृद्धिश्च भवति । दुग्धघ्नं करारं  
पथ्यम् ।

### १४ पैस्यान्तरसायनम्

आर्द्रकं ५ पलं, सैन्धवं २॥ पलं, मरिचानि २  
पलानि, सूर्यक्षारं १॥ तोलकं गृहीत्वाऽऽर्द्रकं जलेन  
प्रक्षाल्यऽवशिष्टानि द्रव्याणि विमृष्टाऽऽर्द्रकेन सूर्य-  
क्षारं मेलयित्वा यामययं सम्यग्निमृष्ट वर्दास्थिप्र-  
माणा घटिकाः कुर्यात् । एकैका घटी सेविता चेत्विस्त-  
यातयमनपाण्डुरासकासाऽऽजीर्णदयो रोगा निवर्त-  
न्ते । गर्भिणीनामपि श्वासकासगलपादशोथादिकं  
नश्यति । पथ्यं यथोचितम् ।

### १५ प्रमेहारिरसः

शुद्धाहिफेनजातीफलमृगमदहिमसारदण्डरक्त-  
कानरसारसूर्यक्षारशुक्रिकाशुद्धश्चेतमलानेकैकतोल-  
कागृहीत्वा श्वेताकृष्टीरेण यामयचतुष्टयं विमृष्ट चक्रि-  
कां विधाय सग्न्यं संशोष्य नूतनमुष्टमाण्डं ४० तो-  
लिकां शुधामास्तीर्य तदुपरि चक्रिकां निधाय ४०  
तोलिकया सुधयाऽऽच्छाद्य २४० उत्पलकैः पुदं  
दद्यात् । पतदौषधं गुञ्जाचतुष्टयमामिक्षाऽनुपानेन  
देयम् । पथ्यं यथोचितम् । अनेनोपसर्गिकप्रमेहा  
नश्यति ।

### १६ विल्वमूलादिवटी ( विल्वमुरारिः )

शुद्धपारदगन्धकविल्वमूलत्वक्तालीमपत्रपूतक-  
रुद्धीजप्रन्थितगरत्रिफलाऽरिष्टशीजमज्जहस्त्रिदादर्वी  
१-१ तोलिकाः गृहीत्वाऽजामूत्रेण दिनत्रयपर्य-  
न्तं विमृष्ट घटीविधाय स्त्रीरतनयेन नेत्रयोरुन्नं  
देयम् । अनेन सर्पवृद्धिकादिविषाण्ययुर्वृद्धिसूत्र्यजी-  
र्णवाय्वादिरोगा निवर्तन्ते अम्लघर्ष्यं पथ्यम् ।

### १७ महूरसः ( महादिः )

गोक्षीरस्वेदितं महं स्तन्यशुद्धं दरदमैकैकतो-  
लकं पृथक् चूर्णीकृत्य शरावे चूर्णद्वयमपि निक्षिप्य  
पञ्चसततिजम्बीरफलस्वरसप्राप्तं दद्यात् । पतति-

यासम्पादने दिनचतुष्टयं भवति । ततः परं शराव-  
स्थमौषधमैकीकृत्य चतुर्गुणितं प्रष्टुद्रुपिप्पलीचूर्णं  
मेलयित्वैकदिनपर्यन्तं विमृष्ट काचपात्रे रक्षयेत् ।  
विमृष्टिवत्सरान्तरितश्वासकासव्याधिषु तण्डुलप्र-  
माणं गोघृतेन सह देयम् । एकवारभक्षणेनैव प्रबल-  
श्वोसोपशान्तिर्भवति । दुग्धघ्नं पथ्यम् ।

### १८ महाप्रतापरसः

एकस्मिन्काचपात्रे सद्योगोमयं विन्यस्य हस्तेन  
घटिकाद्वयं सम्यग्वृद्धा फुस्कसं निःसार्य कृण्णतुल-  
सीकल्केनैकयामपर्यन्तं घृष्टा त्रितोलिकया शर्करया  
सहैकतोलकं पारदं मेलयित्वैकतापर्यन्तं हस्तेन  
घर्षणीयम् । यदा पारदोऽदृष्टः सन् शर्करया सहैकी  
भवति तदा त्रिशम्भाघ्राः कार्याः । मात्राद्वयं  
गृहीत्वा सूर्याभिमुखत उज्जया सूर्याय समर्प-  
यित्वा दन्तस्पर्शं विना निर्गलित् । किञ्चिच्छी-  
तोदकमनुपानतया पेयमेधं सायमपि दातव्यम् ।  
पथं सप्ताहपर्यन्तमौषधं सेवनीयम् । दुग्धघ्नं पथ्यं  
मितरक्तिमपि न भक्षणीयम्, यदि मुत्रपाकः स्यात्ता-  
म्बूल्यह्नीदलेन सह गन्धकतैलं भक्षणीयम् । अनेन  
गण्डमालाऽपचौराजव्रणमगन्दरगलकुष्ठादयः सर्वे  
रोगा निवर्तन्ते । एकसप्तकेन रोगनिःशेषता न स्या-  
त्सर्दि द्वितीयसप्तकेऽपि दातव्यम् ॥

### १९ महामूर्च्छान्तरसायनम्

कान्तलोहयोमैरम २-२ पलं, चन्द्रसारत्रिकुटु-  
त्रिफलाकुष्ठाऽऽकारकभगजपिप्पलीजीरकद्वयविड-  
ङ्गधान्यंकेलायीजलवङ्गजातीफलजातीपत्रजदामांसी-  
तक्रोडत्वङ्गागकेशरत्नयत्रिचूतः प्रत्येकपलिका गृही-  
त्वा धस्रपूतं पूर्णं विधाय नागरं ८० पलं, जम्बी-  
ररसः ४० तोलकः, बीजपूररसः ४० तोलकः, वृह-  
जम्बीर ( संगदराज ) रसः ४० तो०, मृगमदः  
पादतोलकः, गोघृतं ४० तो०, मधु २४ तो०, देशी-  
यशरूपा ८० तोलिका, पतानि सहृदा ३०० तोलक-  
नीलकण्ठुरामूलस्याऽष्टमाणाऽरिशिष्टकाये शर्करां  
निक्षिप्यापयुक्तसारान्द्रत्वा तन्तुपाकं विधाय नृगं  
प्रक्षिप्याऽवलोक्य मन्दार्द्रि रज्ज्वा मध्याग्यादिकं  
निक्षिप्याऽन्ते कस्त्र्यादिसुगन्धिद्रव्याणि मेलयित्वा  
लेहपात्रेन सिद्धं रसायनं गृहीत्वा रूपायेत् । दीवे-  
कालमूर्च्छांरोगिमिरेतदामलकप्रमाणं लेहं प्रत्यहं  
प्रातः सायञ्च मेननीयम् । अनेन चण्डरूपपञ्चविध-  
मूर्च्छापित्तकासाऽम्लपित्तसिराऽयरोधवासासम्प्रा-  
यरोधपित्तपिडिकाप्रभृतिरोगा नश्यन्ति । पथ्यं रोगा-  
नुकूलम् ।

दि०—अत्र चन्द्राशब्देन कण्डूत्वादक क्षुपो आसौ न तु मर्कटी, आग्राधौ तथैव व्यवहारात् ।

## २० मेहगजाङ्गुशरसः ( महदादि )

एकतोलकं कडुपुष्टं ( मृदाश्चट्टं ) विशोष्य कृष्ण-  
तुलसीपत्रजम्बीररसाभ्यां प्रतिघटिकाद्वयं ग्राह्यं  
दत्त्वा पूर्वांकरसद्वये एकदिनं विमान्य परेषुः सम्यक्  
प्रक्षाल्य शोषयित्वा विद्युर्थं मरिचहरिद्रे एकैकतोल-  
के संयोज्येकयाममर्दनेन कडुपुष्टं सिन्दूरं भवति ।  
एतदुज्जाद्वयपरिमितं गोघृतेन सह सेवनीयम् । गो-  
धूमरोटिका दुग्धञ्च पथ्यम् । शर्करा, घृतं, तण्डु-  
लाक्षं, क्षारत्रयादिकं सुतरां घर्ज्यम् । यत्र मेहरोगा-  
निष्पद्यशास्त्रसर्वमपि शरीरे स्फुटितं सङ्गणस्या-  
नेभ्यः किम्यादयः समुत्पद्यन् प्रयादिकं प्रसरति एता-  
दृशमेहुरोगस्यैतदौषधम् । दिनत्रयमेव दातव्यम् ।  
चतुर्थदिवसे बृहज्जम्बीररसमिलितहरिद्रासंयुक्तं चि-  
त्राक्षं भक्षणीयमौषधं न सेवनीयम् । एकसप्तकं व्य-  
तीते सति शुद्धगन्धकससिन्दूरपुराणतण्डुलाः १-१  
तोलकाः, रसकर्पूर २ तोलकं, शुद्धकडुपुष्टं पादतोलकं  
सर्वाण्यपि शुद्धजलेन विमृष्टं गुञ्जाप्रमाणा घटिकाः  
कुर्यात् । सप्ताहपर्यन्तं प्रत्यहं प्रातःकाले घेरण्डतेले  
एकां घटीं निमज्ज्य भक्षयेत् । आढकीखण्डपूपाक्षं  
पथ्यम् । अन्यत्किमपि न भक्षणीयम् । लघणः सुतरां  
घर्जनीयः ।

## २१ मेघनादरसः

सूर्यक्षारः १६ तोलकाः, नरसारः ९ तोलकाः,  
स्फटिका ५ तो०, गोदन्तं ( कर्पूरशिलाजतु. तै० )  
४ तो०, कलनाटमरस ( सङ्गेपलीता यू० ) २ तो०,  
प्रयालमरस ५ तो०, एतानि सर्वाण्यपि विद्युर्थं  
मृत्पात्रे निधायैकशततोलकं नारिकेलजलं निक्षिप्य  
जलाघशोषणपर्यन्तं पाकं कृत्यौषधं ग्राह्यम् । एतदौ-  
षधं गुञ्जावतुल्यपरिमितं शर्करामिश्रितमद्रमुस्तार-  
सेन, तण्डुलसालनोदकेन, नारिकेलजलेन वा देयम् ।  
अनेन लिङ्गदाहोपदेशोपसर्गिकमेहा नश्यन्ति ।

## २२ मेहपञ्चाघृतवटी

शहमरस ५ तोलकं, गोदन्तं ( कर्पूरशिलाजतु )  
कलनाटमरसेलायीजतफोलानि प्रत्येकं सपादतोल-  
कानि गोक्षीरेण नारिकेलजलेन च प्रतियामद्वयं यद्वे-  
यित्वा कतकयीजशोधितजलेन सह कतकचन्दनेन  
वा एका घटी देया । रक्तपीतशुद्धकृष्णमेहादिनिवृत्ति-  
र्भरति । पथ्यं यथोच्छ्रम् ।

## २३ मेहाङ्गुशरसः

शुद्धददः ५ तोलकाः, जार्ताफलं २॥ तो०, जार्ता-  
पत्री मेहाङ्गैकतोलकं, एतानि सर्वाणि विद्युर्थं

शुष्कारिकेलगोलकान्तर्निक्षिप्य तेनैव गोलकख-  
ण्डेन छिद्रं पिघाय पञ्चशेकगोक्षीरे निक्षिप्य  
सर्वस्य क्षीरस्याऽवशोषणपर्यन्तं पाकं कुर्यात् ।  
क्षीरसत्त्वेन सह नारिकेलखण्डादिकं मिलित्वा किट्ट-  
रूपतयोपलभ्यते । तन्नीलवर्णं किट्टं सम्यग्विमृष्टं  
स्थापयेत् । एतदुज्जाद्वयपरिमितं घृतेन मधुना वा  
देयम् । एतेन रक्तपीतशुद्धहरिद्रातन्तुमधुमेहादयो  
निवर्तन्ते । पथ्यं रोगानुकूलम् ।

## २४ मेहान्तकरसः ( महदादि. )

शुद्धपारदगन्धकविपताम्रमरसत्रिकटुकरेणुकाभ-  
द्रमुस्ताजटांमांसेलावीजलवद्गन्धकमूलत्वग्जाती-  
फलजातीपत्रकेशरचन्द्रसारविडङ्गानि समभागानि  
चूर्णीकृत्य विजयापन्नरसेनाऽऽभावना दत्त्वा छाया-  
गुणं विधाय मधुना लेह्यपाकं कृत्वा चणकप्रमाणं  
सेवनीयम् । अनेन विशतिर्महाः, अजीर्णश्वासकास-  
क्षयातिसारव्ययधुवहुम्भादयश्च रोगा नश्यन्ति ।  
पथ्यं यथोचितम् ।

## २५ मृतोद्धारणरसः

शुद्धमलमृषिकनौरीदोडिहिरिलपापानानि शुद्ध-  
पादविड्गुलमनःशिलागन्धकयत्सनामटङ्गानि, ता-  
म्राऽम्रकलोहमरसानि, क्षारजलवर्णपञ्चकातिवि-  
पाकुष्ठानि च सर्वाणि समभागानि गृहीत्वा त्रिकटु-  
कचित्रककाथाभ्यां जयपालवीजतैलेन सैकैकदिनं  
विमृष्टं कृष्णसर्पमयूरकूर्ममहिषीछागपित्तानामेकैक-  
तोलकानां क्रमशो भावना दत्त्वा गुञ्जाप्रमाणा घटि-  
काः कुर्यात् । भीमसेनकर्पूरानुपानेन यद्वा शर्करया  
सेवितव्यम् । सोपद्रवाणां सन्निपातदोषाणां निवृत्ति-  
र्भवति । श्लेष्मप्रधानवातरोगोऽपि नश्यति । नारि-  
केलजलपानं, धीचन्दनलेपनं, कामिनीसम्भाषणञ्च  
न कार्यम् ।

## २६ रसरारजपर्वटी

समभागपारदगन्धकयोः कजली द्वयीकृत्य सम-  
भागं ताम्रलोहयोर्मरसं मेलयित्वा कमलाम्बिना  
मृदुपाकं विधायैरण्डपत्रेषु पर्पटिकां कृत्वा जम्बीर-  
रसेन पञ्चकोलककायेन सैकैकदिनं भावयित्वा सं-  
शोष्य तण्डुलमण्डनेकदिनं विमृष्टं पूर्वांतीपघसमं  
टङ्गणं सौवर्चलञ्च मेलयित्वा यथादर्भां मरिचचूर्णं  
संयोज्य चणकासलेन सप्तदिनपर्यन्तं विमृष्टं शोष-  
यित्वा यथानास्यां स्थापयेत् । एतद्वर्णकप्रमाणमु-  
पानविशेषैः सर्वरोगेषु दातव्यम् ।

दि०—रसरजपर्वटीनाऽपि भावनावच्छेदव्यापारपत्तेन प्रदर्शिता ।

## २७ वसन्तकुसुमाकररसः ( प्रथमः )

सुशुद्धं कनकं तारं रसेन्द्रं पञ्चनिष्पकम् ।  
यद्गमस्य च सिन्दूरं ताप्यं लेहमयामलम् ॥

प्रत्येकञ्च चतुर्निष्कं कान्तं गरलमेव च ।  
ताम्रमस्रम त्रिनिष्कं स्यात्प्रवालं मौक्तिकन्तथा ॥  
कर्पूरञ्च तथा कुयात्कस्तूरीं द्वयनिष्किकाम् ।  
सम्मर्द्य वासास्वरसे त्रिदिनञ्च भिषग्वरः ॥  
शतावरीगोक्षुरजैर्विदारीवटरोहजैः ।  
सारिवासाहदेव्युत्थैश्चन्द्रनाद्धिश्च खादिदैः ॥  
कार्पासपुष्पपक्ष्मकनेर्विधुमृणालजैः ।  
मालतीपुष्पसेव्योत्थैरेभिद्रावैः पृथक्पृथक् ॥  
भावयेत्सप्तदिवसान् सेवनीयं प्रयत्नेतः ।  
गुञ्जाएकप्रमाणेन सिताऽऽज्यमधुसंयुतम् ॥  
नयनीतेन सम्मिश्रं गद्यां क्षीरश्रियोजयेत् ।  
प्रत्यहं रक्तिकामात्रं प्रमाणं वर्धयेत्ततः ॥  
गुञ्जावोडशपर्यन्तं वर्धयेत्सर्वरोगजित् ।  
कृष्णं रक्तञ्च पीतञ्च श्वेतञ्चैव प्रमेहकम् ॥  
अस्थिक्वाथं क्षोमरोगमरोचकमघृन्दरम् ।  
मांसघावनसङ्काशं सर्वातीसारमेघ च ॥  
प्रमेहाग्निशतिविधाम्भुजदोषांश्च विनाशितम् ।  
अशीतिं शुद्धाप्रोगान्स्वर्णशूलहरं परम् ॥  
ऊर्ध्वशूलं योनिशूलं पाष्पशूलं विरोधतः ।  
विनाशयेत्किं बहुना कृष्यं धातुपियर्धनम् ॥  
आयुष्यं पुष्टिं मेघ्यं कान्तिशीभाग्यवर्धनम् ।  
महावसन्तनामाऽयं कुसुमाकर ईरितः ॥  
वर्षेकं भक्षयेन्नित्यं हन्ति रोगानशेषतः ॥

### २८ वसन्तकुमुदाकररसः ( द्वितीयः )

गोदोचनं केशरञ्च समभागं, द्वयोः समं शिलाज-  
तुमस्रम् ( सफेदसुरमा ), सर्वसमं निम्बनिर्यासम्,  
एतत्सर्वमपि खल्वे निधाय गोदध्ना दिनचतुष्टयं  
मर्दयित्वा मुद्रप्रमाणां वटीं कुर्यात् । इत्येतरक्तप्रदरा-  
दिषु प्रमेहेषु च तण्डुलोदकेनोपयोज्यम् ।

### २९ वातगजाङ्कुशरसः ( महादादिः )

पारदं रक्तमुरगं रौप्यकं कनकन्तथा ।  
मण्डूरं नागसिन्दूरं श्यूपणं भृङ्गमलिका ॥  
गारुत्मतश्च मुक्ताश्च समं चूर्णं प्रकल्पयेत् ।  
घातप्रधानरोगेषु टङ्कणं विपसंयुतम् ॥  
आर्द्रकस्य रसेनेव कृष्णनिर्गुण्डिकारसैः ।  
नागवल्लीरसेनेव जम्बीररसमर्दितम् ॥  
प्रत्येकं त्रिविष्टयैयं पङ्क्तिग्रायेन मर्दयेत् ।  
सर्वेषां घातरोगाणां दद्याद्युक्तरसेन ये ॥  
अपस्मारि धनुवांते विद्रुषां रक्तगुल्मके ।  
अदमरीमृत्ररुच्छ्रेषु सर्वगात्राङ्गम्पने ।  
प्रयुतघातरोगेषु हनुस्तम्भेषु पारदके ।  
महानयं सर्वघातगजाङ्कुश इतीरितः ॥  
पथ्यं यथोचितं प्राह्यं सर्वरोगेषु योजयेत् ।

### ३० व्रणान्तकरसः ( महादादिः )

यवानिका ४ तोलिका, खुपसानिका ५ तोलिका,  
क्षुद्रहरीतकी ४ तोलिका, अम्लतकशोधितमहात-  
काः ४ तो०, पारदः १ तो०, रक्तकर्पूरम् १ तो०,  
मधुस्तुत्यं १ तो०, एतानि चूर्णीकृत्य १२० निम्बुक-  
रसेन मर्दयित्वाऽरिष्टबीजप्रमाणां वटीं कुर्यात् । एका  
वटी प्रातर्गोघृतानुपानेन निर्गिलनीया । क्षीरशर्क-  
राचं पथ्यम् । एवं सप्ताहं कार्यम् । चणकमसूरमुद्र-  
मूलकघातिकादयः सुतरां वर्जनीयाः ।

### ३१ सखीरसिक्पकम्

शुद्धसखीरसैन्धवविडलघणौपरस्यैक्षारस्फटि-  
कासमुद्रलयणानि १-१ पलानि विचूर्ण्योर्ध्वनलिकाय-  
न्येन द्रावकं प्राह्यम् । महाद्रावकयद्रोगेषूपयोजनीयम् ।

### ३२ सखीरसिक्पकम्

एकतोलकं सखीरं परिपक्कारयेत्तुफले विन्यस्य  
मृद्वसैः संघेष्ट्य त्रिभिश्चतुर्भिर्वात्पलकैः पुष्टं दत्त्वा  
त्यक्चकटाहं निक्षिप्य शिष्टमृद्वमूलककारयेत्त-  
तामृद्वलपनतुलसीरक्तकार्पासपत्रस्थरसान् प्रतिपञ्च-  
तोलकान् दत्त्वा विपचेत् । शुष्के सति पञ्चतोलकं  
मधु मिश्रयित्वा काचपात्रे सम्भृत्य स्थापनीयम् ।  
एतत्सखीरसिक्पकमसाध्यभ्यासकाससन्निपातन्या-  
धिषु महाघातप्रकोपे च द्विविदारमुपयोज्यम् । एत-  
दोपपसेवितां मधुरं वर्ज्यम् ।

### ३३ सिक्पद्रावकम् ( महाद्रावकम् )

स्वदेशसिक्पकं २४ तोलकं, सिक्ता १६ पलिका,  
शुद्धमहापापानरसकर्पूरदरदचन्द्रसारतुल्यकसैन्धव-  
स्फटिकापिप्पलीमूलजीरकक्षुद्रपिप्पलीपयानीराजि-  
कारास्नाहरीतक्यः प्रत्येकपलिकाः, महिषाक्षगुग्गुलुः  
२ पलः, एतेषु महारसकर्पूरदरदान् सम्यग्विचूर्ण्य  
शेषद्रव्यचूर्णे मिश्रयित्वा सिक्पकञ्च सङ्कुच्य सर्वमपि  
सिक्तायां मेलयित्वा पुष्टमृद्राण्डे निधायोर्ध्वनलि-  
काविधिना निःशेषं द्रावकं प्राह्यम् । एतद्दिन्द्रुचतुष्टयं  
शुद्धजलानुपानेन दत्त्वोर्ध्वशरापे पतद्भिन्नं मस्रं तण्डु-  
लपरिमितं मधुना सह पञ्चयदिनानि दातव्यम् ।  
श्वयधुरोगिणां तत्क्षणं मूत्रं निःसरति । असाध्यो  
महानपि करपादादिशोषो दिनप्रयाऽभ्यन्तरे क्षयं  
याति । पथ्यं यथोचितम् ॥ ( भोजप्रवन्धात् )

### ३४ सुवर्णसूर्यावर्तारसः

स्वर्णमस्रं त्येकभागं स्वर्णाङ्गं मृगनामकम् ।  
मृतरौप्यञ्च कान्तञ्च माद्रीकं मौक्तिकन्तथा ॥  
हमकापांससूत्रमेला गोवर्णकुमुमं क्षिपेत् ।  
नागरं टङ्कणञ्चैव कारुयिग्याञ्च योजकम् ॥

अमृतं सर्वद्विगुणमेतद्व्येषु निक्षिपेत् ।  
 दरदञ्चापि सर्वाङ्गे जम्बीररसमर्दितम् ॥  
 आर्द्रकस्वरसेनैव सप्तवारञ्च मर्दयेत् ।  
 लवङ्गस्य कपायेण पञ्चवारञ्च मर्दयेत् ॥  
 खर्जूरस्याऽनुपानेन क्लीबत्वन्तु विनाशयेत् ।  
 द्राक्षाफलानुपानेन उन्मादक्षयकृत्तया ॥  
 आर्द्रकस्याऽनुपानेन हिक्राहृद्रोगनाशनम् ।  
 गुडामात्रं द्विगुञ्जं वा अनुपानविशेषतः ॥  
 सर्वशूलप्रशमनं चित्तविघ्नमनाशनम् ।  
 अस्थिहृद्रततापञ्च पुराणज्वरनाशनम् ॥  
 महासूयावर्तस्त्रो नानारोगनिपूदनः ॥

### ३५ सूतिकाभरणरसः

शुद्धपारदगन्धकविषदरददङ्गणमरिचानि समभागानि भृङ्गाऽऽर्द्रकस्ताभ्यां प्रति यामद्वयं विमृष्टजयपालयीजतैलेन यामत्रयं सम्यङ्मर्दयित्वा शृङ्गसम्पुटे स्थापनीयम् । एतदौषधं सूक्ष्मकायेण किञ्चिन्मात्रमादाय जिह्वायां घर्षणमात्रेण सोपद्रवाः सन्निपाता शान्ता भवेयुः । वाताः शिथिला भवन्ति । पर्ययं यथोचितम् ।

### ३६ स्वच्छन्दरसः ( रसस्वच्छलः )

समभागञ्च सङ्गाढं पाट्वाऽमृतगन्धकम् ।  
 जातीफलञ्च भागाङ्गं पिप्पलीसमभागिका ॥  
 अहिबल्ल्युत्थनीरेण मर्दयित्वा दिनद्वयम् ।  
 पण्मासं भावयेद्भाह्नः पक्वजम्बीरसारतः ॥  
 अञ्जनं सन्निपातादौ तमोमोहाप्यनाशनः ॥

## विसृष्टरसः

### ३७ अजमोदादिधूर्णम्

अजमोदाऽम्रकं रास्ता शुद्धची चिन्धमेपजम् ।  
 शतपुष्पाऽभ्रगन्धा च शतमूली समाशतः ॥  
 सुलक्षणचूर्णमेतेषां भक्षितं सर्पिषा सह ।  
 हृत्पृष्ठकटिकोष्ठस्थं मारुतं हन्ति वेगतम् ॥  
 हितो, वातरोगे ।

भाषा—अजमोद, अम्रकमूल, रास्ता, गिलोय, लौड, सोंफ, देशी असमग्न और शतावर समभाग लेकर बारीक चूर्णकर रखोढ़े । इसमेंसे १ से २ मासेतक घी अथवा उचितानुपातके साथ लेनेसे हृदय, पीठ, कमर, और कोष्ठव्याधतको यह शीघ्र नष्टकरताहै ।

### ३८ अमरमुन्दरी गुटिका

कान्तचूर्णं पलान्यष्टौ पलान्यष्टौ रसस्य च ।  
 पक्वीकृत्याऽथ सम्मर्धं बीजपूराम्लमर्दितम् ॥

मर्दयेत्तप्तखल्वेन गोलको भवति क्षणात् ।  
 मृतवज्रस्य भागैकं गोलभागचतुष्टयम् ॥  
 पक्वीकृत्याऽथ सम्मर्धं भस्मीभवति सूतकः ।  
 मारयेद्भूधरे यत्रे सप्तसङ्कुलिकाः क्रमात् ॥  
 तद्भस्म भागमेकन्तु भागैकं गन्धकस्य च ।  
 अन्धमृषागतं घ्मातं खोटो भवति तत्क्षणात् ॥  
 द्वात्रिंशन्मृतखोटस्य शुद्धहेमश्च विंशतिः ।  
 तारं तापत्रं व्योमसत्त्वं कान्तसत्त्वं चतुर्थकम् ॥  
 एकैकं द्वादशांशाः स्युः सर्वमेकत्र कारयेत् ।  
 अन्धमृषागतं घ्मातं खोटो भवति तत्क्षणात् ॥  
 द्वात्रिंशन्मिलतः खोटान् सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् ।  
 तत्खोटसूक्ष्मचूर्णन्तु आरौद्ररससंयुक्तम् ॥  
 मर्दयेन्मध्यमाभलेन गोलको भवति क्षणात् ।  
 गोलकस्य पले द्वे च मृतकान्तस्य तत्समम् ॥  
 पक्वीकृत्याऽथ सम्मर्धं मेघनादरसेन च ।  
 मुनिपुष्परसेनैव दिनमेकञ्च मर्दयेत् ॥  
 गुटिकाः कारयेदेवि पृथगधिकशतत्रयम् ।  
 तत्रैकां गुटिकां सर्पिलिफलामधुसंयुताम् ॥  
 भक्षयेद्वर्षमेकन्तु ब्रह्मायुर्जायते नरः ।  
 सर्वांस्ता भक्षयेत्पञ्चाद्रुद्रासुः स भवेन्नरः ॥  
 अथेका धारिता वरुने गुटिकाऽमरमुन्दरी ।  
 हठाद्रोगान् समस्तांश्च पलितानि च नाशयेत् ॥  
 रसाङ्गं, रसायने ।

भाषा—कान्तलोहचूर्ण और शुद्धपाटा ८-८ पल मिलाकर तप्तखल्वे में बालकर बिजोरेके रससे गोलीबननेतक मर्दनकरे । इसमें चतुर्थांश वज्रभस्म बालकर तप्तखल्वे में मर्दन करनेसे पारेकी भस्म होजाती है । फिर उसका गोलाबनाय बारावत्संयुक्तमें बन्दकर मृषपुटकी आंचदे । स्वाज्ञशीतल होनेपर निकालकर एकदिन पूर्ववत् तप्तखल्वे में बिजोरेके रसकेसाथ मर्दनकर गोला बनाय पूर्ववत् मृषपुटकी आंचदे । ऐसे ७ बार पुट देनेकेबाद यह स्थायी भस्म होजाती है । इस भस्मको बराबर शुद्ध गन्धक मिलाकर अन्धमृषासे घमन करनेसे खोट होजाता है । यह खोट ३२ माग, शुद्धधुवर्ण २० भा०, रजत, तांब, अम्रक और कान्तसत्त्व ३-३ माग लेकर सबको इक्का मिलाय अन्धमृषासे घमन करनेसे खोट तैयार होगा । इस खोटकी बराबर शुद्धपाटा मिलाकर मध्यमाभलेसे तप्तखल्वे में मर्दन करनेसे गोला तैयार होगा । इस गोलेमेंसे १ पल, कान्तलोहभस्म २ पल लेकर कटिवाली चौलाई और अलस्यपुष्पके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ३६० गोलिएं बनाकर रखोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली घी, मधु और त्रिफलाके चूर्णके साथ एक वर्षतक लेनेसे ब्रह्मायु होता है । इसीतह समस्त गोलेकी गोलिएं ११ सेवन करनेसे श्वासु होता है । इसमेंसे १-१ गोली मुँहमें रखनेसे समस्तदोग और बलीपक्ति नष्टहोतेहैं ।

## ३९ अभीररसः

रसेन्दुर्वर्द्धं दालिचिकणं तारतन्त्रवः ।  
 कर्पं कर्पं समाहृत्य कणिकाः कल्पयेत्तनुः ॥  
 तवके पटुमास्तीर्य तव ताः कणिका न्यसेत् ।  
 विधाय पटुना नेमिं पिदध्याचीनपात्रतः ॥  
 तद्धो ज्वालयेद्बहिर् शनैः प्रहरत्रयम् ।  
 स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य चीनपात्राऽवलम्बकम् ॥  
 अथाद्मीरनामानं ग्रन्थिवातोपदेशवान् ।  
 अहानि सप्त नव वा मर्यादाऽमुष्य भक्षणे ॥  
 सितासखं पयो गव्यं पय्यं गोधूमफुल्लिका ।  
 निपजामुपकारार्थं रसोऽयमत्र कीर्तितः ॥  
 गुल्लैका वा द्विगुला वा मात्राऽमुष्य यथामयम् ।  
 पित्राय द्राक्षया प्रातर्गिलेह्यतेन च स्फुरेत् ॥  
 पटोद्वेष्ट्रीणि पलानीह तत्र स्वास्तरणं पलात् ।  
 द्वाभ्यां पलाभ्यां घटयेत्परितो नेमिवन्धनम् ॥  
 सि. मे. म., वातव्याघ्रधिकारः ।

टि०—अयं रसकूपरं ध्याति भावप्रकाशीयकूपरं भाण्डेस्वरान्नं  
 विष्णुगुणोऽपि नास्ति परन्तु मन्त्रेण विशेषतया लम्प्यतिष्ठोऽस्ति  
 अस्त्यस्थाने भावप्रकाशीययोगे विशेषतया लाभप्रदोऽस्ति ।

भाषा—एक साफ तवेपर एकपल बारीक सेंपेनमकका  
 चुरे विछाकर रसकूपर, शिंगरिफ और दालचिबना १-१ कप  
 लेकर बारीक ढुके बनावकर नमकपर रखकर एककप चांदीकी  
 जरीको कैंचीसे बारीककाटकर उसपर बिछाकर चीनीके  
 प्यालेसे ढकदे और १ पल नमककेचूर्णकी चारोंतर्फ दीवाल  
 बनावे, फिर तबैको चूल्हेपर कढाय बेरकी पतली दो लकड़ि-  
 योंकी मन्दआंच देकर १ पहर पकावे । चार सह भीगाहुआ  
 कपड़ा प्यालेके पैंदेपर रखतारहे । स्वाङ्गशीतल होनेपर नमककी  
 दीवालको धीरजसे हटाकर प्यालेमें लगेहुए पारदपुष्पोंको  
 निकालकर शीशीमें भरले । इसमेंसे १ से २ रत्तीतक द्राक्षके  
 अन्तर अन्तर मिलाकर दे, दालोंमें न लगे ऐसे ७, ९ या १५  
 दिनतक सेवन करे । शकर मिलाहुआ गायका दूध, गेंहूँकी  
 रोटी और धोंके सिवाय कुछभी खानेको न दे । इसके सेवनसे  
 ग्रन्थिवात और ज्वरदश नष्ट होते हैं ।

## ४० अर्धनारीश्वररसः

सूतो गन्धकतालके मणिशिला हिङ्गलताप्ये विपं,  
 संशुद्धं विपतिन्दुधमजनितं नागारियुक्त्वा लङ्गली ।  
 सर्वं श्लक्ष्णशिलातले मुनिदिनं सम्भाव्य भृङ्गद्रवैः,  
 संशोष्याऽथ विधाय चूर्णमखिलं स्वादर्धनारीश्वरः ॥  
 गुल्लैका खलु चार्द्रवारिसहितां दद्याज्ज्वरे दारुणे,  
 द्रन्द्वे वाऽपिलसन्निपातजनिते भूतप्रदे च ज्वरे ।  
 तोयं चाऽथ सुततशीतलमथ क्षारोदकं वा पिबेत्,  
 तप्तं पथ्यमथाचरेद्दि लवणं शाकादिभिर्वर्जितम् ॥  
 र. बो., सपिपाते ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, इरिताल, मैनसिल, शिंगरिफ,  
 सोनामासी, बलनाग, कुचिला, गुहधूम, वासिखेखसा और करि-  
 हारी समभाग लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर भंगरेके रससे  
 ७ दिन मर्दनकर सुखाकर रसछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती अद-  
 रसके साथ देनेसे भयङ्करज्वर, द्रन्द्वज, सापिपातिक, भूत और  
 महाविषाज ज्वर इन सबको यह नष्टकरता है । गरम करके ठंडा  
 कियाहुआजल अथवा क्षारोदक पिलावे । संधानमकवाली-  
 हुई छाल देने । शाक घेरहुका त्याग करे ।

## ४१ अश्वत्थवल्कलादिलोहम्

अश्वत्थवल्कलञ्चैव त्रिकटुलौहकटुकम् ।  
 शुडेल सह दातव्यं क्षयरोगविनाशनम् ॥

नि. र., क्षयाधिकारः ।

भाषा—पीपली छाल, त्रिकटु और लोहभस्म समभाग  
 लेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ मासा गुहके  
 साथ देनेसे क्षय नष्ट होताहै ।

## ४२ आहवारिरसः

शुद्धैला सामथा कृष्णा लोहान्नखर्परणि च ।  
 समभागं प्रकृतव्यं द्विभागः पारदो मतः ॥  
 सूर्यमेकयु सम्मर्द्य द्रोणपुष्पीरसेन च ।  
 घृतमात्रं प्रशतव्यं पुनर्नयस्सूर्युत्तम् ॥  
 ग्रीहानं यकृतं शोथमग्निमान्द्यमरोचकम् ।  
 नासाज्वरं विशेषेण सर्वञ्च विषमज्वरम् ॥  
 आहवारिरसो होप नाशयेदधिकल्पतः ॥

मे. र., ज्वराधिकारः । आहवो नासाज्वरः ।

भाषा—छोटी इलायची, हरे और पीपल, लोह, अभ्रक  
 और खरैरभस्म १-१ भाग, पारदभस्म अथवा रससिन्दूर २  
 भाग लेकर बारीक चूर्णकर घृमात्ररससे १-२ दिन मर्दनकर  
 १-२ रत्तीकी गोलीबैबनावकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली  
 पुनर्नयके रसके साथ देनेसे शीश, यकृत, शोथ, मन्दाग्नि,  
 अरुचि, नासाज्वर और विशेषतः समस्त विषमज्वर नष्ट  
 होते हैं ।

## ४३ कनकसुन्दररसः

कनकसुन्दररसाम्रकताप्यकं,

प्रपु सवीरविषायसगन्धकम् ।

यसुकराकयुगद्विकुरानल-

त्रितयदिग्गजयुक्लिकारिकाम् ॥

पलमितां विनिधाय विमर्दयेत्

त्रिदिवसं त्रिफलोद्भवैः रसैः ।

मृदुपुटे परितोष्य कृतं रजः

कनकसुन्दर एव महारसः ॥

यमनरेचनगुदतनोः सदा

ऽऽर्द्रकरसेन रसानरसेन वा ।

निखिलकुष्ठकिलासभगन्दरं  
ज्वरविस्पर्गदालसकाञ्चयेत् ।

ना. वि., ३७ ।

भाषा—शुष्कभस्म ८ कर्ष, रजतभस्म २ कर्ष, शुद्धपात्रा १२ कर्ष, अश्रु, सोनामासी और वज्रभस्म २-२ कर्ष, शुद्ध सन्धी ( दालचिनी ) और बडनाग ३-३ कर्ष, लोह-भस्म और शुद्धगन्धक ८-८ कर्ष, करिहारी १ पल लेपर सबकी नीलवर्णदलीकर त्रिकलाके क्वायसे मर्दनकर गोलाबनाय हारावसमुष्टमें बन्दकर मृदुपुटकी आंचदे । स्वाह्मतीतल होनेपर निकालकर रखोछे । इसमेंसे वमनविरेचनादिभेदे शुद्ध किये हुए रोगीको १-१ रती अदरग अथवा लघुनकेरसकेसाथ देनेसे सब प्रकारके पुष्ट, चिन्, भगन्दर, ज्वर, विस्पर्ग, गर और शल्वकको यह नष्टकरता है ।

### ४४ कर्पूरतिलकरसः

समभागं रसं नागं संयोज्य प्रथमं ततः ।  
क्षारस्यैकं गन्धकस्य द्वौ भागौ तत्र मेलयेत् ॥  
तत्सर्वं पञ्चमूत्रेण मर्दयेद्विषसञ्चयम् ।  
त्रिभिर्गजपुटैर्देग्धं भाययेद्वाद्रकद्रवेः ॥  
मुशलीफन्दजेनापि ततः सिद्धो भवेद्रसः ।  
द्विवर्तं मधुना मार्सं कासश्वासात्तुरो भजेत् ॥  
मूत्रहृत् पाण्डुरोगे च तथाऽऽर्द्रकसाम्बितम् ।  
पिष्टम्भशूलकुम्भातंस्त्रिफलाक्वाथतो भजेत् ।  
गोदुग्धेन भजेन्मेही सितामरिचयत्सयी ।  
कर्पूरतिलकः सोऽयं कासे श्वासे प्रशस्यते ॥

र. मू., कायशायोः ।

भाषा—एकभाग शुद्धनागको मलाकर सनभागपात्र मिलावे । फिर दशभाग १ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग मिलाकर बोझा २ प्रशेर देकर छोड़ेकी कटछोटे बलावे । नागकीभस्म होनेपर बीचे छतार ब्रमेसे गंधी, गाय, कटरी और भेड़के मूत्रोंसे ३-३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय हारावसमुष्टमें बन्दकर मृदुपुटकी आंचदे । स्वाह्मतीतल होनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दनकर छुट्टे । ऐसे ३ छुट्टे देनेके बाद अदरग और मुशलीके स्वरसोछे १-१ दिन मर्दनकर ६-६ रतीकी गोलियें बनाकर रखोछे । इनमेंसे १-१ गोली मधुदेहाय एकमहीनेक देवेसे काष, श्वा, मर्दनी, और पाण्डुरोग, अदरगके राखेसाथ त्रिष्टम्भ और दल, त्रिकलाके क्वाये गुल्म, गोदुग्धसे प्रमेह, पत्तर और मरिचके हादको यह नष्टकरता है ।

### ४५ कर्पूरादिवती

कर्पूरं रसगन्धकञ्च द्रव्यं तीक्ष्णोद्ध्यं मरुत्तं,  
कालोदधेन्द्रमयोऽजमोदं दूतमुक्त्वा घातकयैः श्लाम्बलं  
पन्ना मांसलरालासामलमयं जातौफलं दृष्टुं,  
तिक्ता विष्णुमयं पित्रा पितृमिदं प्रयेकनिष्कान्वितम् ॥

सर्वेषां सदृशं प्रमाणमखिलं कान्ताप्रसिन्दूरकं,  
सिन्दूरस्य समञ्च फेनमहिजं तत्पादतः सङ्घिपेत् ।  
ह्रैमं फोफिलनेत्रवीजसहितं सर्वञ्च घूर्णीकृतं,  
धनुरस्वरसेन फेनममलं सम्भाव्य यामद्वयम् ॥  
सार्धं तेन विमृद्य वस्तु सकलं घञ्जद्वयं सादरं,  
गुलामात्रवर्तौ निबद्धय नियतं मध्यनिक्तां योजयेत् ।  
सर्वेषु ग्रहणीगदेषु सहसा रक्तातिसारेषु च,  
आमं शूलयुतं समस्तजनितं नानातिसाराञ्चयेत् ॥-  
रसायनप० ग्रहयाम् ।

भाषा—शुद्ध सकपूर, पात्र, गन्धक और तिगरीफ, फोलादभस्म, कमलद्रव, इन्द्रजव, अजमोद, चित्रकमूल, घावदीकीजकडोछाल, पुलागोदमली, इलायची, अटामांही, राल, सेमकका सुखला, जायफल, मुनासुहागा, कुटकी, सेंधा-नमक, शुद्धबडनाग और अतीस ४-४ मासो, कान्तलोह और अश्रुभस्म, रससिन्दूर, शुद्ध अफीम ये सब २१-२१ मासो, शुद्धधतूरेवीज और तालमखाना ५१-५१ मासो लेकर सबका बारीक चूर्णकर अफीमको धतूरेस्वरससे दोपहर मर्दनकर सबचूर्णको मिलाय धतूरेस्वरससे दोदिन घोटकर १-१ रतीकी गोलियें बनाकर रखोछे । इनमेंसे १-१ गोली मधु-केसायदेनेसे सबप्रकारकी ग्रहणी, रक्तातिसार, शूलकुष्ठजाना-तिसार, शक्तिपातिक अतिसार इनसबको यह नष्ट करती है ।

### ४६ कामेश्वरमोदकः

सम्यक् शोधितमारितं सुसुजगं वह्नं तथा तीक्ष्णकं,  
सूताञ्च तरणिं शिवां परिमितं प्रत्येकमादाय च ।  
धात्रीसेन्धवकुष्ठकडूफलरुणाः शृङ्गी यषानीह्रयं,  
यष्टीजीरकसुग्धधान्यकराष्ट्रीशृङ्गीजयाकेदारम् ॥  
तालीसं त्रिसुगन्धकं समरिचं जातौफलं मेथिका,  
घूर्णीरुप्य समस्तमेतदखिलं दत्त्वाऽर्द्धशक्रासनम् ।  
सर्वैस्तुल्यतमां सितान् सुचिमलान् पद्मान्ऽस्मानाम्निषेत्,  
कर्पूरैरयचूर्णितानपि तथा दत्त्वा तिलाश्रितुपायम् ॥  
सम्यक् शुद्धकलेवरैरुद्धरहो भस्यं सदा कामिभिः,  
आचिन्त्यापिहरं क्षयक्षयकरं कुष्टापहं शृङ्गणम् ।  
स्त्रीणां तोयकरं परं धुतिकरं मुक्तामिषुद्धिमर्दं,  
कासश्वासासलासरोगनिचयप्रदं रसनं देहिनाम् ॥

र. क. स. ( ग. ), बाजीरवः ।

भाषा—उत्तम नाग, वह्न, फोलाद, पारद, अश्रु और ताप मय, शुद्धगन्धक, आर्चक, सेयानमक, कुट, कादम्ब, पीपल, काष्ठामांसी, दोनो अबरान्न, सुन्दरी, ह्याद घेरे जीरा, पविता, कपूर, मेगामीनी, ओडुलदेखू, देण्ड, तालीखरद, तब, यत्र, इलायची, राधेदमियं, आदरन, मेथी ये सब १-१ भाग, इनसबके आपीमुमीमांन, और ताकडिहेरुएफि तथा शुद्धकपूर उचिन्त्यानामसे लेकर सबका बारीकचूर्णकर समभागपारदकी चट्टनीमें अच्छी

तरह मिलाय १-१ तोलेके मोदक बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ मोदक दूधके साथ खानेसे शारीरिक और मानसिक रोग क्षय, कुष्ठ, नपुंसकत्व, बुद्धिभ्रंश, शुक्राग्निनाश, कास, श्वास, श्लेष्मरोग, इन सबको यह नष्टकरताहै ।

### ४७ कामेश्वरमोदकः

त्रिकटु त्रिकला शृङ्गी जाती तालीसपत्रकम् ।  
कुष्ठसन्धचधान्याकं नागकेशरकफलम् ॥  
मधुकं मेथिका भाङ्गी यवानी चाजमोदकम् ।  
किञ्चिद्भद्रं जीरयुग्मं कर्पूरञ्च विजातकम् ॥  
सबीजयिजयां भ्रष्टां सर्वतुल्यां प्रदापयेत् ।  
अन्नकं पारदं लोहं स्वेच्छया प्रक्षिपेत्ततः ॥  
मधुना घृतमिधेण कर्पमात्रन्तु भोजयेत् ।  
क्षीरानुपानं निर्दिष्टं भिषजामिष्टकारकम् ॥  
षष्टिष्टुद्धिकरो वृष्यो बृंहणो यलयर्धनः ।  
सर्वव्याधिहरो ह्येष सद्ब्रह्महर्षी जयेत् ॥  
कासश्वाससाक्षशूलघ्नो घलीपलितनाशनः ।

र. क. ल ( ना. ) रसायने वाजीकरणे च ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिकला, काकणसौंजी, जावित्री, तालीस-पत्र, कुष्ठ, संधानमक, घनियां, नागकेशर, कायफल, मुलदली, मेथी, भारती, अजवायन, अजमोद, अथयुने दोनों और, शुद्धकपूर, तज, पत्रज, हलायची ये सब समभाग, इन सबकी बराबर सबीज धुनीभाग, तथा अन्नक, पारद और लोहमल्लम औचितो देखकर लेवे । फिर सबका बारीकचूर्णकर मधु और घी मिलाकर १-१ कर्पके मोदक बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ मोदक दूधके साथ देनेसे मन्दाग्नि, वातुशीलता, सद्ब्रह्म-महर्षी, कास, श्वास, रक्तपित्त, शूल और घलीपलितको यह नष्ट करता है ।

### ४८ कामेश्वरमोदकः

खाकारकृष्णः शृङ्गी मस्तकी दरदो रसः ।  
जातीफलं कटुफलञ्च पिप्पली किमिधदनम् ॥  
यैलोस्यविजयायीजं धन्तुरविपतिन्दुकम् ।  
जातीपत्रं वज्रमल्लम यवानीयुगलं तथा ॥  
वृक्षदार्ढ्यहिफेनञ्च मदनञ्चैव कार्पिकां ।  
गृहीत्वा चोत्तमं खण्डं सर्वतुल्यं विमिश्रयेत् ॥  
मधुना मोदकं कृत्वा प्यारोभिष्कचतुष्टयम् ।  
विनाशि मोदकं कुर्यादादौ कृत्वा तु कज्जलीम् ॥  
रसगन्धकयोर्वैद्यः सम्प्रदायविशारदः ।  
शुक्रस्तम्भकरो वृष्य एव उक्तो मनीषिभिः ॥

र. क. ल. ( ना. ), रसायनवाजीकरणयो ।

भाषा—अखलकरा, काकणसौंजी, मस्तकी, शिंगरिफ और पारदमल्ल, जायफल, कायफल, पीपल, विडङ्ग, बीजसहित भाग, शुद्ध धन्तुरे बीज, कुचिला, जावित्री, वज्रमल्ल, दोनों अजवायन, विचारा, अलीम, मदनमल्ल, शुद्ध पारेगन्धककी

नीलवर्णकजली १-१ कर्प लेकर बारीक चूर्णकर सबकी बराबर धन्तर मिलाकर मधुके साथ १-१ कर्पके मोदक बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ मोदक दूधके साथ लेनेसे धातुशुद्धि और शुक्रस्तम्भन होता है ।

### ४९ कृमिमेषमातरिश्वरसः

निम्बं चौरं चाजमोदं विडङ्गं  
चक्रं यदं सूतराजं विमृष्टम् ।  
माध्वीकार्तं द्रुममानन्तु दद्या-  
दन्याजन्तुमातरिश्वरं मेघान् ।

र. मृ. कृमिरोगे ।

भाषा—निम्बशीजमजा, खरजवाहन, अजमोद, विडङ्ग, चक्रबदपारा ( बनलस १२५ देखो ) ये सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर १-२ पहर इकडे मर्दनकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ मोदक दूधके साथ लेनेसे समस्त किमि नष्टहोतेहै ।

### ५० खज्जिनकारिरसः

कुपीलुरज्जतायांसि सम्भाष्यार्जुनधारिणा ।  
मुद्गमानां धर्ती कृत्वा शोषयेत्सूर्यरश्मिना ॥  
पक्षयातं घोरतरं गदं खज्जिनिकं तथा ।  
रसः खज्जिनिकार्याख्यो हरेदाशु न संशयः ॥

भै. र. खज्जवाते ।

भाषा—शुद्धशुचिला, रजत और लोहमल्ल समभाग लेकर सफेदमर्जुनकीछातके कपड़ेसे एकदिन मर्दनकर सुखवाकर गोलिये बनाकर बड़ीधूपमें सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली यथोक्तानुपानकेसाथ देनेसे असाध्य पक्षाघात और खज्जवाते नष्टहोतेहै ।

### ५१ गन्धकादिलेह्यम्

गोक्षीरशोधिता चीनहेमक्षीरी १२ तोलिका,  
गोदुग्धेक्षुतण्डुलीयकाऽऽकाशयल्लुभ्येतकृष्णान्ड-  
नागाशुनीयास्तुकतोयपिप्पलीस्वरसशोधितोऽमल-  
सारगन्धकः १२ तोलकः, वायुचोचिप्रकटुल-  
ग्रास्नाकुण्डलीमूलतालीसपत्राऽऽध्वगन्धापारसवि-  
प्लकण्डकृपलाशमूलकम्पकपुष्पाणि प्रति १ तोल-  
कानि सञ्चर्याऽऽदौ गन्धकं खल्वे विमृष्टं चीनशर्करां  
९ तोलिकां, चीनहेमक्षीरीचूर्णं, प्रवृत्तकवस्तुचूर्णञ्च  
मेलयित्वा १२ तोलकं मधु निक्षिप्य चीनपात्रे रक्ष-  
येत् । सायं प्रातः पादतोलकं रोगयलानुसारिणाऽऽम-  
ण्डलमेकमण्डलं वा सेवयेत् । अनेन मेहमणाः, पामा-  
कालमेहोपद्रवाद्योनिव्यापत्पाणिपादवन्धशूलानि श्वे-  
तरक्तहार्द्रिमेहाश्च निर्मला भवन्ति । अम्लधूमपान-  
खोसङ्गादिकं वर्ज्यमुण्डोदकञ्च पेयम् । क्षीरार्धं, घृतं,  
शर्करा, आदकीखण्डपूषध पच्यः । ( अगस्त्य० )

### ५२ गृहच्युतिचूर्णम्

गृहच्युतिविषा शुण्ठी धुनिम्यं यथतिलकम् ।  
मुस्तं कणा यवश्वारः कासीसं भ्रमराग्रियः ॥



एतेषां समभागेन चूर्णमेव विनिर्दिशेत् ।  
यट्टलीहपाण्डुरोगमग्निमान्द्यमरोचकम् ॥  
ज्वरमष्टविधं हन्ति साय्वासाध्यमथापि वा ।  
नानादोषोद्भवञ्चैव वारिदोषमवन्तथा ॥  
विरुद्धमेपजभवञ्च ज्वरमाशु व्यपोहति ॥

भै. २., ग्रीहयकृदधिकारे ।

भाषा—गिलोय, अतीस, सौंठ, चिरायता, तितली, नाग-  
रमोया, पीपल, यवक्षार, कासीसम्लम्, स्वर्णचम्पक्री छाल  
सब समभागका चूर्ण बनाकर रखओगे । इसमेंसे २-३ भागो  
तत्तदोगहरानुगानके साथ देनेसे यकृत, ग्रीह, पाण्डु, मन्दाग्नि,  
अर्धचि, ८ प्रकारका ज्वर, जलदोषज, विरुद्धमेपजजन्यज्वर  
इन सबको यह नष्टकराई ।

### ५३ चन्दनादिचूर्णम्

चन्दनं शास्मलीपुष्पं निजातं रजनीद्वयम् ।  
अनन्तां सारियां मुस्तमुशीरं यष्टिकामले ॥  
स्वर्णपर्मां शुभां भार्गी देवदारु हरीतकीम् ।  
सर्वद्विगुणितं लौहञ्चैकत्र परिमर्दयेत् ॥  
प्रमेहा विंशतिः श्वासः कासो जीर्णज्वरस्तथा । -  
प्राशनादस्य नश्यन्ति दुर्नामानि च कामला ॥

भै र शुक्रमेहे ।

भाषा—सफेदचन्दन, सेमलकेसूल, तज, पत्रज, इलायची  
हत्ती, दाहलती, अनन्तमूल, सारिका, नागरमोया, खस,  
मुलहठी, आपले, सनाय, भार्गी, देवदारु, हरी, सब समभाग  
लेकर बारिचूर्णकर सबसे दूनी लोहमलम मिलाकर रखओगे  
इसमेंसे २-३ रती प्रमेहहरानुगानके साथ देनेसे २० प्रकारके  
प्रमेह, श्वास, काह, जीर्णज्वर, बघामीर, कामला, ये सब  
नष्ट होते हैं ॥

### ५४ चिञ्चादिलेह्यम् ( महादि )

चिञ्चापत्रं शतपलमायसञ्च तदर्धकम् ।  
तदर्धं चित्रमूलं स्यात्तदर्धं किट्माद्रिकम् ॥  
निर्गुण्डां पाटलो यिल्यो यासा दाग पुनर्नथा ।  
धरुणो शूहती चैव कण्टकारी तथैव च ॥  
सहदेवी विदारी च गोपयती च बालकम् ।  
अपामार्गश्च खट्विरो गणकार्यध्वगन्धिके ॥  
पापार्ही शालपर्णी च वासन्ती सुरसा धवः ।  
पापाणमेदिमूलञ्च सौमार्ग्यं गोभुरं तथा ॥  
शृङ्गिका कायनासा च शार्ङ्गो सहचरी शमी ।  
द्वयोनाकपीरगृक्षी च राजार्क शरपुष्टिका ॥  
भृङ्गं घामलर्णी दग्गी हनुया नीलपुष्पिका ।  
आरुण्योऽमृताऽनन्ता वारुण्यार्कफलन्तथा ॥  
त्रिकटु त्रिकण चैव चण्डप्रणिकराक्षिकाः ।  
दोष्य पिष्टमभुक्ते र्जार्ककोटारपत्रकम् ॥

श्रीगन्धो दारु मज्जिष्ठा वराहं भद्रमुस्तकम् ।  
प्रत्येकं वन्यमूलञ्च पलं शतकमाहरेत् ॥  
पलाष्टकं त्वापणस्यं भाण्डगर्भं विनिक्षिपेत् ।  
द्वादशादकतोयञ्च काथमष्टावशेषितम् ॥  
पुराणस्य गुडस्याऽपि पलानां शतमिश्रितम् ।  
वखपूतञ्च तत्काथं बीजपूररसन्तथा ॥  
भृङ्गराजार्द्रकरसं दुःस्पर्शस्वरसं तथा ।  
प्रत्येकं प्रस्थसम्मानं तच्च मन्दाग्निना पचेत् ॥  
व्योपतालीसपत्राणि चातुर्जातविडङ्गकम् ।  
गजकृष्णा नलं चैव प्रस्थिकं वत्सकं तथा ॥  
त्वक्शीरी धान्यकं जाजी दीप्ययुग्मकरुणुकम् ।  
जातीफलञ्च तत्परं लवङ्गं मांसिकं मधु ॥  
भाङ्गं श्वेतं मरीचञ्च त्रिफला कृष्णीरकम् ।  
रास्नाऽध्वोशीरुदार्वश्च कुङ्कुमं निवृता शटी ॥  
तज्जोलं टङ्गुं शृङ्गी क्रोष्टुं चाहरेद्भिपक् ॥  
मज्जिष्ठा देवदारुश्च प्रत्येकं द्विपलन्तथा ॥  
पट्गालिततर्कणं पके समिश्रितं भवेत् ।  
क्षौद्रं शतपलञ्चैव निक्षिपेत्लोहकान्तकम् ॥  
मण्डूश्च तथैव स्यात्प्रत्येकं पलयुग्मकम् ।  
लेहं पक्त्वा स्निग्धमाण्डे धान्यराशी विनिक्षिपेत् ॥  
धन्वन्तरिगणाधीशदिवपालमिपजोऽर्चयेत् ।  
द्विकालमक्षमानस्य भक्षणं मासमानकम् ॥  
शोफकामलपाण्डुश्च दुग्धमर्कं श्वासकासकौ ।  
द्वादशक्षयरोगाश्च किमि श्रेष्मज्वरं हरेत् ॥  
पुराणशूलमस्युषं मलयूनविषयन्धकम् ।  
प्रमेहपिडिकारोगमग्निमान्द्यमरोचकम् ॥  
अक्षिशूलोदरञ्चैव रक्तपेयञ्च छर्दिकम् ॥

वै. वि. चतुर्विंशतिरित्येत्येव ।

भाषा—छायाशुक्र इमलीके पत्ते १०० पल, मण्डूका-  
वारीक चूर्ण ५० पल, चित्रमूल २५ पल, अदरकछाश्क  
१२½ पल, संभाल, पाटला, बेल, अह्मगा, देवदारु, पुनर्नथा,  
बख, बडी और छोटी भट्टट्टया, सहदेवी, विदारीकन्द, अन-  
न्तमूल, सुगन्धवाला, अपामार्ग, रीर, अरणी, देशीभमगन्ध,  
वाराहीकन्द, शालपर्णी, माधवीलीना, तुलसी, धव, पापाणमेदि-  
कीच, सुहागा, गोसर, काठडासीनी, काठनावा, काठ-  
जड़ा, पीयाथाया, शमी, मोनापाटा, वीरतक, नीलाकं, रा-  
पुत्र, अंगरा, आरले, दन्तीमूल, शाज, कालादाना, भमल्लाय,  
गिलोय, जवाया, करेला, त्रिपटु, त्रिकला, चम्प, गटिपन,  
रास्ना, भवधान, विडङ्ग, तुलहटा, जीरा, राय, पत्रज, छिद  
चन्दन, देवदारु, मजीठ, तज, नागरमोया इसमेंसे जाती  
बीजे १००-१०० पत्र, दूधानकी बीजे ८-८ पल, सेह  
जवट्ट बनाय १२ अण्डकानोमें ओढ़ावे । अष्टमांशावदेव  
रदनेर छनकर मिश्रिकापत्रे बनावे । उपमे १०० पत्र पुराणा  
शुद्ध दाण्डर विशोरा, भगता, अक्षरा, जवाय इनका रस

१-१ प्रत्यङ्ग बालकर मन्दागमिसे पचावे । गोली बननेलायक पन तैयार होनेपर उतारले । फिर त्रिकट्ट, तालीसपत्र, चातुर्जात, विडङ्ग, गजगीपल, नल, पिपलामूल, फुटङ्ग, तीक्ष्ण, धनिया, जीरा, दोनों अजवाइन, रेणुका, जायफल, जावित्री, लौंग, जदामासी, मुलहठी, भारद्वाज, सफेदमिर्च, त्रिकला, कालीजीरी, रास्ना, नागरमोचा, सस, दाहहल्दी, केशर, निसोत, कचूर, शीतलचीनी, भुनासुहाणा, काकडासींगी, वृश्चिणी, मजीठ और देवदार १-२ पल लेकर कपड़छान चूर्णकर मिलावे । उदाहोनेपर मधु १०० पल, कान्तलोह और मण्डुरभस्म १-२ पल बालकर चिकनेवर्तनमें रख मुह-बन्दकर ३ दिनतक घान्यकीराशिमें गाड़दे । चौथेदिन निकालकर धन्वन्तरि, गणेश, विष्णु, और वैद्योका पूजनकर १-१ कप्यं सुबह शाम एक महीनेतक सेवन करनेसे शोथ, कामला, पाण्डु, कुम्भकामला, खास, कास, १२ क्षय, मिमि, लेम्पज्वर, पुराना भयङ्कर शूल, मलमूर विषम, प्रमेहपिडिका, मन्दाभि, अरुचि, अक्षिशूल, उदररोग, रक्तपित्त, वमन इन सबको यह नष्टकरताहै ।

#### ५५ चिन्तामणिलेखम्

भृङ्गराज (चैपुतहाङ्ग तै०) पीतपुष्पभृङ्गराजविल्यगोक्षुरमूलप्राचीनामलकीकोकिलाक्षपत्राणां स्वरसाः प्रति ३६ तोलकाः, जम्बूयौदुम्यरत्वङ्गारिकेलपुष्पाणां प्रति ७॥ तोलकानां ४८ तोलके अलेऽष्टावशेषं कार्यं गृहीत्वा पूर्वोक्तसैः संयोज्य मरिचनीलीमूल-पलातिबलाऽऽप्यमरीचिकाकपित्थमूलानि प्रति १० तोलकानि १२० तोलके शुद्धजले निधाय २४ तोलकं तालगुडं निक्षिप्य १४४ तोलकं गोदुग्धं मेलयित्वा द्रव्यशोषणपर्यन्तं विपाच्य जीरकेलायङ्गत्रिफलायष्टिमधुकमरिचजातीफलजातीपत्रयवानिका-खुरासानिकातालीसनागकेशरपाटला (करकट्टु तै०) कुष्ठाऽऽकारकरमनागराणां ३-३ तोलकानां चूर्णं घनपाके मेलयित्वाऽथतार्यं स्वाङ्गद्वारे २० तोलकं घृतं २४ तोलकं मधु च निक्षिपेत् । अत्र च त्रिलोह-सिन्दूरं ६ तोलकं, मण्डुरसिन्दूरं ३ तोलकं मेलयित्वा पादतोलकं प्रत्यहं द्विपारं पादमण्डलमर्धमेकं वा मण्डलं सेवनीयम् । अनेन पाण्डुशोथकामला सर्ववायुप्रहण्यतीसारचान्तयो निर्मूला भवन्ति । (व्यास०)

#### ५६ जातीपत्र्यादिवती

टङ्गद्वयमिता जातीपत्री जातीफलं समम् ।  
सिन्धुरोपपञ्च तन्मात्रमाकारकरमं समम् ॥  
त्वत्कमालौ च तन्मात्रापेलाकङ्गोलौ समौ ।  
यत्सनामं तत्समानं टङ्गैर्महिकेनकम् ॥  
भूतयीजन्तु टङ्गैर्कमीशनागाजमोदकम् ।  
ज्योतिष्मती च कर्पूरी द्विटङ्गा टङ्गमात्रकम् ॥

कुचेलं शोधितं प्राह्यं सर्वं सूक्ष्मं विचूर्णयेत् ।  
द्विगुणायाः सितायास्तु पाके चूर्णं विमिश्रयेत् ॥  
मुटीं कृत्वा प्रयत्नेन चणकद्वयमानिकाम् ।  
महापुंस्त्यकरी ह्येषा बलवीर्यविधविनी ॥

र. कु. वाजीकरणे ।

भाषा—जावित्री, जायफल, समुद्रशोथ, अकलहरा, तत्र, तमालपत्र, इलायची, शीतलचीनी, शुद्धवज्रनाग १-२ टङ्ग, शुद्ध अफीम और धतूरेके बीज १-१ टङ्ग, रससिन्दूर, नाग-भस्म, अजमोद, मालकान्गनी, अनन्तमूल १-२ टङ्ग, शुद्ध-कुचिला १ टङ्ग लेकर बारीकचूर्णकर सफेदनी पारकी चमानीमें मिलाकर दोबने प्रमाण गोलियेबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली वृद्धन अतुपानकेसाथ लेनेसे मनुष्यत्वरो दूरकर बल और वीर्यको बढ़ाती है ।

#### ५७ जीवन्त्यादिलेहः

जीवन्ती मधुकं पाठां त्वन्शीरीं त्रिफलां शदीम् ।  
मुस्तैले पत्रकं द्राक्षां दे वृहत्यां वितुष्रकम् ॥  
सारिवां पौष्करं मूलं कर्कटार्थं रसाञ्जनम् ।  
पुनर्नवां लोहरजस्त्रायामाणां यवानिकाम् ॥  
भाङ्गीं तामलकीमृष्टिं पिङ्गं धन्यपासकम् ।  
क्षारचित्रकचव्याम्लवेतसत्रयोपद्रव्यं च ॥  
चूर्णीकृत्य समांशानि लेहयेत्क्षीद्रसर्पिषा ।  
चूर्णात्पाणितलं पञ्चकासानेतद्वधपोहति ॥

च. ग. नि. कासाऽपिकारे ।

भाषा—भक्षेणुपीकी जड़, मुलहठी, पाठा, तीपत्र, त्रिकला, कचूर, नागरमोचा, इलायची, पत्रकाट, दाक्ष छोटी और बड़ी भट्कटिया, सोनापाठा, सारिवा, पोहकरमूल, काकडासींगी, रसोत, पुनर्नवा, लोहभस्म, द्रायमाण, अजवाइन, भारद्वाज, मूय्यामलनी, कदि, विडङ्ग, जहाता, यवक्षार, चित्रकमूल कन्य, अम्लवेत, त्रिकट्ट, देवदार, राव समभागलेकर बारीक चूर्णकर रखछोड़े । इनमेंसे ३-३ मासे मधु और पीकेवाप लेनेसे समस्त कास नष्टहोतै ।

#### ५८ ज्योतिष्मानरसः

कान्तं सुवर्णमग्न्य रसं पट्टणजारितम् ।  
वैकान्तं चिदुर्म रङ्गजटामूलं हयाऽग्निपम् ॥  
कङ्कष्टञ्च सर्पं सर्वं गृहीत्वा यत्नतो मियम् ।  
एकीकृत्य रसेन्दुगजपत्रमयेन च ॥  
भृतातमूलखदिरमूलशोथेन यत्नतः ।  
त्रिषा सम्भान्य विधिवन्मात्रा चणकसमिम्ता ॥  
ज्योतिष्माभ्रामकरसां धातरक्तं हरेद्रुतम् ।  
कुष्ठमष्टादशविधं रोगांधान्यास्तदुद्रवात् ॥  
तथा गौणोपदेशाच्च विटति पारदाङ्गवाम् ।  
दुष्टघ्नं गण्डमालां भगन्दस्ययापचीम् ॥

नातः परतरं किञ्चिद्वैषम्यं रक्तमुद्धिक्तम् ।  
सारिवा तन्दिक्का पथ्या पथ्यं गञ्जिनी तथा ॥  
चक्राङ्गी काय पतेपां ज्योतिष्मद्रससेवनात् ॥  
वर्धयेद्वाशु दीर्यञ्च सर्वरोगकुलान्कृतम् ॥  
भापितः श्रीमहेशेन विभुधानां यथाऽमृतम् ॥

शे. र. गुग्गुलिङ्गः ।

भापा—कान्तलोह, सुवर्ण, अन्नक, पट्टणगन्धज्वरित  
पारा, वैकान्त, विदुम, रज्जटा और सफेद कनेरी जड़, रेव-  
नीनी सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पचाइकेपत्तोंके स्वरस  
तथा मिलावे और सैररीजइकेकायसे १-३ भावनाएं  
देकर चनेप्रमाण गोलिए बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली  
कुष्ठरानुपानकेसाय देनेसे भयङ्कर वातकफ, उपद्रवसहित १८  
प्रकारके कुष्ठ, सुगन्ध, उपद्रव, पारद्विकार, दुग्धमल, गण्डमाला,  
भगन्दर इन सबको यह नष्टकरता है । रक्तमुद्धिकेलेसे इससे  
बढ़कर दूसरी औषध कम है । सारिवा, भारती, हरि, पित्तपा-  
पडा, मींग, गिलोय, इनके कायके साथ सेवनकरनेसे समस्त  
रोगोंका नाशहोकर दीर्घकी वृद्धिहोती है ।

### ✓ ५९ ज्वरचिन्तामणिरसः

तुल्यद्वयञ्च वरदं गन्धकं रसतालकम् ।  
शङ्खवीजं दग्धितोयजं ताम्रमसम् हलाहलम् ॥  
लोहवङ्गमयं मसम् रौप्यमसम् मनःशिलाम् ।  
टङ्गुणं श्वेतपाषाणं समभागञ्च योजयेत् ॥  
आद्रकस्यरसेर्मयं घञ्जमृपान्तरे क्षिपेत् ।  
स्वर्णमसम् च तीक्ष्णस्य प्रवालं मौक्तिकं तथा ॥  
पतैस्सर्वैः समायुक्तमाद्रकस्यरसेस्तथा ।  
शुद्धप्रमाणा घटिका सन्निपातज्वरजयेत् ॥

रघादनरः, सन्निपाते ।

भापा—शुद्ध दोनों तृत्वि, त्रिगणिक, गन्धक, पारा, हरि-  
ताल, कालादाना, जमालगोटा, ताम्रमस, वण्णाग, लोह, वज्र  
और रजतमस, शुद्ध मैगसिल, सुगन्ध और सोमल समभाग  
लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर अदरककेरससे एकदिन मर्दन-  
कर गोलाबनाय वज्रमृपाने कन्दर मृपसुटकी आंचदे ।  
स्वाश्वशीतलदोनेर निकालकर सुवर्ण, कोलाद, प्रवाल और  
मोतीमस १-१ भाग मिलाकर अदरकके रससे एकदिन मर्दन-  
कर १-१ रत्तीकी गोलिएबनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१  
गोली समयोचितानुपानकेसाय देनेसे सन्निपात, श्वास, काय,  
विषमज्वर, शय इन सबको यह नष्टकरता है ।

### ✓ ६० ज्वराहुनारसः

लोकनापस्य शुद्धस्य यलेधैरेकमागकः ।  
दोशमण्डनात्यदिमांगा महातकस्य च ॥  
क्षत्वारो नागजिह्वास्तपाम्लेच्छमुखस्य च ।  
क्षत्वारो मासिकस्यापि स्नुहीशिरस्य पोडश ॥

एतन्मृद्वग्निना सर्वं पचेद्भाण्डे च मृन्मये ।  
स्वाङ्गशीतलतां ज्ञात्वा समारुपेत्ततः परम् ॥  
विषकं भेषजं सम्यक्ततः खल्वे विमर्दयेत् ।  
रसो ज्वराहशो नाम शीतादिज्वरनाशनः ॥  
नागवल्लीदलेनास्य दद्याद्भाज्जावतुष्टयम् ।  
दद्यान्मण्डादिकं पथ्यं ज्वरिताय ज्वरापहम् ॥

र. मृ., ज्वराधिकारः ।

भापा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, हरिताल और  
मिलानां ६०-६० भाग, मैगसिल, ताविका चूर्ण और सुवर्ण-  
मासिक ४-४ भाग लेकर नीलवर्णकजलीकर १६ भाग धूमर-  
का दूध मिलाकर मिश्रीके बर्तनमें रस मन्दाग्निसे पकावे । दूध  
सुखनेपर उतारकर खरमें डाल एकदिन मर्दनकर ४-४ रत्ती-  
की गोलिएबनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानके  
साय देनेसे शीतादि समस्त विषमज्वरोंको यह नष्टकरता है ।  
इसमें मांड बगैर हल्का पथ्य देवे ।

### ६१ ताण्डवारिलौहम्

दाहरामठकपूर्वस्यशदयो यथोत्तरम् ।  
प्रगृह्य चतुरावृत्त्या विमान्य विजयाम्बुना ॥  
कुपीलुजकपायेण पार्यस्य स्वरसेन च ।  
पङ्क्तिं च घटीं कृत्वा युज्यात्ताण्डवशान्तये ॥  
वृंहणं पानमग्नञ्च स्नानं श्रोतस्वतीजले ।  
शयनं स्वेदशून्यं यत्कर्म तद्येह शर्मणे ॥  
कर्षणाद्यखिलं शोकमशुभाय पुरातनैः ॥

शे. र. ताण्डवलोपाधिकारः ।

भापा—देवदाह, भुनीहीय, शुद्धकूर, जस्त और सोहमस  
ये सब क्रमशःभाग लेकर बारीकचूर्णकर भागकेस्वरस  
अथवा कायसे ४ भावनाएं देकर कुचितके काय और अर्जुनके  
स्वरससे १-१ दिन मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोलिएबनाकर  
रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाय देनेसे  
ताण्डवशक्तको यह नष्टकरता है । वृंहण अनुपान देवे । बह्नी  
हुई नदीमें स्नानकरावे । पूर्ण ब्रह्मचर्य रखे । कर्षणादिया  
इसमें वर्जित है ।

### ✓ ६२ तापाहुनारसः

सुतसूर्यविषयकृत्रिफलाग्निगोपमद्रुशरसो घटिकैकां ।  
हन्ति मुश्रुसुतुलिता नयमाहाध्यागतेन पयना-  
रितलतापम् ॥

र. भो., ज्वराधिकारः ।

भापा—पारा और ताम्रमस, शुद्धवण्णाग, कुष्ठ, त्रिपला,  
चित्रक, पिष्ट, ये सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर गुल्ली-  
बगैरकेरससे एकदिन मर्दनकर मृगबतार गोलिएबनाकर  
रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली ज्वर आनेसे १ पण्डा पड़ने  
से गुग्गुली बगैरकेसाय देनेसे यह गन्धक, विषमज्वर और वात-  
वेदनाको नष्टकरता है ।

### ५३ ताम्रयोगः

त्रिफला ज्यूपणं मुस्तं विडङ्गं चित्रकं तथा ।  
लघुद्रव्यं पृथक् सद्यः सूक्ष्मं चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥  
सर्वेभ्यो द्विगुणं ताम्रं मृतं दत्त्वा प्रमदयेत् ।  
मापेकं वा द्वयं चापि लेहयेन्मधुना सह ॥  
समस्तशूलशान्त्यर्थं समस्तसुखदेतवे ॥  
ना. वि., घृले ।

भाषा—त्रिफला, त्रिकटु, नागरमोथा, विडङ्ग, चित्रकमूल और लघु तम्र समभागलेकर बारीकचूर्णकर सबसे द्विगुण ताम्रम-  
स्ममे मिलाय १-२ दिन मदनकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से २  
माशेतक मधुकेसाय देनेसे समस्तशूल दूरहोतेहैं ।

### ६४ तालकवटी

तालभागो भवेदेको शिला चैव चतुर्गुणा ।  
चूर्णयित्वा द्वयं चैतद्भाषयेत्त्रिफलोदकेः ॥  
कृत्वा तदुदिकां रुक्षणां कृपीमये चिनिक्षिपेत् ।  
निरुद्धय घालुकायन्ने यामद्वयमतन्द्रितः ॥  
शुद्धाद्वयं ददीतास्य श्वसकासापनुत्तये ॥  
र. म., श्वासकासयोः ।

भाषा—शुद्धहरिताल १ भाग, मैनसिल ४ भागलेकर बारीक  
चूर्णकर त्रिफलाकेसायसे एकदिन मदनकर २-२ रतीकी  
गोलियेबनाकर छायाशुष्ककर आतशीसीसीमें भरके बालका-  
यन्त्रमें रख दोपहरकी आंबदे । स्वातंत्र्यीतलहोनेपर त्रिकालकर  
रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रती उचितानुपानकेसाय देनेसे यह  
श्वासकासकी गड़करताहै ।

### ६५ तालकमुन्दरीगुटिका

तण्डुलाम्बुजनीपुनर्नवा  
धायनी कणजलाग्निजैरलम् ।  
भूतवृक्षपिबुमन्दस्युतः  
स्वेदयेद्य पृथक्पृथक् क्रमात् ॥  
यामकैकमधिकं चिचूर्णितं  
शोपयेत्तदनु गन्धकं पुनः ।  
भृङ्गसम्भवसेन भावितं  
द्रावितञ्च शुभलोहपात्रगम् ॥  
प्रक्षिपेच्च बहुधा घृतान्ते  
शुद्धिमैत्यथ सूतकमध्यगम् ।  
पारदञ्च गृहकन्यकारसै-  
र्मदितं त्रिफलायाऽग्निना क्रमात् ॥  
स्वेदयेत्त्रिकटुद्विह्वराजिका-  
क्षारसुग्मलवर्णदिनत्रयम् ।  
काजिकेन घटदोलिकागतं  
शुद्धमित्थममलञ्च सूतकम् ॥  
अष्टौ भागाः पूर्वशुद्धाश्च ताला-  
दक्षां भागाः पूर्वशुद्धाश्चेन्द्राव ।

दत्त्वा खल्वे तालकार्धञ्च गन्ध-

भाभूमान्तं मर्दयेत्कज्जलाम् ॥  
तालादर्धं सोमराज्याश्च चूर्णं  
चूर्णं देयं चाभयायाश्च तावत् ।  
पलाशुण्ठीकृष्णमुस्ताकराला-  
त्वग्मुक्तानां सोपणानाञ्च भागाः ॥  
देयाः सर्वे सूतराजेन तुल्या  
देयास्तालात्सद्विषं पीडशांशम् ।  
सर्वं सूक्ष्मं पेपितं सिन्धुतोयै-  
र्देयाच्छुद्धनाञ्च सिद्धा यट्टीस्ताः ॥  
दिने दिने भापकसम्मितानां  
प्रभावयत्स्तालकमुन्दरीणाम् ।  
समभ्यसन्त्याति नरो यिलङ्घ्य  
प्रसह्य कुष्ठार्तिसमुद्रमाशु ॥

श्वित्रोदुम्बरशीर्णसुतिरफसाऽसृग्वातद्विभ्रमि-  
नाडीदुष्टभगन्दरप्रहणिकाहुर्नामपाद्ममया ॥  
कृच्छ्रोन्मादससक्षिपाततमकाऽपस्मारमेदोऽप्यश्वरान्,  
हन्त्यातालकमुन्दरीति गुटिका प्रोक्ता स्वयं शम्भुना ॥  
घलिपलितं क्षयरोगं कुष्ठं प्रहणीमसाध्यगदविपिनम् ।  
विद्वहति विशानानलश्च गुटिका तालकमुन्दरीविहिता  
अतिलवणतैलकाजिकचिपमाशनपानमहीधर्माणि ।  
जागरकोपनमैधुनम्रघयिलङ्कानि सर्वाणि ॥  
परिहरतु यावदेनां करोति पुत्रयो तालकेभ्यर्त्तौ गुटिकां  
तायन्ति धान्युपरितो दिनानि गच्छन्मादान्मुक्तिम् ॥  
र. म., कुष्ठे ।

भाषा—बावलकाधोवन, हल्दी, पुनर्नवा, शालपर्णी,  
पीपल, खस, चित्रक, बहेडा और नीमके स्वरसोंसे अलग अलग  
१-१ पहर हरितालको स्वेदनकर सुखाले । फिर गन्धको  
लोहेकेपात्रमें गलाकर भंरेके रस और घृतमें निवापदेकर  
शुद्धकरे । पारोको खदीछाव, पीऊंवार, त्रिफला और चित्रकमें  
क्रमसे मदनकर गोलाबनाय ४ तह कपड़ेमें बांधकर त्रिकटु,  
हींग, राई, सजी, यवक्षार, पाचोनमकमिलीहुई काझीमें  
ढोलायन्त्रसे २ दिन स्वेदनकरके शुद्धकरे । फिर शुद्धहरिताल  
८ भाग, शुद्धपारा, गन्धक, वाकुची, हरे, इलायची, छोट,  
पीपल, नागरमोथा, कालीजीरी, तज और मरिच ४-४ भाग,  
शुद्धबलनाग १६ वा माय लेकर बारीकचूर्णकर धातुर्जीकी नील-  
वर्णकज्जलीमें मिलाय समुदके जलसे १-२ दिन मदनकर १-१  
माशेकी गोलियेबनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली कुष्ठ-  
हरानुपानकेसाय देनेसे सनतहकाकुष्ठ, श्वित्र, उदुम्बर, मोख-  
गिरना, प्रसुति, रक्सा, रक्खात, ददू, किमि, नाडीवण, दुष्ट-  
मगन्दर, प्रहणी, अर्ध, पाण्डू, मूत्रहञ्ज, उन्माद, सक्षिपात,  
तमक, जपस्मार, मेद, ज्वर, इनसबको यह गड़करती है । इसके  
सेवनमें अत्यन्तलवण, तैल, चाञ्चिक, विपमाशन, पान, मृमि-  
क्ष्या, धूप, जागरण, कोप, मैथुन, मद्य, अङ्कुरित अन्न इनसब-

का परित्यागकरे । जितने दिन इसगोलीका सेवनकरे उतने दिनतक तथा औषधसेवनसमाप्तिके बादभी उतनेही दिनतक उष्णजीर्णका निषेधकरे ।

### ६६ तीक्ष्णादिवटिका

खर्पराम्ररसास्तुत्यास्तीक्ष्णञ्च द्विगुणं मतम् ।  
तीक्ष्णपादसमं स्वयं जतुकायेन सप्तधा ॥  
भाययित्वा ततः कायां द्विगुञ्जाप्रमिता वटी ।  
पलङ्कपाकपायेण रसेनोदुम्बरस्य वा ॥  
प्रयोज्या वटिका होया शुभा तीक्ष्णादिनामिका ।  
रक्तपित्तं क्षयं कासं यक्ष्माणं श्वसनं ज्वरम् ॥  
निहन्त्यात्सकलात्रोगान् केसरी करिणं यथा ॥  
भै. र., रक्तपित्ते ।

भाषा—खर्पर, अन्नक और पारदमस १-१ भाग, लोह-मस २ भा०, सुवर्णमस ३ भाग लेकर चारोंकचूर्णकर लाखकेकाढ़ेसे ७ दिन मर्दनकर १-२ रत्तीकी गोलिएबनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गोखरूकेकाय अथवा गुल्मके फलोंकेरससे देनेसे रक्तपित्त, क्षय, कास, राज्यक्षय, श्वास, और ज्वरको यह नष्टकरती है ।

### ६७ त्रिकटुकाद्या वटी

त्रिकटुत्रिफलादुरालभा  
द्विनिशादादयश्चाः सचित्रकाः ।  
रसगन्धकककटाद्वया  
रचककटफलहिङ्गुपत्रिकाः ॥  
इति दर्शितमेपजर्जुटी  
मधुना शाणमिता कृता नृणाम् ।  
प्रणिहन्ति निषेयिता नरैः  
पञ्चमाष्टकक्रकोपजास्त्रिकारम् ॥

ग. नि., कफरोगे ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, जवाब, हल्दी, दाहल्दी, देवदाह, वच, चित्रकमूल, शुद्ध पारा और गन्धक, काकडा-सींगी, कालानमक, कायफल, डीकामाली येसब समभागलेकर चारोंकचूर्णकर पारिगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय मधुमें ४-४ मात्राकी गोलिएबनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सायं प्रातः लेनेसे वातरफ और कफरोगको यह नष्टकरती है ।

### ६८ त्रिनेत्ररसः

टङ्गुणं शोधितं गन्धं मृतं शुल्वायसं रसम् ।  
दिनेकमाद्रिकद्रावेर्मयं लघुपुटे पचेत् ॥  
त्रिनेत्राख्यो रसो नाम चासाध्यं श्वयधुं जयेत् ।  
घट्टमात्रं पिबेद्यानु यातारिश्शिखरीरसम् ॥  
भै. र., शोषाधिकारे ।

भाषा—शुद्धसुहागा, गन्धक और पारा, ताम्र और लोहमस, समभागलेकर नीलवर्णकजलीमें एकदिन अदखके

रससे मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आंचदे । स्वादशीतलहोनेपर निकालकर रखजोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती एण्ड और अपामार्गिक पत्रस्वरसकेसाधनेसे असाध्य शोष नष्टहोता है ।

### ६९ त्रिपुरुषो रसः

वज्रं मद्याणमितं फणिवलिना स्वेदयेद्विवसम् ।  
त्रिदिनं क्षिपेत्तुपाभसि भूषां कन्यारसेन सम्पूर्य ॥  
तत्र निधाय च वज्रं रुद्धमुखीं सप्तभिः पुटेर्विदेहत् ।  
भस्म भवेदिति वज्रं भसितमतः कथ्यते प्रवालम् ॥  
विद्रुमपलं निद्रध्यादिनमेकं देवदालिरसमध्ये ।  
ग्रहरं तद्रसयुष्टं दिनं निद्रध्याद्य कृष्णधूर्तरसे ॥  
अथ याचनालं निद्रधीत दिनत्रयं जलस्यान्ते ।  
तेन जलेन तद्वर्षं पिष्ट्वा भूपोदरं प्रलिम्पेत् ॥  
तत्सलिलपूरितायां भूषायां निक्षिपेत्प्रवालञ्च ।  
रुद्धमुखीं सप्तपुटेर्विदेहन्नवति विद्रुमभस्म ॥  
चूर्णजले सिन्दूरिणि निधाय

पलमात्रमौक्तिकं दिवसम् ।

तस्मिन्नेव धिषपेदिनमेकमथ प्रकल्पयेन्मूपाम् ॥  
वत्सतरीशङ्कतोऽस्याः कृत्वाऽन्तर्लेपनं दशाहानि ।  
तन्मूत्रपूरितायां भूषायां मौक्तिकं क्षेप्यम् ॥  
रुद्धमुखीं सप्तपुटेर्विदेहन्ती मौक्तिकं भस्म ।  
शुद्धं रसपलमेकं नारङ्गफलोदरे ततः क्षेप्यम् ॥  
लवणेन पूरयित्वा नारङ्गं स्थालिकोदरे निहितम् ।  
तां माद्विषेण पयसा सम्पूर्य तापयेन्मन्त्रम् ॥  
यावद्वाऽङ्गुलमानं नारङ्गोपरि स्थितं क्षीरम् ।  
तावद्भस्म रसस्य स्यादेवं भस्मानि चत्वारि ॥  
तान्येकत्र विधाय जम्बूलरसेऽस्मिन्मूपाम् ॥

ततः कृत्वा लुङ्गसमाः क्षिपेत्-

दाऽखिलं ताञ्च प्रपूर्यम्भसा ॥

जम्बीरस्य निरुद्धय तन्मुखमथ त्रिःसप्तधारान्देहं  
सिन्दव्येवमसौ रसस्त्रिपुरुषो रोगौघविध्वंसनः ॥  
क्षौद्राक्षो जरणेन शैलजतुना मासैकसंसेवितः ।  
कृच्छ्रं शरण्या युतोऽपि नितरां पिताहृजं नाशयेत् ।  
तेलेन पक्त्वा घट्टास्त्रिपौष्य

तत्तलमिधं दिवसांश्च पञ्च ।

दद्यात्तमद्याद्रतचेतनोऽपि

जयेद्दशजीनपि सन्निपातात् ॥

जीवतकन्यारसमिश्रितश्च

देवो सिपमिस्त्रिदिनं रसेन्द्रः ।

दुष्टेन कष्टे विधिर्नोपविष्टे

विष्टमशूलं चिनिहन्ति सद्यः ॥

श्वासं सकासं किमिशूलजातं

क्षीरेण युग्मद्वारसो रसेन्द्रः ।

तेनानुपानेन तु तैलपक्वो

मुक्तः स्मरोगमादमपाकरोति ॥

र. मृ. सभिपाते ।

टि०—मूलरूपप्रतिष्ठा पारदभस्म दुर्बलस्य सत्वपक्वके दुग्धे शुष्के  
धरा रयाली मुते न्यस्य मात रघट्ययिका दत्ता चतुर्विंशे क्रमवद्वा  
मिमा पाकः करणीयस्तेन रस्यप्रासादो न यतिष्यति ।

भाषा—६ माघे बज्राध्रकको पानकेरसे एकदिन स्वेदन  
कर तुषाम्भुसे ३ दिन रस सूपामे डाल धीज्वारकेरसे  
सूपको भरके ॥ कपडमिठी देकर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्ग-  
शीतलहोनेपर निकालकर फिर पूर्ववत् घोटकर आचदे । ऐसे  
७ आचोंमें बज्राध्रकमीसम्बोही । एकपल प्रवालको यन्दाळके  
रसमें एकदितस्वेदनकर बारीककूकर एकप्रहरमर्दनकर काले  
घट्टेके रसमें डालकर थोड़ीज्वार डालदे । तीनदिनवाद उसी  
जलमें पवारको धीसकर सूपकेभीतर लेपनकरदे । फिर उसमें  
प्रवालकी टिकड़ीको रस उसीपानीको अन्दरभरके ७ कपड  
मिठीदेकर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर  
फिर पूर्ववत् आचदे । ऐसे ७ बार आचें देनेसे भस्महोगी ।  
एकपल मोतियोंको सिन्दूरबण्णूनेके पानीमें डालकर एक-  
दिन रहनेदे । फिर दूसरेदिन उसीजलमें २४ घण्टा घोटकर  
रघारकीलीदका रघुपुटीहुई वज्रसूपामे रस खबत्तेहीमनेसे  
भरदे । १० दिनवाद कपडमिठीकर गजपुटकी आचदे । ऐसे  
७ पुनदेनेसे भस्महोगी । एकपल शुद्धपारेको नारतीकेभीतर  
रखकर रवणसे आघेतकभरीहुई हण्डीमें रस खण्णसे ऊपर  
तकभरके भेंसकादूधभरदे और भन्द आचसे पकावे । नारगीपर  
एकअहुलद्व बाकीरहजानेपर उतारकर नारतीमेंसे पारको  
निकाल दूसरेफलमें भरके पूर्ववत् आचदे । ऐसे ७ बार पाक  
करे । सातवींवार तमामदूध जलपानेबेबाद हण्डीपर दूसरीहण्डी  
रखकर ६-७ कपडमिठीकर सूखनेपर ४ दिनकी आचदे ।  
ऊपरकी हण्डीपर भीगाकपडा रखे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर  
धीरजसे बन्दको खोलकर ऊपर लगेहुए रघुपुट्योंको निकाल  
के । इसतरह चारोंभस्मोंकी एकत्र मिलाय जभीरीकेरसे घोट  
कर टिकड़ीबनाय सूपामेरस बिजोरे अथवा जभीरीकारस  
भरके कपडमिठीकर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर  
निकालकर पूर्ववत् मर्दनकर आचदे । ऐसे २१ बार गजपुटदेनेसे  
यह रस तैयारहोजाताहै । इसमेंसे १-१ रसी तत्तद्गोहरानु-  
पानकेसाथ एकमहीनेतक सेवनकरनेसे भूतकृन्त्र, शङ्कर, सूत्रमेह,  
रफपित्त इनसबको यह नष्टकरताहै । तैलमें उड़के बड़े बनाकर  
उन्हें दवाकर तैलनिकाले । उस तैलकेसाथ ५ दिनतक देनेसे  
चेतनारहितनी सभिपाती जीवितहोताहै । इसतरह १३  
सभिपातोंको यह नष्टकरताहै । नागरमोया और धीज्वारके  
रसकेसाथ ३ दिनतक देनेसे भगवद्धरविष्टम और चूल्को  
नष्टकरताहै । इसीतरह श्रास, कास, पक्ष्मण, किमि, शूल इन  
सबको नष्टकरताहै । दूध और भगवैरसकेसाथ मिलाकर  
तैलमें पकाकरदेनेसे स्मरोगमादको नष्टकरता है ।

७० त्रिलोचनवटी

वारिणा मर्दयेतालं सीसरं मरिच विपम् ।

मुद्रमाना वटी कार्या जलेन सितया सह ॥

हिमुद्रतान्तरं दद्यात्कमेण वटिकानयम् ।

त्रिलोचनवटी होपा पर्यायज्वरनाशिनी ॥

वातिकं पैत्तिकञ्चापि श्लेष्मिकं साक्षिपातिकम् ।

सर्वाङ्गवराद्धिहत्याशु प्रयुक्ता ज्वरमादये ॥

शै र, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध हरिताल और बज्रनाग, नागभस्म, मरिच,  
येसब समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर एकदिन जलकेसाथ  
घोटकर सूखवावर गोखियेबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१  
गोली जल अथवा शङ्करकेसाथ २-२ घण्टेदेनेसे पालीकेज्वर,  
वातिक, पैत्तिक, श्लेष्मिक और साक्षिपातिक ज्वर नष्टहोतेहैं ।

७१ त्रिविक्रमरसः

शुद्धयताऽमृतं ताम्रं शिलातालञ्च गन्धकम् ।

कुष्ठ महायला पथ्या शिजिकण्ठं विद्वारिका ॥

परण्डतेलं संयोज्य दिनमैकान्तु मर्दयेत् ।

पुनर्नयाद्रवेणयाऽनुपानं सम्प्रकल्पयेत् ॥

गुञ्जामात्रां वटीं खादितुस्मवातनिवहणम् ॥

शै वि गुल्मे ।

भाषा—शुद्ध पारा, बज्रनाग, ताम्रभस्म, शुद्ध मैन्सिल,  
हरिताल और गन्धक, कुष्ठ, महायला (कहूी), हर्द, दुस्मभस्म,  
विद्वारी येसब समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर एकदिन  
परण्डतेलसे मर्दनकर १-१ रसीकी गोखियेबनाकर रखछोड़े ।  
इनमेंसे १-१ गोठी पुनर्नवाके स्वरसकेसाथ देनेसे गुल्मवात  
नष्टहोताहै ।

७२ त्रैलोक्यरक्षामणिरस

सूताम्रगन्धं विपतालरोन्यं ताम्रं प्रवालं द्रवद्वज्ज बज्रम्

मयूरतुत्यं कनकेन मिश्रं नेपालचूर्णं मृतलोहभस्म ॥

निर्गुण्डियैश्चानरतोयपिण्डं सुवालुकायजगतं विपङ्गम् ।

आद्रस्य तोये मरिचैर्विमिश्रं

गुञ्जप्रमाणं विनिहन्ति दोषम् ॥

ग्रन्दाश्लितीणज्वरमारुतानां

श्वसाञ्च कासं बहुरोगसङ्घम् ।

चिन्तामणिनां महाप्रभाव-

श्लैलोक्यरक्षामणिपारदेन्द्रः ॥

रसायन ७० ज्वराधिकारे

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, बज्रनाग और हरिताल, अभ्रक,  
रजत, ताम्र, प्रवाल, शिगरिफ, हीरा, मयूरतुत्य, मुक्कण,  
लोह इनकीभस्में और शुद्धजमालाघाटा समभागलेकर नीलवर्ण-  
कजलीकर समग्र और चित्रकेस्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर  
गोलाबनाय धरायसम्पुमें बन्दकर बालुकायन्त्रमें रख एकदिन-  
रातकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर १-१ रसी अदरखके

रस और मरिचकेसायदेनेसे मन्दाग्नि, जीर्णज्वर, समस्तबायु रोग, श्वास, कासप्रश्रितोर्गोको यह नष्टकरताहै ॥

### ७३ दरदादिवटी

दरदं पादपलिकमहिनेनञ्च तत्समम् ।  
भृङ्गा पलमिता ग्राह्या मायकद्वयसम्मिता ॥  
गन्धकं चोषणं कृष्णा दृङ्गणं चत्सनाभकम् ।  
धूर्तवीजं कुचैलञ्च दरदस्य समं समम् ॥  
सर्वं सम्पेयत्सूक्ष्मं निरेण गुटिका ततः ।  
महुष्मना कर्तव्या दिवा रात्रौ प्रदापयेत् ॥  
तदेकैकाङ्गलेनेवाऽम्लादिकं परिवर्जयेत् ।  
पण्डो पौरुषमासाद्य रमण्या सह मोदते ॥

र. बाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध विंगरिक और अजीम १-१ कर्प, भाग १ पल २ मांशे, शुद्धगन्धक, मरिच, पीपल, सुनासुहृणा, शुद्ध बल्लनाग, धतूरेकेवीज और कुचिला १-१ कर्प लेकर बारीकचूर्णकर १-२ दिन पानीमें घोलकर मोठबराबर गोखिये बनाकर रखोहो । इनमेंसे १-१ गोली पानी अथवा उजि तातुपानकेसायकेनेसे मुषत्वको प्राप्तहोताहै ।

### ७४ द्विपोनिरसः

ग्राह्यं शुद्धरसात्पलं पलमयो सप्रन्धकाच्छोषितं,  
मण्डूराश्च पलद्वयं पलमपि स्यात्पूतनाचूर्णतः ।  
चूर्णांकृत्य त्रिवृत्पलञ्च सकलं खल्वे निधाय स्थितं,  
तं सम्भाव्य सुपीतमृङ्गसलिलप्रस्येन सञ्चूर्णितम् ॥  
वातव्यं मधुसर्पिपा प्रतिदिनं तत्पेयमापान्यितं,  
क्षौद्राम्मोहिमरागद्वडिमजलद्राक्षास्तुपानादिभिः ।  
पीत्वाऽम्लं विनिहन्ति मान्यमलसञ्चयासञ्च वक्षोगद्वयं  
छर्दि सर्वमयामपि क्षययज्जं जीर्णज्वराशस्यपि ॥

र. घृ. राजयश्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ पल, मण्डूराम्ल १ पल, हरे और मिसोत १-१ पललेकर बारीकचूर्णकर एकप्रस्य पीलेभारेकेरसे भावनादेकर सुखाकर रखोहो । इसमेंसे १-१ मांशा द्राक्ष, चन्दन, केसर, अनार, सुगन्ध बाला इनके क्वायकेसायकेनेसे मन्दाग्नि, अलमक, श्वास, छातीकादर्द, धमन, समस्तवातविकार, क्षय, जीर्णज्वर और बवासीर नष्टहोतेहै ।

### ७५ नागार्जुनीवटी

तालेशो दृङ्गणं गन्धं कुष्ठं त्रिकटुकं विषम् ।  
करसाटञ्च सर्वाणि समभागानि कारयेत् ॥  
माययेद्भृङ्गराजेन सप्त धत्तुराजेन च ।  
गुञ्जामांशं वर्टी कृत्वा रात्रौ दद्यात्सुखेच्छया ॥  
अशीतिं घातमात्रोर्गान्धुम्पिकानेकविंशतिम् ।  
पपा नागार्जुनीनाम सिद्धश्लाघ्यामवातनुत् ॥  
र. भो, वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध हरिताल, पारा, सुहागा और गन्धक, कुष्ठ, त्रिकटुक, शुद्धवल्गनाग, अवलकुरा, सप्त समभागलेकर बारीक-चूर्णकर घातुर्गोकी नीलचूर्णरज्जलीमें मिलाय भगरा और धतूरेकेरसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलिये बनाकर रखोहो । इनमेंसे १-१ गोली रात्रिमें उचितानुपान-केसायदेनेसे ८० प्रकारके वातरोग और २१ श्लेष्मरोगोको यह नष्टकरतीहै ।

### ७६ नीलकण्ठरसः

रसस्य भागाश्चत्वारो हेस्त्रो भागचतुष्टयम् ।  
अम्रं लौहं तथा मुका वैक्रान्तं युग्मभागिकम् ॥  
रौप्यं प्रयातं ताप्यञ्च घट्टमेकैकभागिकम् ।  
निधाय कीचन्तिलाक्ष्मिमुलकायेन भावयेत् ॥  
एरण्डपत्रैः संवेष्ट्य धान्यादाशौ निधापयेत् ।  
ततो दिनत्रयापूर्द्धमुदृत्य चणुकप्रभाः ॥  
नीलकण्ठं समभ्यर्च्य शुचिः संयतमानसः ।  
प्रयुज्याद्वटिका धीमान् यथाव्याध्यनुपानतः ॥  
रसायनवर. श्रीदो घातव्याधिघनाशन ।  
रसः क्षीनीलकण्ठाख्यो नीलकण्ठेन भापितः ॥  
कुष्ठमष्टादशविधं प्रमेहान्विंशतिं तथा ।  
नेत्ररोगं तथा दीपान् रजःशुकसमुद्भवान् ॥  
सन्निपातज्वरं घोरं हृत्सासामुलकण्जान् ।  
रोगं बहुविधं हन्ति भास्करस्तित्तिमिरं यथा ॥

भै, र, रसायने ।

भाषा—पारदभस्म अथवा रससिन्दूर और सुवर्णभस्म ४-४ भाग, अम्रक, लोह, मोती और वैक्रान्तभस्म २-२ भाग, रजत, प्रवाल, सुवर्णमाक्षिक और वक्रभस्म १-१ भाग लेकर अर्कूपी, लाख और चित्रकमूलकेक्वायोंसे ३-३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय एरण्डकेपत्तोंमें लपेटकर धान्यकी-राशिमें ३ दिनतक रखकर चौथेदिन चनेप्रमाण गोखियेबनाकर रखोहो । नीलकण्ठ महादेवका पूजनकर १-१ गोली तत्तद्वि-हरातुपानकेसायदेनेसे १८ प्रकारके बुध, २० प्रकारके प्रमेह, नेत्ररोग, रज और शुकदोष, सन्निपात, हृदय, नाक, मुख और कानकेरोग इनसबको नष्टकर रसायनका काम करताहै ।

### ७७ पानीयवटिका

शुद्धः स्वतो गन्धरुञ्ज हरितालं समांशकम् ।  
विषाऽयस्क्रान्तनिम्बानां प्रत्येकञ्च द्विभागिकम् ॥  
शेफालीदलजैः कार्यैर्गुह्यचूर्णपटोद्भवे ।  
भावयित्वा ततः कार्या गुञ्जात्रयमिता वटी ॥  
अनुपानं प्रयोक्तव्यं शीतले सलिलं ह्यनु ।  
ज्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमयापि वा ॥  
प्लीहानं यरुतं शोथं पाण्डुञ्च सहलीमकम् ।  
पानीयवटिका होवा प्रथिता पृथिवीतले ॥  
भै. र. ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और इरितात १-१ भाग, शुद्धजनाग, कान्तोहमस्य, त्रिभुजमन्त्रा २-२ भागलेकर नील-वर्णकजलीहर हारसिंगरकेपते, गिलोय और पित्तपापड़ेके रवर-छोटे १-१ भावना देकर २-२ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रस-छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली डेढ़जलवेगायदेनेसे घाण्य अववा अवाण्य ८ प्रकारकाज्वर, प्लीहा, यकृत, शोष, पाण्डु, हलीमक इन सबको यह नष्टकरती है ।

### ७८ पित्तान्तकलोहम्

रसै गन्धकमस्रञ्च शुद्धचर्ममयं तथा ।  
उशीरं बालकं ताप्रासारं सयै समं समम् ॥  
गृहीत्वाऽप्यः सर्वसमं रसस्यै संस्थाप्य मर्दयेत् ।  
रक्तिकाद्वयमितं खादेद्दृष्टिकामतियत्नतः ॥  
पटोलपत्रधान्याकफार्थेनैवानुपानतः ।  
पाण्डु पित्तोद्भवाप्रोमानशेषान्यरुतं तथा ॥  
उपदेदी तथा हन्याद्विरुतिं पारदोद्भवाम् ।  
लोहं पित्तान्तकं नाम धातरक्तं सुदारुणम् ॥  
दाहञ्च हस्तपद्मोर्हन्ति सूर्यं पथा तमः ॥  
शे. र., वातरके ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रकमस्र, गिलोय, हरे, खय, मुगन्धशाला, लालचन्दन येसु समभाग और लोह-भस्म सबकीबराबर लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्ण-कजलीमें मिलाय पटोलपत्र और धनिशेकेजायोंसे १-२ पहर मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पटोलपत्र और धनिशेके हाथवेगायदेनेसे पाण्डु, समस्त पित्तविकार, उपदश, पारदविकार, भयङ्गराजलफ, हस्तगददाह इनसबको यह नष्टकरता है ।

### ७९ प्रदारारिसः

यज्ञाय.फणिफेतश्च रसः पद्मजजरितः ।  
मूलै रक्तोत्पलमयं रक्तचन्दनमेव च ॥  
समं सर्वमशोकस्य कफैः सम्मर्द्य यत्नतः ।  
धनकामा घटी कार्याऽशोकफार्थं पिबेद्युतु ॥  
प्रदारारिसो हन्ति द्विविधं प्रदारामयम् ।  
यस्तौ च वेदनां रक्तवार्धं घोरज्वरं तथा ॥  
मृषाधिक्षयादिकांश्चैव भास्करस्तिमिरं यथा ।  
अथवा त्वगशोकस्य शुद्धचीयासकत्वचः ॥  
रसाञ्जनं मुस्तकञ्च रक्तचन्दनमेव च ।  
यपामनु पिबेत्कार्यं सर्वप्रदक्षान्तये ॥  
शे. र., प्रदराधिकारे ।

भाषा—वज्र और लोहभस्म, शुद्ध अफीम, पद्मगन्धक-जरित रससिन्दूर, लालमलमलकन्द, लालचन्दन सब समभाग-लेकर बारीकचूर्णकर लालअशोककीछालकेकाठसे १-२ दिन मर्दनकर अनेप्रमाण गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली लालअशोककीछालकेकाठकेसाथदेनेसे दोनोंप्रकारकाप्रदर,

वस्तिशूल, भयङ्गर रक्तवाव, घोरज्वर, बहुमस्र इनघबको यह नष्टकरता है । विषीजयह यह काम न दे तो अशोककीछाल, गिलोय, अङ्गुरकीजकीछाल, रसीत, नागरमोया, लालचन्दन इनके हाथवेगाय देवे ।

### ८० प्लीहारिवटी

सहासाराऽभ्रकासीसलशुनानि समानि च ।  
द्रोणपुष्परसेनैव मर्दयेत्प्रहरप्रयम् ॥  
यहृदयं प्रदातव्यं प्रदोपे सलिलं दानु ।  
प्लीहानं यरुतं गुल्ममग्निमान्यं सद्योद्यकम् ॥  
कासं श्वासं तृषां कम्पं दाहं शीतं धर्मि भ्रमिम् ।  
प्लीहारिवटिका होषा नाशयेन्नात्र संशयः ॥  
शे. र., प्लीहयकृतधिकारे ।

भाषा—एलिया, अभ्रक और कासीसभस्म, एकघोती, लहसुन येसव समभागलेकर गुमाकेरसे ३ प्रहर मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली साय-ङ्गलेसमय पानीबेसाथ देनेसे प्लीहा, यकृत, गुल्म, मन्दाहि, शोफ, कास, श्वास, कम्प, दाह, शीत, धमन, और भ्रमको यह नष्टकरती है ।

### ८१ भृङ्गरानलेहम्

४८ तोलके भृङ्गराजस्वरसे ८ तोलकं निर्वाज-हरीतकीचूर्ण, १२ तोलकञ्च तालगुडं निधाय घनपाके निवृत्ते त्रिकटुकमयोभस्म च प्रतिप्रितोलकं, घृतम-धुनीं प्रतिलसतोलकं संयोज्य लेह्यपाकं गृहीत्वा प्रत्य-हं द्विवारं पादतोलकरूपमार्थं सेवितश्चेद्वातपित्तपाण्डु-दायतं गुल्मकामलादयो रोगा नश्यन्ति । क्षाराम्लौ खीसङ्गश्च सुतरां त्याज्यः । (अगस्त्य०)

### ८२ मालतीकुसुमाकररसः

चन्द्रभागः सुवर्णस्य कर्पूरं युग्मभागिकम् ॥  
यज्ञसीसकलोहानां भागत्रयमुदाहृतम् ॥  
अम्रप्रवालमुक्तानां भागाधत्वार ईरिताः ।  
गन्धेन पयसा चैव कदलीपुष्पजै रसैः ॥  
रसेनेष्टुसमुत्प्रेने तथा पसरसेन च ।  
जडुम्वरसेनेव भावयेत्सप्तधा पृथक् ॥  
रक्तिद्वयमिता हन्ति मालतीकुसुमाकरः ।  
रसः सर्वप्रमेहांश्च बहुमुत्रादिकं तथा ।  
सोमरोगांश्च संहन्ति भास्करस्तिमिरं यथा ॥

शे र, प्रमेहे ।

भाषा—सुवर्णभस्म १ भाग, शुद्धकर्पूर १ भा., वज्र, नाग और लोहभस्म ३-३ भाग, अभ्रक और प्रवालभस्म, मुक्तापिष्टी ४-४ भाग लेकर गायकेदूध, कैलासपुष्प, ईश, कमल और मूलवेफलोंकेरसोंसे ७-७ भावनाएँ देकर २-२ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानके-



साय देनेसे समस्तप्रमेह, बहुमूत्र और सोमरोगको यह नष्टकरताहै ।

### ८३ माहेश्वरवटी

हेममुक्ताऽम्रकाङ्गोक्षरीरकाकोल्ययांसि च ।  
कान्तं महायलामूलं गृहीत्वा समभागिकम् ॥  
शुष्कमूलकगोक्षरी तथा श्वेतपुनर्नवा ।  
एषां काथेन विधिवद्वाधयेत्सप्तधा भिपङ्क्त ॥  
रक्तिक्रयमिता सेव्या वटी माहेश्वराभिधा ।  
होयं विदोपतश्चात्र शस्तं दुग्धाग्रभोजनम् ॥  
पाण्डुं वृक्षामयञ्चैव शोथं सावाङ्गिकं तथा ।  
जलोदरं तथा मोहं विपमज्वरमेव च ॥  
अस्याः प्रयोगादयन्ति भास्करपत्तिमिरं यथा ।  
रसायनाधिकारोक्तान्यौषधान्यपि योजयेत् ॥  
न चास्ति शमने किञ्चिन्निर्दिष्टमस्य भेषजम् ।  
पथ्यैर्वैलैः सुपाच्यैश्च भिषगेन प्रपाययेत् ॥

शै, र, यक्ष्मणि ।

भाषा—शुवर्ण, मोती और अम्रकमस, मुनीफ्टकड़ी, क्षीरकाकोली, लोह और कान्तलोहमस, बलाबीजइ, सबसम-  
भागलेकर बारीकचूर्णकर सूतीमूली, गोखरू और सफेदपुनर्नवाके  
काथोंसे ७-७ भावनाएँ देकर २-२ रस्तीकी गोलियेंबनाकर  
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोक्तानुपानकसायदेकर  
दूधमास पिजानेसे पाण्डु, शुद्धीकार्द, सर्वाङ्गशोथ, जलोदर,  
भ्रम, विपमज्वर इनसबको यह नष्टकरतीहै । इसकेप्रयोगमें  
रसायनाधिकारोक्त औषधोंकीभी योगकरनाचाहिये ।

### ८४ मृगाङ्कचूर्णम्

मुक्ताशङ्खप्रवालानि वज्रञ्चैव समांशकम् ।  
निम्बकाथेन सम्मर्ष्य ततो गजपुटे पथेत् ॥  
सर्वतुल्या तुगाक्षरी इदं तत्कलांशकम् ।  
एतत्सर्वं विभूर्ण्याऽथ पिप्पलीमधुसंयुतम् ॥  
रक्तिक्रयं प्रदातव्यं कृच्छुरोगप्रशान्तये ।  
क्षयं हन्ति तथा कांसं यक्ष्माणं श्वासमेव च ॥  
स्वरभेदं ज्वरं मेहान् दोषत्रयसमुत्थितान् ।  
मृगाङ्कचूर्णमेतद्वि कासरोगकुलान्तकम् ॥

शै र., यक्ष्मणि ।

भाषा—मुक्तापिष्टी, शङ्ख, प्रवाल और वज्रभस्म सम-  
भागलेकर नीमकीछालनेकाटोसे मर्दनकर गोलाबनाया धराव  
समुद्रमें बन्दकर गजपुटी जाचदे । स्वाङ्गशोथलेनेपर  
निकालकर सबकीबराबर बसलोचन और अष्टमास हिहलभस्म  
अथवा शुद्धहिहलडालकर बारीकचूर्णकर १-२ दिन घोटकर  
रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रस्ती पीपल और मधुकेसायदेनेसे  
कष्टापच्यक्षय, कास, राजयक्ष्म, श्वास, स्वरभेद, ज्वर, त्रिदो-  
षजप्रमेह, इनसबको यह नष्टकरताहै ।

### ८५ मृगाङ्कवटिका

पारदो गन्धकः शुद्धो लौहमस्रञ्च टङ्गणम् ।  
त्रिकटु त्रिफला चयं तालीसं पिप्पली तथा ॥  
रक्तोत्पलं तथा लाक्षा सर्वमेकीकृतं शुभम् ।  
वासाकाथेन सम्भाव्य बहुमानां वटीं चरेत् ।  
एकैकां वटिकां खादेद्रक्तोत्पलरसप्लुताम् ।  
वासाकाथेन पिप्पल्या चोदुम्बररसेन वा ॥  
वातिकं पैत्तिकञ्चापि श्लेष्मिकं साध्निपातिकम् ।  
वातश्लेष्मोद्भवं वापि पित्तश्लेष्मसमुद्भवं ॥  
सर्वकासं निहन्त्यागु ज्वरं श्वाससमन्वितम् ।  
रक्तनिष्ठोद्यनं तृष्णां दाहं मेहं भ्रमं वमिम् ॥  
ग्रीहगुल्मोदरानाहक्रिमिकण्डूविनाशिनी ।  
मृगाङ्कवटिका होषा बलवर्णाङ्गिकारिणी ॥

शै, र, यक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और अम्रकमस,  
मुनाखुदागा, त्रिकटु, त्रिफला, चव्य, तालीसपत्र, पीपल, लाल-  
कमल और पीपलीकाल समभागलेकर बारीकचूर्णकर अहुसे-  
केपञ्चाद्रव्यायसे ४-५ भावनाएँ देकर ३-३ रस्तीकी गोलियें  
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली लालकमल, अहुसा,  
पीपल और गुजरके स्यासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंकेसाय-  
देनेसे वातिक, पैत्तिक, श्लेष्मिक, साध्निपातिक, वातश्लेष्मिक,  
पित्तश्लेष्मिक कास, श्वास, ज्वर, रक्तनिष्ठोदन, तृपा, दाह,  
प्रमेह, भ्रम, वमन, प्लीहा, गुल्म, उदर, आनाह, मिमि, कण्डू,  
इनसबको दूरकर बलवर्णको करतीहै ।

### ८६ मृगाङ्कवटी ( वृहती )

हेमायस्कान्तसूताम्रप्रवालमौक्तिकानि च ।  
विभीतकपायेण सर्वाणि भाधयेत्त्रिधा ॥  
परण्डपत्रमव्यस्यै धान्यराशीं दिनप्रथमम् ।  
स्थापयित्वा तदुद्धृत्य त्रिगुञ्जं वटिकां चरेत् ॥  
विभीतकस्थिशस्यश्च माषार्धं मधुसंयुतम् ।  
अनुपानमिह प्रोक्तं काथोवाऽक्षसमुद्भवं ॥  
क्षयं हन्ति तथा कांसं यक्ष्माणं श्वासमेव च ।  
स्वरभेदं ज्वरं मेहं सर्वामयविनाशकम् ॥

शै र, हिक्काधासाङ्गिकार ।

भाषा—शुवर्ण, कान्तलोह, पारद, अम्रक, प्रवाल और  
मौक्तिकमस समभागलेकर बारीकचूर्णकर बहेकेकेवायसे ३  
दिन मर्दनकर गोलाबनाया परण्डपत्रोंमेंरख कच्चेसूतसे लपेट-  
कर कमरवावर धान्यकीराशिमें ३ दिनतक रखे । चौथेदिन  
निकालकर २-२ रस्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली आधेमासे बहेकेकेचूर्ण और मधुके साय लेकर  
अहुसेकासाय पिजानेसे क्षय, कास, राजयक्ष्म, श्वास, स्वर  
भेद, ज्वर और प्रमेहप्रवृत्तिरोगोंको यह नष्टकरतीहै ।

## ८७ रतिवल्लभमोदकः-

शकाशनस्य बीजानां चूर्णानि पल्पपञ्च च ।  
हृषिपः कुडवच्चैरुं सिताप्रस्थं प्रगृह्य च ॥  
शतावरीरसप्रस्थं तथा शकाशनस्य च ।  
गन्धमाजं पयःप्रस्थं ततः प्रस्थद्वयं पचेत् ।  
धात्री द्विजोरकं मुस्तं त्वगेलापनकेशरम् ।  
आत्मगुप्ता चातिवला तालाङ्कुरकशेयकम् ॥  
शृङ्गाटकं त्रिकटुकं धान्यमभ्रञ्च वङ्गकम् ।  
पथ्या द्राक्षा च काकोल्यौ खर्जूरं धुरकं तथा ॥  
कटुका मधुकं कुष्ठं लघ्नं सारसैन्धवम् ।  
यमानी चाजमोदा च जीरन्ती गजपिप्पली ॥  
प्रत्येकं कर्पमेकन्तु चूर्णितानि शुभानि च ।  
कुडवार्यं पाकरोपे मधुन प्रक्षिपेत्ततः ॥  
मृगाण्डजं सकर्पूरं ययालामं विनिक्षिपेत् ।  
रतिवल्लभनामाऽयं सेष्यमानो महारसः ॥  
परमोजस्करो बब्यो वातव्याधिघ्निनाशनः ।  
वातपित्तहरो वृष्यो दृष्टिस्तन्वीपनः परः ॥  
पित्तश्लेष्माश्रुपित्तमो विपगुल्मज्वरपहः ।  
नाशयेदपमन्दाग्निं रोगाणां क्षयहेतुकः ॥  
न भयेद्भिन्नशैथिल्यं बुद्ध्यानां पुष्टिर्जननम् ।  
यस्य गेहं सदा वङ्गयः पत्युः सुमनाहरा ॥  
रसः सेन्यः सदैवाऽयं मोदको रतिवल्लभ ।  
ये केचिद्भिजया योगा लोह्यङ्गाभ्रसंयुताः ॥  
युक्ताश्च रसगन्धाभ्यां रसायनवरा भताः ॥  
भै र, वाजीकरणे ।

भाषा—गाजेनेबीज ५ पल, घी ४ पल, कदर १ प्रस्थ,  
शतावर और भागकारस, गाय और बकरीकादूध १-१ प्रस्थ  
लेकर इन्हेकर पकावे । दोप्रस्थ वाजीरहनेपर भावले, दोनोर्जीरे,  
नागत्तोथा, तज, इलायची, पत्रज, नागकेशर, केवाचकी मन्ना,  
अतिवला, तालाङ्कुर(ताडमाली), कशेरु, सिंघाड़े, त्रिकटु घनिया,  
अन्नक और बज्रमस, हर्द, श्राश, काकोली, क्षीरकाकोली, सुहारे,  
तालमखाना, कुटकी, मुलहठी, कुल, लोण, सेयानमक, अजवाइन,  
अजमोद, अर्जुनीबीजजड़ और गजपीपलका १-१ कर्प चूर्ण  
बालकर पकावे । चाशनी तैयारहोनेपर दोफल मधु, कस्तूरी  
और कपूर यथेष्टप्रमाणसे बालकर १-१ तोलेके मोदक बनाकर  
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ मोदक दूधसेताय सेवनकरनेसे ओज  
और यलामाव, वातव्याधि, वातपित्त, नपुसकत्व, दृष्टिदोष,  
पित्तश्लेष्म, रक्तपित्त, विष, गुल्म, ज्वर, मन्दाग्नि, लघ्न, ध्वज  
भङ्ग, कुशता इनसबको दूरकरताहै । मार्गक्योर्गोमें लोह, वज्र  
और अन्नकमस, पारद तथा गन्धक मिलादेनेसे अत्यन्त रसा-  
यनका कामकरताहै ।

## ८८ रत्नप्रभावटी

हेमायस्कान्तवैकान्तखर्परायासि विद्रुमम् ।  
मुकाञ्चैकन सम्मर्थं दार्याकायेन सप्तथा ॥

भावयित्वा घटीं कुर्याद्रक्तिकाप्रमितां भिपक् ।  
एषा रत्नप्रभा नाम घटी सततकं हरेत् ॥  
ग्रीहानं बद्धिमान्यञ्च कामलां यद्वदामयम् ।  
स्नायुशूलं महाघोरं केशरी करिणं यथा ॥  
भै र, ज्वराधिकारे ।

भाषा—सुवर्ण, कान्तलोह, वैकान्त, खपरिया, लोह,  
प्रवाल इनकीमसमें और मुकापिष्टी समभागलेकर दारहल्दीकी-  
छालनेकायसे ७ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलीयैबनाकर  
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तप्तशोणहरागुपानकेसाथदेनेसे  
सततज्वर, ग्रीहा, मन्दाग्नि, कामला, यद्वत्, स्नायुक, भयहरशूल  
इनसबको यह नष्टकरतीहै ।

## ८९ रसेन्द्रचूर्णम्

पलोन्मितं शुद्धसूतमादृशीताथ शाणकम् ।  
प्रत्येकं वंशजा मुक्ता निकर्त्य हेमभस्मकम् ॥  
द्रावयेदहिफेनस्य शाणं क्षीरे निमज्जितम् ।  
घृतपूतेन तेनैव तत्सर्वं मर्दयेद्भृशम् ॥  
छायायामातपे वाऽथ शोषयेच्चूर्णयेत्ततः ।  
सक्षीरमन्नमश्रीयास्त्राश्रीयाह्वयणाग्मसौ ।  
शौचमाचमनं कार्यमग्निपूतेन वारिणा ॥  
वाससाऽऽच्छादयेद्देहं न छायादस्य सेषकः ।  
अत्रानुयतयेत्सर्वाभियमाग्रससेविनाम् ॥  
चूर्णं रसेन्द्रनामेदं रसे श्रेष्ठे रसायनम् ।  
नाशयेद्गह्वर्णां कृत्वा रक्तातीसारसूतिके ॥  
अग्निमान्द्यादिकं जित्वा दीपयेज्जडरानलम् ।  
पुष्टं हृष्टं बलिष्ठञ्च नरं कुर्याद्विताशिनम् ॥

भै र महत्प्रयधिकारे ।

भाषा—रससिन्दुर ४ कर्ष नीलकण्ठीवंशलोचन और निकर्त्य  
सुवर्णमस ४-४ भासे लेकर बारीकचूर्णकर दूधमें मिलाकर  
कपड़ेसे छानेहुए ४ भासे अक्षीमसे १-२ दिन मर्दनकर छायामें  
सुखाकर चूर्णबनाकर रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ रत्ती दूधकेसाथ  
सेवनकर दूधभातरिल्लानेसे समस्तप्रद्वी, रक्तातिसार, सूतिका-  
रोग और मन्दाग्नि कष्टहोकर पुष्टि और बल प्राप्तहोताहै । इसके  
सेवनमें लवण और पानीको बिल्कुल छोड़देवे । शौच और आच-  
मननेलिये गरमपानीसेकामलेवे । हस्तान न करावे । शरीरको सुखा  
न रखे । ब्रह्मचर्यादि समस्तनियमोंका यथावत् पालनकरे ।

## ९० रसेन्द्रवाटिका

लोहाग्रे कोलमाने च तदर्धो रसगन्धकी ।  
तदर्धा विद्रुमो ग्राह्यः खर्परं विद्रुमः समम् ॥  
कण्टकारीरसेनापि सारस्वतरसेन च ।  
वासकस्य कपायेण भावयेथ त्रिधा चिधा ॥  
रक्तिययप्रमाणेन वटिकां कारयेत्ततः ।  
सप्तरात्रप्रयोगेण स्वप्नुद्धिर्भवेन्नृणाम् ॥  
मासमात्रप्रयोगेण विभ्ररेः सह गायति ।

मेधाश्च लभते तीक्ष्णां तुष्टिपुष्टिसमन्विताम् ॥  
हन्ति कासं तथा श्वासं प्रमेहं बहुमुत्रकम् ।  
रसेन्द्रवटिका ह्येषा धन्वन्तरिचिनिर्मिता ॥  
भै. २, स्वरभेदे ।

भाषा—लोह और अभ्रकमस्य ८-८ माशे, शुद्ध पारा और गन्धक ४-४ माशे, प्रवाल और खर्परमस्य २-२ माशे लेकर नीलवर्णकमलीकर भट्टकट्टया, माझी और अड़सेके स्वर-सोंसे ३-३ भावनाएं देकर २-२ रस्तीकीगोलियें बनाकर रख-छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अवस्थोचितानुपानकेसाथ ७ दिन-तक देनेसे स्वरमज्ज दूरहोताहै । एकमहीनेमें मधुरकण्ट होताहै । इसकानिन्तरसेवनरनेसे दिव्यमेधा औरपुष्टि होतीहै । काष, श्वास, प्रमेह और बहुमुत्रका नाशहोताहै ।

### ९१ वसन्ततिलकरसः

लौहं वज्रं माक्षिकञ्च सुवर्णञ्चाभ्रकं तथा ।  
प्रवालं तारमुकाञ्च जातोऽरूपं फलन्तया ॥  
एतेषां समभागेन चातुर्जातञ्च मिथितम् ।  
मर्दयेत्तिनफलाकाये वटिकां कुरु यत्नतः ॥  
रोगांश्च म्रियजा ज्ञात्वा अनुपानं यथायथम् ।  
घातिर्यं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं साक्षिपातिकम् ॥  
घ्रायुं नानाविधं हन्ति चापस्मारं विशेषतः ।  
विस्तृचिकां क्षयाम्नादौ शरीरस्तम्भमेव च ॥  
प्रमेहान्विशतिञ्चैव नानारोगं विशेषतः ॥  
भै. २, प्रमेहे ।

भाषा—लोह, वज्र, सुवर्णमाक्षिक, सुवर्ण, अभ्रक, प्रवाल, रजत इनकीमसमें और मुक्तापिटी, जावित्री और जायफल समभाग, सबकीबराबर चातुर्जातलेकर वारीकचूर्णकर निफलाके कायसे १-२ दिन मर्दनकर ३-३ रस्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक और साक्षिपातिकरोग, नागातरहका वातविकार, अपस्मार, विस्तृचिका, क्षय, उन्माद, शरीरस्तम्भ, २० प्रकारकेप्रमेह इनसबको यह नष्टकरताहै ।

### ९२ बहुमृगान्तकरसः

शास्त्रमलीकदलीमुलचूर्णं पारदमस्य च ।  
उडुम्वरयीजचूर्णं लौहो वज्रञ्च विद्रुमम् ॥  
मुक्ताहिफेनसारौ च प्रत्येकं समभागिकम् ।  
मर्दयेन्मालतीपुष्परसेन कुशलो म्रियक् ॥  
रक्तियममिता कुर्याद्वटिकाप्रतिशोभनाम् ।  
बहुमृगान्तको नाम रसः परमशोभनः ॥  
मधुमेहं सोमरोगं हन्ति मास्त्वान्यथा तमः ।  
भै. २, बहुमृगाधिकारे ।

भाषा—सेमलकामुसला, बेलेकान्द, पारदमस, गुलके-धीज, लोह, वज्र, प्रवाल, मोती इनकीमसमें और शुद्धबकीम समभागलेकर वारीकचूर्णकर मालतीपुष्पोंकेरसरसे १-२ दिन

मर्दनकर २-२ रस्तीकीगोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे मधुमेह और सोमरोगको यह नष्टकरताहै ।

### ९३ वह्निभास्वररसः

सुवर्णमघ्नं धैर्यान्तं रजतं शाणमानकम् ।  
लौहं रसं गन्धकञ्च माक्षिकं कर्पसम्मितम् ।  
रक्तचित्रकतीयेन तथा ग्राहया रसेन च ।  
द्विसप्तहृत्यः सम्मान्य कुर्याद्वह्निमितां वटीम् ॥  
रसोऽयं सूर्यया हन्ति मस्तिष्कोदकमाशु च ।  
अन्यांश्च शिरसोरोगान्यह्निस्तृणगणानिव ॥  
यद्विवद्भासते यस्माद्वीर्येणैव रसोत्तमः ।  
भूतले प्रथितस्तस्मादाख्यया वह्निभास्वरः ॥  
नैव शान्तिं गते व्याधौ मस्तिष्कात्सलिलं हरेत् ।  
त्रिकूर्चकेन मधुना यत्नतः कुशलो म्रियक् ॥  
भै. २, वीर्याभ्युदये ।

भाषा—सुवर्ण, अभ्रक, वैकान्त और रजतमस्य ४-४ माशे, लोहमस्य, शुद्धपारा, गन्धक और सुवर्णमाक्षिक १-१ कर्पलेकर नीलवर्णकमलीकर रक्तचित्रक और माझीके स्वरसोंसे ७-७ भावनाएं देकर ३-३ रस्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली चित्रक और माझीके स्वरसोंकेसाथ देनेसे मस्तिष्कजलप्रवृत्ति समस्त शितोरोगनष्टहोतेहै । रोगकीशान्ति न हो तो त्रिकूर्चकाह्वसे जल निकाले ।

### ९४ वातश्लेष्मान्तकरसः

पञ्चकोलं प्रवालञ्च पारदं चाभ्रकं तथा ।  
आर्द्रकस्वरसेनैव मर्दयेदति यत्नतः ॥  
शुजाद्वयं प्रदातव्यं नागयल्लीरसैर्युतम् ।  
घातश्लेष्मज्वरहरो वातश्लेष्मान्तको रसः ॥  
घातजं पित्तजं श्लेष्मद्विदोषजमपि क्षणात् ।  
सर्वाञ्ज्वराधिहन्त्याशु भास्करन्विमिरं यथा ॥  
भै. २, ज्वराधिकारे ।

भाषा—पञ्चकोल (पीपल, पिप्लामूल, खव्य, चित्रक, सोंठ), प्रवाल, पारद और अभ्रकमस्य समभागलेकर अदरकके-रससे १-२ दिन मर्दनकर २-२ रस्तीकीगोलियेंबनाकर रख छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानकेरसकेसाथदेनेसे वातश्लेष्म, वातज, पित्तज, श्लेष्मज, और द्विदोषजप्रवृत्ति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ।

### ९५ सहकारवटी

सहकारस्य निम्बस्य खदिरस्याज्ञानस्य च ।  
तुलां धृषग्वनिष्काथ्य द्रोणनानेन चाभ्युना ॥  
एकीकृत्य कपायांश्च पादशिष्टान् पुनः पचेत् ।  
ततः क्षिपेन्मलयजं घालनं रक्तचन्दनम् ॥  
येरिक्तं देवपुष्पञ्च घातकीं रजनीद्रव्यम् ।  
लोहं जातोऽफलं श्यामां चातुर्जातं फलत्रयम् ॥

घटप्ररोहा मज्जिष्ठा त्रिडे मांसी पयोधरम् ।  
कटुत्रयमयश्चन्द्रं प्रत्येकं पलपुष्पकम् ॥  
ततः कलायसदशीर्विदध्याट्टिका मिषक ।  
रोगान् कण्ठीष्ठरसनादन्ततालुसमुद्भवान् ॥  
सहकारयटी हन्यादाश्वेय चन्दन धृता ।  
जनयेन्मुखसीरभ्यं सुरचिं स्थिरदन्तताम् ॥  
भै. र., मुखरोगे ।

भाषा—आम, नीम, रैर, असन इलकीछल १००-१००  
पल्को कूटकर एकपक्षोणजलमे पादावशिष्टस्वायकरके कपड़ेसे छानकर एकजगद मिलावे । फिर इसमें खपेचन्दन, गुणध-  
बाला, कालचन्दन, सोनागेरू, लौंग, धावरीकेफल, हल्दी, दाह-  
हल्दी, पडानीलोष, जायफल, अनन्तमूल, चातुर्जात, निफला,  
चटकीजटा, मजीठ, विडनमक, जठामांसी, नागरनोया, त्रिकटु,  
लोहमसु और शुद्धकपूर २-२ पल्का पूर्ण डालकर पकावे ।  
घन तैयारहोनेपर मठबराबरगोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे  
१-१ गोली सुंभमें रखकर बूँदनेसे कण्ठ, ओष्ठ, जिह्वा, दन्त  
और तालुके समस्तरोगोंको दूरकर मुखमें गुणधिकोपेदाकरतीहै,  
हचिको बढ़ातीहै और दांतोंको स्थिरकरती है ।

### ९६ सिद्धशास्त्रप्लीकल्पः

भूकृष्णाण्डं तालमूली धात्री चैव पुनर्नवा ।  
समभागं समाहत्य भागार्धं गन्धकं तथा ॥  
तद्वर्ध पारदं शुद्धं कज्जलीकृत्य निक्षिपेत् ।  
श्वेतशास्त्रलितोयेन सप्तधा भाषयेत्ततः ॥  
माहिषेण च दुग्धेन तत्तुर्गुणं भाषयेत्पुनः ।  
शुष्कं तत्तुर्गुणयेद्यत्नाहोदयेनमुसर्पिणा ॥  
अनेनाशीतिवर्षांऽपि शतधा रमतेत्त्रिया ।  
ऊर्ध्वलिङ्गः सदा तिष्ठेत्कामदैव इव स्थयम् ॥  
जरादिरोगनिर्मुक्तः संसारसुखमश्नुते ।  
शाणमेकान्तु कर्तव्यं दुग्धमत्रानुपानकम् ॥  
भै. र., ज्वरभत्रे ।

भाषा—भुईबोडला, तालमूली, आवले, पुनर्नवा और शुद्ध-  
पाटा १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारे-  
गन्धककी नीलवर्णजलीमें मिलाय खपेदसेमलेस्वरससे  
७ भावनाएं देकर भस्मबद्धमे घोटकर चूर्णबनाकर रखछोड़े ।  
इसमेंसे ३-३ भागा मधु और पीकेसाय मिलाकरछेनेसे  
अत्यन्त बारीकरणहोताहै ।

### ९७ स्नायुशूलहरचूर्णम्

पलायपुमुरीच्छ चन्दनं सारियाद्वयम् ।  
मेदाद्वयं निशाद्वयं शुद्धचीविश्वभेषजम् ॥  
पलत्रयं यमानीञ्च रोष्यं सर्वसमं तथा ।  
पक्वीकृतं यक्षुमानं पाययेद्ध्यसर्पिणा ॥  
स्नायुशूलहरं नाम चूर्णमेतद्वरेद्भुषम् ।  
निखिले स्नायुशूलञ्च सर्पान्यातामयांस्तथा ॥  
भै. र., स्नायुरोगे ।

भाषा—छोटी और बड़ी इलायची, रास, चन्दन, दोनों-  
सारिया, मेदा, महामेदा, हल्दी, दाहहल्दी, गिलोय, सोंठ  
त्रिफला, अजवाइन येसब १-१ भाग, रजतमसु संबंधीबराबर  
लेकर बारीकचूर्णकर १-२ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे  
३-३ रत्ती पायकेपीकेसायदेनेसे समस्तस्नायुरोग और वात-  
विकारोंको यह नष्टकरताहै ।

## स्वादिरसोंकी विशेषसूचनाएं

१—अगस्त्यप्रोक्षवैद्यकशास्त्र (अगस्त्य), व्यासप्रोक्षवैद्यक-  
शास्त्र (व्यास), रसामृत(रसु), रसकल्पलता (र. क. ल. ना) )  
रत्नकुण्डल (र. कु.) और रसायनम् इनग्रन्थोंको ग्रन्थसूचीमें  
दाखिलकरना ।

२—अगस्त्यमृतारण (द्वितीय) में र. यो. को दाखिलकरना ।

३—अभिधुमारस (तृतीय) में वि. र. म. को दाखिलकरना ।

४—अभिधुमार (पञ्चम) में र. यो., र. पा. को दाखिलकरना  
और नीचेलिखीहुई टिप्पणीको टिप्पणीमेंदेना ।

“र.सं., सै.र., र.सु., वै. क., र.सि., रसायनसं.,  
र.का., यो. म., एषु ग्रन्थेषु हुताशननाम्ना “गन्धेश-  
द्वयवैकं विषमत्र विभागिकम् । अष्टभागान्तु मरिचं  
जम्भाभूमोमर्दितं दिनम् ॥, इति योगो निहितोऽस्ति ।  
यो.र., र.च. पक्षयोः “एकाशिराः पारदगन्धद्वयः  
कर्पदेशाद्वाऽसृतेगृहभूमाः । त्र्यंशो इमेष्यो मरिचं  
त्यिमांशो जम्भर्दितं जम्भरसेन गाढम् ॥, इति पाठो  
निहितोऽस्ति । अनयोर्द्वयोरपि अस्मिन्नन्तर्भागः  
सुकरः । यद्यप्यनयोः प्रथमयोगे कर्पदेशयोरभा-  
योऽस्ति द्वितीये च गृहभूमस्याऽधिक्यमस्ति इत्या-  
पाततोऽन्तर्भागो दुष्करः प्रतिभाति । परन्तु प्रथम-  
योगनिर्दिष्टरोगेषु कर्पदेशयोरौचित्यात्तदाधिक्यं  
गुणवृद्धिरवास्ति । द्वितीययोगे यद्गृहभूम्याधिक्यं  
तत्प्रक्षेपमधिकतयाऽग्निबुमारो योजनेनाऽपि क्षत्य-  
भावोऽस्ति पाठन्यूनता च महत्फलमिति चिठ्छिरा-  
कलीनयम् ।

५—अभिधुमार (षष्ठ) के मूलपाठके स्थानमें नीचे लिगे  
पाठको रचना और टिप्पणीको टिप्पणीमें देना ।

“सुतद्वयविषयाऽन्नकार्दिकं

गन्धनेन मिलिता. समभागाः ।

घटसर्पत्रिभिर्जयाऽतिश्रियाभि.

औफलाभ्युज्जेष्व विमये ॥

सङ्गहमहणिकविनिर्गुस्ये

सिद्धतां समुपैति रमेन्द्र. ।

सातिसारमपि दन्ति दुष्करं

शोषजातपुष्टताऽग्निनाशनम् ॥

मेधाञ्च लभते तीक्ष्णं तृष्टिपुष्टिसमन्विताम् ॥  
हन्ति कासं तथा श्वासं प्रमेहं बहुमूत्रकम् ।  
रसेन्द्रवटिका हेया धन्यन्तरिक्षिनिर्मिता ॥

शै. र., स्वरभेदे ।

भाषा—लोह और अन्नरसम् ८-८ मासे, शुद्ध पारा और गन्धक ४-४ मासे, प्रवाल और रत्नरसम् २-२ मासे लेकर नीलवर्णकवलीकर भट्टादौषा, द्राघी और अङ्गुलेके स्वरसोंसे ३-३ भावनाएं देकर २-२ रत्तीकीगोलियें बनाकर रख छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अरुणोचितानुपानकेसाथ ७ दिन तक देनेसे स्वरभङ्ग प्रहोताहै । एकमहीनेमें मधुमेह होताहै । इसकानिरन्तरसेवनकरनेसे दिव्यमेघा और पुष्टि होतीहै । काष्ठ, श्वास, प्रमेह और बहुमूत्रा नाशहोताहै ।

### ९१ वसन्ततिलकरसः

लौहं घनं माक्षिकञ्च सुवर्णञ्चक्रकं तथा ।  
प्रवालं तारमुकाञ्च जातीकोपं फलन्त्या ॥  
प्लेतां समभागेन चालुजातञ्च मिथितम् ।  
मर्दयेत्तिलफलाकाये पटिकां कुण्ड यत्नतः ॥  
रोगाञ्च निपजा श्लात्वा अनुपानं यथापथम् ।  
घातिकां पित्तिकञ्चैव श्लेष्मिकं साविपातिकां ॥  
धातुं नानाविधं हन्ति चापस्मारं विशेषतः ।  
विद्वचिकां क्षयोन्मादौ शरीरस्तम्भमेव च ॥  
प्रमेहान्विशतिञ्चैव नानारोगं विशेषतः ॥

शै. र., प्रमेह ।

भाषा—लोह, वज्र, सुवर्णमाक्षिक, सुवर्ण, अन्नक, प्रवाल, रजत इनकीमसमें और मुकापिटी, जावित्री और जायफल समभाग, सयकीबावर चालुजातलेकर वारीकचूण्डर त्रिफलाके कायेसे १-२ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे घातिक, पित्तिक, श्लेष्मिक और साविपातिकरोग, नानासहका वातविकार, अपस्मार, विस्त्रिका, क्षय, उन्माद, शरीरस्तम्भ, २० प्रकारकेप्रमेह इनसबको यह नष्टकरताहै ।

### ९२ बहुमूत्रान्तकरसः

शाल्मलीकदलीमूलचूर्णं पारदमस्य च ।  
उदुम्बरवीजचूर्णं लौहो वज्रञ्च विद्रुमम् ॥  
मुकाहिफेनसारौ च प्रत्येकं समभागिकम् ।  
मर्दयेन्मालतीपुष्परसेन कुशलो निपक्व ॥  
रक्तद्वयमितां कुर्याद्वटिकामतिशोभनाम् ।  
बहुमूत्रान्तकी नाम रसः परमशोभनः ॥  
मधुमेहं सोमरोगं हन्ति भास्यान्यथा तमः ।

शै. र. बहुमूत्राधिकारे ।

भाषा—सल्लिकासुसला, केलिकान्द, पारदमस्य, मूलके-वीज, लोह, वज्र, प्रवाल, मोती इनकीमसमें और शुद्धअफीम समभागलेकर वारीकचूण्डर मालतीपुष्पोंकेस्वरसे १-२ दिन

मर्दनकर २-२ रत्तीकीगोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे मधुमेह और सोमरोम्यो यह नष्टकरताहै ।

### ९३ वह्निभास्वररसः

सुवर्णमग्नं धैक्रान्तं रजतं क्षाणमानकम् ।  
लौहं रसं गन्धकञ्च माक्षिकं कर्पसम्मितम् ।  
रक्तचित्रकतोयेन तथा द्राघया रसेन च ।  
द्विसप्ततृत्त्यः सम्भाव्य कुर्याद्वह्निमितां घटीम् ॥  
रसोऽयं सर्वथा हन्ति मस्तिष्कोदकमाशु च ।  
अन्याञ्च शिरसोरोगान्वह्निस्तृणगणानिव ॥  
यद्विघ्नज्ञासते यस्माद्वीर्येणैव रसोत्तमः ।  
भूतले प्रथितस्तस्मादाख्यया वह्निभास्वरः ॥  
नेष शान्तिं गते व्याधौ मस्तिष्कात्सलिलं हरेत् ।  
त्रिकूचेकेन मधुना यत्नतः कुशलो निपक्व ॥  
शै. र. क्षीर्णामुरोगे ।

भाषा—सुवर्ण, अन्नक, वैक्रान्त और रजतमस्य ४-४ मासे, लोहमस्य, शुद्धपारा, गन्धक और सुवर्णमाक्षिक १-१ कर्पलेकर नीलवर्णकवलीकर रक्तचित्रक और द्राघीके स्वरसोंसे ७-७ भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली चित्रक और द्राघीके स्वरसोंकेसाथ देनेसे मस्तिष्कजलप्रवृत्ति समस्त शिरोरोगनष्टहोवे । रोगकीशान्ति न हो तो त्रिकूचेकापत्रसे जल निकाले ।

### ९४ वातश्लेष्मान्तकरसः

पञ्चकोलं प्रवालञ्च पारदं चाग्नकं तथा ।  
आर्द्रकस्वरमेनैव मर्दयेदतियत्नतः ॥  
शुक्राद्वये प्रदातव्यं नागघट्टोरसैर्युतम् ।  
वातश्लेष्मज्वरहरो वातश्लेष्मान्तको रसः ॥  
घातजं पित्तजं श्लेष्मद्विदोषजमपि क्षणात् ।  
सर्वाञ्ज्वराग्रहन्त्यायुः भास्करम्विमिरं यथा ॥  
शै. र., ज्वराधिकारे ।

भाषा—पञ्चकोल (पीपल, पिप्लामूल, चव्वय, विद्रक, सोंठ), प्रवाल, पारद और अन्नकमस्य समभागलेकर अदरसके-रससे १-२ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकीगोलियेंबनाकर रख छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानकेरसकेसाथदेनेसे वातश्लेष्म, वातज, पित्तज, श्लेष्मज, और द्विदोषजप्रवृत्ति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ।

### ९५ सहकारवटी

सहकारस्य निम्बस्य सखिरस्याशनस्य च ।  
तुलां धृषण्यनिपस्याथ द्रोणमानेन चाश्विना ॥  
एकीकृत्य कपायाञ्च पादशिष्टान् पुनः पचेत् ।  
ततः क्षिपेन्मलयजं घातकं रक्तचन्दनम् ॥  
वैरिकं देवपुष्पञ्च घातकीं रजनीद्वयम् ।  
लोत्रं जातीफलं क्ष्यामं चातुर्जं फलत्रयम् ॥

यष्टप्ररोहा मज्झिमा पिंडं मांसी पयोधरम् ।  
कटुत्रयमयश्चन्द्रं प्रत्येकं पलपुग्मकम् ॥  
ततः कलायसहशीर्विद्व्यादुष्टिका मियक् ।  
रोगान् कण्ठीग्रसनादन्ततालुसमुद्भवान् ॥  
सहकारवटी हन्यादाभ्येय घटने धृता ।  
जनयेन्मुससौरभ्यं सुयचि स्थिरदन्तताम् ॥  
भे. र., मुखरोगे ।

भाषा—आम, नीम, रैर, अवन इन्हीछाल १००-१००  
पल्लो कूटकर एकएकटोणत्रयसे पादावशिष्टकायकरके कपडेसे  
छानकर एकजगह मिलावे । फिर इसमें सफेदचन्दन, सुगन्ध-  
बाला, सालवन्दन, सोगागरु, लौंग, धावडीकेफूल, हल्दी, दाह-  
हल्दी, पटानीलोप, जायफल, अनन्तमूल, चावुर्जात, त्रिफला,  
बटकीजडा, मजीठ, विडम्बक, जडामांसी, नागरमोया, त्रिफट्ट,  
लोहमसम और शुद्धकपूर १-२ पल्लो चुंग बालकर पकावे ।  
पन तैयारहोनेपर मटरबाराबरगोलिये बनाकर रखाछोडे । इसमेंसे  
१-१ गोलो सुहमे रचकर घुंवनेसे कण्ठ, ओष्ठ, जिह्वा, दन्त  
और तालुके समस्तरोगोंको दूरकर मुखमें सुगन्धिकोपेदाकरतीडे,  
धक्को बढ़ातीडे और दांतोंको स्थिरकरती डे ।

### ९६ सिद्धशाल्मलीकल्पः

भृङ्गफणाण्डं तालमूली धामी चैव पुनर्नया ।  
समभागं समाहृत्य भागार्धं गन्धकं तथा ॥  
तद्वर्धं पारदं शुद्धं कज्जलीहृत्य निक्षिपेत् ।  
भवेत्तशाल्मलितोयेन सतथा भाषयेत्ततः ॥  
माहिषेण च दुग्धेन तच्चूर्णं भाषयेत्तुनः ।  
शुष्कं तच्चूर्णयेद्यत्तालेहयेन्मधुसर्पिषा ॥  
अनेनाशीतिपर्यंऽपि शतथा रमतेक्षिष्या ।  
ऊर्ध्वलिङ्गः सदा तिष्ठेत्कामदेय इय स्वयम् ॥  
जरादिरोगनिर्मुक्तः संसारमुत्तमभुजे ।  
शाणमेकान्तु कतप्यं बुग्धमध्रानुपानकम् ॥  
भे. र., ध्वजभत्रे ।

भाषा—भृङ्गकोहडा, तालमूली, भांवडे, पुनर्नका और शुद्ध-  
पाटा १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर बाकीकूर्पूणकर परि-  
गन्धकही मीलकरगन्धलीमें मिलाय घण्टसेमलकेस्वरूपसे  
७ भावनाएं देकर भेगदेपुमें घोटकर घुंवनाछर रखाछोडे ।  
इसमेंसे १-१ माया मधु और पीकेघाष मिलाकरखेनेसे  
अनन्त बाजीकरणहोताडे ।

### ९७ स्नायुशूलहरचूर्णम्

पलाशपुमुरीच्छ चन्दनं सारियाश्रयम् ।  
मेशाश्रयं निशाश्रयं शुद्धर्षापिम्बभेरजम् ॥  
फलत्रयं यमानीञ्च सौर्यं सयंसमं तथा ।  
पक्षीरुतं यत्तमानं पाययेन्मधुसर्पिषा ॥  
स्नायुशूलहरं नाम पूर्णमित्तमरेकपुम् ।  
निमित्तं स्नायुशूलश्च रक्षण्यतामानयास्तथा ॥  
भे. र., रानुशोने ।

भाषा—छोटी और बड़ी इलायची, राम, चन्दन, सेनों-  
सारिया, मेदा, महामेदा, हल्दी, दाहहल्दी, गिलोय, सोंठ  
त्रिफला, अजवाइन येसर १-१ भाग, रजनभस्म सबकीबाराबर  
लेकर बाकीकूर्पूणकर १-२ दिन मईनछर रखाछोडे । इसमेंसे  
२-२ रसी गायत्रीपीकेघाषदेनेगे गमन्मन्नायुशोण और पात-  
विकारोंको यह नटकताडे ।

## स्वरादिसर्षोकी विशेषसूचनाएं

१—अगस्त्यप्रोक्तरीयकशास्त्र (अगस्त्य), व्यासप्रोक्तरीयक-  
शास्त्र (व्यास), रसामृत(र मृ.), रमहलगल्ला (र.क.ल.ना.)  
रत्नकुण्डल (र.कु.) और रसायनम् इनग्रन्थोंको ग्रन्थपुष्पीमें  
दाखिलकरना ।

२—अपस्किमृतान (द्वितीय) में र.शो.को दाखिलकरना ।

३—अभिज्ञमारण (तृतीय) में धि.र.म कोदाखिलकरना ।

४—अभिज्ञमार (पंचम) में र.शो., र.पा.को दाखिलकरना  
और नीचेलिखीहुई टिप्पणीको टिप्पणीमेंदेना ।

“र.सं., भे.र., र.सु., य. क., र.सि., रसायनसं.,  
र.का., यो. म., एषु ग्रन्थेषु हुतादाननाम्ना ‘गन्धेदा-  
दुष्पेदेकं विषमत्र त्रिभागिकम् । अष्टभागान्तु मरिचं  
जम्बाम्भोमर्दितं दिनम् ॥, इति योगो निहितोऽस्ति ।  
यो.र., र.चै. एतयोः ‘एकांशकाः पारदगन्धद्वयाः  
कपदेशाद्वाऽधुनगोदधूमाः । त्र्यंशा इमेऽधो मरिचं  
विभाजं सम्मर्दितं जम्भरत्नेन गाढम् ॥, इति पाठो  
निहितोऽस्ति । अनयोद्वयोरपि अस्मिन्नन्तर्मांयः  
शुकरः । यद्यप्यनयोः प्रथमयोगे कपदेशज्ञयोरमा-  
योऽस्ति द्वितीयो च गृहधूमस्याऽधिक्यमस्ति इत्या-  
पाततोऽन्तर्मांयो दुष्करः प्रतिभाति । परन्तु प्रथम-  
योगनिर्दिष्टरोगेषु कपदेशज्ञयोगीगम्यास्तदाधिक्ये  
गुणगुडिरेपास्ति । द्वितीययोगे यद्गृहधूमाधिक्यं  
तत्प्रक्षेपमधिक्यतयाऽतिदुम्भारे योजनेनाऽपि हस्त-  
मायोऽस्ति पाठव्युत्पत्ता च महदन्धमिति पिष्टकृता-  
कलनीयम् ।

५—अभिज्ञमार (पा) में मुपाठडे रयानमें नीचे तिने  
पाठको रचना और टिप्पणीको टिप्पणीमें देना ।

“शुतद्रूपपथिपाऽन्नकर्पादिका  
गन्धकेल मिलिनाः गममागाः ।

यन्सकाशिविज्ञपाऽतिविषाभिः

धीकृत्याम्युजलेऽयं विमर्षः ॥

सहृहमहपिकाविनिपुल्ये

मिदनां समुपेति रमेन्द्रः ।

सातिसारमपि हन्ति दुष्करं

शोरजाह्यगुल्याऽस्मिन्नाशनम् ॥

स्वीयानुपानैरपि योजनीयो  
रोगानुरूपैरर्शनेहितः स्यात् ।  
प्रयत्नतः सङ्ग्रहणीनिवृत्त्यै  
मन्दाग्नितायाम् किल पायुजानाम् ॥

र., र. सं., ग्रहण्यधिकारे ।

टि०—रसावतारं रसेन्द्रम इति नाम । रसेन्द्रमासद्यदीवाग्नि-  
कुमारे अन्नक नास्ति तत्स्थाने त्रिदशभिर्मोक्षोऽस्ति । जन्मीराऽभ्यामा-  
भावना दत्ताऽस्तीति विशेषः । सा., र.क., र.चि., र.च., रं., भे.  
सा., र. (या.), रसायनस., र.क.ल., र.यु., यो.म., र.र.म., एषु  
पुस्तकेषु रसेन्द्रसारमहग्रहे च द्वितीयस्थाने हंसपोट्टीति नाम । र.क.  
यो., ना.वि., धन्यो. कर्पादिकारस इति नाम । रमकामोनी च  
गगनसन्दरेति नाम स्थापितम् । इ. यो. त., आ.वि., मा.म., र.यु.,  
यो.म., र.क.ल., नि र., एषु ग्रन्थेषु हुताशननाम्ना “नागर कौ-  
मात्र स्थात्यैवात्राद्यङ्गम् । मरिच मार्पभाग स्थात्वावश्यं वपट-  
कम् ॥ विष कर्पचतुर्थांशं सर्वमेकत्र वर्णयेत् ॥” इति पाठो निहितीऽस्ति  
तस्याऽप्यत्रैवान्तावः कर्णीयः । यद्यप्यस्मिन्नेवे भारदगन्धयोरकान्त-  
तोऽभावोऽस्ति विषस्य च त्रिभागान्युत्तेति इत्याऽप्यन्तदुर्भटना प्रती-  
त्ये परन्तु योगद्रवस्य सद्यःकार्पाकत्वात्तस्मिन्नेवे सम्पारितेऽप्य योग-  
स्याऽपि क्षिप्रत्वादेकैव योगेन मुष्टुनिर्वादी अभिव्ययीति विद्वदि-  
र्विभावनीयम् ।

६—अग्निकुमारस (१८) में टो. (प्रतापकेश्वर) और  
र.पा., र.मु.को दाखिलकरना ।

७—अग्निकुमार (१५) में यो.चि.को दाखिलकरना ।

८—अग्निकुमार (१५) में र.मु.को दाखिलकरना ।

९—अग्निकुमार (१०) में रसायनप०को दाखिलकरना ।

१०—अग्निकुमार (१८) में पित्तकुलान्तरु नामा-  
न्तर देना और नीचेलिखेहुएको टिप्पणीमें देना ।

“यसवराजीये चिसर्पपित्ताऽधिकारे पित्तकुलान्त-  
केति नाम्नाऽप्येव पाठो निहितीऽस्ति तत्र त्रिधा-  
मान्तो पाकः कृतोऽस्ति । आद्रकस्थाने जीरकाऽनु-  
पानञ्च निवेशितम् ।

११—अग्निकुमार (१५) को निकालदेना वह सत्रिपातभेद  
(४) में गयाइ ।

१२—अग्निकुमार (४०) में व.रा. और वै.चि.को ग्रन्थोंमें  
दाखिलकरना और नीचेलिखेहुएको टिप्पणीमें लेना—

“यसवराजीयवैद्यचिन्तामण्योर्विजयभैरवनाम्ना-  
ऽप्येव रसो निहितीऽस्ति केवलं तस्मात्ताम्रमपसा-  
रितम् । तत्केन कारणेन सञ्ज्ञातमिति न ज्ञायते  
पाठस्त्वेक एवाऽस्ति”

१३—अग्निकुमार (४३) में रसायन., र.पा.को दाखिल-  
करना ।

१४—अग्निकुमार (४६) के पाठेस्थानमें नीचेलिखेहुए  
पाठको रखना—

“पारदो गन्धकस्ताम्रकं तालकं  
वत्सनामः समं मर्दयेद्भृङ्गजैः ।  
याममात्रं रसेऽन्युपणेषां त्रिधा

पञ्चकोलेन वा घटिना च त्रिधा ॥

वह्निकुमाररसः किल एषः

झलकपप्रहणीरनुपानैः ।

हन्त्यरुचिं श्वसनं वसनं तत्

सततं जाडरपावकमान्यम् ॥

रसायनसं., र.क.यो., अग्निमान्ये ।

१५—अग्निपुण्ड्रवटीको टिप्पणीमें नीचेलिखी टिप्पणीको  
और ग्रन्थोंमें रसायनपरीक्षाको दाखिलकरना ।

“रसकामधेनावग्निमान्वाऽधिकारे वैश्वानरनाम्नै-  
को रसो निहितीऽस्ति सोऽप्यत्रैवान्तर्मवति ।

१६—अग्निप्रदरुमें गुबणपत्ररसका अन्तर्भावकरना ।

१७—अग्निमुखूर्णमें ग.नि.को दाखिलकरना ।

१८—अग्निपुत्रस (४) को रसरकी टिप्पणीमें लेजाना ।

१९—अग्निरस (प्रथम) में र.को. (वक्त्रेश्वर) को दाखिल-  
करना ।

२०—अग्निरस (४) में व.रा. (स्वेध्मकासविधुन) को  
दाखिलकरना ।

२१—अग्निसन्दीपन (५) में र.चि. (भस्माभृत) को दाखिल-  
करना ।

२२—अग्निमहिमावटी में र.पा.को दाखिलकरना ।

२३—अङ्गोलवद्वकी में र. सं. को दाखिलकरना ।

२४—अवलेषरमें नि.र., र.त. (गन्धककल्पः), र.को.,  
र.म.सा., र.र.कौ., र.क.ल. (एषु नरनारायणां), र.र.स.  
(नारायणरसः), इनग्रन्थोंको दाखिलकरना ।

२५—अजीर्णकण्टक (२) में र.सं. (वातारिः), रसायन  
को दाखिलकरना ।

२६—अजीर्णकण्टक (३) की टिप्पणीमें अधोलिखितको लेना

“रसेन्द्रकल्पद्रुमे हुताशननाम्ना “पारदं गन्धकं  
टङ्कं विरेषु शुण्ठीञ्च विप्लवीम् । समं विषञ्च समभागं  
मरिचं मर्दयेद्विन्म ॥ निर्गुण्डिकारसेमांशं त्रिधा  
पण्येनूपानतः ॥” इति पाठो निहितीऽस्ति तस्याऽ-  
प्यत्राऽन्तर्भावः कर्णीयः । यद्यप्यापातदृष्टया द्वयो-  
रन्तरं प्रतीयते एकत्र पारदगन्धकयोरन्यत्र च द्र-  
वस्याऽऽगमनात् । परन्तु सूक्ष्मदृष्ट्या द्रवद्वेऽप्युभयो-  
स्तत्त्वात्राऽप्यन्तर्मन्तरम् । मरिचप्रमाणेऽधिकमन्तरं  
प्रतीयते तदेकान्तिरुमसीदञ्चेदजीर्णकण्टके एव तदा-  
धिक्यकरणेनाऽपि क्षत्यभावः । हुताशने निर्गुण्ड-  
कपण्योर्भावने दृश्यते परन्त्वन्तेऽम्लपण्या एव भा-  
वना दत्ताऽस्ति, अजीर्णकण्टके च निर्गुण्डकरस्या-  
स्ति परन्तु तत्र तीक्ष्णाम्लस्य सत्त्वाश्रिगुण्डिकामा-  
वनाऽन्तराऽपि कार्यं सेत्यति । यदि च हुताशनी-  
कमायनयोरप्यधिका प्रीतिश्चेत्तर्ह्य तयोरप्यनुष्ठाने  
क्षत्यभाव इति बोध्यम् ।

२७—अन्नभैरव (१) में र.का., र.सु.टो., रसायनसं (मैर-  
वाज्ज) र.पा. इनग्रन्थों को दाखिलकरना ।

२८—अतिसारदल (१) की टिप्पणी में नीचे लिखी रख-  
पोष्टी को प्रत्यक्षित दाखिलकरना ।

“रसं वर्लि विपे शुभं चराटकं समांशतः । विमर्द-  
येहिं भृशं कृशाशुद्धलिकारसं ॥ क्षिपेत्तद्भाजने मुहु-  
मुहूर्जलं ततः ॥ एषेच यामयुग्मं शनैस्तु दीपव-  
ह्निना । सुशीतलं समुद्धरेदधःस्थिते तु पोष्टली ।  
भवेत्तदोद्धभाजने रसस्य भस्म आयते । मरीचकै-  
र्धृतप्लुतैर्ददीत पोष्टलीरसम् ॥ चिकारपित्तोगिणे  
विधानतः सुयल्लक्ष्म । करोति पुष्टिदीपनं गदमजं  
हरेत्सदा ॥ रसेन्द्रभस्म यल्लक्ष्म नवेऽनवेऽथवा ज्वरे ।  
नियोजयेद्ये पिप्पलीमधुप्लुते तु पैक्तिके ॥ कणाद्रेशु-  
ण्डिसंयुतं हृदेत्कफानिलाधिके । ज्वरे द्दीत यः  
फणायकं निरूपितोऽस्ति ते । द्दीत सभिपातके  
कटुत्रयाऽऽर्द्रजीरकैः । र.दी., र.शं. ज्वराधिकारे”

२९ अतत्रवर्णनको हटावेना यह कामिनीमदविधूतनमे  
गयाई ।

३०—अनलरसमें र.मु.को दाखिलकरना ।

३१—अनीलरसमें र.धं., र.को., र.दी., र.क., र.र.  
स., र.क.ल. (एष पाण्डुरोपणः) र.म.मा. (धनपङ्क-  
शोपणः), र.मु. (अनलसूतिः), रसायनसं, र.ल., र.धं.  
(एष मार्तण्डभैरवः), र.ति., इनग्रन्थों को दाखिलकरना  
और “रसराजशब्दे चित्रस्थाने विजया नियोजिता” इसको  
टिप्पणी में देना ।

३२—अनिलारिस (१) में र.र., भै.र., व.यो.व., र.  
शा., वि.क., घ. (एष जलोद्वारिरसः), र.शं., र.दी.  
(जलारिः), र.क. (जलोद्वरहरः) इनग्रन्थों को  
दाखिलकरना ।

३३—अनिलारिस (२) में र.धं. (यातारिः), र.,  
र.मु., इनग्रन्थों को दाखिलकरना ।

३४—अपस्मारारिसमें र., रसायनसं. इनग्रन्थों को  
दाखिलकरना और अथोलिखितो टिप्पणी में देना ।

“र., रसायनसं. एतयोः परस्मारारिरसस्य समीर-  
पन्नोति नाम स्यापितम् । तत्र न रसान्तरतेति यो-  
ष्यम् । तथा च रम्भातीत्युस्थाने उन्मत्तरसो गृहीत  
इति विशेषः । तत्र द्वयोः रसि रसाभ्यां मर्दितश्लेष्म-  
कतया गुणवृद्धिर्भविष्यति तस्मादुभाभ्यामेव मर्दनं  
विधेयमित्यस्माकं सम्मतिः ।

३५—अर्चुरसको पाठ्यरसमें लेजाना ।

३६—अभिनवकामदेवरसमें र.मु.को दाखिलकरके मदनो-  
दयरीटिप्पणी में लेजाना ।

३७—अत्रलोहयोगमें रसायनसं. को ग्रन्थों में और अथो-  
लिखितको टिप्पणी में दाखिलकरना ।

“अम्रस्थाने मृतसूतस्य नियोगो रसायनसङ्घ-  
प्रमादात्सञ्जात इति विद्वद्भिराकलयीयम् ।

३८—अमृतकलानिधिरसमें सुतरान (प्रथम) और ग्रन्थों में  
र.मु.को दाखिलकरना ।

३९—अमृतमञ्जरिकमें भै.र.को दाखिलकरना ।

४०—अमृतमञ्जरीरसमें अथोलिखितटिप्पणीको दाखिल-  
करना और आनन्दभैरव (द्वितीय) को हटावेना ।

“रसेन्द्रसारसङ्घदे द्वितीयस्थाने व्योपमधिकतया  
नियोज्य आनन्दभैरवेति नाम्ना द्वितीयः पाठः स्था-  
पितस्तस्याऽप्यत्रैवाभ्यन्तर्भूतत्वात्पाठान्तरं त्यजनीयम् ।”

४१—अमृतमञ्जरिको हटाकर शतावरीमण्डूर (प्रथम) की  
टिप्पणी में लेजाना ।

४२—अमृतवटी (१) में र.क.यो., वै.वि. (हुताशनरस) को  
दाखिलकरना ।

४३—अमृतवटी (२) में यो.र., व.यो.ल., र.कौ., र.क.  
ल., र.चं., नि.र., रसायनसं., वै.र., यो.म., र.सि., (एष  
जुर्जलजेतारसः) इनग्रन्थों को दाखिलकरना ।

४४—अमृतसवीरसमें र.मु.को दाखिलकरना ।

४५—अमृतवटीरसमें र.र.स. (वाङ्मूर्तिरस) को दाखिल  
करना ।

४६—अमृताहरसमें र.पा., (अमृताहवटी) को दाखिल-  
करना ।

४७—अमृताण्व (२) में आ.प्र.को दाखिलकरना ।

४८—अमृताण्व (३) में र.क.ल. (ना.) को दाखिलकरना ।

४९—अमृताण्व (१) में र.कौ., र.क.ल., व.यो.व., यो.स,  
रसायनसं., वै.र., र.सु., वै.वि., यो.र. (एष पारदादिपूर्णम्),  
वि.र.म. (कायुद्वारः), र.कि. इनग्रन्थों को दाखिलकरना ।

५०—अमृतेश्वर (२) में रसधं. (क्षुपासागर) को दाखिल-  
करना ।

५१—अमृतपित्तान्तररसमें रसायनसं.को दाखिलकरना  
और अथोलिखितको टिप्पणी में देना ।

“रसायनसङ्घदे यत्ताकोदियोग इति नाम स्या-  
पितम् । तत्राऽमृतस्थानेऽकं नियोजितम् । तथा च  
“पटोलकटुकीमुण्डीखिताशौर्द्रैर्लिहेदनु” इत्यनुपान-  
विशेषः

५२—अयस्कृति (२) में अ.मं. (त्रिहाययस्कृति) तथा  
वि.क.को दाखिलकरना और नीचे लिखे हुए टिप्पणी में दाखिल  
करना त्रिहाययस्कृति को मूलपाठों में निकाल देना ।

“चिकित्साकलिकतया एतस्मिन् रसस्य त्रिहृणं गु-  
ह्यं स्वतन्त्रतया पाठो निर्मितः परन्तु तस्या गन्ध-  
पेय, एतदपेक्षया हानिगुणा चास्तीति एषोभिः। र-  
म्यग्विमायनीयम् । तस्याश्च पाठो यथा—



“सतित्वकविमीतकामलकसप्तलाशक्षिनी,  
पलाशतर्पशिशापाप्रभृतिभिः पृथक् प्रास्यिकैः ।  
त्रिवृत्त्यविरदाहकञ्चलनमन्यपध्यायुते-  
रमीभिरुदकार्मणद्वितयपाचितैरेकशः ॥  
पुनस्तत्रोत्तीर्णं श्रुतचरणशेषौपधियजले,  
पलाशद्रोण्यन्तः स्थितवति विनिर्याप्य बहुशः ।  
ततस्तस्या सम्यक् तरुणखादिराङ्गारनिकरै-  
रयःपिण्डं तस्मिन्नयसि च विलीने घनतमे ॥

अयस्तुला गोमयपाचकेन

संसाध्यते सिध्यति चात्र देयम् ।

अयस्समं मागधिकाद्विचर्ग-

चूर्णं घृतं क्षौद्रमतो द्विभागम् ॥

इत्यामये प्रतिवार्षिकी

सैषीपधायस्कृतिरुक्तमात्रा ।

प्रयुक्तया प्रत्यहमायुष्य

बुद्धेर्धियश्चापि भवेद्विवृद्धिः ॥

न चानया स्थौल्यमपि प्रमेहः

क्षयश्च कुष्ठानि चूर्णां न सन्ति ।

न पाण्डुता श्लेष्मिपदरुक्ल च स्या-

। इवार्न च स्तम्भरुजः कदाचित् ॥” इति

५३—अयोभस्मयोगमें भा.प्र., वै.चि., यो.म. (लोहलु-  
पानम्) इनप्रयोगों को दाखिलकरना ।

५४—अयोमोदकमें ग नि., र.क., वि.सा., च.द. (लोहा-  
दिमोदक.) इनप्रयोगों को दाखिलकरना ।

५५—अयोरन.प्रभृतिवर्णमें वृ. मा.को दाखिलकरना ।

५६—अर्कमूर्तिस (३) में र.मु. तथा अर्केश्वर (२) को  
दाखिलकरना ।

५७—अर्थाज्ञातातारिरसको इटादेना यह कम्पवातहमें  
गयाहै ।

५८—अर्शोऽरिरसमें र. दं.को दाखिलकरना और नीचे-  
लिखेकोटिप्पणीमें देना ।

“शुद्धचिकाराशमलिकारसेन बोलेन पित्तप्रभवे  
प्रदघात् । धातारितिलेन कटुत्रयेण वातोद्भवे चात्र  
मरीचियुक्तम् ॥ श्लेष्मोद्भवे वह्निगुडाद्रिमिश्रं त्रिदो-  
पले मागधिकाधृतेन । हरीतकीगुण्डिगुडोऽस्तु ब्रह्मा  
फलत्रयेणाऽऽज्यमधुप्रयुक्तम् ॥” इति रसराराजशङ्करे  
विशेषोऽस्ति । भावनायां वसुस्थाने चित्रकोऽस्ति  
नाम च रसेन्द्ररस इति स्थापितम् ।

५९—अर्शोहर (२) में नि.र., वै.क., र.मु., वै.चि.,  
र.को. (एष शिवरस) इनप्रयोगों को दाखिलकरना और शुद्धाश्रके  
स्थानमें शुल्पात्र पाठकरना ।

६०—अर्शो कुठारस ४, ५ और चक्रकुठार इनसौके-  
श्य प्रत्ययः समानहैं योहा योहा मेदकके अलगपाठकियेहैं  
इसलिये घक्का एकपाठबनादेनाचाहिये ।

६१—अर्श कुठार (५) में र.पा.को दाखिलकरना ।

६२—अश्वकन्धुको (४) में रसायनप. र.र.कौ., यो.त., र.पा.  
इनप्रयोगों को दाखिल करना और नीचेलिखेहुएके टिप्पणीमें  
देना ।

“रसं गन्धं तथा व्योषं दृक्पुं मरिचन्तथा । हरि-  
तालं विपञ्चैव शाणमात्रं पृथक् पृथक् ॥ दन्तीबीजं  
चतुःशाणं खल्वे चैतानि निक्षिपेत् ॥” इत्याकारको  
रसकौमुद्यां पाठोऽस्ति तत्र त्रिफलाऽभावः, दन्ती-  
बीजं चतुःशाणं नियोज्य निम्बुद्रवेण भावना दत्त्वा  
नाम च नृसिंह इति स्थापितम् । तस्याऽप्यश्वकन्धु-  
क्यामेवान्तर्भावः । रसपारिजाते द्वितीयस्थाने चि-  
त्रकमधिकतया विन्यस्य भातुरेचनमिति नाम स्था-  
पितम् ।

६३—अश्वगन्धापाक (२) में रसायनसं.को दाखिलकरना ।

६४—अश्वगन्धाऽप्रक (२) में र.मा.को दाखिलकरना ।

६५—अष्टमूर्ति (१) में र.शि. ( सन्निपातभैरव ) को  
दाखिलकरना ।

६६—अष्टयामिकवटी में र.क. यो ( ज्वराजकेसरी ) को  
दाखिलकरना ।

६७—अदिवधरस में भै.सा., र.म.मा. (नागवध) को दाखि-  
लकरना और नागवधके पाठको तबमेंसे निकालदेना ।

६८—आगन्तुज्वरहरकेपाठको इटाकर ज्वरहर (८८) में ले-  
जाना और रसेन्द्रमें को दाखिलकरना ।

६९—आहासिद्धरसायनमें र.मु., र.र.स., र.बो इनप्रयोगों को  
दाखिलकरना ।

७०—आनन्दभैरवरस (३) में र.पा., र.बो. इनप्रयोगों को  
दाखिलकरना और अयोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“रसपारिजाते निम्बकृत्सेन त्रिदिनं विमृद्यैकः  
पाठः कृतः, आतीफलकारचेल्लृष्टवेररसैर्विभाष्य  
द्वितीयः पाठः प्रकल्पितः, सकलामयप्रत्वेन गुणश्च  
प्रदर्शित इतिविशेषः ।

७१—आनन्दभैरवरस (११) में रसायनप. को दाखिलकरना ।

७२—आनन्दभैरवोवटी (१) की टिप्पणीमें “मैषज्यरक्षा-  
वल्यां रसराराजमुन्दरे च सन्निपातसूर्यति नाम स्था-  
पयित्वा दृक्पुं निष्कास्य त्रिदिनपर्यन्तमायनां  
दत्त्वा निष्पादितः ॥” इसके दाखिलकरना ।

७३—आनन्दभैरवोवटी (२) में र.र., र.क.यो. र.को,  
र.मु., र.चि., र.का, ( एष सन्निपातभैरव ) इनप्रयोगों को  
दाखिलकरना और “मृतताम्रे सटङ्गणम्” के स्थानमें “मृ-  
ताम्राऽप्रटङ्गणम्” ऐसाकरना तथा “कुतन्विदप्रकरादित्य-  
मस्ति” इसे टिप्पणीमें देना ।

७४—आनन्दरस (१) में आ.प्र. ( आनन्दसूत ) को  
दाखिलकरना ।

७५—आनन्दरस (२) में रसायनप. को दाखिलकरना ।  
७६—आनन्दोदयरसमें र.सं., र.सु., घ., नि.र., र.चि, (एगुलप्यानन्दः) र.क. (आनन्दभैरव) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और आनन्दभैरव (७) को मूलपाठोंमेंसे हटावेना ।

७७—आमलक्यादिलोहमें भै.र. (रक्तपित्तान्तकलोह)को दाखिलकरना ।

७८—आमवातगजकेसर(१)कीटिप्पणीमें “मैषज्यरत्ना-  
वल्यामस्मिन्नेयाऽधिकारे विडङ्गादिलोहमिति नाम्ना  
द्वितीयो योगो लिखितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्त-  
र्भावः करणीयः ।

७९—आमवातविष्वक्सेनमें र.दी, र.चं, र.चि, चि सा,  
रसायनसं. [वातविष्वक्सेन] र.कौ., र.धा., यो.म., र.सि,  
र.का, (पवननाशन) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना ।

८०—आमवातातिरवी (२) में र.कल, भा.प्र., वै र,  
र.र.कौ., र.कौ. र.चं, नि.र., र.र.स, डो, रसायनस,  
र.कौ., र.प्र., र.र.दी, वि.र.भ., व.रा, र. (मा.), वै चि,  
(एगु वातारिस), वा (वातारिगुगुल) इनग्रन्थोंको दाखिल  
करना और अथोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“वैद्यचिन्तामणौ यस्यवराजीये च “पुष्पागं वृहती-  
युग्मं देवदाससुचूर्णकम् । एतत्पूर्वोपघसमं मर्दयेद्या-  
ममात्रकम् ॥” इति पाठोऽधिकोऽस्ति ।”

८१—इच्छाभेदी (४) में र.कि., यो.चि, र.धो, र.मृ  
इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और “योगचिन्तामणौ गरियाऽ  
भावः” इसको टिप्पणीमें देना ।

८२—इच्छाभेदी (५) में र.र.कौ को दाखिलकरना ।

८३—इन्द्रोक्तसायनमें रसायनम् को दाखिलकरना ।

८४—उद्गाररसमें र.र.स, र.र.कौ (दीप्तार), वै चि,  
व.रा (कुण्डामर) नि.र., र.र.दी, र.का., डो, वै चि  
इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और उद्गारस्वरसको निकालदेना  
और उसमें दीहुई टिप्पणीकी टिप्पणीमें देना ।

८५—उदकमञ्जरिस (१) में चि.क. को दाखिलकरना और  
अथोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“भूयो भूयो मावयेत्तत्त्रिार्षं” इत्यस्यात्रे “भाज्यः  
सम्यक् कुटुमुण्डी विशालासेहुण्डाभिप्राह्निनिर्गुण्डि  
नारीः” इत्यधिकः पाठो हस्तलिखितप्रतिषु दृश्यते ।

८६—उदयमातङ्गको निकालदेना वह सूर्यकान्तमें गया है ।

८७—उदयमास्कर (२) में र.कौ को दाखिलकरना ।

८८—उदयमास्कर (४) में र.पा को दाखिलकरना ।

८९—उदयमास्कर (५) में र.मृ को दाखिलकरना ।

९०—उदयमास्कर (८) में यो.चि को दाखिलकरना ।

९१—उदयमास्कर (१०) को निकालदेना वह रसवरकी  
टिप्पणीमें गया है वहापर र.मृ को दाखिलकरना ।

९२—उदयमातङ्ग (१) में र.वो को दाखिलकरना ।

९३—उदयमातङ्ग (२) को निकालदेना वह सूर्यप्रभातामे-  
श्वरकी टिप्पणीमें है ।

९४—उदयादिल (३) को निकालदेना वह रविताण्डवकी  
टिप्पणीमें है ।

९५—उदरारिस (१) में अथोलिखितटिप्पणीको ग्रन्थ  
सहित दाखिलकरना ।

“र.सं., घ., भै. र., र.सु., र.चि. एगु ग्रन्थेयु  
पञ्चाननरस इतिनाम । र.म.मा. (गुल्मगजाराती-  
रसः), र.र.स. (रकोदरकुठारः), र.र.कौ. गुल्म-  
ज्ज इतिनाम । रसरत्नाकरे गन्धकमधिकतया निक्षि-  
प्य वज्ररस इति नाम स्थापितम् । रसायनसङ्ग्रहे  
दिक्षारममयाश्चाऽधिकतया निक्षिप्य पारदादिषटीति  
नाम प्रदत्तमस्ति ।

९६—उदरारि (४)को निकालदेना वह सर्वेश्वर (८) की  
टिप्पणीमें गया है ।

९७—उदरारि (७) में उ.यो.त, र.कौ (गुल्मारि.),  
नि.र., वै चि, र.वा, र.र.दी (गुल्मगजाराति), डो.  
(कुटुश्वरारि), रसायनस (भैरवरस.) इनग्रन्थोंको  
दाखिलकरना

९८—उन्मत्तरसमें र.पा को दाखिलकरना ।

९९—उपदसप्रलेप (२)में छुटुतको दाखिलकरना और  
सुधुत्के पाठको मूलपाठ रखना तथा अथोलिखितको टिप्प-  
णीमें देना ।

“गुन्द्रा तुणचिरोपी दर्भवत्तुश्मशलाकारूपः यथा  
यो गङ्गायमुनातटे बाहुव्येन लभ्यते । तत्रप्यजना  
यद्रज्यादिकं निर्माय खडाघाच्छादनं कुर्वन्ति अथवा  
गुहाघाच्छादनवन्धनानि कुर्वन्ति तं तुणचिरोपं धर्त-  
मानसमये ‘यगई’ अथवा ‘यागेर’ इति नाम्ना व्यवह-  
रन्ति । दर्भसज्जातीयमिदं तुणम् । तद्गन्ध्या तदीयम-  
स्म प्रयोज्यम् । रसकल्पलतायान्तु गुन्द्रास्थाने गु-  
लेति पाठ उपलभ्यते सः गुन्द्राश्चाप्युद्गाराऽपाना-  
त्तत्स्थाने कृतोऽस्ति अथवा प्राचीनसुश्रुतीयपुस्तकेषु  
गुञ्जाया एव विद्यमाननामुपलभ्य तथा कृतोऽस्तीति  
निश्चयेन वक्तुं न शक्नुमः । परन्तु गुञ्जाया विपन्नत्वा-  
द्रोपणात्वाज्जन्तुप्रत्वाच्च योगः सम्यगेवाऽस्तीति वक्तुं  
युज्यत एव ।

१००—उपदसहरीयोगमें र.कौ, घ., भा.प्र., भै.र. (सप्त-  
शाणीवटी) को दाखिलकरना ।

१०१—उपदसहरीवटीको निकालदेना वह सूतादिवटीमें  
गई है ।

१०२—उमाप्रसादनरसमें र.पा. को दाखिलकरना ।

१०३—उमामाहेश्वरमें व.रा.को ग्रन्थोंमें दाखिलकरना  
और अथोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“संशुद्धं पारदञ्चाग्रमित्यस्यस्थाने शुद्धं सृतं वि-  
पञ्चाग्रमिति पाठः करणीयः । वैद्यचिन्तामणौ द्विती-  
यस्थाने तमेव पित्तभावनापरहितं पाठं मदनपिप्ते  
उद्धृत्य तस्य रामबाणेति नाम स्थापनात्स रामबा-  
णोऽप्यत्रैवान्तर्भावनीयः केवलं तत्र पित्तैर्भावना न  
दातव्या, स च मदनजनितपित्तप्रकोपे दातव्य इति  
विशेषः”

१०४—उमाशस्त्रिको टिप्पणीमें अगोलिखितको ग्रन्थ-  
सहित दाखिलकरना ।

“र.ल., र.पा., एतयोः क्षीरसमुद्र इति नाम ।  
शक्तिवल्गुभविर्चितायां रसकोमुद्यां क्षीराणव इति  
नाम स्थापितमस्ति ।

१०५—एकसूतेभररसमें र.शं.को दाखिलकरना और “रस-  
राजशङ्करे भृङ्गबहुबालकानां भावनाऽधिकतया  
दृश्यते” इसको टिप्पणीमें देना ।

१०६—एकाग्रवीररसमें र.पा.को दाखिलकरना ।

—इसकाविवरण—

## अथ कवर्गीयरसोंकी विशेषसूचनाएं

१०७—कजलीयोगमें अगोलिखितपाठको दाखिलकरना

“पारदं गन्धर्वं तुल्यं लघुहर्मदेयेद् दृढम् । याममात्रं  
पुटे पाच्यं स्याद्गन्धर्वात् समुद्धरेत् ॥ शुद्धाग्रं प्रदातव्यं  
रसो धान्तीभकेसरी । लघुहर्मस्यानुपानेन छर्दि हन्ति  
न संशयः ॥ र.म.सा., ना.वि. धमनाधिकारे ॥”

इसकेसिवाय अमिसन्दीपनरस (१), उपदेशेभर्षिह, कज-  
लीरस, कृष्णहृषा, गन्धर्वाख्य, गन्धादमगर्भ, त्रैलोक्यसुन्दर  
(१) पापाणवेदी (२-३), पापाणवन्न (१-२), महाकल्प,  
स्त्रीपद्वन्ती (२), श्वेतेभर्षिहप्रभृति केवलकजलीकेयोगोंको  
भी कजलीयोग नामसे दाखिलकरना ।

१०८—कनकसुन्दर (१) में र. चं. (रोगहर) को दाखिल  
करना ।

१०९—कनकसुन्दर (५) में र.पा., र.कि., वै.जी., अणस्त्य  
इनग्रन्थोंको दाखिल करना और “अगस्त्यप्रोक्तवैद्यरु-  
शाखे पिप्पलीरहितोऽयं पाठो ग्रहणीकपाटनाम्ना  
निहितोऽस्ति ।” इसको टिप्पणीमें देना ।

११०—कन्दर्पसुन्दरमें रत्नवनस, र.क.ल. (ना.) को  
दाखिलकरना और “नारायणविचित्ररसकल्पलतायां  
सिताम्रकमित्यस्यस्थाने शिलाऽम्रकमिति पाठः”  
इसको टिप्पणीमें देना ।

१११—कपर्दोत्प्लवि र.मृ. (विषेकरस), र. (मा.) पोद्-  
लीसूतको दाखिलकरना ।

११२—कण्डुशर (३) को रखने सेजाना ।

११३—कम्पनाहारिमें वै.वि., व.रा. (विषयभैरव) को  
दाखिलकरना और नीचेलिखेहुएको टिप्पणीमें देना ।

“अस्यैव पाठस्य वैद्यचिन्तामणिवसवराजीयोः  
कटुकोस्थाने कण्टकारिभाषायां प्रदाय विजयमेरवेति  
नाम स्थापितम् । अग्निवाते वीरभद्रेति च नाम दत्त-  
मस्ति तत्र कटुकोस्थाने गोकण्टभावना प्रदत्ताऽस्ति ।

११४—कर्पूरस (५) की टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको  
दाखिलकरना ।

“कस्तूरीहिमकर्णकुङ्कुमसुधा जातीफलं हाटकं,  
चाच्येशोपजहेमवीजविजया यष्टी जयन्ती, विपा ।  
प्रत्येकं वल्लभात्रं मधुघृतसितया लेह्यमानं दिनात्ते,  
किञ्चिन्मृच्छाप्रपन्नो भजति हि पयो भक्षयेच्छुद्ध-  
ण्डम् ॥ स्त्रीणां गर्वाधिकृतं शमयति सकलं वीर्यपातो  
न जातु, लिङ्गोत्थानं भयति च कठिनं योनिमङ्गं  
करोति ॥” इति टोडरानन्देऽनुपाने विशेषो दृश्यते ।  
यत्राऽस्योपयोगोऽस्मीष्टस्तत्राऽनुष्ठानं करणीयमतः  
स्वतन्त्रपाठे भ्रमो न करणीयोऽनुपानानामनियतत्वात्

११५—कर्पूरस (७) में र.बो.को दाखिलकरना ।

११६—कर्पूरस (११) में आ.प्र. (धृष्टानिधिरस) को  
दाखिल करना ।

११७—कर्पूरस (१३) में र.पा.को दाखिलकरना ।

११८—कर्पूरस (२७) में यो.म.को दाखिलकरना ।

११९—कल्याणदरसमें रसवि. को ग्रन्थोंमें दाखिलकरना

और सुलाठमें “धुसूरस्य रसस्यापि भृङ्गराजस्यमा-  
धनाः” इसके आगे “वीजपूररसस्यापि तिक्तो देयाश्च  
भावनाः । आर्द्ररस्यरसे घृष्टा पुटेद्रजपुटेन च ॥  
स्वाङ्गशीतलतां प्राप्ते पुनश्चस्मर्यं सम्पुटेत् । नृपा-  
रान्विधायैव तत्समं सूततीक्ष्णजम् ॥ निक्षिप्य मर्द-  
येत्तल्लये सञ्जातोऽयं महारसः ॥” इतना पाठ अधिक  
दाखिलकरना और अगोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“रसचिन्तामणौ अस्य रसस्य ‘विशमागमिर्न  
ताम्र-मित्यारभ्य’ ‘यान्तिर्गान्तिर्न विद्यते, इत्यन्तस्य  
ताम्रयोग इति नाम स्थापितम् । अस्मादप्रस्थभा-  
गस्य देवभूतिरस इति नाम स्थापितम् ।

१२०—कल्पशरसमें र.थो.को दाखिलकरना ।

१२१—कलायवटीमें च.द.को दाखिलकरना ।

१२२—कान्त्यरसमें र.शं.को दाखिलकरना और “रस-  
राजशङ्करे सिन्दूरपार्यत नाम्नाऽथवा कान्त्यरसना-  
म्नाऽप्यमेवपाठो निहितोऽस्ति सः कान्तरसाध्नाति-  
रिच्यते ।” इसको टिप्पणीमें देना ।

१२३—कामदरसमें र.प्र.सु, र.चं., स्त्री.वि. इनग्रन्थोंको  
दाखिलकरना और अगोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“र.प्र.सु., र.चं., एतयोः ‘हंसपादकरभक्ष जा-  
णम्’ इत्यस्यस्थाने ‘वलिवसत्ताप्यथ चाग्रमस्मकम्’  
इति पाठो रूपा प्रमेहजिह्वमेहादुशेति वा नाम स्था-  
पितम् । स्त्रीचिदासे वीर्यस्तम्भनयतीति नाम ।

१२४—कामदेवस (४) में यो चि को दाखिलकरना ।

१२५—कामदेवस (५) में र पा को दाखिलकरना ।

१२६—कामदेवस (८) में र पा को दाखिलकरना ।

१२७—कामदेवस (९) में र.स., र.को, (मन्मथरस) इन-  
ग्रन्थों को दाखिलकरना और अथोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“रसरत्नसमुच्चये रसेन्द्ररत्नकोशे च मन्मथरस-  
इति नाम दत्तम्, तत्र “मयं इयेतह्यारिरक्तदहनैस्ता-  
लोर्से. सप्तधा” इत्यस्य स्थाने “रक्तचित्रकवाराही  
पत्रनिर्यासपेयित—”मिति पाठो भिन्नतया दृश्यते ।  
परन्त्येतायता विशेषेण तत्पृथक्कया पाठो प्रहीतुमयो-  
ग्यः । धाराद्या अपि तत्र भायनादाने न काऽपि  
क्षतिः । कामदेवो मन्मथश्चेत्युभौ पर्यायवाचकौ, त-  
द्विशि लक्ष्यमस्स्या र.को., र.र.स. एतयोः पृथक्  
पाठो निवेशित इति सुधीभिरारुलनीयम् ।

१२८—कामदेवेश्वरसमें वै. वि (मदनकामेश्वर) को दाखिल-  
करना ।

१२९—कामधेनुस (२) की टिप्पणीमें नीचे लिखे-  
हुफोलेना ।

“मैपयपरत्नायह्यां अमृतार्णवनाम्नाऽयमेव रसो  
निहितोऽस्ति तत्र व्योपाऽभावः, भावनायाञ्च त्रिफ-  
लास्थाने चित्रकं नियोजितमिति विशेषः प्रतीयते  
परन्तु सोऽकिञ्चित्करः व्योपयुक्तस्यैव शृणाधिकयात् ।  
भायनाद्वयस्याऽप्यनुष्ठाने सयं समञ्जसमेव स्यात् ।

१३०—कामनायकमें र.सु, र.र.स., र.को इनग्रन्थों को  
दाखिलकरना और अथोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“र.र.स., र.को, अनयोर्मदूनोन्मसतनाम्नैको रसो-  
ऽस्ति तेन साकमस्य बहुधा साम्यमस्ति । अत्रद्रव्यो-  
मिश्रणं कृत्वा बालुकायन्त्रे पाको विहितस्तत्र तु  
यथास्थितमेव प्रयुक्तमिति विशेषो दृश्यते । रसामृते  
मदनकामेश्वरेति नाम ।

१३१—कामशाणरसमें रसायनष को दाखिलकरना ।

१३२—कामविलासिनीवटीमें रसायनषे. (मदनविलास) को  
दाखिलकरना ।

१३३—कामकुन्दरीगुटीको हेमवन्तगुटिकाकी टिप्पणीमें  
दाखिलकरना और ४ का (स्वर्णकुन्दरी) को दाखिलकरना ।

१३४—कामिनीमदविधुननमें ग्रन्थसहित अथोलिखित  
टिप्पणीको दाखिलकरना ।

“रसचि., र.सु, रससं., र.क.ल., वै.जी., र.वो.,  
पपु विलासिनीवल्लभेतिनाम । र.सं.क., रसायनसं.  
एतयोर्माहिनीमानमर्दनेति नाम । र.पा., र.क.ल.,  
एतयोः कामिनीमदविधुननेतिनाम । रसावतारे प्रमे-  
हमर्दनेतिनाम । चिकित्सारत्नाभरणे धूर्तैर्लस्थाने  
सुजङ्गमृङ्गनीराभ्यां भावना प्रदत्ता नाम च प्रमेहा-

रीति । द्वितीयस्थाने अनङ्गवर्धकनाम्नाऽयमेव रसो  
निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः ।

१३५—कामेश्वरमोदक (१, २) में र.क. ल. (ना.) को  
दाखिलकरना ।

१३६—कामेश्वरस (२) में र पा को दाखिलकरना ।

१३७—कालकण्ठक (२) में र.स., ध, र.सु (वातकण्ठक)  
इनग्रन्थों को दाखिलकरना ।

१३८—कालवृक्षकमें नि.र., वै.चि (नागेश्वरस) इन-  
ग्रन्थों को दाखिलकरना ।

१३९—कालवृक्षाशिरसमें र.पा (विपारि) को दाखिल-  
करना ।

१४०—कार्यहलौहमें र.र. (क्षेतादिलोह) को दाखिल-  
करना ।

१४१—कासकर्तरीरसको निकालदेना वह चन्द्रामृत (२)  
में गयाई और “यस्यवराजीय प्रमादाद्यमेव पाठः  
कासकर्तरीति नाम्ना द्वितीयस्थाने निहितोऽस्ति”  
इसको टिप्पणीमें देना ।

१४२—कासकेशरीरसको निकालदेना और उसकेग्रन्थों को  
नारायणरसमें दाखिलकरना ।

१४३—कासाङ्गुय (२) में वै.र को दाखिलकरना ।

१४४—कासीसकदरसको हटादेना वह धिनारिकी टिप्प-  
णीमें गयाई ।

१४५—किन्नरकण्ठरसमें मै.र.को दाखिलकरना ।

१४६—कितादिमण्डरकी टिप्पणीमें अथोलिखितको  
दाखिलकरना ।

“चि.र., वै. क., र.सु., यो म, वै.चि., पपुग्रन्थेपु  
लोहामृतनाम्नाऽयमेव योगो निहितोऽस्ति । सङ्गृह्य  
मृतलोहस्य पलाय्यष्टादशानि चेत्यत्र कर्पस्थाने फलं  
सञ्जातमस्ति तद्विज्ञानादेवाऽस्ति, मध्यायाम्यां लिहे-  
रूपमिति वदतोव्याघातउपस्थिते, तस्मादेक एव  
योगोऽस्ति निघण्टुरत्नाकरे द्वितीयस्थानेऽयमेव  
पाठो शुनिम्बादिवटीति नाम्ना निहितोऽस्ति परन्तु  
पाठान्तरता नास्त्येव समानवस्तुपटितत्वात् ।

१४७—कीटारिसमें कृमिहर (१) को ग्रन्थसहित दाखिल  
करना ।

१४८—कुमुदेधर (२) को हटाकर मृगाङ्ग (१) में दाखिल-  
करना ।

१४९—कुमुदेधर (४) में र म. मा., र.पा.को दाखिल-  
करना ।

१५०—कुङ्कुमारस (१) में रसायनष.को दाखिलकरना ।

१५१—कुङ्कुमलेप (१, २) में र.पा को दाखिलकरना ।

१५२—कुसुमायुधमें र.को. (वीर्यमहोदधि) को दाखिल-  
करना ।

- १५३—कृष्णगणेश (२) में रसायनस को दाखिलकरना ।  
 १५४—कुम्भितुमकुशर में र वो को दाखिलकरना ।  
 १५५—रुमिपातिनीगुटेक में र शी, यो स, र मु, इन ग्रन्थों को दाखिलकरना और रुमिकुशर ( ३ ) का इसमें अन्तर्भावकरना ।  
 १५६—कृष्णमाणिक्यस्य ( रसेन्द्रमङ्गलोक ) को प्रथम कृष्णमाणिक्यमें से हटाकर द्वितीयमें दाखिलकरना और कुशर-धिकार देना ।  
 १५७—कृष्णायगेदम में ग नि, ना वि को दाखिलकरना ।  
 १५८—बोलादिमण्डप में ग नि. को दाखिलकरना ।  
 १५९—कल्यादरस ( १ ) में र वो, रसायनप., र.पा. को दाखिलकरना ।  
 १६०—दाशिरादिबटी ( लोकनाथपोहली ( प्रथम ) की टिप्पणीमें से ) को मूलपाठों में दाखिलकरना और र., भै र., को ग्रन्थों में दाखिलकरना ।  
 १६१—रासपेशरी को हटाकर बह्मालोगान्तक में गई है ।  
 १६२—चचरीगुटी ( १ ) में र का, ( बोयैरोभिनी ), र.शा. ( रघुगुडि ) को दाखिलकरना ।  
 १६३—गगनमुन्दर ( १ ) क स्थानमें अपोलिखित पाठको टिप्पणीसहित रखना ।  
 "शुद्धोपादगन्धो च टङ्गुं चाम्रमरुमकम् ।  
 एनानि समभागानि खल्वमच्ये चिनिक्षिपेत् ॥  
 भद्रमुत्तकपायेण मर्दयेत्त्रिदिनं तथा ।  
 काचकूप्यां चिनिक्षिप्य पुटमेकान्तुभूधरम् ॥  
 स्वाङ्गशीतलमुद्गत्य यल्लभार्थं प्रदापयेत् ।  
 सूत्रापि सयिनाशाय सर्वपित्तनिवारणम् ॥  
 व रा, भै र, र गु पिसरिगे ।  
 १६४—वसवराती १ मृच्छङ्गिकादुक्तानि नाम । भैरवरातावली रघुपञ्चरत्नराशिनिगारे टङ्गादरस-पञ्चभेदुपिकारमरुतेनाश्रय निपातिता । भैरवरातान् उच्यते निपात्योक्तं प्रमुक्तं सोऽदिव पठ्यते प्रवक्ष्यति वाक्यादधिकारप्रवक्ष्यते । दुष्पिकाभावेना लक्ष्यमुपध्याय ।  
 १६५—गगनमुन्दर ( २ ) की टिप्पणीमें अपोलिखितको ग्रन्थगति दाखिलकरना ।  
 "र च, र मु, नि र, वै चि, यो.प्र, एषु पुस्तकेषु मृतराजितनाम । द्वितीयत्रिनेत्रेऽपीमान्येय यस्तुनि सन्ति परन्तु भागवद्विषयचिन्त्यात्र तस्याऽन्तर्भाव इति मुष्ठीभिरचिस्मरणीयम् ।  
 १६६—गगनायसपुत्रे में को वि को दाखिलकरना ।  
 १६७—गगनरस ( १ ) में आ प्र, र. क स. को दाखिलकरना ।  
 १६८—गगनरस ( २, ११, १२, १३ ) इनमें आ.प्र. को दाखिलकरना ।  
 १६९—गगनरस ( १३ ) में को स को दाखिलकरना ।

- १६९—गन्धकदुति ( १ ) में आ प्र को दाखिलकरना ।  
 १७०—गन्धकयोग ( ४ ) की टिप्पणीमें नीचे लिखे हुएको लेना ।  
 "भैरवज्यरत्नायव्यां रसराराजमुन्दरे च द्वितीयस्थाने आमलकानि निष्कास्य शाल्मलीतृचं निवेद्य हर-शशाङ्करसेति नामान्तरं दत्तम् । पञ्चत्रैव शाल्म-लीतृचवर्णस्य प्रक्षेपमधिकतया निवेद्य रसनिष्पा-दने न कापि हानिः प्रत्युत गुणवृद्धिरेव भविष्यति योगसङ्कोचश्च महत्फलम् ।  
 १७१—गन्धहरसायन ( १ ) में आ प्र. को दाखिलकरना ।  
 १७२—गन्धहरसायन ( ७ ) में व रा, वै चि को दाखिल-करना और नीचे लिखेहुको टिप्पणीमें देना ।  
 "यस्यराजीयवैद्यचित्तामण्योर्वेदवामलनाम्ना ए-को रसो निहितोऽस्ति तत्र टङ्गुं नागरं कुष्ठञ्च सप्तमांशकमधिकतया निक्षिप्तं तद्वत् नियुज्यैक एव रसो निष्पादनीयः । अयोमरुमापगमनन्तु प्रमाद-विलसितमेव प्रतीयते इति विद्वद्भिराकलनीयम् ।"  
 १७३—गन्धकलोहमें आ प्र, र कल को दाखिलकरना ।  
 १७४—गन्धकवटी ( १ ) में नि र को दाखिलकरना ।  
 १७५—गन्धागुत ( १ ) में आ प्र को दाखिल करना ।  
 १७६—गन्धागुतसमें वै चि ( भीमख ) को दाखिलकरना इसमें रसायनाधिकारमें आया है ।  
 १७७—गन्धवाल ( १ ) में र.का. ( रघुनाथरस ) को दाखिल करना ।  
 १७८—गन्धारीबटीमें र.का को दाखिलकरना ।  
 १७९—गुड्यादिमोदकमें र पा को दाखिलकरना ।  
 १८०—गुडमण्डर ( १ ) में ग.नि ( त्रिकलानोद ) को दाखिल-करना ।  
 १८१—गुडमण्डर ( २ ) में ग.नि. ( गुहापागुटी ), व त, भ.इ इनग्रन्थों को दाखिलकरना ।  
 १८२—गुडमण्डर ( १ ) में रसायनप. को दाखिलकरना ।  
 १८३—गुडमण्डर ( १ ) में र.क, र.प. ( रघुवटी ) को दाखिलकरना ।  
 १८४—गोमूत्रमण्डर ( २ ) को निहालदेना वह मण्डरयोग ( ७ ) में गया है ।  
 १८५—गोमूत्रमण्डर ( २ ) में भै.र. ( गोवारिमण्डर ) को दाखिलकरना और अपोलिखितको टिप्पणीमें देना ।  
 "भैरवज्यरत्नायव्यां गोमूत्रमण्डरमेव शोषारिम-ण्डरनाम्ना स्मृतित्वयोक्तनाय प्रख्यापितम् । तत्र सुतमीदम्पत्यं नियुञ्ज्यैक मत्वा सुतमीस्थाने नियु-ज्यैकपदं न्यस्तम् । पुनर्नयादिमण्डरपदं गोमूत्रमण्डरं तु मण्डरस्य विशेषप्रमाणस्याऽनिर्देशात् योगे प्रप-मागतत्वेनाऽन्यपूर्वसमं मण्डरमरुमानिः प्रक्षेपणीय-

मिति टीकायां कथितम् । त्रिफलाकटुचव्यानामित्यत्र मूलपाठे कटुशब्देन किङ्ग्रहीतव्यमिति संशय्य त्रिकटुनियोजितः । अस्माभिस्तु कटुशब्देन कटुकी गृहीता शोथरोगे तस्या अधिककार्यकरत्वादिति बोध्यम् ।"

१८९—गोमेदकरसायनको टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएकी दाखिलकरना ।

"क्रामणं रसराजस्य येषकाले प्रदापयेत् । क्रामणं यो न जानाति धमस्तस्य निरर्थकः ॥ रसा० १७।१६॥ अन्नं वा द्रव्यं वा यथानुपानेन धातुषु क्रमते । एवं क्रामणयोगाद्भ्रूराजो विराति लोहेषु ॥ २.६० १७।२॥ इत्यादिवाक्ये लंछि देहे च क्रामणयोगेर्विना उग्ररसा नैव क्रामन्ति, इति विचार्य "क्रामणं पादपादेन" इत्युक्तमस्ति । तत्राऽपि क्रामणानि कानिकानि द्रव्याणि भवन्तीत्यपेक्षायां "अलभ्युपाऽयस्काण्तरस्य तालकस्य च भक्षणात् । देहे क्रामति सूतेन्द्रो नाऽत्र कार्या विचारणा ॥ रसायन प० १८।११४॥ "अरियर्गहती यङ्गनागौ द्वौ क्रामणं परम् ॥ रसा० प० १७।१४॥ "इन्द्रगोपो विपं कान्तं द्रव्यं दधिरे तथा । रसकं तिलतेलञ्च क्रामणं क्षेपलेपयोः ॥ रसा० प० १७।७॥ "शिलया निहतो नागो यङ्गं वा तालकेन शुदेन । क्रमशः पीते शुक्ले क्रामणमेतत्समुद्दिष्टम् ॥ तीक्ष्णं द्रव्येन हतं शुल्यं वा ताप्यमारितं पिबिना । क्रामणमेतत्कथितं कान्तमुखं माक्षिकैर्याऽपि ॥ माक्षिकसत्वं नागं विहाय न क्रामणं किमप्यस्ति । दलसिद्धे रससिद्धे विधावली भवति खलु सफलः ॥ २.६० १७।६,७,८॥ इत्यादिभिरनेकानि द्रव्याणि क्रामणानि रसग्रन्थेषु निर्दिष्टानि तेषु शरीरौचित्याऽत्र नागयङ्गमिषद्वद्ताम्रमाक्षिकसत्त्वस्वर्गैरिकाणि गृहीतानि सन्तीति विद्वद्भिराकलनीयम् ॥"

१८७—ग्रहणीकपाट (५)में रसायन. को दाखिलकरना ।

१८८—ग्रहणीकपाट (१३)में र.सु. को दाखिलकरना ।

१८९—ग्रहणीकपाट (१९)में र.चै., र.सु. इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

"रसेन्द्रसारसंग्रहे द्वितीयस्थाने मैखरसनाम्ना कर्णरोगाऽधिकारे एकः पाठो निहितोऽस्ति तत्र त्रिकटुस्थाने केवलं मरिचं नियोजितम् । भावनायां जम्बीरस्थाने आर्द्रकं नियुक्तं तत्र न रसान्तरता भावनाद्वयसत्त्वेऽपि क्षत्यभावात् । मागधीशुण्डधो-यंगिनापि प्रत्ययायाऽभावात् ।

१९०—ग्रहणीमदवारणसिद्धिमें र.पा. (ग्रहणीकपाट) को दाखिलकरना ।

१९१—ग्रहणीहररस (१)में र.को., र.क.ल. इनको दाखिल करना और "मुशली पेपयेत्तैरयथा तण्डुलोदकैः । कर्पकं पाययेद्यानु पथ्यं तकोदंनं हितम् ॥ द्वे निशे च वचा कुष्ठं मुस्तं कटुकरोहिणी । छागमूत्रैः समं पिष्टं रुद्धा गजपुटेः पचेत् ॥ कर्पमात्रं पिषेतैरग्निदीपनमुत्तमम् ॥" इत्या पाठ अधिक दाखिलकरना । रसका-मधेनुकापाठ अपूराहे दूसरेग्रन्थोंमें शम्भुकाश नामहे ।

## चवर्गीयरसोंकी विशेषसूचनाएं

१९२—चक्रधररसकी टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिल करना.

"रसदीपिकायां धातोद्वारहरनाम्ना "ताम्रस्यप-त्रेण नियद्भयसूतं गन्धेन तुल्येन विषेणयुक्तम् । विम-र्दयेद्द्विचिदङ्गकृष्णाऽजाजीगुडचीसुरसाद्रवेण ॥ क्षा-त्रयश्चेत्तुल्यानि पञ्च सूतेन तुल्यानि च योजयित्वा । जम्बीरनिम्बोत्तरसेन वाऽपि विमर्दयेद्याममतः क्षि-पेत् । लोहस्यपात्रेऽथ कृशानुनीरैः संस्वेदयेत्तं घटि-काद्वयञ्च । गुञ्जाद्वयञ्चास्य द्दीतशुण्डी घृतेन युक्तं त्यज्याऽर्द्धकेण ॥ विरेचने तज्जयपालमिश्रमुणञ्च साज्यं परिमोजयेत् ॥" इति पाठोऽस्ति । रसायतारे च धातोद्वारण्यकृशानुमेघ इति नाम्ना "सूतगन्ध-कविपंविमर्दयेद्द्विहीनरसहितं दिनमेकम् । ताम्रपात्र-कुहरे परिलिप्य बालुकान्तरगतन्तु पुटेत् ॥ कृष्णा-ग्निवेष्टाः सुरसागुडचीशुक्राम्बुभिर्भाषय सतवारम् । क्षारत्रयं चै लघ्यानि पञ्च सर्वेण तुल्यं परिमर्दनी-यम् ॥ जम्बीरनीरेण दिने विमर्दये संस्वेदयेहोहमये च पात्रे । धातोद्वारण्यकृशानुमेघः शुण्ठीघृताभ्यां म-धुना च बलः ॥ कम्पिलकमधुयुक्तः स्तुप्रसमधुनाऽ-पि वा शिवामधुना । धातोद्वारणां हितकृद् द्रव्यलघु सुखिगन्धमोजिनां सततम् ॥" इति पाठो निहितो-ऽस्ति । अनयोश्चक्रधरे एव समायेशः करणीयः । अस्त्यैव प्रपञ्चभूतावेतौ । यद्यपि द्वित्रमावनासु स्फु-लदृष्ट्या विशिष्ट. प्रतिभाति परन्तु योगत्रयघटित-भावनानामेकत्राऽनुष्ठानेऽपि क्षत्यभावोऽस्ति विशे-षगुणोदयश्च भविष्यति । रसावतारीय पाठे कल्कस्य ताम्रपात्रकुहरेलेपनेन बालुकासु पुटोऽस्ति इतरयो-स्तु ताम्रपात्रे विन्यस्य सूतनियन्धनमस्ति परन्तु स्फुलदृष्ट्या तावन्मात्रस्यैव ताम्रसंयोगस्य सञ्जात-त्वाद्विशेषविशेषोऽभावोऽस्ति । अतस्त्वयाणां मिलित्वा एक एव रसः सम्पादनीय इति विशेषेण विवक्षितः । अनेन छाषाणां विशेषोपकारो भविष्यति । चक्रधरे

यद्गत्याधिक्यन्तु गुणवृद्धावेव पर्यवस्यति इति सर्वं समञ्जसम् ।

१९३—चक्रवदरस (२) में र का (वातारिख) को दाखिल करना

१९४—चक्रवदरस (२) के मूलपाठके स्थानमें रसेन्द्रमन्त्रके अगोलिखित पाठको टिप्पणीसहित लेना ।

“शुल्वं सूतसमं कृत्वा खल्वे दत्त्वा दिनत्रयम् । नागपर्णीयलापार्यमेधनादपुनर्नेधे ॥ अभ्यसूत्रैर्गवां मृधैर्मर्दयेद्य ततः पुटेत् । चक्रयन्त्रस्थितं प्राज्ञो जारयेद्भस्मसूतकम् ॥ शुल्वचूर्णं रसे और्णं दमयन्ती पुनर्नेधा । मेघशृङ्गारसेर्घुणं रसः स्याद्गुणरोपणः ॥ रसेन्द्रमं, घणाधिकारे ।

टि०—यौ म, र स, र वि, र मि, मै ना, प, वै चि, निर, र क ल, र छ, र का, र म, र को, र शौ, र सयनप, व रा, र क, वै क, पल्लवाधिकारे तौदस्य नाम्ना “शुद्धं स्रजं समं गन्धं मर्धं यामचतुष्टयम् । नागवल्लीवद्वारैर्मैधनादपुनर्नेधा ॥ गाम्भृषिण्य लोचुत्तैर्गवै दृष्ट्वा पुच्छतु । छिद्रेऽर्धौ रणे तौदो गुणामागोऽर्धं जयेत् ॥” इति पाठे निहितोऽस्ति तत्र प्रमादात्ताम्रं न सङ्गृहीतम् । केनाऽपि कारणेनाभ्यग्नं वा तत्र धार्यते सामास्यमेव कुत्रापि कार्यकरणाऽस्य त्वाद रसान्तरा तु नैकावपितु नाम्ना मूलत्रयैकपाद । तत्प्राप्त-स्याऽप्येवाऽस्तर्माव समुचितं र म मा, र र स, ना वि धेतुं ग्रन्थेषु श्रीपदाधिकारे श्रीपदाधारैरसेतिनाम्ना, र को, र क ल एतयोश्च श्रीपदेभ्यः नाम्ना “शुल्वचूर्णम स्रजं नागवल्लीवद्वारैः । पाठापुनर्नेधे नागपर्णादगोमूत्रमयुतम् ॥ विदिनं मर्दयेत्सत्त्वे ततो गवष्टुं पश्य । मध्यं शीघ्रेणयुक्तं शीघ्रं शीघ्रं पश्य ॥” इत्ययं योगोऽस्ति । बहुषु ग्रन्थेषु भावनाया कला न दृश्यते । रसावधारं भरमसूत्रक नाम्ना “मृधमचूर्णं शुल्वस्य सूतस्य विमर्दयेत् । नागपर्णीयलापथ्या मेघं नादपुनर्नेधा ॥ अमृदगवाम्मर्दयद्विधा ततः पुट्य । चक्रयन्त्रस्थितं प्राज्ञो जायते भरमसूत्रक ॥ शुभादयं त्रयं वासि सेव्यं मूलकलीयुक्त । विद्वत्पैषवाक्यं वा दशमूदनं वा तथा ॥ भरमसूत्रकनामाऽयं गन्ध-पञ्चाचीलता । ग्रन्थद्वयं गन्धमार्गं लयेदानु न सद्यः ॥ गौमुखवद्गुद्गाश्च पथ्या वापा पयलजा । रूक्षं सर्वं द्वितयं स्वाङ्गल्यग्राहिं नागरु ॥” इत्ययं योगो निहितोऽस्ति साऽस्मिन्नेव समावेदनीय स्यात् तत्राऽयोग्यत्वात् । योगमाध्याये अगोपणनाम्ना “शुल्वं स्रजं समं कृत्वा रसं मर्धं दिनत्रयम् । नागपर्णीयलापार्यं मधनादपुनर्नेधा ॥ मेघशृङ्गारसेर्घुणं रसं स्वादग्रापयम् ॥” इति पाठे निहितोऽस्ति । तस्य भावनायामविविक्तो विरोधो दत्तो दृश्यते परन्तु तेन पाठ्यन्तरा अतिपुण्याया अतिगौरवाऽप्युक्त्यायां विभ्रमकरत्वात्वेनायां पाठानां शीघ्रमर्दयान्तर्भावं करणीय । भावनासत्ति मया वेदनाऽपि तदनु शोने क्षयमावोऽस्ति ।

१९५—चतुर्मुखस (१) में आ.प्र, र पा, र क छ (ना) इनग्रन्थोंको टिप्पणीसहित दाखिल करना ।

टि०—अत्र रसाधिकार-“किञ्चिदुत्पत्तीनामीरैरिषातु विमर्दयेत्” इत्ययं स्थाने “किञ्चिद्विराजदपुष्पकचूललावे” इति पाठे दृश्यते तत्र कचचूलज्जनेन शान्ती प्राप्ता । शायनसमयेन काश्चना गी प्राप्ता । कचचूलं समानम् । आ प्र, र क छ (ना) एतयोर्भावनायां विच्छेदादुत्पत्तीनामभावा दृश्यते । दम मा, ना वि रसादिद्वयभिर-मिद्विपरस इति नाम्नाऽप्येव योग पठितं पठ्यु तत्र “किञ्चि-

तुत्पत्तीनामीरैरिषातु विमर्दयेत्” इत्यर्थं पथ वृद्धितमसि । “किञ्चिद्विराजदपुष्पकचूललावे” इत्यनुपात्तं च विशेषोऽस्ति । परैरानवा रसान्तरा, भवेत् तस्याऽन्तर्भावं करणीय । विद्वद्वा दृष्टप्रत्ययेन तत्रामान्तरं स्थापि तमिति रहस्यम् ।

१९६—चन्द्रकलावटी (१) में र.शु को दाखिल करना.

१९७—चन्द्रकान्त (१) में वै चि (सूर्यकान्त) को दाखिल करना ।

१९८—चन्द्रकान्त (२) में नि.र., व रा, र र. (सूर्यावर्त) इनग्रन्थोंको दाखिल करना ।

१९९—चन्द्रप्रभा (४) में र.शु को दाखिल करना ।

२००—चन्द्रोत्तर (२) की टिप्पणीमें भै र (चन्द्रोत्तर) को दाखिल करना ।

२०१—चन्द्रोदय (१) के मूलपाठके स्थानमें अगोलिखित-पाठको टिप्पणीसहित दाखिल करना और ग्रन्थोंमें र पा., र क ल. (ना), र शौ, र सयनप इनको देना ।

चन्द्रोदयः (मकरध्वजः) सिद्धाद्यः

पलमानं रसं सम्यग्गुह्यसंस्कारसंस्कृतम् ।

तथा पलद्वयं गन्धं शुद्धं हेमं द्विकापिकम् ॥

केलासाऽलसम्भूते सुदृढे च सुचिकणे ।

शोणप्रस्तरे खल्वे सयं संस्थाप्य मिश्रयेत् ॥

मर्दयेत्सत्त्वे तेषां धामानां निरन्तरम् ।

रत्नकार्पासपुष्पस्य श्वेताङ्गोदकफलस्य च ॥

हुमार्पाश्चरसेः सम्यग्मावयित्वा पृथक् पृथक् ।

स्थापयित्वा काचकूपीमये सयं प्रयत्नतः ॥

रत्नाङ्गसालसरलज्जदिरधीकलोद्भवा ।

काष्ठिनाऽन्यतमेनैव नीरसेन प्रतापयेत् ॥

मृदुनाऽन्ययोगेन प्राप्यामहितयं पचेत् ।

पुनराप्यमह्यं पाच्यं मध्यतापेन धहिना ॥

अग्निना प्रखरेणैव ततो यामह्यं पचेत् ।

शूयो मन्दाग्निना पाच्यमथशिष्टद्विषामकम् ॥

स्याद्गृहीतमथोद्भूतं नवचूतदलोपमम् ॥

मज्जुरं लोहितं पिष्टं दाडिम्यकुसुमोपमम् ॥

तताऽप्यतार्यगन्धेन द्विगुणेन विमर्दयेत् ।

माघयेत्पूर्वचन्द्रयः पाचयेद्यं प्रयत्नतः ॥

एवं वाच्यं हुयांसम्यगौषधसिद्धये ।

सन्निपाते ज्वरं घोरं मन्दाग्निनित्यमरोचकम् ।

आमशूलं कटीशूलं हृच्छूलं पित्तशूलम् ॥

कासं श्वासस्रजं यरमाणं शूलं कुष्ठमशोपतम् ॥

गलोत्पानश्च शूलिश्च तथातीसारमेव च ।

श्लीपदं कफपातोत्थं चिरञ्जं कुलजन्तया ॥

नादीदमर्षं घ्नं घोरं गुदामयमगान्तरम् ।

पायुं बहुविधं हन्ति श्वजमहं विरोपतम् ॥

सेयनादस्य नश्यन्ति सर्वे रोगा न संशयः ।  
 करोत्यग्निं यत्नं वीर्यं घलीपलितनाशनः ॥  
 विधित्यस्तेयितो होष मुष्ट्युमपि जीवयेत् ।  
 स्येच्छाचारविहारोऽपि न कदाचिद्विषद्यते ॥  
 मेधायुःकान्तिजननं कामोर्दीपनरन्महान् ।  
 घृष्टोऽपि तदणस्पर्द्धां स्त्रीषु चापि वृषायते ॥  
 सेयनादस्य सप्राज्ञो गच्छन्ति प्रमदाशतम् ।  
 प्रेलोक्यशुभं धीमदेय एव महौषधम् ॥  
 मृत्युञ्जयो यथाभ्यासान्मृत्युं जयति देहिनाम् ।  
 तयाऽयं साधकेन्द्रस्य जरामरणनाशनः ॥  
 स्वयं प्रेलोक्यनाथेन प्रेलोक्यहितमिच्छता ।  
 समर्पितोऽयं सिद्धेभ्यः करुणाद्रिणं वै यतः ॥  
 अतोऽयं भुवने स्वातः, धीसिद्धमकरध्वजः ।  
 भास्यान्याथा तमो हन्ति केसरीकरणं यथा ॥  
 तुलासहं यथायद्विस्तथा रोगानसौ हरेत् ॥

आ वि, रत रसायनाधिकारे ।

टि०—इ यो त, रसायनम्, यो म, रघु, एषुमन्वेपु मिहलदमी  
 शरानाम्ना “महाशोभनचक्रे शिरिमुषिकाया मज्जार् पट्टगुणवर्ति  
 कमशोऽधिकम् । ऊर्ध्वं पयोऽभिमेपरे विनिपायपीठा सिद्धिं समस्त  
 करणे स्वकटे कुक्षम् ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति । योगमहापते च  
 “सरोज्यं तिर्ग्रीं इत्यागतोय द्वाभ्यामन्वेपुलक्षणीय । श्रीसिद्ध  
 लक्ष्मीविलसनामा योमपिण्डोदरसम्प्रवृत्तः ॥” इति एतेन  
 गन्धकस्य शतगुणितगारुमपि विहितम् । गुषापिण्ड इत्यपि नाम  
 स्वापिणम् परन्तु च त्रौदयादभिन्न एव केवल पारदसरकारविशेष  
 धवित इत्यापातनो विशेष प्रतीयते परन्तु पारदस्रवारे समाममना  
 वालि रसान्तरतावीधक इति सुभीतिर्विभावनीयम् ॥

२०३—चन्द्रोदय (७)को इटावेना वद मकरध्वज (२)की  
 टिप्पणीमें गयाहि ।

२०३—वकिचादिमण्डूरमे ॥ नि. (चणलामण्डूर, १ मा.  
 (मण्डूरवटिका)को दाखिलकरना ।

२०४—चातुर्थिकनिवारणं र पा (चातुर्थिकगङ्गा)को  
 दाखिलकरना और तालकेशर (२३)की टिप्पणीमें लेजाना ।

२०५—चातुर्थिकारिख (४)में र को को दाखिलकरना ।

२०६—चातुर्थिकारि (७)में ना वि को दाखिलकरना ।

२०७—चित्रनायान्तकमें र र स, र र.कौ (धियारि) को  
 दाखिलकरना ।

२०८—चिन्तामणितैलकी टिप्पणीमें अधोलिखितको  
 दाखिलकरना और ग्रन्थोंमें २ को को देना ।

“टि०—रसकामनेनी राजवहमैलेनाम्या—

“मृतम पकलेहानि दन्तीवीजानि दङ्गुम् ।  
 बासुपेरुण्डीनानि राजपुत्राऽभ्याविष्टम् ॥  
 पलाशनीजमेकन्तु जैपाल तत्सम ममेव ।  
 स्तुवीक्षीरेण समिष्य भावयेदितिजत्र तत् ॥  
 नारिकेलके लिप्सा महागाढात्वे स्थितम् ।  
 तप्तहोल्मु जायते मृदीया नाभिगण्डले ॥

जणुमान्नलेन दशवारान्निरेचयेत् ।

तान् नीवीक्षकनेन वीध प्रक्षालयेदुष ॥

गङ्गाय भावयेदन्मध्यङ्ग विवर्जयेत् ।

गुणिकाऽऽणमात्रेण सप्तवारान्निरेचयेत् ॥

एतत्तैलेन पथ्यादिकल युक्तिविभाषितम् ।

निष्पील्य हस्ते विष्ट विरेचनकर परम् ॥

इति पाठो निहितोऽस्ति । इदं तैलं चिन्तामणितैलेन समानं वर्तते ।  
 तैलेपादानन्दनेपु बासुपेरुण्डीनान्नीजान्मयिकानि सन्ति ।  
 भावनायाश्चाऽभिन्नु स्तुवीक्षीरं दृश्यते, अत उभयोयोगोर्द्वय्यायां  
 भावनायाश्च मिश्रण इत्या तैलं निष्पाद्यते चेत्तर्हि गुणाधिक्य भवि  
 ष्यति । अस्मिन्तैले गुणिकामाणमात्रेति पाठो दृश्यते तत्र तैलनिष्कासना  
 दुर्घटितस्य कल्मष्य गुणिकां विषयं तदाऽऽणमेन विरेचनानि  
 मविष्यन्तीनि निर्धार्यम् ॥”

२०९—चिन्तामणिरस (१०) को इच्छामेदी (६) में  
 लेजाना ।

२१०—चिन्तामणिरस (१२) में र.पा को दाखिलकरना ।

२११—चिन्तामणिरस (१७) में र.मू को दाखिलकरना ।

२१२—चिन्तामणि (२२) की टिप्पणीमें अधोलिखितको  
 दाखिलकरना ।

“मैयज्वरस्तायस्या बूलिकावदीति नाम्नोदराऽ-  
 धिकारे “रसा गन्धो विषं तालं त्रिकटु त्रिकला  
 तथा । दङ्गुणं समभागश्च जयपालश्चतुर्गुणम् ॥ भृङ्ग-  
 राजरसेनाऽथ केशराजरसेन धा । मधुना घटिका  
 कार्या गुञ्जाद्वयमिता शुभा ॥ बूलिकाख्या घटी ध्याता  
 शोयोदरचिनाशिनी । कामला पाण्डुरोगश्च आम-  
 वातं हलीमकम् ॥ हन्याद्गन्धर्ं कुष्ठं ग्रीहानं गुस्म-  
 मेव च ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽऽयुधेया-  
 न्तायां सुकरः ॥”

२१३—चैतन्योदयरसमें रै र को दाखिलकरना

२१४—चोडसिद्धरसको ज्वरकुसान्तकमें लेजाना और  
 नीचेलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“रसाकारोपधयोगे कजलीस्थाने त्रिभागो द्रवो  
 नियोजित । अत्र स्वैरैकभागां गन्धकपारदौ स्तः  
 इत्यापाततो रसान्तरता प्रतीयते परन्तु गन्धकपार-  
 दसंयोगेनैव द्रवस्य जायमानत्वादभिज्ञताऽनयो-  
 रिति सुधीर्मिदमावनीयम् ।

२१५—छर्दिसहयरसमें यो र (बोरकादिरस), र च (सूत  
 मसमयोग) को दाखिलकरना ।

२१६—ज्यावटीमें आ प्र को दाखिलकरना ।

२१७—जातीकलादिवटी (३)में र.पा को दाखिलकरना.

२१८—जीर्णवृत्तरसमें ताभयाय (१०) को दाखिल  
 करना ।

२१९—ज्वरकुलान्तरसकी टिप्पणीमें अधोलिखितको लेना ।

“रसगन्धौ विशुद्धौ द्वौ दङ्गुणश्च कटुत्रयम् । द-  
 न्तिवीजश्च संयोज्य समामेन गिण्धरैः ॥ प्रदेशो



मापमात्रो वै ज्वरशूलार्दितस्य तु । सज्वरं याममात्रेण शूलं हन्ति कफोद्भवम् ॥ इति नारायणविलासे द्वितीयस्थाने पाठोऽस्ति तस्य पृथग्पाठानर्हत्वम् ॥

२१०—ज्वरकेसरी (१) की टिप्पणीमें अथोलिखितको देना ।

रत्नाकरौषधयोगे जयपालस्थाने टङ्कणं नियोज्य योगीति नाम्ना रसान्तरतया पाठो निहितोऽस्ति सोऽप्यत्रैवान्तर्भवति । टङ्कणेऽधिकप्रज्ञा चेदस्मिन्नेव तद्योगस्य सुकरत्वात्पाठान्तरताऽयोग्यत्वम् ॥

२११—ज्वरकेसरी (३) में वा. (शीताकुश) को दाखिल करना ।

२१२—ज्वराजसिंहमें र.पा.को दाखिल करना ।

२१३—ज्वरगजाकुश (२) को निकालदेना वह सत्रिपात-गजाकुशमें गयाई ।

२१४—ज्वरध्वान्तदिवाकररसेको विधत्तापहरणमें दाखिल करना ।

२१५—ज्वरभैरव (१) की टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको दाखिल करना ।

“र.सं., र.चं., पतयोः सर्वाङ्गसुन्दरेति नाम इत्या रेखनाऽधिकारेऽयमेव पाठः स्थापितः । र.सं., र.चं., भै.र., च., र.क.यो., र.सु., नि.र., एषु ग्रन्थेषु ज्वरकेसरीति नाम्ना पाठो निहितोऽस्ति यथा (ज्वरकेसरी १) अत्र टङ्कणामावोऽस्ति । अत्र टङ्कमित्यस्य स्थाने चैवेति पाठः प्रमादात्सञ्जात इति प्रतिभाति । भृङ्गभाषनाऽनुष्ठानान्तु कृतमपि न दोषावहं पाठस्त्वेक एव करणीयः । निघण्टुरत्नाकरेऽजीर्णाऽधिकारे रामबाणनाम्ना “त्रिनिष्कं शुद्धजैपालं विप-गन्धेशटङ्कणम् । भृङ्गराजरसेः पिष्टे—” तिपाठोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः । भृङ्गरसेन प्रथमं भाषणं प्रदायाऽन्ते श्रोणपुष्पीररसेन भाषनायां गुणवृद्धिरेव भविष्यति ॥”

२१६—ज्वरशूटहरमें र.क.यो. (पर्वटीरस) को दाखिलकरके मूलपाठोंमेंसे हटादेना वह रक्तितान्द्रवकी टिप्पणीमें गयाई ।

२१७—ज्वरहरा (७) में र.को को दाखिल करना ।

२१८—ज्वराकुश (१) का नाम र.र.स में चानुर्ग्रहकर खाई ।

२१९—ज्वराकुश (४) की टिप्पणीमें अथोलिखितको दाखिल करना ।

“र.सु., वै वि, रसायनसं., एषु ग्रन्थेषु शीताकुशनाम्ना “नृत्यकाङ्गागमेकज्जलालं दिगुणन्तरा । तालाग्निगुणितः शायः सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ भावितं सूर्ययोगेन तोयेष्य पूर्णजैस्तथा । भावितं सप्तवारणि गोलकं मृगमपयतः । पुटेऽङ्गपुटेऽङ्ग मिद्धो भ्रय-

त्यसौ रसः ॥” इत्यादि पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽत्रैव पाठोऽन्तर्भावः सुकरः । तालनृत्यकयोर्भागव-त्यासस्त्वकिञ्चित्करः पुटदानेन तालाधिकभागस्यो-द्धृत्यमानत्वात् । भाषनाविशेषस्यात्राऽप्यनुष्ठाने शक्यमायात् ।

२२०—ज्वराकुश (७) में वै वि, वा. (रामबाणरस) को दाखिल करना ।

२२१—ज्वराकुश (८) को शीतमघ्री (१) में दाखिल करना ।

२२२—ज्वराकुश (९) की टिप्पणीमें अथोलिखितको दाखिल करना ।

“रसगन्धटङ्कमसितं समांशकं परिमृद्यजातिफल-सप्तमायितम् । सितयोपयुज्य नन्दरक्तिकोस्मितं मयि-ताम्रमुग्धजयते विसृचिकाम् ॥” इति पाठो रस-चण्डांशो रसरत्नसमुच्चये च निहितोऽस्ति । रस-रत्नसमुच्चये “विमृद्य गन्धोपलटङ्कणे च सम्भाव्य वारानय सप्तजात्याः । तोयैः फलानां” इति विसृ-चीविध्यं सनाम्ना द्वितीयः पाठो निहितोऽस्ति सोऽप्यत्राऽनायासेनैव समाविशति ॥”

२२३—ज्वराकुश (११) की टिप्पणीमें अथोलिखितको दाखिल करना ।

“रसेन्द्रकल्पद्रुमे “पारदं गन्धकं टङ्कं विपञ्च म-रिचं समम् । चूर्णितं सूततुल्यञ्च बीजं नैकुम्भजं शुभम् ॥ पिष्टं निम्बुद्रवभाण्डे रक्तिकार्द कफजयेत् ॥” इति हुताशननाम्ना योगो निहितोऽस्ति । योगचन्द्रि-कायां ज्वरभेदीति नाम्ना “गन्धटङ्कणविषोष्पणद-न्तीबीजकट्टफलमुपेतसार्धम् । मर्द्यमाद्रकजलेरथ मापं तत्सितत्वाद्रसयुग्ज्वरभेदी ॥” इति पाठो निहि-तोऽस्ति । पतयोरत्राऽन्तर्भावः सुकरः पतद्वेष्या मूलयोगस्याऽधिकारकार्यकरत्वात्

२२४—ज्वराकुश (१२) में र.पा., र.कि., र.को, रसायन. (ज्वराकुश) अगस्त्य., व्यास. (मृदवज्जीवनी) इनप्र-न्योंको दाखिल करना ।

२२५—ज्वराकुश (१७) को वैष्णवरसमें दाखिल करना ।

२२६—ज्वराकुश (१८) में रसायन. (मृदवज्जीवनी) को दाखिल करना ।

२२७—ज्वराकुश (१९) की टिप्पणीमें अथोलिखितको प्रत्यभहित दाखिल करना ।

“रसगन्धकनेपालं समं खल्वे विमर्दयेत् । अभव-त्यवत्कलद्राये दोलायन्त्रेण पाचयेत् ॥ याममायं ततो नोत्था गुञ्जामात्रप्रमाणकम् । सितकणायुतं खादे-द्विमन्त्र्यरत्नाशनम् ॥ सर्वज्वरं हृणादन्ति नाम्नाऽप्यं भाग्यवीरसः ॥” इति वृषचिन्तामणी पाठोऽस्ति त-

स्य मूलमयमेव रसः । कटुकीनिष्कासनस्य प्रयोजनं न प्रतीयते । अथव्यथक्कलद्रावे स्वेदनेनाऽप्यनुष्ठिते क्षत्यभावः । स्वेदनाऽनन्तरं भृङ्गरसेन घटिकाकरणे सर्वं सामञ्जस्यं भविष्यति । पृथक्पाठकल्पनन्तु सर्वथाऽप्याप्यमेव ।

२३८—ज्वराकुश (२१) में र क यो. को दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना—

“द्वियामं मर्दयेद्वैरीपापाणं कितवद्रवैः । जीरकेण समायुक्तं शीतिकाज्वरनाशनम् ॥” इति रत्नाकरौषधयोगे पाठोऽस्ति । चूर्णद्रव्यस्वेदनाऽनन्तरं कितवद्रावेण मर्दनं विधाय जीरकानुपानेन प्रयोगेकृते द्वयोरप्येकत्र समावेशः करणीयः । अनेन गुणवृद्धिरपि भविष्यति पाठहासश्च महत्फलम् ।

२३९—ज्वराकुश (२२) में र का. को दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“रसकामधेनौ शीतमञ्जीनाम्ना “चूर्णालसौम्यतु-स्थानि तुव्यतुल्यार्द्धमर्षकम् । कारवल्याः सप्तपुटः रसः स्याच्छीतमञ्जनः ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः । यद्यपि शङ्खगुकि-चूर्णस्य भेदो दृश्यते परन्तु सोऽकिञ्चित्करः । द्वयोरपि चूर्णं प्रायशः समानधर्मत्वात् ।”

२४०—ज्वराकुश (२५) को हटादेना वह रामबाण (५) की टिप्पणीमें गयाई ।

२४१—ज्वरारिख (२) में भै. र को दाखिलकरना ।

२४२—ज्वरारिख (१०) की टीकामें “स्वाह्मशीतल होने-पर निकालकर ऊपरलगेहुएपारोके उतारकर उससे द्विगुण-जमालगोटा और त्रिगुण शुद्धवृषभाण डालकर” इसतरहका पाठ करना उचित है ।

२४३—ज्वरारिख (११) की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना और नारसिंहरस (प्रथम) को निकालदेना ।

“वसवराजीय नारसिंहरसस्याऽनेनाऽसरशः समताऽस्ति केवलं उदरारौ कुमारिरसेनभावनास्ति नारसिंहेऽकमूलत्वक्पायस्य भावनाऽस्तीति विशेषो दृश्यते परन्तु स अकिञ्चित्करोऽस्ति. द्वयोरपि भाव-नयोरैकत्र समावेशेन गुणवृद्धिरेव भविष्यति पाठद्व-यप्रभो निरस्ती भविष्यतीति महत्फलम् ।

२४४—ज्वरारिख (१२) में वै. र. (रामबाण), र. सि. (लोलावतीवटी) इनप्रयोगोंको दाखिलकरना ।

## तवर्गीयसोंकी विशेषसूचनाएं

२४५—ताम्रपर्पटी (२) की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना ।

“र. सु. प्र., र को., र का., व. रा., र. क. यो एषु ग्रन्थेषु ज्वराऽधिकारे विजयपर्पटी नाम्नैको रसोऽस्ति तत्र चतुर्भागविपनियुक्तिः कदलीदलपातनञ्चेति विशेषो दृश्यते परन्तु सोऽकिञ्चित्करः, चतुर्भाग-विपक्षेपेणाऽपि क्षत्यभावात् । मात्रायामपि समान-ताऽस्ति पाठान्तरनिरसनञ्च महत्फलम् ।”

२४६—ताम्रपर्पटी (३) की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना ।

“रसरत्नमणिमालायां विस्फोटप्रपर्पटीनाम्ना “मृतं तात्रं मृतं मृतं गन्धकेन च मर्दयेत् । कुर्यात्पर्पटिकां शुभ्रां ताञ्च खादेयपावठम् ॥ त्रिफलाचूर्ण-संयुक्तां विस्फोटार्तः सुप्तीमयेत् ॥” इति पाठो निहि-तोऽस्ति स ताम्रपर्पट्या अभिन्न एव । सर्वत्र सूतयो-गेषु मृतवर्धेनियुज्येत तर्हि शतगुणाऽऽधिन्यमिति वारंवारं सूचितमस्माभिः । अनुपाने त्रिफलाचूर्ण-प्रयोगस्तु योगस्य स्वतन्त्रतामापादयितुमशक्य एव ॥

२४७—ताम्रपिटिका (२) क मूलपाठके स्थानमें अधोलि-खितपाठको लेना ।

“विशुद्धं तुरयताम्रञ्च रसं गन्धं समांशकम् । श-तावरीरसेर्मर्षं कटुतेले विपाचितम् । सूत्रकृच्छ्रज-त्येव रसेन्द्रः शकैरान्वितः । कुण्डलीनीरमधुयुक् पिप्पलीक्षीद्रयुक्तः ॥ यासपापाणभित्पथ्या गोभु-राख्यधैः कृतः । कायः समाक्षिको हन्ति कृच्छ्र-दाहकृत्तापिवितम् ॥ रसावतारे

२४८—ताम्रयोग (२१) को हटादेना वह रविताण्डवकी टिप्पणीमें गयाई ।

२४९—ताम्रयोग (९) में र सु. (सूर्यप्रभ) को दाखिलकरना ।

२५०—ताम्रयोग (१०) की टिप्पणीमें “यो म, रसे-न्द्रमं. एतयोर्बालरोगाऽधिकारे घालरोगहर इति नाम्ना पठितः” इसको दाखिलकरना ।

२५१—ताम्रयोग (१९) को हटादेना वह सूर्यप्रभाताग्नेधर्म गयाई ।

२५२—ताम्रसायन (१) में व द को दाखिलकरना और टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना ।

“रसकामधेनौ रसायनसङ्ग्रहे च “गन्धकेन हतं तात्रं शुद्धाह्वाऽर्द्धं प्रकल्पयेत् । रसोऽयं शुद्धमार्तण्डा गलत्पृष्ठविनाशनः ।” इत्याकारकः कुष्ठे योगोऽस्ति तस्याप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः ।

२५३—ताम्रसुन्दरस (अधोलिखित) को रसवर्ती टिप्प-णीमें लेजाना—

“भैपालशुद्धपत्राणि सूचीवेध्यानि कारयेत् ।

निम्बानालपट्टायेर्याममेकं पचेत्ततः ॥

उष्मारकैः पचेत्तानि सप्तवारात् सकाञ्जिकैः ।

एषं संशुद्धिमायान्ति जलेन क्षालयेत्ततः ॥

शुद्धानां ताम्रपत्राणां गृहीत्यात्पलपञ्चकम् ।  
 कर्पञ्च रसता ग्राह्यं पक्वनिम्बुक्वारिणि ॥  
 यावच्छुद्धत्वमायाति तावत्तच्च चिमर्दयेत् ।  
 निम्बुकरसयुक्तेन गन्धकद्विपलेन च ॥  
 पत्राणि तानि सहित्व यन्त्रे सेकतके क्षिपेत् ।  
 सम्पक्वपचेत्ततस्तानि वह्निना दिनपञ्चकम् ॥  
 स्वाङ्गशीतं चिदित्या च तत् शुल्व समुद्धरेत् ।  
 शृङ्गण तत्तूर्णयेत्तत्त्वे त्वजाक्षारणं सम्भुदत् ॥  
 दिनत्रयं तथाऽऽज्येन दध्ना च सितया तत् ।  
 माक्षिकेण तु तत्तुल्यं शुद्धं स्यात्पुटयागतं ॥  
 उत्कलेदन्नमदाहादि दापि सर्वैर्ययोजितम् ।  
 शुल्वमात्रानुपानानि धस्यन्तेऽतः समासतः ॥  
 धनुर्मेषं दृष्ट्वाऽऽस्यं शुल्वं धानजसम्भवे ।  
 सौर्यं गेह कुवेराक्षं रामठं चाक्षसम्भितम् ॥  
 पियेस्समेण तदनु गव्येनात्यल्पकेन च ।  
 दद्याद्वह्निद्वयञ्चास्यं शुल्वजे परिणामजे ॥  
 स्वर्जिकादङ्गणेनाऽथ पञ्चैव लयणानि च ।  
 अभ्यत्युत्क्रिकाक्षारामार्गीयावन्नामठम् ॥  
 एषा चूर्णन्तु लङ्गेन सप्तवाराश्च भाषयेत् ।  
 कर्ममात्रं पियत्पञ्चात्तचूर्णं ततः भाषयन् ॥  
 धनुर्द्वयमितं शुल्वं रांगराजे प्रयाजयेत् ।  
 छिन्नासस्यस्य वह्निं सितागद्याणकान्वितं ॥  
 अजाक्षीरेण तदनु पातय्या वल्परधेन ।  
 शुद्धं ताम्रं धनुर्मात्रं हरातस्याश्च तिन्दुकम् ॥  
 पियेत्काण्णेन तोयेन शायमुल्मादरेषु च ।  
 यद्द्वयपञ्चं शुल्वस्य प्राणद् द्वौद्वयसम्भितम् ॥  
 पयविशदिनाम्येव सेपयेद्दृहणीगदे ।  
 भासुना भक्षयेत्ताम्राद्विशुद्धाद्रित्कात्रयम् ॥  
 सासारसं पियेत्पञ्चात्साध्यासापनुत्तये ।  
 यद्द्वयपञ्चं शुल्वस्य त्रिपलामधुमिश्रितम् ॥  
 प्रातः सम्मशयेत्प्राणीं ब्रह्मर्षयेस्ता भयेत् ।  
 पक्वान्दशमामेषु घनीपलितयोजितं ॥  
 अष्टादशानु पुष्पेषु ताम्रं तद्द्वयचतुष्टयम् ।  
 पियेत्तरदिरतायेन याद्वारजसा समम् ॥  
 रतिपापञ्चयं शुल्वाद्यापचिप्रकमयुतम् ।  
 न सुश्र्यात्कादियं पय्यं दुग्धं तेऽञ्च राजिकम् ॥  
 सततं मशयेलन्दं रुन्तं यत्पञ्चं यान्तुकम् ।  
 नानारागेभ्यश्चि मोक्षं रम्भाऽथ ताम्रमुन्दरं ॥  
 क्षापादिकं समीक्षादौ शुल्वं दद्यात् प्रायया ।  
 येषु रांगेषु यं यागा देवास्त तदनन्तरम् ॥  
 र मृ, द्रुते । अत्रानिचिदुपानानि विशेषतया  
 निहितानि सन्ति परन्तु उपानानामनियतयात्तदं-  
 नार्थं स्वतः प्रपाठस्यापनम्याऽऽयाम्यत्याद्रसधरं यथाऽ  
 स्यान्तमप्यं क्त्वाऽस्मि ।"

२५४—ताम्रकुन्दरीवर्गे रसायन ९ को दाखिलकरना ।  
 २५५—ताम्रमण्ड (१) में ग नि, र मृ को दाखिल  
 करना ।

२५६—तालकयोग (१) में र क, र का को दाखिलकरना  
 और टिप्पणी में "र क, र का एतयामित्रपञ्चकनाम्ना-  
 ऽयमेव यागा निहिताऽस्ति" इसको देना ।

२५७—तालकधर (२) में र मृ को दाखिलकरना ।  
 २५८—तालकधर (८) में आ प्र को दाखिलकरना ।  
 २५९—तालकधर (१०) में र मृ को दाखिलकरना ।  
 २६०—तालकधर (१५) को तालक २२ (२७) में लेजाना  
 २६१—तालकधर (१७) में र मृ को दाखिलकरना ।  
 २६२—तालकधर (२३) को टिप्पणी में अपोलितिको  
 दाखिलकरना ।

"र, र स, र सु, र र कौ, र का, र क ल, एषु  
 चातुर्यिकनिवारणनाम्ना "त्रिभाग तालक विद्यादे-  
 कभागान्तु पारदम् । तदर्थं गन्धकश्चैव तदर्धांस्तु मन-  
 शिला ॥ कारवल्लीद्वारसेमर्दयेत्प्रहरत्रयम् । पावि-  
 ता बालुकायन्त्रे चातुर्यिकनिवारण ॥ इति पाठो  
 निहिताऽस्ति । अनयोन्तालकप्रमाणे भावनायाश्च  
 विशेषता प्रतीयते परन्तु साऽकिञ्चित्करी विशेषता,  
 त्रिभाग तालकं निक्षिप्य कारयत्पञ्चरात्र्यामुभा-  
 ध्यामपि भावना प्रदाय निष्पादिते रसे सर्व साम-  
 जस्य भवेदित्येक एव पाठो स्थापनीयः ।"

२६३—तालकधर (२७) में वि र भ, र मृ (दीवारि)  
 को दाखिलकरना ।

२६४—तालकधर (२८) में र सु (गुल्लतालेख), र वं  
 (विषमवृत्त) र मृ इनप्रयोगों को दाखिलकरना और अं  
 लिखितको टिप्पणी में लेना ।

"रसरत्नसमुच्चये शुलगजकेसरीति नाम्ना रसर  
 रङ्गिण्याश्च शुलेमकेसरीति नाम्ना "पलप्रमाणमूले  
 वर्णिना विगुणेन च । शुद्धत्रिपलतालैः कृत्वा बज्र  
 त्रिकां व्यहम् ॥ पलमानेन कर्तव्यं शुद्धताम्रस्य सम्-  
 दम् । पिधानपात्रसङ्प्रस्ततल्पात्रस्य धातुः ।  
 जलो सम्भुदस्यान्तर्निद्रापासदनं तत्तत् । अघस्ताद्  
 परिष्ठाद्यं मसुदस्याऽऽतिषेत्तत्तत् । आक्वण्डं पटुम्  
 ता निघाय च निपद्वयं चाविशाय्य गवसम्भेन पुट  
 पुटयेत्तत् । पटुर्गुणं विधायाऽथ शिपेद्रम्यवरण्डे  
 पय्याङ्कुरसापेता यद्दमाना निषेधित । रस  
 नि शेषशुल्गं स्याच्छुलगजकमरा । अ  
 यागा निहिताऽस्ति । यद्यपि द्रव्यप्रमाणे यदकिञ्चि-  
 द्द्विशेष इदमेव परन्तु साऽकिञ्चित्कर, ताम्रमात्र-  
 स्यादयदिदृष्ट्यात् ।"

२६५—(२९) की टिप्पणी में अपोलितिको देना—

“रत्नाकरौपधयोगे रसपारिजाते च शीतभञ्जन-  
नाम्ना “तुल्यमेकं त्रयं तालं शिलाचूर्णं चतुर्गुणम् ।  
कुमारीरससम्पिष्टं कुङ्कुटीपुटपाचितम् ॥ तुलसी-  
रससंयुक्तं शीतज्वरविनाशनम् ॥” इति पाठो निहि-  
तोऽस्ति तत्र वस्तुषु प्रमाणन्यत्यास इति विशेषः ।  
भाजनाद्वयस्य तु द्वयोरपि स्थाने दाने क्षत्यभावो-  
ऽस्ति ।”

२६६—तालकेशर (३४) में र.सु (शीतारि) को दाखिल-  
करना ।

२६७—तालसिन्दूर (२) के मूलपाठके स्थानमें नीचेलिले-  
हुए पाठको रखना

“शुद्धं रसं निष्कशतं तद्वज्रं  
शुद्धं रसं कज्जलिकाञ्च कुर्यात् ।  
सौराष्ट्रिकागन्धस्तुर्वभागा  
देयाऽत्र तद्वज्ररितालभागम् ॥  
सम्पद्य गाढं नवसाद्वज्रं  
तालाचूर्तयांशयुतञ्च सर्वम् ।  
कौमारिकाम्भ.परिमर्दितं वा  
तत्काकमाचीस्थरसेन तद्वत् ॥  
सार्द्रञ्च तत्काचघटे निधाय  
दृढं पचेद्दे सिकतास्थयन्त्रे ।  
सपञ्च सप्तप्रहारांश्च यात्र-  
देयं पचेद्भयं इह त्रिजारम् ॥  
तत्सिद्धसुतं विनिगृह्य शुक्ल्या  
सर्वेषु योगेषु निवेशनीयम् ।”

इति योगमहाणये पाठोऽस्ति । रत्नाकरौपधयोगे  
रसजलिहरितालद्वज्जुनरसारनागभस्मानि समप्रमा-  
णानि गृहीत्या कज्जलिकां विधाय रयिमूलाऽऽर्द्रका-  
न्निमूललघुनरिफलानागवल्लीरसे त्रयेकं पञ्चपञ्च  
भावनाः प्रदाय काचद्वयं भूत्वा पञ्चपञ्चवासरेरथ  
पात्रो विहितः । तस्य रसस्याऽयमेव रसा मूलम् ।  
रत्नाकरौपधयोगकर्ता सर्वश्रेष्ठैरथमेव मूलपाठेषु क-  
पोलकल्पितां युक्तिं समाहृत्य निष्पयोजनां सहायां  
धर्ययति ।

२६८—तालसिन्दूर (४) में र.सु को दाखिलकरना इसमें  
शीतारि नाम है ।

२६९—तालसिन्दूर (७) में र.क.यो को दाखिलकरना ।

२७०—तालसिन्दूर (८) की भाषा में हरितालका प्रयोग दृष्ट  
गया है ।

२७१—त्रिकटादिलोह (२) के स्थानमें नीचेलिलेपाठ  
टिप्पणीसहित रखना—

“व्योषं त्रिवृत्तिकराहिणीं सायारजस्वना त्रि-  
फलारसेन । पीतं वफातयं शमयेत्तु शार्कं भूवेण  
गव्येन हरितकी वा ॥”

च स, मे सं, ज ह, र चि रसायनम्, र का, ग नि  
ना वि शोषाधिकारे ।

टि०—भेलमहिताया त्रिफलास्थाने त्रिपुना दृश्यते । नारायणविलसे  
केन कारणेन त्रिपुत्रिकाभिनेति न ज्ञायते । सावोरज्जेति विशेषणम्  
त्रिफला निषेध साऽपि मूलद्रव्ये निवेदिता । त्रिफला विमृष्ट रसे  
नेति प्रलाम्बित्वायेन त्रिफला साक सार्द्र त्रिफलासेन पीतमिति  
स्वनन्वया निहितम् । प्राचीनगीणा लिपि प्रायो सूत्रस्था भवति,  
अतस्तीव्रोक्तिं समीचीना प्रतिप्राति योगस्त्वयमेवाऽस्ति स्वनन्वया  
अमो न कर्णीय इति नोच्यम् ।

२७२—त्रिगुणाख्यरसमें रसायनस को दाखिलकरना ।

२७३—त्रिदोषनीहारविनाशसूर्यकी टिप्पणीमें अथोलि-  
खितपाठको दाखिलकरना और ग्रन्थों में र.सु दोबार छपया  
है सो ठीककरना ।

“रसेन गन्धं द्विगुणं प्रयुज्य पुनर्नारायणहिरसैर्विमर्द्य  
पकार्कपञ्चोत्तरसे प्रयत्ना-

द्विपाचयेद्विगुणे च पश्चात् ॥

रसायनभागेन विपञ्च दत्त्वा

विपाचयेद्विगुणले क्षयञ्च ।

शीतारिसन्धाऽस्य रसस्य

यत्नं तद्वर्द्धय यदि धार्द्रकेण ॥

प्रतीकचूर्णेन घृतेन धापि

सेजेत मार्सं सघृतञ्च पथ्यम् ॥

इति रसाभूते पाठो दृश्यते सोऽस्यैव प्रपञ्चः प्रति-  
भाति । भावनानान्तु ग्रहणमन्यमेव करणीयम् ॥”

२७४—त्रिदोषघ्नन में त्रिषाफिकाग्रनरतको दाखिलकरना  
और अथोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“र.सं, र.द, र.चं, र.चि, र.सु. र.को, ध, र.का  
(सुतेहमयोग) र.सं क, रसायनसं, र.म (स्वल्पमृ-  
गाङ्गरसः) इति नामभ्यां “रसमस्म हेममस्म तुल्यं  
गुञ्जाद्वयं भजेत् । दोषं शुद्धाऽनुपानेन मृगाङ्गोऽयं  
क्षयापहः ॥ इति योगा गन्धकरदितो निहितोऽस्ति  
परन्तु गन्धरूपयोगेन विशेषकार्यकरत्वात्पुटदानेन च  
गन्धकस्योद्गीयमानतयादेरु एव यागो म्यात्यः नाना-  
योगरूपेण छात्रमुद्दिष्यादुलीमायात् ।

२७५—त्रिनेत्रस (३) में आ ॥ को दाखिलकरना ।

२७६—त्रिनेत्रस (५) में अमरीहर (२) को दाखिल-  
करना और ग्रन्थों में र.क.को दाखिलकरना ।

२७७—त्रिपुत्रिवलरकी टिप्पणीमें नीचेलिलेहुए देना ।

“रसरत्नदीपिकाया रसस्य द्वी भागी स्वर्णस्य  
चक्रस्तथा. पिष्ट्यास्तान्प्रपत्राणां लेपः, ऊर्ध्वाऽपत्रा  
गन्धकदानानन्तरं मत्स्याशिनोरेण सेचनम् । अनु-  
पाने च मृगशृङ्गचूर्णस्य याग इति विशेषः ।”

२७८—त्रिफलागुग्गुलु नामके त्रिफलागुग्गु और व्याधि-  
शार्दूलगुग्गुले तद्वारये सेजाना ।

२७९—त्रिकलामण्डूर (२) में ग नि (मण्डूरयोग), वृ मा, चि सा इन ग्रन्थोंको दाखिलकरना ।

२८०—त्रिकलामण्डूर (३) में कलायवटीको अनुष्ठानमें लियाहै सो अलग कलायवटीमें दाखिलकरना ।

२८१—त्रिकलारायन (३) में र मा को दाखिलकरना ।

२८२—त्रिकलालोह (२) में मु च, हि तो, ग नि, र मा, इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और “मुधुवे पाण्डुधिकारे गोमूना नुपानमस्ति” इसको टिप्पणीमें देना ।

२८३—त्रिकलालोह (५) को हटादेना वह श्रीपदारिलोहमें गयाहै ।

२८४—त्रिकलालोह (९) की टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको लेना—

“व्योषं शतायरी श्रीणि फलानि द्वे बले तथा ।  
सर्वामयहरो योग सेव्यो लोहरजोन्वितः ॥ एतद्व-  
क्ष, क्षतं हन्ति कण्ठजां विविधां रजम् ॥” इति यो-  
गमहार्णवे मुखरोगाधिकारे सप्तमृतलोहनाम्ना यो-  
ज्यं पाठः सोऽयमेव । र र, र प्र, भै र, टो, एषु  
राजयक्ष्मणि विन्ध्ययासियोगनाम्नाको योगो पठि-  
तोऽस्ति सोऽक्षरशोऽन्तर्भवति । फलभागे “एष  
यक्ष क्षतं हन्ति कण्ठजां विविधां रजम् । राजयक्ष्माण-  
मत्युषं बाहुस्तम्भादितं तथा ॥” इति विशेषोऽस्ति  
सोऽप्यत्रैव नियेशनीयः ।

२८५—त्रिकलालोह (१०) में चि सा, ग नि को दाखिल करना ।

२८६—श्रियुक्तीर्तमें र पा को दाखिलकरना ।

२८७—त्रिमूर्तिस (१) की टिप्पणीमें अपोलिरितको प्रत्यक्षहित दाखिलकरना ।

“रसरत्नाकरेऽयमेवपाठो गौडरसनाम्ना निहितो-  
ऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः सुकरः भायनाविदोपे  
प्रतिषेधेदत्रैव तदनुष्ठाने क्षत्यभावः ।

२८८—श्रीलोकचिन्तामणि (४) में र पा, र को, रसाय-  
न इनग्रन्थोंको दाखिलकरना ।

२८९—श्रीलोकचिन्तामणिमें र मृ (श्रीलोकचिन्तामणि) को दाखिलकरना ।

२९०—श्रीलोकचिन्तामणि (२) में र मृ को दाखिलकरना ।

२९१—श्रुतपादिलोह (१) में भै र को दाखिलकरना और  
“भैरवरात्रावत्पाद त्रिलोकास्त्रान विजया हरयत, अत्रछन्दा  
ऽभावः” इनको टिप्पणीमें देना ।

२९२—श्रुतपादिलोह (२) में भै र को दाखिलकरना ।

२९३—श्रुतपादिलोह टिप्पणीमें अपोलिरितको दाखिल-  
करना ।

“रत्नामृते सुरिवाग्नाम्ना “दरदा जयपालश्च  
नुद्धो संयोजितो समो । त्रिकटुत्रिकलाग्नाभिः सूर्य-  
रौद्रमधिरामित ॥ यहद्वयमिता दक्षस्तथा त्रिगुड-

मिश्रितः । हन्ति गुल्मोदरप्लीहशोकापाण्डुमयक्रि-  
मौ ॥ कुप्राऽऽनाहृज्ज्वांसविस्फोटगुदजानपि ॥”  
इति पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः  
करणीयः ।

२९४—धातुज्वराङ्गुलिमें र पा को दाखिलकरना ।

२९५—धातुपञ्चामृत (१) में र वो को दाखिलकरना ।

२९६—धात्रीलोह (१) में ग नि (धात्र्यायवलेह), भा प्र,  
चि सा, र प्र, वृ मा, च द, नि र, इनग्रन्थोंको दाखिलकरना  
और “हृन्माधवे धात्रीस्थाने त्रिकलामिद्योजिता” इसको  
टिप्पणीमें देना ।

२९७—धात्रीलोह (३) में र मा, ग नि को दाखिलकरना ।

२९८—नवज्वराङ्गुलिमें र म, वै, क, र चि, र क, व रा,  
र क यो (श्रीतमङ्गी) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना ।

२९९—नवज्वराङ्गुलिमें र म को हटादेना वह रवितारण्डव-  
की टिप्पणीमें गयाहै ।

३००—नवायसलोह (१) में चि सा, यो, चि, चि क,  
र मृ इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको क्षिप्णी-  
में देना ।

“नवायसायः क्रियया प्रयुक्त पाण्डुमयाशाग्रह-  
णीविकारान् । नानाविधं स्थावरजङ्गमाख्यं क्षिणोति  
गुल्मानुदराणि शोथम् ॥” इति पाठो लोहपद्धतो  
हेमनयकमिति नाम्ना निहितोऽस्ति तन लोहस्थाने  
हेम्नो योग इत्येवविशेषः ।”

३०१—नवायस (३) में भै र, र स, र च, र मृ, र क, य  
(क्षयकेसरी) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको  
टिप्पणीमें देना ।

“भैरवज्वरलावल्या “नवभागान्वितं लोहं समं सि-  
न्दूरसन्निभम्” मिति येन केनाऽपि प्रकारेण भ्रष्टं  
पाठमासाद्य समं सिन्दूरसन्निभमित्यस्य कोऽप्यर्थो  
भवेदिति सन्दिग्ध रससिन्दूरं तदर्थं प्रकल्प्य  
स्वतन्त्र पाठ प्ररूपितः तत्र प्रमाद एव भूलम् । ध,  
र स, र च, र सु, र क, एषु ग्रन्थेषु “नवभागो-  
न्मितस्तुल्यं लोहपारदसिन्दुरः” मिति पाठं प्रकल्प्य  
स्वाशाने प्रस्टीकृतमिति रसग्रन्थानां शास्त्रीयता,  
एवमेव यहद्वयस्थानेषु स्वाऽशाने प्राचीनपाठा भ्रष्टी-  
कृताः सन्ति । पुनरुक्तपाठो नवीनरसप्रकल्पने च पूर्वा-  
तन्त्रग्रन्थेषु क्षयकेसरंति नाम स्थापितम् । यथार्थ-  
तया अयसो नवभागयुक्ततया नवायसमित्येव नाम-  
स्थापितमत्र नवायसपूर्वाये स्थापनीयम् ।

३०२—नागन्दर ( ३ ) की टिप्पणीमें अपोलिरितको  
दाखिलकरना ।

“रत्नामृते “नागधन्धारसः” इति नाम्ना  
“नागनाम्ना पारदं मलयित्वा

वहौ मन्दे तेन चूर्णेन चार्द्धम् ।  
दत्त्वा सूक्ष्मं सद्रिपं द्यंशमस्मा-  
च्छुष्णीभूतं मारिचं चूर्णकञ्च ॥

दद्यात्तस्माद्रक्तिकैरां प्रयत्ना-  
द्युक्तां वैद्यो नागपत्रेण पुंसः ।  
हन्याद्रोगान्ध्रेष्मयातप्रभृतान्

कुर्याद्ब्रह्मः पाटवं देहसौख्यम् ॥”

इति पाटो निहितोऽस्ति । तत्र मूलद्रव्येषु समान-  
ताऽस्ति केवलं भागेषु व्यत्यासः कृतोऽस्ति तस्या-  
प्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः ।

३०३—नागाह्वनीवटी (४) को हटादेना बह भ्रमनासिनी  
वटीमें गई है ।

३०४—नाराचरस (१) की टिप्पणीमें अथोलिखितको  
देना ।

“रसचण्डांशौ षोडशगुणे गोमूत्रे पक्त्वा वटिका-  
रूपं प्रणीयाऽक्षिकुमार नाम स्थापितं तदकिञ्चित्क-  
रम् । तस्याऽथैवाऽन्तर्भावः करणीयः । गोमूत्राऽनु-  
पानेन दत्ते तदीयाऽभीष्टसिद्धिरपि सुसाधा भविष्य-  
ति वृषकपाठकल्पने गौरवात् ॥”

३०५—नाराचरस (२) में र.बो., (नाराच) रसायन,  
(ज्वरादुघ्न) को दाखिलकरना ।

३०६—नाराचरस (१) में अथोलिखित टिप्पणीको ग्रन्थ  
सहित दाखिलकरना ।

“रसपारिजाते कणाविश्वयोर्द्धभागौ, जयपालस्य  
च दशमागा इति विशेषः ।”

३०७—नाराचरस (१) में र.भा.को दाखिलकरना ।

३०८—नाराचरस (१४) में यो.वि.को दाखिलकरना ।

३०९—नीलकण्ठरसमें र.बो.को दाखिलकरना ।

## पवर्गीयरसोंकी विशेषसूचनाएं

३१०—पद्माश्वामृतमें र.चं., र.बो. (वृत्तिघरोगनाशन) को  
दाखिलकरना ।

३११—पद्मवक्त्र (३) को मन्थानभैरव (१) में दानिल  
करना ।

३१२—पद्मामृत (१) में चि.भा.को दाखिलकरके नीचे  
लिखेको टिप्पणीमें देना ।

“चिकित्सासारे वातरक्तारिरस इति नाम । नि-  
घण्टुस्त्राकरे नु नामद्वयमपि स्थापितम् तत्तु प्रमाद  
पथ ।

३१३—पद्मादिलोह (१) में ना.वि.को दाखिलकरना ।

३१४—पानीयमज्जवटी (१) में दे.क., रसचि को दाखिल-  
करना और “त्रिवृता मुस्तकश्चैव त्रिफलाऽप्युषणन्तथा”

इसके स्थानमें “अप्युषणं त्रिफलामुस्तं त्रिवृता चित्र-  
कन्तथा” ऐसा पाठकरना । भै.र., घ., वै.क. रसचि. इनमें  
श्रुलान्तक नामसे आया है ।

३१५—पित्तमुद्गरके पाठको रक्तपित्तादुशमें दाखिलकरना ।

३१६—पित्तान्तक (१) में भै.र.को दाखिलकरना और  
अथोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“यदाऽत्र माक्षिकं त्यक्त्वा सुवर्णमपि दीयते ।  
महापित्तान्तको नाम सर्वपित्तविनाशकः ॥” इति  
पाटो मैपज्यरत्नावल्यां परिशिष्टेऽधिकतया महापि-  
त्तान्तकेति नाम्ना दत्तः ।

३१७—पित्तान्तक (२) की टिप्पणीमें अथोलिखितको  
दाखिलकरना ।

“र.सं., र.चं. एतयोर्द्वितीयस्थाने घ., र.र.स.  
एतयोश्च स्यतन्त्रतया रक्तपित्तान्तकनाम्ना एको रसो  
निहितोऽस्ति तत्र ताप्रभमस नाऽस्ति । यष्टीद्राक्षाऽमृ-  
ताद्वयैश्च भावना प्रदत्ताऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः  
सुकरः । “मापमानं निहन्त्याशु रक्तपित्तं सुदाहण-  
मित्यर्थपद्यस्य तु समावेशोऽत्रैव करणीयः ।

३१८—नीयुषणुन्दरसमें र.मृ. (अमृतमुन्दरीवटी) को  
दाखिलकरना ।

३१९—पुत्रवर्धमानरसमें र.र.स., र.को. (वर्धमानरस)  
र.र.को. (सन्तानवर्धमान) इत्यन्वयो को दाखिलकरना ।

३२०—समेहकैतुको हटादेना बह हरिसङ्करस (२) में  
गया है ।

३२१—शङ्खमृजान्तक (२) में भै.र.को दाखिलकरना ।

३२२—नालरोगान्तक की टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको  
दाखिलकरना ।

“भैपज्यरत्नावल्यामस्मिन्नेवप्रकरणे रामेभ्यररस  
इति नाम्ना द्वितीयो योगो निहितः सोऽप्यस्माद्-  
भिन्न एव ॥”

३२३—जग्राहगुदिकाकी टिप्पणीमें अथोलिखितको देना ।

“रसायनसं., र.र.दी., घ.यो.त., र.म.भा. एषु  
गुस्तकेषु हिरण्यगर्भमुद्रिकेतिनाम्ना “उन्मूल्य मूलं  
विपलं विदध्याद्रभेऽस्यमूलं कनकांरपिष्टम् । संयेष्ट-  
येत्कोलमयेन तत्तु मांमेन पद्मादिपद्येदियामनाऽपत्त-  
रयीजोद्भवतैलमध्ये सम्पञ्चतां याति मुरारिपतांऽ  
यम् । सम्मोगकाले दृढतां करोति धीर्यस्य दुर्ग्य म-  
जतां नराणाम् ॥” इति पाटो निहितोऽस्ति अत्र  
चतुर्थांशं मुषणदानमात्रस्य विशेषः ॥”

३२४—आस्करस (१) की टिप्पणीमें “रसशामपेनो  
शूलगजकेशरी नाम्ना दङ्गुणरहितोऽयमेव पाटोऽस्ति  
तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावोऽस्ति ।

३२५—महोदयक्ययवारमें र. को. (गुदोदय) को  
दाखिलकरना ।

३२६—मानसुरणाचं लोहमे त्रिकत्रयादिलोह ( ३ ) को दाखिलकरना ।

३२७—मिहिरोदयरसमे मे. र. को दाखिलकरना ।

३२८—यूगाद्धरस ( १ ) में कुमुदेवर ( ० ) को दाखिल करना ।

३२९—मृतसञ्जीवन ( १० ) को सन्धिवातारिणीटिप्पणीमें लेजाना ।

३३०—मृत्युञ्जय ( ११ ) को टिप्पणीसहित मुग्धयोग ( १० ) में दाखिलकरना ।

## अन्तःस्थीयर्सोंकी विशेषसूचनाएं

३३१—यदमहर को हटादेना यह राजयधमवरिमसकेसरीमें गयाहै

३३२—रत्नेवर ( १ ) में मे. र. को दाखिलकरना ।

३३३—रसपट्टी ( १ ) में गन्धरसपट्टीको ग्रन्थसहित दाखिलकरना ।

३३४—रसपिट्टिका में रसेन्द्रम ( हेमपिट्टिका ) को दाखिलकरना ।

३३५—रसवरकीटिप्पणीमें उदयगास्वर ( १० ), ताम्रपट्टी ३, ताम्रयोग ( ७ ), ताम्रयोग ( १३ ), ताम्रन्द्रस, त्रिनेत्र ( ३ ), त्रिनेत्र ( ७ ), हनरयोंरा अन्तर्भाव होगयाहै इनको मूलाद्यमेंसे हटादेना और अधोलिखितरों स्मरकी टिप्पणीमें दाखिलकरना—

“र.चि., यो र., र.सि., र.चं., ध., घे.चि., चि सा, र र., नि र., र.को. चि ब्र., मे.र., र.सं, र त, रसा-यनसं. र.का., घ.रा, र. (मा.), मे सा र सु, र.का., यो म, एषु पुस्तकेषु हृदयार्णय नाम्ना “शुद्धं मृतं समं गन्धं मृतं ताम्रं तयोः समम् । मर्दयेत्त्रिफला-षार्थः काफमाच्युद्वेर्दिनम् ॥ चणमात्रां वट्टीं खादे-द्रसोऽयं हृदयाणवः । काफमाच्युद्वेर्दिनं कर्प त्रिफलाप-लयेयुतम् ॥ द्वात्रिंशत्तोलकं तोयं षाधमष्टावशोपि-तम् । अनुपामं पिबेद्यात्र हृदोगे च कफोन्निधत् ॥” इति पाठोनिहितोऽस्ति ”

३३६—रसिन्दूर ( १ ) में र. स. ( रसांशुन्दूर ) को दाखिलकरना और र.चि., र.का., र.गु., द्रव्यर्थोंकोभी दाखिलकरना ।

३३७—सेखररस ( ४ ) में शरम्मरा “यसोपमलोद्गानि धन्यामेष विशेषतः,” यह आपाओरुहमयादे उष जोइदना और र.रा. ( पर्वर ) को दाखिलकरना ।

३३८—रीटातिल ( २ ) में कदवाता ( २ ) को दाखिलकरना केवल भागनामे अन्तरदे ।

३३९—लोकनाथ ( १२ ) की टिप्पणीमें अधोलिखित-  
तको लेना ।

“चि.क., नि.र., घे.चि. र.को., एषु पुस्तकेषु हि-रण्यामर्मे नाम्ना “निकट्वयं पारदमस्मनस्तु प्रगृह्य हेमञ्च तदर्धभागम् । निकट्वयं शोधितगन्धकस्य हुताशनद्रावयुते समस्तम् ॥ समर्थं संशोष्य पुन-द्रियाममन्ते वराटीः खलु तेन पूर्याः । तन्मन्थये रोष्य सुषुष्टमाण्डे तद्वै गजाख्ये सुषुष्टे पचेच ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति । तस्याऽन्येवान्तर्भावः समुचितः तदपेक्षयाऽत्र सुवर्णस्य हेमशुण्यं हस्यते परन्तु तद् हेमशुण्यं लोकनाथे नियोजनेऽपि क्षत्यभावोऽस्ति प्र-त्युत गुणवृद्धिरयं भविष्यति ।”

३४०—लोहपत्रकी टिप्पणीमें अधोलिखितरों लेना—

“गद्गनिग्रहे त्रिकटुलोहयोगेति नाम्ना “त्रिकटु लोहचूर्णञ्च हयमेतत्समांशकम् । पीतमुष्णाम्मखा हन्ति शोफरोगमसंशयम् ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति विशेषाऽभावादितस्याऽन्येवान्तर्भावः करणीयः ।”

३४१—बहिरस ( २ ) में रसरजरस ( द्वितीय ) और र.सं. ( जलोदरह ) को दाखिलकरना ।

३४२—वातगजाकुष्ठ ( १ ) की टिप्पणीमें अधोलिखितरों दाखिलकरना ।

“वेद्यचिन्तामणी द्वितीयस्थाने यत्किञ्चिद्देहं कृ-त्वा कफमताग्निनाम्ना “मृतं मृतं तीक्ष्णकान्तं तालं माक्षिकगन्धकम् । तुर्यांशं मर्दयेत्तस्यै वातारैराद्रको-द्भयः ॥ भृङ्गजैः काफमाच्युत्येगिरिकन्याद्रवेदिनम् । मर्दितं भाण्डगे रुद्धा पचेन्मन्दाग्निना दिनम् ॥ व्या-पाग्निगन्धकचिपे सुरणाऽभयदङ्गणम् । समांशं चूर्णितं मिथं तुल्यांशं पूरेपाचितम् ॥ त्रिदिनं मर्दयेद्वायुमै-ण्डीनिगुण्डिभृङ्गजैः । अष्टगुजामितं खादेत्कफनात-मिहन्तनम् ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति । तत्र विशे-षाऽभावादस्मिन्नेवान्तर्भावः ।

३४३—नागवाङ्मूत्र ( ३ ) को हटादेना यह स्मरंशानारिणी टिप्पणीमें गयाहै ।

३४४—वानराशुस ( २ ) में व्याप को दाखिलकरना ।

३४५—विदरनापहणरसमे यो.च ( त्रिकोयडर ) को दाखिलकरना ।

## औषधर्सोंकी विशेषसूचनाएं

—००००००—

३४६—शतावरीमोदक में मे. र. को दाखिलकरना ।

३४७—शृङ्गनाशनागामे घे.चि. को दाखिलकरना श्ममे प्रियुगाच्यनामर्दे ।

३४८—सन्निपातसूर्यमे रश्मि (सन्निपातकालनल) को दाखिलकरना ।

३४९—सर्वतोभद्रयोगमें भैर को दाखिलकरना ।

३५०—सुवर्णयोग ( १० ) में रर को, ररस को दाखिलकरना और 'एतयोर्गोययमिमन्त्रणस्याने खदिर-भावना प्रदाय योगो निष्पादित' इसको टिप्पणीमें देना ।

३५१—सूतभस्मयोग ( १६ ) में रसायनस, रका, रफस (ह्रोगहर) इनप्रन्थोंको दाखिलकरना ।

३५२—स्वास्तिरियारिमें भैर को दाखिलकरना ।

## आपाततो विभिन्नरसानामेकी- करणदिग्दर्शनम्

—संक्षेपम्—

(१)—तृतीयाग्निकुमाररसे द्वितीयाग्निबुमारस्य द्वितीययिजयरसस्य चान्तर्भाव करणीय । द्वयोरपि तदपेक्षया विपशिष्टमूल्योऽभाव । द्वितीयाग्निबुमारो द्विक्षारस्थाने त्रिकटुनियोजितो भावनायाश्च शिष्टोर्नास्ति । यिजयरसे भावनासमानता दृश्यते । अतस्तृतीयाग्निकुमारो त्रिकटोर्नियोग कृत्वा एक एव पाठ सम्पादनीय ।

(२)—४२ सङ्ख्याकाग्निकुमाररसे ११, १८, २२, २३, २४, ३८, ४३, ४४, ४५ ४६ सङ्ख्याकाग्निकुमाररसाना, अमृतपालरसस्य, प्रथमचण्डेश्वरस्य शूलेर्मसिहिनीगुटिकायाश्चान्तर्भाव करणीय । ४२ सङ्ख्याकाग्निकुमारपेक्षया एकादशतमेऽग्निबुमारो मरिचाऽभाव, द्रव्यप्रमाणे ताप्रापारदगन्धकाऽमृताना ८, १२, २० ( अनुपातेन २-३-५ ) भागा भावनाया निम्बुकुम्भद्वादकाऽमृता गृहीता सन्ति शाकस्य चाऽभावोऽस्ति । अष्टादशसङ्ख्याकाग्निकुमारो ताप्राऽभाव, पारदगन्धकयो समभागयो कज्जली कृत्वा गन्धकचतुर्थांशं विप नियोज्य पाकानन्तर अर्धाऽर्धभागे विपमरिचे मिश्रयित्वा योगो निष्पादित । द्वाविंशतितमेऽग्निबुमारो पारदगन्धकविषताम्रभस्मना प्रमाणे समानता मरिचाऽभावश्च दृश्यते, पाकानन्तर रसार्धममृत निक्षिप्य चित्रकजिकटुसैन्धवयुक्तेनाऽऽर्द्रकरसेन भावना प्रदत्ताऽस्ति । त्रयोविंशेऽग्निबुमारो ताप्राऽभावः पारदगन्धकमरिचाना समानता दृश्यते । पाकात्प्राक् विप पारदाश्चतुर्थांशं पाकानन्तरष्टादशांशं नियोजितम् । चतुर्विंशतितमे त्रिकटुत्रिफलयोराधिस्य, प्रमाणे च सर्वद्रव्याणां समानता, निर्गुण्डयस्मिदमनीवहिव्याघ्रीद्वयपाताल

विन्दुक्रीन्द्वारुणीना भावना विशेषतया दृश्यते । अष्टविंशसङ्ख्याके तीक्ष्णमधिकं, मरिचाऽभाव, पाकानन्तरश्च विपमपि न नियोजितम् । त्रिचत्वारिंशत्तमे पारदगन्धकविषताम्राणां प्रमाणे समानता, पाकानन्तर पारदसम मरिचं चतुर्थांशश्च विप नियोज्य योगो निष्पादित । पञ्चचत्वारिंशत्तमे ताप्रा-मरिचयोरभाव, तालकमधिकं दृश्यते । प्रमाणे च पारदगन्धकतालाना १-२-३ भागा, पाकानन्तरश्च षोडशसं विप नियोजितमस्ति । षट्चत्वारिंशत्तमेऽम्बिकुमारो तालकमधिकम्, मरिचाऽभाव, प्रमाणे सर्वसमता, भावनायाश्चार्धमधिकतया दृश्यते । अमृतपालरसे मरिचाऽभाव समभागपारदगन्धकविषाणां कज्जलीं ताप्रापात्रेण पिधाय हण्डिकाया पाक कृतोऽस्ति । प्रथमचण्डेश्वररसे रसगन्धकविषताम्राणि समभागानि गृहीत्वाऽऽर्द्रकनिर्गुण्डयो प्रति-सप्तभावना प्रदाय योगो निष्पादित । अत्र कृपिका पाकराहित्य मरिचाभावश्च । शूलेर्मसिहिनीगुटिकाया ताप्राऽभाव, एकैकभागयो पिप्पलीनागरयोर-धिस्य, प्रमाणश्च पारद १, गन्धक १, विप १ मरिचानि ३ इति क्रमोऽस्ति । भावनायामपि आर्द्र-कैरण्डो गृहीतो ।

उपरिनिर्दिष्टेषु पाठेषु कुत्रचित् तीक्ष्णस्य कुत्र-चिद्विषाणस्य पिप्पलीनागरत्रिफलानां वा नियागो मूलद्रव्येषु दृश्यते । भावनायाश्च निम्बुकुम्भद्वादकाऽमृता निर्गुण्डयस्मिदमनीविषकण्ठ्याघ्रीद्वयपाताल-विन्दुक्रीन्द्वारुणेरण्डाकां चित्रकत्रिकटुसैन्धवयुक्ताऽऽर्द्रकरसश्चाऽधिकतया दृश्यते । एषा सर्वेषामनुष्ठान द्विचत्वारिंशत्तमेऽग्निबुमारो इत्येक एव योग सम्पादनीय । एतेन क्षत्यभावो पाठेषु महती लघुता च भविष्यति ।

(३) चतुर्दशाग्निकुमारस्याग्निप्रदरसेऽन्तर्भाव करणीय । अग्निबुमारो पाकानन्तरमेव षडशं विप निक्षिप्य त्रिकटुस्थाने मरिचानि नियोजितानि हस-राजभावनायाश्चाधिस्य दृश्यते । अग्निप्रदरसे हस-राजभावनानुष्ठानेनैव क्षत्यभावो भविष्यति ।

(४) विंशतितत्वारिंशत्सङ्ख्याकाग्निबुमारया-नैवमवडवानलरसस्य चातर्भाव धुधासागररसे करणीय । यता विंशतितमेऽग्निबुमार धुधासागराऽपेक्षया विपराहित्य, गन्धकटङ्गणो द्विद्विभागो द्विक्षारस्थाने द्विक्षारग्रहण कृतमस्ति, भावनायाश्चाऽऽर्द्रक गृहीतम् । चत्वारिंशत्तमे ताप्राधिस्य, त्रिफ-लपिप्पल्योरभाव, विपस्यैकभागो भावनायाश्चाऽर्द्रको गृहातमस्ति । चडवानले विपभावो भावनायाश्च निर्गुण्डो गृहीतोऽस्ति । धुधासागररसेऽपि ताप्रा



नियोज्याऽऽर्कनिर्गुण्योर्भावनानादाने क्षत्यभावो-  
ऽस्ति पाठहासश्च महत्फलम् ।

(५)—सप्तचत्वारिंशत्तमेऽग्निकुमाररसे ४, ५, ७, ६, २५ सह्याकात्रिकुमाररसानां शृङ्खलाख्यरसस्य चान्तर्भावः करणीयः यत्र चतुर्थेऽग्निकुमारे ४७ सह्याकपाठापेक्षया विपटङ्कणौ सूतसमौ, शङ्खराटयोश्च द्वौ द्वौ भागौ नियोजितौ । पञ्चमेऽग्निकुमारे टङ्कणः सूतसमः, शङ्खराटको द्विद्विभागौ नियोजितौ । षष्ठे शङ्खमरिचयोरभावः, प्रमाणे सर्वेषां द्रव्याणां समानता त्रिकोटोपधियञ्च दृश्यते । सप्तमे शङ्खस्थाने स्वर्जिका गृहीता द्रव्यप्रमाणेऽपि पिप्पलिनागरस्वर्जिटङ्कणकपर्दान्तमेकैको भागो निहितोऽस्ति । पञ्चविंशतितमेऽग्निकुमारे विपटङ्कणयोरभावः, प्रमाणे च पारदः १, गन्धः १, शङ्खः १, वराटिका २, मरिचानि ३ इत्यन्तरं कृतमस्ति । शृङ्खलाख्यरसे विपाऽभावः, प्रमाणेऽपि शङ्खः ४, कपर्दः ६, मरिचानि १२, टङ्कणं १ इति क्रमः प्रदर्शितः । उपरि निर्दिष्टेषु पाठेषु त्रिकटुस्वर्जिकयोरधिगन्धं भायनासमानता चास्ति । कुत्रचित् नागवल्पाद्रिकवहिशिप्रमुष्णमातुल्लहानां भावनानियोगोऽधिकतया कृतोऽस्ति । प्रथमनिर्दिष्टरससङ्केतरुलिकोलापाठे त्रिकटुस्वर्जिकयोः सर्वासाञ्च भावनानामनुष्ठानं कृत्यैकं पत्र पाठः कल्पनीयः । एतेन पाठलाघये महदुपकृतं भविष्यति ।

(६)—प्रथमकुण्डगजकेसररसे द्वितीयाऽग्निगर्भरसस्य १५, २७, २८, ३८, ६० सह्याकतालकेश्वराणाञ्जान्तर्भावः करणीयः । अग्निगर्भरसे रसगन्धकौ समौ तालकश्च द्विगुणं गृहीत्वा गुञ्जरसेन त्रिदिनं विमृष्ट समभागताम्रपात्रे लेपं विधाय घालुकायन्त्रे द्विधामान्तः पाकः कृतोऽस्ति । पञ्चदशे सप्तविंशतितमे च तालकेश्वरे समभागी पारदतालको कारयल्लीरसेन सप्तदिनपर्यन्तं विमृष्ट समभागताम्रसमुदे धृत्या दिनेकं घालुकायन्त्रेण पाकः कृतोऽस्ति । अष्टाविंशतितमे तालकाय पारदं चतुर्थीशञ्च गन्धकं गृहीत्वा कज्जलीरस्य कारयल्लीरसेन विमृष्ट ताम्रपात्रे लेपयित्वा शरावेण मुपं पिधाय अद्भुतद्रव्योद्यतं स्वर्जिञ्छा घालुकायन्त्रे धान्यस्फुटनपर्यन्तं पाकः कृतोऽस्ति । अष्टविंशतितमे शुद्धतालकं स्थाल्यां निधाय समभागताम्रप्राणिणाच्छाद्य धान्यस्फुटनपर्यन्तं विपाच्य ताम्रपात्रमुद्धाट्य तालकसमं गन्धकं दत्त्वा पूर्वविधानेन विपाच्य समभागं पारदमस्य मेलयित्वा योगो

निष्पादितः । पष्ठितमे तालकभस्मगन्धकावैक-  
भागौ ताम्रभस्म द्विभागं गृहीत्वा घालुकायन्त्रे  
पाकः कृतोऽस्ति । एते सर्वेऽपि रसकङ्कालीयोक-  
कुण्डगजकेसररसेऽन्तर्भावीनः । कुप्रेषु सोऽथता-  
म्रभस्मनोऽप्युपयोगो न दोषावहः प्रत्युत गुणप्रकर्षा-  
यैव । तत्रैव गुञ्जाराखलीभाववानुष्ठानमधिकतया-  
ऽपि न निषिध्यते ॥

(७)—प्रथममज्जराङ्कुशे त्रयोविंशतितमतालके-  
श्वरस्य अष्टविंशतमं ज्वराङ्कुशस्य चान्तर्भावः कर्तु-  
मुचितः ।

(८)—एवं ७, ९, ३०, ३२, ३६, ३७, ४२, ४६, ४८, ४९, ५०, ५१, ५५, ५८, ६४, ६५, ७७ एतत्सह्याक-  
तालकेश्वराणां पञ्चविंशतमज्जराङ्कुशस्य चाष्टम-  
तालकेश्वरेऽन्तर्भावः कर्तुमुचितः ।

(९)—एवं २२, ३४, ४०, ४५, ५९ सह्याकता-  
लकेश्वराणामेकपष्ठितमे तालकेश्वरेऽन्तर्भावः कर-  
णीयः ।

(१०)—एवं ६, १४, १६, २२ सह्याकतालकेश्व-  
राणां ७६ तमे तालकेश्वरेऽन्तर्भावः कर्तुमुचितः ।

(११)—एवं प्रथमत्रिकट्वादिलोहे शुद्धचिलौहस्य,  
१, २, ३, ४, ५, सह्याकत्रिकट्वादिलोहानां, तृती-  
यत्रिकट्वादिलोहस्य, तृतीयनवायसलोहस्य, द्वितीय-  
लक्ष्मणालोहस्य चान्तर्भावः करणीयः ॥

(१२)—एवं द्वितीयत्रिकट्वादिलोहे २, ८, १२,  
सह्याकत्रिकट्वादिलोहानां, प्रथमपञ्चमधानीलौहयोः,  
प्रथमपट्यादिलोहस्य, प्रथमशर्करालोहस्य, षष्ठम-  
ण्डरयोगस्य चान्तर्भावः कर्तुमुचितः ।

(१३)—एवं सप्तमत्रिकट्वादिलोहेऽमृतार्णवलोहस्य  
प्रथमपञ्चमत्रिकट्वादिलोहयोश्चान्तर्भावः करणीयः ।

(१४)—एवं प्रथमनवायसलोहे चतुर्थनवायसलं  
हस्य, लोहपञ्चकस्य, २, ३, ४, ६, सह्याकविडङ्ग-  
लोहानां, शोथारिलोहस्य चान्तर्भावः कर्तुमुचितः ।

(१५)—एवं द्वितीयलोहयोगे द्वितीयतृतीयशर्करा-  
लोहयोस्तर्भावः करणीयः ।

(१६)—एवमेव लोहगुटिकायां प्रथमगुडमण्डरस्य  
गुडलोहस्य, प्रथमद्वितीयगोमूत्रमण्डरयोः, चतुः-  
सममण्डरस्य, जीवितवर्धनस्य, तक्रमण्डरस्य  
द्वितीयतृतीयत्रिकट्वालमण्डरयोः द्वितीयपट्यादिलो-  
हस्य मधुमण्डरस्य, प्रथमतृतीयपञ्चमलोहयोगानां  
ज्ञान्तर्भावः कर्तुमुचितः ।



## नामान्तरसे आयेहुए रसोंकी सूची\*

अगस्तिवटी	स्वर	८५	अशोषरसः	ऊष्म	३२८	ककारिरसः	कु	४१
अमिक्षुमाररसः	स्वर	९३	अष्टादशाज्ञलोहम्	कु	२६९	करवीररस	अन्तःस्थ	१०५
अमिक्षुमाररसः	पु	५५५	अष्टादिलोहम्	कु	४७४	कर्पूरचन्द्रोदयरसः	उद	७४
"	अन्तःस्थ	१०६	आदित्यप्रभापाकताम्रम्	ऊष्म	५३३	काञ्चनमोहनरसः	कु	१२९
"	ऊष्म	२६६	आनन्दभैरवरसः	स्वर	३१०	कान्तपिष्टीरसः	कु	३५२
अमिगर्भावटी	कु	३७०	"	पु	६७१	कामदीपकरसः	उद	१९
अमिगुण्डी	कु	३२६	आनन्दरसः	स्वर	३१०	कामदेवरसः	कु	१८८
अमिदीपनीवटी	अन्तःस्थ	२७०	आमवातान्तकरसः	स्वर	३२२	कामदेवस्तम्भनम्	कु	१६४
अमिप्रभूतवटी	कु	७०८	"	अन्तःस्थ	५८६	कामधेयुरसः	कु	४०१
अमिमान्यवटी	स्वर	६३	आज्ञासिद्धरायनम्	कु	५६	कामलाहलीमकविध्वंसनरसः	कु	१७८
अमिमुखधूर्णम्	अन्तःस्थ	४४४	इच्छाभेदीरसः	कु	३९५	कामिनीदर्पणरसः	कु	१८८
अमिरसः	पु	३७९	इच्छाभेदीरसः	पु	४३४	कामेश्वरमोदकः	पु	२०९
"	पु	४१९	उदप्रकुष्ठरसः	ऊष्म	५२८	कामेश्वररसः	अन्तःस्थ	५०९
अमिसुतरसः	स्वर	३२	उदयभास्कररसः	स्वर	३७६	कामेश्वरवटी	कु	१९९
अमिसुनुरसः	स्वर	३२	"	अन्तःस्थ	१०४	कालयाम्भोधिरसः	पु	२३६
अजीर्णकण्ठकरसः	पु	३४	"	अन्तःस्थ	११२	कालयसागररसः	कु	६२
अन्नरसः	पु	७१७	उदयमार्तण्डरसः	ऊष्म	५३३	कायैषोह्री	कु	२४९
अतिसारस्तम्भनम्	उद	१८०	उदयदित्यरसः	अन्तःस्थ	५४	कालवज्रेश्वररसः	कु	२२१
अनन्तसुन्दरः	कु	१८७	उदरजन्तुविध्वंसनरसः	कु	३३४	कालाभिभवरसः	पु	२०९
"	पु	२५	उदरारियोगः	अन्तःस्थ	४४४	कालामिद्धरसः	स्वर	६३
"	पु	५११	उदरारिरसः	स्वर	३७५	"	कु	२४६
अपूर्वमालिनीवसन्तः	अन्तःस्थ	४३१	"	ऊष्म	३५९	कासकर्तरीरसः	पु	४१९
अपूर्वहृमगभैः	ऊष्म	६३८	उद्दामरसः	स्वर	३५५	कासकेशरीरसः	■	२६०
अभिनवकामदेवः	पु	५११	उद्दामाख्यरसः	स्वर	३९९	कासभिरसः	कु	२६२
अन्नगर्भपोह्ली	ऊष्म	६४४	उन्मादाङ्गुसरसः	स्वर	४०६	कासनासनरसः	कु	२६३
अमरसुन्दरी	अन्तःस्थ	५०४	उपदेशहरीवटी	ऊष्म	५१२	कासमर्दनीवटी	कु	२६२
अमृतकलानिधिरसः	स्वर	१८५	उपदेशभक्तेशरीरसः	स्वर	४१३	कासधासारिरसः	पु	४१९
अमृतपर्वटीसायनम्	अन्तःस्थ	७३	उमासम्भुरसः	पु	२७२	काससंक्षारभैरवरसः	अन्तःस्थ	५४२
अमृतप्रभरसः	स्वर	१८९	कनकप्रभा	कु	१६	कासहावटी	कु	२६२
अमृताणवः	ऊष्म	२२	"	कु	१९	कासीसकदरसः	ऊष्म	२९३
अमोघरामाग्नरसः	अन्तःस्थ	१८२	कनकसङ्कोचरसः	ऊष्म	२४०	कीटमर्दरसः	कु	२७१
अयोधजीयम्	अन्तःस्थ	३०२	कनकसुन्दरी	कु	१५३	"	कु	३२६
अयोरजः प्रभृतिवर्णम्	पु	८२	कनकाभिजुमार	स्वर	३२	कुटजलेहः	कु	३८८
अर्कादिगुटी	ऊष्म	६९	कन्दर्भोक्तिरसः	कु	३२	कुसुमरसः	पु	५६४
अर्द्धयामिकरसः	उद	२०६	कन्दर्पोह्लीरसः	कु	२४९	कुल्लटी	कु	२८३
अर्द्धाज्ञावातारिरसः	■	५८	कन्दर्भरसः	कु	३६	कुष्ठरसः	अन्तःस्थ	१०४
अर्द्धशान्तिरसः	पु	१६६	कन्दर्भकेशुरसः	कु	४८	कुष्ठालकेशरः	■	१०२

\* जुदे जुदे ग्रन्थोंमें एकही रसका जुदे जुदे नामसे ग्रन्थकारोंने सम्यक्कियाहै उनमेंसे जिसग्रन्थकापाठ अच्छाहै उसको उसीग्रन्थमें आयेहुए नामसे इसग्रन्थमें सम्यक्करके रसनामोंको ग्रन्थसहित शिष्टगीमें अथवा नीचेद्वयमें नामान्तरसे दाखिलकियाहै। इनलिये जो जो रस जिमग्रन्थमें दाखिलहैं उनकी यह सूचीहै जेते "अगस्तिवटी" यह स्वररसका ८५ अर्थात् अमिगर्भापावटीमें दाखिलहै इतीरह अन्यथा समझना।

कुण्डलनरस	अन्तःस्थ	२१०	महर्षीकपाटनरस	स्वर	३०७	जलबोध	उद्ग	१६८
कुण्डवाननरस	अन्तःस्थ	५४४	"	कु	७५१	जलमञ्जरीरस	उद्ग	५८
कुण्डरूपम्	पु	६	"	कम्प	४९	जलयोगी रस	उद्ग	१६८
कुण्डरितालेखनरस	पु	८६	महर्ष्यङ्कुशरस	कु	५५४	जलस्यावीररस	उद्ग	१६८
कुण्डरितादीवाननरस	पु	८१	महर्ष्यङ्गलरस	कु	५२१	जलोदरकुशरस	स्वर	३९०
कुण्डान्तकपणी	उद्ग	८६	धृतसौन्दरसायनम्	पु	२२७	जलोदरहररस	अन्तःस्थ	४४४
कुण्डान्तधररस	कु	२१६	धाराबोली	स्वर	२६६	जातस्त्रायसम्	कु	१३४
कुण्डारिरस	कु	२८८	चन्द्रप्रभासम्	पु	७०	जातीफलरस	कु	५३३
कुण्डेररस	कु	२१६	चन्द्रद.	अन्तःस्थ	५९९	जिह्वावाताकुश	कु	५८
कुण्डान्तधररस	अन्तःस्थ	५९९	चन्द्रमासुररस.	पु	३०५	जीरकादिवटी	उद्ग	१८०
कुमिनाथिनी	कु	३२६	चन्द्रभैरवररस	पु	४३८	जीर्णहाररस	अन्तःस्थ	४३०
कुमिसुन्दर	कु	३२६	चन्द्रधररस	उद्ग	५६	"	कम्प	६२५
कुमिरोगारिरस	कु	३३१	चन्द्रसङ्ग्रहद्वैककपाट	कु	५५१	जीर्णहारारिरस	उद्ग	१८९
कुमिधनुस	कु	३२८	चतुर्गन्धकजीर्णसिन्दूरम् अन्तःस्थ	१११	"	"	कम्प	३११
कुमिहाररस	कु	१७१	चतुर्दशाक्षलोदम्	अन्तःस्थ	१८६	ज्वरगङ्गद्वीररस	उद्ग	२०३
कुसारादिवनी	कु	७३	चतुर्दशायसम्	अन्तःस्थ	१८६	ज्वरगङ्गाकुशरस	उद्ग	९०
कुसोरारुणपुत्र	पु	३४०	चन्द्रनादिवनी	कु	३४६	ज्वरघ्नी वनी	पु	३१७
रोगेन्द्ररस	पु	३०२	चन्द्रकसाररस.	उद्ग	३०२	ज्वरचिन्तामणिरस	उद्ग	१२५
खड्गनारायणरस	स्वर	९७	चन्द्रप्रहररस	उद्ग	६४	"	उद्ग	१३६
खड्गधाम्	पु	५०	चन्द्रप्रभरस	उद्ग	७४	"	उद्ग	१३३
खड्गगङ्गवनी	पु	३७२	"	पु	६४६	ज्वरदाहणरस	उद्ग	३०८
गङ्गामुखरस	कम्प	७९	"	अन्तःस्थ	५०४	ज्वरध्वान्तदिवार	अन्तःस्थ	५३७
गङ्गनादिवनी	कु	७०३	चन्द्रप्रभाररस	उद्ग	५५	ज्वरभैरवररस	उद्ग	१२५
गङ्गधर्मपद्माननरस	पु	३३	"	कम्प	५१०	ज्वरमर्दनरस	उद्ग	२६६
गङ्गाद्वार	स्वर	२८५	चन्द्रसोखररस	स्वर	३८८	ज्वरसुरारिरस	उद्ग	२९३
गङ्गदत्तनरस	पु	३९५	चन्द्रार्क रस	उद्ग	६१	"	अन्तःस्थ	४३०
गङ्गकल्प	पु	४३१	चन्द्रोदयरस	उद्ग	६७	ज्वरकुलहररस	अन्तःस्थ	५४
गङ्गधरसायनम्	पु	१२१	चन्द्रलामन्दारम्	उद्ग	८७	ज्वरहस्तिहररस	उद्ग	२२९
गङ्गपद्मादिप्रधानम्	कम्प	४१५	चन्द्रान्तकसर	कु	२९६	ज्वरकुशरस	उद्ग	२२३
गङ्गवन्दरस	कु	४४४	चातुर्धिकमिगारल	उद्ग	२२९	"	उद्ग	२९६
गङ्गमन्दररस	पु	२४६	चातुर्धिकमाहुस	कम्प	१३३	"	पु	३६५
गङ्गाचिन्तामणिरस	पु	४६६	चिन्तामणारादिरस	कम्प	३३	"	पु	३६५
गङ्गादीश्वररस	कु	४६३	चिन्तामणारस	अन्तःस्थ	७४	"	पु	३६५
गङ्गापुत्रकुशरस	कु	२८५	चिन्तामणिबनुमुख	उद्ग	२८	"	अन्तःस्थ	५४
गङ्गापुत्रारिरस	पु	२८५	चिन्तामणिगङ्गाकुशरस	उद्ग	२६८	"	अन्तःस्थ	१७३
गङ्गमन्दारम्	पु	६०	चिन्तामणिरस	उद्ग	२८७	"	अन्तःस्थ	१२७
गङ्गादिवीर	कु	४७४	"	उद्ग	२४८	"	कम्प	१२३
गङ्गापिहररस	स्वर	२५०	"	पु	३६५	"	कम्प	१२४
गङ्गापुत्रा	कु	४८७	चिन्तामणिरस	पु	४३४	"	कम्प	२६१
गङ्गादिरस	पु	४८६	ज्वररस	पु	३६४	ज्वरान्नरस	उद्ग	२९३
गङ्गादेश्वररस	कु	४९३	ज्वरान्नरस	पु	३६४	"	पु	२९७
गङ्गापुत्ररस	पु	२१७	ज्वरान्नरस	अन्तःस्थ	५०४	ज्वरारिरस	उद्ग	२९९
गङ्गापुत्ररस	कु	५०४	ज्वरान्नरस	उद्ग	१६८	"	अन्तःस्थ	४४८
गङ्गापुत्ररस	पु	१००	ज्वरान्नरस	उद्ग	१६८	"	अन्तःस्थ	४४८

"	कम्प	१३४	"	तु	१६१	दधिवटी	अन्त	स्व	६१६	
"	कम्प	१२८	"	तु	१६२	दरदवटी	अन्त	स्व	६४०	
ज्वरारण्यदावानल	तु	२०८	तालज्वराङ्कुसरस	तु	२४७	दरदादिपुष्टपाक	तु		२९९	
ज्वरभेकेसरिरस	तु	२०२	तालाङ्कुरस	तु	२४७	दशसारपित्तान्तकरस	तु		१६९	
ज्वालामुखरस	तु	२५६	"	तु	१५०	दशाङ्गलोहम्	अन्त	स्व	१८६	
टङ्कणसुत	पु	१	तालादियोग	तु	७५	दासरसायनम्	अन्त	स्व	२९४	
टङ्कणादिवटी	स्वर	६२	तिक्तप्रसरस	क	२६२	"	अन्त	स्व	३०१	
तक्षज्वरगजाङ्कुष	तु	२०३	तिमिरहरलोहम्	कम्प	२९४	दाहान्तकरस	क		५८	
"	तु	४२७	तीक्ष्णरस	तु	३०२	दिन्यमाणिक्यरस	पु		५६८	
तक्षज्वरारिरस	तु	२५०	तीक्ष्णादिरस	क	१७८	दिव्यामिकुमारस	स्वर		४०	
"	तु	३००	तृष्णारिरस	अन्त	स्व	१२५	"	स्वर	४८	
"	तु	३०१	त्रिकट्टारसायनम्	क	४४३	दीपनामिकुमाररस	स्वर		२५	
"	तु	३०२	त्रिकट्टादिलोहम्	तु	३७९	"	स्वर		३९	
"	कम्प	१३८	त्रिगुणरस	अन्त	स्व	५४२	"	स्वर	३०	
ताण्डवरस	क	४६८	त्रिगुणाक्षरस	अन्त-स्व	५४	तुलभरस	पु		१२०	
ताण्डवभैरवरस	अन्त	स्व	त्रिदण्डरस	तु	१७९	द्विगन्धजीर्णसिन्धुम्	अन्त	स्व	११०	
तापज्वराङ्कुष	तु	२५९	त्रिधातुगर्भपोष्टी	कम्प	६४४	द्विगुणाक्षरस	तु		१८१	
"	तु	२६०	त्रिनेत्ररस	क	२६२	द्विगुर्विरस	स्वर		४४०	
ताप्यादियोग	अन्त	स्व	"	तु	१६५	धातुपञ्चामृतस	पु		५६	
ताम्रकल्प	तु	३७	"	तु	१८०	धातुपाकरस	तु		२५४	
ताम्रगर्भपोष्टी	कम्प	६४४	"	पु	१०६	धूमप्रयोग	पु		३५२	
ताम्रपर्पटी	अन्त	स्व	"	अन्त	स्व	१०४	नयनामृतलोहम्	तु		३५९
"	अन्त	स्व	त्रिपुरभैरवरस	स्वर	१८५	नवज्वरविनाशनरस	तु		२२९	
"	अन्त	स्व	त्रिफलाकान्तयोग	तु	२२३	नवज्वरहरी वटी	तु		२१७	
ताम्रपाक	अन्त	स्व	त्रिफलागुग्गुलु	तु	२३५	नवज्वरारण्यकृष्णातुमेप	अन्त	स्व	५४	
ताम्रयोग	अन्त	स्व	"	अन्त	स्व	६३४	नवज्वरारिरस	तु		२१७
"	अन्त	स्व	त्रिफलाकैरस	तु	२३६	"	तु		३६६	
"	कम्प	५३३	त्रिफलालोहम्	क	४७४	"	तु		४२७	
ताम्ररसायनम्	तु	५४	"	कम्प	२०२	"	अन्त	स्व	५४	
ताम्रेन्द्ररस	अन्त	स्व	त्रिगुर्विरस	स्वर	४४०	"	अन्त	स्व	४३०	
सारगर्भपोष्टी	कम्प	६४४	"	अन्त	स्व	५०४	नवरत्नमृगाङ्कुरस	पु		६२७
सारपर्पटी	अन्त	स्व	त्रिगुर्विरस	अन्त	स्व	२२	नवरत्नरसजमुष्ठाङ्कुरस	पु		६१६
सारकेशररस	तु	७६	त्रिगुर्विरस	अन्त	स्व	३०८	"	पु		६३८
"	तु	१४४	त्रिगुर्विरस	अन्त	स्व	१९०	नवत्नामिकुमाररस	स्वर		४१
"	अन्त	स्व	त्रिगुर्विरस	अन्त	स्व	४५७	नवलोहामिकुमाररस	स्वर		४६
तालकवटी	तु	७७	त्रिगुर्विरस	अन्त	स्व	१०६	नवायसमण्डूरम्	स्वर		१२४
"	कम्प	९७	त्रिगुर्विरस	अन्त	स्व	११५	नवायसम्	क		२६९
तालकेशररस	क	३००	त्रैलोक्यकीर्तिस	कम्प	११५	नागभस्मादियोग	पु		६०५	
"	तु	२५३	त्रैलोक्यदम्बर	अन्त	स्व	१३७	नागवप	स्वर		२८१
"	पु	१४२	त्रैलोक्यतापहृणस	अन्त-स्व	५३७	नागाजुनी कनी	तु		२८९	
"	अन्त	स्व	त्रैलोक्यरसामणि	कम्प	४९	"	तु		४६८	
तालगर्भपोष्टी	कम्प	६४४	त्रैलोक्यसुन्दररस	तु	२६७	"	अन्त	स्व	३६६	
तालचन्द्रोदय	तु	७६	त्र्यम्बकेशररस	क	५८	नागादियुनी	क		४८४	
"	तु	१५९	त्र्युषणादिमण्डूरम्	पु	४८६	नायिकचूर्णम्	अन्त	स्व	२४९	
"	तु	१६०	त्र्युषणादिलोहम्	कम्प	१९३	"	अन्त	स्व	२९०	

नारसिंहरसः	कम्प	३९९	पित्तज्वरान्तरसः	सुद	२८७	बालमृगाद्वरसः	पु	६१६
नाराचरसः	पु	४४८	पित्तपाण्डुरसः	अन्तःस्थ	२७६	"	पु	६१७
नारायणरसः	कु	२५२	पित्तमग्नरसः	सु	२१०	"	सु	६१८
नारायणज्वराङ्कुशः	सुद	२८२	पित्तमुद्वरसः	अन्तःस्थ	३४	"	पु	६१९
"	अन्तःस्थ	६४०	पित्तहिंसकरसः	कु	२११	"	पु	६२०
नित्योदितरसः	अन्तःस्थ	४९५	पिनाकपाणिरसः	अन्तःस्थ	५४	बालरसः	पु	३७२
निशालोद्धम्	सु	२३६	पिप्पल्यादिचूर्णम्	कम्प	६४२	बालामित्रमारसः	कम्प	६३१
नीलवण्डरसः	अन्तःस्थ	५०४	पीदारिषः	पु	१६२	विभीतकलवणम्	पु	४८५
नृपतिवज्रभ.	■	४६१	पीतहेममर्गरसः	कम्प	६४२	बृहज्ज्वरचूडामणिः	सुद	१४०
पञ्चबाणरसः	कम्प	६०३	पीयूषसुन्दररसः	सुद	१४५	बृहत्तालकेश्वररसः	अन्तःस्थ	१३९
पञ्चवक्त्ररसः	सु	२४	पुनर्नवादिषटी	पु	१९८	बोलवद्धरकारिरसः	पु	३८३
पञ्चाननरसः	पु	१८	पुनर्नवामण्डहरम्	कम्प	३८३	बोल्यद्वरसः	पु	३८३
"	पु	२७	पुष्पचन्दावलेहः	पु	५९१	ब्रह्माक्षरसः	■	४४३
"	कम्प	१२८	पुष्पचन्दरसः	अन्तःस्थ	३१५	भक्षपाकवटी	पु	३८५
पञ्चाननवटी	सु	४४६	पुष्पचन्दोदयरसः	सुद	७४	भक्षवारिरसः	पु	१०९
"	पु	१०६	पुष्पेन्दुरसः	पु	२०३	भक्षविपाकवटी	अन्तःस्थ	३८६
पञ्चामृतम्	सु	१४२	पुष्पज्वररसः	सु	१८८	भगन्दरकेशरी	अन्तःस्थ	५४
पञ्चामृतरसः	सुद	२८	प्रतापामित्रमारसः	स्वर	४७	भगन्दरप्रसरः	अन्तःस्थ	५४
"	सुद	४६	प्रत्यञ्जनयनानामृतम्	सु	३५३	भगन्दरनाशनः	अन्तःस्थ	५४
"	सु	४४६	प्रदरिपुररसः	पु	२५०	भगन्दरहररसः	अन्तःस्थ	५४
"	पु	२७	प्रदीपनरसः	अन्तःस्थ	१५९	भद्रकालीरसः	पु	१६५
पञ्चाक्षररसः	■	१७८	प्रभाकररसः	सु	१८५	भागोत्तरपटी	स्वर	७७
पञ्चादिषटी	कम्प	१५५	प्रभाकवी वटी	पु	३९५	भीममण्डहरम्	■	४७४
पर्पटीरसः	सु	३६६	"	अन्तःस्थ	५८४	भुक्तोत्तरीया वटी	पु	४००
"	अन्तःस्थ	५४	प्रमदानन्दरसः	स्वर	३०८	भुवनेश्वररसः	कम्प	४००
"	कम्प	६१८	प्रमेहकुडाररसः	सुद	४३	भुतभैरवचूर्णम्	सुद	३४७
पर्पटीसूतः	पु	५०	प्रमेहकेशुरसः	कम्प	६०९	भुतभैरवरसः	सुद	३४७
पलाशादिषटी	कम्प	५७८	प्रमेहप्रमग्नरसः	पु	२९८	"	सुद	३४८
पाणिपुटः	कम्प	५५५	प्रमेहवज्ररसः	पु	२७५	भुताङ्गुथरसः	पु	४१९
पाणिपुटारसः	कम्प	२८१	प्रमेहसेतुरसः	पु	२६४	भुयुवटी	पु	१९१
पाण्डुरोगप्रः	अन्तःस्थ	२७६	"	कम्प	६०९	भैरवानन्दरसः	पु	५०३
पाण्डुरहरः	पु	१०६	प्रमेहहरः	पु	२७२	भकरज्वररसः	सुद	७४
पापाङ्गयोगः	पु	१२६	प्रमेहारिरसः	अन्तःस्थ	३२९	"	सुद	८०
पारदादिपुटिका	स्वर	३५०	प्रलयकालामिरसः	पु	३०९	"	कम्प	५२५
पारदादिचूर्णम्	अन्तःस्थ	१२५	प्रवररसः	पु	२२९	मण्डूयोगः	कम्प	५४
पारदादियोगः	कु	३३६	प्रवालमर्मोदली	कम्प	६४४	मण्डूवटकः	सुद	८७
पारदादिरसः	कम्प	२१९	प्रज्ञामित्रमारसः	स्वर	३७	"	अन्तःस्थ	२७९
पाण्डुरसः	कम्प	५५५	प्रज्ञाभैरवरसः	पु	३०९	मण्डूवटकः	अन्तःस्थ	११६
पाण्डुरसः	कम्प	५५५	प्राणरसाविषयी	सुद	४	मण्डूवटकः	पु	४८६
पिण्डीरसः	■	५८	प्राणमित्रमारः	स्वर	३७	मदनकामदेवरसः	कु	१६३
पितामहरसः	कम्प	२५६	प्रापेश्वररसः	पु	२३६	"	कु	१७९
पित्तनालान्तररसः	पु	४४८	श्रीहारिरसः	अन्तःस्थ	३	"	अन्तःस्थ	११०
पित्तनालान्तररसः	कु	२६२	शङ्खुवादिषटी	पु	४१९	मदनकामेश्वररसः	पु	२९६
			बाटम्पराङ्गुथरसः	सुद	२७२	मदनमोदकः	कु	३७

मदनसुन्दरः	अन्त स्थ	४१	मालिनीवसन्तः	अन्त स्थ	४३४	"	पु	२८८
मदात्ययहरः	अन्त स्थ	१६६	माहेश्वरसः	अन्त स्थ	५४	मेहाङ्गारसः	पु	३०६
मधुवातारि रसः	पु	१८०	माक्षिकगर्भपोष्टी	कम्प	६४४	मेहारिरसः	अन्त स्थ	५३२
मधुस्नेही रसः	अन्त स्थ	४७७	माक्षिकयोगः	अन्त स्थ	३१५	मेहेभक्रण्डीरवरसः	पु	३०६
मधुकादिपूर्णम्	पु	२५२	माक्षिकावलेहः	अन्त स्थ	३१५	मेहेभकेशरीरसः	पु	२६१
मन्यानभैरवरसः	पु	३६९	मुञ्जातकपाकः	कम्प	३७५	गौरेश्वरः ( नि र. )	अन्त स्थ	५४
मन शिलाज्वराङ्गुश	उद्	२८१	मुस्तादिलोहम्	अन्त स्थ	३१४	यष्टयादिलोहम्	पु	३४८
मदनज्वरारि	अन्त स्थ	२०६	मृदुहृन्मन्तकसः	अन्त स्थ	५९९	यक्ष्महररसः	अन्त स्थ	१५१
मध्वर्भपोष्टी	कम्प	६४४	मृदुहृन्मन्तरिरसः	पु	५९७	यक्ष्मान्तकलोहम्	अन्त स्थ	१८६
मालचन्द्रोदयः	पु	५३९	मृच्छार्जवसुतः	कम्प	४८७	यक्ष्मारिलोहम्	अन्त स्थ	३१५
"	पु	५४०	मृच्छितरसः	पु	५४५	योगवाही रसः	उद्	१६५
"	पु	५४१	मूलकुमाररसः	स्वर	२५५	रक्षपित्तउत्तररसः	अन्त स्थ	२९
मलज्वराङ्गुशः	उद्	२६५	मृगराजैन्द्ररसः	कम्प	३०६	रक्षमाहेश्वररसः	अन्त स्थ	५४
मल्लपर्वटी	पु	९०	मृगाङ्गोष्टीरसः	अन्त स्थ	२७०	रक्षसुतशेखररसः	कम्प	५०८
मधुकमृगाङ्गः	पु	१८३	मृगाङ्गोष्टीरसः	कम्प	२८	रक्षारिरसः	पु	३८३
महदमिकुमाररसः	स्वर	४९	मृगाङ्गरसः	अन्त स्थ	३३	"	अन्त स्थ	१०४
"	स्वर	५६	मृतम्बराजिज्वराङ्गुश	पु	८८	रतिवल्गभरसः	पु	२०९
"	अन्त स्थ	६	मृतसञ्जीवनरसः	स्वर	३०३	रत्नगर्भपोष्टीरसः	कम्प	२५६
महाकल्पा	पु	३१७	"	पु	१००	"	कम्प	६४४
महाकालरसः	क	२१७	मृतसञ्जीवनीरसः	पु	६५१	रत्नगर्भमृगाङ्गरसः	पु	६१५
"	क	२१८	"	अन्त स्थ	७३	रत्नगर्भेश्वररसः	अन्त स्थ	७०
"	क	२१९	"	कम्प	६२५	रत्नगिरिरसः	क	९
"	क	२२०	मृतसूतारसः	पु	५९७	रविताण्डवरसः	अन्त स्थ	५४
महाकालामिषरसः	क	२३३	मृत्युञ्जयरसः	पु	१८	रविशुन्दररसः	उद्	१०६
महाकालानलरसः	क	२४१	"	पु	३०९	"	उद्	२४९
महागन्धकम्	क	५४७	"	पु	३९९	रसकपयवाणरसः	पु	९
महागन्धसुन्दररसः	पु	७१७	"	अन्त स्थ	३८३	रसकेशरीरसः	कम्प	४१८
महामालिनीवसन्तः	अन्त स्थ	४३३	मेघनादरसः	कम्प	३९९	रसगर्भपोष्टीरसः	कम्प	६४४
महायसपूर्णम्	पु	३७७	"	पु	२७५	रसगण्डिका	पु	४१९
महारजतादिबटी	अन्त स्थ	४०	मेघबन्धरसः	पु	३७५	रसचण्डीशु	अन्त स्थ	३४०
महाराजपुतिवल्गमः	पु	४६०	मेघोद्वररसः	पु	७१५	रसपर्वटी	उद्	८६
महाराजमृगाङ्गरसः	पु	६२४	मेघकृष्णान्तकरसः	पु	२६३	"	अन्त स्थ	१११
महाराजवटी	अन्त स्थ	१५८	मेघराजकुशरसः	पु	३६९	रसपिठिका	अन्त स्थ	१०४
महाराजवटीटिका	क	४२२	मेघदलनवटी	पु	३३	रसमत्स्यकः	स्वर	२३२
महासेतुरसः	पु	२८२	मेघद्विदसिहरसः	पु	२६७	रसभूपतिः	स्वर	४५
महादेवगर्भपोष्टी	कम्प	६३६	मेघनिवृत्तनरसः	पु	२७४	"	स्वर	६०
महेश्वररसः	कम्प	१७९	मेघभैरवरसः	पु	२७६	"	स्वर	५१
महोदधिरसः	क	४७९	मेघदेवरसः	पु	२७७	रसयोगामिडुमारः	स्वर	२९
"	पु	१३	मेघमुद्गररसः	पु	२७८	रसराजरसः	उद्	२२९
माणाया वटी	पु	८८	मेघमृगाङ्गरसः	पु	२७९	"	अन्त स्थ	५४
माणिक्यरसः	पु	२५४	मेहरसायनम्	पु	२८०	"	अन्त स्थ	१०४
मार्तण्डोदयभास्करः	पु	२३३	मेहसुन्दररसः	पु	२८७	"	अन्त स्थ	४३०
मार्तण्डोदयरसः	स्वर	३७६	मेहहररसः	पु	२८६	"	कम्प	५९८

रससिन्दूरम्	सु	५५	राजवटी	कु	४३८	वडवानलरसः	अन्त रस	३८७
"	सु	५६	"	सु	४४०	"	अन्त रस	४५६
रससिन्दूररसः	पु	३९४	राजवीटिका	कु	४२३	वडवामुपरस	अन्त रस	३९८
"	पु	४१७	राजागिन्कुमाररसः	स्वर	४५	"	अन्त रस	४०३
रसादियुटिका	अन्त रस	२१०	रामवागरसः	कम्प	१२३	वनिहकुमाररसः	स्वर	११
रसादिवटी	कम्प	५७६	रुमादलनरसः	पु	३३	वनिहचूकाररसः	अन्त रस	३७२
"	कम्प	६३०	रोगमुरारिरसः	कु	३९६	वन्दिनीरसः	अन्त रस	४४४
रसायनभैरव	कम्प	२८७	"	सु	३६९	वमनीरस	स्वर	३७५
रसायनमृदम्	अन्त रस	२५०	रामभिकुमाररसः	स्वर	४३	वसन्तकुसुमाकररस	पु	३०७
रसेन्द्रपुटी	कु	४५७	रुवानन्दरसः	स्वर	३१०	वसन्तराजरसः	अन्त रस	४२८
रसेन्द्रभित्तामणिः	कु	५८	रुद्रेश्वररसः	सुद	८६	वातकेसररस	अन्त रस	६२७
रसेन्द्ररस	कु	२८४	रुक्मीधित्ताधररसः	पु	४४८	वातगजसिंहरस	पु	३३
"	सु	३०२	"	अन्त रस	७६	वातगजाङ्गुर	अन्त रस	४५६
"	अन्त रस	७३	सीलावती वटी	कम्प	३११	"	कम्प	५७६
रसेन्द्रराजरसः	कम्प	२८१	सीलालिताधररस	कम्प	५६२	"	कम्प	६८०
रसेश.	पु	३८४	सोकायसरस	अन्त रस	१९८	वातज्वरकुलान्तक	सुद	१९८
"	अन्त रस	१०४	सोकेसरपोहली	अन्त रस	२७२	वातज्वरगजाङ्गुरः	सुद	२०४
रसेश्वररसः	कम्प	२८१	"	अन्त रस	२५९	"	कम्प	२६०
राजचण्डेश्वररसः	सुद	२०	सोकेश्वररसः	अन्त रस	२६०	वातज्वरारिरसः	सुद	३०५
"	सुद	२१	"	अन्त रस	२६१	वातपित्तान्तकरस	पु	१६९
राजतलेश्वररसः	सु	९०	"	अन्त रस	२७०	वातपित्तान्तकवटी	अन्त रस	४५७
"	सु	११३	"	अन्त रस	२७१	वातमञ्जररस	कम्प	६२५
राजमुगाद्वरस	पु	६२५	सोकोत्तररसः	सु	४३६	वातमुद्वररसः	कु	२११
"	पु	६२६	"	सु	४३७	वातमेहान्तकरस	अन्त रस	३२९
"	पु	६२७	सोदगर्मपोहली	कम्प	६४४	वातरकान्तकरस	सु	१११
"	पु	६२८	सोदगुगुलु-	सु	२३५	वातरकारिरसः	अन्त रस	४६०
"	पु	६२९	सोदगुटिका	सु	२२७	वातवज्ररसः	कु	४५७
"	पु	६३०	सोदगुपटी	अन्त रस	७३	वातसार्द्धरस	कु	४५७
"	पु	६३१	सोदसायनम्	कम्प	५९६	वातसूक्ष्मा रसः	अन्त रस	१९२
"	पु	६३२	सोदरसः	पु	१०५	वातसम्मोहरसः	पु	१६५
"	पु	६३३	सोदवेपथिन्दूरम्	अन्त रस	३०७	वातायमिन्कुमार	स्वर	५२
"	पु	६३४	सोदसिन्दूरम्	अन्त रस	३०८	वातारिपाक	स्वर	४४५
"	सु	६३५	सोदसुन्दरः	सु	५२	वातारिरसः	अन्त रस	४१३
"	सु	६३६	"	सु	१०७	"	अन्त रस	४५०
"	पु	६३७	सोदामृतरस	सु	३४९	"	अन्त रस	४५६
"	पु	६३८	सज्जबदररस	सु	७६	"	कम्प	३०१
"	पु	६३९	सज्जेन्द्ररसः	सु	५२	"	कम्प	५७६
"	सु	६४०	सज्जपाणिरसः	कु	२२०	वातारिपटी	अन्त रस	४६०
"	सु	६४१	सज्जमण्डूरम्	पु	४७५	वातारिहररस	अन्त रस	४८४
"	सु	६४२	सज्जरसः	अन्त रस	३८२	वातारिगुणव	अन्त रस	५४
"	पु	६४३	सज्जादिपुटी	अन्त रस	३६६	वाद्यकिम्लगरस	अन्त रस	३३२
"	पु	६४४	सज्जाग्निरस	पु	९६	विजयमञ्जररस	अन्त रस	२०२
"	पु	६४५	"	अन्त रस	३९१	विजयपुपटी	अन्त रस	७३
"	पु	६४६	सज्जामिन्दूरम्	अन्त रस	३८१	विजयभैरवरस	पु	४१९







स्वयमग्निरसः	पु	४४५	हिङ्गवादिचूर्णम्	कम्प	३५	हेममृगाहरसः	पु	६४७
	कम्प	५३३	हीरेवेधितरसः	कम्प	६५६	हेमरसः	अन्तःस्थ	५९९
स्वर्णगर्भपोटलीरसः	कम्प	६३४	हृदयार्णवरसः	तु	१९१	हेमसुन्दररसः	कु	१९
हरगौरः	पु	२८५	हेमकुञ्जरेकेसरी रसः	पु	२६१	हेमाम्बुदम्	कम्प	६७८
हरगौरीरसः	चुद्र	७७	हेमगर्भपोटली	कम्प	६३२	हेमवती बटी	कम्प	३११
"	पु	२७२	हेमगर्भपोटलीरसः	कम्प	६३३	हंसमण्डूरम्	पु	४८६
"	अन्तःस्थ	११०	"	कम्प	६३५	हयगुटिका	कु	२६४
"	"	१११	"	कम्प	६४४	हयमृगाहरसः	पु	६३६
हर्नेत्ररसः	कम्प	६०६	हेमगर्भरसायनम्	कम्प	६४०	"	पु	६३८
हरशशाङ्करसः	कु	४०१	हेमगर्भलोकेकनायपोटली	अन्तःस्थ	२५८	हयारिरसः	कम्प	९४
हृत्प्रियावलेहः	तु	३३०	हेमताररसः	पु	२६८	हारताम्ररसः	चुद्र	३५
ह्रीतक्यादिबटी	कु	४९०	हेमपर्पटकरसः	कम्प	४३३	हारयोग	अन्तःस्थ	३७८
हलीमन्त्रयोगः	कु	३९२	हेमपर्पटी रसः	अन्तःस्थ	७३	क्षुद्रोषकरसः	स्वर	९४
हस्तिपञ्चाननरसः	कु	४२३	हेमपिटिकायोगः	कम्प	६७१	शालोदया बटी	कम्प	७१३
हिकान्वासारिरसः	कम्प	११	हेमषडरसः	पु	२७५			

## Index of the Introduction

	Page		Page
Origin and Growth of Āyurveda	1	Indians and the Greeks ...	14
Āryan's knowledge of medical science	2	Arabians indebted to Indians	14
Relation between the Indians and the Greeks ...	3	for medical science ...	14
Western scholars and Sanskrit texts	3	Selucus Necator on India ...	14
Beginning of the Vedas ...	4	Roman colony at Madura ...	15
Whitney on medical science ...	4	Universities of Takshasilā and Nalanda ...	15
Atharvaveda on surgical operation	4	Buddhism and Āyurveda	15
Operation of अस्मरी (strangury stone) ...	5-6	Revision of Suśruta ...	15
Vedic Upāṅgas ...	7	New era dating from 5100 Years	16
Operation during pregnancy ...	7-9	Āyurvedic period between 600 B. C. and 850 A. D. ...	16
Operation when there is मूत्रगर्भ	10-12	Egyptian civilisation an offshoot of the Indian ...	16-17
Surgery known to the people of the Vedic age ...	13	Relations of the two civilisations	18
Ashtādhyāyī of Pāṇini ...	13	Emigrants of India civilised other races ...	18-19
Sanskrit is the Language of languages ...	14	Greece colonised by the Indians	19

	Page		Page
Greek words derived from Sanskrit	20	Āyurvedic period begins from 600	
Indians influenced the progress		B. C ... ..	30
of medicine in Egypt and Greece	20	Vedas are eternal ... ..	30
Vedic literature the oldest record	20	Maxmuller on Vedic period ... ..	31
Indebtedness of Greeks to the Indians	20	Lokmānya Tilak's view ... ..	31
Indians and the Romans ... ..	21	Period of the Vedic hymns 6000	
Forum the early Latin burial ground	21	B. C. according to Tilak ... ..	32
Brahmā the revealer of medicine	21	Existence of medical science in	
Dependence of Greek anatomy on		the Vedas ... ..	32
that of India ... ..	22	Medical hymns from the Vedas	
Kāśī older than Cos. ... ..	23	& their translations ... ..	38-61
Indians and the Arabians ... ..	23	Medical science existed in the	
Arabians borrowed from the Indians	23	Vedic age ... ..	61
Hindu medical works translated		Wonderful cures by the Aśvins	62
by the Arabs ... ..	23	Preservation of dead bodies	62-63
Hindus were induced to reside at the		Descent of Āyurveda ... ..	64-65
court of Caliphs ... ..	24	Rigvedic hymns on Consumption	66-67
Bagdad was the cradle of Arabian		Suśruta saṁhitā ... ..	68
literature ... ..	24	Date of Suśruta ... ..	68-69
Persian translations of original		Contemporary authors ... ..	69-70
Sanskrit Works ... ..	25	Charaka saṁhitā ... ..	71
Vijaynagar a great seat of learning	25	Kāśī and Takṣaśilā ... ..	71
Mahomedans visited Vijaynagar	25	Different views about Charaka	71-72
Medical science next to Veda ... ..	26	Chronological order regarding	
Wrong interpretations to valuable		different authors on medicine	72
medical truths ... ..	26	Patanjali's Mahābhāṣya	73-75
Profession of physicians not		Patanjali lived before Śākyabuddha	76
regarded honourable ... ..	26	Patanjali preceptor of Puṣyamitra	77
Physicians not invited for the		Mahābhāṣya prior to Mahābhārata	78
Śrāddha ... ..	26	Mahābhāṣya and Subandhu ... ..	79
The Āyurvedic period ... ..	27	Patanjali and Kālidāsa ... ..	80
Renaissance of Sanskrit learning	27	Patanjali and different authors	81-83
Search of philosophical truths ... ..	28	Bhela Saṁhitā ... ..	84
Dharmas and Hirās (Sīrās) ... ..	28	Vāgbhata and Mādhava ... ..	84
Professor Harvey and circulation		Bhāvamiśra ... ..	85
of blood ... ..	28	Miscellaneous saṁhitās ... ..	85
Respiration even observed by the		Syphilis ( Venereal Disease )	85-90
Rishis ... ..	29	Small-pox ... ..	90-98
Comic systole and diastole ... ..	29	Cholera ( Vishūchikā ) ... ..	98-101
Indians and Europeans from the		Purifying water ... ..	102
same Āryan race ... ..	30	Properties and uses of घृत	103
		Conclusion ... ..	104

## अथ रसयोगसागरस्योपोद्धातीयविषयानुक्रमणिका

विषयाः	पृष्ठाङ्काः	विषयाः	पृष्ठाङ्काः	विषयाः	पृष्ठाङ्काः
आयुर्वेदमद्वये प्रतीयविदुषामभि- प्रायाः ... .. १		अधःशरीराज्ययाः ... ७७		जाम्बीलः ... .. १०८	
वेदे शल्यचिकित्साक्रमः ... २		साधारणाः स्थूलाः शारीरभावाः ७८		उच्छृङ्खलौ ... .. १०८	
भारतीयविद्याया मीसदेशगमनम् ८		सूक्ष्माः शारीरभावाः ... ७९		प्रसिद्धा ... .. १०८	
भारतीयविद्याया रोमदेशगमनम् १३		आर्पेसन्दिग्धशारीरविवरणम् ... ८०		मांसविवरणम् ... .. १०९	
भारतीयविद्याया आरब्बदेशगमनम् १५		देवकोशः, हिरण्मयः कोशः ... ८०		कीकसाः ... .. ११४	
आयुर्वेदस्य मध्यकालः ... १७		मीबाः ... .. ८०		गोजीविवरणम् ... .. ११४	
आयुर्वेदस्य प्राक्कालः ... १८		अपरकण्ठः ... .. ८१		लोहितम्-पाप्मा-तमः ... १२१	
आयुर्वेदपरम्परा (सुश्रुतमते) ... २३		मन्याः ... .. ८१		मैत्र्याः ... .. १२२	
„ (चरकमते) ... २४		जलिहाः ... .. ८१		स्वप्न्याः ... .. १२२	
सुश्रुतसंहितायाध्वरकुसंहितातो- ज्येष्ठत्वम् ... .. २५		घृण्कण्ठः ... .. ८१		निधिविवरणम् ... .. १२२	
महाभाष्यप्रणेता पतञ्जलिरेव- ध्वरकप्रणेति निर्णयः ... २६		रुक्मण्यौ, अंसौ ... .. ८१		वैधानरः ... .. १२९	
पतञ्जलेः कालनिर्णयः ... २७		कफोदौ ... .. ८२		सुश्रुतवरकामंस्वशरीरकोष्ठम् ८२	
मेरुसंहिताया निर्माणकालनिर्णयः ३१		हस्तौ, पादौ ... .. ८२		ऊर्ध्वशरीराज्ययाः ... .. १२२	
वाग्भट्टमाधवभाषाभिभाषायां कालः ३२		अनु ... .. ८२		मध्यशरीराज्ययाः ... .. १४०	
वेदे उपदर्शरोगस्य विवेचनम् ... ३३		पक्षिः ... .. ८४		अन्तः कोष्ठाज्ययाः ... .. १४२	
वेदे विद्युच्चिकाया विवेचनम् ... ३४		मोहः ... .. ८५		अधःशरीराज्ययाः ... .. १४६	
वेदे दृष्टाऽष्टक्रियाणां विवरणम् ३५		वर्ज्यो ... .. ८५		साधारणाः स्थूलाः शारीरभावाः १४८	
दृष्टाऽष्टकारणसमुदायेन रोगाणा- मुत्पत्तिसम्भवेऽपि त्रिदोष- जनितत्वे प्राधान्यम् ... ४१		कुन्तापानि ... .. ८५		सूक्ष्माः शारीरभावाः ... .. १५३	
त्रिप्रजात्वेन त्रिधातुत्वेन च वेदवाक्यै- स्त्रिदोषनिर्मुक्तिः संवत्क्षणे पुर- साम्यञ्च ... .. ४१-४८		जपनम् ... .. ८५		सुश्रुतसन्दिग्धशारीरविवरणम् ... १५४	
त्रिदोषाणां पञ्चभूतात्मकत्वम्- तदुपसिद्धिः ... .. ४८		अनूकविवरणम् ... .. ८५		शिरः ... .. १५४	
वेदादायुर्वेदाच्च वातपित्तकफप्रनां जन्मशरीरकाण्यत्वम्, किया- भेदादोषचानुमलादिनामप्यङ्ग- विवरणञ्च ... .. ५०-७२		करुराणि ... .. ९०		अधिपतिः ... .. १५४	
वेदिकशारीराज्ययवकोष्ठम् ऊर्ध्वशरीराज्ययाः ... ७३		शृङ्खः ... .. ९०		यस्तुलुङ्गाः ... .. १५४	
मध्यशरीराज्ययाः ... ७४		भासद्म ... .. ९१		आयुर्वी ... .. १५४	
कोष्ठता बाह्यावयवाः ... ७५		श्राविः ... .. ९१		वत्सेपी ... .. १५४	
अन्तःकोष्ठाज्ययाः ... ७६		अनूज्यौ ... .. ९२		स्वप्नी ... .. १५४	
		हृदयविवरणम् ... .. ९२		शङ्खौ ... .. १५४	
		हृन्मविवरणम् ... .. ९६		मयन्युदुदः ... .. १५४	
		तनिमा (यष्टु) ... १०१		तारका ... .. १५५	
		पाजस्यम् ... .. १०१		दष्टिः ... .. १५५	
		हलीक्षणम् ... .. १०२		रुन्नीरुमतः सन्धिः ... .. १५५	
		बहुवचनाऽन्त्रविवरणम् ... १०२		नेत्रशिराः ... .. १५५	
		पुरीतः ... .. १०५		अपाङ्गौ ... .. १५५	
		वनिष्ठः ... .. १०६		कणे ... .. १५५	
		गव्यीन्यौ (मतस्ने) ... १०७		शूत्राटकानि ... .. १५५	
		सिकतावती ... .. १०७		मातृकाः-जीले-मन्ये ... १५५	
		लोहित्वासः ... .. १०७		विपुरे ... .. १५६	
		उत्थः-जरायुः ... .. १०७		कृष्णाटिके ... .. १५६	
		कुत्सलम् ... .. १०८		अवट्ट ... .. १५७	

विषयाः	पृष्ठाङ्काः	विषयाः	पृष्ठाङ्काः	विषयाः	पृष्ठाङ्काः
अंसफलके ...	१५७	श्लेष्मसुखौ ( कुम्भसुखौ ) ...	१६०	गुल्फौ ...	१६४
कक्षपरे ...	१५८	अनेलायनानि ...	१६१	कूर्ची ...	१६४
मणिबन्धौ ...	१५८	रक्षाशयः ...	१६१	तलहृदये ...	१६४
उरः ...	१५८	आमाशयः ...	१६१	क्षिप्रि ...	१६४
अपलापी ...	१५८	अग्रवहे स्रोतसी ...	१६२	कलाविवरणम् ...	१६४
स्तनमूले ...	१५८	स्थूलान्नैकदेशः-अन्नम् (उपात्तम्) ...	१६३	स्रोतोविवरणम् ...	१६८
स्तनरोहिणी ...	१५८	गुदम् ...	१६३	सुश्रुतीयाऽस्यिकोष्ठकम्,	
शुभास्थिविवरणम् ...	१५८	पुरीषबहानि स्रोतसि ...	१६३	तद्विवरणम् ...	१७०-१७८
नाभिः ...	१५९	पोष्यम् ...	१६३		
ज्योतिःस्थानम् ...	१५९	गर्भेशय्या ...	१६३	अथ संस्कृतोपोद्वातीयशुद्धिपत्रकम्	१७९
दृष्टयौ ...	१५९	अपरा ...	१६३	Errata ...	७
पार्श्वसन्धी ...	१५९	विशेषे ...	१६३	रसयोगसागरे प्रमाणतयोपन्यस्तानां	
त्रिकसन्धि ...	१५९	लोहिताक्षे ...	१६४	सुदितप्रन्यानां सङ्केताः ...	२०
नितम्बी ...	१६०	उर्व्यौ ...	१६४	रसयोगसागरे प्रमाणतयोपन्यस्तानां	
कुङ्कुन्दरे ...	१६०	आप्यौ ...	१६४	हस्तलिखितप्रन्यानां सङ्केताः	२१
कटीकतण्डणे ...	१६०	जातुनी ...	१६४	List of Books referred	२१
अपस्तम्भौ ...	१६०	इन्द्रवस्ती ...	१६४		

## अथ प्रथमभागरसयोगसागरीयशुद्धिपत्रकम्

पृष्ठे पङ्क्तौ  
२४ ( उपोद्वातीय ) ७

अशुद्धम्  
प्रज्ञापति ( दक्षः )

इन्द्रः

९९ ( उपो० ) २८-२९

क्लोमभिर्गर्भाणां चन्द्रमसां  
तर्पणेन क्लोमो द्वापारत्वं  
गोक्षत्वं प्रवहद्भवत्वञ्च विज्ञापितम् ।

शुद्धम्  
प्रज्ञापतिः ( दक्षः )

अग्निर्वनौ

इन्द्रः

वल्मीकान् क्लोमभिरित्यत्र क्लोम्ना वल्मी-  
कानां तर्पणेन क्लोमो गोक्षत्वमन्तः साव-  
काशत्वं विलक्षणताल्याकारत्वं सूचितम् ।  
सप्तपदादौ नाम्नास्थले चन्द्रसादृश्याद्द्वा-  
पारत्वं गोक्षत्वं प्रवहद्भवत्वञ्च विज्ञापितं  
भवति अतएवाऽस्मिन्मन्त्रे क्लोमभिर्गर्भा-  
भिरिति विलक्षणो विन्यासः कृतोऽस्ति ।

९९ ( उपो० ) ९-१०-११

अत्र तिलमिलनेन क्लोमकथितं  
वत्पिपासास्थानमित्यभिप्राय इति  
दीपिकायामाद्यमन्त्रेन व्याख्यातम्-  
तत्र भण्डकोशदर्शनसंस्कारमूलकं  
प्रतिभाति ।

तिलम्बु शोणितकिट्टप्रमदं दक्षिणाश्रितं  
यद्वत्समीपे क्लोमसंदर्भकं भवति तत्र जल-  
वादिपिपासामूलं कथितमतएव तृष्णाच्छादनकं  
प्रतिपादितम् । तृष्णा पिपासा तस्यादृष्टादने  
करोतीत्यर्थः इति दीपिकायामाद्यमन्त्रः

पृष्ठे	पङ्क्तौ	अङ्गदम्	शुद्धम्
१५२ (उपो.)	१३	प्राणवहेस्रोतसी वा. ११२ Pulmonary arteries	... प्राणवहे द्वे वा. ११२ Two Bronchi
१५२ (उपो.)	२१	सञ्ज्ञावहानि ज. ६१८ ...	... सञ्ज्ञावहानि ज. ६१८ } सञ्ज्ञावहान्याः ज. ४६६ }
१५२ (उपो.)	२३	उदकवहेस्रोतसी वा. ११२ Alimentary and Lymphatic Systems	... उदकवहे द्वे वा. ११२ 1 Mouth; Pharynx & Oesophagus 2 Common Duct formed by Junction of the Bile & Hepatic Ducts and Pan- creatic Duct:
७ (र.यो.)	३५	तुषर्णल्यं ...	... तृष्णल्यं
७	६३-६४	और ११ सेर शकर बालकर	... ११ सेर शकर और १ पल घृत बालकर
९	१३	कपूर, कान्तलोह ...	... कपूर, बेलगिरी, त्रिकटु, घनियां जायफल, लौंग, कपूर, कान्तलोह
१०	४२	र. रा. छ. ...	... र. छ.
१०	४४	गन्धक, प्रत्येक	... गन्धक, टङ्गण प्रत्येक
१५	१०	छानकरके ...	... छानकरके
१५	३०	लेकर मसूर ...	... लेकर सबके बराबर चित्रकमूल बालकर मसूर
२५	३४-३५	बछनाम, त्रिषार ( यवशार, सखी और घुदागा ) और	... बछनाम, कान्तलोह और
२९	५४	रखना और शीशीके ...	... रखना कसरसे २-२ अथवा आधाआधाकर्य छुदवछनाम और हरिताल बालकर शीशीके
२९	६५	पैरोंकासोना ...	... पैरोंकी सूजन
३३	५४	पीतल, गन्धक ...	... पीतल, हरिताल, गन्धक,
४०	८	संचल, हींग, दालचीनी, ...	... संचल, विप, दालचीनी, हल्दी, मानकन्द और तुषर्णमसम
४०	२६	एकदिनसायकेकायसे ..	... १-१ दिन साय और खिरनीके द्वयोस्त्रे
४०	४९	गोमूत्रवा ...	... गोमूत्रवा
४४	३६	मधेस ...	... मधेस
४९	२६	लेना और ...	... लेना, इन तीनोंके बराबर त्रिकटु और
५५	२३	काठीमसम ...	... काठीमसम
५६	७	लेकर घट्टेके ...	... लेकर सबकी बराबर मिरच मिलाकर पत्तरेके
६६	२	४२ तोले ...	... २४ तोले
६८	१६-१७	उसमें २-२ तोले ..	... उसमें १-१ तोला
६८	५०	मिलाकर बहुत ...	... मिलाकर घी और मधुके साथ बहुत
७१	३३	साथ खाना ...	... साथ मधुमें मिलाकर खाना
७४	४९	गुल ...	... बड़

पृष्ठे	पङ्क्तौ	अशुद्धम्	शुद्धम्
८१	५	सुरासानी ) गजपीपल ...	सुरासानी ) तगरगण्डोला, गजपीपल
८९	३६	लोहमस्म ३ भाग और मुखली ४ भाग	गन्धक ३ भा०, लोहमस्म ४ भा० और मुखली ५ भाग
८९	४०	एकएक ...	सातसात
९०	४३	लोहचूर्ण ३ भाग ...	लोहचूर्ण २ भाग
९४	५०-५१	सुगन्धवाला, जीरा ...	सुगन्धवाला, नागरमोथा, पाठा, जीरा,
१०२	८	चिन्तयेदरिक ...	चिन्तयेदरिक
१०६	१८-१९	रससे और ७ बार सर्पविपसे, ७ बार बन्दाकेरससे और	रससे और
१०६	४४-४५	तीक्ष्णलोह ४ भाग, ताम्रमस्म ५ भाग सोनाभाखी ६ भाग, और शुद्धजमाल- गोटा ७ भाग	तीक्ष्णलोह ४ भाग, हिङ्गुल ५ भाग, ताम्रमस्म ६ भाग, सोनाभाखी ७ भाग और शुद्धजमालगोटा ८ भाग
१०६	६७	दूधकेरसमें ...	दूधके १ सेररसमें
१०७	६३	पञ्चपुल्यैस्तु ...	पञ्चपुल्यैस्तु
१०८	१७	६ पहर ...	१२ पहर
११४	६३	मुलह्दी ...	पीपल
१२२	६२	राब १०० ...	राब ८०
१२३	५	प्रत्येक ३ तोला और शुद्धपारा	प्रत्येक ३ तोला, अन्नक, वज्र, लोह इनहीमस्में १-१ पल और शुद्धपारा
१२३	१०	सूजन, वादी ...	सूजन, शुल, वादी,
१२४	६८	खपरिया प्रत्येक ...	खपरिया, वज्र प्रत्येक
१२४	६९	अङ्गुरोंकेरससे १ पहर ...	अङ्गुरों और पीङ्गुवारकेरससे १-१ पहर
१२५	१५	हरताल, सबको ...	हरताल, मुनाझहागा सबको
१२५	२९	कोर्य ...	क्योर्य
१२६	१	रोग, ८० वात ...	रोग, मगन्दर, ८० वात
१२८	४१	कालकर ३ दिन ...	कालकर भंगेरेकेरससे ३ दिन
१२९	२२	गन्धक, त्रिकटु ...	गन्धक, शुद्धविप, त्रिकटु
१३२	३६	अनार ...	खेदेअनार
१५५	२९	कचूर ...	खचूर
१७२	१०-११	भिर्च, यवशात ...	भिर्च, पीपल, यवशात
१७४	३५	सोंठ ...	पीपल
१७५	१७-१८	और उसमें ५ पलआक ...	और उसमें इटसिट, भिलावा, चित्रक, दन्ती, निसोत, इन्द्रायण, आक, विचारा, क्षीरकचुकी, कालीमुशली, शतावरा, कोयल नील, एरण्डमूल, अमरुतास, बला, असन ये प्रत्येक ४ पल लेकर इनका अष्टावरोप काप और ५ पल आक
१८१	३७	१० तोले ...	४० तोले
१८६	५२	५ मा. ...	८ मा.
१८७	३४	१ तो., अथवा ...	१ तो., गन्धक १ तो., अथवा
१९०	३३	वाला अधिक ...	वाला दिनको सोना अधिक

पृष्ठे	पङ्क्तौ	अष्टमम्	शुद्धम्
१९०	४३	मालकायनी ...	गेंदुला
१९२	५५-५६	निर्युण्डी, अदररा ...	निर्युण्डी, चित्रक, अदररा
१९४	२४	( केवीज ) लोहमस्य ...	केवीज ) शतावरी, लोहमस्य
२०५	६९	दोरोज ...	तीनरोज
२१०	४५	पारेकीमस्य ३ तोले ...	पारेकीमस्य १२ तोले
२१८	५१	गन्धक, रसमाणिक्य ...	गन्धक, ताम्रमस्य, रसमाणिक्य
२१९	४८	( मकोय ) इन ...	( मकोय ) कोयल, इन
२२३	१७	जीरा ये सब ...	जीरा, चित्रक येसब
२३३	२३	निर्युण्डी, वज्रवल्ली ...	निर्युण्डी, भद्रता, वज्रवल्ली
२३४	११	बाघी, सोंठ ...	बाघी, दुरादुर, सोंठ
२३४	१४	यवदार ३ पल ...	यवदार २ पल
२३४	६३	कसोंजी, चित्रक ...	कसोंजी, पपूरा, हंसराग, चित्रक
२४१	२६-२७	समुद्रशोष ये प्रत्येक २ तोलेलेकर ...	येप्रत्येक २ तोले, समुद्रशोष १ तोलालेकर
२४९	६५	चादीमस्य ..	चादी और सुवर्णमस्य
२५२	३१	बनाकरगुल्मीको ...	बनाकर शुद्धकेसाथ गुल्मीको
२५२	३३-३४	इन्द्रजव येसब ...	इन्द्रजव, देवदास ये सब
२५४	३	रजतमस्य ...	सुवर्णमस्य
२५४	५९	सायचाटनेसे ...	साय १ वर्षतकचाटनेसे
२६४	२०-२१	काचमस्य येसब ...	काचमस्य, नागमस्य ये सब
२६४	३८	जायफल और ..	जायफल, धतूरेकेवीज और
२६४	५२	शेकनेर और चित्रककेरसोंसे ...	शेकनेर, चित्रक और कालीमुशलीकेरसोंसे
२६५	५५	जायफल ...	कायफल
२६५	६६	दन्ती ..	भाग
२७५	४२-४३	समुद्रशोष, जटामासी ...	समुद्रशोष, मुशली, जटामासी
२७६	३१	गजपीपल, सैफानमक, समुद्रशोष ...	गजपीपल, समुद्रशोष
२७७	५५-५६	सबवर्णसेद्वनी ...	वह और लोहसे द्वनी
२७७	६५	अष्टम ...	सप्तम
२७८	३०	दालचीनी, सुरासानी ...	दालचीनी, मूर्पा, सुरासानी
२७८	३१	मालकायनी, शुद्धकुचिला ..	मालकायनी, केशर, शुद्धकुचिला
२७८	३४	१० तोले ...	१० पल
२७९	३७	कच्चाकेवीज, येसब ..	कच्चाकेवीज, जटामासी, जकलकरा ये सब
२८३	१८	शुद्धवज्रनाग १ भाग ...	शुद्धवज्रनाग ११ भाग
२८४	३५	चित्रक इनप्रत्येकके ..	चित्रक, फुटकी इनप्रत्येकके
२८६	२५	कर नीबूकेरसकी सात ...	कर सहिजनकीजकीछाल, अमरपेल और नीबूकेरसकीसातसात
२९८	६०	ताम्रमस्य, शङ्खमस्य ...	ताम्र, अन्नक और शङ्खमस्य
३०६	४४	कीजड़, दासहल्दी ..	कीजड़, हल्दी, दासहल्दी,
३०६	४५-४६	चक्रवर्णकेवीज, अणस्त्य ...	चक्रवर्णकेवीज, कटिवालीचौलाईकीजड़, अणस्त्य
३०६	६७	चित्रक, केवाच ...	चित्रक, गोरसमुण्डी, केवाच
३०९	४३	गधु २० पल ...	गधु १० पल
३१०	४३-४४	मैनसिल १॥।। तो. ...	मैनसिल ९ माथे



पृष्ठे	पङ्क्ति	अशुद्धम्	शुद्धम्
३१३	४७	तोलाकेकादेमै ... ..	तोलासोडके कादेमै
३१९	१५-१६	नीम, आक और शूअरकादघ इन प्रत्येकसे १-१ रोज़ मर्दनकर	और नीमकेद्वोंसे १-१, तथा आकऔर शूअरकेद्वघसे ५-५ भावनाएं देकर
३२१	३१	बीज ये सब ... ..	बीज अम्रकमस्य ये सब
३२६	३	चव्य, अदरख ... ..	चव्य, नागकेशर, पीपल, अदरख
३२६	५५	स्वर्णमस ३ तोले ... ..	शुद्धवछनाग और स्वर्णमस ३-३ तोले
३२८	२५	मुण्ठी ... ..	मुण्ठी
३२८	२६	बस्तु ... ..	बस्तु
३२८	४७	तगर ... ..	अगर
३२९	२७-२८-२९	शुद्धगन्धक ३ भा., मुनासुहागा ४ भा., यवहार ५ भा.	ताम्रमस ३ भा. शुद्धगन्धक ४ भा. मुनासुहागा ५ भा. यवहार ६ भा.
३५६	३२	५ तोले ... ..	५ पल
३५६	६०	निसोत ३ माग ... ..	निसोत ३ माग
३८०	१४	पिप्पलीकी १-२ ... ..	पिप्पली और नीबूके स्वरसकी १-१
३८१	३९	कान्तलोहमस ... ..	ताम्रमस
३८२	२६	सैन्धव ... ..	पाँचौनमक
३८२	३१-३२	विडङ्ग १-१ माग ... ..	विडङ्ग और चित्रक १-१ माग
३९०	६४	मरसाकेपते, दहीकापानी इनप्रत्येकके...	मरसाकेपते इनप्रत्येकके
३९४	१८-१९	निकालकर सेंगर, कुठ, अतीघ, केलेकी जड़ इनप्रत्येकके स्वरसोंसे ७-७ मुट	निकालकर इधमें जीरा, सेमलकीछात और कुठ प्रत्येक सममाग मिलावे फिर इस धम- स्तकी बराबर अतीघकाचूर्ण मिलाकर केले- केरसकी ७ भावनाएं
३९४	५०	१-१ गोली दहीके ... ..	१-१ गोली भिल्वपत्रस्वरस अथवा दहीके
३९६	११	भांगकेरससे ... ..	भांगके रससे
३९७	६८	शिंगरिफ, बछनाग ... ..	शिंगरिफ, कसीघ, बछनाग
४००	२०	मोती २ तोला, शुद्धगन्धक... ..	मोती २ तोले, लोह, अम्रक और शङ्खभस मुनासुहागा १-१ तोला, शुद्धगन्धक
४०९	४३	होनेपर लोहेकी ... ..	होनेपर १६ वामाग शुद्धवछनाग मिलाकर लोहेकी
४२६	५०	पलाघ ... ..	कटहर
४२८	७	केकर नागर ... ..	केकर शुद्धकपूरकेजल, नागर
४४३	६७	२६ तोला ... ..	२९ तोला
४४४	२९	१-१ तो. ... ..	३-३ तो.
४४४	५२	भिलावां, वाकुची ... ..	भिलावां, त्रिफला, वाकुची
४४६	१४	दन्तीमूल ६ माग ... ..	दन्तीमूल और अकलकरा ३-३ माग
४४९	३२	शुद्धगन्धक १ माग ... ..	शुद्धगन्धक २ माग
४५५	१५-१६	कौडी, तुल्य ... ..	कौडी, सुप्ता, तुल्य
४७४	२२	दूध, मधु ... ..	दूध, घृत, मधु
४८४	५१	१ प्रहर ... ..	३ प्रहर
४८९	६६	१-१ माग ... ..	२-२ माग
४९०	३२	गन्धक २ पल ... ..	गन्धक और त्रिफला २-२ पल
४९०	६७	अमक, होंग, नीम ... ..	नमक, नीम

पृष्ठे	पङ्क्ति	अनुक्रम	शुद्धम्
५९५	४५	अपामार्ग ... ..	चित्रक
५९५	६५	भट्टकट्टयाका ... ..	तीनोंभट्टकट्टयाजोंका
६०५	४०	पारदमस ... ..	ताम्रमस
६०७	३४	गन्धक, ताम्र ... ..	गन्धक, पारा, ताम्र
६१४	४४	सेलेनेसे ... ..	से मधुकेसाय लेनेसे
६२३	४	ताम्र और सुवर्णमस ... ..	ताम्र, सुवर्ण और रजतमस
६२३	३४	पारा, वह ... ..	पारा, लोह, वह
६२४	६१	५ भाग ... ..	६ भाग
६२५	६५-६६	पारेसे आधी वैक्रान्तमस मिलाकर ... ..	पारेसे चतुर्धा वैक्रान्तमस मिलाकर
		सहिजनकीजङ्ग और ... ..	सहिजनकी जङ्गीछालके स्वरससे ७, और
६२९	२८	स्वर्णको ... ..	ताम्रको
६२९	२९	स्वर्णबीजका ... ..	ताम्रबीजका
६३३	२१-२२-२३	बाराहीकन्द ये सब समभागलेकर बारीक- चूर्णकर सहिजनकीजङ्गीछाल भंगरा इनके रसोंसे १-१ भावनादेकर	बाराहीकन्द, त्रिफला, सहिजन कीजङ्गी- छाल ये सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर भंगरेके रससे पोटकर
६३४	५३	पारेकीबराबर ... ..	पारेसेदूनी
६३५	४८	१-१ सेर देकर ... ..	१-१ सेर और गोमूत्र ८ सेर देकर
६४०	३	झरकेसाय ... ..	झर और त्रिफलाकेसाय
६५९	२७	बीजुवार, त्रिफला ... ..	बीजुवार, भंगरा, त्रिफला
६६२	५६	पारेकी बराबर ... ..	पारेसे चतुर्धा
६६३	४०	सैधानमक, खपरिया (अभावमें जस्तमस) कसीध	सैधानमक, कसीध
६६९	१२	निम्बे... ..	निम्बा
६७१	११	माशालेकर ... ..	माशा मधुसे लेकर
६८६	५१	सोठ, मरिच, पारा, गन्धक... ..	सोठ ३ भाग, मरिच, पारा और गन्धक २-२ भाग
६८७	१०	६-६ रत्नी गरमपानी ... ..	६-६ रत्नी क्षारोंकेसाय अथवा गरमपानी
६९०	८-९-१०-११	भंगरेकेरसकी २-३ भारनाएँ देकर ... ..	भंगरा, बिजोरा, हल्दी, अदरक, प्रसारिणी, दोनोटुलसी, नागरमोथा, आंवले इनके स्वरससे १-१ भावना देकर हमलीके बीजबराबर गोलियेबनाकर रगड़ोके । इनमेंसे १-१ गोली छेद पुनर्नवाकेरस, छाछ
६९१	३२	भंगरेकेरससे ... ..	अदरकके रससे
६९३	१४	भांगरेके ... ..	भांगरेके
६९६	२	पनोंसे ... ..	गुप्फोंसे

## द्विविधसूचीरहस्य

इसप्रन्थमें लगभग सवाचारद्वजार रसप्रयोगोंका सङ्ग्रह होनेसे रसयोगसागर यह अन्यर्थ नाम है । इतने अथाह समुद्रमेंसे अभीष्ट योगको निकालना साधारण बात नहीं है । इसलिये इसकी रोगानुसारिणी सूची बनाकर इसके अन्तमें ल्याई गई है । सूचीमें प्रथम रोगोक्तेनाम दिये गये हैं जैसे ज्वरे इत्यादि । रसोंकी सङ्ख्याके नीचे स्वरा, ऊ, उ, रु, पु, अन्तःस्थाः, ऊष्म (ऊष्माण) ऐसे सङ्केत दिये गये हैं । यद्यपि ये सङ्केत विद्वानोंसे परित्यक्त होते हैं परन्तु सर्वसाधारणके लिये नीचे स्पष्टता की जाती है जैसे स्वराः इस सङ्केतसे अ आ ई, उ ऊ ऋ ए ऌ ७. ए. ऐ ओ. औ. अं. अः इन १६ अक्षरोंका बोध होता है । ऊ से क. ख ग. घ ङ. ५ । उ से च छ. ज झ. ण. ट. ठ. ड. ढ ण. १० । रु से त. थ. द. ध. न ५ । पु से प. फ. ब. भ. म ५ । अन्तःस्थाः से य. र. ल. व. ४ । ऊष्माणः से श. ष. स. ह. क्ष. झ. ६ इनका बोध होता है । व्याकरणके अनुसार यद्यपि ॥ और ॥ ऊष्ममें नहीं आते हैं । संयुक्तस्वर होनेके कारण झ का चवगमें समावेश होना अत्यावश्यक था क्योंकि ज और भ के संयोगसे यह बना हुआ है और वे दोनोंही चवगमें आजाते हैं परन्तु क और सके संयोगसे क्ष बना हुआ है इसमें वितण्डाका सम्भव है कि इसे चवगमें रक्षणाजय था ऊष्ममें ? । वर्णमालिकाको प्रधान रखकर ऊष्मके अन्त्यमें रक्षणागया है । अगस्त्यसंहिता और मुण्डमाला प्रभृति तन्त्रोंमें बाह्यान्तर्मातृकाभ्यासादिचौमें ऐसाही क्रम रक्षणागया है । वर्णमालिकामें तो क्ष को मेरुस्थानाऽऽपम रक्षणाजाता है यह बात तान्त्रिकसिद्धान्तमें प्रसिद्ध है । इनविषाओंसे क्ष को ऊष्मके अन्त्यमें रक्षणागया तब उसके आगे झ कोभी रख दिया है इसलिये ऊष्मसे श. प. स. द. ध. ङ इन ६ अक्षरोंका विन्यास किया हुआ है । केवल नामसेही किसी रसका पाठ देना हो तो समस्त प्रन्थमें अकारादिक्रमसे रसोंका विन्यास किया हुआ है उसे निकालकर देख लें । यदि किसी रोगके लिये कोई रस देना हो तो सूचीमें दिये हुए ज्वरादिरोगोंके नीचेके अङ्कोंको निकालकर देख लें । इस-प्रन्थमें सौकरार्थ स्वरा. ऊ. उ. रु. पु. अन्तःस्थ और ऊष्म ऐसे सङ्ख्याके ७ विभाग किये हुए हैं जैसे स्वरा में १ अगदेवर, ऊ में १ कङ्कालसेचरीवटी, उ में १ चक्रमर, रु में १ तक्रमण्डूर, पु में १ पक्षिचालहर, अन्तःस्थ में १ यकृत्प्लीहाहरीलोह, ऊष्म में १ शकटाक्षविह्वटी, इसतरह सातसङ्ख्याओंके सङ्केतोंको समझ लेना । बस इसतरह यह प्रन्थ समाप्त होता है । इसके बाद सूचीमें अ व्या. यह सङ्केत आता है । इसमें अगस्त्य और व्याससम्प्रदायको लक्षित किया है यह आठवीं सङ्ख्या है । इसके बाद परिशिष्टभाग रक्षणागया है उसका सङ्केत परि० ऐसा रखा है । इसमें दक्षिणेश्वरप्रसिद्ध कृष्णभूषालीयप्रभृति प्रन्थोंके योग हैं और सङ्ग्रह करनेके समय कई कारणोंसे छूटे हुए

योगोंका सङ्ग्रह है इसकीभी सङ्ख्या उन्नीस है इसतरह ९ विभागोंमें इसकी सूची समाप्त होती है । ऐसी सूची दो हैं एक रोगानुसारिणी दूसरी अधिकारानुसारिणी । रोगानुसारिणी सूचीमें योगोक्त प्रधान २ सभीरोगोंका सङ्ग्रह है इसलिये इसका आकार बहुत बड़ा होगा है । केवल ज्वरमें २४०० के लगभग रस आये हैं । इतनेमेंसे साधारण आदमीका काम नहीं है जो कि अपने अभीष्टयोगको निकाल लेवे इसलिये अधिकारपरत्वेन दूसरी सूची बनाई गई है इसमें १ योग एवहीरोगमें आया है । तोभी ज्वराधिकारमें लगभग ७०० रस आये हैं इन्हें देखकर यह कल्पना स्वाभाविक होती है कि एक रोगमें इतने योगोंकी भरमार क्यों हुई ? पर इसका रहस्य ऐसा है कि आयुर्वेदमें ज्वरको बहुतही प्रधानता दी गई है इसके पेटमें बहुतसे रोग आजाते हैं इसीलिये “देहेन्द्रियमन-स्तापी सर्वरोगप्रजो बली । ज्वरः प्रधानो रोगाणामुक्तो भग-वता पुरा ॥” ऐसा कहा गया है और बरकने तो रोगसामान्यका नाम ज्वर रखा है इसलिये ज्वरके बहुतसे योग अन्यव्याधि-योंमें काम करते हैं जैसा कि रोगानुसारिणी सूचीमें दिया गया है । अन्यरोगोंमें इतनी भरती नहीं है बाजू २ रोगोंमें तो एक एक ही योग आये हुए हैं जैसे कि छलसन्निपातप्रभृति । कदाचित् वह योग किसीजगह काम न देवे तो ऐसा न समझना कि इसके लिये अब दुनियामें कोई योगही नहीं है ऐसी जगहमें जितने सन्निपातके योग हैं वे प्रायः सभी काम देते हैं । बहुत जगह तो जिसरोगका विशेषपरिचय नहीं है पर उसमें ज्वर है तो उसमें साधारण और विशेषज्वरज्ञ सभी औषधें काम देती हैं जैसे कि इनफ्लूएन्झा प्रभृतिमें अथवा प्लेगमें हुआ । इनरोगोंमें अन्य वैधीवाले रास्ताही खोजते रह गये पर आयुर्वेदोपासक दोषोंकी प्रधानताको देखकर सन्निपातमेवर प्रभृति योगोंको देखर रोगियोंके आशावांछानुगुण्ये इसीलिये बरकने कहा है कि “विकारनामाऽङ्गलो न जिहीयात्कदाचन । न हि सर्वविकाराणां नामतोऽस्ति ध्रुवा स्थिति ॥” अर्थात् अर्थमकी उत्कटतासे जब कि जनपदबुद्धिकारक सङ्क्रमक-व्याधियां निकल पड़ती हैं उनका नामविशेष मादूम न होनेसे वैद्य लज्जित न होकर दोषोंकी उत्कटताकी तरफ ध्यान देकर चिकित्सा करे उसमें वैद्यको यश मिलता है । ऐसी ऐसी सब व्याधियोंके नाम धातुमें नहीं आया करते हैं । एकविशेष-घात ध्यानमें रखनेलायक यह है कि ज्वररोगोंमें प्रायः ज्वरोंमें और ज्वरजनित उपद्रवोंमें कामदिया करते हैं इसलिये प्रन्थकारोंने ज्वरके लिये बहुतही योगनिर्माण किये हैं । उन्हें औचित्यदेखकर कास, श्वास, मूर्च्छा, कन्धा, घातव्याधि प्रभृतिमें निगूढकरना उचित है केवल अधिकारको पकड़कर बैठ रहना उचित नहीं है । इसीतरह रसायनयोगोंको अग्नेह, शोष, राज-

यश्म, जीर्णज्वर और कृशताप्रभृतिमें प्रयुक्तकरना उचितहै । इस सूत्रसे जिनरोगोंमें अल्पयोग आयेहै वहापर घबड़ाना न चाहिये, बुद्धिसे काम लियाजायगा तो सैकड़ोंयोग तैयार होजायगे । जिसतरह सागर ( समुद्र ) रत्नोंका आकर होनेपरभी सबको रत्नोंकी पोछी नहीं देदेताहै किन्तु वे रत्न गोते लपानेवालोंके ही हाथलगतेहैं इसीतरह यह ( रसयोगसागर ) ज्ञाताऽज्ञातसमस्तरोगोंको दूरकरनेवाले योगोंका सागरहै तथापि जैसा आयुर्वेदाम्यासीकेलिये उपयोगीहै वैसा जनम्यासीकेलिये नहींहै वैसे तो समुद्रका उपयोग लवणकेलिये मनुष्य-

पशुपक्षि सर्वसाधारणहै पर जिस सीछसे उसके ज्ञाता काम, लेतेहै वैसा अज्ञ नहीं । इस ग्रन्थकेरहेतेहुए किसीभी योगके बनानेके नामसे कोई किसीको ठग नहींसकाहै इतना उपयोग तो सर्वसाधारणकेलिये अनिवार्यहै । इसलिये धीमन्तोंके घर-मेंभी इसरो स्थानदेना अत्यावश्यकहै । इसकेबाद रोगानुसारिणी और अधिकारानुसारिणी सूची क्रमसे दीहुईहै उन्हें देखो । इनसूचियोंमें स्थानरातादि रोगोंके विचित्रनाम आतेहै वे दक्षिणदेशप्रसिद्धरोगहैं उनके लक्षण माधवनिदानादि-ग्रन्थोंमें नहींहै इसलिये वे यहाँ देदियेजातेहैं यथा—

## दक्षिणदेशप्रसिद्धा रोगविशेषाः

( वसवराजीयतोऽवगन्तव्याः )



### स्थानवातलक्षणम्

महाघातो भवेद्देहे दिवारात्रौ च शूलनम् ।  
सदानिरसनं स्वेदः स्थानवातस्य लक्षणम् ॥

### शीतवातलक्षणम्

वेहेऽतिशीतता मूर्च्छा नेत्रघ्नममशेष च ।  
कण्ठशूलं शिरःशूलं शीतघातस्य लक्षणम् ॥

### मधुवातलक्षणम्

ज्वरः पाण्डुश्च हिक्का च नासिकाऽस्रस्रुतिस्तथा ।  
देहकण्डूः शिरःकण्डूः कफः स्थान्मधुघातके ॥

### गुल्फवातलक्षणम्

शरीरं पाण्डुवर्णञ्च कटिदेशे च तापनम् ।  
शिरःशूलं नेत्रशूलं गुल्फशूलं विदाहिक्का ॥  
तन्निद्रा नश्यते रात्रौ गुल्फघातस्य लक्षणम् ॥

### शूलवातलक्षणम्

इन्द्रियं पुंस्त्ववर्ज्यञ्च विदाहञ्च विकारिताम् ।  
अन्तर्वायुः प्रकुर्वीत शूलघातस्य लक्षणम् ॥

### क्षीणवातलक्षणम्

क्षीणे च घाते शिरसोव्यथा च  
नासानपे दुःखितमङ्गशूलम् ।  
दिवा च रात्रौ च विनष्टनिद्राः  
कपालनेत्रे च विवृद्धशूलम् ॥

### स्नायुकवातलक्षणम्

देहस्य स्फुटनं पुंसामङ्गवैकल्यपीडनम् ।  
देहशोफो नेत्रशूलं स्नायुघातस्य लक्षणम् ॥

### शृङ्खलावातलक्षणम्

पाण्डुता शुष्कता वेहे निद्रानाशः शिरोव्यथा ।  
यान्ति हिक्का च विस्फोटः शृङ्खलावातलक्षणम् ॥

### विलोमवातलक्षणम्

तन्द्राधिस्यमतिश्वासः पाण्डुता नेत्रशूलनम् ।  
स्वेदो हिक्काऽतिरान्तिश्च विलोमघातलक्षणम् ॥

### दधिवातलक्षणम्

अक्षिशूलं कर्णशूलं नासाशूलं शिरोघ्नम् ।  
हिक्काऽतिसारकं चैव दधिघातस्य लक्षणम् ॥

### मन्दवातलक्षणम्

पाण्डुता च घ्नमो मूर्च्छा स्वेदः कण्ठे परिघ्नम् ।  
यान्तिरामघ्निकारश्च मन्दघातस्य लक्षणम् ॥

### रक्तवातलक्षणम्

रक्तयान्तिश्च हिक्का च मूर्च्छा दाहश्च कम्पनम् ।  
देहकान्तिहरः स्वेदो रक्तघातस्य लक्षणम् ॥

### सुप्तवातलक्षणम्

भयं बीभत्सता रौटं शोथः कर्णान्तरुग्मवेत् ।  
मूर्च्छाकम्पघ्नमस्वेदाः सुप्तघातं विनिर्दिशेत् ॥

### भोगवातलक्षणम्

विधुमञ्च विदाहः स्यादम्लोद्धारः प्ररम्पनम् ।  
अङ्गवैकल्यक्रोपी च विस्पष्टं घातकोपनम् ॥  
नेत्रशूलं शिरःशूलं भोगघातस्य लक्षणम् ।

## किक्किसावातलक्षणम्

कटिप्रदेशशूलञ्च महाशूलाऽवरोधनम् ।  
पादे पीडा शिरोघ्राणे किक्किसावातलक्षणम् ॥

## क्रोधपित्तलक्षणम्

सदा च तामसाचारी दुर्भाषा तीव्रतायुष्मा ।  
शिरोभ्रमणदोषश्च क्रोधपित्तं विनिर्दिशेत् ॥

## मधुपित्तलक्षणम्

अहचि मधुरोद्रेकः उपःकाले च कोपिता ।  
शिरोभ्रमणमाधुर्यं छर्द्दीरोष्णाञ्च हर्षणम् ॥

## चर्मपित्तलक्षणम्

जिह्वाङ्गे चर्मशीर्णत्वं करपादौष्ठकादिके ।  
शीघ्रकण्ठपलं हिक्का चर्मपित्तस्य दोषजाः ॥

## मूर्च्छापित्तलक्षणम्

अहचि मधुरं चक्त्रं प्रसेको भ्रममूर्च्छनम् ।  
छर्द्दीरोमाञ्चकश्चैव मूर्च्छापित्तस्य लक्षणम् ॥

## कुसुमपित्तलक्षणम्

आतापो नासिकारतमतिदुष्णा प्रपीडनम् ।  
कचिच्छोणितवाहश्च कुसुमं शीघ्रसम्भवम् ॥

## भ्रंशपित्तलक्षणम्

अपभ्रंशो मतिस्त्वम्भः सदा चिन्तानिरीक्षणम् ।  
सम्भाषणमतिकोधाद् भ्रंशपित्तस्य लक्षणम् ॥

## सुखसन्निपातलक्षणम्

तरुणज्वरमध्ये तु युवतीसङ्गमो यदा ।  
तत्क्षणाद्द्वारुणादोषाद्गन्धैककल्पनम् ॥  
वक्षोऽन्तरे च सन्तापः प्रलापस्तापविभ्रमौ ।  
पाणिपादतले शीते दोषस्त्रीसङ्गमे स्मृतः ॥

## अथ मानविवरणे सुश्रुतः



“पलकुडयादीनामतो मानं तु ध्यास्यास्यामः ।  
तत्र द्वादश धान्यमाया मद्यमाः सुवर्णमापकः, ते  
पीडाश सुवर्णं, अथवा मध्यमनिष्पावा एकोनविं-  
शतिधरणं, तान्यर्द्धतृतीयानि कर्पः, ततश्चोर्द्धं चतुर्गु-  
णमभिवर्धयन्तः पलकुडयप्रस्थादकद्रोणा इत्यभिनि-  
ष्पद्यन्ते, तुला पलशतं, तानि विंशतिभारः । शुष्काणां  
मिदं मानं, आर्द्रद्रव्याणाञ्च द्विगुणमिति ॥ चि.३.१७”

## अथ शार्ङ्गधरोक्तं मागधीयं मानम्

असरेणुर्बुधैः प्रोक्तस्त्रिंशता परमाणुभिः ।  
असरेणुस्तु पर्यायनाम्ना वंशी निगद्यते ॥  
जालान्तरगते भानौ यत्सूक्ष्मं दृश्यते रजः ।  
तस्य त्रिंशत्तमो भागः परमाणुः स कथ्यते ॥  
जालान्तरगतैः सूर्यकरैर्वंशी विलोम्यते ।  
पट्टंशीमिर्मरीचिः स्यात्तामिः पट्टिस्तु राजिका ॥  
विष्टमी राजिकामिश्च सर्पपः प्रोच्यते बुधैः ।  
यवोऽष्टसर्पपैः प्रोक्तो गुड्या स्यात्तच्चतुष्टयम् ॥  
पट्टिस्तु रक्तिकाभिः स्यान्मापको हेमधान्यकौ ।  
मापैश्चतुर्भिः शाणः स्याद्वरणः स निगद्यते ॥  
दङ्कः स एव कथितस्तद्वयं कोल उच्यते ।  
क्षुद्रको वटकश्चैव द्रवणः स निगद्यते ॥  
कोलद्वयञ्च कर्पः स्यात्स प्रोक्तः पाणिमानिका ।  
अक्षं पिबुः पाणितल किञ्चित्पाणिश्च तिन्दुकम् ॥

विडालपदकं चैव तथा पोडशिका मता ।  
करमण्यो हंसपदं सुवर्णं कवलप्रहः ॥  
उदुम्बरश्च पर्यायैः कर्प एव निगद्यते ।  
स्यात्कर्पाभ्यामर्द्धपलं शुक्तिरष्टमिका तथा ॥  
शुक्तिभ्याश्च पलं द्वेयं मुष्टिरात्रं चतुर्थिका ।  
प्रकुञ्जं पोडशी पित्तं पलमेवात्र कीर्त्यते ॥  
पलाभ्यां प्रसृतिर्द्वेया प्रसृतश्च निगद्यते ।  
प्रसृतिभ्यामञ्जलिः स्यात्कुडयोऽर्द्धशरावकः ॥  
अष्टमानं च स द्वेयः कुडवाभ्याश्च मानिका ।  
शरावोऽष्टपलं तद्वज्ज्वलमत्र विचक्षणैः ॥  
शरावाभ्यां भवेत्स्यश्चतुष्पत्यैस्तथादकम् ।  
भाजनं कंसपात्रञ्च चतुःषष्टिपलं च तत् ॥  
चतुर्भिरादकैर्द्रोणः कलशो नव्वणोर्मणौ ।  
उन्मानश्च घटो राशिर्द्रोणपर्यायसञ्ज्ञकाः ॥  
द्रोणाभ्यां शूर्पकुम्भौ च चतुःषष्टिशरावकः ।  
शूर्पाभ्यां च भवेद्द्रोणी चाहो गोणी च सा स्मृता ॥  
द्रोणीचतुष्टयं खारी कथिता सूक्ष्मशुद्धिभिः ।  
चतुःसहस्रपलिका पण्यवत्यधिका च सा ॥  
पलानां द्विसहस्रञ्च भार एकः प्रकीर्तितः ।  
तुला पलशतं द्वेया सर्वत्रैवैव निश्चयः ॥  
मापट्टङ्गाक्षविवरानि कुडयः प्रस्थमादकम् ।  
राशिगोणी खारिकेति यथोत्तरचतुर्गुणाः ॥

### अथ कलिङ्गदेशीयमानम्

ययो द्वादशभिर्गौरसर्पैः प्रोच्यते बुधैः ।

यद्यद्वयेन गुञ्जा स्याद्विगुणो यत्न उच्यते ॥

मापो गुञ्जामिरष्टाभिः सप्तभिर्वा भवेत्कचित् ।

स्याद्युतर्मापैकैः शाणः स निष्कष्टः एव च ॥

गद्याणो मापकैः पङ्क्तिः कर्पः स्यादशमापिकः ।

चतुष्कर्पैः पलं प्रोक्तं दशशाणमितं बुधैः ॥

चतुष्पलैश्च कुडवं प्रस्थाद्याः पूर्ववन्मताः ॥ इति ॥

उपरिनिर्दिष्ट मानोंमें प्रथममान सुश्रुतोक्त है और द्वितीय तथा तृतीय शार्ङ्गधरोक्त है । शार्ङ्गधरका प्रथममान मागध है और द्वितीय कलिङ्गदेशीय है । इन दोनों मानोंमेंसे मागधमान को ही श्रेष्ठवत्ताया है "मानञ्च द्विविधं प्राहुः कालिङ्गं मागधं तथा । कालिङ्गान्मागध भेदेनैव मानविदो विदुः ॥ च. क. १२।१०२, इसलिये सुश्रुतीयमानकेसाथ शार्ङ्गधरोक्त मागधमानकी तुलना की जाती है । सुश्रुतमें १२ उक्कदा १ मापा माना है तथा शार्ङ्गधरमें ६ रत्तीका १ मासा माना है और कर्पको दोनोमें १६ माशेका लिखा है । वजनकरनेसे १ रत्तीके बराबर दो उक्कद होते हैं । सुश्रुतके हिसाबसे एककर्पमें १९२ उक्कदोते हैं और शार्ङ्गधरमें ६ रत्तीके माशेके हिसाबसे ९६ रत्तिये होती हैं । इन रत्तियोंको द्विगुणकरनेसे १९२ उक्कद बनते हैं इससे यह सिद्ध होता है कि सुश्रुतको भी ९६ रत्तीका कर्प और ६ रत्तीकाही मासा मान्य है सो शार्ङ्गधरके मानके बराबर है । आजकल व्यवहारमें एकतोलेनीभी रत्तिये ९६ मानी जाती हैं । कितनेही लोग ३२ बालका तोला मानते हैं वहापर परिशुद्ध लालरंगका बाल लिया जाता है वह ३ रत्तीके लगभगहोनेसे बेही तोलेमें ९६ रत्तिये गिनी जाती हैं पर वह प्रमाण ठीक नहीं है । लालरङ्गके बालोंकी विषमताके कारण कितनेही लोग ४० बालोंका तोला मानते हैं इसीलिये सुश्रुतने मध्यमनिष्पावोंसे वजनको नियत किया है वह बराबर है । वैसो तो ही प्रयुक्तित्नोंके तोलेमें ६२ रत्तियोंकाही तोला लिया जाता है पर वह एकदम परिशुद्ध लालरंगी अथवा साधारण रत्तीफल ( यह कालेदानेकी जाती है इसे पटनेप्रयुक्तिके जखली लोग रत्तीके नामसेही पुकारते हैं उसका बीज लम्बा होता है ) एकतोलेमें लगभग ६२ या ६३ चडते हैं वह तोला ९६ रत्तीके तोलेसे लगभग १ चावल अधिक होता है । इसलिये सुश्रुतीय जो कर्प है उसका सब तोलोंसेसाथ सादर्य आता है यह देखकर उन ऋषियोंके बुद्धिबेभवपर किस गुणप्राप्तीके अन्तकारणमें पुण्यभाव उत्पन्न न होगा ? निष्कर्षमें उपरिनिर्दिष्टकर्प और व्यावहारिकतोला एकबराबर होता है । यदि आजकलके प्रचलित रुपयोंकेसाथ बराबरी करनी हो तो प्रथमजानेका जो किन्विय रहित नया सिक्का है वह उपरिनिर्दिष्ट तोला या कर्पके बराबर वजनमें है परन्तु इससे पहिलेके दो सिक्के कुछ कम हैं इसलिये रुपयोंसे तोलनेका कामलिया जाय तो वर्तमान नये सिक्के

लेना उचित है पर एकान्त उद्यपरमी भरोसा न रखना उद्यमेंभी एकदूसरेमें टक्कालकी गलतीसे अथवा घिसनेसे अथवा तेजावमें डालकर चांदी निकालनेकी वजहसे कुछ फेर रहता है इसवातपर ध्यान रखना । कर्पके १६ माशे मानेगये हैं और आजकल तोलेके १२ माशे मानेजाते हैं इसजगह आपात विरोध आता है परन्तु तोलेमें मापा ८ रत्तीका मानाजाता है उपरिनिर्दिष्ट कर्पमें ६ रत्तीका माना है इसलिये कर्पमें १६ और तोलेमें १२ माशेका आभासमानमें प्रतीत होता है वास्तविकमें नहीं ।

सुश्रुतमें धरणाकामान "अथवा मध्यमनिष्पाव वा एकोनविंशतिपरिणम्, तान्यधैर्तृतीयानि कर्प" इत्यतः दिया है । इसवाक्यसे कर्पका २५ वा हिस्सा धरणहोता है और उद्यमें १ कर्पका १५ वा भाग ७७ उक्कद अर्थात् ३८॥ रत्ती होती है । सुश्रुतने १९ मध्यम निष्पावोंका (संकेतबीजोंका) १ धरण कहा है । इसलिये एकनिष्पाव २ रत्तीके लगभगहोता है यह प्रमाण अन्यकिसीमानसे नहीं मिलता । यद्यपि शार्ङ्गधरने शाणकापर्याय धरण दिया है पर वह सुश्रुतसेविपरीत है । इसका भेद आगे कलिङ्गमानके कोष्ठके मालूमहोगा । यहापर "एलस्य दशमात्रेण धरणं परिकीर्तितम्" इस कृष्णात्रेयके बचनकी तरफ शार्ङ्गधरका ध्यान चलानाचाही और कलिङ्गमानमें पलका दशमात्र शाण होता है इसलिये शाणका पर्याय समझकर धरण लिखदियाहो यह सम्भव है परन्तु कृष्णात्रेयका मान खराब उसमें पलका दशमात्र शाण नहीं आता है इसलिये यह शार्ङ्गधरकी भूल है । वङ्गधरादियोग खास सुश्रुतके हैं अन्यग्रन्थोंमेंभी सुश्रुतहीसे गये हैं इसलिये इसका हिसाबकरनेमें शार्ङ्गधरने गलतीकी है खबर न पढ़नेसे शाणका नाम रखदिया है । इसीतरह वैदिकशब्दसिन्धुमें भी "पलदशमात्रोऽयं योगः पञ्चगुणमात्रेण प्रत्यादेयः" यहापर सुश्रुतीय माशेको ५ रत्तीका समझा है यह भी भूल है । ५ रत्तीकामापा वैजयन्तीकोप और दार्ढ्यबल्यस्मृतिकी मिताक्षराटीकामें दिया हुआ है—"प्रसेणुमि-रष्टाभिर्लिखा सैव मरीचिका । रपेणुष रेणुष तात्तिसो राज सपै ॥ धुरण्य यन्मात्रं ते नयो गौरसर्प ॥ तेऽष्टौ यष योऽष्ट ॥ यवा मापोऽयथा त्रिभिः । यवैर्युञ्जा पञ्च युञ्जा माष कुन्ये तु सप्त ता ॥ ल्यमापो द्विगुणो वा धरण योऽष्टैव ते । अतमान तु दशभिर्धरेण पलमेव च" इत्यादि वैजयन्तीकोप अथवा "जालस्यमरीचिष्व नवरेणु रज स्मृतम् । तेऽष्टौ लिखा च तात्तिसो राजसपै उच्यते ॥ गौरस्तु ते त्रय पञ्चभिर्वयो मय्यस्तु ते त्रय । कृष्णल पञ्च ते मापस्ते सुवर्णस्तु योऽष्ट" मिताक्षरा टीका । वैजयन्तीकारने २ गुञ्जाका ल्यमापा मानकर १६ ल्यमापाओंका धरण बनाया है वह ३२ रत्तीका होता है और "दशभिर्धरेण पलमेव च" इसवाक्यसे पलका १० वांभाग धरणहोता है । इनदोनों वाक्योंमें परस्पर विरोधवा प्रतीत होता है परन्तु ५ रत्तीके माशेके हिसाबसे भी पलके

१० वेदित्सोमं ३२ ही रती आतीहै इषसे विरोध नहीं आता पन्तु सुप्रतीय धरण इनसबसे जुदाहै ॥ "फलस्य दशमोत्तेन धरणे परिधीर्तिरुतम्" यह इन्द्रजयेयका वाक्यहै सो सुप्रुत्ते बराबर मिलताहै ।

गद्याणकामान शार्ङ्गपर और यत्रतत्र प्राकृतमे आताहै । प्राकृतमे इषकेलिये खास कोई परिभाषा नहींहै । मादुमहोताहै कि शार्ङ्गपरहीसे उठाकर लोगोंने रक्खा होगा । शार्ङ्गपर और इन्द्रजयेय दोनोने १ मासोका इषे बतलाया है और मासोका प्रमाणभी दोनोका बराबरहै इसलिये अद्वाचर्ही गणान आवे वही ४८ रतीका सेना उचितहै ।

उपदसे नीचेका जो मानहै उसे परक और शार्ङ्गपर प्रयुति ने दियाहै । उसका आरम्भ परमाणुसे कियाहै परन्तु वह किसीका किसीकेसाथ नहीं मिलता । कारणहै कि उसका आरम्भ परमाणुसे किया हुआहै वह आनुमानिकहै उसका तोल कटिपर होना अव्यम्बवहै । यद्यपि राजिकावपैरहका तोल कटि प्रयुतिसे होसकताहै पर बीजरूपहोनेसे उनकाभी यथार्थ तोल नहीं होसकता, कारणकि जब एककलीमे होनेवाले बीजोंकी भी प्रायः परस्पर सादृश्य नहीं होती सब दूसरे वृक्ष और विभिन्न २ भूमि तथा कालमे उत्पन्नहोनेवाले बीजोंकी सादृश्य कम होगी । इसका अन्तर देखनाहो तो बीजोंको तोलकर सादृशी करते यही कारणहै कि "यसो द्वादशभिर्गौरसर्पैः प्रोच्यते पुषेः ।" यहापर कालिप्रमाणमे १२ सर्पका जब बतलायाहै और माधममाणमे "यसोऽष्टसर्पैः प्रोचो" ऐसा पूर्वसे विपद लिखाहै । यह तो मूर्खभी जान सकताहै कि यह वाक्य विशिष्टके सिवाय कौन लिखेगा । परन्तु इसमे ऐसा नहींहै यह बीजोंके फेरसे हुआहै । पुष्ट पीठीसरसोंके अन्दाजसे ८ सर्पकाही १ जब होताहै और छोटी सर्प १२ चकतीहै वच इतनाही भेद हुआहै । कोई कदाचित् यह कहकर अपना पिण्ड धुझावे कि सर्पपादिक पदार्थ कास्मनिकहै और कल्पनामे सब धूपक धूपक कहने परमी विरोध नहीं होसकता । परन्तु यह बात यथार्थ नहींहै क्यों कि जब कल्पना ही करनी थी तो "जालान्तरगतैः सूर्यकैर्वैशी विलोक्यते" इत्यादि वाक्य लिखनेकी कोई जरूरत नहींथी । इससे यह स्पष्ट प्रतीत होताहै कि सर्पपादिक पदार्थ कास्मनिक नहींहै किन्तु सहीहै । उनके समय, क्षेत्र और देशप्रयुक्तिके भेदोंसे बीजोंमे भेदहोनेसे यह सब पाप धुसबोहोहै इसीविषयको सोचकर सुधुत्तेन नीचेके प्रमाणको न लिखकर केवल उपदसे प्रमाणका आरम्भ कियाहै । एक और भी कारणहै कि सुप्रतीय औषधोंमे उपदसे नीचेके प्रमाणकी अपेक्षाभी नहींहै । ॥ रसप्रयोगमे दृष्टिप्रयुक्तिकी भस्मोंमे राजिकाप्रयुक्तिके मानकी आवश्यकता रहतीहै तब बहोर प्रायः करके बीजोंके आकारसे रोगीके बलाघलको देखकर मात्राका निर्धारणकरना यह वैयका खास कर्तव्यहै इसीलिये ॥ स्थिति नोस्त्येव मानाया । कालमार्ग वसो बलम् । प्रकृति दोषदेसौ न दृष्टा मात्रा प्रकल्पयेत्" इत्यादि वाक्य कहेहुएहै ।

"पङ्कश्यस्तु मरीचि स्यात्पगमरीन्यस्तु सर्पः । अष्टौ ते सर्पेपा रक्षास्तपुल्लथापि तद्वयम् ॥" चरक ॥ "जालान्तरगतैः सूर्यकैर्वैशी विलोक्यते । पङ्कशीभिर्मरीचिः स्यातामि पङ्कस्तु राजिका ॥ तिस्रमी राजिकाभिध सर्पः प्रोच्यते पुषे ॥" इत्यादि शार्ङ्गपरीय पाठ आपसमे मिलते नहींहै उसका कारण यहहै कि सूक्ष्मवस्तुओंका विचारहै वह ध्यानमे न आनेसे औपारिष्टिक अनुमानकरके लोगोंने बिगाड़ाहै इसलिये परस्पर विरोध मादुमहोताहै शार्ङ्गपरने कोई अपना स्वतन्त्र मत नहीं प्रदर्शित कियाहै किन्तु प्राचीन संहिताओंके आधारही पर ग्रन्थ लिखाहै । चरकीयपाठको न समझनेसे लोगोंने बिगाड़ाहै इसीलिये यह विरोध आकर खड़ाहुआहै । चर कीयपाठ "जालान्तरगतैः सूर्यकैर्वैशी विलोक्यते । पङ्कश्यस्तु मरीचि स्यात्पगमरीन्यस्तु राजिका ॥ तिस्रमी राजिकाभिध रक्षसर्पः इच्यते । अष्टौ ते सर्पेपा रक्षास्तपुल्लथापि तद्वयम् ॥" ऐसाहोनाउचितहै । ३ राईका १ रक्षसर्प और २ रक्षसर्पका १ गौरसर्प प्रत्यर्थहै इसमे सन्देहका कोई अवसरनहींहै ।

वर्तमान चरकीयपाठ "पङ्कश्यस्तु मरीचि स्यात्पगमरीन्यस्तु सर्पः । अष्टौ ते सर्पेपा रक्षास्तपुल्लथापि तद्वयम् ॥ धान्यमापो भवेदेको धान्यमापद्वयं यव । अण्डिकास्ते तु चत्वारस्तायस्तस्तु मापका ॥ हेमच धानकथोको भवेकजगन्तु ते त्रय ॥" ऐसा मिलताहै । इसमे रत्ति या रक्ति यह पाठ अशुद्धहै इसकी जगह रक्षा ऐसा चाहिये क्योंकि यह सर्पोंका विशेषणहै और इसकी साक्षी चक्रपाणिदत्तभी देरहै हैं । "धान्यमापद्वयं यव" यह पाठभी अशुद्धहै क्योंकि धान्यमाप और चतुप यवका बज्रन एकबराबरहोताहै इसीलिये चक्रपाणिदत्तने पूर्वटीकाकारोंका मत बतलाते हुए "ते तु चत्वार इति-यवचत्वारः, अन्ये तु मापाधत्वारश्च अण्डिका इति वदन्ति" ऐसा लिखाहै यहापर गौर करके देखिये यव और धान्यमाप समप्रमाणहोनेसेही किसीटीकाकाले ४यवकी अण्डिका बतलाई और दूसरोंने ४धान्यमापकी अण्डिका बताईहै इनदोनोका अभिप्राय एकहीहै । चक्रपाणि दत्तको अशुद्धपाठका भेद नहीं मादुम हुआ इसीलिये वैचारे मोहजालमे पड़े । इसकाभी कारण यह मादुमहोताहै कि अण्डिकाचत्वार्य इनको क्षात न हुआ यहाकी अण्डिका सुधुतीय निष्पावहै जिसे कि हिन्दीमे सेमकाबीज कहतेहैं । उसे समकक्ष ४ यवकेसाथ अथवा ४ उड़दोंकेसाथ तोलकर देल-लीजिये बराबरहोताहै । इसलिये "धान्यमापद्वयं यव" के स्थानमे "धान्यमापसमो यव" ऐसा पाठ होना उचितहै । "अण्डिकास्ते तु" यह पाठभी अशुद्धहै क्योंकि ४ यव अथवा उड़दोंकी १ अण्डिका होतीहै एकवचन होनेसे विसर्ग अथवा सकार नहीं रहसकता यह अज्ञान हत पाठहै । कृष्णा-त्रेयमे मतान्तरकेनामसे "अण्डिका चापि निर्दिष्टा वृष्णिमाप द्वयेन वै" यह विलक्षण अण्डिका बतलाईहै यहापर मापशब्दसे धान्यमाप समझना इसलिये यह शुद्धका पदार्थहै अण्डाकृति

होनेसे अण्डिका मानलीहै पर यह चरकमुद्रतीय अण्डिका नहीं है ।

“हेमश्च धानकयोक्तो” यह भी पाठ अशुद्ध है । आचार्यने मापशब्दके दो अर्थ बतलाए हैं अर्थात् १ सुवर्णका माप और दूसरा अनाजका माप अर्थात् उड़द । धान्यशब्दसे स्वार्थमें ‘कृ’ प्रत्ययकरके धान्यक शब्द बनाया हुआ है अर्थात् माप अथवा मापक शब्द जहां आता है वहां सुवर्ण-माप अर्थात् १६ उड़द और एक अन्नविशेष यानी १ उड़दका बोध होता है इसभेदको बताना आचार्यका अभिप्राय है । वह अभिप्राय ‘हेमश्च धान्यकयोक्तो’ इसतरहके पाठहोनेसे व्यक्त होसकता है ।

कोई दुराप्रवाहित यह कहे कि यहांपर “हेमश्च धानश्च” ऐसाही पाठहै क्योंकि इसपाठको लिखतेहुए अष्टाङ्गसङ्ग्रहकारने “मापकस्य पर्यायो हेमो धानकश्च” ऐसा लिखा है इसलिये ये दोनों मापने पर्यायहै आप जैसा कह रहे हैं वसा नहीं है । इसजगहपर सर्वतः प्रथम अकारान्त हेमशब्दका होना सम्भव है या नहीं ? यह विचारणीय है । “हि गतौ” स्वादिसे मनिन् प्रत्यय करनेसे हेमन् शब्द बनता है इसलिये हेमन् नकारान्त शब्द होता है न कि अकारान्त, यह प्रथम विषय है । कदाचित् कोई शब्दशास्त्र पर अनास्याकरके पृथक्तासे अकारान्त माननी लेये तो सुवर्ण शब्दको कर्षका पर्याय माना है और सुवर्णकार्पाय हेम है । पर्यायशब्दोंका यथेष्ट प्रयोग होता है तब हेम शब्दके प्रयोगमें कर्ष लिया जाय या माया । यह भारी विपत्ति होगी । इसलिये जैसा हमने कहा है सो ठीक है यह पाठ बहुतदिनका विगड़ानुआ है इसीलिये अष्टाङ्गसङ्ग्रहकारने पर्यायवाचकता लिखवाली है । उसको देखकर शार्ङ्गधरनेमी व्यासोहमें पढ़कर “मापको हेमधान्यको (धानको)” ऐसा पाठ लिखा है । यदि चरकको मापके पर्याय हेम और धान्यक अथवा धानक अभिप्रेतहोते तो कहींपरमी उनका प्रयोग तो किया होता यह निर्विवाद है इसलिये चरकीयपाठको सुधारना अत्यावश्यक है । इसजगहकी मूलसे देखिये कितना बिच्छव होगया है । परिभाषाप्रदीपप्रभृतिमें अकारान्त हेमशब्द और धान्यक अथवा धानकशब्दको “मापमिते माने” ऐसा सिद्धादिया है सही, पर उसका उदाहरण प्राचीनसंहिताओंमें न देखे । किसीने शार्ङ्गधरको बतलाया और किसीने इसी विवादमस्त चरकीयकल्पस्थानको निर्दिष्ट किया है परन्तु संहिताओंमें व्यवहारमें लायाहुआ न बतलाया इसलिये इस अन्धपरम्पराको दूरकरना उचित है ।

इसीतरह शार्ङ्गधरके पाठकोमी सुधारना आवश्यक है यथा—  
“पृथ्वीमिमीरिचि. स्यात्तामिः पङ्क्तिस्तु राजिका । तिस्रमी राजिकाभिश्च रत्नसर्पं द्रव्यते ॥ तद्वयेन भवेत्तु मध्यमो गौर-सर्पः । यवोऽष्टसर्पस्तैश्च शुद्धा स्यात्तद्वयेन च ॥ पङ्क्तिस्तु रजिकाभिश्च मापसो हेममाकन्य ॥” वस इत्तरहका पाठ रच-

नेसे “शुद्धा स्यात्तनुप्रत्ययम्” और “यवद्वयेन शुद्धा स्यात्” इनदोनों पाठोंका परस्पर विरोध नहीं आता है । नहीं तो एकही पुराणके परस्पर विरुद्ध दो पाठ होनेसे मतप्रलप कदा जायगा । इसीतरह “भाजनं कंसपात्रञ्च” इसजगह “भाजनं पात्रकं चैव” ऐसा पाठ होना चाहिये । कारणकि चरकने दो आठक का नाम कंस रखा है “कंसः प्रस्थापकं तथा” प्रस्थापक यह नाम आठकका नहीं होसकता है वह ४ प्रस्थापक होता है इसलिये ऊपरकहाहुआ पाठ रचना उचित है । उसके आगे चरकमें “कंसश्चतुर्गुणो द्रोणः” की जगह “कंस द्विगुणितो द्रोणः” ऐसा पाठ करना । शार्ङ्गधरमें “भाटके कंस आख्यातस्तथा प्रस्थापकं भवेत्” ऐसा पाठ रखनेसे मार्गविशुद्ध होजायगा । “सैहिका भाटकोऽस्त्रियाम् । कंसं चाय” इसतरह सामान्यकांड, गणाध्यायमें वैजयन्तीकोपने इसप्रमको दूर कर दिया है । दोहरा-नन्दमें कृष्णात्रेयके उद्धरणमें “चतुःप्रस्थैर्भवेत्कंसः ॥ स्याद्भा-जनमाठकम् ॥ पात्रं चूर्णाष्टकं पात्रं पर्याये कमतो विदुः” ऐसा पाठ दिया है पर वह प्रत्यक्ष विरुद्ध है कारणकि आगे चलकर “द्रोणाम्या धर्पङ्कमौ च” ऐसा स्वयं कृष्णात्रेयने कहा है इसलिये वहापर “चतुःप्रस्थैर्भवेत्पात्रं ॥ स्याद्भाजनमाठकम् । कंसः प्रस्थापकं पात्रम् ॥” ऐसा पाठ करनेसे मार्ग विशुद्ध होजायगा । इसीतरह “गोर्णाधर्पद्वयं विद्यात्पारीं मारीं तथैव च” इसजगह जिसतरह धर्पद्वयकी गोणी होती है उसीतरह दो गोणीकी १ खारी, २ खारीकी १ भारी, और ३ भारीका १ बाह होता है ऐसा अर्थ तथैवचसे समझना इसी अर्थको स्पष्ट करनेसेलिये “द्वान्नैवैव जानीयाद्वाहं चूर्णाणि युद्धिमान्” ऐसा आचार्यने सुलसा कर दिया है । चरकीय खारीके साथ शार्ङ्गधरकी खारी नहीं मिलती और प्रायः सबकेसाथ समानता आती है । वैजयन्ती कोपने मान बहुत दूर तक बतलाया है वह उसके कोष्ठकमें खारीसे आगे दिया है ।

ऊपरकहीहुई चरकीयपाठकी अपभ्रष्टतासे बहुतसे लोगोंको यह भ्रमहोया है कि सुधुतकेचरसे चरकीयकई इना है कारणकि सुधुत मध्यम १२ उड़दोंका १ मासा मानते हैं और ऐसे १६ माशेका १ कर्ष मानते हैं तब सुधुतके हिसाबमें १९२ उड़दोंका कर्ष होता है । चरकमें २ उड़दोंका १ जव, ४ जवकी १ अण्डिका और ४ अण्डिकाओंका १ मासा अर्थात् १६ जव अथवा ३२ उड़दका १ मासा होता है । ऐसे ३ माशेका १ शाण और ४ शाणका १ कर्ष होता है । इस १ कर्षके १९२ जव अथवा ३८४ उड़दहोते हैं । इसतरह चरकीयकर्ष सुधुतीय कर्षसे ठीक द्विगुणहोता है । इत्तरहका भ्रम लोगोंके मनमें ठसगया है । इसीकारणसे “कालिन्नमानश्च चरकाचार्यसंमतः” इत्या उक्तं बह्मणे लिख दिया है सो मूलमें इसका कारण “धान्यमापद्वयं यवः” यह अशुद्धि मानें इसके अतिरिक्त कोई कारण नहीं है देखिये—सुधुतीय १९ अण्डिकाओंका १ धरण और २॥ धरणका १ कर्ष होता है । २॥ धरणकी ८८ अण्डिका होती है वतनीही चरकीयकूपरी होती है इनका नाम सुधुतने निर्णय और



चरकने अण्डिका रक्ताहै ये दोनों एकही वस्तु-  
है । उद्धके हिसाबसे "तत्र द्वादश धान्यमापा. मध्यमा  
सुवर्णमापक", ते पोडश सुवर्णम्" इसतरह कथं बनायाहै ।  
१२ उद्धका १ माशा और १६ माशेका १ कर्ष अर्थात् १९२  
उद्धका कर्षहै । चरकीयकर्ममी १९२ उद्धकाही होताहै  
क्योंकि यवका वजन उद्धके बराबरहोताहै इसको जो  
पाहे सो धरमके कटिपर रखकर देखलेवे । इसलिये "धान्य-  
मापद्वयं यव." की जगह "धान्यमापसो यव" ऐसा पाठ  
सुधारलेनेसे ४ यव अथवा उद्धकी १ अण्डिका, ४ अण्डिका  
का १ माशा, २ माशेका १ शाण और ४ शाणका १  
कर्षहोताहै अर्थात् १९२ उद्ध या यवका १ कर्षहुआ इसमें  
अन्तरहीक्याआया । हां चरकीय १२ माशेकाकर्षहै औरसुधु-  
तीय १६ माशेकाहै यह आपाततः भेद मालूमहोताहै परन्तु  
सुधुतीयमापा ३ अण्डिका (१२ उद्ध) काहै और चरकीय  
४ अण्डिका (१६ उद्ध) काहै इसलिये मापोंमें अवश्य भेदहै  
चरकीयमापा बड़ाहै और सुधुतीय छोटा । निष्कर्षमें सुधुतीय  
६ रत्तीका मापा होताहै और चरकीय ८ रत्तीका । इसलिये  
केवलमापोंमेंही भेदहै इसकेलिये कर्षप्रशस्तिमें कोईभेदनहींहै ।  
यदि "ताश्चतस्रश्च मापक" की जगह "तास्त्रिंशश्चैकमापक" करदिया  
जाय और "भवेच्छाणस्तु ते त्रय" की जगह "शाणःस्यात्तचतुष्ट-  
यम्" ऐसा कर दियाजाय तो फिर मापोंमेंभी फरक न आवेगा-  
चरकीयमूलपाठकी अशुद्धिको समझनेकी शक्ति न होनेसे चक-  
पाणिदत्तने यहापर अर्धवर्ग लिखमारहाहै वह सर्वथा अनादेयहै ।  
चक्रपाणिदत्तकी तरह अष्टाङ्गसङ्ग्रहकारनेभी "परिमार्ण पुन  
पट्टययो मरीचि. । ताः पट्ट सर्पपै, तप्तौ तण्डुलः । तौ धान्य-  
मापः । तौ यव" ऐसी अविचारसे अशुद्धपाठकीही व्याख्या  
करदीहै । इसीतरह "तुला पुन. पलशतं, तानि विंशतिभारं"  
यह अन्यग्रन्थोंकी चरकनेसाथ खिचड़ी फाडावतीहै कारण कि  
इसभारका नाम चरकमें नहींहै किन्तु सुधुत और कृष्णानेयमें  
है । चरकमें भारको बाढ़ बतलायाहै उससे आपकेको भारी  
बताईहै वही इसभारसे अधिकप्रमाणकीहै । इसलिये यह  
प्रतीतहोताहै कि इनसबने इसका तलस्पर्श न करके एक अन्दा-  
जसे लिखमारहाहै । किंतुही अशुद्धोप सुधुतीय धरणमानको  
अन्यमत बालावतेहैं और यहाका कर्ष ८० रत्तीकाहै इसतरह  
व्याख्यान करतेहै सो अज्ञताहै । यहा दो मत नहींहै किन्तु  
उसीमानको द्वितीयप्रकारसे सिद्धकियाहै इनमें अनुमानभी  
अन्तर नहींहै बस ९६ रत्तीका कर्ष पहिलाहै पैसाही यहहै  
और इसीको पञ्चधरणादियोगोंमें लियाहै ।  
"त्रिरजोभिश्च सिरुता तानिः पोडशभिः क्षुचा ।  
द्वयेन सर्वपौ रक्तस्ते चाष्टौ तण्डुलं विदुः ॥  
तद्द्वयं धान्यमापः स्यात्तद्द्वयं रत्तिका मता ।  
चतुर्भिरण्डिका श्रेया पट्टिवर्धः प्रकीर्तितः ॥  
पक्वगुग्गुलुस्तुल्यैरष्टभिर्मोपकः स्मृतः ।  
रत्तिभिः पञ्चभिर्मोपः पट्टिर्वाप्तसप्तभिः ॥  
दशभिर्वा भवेदत्र प्रोत्तमाधममध्यमाः ।  
अण्डिका चापि निर्दिष्टा कचिन्मापद्वयेन च ॥

चतुर्भिर्मोपकैः शाणस्त्रिभिर्वाऽऽनेयसम्मतम् ।  
गद्याणो मापकैः पट्टिः शाणाभ्यां द्रवृणो मतः ॥  
कोलश्च घटकश्चैव स भवेत्पुनःसम्मतः ।  
शाणैश्चतुर्भिः कर्षः स्यादक्षं पाणितलं विदुः ॥  
पिबुः सुवर्णकं किञ्चिद्विडालपदकं तथा ।  
उदुम्बरो हंसपदं कर्मध्यश्च तिलुकम् ॥  
कवलप्रदः पाणिकश्च स प्रोक्तः पाणिमानिका ।  
कर्षद्वयेनाष्टमिका मुक्तिः सैव प्रकीर्तिता ॥  
गुक्तिभ्यां तु प्रकुञ्चः स्यात्पलं मुष्टिश्चतुर्थिका ।  
आर्ध्रं विल्वं पलाभ्यां स्यात्प्रसूतिः प्रसृतस्तथा ॥  
पलस्य दशमांशेन धरणं परिकीर्तितम् ।  
प्रसृतिभ्यामञ्जलिः स्यात्कुडवश्च चतुष्पलम् ॥  
वेणुपाक्षांयसादीनां भाण्डं यच्चतुर्हलम् ।  
विस्तीर्णमथ वृत्तञ्च कुडयं तं विनिर्दिशेत् ॥  
कुडवाभ्यां शरावः स्यान्मानिकाऽष्टपलं तथा ।  
चतुर्भिः कुडयैः प्रस्थस्तथा सुसमितीरितः ॥  
चतुष्पस्थैर्भवेत्पार्थं तत् स्याद्वाजतममाढकम् ।  
कंसः प्रस्थाष्टकं गात्रं पर्यायैः क्रमशो विदुः ॥  
चतुराढकसङ्ख्यातो द्रोणश्च परिकीर्तितः ।  
कलशो नव्यणो राशिमणश्च परिकीर्तितः ॥  
द्रोणाभ्यां शूर्पकुम्भी च चतुष्पष्टिशरावकः ।  
शूर्पाच्च द्विगुणा द्रोणी वही गोणी च सा स्मृता ॥  
तुला पलशतं तासां विंशतिभारं उच्यते ।

कृष्णानेयसंहिता.

उपरिनिर्दिष्ट कृष्णानेयसंहिताकामी यह मान चरकीयमानसे  
मिलता जुलताहै केवल १-२ स्थानोंपर नाममात्रका अन्तरहै  
यथा—"त्रिरजोभिश्च सिरुता तानिः पोडशभिः क्षुचा ।  
द्वयेन सर्वपौ रक्तस्ते चाष्टौ तण्डुलं विदुः ॥" अर्थात् ३ रजनी  
१ सिक्ता, १६ सिक्ताकी १ राजिका और २ राजिकाका  
१ रक्तसर्वप मानाहै इसहिसाबसे १ रक्तसर्वपमें ९६ शर्पण  
होतेहै । चरकीयमानमें १ रक्तसर्वपके १०८ शर्पण मानेगयेहै  
केवल १२ शर्पणका अन्तर आताहै । यह आनुमानिक प्रमाण  
होनेसे इतने अन्तरका होना सम्भवहै इसलिये यह विशेष  
ध्यान देने योग्य नहींहै ।

आगे चलकर "पक्वगुग्गुलुस्तुल्यैरष्टभिर्मोपकः स्मृतः ।  
रत्तिभिः पञ्चभिर्मोपः पट्टिर्वाप्तसप्तभिः ॥" दशभिर्वा भवे-  
दत्र प्रोत्तमाधममध्यमाः ॥" माशेके उत्तम, मध्यम और  
अधम तीनभेदोंसे १०, ८, ७, ६, ५ और ३ रत्तियेके  
६ तरहके माशे बतायेहै । इनमेंसे १० और ८ रत्तीकामाशा  
उत्तम, ७ और ६ रत्तीका मध्यम, तथा ५ और ३ रत्तीका  
अधमकोटियं रक्खाहै । कृष्णानेयने उपर्युक्तप्रमाणमें ८ रत्तीका  
मापालियाहै इतिहासबसे कर्षकी १२८ गुग्गु या रत्ती  
होतीहै । यह चरकीयकर्मसे प्रमाणमें ३२ रत्ती अधिक हो

जाताहै । यदि ६ गुञ्जाका मध्यममापा लियाजाय तो दोनों-  
कर्म एकचरपर होजातेते । औपधप्रमाणमें ६ गुञ्जाकामापा-  
लेना ठीकमालूम पड़ताहै क्योंकि कृष्णाज्येयसंहिताकी परिभाषा  
में “घम्यादिरक्तमोक्षेषु माने मूत्रवसादिषु । वमनादिषु  
योज्यध मापकथाष्टरक्तिक ॥” अर्थात् वामकम्पाय, रक्तमोक्ष,  
मूत्र और वसादिकोंकेमानमें ८ रत्तीकामापालेना ऐसा विशिष्ट  
रूपसे कहाहै । साधारणतया ६ रत्तीकामापा मानलेनेसे ध्रुवत,  
चरक और कृष्णाज्येयके कर्ममें कोई अन्तर नहीं रहता ।  
वैसेतो “कषायादिनिर्हरेषु द्रव्यमानविभावपि । ततोऽष्टादश-  
भिर्मापैर्मापकः परिकीर्तितः ॥ लोहस्तनादिभिषये दशरक्तिक-  
मापकः” इत्यादि कार्यपरत्वेन ९ रत्तीकामी मापा मानाहै  
उन सन्को मान्य करना असम्भवहै । कहीं २ पर १४ रत्तीका  
मापा भी बतायाहै पर वह व्यवहार्य नहींहै ।

मागधमानमें कुञ्जका विशेषमान “वेणुपार्श्वायसादीना  
भाण्डं यन्तुल्यम् । विस्तीर्णमथ कृत्वा कुञ्जं तं विनिर्दि-  
शेत् ॥” इसतरह दियाहै । कुञ्जसे नीचेका मान यहा नहीं  
दियागयाहै पर हिसाबलगाकर बनाया जासकताहै । इसमें  
अङ्गुलका मान जानना अत्यावश्यकहै इसलिये वास्तुविद्या-  
प्रभृतिमें मान बतलायाहै । यथा—“परमाणुभिरष्टाभिन्नसंयु-  
रिति स्मृतः । त्रसरेणुषु रोमासु लिङ्गा युका यवस्तथा ॥  
क्रमशोऽष्टगुणा प्रोक्ता यशोऽष्टगुणितोऽङ्गुलिः ॥” यहापर  
क्रमशः परमाणु, त्रसरेणु, रोमासु, लिङ्गा, युका, यव इनकी  
आरम्भसे उत्तरोत्तर अष्टगुणित सङ्ख्या आतीहै इसदिष्टानुषे १  
यवमें ३२७६८ परमाणु होतेहैं और तुलामानमें १ यवके  
५१८४० परमाणु होतेहैं । इन्ही ८ यवोंकी चौड़ाईका व्यास  
१ अङ्गुलहोताहै । तुलामानमें परमाणुसे आरम्भ तो इसीके सरसहै पर  
इसमें तहत शूरत्व (वजन) लियागयाहै और अङ्गुलमानमें तहत  
व्यास लिया गयाहै इसलिये दोनोंका विषयभिन होनेसे दोष  
नहीं आता क्योंकि मान सहस्रपा होताहै इसबातको आगे  
सूचित करेंगे । अङ्गुलसे आगेका माप यवपि यहा अत्यन्त  
अपयुक्त नहींहै परन्तु किञ्चीको यह अपेक्षा हो कि इसके  
आगेका माप किसतरहकाहै ? इस आकाङ्क्षाको शान्तकरनेके-  
लिये तथा सुमिस्थद्रव्यके अङ्गुल तथा धराचक्रादिद्वारा  
विज्ञानकेलिये उपयुक्तहोनेसे यहा देदियागयाहै ।

ययोदरैरङ्गुलमष्टहृत्वेयः,

हस्तोऽङ्गुलैः पङ्कणितैश्चतुर्भिः ।

हस्तेश्चतुर्भिर्वतीह दण्डः,

क्रोशः सहस्रद्वितयेन तेषाम् ॥

स्याद्योजनं क्रीडाचतुष्टयेन,

तथा करणार्ण दशकेन वंशः ।

निरतनं विशतियशसहस्रेः,

क्षेत्रं चतुर्भिश्च सुजेर्नियद्वयम् ॥

छीलाचती ( परिभाषा )

## अथ कलिङ्गदेशीयमानम्

कलिङ्गदेश यवपि इससमय अप्रसिद्धता होगयाहै परन्तु  
“तथा मत्स्यकलिङ्गाथ कौशिकांथ समन्ततः । अन्वीक्ष्य  
दण्डकारण्यं संपर्वततदीशुम् ॥ नदीं गोदावर्यं चैव सर्वमेवा-  
नुपश्यत । तथैवान्नाथ पुण्ड्राथ चोलान् पाण्ड्याथ केरलान् ॥  
वाल्मीकि० किष्कि० ४१।११-१२” एतभिर्द्विद्वयमासे गोदा-  
वर्यके उत्तरमें मत्स्य, कलिङ्ग और कौशिक ये देशहैं और  
गोदावर्यके दक्षिण आन्ध्र, पुण्ड्र, चोल, पाण्ड्य और केरलसे  
बतलायाहै इससे यह निर्धारित होताहै कि विजयनगरके समीप  
कलिङ्गदेश होना चाहिये । वहाका कर्म १० माशेका प्रथम  
समयमें होगा ऐसा अनुमान होताहै क्योंकि उसकी कुछ छाया  
नीचे दियेहुए कोष्ठकमें मिलतीहै परन्तु इससमय उसमें फेरफार  
होकर कईतरहके मान होगयेहैं । आधुनिक कलिङ्गदेशीयतोल  
इसप्रकारहै जो कि शास्त्रधरीय कलिङ्गमानसे मिलताहै ।

कलिङ्गदेशीयमानम्

शास्त्र०

३२ गुञ्जा=१ वरहा	...	...	१ शाण
१० वरहा=१ पल	...	...	१ पल
८ पल=१ सेर	...	...	१ शराव
५ सेर=१ बीसा	...	...	१॥ प्रस्य
८ बीसा=१ मन	...	...	५ आठक
२० मन=१ भार	...	...	१०० आठक

आन्ध्रदेशीयप्रचलितमानम्

१ भार=२० मन	१/३ तोला=७ १/३ चित्रम्
१ मन=८ बीसा	१/३ तोला=३ १/३ चित्रम्
१ बीसा=५ सेर	१ चित्रम्=२ अङ्गुला
१ सेर=८ पल	१ अङ्गुला=२ गुञ्जा
१ पल=३ तोला (१० वरहा)	१ गुञ्जा=४ चावल (सदुप)
१ तोला=३० चित्रम्	१ चावल=१ राजिका
१/३ तोला=१५ चित्रम्	

इसमानमें पलके वजनतक कलिङ्गदेशीयमानहै पलसे नीचे  
के वजनमें अन्तर करदियाहै इससमय १ पलके ३ तोले  
मानकर तोलेको १२० गुञ्जाका बनायाहै इस हिसाबसे  
१ पलकी ३६० गुञ्जा होतीहैं और कलिङ्गमानके १  
पलकी ३२० गुञ्जा होतीहैं इनदोनोंमें ४० गुञ्जाका अन्तर  
आताहै जो मालूम होताहै कि व्यापारियोंने फरेबीसे इस-  
भेदको घुसादियाहै कारणकि देनेकेलिये प्राचीनतोल रक्खाहो  
और देनेकेलिये बनावटी तोल बनादियाहो यह सम्भवहै ।  
उदाहरणार्थ आजकल इसदेशमेंभी बसराप्रभृतिसे मोती वगैरह  
लाये आतेहैं वे वहाके तोलेके हिसाबसे आतेहैं वहाका तोला  
यहाके तोलेसे कुछ अधिकहै तो व्यापारी लोग उसतोलेसे  
लाकर यहा इततोलेसे बेचतेहैं यह फर्क हरीफाईकाहै । इसी-  
तरह दक्षिणदेशमें भी हुजाहै तोलमें सबजगहके व्यापारी प्राय  
ऐसीही युक्ति कियाकरतेहैं इसकी नियता करनी असम्भव  
ऐसाहै स्वायत्तप्रधान दुनियासे हरीफाईका जाना अवम्भवहै ।



२ गोणी=१ वाह

२ वाह=१ खारी ( दूधोंके मतमें कुम्भी )

बहुतेके मतमें २ कंसकी १ खारी होतीहै इसीको मानी अथवा वाह कहतेहैं । किन्तुनेही ४ खारीका १ वाह मत्वातेहैं । खारीके चतुर्थांशको गोणिछा कहते हैं । किन्तुनेही २ प्रस्थको वाहकहतेहैं । २० कुम्भको जटी और १० कुम्भको पाश्चमिक अथवा कुम्भकहतेहैं । सुवर्णके ८ और ताँबेके ७० पलोंको धारणकहतेहैं । दूसरेलोच ताँबेके १० पलोंको धारणकहतेहैं । सूर्यके ३॥ पलको शतमान, १०० पलोंको गुला, १० गुलाका १ कस्त अथवा पटिक, २ पटिकाका १ शाकमार अथवा शलाघ, १० शाकमारको सम, सप्त, पारमार अथवा शाकट कहतेहैं ।

१० गुला=१ कस्त

१० कस्त=१ आचित

१० आचित=१ द्वापचित

१० द्वापचित=१ होट

१० होट=१ हेलक

१० हेलक=१ समक

१० समक=१ सम

१० सम=१ वाहित

१० वाहित=१ आरित

माप, माण, तल, मुष्टि, अङ्गुलि, प्रस्थ, आढक, द्रोण, गोणी, खारी ये क्रमसे चतुर्गुण समझना । हस्तादिकोंके मानको पाप्यकहतेहैं । इन्द्रादिकोंके मापको हुवय, तराजूके तोलको पौतव और हस्तादिकके मापनेकी डोरीको भागसूत्र अथवा रागसूत्र कहतेहैं ।

मानवधर्मशास्त्रमें “जालान्तरगते भानी यत्सूक्ष्म द्रव्यते रजः” इत्यादि कुछ तत्सामयिक दण्डके मानका उद्देश कियाहै पर वह औपधोपयोगि नहींहै । उससमयभी व्यवहारोंकी भिन्नताको लेकर कईतरहके मान थे जन्हीं सबकी खिचड़ी बैज यन्त्रीकोपकारने पकईहै इसे मानवधर्मशास्त्रका मान नहीं समझना । मानवधर्मशास्त्रीयमान नीचे दियाहै उसे देखकर वातिरी हो सकतीहै यथा—

“जालान्तरगते भानी यत्सूक्ष्म द्रव्यते रजः ।

प्रथमं तत्प्रमाणानां त्रस्रेणुं प्रचक्षते ॥

त्रस्रेणुभिरष्टामिलिक्षैका परिमाणतः ।

ता राजसर्पपस्तिस्त्रस्ते त्रयो गौरसर्पपः ॥

सर्पपा पट्ट यवो मध्यस्त्रियवं त्वेककृष्णलम् ।

पञ्चकृष्णलको मापस्ते सुवर्णस्तु षोडश ॥

पलं सुवर्णाञ्चत्वारः पलानि धरणं दश ।

हे कृष्णले समभूते विज्ञेयो रौप्यमापकः ॥

ते षोडश स्याद्वरणं पुराणश्चैव राजतः ।

कपापणस्तु विज्ञेयस्ताम्रिक कार्ष्णिकं घण ॥

धरणाणि दश ज्ञेयः शतमानस्तु राजतः ।

चतुःसौवर्णिको निष्को विज्ञेयस्तु प्रमाणतः ॥

पणानां द्वे शते सार्धे प्रथमः साहसः स्मृतः ।

मध्यमः पञ्च विज्ञेयः सहस्रं त्वेव चोत्तमः ॥

मनु० ८।१।२२-२।८

जिसतरह कलिङ्गमानकी दुर्दशा हुईहै उसीतरह हिन्दी गणितकी पुस्तकोंमें मानकी दुर्दशाहै यथा ८ खसखस=१ चावल, ८ चावल=१रत्ती, ८ रत्ती=१माशा, १२ माशे=१ तोला इत्यादि ८ खसखसका जो १ चावल लिखाहै सो खबरनहीं किसमहायज्यने अन्दाजसे लिखडालाहै । तोलमें लाल चावल लियाजाताहै इस १ चावलपर लगभग ७५ खसखस गहतेहैं और लिखनेवालेने = ६५ खसखस लिखेहैं । इसपर कुछभी विचार न करके पुस्तकोंमें बैदाही भेडियावसान बलारक्खाहै इसतरफ किसीकी भी दृष्टि नहीं गई । सन् १९२२ में निर्णय सागप्रेसमें लीलावतीकी छटीक पुस्तक छपीहै उसकी टीकामें भी ‘तोलपरिमाणभारतीय’ शीर्षककेनीचे ८ खसखसका १ चावल लिखाहै । वजनमें तथा आकारमें किसीभीतरह १ चावल के बराबर ८ खसखस नहीं होते । इसकी तर्फ देखकर चित्त अत्यन्त खिन्न होताहै इसीतरह सबजगह तोलमें बहुत फेरफार हुआहै उसे सुधारनेकी आवश्यकताहै ।

सुधुतीयमान प्राचीनकालसे चला आताहै चरकने भी इसीको बतलायाहै । मनुष्योंकी जमिके हासकेकारण कलिङ्गमानकी पीछेसे कल्पना हुई प्रतीतहोतीहै । इन्हीं दोनोंमानोंका अनुकरण करके लोगोंने गानातरहके तोल बनाए हुएहैं । माग धीयप्रस्थमें १६ रुपयेभर वजन बढाकर ८० रुपयेका बज्जाली सेर बनायाहै इसीमें १६ रुपये और मिलाकर ९६ रुपयेका पहाड़में सेर बनायाहै इसीतरह कहीं अधिकता कहीं न्यूनता करके सेर बनाए हुएहै परन्तु सबका मूल मागमानही है ।

इसजगह गूढरहस्य यहहै कि मागधकीतरह मापादि विभागलुफ कोईभी तोल लियाजाय तो उसमें किसीतरहका अन्तर या हर्म नहीं होताहै परन्तु जिसमानसे कामलिया जाय वदापर उसी मानके बजनोंको काममें लेना चाहिये उसमें साङ्ख्य करनेसे दोष उपस्थित होगा । यदि एकयोगमें ५ वस्तुएँ कर्षप्रमाण लिखीहों तो उन पाचोंके तोलनेमें एकही कर्षका उपयोग करना चाहिये जैसे १० रत्तीके माशेसे १६ माशेका कर्ष मानकर द्वाप लेने तो पाचोंको उदीकर्षसे लेना उचितहै और कृष्णादिक मापसे कोई चीज उसमें आईहो तो उसमें इसीकर्षके हिसाबसे डालना उचितहै ऐसा करनेसे कोईभी अन्तर न पड़ेगा इसीकारण अपने जमिके मानको दिखलकर मानविशेषकी नियता दूरकरनेके अभिप्रायसे देखिये सुष्ठव क्या लिखतेहैं यथा—“तत्राऽन्यवमपरिमाणतः मिमतानां यथायथा त्वत्पञ्चमूलादीनामातपपरिशोषितानां छे-  
यानि खडगश्चेदित्याभेदान्यपुत्रो भेदित्याऽवकुट्याऽऽगुणेन

षोडशगुणेन वाग्मसाजमिषिष्य स्थाल्या चतुर्भागावशिष्ट काय-  
यित्वाऽप्यहदित्येय कपायपाककल्पः ॥ स्नेहाश्चतुर्गुणो द्वे स्नेह-  
चतुर्गुणो भेजजकल्कस्तदैकध्वं ससुज्य विपचेदित्येय स्नेह-  
पाककल्पः ॥ अथवा ततोदकद्वारे स्वप्नमूलादीना तुलमा-  
वाप्य चतुर्भागावशिष्टं निष्पवाभ्यापहोदित्येय कपायपाककल्पः ॥  
स्नेहकुडवे भेजपत्रलं पिष्ट कल्कं चतुर्गुणं द्वमावाप्य विपचेदि-  
त्येय स्नेहपाककल्पः ॥ सु. चि. ३१८८” यद्वापर “अन्यत-  
मपरिमाणसम्मिताना, से यही ज्ञापन करातेहै कि परिमाण  
कोई व्यबस्थित वस्तु नहींहै । दुनियामें परमाणुसे लेकर  
हिमाद्रिप्रभृति समस्त पदार्थ स्नेतारपदार्थपरिच्छेदक होतेहैं वे  
कहींपर ऊँचाई, कहींपर नीचाई, कहींपर घेर, कहींपर विस्तार,  
कहींपर हवाता, कहींपर स्थैत्य, कहींपर आकार, कहींपर गुण,  
कहींपर काल, कहींपर गुरुत्वादि विशेष गुण अर्थात् वजन  
इत्यादिभेदोंसे कईतरहकी परिच्छेदकताको निष्पन्न करतेहैं ।  
इसमेंसे प्रकरणविशेषको देखकर अभीष्ट परिच्छेदकताको निर्धा-  
रितकरना यह परिच्छेदकता खास कर्तव्यहै । यहा प्रकरण  
चिकित्साका है इसमें बहुधा वजन (तोल) की जरूरत पड़तीहै  
क्योंकि वजन (तोल) बिना किसी भी चीज़को तैयार नहीं  
करसकते और न देखसकते । जो रातदिन व्यवहारमें आनेवाला  
आहारहै उसमेंभी तोलबिना चीज़ोंको तैयार करना चाहे  
तो नहींकरसके । उदाहरणकेलिये चावलप्रभृतिको लेलें जब  
चावल और जल ठीकवजनसे ढालकर अन्दाज़की अमि लगाई  
जायगी तभी पानेकेयोग्य चावल तैयारहोगे अन्यथा नहीं ।  
इसीलिये “ न मानेन विना शुचिर्द्व्यया जायते ऋचितः ॥”  
शां० ॥ “तत्र सर्वाण्येवौपशानि व्याध्यन्निपुण्यबलान्यमि-  
मीक्ष्य विदम्यात् ॥ सु. सू. ३९१०” “इयं प्रमाणं ॥ यदु-  
क्तमस्मिन्मध्येषु तत्कोष्ठयोर्बलेषु । तन्मूलमालम्ब्य भेदद्विकल्प-  
स्तेषां विकल्पोऽन्यधिकोभवा ॥ च. च. १२८३” इत्यादि  
वाक्य कहेगयेहैं । इन वाक्योंसे यह निष्कर्ष निकलताहै कि  
प्रथम वस्तुस्थितिको देखकर जैसी जहा योग्यता मालूमपड़े  
वैसा व्यवहारकरे । योग्यताके ज्ञानमें आतुरकी शरीरसम्पत्ति,  
देत और कालादिकोई तुलना मुख्यकारणहै । रोषनिर्मूलक  
कार्यमें औषध मुख्यकारण होताहै और प्रमाणप्रभृति समस्त  
उपकरण होतेहैं इनकी योग्यता देखकर औषधमात्राका निर्धा-  
रण करना वैद्यकी बुद्धिपर निर्भरहै वैद्यकी बुद्धि बटानेकेलिये  
शास्त्रकारोंने एक दिग्दर्शनकरायाहै न कि तावन्मात्र मर्यादामें  
उसे निबद्धकियाहै ।

पूनोंकप्रतुतीय उदाहरणोंमें त्वक्, पय, मूल, फल, पुष्प  
प्रभृतिहो भूमिं सुधाकर काष्ठेयेयोग्य कृत्वर अठगुने अपवा  
सोल्हगुने भामीमें पकाकर चतुर्भागावशिष्टनवाका प्रहण बत  
लायाहै और भाग चल्कर १ तुलद्रव्यको एकद्वारेण (२५६ पल)  
जल्में पकाकर चतुर्भागावशिष्ट भाष्यकेदो लिखाहै तथा बीचमें  
स्नेहसे चतुर्गुण ॥ और दशचतुर्भाषा कल्क ढालकर स्नेहका  
गुड, मध्य, रस, यद त्रिविध पाक लिखाहै । इनसे कल्क,

स्नेह और कायका प्रमाणतो विस्पष्ट होजाताहै परन्तु  
स्नेहापेक्षया काय्य द्रव्यका विस्पष्टीकरण नहींहोताहै कि  
वह कितना लियाजाय १ इसकेलिये प्रसिद्धयोगोंमें जहा जो  
प्रमाण लिखाहो उसे लेना और जहा काय्यका प्रमाण नहीं  
लिखाहै वहापर “स्नेहभेजजतोयाना प्रमाणं यत्र नेरितम् ।  
तत्रेयं विधिरास्येयो निर्दिष्टे तत्तदेव ॥ ॥ अनुके द्रवकार्ये ॥  
सर्वत्र सलिल मतम् । कल्कायावनिर्देशे गणात्साल्प्रयोज-  
वेत् ॥ सु. चि. ३१९५-१०” इस्तरह निर्धारण कियाहै  
यद्यपि स्नेहसे द्रवके चातुर्गुण्य विधानसे काय, क्षीर, मध  
और आसवप्रभृति सभी उपस्थितहोतेहैं तथापि प्रत्यासत्ति-  
न्यायसे ऊपर कषायकल्कका विधान लिखनेसे कषायही सर्वत  
प्रथम युद्धासल्ल होताहै और वह ८, १६ और ५ गुने जल्में  
पकानेके भेदसे ३ तरहकाहोताहै उनमेंसे अन्यतम कषाय  
स्नेहसे चतुर्गुणित होनाचाहिये यह निर्धारित होताहै ।

यद्यपि तृतीयकल्पमें इससमय “अथवा ततोदकद्वारे०”  
ऐसापाठ सुधुतमें मिलताहै परन्तु वह उचितनहीं प्रतीतहोताहै  
कारण कि तुलनाम १०० पलकाहै । उसे १ श्रेणअर्थात् २५६  
पल जल्में उबालकर चतुर्गुणावशेष रखकर कार्यकरना दुस्तरहै ।  
यद्वा तद्वा करके कषायी जायगा तो वह निकम्माहोगा । कारण  
कि अल्पपाकसे कषायमें शारका निकलना असम्भव है इसलिये  
यद्वापर द्विगुण ऐसा पाठ अनुमित होताहै ऐसा होनेसे ५१९  
पल जल होगा उसका चतुर्गुणावशेष १२८ पल रहजायगा ।  
इसमें चतुर्गुण ३२ पल स्नेह पकसेगा । इस (तृतीयकल्पमें)  
स्नेहसे तिरुनेसे कुछ अधिक काय्य द्रव्य आताहै इसीको  
लोगोंने चतुर्गुणके नामसे लिखदियाहै देखो इन्दुटीकामें  
लिखीहुई पद्यरूपपरिभाषा-“चतुर्गुणेन तोयेन काययेदौष-  
भानि ॥ क्षीरीणां सुधुतादीना सर्वेषा मतमीदृशम् ॥ एता-  
वास्तु विशेषोऽन शेषमत्रापि पूर्ववत् । काय्य ॥ भेजज स्नेहा-  
दन पक्षे चतुर्गुणम् ॥ १६-१७ अ. स. कल्प०” यह शरी-  
कीसे विचार न करनेसे लिखागयाहै और सुधुतीयपाठकी  
अनुद्धिका पता न लगनेसे “फलव्यपेक्षयाऽन्यस्ति तथा प्रत्य-  
व्यपेक्षया । सुधुतस्य तु य पूर्वपुण्यस्तथिरन्तः ॥ पाठ  
फलव्यपेक्षया भाष्यं तदुदाहृतम् । इत्येव निविष श्रेण  
कषायप्रहणं प्रति ॥ २१-२२” ऐसी किसीने मनाहन्त कल्प-  
नाभी करवालीहै । इनके कथनानुसार यदि माना जायगा  
तो ४, ८ और १६ की जगह ८, १६ और ३२ गुण जल  
लेना होगा और वैसा होनेसे ८ और १६ गुणितकहना अशक्य  
होगा इसलिये फलव्यपेक्षया और प्रत्यव्यपेक्षयाकाज्ञात अर्ध-  
जतीन्यायसे दूषितहोनेके कारण सर्वथा ह्याग्यहै क्योंकि  
इन्होंने अपने कहेहुएकामी पालन न होतका यथा-“चतुर्गुणोदके  
पक्षे स्नेहाद्द्रव्यं चतुर्गुणम् । अष्टांशितं फलपतं द्रव्यशायस्य  
जायते । स्नेहपक्षे विपक्षये शुद्धं तथ भवेदपि । आर्ये चोप-  
द्रुतं सचस्ततं फलसम्पदम् । स्नेहपक्षे भवेत्साधये यद्वपुष्पा-  
द्विपक्षधम् ॥ एवं कृत्वाद्द्रव्यस्य यद्वतुर्गुणितोदकः ।

सकलभोगितस्तत्र स्नेहः स्याद्वीर्यवत्तरः ।” यद्वा तुलामानमेगौ दिगुणपरिभाषाको लगानेसे नियमभङ्ग हुआ इससे हमने जो पूर्वमे रास्ता बतलाया है वही श्रेयस्करो है । सुश्रुतकेपाठको सुधारलेनेसे राजमार्ग विशुद्ध होजायगा । पञ्चगुणपरिभाषापरिभाषा-ताने अच्छीतरह सुश्रुतीयपाठकी वशुद्धिको न विचारकर छात्रोंकेलिये एक नवीन जाल फैलादिया है वह सर्वथा हेय है । शुभ्रुते तृतीयकल्पमे इन्द्रायपेक्षया पञ्चगुणसे कुछ अधिक जल दिया है और स्नेहसे नाममात्र अधिक त्रिगुण इन्द्र दिया है इससे सुश्रुतीय तृतीयकल्पमे स्नेहसे चतुर्गुणित काय्यका विधान है ऐसा कहनाभी भ्रम है । यद्वापर कितनेही लोगोंने तृतीयकल्पसे नियमार्थ मानकर “तुलाद्रव्ये जलद्रोणो द्रोणे इन्द्रयुलाम्भसि । ततः पलसते इन्द्र्ये जलद्रोणोऽपि चेष्यते ॥” व्याख्या=यत्र तुलाद्रव्यं जले पचेदित्युक्तं परं जलप्रमाणं नोक्तं तत्र द्रोणमितं जलं ग्राह्यम् । यत्र तु द्रोणमिते जले इन्द्र्यं पचेदित्युक्तं परं इन्द्र्यप्रमाणं नोक्तं तत्र इन्द्र्यं तुलाप्रमाणं ग्राह्यमिति” ऐसा मनगडन्त श्लोक बनाडाला है । “भक्षितेऽपि लघुने न शान्तो व्याधिः” इत्यन्याख्ये ऐसी कुक्कल्पना करनेपरभी कुछ अभीष्टसिद्धि नहीं होती है क्योंकि शुष्कद्रव्यके चूर्णको १॥ गुने जलमें डालनेसे अपने धरावरके पानीको तो स्वयं शोषण करलेगा बाकी १॥ गुना बचेगा वह अग्निपर चढ़ानेसे १-२ उफानके बाद उसीमें लीनहोजायगा तब चतुर्भागावशेषमें क्या बाकी रहजायगा ? इसको विचार होता तो ऐसा न लिखाजाता । कदाचिद् कोई कि “लेहे यत्राऽस्ति वो भागो निर्दिष्टो द्रवकल्कयोः । तत्रापि पादिकं कल्को द्वात्कायां विज्ञानता ॥ तुलाद्रव्यं जले द्रोणे द्रोणे इन्द्र्ये तुला मता । देयो गुडं सिता चापि इति सर्वत्र निश्चितम् ॥ अवलेहयं लेहयं तस्य मानं पलद्वयम् ॥ इयं गोपुरके शक्तये” यह कल्पना अक्षरशः मिलती है इसे मनगडन्त क्यों कहनीचाहिये ? नहीं उफोदरणमें लेहविधान बतलाया है वद्वापर कवामनिरूपद्रोणेकेबाद लेह तैयार करनेके लिये गुड अथवा शकर किस प्रमाणसे डालनी चाहिये इसका निर्धारण किया है । शुद्धरूप इन्द्रयुलको द्रोण परिमित द्रवमें अर्थात् जलप्रभृतिमें पत्राकर नाशनीकरनी यदि शर्करासे लेह तैयार करना हो तो एकतुलकावयवमें एकद्रोण शर्करा डालकर चासनी करनी यह विस्पष्टतया कहागया है इसलिये गोपुरके उदाहरणसे अथवा सुश्रुतके कवनेसे (अथवा तत्रोदकद्रोणे त्वक्कप्रमूलादीनां तुलामानास्य चतुर्भागावशिष्टं निष्काशयामहेरु) उक्तानिप्रायको नहीं निकालसकेंगे । कोई यह कहनेका साहस न करे कि केवल प्रमाणसे यथास्मत्त्व जल्यं पाक क्यों नहीं ? इसजगद् बड़ाभारी रहस्य यह है कि पैसाहो-माही असम्भव है तब खाली गुक्ति या प्रमाण क्या करसकता है । पोषणार्थ (स्वर्गादिप्राप्तिप्रवृत्ति) में प्रमाण देकर धोताओंको सुझाकरकेहैं परन्तु प्रत्यक्षमें नहीं । कदाचिद् कोई यह शङ्का करे कि “कुड्डये वर्णित इन्द्र्यं प्रक्षिप्तं दिगुणेनले । अहोरात्रं स्थितं तस्माद्भवेत्स्वरस उत्तम ॥ कृष्णत्रैब ॥” इत्यादिस्वाध्यायोंमें

दिगुणजल डालकर कपाय प्रहणकिया है तब प्रवृत्तमे तो १॥ गुना जल है इन्द्र्ये हर्जक्या ? ठीक है परन्तु यद्वापर क्वाय नहीं कियागया है इसलिये इसमेंसे पानी निकल आवेगा, यह विषम दृष्टान्त है । देखिये—“क्वाध्यद्रव्यस्य माहृत्यादुदकं स्वल्पमेव चेत् । सम्यक् पाकत्र मुञ्चति हीनवीर्यन्तु केवलम् ॥ क्वाध्यद्रव्यं षट्समं जलं दशषट क्षिपेत् । नि क्वाध्य पादशेषं तु गुडं सार्धं तं न्यसेत् ॥ विमृश सन्धितं यच्च तथासवमितीरितम् ॥ वृद्धसुश्रुत” “आसवारिष्टयोर्वत्र न गुणो लभ्यते यदा । एकद्विगुणं कृत्वा दापयेद्गुणद्वये ॥ गोपुरः” “प्रसारण्यादिनिर्दिष्टं सतमेकं पृथक्पृथक् । नलद्रोणेन वैके साधयेच्छुष्क-कुम्भम् ॥ सम्यग्भीर्यं न मुञ्चति कारा स्वरूपेन निश्चितम् ॥ शौनक ॥” “द्विज क्षीरं च दहिरे धात्रालोऽयं पुत्रजे । रसे तपेधुयात्रोणा मधुमस्तकासवादिके ॥ एतानि सर्वंस्तुनि स्नेहयोगे विक्षेपत । सम्यग्भीर्यं न मुञ्चन्ति जलं देयं चतुर्गुणम् ॥ कृष्णात्रैब ॥” “मापकादि पल यावद्वात्पोकशिकं जलम् । तदूर्ध्वं कुड्डय यावतोयमष्टगुणं भवेत् ॥ प्रस्थादे. कुड्डादूर्ध्वं सत्सिद्धं चतुर्गुणम् । प्रस्थापितं क्षिपेमीरं क्षीरं यावच्चतुर्गुणम् ॥ यराहमिहिर ॥” चतुर्गुणसे नीचे पानी देकर काप करनेमें कितने आचार्य निष्कलता बतला रहे हैं तब इन गवेप-कोंका निकालाहुआ सिद्धान्त किसतरह मान्य होसकता है ?

कोई यहभी शङ्का न करे कि “स्वद्विरवात्तुलमुदकद्रोणे विषाध्य पोडशावशिष्टमवतार्याऽनुसृतं निदध्यात्, समालक-रसमधुवर्षिर्भि संसृज्योपशुजीत । एष एव सर्वशक्तसोऽयं कल्पः ॥ सु चि. १११३” यद्वापर १ द्रोणका पोडशावशेष किया है तब चतुर्भागावशेषकरनेमें आपको क्या विपत्ति है ? हा ठीक है यद्वापर सारके छोटेछोटे टुकड़ेकरके करणके निकालनेके प्रकारसे कपकिया है वद्वापर सार तत्कालाहत आरंभ किया-जाता है सो वह पानीको नहीं शोषणकरसकता इसलिये वह होसकता है कारण कि उसमें जैसे जैसे पानी कम होतानाता है वैसे वैसे टुकड़े निकालदिये जाते हैं शोषमें सघट्टके निकाल-दिये जाते हैं । बचेहुए जलको जलाकर पोडशावशेषकरके रख-लियाजाता है ॥ शिक्वाजुकी तरह पन तैयारहोता है । कृष्ण-निकालनेवाले भी ऐसाही करते हैं इसलिये आमालकरसरस, मधु और घी ये तल्ल पदार्थ उधके अनुरान बताये हैं । पर यद्वाका स्थान विषम है यद्वापर टुकड़े नहीं दियेजाते किन्तु जबकुट चूर्ण दियाजाता है सो वह चालतेही फूलजायगा और वातवरके पानीको शोषणकरलेगा इससे यथापि बापकरनेमें विपत्तिहोगी इसलिये उच्चदण्टनत कार्यसाधक नहीं होसकता है ।

सुश्रुतके मूलग्रन्थमें द्विशब्द निष्कलनेकी गवाही इन्द्र-गमी दे रहे हैं “उदकद्रोणविषये तुलाद्रव्यस्याऽऽशापेन-ज्वापयति-निष्कास्य इन्द्र्यं जले पञ्चगुणे निष्कापयेत्” इस इन्द्र्यश्लेखसे यह स्पष्ट निकलता है कि मूल्यपाठ पढ़ि-लेख द्विद्रोणे ऐसाहीथा इसलिये पूर्वटीकाओंको देखकर “जले पञ्चगुणे निष्कापयेत्” ऐसा लिखा है अन्यथा यह लिखना

असम्भवया । कदाचित् कोई यह शङ्का करे कि द्वन्द्वगुण्य परिभाषाको उपस्थितकरके इन्होंने पञ्चगुणजल लिखा है तो यह उचित नहीं है कारण कि उस परिभाषाको कोई आधार नहीं है । कदाचित् कहे कि “शुष्काणामिदं मानम्, अर्धद्रवाणाञ्च द्विगुणम्” (सु. चि. ३१।७) यहाँपर आचार्यने स्वयंही वचनरूपसे स्वीकृतकी है ? सो ठीक नहीं । यहाँपर का पाठ ‘आर्द्रव्याणां’ ऐसा है । उसमें कारण यह है कि यदि आचार्य द्वन्द्वगुण्यको मानलेवें तो प्रत्यभरमें जहाँकहीं द्रव आवेगा वहाँ सबजगह इस परिभाषाकी उपस्थिति होनेसे समस्तप्रत्यक्ष शास्त्रानुसंगे अनास्था दोष आजायगा और जो शास्त्रादितत्त्वादि आसवाक्योंके गुणहैं वे इसप्रत्यक्ष निकट-जानेके कारण प्रत्यक्ष आसवाक्यत्वसे वञ्चित रहजायगा । चरक और सुश्रुतीय कतिपय आसवारित्थोंकी सूची आगे दीहुई है उनमें अधिकसे अधिक ३२, और न्यूनसे न्यून ४ गुणित जलदेकर काय किये हैं । ३२ गुणसे अधिकजल किसीनेभी नहीं दिया है देखो—“आसवारित्थसाम्येयु द्वानि सहुणसम्मि-तम् । खदिरादेः प्रतिपलं जलमाहुश्चिकित्सकाः ॥ यद्वसुधुत” यद्यपि इसप्रमाणसे आगे कोईभी नहीं बता है इसीवातको दिख-लानेकेलिये सूची दीगई है यदि हम द्वन्द्वगुण्यपरिभाषा मान-लेगे तो स्नेह अथवा आसवारित्थप्रभृति समस्तस्थान अनास्थाप्रसूत होजायगे । जैसे अमार्याट (सु चि ६।१५) में २१ गुना जल आया है वहापर ४२ गुना देना होगा । इसलिये सुश्रु-तीय मूलपाठ आर्द्रव्याणां ऐसाही पूर्वमेंथा यह निश्चित होता है उसकीजगह लेखकप्रमादसे ‘द्रवाणां’ ऐसाहुआ प्रतीतहोता है । इनको देखकर, “शुष्कद्रव्येभ्यश्च मानमेवमादि प्रकीर्तितम् । द्विगुणं तद्द्रव्येभ्यश्च तथा सय समुद्भूतम्” ऐसा चरकके कल्प-स्थानमें दृढबलने बनालिया है कदाचित् कहे कि अनुकस्थानोंके लिये परिभाषाकी आवश्यकता है २ नहीं बढाकेलिये ८, १६ और पञ्चगुणित पानीकानिर्देश पर्याप्त है इसलिये सुश्रुतका ‘द्रव्याणां’ ऐसाहीपाठ है यह निर्विवाद है । इसीतरह चरककोभी द्वन्द्वगुण्य परिभाषा अभिप्रेत नहीं है । यदि दृढत्व मानलेगे तो पिण्डासव (च. वि. १५।१६१) में विनित्तोगी । वहापर चतु-र्थांश पानी देकर पिण्डकी व्यवस्थिति रक्तादि । यदि द्विगुण्यपरिभाषाको उपस्थितकरेंगे तो अधिक द्रव होजानेसे इसे पिण्ड पागलभी नहीं कहसकेगा । इसलिये चरककोभी यह परिभाषा अभीष्ट नहीं है । चरकके अभिप्रायसे न समझ-कर दृढबलने लिखादी है । परन्तु इसका उपयोग वे भी न करके देखिये—स्नेहव्यापारिसिद्धिमें “दद्यात्तुल्यं यत्ना रसात्ता मध्वान्मा पुनर्नयाम् ॥” इत्येत्ये ३३ पल दवाको ४ दोण-पानीमें पकाया है यह पानी द्रव्यसं ३२ गुना है यदि द्रव-द्रैगुण्य परिभाषा लगाकर द्विगुणमानेगे तो ६४ गुना होजायगा इसको कोई पागलभी पुनर्नयै बतलावे क्योकि कराधोंमें १२ गुने जलसे अधिक कहींपानी नहीं आता है । इत्यष्टन क्वापधो १ दोण घोरस्य १ आठक तैल पकाया है इसमें

१० पल जीवनीयगणका कल्क दिया है । यद्यपि वह तैलसे ६॥ अंश होता है परन्तु इसमें १ आठक द्रव भी ढालागया है । पक्केपर उसका कल्क (सीटी) १ प्रस्थ निकलेगा । परन्तु उसमेंसे तृतीयया चतुर्थांश होजायगा और १०॥ पलके लगभग रहजायगा सो इसकोभी कल्कमें गिनलियाजाय तो स्नेहसे लगभग २॥ वा हिस्सा कल्क (सीटी) आता है सो बराबर है । स्नेहकल्कमें यही गुण रहस्य है इसको न समझनेसे स्नेहपाकमें खोगोंको घोंसाहोता है । केवल द्रव्यकल्क ही गिनती न करना किन्तु स्नेहपाकोत्तर उसमें सीटी कितनी निकलेगी इसवातपर ध्यान रखकर “स्नेहकुडवे भेषजपलं पिष्टं कल्कं चतुर्गुणं द्रवमावाप्य विपचेदित्येष स्नेहपाककल्प (सु चि. ३१।८) अथवा “काय्याचतुर्गुणं वारि स्नेहात्कार्थं चतुर्गुणम् । खोरं स्नेहसमं दद्यात्कल्कश्च स्नेहपादिकः ॥ शिवमेखला ॥” इस प्रक्रियाका अवलम्बनकरके स्नेहोंको सिद्धकरलेनेमें किसीभी तरहकी विपत्ति उपस्थित नहीं होती है और न द्विगुणपरिभा-षाका आश्रय लेनापड़ता है । इस दृढबलने दवागुलादि तैलसे यह निर्धारण होता है कि केवल दृढबलने सुश्रुतीय अशुद्धिको न समझकर द्वन्द्वगुण्य लिखतो दी पर उसका उदाहरण कहींभी न दिखलासे । इसीतरह “शुष्कमेवेयिदं मानं द्विगुणं तु द्वादशेः” ऐसा पाठ अष्टांशसङ्ग्रहमें भी कल्पित किया परन्तु “धनमेवायमौषधान्युषो भेदमित्था छेदमित्था छेदानि प्रधा-स्योदकेन शुचौ रक्षायामधः प्रक्षिप्या ताम्बायोश्मयान्य-तमाया स्थाल्या समावाप्य बहुलपानीयप्राहितामपधानामाक-ल्प्य यावता सुकरसता स्यात्तावदुदकमासेचयेज्जोपयेव । अधामावधिधित्य महत्यासने सुलोपविष्टः सर्वतः सततमव-लोकयन् द्रव्यांश्चवश्यन् मुदुना वरित समुपगच्छताऽनलेन सापयेत् । अवतार्य च परिक्षितं यथाहंस्वरो प्रमुक्षीत ॥ अ यं. क. ८” इसजगह “बहुलपानीयप्राहितानीपधानामाकल्प्य यावता सुकरसता स्यात्तावदुदकमासेचयेत् ॥” यही अपना सिद्धान्त दिया परन्तु द्वन्द्वगुण्य परिभाषाका पता इनकोभी न लगा और इन्हींका अनुकरणकरके “गुप्तादिमानमारन्य यावत्स्थान-त्कुडविस्यतिः । द्रव्यं शुष्कद्रव्याणां तावन्मानं सयं मतम् ॥ प्रस्थादिमानमारन्य द्विगुणं तद्द्रवार्थोऽयम् । मानं तथा तुलायाश्च द्विगुणं न त्रयित्स्युत्तम् ॥ शांते २० १।३२-१४” इनको लिखकर “शुष्क नवीनं यद्द्रव्यं योज्यं सखलकर्मणः । आर्द्रञ्च द्विगुणं गुप्तादेप सर्वत्र नियम ॥ शांते २० १।४६” इत्य-जगहपर जो सुश्रुतीय सिद्धान्त है उसीको बतलाया किन्तु यहाँ द्रवका नाम नहीं लिखा यदि द्वन्द्वगुण्यअभिप्रेत होता तो द्वादश-द्रवक शुष्कात् पाठ किया होता । इससे प्रतीत होना है कि इन्होंने द्वन्द्वगुण्यका कुछ नियम नहीं हुआ । इसप्रसंगे होनेवा-सुन्यकारण तो सुश्रुतीय “द्रव्याणां क्षीजगद ‘द्राणां’ होना है । दूसरा औरभी कारण प्रतीत होता है तो यह कि “रक्षिकादि यानिपु यावदि कुडरो गवेत् । कुडादिद्रव्ययोस्तान्यनुल्यं मानं प्रयोजयेत् ॥ शुष्कद्रव्येभ्यश्च मानं द्विगुणं तु द्वादशेः ।

यद् द्वयं कुडवाद्भवं प्रस्थादिभूतनामकम् । द्विगुणं न तुल्यमानं  
मिति मानविदो विदुः ॥” यह उद्धरण गोपुररक्षितकेनामसे  
टोडरानन्दमें दिया हुआ है तो यह गोपुररक्षितका है या  
नहीं इसका पता साक्षात् संहिताके मिलेबिना लग्ना  
मुश्किल है । परन्तु इतना अनुमान किया जा सकता है कि  
गोपुररक्षितप्रभृति सुधृतसद्भाष्यायो है उन सबमें सुधृतको श्रेष्ठ  
माना है देखो “वत्स सुधृत ! ॥ खल्लासुवैदप्रयोजनं व्याधुः  
पद्यना व्याधिपरिमोक्ष स्वस्थस्य रक्षणम् ॥ सु सू १११३”  
इत्यादि स्थानोंमें बारम्बार सुधृतके प्रति सम्बोधन देकर  
धन्वन्तरिभगवानका उपदेश आता है इसलिये इन सबमें सुधृतही  
प्रधान बिद्वान् ये इनके प्रतिकूल गोपुररक्षितादि नहीं लिख सके  
हैं । सुधृतमें रक्षिकारि कुडवान्त और प्रस्थादि तुल्यन्तकी  
अपधि नहीं दी है इसलिये यह कहींका प्रक्षिप्त वाक्य मालूम  
होता है । यदि यह ठीक सिद्धान्त होता तो कहींपरभी आसब  
या स्नेहवाचनप्रकरणमें इसका पालन किया होता, सो देख  
नेमें नहीं आता है ।

कदाचित् यह शङ्का करें कि चरकके सुनिष्पन्नकषात्रेरी  
पुत्रमें “चतुःप्रत्ये श्वतः प्रस्थ कषायमवतारयेत् । च चि  
१४१३५ के नीचे “त्रिंशत्पलानि प्रस्थोऽन विज्ञेयो द्विप  
काधिक ॥” यह श्लोकलिखा हुआ देखनेमें आता है । सोही  
प्रमाण है । नहीं विनायोगकी समाप्तिके इसका यहा रखना  
अकारणतान्त्रिक जैसा मालूम होता है । योगोंकी विशेषसूचनाएँ  
उनके अन्तमें दी जाती हैं बीचमें नहीं । इससे यह साफ प्रक्षिप्त  
मालूम होता है परन्तु यह आजकलका प्रक्षिप्त नहीं है । इसका  
रहस्य न समझकर चक्रपाणिदत्तने इसपर “तथा त्रिंशत्पलानि  
द्विप्रस्थो विज्ञेयो द्विपकाधिक इति विज्ञेयम् । परिभाषासिद्धा  
र्थाभिप्रायकम् । अत एव दृढबलसंस्थानेऽपि द्रव्यद्वैगुण्यभिधानं  
भविष्यति ॥” ऐसी व्याख्याभी कही है यहभी हास्यास्पद है  
कारण कि यहापर इस अर्थपरकी कोई आवश्यकता नहीं है  
हेतुयि “अयाप्यपूर्णं बला दार्ढ्यं वृद्धिपूर्णं त्रिकण्डकं ।  
न्यमोऽधोऽधोऽधोऽधोऽधोऽधो द्विपलोम्भिता ॥ कषाय एवा०”  
एक कषाय यह है । “कलिज्ञां बालमलं पुण्यं वीरा चन्दनमु-  
त्पलम् । कटुफलं चिन्तकं मुस्तं त्रियङ्गुवतिविषां रिषां ॥ पप्रो-  
त्पलानां किञ्चलं समज्ञां सनिदिग्धिका । बिल्वं मोचरसं पाठ्यं  
माणां कर्षसमान्त्वता ॥” इस द्वितीयकषायके ४ प्रस्थ जलमें  
पादावशिष्टकषायकरनेसे एकप्रस्थ क्षामहोमां इसीतरह सुनि-  
ष्पन्न और पात्रेरीका स्वरस १-१ प्रस्थ होमा । यह सब  
मिलकर ४ प्रस्थ द्रव रहेगा इसमें स्नेहसे चतुर्गुणित  
॥ होनेसे इसकापाक बराबर होजायगा । इसकेलिये “त्रिंश-  
त्पलानि प्रस्थोऽन०” इस प्रक्षिप्तवाक्यकी आवश्यकताही  
क्या है ? इसका कुछभी विचार करते तो चक्रपाणिदत्तको इस  
पक्षकी प्रक्षिप्तता मालूम होजाती । इसयोगमें “पण्यास्तु  
जीवन्ती कटुरोहिणी । पिप्पली विष्णुलोमूलं नागरं सुरदार-  
व ॥” इतना यह आपाप है इसकी कषायमें मिलाती नहीं

करनी चाहिये । इसमेंदो न समझकर मालूम होता है कि  
लोगोंने इस प्रक्षिप्त पक्षको बीचमें डाल दिया है । अथवा द्रव  
द्वैगुण्य परिभाषाके भर्त्ताने ऐसा काम किया हो यहभी  
सम्भव है । यदि आचार्यको इससे अधिक द्रव अभीष्ट होता तो  
“चतुःप्रत्ये श्वतः प्रस्थ कषायमवतारयेत्” की जगह “अष्टप्रत्ये  
श्वतः कषायमवतारयेत्” ऐसापाठ करनेमें आचार्यको क्या  
विपत्ति थी ? यह कोई पञ्चदशगीरह छन्द नहीं है जिसकेलिये  
कि इतनी कृत्कल्पना करनी पड़ी । एक और विचित्र रहस्य  
यह है कि इसके पूर्व कई घृत और तैल आयें हैं उनमें कहीं-  
परभी इस पक्षके देनेको जगह न मिली और यहा आकर  
आचार्यको भान हुआ । इसलिये यह स्पष्ट प्रतीत होता है  
कि यह पक्ष पीछेसे लगाया हुआ है । इसके अतिरिक्त अन्य  
स्थलोंमेंभी सुधृत नहीं मालूम होती है । यदि आचार्यको १  
श्लोककी जगह द्विदोण अभीष्ट होता तो दो का नाम देनेमें कोई  
पाप सोझाही लगता, प्रत्युत इससे विपरीत देखनेमें आता है  
देखो पूर्वोद्धित दृढबलकी उदाहरणमें दशमूलादितैलमें “चतु-  
र्दोणेऽम्भस पक्त्वा दोणचोपेयं तेन च । तैलात्क समक्षीर जीव-  
नीयं पलोम्भिते ॥” यहापर ३२ गुना पानी बतला दिया सो  
बायोकी परमावधि तक पहुचने । यदि द्रव्यद्वैगुण्य परि-  
भाषा अभीष्ट होती तो “गुग्मदोणेऽम्भस पक्त्वा” ऐसा पाठ  
करते । पर वैसा न करनेसे यह भेदियापधान जैसाही मालूम  
पड़ता है ।

इसीतरह त्रिफलात्वक् त्रिकटुक सुरसा मदयन्तिका ( सु  
चि १३४ ) इस महानीलीपुत्रमें जलापेक्षका काष्ण्य इत्युकी  
अधिकता होनेसे टीकाकारोंने इसे अर्वाप कहा है । बल्लभनेमी  
इस बातका परिचय दिया है । यदि द्रव्यद्वैगुण्य परिभाषा होती  
तो जलापेक्षका काष्ण्य इत्युकी आधिक्य बल्लभ कभी नहीं कहते ।  
इसलिये द्रव्यद्वैगुण्य परिभाषा सुधृतमें नहीं है अपात् “द्रव्याणां”  
ऐसाही पाठ प्रतीत होता है । हां इसपरिभाषाका एक रहस्य  
यह मालूम हाता है कि मानप्रकरणमें एक रक्षिकादि मान  
और दूसरा कुडवादिमान अथवा खारीमान और  
तुल्यमान ऐसे दोतरहके मान देखनेमें आते हैं इनमें रक्षि-  
कादि और तुल्य यह मान तराजूसे तोलनेका है तुल्य नाम  
तराजूहीका है । “जीवयोधमविषमूलमूलमीता तुल्यान्य ( पा०  
४१४९१ ) तुलया सम्मितं तुल्यम्” इत्यादिस्थलोंमें पाणि-  
निनी तराजूही का नाम लिया है और १०० पल का नाम तुल्य  
( व्यावहारिक पसेरी ) माना जाता है ॥ दोणोऽभीष्ट की तरह  
काष्णिक है क्योंकि साधारणतया अधिक गन्ना तोलनेके समय  
पसेरीसे काम लिया जाता है बस इसीलिये १०० पलकाभी  
नाम तुल्य रखलिया गया है । अबभी यत्र तत्र दशोंमें तुल्यमानसे  
तराजूका तोल और कुडव, प्रस्थ अथवा खारीमानसे माप सम-  
झा जाता है । यह अबभी दोतरहका दशोंमें प्रचलित है और मानमें  
तथा तोलमें वस्तुओंके गुणत्वमें बहुतया अन्तर आता है ।  
उदाहरणार्थ जियवायमें उड़द और आदरको धुलीदात तथा



पीलीसर्पसौ २० तोले आतीहै उसमें चावल, उड़द और तेल २३ तोले, जल २५ तो०, मधु ३० तो०, बाद ३५ तो०, लोहभस्म ४५ तोले और लाजा २१ तोले आतीहैं सो देखिये कितना अन्तरहै । प्राचीनसमयमें साधारण्यवहारमें मापका प्रचार अधिकया सो कहीं इस मापकोही लेकर तो लोगोंने यह द्रवद्रैगुण्य परिभाषा नहीं मानलीहै । चरक अथवा सुश्रुतमें इसकी चर्चा नहीं कीहै पर कृष्णात्रेयने मानप्रकरणमें “वेणु-वार्ध्यायसादीनां भाण्डं यत्तुरङ्गुलम् । विस्तीर्णमय वृत्तं च तन्मानं कुडवं विदुः” ऐसा कुडवमान बतायाहै । इनकीतरह दूसरोंने भी लिखाहो यह सम्भवहै । उसीको लेकर यह गङ्गबड़ी हुईहो यहभी होसकताहै कारणकि इसका प्रमाण कुडवहीसे कियाहै उसके नीचेका मान था तो अन्दाजसे लेलियाकरतेये या कटिसे तोलतेये । वह तोल द्वादश और शुष्कका बराबरही आया करता था इसको “रक्ति-कादिषु मानेषु यावदि कुडवो भवेत् । शुष्काद्रैगुण्योस्ताव-तुल्यं मानं प्रयोजयेत् ॥” इसवाक्यसे बतायाहै । यहाँपर ‘तुल्यं मानं, जो दियाहै उसका अर्थही यह होताहै कि कटिसे तोलकर बराबरकियाहुआ भाग । इसकेबाद “यद् द्रव्यं कुडवाध्वं प्रत्यादिभुतनामकम् । द्विगुणं तुलामानमिति मानविदो विदुः ॥” अर्थात् कुडवसे आगे जो प्रत्यादिक-सङ्ख्याहै उसे भी जप सत्राणमें तोलकर केना हो तो वहाँपर भी सव वस्तुओंका बराबरही मान केना यह कार्यहै । इसका अभिप्राय यहहै कि तुला (सत्राण)से बाँधे जिस द्रव्यको तोले उनके तोलमें कोईभी अन्तर नहीं आताहै हाँ जब इसे कुडवादिमापसे लेंगे तबतो न्यूनाधिक्य होनी अनिवार्यहै यह इसका मुख्य अर्थहै । इसीलिये “रक्तिकादिषु मानेषु यावदि कुडवो भवेत् । द्वादशशुष्कद्रव्याणां तावन्मानं सर्वं मतम् ॥ यद्-द्रव्यं कुडवाध्वं प्रत्यादिभुतनामकम् । द्विगुणं तुलामानमिति मानविदो विदुः ॥” ऐसा विस्पष्टविन्यास कियागयाहै पर बहुतसे लोग इसके रहस्यको न समझर “यद् द्वादशैव द्रव्यं धुननामकं प्रत्यादि तद्द्विगुणं मात्रा, तुलामानं न, अर्थात् द्विगुणं न कार्यम्” ऐसा अन्वयकरके कुडवसे ऊपर प्रत्यादि प्रसिद्धनामसे आयाहुआ द्वादशद्रव्य द्विगुण केना पर साक्षात् तुलाकेनामसे आयेहुएकी द्विगुण ॥ करना ऐसा अर्थकरतेहैं । किन्तुही अक्ष यह अर्थ करतेहैं कि जहाँ प्रथमि, अग्रलिप्रथमिसे नाम आयेहो वहाँपरभी द्विगुण न करना । देवो— “विशेषः कथ्यतेऽप्योऽपि माने शुक्लद्रव्याभ्ये शुक्लद्रव्याभ्यं मानं निर्दिश्य यदुदाहृतम् ॥ ६२ ॥ द्वेषु द्विगुणं मानं सत्यै-वोद्वेत्तु च । द्विगुणं मानमित्येतद्वारम्य कुडवादिति ॥ ६३ ॥ शुष्काणाम् द्वापाणाम् सर्वं तु कुडवादपः । तुलायामपि भैवेष्टा द्विगुणा मानकल्पना ॥ ६४ ॥ तुला पलशतं नैव तत्कुडव-योर्मतम् । पलं चतुर्गुणं चेष्टं प्रसिद्धाणकादिदम् ॥ ६५ ॥ सहायतुलायाश्च रसे तैलादकं पञ्च । यदुक्तं क्षतमेवात्र पलानां परिणते ॥ ६६ ॥ चतुःशतमेतच्च पलं मात्रमुपवर्णकम् । द्रव्यस्य

द्विगुणस्य स्यात्पलमष्टवर्णकम् ॥ ६७ ॥ नैवाध्रुवी ॥ प्रसृते न पले ॥ पलादपः । द्वापाणामौपधानां हि द्विगुणं मानमित्यते ॥ ६८ ॥ अ. सं. कण्ड इन्दुटीका ॥” इसीतरह औरभी कईयोगोंने प्रयासकियाहै पर वह पूर्वोक्तरीतिसे लब्धास्पद नहींहोताहै इसमेंभी शुष्कापेक्षया आर्द्रद्रव्यमें तो सुश्रुतभी सहमतहैं परन्तु द्रवकेलिये झगड़ाहै । झगडाही नहीं किन्तु उसकी उभयुक्तताभी नज़र नहीं आतीहै इसलिये इसकी प्रसि-प्ततामें कुछभी सन्देह नहींहै । इसीतरह कईतरहके पुटकरवाक्य और भी मिलतेहैं वे भी छात्रोंकेलिये जालझूझ हैं उनमेंसे जो जो उपपत्तिरहितहैं उन्हें प्रक्षिप्तसमझर अनादिय समझना । उनमेंसे कतिपयके उदाहरण नीचे दिये जातेहैं । यथा— “आर्द्रद्रव्यं द्रवद्रव्यैः पलेष्टभिरेव च । शुष्कद्रव्यैः चतुष्केण कुडवः समुदाहृतः ॥ हारीतः” “आर्द्रस्यापला मात्रा कुडवस्य प्रमाणतः । मधुतैलपृतादेष शुष्कद्रव्ये चतुःपलैः ॥ शुष्कलवतः” “शुद्धगुगुलुनाडीकैः मिफलारिष्टनागैः । कुम्भाण्डार्कनिम्बानां कुडवधाष्टभिः पलैः ॥ विषामित्रः” “लाजापायसनालिकेरिसलैर्मूत्रैस्तथा काष्ठिकै मत्स्यण्डीम-धुतकमस्तुभदिरादीनां भवेद्द्वैगुणः । वासानिम्बपटोलिकेतकि-बलाकुम्भाण्डकेन्द्वीवरैः, वषांमृष्टनाश्वमारसहिता ज्योषा-श्वगन्धामृताः ॥ मांसी मागबला सहाचत्पूरं हिंवारकं नित्ययोगे प्राक्षास्तस्त्रणमेव न द्विगुणिता ये चैधुजातास्तथा ॥ रसवर्षण” “गुडरामलशुण्डीनां मांसीकुम्भाण्डयोरपि । शुद्धया शुग्-लोधने प्रस्यः पौडशभिः पलैः ॥ भेल” “लाजापायस-नारिकेलसलैः मूत्रं जलं काष्ठिकं, द्वाग्निचालकं तदर्थ-सुदितं प्रस्यं रसायोपयोः । तैलं शौडपुत्र विंशतिपलं शीरष विंशत्पलं, तद्वत्तत्रकपत्रके शुडपलं चाष्टादशं प्रोच्यते ॥ प्रस्यं तु पौडशपलं द्रव्ये जाये रसे तथा । शौडै सर्पिणि तैले च प्रस्यं विंशत्पलं भवेत् ॥ इत्याशयेन द्वैगुण्यं निरामस्य इत्यस्य च । द्वाग्निशता पलैः प्रस्यं प्रोक्तं पायसलाजयोः ॥ सूत्रकाष्ठिकमस्तव-स्तुनारिकेलाम्भसामपि । मूलवङ्गादपत्राणां पुष्पस्य च फलस्य च ॥ शिलाज्वणश्चमूलोलोहाणां गोमयस्य च । पलैःपौडशभिः प्रस्यो रसस्य ह्यौपचस्य च ॥ प्रस्यं पलानां विंशत्या तैले मांशि-कसर्पयोः । शीरे च विंशतिः प्रस्यो दण्डः स्यात्पत्रावि-शतिः । शुडस्य सप्तदशभिरितिभोजनमते स्थितिः । शुडस्य दशनिष्कं हि पलमात्रेण पूजितम् ॥ शशिङ्कुमकसद्रीसर्पार्क-स्तुकृष्यांश्चि च । वमने च मित्रे ॥ तथा शोणितमोक्षणे । सर्पत्रयोदशपलं प्रस्यमाहुर्मनीनिषणः ॥ पद्ममूलं ॥ विस्तीर्णं द्वादशाष्टलमायतम् । एतन्मात्राधिकं प्रस्यं मानमात्रेण पूजि-तम् ॥” इत्यादिस्फुल्लोमें जिसवस्तु का एकने ४ पलका कुडव बतायाहै उसीका दूसरोंने ८ पलका बतायाहै यह कहीं तोल और मापकेभेदसे, तथा कहीं तत्रत “चित्रं हिवाचसे है”असे कि शुष्का १० पलका प्रस्य मानाहै यहाँपर शुडको छाननेसे यदि वह विशुद्ध न होगातो कर्मकेकम् १ प्रस्यसे १ पल चित्र निवृत्तजायाया उसको निवृत्तलेकेलिये १० पलका प्रस्य

मानलिया । क्षीरका २० पलका प्रस्थ मानाहै इसमें मापके हिसाबसे ४ पल अधिक आवेगा । इसमेंदेने दिखानेकेलिये २० पलका प्रस्थ मानलिया । दहीका २५ पलका प्रस्थ मानाहै उसमेंभी मापही का भेद मालूम पड़ताहै इत्यादि अवान्तरभर्त्ता कोलेकर नानातरहके प्रस्थ और कुडवादिमें भेददेखनेमें आताहै परन्तु यह भेद चरक और सुश्रुते नहीं मानाहै इसलिये सुश्रुतकी मानपरिमापाने “द्रवाणां को प्रविष्टरूपा तन्त्रको व्याकुलकरनाहै

अस्तु ॥ वितण्डाको छोड़कर प्रकृतविषयकी तरफ ध्यानदी जिये । क्यायमें मृदुता, साधारणता और तीक्ष्णतात्यादनायें सुश्रुतने क्वाभ्यद्रव्यकी त्रिविधयोजना की है यद्यपि मृदुत्वादियुगोदय इत्यथाहुस्यसे अथवा इत्यगत व्यथायि विकाशि छेदि मदा बहाऽऽभ्येत्वादि गुणोत्ते हुआकारताहै यद्यपि यथापर इत्यबाहुस्यको लेकरही भेद बतलाना आचार्यको अभीष्टहै । एकपलमें १६ पल जलदेकर ४ पलावशिष्ट क्यायमें १ पल घृतादिस्नेहका पाककरनेसे मृदुप्रकृतिक स्नेह तैयारहोगा क्योंकि स्नेहसम इत्यका सार स्नेहमें आयाहै इसे मृदुप्रकृतियोंमें नियुक्तकरना, दोपल इत्यको ८ पल पानीमें पकाकर २ पल अवशिष्टक्यायमें २ कर्ष स्नेह पकानेसे साधारणप्रकृतिकस्नेह तैयारहोताहै क्योंकि स्नेहसे द्विगुण इत्यका इसमें सार आयाहै इसे मध्यम प्रकृतिक व्यक्तियोंको देना । इसीतरह ३ पल ८ भागे इत्यको ५ पल जलमें उबालकर १ पलावशिष्ट क्यायमें १ कर्ष स्नेह पकानेसे तीक्ष्णप्रकृतिकस्नेह तैयार होगा, इसे जवान और साहसिक लोगोंको अथवा कुष्ठप्रवृत्ति भयंकर व्याधियोंमें देना चाहिये यह आचार्यका अभिप्रायहै । तृतीयकल्पमें सुश्रुतमता सुधार स्नेहसे ठीक चतुर्गुण क्वाभ्यद्रव्य नहीं जाताहै इस बातपर ध्यानरखना चाहिये । ॥ “क्वाभ्यद्रव्यचतुर्गुणं वारि स्नेहात्कृत्वा चतुर्गुणम् । क्षीरं स्नेहसम द्यात्कल्कश्च स्नेहपादिक ॥ द्रवेण केवलैर्नैव स्नेहपाको भवेद्यदि । तन्नाम्बुपिठ कल्क स्याज्जल बापि चतुर्गुणम् ॥ ऐसा शिवने खलातन्त्रमें मिलताहै सो परपरिमाषाकीतरह सुश्रुतकीतृतीय कल्पका आनुमानिक अर्थमानकर लिखाहै अथवा अपनी कल्पनासे कायमकियाहो, इसका पता प्रत्यनिर्माणकाल्पान साधेजहै सो होना मुश्किलहै । अन्यलोभोंने इत्यगतमृदुता, साधारणता और कठिनताको लेकर जलपरिमाणमें भेद बत लायि है यथा—“मृदू चतुर्गुणं देय कठिनेऽष्टगुणं जलम् । कठिनात्कठिने देय बुधे योऽधिक जलम् ॥ मृदादिबाधसङ्घातै र्मानानुके चिकित्सका । मध्यस्योमयगामित्वादित्थन्यष्टगुणं जलम् ॥ काप्यद्रव्यपले वारि द्विष्टगुणमिष्यते । चतुर्भागावये पतुं पेय पलचतुष्टयम् ॥ क्षारपाणि ॥ इत्यादिवाक्योंमें काप्यद्रव्यके परिमाणमें कुछ अन्तर नहींहै उसका प्रमाण तीनोंजगह बराबरहै इसलिये यह विषय प्रष्टकहै इसपर ठीक ध्यान रखना चाहिये । ‘माषादिपल यावद्वात्योऽधिक जलम् । तूर्ध्व कुडव यापतोयमष्टगुणं भवेत् ॥ प्रस्थादे

कुडवादूर्ध्व सलिलञ्च चतुर्गुणम् । प्रस्थादित क्षिपेनीर सारि यावच्चतुर्गुणम् ॥’ यथाहमिहितने तोलकी सीमाबाधकर योऽशादियुगलकी व्यवस्थाकीहै परन्तु इसमें धीज क्याहै यह निर्धारित नहीं होताहै तैसेही प्रामाणिक आयुर्वेदीयसहि ताजोक्तेसाथ सबदितभी नहीं होताहै इसलिये यह उतना मूल्य-वान् सिद्धान्त नहीं निर्धारितहोताहै ।

रस या गुटिका प्रभृतिमें भावना देनेकेलिये जहापर साक्षात् स्वरस मिलसकताहो वहापर अच्छीतरह आर्द्र होसके ताव न्यात्र स्वरस देनेका प्रमाण समझना “द्रवेण यावता इत्यमेकी-भूयास्तैा भवेत् । तावत्प्रमाण निर्दिष्ट भिन्नभिन्नभावनाविधौ ॥ कृष्णात्रेय ० ॥’ स्वरसाभावमें भाव्यद्रव्यसमक्वाभ्यको अष्टगुणितपानीमें उवाञ्चर भाव्यद्रव्यसम अवशिष्ट रहनेपर भावना देना यह साधारणनियमहै । यदि इससे भाव्यमान इत्य अच्छीतरह आच्छुत न होसके तो भाव्यद्रव्यसे द्विगुण काप्यद्रव्यको १६ गुने पानीमें अधिकतर भाव्यमानद्रव्यसे द्विगुण अवशिष्ट रखकर उससे भावना देना । देखिये—“भाव्य इत्यसम क्वाभ्य कायोऽष्टास्तु तेन हि । आर्द्र यावदि तद्भाव्य सप्ताहं भावनाविधौ ॥” कृष्णात्रेय । उपरिनिर्दिष्ट जलप्रमाण साधारणतया स्नेहपाकविषयक अथवा पानविषयक ना भाव नाविषयक समझना ।

‘स्नेहाद्यतुर्गुणो द्रव, स्नेहचतुर्गुणो भेषजकल्कस्तद-कप्य समुज्य विपपेदित्येष स्नेहपाककल्प ॥ घृ चि ३१।८ इसवाक्यमें द्रवचतुर्गुणको देखकर यह सन्देह उठना स्वाभाविकहै कि यह चातुर्गुण्य सङ्घातापेक्षया है या प्रत्येकापेक्षया ? जहा वाचनिक प्रामाण्यनिर्देश किया हो वहाकेत्रिये तो किसीतरहके विचारको अवकाश ही नहींहै कारणकि विधि वाक्यमें स्नेहका कोई कारण नहीं रहता इसीलिये ‘स्नेहमे-वजतोयानां प्रमाण यत्र नेरितम् । तनाऽय विधिरास्तेयो निर्दिष्टे तत्तेव तु ॥’ इससे ऊपरकहाहुआ सिद्धान्त स्पष्ट होजाताहै । परन्तु अनुक्तस्यानमें क्या करनाचाहिये ? यह आकाङ्क्षा उठनी स्वाभाविकहै । उसकेलिये ‘स्नेहाद्यतुर्गुणो द्रव’ यह साधारणनियम आचार्यने कियाहै । जितजगह एकदल बतलायाहो परन्तु प्रमाण न दिखायाहो वहापर ‘स्नेहा चतुर्गुणो द्रव’ यह परिमाया उपस्थितहोकर सन्देहको दूरक रेगी । परन्तु जहा क्वाभ्य क्षार आरनात्र, माषरसादि कईद्रव प्रमाणरहित बतायेहों या बाल्नेहों तो वहाहेलिये सन्देह उपस्थितहोगा कि यहां चतुर्गुणत्व किसतरह लियाजाय ? इसकलिये ‘चिनिगमनाविरहादविशयम्’ अर्थात् जहा विशेष कोई गमक न हो वहापर अवशेषसे काम लिया जातेहैं प्रष्टमें जितने द्रव आवेहों वे प्रत्येक स्नेहसे चतुर्गुणित लेनेचा-हिये यह सिद्धान्त स्थिरहोताहै । इसीलिये ‘स्नेहाद्यतुर्गुणो द्रव इति वचनात्सर्वेष्वुदक्क्षारादयो यश्नन्ते । केचिदेव पटमिता यैकद्वित्रिचतुर्गुण्यद्वयानि तत्र सवाणि चतुर्गुणानि, पञ्च

यतीनि समानानि इति तथा चोक्तम् "पञ्चप्रश्रुति यत्र स्युर्द-  
वाणि स्नेहसप्तविधौ । तत्र स्नेहसमान्याहुरन्यत्र स्याच्चतुर्गुणम् ॥  
इति" ऐसा व्याख्यान बल्हणे किया है । बल्हणका मुख्य  
सिद्धान्त वही है जो हमने यत्न किया है । इसीलिये "चित्रक-  
न्योपसिन्धुत्वम् ० सु. उ ४२।२५" यहापर "द्वयादीनि  
मूलकस्वसान्त्वानि प्रत्येक भूताच्चतुर्गुणानि" ऐसा बल्हणे  
व्याख्यान किया है । "पञ्चप्रश्रुति यत्र स्यु ०" यह पद्य  
अग्निवेशसंहिताका है इसके चतुर्भण्डम् "अर्वाक् तस्माच्चतुर्गुणम्"  
ऐसा पाठ है जिसजगह चारसे ऊपर द्रव्यों बहापर स्नेहके  
बराबर लेवे और पाचसे नीचे अर्थात् १, २, ३, ४, इन-  
प्रत्येकको स्नेहसे चतुर्गुणित लेवे, यह स्वरसत अर्थ निकलता  
है । इसीको स्पष्टकरनेकेलिये "यत्र द्वित्रिद्वैद्वयै कुर्यात्स्नेहा-  
च्चतुर्गुणम् । क्षीर स्नेहसम दद्याच्चतुर्भिर्ब चतुर्गुणम्,, इसपद्यको  
जैयटने लिखा है । टोडरानन्दमें "पञ्चप्रश्रुति०,, श्लोकको  
छिछकर "अस्याऽयमर्थः—भूक्तो द्रवस्तत्रैकेन चातुर्गुण्य,  
द्वान्यामपि चातुर्गुण्य, त्रिभिरपि चातुर्गुण्यमिति,,  
ऐसा खुलासा करके 'तत्र जैयटः, ऐसा छिछकर  
"यत्र द्वित्रिद्वैद्वयै—" इसपद्यको उद्धृतकिया है इससे हमारा-  
कहाहुआ सिद्धान्त स्थिर होता है । इसरहस्यको न जाननेवाले  
कितनेही लोगोंमें इसका उल्टाही अर्थ किया है देखिये—“स्ने-  
हाच्चतुर्गुणो द्रव इति वचन एकद्वित्रिद्वेषु चतुर्गुणत्वमन्युते  
स्नेहसाधननिषेधार्थम्, न तु पञ्चप्रश्रुतिद्रवेषु चतुर्गुणाधिक्ये  
प्रतिषेधार्थम्, तेन यत्रैकेन द्रवेण पाकस्तत्रैकेन चतुर्गुण्य,  
यत्र द्वान्यां द्वाभ्यां स्नेहपाकस्तत्र स्नेहद्विगुणान्यां तान्यां  
चातुर्गुण्य, यत्र त्रिभिर्द्वै स्नेहपाकस्तत्र त्रिभिर्भित्तिधातुर्गुण्यम्  
यत्र तु चतुर्भिर्द्वै स्नेहपाकस्तत्र स्नेहसमैश्चतुर्भिर्धातुर्गुण्यमिति ।  
यन तु पञ्चप्रभृतीनि द्रवाणि तत्र तु सर्वाणि स्नेहसमान्येव  
स्यादिति ॥” हमने क्या अर्थका अनर्थ किया है ।

जहां सर्पविष या हाथिकप्रभृति द्रवके योगसे स्नेह पका-  
नाहो बहापरमी क्या इसनियमको ल्यासकेंगे ? यदि स्त्रीका  
रंगे तो महा अनर्पहोगा इसलिये—“स्नेहाच्चतुर्गुणो द्रव इति  
वचन एकद्वित्रिद्वेषु चतुर्गुणत्वमन्युते स्नेहसाधननिषेधार्थम्, न  
तु पञ्चप्रभृतिद्रवेषु चतुर्गुणाधिक्ये प्रतिषेधार्थम् ” यह मन क-  
ल्पित नियम निर्मूलके कारणकि एकराक्यसे पास्वरविषद्वे  
को नियमनिकालने न्यायविरुद्ध है । "चतुर्गुणान्युते द्रवे स्नेहो  
न साम्यः" ऐसा नियम बनावेगे तब वाक्य निराकाहु होनेसे  
आकाशका उत्पान कैसे होगा ? इसवातको सोचा होता तो  
ऐसी भंड्यड कल्पना न की होती हमलिये यह वाक्य अणु  
द्रवप्रमाणमूलमें दिग्दर्शनांध है । यह न तो दिग्गदियुद्धमें निय-  
मकरता है और न पञ्चप्रश्रुति द्रवोंमें विधिमुरदा प्रवृत्तहोता है ।  
साधारणवाक्यहोनेसे जहांदृष्टीही द्रव आवेगा वही द्रवही उप-  
स्थिति होगी वे चाहे जितने क्यों न हों । यदि चतुर्गुणमा-  
त्रा नियमकरवे तो "तीस द्रवगुणे सिद्धं भूतदाश्रयसे धुने ।

सु उ ५१।२५" यहापर द्रवगुने द्रवमें तैलसिद्धकिया है । यदि  
चौगुने द्रवका नियमहोता तो आचार्य अपने नियमका अपनेसे  
कैसे भ्रूकरते ? और देखो "सुवहा कालिका भार्गी शुका-  
ख्या मैत्रुल फलम् । . . ॥ सु उ ५१।२३-२४" "गोप  
वल्गुके सिद्ध स्यादन्यद्विगुणे घृतम् ॥ सु उ, ५१।२६"  
इत्यादि स्नेह द्विगुणद्रवमें सिद्धकिये हैं । इसलिये चतुर्गुणसे  
कम द्रवमें स्नेहसिद्ध नहीं होता है यह नियमभी निर्मूल हुआ ।

चित्रकाद्विधुतमें दधि, आरनाल बदर, मूलक इनप्रत्येकद्रव  
रसोंको बल्हणे चतुर्गुणित बताया है इसलिये "यत्र द्वान्या  
द्वाभ्यां स्नेहपाकस्तत्र स्नेहद्विगुणान्यां तान्यां चातुर्गुण्यम्,  
यत्र त्रिभिर्द्वै त्रेहपाकस्तत्र त्रिभिर्भित्तिधातुर्गुण्यम्, यत्र तु  
चतुर्भिर्द्वै स्नेहपाकस्तत्र स्नेहसमैश्चतुर्भिर्धातुर्गुण्यमिति ।"  
यह व्याख्यानभी निर्मूल उठता है । इससे जहां वाचिक  
प्रमाण आवे उसको बैसाही केना और अन्यत्र जितने द्रव  
हों उन प्रत्येकको स्नेहसे चतुर्गुण लेना यही सुधुतीयसिद्धान्त  
मालूमहोता है । हा कृष्णात्रेयने चारसे ऊपर इसका नियमन  
किया है पर सुधुतके मतमें नहीं है । यहापर सुधुतके कईतरहके  
द्रवप्रमाण देखनेसे यही सिद्धान्त निकलता है कि लेहादि  
पदार्थ तैयार करनेकेलिये केवल हमारा दिग्दर्शन है जहां वेष  
जैसी औचित्य समझे वहा बैसा योग करे । इन्हीं सब बातोंको  
विचारकर मालूम होता है कि "बह्वक्षपनीयमाहितानौपया  
नामकल्मस्य यावता मुजरसता स्यात्तावदुदकमासेचयेच्छोपयेच"  
अर्थात् मूत्र, मध्य और कठिनत्वादि भेद समझकर यह निर्वा-  
हितकरे कि इन औपधोंमें कितने गुना पानी देनेसे इनका  
जच्छीतरह सार निकल आवेगा उतना पानी देकर वायकरके  
उचित शेष रखे । ऐसा वागमटने निष्कर्ष निकाला है । इस  
कथायकल्पके आधुनिक कालपनिकजालमें न पककर आर्यभट्ट  
दायसे काम केना चाहिये ।

जहां कल्ककी औपधें निर्दिष्ट हैं वहापर हम जैसा प्रथम  
कहचुके हैं उसके अनुसार जितनेभी पदार्थ स्नेहमें आनेवालेहैं  
उनसबकी सीटीको जोड़कर उधसे चतुर्गुणित स्नेहको रत्नकर  
कामकरनेसे निर्वाह स्नेहसिद्ध होगी । पाकके मूत्र, मध्य और  
खरत्नके रक्षण जैसे सुधुतने दिष्ट हैं उसीतरह समझना बया  
"अत ऊर्ध्वं स्नेहापाकक्रममुपदेह्याम । स तु त्रिविध  
तथा—मूत्रमध्यम खर इति तत्र स्नेहोपधिविवेकमात्रं यत्र  
भेदत्र स मूत्रमिति, यच्चिच्छामिव विरादमद्विकेपि भेदत्र स  
स मध्यम, कृष्णमवसममीपदिशद् चित्रणं च यत्र भेदत्र  
स खर इति, अत ऊर्ध्वं दान्यन्नेहो भवति, तं तु साध  
साधयेत् । तत्र पानान्यवहारयोर्दुष्टः । न्यायऽन्यत्रयोर्मध्यम,  
वसितर्कपूर्णयोस्तु खर इति ॥११॥ भरतयात्र सद्रव्योपधामे  
प्राप्ते तेनस्योपरमे तथा । गन्धवर्णरसादीनां सम्यक्तां सिद्धिं  
मादिदेत् ॥१२॥ घृतमन्यव विरसमन्य जानीयात् कृशजो गिरह ।  
केनोपतिपायै तेलम्य शेष घृतदादिशो ॥१३॥ सु चि. ११

जहां कल्कप्रवृत्तिका निर्देश न कर केवल गणमात्र निर्दिष्ट कियाहो जैसे कि "सौवर्चलयषसारकटुकाव्योषचित्रैः" । वचाभ्यावाविडगैश्च साधितं भासन्तान्ते ॥ सु उ ५१॥२५" इत्यादिमें 'अतुके द्वेकार्ये तु सर्वत्र सलिल मत्म् । कल्क क्वायावनिर्देशे गणात्तस्मात्प्रयोज्यते ॥ सु चि ३१॥१०,, इसपरिभाषासे कामलेना ।

आजकल "आपिधानमुखे पात्रे जल दुर्जरता वजेत् । तस्मा दावरण त्यक्त्वा कामादीना विनिश्चय ॥" अर्थात् ढकेहुए बर्तनमें जल जल्दी नहीं सूखता इसलिये खुलेमुहके बर्तनमें बाप पकाना चाहिये । कितनेही लोग दुर्जरका अर्थ पाचनमें भारी होताहै ऐसाकरतेहैं । इसी धुनमें लोग सगेहुएहैं परन्तु यह श्लोक कहाँकोहै इसका पता नहीं चलताहै । हाँ आजकल शार्ङ्गधरमें शामिल कर रक्खाहै परन्तु आदमश्लेके समयमें शार्ङ्गधरमें यह श्लोक नहींपा ऐसा अनुमान होताहै यदि होता तो इसकी व्याख्या की होती । इस श्लोककी रचना भी अण्डवण्डहै इसका अन्तिमपाद अपने अर्थको प्रकटनहींकरताहै । किसी योग्य पुरुषका बनायाहुआ होता तो 'विनिश्चय, की जगह 'विधि स्मृत' 'श्रुते विधि', 'बाधस्य करणे विधि' इत्यादि पाठ होता । आस्तपुरुष प्रायः अभ्याहारनिरपेक्ष भाष्यका प्रयोग किया करतेहैं इसलिये यह साफ बनावटी नजर आताहै । यदि यह सिद्धान्त प्राचीन होता तो दाल भगैह डकनैकामी रिवाज न होता प्रत्युत विपरीत देखनेमें आताहै । ढके बिना पकायपरमाणुओंका प्रयकरण जल्दी नहीं होता और पाचनहोनेमें प्रयकरणही मुख्य कारण होताहै इसलिये द्वितीय जो अर्थहै वह निर्मूलकहै । "वृद्धवैयोपदेशेन पिबेत्काथं क्षुपाचितम्" यह शार्ङ्गधरने स्वीकृत कियाहै । 'क्षुपाचितम्' का अर्थही यह है कि अच्छीतरह काष्ठद्रव्य परमाणुओंका जिसमें विच्छेद होगयाहो और उसके गन्ध, रस तथा रस विकृत न हुए हों इसीवातको आदमश्लेके दिख लायीहै यथा—'क्षुपाचितमिति गन्धवर्णरसान्वितम् । तदुत्तम—द्रव्यस्य गन्धवर्णं च द्रव्य कार्यकर विदुः । तद्विशुद्ध विशुद्धाय कषायममृतोपमम् ॥" यह उद्धरण दियाहै । इसपर अच्छीतरह ध्यानदेकर विचारना चाहिये इस श्लोकसे मिलकुल विपरीतार्थक वह पयहै । बिना ढकेहुए कायकरनेमें चन्दनादि जो गन्ध द्रव्यहैं और उनका गुण गन्धहीपर अवलम्बितहै वह गन्ध उसमेंसे निकल जायगा तब बाकी सीठी रहकर कामही क्या करेगी । इसबातको आजकलके वैद्य भेडिया परमानमें पढ़कर भूलगयेहैं परन्तु अर्कजीवनेवाले असार इसकी तर्क अच्छीतरह ध्यानदेतेहैं और अर्कनिकाश्लेकेलिये आज कल नवीनशोधके जमानेमेंभी इसउलटके यत्न बनाए जा रहेहैं कि जिनमेंसे किसीतरहभी गन्ध या बाप न उड़नेपावे । जब द्रव्यस्य गन्धही निकलजायगा तब बाकी रह क्या जायगा ? इसको सस्तेभी समझसकताहै । हाँ कदाचित् जन्दीबनानेके दिसावसे यह वाक्य बनाया गयाहो तो वह भी मूर्खताहै

उसकेलिये उपदेशकी खुरुरत नहीं उसे तो सवलोग जानतेहै । जब जन्दी होतीहै तब गुदप्रसालनकामी पता नहीं चलताहै क्या इसकेलिये किसी विधिवाक्यकी खुरुरतहै ? अर्कजीव नेकासिद्धान्तभी इसीरहस्यको लेकर प्रचलित हुआहै उसका सिद्धान्तहै कि द्रव्यस्य गुण और गन्ध प्रायः सबके सब बाष्पमें शामिल रहतेहै इसलिये गुग्गुलु द्रव्योंका अर्क जितना कामकरताहै उतना काय नहीं करता यह प्रत्यक्ष विषयहै ।

आसवोंकेलिये यदि वे खदिरसारकीतरह कठिन द्रव्य हों तो १ पल काष्ठद्रव्यमें ३२ पलपानीदेकर अष्टमासावशेष रहनेपर उसकी बराबर पुरानागुड़ देवै—“आसवादिसु साध्येषु द्वानि ण्णुणसम्मिताम् । खदिरादे प्रतिपल जलमाहुधित्वित्त्वा ॥ अष्टावशेषित कृत्वा गुड कायसम क्षिपेत् ॥ वृद्धसुष्ठुत ॥” जहाँ द्रव्य अधिक हो और पानी कम कहाहो अथवा अनुमानसे छोड़ना हो तो कम न छोड़ना । वैसाकरनेमें द्रव्यकासार न निकलनेसे यथार्थ गुणोदय नहींहोगा इसलिये १ क्षोणद्रव्यमें १० क्षोणपानीदेकर उबालनेपर २॥ क्षोण अवशेषकायमें १॥ क्षोण पुराना गुड डालकर अच्छीतरह मर्दनकर सन्धानकरना उचित है ।—“क्वाथद्रव्यस्य बाहुल्यादुक्त स्वरूपमेव चैत् । सम्यक् पाकं न मुञ्चन्ति हीनवीर्येन्तु कैवलम् ॥ क्वाथ्यद्रव्यं घटसम जल दशपटे क्षिपेत् । नि क्वाथ्य पादशेषं तु गुड सार्धं घट न्यसेत् ॥ विमृश सन्धित यथा तत्पातयतितीरिभम् ॥ वृद्धमुष्ठुत ॥” मृदुप्रकृतिकरोगियोंकेलिये द्रव्योंका क्वाथ न बनाकर जहाँ आसव तैयार करनाहो वहापर औषध चूर्णके बराबर पुराने गुड़को चौगुने पानीमें मिलाकर जबउद्वर्ण डालकर सन्धानकरे, यह अत्यन्त मृदुप्रकृतिक आसव होताहै इस रहस्यको न समझनेवालोंने क्वाथसिद्धसन्धानको अरिष्ट और क्वाथबिनाको आसवकहतेहैं ऐसा नियम बनारसकाहै । और इसकेलिये “यद्वक्त्रोपाध्मन्मुद्या सिद्ध मयं स आसवः । अरिष्टं क्वाथसिद्धं स्वात्तोर्मानं पलोन्मिताम् ॥” ऐसा वाक्यभी बनारसकाहै जैसे कि शार्ङ्गधरने लिखाहै और इसीकी छायारूप बिना क्वाथने सन्धाननासब प्रोच्यते किम् ॥ ऐसावाक्य बिना नामनिदानका नारायणबिलासमें दियाहै । “पक्वोपाध्मन्सिद्धं यन्मयं तत्स्वादादिरिष्टम् । यद्वक्त्रोपाध्मन्मुद्या सिद्धं मयं स आसवः ॥” ऐसा भाव-प्रकाशनेभी लिखाहै यद्यपिशार्ङ्गधरने अपने लक्षणपर ध्यान देकर वर्तावभी वैसाही कियाहै परन्तु यह आपसिद्धान्तनहींहै यदि ऐसा होता तो “आसवाऽरिष्टयोर्वैत्रं न गुणो न सम्यते यदा । एकद्वित्रिष्ट कृत्वा दापयेद्गुणद्वये ॥” जहाँ आसव और अरिष्टोंमें बिनाक्वाथकेसन्धानसे यथार्थगुणोदय न होवे तो एक दो बार अथवा तीनबार औषधोंका प्रक्षेपदेकर क्वाथ बनाकर सन्धान करना, अर्थात् प्रथमपाक ३० गुने जलमें अधिक करके फिर दोबार और करना क्योंकि आसवोंमें अधिक तेज कटने अधिक ३२ गुने जलका विषाजहै इससेभी अधिक तेज करना हो तो प्रथमपाक ३२ गुणमें, फिर १६ गुणमें और स्तीयअष्टगुणमें

करना. ऐसा गोपुरके कदमेसे पूर्वलक्षण निर्मूल होतावै (सूचना प्रतिपादक योग्यतानुसार नयाजल देना) आसवमें "अथावशेषितं कृत्वा गुडं क्वायसमं क्षिपेत्। गुडं क्वायौपधसमं जलं चापि चतुर्गुणम् ॥ आसवारिष्टमेवैषावापय दशांशकः। क्षौद्रं गुडपादोनं प्रदातव्यं म्रियकमैः ॥" क्वाय अथवा क्वायौपधके बराबर गुड देना। यदि गुडकेस्थानमें मधु देना हो तो चतुर्थीया कम देना यह श्रुद्धयुक्तका सिद्धान्तहै। "अरिष्टेषु च सर्वेषु द्रोणे फलसते गुडम्। चिरस्थायिणरिष्टेषु द्विगुणं गुडमावपेत् ॥ क्षौद्रं क्षिपेद्गुडस्यार्द्धं प्रसेपस्तु दशांशिक ॥ ३२ गुणप्रभृति उचितजलमें क्वायको बनाकर चतुर्थ अथवा अष्टमांशावशेष रहे हुए १ द्रोण इवमें १०० पल गुड देना। यदि उसे बहुतदिन रखना हो तो २०० पल देना और गुडकी जगह मधु देना हो तो गुडसे आधा देना। यह गोपुरका सिद्धान्तहै। दशांशप्रशेष दोनोंमें करावै। इसतरह जहां गुडमधुप्रभृतिका निर्देश न हो वहां इसपरिभाषासे कामलेना उक्तकेलिये विचारकरनेकी कोई आवश्यकताही नहींहै जहां जैसा लिखाहो वैसा करना। पुनः "अभियवे" स्वादिसे "कदोरे" (पा. ३।३।५७) प्रत्ययकरणसे आसवबहुविधहोता है। सन्धानकरके द्रव्यस्थितिको खुदा करनेकालाम साधारणतया आसवहै। इसकेभेद और योनि "धान्याफलमूलसारपुष्पकाष्ठपत्रत्यको भवन्त्यासवयोनिर्दोऽभिवा ॥ सद्गृहेणाष्टौ शर्करानवम्योः तास्वेष द्रव्यसंयोगकरणोऽपरिगृह्येयसु अथा पथ्यतमानामासवानां चतुरतीति निबोध ॥ च. सू. २।५।८८" में चरकने बतलायैहैं। इनमें घृता १, क्षौवीर २, तुपोदक ३, मैरेय ४, मेदक ५, धान्याम्ल ६, इनमेंदोसे मयके अम्रसंयोगसे खास ६ भेद बताएहैं। धान्यासव ६, फलासव १६, मूलासव ११, सारासव २०, पुष्पासव १०, काण्डासव ४, पत्रासव २, त्वगासव ४, शर्करासव १, इसतरह मोटे हिसाबसे ८४ आसव बतलाए हैं। इनके द्रव्यसंयोग, विभाग और संस्कार नानातरहके होनेकेकारण नानातरहके आसव होतेहैं। "एषामासवानामाश्रुतत्वादासवसञ्ज्ञा ॥" इससे योग्यत्वज्ञा बतलाई है। इसका अपरपर्याय अभियवहै। इन दोनों उपसर्गोंके अन्वयाय होनेसे आसव बहुवचनकारके होतेहैं यह अर्थ सिद्ध होताहै उनमेंसे एकप्रकार वहै जिसमें द्रव्यमेंसे समस्तसार निचल आवे, जैसे कि मयका रींचना। दूसरा यहै कि जिसमेंसे अधिष्ठत सार निचल आवे, जैसे अरिष्ट। तीसरा वहै जिसमें कि द्रव्य उससे पृथक् न कियेजायै परन्तु सन्धानरूपसे मरुमय और यदिदधिर्मादरुका उत्पन्न होजाये, जैसे कि मुरब्बे, काष्ठी-प्रभृति। इनके अपान्तरभेद द्वात्रो होतेहैं पर उन्हें लोकमें मयके नामसे नहीं पुकारातैहै किन्तु काष्ठी, सौदा, आचार, मुरब्बा प्रभृति नामोंसे जाने जातेहैं। परन्तु "आगुप्तवादा-धया ॥" यह लक्षण सरजगद् व्याप्तहोनेसे सन्धानाद्यनेपर भिन्नमें व्यक्त अपना अन्त्यक मददो उन्मथनी आसवमें गिननीहै

इसलिये "कन्दमूलफलवद्य तद्विद्यासदाश्रुतम् ॥ च. सू. २।५।८०" यहां इसबातको स्पष्ट करदीहै। मयवर्ग, च. सू. २।५।७६-१९३ में घृता १, मदिरा २, जल ३, अरिष्ट ४ ये चारभेद बतायेहैं। "न रिप्यत इलरिष्टम्" अर्थात् नहीं सकेवाला पदार्थ, यहांपरमी अर्थापत्तिसे आसवावर्धे व्यक्त होताहै। जिसमें मयसार उत्पन्नहोताहै वह पदार्थ सञ्ज्ञतानहीहै इसीलिये आजकल आलकोहल या रेकटीकाइस्ट्रिट यत्कि-ञ्चित्प्रमाणमें डालकर कचे ( बिनाचासनीके) कायोंके रखनेकी रिवाज चलीहुईहै। मयवर्गीय समस्तपदार्थोंमें यह (मयसार) मोदेबहुत प्रमाणमें रहताहीहै इसलिये व्यक्तकरनेकेलिये अरिष्टज्ञा रक्खीहै इसीलिये चतुरतीति आसवप्रदर्शनप्रकरणमें अरिष्टका नाम निधानतक नहीं दियाहै और मयवर्गमें जिनका नाम आसव दियाथा उनमेंसे शर्करा १, पञ्चरस २, क्षौद्र-रसिक ३ और गौड ४ इनका अरिष्टावसे निर्देश कियाहै वहांपर मधुकावका मधुप्रधानासव ऐसा चक्रपाणिदत्तने अर्थ-कियाहै यह सनकी गलतीहै। मधु स्वयं ही आसवहै इसको अधिकज्ञानसे नया होताहै देखो बाल्मीकिरामायण सु० ६१, ६२ सर्ग "मधुनि द्रोणमात्राणि बाहुभिः परिश्रुते। पिबन्ति कपयः केचित्सङ्घास्तत्र हृत्पद ॥ प्रन्ति स्म सहितास्सर्वे मधुयन्ति तथा परे ॥ मधुच्छिन्ने केचिन्म जन्तुन्योन्यमु-ल्कटाः ॥ अपरे बृहस्पतेषु धातुषा गुणं व्यनक्तिवत् ॥ अत्यर्थंश्च मदम्लानाः पर्णाह्यास्तीर्य शोरे ॥ समस्तवेगाः प्लवगा मधुमत्ताश्च हृत्पद ॥ इसप्रकरणकी देखनेसे स्पष्ट विदित होगा कि मधुमें कितनी मादकताहै। यह मधुमक्षिकाओंका बनावाहुआ पुष्पासवहै इसलिये "यि-यन्धन्म कपजश्च मधु लब्धप्लमाश्रुतम् ॥" ऐसा चरकने इसका गुण बतलायाहै। इसके बाद समग्रघृता, मधुलिका, क्षौवीरक, तुपोदक और अम्लहाधिकको कहकर मयवर्गको समाप्त कियाहै इसलिये आसव और अरिष्ट एकार्थवाचकहै। इसीकारणसे "दिप्याः प्रथमा विविधा घृताः इतुघृता अपि। शर्करासव-माष्ठीकाः पुष्पासवकलासवाः ॥ वा. रा. छं. १।४।२३-२४" में रावणकी पानमृमिमें घृता और इतुघृता इनदोनोंसे अम-योगजन्यमय तथा आसवोंसे अमरहित मयवर्गको कहकर समस्त मयवर्गकी सत्ता सूचितकीहै वहांपर अरिष्टका पृथक् निर्देश नहीं कियाहै।

अब घृतके मयवर्ग (घृत ४।५।१०० से २१६ तक) की तर्क प्यानरीजिये इसमें मर्दिक (अहरी) १ यानूर (घनूरी) २, मेता ३, प्रथमा ४, मधुलिका ५, आक्षिटी ६, घृता (प्रथमा अर्थात् स्वच्छप्रमाण) की बतलाकर कोहल १, जल २ और बरुस ३ इसतरह क्रमशः अमरारिष्टमागके गुणोंको कहकर गौड १, शर्करा २, पञ्चरस ३, क्षौद्ररसिक ४, आक्षिटी ५, जाम्बव ६, घृतामय ७, मध्यासव ८, मैरेय ९, इत्यासव १०, मधुकासव ११, इन व्यावहारीयुक्तोंको बतलायाहै। यदापर पूर्वापरमें क्षौद्रो कदा और बीचमें आसवोंका निर्देश कियाहै।

यद्वा आसवविरोधका नाम नहीं प्रतीतहोता कारण कि इसके समनन्तर 'निर्दिष्टोदसतथान्यान् कन्दमूलफलसन्धान' ऐसा वाक्य आनेसे यद्वापर आसवचन्दसे सीधुही अभिप्रेत मान्यहोताहै कारण कि रससे इनके गुणोंका निर्देश कियाहै । रससे प्राय सीधु (ठाडी) या शुष्क (सिरका) ही तैयार किया जाताहै आसवविरोध नहीं । आसवविरोधकानाम इसके आगअरिष्ट रक्खाहै और इसे तीक्ष्ण मानाहै देखिये—“अरिष्टो द्रव्यसंयोगवत्कारादधिको गुणः । बहुदोषहरश्च दोषाणां घम नय स ॥ दीपनः कफनाशकः रसः पित्तविरोधनः । शूलऽऽपमानोदरप्लीहज्वराऽजीर्णाऽर्शसां हित ॥ इति” यजुः सौरहके रचने यत्किञ्चित् सत्कारदेकर मध्यस्थमें कियेहुएकी सीधुमें १, यन्त्रद्वारा सींचकर तैयार कियेहुएकी आसवमें २ (कोहल १ जल २ और बक्ष ३ भी इसीमें शामिलहै) और दशमूलादि दवाओंकेकायमें अपवा शुद्धजल या तकादि द्रवोंमें औषधपूर्ण तथा गुहादिपदार्थ देकर सन्धानकिये हुएकी अरिष्टमें गिनाहै । “न रिप्यतीत्यरिष्टम्” अर्थात् चिरस्वा पित्रभ्य, वस इतनीनिविभागोंमें प्रधान मध्यमोंको समाप्त कियाहै । इसकेबाद शुष्क (सिरका) और उसकेभेद, गौडशुष्क, रसशुष्क, मधुशुष्क, आसुत, मुरम्बे और आचार सौरह, गुप्ताम्यु तथा धान्याम्लकी गौणमध्यमें दाखिल कियाहै । इससे “यद्वापक्षौषधाम्बुम्या सिद्ध मद्य स आसव । अरिष्टः क्वाथसिद्ध स्यात्तयोर्मानं फलोन्मिताम्” यह वाक्य निर्मूल टहताहै देखिये सुधुत चि० १०१६ अरिष्टको बिनाक्वाथके बनायाहै और पलायसारके परिप्लुत जलको क्वथितकर यत्किञ्चित् गाढाहोनेपर ट्याकरके सन्धानकियाहै इससे उक्तलक्षणकी विपरीतता देखनेमें आतीहै । यद्वापर यह कहा न करें कि बड़ा साक्षात् क्वाथका विधान नहींहै ? पलायसजसपरिप्लुतस्य वण्णोदकस्य शीतीभूतस्य श्रमोभागा०” गरमकर ठंडे कियेहुएके तीनभाग, इससे क्वाथकरना व्यर्थहोताहै अन्यथा यह कहनेकी आवश्यकताही क्या थी ? यद्वापर अवाप्तर यह कहा न करें कि अरिष्ट और आसव दो भेद एकही जगह क्यों मतलाए ? इसका रहस्य यहहै कि इसतरहकेसन्धानके दो प्रकारहैं एक क्वथितकरके निष्पन्नकरना और दूसरा बिना क्वाथका इसीलिये “प्राप्तियर्क्षी पिप्पलीं पिष्ट्वा शुद्धं मध्य विमीतकात् । उदकप्रस्यसंयुक्तं यवपत्रे निषापयेत् ॥ तस्मात्पलं सुजातात्तु सलिलाञ्जलिसुतम् । पिबेत्पिप्पलासो खेप रोगानीक विनाशन ॥ च. चि. १५१११-११२” इसप्रकारका चरकने पिप्पलासव कहाहै सुधुतने “पिप्पल्यादिद्रवो गुल्मकफ्रोमहर स्मृत ॥ ३४५१११६” इत्यादिकोंकी अरिष्टसहा दीहै इससे सीधु और प्रसप्राऽऽसव द्विभिषगुराको छोड़कर प्रधान मद्यका तृतीयको प्रकारहै उसे साधारणतासे अरिष्ट और आसवके नामसे निर्देशकरतेहैं । यह चाहे क्वथितकरके किया जाय अथवा क्वाथविना कियाजाय यह तो वैद्यकी बुद्धिपर आधारितहै इसे हम प्रथमही सूचितकरचुकेहैं कि क्वथितकी

अपेक्षा बिनाक्वथित मृदुप्रकृतिहोताहै । अर्थात् “मृदुप्रकृतिक् आसवस्तद्विषमरिष्टम्” इसभेदको लेकर भेदकरें तो अवश्य हो सकताहै ॥ “पदपक्षौषधाम्बुम्या सिद्ध मद्य ॥ आसव । अरिष्ट क्वाथसिद्ध स्यात् ० । शार्ङ्ग ०, भा ॥” अरिष्टासव सीधुनां गुणान् कर्माणि नादिशेत् । सुधुता यथास्व सत्कार मवेक्ष्य कुसलो भिक् ॥ ३४५१११७” की टीकामें “द्रव्यप्रधानमरिष्टम्, द्रवप्रधान आसव, उभयप्रधान मद्यम्” इसतरह कियेहुए लक्षण अन्यात्त्यादिदोषनयशुद्धहोनेसे त्याज्य है । अरिष्टलक्षणमें द्रव्यप्राधान्यदीहै तो औषधमात्रमें यह लक्षणहोनेसे विरथेकहै दुनियामें कौनसा औषधहै जिसमें कि द्रव्यप्रधान न हो ? इसीलिये “नानौषधिभूतं जगति निश्चितम्” यह सिद्धान्त कियाहै इससे (जरकरा लक्षण) निरर्थकहोता । इसीतरह द्रवप्राधान्यमेंभीहै प्रधान और अप्रधान दोनोंतरहके मध्यमें यत्किञ्चित् प्रधानमें द्रवभी अपेक्षितहै उसके बिना मद्यभेदका बननाही असम्भवहै क्वाचित् कहें कि वक्तलक्षणमें एकदम द्रवकी अधिकता अभीष्ट है तो सीधु और मुरम्बे अतिव्याप्तिहोनेसे यह लक्षणभी निरुन्माहै । चरकीय पिप्पलासवमें एकदम द्रव कमहै इसीलिये उसका नाम पिप्पलासव रक्खाहै इसलिये यहलक्षणभी दूषितहै । इसीतरह “उभयप्रधान मद्यम्, यहभी अप्राप्तहै । जैसाहमने पूर्वमें कहाहै वही मद्यमार्गहै लोगोंके कियेहुए लक्षण छान-गुदिको व्यामुग्ध करनेवाहैहै । कुष्ठप्रकरणमें अरिष्ट और आसवका जो प्रथक विधानहै वह क्वथिताकथित प्रकारको बतातेके लियेहै कुटीकी इच्छाहो तो पलायसवमें मुरम्बे सौरह भी तैयार करके देखकरहैं इसलियेभी आसवप्रकार खुदा बतायाहो यहभी सम्भवहै । इसलिये “सुरामन्याऽऽसवारिष्टालेक्षाधुनां व्यवस्कृती । सहस्रशोऽपि कुर्वीत बोलेनाऽनेन बुद्धिमान् ॥” इस उपसंहारमें अप्रयुक्त मन्थकोभी गिनायाहै । क्वाचित् कोई द्रव्यप्रधानका प्रयोगप्रधान यह अर्थ करें तो वहभी असंयोजित इत्यरिष्ट, गण्डीरारिष्ट प्रभृतिमें अव्याप्तहोनेसे अप्राप्तहै ऊपर दियेहुए व्याख्यानको समझनेकेलिये सुधुतीय और चरकीय कतिपय आसवारिष्टोंकी सूची नीचे दीजातीहै । यथा लोघ्रासव (च. चि. १५११) में ३२ गुणजलमें चतुर्धाशवरोध कायकरके प्रयोगरहित सन्धानकियेहुएकी प्रमेदादि रोगोंमें प्रयुक्तकियाहै ।

मूलासव (च. चि. १५११५०) में १४१ गुणजलमें चतुर्धाशवरोध क्वाथकरके प्रयोगदेकर सन्धानकियेहुएकी ग्रहणी-प्रभृतिरोगोंमें प्रयुक्तकियाहै

दुरालमासव (च. चि. १५११५१) में ११ गुणजलमें चतुर्धाशवरोध क्वाथकरके प्रयोगदेकर सन्धानकियेहुएकी ग्रह व्यादिरोगोंमें प्रयुक्त कियाहै ।

शर्करासव (च. चि. १५११५४) में अठ्ठावेजलमें चतुर्धाशवरोध क्वाथकरके प्रयोगरहित सन्धानकरके अशमें प्रयुक्त कियाहै ।

पलाशक्षारासय (सु. चि. १०१७) में पलाशकी मलमको ६ गुने पानीमें ढालकर नितेहुए जलकी अभिपर गाढावनाय-प्रक्षेपरहित सन्धानकरके कुष्ठमें प्रयुक्त किया है।

गौडासय (सु. सू. ४४१२८) में ५ गुनेजलमें चतुर्भा-गावशिष्टस्वायकरके प्रक्षेपरहितका सन्धानकरके विरचनादिकमें प्रयुक्त किया है।

मधूकासय (च. चि. १५१४७) में चतुर्गुणजलमें तृतीयांशवशिष्ट स्वाय करके प्रक्षेपरहितसन्धानकियेहुएकी प्र-ण्यादिदोगोंमें प्रयुक्त किया है।

पिण्डासय (च. चि. १५१६१) में चतुर्धाजलदेकर पाकरहितही सन्धानकरके प्रक्षेपरहितमें प्रयुक्त किया है।

पुनर्नवाचरिष्ट (च. चि. १२३४) में ३२ गुनेजलमें अर्धवशेषक्यायकरके प्रक्षेपदेकर सन्धानकियेहुएकी श्वययुमें प्रयुक्त किया है।

अमयारिष्ट (च. चि. १४१३९) में २५ गुनेजलमें चतुर्धावशिष्ट वायकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकरके अर्धमें प्रयुक्त किया है।

अमयारिष्ट (सु. चि. ६१५५) में २१ गुनेजलमें चतुर्भागावशिष्ट स्वायकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएकी अर्धमें प्रयुक्त किया है।

दन्त्यारिष्ट (सु. चि. १४१४५) में १६ गुनेजलमें चतुर्धावशिष्टस्वायकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएकी अर्धमें प्रयुक्त किया है।

फलारिष्ट (च. चि. १४१४९) में १२॥ गुनेजलमें चतुर्भागावशिष्टस्वायकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकरके अर्धप्रप्रतिमें प्रयुक्त किया है।

दन्त्यारिष्ट (सु. चि. ६११४) में १० गुनेपानीमें चतुर्धावशिष्टस्वायकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएकी अर्धमें प्रयुक्त किया है।

गण्डारिष्ट (च. चि. १२१२९) में ८ गुनेपानीमें त्रिभागावशिष्ट स्वायकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएकी श्वययुमें प्रयुक्त किया है।

वीजकारिष्ट (च. चि. १६१०६) में ५॥ गुनेजलमें चतुर्धावशिष्ट स्वायकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएकी पाण्डुमें प्रयुक्त किया है।

मध्वारिष्ट (च. चि. १५१६४) में पक्षगुण जलदेकर विना-पाककियेही सन्धानकर प्रण्यादिदोगोंमें प्रयुक्त किया है।

कनकारिष्ट (च. चि. १४१५९) में चतुर्गुणजलदेकर पादशेष स्वथितकर प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएकी अर्धमें प्रयुक्त किया है।

पूतीकारिष्ट (सु. चि. १०६६) में द्रव्यापेक्षया आधेसे कुछ अधिक जल देकर पाकहित सन्धानकरके कुष्ठदिकमें प्रयुक्त किया है।

अष्टशतारिष्ट (च. चि. १२१२२) में तृतीयांश जलदेकर विनापाक कियेही सन्धानकिये हुएकी श्वययुमें प्रयुक्त किया है।

फलत्रिकारिष्ट (च. चि. १२१२९) में जलरहितकाही सन्धानकरके श्वययुमें प्रयुक्त किया है।

लोहारिष्ट (सु. सं. १२१२२) में १६ गुनेजलमें चतुर्भागावशिष्ट स्वायकरके सन्धानकियेहुएकी प्रमेहपिण्डकाप्रप्रतिमें निर्युक्त किया है।

घात्र्यारिष्ट (च. चि. १६१११) में आंवलोदेकरसमें विनापाककियेही सन्धानकरके पाण्डुगोमें प्रयुक्त किया है।

आसवोंमें प्रायः घृतमाण्ड लियाजाताथा उसमें चन्दन और अगरका, अथवा जटामांसी और मरिचका, तथा कहीं कहींपर केवल अगरका धुपलिया है। पीपल, मधु और घृतका लेप सुष्ठवमें बतलाया है। चरुमें पिप्पली और मधुका लेप (मध्वारिष्टमें), पीपल, चम्प, प्रियङ्गु, मधु और घृतका लेप (शर्करासवमें), तथा इलायची, मृणाल, अगर और चन्दन-का लेप (मधूकासवमें) बतलाया है। मध्वारिष्टमें घृतमाण्डकी जगह कोरायका उपयोगमें लिया है परन्तु आजकल आसवोंको लकड़ीके पीपेमें रखनेका प्रचार हुवा है इसमें प्रथम जो आसव रखा जाता है उसमें जिसतरहकी लकड़ीहोगी उसका विशेष अंश आवेगा। हाँ वह कई बारका होजायगा तो इतना अंश नहीं आवेगा इसवातका ध्यान रखना चाहिये। इसीलिये आचार्योंने घृतमात्रन लिया है क्योंकि इसमें कोईबीजमिलनेका सम्भवन नहीं रहता और स्नेहके कारण बाहरसे सूक्ष्मलकीटोंका प्रवेशभी नहीं होता है। इसीलिये जन्तुनशनाओंका धूप और प्रलेप लिखाहुआ है। इनका अनुष्ठान कराना भी उचित है।

आसवोंमें समय अधिकतर १ महीनेका रखाहुआ है कहीं-कहीं शर्करासव प्रप्रतिमें मासाधे भी आता है पर यह अवधि मयसार उत्पन्न करनेकी है। “घनात्यये तथा ग्रीष्मे सन्धानं यद्दिनैर्भवेत्। हेमन्ते सित्तरे स्वाप्यं निपजा दिग्विनाचथि ॥ श्राद्धसन्ते सन्धानं भवेत्तद्विनेन वै ॥” इस ब्रह्मसूत्रके वाक्यसे अत्यन्तकालमें सन्धान व्यक्तहोता है पर वह आसवपरक नहीं है वहाँपर दुषाम्बु प्रभृतिका प्रकरण है अप्रमिश्रितसन्धान बहुत-जल्दी होता है इसलिये वहाँ वैसी अवधि बतलाई है। यद्यपि स्व-याक्यमें श्राद्ध समयमें भी सन्धान कहा है पर वहभी दुषाम्बु प्रप्रतिके लिये है। येसव सन्धान विरकालतक रखनेके लिये नहीं होते हैं। योके समयके लिये कियेजाते हैं आसवोंका सन्धान श्राद्धकालमें कियाहुआ बुराबोजाता है उसके लिये स्वयंसे उत्तम बसन्त और ग्रीष्म ऋतु है। जहाँपर उष्णता कमहोगी वहाँपर आसव बिगड़जायगे इसवातका ध्यान रखना चाहिये।

नस्यमें ८ विन्दु (१) शुक्रि (२) और पाणिशुक्रि (३) इतल ३ यात्राएँ बताई हैं ये प्रत्येकनासापुटके लिये सम-झनी चाहियें क्योंकि गयीप्रप्रतिन ऐसा स्पष्ट कहा है यथा- “प्रायोगिके नस्ये प्रत्येकं नासपुटयोरटौ विन्दवः स्नेहनायं

वद्विगुणाः शुक्तिप्रमाणा इति १" यहाँपर आठके द्विगुणको शुक्तिनाम देनेसे ३२ कानाम पाणिशुक्ति अर्थात् आजाताई । "प्रायोगिकं स्नेहिष्ठ द्विविधं नस्यमुच्यते । प्रायोगिके बिन्द्वोऽष्टौ स्नेहिके शुक्तिरिष्यते ॥" इसभोजके वाक्यमें प्रायोगिकनस्यमें आठ बिन्दु बताकर स्नेहनमें शुक्ति बतलाई है इसलिये यहाँ प्रायोगिकको द्विगुणकरके शुक्तिनाम दियाहो यह अनुमान होताई । भोजने उसे द्विविधगुणभी बतलायाई सो भी इसीक्रमको मानकर होसकताई क्योंकि १६ को १,१,४से गुणित करनेसे ३२,४८ और ६४ बिन्दुहोतेहैं । ये यथाकथञ्चिन् जवान और शूणके नाकमें बाँटेजासकतेहैं परन्तु इन्द्रादीतके सहेतको छेदर बत्ते तो भोजका कपन एकान्तः निरर्थक होताई देखिये "प्रदेशिन्या नियमे द्वे पर्वणी गत्विोऽरिषम् । नस्यादिषु तु विद्ध्यो भित्तिमर्षि-  
नुसम्भक्तः ॥ बिन्दुभिषाष्टभिः शाणः प्रोक्ष्येति भिषक्यै । द्वात्रिंशद्विन्दुभिषाश्च शुक्तिश्चैव विधीयते ॥ द्वे शुष्के पाणि-  
शुक्तिश्च नस्यकर्मणि पूजिताः ॥ इन्द्रादीत ॥

सैवाद्विधनिममर्तर्नद्वय—

पर्वण्युत्तमप्रद्वय=१ बिन्दु (४रती)

८ बिन्दु=१ घाण (१२रती)

३२ बिन्दु=१ शुक्ति (१२८रती)

२ शुक्ति=१ पाणिशुक्ति (२५६रती)

इसहिषासे १२८ रतीकी १ शुक्ति होतीई उसे २,१,४ गुणितकरनेसे २५६,१८४,५१२ रतियोंकीमात्राएँ होतीहैं । इनका उपयोग मनुष्यपर तो क्या ? नोमहिपरभी होना दुस्तरई इसलिये इन्द्रादीतके वाक्यमें "अखिलं, का अर्थ ८ बिन्दुका १ बिन्दु नहीं गिनना किन्तु तर्जनीके २पर्व तैलमें डबाकर टपकानेसे ८ बिन्दुतो बराबर गिरतेहैं और दो बिन्दु पीछेसे अल्पप्रमाणके गिरतेहैं उन्हें अल्प न गिनकर ८ ही बिन्दु गिनना, यह अखिलका अर्थकरना कारण कि "तस्य प्रमाणमष्टौ बिन्दवः प्रदेशिनीपर्वद्वयनिःसृताः प्रथमा मात्रा, द्वितीया शुक्तिः, तृतीया पाणिशुक्तिः, इत्येतास्तिस्रो मात्रा यथावत् प्रयोग्याः ॥ सु.चि. ४०।२८" यहाँपर अखिलका नामनिर्धानतक नहीं है । इसतरहके व्याख्यान-  
करनेसे हारीतका उदरण बराबर छजजाताई क्योंकि तर्जनीयुत्त १ बिन्दु आधीरती या १ उरुद या १ जबके बराबर होताई । इंगलियमेंभी १ मिमि (बिन्दु) १ मेनके बराबर होताई । २ मेनकी १ रतीहोतीहै इसलिये ८ बिन्दु-  
ओंकी ४ रती हुई । इनका बाल, वृद्ध और जवान सबपर उपयोग होसकताई परन्तु इन ८ बिन्दुओंका १ बिन्दु गिनेगे जैसा कि द्वात्रिंश और वाग्मटने कहाई यथा—"स्नेहे प्रमथ्यद्वयं यावद्विममा चोद्धृता क्त" । तर्जनीयं सवेहिन्दुं घा-  
मात्रा बिन्दुसंज्ञिता ॥ एव विधेर्विन्दुसंज्ञैरष्टभिः घ्राण उच्यते ॥ द्वात्रिं० उ. ८।३१ ॥ "मर्शप्रमाणं तु प्रदेशिन्याष्टल्लिख्यद्वया-  
निमोद्धृतायावत्पतति स बिन्दुः ॥ अ.सं.सु. २९" इनके

हिषासे प्रतिबिन्दु ४ रतीहोनेसे ८ बिन्दुओंकी ३२ रतियें होंगी और ६४ बिन्दु होंगे । इनका प्रतिपासापुटमें एकवार उपयोग होना दुस्तरई सब १६ और ३२ बिन्दुओंका उप-  
योग कैसे होसकेगा ? यद्यपि "अनी दशाष्टौयद्बिन्दव उत्तम-  
मध्यमकनीयस्योमात्राः" ऐसी मन्गदन्तमात्रा कायम करके अपने व्याख्यानको सज्ज करकेका प्रयास वाग्मटने कियाई परन्तु इसका मूल क्याहै ? इसतरहके प्रश्नका उत्तर क्यादिया जायगा इसका कुछभी विचार न किया । इसलिये "न मात्रामात्र मध्यत्र विशिष्टागमवर्जितम्" इसपर विश्वास रखनेवालोंको धावधान होना उचितहै । देखो यहाँपर दशबिन्दुकी मात्रा विदेह सुषुप्त और हारीतप्रथति विसोभी महर्षिने नहीं बत-  
लाई और ६ की मात्रा वैरेचनिककीहै ८ स्नेहनकी, सो इन-  
कामी साध्य करके ऋषिसिद्धान्तका कितना विप्लव कियाई इसके विचारके वाग्मटपर अल्पप्रश्ना न रखनीचाहिये । इन्होंने अपना मन्गदन्त सिद्धान्त बनाकर लोगोंके मनमें यह ठसानेकी कोशिश कीहै कि सुषुप्तादि ऋषियोंका इसविषयमें अज्ञानहै इस-  
लिये वे दोनों ( द्वात्रिंश और वाग्मटके ) व्याख्यान अग्रदेय हैं कारण कि एषविध व्याख्यान 'अखिल'की गुरुसमज्ञसे लिखे-  
गयेहैं । भोजका जो निषयहै वह सुषुप्तीय पूर्वहस्त्योंके उद्घाटनापेही है । आचार्यमें वैरेचनिकनस्यमें "बत्तारो बिन्दवः षड् वा तथाऽष्टौ वा यथावत्सम् । शिरोविरेक-  
स्नेहस्य प्रमाणमभिनिर्दिशेत् ॥ सु.चि. ४०।३६" यहाँपर ४,६ और ८ बिन्दुओंकी मात्रा बतलाकर अन्तमें 'यथावत्सम्' को सिद्धान्त मानाहै । इससे यह लक्षितकराया कि चिकि-  
त्साका प्रत्यक्ष विषयहै इसमें जैसी जहाँ औचित्य हो तदनुकूल कल्पना करनीचाहिये इसके अतिरिक्त और कोई मार्ग नहींहै । यही बात विदेहने कहीहै वज्रो "चतुर्बन्धुरो बिन्द्वेवैकस्मिन् समाचरेत् । अभ्यर्द्धौ द्विगुणं बाधि त्रिगुणं वा चतुर्गुणम् ॥" अर्थात् प्रत्येक नासापुटमें विरेचनायें ४-४ बिन्दु डाले, और औचित्य देखकर ६,८,१२,१६ इत्यादिकका अनुष्ठानकरे अर्थात् चिकित्साशास्त्र औचित्यको देखकर प्रशुप्त होताहै । यहाँ ध्यानदीजिये विदेहने जैसे वैरेचनिकनस्यकी मात्रा ४ बिन्दु एकनासापुटकलिये नियतकरके डेढ, दो, तीन और चारगुणितका उसमें विकल्प बतलायाहै वैसेही जेहनमेंभी यह सिद्धान्त अनायाससे उपरहित होगा । तब विदे-  
हके सिद्धान्तसे वैरेचनिकसाधारणमात्रा ४ बिन्दुओंकी द्विगुणकरनेसे ८ बिन्दु नियत होतीहै इसमें पूर्व विक-  
ल्पोंका योगकरनेसे १२,१६,२४,३२ इतने बिन्दुओंकी मात्राएँ आतीहै । सुषुप्तने अभ्यर्थ और त्रिगुणको छोडकर उत्तरोत्तरको द्विगुण कियाहै । यथा विदेहनिर्दिष्ट वैरेचनिकसा-  
धारणमात्रा ४ बिन्दुहै जेहनार्थ स्वभावतः ८ हुए । इन्हें द्विगुणकरनेपर १६ को मध्यम, तथा इनकोभी द्विगुणकरके ३२ को उत्तम मात्रा मानी । इसतरहस्यको देखकरभी सुषुप्तने १६ बिन्दुओंकाही नाम शुक्ति रक्खाहै यह निःसन्देह अनुमान



होता है। इन्द्रहारीतने साधारणस्नेहनमात्रको अर्थात् ८ विन्दुओंको चतुर्गुणितकरके शुक्ति नामरक्साहै इत्या मत्तमेद अवश्य है परन्तु नस्यका विधान कर्णज्वरुगोक्त निर्हरणाधै। यह विषय प्रधानतया शालाक्यतन्त्रका है इसके प्रथमाचार्य महाराजविदेह है। सुश्रुतप्रथितनेमी उन्हींके तन्त्रानुसूल रचना की है। इससे यह निर्धारित हुआ कि १६ विन्दुओंको नाम शुक्ति और ३२ को पाणिशुक्ति कहते हैं। भोजने शालाक्यतन्त्रके मूलकी तरफ ध्यान न देकर केवल सुश्रुतकी मूलनिर्माता समझकर “ प्रायोगिक स्नेहिकञ्च० ” इत्यादि पक्की रचना की है उसमें “ तस्य प्रमाणमष्टौ विन्दवः प्रथमा मात्रा, द्वितीया शुक्ति० ” इसवाक्यको कमजब विवेचन और स्नेहनमें ल्याया है देखिये—“ प्रायोगिके विन्द्वोऽष्टौ स्नेहिके शुक्तिरिष्यते । ” इति। परन्तु सुश्रुतीयसन्दर्भमें तृतीयमात्रा पाणिशुक्ति रङ्गजाती है इसकी व्यनस्याकलिये “ दोषोऽप्यसमासाय दद्याद् द्वित्रिचतुर्गुणम् ” इस अतुल्यपदकी रचना की। परन्तु सुश्रुतका यह अभिप्राय नहीं है किन्तु उन्हींके ८, १६ और ३२ की मात्रा निश्चय मध्यम और उत्तम भेदोंको लेकर तीनों स्नेहनकेलिये ही बताई है। रचनकेलिये आगे स्वतन्त्रमात्राका निर्धारण किया है देखिये—“ चत्वारो विन्दवः षड्वा तथाऽष्टौ वा यथाबलम् । सिरोविरक्तस्नेहस्य प्रमाणमभिनिर्दिशत ॥ सु चि ४०।३९ ” इसजगहपर भोजने इतनीही मूल हुई है कि मूल सुश्रुतकीको मान लिया। इसमें विपत्ति यही आवेगी कि शुक्तिको द्वित्रिचतुर्गुण करनेसे ६४, १६ और १०८ विन्दु आते हैं तो इनका मनुष्यके अत्येक नासामुमें समावेश होना दुर्घट है। इसलिये विदेहकी मूलपुत्र मानकर व्यवस्था करनी श्रेय स्कन्धे ॥ द्रव्याष्टगुण क्षीर क्षीरात्तौय चतुर्गुणम् । क्षीराऽत्रैष कर्तव्य क्षीरापके त्वय विधि ॥ यह श्लोक टोडरानन्दमें कृष्णात्रैषके नामसे उद्धृत किया है। सुश्रुतीयवाजीकरणऽधि कारमें “ यस्ताण्डासिद्धे पयसि भाविता नष्टकृतिलावु, ” इसश्लोककी टीका में उद्धरणे “ परिमापामाह ” इसतरहलिखकर इसीश्लोकको लिखा है और इसे क्षीरपाकविषयक परिभाषा मानी है परन्तु सुश्रुत अथवा चरकने इसका निर्देश नहीं किया है, कहे भी क्या? जैसे आर कीचोंके कवायोंका विधान है वैसी ही क्षीरका, हो केवल क्षीरमें कठिनवस्तुओंका पाक करना हो तो उसमें मोटेबहुत तलकी अपेक्षा अवश्य होती है क्यों कि दूध गरम होनेसे स्वयं धीरे गाटा हो जाता है और उसमें चिकनाई होनेके कारण क्वाथ्यद्रव्यमेंसे तदीयसारका भूषकरण प्राय नहीं होता है इसलिये जैसी जहाँ योग्यता हो उतना जल देना आवश्यक है। यस्ताण्डप्रथितके पाककेलिये दुग्धसम अथवा दुग्धद्विगुणित जल पर्याप्त है। कदाचिद् जल नदिवा जाय तो भी वह सिद्ध होजायगा, इसीलिये सुश्रुतके किसी भी क्षीर पाकमें कोई नियम विशेष निर्धारित नहीं किया है। अत्येक वस्तुपाककेलिये नियम बाधे जाय तो सारायें यावन्मात्रद्रव्य-

केलिये स्तम्भित परिभाषायें बनानां होंगी। खाद्यवस्तुपाकके लिये पाकशास्त्रके नियम जाननेकी खास जरूरत है पर वह भी क्वाथनियमसे बहिर्भूत नहीं है। क्वाथोंके लिये ३२ गुने तक पानीका निर्धारण किया हुआ है उसीके भीतर समस्तपाकशास्त्रका विषय समाप्त होता है इसीलिये सुश्रुतादि महर्षियोंने अत्येकपाककेलिये स्वतन्त्रनियमनहीं बाधे है। उपरिनिर्दिष्टश्लोक यदि यथावत कृष्णात्रैयकथित हो तो उसे दिग्दर्शनार्थ समझना किन्तु परिभाषात्वेन नियन्त्रण करना उचित नहीं, इसीतरह क्षीरमष्टगुण द्रव्याक्षीरानीर चतुर्गुणम् । क्षीरावशेष तत्पीत दूधमामोद्भूत जयेत् ॥ इसशास्त्रव्यवस्थाकवायकोमी दिग्दर्शनार्थ समझना। अथ स्वसादिनिस्तुक्ति ।

स्वरस—सद्य समुद्रताल्लुण्णात्पटनिष्पीडिता तु य ।

द्रव्यादसौ विनिर्याति स रस स्वरसश्च ॥

निर्यासः—इहास्तस्य विनिर्याति स निर्यासो जनुश्च ॥

काथ—शुक्रद्रव्यमुपादाय स्वरसानामसम्भवे ।

वारिण्यगुणे साध्य माद्य पादाऽत्रैषेति ॥ चन्द्रतन्दनः

शीतः—उद्वर्णित इव प्रसिप्त द्विगुणे जले ।

अहोरात्र स्थित तस्माद्भवेत्स रस उत्तम ॥

स्वरसस्य गुरुत्वेन शुक्तिमात्रं प्रदापयेत् ।

बहिर्दिष्ट रस चैव पलमात्रं प्रदापयेत् ॥ कृष्णाऽऽत्रैयः

फाण्डः—अष्टात्रैषेतिऽस्तुपुनरुत्तरे काप्यपले सिपेत् ।

विषय पट्युत तल्ल फाण्डमिति स्थूतम् ।

कल्क—य पिण्डाद्रेपिधाना स कल्क इति कीर्तित ।

चूर्णम्—अत्यन्तगुणं यद्द्रव्यं कुक्षितं बलप्राणितम् ।

चूर्णे स्यात्तुद्रको रेणु रतो मात्राऽन्य किन्तुक्म् । आत्रैयः

पुटपाकः—पुटेन पच्यते यस्मात्पुटपाकस्ततो मत ।

मुषिष्ठं कुडब इव वारिणा काञ्चिकेन वा ।

पुटकात्तन्तं बद्ध सान्द्रपट्टेन लेपितम् ।

अहुष्टमानत पथाद्रोमयामिप्रदीपितम् ॥

सिन्दूरवर्णत प्राप्त माह्वेतादस शुभम् ।

शुटिका—शुटादिवर्तित-चूर्णो वर्ति स्यादुटिका शुट ।

मोदको बटक पिण्डी तस्मात्ता चूर्णवन्मता ॥ पराशरः

रसक्रिया—आपानीना पुन पाकाद्धनभावो रसक्रिया ।

मात्रां रसविधायिका लिप्तात्पाणितल्ल बुध ॥ गोपुटः

मण्डादि—सिक्खे विरहितो मण्ड पेया क्षिप्यसमन्वितः ।

विलेपी बहुसिक्खा स्यादयवागुर्विलम्बा ॥

अथ पत्रगुणे सिद्ध विलेपी वा चतुर्गुणे ।

चतुर्दशगुणे मण्डो यवायू पट्टणेऽस्मति ॥ वृ० सु०

पानकादि—वर्षमात्रं ततो द्रव्यं साधयेत्प्रास्थिकेऽस्मति ।

अर्द्धं श्व प्रयोच्य पानयेयादिविधौ ॥ अग्निपेदाः

यूपः—श्वसुद्रदानान्नु पलेकेन विपाचित ।

पूताऽग्नीतविद्वस्तुनृप कृताश्चतः । नलः

स्यादित साधितो यूपस्तथाऽष्टगुणे जले । चूडसुश्रुत

१५	९१	२५३	२७६	५५१	३९१	१११	५०१	१५७	२८६	१८१	६४०	३१८	१९८	५४७
१७	९२	२५४	२७७	५५३	४०६	११२	५१७	१५८	२९१	१८५	६४१	३३०	२२९	५६९
४३	९३	२५५	३२१	५६३	४०७	११३	५२६	१५९	१५	२९२	१९६	६४६	३५३	५७०
५७	९४	२५७	३२२	५६४	४२०	११४	५२९	१६४	२२	२९५	२०१	६४७	३५५	६०३
६०	९५	२५८	३४२	६३१	४२१	११५	५३०	१६७	२३	३१३	२०२	६४८	३६४	६०६
८७	९६	२६१	३५७	६३९	४२२	११६	५३१	१७४	२६	३१४	२०३	६४९	३६५	६०९
१५१	११०	२६४	३७०	६४४	४२८	११७	५३३	१७५	२७	३१८	२०४	६८५	३६८	६११
१५५	१११	२६५	४०५	६५८	४२९	११९	५५६	१७७	६३	२२१	६८६	३६९	२७४	६१७
१५६	११६	२६८	४०८	६७५	४३०	१२१	५९७	१८१	६९	२६६	६९०	३७०	२८५	६३३
१८६	१२५	२६९	४०९	६८६	४८९	१२२	६४२	१८६	७०	४	२६७	७०९	३७१	६३६
२०२	१२६	२७०	४२५	६९५	४९६	१२३	६४३	१९४	७४	५	२६९	७१९	३७५	६३९
२०४	१३१	२७१	४४०	७०१	४९८	१२४	६४५	१९६	७५	१२	२९४	३७७	३०७	६४१
२०९	१३३	२७३	४४७	७०९	५००	१२५	६५१	२०४	७६	६२	२९५	३८३	३०८	६४०
२१०	१३५	२७५	४५४	७१०	५०१	१२६	६५५	२०७	७७	६७	३०९	३८३	३०९	६५१
२६४	१३७	२७७	७११	५०२	१२७	६८७	२२४	७९	९१	३३०	४२१	३१०	६५२	
२६५	१३८	२७९		५०४	१२८	७१०	२६७	९६	१६६	३७४	४७	४२४	३११	६५४
२६६	१४०	२८०	१५	५११	१२९	७१२	२७४	१०९	१८७	३९४	४८	४२८	३१२	६५५
२७४	१५४	२८१	१६	५२१	१३०	२७५	११४	१९०	४१२	४९	४३०	३१६	६६२	
२७५	१५७	२८२	२१	५२८	१३३	२८५	११६	२०९	४१७	५०	४३१	३१७	६६७	
३०५	१६०	२८६	३६	११	५३९	१३४	२९२	११८	२३६	४४४	५३	४३२	३२०	६६८
४१०	१६५	२८८	५४	६८	५३१	१३५	३०६	१२०	२५७	४५१	५९	४३४	३२५	६७२
४३५	१८७	२८९	५८	८९	५४१	१३६	३११	१३२	२५८	४६९	७०	४३६	३३५	६७४
४४०	१९३	२९०	१४५	१२१	५५१	१३७	३१५	१३९	२८५	४७०	८३	४३९	३३६	६७५
४४१	१९७	२९१	१४७	१५८	५५५	१३८	४४७	१२९	२८८	४७१	८८	४९८	३५९	६७६
४४७	१९९	२९४	१६१	१६८	५५६	१३९	१०८	१३१	३११	४८३	१०६	४९९	३६८	६७८
कु	२०४	३०५	१७२	१७१	५५७	१४०		कु	१३६	३१७	५१३	११०	५१४	३७३
५५	२०५	३१३	१८५	१७२	५५८	१४१	परि०	९	१३७	३२०	५१९	१११	५१५	३७४
६२	२०६	३१४	१९७	१७३	५५९	१४२	८	८९	१४०	३२२	५३३	११२	५१७	३८४
१०४	२१०	३१५	२२१	१७५	५६०	१४४	१०	१०४	१४१	३२६	५४०	११३	५१९	३८५
१०५	२१६	३२३	२४३	१७७	५६१	२३२	४०	११२	१५१	३३१	५५४	११४	६०४	३८८
११०	२१७		२४५	१७८	५६२	२४९	६२	११३	१५४	३४२	५५६	११५	६०५	३९४
१११	२२०		३०९	१७९	५६७	२५३	७०	१२२	१५८	३४४	५५७	११६	६०८	४१३
११५	२२३	१२	३२८	१८०	५६९	२६५	७७	१५१	१६५	४३८	५६०	११७	६११	४१९
१२१	२२७	३२	३३५	१८१	५९१	२६७	८३	१५५	१६६	४४७	५६३	११८	६१६	४२२
१२२	२२९	५४	४३५	१८२	५९४	२७४	८८	१५७	१७९	४५८	५८५	११९	६२७	४३०
१४९	२३०	६७	४३९	१८३	६१६	२८५	१७२	१८७	४६२	५८६	१३४	कुम्भ	४३१	३४
१७२	२३१	६८	४४१	१८४	६२७	३०६	१७३	१८८	४६३	५८७	१६८	कुम्भ	४३२	५३
२६४	२३२	७०	४४०	२०४	६३४	३०७	१९०	१८९	५८८	१७०	९	४३३	७२	
३९१	२३३	७८	४५९	२१२	६४२	३०८	२७६	१९०	२	५८९	२०१	११	४४९	७४
४७०	२३४	८८	४६३	२२८	६४३	३०९	२८२	१९१	४९	५९९	२२७	१२	४५३	७७
४८१	२३५	९६	४६९	२३४	३१०		३१३	२१०	५३	६०२	२२९	२६	४५४	
कु	२३७	१००	४७०	२६९	३११	१	३१४	२१९	५६	६१९	२३४	२१	४५५	
१३	२४४	१०१	४७१	२७५	५	३१२	२	३९१	२२०	५९	६२०	२५५	४२	४९९
२१	२४५	११९	५३०	२९४	१९	३१७	६	४७०	२२१	६१	६२१	२५७	५१	५०१
३५	२४६	१२९	५३७	३०३	३३	३५९	७	४७७	२२२	६२	६२३	२५८	१०३	५०८
४१	२४७	१३८	५४०	३१८	५०	४०४	१९	४८१	२२७	६४	६२४	२६८	१०४	५१३
६१	२४८	१५७	५४१	३२७	७६	४०५	४१	५०३	२५५	७२	६२५	२६९	१०५	५१८
६३	२४९	१५०	५४३	३२५	१०३	४०६	७६	५०५	२५६	७९	६२८	२७०	१०६	५२३
८९	२५०	२६५	५४४	३७५	१०४	४०९	१२०	५४६	२७४	१६१	६३३	३०७	१०७	५२५
९०	२५१	२४४	५४९	३८७	१०५	४९९	१२८	५४८	२७७	१७६	६३५	३१२	११७	५२६

असिपान्तवर्ग

ख

ग

घ

ङ

१०९	११६	२१३	१४०	२१	४१४	३९९	७०२	४१०	१४२	३३७	५१७	५३	३४०	अ. व्या. १८७
११०	११५	२१५	१४२	६२	४१६	४०१	७०४	४११	१४४	३३८	५१६	६६	३९०	४७
१११	११६	२२४	१४३	६७	४२३	४१८	७१७	४२१	१४५	३४०	५२७	६७	३९७	क
११२	११८	२२५	१४५	७३	४२१	४२४		४२२	२०४	३४१	५२९	७०	४३९	११०
११३	११८	२२८	१५०	७८	४२२	४३५		४५०	२१५	३४५	५४०	७५	५४८	२८७
११४	२०८	२३१	१५१	८५	४६६	४३९	अन्ता स्या	४६६	२३७	३५४	५५५	७६	६५२	२८९
११५	२०९	२३३	१५४	९१	४४२	१९	४४२	१९	४६८	२३६	५५६	८८	६५३	५३५
११६	२१०	२३४	१५७	१११	४४३	५९	४७०	२५०	३५९	५६२	८९	६७१	५४८	५४८
११७	२१०	२३४	१५८	१२३	४४८	६८	४८७	२५१	३६४	५८१	९१	६७३	क	५४८
११८	२२७	२३७	१५९	१३	४५८	७०	४८८	२५२	३६६	५८३	९४	कम	९५	उद्
११९	२३४	२३८	१६०	१६	४५९	७३	४९०	२५७	३६८	५८६	९९	कम	१०४	१०३
१२०	२७३	२३९	१६१	१८	४६०	७४	४९४	२५८	३८०	५८७	१०३	२४६	१२३	१०६
१२१	२७९	२४०	१६३	१९	४६१	७९	४९८	२५९	३८१	५८८	१०४	२६२	१४३	१०६
१२२	२९१	२४१	१६८	१७१	४६२	९८	५००	२६०	३८४	५८९	१०५	२८८	१७३	१०६
१२३	२९३	२४१	१७०	१८३	४७४	११७	५०५	२६१	३८५	५९१	१०६	४५६	५३७	१०६
१२४	२९४	२४४	१७१	१८५	५२८	१२०	५०६	२६२	३८६	५९३	१०७	४६०	५४०	२६८
१२५	३००	२५१	१७२	१८६	५३०	१२४	५१४	२६३	३८८	६०२	१०९	४६३	उद्	७
१२६	३०१	२८९	२०४	१८७	५३३	१५०	५३३	२६४	३९२	६०३	११२	४६३	उद्	७
१२७	३०३	३७६	२०६	१८८	५३८	१५५	५३९	२६५	३९४	६०७	परि.	४६५	२६१	२०६
१२८	३०३	३९१	२१४	१८९	५३९	१५८	५४२	२६६	३९९	६१०	परि.	४६७	२७५	३१७
१२९	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१३०	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१३१	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१३२	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१३३	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१३४	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१३५	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१३६	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१३७	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१३८	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१३९	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१४०	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१४१	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१४२	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१४३	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१४४	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१४५	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१४६	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१४७	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१४८	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१४९	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१५०	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१५१	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१५२	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१५३	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१५४	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१५५	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१५६	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१५७	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१५८	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१५९	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१६०	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१६१	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१६२	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१६३	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१६४	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१६५	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१६६	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१६७	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१६८	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१६९	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१७०	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१७१	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१७२	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१७३	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१७४	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१७५	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१७६	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१७७	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१७८	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१७९	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१८०	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१८१	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१८२	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१८३	३०४	३९२	२१६	१९०	५४०	१७०	५४५	२६७	४०९	६११	१	४६८	२८३	५४७
१८४	३०४	३९२	२१६											

११६	३६०	२६०	५५०	५१२	७१३	४२७	बु	१५७	१७९	५२५	१८५	२५७	६४	३६०	६४४
११७	४३२	२८५	६४२	५१४	५१६	२४८	१५८	१८३	५२६	१८७	२५८	६९	३६४	६४५	
११८	४५१	२८७	६४५	५४३	५२३	२८५	१५९	१९१	५२७	१९०	२६०	७०	४०१	६४६	
११९	४७२	२९३	६५१	५५८	५३२		१६०	१९३	५२८	१९३	२६९	७५	४०३	६४७	
१२४	४९०	३९९	६५५	५८०	५३५		१७५	२६९	५२९	१९७	२७५	८८	४१४	६४८	
१५१	५०९	३०२	६५६	५९६	५४३	५२	१८०	२७३	५३०	२७२	२८५	९३	४४४	६४९	
१५५	५१०	३०४	६६७		५४६	६६७	१८१	३१८	५३१	२८३	२८७	९९	४६६	६५१	
१५६	५१४	३०९	६९०	कम्प	खरा:	५४९	१८२	३२४	५३२	२८९	२८८	१०९	४६९	६६७	
१५९	५१६	३५०		अन्तःस्था:	११	३०३	१८३	३३३	५३३	३१८	३०१	११०	४८७	६८१	
१८०	५२३	३९०		१३	३०५	१८५	१८४	३५१	५३४	३२१	३०४	११३	४९१	६८२	
१८१	५२५	३९८		३१	३०५	१८५	२००	३५३	५३५	३२२	३०९	११४	४९८	६८५	
१८७	५२६	४०९		४३	३०५	१८८	२०२	३६१	५३६	३११	११७	५०५	६८७		
२००	५३३	४४९	८	४६	१६८	५	२२८	२०४	५३७	३२०	११५	५०९	६९०		
२२१	५३५	४५४	४४	४८	२२१	५३५	२२१	३६५	५३८	३२१	१३६	५१२	७१९		
२९१	५३८	४५८	६२	४९	कम्प	६६७	कम्प	२७२	३७३	५३९	५	३४३	११८	५१३	
२९२	५४६	४६२	७१	६०	२९२	५४६	२९१	३७३	५४०	११	३६९	१६०	५१६		
२९३	५४७		८९	११०	५१०	अ.व्या.	४८	२९६	३८६	५४१	१२	३७५	१६३	५४०	
२९४	५४८		९८	१६४	अ.व्या.	अ.व्या.	२९७	३८८	५४२	१४	३७७	१८१	५४७	अन्तःस्था:	
२९६	५५१	१४	१०८	२३८	१	२१६	३०७	३८९	५४३	२१	३७९	१८६	५४९	८	
३०२	५५५	२१	१४८	२७०	८	२१६	३१०	३९०	५४४	३२	३९०	१८८	५५८	९	
३११	५५५	२१	१६०	२०८	१३	कम्प	३११	४१२	५४५	३०	३९१	१८९	५६०	१५	
३५७	५५५	२५	१६२	२३७	२१	४२०	३१३	४२०	५४६	३४	३९४	१९७	५६१	२५	
३६४	२५	४३	१६७	३४१	२१	४२०	३१४	४२३	५४७	४२	३९६	१९८	५६६	४१	
३९५	३२	४५	२१७	३५४	२२	परि.	३१५	४२४	५४८	४४	३९७	२०१	५६७	४३	
४०१	३५	४८	२१८	३५५	२९	१०	४१५	४२७	५४९	४५	३९८	२०३	५६८	४७	
क	१२५	४९	२२८	३६४	४६	३	४३१	५५०	४७	४११	२०३	५७५	४९		
६	१४१	५३	२३५	३६७	४६	४	४३२	५५१	५३	४१२	२०४	५७६	५०		
११	१६५	७०	२३६	३७९	५१	५	४३६	५५२	५६	४१३	२०५	५८३	५२		
१९	१८०	१३६	२३७	३८९	६४	६	४४१	५५३	६०	४१६	२०६	५८४	६३		
१९	१८२	१४८	२३८	३९४	७८	७	४४१	५५४	६१	४१८	२०७	५८९	६७		
२१	१८५	१८१	२४७	३९५	८८	८	४४७	५५५	६२	४१९	२०८	५९०	७१		
६३	१८६	१८६	२४८	४००	९८	९	४४७	५५५	६३	४२०	२०९	५९१	७५		
९३	१८७	२०५	२५०	४२०	१०८	१०	४४७	५५५	६४	४२१	२१०	५९२	७९		
९६	१८८	२०६	२५१	४६६	११०	११	४४७	५५५	६५	४२२	२११	५९३	८३		
१०७	२१९	२१२	२५९	५०६	११०	१२	४४७	५५५	६६	४२३	२१२	५९४	८७		
११५	२२३	२३८	२६१	५१३	११०	१३	४४७	५५५	६७	४२४	२१३	५९५	९१		
१०९	२१८	२५३	२७२	५१४	११०	१४	४४७	५५५	६८	४२५	२१४	५९६	९५		
१९१	२६१	३०२	५१९		११०	१५	४४७	५५५	६९	४२६	२१५	५९७	९९		
१९६	२८०	३३७	५२२		११०	१६	४४७	५५५	७०	४२७	२१६	६००	१०३		
२५३	५	३३३	५४८	५४६	११०	१७	४४७	५५५	७१	४२८	२१७	६०१	१०७		
२७२	५६	३३५	५५३		११०	१८	४४७	५५५	७२	४२९	२१८	६०२	१११		
२७३	१५४	३३६	५५४		११०	१९	४४७	५५५	७३	४३०	२१९	६०३	११५		
३२४	१५७	३३९	५५९		११०	२०	४४७	५५५	७४	४३१	२२०	६०४	११९		
३५१	१६०	३४१	५६४		११०	२१	४४७	५५५	७५	४३२	२२१	६०५	१२३		
३६५	१६५	३४३	५६५		११०	२२	४४७	५५५	७६	४३३	२२२	६०६	१२७		
३७१	१६७	३४५	५६७		११०	२३	४४७	५५५	७७	४३४	२२३	६०७	१३१		
३७४	१६८	३४७	५६८		११०	२४	४४७	५५५	७८	४३५	२२४	६०८	१३५		
३८०	२१२	३७६	५८८		११०	२५	४४७	५५५	७९	४३६	२२५	६०९	१३९		
३८६	२३०	३८६	५९०		११०	२६	४४७	५५५	८०	४३७	२२६	६१०	१४३		
३८७	२३९	४०३	५९१		११०	२७	४४७	५५५	८१	४३८	२२७	६१०	१४७		
३८९	२५६	४४९	५९६		११०	२८	४४७	५५५	८२	४३९	२२८	६१०	१५१		

२१७	४१६	६	३१७	५२६	७१०	२४७	२५४	४५१	३	३५	४९०	२६४	५५	४०	३२
२२८	४२२	१०	३१९	५३१	७११	२५१	२५५	४७७	४५	४३	५०५	२७३	६	६२	३३
२३०	४२४	११	३२५	५३३	७१३	कम्य	२५६	४७९	४७	४६	५०६	२८०	७७	६३	४९
२३९	४२५	१२	३२६	५४३	अ.व्या.	२५७	४८५	४९	४८	५३५	२८२	८१	परि०	५१	
२४०	४२६	१३	३३४	५५८	२९	२५८	४८६	५६	५०	५४७	३०६	८२		५३	
२४५	४२७	२२	३३५	५६४	१	१८७	२५९	५०६	६०	५५८	३१०	१६५	२७	५४	
२४६	४२८	२३	३३७	५६९	८	५८५	२६६	५१६	६१	५६९	३१७	१९४	६५	५५	
२४८	४२९	२५	३४०	५७०	१३	६२६	२६८	५२३	६४	७५	५७३	३२७	१९७	७४	५८
२४९	४३५	३१	३४६	५८५	१९	२७२	५२९	९७	८८	५९४	३५६	२०९	गुदम्रशे	५९	
२५०	४३६	३४	३५०	५८६	२१	२७७	५३३	११८	९९	६१८	३५८	२३३	क	६२	
२५७	४३९	३८	३५४	५९५	२२	२९९	५४७	१२४	११०	६२६	३८६	२३८		६३	
२५८	४४१	४२	३५५	५९६	३५	३२३	५५१	१२६	१११	६३८	३९०	२४९	५४०	६४	
२५९	४४५	४३	३६१	६०३	३९	३२६	५५६	१८२	११७	६३९	४०७	२५७	उद्ग	६५	
२६०	४४८	४४	३६४	६०६	४०	३३७	५६१	१४८	११८	६४२	४१६	२६२	उद्ग	६६	
२६६	४६२	४५	३६५	६१०	४१	३९७	उद्ग	११७	१६८	६४४	४२९	३०८	१०३	६७	
२७०	४६६	४६	३६७	६११	८८	४	४२२	३	११९	१८८	६५१	४३०	३९६	७०	
२७१	४७१	४७	३६८	६१७	९८	७	४४६	४	२०१	१८९	६८७	४३५	३९८	७४	
२७२	४८०	४९	३७०	६२२	८	५	४	५	२२८	१९७	७१६	४४१	३९८	८०	
२७३	४८७	५०	३७४	६२३	९	६	४	६	२३०	१९८	४४६	३९७	३९८	८२	
२७४	४८८	५१	३८४	६२६	१३	१०	८	९	२४५	२०७	४५०	३४०	८३		
२८०	४९९	५५	३८५	६३२	४४	१६	१४	१०	२५२	२१७	५०१	३४१	८४		
२८१	५००	६०	३८८	६३३	५५	२२	१७	१२	२५६	२२७	५०६	३५०	८५		
२९६	५०१	६१	३८९	६३४	६५	२६	१८	१४	२६०	२३८	५११	३५२	९४		
२९७	५०२	११०	३९५	६३५	८९	५५	२५	१५	२७०	२७०	११	५१४	३५४	९६	
२९८	५०४	१५४	४०२	६३६	५९	३१	२४	२७५	२७६	२३	५१५	३६१	४०७	९७	
२९९	५०६	१६०	४०३	६३७	६३	९६	२५	२८०	२७८	२४	५२४	३६५	६३४	९८	
३००	५०७	१६५	४०९	६३८	६७	१०७	२६	२८४	२८४	२५	५३०	३७३	९९		
३०१	५०९	१६५	४१०	६४५	७५	१०९	३७	२८५	२९७	३८	५५०	३७६	१०८		
३०३	५११	१७४	४१६	६४६	९६	१३५	४९	३५८	२९८	३९	५५३	३८७	१२०		
३०६	५१२	१८३	४२०	६४७	१२०	१४५	५१	३७६	३१५	४४	६०७	४३७	१३३		
३०७	५१४	१८५	४२१	६५०	१३७	१५१	५२	३७७	३१८	६२	६३२	४५१	१३८		
३१३	५२३	१८७	४२२	६५३	१४८	१५६	५३	३८०	३१९	६६	६३४	४५९	१४८		
३१३	५२४	१८८	४२३	६५४	१५०	१६०	७२	३९७	३२३	६७	६३६	५००	१५०		
३१०	५२५	१९२	४२१	६५६	१६१	१९०	८८	३९९	३२७	७५	कम्य	५११	१५५		
३४८	५३०	१९७	४३२	६५७	१५१	१६९	१९१	१०८	४१९	३३७	८७	५	१६०		
३५३	५३८	२०९	४३३	६५९	१७५	१९२	१९२	१२२	४४६	३७५	९३	७	१७१		
३५५	५४३	२३३	४३५	६६०	१७६	१९३	१९३	१२३	४४९	३८३	१२७	१३	१७२		
३६३	५४५	२३५	४३३	६६१	१८२	२१२	१३३	४४९	३८३	१२७	१३	५४८	१२	१७५	
३६५	५५८	२३६	४५४	६७०	१८७	२१६	१३८	४५४	३८४	१४५	२१	६१०	१३	१७६	
३६८	५८०	२३७	४५५	६७४	१९३	२६९	१५१	४५८	३८७	१५६	२२	६११	१४	१८१	
३६९	५८४	२३८	४६६	६७५	१९९	२९०	१५४	४५९	३८८	१५७	२३	६१९	१५	१८२	
३७०	५९६	२४९	५०१	६७६	११९	२००	३१९	१६१	३९४	१५९	२४	६४५	१६	१८४	
३७१	६०४	२५७	५०६	६७८	२२०	२०३	३२४	१६५	४०३	१६१	२५	६७७	१७	१९९	
३७७	६०९	२८३	५१०	६८३	४३२	२२२	३४३	१८२	४१४	२०४	२६	६८१	१८	२०२	
३८३	६११	२८५	५११	६८४	४८०	२२९	३६१	१८४	३	४१५	२१७	३३	६८३	१९	२११
३९५	६१३	२८६	५१३	६८५	५७१	२४८	३७३	१८८	१४	४२४	२२९	३७	६९८	२०	२१४
३९६	६१६	२९०	५१४	६८६	५८१	२४९	३८८	१९३	१६	४४७	२३०	३८	७०१	२१	२२२
४०३	६२१	२९४	५१८	६९५	५८१	२४९	३८८	२१९	१७	४७६	२३३	४२	७०४	२२	२८८
४०७	६३२	२९६	५१९	६९८	५८१	२५१	४२४	३२२	२८	४८१	२३४	४३	७०७	२५	२९०
४०८	३०८	५२३	६९९	६९९	५८१	२५२	४२७	३२३	२९	४८६	२३६	४८	अ.व्या.	२६	२९१
४१५	कम्य	३१६	५२५	७०१	२१७	२५३	४३०	३३	३३	४८७	२४७	४९	२९	२९२	

२९३	१९३	५४६	२२३	२६९	५८	४०५	६३७	११५	३३६	४८७	४२	३२९	६०४	८८	२६६
२९४	१९६	५४७	२२७	२७५	६७	४२३	६३८	११६	३४१	४८८	४६	३२८	६१९	८९	२७२
२९६	२१४	५५२	२५७	२८१	७०	४२५	६४२	११७	३५५	४९३	४७	३३४	६२६		२९०
२९७	२१६	५५४	२६१	२८२	७२	४२८	६४३	११८	३५६	५०१	५०	३३५	६३४		२९६
२९८	२२४	५५८	२७२	२८७	७४	४३२	६४५	११९	३६२	५०४	५१	३३७	६४५		३२७
२९९	२३२		२८५	२८८	७५	४३३	६४६	१२०	३६४	५०६	५५	३४७	६४६		
३०२	२७३	उरु	३१३	२९९	७९	४३४	६५४	१२६	३६५	५०७	६०	३५०	६५५	स्त्राः	३
३०६	२७४	२	३१५	३१०	८८	४३५	६७२	१२८	३६८	५०८	६२	३५१	६५६		
३१०	३१३	४	३१८	३२१	९३	४३९	६७९	१३१	३७०	५०९	६४	३५२	६५८	१	११
३१२	३१४	९	३२२	३२५	९९	४४४	६८२	१३५	३७१	५१४	८२	३५४	६५९	४	१५
३१३	३१७	२४		३२८	१०३	४४७	६८५	१३६	३७३	५१५	१०३	३६८	६६०	५	२७६
३१४	३१९	२५		३२९	१०५	४४९	६८६	१३८	३७५	५१९	१०४	३७६	६६०	६	३५३
३२६	३२५	२६	२	३४१	१०८	४५७	६८७	१५९	३७७	५२५	१०५	३९५	६७२	११	३५४
३२७	३२९	२७	१०	३४५	११०	४५९	७१४	१६१	३७८	५३८	१०६	४०२	६७४	१२	३७४
३४६	३४५	२८	२४	३५९	१११	४६६	७१६	१८६	३७९	५४५	११०	४०३	६७७	२७	४२३
३६६	३५३	३२	४४	३६०	११२	४६९		१८७	३८२	५४६	११४	४०९	६७८	२८	४३६
३७०	३५५	३६	४५	३७५	११३	४७६		२०२	३८३	५४७	११५	४१४	६८३	२९	४३७
३७५	३६३	३७	४६	३७७	११५	४८०		२१७	३८६	५५०	११६	४१६	६८७	३०	४३८
३७६	३६४	५०	४९	३७९	११६	४८४	१	२१९	३८८	५५३	११७	४१८	६९६	४२	४४०
३८७	३६५	५३	५१	३९५	११७	४९१	३	२२०	३९०	५५६	११८	४२०	६९९	४३	४४१
३८९	३७२	६३	५३	४०९	११९	४८८	६	२२७	३९१	५५७	११९	४२५	७०१	४५	४८४
३९५	३७८	६९	६०	४११	१२७	५००	९	२४०	३९२	५७९	१८३	४२६	७०६	५४	५३७
६	३७९	७०	६१	४१८	१२१	५१३	१६	२४१	३९६	५८०	१८४	४२७	७०७	६७	५३८
६	३८२	७२	६२	४१९	१४८	५१५	१७	२४५	३९७	५८४	१८५	४३०	७०९	७०	५३९
८	३८४	७४	६५	४२०	१७२	५१६	१८	२४६	४०२	५८५	१८७	४३१	७१०	८१	२५
११	४३२	७७	६८	४४०	१७४	५१७	१९	२४७	४०५	५९१	१९७	४३२	७११	८२	३६
१४	४३०	८८	७०	४४५	१७६	५३३	२०	२४९	४०८	६०९	२०६	४३३	७१२	८३	३७
१७	४३३	१०३	१२४	४४७	१७७	५४०	२१	२५०	४१२	६१३	२०७	४३५	७१३	८४	३८
१८	४३०	१०९	१३९	४५३	१८६	५४१	२२	२५८	४१३	६१६	२०८	४५९		८५	११५
१९	४३२	११०	१४२	४५८	१८८	५४४	२३	२५९	४१५	६१८	२१६	४७७		८६	१३४
२१	४३५	१११	१५०	४५९	२००	५४९	२४	२६०	४१६	६२०	२३०	४९५		८७	१९९
२३	४३६	१२२	१६४	४६०	२०७	५५५	२५	२६३	४२१	६२१	२३१	५०१		८८	२२५
५३	४४०	१२९	१७०	४६१	२०९	५५६	२६	२६५	४२५	६२४	२३२	५०६	कम्य	८९	२३५
५६	४४१	१३८	१७३	४६२	२१०	५५८	२७	२७०	४२९	६३२	२३३	५०८		९०	२४५
७३	४४२	१४१	१७४	४६३	२११	५६०	२८	२७३	४३८	६३५	२३५	५१४	४२६	१००	१४
७४	४५१	१५३	१८४		२१४	५७१	२९	२७४	४३९	६३६	२३६	५१५		१०१	१५
९३	४६१	१५५	१९३	२	२१५	५७३	३०	२७५	४४०	६३७	२३७	५१७	म.व्या.	१०२	१६
१०३	४७०	१६३	१९५	४	२१८	५७५	३१	२७६	४४१	६३८	२३८	५१९	३	१०३	१७
१०६	४७२	१७०	१९७	६	२२०	५७७	३२	२७७	४४२	६३९	२३९	५२०	२१	१०४	१८
१०७	४८१	१७२	१९९	१२	२२१	५८४	३३	२७८	४४३	६४०	२४०	५२३	२२	१०५	१९
१०९	४८६	१७९	२०१	१८	२२५	५९४	३४	२७९	४४४	६४१	२४१	५२६	२३	१०६	२०
११०	४८७	१८४	२०९	२९	२२७	६०१	३५	२८०	४४५	६४२	२४२	५२९	२४	१०७	२१
११९	४९०	१८५	२२८	३४	२२४	६०६	३६	२८१	४४६	६४३	२४३	५३२	२५	१०८	२२
१२४	५०३	१८७	२३०	३५	२२७	६०९	३७	२८२	४४७	६४४	२४४	५३५	२६	१०९	२३
१२५	५१८	१९०	२३१	३६	२२८	६१०	३८	२८३	४४८	६४५	२४५	५३८	२७	११०	२४
१२५	५१९	१९१	२३२	३७	२२९	६११	३९	२८४	४४९	६४६	२४६	५४०	२८	१११	२५
१२५	५२९	१९२	२३३	३८	२३०	६१२	४०	२८५	४५०	६४७	२४७	५४३	२९	११२	२६
१२५	५३७	१९३	२३४	३९	२३१	६१३	४१	२८६	४५१	६४८	२४८	५४६	३०	११३	२७
१२५	५४७	१९४	२३५	४०	२३२	६१४	४२	२८७	४५२	६४९	२४९	५४९	३१	११४	२८
१२५	५५७	१९५	२३६	४१	२३३	६१५	४३	२८८	४५३	६५०	२५०	५५२	३२	११५	२९
१२५	५६७	१९६	२३७	४२	२३४	६१६	४४	२८९	४५४	६५१	२५१	५५५	३३	११६	३०
१२५	५७७	१९७	२३८	४३	२३५	६१७	४५	२९०	४५५	६५२	२५२	५५८	३४	११७	३१
१२५	५८७	१९८	२३९	४४	२३६	६१८	४६	२९१	४५६	६५३	२५३	५६०	३५	११८	३२
१२५	५९७	१९९	२४०	४५	२३७	६१९	४७	२९२	४५७	६५४	२५४	५६३	३६	११९	३३
१२५	६०७	२००	२४१	४६	२३८	६२०	४८	२९३	४५८	६५५	२५५	५६६	३७	१२०	३४
१२५	६१७	२०१	२४२	४७	२३९	६२१	४९	२९४	४५९	६५६	२५६	५६९	३८	१२१	३५
१२५	६२७	२०२	२४३	४८	२४०	६२२	५०	२९५	४६०	६५७	२५७	५७२	३९	१२२	३६
१२५	६३७	२०३	२४४	४९	२४१	६२३	५१	२९६	४६१	६५८	२५८	५७५	४०	१२३	३७
१२५	६४७	२०४	२४५	५०	२४२	६२४	५२	२९७	४६२	६५९	२५९	५७८	४१	१२४	३८
१२५	६५७	२०५	२४६	५१	२४३	६२५	५३	२९८	४६३	६६०	२६०	५८०	४२	१२५	३९
१२५	६६७	२०६	२४७	५२	२४४	६२६	५४	२९९	४६४	६६१	२६१	५८३	४३	१२६	४०
१२५	६७७	२०७	२४८	५३	२४५	६२७	५५	३००	४६५	६६२	२६२	५८६	४४	१२७	४१
१२५	६८७	२०८	२४९	५४	२४६	६२८	५६	३०१	४६६	६६३	२६३	५८९	४५	१२८	४२
१२५	६९७	२०९	२५०	५५	२४७	६२९	५७	३०२	४६७	६६४	२६४	५९२	४६	१२९	४३
१२५	७०७	२१०	२५१	५६	२४८	६३०	५८	३०३	४६८	६६५	२६५	५९५	४७	१३०	४४
१२५	७१७	२११	२५२	५७	२४९	६३१	५९	३०४	४६९	६६६	२६६	५९८	४८	१३१	४५
१२५	७२७	२१२	२५३	५८	२५०	६३२	६०	३०५	४७०	६६७	२६७	६०१	४९	१३२	४६
१२५	७३७	२१३	२५४	५९	२५१	६३३	६१	३०६	४७१	६६८	२६८	६०४	५०	१३३	४७
१२५	७४७	२१४	२५५	६०	२५२	६३४	६२	३०७	४७२	६६९	२६९	६०७	५१	१३४	४८
१२५	७५७	२१५	२५६	६१	२५३	६३५	६३	३०८	४७३	६७०	२७०	६१०	५२	१३५	४९
१२५	७६७	२१६	२५७	६२	२५४	६३६	६४	३०९	४७४	६७१	२७१	६१३	५३	१३६	५०
१२५	७७७	२१७	२५८	६३	२५५	६३७	६५	३१०							

४११	५८४	भस्मके	७४	५९६	परि०	३१५	४०९	५०३	कु	२८५	कम्प	५०	कु	५०१	२
५	६३२	क	१३८	६३२	४३	३७५	४५८	५२४	१४	२८७	५५	५५	५०६	५	
३	कम्प	४२४	२७०	कम्प	७४	३७८	४५९	५२५	१०१	२८८	२१	५६	१४	५१४	११
१६	१३	व	२८२	२३	विलिखिकायाम्	३८९	५७९	५७९	११७	३०४	२६	५७	१७	५२६	१५
४८	१४	व	३१५	२५	क	१६	६३४	१८३	१७२	३११	३७	५९	२१	५३७	४५
५२	१८	२२५	३२	३२	कम्प	१०२	४१	१९३	२७७	३८७	१९७	६९	२३	५४६	४९
७२	२२	व	३५	३५	क	१५६	४८	२७१	३८७	२०७	२०७	६६	२४	५३	५३
११५	२३	व	२७	३६	विलिखिकायाम्	११५	७५	३४	३१७	३९७	२०७	१२०	२५	वृद्ध	५४
३११	२४	५४९	२९	३९	क	१७२	११६	५५	३१८	३९८	२०१	१२४	५६	१४	५६
३३२	२५	कम्प	१६९	४१	वरा:	१८३	११७	६७	३१९	४३८	३०५	१३७	८९	१५	६०
३३५	३२	५	२६२	४३	६७	३१२	१६०	१६५	३२०	४३५	३५५	१३७	८९	३४	८४
३७९	३५	७०५	३०४	११४	क	३१३	१६८	१८४	३२१	४४५	३६०	१३७	८९	३४	८४
३८०	३६	७०५	३११	१६४	क	३५८	१८८	२४८	३२२	४५६	३७६	१५५	१०९	३५	९७
३८१	३७	विलिखिकायाम्	४०५	१६५	२४२	४०४	२१०	२१४	३२३	४५९	३८२	१५७	११०	४९	१३८
४०३	४०	क	४५८	२५०	व	४५८	२१०	२१४	३२४	४५९	४२७	१५७	११०	४९	१३८
४०४	४०	विलिखिकायाम्	४५८	२५०	व	४५८	२१०	२१४	३२४	४५९	४२७	१५७	११०	४९	१३८
४७४	४१	क	४६०	३०१	वृद्ध	४५९	२१६	३१७	३२६	५९	५२९	१५९	११३	५२	१६५
४८६	४२	व	३१५	३१५	४	२८	३६१	३७०	३२७	१९७	५४४	१६७	११७	६३	१६६
५३३	११४	विलिखिकायाम्	४६	३५०	व	३४	३६१	३७०	३२८	१९८	६०१	१७५	१४२	६५	१७४
५४०	१६७	वरा:	१४८	३५५	कम्प	३६	४०३	४१७	३२९	४०३	६२७	१७५	१४५	७०	१८४
५४१	१७४	११	२५५	४०९	कम्प	४३०	४३०	४३०	३३१	४१४	६९२	१८९	१५१	१००	१९५
५६१	२५०	१३	३१५	४१८	४०५	४२	४८०	४२७	३३२	४२५	५५	१९०	१५४	१०१	२१६
६७५	३०८	१४	४२८	४३०	कम्प	४३०	४३०	४३०	३३३	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३५३	२८	४७४	४२२	३५०	४३०	४३०	४	३३४	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३५४	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३३५	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३५५	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३३६	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३५६	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३३७	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३५७	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३३८	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३५८	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३३९	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३५९	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३४०	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३६०	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३४१	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३६१	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३४२	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३६२	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३४३	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३६३	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३४४	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३६४	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३४५	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३६५	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३४६	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३६६	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३४७	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३६७	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३४८	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३६८	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३४९	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३६९	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३५०	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३७०	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३५१	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३७१	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३५२	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३७२	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३५३	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३७३	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३५४	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३७४	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३५५	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३७५	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३५६	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३७६	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३५७	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३७७	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३५८	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३७८	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३५९	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३७९	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३६०	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३८०	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३६१	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३८१	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३६२	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३८२	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३६३	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३८३	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३६४	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३८४	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३६५	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३८५	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३६६	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३८६	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३६७	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३८७	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३६८	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३८८	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३६९	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३८९	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३७०	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३९०	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३७१	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३९१	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३७२	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३९२	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३७३	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३९३	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३७४	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३९४	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३७५	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३९५	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३७६	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३९६	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३७७	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३९७	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३७८	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३९८	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३७९	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	३९९	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३८०	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	४००	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३८१	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	४०१	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३८२	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	४०२	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३८३	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	४०३	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३८४	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	४०४	५३	५३३	५८९	३५०	४३०	४३०	४	३८५	४३०	५५	१९३	१७२	१०३	२३०
	४०														

३४४	१०१	४४४	१४	३०२	५८६	३१६	५४८	१०८	२९८	३१९	५९४	४२५	५३३	७४	२८०
३४८	१०२	४७७	२५	३०७	५८९	३१७	५४९	परि०	३५९	३२६	५९५	४३५	५५९	९३	२८२
३४९	१०३	४७८	३६	३०८	६१४	३१८	५५८		३६२	३४७	६१८	४४५	५६४		२८४
३७५	१०४	४७९	४६	३१२	६१५	३२६	५६४	१३	३६४	३४८	६२०	४९२	५६९		३११
३७७	१०५	४८०	४८	३१४	६१६	३२७	५६६	१४	४२३	३४९	६२२	५००	५९६		३४३
३७८	१०६	४८२	४९	३१५	६१७	३२८	६०३	१५	४२४	३५०	६३७	५०१	६०३		३४७
३७९	१०७	४८५	६७	३१७	६३२	३३१	६१०	५२	४८८	३७७	७३८	५०९	६१०	स्वराः	३८०
३८०	१०८	४८६	७०	३१८	६३४	३३५	६१४	५४	४८९	३८०	६४६	५१६	६१४	५८	७
३८१	११०	४८७	७१	३३०	६३५	३५०	६२८	५५	५४०	४४०	६५७	५१७	६१७	६१	३४
३९२	१७१	४८९	७६	३३३	६३८	३५४	६३१	६५	४४७	६७५	५५०	६३१	६३१	३१५	३४
३९४	१७२	४९०	७७	३३५	६३९	३५५	७७	४४८	४४९	६८१	५५१	६८४	६८८	३८८	३५
३९६	१७७	५०६	८७	३३६	६४०	३५५	७८	२५	४५८		५७९	६८८	६८८	३२१	६९
३९७	१८८	५१५	८९	३५५	१	३६६	६७९	८१	३२		५८६	६८९	६८९	३२१	७३
४११	१९६	५१७	९३	३५८	५	३६७	६८०	८३	३४	७	६३४	६९५	७०४	९८	९८
४२१	१९७	५१८	१०६	३६४	६	३६८	६८६		५२	१४				९९	
४२५	१९८	५५४	१२९	३६९	१३	३७६	६८८		७३	१६	कर्म	७११	१४	१०३	
४३०	२०७	५५६	१३१	३७०	२६	३८९	६८९		७८	१७	१	६	अ.व्या.	१६६	१०८
४४७	२१०	५६०	१३४	३७१	३३	३८४	६९०		१०२	३५	३	२६		१३२	१६८
४४९	२१५	५६१	१३५	३७५	३८	३८५	६९२		१०३	४५	११	५५	२	१३७	१९६
४५७	२१८	५६७	१३६	३८८	५०	३८८	६९५	स्वराः	११८	४८	६७	८३	९	१५१	१९८
४५८	२१९	५७३	१४५	४०७	५१	३९४	६९६		१३८	४९	७०	१४५	१४	१५५	२६३
४५९	२४१	५७५	१५६	४१६	५५	३९६	६९७	५०	१५०	५३	७१	१५४	१४	१९३	३७८
	२४८	५७८	१५८	४२४	६२	४०२	६९८	५१	१५४	८२	७५	१६६	३५	२६९	३७८
७	२६३	५९४	१६०	४२५	८१	४०३	७०४	५५	१८५	१०८	७६	१८५	४०	२९८	५५६
२	२७६	५९५	१६१	४२६	१५४	४०५	७०६	५६	१९७	११०	८२	१९४	४६	३५१	५७५
७	२७८	५९९	१६२	४२७	१५९	४०६	७०१	५७	२१०	११९	१२७	२३३	१०८	३५९	६३८
१३	२९३	६२०	१६४	४३४	१६४	४०९	७३२	५८	१२३	१२८	१३९	२८२	परि०	३६२	६८७
१४	२९७	६२३	१७०	४३५	१६६	४१६		१२४	१७२	१९६	१३१	२९०		३६४	
१६	३०५	६२६	१७५	४३६	१७९	४२३	अ.व्या.	१५२	२८९	१९८	१३४	३०४	१३	४३०	
१७	३१३	६३१	१७६	४४५	१८४	४३६		१७९	३२२	२०७	१३५	३०९	५४	४८१	अन्तराः
२८	३१५	६३४	१७७	४६२	१८५	४३८	२	२१७	२१५	२१५	१५८	३१७	५५	५०६	
२९	३१७	६३८	१८७	४६४	१८८	४३०	३	२७३	२१६	२१६	२१६	३१८	८१	५४०	
३४	३३०	६३९	१३०	४८०	१९०	४३१	६	३१३	५	२६३	२३०	३१६	८८		१
३५	३३२	६४२	१३३	४८७	१९४	४३२	९	३१४	१८	२७८	२३७	३१७			३
४१	३३४	६४३	१३७	४९२	१९७	४३३	१०	३२१	३०	३०५	२४०	३१९	उद्ग	२१६	
४५	३३९	६४६	१४०	५००	१९८	४३५	११	३२५	५३	३१५	२४५	३१६	३४	२१७	
४८	३४५	६४७	१४१	५०१	२००	४४९	१९	३२७	६०	३२०	२७६	३२४	५३	२३३	
४९	३३३	६४९	१४२	५०४	२०९	४५३	२१	८४	८४	३२२	२८०	३२५	६३	२४१	
५३	३३५	६८२	१४४	५०६	२१९	४५३	२३	८५	८५	३२४	२८१	३२८	६५	२४१	
५४	३३७	६८३	१४५	५०९	२३७	४५४	२४	१४	९८	३३३	३३१	३३९	५५१	१०२	२४३
५८	३६७	६८५	१४७	५११	२३८	४५५	३८	१७	१५८	४२३	३३२	३३४	५००	११६	२५४
६१	३७४	६८६	१६४	५१४	२७०	४५७	४०	२१	१७४	४७८	३०२	३३६		११०	३३०
६४	३७५	६८७	१७६	५१६	२७२	४५९	४६	२३	१९५	४७९	३०३	४१६	३१३	३३५	
६७	३७७	७११	१७७	५१७	२८५	५००	५१	८९	२३६	४८०	३०७	४२१	२८०	४०४	
७२	३७८		२८०	५३०	२८९	५०१	५३	१०४	२७५	४८२	३१२	४३५	३११	४६४	
७५	३८५	अन्तराः	२८१	५३८	२९०	५०८	५८	१४२	२८०	४८६	३१७	४५३	५	४६४	
७६	३८६		२८४	५५०	२९६	५१५	५९	१५५	२८२	५०६	३३४	४५३	३११	५६	५१७
८०	४१४	१	२९१	५५७	३०४	५३२	६०	१७७	२८४	५५४	३५३	४५४	३११	५७५	६०९
९८	४१७	८	२९२	५५८	३०८	५३३	६३	१७८	३०६	५६०	३५५	४५५	३१५	१७४	६३०
९९	४२४	११	२९३	५६१	३०९	५३१	७७	१८३	३०६	५६२	३७७	५६१	४८२	१९५	
१००	४३९	१३	२९४	५८०	३१४	५३३	९३	१९३	३११	५८७	४०७	५३१	कर्म	२३५	कर्म



२६	१००	३७८	५५	२१	१९८	२९	४८७	१९०	२८७	४६	३३३	६०७	५	२२२	४२१
५५	१७२	३८३	८१	२५	१९९	३०	५०३	१९१	२८८	४७	३६७	६०८	५	२२७	४२२
६६	१९०	३९२	१४०	२९	२०४	३९	५०५	१९२	३००	५०	३७०	६०९	११	२२९	४२३
१९४	२६९	४११	१८४	३०	२०५	५३	५१६	२१०	३०८	५४	३७४	६१०	१८	२३०	४२४
२५१	३१३	४२३	२२०	३२	२०७	५७	५२०	२२५	३११	५६	३७५	६१२	२०	२३३	४२५
३०८	३५८	५०६	२३३	३३	२११	६२	५२८	३२२	३१७	५७	३८६	६१४	२३	२३४	४२६
३१८	३६५	५१५	२३७	४१	२१४	८९	५२९	३२३	३२४	६१	३९४	६१५	३९	२३५	४२७
३५४	३६३	५४९	२४९	४९	२२२	१०६	५५२	३२८	६४	४०१	३९६	४१	२३६	४२८	
४५२	४२३	६०३	२९१	५०	२२४	१०७	५५४	३२९	६५	४२३	६१७	४४	२३७	४२९	
५२९	४२६	६२७	२९८	५१	२६७	१०९	५	३३३	६६	४२५	६२०	४६	२३९	४३२	
५३१	४७७	६४२	२९९	५५	२६९	११०	उ३	११	३३४	६७	४२७	६२१	४७	२४०	४३४
५५९	४८१	६५२	३००	५७	२७०	१११	४	१५	३३६	६९	४२९	६२२	४९	२४२	४३५
६१४	उ३	३०८	६५	२७१	११७	१४	३०	३६०	७६	४४४	६२३	५०	२४३	४३६	
६३१	२४	३१७	६८	२७२	११९	२२	३४	३७५	७८	४५२	६२४	५२	२४४	४३७	
७०४	४२	३१९	९२	२७५	१२१	२३	४४	३७६	१०५	४५४	६२५	५५	२४५	४३८	
७११	६३	२९	३६७	९६	२७८	१२१	२६	४५	३८१	१४८	४७१	६२७	६८	२४८	४७७
परि०	७३	३०	३७३	९७	२८०	१२३	२७	४७	३८६	१६९	४७४	६२८	७०	२५९	४८०
१३	१४१	३१	४३५	१२०	२८१	१२४	२८	४८	३८९	१७२	४७८	६२९	७६	२६३	४८८
१३	१४८	३२	४२७	१२४	२८३	१२५	३३	५६	३९१	१७४	४८२	६३०	८३	२६४	४९३
७७	१५७	३३	४९२	१२८	२८५	१२६	३४	६२	३९३	१७५	४८५	६३१	८७	२६६	४९९
	१९३	३४	५०४	१३३	२८७	१२७	३५	७२	३९४	१७७	४८६	६३२	८८	२६९	५००
	२१६	३५	५२९	१३७	२९१	१२९	४०	७३	३९६	१८८	५००	६३३	८९	२७०	५०१
	२८७	३६	५३१	१३८	२९५	१०३	४९	८५	३९७	१८९	५०६	६३४	९३	२७३	५०४
	३८	५३३	१४१	३०६	१७४	५१	८७	३९९	१९६	५१२	६३५	९८	२७४	५०६	
रकृपिपरीये	४२	९८	६५७	१५१	३४८	१९१	६६	१२१	४११	२०६	५१५	६३७	११०	२७९	५१४
	१२८	१२२	६८१	१५५	३६१	१९३	६७	१२४	४१२	२०७	५१७	६३८	१११	२८१	५१५
खरा:	१३९	१३०	६९०	१५६	३७५	१९६	७०	१२५	४१५	२१०	५४०	६३९	११२	२८२	५१८
	१५७	१३६	७०४	१५७	३७६	२२२	७२	१५८	४४०	२१३	५४९	६४०	११३	२८५	५४३
१३५	१६९	१३७	१५८	४००	२२४	७४	१६५	४४४	२१८	५५७	६४१	११४	३०३	५४५	
१५०	२६०	१४३	१५९	४१५	२३८	७५	१६७	४४७	२२५	५५८	६४२	११५	३०७	५४७	
१८३	३११	१५८	१६३	४२४	२४३	७७	१९२	४४९	२३७	५६०	६४३	११६	३११	५४३	
१८७	३२६	२५८	१६४	४४५	२४७	८०	१९५	४५३	२३५	५६१	६४४	११७	३१५	५५७	
१९०	३९५	२८२	६९	१६५	४४७	२५३	८१	२०९	४५४	२४०	५६६	६४५	११८	३१८	५८०
१९४	४०९	२९५	८२	१६७	४४८	२५४	८३	२३०	४५५	२४४	५६७	६४६	११९	३२६	५८४
२२२	४५६	३०३	परि०	१७०	२७७	८३	२३३	४५६	२६७	५६८	६४७	१२०	३२३	५८५	
२३३	४५८	३१०	१७४	७	२७९	८४	२३९	४५७	२६९	५७३	६४८	१२३	३२८	६०४	
२३५	४०४	१३	१७५	८	२८०	८५	२५१	४५८	२८०	५७५	६४९	१२५	३५३	६०८	
२३७	४२३	४७	१७७	९	२१२	९९	२५२	४५९	२९३	५७६	६७२	१२६	३५६	६०९	
२१५	१४	४२६	५४	१८०	१०	२१३	१००	२५३	४६०	२९४	५७८	६८५	१३७	३६४	६११
२६४	३०	४२९	६६	१८२	१२	२१४	१०१	२५७	४६१	२९५	५८३	६९०	१५१	३६५	६१३
४०९	४३	४६२	८७	१८३	१४	२१८	११७	२६०	४६२	२९६	५८४	६९२	१५२	३६६	६१४
४३९	१६३	४६३	वि	१८७	१६	२७३	१२०	२६०	४६३	२९७	५८५	६९३	१५३	३६९	६१०
४७	१८८	५२५	वि	१८९	१७	२८४	१२२	२६२	४६	३१७	५८६	६९४	१५८	३७०	६१५
१४	१९६	५७५	वि	१९०	१८	४२२	१२३	२६७	१८	३१८	५८९	६९५	१५९	३७१	६१६
२३	२१०	६१२	वि	१९१	२०	४२३	१२९	२६९	२८	३१९	५९१	६९६	१६०	३७२	६१७
२४	२२९	६१२	वि	१९२	२१	४२४	१३०	२७०	२९	३२०	५९२	६९७	१६१	३७३	६१८
२९	२७०	६१२	वि	१९३	२२	४२५	१३६	२७४	३०	३२१	५९३	६९८	१६२	३७४	६१९
२६	२७५	५३	१	१९४	२३	४२७	१३७	२७५	३१	३२२	६००	७	३१५	४१५	२८

३१	३५५	५४२	८९	क.	१५१	५४	३५६	१९२	२८८	६४	४०१	६१६	४९	२६५
३७	३५७	५४७	६९०	२९	१५५	५६	३५८	१९३	२९७	६६	४१०	६१७	५२	२६६
४३	३६४	५४९	६९१	१२८	१५६	८९	३५९	२०६	२९८	६७	४१९	६१८	५८	२७०
४४	३६५	५६४	६९२	१९३	१५७	१०१	३७९	२१०	३००	७२	४२३	३१९	७०	२७३
४५	३६८	५६९	६९३	४५	१५८	१०३	३८४	२१९	३०३	८०	४३२	३२०	७४	२७४
४६	३७३	५७०	६९४	४८५	१५९	१०४	४२०	२२५	३०८	१०५	४३९	६२२	७६	२७५
५०	३७४	५९६	६९५	४३८	१६०	१०६	४२३	२३५	३११	१०६	४४५	६२३	९१	३०२
५१	३८४	६०३	६९६	उद्व	१६३	१०७	४७९	३०७	३१७	११०	४५२	६२४	९८	३०३
५५	३८५	६०६	६९७	२४	१६५	११०	५४७	३१३	३४१	११८	४५३	६२५	९९	३०५
८३	३८८	६०९	६९८	३२	१६७	११७	५७३	३१४	३४३	११९	४५७	६२७	१०४	३३६
८९	३९३	६१०	७०३	३२२	१७४	११९	६०९	३२२	३६९	१२१	४६४	६२८	१०७	३४१
९४	३९४	६१५	७०४	१६०	१७७	१२१	६	३२३	३७९	१२७	४६५	६२९	१११	३४५
९५	४०३	६१७	७०६	उ	१८७	१२३	१४	३२४	३८७	१४०	४६६	६३४	११२	३५६
१७९	४०९	६३२	७११	४२७	१९२	१२८	२३	३२५	३९१	१४६	४६८	६३५	११३	३६२
१८३	४१३	६३३	७१२	५	२००	१३०	२४	३२६	३९३	१६४	४७०	६३६	११४	३६५
१८४	४१४	६३४	७१३	२५२	२०१	१३१	२६	३२७	३९४	१७२	४७१	६३७	११५	३६७
१८५	४१९	६३५	७१४	२६०	२०५	१३५	२७	३२८	३९५	१७३	४७४	६३८	११६	३६८
१८८	४२३	६३६	७१५	४०९	२०१	१४५	२८	३२९	३९७	१७५	४७८	६३९	११७	३६९
१९८	४२२	६३७	७१६	उ	२६६	१४९	३४	४६	४०२	१७७	४७९	६४५	११८	३७०
२११	४२५	६३८	७१७	२९	२६८	१५१	३५	४८	४०८	१८१	४८७	६४६	११९	३७१
२२९	४२६	६४१	७१८	५४	२६९	१८३	३६	४९	४१६	१८८	४९०	६४७	१२३	३८३
२३०	४२७	६४३	७१९	७८	२७३	१९०	४०	५४	४२५	१९६	४९१	६४८	१२८	३८६
२३५	४२९	६४४	७२०	५९४	२८०	१९१	४१	५५	४३४	१९७	४९८	६४९	१२९	३८९
२३६	४३०	६४६	७२१	१६	२८७	१९२	५१	६७	४४४	२००	५००	६५०	१३५	४०४
२३७	४३१	६४७	७२२	२१	२८८	१९६	५२	८४	४४७	२१३	५०३	६८२	१३६	४०८
२३८	४३३	६४८	७२३	२४	२९९	२०४	६३	९७	४४९	२१४	५०५	६८३	१३७	४१६
२८२	४३३	६४९	७२४	२९	३०६	२३८	६८	१२४	४५१	२१५	५०९	६८५	१४५	४३१
२८५	४३५	६५०	७२५	३०	३०७	२४१	६९	१२८	४५४	२१७	५१०	६८६	१४६	४३२
२९०	४४९	६५१	७२६	३०	३१३	२४७	७०	१४४	४५८	२४८	५१५	६९५	१६१	४३४
२९३	४५०	६५२	७२७	८८	३१६	२५०	७२	१४८	४५९	२८०	५२७	७०३	१८६	४३५
२९६	४५३	६५३	७२८	१८९	३१९	२५१	७३	१५५	४६३	२८३	५३३	७०६	१८८	४३६
२९८	४५४	६५४	७२९	३०२	३२०	२५२	७४	१५७	४६४	२८६	५३४	७०९	१८९	४३७
२९९	४५५	६५५	७३०	४६२	३२५	२५५	७५	१५८	४६५	२८९	५३५	७१२	१९०	४३८
३००	४५७	६५६	७३१	४६३	३२६	२५७	७६	१६४	४६६	२९०	५३६	७१३	१९१	४३९
३०८	४८६	६५७	७३२	४६४	३२७	२५८	७७	१६५	४६७	२९१	५३७	७१४	१९२	४४०
३१४	४९६	६६१	७३३	५०	३२८	२५९	७८	१६६	४६८	२९२	५३८	७१५	१९३	४४१
३१६	४९७	६६३	७३४	२९८	३२९	२६०	७९	१६७	४६९	२९३	५३९	७१६	१९४	४४२
३१८	५००	६६५	७३५	२९९	३३०	२६१	८०	१६८	४७०	२९४	५४०	७१७	१९५	४४३
३२०	५०१	६६७	७३६	३००	३३१	२६२	८१	१६९	४७१	२९५	५४१	७१८	१९६	४४४
३२१	५०२	६६८	७३७	३०१	३३२	२६३	८२	१७०	४७२	२९६	५४२	७१९	१९७	४४५
३२५	५०६	६७१	७३८	३०२	३३३	२६४	८३	१७१	४७३	२९७	५४३	७२०	१९८	४४६
३२६	५१०	६७४	७३९	३०३	३३४	२६५	८४	१७२	४७४	२९८	५४४	७२१	१९९	४४७
३२८	५११	६७५	७४०	३०४	३३५	२६६	८५	१७३	४७५	२९९	५४५	७२२	२००	४४८
३३१	५१३	६७६	७४१	३०५	३३६	२६७	८६	१७४	४७६	३००	५४६	७२३	२०१	४४९
३३४	५१५	६७८	७४२	३०६	३३७	२६८	८७	१७५	४७७	३०१	५४७	७२४	२०२	४५०
३३५	५१९	६७९	७४३	३०७	३३८	२६९	८८	१७६	४७८	३०२	५४८	७२५	२०३	४५१
३३७	५२३	६८०	७४४	३०८	३३९	२७०	८९	१७७	४७९	३०३	५४९	७२६	२०४	४५२
३४०	५२५	६८२	७४५	३०९	३४०	२७१	९०	१७८	४८०	३०४	५५०	७२७	२०५	४५३
३४६	५२६	६८४	७४६	३१०	३४१	२७२	९१	१७९	४८१	३०५	५५१	७२८	२०६	४५४
३५०	५२९	६८७	७४७	३११	३४२	२७३	९२	१८०	४८२	३०६	५५२	७२९	२०७	४५५
३५५	५३३	६८८	७४८	३१२	३४३	२७४	९३	१८१	४८३	३०७	५५३	७३०	२०८	४५६

६५३	३३६	१२८	६३	अन्तःस्थाः	४१६	३१९	१०१	२८९	२१३	२३९	४४०	१०६	५०	४५९	९१
६६९	४५८		६९		४२३	४८८	१०४	३०३	२६५	२४२	४६६	१८४	५२	४९८	९७
६७०		५	७०		५४६	५१५	१०५	३५६	२८०	२५५	४७८	१८६	५३	५०७	९८
६७५	५	८	११७			५६३	१८६	४०९	२८८	३७४	४७९	१८७	५६	५३९	१०२
	१८८		१८८	८७	वृद्ध	६३०	१९९	४२१	२९१	३९८	४८१	१९३	५८	५५२	१०३
अन्तःस्थाः	४२३		२०६	९८	६०	७०३	२५७	४२५	२९६	४०१	५७९	२०१	५९	वृद्ध	१०५
	५०६		३२३	१०८	६३		३११	४४७	३५०	४१२	६०१	२०५	७२	१४	११०
	६३९		१२२	६९			३२८	४७८	४०४	४४८	६४१	२१९	७९	२५	१२०
			१२९	७०			३३६	६०१	४०५	४६८		२२०	८७	२६	१२१
२३		अन्तःस्थाः	१६७	४३३	२०६	उन्मोच	३८५	६४०	४०६	४९४	परि०	२४७	८८	४७	१२४
८६			१६९	४६३	२१०		४५४	६४१	४०८	५४९		२६५	८९	५०	१२८
९८			३०७	५५३		वृद्ध	६७७	४०९	५५८	२९	२६६	१००	५२	१४३	
१४६	८७		३०८	५७९				४१०	६३९	६५	२६८	१०१	६३	१५०	
२३९	१३९		३०९		कर्म	५	१०४	७५	४११	६५१	९१	२६९	१०७	७२	१५४
२६३	३०१		३१०		१३	१८७	१७३		४१५		२७०	१०९	७४	१५६	
४४९	२९२	५१५	३११	५३	१७	२१३	२२७		४४७		३७२	११०	७९	१६०	
४७६	५२६		३२६	५५	१६७	२३४	२४२				३७५	११७	९९	१६१	
५६७	५५३		३२७	१४५	१६९	२८०	३६७				३८०	१३०	१०७	१६३	
	५६०		३४९	१७६	१७०	४०३	३७४				३८८	१४८	११७	१७१	
कर्म			४०८	३०८	२७५	४०४	४०१				३९६	१६५	११९	१७५	
१४५			४५८	४१३	३११	४०५	४३८		१४४	१६	११				
२७५	५	१३२	४५९	४२७	४५८	४०६	४४४		१५३	२३					
२७५	२७१	१६६	५०६		४०७	४७४			उद्ध	२२९					
३०३	२१५	२१४	५४५	१४४	४०८	४९१			२६	२३०	१	३०६	२०८	१२८	१९५
३०८	३७७	५४८	६३०	१६९	४०९	४९४			२८	२४१	२१	३०७	२१०	१३०	२०३
३१५	५८५	कर्म	७०३	१७४	४१७	५०६			३६	२४२	१६	३१०	२१६	१३४	२०९
३१९			११८	अ.व्या.	१७४	४१५	५०९	५	१४४	३०३	२३	३१३	२२४	१३५	२१९
३७७	४८७		१६३		१७८	४१७	५५८	५०३	१४६	४०७	२५	३१४	२३२	१४४	२३९
४६५	५०३		१६९	८	२७२	४४७	५७६	७१०	१७२	४४९	२६	३१६	२४४	१४६	२५०
४८७	१७२	५१	४२३		६५१		६५३	अ.व्या.	२४५	४६६	४०	३१८	२४५	१४८	२६०
५६३	१७४	६४	५१५	क.	७१४		७१६	वृद्ध	४४	५२१	५१	३२१	२७३	१५०	२६४
अ.व्या.	२०५	७८	६३९		७१६		७१९	५	४४	५४१	५३	३२४	२७३	१५१	२६५
	२१०	८८	६६९	८	७१९		१०९	६४	१०९	५४१	५३	३२५	२१३	१५३	२८६
३	१९७	खरा:	२११	९३	७००	१०१	१५७	अन्तःस्थाः	१००	१२४	५६७	५३	३६६	३१४	१५४
४४	४८८		२१८		७१०	१५७	१५३	वृद्ध	१०१	१७१	६०८	५४	३७०	३४४	१६६
						१५३	४२५		१३	१७५	कर्म	५६	३७६	३४५	१७०
परि०										६५	१८६	८३	६६	४०१	३८०
										९१	१९५	१४५	६७	४०२	३८२
१३		अन्तःस्थाः	३६५	२९३	२५४	२१४	२१४			२५६	२१५	११८	४१५	२९७	२२१
१९	४६३	कर्म	२९६	२९४	२९६	२३२	२३०			३११	२५१	१२०	४४२	४०७	२२५
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			३२८	२५१	१२९	४४३	४१४	२३०
		खरा:	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			३३६	२७१	१३०	४४४	४२३	२३०
		खरा:	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			३८५	२८९	१४५	४४५	४२३	२३१
		अपसार	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४०७	२०१	१५५	४४५	४२३	२३२
		खरा:	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		खरा:	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७	१४	४२७	६८	२३७
		अ	२९७	२९४	२९६	२३२	२३०			४५४	१५७				

४११	३६७	६७३	२७७	४७८	१४५	३७९	६९६	३६	२४४	अन्तःस्थाः	खराः	६९	६३४
४१२	३७४	६८२	२७८	४७९	१४८	३६३	७०४	७	४११	अन्तःस्थाः	४३८	७८	कम
४३६	३७५	६८६	२८१	४८०	१४९	३६४	७०८	४०१	४३७	अन्तःस्थाः	४४४	११३	कम
४४४	३९४	६८७	२९२	४८१	१५२	४०३	७१३	४३२		अन्तःस्थाः	४४४	११४	९
४४९	४००	७०७	३०३	४८२	१५४	४३७		अ.व्या.	४७४	अन्तःस्थाः	४४४	११५	२२
४५६	४०१	७१३	३०५	४८३	१६०	४३०		कम		अन्तःस्थाः	४४४	११६	२६
४५८	४०३		३१८	४८४	१६७	४३५	६			अन्तःस्थाः	४४४	११७	२४
४६०	४०५		३२१	४८५	१७१	४५४	११	४२१	२११	अन्तःस्थाः	४४४	११८	१०८
५	४१०	अन्तःस्थाः	३५३	४८६	१७८	४६५	१५	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	११९	१४८
४११		अन्तःस्थाः	३६६	४८७	१७९	४६६	१६	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१२०	१५२
१३	४१२	९	३७३	४८८	१८४	४७७	२०	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१२१	१५५
१६	४२७	९०	३७९	४८९	१९०	४७८	२२	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१२२	१५५
३४	४३९	१७	३८९	४९१	२०६	४७९	३१	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१२३	१५५
३७	४७४	१८	३९०	४९३	२०७	४८०	४२	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१२४	१५५
४२	५१५	२३	३९२	५५२	२१८	५०८	५१	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१२५	१५५
५३	५१९	२४	३९३	५५०	२२९	५११	५२	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१२६	१५५
५८	५२९	२४	३९६	५५७	२३०	५१७	५५	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१२७	१५५
७०	५३६	४७	४०१	५७८	२३८	५३७	५९	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१२८	१५५
७७	५३८	५७	४०२	५८४	२४१	५३१	६१	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१२९	१५५
९०	५३९	५८	४०८	५८५	२५५	५३३	६६	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१३०	१५५
९३	५४०	६७	४१३	५९४	२५६	५४०	६८	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१३१	१५५
१०२	५४१	६९	४१४	६०२	२७१	५४९	७०	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१३२	१५५
१२१	५४२	७९	४२८	६०५	२८५	५५८	७९	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१३३	१५५
१२६	५४४	८६	४३८	६०५	२८५	५५८	८०	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१३४	१५५
१४१	५५३	८९	४४१	६०८	२८९	५६६	८३	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१३५	१५५
१४८	५५७	९३	४४३	६२१	३०१	५७८	८४	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१३६	१५५
१७३	५५८	११७	४४४	६२९	३०२	५८३	८८	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१३७	१५५
१७४	५६०	१२४	४४८	६३०	३०३	५९०	१०३	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१३८	१५५
१७६	५६२	१३८	४४९	६३२	३०४	५९२	१०९	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१३९	१५५
१८८	५७३	१३९	४५०	६३४	३०५	५९३	१०९	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१४०	१५५
१९१	५७५	१४१	४५१	६३७	३०६	५९४	१०९	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१४१	१५५
१९४	५८१	१४५	४५२	६३८	३०७	५९५	११	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१४२	१५५
२०६	५९१	१६४	४५३	६	३२१	६०३	२९	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१४३	१५५
२२८	५९४	१७०	४५४	११	३२६	६०४	३५	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१४४	१५५
२३५	५९९	१७४	४५६	१३	३२७	६०७	३७	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१४५	१५५
२३६	६०१	२०१	४५९	१९	३२८	६१९	५०	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१४६	१५५
२३८	६११	२०४	४६०	२१	३३१	६३१	५५	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१४७	१५५
२३९	६१९	२०५	४६२	२२	३३४	६३२	६२	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१४८	१५५
२४१	६३५	२१५	४६३	२४	३३७	६३६	७१	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१४९	१५५
२४३	६३६	२१९	४६४	२३	३४२	६३७	७२	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१५०	१५५
२४४	६३७	२२०	४६५	२५	३४३	६३८	७५	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१५१	१५५
२४५	६३९	२२१	४६६	२७	३४७	६३९	७६	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१५२	१५५
२८०	६४०	२२८	४६७	३०	३५०	६४०	८७	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१५३	१५५
२९१	६४४	२२९	४६८	३६	३५२	६४६	९१	४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१५४	१५५
२९१	६४६	२३०	४६९	३७	३५४	६४७		४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१५५	१५५
२९२	६४९	२३४	४७०	४०	३६१	६५३		४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१५६	१५५
२९३	६५३	२४०	४७३	५१	३६५	६५३		४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१५७	१५५
२९५	६५४	२४२	४७४	७३	३६६	६५४		४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१५८	१५५
२९९	६५७	२६५	४७५	१०८	३७५	६५७		४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१५९	१५५
३३३	६६९	२६६	४७६	११०	३७६	६६२		४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१६०	१५५
३६०	६७०	२७३	४७७	१४०	३७७	६६५		४०९	४०९	अन्तःस्थाः	४४४	१६१	१५५

१७५	२८५	७७	१६५	१६९	५००	वृद्ध खराः	४४	३७४	३७९	३४७	२८	३१३	४३६		
१७६	३०३	८५	१७७	१७०	५०९		४५	३७५	३८६	३५२	३९	३१४	४४०		
१८३	३२९	१२०	१८३	२१७	५१४	६२	११	४६	२२	३८५	४१३	३५९	३२	३१५	४४३
१९३	४५८	१५२	२२४	२३९	५८५	१६	४७	४८	३९४	४१४	३९३	४०	३२१	४७४	
२०३	५	२१८	२७९	३०५	५९४	२१	४८	६२	४०३	४२७	३९४	४५	३२५	४८४	
२१३	२४९	३१३	३२२	६२९		४२	४९	६८	४२७	४३८	४०३	४९	३६४	४८५	
२८१	६	३१८	३१४	३३५		४९	५०	७०	४८६	४४४	४२७	५०	३६६	४८८	
३७६	६३	३६२	३५८	३६७	कृष्ण	५१	५१	७३	४९०	४५३	४३०	५३	३७१	४९०	
३७९	७५	४१३	४२२	५०६	५	५४	५२	१४९	५४४	४६२	४५९	५४	३७३	४९१	
	१७३	४५७	५०७	५१५	११	६४	५३	१५६	५४९	४६६	४७७	५५	३७४	४९२	
	१९४	५३१		५२९	१३	१०६	९९	५४	१६३	५५७	४६९	५०८	५६	३७५	४९९
८३	१९८	५४८	वृद्ध	५४९	७२	४०८	११८	५५	१६३	५५८	४७४	५११	५९	३७६	५०६
१११	२१५	५९०	१८	५५७	१४८		१२०	१०३	१६५	५६०	४७७	५३१	६१	३७८	५०७
१५१	२७८	५९३	४७	५६०	१४९	५	१४१	१०६	२१९	५७३	४७९	५४६	६८	३८३	५३५
२१३	३२०	५९६	५०	५७३	१८४	८	१४८	११६	२४०	५९१	४८७	५४९	७०	३८४	५३७
३४४	३३०	६०१	५२	५९१	२०५	६१३	१५५	१२१	२५८	५९४	४८८	५६३	७१	३८६	५४०
३५८	३८४	६११	७३	५९४	२३८	६६२	१५७	१३०	२६०	५९९	४९१	५९४	७२	४४६	५४३
४१२	४१०	६५९	७८	५९९	३१७	६८६	१६४	१४८	२९५	६०२	४९४	५९६	७३		५४७
४७८	४११		११७	६१८	३१९		१७२	१६५	३११	६०६	५००	६११	८२	कृ	५५२
वृद्ध	४३०		१८८	६६९	३६७		१८४	१८३	३४८	६१५	५०९	६३९	८५	१०	५५५
	४३२	७	३२१	६७०	३७७		१८६	३३९	३४९	६७५	५१४	६३८	९२	१४	५५५
१७०	४५२	१०९		६८६	३९०		१९२	३३६	३५७	६८२	५४१	६४६	९३	१७	५५८
१९३	५६२		५	६९२	३९३		२०८	३२४	३९१	६८३	५४७	६४७	९६	२५	वृद्ध
	५६५	परि०	७३	७०३	३९४		२२०	२७९	४०४	६८५	५८५	६५२	९७	५३	
१४	५९४	५८	१६७	४३०		४३३	२६९	३१३	४०५	६८६	६०२	६५८	१००	६२	४
७९	६४२	६५	२१९	५३७		२७२	३१४	४१३	६९२	६०५	६९०	१०१	८९	९	
८०		६७	२५८	५३१		२८०	३४८	४४९	७०३	६३४	६९६	१०८	९०	२४	
८१		कल्याणः	३११	५४६		२८७	३६०		७१३	कृष्ण	७०८	१३७	९१	३८	
८१			३२६	६९५		२९७	३९७	५	७१४	७	७१६	१३९	१०४	३४	
८२		सिन्धुपिपे	३३७	७०		३००	४१४	६		११		१४७	१०९	३६	
८४	८		३४६	३६		३०३	४२३	१६		१३	परि०	१५५	११०	३८	
१०४	९		३४८	३९		३०७	४२५	१८		७२		१६०	११३	३९	
१०५	४६		३४९	१३०		३०८	४२७	३४		१४८	६६	१६४	११७	४७	
११०	११७		३९१	१६०		३१०	४५९	४६	१०	१४९	७५	१६८	१२९	४९	
११२	१२७	साराः	४०७	१७०	कृ	३१७	५०७	५५	२५	१८४		१७१	१४५	५३	
१२१	१३९		४४९	२०४	४५७	३३७		५८	५८	२०३		१७३	१५१	६३	
१२२	२५३	१४८	४५६	२१५	४५७	३४०	वृद्ध	७०	६७	२०४	१७५	१७५	१७२	६५	
१२३	२८३	१६०	४५९	२२९	४५७	३४६	७४	१३३	२०५	१३३	१७८	१९३	६९		
१२४	३५५	१८७	४६०	२३०	४५७	३४८	२६	९०	१५८	२०६	१८५	२३४	७३		
१२७	४०४	२०६	४६५	२३५	४५७	४००	५०	१०२	१६४	२०७	१९३	२७४	८८		
१२८	४५८	२३३	५८	२६६		४०५	५३	१३७	१७०	२०८		१७६	१७९	१००	
१३३	४५९	२६९	८०	२९५	भक्त स्याः	७२	७२	१७०	२०१	११२	४	२०४	१२३	११५	
१३९	४६०	३०३	९६	३२७		७३	७४	१४८	२०५	२४४	१२	२११	१३५	१३३	
१४३	४६१	३१३	१४८	३७९	५१	१४	७४	१४८	२०५	२४४	१२	२११	१३५	१३३	
१५०	४६५	४०१	१५७	४२७	५१	१८७	१७	१२८	२३९	२३०	१३	२६४	१४२	१३३	
१५१	४७९	४४५	१५९	४३०		१८	१५०	३१५	२३०	२७१	१४	२६६	१५०	१२५	
१६०	५०१	कृ	१६१	४३६		२८	१७०	३२२	२६६	३०३	१५	२८८	३८४	१३७	
१६१	५०३		१६५	४५३		४०	१९१	३३०	२८१	३१४	१६	२९९	३८८	१३०	
१९३	५४६	६०	१६६	४५४	यमनालपिपे	४१	२०७	३३५	२९२	३१७	३४	३०७	४२०	१३३	
२६०	५७९	११९	१६७	४६२		४२	३१८	३३७	३०५	३२८	३५	३०८	४३३	१३५	
२६४	कृष्ण	१५७	१६८	४७७		४३	३२३	३६७	३०९	३३०	३६	३११	४३८	१३८	

१४१	१७४	१६	३९७	६९	३१६	५५३	६८	२९४	६२२	२८५	२५५	३५०	१०९	५०१
१५१	१७८	२८	४०३	७१	३१७	५७४	१००	३०५	६३१	४	२७७	४	१६८	कम्प
१५४	१८२	२९	४०५	७७	३१८	५७५	१४५	३१४	६३९	४७	३०६	४२३	६७२	२३४
१५४	१८४	३०	४१२	७८	३३६	५७९	१५०	३१८	६४५	५०	३१३		कम्प	आनन्द
१७०	१९६	३३	४१४	८२	३५५	५८१	१५१	३१९	६४९	५०	३१३		कम्प	आनन्द
१७२	१९९	४१	४२३	८७	३७९	५८५	१५३	३२०	६५१	५३	३१६		कम्प	आनन्द
१८७	२००	४२	४२४	८९	३८२	५८६	१५३	३२१	६५२	२१८	३१७		५५	आनन्द
१८८	२०१	४६	४२५	९३	३८६	५९१	१५४	३२५	६६२	३४५	३४५		१६०	सारा:
१९०	२०६	४८	४२८	९८	३९०	६१३	१५५	३२७	६६५	१७४	३६२	५२५	१६२	
१९३	२२६	५२	४३०	९९	३९१	६१४	१५६	३२८	६७२	१८०	४०४	५४३	१६५	६१
१९९	२२८	५८	४३२	१२९	३९५	६१७	१५७	३३१	६७४	१८२	४०९	५४३	३२७	९६
२१०	२४८	६७	४३५	१४५	३९९	६२३	१५८	३३२	६९२	१९६	५००	कम्प	३८७	
२१९	२४९	७०	४७६	१६०	४०२	६२६	१५९	३३३	६९५	३००	५०१	३५१	३८७	क
२२०	२५०	७५	४८०	१६२	४०७	६३०	१६०	३३६	७००	३०६	५२५	३७०	३८७	क
२२१	२५६	८१	४८४	१६४	४०८	६३२	१६१	३४२	७०१	३३	५२६	४८०	१४९	
२४०	२६०	१०९	४८८	१८५	४१३	६३४	१६२	३४३	७०२	२१४	५८५	कम्प	१५३	
२८५	२६२	११०	४९०	१९२	४१६	६३७	१६३	३४४	७०५	२१४	५८५	कम्प	४८४	३५८
२९३	२६४	११२	५३०	२०२	४२५	कम्प	१६४	३५२	७०६	१६२	२२८	५	४८८	५५५
२९५	२६६	११३	५५६	२१६	४२६	५	१६५	३५४		२३५	३३		५५५	
३१५	२७८	११४	५५८	२१८	४२७	१०	१६६	३७७		२६६	५४		५५५	
३१९	२७९	११५	५७३	२२०	४३५	१३	१६७	३८२	२१	२७८	५५		५५५	
३२२	२८५	११६	५८१	२२७	४४०	१४	१६८	३९३	२३	३४५	५६	६९	५५५	
३२३	२८८	११७	५९५	२२८	४४१	१६	१६९	३९४	२४	३४८	५९		५५५	
३२३	३११	१२२	६०८	२३३	४४३	१७	१७०	४११	३१	३५०	६२		५५५	
३२५	३३६	१३६	६१३	२३५	४४५	१८	१७१	४१८	४०	३५०	६३		५५५	
१५	३३९	१४०	६२६	२३६	४४८	१९	१७२	४२७	४५	३५०	६३		५५५	
१६	३४९	१४२	६२७	२४०	४४९	२०	१७३	४३५	४६	६८	१	१७५	५३	१५०
२१	३५०	१४८	६३७	२४१	४५५	२१	१७४	४५५	५१	३७	४१	२०८	५३	२१०
२३	३५७	१८८	६४२	२४५	४६६	२२	१७५	५०१	५२	१३९	८१	३१८	५७	२३०
२४	३५८	१८९	६४७	२४६	४६८	२६	१७६	५०६	५३	१६०	८३	३५१	१६०	२३०
२५	३५९	१९८	६५३	२४७	४७०	२८	१७७	५१७	५६	१७२	११०	३७०	१७२	२३०
२७	३७६	१९९	६५४	२४९	४७१	३०	१७८	५२२	७३	१७८	११५	४८०	३७०	२३१
२९	३८९	२११	६५७	२५०	४७२	३२	१७९	५२३	७४	१७९	११९	५५२	४८०	२३२
३३	३९४	२१२	६७२	२५१	४७४	३४	१८०	५३१	७७	३९५	२१२	७०२	१८३	२५१
३४	३९५	२१५	६८३	२५५	४७५	३५	१८३	५३३	९३	३९४	७०५	३७४	४२४	४५८
३५	३९७	२१८	६८३	२५७	४७९	३६	१८४	५३८	१००	३९५	७०५	३७४	४२४	४५८
४३	४०९	२४२	६९३	२५८	४८१	३९	१८७	५४४	१०१	३९७	७०५	३७४	४२४	४५८
४४	४१६	२४८	७०६	२६०	४८७	४०	१९७	५४६	१०४	३९८	७०५	३७४	४२४	४५८
४५	४२५	२५३	७१४	२६५	४८९	४१	२०८	५४८	११०	३९९	७०५	३७४	४२४	४५८
४८	४३८	२५५	७२४	२७४	५०४	४२	२०९	५४९	११३	४००	७०५	३७४	४२४	४५८
५०	४३६	२८०	७३४	२७४	५०६	४३	२१८	५५०	११४	४०१	७०५	३७४	४२४	४५८
५१	४३८	२८०	७३४	२७४	५०७	४५	२१९	५५२	११५	४०२	७०५	३७४	४२४	४५८
५२	४४०	३२३	७८७	५०९	४७०	४७	२३०	५६३	११६	४०३	७०५	३७४	४२४	४५८
५३	४४९	३२४	७८८	५११	४७१	४८	२३१	५६४	११७	४०४	७०५	३७४	४२४	४५८
६०	४५३	३२५	७८९	५१२	४७२	४९	२३२	५६५	११८	४०५	७०५	३७४	४२४	४५८
६८	४५७	३३०	७९३	५१६	४७६	५०	२३३	५६६	११९	४०६	७०५	३७४	४२४	४५८
७८	४५८	३३५	७९८	५२०	४८०	५१	२३४	५६७	१२०	४०७	७०५	३७४	४२४	४५८
८४	४५९	३३७	८००	५२२	४८२	५२	२३५	५६८	१२१	४०८	७०५	३७४	४२४	४५८
८५	४६०	३३८	८०१	५२३	४८३	५३	२३६	५६९	१२२	४०९	७०५	३७४	४२४	४५८
१११	४६१	३३९	८०२	५२४	४८४	५४	२३७	५७०	१२३	४१०	७०५	३७४	४२४	४५८
११२	४६२	३४०	८०३	५२५	४८५	५५	२३८	५७१	१२४	४११	७०५	३७४	४२४	४५८
११३	४६३	३४१	८०४	५२६	४८६	५६	२३९	५७२	१२५	४१२	७०५	३७४	४२४	४५८
११४	४६४	३४२	८०५	५२७	४८७	५७	२४०	५७३	१२६	४१३	७०५	३७४	४२४	४५८
११५	४६५	३४३	८०६	५२८	४८८	५८	२४१	५७४	१२७	४१४	७०५	३७४	४२४	४५८
११६	४६६	३४४	८०७	५२९	४८९	५९	२४२	५७५	१२८	४१५	७०५	३७४	४२४	४५८
११७	४६७	३४५	८०८	५३०	४९०	६०	२४३	५७६	१२९	४१६	७०५	३७४	४२४	४५८
११८	४६८	३४६	८०९	५३१	४९१	६१	२४४	५७७	१३०	४१७	७०५	३७४	४२४	४५८
११९	४६९	३४७	८१०	५३२	४९२	६२	२४५	५७८	१३१	४१८	७०५	३७४	४२४	४५८
१२०	४७०	३४८	८११	५३३	४९३	६३	२४६	५७९	१३२	४१९	७०५	३७४	४२४	४५८
१२१	४७१	३४९	८१२	५३४	४९४	६४	२४७	५८०	१३३	४२०	७०५	३७४	४२४	४५८
१२२	४७२	३५०	८१३	५३५	४९५	६५	२४८	५८१	१३४	४२१	७०५	३७४	४२४	४५८
१२३	४७३	३५१	८१४	५३६	४९६	६६	२४९	५८२	१३५	४२२	७०५	३७४	४२४	४५८
१२४	४७४	३५२	८१५	५३७	४९७	६७	२५०	५८३	१३६	४२३	७०५	३७४	४२४	४५८
१२५	४७५	३५३	८१६	५३८	४९८	६८	२५१	५८४	१३७	४२४	७०५	३७४	४२४	४५८
१२६	४७६	३५४	८१७	५३९	४९९	६९	२५२	५८५	१३८	४२५	७०५	३७४	४२४	४५८
१२७	४७७	३५५	८१८	५४०	५००	७०	२५३	५८६	१३९	४२६	७०५	३७४	४२४	४५८
१२८	४७८	३५६	८१९	५४१	५०१	७१	२५४	५८७	१४०	४२७	७०५	३७४	४२४	४५८
१२९	४७९	३५७	८२०	५४२	५०२	७२	२५५	५८८	१४१	४२८	७०५	३७४	४२४	४५८
१३०	४८०	३५८	८२१	५४३	५०३	७३	२५६	५८९	१४२	४२९	७०५	३७४	४२४	४५८
१३१	४८१	३५९	८२२	५४४	५०४	७४	२५७	५९०	१४३	४३०	७०५	३७४	४२४	४५८
१३२	४८२	३६०	८२३	५४५	५०५	७५	२५८	५९१	१४४	४३१	७०५	३७४	४२४	४५८
१३३	४८३	३६१	८२४	५४६	५०६	७६	२५९	५९२	१४५	४३२	७०५	३७४	४२४	४५८
१३४	४८४	३६२	८२५	५४७	५०७	७७	२६०	५९३	१४६	४३३	७०५	३७४	४२४	४५८
१३५	४८५	३६३	८२६	५४८	५०८	७८	२६१	५९४	१४७	४३४	७०५	३७४	४२४	४५८
१३६	४८६	३६४	८२७	५४९	५०९	७९	२६२	५९५	१४८	४३५	७०५	३७४	४२४	४५८

४३८	५२९	१५	३७४	६३४	३२०	३२७	१५७	१२७	२१३	४३३	१७६	९१	५०५	६५	१८७
४४०	५३१	४२	३७५			३५६	१५७	१५७	२१४	५१९	१८०	९२	५०७	६८	१८९
४५९	५६३	५१	३८६	कम	मो	४२०	उ	२१५	२८८	५८०	१८१	९३	५१६	७२	१९१
५	६०३	५२	४१२	१३	मूवागो	४३३	१८२	२२९		६३०	१८२	१०१	५३९	८४	२०१
	६५५	७३	४४७	२१	कम	२४५	२४४			६३४	१८७	१०६	५४७	१२०	२०२
२७	६६१	१३८	४७६	२२		२४६	३०२	२५	कम	१८८	१०७		१२५	२०६	
४६	६६२	१५१	५०७	२३	खरा:	१९	३२६	३३५	३९	१९१	११०	उद्र	१४२	२०९	
६७	६८०	१५७	५४९	२५		८६	३४३	३३९	१४८	४४	१९३	१२३	२	१६७	२१०
७८	६९५	१६९	५९४	४०	४५	२९४	४५८	२३०	१५१	१८४	१९४	१२८	४	१९२	२१३
१४८	७०७	२८७	५९६	६२	१५०	४३५	४२५	२३२	२०७	१९६	१३०	२६	१९५	२१५	
२१४	अ.व्या.	३२३	५९७	१३१	१८७	४५१	४३१	२४९	४१९	१९७	१३१	२७	२३१	२१७	
२५४			५९८	१४६		४८४	१७	४३३	२७४	४५९	१९८	१३४	३८	२६०	२१८
३११	६		५९९	२३०	क	५५१	३८	४३५	४१४	४९४	१९९	१३९	२३	२७५	२२३
३०१	१९	१९	६००	२३७	९०	५५९	७६	४७०		५६५	२०४	१४२	४०	२८८	२२३
४९३	५५	४१	६०१	२९८	९१		११८	५४१	उद्र	५५०	२१२	१४५	४४	२९५	२२४
५७३	८८	५७	६०२	३१७	२६४	परि०	१४९	६३०	७२	५७१	२२५	१५०	४९	२९९	२२५
	९३	१२४	६७२	३३१	४७७	१९	१५०	६३४		५७२	२६७	१५२	५२	३१७	२५८
वापः	१०४	१५७		३५५			१५१		कम	५७३	२६९	१५९	७०	३२५	२६०
हजरे		१९४		३६१	उद्र		१५२		६०	५७४	२७०	१८४	७४	३२६	२६६
		२३०		४०९	५२	अकर्मयोग	१५३	३१	१२४	६३३	२७१	१८५	७५	३४४	२६७
५०		२४५		४३५			१५४	२२	१४८	६३७	३७२	१८७	७६	३४६	२६९
१२९	७	३०८	२४	४५१	७		१५५	२३	१७२	६७७	२७४	१८८	७७	३५९	२७२
२३०	२३०	३११	२५	४५७	३०८	खरा:	२०५	२५	१७६	६९२	२७५	१९०	८०	३९४	२७६
२५६	२४९	३२७	९३	५०७	३११		२६१	३८	२४०		२७८	१९३	८१	३९६	२८०
३७३		३४६	९८	५२९	३२६	४५	२६३	६२	२५१		२८०	१९७	८२	३९७	२८३
३८३	मो	३६०	१५७	५३१	३४३	५५	२७०	१४६	२८१	६५	२८२	२०५	८३	३९८	२८४
३८६	मूवागो	३६४	१७६	५४८	४५८	१५०	२७८	१६३	२८२	२९५	२३५	८४	४०९	२९५	
४२७		४५८	२१५	५५१	१८२	२८४	२३०	४१९		३१२	२४७	८५	४११	२९७	
५४९	मूवागो	४५९	२३७	५५९	१८३	३११	२३१		४	३२७	२४९	११७	४१३	३०४	
५५६			२४४	५६३	३८	१८७	३६०	२९८		३४४	२६४	१४१	४१३	३३०	
५८५	खरा:	७	२६१	६२७	११८	१९३	४१४	३५८	६	३६१	२७३	१४६	४१४	३९४	
	५४	१७	२६६	६५९	२६३	२६०	४४७	४३७	४३	४०९	३८३	१५८	४१७	४०१	
कम	५५	३८	३३०	२६५	२६१	४७३	४३५	१८८	४१	४१५	३०२	१६४	४१९	४०९	
९	१५०	७६	३३५	अ.व्या.	अ.व्या.	५०८	६६२	५००	५३१	२०८	४९	४२२	३१३	१७०	४५६
३८	१८३	८०	३३६	५२	२९८	३०३	५४९	६१०	३१५	५४	४३४	३१३	१७९	४५८	४१७
६२	१७७	१७१	३३९	५४	३७४		५९४	६९३	५६९	८९	४३७	३१४	१९०	४६२	४३३
२२९	१११	१८८	३३९	७५	३८६	क	५९९	७७५	९२	४५५	३३४	१९१		४४४	
२३०	३०३	२०४	३४३	९३	४१२	९०	६०१	अ.व्या.	७१६	११७	४४७	३४५	२८९	५	४५५
२३३	४४४	२०५	३४४	९५	४४७	९१	६३७	५३		१२०		३४८	२९५	९	४६९
२४५		२०६	४०७	१००	५९४	११३	६५७	५४		१२३		३५८	३२३	१३	४७०
२८९	क	२४८	४२०	१०१	६०१	२६४	६७२	९५		१२८	९	३६३	३२३	३९	४७१
२९०	२६४	३६१	४१५		६२९	२७३				१२५	११	४०७		५२	४७३
२९६	२७३	२६३	४३१	परि०		३८४			९	१५५	१२	४२२	५	५६	४९१
३०४	३१३	३७०	४३५	२९	अ.व्या.	४७९		२९	८९	१५६	१७	४२७	५	६१	४९३
३७३	३८४	२७८	४६१	६९	अ.व्या.	उद्र		६९	३३५	१५७	३०	४३०	९	७२	४९३
३७४	४३०	२८०	४०१			८			२७७	१५८	३८	४४९	१२	७४	४९४
३७५	४३१	२९४	४९९	मूवागो		१५	१५	मो	२९२	१५९	३९	४७७	४४	७८	४९५
४२०	४७७	३११	५४१		२३	५२	२४	मो	३५५	१६५	५७	४८१	४८	१२३	४९६
४२२	४९६	३१३	५५३		२४	७३	४४	मो	३८७	१७१	८३	४८६	५५	१३२	४९७
४९०	५०६	३६०	५५८		२४४	११७	८९	मो	४०४	१७४	८९	४९८	५९	१७४	४९९
५००	५२३	५९९	कम	३२२	१५४	९३	खरा:	४१३	१७५	९०	५०३	६३	१७५	५००	

५०१	६४०	१४०	५८५	४२२	६८७	३३०	७	९०	४३१	३८९	४१२	३५०	३१४	६३५	२३०
५०३	६४१	१५८	५९२	४२६	६९०	६०५	२४	९१	४३९	३९२	४१५	३५८	३१५	६३६	२३३
५०४	६४४	१८६	६०२	४२९	६९१		५६	१००	४४०	३९३	४२५	३५९	३१७	६३७	२३४
५०५	६४६	१८७	६०४	४३०	६९२		१२०	१०६	४५१		४४७	३६०	३३०	६४०	२३६
५०६	६४७	२२०	६०५	४३१	६९६		१३५	१०७	४५७	॥	४५४	३६१	३३३	६४१	२३८
५०७	६४८	२२१	६०८	४३२	६९७		१४४	१०९	४७९	११	४५८	३६२	३६०	६४४	२४०
५०८	६४९	२२४	६०९	४३३	७०४		१५०	११०	४९६	१५	४५९	३६३	३६२	६४७	२४१
५०९	६५०	२२९	६११	४४९	७११		१५२	११७	४९८	६२		३६४	३६७	६४८	२४४
५११	६८१	२३३	६३४	४५०	७१३		१५४	१२२	५०३	७३		३६५	३७५	६४९	२४६
५१३	६८५	२३५		४५३		१५६	१५७	१२३	५०५	९७	३	३६६	३७८	६५०	२४७
५१३	६९०	२३७	कृष्ण	४५४	क.व्या.	१५८	१२४	१२४	५०६	१२४	६	३६७	३८४	६५१	२४८
५१६	७०३	२३९	४	४५५	४७	१५९	१२५	१३०	५३०	१२५	७	३६८	३८६	६५२	२४७
५१९	२५७	९	५०१	४९		१६२	१३१	५३३	१२८	१४		३६९	३९४	६५७	२८०
५१९	२५८	९	५१०	५७		१६३	१४६		१५७	१६		३७०	४१३	७०५	२८८
५१९	२६४	५७	५११	८१		१८७	१४९	पुत्र	१८३	१७		३७१	४१४	७१०	२९३
५५७	२७०	८३	५१३	८३		१९३	१५१	४	१९३	२८		३७३	४१९		३०३
५५८	१६	२९१	१०३	५१९	८४	१९४	१५२	१५	१९५	२९		३७३	४३९		३११
५६०	२३	३०७	१४७	५२३	९३	२०२	१५३	३८	२३९	३३		३७४	४५७		३१३
५६१	२५	३१८	१४८	५२४	परि०	२११	१५५	३३	२३०	३४		३७५	४७०		३१३
५६६	४१	३२७	१८४	५२६	८०	२१३	१५८	३५	२३३	३५		३७६	४८६	८	३१४
५६६	४३	३३०	१८५	५२३	२७	१८७	२१४	३७	२३६	३८		३७७	४८७	९	३१५
५७०	४७	३३४	१९८	५६३	३८	२१५	२६१	३७	२३९	४५		३७८	४९४	११	३१६
५७१	४८	३३८	२११	५६४	४६	२५८	२६३	३७	२४१	४६		३७९	५००	१६	३१७
५७६	४९	३४१	२२९	५६७	४७	४१०	२६८	५०	२४१	४९		३८०	५०३	२३	३१८
५८३	५०	३४२	२३५	५६९	४८	४१२	२८०	५१	२४२	५१		३८१	५०५	२४	३१९
५८४	५२	३४४	२३६	५६९	४९	४५५	२८८	५३	२४७	५३		३८३	५०६	२५	३२०
५८५	५०	३४८	२३८	६०३	५८	४९५	२९५	५३	२५८	५४		३८३	५०७	३०	३२३
५८७	५०	३५३	२३८	६०९	७३	४९७	२९६	५४	२६४	५६		३८४	५१६	४४	३२४
५९१	७१	३६४	२९०	६०९	८३	५०५	३०३	७३	२६८	६९		३८५	५१७	५५	३२५
५९४	८१	३६८	२९१	६१०	८७	५१३	३०६	७४	२७०	८०		३८६	५१९	५६	३२६
५९९	८३	३७१	२९३	६११	८९	५९४	३०८	७५	२८१	९३		३८७	५२६	६०	३२७
६०१	८६	४२१	२९९	६१५	९६	६१९	३१९	७७	२८५	११८		३८८	५२७	६८	३२८
६०२	८७	४२४	३००	६१७		६४८	३२३	७८	२९४	१२१		३८९	५२८	८१	३२९
६०५	८८	४२५	३१६	६३३		६५१	३२३	९९	३०८	१२३		३९०	५२९	८९	३४०
६०६	८९	४२७	३२०	६३६		६५४	३२६	१००	३११	१२३		३९१	५३०	९३	३४२
६०८	१०३	४२९	३२५	६३७	९	६६४	३३३	१०१	३१३	१२३		३९३	५३५	९८	३४३
६०९	१०५	४३२	३२६	६४१	४८	६६५	३३३	११२	३२७	१२४		३९३	५३७	१०६	३४४
६१०	१०६	४३३	३२७	६४५	४९	६६७	३३४	११३	३२७	१२४		३९४	५३९	११३	३४५
६११	१०९	४३६	३२८	६४५	५०	६६९	३३५	११७	३२७	१२४		३९५	५४१	१२३	३४६
६१३	१११	४५३	३३८	६६१	५१	६७३	३४६	११९	३२६	१२८		३९६	५०१	१३८	३४७
६१४	११२	४६४	३४४	६६४	५२	६७४	३४७	१२०	३२७	१२९		३९७	५०३	१४१	३४८
६१५	११३	४७६	३४५	६६७	कृष्ण	६७५	३४९	१२२	३२८	१३०		३९८	५०५	१४३	३४९
६१७	११४	४८७	३४६	६६८	८१	६७७	३५०	१२३	३२९	१३१		३९९	५०६	१४५	३५०
६१८	११५	४८९	३४७	६७१	८२	६७८	३५१	१२४	३३०	१३२		४००	५०७	१४६	३५१
६१९	११६	४९१	३४८	६७४	८३	६७९	३५२	१२५	३३१	१३३		४०१	५०८	१४७	३५२
६२०	११७	५००	३४९	६७५	१०३	६८०	३५३	१२६	३३२	१३४		४०२	५०९	१४८	३५३
६२१	११८	५२६	३५०	६७६	१०४	६८१	३५४	१२७	३३३	१३५		४०३	५१०	१४९	३५४
६२२	११९	५५५	४०९	६७७	१०५	६८२	३५५	१२८	३३४	१३६		४०४	५११	१५०	३५५
६२३	१२३	५५३	४१३	६८०	प्रमोहे	६८३	३५६	१२९	३३५	१३७		४०५	५१२	१५१	३५६
६२८	१२८	५८०	४१९	६८४	१०६	६८४	३५७	१३०	३३६	१३८		४०६	५१३	१५२	३५७
६२९	१२९	५८१	४२०	६८५	१०७	६८५	३५८	१३१	३३७	१३९		४०७	५१४	१५३	३५८
६३०	१३०	५८२	४२१	६८६	१०८	६८६	३५९	१३२	३३८	१४०		४०८	५१५	१५४	३५९
६३१	१३१	५८३	४२२	६८७	१०९	६८७	३६०	१३३	३३९	१४१		४०९	५१६	१५५	३६०
६३२	१३२	५८४	४२३	६८८	११०	६८८	३६१	१३४	३४०	१४२		४१०	५१७	१५६	३६१
६३३	१३३	५८५	४२४	६८९	१११	६८९	३६२	१३५	३४१	१४३		४११	५१८	१५७	३६२
६३४	१३४	५८६	४२५	६९०	११२	६९०	३६३	१३६	३४२	१४४		४१२	५१९	१५८	३६३
६३५	१३५	५८७	४२६	६९१	११३	६९१	३६४	१३७	३४३	१४५		४१३	५२०	१५९	३६४
६३६	१३६	५८८	४२७	६९२	११४	६९२	३६५	१३८	३४४	१४६		४१४	५२१	१६०	३६५
६३७	१३७	५८९	४२८	६९३	११५	६९३	३६६	१३९	३४५	१४७		४१५	५२२	१६१	३६६
६३८	१३८	५९०	४२९	६९४	११६	६९४	३६७	१४०	३४६	१४८		४१६	५२३	१६२	३६७
६३९	१३९	५९१	४३०	६९५	११७	६९५	३६८	१४१	३४७	१४९		४१७	५२४	१६३	३६८
६४०	१४०	५९२	४३१	६९६	११८	६९६	३६९	१४२	३४८	१५०		४१८	५२५	१६४	३६९
६४१	१४१	५९३	४३२	६९७	११९	६९७	३७०	१४३	३४९	१५१		४१९	५२६	१६५	३७०
६४२	१४२	५९४	४३३	६९८	१२०	६९८	३७१	१४४	३५०	१५२		४२०	५२७	१६६	३७१
६४३	१४३	५९५	४३४	६९९	१२१	६९९	३७२	१४५	३५१	१५३		४२१	५२८	१६७	३७२
६४४	१४४	५९६	४३५	७००	१२२	७००	३७३	१४६	३५२	१५४		४२२	५२९	१६८	३७३
६४५	१४५	५९७	४३६	७०१	१२३	७०१	३७४	१४७	३५३	१५५		४२३	५३०	१६९	३७४
६४६	१४६	५९८	४३७	७०२	१२४	७०२	३७५	१४८	३५४	१५६		४२४	५३१	१७०	३७५
६४७	१४७	५९९	४३८	७०३	१२५	७०३	३७६	१४९	३५५	१५७		४२५	५३२	१७१	३७६
६४८	१४८	६००	४३९	७०४	१२६	७०४	३७७	१५०	३५६	१५८		४२६	५३३	१७२	३७७
६४९	१४९	६०१	४४०	७०५	१२७	७०५	३७८	१५१	३५७	१५९		४२७	५३४	१७३	३७८
६५०	१५०	६०२	४४१	७०६	१२८	७०६	३७९	१५२	३५८	१६०		४२८	५३५	१७४	३७९
६५१	१५१														



४२७	९६	४३१	१९	ऊ	यक्ष्म	परि०	३८५	२५	२४५	३७५	२६२	६३२	३६६	२६३
४३१	१०२	४३२	२१	४९६	यक्ष्म	उष्णवाते	३८६	३२	२५३	३९७	२६५	६३४	३६७	२६५
४३२	१०९	४३३	२३	ऊ	ऊ	३	३८७	३६	२५६	४०५	२८०	ऊष्म	३७१	२७१
४३३	११६	४३४	२४	ऊ	ऊ	१९	३८८	५२	२६४	४१२	२८१	ऊष्म	३७६	२७६
४३४	११६	४३५	२७	३८४	ऊ	२०	३८९	६३	२६६	४२३	२८३	७	३८२	ऊ
४३५	१८४	४३६	२८	३८६	ऊ	५१	३९०	७०	२७३	४२९	२९३	८	४०३	ऊ
४३६	१८७	४३७	२९	ऊ	ऊ	५४	३९१	७२	२७८	४३७	२९४	१३	४०५	ऊ
४३७	२०७	४३८	५५	ऊ	ऊ	५४	३९२	८८	२८४	५३३	२९५	१४	४०६	१९९
४३८	२०९	४३९	४६	ऊ	ऊ	५४	३९३	१०३	२८८	५४९	३००	१६	४०७	ऊ
४३९	२१८	४४०	५१	ऊ	ऊ	५४	३९४	१०८	२०५	५५६	३०२	१७	४०८	ऊ
४४०	२२९	४४१	५३	ऊ	ऊ	५४	३९५	११८	३११	६३७	३०५	१८	४०९	ऊ
४४१	२३०	४४२	५४	ऊ	ऊ	५४	३९६	१२२	३२५	६४८	३१२	१९	४१०	ऊ
४४२	२३३	४४३	५५	ऊ	ऊ	५४	३९७	१२३	३३५	६५९	३१३	२१	४११	ऊ
४४३	२३५	४४४	५६	ऊ	ऊ	५४	४००	१२४	३४५	६७०	३१४	२२	४१२	ऊ
४४४	२३६	४४५	५७	ऊ	ऊ	५४	४०१	१२५	३५५	६८१	३१५	२३	४१३	ऊ
४४५	२३७	४४६	५८	ऊ	ऊ	५४	४०२	१२६	३६५	६९२	३१६	२४	४१४	ऊ
४४६	२३८	४४७	५९	ऊ	ऊ	५४	४०३	१२७	३७५	७०३	३१७	२५	४१५	ऊ
४४७	२३९	४४८	६०	ऊ	ऊ	५४	४०४	१२८	३८५	७१४	३१८	२६	४१६	ऊ
४४८	२४०	४४९	६१	ऊ	ऊ	५४	४०५	१२९	३९५	७२५	३१९	२७	४१७	ऊ
४४९	२४१	४५०	६२	ऊ	ऊ	५४	४०६	१३०	४०५	७३६	३२०	२८	४१८	ऊ
४५०	२४२	४५१	६३	ऊ	ऊ	५४	४०७	१३१	४१५	७४७	३२१	२९	४१९	ऊ
४५१	२४३	४५२	६४	ऊ	ऊ	५४	४०८	१३२	४२५	७५८	३२२	३०	४२०	ऊ
४५२	२४४	४५३	६५	ऊ	ऊ	५४	४०९	१३३	४३५	७६९	३२३	३१	४२१	ऊ
४५३	२४५	४५४	६६	ऊ	ऊ	५४	४१०	१३४	४४५	७८०	३२४	३२	४२२	ऊ
४५४	२४६	४५५	६७	ऊ	ऊ	५४	४११	१३५	४५५	७९१	३२५	३३	४२३	ऊ
४५५	२४७	४५६	६८	ऊ	ऊ	५४	४१२	१३६	४६५	८०२	३२६	३४	४२४	ऊ
४५६	२४८	४५७	६९	ऊ	ऊ	५४	४१३	१३७	४७५	८१३	३२७	३५	४२५	ऊ
४५७	२४९	४५८	७०	ऊ	ऊ	५४	४१४	१३८	४८५	८२४	३२८	३६	४२६	ऊ
४५८	२५०	४५९	७१	ऊ	ऊ	५४	४१५	१३९	४९५	८३५	३२९	३७	४२७	ऊ
४५९	२५१	४६०	७२	ऊ	ऊ	५४	४१६	१४०	५०५	८४६	३३०	३८	४२८	ऊ
४६०	२५२	४६१	७३	ऊ	ऊ	५४	४१७	१४१	५१५	८५७	३३१	३९	४२९	ऊ
४६१	२५३	४६२	७४	ऊ	ऊ	५४	४१८	१४२	५२५	८६८	३३२	४०	४३०	ऊ
४६२	२५४	४६३	७५	ऊ	ऊ	५४	४१९	१४३	५३५	८७९	३३३	४१	४३१	ऊ
४६३	२५५	४६४	७६	ऊ	ऊ	५४	४२०	१४४	५४५	८८०	३३४	४२	४३२	ऊ
४६४	२५६	४६५	७७	ऊ	ऊ	५४	४२१	१४५	५५५	८९१	३३५	४३	४३३	ऊ
४६५	२५७	४६६	७८	ऊ	ऊ	५४	४२२	१४६	५६५	९०२	३३६	४४	४३४	ऊ
४६६	२५८	४६७	७९	ऊ	ऊ	५४	४२३	१४७	५७५	९१३	३३७	४५	४३५	ऊ
४६७	२५९	४६८	८०	ऊ	ऊ	५४	४२४	१४८	५८५	९२४	३३८	४६	४३६	ऊ
४६८	२६०	४६९	८१	ऊ	ऊ	५४	४२५	१४९	५९५	९३५	३३९	४७	४३७	ऊ
४६९	२६१	४७०	८२	ऊ	ऊ	५४	४२६	१५०	६०५	९४६	३४०	४८	४३८	ऊ
४७०	२६२	४७१	८३	ऊ	ऊ	५४	४२७	१५१	६१५	९५७	३४१	४९	४३९	ऊ
४७१	२६३	४७२	८४	ऊ	ऊ	५४	४२८	१५२	६२५	९६८	३४२	५०	४४०	ऊ
४७२	२६४	४७३	८५	ऊ	ऊ	५४	४२९	१५३	६३५	९७९	३४३	५१	४४१	ऊ
४७३	२६५	४७४	८६	ऊ	ऊ	५४	४३०	१५४	६४५	९८०	३४४	५२	४४२	ऊ
४७४	२६६	४७५	८७	ऊ	ऊ	५४	४३१	१५५	६५५	९९१	३४५	५३	४४३	ऊ
४७५	२६७	४७६	८८	ऊ	ऊ	५४	४३२	१५६	६६५	१००२	३४६	५४	४४४	ऊ
४७६	२६८	४७७	८९	ऊ	ऊ	५४	४३३	१५७	६७५	१०१३	३४७	५५	४४५	ऊ
४७७	२६९	४७८	९०	ऊ	ऊ	५४	४३४	१५८	६८५	१०२४	३४८	५६	४४६	ऊ
४७८	२७०	४७९	९१	ऊ	ऊ	५४	४३५	१५९	६९५	१०३५	३४९	५७	४४७	ऊ
४७९	२७१	४८०	९२	ऊ	ऊ	५४	४३६	१६०	७०५	१०४६	३५०	५८	४४८	ऊ
४८०	२७२	४८१	९३	ऊ	ऊ	५४	४३७	१६१	७१५	१०५७	३५१	५९	४४९	ऊ
४८१	२७३	४८२	९४	ऊ	ऊ	५४	४३८	१६२	७२५	१०६८	३५२	६०	४५०	ऊ
४८२	२७४	४८३	९५	ऊ	ऊ	५४	४३९	१६३	७३५	१०७९	३५३	६१	४५१	ऊ
४८३	२७५	४८४	९६	ऊ	ऊ	५४	४४०	१६४	७४५	१०८०	३५४	६२	४५२	ऊ
४८४	२७६	४८५	९७	ऊ	ऊ	५४	४४१	१६५	७५५	१०९१	३५५	६३	४५३	ऊ
४८५	२७७	४८६	९८	ऊ	ऊ	५४	४४२	१६६	७६५	११०२	३५६	६४	४५४	ऊ
४८६	२७८	४८७	९९	ऊ	ऊ	५४	४४३	१६७	७७५	१११३	३५७	६५	४५५	ऊ
४८७	२७९	४८८	१००	ऊ	ऊ	५४	४४४	१६८	७८५	११२४	३५८	६६	४५६	ऊ
४८८	२८०	४८९	१०१	ऊ	ऊ	५४	४४५	१६९	७९५	११३५	३५९	६७	४५७	ऊ
४८९	२८१	४९०	१०२	ऊ	ऊ	५४	४४६	१७०	८०५	११४६	३६०	६८	४५८	ऊ
४९०	२८२	४९१	१०३	ऊ	ऊ	५४	४४७	१७१	८१५	११५७	३६१	६९	४५९	ऊ
४९१	२८३	४९२	१०४	ऊ	ऊ	५४	४४८	१७२	८२५	११६८	३६२	७०	४६०	ऊ
४९२	२८४	४९३	१०५	ऊ	ऊ	५४	४४९	१७३	८३५	११७९	३६३	७१	४६१	ऊ
४९३	२८५	४९४	१०६	ऊ	ऊ	५४	४५०	१७४	८४५	११८०	३६४	७२	४६२	ऊ
४९४	२८६	४९५	१०७	ऊ	ऊ	५४	४५१	१७५	८५५	११९१	३६५	७३	४६३	ऊ
४९५	२८७	४९६	१०८	ऊ	ऊ	५४	४५२	१७६	८६५	१२०२	३६६	७४	४६४	ऊ
४९६	२८८	४९७	१०९	ऊ	ऊ	५४	४५३	१७७	८७५	१२१३	३६७	७५	४६५	ऊ
४९७	२८९	४९८	११०	ऊ	ऊ	५४	४५४	१७८	८८५	१२२४	३६८	७६	४६६	ऊ
४९८	२९०	४९९	१११	ऊ	ऊ	५४	४५५	१७९	८९५	१२३५	३६९	७७	४६७	ऊ
४९९	२९१	५००	११२	ऊ	ऊ	५४	४५६	१८०	९०५	१२४६	३७०	७८	४६८	ऊ
५००	२९२	५०१	११३	ऊ	ऊ	५४	४५७	१८१	९१५	१२५७	३७१	७९	४६९	ऊ
५०१	२९३	५०२	११४	ऊ	ऊ	५४	४५८	१८२	९२५	१२६८	३७२	८०	४७०	ऊ
५०२	२९४	५०३	११५	ऊ	ऊ	५४	४५९	१८३	९३५	१२७९	३७३	८१	४७१	ऊ
५०३	२९५	५०४	११६	ऊ	ऊ	५४	४६०	१८४	९४५	१२८०	३७४	८२	४७२	ऊ
५०४	२९६	५०५	११७	ऊ	ऊ	५४	४६१	१८५	९५५	१२९१	३७५	८३	४७३	ऊ
५०५	२९७	५०६	११८	ऊ	ऊ	५४	४६२	१८६	९६५	१३०२	३७६	८४	४७४	ऊ
५०६	२९८	५०७	११९	ऊ	ऊ	५४	४६३	१८७	९७५	१३१३	३७७	८५	४७५	ऊ
५०७	२९९	५०८	१२०	ऊ	ऊ	५४	४६४	१८८	९८५	१३२४	३७८	८६	४७६	ऊ
५०८	३००	५०९	१२१	ऊ	ऊ	५४	४६५	१८९	९९५	१३३५	३७९	८७	४७७	ऊ
५०९	३०१	५१०	१२२	ऊ	ऊ	५४	४६६	१९०	१००५	१३४६	३८०	८८	४७८	ऊ
५१०	३०२	५११	१२३	ऊ	ऊ	५४	४६७	१९१	१०१५	१३५७	३८१	८९		

४४०	२२५	१०६	२६५	१६५	२	अन्तःस्थाः	२९९	३६५	११८	३२०	३०१	२६५	१८४	६	३४५
क	३१३	१८८	२८१	१६७	१५	अ	३००	१२२	३२१	३०८	२७३	१८७	९	४४५	
	३२२	१९७	२८३	१७४	५७		३०२	१५०	३२४	४२३	२७४	१८८	१९		५
२३	३२३	१९८	२९५	१८७	१००		३११	३०७	१५४	३२५	४५२	२७७	१८९	२१	४०५
१०१	३११	३०२	१८८	३४५	७१	अन्तःस्थाः	३३०	३९७	१५७	३२९	४७५	२८०	१९०	२३	४०५
१०९	३२४	३३१	१९७	३६५	८५	अ	४४६	१७२	३३०	४७६	२८३	१९१	३५	५५७	
११७	५	३३४	३३३	१९९	३६५	१६०	क	१८२	३३१	४७८	२९२	१९२	३८	७१४	
१२९	१२	३३६	३५५	२०९	३८६	१६४	अ	१९७	३३९	४७९	२९३	१९३	४०		
१३५	१६	३३७	३५६	२४९	३८९	२२९	४	१९९	३४३	४८६	३०२	१९४	४६		
१४५	२३	३३८	३९६	२८२	३९०	२४५	५७९	१४	२१०	३७५	४९०	३०३	१९६	५५	
१५१	४५	३३९	४०४	२८५	३९६	५००	कम्य	३९	२१६	३७७	५२५	३०६	१९७	५८	
२८९	४६	३७१	४०७	३०८			५०१	११२	२२५	३७९	५४४	३१२	२०९	६०	६७
२९०	४९	३७५	४०८	३१०			५९३	११३	२९३	३९९	५४८	३१७	२१०	७७	९७
२९८	५४	४०३	४१३	३१४	३५३	६२२	अभ्यस्यी	११७	३१३	४०९	५४९	३१८	२४८	१०८	२३५
३१९	५५	४२३	४३४	३३७	४२४		कम्य	११९	३२३	४२१	६३८	३५५	२५७	परि०	२३६
३२४	५६	४४७	४६६	३५१			१२१	३२४	४३९	६३९	३७९	२८२		३३१	
३२५	६८	४७६	४८९	३५४	उद्ग	३८	१२९	४४०	६४४	३८६	३९४	२९४	२४	४०४	
३५३	११८	४८६	४८७	३६०	११८	८१	१२९	१	४५८	६४६	३९९	३९६	३३	४०७	
३५८	१४०	५४९	४९९	३७०	११२	१९५	खराः	१५१	२	४५९	६७५	४०४	३०४	५५	५३८
३६४	१६४	६३७	५००	३७९	१३३	२	१५२	५			६८२	४०७	३०८	६८	५८९
४२४	१७४	६३९	५०१	४२७	१५४	४	२१४	१२	५		६८३	४१६	३१८	७७	कम्य
४३०	२१२	६४२	५०६	४५२	१७२	३२७	१६	२२६	३४	४	६८५	४७९	३२६	८०	
४७१	२१९	६४६	५३०	४५९	१७३	४०५	२६	३६९	४५	१७	६८६	४८०	३७६	८३	२०७
४७७	२३०	६५४	५३८	४६६		४०६	२७	३९०	४६	३५	७०६	४९२	३८२		अ.व्या.
४७९	२३६	६७२	५५३	५१८	५	अ.व्या.	५३	३९८	६०	५५	अन्तःस्थाः	५०१	४१६		१५
४८८	२४६	६८३	५५८	५३८	२३	६	५९	३९९	६८	७२	अन्तःस्थाः	५०६	४१९		अभ्यस्यी
४८९	२७५	६९५	५७९	५४८	२६	२०	६९	३५८	९८	७१	५११	४२७			
५०६	३०५	७०६	६२१	५४९	१७२	२१	१००	३५९	१२४	९९	१	५१४	४३८		अ
५२९	३११	७१४	६२६	६१०	१९३	२३	१२०	३७१	१३८	१००	३५	५१५	४५२		अभ्यस्यी
५४६	३२९		६३०	६४५	२४१	६२	१२४	३७४	१३२	१०२	४६	५१७	४५७	५५६	खराः
५४७	३४५		६३४	६५५	२४२	७२	१२७	४८१	१३९	१०३	६२	५३८	४८५	२६८	
५४८	३९९		६९३	२६२	८०	१२८	४८९	१४८	१०५	६७	५५७	५११		४४४	
१५	४२१	अन्तःस्थाः	१४	७०६	३२९	१०८	१३७	५०१	१६५	१०६	७०	५५८	५१८		अभ्यस्यी
२४	४२७	१	१५			परि०	१५०	५०२	१०८	१०७	५०९	५२२		क	
३५	४३४	२	१६		अ.व्या.	५	१५५	५०६	१७३	११०	१२९	५८५	५२९	खराः	
५३	४३९	३	१७		अ	८३	१६४	५१४	१७४	१२६	१३४	६१४	५१३		
६३	४५८	४	१८	१०१	४८		१८९	५२६	१९७	१३६	१३५	६३२	५९५	६७	२७६
७०	४६०	७१	२३	परि०	५५		१९३	५४६	२०१	१८८	१५६	६३४	६१०	४४२	अ
७२		८९	२३		३५५		२०८		२१२	१९६	१६१	६१४	५१४	४४४	अ
८८		१२९	३४	५२	३१५		२१३		२१७	१९७	१६४	कम्य	६१५	४४५	५२
१०१	४१	१३४	२५	७७	४४३		२१४	१५	२३५	१९८	१७०	५	६१९		अ
१०२	४८	१५७	२६	७८	४४७		२२०	२५	२४०	२०५	२१६	१३	६८८	अ	अ
१०३	५३	१७६	२७	८०	५४४		२६८	३२	२४३	२०६	२१७	१९	६९५	४५१	४५८
११६	७५	२०६	३८	८५	५४८		२७२	७२	२५१	२७६	२१८	२६	६९७	उद्ग	अ
१२३	७९	२१७	४३	८८	५४९	८९	३१३	७४	२६२	२१८	२३०	६२	७०६		
१५१	८८	२४५	५५		६५३		३१४	८८	२६७	२२०	२३३	९०	७१०	५२	११४
१५३	९९	२४६	८१		६५४		३१५	१००	२७४	२३३	२४५	१५५		अ.व्या.	
१९९	१०३	२४७	१५९		६७५		३२३	१०१	२७५	२३४	२४७	१५९		अ	
२१०	११७	२६२	१६२		७०६		३२६	१०२	२८०	२३५	२६२	१६४		अन्तःस्थाः	
२१६	१७३	२६५	१६४	खराः	७११	अ	३५६	१०८	३१९	२३७	२६४	१६६	३	२११	



[illegible]





५२४	४६	९०	३१४	२५८	३९४	४१	१०९	१७८	१८२	९४	४२४	१४०	२०४	५७७
५२५	६२	९१	३१५	२७०	३९६	४२	१४७		१८३	११०	४२६	१९२	२०५	५७८
५२६	६३	९२	३१६	२९५	४०९	४७	१५२		१८७	१११	४२७	१९५	२०६	५९१
६२२	१०२	१०६	३४३	३१५	४५५	४८	२३०		१९१	११४	४२८	२१३	२०९	५९४
६४६	परि०	११०	३४४	३१७	४६६	४९	२९१		१९३	११७	४२९	२१५	२१३	६०२
६५३		१२३	३४५	३२६	४६७	६०	३७५		१९४	१२३	४३०	२२१	२१५	६२५
६७४	१०	१२४	३४८	३४६	४६९	६५	३८४		१९६	१२४	४३२	२२३	२१६	६३८
७१४	१६	१२५	३५८	३५१	४७०	८६	३८५	२०६	१९७	१२६	४३३	२२३	२१७	६३९
	४३	१३२	३६७	३५९	४७१	८७	३८८	४०९	१९८	१३६	४३४	२२४	२१८	६४३
		१५०	३७५	३९४	४७२	८८	३९७	४९६	१९९	१३९	४३४	२२१	२२५	६६३
११		१५२	३७९	४००	४९१	८९	४२२	४९७	२०४	१४१	४३६	२५१	२२६	६६४
१५०		१५४	४०३	४१२	१०२	४५०	४९८		२०५	१४२	४३७	२५२	२२८	६६५
३३७		१५९	४०१	४१७	४९३	११०	५६१	५०३	२१३	१४३	४५२	२८८	२५३	६६६
३९२		१६०	४३३	४१८	४९४	१११	५६८	५०५	२१४	१४५	४६९	३१४	२५८	६८१
४२६	८८	१६३	४०३	४४९	४९७	११४	६५४	५३३	२२४	१४७	४७३	३१५	२६०	६८४
४२७	८९	१६४	५०५	४५८	४९८	११५	६५६	५३७	२६७	१८३	५०७	३२५	३२९	६९०
५४३	१२१	१६६	५३९	४९९	११६	७१३	६३८	४९६	२७८	२०७		३२८	३६९	६९४
५४५	१२२	१६७		५००	११७		६३९	४९७	२८०	२१७		३२५	३८९	६९६
५६०	१२३	१६८	उद्ग	८	५०१	११८	६४३		२८३	२२४	२	३९७	४००	७१३
५६३	१३५	१६९	२	९	५०३	११९	४८		२८८	२२७	२६	४००	४०२	७१९
५६४	१५६	१७०	१९	१०	५०४	१२०	४९		३०६	२३८	३३	४४९	४१३	
५६६	१५७	१७४	४४	११	५०५	१२१	५७		३०८	२४८	७४	४५६	४१३	
५७९	१५८	१७५	७४	१२	५०६	१२४	८१		३०९	२९८	७५	४५८	४१४	
कम्य	१५९	१७६	७५	१३	५०७	१२५	८३		३१८	३१३	७६	४१६		
	१६५	१७९	७६	१४	५०८	१२६	८४	८	३५२	३५५	८१	४१७	४१	
६९	१७५	१८०	७७	१६	५०९	१२७	८५	८	३५३	३५९	८३	४१८	४७	
११४	१८०	१८१	८०	२९	५११	२२९		परि०	३६०	३६९	८३	४१९	४८	
११५	१८१	१८२	८१	३९	५१३	२३३			३६७	३६६	८४	४०	४५६	४९
१८४	१८७	१८३	८२	४१	५१३	२३९	२७		३६४	३६७	८५	४१	४६९	५०
२३६	१९९	१८४	८३	१२४	५३१	२३१	३८		३६६	३६९	१५४	४३	४७१	५२
२५०	२६९	१८५	८४	१२८	५३३	२३९	४६		३६७	३६९	१६४	५६	४७२	५३
२५२	२७०	१८६	८५	१३२	५६१	२३०	४७		३६८	३६९	१६५	५६	४७३	५५
३६९	२७१	१८७	१३१	१३८	५६६	२३६	४८		३६९	३६९	१६६	५६	४७४	५६
४५०	२७२	१८८	१३४	१३५	५६७	२३८	५६		३७०	३६९	१६७	५६	४७५	५७
४७१	२८०	१९०	१६६	२०१	५७०	२६६	५८	कम्य	३७१	३६९	१६८	५६	४७६	५८
६०१	३०६	१९१	१७९	२०२	५७१	२६८	५९		३७२	३६९	१६९	५६	४७७	५९
६१०	३०८	१९२	१८३	२०३	५८३	२६०	८३		३७३	३६९	१७०	५६	४७८	६०
६१३	४३४	१९३	२८९	२०४	५८४	४२४	८७		३७४	३६९	१७१	५६	४७९	६१
६५७		१९४		२०५	५८५	४२६	८९		३७५	३६९	१७२	५६	४८०	६२
६६८	३२	१९५		२०६	५८६	४२७	९०		३७६	३६९	१७३	५६	४८१	६३
६६९	३४	१९७	९	२१०	६४९	४८३	९१		३७७	३६९	१७४	५६	४८२	६४
३७	१९९	५९	२१२	६५०	५८३				३७८	३६९	१७५	५६	४८३	६५
अ.व्या.	३८	२००	६५	२१५	६५०	५८३			३७९	३६९	१७६	५६	४८४	६६
३२	३९	२०१	६५	२१८	६५०	५८३			३८०	३६९	१७७	५६	४८५	६७
३५	७३	२०२	७२	२२३	६५०	५८३			३८१	३६९	१७८	५६	४८६	६८
३८	७४	२४८	१७०	२२४	६५०	५८३			३८२	३६९	१७९	५६	४८७	६९
४०	८२	३१२	१९५	२२५	६५०	५८३			३८३	३६९	१८०	५६	४८८	७०
४३	८९	३१३	२०८	२५८	६५०	५८३			३८४	३६९	१८१	५६	४८९	७१





[illegible]









७१	१६४	६२१	१५	१६	६३०	१२६	सुद्ध	२५	६६६	३५२	१०६	परि०	१६९
अन्तःस्थाः	वृ	अ.व्या.	वृद्धिकविधि	२२	५२	६३५	१२८	२६	६८१	३५४	१०९	३८	१७०
	३२८	१७	२३	५६		१३६	२	४०	६८४	३५७	१०४	४७	१७४
२६	५	६७	२४	६३		१३९	३३	५८	६९३	३६०	१०८	४८	१७५
२७	१८७	७२	२५	६४	५०	१४१	७४	६४	६९६	३६१	२३८	७६	१७६
			२६	६५	१११	१	१४२	७७	६९९	३६४	२४७		१७९
			२७	६६	११३	४	१४३	१६६	७०	७१९	३६५	३१४	१८०
				७६	२०	१६	१४७	१६७	७१		३६६	३१९	१८१
प्रदरे	अ.व्या.		७७	२१	२१	८८	१४९	१७०	७४		३६७	३२५	१८२
सराः	३३		७८	२२	२२	९०	२०७	१७४	८४		३७०	३३०	१८३
१४६			७९	२३	२३	९०	२१७	८७			३७१	३७४	१८४
सुद्ध	सराः	विपरीतो	८०	२४	२४	१०४	२२७	८७					१८५
४७	२८४	सराः	८१	२५	२५	१०४	२२७	८७					१८५
			८२	२६	२६	१०४	२२७	८७					१८५
			८३	२७	२७	१०४	२२७	८७					१८५
			८४	२८	२८	१०४	२२७	८७					१८५
			८५	२९	२९	१०४	२२७	८७					१८५
			८६	३०	३०	१०४	२२७	८७					१८५
			८७	३१	३१	१०४	२२७	८७					१८५
			८८	३२	३२	१०४	२२७	८७					१८५
			८९	३३	३३	१०४	२२७	८७					१८५
			९०	३४	३४	१०४	२२७	८७					१८५
			९१	३५	३५	१०४	२२७	८७					१८५
			९२	३६	३६	१०४	२२७	८७					१८५
			९३	३७	३७	१०४	२२७	८७					१८५
			९४	३८	३८	१०४	२२७	८७					१८५
			९५	३९	३९	१०४	२२७	८७					१८५
			९६	४०	४०	१०४	२२७	८७					१८५
			९७	४१	४१	१०४	२२७	८७					१८५
			९८	४२	४२	१०४	२२७	८७					१८५
			९९	४३	४३	१०४	२२७	८७					१८५
			१००	४४	४४	१०४	२२७	८७					१८५
			१०१	४५	४५	१०४	२२७	८७					१८५
			१०२	४६	४६	१०४	२२७	८७					१८५
			१०३	४७	४७	१०४	२२७	८७					१८५
			१०४	४८	४८	१०४	२२७	८७					१८५
			१०५	४९	४९	१०४	२२७	८७					१८५
			१०६	५०	५०	१०४	२२७	८७					१८५
			१०७	५१	५१	१०४	२२७	८७					१८५
			१०८	५२	५२	१०४	२२७	८७					१८५
			१०९	५३	५३	१०४	२२७	८७					१८५
			११०	५४	५४	१०४	२२७	८७					१८५
			१११	५५	५५	१०४	२२७	८७					१८५
			११२	५६	५६	१०४	२२७	८७					१८५
			११३	५७	५७	१०४	२२७	८७					१८५
			११४	५८	५८	१०४	२२७	८७					१८५
			११५	५९	५९	१०४	२२७	८७					१८५
			११६	६०	६०	१०४	२२७	८७					१८५
			११७	६१	६१	१०४	२२७	८७					१८५
			११८	६२	६२	१०४	२२७	८७					१८५
			११९	६३	६३	१०४	२२७	८७					१८५
			१२०	६४	६४	१०४	२२७	८७					१८५
			१२१	६५	६५	१०४	२२७	८७					१८५
			१२२	६६	६६	१०४	२२७	८७					१८५
			१२३	६७	६७	१०४	२२७	८७					१८५
			१२४	६८	६८	१०४	२२७	८७					१८५
			१२५	६९	६९	१०४	२२७	८७					१८५
			१२६	७०	७०	१०४	२२७	८७					१८५
			१२७	७१	७१	१०४	२२७	८७					१८५
			१२८	७२	७२	१०४	२२७	८७					१८५
			१२९	७३	७३	१०४	२२७	८७					१८५
			१३०	७४	७४	१०४	२२७	८७					१८५
			१३१	७५	७५	१०४	२२७	८७					१८५
			१३२	७६	७६	१०४	२२७	८७					१८५
			१३३	७७	७७	१०४	२२७	८७					१८५
			१३४	७८	७८	१०४	२२७	८७					१८५
			१३५	७९	७९	१०४	२२७	८७					१८५
			१३६	८०	८०	१०४	२२७	८७					१८५
			१३७	८१	८१	१०४	२२७	८७					१८५
			१३८	८२	८२	१०४	२२७	८७					१८५
			१३९	८३	८३	१०४	२२७	८७					१८५
			१४०	८४	८४	१०४	२२७	८७					१८५
			१४१	८५	८५	१०४	२२७	८७					१८५
			१४२	८६	८६	१०४	२२७	८७					१८५
			१४३	८७	८७	१०४	२२७	८७					१८५
			१४४	८८	८८	१०४	२२७	८७					१८५
			१४५	८९	८९	१०४	२२७	८७					१८५
			१४६	९०	९०	१०४	२२७	८७					१८५
			१४७	९१	९१	१०४	२२७	८७					१८५
			१४८	९२	९२	१०४	२२७	८७					१८५
			१४९	९३	९३	१०४	२२७	८७					१८५
			१५०	९४	९४	१०४	२२७	८७					१८५
			१५१	९५	९५	१०४	२२७	८७					१८५
			१५२	९६	९६	१०४	२२७	८७					१८५
			१५३	९७	९७	१०४	२२७	८७					१८५
			१५४	९८	९८	१०४	२२७	८७					१८५
			१५५	९९	९९	१०४	२२७	८७					१८५
			१५६	१००	१००	१०४	२२७	८७					१८५
			१५७	१०१	१०१	१०४	२२७	८७					१८५
			१५८	१०२	१०२	१०४	२२७	८७					१८५
			१५९	१०३	१०३	१०४	२२७	८७					१८५
			१६०	१०४	१०४	१०४	२२७	८७					१८५
			१६१	१०५	१०५	१०४	२२७	८७					१८५
			१६२	१०६	१०६	१०४	२२७	८७					१८५
			१६३	१०७	१०७	१०४	२२७	८७					१८५
			१६४	१०८	१०८	१०४	२२७	८७					१८५
			१६५	१०९	१०९	१०४	२२७	८७					१८५
			१६६	११०	११०	१०४	२२७	८७					१८५
			१६७	१११	१११	१०४	२२७	८७					१८५
			१६८	११२	११२	१०४	२२७	८७					१८५
			१६९	११३	११३	१०४	२२७	८७					१८५
			१७०	११४	११४	१०४	२२७	८७					१८५
			१७१	११५	११५	१०४	२२७	८७					१८५
			१७२	११६	११६	१०४	२२७	८७					१८५
			१७३	११७	११७	१०४	२२७	८७					१८५
			१७४	११८	११८	१०४	२२७	८७					१८५
			१७५	११९	११९	१०४	२२७	८७					१८५
			१७६	१२०	१२०	१०४	२२७	८७					१८५
			१७७	१२१	१२१	१०४	२२७	८७					१८५
			१७८	१२२	१२२	१०४	२२७	८७					१८५
			१७९	१२३	१२३	१०४	२२७	८७					१८५
			१८०	१२४	१२४	१०४	२२७	८७					१८५
			१८१	१२५	१२५	१०४	२२७	८७					१८५

४०३	२६	२१७	४९५	५३१	८९	३११	५९३	३८५	अव्या	कि	५६७	कि	३३८	६२	स्थ
४१७	३९	२१८	४९७	५६१	१०२	३४६		३८८		कि	५६८	कि	३३९	१०७	स्थ
४२०	१३३	२२२	४९८	५७०	१४०	३४८	कमला	३९७	४८				३४०	१५२	स्थ
४४३	१७३	२२३	४९९	५७६	१९४	३६९		४१४	४९				३४१	१५३	
	१७४	२२४	५००	६२९	१९५	४२३		४२३	८४	व	कि	खरा	३४२	६	१६३
पु	१९५	२५८	५०१	६४९	१९६	४२४	४	४२३		२०८	कि	३२९	३४३	४	५३५
	२०१	४०९	५०३	६५०	१९७	४२५	५७	५२५	परि०			३३०	३४४	४३१	
८	२०२	४५५	५०४		२२४	४२७	१४७	५६१		पु		३३१	३४५	४३७	कमला
९	२०३	४६६	५०५	कि	२२५	४४६	१८४	६२०	४६	१२९	उद्र	३३२	३४६	४३८	
१०	२०४	४६९	५०६	कि	२२६	४४७	१८५	६७१	४७	३९६		३३३	४३९	४०४	
११	२०५	४७२	५०७		२२७	४७८	२३५	६७२	४८	४६७	१७५	३३४	४	४०५	
१२	२०६	४९१	५०८	८	२२९	४८३	२९१	६७५	५९		१७६	३३५	३९१	पु	४०६
१३	२०९	४९३	५०९	४१	२३२	४८५	३७५	६७६	७३	कि	१७७	३३६	३९५	५३४	४०७
२५	२१५	४९४	५१३	६५	२३९	५८३	३७९	७१३	८७	कि	१७८	३३७	उद्र	७११	४०८

## अत्यन्तोपयुक्तपदार्थोंका शोधन तथा भस्मप्रकार ।

भस्मोंका प्रकरण बहुत लम्बा चौकाई इसलिये समस्त इसजगहदेना अशक्य है । ईश्वरी दया होगी तो उधे भारतीयरसायनतत्त्व नामक ग्रन्थमें दियाजायगा जिसमेंकि यथाशक्य भारतवर्षमें मिलने वाले धातुधानु, रत्नोपरस और रत्नोपरलौकी गवेषणा करके उनका शोधन, भाजन और अनुपान प्रसूति दिये जायगे । धाप १ यथाशक्य धातुधातुका विद्विषय भी दिया जायगा । सम्प्रति इसप्रत्यक्ष योगोंके तैयारकरनेमें जिनके बिना कार्य नहीं चलसकता उनका १-१ प्रकार दियाजाता है । उनमेंसे भी जिन जिनके प्रकार हस्तग्रन्थमें आनुकेहैं उनकी सूचना दीगई है और रहेहुनोंका शोधन तथा भस्मविधान दिया जाता है ।

रत्नोंकीभस्म—द्वितीयभागके ५८२ पृष्ठमें रत्नगर्भपोष्टनीके अन्तर्गत विधान है ।

सुवर्णभस्म—हिरण्यगर्भपोष्टी ( प्रथमा ) में देखो ।

ताम्रभस्म—ताम्रयोग ( २३ ) में देखो ।

नागभस्म—नागभस्मयोग ( प्रथम ) में देखो ।

कान्तलोहभस्म—कान्तलोहरसायनमें देखो ।

लोहभस्म—अगरलप्रोक्त अय-चिन्तुर ( संख्या ९ ) में देखो ।

माक्षिकभस्म—घर्षघर ( चतुर्थ ) की टिप्पणीमें देखो ।

अध्वजभस्म—अध्वजयन ( सं० १५० ) तथा अग्रचिन्तुर ( सं० १५९ ) में देखो ।

तालभस्म—तालकेघर ( अष्टम ) में द्वितीयप्रकार देखो ।

प्रलेकपानुके शोधन और मरण प्रत्येकमेंसे बन्तरहके मिलतेहैं । परन्तु तैज, तक, भोयून, काप्रिड और कु-त्यक्य इन प्रलेकमें ७-७ बार पुष्टानेसे भिन्न होजातेहैं परन्तु गलनेकी खाटाटसे लोग इनके पत्रे बनकर पुन-याकरतेहैं पर जो गुण गलनेसे होता है वह पत्रोंमें नहीं होता है । नाग और बज गलनेमें बहुत अयनहैं पर हट्टे गु-पात्रमें भूलकर नहीं पुष्टाना, नहीं तो ये उबटकर नुष्टानकरतेहैं इसलिये सिद्धिपद्धतिकेवर्तनसे जिनकीमें गलकर शोधन द्रव्यको मरके ऊपर खिच्छरहनीको रस उसके छिद्रमेंसे हट्टे बनना चाहिये । इसद्रव्य उबटनेका समय नहीं रहता । परन्तु जहाँ अधिकप्रमाणमें शुद्ध करनीको बहावर नवीस लकादिप्रगुणगवर्ण बजोका पट्ट बरदेना और ऊपर बांधी कम्पी छीरी रघकर होनोंतरफ दो बहमियोंको दबनेदेहिये खजकरदेना एव बीचमेंसे लठेदुर द्रव्यको दबनेसे ओरसे

शब्दतो होगा पर किसीतरहका गुच्छान नहीं होगा । खाइसीतलहोनेपर पाटको ढ़कर भीतरका द्रव निकालकर धातुको छेकर फिरे गलाना और दूसरे नवीन द्रवमें घुसाना । द्रव कमसेकम घुसनेवाली धातुसे चतुर्गुणित होनाचाहिये और प्रतिवार नयाद्रव भरना चाहिये । इसतरह करनेसे सामान्यतया सब धातुओंकी शुद्धि होजातीहै । विशेषकर निर्गुण्डी, भंगरा, आककादूध, केशरका द्रव इनमें क्रमशः यथाशक्य बुझावे देनेसे धातुओंकी विशुद्धि और विशेष गुणाधान होताहै । नाग और वज्रको २१-२१ बार अर्कदुग्ध और केशरकेपानीमें बुझावे देनेसे अत्यन्तही शुणोदय होताहै । अर्कशीर अधिक न मिले तो एकवारके द्रवमें २-२ बुझावे देनेसेभी हर्ज नहींहै कारण कि साधारणशुद्धिसे विपभाग निकलजाताहै केवल गुणाधानार्थ इनमें बुझाव दिया जाताहै । केशर मंहगी चीजहै इसलिये उत्तमप्रकारतो पानीमें वष्ट-मांश केशर डालनेकाहै पर कमसेकम द्वादशांश तो अवश्यही पीसकर छोड़नी चाहिये ।

**रजतभस्म**—२० तोले विशुद्ध रजतका थारीकरेता बनाकर जख्खी करेदेके पयांगसरसमें ६-७ दिनतक मर्दनकर ४-४ आनेपरकी टिकडियें बनाय कड़ेधूममें गुप्ताकर गणवस्मपुटमें बन्दकर गट्टेमें २ सेर कण्डोंकी आंचदे । आंच अधिक न होनी चाहिये नहींतो चांदी गलकर थरा होजायगी । खाइसीतलहोनेपर निकालकर दिनभर पूर्वद्रवमें मर्दनकर टिकडीबनाय गुप्ताकर २॥ सेर कण्डोंकी आंचदे । कदाचित् प्रथमपुटमें आंचका प्रमाण अधिक मात्रा में पड़ेतो ४-५ आंचोंतक उतनाही प्रमाण रखे । जैसेजैसे आंचको सहन करने लगे वैसेवैसे बढ़ाताजाय । १५-२० आंचोंकेबाद अभिमन जख्खी-कण्डोंकी आंचदेनेमेंनी हर्ज नहींहै । ३० आंचें देनेकेबाद १ मनकण्डोंकी आंचदे । ४० आंचोंकेबाद पूरे गजपुटकी आंचदे । ऐसे १०० पुटमें उत्तमोत्तम भस्म होतीहै । रजत और सुवर्ण भस्महोनेमें बड़े दुर्जरहें इनकी भस्मोंकी शार्तार्थवर्णनहने बहुतथोड़े पुटोंकी आंचोंमें सिद्धि लिखीहै परन्तु वह निबन्ध और निश्चय नहीं होती इसबातपर ध्यान देना उचितहै ।

**घट्टभस्म**—दलदार और मजबूत मिट्टीकी कड़ाहीछेकर भट्टीपर इसतरह रखे कि उसका पेंदा भट्टीमें चलाजाय केवल ४-४ अट्टल ऊपर रहे । इसमें ८० तोले शुद्धघट्टको गलाकर पोखके डोंडोंके चूर्णका ( बनवेतकदिना अफीमनिकाछे हुए हो तो अच्छाहै ) प्रक्षेप देकर बबूलके हरे ढण्डेसे घर्षणकरे । जबतक समस्तघट्टकी भस्म न होजाय तबतक प्रक्षेप देताजाय लगभग ४ पहरमें भस्म होजातीहै ( सूचना—इसे कितनेही अन्न भस्म समझकर खानेको देतेहैं यह खानेके योग्य नहींहै ऐसेही जिस्स और नागमें रामसना । ) इसकेबाद प्रक्षेपदेना बन्दकर २ पहरतक कड़ी आंचलगावे और चलाताजाय । इसबातका ध्यान रहे कि भस्म उबने न पावे । फिर भस्मको मिट्टीके बड़ेसरावसे ढ़ककर यथावस्थित छोड़दे । २४ घंटेबाद खाइसीतलहोनेपर धीरजसे निकालकर गुमारीसरसमें २ दिन मर्दनकर १-१ तोलेकी टिकडियां बनाकर कड़ीधूममें गुप्तावे । फिर ५-५ घेर घट्टनके दो सूखे कण्डे छेकर एकतर्तमें एक कण्डेको रथकर दादविछाकर कुड़ेहुए निनीलोंकी ( कापसपी-जोंकी ) एक अट्टल मोटी तह जमाकर टिकडियोंकी इसतरह रखे कि एकदूसरीसे अलगरहे । फिर टिकडियोंपर एकअट्टलमोटी दूसरी तह जमाकर बचीहुई टिकडियोंको रखदे, ऐसे ३ तहतक जमाकरहे । फिर इसपर दो अट्टल-मोटी निनीलोंकी तह देकर दूसरे कण्डेसे ढ़ककर गोबरसे सन्धिबन्दकरदे । कुछ सूखानेपर १५ घेर कण्डे ऊपर जमाकर आंच लगादे । यह क्रिया निर्वात स्थानमें करनी चाहिये । तीसरेदिन खाइसीतल होनेपर छावपानीसे ऊपरकी राखको हटाकर टिकडियोंको निकालछे । फिर पूर्ववत् गुमारीसरसमें एकदिन मर्दनकर गुप्ताटिकडियोंको धारावस्मपुटमें बन्दकर एकमनकण्डोंकी आंचदे । ऐसे ५-६ आंचें देनेकेबाद यदि एकदम सफेद होजाय तो रखछे । कदाचित् कुछ काजिमा रहगई हो तो गुटेवस्मपुटकी एक आंचदेवे । यह अत्यन्त सफेद और निश्चय भस्म होतीहै ।

**यदादभस्म**—त्रिघोका थारीक रेता बनाकर मिट्टीकी कड़ाहीमें मन्द अभिपर गरमकर क्रमशः त्रिगुण तैलादिक द्रव्योंको ढ़ालकर गुप्तावे । सबकेपीछे इतनी आंचदे कि छिह सब जलजाय । फिर शीघ्र, हरिताल, गन्धक, मेनधिल, गुहागा, सिट्करी, नरसार ये प्रत्येक अष्टमांशछेकर थारीकचूर्णकर रखछे । इसकेबाद जिसके नीचे अग्नि जलावे और नीमके ताले ढण्डेसे पलाताहै । जब जिस गलकर उबने लगे तब सपुंघुचूर्णकी पुटकी देकर ढण्डेसे पलाताजाय । इस-तरह जबतक समस्त जिसकी भस्म न होजाय तबतक दहीक्रम जारी रखे । भस्म होनेपर चूर्ण देना बन्दकरके १ पहर-तक अभिदेकर पोटे । फिर वज्रकी तरह ढ़ककर रखदे । खाइसीतलहोनेपर निकालकर चीनी अथवा पराकरे पात्रमें रख जलढालकर चलादे । पानी मित्र अनेकर धीरजसे निकालकर दूसरापानी भरदे । ऐसे जबतक भस्ममें साराका भाग रहे तबतक इसीतरह करताजाय । फिर सपुंघुभस्ममें गुप्ताकर गुमारीसरसमें पोटाकर टिकडीबनाय गुप्ताकर पक्षीतराह निनीलोंके बीचमें रथकर आंच दे । खाइसीतलहोनेपर निकालकर गुमारीसरसमें टिकडियां बनाय गजपुटकी आंचदे । ऐसे ३-४ आंचें देनेसे निश्चय श्रेष्ठ भस्म होगी । यन्त्रादमें किसीछे अभिग्यामि जिसकी लुत्तरा दो तो जलमें पोटा रखते आंच न दे । यदि उबनेवागी यन्त्रांशोके कयम करने की इच्छा हो तो थोना नहीं बंधेही क्रममें छेजेना ।



**पित्तल च कांश्चभस्म**—पूर्व रीतिसे विशुद्ध काश्च और पीतलके टुकड़ेकरके मूपाकर्णों, ब्राह्मी या अष्टपेका यथा-  
लामचूर्ण, शुद्ध गन्धक और मैनसिल प्रत्येक अष्टमाश डालकर नीचूकरसमें घोटकर टुकड़ोंपर लेपकरे । सूखनेपर ऊपर-  
कहीहुई वनसतियोंके चूर्णकी ऊपर नीचे तह देकर शरावसम्पुटमें बन्दकर इतनी आच दे कि चूर्ण और गन्धक जलज्यों ।  
इसकेबाद निकालकर पूर्ववत् ३-४ आंचदे । भस्महोनेपर (नीचूकीनगद काटेवालीचोलाईके रससे कामलेवे) खरलमें घोटकर  
टिकडिया बनाकर आचदे । कमश आचको बढाता जाय । २० पुटकेबाद चूर्णकी तह देना बन्दकरदे और गजपुटकी  
आच दे । ऐसी २-३ आचोंमें विशुद्धभस्म होगी । रंग न आया हो तो अखीरकापुट उधकीहुई टिकडियोंको देदे ।

**कसीसभस्म**—कुमारी, मटकटैया और सलानासीके खरसोंमें कमश ३-३ दिन घोटकर सुखाकर ३-४ दिनतक  
बहुतखड़े दहीमें डालकर रहनेदे । गाढाहोनेपर घोटकर १-१ तोलेकी टिकिया बनाय सुखाकर जलभगरेके चूर्णके बीचमें  
टिकडियोंको रख गजपुटकी आचदे खाहसीलतलहोनेपर निकालकर रखले ।

**तुल्यभस्म**—५-५ तोलेकी तुल्यकी चमकदार डलियों लेकर कच्चे सूतसे लपेटकर मिट्टीकी हथौड़ीमें २ शेर अनुस  
पत्थरके चूनेकी डलियोंमें दबाकर इतना पानी डाले कि सारा चूना फूटजाय । फिर घड़ो कोडकर डलियोंको निकालकर  
सुखादे । इसकेबाद १-१ डलीको मारियलके धरावर मँचके ताजे गोबरमें रखकर धूपमें सुखावे । जब अन्दरकी डली  
हिलानेसे खड़खड़ बजनेलेगे तब निकालकर डलीपरसे सूतको खोलकर लोहेके तवेपर रखकर तेलियागेह १ रतलको  
पीसकर आगेकेरुसे डलीको सिखराकर ढकदे और चूहेपर रख नीचे बेर या शमीकीलकड़ीकी १ पहर मन्द आचदे ।  
यह ध्यान रहे कि कहींसे हवा निकलती देखे तो दूसरे गेरुसे दबावे । फिर धीरे २ आच बढाकर १ पहर मध्यमाग्नि  
और १ पहरकी सीमाग्नि देकर खाहसीतल करके निकालले । जहा कहीं (औषधनिर्माणमें) तुल्यका प्रयोग आवे वहां  
इसभस्मको काममें लेवे ।

**मल्लभस्म**—नरगुन ८० तोले, जबडुटमिच १५ तोले, काटेवाली चोलाईकी जवना कल ५ तोले लेकर सबको  
मिट्टीकी हथौड़ीमें भरके ३ तोले माछी डलीको दोलायत्रलिधिसे मृत्तुशोधनपर्यन्त बाण देवे मृत्तुका सम्पर्क न होनेपावे । फिर  
काचकेवर्तनमें डलीको रखकर डूबनेतक आचकादूप भरके धूपमें रखले । दूध नया बदलताजाय परन्तु मद्यपर जमीहुई  
दूधकी तहको अलग न करे । २२ वें दिन अपामार्गके क्षारकी आकके दूपमें पीसकर एकलेपलगाकर सुखादे । ऐसे  
७ लेपलगानेकेबाद बारीक कपड़ेपर आकके दूपमें पिसे हुये अपामार्गके क्षारका लेपदेकर सुखासुखाकर ७ तह चढ़ावे ।  
फिर मिट्टीकी कुलहड़ीमें मल्लसे चतुर्गुण अपामार्गके क्षारमें दबाकर ठंडन लगाय ७ कण्डमिट्टीदेकर अच्छीतरह सूखनेपर  
मिट्टीके पड़ेमें आधेमन बकरीकी मीनगियोंकी निर्वातस्थानमें आचदे । ७ दिनयाद सावधानीसे मद्यको निजालकर रखछोड़े ।  
इसे योग्यचिकित्सककी सलाहसे काममें लेवे उरुद्विषहै ।

**पारदशुद्धि**—बागल पारेमें जिल, रागा और बीसा मिले हुए आवेहैं इसलिये जो ऊदरती शिगरिफेह (अभा-  
वमें वनावटी) उसे समवाकर नीचू और आककेपत्तोंकरसमें १-२ दिन घोटकर छोटीछोटी टिकडियों बनाय अच्छीतरह-  
सुखाकर डमरुमध्यमें बन्दकर चूहेपर बढाय नीचे बेर, बबूल, चैर, धव बगरह सारिलडडियोंकी मन्द, मध्य और  
तीव्र इसक्रमसे ४ पहरकी आग्निदेवे । ऊपरके घड़ेपर ४ तह मोटे कपड़ेकी गद्दीको पानीमें तरकरके रखदे और उसे  
१-१ घण्टेकेबाद ठंडेपानीमें तरकरके निचोड़कर रखताजाय । इसका मतलब यह है की अत्यन्तगर्मीमानेसे पार फिरी न  
फिरी राखेसे निकल जातारै । तर रहनेसे न जायगा । ४ पहरकेबाद आचदेना बन्द करदे और साधारणकोयलीपर  
मध्यको रक्कासहनेदे तथा गद्दीकी हटादे । खाहसीतलहोनेपर बहुतसामालकर कण्डमिट्टीको ढरकर ऊपरके पड़ेमेंसे बारीक  
कपड़ेके सहारे पिसकर तमामपारेको निकालले । नीचेके घड़ेकीराख जब एकदम श्वेतहोगातीदे उससमय ११ रा नीचेकी  
हथौड़ीमें भी चला आताहै तब ऊपरकीहथौड़ीतरह नीचेकी हथौड़ीमेंसेभी पारेको निकालले और राखकोनी देखले उसमें पार  
मिला न हो । इसतरह पारेको निकाल राखीके कपड़ेसे १०८ बार छाननेसे कालिमाराहित होताताहै । यह इसकी काम-  
चलाऊ शुद्धि हुई । विशेष शुद्धि की इच्छा हो तो रोहेका खरल अथवा मोटेपेंडेकी कपाड़ी और रोहेका मूषट लेकर  
इसतरहके चूहेपर रखे कि जिसमें आगेपीछे दोनोंतरफसे ईषन देखन । फिर इसमें जमीष्टरमाग पारेको डालकर  
उससे १६ वां हिस्सा संधानमक और अत्यन्त खरी काशी अथवा नीचूकारस देकर घोटतरहे । राखपनेपर नया  
देताजाय । ४ पहरकेबाद गरमपानीसे इसयुक्तिके धोवे कि पारेका अश पानीमें न जाय । निकालेहुए पानीको मिट्टी  
अथवा चीनीकेवर्तनमें रखे बाण कि कदाचित् भूलसे पारा चलाया हो तो उसमेंसे निश्चयके । दूगरेदिन १२ वां  
हिस्सा नोसादर और नीचूकारस देकर ४ पहर उरीतरह घोटकर थोकर साफकरे । तीसरे दिन रोहनांस हन्दीकचूर्ण  
और नीचूके रसमें शोधनकरे । इसीतरह चित्रमूलमिश्राल, कच्चे सहजिनदी जड़मिश्राल, बागरी (मिर्जिया),  
एहधूम, एकरोटी लहसन, त्रिफला, त्रिकटु इनप्रत्येकके योग्याशचूर्ण और नीचूकरसमें ४-४ पहर मर्दन और शोधनकरे ।

इससेभी विशेष शुद्धिकरनी हो तो मर्दनकेबाद गरमपानीसे न धोकर कमलपत्रमें रख ऊर्ध्व, अधः अथवा तिर्यक्पातन- करताहै । इससे अत्यन्तविशुद्धहो जाताहै । इसकेबाद विशेषविष जितने मिलसकें उनमें मर्दनकरके शोधनकरके यह समस्तकायकेलिये उपयुक्तहो जायगा । जहां कजली हो वहां उसकेसाथ शुद्धगन्धककेयोगसे नीलवर्ण कजली बनाकर काममें लेवे और चन्द्रोदयप्रभृति समस्तसिन्दूरोंको तैयार करके पारदमसके अभावमें ढाळे । सिन्दूरोंका प्रकार ग्रन्थमें विस्तृतरूपसे दियाहै ।

**गन्धकशुद्धिः**—लक्ष्मिमुख आवलासार गन्धकलेकर लोहेकीकड़ाहीमें डालकर अरणी, भंगरा अथवा तुलसीका चौगुना रस देकर साधारण अग्निपर औटावे । कमीकमी चला दियाकरे । योना रस बाकीरहनेपर उतारकर गरमपानीसे धोकर साफकरले फिर धूपमें सुखाकर बारीकचूर्णकर चतुर्थांश गायके धीकेसाथ गलाकर चौगुने गायके दूधमें छावदे । ठंडाहोनेपर निकालकर गरमपानीसे साफकरके सुखाळे । ऐसे तीनबारकरनेसे विशुद्धहो जाताहै ।

**मनःशिलाशुद्धिः**—लोहेकी कड़छीमें मैगखिलको साधारण गरमकरके चौगुने गोमूत्रमें डुतावे । ऐसे १०० बार डुतानेसे एकान्तात् विशुद्ध होजातीहै । गोमूत्र प्रतिवार नयालेना ।

**वत्सनामशुद्धिः**—गोमूत्र और दुग्धमें ४-४ पहर दोलायन्त्रसे खेदितकर छोटे छोटे टुकड़ेकरके पीलीसरसोंके तैलमें भिगोएहुए ४ तहकपचेमें पोष्टीबनाय ३ दिन रखकर कड़ीधूपमें सुखाकर रखले ।

**विषमुष्टिशुद्धिः**—परिपुष्टसेफेड़कुचिलोंको गोमूत्रमें डालकर रखदे गोमूत्र प्रतिदिन बदलतारहै । २१ वें दिन साफ पानीमें डालदे और पानीको प्रतिदिन बदलतारहै । १० दिनबाद कुचिलोंको छीलकर सीतरका अङ्कुर निकालकर पानीमें ही डालताजाय । फिर अत्यन्तसूटीकाजीमें ४ पहर खेदनकर गरमपानीसे धोकर ४ पहर दूधमें डबाळे । यदि इनकी विजता दूर करनी हो तो गोखरू, हूँ और शतावरके क्वाथमें ४ पहर उबालकर छोटे २ टुकड़े बनाय सुखाकर रखले ।

**मृदाऋक्षशुद्धिः**—घृहारथको ७ बार बकरीके मूत्रमें गरमकरके डुतावे । फिर चतुर्थांशसेधेनमककेसाथ १ पहर पानीमें घोटकर अठगुने पानीमें मिलाकर रखदे । नितरनेपर पानीको निकालकर दूसरा सैयानमक डालकर पूर्ववत् घोटकर पानीडालकर रखदे । ऐसे २१ बार करके नमकका तमाम हिस्सा निकालकर सुखाकर रखले ।

**भट्टातकशुद्धिः**—भेंसके गोबरमें चौगुना पानी डालकर मिलावोंकी पोष्टीको दोलायन्त्रमें लटकावे । पोष्टी गोबरमें डूबीरहै । फिर ४ पहर मन्दआँचसे पकाकर गरमपानीसे धोहाळे । इसीतरह ४-४ पहर गोमूत्र, दुग्ध और नारियलके पानीमें पकावे । नारियलकेपानीमें पकानेसे पहिले इनकी दोपी उतारदे । इसतरह छद्दकियेहुए मिलावोंको काममें लेवे । इसीतरह जयपालकी शुद्ध करे परन्तु नारियलके जलमें न पकावे । अन्तमें इनकी जिह्वाको निकालकर नीचूरेसरमें सहातक पोटे कि चिकनाई निकलजाय ।

**घत्तुटा, फरिहारी, फनेरशुद्धिः**—गोमूत्र और दुग्धमें ४-४ पहर खेदनकरले ।

**शिलाजतुशुद्धिः**—यवगीय रससख्या २९ में देखो ।

शान्ति ध्रियं सिद्धिमनन्तविश्रुतिं मानं महोत्साहमकुण्ठलोचमम् ।

आयुस्तति रोगसमूहवर्जितां विष्णुर्विद्व्याद्रसयोगसागरे ॥

इति थीरसयोगसागरे परिशिष्टं समाप्तम्

## अत्रविषये विशिष्टविदुषामभिप्रायाः ।

अथ बहोः कालात् प्रतीक्षितस्य अन्तराजस्य समबलकेनेन सर्वं महान्तं प्रमोदभावहाभि । धन्वईनगरवास्तव्यैः प्रश-  
स्वयशोभिर्मियवरेण्यैः सुहृदयैर्भूहिरिप्रपञ्चमभिः सुव्यवस्थया शताधिकानां रसप्रन्यानां विकीर्णानि प्रयोगजातानि सुस-  
श्रुष विरचितोऽयं रसयोगसागरो रसजगति कामप्यतिशयिनीं सुप्रभां धत्ते । विषमस्थलेषु मार्मिकीकया संवर्धितमिदं  
अन्तराजं हिन्दीटीकायाः साहित्येन न केवलं विदुषां भिषजामेवोपयोमि किन्तु साधारणचिकित्सकानामपि, अनल्पमुपयोगीति  
को नाम विद्वान् विवदेत् ।

इत्यपि वक्तुं सुशक्तं यदथावधि सङ्ग्रहप्रन्यानां निर्माणे यः प्रयासः समजलि तत्र मूर्धन्यभूतोऽयं प्रयासतिशयः । मध्ये  
षैककिन् एवास्य अन्तराजस्य सङ्ग्रहणात् पुस्तकविबहनायं निधानं केवलं आरायितमेव साद्रेषणाम् । वैद्यराजमहोदयैर्मुद्रणा-  
धिकार्यं स्वयं सावधानतया विहितमिति सुसुप्रसयाऽऽलोचकं नितरां प्रकाशयति । अन्येन सहोपोद्गातभागोऽपि दर्शनीय-  
तमः । ध्यानपूर्वकमध्ययनेन नियमवरेण्यानां न केवलमायुःशास्त्रविषयकं, किन्तु शास्त्रान्तरविज्ञानमपि सुतरां भवति विज्ञात-  
मिति किं बहुना स्वयंपुण्यौरेयस्य विषयेऽनल्पप्रत्यवेनेति ।

जयपुर, मार्गशीर्षे }  
शुक्र ११ सं. १९८६ }

आयुर्वेदमार्तण्ड लक्ष्मीराम स्वामी, आयुर्वेदाचार्यः ।  
राजकीय आयुर्वेदिक कालेज

धीमान् विविधभागममपरिशीलनासमश्रमसमासादितोपादेयवैद्यप्रकरणः, शाब्दम्यात्पाठरूपवाक्यविन्यासपरिज्ञानपरि-  
निष्ठान्तःकरण आयुर्वेदविज्ञानोपस्थितशास्त्रनिष्णातधियुगः, मारतवर्षप्रहर्षवर्षिलकलितलेखः पण्डितप्रवरः वैद्यराजधीहिरिप्रपञ्च-  
महाधायोऽभिनवगवेषणापूर्णं रसयोगसागरमिषं स्रक्तुषं प्रबन्धं निर्माय मनोहरं मुद्रापयित्वा पायलोकनार्यं मत्स्यधिपे  
सदेकं सङ्घर्षं पुस्तकं आहिणोत् एतदर्थं श्रमयुसौहार्दभेदस्त्रिकपरशतपन्थवादाः सन्नुत्तराम् । प्राच्यप्रतीच्यविचारसयसतदुचि-  
तवाकविवेचनाचातुर्यसमञ्जितवेदविभूतिरुपायुर्वेदप्राप्त्यभ्यवस्थापकोद्गातप्रकरणदर्शनधदानुरागवकीकृतान्तरतयाऽन्यप्रापी-  
दया एवायमिति समधिकोत्पन्नविभ्रमः श्रोतव्ये मूकता मूकत्वैवेति प्रतीयकन्यायां द्वित्राणां समर्थनानीदृशातुक्तौ श्रोत्साह-  
दानार्थमत्र प्रावर्तिषि श्लोकलेशाय इति विषोदगोदन्वन्तः सन्तः क्षाम्यन्नुत्तराम् ।

भारतीयचिकित्साशास्त्रमपरिपूर्णं तात्त्विकशरीरविज्ञानरहितम् शास्त्रचिकित्साशून्यं गतिप्राचीनमिस्त्रादि वैदेशिकचिकि-  
त्सकगणैर्लोकप्रचलितं कृद्वाकल्पप्रत्यननेतदुपक्रमार्कदर्शनाम् विच्छिन्नाप्रवित्तायं विलीयते इति केषां हृदयजुषां हृदयानि  
प्रमोदोदयवशात्प्रचलितानि न भवेयुः । अस्मिन् ऋगादिमन्त्रैः शरीरावयवविभागस्थाननामगणनादि निर्दिश्य सन्निधयस्स्रवि-  
शेषे मज्जान्तरेः सम्भवादाऽभिमतार्थविशेषं साधु व्यवाविष्टिपद् ग्रन्थकारः । अपाचीकरष रुषिरमत्र व्याख्यातुमुद्गातान्तरभ्रमप्र-  
मादोपपञ्चमभिमतार्थान्तरम्, पराकस्य पराचीकरषात् वैदेशिकानां विमत्तानि सतानि । समतुल्यपक्ष काङ्क्षपूर्णमानसमह-  
विभ्रणीतप्राणप्राणतरंगिचिकित्सापरायणानि मनीषिणामन्तःकरणानि ।

वैद्यकस्याऽस्य प्रणेतरूपविवेचनाचातुर्यं परिशुद्धशब्दप्रयोगप्रागल्भ्यं विविधशास्त्रपरिशीलनकौशलं, पुरातनपुण्यप्रमाणो-  
पनतप्रशस्तिमात्रमवयव पर्यतः कस्य सचेतसचेतधिराय न विनीयते ? न ताव्यहराण्युत्तमे मेरस्य वास्तवं संस्ववं कर्तुं  
पारयेयमित्युपारम्भते । ईदृशाऽपूर्वप्रत्यभनप्रकाशनाभ्यां जगतो महीयातुपकारः सम्पद्येत इत्यन न कस्यापि विधाविदावि-  
वादः । एषमेव शास्त्रोक्तिविधिना रसनिर्माणतदुपयोगप्रकारप्रकाशनमुत्तेरियन्त ईदृशाचोपकार इति तु अररिचक्षुषेयं सट्ट्या-  
वतामपि ।

पाटलिपुत्र (पटना). सं. १९८६ }  
कार्तिक शुक्ल द्वादशी }

महामहोपाध्याय हरिहररुपायु डिपेरी  
रामनिरञ्जनदास सुप्रादेश्यविद्यालय

स्वस्ति धीमता निश्चिन्नायुर्वेदरसशास्त्रोदधिपारंगतानां वैद्यवर्कानां हरिप्रपञ्चशास्त्रिणां चरणकमलेषु जनस्थाननिवाशिनां  
देवप्रपणनामकस्य कृष्णशास्त्रिणः सहस्रशः सञ्चयः विलसन्नुत्तराम् । भीमहिः सम्पादितस्य रसयोगसागरप्रन्यराजस्य प्रथमं  
भागं समधिगम्य समालोच्य च प्रमोदततायां जेवतः । अपरिमितप्राणानां रसयोगानामेतस्मिन् सङ्ग्रहात् सर्वेषां धार्यमेका-  
निधानं रसयोगसागर इति । निविधानां रसयोगानां बह्वचान्ध पाठाः प्रदर्शिताः समुपलभ्यन्ते । सया प्रन्यारम्भ एव

अभिक्रमरस्य पञ्चाशत् (५०) पाठाख्या चापि अर्धनारीनटेश्वरस्य सप्तदश (१७) कालाभिरुदयस्य दश (१०) चन्द्रोदयस्य सप्त (७) उवराकुशस्य नवत्रिंशत् (३९) ताम्रयोगस्य त्रयोविंशतिः (२३) तालकेश्वरस्य ॥ एकोनशीतिः (७९) इत्यादयोऽनेके विविधाः पाठाः प्रदर्शिता वर्तन्ते । अधुना मुद्रितग्रन्था न तावदुरधिगमाः किन्त्वमुद्रितानां दुष्प्राप्याणां प्राचीनलिखितग्रन्थानामेकत्रीकरणं नाम कठिनतमो व्यापारः । सत्यामपि एवमवस्थायां दीर्घयोगपरैर्विद्वद्वेदसंरैः सम्पाद्य यथाकथञ्चित्पञ्चाशदधिकानमुद्रितानन्यानन्यान् प्राचीनलिखितग्रन्थान् समालोक्य तत्रत्यं मुद्रितग्रन्थस्थं च विषयजातं, तत्स्थान् पाठमेवाथ समालोच्य मुद्रापितास्ते सर्वे अक्षरादिवर्णानुक्रमेणाऽस्मिन् ग्रन्थराजे ।

अद्वणीरसायनेकस्थानेषु अनेकानां व्याख्यातुणामर्थनिर्णये प्रमादस्थानानि प्रदर्श्य युक्तार्थविशदीकरणार्थं पण्डितवर्गैर्विरचिता संस्कृतटीकैव केवलमलं खलु तेषां पाण्डित्यप्रदर्शनाय । अपि च कासीसादिरस्य, त्रिदोपाकुशरसादिस्थलेषु तेषां निवृत्तं भाष्यं तु मुनरां पाण्डित्यपूर्णं वर्तते । तथा चास्मिन् ग्रन्थराजे पण्डितमहाभागैर्नूतनकल्पा इति निर्दिष्टाः अत्र कल्पः, अश्वकंसुफी, कन्दर्पजीवनः ताम्रयोगाद्यनेकेऽनुभूतयोगाः सुखं प्रत्यावेदयन्ति महाभागानां चिकित्सानैपुण्यं तेषां चन्द्रोदयवृद्धत्वेन रचनाचातुर्यं । गुरुपरम्परयैव केवलमसत्सकाशमागतानविज्ञातमूलान् कांश्चिदनुभूतयोगान् ग्रन्थराजेऽस्मिन् समुपलभ्य परं हर्षमुपागताः स्मः ।

रसयोगसागरस्य पूर्वार्द्धभूतस्मिन् ग्रन्थे १७९६ योगाः ७३१४ श्लोकाश्च वर्तन्ते । प्रथमतस्त्येतदेव सुमहत्कठिनं यच्छतादिकेभ्योऽन्यान्यपुस्तकेभ्य एतेषां रसयोगानामेकत्रीकरणं, तत्तद्व्यतिदेशपुरःसरं तेषामकारादिवर्णानुक्रमेण विरचनं च नाम । एतस्मिन् ग्रन्थे एवं विरचितानां योगानां शुद्धाऽशुद्धविचारोऽपि कृतो वर्तते । कार्यमिदं कियन्तं परिश्रममावहति कियती च विद्वत्तां प्रकटीकरोतीति अकृतेतादृग्व्यवसायैर्दुःशर्कं कल्पनापथमप्यानेतुम् । सुविचार्य चास्य ग्रन्थस्योपयोगितां मूल्यमल्पमेवाभाति यदस्य द्वादशरूप्यका इति । ग्रन्थस्याऽस्य उपोद्घात एव केवलमहलेतदधिकं मूल्यमिति मन्यामहे । अतिविस्तृते ग्रन्थस्याऽस्योपोद्घाते “आयुर्वेदस्य प्राक्कालः” त्रिदोषविवरणम्, आपेशारीरावयवाः, सन्दिग्धशारीरविवरणम्, इत्याद्यनेकानामायुर्वेदीयविषयाणां साक्षोपाहं विवरणं कृतं वर्तते । विवरणे चास्मिन् पदेपदे वेदेभ्यः प्रमाणान्नुपन्यस्तानि, पाश्चात्यानामपि विदुषामभिप्रायाः समुद्धृता वर्तन्ते । हृदयज्ञेन विचारपरिष्कृतेन चैतेन विवरणेन सत्यामपि क्वचित् कुत्रचिन्मतभिन्नतायामवश्यमेव सर्वेषामायुर्वेदीयानां भनांसि वेदप्रवणानि शारीरावयवविचारप्रवृत्तान्यपि च क्रियेरमिन्नानास्ति नत्तोऽपि सन्देहः ।

नासिक सं. १९८६  
माघ शुद्ध अष्टमी

तत्रमवतः प्रेमाकाशी  
देवधरोपनामकः कृष्णशर्मा,  
तथा च पं. हरिशास्त्री पराबकर वैद्यः  
आकोला (बरार)

भवतां रसयोगसागरस्य प्रथमभागं दृष्ट्वाऽखन्तमाहादितोऽस्मि । यथा वेदोद्धाराय व्यासस्य प्रवृत्तार्थः समभूतयैवाऽऽयुर्वेदोद्धाराय भवदाविर्भाव इति । उपोद्घाते समधिकं वैदुष्यं प्रकटीकृतं गहनस्थलेषु च संस्कृतविवरणमपि कृतम् । ग्रन्थोऽयं वैद्यानामन्येषां चोपादेशो भविष्यतीत्यासावे । विद्यालये प्राचालये चोपयोगितव्योऽयं ग्रन्थ इति शम् ।

अमदाबाद आपाङ्ग कृष्ण  
सप्तमी १९८६ वि०

वैद्य नारायणशङ्करो देवशङ्करारमजः ।

वैद्य पण्डित श्रीहरिप्रपन्नदामिः सङ्गृहीतो रसयोगसागरः परममहान् रसनिष्पन्नो विधीयते मया चाधुनः हृदया ग्रन्थकृतुमां । अत्रागदेश्वरादीनां निराशानिपर्यन्तानां १७९५ रसानां दस्यते सङ्ग्रहः । सङ्ग्रहार्थं सङ्गृहीतानां ग्रन्थानां सङ्गा अतोत्तरं दातम् । तेषु च ५३ ग्रन्था मुद्रिताः ६० ग्रन्थाश्च हस्तलिखिताः । एतावतां ग्रन्थानां सङ्ग्रेहे अपेक्षितस्य कालस्य द्रव्यस्य सर्वपाय तेषां तावदावगमे तथाभूतायाः प्रतिभायां मानसकल्पनायामेतत्कथनीयं भवति यदलोकसामान्यवैभवेषु महापुरुषेभ्यस्तन्मोऽयं विचरः श्रीहरिप्रपन्नपण्डितः पण्डितमार्तण्डः । परममहती भूमिका प्रकाशयन्ती कर्तुं बहुश्रुतत्वं मुसाय कल्पते पश्यतो देशान्तरवैद्यैः कृतां पूर्वजानां कीर्तिं धारयन्ती । सन्दिग्धार्थानां शब्दानां तात्पर्यनिर्णयायाऽऽदत्तोऽपि यत्रो हस्तायुक्त्या कथयति कर्तुं सारस्वतिं पाण्डित्यम् ।

मुम्बापुरी वैद्य शुद्ध अष्टमी  
सं. १९८४ वि.

पं. रमापति मिश्रः ।

अस्माभिः प्राचीना नूतना बहवो ग्रन्था पठितास्तेष्वेकमात्रा प्रसिद्धा भिन्नक्रियात्मका बहुसंख्यावन्तो रसा दृश्यन्ते । ते कठिनपुनश्चन्द्रक्रियात्कठिना दुर्लभ्याश्च । तेषु मुद्रितानां लभ्यानां भूयमधिकं भारो विशेषः । एतत्सर्वं पर्यालोच्य बहूनां विदुषां प्राचीनानां नूतनानां भिन्नजन्मप्रार्थना कृता—कोऽपि रसग्रन्थ एतादृशं केनाप्याचार्येण कृतं प्राप्यते ? यस्मिन् सर्वेषां रसानां समावेशः स्यात् परन्त्वद्यावधि न कोऽपि ग्रन्थो लब्ध इदं । एतेन शुष्कयामाद्यालतायां श्रीमद्विवेकानुशासनकारिभिरुपनिषत्प्रणयज्ञेभिः कृतो रसयोगसागरो लब्धः । अस्मिन् एकमात्रा बहूनां रसानां नानाक्रियावता समावेशः कृतोऽस्ति । कठिनानां शब्दानां गुणानां क्रियाणाञ्च प्रत्यक्षनिदर्शकम् । अथ सर्ववैयनामधारिभिरसद्गृहीतव्योऽनेन पार्श्ववर्तिना कस्याऽपि ग्रन्थस्यापेक्षा न भवति ।

कलकत्ता पौषशुक्ला  
प्रतिपदा १९८६ वि० }

भगीरथस्वामी

वैद्यप्रकाशश्रीयुतहरिप्रपञ्चविषयिद्वी 'रसयोगसागर' प्रणयनेन न केवलं सामान्यजनता किन्तु भिन्नग्रन्थताऽपि चिरमनुपहृता यतोऽनं प्राचीनरसग्रन्थानां प्रयोगास्तथा स्वर्गिता यथा वर्णानुक्रमेण रसा उपस्थाप्यन्ते येन तत्तद्व्यवस्थामनुवीच्य सुकरतामापन्नमुपकरिष्यत्सुर्वेदविदो रसवैद्यान् ॥

किञ्च टिप्पणीप्रदानेन रसपाठेषु सन्दिग्धानां चिन्तनप्रसङ्गपर्यन्तं रसायनशास्त्रपरम्परी परिष्कृता, यथा रति-फारमरसे—आपातत प्रतीयमानमर्थं पुरस्कृत्य प्रवृत्तिस्पर्षावहेति सम्प्रदर्श्य रसशोधनार्थं प्रागुपयुज्य प्रमदाप्रपमातैव परि-शुद्धरसयोगानन्तरं पालाशमूलरसं शुद्धिकाश्रये निपुणानो साङ्केतिकसरणिराविष्कृता परिहृतय मालिन्योद्बुद्धम् ।

एव महता परिश्रमेण सम्पादितोऽयं ग्रन्थः सर्वेषां रसग्रन्थेषु प्रधानगणनामहेति ।

जामनगर आषाढशुक्ला  
१० सं. १९८६ }

महामहोपाध्याय शास्त्री—हार्थीभाई शर्मा.

काशीनिवासिवैद्यपण्डितश्रीहरिप्रपञ्चसमैर्विरचितोऽयं "रसयोगसागरो" ग्रन्थो लोकोपकारको विज्ञानानु विज्ञानानु-कारकोऽयं उत्तमधेति सम्मनुते ।

मुम्बापुरी आषाढशुक्लापूर्णिमाया  
संवत् १९८५ }

ययुनन्दन झा.

बृहन्मन्दिरेस्थितकृष्णगुहादेवसरकृतवाटछालाप्रधानाध्यापक ।

रसग्रन्थोऽयम् । अत्रच तेषु तेषु वैचक्रमन्त्रेषु पठिता रसयोगास्त्वल्लितास्त्वग्निः । एकत्र नानाप्रथीयरसयोगाद्या अत्र इष्टं शक्यत इति ग्रन्थस्यास्य विशेषोऽयम् । हिन्दीभाषानुवादेन साकं तत्तत्सूत्रप्रथीयरसरसकृतभाषानुवपाठा अत्र समुद्घातास्त्वन्ति । अकारादिक्रमेण रसयोगानामनं विन्यासः कृतो वर्तते । प्रारम्भे चान्न भूमिकाद्वयं सयोजनमस्ति । एकमात्रं भाषानामम् १०४ पृष्ठव्याप्तम्, अन्यत्सरकृतभाषानामम् १७८ पृष्ठव्याप्तम् । तत्र यावुर्वेदलेखितामलस्य महत्त्वं व्यापिहृत्य महान्विचारः कृतो वर्तते । प्रत्येकविषयेनेन देवनागरीलिपिर्मुद्रितः ।

मुम्बापिणी काशी, प्रभवसकत्तरे शुद्धिकमासे १० दिवस ।

निखिलरसशास्त्रीयदुरवगमाशयप्राचीनरसयोगास्त्वैऽप्यत्र सप्रथमं पौर्वापर्यसमीक्षापूर्वकं हिन्दीसरसकृतव्याख्याद्वयेन परिष्कृताश्च पूर्वोत्तरपरिशिष्टाद्वयभागन्यात्मकतया आदिशस्तान्ता यथाक्रमं निबन्धनरसद्वन्द्वद्वन्द्वो विज्ञाय योगः । आद्यतु पोद्दातोऽयमायुर्वेदनिगमागमसामर्थ्यमाचार्याणां सकलकलापरीक्षणं च बोधयति । प्रायः आधुनिकीयसरसशास्त्रोपासकै रसयोगः प्राचीना नवीना व्यासगत्यश्रोतान्तेनैव शास्त्रोपासकतया समुद्गीताधरितायां ह्य दृश्यन्ते, सकलण्यं विवरणं शुक्ति-रस्यस्यादिशदकृतम् । सरकृता अवसरकृता आचार्या केवलं भाषामात्रविदो भिन्नोऽपि पुष्टार्थं साधयेयुः । तस्मादयं रसयोगसागरो निखिलभारतीयोऽयुर्वेदविद्वज्जनदरणीयो मानवीयव्यापितदेवाच्च इत्यारं दिगं तद्विषयमनीयारिलम्बयैवतो मे नमोऽस्तनन्तानि हरिप्रपञ्चाचार्याणां समुत्सन्नतुतराम् ।

मुम्बापुरी, विक्रमवत्सरे  
१९८७ आश्विनशुक्ल २ तृथे }

मुप्रहाण्यदास्त्री.

वृष्णातीरान्तर्गत, श्रीपुष्पभिरसम्पन्नविद्वान् ।

षोडशाऽधिवेशनसम्बन्धिनां प्रदर्शनां जयपुरे शोहमयीवास्यैः श्रीपण्डितहरिप्रपन्नाचार्यमहाशयैः पुस्तकविभागे प्रेषितो रसयोगसागरस्य प्रथमो भागः परीक्षणसमितेर्निर्णयमनुसृत्य सबहुमानं सप्रमोदं च प्रकाशयते इति प्रमाणयति उत्तमश्रेणि प्रमाणपत्रमिदम् ।

अखिलभारतवर्षावैद्यसम्मेलनम् }  
चत्र कृ० १४ सं. १९८३ }

पं. मदनमोहनमालवीयः  
षोडशाधुर्वेदसम्मेलनसभापतिः

ईयमहाशयपण्डितहरिप्रपन्नशर्मभिः सम्पादितो रसयोगसागरनामा विशालग्रन्थो निरीक्षितः । अनेकान् दुष्प्राप्यान् हस्तलिखितान्मुद्रितांश्च ग्रन्थान् महाप्रयासेन समाहृत्य, रसानामेको विस्तीर्णसङ्ग्रहोऽस्मिन् रसयोगसागरे कृतो दृश्यते । अस्याऽध्ययनेन रससाक्षाऽभ्यासकानां तच्छास्त्राध्ययनं सुखसाध्यं युगमं च भविष्यति इति मे मतिः । असौ सर्वेषामुपरि विद्वद्भ्यानां महाउपकारः संजातः । यदस्मिन्ग्रन्थे पण्डितवरैः खान्दुभूतानां रसप्रयोगाणामपि सङ्ग्रहः कृतो विद्यते । किमति-विस्तारेण, सर्वैर्गुणैः शर्मैश्च एतदुत्कृष्टं पुस्तकं स्वकीयपुस्तकालये सङ्ग्राह्यं पण्डितमहाशयानां श्रमसाधकं च कार्यमिति मेऽभिप्रायः सर्वेभ्यः प्रार्थना च इति शम् ।

कार्तिककृष्णे अमावस्या  
सं. १९८७ वि० }

प्राणाचार्य वैद्यराजवासुदेवाचार्यजी पेनापुरे  
मुम्बापुर्याम्

उच्छ्रुतिताऽऽधुर्वेदस्य श्रेष्ठान् मृतकस्य रसतन्त्रमुद्दिष्टीपुंराचार्यप्रवरसकलशालनिष्ठातपण्डितहरिप्रपन्नशर्मणश्चिर-कालादनवरतकृतभ्रमस्य फलस्वरूपो रसयोगसागराभिधो ग्रन्थो मम दृष्टिपथमाकृष्टस्मरति । साक्षादयं रसप्रयोगाणामा-करोऽस्ति जलधिरेव सुकानाम् । अस्मिन् ध्योतमाना रसाः स्वकं गुणोत्कर्षं दर्शयन्तीऽहद्वारेण परस्परं लक्ष्ययन्तीव विलसन्ति, अहमपूर्वाऽहमिति । दशोत्तरशतसङ्ख्याकहस्तलिखितमुद्रितग्रन्थस्थरसप्रयोगाणामपूर्वमेव सङ्ग्रहसमुद्रमवगाहयितुं कस्य प्रयुक्त-चेतसधेतो न कामयेत । सम्प्रत्युपलब्धमानरसवाटविषयकतन्त्राणां निकरोऽस्य विषयमानत्वे भाररूपेण लक्ष्यते । अनेनै-कैर्नव मकररूपेण निखिलरसग्रन्थमरत्याः स्वकीयोदरे प्रतिष्ठापिताः । भाषाटीकया च बालवैद्यानामप्युपयोगिता प्रदर्शिता । बृहत्तमोषोद्घातोऽप्यस्य ग्रन्थस्य ग्रन्थकर्तुः प्रकाण्डपाण्डित्यं ध्योतयति विषयविवरणपाठवं च । सन्दर्भशारीरविवरणद्वारा स्वैर्य्याकुलीकृतशारीरतन्त्रस्याऽमृतीकरणं कृतं निरलं चाज्ञानरूपं तमः । किं बहुना, अस्य ग्रन्थरत्नसाऽदरो विषुषवैद्यसमा-जेन कर्तव्य इत्याशासे ।

तिथिः पथनी कार्तिककृष्णा }  
संवत् १९८७ }

पण्डित जयनारायण दीक्षितः  
आगराप्रान्तान्तर्गतं देहू ग्रामाभिजनः

युगेऽस्मिन्वैज्ञानिकेऽन्वेषेभ्यो भारतस्य हीनां दशां जानन्ति जनाः, परन्तु ग्रन्थरत्नसाऽस्य प्रभामरेण समुत्सारितं तदज्ञानतमः । अस्य ग्रन्थस्य सङ्ग्रहीतारः श्रीहरिप्रपन्नाः सन्ति, ते किल मार्मिका विद्वांस आधुर्वेदस्य । अस्य तैत्तिरीयोक्तमो वैदुष्यपूर्णोषोद्घातोऽस्ति, तस्मिन्नेव येषु विषयेषु विचारः कृतः सोऽपूर्वं एव प्रतिभाति । आधुर्वेदेतिहाससङ्कलनं सङ्ग्रही-तृणाम्नाषपरिधमं व्यनक्ति । सर्वदेशगुरुलं भारतस्थेतिसाधितम् । शक्यचित्साऽपि वृद्धभारतस्य कृते न मूलनं दस्तिरिति गर्भिणीनिषयकचिकित्सोक्त्येन प्रकटीकृतम् । इदमपि निषयवरेण साधितं यदेपां रोगाणामवांचीनलं पाश्चात्या अवगच्छन्ते तेषां रोगाणां निदानचिकित्साप्रत्ययो वैदिककालेपि मर्द्वाणां कटाऽऽमलकवज्ज्ञाता आसन्, समकारि च शारीराऽऽरवयानामपि पूर्णां विचारः । निषयवराणां प्रमाणोपन्यासद्वङ्गा चेत्यक्तं भवति । अधुना ग्रन्थविषये वक्तव्यमवशिष्टम्, घातघृष्टाऽधि-कम्बो मुद्रितहस्तलिखितग्रन्थेभ्योऽस्मिन् सङ्ग्रहः कृतः । महामारतं इव यो रसोऽस्मिन्वर्णितस्वस्यैव चरत्वं जगति विद्यते, योऽत्र नास्ति स यत्पुष्पमिवाऽपगन्तव्यः । विषयसूचनोक्त्येन प्रयोगकर्तृणां सङ्ग्रहीतृभिः कुञ्चन रसानां स्वाऽधुभूतस्य-चनया च गूढतः समुत्सादितोऽविज्ञातः । किमधिकं बदामो वैद्यवर्योगाभिमं श्लोकं स्मारयन्तो विरमामः ।

धीरा भूषा भनाञ्चः सुश्रुतिवृद्धया भारतीयाः परे वा नानाविद्याप्रवीणा निधिपशुगणप्रशस्ये यन्नवन्तः ॥

आधुर्वेदे स्वकीये परविषयमये लक्ष्यवोधाय वैद्या विज्ञाप्यन्ते भवन्तः सविनयमिह तद्व्येतां मानते स्ते ॥ १ ॥

मुम्बई ता० १ । ११ । १९९० }

गोशामिडुल्लोत्तुमजी १०८-  
श्रीगोकुलनाथ महाराजः

धन्यः स परमशुभाः परमेश्वरो, यस्य प्रसादान्मयाऽयं पियानशार्दिणरत्नसूत्रस्य सष्टद्विमतसष्टद्वस्य वम्बईनिवा-सिनः पण्डितप्रवरहरिप्रपन्नशार्दिणो विविधशास्त्रीयमर्यादपधिसिपुलसङ्ग्रहसहितं रसयोगसागरनामग्रन्थरत्नस्य गम्बईयं रत्ना निरालं हारितोऽस्मि । ग्रन्थोऽयं वैद्यानामुपादेयो शोकोपयोगी च अभिप्रेतीति जाने । उक्तशालिवरोऽनः परमपुत्तमं ग्रन्थं

निर्मातुं यतिष्यते इत्याशा मे । यदायुर्वेदविषये चिकित्साविधिविद्वांसो बहवः साम्प्रतं दृश्यन्ते परन्तु ग्रन्थप्रणयनद्वारा तद्विशिष्टगुणदर्शका विरलाः सन्ति, एवं स्थितौ चाभिव्यक्तिरपि तादृशो नितरामनीष्टः कार्यकारः शिरसा गृहीत इति परं प्रमुदितोऽसि श्रीप्रभेवाऽन्यामपि तदीयां यशस्विनीं कृतिं दृश्यामीत्याशासे ।

इन्दौर ता० २ । ११ । १९३० }

वैद्यव्यालीरामशर्मा द्विवेदी

मोहमयीषादिधोमत्पण्डितवरवैद्यराजहरिप्रपञ्चसर्मासहोदयनिर्मितोऽकारादिसर्वगान्तो रसयोगसागरो मलादरपति गुणमहिषाममत्तराणां मानसामि । ईदृशैरेव ग्रन्थरत्नैः संस्कृतवाङ्मयं प्रासहिनीमभिर्दिशमाप्स्यति । सोऽयं सर्वरसि भिषगिभ्यः संपाद्यः प्रचारणीयधैत्यसाकम्पनुरोधो विद्वत्सु इत्यभिप्रेति वेदान्तशास्त्री पञ्चवीर्णा हरिदत्तशास्त्री

२८ । १० । १९३० }

प्रधानाध्यापकः  
महाविद्यालयपालापुरीयः

पुस्तकमन्त्राभिः सर्वतो निर्भालितमतीवोपकरिष्यति भिषजामिति प्रत्ययं ब्रूयति । एतत्सम्पादयता भवता बहूपकृतः कविराजसमाज इति शिवम् ।

साह्यर शुद्धबोधतीर्थस्वामी २८ । १० । ३०

यह ग्रन्थ वस्तुतः रसयोगसाम्राज्य का सागर ही है । इसमें ग्रन्थकर्ताने बहुमूल्य अनन्त रत्नों का समावेश किया है जो कि वैद्यविद्याके अनुपम अलङ्कार स्वरूप हैं । इसमें आधुनिकफलप्रदायी अतएव पूर्णानुभूत अनेक रसयोग विद्यमान हैं । इन योगों का भूरिभूरि प्रयोजन करनेपर ही अन्यत्र प्राप्त होना कठिन ही नहीं असम्भव है । अत एव यह ग्रन्थ छोटेछोटे और बड़ेबड़े वैद्यों के तथा जनसाधारणके लिये परमोपयोगी है । इस रत्नाकरके रचयिता दर्शनशास्त्रमें निष्णात और आयुर्वेदके सर्व रसयोगविज्ञानपारङ्गत भिषक्प्रवर वैद्यपण्डित हरिप्रपञ्चजी हैं । भारतवर्षमें आर्य आयुर्वेदके अद्वितीय विद्वान् हैं । आपनी रासायनिक क्रिया और भिन्नभिन्नवनस्पतियों की अनुभूति पराकाष्ठाको पहुँची है । आपने अपने इस आयुर्वेदिक विज्ञान का सर्वसाधारणको लाभपहुँचाने की छानकामनासे बहुतवर्षोंके अनवरतपरिश्रमसे इसका सम्पादन करके असाधारण लोकोपकार किया है । ऐसे ग्रन्थ की संसारमें इस समय बड़ी आवश्यकता थी । इस पुस्तक की समालोचनात्मक भूमिका में ग्रन्थकारने अपना अप्रति मण्डित हलकाया है । यदि इस पुस्तकके योगे ही प्रयोगों का अनुष्ठान क्रियायत्ना तो संसार में आशादीप्त काम होगा । अतः मैं आशाकरता हूँ कि इसग्रन्थसे जनता पूर्णलाभ उठावे और ग्रन्थकर्ता पूर्ण यशस्वी बनें ।

वेदान्ताश्रम,  
सिद्धपुर, ८।१०।३० }

स्वामि रघुवराचार्य वेदान्ती  
तर्कतीर्थ, वेदान्ततीर्थ, म्याथव्याकरणाचार्य, भीमासोपाध्याय  
वेदान्तशिरोमणि, दर्शनविधि.

रसयोगसागरका निर्माण और प्रकाशनकरके वैद्य पं. हरिप्रपञ्चजीने वैद्यसमाजके ऊपर अनुल उपकार किया है । इसका फल अथ देश में सुनिश्चित मिलेगा जो इसग्रन्थमें न आया हो । यह ग्रन्थ पण्डितजीके १० वर्षोंके अध्ययनके अथाह परिश्रमका फल है । प्रत्येक वैद्यको यह ग्रन्थ अवश्य खरीदकर इससे लाभ उठाना चाहिये । हम परमेश्वरसे प्रार्थना करते हैं कि परमेश्वर पण्डितजीको विरायुकर और पण्डितजी ऐसे अनुपमग्रन्थ तैयार करके सुत्राय आयुर्वेदका उद्धार करें ।

कालबादेवीरोड,  
मम्बई ता. ४।१०।३० }

आयुर्वेदमार्ग  
वैद्य वादयजीप्रिकमजी आचार्य

### वैद्यसम्मेलनपत्रिका.

इस अपूर्व सर्वोपयोगी महद्ग्रन्थका निर्माण पण्डित हरिप्रपञ्चसर्मा शास्त्री भिषगाचार्यजी बम्बईनिवासीने किया है । संस्कृतमें तथा अंग्रेजीमें उपोद्घात लिखा है, जो की सभी वैद्य महाज्जनों और आयुर्वेदके विचारियोंके लिए उपादेय है । इसग्रन्थके अध्ययनसे रसज्ञ (रसचिकित्सा) का ज्ञान पूर्ण होजाये । जिमप्रकार यह ग्रन्थ तात्परजनः देगनेमें सुवर्णकारी प्रतीतहोता है उससे कहीं अधिक इसकी उपादेयता समालोचनात्मकममीररक्षिते देगनेमें ही होती है । वास्तवमें आयुर्वेदशास्त्रके विद्वान् ही पण्डितजीके इस अद्वितीय परिश्रमका अनुभव करसकेंगे ।

विद्वानेय विज्ञानाति निश्चयनपरिधमम् । नहि यन्प्या विज्ञानाति सुर्वी प्रसवयेदनाम् ॥

इससे अच्छी रसविद्या का ग्रन्थ आज तक नहीं प्रकाशित हुआ । इसके महत्त्व को देखते हुए इसकी कीमत जो रखी है सो न्यून है ।

जो वैद्य इसग्रन्थको पढ़कर रसचिकित्सा करेंगे उन्हें ज्ञानन्यूनताजन्य प्रसवाय नहीं होगा और लोकमें यश के भागी होंगे आयुर्वेदका भविष्य उज्ज्वल होगा । अतः मैं समस्त आयुर्वेदप्रेमियोंसे अनुरोध करता हूँ की इसग्रन्थरस को बिना विलम्ब के शीघ्र मंगवाकर लौकिक व पारलौकिक लाभ उठावें ।

**यदि सन्ति गुणा ग्रन्थे विकसन्त्येव ते स्वयम् । नहि कस्तुरिकामोदः शपयेन विभाव्यते ॥**

इस न्याय के अनुसार यह ग्रन्थ गुणहीन के कारण स्वयं प्रसिद्धि पावेगा ।

कानपुर,  
सितम्बर १९२८ }

सत्यदेवपाण्डेय आयुर्वेदाचार्य वेदान्तराक्षी  
संयुक्तमन्त्री; नि० भा० आ० वि० पी०

### विज्ञान

इस बृहद्ग्रन्थमें रसों के बनानेकी स्पष्टरूपसे विधि दी गई है ।

अनेक आपे, अनारपे, प्राच्य और पाश्चात्यग्रन्थोंकी सहायतासे विद्वान् छेयकने इसमें दो विस्तृत भूमिकायें भी की हैं । ग्रन्थ के आरम्भमें अंग्रेजीकी मनोहर और विद्वत्तापूर्ण भूमिका है । संस्कृतकी भूमिका में कई नवीन विषयोंका समावेश किया गया है । अंग्रेजीकी भूमिकासे छेयककी अगाध विद्वत्ताका परिचय होसका है । प्राच्य और पाश्चात्य इतिहासोंके बचनोंकी उद्धृतकरके वैद्यकशास्त्रका सुन्दर इतिहास और अतीतभारतके गौरवका मनोहरचित्र इसमें अंकित किया गया है । वैद्योंके अवतरण प्रस्तुत करके छेयकने यह प्रदर्शित करनेका प्रयत्न किया है की रसायन और वैद्यक विद्याका आदि मूल वेदोंमें विद्यमान है । हार्नेले आदि पाश्चात्यविद्वानोंकी चरक तथा सुश्रुतके निर्माणकालविषयकप्रान्तिपरमी श्रीहरिप्रपञ्चजीने विचारपूर्वक प्रकाश डाला है ।

वैदिक, ब्राह्मण, और सुश्रुतकालमें शरीरावयवोंकी समानान्तरनामोंकी सूची वैदिक साहित्यके अध्ययन करनेवालोंकी अवश्य बहुमूल्य सिद्ध होगी । एकसूचीमें शरीरके अवयवोंके चरक तथा सुश्रुतवर्णित नाम तो दिये ही गये हैं उनके साथसाथ अंग्रेजी पद भी रखदिये गये हैं । इसप्रयासके लिए समस्तपाठकोंको हृदयसे कृतज्ञ होना चाहिए । रसोंके बनानेकी विधि—सङ्ग्रहमें छेयकने बड़ा परिश्रम किया है । निम्नलिखित प्राच्यग्रन्थोंके श्लोकोंको उद्धृतकरके उनका भाषानुवाद भी दे दिया गया है । सारांश यह है की ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी है और अपने ढंगका निराला है । हिन्दी साहित्य इसप्रकारकी पुस्तकों पर गवैकरसका है । हमें पूर्ण आशा है की उदारजनता इसका समुचित समादर करेगी ।

इलाहाबाद,  
अगस्त १९२७ }

### आरोग्यदर्पण

रसप्रयोगोंका एक बृहत्सुन्दर संग्रहकिया है । उपोद्घातके आरम्भमें पण्डितजीने आयुर्वेदके इतिहासपर अच्छाप्रकाश डाला है, उपोद्घातका प्रधानभाग शारीरविवेचनसे परिपूर्ण है, यह अंश बहुतही खोजके साथ लिखा गया है । इसग्रन्थमें अनेक उद्धरणों और सुक्तियोंद्वारा सिद्ध किया है कि वेदोंमें शल्यचिकित्सा, रोगविज्ञान, और शरीरका बहुतकुछ वर्णन मिलता है । वेदोंमें व्यवहृत बहुतसे शब्द दिखाए गए हैं कि जो शारीरावयववाची हैं परन्तु साम्यकारोंमें उन्हें अन्यअर्थोंमें प्रयुक्तकिये हैं । वेदव्यवहृतशब्दोंकी सुश्रुतमें व्यवहृत तदर्थबोधक शब्दोंसे तुलना की गई है, अर्थकरनेमें पण्डितजीने पर्याप्तविवेचनाबुद्धिसे कामलिया है ।

कुमोदि सन्दिग्धशब्दोंपर भी खूब टीका टिप्पणी की गई है । सारांशतः यह उपोद्घात स्वतन्त्ररूपेण भी एक अत्यन्त उपयोगी और विद्वान् वैद्योंके देखनेयोग्य ग्रन्थ है ।

### वृद्धीदर्पण

बम्बईके प्रतिद्वैत और प्रकाण्डपण्डित श्रीमान् हरिप्रपञ्चशर्माजीने एकबडेमार्कका, और खोजपूर्ण तथा नितान्त विचारणीय उपोद्घात लिखकर, स्वर्णमें शुभन्धोत्पादनकी सन्निवेशित कर दी गई है । हमारी सम्मतीमें तो, इस अपूर्व रसोपध-समूहके सुविस्तृतसंग्रहके विनागी, यदि केवल, यह बहुगवेषणागवेपित—उपोद्घातमात्रही सदैवोंके सामने उपस्थापित किया-



गया होता, तो, वह अकेलाही समस्त ग्रन्थके मूल्यसे, अधिक न्योछावरका अधिकारी होजाता । इसप्रकारकी गम्भीरगवेषणाओं और पाण्डित्यपूर्ण परिश्रमोंकी सराहना और समादरकाद्वारा यदि गुणहोंकी ओरसे बन्द करदियाजाय तो, लोकसङ्ग्रहदृष्टिसे कितनीभारी हानि उपस्थितहोसकतीहै इसका उत्तरतो बहुश्रुत और बहुवृद्धोपासकविद्वान् लोग सहजमेंही देसकेहैं । इसलिए प्रत्येक विद्वान् वैद्य महानुभावसे हमारी विनीतप्रार्थना है की वे इसग्रन्थको खरीदकर साहसी और बहुशास्त्रनिष्णात वैद्य. पं. हरिप्रपञ्चजीकी अवश्य उत्साहवृद्धि करें ।

साहोर, कार्तिक सं० १९८५

इस एकही पुस्तकके साथ रत्नेसे चिह्नितसकका परमोपकार हो सकताहै । पाण्डित्यकी दृष्टिसे इसका उपोद्घात अत्यन्त महत्त्वका है ऐसी अनेक गूढविषयकी जटिलबातोंपर पण्डितजीने प्रकाश डालाहै कि जिसके मननसे आयुर्वेदके कुतन्त्राय ग्रन्थियोंके उद्घाटनमें बड़ाभारी सहारा मिल सकताहै । विषय और पाण्डित्यकी दृष्टिसे भी ग्रन्थ परमोपादेय है । आशाही नहीं विश्वास है कि वैद्यबन्धु इस उपादेय ग्रन्थको अपनेपास रखकर अपनी और अपने व्यवसायकी उन्नति करेंगे ।

हिन्दुविश्वविद्यालय }  
बनारस ४/१/२०

कविराज प्रतापसिंह रसायनाचार्य

सङ्ग्रहका प्रकार नयाहै उपयोगी और उपादेय है । .....ग्रन्थकर्ता विद्वान् हैं ज्ञानसमैह हैं एकभिमुखकी हैसियतसे इतना कहसकता हूँ कि—

सागरः सागरस्येव प्रथतां पृथिवीतले । यशो गायन्तु विद्वांसो हरिप्रपञ्चशर्मणः ॥

बङ्गयान ता. १५/१२/९

स्वामी सोमतीर्थ

रसयोगसागर अत्यन्त हर्ष व उत्साहका कारण हुआ. सैकड़ों संस्कृत व हिन्दीके ग्रन्थ संग्रहाये गये परन्तु रस-योगसागरविशेष अपनी भाविका नया ही अद्भुत ग्रन्थ है, कर्ताकी विद्वत्ता व चतुराई प्रतिष्ठित प्रकट होतीहै.

होशियारपुर (पंजाब) }  
१५/१२/२०

हीरासिंह श्री. ए.

### माधुरी

“रसयोगसागर” एक सर्वोत्कृष्ट तथा सर्वसुन्दर सेप्रहग्रन्थ है । रसयोगोंके सङ्ग्रहके साथ साथ कितनेही स्थलोंपर आयुर्विज्ञानाचार्य, सुयोग्य सङ्ग्रहकर्ता महोदयने रसनिर्माणविधिमें अपनी किंवाकुशलता, अनुभव, वरदक्षिता तथा सङ्गृह्यद्विसेमी पूरा-पूरा कामलियाहै । एकएक रसके जितने भी भेद तथा उपभेद प्राचीन, अर्वाचीन, प्रकाशित एवं अप्रकाशित ग्रन्थोंमें पाएजातेहैं, वे प्रायः सभी इसग्रन्थमें मिलमानहैं । संस्कृत श्लोकोंका हिन्दीभाषान्तरभी अन्य प्रकाशित वैद्यग्रन्थोंकी अपेक्षा शुद्ध तथा सुन्दर हैं । अग्नेयीमें और संस्कृतभाषामें भूमिका लिखकर अपने प्रकाण्डपाण्डित्य, व्यापक ज्ञान तथा आदर्शगवेषणपरायणताका परिचय दियाहै । हमें मुक्तकंठसे स्वीकार करना पड़ताहै कि इसग्रन्थके दोनोंही उपोद्घात बहुतही सुन्दर, विचारपूर्ण, मननीय, पठनीय तथा आयुर्वेद्येमियोंके लिए बड़ेप्रेमकी वस्तुहैं ।

इसग्रन्थमें कितनेही बुरुहस्थलोंपर मूलश्लोकोंका संस्कृतभाषामें भाष्य, अर्थ तथा टिप्पणी लिखकर छेपकमहोदयने सोनेसे सुवर्णका काम कियाहै । फलतः कई दृष्टियोंसे यह ग्रन्थ बहुतही उपयोगी तथा अपने रंगका एकदै । हमें यह लिखते हुए बड़ीही प्रसन्नता होती है की “रसयोगसागर” का नाम सार्थकहै । यह ग्रन्थ आयुर्वेद प्रेमियोंकेलिये सर्वथा उपादेयहै । इसग्रन्थने एकबड़ेभारी अमावसी पूर्ति कीहै । अन्तमें हम आयुर्विज्ञानाचार्य, वैद्यवर्य पण्डित हरिप्रपञ्चशर्मांकी वो इसमहत्त्वपूर्ण प्रयत्नके लेखन व सम्पादनमें किएएए असीम धनके लिये अभिनन्दन तथा इसग्रन्थके सम्पादनमें प्राप्तकीहुई सफलताके लिये हार्दिक बधाइयाँ देतेहैं ।

सखनऊ, मार्गशीर्ष }  
सं० १९८४

गयाप्रसादशास्त्री “धीहरि”

## सरस्वती

ऑक्टोबर १९२८

यह आयुर्वेदशास्त्रसम्बन्धी एक महत्त्वपूर्ण सङ्ग्रहग्रन्थ है । इसके सङ्ग्रहकार पण्डित हरिप्रभनजीने इसकी रचना घडेपरिभ्रमके साथ की है । इस सङ्ग्रहसे आपकी अध्ययनशीलता ही नहीं प्रकटहोती है, किन्तु साहित्यिक सुसूचितता । अपने इसका सङ्ग्रहण और सङ्गृहीतमूल्योंको सम्पादन नये ढङ्गसे किया है । इससङ्ग्रहकी रचनामें सङ्ग्रहकारने इसका हिन्दीमें आधुनिकता की है । इससे इसकी उपयोगिता और भी बढ गई है । अस्तित्ववादी इसका अच्छीतरह उपयोग कर सकेंगे ।

सङ्ग्रहकारने इसकी भूमिकामें अपने पाण्डित्य और अध्ययनशीलता का खासा परिचय दिया है । इसमें (भूमिकामें) आयुर्वेदकी प्राचीनता वैदिककालसे सिद्ध की गई है । एवं उसका इतिहास दिया गया है, साथही शारीरविज्ञानकी सविस्तर विवेचना की गई है । यह महत्त्वपूर्णग्रन्थ अनेक ज्ञातव्य बातोंसे पूर्ण है ।

यह सङ्ग्रह अपने ढङ्गका निरालाही नहीं, किन्तु निश्चयनीय एवं उपयोगी है । आयुर्वेदके ज्ञाताओं तथा उसके प्रमरखनेवाले लोगोंको इस उत्कृष्टग्रन्थका सङ्ग्रह अवश्य करना चाहिए ।

## विश्वमित्र

कलकत्ता, २०-१२-१९२७

उपोद्घातमें आयुर्वेदका इतिहास और रहस्य और उसके चरकसुश्रुतादि ग्रन्थोंका साहाय्य अत्यन्त योग्यताके साथ वर्णित है । एकएकयोगके जितने भी भेद अवतारके प्रकाशित और अप्रकाशित ग्रन्थोंमें पायेजाते हैं उनसबका इसएकही ग्रन्थरत्नमें सङ्ग्रह है । रसयोगसागर एक अद्वितीय और अनुपम ग्रन्थ बना है । इस एक ग्रन्थरत्नकी अपनेपास रखनेसे वैद्योंके लिए अन्यरसग्रन्थोंके सङ्ग्रहकी प्रायः कोई आवश्यकता न रहजायगी । संस्कृतश्लोकोंके नीचे सुबोध हिन्दीमें उनके अर्थ भी दिये गये हैं । इतनाही नहीं, जहाँ कोई गूढ़ार्थ है वहाँपर सुयोग्य केरकने खानुभव एवं टिप्पणियाँ देकर सोनेमें छुगादि पैदा करी है । यह ग्रन्थरत्न रसवित्तिकोंके बहुतही कामका है । इसके सहारेसे केवल हिन्दीज्ञान-रत्ननेवाले चिकित्सकी पूरापूरा लाभ उठासकते हैं । वैद्यमात्रको इसकी एकप्रति खरीदकर ग्रन्थकर्ताको उरसाहदान करना चाहिए । हम ऐसे अमूल्य सङ्ग्रहकेलिये ग्रन्थकर्ताको हार्दिक धन्यवाद एवं यहाँसे देते हैं ।

## प्रताप.

रसप्रयोगोंके इसप्रकारके एक सङ्ग्रहकी परमावश्यकता थी । आयुर्वेदमें रसग्रन्थोंका कोईही ऐसा सङ्ग्रह नहीं है जो अकारणिक क्रमसे हो और जिससे यह जानाजासके कि कौनकौनसा पाठ किसकिस ग्रन्थमें है और एकहीनामसे भिन्नभिन्न कितने योगप्रचलित हैं ।

वैद्य हरिप्रभनजीने धर्म और व्यवसाय इसकार्यको करके वैद्यसमाजका बड़ा उपकार किया है, भिन्न २ रसोंके भिन्न २ ग्रन्थों और अधिकारोंके अनुसार कई २ पाठोंका सङ्ग्रह इसमें है जिन्हें एकत्रित करना कमभ्रमसाध्य नहीं है ।

अग्रेसरी तथा संस्कृत अवतरणिका सङ्ग्रहकर्ताने खोज और विद्वत्तापूर्वक लिखी है । इसके उपोद्घातमें आयुर्वेदका इतिहास तथा सम्पूर्ण शारीरज्ञानका वर्णन किया गया है । साथही पाश्चात्य शारीरका तुलनात्मक वर्णन है । यदि इसका उपोद्घातमागही पुस्तककार प्रकाशित होता तो भी यह भारतीय शिक्षितसमाजके लिए एक आनन्दकवस्तु होती । पुस्तक सती दृष्टिओंसे उपयोगी है ।

प्रत्येक वैद्यको अपनेपास इस अत्यन्त उपयोगी, पठनीय, मननीय एवं सङ्ग्रहणीय ग्रंथकी एकप्रति रखनी चाहिए ।

कानपुर,  
ता. १४/१२/२८ }

विषमन्न शिचनारायणमिश्र, वैद्यशास्त्री

## अभीष्ट

बंबई ता. १५/११/१९२७

पुस्तकको देखकर हमारे हृदयमें बहामारी हृष्य होता है.

इस ग्रन्थके रसप्रयोगोंका सङ्ग्रह तो प्रायः समीक्षकोंके कामका है. परन्तु उपोद्घातका विषय विद्वान् वैद्योंके लिये अत्यन्त ही है.

संस्कृत उपोद्घातमें आर्यशारीरतत्त्व नामक सन्दर्भ बहुतही महत्त्वका है । भारी मन्थन करके वेदोंमें तो जहाँ जो कुछ मिलता उतना शारीरतत्त्व खोज लिया है । वेदोंमें खासकर अथर्ववेद और रतपत्रब्राह्मणमें शारीरतत्त्वका उल्लेख विशेष है

इस शारीरतत्त्वको एकत्रित करके सुश्रुतके शारीर और आधुनिक शारीरसे तुलना करनेका पण्डितजीने ब्रह्म परिश्रम किया है । सन्दिग्धस्थानोंमें सविस्तर प्रमाणदेकर पण्डितजीने अच्छा प्रकाश डाला है । टिप्पणियोंमें देखकरही पाठक जान सकते हैं कि किन २ सुदृढ प्रमाण और युक्तियोंसे इनके यथार्थ अर्थोंका प्रतिपादन किया है ।

रसग्रन्थोंमें एकही नामके अनेक प्रयोग हैं और एकही प्रयोगके अनेक नाम रखे हुए हैं, ऐसी प्रयोगोंकी अव्यवस्थामेंसे प्रयोगोंको छांटना कितना कठिन काम है, उसको अनुभवकी विद्वान्ही जानसकते हैं । इस ग्रन्थमें बहुतसे प्रयोग इतने कूटसङ्केतोंमें लिखे हुए आये हैं कि जिनको देखकर मग्न चक्र खाता है उनका भी सरल अर्थ पण्डितजीने बरी-योग्यतासे किया है । हम पाठकगणसे पण्डितजीके किये हुए वार्षिक विस्तृतभाष्यको देखनेका अनुरोध करते हैं । सम्पूर्ण वैद्य और आयुर्वेदप्रेमी जनतासे हमारी प्रार्थना है कि ऐसे ग्रन्थको एकवार अवश्य देखें और सद्गद करें,

### धर्मभूषण

आयोध्या, जनवरी १९२८

इसमें रसोंका अपूर्व वर्णन है । प्रायः सभी वैद्यग्रन्थोंके रसोंका इसमें समावेश किया गया है । इसकी विद्यालभिका तो भारतीय वैद्यविद्याकी प्रमाणभूतही है । इसमें वैद्यकशास्त्रकी सर्वोत्कृष्टमहत्ता और सर्वतोभावेन उपयोगिता दिखाते हुये कतिपय देशान्तरिय वैद्यों (डाक्टरों) के मतोंकी सप्रमाण समालोचना की गई है । ग्रन्थकर्ताके अगाधपाण्डित्यक इस भूमिकासे परिचय होता है । ऐसी भूमिकाएँ असाधारणगुणविशिष्ट व्यक्तिही लिख सकते हैं । भूमिका सस्कृतभाषामें है । इसका प्रायः सभी विद्वानोंको अध्ययन करना चाहिए । यह सर्वथा उपादेय है ।

### सुधानिधि

प्रयाग कार्तिक १९८४

इस ग्रन्थकी उपयोगिता बहुत बड़ीबड़ी है । एक इस ग्रन्थके पास रहनेसेही फिर अनेक रसग्रन्थोंकी उत्तरी अधिका आवश्यकता नहीं रहजाती । यही नहीं एक औषधिके पाठके लिये अनेक पुस्तकोंके पक्षे सल्टनेकी आवश्यकता नहीं ।

आयुर्वेदविद्याके विस्मयी और खोजी विद्वानोंके लियेभी इस ग्रन्थकी उपयोगिता बहुत ऊँचे दर्जेकी है । भूमिकामें आयुर्वेदके इतिहास और शारीर तथा रोगविज्ञानसम्बन्धी अनेक विवादों और उल्लंघनोंकी सुविधा सुलझानेका प्रयत्न किया गया है । पण्डित हरिप्रपन्नजी इस पुस्तकको छपाकर वैद्यसमाजके धन्यवादभाजन हुये हैं ।

धीमान् विद्वद्भर वैद्यराज पण्डित श्रीहरिप्रपन्नरामाजीने इस अनुपम ग्रन्थरत्नकी रचना करके वैद्यवर्गका बड़ा उपकार किया है—अनेक आकर प्रयोगों—(जिनमें बहुतसे अमोहत अग्रकाशित और अग्रगण्य हैं) जो 'रसयोग' इधर उधर बिखरे पड़े थे उन्हें एक जगह अकारादि नमसे इकट्ठे करके इसग्रन्थकी बरी गार (मटका)में मानो सागरको भर दिया है ।

ग्रन्थके आकार प्रकार और रंगरङ्गको देखकर समग्र कृतोंके पाण्डित्य और परिश्रमकी प्रशंसा करनी पड़ती है, ग्रन्थके आरंभमें बहुतविस्तृत १०८ पेजका सस्कृतमें उपोद्घात है, जो बरी खोज और विद्वत्तासे लिखा गया है, जिसमें ऐतिहासिक और दार्शनिक रीतिसे वैद्यकविषयका विशद विवेचन किया गया है, यह उपोद्घात पढ़ने लायक है, परेशकामकी चीज है संस्कृत उपोद्घातका चार १०४ पृष्ठोंमें अंग्रेजीमें भी दिया है, जिसमें अंग्रेजी जाननेवाले वैद्य और जिज्ञासुगोष्ठरालोगमी लाभान्वित होसकेंगे । ग्रन्थके इस पहिले भागमें 'अ-वि-न' तक अनुक्रमके कोई दोहजार योग हैं प्रत्येक योगके मूलश्लोकोंका सरल हिन्दीमें अनुवाद है, साथमें समग्रकृतों जहातहा अपने अनुभवकी छिपतेगये हैं कि कौन योग किस रोगपर अनुभूत है । पुस्तक सबप्रकारसे उपादेय और सबतरहसे सुन्दर है ।

काव्यकुटीर नायक नगला  
म्हानपुर (विजयनर) कार्तिकसुद ६ । ८७ वि. }

पद्मसिंह शर्मा.

### केसरी

गुण, ता. २१/१२/२८

सुबईचे प्रसिद्ध वैद्य पण्डित हरिप्रपन्नजी यानी ऋग्वेद, अथर्ववेद, यजुर्वेद, छतपयस्रामन, उरनिषद व आयुर्वेदीय ग्रन्थ यांचा चिकित्सक व सशोधक सुदीर्घ अभ्यास करून आयुर्वेदाची उत्पत्ति व अभ्युदय यांचे ऐतिहासिक रक्षा विवरण करणारा इमची व सस्कृत उपोद्घात या ग्रन्थाचे प्रारंभी जोडला आहे तो विशेष मनीष व विचार करण्यासारखा आहे यांचा साराय नाही अमूल्य रत्नसद्गद भारतीय वैद्यांपुढे देवला आहे. वेतक छापील ग्रन्थाचा सद्गद करणे मुदा किती कष्टप्रद याची कल्पना सामान्य लोकांसहि आहे. पण इच्छितिय प्रय सम्पादन करणे व त्यांचा संग्रह करणे किती प्राणाय व किती

*Bombay, 18th, July 1928.*

It was with great pleasure that I went through your valuable exhaustive book *Rasayogasāgara*. Your collecting and systematic grouping of the various formulae of *Āyurvedic* prescriptions will be of great help not only to professional *Vaidyas*, but also to laymen. I found your introduction especially instructive and I am sure it will be of great help to all those, who wish to study and understand our ancient medical system.

D. D. SATHAYE.

Ophthalmic Surgeon.

*Calcutta, 8<sup>th</sup> 1930.*

The introduction in which you have discussed the progress of medicine and surgery in ancient India will prove highly interesting .....The commentary in Hindi, "Bhasā", will prove highly useful to those who are not well acquainted with Sanskrit.

P. C ROY.

University College of science and Technology.

*Bombay, 30 10-1929*

*Rasayogasāgara* (is) the *Āyurvedic* book of Chemical Pharmacy..... This book contains in detail the different *Āyurvedic* chemical preparations with mercury as their basis. This work is full of such preparations collected from different *Āyurvedic* works . .with true authentic names of the drugs... ..Introduction contains a synopsis in English of the origin of the *Āyurveda* and its spread in different countries. Going deep into the matter of the origin of *Āyurveda*, you have established its superiority ... for which you deserve best thanks of the medical public. In short you have been able to prove that the origin of *Āyurveda* dates so far back as that of the Vedas, and that if there is any unrivalled science in this world to heal diseases it is only *Āyurveda* the oldest and the best ... ..different healing sciences came into existence as offshoots of *Āyurveda* .....you have .... proved the thoroughness of the *Āyurvedic* science by giving equivalent *Āyurvedic* terms of different arteries, veins, organs, tissues etc ..... known to the *Āyurvedic* practitioners from olden times ..... its introduction shows your deep knowledge of the science. The book is really very useful to *Vaidyas*, *Āyurvedic* students, Doctors and *Hakims*.

POPAT PRABHURAM L M & S, PRANACHARYA

Principal, Prabhuram *Āyurvedic* College.

*Nepal, 24-5 1928.*

.. .. *Rasayogasagara* Vol I the valuable and welcoming gift .....This book is one of the best and well suggested and defined books, that I have ever met with and *Vaidyas* might have met with. ....

A. M. VAJRACHARYA.

Librarian, Trichandra College, Nepal

*Modern Review, March 1928*

This is a laudable attempt at the compilation of a Sanskrit-Hindi dictionary of Ayurvedic Rasa medicine. The various medicines are arranged in alphabetic order and original Sanskrit texts, with reference, tilka where deemed necessary, and translation in modern Hindi given in each case .... from what we can see it is likely to be a valuable addition to the literature on this subject.....A table of Sanskrit anatomical terms with their English equivalents is given.

K. N. C.

*Dreslau, 4 1 1930.*

Your work will do much in propagating the understanding of Ayurvedic medicine, especially through the table comparing Sanskrit anatomical words with their English equivalents. I congratulate you on what you have done already. And I am looking forward to further issues of your appreciable publication.

Prof. D CHUNIT.

Director of Staats und Universitäts Bibliothek.

*Göttingen, 2-5 1930*

I have studied the statement of your Introduction with the most vivid interest, being fully convinced, that also here in Germany the high value of the Indian medical systems and the necessity to study them is more and more recognised. For the Sanskrit scholar in my opinion the occupation with the Ayurveda is indispensable in consideration of the better understanding of the Veda, especially the Atharvaveda. I wish you the best progress of your meritorious task and should be grateful for informing me about the publication of further parts of your work in order to buy them for the University Library of Göttingen.

Prof. Fik

Director of Göttingen Universitäts Bibliothek.

*27 French Road Chaurpatty Sea face*

*Bombay 23 10 1930.*

I have great pleasure in going over the two Books "Rasayogasagara" and "Klomayathathya" written by Vaidyraj Hariprapannaji. His control over Sanskrit is very good and the former book is like a treasury of Indian Pharmacopoeia. In these days of Swadeshim, this should supply a foundation for the Industrial Development of Indian drugs. Panditji also seems to be a thinker of pure reason as one could see from his "Klomayathathya". His theory is very interesting but his arguments are still more interesting and sound. I should congratulate Panditji on production of such useful & instructive Volumes.

J. DURLABH DHURV, M. S. F. R. C. S., D. L. O.

Surgeon to Sir J. J. Hospital.

*Bombay 15 10-1930.*

I had occasion to read the reply of Pandit Hariprapannaji to Vaidyraj Kawade Shastri re the actual meaning of the word ग्लेज. I have come to the conclusion that Panditjee is correcting in wearing the ग्लेज as Gall bladder.

D. D. SATHAYE

Ophthalmic Surgeon



## होमयाथातथ्ये आभप्रायाः ।

पण्डितहरिप्रपञ्चजीप्रापितः “होमयाथातथ्यम्” नाम प्रबन्धो मया समग्रमवलोकितः । पण्डितमहाशयैः शतपथम्  
गवाजसनेयसंहिताऽथर्वसंहितादीनामतीवप्रथमपूर्वकमभ्यासं कृत्वा तत्रस्थानि यानि यानि श्रुतिवचनानि अत्र बहु  
तैः सर्वैरायुर्वेदीयशारीरचंरास्यदस्थानानां सर्वेषंशयच्छेदि विवेचनं सज्जातमिति मन्ये । आयुर्वेदशास्त्रं तदभ्यास  
प्रबन्धलेखकैरुपकृता इति मे मतिः सर्वभियावरैरयं निबन्धः सूक्ष्मतयाऽभ्यस्य शारीरज्ञानवृद्धिरवश्यं कार्या, येन निब  
कारणां परिश्रमः सफलं भवेत् । पण्डितमहाशयानां कार्यमभिनन्दनीयम् ।

मुम्बापुरी आश्विन कृष्ण  
चतुर्दशी सं. १९८७ }

पेनापुरे उपाह्वासुदेवशास्त्री.

-इह खलु होमयाथातथ्यमित्याख्यग्रन्थसङ्ग्रहे यथायुर्वेदतन्त्रार्णवमुन्मथालम्भ्यत्नं प्रविच्योद्घाटितमेतद्विनिर्ण  
श्रीहरिप्रपञ्चशास्त्रिमहोदयेन भिषक्चक्रचूडामणिना तद्विदितमेवास्ति वैयर्थ्यरतोऽस्याभिरपि लोकोत्तरोपकारकग्रन्थ इत्येव  
धन्यवादाः समर्प्यन्ते ।

हिन्दुविश्वविद्यालय, काशी भाद्रपदशुक्ल  
अष्टमी सं. १९८७ }

धर्मदासकविराज  
अध्यक्ष आयुर्वेद विद्यालय,

इह खलु ‘होमयाथातथ्य’पदानिग्रन्थसङ्ग्रहे प्राचेतसाऽभ्यन्तराऽवयवप्रणिगदने यथा प्रवचनशक्तिव्याऽन्वेष्टन-  
चातुर्यचमत्कृतिः प्रतिभापरिणतिर्विद्वज्जनमनोऽनुरञ्जननीतिलेखनरीतिरापामरावगमनप्रीतिर्निर्दिष्टा । नैतत्सर्वं केनाऽपि  
तिरोहितं वरीवर्ति इति छुविदितमेवास्तिवलोकितग्रन्थमनीषिभिरतोऽलौकिकसुरिसमर्थितचरणसरोवररजते चिकित्सकाय न धन्य-  
वादप्रदानमन्तरा मनोऽवरुध्यत इति दिक् ।

अगस्त्यकुण्ड, काशी, भाद्रपद शुक्ल  
अष्टमी सं. १९८७ }

मिथयाचार्य श्रीसत्यनारायणशास्त्री

निर्दिष्टाभिनवनिबन्धाऽभिधानालोचनाव्यवहितोत्तरक्षण एवोद्भूतकुतूहलेन मयाऽयमामूलोपान्तमालोचित एव सकौतु-  
कम् । प्रणेत्राऽनैकशः श्रुतिस्मृत्यगदङ्कारप्राच्यनिबन्धालोढनेन विपश्चिन्मनोविनोदाहर्षं प्रमाणजातप्रचुरं प्रास्थापि यत्कोम्नो  
याथात्म्यं तेन सुष्टुहीतनामधेयानां वैयर्थ्यपण्डित हरिप्रपञ्चजी महाशयानां निरुपमवैदुष्येण लेखनपाठवेन च प्रमोदमुदिरत्नान्तः  
सन् प्रयुज्य तेष्वी धन्यवादान् अपूर्वोऽयं निबन्धः सर्वैर्विद्वद्भिर्विशेषतश्च भिषग्भरैरवश्यं सङ्ग्राह्यः सादरं परिचेयधेलभिप्रैति ।

मुम्बापुर आश्विनकृष्ण  
एकादशी सं. १९८७ }

पणशीकरोपाधिधारी वासुदेवशास्त्री.

अयि महाशयाः “श्रीमतां होमयाथातथ्यम्” साधनं याथातथ्येनाऽवलोक्य प्रफुल्लितं चित्तं मयीयम् । कदा-  
चालालातेन निरूपेणाऽऽस्तं होमोत्सवं पुनरपि लौकिकरीत्या वैदिकपद्धत्या च सममाणं भवता प्रमाणीकृतमित्यत्र नास्ति  
शयाऽवकाशलोऽपि । ग्रन्थेस्मिन् भाषामयेऽपि भावगाम्भीर्यं श्रमशीलता कार्यपटुता लिपिकुशलता चारमनधेन्द्रियाणां च  
दृग्दर्शयैवास्तो नव्यशारीरतत्त्वजिज्ञासुनामवश्यमिदं सहायकरं सम्पत्स्यत इत्यमरायै ।

पटना  
ता. १९।१।१३. }

पं. हजारीलालसुकुलः ।  
रसायनाऽऽयुर्वेदिकपाठशालाऽध्यापकः । आयुर्वेदाचार्यः ।

पृष्ठ १ से ५२ तक प्रिन्टर-रामचंद्र येसू शेरने, निर्णयगगर प्रेस, २६।२८ कोलमाट लेन, मुंबई.